गुजराती

गिरधर रामायण

[नागरी लिपि में मूल गुजराती पाठ तथा हिन्दी गद्यानुवाद]

रचयिता

महाकवि गिरधर

अनुवादक

डॉ० गजानन नरसिंह साठे

डॉ० दीनेश हरिलाल भट्ट

प्रकाशक

भुवन वाणी ट्रस्ट

वर्तमान पता:— मौसम बाग़ (सीतापुर रोड), लखनऊ–२२६०२०

'प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक संत की वानी।
सम्पूर्ण विश्व में घर-घर है पहुँचानी ॥'

प्रथम संस्करण—मार्च, १९७८

पृष्ठसंख्या—१८×२२÷८=१४६०

मूल्य— ८०·०० रुपया

मुद्रक

वाणी प्रेस

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८, चौपटियाँ रोड, लखनऊ—२२६००३

अक्षरों के माध्यम से विश्वभाषा-सेतुकरण और राष्ट्र की भावात्मक
एकता के कार्यक्रम में, अकिञ्चन एवं भुवन वाणी ट्रस्ट
के मूर्धन्य संरक्षक तथा अनन्य सहायक
लोकनायक श्री जयप्रकाश बाबू को गुजराती भाषा के
महाकाव्य **'गिरधर रामायण'** का यह सानुवाद
नागरी लिप्यन्तरण-ग्रन्थ सादर माल्यार्पित।

मुख्यन्यासी सभापति, भुवनवाणी ट्रस्ट, लखनऊ-३

विषय-सूची

प्रथम खण्ड पृष्ठ संख्या ९६४
द्वितीय खण्ड पृष्ठ संख्या ४९६ } —ग्रन्थ की समग्र पृष्ठ-संख्या १४६०

भूमिका

पुरातन काल से रामायण के प्रति लोगों की अगाध श्रद्धा और प्रेम रहा है। यह सदा शान्ति, सन्तोष और प्रेरणा के स्रोत रहे हैं। इस ग्रन्थ में सामाजिक मूल्यों और उच्च आदर्शों का अक्षय भण्डार है, जिससे मनुष्य के चरित्र का निर्माण होता है। दुनिया में ऐसे कम ग्रन्थ होंगे जो जनसाधारण में इतने लोकप्रिय हों। इसे सिर्फ़ भारतीय अथवा हिन्दू पुस्तक मानना अनुचित होगा ऐसा मैं मानता हूँ। इण्डोनेशिया, जावा आदि अनेक देशों में रामायण के सन्देश का प्रभाव हम देख सकते हैं। हमारी सभी भाषाओं में रामायण लिखी गई है। अगर कुछ लोगों ने वाल्मीकि रामायण का अध्ययन मूल संस्कृत में किया है तो बहुत लोगों ने अपनी मातृभाषा में इसका सन्देश ग्रहण किया है। सभी भारतीय भाषाओं में रामायण के अनुवाद मिलते हैं। गुजरात की लोकप्रिय "श्री गिरधर रामायण" का अपना एक विशिष्ट स्थान है।
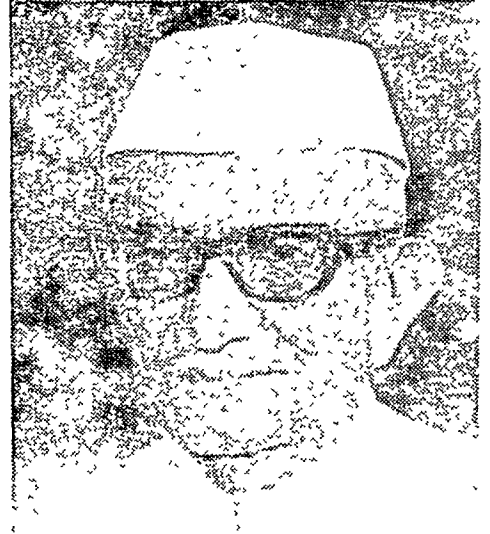
मुझे खुशी है कि भुवन वाणी ट्रस्ट के तत्वावधान में डॉ० दीनेश भट्ट और डॉ० गजानन नरसिंह साठे ने इस रामायण का नागरी लिपि में लिप्यंतरण और हिन्दी अनुवाद किया है। यह ग्रन्थ पाठकों के लिए प्रेरणास्रोत होगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

राष्ट्र की एक जोड़ लिपि और भाषा के लिए भुवन वाणी ट्रस्ट जो कार्य कर रहा है, वह सराहनीय है; और इसमें सबका सहकार प्राप्त होगा, ऐसी मैं कामना करता हूँ।

मोरार जी देसाई

(प्रधानमंत्री, भारत)

नई दिल्ली, १७ नवम्बर, १९७७

ग्रन्थ के प्रणेता

कविवर श्री गिरधर की

पुण्य स्मृति में

श्री गिरधरदास के पुण्य स्मरण से अपने आपको पावन करने का यत्न करते हुए उनके इस गुजराती रामायण का यह

हिन्दी गद्यानुवाद

हिन्दी माध्यम से उसे पढ़ने के अभिलाषी राम - कथा - प्रेमियों को सादर समर्पित।

रही बात मूल रचना की—

हे कविवर,

वस्तु आपकी है। हम तुच्छ जन उसे किसी और को देने का दुःसाहस कैसे कर सकते हैं।

हमने आपकी इस कृति को नागरी लिपि में और उसके भावार्थ को राष्ट्रभाषा हिन्दी में प्रस्तुत करने का यह यथाशक्ति प्रयास किया है। इसमें त्रुटियाँ रह गयी हैं। आशा है, आप हमें क्षमाके योग्य समझेंगे।

'ते दोष क्षमा करजो, हे कविवर, राखजो, चित्त उदार जी।'

विनीत
अनुवादक

वसन्त पंचमी, विक्रम संवत् २०३४

अनुवादकीय वक्तव्य

सज्जनो,

गुर्जर कवि श्री गिरधर, अर्थात् श्री गिरधरदास कृत रामायण का यह हिन्दी गद्यानुवाद (नागरी लिपि में मूल गुजराती पाठ-सहित) आपके सम्मुख ग्रन्थाकार प्रस्तुत करते हुए हमें बहुत प्रसन्नता हो रही है। १९७१ ई० में 'भुवन वाणी ट्रस्ट' की त्रैमासिक पत्रिका 'वाणी सरोवर' के अप्रैल अंक से इस रामायण का नागरी लिप्यन्तरण सहित हिन्दी अनुवाद आपके अवलोकनार्थ प्रकाशित करना आरम्भ किया गया और आज तक उसे धारावाही रूप में उस पत्रिका के प्रत्येक अंक में आठ या सोलह पृष्ठ के हिसाब से आपके पास भेजा जा रहा है (और आगे भी भेजा जाएगा)। यदि इसी गति से यह विशाल-काय ग्रन्थ प्रकाशित होता रहे, तो उसे पूर्ण करने में

डॉ० गजानन नरसिंह साठे

लगभग पैंतालीस वर्ष आपको प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। आप जैसे सुधी पाठकों, रामकथा-प्रेमियों को इतना सब्र कहाँ? फिर जीवन तो सीमित है—इस स्थिति में आप उसे यथाशीघ्र पढ़ना चाहते हैं। इस दृष्टि से ट्रस्ट के मुख्यन्यासी श्री नन्दकुमारजी अवस्थी तथा 'वाणी सरोवर' के प्रबन्ध सम्पादक श्री विनयकुमारजी अवस्थी ने सम्पूर्ण ग्रन्थ को यथाशीघ्र प्रकाशित करने का आयोजन किया और उसका फल आज वे आपके हाथों में समर्पित कर रहे हैं। वस्तुतः इस ग्रन्थ का प्रकाशन पिछले वर्ष होना अपेक्षित था; परन्तु हम अनुवादक अध्यापक हैं; हमें अपने निर्धारित काम के लिए हर दिन बहुत समय व्यतीत करना पड़ता

डॉ० दीनेश हरिलाल भट्ट

है; अन्यान्य उत्तरदायित्वों का निर्वाह करना पड़ता है। इधर, प्रकाशक की ओर से तकाज़े होते रहे थे, फिर भी, हम अपनी रफ़्तार से बाज़ नहीं आये। नतीजा यह हुआ कि यह अनुवाद निर्धारित तिथि से लगभग एक वर्ष विलम्ब से प्रकाशित हो रहा है। हम ग्रन्थ के मधुर रस के कलश में से दो-दो बूँदों का पान आपको कराते रहे; आपको बहुत प्रतीक्षा करनी पड़ी है— हम क्षमा-प्रार्थी है। परन्तु अब तो रस-कलश आपके हाथों में है। विश्वास है, आप इसका लाख-लाख बार प्राशन-आस्वादन करें— तो भी न यह कभी रिक्त-सा लगेगा, न कभी आप पूर्णतः अघाते हुए इसे दूर कर देंगे। मधुर फल देर से भी मिले, उसकी मधुरता कम नहीं प्रतीत होगी।

*　　　*　　　*

'भुवन वाणी ट्रस्ट' की पत्रिका 'वाणी सरोवर' के माध्यम से हमें श्री अवस्थी महोदय का परिचय प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। (और प्रत्यक्ष उनके दर्शन तो काम कुछ हो जाने के पश्चात् ही हो गये।) इस ट्रस्ट के उदात्त कार्य से आप परिचित होंगे, अतः इसे हम यहाँ दोहराना नहीं चाहते। हम केवल यही कहेंगे कि हमने उनके इस सत्कार्य में यथा-शक्ति हाथ बँटाने की अभिलाषा व्यक्त की— इसमें कुछ 'स्वार्थ' था, तो कुछ 'परमार्थ' भी। गिरधरदास कृत रामायण के अनुवाद की हमारे द्वारा सुझायी हुयी योजना को उन्होंने बेहिचक स्वीकार किया और हम से यह काम करवा लिया। हम इस कार्य की पूर्ति का श्रेय श्री अवस्थी—पिता-पुत्र - दोनों को देना चाहेंगे।

भारत में विभिन्न भाषाएँ बोली जाती है; इन भाषाओं को लेकर कहीं-कहीं कटु संघर्ष भी हो गये है। फिर भी ये कटु संघर्ष क्षणिक होते हैं— लोग तत्पश्चात् एक-दूसरे से प्रेम-पूर्वक घुल-मिलकर रह जाते हैं। इससे स्पष्ट है कि हम विभिन्न भाषा-भाषी लोग एक-दूसरे से केवल राजनैतिक बन्धन से जुड़े नहीं हैं; हमारे भीतर 'भारतीयता' का जो भाव है, वही हम सबको एकात्म किये हुए है। इस 'भारतीयता' का निर्माण, मातृ-भूमि-प्रेम, हमारी संस्कृति, हमारी कलाओं, हमारे साहित्य आदि से हुआ है। वस्तुतः भारतीयता के इस सूत्र को दृढ़ बना लेने में साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है। इस साहित्य भण्डार में संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश तथा आधुनिक भारतीय भाषाओं में लिखित राम-कथात्मक तथा अन्य कृतियों के रूप में अनमोल रत्न पड़े हुए हैं। रामायण-महाभारत जैसी कृतियों ने एक-दूसरे के साथ एकात्म बने रहने का, विशिष्ट आदर्शों का सम्मान करते हुए जीवन को अधिकाधिक उदात्त बनाने का सन्देश दिया है। प्रान्तीय भाषाओं में इस प्रकार की एक-से-एक बढ़िया कृतियाँ

उपलब्ध हैं। फिर भी कभी-कभी लगता है कि भाषाओं और लिपियों की भिन्नता के कारण हम लोग मूलतः एक होने पर भी एक-दूसरे से बिखरे पड़े हैं। हम अपनी-अपनी क्षेत्रीय भाषाओं के दायरे में तृप्त बने रहते हैं। 'ट्रस्ट' की नागरी-लिप्यन्तरण सहित हिन्दी अनुवाद वाली योजना के फल-स्वरूप, हम क्षेत्रीय भाषा के ऐसे छोटे-छोटे दायरों से बाहर निकलकर राष्ट्रभाषा के माध्यम से अन्यान्य भाषाओं के अनमोल ग्रन्थों का अवलोकन कर सकते हैं। इससे बंगाली, तमिल, मलयाळम आदि भाषाओं के गौरव-ग्रन्थों को पढ़कर उनके द्वारा भारतीय संस्कृति के विविध पहलुओं को हम निकट से देख पाते हैं और अनुभव करते हैं कि हम सब एक हैं। भाषिक अन्तर को दूर करते हुए साहित्य-प्रेमियों को साहित्य का रसास्वादन करने का, उत्तमोत्तम संस्कार उत्पन्न करनेवाले साहित्य का परिचय कर लेने का सुअवसर 'ट्रस्ट' की योजना द्वारा सब को मिलता है— यही ट्रस्ट का माहात्म्य है। हम राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचारक हैं, हिन्दी के माध्यम से इस कार्य में हाथ बँटाते हुए गुजराती कवि गिरधरदास कृत रामायण को आपके लिए सुगम बना लेने का हमने जो अल्प-सा प्रयास किया है, उसमें हमें कुछ-कुछ कृतार्थता अनुभव हो रही है।

* * *

इसी ग्रन्थ में अन्यत्र (प्रथम खण्ड) पृ० १७ पर कवि गिरधरदास का परिचय दिया गया है। उनकी इस कृति का अनुवाद करते समय हमें अनेकानेक कठिनाइयाँ अनुभव हुईं; फिर भी हमने यथाशक्ति उनका सामना करते हुए इस अनुवाद को पूर्ण किया है। रचनाकार की अपनी विशिष्ट शैली को हमने यथा-सम्भव अपरिवर्तित रखा है; अतः इस अनुवाद में आपको कहीं-कहीं अटपटापन या हिन्दी भाषा की दृष्टि से कृत्रिमता का भी कहीं-कहीं अनुभव होगा। आप इसका ध्यान रखें कि हमने मूल को यथार्थ रूप में, उसे न बिगाड़ते हुए, देने का यत्न किया है।

अनुवाद करते समय हमने मूल ग्रन्थ में प्रयुक्त क्रिया रूपों का अनुवाद अर्थानुसारी पद्धति से किया है। प्रायः कथा का कथन-कर्ता या कथा-वाचक कथा की घटनाओं के सन्दर्भ में क्रिया के वर्तमानकालिक रूपों का प्रयोग करता है, यद्यपि वर्णित घटनाएँ अतीत में घटित हैं। अर्थात् वर्तमानकालिक क्रिया रूप से वहाँ भूतकाल ही सूचित होता है। गिरधरदास ने कहीं वर्तमानकाल का प्रयोग किया है, तो कहीं भूतकाल का। हमने प्रायः भूतकालिक रूपों का ही प्रयोग किया है। शुरू-शुरू में कोष्ठक में [illegible]या है, बाद में आम तौर पर भूतकालिक रूपों का ही प्रयोग

दूसरे, रचनाकार ने हनुमान, विभीषण आदि के लिए आदरार्थ में बहुवचन का प्रयोग किया है। हमने अनुवाद करते समय एकवचन रूपों का ही प्रयोग किया है।

हमने यथास्थान टिप्पणियाँ दी है। आशा है, आपकी जिज्ञासा का उससे समाधान होगा।

* * *

कवि गिरधरदास ने अपने रामायण की रचना के लिए अनेक ग्रन्थों से सहायता ली है। उन्होंने बालकाण्ड के दूसरे अध्याय में अनेकानेक रामायणों का उल्लेख किया है। इसके अतिरिक्त, यथास्थान उन्होंने स्कन्दपुराण, अग्निपुराण, रामाश्वमेध आदि से ऋण स्वीकार करने का भी उल्लेख किया है। वे हनुमन्नाटक के भी ऋणी हैं— प्रत्येक अध्याय के अन्त में उन्होंने 'वाल्मीकि-नाटक-धारा' का बड़ी विनम्रता के साथ उल्लेख किया है। (हमने अध्याय के अन्त में पुष्पिका को नहीं दिया है।) जान पड़ता है, इन प्राचीन ग्रन्थों के अतिरिक्त, गिरधरदास ने तुलसीदास कृत रामचरितमानस का भी अवलोकन किया था। हमारा यह भी अनुमान है कि कवि श्रीधर (कृत मराठी श्रीराम-विजय) से भी बहुत अधिक प्रभावित थे। श्रीराम-विजय (रचना काल लगभग १७०३ ई०) और गिरधर रामायण (रचना काल १८३५ ई०) में कथा-सूत्र-क्रम, दृष्टान्त आदि के विषय में आश्चर्यकारी समानता पाई जाती है। यहाँ तक कि राम-विजय में पायी जानेवाली महाराष्ट्र सम्बन्धी प्रादेशिक विशेषताएँ भी गिरधर-रामयण में पायी जाती हैं। कवि वटोदरा (बड़ोदा) रियासत के निवासी थे; बहुत सम्भव है कि वहाँ उन्होंने मराठी भाषा पढ़ी हो या किसी साधु पुरुष की संगति से श्रीराम-विजय का गहराई में उतरकर पठन किया हो। अर्थात् गिरधर-कृत रामायण के मूल स्रोतों का अधिक अवलोकन करना यहाँ समुचित नहीं है। इसलिए जिज्ञासुओं का केवल ध्यान इस बात की ओर आकर्षित करने के हेतु यह विचार प्रस्तुत किया गया है।

मूल स्रोतों की ओर संकेत करने का यह मतलब कदापि नहीं है कि रचनाकार को हम केवल रूपान्तरकार मानना चाहते हैं। हम तो इससे कवि की बहुश्रुतता और अध्ययनशीलता की ओर संकेत करना चाहते हैं। राम, कृष्ण आदि की लीलाओं का गान प्रस्तुत करनेवाला कोई भी कवि अपने पूर्ववर्ती कवियों से कथा-सूत्र चुन ले, इसमें कोई अस्वाभाविकता नहीं है। ऐसा कवि तो मधु-मक्खी जैसा होता है। मधु-मक्खी फूल-फूल से मधु संचित करके अपने निर्मित रस-कोश दूसरों के लिए छोड़ जाती है। क्या हम उसे इसलिए दोष दें कि वह फूल-फूल से मधु इकट्ठा करती है?

आख्यानकार कवि के बारे में ऐसा ही होता है। कवि की महानता इस पर अवलम्बित नहीं है कि उसने कहाँ से और कितनी सामग्री इकट्ठा की है, बल्कि वह इस पर मानी जाए कि उसने उस सामग्री को किस तरह से प्रस्तुत किया है।

सज्जनो, यह अनुवाद आपके हाथों में है। इसमें आपको जो त्रुटियाँ दिखायी देंगी, उनके लिए हम उत्तरदायी हैं। यदि कोई सज्जन ऐसी त्रुटियों को हमें दिखाने की कृपा करें, तो इस ग्रन्थ के आगामी संस्करण में उन्हें रहने नहीं देंगे।

प्रूफ़-संशोधन तथा कुछ शब्दों के अर्थ निर्धारित करने, सन्दर्भ-ग्रन्थ उपलब्ध कर देने में मित्रवर श्री ब० का० विप्रदास (ग्रन्थपाल, राष्ट्रभाषा ग्रन्थालय, महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा, पूना ३०) ने हमारी सहायता की है। हम उनके ऋणी हैं।

हमसे इस अनुवाद को पूर्ण कराने, उसे सुचारु रूप से पुस्तकाकार प्रकाशित करने, हमें प्रोत्साहित करते हुए हमारे उत्साह को बनाये रखने का महत्कार्य पितृ-तुल्य श्री नन्दकुमारजी और बन्धुवर श्री विनयकुमारजी ने किया है। उनके प्रति आभार प्रदर्शित करते हुए क्या हम उनसे ऋण-मुक्त हो सकेंगे ? हम तो यही चाहते हैं कि उनका ऋण हम पर बना रहे—किसी अजनवी की भाँति उस बोझ को उतारकर उनसे हम दूर जाना नहीं चाहते।

बम्बई,
वसन्त पञ्चमी, सम्वत् २०३४
(१२, फरवरी, १९७८)

विनीत
(डॉ०) गजानन नरसिंह साठे
(डॉ०) दीनेश हरिलाल भट्ट

प्रकाशकीय परिशिष्ट

"या देवी सर्वभूतेषु बीजरूपेण संस्थिता,
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः।"

विषय प्रवेश

विश्व-वाङ्मय की अधिष्ठात्री, भगवती वाणी ने १९६९ ई० के उत्तरार्द्ध में 'भुवन वाणी ट्रस्ट' में बीज रूप से प्राण-प्रतिष्ठा की। अकिञ्चन की १९४७ ई० से अनवरत साधना से प्रसन्न वरदायिनी के प्रसाद से ट्रस्ट का बीजारोपण हुआ। विश्व-भाषा-सेतुकरण को आदर्श, और अखिल भारत में व्यवहृत देशी-विदेशी भाषाओं के शाश्वत पुनीत साहित्य के सानुवाद लिप्यन्तरण को तत्कालीन कार्यक्षेत्र मान कर, कर्तव्य-पथ पर अग्रसर हुए। अनेक भाषाओं के विशाल ग्रन्थों का हिन्दी अनुवाद सहित नागरी-लिप्यन्तरण का आरम्भ, और नागरी लिपि में अनुपलब्ध विशिष्ट ध्वनियों का सिर्जन हुआ। इन्हीं ग्रन्थों के धारावाहिक अंशों को प्रकाशित करते हुए १९७० ई० से 'वाणी सरोवर' त्रैमासिक का श्रीगणेश हुआ। उस समय ६४ वर्ष की आयु, पंगु साधन; कामना असीम, किन्तु आशा लरजती। इसी अनिश्चित वातावरण में " पुण्यमही के व्योम में जगे 'साम' के मंत्र " !

यज्ञारम्भ

विविध भाषाई क्षेत्रों से मातृभाषा एवं राष्ट्रभाषा के समानरूपेण विद्वान्, वाणीयज्ञ के अनुष्ठान में हविर्दान हेतु सन्नद्ध हो उठे। उन्हीं उल्लेखनीयों में हैं, हमारी विद्वत् परिषद् के वरिष्ठ सदस्य डॉ० गजानन नरसिह साठे, एम० ए० (मराठी, अंग्रेजी), (हिन्दी) बी० टी०; पीएच्० डी० साहित्यरत्न (जी/२ सहकार निवास, गोखले रोड [दक्षिण] दादर-बंबई-२८)। कहीं 'वाणी सरोवर' का साक्षात् पाकर उन्होंने ट्रस्ट से सम्पर्क स्थापित कर मराठी के श्रीधर कृत 'श्रीरामविजय' और गुजराती के श्री गिरधर कृत 'गिरधर रामायण' के सानुवाद नागरी लिप्यन्तरण का प्रस्ताव रखा। कार्य आरम्भ हुआ। गुजराती में उनके सहयोगी रहे डॉ० दीनेश हरिलाल भट्ट, एम०ए०, पीएच्० डी (८३, शान्तिनिकेतन, डॉ० आम्बेडकर रोड, बंबई—१९)। अन्य ग्रन्थों के समानान्तर, गुजराती श्री गिरधर रामामण वाणीसरोवर में १९७१ ई० से प्रकाशित होने लगा।

प्रकाशकीय परिशिष्ट की आवश्यकता

ये अनेक विशाल ग्रन्थ सम्पूर्ण होकर राष्ट्र के सम्मुख प्रस्तुत हो सकेंगे, अथवा वाणीसरोवर में ही अंशतः पचासों वर्ष तक प्रकाशित होते

रहने के अधर में झूलते रहेंगे, यह अनिश्चित-सा था। अतः प्रस्तुत ग्रन्थ के पृष्ठ १७-१९ पर 'आमुख' रूप में, ग्रन्थ, रचनाकार और अनुवादकद्वय का परिचय पाठकों की तुष्टि के लिए वाणीसरोवर में दिया गया था— न वह अनुवादकीय है, न प्रकाशकीय। अटूट निष्ठा और श्रम के फलस्वरूप आज १४६० पृष्ठों का ग्रन्थ, साकार प्रस्तुत करने का सौभाग्य हुआ है। सुतराम्, कार्यसमापन पर परिशिष्ट रूप में अनुवादकीय (पृ० ७-११) और प्रकाशकीय (पृ० १२-१५) देना समुचित प्रतीत हुआ। पाठक-वृन्द के लिए इनके साथ ही पृ० १७-१९ पर 'आमुख' भी पठनीय है।

जिस प्रकार ग्रन्थ के पूर्णप्रकाशन की अवधि सन्दिग्ध थी, उसी भाँति उसके कलेवर की बात भी; अनुमान दो जिल्दों में प्रस्तुतीकरण का था। २००० प्रतियों का संस्करण मुद्रित हुआ; उसमें लगभग ७०० प्रति 'वाणीसरोवर' में निकल जाने के उपरान्त शेष १३०० को दो खण्डों में विभक्त कर देने पर बहुधा खण्ड-खण्ड के पृथक् निर्यात पर ट्रस्ट को बड़ी क्षति की सम्भावना देखकर एक ही जिल्द में समग्र ग्रन्थ को गुंथित करना उचित प्रतीत हुआ। इस विचार-परिवर्तन के फलस्वरूप प्रथम खण्ड (बालकाण्ड से युद्धकाण्ड पर्यन्त) ९६४ पृष्ठ के बाद द्वितीय खण्ड (उत्तरकाण्ड) की पृष्ठ-संख्या पुनः १ से आरम्भ होकर ४९६ पर समाप्त हुई है। इस अटपटेपन को भी, ट्रस्ट की परिस्थिति को ध्यान में रखकर पाठकगण क्षमाभाव से स्वीकार करें। समग्र ग्रन्थ १४६० पृष्ठों में समाप्त है।

प्रस्तुत ग्रन्थ का श्रेय

'भुवन वाणी ट्रस्ट' तो निमित्त मात्र है। वस्तुतः श्रेय तो रचनाकार मनीषियों और सन्तकवियों को है जिन्होंने जनता के लिए चरित्र-उन्नायक इन दिव्य पावन ग्रन्थों की रचना की। 'गिरधर रामायण' गुजराती के मूल रचयिता, महाकवि गिरधरदास की जीवनी 'आमुख' पृष्ठ १७ पर अवलोकनीय है। श्री गिरधर परमवैष्णव, भक्तिरसामृत से सराबोर महान् कवि हैं। स्वसुखाय स्वान्तःसुखाय, वे, रामचरित्र को धनाश्री, धवल धनाश्री, देशी चालती, आसावरी, मेवाडी, सामेरी, दोहरा, सोरठ, बिलावल, सामेरीनी चाल टूंकड़ी, मारू, मरजियो, काफ़ी, देशाख, वेराडी, घनाक्षरी, सोरठ गरबानी, सारंग, बिहागड़ा, मलार, परज, भैरवी, दोहा, चौपाई, विभास, भुजंगिनी, विलाप, हरिगीतिका, धोलनी देशी, प्रबन्ध, भैरव, सूरती, त्रोटक, भूपाली, विहाग आदि नाना छंद-राग-रागिनियों में जन-समुदाय में भाव-विभोर गाया करते थे। उनका वही भक्तिगान-समुच्चय यह 'गिरधर रामायण' है।

उपरान्त, श्रेय के अधिकारी हैं विद्वान्द्वय—डॉ० गजानन साठे और डॉ० दीनेश भट्ट, जिनकी बदौलत हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण

समग्र भारत के लिए आज उपलब्ध हुआ है। इनका परिचय 'आमुख' पृष्ठ १८ पर भी दिया गया है। डॉ० साठे अनेकभाषाविद् और राष्ट्रभाषा के अहर्निश सेवक हैं। वे न केवल इस ग्रन्थ के रूपान्तरकार वरन् ट्रस्ट के अनेकभाषाई कार्यों के सहायक और व्यवस्थाकार हैं। अब तो वे भुवन वाणी ट्रस्ट के न्यासी-पद को भी संभाले हैं। वे ट्रस्ट के, एवं मेरे घनिष्ट पारिवारिक सदस्य-जैसे हैं। अनुवादक डॉ० दीनेश भट्ट का चित्र पृष्ठ ७ पर दिया है। अनन्य निष्ठा के साथ इतना कार्य कर चुकने के बावजूद अभी तक उनके साक्षात् का मुझे सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ है। उनकी अब तक की कार्यविधा से, उनका सौम्य और राष्ट्रभाषा के प्रति निस्पृह भाव स्पष्ट परिलक्षित है। अनुवादकद्वय इस कार्य-हेतु अनन्त श्रेय के पात्र हैं। अनुवाद में कोष्ठों में शब्द देकर विषय को समझाना, पादटिप्पणी, नाना उद्धरण, और विस्तृत विषयानुक्रमणिका उनके श्रम, योग्यता, और लगन का द्योतक है।

श्रेय के तीसरे पात्र ट्रस्ट के वे कुशल शिल्पी और कारकुन हैं जो श्रमजीवी होते हुए भी ट्रस्ट के कार्य को कुशलता, श्रद्धा और आत्मविस्मृत भाव से निबाहते हैं। यह गौरव और सौभाग्य भुवन वाणी ट्रस्ट के यंत्रालय को ही सुलभ है। कार्यरत इस मण्डल का विस्तृत परिचय उपयुक्त अवसर पर दिया जायगा।

भूमिका—प्रधानमंत्री श्री मुरार जी भाई

यह प्रथम ही अवसर था जब मैंने १५ नवंबर, १९७७ को प्रधानमंत्री महोदय से भेंट का सुअवसर प्राप्त कर, ट्रस्ट के समग्र भाषाई कार्य को उनके सम्मुख प्रस्तुत करते हुए, 'गुजराती गिरधर रामायण' पर भूमिका लिखने की उनसे प्रार्थना की। प्रधानमंत्रि-पद जैसे व्यस्त पद पर आसीन श्री मुरारजी भाई ने ध्यान से सारे कार्यों का अवलोकन किया, सराहा, और तीसरे ही दिन—१७ नवम्बर, १९७७ को भूमिका लिख-भेजने की कृपा की। उनके औदार्य के लिए हम नितांत अनुग्रहीत हैं।

माल्यार्पण—श्री जयप्रकाश बाबू

आचार्य श्री विनोबा भावे, और श्री विचित्र भाई, माननीय गृहमंत्री श्री चौधरी चरणसिंह, श्री डॉ० चेन्ना रेड्डी मुख्यमंत्री आन्ध्रप्रदेश, पं० कमलापति त्रिपाठी जैसे मूर्धन्य सदाशयों का आशीर्वाद और महान् संरक्षण अकिञ्चन और उसके द्वारा स्थापित भुवन वाणी ट्रस्ट को लम्बे अरसे से प्राप्त है।

उसी प्रकार लोकनायक श्रीजयप्रकाश बाबू का भी हम पर दसियों वर्ष से अनुग्रह है। उनकी सतत सहायता हमको प्राप्त है, यह दिव्य ग्रन्थ—

'गुजराती श्री गिरधर रामायण का हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तर' उनको सादर माल्यार्पित कर हम अपने को कृतकृत्य मान रहे हैं।

उद्देश्य-पूर्ति के प्रति दो शब्द

अक्षरों के माध्यम से समस्त भारतीय एवं विश्व के वाङ्मय को एक मञ्च पर लाकर अखिल राष्ट्र को समरस और तादात्म्य प्रदान करते हुए, विश्वबन्धुत्व और विश्वभाषा-सेतुकरण की ओर निरन्तर बढ़ते रहना ट्रस्ट की अहर्निश साधना है। एक भाषा का ग्रन्थ प्रकाशित हो जाते ही, उसी भाषा के अन्य लोकप्रिय सद्ग्रन्थ के सानुवाद लिप्यन्तरण में संलग्न हो जाना, यही ट्रस्ट का कार्यक्रम है। पाठकों और भावात्मक एकता के पुजारियों को सुसमाचार देते हुए हम उल्लास अनुभव करते हैं कि गुजराती भाषा-स्तम्भ में हमारे अगले कार्य—'प्रेमानन्द भजनमाला' और 'आखा' नाम कवीर-जैसी संतवाणी आरम्भ हो चुके हैं।

शासन के प्रति आभार-प्रदर्शन

उदार श्रीमानों तथा उत्तर-प्रदेश शासन से आंशिक सहायता के आधार पर बड़ा सहारा मिलता रहा है। अन्यथा यह पुष्कल कार्य चलाना संभव न होता। सौभाग्य से केन्द्रीय शिक्षा एवं समाज कल्याण मंत्रालय का भी अनुग्रह प्राप्त हुआ। वर्तमान राज्यशिक्षामंत्री श्रीमती रेणुकादेवी बरकटकी ने भी ट्रस्ट का विश्व-भाषा-सेतुकरण-कार्य का अवलोकन किया। उनकी एवं शिक्षा-निदेशक श्री के० के० सेठी महोदय की ट्रस्ट पर सतत अनुकम्पा पूर्ववत् क़ायम है। फलस्वरूप गुजराती का यह पुनीत ग्रन्थ 'गिरधर-रामायण' एक जिल्द में सम्पूर्ण होकर राष्ट्र के सम्मुख अर्पित है। हम केन्द्रीय शासन एवं उ० प्र० शासन के प्रति नितांत आभारी हैं।

अमर भारती सलिला की 'गुजराती' पावन धारा।
पहन नागरी पट, उसने अब भारत-भ्रमण विचारा॥

महाशिवरात्रि
७ मार्च, १९७८ ई०

नन्दकुमार अवस्थी

प्रतिष्ठाता, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ-३

भुवन वाणी ट्रस्ट द्वारा प्रयुक्त

गुजराती वर्णमाला का देवनागरी रूपान्तर

गुजराती - देवनागरी वर्णमाला				
અ अ	આ आ	ઇ इ	ઈ ई	ઉ उ
ઊ ऊ	ઋ ऋ	એ ए	ઐ ऐ	ઓ ओ
	ઔ औ	અં अं	અઃ अः	
ક क	ખ ख	ગ ग	ઘ घ	ઙ ङ
ચ च	છ छ	જ ज	ઝ झ	ઞ ञ
ટ ट	ઠ ठ	ડ ड	ઢ ढ	ણ ण
ત त	થ थ	દ द	ધ ध	ન न
પ प	ફ फ	બ ब	ભ भ	મ म
ય य	ર र	લ ल	વ व	શ श
ષ ष	સ स	હ ह	ળ ळ	ક્ષ क्ष
	ત્ર त्र		જ્ઞ ज्ञ	

गिरधर-कृत रामायण

(गुजराती)

आमुख

गुजराती साहित्य में कृष्ण-कथात्मक काव्य की तुलना में रामकथात्मक काव्य अधिक नही है। जो रामकथात्मक काव्य उपलब्ध है, उसके रचयिताओं में प्रमुख है— विष्णुदास, ध्रुव और गिरधरदास; और उसमें सर्वाधिक लोकप्रिय तथा सर्वश्रेष्ठ रचना है गिरधरदास-कृत रामायण।

श्रीगिरधरदास का जन्म तत्कालीन बड़ोदा राज्य के अन्तर्गत 'मासर' नामक गाँव में सं० १८४३ (ई० १७८५) मे लाड़-वणिक् परिवार में हुआ। उस समय की परिपाटी के अनुसार उनकी शिक्षा-दीक्षा लेखन-पठन और हिसाब-किताब के मामूली ज्ञानार्जन तक सीमित रही। बीस साल की अवस्था में वे बड़ोदा में आकर बस गये। यहीं पर विद्वानों एवं साधु-सत्पुरुषों की संगति में रहकर उन्होंने संस्कृत का अध्ययन और रामायण, महाभारत, पुराण आदि का पठन किया।

श्रीगिरधरदास के पिता गरबड़दासजी पटवारी का काम करते थे। शुरू में कवि ने भी कुछ साल वही काम किया। बाद मे बड़ोदा में आने पर उन्होने अपने बहनोई की सराफी की दूकान की देखभाल करना शुरू किया। कुछ वर्षो तक उन्होने वल्लभी सम्प्रदाय के एक मन्दिर मे भी व्यवस्थापक के नाते काम किया। इन दिनों फुरसत के समय वे पठन-लेखन किया करते थे।

श्रीगिरधरदासजी ने गोस्वामी पुरुषोत्तमदासजी से वल्लभ सम्प्रदाय के अनुसार वैष्णव धर्म की दीक्षा ग्रहण की। उनके गुरु काव्य शास्त्र एवं वेदान्त के ज्ञाता थे। उन दिनों राधावल्लभी सम्प्रदाय के एक आचार्य श्रीरगीलालजी महाराज बड़ोदा में रहते थे। गिरधरदास उनके घनिष्ठ मित्र थे।

श्रीगिरधरदासजी विवाहित थे। उनके इकलौते पुत्र की असमय मृत्यु हुई; कुछ दिनों के अन्दर उनकी पत्नी का भी देहान्त हो गया। साधु-प्रकृति के गिरधरदासजी को अब गार्हस्थ्य जीवन मे कोई लगाव नहीं रहा।

आचार्य रंगीलालजी के साथ गिरधरदासजी ने गोकुल, मथुरा, काशी, जगन्नाथपुरी आदि की यात्रा की। कहते है, लौटते समय वे श्रीनाथजी के दर्शन करना चाहते थे। रगीलालजी से कहा भी, किन्तु उन्होने आनाकानी की। दिन-व-दिन श्रीनाथजी के दर्शन के लिए गिरधरदासजी अधिकाधिक व्याकुल होते गये और एक दिन सं० १९०८ (ई० १८५०) मे उनका ध्यान करते-करते मृत्यु को प्राप्त हुए।

श्रीगिरधरदासजी ने समय-समय पर स्फुट रचना विपुल मात्रा मे की। उन्होंने उपदेशात्मक रूप मे अनेक छप्पय, कुण्डलिया, सवैया आदि छन्दो की रचना की। उनका ग्रन्थ-भण्डार नीचे लिखे अनुसार है—

(१) दाण-लीला, (२) श्रीकृष्ण-जन्म-वर्णन, (३) राधाकृष्णनो रास, (४) प्रह्लाद-चरित्र, (५) ग्रीष्म-ऋतुनी लीला, (६) तुलसी-विवाह, (७) राजसूय-यज्ञ, (८) रामायण, (९) कृष्ण-चरित्र, (१०) जन्माष्टमीनो सोहलो और (११) नृसिह चतुर्दशीनी बधाई।

गिरधरदासजी ने रचनाओ के लिए सामग्री अनेक ग्रन्थो से इकट्ठा की। उस सामग्री को उन्होन योजना-वद्ध रूप मे प्रस्तुत किया है। वे अपनी रचनाएँ गा-गाकर सुनाया करते थे। श्रोताजन उनसे अत्यधिक प्रभावित थे और उनकी रचनाओ को लिख लिया करते थे। इसस कवि के जीवन-काल मे ही उसके ग्रन्थों को वहुत लोक-प्रियता प्राप्त हो गयी।

गिरधरदास की भाषा अत्यन्त प्रौढ़ फिर भी सरल एवं प्रासादिक है। उन्होंने अप्रचलित शब्दों का प्रयोग नही किया है। उनकी भाषा प्रसाद और माधुर्य गुणों से अलकृत है। अपनी रचनाओ मे प्रसगानुकूल रसो का परिपोप करते हुए उन्होने उन्हें हृदयगम्य वनाया है। यद्यपि प्रसगानुसार शृंगार, वीर आदि रसो का परिपोप उन्होने किया है, फिर भी शान्त रस ही उनका प्रिय रस जान पड़ता है।

कहा जा चुका है कि गिरधरदास-कृत रामायण गुजराती का सर्वोत्तम रामकथा-काव्य है। कवि ने इसकी रचना सं० १८९३ (ई० १८३५) मे की। अन्य रामायणों की भाँति गिरधर-कृत रामायण भी सात काण्डो में विभाजित है। प्रत्येक काण्ड में अनेक अध्याय समाविष्ट है–प्रायः एक-एक प्रसग को लेकर एक-एक अध्याय की रचना की गयी है। इस प्रकार कुल अध्याय है २९९ और पक्तियाँ १९ हजार से कुछ अधिक हैं। यह रामायण गेय है, राग-रागिनियों मे लिखा गया है। इसमे धनाश्री, विलावल, मारु, सामेरी, सारग, सोरठ, आसावरी, भैरव आदि राग प्रयुक्त है। कही कही दोहा, चौपाई, घनाक्षरी आदि का भी प्रयोग किया गया है।

गिरधरदासजी ने अपने रामायण के लिए वाल्मीकि रामायण और हनुमन्नाटक से मुख्यतया कथासूत्र चुने है। फिर भी अग्निपुराण, पद्मपुराण आदि से भी उन्होने

यथास्थान कुछ बातें उधार ली है। इस क्षेत्र में वे गोस्वामी तुलसीदास के रामचरित-मानस के भी ऋणी हैं। वहुत सम्भव है, उनके सामने कुछ अन्य-अन्य भाषाओं की कृतियाँ भी रही हों।

गेयता, भाषा की सरलता, रसात्मकता के कारण यह कृति गुजराती-भाषी प्रदेश में वहु-प्रचलित रही है। मानस की भाँति उसका नित्य पठन भी किया जाता है।

* * *

भुवन वाणी ट्रस्ट भारत की विभिन्न भाषाओं की उत्तम कृतियों को नागरी लिपि में मूल ग्रन्थ देते हुए उनका हिन्दी मे अनुवाद प्रस्तुत करता आ रहा है। इस अद्वितीय कार्यक्रम के अन्तर्गत एऴुत्तच्छन कृत महाभारत (मलयाळम), श्री जपुजी तथा सुखमनी साहिब (गुरमुखी), तिरुवल्लर कृत तिरुक्कुरळ (तमिऴ), कृत्तिवास-रामायण (बंगला), वैदेहीश-विळास (ओड़िया), रामविजय (मराठी), माधव कन्दली रामायण (असमिया) आदि अनेक विविध-भाषा-ग्रन्थों का कार्य शुरू हो चुका है। गुजराती गिरधर-रामायण का यह अनुवाद 'अनुवाद-माला' का आगे का पुष्प है। अर्थात् लक्ष्य-पूर्ति की ओर बढ़ाया हुआ यह एक महत्त्वपूर्ण चरण है। लिप्यन्तरण और हिन्दी अनुवाद का कार्य प्रा० डॉ० गजानन नरसिह साठे और प्रा० डॉ० दीनेश हरिलाल भट्ट ने किया है।

डॉ० गजानन साठे हिन्दी, मराठी-अंग्रेजी के एम० ए० है। उन्होंने 'स्वयम्भु कृत पउमचरिउ और तुलसीदास कृत रामचरितमानस का तुलनात्मक अध्ययन' नामक शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत कर बम्बई विश्वविद्यालय से हिन्दी में पीएच्० डी० की उपाधि प्राप्त की है। उनकी मातृभाषा मराठी है, फिर भी वे गुजराती के जानकार हैं। रामकथा उनका प्रिय विषय है। भुवन-वाणी ट्रस्ट के लिए वे मराठी के श्रीधर-कृत रामविजय का अनुवाद भी कर रहे है। अब तक उनके अनेक लेख प्रकाशित हो चुके है। उन्होंने 'मराठी स्वयं शिक्षक' तथा 'राष्ट्रभापा का अध्यापन' नामक पुस्तकों की रचना की है। १९४० से राष्ट्रभापा-प्रचार के कार्य से उनका घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। फिलहाल वे बम्बई के 'पोद्दार कॉलेज ऑफ कॉमर्स एण्ड इकानामिक्स' में हिन्दी के प्राध्यापक तथा हिन्दी-विभागाध्यक्ष है।

प्रा० डॉ० दीनेश हरिलाल भट्ट ने बम्बई विश्वविद्यालय से गुजराती में एम० ए० किया। तदनन्तर 'कवि मूलशंकर मूळानीना नाटको अने तेनो गुजराती रंगभूमिना विकास मा फाळो' नामक शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत कर उन्होंने (गुजराती मे) पीएच्० डी० की उपाधि प्राप्त की। उन्होंने 'पायानो पत्थर', 'मानवी बनिए', 'माफ करजो आ नाटक थशेज' आदि अनेक गुजराती एकांकी तथा रेडिओ रूपक लिखे है। वे राष्ट्रभापा-रत्न है और मराठी के भी जानकार है। आजकल वे बम्बई में स्थित 'रामनारायण रुइया कॉलेज' तथा 'पोद्दार कॉलेज ऑफ कॉमर्स एण्ड इकानामिक्स' में गुजराती के प्राध्यापक है।

श्रीराम-पञ्चायतन

गिरधर-कृत रामायण

बाल काण्ड

अध्याय–१ (वन्दना)

राग धनाश्री

श्रीगुरुपदजुग मंगळरूप जी, सकळ तीरथनुं धाम अनुप जी,
नमुं ते पदने जोडी जुग हाथ जी, सीधे मनोरथ हुं थाउं सनाथ जी ।१।

ढाल

थाउं सनाथ गुरु-कृपाए, पामुं मनोरथ पार,
श्रीपुरुषोत्तम पद-कमळ जुगने, नमुं वारंवार । २ ।
वागीश-वदने हृदयलक्ष्मी, अखंड ज्ञानप्रकाश,
ते नरहरिने हुं नमुं, दुःख-विघ्न थाय विनाश । ३ ।

अध्याय–१ (वन्दना)

श्रीगुरु के दोनों चरण मंगल रूप और सब तीर्थों के अनुपम स्थान हैं । मैं दोनों हाथ जोड़कर उन चरणों का नमन करता हूँ और (चाहता हूँ कि) पूर्णकाम (अर्थात् वह जिसकी कामनाएँ सफल हो चुकी है) एवं सनाथ हो जाऊँ । १ । (चाहता हूँ कि) मै गुरु की कृपा से सनाथ हो जाऊँ और अपने मनोरथों की पूर्णता (सफलता) प्राप्त करूँ । अपने गुरु श्रीपुरुषोत्तमदासजी के दोनों पद-कमलों का वन्दन मैं वार-वार किया करता हूँ । २ । जिसके मुख में वागीश्वरी (सरस्वती) का निवास है, हृदय पर लक्ष्मी विराजमान है और जो ज्ञान का अक्षय प्रकाश है, मैं उस नरहरि का वन्दन करता हूँ, ताकि दुःख एवं विघ्न का विनाश हो जाए । ३ ।

श्री गजानन गणपति मंगळ, सकळ गुणमय रूप,
निर्विघ्न थाये नाम लेतां, अखिल पूज्य अनुप । ४ ।
माता उमिया, पिता शिवजी, सुध बुध सुंदर नार,
बुद्धिदाता शरणत्राता, क्षेम लाभ कुमार । ५ ।
एकदंत उज्ज्वळ पुष्पमाळा, कनक उपवीत अंग,
चतुर्भुज तन सुभग सुन्दर, मुगट कुडळ संग । ६ ।
हे विघ्ननाशक विनायक, तुजने करुं प्रणाम,
तुज कृपाए गाउं पुनित, श्रीरामना गुणग्राम । ७ ।
कमळभू तनया सती, सरस्वतीने लागुं पाय,
हंसवाहनी विमळ वाणी, आप मुजने माय । ८ ।
अनेक कवि आगे थया, ते कृपा तारी जाण,
तुं भारती भगवती देवी, सदा वस मुज वाण । ९ ।
हुं वालक-बुद्धि स्तवुं तुजने, करो वचन पवित्र,
तुज कृपाए सरस्वती माता, गाउं रामचरित्र । १० ।

श्रीगणपति गजानन (गणेशजी) मंगल रूप हैं, सब गुणों के (साकार) रूप हैं। वे सबके लिए अतिशय पूज्य है। उनका नाम लेने पर (मनुष्य) निर्विघ्न हो जाता है। ४। उनकी माता उमा (पार्वती) है, पिता शिवजी है और सिद्धि एवं बुद्धि उनकी सुन्दर स्त्रियाँ है। वे बुद्धि के दाता एव शरणागत के रक्षक है। वे शिव-पार्वती के पुत्र श्रीगणेश जी सवको क्षेम (कुशल) का लाभ कराते है। ५। गणेशजी एकदन्त है, उज्ज्वल पुष्पमाला एवं सुवर्ण का जनेऊ शरीर पर पहने हुए हैं। वे चतुर्भुज है; उनका शरीर मनोहर और सुन्दर है। साथ मे (वे) मुकुट एव कुण्डल (के धारी) है। ६। हे विघ्ननाशक विनायक (गणेश), मैं तुम्हे प्रणाम करता हूँ। तुम्हारी कृपा से मैं श्रीरामजी के पवित्र (उज्ज्वल) गुणो के समूह का गान करता हूँ (करना चाहता हूँ)। ७। मै ब्रह्माजी की साध्वी कन्या सरस्वती के चरणों का वन्दन करता हूँ। हे हसवाहनी, पवित्र वाणी देवी, तुम मेरे लिए माता जैसी हो। ८। इससे पूर्व अनेक कवि हो गये। समझो कि वे तुम्हारी कृपा के ही कारण हुए। हे भारती भगवती देवी, तुम नित्य मेरी वाणी में निवास करो। ९। मैं तो वाल-बुद्धि (बच्चो की-सी अपरिपक्व वुद्धि) से तुम्हारा स्तवन करता हूँ। तुम मेरी उक्तिओं को पवित्र (निर्दोष) वनाओ। हे सरस्वती माता, तुम्हारी कृपा से ही मै रामचरित्र का गान (वर्णन) करता हूँ। १०।

कल्याणमय कैलास-पति, कर्पूर-गौर स्वरूप,
उमा अर्धांगे रह्यां, त्रिलोकना छो भूप । ११ ।
शिरजटामां गंगा विराजे, भस्मलेपन अंग,
मृगचर्म अंबर त्रिशूळधर, तन अलंकार भुजंग । १२ ।
जय भक्तवत्सल जगतगुरु, भयहरण भोळानाथ,
पुरुषोत्तमना प्रिय सखा, हुं नमुं जोडी हाथ । १३ ।
शतकोटी रामायण तणी, जेणे करी वहेंचण सार,
जुग शेष अक्षर ग्रहण कीधा, धर्या कंठमोझार । १४ ।
एवा परम शिवने हुं नमुं, नीलकंठ जेनुं नाम,
तव प्रसादे रघुवीर-जश कहुं, थाय पूरण काम । १५ ।
सहु भगवतीने हुं नमुं, जेने सदा हरिनुं ध्यान,
विचरे मही जग पुनित करवा रहित मच्छर मान । १६ ।
दया क्षमा धृति शांति करुणा, मुदित मन आनंद,
विषय-रहित संतुष्ट आत्मा वृत्ति चैतन्य चंद । १७ ।

कैलास के स्वामी श्रीशिवजी कल्याण रूप है, उनका रूप (वर्ण) कर्पूर-गौर है (कपूर के समान शुभ्र है) । उनके अर्धांग में उमाजी रहती है— ऐसे हे शिवजी, तुम त्रिभुवन के (राजा) स्वामी हो । ११ । उन (शिवजी) के मस्तक पर जटाओं में गंगा विराजमान है; उनका अंग भस्म का लेपन किया हुआ है । मृगछाला उनका वस्त्र है । वे त्रिशूल के धारी हैं । उनके शरीर पर सर्प रूपी आभूषण (शोभायमान) है । १२ । भक्तवत्सल जगद्गुरु तथा भय के नाश-कर्ता भोलानाथ (शिवजी) की जय हो । हे पुरुषोत्तम राम के प्रिय सखा, हाथ जोड़कर मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ । १३ । शतकोटि सुन्दर रामायण को जिन्होंने बाँट दिया, उन्हीं शिवजी ने शेष रहे (राम इन) दो अक्षरों को ग्रहण करके अपने कण्ठ में रक्खा । १४ । ऐसे उन परमश्रेष्ठ शिवजी को, जिनका नाम नीलकण्ठ है, मैं नमस्कार करता हूँ । हे शिवजी, (मैं चाहता हूँ कि) तुम्हारी कृपा से मैं रघुवीर राम के यश का वर्णन करूँ और पूर्णकाम हो जाऊँ ।१५। जो नित्य श्रीहरि (श्रीराम) का ध्यान करती है उन भगवती उमा का नमन मैं साथ ही में करता हूँ । १५½ । सन्त पुरुष जगत् को पवित्र करने के लिए मत्सर और मान का त्याग कर विचरण करते हैं । १६ । वे सन्त दया, क्षमा, धृति (धीरज), शान्ति, करुणा के धारी हैं । उनका मन आनन्द से प्रमुदित (रहता) है । उनमें विषय-वासनाओं का अभाव है; उनकी आत्मा (नित्य) सन्तुष्ट रहती है । उनकी वृत्ति मानो चैतन्य की

एवा संतना पद तणी रज हुं लेई चढ़ावुं शीश,
अवलोकन कर जो कृपादृष्टे, गाउं गुण जगदीश । १८ ।
मा'नुभाव सज्जन संत सरवे क्षमा करजो दोष,
प्राकृत वाणी सांभळी, मन लावशो नहि रोष । १९ ।
जेम पय-अब्धि ने तक्र अर्पण, बद्री-फळ सुररूख,
अमृतने शर्करा अरपण, विधिने भूतळ सुख । २० ।
कुवेर आगळ कोडी ज्यम, सुरभि अजानुं क्षीर,
मलयाचलने निब-काष्ठे, चंद्रशीत समीर । २१ ।
ज्यम सूरज सामो दीपक करीए, मानी ले छे तेह,
एम मोटा ते जे मानी ले, रंकनुं आप्युं जेह । २२ ।
प्राकृत वाणी करुं अर्पण, रसहीन होये काव्य,
ते पूर्ण करीने मानजो, सहु संत मा'नुभाव । २३ ।
हुं वालक उपर दया करजो, साधु पुण्य पवित्र,
अल्पमतिए आदर्युं छे, गावा राम-चरित्र । २४ ।

चन्द्रकला ही है। १७। मैं ऐसे सन्तों के चरणों की धूली अपने मस्तक पर चढ़ा लेता हूँ। (हे सन्तो,) तुम (मेरी ओर) कृपा दृष्टि से देखो। मैं जगदीश्वर श्रीराम का गुणगान करता (करना चाहता) हूँ। १८। सब महापुरुष सज्जन सन्तो, मेरे दोषों को क्षमा करो। मेरी इस प्राकृत वाणी (भाषा) को सुनकर मन में रोष मत करो (इसे बुरा न मानो)। मेरे द्वारा प्राकृत (जन भाषा) में रामचरित्र का वर्णन करना मानो, क्षीर-समुद्र को (किसी द्वारा) छाछ अर्पण करना, कल्प वृक्ष को वेर का फल देना, अमृत को शक्कर समर्पित करना, विधाता को पृथ्वी पर के भौतिक सुख प्रदान करना, कुबेर के सामने कौड़ी रखना, कामधेनु सुरभि को वकरी का दूध देना, (चन्दन के निवास-स्थान) मलय पर्वत को नीम के वृक्ष की लकड़ी समर्पित करना तथा चाँदनी की शीतलता को (गर्म मानकर उसे ठण्डक पहुँचाने के लिए) हवा करना—जैसा है। १९-२१। जैसे कोई मनुष्य सूर्य के सामने दीपक रक्खे, तो वह (सूर्य) उसे स्वीकार करता है; उसी तरह वह लोग वड़े है, जो रंक (दरिद्र) का दिया हुआ (तुच्छ पदार्थ) भी स्वीकार कर लेते है। २२। हे सभी महान सन्तो, मैं प्राकृत (देशी जनभाषा) में लिखित यह काव्य तुमको समर्पित करता हूँ। (सम्भव है,) यह (काव्य) रसहीन ही हो। फिर भी, उसे पूर्ण (दोष-रहित) मानकर स्वीकार करो। २३। हे पुण्य पवित्र चरित्र-वाले साधुओ, मुझ वालक पर दया करो। (अव) यह अल्प-बुद्धि (छोटी-अर्थात् अपरिपक्व-बुद्धि

वलण

गावा राम-चरित्र पावन, इच्छा मनमांहे धरी,
कर जोडी कहे दास गिरधर,श्रोताजन बोलो श्रीहरि । २५ ।

वाला) मैं राम के चरित्र का गान आरम्भ करता हूँ । २४ । मैंने श्रीराम के पावन चरित्र का गान करने की इच्छा मन में रक्खी है । हे श्रोताओ, (यह) गिरधरदास हाथ जोड़कर तुमसे 'श्रीहरि' बोलने की विनती कर रहा है । २५ ।

* * *

अध्याय–२ (रामायण-रचना)

राग देशी चालती

क्षीर-निधि-शरणे क्षुधा नव पीडे जी,
रवि संगे रहेतां तिमिर नव भीडे जी;
सुरतरु शरणे न कल्पना बांधे जी,
हुताशन संगे शीत नव वाधे जी । १ ।

ढाल

नव शीत वाधे अग्नि संगे, सुधापाने विष जथा,
नव खाय जांबुक सिंहशरणे, चिंतामणिथी धन व्यथा । २ ।
एम रामकथानो आश्रित जन तेने, विघ्न बाधा नव करे
विषय-पाश विमुक्त थईने, भवसागर सेजे तरे । ३ ।

अध्याय–२ (रामायण-रचना)

क्षीरसागर की शरण में (रहनेवाले को) भूख पीड़ा नहीं पहुँचाती । सूर्य की संगति में रहने पर अँधेरा (किसी से भी) नहीं भिड़ता । कल्प-वृक्ष के आश्रय में रहनेवाले को,(किसी पदार्थ के अभाव की) कल्पना बाधा नहीं पहुँचाती । अग्नि के साथ (पास) रहने पर ठण्ड नहीं सताती । १ । जिस प्रकार अग्नि के साथ (पास) रहनेवाले को ठण्ड बाधा नहीं पहुँचाती, अमृत का पान करने से विष वाधा नहीं पहुँचाता, सिंह की शरण में रहनेवाले को सियार नहीं खाता, चिन्तामणि पास होने पर धन (के अभाव की) व्यथा नहीं हो सकती. उसी प्रकार जो मनुष्य रामकथा का आश्रित है (अर्थात् जिसे रामकथा के प्रति अत्यधिक श्रद्धा है और जिसका ध्यान उसी के प्रति लगा हुआ रहता है) उसे विघ्न (संकट) बाधा नहीं पहुँचा सकता । विषय (वासनाओं के) पाश से मुक्त होकर वह भवसागर को आसानी से (शय्या पर लेटे-लेटे) ही तैरकर पार करता है । २-३

हरिकथानो महिमा मोटो, संत जाणे छे घणा,
आदि कवि जे मुनि वाल्मिक, कर्ता रामायण तणा । ४ ।
वाल्मीकि रामायण प्रथम वळी व्यासे रामायण करी,
वसिष्ठ रामायण तथा, शुकदेव रामायण खरी । ५ ।
वळी ब्रह्म-रामायण करी, भणावी नारदने तथा,
अंजनी-पुत्रे करी छे, हनुमान-नाटकनी कथा । ६ ।
विभीषणे रामायण करी, शंभु-कृत अभिराम छे,
पार्वतीने भणावी तेनुं, शिव-रामायण नाम छे । ७ ।
अगस्त्य मुनिए करी छे ते, अगस्त्य-रामायण जथा,
अनंत विरचित छे वळी, ते शेष-रामायण कथा । ८ ।
वळी सर्व मुनिए मळीने, अध्यात्म-रामायण करी,
कूर्म-पुराणे वर्णवी ते कूर्म-रामायण खरी । ९ ।
एक आगम-रामायण पुनीत छे, भरथ रामायण वळी
स्वामी कार्तिके करी ते, स्कंध-रामायण भली । १० ।
पौलस्त्ये रामायण करी, कालिका-खण्डे वर्णवी,
रवि-अरुण-संवाद छे ते, अरुण-रामायण हवी । ११ ।

सभी सन्त जानते है कि हरिकथा की महिमा बड़ी है। जो वाल्मीकि ऋषि आदि कवि (माने जाते) हैं, वे रामायण के कर्ता (लेखक) हैं। ४। (अतः) वाल्मीकि-रामायण पहला रामायण है। तदनन्तर व्यास ने रामायण की रचना की। वैसे ही वसिष्ठ (कृत) रामायण और शुकदेव (कृत) रामायण अच्छे है। ५। तत्पश्चात् ब्रह्मा ने रामायण की रचना की और वह नारद मुनि को (पढ़ाया) सुनाया। अंजनी के पुत्र हनुमान ने हनुमन्नाटक नामक रामकथा तैयार की है। ६। विभीषण ने विभीषण-रामायण रचा। शिवजी कृत रामायण सुन्दर है; उसे उन्होंने पार्वती को सुनाया। उसका नाम शिव-रामायण है। ७। जो (रामायण) अगस्त्य ऋषि ने रचा है, वह (जैसे) अगस्त्य-रामायण (कहाता) है, वैसे ही पश्चात् शेषनाग द्वारा जो विरचित है, वह शेष-रामायण नामक कथा (कहाती) है। ८। तदनन्तर सब ऋषिओं ने मिलकर अध्यात्म-रामायण तैयार किया। जो रामायण कूर्म पुराण में वर्णित है, वह वस्तुतः कूर्म-रामायण (कहाता) है। ९। एक आगम नामक रामायण पवित्र है। तत्पश्चात् (आता) है भरत-रामायण। कार्तिक स्वामी ने जिसे तैयार किया, वह स्कन्ध-रामायण सुन्दर है। १०। पौलस्त्य ने जो रामायण रचा, वह कालिका-खण्ड में वर्णित है। सूर्य और अरुण के संवाद के रूप

पद्म-पुराणे प्रसिद्ध कहावे, पद्म रामायण नाम छे,
बगदाल्व ऋषिए करी छे, आश्चर्यपूरण काम छे । १२ ।
वळी धर्मराजाए करी, ते धर्म-रामायण खरी,
एम अनेक कवि आगे थया, तेणे रामायण घणी विस्तरी । १३ ।
अपार गुण रघुवीर तणा, ते पार को पामे नहि,
बुद्धिना अनुसार प्रमाणे, वर्णवी कविए कही । १४ ।
भूमि रजकण, गगन तारा, बिंदु घन जाए गण्या,
पण माप-संख्या थाय नहिं, छे अपार गुण रघुवीर तणा । १५
सुधा जळसिंधु भर्यो ते, कहो केम पिवाय ?
एक चंचु जळथी तृषा वामे, पक्षी सुखियो थाय । १६ ।
एम करुं आदर अल्प बुद्धे, कहेवा रामकथाय,
अंतरजामी कृपा करजो, ग्रंथ पूरण थाय । १७ ।
सहु कविने पाये नमुं, कर जोडी मागुं मान,
बाळक जाणी दया आणी, देजो हरिगुणदान । १८ ।

में जो रामायण (उपलब्ध) है, वह अब अरुण-रामायण (कहलाता) है । ११ । पद्म पुराण के अन्तर्गत जो प्रसिद्ध रामायण कहा जाता है, उसका नाम पद्म-रामायण है । बगदाल्व ऋषि ने जो (रामायण) तैयार किया, वह आश्चर्यपूर्ण कार्य है । १२ । तदनन्तर धर्मराज ने जो रचा, वह धर्म-रामायण अच्छा है । इस प्रकार पूर्वकाल में अनेक कवि हो गये । उन्होंने रामकथा का बहुत विस्तार किया । १३ । रघुवीर राम के गुण अपार (अथाह) है । उसका पार कोई नहीं पा सकता । (इसलिए अपनी-अपनी) बुद्धि के अनुसार प्रमाण मानकर कविओं ने वर्णन कर कहा है । १४ । भूमि के धूलि-कण, आकाश के तारे, बादल से गिरनेवाले जल-कण गिनाये जा सकते है । पर मापने (गिनने) के लिए (ऐसी) कोई संख्या ही नहीं है, जिससे रघुवीर राम के गुण नापे या गिनायें जा सकेंगे—इतने अनन्त है रघुवीर राम के गुण । १५ । अमृत समुद्र में भरा हो तो कहो, उसे कैसे पिया जाए ? एक चोंच भर जल से ही प्यास कम होती है (बुझती है) और पक्षी सुखी हो जाता है । १६ । इस प्रकार मैं अपनी अल्प बुद्धि के अनुसार रामकथा कहना आरम्भ कर रहा हूँ । अन्तर्यामी भगवान् कृपा करे और यह ग्रन्थ पूर्ण हो जाए । १७ । सब कवियों के चरणों का नमन कर, मैं हाथ जोड़कर (उनसे) विशेष सद्भाव की याचना करता हूँ कि मुझे बालक समझकर (मुझपर) दया करो और हरि के गुणों का—उन्हें समझने की योग्यता का—दान दो । १८ । हरिनाम

हरिनामनो महिमा घणो, महापतित पावन थाय,
वाल्मीक मुनि मोटा थया ते, नामनो महिमाय । १९ ।
पूर्वे वाल्मीक व्याध करमे, हता अधम अपार,
ते नारदना उपदेशथी, जप्युं रामनामज सार । २० ।
ए रामनाम प्रतापथी, पाम्या ले पद अभिराम,
सहु कविमां मोटा थया, आदि कवि जेनुं नाम । २१ ।
शतकोटी रामायण करी, वाल्मीक मुनिए सार,
त्रिलोकमां वहेंची करी, आपी तदा त्रिपुरार । २२ ।
ते मांहेथी बे अंक लीधा, शिवे तेणी वार,
कंठ माहे लेई मूक्या, रामनाम ज सार । २३ ।
विषपान महादेवे कर्युं, त्यारे थई अग्नि अपार,
सहु अंग दाझे विषथकी, दुखिया थया त्रिपुरार । २४ ।
ललाट धरियो चंद्रमा, शीतळ थवाने अंग,
भस्म शीतळ अंग अर्ची, शीश उपर गंग । २५
शीतळ हिमाचळ तणी, कन्या ते परण्या सार,
नाग वींट्या तन विषे करवा ते विषेनो आहार । २६ ।

की महिमा बड़ी है। (उससे) महापापी भी पवित्र हो जाता है। राम-नाम से वाल्मीकि ऋषि महान् हो गये—यह (राम) नाम की ही महिमा है। १९। पूर्वकाल में वाल्मीकि व्याध (आखेटक) का काम करते थे। वे अतीव अधम (नीच) थे। उन्होंने नारद के उपदेश से सुन्दर रामनाम का ही जप किया। २०। उस रामनाम के प्रताप से उन्होंने सुन्दर पद को प्राप्त किया। (इससे ही,) जिनका नाम आदि कवि है, वे वाल्मीकि सब कवियों में बड़े हो गये। २१। वाल्मीकि ऋषि ने शतकोटि (सौ करोड़) सुन्दर रामायणों की रचना की, तब त्रिपुरारि भगवान शिवजी ने तीनों लोकों (स्वर्ग, मृत्यु और पाताल) में उसका बँटवारा कर दिया।२२। उस समय शिवजी ने उनमें से रा, म—ये दो अक्षर (अपने लिए) लिये और यह सुन्दर रामनाम अपने कंठ में ले रक्खा (धारण कर रक्खा)। २३। महादेव (शिवजी) ने विष पी लिया (था)। उससे (उनके शरीर में) अपार जलन (उत्पन्न) हो गयी। सारे अंग विष (की आग) से झुलस गये। (उससे) त्रिपुरारि शिवजी दुःखी हो गये। २४। अंग को शीतल करने के लिए उन्होंने ललाट पर चन्द्रमा को धारण किया; अग में ठण्डे भस्म का लेपन किया; मस्तक के ऊपर गंगा को रक्खा; शीतल हिमालय की सुन्दर पुत्री (उमा) से विवाह किया; अंग में नागों को लपेट कर

गज-चर्म शीतळ करी सज्यां, अन्य विधि उपचार,
पण अंग शीतळ नव थयुं, विष तणो अग्नि अपार । २७ ।
पछी नीलकंठे कंठमां बे अंक मूक्या सार,
रामनाम प्रतापथी, शीतळ थया तेणी वार । २८ ।
ए नामनो महिमा घणो, महा अधम थाय पवित्र,
वाल्मीके महिमा वर्णव्यो, शतकोटी रामचरित्र । २९ ।
याज्ञवल्क्यने भणावी, करुणा करी मुनिराय,
ते भारद्वाज प्रत्ये कही, विस्तारी रामकथाय । ३० ।
ते देववाणी संस्कृते, वाल्मीक मुनिनां वचन,
ते समजवा प्राकृत करुं, पदबंध अर्थरतन । ३१ ।
हनुमान-नाटकनी कथा; अद्भुत रचना जेह,
जुगम संमत मेळवीने, ग्रंथ कीधो अेह । ३२ ।

वलण

ए ग्रंथ नाटक तणो संमत, वाल्मीकि पुण्य पवित्र रे,
श्रोताजन सावधान थईने, सुणजो रामचरित्र रे । ३३ ।

* * *

उनसे उस विष का आहार कराया; गजचर्म शीतल करके पहन लिये; अनेक प्रकार से उपचार किया; लेकिन उनसे शिवजी का बदन शीतलता को प्राप्त नहीं हुआ। उस विष की आग (दाहकता) ऐसी अपार थी। २५-२७। तदनन्तर शिवजी ने 'राम' ये दो सुन्दर अक्षर अपने कण्ठ में छोड़ (धर) रक्खे। रामनाम के प्रताप से उसी समय (तत्काल) वे शीतलता को प्राप्त हो गये। २८। इस नाम की महिमा बड़ी है। उससे महा अधम (व्यक्ति) भी पवित्र हो जाता है। वाल्मीकि ने सौ करोड़ रामायणों (रामचरित्रों) की रचना करते हुए उस महिमा का वर्णन किया। २९। ऋषिराज (वाल्मीकि) ने दया करके याज्ञवल्क्य को (वह कथा) सुनायी। उसी (रामकथा) का विस्तार करते हुए याज्ञवल्क्य ने (वह कथा) भारद्वाज को सुनायी। ३०। वाल्मीकि ऋषि के वे वचन देववाणी संस्कृत में है। उनके रत्न के समान (मूल्यवान्) अर्थ को समझाने के हेतु मैं प्राकृत (जनभाषा) में उन्हें पद-बद्ध कर रहा हूँ। ३१। हनुमान् नाटक की कथा अद्भुत रचना है। इन दोनों को मिलाकर मैंने यह ग्रन्थ (तैयार) किया। ३२।

यह ग्रंथ वाल्मीकि के पुण्य पवित्र नाटक से सम्मत है। हे श्रोताजनो, सावधान होकर (इस) रामचरित्र का श्रवण करो। ३३।

* * *

अध्याय–३ (कुबेर-रावणादिक-उत्पत्ति)

राग आशावरी

श्री रामकथा विस्तार घणो छे, पावन पुण्य पवित्र,
हवे रावणनी उत्पत्ति कहुं जेने अर्थे रामचरित्र । १ ।
वैकुंठवासी द्वारपाळ ते, जय-विजय कहीए त्यांहे,
सनकादिकने शापे करीने, पडिया भूतळमांहे । २ ।
तेनो अनुग्रह करवा हरिए लीधा छे अवतार,
त्रैण जन्म मुकावी वळता, कीधा अंगीकार । ३ ।
पहेले जन्मे प्रगटचा बंन्यो, असुर महा बळवान,
हिरण्यकश्यपु हिरण्याक्ष नामे, बळ-गुण-रूप समान । ४ ।
वराह नरहरि रूप धरीने, मार्या बंन्यो वीर,
भक्त तणुं प्रतिपालन कीधुं धर्म धोरींधर धीर । ५ ।
हवे बीजे जन्मे प्रगटचा रावण, कुंभकरण अभिधान,
मूळ थकी उत्पत्ति कहुं छुं सुणजो थई सावधान । ६ ।
ब्रह्माथी पौलस्त्य थया ऋषि, मा'नुभाव महंत,
सूरजवत् तेजस्वी जाणे, चार वेदनो अंत । ७ ।

अध्याय–३ (रावण-कुबेरादिक-उत्पत्ति)

पावन पुण्य पवित्र श्रीरामकथा का विस्तार बड़ा है। जिसके कारण राम का चरित्र (सम्पन्न) हो गया, उस रावण की उत्पत्ति (की कथा) मैं अभी कहता हूँ। १। वैकुण्ठवासी भगवान् विष्णु के दो द्वारपाल थे— (हम) उन्हें जय और विजय कहते है। सनकादिक (नामक मुनि) के शाप के कारण वे भू-मण्डल पर (आ) पड़े। २। उनपर अनुग्रह करने के लिए श्रीहरि ने अवतार ग्रहण किये है। उनके तीन जन्म लेने और अच्छी दशा को प्राप्त होने पर भगवान् ने उनका (पुनश्च) अंगीकार किया। ३। प्रथम जन्म में (वे) दोनों महा वलशाली असुरो के रूप में प्रकट हो गये। हिरण्यकश्यपु तथा हिरण्याक्ष नामक वे दोनों (असुर) वल, गुण और रूप मे समान थे। ४। भगवान् ने वराह और नरसिंह के रूप धारण करके उन (क्रमशः हिरण्याक्ष और हिरण्यकश्यपु) दोनों वीरों को मार डाला। और धर्म-धुरन्धर एवं धैर्यशाली भगवान् ने भक्तों का प्रतिपालन किया। ५। अव दूसरे जन्म में वे दोनों रावण और कुम्भकर्ण नाम से प्रकट हो गये। मै आरम्भ से उनकी उत्पत्ति (जन्म) की कथा कहता हूँ। सावधान होकर उसे सुनो। ६। ब्रह्माजी से

त्रणबिंदु एक देवनी कन्या, पौलस्त्य परण्यो तेह,
विश्वश्रवा तेनो पुत्र थयो, महात्रिकाळज्ञानी जेह । ८ ।
ऋषि भारद्वाजनी कन्या सुन्दर महामति जेनुं नाम,
विश्वश्रवा ते परण्या पोते, साधवी पूरणकाम । ९ ।
कुबेरभंडारी प्रगट्या तेना, महामतिना ए तन,
तेणे ब्रह्मानुं आराधन कीधुं वर्त्यो निर्मळ मन । १० ।
त्यारे प्रसन्न थईने प्रजापति बोल्या, 'माग्य पुत्र वरदान',
कुबेर कहे 'आपो मने सुंदर, वसवा केरुं स्थान' । ११ ।
विधिए पूर्वे लंका निर्मी, सागर बेट मोझार,
ते नगरीमां दानव रहेता, बळिया जोध अपार । १२ ।
पछी देवे जुद्ध करीने काढया, असुर गया पाताळ,
कुबेरने ते लंका आपी, ब्रह्माए तत्काळ । १३ ।
ते लंका केरुं राज्यज करतो, कुबेर पूरणकाम,
वैमान एक विधिए आप्युं पुष्पक जेनुं नाम । १४ ।
हवे दैत्य सुमाली नामे रहे छे, पाताळमां निरधार,
तेणे कुबेर राज्य करतां दीठो, लंकापुर मोझार । १५ ।

पौलस्त्य (नामक) महानुभाव महान् ऋषि (उत्पन्न) हो गये। उन्हें सूर्य के समान तेजस्वी समझो। वे चारों वेदों के अन्त ही (जान चुके) थे—अर्थात् चारों वेदों में पारंगत थे । ७ । पौलस्त्य ने तृणविन्दु नामक एक देव की कन्या से विवाह किया। उससे उनके महा त्रिकालज्ञानी विश्वश्रवा (नामक) पुत्र (उत्पन्न) हो गया । ८ । भारद्वाज ऋषि के एक सुन्दर कन्या थी, जिसका नाम महामति था। विश्वश्रवा ने स्वयं उससे विवाह किया। वह कन्या साध्वी और पूर्णकाम थी । ९ । उसी महामति के शरीर (अर्थात् गर्भ) से कुबेर प्रकट हो गये। उन्होंने निर्मल मन से आचरण किया तथा ब्रह्माजी की आराधना की । १० । उससे प्रसन्न हो ब्रह्मा ने कहा—'पुत्र, वरदान माँगो'। तो कुबेर ने कहा—'मुझे निवास करने के लिए सुन्दर स्थान दो'। ११ । विधाता ने पूर्वकाल में सागर के मध्य में टापू के रूप में लंका का निर्माण किया (था)। उस नगरी में दानव रहते थे, जो बहुत बडे बलवान योद्धा थे । १२ । अनन्तर देवों ने युद्ध करके असुरों को (वहाँ से) हटाया, तो वे (असुर रहने के लिए) पाताल (में चले) गये। तत्काल ब्रह्माजी ने वह लंका कुबेर को प्रदान की । १३ । कुबेर लंका में ही राज्य करता था, वह पूर्णकाम था। विधाता ने उसे एक विमान दिया, जिसका नाम पुष्पक था । १४ । अब

तेणे मनमां वात विचारी, कपट करुं निर्वाण,
पुत्री पोतानी एक हती ते, कैकशी नामे जाण । १६ ।
सुमाली कन्या लेईने आव्यो, धरी विप्रनो वेष,
विश्वश्रवाने ते परणावी, राखी मनमां द्वेष । १७ ।
जाण्युं एना उदरथी पुत्र, थाय असुर बळवान,
ते पक्षे करीने लंका पाछी, आवे हाथ निदान । १८ ।
एवुं विचारी कपट करीने, परणावी कन्याय,
पछी सुमाली पाताळ गयो, तेने हइडे हरख ना माय । १९ ।
पछे दिवस केटला एक समे त्यां, दिनकर पाम्यो अस्त,
त्यारे संध्या करवा मुनिवर पोते, बेठा थईने स्वस्थ । २० ।
तेणे समे त्यां आसुरी आवी, विनवियो भरथार,
ऋतुदान आपो मुने स्वामी, हुं छुं साधवी नार । २१ ।
त्यारे विश्वश्रवा कहे, 'सांभळ वनिता, अघटित कर्म न थाय,
आ बेळा जो भोग करे तो, दंपती नर्क पळाय । २२ ।
संध्याकाळ-निशा दिनसंधि, बे घटिकानुं मान,
घोर समो वीत्या पछी तुजने, आपीश हुं ऋतुदान' । २३ ।

(बात यह है कि) पाताल में सुमाली नामक दैत्य निश्चयपूर्वक रहता था। उसने लंकापुरी मे कुबेर को राज्य करते देखा । १५ । उसने मन में (यह) बात सोची कि मैं भयंकर कपट करूँगा । उसके अपनी एक कन्या थी, उसका नाम कैकसी समझो । १६ । ब्राह्मण का वेश धारण करके सुमाली कन्या को लेकर (विश्वश्रवा के पास) आ गया और मन में द्वेष भाव रखते हुए उसने उसका विश्वश्रवा से विवाह कर दिया । १७ । उसने माना कि उसके उदर (गर्भ) से बलवान असुर पुत्र उत्पन्न हो जाएगा । उसका पक्ष लेने पर लंका अन्त में पुनः अपने हाथ आएगी । १८ । ऐसा सोचकर उसने कपट करके कन्या का विवाह कर दिया । तत्पश्चात् सुमाली पाताल में गया । उसके हृदय में आनन्द नहीं समाता था । १९ । अनन्तर कई-एक दिन बीत जाने पर (एक दिन जब) सूर्य का अस्त हो गया, तो मुनि विश्वश्रवा स्वस्थ हो स्वयं संध्या करने बैठे । २० । उस समय वहाँ (वह) असुरी (राक्षसी) आयी (और) उसने (अपने) पति से विनती की—' हे स्वामी, मुझे ऋतुदान दो; मैं साध्वी नारी हूँ ' । २१ । तब विश्वश्रवा ने स्त्री की बात सुनकर कहा—'यह अघटित (अर्थात् अभूतपूर्व अतएव अनुचित) कर्म न हो । इस वक्त जो भोग करते है, वे पति-पत्नी नरक मे जाते है । २२ । संध्याकाल की—रात और दिन के

त्यारे अबळा आडी थईने ऊभी, कंथतणो कर झाली,
मुनिवरने त्यां मोह पमाडी, मंदिरमां लई चाली । २४ ।
भयंकर वेळा भोग कर्यो ते, गर्भ रह्या निर्वाण,
भावि पदारथ भूले नहि, एम पंडित कहे जे वाण । २५ ।
पछे पूरे दिवसे प्रगट थया, बे पुत्र महा बळवान,
आसुरी उदरथकी तेवा, ब्रह्मराक्षस प्रेत समान । २६ ।
प्रथमे प्रसव हवो ते पुत्रनुं, रावण धरियुं नाम,
कुंभकर्ण ते पूंठे आव्यो, पापी अघनुं धाम । २७ ।
जन्म्या पछी अति प्रौढ थया, तेनी काया जाज्वल्यमान,
रूप भयंकर राक्षस मोटा, प्रल्लेकाळ समान । २८ ।
कुंभकर्ण प्रगट्यो ते जाणे, करशे विश्वनो आहार,
मुख फाडीने रुदन कर्युं त्यारे, वरत्यो हाहाकार । २९ ।
त्यार पछी बे पुत्री थई, शूर्पणखा ताडिका नाम,
पापणीओ ते बंने प्रगटी, करती हिंसा काम । ३० ।
कैकशी मनमां कष्टज पामी, प्रजा भयंकर जाणी,
त्यारे कर जोडीने मुनिवर प्रत्ये, दीन थई कहे वाणी । ३१ ।

संध्याकाल की—रात और दिन के सन्धिकाल की—दो घड़ियों (प्रमाण) का यह घोर समय बीत जाने के बाद मैं तुझे ऋतुदान दूँगा' । २३ । तब बाधा रूप खड़ी होकर उस स्त्री ने अपने पति का हाथ पकड़ लिया । वहाँ उसने मुनिवर को मोह में डाल लिया और वह उन्हें लेकर मन्दिर में चली गयी । २४ उन्होंने उस भयंकर वेला में भोग किया; आखिर गर्भ रहा । पण्डितों ने ऐसी बात जो कही है—होनी (बात) नहीं टलती । २५ । बाद में पूर्ण दिवस होने पर उस राक्षसी के गर्भ से दो बलवान पुत्र उत्पन्न हो गये—वे (दोनों) ब्रह्म-राक्षस प्रेतों के समान थे । २६ । जिस पुत्र का जन्म पहले हुआ, उसका नाम रावण रक्खा, कुम्भकर्ण पीछे से (तदनन्तर) जन्मा । वह पापी पाप का घर ही था । २७ । जन्म के पश्चात् वे अति प्रौढ़ हो गये । उनके शरीर जाज्वल्यमान थे । उनका रूप भयंकर था; वे बड़े राक्षस प्रलय-काल के समान थे । २८ । जब कुम्भकर्ण प्रकट हुआ, तो जान पड़ा कि (यह) विश्व का आहार करेगा । (जब) उसने मुँह बाये रुदन किया, तो हाहाकार मचा । २९ । उसके बाद शूर्पणखा और ताड़का नामक दो पुत्रियाँ हुई । वे दोनों पापिनियाँ ही प्रकट हो गयीं । वे हिंसाकर्म करती थीं । ३० । अपनी सन्तान को भयंकर जानकर कैकसी को मन में कष्ट (दुःख) हुआ, तो हाथ जोड़कर, दीन होकर उसने मुनिवर विश्वश्रवा

'तमोगुणी आ संतति स्वामी, करशे कुळनो नाश,
माटे सात्त्विक सुत आपो मुजने, तो पहोंचे मननी आश' । ३२ ।
ऋतुदान आप्युं अवळाने शुभ वेळा जोई तेह,
तेहथकी पुत्र विभीषण प्रगट्यो, भक्त-शिरोमणि जेह । ३३ ।
एम बे तनया ने त्रण पुत्र, ते प्रगट थया निर्वाण,
थोडा दिवसमां वृद्धि पाम्या, राक्षस वळिया जाण । ३४ ।
त्रणे बांधव तप करवाने, चाल्या तेणी वार,
गोकर्ण तीर्थमां रावणे, आराध्या त्रिपुरार । ३५ ।
मंद्राचळ गिरि उपर वेठो, कुंभकरण वळवंत,
ब्रह्मानुं तप मांड्युं तेणे, करतो कष्ट अनंत । ३६ ।
विभीषणे विष्णु आराध्या, सात्त्विक धरतो ध्यान,
एम त्रणे बांधव त्रणे देवने, भजता भाव समान । ३७ ।

वलण (तर्ज़ वदल कर)

एम भजता भावे त्रणे बांधव, अपूर्व तपमहिमाय रे,
कहे दास गिरधर ते जे वर पाम्या, तेनी कहुं कथाय रे । ३८ ।

* * *

से यह वचन कहा—। ३१ । 'हे स्वामी, यह सन्तति तमोगुणी है। यह कुल का नाश करेगी। इसलिए मुझे (कोई) सात्त्विक पुत्र (प्रदान) करो, तो मन की आशा पूरी होगी'। ३२ । तब शुभ समय देखकर (विश्वश्रवा ने) स्त्री को ऋतुदान दिया, उससे विभीषण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जो भक्त-शिरोमणि (समझा जाता) है। ३३ । इस प्रकार आखिर (विश्वश्रवा और कैकसी के) दो कन्याएँ और तीन पुत्र उत्पन्न हो गये। समझो कि थोड़े ही दिन में वे विकास को प्राप्त हो वलवान राक्षस हो गये। ३४ । उस समय तीनों वन्धु तप करने चले। रावण ने गोकर्ण तीर्थ में त्रिपुरारि भगवान् शिवजी की आराधना की। ३५ । वलशाली कुम्भकर्ण मन्द्राचल (मन्दर) पर्वत पर (तप करने) वैठा। उसने ब्रह्मा जी (की कृपा) के लिए तपस्या शुरू की। वह अपार कष्ट उठाता था। ३६ । विभीषण ने सात्त्विक ध्यान धारण कर विष्णु की आराधना की। इस तरह (वे) तीनों भाई तीन देवों को समान भाव से भजते रहे। ३७ ।

तप की महिमा अपूर्व (अद्भुत) है। गिरधरदास कहते हैं कि इस प्रकार तीनों भाइयों ने भक्ति-भाव से भजते हुए जो वर प्राप्त किये, उनकी कथा अब मैं कहता हूँ। ३८ ।

* * *

अध्याय—४ (रावणादिक को वरप्रदान)

राग मेवाडो

रावणे शंकरने आराध्या, करियुं कष्ट अपार जी,
दारुण तप जोई असुर तणुं, त्यां आव्या छे त्रिपुरार जी । १ ।
"माग माग तुजने वर आपुं, प्रसन्न थयो छुं आज जी,"
(त्यारे) रावण कर जोडीने बोल्यो, सांभळो शिव महाराज जी । २ ।
"दशमुख वीस भुजा मने आपो, बळ गुण तेज प्रताप जी,
देव सकळ मारे वश वरते, संतति संपत्ति अपार जी" । ३ ।
(त्यारे) 'अस्तु' कही अविनाशी ऊठ्या, आप्युं छे वरदान जी,
दशमुख, वीस भुजा आपीने, असुर कर्यो बळवान जी । ४ ।
अमृतकुप्पी रुदेमां स्थापी, अमर कर्यो तत्काळ जी,
'ज्यां लगी कुप्पी भंग थाये, त्यां लगी नहि तुज काळ जी' । ५ ।
वर आपी विश्वंभर वळिया, रावणने तेणी वार जी,
(हवे) कुंभकरण दारुण तप साधे, मंद्राचळ मोझार जी । ६ ।
त्यारे ब्रह्मा भय पामीने आव्या, शुं मागशे वरदान जी ?
इंद्रने क्षोभ थयो तेणी वेळा, सुर सहु चिंतावान जी । ७ ।

अध्याय—४ (रावणादिक को वरप्रदान)

रावण ने शंकर की आराधना की; उसने (इस आराधना में) बहुत कष्ट किया। (उस) राक्षस का (यह) कठोर तप देखकर त्रिपुरारि शिवजी वहाँ आ गये (हैं) । १ । (उन्होंने कहा—) '(वर) माँगो, (वर) माँगो। मैं तुमको वर देता हूँ। मैं आज (तुमपर) प्रसन्न हो गया हूँ'। तो रावण हाथ जोड़कर बोला—'महाराज शिवजी, सुनो । २ । 'मुझे (तुम) दस मुँह (और) वीस हाथ दो। (मुझे) बल, गुण, तेज, (और) प्रताप दो। सब देव मेरे वश में हो जाएँ। मुझे अपार सन्तति और सम्पत्ति प्राप्त हो जाए' । ३ । तब 'तथास्तु ।' कहकर अविनाशी शिवजी उठ गये। उन्होंने उसे वरदान दिया और दस मुँह (तथा) वीस हाथ देकर (उस) राक्षस को बलवान कर दिया । ४ । तत्काल (उस राक्षस के) हृदय में अमृत की कुप्पी रखकर (उसे) उन्होंने अमर कर दिया (और कहा—) 'जब तक (यह) कुप्पी न टूट जाए, तब तक तुमको मौत नहीं है' । ५ । रावण को उस समय (ऐसा) वर देकर विश्वम्भर (शिवजी) लौट गये। अब मन्द्राचल (मन्दर पर्वत) के मध्य में कुम्भकर्ण दारुण तप कर रहा था । ६ । 'यह क्या वर माँगेगा ?'—

(त्यारे) सुरपतिए सरस्वती ने, मोकळी तेणे ठार जी,
असुर तणा मुखमांहे प्रवेशी, वागीश त्यां निरधार जी । ८ ।
(हवे) कुंभकर्णने जगाड्यो विधिए, 'माग माग वरदान जी,'
तप मूकी बोल्यो तेणी वेळा, असुर थयो सावधान जी । ९ ।
इंद्रासन अरथे तप साध्यो, फळमां कांई नव फाव्यो जी,
निद्रासन माग्युं तेणी वेळा, भारतीए भुलाव्यो जी । १० ।
अघोर निद्रा आवी असुरने, विधि वळिया निरधार जी,
निद्रा पामी दानव पडियो, मंद्राचळ मोझार जी । ११ ।
(त्यारे) पडतांमां घणां तरुवर भांग्यां, व्याप्यो शब्द ब्रह्मांड जी,
पहोळुं मुख विकराळ तेनुं छे, घूमे श्वास प्रचंड जी । १२ ।
कुंजर महिष प्रवेशे मुखमां, श्वासथकी खेंचाय जी,
नासिकामांथी नीकळे पाछां, श्वासे ऊडी जाय जी । १३ ।
पिताने जाण थयुं तेणी वेळा, पाम्या दुःख अपार जी,
निशदिन निद्रा पुत्रने व्यापी, व्यर्थ गयो अवतार जी । १४ ।

इस विचार से भयभीत होकर ब्रह्मा जी वहाँ आ गये । ७ । तब सुरपति इन्द्र ने सरस्वती को उस स्थान की ओर रवाना किया । इस स्थिति में वागीश्वरी (सरस्वती) निश्चयपूर्वक (उस) राक्षस के मुँह में प्रवेश कर गयी । ८ । अब ब्रह्माजी ने कुम्भकर्ण को (ध्यान-तप) से जगाया (और कहा)—'वरदान माँगो, वरदान मांगो' । उस समय वह राक्षस सावधान हो गया और तप छोड़कर बोला । ९ । उसने इन्द्रसन की प्रप्ति के लिए तप साधना की—(लेकिन) फल के रूप में कुछ नहीं प्राप्त किया—वह सफल नही हुआ । भारती (सरस्वती)ने उसे भुलावे में डाला (मोहित किया), इसलिए उस समय उसने (इन्द्रासन नहीं, अपितु) निद्रासन माँग लिया ।१०। (तब उस) राक्षस को प्रगाढ़ नीद आ गयी । (तो वहाँ से) विधाता निश्चयपूर्वक लौट गये । (वर रूप में) निद्रा प्राप्त कर वह राक्षस मन्द्राचल में (लुढ़क कर) पड़ गया । ११ । उसके गिरने से बहुत पेड़ टूट गये । उसके पड़ने और पेड़ों के टूटने का शब्द (आवाज) ब्रह्माण्ड को व्याप्त कर गया । उसका चौड़ा मुँह विकराल था । उसकी प्रचण्ड साँस (मानो इधर-उधर) तेजी से घूमती । १२ । हाथी, भैंसे उसके मुँह में पैठ जाते; (क्योंकि) वे उसकी साँस से (अन्दर) खींचे जाते । बाद में नाक में से (बाहर) निकलते और उसाँस से उड़ जाते । १३ । पुत्र को रात-दिन निद्रा व्याप्त किये हुए है, उसका अवतार (जन्म) व्यर्थ हो गया—इसका ज्ञान तब पिता (विश्वश्रवा) को हुआ; उन्हें (इससे) अपार दुःख

(त्यारे) प्रार्थना करी ब्रह्मा केरी, बोल्या वचन प्रमाण जी,
एक संवत्सरमां बे दिन जागे, छट्ठे मासे जाण जी । १५ ।
कुंभकर्ण खट मासे जागे, (त्यारे) वरते हाहाकार जी,
एक दिनमां सहु भोगवे, करतो आहार अपार जी । १६ ।
विभीषणे विष्णु आराध्या, प्रसन्न थया मोरार जी,
वैकुंठनाथे ध्यानमां आवी, दर्शन दीधुं सार जी । १७ ।
विभीषणे तव भक्ति मागी, भजतो निरमळ मंन जी,
आकाशवाणी थई ते वेळा, 'सांभळ आसुरी तंन जी । १८ ।
प्रसन्न थशे पुरुषोत्तम तुजने, आपशे अविचळ राज जी',
वचन सांभळी विभीषण हरख्यो, सरियुं सरवे काज जी । १९ ।
(पछी) रावण बहु असुर मळ्या, तेणे करियो मित्राचार जी,
पाताळमांथी सरवे आव्या, राक्षसनो नहि पार जी । २० ।
कुबेर साथे युद्ध कर्युं; वीती गया बहु दंन जी,
लंका हाथ न आवी त्यारे, बात विचारी मंन जी । २१ ।

हुआ । १४ । तब फिर उन्होंने ब्रह्माजी से प्रार्थना की; वे यों वचन बोले—'यह (कुम्भकर्ण), समझो, छठे महीने में एक दिन—इस तरह वर्ष में दो दिन जागृत हो जाए' । १५ । (ब्रह्माजी ने इस प्रार्थना को स्वीकार किया; उसके अनुसार) कुम्भकर्ण छः महीने में (एक दिन के लिए) जागृत होता; तब हाहाकार मच जाता । वह एक दिन (में) सब प्रकार के भोगों का उपभोग किया करता और अपार आहार किया करता । १६ । (इधर) विभीषण ने भगवान् विष्णु की आराधना की । उससे मुरारि (विष्णु) प्रसन्न हो गये । उसके ध्यान में आकर वैकुण्ठनाथ (विष्णु) ने उसे अपने सुन्दर दर्शन दिये । १७ । तब उसने भक्ति की याचना की; (क्योंकि) वह तो निर्मल मन से उनकी भक्ति करता था । उस समय आकाशवाणी हो गयी—'सुनो हे असुरी के पुत्र, पुरुषोत्तम भगवान् तुमसे प्रसन्न हो जाएँगे, (वे) तुम्हें अविचल राज्य देंगे' । (यह) वचन सुनकर विभीषण आनन्दित हो गया; (क्योंकि) उसका समस्त कार्य (तप) सफल हो गया । १८-१९ । तदनन्तर रावण को बहुत असुर आ मिले (रावण के पक्ष में आ मिले) । उसने उनसे मित्रता का व्यवहार किया (सम्बन्ध स्थापित किया) । सब राक्षस पाताल में से आ गये । उन (राक्षसों की संख्या) का कोई पारावार नहीं था । २० । (तत्पश्चात्) रावण ने कुबेर के साथ युद्ध (शुरू) किया । (युद्ध करते-करते) बहुत दिन बीत गये । (फिर भी) लंका (उसके) हाथ नहीं आयी; तो उसने मन में

पितानी पासे पत्र लखाव्यो, जोरावरी तेणीवार जी,
'लंका आपजे रावणने, ना रहीश नगर मोझार जी' । २२ ।
कागळ तेह कुबेरे वांच्यो, लेई चढाव्यो शीश जी,
आज्ञा पितानी पाळी पोते, ना धरी मनमां रीस जी । २३ ।
संपत्ति सरव पोतानी लीधी, त्रियापुत्र परिवार जी,
पुष्पक वैमान भरीने चाल्यो, ब्रह्मसदन मोझार जी । २४ ।
वात कही विधि आगळ सरवे, दशमुखनुं वरतांत जी,
कुबेर कर जोडीने ऊभो, दीन थई बळवंत जी । २५ ।
(त्यारे) प्रसन्न थया परमेष्ठी पोते, नगर रच्युं निरवाण जी,
हिमाचळनी पासे सुंदर, अलकापुरी ते जाण जी । २६ ।
कुबेरने ते नगरी आपी, मनवांच्छित सहु भोग जी,
देवने दुर्लभ सरवे पदारथ, नहि व्याधि ने रोग जी । २७ ।
(त्यारे) कुंभकरण विभीषणने रावण, वसिया लंकामांहे जी,
ठाम-ठामथी दानव बळिया, आवी मळिया त्यांहे जी । २८ ।
प्रहस्त महोदर विद्युतजीभ्या, वज्रदंष्ट्री कहेवाय जी,
विरूपाक्ष खर दुखर त्रिशिरा, माल्यवंत महाकाय जी । २९ ।

(यह) बात सोची । २१ । (और उसके अनुसार अपने) पिता (विश्वश्रवा) से (कुबेर को ऐसा) पत्र लिखाया (क्योंकि) उस समय वह ज़ोरों पर (बलशाली हो गया) था । 'तुम रावण को लंका दे दो और उस नगरी में न रहो।' २२ । (कुबेर ने) उस पत्र को मस्तक पर चढ़ाकर (अर्थात् बहुत आदर पूर्वक) पढ़ा । उसने पिता की आज्ञा पालन किया; मन में क्रोध (या असन्तोष) नहीं रक्खा (किया) । २३ । अपनी सारी सम्पत्ति, स्त्री-पुत्र-परिवार लेकर उसे पुष्पक विमान में भरकर वह (कुवेर) ब्रह्माजी के घर (की ओर) चला । २४ । सारी बात रावण का वृत्तान्त उसने सब विधाता के सामने कह दिया । बलवान् होने पर भी दीन होकर कुबेर हाथ जोड़कर खड़ा रहा । २५ । तब परमेष्ठी ब्रह्मा प्रसन्न हो गये और उन्होंने स्वयं हिमालय के पास एक सुन्दर नगर का निर्माण किया । उसे (ही) अलकावती नगरी समझो । २६ और वह नगरी उन्होंने कुबेर को प्रदान की । सब मनोवाञ्छित भोग (भोग्य पदार्थ) तथा देवों के लिए भी जो दुर्लभ है ऐसे सब (अन्य) पदार्थ उसे दिये । उसे न व्याधि (दी) थी, न रोग । २७ । तब कुम्भकर्ण, विभीषण और रावण लंका में निवास करते थे । स्थान-स्थान के बलवान् दानव आकर उन्हें (उनके पक्ष में) आ मिले । २८ । प्रहस्त, महोदर, विद्युज्जिह्व, वज्रदंष्ट्री

मत्त महामत्त विद्युतमाली, जंबुमाली बळवान जी,
बळ महाबळ शुक सारण आदे, ए रावणना प्रधान जी । ३० ।
मयनामानी कन्या सुंदर, मंदोदरी तेनुं नाम जी,
ते रावणने परणावी प्रीते, साधवी पूरणकाम जी । ३१ ।
बळी राजाना कुटुंबनी कन्या दीर्घज्वाळा कहेवाय जी,
कुंभकरणने ते परणावी, दीसंती महाकाय जी । ३२ ।
गांधर्व कन्या शरमा नामे, विभीषण परण्या तेह जी,
लंकापुरीमां राज करे छे, रावण बळियो जेह जी । ३३ ।
अनेक कन्या लाव्यो दशानन, हरण करी निरधार जी,
देव दानवी मानव पन्नगी, यक्ष गांधर्वी नार जी । ३४ ।
लक्ष पुत्र थया रावणने, लक्ष तेहना तंन जी,
मेघनाद ते सहुथी मोटो, पाटवीपुत्र रतंन जी । ३५ ।
ते शेषनागनी कन्या परण्यो, पतिव्रता कहेवाय जी,
सुलोचना एवुं नामज लेतां, पापी पावन थाय जी । ३६ ।
सहु परिवारे पनोते रावण, लक्ष्मीवैभव पूर जी,
सरव दिशा जीती वश कीधी, एवो बळियो शूर जी । ३७ ।

कहानेवाले (नामक राक्षस), विरूपाक्ष, खर, दूषण, त्रिशिरा, माल्यवान् महाकाय, मत्त, महामत्त, विद्युन्माली, बलशाली जम्बुमाली, बल, महाबल, शुक, सारण आदि राक्षस—ये रावण के प्रधान थे । ३० । मय नामक दानव के एक सुन्दर कन्या थी । उसका नाम मन्दोदरी था । उस (मय) ने रावण के साथ उसका विवाह कराया । (पति के) प्रेम से वह पूर्णकाम सिद्ध हो गयी । ३१ । बलीराजा के परिवार की एक कन्या दीर्घज्वाला कहाती थी । वह देखने में महाकाय थी । उसे कुम्भकर्ण को विवाह में दे दिया गया । ३२ । सरमा नामक एक गन्धर्व-कन्या से विभीषण ने विवाह किया । अब लंकापुरी में बलवान् रावण राज्य कर रहा है । ३३ । दशमुख रावण निश्चय ही अनेक कन्याओं को अपहरण कर लाया । वे देव, दानव, मनुष्य, पन्नग (सर्प), यक्ष, गन्धर्व स्त्रियाँ थीं । ३४ । रावण के एक लाख पुत्र (उत्पन्न) हो गये ।—उनके लाखों पुत्र हो गये । रावण के पुत्रों में मेघनाद सबसे बड़ा (ज्येष्ठ) था । वह युवराज रत्न था । ३५ । उसने शेषनाग की पतिव्रता कहानेवाली कन्या से विवाह किया । सुलोचना नामक उस कन्या का नाम ही लेने पर पापी पवित्र हो जाता है । ३६ । बाल-बच्चों सहित रावण का समूचा परिवार धन-वैभव से भरा-पूरा (सम्पन्न) था । उसने सब दिशाओं को जीतकर

वलण (तर्ज़ वदल कर)

असुर वळियो दशानन ते, कोण जीत्यो नव जाय रे;
हवे रावणे दिग्विजे कीधो, तेनी कहुं कथाय रे। ३८।

अपने वश मे कर लिया। ऐसा वह वलवान एवं शूर था। ३७।

दशानन रावण वलवान् राक्षस था। उससे कौन जीता नहीं जाता? अब रावण ने दिग्विजय की—उसकी कथा मैं कहता हूँ। ३८।

* * *

अध्याय—५ (रावण-दिग्विजय-मानापमान)

राग शामेरी

दिग्विजे करियो रावणे, जीत्या सकळ भूपाळ,
निज बाहुबळथी वश कर्युं, तेणे स्वर्ग ने पाताळ। १।
आसुरी सेना अति घणी, कहेतां न आवे अंत,
अष्टादश अक्षौहिणी, वाजे सैन्यमां वाजित्र। २।
छेदवा लाग्यो पंख गिरिनी, सुरपति जेणी वार
केटलाक परवत रावण शरणे, आव्या तेणी वार। ३।
मेघनाद चढियो जुद्धे, रावण तणो कुमार,
ते इंद्र साथे आथड्यो, जुद्ध कर्युं सत्तर वार। ४।
इंद्र ने जीत्यो ते माटे, इंद्रजित पडियुं नाम,
मघवापति ने बांधीने, नाख्यो कारागृह ठाम। ५।
ब्रह्माए छोडावियो, ते विनय करी बहु पेर,
ते दिवसथी सेवा करे, सुर रह्या रावण घेर। ६।

अध्याय—५ (रावण-दिग्विजय-मानापमान)

रावण ने दिग्विजय की; समस्त राजाओं को जीत लिया। उसने अपने बाहुवल से स्वर्ग और पाताल को अपने अधीन कर लिया। १। राक्षसों की सेना वहुत वड़ी थी, उसका अन्त कहने में नहीं आ सकता (वह कितनी वड़ी थी, यह नहीं कहा जा सकता)। (हाँ कहो–) वह अठारह अक्षौहिणी थी और उसमें (अनगिनत) वाद्य वजते थे। २। जिस समय इन्द्र पर्वतों के पंख काटने लगा, तव कितने ही (असंख्य) पर्वत रावण की शरण में आ गये। ३। रावण के पुत्र मेघनाद ने युद्ध के लिए (इन्द्र पर) आक्रमण किया। उसने इन्द्र के साथ युद्ध किया–वह उससे सत्रह वार लड़ा। ४। उसने इन्द्र को जीता; इसलिए उसका नाम 'इन्द्रजित्' पड़ गया। उसने इन्द्र को वाँधकर त्वरित कारागृह में डाल दिया। ५।

इंद्र लावे हार गूंथी, पुष्प केरा तत्र,
द्वारपार रवि थया, चन्द्रमा धरता छत्र। ७।
वरुण पाणी पाय छे, कुबेर लींपे भोम,
वस्त्र वह्नि धुए, पूंजो वाळतो सूत व्योम। ८।
पुरोहित ब्रह्मा थया, नित गाय नारद एव,
पंडितपणुं बृहस्पति करे, इष्टदेव श्रीमहादेव। ९।
एम रूप धरीने रह्या त्यां नित, सेवा करता सुर,
तृणमात्र कोने नव गणे, अभिमान वाध्युं पूर। १०।
नित्य मंत्र मेला जपे दानव, करे अपुनित होम,
गौ-ब्राह्मणनी हिंसा करे अति, असुर फरता भोम। ११।
त्यारे कुबेरे रावण भणी, मोकल्यो कहेवा दूत,
'हे भाई आपणा ब्रह्मसुत, संध्याकरम संयुक्त। १२।
स्वधर्म मूकी कुळ तणो, हिंसा करे छे अपार,
ते पाप भोगवतां घणुं दुःख पामशो निरधार।' १३।
ते वचन रावण सांभळी, क्रोधी थयो तत्काळ,
बहु सैन्य लेई रजनी विषे, ते चालियो भूपाळ। १४।

तदनन्तर बहुत प्रकार से विनय करके ब्रह्मा ने (इन्द्र को) छुड़ा लिया। उस दिन से देव (रावण की) सेवा करते और उसके घर में रहते। ६। इन्द्र फूलों के हार गूँथकर (माला बनाकर) लाता। सूर्य द्वारपाल (पहरेदार) हो गया। चन्द्रमा (रावण पर) छत्र धरता (पकड़े रहता)। ७। वरुण पानी सींचता तो कुबेर भूमि को लीपता-पोतता। अग्नि वस्त्रों को धोया करता, तो आकाश-पुत्र (पवन) कूड़े-करकट को बुहारकर (जगह) साफ किया करता। ८। ब्रह्माजी पुरोहित हो गये (और) नारद नित्य गायन किया करता। बृहस्पति पण्डित का काम करता। शिवजी (रावण के) इष्टदेव हो गये। ९। इस प्रकार (सेवकों के) रूप धारण कर, देव वहाँ रहे और नित्य (रावण की) सेवा किया करते। रावण किसी को भी तिनके के बराबर नही मानता था—(उसके) अभिमान में (मानो) बाढ़ आ गयी। १०। राक्षस हमेशा गन्दे (अशुभ) मंत्र जपते; अपवित्र होम करते। वे गायों-ब्राह्मणों की अतिशय हिसा करते (हुए) पृथ्वी पर घूमते रहते। ११। तब कुबेर ने रावण के पास यह कहकर दूत भेज दिया—'हे भाई, तुम ब्रह्माजी के (परिवार में उत्पन्न) पुत्र हो; संध्या कर्म (जैसे कर्म) में लगे रहते हो। (लेकिन) कुल का (आचार) धर्म छोड़कर तुम अपार हिंसा करते हो।

अलकापुरी वींटी सकळ, पुर प्रवेश्या पापिष्ठ,
दरबार आदे नगर लूट्युं, कपटी दानव ईश । १५ ।
वैमान पुष्पक आदि लाव्यो, रावण वस्तु अपार,
कुबेर नाठो इंद्रशरणे, गयो तेणी वार । १६ ।
कुबेरनुं स्वागत करी, संतोपिया सुरनाथ,
वैभव घणो आपी वळाव्यो, अनेक सुरगण सांथ । १७ ।
शिक्षा न लागे नीचने जो, करे कोटी उपाय,
व्यर्थ वाणी जाय तेनी, दुःख अन्ते थाय । १८ ।
एवो अधर्म करे रावण, मन घणुं अभिमान,
एक समे कैलासे गयो जे, परम शोभामान । १९ ।
ते भोवनमां भव-उमा बेठां, करे गोष्ठि एकांत,
द्वारपाळ शिवनो नंदी नामे, वेठो छे वळवंत । २० ।
रावणे धसी पेसवा मांड्युं, शिव तणे भोवन,
नंदीए खाळ्यो ते समे, अवसर विचारी मन । २१ ।
महादेव छे एकांतमां, नहि जावा देउं घरमांहे,
रावण क्रोधे थयो रातो, वचन बोल्यो त्यांहे । २२ ।

इससे पाप का (फल) भोग करते हुए निश्चय ही तुम वहुत दुःख पाओगे'। १२-१३। वह वचन सुनकर रावण तत्काल क्रुद्ध हो गया। बड़ी सेना लेकर रात में वह राजा चला। १४। उसने सम्पूर्ण अलकापुरी को घेर लिया। उस पापी ने नगर में प्रवेश किया। उस कपटी दानवेन्द्र ने राजसभा आदि (सहित) नगर को लूट लिया। १५। रावण पुष्पक विमान तथा अनगिनत वस्तुओं को लूटकर लाया। उस समय कुबेर भागकर इन्द्र की शरण मे गया। १६। सुरपति इन्द्र कुबेर का स्वागत करके सन्तुष्ट हो गया। बहुत वैभव तथा अनेक सुर-गणों को साथ में देकर इन्द्र ने उसे लौटा दिया। १७। करोड़ों उपाय करें, तो भी नीच (व्यक्ति) पर शिक्षा का प्रभाव नहीं होता। शिक्षा देनेवाले का बोलना व्यर्थ हो जाता है और अन्त मे (उसे) दुख होता है। १८। रावण ऐसा अधर्म करता। उसके मन में वहुत अभिमान था। एक समय वह कैलास पर्वत की ओर गया जो परम शोभायमान है। १९। उस स्थान पर शिव-पार्वती बैठे थे—एकान्त में वार्तालाप कर रहे थे। (वहाँ पर) शिवजी का नन्दी नामक वलवान द्वारपाल बैठा था। २०। शिवजी के उस भवन में रावण घुसकर प्रवेश करने लगा। मन में प्रसंग का विचार कर उस समय नन्दी ने उसे रोका। २१। (उसने कहा—) 'महादेव एकान्त

'अल्या मरकट, मुजने खाळे ? करुं मारी चूर ',
नंदीने प्रहार कर्यो तदा, कोपियो दानव शूर । २३ ।
त्यारे नंदीए त्यां शाप दीधो, 'सुण अधरमी वात,
नर वानर तुजने मारशे, प्रगट थई जगतात । २४ ।
दश रुद्रने तें वश कर्या, तप करीने निरधार,
अगियारमा हनुमंत थाशे, रुद्रनो अवतार । २५ ।
ते गरव तारो भांगशे, कपिरूप महा बळवंत',
असुर एवुं सांभळीने, चढचो क्रोध अनंत । २६ ।
उपाडी कैलासने लेई, जाउं लंकामांहे,
रावणे गिरिने उखेडचो, कर तळे घाली त्यांहे । २७ ।
त्यारे पार्वतीजी कोपियां, जोई रावणनुं अभिमान,
पग वडे परवत चांपियो ते, चंपायो बळवान । २८ ।
कर चंपाया रावण तणा, वही गयां वर्ष हजार,
घणी स्तुति शिवनी करी त्यारे, मुकाव्यो त्रिपुरार । २९
एक समे रावण रेवामां, धरवाने बेठो ध्यान,
सहस्रार्जुन ते समे, त्यां आवियो बळवान । ३० ।

में हैं। मैं (तुम्हें) घर में नहीं जाने दूँगा '। (यह सुनकर) रावण क्रोध से लाल हो गया और तब यह वचन बोला । २२ । ' अरे वानर, तू मुझे रोकता है ? मैं मारकर (तुझे) चूर कर डालता हूँ ।' (यह कहकर) तब वह शूर राक्षस क्रुद्ध हुआ; उसने नन्दी पर प्रहार किया । २३ । इसलिए नन्दी ने वहाँ उसे शाप दिया—' हे अधर्मी पापी ! यह बात सुनो । जगत में प्रकट होकर नर और वानर तुमको मार डालेंगे । २४ । तुमने दृढ़ता पूर्वक तप करके दस रुद्रों को वश (में) कर लिया । (अब) रुद्र का ग्यारहवाँ अवतार हनुमान् (के रूप में) होगा । २५ । वह महा बलवान ग्यारहवाँ रुद्र कपि रूप में तुम्हारे गर्व का भंग करेगा' । ऐसा (वचन) सुनकर राक्षस को असीम क्रोध आया । २६ । (उसने कहा—) ' कैलास को उखाड़कर मैं लंका में (ले) जाता हूँ ' । (और फिर उस पर्वत के) नीचे तल में हाथ डालकर रावण ने पर्वत को उखाड़ लिया । २७ । रावण का अभिमान देखकर पार्वती क्रुद्ध हो गयी । उसने पर्वत को दबाया तो वह बलवान राक्षस दब गया । २८ । (अर्थात्) रावण के हाथ कुचल गये । ऐसे एक हजार वर्ष (बीत) गये । (फिर) उसने शिवजी की बहुत स्तुति की, तो त्रिपुरारि ने उसे मुक्त किया । २९ । एक समय रावण रेवा (नर्मदा) नदी में (नदी-तट पर) ध्यान लगाने बैठ

ते स्नान करवा नर्मदामां, राय पेठो मांहे,
सहस्र भुजथी नीर वांध्युं, वूडचो रावण त्यांहे । ३१ ।
त्यारे दशानन अकळाई ऊठचो, चढचो क्रोध अपार,
बहु गाळो देतो आवियो, ह्वडां करुं संहार । ३२ ।
सहस्रार्जुने तव झालियो, बांधियो करीने हास,
काराग्रहमां नाखियो, ते वही गया खट मास । ३३ ।
पौलस्त्य मुनि त्यां आविया, जाचियो हैहयराय,
रावणने छोडावियो, ते पाम्यो मन लज्जाय । ३४ ।
अपमान पामी चालियो, मन नहि लाज लगार,
पाताळमांहे आवियो, बळिरायने दरवार । ३५ ।
सभामां कहे 'मुने आपो, जुद्ध आणीवार,
अभिमान जोई रावण तणुं. बळि हस्या त्यां निरधार । ३६ ।
'रावण, सुण एक वात कहुं, तुं महाबळियो कहेवाय,
हिरण्यकशिपु साथे पूरवे, वढचा वैकुंठराय । ३७ ।
हिरण्यकशिपुना काननुं कुंडळ पडचुं भू साथ,
ते उपाडी ऊंचुं करे तो, जुद्ध करुं तुज साथ ।' ३८ ।

गया, तो उस समय वहाँ वलशाली सहस्रार्जुन आ गया । ३० । उस राजा ने स्नान करने के लिए नर्मदा (के जल) में प्रवेश किया । उसने (अपने) सहस्र हाथों से पानी को रोका, तो (वढे हुए) पानी में रावण डूव गया । ३१ । तब रावण व्याकुल हो उठा । (फिर) उसे वहुत क्रोध आ गया । वह गालियाँ देता हुआ आया । (उसने कहा) 'मैं अभी (इसका) संहार करता हूँ' । ३२ । तव हँसकर सहस्रार्जुन ने उसे पकड़ा (और) वाँध लिया और कारागृह में डाल दिया । ऐसे ही छः महीने बीत गये । ३३ । वहाँ पौलस्त्य मुनि आये । उन्होंने हैहयराज (सहस्रार्जुन) से याचना की और रावण को छुड़वाया । (इससे) वह मन में लज्जित हुआ । ३४ । अपमानित होकर रावण चला, (फिर भी) उसके मन में जरा-सी भी लज्जा नहीं रही । वह पाताल में वली राजा के दरबार में आ गया । ३५ । उसने राजसभा मे कहा—'मुझे अभी युद्ध दो (मुझसे अभी युद्ध करो)' । उस स्थिति में निश्चय ही रावण का अभिमान देखकर वली हँस पड़े । ३६ । उन्होने कहा—'सुनो रावण, एक वात कहता हूँ । तू महाबलवान् कहलाता है । पूर्वकाल में वैकुण्ठराय विष्णु हिरण्यकश्यपु से भिड़ गये थे । ३७ । उस समय हिरण्यकश्यपु के कान से जमीन पर कुण्डल गिर पड़ा; तुम (यदि) उसे उठाकर ऊँचा करोगे, तो मैं तुमसे युद्ध

वीश करशुं बाथ मारी, रावणे तेणी वार,
लेश हाल्युं नहि कुंडळ, थयो श्रम अपार । ३९ ।
अधोमुखे निस्तेज थई, अपमान पाम्यो मन,
(त्यारे) विरोचनसुत रावण प्रत्ये, बोल्यो हसीने वचन । ४० ।
बळिरायनी अर्धांगना, विंध्यावळी जे नार,
ते सखी साथे द्यूत रमती हती तेणी वार । ४१ ।
बळिराय कहे, 'दशानन, तुं लाव्य पासा आंहे',
रावणे ते लेवाया नहि, अतिभार पासामांहे । ४२ ।
एम मंदबुद्धि पड्यो हळवे, ए दैवगति कहेवाय
तरण तोडे वज्र कुलीशे, तरण नव छेदाय । ४३ ।
बळिरायना अनुचरे झाल्यो, रावणने तेणी वार,
वस्त्राभूषण काढी लीधां, लूंटियो निरधार । ४४ ।
मुख शाम करी कर बांधिया, फेरव्यो नगरमोझार,
नग्न करीने नचाव्यो पछे, काढी मूक्यो बहार । ४५ ।
लंका भणी ते चालियो, अपमान पामी मंन,
ध्यान धरतो हतो वाली, इंद्र केरो तंन । ४६ ।

करूँगा'। ३८। उस समय रावण ने उस कुण्डल को बीसों हाथों से लपेट लिया। (लपेटकर उठाने का यत्न किया), लेकिन वह ज़रा भी नहीं हिला, बल्कि रावण को (इसमें) अपार श्रम हो गया (रावण बहुत थक गया।) ३९। वह अधोमुख हो फीका पड़ गया। वह मन में अपमानित हो गया, तो विरोचन के पुत्र बली ने हँसकर रावण से यह वचन कहा। ४०। बलीराजा की पत्नी विंध्यावली (नामक स्त्री) थी। वह उस समय सखी के साथ द्यूत खेल रही थी। ४१। बलीराजा ने कहा—'हे दशानन, तुम यहाँ पाँसा लाओ'। रावण से वह उठाकर लाया नहीं गया—उस पाँसे का बहुत वज़न था। ४२। इस प्रकार वह मूर्ख (रावण) शिथिल (ढीला) पड़ गया। यह दैवगति कहाती है। (इन्द्र के अस्त्र) वज्र से घास (तृण) तोड़ा जाता है, लेकिन वह छेदा नहीं जाता (उसमें छिद्र नहीं बनाया जाता।) ४३। बलीराजा के अनुचरों (सेवकों) ने रावण को उस समय पकड़ लिया; उसके वस्त्र आभूषण निकाल (उतार) लिये और उसे पूरा लूट लिया। ४४। उसके मुँह को काला करके उसके हाथ बाँध लिये और उसे नगर में घुमाया। उसे नंगा करके नचाया और बाद में (नगर के) बाहर कर (निकाल) दिया। ४५। वह मन में अपमानित होकर लंका की ओर चला। (उस समय) इन्द्र का पुत्र

वाटे जतां विरोध कीधो, मुकाव्युं तव ध्यान,
रीस वालीने चढी तें, ऊठियो वळवान । ४७ ।
वालीए रावण झालियो, जेम अजाने मृग-ईश,
निज बगलमांहे घालियो, चांपियो आणी रीस । ४८ ।
चतुर सागर विषे जईने, स्नान कीधुं तांहे,
पछी किष्किन्धामां आवियो, न फरी बे घडीमांहे । ४९ ।
पुत्र वाली तणो अंगद, हतो नहानुं बाळ,
तें अंगदने पारणे बाँध्यो, अधोमुख भूपाळ । ५० ।
त्यां पिता रावण तणो आव्यो, जाचियो कपिराय,
विश्वश्रवाए मुकाव्यो, मन पामियो लज्जाय । ५१ ।
वालीए चरणे झालियो, कर वडे रावण त्यांहे,
आकाशमां उछाळियो ते, पड्यो लंकामांहे । ५२ ।

वलण (तर्ज़ वदलकर)

लंकामां आवियो रावण, मान भंग थयो जदा,
त्यारे चिंता प्रकटी मन विषे ते, ब्रह्माने पूछे तदा । ५३ ।

* * *

बाली ध्यान धारण किये हुए (बैठा) था । ४६ । जाते समय मार्ग में रावण ने उसका विरोध किया (और) उसका ध्यान तोड़ डाला । तब बाली को गुस्सा आया और वह बलवान् वीर उठ पड़ा । ४७ । जैसे सिंह बकरी को पकड़ लेता है, वैसे ही बाली ने रावण को पकड़ लिया; उसे अपनी बगल में दबाकर क्रोधपूर्वक दबा लिया । ४८ । उसने (रावण को उठाये हुए) चारों समुद्रों में (जाकर) स्नान किया और बाद में वह दो घड़ियों में ही लौटकर किष्किन्धा आ गया । ४९ । (उस समय) बाली का पुत्र अंगद नन्हा शिशु था । (कपियों के) राजा (बाली) ने अंगद के पालने के ऊपर उसे उलटा बाँध लिया । ५० । तब रावण के पिता ने वहाँ आकर कपिराज (बाली) से याचना की । इस प्रकार विश्वश्रवा ने उसे छुड़ाया । वह मन में लज्जित हो गया । ५१ । (फिर) बाली ने हाथ से उसके पाँवों को पकड़ लिया और उसे आकाश में उछाल दिया, तो (अन्त में) वह लंका में आ गिरा । ५२ ।

इस प्रकार मानभंग होने के बाद जब रावण लंका में आया, तो उसके मन में (एक) चिन्ता उत्पन्न हो गयी, जिसे उसने तब ब्रह्माजी से पूछा ।५३।

* * *

विवाह मांड्यो दशरथ तणो, अज राजाने हरख ज घणो,
लग्न वच्चे आडा दिन सात, नारद मुनि तव वोल्या वात । ८ ।
सुणो रायजी, कहुं एक पेर, मोटुं विघ्न थशे तम घेर,
रावण राक्षस लंकापति, ते दशरथने हणशे दुर्मति । ९ ।
एवी वात में जाणी तहीं, छानो कहेवा आव्यो अहीं,
(माटे) करो जत्न विचारी मंन, कैं गुप्त ठेकाणे राखो तन । १० ।
एवुं कहीने नारद गया, अज राजा चितातुर थया,
वर-कन्याने पीठी चढी, माटे तेडावुं आ घडी । ११ ।
सांढ मोकली रातोरात, जेम कन्या आवे परभात,
तेडावी तेने तत्काळ, कौशल्या गुणरूप विशाळ । १२ ।
सती शिरीमणि ने साधवी, जेम सरितामांहे जाह्नवी,
दशरथ कौशल्याने त्यांहे, राये वेसाड्या रथ मांहे । १३ ।
साथे प्रधान सोंप्या चार, वीजा सेवकनो नहि पार,
वसिष्ठ मुनिनो विद्यारथी, प्रोहित करी सोंप्यो सरवथी । १४ ।

(उन्हें) आसन देकर और (उनका) पूजन करके उन्होंने हाथ जोड़कर (उनका) स्तवन किया । ७ । (उन्होंने) दशरथ का विवाह आयोजित किया था, इससे अजराज को वहुत आनन्द हो रहा था । आज और विवाह-दिवस के वीच सात दिन (वाक़ी) हैं । तव नारद ने यह वात कही । ८ । ' राजन्, सुनो । मैं एक वात कहता हूँ—तुम्हारे घर में बड़ा विघ्न (उपस्थित) होने वाला है । राक्षस रावण लंका का राजा है । वह दुर्बुद्धि (राक्षस) दशरथ की हत्या करेगा । ऐसी वात मैंने वहाँ जान ली और यह कहने के लिए यहाँ छिप कर (चुपचाप) आ गया । इसलिए मन में विचार कर उसकी रक्षा करो, अपने पुत्र को किसी गुप्त स्थान पर रखो । ९-१० । ऐसा कहकर नारद चले गये, तो अज राजा चिन्तातुर हुए । वर और वधू को हलदी (आदि उवटन) लगायी गयी और (सोचा कि) कन्या (वधू) को लिवा लाने का यह समय है । ११ । रात की रात में उन्होंने साँड़िया भेज दिया, ताकि प्रातःकाल (तक) वधू आ जाए । कौसल्या गुण और रूप में बड़ी (महान्) थी । उसे (इस प्रकार) शीघ्र लाया गया । १२ । वह सतीशिरोमणि साध्वी थी । वह मानो नारी-रूपी नदियों में गंगा थी । राजा ने तव दशरथ और कौसल्या को रथ में बैठाया । साथ में चार प्रधान सौंप दिये । दूसरे सेवकों की तो कोई गिनती नही थी । वसिष्ठ मुनि के (एक) विद्यार्थी को सब प्रकार से पुरोहित वनाकर (उन्हें) सौंप दिया (साथ में भेज दिया) । १३-१४ ।

बीजी वस्तु जोईए जेह, शकट भरीने लीधी तेह,
प्रधानने कहे राजा वात, पूर्वदेश जजो साक्षात् । १५ ।
समुद्र बेटमां रहेजो जई, अन्य कोई जेम जाणे नहि,
त्यां वर-कन्याने परणावजो, हुं तेडावुं त्यारे आवजो । १६ ।
एवो प्रपंच करीने राय, वर-कन्याने कर्यां विदाय,
निशा समे चाल्या निरधार, पवनवेगे खेड्या तोखार । १७ ।
पूर्व समुद्रने कांठे जई, नावमांहे बेठा सज्ज थई,
समुद्रमध्ये राख्युं वहाण, अथाग जळ ज्यां छे निर्वाण । १८ ।
अर्धकोशनुं मोटुं नाव, रचना मंदिर केरो भाव,
रह्या सरव ते ठामे ठरी, चार दिवस वीत्या अनुसरी । १९ ।
रावणने ते जाण ज थयुं, सागरमां जे वहाण ज रह्युं,
दशमुखने थयो क्रोध अपार, हवडां जईने मारुं ठार । २० ।
रावण चाल्यो पामी त्रास, पंखीवत् ऊड्यो आकाश,
निशा समे ते आव्यो त्यांह्य, वहाण छे जे सागर मांह्य । २१ ।
असुरे लाग जोई सरवदा, कन्या काढी लीधी तदा,
गदा एक मारी निरवाण, भांगी मूको कीधुं वहाण । २२ ।

दूसरी वस्तुएँ जितनी चाहिए थीं, उतनी गाड़ी में भरकर लीं (गयीं)। (फिर) राजा ने प्रधान से यह बात कही—'(तुम) स्वयं पूर्व देश में (की ओर) जाओ । १५ । समुद्र के एक टापू (द्वीप) में जाकर रहो, जिससे अन्य कोई यह जान न पाए। वहाँ वर और वधू का विवाह कराओ (और) जब मैं बुलाऊँ तब आओ'। १६ । ऐसा छल-प्रपंच करके राजा ने वर और वधू को बिदा किया। रात के समय वे निश्चय-पूर्वक चले गये। उन लोगों ने घोड़ों को वायु-वेग से दौड़ाया । १७ । पूर्व समुद्र के किनारे जाकर वे सुसज्ज होकर नौका में बैठे। अन्त में समुद्र के मध्य में उन्होंने नौका को रखा, जहाँ अथाह पानी है(था)। १८ । वह नौका आधा कोस बड़ी थी। उसकी रचना मन्दिर की-सी थी। उस स्थान पर वे सब रहे। इसके बाद चार दिन बीत गये । १९ । (परन्तु) सागर में जिस प्रकार नौका रही, उसका ज्ञान रावण को हो ही गया। (तब) दशमुख रावण को अपार क्रोध आया। (उसने सोचा) मैं अभी जाकर (उन्हें) जान से मार डालता हूँ (मार डालूँगा) । २० । रावण आकुल होकर चला। वह पक्षी की तरह आकाश में उड़ा। रात के समय वह वहाँ आया, जहाँ सागर के मध्य में नौका थी । २१ । उस राक्षस ने पूरा मौका देखकर वधू को (नौका में से) निकाल लिया

कन्या लेई चाल्यो दुर्मति, दैव तणी नव जाणे गति,
लंकामां आव्यो ते राय, पेटीमां घाली कन्याय। २३।
एक मच्छने सोंपी तेह, जत्न करीने राखजे एह,
मच्छे बेटमां पेटी धरी, चारो चरतो जोतो फरी। २४।
रावणे जाण्युं रिपु क्षे थयो, मन हरखीने मंदिर गयो,
मागी ब्रह्मानी आज्ञाय, नगरमांहे लावीश कन्याय। २५।
हरि-इच्छा मोटी बळवंत, तेनो कोई न जाणे अंत,
जेनी साह्य करे जगदीश, सकळ दुःख वामे ते दीश। २६।
नाव भंग ते ज्यारे थयुं, सर्वे जळमां बूडी गयुं,
एक ऊगर्या दशरथ राय, साह्य करी श्रीवैकुंठराय। २७।
वहाण पाटियुं आव्युं हाथ, दशरथ बाझ्या ते संगाथ,
सुगम समीर थयो तेणी वार, आवी छीप्युं बेट मोझार। २८।
जे ठेकाणे पेटी हती, त्यां आव्या दशरथ महामति,
मीन गयो छे करवा आहार, दशरथ आव्या बेट मोझार। २९।

और जोर से एक (बार) गदा मारकर नौका को तोड़ डाला। २२। वह दुर्बुद्धि राक्षस कन्या को लेकर चला। दैव की गति जानी नहीं जाती।. एक पेटी में कन्या को रखकर वह लंका में आ गया। २३। उसने वह (पेटी) एक मत्स्य को सौप दी (और कहा—) 'इसे यत्न-पूर्वक रखो।' मत्स्य ने वह पेटी एक टापू में रखी और इधर-उधर घूमते हुए वह चारा खाता हुआ उसे देखता रहता। २४। रावण ने जान (समझ) लिया कि शत्रु का क्षय हो गया (अतः) मन में वह आनन्दित होकर घर (प्रासाद) गया। (उसने सोचा कि) ब्रह्मा की आज्ञा माँगकर मै कन्या को नगर में लाऊँगा। २५। (परन्तु) हरि की इच्छा बलवती होती है।. कोई उसका अन्त नही जानता। जगदीश जिसकी सहायता करता है, उसके सब दुःख उसी स्थान पर नष्ट हो जाते है। २६। जब नौका भंग हो गयी, तो सब (लोग) पानी में डूब गये। (लेकिन) वैकुण्ठराय भगवान ने सहायता की (जिससे) एक (मात्र) दशरथ (ऊपर आकर) बच गये। २७। नौका का (एक) तख्ता उसके हाथ आया, तो दशरथ उससे सट (चिपक) गये। उस समय हवा (उनके) अनुकूल हुई। इसलिए वह तख्ता टापू में आकर छिप गया। २८। (इस प्रकार) जिस स्थान पर पेटी थी, उसी स्थान पर महामति दशरथ आ गये। (इधर) वह मत्स्य भोजन करने गया, (उधर) दशरथ टापू में आ गये। २९।

दीठी पेटी पासे गया, उघाडतामां विस्मे थया,
कौशल्या कन्या सर्वदा, अजनंदन जोई हर्ख्या तदा । ३० ।
एटले नारद आव्या त्यांह्य, वर-कन्या बेठाँ छे ज्यांह्य,
गांधर्वविवाह मुनिए करी, परणाव्यां आशिष ऊचरी । ३१ ।
वर-कन्यानी प्रत्ये एव, मुनिए वचन कह्युं ततखेव,
तमो दंपती मंगळरूप, थशे पुत्र त्रिभुवनभूप । ३२ ।
तमारा भाग्य तणो नहि पार, रमा रमण लेशे अवतार,
एक पहोर रहेजो आ ठार, पछे जशो निज नगर मोझार । ३३ ।
बे जण घाल्यां पेटीमांह्य, हती तेम अडकावी त्यांह्य,
धीरज राखजो मनमां सही, नारद चाल्या एवुं कही । ३४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नारद चाल्या धीरज आपी, परणावी वर-कन्याय रे,
कहे दास गिरधर ए ईश्वर इच्छा, ते केम मिथ्या थाय रे? । ३५ ।

* * *

उस पेटी को देखकर वे (उसके) पास गये। (उसे) खोलने पर वे चकित हो गये। तब कौसल्या वधू को देख कर अजनन्दन दशरथ आनन्दित हो गये। ३०। इतने में नारद वहाँ आये, जहाँ वर और वधू बैठे थे। मुनिवर ने उन्हें आशीर्वाद देते हुए गान्धर्व विवाह पद्धति से उनका परिणय कराया। ३१। मुनि नारद ने वर और वधू के प्रति तत्क्षण यह वचन कहा—'तुम दम्पती (पति-पत्नी) मंगल-रूप हो; त्रिभुवन का राजा तुम्हारा पुत्र होगा। ३२। तुम्हारे भाग्य का पार नहीं है। रमारमण (भगवान् विष्णु) तुम्हारे यहाँ अवतरित होंगे। एक प्रहर भर इस स्थान पर ठहरो—बाद में अपने नगर में जाओगे'। ३३। (तदनन्तर) उन्होंने उन दोनों को पेटी में रखा और उस पेटी को जैसी थी वैसी बन्द कर दिया। 'मन में धीरज रखो'—ऐसा कहकर नारद चले गये। ३४।

वर-वधू का विवाह कराकर और उन्हें धीरज देकर नारद चले गये। गिरधरदास कहते हैं—यह ईश्वरेच्छा है; वह कैसे मिथ्या (झूठी) हो सकती है? । ३५ ।

* * *

अध्याय–७ (ब्रह्मा के साथ जाकर पृथिवी-देवतादिक का क्षीरसागर में नारायण से प्रार्थना करना)

राग धनाश्री

सुणो श्रोता विवेकी जंन, रूडी रामकथा पावंन,
मुनि दशरथने परणावी, गया कुशळ वात जणावी । १ ।
हवे लंकामां ते दीश, सभा मांहे बेठो दशशीश,
विधि साथे हसीने वचन, बोल्यो मंदबुद्धि दशानन । २ ।
कर्युं वचन तमारुं फोक, कोण बळियो हुंथी त्रिलोक,
कर्यो लग्न तणो में भंग, मार्यो दशरथ बहु जनसंग । ३ ।
कन्या हरण करीने लाव्यो, निरभे थकी पाछो आव्यो,
विधि बोल्या हसीने वाण, सुण रावण साचुं जाण । ४ ।
लख्या अंक मटे नहि एह, वर-कन्या परण्या तेह,
त्यारे रावण कहे केम मानुं ? मारे हाथे कर्युं नथी छानुं । ५ ।
जो परण्यां होय वर-कन्याय, तो जे मागो ते आपुं न्याय,
विधि कहे जो थयां हशे लगन, तो हुं मागीश थईने मगन । ६ ।

अध्याय–७ (ब्रह्मा के साथ जाकर पृथिवी-देवतादिक का क्षीरसागर में नारायण से प्रार्थना करना)

श्रोताओ, विवेकवान् लोगो, (यह) सुन्दर पवित्र रामकथा सुनो । नारद मुनि ने दशरथ का विवाह कराया और वे कुशल-वार्ता बताकर चले गये । १ । अब उस दिन लंका मे दशानन रावण (राज) सभा में बैठा था । वह मन्दबुद्धि रावण हँस कर विधाता से बोला । २ । 'तुम्हारा वचन मैंने व्यर्थ कर डाला । त्रिभुवन में मुझसे कौन बलवान् है ? मैंने विवाह को भंग कर डाला और अनेक लोगों सहित दशरथ को मार डाला । ३ । कन्या (वधू) को हरण कर लाया और निर्भय होकर वापस आया ।' (तब) विधाता ने हँस कर यह बात कही, 'रावण, सुनो । यह सत्य समझ लो; (यह) लिखा अंक (भाग्य में लिखित बात) मिटता नहीं । वर और वधू का विवाह हो गया (है) ।' तब रावण ने कहा—'(यह मैं) कैसे (सत्य) मानूँ ? मेरे हाथ से किया (काम) छिपा नही है । ४-५ । यदि वर और वधू का विवाह हुआ हो, तो जो न्याय (संगत बात) माँगोगे, दूँगा ।' (इसपर) विधाता ने कहा—'यदि विवाह हुआ (सिद्ध) होगा, तो मैं अति प्रसन्न होकर माँगूँगा' । ६ ।

सुणी ऊठ्यो तदा लंकेश, जे अधरमी अमंगळ वेश,
ते समुद्रनी तीरे आव्यो, पेला मच्छने पासे बोलाव्यो । ७ ।
लाव्य पेटी में आपी जेह, लेई जाऊं मंदिर तेह,
चाल्यो मच्छ महाबळ वापी, तत्काळ ते आणी आपी । ८ ।
सहु देखे सभाना जन, पेटी लईने आव्यो दशानन,
सभामांहे मूकी तेणी वार, मनमांहे छे हरख अपार । ९ ।
उघाडीने जुए जेटले, वर-कन्या दीठां तेटले,
महा मनोहर जेनो वेश, देखी विस्मे थयो लंकेश । १० ।
पछी क्रोध करी तेणी वार, करमां खडग ग्रह्युं निरधार,
एथी शत्रु थशे उत्पन्न, माटे एने पमाडुं पतन । ११ ।
मारवाने ऊठ्यो जेटले, ब्रह्मा आवी ऊभा तेटले,
तें आप्युं' तुं मुजने वचन, ते पाळ हवे राजन । १२ ।
वर-कन्या जो परण्यां होय, जे मागे ते आपुं सोय,
में कह्युं ते थयुं छे साचुं, माटे आप्य हुं तुजने जाचुं । १३ ।
कहे दुष्ट ना जीवता मूकुं, वेरी हाथ आव्यो केम चूकुं ?
ए विना जे मागो ते आपुं, आज शीश हुं एनुं कापुं । १४ ।

यह सुनकर लंकाधिपति रावण उठा—वह अधर्मी था और अमंगल वेश पहने हुए था । वह समुद्र-तट पर आ गया और (तदनन्तर) उसने उस मत्स्य को पास बुलाया । ७ । (उसने कहा)—'मैंने जो पेटी दी थी, उसे लाओ । मैं उसे मन्दिर (प्रासाद) में ले जाता हूँ (जाऊँगा) ।' (तब) वह महाबलवान् मत्स्य चला गया और उसने तत्काल (उस पेटी को) लाकर दिया । ८ । सभा के सब लोगों ने देखा—रावण पेटी ले आया । उस समय उसने सभा में पेटी छोड़ी (रखी), तो उसके मन में अपार आनन्द था । ९ । ज्यों ही खोलकर देखा, त्यों ही (उसमें) वर और वधू को देखा । उनका वेश अति मनोहर था । (उन्हें) देखकर लंकेश रावण विस्मित हो गया । १० । बाद में उस समय क्रोध करके उसने निश्चयपूर्वक खड्ग हाथ में लिया । (उसने सोचा—) इनसे (मेरा) शत्रु उत्पन्न होगा, इसलिए इन्हें मैं नष्ट कर डालता हूँ । ११ । ज्यों ही वह उन्हें मार डालने उठा, त्यों ही ब्रह्माजी आकर खड़े हो गये । (उन्होंने कहा)—' हे राजन्, तुमने मुझे अभिवचन दिया (है); अब उसका पालन करो । १२ । (तुमने कहा था कि) यदि वर और वधू का विवाह हुआ हो तो जो माँग लिया जाए, वह (तुम्हें) मैं दूँगा । (अब) मैंने जो कहा, वह सत्य हुआ है । इसलिए मैं तुमसे जो माँगता हूँ,

कौशल्याए सुण्यां वचन, त्यारे थरथर ध्रूजे तन,
आपे धीरज दशरथराय, शाने अबळा करे छे चिंताय ? । १५ ।
हुं छुं क्षत्री केरो तंन, शुद्ध सूरजकुळ पावंन,
आवे मारवा जो आ दीश, खूटी नाखुं एनां दश शीश । १६ ।
एम दशरथ धीरज दे छे, विधि रावण प्रत्ये कहे छे,
आप्य माग्युं मुने आ वार, तारो थशे जश विस्तार । १७ ।
एम वीनवता विधि वाणी, एवे आव्यां मंदोदरी राणी,
कह्यां नीति वचन संबंध, समजाव्यो असुर मद-अंध । १८ ।
स्वामी एने मारे शुं थाय ? काळ विश्व सकळने खाय,
आवरदाए सहु जन मरे, तेमां ए वापडां शुं करे ? । १९ ।
आगे भूप मोटा चक्रवरती, जेनी आण पृथ्वीमां फरती,
ते समे पामी काळे ग्रह्या, नथी अमर कोईए रह्या । २० ।
एवुं जाणीने हे राजन, आपो ब्रह्माने माग्युं वचन,
सुणी राणी तणो प्रतिबोध, ऊतर्यो रावणनो क्रोध । २१ ।

वह मुझे दो ' । १३ । (तब रावण ने) कहा—' दुष्ट को मैं जीवित नहीं छोड़ता (छोड़ूँगा) । वैरी हाथ आया तो (उसे) कैसे चूकूँ (छोड़ दूँ) ? इसके सिवा जो माँगोगे, वह देता हूँ (दूँगा) । आज इसका सिर मैं काटता हूँ (काटूँगा)' । १४ । कौसल्या ने ये बातें सुनीं, तो उसका शरीर (भय से) थरथर काँपने लगा । तब दशरथ राजा ने (उसे) धीरज दिया और कहा—' हे स्त्री, तुम चिन्ता क्यों कर रही हो ? । १५ । मैं शुद्ध (पवित्र) सूर्यवंश में उत्पन्न क्षत्रिय का पुत्र हूँ । यदि इस समय (मुझे) यह मारने आए तो मैं इसके दसों मस्तक काट डालूँगा' । १६ । दशरथ (इधर) कौसल्या को धीरज बँधा रहा है, तो उधर विधाता रावण से कहता है—' इस समय मैं जो माँगूँ, वह मुझे दो; तुम्हारी कीर्ति विस्तार को प्राप्त होगी ' । १७ । विधाता के इस प्रकार (रावण से) विनती करने पर रानी मन्दोदरी उस समय (वहाँ) आयीं । उन्होंने नीति के सम्बन्ध में वचन कहे और मदान्ध असुर (रावण) को समझाया । १८ । (उसने कहा—) 'स्वामी, इन्हें मारकर क्या होगा ? काल सारे विश्व को खा जाता है । आयु (के अन्त) में सब लोग मरते हैं । उनमें यह बेचारा क्या करे ? । १९ । पहले भी (पूर्वकाल में) बड़े चक्रवर्ती राजा, जिनकी सत्ता पृथ्वी भर पर चली, काल द्वारा पकड़ लिये गये । उस समय, किसी के रखने (रक्षण करने) पर भी वे अमर नहीं (बने) रहे । २० । ऐसा जानकर हे राजन्, (ब्रह्मा का) माँगा

सोंप्यां विधिने वर-कन्याय, रंगमहेलमां रावण जाय,
ब्रह्माए पछी देवनी साथ, पेटी पहोंचाडी आपी हाथ । २२ ।
ते मूकी गया पुर मांहे, अज राजा तणुं घर ज्यांहे,
पिता पुत्रने जोई हरख्यो, वधू सहित आव्यो ते नीरख्यो । २३ ।
कही दशरथे मांडी वात, अथ इति थई जे ख्यात,
एम दशरथ आव्या घेर, एवी अकळ ईश्वरनी पेर । २४ ।
एक समे दशानन शूर, नीकळ्यो पृथ्वीमां भूर,
आव्यो अलकापुरीनी पास, दीठी सुंदरी रूप प्रकाश । २५ ।
छे कुबेरना पुत्र ज तणी, वधू अंगनी शोभा घणी,
तेने झाली दशानन अंध, कामे भूल्यो विवेकसंबंध । २६ ।
ते सतीने चढ्यो मन कोप, बोली लज्जा करीने लोप,
अल्या वृद्ध, शुं आचरे आम? तुं श्वशुर पिताने ठाम । २७ ।
तोये मान्युं नहि दशशीश, त्यारे अबळाने चढी रीस,
पछी तेणीए दीधो शाप, तुं भोगवजे तारुं पाप । २८ ।

हुआ वचन उन्हें दो (अपना वचन पूरा करो) ।' रानी का यह उपदेश सुनकर रावण का क्रोध उतर गया । २१ । तब रावण ने विधाता को वर और वधू सौप दिये और वह रंगमहल में गया । तदनन्तर ब्रह्माजी ने देवों के हाथों में पेटी देकर पहुँचवा दी । २२ । वे (पेटी को उस) नगर में छोड़ गये जहाँ अज राजा का घर (प्रासाद) था । पिता (अपने) पुत्र को देखकर आनन्दित हो गये । वह वधू-सहित आया है, यह भी उन्होंने देखा । २३ । जो बात (घटना) प्रख्यात हो गयी थी, उसे दशरथ ने अथ से इति तक (पिता से) कहा । इस प्रकार दशरथ (अपने) घर आये । ईश्वर की रीति (करनी) ऐसी अगम्य होती है । २४ । एक समय (यह) शूर दशानन (रावण) पृथ्वी पर घूमने निकला । वह (कुबेर की) अलकापुरी के पास आया । (वहाँ) उसे एक उज्ज्वल रूपवाली सुन्दरी दिखायी दी । २५ । वह कुबेर के पुत्र की वधू थी । उसके शरीर की शोभा (सुन्दरता) बहुत थी । काम के कारण दशानन विवेक के बारे में (विचार) भूल गया और अन्ध (विवेकहीन) होकर उसने उसे पकड़ लिया । २६ । तो उस सती के मन में क्रोध आया । वह लज्जा (संकोच) को छोड़कर (अर्थात् प्रकट रूप में) बोली, 'अरे बूढ़े, यहाँ तू क्या करता है ? तू (मेरे लिए) श्वशुर-पिता के स्थान पर है' । २७ । दशानन इससे नहीं माना, तो उस नारी को (अधिक) गुस्सा आया । बाद में उसने (रावण को) शाप दिया—'तू अपने पाप (के फल)

आवुं कर्म करे भयरहित, तारो क्षे थाजो कुळसहित,
एवुं सांभळी लाज्यो राय, तेने मूकी चाल्यो महाकाय । २९ ।
एम अधरम करतो असुर, पृथ्वीमांहे भरतो भूर,
अति वाध्यो बळ अहंकार, एनां पाप तणो नहि पार । ३० ।
धरा उपर असुर अनेक, फरे कहेतां न आवे छेक,
मार्या अनेक मुनिवर ब्रह्म, करे राक्षस हिंसाकर्म । ३१ ।
शुभ जज्ञ कोणे नव थाय, ते देखी भंग करवा जाय,
गौब्राह्मण पाम्यां कष्ट, दुःख दे छे दानव नष्ट । ३२ ।
बंधीखाने पड्या छे देव, ते तो सेवा करे नित्यमेव,
थयो पृथ्वी उपर अति भार, सहेवायो नहि निरधार । ३३ ।
वसुधा गौरूपे थई, ते प्रजापतिने शरणे गई,
कह्यां दीन वचन अपार, नथी सहेवातो में भार । ३४ ।
एवे देव सकळ त्यां आव्या, साथे शिवजीने तेडी लाव्या
विधि कहो कंई हवे उपाय, जेथी दुष्टनो नाश ज थाय । ३५ ।

को भोग । भयरहित होकर तू ऐसा काम कर रहा है, तो तेरा कुलसहित नाश हो जाए'। यह सुनकर राजा (रावण) लज्जित हुआ। उसे (स्त्री को) छोड़कर वह महाकाय (रावण) चला गया। २८-२९। वह राक्षस ऐसा अधर्म करता, पृथ्वी पर दूर-दूर (तक) भ्रमण करता। उसका बल एवं अहंकार अति बढ़ गया। उसके पाप का कोई पारावार नहीं (रहा) था। ३०। पृथ्वी पर अनेक राक्षस घूमा करते। उनकी संख्या का अन्त कहने में नहीं आ सकता। उन्होंने अनेक ऋषियों—ब्राह्मणों को मार डाला। वे राक्षस हिंसाकार्य किया करते थे। ३१। किसी का शुभ यज्ञ (पूरा) नहीं होता था, (क्योंकि) उसे देखकर वे (राक्षस) उसे भंग करने जाते। (उनसे) गो-ब्राह्मण कष्ट को प्राप्त हो गये। वे मुए दानव (इस प्रकार) दुःख पहुँचाते थे। ३२। देव बन्दीवास में पड़े है। वे तो नित्य ही उसकी सेवा किया करते हैं। पृथ्वी पर अतिशय (पाप का) भार हो गया। वह निश्चय ही (उसके द्वारा) नहीं सहा जाता। ३३। (तब) पृथ्वी गौ-रूप धारण कर प्रजापति की शरण में गयी। उसने (उनसे) अपार दीन वचन कहे—मुझसे यह भार सहन नहीं किया जाता। ३४। इसी बीच सब देव वहाँ आये। साथ में वे शिवजी को बुला लाये। (उन्होंने विधाता से कहा—)' हे विधाता अब, कोई उपाय बताओ, जिससे इन दुष्टों का नाश ही हो जाए। ३५।

यज्ञकर्म थयां सहु बंध, नथी पृथ्वीमां पुण्य-संबंध,
नित्य सेवा करावे नष्ट, गौब्राह्मण हणता दुष्ट। ३६।
माटे सत्वर करीए उपाय, हवे दुःख सह्युं नव जाय,
विधि कहे चालो सहु जईए, पासे जई दुःख कहिये। ३७।
भीडभंजन देवदयाळ, जे सदा करता संभाळ,
एवुं कही चाल्या तत्काळ, आव्या क्षीरसागरनी पाळ। ३८।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

क्षीरसागरने तटे आवी, ऊभा सर्वे देव रे;
विनये सहु विश्वंभरने, स्तुति करता ततखेव रे। ३९।

सब यज्ञ-कर्म बन्द हो गये। पृथ्वी पर पुण्य सम्बन्धी कार्य नहीं (रहे) हैं। वह मुआ नित्य सेवा कराता है; वह दुष्ट गौ-ब्राह्मणों का वध कराता है। ३६। इसलिए शीघ्र ही उपाय करो। अब (हमसे) दुःख नहीं सहा जाता।' (इसपर) विधाता ने कहा—'चलो, सब चलें। (भगवान् के) पास जाकर दुःख कहें। भगवान् संकट के नाशकर्ता तथा दयालु हैं, जो हमेशा (सबकी) रक्षा करते हैं'। ऐसा कहकर वे तत्काल चल पड़े और क्षीरसागर के तट पर आ गये। ३७-३८।

क्षीरसागर के तट पर आकर सब देव खड़े (हो गये) हैं। तत्क्षण सब विश्वम्भर भगवान् का विनम्रतापूर्वक स्तवन करते हैं। ३९।

*　　　*　　　*

अध्याय—८ (श्रीनारायण का सब देवों को उपदेश)

राग विलावल

क्षीरसागर विषे रहेता, नारायण अविनाश,
एक लक्ष जोजन मणिमंडप कोटि सूरज प्रकाश। १।

अध्याय—८ (श्रीनारायण का सब देवों को उपदेश)

अविनाशी (भगवान्) नारायण क्षीरसागर में रहते हैं। (उनके निवास के लिए) एक लाख योजन विशाल रत्न-मण्डप (बना) है, जिसमें

ते मध्यमां छे शेप लांबा, जोजन साठ हजार,
पहोळा छे अधलक्ष, जोजन शय्यारूपे सार । २ ।
ते शेषशय्या विषे पोढचा, नारायण साक्षात्,
सच्चिदानंद स्वरूप सुंदर, अखिल जुगना तात । ३ ।
मुगट कुंडळ पीतपट, कटीवंध कंकण हार,
चतुर्भुज घनश्याम तन मणि कनक भूपण सार । ४ ।
अनंत शक्ति निज श्यामनी, लक्ष्मी सदा निष्काम,
ते चरणसेवा करे नित्ये, धरी मन अभिराम । ५ ।
एवा नारायणने शरणे आव्या, दुःख कहेवा देव,
गदगद गिराचित सजळ लोचन स्तुति करता एव । ६ ।
जय जय अनेक ब्रह्मांडनायक, पूरण ब्रह्म अनूप,
देववंदित देवपाळक, अगम वेद स्वरूप । ७ ।
जय विश्वंभर विश्वपाळक, विश्वरूप अनंत,
वनमाळी व्यापक विश्वपति, सर्वात्म कमळाकंत । ८ ।
जय जगतगुरू जग-तात मात, अनाथनाथ दयाळ,
करुणानिधि कैवल्यदायक, देवना प्रतिपाळ । ९ ।

करोड़ों सूर्यों का प्रकाश है । १ । उस (देदीप्यमान मण्डप) के मध्य में साठ हज़ार योजन लम्बा शेपनाग है । वह पचास हज़ार योजन सुन्दर शय्या रूप में विछा हुआ है । २ । उस शेश-शय्या पर सच्चिदानन्द-स्वरूप, सुन्दर, अखिल जगत् के पिता. साक्षात् नारायण लेटे हुए हैं । ३ । भगवान् मुकुट, कुण्डल, पीत वस्त्र, कटिवन्ध (करधनी), कंकण और हार धारण किये हुए हैं। वे चतुर्भुजधारी श्याम (साँवले) शरीरधारी हैं। वे रत्न और सुवर्ण के सुन्दर आभूपण पहने हुए हैं । ४ । लक्ष्मी श्याम शरीरधारी अपने पति की अनन्त शक्ति (रूप) है। वह सदा निष्काम (रहती) है। सुन्दर (पवित्र) मन (धारण करने) वाली वह लक्ष्मी (भगवान् के) चरणों की नित्य सेवा करती है । ५ । देव दुःख कहने के लिए ऐसे भगवान् नारायण की शरण में आ गये। उनकी वाणी गद्गद थी और नेत्र अश्रुजल से युक्त थे। वे (भगवान् की) इस प्रकार स्तुति करते हैं । ६ । 'हे अनेक ब्रह्माण्डों के नायक, अनुपमेय पूर्ण ब्रह्म, तुम्हारी जय हो। हे देवों द्वारा वन्दित, देवों के पालक, अगम्य वेद-स्वरूपी भगवान्, तुम्हारी जय हो । ७ । हे विश्वम्भर, हे विश्वपालक, हे विश्व-रूप, हे अनन्त, हे वनमाली, हे सर्व-व्यापक विश्व-पति, हे सर्वात्म, हे कमला-पति भगवान्, तुम्हारी जय हो । ८ । हे जगद्गुरु, हे जगत्पिता

जय कमळलोचन कर्ममोचन, अखिल जीव-निकाय,
भक्तवत्सल भुवनसुंदर, सगुण निर्गुन राय । १० ।
जय मुरमर्दन मधुसूदन, अखंड रूप उदार,
प्रतिपाळ गोसुर द्विज तणा, गुणरूप नाम अपार । ११ ।
जय मच्छ कच्छ वराह नरहरि, वामन परशुराम,
अवतार धरी दुष्टने भार्या, धर्मस्थापन काम । १२ ।
हवे प्रगट थई खळने संहारो, उतारो भू-भार,
हे नारायण तुजने अमो, नित्य नमुं वारंवार । १३ ।
एवी स्तुति सुरनी सांभळी, बोल्या श्रीपति देव,
गंभीर वाणी सागरमांथी, धुनी थई ततखेव । १४ ।
हे देव चिंता न करशो, हुं धरुं छुं अवतार,
अमो चार रूपे प्रकट थईशुं, अवधपुरी मोझार । १५ ।
दशरथ कौशल्या थकी हुं धरीश राम स्वरूप,
आ शेष ते लक्ष्मण थशे, मुज बंधु-धर्म अनूप । १६ ।

जगन्माता, अनाथों के नाथ, हे दयालु भगवन्, हे करुणानिधि, मुक्ति दाता, हे देवों के प्रतिपालक, तुम्हारी जय हो । ९ । हे कमलनेत्र, हे अखिल जीव-समूह को कर्म से मुक्ति देनेवाले, हे भक्त-वत्सल, भुवन-सुन्दर सगुण और निर्गुण महाराज, तुम्हारी जय हो । १० । हे मुरमर्दन (मुर नामक दैत्य को कुचल देनेवाले भगवान् विष्णु), हे मधुसूदन (मधु नामक दैत्य को मार डालने वाले भगवान् कृष्ण अर्थात् विष्णु), अखण्ड रूप, हे उदार, गायों, देवताओं और ब्राह्मणों के प्रतिपालक, हे अपार रूपों और नामों के धारक भगवान्, तुम्हारी जय हो । ११ । मत्स्य, कूर्म (कच्छप), वराह, नरसिंह, वामन, परशुराम नामक अवतार धारण करके तुमने दुष्टों को मार डाला और धर्म की स्थापना का कार्य किया । हे भगवान्, तुम्हारी जय हो । १२ । (हे भगवान्), अब प्रकट होकर दुष्टों का संहार करो (और) भूमि का (पाप रूपी) भार उतारो (अर्थात् पापियों का नाश करो) । हे नारायण, हम बार-बार तुम्हारा नमन करते हैं ' । १३ । देवों द्वारा किया हुआ ऐसा स्तवन सुनकर भगवान् श्रीपति बोले । तत्क्षण सागर में से (उनकी) वाणी की गम्भीर ध्वनि (उत्पन्न) हुई—' हे देवताओ, तुम चिन्ता न करो । मैं अवतार धारण करूँगा । अयोध्या नगरी में मैं चार रूपों में प्रकट हो जाऊँगा । १४-१५ । दशरथ और कौसल्या से मैं राम (का) रूप धारण करूँगा । यह शेष बन्धु-धर्म का अद्वितीय रूप—मेरा बन्धु लक्ष्मण

सुदर्शन ते शत्रुघन, वळी शंख भरत प्रमाण,
एम चतुर मूर्ति प्रगट थईशुं, दुष्ट हणवा जाण । १७ ।
वळी पृथ्वीनो अवतार कहावे, जनक राजा जेह,
तेनी पुत्री जानकी, लक्ष्मी ते धरशे देह । १८ ।
ते माटे सुर सरवे तमो मुज साथे आवो त्यांय,
मर्कट वानर रींछ थई, अवतरो पृथ्वीमांय । १९ ।
हनुमंत शिवजी प्रगटशे, ब्रह्मा ते जांबुवान,
सूरज सुग्रीव, चंद्र अंगद, रषभ धरम समान । २० ।
अग्नि नळ ने नील वायु, सरभ रसना ईश,
धनवंतरी सुषेण ते, एम सकळ थाओ कीश । २१ ।
तमो प्रगट थाओ देव सरवे, गिरि वनमोझार,
हुंए पण थोडा दिवसमां, धरुं छुं अवतार । २२ ।
पूरवे कश्यप अदितिने आप्युं छे वरदान,
ते दशरथ कौशल्या थयां छे, अवधपुर स्वस्थान । २३ ।
नारायणनां वचन एवां सांभळी निरधार,
सुर सकळ निज लोके गया ते, करी जय-जयकार । २४ ।

रूप में उत्पन्न) हो जाएगा । १६ । इसके अतिरिक्त (मेरा) यह सुदर्शन चक्र शत्रुघ्न के रूप में और शंख भरत के प्रमाण (रूप) में (उत्पन्न) हो जाएगा । इस प्रकार, यह समझो कि दुष्टों को मार डालने के लिए मैं चार मूर्तियों अर्थात् रूपों में प्रकट हो जाऊँगा । १७ । इसके सिवा, जो जनक राजा पृथ्वी के अवतार कहलाते है उनकी पुत्री जानकी का शरीर (यह) लक्ष्मी धारण करेगी । १८ । इसके लिए तुम सब देव मेरे साथ वहाँ आओ । मर्कट, वानर, रीछ होकर तुम पृथ्वी में अवतरित हो जाओ । १९ । शिवजी, हनुमान के रूप में प्रकट होंगे । ब्रह्माजी वह जाम्बवान् होंगे । सूर्य सुग्रीव के, चन्द्र अंगद के और धर्म (यम) ऋषभ के समान (रूप में) हो जाएँ । २० । अग्नि नल और वायु नील तथा रसेश्वर (वरुण) सरभ बनें । धन्वन्तरी सुषेण हो जाएँ—इस प्रकार तुम सब वन्दर हो जाओ । २१ । तुम सब देव पर्वत और वन में प्रकट हो जाओ । मैं भी थोड़े ही दिनों में अवतार ग्रहण करूँगा । २२ । पूर्वकाल में मैंने कश्यप और अदिति को वरदान दिया था । वे अयोध्या नगरी में अपने (उचित) स्थान पर दशरथ-कौसल्या (के रूप में उत्पन्न) हो गये हैं ' । २३ । भगवान् नारायण

वलण (तर्ज़ वदलकर)

जय-जयकार करी तदा, सहु देव गया स्वस्थान रे,
हवे अजोध्यानी कहुं कथा, ज्यां प्रगटचा श्री भगवान रे । २५ ।

के ऐसे वचन सुनकर वे सव देव उनकी जयकार करके अपने लोक चले गये । २४ ।

तब भगवान् नारायण का जय-जयकार करके सव देव अपने-अपने स्थान गये । अब मैं जहाँ श्री भगवान् प्रकट हो गये, उस अयोध्या की कथा कहता हूँ ।

* * *

अध्याय–९ (श्रवण-वध)

राग धनाश्री

दशरथ राजा पुण्य पवित्र जी,
कहुं संक्षेपे तेनां चरित्र जी,
रावणे मूक्यां बंन्यो त्यांहे जी,
विधिए पहोंचाडयां अवधपुर मांहेजी । १ ।

ढाल

अवधपुर मां राय दशरथ, राणी कौशल्या सती,
तेना आनंदमां दिन जाय छे, निजधर्म पाळे महामति । २ ।
पछे पुत्रने निज राज सोंपी, अज गया वनवास,
तपसाधना करी थोडे दिवसे, पाम्या स्वर्गनिवास । ३ ।

अध्याय–९ (श्रवण-वध)

राजा दशरथ पुण्यशील और पवित्र आचरणवाले थे । मैं उनका चरित्र संक्षेप में कहता हूँ । (कहा जा चुका है कि) रावण ने (दशरथ और कौसल्या) दोनों को वहाँ छोड़ दिया । वहाँ से विधाता ने अवधपुर में उन्हें पहुँचवाया । १ । अयोध्या में राजा दशरथ और साध्वी रानी कौसल्या (रहते) हैं । उनके दिन आनन्द में वीतते जाते हैं । वे महामति (मान्) अपने-अपने धर्म का पालन किया करते हैं । २ । पहले अपने पुत्र (दशरथ) को अपना राज्य सौंपकर अजराज वनवास करने

त्यारे दशरथ राज करता, नीति धरम विवेक,
पुत्रनी पेरे प्रजा पाळे, दया सत्य विवेक । ४ ।
एक केकै कन्या रायनी, शुभ रूप कपटी मंन,
बळवान निर्दय अति घणी, ते परणिया राजन । ५ ।
वळी नागकन्या सुमित्राने, परण्या पोते भूप,
बीजी सात सत कन्या वर्या, जेनुं महा मनोहर रूप । ६ ।
ज्ञानकळा ते कौशल्या, सुमित्रा भक्ति अनूप,
केकै निश्चे जाणजो, ए कपटवृत्ति रूप । ७ ।
त्रिगुणरूप विवेक मुरतिमंत दशरथ राय,
तेनां पावन जश अद्भुत प्राक्रम, कहेतां पार न थाय । ८ ।
धनुर्विद्या विशारद, रणपंडित शस्त्रप्रवीण,
शब्दवेधी विचिक्षण, सहु शत्रु कीधा क्षीण । ९ ।
पण प्रजा नव थई रायने, कंई पुत्रपुत्री रूप,
जोबनपणुं चाल्युं वही, चिंता करे छे भूप, । १० ।

गये । तपःसाधना करके थोड़े दिनों में वे स्वर्गवास को प्राप्त हो गये । ३ । तब फिर नीति, धर्म के विवेक के अनुसार दशरथ राज्य किया करते । दया, सत्य और विवेक से वे प्रजा का पुत्र की तरह पालन किया करते । ४ । कैकेयी नामक एक राजकन्या थी; वह रूप में तो शुभ (सुन्दर) थी (परन्तु) उसका मन कपटी था । वह अति शक्तिशाली, परन्तु निर्दय थी । राजा दशरथ ने उससे विवाह किया । ५ । इसके सिवा राजा ने स्वयं सुमित्रा नामक नागकन्या से विवाह किया । उन्होंने अन्य सात सौ कन्याओं (लड़कियों) का भी वरण किया, जिनका रूप अति मनोहारी था । ६ । कौसल्या तो (साक्षात्) ज्ञान-कला थी, सुमित्रा (मानो) अद्भुत भक्ति (की ही मूर्त्ति) थी । (और) यह निश्चय समझो कि कैकेयी कपटवृत्ति का ही रूप (मूर्ति) थी । ७ । राजा दशरथ सत्त्व, रज और तम इन तीनों गुणों से युक्त (प्रत्यक्ष) मूर्तिमान विवेक थे । उनकी पवित्र कीर्ति और अद्भुत पराक्रम का वर्णन करने में पार (अन्त) नहीं आए । ८ । वे धनुर्विद्या विशारद, युद्ध-सम्बन्धी विद्या में पण्डित तथा शस्त्र-विद्या में प्रवीण थे । वे चतुर शब्दवेधी थे । उन्होंने सब शत्रुओं को दुर्बल (निस्तेज) बना डाला । ९ । परन्तु राजा दशरथ के पुत्र व पुत्री के रूप में कोई सन्तान नहीं (उत्पन्न) हुई । उनकी युवावस्था (जवानी) बीतती (ढलती) चली ।

शास्त्र पंडित एम कहे, पुत्र विना धिक संसार,
सूनुं मंदिर सुत विना, जेम दीप विण अंधार। ११।
प्राण विना ज्यम देह कहिये, नाथ विना ज्यम नार,
दया विण भक्ति जथा, ज्यम क्रिया विण आचार। १२।
शांति विना वैराग्य मिथ्या, संपत्ति धर्मरहित,
ज्ञान रहेणी विना जेवुं, सभा विण पंडित। १३।
वेदान्त विण ज्यम आत्मविद्या, बंधुरहित सनेह,
सतपात्र पाखे दान ज्यम, जळ विण सरोवर जेह। १४।
प्रजा ज्यम राजा विना, घृत लवण पाखे अंन,
राका विधु तरु फळ विना, संसार सुख निर्धन। १५।
हरिनाम-अंकित विना वाणी, मनोजय विण मुन्य,
पुत्र विना एम जाणजो, कुळ वंश सरवे शून्य। १६।

अतः राजा चिन्ता करते हैं (थे)। १०। शास्त्रों के ज्ञाता पण्डित यों कहते हैं—बिना पुत्र के (गृहस्थ के लिए) संसार धिक्कार करने योग्य (तिरस्कार करने योग्य) होता है। जैसे दीपक के बिना अन्धकार होता है, वैसे पुत्र (रूपी दीपक) के बिना गृह (रूपी मन्दिर प्रकाश से) शून्य अर्थात् दुःख रूपी अन्धकार से पूर्ण होता है। ११। जैसे प्राणों के बिना शरीर को व्यर्थ कहते हैं, जैसे पति के अभाव में नारी (शोभाहीन) होती है, जैसे भक्तिहीन दया (निरर्थक) होती है, जैसे पवित्र आचार के बिना करनी अर्थहीन होती है, वैसे ही पुत्रहीन गृह निरर्थक होता है। १२। जैसे (आत्मिक) शान्ति के अभाव में वैराग्य मिथ्या होता है, धर्म के बिना धन निरर्थक होता है, जैसे बिना पवित्र आचार के (जीवन) व्यर्थ होता है, जैसे पण्डितों के अभाव में सभा अर्थहीन होती है, वैसे ही पुत्र-हीन घर व्यर्थ होता है। १३। जैसे आत्मविद्या के अभाव में वेदान्त (का ज्ञान) व्यर्थ होता है, जैसे स्नेह के अभाव में बन्धु का होना व्यर्थ होता है, जैसे सत्पात्र को छोड़कर अन्य को दिया हुआ दान और जल के अभाव में सरोवर (का अस्तित्व) निरर्थक होता है, वैसे ही पुत्रहीन गृह व्यर्थ होता है। १४। (सुयोग्य) राजा के बिना प्रजा, घी और नमक के बिना अन्न, चन्द्र के बिना रात्रि, फल के बिना वृक्ष, धनहीन व्यक्ति के लिए संसार-सुख—ये सब जैसे अर्थहीन होते हैं, वैसे ही संतान-हीन गृह व्यर्थ होता है। १५। भगवान् के नाम से अंकित न हुई वाणी निरर्थक होती है। मन पर विजय (मनोनिग्रह) के बिना मुनि (का जीवन) व्यर्थ होता है। उसी प्रकार ऐसा समझो कि बिना

एम राय दशरथ करे चिन्ता, पुत्र न थयो पेट,
एक दिवस नृपने निद्रामांहे स्वप्न आव्युं नेह । १७ ।
जाणे बे पुरुष एक स्त्री मारी, स्वप्नामां निरधार,
झबकीने जाग्या रायजी, करता ते मन विचार । १८ ।
प्रात:काळे वसिष्ठ गुरुने कही राये वात,
में त्रण जणनी स्वप्नमांहे करी शस्त्रे घात । १९ ।
त्यारे गुरु कहे भविष्य आगळ, थवानुं छे जाण,
पछी शांति अरथे राय दशरथे, कर्युं पुण्य प्रमाण । २० ।
केटला दिन वीत्या पछी, मृगया गया वन राय,
कोई मृग हाथे नव चढ्यो, त्यारे दूर पंथे जाय । २१ ।
ते वनमांहे निशा पडी, त्यारे विमास्युं मनमांहे
एक सरोवरथी दूर, तरुवर तळे बेठा त्यांहे । २२ ।
ते समे ब्राह्मण श्रवण नामे, वृद्ध अंध मातपिताय,
ते फरे तीरथ-अटण करतो, धरि कावड काय । २३ ।
त्यारे तम निशामां तृषा लागी, वृद्धने तेणी वार,
कावड सर उपकंठ मूकी, गयो भरवा वार । २४ ।

पुत्र के कुल, वंश—सब शून्य हो जाता है। १६। राजा दशरथ इस प्रकार चिन्ता करते है (थे); (क्योंकि) सचमुच उनके कोई पुत्र नहीं (उत्पन्न) हुआ। (ऐसी स्थिति में) एक दिन नींद में राजा को एक स्वप्न आया (राजा ने स्वप्न देखा)। १७। समझो कि उन्होंने निश्चय ही सपने में दो पुरुषों को और एक स्त्री को मार डाला। (यह देखने पर) राजा चौंककर जागृत हो गये। वे मन में सोचते रहे। १८। सबेरे राजा ने गुरु वसिष्ठ से यह बात कही कि मैंने स्वप्न में शस्त्र से तीन लोगों का वध किया है। १९। तब गुरु कहते हैं कि आगे भविष्य में ऐसा होनेवाला है–यह जान लो। तदनन्तर राजा दशरथ ने (अरिष्ट की) शान्ति के लिए (शास्त्रों से) प्रमाणित पुण्यप्रद अर्थात् शुभ कर्म किया। २०। कितने ही (कुछ) दिन बीत जाने के बाद राजा दशरथ शिकार के लिए वन में गये। कोई मृग (पशु) उनके हाथ नहीं आया, इसलिए वे मार्ग में आगे दूर गये। २१। उन्हें वन में रात हो गयी; इसलिए वे मन में सोच में पड़ गये। तब वे एक सरोवर से कुछ दूर पेड़ के तले बैठ गये। २२। उस समय श्रवण नामक एक ब्राह्मण अपने बूढ़े और अन्धे माता-पिता को काँवर में रखकर तीर्थ-यात्रा करते हुए घूम रहा था। २३। तब उस समय अँधेरी रात में (उस)वृद्ध को प्यास लगी।

कमंडळमां जळ भर्यु, ते शब्द प्रगटचो त्यांहे,
त्यारे राये जाण्युं मृग को, आव्यो सरोवरमांहे । २५ ।
राये तत्क्षण बाण मूक्युं, शब्दवेधी जेह,
ते श्रवणने वाग्युं तदा, कही राम पडियो तेह । २६ ।
त्यारे दशरथ गया पासे, द्विज पडचो जे ठाम,
दीन थई कहे श्रवणने, में कर्यु अघटित काम । २७ ।
त्यारे श्रवण कहे जई पाओ जळ, मुज मातपिताने जाण,
ए वृद्धने तमे पाळ जो, एवुं कहेतामां गया प्राण । २८ ।
त्यारे कमंडळ लेई राय आव्या, वृद्ध केरी पास,
बोल्या विना जळ आपियुं त्यारे, थयां चित्त उदास । २९ ।
अरे ! श्रवण क्यम नथी बोलतो? तुंने क्रोध नहि कोई दीन,
जळपान नहि करीए अमो, बोल्या विना चित्त भिन्न । ३० ।
त्यारे राय वळतुं बोलिया, में श्रवण मार्यो ठाम,
अज तणो हुं पुत्र दशरथ, अयोध्या मुज गाम । ३१ ।

तो काँवर को सरोवर के तट पर रखकर वह (श्रवण कमण्डलु में) पानी भरने (भरकर लाने) के लिए गया । २४ । कमण्डलु में (जब) पानी भरा, तो उससे शब्द (आवाज़) उत्पन्न हुआ । उससे (शब्द को सुनकर) राजा ने जाना कि कोई मृग (पशु) सरोवर में आ गया है । २५ । राजा ने तत्क्षण शब्दवेधी बाण चलाया, तो वह श्रवण को लग गया और वह (श्रवण) 'राम' कहकर पड़ गया । २६ । तब वह ब्राह्मण जिस स्थान पर पड़ा था, (उसी स्थान पर) राजा दशरथ (उसके) पास गये । उन्होंने दीन (व्याकुल) होकर श्रवण से कहा—'मैंने (यह) अनुचित काम किया' । २७ । इस पर श्रवण ने कहा—'जाकर मेरे माता-पिता को पानी पिलाओ । तुम उन वृद्धों का पालन करो' । ऐसा कहते हुए, उसके प्राण निकल गये । २८ । इससे राजा दशरथ कमण्डलु लेकर (उन) वृद्धों के पास आये और बिना (कुछ) बोले उन्हें जल दिया तो उनके मन उदास हो गये । २९ । (तब उन वृद्धों ने कहा)—'ओह ! श्रवण ! तुम क्यों नहीं बोलते हो ? तुम्हें किसी भी दिन (समय) क्रोध नहीं आया । हम जलपान नहीं करते (करेंगे) (क्योंकि) बिना बोले (एक दूसरे के) चित्त अलग हो जाते हैं अथवा मन टूट जाते हैं' । ३० । तब बाद में राजा बोले—'मैंने श्रवण को मार डाला । मैं अज (राजा) का पुत्र दशरथ हूँ और मेरा स्थान

में अजाणे कर्म आचर्युं, मृग वरांसे करी आज,
हुं पुत्र थई पाळीश तमने, पीओ जळ महाराज । ३२ ।
एवुं सांभळी अति दुःखमां, आक्रंद मांड्युं अपार,
अरे ! श्रवण जेवो पुत्र क्यांथी, प्रगटशे संसार ! । ३३ ।
ज्यम लक्ष्मी नारायण तणी, सेवा करे अनुदिन,
एम मातापितानी सेवा करी, ए पुत्रने छे धन्य ! । ३४ ।
जेणे अमारी सेवा न करी, धरी मनुष्यादेह,
चंडाळ तेने जाणवो, महापुत्र पापी तेह । ३५ ।
तेनुं ज्ञान-ध्यान वळो सहु, जप तप क्रिया अनुष्ठान,
चतुराई विद्या व्यर्थ तेनी, श्रवण, अध्ययन दान । ३६ ।
वेदविद्या भण्यो मिथ्या, सकळ शास्त्र पुराण,
तेने तीरथ पावन नव करे, थाय वृथा साधन जाण । ३७ ।
मातपिताने उवेखी, शुभ करम करता अन्य,
ते धरम अधरम जाणजो, सेवा समुं नहि पुण्य । ३८ ।
एवुं कही धरणी ढळ्या, मुर्च्छा थई तव आप,
अंतकाळे रायने, बे जणे दीधो शाप । ३९ ।

अयोध्या है । ३१ । आज मैने मृग (पशु) के भ्रम (धोखे) में आकर अनजाने में यह कर्म किया । मैं तुम्हारा पुत्र होकर (पुत्र के रूप में रहकर) तुम्हारा पालन करूँगा । महाराज, (अब) पानी पिओ' । ३२ । ऐसा सुनकर अत्यधिक दुःख में (के कारण) उन्होंने बहुत ही रुदन शुरू किया । उन्होंने कहा—' हाय ! श्रवण जैसा पुत्र संसार में कहाँ से प्रकट (उत्पन्न) होगा ? । ३३ । उसने रात दिन (अपने) माता-पिता की लक्ष्मी-नारायण की-सी सेवा की । धन्य है ऐसा पुत्र ! । ३४ । जिसने मनुष्य-देह धारण करके हमारी (जैसी अपने माता-पिता की) सेवा नहीं की, उसे चण्डाल समझो—उस पुत्र को महापापी समझो । ३५ । उसका सब ज्ञान, ध्यान जल जाए । उसका जप, तप, क्रियाकर्म, अनुष्ठान व्यर्थ हैं । उसकी चतुराई, विद्या, श्रवण, अध्ययन, दान–सब व्यर्थ है । ३६ । उसके द्वारा वेदविद्या, सब शास्त्र, पुराण का सीखा-पढ़ा (हुआ) मिथ्या है । उसे तीर्थ (- क्षेत्र का भ्रमण) पावन नहीं करता है । यह समझो कि उसकी साधना व्यर्थ है । ३७ । माता-पिता की उपेक्षा कर जो अन्य शुभ कर्म करते है, उनके उस धर्मकर्म को अधर्म समझो । (माता-पिता

पुत्र-विजोगे प्राण तारा, जजो सत्य वचन,
एवुं कही बे मरण पाम्यां, राय कंप्या मन । ४० ।
दाह क्रिया कीधी ते तणी, दशरथे तेणी वार,
पछे अश्व आरूढ थई पोते, आव्या नग्रमोझार । ४१ ।
उत्तर क्रिया करी वृद्धनी, आप्यां अपरिमित दान,
राय हरख्या मन विषे, मारे थशे संतान । ४२ ।
ए शापने वर मानियो, जे पुत्र थाशे सत्य,
वसिष्ठ गुरुने वात कही, द्विज त्रैण पाम्यां मृत्य । ४३ ।
ए करमनी छे अकळगति, क्यां श्रवण-दशरथ योग ?,
लख्युं भविष्य मटे नहि, सुख-दुःख मृत्यु रोग । ४४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रोग भोग ने सुख दुःख मृत्यु, ए लख्या प्रमाणे थाय रे,
माटे कल्पना सरवे तजीने, भजो वैकुंठराय रे । ४५ ।

* * *

की) सेवा के समान अन्य कोई पवित्र कर्म नहीं है'। ३८। ऐसा कह कर वे धरती पर लुढ़क गये। उन्हें मूर्च्छा (बेहोशी) आ गयी। अन्तकाल में उन दो जनों ने राजा को शाप दिया— । ३९। '(हमारा) यह कथन सत्य है कि तुम्हारे प्राण पुत्रवियोग से जाएँ'। ऐसा कहकर वे मृत्यु को प्राप्त हो गये; तो राजा का मन काँप उठा । ४० । उस समय दशरथ ने उनकी दाह-क्रिया (सम्पन्न) की। बाद में घोड़े पर सवार होकर वे स्वयं अपने नगर में आ गये । ४१ । उन्होंने उन (वृद्धों) की उत्तर-क्रिया (सम्पन्न) करके अपरिमित दान दिया। (फिर भी) राजा मन में (इस विचार से) आनन्दित हो गये कि मेरे सन्तान (उत्पन्न) होगी । ४२ । यदि सचमुच पुत्र उत्पन्न हो जाए, तो इस शाप को वर समझो। फिर राजा ने गुरु वसिष्ठ से यह बात कही कि (उनके हाथों) तीन ब्राह्मण मृत्यु को प्राप्त हो गये हैं । ४३ । कर्म की यह गति अगम्य है। कहाँ श्रवण और दशरथ का यह योग? सुख, दुःख, मृत्यु, रोग आदि सम्बन्धी जो भविष्य में लिखा है, वह नहीं मिटता (टलता) । ४४ ।

रोग, भोग और सुख-दुःख, मृत्यु—वह सब लिखे अनुसार होता है। इसलिए सब कल्पना त्याग कर वैकुण्ठराज भगवान् की भक्ति करो । ४५ ।

* * *

अध्याय–१० (दशरथ द्वारा कैकेयी को वर-प्रदान)

राग सामेरीनी चाल टूंकडी

(हवे) असुर तणो राजा वृषपरवा, प्राक्रमवंत अमोघ,
तेणे शुक्राचारज पासे कराव्या, वृष्टिबंध प्रयोग । १ ।
मेघतणुं आकर्षण कीधुं, आणी मनमां गर्व,
अनावृष्टि थई बार वर्षनी, पीडा पाम्युं सर्व । २ ।
गौब्राह्मणनी आदे प्रजा सहु पाम्युं दु:ख अपार,
यज्ञयाग सहु बंध थया, ने वरत्यो हाहाकार । ३ ।
(त्यारे) इन्द्रे युद्ध घणा दिन कीधुं वृषपरवानी साथ,
(पण) नव जितायो असुर महाबळियो, शुक्रतणो शिरहाथ । ४ ।
बह्माए कह्युं मघवापतिने, ए तुजथी नहि जिताय,
(जो) दशरथरायने तेडी लावे तो दानव प्राजे थाय । ५ ।
(त्यारे) अवधपुरीमां इन्द्रे आवी, जाच्या दशरथराय,
अजनंदन त्यां तत्पर थईने, युद्ध करवाने जाय । ६ ।
(त्यारे) केकै कहे मुजने साथे तेडो, मारे जोवुं छे युद्ध,
जोउं तमारुं बळ छे केवुं, प्राक्रम विद्या विशुद्ध । ७ ।

अध्याय–१० (दशरथ द्वारा कैकेयी को वर-प्रदान)

अब (बात यह है कि) असुरों का राजा वृषपर्वा अद्भुत पराक्रमी था। उसने शुक्राचार्य द्वारा वृष्टिबंध नामक प्रयोग कराया। (ऐसा प्रयोग कि जिससे वर्षा नहीं होती, सूखा-अकाल पड़ जाता है)। १। उन्होंने मन में गर्व करते हुए मेघों को आकृष्ट किया। इससे बारह वर्षों तक अनावृष्टि (वर्षा का अभाव) हो गयी। इससे सब पीड़ित हुए। २। गायें, ब्राह्मण आदि सब प्रजा अपार दुःख को प्राप्त हुई। यज्ञ-याग सब बन्द हो गये और हाहाकार मच गया। ३। तब इन्द्र ने वृषपर्वा के साथ बहुत दिन युद्ध किया। परन्तु वह महाबली असुर जीता नहीं गया; क्योंकि उसके मस्तक पर शुक्राचार्य का (वरद) हस्त था। ४। (तदनन्तर) ब्रह्मा ने इन्द्र से कहा—वह (वृषपर्वा) तुमसे नहीं जीता जा सकता। यदि दशरथ को बुला लाओ, तो वह दानव पराजित हो जायगा। ५। तब अयोध्या में आकर इन्द्र ने दशरथ राजा से याचना (विनती) की। तब अजनन्दन दशरथ तैयार होकर युद्ध करने के लिए चले। ६। तब कैकेयी ने कहा कि मुझे साथ ले चलो, मुझे युद्ध देखना है, मैं देखूँगी कि तुम्हारा कैसा बल है, पराक्रम कैसा है,

केकैने लई रथमां बेठा, चाल्या त्यांथी नरेश,
बृहस्पति आदि सकळ देवशुं, आव्यो साथ सुरेश। ८।
सिंधु पार जईने मांड्युं, जुद्ध करवा तेणी वार,
वृषपरवानी साथे वढियो, दशरथराय अपार। ९।
दारुण जुद्ध थयुं तेणी वेळा, मार्या असुर अनंत,
सैन्य सहित वृषपरवानो, आण्यो राये अंत। १०।
(त्यारे) वृषपरवानो पक्ष करीने, शुक्राचारज आव्या,
(कंई) असुरनी सेना शेष हती ते, सरवे साथे लाव्या। ११।
असुरगुरु त्यां मंत्र भणीने मूके बाण अपार,
दशरथ राजा शर मूकीने, छेदे तेणी वार। १२।
पछे शुक्रने भूपतिए अकळाव्या, सेन सकळ संहार्युं,
(त्यारे) द्विजवरने अति क्रोध चढयो, जाणे रायने हमणां मारुं। १३।
पछी पांच बाण महा प्रौढां मार्यां, असुरगुरु निरधार,
दशरथनो रथ पाछो हठाव्यो, बार धनुष तेणी वार। १४।
धरी भांगी दशरथना रथनी, नमियो पृथ्वी मांहे,
त्यारे केकैये निज कर घाली, रथ ऊभो राख्यो त्यांहे। १५।

(युद्ध-शास्त्र) विद्या कैसी शुद्ध है। ७। राजा (दशरथ) कैकेयी को लेकर रथ में बैठे और वहाँ से चले। बृहस्पति आदि सब देवों की तरह इन्द्र भी उनके साथ आये। ८। उस समय समुद्र के पार जाकर वे युद्ध करने लगे। दशरथ राजा ने वृषपर्वा के साथ घोर युद्ध किया। ९। उस समय भीषण युद्ध हुआ और (उसमें) उन्होंने अनगिनत असुरों को मार डाला। राजा वृषपर्वा को सैन्य-सहित प्राणों के अन्त तक लाये (अर्थात् उन्हें मार डाला)। १०। तब वृषपर्वा का पक्ष लेकर शुक्राचार्य आये। कुछ असुरों की सेना, जो शेष थी, सब साथ में ले आये। ११। तब असुरों के गुरु (शुक्राचार्य) ने मंत्र पढ़कर असंख्य बाण चलाये। दशरथ राजा ने बाण चलाकर उस समय उन्हें काट डाला। १२। बाद में शुक्राचार्य को राजा ने व्याकुल कर दिया। तब ब्राह्मणश्रेष्ठ (शुक्राचार्य) को बहुत क्रोध आया। वे मानते हैं—मैं राजा को अभी मारता हूँ (मार डालूँगा)। १३। तदनन्तर असुरों के गुरु ने वेग से पाँच बड़े वाण चलाये। और उस समय दशरथ के रथ को बारह धनुष दूर हटा दिया। १४। दशरथ के रथ का धुरा टूट गया, (जिससे वह) रथ ज़मीन में धँस गया। तब कैकेयी ने अपना हाथ

एवुं बळ छे अबळानुं ते, नथी जाणता राय,
तदाकार युद्धमांहे थया, कोणे सन्मुख नव रहेवाय । १६ ।
दशरथ राजा कहे हवे ए ब्राह्मणने जो मारुं,
तो ब्रह्महत्यानुं पातक बेसे, मनमां एम विचार्युं । १७ ।
पछी मुगट उडाड्यो शीश विषेथी, मूकी तीक्षण वाण,
त्यारे शुक्राचारज नाठा त्यांथी, युद्ध मूकी निरवाण । १८ ।
जय-जयकार थयो तेणी वेळा, हरख्या देव अपार,
जय पाम्या शत्रु संहारी, अवधपति निरधार । १९ ।
एवे राये केकै सामुं जोयुं, विस्मे थया नरनाथ,
रथचक्रमां धरी ठेकाणे दीठो राणीनो हाथ । २० ।
प्रसन्न थई अजनंदन बोल्या, माग्य माग्य वरदान,
तें मुजने रणमां जश आप्यो, राख्युं मारुं मान । २१ ।
(माटे) इच्छा होयते माग हुं आपुं, बे वर तुजने आज,
राणी कहे हुं मागीश ज्यारे पडशे मारे काज । २२ ।
वचन रायनुं लीधुं पोते, राणी हरखी मन,
देवे जय-जयकार कर्यो, एम जय पाम्या राजन । २३ ।

डालकर उससे (उसके आधार पर) रथ को खड़ा रक्खा । १५ । राजा यह नहीं जानते थे कि (इस) अबला (स्त्री) का ऐसा बल है । वे तो युद्ध में तल्लीन हुए । उनके सामने कोई खड़ा नहीं रह पाता । १६ । राजा दशरथ ने कहा—' यदि अब मैं इस ब्राह्मण को मार डालूँ, तो (मुझे) ब्रह्महत्या का पाप लगेगा ' । उन्होंने मन में ऐसा विचार किया । १७ । और बाद में तीक्ष्ण बाण चलाकर उन्होंने (उनके) मस्तक पर से मुकुट को उड़ा दिया । तब शुक्राचार्य सचमुच युद्ध छोड़कर वहाँ से चले गये । १८ । उस समय जय-जयकार हो गया । देव बहुत हर्ष-विभोर हो गये । निश्चय ही अयोध्यापति दशरथ ने शत्रु का संहार कर जय प्राप्त की । १९ । राजा ने कैकेयी को सामने देखा तो वे विस्मित हो गये । उन्होने रथ के पहिये में धुरे के स्थान पर रानी का हाथ देखा । २० । अजनन्दन दशरथ प्रसन्न होकर बोले—' वरदान माँगो, वरदान माँगो । तुमने मुझे रण में सफलता दिलायी और मेरे मान (प्रतिष्ठा) की रक्षा की । २१ । इसलिए जो इच्छा हो, सो माँग लो । मैं तुमको आज दो वर देता हूँ ' । (इसपर) रानी ने कहा—' जब मुझे काम पड़े (आवश्यकता होगी) तो मैं माँगूँगी ' । २२ । राजा का (से) अभिवचन लेकर रानी मन में आनन्दित हो गयी । देवों ने जय-जयकार

इंद्रे आभूषण बहु आप्यां, वस्त्र अनोपम सार,
आशिष दीधी वाचस्पतिए, दशरथने तेणी वार । २४ ।
इंद्रे पूछ्युं राय तमारे, शां छे घेर संतान ?
(त्यारे) दशरथरायने दुमो चाल्यो, दीन थया दुःखवान । २५ ।
(त्यारे) बृहस्पति कहे चिंता नव करशो, भूप छो भाग्यवान,
तमारा पुत्र थई अवतरशे, पोते श्रीभगवान । २६ ।
विभांडिक ऋषिनो पुत्र छे श्रृंगी, मृगीथकी उत्पन्न,
पुत्रेष्टि जग्न करावो ते पासे, छे ब्रह्मनिष्ठ मुनिजन । २७ ।
तेनी स्त्री-पुरुषनुं भान नथी पण, गान थकी वश थाय,
(बाकी) अन्य उपाये ते न आवे, सांभळो साचुं राय । २८ ।
(त्यारे) दशरथ कहे तमो अपसरा मोकली, मुनिवर मोह पमाडो,
ज्यम त्यम करने लावो तेने, अयोध्यामां पहोंचाडो । २९ ।
एवुं कही राये आज्ञा मागी, इंद्र तणी तेणी वार,
केकै साथे रथमां बेसी, आव्या नगर मोझार । ३० ।
वृषपरवाने मार्यो त्यारे, मुक्त थयो परजन्य,
वृष्टि थई सहु सृष्टिमांहे, टळिया दुःखना दिन । ३१ ।

किया । इस प्रकार राजा दशरथ विजयी हुए । २३ । इन्द्र ने (राजा दशरथ को, बहुत आभूषण और अनुपम सुन्दर वस्त्र दिये । उस समय बृहस्पति ने दशरथ को आशीर्वाद दिया । २४ । फिर इन्द्र ने पूछा—'राजन्, तुम्हारे घर में क्या सन्तान है ?' तब दशरथ राजा को बेचैनी अनुभव हो गयी । वे व्याकुल और दुखी हो गये । २५ । तब बृहस्पति ने कहा—'राजन्, चिन्ता न करो । तुम भाग्यवान हो । स्वयं श्रीभगवान् तुम्हारे पुत्र होकर अवतरित होंगे । २६ । विभाण्डिक ऋषि का मृगी (हिरनी) से उत्पन्न श्रृंगी नामक पुत्र है । उसके द्वारा पुत्रेष्टि (नामक) यज्ञ कराओ; वह ब्रह्मनिष्ठ मुनि है । २७ । उसे स्त्री-पुरुष (के अन्तर) का भान नहीं है; परन्तु वह गान से वश होगा । हे राजन्, यह सत्य सुनो कि किसी अन्य उपाय से वह नहीं आएगा' । २८ । तब दशरथ ने कहा—'तुम अप्सरा को भेजो और (उस) मुनि को मोहित करो । ज्यों-त्यों करके उसे लाओ और अयोध्या में पहुँचा दो' । २९ । ऐसा कहकर राजा ने इन्द्र से आज्ञा माँगी और कैकेयी के साथ रथ में बैठकर वे नगर (अयोध्या) में आ गये । ३० । उन्होंने वृषपर्वा को मार डाला; पर्जन्य (वर्षा का देवता) मुक्त हो गया । समूची सृष्टि में वर्षा हो गयी, (और)

अपसराने पछे आज्ञा आपी, इंद्रे मोकली तेह,
रंभा नामे चतुरा चाली, चतुर-शिरोमणि जेह । ३२ ।

वलण (तर्ज़ वदलकर)

चतुर-शिरोमणि नायका, वेगे तत्पर थाओ रे,
शृंगी ऋषिने मोह पमाडी, अयोध्यामां लेई जाओ रे । ३३ ।

दुःख के दिन टल गये । ३१ । अनन्तर अप्सरा को आज्ञा देकर इन्द्र ने उसे भेज दिया । तब चतुरों में शिरोमणी चतुर रम्भा नामक अप्सरा (वहाँ से) चली । ३२ ।

चतुर शिरोमणि नायिका (रम्भा) शीघ्र तैयार हो गयी । शृंगी ऋषि को मोहित करके वह उन्हें अयोध्या में ले गयी । ३३ ।

* * *

अध्याय–११ (शृंगी ऋषि का अयोध्या में आगमन)

राग मारु

आपी आज्ञा निर्जर भूप, चाली अप्सरा अद्‌भुत रूप,
महावनमां तत्क्षण आवी, साथे ऋतु वसंतने लावी । १ ।
वन शोभा तणो नहि पार, फूली वनस्पति भार अढार,
जाई जूई केतकी महेके, त्यां गुलाब ने चंपक बहेके । २ ।
फूल्यां ब्रह्मद्रुम ने रसाळ, रंभा अशोक ताल तमाल,
बोले हंस, कारंडव मोर, कोकिला शुक मेना चकोर । ३ ।

अध्याय–११ (शृंगी ऋषि का अयोध्या में आगमन)

देवों के राजा (इन्द्र) ने आज्ञा दी और अद्‌भुत रूपवाली (रम्भा नामक) अप्सरा (वहाँ से) चली । वह तत्क्षण महावन में आ गयी । वह साथ में वसन्त ऋतु को (भी) लायी । १ । उस वन की शोभा का कोई पार नहीं था । वनस्पतियाँ ढेर की ढेर फूली थीं । जाही, जूही, केतकी, (केवड़ा) महक रही हैं । वहाँ गुलाब और चम्पा महक रहे है । २ । ब्रह्मवृक्ष, आम्रवृक्ष (आम), रम्भा (केला), अशोक, ताल, तमाल फूले थे । (वहाँ) हंस, कारण्डव (वतख), मोर, कोकिल, शुक (तोता), मैना, चकोर पक्षी वोल (गा) रहे हैं । ३ ।

चकवा चकवी चक्रवाक, बपैया मारे पियुने हाक,
सरोवरमां फूल्यां कुंज, मत्त मधुकर करता गुंज । ४ ।
मृगजूथ मळीने फरतां, तृण अंकुर लीलां चरतां,
तरु सफळ सघन गंभीर, शीतमंद सुगंध समीर । ५ ।
चारे पासे गिरि छे अगम्य, ते मध्ये मुनि आश्रम रम्य,
विभांडिक नहि स्थळ मांहे, शृंगी बेठा एकला त्यांहे । ६ ।
धरे ध्यान ते आसन वाळी, एक ब्रह्मनी साथे ताळी,
जेने सरवे विश्व समान, नथी स्त्री-पुरुषनुं भान । ७ ।
ते आश्रम केरी पास आवी, अप्सरा तेज प्रकाश,
मृगलोचनी भ्रूधनु वंक, स्तन पीन सिंहकटी लंक । ८ ।
चंद्रवदनी चंपकवरणी, मंदहास्य करे गति हरणी,
हावभाव अति रस लावे, कुच-मंडलने कंपावे । ९ ।
आभूषण आपे अंगे, चीरहार चोळी नव रंगे,
कर कामिनीए ग्रही वीणा, करे गान मधुर स्वर झीणा । १० ।

चकवा, चकवी (चक्रवाक-चक्रवाकी), पपीहा अपने प्रिय को पुकारते हैं। सरोवर में कमल खिले हैं; मतवाले भौंरे गुंजारव करते हैं। ४। हिरन समूह बनाकर (मिलकर) घूमते हैं और हरी ताजी घास के अंकुर चरते हैं। वृक्ष फलयुक्त हैं, घने और गम्भीर (बड़े) हैं और हवा सुगन्धियुक्त तथा शीतल और मन्द बह रही है। ५। चारों ओर दुर्गम पर्वत हैं। उनके मध्य में मुनि का रम्य आश्रम है। उस स्थान पर (उस समय) विभाण्डिक (ऋषि) नहीं थे; वहाँ शृंगी अकेले बैठे हुए थे। ६। जिन्हें समूचा विश्व एक-सा (समान) था, स्त्री-पुरुष (के भेद) का भान नहीं था, ऐसे वे शृंगी ऋषि स्वच्छ आसन पर ध्यान लगाये हुए है; केवल ब्रह्म में वे तल्लीन थे। ७। वह तेजस्विनी, रूप के प्रकाशवाली अप्सरा उस आश्रम के पास आयी। वह मृगनयनी थी; उसकी भौंहें धनुष्य-सी टेढ़ी थीं। उसके स्तन पुष्ट थे। वह सिंह-की सी पतली कमरवाली थी। ८। वह चन्द्रमुखी और चम्पा के समान वर्णवाली अप्सरा है। वह मन्द-मन्द मुस्कुराती है। वह गति में (मानो) हिरनी है। उसके हाव-भाव अतिशय आनन्द (रस) उत्पन्न करते हैं और स्तन-मण्डल को हिलाते हैं। ९। उसने शरीर पर आभूषण तथा नव-नव रंग के वस्त्र, हार और चोली पहनी है। उस कामिनी ने हाथ में वीणा ली है। जिसके गायन (के प्रभाव) से सूर्य स्थिर हो जाता है, शेषनाग अपार गति से डोलने लगता है, ऐसी वह रम्भा मधुर स्वर में गा रही है। (उसे सुनकर)

जेना गानथी दिनकर थंभे, फणी डोले अनंत असंभे,
मृगनुं जूथ आवी मळियुं, थया तन्मय भान ज टळियुं । ११ ।
मुनि श्रवण पड्युं ते गान, नेत्र ऊघड्यां छूट्युं ध्यान,
छे मृगथकी उत्पन्न, माटे नादे मोह्या मुनिजंन । १२ ।
उठी बारणे आव्या चाली, दीठी रंभा रूपरसाळी,
मन जाण्युं को आव्या मुन्य, मुजने करवा पावन । १३ ।
नथी नर-नारीनुं भान, सघळे एक दृष्टि समान,
धसी आव्या तेनी पास, मनमां आणी उल्लास । १४ ।
करी प्रदक्षिणा पाये लाग्या, त्रिये आलिंगी अनुराग्या,
धन्य दिवस घडी महाराज, मा'नुभाव पधार्या आज । १५ ।
आवो रूडो तमारो वेश, क्यांथी आव्या रहो कोण देश?
कोण वनमां आचरो तप, कोण गुरु शो मंत्रनो जप ? । १६ ।
हसीने बोली तव रंभा, तपनुं स्थळ स्वर्ग आ रंभा,
गुरु मन्मथ जप मोह, मंत्र रति आसन तपनुं तंत्र । १७ ।
पंचबाण अमारो प्रयोग, समाधिसुख अंग-संयोग,
एवुं वचन सुणी मुनि त्यांहे, तेडी लाव्या आश्रममांहे । १८ ।

मृगों का समूह इकट्ठा हुआ और वे मृग तल्लीन हो गये, उनका भान भूल गया । १०-११ । वह गायन मुनि के कानों पर आया, तो उनकी आँखें खुल गयी, उनका ध्यान छूट गया । वे मृगी से उत्पन्न हुए हैं, इसलिए उस नाद से वे मुनि मोहित हो गये । १२ । उठकर वे दरवाज़े के पास चले आये तो उन्हें सुन्दर रूपवती रम्भा दिखायी दी । उन्हें मन मे ऐसा लगा कि मुझे पवित्र करने हेतु ये कोई मुनि (ही) आये (है) । १३ । उन्हें पुरुष और स्त्री (के भेद) का भान नही है । उनकी दृष्टि में सब एक समान है । मन में उल्लसित होकर वे उस (रम्भा) के पास आये । १४ । प्रदक्षिणा करके वे उसके पाँव लगे । उस स्त्री के आलिंगन करने पर वे (मन में उसके प्रति) अनुरक्त हो गये । (उन्होंने कहा—) 'महाराज, यह दिवस धन्य है ! यह घड़ी धन्य है, जब तुम महानुभाव पधारे । १५ । आओ, तुम्हारा वेश सुन्दर है । तुम कहाँ से आये ? तुम किस देश मे रहते हो ? किस वन मे तप करते हो ? तुम्हारे कौन गुरु है ? तुम किस मंत्र का जाप करते हो ?' । १६ । तव रम्भा हँस कर बोली—'यह मै रम्भा हूँ । स्वर्ग मेरे तप का स्थान है । कामदेव (मेरे) गुरु है । मेरे लिए जप है मोह मंत्र का, और रति का आसन तप का तंत्र (पद्धति) है । १७ । हमारा प्रयोग पंचबाण (काम)

आप्युं आसन भाव समान, करी स्वागत आदरमान,,
पासे लावी मूक्यां वनफळ, कमंडळु भरीने जळ । १९ ।
फळ आरोगो मुनिजंन, त्यारे अप्सरा बोली वचन,
ए फळ आरोगुं नहि, जुओ अम फळ छे आ सही । २० ।
एवुं कहीने काढ्युं पकवान्न, घृतपक्व पीयूष समान,
ते मुनिने कराव्युं अशन, लाग्युं स्वाद थया प्रसन्न । २१ ।
धन्य मुनिवर तम अवतार, आवा फळनो करो नित्य आहार,
तमारुं तप आसन योग, देखाडो मुंने ते करी भोग । २२ ।
मारे आश्रम रहो हवे तमो, नित सेवा करीशुं अमो,
एम रंभा रही आश्रम, करे कामकळा अनुक्रम । २३ ।
निज अमरत भोजन आहार, मुनिने करावे निर्धार,
शयन करतां एक आसन, मुनिनुं थयुं चंचळ मन । २४ ।
रमे रति सुख आसने भेद, काम व्याप्यो टाळ्यो निर्वेद,
माया ईश्वरनी बळवान, भूल्या जोग समाधि ध्यान । २५ ।

का है, अंग-संयोग हमारे लिए समाधि-सुख है'। उसके ऐसे वचन सुनकर (शृंगी) मुनि उसे वहाँ से अपने आश्रम में ले आये। १८। समान (स्त्री-पुरुष के प्रति एक-से) भाव से मुनि ने उसका स्वागत एवं आदर-सम्मान करके उसे आसन दिया। (उसके) पास में वन्य फल लाकर उसे दिये और कमण्डलु (में) भरकर पानी दिया। १९। (और कहा—) 'हे मुनि, (ये) फल खाओ।' तब (वह) अप्सरा बोली—'मैं ये फल नहीं खाती। देखो, हमारा सच्चा फल यह है'। २०। ऐसा कहकर उसने पक्वान्न निकाल लिया, जो घी में पकाया हुआ (और) अमृत के समान (मधुर) था। उसने उसे मुनि शृंगी को खिलाया। उसमें उन्हें स्वाद आया—अर्थात् उन्हें वह रुचिकर लगा और वे प्रसन्न हो गये। २१। (उन्होंने कहा—) 'हे मुनिवर, तुम्हारा अवतार (जीना) धन्य है, जो तुम ऐसे फल का आहार नित्य करते हो। हे मुनि, मुझे अपना तप, आसन और योग का (स्वयं) भोग (प्रयोग) करके दिखाओ। २२। अब तुम मेरे आश्रम में रहो। हम (तुम्हारी) नित्य सेवा करेंगे'। इस प्रकार रम्भा (उनके) आश्रम में रही। वह कामकला का उपक्रम आरम्भ करती है। २३। वह निश्चय ही मुनि शृंगी को अपने अमृत (के समान मधुर) भोजन का आहार कराती। वे (दोनों) एक आसन (शय्या) पर सोया करते। (इससे) मुनि का मन चंचल हो गया। २४। वे आसन (शय्या) पर रति सुख का आनन्द मनाते। उन्हें काम व्याप्त

बळवान इंद्रिनुं ग्राम, मन आकर्ष्युं अभिराम,
त्रिया मांहे थया तदाकार जाण्यो जग्त तणो व्यवहार । २६ ।
एम वही गया केटला दिन, आव्या विभांडिक मुनिजन,
रंभाए जाण्युं देशे शाप, सुत भ्रष्ट कर्यो में आप । २७ ।
एवुं जाणीने सामी आवी, रही चरणे शीश नमावी,
हुं छुं शरण तमारे स्वामी, आवी छुं परमारथ कामी । २८ ।
मुनि कहे, बाई तुं छे कोण ? शें कारणे अहीं आवी जाण,
अबळा कहे, सुणो महाराज, अयोध्याना दशरथराज । २९ ।
तेने पुत्र नथी उत्पन्न, ते माटे करवो छे जगन,
कह्युं बृहस्पतिए तेडी लावो, शृंगी पासे यज्ञ करावो । ३० ।
आपी आज्ञा मने सुरनाथ, शृंगीने मोकलो मारी साथ,
एवुं कहीने रही जेटले, शृंगी धाई आव्यो तेटले । ३१ ।
मुनिने पाये लाग्या उल्लास, पक्षी बोल्या वचन प्रकाश,
सुणो पिता कहुं वरतांत, आ मुनिवर मोटा महांत । ३२ ।

(अति प्रभावित) कर गया और उनकी शान्ति को नष्ट कर गया। ईश्वर की माया बलवती होती है। उससे वे मुनि योग, समाधि, ध्यान भूल गये। २५। इन्द्रियों का समूह बलवान् होता है। उसने सुन्दर (सरल) मन को मुग्ध-मोहित कर डाला। अतः वे मुनि स्त्री में एकाकार (एकात्म) हो गये और (इस प्रकार) जगत् के व्यवहार को समझ गये। २६। इस प्रकार कितने ही (बहुत) दिन बीत गये, तो विभाण्डिक मुनि (लौट) आये। (तब) रम्भा ने माना कि मैंने स्वयं (इनके) पुत्र को भ्रष्ट किया (है), अतः ये मुझे शाप देंगे। २७। ऐसा जानकर वह (उनके) सामने आयी और उनके चरणों में सिर नवाकर रही। (उसने कहा—) 'स्वामी, परमार्थ (कल्याण) की कामना करने वाली मैं तुम्हारी शरण में आयी हूँ'। २८। मुनि (विभाण्डिक) ने कहा—'हे स्त्री' तुम कौन हो ? किस कारण से यहाँ आयीं ?' (तब) उस स्त्री ने कहा—'महाराज, सुनो। अयोध्या के दशरथ राजा हैं। उनके (कोई) पुत्र उत्पन्न नहीं (हुआ) है, इसलिए (उन्हें) यज्ञ करना है। बृहस्पति ने (उनसे) कहा कि शृंगी ऋषि को लिवा ले जाओ और उनसे यज्ञ कराओ। २९-३०। (तब) मुझे इन्द्र ने आज्ञा दी। अतः शृंगी को मेरे साथ में भेज दो'। इतना वह कह ही रही थी कि शृंगी दौड़ते हुए (वहाँ) आ गये। ३१। वे मुनि विभाण्डिक के उल्लासपूर्वक पाँव लगे और बाद में प्रकट रूप में बोले—'पिताजी, समाचार सुनो। ये मुनिवर बड़े

योग आसन साधनवंत, फळ लाव्या छे स्वाद अनंत,
(त्यारे) मुनिए धरि जोयुं ध्यान, पुत्र भ्रष्ट थयो गयुं भान । ३३ ।
अबळाने जो दउं शाप, तो ए पुत्र मरे परिताप,
सर्वज्ञ विभांडिक जेह, मनमांहे विचार्युं एह । ३४ ।
अवतरवाना छे भगवंन, माटे लेई जवा देउं तंन,
ए पुत्र करावशे योग, थाशे निर्मळ जश महाभाग । ३५ ।
एवुं विचारी बोल्या मुन, सुण पुत्र कहुं ते वचन,
जाओ रंभानी साथे आज, करो नृप दशरथनुं काज । ३६ ।
कराओ पुत्रेष्टि जगंन, जाओ राखी धीरज मंन,
विभांडिकना सुणी वचन, रंभा लेई चाली मुनिजंन । ३७ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

मुनिवरने रंभा लेई आवी, अवधपुर मोझार रे,
शृंगीने जोई दशरथ हरख्या, स्वागत कीधुं अपार रे । ३८ ।

* * *

महान् हैं । ३२ । योग, आसन, साधना वाले (—के जानकार) हैं, वे अद्भुत रुचि वाले फल लाये हैं’। तब मुनि ने ध्यान-धारण करके देखा तो उन्हें भान हो गया कि पुत्र भ्रष्ट हो गया है । ३३ । उन्होंने सोचा—यदि इस स्त्री को शाप दूँ तो दुःख से यह पुत्र मरेगा । विभाण्डिक तो सर्वज्ञ थे । उन्होंने मन में ऐसा विचार किया । ३४ । भगवान् अवतरित होने वाले हैं; इसलिए पुत्र को ले जाने दूँ । यह पुत्र यज्ञ कराएगा तो इस महाभाग की निर्मल कीर्ति हो जाएगी । ३५ । ऐसा विचार कर मुनि बोले— ‘पुत्र सुनो, मैं तुमसे (यह) वचन कहता हूँ । आज तुम रम्भा के साथ जाओ और राजा दशरथ का कार्य (सम्पन्न) करो । ३६ । पुत्रेष्टि यज्ञ (सम्पन्न) कराओ । मन में धीरज रखकर जाओ’। विभाण्डिक के वचन सुनकर रम्भा शृंगी मुनि को ले चली । ३७ ।

रम्भा मुनिवर शृंगी को अयोध्या में ले आयी । शृंगी को देखकर दशरथ आनन्दित हो गये और उन्होंने (उनका) स्वागत किया । ३८ ।

* * *

अध्याय–१२ (दशरथ द्वारा पुत्रेष्टियज्ञ करना)

राग धनाश्री

श्रृंगी आव्या अयोध्या मोझार जी,
दशरथे पूज्या अरच्या अपार जी,
रंभा मूकी गई सुरलोक जी,
मुनिने व्याप्यो विजोग शोक जी । १ ।

ढाळ

थयो शोक संग विजोगनो, सुख संभारी रंभा तणुं,
पछी भोजन आच्छादन वडे, रात्रे मुनि संतोष्या घणुं । २ ।
शुभ कन्या एक ब्राह्मण तणी, राय दशरथे पाळी हती,
ते परणावी श्रृंगी ऋषिने, लग्नविधिए महामति । ३ ।
वसिष्ठ गुरुने पूछीने, उपचार यज्ञ तणो कर्यो,
शुभ लग्न मांहे राय जी, आरंभ विधिए अनुसर्यो । ४ ।
अनेक मुनिवर मळ्या छे, ते शब्द स्वाहा ऊचरे,
हुतद्रव्य होमे सफळ मंत्रे, विप्र वेदधुनि करे । ५ ।
सकळ मुनिना साथ मांहे, मुख्य श्रृंगी छे तथा,
(जेम) तारामंडळ मांहे शोभे, रोहिणीवर सरवदा । ६ ।

अध्याय–१२ दशरथ द्वारा पुत्रेष्टि यज्ञ करना

श्रृंगी ऋषि अयोध्या में आये, (तो) दशरथ ने उनका वहुत पूजन-अर्चन किया। रम्भा (मुनि को वहाँ) छोड़कर देवलोक (में लौट) गयी, (तो) मुनि को वियोग (विरह) का दुःख व्याप्त कर गया। १। रम्भा के (साथ रहने से मिलनेवाले) सुख का स्मरण कर मुनि श्रृंगी को उसकी संगति से बिछुड़ने का शोक (दुःख) हुआ। (फिर भी) बाद में रात को भोजन तथा आच्छादान (वस्त्र-प्रावरण) से मुनि वहुत सन्तुष्ट हो गये। २। (किसी) एक ब्राह्मण की शुभ (—लक्षणा) कन्या राजा दशरथ द्वारा पाली हुई (अर्थात् लालित-पालित) थी। उस महामति राजा ने उसका परिणय (विवाह) लग्न-विधि पूर्वक श्रृंगी ऋषि से कराया। ३। दशरथ राजा ने वसिष्ठ गुरु से पूछकर यज्ञ का अनुष्ठान किया (और) शुभ मुहूर्त पर विधिपूर्वक (यज्ञ का) आरम्भ किया। ४। (उस अवसर पर) अनेक बड़े-वड़े मुनि इकट्ठा हो गये है। वे 'स्वाहा' शब्द का उच्चारण करते और मंत्रपूर्वक आहुति-द्रव्य फल सहित होम में

पूर्णाहुति थई यज्ञनी, त्यारे प्रगट अग्नि नरखिया,
यज्ञनारायण रूप जोईने, मुनि सरवे हरखिया । ७ ।
चत्वारी श्रृंग ने सप्त पाणि, चरण त्रय द्वय शीश,
एम ज्वाला मांही प्रगट मूर्ति, जोई हरख्या अवधीश । ८ ।
पयसान्ननुं पात्र करमां, आप्युं श्रृंगी हाथ,
त्रिपिंड करी भक्षण करावो, त्रिराणीने साथ । ९ ।
प्रसाद आपी श्रृंगीने हवा, अनल अंतरधान,
श्रृंगीए आप्यो वसिष्ठने, अति घणो आदरमान । १० ।
(त्यारे) वसिष्ठे वहेंचण करी, त्रण पिंड कीधा ने तणा,
जेष्ठ भाग आप्यो कौशल्याने, जेना गुण छे अति घणा । ११ ।
ते थकी मध्यम भाग बे ते, कर्या बह्मकुमार,
केकै सुमित्रा त्रणे कर, चर आपिया तेणी वार । १२ ।
केकै रिसाई ते समे, करी कोप बोली वाण,
चर जेष्ठ आप्यो कौशल्याने, शुं अधिक मुजथी जाण । १३ ।
हुं घणी वहाली रायने, में कर्या बहु उपकार,
में जिताडचा संग्राममां, जश पामिया निरधार । १४ ।

समर्पित करते ; ब्राह्मण वेदमंत्रों का पठन करते । ५ । तब सब ऋषियों के साथ (समूह) में मुख्य श्रृंगी ऋषि है । वे उनमें वैसे ही शोभायमान थे, जैसे तारों के समुदाय में रोहिणी-पति चन्द्रमा होता है । ६ । यज्ञ की पूर्णाहुति (सम्पन्न) हो गयी, तव अग्निदेव प्रकट हो गये । यज्ञ नारायण का रूप देखकर सब मुनि हर्षित हो गये । ७ । चार सींग और सात हाथ, तीन चरण और दो मस्तक—इनसे युक्त (यज्ञ नारायण की) मूर्त्ति ज्वाला में से प्रकट हो गयी । उसे देखकर अवधेश दशरथ आनन्दित हो गये । ८ । उनके हाथ में जो पायस (प्रसाद) अन्न का पात्र था, उन्होंने वह श्रृंगी ऋषि के हाथ में दिया (और कहा—) ‘ इसके तीन पिण्ड बनाकर तीनों रानियों को साथ में खाने को दो ’ । ९ । श्रृंगी को प्रसाद देकर अग्निदेव अन्तर्धान हो गये । श्रृंगी ने वह (पायस) अतिशय आदर-सम्मान-पूर्वक वसिष्ठ को दिया । १० । तब वसिष्ठ ने उसका विभाजन करके उसके तीन पिण्ड बनाये । जिसमें अत्यधिक गुण थे, ऐसी कौसल्या को उन्होंने सबसे बड़ा भाग दिया । ११ । (फिर) ब्रह्माजी के पुत्र वसिष्ठ ने उससे मध्यम (आकार वाले) दो भाग किये (और) कैकेयी और सुमित्रा के हाथों में (उन्होंने) उस समय चरु-हविष्यान्न दिया । १२ । उस समय कैकेयी रूठ गयी । यह क्रोध करके यह वचन बोली— ‘ मुझसे क्या

(त्यारे) ब्रह्मनंदन कहे राणी, करो चर प्राशंन,
जो झाझी वार लगाडशो तो, थशे कांई विघन । १५ ।
एम कहेतामां कौतुक थयुं, एक समडी आवी त्यांहे,
झडप मारी पिंड लीधो, ऊडी गई नभ मांहे । १६ ।
कल्पांत केकै करे छे अति, नेत्रे आंसु धार,
शोक धरती रुदन करती, थयो हाहाकार । १७ ।
त्यारे कौशल्याने नेत्रे समस्या, करी दशरथ राय,
सुमित्रानी सामुं जोयुं, समजी ते अभिप्राय । १८ ।
कौशल्या निज चर विषेथी, आप्यो चोथो भाग,
वळी सुमित्राए आपियो, तेटलो धरी अनुराग । १९ ।
कौशल्या ने सुमित्राना, चर तणा बे अंश,
ते केकैये भक्षण कर्या, एम संतोषी अवतंश । २० ।
राणीओ चर भक्षण करी, अति हरखियो मन मांहे,
घणां दान आप्यां रायजी, मुनिवर लाव्या त्यांहे । २१ ।

(किसमें) अधिक (बड़ी) जानकर (प्रसाद का) बड़ा भाग कौसल्या को दिया ? । १३ । मै राजा की बहुत प्यारी हूँ । मैंने (उनका) बहुत उपकार किया । मैने उन्हें युद्ध में जितवाया (विजयी बनाया), और निश्चय ही यश प्राप्त कराया ' । १४ । तब ब्रह्मा के पुत्र वसिष्ठ ने कहा— ' रानी, यह चरु प्राशन (भक्षण) करो । यदि अधिक समय लगाओगी, तो कुछ विघ्न (संकट) उत्पन्न होगा ' । १५ । ऐसा कहते (समय) ही एक आश्चर्य हुआ । एक चील वहाँ आयी । लपककर उसने पिण्ड (छीन) लिया, (और) उड़कर वह आकाश में गयी । १६ । तब कैकेयी भयंकर विलाप करती है । उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बहती है । वह शोक करती है, रोती है । (इस प्रकार) हाहाकार होने लगा । १७ । तब दशरथ राजा ने कौसल्या को आँख से इशारा किया । उन्होंने सुमित्रा के सामने भी देखा, तो वह मतलब समझ गयी । १८ । कौसल्या ने अपने चरु में से चौथा भाग कैकेयी को दिया । इसके अतिरिक्त सुमित्रा ने (भी) प्रेमपूर्वक उतना (ही) भाग उसे दिया । १९ । कौसल्या और सुमित्रा के चरु के दो भाग कैकेयी ने खा लिये । इससे वह नारियों में श्रेष्ठ (कैकेयी) सन्तुष्ट हो गयी । २० । रानियाँ चरु को खाकर मन में अतिशय आनन्दित हो गयी । राजा वहाँ श्रेष्ठ मुनियों को बुला लाये और उन्होने बहुत दान दिया । २१ ।

त्रिया त्रण सगर्भा थई, घणुं हरख पाम्या राय,
पेलो पिंड समडी लेई गई, तेनो थयो कवण उपाय? । २२ ।
एक हतो वानर केसरी, तेनी अंजनी नामे नार,
ते पोतानो आश्रम बांधी, रहेतां वन मोझार । २३ ।
कंई प्रजा नव थई तेहने, त्यारे विचार्यु छे त्यांहे,
तप करवा बेठी अंजनी, ऋषिमुख परवत मांहे । २४ ।
घणुं कष्ट करती कामिनी, ते आराधे त्रिपुरार,
वर्ष सात सहस्र सुधी, तप कर्यु ते ठार । २५ ।
शिव प्रसन्न थईने बोलिया, तुं माग्यने वरदान,
अंजनी कहे मुंने पुत्र आपो, तेजस्वी बळवान । २६ ।
शंकर कहे—धन्य अंजनी, तुज पुत्र थाशे नेट,
रुद्र जे अगियारमा, ते प्रगटशे तुज पेट । २७ ।
आ मंत्र जप वायु तणो, बे कर पसारी एह,
प्रसाद आपे पवन तुजने, भक्ष करजे तेह । २८ ।
शिवजी गया एवुं कही करी मंत्र दान प्रकाश,
ते समे समडी पिंड लेईने, ऊडी छे आकाश । २९ ।

तीनों स्त्रियाँ गर्भवती हो गयीं, तो राजा वहुत हर्ष-विभोर हो गये । (अब सुनो,) वह (जो) पिण्ड चील ले गयी, उसकी क्या स्थिति हुई? । २२ । कोई एक केसरी नामक वानर था । उसके अंजनी नामक स्त्री थी । वे (दोनों) वन में अपना आश्रम बनाकर रहते थे । २३ । उनके कोई सन्तान नहीं उत्पन्न हुई; तब वहाँ उन्होंने विचार किया और अंजनी ऋष्यमुख पर्वत पर तपस्या करने के लिए बैठ गयी । २४ । वह स्त्री वहुत कष्ट (सहन) करती । वह त्रिपुरारि शिवजी की अराधना किया करती । उस स्थान पर उसने सात हजार वर्ष तक तप किया । २५ । (अन्त में) प्रसन्न होकर शिवजी बोले— 'तुम वरदान माँगो' । अंजनी ने कहा— 'मुझे तेजस्वी, बलवान् पुत्र दो' । २६ । (इस पर) शिवजी ने कहा— 'अंजनी, तुम धन्य हो । तुम्हारे अवश्य पुत्र (उत्पन्न) होगा । जो ग्यारहवाँ रुद्र है, वह तुम्हारे पेट (गर्भ) से प्रकट होगा । २७ । दोनों हाथों को फैलाये हुए तुम वायु (देव) के इस मंत्र का जप करो । पवन (देव) तुम्हें प्रसाद देंगे, उसे तुम खा लो' । २८ । ऐसा कहते हुए प्रसिद्ध मंत्र देकर शिवजी चले गये । इस समय (वही) चील (कैकेयी के हाथ में से प्रसाद का पिण्ड लिये हुए) आकाश में उड़ गयी है । २९ ।

त्यारे वायु वायो अति घणो, आज्ञा शिवनी अभंग,
पंखिणी तव व्याकुळ थई, अति झपट लागी अंग । ३० ।
चर चंचुमांथी पड्यो तत्क्षण, कर्युं कारज सार,
वायुए लावी मूकियो, अंजनी कर मोझार । ३१ ।
प्रसाद पडियो कर विषे, ते जोई हरखी एह,
शिवमंत्र भणीने अंजनीए भक्ष कीधो तेह । ३२ ।
ते समडी पूर्वे अपसरा, ब्रह्मलोक रहेती जाण,
सुवर्चसा देवांगना, नामे हती निरवाण । ३३ ।
एक समे ब्रह्मानी सभानां, नृत्य करती नार,
चंचळताए सर्व सामुं, जोती काम-विकार । ३४ ।
स्वर मान चूकी मानुनी विधिए तेने दीधो शाप,
तुं चंचळ दृष्टे जुए माटे, समडी थाजे आप । ३५ ।
अनुग्रह पूछ्यो प्रमदाए, त्यारे प्रजापति कहे वाण,
थोडा दिवसमां राय दशरथ, यज्ञ करशे जाण । ३६ ।
प्रसाद वह्नि आपशे, राणीओने तेणी वार,
केकै तणा कर विषेथी, चर लेजे तुं निरधार । ३७ ।

तब (अचानक) पवन अतिशय जोर से वहा । शिवजी की आज्ञा तो अभंग (अटल) है । तब (वह चील) पक्षिणी व्याकुल हो गयी । उसके अंग में बहुत झपट आ गयी । ३० । तत्क्षण उसकी चोंच में से वह चरु (प्रसाद का पिण्ड) गिर गया और उसने सुन्दर (इच्छित) काम कर दिया । वायु ने उसे अंजनी के हाथ में ला डाला । ३१ । हाथ में प्रसाद पड़ा, यह देखकर वह आनन्दित हो गयी । शिवजी का दिया हुआ मंत्र पढकर अंजनी ने उसे खा लिया । ३२ । यह जान लो कि वह चील (पक्षिणी) पूर्वकाल में अप्सरा थी, जो ब्रह्मलोक में रहती थी । सचमुच वह सुवर्चसा नामक देवांगना थी । ३३ । एक समय वह नारी ब्रह्माजी की (राज–) सभा मे नृत्य कर रही थी । सबके सामने काम-विकार के कारण वह चंचलता से देखती रह गयी । स्वर-माला में उसने गलती की । ऐसा मानकर विधाता ने उसे शाप दिया— 'चचल नजर से देखने के कारण तुम स्वयं चील हो जाओगी'। ३४-३५ । (तदनन्तर) उस स्त्री ने अनुग्रह पूछा, तो ब्रह्माजी ने यह वचन कहा— 'यह समझ लो कि थोड़े दिन में दशरथ राजा यज्ञ करेंगे । ३६ । उस समय स्वयं अग्निदेव रानियों को प्रसाद देंगे । तुम कैकेयी के हाथ में से चरु अवश्य (उठा) लो । ३७ ।

ते पिंड भक्ष करीश नहि तुं, ऊडजे आकाश,
चर-स्पर्शथी पामीश पाछी, सत्य-लोक-निवास । ३८ ।
ते समडी केरी चंचुमांथी, पिंड पडियो त्यांहे,
निजरूप धरीने अप्सरा गई, बह्मलोक ज मांहे । ३९ ।
चर भक्ष कीधो अंजनी, ते सगर्भा थई तेणी वार,
दिन दिन वृद्धि थाय छे, अंजनी तेज अपार । ४० ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अपार तेज अंजनी केरुं दिन दिन वृद्धि थाय रे,
श्रोताजन सहु सांभळो, कहुं हनुमंत जन्मकथाय रे । ४१ ।

तुम उस प्रसाद-पिण्ड को न खाना। तुम (वैसे ही) आकाश में उड़ ही जाओ। बाद में उस प्रसाद के स्पर्श से तुम सत्य (ब्रह्म)–लोक में निवास को प्राप्त होगी। ३८। उस चील की चोंच में से वहाँ पिण्ड गिर पड़ा, तो अपने (पूर्व) रूप को (पुनश्च) ग्रहण करके वह अप्सरा ब्रह्मलोक में (लौट) गयी। ३९। अंजनी ने चरु को भक्षण किया, तो उस समय वह गर्भवती हो गयी। (उससे) अंजनी की असीम (अद्‌भुत) कान्ति दिन-ब--दिन बढ़ती जाती है। ४०।

अंजनी का असीम तेज प्रतिदिन बढ़ता जाता है। श्रोताजनो! तुम सब सुनो, मैं हनुमान के जन्म की कथा कहता हूँ। ४१।

* * *

अध्याय–१३ (हनुमान का जन्म)

राग सामेरी

हवे श्रोताजन सहु सांभळो भावे, हनमंत जनम-कथाय,
पूरा मास हवा अंजनीने, प्रसव समे त्यांहां थाय । १ ।
सुगम समिर दिशाओ दीपे ने, फूल्यो फागण मास,
वनमांथी ऋषि-पत्नीओ आवीने, बेठी अंजनी पास, । २ ।

अध्याय १३ (हनुमान का जन्म)

श्रोताजनो, अब (तुम) सब प्रेमपूर्वक हनुमान के जन्म की कथा सुनो। अंजनी को पूरे महीने हो गये, तो उसकी प्रसूति का समय आ गया। १। (उस समय) पवन सुगम अर्थात् अनुकूल हुआ ; दिशाएँ

पुत्रनो जन्म थयो तेणी वेळा, वानरकेरो वेष,
उदयाचळ उपर जेम ऊगे, कांति अंग दिनेश । ३ ।
विद्युत जेवां कुंडळ जळके, मणि जडित्र शिर टोपी,
वज्र कछोटो कोपीन कंचन, कटीए मुंजी ओपी । ४ ।
महावीर रणधीरने शोभे, यज्ञयोपवीतज सार,
मुख पुच्छाग्र प्रवाळां जेवुं, रक्तवरण सुकुमार । ५ ।
एवो पुत्र ज प्रगट्यो देखी, हरख्या सरवे कोय,
क्षुधातुर थयो ते बाळक, चारे दिशाए जोय । ६ ।
त्यारे प्रातःकाळे सूरज ऊग्यो, रक्तवरण छे तेह,
कपिए जाण्युं पाकुं फळ छे, भक्ष करुं हुं एह । ७ ।
पछे रोमावळी फुतकार करीने, गरजना कीधी घोर,
दिग्गज कंप्या सिंधु ऊछळ्या, ध्रूजी धरा पद जोर । ८ ।
सिंहनाद करी तळप ज भारी, ऊछळियो आकाश,
दिनकरने फळ जाणी पोते, चाल्यो करवा ग्रास । ९ ।

उज्ज्वल हुई। फाल्गुन मास चरम विकास को प्राप्त हुआ। वन में से ऋषियों की स्त्रियाँ आकर अंजनी के पास बैठीं। २। उस समय पुत्र का जन्म हुआ। उसका वेश वानर का था। उदयाचल पर जिस प्रकार की कान्ति से युक्त सूर्य उदित होता है, वैसी उसके अंगों की कान्ति थी। ३। उसके कुण्डल बिजली की भाँति झलकते हैं। मस्तक पर रत्न-जटित टोपी है। कछोटा वज्र का है और लंगोटी सोने की है। कमर में मुंज घास की डोरी शोभायमान है। ४। उस महावीर रणधीर (हनुमान) को सुन्दर यज्ञोपवीत (जनेऊ) सुशोभित हो रहा है। उसका मुख और पूँछ का अग्र भाग प्रवाल (मूँगे) के समान लाल और सुकोमल है। ५। ऐसे पुत्र ही को प्रकट हुए देखकर सब कोई आनन्दित हुए। (तदनन्तर) वह बालक भूख से व्याकुल हुआ। वह चारों दिशाओं में ज्योंही देखता है त्योंही प्रातः काल में सूर्य का उदय हुआ। वह लाल वर्ण का है। उस कपि को जान पड़ा कि वह (सूर्य) कोई पका फल है। (वह सोचता है कि) मैं इसे खाता हूँ (खाऊँगा)। ६-७ तत्पश्चात् रोंगटों को खड़े करते हुए उसने घोर गर्जन किया। उससे दिग्गज काँप उठे। समुद्र उछल गये। उसके पाँव के जोर से पृथ्वी काँप उठी। ८। सिंहनाद करते हुए छलाँग भरकर वह आकाश में तड़क गया। सूर्य को अपना (भक्ष्य) फल समझकर उसका ग्रास करने लिए वह (आगे) चला। ९।

जेम वैकुंठमांहे जाये ऊडचो, विनता सुत बळवंत,
एम सूरजमंडल पासे आव्यो, ऊछळतो हनुमंत। १०।
त्यारे ताप घणो प्रगटचो सूरजनो, दाझवा लाग्यो तन,
पवने जाण्युं पुत्र ज बळशे, वरसाव्यो शीत परजन्य। ११।
सूरजग्रहण हतुं ते दिवसे, राहुए रविने ग्रसियो,
जाण्युं ए फळ खाय छे मारुं, कपिवर वेगे धसियो। १२।
पछे हनुमंते लांगूलनी झापटे, राहुने मार्यो अपार,
(तेनी) पक्ष ज करवा केतु आव्यो, युद्ध करवा तेणी वार। १३।
पछे राहु केतु बेने मार्या, नाठा पामी त्रास,
रुदन करंता आवी ऊभा, सुरपति केरी पास। १४।
(त्यारे) इंद्र ऐरावत बेसी चाल्यो, लीधी घणी सेन्याय,
कपिवर सामो युद्ध करवाने, आव्या सुरपति राय। १५।
दारुण युद्ध थयुं तेणी वेळा, वरत्यो हाहाकार,
देवनी उपर अंजनीनंदन, मारे बहुविधि मार। १६।
पछी ऐरावतनुं पुच्छ ग्रहीने, कपिवर कोप्यो अपार,
इंद्र सहित पछाडचो पृथ्वी, पाम्यो दुःख तेणी वार। १७।

जिस तरह विनता का बलवान पुत्र (गरुड़) वैकुण्ठ की ओर उड़ते हुए जाता है, उसी तरह हनुमान छलाँग भरता हुआ सूर्यमण्डल के पास आ गया। १०। तब सूर्य का तीव्र ताप प्रकट हो गया, तो उसका शरीर जलने लगा। (हनुमान के पिता) पवन ने समझा कि मेरा पुत्र जल जाएगा ; तब उसने शीतल बौछार बरसा दी। ११। उस दिन सूर्य-ग्रहण था ; राहु ने सूर्य को निगल लिया। यह (राहु) मेरा फल खा रहा है—ऐसा समझकर कपिवर हनुमान वेगपूर्वक आगे झपटा। १२। फिर हनुमान ने पूँछ से आघात कर राहु को पीट लिया। उस समय उसका साथ देने के लिए केतु आ गया। १३। फिर हनुमान ने राहु और केतु दोनों को मारा। (तो) वे भयभीत होकर भाग गये। रोते-रोते वे सुरपति इन्द्र के पास आकर खड़े हो गये। १४। तब इन्द्र ऐरावत पर विराजमान होकर चल पड़ा। उसने बड़ी सेना साथ में ली। (इस प्रकार) कपिवर हनुमान से युद्ध करने के लिए सुरपति इन्द्र आ गये। १५। उस समय घमासान युद्ध हो गया। हाहाकर मच गया। अंजनी-नन्दन हनुमान देवों पर बहुत प्रकार से आघात करता था। १६। फिर वह कपिवर बहुत क्रुद्ध हो

त्यारे इंद्रे क्रोध करीने मार्युं वज्र कपिने शीश,
ते वज्र प्रहारथी मूर्छा आवी, धरणी ढळ्यो पति कीश । १८ ।
(त्यारे) वायुए पुत्र खोळामा लइने, करवा मांड्युं रुदन,
तेणे प्राण अपान बे रूंध्या छे, अकळायां त्रण भुवन । १९ ।
देव सहु अकळाया लाग्या, पवन बंध थयो त्यारे,
शिव ब्रह्मा विष्णु लोकपति मुनि, आव्या मळी ते वारे । २० ।
त्यारे वायु प्रत्ये विधाता बोल्या, शाने करे छे रुदन ?
देव सरवेने जीत्या एणे, महाबळियो छे तन । २१ ।
विष्णु कहे—सुण वायु ए छे, पूर्ण पिंडनो पुत्र,
चौद लोकमां कोई थकी ए, मार्यो मरे नहि सूत्र । २२ ।
हरिए हसी हनुमंत उठाड्यो, मूक्यो मस्तके हाथ,
चिरंजीवी रहेजे एम बोल्या, पोते वैकुंठ-नाथ । २३ ।
शिवजी कहे—मारां नेत्रनो अग्नि, बाळे सकळ ब्रह्मांड,
तेनो ताप नहि ए पुत्रने, बोल्या वचन अखंड । २४ ।

गया । उसने ऐरावत की पूँछ पकड़कर, उसे इन्द्र-सहित भूमि पर पछाड़ दिया । (इससे उन्हे) उस समय बहुत दुःख हुआ । १७ । तब गुस्सा होकर इन्द्र ने (उस) वानर के सिर पर वज्र से आघात किया । वज्र के उस आघात से उसे मूर्च्छा आ गयी और (वह) कपि-पति (हनुमान) धरती पर लुढ़क गया । १८ । तब पुत्र को गोद में लेकर वायु ने रुदन शुरू किया । उससे प्राण और अपान दोनों रुँध गये और तीनों भुवन व्याकुल हो गये । १९ । वायु का चलना बन्द हो गया, तो सब देवता व्याकुल होने लगे । उस समय शिव, ब्रह्मा, विष्णु, लोकपाल, मुनि सब मिलकर (वहाँ) आ गये । २० । तब विधाता वायु से बोले—तू किस लिए रो रहा है ? इसने सब देवों को जीत लिया है । (यह) पुत्र महाबली है । २१ । विष्णु ने कहा—हे वायु ! सुन । यह पूर्ण पिण्ड वाला पुत्र है । चौदह भुवनों में (से) किसी से भी मारने पर (भी) यह नहीं मरेगा । २२ । फिर श्रीहरि (विष्णु) ने हँसते हुए हनुमान को उठाया और (उसके) मस्तक पर हाथ रखा । स्वयं वैकुण्ठनाथ (हनुमान से) ऐसा बोले—तू चिरंजीवी हो जाए । २३ । शिवजी कहते हैं—मेरे नेत्र की अग्नि सकल ब्रह्माण्ड को जलाती है । परन्तु उसकी आँच इस पुत्र को नहीं लगेगी । इस प्रकार वे पूर्ण वचन बोले—त्रिशूल आदि मेरे जो आयुध हैं, वे इसे नहीं भेदेंगे—छिन्न न करेंगे । ब्रह्माजी ने कहा—इसे ब्रह्मशाप नहीं लगेगा, न इसे

त्रिशूळादिक जे मारां आयुध, ते एने नव छेदे,
ब्रह्मा कहे—ब्रह्मशाप न लागे, शस्त्र एके नव छेदे । २५ ।
इंद्र कहे—मारुं वज्र न वागे, थाजे वज्रदेही बळवंत,
मारे वज्रे हणायो माटे, नाम एनुं हनुमंत । २६ ।
कुबेर कहे—यक्ष राक्षसथी नव, पामे पराजय एह,
वरुण कहे—युद्धमां यश थाशे, अभंग शक्ति देह । २७ ।
यमराज कहे—काळदंड एने, नहि पीडे अभिराम,
ते प्राणीने यमदंड नहि जे, समरे तारुं नाम । २८ ।
आशिष दीधी सरव मुनि, थया विश्वामित्र कृपाळ,
कोटि वर्षे करमाय नहि एवी, आपी कमळनी माळ । २९ ।
एम हनुमन्तने वरदान आपी, देव गया निरधार,
मुनि सरवे निज आश्रम आव्या, वरत्यो जयजयकार । ३० ।
प्राण अपान सकळ प्राणीना, गति करवाने लाग्या,
अखिल विश्वमां आनंद वरत्यो, शोक सरवना भाग्या । ३१ ।
(त्यारे) पुत्रनो शोक धरीने अंजनी, करती रुदन अपार,
(एवे) लोकप्राणेशे लावी मूक्यो, उछंगमां तेणी वार । ३२ ।

शस्त्र भेदेंगे । २४-२५ इन्द्र कहते हैं—मेरा वज्र इसे चोट नहीं पहुँचाएगा, यह वज्रदेही और बलवान बनेगा। मैंने वज्र से आघात किया, इसलिए इसका नाम 'हनुमन्त' (अर्थात् 'हनुमान') होगा। २६। कुबेर कहते हैं—यह यक्षों और राक्षसों से पराजय को नहीं प्राप्त होगा। वरुण कहते हैं—युद्ध में इसका यश (कीर्ति) होगा—बढ़ेगा। इसकी देह की शक्ति अभंग रहेगी। २७। यमराज कहते हैं—इस सुन्दर बालक को काल-दण्ड पीड़ा नहीं पहुँचाएगा। हे हनुमान, जो तेरे नाम का स्मरण करेगा, उस प्राणी को यम-दण्ड नहीं जीतेगा। सब मुनियों ने (हनुमान को) आशिष दिया। २८। वहाँ कृपालु विश्वामित्र ऋषि थे। उन्होंने उसे ऐसी कमल-पुष्प-माला प्रदान की, जो करोड़ों वर्षों में भी नहीं मुरझाएगी। २९। इस प्रकार हनुमान को वरदान देकर देवता चले गये। सब मुनि अपने-अपने आश्रम गये। हनुमान का जयजयकार हो गया। ३०। (तो) सब जीवों के प्राण और अपान (गतिमान होकर) चलने लगे। समस्त विश्व में आनन्द हो गया और सबके शोक (दुख) भाग गये। ३१। पुत्र के विषय में दुःख करते हुए अंजनी बहुत रुदन करती रही ; तब लोक-प्राणेश वायुदेव ने उस समय (शिशु को) लाकर उसकी गोद में

(त्यारे) पुत्रने जोई माता हरखी, वात्सल्य भाव अनंत
हृदे चांपी स्तनपान कराव्युं तृप्त थया हनुमंत । ३३ ।
वळी कोई समे हनुमंत भण्यो छे, सूरज केरी पास,
अन्य पुराणमां तेह कथा छे, सूरज शिष्य प्रकाश । ३४ ।
वळी अन्य प्रकारे छे उत्पत्ति, हनुमंत जन्मकथाय,
बहु ऋषिमतने भेद करीने, कल्पकथा कहेवाय । ३५ ।
ते माटे संदेह नव करशो, विवेकी संत सुजाण,
ए अफळ चरित्र ज देव तणां, ते कोणे न थाय प्रमाण । ३६ ।
ए हनुमंतनी जन्मकथा कही, बळ प्राक्रम चरित्र,
जे प्राणी सांभळे भावथकी, ते थाये पुण्य पवित्र । ३७ ।
ग्रहपीडा थाये नहि तेने; विजय सदा ते पामे,
भूत प्रेत पिशाच न पीडे, विघ्न सकळ ते वामे । ३८ ।
जंत्र मंत्र ने तंत्रनी विद्या, नाटक चेटक जेह,
हनुमंतनी कथा सांभळतां, बाध न करे तेह । ३९ ।

डाल दिया । ३२ । तब पुत्र को देखकर वह माता आनन्दित हुई। उसका वात्सल्य-भाव अनन्त था। (उसने उसे) छाती से लगाकर स्तन-पान कराया। इससे हनुमान तृप्त हो गया। ३३ । इसके सिवा, किसी समय सूर्य के पास हनुमान ने (विद्या) सीखी है। अन्य पुराणों में वह कथा है। यह विख्यात है कि वह सूर्य का शिष्य हैं। ३४। इसके सिवा, हनुमान की उत्पत्ति की कथा, जन्मकथा दूसरे प्रकार से भी (बतायी जाती) है। बहुत से ऋषियों के मत में अन्तर होने के कारण, अलग-अलग कल्पना करके यह कथा कही जाती है । ३५ । इसलिए (श्रोताओ !), सन्देह न करो। तुम विवेकवान सुज्ञ सन्त हो। यह तो अगम्य देव-चरित्र ही है। किसी से भी उसका प्रमाण (अर्थात् केवल यही सही है ऐसा प्रमाण) नहीं दिया जा सकता । ३६ । हनुमान की यह जन्म-कथा कही है। वह बल, पराक्रम का चरित्र है। जो जीव इसे श्रद्धापूर्वक श्रवण करेगा, वह पुण्यवान, पवित्र हो जाएगा । ३७ । उसे ग्रह-पीड़ा नहीं होगी। उसे सदा विजय प्राप्त होगी। उसे भूत प्रेत, पिशाच पीड़ा नहीं पहुँचाएँगे। उसके समस्त विघ्न कम हो जाएँगे । ३८ । यंत्र-मंत्र और तंत्र की विद्या, नाटक-पिशाच—जो (भी) हैं, हनुमान की कथा का श्रवण करने पर वे उसे बाधा नहीं पहुँचाएँगे । ३९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

बाधा न करे ते प्राणीने, विघ्न सरवे जाय रे,
कहे दास गिरधर कहुं हवे, श्रीरामजन्म कथाय रे। ४०।

उस प्राणी को विघ्न बाधा नहीं पहुँचाएँगे—समस्त विघ्न (नष्ट हो) जाएँगे। गिरधरदासजी कहते हैं—(मैं) अब श्रीराम के जन्म की कथा कहता हूँ। ४०।

* * *

अध्याय—१४ (कौशल्या से राम का आविर्भाव)

राग धनाश्री

राय दशरथनी त्रण राणी, ते सगर्भा थई गुण खाणी,
चंद्र शुक्ल पक्षनी जेम, पामे दिन दिन वृद्धि तेम। १।
त्यारे दशरथ प्रत्ये वचन बोल्या, गुरु वसिष्ठ पावन,
जाओ राणीओ पासे राज, जे मागे ते आपो आज। २।
जेने जेवी इच्छा होय, तेना पूरा मनोरथ सोय,
छे धर्मशास्त्रनी रीति, माटे आचरो एवी नीति। ३।
ऊठ्या वचन सुणीने राय, शुभ मुहूरत जोईने जाय,
पहेला आव्या केकैने घेर, तेणीए त्यां विचारी पेर। ४।
बेठी रिसाई तेणी वार, जाणे सर्पिणी क्रोध अपार,
एवुं जोई अयोध्या भूपाळ, पासे आवी बोल्या तत्काळ। ५।

अध्याय—१४ (श्रीराम का आविर्भाव)

राजा दशरथ के तीन रानियाँ थीं। गुणों की खानों जैसी वे स्त्रियाँ गर्भवती हो गयीं। चन्द्रमा शुक्ल पक्ष में जैसे वृद्धि प्राप्त करता है, वैसे वे प्रतिदिन विकास को प्राप्त होती थीं। १। तब पावन गुरु वसिष्ठ दशरथ से यह वचन बोले—हे राजा! रानियों के पास जाओ (और) आज जो वे माँगेंगी, वह उन्हें दो। जिसकी जैसी इच्छा हो, उसके अनुसार उसका वही मनोरथ पूर्ण करो। धर्मशास्त्र की (कही हुई यह) रीति है। इसलिए ऐसी नीति का व्यवहार करो। २-३। राजा (यह) वचन सुनकर उठ गये और शुभ मुहूर्त देखकर चले। वे (सबसे) पहले कैकेयी के घर आये। तब उसने एक युक्ति सोची। ४।

केम रिसाई तुं राणी ? जे मागे ते आपुं आणी,
तुं वहाली छे तन मन धन, बोल्यने मुज साथे वचन । ६ ।
मुख मरडी बोली तेणी वार, सुणो राय कहुं निरधार,
कौशल्याशुं राखो छो हेत, तेने मानो छो प्रेमसमेत । ७ ।
राखो अंतर मारी साथ, एवुं ना घटे तमने नाथ,
ते छे वहाली तन मन धन, मारी साथ ना मेळवो मन । ८ ।
अहीं आव्या शुं करवा काज ? पूरो तेना मनोरथ आज,
एवां सांभळी राय वचन, दीधुं राणीने आलिंगन । ९ ।
प्राणवल्लभा तुं मने वहाली, तने मळवा हुं आव्यो चाली,
एम कही घणां विनय वचन, राणी संतोषी राजन । १० ।
आप्यां पट आभूषण सार, कराव्यां भूपे दान अपार,
करी केकैनी आश्वास, पछी आव्या सुमित्रानी पास । ११ ।
ऊठी अबळा तेणी वार, कर्यो नरपतिने नमस्कार,
आप्युं आसन पूजन कीधुं, घणी स्वागते मान ज दीधुं । १२ ।

उस समय वह रूठकर बैठी (हुई थी)। मानो (कोई) साँपिन अपार क्रुद्ध हुई हो। ऐसा देखकर, तत्क्षण अयोध्यापति उसके पास आकर बोले । ५ । हे रानी ! तू क्यों क्रुद्ध हुई ? जो तू माँगे उसे लाकर मैं देता हूँ। तू तन-मन-धन से मेरी प्यारी है। (अतः) मुझसे बात कह । ६ । उस समय मुँह फेरकर वह बोली—सुनो राजा ! मैं निश्चय-पूर्वक कहती हूँ। तुम कौशल्या में प्रेमभाव रखते हो; प्रेमपूर्वक उसको मानते हो। मुझसे अन्तर रखते हो। हे नाथ ! तुम्हारे लिए यह योग्य नहीं है। तन-मन-धन से वह तुम्हारी प्यारी है, (इसलिए) मेरे साथ मन नही लगाते । ७-८ । यहाँ क्या काम करने आये ? आज उसके मनोरथ पूर्ण करो। राजा ने ऐसे वचन सुनकर रानी का आलिंगन किया । ९ । (उन्होने कहा—) हे प्राणवल्लभा ! तू मुझे प्यारी (लगती) है। तुझसे मिलने के लिए मैं स्वयं चला आया। विनय से युक्त ऐसे बहुत वचन कहकर राजा ने रानी को सन्तुष्ट किया । १० । राजा ने उसे सुन्दर वस्त्र और आभूषण दिये और उससे अमित दान दिलाये। कैकेयी को आश्वस्त कर, बाद मे वे सुमित्रा के पास आये । ११ । उस समय वह स्त्री उठी और राजा को उसने नमस्कार किया, (उन्हें) आसन दिया, (उनका) पूजन किया और बहुत स्वागत करते हुए उनका सम्मान ही किया । १२ । मन्द-मन्द मुसकुराकर रानी (उनके सामने) हाथ जोड़कर खड़ी रही।

मंद हास्य करीने राणी, ऊभी सन्मुख जोडी पाणि,
घणां मीठां मधुरां वचन, सुणी सुख पाम्या राजन । १३ ।
जे बोली हती कैकै आप, तेनो लाग्यो तो राय ने ताप,
सुमित्रानां वचनरूपी जळ, तेणे भूप थया शीतळ । १४ ।
सुमित्रानो झाली हाथ, हसी बोल्या अयोध्यानाथ,
माग्य माग्य इच्छावर आज, पूरुं सकळ मनोरथ काज । १५ ।
सुमित्रा कहे—सदा आचरण चित्त रहेजो तमारे शरण,
कौशल्यानो पुत्र थाय रतन, तेनी सेवामां रहे मुज तन । १६ ।
जेष्ठनी पाळवी आज्ञाय, धरम-नीतिनो एवो न्याय,
सुमित्रानां वचन वरिष्ठ, लाग्यां अमृतथी अति मिष्ट । १७ ।
हरखीने पछी आप्यां भूप, अलंकार ने वस्त्र अनूप,
राणीने हाथे घणां दान, अपाव्यां द्विजने सन्मान । १८ ।
संतोषीने चाल्या नरेश, कौशल्या गृहे करियो प्रवेश,
राणी रहित व्यथा थई शांत, बेठी अंतरगृहमां एकांत । १९ ।
थयो ब्रह्मनो आविर्भाव, देखे राम स्वतंतर साव,
इंदिरावर पूरण ब्रह्म, शिव ब्रह्मा न जाणे मर्म । २० ।

(उसके) बहुत मधुर-मधुर वचन सुनकर राजा ने सुख पाया । १३ । कैकेयी स्वयं जो बोली थी, राजा को उससे ताप पहुँचा था । सुमित्रा के वचन रूपी जल को पाकर उससे राजा शान्त हो गये । १४ । सुमित्रा का हाथ थामकर अयोध्यापति दशरथ हँसकर बोले—माँग, आज तू मन-चाहा वर माँग । मैं सब इच्छित कार्य पूर्ण करता हूँ । १५ । सुमित्रा कहती है—(मेरा) आचरण (और) मन नित्य आपकी शरण में रहे । कौशल्या के (जो) पुत्ररत्न उत्पन्न होगा, उसकी सेवा में मेरा पुत्र रहे । १६ । ज्येष्ठ की आज्ञा का पालन हो—ऐसा धर्म-नीति (शास्त्र) का न्याय (निर्णय) है । सुमित्रा के (ये) श्रेष्ठ वचन राजा को अमृत से भी मधुर जान पड़े । १७ । फिर आनन्दित होकर राजा ने (उसे) अनुपम आभूषण तथा वस्त्र प्रदान किये । रानी के हाथों उन्होंने ब्राह्मणों को दान दिलाया और सम्मान कराया । १८ । सन्तुष्ट होकर राजा चले गये (और) उन्होंने कौशल्या के गृह में प्रवेश किया । वह रानी व्यथा-रहित और एकान्त अन्तर-गृह में शान्त बैठी थी । १९ । ब्रह्म का आविर्भाव हुआ है, अतः वह राम को बिलकुल स्वतंत्र रूप में देखती है । इन्दिरापति भगवान (विष्णु) पूर्ण ब्रह्म हैं । शिवजी और ब्रह्मा उसका मर्म नहीं जानते । २० । जिसकी आज्ञा लोकपाल मानते हैं, जो

जेनी आज्ञा माने लोकपाळ, करता जे उदे स्थिति काळ,
कौशल्यानुं उदर ज्ञान खाणी, छुपाय तेमां सारंगपाणि । २१ ।
अंतरजामी एक निसंग, रह्या व्यापी सर्व अंग,
कौशल्या नेत्र अभिराम, देखे सर्वत्र एक ज राम । २२ ।
स्थूळ सूक्ष्म कारण देह, त्रि-अवस्था कहीए जेह,
ते रहित थई छे वृत्ति, खट ऊरमी पीडा नथी करती । २३ ।
रामरूप थई निष्काम, बाह्य भीतर देखे राम
सप्तमी भोमिकाए स्थिति, परात्पर तणी जे रीति । २४ ।
समाधिस्थ बेठी एक लग्न, ब्रह्मानंदमां थईने मग्न,
एवी राणीने दीठी बेठी, जोई रायने चिंता पेठी । २५ ।
जाण्युं ए मुज साथे रिसाइ, नव बोले घणुंये बोलावी,
रुदे चांपी आलिंगन दीधुं हांक मारी घणुं हेत कीधुं । २६ ।
सुणी रायनां प्रेम वचन, उघाड्यां कौशल्याए लोचन,
नथी देहनुं भान लगार, न जाणे हुं छुं नर के नार । २७ ।
त्यारे राजा कहे—माग्य आज, तारा पूरुं मनोरथ काज,
बोल्यां कौशल्या राणी गंभीर—हुं छुं जगदात्मा रघुवीर । २८ ।

उत्पत्ति, स्थिति और लय के कर्ता हैं, वे ही भगवान् शारंगपाणि ज्ञान-खानि कौशल्या के उदर के अन्दर छिपे हैं । २१ । वह एक अन्तर्यामी, निःसंग भगवान उस (कौशल्या) के सभी अंगों में व्याप्त रहे । कौशल्या के सुन्दर नेत्र सर्वत्र एक ही राम को देखते हैं । २२ । देह की स्थूल, सूक्ष्म और कारण नामक जो तीन अवस्थाएँ कही जाती हैं, कौशल्या की वृत्ति उनसे रहित हो गयी है । (अतः) कोई भी कटु भाव की लहर उसे पीड़ा नहीं पहुँचाती । २३ । वह राम-रूप एवं निष्काम हो गयी । वह अन्तर-बाह्य राम को देखती है । सातवीं अवस्था में उसकी वैसी स्थिति हो गयी जो परात्पर अवस्था में होती है । २४ । ब्रह्मानन्द में मग्न होकर वह एक मुहूर्त भर समाधिस्थ हो बैठी । रानी को ऐसी (अवस्था में) बैठी देखकर राजा को चिन्ता हो गयी । २५ । उन्हें जान पड़ा कि वह मुझसे रूठ गयी है, इसलिए यह बहुत बुलाने पर भी नहीं बोलती । हृदय से लगाकर उन्होंने उसका आलिंगन किया, उसे पुकार कर उससे बहुत प्रेम (पूर्वक व्यवहार) किया । २६ । राजा के प्रेम (पूर्वक कहे) वचन सुनकर कौशल्या ने आँखें खोलीं । उसे जरा-सा भी देह का भान नहीं है । मैं नर हूँ या नारी—यह भी वह नहीं जानती है । २७ । तब राजा कहते है—(हे रानी) आज (तू) माँग । तेरा मनोरथ-मनोवांछित

अज्ञान अपेक्षा नथी, पूर्ण काम हुं छुं सर्वथी,
रह्यो विश्व सकळ भरपूर, स्थूल लिंग कारणथी दूर । २९ ।
महा कारण न होये मारुं रूप, हुं तो आत्माराम अनूप,
द्वैताद्वैत ने ज्ञाता ज्ञान, नथी मारे ध्याता ध्यान । ३० ।
हुंनो साक्षी सर्वनिवासी, साखी चैतन्य विश्वप्रकाशी
सच्चिदानंद छुं अविनाशी, सुखरूप आनंद-विलासी । ३१ ।
एवुं सांभळी दशरथराय, मनमां घणुं विस्मे थाय,
अरे राणी तने शुं थयुं ? आज भान तारुं क्यां गयुं ? । ३२ ।
मने ओळख, हुं छुं कोण ? केम थई छेक अजाण ?
तने करी गयो रावण हरण, हुं लाव्यो करी पाणिग्रहण । ३३ ।
सुणी रावण केरुं नाम, करी गर्जना बोली भाम,
लाव्य धनुष बाण आ दिश, छेदुं रावणनां दश शीश । ३४ ।
त्रिशिरा खर दुखर मारुं, ताडिका सुबाहु संहारुं,
शूर्पणखानुं छेदुं नाक, छोडुं बंध सकळ रिपु पाक । ३५ ।

कार्य मैं पूर्ण करता हूँ। कौशल्या रानी गम्भीरता पूर्वक बोली—मैं जगदात्मा रघुवीर हूँ। मुझमें कोई अज्ञान तथा अपेक्षा नहीं है। मैं सर्वत: पूर्णकाम हूँ। (मुझसे) सकल विश्व परिपूर्ण (व्याप्त) है—स्थूल, सूक्ष्म तथा कारण अवस्था से मैं दूर हूँ। महाकारण मेरा रूप नहीं हो सकता। मैं तो अनुपमेय आत्माराम हूँ। मेरे लिए द्वैत-अद्वैत और ज्ञाता-ज्ञान तथा ध्याता-ध्यान का अन्तर नहीं है। २८-३०। 'मैं' का साक्षी सर्व-निवासी है, वह साक्षी चैतन्य रूप तथा विश्व-प्रकाशी है। मैं सच्चिदानन्द एवं अविनाशी हूँ, सुख-रूप एवं आनन्द-विलासी हूँ। ३१। ऐसा सुनकर दशरथ राजा को मन में बहुत आश्चर्य हो गया। (वे बोले—)अरी रानी! तुझे क्या हुआ? आज तेरा भान कहाँ गया? । ३२। मुझे पहचान! मैं कौन हूँ? तू निपट अज्ञान क्यों हुई? जब रावण तेरा अपहरण कर गया था, तब तुझे लाकर मैंने (तुझसे) पाणिग्रहण (विवाह) किया। ३३। रावण का नाम सुनकर वह भामा (स्त्री) गर्जन कर बोली—इसी समय धनुप-बाण लाओ। मैं रावण के दसों मस्तकों को काटती हूँ (काटूँगी)। त्रिशिरा, खर और दुखर (दूषण) को मारती हूँ (मारूँगी)। ताड़का-सुबाहु का संहार करती हूँ (करूँगी), शूर्पणखा की नाक छेदूँगी। स्वर्ग के शत्रु—रावण के (बनाये) समूचे बन्धन छुड़ा दूँगी—देवताओं को मुक्त करूँगी। ३४-३५। रानी ने ऐसा सकल-नि:शेष चरित्र कहा और राजा सुनते रहे। तो राजा दशरथ को दु:ख जग

एम सकळ चरित्र अशेष, कह्यां राणीए सुणतां नरेश,
राय दशरथने दुःख जाग्युं, राणीने कांई चेटक लाग्युं । ३६ ।
कर्युं कामण कोईए अचेत, वा वळग्युं भूत के प्रेत,
एम चिंता करी नरदेव, तेडाव्या गुरुने ततखेव । ३७ ।
आवी जोयुं वसिष्ठे अनूप, कोशल्या ने दीठां रामरूप,
जेम अंजन विद्यावान, आडरहित देखे ते धन । ३८ ।
एम दीठा वसिष्ठे राम, कोटी कंदर्प मूर्ति श्याम,
स्त्रीनी जे हती आकृति, ते जोयामां नथी आवती । ३९ ।
रघुवीर मूर्ति चित्त बांधी, मुनिवरने थई छे समाधि,
त्यारे बोलावे छे राजंन, नथी बोलता ते मुनिजंन । ४० ।
राय बीन्या तेणी वार, आ तो कौतुक दीसे अपार,
आ वसिष्ठ जेवा मुनिराज, तेने भूते झडप्या आज । ४१ ।
मोटुं चेटक छे ए सांये, हवे नासीने जइए क्यांये ?
एम चिंता करे छे भूपाळ, एवे जाग्या गुरु ततकाळ । ४२ ।
भूपे पूछ्युं लागी पाय, गुरु कहे—नोहे चेटक राय,
साक्षात् जे श्रीभगवान, शिव ब्रह्मा धरे जेनुं ध्यान । ४३ ।

गया—अनुभव होने लगा। उन्हें जान पड़ा कि रानी को कोई टोना लगा है। ३६। इसे किसी ने वशीकरण कर अचेत (ज्ञानहीन) किया अथवा भूत या प्रेत ने झपेट लिया—ऐसी चिन्ता करते हुए तत्क्षण राजा ने गुरु (वसिष्ठ) को बुलाया। ३७। जिस प्रकार विद्या का कोई ज्ञाता अंजन लगाने पर बिना किसी आड़ के धन को देखे, उसी तरह वसिष्ठ ने आकर देखा, तो उन्होंने कौशल्या को अद्भुत राम रूप हुए देखा। ३८। इस प्रकार वसिष्ठ ने राम की करोड़ों मदन के समान सुन्दर श्यामवर्ण मूर्त्ति को देखा और स्त्री की (कौशल्या की) जो आकृति (देह) थी, वह उनके देखने में नहीं आ रही थी। ३९। रघुवीर की मूर्ति में चित्त बाँध (लगा) लिया, तो वसिष्ठ को समाधि लग गयी है—इसलिए राजा उन्हे बुलाते है (बोलने को प्रेरित करते है—पूछते हैं), तो मुनिवर बोलते नहीं है। ४०। उस समय राजा डर गये—यह तो अद्भुत कौतुक दिखायी देता है। वसिष्ठ जैसे ये मुनिराज हैं—उन्हें आज भूत ने झपेट लिया। ४१। इसमें यह बड़ा ही पिशाच है, अब (हम) भाग कर कहाँ जाते हैं (जाएँ) ? राजा ऐसी चिन्ता कर रहे हैं, तो तत्काल गुरु जागृत हुए। ४२। गुरु के चरणों में लगकर राजा ने उनसे पूछा, तो गुरु कहते हैं—राजा, यह टोना नही है। जिनका ध्यान शिवजी,

ते कौशल्या उदर अवतार, आव्या हरवा भूमिनो भार,
तमने चरित्र कह्यां जेटलां, प्रगट थई करशे तेटलां । ४४ ।
आजकालमां हवे भूप, अवतरशे रामस्वरूप,
एवुं सांभळी दशरथराय, पाम्या आनंद हरख न माय । ४५ ।
पछे गुरुने तेडी साथ, सभामांहे आव्या नृपनाथ,
घणुं हरख-भर्या राजन, आव्यो प्रसव समयनो दन । ४६ ।
अयोध्यावासी नरनार, तेना हरख-तणो नहि पार,
उदय चंद्रनो इच्छे चकोर, घन चाहे बपैया मोर । ४७ ।
भानु आगम फूले कंज, कुसुमकर कोकिल रंज,
एम कुशळ इच्छे प्रजाय, क्यारे रायने पुत्र ज थाय । ४८ ।
मेल्या अखंड दीपक द्वार, निशाए जागे सहु नरनार,
बेठा गणक लेई घडियाळ, सभा पूरी बेठा भूपाळ । ४९ ।

वलण (तर्ज वदलकर) :

भूपाळ बेठा सभामांहे, वसिष्ठ आदे मुनिजंन रे,
वाट जुए छे वधामणीनी, क्यारे प्रगटे जुगजीवंन रे ? । ५० ।

* * *

ब्रह्माजी करते हैं, वे ही भगवान प्रत्यक्ष कौशल्या के उदर में, भूमि का भार हरण करने के लिए अवतार के रूप में, आये (हैं)। तुम्हें जितना चरित्र (कौशल्या ने) बताया, प्रकट होकर वे उतना करेंगे । ४३-४४ । हे राजा, अब आजकल में (अभी-अभी) वे भगवान राम रूप में अवतरित होंगे। ऐसा सुनकर राजा दशरथ को आनन्द प्राप्त हुआ, उनका हर्ष कहीं समाता नहीं । ४५ । तदनन्तर गुरु को साथ में लेकर राजा सभा में गये। वे बहुत आनन्दित थे। (कौशल्या की) प्रसूति का दिन (निकट) आ गया । ४६ । अयोध्या के नर-नारियों के आनन्द का कोई पारावार नहीं था। जिस प्रकार चकोर चन्द्रमा के उदय की अभिलाषा करता है, जिस प्रकार चातक और मोर बादल (के आगमन) की इच्छा करते हैं, उसी प्रकार सब लोग राम के आविर्भाव की इच्छा करते हैं । ४७ । सूर्य के उदय से कमल खिलते हैं। वगीचे से कोयल को आनन्द होता है। इस प्रकार प्रजा कुशल की इच्छा करती है और प्रतीक्षा करती है कि कब राजा के पुत्र ही उत्पन्न होगा । ४८ । दरवाजों पर अखण्ड दीपक लगाये गये। सभी नर-नारी रात को जागृत रहे हैं। ज्योतिषि घटिका-यंत्र लेकर बैठे और राजा सभा लगाकर बैठे । ४९ ।

राजा और वसिष्ठ आदि ऋषि सभा में बैठे। सब लोग मिलकर प्रतीक्षा कर रहे हैं कि कब जगजीवन (राम) का आविर्भाव होगा। ५०।

* * *

अध्याय–१५ (ब्रह्मादिकृत राम की गर्भ-स्तुति)

राग दोहा

देव सकळ त्या आविया, सूतिका घर जे ठार,
गर्भस्तुति करता सहु, अदृश्य रही निरधार। १।
अग्र रह्या सहु देवने, ब्रह्मा चतुर सुजाण,
प्रभु प्रगट्या आगम लही, स्तवता मधुरी वाण। २।

ब्रह्मा उवाचः

जय जय अगम अगाध, बोध अविचळ अविनाशी,
आदि पुरुष अव्यक्त, हरि सचराचर-वासी। १।
अखिल विश्व-आधार, अमल अज अंतरजामी,
पूरण-काम परमेश, परात्पर व्यापक स्वामी। २।
अपरिछिन्न आनंदरूप, सर्वज्ञ सुखाकर,
ब्रह्म सच्चिदानंद, ज्ञानघन निर्गुण गुणाकर। ३।

अध्याय–१५ (ब्रह्मा आदि द्वारा श्रीराम की गर्भ-स्तुति)

जिस स्थान पर सूतिका (प्रसूति) गृह था, वहाँ सभी देवता आ गये। वे सब निश्चय ही अदृश्य रह कर (भगवान् की) गर्भ-स्तुति करते हैं। १। चतुर और सु-ज्ञानी ब्रह्माजी सब देवों के आगे रहे। जन्म लेकर प्रभु श्रीराम प्रकट हो गये (जब) सभी देवता मधुर स्वर में स्तवन करते रहे। २। ब्रह्माजी कहते है—अगम्य, अगाध, बोधमय, अविचल, अविनाशी भगवान् की जय हो। उस आदि पुरुष की, अव्यक्त होने पर भी सचेतन-अचेतन में निवास करनेवाले श्रीहरि की जय हो। तुम अखिल विश्व के आधार हो। तुम अमल (विशुद्ध) हो, अजन्मा (अनादि) और अन्तर्यामी हो। तुम पूर्णकाम, परमेश्वर, परात्पर, (सर्व) व्यापक, (सब के) स्वामी हो। तुम अपरिच्छिन्न (अखण्डित), आनन्दरूप, सर्वज्ञ, सुख के आकर (खान) हो। तुम ब्रह्म सच्चिदानन्द, ज्ञान के घन (मेघ), निर्गुण होने पर भी गुणों के समूह (अथवा खान) हो। ३।

निगम अगम वागीश, ईश अज सिद्ध अमर गण,
पार न पामे सकळ, लक्षणा करे विशेषण । ४ ।
मन वाणी गोतीत, अगोचर नव्य प्रमाणे,
दारू दारा सूत्रधार, करता नव जाणे । ५ ।
आत्माराम अग्राह्य, अपार अदृश्य अनादि,
अकळ रूप अविधार, सकळ सृष्टि कर आदि । ६ ।
तदपि निज इच्छाय, भक्त गो सुर द्विज कारण,
स्थापन धर्म अशेष, धरो विविध तनु धारण । ७ ।
अंश कळा युद्ध व्यूह, रूप अद्भुत वर धरता,
निज जन पूरण काम, अनुग्रह निग्रह करता । ८ ।
मच्छरूप धरी वेद ग्रह्या, शंखासुर मार्यो,
कूर्मरूप धरी निधि-मथन मंद्राचळ तार्यो । ९ ।
रूप वराह विशाळ, ग्रहण करी भूमि स्थापी,
हिरण्याक्ष हत कर्यो, विमळ कीर्ति जगव्यापी । १० ।

तुम वेदों के लिए (भी) अगम्य हो। वागेश्वरी सरस्वती, ईश्वर (शिव), ब्रह्मा, सिद्ध, देवतागण—ये सब तुम्हारी महिमा का पार प्राप्त नहीं कर सकते। (इसलिए उसका वर्णन करने के लिए) वे लक्षण और विशेषण का प्रयोग करते हैं। ४ । तुम मन, वाणी और इन्द्रियों के परे हो। न्यायशास्त्र के नये-नये प्रमाणों के विचार से (भी) तुम अगोचर हो। (सृष्टि रूपी) कठ-पुतली को नचाने वाले सूत्रधार हो। फिर भी तुम्हें—उस कर्ता को कोई नहीं जानता। ५ । तुम आत्माराम हो, अग्राह्य (पकड़ या समझ में नहीं आनेवाले), अपार, अदृश्य, अनादि हो। तुम अकल, आधार-रहित, फिर भी सकल सृष्टि के आदि (जन्मदाता) हो। ६ । फिर भी अपनी इच्छा से भक्तों, गायों, देवों (और) ब्राह्मणों के लिए और निश्शेष (पूर्ण) धर्म की स्थापना के लिए तुम अनेक शरीरों को धारण करते हो। ७ । तुम अंश, कला, युद्ध-व्यूह (इत्यादि) अद्भुत श्रेष्ठ रूप अर्थात् अवतार ग्रहण करते हो और अपने (भक्त) जनों की कामनाएँ पूर्ण करते हुए उन पर अनुग्रह (कृपा) तथा (दुष्टों का) दमन करते हो। ८ । तुमने मत्स्य रूप (अवतार) धारण करके वेदों की रक्षा की और शंखासुर को मार डाला। समुद्र-मन्थन के अवसर पर तुमने कूर्म (कछुआ) रूप (अवतार) धारण करके मन्द्र (मन्दर) नामक पर्वत (जिसको मथानी के रूप में प्रयुक्त किया गया था) को तारा—उठाये रक्खा। ९ । विशाल वराह का अवतार ग्रहण करके

भीम भयंकर तनु, नरहरि स्थंभ विदार्यो,
हिरण्यकश्यपु हण्यो, भक्त प्रह्लाद उगार्यो । ११ ।
वामन थई बळि-द्वार, जई जाचि भू त्रिकम,
करी सुरपतिनी सहाय, विस्तर्यु अद्‌भुत विक्रम । १२ ।
भृगुकुळ कमळ पतंग, फरशुधर सहस-भुजारी,
नक्षत्री एकवीश वार, करी भुव द्विज करधारी । १३ ।
अब उदयाचळ उदर, मात कौशल्या केरो,
उदय होउ श्रीराम रवि हर विश्व अंधेरो । १४ ।
असुर सघन वन विपुल, दुष्ट दशमुख आदि सब,
जातवेद रघुवीर, जन्म धरी दहन करो अब । १५ ।
देव दीन होई रहे, वेदपथ परम निवारे,
उतारो भूभार, करो सुर संत सुखारे । १६ ।

तुमने (पाताल लोक में धँसती हुई) पृथ्वी (को बचा कर उस) की प्रतिष्ठापना की तथा हिरण्याक्ष नामक दैत्य का वध करके अपनी विशुद्ध कीर्ति को जगत् में व्याप्त कर दिया । १० । नरसिंह के रूप में प्रचण्ड, भयंकर शरीर धारण करके तुमने खम्भे को विदीर्ण किया, हिरण्यकश्यपु को मार डाला और (अपने) भक्त प्रह्लाद का उद्धार किया । ११ । (दैत्यों के राजा) बली के द्वार पर वामन रूप में जाकर तुमने तीन कदम भर भूमि माँगी और (उस निमित्त उसे पाताल में धकेलकर) तुमने इन्द्र की सहायता करके अद्‌भुत प्रताप का विस्तार किया । १२ । भृगु-कुल रूपी कमल के लिए सूर्य के रूप में और सहस्रहस्तधारी कार्तवीर्य के शत्रु परशुराम के रूप में अवतीर्ण होकर, तुमने ब्राह्मणों को हाथ में लेकर, पृथ्वी को इक्कीस बार निःक्षत्रिय कर डाला । १३ । हे श्रीराम, अब माता कौसल्या के उदर रूपी उदयगिरि पर तुम सूर्य के रूप में उदित हो जाओ और विश्व में फैले हुए (दुराचार रूपी) अँधेरे को दूर करो ।१४। दशमुख रावण आदि सब दुष्ट असुरों के रूप में बहुत घना वन (विश्व में) बढ़ा हुआ है । हे रघुवीर रूपी अग्नि ! तुम जन्म लेकर प्रकट होकर अब उसे जला डालो । १५ । (आज विश्व में) देवता दीन होकर रहते है । वेदों का बताया मार्ग अति अवरुद्ध हुआ है । अतः हे श्रीराम, (तुम अवतार धारण करके) भूमि का (पाप रूपी) बोझ उतार डालो और देवों तथा सज्जनों को सुखी करो । १६ । हे श्रीजगदीश ! भक्त जनों के दुःख को नष्ट करनेवाले, (भक्तों से) विमुख बने हुए लोगों

जज जय श्रीजगदीश, प्रभो जन आरत भंजन,
गंजन विमुख समूह, सदा मुनिजन मनरंजन । १७ ।
जय जय दीनदयाल, हरि शरणागत-वत्सल,
प्रगट थाओ परिब्रह्म, करो पावन पद भूतल । १८ ।
जय जय जगन्निवास, रमापति संकटमोचन,
कोटी काम लावण्य, छबी हम निरखहु लोचन । १९ ।
जय अपार गुण नाम, रूप अद्‌भुत चरित्र वर,
त्रिविध तापहर विमळ सुधा सम श्रवण मंगळकर । २० ।
करुणानिधान भगवान जय, पुण्यश्लोक पावन करण,
अब प्रगट होउ गिरधर प्रभु, जय रघुपति अशरण-शरण । २१ ।

दोहरो

गर्भस्तुति करी देवता, रही आकाश विमान,
पुष्प अंजलि ग्रही जुवे, जन्म समय भगवान । २२ ।

* * *

(अर्थात् भक्तों को पीड़ा पहुँचानेवालों) का विनाश करनेवाले, मुनिजनों के मन को सदा बहलानेवाले—प्रसन्न करनेवाले हे प्रभो ! तुम्हारी जय हो । १७ । हे दीनों पर दया करनेवाले, शरण में आनेवालों के प्रति वात्सल्य दिखानेवाले हरि ! तुम्हारी जय हो । हे परि (पूर्ण) ब्रह्म ! तुम प्रकट हो जाओ और अपने चरणों (के स्पर्श) से धरा-तल को पवित्र बनाओ । १८ । हे जगन्निवास, (भक्तों को) संकट से मुक्त करनेवाले श्रीरमापति भगवान् ! तुम्हारी जय हो ! करोड़ों कामदेवों के लावण्य से युक्त तुम्हारी मूर्ति को हम अपने नयनों से देखें । १९ । हे अपार गुणों और नामों एवं रूपों के धारक तथा अद्‌भुत श्रेष्ठ चरित्रवाले प्रभो, तुम्हारी जय हो । (आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक—इन) तीनों प्रकार के तापों को दूर करनेवाले, विशुद्ध अमृत-सदृश नाम को श्रवण करनेवाले का कल्याण करनेवाले प्रभो, तुम्हारी जय हो । २० । हे करुणानिधान ! हे पुण्यश्लोक, हे (सबको) पवित्र करनेवाले भगवान्! तुम्हारी जय हो । हे गिरिधर प्रभो ! अब प्रकट हो जाओ । हे निराधार के आधार रघुपति ! तुम्हारी जय हो । २१ ।

आकाश में विमानों में (विराजमान) रहकर देवताओं ने (भगवान् की) गर्भ-स्तुति की । और अंजलियों में फूल लेकर वे भगवान् के जन्म-समय की प्रतीक्षा करते हैं (रहे) । २२ ।

* * *

अध्याय–१६ (राम-लक्ष्मण-भरत-शत्रुघ्न-जन्म)

राग धवळ धनाश्री

श्रीराम-जन्म मंगळ सुखदायक, ग्रह सकळ अनुकूळ जी,
दशे दिशा दीप्तमान थई, शुभ लग्न छे मंगळ मूळ जी । १ ।
ऋतु वसंत चैत नौमी शुभ, शुक्ल पक्ष मध्यान जी,
पुष्य नक्षत्र रविवारे प्रगटया, रघुवीर रूप-निधान जी । २ ।
देवदुंदुभि वाग्यां नभमां, पुष्पनी वृष्टि थाय जी,
सुर विमाननी भीड थई, गुण गंधर्व-किन्नर गाय जी । ३ ।
सूतिका गृहमां कौशल्याजी जोतां थई सावधान जी,
वर्ष अष्टादश केरी मूर्ति, प्रगट्या श्रीभगवान जी । ४ ।
शंख चक्र गदा पद्म विराजे, चतुर्भुज घनश्याम जी,
कुंडल मुगट आभूषण-मंडित, लाजे कोटिक काम जी । ५ ।
पीळुं पीतांबर पदनखमणिद्युति कमळकोमळता भ्राजे जी,
वज्रांकुश घट मच्छनी आदे, रेखा अष्टादश राजे जी । ६ ।

अध्याय–१६ (श्रीराम आदि के जन्म की कथा)

श्रीराम का जन्म मंगल (कल्याणकारी) और (सब के लिए) सुखदायक है। (उनके जन्म के समय) सब ग्रह अनुकूल थे। दसों दिशाएँ तेजस्वी (उज्ज्वल) हो गयीं। (जन्म-वेला का) मुहूर्त शुभ एवं मंगल-मूलक था। १। वह वसन्त ऋतु थी; चैत्र महीने के शुक्ल पक्ष की शुभ नवमी तिथि का मध्याह्न (दुपहर) समय था। (उस दिन) नक्षत्र पुष्य था। (ऐसे शुभ मुहूर्त), रविवार के दिन रूप-निधान रघुवीर श्रीराम प्रकट हुए। २। (आकाश में से) पुष्प-वर्षा हुई। (आकाश में) देवो के विमानों की भीड़ हो गयी; गन्धर्व और किन्नर भगवान् के गुणों (की महिमा) का गान करते थे। ३। सूतिका-(प्रसूति) गृह में कौशल्या (भगवान् के आविर्भाव को) देखते ही सावधान हो गयी। श्रीभगवान् अठारह वर्ष की मूर्ति के रूप में प्रकट हो गये। ४। मेघ के समान साँवले वर्णवाले भगवान् की वह मूर्ति चार हाथों से युक्त है। उनके हाथों में शंख, चक्र, गदा और कमल-पुष्प शोभायमान हैं। वे कुण्डलों, मुकुट तथा आभूषणो से सुशोभित हैं। (उनके सौन्दर्य को देखकर) करोड़ों कामदेव लज्जित हो जाते है। ५। (पीला) पीताम्बर, पाँवों के नखों की रत्न की-सी कान्ति और (शरीर की) कमल की-सी कोमलता उज्ज्वलता-पूर्वक झलकती है। वज्र, अंकुश, घट, मत्स्य आदि

एवा हरिने कौशल्याए, ऊभा दीठा पास जी,
पूरवनी स्मृति त्यां आवी, ओळखिया अविनाश जी । ७ ।
कौशल्याए स्तुति वहु कीधी, कर जोडी तेणी वार जी,
बाळकरूपे राम थया, पछे दशरथ राजकुमार जी । ८ ।
शिशुरूपे थई शय्या मांहे, करवाने लाग्या रुदन जी,
त्यारे सर्वे जाण्युं जे पुत्र ज प्रगट्यो, हरख वधाई धन्य जी । ९ ।
एवा सुतने जोई कौशल्या आश्चर्य प्राम्यां मंन जी,
प्रसव तणी पीडा नव जाणी, जे क्यारे प्रगट्यो तंन जी । १० ।
वाजित्र अगणित वागवा लाग्यां, देवनां दुंदुभिनाद जी,
जयजयकार तणी धुनि ऊठी, ऊपन्यो अति आह्लाद जी । ११ ।
वधामणिया ते दोड्या वेगे, मळियां जाचकवृंद जी,
अवधपुरीमां घेर घेर मंगळ, नरनारी आनंद जी । १२ ।
कनक थाळ कुमकुम दधि अक्षत, मंगळ विधि उपचार जी,
नवल त्रिया सहु मंगळ गाती, आवी राजद्वार जी । १३ ।

की अठारह रेखा-कृतियाँ शोभायमान हैं । ६ । कौशल्या ने ऐसे (रूप-धारी) हरि को अपने पास खड़े हुए देखा । तब उसे पूर्वजन्म की स्मृति हो आयी और उसने अविनाशी भगवान् को पहचान लिया । ७ । उस समय हाथ जोड़कर कौशल्या ने (भगवान् की) बहुत स्तुति की तो वाद में श्रीराम बालक के—अर्थात् दशरथ के राजपुत्र के रूप में (बदल गये)—प्रस्तुत हो गये । ८ । शय्या में शिशु-रूप में (प्रस्तुत) होकर वे रुदन करने लगे । तब सबने जाना कि (कौशल्या के) पुत्र ही प्रकट हुआ (जन्मा) । सबने (इस) सौभाग्य के लिए आनन्दपूर्वक वधाई दी । ९ । कौशल्या ऐसे पुत्र को देखकर मन में आश्चर्य-चकित हो गयी (क्योंकि) उसे प्रसूति की पीड़ा अनुभव नहीं हुई और उसने यह नहीं जाना कि पुत्र कब प्रकट हुआ । १० । (उस समय) अनगिनत बाजे बजने लगे । (आकाश में) देवों की दुन्दुभियों (नगाड़ों) की ध्वनि हो रही थी । (चारों ओर) जय-जयकार की ध्वनि उठी (उत्पन्न हुई), (और सबको) अतिशय आह्लाद उत्पन्न (अनुभव) हुआ । ११ । याचकों के समूह मिलकर वधाई देने दौड़े । अयोध्यापुरी में घर-घर मंगल अनुभव हो रहा था (और) पुरुष तथा स्त्रियाँ, सब आनन्दित हो गये । १२ । सोने की थालियों में कुंकुम, दही, अक्षत तथा (अन्य) मंगल विधि के योग्य उपचार (सामग्री) लेकर सब नववधुएँ (स्त्रियाँ) मंगल गीतों को गाती हुई राज-(प्रासाद के) द्वार के पास आ गयीं । १३ । कौशल्या को

कौशल्याने वधावे वनिता, जोती कुंवरनुं मुख जी,
शेष सहस्त्र शके नहि वरणवी, तेह समेनुं सुख जी । १४ ।
नृप दशरथ सुख पाम्या अति धणुं, ब्रह्मानंदमां मन जी,
मुनिमंडळमां वसिष्ठ विराजे, साधे सुग्रह जन्मलग्न जी । १५ ।
अनेक मुनिवर ते समे आव्या, दशरथने दरवार जी,
सरव मळी महापर्व विशे ज्यम, प्रयाग मोझार जी । १६ ।
ते समे ऊठ्या दशरथ, पुत्रनुं मुख जोवाने जाय जी,
वसिष्ठ आदे मुनिवर साथे, उर आनंद न माय जी । १७ ।
स्नान करी शुभ अंबर पहेर्यां, स्वस्ति-वाचन थाय जी,
कोटि कंद्रप सम रामचंद्रमुख, जोयुं दशरथ राय जी । १८ ।
जन्मअंध लोचन पामे ज्यम, निर्धन धन भंडार जी,
एम पुत्रने जोई दशरथ राजा, पाम्या हर्ष अपार जी । १९ ।
जातकर्म पछी कर्युं कुंवरनुं, वेदविदित महिमाय जी,
भीड घणी थई जाचकनी तव, दान आपता राय जी । २० ।

बधाई देते हुए वे स्त्रियाँ राजा के पुत्र को देखती हैं। उस समय के सुख का वर्णन सहस्त्रों शेष (भी) नही कर सकते । १४ । राजा दशरथ ने अति गहरा सुख पया। उनका मन ब्रह्मानन्द में (मग्न) था। (इधर) मुनियों के समूह में वसिष्ठ ऋषि विराजमान हैं (थे) जो शुभ ग्रहों तथा जन्म-लग्न को सिद्ध कर रहे है (थे) । १५ । उस समय राजा दशरथ की राजसभा में अनेक श्रेष्ठ ऋषि आ गये। वे सब ऐसे मिलकर आ गये, जैसे महान् पर्व के अवसर पर प्रयाग में आते हैं । १६ । उस समय राजा दशरथ उठ गये और (अपने) पुत्र का मुख देखने के लिए जाते है (गये) । उनके साथ वसिष्ठ आदि श्रेष्ठ मुनि थे। उनका आनन्द हृदय में नहीं समाता था । १७ । स्नान करके राजा ने मंगल वस्त्र पहन लिये। (तदनन्तर) स्वस्ति-वाचन विधि (सम्पन्न) हो गयी। (तब) राजा दशरथ ने करोड़ों कामदेवों के समान सुन्दर रामचन्द्र का मुख देखा । १८ । जन्मान्ध आँखें प्राप्त करे अथवा निर्धन मनुष्य को धन-भण्डार मिले, तो उसे जैसा आनन्द होता है, वैसा ही अपार आनन्द राजा दशरथ ने पुत्र को देखकर पाया (अनुभव किया) । १९ । तदनन्तर जिसकी महिमा वेद-विदित है, ऐसे उस पुत्र का जात-कर्म (नामक विधि) सम्पन्न किया। उस समय याचकों की बहुत भीड़ हो गयी, तो राजा उन्हें दान देते है (देने लगे) । २० । विशेषतः ब्राह्मण अनेक आभूषण,

आभूषण पट मुक्ता माणेक, गज रथ अश्व अनेक जी,
गो पृथ्वी गृह ग्राम विधिए, लेता विप्र विशेक जी । २१ ।
दशरथे दान कर्यां जळ मूकी, सरिता चाली त्यांहे जी,
तेनी संख्या कोण करे थयो, संगम सरज्युं मांहे जी । २२ ।
विप्र बंदीजन मागध पासे, लूंटाव्या भंडार जी,
जेणे जेम लेवाय तेम लीधुं, द्रव्य तणो नहि पार जी । २३ ।
जाचक सरव अजाचक कीधा, भिक्षुक थई गया भूप जी,
लक्ष्मीपति दशरथ घेर प्रगट्या, ईश्वर अकळ अनूप जी । २४ ।
तेणे समे नृप केरी राणी, सात सें आवी त्यांहे जी,
मुक्ता कुसुम वधावे विधिए, बेठी मंदिर मांहे जी । २५ ।
(जेम) आदिमाया भगवती पासे, अनंत शक्ति आवे जी,
एम कौशल्यानी पासे आवी, राणीओ हरखे बोलावे जी । २६ ।
रत्न जटित पर्यंकनी उपर, छत्र अनोपम झळके जी,
चंद्र-वरण चामर बे पासे, चंचळ थातां चळके जी । २७ ।

वस्त्र, मोती, मानिक-रत्न, हाथी, रथ, घोड़े, गायें, भूमि, घर, ग्राम विधि-पूर्वक (दान के रूप में) लेते है । २१ । दशरथ ने पानी सींचकर (उदक छोड़कर) दान दिये—उस जल से वहाँ नदी बह चली । (दशरथ द्वारा दिये हुए) दानों की गिनती कौन कर सकता है ? (बस !) उदक के जल-प्रवाह का सरयू नदी में संगम हुआ । (इससे दानों की संख्या का अनुमान करें) । २२ । (दशरथ ने) ब्राह्मणों, बन्दियों और मागधों को (धन-धान्य का) भण्डार लुटा दिया । जिससे जिस तरह लिया जा सकता, उस तरह उसने लिया । फिर भी उस द्रव्य का अन्त नहीं हुआ । २३ । राजा ने याचकों को 'अयाचक' बना दिया (अर्थात् उनको इतना धन आदि दिया कि उन्हें आगे चलकर किसी से याचना करने की आवश्यकता नहीं रही ।) और स्वयं राजा भिक्षुक (शुभ कामनाओं के याचक) बन गये, अथवा भिक्षुक (भिखमंगे) राजा (के समान धनवान्) हो गये । अकल (अगम्य), अनुपमेय ईश्वर, लक्ष्मी-पति भगवान् विष्णु (आज स्वयं) दशरथ के घर में प्रकट हो गये । २४ । उस समय राजा (दशरथ) की सात सौ रानियाँ वहाँ आ गयीं और मोतियों तथा फूलों को विधिपूर्वक स्वीकार करती हुई वे (कौशल्या के) मन्दिर (प्रासाद) में वैठ गयीं । २५ । जैसे आदिमाया भगवती के पास अनन्त शक्तियाँ आती हैं, वैसे ही वे रानियाँ कौशल्या के पास आ गयीं और उसके साथ आनन्द-पूर्वक बोलती हैं (रहीं) । २६ । रत्न-जटित

तेनी उपर कौशल्याजी बेठां, श्री रामने लेई उछंग जी,
किंकरी अनेक सेवामां सत्वर, विचरे नाना रंग जी । २८ ।
स्वस्थ थई नृप दशरथ बेठा, करी मुनिवरनी सभाय जी,
जन्मपत्रिका वसिष्ठ वांचे, सांभळो दशरथराय जी । २९ ।
ए क्षीरसागरवासी नारायण, आदि पुरुष त्यां जेह जी,
दुष्टसंहारक निजजन-तारक, अवतरिया छे एह जी । ३० ।
सकळ जीवना अंतर्यामी, उत्पत्ति स्थिति अविनाश जी,
आत्माराम रमे सघळे माटे, रामनाम अभिधान जी । ३१ ।
द्वादश वर्षना पुत्र थशे, बळ प्राक्रम विषे जेह जी,
एक मुनि जाचीने लेई जाशे, यज्ञरक्षा करशे एह जी । ३२ ।
एम भविष्य मुनि सहु कहेवा लाग्या, आगम रामचरित्र जी,
श्रवण करे दशरथ कौशल्या, पावन पुत्र पवित्र जी । ३३ ।
श्रीरामचंद्र स्तनपान करंता, जगजीवन आधार जी,
नेत्र तणी समश्या करी नाथे, गुरुने तेणी वार जी । ३४ ।

पलंग के ऊपर अनुपम छत्र झलकता है (था) और चन्द्र के-से वर्ण-वाले दो चामर साथ में (हिलाये जाने के कारण) चंचल होने से चमकते हैं (थे) । २७ । उस पलंग के ऊपर श्रीराम को गोद में लिये हुए कौशल्या बैठी (थी) और सेवा में तत्पर हुई अनेक सेविकाएँ नाना रंग-ढंग से (इधर-उधर) घूमती-फिरती हैं (थीं) । २८ । बड़े-बड़े मुनियों की सभा लगाकर, स्वस्थ (निश्चिन्त) हो कर दशरथ बैठे थे । (उसमें) वसिष्ठ ऋषि जन्म-पत्रिका पढ़ते है (थे) और राजा दशरथ सुनते हैं (थे) । २९ । जो (भगवान्) क्षीरसागर में निवास करनेवाले नारायण आदिपुरुष, दुष्टों के संहारक तथा अपने भक्तों के उद्धारक हैं, वे यहाँ (श्रीराम के रूप में) अवतरित है । ३० । वे समस्त जीवों के अन्तर्यामी है, उत्पत्ति-स्थिति के कर्ता तथा अविनाशी है । वे सब में आत्माराम के रूप में रमते हैं । उनका नाम श्रीराम है । ३१ । वह पुत्र वारह वर्ष का होगा, तो (वह) वल और पराक्रम में (विशेष व्यक्ति) सिद्ध होगा । एक मुनि उसे माँग कर ले जाएगा, तो यह (उसके) यज्ञ की रक्षा करेगा । ३२ । इस प्रकार मुनि श्रीराम का जन्म, चरित्र (आदि) का भविष्य सव को वताने लगे । दशरथ और कौशल्या अपने पावन पवित्र पुत्र के वारे में सुनते है (थे) । ३३ । जगत् के जीवनाधार श्रीरामचन्द्र स्तन-पान कर रहे हैं (थे) ।

चरित्र सकळ कहेजो रायनुं, पण मरण न कहेशो एव जी,
एम समश्यामां सूचवियुं पोते, गुरु समज्या ततखेव जी । ३५ ।
(पछे) यज्ञरक्षाथी मांडी कथा कही, रावणकुळ संहार जी,
दशरथ मरण विना गुण सघळा, गुरुए कर्या विस्तार जी । ३६ ।
त्यारे सुमित्राने पुत्र थयो, आवी वधामणी तत्काळ जी,
गुरु सहित मुनिमंडळ तेडी, आव्या त्या भूपाळ जी । ३७ ।
जातकर्म कुंवरनुं करियुं, आप्या बहुविधि दान जी,
तेणी समे केकैने प्रगट्या, सुंदर बे संतान जी । ३८ ।
अवधपतिने आनंद न माये, जाचकनां दुःख काप्यां जी,
जातकर्म कर्युं बे पुत्रनुं, दान अपरिमित आप्यां जी । ३९ ।
चारे पुत्र थया दशरथने, आनंद्या तेणी वार जी,
बार दिवस महा ओच्छव वरत्यो, अवधपुरी मोझार जी । ४० ।
त्रयोदशमे दिन वसिष्ठ मुनिए, जन्मपत्र कर लीधां जी,
चारे पुत्रनां विधिए करीने, नामकरण त्यां कीधां जी । ४१ ।

उस समय (जगत् के) नाथ (श्रीराम) ने आँखों से कूट (संकेत) करके गुरु को सूचित किया—राजा का समस्त चरित्र तो कहो, परन्तु (उनकी) मौत (के बारे में) न कहो। इस प्रकार उन्होंने स्वयं गुरु को (संकेत) सूचित किया, तो गुरु वसिष्ठ तत्क्षण उसे समझ गये। ३४-३५। तदनन्तर भविष्य कथन करते हुए गुरु ने (विश्वामित्र के) यज्ञ की रक्षा से लेकर रावण-कुल के संहार तक की कथा कही। दशरथ की मृत्यु की बात के सिवा, अन्य सभी गुणों का गुरु ने विस्तार किया—विस्तार-पूर्वक वर्णन किया। ३६। तत्पश्चात् सुमित्रा के पुत्र (उपत्न्न) हुआ। तत्काल बधाइयाँ आयीं। गुरु सहित ऋषि-मण्डली को बुलाकर राजा दशरथ वहाँ आ गये। ३७। (उन्होंने) कुमार का जातकर्म किया और बहुत प्रकार के दान दिये। उस समय कैकेयी के दो सुन्दर पुत्र (सन्तान) प्रकट (उत्पन्न) हो गये। ३८। अयोध्या-पति दशरथ का आनन्द (कहीं) समाता नहीं है (था)। (दान पाकर) याचकों के दुःख काटे गये (नष्ट किये गये)। (राजा ने) दोनों पुत्रों का जातकर्म किया और अपरिमित दान दिये। ३९। (इस प्रकार) दशरथ के चार पुत्र (उत्पन्न) हो गये। उस समय वे आनन्दित हो गये। अयोध्यानगरी में बारह दिवस महोत्सव सम्पन्न किया गया। ४०। तेरहवें दिन वसिष्ठ मुनि ने जन्म-पत्रिका हाथ में ली और तब चारों पुत्रों का विधिवत् नामकरण किया। ४१। कौशल्या का पुत्र वस्तुतः

वैकुंठवासी कौशल्या-सुत, नाम तेनुं श्रीराम जी,
शेषतणो अवतार सुमित्री, लक्ष्मण एवुं नाम जी । ४२ ।
केकैना बे पुत्र ते हरिना शंख-चक्र अवतार जी,
भरत शत्रुघन नामज पाड्यां, गुण वळ तेज अपार जी । ४३ ।
एम चार पुत्रनां नाम ज पाड्यां, गुरुए तेणी वार जी,
श्रीराम लक्ष्मण भरत शत्रुघन, वरत्यो जयजयकार जी । ४४ ।

वलण (तर्ज वदलकर)

जयजयकार थयो अवधपुरमां, दशरथ हरख्या अति घणुं,
श्रोताजन सहु सांभळो, कहुं बाळचरित्र राघव तणुं । ४५ ।

* * *

वैकुण्ठवासी भगवान् विष्णु थे, उसका नाम 'श्रीराम' हुआ । सुमित्रा का पुत्र शेष भगवान् का अवतार था । उसका नाम 'लक्ष्मण' था । कैकेयी के दोनों पुत्र श्रीविष्णु के शंख और चक्र के अवतार थे । गुण और बल में जो अपार (असीम) थे, ऐसे उन दोनों को भरत और शत्रुघ्न नाम दिये गये । ४२-४३ । इस प्रकार उस समय गुरु ने चारों पुत्रों के नाम रखे—श्रीराम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न; तो जय-जयकार हुआ । ४४ ।

अयोध्यानगर में जय-जयकार हुआ, तो दशरथ अत्यधिक आनन्दित हुए । हे श्रोताजनो, तुम सब सुनो—मैं श्रीराम का बाल-चरित्र कहता हूँ । ४५ ।

* * *

अध्याय–१७ (रावण का भयभीत होना)

राग आशावरी

श्रीरामचरित्र कथारस अमृत, पावन सुखद अपार,
जे आदरे श्रवण करे नहि, तेनी बुद्धिने धिक्कार । १ ।

अध्याय–१७ (राग आसावरी)

श्रीराम-चरित्र की कथा का रस (मानो) अतीव पावन और सुखदायी अमृत है । जो उसका आदरपूर्वक श्रवण नहीं करते, उनकी बुद्धि को

वक्ता विवेकी बृहस्पति जेवा, मूरख श्रोता होय,
तो व्यर्थ कथा जाये ते सादर, श्रवण करे नहि कोय। २ ।
वक्तानी वाणी मिथ्या ज्यम, उज्जड वनमां रुदन,
सुख दुःख तेने कोई न पूछे, एम श्रोता मूरख जन। ३ ।
जेम खटरस भोजन भात्यभात्यनां, जमनारो रोगिष्ठ,
स्वाद कशो रुचे नहि तेने, धर्मशास्त्र पापिष्ठ। ४ ।
जन्मअंधने दर्पण जेवुं, कागने अमृत आहार,
ऊंटने रंभाफळनुं भोजन, शूकर ने धनसार। ५ ।
एम श्रोता मूरख देखीने, थाय सरस्वतीने संताप,
राजकन्या ज्यम पद्मनी सुंदर, षंढने दीधी आप। ६ ।
ज्यम पतिसेवामां जारणी रहे नहि भग्न पात्रमां नीर,
एम मूरखना रुदेमांहे हरे नहि, रामकथा गंभीर। ७ ।
कविता सिंधुमां अर्थ रत्न ते, नव जाणे मतिमंद,
ज्ञाता भगवती ए रस जाणे, जे काव्य कथा नभ चंद। ८ ।

धिक्कार है। १। वक्ता (कथा कहनेवाला) विवेकवान बृहस्पति जैसा हो—और यदि श्रोता मूर्ख हो, तो चूँकि कोई उसका आदरपूर्वक श्रवण नहीं करता, वह कथा (कथन) व्यर्थ हो जाती है २। यदि श्रोताजन ऐसे मूर्ख हों कि कोई उससे सुख-दुःख पूछते नहीं, तो वक्ता की वाणी उस प्रकार मिथ्या अर्थात् व्यर्थ होती है, जैसे उजाड़ वन में (किसी का) रुदन (निष्फल) होता है। ३। जैसे भाँति-भाँति का षड्-रस (छहों रसों से युक्त) भोजन (बनाया हुआ) हो, परन्तु भोजन करनेवाला रोगी हो, तो उसे किसी (भी) पदार्थ का स्वाद अच्छा नहीं लगता, वैसे ही (मूर्ख को रामकथा का वर्णन श्रवण करने में कोई आनन्द नहीं आता।) पापी को धर्मशास्त्र अच्छा नहीं लगता। ४। जन्मान्ध को दर्पण (दिखाना), कौए को अमृत (के समान मधुर) आहार (कराना), ऊँट को केले (के फल) का भोजन (कराना), और सूअर को कपूर (खिलाना जैसे व्यर्थ) है। (वैसे ही मूर्ख श्रोता को रामकथा का वर्णन सुनाना निरर्थक है)। ५। ऐसे मूर्ख श्रोता को देखकर (वाणी की देवी) सरस्वती को सन्ताप (अनुभव) होता है। (ऐसे मूर्ख श्रोता को किसी ने रामकथा सुनायी हो तो यह मानो ऐसा हुआ कि किसी ने स्वयं पद्मिनी सुन्दर राजकन्या षण्ढ (नपुंसक) को प्रदान कर दी। ६। जैसे जारिणी (बदचलन स्त्री) पति की सेवा में नहीं (लगी) रहती, अथवा टूटे पात्र में पानी नहीं रहता, वैसे ही मूर्ख के हृदय में गम्भीर (अर्थ से युक्त) रामकथा नहीं ठहरती। ७। कविता

ते माटे श्रोताजन सुणजो, सादर श्रद्धा सहित,
श्रीपुरुषोत्तम दशरथ घरे प्रगटचा, पुरमां हरख अमित । ९ ।
श्रीरामजन्मथी सकळ विश्वमां, वरत्यो जयजयकार,
एक लंकामांहे शोक पडचो, धराकंप थयो तेणीवार । १० ।
सिंहासन दशानन वेठो, भांगी पडचुं तव छत्र,
मुगट खसी पडचा शीशविषेथी कंप्यो रावण तत्र । ११ ।
त्यारे आदर्शमां अवलोक्युं रावणे, दीठां नहि दशमुख,
एवां मान शुकन जोईने मतिमंद, पाम्यो मनमां दुःख । १२ ।
मंदोदरीने स्वप्न ज आव्युं, पामी घणो परिताप,
जाणे सहित सुलोचना अंग पोतानुं, विधवा दीठुं आप । १३ ।
राणीए स्वप्ननी वात कही त्यारे, वोल्यो रावण वाण,
दैव जे ईश्वर आपणी उपर, कोप्या निश्चे जाण । १४ ।
जेनी उपर दैव कोपे तेने, थाय विघ्न अनेक,
क्षीण पामे वळ पोतानुं, थाय वेरीनुं बळ विशेक । १५ ।

(–काव्य) रूपी समुद्र में (महान्) अर्थ रूपी रत्न होता है। उसे मन्द बुद्धिवाला मनुष्य नहीं समझता। जो काव्य-कथा रूपी आकाश का चन्द्र है, ऐसा ही कोई ज्ञानी भक्त उस काव्य रस (के मर्म) को समझता है । ८ । इसलिए हे श्रोताजनो, (यह रामकथा) आदर और श्रद्धा के साथ सुनो। श्रीपुरुषोत्तम श्रीराम दशरथ के घर प्रकट हो गये। (इससे) नगर में असीम आनन्द हो गया । ९ । श्रीराम के जन्म के कारण समस्त विश्व में जयजयकार हो गया। (केवल) एक लंका में शोक छा गया। उस समय (वहाँ) भूचाल हो गया । १० । दशमुख (रावण) सिंहासन पर बैठा (हुआ था), तव उसका छत्र टूट पड़ा। मस्तक पर से मुकुट खिसक कर गिर पड़े, तो रावण काँप उठा । ११ । तव रावण ने आईने में देखा, तो उसमें (उसने अपने) दस मुख (प्रतिविम्वित) नहीं देखे (उसे नहीं दिखायी दिये)। तव ऐसे अपशकुन देखकर वह मन्दमति रावण मन में दुःख को प्राप्त हो गया । १२ । मन्दोदरी को स्वप्न ही देखने में आया, उससे उसे वहुत ग्लानि हो गयी। उसने (इन्द्रजित की पत्नी) सुलोचना सहित अपने शरीर को विधवा (के शरीर के रूप में) देखा । १३ । रानी (मन्दोदरी) ने (जव) स्वप्न की वात कही, तव रावण ने यह वात कही—यह निश्चय समझो कि दैव, जो ईश्वर (ही) है, हमारे ऊपर क्रुद्ध हो गया । १४ । जिसके ऊपर दैव कुपित होता है, उसके लिए अनेक विघ्न (उत्पन्न) हो जाते हैं। वह अपने वल को क्षीण

ते लाभ जाणी उद्यम करे, पण आवे तेमां हाण,
विजय ठामे पराजय पामे, वहालां वेरी थाय जाण । १६ ।
आपणुं राज त्रिया ने संपत्ति, गज रथ वाहन जेह,
ते शत्रु भोगवे आपण जोइए दैव रूठ्यौ होय एह । १७ ।
जे लख्युं हशे ते थशे सुन्दरी, सुख दुःख करम समान ।
माटे चिंता शाने करे छे ? हुं छुं महा बळवान । १८ ।
पछे प्रधान प्रत्ये रावण कहे छे, साचवो नग्र ने राज,
रातदिवस सावधान रहो, कोई शत्रु उदे थयो आज । १९ ।
ए रीते आगम जणाव्युं, बीन्यो रावण राय,
हवे अवधपुरीमां दिन दिन अदको आनंद उत्सव थाय । २० ।
रामजन्म सुखमंगलकारी, निरभे लोक प्रसन्न,
माग्या मेह वरसे वसुधातळ, पाके छे घणुं अन्न । २१ ।
वृक्ष सदा अमृतफळ आपे, त्रिकाळ दूझे धेनु,
व्याधि दरिद्र न चिंता कोने, थाय नहि दुःख देहनुं । २२ ।

हुआ पाता है, (और उसके) शत्रु का वल विशेष (बढ़ा हुआ) हो जाता है । १५ । वह लाभ (होगा ऐसा) समझ कर उद्योग करता है, परन्तु उसमें उसकी हानि हो जाती है । विजय के स्थान पर उसे पराजय (प्राप्त) होती है । (यह) समझो, (कि उसके) प्रिय जन शत्रु हो जाते हैं । १२ । हमारा राज्य, स्त्रियाँ और सम्पत्ति, हाथी-रथ जो भी वाहन हों, उनका भोग शत्रु करता है और हम देखते (रहते) हैं । तो (समझो कि) दैव रूठा हुआ होता है । १७ । जो (भाग्य में) लिखा होगा, वह होगा । हे सुन्दरी ! सुख-दुःख (अपने-अपने कर्म के अनुसार (होता) है । इसलिए चिन्ता क्यों करती हो ? मैं महाबलवान हूँ । १८ । अनन्तर रावण मंत्रियों से कहता है—नगर और राज्य की रक्षा करो । रात-दिन सावधान रहो । आज कोई शत्रु उदित (उत्पन्न) हुआ (है) । १९ । इस प्रकार (राम का) जन्म हुआ जाना, (तो) राजा रावण भयभीत हुआ । (परन्तु इधर) अयोध्या नगरी में अब प्रतिदिन बहुत आनन्दोत्सव सम्पन्न होता (रहता) है । २० । श्रीराम का जन्म सुख और मंगल का कर्ता है । (उससे) लोग निर्भय और प्रसन्न हैं । माँग (आवश्यकता) के अनुसार धरा-तल पर मेघ बरसते हैं; विपुल अनाज उत्पन्न होता है । २१ । वृक्ष सदा अमृत (के समान मधुर) फल देते हैं । गाय तीनों काल (सुबह, दुपहर और शाम को) दूध देती है, किसी को व्याधि (बीमारी), दरिद्रता नहीं है, न किसी को देह का (शारीरिक) दुःख

स्वरूप सुन्दर नरनारीनां, मूढ थया विद्वान,
चारे वर्ण धर्म निज पाळे, भूपति ईन्द्र समान । २३ ।
कौशल्या उदयाचळमां ज्यारे, ऊग्यां दिनमणि राम,
तस्कर उलूक ते अंध थया, मूक्यां जार चोरीनां काम । २४ ।
वेदांत शास्त्र करीने सर्व, मतनो थाये छेद,
विषयासक्ति टळे सहु ज्यारे, प्रगटे दृढ निर्वेद । २५ ।
एम रामजन्मथी काम क्रोध मद, अन्या अधरम जेह,
शोक दुःख दुष्काळ दोष सहु, नाश थया छे तेह । २६ ।
द्वितीयाचंद्रनी पेरे दिन दिन, वृद्धि पामे कुमार,
मातापितानी आँख ठरे, जोई हरखे छे नरनार । २७ ।
कनकमणिना पारणामांहे, चारे पुत्र झुलावे,
हरखे हालरुं गाती माता, हेत करीने हुलावे । २८ ।
अनेक नारीओ आवे नगरनी, झुलावे करीने हेत,
न्योछावर करी लेती ओवारणां, भक्ति प्रेम समेत । २९ ।

है । २२ । नर-नारियों का रूप सुन्दर है, मूढ़ लोग विद्वान हो गये । चारों वर्णों के लोग अपने-अपने धर्म का पालन करते हैं । (अयोध्या के) राजा (दशरथ) इन्द्र के समान हैं । २३ । जब कौशल्या रूपी उदयगिरि पर राम रूपी सूर्य का उदय हुआ, तो चोर रूपी उल्लू अन्धे हो गये; उन्होंने जार-कर्म (व्यभिचार) और चोरी का काम छोड़ दिया । २४ । सब (लोग) वेदान्त-शास्त्र (का अध्ययन) करने से सब (अन्य) मतों का खण्डन हो जाता है । जब सब में विषयासक्ति टल जाती है, तो दृढ़ शान्ति का भाव प्रकट हो जाता है । २५ । इस प्रकार राम के जन्म (के दिन) से काम, क्रोध, मद तथा जो अन्य अधर्म (कारी) विकार है, शोक, दुःख, अकाल—सब दोष नष्ट हुए हैं । २६ । प्रतिदिन वे कुमार द्वितीया के चन्द्र की भाँति विकसित होते (रहते) हैं । (उन्हें देखकर) माता-पिता की आँखें ठण्डी (प्रसन्न) हो जाती है । और (यह) देखकर पुरुष और स्त्रियाँ आनन्दित हो जाते है । २७ । सोने और रत्नों के पालनों में चारों पुत्रों को झुलाते हैं । लोरी गाते हुए माताएँ आनन्दित होती हैं और प्रेमपूर्वक वे लाड़-प्यार करती है । २८ । नगर की अनेक स्त्रियाँ (वहाँ) आती है और प्रेमपूर्वक (उन्हें) झुलाती है, भक्ति और प्रेम के साथ (अमंगल के निवारण के हेतु) निछावर करते हुए बलैया लेती हैं । २९ । श्रीरामचन्द्र के मुख को देखकर स्त्रियाँ आशीर्वाद देती हैं—हे कौसल्याजी, तुम्हारा पुत्र करोड़ों वर्ष जीवित रहे । ३० । कुमार

श्रीरामचंद्रनुं मुख नीरखीनें, देती त्रिया आशिष,
कौशल्याजी पुत्र तमारो, जीवजो क्रोड वरीष । ३० ।
कुंवरने कर्णवेध कृत्य कीधुं, सरवे पाम्यां सुख,
उछंग लेई पयपान करावे, जननी जोती मुख । ३१ ।

वलण (तर्ज़ बदल कर)

मुख जोई सुख पामे दशरथ, चारे पुत्र रतंन रे,
लाड लडावे कुंवरने, कौशल्या हरखे मंन रे । ३२ ।

* * *

राम की कर्ण-वेध नामक विधि (सम्पन्न) की, तो सबको सुख प्राप्त हुआ । माता (कौशल्या) उसे गोद में लेकर दूध पिलाती है और उसके मुख को देखती है । ३१ ।

चारों पुत्र मानो रत्न हैं, दशरथ उनके मुख देखकर सुख प्राप्त करते हैं । कौशल्या पुत्र को लाड़ लड़ाती है और मन में आनन्दित होती है । ३२ ।

* * *

अध्याय–१८ (श्रीराम का बालचरित्र)

राग वेलीनो ढाळ

श्रीरामकथा जश निर्मळ छे पुण्य पवित्र जी,
जथामातिए करी गाउं ते बाळचरित्र जी । १ ।
प्रभु खट मासना थया झूले छे पारणे,
सातसें राणीओ आवे झुलावा कारणे । २ ।

अध्याय–१८ (श्रीराम का बालचरित्र)

श्रीराम की कथा की कीर्ति निर्मल तथा शुभ एवं पवित्र है । मैं (अपनी) बुद्धि के अनुसार उस (श्रीराम के) बाल-चरित्र (लीला) का गान करता हूँ । १ । प्रभु राम छः महीने के हुए । (एक दिन) वे पालने में झूलते (झुलाये जाते) हैं (थे) । उसे झुलाने के हेतु से सात सौ रानियाँ आती हैं । २ । वे (अपने) मुख-कमल में अंगूठा डालकर

मेली मुखकमळमां अंगूठो धावता,
कीलकी हुंकार करी माताने बोलावता। ३ ।
आवी ऋतु शरदकेरी पूनमनी रातडी,
करी एक कौतुकलीला तेनी कहुं वातडी। ४ ।
चोकमां पारणुं मूकी सुवाड्या रामने,
माता हालो गाय झुलावे पूर्णकामने। ५ ।
तेवे समे चंद्रमा ऊग्यो, दिशाओ दीपावतो,
कळाओ पूर्ण किरणे, जनमन भावतो। ६ ।
तेनुं प्रतिबिंब पड्युं सुतमुख हेजमां,
जाणे बीजो चंद्रज उदे थयो थंभ तेजमां। ७ ।
सामसामी चंद्र देखाया तेज एक तारमां,
कौशल्याए कौतुक दीठुं, पड्यां छे विचारमां। ८ ।
आ ते शुं चेटक हशे के मने स्वप्न थयुं,
बदन विधु देखायो, मुख एनुं क्यां गयुं ? । ९ ।
एवे त्यां भूपति आव्या आनंद न माय जी,
मुखमां चंद्र दीठो, विस्मय थया राय जी। १० ।

चूसते। किलकारी और हुँकार देकर वे माता को बुलाते। ३। शरद् ऋतु की पौर्णिमा की रात आयी। (श्रीराम ने) एक कौतुक-लीला की, मैं उसकी बात कहता हूँ। ४। आँगन में पालना डालकर राम को सुलाया (और) माता लोरी गाते हुए पूर्णकाम राम को झुलाती है। ५। उस समय दिशाओं को प्रकाशित (उज्ज्वल) करता हुआ चन्द्र उदित हुआ। कलाओं से पूर्ण वह (चन्द्र) किरणों से जनमानस को अच्छा लगता रहा। ६। उसका प्रतिबिम्ब पुत्र के स्निग्ध मुख में पड़ा। जान पड़ता है (था), दूसरा चन्द्र (ही) तेज के स्तम्भ के रूप में उदित हो गया। ७। सामने-सामने तेज के एक तार में बँधे हुए (दो) चन्द्र दिखाई पड़े। कौशल्या ने (यह) कौतुक (अद्‌भुत बात) देखा, तो वे सोच में पड़ गयी है। ८। यह क्या भूत-पिशाच (का चमत्कार) होगा या मुझे स्वप्न देखने में आया ? (वह) मुख (तो) चन्द्र दिखायी दिया। (फिर) इसका मुख कहाँ गया ? । ९। तब (वहाँ) राजा आये। आनन्द (उनके मन में) समाता नहीं। (श्रीराम के) मुख में (के स्थान पर जब) चन्द्र देखा, तो राजा विस्मित हो गये। १०।

आकाशमां एक देखाये, बीजो सुतने मुखे,
निशाकर जुग्म देखी भूल्या नृप भर्म विषे । ११ ।
पुत्र लीधो पारणामांथी दशरथराय जी,
लेईने मंदिरमां आव्या, विस्मे घणुं थाय जी । १२ ।
रूप जोई रीझ्या राजा, ए सुंदर श्यामनुं,
जेवुं हतुं तेवुं दीठुं मुख श्रीरामनुं । १३ ।
गुरुने तेडावीने पूछ्युं ब्रह्मपुत्र बोलिया,
वसिष्ठे विचारी लीला, मग्न थई डोलिया । १४ ।
अरे नृप ए सुत जाणो, नारायण रूप छे,
अलौकिक लीला करशे, त्रिभुवनभूप छे । १५ ।
मुखमांहे चंद्रज दीठो माटे कारण कहुं,
आजथी नामज एनुं रामचंद्र कहो सहु । १६ ।
भूप सुणी आनंद पाम्या, दान धणां आपियां,
एवी नित्य नवी लीला जोई सुख व्यापियां । १७ ।
एक समे राय रमाडे ते पूरणकामने,
चोकमां चोकी उपर बेठा लेई रामने । १८ ।

आकाश में एक (चन्द्र) दिखायी दिया (और) दूसरा पुत्र के मुख में (दिखायी दिया)। चन्द्रों की जोड़ी देखकर राजा भ्रम में (पड़कर) भान भूल गये। ११। राजा दशरथ ने पुत्र को पालने में से (निकाल) लिया (और उसे) लेकर वे मन्दिर (प्रासाद) में आ गये। उन्हें (तब) बहुत विस्मय होता है (हुआ था)। १२। सुन्दर श्याम (वर्ण के पुत्र) का यह रूप देखकर राजा प्रसन्न हो गये। (फिर) श्रीराम का मुख पहले जैसा था, वैसा देखा। १३। उन्होंने गुरु को बुलाकर पूछा, तो (ब्रह्मदेव के पुत्र) वसिष्ठ बोले—वसिष्ठ तो इस लीला का विचार करके मग्न होकर डोलने (झूमने) लगे। (उन्होंने कहा)—हे राजा, यह पुत्र नारायण-रूप समझो। यह अलौकिक लीला करेगा, यह त्रिभुवन का राजा (जो) है। १४-१५। इसके मुख में चन्द्र ही देखा, इस कारण, मैं कहता हूँ, आज से (तुम) सब इसका नाम ही 'रामचन्द्र' कहो। १६। (यह) सुनकर राजा को आनन्द (प्राप्त) हुआ। उन्होंने बहुत दान दिये। इस प्रकार नित्य नयी-नयी लीला देखकर (उनके मन में) सुख व्याप्त हुआ। १७। एक समय उस पूर्णकाम (पुत्र) को राजा खेलाते हैं (थे)। राम को लेकर वे आँगन में चौकी पर बैठे। १८। सवेरे नगर की स्त्रियाँ आकर उसे बुलातीं। वे करोड़ों कामदेवों की-सी राम की छवि को

प्रात:समे नगर-नारी आवीने बोलावती,
रामछबी कंदर्प कोटी जोवा मिष आवती। १९।
प्रभु किलकारी करता समजाय न वेणमां,
अंतरनो नेह जणावे पोतानां नेणमां। २०।
ओवारणां लेई जाये जोई रघुवर रामने,
वळी बीजी वाळा आवे मूकी घरकाजने। २१।
सखी प्रत्ये सखी कहे छे सुण मारी मावडी,
राजदरबारमां गई'ती जोई आवी आ घडी। २२।
आंगणे भूपति बेठा लेई श्रीरामने,
शी कहुं रूपनी शोभा लजावे कामने। २३।
नाजुक आभूषण ओपे कंचन हीरे जडचां,
चपळ चक्षु मीन जाणे सुधारसमां पडचां। २४।
मुख शशी कंज लजावे कुंडळ छे कानमां,
नेत्रना चाळा करी समजावे सानमां। २५।
खीटलियाळा केश झूमे लांछन मुखचंद्रना,
जाणे आव्या अमृत पीवा बाळक फणींद्रनां। २६।

देखने के बहाने आया करतीं। १९। (उस समय) प्रभु श्रीराम (ऐसे शब्दों में) किलकारी किया करते, जो समझ में न आती। वे हृदय का स्नेह अपनी आँखों द्वारा दिखाते। २०। रघुवीर राजा श्रीराम को देखकर वे बलैया लेकर चली जाती है। तत्पश्चात् (कोई) दूसरी बाला (स्त्री) घर के काम को छोड़कर आती है। २१। (एक) सखी (दूसरी) सखी से कहती है—मेरी मैया, सुनो, मै राज-दरबार में गयी हुई थी। इस घड़ी (समय) देखकर आयी। २२। आँगन में राजा श्रीराम को लेकर बैठे (हुए थे)। उन (श्रीराम) के रूप की शोभा क्या कहूँ ? वह (तो) कामदेव को लज्जित करती है। २३। (उन्हें पहनाये हुए) सोने और हीरे से जड़े कोमल आभूषण शोभायमान हैं। (उनकी) चंचल आँखें (ऐसी है) मानो अमृत रस में मछलियाँ पड़ी हों। २४। (उनका) मुख चन्द्र और कमल को लज्जित करता है। (उनके) कानों में कुण्डल है। नेत्रों से इशारे करके संकेत से (वे) समझाते हैं। २५। घुँघराले बाल (उनके) मुख-चन्द्र पर (चन्द्र में दिखायी देनेवाले) लांछन (दाग)—से झूमते है। जान पड़ता है कि (उन बालों की लटों के रूप में) फणीन्द्र शेष (भगवान्) के बालक (—मुख रूपी चन्द्र में स्थित) अमृत पीने के लिए आये (हों)। २६। झालर और मोतियों की (—से युक्त)

टोपी शिर उपर झळके झालर मोती तणी,
जुगरद मुखमां चळके जाणे हीराकणी ! । २७ ।
अंगोअंग मीनकेतन वरसी रह्यो वास करी,
रूपना भूप शिरोमणि जोतां मारी आंख ठरी । २८ ।
ठगारी शी हुं ठगाइ, नेत्र आनंदमां,
भली भली भामा भूले भ्रूकुटि फंदमां । २९ ।
संसारनां कारज सरवे भूली एने भजुं,
नर जोइ मोह पामे नारीनुं शुं गजुं ? । ३० ।
बेनी में तो ज्यारनुं जोयुं रघुवर रूपने,
ज्यांहां जोउं त्यांहां देखुं ए रूपना भूपने । ३१ ।
दशरथ कौशल्यानां सुकृत उदे थयां,
पुण्यतरु प्रफुल्ल थयां पुत्र-फळ आवियां । ३२ ।
एम सहु पुरनी नारी गाये गुणग्रामने,
आवे नित राजद्वारे नीरखवा रामने । ३३ ।
मणिबंध आंगणामांहे रमे प्रभु रीझमां,
क्यारे वढे क्यारे पडे क्यारे रडे खीजमां । ३४ ।

टोपी (उनके) सिर पर झलकती है। मुख में दो दँतियाँ चमकती है, मानो (वे) हीर-कनियाँ हों। २७। (जान पड़ता है उनके) अंग अंग में मीन-केतन अर्थात् कामदेव निवास करके रह गये। रूप के राजाओं में शिरोमणि सदृश श्रीराम को देखते-देखते मेरी आँखें तृप्त हो गयीं। २८। दूसरों को ठगनेवाली मैं ख़ुद आँखों को प्राप्त आनन्द में ठग गयी—स्तब्ध हो गयी। बड़ी-बड़ी (चतुर) स्त्रियाँ (उनकी) भौंहों के फँदे में उलझ जाती हैं। २९। घर-गिरस्ती के सब काम भुला-कर मैं उनको भजती हूँ। (जब) पुरुष (उन्हें) देखकर मोह को प्राप्त हो जाते हैं (मोहित हो जाते हैं), तो नारी की क्या बिसात (जो उन्हें देखकर मोहित न हो जाए)। ३०। हे सखी ! मैंने जब से रघुवर का रूप देखा, तब से जहाँ देखूँ, वहाँ रूप के इस राजा (श्रीराम) को देखती हूँ। ३१। दशरथ-कौशल्या के सुकृत (किये हुए पुण्य कर्म इन पुत्रों के रूप में) उदित हुए। (उनके) पुण्य-रूपी वृक्ष प्रफुल्लित हुए; (और उनमें) पुत्र रूपी फल आ गये। ३२। इस प्रकार नगर की सब स्त्रियाँ श्रीराम के गुण-ग्राम (समूह) का गान करती हैं। वे नित्य राज (प्रासाद के) द्वार पर श्रीराम को देखने के लिए आती हैं। ३३। रत्न-जटित आँगन में प्रभु श्रीराम प्रसन्नतापूर्वक खेलते हैं। कब (कभी)

जानु करवडे चाले घूघरी गाजती,
पाये नेपूर कटिए किंकणी वाजती । ३५ ।
पीतजधुलियुं पहेर्युं घनश्याम अंगमां,
जरकसी कोर्यो झळके बुट्टा बहु रंगमां । ३६ ।
टोपी शिर उपर शोभे कुंदन मढावनी,
रुदे पर चोकी चळके दीपक जडावनी । ३७ ।
मोतीनां कुंडळ काने सोहिये कर सांकळां,
प्रतिबिंब आभूषणनां एक एकमां मळ्यां । ३८ ।
सिंहनख सोने मढ्या हालरुं ओपतुं,
उर आकाश मणि रंग ग्रह द्युति लोपतुं । ३९ ।
बाळविधु आनन उपर केश झूमी रह्या,
करपद कंज सुकोमळ नख जाणे मणि ग्रह्या । ४० ।
अणियाळी आंखडी आंजी बिन्दु दीधो भलो,
कपाळे कौशल्याए करियो कुमकुम चांदलो । ४१ ।
अलवेलो आंगणे रमता रमकडां लेईने,
चपळ गतिए चाले जानु कर देईने । ४२ ।

झगड़ते है, कब (कभी) गिर पड़ते है, कब (कभी) खीझकर रोते हैं । ३४ । जब वे घुटनों और हाथों के बल चलते (है), तो घुँघरू बजते । पाँवों में (बँधे) नूपुर और कमर में (बँधी) किंकिणी बजती । ३५ । घनश्याम श्रीराम ने शरीर में पीला झंगुला पहना । (उसमें) जरी के कलाबत्तू से बनाये हुए बहुत प्रकार के रंगों के बूटे चमकते है । ३६ । सोने से मढ़ी हुई टोपी मस्तक पर शोभा देती है । दीपक जड़ा हुआ चौकी नामक एक आभूषण हृदय पर झलकता है । ३७ । कानों मे मोतियों के कुण्डल और हाथों में जंजीरें शोभायमान हैं । गहनों के प्रतिबिम्ब एक-दूसरे में मिल गये (है) । ३८ । सिंह-नख सोने से मढ़े (हैं); उनकी माला चमकती है । उर रूपी आकाश में रत्नों के रंग ऐसे है जो ग्रहों (तारों) की द्युति (कान्ति) को लुप्त (फीकी) कर देते हैं । ३९ । बालचन्द्र के समान शोभायमान मुख पर बाल झूमते रहे । कर और पद रूपी कमल अति कोमल है, मानो नखों रूपी मणियों को उन्होंने धारण किया (है) । ४० । कौशल्या ने उनकी कोरदार आँखों में अंजन लगाकर अच्छा-खासा तिलक लगा दिया और भाल पर कुंकुम का गोल टीका कर दिया । ४१ । (वह) अलबेला (बालक) खिलौने लेकर आँगन में खेला करता । घुटनों तथा हाथों के बल पर वह चपल

चालवा शीख्या चारे तोतडुं बोलता,
पुत्रने रमाडवा पूंठे दशरथ डोलता । ४३ ।
खोळामां लेईने राजा बोलवुं शिखावता,
कर चपटी वजाडी सुतने नचावता । ४४ ।
दशरथ पुत्रने जोई प्रेम मन आणता,
पोतानुं भाग्य सराहे विधिने वखाणता । ४५ ।
भूख्या थाय त्यारे रोतां पयपान करावता,
नवां नवां नित्य आभूषण ते अंग धरावता । ४६ ।
वे वर्षना बाळक थया रमे धणां रंगमां,
बंधु आदे बीजा सखा छे संगमां । ४७ ।
भोजन समे बोलावे तोये नथी आवता,
नासीने बारणे जाय रडता ने रिसावता । ४८ ।
कौशल्या पूंठळ धाये पुत्रने बोलावती,
मधुरी मीठी वाणी कहे मन भावती । ४९ ।
आवो मारा कुंवर काला जाउं तारे वारणे,
घणीवार थई छो भूख्या रमो छो बारणे । ५० ।
रुदे चांपी चुंबन कीधुं केडे लई आवतां,
पुत्रने भोजन करावे रूडां मनभावतां । ५१ ।

गति से चलता है । ४२ । (वे) चारों (पुत्र) चलना सीख गये । वे तोतली वोली वोलते । पुत्रों को खेलाने के लिए पीठ पर लेकर दशरथ (खुशी से) डोलते-झूमते । ४३ । गोद में लेकर राजा (उन्हें) वोलना सिखाते । हाथों से चुटकी वजाकर पुत्रों को नचाते । ४४ । दशरथ पुत्रों को देखकर मन में प्रेम अनुभव करते, अपने भाग्य की सराहना करते और विधाता का वखान करते । ४५ । (जव वे वालक) भूखे होते, तव वे रोते । तव वे (दशरथ) उन्हें दूध पिलवाते । उनके शरीर पर नित्य नये-नये आभूपण पहनाया करते । ४६ । वालक श्रीराम दो वर्ष के हो गये, (तो) वे मस्ती में वहुत खेलते हैं (थे) । साथ में वन्धु, अन्य सखा आदि होते हैं (थे) । ४७ । उन्हें भोजन के समय बुलाते, तव वे न आते, भागकर दरवाजे में जाते, रोते और रूठते । ४८ । कौशल्या पीछे दौड़ती और पुत्र को बुलाती । वह मन को भानेवाली मधुर-मीठी वाणी (में) कहती—मेरे नन्हे वेटे, आओ । मैं तुम पर वलि जाती हूँ । दरवाजे पर (के वाहर) वहुत समय से भूखे ही खेल

पासे लेई भूपति बेठा विशेके वहालमां,
चारेने भोजन करावे पोताना थाळमां । ५२ ।
एवां सुख जोई राजा ब्रह्मानंद पामता,
मग्न थई लाड लडावे सुखे दिन वामता । ५३ ।
वैकुंठाधीश विश्वंभर ब्रह्म जेने जणिये,
ते प्रभु पुत्र ज थया शुं भाग्य वखाणिये ? ५४ ।
ब्रह्मा शिव शेष ने नारद वखाणे भूपने,
आवे नित्य प्रत्ये जोवा रघुवर रूपने । ५५ ।

वलण (तर्ज वदलकर)

रूप जोई रघुवर तणुं, मोह पामे नरनार रे,
पांच वरसना प्रभु थया त्यारे, करता लीला अपार रे । ५६ ।

* * *

रहे हो । ४९-५० । उसे हृदय से लगाकर, गोद में लेकर आते हुए उसने उसका चुम्बन किया । (तदनन्तर) वह पुत्र को सुन्दर मन-पसन्द भोजन कराती । ५१ । (पुत्रों को) विशेष लाड़-प्यार से पास में लेकर राजा वैठ गये । उन चारों को अपनी थाली में भोजन कराते हैं (थे) । ५२ । ऐसा सुख देखकर राजा को ब्रह्मानन्द प्राप्त होता; (उसमें) मग्न होकर वे (पुत्रों को) लाड़ लड़ाते और सुखपूर्वक दिन बिताते । ५३ । जिन्हें (लोग) वैकुण्ठाधीश, विश्वम्भर ब्रह्म (के रूप में) जानते हैं, वे भगवान् (राजा दशरथ के) पुत्र ही हुए । (राजा के इस) भाग्य का क्या बखान करें ? । ५४ । ब्रह्मा, शिव, शेष, और नारद राजा (के भाग्य) का बखान करते हैं । वे रघुवर श्रीराम के रूप को देखने के लिए नित्य प्रति (वहाँ) आते है । ५५ ।

रघुवर श्रीराम के रूप को देखकर स्त्री-पुरुष मोहित हो जाते हैं । (जब) प्रभु श्रीराम पाँच वर्ष के हो गये, (तव) अपार लीला किया करते (थे) । ५६ ।

* * *

अध्याय–१९

राग धनाश्री

थया पंच वर्षना चारे कुमारजी, अंगे धरता विविध शणगारजी,
सहुमां मोटा छे श्रीरामजी, निज जन केरा पूरणकाम जी । १ ।

ढाळ

काम-पूरण रामजी, जेनी कथा पुण्य पवित्र,
वस्त्र भूषण अंगे धरीने, करता राम चरित्र । २ ।
कर कनक सायक चाप नानां, ग्रही रमता राम,
असुर करी पाषाणना, शिर छेदता अभिराम । ३ ।
ने दूर बेठा जुए दशरथ, पुत्र मूके बाण,
ते भण्या विना भूले नहि, शिर चोट मारे जाण । ४ ।
त्यारे सभाजन कहे रायने, महा पुत्र बळिया एह,
सिंह तणा होय सिंह निश्चे, तेमां नहि संदेह । ५ ।
वसिष्ठ गुरुने पूछीने, शुभ लग्न मुहूरत दीध,
उपवीत धरवा पुत्रने, दशरथे आदर कीध । ६ ।

अध्याय–१९ (श्रीराम का उपनयन संस्कार तथा विद्याध्ययन)

चारों कुमार पाँच वर्ष के हो गये । वे तरह-तरह के गहने शरीर पर धारण किया करते । अपने पिताजी की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले श्रीराम (उन) सबमें बड़े हैं (थे) । १ । जिनकी कथा शुभ फलदायी तथा पवित्र है, वे श्रीराम (सबकी) अभिलाषाओं के पूर्तिकर्ता हैं । वे (बाल श्रीराम) शरीर पर वस्त्र तथा आभूषण धारण करके चरित्र अर्थात् लीलाएँ किया करते । २ । हाथ में सोने के छोटे-छोटे बाण और धनुष लेकर श्रीराम खेला करते । वे मनोहर श्रीराम पत्थरों के राक्षस बनाकर (अर्थात् पत्थरों को राक्षस मानकर) उनके सिर काट डालते । ३ । दूर बैठे हुए दशरथ उन्हें देखा करते हैं कि (उनका) पुत्र बाण चलाता है । देखो, (कैसे) वह बिना सीखे, (विपक्षी के) सिर पर आघात करना नहीं चूकता । ४ । तब सभा में बैठे हुए लोग राजा (दशरथ) से कहते हैं—'वे तो महाबलवान पुत्र हैं । वे निश्चय ही सिंहों में सिंह हो जाएँगे—उसमें कोई सन्देह नहीं है' । ५ । वसिष्ठ गुरु से पूछने पर (उन्होंने) शुभ लग्न (घड़ी वाला) मुहूर्त (खोज) दिया । तब दशरथ ने पुत्र को जनेऊ

अनेक मुनिवर तेडिया, भोजन नाना भात,
सज्जन फरे हुलमल करे, आनंदमां दिनरात । ७ ।
चार सुतने मुंजी बंधन, कराव्युं ऋषिराय,
उपवीत अंगे धराव्यां, ते निगम पथ महिमाय । ८ ।
वसिष्ठ गुरुए आपियो, जे गायत्रीनो मंत्र,
कुळधर्म क्षत्री तणो जे वळी वेद मारग तंत्र । ९ ।
वाजित्र वागे अति घणां, ने स्वस्ति मंत्र भणाय,
कीर्ति जाचक वखाणे, घणुं दान आपे राय । १० ।
चार दिन भोजन कराव्युं, नगर सहु तेणीवार,
विप्रने बहु दान आपी, वळाव्या निरधार । ११ ।
जे वेदवंद्य जगतगुरु ते थया छे व्रतबंध,
पछे विद्या भणवा चारे, बेठा गुरु वसिष्ठ संबंध । १२ ।
जेनी श्वासा निगम कहावे, ते भण्या आगम वेद,
धर्मपाळक प्रभु ते गुरु, सेवता गत भेद । १३ ।

धरवाने (उपनयन संस्कार करने) का आरम्भ किया । ६ । उन्होंने अनेक श्रेष्ठ मुनियों को बुलाया (और) उनको भाँति-भाँति का भोजन कराया । (तब) वे सज्जन दिन-रात आनन्द-पूर्वक घूमते-फिरते और धूम मचाते हैं (थे) । ७ । ऋषिराज वसिष्ठ ने (दशरथ के) चारों पुत्रों का मौंजी-बन्धन कराया और उन्हें जनेऊ धरवाया (पहनाया) । वह वेदों का महिमामय मार्ग (रीति) है । ८ । वसिष्ठ ऋषि ने उन्हें जो गायत्री मंत्र दिया (पढ़ाया) वह क्षत्रियों का कुल-धर्म था । इसके अतिरिक्त वह वेद-विहित मार्ग तंत्र (पद्धति) है । ९ । (तब) अनेकानेक वाद्य बजते हैं (थे) और ऋषिवर 'स्वस्ति' मंत्र पढ़ते हैं (थे) । याचक राजा की कीर्ति का बखान करते हैं (थे) और राजा (उन्हें) बहुत दान देते हैं (राजा ने उन्हें बहुत दान दिया) । १० । उस समय समस्त नगर (-वासियों) को (राजा ने) चार दिन भोजन कराया । निश्चय ही ब्राह्मणों को बहुत दान देकर उनको बिदा किया । ११ । व्रतबन्ध समारोह सम्पन्न हो गये; तदनन्तर वे (श्रीराम) जो वेद-वंद्य तथा (वस्तुतः) जगद्गुरु हैं, वसिष्ठ के पास विद्या सीखने के लिए बैठ गये । १२ । जिनके श्वास 'वेद' कहाते हैं, उन्होंने आगमों और वेदों की शिक्षा पायी । जो धर्म के पालक प्रभु है, ये भेद-भाव का त्याग कर गुरु की सेवा किया करते (थे) । १३ । जिनके कटाक्ष से सब लोकपाल काँपते हैं,

सहु लोकपति कंपे कटाक्षे, काळे पामे त्रास,
ते आज्ञा गुरुनी पाळता, करे विद्यानो अभ्यास । १४ ।
वसिष्ठ पासे ते भण्या सहु कळा गुण समुदाय,
त्यारे वरस द्वादशना थया, बंधु सहित रघुराय । १५ ।
चौद विद्या धनुर आदि, कळा सकळ सुजाण,
धरम न्याय ने वेद नीति, भण्या पुरुष पुराण । १६ ।
राय दशरथ बोलिया ते, वसिष्ठ प्रत्ये वाण,
हवे चारे पुत्रने तीर्थ करवा, मोकलीए निरवाण । १७ ।
सेना घणी सत्वर करी, साथे सुमंत प्रधान,
आज्ञा लेई गुरु पितानी, पछे चालिया गुणवान । १८ ।
घणां शकट भरीने द्रव्य लीधुं, वस्तु नाना भात,
चरण वंदी निज मातना, चालिया चारे भ्रात । १९ ।
रथमां बेठा चार बंधु, सैन्यनो नहि पार,
श्रीराम चाल्या तीर्थ करवा, वरत्यो जयजयकार । २० ।
ज्यां तीर्थ आवे ते ठेकाणे, स्नान करता राम,
ब्रह्मभोजन देव अर्चन, करे छे निष्काम । २१ ।

काल भय को प्राप्त करता है (भयभीत हो जाता है), वे गुरु की आज्ञा का पालन करते हैं और विद्या का अभ्यास करते हैं । १४ । उन्होंने वसिष्ठ से सब कलाओं के गुण (विशेषताओं के) समूहों को सीख लिया । तव (तक) वन्धुओं सहित श्रीराम बारह वर्ष के हो गये । १५ । वे धनुर्विद्या आदि चौदह विद्याओं तथा सब कलाओं के अच्छे ज्ञाता हो गये । पुराण-पुरुष श्रीराम ने धर्म, न्याय, तथा वेद और नीतिशास्त्र की शिक्षा पायी । १६ । तब राजा दशरथ वसिष्ठ से (यों) बोले—अब हम चारों पुत्रों को निश्चय ही तीर्थ-यात्रा करने के लिए भेजते हैं । १७ । बाद में शीघ्र ही विशाल सेना (सुसज्ज) करके, साथ में मंत्री सुमंत को लिये हुए, गुरु और पिताजी की आज्ञा लेकर वे गुणवान् पुत्र चले । १८ । (उन्होंने) धन तथा भाँति-भाँति की अनेक वस्तुओं से भरकर बहुत गाड़ियाँ (साथ में) लीं । अपनी माताओं के चरणों की वन्दना कर (वे) चारों भाई चले । १९ । चारों बन्धु रथ में बैठ गये । (साथ वाली) सेना का कोई पार नहीं है (था) । (इस प्रकार) जब श्रीराम तीर्थ-यात्रा करने चले, तो जय-जयकार हो गया । २० । जहाँ (कोई) तीर्थ-क्षेत्र आता, उस स्थान पर श्रीराम स्नान करते । वे निष्काम हो ब्रह्म-भोजन कराते

जेवो महिमा जे तीर्थनो, जेवो ज्यां अनुक्रम,
ते विधि करता रामजी, आचरे एवो धर्म । २२ ।
गज तुरंगम गउ वस्त्र भूपण, द्रव्यनो नहि पार,
ते दान करता विप्रने, तीरथ विपे निरधार । २३ ।
जेना चरणथी गंगा थयां, जे तीर्थ पद पावन,
जे प्रभु फरता तीर्थ करता, पोते जगजीवन । २४ ।
जेने चरणे सकळ तीरथ, रह्यां कारणरूप,
जेना नामथी अघओघ जाये, आपे मोक्ष अनूप । २५ ।
शिव विरंचि शेष जेनुं, धरे नित्य ध्यान,
ते लोकसंग्रह अर्थ पाळे, धरम श्रीभगवान । २६ ।

वलण (तर्ज वदलकर)

भगवान पाळे धर्म एवो, ते लोकना हित काज रे,
हवे रामे जे तीरथ कर्या, ते विस्तारी कहुं आज रे । २७ ।

* * *

और देवतार्चन किया करते । २१ । जिस तीर्थ-क्षेत्र की जैसी महिमा हो, जहाँ जैसा (विधियों का) अनुक्रम हो, उस प्रकार श्रीराम विधियाँ सम्पन्न करते—वैसे धर्म का आचरण करते । २२ । हाथी, घोड़े, गायें, वस्त्र, आभूषण, धन—इनका कोई पारावार नहीं है । श्रीराम निश्चय-पूर्वक तीर्थ-क्षेत्र में ब्राह्मणों को दान दिया करते । २३ । जिनके चरणों से गंगाजी (उत्पन्न) हुईं, जो चरण पवित्र तीर्थ (ही) हैं, जो स्वयं जगज्जीवन प्रभु (होने पर भी) भ्रमण करते हैं और तीर्थ-यात्रा करते हैं, जिनके चरणों में सब तीर्थ कारण-रूप में रहे, जिनके नाम से पापों का प्रवाह निकल जाता (नष्ट हो जाता) है; और जो अनुपम मोक्ष प्रदान करते हैं, जिनका ध्यान शिवजी, विधाता, शेप नित्य करते है, वे श्रीभगवान् लोक-संग्रह के लिए (लोक) धर्म का पालन करते हैं । २४-२६ ।

श्रीभगवान् ऐसे धर्म का पालन लोगों के हित के लिए करते हैं (थे) । अव श्रीराम ने तीर्थ-क्षेत्रों की जो यात्रा की, उसे मैं आज विस्तार-पूर्वक कहता हूँ । २७ ।

* * *

अध्याय–२० (श्रीराम की तीर्थ-यात्रा)

राग मारू

सुणो श्रोता निर्मळ मन, रूडी रामकथा पावन,
रामे तीरथ करियां जेह, कहुं संक्षेपे करी तेह। १ ।
काशी विश्वनाथ त्रंबकेश, महाकाळेश्वर ओंकारेश,
अमलेश्वर जेनुं नाम, केदारेश्वर पूरे काम। २ ।
नागनाथ घृष्णेश्वर जेह, वैजनाथ अभेकर तेह,
मल्लिकार्जुन शंकर भीमा, सोमनाथ रामेश्वर सीमा। ३ ।
ज्योतिर्लिंग थयां ए बार, कहुं सप्त पूरी विस्तार,
अयोध्या मथुरा ने माया, काशी कांची विष्णु शिवराया। ४ ।
अवंतिका ने द्वारामती, सप्तपुरी अे छे मोक्षवती,
तीरथ जे त्रिवेणी गोमती, पंचप्रयाग आपे सद्गति। ५ ।
ब्रह्मप्रयाग कर्णप्रयाग, गुप्तप्रयाग दिव्यप्रयाग,
शिवप्रयाग निमिषारण्य, मधुवन ने वृन्दावन। ६ ।
चंपकारण्य ब्रह्मारण्य, ब्रद्रिकाश्रम नंदनवन,
प्रवरा ने वेदारण्य, आनंदवर्धनी पावन। ७ ।

अध्याय–२० (श्रीराम की तीर्थ-यात्रा)

हे श्रोताओ! निर्मल मन से तुम सुन्दर पवित्र रामकथा का श्रवण करो। श्रीराम ने जिन तीर्थ-क्षेत्रों की यात्रा की, उन्हें मैं संक्षेप में कहता हूँ। १ ।

* [कवि ने इस अध्याय में अनेकानेक तीर्थक्षेत्रों के नाम गिनाये हैं। यहाँ उनमें से कुछ प्रमुख स्थलों, नदियों, पर्वतों के नाम प्रस्तुत किये जा रहे हैं। —अनुवादक]

काशी विश्वनाथ (वाराणसी), त्र्यम्बकेश्वर, महाकालेश्वर, ओंकार अमलेश्वर (ओंकार मांधाता), (सब की इच्छाओं को पूर्ण करनेवाला) केदारेश्वर, नागनाथ, घृष्णेश्वर, परली वैजनाथ, मल्लिकार्जुन, भीमाशंकर, सोमनाथ, रामेश्वर—ये वे बारह ज्योतिर्लिंग हैं, जिनकी यात्रा श्रीराम ने की। अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, कांची, अवंतिका, द्वारवती (द्वारका) —विष्णु और शिव से सम्वन्ध रखनेवाली इन मोक्षदायिनी सप्त नगरियों की यात्रा श्रीराम ने की। त्रिवेणी, गोमती, तथा सद्गति देनेवाले ब्रह्मप्रयाग, कर्णप्रयाग, गुप्तप्रयाग, दिव्यप्रयाग और शिवप्रयाग नामक

भीमरथी जुमनां सरस्वती, तापी नर्मदा भोगावती,
भागीरथी गोमती कृष्णा, कावेरी कृतमाळ पयोष्णा। ८।
पीनातुंगी मंदाकिनी, सुवरणमुखी पयस्वनी,
तुंगभद्रा ने सोमवती, ताम्रपरणी ने सरस्वती। ९।
सावित्री रेवा शिशुमाळा, कुंकुमती वेणा रसाळा,
वेदावती छे अघनाशनी, मळप्रहरा निर्मळमनी। १०।
घटप्रहरा निर्मळ करणी, गंडकी सरजु वैत्तरणी,
सोमनद ने शिवनद जेह, सोमभद्र नदेश्वर तेह। ११।
पुरंदरी ने प्राची अरुण, वेत्रवती सप्तउर्गा वरुण,
स्वामीकार्तिक करणकुमारी, पंचद्रता वांजजरा हुंकारी। १२।
देवी काळिका महींद्रकाळी, सुरनदी त्रिशूळी वाळी,
मंत्रवर्धनी नीरावती, शंखोद्धारिणी ने रंजयंती। १३।
अहीरावणी अलकनंदा, नाटकी फलगु त्रिपदा,
शतवरण नदी शेपाद्रि, मूळ पीठ शोभे ब्रह्माद्रि। १४।
सिंहाद्रि हिमाद्रि स्थान, विंध्याद्रि ने सरोवर मान,
अरुणाचळ आनंदवन, कमलाय, चिदांवरी धन्य। १५।
जनार्दन ने कन्याकुमारी, श्रीरंगपट्टण शोभा सारी,
पक्षतीरथ शंखोद्धार, मच्छतीरथ वेदोद्धार। १६।

पंचप्रयाग। नैमिषारण्य, मधुवन और वृन्दावन, चम्पकारण्य, ब्रह्मारण्य तथा वदरिकाश्रम का निकटवर्ती नन्दनवन, वेदारण्य नामक सात अरण्य। प्रवरा, आनन्दवर्धिनी, भीमरथी, यमुना, सरस्वती, ताप्ती, नर्मदा, भोगावती, भागीरथी, गोमती, कृष्णा, कावेरी, कृतमाला, पयोष्णी, पीनातुंगी, मन्दाकिनी, सुवर्णमुखी, पयस्विनी, तुंगभद्रा, सोमवती, ताम्रपर्णी, सरस्वती, सावित्री, रेवा, शिशुमाला, कुंकुमती, वेण्णा, रसाला, पापनाशिनी वेदावती, मलप्रहरा, घटप्रहरा, गंडकी, सरयू, वैतरणी, सोमनद, शिवनद, सोमभद्र, पुरन्दरी, प्राची, वेत्रवती, सप्तउरगा, स्वामिकार्तिकी करणकुमारी, वरुणा, पचद्रता, वाँजजरा, कालिका, महींद्रकाली, त्रिशूली, मंत्रवर्धिनी, नीरावती, शंखोद्धारिणी, रजयंती, अहिरावणी, अलकनन्दा, नाटकी, फल्गु, त्रिपदा, शतवर्णा—आदि नदियाँ। शेपाद्रि, मूलपीठ ब्रह्माद्रि, सिंहाद्रि, हिमाद्रि, विंध्याद्रि नामक पर्वत। मानसरोवर, अरुणाचल, आनन्दवन, चिदाम्बरी, जनार्दन, कन्याकुमारी, श्रीरंगपट्टम, पक्षीतीर्थ, शंखोद्धार, मत्स्यतीर्थ, अगस्त्याश्रम, हिरण्यनदी, संध्यावट, पृथकोदक, धर्मस्तम्भ,

अगस्त्याश्रम ऊर्वी संघट, हिरण्यनदी ने संध्यावट,
प्रथकोदक ने धर्मस्थंभ, ब्रह्मयोनि ब्रह्मावर्तरंभ । १७ ।
कुरुक्षेत्र बिंदुतीर्थ धरमालय पामे अर्थ,
गुणसागर कलापग्राम, सिंधु संगम पावन धाम । १८ ।
अंबिकादेवी कौडंन्यपुर, योगदाता भैरवीपुर,
कलोलक बाळालंकेश्वरी, विराटरूपी रक्तांबरी । १९ ।
बह्म अंबिका ज्वाळामुखी, देवी पीतांबरी महामुखी,
शांभवी करवीरवासनी, सप्तशृंगी कमळआसनी । २० ।
हिंगळुजा कमळजा नाम, चांगदेव मोरेश्वर धाम,
वटेश्वर ने गुप्त केदार, अखेवट कुश तीरथ सार । २१ ।
जांबुनद त्रिकुटाचल नूर, हरिहरेश्वर नरसिंहपुर,
मूळ माधवी ज्ञानेश्वर, चक्रपाणि ने जाळेश्वर । २२ ।
गौतमेश्वर ने जुनाट, नागेंन्द्र सप्तयोजन घाट,
कोटेश्वर दक्षिण प्रयाग, माधवेश्वर छे महाभाग । २३ ।
धौतपाप सिद्धवट जेह, सिद्धेश्वर कहिये तेह,
पूर्वसागर तीरथराज, महाबळेश्वर वैराटराज । २४ ।
उंधुल खेटक शंकर, नारायण मळ्या सर्वेश्वर,
पंचालेश्वर ने सप्तनाथ, पूर्णालय ने विश्वनाथ । २५ ।
महामुंडेश्वर सिंधुपुर, इंद्रायणी ने गोपिकेश्वर,
भीमचंडी हिमालय मया, मोक्षमठ वेदपुर गया । २६ ।

ब्रह्मावर्त, कुरुक्षेत्र, बिन्दुतीर्थ, धर्मालय । गुणसागर, कलापग्राम, सिन्धुसंगम (गंगासागर) । अम्बिकादेवी-कौडिण्यपुर, योगदाता भैरवीपुर, बालालंकेश्वरी, विराटरूपा रक्ताम्बरी, ज्वालामुखी ब्रह्माम्बिका, महामुखी पीताम्बरी देवी, शाम्भवी करवीरवासिनी, कमलासनी, सप्तशृंगी, हिंगुलजा, कमलजा—आदि देवियों के स्थान । चांगदेव, मोरेश्वर, वटेश्वर और गुप्त केदार, अक्षयवट, कुशतीर्थ, जाम्बुनद, त्रिकुटालय, हरिहरेश्वर, नृसिंहपुर, मूल माधवी ज्ञानेश्वर, चक्रपाणि और जाळेश्वर, गौतमेश्वर, नागेन्द्र, कोटेश्वर, माधवेश्वर, धूतपापेश्वर, सिद्धवट, सिद्धेश्वर, तीर्थराज पूर्वसागर, महाबलेश्वर, उंधुल खेटकेश्वर, नारायण, पांचालेश्वर, सप्तनाथ, पूर्णालय, विश्वनाथ, महामुण्डेश्वर, इन्द्रायणी, गोपिकेश्वर, भीमचण्डी, मोक्षमठ, गया, अरुणावती, स्वामी कार्तिकराय, किष्किन्धा पर्वत, मातंग, विरूपाक्ष, चित्रकूट, पम्पासरोवर, रुक्मकूट, कालचन्द्रिका, गोकर्ण,

अरुणावतीए शेषशायी, शुभ्रमणि स्वामी कार्तिकराई,
किष्किंधा परवत मातंग, विरूपाक्ष शोभे उतंग । २७ ।
चित्रकूट पंपासरोवर, रुकम कूट शोभे सुंदर,
काळचन्द्रिका ने गोकर्ण, कृष्ण सागर निर्मळ वर्ण । २८ ।
तीर्थ हरिहर जंबुकेश्वर, अनंतशायी ने ममलेश्वर,
प्रभाकर मथुरां विकर्ण, तपोवन प्रभास उद्धर्ण । २९ ।
विश्रांतिवन कुंभकोण अर्थ, मातुलिंग त्रिविक्रमतीर्थ,
मूळ मान्धाता जगन्नाथ, कर्ण मूळ त्रिकोण सनाथ । ३० ।
पुंडरीक्षेत्र ने चंद्रभागा, देवी आशापुरी सभागा,
मथन काळेश्वर मीनाक्षी, कुश तर्पण ने कामाक्षी । ३१ ।
सीतादेवी चिदांबरेश्वर, तीर्थ आदित्य वैश्वानर,
हरिद्वार ने ब्रह्मकटाह, अग्निकुंडनो चाले प्रवाह । ३२ ।
चंद्रकुंड ने गोदावरी, ब्रह्मकुंडनी जात्रा करी,
एम सकळ तीरथ करी धाम, आव्या अवधपुरी श्रीराम । ३३ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

श्रीराम तीरथ करी आव्या, अवधपुर मोझार रे,
माता-पिताने पाये लाग्या, हरख्यो सकळ परिवार रे । ३४ ।

* * *

कृष्णसागर, हरिहर, जम्बुकेश्वर, अनन्तशायी और अमलेश्वर, प्रभाकर, मथुरा, विकर्ण, प्रभास, कुम्भकोण, मातुलिंग, त्रिविक्रमतीर्थ, मूल मान्धाता, जगन्नाथ, कर्णमूल, त्रिकोण, पुण्डरीक क्षेत्र (पंढ़रपुर) और चन्द्रभागा, आशापुरी देवी, मथन कालेश्वर, मीनाक्षी, कुशतर्पण और कामाक्षी, सीतीदेवी, चिदाम्बरेश्वर, आदित्य वैश्वानर तीर्थ, हरिद्वार, और ब्रह्मवराह (कुण्ड), अग्निकुण्ड, चन्द्रकुण्ड और गोदावरी, ब्रह्मकुण्ड । इस प्रकार समस्त तीर्थधामों की यात्रा करके श्रीराम अयोध्यापुरी में लौट आये । ३३ । तीर्थ क्षेत्रों की यात्रा करके श्रीराम अयोध्या नगरी में वापस आये और माता-पिता के चरणों में लग गये (पाँव लगे) । (उनके आगमन से) सकल परिवार आनन्दित हुआ । ३४ ।

* * *

अध्याय–२१ (दशरथ से विश्वामित्र की राम-लक्ष्मण के लिए याचना)

राग परजियो

श्रीरामचंद्र तीरथ करी आव्या, प्रधान बंधु समेत,
मात-पिताने हर्ष थयो ने, प्रजाने ऊपन्युं हेत । १ ।
ब्राह्मणने भोजन कराव्यां, वरत्यो ओछव घोष,
दान घणां अपाव्यां द्विजने, पाम्या सरव संतोष । २ ।
ब्रह्मव्रत ऋषिपणुं पाळवा, लाग्या पोते राम,
खटरस भोजन स्वाद तजीने, वरते छे निष्काम । ३ ।
दशा विरक्त विश्वंभर पाळे, तज्युं उत्तम सेज्यासन,
हास्य विनोद जे शणगार रसना, मृगया गमनागमन । ४ ।
स्त्रीओ तणुं अवलोकन न करे, तेनी साथे न बोले,
एकान्त आसन नासा दृष्टि, ब्रह्मानंदमां डोले । ५ ।
जगतना ईश्वर धर्मना पाळक, एवुं व्रत आचरता,
त्रण बंधु ते साधुपणे, श्रीरामनी सेवा करता । ६ ।

अध्याय–२१ (दशरथ से विश्वामित्र की राम-लक्ष्मण के लिए याचना)

मंत्री (सुमंत) और बन्धुओं सहित श्रीरामचन्द्र तीर्थ क्षेत्रों की यात्रा कर (वापस) आये। (इससे) माता-पिता को आनन्द हुआ और प्रजा को (उनके प्रति अधिक) प्रेम उत्पन्न हुआ। १। (उन्होंने) ब्राह्मणों को भोजन कराया। उत्सव और (जय) घोष हो गया। ब्राह्मणों को बहुत दान दिलवाया। (इससे) सब को सन्तोष प्राप्त हो गया। २। राम स्वयं ब्रह्मव्रत और ऋषि-वृत्ति का पालन (आचरण) करने लगे। छह रसों के भोजन का स्वाद छोड़कर वे निष्काम आचरण करते हैं (थे)। ३। विश्वम्भर श्रीराम विरक्त स्थिति का पालन करते हैं (थे)। उन्होंने उत्तम शय्या और आसन का त्याग किया। हास्य-विनोद, जो जिह्वा का श्रृंगार है, तथा मृगया के लिए आना-जाना उन्होंने छोड़ दिया। ४। वे न स्त्रियों को देखते, न उनके साथ बोलते। एकान्त में आसन लगाये और नाक (की नोक) पर दृष्टि लगाये, वे ब्रह्मानन्द में डोलते। ५। जगत के ईश्वर और धर्म के पालक (श्रीराम) इस प्रकार व्रत का आचरण करते। तीनों भाई साधु-वृत्ति से श्रीराम की सेवा किया करते। ६। एक समय, सिद्धाश्रम में रहने वाले (वे) विश्वामित्र,

एक समे सिद्धाश्रमवासी, जे गाधि-पुत्र कहेवाय,
ते विश्वामित्र अजोध्यामां आव्या, जाचवाने रघुराय। ७ ।
त्यारे दशरथे साष्टांग नमन करीने, सिंहासन बेसाड्या,
पूजा वस्त्राभूषण आपी, मुनिवर सुख पमाड्या। ८ ।
त्यारे विश्वामित्र प्रसन्न थई बोल्या, धन्य-धन्य दशरथराय,
तारे ब्राह्मण उपर भाव घणो छे, तुं सत्यव्रत कहेवाय। ९ ।
जे ब्राह्मण देखी हर्ष न पामे, निंदा करे पापिष्ट,
ते बीजे जन्मे श्वान थईने, भोगवे पामर विष्ट। १० ।
जे वृत्ति हरण करे ब्राह्मणनी, ते प्राणी दरिद्री थाय,
सात जन्म सुधी भिखारी ते, अन्न विना पीडाय। ११ ।
जे ब्राह्मणने करे ताडन मारण, दुर्वचन दे गाळ,
ते रौरव नरक सहस्र वरस रहे, पछी थाय शूकर चंडाळ। १२ ।
एवा गाधिपुत्रनां वचन सुणीने, नमिया दशरथ भूप,
हुं सरखुं कांइ काम-काज कहो, मागो सुख अनुरूप। १३ ।
त्यारे मुनिवर कहे मारे अन्य पदारथ, नथी जोई तुं राज,
द्रव्य, अश्व, गज, रथ ने भूषण, तेहतणुं नथी काज। १४ ।

जो गाधि-पुत्र कहलाते हैं, रघुनाथ श्रीराम को माँगने के लिए अयोध्या में आये। ७। तब दशरथ ने उनका साष्टांग नमन करके उन्हें सिंहासन पर बैठाया। (उनकी) पूजा (कर) वस्त्र और आभूषण देकर मुनिवर को सुखी किया। ८। तब विश्वामित्र प्रसन्न होकर बोले—'हे दशरथ राजा! धन्य! धन्य! ब्राह्मणों के प्रति तुम्हारी श्रद्धा बहुत है'। तुम सत्य-व्रती कहलाते हो। ९। ब्राह्मण को देखकर जो आनन्द प्राप्त नहीं करता (अर्थात् जिसे आनन्द नहीं होता), जो पापी उनकी निन्दा करता है, दूसरे जन्म में कुत्ता होकर वह पामर (क्षुद्र जीव) विष्टा का भोग करता है। १०। जो ब्राह्मण की वृत्ति (जीविका) का अपहरण करता है, वह प्राणी दरिद्र होता है; वह सात जन्म पर्यन्त भिखारी होकर बिना अन्न के पीड़ित होता है। ११। जो ब्राह्मण को ताड़न-मारण करता है, बुरे वचनों में गाली देता है, वह रौरव नरक में सहस्र वर्ष रहता है और बाद में वह कुत्ता और चण्डाल हो जाता है।' १२। गाधिपुत्र विश्वामित्र के ऐसे वचन सुनकर दशरथ राजा ने (उनका) नमन किया और कहा—'मेरे योग्य कोई कामकाज कहो, (अपने लिए) अनुरूप (योग्य) सुख (-सुविधा) माँग लो'। १३। तब मुनिवर ने कहा—'हे राजा, मुझे अन्य पदार्थ, राज्य नहीं चाहिए।

हुं मुनि मेळवी यज्ञ करूं छुं, ते भंग करे छे असुर,
सुबाहु मारीच ताडिका आदे, महा दुःख दे छे भूर। १५।
ते माटे राय पुत्र तमारा, राम लक्ष्मण छे जेह,
ते यज्ञनी रक्षा करवा आपो, हुं मागुं छुं एह। १६।
पूरण यज्ञ थशे त्यारे हुं, संतोष पामीश मन,
त्यारे पुत्रने पाछा कुशळ लावीने, सोंपीश तमने तन। १७।
एवां गाधिपुत्रनां वचन सुणीने, राय थया भयभीत,
वज्र तणो घा वागे जाणे, वीज पडे विपरीत। १८।
प्राणप्रिय रघुवीर ज वहाला, जाणी तन मन धन,
एवुं विचारी धीरज राखी, बोल्या राय वचन। १९।
अरे मुनिवर पुत्र जे मारा, बाळक छे सुकुमार,
ए शुं करी जाणे जुद्ध ते साथे, बळिया असुर अपार। २०।
बाळकमां हजी राम रमे छे, शुं जाणे जुद्धनी वात,
जुद्ध करवाने माग्या सुतने, ए तो महा उत्पात। २१।
सैन्य सकळ लईने हुं आवुं, चाळो तमारी साथ,
असुर सहु संहार करुं, देखाडुं मारा हाथ। २२।

धन, घोड़े, हाथी, रथ और आभूषण—इनका (मेरे लिए) कोई काम नहीं है। १४। मुनियों को इकट्ठा कर मैं यज्ञ करता हूँ, (और) असुर (राक्षस) उसे भग्न करते हैं। सुबाहु, मारीच, ताड़का आदि (हमें) बहुत दुःख देते हैं। १५। इसलिए हे राजा, राम और लक्ष्मण, जो तुम्हारे पुत्र हैं, यज्ञ की रक्षा करने के लिए दे दो। मैं यह माँगता हूँ। १६। यज्ञ पूर्ण होगा, तब मेरा मन सन्तोष प्राप्त करेगा। (और) तब उन पुत्रों को सकुशल लाकर तुम्हें (पुत्र) सौंप दूँगा।' १७। गाधि-पुत्र विश्वामित्र के ऐसे वचन सुनकर राजा भयभीत हो गये। मानो (उनपर अब) वज्र का आघात हो रहा हो, (अथवा) अनर्थकारी बिजली गिर रही हो। १८। प्राणप्रिय लाड़ले रघुवीर राम ही को तन, मन और धन समझकर, ऐसे विचार से धीरज धारण करके राजा यह बात बोले—। १९। 'हे मुनिवर, मेरे जो पुत्र हैं, वे सुकुमार (अति छोटे) बालक हैं, (और) राक्षस अत्यधिक बलवान हैं। उनके साथ युद्ध करना वे क्या जानें? । २०। अभी राम बालकों के साथ खेलता है। वह युद्ध की बात क्या समझता है? (और) तुमने युद्ध करने के लिए (मेरे) पुत्रों को माँग लिया! यह तो महान् उत्पात है। २१। चलो, समस्त सेना लेकर मैं तुम्हारे साथ

प्राणप्रिय रघुवीर न आपुं, ए मारुं जीवन,
गद्‌गद कंठ थया एवुं कही, आंसु आव्या लोचन । २३ ।
त्यारे कोपायमान थया मुनि कौशिक, बोल्या क्रोधे पर्म,
अल्या केम कह्युं जे मागो ते आपुं, ने हवे मूके छे धर्म ? २४ ।
तुं सूरजवंशी थईने सत्य मूके, जोने विचारी मन,
रविकुळमां लांछन लगाडे, कायर थई राजन । २५ ।
तारा वंशमां हरिश्चंद्र राजा, जोने केवुं सत्य पाळ्युं ?
राज तजी निज कर्म करी मने, जे माग्युं ते आप्युं ? । २६ ।
वळी रुक्मांगद ने शिवि राजा, तेणे पाळ्युं सत्य,
तुं हंस वंशमां प्रगट थई ने, आवुं बोले छे असत्य । २७ ।
श्रीरामने तुं पुत्रज जाणे, ए मूर्खता मन,
वैकुंठनाथ तारे घेर अवतर्या, साक्षात श्रीभगवन । २८ ।
वसिष्ठे तुजने पूर्वे कह्युं, तुं ते क्यम भूल्यो राय ?
जे निग्रह करता काळ तणुं, मूळ मायापति कहेवाय । २९ ।

चलता हूँ । मैं सब असुरों का संहार करता हूँ और उन्हें अपना हाथ दिखा दूँगा । २२ । (परन्तु) मैं प्राणप्रिय राम को नहीं दूँगा । वह मेरा जीवन है ।' ऐसा कहते हुए राजा का कण्ठ रुँध गया (और उनकी) आँखों में आँसू आ गये । २३ । तब कौशिक (विश्वामित्र) मुनि कोपायमान हो गये । वे अत्यधिक क्रोध से बोले—"अरे ! 'जो माँगो—वह दूँगा'— ऐसा क्यों कहा ? और अब धर्म का त्याग करते हो ? २४ । तुम सूर्यवंशीय होने पर भी सत्य का त्याग करते हो ? मन में सोचकर देखो । हे राजा ! तुम कायर होकर सूर्यकुल में कलंक लगा रहे हो । २५ । तुम्हारे वंश में राजा हरिश्चन्द्र ने सत्य का पालन कैसे किया ! देखो । राज्य का त्याग कर अपने कर्तव्य को (पूर्ण) करके, जो (मैंने) माँगा, सो मुझे दिया । २६ । फिर रुक्मांगद और शिविराजा (हैं, उन्हों) ने वचन का पालन किया । सूर्यवंश में उत्पन्न होकर तुम ऐसा असत्य बोलते हो ? । २७ । श्रीराम को तुम पुत्र ही समझते हो । यह (तुम्हारे) मन की मूर्खता है । साक्षात् श्रीभगवान वैकुण्ठनाथ तुम्हारे घर में अवतरित हैं । २८ । वसिष्ठ ने तुमको पूर्वकाल में (जो) बताया, (उसे) हे राजा ! तुम क्यों भूल गये ? जो काल पर शासन करते है, जो आदि माया के पति कहलाते हैं, जिनका ध्यान ब्रह्मा, शिवजी, सनकादिक अभेद-भावपूर्वक करते है, शेष भगवान् जिनका स्तवन करते हैं, वेद जिन्हें 'पूर्ण ब्रह्म' कहते हैं, जिनके कटाक्ष से भय मानकर (अनुभव

ब्रह्मा शिव सनकादिक जेनुं ध्यान धरे छे अभेद,
स्तवन करे छे अनंत पूरण ब्रह्म कहे छे वेद । ३० ।
जेना कटाक्षे लोकपति सहु, कंपे मानी त्रास,
ते रामने तुं बाळक कहे छे, जे अनंत गुण अविनाश । ३१ ।
तत्त्वमसि वाक्ये करी जेने, वेदान्त शास्त्र अभिराम,
सर्वव्यापक परब्रह्मने स्थापे, ते छे ए श्रीराम । ३२ ।
कर्मश्रेष्ठ करी माने मीमांसक, जीवनुं करवा काज,
जेने पामवा कर्म आचरे, ते छे ए रघुराज । ३३ ।
जीव अनेक अनित्य बंध छे, लय नव पामे प्राय,
सत्य मुक्त एक ईश्वर कर्ता, एवुं कहे छे न्याय । ३४ ।
तत्त्वनी संख्या सांख्य करी कहे, प्रकृति पुरुषनो विवेक,
तत्वातीत स्वरूप ज्ञाने करी, अखंड ईश्वर एक । ३५ ।
सप्त विभक्तिए करीने व्याकरण, शव्द अर्थने साधे,
जेना नामना अनेक अर्थ करी, ईश्वरने आराधे । ३६ ।
साधन अष्टांगयोगे करीने, साधे छे मति धीर,
पातंजलि जेने ईश्वर कहे छे, ते ए श्रीरघुवीर । ३७ ।

करके) सब लोकपाल काँपते हैं, जो अनन्त गुणों के धारी और अविनाशी हैं; उन श्रीराम को तुम 'बालक' कहते हो ? । २९-३१ । अभिराम वेदान्त शास्त्र जिसकी 'तत्त्वमसि' (वह तुम हो) वाक्य द्वारा सर्वव्यापक परब्रह्म के रूप में स्थापना करता है, वह (परब्रह्म) हैं वे श्रीराम । ३२ । जीव का कार्य करने के लिए कर्म को मीमांसक श्रेष्ठ मानते हैं । और वे जिसकी प्राप्ति के लिए कर्म का आचरण करते है, वह हैं वे रघुराज राम । ३३ । जीव अनेक हैं; उसके बन्धन अनित्य हैं । वह जीव प्राय: लय को प्राप्त नहीं होता । एक ईश्वर (ही) सत्य, (बन्धनों से) मुक्त है—वही कर्ता है । न्याय शास्त्र इस प्रकार करता है । ३४ । सांख्य-शास्त्र तत्त्वों की संख्या बताते हुए प्रकृति और पुरुष के भेद का विवेक प्रस्तुत करता है । वह (तत्त्व) ज्ञान से ईश्वर को तत्त्वों के परे समझते हुए उसे अखण्ड मानता है । ३५ । व्याकरण शास्त्र सात विभक्तियों से (अर्थात् आधार पर) शब्दों के अर्थ सिद्ध करता है । वह जिसके नाम के अनेक अर्थ बताते हुए ईश्वर की आराधना करता है वह ईश्वर ये श्रीराम हैं । ३६ । धीर-मति पुरुष अष्टांग योग द्वारा साधना करके जिसे प्राप्त करते हैं और जिसे (योग शास्त्र के प्रणेता) पतंजलि जिसे ईश्वर कहते हैं, वह हैं ये श्रीरघुवीर राम । ३७ । हे दशरथ राजा, सुनो । इस प्रकार छ: शास्त्र

अध्याय–२२ (राम-वसिष्ठ-सम्वाद—मायाचरित्र-कथन)

राग सामेरी

सुणी वचन दशरथ रायनां, तव गाधिसुत हरख्या घणुं,
बे पुत्रने तेडाव्या राये, ते कारज करवा मुनि तणुं । १ ।
तव राम-लक्ष्मण सज थया, धर्या धनुप भाथां वाण,
चरण वंदी मातना, चालिया चतुर सुजाण । २ ।
किरीट मुगट मणिखचित कुंडळ, कडां अंगद मुद्रिका,
कटी मेखळा उरमाळ मुक्ता, तिलक केसर चंद्रिका । ३ ।
घनश्याम तन पट पीत अंवर, जरकसी जामा धर्या,
कटीवंध उत्तरी वस झळके, वीररस वेशे भर्या । ४ ।
विश्वमोहन जगत रक्षण, भक्त कारण अवतर्या,
पद पादुका मणिखचित पहेरी, सभामांहे संचर्या । ५ ।
रामने जोई सहु सभा उठी, हरख अंग न माय,
साष्टांग विश्वामित्र चरणे, नम्या श्रीरघुराय । ६ ।

अध्याय—२२ (राम-वसिष्ठ-संवाद—मायाचरित्र-कथन)

तव दशरथ राजा के वचन सुनकर गाधि-पुत्र विश्वामित्र वहुत आनन्दित हो गये। मुनिवर का वह कार्य करने के लिए राजा ने (अपने) दो पुत्रों को बुला लिया । १ । तो राम और लक्ष्मण तैयार हो गये। उन्होंने धनुप, भाले और वाण धारण किये। (फिर) माताओं के चरणों का वन्दन कर वे चतुर तथा सुजान वालक (अन्दर से वाहर राजसभा की ओर) चल दिये । २ । उन्होंने रत्नों से युक्त किरीट, कुण्डल, कड़े, वाजूवन्द, अंगद और अंगूठियाँ—ये आभूपण धारण किये। उनकी कमर में मेखला (करधनी) थी और छाती पर मोतियों की माला (शोभायमान) थी। उन्होंने केसर का तिलक लगाया और चन्द्रिका (वेंदी) नामक एक शिरोभूपण धारण किया । ३ । श्रीराम का शरीर मेघ के समान साँवला था। (उन दोनों ने) पीले वस्त्र तथा जरकसी जामा पहन लिया। उनके कमरवन्द और उत्तरीय वस्त्र अर्थात् दुपट्टे झलकते हैं (थे)। (जान पड़ता था कि) उन्होंने वीर रस को अपने वेश में भर लिया (हो) । ४ । विश्व को मोहित करनेवाले तथा जगत् की रक्षा करने वाले श्रीराम भक्तों के कारण से अवतरित हो गये (थे)। पाँवों में रत्न-जटित पादुकाएँ पहन कर उन्होंने सभा में प्रवेश किया । ५ । श्रीराम

उठाड्या कौशिके कर ग्रही, आशिष मुख अविचळ वदे,
प्रेमे गदगद थया मुनि, श्रीरामने चांप्या रुदे । ७ ।
जेम परम तत्त्वनी थाय प्राप्ति, ज्ञानीने निरधार,
कौशिक मुनि रामने मळी, एम पाम्या सुख अपार । ८ ।
निज आसन बेठा राम-लक्ष्मण, नमी गुरुने पाय,
सहु सभाजन जुए रामने, नव नेत्रतृप्ति थाय । ९ ।
आगमन कारण कह्युं मुनिए, दुःख जे पोता तणुं,
श्रीराम कहे करुं यज्ञरक्षा, दुष्ट सहु पहेलां हणुं । १० ।
पण सुणो मुनिवर एक संदेह, ऊपन्यो निरवाण,
तमो मने तेडी जाओ छो, त्यां युद्ध करवा जाण । ११ ।
ते दैत्य महाबळवंत छे, हुं करीश युद्ध अपार,
पण देह क्षणभंगुर छे, माटे कहो आत्मविचार । १२ ।
ते आत्म-प्राप्ति कहो मुजने, वासना मोह जाय,
जेने करी जन मोक्ष पामे, अन्य गति नव थाय । १३ ।

को देखकर समस्त सभा उठ गयी—सभा में बैठे हुए लोग उठ गये। उनके अंग में आनन्द नहीं समाता (था)। (तब) श्रीराम ने विश्वामित्र के चरणों में साष्टांग नमस्कार किया। ६। विश्वामित्र ने हाथ पकड़कर उन्हें उठाया, (और) वे मुख से स्थिरता-पूर्वक आशीर्वाद कहते हैं (उन्होंने आशीर्वाद दिया)। (इस समय) मुनि प्रेम से गद्गद हो गये। (तत्पश्चात्) उन्होंने श्रीराम को हृदय से लगा लिया। ७। जिस प्रकार ज्ञानी पुरुष को परम तत्त्व अर्थात् ब्रह्म की प्राप्ति हो जाती है (और उससे उसे अपार सुख प्राप्त होता है), उसी प्रकार विश्वामित्र को श्रीराम से मिलकर निश्चय ही अपार सुख प्राप्त हो गया। ८। (तदनन्तर) श्रीराम और लक्ष्मण गुरु के चरणों का नमन करके (अपने-अपने) आसन पर बैठ गये। सभी सभाजन श्रीराम को देखते हैं (थे) फिर भी उनकी आँखों की तृप्ति नहीं होती (थी)। ९। जो उनका—अपना दुःख था, वह—अर्थात् अपने आगमन का कारण—मुनि विश्वामित्र ने (श्रीराम से) कहा। तो श्रीराम ने कहा—'मैं यज्ञ की रक्षा करता हूँ (करूँगा), पहले सभी दुष्टों को मार डालता हूँ (डालूँगा)। १०। परन्तु हे मुनिवर! सुनो, निश्चय ही मन में एक संशय उत्पन्न हुआ (है)। तुम मुझे युद्ध करने के लिए बुलाकर (ले) जा रहे हो। ११। वे दैत्य महा बलवान हैं। फिर भी मैं (उनके साथ) अपार युद्ध करूँगा। परन्तु देह क्षण-भंगुर है; इसलिए मुझे आत्म-ज्ञान सम्बन्धी विचार कहो। १२। मुझे वह

आत्म-प्राप्ति विना साधन, न शोभे वळी तेह,
ज्यम नासिका विण रूप सुंदर, प्राण विण ज्यम देह । १४ ।
दीपक विना मंदिर ज्यम, भरथार पाखे भामनी,
इंद्रियनिग्रह विण जोग मिथ्या, विधु विना ज्यम जामनी । १५ ।
एम आत्म प्राप्ति विना साधन, सकळ जाणो व्यर्थ,
ते लक्ष श्रीगुरु करावे, सरे गुरुसेवाए अर्थ । १६ ।
ते गुरुकृपा बिना कदापि, नव ऊपजे निर्वेद,
सेवाथकी गुरु प्रसन्न थाये, आपे ज्ञान अभेद । १७ ।
जेणे गुरुसेवा नव करी, घाल्यो ऊलंघी मरजाद,
पडी धूळ तेना ज्ञानमां, जेवो सुरापानीनो वाद । १८ ।
नव फळे वेद पुराण अध्ययन, बळो तेज प्रताप,
धवरहित जोबन सुंदरी, नवरूप शोभे आप । १९ ।
जेम अदातानुं ऊंचुं मंदिर, लोभीनो तत्त्व विचार,
भ्रष्टनुं कुळ गोत्र तेवुं, अत्यंजनो आचार । २० ।

आत्म (ज्ञान की) प्राप्ति (का मार्ग) वताओ, जिससे वासना और मोह निकल जाते है और जिसे प्राप्त कर मनुष्य मोक्ष प्राप्त करता है तथा जिससे उसकी कोई अन्य गति नहीं हो जाती । १३ । इसके अतिरिक्त विना आत्म-ज्ञान की प्राप्ति के (कोई) साधना शोभा नहीं देती । जैसे बिना नाक के सुन्दर रूप, जैसे विना प्राणों के देह, जैसे विना दीपक के मन्दिर, जैसे विना पति के स्त्री और बिना इन्द्रिय-निग्रह के योग-साधन और बिना चन्द्र के रात व्यर्थ है, उसी प्रकार आत्म (ज्ञान की) प्राप्ति के विना समस्त साधना को व्यर्थ समझो । (अतः) श्रीगुरु को वह लक्ष्य वनाएँ । गुरु-सेवा से (धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष जैसे) पुरुषार्थ सिद्ध होते हैं । १४-१६ । विना उस गुरु-कृपा के निर्वेद (शान्ति) कदापि उत्पन्न नही होती । (जव) सेवा से गुरु प्रसन्न हो जाते हैं, तो वे अभेद भावपूर्वक (आत्मीयता से) आत्म-ज्ञान प्रदान करते हैं । १७ । जिसने गुरु की सेवा नही की, उसने मर्यादा का उल्लंघन कर उसे विगाड़ डाला । जैसे मद्यपी से विवाद करना व्यर्थ है, (इसलिए उससे ज्ञान की बातें करना व्यर्थ है) उसके ज्ञान में मिट्टी पड़ी समझो—उसे व्यर्थ समझो । १८ । उसके द्वारा किया पुराणों का अध्ययन, उसका वल, तेज और प्रताप निष्फल (फलरहित) रह जाते हैं । सुन्दर स्त्री का यौवन और अभिनव रूप उसके पति-हीन होने पर अपनें आप में शोभा नहीं देता; (वैसे गुरु कृपा से हीन अध्ययन, वल आदि अशोभनीय – अर्थ-हीन है) । १९ ।

एम गुरुकृपा विण जाणजो, तेनी व्यर्थ विद्या सर्व,
माटे आत्मसाधन कहो मने, टळे अहंबुद्धि गर्व । २१ ।
रघुवीरनां वायक सुणी, सभा हरखी मन,
कौशिक मुनि आनंद पाम्या, कहेता हवा धन्य-धन्य । २२ ।
पछी हर्ष पामी वसिष्ठ प्रत्ये, बोल्या गाधिकुमार,
हे ब्रह्मनंदन ब्रह्मनुं तमो, ज्ञान आपो सार । २३ ।
ईश्वर अनंत ब्रह्मांडना, धर्यो लीला विग्रह देह,
ते गुरु प्रत्ये ज्ञान इच्छे, धरम पाळक एह । २४ ।
एवुं सांभळी श्रीराम ऊठ्या, नम्या गुरुने चर्ण,
संपुट कर करी गुरु सन्मुख, बेठा अशरण शर्ण । २५ ।
वसिष्ठ बोल्या हसीने, हे जगतगुरु जगदीश,
छो सच्चिदानंद ब्रह्मपूरण, परात्पर परमेश । २६ ।
उपदेश तमने शो करुं ? छो सदा एकरस-रूप,
वधारवा गुरु-माहात्म्य पूछो भक्त भावन भूप । २७ ।

जैसे अदाता अर्थात् कंजूस का ऊँचा भवन (और) लोभी मनुष्य का तत्त्व-विचार करना व्यर्थ होता है, जैसे (धर्म) भ्रष्ट व्यक्ति का (उच्च) कुल-गोत्र और अन्त्यज का आचार-धर्म व्यर्थ होता है, वैसे ही गुरु-कृपा के बिना उसकी समस्त विद्या को अर्थ-हीन समझो। इसलिए (हे गुरु,) मुझे आत्म-साधना (का मार्ग) बताओ, जिससे मेरी अहं-बुद्धि और गर्व टल (नष्ट हो) जाए। २०-२१। श्रीरघुवीर राम के (ये) वचन सुनकर सभा मन में आनन्दित हो गयी। विश्वामित्र मुनि आनन्द को प्राप्त हो गये और वे कहते रहे—'धन्य! धन्य!'। २२। तदनन्तर आनन्द को प्राप्त कर गाधिकुमार (विश्वामित्र) ने वसिष्ठ से कहा—'हे ब्रह्मनन्दन! तुम (श्रीराम को) सुन्दर ब्रह्म-ज्ञान प्रदान करो। २३। 'अनन्त ब्रह्माण्डों के ईश्वर ने लीला अवतार और विग्रह देह धारण किया। ये धर्म के पालक श्रीराम गुरु से ज्ञान (प्राप्ति) की इच्छा करते हैं'। २४। ऐसा (वचन) सुनकर श्रीराम उठ गये और उन्होंने गुरु के चरणों का नमन किया। अशरणों (निराधारों) के आधार श्रीराम हाथ जोड़कर गुरु के सामने बैठ गये। २५। (तब) वसिष्ठ हँसकर बोले—'हे जगद्‌गुरु, जगदीश! तुम सच्चिदानन्द, पूर्ण ब्रह्म, परात्पर परमेश्वर हो। २६। मैं तुम्हें क्या उपदेश दूँ ? तुम सदा एक-रस, एकरूप (परमात्मा) हो (अर्थात् तुम उपदेश को प्राप्त करके ही बदल जानेवाले हो, ऐसी बात नहीं है।) हे भक्तों के प्रिय राजा! तुम

याचकने दातार जाचे, सर स्तवे सिंधु जेम,
गूंगाने वाचस्पति, विचार पूछे तेम । २८ ।
दिनपति दीप प्रकाश इच्छे चकोर प्रत्ये चंद्र,
कल्पतरु दुर्बळनी पासे, मागे दान सुखेंद्र । २९ ।
एम जगतगुरु जगन्नाथ मुजने ज्ञान पूछो आज,
गुरुमाहात्म्य धर्म वधारवा, ते कारण कहुं महाराज । ३० ।
सन्मुख बेसाड्या रामने, गुरु वसिष्ठे तेणी वार,
दीक्षा आपी रामने, विधिए ते ब्रह्मकुमार । ३१ ।
गुरु संप्रदाय प्रमाणशास्त्र महावाक्यनो अनुसार,
अनुभव प्रत्यक्ष प्रमाण वायक, बोलिया तेणी वार । ३२ ।
ते कथा बृहद वसिष्ठ मांहे, छे सकळ विस्तार,
समुद्र जेवो ग्रंथ छे जेना, श्लोक छत्रीश हजार । ३३ ।
ते मांहेथी किंचित् कथा, मेळवी लीधो भाव,
वाल्मीकि रामायण विषे, कही गया छे मुनिराव । ३४ ।
ए ग्रंथ संमत मेळव्यो, कोई संदेह पामे सोय,
जे कथा तो उच्छिष्ट थई एम तर्क करशे कोय । ३५ ।

गुरु के माहात्म्य की वृद्धि करने के हेतु यह पूछते हो । २७ । तुम्हारी यह कृति वैसी है, जैसे दानी पुरुष याचक से (कुछ) माँग ले, जैसे समुद्र सरोवर का स्तवन करे, अथवा वाचस्पति गूँगे से विचार पूछे—विचार-विनिमय के लिए चर्चा करे; अथवा सूर्य दीपक से प्रकाश (पाने) की इच्छा करे, चन्द्र चकोर को चाहे, अथवा सब सुखों का इन्द्र राजा कल्पतरु दुर्बल से दान माँगे । २८-२९ । इस प्रकार जगद्-गुरु, जगन्नाथ श्रीराम ! तुम मुझसे (ब्रह्म) ज्ञान पूछ रहे हो । (फिर भी) गुरु-माहात्म्य सम्बन्धी धर्म की वृद्धि हो जाए, इस हेतु से, हे महाराज ! मैं वह कहता हूँ । ३० । उस समय ब्रह्म-नन्दन वसिष्ठ ने श्रीराम को (अपने) सम्मुख बैठा दिया और उन्हें विधि-पूर्वक दीक्षा दी । ३१ । उस समय उन्होने (श्रीराम को) गुरु-सम्प्रदाय, प्रमाण-भूत शास्त्र और महावाक्य के अनुसार और प्रत्यक्ष अनुभव से प्रमाणित वचन कहे । ३२ । वृहद् (योग) वासिष्ठ नामक ग्रन्थ में वह सम्पूर्ण सविस्तार कथा (उपलब्ध) है । वह समुद्र जैसा (विशाल) ग्रन्थ है, जिसमें छत्तीस हज़ार श्लोक हैं । ३३ । उसमें से अल्प-सी कथा और भाव को मुनिराज वाल्मीकि ने इकट्ठा कर लिया; और उसे वे वाल्मीकि-रामायण मे कह गये हैं । ३४ । जो इन ग्रन्थों को मिलाये, वह सन्देह को प्राप्त होगा । और वह अनुमान

पण श्रोताजन सावधान थईने, सुणो कहुं दृष्टान्त,
जेम वत्सनुं धावेलुं पय, मक्षिका मधु शुचि मात । ३६ ।
जेम पुष्प गंधित भ्रमरनुं, जळ मेघ मुखनुं जेह,
पुरोडास यज्ञ तणो पुनित, मोटा ग्रहे छे तेह । ३७ ।
प्रसाद जे विष्णु तणो, उच्छिष्ट ते नव जाणिये,
एम व्यास वाल्मीकिनां कर्यां ते पुराण पुनित प्रमाणिये । ३८ ।
ते बृहद वसिष्ठ ग्रंथमांथी, काढचो राम-वसिष्ठ-संवाद,
ते कथा किंचित कहुं सुणजो, श्रोता तजीने प्रमाद । ३९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

प्रमाद तजी श्रोता सुणो, जे पावन रामचरित्र रे,
वसिष्ठ वळता बोलिया, सुणो राघव पुण्य पवित्र रे । ४० ।

* * *

करेगा कि यह कथा तो जूठी हो गयी । ३५ । परन्तु हे श्रोताजनो, सावधान होकर सुनो— मैं दृष्टान्त कहता हूँ । जैसे बछड़े द्वारा पिया हुआ दूध, मधुमक्खी द्वारा चखा हुआ मधु, भौंरे द्वारा सूँघा हुआ फूल और जैसे मेघ के मुख से निकला हुआ पानी पवित्र माना जाता है, जैसे यज्ञ का पुरोडास पवित्र होता है और उसे बड़े लोग ग्रहण करते हैं; जैसे विष्णु भगवान का जो प्रसाद होता है, उसे जूठा नहीं मानते , उसी प्रकार व्यास और वाल्मीकि ने (जिन) पुराणों की रचना की; उन पुराणों को पवित्र प्रमाणित मानते हैं । ३६-३८ । उस वृहद् (योग) वासिष्ठ ग्रन्थ में से (मैंने) श्रीराम-वसिष्ठ-संवाद (छाँटकर) निकाला । हे श्रोताओ, प्रमाद का त्याग कर उस छोटी-सी कथा का श्रवण करो । ३९ ।

प्रमाद का त्याग कर हे श्रोताओ, यह पवित्र रामचरित्र सुनो । वसिष्ठ बोले–हे पुण्यशील पवित्र श्रीराम, सुनो । ४० ।

* * *

अध्याय—२३ (मायाचरित्र कथन)

राग काफी

ब्रह्मपुत्र कहे सुणो राम, एक द्रष्टा आत्माराम,
सर्व व्यापक पूरण ब्रह्म, हृदये इंद्रिना ना जाणे मर्म । १ ।
सर्व साक्षी सर्वावास, तेमां विश्व ते मिथ्याभास,
तमो एक निरंजन आदि, शुद्ध कारणरहित अनादि । २ ।
जगत भासे चित्रविचित्र, ए तमारी मायानुं चित्र,
मायानो खेल मिथ्या भूत, जेवुं मृगजळ भासे अद्भुत । ३ ।
तमो अलिप्त सर्वावास, जेम सर्वत्र एक आकाश,
जळ भरिया कुंभ अनेक, सहुमां सविता भासे एक । ४ ।
जेम काष्ठमां अग्नि-वास, तेम सर्वत्र रामनिवास,
दर्पणमां देखाये रूप तेम मिथ्या विश्व स्वरूप । ५ ।

अध्याय–२३ (मायाचरित्र कथन)

ब्रह्मदेव के पुत्र (वसिष्ठ) ने कहा—'हे राम ! सुनो । आत्मा-रूपी (ब्रह्म) राम (ही) एक (मात्र) सर्व-द्रष्टा, अर्थात् सर्वसाक्षी है । वह सर्वव्यापी पूर्णब्रह्म है । हृदय से उसके मर्म को जाना जा सकता है, न कि इन्द्रियाँ उसके मर्म को जानती है । १ । वह सर्वसाक्षी, सर्व-निवासी है । उसमें वह विश्व (जो दिखायी देता है) मिथ्या आभास है । (हे राम !) तुम एक (वही) निरंजन, आद्य, शुद्ध, कारण-रहित, अनादि ब्रह्म हो । २ । जगत चित्र-विचित्र दिखायी देता है, यह तो तुम्हारी माया द्वारा अंकित चित्र है । जैसे मृगजल अद्भुत दिखायी देता है, (परन्तु वह सब मिथ्या होता है) वैसे ही माया का खेल मिथ्या होता है । ३ । जैसे एक आकाश सर्वत्र होने पर भी सबसे अलिप्त है, वैसे सर्वनिवासी होने पर भी तुम (सबसे) अलिप्त हो । किसी ने अनेक कुम्भ पानी से भर दिये, तो (उन) सबमें एक ही सूर्य (का प्रतिविम्ब) दिखायी देता है । (अर्थात् अनेक प्रतिविम्ब होने पर भी सूर्य एक ही है ; उसी प्रकार अनेक पदार्थों में तुम्हारा अस्तित्व दिखायी देने पर भी तुम ब्रह्म एक ही हो) । ४ । जैसे (दिखायी न देने पर भी) काठ में आग का निवास होता है, वैसे ब्रह्म (राम) का सर्वत्र निवास होता है । आईने में (वस्तु का प्रति) रूप दीख पड़ता है (परन्तु वह मिथ्या होता है), वैसे ही (यह दिखायी देने वाला) विश्व का स्वरूप मिथ्या है, (सत्य नहीं) । ५ । इसलिए यह

सत्य आत्मा माटे एह, विश्व स्वरूप देखाये तेह,
ज्यम बीजमां तरुवर थाय, पटतंतु केरे न्याय। ६ ।
जळ ने लहरी छे जेम, विश्व तुजमां रह्युं छे तेम,
तुं विना अन्य वस्तु नथी, सत्य राघव कहुं सरवथी। ७ ।
जे अनेक ब्रह्मांडना जीव, विषयासक्त भूल्या शिव,
तारी भक्ति विना भगवान, नथी थातुं स्वरूपनुं ज्ञान। ८ ।
ए अविद्या मायानो प्रताप, अहंदेह मानी रह्यो आप,
ज्यम मृगजळ पुर देखाय, गांधर्व नगरनी शोभाय। ९ ।
ज्यम स्वप्ने राज्यासन, जेवो वंध्यापुत्र रतन,
चित्रमां अग्निनी ज्वाळ ज्यम शुक्तिमां रजत रसाळ। १० ।
एम विश्व मायानुं कृत्य, वाचारंभण जाणो असत्य,
तेवी राम तमारी माया, तेणे जगतना जीव वहाव्या। ११ ।
अघटने घटावे जेह, मायानुं विदाण ज एह,
सुणो राम कहुं एक वात, मायानी प्रभुता साक्षात्। १२ ।

आत्मा (ही) सत्य है; उसमें विश्व-स्वरूप दीख पड़ता है। जिस प्रकार बीज के अन्दर बड़ा वृक्ष होता है, वैसे इस आत्मा-राम में विशाल विश्व होता है। (इसमें) पट-तन्तु न्याय घटित होता है। जिस प्रकार जल और (उसमें उत्पन्न) लहरें होती हैं, उसी प्रकार, हे राम ! तुमसे उत्पन्न यह विश्व तुममें ही रहा है। हे राघव ! मैं सर्वतः सत्य कहता हूँ, कि तुम्हारे बिना कोई अन्य वस्तु (सत्य) नहीं है। ६-७। अनेक ब्रह्माण्डों में जो जीव हैं, वे विषयासक्त होकर शिव (सच्चा कल्याण) को भूल गए। हे भगवान् राम ! तुम्हारी भक्ति के बिना उन्हें आत्म-स्वरूप का ज्ञान नहीं होगा। ८। अविद्या माया का यह प्रताप है, जिससे जीव अहंकार (अपने स्वतंत्र अस्तित्व का भान) मानकर रहा। जिस प्रकार मृगजल में नगर नजर आता है, गन्धर्व-नगर की सी शोभा दीखती है, परन्तु वह आभासमय है, वैसे ही अहंदेह-बुद्धि से जो-जो दिखायी देता है, वह सब आभास मात्र है। ९। जैसे स्वप्न में (किसी को) राजगद्दी प्राप्त हो, जैसे बाँझ नारी के पुत्र-रत्न उत्पन्न हो, जैसे चित्र में अंकित अग्नि में ज्वाला हो, जैसे सीप में तेजस्वी चाँदी दिखायी दे, (दिखायी देने पर भी यह स्वप्न, भ्रम, मिथ्या है) वैसे ही यह विश्व माया की करनी है। उसे (केवल) वाग्विनोद के लिए कही बात, मिथ्या रूप समझो। हे राम ! वैसे ही तुम्हारी माया है, जिसने जगत के जीवों को बहा दिया—फँसाकर वहका दिया। १०-११।

एक गौतम ऋषि कहेवाय, तेणे निर्म्युं शास्त्रज न्याय,
शिष्य गौतमनो अभिराम, तेनुं गाधिऋषि एवुं नाम । १३ ।
चार वेद खट शास्त्रनो जाण, महाज्ञानी तपस्वी प्रमाण,
तेणे अनुष्ठान करियुं सार, विष्णु प्रगट थया तेणी वार । १४ ।
विष्णु कहे मागो मुनिराज, जे मागो ते आपुं आज,
ते मुनिवर कहे मागुं मुरारि, मुंने माया देखाडो तमारी । १५ ।
नारायण हसी बोल्या वाण, परम दारुण माया जाण,
तमने बंधन करशे तेह, छे मिथ्या पण दुर्घट एह । १६ ।
ज्यम रज्जुनो सर्प ज भासे, शुक्तिमां रजत प्रकाशे,
ज्यम काष्ठ खीलानो चोर, स्वप्नने सुख दुःखनुं जोर । १७ ।
आदि अंत मांहे नथी एह, मध्यमांहे स्फुरी छे तेह,
छे मिथ्या पण महादुःख देशे, ज्ञान ध्यान हरीने लेशे । १८ ।
मार्कंडेय सरखाने भमाव्या, ब्रह्मादिक जाळमां आव्या,
भ्रम बुद्धि करशे तमारी, एवी निर्दय माया मारी । १९ ।

यह (तुम्हारी) माया का कौशल है, जो अघट (कभी न घटने वाली बात) को भी बना दे। हे राम! प्रत्यक्ष माया की प्रभुता की एक बात कहता हूँ। १२। गौतम (नामक) एक ऋषि थे। उन्होंने न्यायशास्त्र की रचना की। गौतम के एक भले शिष्य थे। उनका नाम गाधि था। १३। वे चार वेदों और छः शास्त्रों के वेत्ता थे, महाज्ञानी तथा प्रमाणभूत तपस्वी थे। उन्होंने (एक समय) सुन्दर अनुष्ठान (सम्पन्न) किया, तो उस समय भगवान् विष्णु प्रकट हो गये। १४। श्रीविष्णु ने कहा—'हे मुनिराज! माँग लो। जो माँगोगे, आज वह (तुम्हें) दूँगा।' (इसपर) वे मुनिवर बोले—'हे मुरारि! मैं यह माँगता हूँ कि तुम मुझे अपनी माया दिखाओ'। १५। (तब) श्रीनारायण हँसकर (यह) वचन बोले—'माया को परम दारुण समझो। वह तुम्हें आबद्ध करेगी। यह है तो मिथ्या, पर (बहुत) कठोर है। १६। जैसे रस्सी में सर्प ही का भास होता है, सीप में चाँदी की झलक होती है, जैसे लकड़ी के खूँटे का चोर बनता है, स्वप्न में प्राप्त सुख-दुख की तीव्रता होती है, ये सब जिस प्रकार मिथ्या हैं, वैसे ही माया (वस्तुतः) मिथ्या है, परन्तु वह बहुत दुःख देती है; वह ज्ञान, ध्यान का हरण कर लेती है। वह आदि और अन्त में नहीं है, वह तो मध्य में स्फुरित हो जाती है। १७-१८। उसने मार्कण्डेय जैसे (बड़े-बड़े मुनियों) को भ्रम में डाला, ब्रह्मा आदि इसके जाल में आ गये (फँस गये)। वह तुम्हारी बुद्धि को भ्रमित कर

एमां शुं जोवुं छे मुन्य ? त्यारे गाधि बोल्या वचन,
मायाथी दुःख पामुं ज्यारे, तमो संभाळ लेजो त्यारे । २० ।
'अस्तु' कहीने नारायण गया, पछे दिन थोडा वही गया,
जाह्नवी तीरे वनमां सार, करी आश्रम रहे नरनार । २१ ।
एक समे मुनि मध्याह्न गया, करवा गंगामां स्नान,
जळमांहे पेठा जेटले, जीव अकळायो तेटले । २२ ।
थयुं मर्ण ते वेळा अकाळ, जमदूते झाल्या तत्काळ,
लेई चाल्या जमपुर मांहे, नर्ककुंडमां नाख्यो त्यांहे । २३ ।
नर्क भोगवियुं कंई काळ, पछी अवतार्यो चंडाळ,
नाम कंटक हिंसा कर्म, पाम्यो जोवन स्त्री पर्म । २४ ।
मांज्यो गृहस्थाश्रम तेणी वार, थयां पुत्र पुत्री परिवार,
तेनुं पोषण करवा माट, लूंटे लोकने पाडी वाट । २५ ।
गौ ब्राह्मण आदे जीव, घणी हिंसा करी छे अतीव,
तेम करतां वन मोझार, दव लाग्यो एक ज वार । २६ ।

डालेगी—मेरी माया ऐसी निर्दय है । १९ । हे मुनिवर ! उसमें क्या देखना है ?' तब (इसपर) गाधि ने (यह) वचन कहा—' जब मैं माया से दुःख प्राप्त करूँ, तब तुम मुझे सम्भाल लो ।' २० । ' तथास्तु ' कहकर श्रीनारायण चल दिये । अनन्तर कुछ दिन व्यतीत हो गये । गंगा नदी के तट पर (एक) सुन्दर वन में वह पुरुष और स्त्री—गाधि ऋषि और उनकी स्त्री—आश्रम बनाकर रहते हैं (थे) । २१ । एक समय मुनि मध्याह्न के अवसर पर गंगा में स्नान करने गये । जिस समय वे पानी में पैठ गये, उसी समय उनके प्राण व्याकुल हो गये । २२ । उस समय उनकी अकाल (में) मृत्यु हुई—तत्काल यमदूत ने उन्हें पकड़ लिया और वे (यमदूत) उन्हें यमपुर में ले गये; (और) वहाँ (उनको) नरक-कुण्ड में डाल दिया । २३ । कुछ समय उन्होंने नरक का भोग किया और बाद में वे चण्डाल के रूप में अवतरित हुए । उस (चण्डाल) का नाम कंटक था, कर्म हिंसा था । युवावस्था को प्राप्त कर उसने परम सुन्दर स्त्री पायी । २४ । उसने उस समय गृहस्थाश्रम (का जीवन) आरम्भ किया । उसके परिवार (अनेक) पुत्र-पुत्रियाँ हो गये । उनका भरण-पोषण करने के लिए वह बटमारी करके लोगों को लूटता (था) । २५ । वह गौ, ब्राह्मण आदि जीवों की बहुत हिंसा करता (था) । तब उसके ऐसा करते हुए, एक समय वन में दावाग्नि लग गयी । २६ । (उस समय) कंटक घर पर नहीं था । दैव की इच्छा से (ही) ऐसी बात हो गयी

नथी कंटक ते निज घेर, दैव इच्छाये थइ एवी पेर,
मातपिता पुत्र ने नार, सर्वे वळियां दव मोझार । २७ ।
कंटके आवी जोयुं त्यांहे, महादुःख पाम्यो मनमांहे,
मुंने नहि मळे आवो संसार, तेवुं कहीने रोयो ते अपार । २८ ।
पछी दूर देशांतर गयो, केरल देशमां आवियो,
ते नगरनो नरपति जेह, पाम्यो मर्ण तेणे दिन तेह । २९ ।
ते रायने न होती प्रजाय, प्रधाने त्यां विचार्यो न्याय,
हस्तिनी शणगारी त्यांय, पुष्पमाळा आपी सूंढमांह्य । ३० ।
जेने कंठे आरोपे माळ, थाय नग्र तणो ए भूपाळ,
एटले त्यांहां आव्यो चंडाळ, तेने कंठे आरोपी माळ । ३१ ।
लेई गया तेने राजद्वार, कर्यो राज तणो अधिकार,
कर्युं भूपतिनुं क्रियाकर्म, राजसंपत्ति पाम्यो पर्म । ३२ ।
खट वर्ष भोगव्युं राज, महाअधरमी करे कूडां काज,
एक समे ते कंटकराय, सैन्य सहित गयो मृगयाय । ३३ ।

(कि) उसके माता-पिता, स्त्री सब दावाग्नि में जल मरे । २७ । कंटक ने आकर वहाँ देखा, तो मन में वह अति दुःख को प्राप्त हो गया । 'मुझे अब ऐसी गिरस्ती नहीं मिलेगी'—ऐसा कहते हुए वह अपार रोया । २८ । अनन्तर वह दूर दूसरे देश में गया—केरल देश में आ गया । उस देश के (प्रमुख) नगर का जो राजा था, वह उस दिन मृत्यु को प्राप्त हो गया । २९ । उस राजा के (कोई) सन्तान नहीं थी (अतः) तब प्रधान ने न्याय-नीति का विचार किया । (उसके अनुसार) उसने तभी एक हथिनी को सजा दिया और उसकी सूँड़ में पुष्पमाला (धरवा) दी । ३० । जिसके गले में वह माला डालेगी, वह उस नगर का राजा होगा । उस समय वहाँ (वह कंटक नामक) चंडाल आ गया; उसके गले में (उस हथिनी ने) माला पहना दी । ३१ । (लोग) उसे राजद्वार (तक) ले गये और उन्होंने उसे राज्य का अधिकारी बना दिया । उसने राजा का कर्तव्य कर्म किया और उसने अतिशय राज-सम्पत्ति प्राप्त की । ३२ । उसने छः वर्ष राज्य का भोग किया । उस महा अधर्मी (व्यक्ति) ने कपट-पूर्वक कार्य किया । एक समय कंटक राजसेना-सहित शिकार के लिए चला गया । ३३ । (तब) उस बन में उसके अपने वतन के लोग तीर्थ यात्रा करते हुए आ गये । उन्होंने उसे वन में पहचान लिया (और पूछा)—'अरे कंटक ! तू यहाँ कहाँ से आया ?' । ३४ ।

पोतानी जन्मभूमिनाजन, तीर्थ करता आव्यो ते वन,
तेणे ओळखियो वनमांथी, अल्या कटंक तुं आंहां क्यांथी । ३४ ।
सुणी मन पाम्यो लज्जाय, सैन्य प्रधान विस्मे थाय,
प्रधाने पछी तेड़ी एकांत, पूछ्युं तेनी भांगी भ्रांत । ३५ ।
अमारा गामनो ए चंडाळ, अहीं थई बेठो छे भूपाळ,
मंत्रीए सुणी दंडज दीधो, कंटकने लूंटी लीधो । ३६ ।
त्यांथी मारी काढ्या चंडाळ, नग्रमांहे आव्यो तत्काळ,
थयां भ्रष्ट सहु नर नार, सर्वे करतां हाहाकार । ३७ ।
पुरनी मळी सर्व प्रजाय, काढ्यो धर्मशास्त्रनो न्याय,
प्रजाए कर्यो अग्निप्रवेश, नग्रमां न रह्युं कोई शेष । ३८ ।
आव्यो कंटक नग्र मोझार, प्रजा दीठी भस्माकार,
मारे सारुं वळ्यां ए आप, मारे शिर बेठुं ते पाप । ३९ ।
करी काष्ट चिता तेणी वार, बळवा बेठो ते मोझार,
एटले थयुं कौतकमान, माया ईश्वरनी बळवान । ४० ।
एटळे थयुं कौतुकमान, माया ईश्वरनी बळवान,
ऋषिपत्नी पूरवनी जेह, आवी बारणे ऊभी तेह । ४१ ।

यह सुनकर वह मन में लज्जा को प्राप्त हो गया। उसका सैन्य तथा प्रधान विस्मित हैं (थे)। अनन्तर प्रधान ने उन्हें एकान्त में ले जाकर पूछा—तो उसका भ्रम भंग (दूर) हो गया। ३५। (उन्होंने कहा)—'वह हमारे गाँव का चण्डाल है, (जो) यहाँ राजा होकर बैठा है।' मंत्री ने (यह) सुनकर कंटक को दंड ही दिया और उसे लूट लिया। ३६। वहाँ से उन्होंने उस चण्डाल को मार भगाया और वह (प्रधान) तत्काल नगर में आ गया। सब नर-नारी भ्रष्ट हो गये (थे), वे हाहाकार करते थे। ३७। नगर की समस्त प्रजा इकट्ठा हो गयी और (उन लोगों ने) धर्मशास्त्र का निर्णय (खोज) निकाल लिया। (तदनुसार) प्रजा ने अग्नि-प्रवेश किया। नगर में कोई बाक़ी न रहा। ३८। (तदनन्तर) कंटक (जब) नगर में आया (तो) उसे प्रजा भस्माकार हुई दिखायी दी। वे सब मेरे कारण स्वयं जल गये; वह पाप मेरे सिर पर बैठा (चढ़ा)। (यह सोचकर) उस समय लकड़ियों की चिता बनाकर उसमें वह जल (मर) जाने के हेतु बैठ गया। ३९-४०। इस समय एक चमत्कार हो गया। ईश्वर की माया बलवान होती है। जो पहले ऋषि (गाधि) की पत्नी थी, वह आकर दरवाजे में खड़ी रही। ४१। उसने पुकार कर (उन्हें) बुलाया (और पूछा) —'हे स्वामी! वहाँ से क्यों नहीं आ रहे हो? रसोई बनाकर मैं (तुम्हारी)

तेणे हाक मारी बोलाव्यो, स्वामी त्यारना शेना आवो ?
हुं रसोई करी जोउं छुं वाट, वार लागी थयो उचाट । ४२ ।
घणी वारना आव्या आंहे, शुं नाहो छो गंगामांहे ?
एवुं सांभळी चमक्यो मन, दीठो आश्रम ने स्त्रीजन । ४३ ।
पूर्वस्मृति आवी मनमांह्य, चिता नग्र न दीठुं त्यांय,
दीठो आश्रम पोतातणो, भयभीत थयो अति घणो । ४४ ।
अरे हुं ब्राह्मण अवतार, शिष्य गौतमनो निर्धार,
हुं थयो भ्रष्ट हिंसावंत, एवुं कही करतो कल्पांत । ४५ ।
विष्णु स्मरण कर्युं छे त्यारे हरि प्रगट थया तेणी वारे,
गाधिने मुखे फेरव्यो हाथ, थयुं पूरवज्ञान सनाथ । ४६ ।
श्रीहरिनी घणी स्तुति करी, कर जोडी वाणी ऊचरी,
जाण्यो माया तणो प्रताप, पछी शुद्ध थयो निज आप । ४७ ।
हे नाथ ! ए माया तमारी, महाबळवंती ने विकारी,
ते दुरस्त निर्दे अपार, कृपा राखजो देवमोरार । ४८ ।
हुं छुं शरण तमारे स्वामी, माया वारजो अंतर्यामी,
एवुं कही मुनि लाग्या पाय, त्यारे हसिया वैकुण्ठराय । ४९ ।

वाट जोहती हूँ । (तुमको) देर हुई तो चिंता हो गयी । ४२ । बहुत समय से यहाँ आये; क्या गंगा में नहा रहे हो ?' ऐसा सुनने पर (गाधि का) मन चकित हो गया । उसे आश्रम और स्त्री दिखायी दी । ४३ । मनमें पूर्व (स्थिति की) स्मृति हो आयी । उन्हें चिता और नगर वहाँ नहीं दिखायी दिया । उन्होंने स्वयं का आश्रम देखा, तो वे अत्यधिक भयभीत हो गये । ४४ । (उन्होंने सोचा)—अरे ! मैं (तो) ब्राह्मण (के कुल में) अवतरित हूँ, निश्चय ही गौतम ऋषि का शिष्य हूँ । मैं भ्रष्ट तथा हिंसाचारी हुआ । ऐसा कहकर वे अतिशय शोक करने लगे । ४५ । तब उन्होंने भगवान् विष्णु का स्मरण किया है, उस समय श्रीहरि प्रकट हो गये । उन्होंने गाधि के मुख पर हाथ फेर दिया, तो उस (गाधि) को पूर्वज्ञान हो गया और वे अपने को सनाथ (अनुभव करने लगे) हो गये । ४६ । (फिर) उन्होंने श्रीहरि की बहुत स्तुति की, हाथ जोड़कर शब्दों का उच्चारण किया । उन्होंने (अब) माया का प्रताप जान लिया और अनन्तर वे स्वयं शुद्ध हो गये । ४७ । (उन्होंने कहा–' हे नाथ ! तुम्हारी वह माया महा बलवती और विकारी है । वह बहुत दुस्तर तथा निर्दय है । हे देव मुरारि ! कृपा (दृष्टि) रखो । ४८ । हे स्वामी ! मैं तुम्हारी शरण में (आया) हूँ । हे अन्तर्यामी ! (अपनी)

ऋषिने आप्युं अभेदान, हरि पाम्या अंतर्धान,
कहे वसिष्ठ सुणो रघुराय, एवी माया तमारी कहेवाय । ५० ।
अति दुर्जय नव जिताय, तम शरण रहे सुख थाय,
छे मिथ्या पण महा बळवान, महापुरुषनां मुकावे मान । ५१ ।

वलण (तर्ज़ वदलकर)

मान मुकावे महापुरुषनां, हरिमाया बळवान रे,
ते माटे सहु अभिमान मूकी, भजवा श्रीभगवान रे । ५२ ।

माया का निवारण कर लो ।' ऐसा कहकर गाधि मुनि श्रीहरि के पाँव लगे । तव वैकुण्ठराय श्रीहरि हँस दिये । ४९ । उन्होंने ऋषि को अभयदान दिया और वे अन्तर्धान (को प्राप्त) हो गये । वशिष्ठ ऋषि कहते हैं—' हे रघुराज ! सुनो । ऐसी तुम्हारी माया कही जाती है । ५० । वह अति दुर्जय है, वह नहीं जीती जाती है । तुम्हारी शरण में रहने से सुख होता है । वह (माया) है (तो) मिथ्या, पर वह महा वलवती है । वह महापुरुषों के अभिमान को छुड़ाती है । ५१ ।

वह महापुरुषों के अभिमान को छुड़ाती है । हरि की माया ऐसी वलवती है । इसलिए अभिमान को त्यागकर सव श्रीभगवान का भजन करें । ५२ ।

* * *

अध्याय—२४ (उत्पत्ति-प्रलय-कथन)

वसिष्ठ कहे सुणो श्री रघुरायजी, ए चिद्‌शक्ति तमारी कहेवायजी,
आदि अंते नथी आकार जी, मध्ये माया पामी विकार जी । १ ।

अध्याय—२४ (उत्पत्ति-प्रलय-कथन)

वसिष्ठजी कहते हैं—' हे रघुराज ! वह चिद्-शक्ति तुम्हारी कही जाती है । (ब्रह्माण्ड के) आदि और अन्त में उसके (कोई) आकार नहीं है ; (केवल) मध्य (अवस्था) में (वह) माया विकार (अर्थात् स्थित्यन्तर) को प्राप्त हो जाती है । १ ।

ढाल

विकार पामी मूळ माया, ज्यारे इक्षणा पुरुषे करी,
महत्तत्व तेथी उदे पाम्यं, अहं त्रिगुणे विस्तरी । २ ।
अहंतत्त्व त्रिगुण विकारथी, जे तत्त्व चोवीस निरमयां,
नभ समिर तेज सलिल भूत, पंच भूत ए तमनां थयां । ३ ।
रजोगुण थी दशे इंद्री, पंचज्ञान पंचकरम कही,
ते मन आधीन सकळ वरते, निज विषय भक्ते रही । ४ ।
सत्त्वनुं आशे चतुर, मन बुद्धि चिन्त अहंकार,
शब्द स्पर्श रस रूप गंध, ए तत्त्व चोवीस सार । ५ ।
स्वराट सरवे थयुं तेनुं, स्थूळ सूक्ष्म जेह,
मांहे पुरुषसत्ता प्रवेशी, त्यारे थयुं चैतन्य एह । ६ ।
ब्रह्मांड सरवे भरायुं, चर अचर जीवनी काय,
पण एक आत्मा रमे सघळे, ते नव आवे न जाय । ७ ।

जब (आदि) पुरुष ने (कोई) इच्छा की, तो मूल (आदि) माया विकार को प्राप्त हो गयी। उससे (सत्त्व, रज तथा तम गुणों की साम्यावस्था से युक्त) महत्तत्व अर्थात् आदिमाया उदित हो गयी, तो अहंतत्त्व ('मैं भी कोई हूँ'—यह अहंभाव) सत्त्व, रज तथा तम नामक त्रिविध गुणों में विस्तार को प्राप्त हो गया । २ । अहंतत्त्व ने तीन प्रकार के (उन) गुणों के विकार से जो (कुल) चौवीस तत्त्व है, उनका निर्माण किया। आकाश, वायु, तेज, जल और पृथ्वी (नामक) वे पाँच महाभूत (तत्त्व) तमोगुण से उत्पन्न हो गये । ३ । रजोगुण से दस इन्द्रियाँ उत्पन्न हो गयी, जो पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ (नेत्र, कान, जिह्वा, त्वचा, नाक) और पाँच कर्मेन्द्रियाँ (हाथ, पाँव, वाणी, शिस्न और गुदा) कही गयीं। वे सब मन के अधीन रहती हैं और अपने-अपने (भोग्य) विषय की भक्ति (लगाव) में (लगी) रहती हैं । ४ । सत्त्व गुण के मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार (नामक) चार (रूप-तत्त्व) हैं। (इनके अतिरिक्त) शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गन्ध (—ये और पाँच तत्त्व) हैं। (इस प्रकार) वे कुल चौवीस तत्त्व हैं । ५ । स्थूल और सूक्ष्म जो-जो तत्त्व हैं, उनके वे सब अधिपति हो गये। उन (तत्त्वों) में (आदि) पुरुष अर्थात् ब्रह्म की सत्ता प्रवेश कर गयी, तब वह समस्त चैतन्य (युक्त) हो गया । ६ । सबने चर, अचर-जीवों के शरीरों से—ब्रह्माण्ड को भर दिया। परन्तु सब में एक (वह परम) आत्मा—परब्रह्म—रमण करता है—वह न (कही) आता है, न

विराट रूपे एक आत्मा, नथी बीजुं अन्य,
ते रूप संक्षेपे कहुं, रघुवीर धरजो मन। ८।
चरणतळ पाताळ छे, प्रपद रसातळ जाणिये,
महातळ बे गुल्फ पद केरां, विराट वखाणिये। ९।
जानुं जंघा ते तळातळ वितळ भ्रूकुटि देश,
नैऋत लोके गुदस्थानक, शिश्न प्रजापति एश। १०।
आकाश मंडळ पोळ, पेट ज, उदर सागर सात,
जठराग्नि ते वडवानळ, रुदे भूर्लोक विख्यात। ११।
महर लोक कंठनाले, जनलोक मुख कहेवाय,
यमलोक रहे छे दंत दाढचो, वरुण ते रसनाय। १२।
अश्वनीकुमारने घ्राण इंद्री, भुवरलोक भ्रूकुटि विषे,
ललाटे तपलोक मस्तक, सत्यलोक रहो सुखे। १३।
नेत्र दिनकर हस्त वासव, रोमावळी वनराय,
त्वचा वायु पृष्ठ अधरम, पर्जन्य रेत कहेवाय। १४।

(कहीं) जाता है। ७। (उस) विराट् (ब्रह्माण्ड) रूप में एक (मात्र) परमात्मा (निवास करता) है; (वहाँ) दूसरा कोई नहीं है। उस रूप को संक्षेप में मैं बताता हूँ। हे रघुबीर! मन लगाओ (मन:पूर्वक सुनो)। ८। (उस परब्रह्म के) चरण-तल (तलुए) उस (विराट् ब्रह्माण्ड का) पाताल है, (उसके) पैर का पंजा रसातल समझो। पाँवों के गुल्फ (एड़ी के ऊपर वाली गाँठ) को महातल के रूप में बखानो। ९। (उसके) घुटने और जंघाएँ तल और अतल हैं। भ्रुकुटि वाला भाग वितल है। [पुराणों के अनुसार सात पाताल हैं—अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल और पाताल।] उसका गुदस्थान नैऋत्यलोक है; शिस्न प्रजापति है। १०। (उस विराट् परमपुरुष का) रिक्त पेट (उस विराट् ब्रह्माण्ड का) आकाश-मण्डल है और पेट सात सागर है। वह जठराग्नि वड़वानल है और हृदय विख्यात भूर्लोक है। ११। (उसका) कण्ठनाल महर्लोक है और मुख जनलोक कहाता है। उसके दाँत और दाढ़ें यमलोक हैं और जिह्वा वरुणलोक है। १२। (उस विराट् परम पुरुष की) घ्राणेन्द्रिय (नाक) (उस विराट् ब्रह्माण्ड के) अश्विनीकुमार है, तो भृकुटि (भौंह) में भुवर्लोक है। ललाट-स्थान में तपलोक है, तो मस्तक में सत्यलोक सुख-पूर्वक रहता है (वसा हुआ है)। १३। [पुराणों के अनुसार मुख्य सात लोक हैं—भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक और सत्यलोक।]

क्षुधा ते दुर्भिक्ष जाणो, क्रोध सृष्टिसंहार,
मोह पालन प्रजानुं ते, मृत्यु भय निरधार । १५ ।
मन चंद्रमा बुद्धि विरंचि, नारायण चित् रूप,
अहंकार ते महा रुद्ररूपे, मुख ते अग्नि अनुप । १६ ।
लोभ लज्या अधर बे गिरि, अस्थि सरिता नाड,
ए विराट सप्तावरण सुधी, एक छे गत आड । १७ ।
एक एकथी दशगुणुं आ व्रण, छे अपार अनुप,
एक पुरुष व्यापक रह्या सघळे, अकळ अलख स्वरूप । १८ ।
ज्यम बाजीगर विस्तारे लीला, समेटे निरधार,
एम पुरुष सृष्टि समेटे, त्यारे कहेवाय संहार । १९ ।
ज्यम उर्ण नाभि जाळ काढी, रमे तेनी मांहे,
पाछी समेटे मुखे एम, लय सृष्टि पुरुष मांहे । २० ।
ज्यम उत्पत्ति त्यम लय ज पामे, विश्व सघळुं एह,
प्रलय पंच कहुं जथा, ए सुणो राघव तेह । २१ ।

नेत्र सूर्य हैं, हाथ इन्द्र हैं, रोमावली (बाल) वनराजी है; त्वचा वायु और पीठ अधर्म है। रेत (वीर्य) पर्जन्य (वर्षा) कहाता है । १४ । (उस परमपुरुष की) क्षुधा (भूख) को (उस विराट् ब्रह्माण्ड का) अकाल और क्रोध को सृष्टि का सहार समझो; मोह वह प्रजा का पालन है तो भय निश्चय ही मृत्यु है । १५ । मन चन्द्रमा है, तो बुद्धि ब्रह्मा है; उसका चिद् रूप नारायण है। अहंकार उस महारुद्र-रूप में है, तो मुख वह अद्भुत अग्नि है । १६ । लज्जा लोम (रोम, बाल) हैं; हड्डियाँ पर्वत और नाड़ियाँ नदियाँ हैं। (इस प्रकार यह विराट् ब्रह्माण्ड सात आवरणों तक एक ही है।) १७ । एक-एक से दसगुना आवरण अपार और अनुपम है। इन सब में एक (ही) आदिपुरुष व्यापक रहा (है)। वह अकल, अलख स्वरूपी है । १८ । जैसे जादूगर लीला का विस्तार करता है और उसे निश्चय ही समेट लेता है, उसी प्रकार एक पुरुष (सृष्टि का निर्माण कर उसे) समेट लेता है। यह 'संहार' कहाता है । १९ । जैसे मकड़ी नाभि में से (धागा निकालते हुए) जाला तैयार करके उसी में रम जाती है और बाद में उसे मुख में समेट लेती है, वैसे ही उस महापुरुष में सृष्टि (सिमट जाती है और) लय हो जाती है । २० । जैसे (उसकी) उत्पत्ति होती है, वैसे वह समस्त विश्व लय ही को प्राप्त हो जाता है। मैं जैसे पाँच प्रकार के प्रलय कहता हूँ, हे राघव राम! उसे सुनो । २१ । पिण्ड के निद्रा

पिंडने वे प्रलय नित्य, निमित्त निद्रा मर्ण,
त्रीजो प्रलय त्रिलोकनो, करे विधि निद्राचर्ण । २२ ।
चारे युग जाय सहस्र वेळा, सृष्टिनो लय थाय,
प्रलय नाम ज ते तणुं, तमो सुणो श्रीरघुराय । २३ ।
आठ लक्ष योजन चढे पाणी त्रिलोक बूडी जाय,
ब्रह्मा निद्रा करे त्यारे, प्रलय ते कहेवाय । २४ ।
हावे महाप्रलय ते कहुं, वरसे शत वरस घनमाळ,
शत वरस सूरज तपे द्वादश शेष मुखनी ज्वाळ । २५ ।
ब्रह्मांड बळीने भस्म थाये, त्यारे अग्नि शोषे नीर,
लय थाय अग्नि वायुमां, आकाशमांहे समीर । २६ ।
नभ तमोगुणमां जई मळे रजमांहे तम लय थाय,
रज समाये सात्त्विकमां, अहंतत्त्व सत्व समाय । २७ ।
अहंतत्त्व ते महत्तत्त्वमां, थई समाये गुणहीन,
महत्तत्त्व मायामां मळे प्रकृति पुरुषमां लीन । २८ ।
ते पुरुष अचळ अखंड निर्मळ, सदा एक रसरूप,
ए पुरुषोत्तम आनंदघन सुख ज्ञानरूप अनूप । २९ ।

और मरण नामक नित्य और नैमित्तिक दो प्रलय होते हैं। तीसरा प्रलय है त्रिलोक का—तब विधाता निद्रा का आचरण करता है (विधाता सो जाता है) । २२ । चार युग हजार बार व्यतीत हो जाते हैं, तब सृष्टि का लय हो जाता है। उसका नाम प्रलय है। हे श्रीरघुराज राम ! तुम उसे सुनो । २३ । (उस प्रलय की अवस्था में) आठ लाख योजन (ऊँचा) पानी चढ़ता है; (उसमें) त्रिभुवन (स्वर्ग, मृत्यु, पाताल) डूब जाता है। तब ब्रह्मा सो जाता है। वह प्रलय कहा जाता है । २४ । अब मैं कहता हूँ कि महाप्रलय क्या है। घनघटा सौ वर्ष बरसती रहती है। सौ वर्ष बारह सूर्य तपते रहते हैं। शेष भगवान् मुख से ज्वाला निकालते रहते हैं । २५ । उसमें जाकर ब्रह्माण्ड भस्म हो जाता है। तब अग्नि पानी को सोख लेती है। (फिर) अग्नि का वायु में लय हो जाता है और वायु का (लय) आकाश में हो जाता है । २६ । आकाश तमोगुण में जाकर मिल जाता है; (फिर) तमोगुण का लय रजोगुण में हो जाता है। (तदनन्तर) रजोगुण सत्त्वगुण में समाविष्ट हो जाता है, तो सत्त्वगुण अहंतत्त्व में । २७ । (फिर) अहंतत्त्व गुणहीन होकर उस महत्तत्त्व में समा जाता है। (फिर) महत्तत्त्व माया में मिल जाता है और प्रकृति (आदि) पुरुष में लीन हो जाती है । २८ । वह (आदि) पुरुष अचल

तमो छो रघुनाथ जी, सर्वना आत्माना ईश,
भक्ति थकी साक्षात् जाणे, जीव श्रीजगदीश । ३० ।
भक्ति विना नव लेश थाये, स्वरूप केरुं ज्ञान,
भक्तिए अंतर शुद्ध थाये, मास श्रीभगवान । ३१ ।
हवे प्रलय आत्यंतिक कहुं, रघुवीर सुणजो तेह,
वळी ज्ञानप्रलय एने कहे, मानुभाव पंडित जेह । ३२ ।
जे ज्ञानी जाणे एक ब्रह्म, अखंड रूप अभेद,
आभास विश्व प्रपंचथी, पाम्यो जथा निर्वेद । ३३ ।
जेणे प्राण आशय अक्ष होमी, ज्ञान अग्निमांहे,
जग्त दृष्टि टळी तेनी, द्वैत न जुए कांहे । ३४ ।
अद्वैत पद भास्युं तदा, एक पुरुष अखिल प्रकाश,
ब्रह्मांडमां भरपूर आत्मा, रह्यो यथा अवकाश । ३५ ।
ज्ञाने करीने विश्व टाळ्युं जीवन्मुक्ते जेह,
ए प्रलय कहिये पांचमो, रघुवर जाणो तेह । ३६ ।

अखण्ड, निर्मल तथा सदा एकरस (एक-सा) रूप होता है। वह पुरुषोत्तम आनन्दघन, सुख और ज्ञान-रूप, अनुपमेय है। २९। हे रघुनाथ राम! तुम (वही) सबकी आत्माओं के ईश्वर हो। हे श्रीजगदीश! जीव भक्ति से (तुम्हें) प्रत्यक्ष जान जाते है। ३०। बिना भक्ति के, (भगवान के) स्वरूप का लेश मात्र (तक) ज्ञान नहीं होता। भक्ति से हृदय शुद्ध हो जाता है; उससे श्रीभगवान् दिखायी देते हैं। ३१। हे रघुवीर राम! अब मै आत्यन्तिक प्रलय का वर्णन कहता (करता) हूँ। वह (तुम) सुनो! जो महानुभाव पण्डित है, वे उसे 'ज्ञान-प्रलय' कहते हैं। ३२। जो ज्ञानी (व्यक्ति) ब्रह्म को एक, अखण्ड-रूप और अभेद समझता है और विश्व को प्रपंच से (निर्मित) आभास (मिथ्या) समझता है तथा इससे जो (व्यक्ति) निर्वेद (परम शान्ति) को प्राप्त हो गया (हो), जिसने ज्ञान-रूपी अग्नि में प्राणों के हेतु आँखों का हवन किया, (समझो कि) उसकी दृष्टि संसार से हट गयी, (और इसलिए) वह कहीं भी द्वैत नहीं देखता। तब उसे अद्वैत का ज्ञान हो जाता है अर्थात् एक पुरुष और एक प्रकाश दिखायी देता है। (और वह अनुभव करता है कि) ब्रह्माण्ड में जहाँ अवकाश हो, वहाँ (यथा स्थान एक मात्र परम) आत्मा (ब्रह्म) भरा (व्याप्त) रहता है। ३३—३५। हे रघुवीर, (यह) समझो कि जिस जीवन-मुक्त व्यक्ति ने ज्ञान द्वारा विश्व (के मायाजाल) को टाल दिया, उसे (टाल देने की क्रिया को) पाँचवाँ प्रलय कहा जाता है। ३६।

अध्यासनो अपवाद करतां, ऊगरे जे रूप,
ते तमो सत्य स्वरूप छो, ब्रह्मांड केरा भूप। ३७।
श्रीरामने गुरुए कह्युं, ते ज्ञानसिंधु अपार,
में मंदबुद्धिए करी, किंचित् कर्यो विस्तार। ३८।
अध्यात्मज्ञान गुरु थकी, सांभळ्युं श्रीरघुवीर,
त्यारे अंतर्लक्षमां गई वृत्ति, थया पोते स्थिर। ३९।
समाधिस्थ थई ठर्या, निज रूपमां निरवाण,
समाधि थई रामने ते, एक आसन जाण। ४०।
अष्टादश दिन वही गया, नव जुए बोले राम,
समाधिमां भूली गया अवतार कारण काम। ४१।
त्यारे राय दशरथ थया दुःखिया शोचे कौशिक मुन्य,
सहु सभा चिंतातुर थई, बोल्या विश्वामित्र वचन। ४२।
हे वसिष्ठ रामने बोलावो तो, सरवेने थाये सुख,
राय दशरथ करे चिंता, पामे छे घणुं दुःख। ४३।
वसिष्ठ वळता राम पासे, आवी बोल्या वचन,
रघुवीर राजाधिराज हावे, उघाडो लोचन। ४४।

अध्यासन का अपवाद करके जो शेष रहता है, वह (हे श्रीराम!) तुम वही सत्य-स्वरूप और ब्रह्माण्ड के राजा हो। ३७। गुरु वसिष्ठ ने श्रीराम को वह ज्ञान-रूपी अपार सागर बता दिया। (गिरधर कवि कहते हैं कि) मन्दबुद्धि मैंने किंचित् विस्तार कर लिया। ३८। श्रीरघुवीर राम ने (इस प्रकार) गुरु से अध्यात्म ज्ञान सुना, तब उनकी वृत्ति अन्तर्लक्ष्य में (पैठ) गयी (और) वे स्वयं स्थिर हो गये। ३९। निश्चय ही वे अपने आत्म-रूप में समाधिस्थ होकर रहे, श्रीराम की समाधि (अवस्था) हो गयी। उन्हें एक-आसन समझो। ४०। (इस स्थिति में) अठारह दिन व्यतीत हो गये। (इस अवधि में) श्रीराम न देखते हैं—न बोलते हैं। समाधि (अवस्था) में अपने अवतरित होने का कारण और कार्य भूल गये। ४१। तब राजा दशरथ दुखी हो गये। विश्वामित्र भी चिन्तित हो गये। समस्त सभा चिन्तातुर हो गयी, तो विश्वामित्र ने (यह) वचन कहा। ४२। हे वसिष्ठ! श्रीराम को बुलावो तो सबको सुख होगा। राजा दशरथ चिन्ता कर रहे हैं, वे बहुत दुःख को प्राप्त हो रहे हैं। ४३। (तदनन्तर) वसिष्ठ मुनि मुड़ते हुए श्रीराम के पास आकर यह बात बोले, हे राजाधिराज रघुवीर राम! अब (अपने) नेत्र खोलो। ४४। चंचलता

तमो ज्ञान समाधिरूप छो विक्षेप आव्रणरहित,
भगवंत निज गुणवंत छो सच्चिदानंद सहित। ४५।
हवे यज्ञकरण करो जईने, असुरवधनुं काज,
देव बंधी पड्या छे ते छोडावो महाराज। ४६।
एम घणां वचन गुरुए कह्यां त्यारे, उठ्या थई सावधान,
लोचन उघाडी मधुर हासे हस्या श्रीभगवान। ४७।
प्रदक्षिणा करीने नम्या, बे मुनिने तेणी वार,
राजा दशरथ हरख पाम्या, थया जयजयकार। ४८।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

जयजयकार थयो तदा, पछे स्नान दान बहु आचर्या,
राजा मुनिवर बंधु साथे, श्रीरामे भोजन कर्यां। ४९।

* * *

(भ्रम अथवा मन की व्यग्रता) के आवरण से मुक्त (रहित) होकर तुम ज्ञानयुक्त समाधि-रूप में हो। तुम अपने गुणों से युक्त और सच्चिदानन्द-सहित भगवन्त हो। ४५। अब (ऋषियों के) यज्ञकार्य में जाकर असुरों के वध का कार्य सम्पन्न करो। देव बन्दी होकर (पड़े) रहे हैं। हे महाराज! उन्हें छुड़ाओ। ४६। इस प्रकार गुरु वसिष्ठ ने बहुत बातें कहीं तब सावधान होकर श्रीराम उठ गये। भगवान् श्रीराम ने आँखें खोल लीं, और वे मधुर भाव से हँस दिये। ४७। उस समय उन्होंने प्रदक्षिणा करके मुनि वसिष्ठ का नमन किया। (यह देखकर) राजा दशरथ आनन्द को प्राप्त हो गये। (तब श्रीराम का) जयजयकार हो गया। ४८।

तब जयजयकार हो गया। तदनन्तर श्रीराम ने स्नान करके बहुत दान दिया। (फिर) राजा दशरथ, श्रेष्ठ मुनियों, तथा बन्धुओं सहित श्रीराम ने भोजन किया। ४९।

* * *

अध्याय—२५ (गंगोत्पत्ति-वर्णन)

राग सामेरी

श्रीराम लक्ष्मण सत्वर थया, धर्यां वस्त्र आभूषण सार,
माथा धनुष लेई आज्ञा मागी, रायनी तेणी वार। १ ।
गुरुने चरणे नमी चाल्या, विश्वामित्रनी साथ,
रामवियोगने दुःखे करी, थया व्याकुळ अवधीनाथ। २ ।
वळावी आव्या गंगा सुधी, सुमंत ने वसिष्ठ राय,
पछे रामलक्ष्मण वीर, विश्वामित्र साथे जाय। ३ ।
रथ मांहे बेसी परवार्या, मुनि सहित बंन्यो वीर,
वायुवेगे रथ चलाव्यो, आव्या गंगातीर। ४ ।
श्री गंगाजीमां स्नान कर्युं मध्याह्न संध्याकर्म,
पछी नावथी ते ऊतर्या, रथमांहे बेठा पर्म। ५ ।
रघुवीर पूछे मुनिने, ते गंगानी उतपत्य,
क्यां थकी आवी कोण लाव्युं ? कहो मुजने सत्य। ६ ।
श्रीरामनां वायक सुणी, बोल्या विश्वामित्र वचन,
उत्पत्ति कहुं गंगा तणी, रघुवर धरज्यो मन। ७ ।

अध्याय—२५ (गंगा-उत्पत्ति-वर्णन)

श्रीराम और लक्ष्मण तैयार हो गये, उन्होंने सुन्दर वस्त्रों और आभूषणों को धारण किया। उस समय उन्होंने तरकस और धनुष लेकर राजा से आज्ञा माँगी। १। गुरु वसिष्ठ के चरणों का नमन करके वे विश्वामित्र के साथ चल दिये। (इधर) श्रीराम के वियोग के दुःख से राजा (दशरथ) व्याकुल हो गये। २। वसिष्ठ, राजा दशरथ और सुमन्त उन्हें गंगा नदी तक पहुँचाकर (बिदा करके लौट) आये। तदनन्तर वीर राम और लक्ष्मण विश्वामित्र के साथ (आगे) चल देते हैं। ३। मुनि (विश्वामित्र) के साथ दोनों वीर रथ में विराजमान हो चले। वायु गति से रथ चला दिया और वे गंगाजी के तट पर आ गये। ४। उन्होंने श्रीगंगाजी में स्नान किया; मध्याह्न काल की संध्या कर्म किया। फिर वे नाव से (गंगा पार) उतर गये और रथ में बैठ गये। ५। श्रीरघुवीर राम ने मुनि विश्वामित्र से उस गंगा नदी की उत्पत्ति पूछी। (उन्होंने पूछा)—वह कहाँ से आ गयी ? उसे कौन लाया ? हे मुनि ! मुझे सत्य (वृत्तान्त) कहो। ६। श्रीराम का (यह) वचन (प्रश्न) सुनकर विश्वामित्र यह (वचन) बोले—'हे रघुवीर ! मैं गंगा की उत्पत्ति

एक समे श्रीमहादेवजीए, कर्यो पूर्वे जाग,
त्यारे मळ्या सरवे देवता, विष्णु विधि महाभाग। ८।
कैलासमां सहु आविया, मोटा मळ्या मुनिजन,
दीक्षा लेई महादेव बेठा, थवा मांड्यो जग्न। ९।
त्या देव मुनिवर सिद्ध चारण, लोकपति सहु जेह,
ब्रह्मा विष्णु आदि सुर, यज्ञमां बेठा तेह। १०।
पूर्णाहुति पूजा समे, आवियां उमिया त्यांहे,
शणगार अद्भुत चीर चोळी, धर्या अंग ज मांहे। ११।
त्यारे वायु वायो ते समे, उमिया करे पूजन,
सती अंगथी अंबर खस्युं, ने थयुं ऊघाडुं तन। १२। १२।
ते अंग जोई उमिया तणुं, विधि थया विह्वळ मन,
कामातुर परमेष्ठि पोते, भान भूल्या तन। १३।
कुदृष्टिए जोयुं विधाता, दीठुं सरवे एह,
त्यारे देव मुनिवर विष्णु शिव, सहु कहेवा लाग्या तेह। १४।
अरे ब्रह्मा तमो अहींथी, ऊठी बेसो दूर,
तमे कुदष्टि करी सती उपर, थया पापी पूर। १५।

(की कथा) कहता हूँ। मन लगाओ (मनःपूर्वक सुनो)। ७। पूर्वकाल में एक समय श्रीशिवजी ने (एक) यज्ञ सम्पन्न किया। तब महाभाग श्रीविष्णु, ब्रह्मा तथा सब देवता उपस्थित हो गये। ८। सब महान ऋषि कैलाश मे आ गये—वहाँ मिल गये, उपस्थित हो गये। दीक्षा ग्रहण करके श्रीशिवजी बैठ गये। उन्होंने यज्ञ आरम्भ किया। ९। वहाँ देव, मुनिवर, सिद्ध, चारण, सब लोकपति, ब्रह्मा, विष्णु आदि देव यज्ञ (स्थान) में बैठ गये। १०। पूर्णाहुति और पूजा के समय वहाँ उमाजी आ गयीं। उन्होंने अद्भुत साज-शृंगार, वस्त्र, चोली अंग में धारण किया (था)। ११। तब उस समय हवा चली। (इधर) उमाजी पूजन करती हैं। तब (हवा से उन) सती के अंग पर से वस्त्र खिसक गया और उनका शरीर निरावरण हो गया। १२। उमाजी के उस अंग को देखकर ब्रह्माजी मन में व्याकुल हो गये। वे परमेष्ठी ब्रह्मा कामातुर हो गये (और) देह-भान भूल गये। १३। विधाता (ब्रह्मा) ने (उमाजी को) बुरी दृष्टि से देखा, यह सबको दिखायी दिया। तब देव मुनिवर, विष्णु, शिव सब उनसे यों कहने लगे। १४। 'हे ब्रह्माजी, तुम यहाँ से उठ (जा) कर दूर बैठो। तुमने सती उमाजी पर बुरी दृष्टि की (बुरी दृष्टि से देखा), तुम बहुत पापी हो गये। १५। (यह सुनकर) प्रजापति ब्रह्मा मन में बहुत

प्रजापति पस्ताय छे, घणी लाज आणी मन,
देव मुनिवर विष्णु साथे, बोल्या दीन वचन। १६।
हवे शिक्षा द्यो मुंने सर्व मळी, अनुग्रह करो स्वामिन,
सरवे मळी पछे विचार्यु बोल्या न्याय वचन। १७।
अरे विधि सरवे तीरथनुं, सहु तत्त्व केरुं सार,
ते मेळवी करो स्नान त्यारे, थशो शुद्ध अपार। १८।
पछे ब्रह्माए मेळव्युं सरवे, तीरथ केरुं सार,
सहु तत्त्वकेरुं तत्त्व लेई, निचोवी काढ्युं वार। १९।
पवित्र वस्तु जेटली, औषधि पावन जेह,
एम सार सरवे तणुं लेईने, भर्युं कमंडळ तेह। २०।
पछे स्नान कीधुं प्रजापति, पावन थया तेणी वार,
सहु दोष दूर थयो तदा, वरतियो जयजयकार। २१।
पछी स्नान करतां जळ वध्युं ते, कमंडळ मोझार,
विधि लेई गया ने सत्य लोके, राखियुं शुभ ठार। २२।
केटला दिवस गया पछी, हरि थया वामन रूप,
बळीरायने घेर आविया, भूदान आप्युं भूप। २३।

लज्जा लाते (अनुभव करते) हुए पछताते हैं। वे देवों, मुनिवरों, और श्रीविष्णु से (यों) दीन वचन बोले। १६। 'हे मुनिवरो! अब (मुझे) सब मिलकर दण्ड दो। हे स्वामी! (मुझ पर) अनुग्रह करो।' अनन्तर सब ने मिलकर विचार किया और न्याय (संगत) वचन कहा। १७। 'हे विधाता! सब तीर्थों और सब तत्त्वों का सार मिलाकर (इकट्ठा कर उसमें) स्नान करो, तो तुम बहुत ही शुद्ध हो जाओगे'। १८। फिर ब्रह्मा ने सब तीर्थो का सार इकट्ठा किया। सब तत्त्वों का तत्त्व लेकर, (उन्हें) निचोड़कर पानी निकाल लिया। १९। जितनी पवित्र वस्तुएँ हैं, जो-जो पवित्र औषधियाँ हैं, उन सबका इस प्रकार सार लेकर उन्होंने कमंडल भर लिया। २०। अनन्तर (उसमें) स्नान करके प्रजापति ब्रह्मा उस समय पावन, शुद्ध हो गये। (उनका) सारा दोष दूर हो गया; तब जय-जयकार हो गया। २१। स्नान करने के पश्चात् वह समस्त जल कमंडल में लेकर ब्रह्मा सत्यलोक में गये (और उसे) उन्होंने पवित्र स्थान पर रख दिया। २२। कितने ही (बहुत) दिन बीत गये तो बाद में श्रीविष्णु वामन रूप (में अवतरित) हो गये। वे वलिराज के घर आ गये; राजा ने उन्हें भूमि दान में दी। २३। तब श्रीविष्णु पृथ्वी को भरने (व्याप्त करने) के लिए विश्वरूप हो गये। (अर्थात्) श्रीमहाराज विष्णु

त्यारे त्रिविक्रम थया विश्वरूपे, पृथ्वी भरवा काज,
विराट रूपे विस्तर्या, बळी छळ्यो श्री महाराज । २४ ।
वामपद पाताळ, दक्षण, सत्य लोक ज ज्यांहे,
ते चरण जोई विष्णु तणो, विधि हरखिया मनमांहे । २५ ।
पेला कमंडळमां जळ हतुं जे, सार केरुं सार,
ते जळे विष्णुचरण विधिए पखाळ्यो तेणी वार । २६ ।
ते जळ घणुं विस्तार पाम्युं, कहेता न आवे पार,
प्रजापतिए करी पूजा, थयो जयजयकार । २७ ।
ते चरणजळ अति थयुं पावन, पड्युं गंगा नाम,
विष्णु पदना स्पर्शथी वाध्युं अधिक अभिराम । २८ ।
जेम मुमुक्षु मळे मुक्त गुरुने थाय पूरण काम,
एम विष्णुपद नखस्पर्शी जळ, थई पावन गंगा नाम । २९ ।
विष्णुचरणजा एम थयां, रह्यां सत्यलोक ज मांहे,
घणी स्तुति ब्रह्माए करी, फळ अमित महिमा ज्यांहे । ३० ।
एम प्रगट गंगाजी थयां, रह्यां ब्रह्मलोक मोझार,
हावे पृथ्वी उपर आव्यां ज्यम, तेनो करुं विस्तार । ३१ ।

विराट् रूप में विशाल हो गये और उन्होंने बलिराजा को छल लिया (धोखा दिया) । २४ । (उनका) बायाँ पाँव पाताल में और दायाँ पाँव (जहाँ) सत्यलोक (है उसी) में था । श्रीविष्णु के उन चरणों को देखकर ब्रह्मा मन में आनन्दित हो गये । २५ । सारों का सार जो पहला जल कमंडल में था, उस जल से उस समय विधाता ने श्रीविष्णु के चरणों का प्रक्षालन किया (धोया) । २६ । वह जल बहुत वृद्धि को प्राप्त हो गया—उसका पार कहने में नहीं आता । प्रजापति ने (श्रीविष्णु के चरणों का) पूजन किया । (तब) जय-जयकार हो गया । २७ । वह चरण-जल अति पावन हो गया । उसका नाम 'गंगा' पड़ गया । श्रीविष्णु के पद-स्पर्श से वह जल अधिक सुन्दर हो गया । २८ । जिस प्रकार मुमुक्षु (मुक्ति का अभिलाषी) मुक्त गुरु से मिलता है और (उससे) पूर्णकाम हो जाता है, उसी प्रकार श्रीविष्णु के चरण-नख के स्पर्श से, गंगा-जल पावन होकर गंगा नामक नदी (भी) पवित्र हो गयी । २९ । इस प्रकार गंगाजी 'विष्णु चरणजा' (श्रीविष्णु के चरणों से उत्पन्न) हो गयीं । वे सत्यलोक ही में रहीं । (फिर) ब्रह्मा ने बहुत स्तुति की, जिसका फल एवं माहात्म्य अपरिमित है । ३० । इस प्रकार गंगाजी प्रकट (उत्पन्न) हो गयीं; और

वलण (तर्ज़ बदलकर)

विस्तार करुं ज्यम आव्यां गंगा, पृथ्वीतळ मोझार रे,
विश्वामित्र कहे रामने, सुणो दशरथराजकुमार रे। ३२।

ब्रह्म (सत्य) लोक में रहीं। वे जिस प्रकार पृथ्वी पर आ गयीं, उसका विस्तार (पूर्वक वर्णन) मैं अब करता हूँ। ३१।

विश्वामित्र श्रीराम से कहते हैं—' हे दशरथकुमार श्रीराम ! सुनो, जिस प्रकार गंगाजी पृथ्वी-तल में (पर) आ गयीं, उसका विस्तार (पूर्वक वर्णन) मैं करता हूँ '। ३२।

* * *

अध्याय—२६ (भागीरथ के साथ गंगागमन)

राग मारु

बोल्या कौशिक सुणो रघुराय, कहुं पावन पुण्यकथाय,
पूर्वे तमारा कुळमांहे, थया सगर भूपति त्यांहे। १।
तेने राणीओ बे शुभ-मन, ऋषिवचन थकी थया तन,
एक राणीने साठ हजार, एकने थयो एक कुमार। २।
नाम असमंजस अभिराम, साठ सहस्रनां कहे कोण नाम ?
राये सगर सुधरमी अपार, अश्वमेध आरंभ्या सार। ३।
नव्वाणुं थया पूरण ज्यारे, शतमो अश्व मूक्यो त्यारे,
इंद्रने थई चिंता मन, मारुं लेशे इंद्रासन। ४।

अध्याय—२६ (भगीरथ के साथ गंगागमन)

विश्वामित्र ऋषि ने कहा—' हे रघुराज ! सुनो। मैं (गंगा के बारे में एक) पवित्र और उत्तम फलदायी कथा कहता हूँ। पूर्वकाल में तुम्हारे कुल में सगर नामक (एक) राजा हो गये। १। उनके शुभमना (पवित्र मनवाली) दो रानियाँ थीं, जिनके (किसी) ऋषि के (आशिष) वचन के फलस्वरूप पुत्र (उत्पन्न) हो गये। एक रानी के साठ हज़ार पुत्र हो गये, तो एक (दूसरी) के एक (मात्र)। २। उस पुत्र का सुन्दर नाम था—असमंजस। अन्य साठ हज़ार पुत्रों के नाम कौन बताए ? अत्यधिक सद्धर्मी सगर राजा ने सुन्दर अश्वमेध यज्ञों का आरम्भ किया। ३। जब

आव्यो इंद्र अदृश्य ते ठार, तेणे हरण कर्यो तोखार,
पूरव सागर कपिलाश्रम, तप आचरे पूरण ब्रह्म । ५ ।
तप भंग करे जन जेह, भस्म थाय बळीने तेह,
ते ठेकाणे बांधी तोखार, गयो सुरपति स्वर्ग मोझार । ६ ।
पुत्र सगरना साठ हजार, खोळे अश्वने ठारोठार,
स्वर्ग मृत्यु ने पाताळ, गिरि सरिता सर वनजाळ । ७ ।
महाजोद्धा वीर अभंग, वज्र सरीखां जेनां अंग,
खणी पृथ्वी अपार अघात, तेना सिंधु थया छे सात । ८ ।
सहु खोळीने थाक्या एह, नव जडचो यज्ञवाजी तेह,
एवे मळिया नारद मुन्य, तेनी साथे बोल्या वचन । ९ ।
पूर्व सिंधुनी तीरे सार, कपिलाश्रम बांध्यो तोखार,
एवुं कही गया मुनि स्वर्ग मांहे, सगरात्मज आव्या त्यांहे । १० ।
दीठो अश्वने तेने स्थान, मुनि बेठा धरे छे ध्यान,
दीठो अश्व बांधेलो ज्यारे, बोल्या क्रोध करीने त्यारे । ११ ।

निन्यानबे यज्ञ पूर्ण हो गये, तो उसने सौवें यज्ञ का घोड़ा छोड़ दिया। (तब) इन्द्र को मन में यह चिन्ता (अनुभव) हुई कि यह मेरे इन्द्रासन (इन्द्र-पद) को लेगा। ४। इन्द्र उस स्थान पर अदृश्य रूप में आया और उसने (उस) घोड़े का अपहरण कर लिया। पूर्व समुद्र (के तट) पर कपिल मुनि का आश्रम था; (जहाँ) वे पूर्णब्रह्म के साक्षात्कार के लिए तपस्या करते हैं, (थे)। ५। जो व्यक्ति (उनके) तप का भंग करता है (था), वह जलकर भस्म हो जाता है (था), उस स्थान पर घोड़े को बाँधकर इन्द्र स्वर्गलोक में चला गया। ६। (तदनन्तर) सगर राजा के (वे) साठ हजार पुत्र स्वर्ग, मृत्यु और पाताल में, पर्वतों, नदियों, सरोवरों, वन-जालों में स्थान-स्थान पर अश्व की खोज करते हैं (थे)। ७। वे महायोद्धा तथा अभंग अर्थात् अजेय वीर हैं (थे), जिनके शरीर बज्र के समान थे। उन्होंने अति बहुत आघात करके पृथ्वी को खोद डाला। उससे सात समुद्र हो गये है (बने हैं)। ८। ठीक से खोज करने पर वे थक गये, परन्तु उन्हें यज्ञ का घोड़ा नहीं मिला। उस समय उन्हें नारद मुनि मिले। उन्होंने (सगर के पुत्रों ने) उनसे (यह) बात कही। ९। तो 'पूर्व समुद्र के तट पर कपिल मुनि के सुन्दर आश्रम में (इन्द्र ने) घोड़े को बाँधा (है)' ऐसा कहकर नारद मुनि स्वर्गलोक में गये। (तदनन्तर) सगर के पुत्र वहाँ (कपिलाश्रम के पास) आ गये। १०। उन्होंने उस स्थान पर अश्व को देखा।

अल्या दांभिक चोर अज्ञान, बांधी अश्व धरे छे ध्यान,
कह्यां अति घणां कठण वचन, ध्यान भंग थयुं मुनिजन । १२ ।
नेत्र उघाडियां तत्काळ, जाणे प्रले अग्निनी झाळ,
वळ्या ज्वाळे करीने कुमार, थया भस्म ते साठ हजार । १३ ।
जुए सगर भूपति वाट, न आव्या सुत थाय उचाट,
असमंजस केरो तन, नाम अंशुमान रतन । १४ ।
पितामहनी आज्ञा मागी, चाल्यो खोळवाने अनुरागी,
काकानी करतो परिशोध, सिंधु-तीरे आव्यो अविरोध । १५ ।
वेठा दीठा कपिल मुनिजन, करी स्तुति निर्मळ मन,
थई प्रसन्न बोल्या भगवान, माग्य माग्य आपुं वरदान । १६ ।
बोल्यो अंशुमान सलग्न, अश्व आपो पूर्ण थाय यज्ञ,
मुज काका पाम्या अवगत्य, ते तणी बतावो सद्‌गत्य । १७ ।
बोल्या कपिलमुनि त्यां वचन, तारो अश्व लेइ जा तन,
मुज ध्यान भंग कर्युं जेह, बळी भस्म थया छे तेह । १८ ।

(वहाँ) कपिल मुनि ध्यान धारण करके बैठे हैं (थे)। जब उन्होंने घोड़े को बाँधा हुआ देखा, तो वे क्रोध करके बोले। ११। 'अरे दाम्भिक, चोर, अज्ञान (नासमझ)! घोड़े को बाँधकर (अब) ध्यान धारण करता है!' उन्होंने अत्यधिक कठोर वचन (और भी) कहे, तो (कपिल) मुनि का ध्यान टूट (भंग हो) गया। १२। उन्होंने (कपिल ने) तत्काल आँखें खोल दीं, मानो वे प्रलय की अग्नि की ज्वालाएँ ही थीं। उस ज्वाला में (वे) कुमार जल गये। (इस प्रकार) वे साठ सहस्र (सगर-)पुत्र भस्म हो गये। १३। सगर राजा ने (पुत्रों की) राह देखी, वे पुत्र (जब) नहीं (लौट) आये तो वे चिन्तित हो गये। असमंजस के (एक) पुत्र-रत्न था, जिसका नाम था अंशुमान। १४। (अपने) दादा से आज्ञा माँग कर, (अपने) चाचाओं के प्रति प्रेम करनेवाला वह (अंशुमान) तलाश करने चल दिया। चाचाओं को खोज़ता हुआ वह बिना किसी विरोध के समुद्र-तट पर आ गया। १५। उसे कपिल मुनि बैठे हुए दिखायी दिये। उसने निर्मल (शुद्ध) मन से (उनकी) स्तुति की। भगवान् कपिल (इससे) प्रसन्न होकर बोले— 'माँगो, माँगो! मैं वरदान देता हूँ।' १६। तो उत्कट इच्छा-सहित अंशुमान बोला—'अश्व दीजिए जिससे यज्ञ पूर्ण हो जाए। मेरे चाचा अवगति को प्राप्त (हो गये) हैं, उनकी सद्‌गति (का उपाय) बताइए।' १७। तब कपिल मुनि (यह) बात बोले—'हे पुत्र, अपना घोड़ा ले जाओ। जिन्होंने मेरे ध्यान को भंग कर दिया, वे जलकर भस्म हो गये हैं। १८। (जब)

सत्यलोकथी आवे गंग करे स्पर्श भस्म जळसंग,
त्यारे पामे ए उद्धार, माटे गंगा लावो निरधार । १९ ।
सुणी वाणी कपिलनी शुद्ध, अंशुमाने विचारी बुद्ध,
सगरात्मज बळिया तेह, तेनी भस्म पडी'ती जेह । २० ।
एक कूपमां नाखी त्यांहे, हय लेई आव्यो पुरमांहे,
कही भूपतिने सहु वात, सुणी राये कर्यो आंसुपात । २१ ।
अशुमानने आपी राज, नृप वनमां गया तप काज,
असमंजस रायनो तन, ते तो पहेलो गयो छे वन । २२ ।
अंशुमान करे छे राज, कुळधर्म नीतिनुं काज,
तेने एक थयो संतान, नाम दिलीप महाबळवान । २३ ।
आप्युं दिलीपने राज्यासन, अंशुमान गयो छे वन,
बेठो ध्यान धरी महाराज, गंगानुं तप करवा काज । २४ ।
घणा दिवस कर्युं तपाचर्ण, नाव्यां गंगा ते पाम्यो मर्ण,
वृद्धि पाम्यो दिलीप राजन, थयो तेने भगीरथ तन । २५ ।

सत्यलोक से गंगा आएगी, और उसके जल से (उनका) भस्म स्पर्श करेगा, तब वे उद्धार को प्राप्त हो जाएँगे। इसलिए निश्चयपूर्वक गंगा को ले आओ'। १९। कपिल मुनि की (यह) पवित्र वाणी अंशुमान ने सुनी और (अपनी) बुद्धि से उसपर विचार किया। सगर के पुत्र बलवान (थे) और (जहाँ) उनका भस्म पड़ा हुआ था, वहाँ एक कुएँ में उसे अंशुमान ने डाल दिया; (तदनन्तर) घोड़ा लेकर वह (अपने) नगर में आ गया। उसने राजा से समस्त बात कह सुनायी। उसे सुनकर राजा ने अश्रुपात कर दिया (आँसू बहाये)। २०-२१। अंशुमान को राज्य देकर, राजा (सगर) तपस्या करने के लिए वन में गये। राजा का पुत्र असमंजस था, वह तो पहले ही वन में गया है (था)। २२। (तब) अंशुमान राज्य करता है (था)। वह कुलधर्म तथा नीति के अनुसार कार्य करता है (था)। उसके एक पुत्र हुआ। उस महाबलवान पुत्र का नाम दिलीप था। २३। अंशुमान ने दिलीप को राज-गद्दी दी और वह (भी) वन में (तपस्या के लिए) गया है (था)। वह महाराजा गंगा की प्राप्ति के हेतु तप करने के लिए ध्यान धारण करके बैठ गया। २४। उसने बहुत दिन तपश्चरण किया; परन्तु गंगाजी नहीं आयीं, तो वह मृत्यु को प्राप्त हो गया। इधर राजा दिलीप उन्नति को प्राप्त हो गया। उसके भगीरथ नामक (एक) पुत्र हो गया। २५। (यथासमय) दिलीप ने भगीरथ को राज्य सौंप दिया और वह गंगाजी की प्राप्ति के हेतु तपःकर्म

भगीरथने सोंप्युं राज, गयो दिलीप गंगा तपकाज,
नाव्यां गंगा थया बहु दिन, पछे मृत्यु पाम्यो राजन । २६ ।
ते भगीरथे जाणी वात, नथी आवतां गंगा मात,
माटे निश्चे हुं लावुं आ ठाम, तो भगीरथ मारुं नाम । २७ ।
ऊठीने चाल्यो तेणी वार, तप करवा वन मोझार,
जे मेरुथकी दक्षिण पास, मानसरोवर छे सुख-राश । २८ ।
मयनाकर पर्वत ज्यांहे, भूमि कनक तणी छे त्यांहे,
ते ठेकाणे भगीरथ भूप, तप आचर्युं उग्र अनूप । २९ ।
ते तपे स्वर्गे भूमि डोलावी, गंगाए कह्युं ध्यानमां आवी,
हुं आवुं राय निश्चे जाण, मारी धारा धरशे कोण ? । ३० ।
काढ्य खोळी तेने तत्काळ, नीकर भेदी भू जईश पाताळ,
गंगानां सुणी एवां वचन, राये आराध्या पंचानन । ३१ ।
शिव कहे सुण दिलीपकुमार, हुं धरीश गंगानी धार,
त्यारे ऊतर्यां सुरसरी त्यांहे, पडी धारा ते शिवजटामांहे । ३२ ।
अभिमान कर्युं ते काळ, शिव सहित घालुं पाताळ,
शिवे विचार्युं ते मनमांहे, गंगा गूंचवायां जटामांहे । ३३ ।

करने के लिए गया। बहुत दिन तक गंगाजी नहीं आयीं; तदनन्तर राजा दिलीप मृत्यु को प्राप्त हो गया । २६ । भगीरथ ने यह बात जान ली कि गंगामाता नहीं आ रही हैं। (उसने सोचा) इसलिए मैं निश्चय ही उन्हें इस स्थान पर लाऊँगा, तो ही मेरा 'भगीरथ' नाम (चरितार्थ) है । २७ । उस समय वह तप करने के लिए वन में चला गया। जिस मेरु पर्वत के दक्षिण में (साक्षात्) सुख की राशि (के समान) मानसरोवर है और जहाँ मयनाकर पर्वत है, वहाँ स्वर्ण-भूमि है। उस स्थान पर भगीरथ राजा ने बेजोड़ उग्र तप का आचरण किया । २८-२९ । उस तप ने स्वर्ग में भूमि को हिला दिया (कँपा दिया), तो राजा भगीरथ के ध्यान में आकर गंगाजी ने कहा—'हे राजा ! मैं आती हूँ—यह निश्चय समझो। (परन्तु) मेरी धारा को धारण कौन करेगा ? ३० । उसे झट से खोज निकालो, नहीं तो भूमि को भेदकर मैं पाताल में चली जाऊँगी'। गंगाजी के ऐसे वचन (शब्द) सुनकर राजा ने शिवजी की आराधना की । ३१ । तो शिवजी ने कहा—'सुनो हे दिलीप के पुत्र भगीरथ ! मैं गंगाजी की धारा को धारण करूँगा।' तब सुर-सरिता गंगाजी वहाँ उतर गयीं, तो उनकी धारा शिवजी की जटा में पड़ गयी । ३२ । उस समय गंगाजी ने अभिमान किया (अभिमान-पूर्वक विचार किया) कि शिवजी के

नीकळायुं न सुरसरिताय, एवी महादेवनी प्रभुताय,
स्तुति करी नृपतिए अपार, त्यारे चाली गंगानी धार। ३४।
मेरु शीश पडी ते धार, महाप्रचंड ने वेग अपार,
त्यांथी धारा थई त्रण खंड, त्रण लोकमां चाली प्रचंड। ३५।
नाम सुरसरी स्वर्गे त्यांहे, भोगावती ते पाताळमांहे,
आव्यां भूतळ भागीरथी नाम, जोई भूप थयो अभिराम। ३६।
गंगा कहे करुं पूरण काम, चाल्य देखाड पित्रीनो ठाम,
रथ बेसी आगळ राय, पूंठे चाले प्रवाह गंगाय। ३७।
फोडे गिरवर चाले धार, थाय शब्द प्रचंड अपार,
एक मुनिवर मारगमांह्य, ध्यान धरवा बेठा हता त्यांह्य। ३८।
राय कहे मुनि शुं बेठा आंहे ? आवे गंगा तणाशो तेमांहे,
अंजलि भरीने मुनिजन, गंगाजळ कर्युं प्राशन। ३९।
रायने थई चिंता घणी, करी स्तुति मुनिवर तणी,
जानुमांथी काढी ते ठाम, माटे जाह्नवी पडियुं नाम। ४०।

साथ (भगीरथ को) मैं पाताल में डालूँगी। शिवजी ने इसका विचार मन में किया (और) गंगाजी को (अपनी) जटा में उलझा दिया। ३३। (जटा से) सुरसरिता गंगाजी नहीं निकल पायीं। शिवजी की ऐसी प्रभुता है। (तव) राजा भगीरथ ने (शिवजी का) वहुत स्तवन किया, तो गंगाजी की धारा चल पड़ी। ३४। मेरु पर्वत के मस्तक (शिखर) पर वह धारा पड़ी। उसका वेग अपार था। वहाँ से वह तीन खण्डों में विभक्त हो गयी और तीनों लोकों में वह प्रचण्ड धारा चल दी। ३५। वहाँ स्वर्गलोक में उनका (गंगाजी का) नाम 'सुरसरिता' है, पाताललोक में वह (उनका नाम) 'भोगावती' है और धरा (पृथ्वी तल) पर वे 'भागीरथी' नाम से आयीं। उसको देखकर राजा प्रसन्न हो गया। ३६। गंगाजी कहती हैं—'मैं तुम्हें पूर्णकाम कर देती हूँ। चलो पितरों का स्थान दिखाओ।' (इसपर) रथ में राजा आगे बैठ चला और (उसके) पीछे गंगाजी का प्रवाह चलता है (था)। ३७। पर्वतों को फोड़ती हुई वह धारा चलती है (थी)। उससे प्रचंड आवाज़ होती है (थी)। तब मार्ग में एक बड़े मुनि ध्यान धारण करके बैठे थे। ३८। (उन्हें देखकर) राजा कहता है—'हे मुनि ! आप यहाँ क्यों बैठे (हैं) ? गंगाजी आएँगी, तो उनमें वह जाएँगे।' यह सुनकर मुनि ने अंजली भरकर गंगाजी का जल पी डाला। ३९। (इससे) राजा को वहुत चिंता हुई। उसने मुनिवर का स्तवन किया, तो उसने उस स्थान पर अपने घुटने में से

गयां गंगा ते सिंधु-मोझार, भस्म कूप भरायो ते वार,
गंगा स्पर्श थयो उद्धार, पाम्या सद्‌गति सगरकुमार । ४१ ।
थयो विस्वमां जयजयकार, पाम्या मुनिजन हर्ष अपार,
तट चंदर शोभा रम्य, घणा मुनिए कर्या आश्रम । ४२ ।
थयां अनेक क्षेत्र ने धाम, कर्यो पावन भूतळ ठाम,
विश्वामित्र कहे सुणो राम, एम आव्यां गंगा अभिराम । ४३ ।
जे कोई सांभळे एह कथाय, नरनारी ते पावन थाय,
तेनुं जन्ममरण दुःख वामे, गंगास्नान तणुं फळ पामे । ४४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

फळ पामे गंगास्नान केरुं, पापी पावन थाय रे,
एवी कथा करी कौशिक ऋषिए, ते सुणी हरख्या श्रीरघुराय रे ।४५।

* * *

(बाहर) उस (धारा) को बाहर निकाल दिया। इसलिए (गंगाजी का) 'जाह्नवी' नाम पड़ गया । ४० । (तदनन्तर) गंगाजी समुद्र में गयीं और उस समय भस्म-कूप को (पानी से) भर डाला। गंगाजी के स्पर्श से सगर-पुत्रों का उद्‌धार हो गया और वे सद्‌गति को प्राप्त हो गये । ४१ । विश्व में जय-जयकार हो गया। मुनि अत्यधिक हर्ष को प्राप्त हो गये। गंगा के चंद्राकार तट की रमणीय शोभा थी। अनेक मुनियों ने (वहाँ) आश्रम (तैयार) किये । ४२ । गंगाजी के तट पर अनेक (तीर्थ) क्षेत्र और (पवित्र) स्थान (तैयार) हो गये। उन्होंने पृथ्वी-तल का स्थान पवित्र कर दिया। विश्वामित्र कहते हैं—'हे राम! सुनो—इस प्रकार मनोहारिणी गंगाजी (पृथ्वी-तल पर) आ गयीं।' ४३ । (गिरधर कवि कहते हैं कि) जो कोई यह कथा सुनते हैं, वे नर-नारी पवित्र हो जाते हैं। उनका जन्म-मरण का दुःख घट जाता है और वे गंगा-स्नान के फल को प्राप्त हो जाते हैं । ४४ ।

वे गंगा-स्नान के फल को प्राप्त हो जाते हैं। पापी जन पवित्र हो जाते हैं। विश्वामित्र ने यह कथा कही, तो उसे सुनकर श्रीरघुराज आनन्दित हो गये । ४५ ।

* * *

अध्याय–२७ (ताड़का-वध)

रागमेवाडो

विश्वामित्रनां वचन सुणीने, हरख्या लक्ष्मण राम जी,
गंगानी उत्पत्ति सुणी जे, भागीरथी पडियुं नाम जी। १।
पछी त्यांहा थकी आगळ चाल्या त्रैणे, सिद्धाश्रमने पंथ जी,
रामने विश्वामित्र भणावे, अनेक प्रकारना ग्रंथ जी। २।
अस्त्रमंत्र नानाविध केरा, युद्धकळा बहु भात जी,
विश्वामित्रे प्रवीण कर्या ते, शीख्या बन्ने भ्रात जी। ३।
त्यारे आगळ जातां बे मारग आव्या, मुनिने पूछे राम जी,
बे मारगमां जे होय ढूकडो ते, कहो मुजने अभिराम जी। ४।
त्यारे कौशिक कहे वाम पंथ वेगळो, दक्षिण पंथ नजीक जी,
पण ए मारगमां ताडिका रहे छे, तेनी छे घणी बीक जी। ५।
त्यारे राम कहे ए मारग चालो, नहि थाय कांई विघन जी,
घणघणाट रथनो रव वाजे, आप्युं ताडिकारण्य जी। ६।

अध्याय—२७ (ताड़का वध)

श्रीराम और लक्ष्मण ने गंगा की उत्पत्ति (की वह कथा) सुनी, जिसके अनुसार उसका नाम 'भागीरथी' पड़ गया। विश्वामित्र के (इस सम्बन्ध में वे) वचन सुनकर श्रीराम और लक्ष्मण आनन्दित हो गये। १। अनन्तर (वे) तीनों वहाँ से आगे सिद्धाश्रम के पथ पर चल दिये। (मार्ग में चलते-चलते) विश्वामित्र ने श्रीराम को अनेक प्रकार के ग्रन्थ पढ़ाये (अर्थात् शिक्षा प्रदान की)। २। विश्वामित्र ने उन्हें नाना प्रकार के अस्त्रों के मंत्रों तथा बहुत प्रकार की युद्ध-कलाओं में प्रवीण कराया। दोनों भाइयों ने उन्हें सीख लिया। ३। तब आगे जाने पर दो मार्ग आये (दिखायी दिये), तो राम ने मुनि विश्वामित्र से पूछा—'हे अभिराम मुनि, (इन) दो मार्गों में से जो निकट का हो, वह मुझे बताइए'। ४। तब विश्वामित्र कहते हैं (बोले)—'बायाँ मार्ग दूर का है, जबकि दाहिनी ओर का (मार्ग) निकट का है। परन्तु उस मार्ग में ताड़का रहती है। उसका बहुत भय है।' ५। तब राम कहते है (बोले)—'उस मार्ग से चलिए। कोई विघ्न नहीं होगा।' (तदनन्तर वे आगे चल दिये। उनके) रथ की घनघनाहट (की ध्वनि) बजती है (थी)। (कुछ समय के बाद) ताड़का का वन आ गया। ६। उस समय रथ की आवाज सुनकर ताड़का (वहाँ) आ गयी। उसमें एक हजार हाथियों का बल है

एवे रथनो पडघो सांभळी, आवी ताडिका तेणी वार जी,
एक सहस्र वारणनुं बळ छे, प्रचंड रूप अपार जी । ७ ।
सो एक मुनि मुखमां घाल्या छे, पापिणी हिंसावान जी,
एवी कुंभकर्णनी भगिनी आवी, तनु पर्वत समान जी । ८ ।
बार गाउ लगी मुख पहाळुं छे, नेत्र जाणे अंगार जी,
पंच पंच कोशनो एकेको स्तन छे, शिर गिरिशृंग आकार जी । ९ ।
अनेक राक्षसीओ लेई संगे, आवी मारग मांहे जी,
श्रीरघुवीरने देखाडी छे, विश्वामित्रे त्यांहे जी । १० ।
त्यारे श्रीरामे कोदंड चडाव्युं, शर कीधुं संधाण जी,
मुनि आज्ञा मागी रघुवीरे, मूक्युं तीक्ष्ण वाण जी । ११ ।
जेम अग्नि केरी ज्वाळा चाले चमके तडित आकाश जी,
एम रामबाण घूघवतुं चाल्युं, करतुं दिशाओ प्रकाश जी । १२ ।
अकस्मात् आवीने वाग्युं, ताडिकाना रूदे मांहे जी,
वाण संगाथे प्राण गया, मृत थई पडी पृथ्वी मांहे जी । १३ ।
पडतामां तेणे चीस ज नाखी, खळभळियुं ब्रह्मांड जी,
बीजी अनेक राक्षसी साथ हती ते, रामे करी शतखंड जी । १४ ।

(था) और उसका रूप (आकार) अत्यधिक प्रचण्ड है (था) । ७ । उसने सौ एक (लगभग सौ) मुनियों को मुँह में डाल लिया है । वह पापिनी हिंस्र है । उसका शरीर पर्वत के समान वड़ा है । कुम्भकर्ण की वह ऐसी भगिनी (सामने) आ गयी । ८ । उसका मुख बारह 'गाऊ' अर्थात् कोस तक चौड़ा है । आँखें मानो अंगार हैं । उसका एक-एक स्तन पाँच-पाँच कोस का (—जितना लम्बा) है । (उसका) मस्तक आकार में पर्वत के शिखर (के समान) है । ९ । अनेक राक्षसियों को साथ में लेकर वह ताड़का मार्ग में (सामने) आ गयी । वहाँ विश्वामित्र ने उसे राम को दिखा दिया । १० । तव श्रीराम ने धनुष चढ़ा लिया (और) बाण संधान किया । उन्होंने मुनि से आज्ञा माँगी (और एक) तीक्ष्ण बाण चला दिया । ११ । जैसे अग्नि की ज्वाला चलती (उभरती) है, जैसे आकाश में बिजली चमकती है, वैसे श्रीराम का (चलाया हुआ) वाण घहराता हुआ, दिशाओं को प्रकाशित करता हुआ चला । १२ । सहसा आकर वह ताड़का के हृदय में लग गया (और) वाण के साथ उसके प्राण (निकल) गये । (इससे) मरकर वह भूमि पर पड़ (लुढ़क) गयी । १३ । भूमि पर लुढ़क जाते समय उसने चीत्कार ही किया, जिससे ब्रह्माण्ड क्षुब्ध हो उठा । (उसके) साथ में जो दूसरी अनेक राक्षसियाँ थीं, (उन्हें

आकाशमांहे विमानमां वेसी, जुए देव तेणी वार जी,
दुंदुभिनाद करी पुष्पवृष्टि, कहेता जय जयकार जी। १५।
ताडिकानो वध रामे कर्यो सुणी, हरख्या सरवे लोक जी,
मुनिवर मन आनंदज पाम्या, टाळियो भय ने शोक जी। १६।
त्यां थकी सिद्धाश्रममां आव्या, राजकुंवर ऋषि साथ जी,
त्यारे जाण थयुं छे सरव ऋषिने, जे आव्या कोशलनाथ जी। १७।
ज्यम सरिता केरु पूर चडे, जाय सागर भरवा काज जी,
एम रामने मळवा दशे दिशाथी आव्या सकळ मुनिराज जी। १८।
पछे यज्ञारंभ कर्यो गाधिसुत, मंडप वेदी विशाळ जी,
कुंडमां आहुति थई चालती, प्रगटी अग्निज्वाळ जी। १९।
विश्वामित्र दीक्षा लेई बेठा, अनेक मुनिवर पास जी,
राम ने कहेता तमो रक्षा करजो, अमने असुरनो त्रास जी। २०।
मारीच ने सुबाहु आदे, आवीने करशे भग्न जी,
त्यारे राम कहे मुनिवर नव बीहशो, करो सुखेथी यज्ञ जी। २१।

भी मारकर) राम ने शत-शत खण्ड कर डाला। १४। उस समय आकाश में देव विमानों में बैठकर देखते है (देख रहे थे)। दुन्दुभी-नाद के साथ (और) 'जय'—'जय' कहते हुए उन्होंने (श्रीराम पर) फूलों की वर्षा कर दी। १५। श्रीराम ने ताड़का का वध कर डाला—यह सुनकर सव लोग आनन्दित हो गये। मुनि मन में आनन्द को ही प्राप्त हो गये (क्योंकि श्रीराम ने सबके) भय और शोक को टाल (हटा) दिया। १६। वहाँ से (वे दोनों) राजपुत्र ऋषि विश्वामित्र के साथ सिद्धाश्रम में आ गये। तब सव ऋषियों को यह विदित हुआ कि कोशलनाथ श्रीराम आ गये (हैं)। १७। जैसे नदी में बाढ़ आती है और वह सागर को भर देने के लिए जाती है, वैसे समस्त ऋषि श्रीराम से मिलने के लिए दसों दिशाओं से आ गये। १८। अनन्तर गाधिपुत्र विश्वामित्र ने यज्ञ का आरम्भ किया। (उस यज्ञ के लिए) मण्डप और वेदी विशाल (वनाये गये) थे। कुण्ड में आहुति चलती (समर्पित कर दी जाती) थी; तव अग्नि की ज्वाला प्रगट हो गयी। १९। विश्वामित्र दीक्षा ग्रहण कर वैठ गये। उनके पास अनेक श्रेष्ठ मुनि (वैठ हुए) थे। वे श्रीराम से कहते, 'तुम (यज्ञ की) रक्षा करो; हमें असुरों का (के सम्वन्ध में यह) भय है, कि मारीच और सुबाहु इत्यादि आकर (यज्ञ को) भंग करेंगे।' तव श्रीराम ने कहा, 'हे मुनिवरो, आप भयभीत न हो जाएँ; सुखपूर्वक (निश्चिन्त होकर) आप यज्ञ कीजिए। २०-२१

पछे राम लक्ष्मण बे सज थई ऊभा, ग्रही धनुष्य ने बाण जी,
मुनिवर मंत्र भणे गाजीने, वेद सूत्रनी वाण जी। २२।
स्वाहाकार ने स्वधाकारना, शब्द घणां त्यांहां थाय जी,
वषट्कार ओंकार तणी धुनि, मुनिवर भणता जाय जी। २३।
यज्ञ चालतो थयो त्यारे, एम करतां गई मध्य रात्र जी,
त्यारे मारीच ने सुबाहु बळिया, आव्या अकस्मात जी। २४।
ताडिकानो वध सांभळी तत्क्षण, कोधे भराया वीर जी,
वीश कोटि रजनीचर साथे, आव्या स्थूळ शरीर जी। २५।
सिद्धाश्रमनी पासे आवी, करी गर्जना घोर जी,
ब्राह्मण सर्वे भड़की ऊठ्या, करता शोर बकोर जी। २६।
सुणो कौशिक हावां क्यम रहेवाशे ? आव्यो आपणो अंत जी,
ए बालक ते शुं रक्षा करशे ? दैत्य महा बळवंत जी। २७।
त्यारे विश्वामित्र विनय वचने करी, आपे सहुने धीर जी,
बाळक ए नव जाणशो निर्बळ, रामलक्ष्मण बे वीर जी। २८।
पुराण पुरुषोत्तम लक्ष्मीपति, आदि नारायण जेह जी,
दुष्ट संहारवा अवतर्या पोते, धर्म स्थापवा एह जी। २९।

फिर धनुष और बाण लेकर श्रीराम और लक्ष्मण दोनों सज्ज होकर खड़े रहे। (वे) श्रेष्ठ मुनि गरज-गरजकर (उच्च स्वर में वे) मंत्र पढ़ते हैं जो वेदों के सूत्रों के वचन हैं।२२। वहाँ स्वाहाकार और स्वधाकार की ध्वनियाँ ज़ोर से हो रही हैं (थीं)। मुनिवर वषट्कार और ॐकार की ध्वनि करते रहते हैं (थे)।२३। तब यज्ञ चलता रहा। ऐसा करते-करते मध्य रात (बीत) गयी। तब सहसा बलवान मारीच और सुबाहु (वहाँ) आ गये।२४। ताड़का का वध (-सम्बन्धी समाचार) सुनकर वे तत्क्षण क्रोध से भर गये (क्रुद्ध हो गये)। बीस करोड़ रासक्षों सहित वे बड़े (बड़े) शरीरधारी राक्षस (वहाँ) आ गये।२५। सिद्धाश्रम के पास आकर उन्होंने घोर गर्जन किया। (उसे सुनकर) सब ब्राह्मण भयभीत हो गये। वे शोरोगुल करते हैं (थे)।२६। (उन्होंने कहा—) 'हे विश्वामित्र, सुनो। अब हम (इस स्थिति में) कैसे रह सकेंगे ? हमारा अन्त (-काल) आ गया। ये बालक (हैं, वे) क्या रक्षा करेंगे ? दैत्य (तो) महा बलवान हैं'।२७। तब विश्वामित्र विनम्रतापूर्वक बातें कहते हुए सबको धीरज बँधाते हैं। (उन्होंने कहा—) 'इन बालकों को दुर्बल न समझो। (ये) राम और लक्ष्मण दोनों वीर हैं।२८। जो पुराण पुरुष, लक्ष्मीपति (भगवान विष्णु) हैं, आदि नारायण हैं, वे स्वयं दुष्टों का

एक वाणे जेणे ताडिका मारी, एवा दशरथ-तन जी,
माटे रक्षा करशे रूडी रीते, भय नव धरशो मन जी । ३० ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

भय नव धरशो मन विषे, ए रक्षा करशे राम रे,
एम विश्वामित्रे धीरज आपी, मुनि बेसाडया ठाम रे । ३१ ।

का संहार करने और (सद्) धर्म की स्थापना के लिए अवतीर्ण हुए है । २९ । वे ऐसे (वीर) दशरथ-पुत्र श्रीराम है, जिन्होंने एक वाण से ताड़का को मार डाला । इसलिए वे भली-भाँति (सवकी) रक्षा करेंगे । तुम मन में भय न रक्खो (करो) । ३० ।

तुम मन में भय न करो । वे श्रीराम (सवकी) रक्षा करेंगे'। इस प्रकार विश्वामित्र ने ढाढ़स बँधाकर ऋषियों को (उनके) स्थान पर वैठा दिया । ३१ ।

* * *

अध्याय—२८ (सुबाहु आदि का वध)

राग-मारु

आपे धीरज गाधिकुमार, एवे आव्या असुर अपार,
यज्ञमंडप उपर जाण, नाखे वृक्ष गिरि पाषाण । १ ।
यज्ञ रक्षा करवा विशेक, रामे धरियां रूप अनेक,
चारे पासे ऊभा रघुवीर, अति बाण मूके रणधीर । २ ।
यज्ञमंडप उपर वेद, शर-पंजर करियुं अभेद,
काळी रात अंधारी घोर, दैत्य दारुण करता शोर । ३ ।

अध्याय—२८ (सुबाहु आदि का वध)

गाधि-पुत्र विश्वामित्र मुनियों को ढाढ़स बँधाते है । इतने में (वहाँ) अनगिनत राक्षस आ गये । वे यज्ञ मण्डप पर मानो वृक्ष पर्वत और पत्थर डालते हैं । १ । (यह देखकर) श्रीराम ने यज्ञ की रक्षा करने के लिए अनेक रूप धारण किये (और) चारों ओर (वे) रघुवीर श्रीराम (अपने विभिन्न रूपों में) खड़े (हुए) हैं । (वे) रणधीर (श्रीराम) वहुत वाण चलाते हैं । २ । उन्होंने यज्ञ-मण्डप और वेदी के ऊपर अभेद्य शर-पंजर (पिंजड़े के समान वाणों का आच्छादन) वना लिया ।

छूटे अखंड शरनी धार, जाणे विद्युतना चमकार,
वीश कोटी निशाचर जेह, रामे सर्व संहार्या तेह । ४ ।
कोनां छेद्यां भुजा ने चर्ण, उरु जंघा कटि शिर कर्ण,
एम करतां थयुं छे प्रभात, नव दीसे निशाचर जात । ५ ।
ऊडयां आकाशमां ते दिश, भमतां फरे दैत्यनां शीश,
कोई वृक्ष उपर कंइ धरणी, देखायां ज्यारे ऊग्यो तरणी । ६ ।
रह्या वीश कोटीमां बे वीर, मारीच ने सुबाहु धीर,
आव्या जुद्ध करवा ते जाण, गदाओ ग्रहीने निज पाण । ७ ।
घणुं जुद्ध थयुं ते ठार, कहेतां ग्रंथ पामे विस्तार,
पछे रामे विचार्युं मन, हवे एने पमाडुं पतन । ८ ।
करी क्रोध मूक्युं एक बाण, महा प्रचंड ते छे निरवाण,
तेणे छेद्युं सुबाहुनुं शीश, पामी मरण पडचो ते दिश । ९ ।
लागी झपट ते शरनो पवन, तेणे मारीच ऊडचो गगन,
ते जई पडचो सागर पार, भय पामी रह्यो ते ठार । १० ।

रात काली, घोर अँधेरी थी और (वे) दैत्य दारुण शोर किया करते (थे) । ३ । मानो (श्रीराम के धनुष से) बाणों की अखण्ड धारा निकल रही है; मानो (बाणों के तेज के रूप में) बिजली चमक रही है । जो बीस करोड़ राक्षस (आये हुए) थे, श्रीराम ने उन सबका संहार किया । ४ । उन्होंने किसी के हाथ और पाँव छेद डाले, तो किसी के उरु, जाँघ, कमर, सिर (और) कान काट डाले । ऐसा करते-करते सबेरा हो गया है; तो राक्षस जाति (कहीं) दिखायी नहीं दे रही है । ५ । (परन्तु) उस समय (दिखायी दिया कि) राक्षसों के सिर आकाश में उड़ गये (हैं) और वे मँड़राते हुए घूमते हैं । जब सूर्य का उदय हुआ, तो कुछ सिर वृक्षों पर, तो कुछ जमीन पर दिखायी दिये । ६ । (अब) बीस करोड़ राक्षसों में से मारीच और सुबाहु नामक दो धीर-वीर (राक्षस)—(शेष) रह गये । समझो, अपने हाथों में गदाएँ लेकर वे युद्ध करने के लिए आ गये । ७ । उस स्थान पर (कैसे) घमासान युद्ध हो गया—यह सब कहते-कहते यह ग्रन्थ विस्तार को प्राप्त हो जाएगा । अनन्तर श्रीराम ने मन में विचार किया—अब इन्हें पतन को प्राप्त कराऊँगा । ८ । इसलिए उन्होंने क्रोध करके (क्रोधपूर्वक) एक बाण चला दिया । वह महा प्रचण्ड निर्वाण (अति तीक्ष्ण बाण) है (था) । उसने सुबाहु का सिर काट डाला । उस समय वह (सुवाहु) मृत्यु को प्राप्त होकर पड़ गया । ९ । बाण के चलने से उत्पन्न हवा की झपट लगने से मारीच आकाश में उड़ गया । वह

थयो असुर तणो संहार, मुनि करता जेजेकार,
सुर आशिष दे अनुकूळ, वरसावे सुरतरु फूल । ११ ।
निशाचरने मारी ते ठाम, शोभे सिद्धाश्रम श्रीराम,
महाकल्पे सृष्टि संहार एक ब्रह्म शोभे ज्यम सार । १२ ।
जेम नक्षत्रमंडळ लोपी, तपे दिनकर तेजे ओपी,
तजी विषय प्रपंच विकार, शोभे निरमळ जोगी सार । १३ ।
एम शोभे पूरण-काम, मुनि रक्षा करी श्रीराम,
जेम जठरा अन्न पचावे, पण गर्भने आंच न आवे । १४ ।
एम जज्ञ मुनिवर केरी, करी रक्षा रामे घणेरी,
सहु मुनिवर आशिष देता, राम रूप रुदेमां लेता । १५ ।
सहुए ओळख्या श्रीभगवान, गुण ईश्वरना वळवान,
त्यारे मुनिवर प्रत्ये वचन, हसी वोल्या गाधितन । १६ ।

सागर के पार जाकर पड़ गया । भय को प्राप्त होकर वह उस स्थान पर रह गया । १० । असुरों का संहार हो गया, तो मुनि जय-जयकार करते रहे । देव अनुकूल अर्थात् शुभ आशीर्वाद देते हैं (थे) और कल्पवृक्षों के फूल बरसाते है (थे) । ११ । उस स्थान पर निशाचरों को मार डालकर श्रीराम सिद्धाश्रम में वैसे ही शोभायमान (दिखायी दे रहे) हैं, जैसे महाकल्प के अन्त में सृष्टि का संहार हो जाने पर ब्रह्म शोभायमान रहता है; जैसे नक्षत्र-मण्डल का लोप करके सूर्य तेज से सुशोभित होकर तपता रहता है; जैसे (सांसारिक) विषयों से उत्पन्न छल-प्रपंचों, विकारों का त्याग करके निर्मल आत्मावाला (कोई) योगी सुन्दर रूप से शोभायमान होता है । १२-१३ । ऐसे ही लोगों की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले श्रीराम मुनियों की रक्षा करके सुशोभित हो रहे हैं (थे) । जैसे (गर्भवती स्त्री का) जठर अन्न को (तो) पचा लेता है, लेकिन (इस क्रिया के चलते रहने पर भी अन्तस्थ) गर्भ को (गर्भस्थ जीव को) आँच नहीं पहुँचती, वैसे राक्षसों का संहार चलता रहा, फिर भी मुनियों के यज्ञ को कोई हानि नहीं पहुँची । १४ । इस प्रकार श्रीराम ने मुनियों तथा उनके द्वारा किये जाने-वाले यज्ञ की अच्छी तरह से रक्षा की । सब मुनि श्रीराम को आशीर्वाद देते हैं और उनके रूप को (अपने) हृदय में स्थापित कर लेते हैं । १५ । सबने श्रीभगवान को पहचान लिया और जान लिया (अनुभव किया) कि ईश्वर के गुण वलवान (महान) है । तव विश्वामित्र ने हँसकर मुनिवरों से कहा—' तुम राम को बालक कहते हो । (परन्तु) तुमने उनके प्रताप को इस समय देखा । उस तेजस्वी (व्यक्ति) को छोटा मत समझो,

तमो रामने कहेता बाळ, दीठो प्रताप आणे काळ,
तेजस्वी नव गणिये कनिष्ठ, जेनां प्राक्रम प्रोढ वरिष्ठ। १७।
रवि मंडळ नानुं भासे, पण विश्व सकळने प्रकाशे,
कळशोद्भव नाने वान, कर्युं सागर जळनुं पान। १८।
नाना वामनरूप अखंड, कर्युं बे पगलां ब्रह्मांड,
पंडितनी बुद्धि लगार, जाणे सरव शास्त्रनो सार। १९।
एम रामनुं पाक्रम जेह, घणुं अपार बळ छे तेह,
ब्रह्मादिकना कळ्यामां न आवे, कवि वाणीमां क्यम करी लावे? २०।
थयो पूरण यज्ञ प्रसन्न, मुनि कौशिक हरख्या मन,
ब्राह्मणने भोजन कराव्यां, आपी दक्षणा वस्त्र पहेराव्यां। २१।
सहु बेठा पामी निवर्त, तेवे दूत आव्यो एक तर्त,
मिथुलेश्वर केरो पत्र, आप्यो विश्वामित्रने तत्र। २२।
गाधिपुत्र वांच्यो तेणी वार, कह्या श्रीरामने समाचार,
मिथिलापुर जनक राजन, तेने पुत्री सीता उत्पन्न। २३।
तेनो रचियो स्वयंवर राये, त्यां मोटो महोत्सव थाये,
आवशे पृथ्वीना राजन, वळी महामोटा मुनिजन। २४।

जिसका पराक्रम प्रौढ़ और वरिष्ठ (बहुत भारी) होता है। १६-१७। रवि-मण्डल नन्हा (तो) दिखायी देता है, लेकिन विश्व को प्रकाशित कर देता है। कलश में उत्पन्न अगस्त्य ऋषि (तो) छोटे (कदवाले) थे, परन्तु उन्होंने सागर के जल को प्राशन कर डाला। १८। (भगवान्) वामन रूप में (तो) छोटे थे, परन्तु उन्होंने अखण्ड (सम्पूर्ण) ब्रह्माण्ड को दो कदम भर कर लिया। पडित की बुद्धि (तो) छोटी जान पड़ती है, पर वह शास्त्रों के सार को जानती है। १९। ऐसा ही राम का पराक्रम है—जिसमें अपार बल है। वह ब्रह्मा आदि की समझ में नहीं आता, तो उसे कवि अपनी वाणी (की पकड़) में कैसे रख सकता है? २०। यज्ञ पूर्ण हो गया, इससे प्रसन्न मुनि कौशिक का मन आनन्दित हो गया। उन्होंने ब्राह्मणों को भोजन कराया और दक्षिणा देकर उन्हें वस्त्र पहना दिये—अर्थात् पहनने के लिए प्रदान किये। २१। यज्ञ-कर्म से निवृत्ति को प्राप्त होकर वे सब बैठे (थे) कि वहाँ तत्क्षण एक दूत आ गया। उसने वहाँ विश्वामित्र को मिथिला के राजा जनक का पत्र दिया। २२। उन्होंने उस समय उसे पढ़ा और श्रीराम को समाचार (सन्देश) बता दिया—मिथिला के राजा जनक हैं, जिनके सीता नामक एक कन्या उत्पन्न है। २३। राजा ने उसका स्वयंवर आयोजित किया (है)। वहाँ बड़ा महोत्सव होगा।

माटे आपणे जावुं त्यांहे, लीला जोवा जनकपुर मांहे,
एवां सांभळी मुनिनां वचन, फरक्युं रामनुं जमणुं लोचन । २५ ।
वळी दक्षिण अंग भुजाय, शुभ शुकन थया रघुराय,
एम करतां रवि थयो अस्त, कर्या आसन विप्र समस्त । २६ ।
संध्यावंदन कर्युं राम, भर्या भोज पूरणकाम,
एक सज्जाए सूता वीर, राम लक्ष्मण रणना धीर । २७ ।
पासे पोढ्या मुनि भगवान, जाणे बाळक प्राण समान,
निशा मध्य गई छे ज्यारे, विश्वामित्र बेठा थया त्यारे । २८ ।
मुनि कौशिक महा तपवान, करे स्मरण हरिनुं नाम,
त्यारे लक्ष्मण प्रत्ये राम, करे वारता पूरणकाम । २९ ।
जोने लक्ष्मण मारा वीर, केवुं ध्यान धरे मुनि धीर ?
लाभ मनुष्या देहनो एह, हरिभजन करे जन जेह । ३० ।
हरिनाम विना ले अन्न, ते जाणो प्रेत भोजन,
प्रभुने अरपण नथी करता, ते पापी जाणो आतम-हणता । ३१ ।

पृथ्वी-भर के राजाओं के अतिरिक्त बड़े महान् ऋषि जन (भी वहाँ) आएँगे । २४ । इसलिए जनकपुर में वह स्वयंवर-लीला देखने के लिए हमें वहाँ जाना होगा ।' मुनि के ऐसे वचन सुनकर राम का दाहिना नेत्र फड़क उठा । २५ । फिर इसके अतिरिक्त श्रीराम के दाहिने अंग, बाहु स्फुरित हो गये—इस प्रकार रघुनाथराज के लिए शुभ शकुन हो गये । ऐसे करते हुए सूर्य का अस्त हो गया । सब ब्राह्मण (सध्या आदि नित्य-कर्म सम्पन्न करने के लिए विशिष्ट मुद्रा में) आसनस्थ हो गये । २६ । पूर्णकाम श्रीराम ने भी सध्या-वन्दना की और पूरा भोजन किया । (तदनन्तर) रणधीर श्रीराम और लक्ष्मण—दोनों वीर एक शय्या पर सो गये । २७ । भगवान् राम के पास मुनि विश्वामित्र लेट गये । वे उन बालकों को प्राणों के समान (प्रिय) मानते हैं (थे) । जब मध्य रात बीत गयी, तब विश्वामित्र (उठकर) बैठ गये । २८ । वे विश्वामित्र मुनि महान् तपस्वी हैं (थे) । वे (तब) हरि का ध्यान करते हैं (थे) । तब पूर्णकाम श्रीराम, लक्ष्मण के प्रति यों बातें कहते हैं—मेरे भाई लक्ष्मण, देखो (ये) धैर्यवान् मुनि कैसे ध्यान धारण कर रहे है । मनुष्य-देह से यह लाभ होता है कि वह मनुष्य हरि भजन करता (कर सकता) है । २९-३० । विना हरिनाम जो अन्न लेता है, समझो कि वह प्रेत का भोजन होता है । जो भगवान् को (अपने आपको) समर्पित नहीं कर देता, समझो कि वह पापी आत्म-हन्ता है । ३१ । बिना हरि की दृढ़ भक्ति के जो ज्ञान प्राप्त

दृढ भक्ति विना जे ज्ञान, तेनुं ज्ञान जाणो अज्ञान,
तेनो धर्म ते अधर्मकार, आचार तेतो अनाचार । ३२ ।
भगवंतनी भक्ति रहित, तेनी विद्या अविद्या सहित,
एम लक्ष्मणने कर्यो बोध, जेणे टळे संसार विरोध । ३३ ।
एवी वातो करे बे भ्रात, एम करतां थयुं छे प्रभात,
ऊठी लाग्या मुनिने पाय, स्नान संध्या करी रघुराय । ३४ ।
मुनि साथे कर्यां भोजन, पछे बेठा निज आसन,
संभारी अवधपुर वास, रघुवीर थया छे उदास । ३५ ।
सुण लक्ष्मण वीर वचन, अहीं आवे थया बहु दन,
वाट जोता हशे त्यां राय, केम धीरज धरशे माय ! । ३६ ।
वच्छवियोगे धेनु जेम, थयुं मातपिताने तेम,
हावे पाछा क्यारे वळीशुं ? क्यारे मातपिताने मळीशुं ? । ३७ ।
एम विरह थयो रघुवीर, चाल्यां नेत्रमां आंसु नीर,
एम मानुषी चेष्टा राम. जणावे छे पूरणकाम । ३८ ।
एवुं जोईने कौशिक मुन्य, रुदेशुं चांप्या बे तन,
प्राणवल्लभ मारा वीर, तमे राखो रुदेमां धीर । ३९ ।

करता है, समझो कि उसका ज्ञान अज्ञान (मात्र) है। उसका धर्म तो अधर्म है (और) आचार तो अनाचार है। ३२। भगवान् की भक्ति से रहित उसकी प्राप्त की हुई विद्या अविद्या-युक्त है। श्रीराम ने लक्ष्मण को यों बोध कराया, जिससे (मनुष्य का) सांसारिक विरोध भाव टल जाता है। ३३। इस प्रकार दोनों बन्धु बातचीत करते हैं (थे), ऐसा करते-करते सबेरा हो गया है। उठकर वे मुनि के पाँव लगे। फिर रघुनाथ ने स्नान-संध्या कर्म कर लिया। ३४। मुनि के साथ उन्होंने भोजन किया; बाद में वे अपने आसन पर बैठ गये। अयोध्या वाले (अपने) निवास का स्मरण होने पर रघुवीर राम उदास हो गये। ३५। उन्होंने कहा—'हे भाई लक्ष्मण, यह बात सुनो। यहाँ आये (हमें) बहुत दिन हो गये। वहाँ राजा हमारी बाट जोहते होंगे। हमारी माता (वहाँ) कैसे धीरज रखती होंगी ? ३६। बछड़े से बिछुड़ने पर धेनु (की) जैसी (स्थिति) होती है, वैसी अवस्था माता-पिता की हुई (होगी)। अब हम वापस कब लौटेंगे !' ३७। इस तरह रघुवीर को विरह (दुःख) हो गया। उनकी आँखों से अश्रुजल बह चला। इस प्रकार पूर्णकाम (भगवान्) श्रीराम मानवीय (मानव स्वभाव के योग्य) चेष्टा (लीला) दिखाते हैं (थे)। ३८। (उन्हें) ऐसा (करते) देखकर विश्वामित्र मुनि ने (उन) दोनों बालकों

एवुं भावि जणाय छे अमने, राम सीता वरशे तमने,
माटे जावुं जनकपुर आज, थाओ शीघ्र बे रघुराज । ४० ।
एवुं कही थया सत्वर मुन्य, साथे लीधा घणा ऋषिजन,
मिथिलापुर जावा काज, थया तत्पर श्रीरघुराज । ४१ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रघुराज बे तत्पर थया, धर्यां धनुष्य भाथा बाण रे,
अनेक मुनिवर कौशिक साथे, चाल्या चतुर सुजाण रे । ४२ ।

को हृदय से लगा लिया; (और कहा—) प्राण-प्रिय मेरे भाई, तुम हृदय में धैर्य रक्खो । ३९ । हमें ऐसी होनी जान पड़ती है, हे राम सीता, तुम्हारा वरण करेगी । इसलिए, आज हमें जनकपुर जाना चाहिए । हे रघुवीर, दोनों शीघ्रतापूर्वक तैयार हो जाओ । ४० । ऐसा कहकर मुनिवर शीघ्रता से तैयार हो गये । उन्होंने बहुत ऋषियों साथ में लिया । मिथिलापुर जाने के लिए रघुराज श्रीराम (भी) शीघ्रता से तैयार हो गये । ४१ ।

दोनों रघुराजकुमार—राम और लक्ष्मण—तैयार हो गये । उन्होंने धनुष, वाण और भाथा धारण कर लिया । विश्वामित्र के साथ अनेक चतुर और ज्ञानी मुनिवर (मिथिला की ओर) चल दिये । ४२ ।

* * *

अध्याय—२९ (अहल्या-शापमोचन)

दोहरा

जनकपुर जावा कारणे, चाल्या सुंदर श्याम,
मुनिवर सखे चालता, माटे रथ नव वेठा राम । १ ।
मुनि संगाथे चालिया, राम लक्ष्मण बे भ्रात,
आश्रम आवे मुनि तणा, त्यांहां रहेता सरवे रात । २ ।

अध्याय—२९ (अहल्या-शापमोचन)

जनकपुर जाने के लिए सुन्दर श्याम (शरीरधारी राम) चल दिये । सब मुनिवर पैदल ही चलते थे, इसलिए राम रथ में नहीं बैठे । १ । राम और लक्ष्मण दोनों वन्धु मुनियों के साथ चलते थे । (मार्ग में) मुनियों के आश्रम आते (पड़ते), तो वहाँ वे सब रात को रह जाते । २ ।

मारगमां जे मुनि मळे, ते करे स्वागत बहु पेर,
आतिथ्य करे श्रीरामने, तेडी लावे निज घेर। ३ ।
एम करतां आगळ चालिया, आव्या एक वनमोझार,
त्यां अहल्या शल्या थई पडी, गौतमऋषिनी नार। ४ ।
त्यारे पदरज ऊडी रामनी, पवन थकी निरवाण,
शल्याने स्पर्शी जई, अहल्या थई ते जाण। ५ ।
ते जड मटीने चेतन थई, पदरजने प्रताप,
सुंदर रूपे सुंदरी, तत्क्षण ऊठी आप। ६ ।
कोई कहे छे रामे चरणनो, स्पर्श कर्यो साक्षात्,
ए तो जूठुं जाणजो, घटे नहि ए वात। ७ ।
धरम धोरींधर राम छे, गौब्राह्मण प्रतिपाळ,
क्षत्री धरम शुभ आचरे, एवा दीनदयाळ। ८ ।
अन्य क्षत्री ऐवुं नव करे, आ तो धरम अवतार,
चरण स्पर्श ते क्यम करे ? ब्राह्मणी ने निरधार। ९ ।
अहल्याए तव ओळख्या, रघुवीरने निरधार,
पूरवनी स्मृतिए करी, मळवा आवे नार। १० ।
अहल्या सामे आवती, दीठुं रामे रूप,
पूछे विश्वामित्रने, सकळ भुवनना भूप। ११ ।

मार्ग में जो मुनि मिलते, वे (उनका) बहुत प्रकार से स्वागत करते। वे श्रीराम को अपने घर बुला लाते और उनका आतिथ्य करते। ३। ऐसा करते-करते वे आगे चले। (फिर) वे एक वन में आ गये। वहाँ गौतम ऋषि की स्त्री अहल्या शिला होकर पड़ी (हुई थी)। ४। तब निश्चय ही राम की पद-धूलि हवा से उड़ गयी और जाकर शिला को स्पर्श कर गयी। समझो, वह (शिला पुनः) अहल्या हो गयी। ५। पदरज के प्रताप से जड़-रूप मिटकर वह सचेतन हो गयी (और) वह स्त्री सुन्दर रूप में तत्क्षण स्वयं उठ गयी। ६। कोई-कोई कहते हैं कि राम ने (शिला-रूप अहल्या का) प्रत्यक्ष पद-स्पर्श किया। इसे तो झूठ समझो। यह बात घटित नहीं हो सकती। ७। राम धर्म-धुरन्धर, गो-ब्राह्मण-प्रतिपालक हैं। वे क्षत्रियों के शुभ धर्म का आचरण करते हैं। ऐसा करनेवाले वे (राम) दीन-दयालु हैं। ८। अन्य क्षत्रिय ऐसा नहीं करते। ये (राम) तो धर्म के अवतार हैं। वे निश्चय ही ब्राह्मणी को चरण-स्पर्श कैसे करेंगे ! ९। निश्चय हीं तब अहल्या ने रघुवीर राम को पहचाना। पूर्वकाल की स्मृति से

हे मुनि पेली कोण छे ? सन्मुख आवे नार,
चंपकवरणी विधुमुखी, मृगनेणी सुकुमार । १२ ।
जे रंभा ने वळी उर्वशी, करती हशे तेनी सेव,
हुं जाणुं एना उदरथी, प्रगटचा इंद्रादिक देव । १३ ।
के आवे भवानी ईश्वरी, मुंने आपवाने वरदान,
के ऋषिपत्नी कोई आ समे, ऊठी निद्रावान । १४ ।
के कृपा तमारी महामुनि, मूर्तिमान थई आज,
माटे कहो ते कोण छे, कृपा करी मुनिराज । १५ ।
एवां धरम वचन सुणी रामनां, बोल्या गाधिकुमार,
ते अहल्या शल्या थई हती गौतमऋषिनी नार । १६ ।
ते तम पद-रज प्रतापथी शापमुक्त थई आज,
दरशन करवा तम तणुं आवे श्रीरघुराज । १७ ।
एटले त्यां आवी तदा, अहल्या जोडी पाण,
साष्टांग दंडवत् करी नमी, रघुवीरने निरवाण । १८ ।
त्यारे राम कहे हे साधवी, ऊठो हावे मात,
पछे अहस्या ऊठी ते समे, ऊभी जोडी हाथ । १९ ।

(वह) स्त्री (राम से) मिलने आती है । १० । अहल्या जब सामने आ रही थी, तब राम ने (उस) रूपवती स्त्री को देखा । (तो) सकल भुवन के राजा राम ने विश्वामित्र से (यह) पूछा । ११ । 'हे राम, (जो) चम्पकवर्णी, चन्द्रमुखी, मृगनयनी, सुकुमार स्त्री सामने आती (आ रही) है, वह कौन है ? १२ । मानो, रम्भा तथा उर्वशी (जैसी सुन्दर अप्सराएँ) उसकी सेवा करती होंगी । मुझे जान पड़ता है कि उसके उदर से इन्द्र आदि देव प्रकट हो गये (होंगे) । १३ । (अथवा) मुझे वरदान देने के लिए क्या देवी भवानी आती (आ रही) है ? क्या (यह) कोई (दीर्घ समय से) सोयी हुई ऋषि-पत्नी इस समय जाग उठी ? हे महामुनि, क्या आज आपकी कृपा (इसके रूप में) मूर्तिमती (तो नहीं) हुई ? हे मुनिराज! इसलिए कृपा करके कहिए कि वह कौन है ।' १४-१५ । राम के ऐसे धर्म-युक्त वचन सुनकर विश्वामित्र बोले—'गौतम ऋषि की वह पत्नी अहल्या शिला हो गयी थी । १६ । वह आज तुम्हारे चरण-रज के प्रताप से शाप-मुक्त हो गयी । हे रघुराज, तुम्हारे दर्शन करने के लिए वह आती (आ रही) है ।' १७ । तब इतने में वहाँ अहल्या आ गयी । उसने (राम के) हाथ जोड़ लिये । निश्चय ही उसने साष्टांग नमस्कार करके रघुनाथ राम का नमन किया । १८ । तब राम ने (उससे) कहा—

नेत्र सजळ गद्‌गद गिरा, दृढ मति निर्मळ मन,
कर संपुट सन्मुख रही, करती राम स्तवन । २० ।
ज्यम वसंतऋतुमां कोकिला, बोले मधुरी वाण,
एम स्तुति करती श्रीरामनी, ऋषिपत्नी ते जाण । २१ ।

छंद

जय राम करुणधाम पूरण-काम दशरथनंदनं,
तव नाम मन अभिराम सुंदर श्याम सुरमुनिवंदनं,
जय जगतगुरु जगतात माता विश्वंभर जगनायकं,
स्मरामि पावन चरित्र चित्र विचित्र जन सुखदायकं । १ ।
जय परात्पर परब्रह्म पूरण सगुण निरगुण अव्ययं,
चर अचर जीवनिकाय व्यापक एक अजीत अनामकं,
जयनिगम अगम अपार, कारण-रहित कौशल्या तनं,
सच्चिादानंद अखंड अज चैतन्य साक्षी चिद्‌घनं । २ ।

'हे साध्वी ! हे माता ! अब उठो ।' अनन्तर उस समय अहल्या उठ गयी (और) उसने बिना बोले हाथ जोड़ लिये । १९ । (तब) उसके नेत्र सजल थे । (उसकी) वाणी गद्‌गद (हो गयी) थी । (फिर भी उसकी) मति स्थिर थी और मन निर्मल था । हाथ सम्पुट (अंजलि) में बाँधकर (हाथ जोड़कर) वह (राम के) सामने खड़ी रही (और) राम का स्तवन करती थी । २० । जैसे वसन्त ऋतु में कोयल मधुर वाणी बोलती है, वैसे वह मधुर वाणी (में) कहती थी । समझो कि वह ऋषि-पत्नी श्रीराम की इस प्रकार स्तुति करती थी । २१ ।

हे करुणा के धाम, पूर्णकाम दशरथ-नन्दन राम ! तुम्हारी जय हो । देव और मुनि जिनका वन्दन करते हैं, ऐसे हे सुन्दर श्याम (शरीरधारी) राम ! तुम्हारा नाम मेरे मन को प्रिय है । हे जगद्‌गुरु, जगत्-पिता, जगन्माता, विश्व का भरण-पोषण करनेवाले, जगन्नायक राम, तुम्हारी जय हो । जिनके पावन चरित्र (लीलाएँ) चित्र-विचित्र और लोगों के लिए सुखदायी हैं, ऐसे हे राम, मैं तुम्हारा स्मरण करती हूँ । १ । परात्पर परब्रह्म (राम), पूर्ण सगुण एवं निर्गुण तथा अव्यय (अक्षय) ब्रह्म (राम), तुम्हारी जय हो । चर, अचर, जीव-समूह को व्याप्त करनेवाले एक अजित, अनामक ब्रह्म राम, तुम्हारी जय हो । हे कौसल्या के पुत्र राम, हे निगम (वेद) के लिए (भी) अगम्य, अपार, कारण-रहित ब्रह्म राम, तुम्हारी जय हो । सच्चिदानन्द, अखण्ड, अज, चैतन्य रूप, (सर्व) साक्षी,

जय शापमोचन कमळलोचन दीनजन प्रतिपालकं,
निज भक्तवत्सल शरण जन भवरोग वैद्य कृपालकं,
जय मित्रकुळ कानन कमळरवि चतुर विहु वपु धारकं,
अवतार कारण धर्मस्थापन, दुष्ट दनुज विदारकं। ३ ।
जय यज्ञपाळ दयाळ कृतवध ताडिका खर दूषणं,
करशर अमोघ निखंग धनुष्य नमामि रविकुळभूषणं,
बह्मांडनायक भुवन सुंदर दानकृत मम सदगति,
जय शिव-हृदय-मानसमराळ नमामि रमापति। ४ ।
मुनिपत्नी कृत ए स्तोत्र, पावन जपे नरनारी सदा,
ते धन्य भूतळ दास गिरधर मोक्ष पामे सर्वदा। ५ ।

दोहा

एम स्तुति अहल्याऐ करी, जोडीने जुग पाण,
तमने आशिष देउं छुं, हजो सदा कल्याण। १ ।

चिद्‌घन ब्रह्म राम, तुम्हारी जय हो। २। (मुझे) शाप से मुक्ति देनेवाले हे कमल-नेत्र राम, हे दीन जनों के प्रतिपालक राम, तुम्हारी जय हो। अपने भक्तों के प्रति वत्सल (बने) रहनेवाले राम, शरणागत लोगों के सांसारिक (विकारों से उत्पन्न) रोगों के लिए वैद्य (के समान रहनेवाले) कृपालु राम, तुम्हारी जय हो। हे रवि-कुल-रूपी कमलवन के लिए सूर्य (के समान) राम, चार व्यूह शरीर धारण करनेवाले हे राम! तुम्हारी जय हो। धर्म की स्थापना के कारण (उद्देश्य से) अवतार धारण कर लेनेवाले, दुष्ट राक्षसों का नाश करनेवाले राम! तुम्हारी जय हो। ३। हे यज्ञ-पालक, दयालु, ताड़का-खर-दूषण के वधकर्ता हे राम! तुम्हारी जय हो। हाथ में बाण, अक्षय भाथा (तूणीर)और धनुष धारण करनेवाले रवि-कुल-भूषण श्रीराम, मै तुम्हारा नमन करती हूँ। हे ब्रह्माण्ड-नायक, भुवन-सुन्दर, मुझे सद्‌गति प्रदान करनेवाले हे श्रीराम! शिवजी के हृदय-रूपी मानसरोवर के हंस! हे रमापति श्रीराम! मैं तुम्हारा नमन करती हूँ। ४। कवि गिरधरदास कहते है—(गौतम) मुनि की पत्नी (अहल्या) द्वारा विरचित इस पवित्र स्तोत्र का जाप जो स्त्री-पुरुष सदा करते हैं, वे धरा (पृथ्वी)-तल पर धन्य है। वे नित्य मोक्ष को प्राप्त हो जाते है। ५।

दोनों हाथ जोड़कर अहल्या ने (राम की) ऐसी स्तुति की। (फिर उसने कहा—) मैं तुम्हें आशीर्वाद देती हूँ—तुम्हारा सदा कल्याण हो। १। मैं साठ हज़ार वर्षो तक जड़-रूप रही थी। तुम्हारी पद-धूलि

साठ सहस्र वर्ष लगी, हुं रही'ती जडरूप,
ते तम पदरज परतापथी, पामी मूळ स्वरूप । २ ।
शाप मुक्त कीधो तमे, थई चैतन्य अभिराम,
माटे सीता कन्या जनकनी, वरजो तमने राम । ३ ।
तेवे समे त्यां गौतम ऋषि, आव्या अकस्मात,
मळया रामने हरखशुं, गद्गद प्रेम अघात । ४ ।
साष्टांग कर्यो मुनिने तदा, बोलिया राजकुमार,
हवे अंगीकार सतीनो करो, ए छे साध्वी नार । ५ ।
एवां वचन सुणी श्रीरामनां, त्यारे हरख्या मुनि गौतम,
अहल्याने तेडी गया, ते पोताने आश्रम । ६ ।
पछी आगळ चाल्या रामजी, साथे मुनिवर वृन्द,
रामप्रताप जोई सहु, मन पामिया आनन्द । ७ ।
अष्टक ए अहल्या तणुं, जे श्रवण करे नरनार,
पाठ करे श्रद्धा थकी, ते पामे पदारथ चार । ८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पामे पदारथ चार, तेने कृपा श्रीरघुवर करे,
जे सांभळे नर ने नार, ते भवसागर सेजे तरे । ९ ।

* * *

के प्रताप से मैं मूल स्वरूप को प्राप्त हो गयी । २ । तुमने मुझे शाप-मुक्त कर लिया, (अब) मैं सुन्दर सचेतन रूप हो गयी । इसलिए हे राम, जनक राजा की कन्या सीता तुम्हारा वरण करे । ३ । उस समय गौतम ऋषि वहाँ अकस्मात आ गये । वे राम से आनन्दपूर्वक मिले । प्रेम से गद्गद होकर वे तृप्त हो गये । ४ । तब राजपुत्र राम ने मुनि को साष्टाग नमस्कार किया (और) वे बोले—'(हे मुनिवर), अब (इस) सती को अंगीकार (स्वीकार)कीजिए । वह साध्वी नारी है ।' ५ । तब श्रीराम के ऐसे वचन सुनकर गौतम मुनि आनन्दित हो गये । (तदनन्तर) वे अहल्या को बुलाकर अपने आश्रम (के प्रति) ले गये । ६ । अनन्तर मुनियों के समुदाय के साथ राम आगे चले । सब (मुनि) राम के प्रताप को देखकर मन में आनन्द को प्राप्त हो गये । ७ । अहल्या का यह अष्टक जो नर और नारियाँ श्रवण करते हैं, श्रद्धा से उसका पठन करते हैं, वे (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष नामक) चारों पदार्थों को प्राप्त होते हैं । ८ ।

वे चारों पदार्थों को प्राप्त होते है। श्रीराम उनपर कृपा करते हैं। (अहल्या का यह अष्टक) जो पुरुष और स्त्रियाँ सुनते हैं, वे शय्या में (लेटे-लेटे ही अर्थात् विना किसी प्रयास के) भवसागर को तैर जाते हैं। ९।

* * *

अध्याय—३० (अहल्योत्पत्ति वर्णन)

राग धनाश्री

अहल्या केरो कर्यो उद्धार जी, मुनिसंग चाल्या राजकुमार जी,
मारग जातां पूछे श्रीरामजी, गौतमपत्नी अहल्या नामजी। १।

ढाळ

नाम अहल्या शल्या क्यम थई? कोणे दीधो शाप?
ते मुनिवर मुजने कही, संदेह टाळो आप। २।
रामनां वायक सांभळी, बोल्या विश्वामित्र वचन,
उत्पत्ति कहुं अहल्या तणी, सांभळो दशरथ-तन। ३।
पूर्वे ब्रह्माए रची सृष्टि, चित्रविचित्र अनेक,
ते स्वरूप सुंदर तेजपूर्ण, रची कन्या एक। ४।
अहल्या तेनुं नाम पाड्युं, थई ज प्रौढी बाळ,
त्यारे देव सर्वे रूप जोई, मोह पाम्या तत्काल। ५।

अध्याय—३० (अहल्या-उत्पत्ति वर्णन)

राग धनाश्री

राजपुत्र राम ने अहल्या का उद्धार किया (और) वे मुनियों के साथ चल दिये। मार्ग में जाते हुए श्रीराम ने गौतम मुनि की अहल्या नामक पत्नी के बारे में (विश्वामित्र से) पूछा—। १। अहल्या नामक (यह) स्त्री शिला क्यों हो गयी? उसे किसने शाप दिया? हे मुनिवर! यह मुझसे कहकर मेरे सन्देह को आप हटा दीजिए। २। राम की ये वातें सुनकर विश्वामित्र (ये) वचन बोले—' हे दशरथ-नन्दन! सुनो, मैं अहल्या की उत्पत्ति (की कथा) कहता हूँ। ३। पूर्वकाल में ब्रह्मा ने अनेक प्रकार की चित्र-विचित्र सृष्टि की रचना की। उसमें उन्होने एक स्वरूप-सुन्दर (और) तेजस्वी कन्या का निर्माण किया। ४। उसका नाम अहल्या रखा। वह कन्या (यथासमय) प्रौढ़ हो गयी। तब उसके

वरवाने इच्छे सुर सकळ, ए ब्रह्मकन्या जेह,
विचार करी विधिए रच्यो, कन्या स्वयंवर तेह। ६।
त्यारे प्रजापतिए पण कर्युं, बे पहोरमां नर जेह,
पृथ्वी परिक्रमा करी आवे, कन्या परणे तेह। ७।
ते सांभळी सुर सकळ चाल्या, नव लगाडी वार,
पाक शासन गजारूढ थई, चालियो तेणी वार। ८।
ते समे गौतम स्नान करी, नीकळ्या गंगा बहार,
त्यारे मारगमां गौ बेमुखी ऊभी हती ते ठार। ९।
ज्यारे थाय गौ प्रसूता समे, वच्छनुं मुख देखाय,
ते समे सुरभि बेमुखी, ते भूमिरूप कहेवाय। १०।
ते समे प्रदक्षिणा करे तेने, भूमिनुं फळ थाय,
गौतम ऋषिए विचार्युं, शास्त्रनो एवो न्याय। ११।
भणी मंत्र गायत्री तणो, प्रदक्षिणा करी सात,
मन विचार्युं विधिलोक जई, कन्या वरुं साक्षात्। १२।

रूप को देखकर सब देव तत्क्षण मोह को प्राप्त हो गये। ५। यह (अहल्या) जो ब्रह्म-कन्या है (थी) उसका वरण करने की इच्छा सब देव करते हैं (थे)। तो विधाता ने विचार करके उस कन्या का स्वयम्वर आयोजित किया। ६। तब प्रजापति ने यह प्रण किया कि जो पुरुष दो प्रहर (अवधि) में पृथ्वी की परिक्रमा करके आता है (आएगा), वह इस कन्या से परिणय करता है (करेगा)। ७। वह सुनकर सब देव चल दिये। उन्होंने देर नहीं लगायी। उस समय इन्द्र (अपने ऐरावत) हाथी पर आरूढ़ होकर चल पड़ा। ८। उस समय स्नान करके गौतम ऋषि गंगा (के जल) से बाहर निकल आये, तो उन्होंने देखा कि उस स्थान पर (गंगा के तट पर एक) द्विमुखी गाय खड़ी थी। ९। जब गाय प्रसूत होती है (हो रही हो) और (यदि) उस समय वत्स का मुख दिखायी दे रहा हो, (तो) उस समय वह 'द्विमुखी' गाय भूमि (पृथ्वी) रूपा कही जाती है। १०। गौतम ऋषि ने विचार किया कि शास्त्र का ऐसा न्याय (निर्णय) है कि उस समय जो (ऐसी द्विमुखी गाय की) प्रदक्षिणा करता है, उसे भूमि (पृथ्वी) प्रदक्षिणा का फल प्राप्त हो जाता है। ११। उन्होंने गायत्री (का) मंत्र पढ़कर उस द्विमुखी गाय की सात परिक्रमाएँ कर लीं। (और) मन में सोचा कि अब (मैं) ब्रह्मलोक में जाकर प्रत्यक्ष (उस) कन्या का वरण करूँगा। १२। सत्यलोक (ब्रह्मलोक) में उपस्थित होकर उन्होंने कहा—'मेरा नाम गौतम है। पृथ्वी की सात

सत्यलोक थई विधिने कह्युं, गौतम मारुं नाम,
परदक्षिणा करी सात भूनी, आव्यो छुं आ ठाम । १३ ।
विधिए विचार्युं सत्य वायक, मुनि बोल्या जेह,
कन्या परणावी तदा, गौतम ऋपिने तेह । १४ ।
ते सर्व पहेलो इंद्र आव्यो, फरी पृथ्वी पार,
जुए तो गौतम ऋषि, परणिया तेणी वार । १५ ।
घणो क्रोध आणी इंद्रे वळतो, कर्यो विधिशुं वाद,
चतुरमुख प्रत्ये न चाल्युं, पाम्यो मन विषाद । १६ ।
पछे लाज पामी वळ्यो पाछो, विचार्युं मन काम,
एक वार कन्या भोगवुं तो इंद्र मारुं नाम । १७ ।
ते कन्या लेई मुनि आव्या, मांड्यो गृहस्थाश्रम,
केटला दिन एम वही गया, पण इंद्र जोतो मर्म । १८ ।
पछे अहल्याने घणे काळे, थयां बे संतान,
प्रथम जन्म्यो पुत्र ते, महातेजस्वी विद्वान । १९ ।
नाम शतानंद भण्यो विद्या, पछी जनकपुरमां जाय,
ते पुरोहित थयो जनकनो, वळी पुराणी कहेवाय । २० ।

प्रदक्षिणाएँ करके मैं इस स्थान पर आया हूँ'। १३। (यह सुनकर) विधाता ने विचार किया कि मुनि ने जो कहा, वह सत्य बात है। तब उन्होंने गौतम ऋषि से (अपनी) कन्या का परिणय (विवाह) कराया। १४। (इधर) सब (देवों) से पहले पृथ्वी पार घूमकर (पृथ्वी की परिक्रमा कर) इन्द्र आ गया। देखता है (उसने देखा) कि उस समय गौतम ऋषि का (अहल्या से) विवाह हो गया। १५। फलस्वरूप इन्द्र ने बहुत गुस्सा लाकर (करके) विधाता (ब्रह्मा) से विवाद किया। (फिर भी) चतुर्मुख (ब्रह्मा) से उसकी एक न चली तो वह मन में विषाद को प्राप्त हो गया। १६। अनन्तर लज्जा को प्राप्त होकर (अर्थात् लज्जित होकर) वह (अपने स्थान) वापस आ गया। उसने मन में काम का विचार किया कि एक बार (इस) कन्या का भोग करूँ, तो (ही) मेरा नाम 'इंद्र' (सार्थक) है। १७। उस कन्या को लेकर मुनि आश्रम में आ गये (और) उन्होंने गृहस्थाश्रम का आरम्भ किया। (तदनन्तर) कितने ही दिन बीत गये। परन्तु इन्द्र (तो) मर्म देखता रहा था। १८। फिर बहुत समय के बाद अहल्या के दो सन्तानें (उत्पन्न) हुईं। (जो) पुत्र पहले उत्पन्न हुआ, वह महातेजस्वी और विद्वान था। १९। उसका नाम शतानन्द था। उसने विद्या पढ़ी। बाद में वह जनकपुर में जाता है (गया)।

पछे थई पुत्री अहल्याने, अंजनी पावन,
ते कुंवारी निज घेर छे, एम वही गया बहु दन । २१ ।
एक समे सूरज ग्रहण आव्युं, पर्व मोटुं त्यांह,
गौतम अहल्या स्नान करवा, गयां गंगा मांह्य । २२ ।
ते स्नान करीने आवी पाछी, सुंदरी निज घेर,
त्यां मुनि बेठा ध्यान धरवा, जाणी इंद्रे पेर । २३ ।
एकली जाणी अहल्याने, आवियो सूरभूप,
कपट करी इंद्रे धरियुं, गौतम ऋषिनुं रूप । २४ ।
घरमांहे वासव आवियो, त्यारे सति पूछे पेर,
स्वामी नित्य पूरण कर्या पाखे, केम आव्या घेर ? २५ ।
कपटी कहे मन थयुं चंचळ, व्यापो मन्मथ रोग,
माटे आ वेळाए भामनी तुं, आप मुजने भोग । २६ ।
त्यारे सती कहे मध्याह्न वेळा, सूरज आव्यो शीश,
अघटित कर्म न थाय हवडां, गहण छे आ दीश । २७ ।
स्वामी तमे सर्वज्ञ छो, ते जुओ विचारी न्याय,
आ समे ए कृत्य करे तो, दंपती नरक पळाय । २८ ।

वह जनक का पुरोहित हो गया। इसके अतिरिक्त वह 'पुराणिक' कहाता है (था)। २०। बाद में अंजनी नामक (एक) पवित्र (लक्षणी) कन्या अहल्या के (उत्पन्न) हुई। वह कुमारी अपने घर में (ही रहती) है (थी)। इस प्रकार बहुत दिन बीत गये। २१। एक समय सूर्य-ग्रहण आ गया। वहाँ वह बड़ा पर्व (माना जाता) है। (तब) गौतम और अहल्या गंगा में स्नान करने के लिए गये। २२। वह सुन्दरी स्नान करके अपने घर वापस आ गयी। परन्तु मुनि वहाँ ध्यान धारण करने के लिए बैठे (रहे)—यह समाचार इन्द्र ने जान लिया। २३। अहल्या को अकेली जानकर सुर-राज (इन्द्र आश्रम के पास) आ गया। कपट करके इन्द्र ने गौतम ऋषि का रूप धारण किया। २४। (फिर) इन्द्र घर में आ गया, तब सती ने समाचार पूछा—'हे स्वामी, बिना नित्य कर्म पूर्ण किये आप घर कैसे (लौट) आये ?'। २५। (इसपर) वह कपटी पुरुष कहता है (बोला)—'मन चंचल हो गया। काम रोग ने उसे व्याप्त कर लिया। अतः हे भामिनी, इस समय तुम मुझे उपभोग दो'। २६। तब सती बोलती है (बोली)—(यह) मध्याह्न बेला है। सूर्य मस्तक पर आ गया। इस समय (कोई) अघटित कर्म नहीं करना चाहिए। इस समय ग्रहण है। २७।

वासव कहे तारे कारण शुं छे ? शुभ अशुभ जे कर्म,
जे मारी आज्ञा पाळवी, ए मुख्य तारो धर्म । २९ ।
त्यारे वचन स्वामी तणुं तेणे कर्युं अंगीकार,
पुत्री बेसाडी बारणे, अडकावी घर-द्वार । ३० ।
पछे संग आप्यो सुंदरी, नव कपट जाण्युं मन,
सुरमायामां भूली पडी, ओळख्यो नहि स्वामिन । ३१ ।
बारणे पुत्री हेरती, जार जननी जेह,
जाळीएथी जोती तदा, करी कोट ऊँची तेह । ३२ ।
एटळे गौतम आविया करी, नित्य कृत पावन,
उघाड करी उभा रह्या, बारणे ते मुनिजन । ३३ ।
साद स्वामीनो ओळख्यो त्यारे नारी थई भयभीत,
कपट जाण्युं कामनी कंई, दीसे छे विपरीत । ३४ ।
अरे दुराचारी तुं कोण छे ? तव इंद्र बोल्यो वाण,
भामनी कहे भाग सत्वर, करी जा निरवाण । ३५ ।

हे स्वामी ! तुम सर्वज्ञ हो। (अतः) शास्त्र-न्याय का विचार करके देखो। जो दम्पती (पति-पत्नी) इस समय वह कृत्य करते हैं, वे नरक में जाते हैं'। २८। (इसपर कपट-वेषधारी) इन्द्र कहता है (बोला) —'जो भी शुभ या अशुभ कर्म हो, उसे जान लेने का तुम्हें क्या कारण है ? जो मेरी आज्ञा है, उसका पालन करना—वही तुम्हारा मुख्य धर्म है। २९। तब उसने (अपने) स्वामी का वचन स्वीकार कर लिया, दरवाजे में (अपनी) कन्या को बैठाया और घर का दरवाज़ा बन्द कर लिया। ३०। फिर (उस) सुन्दरी ने (कपट वेषधारी) इन्द्र को देह-संग प्रदान किया—वह मन में यह कपट नहीं जानती है (थी)। देवमाया के कारण (प्रभाव से) उसने धोखा खाया, क्योंकि उसने स्वामी को नहीं पहचाना (था)। ३१। दरवाज़े (के बाहर) से (वह) कन्या (अपनी) जननी को गौर से देखती थी, जो जारिणी है। तब वह गरदन को ऊँचा करके झरोखे में से देखती थी। ३२। इतने में (अपने) पवित्र नित्य कर्म (पूर्ण) करके गौतम (लौट) आये। 'खोलो' कहकर मुनिवर दरवाज़े में खड़े रहे। ३३। स्वामी की आवाज पहचानकर (वह) स्त्री भयभीत हो गयी। (अब) कामिनी ने कपट जान लिया—यह कुछ विपरीत दिखायी दे रहा है। ३४। (फिर वह कामिनी—अहल्या पूछती है—) अरे दुराचारी ! तू कौन है ?' तो इन्द्र ने (कुछ) शब्द कहे। (फिर) वह स्त्री कहती है (बोली)—'जल्द भाग जाओ। मौन (धारण) करके

भय घणो मानी मुनि तणो, इंद्र ऊठियो तेणी वार,
अबळा ऊठी बेबाकळी, आवी उघाडचुं द्वार। ३६।
एवे इंद्र दीठो मुनिवरे, नीकळ्यो थई मंजार,
ते जोई गौतम कोपिया, मन चढी रीस अपार। ३७।
अल्या करम कूडुं आचरी, क्यां जाय ते मति पाप ?
तुज अंग थाजो सहस भग मुनिए ते दीधो शाप। ३८।
वळी पुरुषारथने बळे, तें सतीशुं कर्यो व्यभिचार,
माटे नपुंसक तुं थजे, पामजे दुःख अपार। ३९।
ते सहस भग इंद्रने अंगे, थयां श्रीरघुवीर,
वळी केटलांक दिन नपुंसक रह्यो, धरी मोर शरीर। ४०।
एम घणा दिन दुःख भोगव्युं, पछी कर्युं प्रायश्चित प्राण,
मघवापतिने भग मटी थयां सहस्रलोचन जाण। ४१।
हवे अहल्याशुं क्रोध करी गौतमे दीधो शाप,
तुं थजे पाषाण शल्या, जार बुद्धि आप। ४२।
त्यारे कर जोडी कहे कामनी, मारो नथी अपराध,
ए कपटरूपे आवियो, में जाण्या तमने साध। ४३।

जाओ।' ३५। मुनि (गौतम) से बहुत भय मानकर इन्द्र उस समय उठ गया। वह अबला (स्त्री अहल्या) व्याकुलता के साथ उठ गयी और आकर उसने दरवाजा खोल दिया। ३६। उस समय मुनिवर ने इन्द्र को देखा—वह मध्य-गृह से निकल गया। उसे देखकर गौतम ऋषि क्रुद्ध हो गये—उनके मन में अपार क्रोध चढ़ गया। ३७। वे बोले—' हे पापमति! कपट कर्म का आचरण करके कहाँ जाता है ? ' (फिर) मुनि ने उसे शाप दिया—' तेरे अंग में सहस्र भग (स्त्री-योनि के समान छेद-से चिह्न) उत्पन्न हो जाएँ। ३८। पुरुषार्थ के बल से तूने (एक) सती के साथ व्यभिचार किया। इसलिए तू नपुंसक हो जाए और अपार दुःख को प्राप्त हो जाए '। ३९। (फलस्वरूप) हे रघुवीर ! इन्द्र के अंग में एक हजार भग (उत्पन्न) हो गये। इसके अतिरिक्त वह कितने ही (बहुत) दिन मोर का शरीर धारण कर नपुंसक बना रहा। ४०। इस प्रकार इन्द्र ने बहुत दिन दुःख का भोग किया। बाद में उसने प्राण-प्रायश्चित कर लिया। (उसके फलस्वरूप) इन्द्र के (शरीर में उत्पन्न) भग-चिह्न मिट गये और समझो (उनके स्थान पर) हजार नेत्र (उत्पन्न) हो गये। ४१। अब अहल्या के प्रति क्रोध करके गौतम ने उसे (यह) शाप दिया—' तू स्वयं जार-बुद्धि है, (अतः) तू पाषण-शिला बन जाए '। ४२। तब (उस) कामिनी ने हाथ जोड़कर

मुनि कहे में हांक मारी, त्यारे केम न दीधो शाप ?
इद्र जाण्या पछी पूरण भोग कीधा आप । ४४ ।
माटे शल्या था तुं सुंदरी, ए करम तारुं जाण,
वरस साठ सहस्र सुधी, भोगवजे निरवाण । ४५ ।
त्यारे दिन थई अबळा कहे, अनुग्रह करो स्वामिन,
हावे पछी क्यारे पामीश, तमारुं दरशन ? ४६ ।
ऋषि कहे रविकुळ मांहे धरशे नारायण अवतार,
ते रामनी पदरज थकी, पामीश तुं उद्धार । ४७ ।
एवुं कहेतामां शल्या थईने, पडी जड आकार,
पछी अंजनीशुं बोल्या मुनि, करी क्रोध अपार । ४८ ।
तें जार जोयुं मातानुं, कर्युं करम अघटित जेह,
वानरनी पेरे ढूकती, करी कोट ऊँची तेह । ४९ ।
ते दोष माटे सुता तुज़ने, देउं छुं हुं शाप,
कपि-रूप थाजो ताहरुं एम बोलिया मुनि आप । ५० ।

कहा—' (इसमें) मेरा (कोई) अपराध नहीं है। वह कपट रूप में आ गया। मैने (उसे) आपके समान जाना '। ४३। (इसपर) मुनि ने कहा (पूछा) —' मैने (तुझे) पुकारा, तब (उसके कपट-रूप को जानते ही) तूने उसे शाप क्यों नहीं दिया ? इन्द्र को पहचाना (फिर भी) उसके बाद स्वयं तुम (लोगों) ने भोग-क्रिया पूर्ण की। ४४। इसलिए अरी सुन्दरी, तू शिला बन जा। समझ वह तेरा (ही) कर्म है। अतः तू (इस शाप को) साठ सहस्र वर्ष तक भोगे (गी) '। ४५। तब दीन होकर (वह) अबला कहती है—' हे स्वामी ! (मुझपर) कृपा कीजिए। (और बताइए कि) अब बाद में मैं आपके दर्शन कब प्राप्त करूँगी?'। ४६। (इसपर) ऋषि कहते हैं—' भगवान नारायण रवि-कुल में अवतार धारण करेंगे, तो (उनके अवतार रूप) श्रीराम के पद-रज (के स्पर्श) से तू उद्धार को प्राप्त होगी '। ४७। (ऋषि के) ऐसा कहते-कहते वह जड़ आकार (रूप को प्राप्त कर) शिला होकर पड़ गयी। बाद में अपार क्रोध करके मुनि (गौतम) अंजनी से बोले— ४८। '(तेरी माता ने) जो अघटित (अनुचित) कर्म किया, उस जार कर्म को तूने देखा। गरदन ऊँची करके वानर की तरह तू (मानो) निकट जाती थी (निकट से देखती थी)। ४९। अरी कन्या, उस दोष (अपराध) के लिए मैं तुझे शाप देता हूँ कि तेरा रूप वानर-रूप ऐसा हो जाए (गा) '। गौतम मुनि स्वयं ऐसा बोले। ५०। तब (वह) कन्या बोलती है (बोली)—' हे

त्यारे पुत्री कहे हे पिताजी, अनुग्रह करो आ दंन,
छोरु कछोरु थाय पण, मावाप सांखे मंन । ५१ ।
एवां वचन सुणीने दया आवी, बोल्या गौतम वाण,
ए शाप मिथ्या थशे नहि, सुण पुत्री कहुं परमाण । ५२ ।
केसरी वानर महाबळी ते, सुर तणो अवतार,
ते ऋषिमुखमां तने मळशे, थशे तुज भरथार । ५३ ।
अगियारमा जे रुद्र जे, तुज उदर थाशे तंन,
ते थकी शुभ कीरति थशे मानजे साचुं मंन । ५४ ।
एवुं सुणीने अंजनी, लागी पिताने पाय,
ते शाप शीश चढावीने, ऋषिमुख पर्वत जाय । ५५ ।
घरभंग थयुं मुनिवर तणुं तप नाश पाम्युं तेह,
इंद्र अंजनी अहल्याने, शाप दीधो जेह । ५६ ।
स्त्री-वियोगे थया उदासी, दुःख पामिया मन मांहे,
वद्रिकाश्रममां जई, तप करवा बेठा त्यांहे । ५७ ।
आज अहल्या ते उद्धरी, तम चरण-रज परताप,
शुभ रूप पामी मळ्यो स्वामी, नारी थई निष्पाप । ५८ ।

पिताजी, इस दिन (इस समय मुझ पर) अनुग्रह कीजिए । बालक कुबालक हो जाए (अर्थात् बिगड़ जाए), तो भी माता-पिता उसे मन में क्षमा करते हैं' । ५१ । ऐसी बातें सुनने पर (ऋषि को) दया आ गयी (अनुभव हुई), तो गौतम यह बात बोले—'यह शाप झूठा नहीं होगा । अरी लड़की, सुन, मैं सत्य कहता हूँ । ५२ । केसरी नामक (एक) वानर महाबलवान है । वह देवता का अवतार है । वह तुझे ऋष्यमुख पर्वत पर मिलेगा । वह तेरा पति होगा । ५३ । (ग्यारह रुद्रों में से) जो ग्यारहवाँ रुद्र है वह तेरे उदर से पुत्र (रूप में उत्पन्न) होगा । उससे तेरी शुभ कीर्ति होगी । (इसे) मन में सत्य मान' । ५४ । ऐसा सुनकर अंजनी (अपने) पिता के पाँव लगी (और) उस शाप को शिरोधार्य करके (आदर-पूर्वक स्वीकार करके) वह ऋष्यमुख पर्वत पर जाती है (गयी) । ५५ । इस प्रकार गौतम ऋषि का घर (गिरस्ती, परिवार) नष्ट हो गया । उससे (उनका) तप (भी) विनाश को प्राप्त हो गया जबकि उन्होंने इन्द्र, अहल्या और अंजनी को शाप दिया । ५६ । स्त्री-वियोग से वे उदासीन—विरक्त एवं खिन्न हो गये और मन में दुःख को प्राप्त हो गये । तब वे वदरिकाश्रम में जाकर तपस्या करने के लिए वैठ गये । ५७ । (हे श्री-राम !) तुमने आज अपने पदरज के प्रताप से उस अहल्या का उद्धार

ऐ अहल्यानी उत्पत्ति, तमने कही रघुवीर,
सराहना करी सुणी रामे, धन्य मुनि मतिधीर। ५९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

मतीधीर चाल्या जाय मारग, करता वात विचार रे,
एवे जनकपुर दूरथी देखायुं, त्यारे पूछे जुगदाधार रे। ६०।

*　　*　　*

किया। शुभ रूप को प्राप्त करके उसे (अपने) स्वामी मिल गये। (इससे वह) स्त्री निष्पाप हो गयी। ५८। हे रघुवीर! मैंने तुमसे अहल्या की वह उत्पत्ति (की कथा) कह दी। राम ने उसे सुनकर प्रशंसा की—हे धीरमति मुनि! आप धन्य हैं। ५९।

धीरमति मुनि (मिथिला के) मार्ग से जाते हैं (जा रहे थे), वे इसी बात का विचार करते थे। उस समय जनकपुर दूर से दिखायी दिया, तो जगदाधार श्रीराम उनसे पूछते हैं। ६०।

*　　*　　*

अध्याय—३१ (पद्माक्षी की कथा)

राग-देशाख

श्रीरघुवीर ऋषिने पूछे, कहो मुझने मुनिजन,
जनकरायनी पुत्री जानकी, केम थई उत्पन्न? १।
शा माटे पण कर्युं धनुष्यनुं, मिथिला पतिए जेह,
के दहाडानुं चाप पडचुं छे? कोनुं छे कहो तेह। २।
श्रीरामचंद्रना वचन सुणीने, बोलिया विश्वामित्र,
सीतानी उत्पत्ति कहुं सुणो, राघव पुण्य पवित्र। ३।

अध्याय—३१ (पद्माक्षी की कथा)

श्रीरघुवीर राम विश्वामित्र ऋषि से पूछते हैं, 'हे मुनि, मुझे यह बताइए कि जनक राजा की पुत्री जानकी कैसे उत्पन्न हुई? १। मिथिला-पति (जनक) ने जो धनुष-सम्बन्धी प्रण किया, वह किसलिए (किया)? कितने दिनों से (वह) धनुष (उनके यहाँ) पड़ा (हुआ) है? कहिए कि वह किसका है?' २। श्रीरामचन्द्रजी के ये वचन (प्रश्न) सुनकर विश्वा-

भूपति पूरवे एक हतो, तेनुं पदमाक्ष राजा नाम,
तेणे लक्ष्मीनुं आराधन कीधुं, धारीने मन काम। ४।
पछे पद्मा प्रकट थईने बोली, माग्य भूप वरदान,
त्यारे राय कहे मम पुत्री थाओ, ए मागुं छुं मान। ५।
कमला कहे हुं तारे मंदिर, सदा रहुं करी वास,
निश दिन साह्य करीश हुं तारी, विघ्न सकळनो नाश। ६।
पण पुत्री थई नव में रहवाये, स्वामी आधीन नार,
जो आज्ञा करे वैकुंठपति तो, लउं तुज घेर अवतार। ७।
त्यारे भूपतिए विष्णु आराध्या, प्रकटे वैकुंठनाथ,
माग्य माग्य वर आपुं तुंने, राय बोल्यो जोडी हाथ। ८।
लक्ष्मी मारी पुत्री थाये, ए मागुं मनकाम,
त्यारे हरिए हसीने फळ एक आप्युं, मातुलिंग जेनुं नाम। ९।
राखजे फळ ए रूडे ठामे, जत्न करी नव मास,
ए फळमांथी कन्या प्रकटशे, सुंदर रूप प्रकाश। १०।

मित्र बोले, —हे राघव राम, सीता की उत्पत्ति की शुभ एवं पावन कथा मैं कहता हूँ! सुनो। ३। पूर्वकाल में एक राजा था। उसका नाम पद्माक्ष-राज था। उसने मन में (एक) अभिलाषा रखकर लक्ष्मी की आराधना की। ४। (फिर) बाद में पद्मा अर्थात् लक्ष्मी प्रकट होकर बोलीं, 'हे राजा, वरदान माँग लो।' तब राजा कहता है, 'तुम मेरी कन्या (के रूप में उत्पन्न) हो जाओ, वह (वर) मैं माँग रहा हूँ। (उसे) स्वीकार करो।' ५। (इसपर) लक्ष्मी कहती हैं, 'मैं तुम्हारे मन्दिर अर्थात् प्रासाद में निवास करते हुए सदा (के लिए) रहूँगी। मैं रात-दिन तुम्हारी सहायता करूँगी, जिससे (तुम्हारे) सब विघ्नों का नाश हो जाएगा। ६। परन्तु (तुम्हारी) कन्या (के रूप में उत्पन्न) होकर मैं नहीं रहूँगी। स्त्री (अपने) पति के अधीन होती है। यदि वैकुण्ठ-पति (विष्णु) आज्ञा दें, तो मैं तुम्हारे घर अवतार लूँगी।' ७। तब राजा ने (भगवान्) विष्णु की आराधना की, तो (वे) वैकुण्ठनाथ प्रकट हो गये (और उन्होंने कहा)— 'माँग लो, माँग लो। मैं तुम्हें वर देता हूँ।' (तब) राजा हाथ जोड़ कर बोला। ८। 'मैं (अपनी) वह मनोकामना (वर के रूप में) माँग लेता हूँ—लक्ष्मी मेरी पुत्री (के रूप में) उत्पन्न हो (कर रह) जाए।' तब श्रीहरि (विष्णु) ने हँसकर (राजा को) एक फल दिया, जिसका नाम 'मातुलुंग' (बिजौरा नीबू) है। ९। (और कहा—) उस फल को अच्छे स्थान पर यत्नपूर्वक नौ महीने (तक) रखो। उस फल में से

पछे फळ लईने भूपति घेर आव्यो, राख्युं रूडे ठाम,
पूरे मास कन्या प्रकटी, लक्ष्मी जोनुं नाम । ११ ।
पद्माक्षी तेनुं नामज पाड्युं, दिन दिन मोटी थाय,
पछी कन्या ते वरजोग थई, अति ओपे अंग कळाय । १२ ।
त्यारे देव दनुज ने गांधर्व, किन्नर मोह पाम्या जोई रूप,
कन्या समान दीठो नहि वर को, ना कही सहुने भूप । १३ ।
पछे सरवे मळीने युद्ध आरंभ्युं, कन्या लेवा काज,
सप्त दिवस दारुण युद्ध कीधुं, पोते पद्माक्षराज । १४ ।
सरवे मळीने रायने मार्यो, नग्र ते लूंटी लीधुं,
सर्व कुटुंबनो नाश कर्यो, एवुं विपरीत कारज कीधुं । १५ ।
त्यारे कन्या जे पद्माक्षी, नामे लावण्य रूप अपार,
ते अग्नि कुंडमां समायां पोते, गुप्त थयां तेणी वार । १६ ।
पछे सरवे मळी परिशोध करी, पण नव दीठी कन्याय,
त्यारे निराश थई निजलोके गया सहु, पामी मन लज्जाय । १७ ।

(एक) सुन्दर रूपवती तेजस्वी कन्या प्रकट होगी । १० । फिर राजा फल लेकर घर आ गया और उसने (उसे) अच्छे स्थान पर रख दिया । (नौ) महीने पूर्ण होने पर (उस फल में से एक) कन्या प्रकट हुई, जिसका नाम (वस्तुतः) लक्ष्मी था । ११ । (फिर भी) उसका नाम ही 'पद्माक्षी' रखा गया । वह दिन-ब-दिन बड़ी होती (जाती) है (थी) । फिर वह विवाह-योग्य हो गयी । उसकी अंग-कान्ति अति शोभा देती है (थी)। १२। तब (उसके) रूप को देखकर देव, दानव और गन्धर्व, किन्नर मोह को प्राप्त हो गये (उसपर मोहित हो गये) । (परन्तु) कन्या के समान (योग्यतावाला) अर्थात् योग्य कोई वर नहीं देखा, (इसलिए) राजा ने सब से 'नहीं' कहा । १३ । अनन्तर कन्या को (प्राप्त कर) लेने के हेतु सबने मिलकर (पद्माक्ष राजा के साथ) युद्ध आरम्भ कर दिया । स्वयं पद्माक्षराज ने सात दिवस (तक) दारुण युद्ध किया । १४ । (अन्त में) सबने मिलकर राजा को मार डाला (और) उस नगर को लूट लिया । (राजा के) सब (पूरे) परिवार का नाश कर डाला—इस प्रकार विपरीत (नीति-नियम-विरुद्ध) काम कर डाला । १५ । तब अपार रूप (सौन्दर्य) लावण्यधारिणी 'पद्माक्षी' नामक जो कन्या थी, वह स्वयं (एक) यज्ञ-कुण्ड में पहुँच गयी और गुप्त हो गयी । १६ । बाद में सबने मिलकर उसकी खोज की, परन्तु उन्होंने कन्या को (कहीं) नहीं देखा । तब निराश होकर (तथा) मन में लज्जा को प्राप्त होकर वे सब अपने-अपने लोक

पछे दिवस केटला वही गया पूंठे, ब्रह्मारण्य मोझार।
एक अग्नि होमनो कुंड हतो, मुनि आश्रम केरे ठार। १८।
ते कुंडमांथी कन्या नीकळी, बारणे ऊभी आप,
अद्‌भुत रूप अनुपम शोभा, सुंदर तेज अपार। १९।
तेणे समे जातो हतो रावण, बेसी पुष्प विमान,
पृथ्वी ऊपर दृष्टि करी, दीठी कन्या शोभामान। २०।
विमान उतार्युं वसुधा ऊपर, मनमां अति उल्लास,
मोहनी रूप जोई मोह पाम्यो, सत्वर आव्यो पास। २१।
त्यारे कन्या तत्क्षण यज्ञ-कुंडमां, गुप्त थई ते ठार,
रावण वळतो विस्मे पाम्यो, चिंता व्यापी अपार। २२।
हवडां हती ते कन्या क्यां गई ? एम विचारे मन,
पछे कुंडमांहे ते शोधवा लाग्यो, राक्षसनो राजन। २३।
त्यारे कन्या तो कर चढी नहि ने, जडियां पंच रतन,
ते रत्न लेईने रावण आव्यो, लंकामां ते दन। २४।
पेटी मांहे मूक्यां लावी, जतन करी बहु पेर
पछे एकांतमां मंदोदरी साथे, बोल्या आनंद-भेर। २५।

(जगत्, स्थान) चले गये। १७। वाद में कितने (हाँ अर्थात् वहुत) दिन वीत गये। ब्रह्मारण्य में (एक) ऋषि के आश्रम के स्थान में एक होम का अग्नि-कुण्ड था। १८। उसमें से वह कन्या निकली और वह स्वयं दरवाज़े में खड़ी (रही) थी। उसका रूप अद्‌भुत था, उसकी शोभा, सौन्दर्य, तेज और प्रताप अनुपम था। १९। उस समय रावण पुष्पक विमान में वैठा हुआ जा रहा था। (जब) उसने पृथ्वी पर दृष्टि की (पृथ्वी की ओर देखा) तो उसने (वह) शोभायमान कन्या देखी। २०। उसने पृथ्वी पर विमान को उतार दिया। (उसके) मन में अति उल्लास था। (उस) मोहिनी के रूप को देखकर वह मोह को प्राप्त हो गया (मोहित हो गया) और सत्वर (उस स्थान के) पास आ गया। २१। तत्क्षण (वह) कन्या उस स्थान पर (स्थित) यज्ञ-कुंड में गुप्त हो गयी। फिर रावण आश्चर्य को प्राप्त हो गया। उसे अपार चिन्ता व्याप्त कर गयी। २२। अभी (जो कन्या यहाँ) थी, वह कहाँ गयी। वह मन में इस प्रकार विचार करता है (था)। फिर (वह) राक्षस-राज (रावण) कुण्ड में उसे खोजने लगा। २३। तव कन्या (तो उसके) हाथ नहीं आयी और (फिर भी उसे) पाँच रत्न मिल गये। उन रत्नों को लेकर रावण उस दिन लंका में आ गया। २४। उन्हें लाकर (उसने) एक सन्दूक में

सुण राणी हुं तारे काजे, लाव्यो रत्न अमूल्य,
सकल विश्वमां ना मळे एवां, नावे ते समतुल्य । २६ ।
पेली पेटीमां रत्न मूक्यां छे, जत्न करी में आज,
एवी वात सुणीने मंदोदरी, ऊठी रत्न जोवाने काज । २७ ।
राय राणी बन्यो जण जईने, पेटी उघाडी ज्यारे,
ते पेटीमां खट मासनी कन्या, रमती दीठी त्यारे । २८ ।
छे सती-शिरोमणि राणी मंदोदरी, ओळखियुं एंधाण,
लक्ष्मी-रूप जाणीने, रावण प्रत्ये बोली वाण । २९ ।
हे स्वामी शुं करवा लाव्या, आ कन्याने घेर ?
कारण-रूप ए देवी छे माटे, विघ्न थशे बहु पेर । ३० ।
जे कहवाय माया आदि शक्ति, सृष्टि उदे गुण-खाणी,
जे सरव विश्वना नियंता ईश्वर, तेनी ए पटराणी । ३१ ।
ए तो छे अग्निनी ज्वाळा, हुं जाणुं एनी पेर,
घणु विघ्न थशे ने लंका जशे, जो राखशो एने घेर । ३२ ।

रख दिया और बहुत प्रकार से (उसकी) रक्षा की (करता रहा)। फिर (एक दिन) एकान्त मे आनन्द के साथ वह मन्दोदरी से बोला । २५ । 'हे रानी, सुनो । मै तुम्हारे लिए अनमोल रत्न लाया (हूँ) । ऐसे रत्न सारे विश्व में नहीं मिलते—उनके समतुल्य (समान रत्न) नही आते । २६ । उस सन्दूक में आज मैने यत्नपूर्वक (वे) रत्न रखे है ।' ऐसी बात सुनकर मन्दोदरी रत्नों को देखने के लिए उठ गयी । २७ । समझो, राजा और रानी दोनों ने जाकर उस सन्दूक को खोला, तब उन्होने उस सन्दूक में छः मास (अवस्था-वाली) कन्या खेलती हुई देखी । २८ । रानी मन्दोदरी सती-शिरोमणि है । उसने (उस कन्या के) लक्षण पहचान लिये (और) उसे लक्ष्मी-स्वरूपा जानकर उसने रावण से (यह) बात कही । २९ । 'हे स्वामी, इस कन्या को क्या करने के लिए आप घर लाये ? वह कारण-स्वरूपा देवी है । इसलिए (इसके यहाँ रहने से) वहुत प्रकार से विघ्न (उत्पन्न) होगे । ३० । जो माया और आदिशक्ति कहाती है, जिस गुण-खनि से सृष्टि का उदय होता है, वह यही है और जो समस्त विश्व का नियन्ता ईश्वर है, उसकी यह पटरानी है । ३१ । वह तो अग्नि की ज्वाला है । इसका समाचार (परिचय) मैं जानती हूँ । यदि उसे घर में रखोगे, तो भारी विघ्न (उत्पन्न) हो जाएगा और लंका (हाथ से निकल) जाएगी (अथवा नष्ट होगी) । ३२ । उसने पद्माक्षराज को मरवा डाला । इसलिए पेटी-सहित उसे निश्चय ही दूर दूसरे देश में छोड़

एणे मराव्यो पद्माक्षराजा, पुरनो कराव्यो संहार,
माटे दूर देशांतर पेटी सुध्धां, मोकली दो निरधार। ३३।
त्यारे भय पामी रावणे, बोलाव्या, वळता सेवक जन,
पेटी लेवा मांडी त्यारे कन्या बोली वचन। ३४।
हळवे रहीने लेजो मुजने, अंगे न थाय प्रहार,
हुं आवीश पाछी लंका, करवा रावण-कुळ संहार। ३५।
एवुं सांभळी राय खड्ग ग्रही ऊठ्यो, मारवाने करी क्रोध,
त्यारे राणी कर झाली कहे स्वामी, हवडां थशे विरोध। ३६।
जो कुशळ इच्छो तो ए कन्याने, काढो दूर विदेश,
एवुं कहीने क्रोध शमाव्यो, सरवो करी उपदेश। ३७।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

उपदेश राणीए कर्यो, समझाव्यो रावणराय रे,
पछे सेवक पेटी लईने चाल्या, ते उत्तर देशे जाय रे। ३८।

* * *

दो। ३३। तब भय को प्राप्त होकर रावण ने बाद में सेवक जन बुला लिये। वे पेटी उठाने लगे तो वह कन्या (यह) बात बोली। ३४। 'मुझे हौले से रहकर (उठा) लो, (जिससे मेरे) अंग में कोई प्रहार (आघात) न हो जाए। मै रावण के कुल का संहार करने के लिए लंका में फिर वापस आऊँगी'। ३५। ऐसा सुनकर राजा रावण गुस्सा करके (उसे) मार डालने के लिए खड्ग लेकर उठ गया। तब (उसका) हाथ पकड़कर रानी मन्दोदरी (उससे) कहती है (बोली)—'हे स्वामी, अब विरोध होगा। ३६। यदि (तुम अपना) कुशल चाहते हो, तो उस कन्या को दूर विदेश में ले जाओ।' इस प्रकार पक्षपात-रहित उपदेश देते हुए रानी ने उसके क्रोध का शमन कर दिया। ३७।

रानी ने रावणराज को उपदेश दिया और समझा दिया। फिर वे सेवक पेटी लेकर उत्तर देश की ओर चल दिये। ३८।

* * *

अध्याय—३२ (सीता की उत्पत्ति)

राग धनाश्री

विश्वामित्र कहे सुणो रघुरायजी, ते पेटी लईने अनुचर जाय जी;
लावी ने दाटी जनकपुर पास जी, वळिया पाछा रावणना दास जी ।१।

ढाळ

दास दाटी गया पेटी, जनकपुरनी पास,
ते क्षेत्र कृषि करवा तणुं, लक्ष्मीए पूर्यो वास । २ ।
पद्माक्षराजा मृत्यु पाम्यो, थई पूरव पेर,
ते जनकपुरमां अवतर्यो छे, ब्राह्मण केरे घेर । ३ ।
ते वेदशास्त्र पुराण भणियो, शील धर्म सुजाण,
एक समे राजा जनक, करता हता यज्ञ प्रमाण । ४ ।
ते द्विज ने भूमिदान आप्युं, क्षेत्र पेलुं जेह,
कृषि करावाने विप्र चाल्यो, धरी मनमां नेह । ५ ।
खेडवा मांडी भूमि ज्यारे, वर्षा ऋतुनी मांहे,
हळ तणी अणीए भराई, पेटी नीकळी छे त्यांहे । ६ ।

अध्याय—३२ (सीता की उत्पत्ति और बाल-लीला)

विश्वामित्र कहते है, ' हे रघुराज राम, सुनो । उस पेटी को लेकर (रावण के) सेवक जाते हैं (गये) । जनकपुर के पास लाकर रावण के दासों ने उसे गाड़ दिया (और) वे वापस (जाने को) मुड़ गये । १ (रावण के वे) दास जनकपुर के पास (जिस क्षेत्र मे पेटी) गाड़कर (चले) गये, कृषि करने योग्य उस क्षेत्र को लक्ष्मी ने अपने निवास से भर दिया (—अर्थात् समृद्धि की देवी लक्ष्मी वहाँ रहने लगी) । २ यह पूर्व वृत्तान्त (कथा) है कि पद्माक्ष राजा मृत्यु को प्राप्त हो गया । वह जनकपुर में (एक) ब्राह्मण के घर मे अवतरित हुआ है (था) । ३ उसने वेद-शास्त्र और पुराणों का अध्ययन किया । वह शील, धर्म (-निष्ठा) से युक्त तथा सुज्ञानी था । एक समय जनक राजा (शास्त्र आदि से) प्रमाणित यज्ञ कर रहे थे । ४ जहाँ वह क्षेत्र था, वह भूमि (जनक ने उसे) ब्राह्मण को दान में दी । (उसके प्रति) मन में स्नेह रखते हुए (वह) ब्राह्मण खेती करने के लिए चल दिया । ५ वर्षा ऋतु में जब उसने खेत जोतना शुरू किया, तो हल (के फाल) की नोक में (वह) पेटी उलझ गयी और वहाँ वह (बाहर) निकल आयी । ६ उसे देखकर (वह) ब्राह्मण विस्मित हो गया । वह (तो) स्वधर्म का पालन-कर्ता और सद्विवेकी

ते जोई ब्राह्मण थयो विस्मे, स्वधर्मी सुविवेक,
ए हशे थापण रायनी पेटीमां द्रव्य विशेक। ७।
शिर चढावीने लेई आव्यो, जनक नृपनी पास,
ल्यो रायजी थापण तमारी, पडी आ परकाश। ८।
महाराज मुजने आपियुं, तमो क्षेत्र जे भूपत्य,
ते मध्येथी नीकळी, ए तमारी संपत्य। ९।
सहु सभा जोतां मिथिलापतिए, पेटी उघाडी तेह,
तेमां दीठी पंच वर्षनी, कन्या अद्‌भुत एह। १०।
अति रूप सुन्दर जोईने, आश्चर्य पाम्युं सर्व,
वखाणतां सरस्वती हारे, रति मूके गर्व। ११।
नृपति हरख पाम्या घणुं, कन्या तणुं जोई मुख;
कांई प्रजा नहोती रायने, माटे थयुं अति सुख। १२।
ते विप्रने कन्या बरोबर, कनक आप्युं राय,
वळी वस्त्राभूषण आपी, भूपे लीधी छे कन्याय। १३।
गज अश्व कंचन भूमि रथ, गौ दान आप्यां राय,
जनक हरख्या जोई कन्या, ऊलट अंग न माय। १४।

था। (उसने सोचा कि उस) पेटी में विशेष (अधिक, असाधारण) द्रव्य होगा; वह राजा की धरोहर होगी। ७ (इसलिए उस पेटी को) सिर पर चढ़ाकर (उठाकर) वह जनक राजा के पास आ गया। (उसने कहा)–' हे राजा, अपनी धरोहर लीजिए। यह प्रकट हो गयी। ८ हे महाराज, आपने मुझे जो खेत दिया, उस (के बीच) में से (यह) निकल आयी। (अतः) वह आपकी सम्पत्ति है। ९ समस्त सभा के देखते हुए (अर्थात् समक्ष) मिथिला के राजा ने वह पेटी खोल दी तो उसमें (उन्होंने) पाँच वर्ष (अवस्था) की वह अद्‌भुत कन्या देखी। १० (उसके) अतिशय सुन्दर रूप को देखकर सब आश्चर्य को प्राप्त हो गये। उसकी सुन्दरता का बखान करते हुए सरस्वती (मानो) हार जाती है; (उसकी सुन्दरता को देखते हुए) रति (अपना सौन्दर्य सम्बन्धी) गर्व छोड़ देती है। ११ (उस) कन्या के मुख को देखकर राजा (जनक) बहुत आनन्द को प्राप्त हो गये। राजा के कोई सन्तान नहीं थी, इसलिए उन्हें अति सुख हो गया। १२ राजा ने उस ब्राह्मण को (उस) कन्या के (वजन के) बराबर सोना दे दिया। सिवा उसके, अतिरिक्त वस्त्र और आभूषण देकर राजा ने (ब्राह्मण से) उस कन्या को ही लिया है (था)। १३ उस अवसर पर) राजा ने हाथी, घोड़े, सोना, भूमि, रथ, गायें— ये दान में दिये।

त्यारे शतानंदे नाम पाड्युं, पुत्रीनुं तेणी वार,
हळ सीतास्पर्शे प्रकट थई माटे, नाम सीता सार । १५ ।
विदेह-कन्या माटे कहिये, वैदेही गुणवान,
जनक-तनया ते माटे, जानकी ए अभिधान । १६ ।
साक्षात् लक्ष्मी-रूप ए छे, प्रकट थई तम घेर,
तेवुं सांभळीने राय हरख्या, थई छे लीला-लहेर । १७ ।
वैशाख मासे सीत नौमी लग्न शुभ विधुवार,
ते दिवसे प्रकट्यां जानकी, ए अजन्मा अवतार । १८ ।
सहु नग्रमां आनद वरत्यो, मंगळ उत्सव थाय,
पछे सुनयना राणीने सोंपी, राजाए कन्याय । १९ ।
दिन दिन वृद्धि पामतां, विधु शुक्ल पक्ष कळाय,
नाना विधनां लाड करतां, हरखे मात-पिताय । २० ।
परशुरामे नक्षत्री पृथ्वी, करी एकवीस वार,
विराम पामी एक समे आव्या, जनकपुर मोझार । २१ ।

कन्या को देखकर जनक राजा आनन्दित हो गये । (उनका) उत्साह-आनन्द अंग में नहीं समाता (था) । १४ तब उस समय शतानन्द ने (उस) कन्या का नामकरण कर दिया । हल की सीता (फाल से भूमि में बने गढ़े या कूँड) के स्पर्श से वह प्रकट हो गयी (थी), इसलिए 'सीता'—यह सुन्दर नाम रखा गया । १५ वह विदेह (के कुल में उत्पन्न) कन्या है, इसलिए उस गुणवती को 'वैदेही' कहिए । वह जनक की कन्या है; इसलिए (उसका) नाम 'जानकी' होगा । १६ "हे राजा, जो आपके घर प्रकट हो गयी वह (कन्या) साक्षात् लक्ष्मी-स्वरूपा है ।" —ऐसा सुन कर राजा आनन्दित हो गये । (वहाँ तो) अति आनन्द हो गया (था) । १७ वैशाख महीने की शुक्ला नवमी के शुभ लग्न पर सोमवार का दिन था । उस दिन जानकी प्रकट हो गयी । वह अजन्मा और (लक्ष्मी का) अवतार है । १८ समस्त नगर में आनन्द हो गया । (उस अवसर पर) मंगल उत्सव सम्पन्न हो जाता है (हो गया) । फिर राजा ने वह कन्या सुनयना (नामक अपनी) रानी को सौंप दी । १९ शुक्ल पक्ष के चन्द्र की कला की भाँति वह प्रतिदिन वृद्धि को प्राप्त होती रही । (उसके) माता-पिता अनेक प्रकार से लाड़ करते-करते आनन्दित हो जाते है (थे) । २० (यह कथा विख्यात है कि) परशुराम ने पृथ्वी को इक्कीस वार निःक्षत्रिय कर दिया और विश्राम को प्राप्त हो जाने पर वे एक समय जनकपुर में आ गये । २१ शिवजी ने (उन्हें) अपना धनुष दिया (था) ।

त्रंबक धनुष शिव तणुं आप्युं, स्कंध भराव्युं तेह,
फरशी कर ग्रही कटी बांध्यां, अक्षे भाथां जेह। २२।
एवा भृगुपतिने जोईने, ऊठ्या जनक तेणी वार,
साष्टांग नमिया भूपति, पछें कर्यो बहु सत्कार। २३।
सिंहासन ऊपर बेसाडी, पूजा करी बहु पेर,
भोजन समे थयो त्यारे, राजा तेडी लाव्या घेर। २४।
चोकमां त्रंबक धनुष मूकी, गया मंदिर मांहे,
बारणे रमतां जानकीए, धनुष दीठुं त्यांहे। २५।
त्यारे सीता सायक ग्रही करमां, रमे चोक ज मांहे,
घोडो करीने फेरवे, करे वाळचेष्टा तांहे। २६।
भार्गव ऊठ्या करी भोजन, आव्या मंदिर बहार,
जुए तो त्रंबक नव दीठुं, मूक्युं हतुं जे ठार। २७।
एटले दीठां जानकी रमतां, धनुष ग्रहीने पाण,
आश्चर्य पामी भृगुपति कहे, जनक प्रत्ये वाण। २८।
अरे राय त्रंबक शिव तणुं, महा कठण गौरव जेह,
एक सहस्र वारणथकी सायक, न हाले वळी तेह। २९।

उसे जिन्होंने (अपने) कन्धे पर रखा (था), हाथ में परशु लिया (था), जिन्होंने कमर में अक्षय (अर्थात् जिसमे बाण कभी समाप्त नहीं होते, ऐसा) भाथा (तरकश) बाँध लिया (था), ऐसे उन भृगुपति (परशुराम) को देखकर, उस समय जनक (आदर-पूर्वक) उठ गये। राजा ने (उनको) साष्टांग नमस्कार किया और अनन्तर बहुत सत्कार किया। २२-२३ (जनक राजा ने (उन्हें) सिंहासन पर बैठा लिया (और) बहुत प्रकार से (उनका) पूजन किया। भोजन का समय हो गया; तब राजा उन्हें बुलाकर घर ले आये। २४ आँगन में शिव-धनु छोड़कर वे प्रासाद में (भोजन के लिए) गये, तो खेलते हुए जानकी ने (वह) धनुष वहाँ देखा। २५ तब हाथ में धनुष लेकर सीता आँगन में ही खेल रही है (थी), उसे घोड़ा करके (मानकर) वह घुमाती है (थी। इस प्रकार वह) वहाँ बाल-लीला करती है (थी)। २६ भार्गव परशुराम भोजन करके उठ गये, तो प्रासाद से बाहर आ गये। देखते हैं, तो जिस स्थान पर छोड़ा (था), वहाँ शिव-धनु नहीं देखा (नहीं दिखायी दिया)। २७ इतने में उन्होंने सीता को हाथ में धनुष लेकर खेलते देखा। तो आश्चर्य को प्राप्त होकर परशुराम ने जनक से (यह) बात कही। २८ 'हे राजा, शिवजी का वह धनुष महा कठिन है— जिसमें (कठिन होने में ही) उसका गौरव है।

तेने कर ग्रही कन्या रमे, फेरवे चोक मोझार,
ए कन्या कारण-रूप जाणो, लक्ष्मीनो अवतार। ३०।
एटले आवी जोयुं जनके, रमे पुत्री ज्यांहे,
त्यारे धनुष मूकी जानकी, नासी गयां घर मांहे। ३१।
भृगुपति कहे सुणो भूपति, एक पण करो तमो राय,
जे पण पाळे ते पुरुषने, परणावजो कन्याय। ३२।
प्रत्यंचा ए धनुष्यनी, जे चडावे बळवान,
एम स्वयम्वर जीते सही, तेने देजो कन्या दान। ३३।
जमदग्नि-सुत तेवुं कही गया, बद्रिकाश्रम ज्यांहे,
ते दिवसथी त्रंबक धनुष ए, रह्यु जनकपुर मांहे। ३४।
ते सीताजीनो स्वयम्वर कर्यो, तमे सुणो श्रीरघुवीर,
त्यां भूप सहु आव्या हशे, वळी मुनि घणा मति धीर। ३५।
एम कन्या देवा धनुषनुं पण, कर्युं छे मिथिलेश,
निमंत्रण लखी तेडचा, पृथ्वीना राय अशेष। ३६।

इसके अतिरिक्त, (वह इतना भारी है कि) एक सहस्र हाथियों से (भी) वह नहीं हिल पाता। २९ उसे हाथ में लेकर (यह) कन्या खेल रही है, (और उसे) आँगन में घुमा रही है। (इसलिए इस) कन्या को कारण-स्वरूपा (अर्थात् विश्व का निर्माण आदि करनेवाली) तथा लक्ष्मी का अवतार समझो।' ३० इतने में जब जनक ने आकर देखा कि कन्या खेल रही है। तब जानकी धनुष को छोड़कर घर के अन्दर भाग गयी। ३१ (फिर) भृगुपति परशुराम ने कहा—' हे राजा, सुनो, तुम एक प्रण करो। हे राजा, जो (उस) प्रण का निर्वाह करेगा, उस पुरुष के साथ कन्या का विवाह कराओ। ३२ उस धनुष की प्रत्यचा (डोरी), जो शक्तिशाली पुरुष चढ़ाएगा, (और) इस प्रकार प्रण को ठीक से जीतेगा, उसको कन्या दान कर दो।' ३३ जमदग्नि के पुत्र परशुराम जब ऐसा कहकर बदरिकाश्रम गये, उस दिन से वह शिवधनुष जनकपुर में रहा। ३४ (तदनन्तर) हे रघुवीर! तुम सुनो। उन्होंने उन सीताजी का स्वयंवर (आयोजित) किया (है)। वहाँ सब राजा, उनके अतिरिक्त बहुत-से धीरमति मुनि (भी) आये होंगे। ३५ इस प्रकार कन्या (विवाह में) देने के लिए मिथिला के राजा जनक ने प्रण किया है। उन्होंने निमंत्रण (-पत्र) लिखकर पृथ्वी के सब राजाओं को आमंत्रित किया (है)। ३६ हे श्रीराम, मैंने सीता की उत्पत्ति की वह कथा तुम को

उत्पत्ति ए सीता तणी, तमने कही श्रीराम,
ए धनुष-पण कारण कह्युं, पावन कथा अभिराम । ३७ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अभिराम पावन कथा ए, कही रामने गाधिकुमार रे,
एटले आव्युं जनकपुर त्यारे, पाम्या हरख अपार रे । ३८ ।

* * *

सुनायी । इस धनुष-सम्बन्धी प्रण का कारण (भी) कहा । यह कथा पावन एवं मनोहर है । ३७

गाधि-पुत्र विश्वामित्र ने (चलते-चलते) वह मनोहर तथा पावन कथा श्रीराम से कही । इतने में जनकपुर (निकट) आ गया, तो वे अपार हर्ष को प्राप्त हो गये । ३८

* * *

अध्याय—३३ (श्रीराम के दर्शन से सीता का प्रभावित होना)

राग काफी

नग्र पासे छे उपवन, तेमां ऊतर्या कौशिक मुन्य,
राम लक्ष्मण बन्ने वीर, मुनि पासे रह्या मतिधीर । १ ।
स्थळ सुंदर शोभामान, तरुछाया घणी सुखवान,
त्यां दिनकर पाम्यो अस्त, करी संध्या विप्र समस्त । २ ।
सौमित्रीनी साथे राम, नित्यकर्म कर्युं अभिराम,
कर्यां आसन आच्छादन, पछे पोढ्या सहु मुनिजन । ३ ।
मुनि कौशिक केरा चरण, चांपे वीर बे अशरणशरण,
करे धर्मनीतिनी वात, एम करतां गई मधरात । ४ ।

अध्याय—३३ (श्रीराम के दर्शन से सीता का प्रभावित होना)

(मिथिला) नगर के समीप एक उपवन है (था) उसमें विश्वामित्र ठहर गये । धीरमति राम और लक्ष्मण दोनों भाई मुनि के पास (ही) ठहरे । १ वह स्थान सुन्दर और शोभायमान था । (वहाँ) पेड़ों की सुखदायी घनी छाया थी । वहाँ सूर्य अस्त को प्राप्त हो गया, तो समस्त मुनियों ने संध्या (-विधि सम्पन्न) की । २ श्रीराम ने लक्ष्मण के साथ (अपने) प्रिय नित्यकर्म (पूर्ण) किये । उन्होंने शय्या-आच्छादन कर लिया (अर्थात् शय्या बिछा दी) । अनन्तर सब ऋषि लेट गये । ३ (फिर) निराधार (जनों) के लिए आश्रय-स्वरूप वे दोनों बन्धु विश्वामित्र के पाँव दबाते हैं (थे) और वे धर्म-नीति-सम्बन्धी वातें करते हैं (थे) ।

मुनि कहे छे वारंवार, हवे पोढोने प्राण आधार,
आज्ञा मागी ऊठ्या मतिधीर, पोढ्या आसने बन्ने वीर । ५ ।
वीती रजनी ऊग्यो सूर, ऊठ्या विप्र तपस्वी पूर,
राम लक्ष्मण बे गुणवान, मुनि साथे कर्या छे स्नान । ६ ।
प्रातःकर्म कर्युं पावन, थई स्वस्थ बेठा मुनिजन,
मागी कौशिकनी आज्ञाय, राम उपवन जोवा जाय । ७ ।
तरु सफळ शोभे अंकोर, बोले हंस कारंडव मोर,
सरोवरमां सुगंधी कुंज, त्यां खटपट करता गुंज । ८ ।
करे लक्ष्मण साथे वात, वन जोता फरे बे भ्रात,
ते समे पूजवाने अंबा, आव्यां जनकसुता जगदंबा । ९ ।
ते सुखासन बेठी बाळी, संग सुंदरी बहु रखवाळी,
देवी देवळमांहे सधारी, वीनव्यां घणुं वहाल वधारी । १० ।
पूज्यां पारवतीने प्रीते, आरती वारती शुभ रीते,
कर जोडी कहे शीर नामी, हुं समोवड आपज्यो स्वामी । ११ ।

इस तरह करते-करते मध्य रात्रि बीत गयी । ४ मुनि उनसे बारबार कहते हैं (थे)—' हे प्राणाधार (बच्चो), अब लेट जाओ ।' (अन्त में) मुनिवर से आज्ञा माँग (ले)कर वे दोनों धीरमति भाई उठ गये और (अपनी) शय्या पर लेट गये । ५ रात बीत गयी, सूर्य का उदय हो गया, तो वे तपस्वी ब्राह्मण उठ गये । राम और लक्ष्मण दोनों गुणवानो (राजपुत्रों) ने मुनियों के साथ स्नान किया है । ६ मुनिजनो ने शुभ प्रात.कर्म (सम्पन्न) किया और वे स्वस्थ (निश्चिन्त) होकर बैठ गये । (तदनन्तर) विश्वामित्र की आज्ञा लेकर राम उपवन देखने के लिए जाते है (गये) । ७ (उस उपवन में) फलो से युक्त वृक्ष सुशोभित है (थे) । (उनकी) गोद में हंस, कारण्डव (बत्तख) मोर (मधुर) बोल रहे है (थे) । सरोवर में सुगंधित (कमलों का) कुंज था । वहाँ भौरे गुंजन कर रहे थे । ८ राम लक्ष्मण से बातें कर रहे हैं (थे,और) उपवन को देखते हुए दोनों भाई भ्रमण कर रहे हैं (थे) । उस समय जनक की कन्या-जगन्माता सीता, गौरी का पूजन करने के लिए (वहाँ) आ गयीं । ९ वे कन्या सुखद आसन पर बैठ गयीं । (उनके) साथ रखवाली करनेवाली अनेक सुन्दर स्त्रियाँ (सखियाँ) थी । (तदनन्तर) वे देवी के मंदिर में गयीं (और उन्होने) बहुत प्रेम (श्रद्धा) से (देवी से) प्रार्थना की । १० (उन्होंने) प्रेम (भक्ति)-पूर्वक पार्वती का पूजन किया (और) शुभ रीति से आरती उतारी । (तब) हाथ जोड़कर, सिर नवाकर वे कहती हैं (बोलीं)—'(हे माता,) मुझे मेरे अनुरूप (योग्य) पति देना ।' ११

पूज्युं पोते पोतानुं रूप, करे मानसी लीला अनुप,
संगे साहेली लेई सरखी, फूल वीणे सीता मन हरखी । १२ ।
सात वरस तणी कन्याय, पामे रूपे रति लज्जाय,
पद कुमकुम वरणा राजे, नेपुर अणवट घुघरी गाजे । १३ ।
नखमणिगण चळके अनुप, विधु सेवे जाणे धरी रूप,
करी सूंढ सुकोमल हस्त, धर्यां अंगद आदि समस्त । १४ ।
करे हथेळी रातीचोळ, ओढी चूंदडी रंग झबोळ,
मुखचंद्र कलंकरहित, आंख्य अणियाळी अंजन सहित । १५ ।
नाके सोहिये मोतीनो मोर, काने झाल झबूके जोर,
चारु चिबुके छूंदणुं लीलुं, घणुं शोभे अखंड रसीलुं । १६ ।
रक्त अधर हीराकणी दंत, रंगे राता घणां द्युतिवंत,
करी केसरी आड कपोळ, मध्ये टीलडी रातीचोळ । १७ ।

(तदनन्तर, वस्तुतः) उन्होंने स्वयं अपने (ही) रूप का पूजन किया। [पार्वती और सीता दोनों को जगन्माता मानते हैं—दोनों ही आदिशक्ति के रूप है। इस दृष्टि से पार्वती और सीता एक दूसरी के रूप मात्र हैं। परन्तु] वे (अब) मानवीय लीला कर रही हैं (थीं)। सीताजी मन में आनन्दित होकर, अपने ही समान (अनुरूप) सखियों को साथ में लिए हुए फूल चुन रही हैं (थीं)। १२ वे सात वर्ष अवस्था की कन्या हैं (थीं), फिर भी (उनके सामने) रूप में रति लज्जा को प्राप्त हो जाती है (थी)। (उसके) कुकुम वर्ण के (लाल-से) पाँव शोभायमान हैं (थे), (उनमें बँधे) नूपुर, अनवटें और घुंघरू बज रहे है (थे)। १३ उनके नख-रूपी अनुपम रत्न-समूह चमकते थे। मानो चंद्र, रूप धारण करके उनकी सेवा करता था। उनके सुकोमल हाथ मानो हाथी की सूँड़ (के समान) थे। उन्होंने (उनमे) अंगद आदि समस्त आभूषण धारण किये थे। १४ उनके हाथों की हथेलियाँ बहुत लाल थीं। उन्होंने रंग में डुबोयी हुई चुनरी ओढी (पहनी) थी। उनका मुखरूपी चंद्र कलंक-रहित (अर्थात् पूर्णतः उज्ज्वल) था। अंजन लगायी हुई (अंजन-सहित) उनकी आँखें कोरदार (अनियारी) थी। १५ उनकी नाक में मोतियों का (बना) मोर (मोर के आकार-वाली नथ) सुशोभित है (था); कानों में (पहने हुए) कर्णफूल झिल-मलाते हैं (थे)। उनकी सुन्दर चिबुक में सुन्दर गोदना था, जो निरन्तर रसीला बना हुआ बहुत शोभा देता है (था)। १६ उनके दाँत (मानो) हीरे की कलियाँ थे (और) लाल होंठ (अपने) लाल रंग से बहुत कांति-मान थे। उन्होंने भाल पर केसरिया रंग का आड़ा तिलक लगाया था, जिसके बीच में लाल-लाल बिन्दी थी। १७ गले में गुलूबन्द-सी मोतियों

गळुबंध मुक्तानी माळ, अंगोअंगनी शोभा रसाळ,
चाले हंसगति जाणे करणी, प्रतिबिंब पडे छे धरणी । १८ ।
सखी साथ करे मंद हास, थाय चंद्रना जेवो प्रकाश,
इंदिरा जक्त-जनुनी जेह, आदि शक्ति ईश्वरनी एह । १९ ।
कवि क्यम करी वरणवे रूप ? कहेतां हारे गिरा न रूप,
एवी जनकसुता शुभ अंग, जुए वाडीमां साहेली संग । २० ।
एवे सीताए दूरथी राम, दीठा श्यामसुंदर कोटीकाम,
तरु सघन सरोवर पाळ, त्यांहां ऊभा दशरथ-बाळ । २१ ।
एक हस्ते ग्रही तरुडाळ, बीजो बाहु कटिए विशाळ,
जोई चकित थई छे कुमारी, जाणे तनमन नाखुं वारी । २२ ।
रामे दीठुं सीतानुं रूप, मोह पाम्या त्रिभुवन भूप,
उपनी त्यां परस्पर प्रीत, जेवी चंद्र-चकोरनी रीत । २३ ।
सामसामी बंधायो तार, चारे नेत्र थयां तदाकार,
एकएकनी मूरति जेह, रुदेमांहे ठरी छे तेह । २४ ।

की माला थी। उनके अग-प्रत्यग की शोभा रसीली (मनोहर) थी। वे हंस-गति से चलती, (फिर भी) मानो वे हथिनी हों। उनका प्रतिबिम्ब धरती में पड़ रहा है (था)। १८ जब वे सखियों के साथ मन्द-मन्द हास्य कर रही है (थी), तो जान पड़ता था कि चन्द्र का-सा प्रकाश हो जाता है (था)। जो जगज्जननी लक्ष्मी हैं, वे (ही ये सीताजी) ईश्वर की आदिशक्ति है। १९ कवि (उनके) रूप का वर्णन किस प्रकार करे? वाणी (की देवी सरस्वती भी) वर्णन करने में हार जाती है, न कि (उनका) रूप (अर्थात् वाग्देवी कितना भी वर्णन करे, फिर भी उनके रूप का ठीक से वर्णन वह नहीं कर पाती)। श्रीराम ऐसी उन शुभांगी जनकसुता सीता को सहेलियों के साथ देखते हैं। २० वैसे ही सीता ने दूर से श्यामसुन्दर, करोड़ों कामदेवों-से श्रीराम को देखा। (उस उपवन में) सरोवर के किनारे सघन वृक्ष थे। वहाँ दाशरथी राम खड़े थे। २१ एक हाथ से उन्होंने पेड़ की शाखा पकड़ी (थी, और) दूसरा विशाल बाहु कमर पर (टिकाया हुआ) था। (उन्हें) देखकर वे कन्या (सीताजी) चकित हो गयी है (थीं); (उन्हें) लगता है कि (श्रीराम पर) तन-मन न्योछावर कर दूँ। २२ राम ने (भी) सीताजी का (सुन्दर) रूप देखा, तो त्रिभुवन के वे राजा मोह को प्राप्त हो गये। वहाँ (उनमें) परस्पर प्रीति उत्पन्न हो गयी, जैसे चन्द्र और चकोर की (प्रीति की) रीति होती है। २३ आमने-सामने (खड़े हुए उन दोनों में) प्रेम का

निजधर्म विचारी राम, चित्त राख्युं पोतानुं ठाम,
दृष्टि आडी करी तेणी वार, कहेशे लक्ष्मण आ शो विचार। २५।
पछी साहेली प्रत्ये सीता, वोली वचन मधुर पुनिता,
सखी पेला बे राजकिशोर, गौर-श्याम छबी चित्त-चोर। २६।
पूछ कोना हशे ए वाळ ? आव्य सत्वर काढी भाळ,
सुणी आव साहेली त्यांहे, राम लक्ष्मण ऊभा ज्यांहे। २७।
सखी वोली मस्तक नामी, कोना पुत्र तमो छो स्वामी ?
कोण नग्र तणा छो निवासी ? केम आव्या अहीं सुखराशी ?। २८।
त्यारे बोल्या हसी रघुराय, नग्र अवधपुरी कहेवाय,
राय दशरथना सुत धीर, हुं राम आ लक्ष्मण वीर। २९।
विश्वामित्रनी साथे आव्या, अमने मुनिवर तेडी लाव्या,
जोवा सीता-स्वयंवर काज, अमो आव्या जनकपुर आज। ३०।
एवां वचन सुणीने साहेली, सीता पासे गई वहेली वहेली,
कह्या सीताने समाचार, राम-लक्ष्मण राजकुमार। ३१।

तार वँध गया (और) चारों नेत्र (मानो) एकरूप हो गये। एक-दूसरे की जैसी मूर्ति थी, वह उनके हृदय में (प्रवेश कर) ठहर (प्रतिष्ठित हो) गयी। २४ (फिर) श्रीराम ने अपने (नीति-) धर्म का विचार करके (अपने) मन को उसके अपने स्थान पर रखा (अर्थात् वहकने अथवा विचलित होने नहीं दिया)। दृष्टि को तिरछी करके (अर्थात् सीता की ओर से दृष्टि हटाकर) वे उस समय कहते हैं (वोले)—'हे लक्ष्मण, यह कैसा विचार है ?' २५ बाद में सीताजी ने सहेली से यह मधुर एवं पवित्र बात कही—'हे सखी, गौर तथा श्याम कांतिवाले तथा मन को चुरानेवाले वे दो राजकुमार है। (उनके पास जाकर तू) पूछ कि वे किसके पुत्र हैं। यह जानकारी प्राप्त करके तू शीघ्र (वापस) आ।' (यह) सुनकर (वह) सखी वहाँ आती है (आ गयी), जहाँ राम और लक्ष्मण खड़े थे। २६-२७ (फिर) सिर नवाकर सखी वोली—'हे स्वामी, आप किसके पुत्र हैं ? किस नगर के निवासी हैं ? सुखराशि-से आप यहाँ क्यों आ गये ?' २८ तव हँसकर राम ने कहा—'एक नगरी अयोध्यापुरी कहाती है। हम उसके धैर्यशील राजा दशरथ के पुत्र हैं। मैं राम हूँ और यह लक्ष्मण (मेरा) बन्धु है। २९ हम विश्वामित्र (मुनि) के साथ आ गये। मुनिवर हमें बुलाकर लाये (हैं)। सीता का स्वयम्वर देखने के लिए हम आज जनकपुरी (में) आ गये (हैं)।' ३० ऐसी वातें सुनकर (वह) सखी सीताजी के पास जल्दी-जल्दी गयी।

वाई सुंदर श्याम स्वरूप, वर ए तम जोग अनुप,
सखी वचन सुणी सुकुमारी मनमां रही वात विचारी । ३२ ।
पितानुं पण संभारी सीता, चित्तमांहे थई भयभीता,
वीनवे विधिने त्रिपुरार, उमया करजो मुज सार । ३३ ।
कंई पूरव पुण्य प्रताप, चढावे राम ए शिवचाप,
तमो धर्म धोरींधर धीर, मुजने वरजो रघुवीर । ३४ ।
एम जानकी करतां विचार, नेत्रे जोतां राजकुमार,
पूछे लक्ष्मण जोडी हाथ, कोनी कन्या हशे रघुनाथ ? । ३५ ।
जेना रूपथकी रति लाजे, उपमा नथी एने काजे,
त्यारे वोल्या श्रीरघुवीर, सुण लक्ष्मण बंधव वीर । ३६ ।
ए तो जानकी जनककुमारी, आवी पूजवा शैलकुमारी,
अबळानुं छे एवुं रूप, जेथी मोह पामे सुर भूप । ३७ ।
आपणे रघुकुळना तन, राखीए दृढ निर्मळ मन,
परनारीथी रहीए विरक्त, जोई नव थईए आसक्त । ३८ ।

उसने सीताजी से समाचार कह दिये कि राम और लक्ष्मण राजपुत्र हैं ।३१ वाई (देवी), वे सुन्दर श्यामस्वरूप (राजकुमार) तुम्हारे वहुत ही योग्य वर है । सखी की वात सुनकर वह सुकुमारी मन में विचार करती रहीं । ३२ पिताजी के प्रण का स्मरण होते ही सीता मन में भयभीत हो गयी । (तव) वह विधाता, शिव और पार्वती से विनती करती है (थी)— 'मेरा भला करना । ३३ किसी पूर्व पुण्य के प्रताप से राम इस शिव-धनुष को चढ़ा दें । हे रघुवीर, आप धर्म-धुरन्धर, धीर पुरुष है । मेरा वरण करना ।' ३४ इस प्रकार सीता विचार करती रहीं और आँखों से राजकुमार (राम) को देखती रही । (इधर) तव लक्ष्मण हाथ जोड़कर राम से पूछते हैं— ' हे रघुनाथ ! यह किसकी कन्या है, जिसकी सुन्दरता से रति (भी) लज्जित हो जाती है ? उसके लिए कोई उपमा नहीं है ।' तव श्रीराम वोले— ' हे वीर वन्धु लक्ष्मण, सुनो । ३५-३६ वह जनक राजा की कन्या जानकी (सीता) है । वह शैलजा पार्वती की पूजा करने के लिए आ गयी (है) । स्त्री का ऐसा रूप तो (होता) है कि जिससे सुर-राज इन्द्र भी मोह को प्राप्त हो जाता है । ३७ (परन्तु) हम रघुकुल में उत्पन्न पुत्र हैं (जो) मन को दृढ़ एव निर्मल रखते हैं । हम पर-स्त्री से विरक्त रहते है । (उसे) देखकर आसक्त नही हो जाते । ३८ हम वुरी दृष्टि से किसी से प्रेम नहीं करते— धर्मशास्त्र की

कुदृष्टिए ना करीए प्रीत, धर्मशास्त्रनी एवी रीत,
परनारी ने परवित्त, स्वपने नव दीजे चित्त । ३९ ।
एम कही शुभ धर्मप्रकाश, पछे आव्या मुनिवर पास,
राखी ध्यानमां मूरति राम, गयां जनकसुता निज ठाम । ४० ।
जाणी जनकराजाए वात, आव्या कौशिक मुनि साक्षात,
ऊठ्या सभा सहित राजन, चाल्या तेडवाने मुनिजन । ४१ ।
वाजे वाजित्र नाना प्रकार, सर्वे आव्या ते वाडी मोझार,
ऋषि सूरज सरखा अनेक, शोभे एक एक करतां अधिक । ४२ ।
आव्या लागी नरपति पाय, वदे आशिष सहु मुनिराय,
गाधि-सुतने कर्यो साष्टांग, बेठा भूपतिमंडळ संग । ४३ ।
राम-लक्ष्मण मुनिवर पास, बेठा अद्भुत रूप प्रकाश,
गौर श्याम किशोर कुमार, दीठा जनके तेणी वार । ४४ ।
जोई रूप सुंदरता वेश, थया नरपतिरहित निमेष,
कहावे नाम विदेह ज एह, थया जोई विशेष विदेह । ४५ ।

(बतायी हुई) ऐसी (ही) रीति है कि पर-नारी और पर-सम्पत्ति की ओर सपने में भी मन नहीं लगाएँ।' ३९ शुभधर्म-प्रकाश से युक्त ऐसी बात कहने के वाद वे मुनिवर के पास आ गये। सीता ने राम की मूर्ति को ध्यान में रखा और वे अपने स्थान (घर) गयीं। ४० जनक राजा ने (इस) वात को जान लिया कि प्रत्यक्ष विश्वामित्र मुनि आ गये (हैं), तो वे राजा सभा (-जनों) सहित उठ गये; (और) मुनिजनों को बुलाने के लिए चल दिये। ४१ (उस समय) नाना प्रकार के वाद्य बज रहे हैं (थे)। सव (लोग) उपवन में आ गये। (वहाँ) सूर्य के समान (तेजस्वी) अनेक ऋषि थे, जो एक-दूसरे से अधिक शोभायमान हैं (थे)। ४२ राजा आकर (मुनि विश्वामित्र के) पाँव लगे, तो सब श्रेष्ठ मुनियों ने आशीर्वाद (कह) दिये। (तदनन्तर) राजा ने विश्वामित्र को साष्टाग नमस्कार किया और वे राजमण्डल के साथ बैठ गये। ४३ मुनिवर विश्वामित्र के पास अद्भुत रूप के प्रकाश से युक्त राम और लक्ष्मण बैठ गये। उस समय जनक ने गोरे और साँवले किशोर-अवस्था के (राज-) कुमारों को देखा। ४४ उनके रूप, सौन्दर्य और वेश को देखकर राजा जनक निमेष-रहित हो गये (अर्थात् चकित होकर आँखें फाड़कर-एकटक देखते रहे)। वे नाम से तो 'विदेह' कहाते हैं; (अव वे राम-लक्ष्मण को) देखकर विशेष अर्थ में 'विदेह (—सुध-बुध खोये हुए)' हो गये। ४५ बाद में समस्त सभा (-जनों) के सुनते हुए राजा जनक विश्वामित्र से पूछते हैं (बोले)—' कहिए हे मुनिवर, गौर और श्याम रूपधारी

पछी सुणतां सर्व सभाय, पूछे विश्वामित्रने राय,
कहो मुनि आ कोना तन, गौर श्याम बे रूप रतन ? । ४६ ।
शु रवि शशी बे धरी रूप, के बृहस्पति ने सुरभूप ?
उमापति रमापति एह, धरी काम वसंते देह । ४७ ।
वारुं कोटिक मीनकेतन, जेथी मोह पाम्युं मुज मन,
जाणे विश्वना प्राण आधार, एवा कोना छे सुकुमार ? । ४८ ।
सुणी भूपनां स्नेहवचन, त्यारे बोल्या कौशिक मुन्य,
राय दशरथना ए कुमार, बळ प्राक्रम रूप अपार । ४९ ।
घनश्यामतनु श्रीराम, गौर सुंदर लक्ष्मण नाम,
यज्ञरक्षा करी धनुधारी, ताडिका-सुबाहुने मारी । ५० ।
बळ प्राक्रम गुण चरित्र, कह्यां भूपतिने विश्वामित्र,
सुणी हरख पाम्या राजन, वळी शोकातुर थया मन । ५१ ।
रामरूप जोई थयुं सुख, पण संभारी पाम्या दुःख,
मुनि सर्वने तेडी राय, निज नग्रमां नरपति जाय । ५२ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नरपति जाय नग्रमांहे, तेडी सरवे मुनिजन रे,
राम लक्ष्मण साथे चाल्या, हरख्या जनक राजन रे । ५३ ।

* * *

ये दो रत्न किसके पुत्र हैं ? ४६ क्या सूर्य और चन्द्र ने (ऐसा) रूप धारण किया (है) ? अथवा बृहस्पति और इंद्र ने ? क्या ये शिवजी और विष्णु हैं; अथवा क्या कामदेव और वसन्त ने देह धारण कर ली ? ४७ (लगता है) जिनसे मेरा मन मोह को प्राप्त हो गया, उन पर करोड़ों कामदेवों को निछावर कर दूँ। मानो ये विश्व के प्राणाधार हैं। —ऐसे ये किसके सुपुत्र है।' ४८ तब राजा के स्नेहपूर्वक कहे वचन सुनकर विश्वामित्र मुनि बोले— ' वे राजा दशरथ के पुत्र है। वे बल, पराक्रम और रूप में असीम हैं। ४९ घन-श्याम शरीरधारी (ये) राम हैं, (और) गोरे सुन्दर (किशोर) का नाम लक्ष्मण है। इन धनुर्धारियों ने ताड़का और सुबाहु को मारकर (मेरे) यज्ञ की रक्षा की। ५० (फिर) विश्वामित्र ने (राम और लक्ष्मण के) बल, पराक्रम, गुण और शील के बारे में राजा से कहा। (वह सुनकर) राजा आनन्द को प्राप्त हो गये। (इसके सिवा) वे मन में शोकातुर (भी) हो गये। ५१ राम के रूप को देखकर उन्हें सुख (तो) हुआ, परन्तु (अपने) प्रण का स्मरण होते ही दुःख हुआ। (तदनन्तर) राजा जनक समस्त मुनियों को बुलाकर नगर में (ले) जाते हैं (गये)। ५२

सब मुनियों को बुलाकर राजा जनक नगर में (ले) जाते हैं (गये)। राम और लक्ष्मण (भी उनके) साथ चल दिये, तो जनक राजा आनंदित हो गये। ५३

* * *

अध्याय—३४ (श्रीराम का जनकपुर में प्रवेश)

राग सोरठ

राम जनकपुर आविया, विश्वामित्रनी साथ,
हेते करी तेडी जाय छे, मिथिला नगरीनो नाथ। राम०। १।
मुनिमंडळमां महालता, चालता बे चतुर,
शोभे ज्यम साधन विषे, ज्ञान विवेक पुर। राम०। २।
सुंदर पुर शणगारियुं, शेरी चौटां ने पोळ,
मनोहर मंदिर शोभतां, सामासामी छे ओळ। राम०। ३।
झळके छे ऊंची अटारीओ, सप्त भूमिना माळ,
छजां झरूखां नें रावटी, बोले कीर मराळ। राम०। ४।
धजा पताका फरफरे, जाणे तडिताकार,
शिखरे शिखंडी नाचता, कंचन कळश अपार। राम०। ५।
घरघर केरे आंगणे, मंगळ उपचार,
पूरण कुंभ ने साथिया, मोती तोरण द्वार। राम०। ६।

अध्याय—३४ (श्रीराम का मिथिला में प्रवेश)

विश्वामित्र के साथ राम जनकपुर (मिथिला) आ गये। मिथिला के राजा (जनक उन्हें) प्रेमपूर्वक बुलाकर ले जाते है (गये)। १ मुनियों के समुदाय में आनन्द और सम्मान पाते हुए दोनों चतुर राजपुत्र चल रहे थे। साधना (के क्षेत्र) में जैसे ज्ञान और विवेक (शोभा देते) हैं, वैसे वे (उन ऋषियों के समुदाय में) शोभायमान हैं (थे)। २ गलियाँ, बाजार और मुहल्ले—(सम्पूर्ण) नगर को सुन्दर सजा दिया (था)। (उसमें) भवन मनोहारी रूप में शोभा दे रहे थे। (उनकी) पंक्तियाँ आमने-सामने है (थीं)। ३ सात (-सात) खण्डों (मंजिलों) के भवनों की ऊँची-ऊँची अटारियाँ जगमगा रही हैं (थीं)। छज्जे, झरोखे और बरामदे भी जगमगा रहे थे जिनमें तोते और हंस बोलते (कूजन करते) हैं (थे)। ४ ध्वजाएँ और पताकाएँ फहर रही हैं (थीं), मानो वे बिजली के तार ही हों। (भवनों के) शिखरों पर मयूर नाच रहे थे। (ऐसे) अनगिनत स्वर्ण-कलश (वहाँ) थे। ५ प्रत्येक घर के आँगन में मंगल-उपचार चल रहे थे। (वहाँ पवित्र जल से) पूर्ण (भरे) कुम्भ तथा स्वस्तिक चिह्न, और दरवाज़ों में मोतियों के

नरनारी शोभे घणुं, जाणे देवना अंश
व्याधि दरिद्र पीडे नहि, पुण्यकारी प्रशंस। राम०। ७।
जे पुरमां लक्ष्मी रह्यां, धरी सीतानुं रूप,
तेनी शोभा शी कहुं जेनी, कीरति अनुप। राम०। ८।
एवी रचना रघुवर नीरखता, आवे नगर मोझार,
रूपना भूपने जोईने मोह्यां सहु नर नार। राम०। ९।
मोहन रूपनी मोहनी, मोही नगरनी नार,
जाणे पूतळीओ चित्रनी एम थई तदाकार। राम०। १०।
कोई अबळा लेती ओवारणां, कोई देती आशिष,
नेत्र भरीने नीरखती, कोई वीनवे ईश। राम०। ११।
ए वर सीता परणजो, छे सरखी जोड,
जो विधि जोग ते मेळवे, त्यारे पहोंचे कोड। राम०। १२।
त्यारे एक सखी बीजीने कहे, सुण वेनी वचन,
आवा रूपाळा राजवी, हशे कोना तन ?। राम०। १३।
गौर श्याम गुणवंत छे, कामरूप किशोर,
धनुषबाण कर शोभतां, नेत्र चपळ चकोर। राम०। १४।

बन्दनवार थे। ६ (उस नगर के) पुरुष और स्त्रियाँ अति सुन्दर हैं (थे) मानो वे देवताओं के अंश हों। उन्हें बीमारी और दरिद्रता पीड़ा नहीं पहुँचाती—ऐसे (वे लोग) पुण्यकारी और प्रशसनीय है (थे)। ७ जिस नगर मे लक्ष्मीजी सीता का रूप धारण करके रहीं, जिसकी कीर्ति अतुल्य है, उसकी क्या शोभा कहूँ (उसकी शोभा का वर्णन कैसे कर सकूँगा ?) ८ रघुवीर राम ऐसी (सुन्दर) रचना का निरीक्षण करते हुए नगर में आ जाते हैं (आ गये)। सुन्दरता के (ऐसे) राजा को देखकर नगर के सब पुरुष और स्त्रियाँ मोहित (मुग्ध) हो गये। ९ (श्रीराम के) मोहक रूप की मोहनी से नगर की स्त्रियाँ मुग्ध हो गयीं। वे (उन्हें देखते हुए) इस प्रकार तद्‌रूप हो गयीं मानो वे चित्र में अंकित पुतलियाँ अर्थात् मूर्तियाँ हों। १० (तब) कोई नारी वलैया लेती है (थी), तो कोई आशिष देती है (थी)। कोई उन्हें आँखो-भर निरखती है (थी), तो कोई भगवान् से विनती करती है (थी) कि वह वर (दूल्हा) सीता का वरण (पाणि-ग्रहण) करे। (दोनों की) यह अनुपम (बेजोड़) जोड़ी है। यदि विधाता संयोग से (इन्हें एक-दूसरे से विवाह द्वारा) मिला दें, तब (हमारी यह) मनीषा सफलता को पहुँचती है—अर्थात् सफल हो जाएगी। ११-१२ तब एक सखी दूसरी से कहती है (बोली)— 'हे सखी, (मेरी) बात सुनो।

सखी श्याम घणो सुकुमार छे, चाले लटकंती चाल,
ए वर सीता जोग छे, निश्चे परणशे काल । राम० । १५ ।
त्यारे बीजी कहे बाई सांभळो, सीता सुक्रीतवान,
अणचिंतव्यो आवी मळ्यो, गुणरूपे समान । राम० । १६ ।
त्रीजी त्रिया बोली तदा, शुं जाणो तमो आज ?
जनके तेडाव्या हशे, वरवाने काज । राम० । १७ ।
चोथी चतुरा कहे सखी, घणुं धनुष कठोर,
तेने केम चढावशे, सुकुमार किशोर ? । राम० । १८ ।
त्यारे पांचमी कहे पण पाळशे, राखो धीरज मन;
तेजस्वी गणीए नहि, लघु कोमळ तन । राम० । १९ ।
एम पंच मळी परमाणियुं, निश्चे वरशे राम,
सुक्रीत फळशे सीता तणुं, पहोंचशे मनकाम । राम० । २० ।
एवी नगरनी नारी वातो करे, धरे नेह अपार,
स्तुति विधि उमियानी करे मनावे त्रिपुरार । राम० । २१ ।

ये सुन्दर राजसी (कुमार) किसके पुत्र होंगे ? १३ गोरे और साँवले वे गुणवान हैं, मानो किशोर (अवस्था वाले) कामदेव के (ही) रूप अर्थात् अवतार हैं। उनके हाथों में धनुष-बाण शोभा दे रहे हैं। उनके नेत्र (मानो) चंचल चकोर (हो गये) है। १४ री सखी, साँवला किशोर बहुत सुकुमार है। वह लटकती चाल से है। वह सीता के लिए योग्य वर है। कल वह उसका निश्चय ही वरण करेगा।' १५ तब दूसरी सखी कहती है (बोली)— 'बाई, सुनो। सीता पुण्यवान् है। (उसके) गुण-रूप में अनुरूप वर (उसे) अप्रत्याशित रूप में आकर मिल गया।' १६ तब (इसपर) तीसरी चतुर स्त्री बोली— 'तुम आज क्या जानती हो ? विवाह कराने के लिए जनकजी ने (ही उन्हें) बुलाया होगा।' १७ (यह सुनकर) चौथी चतुर सखी कहती है (बोली)— 'अरी सखी, धनुष (तो) बहुत कठिन है। (वह) सुकुमार किशोर उसे कैसे चढ़ाएगा ?' १८ तब पाँचवीं सखी कहती है (बोली), '(राजा जनक) प्रण का पालन (तो) करेंगे (ही)। तुम मन में धीरज रखो। तेजस्वी को लघु कोमल शरीरधारी (होने पर भी लघु) न समझो।' १९ इस प्रकार पाँचों ने मिलकर प्रमाणित किया कि राम निश्चय ही (सीता का) वरण करेंगे। सीता के सुकृत (पुण्य) फलयुक्त हो जाएँगे और (उसकी) मनोकामना सफलता तक पहुँचेगी—सफल हो जाएगी। २० नगर की स्त्रियाँ राम के प्रति अपार स्नेह धारण (अनुभव) कर रही हैं (थीं)

सुक्रीत कँ जे अमे कर्या धरीने आ शरीर,
ते पुण्ये करी जानकी, वरज्यो रघुवीर। राम०। २२।
एवी रीते रघुनाथजी, आव्या राजद्वार,
मिथिलेशे मुनि पूजिया, करी सेवा अपार। राम०। २३।
एक मंदिर सुंदर शोभतुं, आप्युं देईने मान,
राम सहित मुनि ऊतर्या कर्या भोजन पान। राम०। २४।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

भोजन करियां भावतां, संतोष्या मुनिजंन रे,
कहे दास गिरधर ए कथा, पावन धरजो मंन रे। २५।

* * *

और ऐसी बातें कर रही है (थीं)। वे विधाता और उमा की स्तुति कर रही है (थी) और शिवजी को मना रही है (थीं) २१ —'हमने यह शरीर धारण कर जो पुण्यकर्म किये, उस पुण्य (के बल) से रघुवीर जानकी का वरण करे।' २२ इस प्रकार राम राज (-भवन के) द्वार (में) आ गये। (वहाँ) मिथिलाधिपति जनक ने मुनियों का पूजन किया और (उनकी) अपार सेवा की। २३ (नगर में) एक सुन्दर मन्दिर (प्रासाद) शोभायमान है (था)। जनक ने (वही) उन्हें सम्मानपूर्वक (निवास के लिए) दिया। (वहाँ) राम (और लक्ष्मण) सहित मुनि ठहर गये। (फिर) उन्होंने भोजन-पान किया। २४

मुनिजनों ने प्रिय (लगने वाला) भोजन किया तो वे सन्तुष्ट हो गये। गिरधरदास कवि वह पवित्र कथा कहते है—(श्रोता) उसे मन में धारण करें (उसकी ओर ध्यान दें)। २५

* * *

अध्याय—३५ (श्रीराम का स्वयंवर-मण्डप में आगमन)

राग धनाक्षरी

जनके तेडाव्या राय अनुप जी, दशे दिशाना आव्या भूप जी,
आप्यां आसन भोजन पान जी, सहुने उतार्या करी सन्मान जी। १।

अध्याय—३५ (श्री राम का स्वयम्वर-मण्डप में आगमन)

जनक ने श्रेष्ठ-श्रेष्ठ राजाओं को निमंत्रित किया, तो दसों दिशाओं के राजा (मिथिला) आ गये। उन्होंने (उन) सबको आसन, भोजन और पान (पेय) दिया (और उनका) सम्मान करके ठहरा दिया। १

ढाल

सन्मान करी सहुने उतार्या, मिथिलापतिए त्यांहे,
अपार सेना सकळ नृपनी, भीड थई पुरमांहे । २ ।
केटला राजा नगर बहार, उतर्या उपवन,
त्यां जनकना परधान फरता, आपे तृण जळ अन्न । ३ ।
रथ अश्व हस्ती पदाति दळ, चतुरंग सेन्या त्यांहे,
तेणे जनकपुर वींटयुं सकळ, ज्यम नाव सागरमांहे । ४ ।
निमंत्रण गयुं 'तुं अवधपुर, स्वयंवरनुं जेह,
छे दु:खी रामविजोगे दशरथ, माटे न आव्या तेह । ५ ।
मंडप रचाव्यो जनकराये, अति घणो विस्तार,
मणि स्तंभ कंचन कळश झळके, शोभानो नहि पार । ६ ।
वितान बंदन जरी झालर, दुलीचा बहु रंग,
जाळी मुक्ताफळ तणी, मणि रत्न तेज तरंग । ७ ।
सिंहासन सोना तणां, ते मूक्यां हारोहार,
मांहे खंड जुदा कर्या छे, मंडप घणो विस्तार । ८ ।

वहाँ मिथिलापति जनक ने सबको सम्मानित करके ठहरा दिया। सब राजाओं की अपार सेना से नगर में (अर्थात् नगर के समीप) भीड़ हो गयी। २ कितने (ही) राजा नगर के बाहर उपवन में ठहर गये। वहाँ जनक के मंत्री घूमते हुए (उनको) तृण का आसन, अर्थात् कुशासन या बिछावन, पानी, अन्न (भोजन) दे रहे हैं (थे)। ३ वहाँ रथ, अश्व, हाथी और पदाती सेना अर्थात् चतुरंग सेना थी। उससे समस्त जनकपुरी वैसे ही घिर गयी, जैसे सागर में (जल से) नौका (घिरी) रहती है। (अर्थात् सेना-सागर में जनकपुरी रूपी नौका स्थित थी।) ४ जब अयोध्या में (दशरथ राजा को सीता के) स्वयंवर का निमंत्रण (भेजा) गया था, तब दशरथ राम के वियोग से दुखी हैं (थे), इसलिए वे नहीं आये। ५ जनक ने अति वहुत विशाल मण्डप बनवा लिया। (उसके) रत्न-स्तम्भ और स्वर्ण-कलश झलक रहे हैं (थे)। उसकी शोभा की कोई सीमा नहीं है (थी)। ६ मण्डप के वन्दनवार ज़री की झालर के (बने हुए) थे। (वहाँ) बहुरंगी गलीचे (बिछे हुए) थे। मोतियों की जालियाँ थीं; मनकों और रत्नों के तेज की तरंगें (उभर रही) थीं। ७ स्थान-स्थान पर सोने के सिंहासन (रखे हुए) थे। उस अति विशाल मण्डप में अलग-अलग खण्ड किये (हुए) हैं (थे)। ८ उसके मध्य में चारों ओर (खुला) स्थान छोड़कर (रखा हुआ) शिवधनु (शोभायमान)

ते मध्यमां त्र्यंवक रह्युं छे, छूट चारे पास,
जनके धनुपपूजा करी, शुभ लग्नमां उल्लास । ९ ।
दूतने आज्ञा करी, भूपे तेडाव्या सहु राय,
ते सभा मांहे आविया, त्यां थई घणी शोभाय । १० ।
सिंहासन बेठा सकळ नृप, ज्यां जेनो अधिकार,
ऋषिमंडळ सहित आव्या, दशरथ राजकुमार । ११ ।
गौर श्याम किशोरतन, मनहरण मोहनरूप,
श्रवणारि-सुतने जोईने, मोह पामिया सहु भूप । १२ ।
ज्यम तारामंडळ क्षीण पामे, उदे रविनो थाय,
एम भूप सहु झांखा थया, ज्यारे आव्या श्रीरघुराय । १३ ।
एक दीर्घ सिंहासन सुभग छे, अधिक सहुथी सार,
श्रीराम लक्ष्मण मुनि, कौशिक बेठा तेणे ठार । १४ ।
अन्य मुनिजन सरव बेठा, सकळ पृथ्वीराय,
रूप जोई रघुवर तणुं, नव नेत्र तृप्ति थाय । १५ ।
सर्वे मळी एम विचार्युं धनुपनुं मिथ्या नाम.
ए रामने परणावशे, कन्या जनक अभिराम । १६ ।

हो रहा है (था)। जनकराज ने उल्लास-पूर्वक शुभ मुहूर्त पर धनुष का पूजन किया। ९ जनक राजा ने दूतों को आज्ञा करके सभी राजाओं को (मण्डप में) बुला लिया। वे सभा (-मण्डप) में आ गये, तो वहाँ बहुत शोभा हो गयी। १० जहाँ जिसका अधिकार था, वहाँ उसके अनुसार सब राजा सिंहासनों पर बैठ गये। ऋषि-समूह के साथ दशरथ के पुत्र (राम और लक्ष्मण भी) आ गये। ११ गोरे और साँवले किशोर (अवस्थावाले) मनोहर मोहक रूपधारी (उन) दशरथ-पुत्रों को देखकर सभी राजा मोह को प्राप्त हो गये। १२ जैसे सूर्य का उदय हो जाए, तो तारों का समूह क्षीण (-प्रकाश) हो जाता है, वैसे जब श्रीराम आ गये, तब सब राजा फीके पड़ गये। १३ (वहाँ) सब सिंहासनों से अधिक सुन्दर, एक विशाल और सुभग अर्थात् मनोरम सिंहासन है (था)। उस स्थान पर विश्वामित्र मुनि, श्रीराम और लक्ष्मण बैठ गये। १४ अन्य सब मुनिजन तथा सब राजा (यथास्थान) बैठ गये। श्रीराम के रूप को देखकर उनकी आँखों को तृप्ति नहीं हो रही है (थी)। १५ सबने मिलकर यों विचार किया—धनुष का नाम तो मिथ्या है (धनुप-सम्बन्धी प्रण तो बहाना मात्र है)। जनकराज अपनी प्रिय पुत्री का राम से विवाह करा देंगे (—यही सत्य है)। १६ उस मण्डप के एक खण्ड में, जहाँ

ते मंडपना एक खंडमां, शोभा अधिक छे ज्यांहे,
सिंहासन उपर विराजे, जनकतनया त्यांहे । १७ ।
इंद्राणी जेवी अनुचरी ते अनेक ऊभी दास
रत्न डांडी तणां चम्मर, करे छे बे पास । १८ ।
पुष्पमाळा हाथ झाली, बेठी अद्भुत रूप,
चपळ नेत्रे करी जोती, सकळ पृथ्वी भूप । १९ ।
ए आदि माया ईश्वरी छे, प्रणव रूपिणी छेह,
त्रिभुवनपति परिब्रह्मनी छे, मुख्य राणी एह । २० ।
ब्रह्मांडनी उत्पत्ति स्थिति, संहार कारण जाण,
जे ब्रह्मादि देवनी जननी, इंदिरा गुण खाण । २१ ।
अनंत शक्ति जेनी आगळ, स्तवे जोडी हाथ,
ए रूप वर्णवी नव शके, हारे गिरा गणनाथ । २२ ।
तप्त जांबुनद सरखुं, अंग झलके बाळ,
मृगांक मुख शोभे प्रफुल्ल, आकरण नेत्र विशाळ । २३ ।
अनेक आभूषण धर्यां, मणि कनक मोती जडाव,
करमांहे कंकण साकळां, ते पदिक रत्न मढाव । २४ ।

सबसे अधिक शोभा है (थी), वहाँ सिंहासन पर जनक-कन्या सीता शोभायमान (दिखायी दे रही) हैं (थीं) । १७ (वहाँ) इन्द्राणी जैसी (सुन्दर) अनेक दासियाँ और सेविकाएँ खड़ी हैं (थीं) । वे दोनों ओर रत्न (-जटित) दण्डवाले चँवर झुला रही हैं (थीं) । १८ (वह) अद्भुत रूप-धारिणी (सीता) हाथ में पुष्प-माला लेकर बैठी है (थी और) समस्त पृथ्वी के राजाओं को वह चपल नेत्रों से देख रही है (थी) ।१९ (वस्तुतः) वह (सीता) आदिमाया, ईश्वरी है; वह प्रणव-रूपिणी है । वह त्रिभुवन-पति परब्रह्म की मुख्य रानी है । २० समझो, वह ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति, स्थिति और संहार का कारण है । जो ब्रह्मा आदि देवों की जननी है, जो गुणों की खानि इंदिरा (ही) है, जिसके सम्मुख अनन्त शक्तियाँ हाथ जोड़कर स्तवन करती हैं, उसके रूप का वर्णन वाणी (की देवी सरस्वती) और गणपति (भी) नहीं कर सकते । (अर्थात्) वे हार जाते हैं ।२१-२२ उस बाला का अंग तप्त जम्बुनद सोने-सा झलक रहा है (था) । उसका प्रफुल्ल मुख-चंद्रमा शोभायमान है (था) उसके नेत्र आकर्ण (कानों तक फैले हुए) विशाल हैं (थे) । २३ उसने रत्न, सुवर्ण और मोतियों से जड़े अनेक आभूषण पहन लिये (थे) । उसके हाथों में कंगन हैं (थे; और पाँवों में) सिकड़ियाँ हैं (थीं) । रत्नों से जटित पदिक (गले में पहना

पवन स्पर्शे मधुर चाले, अंगराग सुवास,
विस्तरे दश दिशा भेदी, जय महदाकाश । २५ ।
जेणे वश कर्या आदि पुरुषने, भुलाव्या निज़रूप,
ते तणी शोभा शी कहु, जेनी पावन कीरति अनुप । २६ ।
एवां सीता सिंहासने बेठां, जुए चारे पास,
एवे मुनिमडळमांहे दीठा, कोटि काम निवास । २७ ।
रघुवीरने जोई जानकी, मोह पामियां निरधार,
त्यारे विजया नामे सखीशुं, बोलियां तेणी वार । २८ ।

वलण (तर्ज वदलकर)

बोलियां तेणी वार सीता, सुण विजया मुज वचन रे,
पेली श्यामसुंदर मूरति साथे, मोह्युं मारुं मन रे । २९ ।

* * *

हुआ) है (था) । २४ पवन के स्पर्श से उसके (अंग में) लगाये अंगराग की मधुर सुगन्ध (फैलती) जाती है। वह दसों दिशाओं में फैलती जाती है (थी) और महदाकाश को भेदकर ऊपर जा रही है (थी) । २५ जिसने आदिपुरुष को (अपने) वश में कर लिया और उससे उसके अपने निजी रूप को भुलवा दिया, जिसकी पावन कीर्ति अद्वितीय है, उसकी शोभा मैं कैसे कहूँ ? (कहने में कैसे समर्थ हो सकता हूँ ?) २६ ऐसी वे सीताजी सिंहासन पर विराजमान हो गयीं (थीं); वे चारों ओर देख रही हैं (थीं)। इस तरह (देखते हुए) मुनि-मण्डल में उन्हें, मानो करोड़ों कामदेवों के निवास-स्थान श्रीराम दिखायी दिये । २७ श्रीराम को देखकर जानकी निश्चय (ही) मोह को प्राप्त हो गयीं। तो उस समय वे विजया नामक (अपनी) सखी से (यों) बोली । २८

उस समय सीता ने कहा—'अरी विजया, मेरी बात सुनो। उस श्याम-सुन्दर मूर्ति पर मेरा मन मोहित हो गया।' २९

* * *

अध्याय—३६ (सीता की व्याकुलता और सखी द्वारा उसे आश्वासन देना)
राग सोरठ

मुनि पासे बेठा श्रीराम, कोटि कंद्रप सुंदर श्याम,
दीठा सीताए पूरणकाम, जोई मोह पामियां रे। १।
सुण विजया सहियर मारी, पेला बेठा अवधविहारी,
रूप उपर जाउं बलिहारी, थाउ एनी किंकरी रे। २।
मारुं मान्युं एशुं मन, एनी साथे करे जो लगन,
थाउं त्रिभुवनमां हुं धन्य, सदन सौभाग्यनुं रे। ३।
त्यारे पहोंचे मारा कोड, पामुं वर ए काम करोड,
नथी चौद भुवनमां जोड, रघुवर रूपनी रे। ४।
छे शरासन शिवनुं कठोर, ए कुंवरनुं केटलुं जोर ?
घणा कोमळ राजकिशोर, ए केम चढावशे रे ? । ५।
जो नहि वरे शामल-गात, तो हुं तरत करुं देहपात,
पण कठण कर्युं क्यम तात ? धनुष वेरी थयुं रे। ६।
घणो निरदे थयो मुज बाप, लावी मूक्युं सभामां चाप,
मने थाय घणो परिताप, हवे शुं करुं रे ? । ७।

अध्याय—३६ (सीता का जनक के प्रण पर सन्ताप)

करोड़ों कामदेवों के समान, सुन्दर श्याम (शरीर-धारी) श्रीराम विश्वामित्र के पास बैठे (हुए थे)। सीता ने उन पूर्णकाम श्रीराम को देखा। उन्हें देखकर वे मोह को प्राप्त हो गयीं। १ (वे अपनी सखी से बोलीं—) 'री मेरी सखी विजया, सुनो। वे अवधविहारी श्रीराम बैठे (हैं)। (लगता है,) उनके रूप पर मैं बलिहारी हो रही हूँ, मैं उनकी दासी हो रही हूँ। २ यदि (पिताजी) उनके साथ विवाह करा दें, तो मैं त्रिभुवन में धन्य और सौभाग्य का (साक्षात्) सदन हो जाऊँगी—ऐसा मेरे मन ने माना (सोचा) है। ३ यदि करोड़ों कामदेवों-सा वह वर मैं प्राप्त करूँ, तो मेरी कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं (जाएँगी)। चौदहों भुवनों में (कहीं भी) राम के रूप का जोड़ नहीं है। ४ शिवजी का धनुष कठिन है। उस कुमार का (में) कितना बल है (जो उसे उठा सके) ? वह राजपुत्र बहुत कोमल है। वह (धनुष को) कैसे चढ़ा पाएगा ? ५ यदि श्याम-शरीरी (श्रीराम) मेरा वरण नहीं करें तो मैं शीघ्र ही देहपात (देह-त्याग) कर दूँगी। हे पिताजी, आपने कठिन प्रण क्यों किया ? अरी, (यह) धनुष (ही) मेरा शत्रु हो गया। ६ पिताजी मेरे प्रति अति निर्दय हो गये जो कि उन्होंने सभा (-मण्डप) में

कोई जनकने जई कहो आज, पण मूकी करो शुभ काज,
तम पुत्रीए रघुराज, ते मन साथे वर्या रे। ८।
एम सीता आरत मन, जोई विजया बोली वचन,
बाई धीरज राखो मन, चिंता शाने करो रे ? । ९ ।
निश्चे वरशे तमने राम, चित्त राखो तमारुं ठाम,
छे भक्तना पूरणकाम, ते क्यम भूली जशे रे ? । १० ।
तमो रामने जाणो बाळ, पण काळ तणा छे काळ,
वळी बाहु नेत्र विशाळ, जुओ एनी आकृति रे। ११ ।
मारी ताडिकाने एक बाण, सुबाहुना लीधा प्राण,
ते थयुं छे मुजने जाण, मुनि वातो करे रे। १२ ।
माटे त्र्यंबक तोडशे एह, तमो टाळो मन संदेह,
ज्यम प्रीत बपैयाने मेह, ए नेह वधारशे रे। १३ ।
करे वात सकळ पुरजन, वरशे सीताने दशरथ-तन,
पंच कहे ते साचुं वचन, थाये निश्चे खरुं रे। १४ ।

(यह) धनुष ला रखा। मुझे बहुत ग्लानि हो रही है—अब मैं क्या करूँ ? ७ कोई जाकर जनकराज से कह दो— (आप) प्रण का त्याग कर (यह) शुभ कार्य करें; (क्योंकि) आपकी कन्या ने तो मन से श्रीराम का वरण किया (है)।' ८ सीता को (दुःख से) आर्त-मुख हुई देखकर विजया ने (यह) बात कही— 'बाई (देवी), मन में धीरज रखो। चिन्ता किसलिए कर रही हो ? ९ श्रीराम तुम्हारा निश्चय ही वरण करेंगे (अतः) तुम अपना मन ठिकाने पर रखो (मन को विचलित न होने दो)। वे भक्तों के पूर्ण-काम है (अर्थात् भक्तों की इच्छा पूर्ण कर देते हैं।) वे (तुम्हें) कैसे भूल जाएँगे ? १० तुम राम को 'बालक' समझती हो, परन्तु (वस्तुतः) वे काल के (भी) काल हैं। इसके अतिरिक्त विशाल बाहुओं और नेत्रों से युक्त उनकी आकृति (क़द-कामत) तो देखो। ११ उन्होंने एक बाण से ताड़का को मार डाला, सुबाहु के प्राण लिये। उसकी मुझे जानकारी (ख़बर प्राप्त) है— (क्योंकि) मुनि (ऐसी) बातें कर रहे हैं (थे)। १२ इसलिए वे शिवजी के धनुष को तोड़ डालेंगे— (इस सम्बन्ध में) तुम मन का संशय हटा दो। चातक और मेघ की प्रीति जैसी है, वैसी प्रीति (तुम दोनों में) बढ़ेगी। १३ सब नगर-निवासी लोग यह बात कर (कह) रहे हैं कि दशरथ-पुत्र श्रीराम सीता का वरण करेंगे। पंच (जो) कहते हैं, वह सच्ची बात होती है— वह निश्चय ही सत्य (सिद्ध) हो जाएगी। १४ तेजस्वी (व्यक्ति दीखने में छोटा होने पर भी) व्यक्ति को छोटा न मानो। सिंह का शावक (बच्चा)

लघु ना गणीए तेजवंत, सिंहबाळक सूक्ष्म जंत,
आणे मदगळ केरो अंत, एवा रघुवीर रे। १५।
सुखी वचन सुणी तेणी वार, सीता करतां मन विचार,
मनावे विधि ने त्रिपुरार, त्रंबक हळवुं थजो रे। १६।
जोई धनुष प्रचंड अथात, सीता करतां ते असुंपात,
तमो हरज्यो उमया मात, गौरवता ए तणी रे। १७।
सच्चिदानंद छो सुखराशी, मारी अरज सुणो अविनाशी,
प्रभु हुं छुं तमारी दासी, रखे भूली जता रे। १८।
तम अर्थे धर्युं छे शरीर, छो धर्मधोरींधर धीर,
तमने मूकी रघुवीर, बीजाने नहि वरुं रे। १९।
एम जानकी शोचे मंन, स्तुति करतां दीन वचंन,
अंतरजामी जुगजीवन, ते सरवे जाणियुं रे। २०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

जुगजीवने सहु जाणियुं, जे शोचे जनक तनयाय रे,
श्रोताजन सहु सांभळो, हवे स्वयंवरमां शुं थाय रे ? । २१ ।

* * *

छोटा प्राणी होता है, परन्तु वह मदोन्मत्त हाथी का अन्त लाता अर्थात् कर डालता है। श्रीराम (भी) ऐसे (ही) हैं।' १५ उस समय सखी की (ऐसी) बातें सुनकर सीता मन में विचार करती रहीं। वे विधाता और शिवजी को मना रही हैं (थीं)— '(आपकी कृपा से) धनुष हल्का हो जाए।' १६ असीम प्रचण्ड धनुष को देखते हुए सीता तो आँसू बहाती रहीं। (फिर भी पार्वती को मनाती हुई उन्होंने कहा—) 'हे माता उमाजी, तुम इस (धनुष) की गुरुता (कठिनता और भार) का हरण करो।' १७ (फिर श्रीराम को लक्ष्य कर मन-ही-मन वे बोलीं—) 'आप सच्चिदानन्द हैं, सुखराशि हैं। हे अविनाशी (भगवान्)! मेरी विनती सुनिए। हे प्रभु, मैं आपकी दासी हूँ। आप कदाचित् (मुझे) भूलते तो नहीं जाते रहे ? १८ आपके लिए मैंने (यह) शरीर धारण किया है। आप धर्म-धुरन्धर धीर पुरुष हैं। हे रघुवीर, आपको छोड़कर (किसी) दूसरे से विवाह नहीं करूँगी।' १९ इस प्रकार सीता मन में चिन्ता कर रही हैं (थीं)। वे दीन शब्दों में स्तवन करती रहीं। जगज्जीवन अन्तर्यामी श्रीराम ने उस सबको जान लिया। २०

जगज्जीवन श्रीराम ने (वह) सब जान लिया, जिसकी चिन्ता जनक-तनया सीता कर रही हैं (थीं)। (गिरिधर कवि कहते हैं—) 'हे श्रोताजनो, स्वयम्वर (-सभा में) क्या हो जाता है, (वह) अब सुनो।' २१

* * *

अध्याय—३७ (रावण-मान-भंग-कथा)

राग सामेरी

आवी रह्या सहु भूपति, स्वयंवरमां जेणी वार,
त्यारे जनक रायनो भाट ऊठी, बोलियो तेणी वार। १।
सांभळो सरवे नरपति, जनके कर्युं पण जेह,
जे आ समे त्रंबक चढावे, वरे कन्या तेह। २।
माटे शूर वीर पराक्रमी शुभ, होय क्षत्रीराज,
ते ऊठो तत्पर थई करी. त्रंबक चढावो आज। ३।
एवुं सुणी वायक सरव, राजा करे मंन विचार,
शरासन भणी जोता सकळ, शिवधनु प्रचंड अपार। ४।
घणुं कठण त्रंबक जोईने, हतबळ थया राजन,
पछे परस्पर वातो करे छे, राय अन्योअन्य। ५।
ए शरासन जे चढावे, एवो नथी को राज,
बीजो कहे अमो आव्या छुं, जोवा स्वयंवर काज। ६।
एक कहे अमारे जनक साथे, घणो मित्राचार,
ते माटे आव्या अमो, करवा गृहस्थनो वहेवार। ७।

अध्याय—३७ (रावण-मानभंग)

जिस समय सब राजा स्वयंवर (-मण्डप) में आकर (उपस्थित) रह गये (अर्थात् आकर बैठ गये), उस समय जनक राजा का भाट उठकर बोला। १ 'हे समस्त राजाओ, जनक राजा ने जो प्रण किया उसे सुनिए— जो इस समय (शिव-) धनुष चढ़ाएगा, वह कन्या का वरण करे। २ इसलिए जो क्षत्रिय राजा शूर-वीर, शुभ (कार्य के सम्बन्ध में) पराक्रमी हो, वह शीघ्रतापूर्वक उठे और आज शिवधनुष चढ़ाए।' ३ ऐसी बात सुनकर सब राजा मन में सोचते है (रहे) और धनुष की ओर देखते रहे। (वह) शिवधनुष तो असीम प्रचण्ड था। ४ अति कठिन धनुष को देखकर राजा हतबल हो गये। (फिर) बाद में वे राजा एक-दूसरे से परस्पर बातें कर रहे हैं (थे)। ५ (उनमें से एक ने कहा—) 'जो इस धनुष को चढ़ाएगा, ऐसा कोई राजा (यहाँ) नहीं है।' (इसपर) दूसरा कहता है (बोला)— 'मैं तो स्वयंवर देखने के हेतु आ गया हूँ।' ६ (कोई दूसरा) एक कहता है (बोला)— 'जनक के साथ हमारा मित्रता का व्यवहार (सम्बन्ध) है। इसलिए हम गृहस्थ के (नाते) व्यवहार (का निर्वाह) करने के लिए आ गये (है)।' ७ (तदनन्तर) कितने ही

केटलाये आवी हलाव्युं, न हाल्युं ते चाप,
ते पाछा बेठा मान मूकी, पाम्या मन परिताप । ८ ।
केटलाक कहे अभिमानथी, जो ऊठीशुं आ वार,
अपमान थाशे आपणुं, एम करे मन विचार । ९ ।
एम धनुष्य हाल्युं नहि कोईथी, थई घडी बे-चार,
त्यारे जनक नृपति बोलिया, सांभळो राजकुमार । १० ।
राजेंद्र वळियो होय जे, त्र्यंबक चढावे आज,
परणावुं तेने जानकी, माटे ऊठो करवा काज । ११ ।
जोई रह्या नीचुं सुणी सरवे, कोई न ऊठ्यो शूर,
ते समे दशमुख आवियो, अभिमान सागर पूर । १२ ।
कंकोतरी लखी हती जनके, रावणने ते दिश,
बे मंत्री साथे आवियो, ते सभामां दश-शीश । १३ ।
लंकापतिने जोईने, सहु कंप्या राजकुमार,
सन्मान करी आसन बेसाड्या, विदेहे तेणी वार । १४ ।
अभिमान करीने बोलियो, ते समे रावणराज,
अल्या जनक तें शुं पण कर्युं छे ? कहे मुजने आज । १५ ।

(राजाओं) ने आकर (धनुष को) हिलाया (उठाने का यत्न किया), परन्तु वह धनुष (बिलकुल) नहीं हिला। तत्पश्चात् वे अभिमान छोड़कर बैठ गये। वे मन में ग्लानि को प्राप्ति हो गये। ८ कितने ही (राजा) अभिमान-पूर्वक बोलते हैं (बोले)— 'इस बार यदि हम (धनुप चढ़ाने के लिए) उठे, तो हमारा अपमान हो जाएगा। वे मन में ऐसा विचार कर रहे हैं (थे)। ९ इस प्रकार धनुष किसी से भी हिला नहीं। दो-चार घड़ियाँ हो गयीं (बीत गयीं)। तो जनक राजा बोले, 'हे राजकुमारो, सुनिए। १० जो राजेन्द्र (महान् राजा) बलवान् हो और जो आज शिवधनुप को चढ़ाए, उससे मैं जानकी का विवाह करा दूँगा। इस लिए (हे राजकुमारो, यह) कार्य करने के लिए उठिए।' ११ (परन्तु यह) सुनकर सब नीचे देखते रह गये। कोई भी शूर पुरुष नहीं उठा। उस समय अभिमान-सागर से भरा-पूरा दशमुख रावण (वहाँ) आ गया। १२ उस समय जनक ने रावण को (विवाह सम्बन्धी) निमंत्रण-पत्रिका लिखी थी। (इसलिए) वह (रावण) दो मंत्रियों के साथ उस (स्वयंवर-) सभा में आ गया। १३ लंकापति रावण को देखकर सब राजकुमार काँप उठे। उस समय जनक ने रावण का सम्मान करके आसन पर बैठा दिया। १४ उस समय रावण राजा अभिमान-पूर्वक

तव विदेहे त्रंबक देखाड्युं, रावणने तत्काळ,
ए चाप चढावे तेने कन्या, आरोपे वरमाळ । १६ ।
एवुं सांभळीने अट्टहासे, हस्यो रावण राय,
कैलास सरखो हलाव्यो, कोण मात्र धनुष कहेवाय ? । १७ ।
में अमर बंधीवान कीधा, हुं रावण बळियो सत्य,
कंदुकनी पेरे उछाळुं मेरु, मंद्राचळ परवत । १८ ।
पृथ्वी ऊंधी करी नाखुं, पलकमां निरधार,
ब्रह्मांड चाक चढावुं तो, ए धनुषना शा भार ? । १९ ।
एम घणां वचन बोली, पछे ऊठियो राय,
वस्त्र भूषण संभाळीने, धनुष भणी ते जाय । २० ।
त्यारे सीताने चिंता थई, जे रावण करशे काम,
पछे स्तुति शिव उमिया तणी, करतां सती अभिराम । २१ ।
महाराज शिव संकटहरण, राखजो मारी लाज,
हाले नहि रावण थकी, त्रंबक तमारुं आज । २२ ।

बोला— 'अरे जनक, तूने क्या प्रण किया है ?— आज मुझे (तो) बता ।' १५ तब विदेहराज जनक ने रावण को तत्काल शिव-धनुष दिखा दिया (और कहा—) 'जो इस धनुष को चढ़ाएगा, (मेरी) कन्या उसे वरमाला पहनाएगी ।' १६ ऐसा सुनकर रावण राजा अट्टहास करके हँस दिया । (और उसने कहा—) '(मैंने) कैलास तक को हिला दिया, तो (यह) कौन धनुष (बड़ा) कहाता है ? १७ मैंने देवों को बन्दी बना डाला । मैं रावण सचमुच (ऐसा) बलवान् हूँ । मैं मेरु और मंदर पर्वत को गेंद की भाँति उछालता हूँ (उछाल सकता हूँ) । १८ निश्चय ही एक पलक में पृथ्वी को औंधी (उलट-पलट) कर डाल सकता हूँ । मैं ब्रह्माण्ड-चक्र को चढ़ा सकता हूँ, तो इस धनुष का क्या बोझ ?' १९ इस प्रकार बहुत बातें कहने के बाद रावण राजा उठ गया । (अपने) वस्त्रों और आभूषणों को सँवार कर वह धनुष की ओर जाता है (गया) । २० तब सीता को (यह) चिन्ता हो गयी कि यदि रावण (धनुष को चढ़ाने का यह) काम करे तो…… ? फिर वह सुन्दरी सती शिव-पार्वती का स्तवन करती रही । २१ (उसने मन-ही-मन कहा—) 'हे (भक्तों के) संकटों का हरण करनेवाले महाराज शिवजी, मेरी लज्जा रखो (मेरी लज्जा की— प्रतिष्ठा की रक्षा करो) । तुम्हारा (यह) धनुष आज रावण से न हिल पाए ।' २२ राम ने सीता के मन की ऐसी

एम सीताना मन तणी चिंता, जाणी रामे एह,
करी विकट दृष्टि धनुष्य उपर, थयुं गौरव तेह। २३।
रावणे आवी बाथ मारी, वीश कर शुं त्यांह्य,
लेश हाले नहि ते, घणो भार त्रंबक मांह्य। २४।
तदा थयो निस्तेज रावण, स्पर्शतां शिव चाप,
हलाव्युं हाले नहि, त्यारे पाम्यो मन परिताप। २५।
पछे अधर पीसे दंत रीसे, रक्त लोचन क्रोध,
धनुषने तव उपाड्युं, घणुं जोर करीने जोध। २६।
परस्वेद चाल्यो अंगथी, ऊँचुं कर्युं बळवान,
घणो श्वास चढियो शूरने, थयुं मन घणुं अभिमान। २७।
ऊभुं कर्युं जव धनुषने, अति बळ करी महाकाय,
कर मांहेथी लथड्युं तदा, तव पड्यो रावण राय। २८।
पृथ्वी उपर पड्यो दशमुख, थयो पूर्ण प्रहार,
तेनी उपर पड्युं त्रंबक, चंपायो तेणी वार। २९।

चिन्ता को जान लिया, तो उन्होंने धनुष के ऊपर विकट (टेढ़ी) दृष्टि की— (विकट नज़र से देखा) तो वह भार (से युक्त) हो गया (अर्थात् वह पहले से अधिक भारी हो गया)। २३ रावण ने आकर बीसों बाहुओं से वहाँ (उस धनुष को) लपेट लिया (और उसे उठाने का यत्न किया), फिर भी वह लेश मात्र (भी) नहीं हिला (क्योंकि) धनुष में बहुत भार था (वह बहुत भारी था)। २४ तब रावण निस्तेज हो गया; वह शिव-धनुष को स्पर्श करता रहा। वह हिलाये भी नहीं हिल पा रहा है (था), तो (रावण) मन में ग्लानि को प्राप्त हो गया। २५ फिर वह क्रोधपूर्वक दाँत पीसने लगा। (उसकी) आँखें गुस्से से लाल हो गयीं। तब उस वीर ने बहुत जोर लगाकर धनुष को उठाया (खड़ा कर दिया)। २६ उसके बदन से पसीना बह चला। उस बलवान् ने उसे ऊँचा (खड़ा) कर लिया। उस शूर पुरुष की साँस बहुत चढ़ गयी (वह हाँफने लगा)। (फिर भी) उसके मन में बहुत अभिमान (उत्पन्न) हो गया। २७ उस महाकाय (प्रचण्ड शरीर-धारी) रावण ने अति बल लगाकर जब धनुष को खड़ा कर लिया, तब वह (उसके) हाथों में ज़ोर से हिलने लगा और (उससे) रावण राजा गिर पड़ा। २८ रावण पृथ्वी पर लुढ़क गया, तो उसपर पूर्ण (प्रचण्ड) आघात-सा हो गया। उसपर धनुष पड़ गया और उस समय वह दब गया। २९ तब ज़ोर से धमाका

ते भडाको सबळो थयो, घणी उडी रज ते ठार,
रुधिर चाल्यु मुखथकी, कच्चर थयो निरधार। ३०।
पोकार करतो बोलियो, तमे सुणो सखे जन,
हुं दबायो छुं मने काढो, थाय पीडा तन। ३१।
अरे जनक मुजने काढ वहेलो, जशे मारा प्राण,
तो कुंभकरण इंद्रजित, तुजने मारशे निरवाण। ३२।
पुरभंग करशे असुर तारुं, लेशे मारुं वेर,
पामुं नवो अवतार जो, जाउं जीवतो मुज घेर। ३३।
एम ते समे चंपायो रावण, थयुं दुःख अपार,
पृथ्वी उपर पड्यो निशिचर, करे मुख पोकार। ३४।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पोकार करतो मुखे रावण, पीडा पामे तन रे,
त्यारे सर्व सभा सांभळतां, बोल्या जनकराय वचन रे। ३५।

* * *

हो गया। उस स्थान पर बहुत धूल उड़ गयी। (रावण के) मुख में से रक्त बह चला और वह निश्चय ही चूर-चूर हो गया। ३० चीत्कार करते हुए वह बोला— 'सब लोगो, तुम सुनो। मैं दब गया हूँ। मुझे निकालो (अर्थात् छुड़ा लो)। शरीर मे पीड़ा हो रही है। ३१ रे जनक, मुझे जल्द छुड़ा दे। मेरे प्राण निकल जाएँगे, (तो भी) कुम्भकर्ण और इंद्रजित तुझे अन्त में मार डालेंगे। ३२ राक्षस तेरे नगर का नाश करेंगे, मेरी शत्रुता के कारण तुझसे बदला लेंगे। यदि मैं नया अवतार अर्थात् पुनर्जीवन प्राप्त करूँ, तो अपने घर जीवित जाऊँगा।' ३३ इसी प्रकार रावण उस समय दब गया। उसे अपार दुःख हो गया। (वह) राक्षस भूमि पर (गिर) पड़ा (हुआ था) और मुख से चीख़-पुकार कर रहा है (था)। ३४

रावण मुख से चीख़ता-पुकारता रहा। (उसका) शरीर पीड़ा को प्राप्त कर रहा है (था)। तब समस्त सभा के सुनते रहते, जनकराज (यह) बात बोले—। ३५

* * *

अध्याय—३८ (श्रीराम द्वारा धनुर्भंग)

राग मारु

बोल्या जनक ते परुष वचन, नथी बळियो को राजन,
में जोई सरवनी करणी, निरवीर्य थई आज धरणी । १ ।
भू नक्षत्री करी भृगुनाथ, गयुं बळ प्राक्रम ते साथ,
पछी जन्म्यो नथी कोई शूर, राणीजायो क्षत्री पूत्र । २ ।
सरवे बेठा हिंमत हारी, रही कन्या कुंवारी मारी,
सरवे भूपति शोभा सहित, पण छे पुरुषार्थरहित । ३ ।
कह्यां अघटित एवां वचन, रह्या सांभळी सहु राजन,
सुणी जनकनी वाणी विरोध, चढयो लक्ष्मणने अति क्रोध । ४ ।
थयां लोचन रातांचोळ, फरके अधर भ्रूकुटि कपोळ,
प्रगटयां रोमांचित अंग, चढयो रामानुज रणरंग । ५ ।
जे छे शेष तणो अवतार, क्षणमां करे विश्व संहार,
वीरासन ऊंचो करी पाणि, गुरु प्रत्ये वोल्या वाणी । ६ ।
हे मुनिवर आवां वचन, क्यम बोले जनक राजन ?
बेठा रामचन्द्र रघुराय, क्यम लोपी एणे लाज ? । ७ ।

अध्याय—३८ (श्रीराम द्वारा धनुषभंग)

तव जनक (इस प्रकार) कठोर शब्द बोले— '(यहाँ अब) कोई बलवान् राजा नहीं है । मैंने सब की करनी देखी । आज धरती निर्वीर्य (वीर पुरुषों से रहित) हो गयी है । १ भृगुनाथ परशुराम ने पृथ्वी को निःक्षत्रिय कर डाला (था), तो (मानो) उनके साथ बल और पराक्रम (संसार से) उठ गया । फिर बाद में कोई शूर पुरुष, रानी का जना कोई क्षत्रिय पुत्र नहीं रहा । २ सब हिम्मत हारकर बैठे । मेरी कन्या क्वारी रह गयी । सब राजा तो शोभा-सहित (युक्त) हैं, परन्तु वे हैं सब पुरुषार्थ-रहित ।' ३ जनक राजा ने (जब) ऐसे अघटित (व्यंग्य) शब्द कहे, तो सब राजा सुनकर ही रह गये । जनक की ऐसी (प्रतिष्ठा-) विरोधी बात सुनकर लक्ष्मण को अतिशय क्रोध आ गया । ४ उनकी आँखें लाल-लाल हो गयीं । उनके होंठ, भौंह और गाल फड़क रहे हैं (थे) । वदन में रोमांच प्रकट हो गये । (इस प्रकार) रामानुज लक्ष्मण पर रण-रंग अर्थात् युद्ध के लिए त्वेश (तैश) चढ़ गया । ५ वे तो शेष के अवतार हैं (थे); वे क्षण में विश्व का अन्त (विनाश) कर सकते हैं (थे) । वीरासन (मुद्रा) में बैठे हुए उन्होंने हाथ ऊँचा कर गुरु (विश्वामित्र) से (यह) बात कही । ६ 'हे मुनिवर, जनक राजा ऐसी बातें क्यों बोल रहे हैं ?

सुणतां भानुकुळ तंन, क्यम बोले कठण वचन ?
कहो तो उर्वी ऊंधी नाखुं, एक हस्तमां मेरु राखुं । ८ ।
करुं त्रंबक चोळी पिष्ट, तो हुं रामनो दास कनिष्ठ,
सौमित्रीनां वचन सुणी धीर, नेत्र समश्या करी रघुवीर । ९ ।
रामे लक्ष्मण वार्या ज्यारे, मुनि कौशिक बोल्या त्यारे,
ऊठो राम हवे करो काज, पाळो जनक तणुं पण आज । १० ।
गुरु आज्ञा चढावी शीश, पछी ऊठ्या श्रीजगदीश,
जेम निशा अंते ऊगे तरणि, एम शोभा शी कहुं वरणी? । ११ ।
ज्ञान वेदांते अवरोध, थाय अंतरमां निजबोध,
जेम आराध्य मूरति देव, यज्ञ अंते प्रगटे एव । १२ ।
प्रह्लाद कारण मन धरी जेम प्रगट्या श्रीनरहरी,
गुरुवचन पाळवा आप, हरवा जनक तणो संताप । १३ ।

(यहाँ) रघुराज रामचंद्र बैठे (हुए है), तो क्या उन्होंने लज्जा का लोप कर दिया है (अर्थात् क्या उनकी प्रतिष्ठा लुप्त हो गयी) ? ७ सूर्यवंश में उत्पन्न पुत्रों के सुनते हुए (जनक) ऐसे कठोर शब्द क्यों बोल रहे हैं ? कहिए तो मैं पृथ्वी को उलटा देता हूँ, एक हाथ में मेरु पर्वत को रख (कर उठा) लेता हूँ । ८ शिव-धनु को मसलकर (उसका) चूर्ण कर देता हूँ; तो ही मैं राम का कनिष्ठ दास (अर्थात् भाई) सार्थक हूँ ।' लक्ष्मण के शब्द सुनकर धैर्यधारी रघुवीर राम ने (उन्हें) आँखों से संकेत किया । ९ (इस प्रकार) राम ने (जब) लक्ष्मण को रोक लिया, तो विश्वामित्र उन (राम) से बोले, 'हे राम, उठो, अब (यह) कार्य करो और आज जनक के प्रण का पालन (निर्वाह) करो ।' १० जगदीश राम ने गुरु की आज्ञा शिरोधार्य की और बाद में वे उठ गये । जब रात के अन्त में सूर्य का उदय होता है (उसी प्रकार सभा-मण्डप में ग्लानि-रूपी रात के अन्त में पुरुषार्थ के प्रतीक श्रीराम-रूपी सूर्य का उदय हो गया) तो ऐसी शोभा का वर्णन करके मैं कैसे कहूँ ? (वह वर्णनातीत है) । ११ वेदान्त-ज्ञान की प्राप्ति में अवरोध (के दूर होने) के बाद जैसे अन्तःकरण में आत्म-ज्ञान (का उदय) हो जाता है, जैसे यज्ञ के अन्त में आराध्य देवता की मूर्ति प्रकट हो जाती है, वैसे ही श्रीराम (उस स्थित में) दिखायी दिये । १२ प्रल्हाद के कारण (उनकी भक्ति को) मन में रखते हुए, जैसे श्रीनरसिंह प्रकट हो जाते हैं (गये), वैसे गुरु के वचन (आदेश) का पालन करने के लिए जानकी की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले श्रीराम उस समय उठ गये । उस अवसर पर उन्होंने गुरु के चरणों की वन्दना की और सब

जानकीनां पूरण-काम, ते समे ऊठ्या श्रीराम,
गुरुचरण वंद्यां तेणी वार, कर्या सहु मुनिने नमस्कार । १४ ।
ए विरक्त राम ब्रह्मचारी, ऊठ्या सरज्यु-तीर-विहारी,
ब्रह्म पूरण आनन्दरूप, चाल्या कोटि ब्रह्मांडना भूप । १५ ।
श्यामसुन्दर तन सुकुमार, पहेर्युं पीतवसन चळकार,
मणिजडित मुगट शिर शोभे, जेना तेजथी दिनकर थोभे । १६ ।
काने कुंडल मच्छाकार, उर मुक्ताफळना हार,
मणिमाळ हीरा गळुबंध, कर कंकण बाजुबंध । १७ ।
शोभे वस्त्राभूषण सार, एम चाल्या विश्वाधार,
पाम्या विस्मे सरवे भूप, जोई रघुवर केरुं रूप । १८ ।
आवी ऊभा धनुषनी पास, थयां जानकी जोई उदास,
मन गभरायुं तेणी वार, रामचंद्र घणा सुकुमार । १९ ।

सोरठा

विचारे जानकी मन, जोई कठिनता धनुषनी,
रघुवर कोमळ तन, ऊपडशे क्यम ए थकी ? । २० ।

मुनियों को नमस्कार किया । १३-१४ (सांसारिक भोग-विलास आदि की कामनाओं से) विरक्त, ब्रह्मचारी, सरयू नदी के तट पर विहार करनेवाले वे श्रीराम (धनुष की ओर) चल दिये । १५ उनका शरीर श्याम-सुन्दर तथा सुकुमार था । उन्होंने तेजस्वी (चमकदार, जगमगाता हुआ) पीताम्बर पहन रखा (था) । उनके मस्तक पर (ऐसा) रत्न-जटित मुकुट शोभा दे रहा है (था), जिसके तेज से सूर्य अटक (अर्थात् स्तंभित हो) जाता है (था) । १६ उनके कानों में मछली के आकारवाले कुण्डल थे, छाती पर मोतियों का हार था । हीरों से युक्त रत्नमाला तथा गुलूबन्द था । हाथों में कंगन (अर्थात् कड़े) और बाजूबन्द थे । १७ उनके सुन्दर वस्त्र तथा आभूषण शोभायमान थे । ऐसे (रूप में) विश्व के आधार-से श्रीराम चल दिये । श्रीराम के (ऐसे) रूप को देखकर सब राजा विस्मय को प्राप्त हो गये । १८ वे धनुष के पास आकर खड़े हो गये, तो (उन्हें) देखकर जानकी उदास हो गयीं । उस समय (उनका) मन (इस विचार से) भयभीत हो गया कि श्रीराम तो बहुत सुकोमल हैं (जब कि यह धनुष अति कठिन है) । १९ धनुष की कठोरता देखकर सीता मन में सोच रही है (थी) कि राम तो कोमल शरीर के हैं; उनसे (वह) कैसे उठ पाएगा ? २० शिवजी का धनुष कठोर है । इस बालक की क्या शक्ति है ? उसमें इतना कहाँ से बल (हो सकता)

शिवनुं धनुष कठोर, कोण गजुं ए बाळनुं ?
एमां एटलुं क्यांथी जोर ? हजु मुख पर मूछ आवी नथी । २१ ।
तुं निर्दय हे तात, आवुं दुस्तर पण तें क्यम कर्युं ?
ए मदनमनोहर गात्र, एने जोई दया क्यम नथी आवती ? । २२ ।
अरे तात, विचारी जो आप, तुं वेरी क्यम थई नीवडयो ?
हुं जाणुं खरो मुज बाप, पण मूकी परणावे जो रामने । २३ ।
मुज प्राण तजुं पण काज, हुं जीवीने हावे शुं करुं ?
राम विना वर आज, हुं तो बीजा वरने नहि वरुं । २४ ।

राग मारु

एम करे शोचना सीता, मन ऊपन्युं दुःख अमिता,
जाण्युं अंतरजामीए तेह, करे चिंता जानकी जेह । २५ ।
जाणी प्रीत एवी मन मोह्युं, पछे धनुषनी सामुं जोयुं,
पीतांबरनो काछडो वाळी, कटिवस्त्र बांध्युं संभाळी । २६ ।
चांप्यो मुगट वाळी अंबोडो, संभाळ्यो कुंडळनो जोडो,
हेम सांकळां हीरे जडाव्यां, करनां कडां ऊंचां चढाव्यां । २७ ।

है ? अब तक (इसके) मुख में मूछें (भी) नहीं आयीं । २१ हे पिताजी, तुम निर्दय हो । तुमने वह ऐसा दुस्तर प्रण क्यों किया ? वे (श्रीराम) तो मदन-मनोहर शरीर-धारी है; उन्हें देखकर तुमको क्यों दया नही आती ? २२ हे पिताजी, स्वयं सोचो कि तुम (हमारे) शत्रु क्यों बन गये ? यदि तुम प्रण का त्याग करके मेरा राम से विवाह कराओगे तो ही मै तुमको अपना सच्चा पिता समझूँगी । २३ मैं प्रण के कारण प्राण त्याग देती हूँ (दूँगी)—अब मैं जीवित रहकर क्या करूँ ? आज तो मै राम के विना किसी दूसरे वर का वरण नहीं करती (करूँगी) । २४ इस प्रकार सीता चिन्ता कर रही है (थी) । उसके मन में अतीव दुःख उत्पन्न हो गया । जानकी जो चिन्ता कर रही है (थी), उसे अन्तर्यामी (श्रीराम) ने जान लिया । २५ (सीता की) ऐसी प्रीति को जानकर उनका मन मोहित हो गया । फिर उन्होंने धनुष की ओर देखा । (तदनन्तर) उन्होंने पीताम्बर का कछोटा बनाते हुए सम्हालकर कटि-वस्त्र बाँध (कस) लिया । २६ उन्होंने मुकुट दबा (कर ठीक कर) लिया, बालों का जूड़ा कसकर बाँध लिया, कुण्डलों का जोड़ा सम्हाल लिया (ठीक कर लिया) । हीरे जड़ी हुई सोने की जंजीरे ठीक कर दीं, हाथों में पहने हुए कड़े ऊपर की ओर चढ़ा लिये । २७

सभाना जे जन अशेष, जुए सहु थई रहित निमेष,
लघु लाघवता करी राम, चांप्यो पगनो अंगूठो वाम । २८ ।
एक खूणे दाब्यो जेणी वार, थयुं ऊंचुं तडित आकार,
अकस्मात् ऊपडियुं एह, वाम करशुं झाल्युं तेह । २९ ।
प्रत्यंचा ग्रही जमणे हस्त, रघुवर थया छे स्वस्थ,
नमाव्युं ते चडावा माट, त्यारे थावा मांड्युं तडेडाट । ३० ।
नाखे चीस त्रंबक चडेडाट, पूंठे थाये फडेडाट,
पृथ्वी मंडल डोलवा लाग्युं, शेषनाग तणुं बळ भांग्युं । ३१ ।
कडकड्या आदि वराहना दंत, जेनी उपर पृथ्वी अनंत,
दिगपाळे कर्यो चित्कार, भानु थाकी गयो तेणी वार । ३२ ।
शिवजीनी समाधि छूटी त्यारे पवन तणी गति खूटी,
पाम्या मूर्छा सभाना जन, कर शस्त्र पड्यां राजन । ३३ ।
ज्यम तोडे गज इक्षु-दंड, तेम रामे भांग्युं कोदंड,
नमावतां भांग्युं भडेडाट, काटको थयो छे कडेडाट । ३४ ।

सभा-स्थान में जो लोग (उपस्थित) थे, वे सब निमेष-रहित (एकटक, अपलक) देख रहे हैं (थे), राम ने थोड़ी-सी लाघवता दिखाकर बाएँ पाँव का अँगूठा (ज़मीन पर) दबा लिया। २८ (तदनन्तर) जिस समय उन्होंने (धनुष को) एक छोर पर दबा दिया, तब वह बिजली के-से आकार में वह ऊँचा हो गया। वह अचानक ऊँचा उठ गया, तो (श्रीराम ने) उसे बाएँ हाथ में पकड़ लिया। २९ (फिर) दाहिने हाथ में डोरी पकड़कर श्रीराम स्थिर खड़े रह गये हैं (थे)। (डोरी को) चढ़ाने के हेतु उन्होंने उसे झुका लिया, तो तड़तड़ (आवाज़) होना शुरू हो गया। ३० धनुष ने तड़तड़ घोर शब्द कर दिया, पीछे से फट-फट आवाज़ हो रही है (थी)। (उससे) पृथ्वी-मण्डल हिलने लगा। शेषनाग का बल भग्न (खत्म) हो गया। ३१ जिनके ऊपर अनन्त (असीम) पृथ्वी (थमी हुई) है, उस आदि वराह भगवान् के दाँत कटकटा उठे। दिग्पालों ने चीत्कार कर दिया। उस समय सूर्य (मानो) थक गया। ३२ शिवजी की समाधि छूट गयी, तो पवन की गति अपर्याप्त हो गयी। सभा-(-मण्डप में बैठे) जन मूर्च्छा को प्राप्त हो गये। राजाओं के हाथों से शस्त्र गिर पड़े। ३३ जैसे हाथी ईख को तोड़ डालता है, वैसे बड़ी आसानी से राम ने धनुष को तोड़ डाला। धनुष को दबाते ही फटफट ध्वनि के साथ वह टूट गया, तो कड़कड़ गर्जन हो गया। ३४

शिव त्रंबक तुटचुं प्रचंड, थयो शब्द ते व्याप्यो ब्रह्मांड,
थया सायकंना बे खंड, पाम्या मूर्छा वीर अखंड । ३५ ।
थयुं अचेत सरवे ज्यारे, छे सचेत पंच जण त्यारे,
सीता जनक ने विश्वामित्र, राम लक्ष्मण वीर्य विचित्र । ३६ ।

छप्पय छंद

धरधरा धर्क घर हरत, डर दिग्गज गयंदलर,
अरकचंद रथ खरत, झरत निरझर अनीकधर । ३७ ।
सरित सिंधु सर डोल, गरत गिरि गरज घोर कर,
चकित कच्छ अहि कोल, नायका थकित नरतकर । ३८ ।
अज इंद्र चलिक दशकंध डर, चित्कार चंड धुनि घर अलख,
दशरथनंदन गिरधर कहे, जनकनगर तोर्यो धनक । ३९ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

धनुष भांग्युं रामचंद्रे, व्याप्यो शब्द ब्रह्मांड रे,
पृथ्वी ऊपर नाख्या वळता, सायकना बे खंड रे । ४० ।

शिवजी का धनुष टूट गया, तो प्रचण्ड ध्वनि हो गयी । उसने ब्रह्माण्ड को व्याप्त कर डाला । धनुष के दो टुकड़े हो गये । तब समस्त वीर मूर्च्छा को प्राप्त हो गये। ३५ जब सब अचेत हो गये, तब (देखा कि) सीता, जनक और विश्वामित्र तथा अद्भुत वीर राम और लक्ष्मण— (केवल) ये पाँच (व्यक्ति) सचेत (रह गये) हैं (थे) । ३६ (धनुष के टूटने पर जो प्रचण्ड ध्वनि हुई उसके फल-स्वरूप) पृथ्वी धरधर् धड़कने (काँपने) लगी । दिग्गज घबड़ा उठे । सूर्य और चन्द्र के रथ फिसल गये । निर्झर झरने लगे । ३७ नदियाँ, समुद्र, सरोवर हिल उठे । भीषण गर्जन करते हुए पर्वत ढह गये । (पृथ्वी के लिए आधार-भूत) कछुआ, (अपने फन पर पृथ्वी को रखे हुए) शेषनाग, (अपने दाँतों पर पृथ्वी को टिकाये रहनेवाला) वराह विस्मित हो गये । दिक्पाल (मानो) नर्तन करते-करते थक गये । ३८ ब्रह्मा और इन्द्र विचलित हो गये । रावण घबरा उठा । उसके किये चीत्कार की ध्वनि ब्रह्माण्ड में भर गयी । गिरधर कवि कहते है—दशरथ-नन्दन (श्रीराम) ने जनक-नगरी में (शिव-) धनुष को तोड़ डाला । ३९

श्रीरामचन्द्र ने धनुप को भग्न कर डाला, तो (उससे उत्पन्न) ध्वनि ने ब्रह्माण्ड को व्याप्त कर डाला । फिर (उन्होंने) धनुष के वे टुकड़े पृथ्वी पर फेंक दिये । ४०

* * *

अध्याय—३९ (विश्वामित्र और जनक द्वारा दशरथ के पास पत्र भेजना)

राग धनाश्री

श्रीरामे करियो धनुषनो भंग जी,
जनक पण पाळ्युं राख्यो रंग जी,
रावण ऊठ्यो थई सावधान जी,
ते गयो लंका पामी अपमान जी। १।

ढाळ

अपमान पामी गयो रावण, रामे भांग्युं चाप,
ते समे जयजयकार वरत्यो, थयो अधिक प्रताप। २।
सहु सभाने मूर्छा वळी, ते थया सरव सचेत,
श्रीरामने जोता तदा, वात्सल्य प्रेम समेत। ३।
सहु परस्पर वातो करे, रघुवीर अति सुकुमार,
ए कठण धनुष केम भांग्युं ? एम करे मन विचार। ४।
हरख आंसु आव्यां सहुने, रोमांचित गदगद वाण,
जनक सीता सहित सरवे, हरख पाम्यां जाण। ५।
ते समे विश्वामित्र ऊठ्या, हरख प्रेम अपार,
रुदे चांपिया रघुवीरने, आशिष देता सार। ६।

अध्याय—३९ (दशरथ को निमंत्रण)

श्रीराम ने धनुष को तोड़ डाला और जनक के प्रण का निर्वाह किया; तथा (रघुकुल की) प्रतिष्ठा को बनाये रखा। (तदनन्तर) रावण सावधान होकर उठा और अपमान को प्राप्त होते हुए वह लंका (की ओर लौट) गया। १ रावण अपमान को प्राप्त होकर (लंका की ओर लौट) गया; (इधर) राम ने धनुष को तोड़ डाला। उस समय ज़य-ज़यकार हो गया। (इस घटना से) श्रीराम के प्रताप की वृद्धि हो गयी। २ समस्त सभा (-जनों) की मूर्छा छूट गयी, तो वे सब सचेत हो गये। तव वे वात्सल्य और प्रेम के साथ राम को देखते रहे।३ सब परस्पर (एक-दूसरे से) बातें कर रहे है (थे) कि रघुवीर राम हैं तो अति सुकुमार; फिर उन्होंने (उस) कठोर धनुष को कैसे तोड़ डाला ? —इस प्रकार वे मन में विचार कर रहे हैं (थे)। ४ सब की आँखों में आनन्दाश्रु आ गये; वे रोमांचित हो गये; (उनकी) वाणी गद्गद हो गयी। समझो कि जनक और सीता के साथ सब हर्ष को प्राप्त हो गये। ५ उस समय विश्वामित्र उठ (कर खड़े हो) गये। उनके मन में अपार आनन्द और (राम के प्रति) प्रेम था। उन्होंने राम को हृदय से लगा लिया और

त्यारे जनक आज्ञाथकी ऊठ्यां जानकीजी त्यांहे,
हंसगमनी हरखशुं, वरमाळ ग्रही करमांहे । ७ ।
शणगार सजिया सोळ अंगे, चूंदडी झळकार.
प्रकाश पृथ्वी थाय छे, ज्यम तडितनो चळकार । ८ ।
गजगति चाले चपळ चरणे, घूघरी घमकार
पदपान अणवट वींछियां, नेपुर तणो झणकार । ९ ।
एवां जक्तजनुनी आवियां, जानकी रूप रसाळ,
रघुवीर केरा कंठ मांहे, आरोपी वरमाळ । १० ।
मुनिए कह्युं पाये नमो, तव विचारे मन साथ,
पेली उपलनी स्त्री थई, रज परशी पद रघुनाथ । ११ ।
कर अंगुली दश मुद्रिकामां, जड्या पदिक विशाळ,
ते परसतां थाय प्रमदा, मुज शोक्य केरुं साल । १२ ।
एवुं विचारी सन्मुख ऊभां, जनकतनया त्यांहे,
विजया सखीए ते समे, समजाव्यां समश्यामांहे । १३ ।

वे (उन्हें) सुन्दर (-सुन्दर) आशीर्वाद देते रहे । ६ तब वहाँ जनक की आज्ञा से जानकीजी उठ (कर खड़ी हो) गयीं । हंसगति-सी चाल से चलनेवाली उन्होंने आनन्द-पूर्वक हाथ में वर-माला ली । ७ उन्होंने अंग में सोलहों श्रृंगार सजाये थे । (उनकी) बूटेदार रेशमी साड़ी जगमगाहट से युक्त थी । जैसे बिजली की चमक से होता है, वैसे (उनकी साड़ी की चमक से) पृथ्वी पर प्रकाश हो रहा है (था) । ८ वे अपने चपल चरणों से गज-गति से चल रही हैं (थीं) । घुँघरुओं की रुनझुन हो रही थी । पदपान, अनवट, बिछुआ और नूपुर (पायल) का झनत्कार हो रहा था । ९ इस प्रकार सुन्दर रूप-धारिणी जगज्जननी जानकी आ गयीं और उन्होंने श्रीराम के गले में वर-माला पहना दी । १० (तब) मुनि विश्वामित्र ने कहा—'(श्रीराम के) चरणों का नमन करो, तो वे मन में विचार करती रही हैं (थीं) कि राम के चरणों की धूली के स्पर्श से (उस) पाषाण से स्त्री (प्रकट) हो गयी । ११ (मेरे) हाथों की दसों अंगुलियों में (पहनी हुई) अंगूठियों में बड़े (-बड़े) पदक जड़े हुए है । उनके स्पर्श होने से नारियाँ (उत्पन्न) हो जाएँ, तो सौतों का (जीवन-भर) अवरोध हो जाए ।' १२ इस प्रकार विचार करके सीता वहाँ (श्रीराम के) सामने खड़ी रह गयीं । उस समय सखी विजया ने (उन्हें) इशारे से समझा दिया । १३ अनन्तर वे प्रेम से राम के चरणों में लग गयीं, तो वहाँ जयजयकार हो उठा । देवों (के लोक)

पछे पाय लाग्यां प्रीतशुं, त्यारे थयो जयजयकार,
देवनां दुंदुभि वागियां, थई पुष्पवृष्टि अपार । १४ ।
निज आसने बेठां जई, हरख्यां ते सीता मंन,
वाजित्र वाजे अति घणां, करे गान मंगळ जंन । १५ ।
आनंद मन पामी तदा, ऊठ्या जनक राजन,
राम-लक्ष्मणने बेसाड्या, पोताने आसन । १६ ।
जामात्र श्रीरघुवीर थया, ते जोई हरखे राय,
पछी विश्वामित्रनी साथ बोलिया, सुणतां सरव सभाय । १७ ।
कंकोतरी लखो अवधपुरमां, राय दशरथ ज्यांहे,
सहु साथ तेडी भूपति, वहेला पधारे आंहे । १८ ।
मुनि कौशिके कंकोतरी लखी, विनय करी बहु त्यांहे,
कुमकुमे छांटी पत्र बीड्यो, आप्यो द्विज करमांहे । १९ ।
चाल्यो विप्र उतावळो, अति हरखशुं तेणी वार,
ते अवधपुरमां आवियो, ज्यां रायनो दरबार । २० ।
ते समे दशरथ सभा करीने, बेठा छे गुरु साथ,
विजोग छे रघुवीरनो, चिंता करे नरनाथ । २१ ।

की दुन्दुभियाँ बजीं और अपार पुष्प-वर्षा हो गयी । १४ (तब) सीता जाकर अपने आसन पर बैठ गयीं । वे मन में आनन्दित हो गयीं । (उस समय) वाद्य अति तुमुल बज रहे है (थे) और लोग मंगल गीत गा रहे हैं (थे) । १५ तब मन में आनन्द को प्राप्त होकर जनक राजा उठ गये । उन्होंने राम और लक्ष्मण को अपने आसन पर बैठा लिया । १६ रघुवीर श्रीराम जामाता हो गये— वह देखकर राजा आनंदित हो गये । बाद में सब सभा (-जनों) के सुनते रहते हुए वे विश्वामित्र से बोले । १७ '(हे मुनि,) अवधपुर में निमंत्रण-पत्र लिखिए (लिखकर भेज दीजिए) जहाँ दशरथ राजा रहते हैं । सबके साथ राजा को निमंत्रित करके शीघ्र यहाँ आने को लिखिए ।' १८ विश्वामित्र मुनि ने निमंत्रण-पत्रिका लिखी । उसमें उन्होंने बहुत (प्रकार से) विनती की । उन्होंने कुंकुम छिड़ककर (कुंकुम डालकर) उसे बन्द किया और एक ब्राह्मण के हाथ में दिया । १९ उस समय अत्यन्त आनन्द-पूर्वक वह ब्राह्मण उतावली (अति शीघ्रता) से चल दिया । अयोध्या में, जहाँ (दशरथ) राजा का दरबार था, वह आ गया । २० उस समय दशरथ सभा (परिषद) लगाकर गुरु के साथ बैठे हैं (थे) । रघुवीर से बिछोह (हो गया) है (था, इसलिए) राजा चिन्ता कर रहे हैं (थे) । २१

अरे गुरु वीत्या दिन बहु, गया राम लक्ष्मण ज्यांहे,
पछे खबर कंई आवी नथी, शुं हशे कारण त्यांहे। २२।
एटले द्विजवर आवियो, सभामां ते दिश,
रायने कर कंकोतरी ते, आपी देई आशिष। २३।
श्रीराम-लक्ष्मण कुशळ छे, राजे जनकपुर मांहे,
नरपति जोतां सर्व रामे, धनुष भांग्युं त्यांहे। २४।
जानकीए वरमाळ घाली, थयुं रूडुं काज,
जान सरवे लेई तमने तेड्या जनके आज। २५।
मिथिलापतिए कह्या छे, परणाम अति अह्लाद,
घणा कारी तमने कह्या, कौशिके आशीर्वाद। २६।
एवुं सांभळतामां राय दशरथ, पाम्या हरख अपार,
रामे स्वयंवर जीतियो, सुणी थयो ज़यजयकार। २७।
पछे दशरथे कंकोतरी, आपी गुरु करमांहे,
सहु सभा सुणतां वसिष्ठ व़ांचे, उकेलीने त्यांहे। २८।
स्वस्ति श्री महाशुभस्थानक, अवधपुर पावंन,
पूज्यमूर्ति पावन जश, नृपमुगटमणि राजंन। २९।

(उन्होंने वसिष्ठ से कहा—) 'हे गुरुजी, जब से राम और लक्ष्मण गये, (तब से) बहुत दिन बीत गये। बाद में कोई समाचार नहीं आया, उसका क्या कारण होगा?' २२ इतने में उस समय (वह) ब्राह्मण (वहाँ) आ गया। आशीर्वाद देते हुए उसने राजा के हाथ में निमंत्रण-पत्रिका दी। २३ (और वह बोला—) 'श्रीराम और लक्ष्मण सकुशल हैं। वे जनकपुर में शोभायमान हैं। वहाँ सब राजाओं के देखते रहते हुए (राजाओं के समक्ष) श्रीराम ने धनुष को तोड डाला। २४ जानकी ने उन्हें वर-माला पहना दी— यह सुन्दर कार्य हो गया। आज जनक ने आपको सब लोगों को (साथ में) लेकर निमंत्रित किया (है)। २५ मिथिलाधीश (जनक) ने अति आनन्द-पूर्वक (आपको) प्रणाम कहा है; (और) विश्वामित्र मुनि ने आपको बहुत-बहुत आशीर्वाद कहे (हैं)।' २६ ऐसा सुनते हुए राजा दशरथ अपार हर्ष को प्राप्त हो गये। राम ने स्वयंवर (-सम्बन्धी प्रण) जीत लिया— यह सुनने पर जयजयकार हो गया। २७ अनन्तर दशरथ ने (वह) निमंत्रण-पत्रिका गुरु के हाथ में दी। तो उसे खोलकर समस्त सभा (-जनों) के सुनते हुए वसिष्ठ उसे (यों) पढ़ते है (यों पढ़ा—)। २८ 'स्वस्ति। श्रीमहाशुभ और पवित्र स्थान अवधपुर के पूज्यमूर्ति, पावन कीर्तिमान्, नृप-मुकुट-मणि राजन्! 'अखण्ड लक्ष्मी से अलंकृत, सकल

अखंड लक्ष्मी अलंकृत, गुण सकळबळ महिमाय,
केतुवत रविकुळ विषे, महाराज दशरथ राय। ३०।
लखितंग मिथिला पुरथकी, सेवक जनक अभिराम,
चूडामणि महीपति मारो, मानज्यो परणाम। ३१।
शुभकाम कारण लख्यानुं, ते सांभळो नृपनाथ,
तम पुत्र मुज पुर विषे आव्या, मुनि कौशिक साथ। ३२।
ते स्वयंवरमां धनुष्य भांग्युं पाळ्युं मुज पण राम,
मम पुत्रीए वरमाळ घाली, थयां पूरण काम। ३३।
माटे परणावा रघुवीरने, शुभ लग्न करवा काज,
सहु साथने तेडी तमो, वहेला पधारो आज। ३४।
तमो सदा जशवंत छो, शोभा सहित राजंन,
माटे वहेला पधारीने, मुजने करो पावंन। ३५।
ए विनति सेवक तणी, लख्युं तेह धरजो चित्त,
कोटीगणुं करी मानजो, भूपति भायगवंत। ३६।
एम पत्र वांच्यो वसिष्ठे, ते सुण्यो दशरथ राय,
थया मग्न ब्रह्मानंदमां, अति हरख अंग न माय। ३७।

गुणों एवं बल से महिमावान्, रवि-कुल के लिए ध्वज-सदृश महाराज दशरथ राजा। २९-३० लिखनेवाले हैं— मिथिलापुर से (आपके) प्रिय सेवक जनक। हे महीपति-चूड़ामणि, मेरा प्रणाम स्वीकार कीजिए। ३१ हे राजा, शुभ कार्य के निमित्त (कारण) लिख रहा हूँ— उसे सुनिए। आपके पुत्र विश्वामित्र मुनि के साथ मेरे नगर में पधारे। ३२ श्रीराम ने स्वयंवर (-सभा) में धनुष को तोड़ डाला (और) मेरे प्रण का निर्वाह किया। (इसलिए) मेरी पुत्री ने उन्हें वर-माला पहना दी— (इससे हमारी) मनोकामनाएँ पूर्ण हो गयीं। ३३ इसलिए कार्य करने के लिए, शुभ मुहूर्त पर (मेरी पुत्री का) रघुवीर से विवाह कराने के लिए मैं आपको सबके साथ निमंत्रित कर रहा हूँ। अतः आज शीघ्रतापूर्वक पधारिए। ३४ हे राजन्, आप सदा यशवन्त अर्थात् कीर्तिशाली और शोभा से युक्त हैं। इसलिए शीघ्र पधारकर मुझे पावन कर दीजिए। ३५ सेवक की यह विनती लिख रहा हूँ— उसे मन में धारण कीजिए। हे भाग्यवान् राजा! उसे करोड़ों गुना (अधिक) समझिए।' ३६ इस प्रकार वसिष्ठ ने पत्र पढ़ा (और) उसे दशरथ राजा ने सुना, तो वे ब्रह्मानन्द में मग्न हो गये। अति आनन्द उनके अंग में नहीं समा रहा है (था)। ३७ (तदनन्तर) राजा (दशरथ) ने समस्त सभा (-जनों) से बारात में जाने के हेतु कह

सहु सभाने भूपे कह्युं, जाने जवाने काज,
प्रधानने कहे सकळ सेन्या, करो तत्पर आज । ३८ ।
वीर बंन्यो हरखिया जे, भरत-शत्रुघन,
सहु अवधपुरमां वात चाली, लोक कहे छे धंन । ३९ ।
रणवासमां जई राणीओने, कर्युं राये जाण,
जनकपुरनो पत्र ते, संभळावियो निरवाण । ४० ।
राणीओ सहु आनंद पामी, ऊलट अंग न माय,
थयो कौशल्याजीने तदा, ते हरख नव कहेवाय । ४१ ।
द्विजवर तणी सेवा करी, संतोखियो बहु पेर,
गीत मंगळ गाय सरवे, थई छे लीलालहेर । ४२ ।
पछे अश्व गज रथ पालखी, शणगारियां वाहन,
वस्त्र आभूषण धरी, तत्पर थयां सहु जन । ४३ ।
अवधपुरनी प्रजा सहु, वहेवारिया श्रीमंत,
जावा जनकपुर थया तत्पर, जान शोभावंत । ४४ ।

वलण

शोभावंत थई जान सरवे, वाजे बहु वाजित्र रे,
सैन्य सकळ शणगारियुं, ते चळके चित्रविचित्र रे । ४५ ।

* * *

दिया । (फिर) मंत्री से कहते हैं (कहा)— 'आज समस्त सेना सज्ज करो ।' ३८ भरत और शत्रुघ्न दोनों वीर आनंदित हो गये । सारी अयोध्या में बात फैल गयी, तो (सुनकर) लोग कहते हैं (थे)— धन्य हैं ! ३९ (तदनन्तर) अन्तःपुर में जाकर राजा ने रानिओं से (वह) समाचार कह दिया और अन्त में जनकपुर से आया हुआ वह पत्र (पढ़कर) सुनाया । ४० सब रानियाँ आनन्द को प्राप्त हो गयी । (उनका) उत्साह तो अंग में नही समा रहा है (था) । तब कौसल्या को (जो) आनन्द हो गया, वह (शब्दों में) नही जा सकता । ४१ उस ब्राह्मण की सेवा करके उसे बहुत प्रकार से सन्तुष्ट कर दिया । सब मंगल गीत गा रहे है (थे) । सब आनन्द-विभोर हो गये । ४२ बाद में घोड़े, हाथी, रथ, पालकी (आदि) सवारियों को सजा लिया । सब लोग (सुन्दर) वस्त्र तथा आभूषण धारण करके तैयार हो गये । ४३ अयोध्या की समस्त प्रजा, साहूकार, अमीर (लोग) जनकपुर जाने के लिए तैयार हो गये । (उनकी) बारात शोभायमान थी । ४४

सब लोग सुशोभित हो गये । बहुत वाद्य बज रहे हैं (थे) । समस्त सेना को सजा दिया । वह चित्र-विचित्र रूप में झलक रही है (थी) । ४५

* * *

अध्याय-४० (बारात का मिथिला में आगमन)

दशरथ राजा हरख्या अपार जी,
जनकपुर जावा कर्यो विचार जी,
पडो वजडाव्यो पुर मोझार जी,
जाने जवाने सहु थाओ तैयार जी । १ ।

ढाळ

तैयार थाओ जवा जाने, जनकपुर मोझार,
माटे जेने ईच्छा होय ने, आज नीकळो नर नार । २ ।
एवुं सांभळीने पुरजन सकळ, अति हरख्यां पाम्यां मन,
वृद्ध बाळक विना सखे, थया तत्पर जन । ३ ।
गज उपर बेसाड्या प्रथम, गुरु वसिष्ठने तेणी वार,
रथमांहे बेठा राय दशरथ, जोडिया हय चार । ४ ।
अश्व उपर चढ्या बंन्यो, भरत-शत्रुघन,
सहु राणीओ बेठी सुखासन, संग दासीजन । ५ ।
अनेक रथ हय गज पदाति, सुखासन अपार,
चतुरंग सेन्या नीकळी, ते अवधपुरनी बहार । ६ ।

अध्याय ४०—(बारात का मिथिला में आगमन)

दशरथ राजा अत्यधिक आनन्दित हो गये। उन्होंने जनकपुर (अर्थात् मिथिला) जाने का विचार (पक्का) किया (और) नगर में ढिंढोरा पिटवाकर घोषित कर दिया— '(नगरवासियो, तुम) सब बारात में जाने के लिए तैयार हो जाओ। १ बारात में जनकपुर जाने के लिए तैयार हो जाओ। अतः जिनकी (वहाँ जाने की) इच्छा हो, वे नर-नारी आज (ही) निकलें।' २ ऐसा सुनकर समस्त नगर-जन मन में अति आनन्द को प्राप्त हो गये। सिवा वृद्धों और बालकों के (अन्य सब) लोग तैयार हो गये। ३ (तत्पश्चात्) उस समय राजा ने गुरु वसिष्ठ को (सबसे) पहले हाथी पर बैठा दिया और वे (स्वयं) रथ में बैठ गये। (उस रथ में) चार घोड़े जुते (थे)। ४ भरत और शत्रुघ्न दोनों (राजपुत्र) घोड़ों पर सवार हो गये। सब रानियाँ पालकियों में बैठ गयीं। (उनके) साथ में दासियाँ थीं। ५ (उस बारात में) अनेक रथ, घोड़े और हाथी थे; पैदल चलनेवाले लोग थे। (उसमें) अनगिनत पालकियाँ थीं। (तब) चतुरग सेना (भी) अयोध्या के बाहर निकल गयी। ६ (उस समय) वाद्य अति तुमुल बज रहे हैं (थे)।

वाजित्र वाजे अति घणां, थई रह्यो जयजयकार,
हणहणे केकाण कच्छी, गज करे चित्कार । ७ ।
हस्ती उपर विप्र बेठा, बंदीजन बहु रंग,
रघुकुळ तणी कीरति वखाणे पामे हरख उमंग । ८ ।
नेजा अंबाडी धजा झळके, कनक मणिमय सार,
छत्र चामर चळकतां, झळकतां ताडिताकार । ९ ।
वीर शूरा वेश पूरा, चाल्या चढी केकाण,
आभूषण शुभ्र शस्त्र झळके, रत्नजडित पलाण । १० ।
शुभ शुकन बंदी नीकळ्या चाल्या जनपुरनी वाट,
सरित वन आवे बहु, ओळंगता गिरि घाट । ११ ।
वाटे ज्यां वासो रहे, दशरथ सहित समाज,
सुरलोक जेवुं स्थळ भजे, जाणे भूपति सुरराज । १२ ।
एवी शोभा सहित आव्या, मिथिल देश मोझार,
जनकपुरनी बहार उपवन, ऊतर्या ते ठार । १३ ।
निशान नोबत गडगडे, शोभा सहित राजन,
रूपक वांधे ते तणुं, श्रोता सुणो एकमन । १४ ।

(रह-रहकर) जयजयकार हो रहा था। कच्छी घोड़े हिनहिना रहे हैं (थे); हाथी चिंघाड़ रहे हैं (थे)। ७ ब्राह्मण हाथियों पर बैठ गये। (बारात के साथ) अनेक प्रकार के बन्दीजन थे, (जो) रघुकुल की कीर्ति का बखान कर रहे हैं (थे) तथा आनन्द और उत्साह को प्राप्त हो रहे हैं (थे)। ८ स्वर्ण और रत्न-मय सुन्दर भाले अम्बारियाँ तथा ध्वज झलक रहे हैं (थे); बिजली के-से आकार (रूप) में छत्र और चामर चमकते— झलकते थे। ९ शूर-वीर पूरे वेश (वर्दी) में थे। वे घोड़ों पर सवार होकर चल दिये। उनके शुभ आभूषण और शस्त्र चमक रहे है (थे)। (घोड़ों के) पलान (जीन) रत्न-जटित थे। १० शुभ शकुन पर (भगवान् का) वन्दन करके वे जनकपुर के मार्ग पर चल दिये। पर्वतों और घाटियों को पार करते समय (मार्ग में) बहुत नदियाँ और वन आते हैं (थे)। ११ मार्ग में दशरथ अपने समाज (अर्थात् साथ में चलनेवाले बारातियों) के साथ मुकाम डालते (जहाँ ठहर जाते) वह स्थान देवलोक-सा शोभा देता है (था), मानो राजा दशरथ इन्द्र ही हों। १२ वे ऐसी शोभा के साथ मिथिला प्रदेश में आ गये। जनकपुरी के बाहर एक उपवन था। उस स्थान पर वे ठहर गये। १३ ढोल, नगाड़े घनघनाहट

पायदळ शम-दम तणुं, मांहे सद्विवेक तुरंग,
ते चाले आगळ मलपता, रक्षा करे निज अंग । १५ ।
तेनी पूंठे निजबोधना, कुंजर विराजे सार,
रामनाम तणा मुखे करता घणा चित्कार । १६ ।
निजानुभवना दिव्य रथमां, बेठा मोटा संत,
ते रामरूपने निरखवा, अनुभव चढचा महंत । १७ ।
प्रयाण प्रथमे जागृति, पुरग्राम स्थूळ निवास,
त्यां रही दशरथ रामने, संभारता सुखराश । १८ ।
स्वप्नावस्था गामडां सूक्ष्म त्यांहां नथी रहेता राय,
अघोर वनवाटे घणां, ते सुषुप्ति कहेवाय । १९ ।
एम करतां जनकपुरने आविया उपवन,
त्यांहां लक्ष करी राय, जणायां राम-प्राप्ति चिह्न । २० ।
विदेहने तव खबर थई, जे पधार्या महाराज,
सामा आव्या वाजित्र वाजते साथे घणा पृथ्वीराज । २१ ।

के साथ बज रहे हैं (थे)। राजा दशरथ शोभा से युक्त (शोभायमान) थे। मैं इसका (इसपर) रूपक बाँध रहा हूँ। हे श्रोताओ, आप एकमन (एकाग्रता-पूर्वक) सुनिए। १४ पदाती (पैदल चलनेवाले) शम और दम के अर्थात् शम-दम-रूप हैं। सेना में घोड़े अर्थात् घुड़सवार (मानो) सद्विवेक हैं। वे आगे उत्साहपूर्वक झूमते हुए चल रहे हैं (थे) और अपने भाग की रक्षा कर रहे हैं (थे)। १५ उनके पीछे आत्मबोध के सुन्दर हाथी विराजमान हैं (थे)। वे मुख से रामनाम-रूपी बहुत चिघाड़ करते रहे। १६ दिव्य रथों में महान् सन्त बैठे हुए थे। वे राम के रूप को देखने के लिए आत्मानुभव-रूपी रथों में सवार हो गये (थे)। १७ पहले (किया हुआ) प्रयाण (मानो) जागृति (अवस्था) है। वह तो नगर-ग्रामों का निवास स्थूल-शरीर का निवास है (था)। वहाँ रहते हुए दशरथ सुखराशि श्रीराम का स्मरण करते रहे। १८ सूक्ष्म अर्थात् छोटे गाँवों का निवास स्वप्नावस्था है। वहाँ राजा नहीं रह जाते थे। बहुत भीषण वन-मार्ग से चलना तो सुषुप्ति अवस्था कहाती है। १९ ऐसा (मार्ग तय) करते-करते वे जनकपुर के उपवन (के पास) आ गये। राम की प्राप्ति के वे चिह्न दिखायी दिये (विदित हो गये), तो राजा वहाँ (उसे) लक्ष्य कर रह गये। २० जनक को (यह) समाचार विदित हो गया कि महाराज दशरथ पधारे (हैं)। वाद्यों के बजते रहते हुए वे (दशरथ की अगुवानी के लिए) सामने आ गये। साथ में अनेक

गुरु वसिष्ठने चरणे प्रथम नमिया जनक राजन,
पछी राय दशरथने मळ्या, भेटिया अन्योअन्य । २२ ।
भूपनी पासे पुत्र छे जे, भरत-शत्रुघन,
राय जनकनां तेने जोईने, स्थिर थयां छे लोचन । २३ ।
पड्या विदेह विचारमां, बे पुत्रने जोई त्यांहे,
राम लक्ष्मण मुज घेर छे, शुं रिसाई आव्या आंहे ? । २४ ।
एम तंन बे तद्वत जोईने, विचारे मन विदेह,
वसिष्ठने पूछ्युं तदा, त्यारे निवर्त्यो संदेह । २५ ।
घणुं मान देईने जाय तेडी, राय नगरमोझार,
सुमंते सैन्य सकळ पछे, उतार्युं ने ठार । २६ ।
जनकपुरमां गया दशरथ, शोभानो नहि पार,
सहु लोक जोई विस्मे थया, वळी गौर श्याम कुमार । २७ ।
एक सुन्दर मंदिर शोभतुं, रहेवाने आप्युं त्यांहे,
सहु साथ शुं नरनाथ पोते, ऊतर्या ते मांहे । २८ ।
पछी राम-लक्ष्मण मळ्या आवी, लाग्या गुरुने पाय,
पिताने चरणे नम्या, तव हरखिया जोई राय । २९ ।

राजा थे । २१ राजा जनक (सबसे) पहले गुरु वसिष्ठ के चरणों में लग गये । बाद में वे दशरथ राजा से मिले— वे परस्पर मिल गये । २२ राजा दशरथ के पास जो पुत्र थे, वे थे भरत और शत्रुघ्न । उन्हें देखकर राजा जनक के नेत्र स्थिर हो गये हैं (थे), —वे एकटक देखते रहे । २३ उन दो पुत्रों को वहाँ देखकर जनक विचार (दुविधा) में पड़ गये कि राम और लक्ष्मण तो मेरे घर में हैं, क्या वे क्रोध करके— रूठकर यहाँ आ गये ? २४ उन्हीं के समान (इन) दो पुत्रों को देखकर जनक मन में यों सोच रहे हैं (थे) । तब उन्होंने वसिष्ठ से पूछा, तो (उनका) सन्देह दूर हो गया । २५ उनका बहुत सम्मान करते हुए उन्हें बुलाकर जनक राजा नगर में (लौट) गये । बाद में उस स्थान पर सुमन्त ने समस्त सेना को ठहरा लिया । २६ (तदनन्तर) दशरथ जनकपुर में गये । वहाँ की शोभा का (कोई) पार नहीं है (था) । इसके अतिरिक्त गोरे (शत्रुघ्न) और साँवले भरत— इन कुमारों को देखकर सब लोग चकित हो गये । २७ एक मंदिर (प्रासाद) सुशोभित हो रहा था । वह (उन लोगों को) निवास करने के लिए दिया । अपने साथ वाले लोगों सहित दशरथ राजा उसमें ठहर गये । २८ बाद में राम और लक्ष्मण (वहाँ) आकर मिल गये । वे गुरु (वसिष्ठ) के पाँव लगे ।

राये चांप्या रुदे साथे, राम-लक्ष्मण तन,
संतोष पाम्या रायजी, जेम पामे धन निरधन। ३०।
कौशल्या केकै सुमित्राए, बेसाड्या उछंग,
रुदे चांपी सूंघे शिर जेम वच्छ धेनु संग। ३१।
सहु सभा साथे राय दशरथ, गुरु ब्रह्मकुमार,
ते मंडप जोवा चालिया, सीता स्वयंवर साथ। ३२।
भूपने सरवे देखाड्या जे चापकेरा खंड,
आ जुओ नृप श्रीरामजीए, भांगियुं कोदंड। ३३।
ते जोई दशरथ थया विस्मय, अति प्रचंड कठोर,
ए केम भांग्युं प्राणवल्लभ ? कोमळ राम किशोर। ३४।
पछी विदेहे आदर करी, बेसाडिया आसन,
राय दशरथ पासे बेठा, चारे पुत्र रतन। ३५।
वसिष्ठ आदे सभा सहु, बेठा थई निश्चित,
अन्य पृथ्वीराय बेठा, हरख पामी चित्त। ३६।

पिताजी के चरणों में (का) नमन किया; तो (उन्हें) देखकर राजा आनंदित हो गये। २९ राजा ने अपने पुत्रों--राम और लक्ष्मण को हृदय से लगा लिया। जैसे निर्धन मनुष्य धन मिलने पर (सन्तोष को प्राप्त) हो जाता है, वैसे दशरथ राजा (पुत्रों से मिलकर) सन्तोष को प्राप्त हो गये। ३० (तदनन्तर) कौसल्या, कैकेयी और सुमित्रा ने उन्हें गोद में बैठा लिया। जैसे गाय, बछड़ा साथ होने पर करती है, वैसे उन्हें हृदय से लगाकर वे उनके मस्तक को सूँघती हैं (थीं)। ३१ दशरथ राजा और गुरु वसिष्ठ समस्त सभा-जनों सहित सीता-स्वयंवर के उस सुन्दर मण्डप को देखने के लिए चल दिये। ३२ धनुष्य के जो टुकड़े (हो गये) थे, वे सबने राजा को दिखा दिये (और कहा)— 'यह देखिए, राजन् ! श्रीराम ने धनुष को तोड़ डाला।' ३३ उसे देखकर दशरथ आश्चर्य-चकित हो गये। उस अति प्रचण्ड एवं कठोर धनुष को मेरे प्राण-प्रिय (राम ने) कैसे तोड़ डाला ? किशोर (अवस्थावाला) राम तो कोमल है। ३४ अनन्तर जनक ने आदर (-सत्कार) करके (उन्हें) आसन पर बैठा लिया। चारों पुत्र-रत्न दशरथ राजा के पास बैठ गये। ३५ वसिष्ठ आदि सब सभा-जन निश्चिन्त होकर बैठ गये। अन्य राजा (भी) मन में हर्ष को प्राप्त होकर (यथास्थान) बैठ गये। ३६ श्री-सम्पन्न चारों पुत्रों सहित दशरथ शोभायमान हो रहे थे। उस समय जनक ने

पुत्र चारे सहित दशरथ, शोभता श्रीमंत,
ते समे जनके मानिया, भूपति भाग्यवंत । ३७ ।
पछी जनक राजा बोलिया, सुणो भूपति कहुं पेर,
पुत्र चारे तमारा ते, परणावो मुज घेर । ३८ ।
बे कन्या छे माहरी, ऊर्मिला सीता नाम,
मांडवी श्रुतकीर्ति बे मुज बंधुनी अभिराम । ३९ ।
रामने सीता वरे, ऊर्मिला लक्ष्मण वीर,
मांडवी भरतने श्रुतकीर्ति शत्रुसूदन धीर । ४० ।
एवुं सांभळी सहु सभा हरखी, अनंद्या भूपाळ,
पछे सामसामी रच्या मंडप, अति विचित्र विशाळ । ४१ ।
वाजित्र बे मंडप विषे, वाजतां अति घनघोर,
गाय मंगळ गीत सुन्दर, सुन्दरी चित्तचोर । ४२ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

चित्तचोर चतुरा चोळे पीठी, वरकन्याने तेणी वार रे,
सहु करे भोजन भावतां, मन पामे मोह अपार रे । ४३ ।

* * *

दशरथ राजा को भाग्यवान् समझ लिया । ३७ अनन्तर जनक राजा बोले— 'हे राजा ! मैं समाचार कहता हूँ । आपके इन चारों पुत्रों का मेरे घर (की कन्याओं से) विवाह कराइए । ३८ उर्मिला और सीता नामक मेरे दो कन्याएँ है। (और) मेरे प्रिय वन्धु के माण्डवी और श्रुतकीर्ति नामक दो (कन्याएँ) हैं । ३९ सीता राम का वरण करे, उर्मिला वीर लक्ष्मण का, माण्डवी भरत का और श्रुतकीर्ति धैर्यशाली शत्रुघ्न का ।' ४० ऐसा सुनकर समस्त सभा आनन्दित हो गयी । राजा भी आनन्दित हो गये । अनन्तर आमने-सामने अति विशाल और सुन्दर (आश्चर्यकारी) मण्डप बना दिये (गये) । ४१ दोनों मण्डपों में वाद्य अति घनघोर वजते रहे । (देखनेवालों के) मन को चुरा लेनेवाली, अर्थात् अति सुन्दर स्त्रियाँ मंगल सुन्दर गीत गा रही हैं (थीं) । ४२

(वे) चित-चोर चतुर स्त्रियाँ वर और वधू को उस समय हलदी लगाती है । सब मन-भाया भोजन करते हैं । उनका मन असीम मोह को प्राप्त हो जाता है । ४३

* * *

अध्याय–४१ (वरों का विवाह-मण्डप की ओर गमन)

राग धोळनी देशी

शुभ मुहूरत मांहे लग्न लीधुं, करी मुनिए विचार,
मार्गशीर्ष सुद पंचमी, शुभ योग ग्रह चंद्र वार। १।
गणपति पधराविया, जे सकळ मंलळरूप,
गोत्रज केरी स्थापना करी, पूज्या दशरथ भूप। २।
चार कन्या चार वरने, पीठी चोळी अंग,
स्नान विधिए कराविया, धर्यां अलंकार उमंग। ३।
राय जनकने घेरथी आवी, लई कलवो नार,
ते गीत मंगळ गाय छे, आनंद हरख अपार। ४।
ते केवी शोभे कामिनी ? कवि उपमा दे सार,
जाणे शांति करुणा दया क्षमा, धृति उन्मनी अविकार। ५।
सद्बुद्धि सद्विद्या तितिक्षा, समाधि श्रद्धा विनीत,
मुमुक्षुता तुरिया उपरति, सद्गति सुनीत पुनीत। ६।
एवी राममंदिरमां प्रवेशी, सुन्दरी शुभ काम,
त्यारे वरघोडानो समो हवो, तत्पर थया श्रीराम। ७।

अध्याय—४१ (भ्राताओं-सहित श्रीराम का मण्डप-समीप आगमन)

वसिष्ठ मुनि ने विचार करके शुभ मुहूर्त पर विवाह की तैयारी की। (वह मुहूर्त था)— मार्गशीर्ष शुक्ल पंचमी तिथि शुभ ग्रहयोग (से युक्त) सोमवार। १ जो समस्त मंगल-रूप हैं, ऐसे गणपति देवता का आगमन (आवाहन) कराया। कुल-देवताओं की स्थापना करके दशरथ राजा ने उनका पूजन किया। २ चारों कन्याओं (वधुओं) और चारों वरों को हलदी लगायी। उनको यथाविधि स्नान कराया और उन्होंने आनन्द-पूर्वक आभूषण धारण किये (पहने)। ३ जनक राजा के गृह से स्त्रियाँ कलेवा लेकर आ गयीं। वे मंगल गीत गा रही है (थीं)। (उनके) आनन्द-उल्लास का कोई पार नहीं था। ४ वे ललनाएँ कैसी शोभायमान हो रही हैं (थीं), (इसे बताने के लिए) कवि सुन्दर उपमा दे रहा है। मानो वे (ललनाएँ) शान्ति, करुणा, दया, क्षमा, धृति (धैर्य), उन्मनी, अविकार-स्थिति, सद्बुद्धि, सद्विद्या, तितिक्षा (क्षमाशीलता), समाधि, विनम्रता से युक्त श्रद्धा, मुमुक्षता (मोक्ष पाने की अवस्था), तुरीयावस्था, (ब्रह्म में लीन होने की अवस्था), उपरति (विरक्ति), सद्गति, और पवित्र सुनीति (मूर्तिमती) होकर आ गयी) थीं। ५-६ ऐसी वे शुभ-कामना करनेवाली सुन्दर नारियाँ श्रीराम के सदन में प्रविष्ट हो गयीं।

ते समे जनके तेडवा, मोकल्या निज परधान,
ते आविया श्रीराम पासे, सकळ शोभामान । ८ ।
जाणे सद्विवेक ने बोध आनंद, ज्ञान तप वैराग,
परमारथ निष्काम निश्चे, संतोष ने अनुराग । ९ ।
वररायने शणगारिया, जरकशी जामा अंग,
तिलक मृगमदनां कर्यां, कुमकुम अक्षत अंग । १० ।
मेश बिंदु आंख्य आंजी, करमां श्रीफळ पान,
वरराय वरघोडे चड्या तत्पर थई सहु जान । ११ ।

वरघोडानी देशी

तत्पर थईने ऊघलिया श्रीरामजी, मुनिवरने लाग्या पाय,
रघुवरजी घोडे चड्या ।
तीखा तोरंग चाले रे नाचता, निज बंधु सहित रघुराय । रघु० । १
अंगोअंगनी शोभा रे शी कहुं ? जोतां लाजे कोटिक काम । रघु० ।
लक्षणवंता लघु वेशे विराजता, त्रण बंधुनी आगळ राम । रघु० । २

तब दूल्हे का घोड़े पर सवार होकर निकलने का समय हो गया, तो श्रीराम तैयार हो गये । ७ उस समय जनक ने (वर-पक्ष के लोगों को) लिवा ले जाने के लिए अपने मंत्रियों को भेज दिया । वे श्रीराम के पास आ गये । वे सब सुशोभित थे । (वे कैसे थे, इसे स्पष्ट करते हुए कवि कहता है कि) वे मानो निश्चित रूप में सद्विवेक और बोध, आनन्द, ज्ञान, तप, वैराग्य, परमार्थ, निष्काम-स्वरूप, सन्तोष और अनुराग (उन मंत्रियों के रूप में उपस्थित हो गये) थे । ८-९ जरी से युक्त पोशाक शरीर पर पहनाकर वर-राज को सजाया गया । अंग पर कुंकुम और अक्षत के साथ कस्तूरी के तिलक लगा दिये । १० आँखों में काजल लगाया और हाथों में श्रीफल (नारियल) तथा पान रख दिया । वर-राज (दूल्हे) घोड़े पर सवार हो गये । (इस प्रकार) सब बारात तैयार हो गयी । ११ श्रीराम मुनिवर वसिष्ठ के पाँव लगे । वे सज्ज होकर विवाह के लिए चल दिये और घोड़े पर विराजमान हो गये । तेजस्वी घोड़े (मानो) नृत्य करते हुए चल दिये । अपने भाइयों-सहित श्रीराम (विवाह के लिए) चल दिये । १ (उनके) अंग-प्रत्यंग की शोभा का वर्णन कैसे करूँ ? (उसे) देखकर करोड़ों कामदेव लज्जित हो जाते हैं । (समस्त) सुलक्षणों से युक्त वे लघु वेश में शोभायमान थे । तीनों बन्धुओं के आगे श्रीराम थे । २ (उनके) मुकुट में (लगाये) तुर्रे, कलगियाँ जगमगा रहे हैं (थे) ।

तोरा कलगी मुगट पर झळकती, उपर मुक्ताफळनी खूंप । रघु० ।
थाके वरणवतां शेष शारदा, शुं वखाणुं सुन्दर रूप ? । रघु० । ३
शोभे दशरथ सहु जन साथमां, ग्रही चाले गुरुनो हाथ । रघु० ।
जोई शोभा चारे रे पुत्रनी, ब्रह्मानंद माने नृपनाथ । रघु० । ४
मोड बांधी माताओ रे चालती, ग्रही रामणदीवो हाथ । रघु० ।
गीत मंगळ मधुरां गाय छे, चाले सरब राणीनो साथ । रघु० । ५
वाजे वाजित्र नाना प्रकारनां नाचे अपछरा गांधर्व गाय । रघु० ।
बंदीजन बहु कीरति वखाणता, जयजयकार मंगळधुनि थाय । रघु० । ६
नभे देवनां दुंदुभि गडगडे, सुर जोता चढीने विमान । रघु० ।
दई आशिष पुष्प वरसावता सुर अंगना करती गान । रघु० । ७
जुए नरनारी सरवे नग्रनी, वधावे भरी मोतीडे थाळ । रघु० ।
हरखी नीरखीने लेछे ओवारणां, घणुं जीवजो दशरथ बाळ । रघु० । ८
आगळ साबेला सरवे शोभता छेलछबीला राजकुमार । रघु० ।
जरीजीन मरीना मोरडा, रत्नजडित पलाण तोखार । रघु० । ९

ऊपर मोतियों का सेहरा था। शेष और सरस्वती (तक) वर्णन करते हुए थक जाते हैं, तो मैं उनके सुन्दर रूप का बखान कैसे कर (सक)-ता हूँ ? ३ सब लोगों के साथ में दशरथ शोभायमान हो रहे हैं (थे); वे गुरु वसिष्ठ का हाथ थामे चल रहे हैं (थे)। (अपने) चारों पुत्रों की सुन्दरता देखकर नृपनाथ दशरथ ब्रह्मानन्द मानते (अर्थात् अनुभव करते) हैं (थे)। ४ हाथों में (विशिष्ट प्रकार के मंगल) दीप लिये हुए माताएँ चलती रहीं। वे मंगल गीत मधुर स्वर में गा रही हैं (थीं)। ५ नाना प्रकार के बाजे वज रहे है (थे)। अप्सराएँ नाच रही हैं (थीं) और गन्धर्व गा रहे हैं (थे)। वन्दीजन कीर्ति का बहुत बखान कर रहे हैं (थे)। जयजयकार की मंगल ध्वनि हो रही है (थी)। ६ आकाश में देवों की दुन्दुभियाँ गर्जन कर रही हैं (थीं)। विमानों में बैठकर देव देख रहे हैं (थे)। वे आशीर्वाद देते हुए फूल वरसा रहे थे। देवांगनाएँ गीत गा रही थीं। ७ नगर के सब पुरुष और स्त्रियाँ देख रहे हैं (थे) और मोतियों से थाल भरकर, आशीर्वाद देते हुए (मोती) वरसा रहे हैं(थे)। देखते हुए वे आनन्दित होकर (अशुभ और दुःख को टालने के हेतु) बलैया ले रही हैं (थीं और मनारही थीं कि)— दशरथ के ये पुत्र बहुत-बहुत जीएँ। ८ आगे वरों के लिए (सजे हुए) घोड़ों पर सब छैल-छबीले राजकुमार शोभायमान थे। घोड़ों पर जरी के चारजामे, (मस्तक पर) मोरड़े (नामक अलंकार) तथा रत्न-जटित पलान (जीन) थे। ९

एवुं आपता सुखडुं रे सर्वने, तोरण आव्या त्रिभुवन-भूप । रघु० ।
गिरधारी प्रभु गुणवंतनुं, सरवे मोह पाम्या जोई रूप । रघु० । १०

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रूप जोई रघुवर तणुं, मोह पाम्यां नर नार रे ।
हवे सासु आव्यां पहोंखवा, त्यां थई रह्यो जयजयकार रे । ११ ।

* * *

इस प्रकार सबको सुख देते हुए त्रिभुवन के राजा श्रीराम (मण्डप के)तोरण पर आ गये । गिरधर कवि कहते हैं— गुणवान् प्रभु के रूप को देखकर सब मोह को प्राप्त हो गये (मोहित हो गये) । १०

श्रीरघुवीर राम के रूप को देखकर पुरुष और स्त्रियाँ मोह को प्राप्त हो गये (मुग्ध हो गये) । अब सासजी परछन करने आ गयीं, तो (वहाँ) जयजयकार होता रहा । ११

* * *

अध्याय—४२ (श्रीराम आदि का विवाह)

वरराय तोरण आविया, ते अश्व उपरथी ऊतर्या,
मणि बाजठ पर ऊभा रह्या, आव्या आचारज हरखे भर्या । १ ।
सुनेना राणी जनकनी, सुमति ते कुशकेतु तणी,
ते बन्यो आवी पोंखवा, गाय गीत गोरी अति घणी । २ ।
शतानंद वसिष्ठ कौशिक, आदे मुविवर आविया,
विधिए करी पूजन कराव्युं, चारे वर पोंखाविया । ३ ।
मधुपर्क विधि वहेवार सरवे, आरती वरनी करी,
एम पुरुषोत्तमने पोंखिया, राणीओ अति हरखे भरी । ४ ।

अध्याय—४२ (श्रीराम आदि का विवाह)

वरराज तोरण पर आ गये । वे घोड़े पर से उतर गये । वे रत्नमय चौकी पर खड़े रह गये । (उसी समय) आचार्य (वहाँ) पधारे । वे आनन्द से भरे-पूरे अर्थात् आनन्द-विभोर थे । १ सुनयना जनक की रानी थी, तो सुमति (जनक के बन्धु) कुशकेतु की । वे दोनों परछन करने के लिए आ गयीं । (उस समय) बहुत (सुन्दर) स्त्रियाँ गीत गा रही हैं (थी) । २ शतानन्द, वसिष्ठ, विश्वामित्र आदि मुनिवर (भी) आ गये । (उन्होंने) यथाविधि चारों वरों का पूजन कराया और परछन कराया । ३ (फिर) मधुपर्क विधि (-जैसे) सब व्यवहार करते हुए वरों की आरती उतारी । इस प्रकार पुरुषोत्तम (श्रीराम) का परछन

त्यांहां मंडपमां छे माहेरुं, वाजठ कनकमणिना धर्या,
वररायने पधराविया, आचार कुळ रीते कर्या । ५ ।
सहु भूपने बेसाडिया, मंडपमां आदर करी,
एक खंडमां मरजादथी, त्यां बेसाडी सहु सुन्दरी । ६ ।
पुरजन परिजन ज्ञाति गुरुजन, बेठा मंडपमां मळी,
सहु लग्नरचना जुए छे, वाजित्र बहु वाजे वळी । ७ ।
कनकझारी जळ भरी लावी राणी सुनेना वहालमां,
पग पखाळ्या वरना विदेहे कनक केरी थाळमां । ८ ।
यज्ञोपवीत पहेरावियां, ते वेदमंत्रे अनुसरी,
जनके ते वरने पूजिया, पछी शोडष उपचारे करी । ९ ।
लग्नघटिका साथे गणिक, घडियाळ बांधीने तदा,
पछी पधरावी त्यां चार कन्या, शणगारीने सर्वदा । १० ।
सावधान वाणी विप्र बोले, अंतरपट आडा धर्या,
मंगळाष्टक उच्चार करता, मुनि मन हरखे भर्या । ११ ।

किया तो रानियाँ अति हर्ष से भर उठीं (हर्ष-विभोर हो गयीं) ४ वहाँ (उस विशाल) मण्डप के भीतर (विवाह-विधि सम्पन्न करने के लिए एक विशेष रूप में बनाया हुआ) लग्न-मण्डप है (था), जिसमें सोने एवं रत्नों की चौकियाँ रखीं (थीं)। (वहाँ) दूल्हों का आगमन कराया (वरों को लाया गया) और कुल-रीति के अनुसार आचार सम्पन्न किये । ५ सब राजाओं को (उनका) सत्कार करते हुए मण्डप में बैठा दिया और वहाँ (मण्डप के) एक भाग में मर्यादा-पूर्वक सब स्त्रियों को बैठा दिया । ६ नगर-निवासी, सेवक, ज्ञाति (जाति-बिरादरी) के लोग तथा गुरुजन मण्डप में मिलकर बैठ गये । (वे) सब विवाह-विधि देख रहे हैं (थे) । इसके सिवा, बहुत वाद्य वज रहे है (थे) । ७ रानी सुनयना प्रेमपूर्वक सोने की झारी में पानी भरकर लायी । (फिर) जनक ने सोने के थाल में वर के पाँव धोये (पद-प्रक्षालन किया) । ८ (तत्पश्चात्) वेद-मंत्रों का अनुसरण करते हुए जनेऊ पहना दिया । फिर सोलह उपचार करते हुए जनक ने वरों का पूजन किया । ९ ज्योतिषि ने तब घटिका-यंत्र (समय-सूचक यंत्र) बाँधकर विवाह के मुहूर्त-सम्बन्धी घटिका साध ली । बाद में सब प्रकार से शृंगार सजाकर वहाँ चारों कन्याओं को लाया गया । १० ब्राह्मणों ने 'सावधान' शब्द कहे, तो (वधुओं और वरों के) बीच में अन्तर्पट पकड़ा दिया । वे मंगलाष्टकों का उच्चारण करते रहे, तो मुनियों के मन आनन्द से भर गये (आनन्द-विभोर हो गये) । ११

ज्यारे लग्नघटिका पूर्ण थई, त्यारे वेद आचारज भणे'
मंगळाक्षत मंत्रीने, कर आप्या वरकन्या तणे। १२।
कन्या केरे शीश चरणे, वरे मूक्या ते जदा,
पछी वर तणे पद शीश अक्षत, कन्याए मूक्या तदा। १३।
एम वेदविधिए लग्न थाय, कर्यो हस्तमेळाप,
स्वस्तिवाचन बोलता, वरमाळ घाली आप। १४।
एम चार कन्या करी अर्पण, जनक भूपे त्यांहे,
मंगळ तूरी वाजित्र जयजय, थाय मंडप मांहे। १५।
राम-सीता परणियां, ऊर्मिलाने लक्ष्मण वर्या,
शत्रुघन श्रुतकीरतिने, मांडवी भरत हरखे भर्या। १६।
मंगळ फेरा फरे छे, वरकन्या हरखे अति घणुं,
शेषनाग कही शके अति, शोभा सुख ते समे तणुं। १७।
मणिथंभमां प्रतिबिंब भासे, फरे वरकन्याय,
अलंकार अंगे झळकता शी वरणवुं शोभाय ? । १८।

जब लग्न-घटिका पूर्ण हो गयी, तब आचार्य वेद (मंत्र) पढ़ते हैं (पढ़ रहे थे)। मंगलाक्षत को अभिमंत्रित कर वह वरों और वधुओं के हाथों मे दी। १२ फिर जब (प्रत्येक) वर ने वधू के मस्तक और पाँवों पर अक्षत डाल दी, तो बाद में वधू ने (भी) वर के पाँवों और मस्तक पर अक्षत डाल दी। १३ इस प्रकार वैदिक विधि से विवाह सम्पन्न हो जाता है (गया), तो वर-वधू के हाथ मिला दिये। (जब ब्राह्मण) स्वस्ति-वाचन करते रहे, तब वर और वधू ने स्वयं (एक-दूसरे को) वरमाला पहना दी। १४ इस प्रकार जनक राजा ने वहाँ चारों कन्याएँ समर्पित कर दीं। तूरहियों आदि मंगल वाद्यों के साथ ही मण्डप में जयजयकार होता है (होता रहा)। १५ राम ने सीता से परिणय (विवाह) किया, तो लक्ष्मण ने उर्मिला का वरण किया। शत्रुघ्न ने श्रुतकीर्ति का, तो भरत ने माण्डवी का पाणिग्रहण किया। तब सब हर्ष-विभोर हो गये। १६ वर तथा वधू (भाँवर के) मंगल फेरे कर रहे हैं (थे) तो वे अत्यन्त आनदित हो रहे हैं (थे)। उस समय की उनकी अत्यधिक शोभा और सुख (का वर्णन करके सहस्र मुखधारी) शेष (भी) नहीं कह सकते है। १७ जव (भाँवर देते हुए) वर और वधू फिर रहे हैं (थे), तो रत्नों के (बनाये) खम्भों में (उनका) प्रतिबिम्ब दिखायी दे रहा है (था)। उनके अंग में आभूषण चमक रहे हैं (थे)। उस शोभा का वर्णन मैं कैसे करूँ (कर सकूँगा)? १८ मानो अभिमानी व्यक्ति के

जाणे चार अवस्था शोभिये, अभिमानी साथे जेम,
एम फेरा फरतां ते समे, वरकन्या शोभे तेम । १९ ।
चार मंगळ वरतियां, जनके कर्यां बहु दान,
वळी जाचकने आप्युं घणुं धन विप्रने दई मान । २० ।
शाखोच्चार करे परस्पर, आचारज तेणी वार,
कुळरीतथी वरकन्या वळतां आरोग्यां कंसार । २१ ।
होम हुताशनमां कर्यो, गोत्रज पूजा प्रसन्न,
एम वरकन्या परणी रह्यां, पछी कराव्युं ध्रुवदरशन । २२ ।
गुरुचरण नमिया भावशुं, रघुवीर साथे भ्रात,
पछी पिताने पाये नम्या पदवंदना करी मात । २३ ।
मिथिलापतिना कोड पहोंत्या हरख्या दशरथ भूप,
वखाणे छे जन सकळ, जोई वरकन्यानु रूप । २४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

वरकन्यानुं रूप जोईने, हरखे सहु नर नार रे,
दुंदुभि वाजे देवनां, थई रह्यो जयजयकार रे । २५ ।

* * *

साथ जिस प्रकार चार अवस्थाएँ शोभा देती हैं, उसी प्रकार भाँवर भरते हुए उस समय वर और वधुएँ शोभा दे रही हैं (थे) । १९ चार (विवाह सम्बन्धी) मंगल कार्य को सम्पन्न करते हुए जनक ने बहुत दान दिया । इसके अतिरिक्त जनक ने सत्कार करते हुए ब्राह्मणों को बहुत धन दिया ।२० उस समय आचार्य परस्पर (गोत्र-सम्बन्धी) शाखाओं का उच्चारण कर रहे हैं (थे) । फिर कुलरीति के अनुसार वरों और कन्याओं ने कसार जैसे मिष्ठान्न का भोजन किया । २१ हुताशन में होम किया । प्रसन्नता-पूर्वक गोत्रज (कुल-) देवताओं का पूजन किया । इस प्रकार वरों और वधुओं का विवाह होने पर बाद में उन्हें ध्रुव (तारे) के दर्शन कराये । २२ फिर बन्धुओं के साथ रघुवीर राम ने श्रद्धा-पूर्वक गुरु के चरणों का नमन किया । बाद में उन्होंने पिताजी के चरणों का नमन किया और फिर माताओं के चरणों का वन्दन किया । २३ मिथिलापति जनक की अभिलाषाएँ (इस प्रकार) पूर्ण हो गयीं । राजा दशरथ (भी) आनन्दित हो गये । वरों और वधुओं के रूप देखकर सब लोग (उसकी प्रशंसा करते हुए) बखान कर रहे हैं (थे) । २४

वरों और वधुओं के रूप को देखकर सब स्त्री-पुरुष आनंदित हो जाते हैं (हो गये) । देवों की दुन्दुभियाँ बज रही हैं (थीं) और जय-जयकार हो रहा था । २५

* * *

अध्याय—४३ (राग धवळ धनाश्री)

श्रोताजन सुणो भाव धरीने, पावन रामकथाय जी,
नित नित आनन्द मिथिलापुरीमां, मंगळ उच्छव थाय जी । १ ।
श्रीराम लग्न जोई मग्न थया, मुनि देता आशीरवाद,
क्षण-क्षणमां थाय पुष्पवृष्टि, करे देव दुंदुभिनाद जी । २ ।
शिव ब्रह्मा मघवापति आदे, देव सकळ कहेवाय जी,
ते विप्र वेश धरी आव्या जनकपुर, जोवा रामविवाह जी । ३ ।
अन्य मुनिवर पृथ्वी केरो, मानुभाव महांत जी,
ते लग्न जोवाने जनकपुर आव्या, पाम्या हरख अनंत जी । ४ ।
नग्रनिवासी नरनारी जन, गीत मंडळ सहु गाय जी,
अवधवासी जन सुख बहु पामे, आनंदमां दिन जाय जी । ५ ।
नित नित भावतां भोजन सहुने, नित नित झाझां मान जी
नित नित नवलो रंग विवाहनो, नित नित नवलां गान जी । ६ ।
सरवे परस्पर वातो करे छे, नरनारी गुणवान जी,
दशरथ जनक संबंधी सरखा, भूपति भायगवान जी । ७ ।

अध्याय—४३ (परशुराम-आगमन)

हे श्रोताजनो, श्रद्धा धारण करके पवित्र रामकथा का श्रवण कीजिए। (विवाह के पश्चात्) मिथिला में नित्यप्रति आनन्द (छाया हुआ) रहा तथा मंगल उत्सव होते है (होते रहे) । १ श्रीराम का विवाह देखकर ऋषि (आनन्द-सागर में) मग्न रह गये और (वधुओं तथा वरों को) आशीर्वाद देते रहे । प्रतिक्षण (देवलोक से) पुष्प-वर्षा होती है (थी); देव दुन्दुभि-नाद किया करते है (दुन्दुभि बजाया करते थे) । २ शिवजी ब्रह्मा, इन्द्र आदि (जो) समस्त देव कहाते हैं, वे राम के विवाह को देखने के लिए ब्राह्मणों का वेश (रूप) धारण करके जनकपुर आ गये (थे) । ३ पृथ्वी पर के अन्य श्रेष्ठ ऋषि, महानुभाव, महन्त विवाह देखने के लिए जनकपुर आ गये (थे) । वे अनन्त (अपार) आनन्द को प्राप्त हो गये । ४ नगर में रहनेवाले पुरुष और नारी जन सब मंगल गीत गा रहे हैं (थे) । अयोध्या के निवासी (जो बारात में आये हुए थे) बहुत सुख को प्राप्त हो जाते हैं (गये) और उनके दिन आनन्द में (बीतते) जा रहे है (थे) । ५ सबको नित्य-नित्य मनभाया भोजन तथा नित्य-नित्य सम्मान प्राप्त हो जाता था । नित्य-नित्य विवाह का नया रंग (आनन्द) आ जाता तथा नित्य-नित्य नये-नये गीत गाये जाते । ६ (वे) सब गुणवान् स्त्री-पुरुष परस्पर (आनन्दपूर्वक) बातें करते हैं (थे)— 'दशरथ

अन्य समोवड नथी आ जगमां, उपमा एह समान जी,
विवेक वैराग्य जेवा नृप, जाणे वरकन्या भक्ति ज्ञान जी । ८ ।
एम पुरजन सरवे वातो करे, रखे राम आंहां थकी जाय जी,
घणां दिवस आंहां रघुपति रहे, तो आपणे महासुख थाय जी । ९ ।
पछी सरव सभा सांभळतां बोल्या, राय विदेह वचन जी,
कृपा करी एक मास रहो मुज घेर दशरथ राजन जी । १० ।
त्यारे श्रीरामे समस्या करी गुरुने समज्या ब्रह्मकुमार जी,
आगळ काम घणां करवां छे, जे कारण धर्यो अवतार जी । ११ ।
पछे बार दिवस रह्या मिथिलापुरमां साथ शुं दशरथ राय जी,
त्यारे वसिष्ठ गुरु कहे भूपति हावे, अमने करो विदाय जी । १२ ।
तमे अमने घणुं सुख आप्युं, अति सेवा करी राजन जी,
रामने हावे गमतुं नथी, घर मूक्ये थया घणा दिन जी । १३ ।
एवा वचन सांभळी मुनिवर केरां, जनक ऊठ्या तेणी वार जी,
पहेरामणी बहु विधनी आपी, कहेतां न आवे पार जी । १४ ।

और जनक (दोनों) समधी समान (योग्यतावाले) हैं, राजा (जनक ऐसे समधी को पाकर) भाग्यवान् (सिद्ध हुए) है । ७ उनके समकक्ष और कोई इस संसार में नहीं हैं । (उनके लिए) वे ही समान उपमा (तुल्य) हैं । मानो, दशरथ और जनक राजा (क्रमशः मूर्तिमान) विवेक और वैराग्य जैसे हैं, (जब कि) वर और वधू (मूर्तिमान) ज्ञान और भक्ति हैं ।' ८ इस प्रकार नगर-निवासी सब लोग बातें करते (थे) । (वे सोचते थे कि)— हम राम को (यहाँ) रखते हैं (रखना चाहते हैं) । वे यहाँ से न जाते हैं (न जाएँ) । राम यहाँ बहुत दिन रहते हैं (अर्थात् यदि रहें) तो हमें महान् सुख (प्राप्त) हो जाता है (हो जाएगा) । ९ अनन्तर समस्त सभा (-जनों) के सुनते रहते जनक राजा (यह) बात बोले— 'हे दशरथ राजा, कृपा करके मेरे घर एक महीना (और) रहिए ।' १० तब श्रीराम ने गुरुजी को संकेत किया, तो ब्रह्म-कुमार वसिष्ठ समझ गये कि जिसके कारण (राम ने) अवतार धारण किया, वे बहुत कार्य आगे करने हैं । ११ दशरथ राजा के साथ फिर बारह दिन मिथिलापुरी में वे रह गये । तब गुरु वसिष्ठ जनक राजा से कहते हैं (बोले)— 'अब हमें विदा कीजिए । १२ हे राजा, आपने हमें बहुत सुख प्रदान किया, हमारी बहुत सेवा की । अब राम को (यहाँ अधिक रहना) नहीं भा रहा है । घर छोड़े बहुत दिन (व्यतीत) हो गये ।' १३ मुनिवर वसिष्ठ की ऐसी बातें सुनकर, उस समय जनक उठ गये । उन्होंने (वर-

हय गज रथ मणि भूषण पटकूळ पहेराव्यां नर नार जी,
ग्राम सैन्य सुख आसन-सज्जा, दासी दास अपार जी । १५ ।
सकळ जान संतोषी जनके, कर जोडी लाग्या पाय जी,
विनय वचनथी करी विनति, रीझव्या दशरथराय जी । १६ ।
पछी कन्याओ शणगारी सुन्दर, वळावी तेणी वार जी,
वाजित्र वाजे नाना विधनां, थई रह्यो जयजयकार जी । १७ ।
सैन्य सकळ सावधान थयुं, ने चाल्या दशरथ भूप जी,
राणीओ सहु सुखासन बेठी, वरकन्या अनुरूप जी । १८ ।
चार हस्ती शणगार्या सुन्दर, बेठा चारे भ्रात जी,
निज वधू सहित संगाथे शोभे, भूपण नाना भात जी । १९ ।
एवी शोभा सहित रघुपति, नीकळ्या नग्रनी बहार जी,
जनक भूपति जान वळावा, चाल्या तेणी वार जी । २० ।
त्यारे नारदजीए कर्युं कौतुक, बद्रिकाश्रम गया मुन्य जी
भृगुपति बेठा छे तप करवा, त्यां जई बोल्या वचन जी । २१ ।

पक्ष के लोगों को) बहुत प्रकार की मिलनी (उपहार, भेंट) दी। कहने में उसका कोई पार नहीं आता है। १४ (उन्होंने) घोड़े, हाथी, रथ दिये; स्त्री-पुरुषों को रत्नों के आभूषण और (सुन्दर) वस्त्र पहना दिये। (साथ ही) ग्राम (भूमि), सेना, सुखद आसन, साज-सज्जा, तथा अनगिनत दास तथा दासियाँ—प्रदान किया। १५ समस्त लोगों को सन्तुष्ट करके जनकजी हाथ जोड़कर (फिर दशरथ के) पाँव लगे। उन्होंने विनम्रता-पूर्वक विनती की तथा दशरथ राजा को प्रसन्न किया। १६ अनन्तर कन्याओं को सुन्दर शृंगार सजाकर, उस समय उन्हें विदा किया। (तब) नाना प्रकार के बाजे बजते है (थे) और जयजयकार होता रहा। १७ सब सेना सावधान हो गयी और दशरथ राजा चल दिये। सब रानियाँ पालकियों में बैठ गयीं। वरों और वधुओं के लिए उनके अनुरूप चार हाथी सुन्दर सजा दिये। (उनपर) बन्धु बैठ गये। वे अपनी-अपनी वधुओं सहित शोभायमान है (थे)। उन्होंने नाना प्रकार के भूषण पहने थे। १८-१९ ऐसी शोभा के साथ राम (मिथिला) नगर के बाहर निकल गये। उस समय जनक राजा बारात को विदा करने के लिए चल दिये। २० तब नारद मुनि ने एक कौतुक (लीला) की। वे मुनि बद्रिकाश्रम गये। वहाँ भृगुपति परशुराम तपस्या करने के लिए बैठे हैं (थे)। वहाँ जाकर वे यह बात बोले—। २१ 'हे परशुराम, मेरी बात सुनो। यहाँ (तुम) क्या बैठे रहे? (उधर) राम

फरसुराम सुणो वचन अमारुं बेसी रह्यां शुं आंहे जी ?
त्रंबक धनुष तमारुं रामे, भांग्युं जनकपुर मांहे जी । २२ ।
त्यारे भार्गव कहे भगवान ए ज छे, अवतारकृत्य अमारो जी,
नारद कहे छे के ब्राह्मण थई गया, शो रह्यो महिमा तमारो जी ? । २३ ।
किंचित् क्रोध जो नहि राखे तो थशे, मृत्यु तमारुं वहेलुं जी,
जुओ जमदग्निए क्रोध त्यज्यो त्यारे, विघ्न थयुं घणुं पहेलुं जी । २४ ।
एवां वचन सांभळी नारद केरां, चढियो क्रोध अपार जी,
तरत ऊठीने आव्या जनकपुर, साथे ब्रह्मकुमार जी । २५ ।
ज्यम वळियो सिंह सूतेलो ऊठे, छंछेड्यो विखभूप जी,
हिरण्यकश्यपु कारण जेम स्थंभथी, प्रगट्या नरहरिरूप जी । २६ ।
जेम घी होम्येथी वैश्वानरनी, प्रचंड थाये ज्वाळ जी,
एम फरशीधर अति क्रोधे आव्या, जाणे करशे प्रल्लेकाळ जी । २७ ।
पुरमांथी ज्यारे जान नीकळी, दशरथसहित समाज जी,
गजारूढ थई आगळ चाले, श्रीरामचंद्र रघुराज जी । २८ ।
तेणे समे त्यां भृगुपति आव्या, क्रोधे काळ स्वरूप जी,
दूर थकी ते दीठा त्यारे, कंप्या सरवे भूप जी । २९ ।

ने तुम्हारे शिव-धनुष को जनकपुर में तोड़ डाला ।' २२ तब भार्गव—परशुराम कहते हैं (बोले)— 'हे भगवान्, हमारा अवतार-कृत्य वही है (था)' (इसपर) नारद कहते हैं (बोले)— 'ब्राह्मण हो गये तो तुम्हारी क्या महिमा रह गयी ? २३ (यदि) तुम ज़रा क्रोध नहीं रखते हो (करोगे), तो शीघ्र ही तुम्हारी मौत होगी । देखो, (तुम्हारे पिता) जमदग्नि ने क्रोध का त्याग किया, तो पहले (पूर्वकाल में) बहुत विघ्न हो गया ।' २४ नारद के ऐसे वचन सुनकर (परशुराम को) अपार क्रोध आ गया । तत्क्षण उठकर वे ब्रह्मकुमार (नारद) के साथ जनकपुर आ गये । २५ जैसे बलशाली परन्तु सोया हुआ सिंह उठ जाता हो, जैसे छेड़ा (चिढ़ाया) हुआ साँप उठ जाता हो, जैसे हिरण्यकशपु (का वध करने) के हेतु भगवान् नरसिंह के रूप में खम्भे में से प्रकट हो गये, जैसे घी की (होम में) आहुति चढ़ाने पर होम में से अग्नि की प्रचण्ड ज्वाला (उत्पन्न) हो जाती है, उसी प्रकार (तपस्या का त्याग कर) परशुराम अतिशय क्रोध से (मिथिला के पास) आ गये । मानो, वे अब प्रलय-काल (की स्थिति उत्पन्न) करेंगे । २६-२७ दशरथ राजा के साथ अयोध्या-निवासी लोगों की बारात जब (मिथिला) नगर से निकली, तब रघुराज श्रीरामचन्द्र हाथी पर विराजमान होकर आगे चल रहे हैं (थे) । २८ उस समय वहाँ भृगुपति

वलण (तर्ज़ बदलकर)

कंप्या सरवे भूपति ते, जोई जमदग्निकुमार रे,
संकोच पाम्या जनक दशरथ, शुं थशे आणी वार रे ? । ३० ।

* * *

परशुराम आ गये। वे क्रोध से काल-स्वरूप (जान पड़ते) थे। वे दूरी पर से दिखायी दिये, तो सब राजा (भय से) काँप उठे। २९

जमदग्नि-पुत्र परशुराम को देखकर (वे) सब राजा काँप उठे। जनक और दशरथ (दोनों इस चिंता से) संकोच को प्राप्त हो गये कि इस समय क्या होगा। ३०

* * *

अध्याय—४४ (श्रीराम-परशुराम-संवाद)

राग मारु

आव्या उपवनमां सहु साथ, एवे सामा मळ्या भृगुनाथ,
ऊभा सन्मुख मारग रोकी, कोई शूर शके नहि टोकी । १ ।
ज्यारे दीठा रेणुका-तन, सरवे भय पाम्या घणुं मंन,
थंभ्युं सोळ पदम दळ त्यांहे, मोटा भूप कंप्या मनमांहे । २ ।
राय जनक ने दशरथ भूप, कंप्या जोई भृगुपतिनुं रूप,
तप्त कांचन जेवुं तन, हुत पामेलो हुताशन । ३ ।
कर फरशी धर्युं चाप स्कंध, अक्षे भाथा कटिए बंध,
शिर जटा भस्म धरी अंग, नेत्र विशाळ लोहित रंग । ४ ।

अध्याय—४४ (श्रीराम-परशुराम-संवाद)

सब (लोग) साथ में (मिथिला के बाहर) उपवन में आ गये, तो (उन्होंने) उस समय परशुराम को (वहाँ उपस्थित) पाया। वे (परशुराम) मार्ग रोककर खड़े थे। (बारात में से) कोई शूर पुरुष (उनसे) पूछताछ नहीं कर सकता है (था, अथवा उन्हें टोक नहीं सकता था)। १ जब (सामने) रेणुका के पुत्र परशुराम को देखा, तो सब मन में बहुत भय को प्राप्त हो गये। तब सोलह पद्म (पद्म = एक सौ करोड़) सेना रुक गयी। बड़े (-बड़े) राजा मन में काँप उठे। २ परशुराम के (वैसे) रूप को देखकर राजा जनक और दशरथ (भी) काँप उठे। (वह रूप ऐसा था—) उनका शरीर तप्त (गर्म) सोने जैसा था। मानो उनकी देह आहुति पायी हुई होम की अग्नि थी। (उन्होने) हाथ में परशु और कंधे पर धनुष धारण किया (था)। कमर

फरके अधर भृकूटी कपोल, क्रोधे तन थयुं रातुं चोळ,
क्षत्री कुळ-दहन-कृशानु, जेवो प्रल्ले समेनो भानु । ५ ।
एवा दीठा फरशुराम, त्यारे मूकी सरवे माम,
ते समे पोते रघुवीर, चलाव्यो गज श्रीरणधीर । ६ ।
भृगुपति सन्मुख श्रीराम, गज राख्यो पूरण-काम,
नव ऊतर्या जुगदाधार, उपर रहीने कर्या नमस्कार । ७ ।
जोई क्रोध चढ्यो अति मन, अल्या कोण तुं, कोनो तन ?
राम कहे सुणो मुनिवर सूत, हुं दशरथरायनो पूत । ८ ।
राम नाम मारुं द्विजराज, में कर्युं धनुभंगनुं काज,
एवुं सांभळीने भृगुनाथ, क्रोधे बोल्या करी ऊंचो हाथ । ९ ।
चढ्यो मदगळ महा अभिमानी, मुंने आवी नम्यो नहि मानी,
क्षत्री कुळ थयो उत्पन्न, अविवेकी दुष्टता मन । १० ।
राम कहे हुं न समज्यो मर्म, शस्त्राधारी न जाण्या ब्रह्म
जे जाणुं तमने द्विजराय, तो हुं आवी नमुं तम पाय । ११ ।

में अक्षय (अर्थात् जिसमें से बाणों का निकलना कभी वन्द नहीं होता, ऐसा) भाथा (तरकश) बाँधा (था)। सिर पर जटाएँ थीं; शरीर में भस्म लगाया था। उनकी विशाल आँखें लाल रंग की थीं। ३-४ उनके होंठ, भौंह तथा गाल फड़क रहे हैं (थे)। शरीर क्रोध से लाल-लाल हो गया (था)। क्षत्रिय वंश को जला डालनेवाली अग्नि-से वे प्रलयकाल के सूर्य (जैसे जान पड़ते) थे। ५ ऐसे परशुराम को देखा, तो सबका धैर्य छूट गया। उस समय रणधीर श्रीराम ने स्वयं हाथी को आगे चला दिया। ६ पूर्णकाम श्रीराम ने परशुराम के सामने हाथी को (खड़ा) कर दिया। जगत् के आधार (वे श्रीराम हाथी से) नीचे नहीं उतरे, (परन्तु) ऊपर (बैठे) रहकर ही उन्होंने परशुराम को नमस्कार किया। ७ यह देखकर (परशुराम के) मन में बहुत क्रोध उत्पन्न हो गया (और वे बोले)— 'अरे तू कौन है ? किसका पुत्र है ? इस पर राम ने कहा, "हे मुनिवर, सूत्र-रूप (संक्षेप) में सुनिए। मैं दशरथ राजा का पुत्र हूँ। 'राम' मेरा नाम है। हे द्विज-राज (श्रेष्ठ ब्राह्मण), धनुष को तोड़ने का काम मैंने किया।" ऐसा सुनकर परशुराम हाथ ऊपर (ऊँचा) उठाकर क्रोध से बोले। ८-९ 'रे महा अभिमानी, तू हाथी पर चढ़ा बैठा (है)। (अपने को) महत्त्वपूर्ण (महान्) समझते हुए तूने (यहाँ) आकर मुझे नमस्कार (तक) नहीं किया। तू क्षत्रिय-कुल में उत्पन्न हुआ, तेरा मन अविवेकी और दुष्टता-पूर्ण है।' १० इसपर राम

जेम नटुवो धरे बहु वेश, मने एम ज भास्युं मुनेश,
त्यारे बोल्या फरशुराम, नथी ओळखतो मने राम। १२।
आ जो फरशुनी तीक्ष्ण धार, कर्यो क्षत्री तणो संहार,
मारुं नाम सुणीने अर्भ, छूटे गर्भवंतीनां गर्भ। १३।
एणे मारुं हुं तुजने आज, तें कर्युं घणुं कूडुं काज,
भांग्युं त्रंबक शिवनुं प्रचंड, माटे देवो घटे तुंने दंड। १४।
त्यारे थाय मारुं प्रतिकाज, गुरुनो रणियो टळुं आज,
कहे रघुपति सुणो मुनीश, आवडी करो शाने रीस ? । १५।
ए सडेलुं शरासन जूनुं, पोचुं वित्तरहित पुराणुं,
भांग्युं चढावतां ततखेव, तेमां हुं शुं करुं मुनिदेव ? । १६।
अमो बाळपणमां एवां, धनु तोड्यां त्रंबक जेवां,
तमारे होय एनी आश, तो संधावो कारीगर पास। १७।

ने कहा— 'मैंने मर्म (रहस्य) को नहीं समझा। मैने (आप जैसे) शस्त्र धारण करनेवाले को ब्राह्मण नहीं समझा। यदि मैं आपको श्रेष्ठ ब्राह्मण समझता, तो मैं आकर आपके चरणों का नमन करता। ११ हे मुनीश्वर, जैसे नट (या अभिनेता) अनेक वेश धारण करता है, मुझे ऐसा ही प्रतीत हो गया (कि आप भी वैसे ही कोई नट या अभिनेता है)।' तब परशुराम बोले— 'रे राम, तू मुझे नहीं पहचानता। १२ देख यह परशु की तीक्ष्ण धार। (मैंने इससे) क्षत्रियों का संहार किया। मेरे नाम को सुनते ही गर्भवती स्त्रियों के गर्भस्थ अर्भक (शिशु) गिर जाते है। १३ आज मै इससे तुझे मार डालता हूँ (डालूँगा)। तूने बहुत खोटा काम किया (है)। शिवजी के प्रचण्ड धनुष को तोड़ डाला (है), इसलिए तुझे दण्ड देना (ही) योग्य है। १४ तब मेरा प्रतिकार्य (प्रतिहिंसा या बदला लेने का कार्य पूरा) होगा। (उससे) गुरु के ऋण से दूर (मुक्त) हो जाता हूँ (जाऊँगा)।' (यह सुनकर) राम कहते है (बोले)— 'हे मुनीश्वर सुनिए। (आप) इतना क्रोध क्यों करते हैं ? १५ वह तो सड़ा-गला, जीर्ण, ढीला, मूल्य-रहित धनुष था। चढ़ाते-चढ़ाते (ही) वह तत्क्षण टूट गया। हे मुनिदेव, उसमें मैं क्या करता ? १६ हमने वचपन में (उस) शिव-धनुष जैसे धनुष (अनेक) तोड़ डाले। यदि आपको उसके प्रति आसक्ति हो, तो (किसी) कारीगर से (अर्थात् कारीगर के पास ले जाकर उसके खण्डों को) जोड़वाइए।' १७ तब हँसी-दिल्लगी की ऐसी वातें सुनकर जमदग्नि के पुत्र परशुराम कहते हैं (बोले)— 'अरे राम, तू सोच-विचारकर बोल। यह देख मेरा तीक्ष्ण (धारवाला) परशु। १८

एवां सांभळी हांसी वचन, तव कहे जमदग्नि तन,
अल्या राम तुं बोल विचारी, आ जो तीक्ष्ण फरशी मारी । १८ ।
एणे क्षत्री मार्या अनंत, शूरवीरनो आण्यो अंत,
तुं बोले छे वक्र वचन, जाणी बाळक सांखु मन । १९ ।
शुं जाणे मुंने केवळ विप्र, पूछी जो मुज़ कारज क्षिप्र,
राम कहे शुं देखाडो कुठारी ? भाटनी पेरे कीरति विस्तारी । २० ।
नोहे कुसुमांड़ फळ शिशुप्राय, जे तरजनी देखी विलाय,
हुं छुं रघुकुळ केरो तन, ए देखाडे डरुं नहि मन । २१ ।
कहे भृगुपति होय प्रबुद्ध, तो तुं कर मुज साथे युद्ध,
अरे तम प्रत्ये मुनिराज, केम शस्त्र हुं मारुं आज ? । २२ ।
स्त्री रोगी ने मूरख बाळ, पराधीन अंध पंगाळ,
वृद्ध ब्राह्मण गुरु ने गाय, जेष्ठ बंधु ने मातापिताय । २३ ।
जे को शस्त्ररहित विरथ, पळाये रणथी समरथ,
एटलां पर जो करे घात, ते अधरमी पामे नर्कपात । २४ ।
आ लोके पामे अपजश, पडे नरकमां अंते अवश्य,
तमो ब्राह्मण साथे आज, युद्ध केम करुं महाराज । २५ ।

मैंने उससे अनगिनत क्षत्रियों को मार डाला, मैं उससे शूर-वीरों का अन्त लाया, अर्थात् उनका संहार किया। तू टेढ़ी बात बोल रहा है, (फिर भी तुझे) बालक समझकर मेरा मन सहन कर रहा है। १९ तू क्या मुझे केवल ब्राह्मण समझ रहा है ? मेरा (क्या) कार्य (है, यह) शीघ्र ही मुझसे पूछकर देख।' (इसपर) राम कहते हैं (बोले)— 'आप कुठार (कुल्हाड़ी अर्थात् परशु) क्या दिखाते हैं ? आपने किसी (स्तुति-पाठक) भाट की भाँति (अपनी) कीर्ति विस्तारपूर्वक बतायी। २० मैं कोई (बच्चे के समान कुम्हड़े का फल, अर्थात्) कच्चा, नासमझ नहीं हूँ, जो (आपकी) अंगुली देखकर मुरझा जाए—नष्ट हो जाए।' २१ यह सुनकर परशुराम कहते हैं (बोले)— '(यदि) तू प्रबुद्ध है, तो (तू) मेरे साथ युद्ध कर।' (तब राम ने कहा)— 'हे मुनिराज, आज आपके प्रति, जो काम में लाया जाए, ऐसा मेरा कौन शस्त्र है ? २२ स्त्री, रोगी और मूर्ख, बालक, पराधीन व्यक्ति (दास), अंध, पंगु (अपाहिज), वृद्ध, ब्राह्मण, गुरु और गाय, ज्येष्ठ बन्धु और माता-पिता, वह व्यक्ति जो शस्त्र-रहित, विरथ हो और जो युद्ध से भाग रहा हो— इतने (में से किसी) पर जो आघात करता है, वह अधर्मी (अर्थात् पापी है, जो) नरक-पतन को प्राप्त हो जाता है (नरक में जाता है)। २३-२४ वह इस लोक में

अल्या धर्म तारो हुं जाणुं, परपंची प्रतीत न आणुं,
आज थई बेठो मोटो साध, मारी ताडिका विण अपराध । २६ ।
तेणे शो कर्यो तुज अन्याय ? करी अस्त्री तणी हत्याय,
राम कहे ते अधरमी अपार नित्य करती मुनिनो आहार । २७ ।
तेमां शानो कर्यो अन्याय ? ते न हती कांई मारी माय,
तमो निज मातने मारी, तमथी कोण बीजो दुराचारी ? । २८ ।
तमे ब्राह्मण थईने आज, शस्त्र धर्या शुं करवा काज ?
शस्त्र मूकी धरो जई ध्यान, करो जप तप ने अनुष्ठान । २९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अनुष्ठान जप तप करो जईने, शस्त्र मूकी निरधार रे,
एवां वचन रामनां सांभळी, भृगुपति कोप्या अपार रे । ३० ।

* * *

अपयश (बदनामी) को प्राप्त हो जाता है । वह अन्त में अवश्य नरक में पड़ जाता है । (इसलिए) हे महाराज, आप (जैसे) ब्राह्मण के साथ आज मैं कैसे युद्ध करूँ ।' २५ (तब) परशुराम ने कहा— ' अरे, तेरे धर्म को मै जानता हूँ । तू प्रपंची (अर्थात् छल-कपट करनेवाला) है । मैं तुझपर विश्वास नहीं करता । आज तू बड़ा साधु बन बैठा, (परन्तु) तूने बिना किसी अपराध के ताड़का को मार डाला । २६ उसने तेरे साथ क्या अन्याय किया था ? तूने स्त्री की हत्या की ।' (यह सुनकर) राम कहते हैं (बोले)— ' वह बहुत अधर्मी थी; वह नित्य मुनियों को खा डालती रही । २७ उसमें (मैंने उसके साथ) क्या अन्याय किया ? वह तो कहीं मेरी माता नहीं थी । आपने तो अपनी माता को मार डाला । (इसलिए) कौन आपसे (अधिक) दुराचारी है ? २८ ब्राह्मण होकर भी आपने आज किस काम को करने के लिए शस्त्र धारण किया ? शस्त्र का त्याग करके (आप कहीं) जाकर ध्यान धारण कीजिए; जप, तप और अनुष्ठान कीजिए । २९

(हे मुनिवर,) निश्चय से शस्त्र का त्याग करके (आप कहीं) जाकर जप और तप कीजिए ।' श्रीराम की ऐसी बातें सुनकर भृगुपति परशुराम अत्यधिक क्रुद्ध हो गये । ३०

* * *

अध्याय—४५ (परशुराम कृत राम-स्तुति)

राग सामेरी

अनीहां रे भृगुपति कोप्या सुणी रामवचन,
अति घणो व्याप्यो कामानुज तन,
अनीहां रे रीसे करी रातां थयां छे लोचन,
वीररस प्रगट्यो रोमांचित तन। १।

ढाळ

तन रोमांचित मन क्रोध प्रगट्यो, गाजीने बोल्या भृगुपति,
अल्या शूरो बळियो होय तो, मुज साथे जुद्ध कर रघुपति। २।
एम कही शरासन कर ग्रह्यं, संधाण करियुं बाण,
त्यारे रामे धनुष चडावीने, कर्युं शर तणुं संधाण। ३।
भार्गव कहे तुं मूक शर, त्यारे बोल्या श्रीरघुवीर,
तमो विप्र माटे प्रथम मूको, सुणो मुनि मतिधीर। ४।
त्यारे फरशुरामे सज्ज थईने, मंत्र भणिया साच,
धनुष खेंची करण सुधी, मूकियुं नाराच। ५।
सुसवाट करतुं छूटियुं, वीजळी सरखुं बाण,
सहु दिशाओ दीपावतुं ज्यम अग्नि-ज्वाळ प्रमाण। ६।

अध्याय—४५ (परशुराम-कृत राम-स्तुति)

अरे ! तदन्नतर यहाँ तो श्रीराम की बातें सुनकर परशुराम क्रुद्ध हो गये ! उनके शरीर को तामस भाव ने अत्यधिक व्याप्त कर दिया। अरे ! तदनन्तर यहाँ तो उनकी आँखे गुस्से से लाल हो गयीं। (उनके) रोमांचित शरीर (के रूप) में वीर रस (ही) प्रकट हो गया। १ (उनका) शरीर रोमांचित हो गया। मन में क्रोध उत्पन्न हो गया, तो भृगुपति परशुराम बोले— ' रे राम ! (यदि) तू शूर, बलवान् है, तो मेरे साथ युद्ध कर।' २ ऐसा कहकर परशुराम ने धनुष हाथ में लिया और (उनपर) बाण सन्धान किया। तब श्रीराम ने भी धनुष चढ़ाकर शर-सन्धान किया। ३ (अनन्तर) परशुराम कहते हैं (बोले)— ' तू बाण चला।' तो श्रीराम बोले —' हे मतिधीर मुनि, सुनिए। आप ब्राह्मण हैं। इसलिए आप बाण पहले चलाइए।' ४ तब सज्ज होकर परशुराम ने सचमुच मंत्र पढ़ लिया। (फिर) उन्होंने कान तक धनुष (की डोरी) खींचकर बाण छोड़ दिया। ५ सूँ-सूँ ध्वनि करते हुए बाण छूटा। जैसे आग की ज्वाला करती है, वैसे वह बिजली-सा बाण सब दिशाओं को प्रकाशित

ते बाण द्वारे भृगुपतिनुं, तेज सरवे जेह,
रघुवीरना मुखमां प्रवेश्युं, परम ज्योति तेह। ७।
ते बाण पण तेजे करीने, थयुं तेजस्वरूप
ईश्वरता गुण बळ प्रभुता, अवतार कृत्य अनुप। ८।
सुरनर मुनिवर सरव जोतां, समायुं तेणी वार,
थई पुष्पवृष्टि राम उपर, दुंदुभि जयजयकार। ९।
भृगुपति थया निस्तेज त्यारे, विप्र केवळ रूप,
तत्काळ नमिया रामने, साष्टांग भृगुकुळ भूप। १०।
त्यारे गज उपरथी ऊतर्या, रघुवीर तेणी वार,
भेटिया भार्गवने तदा वरतियो जयजयकार। ११।
पछे फरशीधर करजुगल जोडी, रोमांचित गदवाण,
स्तुति करता रामनी, ते रही सन्मुख जाण। १२।

त्रोटक छंद

जयराम सदा सुखधाम जनं, मन-कामतरुं घनश्याम तनं,
अवधीपुर पावन पुण्यधरा, अजनंदन वंदन भूपवरा। १।

करता रहा। ६ भृगुपति परशुराम का जो तेज था, वह सब उस बाण द्वारा श्रीराम के मुख में प्रविष्ट हो गया। वे (श्रीराम) तो परमज्योति (स्वरूप ही) है। ७ वह बाण भी तेज के कारण तेज-स्वरूप हो गया। इससे परशुराम की ईश्वरता, गुण, बल, प्रभुता, अद्वितीय अवतार-कृत्य (अवतारित्व), उस समय देव, मनुष्य, मुनिवर— सबके देखते रहते हुए (परमज्योति-स्वरूप श्रीराम में) समाविष्ट हो गया। तब श्रीराम पर पुष्प-वर्षा हो गयी। दुन्दुभी बाजे बज उठे और (उनका) जयजयकार हो गया। ८-९ तब परशुराम निस्तेज हो गये— वे (साधारण) ब्राह्मण रूप रह गये (न कि भगवान् के अवतार)। भृगु-वंश में उत्पन्न राजा ने तत्काल श्रीराम को साष्टांग नमस्कार किया। १० तो उस समय श्रीराम हाथी पर से उतर गये और परशुराम से मिले। तब जयजयकर हो गया। ११ अनन्तर परशुधारी परशुराम दोनों हाथ जोड़कर, रोमांचित हो, गद्‌गद वाणी में श्रीराम की (इस प्रकार) स्तुति करते रहे। समझिए वह (स्तुति) सामने (प्रस्तुत) है। १२ घनश्याम-शरीरधारी (उन) श्रीरामजी की जय हो, जो लोगों के लिए सदा सुख के धाम (निवास-स्थान) हैं और मन की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले कल्पवृक्ष हैं। (उनके आविर्भाव से) अयोध्यानगरी पावन और पुण्यभूमि (बन गयी) है। (उनके पिता अर्थात्) अजराजा के पुत्र राजश्रेष्ठ दशरथ की

जननी कौशल्या भाग्य भरी, तन पूरण ब्रह्म अखंड हरी,
अज आदि अनंत अरूप यदा, जन साह्यक रूप सगुण सदा । २ ।
करुणायतनं मनुजाद अरि, पर पीत तनुं घनश्याम हरि,
सरसिरुह नेन कृपा-भवनं, परमारथ भोग छबि सदनं । ३ ।
धृत सायक चाप निखंगवरा, कृत ए रजनीचरहीन धरा,
जगतीतल पावनरूप धरी, पद तीरथराज पुनीत करी । ४ ।
दशस्यंदन भूप मणि सुवनं, जश मंगळ व्यापी रह्यो भुवनं,
जय शेष महेश गिरेश गणं, स्तवते गुण पावन मुक्तरणं । ५ ।
दुखदीन दरिद्र वनंदवनं, प्रणमामि विदेहसुता-रमनं,
जग जीव अनीक चराचर जे, भटके भवकूप अजा सरजे ६ ।
तव भक्ति विना मद मूढमति, स्वपने न लहे सुख लेश गति,
परमानंद पूरण-काम विभो, प्रणतारति मोचन पाहि प्रभो । ७ ।

वन्दना हो । १ माता कौसल्या भाग्यवती है, जिनके पूर्ण एवं अखण्ड ब्रह्म— श्रीहरि पुत्र (के रूप में उत्पन्न हो गये) हैं । वे श्रीराम जबकि अज (अजन्मा), आदिपुरुष (अनादि), अनन्त एवं अरूप हैं, तब भी (भक्त-) जनों के सहायक के रूप में सदा सगुण (रूपधारी होते रहे) हैं । २ पीतवस्त्र (पीताम्बर) धारण किये हुए वे घनश्याम श्रीहरि (भक्त-) जनों के लिए करुणा के निवास-स्थान और राक्षसों के शत्रु हैं । कमल-नेत्र (वे) श्रीराम (भक्त-जनों के लिए) कृपा के (प्रत्यक्ष) भवन हैं । (वे) श्रीराम (भक्त-जनों को) परमार्थ का भोग करानेवाले सुन्दरता के सदन हैं । ३ वे उत्तम बाण, धनुष और तुणीर (तरकश) धारण किये हुए हैं और उन्होंने इस पृथ्वी को राक्षस-हीन कर दिया (है) । उन्होंने सगुण रूप धारण करके पृथ्वी-तल को पवित्र किया और अपने चरणों (के स्पर्श) से बड़े-बड़े तीर्थ-क्षेत्रों को पावन बना लिया । ४ वे श्रीराम राजरत्न दशरथ के पुत्र हैं, जिनकी मंगलकीर्ति जगत् को व्याप्त करके रही (है) । शेष, शिवजी, गणेश (आदि देवता-) गण (सब प्रकार के) भोगविलास की लालसाओं से मुक्त होकर जिनके पावन गुणों का स्तवन करते हैं, उन श्रीरामजी की जय हो । ५ मैं (विदेह जनक की कन्या) सीता के पति (श्रीराम का) नमन करता हूँ; जो (भक्तों के) दुःख, दैन्य और दरिद्रता-रूपी वन को जला देनेवाली अग्नि हैं । जगत् में जो जीव, चर और अचर वस्तुएँ हैं. वे संसार-रूपी (उस) कुएँ में घूमते रहते हैं, जिसका निर्माण माया करती है । ६ । (हे श्रीराम!) बिना आपकी भक्ति के कोई भी मन्द एवं मूढ़ मतिवाला जीव स्वप्न (तक) में

अज आदि अनामय चिदघनं, मन-मानस-हंस-रिपु-अतनं,
सनकादिक नारद देवपति, निगमागम सार अपार गति । ८ ।
मदमोह-निशा-तम दिनकरं, खळनागहतं मृगराजवरं,
त्रयताप शमावन नाम विधु, भवरोग निवारण गीतमधु । ९ ।
तरणि कुळकंज प्रकाश रवि, प्रगट्या हत मायिक भाव भुवि,
रघुवीर महा रणधीरधरं, प्रणमामि अभिमत दानवरं । १० ।

दोहरा

अखिल विश्व-मंगळ-करण, हरण-सकळ-भवपीर,
लीला विग्रह वपु धरण, जय जय श्रीरघुवीर । ११ ।

* * *

ज़रा-सा सुख और (सद्) गति नहीं प्राप्त करता । हे परमानन्द, पूर्णकाम विभु, हे प्रणत की पीड़ा को दूर कर देनेवाले प्रभु (श्रीराम, मेरी) रक्षा कीजिए । ७ । (हे श्रीराम,) आप अज (अजन्मा), आदि (पुरुष, अर्थात् अनादि), अनामय (दोष-रहित अर्थात् पूर्णतः विशुद्ध) एवं चिद्घन (ज्ञान या चैतन्य के मेघ) हैं, आप कामदेव के शत्रु शिवजी के मन-रूपी मानसरोवर के (निवासी) हंस हैं । सनकादिक, नारद, देवराज इन्द्र, वेदशास्त्र के सार के लिए (भी) आप अपार-गति हैं, अर्थात् उनमें से कोई (भी) आपके सच्चे रूप का पार नहीं पा सकता । ८ । आप मद और मोह-रूपी रात के अँधेरे को दूर करनेवाले सूर्य हैं । आप खल (दुष्ट) पुरुषों-रूपी हाथियों का नाश कर देनेवाले श्रेष्ठ सिंह हैं । आप (आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक—इन) तीनों प्रकार के ताप का शमन करनेवाले चन्द्र हैं । आपके यश के गीतों का मधु—अर्थात् मधुरस संसार में उत्पन्न (सांसारिक) रोगों का निवारण करता है । ९ । आप सूर्य कुल-रूपी कमल को प्रकाश देकर विकसित कर देनेवाले सूर्य के रूप में प्रकट हो गये (है) । आपने संसार में माया से उत्पन्न भावों को नष्ट किया (है) । (एवंगुण-विशिष्ट) हे महारणधुरंधर, मनोवांछित दान देनेवाले रघुवीर, मैं आपको प्रणाम करता हूँ । १० । आप अखिल विश्व के मंगलकर्ता है, संसार की समस्त सीमाओं का हरण करनेवाले हैं । हे लीला से विग्रह-शरीर धारण करनेवाले श्रीरघुवीर, आपकी जय हो, जय हो । ११ ।

* * *

अध्याय—४६ (सीता-राम का अयोध्या में प्रवेश)

राग धनाश्री

स्तुति सुणी बोल्या श्री रघुवीरजी,
सुणो मुज वायक भृगुनायक धीरजी,
में जे चढाव्युं धनुष पर बाणजी,
ते पाछुं फरे नहि ए निरवाणजी। १।

ढाल

निर्वाण बाण अमोघ मारुं, क्यांहां मूकुं आज ?
नव ऊतरे प्रत्यंचा थकी, माटे कहो मुनिराज। २।
त्यारे भृगुपति कहो रघुपति, ए मूको शर नभमांहे,
काळने छेदो तमो, मुज मृत्यु आवे ज्यांहे। ३।
मुज काळ क्यारे थाय नहि, करो मृत्यु मारग रोध,
सदा अमर करो मने, हुं साधीश तप निजबोध। ४।
एवुं सांभळीने मृत्यु मारग, मूकियुं ते बाण,
निरोध कीधो काळ मारग, मृत्युंजय कृत जाण। ५।

अध्याय—४६ (सीता-राम का अयोध्या में प्रवेश)

(परशुराम द्वारा किया हुआ) स्तवन सुनकर श्रीराम बोले, 'हे धैर्यशाली भृगु-(कुल)-नायक (परशुराम) मेरी बात सुनिए। मैंने धनुष पर जो बाण चढ़ाया (है), वह निश्चय ही पीछे नहीं फिरता (अर्थात् उसे वापस नहीं उतार लिया जा सकता)। १। (इसलिए यह कहिए) आज (अभी) मैं अपने इस तीक्ष्ण तथा अमोघ बाण को कहाँ (किस ओर) चला दूँ। वह डोरी से नहीं उतरता (उतर सकता)। इसलिए हे मुनिराज, (उसके लिए लक्ष्य) कहिए'। २। तब परशुराम कहते हैं (बोले), 'हे रघुपति, वह बाण आकाश में चला दीजिए। आप (उससे) काल को काट डालिए, जहाँ से मुझे मौत आ सकती है। ३। (मेरी) मृत्यु के मार्ग का अवरोध कर दीजिए, जिससे मेरी मौत नहीं हो पाये। मुझे सदा के लिए अमर बना दीजिए। मैं तपस्या तथा आत्म-ज्ञान को सिद्ध (प्राप्त) करूँगा'। ४। ऐसा सुनकर (श्रीराम ने) वह बाण मृत्यु के मार्ग पर चला दिया, (और) काल के मार्ग का अवरोध कर लिया। (इससे) मानो परशुराम को मृत्युंजय अर्थात् मृत्यु को जीतनेवाले बना दिया। ५। उस समय परशुराम को मौत आनेवाली थी। (श्रीराम ने) उस बाण से मृत्यु का निरोध कर लिया (रोक लिया)। मानो उन्होंने

ते समे परशुरामनुं, आवतुं हतुं अवसान,
ते शर थकी निरोध कीधो जीत्युं मृत्यु मान । ६ ।
भृगुपति मृत्यु निरोध कृत, रघुपति बाण विचित्र,
ए कथा छे हनुमान नाटक, विषे परम पवित्र । ७ ।
पछे नम्या श्रीरघुवीरने, जमदग्निनंदन जेह,
बद्रिकाश्रममां गया, तप करवा बेठा तेह । ८ ।
एवी प्रभुता जोई रामनी, आश्चर्य पाम्या भूप,
सहु मुनि आशीरवाद देता, अखिल मंगळ रूप । ९ ।
सज्जन सकळ हरख्या तदा, वरत्यो ते जयजयकार,
भृगुपति सागर क्रोध जळथी, ऊतर्या ते पार । १० ।
पछी वळ्या जनक वळावीने, भेटिया दशरथराय,
वाजित्र वाजे अति घणां, सहु अवध पंथ पळाय । ११ ।
मारगे जे राजा मळ्या, तेणे कर्यो बहु सत्कार,
एम कुशळ रघुपति जान साथे, आव्या पुर मोझार । १२ ।
शुभ मुहूर्तमां मंदिर प्रवेश्या, पूज्या गुरु मुनिरूप,
वधू सहित चारे पुत्र जोईने, हरख्या दशरथ भूप । १३ ।

मृत्यु को जीत लिया । ६ । परशुराम की मृत्यु को रोक लिया—राम का (ऐसा) वह अद्भुत बाण था । वह परम पवित्र कथा 'हनुमान-नाटक' में है । ७ । बाद में जब जमदग्नि-सुत परशुराम ने श्रीराम का नमन किया, तो वे बदरिकाश्रम में गये, (और वहाँ) वे तपस्या करने के लिए बैठ गये । ८ । श्रीराम की ऐसी प्रभुता (महानता) देखकर राजा आश्चर्य को प्राप्त हो गये । अखिल मंगल-रूप श्रीराम को सब ऋषि आशीर्वाद देते रहे । ९ । तब समस्त सज्जन आनन्दित हो गये, तो जयजयकार हो गया । वे (मानो) परशुराम के क्रोध-रूपी समुद्र के जल से पार उतर गये (अर्थात् वे सब बच गये) । १० । बाद में उन्होंने दशरथ राजा को गले लगाया और उन्हें बिदा करके राजा जनक लौट गये । (उस समय) बाजे बहुत बज रहे हैं (थे) । फिर सब अयोध्या के मार्ग जाते हैं (चल दिये) । ११ । मार्ग में जो-जो राजा मिले, उन्होंने (दशरथ आदि का) बहुत सत्कार किया । इस प्रकार बारात के साथ श्रीराम (अयोध्या) नगर में सकुशल आ गये । १२ । शुभ मुहूर्त पर वे (राज-) भवन में प्रविष्ट हो गये और उन्होंने मुनि-रूपी गुरु का पूजन किया । वधुओं सहित चारों पुत्रों को देखकर दशरथ राजा आनंदित हो गये । १३ ।

गोत्रज पूजा विधि करी, आप्यां अपरिमित दान,
सहु नगरने भोजन कराव्युं, थाय मंगळ गान । १४ ।
अवधपुरना लोक सरवे, हरखियां नर-नार,
रघुवीर विहीवा गीत मंगळ, गाय गुण विस्तार । १५ ।
घेर घेर तोरण पताका, साथिया कुंभ विधान,
नित नवां भूषण धरी नारी, करे मंगळ गान । १६ ।
सहु विश्वनो आनंद मंगळ, समेटी समुदाय,
ते अवधपुरमां रह्यो आवी, नगरमां न समाय । १७ ।
प्रसर्यो पछी ते दश दिशा, विस्तर्यो चौद भुवन,
पद राम पद्म पराग वासित, ज्यम मलयाचळनो पवन । १८ ।
ए सुखसमाज अवधपुरी, रघुवीरनो विहवाय,
कोटि अनंत गिरा थकी, वरणवी नव कहेवाय । १९ ।
राजधानी दशरथ रायनी, सुख सकळ शोभा खाण,
ते विस्तारीने वखाणतां, हारे कवि निर्वाण । २० ।

गोत्रज अर्थात् कुल-देवताओं की पूजा-विधि सम्पन्न करके उन्होंने अपरिमित (अपार) दान दिया। समस्त नगर (के लोगों) को भोजन कराया। (तब) मंगल गान हो रहा है (था) । १४ । अयोध्यापुरी के सब लोग—पुरुष तथा स्त्रियाँ—आनंदित हो गये। वे रघुवीर राम के विवाह-सम्बन्धी मंगल गीतों द्वारा (उनके) गुणों को विस्तारपूर्वक गा रहे हैं (थे) । १५ । प्रत्येक घर में तोरण और पताकाएँ, स्वस्तिक चिह्न, (मंगल) कुम्भ (आदि) विधिवत् तैयार किये हुए थे। स्त्रियाँ नित्य नये (-नये) आभूषण धारण करके मंगल गीत गाती हैं (थीं) । १६ । समस्त विश्व का आनन्द और सुख, समूह में बन्द होकर (एकत्र होकर) अयोध्यानगरी में आकर रह गया—वह मानो नगर में समा रहा है (था) । १७ । जिस प्रकार मलय पर्वत से (निकलनेवाली) हवा (चन्दन की सुगन्ध को लिये हुए दसों दिशाओं में) फैल जाती है, उसी प्रकार, राम के चरण-कमलों के पराग तथा गंध से युक्त वह आनन्द, अनन्तर दसों दिशाओं में प्रसारित हो गया; वह चौदहों भुवनों में विस्तार को प्राप्त हो गया । १८ । अयोध्यापुरी के उस सुखी समाज का और रघुवीर श्रीराम के विवाह का वर्णन करोड़ों शेषों और सरस्वतियों से (भी) नहीं हो पाता । १९ । दशरथ राजा की (वह) राजधानी (अयोध्यानगरी) समस्त सुखों और सुंदरता की खान है (थी) । उसका विस्तार-पूर्वक बखान करते-करते में कवि निश्चय ही हार जाता है । २० ।

बालकाण्ड — उपसंहार

वाल्मीक मुनि आदि कवि तेणे, कह्यां चरित्र अपार,
में मंदबुद्धिए करी, किंचित् कर्यो विस्तार । २१ ।
ए बाळकांडनी कथा कोईए, पूरण नव कहेवाय,
लीला सागर सुधारस, रघुवीरनो विह्वाय । २२ ।
जे गाय शीखे सांभळे, आदरे श्रद्धा प्रेम,
सहु पापथी मुकाय प्राणी, मंगल क्षेम । २३ ।
करे मनन रामचरित्रनुं,, समजे कथा मर्म,
निज भक्ति आपे तेह्ने, रघुवीर पूरण ब्रह्म । २४ ।
अमृत नित्य सेवता जे, अमर वसता व्योम,
ते सुधापाने पडे पाछा, क्षीण पुण्ये भोम । २५ ।
पण कथा-अमृत पान करतां, जन अमर ते थाय,
पद मूकी मस्तक सुर तणे अपवर्ग पंथ पळाय । २६ ।
ए अधिकता अमृत थकी, रघुवीर जश महिमाय,
जे ब्रह्मवेत्ता मुक्त ते पण, कथा नित्ये गाय । । २७ ।

वाल्मीकि मुनि आदिकवि (माने जाते) हैं। उन्होंने श्रीराम के अथाह चरित्रों अर्थात् लीलाओं को (अपने ' रामायण ' नामक काव्य में) कहा (है) । मैंने (अपनी) मन्द बुद्धि से (उनका) किंचित् विस्तार किया । २१ । बालकाण्ड की वह कथा किसी से भी पूर्ण (रूप से) नहीं कही जा सकती । रघुवीर राम का विवाह तो उनकी लीला-रूपी सागर में स्थित अमृत रस (ही) है । २२ । जो उसे आदर, श्रद्धा और प्रेम से गाता है, सीखता है, सुनता है, वह प्राणी समस्त पापों से मुक्त हो जाता है और कल्याण तथा कुशल को प्राप्त हो जाता है । २३ । जो राम-चरित्र का मनन करता है, (उनकी) कथा का मर्म समझ लेता है, उसे पूर्णब्रह्म (रूप) श्रीरघुवीर राम अपनी भक्ति प्रदान करते है । २४ । जो देवता आकाश अर्थात् स्वर्ग में रहते है और नित्य अमृत का सेवन करते हैं, वे बाद में अमृतपान में पिछड़ जाते है और पुण्य का क्षय हो जाने पर भूमि (पृथ्वी) पर आ जाते हैं । २५ । परन्तु रामकथा के अमृत का पान करते हुए लोग अमर हो जाते है । वे देवताओं के मस्तक पर पाँव रखकर (मानो उनकी उपेक्षा कर सीधे) मोक्ष-मार्ग पर गमन करते हैं । २६ । श्रीराम की कीर्ति और माहात्म्य में तो अमृत से भी अधिकता है । जो ब्रह्म (-ज्ञान) के ज्ञाता और मुक्त हैं, वे भी श्रीराम की कथा का नित्य गायन किया करते हैं । २७ । जो उस कथा का मन के प्रेम और उल्ल

करे श्रवण सादर ए कथा, मन प्रेमथी उल्लास,
रघुवीर तेना हृदे मांहे, सदा पूरे वास । २८ ।
वाल्मीकि रामायण थकी, प्राकृत कर्यो विस्तार,
मांहे नाटकधारा तणो, संमत मेळव्यो छे सार । २९ ।
बालकांडनी कथा पूरण, करी मति अनुसार,
पद पूरां सत्तरसें ने पांत्रीस, कथा रसिक विस्तार । ३० ।
सहु संत कविजन महामति, कहुं विनवी कर जोड,
प्राकृत वाणी सांभळी, मुजने न देशो खोड । ३१ ।
गुरु पुरुषोत्तम श्रीधर-कृपाए, करी कथा आनंद,
दास गिरधर निमित्त मात्र, ए कर्ता श्रीगोविंद । ३२ ।
ए बाळकांडनी कथा कही, जेना अध्याय छेंताळीश,
हवे अयोध्याकांडनी कथा कहुं, कृपा श्रीजुगदीश । ३३ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

जुगदीश केरी कृपाए कहुं, अयोध्याकांड कथाय रे,
श्रोताजन सहु भाव धरी, कहो जय जय वैकुंठराय रे । ३४ ।

।। बा ल का ण्ड समाप्त ।।

से आदर-पूर्वक श्रवण करते है, उनके हृदय में रघुवीर सदा पूर्णतः निवास करते हैं । २८ । वाल्मीकि-रामायण से (कथांश लेकर) मैंने प्राकृत (लोक-) भाषा में विस्तार किया । इसमें (वाल्मीकि-) नाटक-धारा से सम्मत कुछ सार (-भूत बातों को) मिला दिया है । २९ । मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार बालकाण्ड की कथा पूर्ण की । सत्रह सौ पैंतीस पूर्ण पदों (छन्दों) में मैंने कथा का रसात्मक विस्तार किया । ३० । मैं हाथ जोड़कर समस्त महामति सन्तों, कविजनों से विनती करते हुए कहता हूँ—(यह) प्राकृत (जन-) भाषा सुनकर मुझे दोष न देना । ३१ । श्रीगुरु पुरुषोत्तम श्रीधर की कृपा से मैंने आनन्दपूर्वक कथा का वर्णन किया । गिरधरदास तो निमित्त मात्र है—(वस्तुतः) कर्ता श्रीगोविन्द (भगवान्) ही है । ३२ । मैंने बालकाण्ड की यह कथा कही, जिसके छियालीस अध्याय है । अब जगदीश भगवान् की कृपा से मैं अयोध्याकाण्ड की कथा कहता हूँ (कहूँगा) । ३३ । जगदीश की कृपा से मैं अब अयोध्याकाण्ड की कथा कहता हूँ (कहूँगा) । हे समस्त श्रोताजनो, आप भावपूर्वक 'वैकुण्ठराय श्रीभगवान् की जय' कहिए । ३४ ।

।। बा ल का ण्ड समाप्त ।।

अयोध्या काण्ड

अध्याय—१ (गुरु-वन्दना)

राग काफीनी देशी

श्रीगुरु-पद-पंकज उपर, हुं वारी रे,
रहुं धरी मन मधुकर रूप, जाउं बलिहारी रे। १।
जे जगत-अंकुरना मूळकंद, हुं वारी रे,
जे कैवल्य पदना भूप। जाउं०। २।
वैराग-वेली तणां पुष्प, हुं वारी रे,
जे मंगळ सुखना समुद्र। जाउं०। ३।
वेदांत-सिंधुना मीन रूप, हुं वारी रे,
नभ-शांति-रसना चन्द्र। जाउं०। ४।
जे धीरज मेरु तणा शिखर, हुं वारी रे,
दया-जळधर रूप दयाळ। जाउं०। ५।
अज्ञान-तिमिरना प्रकाश रवि, हुं वारी रे,
सत्त्व-सरोवर कंज कृपाळ। जाउं०। ६।

अध्याय—१ (गुरुवन्दना)

श्रीगुरु के पद रूपी कमलों में समर्पित होते हुए, मैं (वहाँ) मन रूपी मधुकर के रूप में रहता हूँ (तथा) उनपर बलिहारी जाता हूँ। १। जो जगत् के अंकुर के मूल अर्थात् बीज रूप कन्द हैं और जो कैवल्य पद के राजा हैं, उन (ब्रह्मस्वरूप) श्रीगुरु के चरण-कमलों पर मैं बलिहारी जाता हूँ। २। जो वैराग्य रूपी लता में उत्पन्न फूल हैं और जो मंगल तथा सुख के समुद्र है, उन श्रीगुरु के चरणकमलों पर मैं बलिहारी जाता हूँ। ३। जो वेदान्त रूपी सागर में (विहार करनेवाले) मत्स्य हैं, जो आकाश में (उदित) शान्त रस रूपी चन्द्र हैं, उन श्रीगुरु के चरणों में मै समर्पित हो जाता हूँ। ४। जो धैर्य रूपी मेरु पर्वत के शिखर है, जो दया रूपी जल के धारी अर्थात् दयालु मेघ है, उन श्रीगुरु के चरणों पर मैं बलिहारी जाता हूँ। ५। जो अज्ञान रूपी अँधेरे को दूर करनेवा[ले] प्रकाश को उत्पन्न करनेवाले सूर्य हैं, जो सत्त्वगुण रूपी सरोवर [के] (विकसित) कमल हैं, उन कृपालु श्रीगुरु के चरणों पर मैं ब[लिहारी जाता हूँ।]

भक्ति विरक्ति ज्ञान शुद्ध, हुं वारी रे,
त्रिगुणात्मक तीर्थ-राज । जाउं० । ७ ।
शुद्ध ब्रह्म भागीरथीनां जळ छो, हुं वारी रे,
भव-सिंधु-तारक झाझ । जाउं० । ८ ।
एवा सद्‌गुरु नाथ अनाथ तणा, हुं वारी रे,
नथी उपमा सम कहेवाय । जाउं० । ९ ।
पारस लोहनुं हेम करे, हुं वारी रे,
पण आप रूपे नव थाय । जाउं० । १० ।
सुरभि, चिंतामणि, कल्पतरु, हुं वारी रे,
इच्छित फळ आपे तेह । जाउं० । ११ ।
गुरु पोताने रूपे करे, हुं वारी रे,
प्रभु मेळवे निःसंदेह । जाउं० । १२ ।
निज मा-बाप जन्म मरण आपे, हुं वारी रे,
योनि प्रत्ये नवां नवां थाय । जाउं० । १३ ।

जाता हूँ । ६ । जो विशुद्ध भक्ति, विरक्ति और ज्ञान (-स्वरूप) हैं, जो सत्त्वगुण, रजोगुण तथा तमोगुण—इन तीनों गुणों के श्रेष्ठ तीर्थक्षेत्र हैं, उन श्रीगुरु के चरण-कमलों पर मैं वलिहारी जाता हूँ । ७ । हे गुरुदेव ! आप शुद्ध ब्रह्म हैं; (पापों से मुक्ति देनेवाले) गगा-जल हैं । आप संसार रूपी सागर के पार ले जानेवाले जहाज हैं । आपके चरण-कमलों में मैं समर्पित हो जाता हूँ । ८ । ऐसे सद्‌गुरु अनाथों के नाथ हैं । उनके लिए सम-तुल्य उपमा नहीं कही जाती । ऐसे उन श्रीगुरु के चरणों में मैं समर्पित हो जाता हूँ । ९ । पारस लोहे का सोना बना देता है; परन्तु वह (लोहा उस) पारस के अपने रूप के समान नहीं हो जाता—अर्थात् लोहा या उससे बना सोना पारस नहीं हो जाता । ये गुरु तो शिष्य को अपने समान बना देते हैं । १० । कामधेनु, चिन्तामणि, कल्पवृक्ष मनुष्य को इच्छित फल (तो) देते हैं; परन्तु ये सब दूसरे की इच्छा तो पूर्ण करते है, फिर भी दूसरे को अपने समान गुणधर्मों से युक्त नहीं बना पाते । सद्‌गुरु तो ऐसे कामधेनु, चिन्तामणि अथवा कल्पवृक्ष है, जो शिष्य की इच्छाओं की पूर्ति तो करते ही हैं; इसके अतिरिक्त वे उसे अपने रूप में परिवर्तित कर देते हैं । वे निःसन्देह भक्त को भगवान् से मिला देते हैं । ऐसे श्रीगुरु के चरण-कमलों में मैं समर्पित हो जाता हूँ । ११-१२ । (प्राणी के) अपने माता-पिता जन्म-मरण देते है—अर्थात् जीव विभिन्न योनियों में से प्रत्येक में नये-नये रूप में (उत्पन्न) हो जाता है (तथा मौत [illegible] हो जाता है) । परन्तु श्रीगुरु तो (जीव के) जन्म और मृत्यु

श्रीगुरु जन्म-मरण टाळे, हुं वारी रे,
वळी स्वतन्त्र एक सहाय । जाउं० । १४ ।
एवा श्रीगुरुने नमस्कार करुं, हुं वारी रे,
गाउं सुख-निधि राम-चरित्र । जाउं० । १५ ।
निज सेवक जाणी कृपा करजो, हुं वारी रे,
सहु भगवती संत पवित्र । जाउं० । १६ ।
करुणा अनुग्रह करजो घणी, हुं वारी रे,
कवि हरिजन मोटा साथ । जाउं० । १७ ।
ज्यम त्यम गुण गाउं राम तणा, हुं वारी रे,
ते क्षमा करजो अपराध । जाउं० । १८ ।
ज्यम बाळक बोले बोबडुं, हुं वारी रे,
सुणी माता-पिता हरखाय । जाउं० । १९ ।
एम प्राकृत वाणी सांभळी, हुं वारी रे,
मन धरजो वात्सल्यताय । जाउं० । २० ।
हरि गुरु संत तणे चरणे, हुं वारी रे,
नमुं प्रीते वारंवार । जाउं० । २१ ।

को टाल देते हैं । इसके अतिरिक्त वे (जीव के) एकमात्र स्वतंत्र सहायक (बने) रहते है । ऐसे श्रीगुरु के चरण-कमलों पर मैं निछावर हो जाता हूँ । १३-१४ । ऐसे श्रीगुरु को, उनके चरण-कमलों में समर्पित होते हुए मैं नमस्कार करता हूँ और सुख की निधि-से श्रीराम-चरित्र का गान करता हूँ । १५ । हे पावन(-चरित्र)समस्त भक्तो और सन्तो! मुझे अपना सेवक समझकर (मुझपर) कृपा कीजिए । मैं आपके चरण-कमलों में समर्पित हो जाता हूँ । १६ । मुझपर बहुत करुणा तथा कृपा कीजिए । मैं साथ ही बड़े कवियों और हरि-जनों अर्थात् (आप जैसे) भक्तों के चरणों पर बलिहारी जाता हूँ । १७ । मैं जैसे-तैसे राम का गुण-गान कर रहा हूँ । (अतः उसमे त्रुटि भी रह सकती है ।) उस अपराध को आप क्षमा कीजिए । मैं आपके चरण-कमलों पर बलिहारी जाता हूँ । १८ । जिस प्रकार बालक तुतलाकर बोलता है, फिर भी उसे सुनकर (उसके) माता-पिता आनंदित हो जाते हैं, उसी प्रकार मेरी यह प्राकृत, अर्थात् अपरि-मार्जित वाणी सुनकर आप मन में (मुझ जैसे बालक के प्रति) वात्सल्य-भाव धारण कीजिए । मैं आपके चरण-कमलों पर बलिहारी जाता हूँ । १९-२० । भगवान् हरि, गुरु और (आप जैसे) सन्तों के चरणों में मैं प्रेमपूर्वक पुनः पुनः नत हो जाता हूँ और आपके चरणों पर [illegible]

बाळक-बुद्धे कर जोडी, हुं वारी रे,
करुं रामकथा विस्तार । जाउं० । २२ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रामकथा विस्तार करुं छुं, दृढ विश्वास मनमां धरी,
कर जोडी कहे दास गिरधर, श्रोताजन बोलो श्रीहरि । २३ ।

हो जाता हूँ । २१ । बाल-बुद्धि से मैं आपके हाथ जोड़ते हुए आप पर निछावर हो कर राम-कथा का विस्तार (-पूर्वक वर्णन) करता हूँ । आपके चरणों में समर्पित हो जाता हूँ । २२ ।

मन में दृढ़ विश्वास धारण करते हुए मैं राम-कथा का विस्तार (-पूर्वक वर्णन) करता हूँ । यह गिरधरदास हाथ जोड़कर कहता है, " हे श्रोताजनो ! आप 'श्रीहरि' बोलिए । २३ ।

* * *

अध्याय—२ (भरत-शत्रुघ्न-मातुलगृह-गमन)

राग देशाख

श्रीरघुवीर चरित्र कथामृत, लीला सिंधु अपार,
प्राकृतवाणी पदबंध करुं छुं, बुद्धिमाने विस्तार । १ ।
बालकांडमां प्रथम कथा कही रावणकुळ उत्पन्न,
दशरथ लग्न श्रवणवध समर, शृंगी चरित्र जगन्न । २ ।

अध्याय—२ (भरत-शत्रुघ्न का मातुलगृह-गमन)

श्रीराम की चरित्र-कथा अमृत है । उनकी लीला रूपी समुद्र असीम है । मैं (उस कथा को) प्राकृत (अर्थात् संस्कृत से भिन्न गुजराती जैसी जन-) भाषा में अपनी बुद्धि के अनुसार विस्तार करते हुए पद-बद्ध कर रहा हूँ । १ । बालकाण्ड में मैंने पहले वह कथा कही— रावण-कुल कैसे उत्पन्न हुआ ? (फिर) दशरथ का विवाह, श्रवण का वध, (वृषपर्वा के साथ) युद्ध, शृंगी ऋषि का चरित्र, (पुत्रकामेष्टि) यज्ञ—इनके सम्बन्ध में

हनुमंतनी उत्पत्ति कही, पछी रामजन्म समुदाय,
बाळचरित्र कह्युं राघवनुं, तीर्थाटन विदाय । ३ ।
विश्वामित्र आगमन अवधपुर, वसिष्ठ बोध विचार,
ताडिकावध मखरक्षण निशिचर, आदि सुबाहु संहार । ४ ।
मुनिवधू शापमुक्त करीने, सुणी सीता जन्मकथाय,
जनकपुरीमां प्रवेश्या वळता, स्वागत कीधुं राय । ५ ।
धनुष भंग करी जानकी परण्या भृगुपति गर्व उद्धार,
पछे कुशळ अवधपुरीमांहे आव्या, वरत्यो जयजयकार । ६ ।
हवे श्रोताजन सहु भावे सुणजो अयोध्याकांड विचार,
राज तजी रघुवीर नीकळ्या, वनमां ए विस्तार । ७ ।
श्रीराम लक्ष्मण भरत शत्रुघन, परणीने आव्या घेर,
उच्छवमां दिन जाय सरवना, सहुने लीला-लहेर । ८ ।
त्रण वीर रघुवीरने सेवे, भक्ति श्रद्धा सहित,
मातपितानी आज्ञा पाळे, अधरम कपट रहित । ९ ।

कहते हुए हनुमान की उत्पत्ति (-सम्बन्धी कथा) कही । बाद में मैंने आनन्द-पूर्वक राम का जन्म तथा राम की बाल-लीला कही । (अनन्तर) श्रीराम का तीर्थ-यात्रा के लिए विदा होना, अयोध्या में विश्वामित्र का आगमन, वसिष्ठ द्वारा (आत्म-) ज्ञान सम्बन्धी विचार कहना, राम द्वारा ताड़का का वध, यज्ञ-रक्षण, सुबाहु आदि राक्षसों का संहार (—इनके सम्बन्ध में मैंने कहा) । २-४ । फिर (यह कहा कि) श्रीराम ने (गौतम) ऋषि की पत्नी (अहल्या) को शाप से मुक्त करके (विश्वामित्र से) सीता की जन्म-सम्बन्धी कथा सुनी । बाद में (मैंने कहा कि) वे जनकपुरी में प्रविष्ट हो गये; जनकराजा ने उनका स्वागत किया । ५ । धनुष को तोड़कर उन्होंने जानकी का पाणिग्रहण किया; भृगुपति परशुराम का घमण्ड छुड़ाया; बाद में वे सकुशल अयोध्या में आ गये, तो (उनका) जय-जयकार हो गया । ६ । हे समस्त श्रोताजनो, अब अयोध्याकाण्ड का आशय प्रेमपूर्वक सुनिए । राम राज्य का त्याग करके वन में जाने के लिए निकले—वह (कथा) सविस्तार सुनिए । ७ । श्रीराम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न विवाह करके घर आ गए । सब के दिन आनन्दोत्सव में बीत रहे थे । सबको आनन्द हो रहा था । ८ । तीनों भाई भक्ति और श्रद्धा के साथ श्रीराम की सेवा करते थे । वे (चारों बन्धु) अधर्म और कपट से मुक्त होकर माता-पिता की आज्ञा का पालन करते थे । ९ । चारों भाइयों के जो चार वधुएँ थीं, वे पतिव्रता-धर्म का पालन करती थीं ।

चार बंधुनी चार वधू ते पाळे पतिव्रत धर्म,
सुरपति सुखथी कोटिगणुं सुख, भोग भोगवे पर्म। १०।
सासु तणी आज्ञामां रहेतां, कुळवधू धर्म समेत,
भेद रहित माताओ सर्वे सहुनुं सरखुं हेत। ११।
एम घणा दिवस वीत्या महासुखमां साचवतां निज धर्म,
पितानी आज्ञा प्रमाणे करता, राजकाजनुं कर्म। १२।
हवे केकै केरो बंधु कहिये, संग्रामजित एवुं नाम,
ते एक समे आव्यो पुर मध्ये, भूपति केरे धाम। १३।
ते चार मास रही नीज पुर जावा थयो तत्पर जेणी वार,
त्यारे केकै साथे बोल्यो वचन, संग्रामजित तेणी वार। १४।
भरत शत्रुघन बंन्यो बांधव, मोकल मारी साथ,
थोड़ा दिवस हुं राखीश माटे, बहेनी सांभळ वात। १५।
त्यारे केकै कहे हुं हा कहुं छुं, पण रायने पूछो पेर,
जो भूपति आज्ञा आपे तो, तेडी जाओ तम घेर। १६।
त्यारे मामाए कह्युं महीपतिने, सुणो भुपति मुज वचन,
आज्ञा आपो तो तेडी जाउं, भरत ने शत्रुघन। १७।

वे सब (लोग) इन्द्र के सुख (और भोग) से करोड़ों गुना अधिक परम सुख और भोग भोगते थे। १०। वे (वधुएँ) कुलवधुओं के (निर्धारित) धर्म के साथ सासुओं की आज्ञा में रहती थीं। सब माताएँ सव (पुत्रों तथा वधुओं) से भेद-भाव रहित समान प्रेम करती थीं। ११। इस प्रकार (पुत्र) अपने-अपने धर्म का पालन करते थे। इस प्रकार (रहते हुए) बहुत दिन बड़े सुख में व्यतीत हो गए। वे पिताजी की आज्ञा के अनुसार राज-काज सम्बन्धी कार्य किया करते थे। १२। अव कैकेयी के एक वन्धु था। कहिए कि उसका नाम संग्रामजित (= युधाजित) था। एक समय वह नगर में राजा (दशरथ) के भवन में आ गया। १३। चार महीने रहकर वह जिस समय अपने नगर में जाने के लिए तैयार हुआ तो उस समय संग्रामजित ने कैकेयी से यह वात कही। १४। 'भरत और शत्रुघ्न—दोनों भाइयों को मेरे साथ भेज दो। हे वहन! (मेरी) वात सुनो। थोड़े दिन मैं (उनको) रखूँगा'। १५। तव कैकेयी ने कहा—'मैं 'हाँ' कहती हूँ। परन्तु राजा से (यह) वात पूछ लो। यदि राजा आज्ञा दें, तो तुम उन (दोनों) को घर ले जाओ"। १६। तव (भरत के) मामा ने राजा से कहा—'हे राजा, मेरी वात सुनिए। भरत और शत्रुघ्न को यदि आप आज्ञा दें, तो ले जाऊँगा। १७। किसी (भी) दिन

मोसाळ मांहे गया नथी कोई दिन, माटे मनोरथ मन,
एक मास राखीने वळता, सोंपीश तमने तन । १८ ।
एवां वचन सुणीने दशरथ रायने, जळ भराई आव्युं नेण,
भरत शत्रुघन पासे तेडावीने, राजा बोल्या वेण । १९ ।
सुणो पुत्र आ मामो तमारो आग्रह करे छे अपार,
माटे थोडा दिवस जईने रही आवो, मोसाळमां निरधार । २० ।
जो ना कहिये तो तमारी मातने दुःख लागे मनमांहे,
मामो तमारो रिसाय माटे, जई आवो सुत त्यांहे । २१ ।
एवुं कही राय रुदेशुं चांप्या, गद्‌गद थई वहु पेर,
जाओ बाप सुखे एक मास रहीने, आवज्यो पाछा घेर । २२ ।
भरतने भाव जवानो नथी, मूकी राम तणी सेवाय,
पछे मातपिताशुं भरतज बोल्या, कर जोडी नमी पाय । २३ ।
श्रीरामनी सेवा समागम पाखे मुजने रुचे नहि आन,
रामविजोगे एक क्षण ते कोटि कल्प समान । २४ ।
श्रीरामचन्द्र हुं चकोर चातक, रघुपति जळधररूप,
मुज मनकंज सदा प्रफुल्लित रहे, राघव दिनकर भूप । २५ ।

(समय) वे (दोनों) ननिहाल में नहीं गये, इसलिए मेरे मन की (यह) अभिलाषा है । आपके पुत्रों को एक महीना रखकर, बाद में (आपको) सौंप दूंगा '। १८ । ऐसी बातें सुनकर दशरथ राजा की आँखों में पानी भर आया । भरत और शत्रुघ्न को (अपने) पास बुलाकर राजा (यह) बात बोले । १९ । " हे पुत्रो ! सुनो । ये तुम्हारे मामा बहुत आग्रह कर रहे हैं । इसलिए तुम अवश्य थोड़े दिन जाकर ननिहाल में रहकर आओ । २० । यदि ' ना ' कहोगे, तो तुम्हारी माता को मन में बहुत दुःख होगा । तुम्हारे मामा रूठेंगे । (अतः) वहाँ हो आओ " । २१ । ऐसा कहकर राजा ने गद्‌गद होकर बहुत प्रकार से (उन्हें) हृदय से लगा लिया । (और कहा—) ' हे तात ! सुखपूर्वक जाओ (और) एक महीना रहकर घर लौट आओ ' । २२ । भरत को श्रीराम की सेवा को छोड़कर जाने की इच्छा नहीं थी । अनन्तर हाथ जोड़कर और चरणों को प्रणाम करके भरत ही माता-पिता से बोले । २३ । ' श्रीराम की सेवा और संगति की तुलना में मुझे (कोई) दूसरी बात अच्छी नहीं लगती । श्रीराम के वियोग में एक क्षण (भी मुझे) करोड़ कल्पों के समान लगता है । २४ । श्रीराम चन्द्र हैं, तो मैं चकोर हूँ; रघुपति राम मेघ रूप है, तो मै चातक (रूप) हूँ । श्रीराम राजा सूर्य है । उनसे मेरा

राम सुरभि हुं वत्स कहो ते, वियोग क्यम करी सहेशे,
कल्पवृक्षनां विहंगम ते वळी, बबुल उपर नव बेसे । २६ ।
एवुं कही गद्‌गद कंठ थया ने, आंसु आव्यां लोचन,
त्यारे केकैए कह्युं एक मास रही, वहेला आवजो तन । २७ ।
त्यारे भरते मातपितानुं वचन, ते लोपायुं नहि त्यांहे,
पछे तत्वर थई बे वीरज आव्या, रघुपति बेठा ज्यांहे । २८ ।
श्रीरामचन्द्रने चरणे लाग्या, भरत ने शत्रुघन,
त्यारे रामे ऊठीने रुदेशुं चांप्या, दीधुं आलिंगन । २९ ।
मोसाळ जवानी आज्ञा लीधी, साथे घणी सेन्याय,
मातुल साथे रथमां बेसीने भरत शत्रुघन जाय । ३० ।
एम बंन्यो वीर मोसाळ गया, पण मन रघुवीरनुं ध्यान,
राम लक्ष्मण ते घेर रह्या छे, वीर बंन्यो बळवान । ३१ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

वळवान बंन्यो रह्या मंदिर, राम लक्ष्मण वीर रे,
नीति धरमे काज चलावे छे, धोरींधर धीर रे । ३२ ।

* * *

मन रूपी कमल सदा प्रफुल्लित रहे । २५ । श्रीराम सुरभि कामधेनु हैं; मैं उसका बछड़ा हूँ । कहिए, वह विरह मैं कैसे सहन करूँगा ? कल्पवृक्ष के पक्षी बाद में बबूल के ऊपर नहीं बैठते ' । २६ । ऐसा कहकर वे गद्‌गद-कंठ हो गये (—उनका गला रुँध गया) और आँखों में आँसू आ गये । तब कैकेयी ने कहा—' हे पुत्रो ! एक महीना रहकर जल्दी (लौट) आ जाओ ' । २७ । तब भरत ने माता-पिता की उस बात (आज्ञा) को अस्वीकार नहीं किया । अनन्तर तैयार होकर दोनों बन्धु ही (वहाँ) आ गये, जहाँ राम बैठे थे । २८ । भरत और शत्रुघ्न श्रीराम के चरणों में लग गये, तब राम ने (उन्हें) उठाकर हृदय से लगा लिया और आलिंगन किया । २९ । उन्होंने ननिहाल जाने की आज्ञा ली । साथ में बड़ी सेना लेकर भरत और शत्रुघ्न (दोनों) मामा के साथ रथ में बैठकर चल दिये । ३० । इस प्रकार दोनों भाई ननिहाल तो गये, परन्तु उसका मन श्रीराम के ध्यान में (संलग्न) था । (इधर) श्रीराम और लक्ष्मण दोनों बलवान् बन्धु घर पर रहे । ३१ ।

श्रीराम और लक्ष्मण दोनों बलवान् बन्धु (राज-) मन्दिर में रह गये । वे धुरंधर तथा धीर पुरुष नीति और धर्म से काम चलाते रहे । ३२ ।

* *

अध्याय—३ (दशरथ का राम-राज्याभिषेक-सम्बन्धी विचार)

राग सामेरी

मोसाळ मांहे गया बंन्यो, भरत शत्रुघन,
श्रीराम लक्ष्मण रह्यां मंदिर, वरते निर्मळ मंन। १ ।
नित सेवता गुरुचरण पंकज, धरमपंथ पळाय,
वसिष्ठ मुनिना मुख थकी, सुणता पुराण कथाय। २ ।
सभा करी एक समे बेठा, राय दशरथ भूप,
रंगमंडप मांहे बेठा, गुरु सहित अनुप। ३ ।
त्यारे जोवा विद्यानी परीक्षा तेडचा लक्ष्मण राम,
पछी कळा युद्धनी देखाडी, सहु पोते पूरणकाम। ४ ।
अस्त्र शस्त्र अनेक विद्या, सफळ मंत्र ज जेह,
मल्ल मेष महिषनुं जुद्ध करी देखाडचुं तेह। ५ ।
प्रसन्न थया घणुं रायजी, जोई पुत्रनो परताप,
त्यारे सकळ गुण सम्पूरण जाण्या रघुवीरने आप। ६ ।
ए प्रकारे आनंदमां दिन, जाय छे सुख मांहे,
रघुवीरने सेवतां भावे, जनकतनया त्यांहे। ७ ।

अध्याय—३ (दशरथ द्वारा रामराज्याभिषेक-विचार)

भरत और शत्रुघ्न दोनों ननिहाल में गये, तो श्रीराम और लक्ष्मण (दोनों राज–) मन्दिर में रह गये। वे निर्मल (शुद्ध) मन से काम करते रहे। १। वे नित्य गुरु के चरण-कमलों की सेवा करते; धर्म-(द्वारा निर्धारित) मार्ग का पालन (अनुसरण) करते। वे वसिष्ठ ऋषि के मुख से पुराणों की कथा सुनते। २। इस समय राजा दशरथ सभा (राज-परिषद) लगाकर विराजमान हो गये। वे अपने श्रेष्ठ गुरु-सहित (आनन्दोत्सव आदि के लिए निर्मित एवं) सुसज्जित मण्डप में बैठ गये। ३। तब उन्होंने विद्या (जो सिखायी गयी थीं) की परीक्षा कर देखने के लिए श्रीराम और लक्ष्मण को बुला लिया। बाद में पूर्णकाम श्रीराम ने स्वयं युद्ध-सम्बन्धी सब कलाएँ प्रदर्शित कीं। ४। अस्त्र-शस्त्र सम्बन्धी जो अनेक विद्याएँ तथा सब (प्रकार के) मन्त्र हैं, (उनका प्रयोग) तथा मल्ल-युद्ध, मेष-युद्ध, महिष-युद्ध—सब करके उन्होंने दिखाया। ५। अपने पुत्रों का प्रताप देखकर राजा बहुत प्रसन्न हुए। तब उन्होंने स्वयं श्रीराम को सकल गुणों से सम्पूर्ण अर्थात् सम्पन्न जाना। ६। इस प्रकार उनके दिन आनन्द और सुख में व्यतीत हो रहे थे। तब जनक-तनया सीता

एक बार बेठा मंदिरमां, अजपाळनंदन जेह,
निज मुखने अवलोकता आदर्श मांहे तेह । ८ ।
त्यारे करण आगळ केश शिरनो, श्वेत दीठो राय,
उदासी आवी अति घणी, मन मांहे थई चिंताय । ९ ।
जाण्युं जरा आवी वात कहेवा, चेतावा नरदेव,
एम विचारी वसिष्ठ गुरुने, तेडाव्या ततखेव । १० ।
गुरुने कहे मारा छतां, हवे करे रघुवर राज,
संकल्प मारे मन थयो, ते करो गुरु महाराज । ११ ।
अभिषेक रघुवरने करो, शुभ लग्न जोई आज,
रामने देखुं राज करतां, थाय मारुं काज । १२ ।
गुरु कहे तभी रूडुं विचार्युं, घटे एम ज भूप,
साहित्य सरवे करावो ए, यथायोग्य अनुप । १३ ।
त्यारे दशरथे तेडाविया, रघुवीरने एकान्त,
पासे बेसाडीने कह्युं, निज मन तणुं वरतांत । १४ ।
हे राम मुजने एम भास्युं, कहुं सत्य वचन,
थोडा दिवसमां जाणुं हावे, पडशे मारुं तन । १५ ।

श्रीराम की प्रेमपूर्वक सेवा किया करती रही । ७ । एक समय जब दशरथ (राज-) मन्दिर में बैठे (हुए थे) तो दर्पण (आईने) में वे अपने मुख को देखते रहे । ८ । तब राजा ने कान के आगे मस्तक का एक बाल सफ़ेद (हुआ) देखा । (उससे) उन्हें बहुत बड़ी उदासी हो आयी और मन में चिन्ता (उत्पन्न) हुई । ९ । (उन्हें) जान पड़ा कि राजा को (यह) बात बताने और सचेत करने के लिए बुढ़ापा आ गया । ऐसा सोचकर उन्होने तत्क्षण गुरु वसिष्ठ को बुला लिया । १० । उन्होंने गुरु से कहा—'अब मेरे होते हुए श्रीराम राज करे । मेरे मन में (ऐसा) निश्चय हो गया । (अतः) गुरु महाराज, वह कर दीजिए । ११ । आज शुभ मुहूर्त देखकर श्रीराम का अभिषेक कीजिए । श्रीराम को राज करते देखूँ, तो मेरा कार्य (सार्थक) हो जाएगा' । १२ । (इसपर) गुरु ने कहा—'तुमने अच्छी (बात) सोची । हे राजा ! ऐसा ही घटित होगा । यथायोग्य उत्तम सब साहित्य तैयार कराओ' । १३ । तब दशरथ ने रघुवीर श्रीराम को एकान्त में बुला लिया और (अपने) पास बैठाकर अपने मन की बात कही । १४ । 'हे राम ! मैं सच्ची बात कहता हूँ । मुझे ऐसा जान पड़ता है । अब मैंने जाना कि थोड़े ही दिन में मेरा शरीर-पात हो जाएगा । १५ । समझो कि मेरे ग्रह भी विपरीत

मुज ग्रह पण विपरीत छे, अवदशा बेठी जाण,
शनि आठमे गुरु बारमे, ते करे रिष्ट प्रमाण। १६।
मुज मरणचिह्न जणाय छे, माटे राम कर तुं राज,
तमे तमारुं संभाळो, पुर देश घरनुं काज। १७।
एवां वचन सुणीने भूपचरणे, नम्या श्रीरघुराय,
महाराज जे कहो ते करुं शिर चढावी आज्ञाय। १८।
पछे राजाए सहुने तेडाव्या, पोताना परधान,
शाहुकार सरवे नग्रना ते, बोलाव्या देई मान। १९।
दरबारना अष्ट अधिकारी, आदे सरब सभाय,
ते सरव सांभळतां पछे, बोलिया दशरथ राय। २०।
भाई सहु सभाजन सांभळो, में मन विचार्युं आज,
माटे पंच सहुने गमे तो, रामने आपुं राज। २१।
एवुं सुणी सरवे हरखिया, धन्य धन्य हे राजन,
ए काज तो रूडुं विचार्युं, अरे रिपुनाशन। २२।
वसिष्ठ आदि सरव ऋषिए मुहूर्त आप्युं सार,
चैत्र सीत सप्तमी शुभ, गुरु पूर्ण योग विचार। २३।

(प्रतिकूल) हैं, (मेरे लिए) अवदशा आ बैठी है—आठवाँ शनि और बारहवाँ गुरु—दोनों (मिलकर) निश्चय ही अमंगल (नाश) करते हैं। १६। मुझे मृत्यु के चिह्न विदित हो रहे हैं। इसलिए हे राम! तुम (अब) राज करो। तुम अपना नगर, देश, घर का कार्य सम्हालो'। १७। ऐसी बातें सुनकर श्रीराम ने राजा के चरणों को नमस्कार किया (और कहा) 'महाराज! आप जो कहें, वह उस आज्ञा को शिरोधार्य करके मैं करूँगा'। १८। अनन्तर राजा ने अपने सब मन्त्रियों को बुलाया। नगर के सब साहूकारों को (भी) सम्मान करते हुए बुला लिया। १९। राजसभा के आठों अधिकारी आदि समस्त सभा-जनों के सुनते हुए (अर्थात् उन सबको सुनाते हुए) दशरथ राजा बोले। २०। 'समस्त सभाजन बन्धुओ, सुनिए। मैंने आज मन में सोचा, इसलिए, सब पंचों को जँचे, तो श्रीराम को राज्य दूँ'। २१। ऐसा सुनकर सब आनन्दित हो गये (और बोले)—'हे राजन्! धन्य-धन्य! हे शत्रुनाशक! आपने यह कार्य तो सुन्दर सोचा!'। २२। वसिष्ठ आदि सब ऋषियों ने (यह) सुन्दर मुहूर्त (खोजकर) दिया—चैत्र सुदी सप्तमी, जब कि योग के विचार से गुरु पूर्ण रूप से शुभ था। २३ उस समय वसिष्ठ ने सामग्री तैयार करायी। अभिषेक के लिए यह साधन तथा सा

साहित्य सहु तत्पर कराव्युं, वसिष्ठे तेणी वार,
उपलक्षण आणी मेळव्यां, अभिपेकनो उपचार । २४ ।
चार दांतनो उज्ज्वळ हस्ती श्वेत हय शुभ अंग,
नवीन सिंहासन कनकनुं, छत्र चामर संग । २५ ।
पंच पल्लव सप्त मृत्तिका, चार समुद्रनुं वार,
मोटा विप्रने जप करवाने बेसाडया निरधार । २६ ।
सहु नगरने शणगारियुं, घर चौटां शेरी पोळ,
नरनारी अति हरखे भर्या, थई रह्यो रंगझकोळ । २७ ।
पहेले दिवसे वसिष्ठ गुरुए, आज्ञा आपी तास,
श्रीराम सीता बन्ने जणने, कराव्यो उपवास । २८ ।
रघुनाथने हाथे करीने, अपाव्यां बहु दान,
होम हुताशनमां कर्यो, त्यां थाय मंगळ गान । २९ ।
आहुति आपी स्वहस्ते, कर्यो तृप्त हुताशन,
धूम्रे करी रघुवीरनां रातां थयां लोचन । ३० ।
केकै कौशल्या सुमित्रा, मन हरखनो नहि पार,
सुखवंत सरवे राणीओ, आपती दान अपार । ३१ ।

लाकर इकट्ठा करवायी—२४ चार दाँतोंवाला धवल हाथी, शुभ-अंगोंवाला श्वेत घोड़ा, छत्र-चामर सहित सोने का नूतन सिंहासन, (आम्र, पीपल, बरगद, गूलर, जामुन नामक) पाँच (वनस्पतियों की) पत्तियाँ, (अश्व, गज, रथ, वल्मीक, चौराहा, गोष्ठ, हाट या संगम इन स्थलों में पायी जानेवाली) सात (प्रकार की) मिट्टियाँ, (पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर नामक) चार समुद्रों का पानी। (अनन्तर) संकल्प-पूर्वक बड़े-बड़े ब्राह्मणों को जप कराने के लिए बैठाया। २५-२६। घर, बाजार, गली और मोहल्ले—समस्त नगर को सजवाया। पुरुष, स्त्रियाँ—आनन्द से भर उठे; (सभी ओर) आनन्द की लहरें फैलती रहीं। २७। पहले दिन उसी घड़ी पर वसिष्ठ गुरु ने आज्ञा दी और श्रीराम और सीता दोनों को उपवास कराया। २८। श्रीराम के हाथों बहुत दान कराया। अग्नि में (आहुतियों का) हवन किया। तब मंगल गीतों का गान होने लगा। २९। अपने हाथ से आहुति चढ़ाकर अग्नि को तृप्त कर दिया। (तब) धुएँ से श्रीराम की आँखें लाल हो गयीं। ३०। कैकेयी, कौसल्या [illegible] सुमित्रा के आनन्द की कोई सीमा नहीं रही। सब रानियाँ सुखी [illegible] वे अपार दान देती रहीं। ३१। दरवाजे में मंडप बनाया। [illegible] में [illegible] कर रहे थे। बहुत रंगीन तोरण बाँध लिये थे। चित्रविचित्र

बारणे मंडप रोपीओ, गुणीजन करे छे गान,
बहु रंगतोरण बांधियां झळके विचित्र वितान । ३२ ।
एम करतां निशा थईने, सूरज पाम्यो अस्त,
त्यारे कुशासन पर रामसीता, पोढियां थई स्वस्थ । ३३ ।
सिंहासन उपर प्रभाते, वेसशे रघुराय,
सहु लोक आनंद पामिया, देवने थई चिंताय । ३४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

चिंता थई सहु देवने, जे रघुवीर करशे राज रे,
त्यारे दुष्टने क्यारे मारशे ? क्यम थशे आपणुं काज रे ? । ३५ ।

चँदोवे झलक रहे थे । ३२ । ऐसा करते-करते रात होकर सूर्य अस्त को प्राप्त हो गया । तब श्रीराम और सीता (दोनों) स्वस्थ होकर कुशासन पर लेट गये--सो गये । ३३ । सवेरे श्रीराम सिंहासन पर विराजमान होंगे । (इस विचार से) सब लोग तो आनन्द को प्राप्त हो गये, परन्तु देवों को चिन्ता (अनुभव) हो गयी । ३४ ।

सब देवों को (यह) चिन्ता (अनुभव) हो गयी कि यदि राम राज (स्वीकार) करें, तो वे दुष्टों को कैसे मार डालेंगे ? हमारा कार्य कैसे (सिद्ध) होगा ? । ३५ ।

* * *

अध्याय—४ (कलयुग का मंथरा के शरीर में प्रवेश)

राग मारु

सुणो श्रोता कहुं वृत्तांत, हरिइच्छा मोटी बळवंत,
राम आपवुं ठर्युं राज, कर्युं तत्पर साहित्य काज । १ ।
ते जाणीने सरवे देव, मन चिंता पाम्या ततखेव,
सरवे मनमां थया उदास, आव्या ब्रह्मा केरी पास । २ ।

अध्याय—४ (मंथरा में कलि-प्रवेश)

हे श्रोताओ, मैं (घटनाक्रम का) जो विवरण कहता हूँ, उसे सुनिए । भगवान् की इच्छा बड़ी बलवती होती है । श्रीराम को राज्य देना (देने सम्बन्धी निर्णय) पक्का हुआ, तो उसके लिए साहित्य तैयार किया (गया) । १ । उसे जानकर सब देव मन में तत्क्षण चिन्ता प्राप्त हो गये । सब मन में उदास हो गये और ब्रह्मा के पास

सुणो वात पितामह आज, काले रामने आपे छे राज,
स्वर्गतुल्य राजसुख एह, तजी क्यम नीकळशे तेह ? । ३ ।
रावणादिक असुर अपार, क्यारे करशे तेनो संहार ?
ते माटे करो एवो उपाय, राम राज तजी वन जाय । ४ ।
त्यारे छूटे आपणा बंध, मारे राम जई दशकंध,
एवां वचन सुण्यां विधि ज्यारे, उभो कर्यो विकल्प कळि त्यारे। ५ ।
जा तुं अवधपुरी कर्य एश, कर केकैना मनमां प्रवेश,
मागे रायनी पासे वचन, भरत राज रघुपति वन । ६ ।
त्यारे कळजुग कहे महाराज, क्यम थाशे ते मुजथी काज,
सत्यवंत छे सरव प्रजाय, में पुरीमां नहि प्रवेशाय । ७ ।
विधि कहे सुण साचुं वचन, छे रामने गमतुं मन,
माटे जा तुं उतावळो आज, कर सकळ देवनुं काज । ८ ।
एवुं सुणी कळि थयो विकल्प, चाल्यो मनमां करतो संकल्प,
आव्यो अवधपुरी छे ज्यांहे, नव पेसायुं नग्रज मांहे । ९ ।

गये । २ । (वे बोले—) 'हे पितामह, आज (हमारी) बात सुनिए। कल (दशरथ) राम को राज्य दे रहे हैं। उस स्वर्ग-तुल्य राज्यसुख का त्याग करके वे (प्रासाद से बाहर) कैसे निकलेंगे ? । ३ । रावण आदि अनगिनत (जो) राक्षस हैं, वे (राम) उनका संहार कब करेंगे ? इसलिए ऐसा (कोई) उपाय कीजिए, जिससे श्रीराम राज्य का त्याग करके वन जा सकें । ४ । तब हमारे वन्धन छूटेंगे, (जब) श्रीराम जाकर रावण को मार डालेंगे।' विधाता ने जब ऐसी बातें सुनीं, तो (भ्रम और कुबुद्धि या कलह के अधिष्ठाता देवता) विकल्प 'कलि' को उन्होंने खड़ा किया (उकसाकर तैयार किया) । ५ । (उन्होंने उससे कहा—) 'तुम अयोध्या में जाओ और वह (काम) करो; कैकेयी के मन में प्रवेश करो, जिससे कि वह राजा से यह वचन माँगे—भरत को राज्य और राम को वन (-वास) प्राप्त हो'। ६ । तब कलियुग (के देवता) ने कहा—'महाराज, वह काम मुझसे कैसे होगा ? (अयोध्या की) समस्त प्रजा सत्यनिष्ठ है; (अतः) मुझसे उस नगरी में प्रवेश नहीं किया जा सकता'। ७ । (यह सुनकर) विधाता ने कहा—'सच्ची बात सुनो—राम को वन(-वास) अच्छा लगता है। इसलिए आज शीघ्र जाओ और सब देवताओं का काम (सिद्ध) करो'। ८ । ऐसा सुनकर कलि विकल्प अर्थात् विपरीत हो गया और मन में निश्चय करते हुए चल दिया। जहाँ अयोध्यानगरी है, वहाँ वह आ गया; (परन्तु) उसने

छे सुधर्मा नरनार, माटे जई रह्यो वाडी मोझार,
सुणो श्रोता थई सावधान, ए कथानुं अनुसंधान । १० ।
मंथरा नामे एक दासी, हती केकै केरी खवासी,
ते पूर्वने पापे एश, राखे राम उपर घणो द्वेष । ११ ।
एक समे प्रभाते राम, सज्याथी ऊठया पूरणकाम,
दंतधावन करवा काज, बेठा चोकमां श्रीमहाराज । १२ ।
पासे ऊभो एक खवास, बेठा चोकी उपर अविनाश,
ते समे आवी मंथरा पास, पूंजो वाळती निज अवास । १३ ।
राम उपर ऊडी रज, बोल्यो सेवक थईने धज,
हवडां रहेवा दे तारुं काज, रजे भराय छे महाराज । १४ ।
एवुं वदतामां वढवा लागी, गाळो देती ते बोली अभागी,
दुवर्चन कह्यां तजी लाज, जाण्या तारा मोटा महाराज । १५ ।
एवां सांभळी वचन विरोध, चढचो श्रीरघुवीरने क्रोध,
अरे रंडा तुं तारे मारग जा, शाने काजे वढे छे तुं कुबजा । १६ ।
एम नीकळ्युं मुखथी वचन, दासीनुं थयुं कूबडुं तन,
अष्ट अंग थया छे वंक, काळी कूबडी आडे अंक । १७ ।

नगरी ही में प्रवेश नहीं किया । ९ । (उसका कारण यह था कि वहाँ के) सब स्त्री-पुरुष सद्धर्मी थे । इसलिए वह उपवन में रहा । हे श्रोताओ, सावधान होकर (कथा का) यह पूर्वापर सम्बन्ध सुनिए । १० । मन्थरा नामक एक दासी कैकेयी की नौकरानी थी । वह पहले घटित किसी पाप से राम के प्रति बहुत द्वेष-भाव रखा करती थी । ११ । एक समय प्रभातकाल में पूर्णकाम राम शय्या से उठे (और) वे आँगन में दातुन करने बैठ गये । १२ । पास में एक उनका अपना विशिष्ट सेवक खड़ा था । अविनाशी भगवान् राम चौकी पर बैठे हुए थे । उस समय अपने घर में झाड़ू लगाती हुई मन्थरा पास आ गयी । १३ । (तब) राम पर धूली उड़ गयी, तो गुस्सा होकर सेवक (उससे) बोला—'अब तुम्हारा काम रहने दो—महाराज (यहाँ उड़ी हुई) धूल से भर (सन) गये हैं' । १४ । (उस सेवक के) ऐसा बोलने पर वह आग-बबूला हो गयी और वह अभागिन गालियाँ देती हुई बोली । उसने लज्जा छोड़कर (यों) दुर्वचन कहे—'ज्ञात है बड़े तुम्हारे महाराज !' । १५ । ऐसी विरोधी बाते सुनकर श्रीराम को क्रोध आ गया । (वे बोले—) 'अरी बाई । तू अपनी राह चली जा । तू कुब्जा क्यों झगड़ा करती है ?' । १६ । (उनके) मुख से ऐसी बात निकली

जोई रूप पामी लज्जाय, नमी श्रीरघुवीरने पाय,
हुं अज्ञाने बोली तम साथ, अपराध क्षमा करो नाथ। १८।
हुं विमुख थई पड्यो वंक, प्रभु दासी तमारी रंक,
राम कहे सुण कुब्जा वचन, रहेशे घणो काळ तुज तन। १९।
जुग द्वापर मथुरा गाम, थशे जन्म तारो ते ठाम,
नाम कुबजा कूबडुं रूप, थईश किंकरी मथुरा भूप। २०।
हुं धरीश कृष्ण अवतार, त्यारे तारो करीश उद्धार,
कंस मारवा कारण त्यांह्य, हुं आवीश मथुरा मांह्य। २१।
तारुं करीश सुंदर रूप, सुख आपीश परम अनुप,
एम बोल्या श्रीरघुवीर, थयुं कूबडुं तेनुं शरीर। २२।
वही गया पछे केटला दन, रामने ठर्युं राज्यासन,
ते मुहूर्तने पहेले दन, वाडीमां गई दासीजन। २३।
मंथरा त्यां वीणती फूल, ते विकल्पे दीठी अनुकूल,
कुळरहित अधरम कुपात्र, कर्म कुत्सित कूबडुं गात्र। २४।

तो उस दासी का शरीर कुबड़ा हो गया। उसके आठों अंग टेढ़े हो गये। उसके काली-कुबड़ी होने में कोई कोर-कसर नहीं रही। १७। अपने रूप को देखकर वह लज्जा को प्राप्त हो गयी; (फिर) उसने श्रीराम के चरणों को प्रणाम किया। (और कहा—) 'मैं अज्ञान से आप से (ऐसा) बोली। (अतः) हे नाथ, मेरे अपराध को क्षमा कीजिए। १८। मैं (आप से) विमुख हो गयी, (अतः) मेरा शरीर टेढ़ा हो गया। हे प्रभु, मैं तो आपकी गरीब दासी हूँ'। (इसपर) राम ने कहा— 'हे कुब्जा, मेरी बात सुनो। तुम्हारा (यह) शरीर बहुत समय तक रहेगा—अर्थात् तुम बहुत समय तक जीवित रहोगी। १९। द्वापर युग में मथुरा नामक ग्राम में तुम्हारा (पुनर्-) जन्म होगा, नाम कुब्जा और रूप कुबड़ा होगा। (फिर भी) तुम मथुरा के राजा की दासी हो जाओगी। २०। मैं कृष्ण अवतार ग्रहण करूँगा, तब तुम्हारा उद्धार करूँगा। मैं कंस को मार डालने के लिए वहाँ मथुरा नगरी आ जाऊँगा। २१। (तब) तुम्हारे रूप को सुन्दर कर दूँगा और परम अद्वितीय सुख प्रदान करूँगा'। रघुवीर राम ऐसा बोले। और (इधर) उस (दासी) का शरीर कुबड़ा हो गया था। २२। बाद में कितने ही दिन—अर्थात् बहुत दिन बीत गये। श्रीराम को राज्यासन देना निश्चित हुआ। उस (राज्याभिषेक के) मुहूर्त के एक दिन पहले में स्त्रियाँ उद्यान में गयीं। २३। मन्थरा वहाँ फूल चुन रही थी, तो

एवो जोई अमंगळ वेश, कर्यो मनमां विकल्पे प्रवेश,
पाकां फळ कलिंगना जेह, मंथराए भक्षण कर्या तेह । २५ ।
दासी भ्रष्ट थई फरी गत्य, ते विकल्पे भुलावी मत्य,
फूल वीणतां ऊपन्यो विचार, पाछी आवी ते नग्र मोझार । २६ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नग्रमां आवी मंथरा, ते करवा कूडुं काज रे,
मारा भरतनो कोई भाव न पूछे, क्यम रामने आपे राज रे? । २७ ।

विकल्प ने उसे (अपने उद्देश्य के) अनुकूल देखा । —वह तो कुलहीना, अधर्मी, कुपात्र, निंद्यकर्मी तथा कुबड़े शरीरवाली (जो) थी । २४ । ऐसे अमंगल वेश को देखकर विकल्प ने उसके मन में प्रवेश किया । पके कलिंग (एक किस्म के तरबूज) फलों को मन्थरा ने खा लिया । २५ । वह दासी (बुद्धि से) भ्रष्ट हो गयी, उसकी मति फिर गयी । विकल्प ने उसकी बुद्धि को भुलावे में डाल दिया । फूल चुनते हुए उसके मन में एक विचार उत्पन्न हो गया और वह नगर में लौट आयी । २६ ।

बुरा कर्म करने के लिए वह मन्थरा नगर में (लौट) आयी । (वह सोचने लगी—) मेरे भरत को कोई पूछता नहीं । राम को राज क्यों दे रहे हैं ? । २७ ।

* * *

अध्याय–५ (मंथरा की उक्ति से कैकेयी का विषाद)

राग धन्याश्री

दासी आवी राजद्वार जी, कुत्सित करती मनमां विचार जी,
कळिए कीधी बुद्धि भ्रष्ट जी, मूळे अधरमी थई मति नष्ट जी । १ ।

ढाळ

नष्टमति अति भ्रष्ट थईने, आवी राजद्वार,
त्यां केकै केरा चोकमां, मंडप रच्यो छे सार । २ ।

अध्याय—५ (मन्थरा के परामर्श पर कैकेयी-विषाद)

वह दासी (मन्थरा) मन में कुत्सित विचार करती हुई राज-द्वार पर आ गयी । कलिदेव ने उसकी बुद्धि को भ्रष्ट किया था । वह मूलतः तो अधर्मी थी ही—(अब) उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो गयी । १ । वह नष्ट-मति (दासी) अति (विवेक-) भ्रष्ट होकर राज-द्वार पर आ गयी (तो देखा कि) वहाँ कैकेयी के आँगन में सुन्दर मण्डप बनाया गया है ।

चंद्रवा तोरण बांधियां, वाजित्र गरजे त्यांहे,
ते जोई दासी बळी मनमां, आवी मंदिर मांहे । ३ ।
थई रह्यो मंगळ सोहलो, जोई द्वेष आप्यो मन,
ज्यम संत मूरति जोईने, करे द्वेष पापीजन । ४ ।
वसंतऋतुमां कोकिलानो, सुणी नाद रसाळ,
ज्यम काग मनमां खेद पामे, तेम लागी झाळ । ५ ।
पंडितनी व्युत्पत्ति जोई, थाय मुरखने संताप,
श्रीमंतने जोई बळे ज्यम, दुर्बळ दरिद्री आप । ६ ।
आचारीनी लीला जोई, अपवित्रने थाय खेद,
हिंसकने ज्यम दया न रुचे, विषयीने निरवेद । ७ ।
पतिव्रतानो धर्म जोई, करे जारणी मन द्वेष,
एम मंगळ जोई मंथरा, करवाने आवी क्लेश । ८ ।
केकै कने कूटती आवी, शिर पोतानुं जेह,
पुष्पछाब पछाडी लागी रुदन करवा तेह । ९ ।
केकै कहे रे शुं थयुं, ते कहे मुंने विचार,
आनंदनो दिन आज छे, क्यम रडे छे तुं नार ? । १० ।

चँदोवे और तोरण (बन्दनवार) बाँधे हैं; वहाँ वाद्य बज रहे हैं—वह देखकर दासी मन में जल उठी, और मन्दिर (—प्रासाद) में आ गयी । ३ । वहाँ मंगल आनन्दोत्सव हो रहा था । देखते ही उसके मन में द्वेष उत्पन्न हो आया, जैसे वसन्त ऋतु में कोयल का मधुर स्वर सुनकर कौआ मन में खेद को प्राप्त हो जाता है, वैसे (यह देखकर मन्थरा के मन में) आग-सी लग गयी । ४-५ । जैसे (किसी) पंडित की व्युत्पन्नता (विद्वत्ता) देखकर मूर्ख मनुष्य को सन्ताप हो जाता है, जैसे धनवान् को देखकर दुर्बल दरिद्र व्यक्ति स्वयं (उसके प्रति) जल उठता है, जैसे सदाचारी व्यक्ति की लीला (व्यवहार) देखकर अपवित्र व्यक्ति को खेद हो जाता है, जैसे हिंसक को दया अच्छी नहीं लगती, विषयी व्यक्ति को निर्वेद (वैराग्य) नहीं भाता, जैसे पतिव्रता नारी का धर्म (-संगत आचरण) देखकर जारिणी मन में (उससे) द्वेष करती है । वैसे ही ऐसा मंगल (अवसर) देखकर मन्थरा (वहाँ) झगड़ा या दुःख (उत्पन्न) करने के लिए आ गयी । ६-८ । वह कैकेयी के पास अपना सिर पीटती हुई आ गयी । उसने फूलों की डाली ज़ोर से गिरा दी और वह रुदन करने लगी । ९ । (यह देखकर) कैकेयी बोली—' री, क्या हुआ ? मुझे मेरा विचार बताओ । आज तो आनन्द का दिन है । ' हे नारी ! तुम

दासी कहे रे अभाग्यणी, तारुं थयुं कूडुं काज,
सुत मोकल्या मोसाळमां रामने आपे राज । ११ ।
राणी कहे रे मूरख तुं, एम शुं बोले बोल ?
मारे भरत जेवा राम छे, बे पुत्र ते समतोल । १२ ।
एम कही मोतीमाळ घाली, तेने करवा शांत,
ते तोडी नाखी पछाडी, करती महा कलपांत । १३ ।
ताहरे ऊगरशे शुं ए थतां ? तुज पुत्रनी शी पेर,
तारे जीव्यानो आरो नथी, शुं रह्युं सुख तुज घेर ? । १४ ।
भाव नहि पूछे भरतनो, थशे राम ज्यारे भूप,
तुं सेवा करजे कौशल्यानी, थईने दासी रूप । १५ ।
केकै कहे छानी रहे, शां करे फोगट चेन ?
रामने अंतर कंई नथी, तुं सांभळ मारी बेन । १६ ।
सहु मातने सरखी गणे, रघुवीर धरम स्वरूप,
भरत पण एने भजे छे, समान भाव अनुप । १७ ।
एम कही आलिंगन देई भुजमांह्य भीडी नार,
प्रवेश तब कळिए कर्यो, केकै रुदे मोझार । १८ ।

क्यों रो रही हो ? ' । १० । (इसपर) दासी बोली—' हे अभागिनी ! आज तुम्हारे लिए बुरा काम हो गया । तुम्हारे पुत्र को ननिहाल में भेज दिया और (इधर) राम को राज्य दे रहे हैं ' । ११ । (यह सुनकर) रानी बोली—' अरी मूर्ख, तुम ऐसी बात क्यों बोल रही हो ? मेरे लिए भरत जैसा (ही) राम है—दोनों पुत्र सम-समान है ' । १२ । ऐसा कहते हुए उसने उसे शान्त करने के लिए (उसके गले में) मोतियों की माला पहना दी । तो उसने वड़ा कल्पान्त (अतीव रुदन) करते हुए उसे तोड़ डालकर फेंक दिया । १३ । उसने कहा—' यह होने पर तुम्हारे लिए क्या बचेगा ? तुम्हारे पुत्र की क्या स्थिति होगी ? तुम्हारे लिए जीने का कोई चारा नहीं रहेगा । तुम्हारे घर में (अब) क्या सुख रहा ? । १४ । जब राम राजा हो जाएगा, तो भरत का कोई महत्त्व नहीं मानेगा ? (तब) तुम दासी-रूप होकर कौसल्या की सेवा करो ' । १५ । (इसपर) कैकेयी बोली—' चुप रहो । तुम व्यर्थ ही क्या नखरे करती हो ? मेरी बहन ! तुम सुनो, राम से (मुझे) कोई अन्तर नहीं है । १६ । श्रीराम धर्म-स्वरूप है; वह सब माताओं को समान मानता है । भरत भी समान बेजोड़ प्रेम से उसकी सेवा करता है ' । १७ । ऐसा कहकर आलिंगन करते हुए कैकेयी ने उस

बुद्धि फरी राणी तणी, मन मलिन थयुं तेणी वार,
मंथरा शुं बोली पछे, करी कपट कूड विचार। १९।
सुण बेन हुं समजी हवे, तुज वचन केरो मर्म,
विचार रूडो में कर्यो, त्यारे खुल्लो भर्म। २०।
तें भले चेतावी मने, उपकार कीधो आज,
आपणे शुं ऊगरे जो, रामने आपे राज ? । २१।
मंथरा कहे रे मावडी, एवी अक्कल सूझी मुज,
ए काजे पाळज बांधिये, माटे चेतावी तुज। २२।
केकै कहे रे प्राणवल्लभा, खरी कही तें बात,
रामने आपे राज काले, आडी छे एक रात। २३।
हवे शो उपाय ज हुं करुं, ते कहे मुजने पेर,
जो राज पामे भरतजी तो, थाय लीलालहेर। २४।
त्यारे दासी कहे राणी सुणो, आवे निशाए राय,
त्यारे रिसाईने बेसजो, धरी रूप कदरूप काय। २५।
ज्यारे मनावे महीपति तमने, त्यारे मागी लेजो वचन,
राज आपो भरतने, रघवीर जाये वन। २६।

को बाँहों में कस लिया। तब कलि ने कैकेयी के हृदय में (भी) प्रवेश किया। १८। उस समय रानी की बुद्धि फिर गयी, उसका मन मलिन (विकृत) हो गया। कपट-पूर्ण बुरा विचार करते हुए वह बाद में मन्थरा से बोली। १९। 'सुनो, बहन। तुम्हारी बात का रहस्य अब मैं समझ गयी हूँ। मैंने ठीक से विचार किया, तब मर्म खुल गया (स्पष्ट हो गया)। २०। तुमने मुझे भली चेतावनी दी; (तुमने) आज (मेरा) उपकार किया। यदि राम को राज्य दें, तो अपने लिए क्या शेष रहेगा ?'। २१। तो मन्थरा ने कहा—'री माँ, ऐसी बुद्धि मुझे सुझायी दी। इस काम के लिए मेंड ही बनाओ—अर्थात् संकट को दूर रखने का पहले से उपाय करो। इसके लिए मैं तुम्हें चेतावनी दे रही हूँ'। २२। कैकेयी ने कहा—'री प्राणवल्लभा, तुमने सच्ची बात कही। कल राम को राज्य देंगे, बीच में एक रात (ही) है। २३। मुझे यह कहो कि अब मैं उपाय ही क्या करूँ। यदि भरत राज्य प्राप्त करे, तो अति आनन्द हो जाएगा'। २४। तब दासी ने कहा—'हे रानी सुनो। रात को राजा आएँगे, तब शरीर का बुरा-बेडौल रूप बनाये हुए रूठकर बैठो। २५। जब राजा तुम्हें मनाएँगे, तो (उनसे) अभिवचन माँग लो—राज्य भरत को दो और राम वन (में) जाए। २६।

पूर्वे जे वरदाननुं, तने वचन आप्युं राय,
ते मागी लेजे मोजथी, जे राम वनमां जाय । २७ ।
चौद वरस वन भोगवे, त्यां असुर करशे घात,
पछे राज निष्कंटक थशे, ते राख्य मनमां बात । २८ ।
तेवां वचन सुणी किंकरी केरां, केकै हरखी मन,
पछे अलंकार सहु तजीने, बेठी शोकभवन । २९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

शोकभवनमां सुन्दरी, तेनी साथे बेठी नार रे,
मुक्तकेश ने वेश कुत्सित, धरती दुःख अपार रे । ३० ।

पूर्वकाल में राजा ने जो दो वरदान देने का वचन दिया है, उसे मौज में माँग लो, जिससे राम वन में जाएगा । २७ । वह चौदह बरस वन (-वास) भोगेगा, वहाँ राक्षस उसका वध करेंगे । बाद में राज्य निष्कण्टक हो जाएगा । वह बात ध्यान में रखो'। २८ । दासी की वैसी बातें सुनकर कैकेयी मन में आनन्दित हो गयी । बाद में सब आभूषणों को उतारकर वह शोक-भवन में (जाकर) बैठ गयी । २९ ।
शोक-भवन में वह सुन्दरी (कैकेयी बैठ हुई) थी, उसके साथ वह नारी (मन्थरा भी) बैठ गयी । (कैकेयी) मुक्त-केश हो गयी—अर्थात् उसने बालों (के जूड़े) को खोलकर रखा (और) भद्दा वेश धारण किया । उसका दुख अपार था । ३० ।

* * *

अध्याय—६ (सुमंत का राम-मंदिर में आगमन)

राग सोरठी चौपाई

सुणो श्रोता एक चित्ते करी, दिवस गयो थई रजनी अनुसरी,
त्यारे राजा दशरथ तेणी वार, आव्या केकैना भवन मोझार । १ ।
दासी मंथराने पूछ्युं कथी, क्यां गई राणी ? देखाती नथी ?
त्यारे कुबजा बोली रीसे चढी, ओ पेली तमारी राणी पडी । २ ।

अध्याय—६ (सुमन्त का राम-मन्दिर में आगमन)

हे श्रोताओ, मन को एकाग्र करके सुनिए । दिवस बीत गया, [illegible] उसका अनुसरण करते हुए रात हो गयी । उस समय ऐसी स्थिति में रा[illegible] दशरथ कैकेयी के भवन में आ गये । १ । उन्होंने यह कहकर म[illegible]

राजा दशरथ आव्या पास, ईहां क्यम बेठी छे थईने उदास ?
मीठां बचने बोलावे राय, तेम तेम राणी अवळी थाय । ३ ।
हस्त स्पर्शवा मांड्यो जदा, राणीए कर तरछोड्यो तदा,
पछे रुदन करवा मांड्युं धणुं, न जाण्युं राये कपट ते तणुं । ४ ।
बोल साचुं तने मारा सम, तुं रिसाईने रडे छे क्यम ?
आंसुधाराए भींजे रुदे, रुदन करती राणी वदे । ५ ।
हुं नहीं बोलुं तमारी साथ, जाओ, शुं करवा आव्या नाथ ?
हेत तमारुं जाण्युं राय, तमने हुं आपीश हत्याय । ६ ।
त्यारे राजा कहे आवडुं कां करे? शा माटे दुःख मनमां धरे?
जो कोईए दूभवी होय तने, तो देउं दंड साचुं कहे मने । ७ ।
माग्य माग्य जे मागे तुंय, सत्य वचनथी आपुं हुंय,
हुं सरखो स्वामी तारे, नथी न्यून वस्तु मारे । ८ ।
वळती केकै बोली वचन, क्यम जाओ छो भूली राजन?
गया जुद्ध करवा वृषपर्वा साथ, हुं तम संग आवी'ती नाथ । ९ ।

से पूछा—'रानी कहाँ गयी ? वह तो नहीं दिखायी दे रही है ?' तब अप्रसन्न होकर उस कुब्जा ने कहा—'वह आपकी रानी वहाँ पड़ी हुई है ?'। २। (यह सुनकर) राजा दशरथ (कैकेयी के) पास आ गये (और बोले—) 'उदास होकर यहाँ कैसे बैठी हो ?' राजा जैसे-जैसे मीठी बातें करते, वैसे-वैसे रानी विपरीत (प्रतिकूल) होती जाती। ३। जब उन्होंने हाथ से उसे स्पर्श करना शुरू किया, तो रानी ने उस हाथ को तिरस्कार-पूर्वक हटा दिया। बाद में उसने बहुत रुदन करना शुरू किया। (तब तो) राजा ने उसके कपट को नहीं जाना था। ४। (यह देखकर) राजा ने कहा—'सच बोलो। तुम्हें मेरी सौगन्ध है। तुम रूठकर क्यों रो रही हो ? उसकी छाती आँसुओं की धारा से भीग रही थी। रानी रोती हुई बोली। ५। 'मैं आप के साथ नहीं बोलती। जाओ ! हे नाथ, तुम (यहाँ) क्या करने आ गये ? हे राजा, तुम्हारे प्रेम को मैं जान गयी ! मैं तुम्हें हत्या (का दोष लगा) दूँगी !'। ६। तब राजा ने कहा—'इतना ऐसा क्यों करती हो ? तुम मन में दुःख किसलिए रखती (करती) हो ? मुझे सच बताओ। जिस किसी ने तुम्हें दुःख दिया हो, उसे मैं दण्ड दूँगा। ७। माँग लो, माँग लो। जो तुम माँगोगी, मैं सचमुच अभिवचन-पूर्वक दूँगा। मुझ-जैसा तुम्हारा स्वामी (पति) है। मेरे लिए किसी भी वस्तु की कमी नहीं है'। ८। अनन्तर कैकेयी यह बात बोली—'हे राजा, तुम कैसे भूल गये ? हे नाथ, मैं न (जब) वृषपर्वा से युद्ध करने गये थे, तब मैं तुम्हारे साथ आयी

त्यारे आप्यां जे जुगल वचन, ते आज मुंने आपो राजन,
राजा कहे मागी ले सुखे, सत्य वचन ना नहि कहुं मुखे । १० ।
त्यारे केकै कहे वनमां जाय राम, चौद वरस लगी रहे ते ठाम,
मारा भरतने आपो राज, ए बे वचन मागुं छुं आज । ११ ।
एवुं वचन सुण्युं जेटले, व्याकुळ राय थया तेटले,
जेम वज्र वीजळी आवी अडे, जेम शिर पर परवत तूटी पडे । १२ ।
जेम वहेरे काळजुं करवत धार, एम दशरथने थयुं दुःख अपार,
प्रलय अग्नि केकैनुं वचन, बळी गयुं रायनुं आयुषवन । १३ ।
पडचा भूपति पृथ्वीमांह्य, आंखे आंसु धार चाली त्यांह्य,
अंग मोडीने वेठा थाय, खोळा पाथरी कहे छे राय । १४ ।
अरे प्रिये कांई बीजुं माग्य, ए विण आपुं धरी अनुराग,
मारो राम कोमळ सुकमार, शीद मोकले वन मोझार ? । १५ ।
नहि करे राम राजवहेवार, भरतने सोंपुं सहु घरबार,
ए राज भरत करे सर्वदा, राम घेर बेसी रहे सदा । १६ ।

थी । ९ । हे राजन्, तब आपने मुझे जो दो वचन दिये थे, वे मुझे आज दो ।' (इसपर) राजा ने कहा—'सुख से माँग लो । सचमुच वचन के लिए मैं मुख से ना नहीं कहूँगा' । १० । तब कैकेयी ने कहा—'राम वन में जाए, उस स्थान पर वह चौदह बरस तक रहे । (दूसरे) मेरे भरत को राज्य दो । ये दो वचन मैं आज माँग रही हूँ' । ११ । जैसे ही ऐसी बात सुनी, वैसे ही राजा व्याकुल हो गये । जैसे वज्र या बिजली आकर उन्हें छू गयी हो, अथवा जैसे पर्वत (उनके) सिर पर टूट पड़ा हो; अथवा आरे की धार से (किसी ने उनके) कलेजे को चीर डाला हो । वैसे राजा को (अनुभव होकर) अपार दुःख हो गया । कैकेयी की बात (मानो) प्रलयाग्नि थी, जिससे राजा का आयु-रूपी वन जल गया । १२-१३ । राजा भूमि पर गिरे । तब उनकी आँखों से अश्रुधारा चल रही थी । (फिर) राजा अंग को मोड़कर बैठ गये और दामन फैलाकर (यों) बोले । १४ । 'री प्रिये, इसके अतिरिक्त कुछ दूसरा माँग लो, प्रेमभाव धारण करके (अर्थात् प्रेम से) दूँगा । मेरा राम कोमल तथा सुकुमार है । उसे वन में क्यों भेजती हो ? । १५ । राम राज्य-व्यवहार (राजकाज) नहीं करेगा । मैं सब घरबार भरत को सौंप देता हूँ । भरत यह राज्य सर्वदा करेगा और राम घर में नित्य बैठा रहेगा । १६ । इस बालक को क्यों वन में भेज रही हो ! ...

ए बाळकने शीद काढे वन ? छे घणुं रामनुं कोमळ तन,
एम दीन वचन कह्यां राये जदा, तारे केकै घूरकी बोली तदा । १७ ।
शुं अधरमी हो राजन ? लागशे रविकुळमां लांछन,
सत्य वचन ते नहि पाळो सार, तो पूर्वज पडशे नरक मोझार । १८ ।
केकै वचन ते लाग्युं बाण, भेद्युं रुदे ज्यम जाये प्राण,
मूर्च्छित थईने पडिया राय, नेत्रथकी जळ चाल्युं जाय । १९ ।
एम स्त्रीवश राजा थया, वचनबंधमां आवी गया,
त्रियालोभी दुःख पामे घणुं, विवेक ज्ञान जाये ते तणुं । २० ।
वनिताने वश जो अनुसरे, तो सकळ पाप ते पुरुष करे,
स्त्री अविद्या परमाणज्यो, मूर्तिमंत व्याधि जाणज्यो । २१ ।
अचेत थई पडिया राजन, नव जाणे को बीजुं अन्य,
रजनी ते महादुःखमां गई, अरुण उदयनी वेळा थई । २२ ।
गुरु वसिष्ठ वहेला ऊठिया, सभामांहे सत्वर आविया,
सुमंतने कहे जा घरमांह्य, तेडी लाव्य राजाने आंह्य । २३ ।
सुमंत चाल्यो तेणी वार, आव्यो केकैना भोवन मोझार,
दशरथ राजा पडिया ज्यांह्य, सुमंत आवी ऊभो त्यांह्य । २४ ।

का शरीर तो बहुत कोमल है।' जब राजा ने ऐसे दीन वचन कहे, तब कैकेयी (उन्हें) घुड़ककर बोली । १७ । 'हे राजा, अधर्मी हो क्या ? (इससे) रविकुल में कलंक लगेगा। प्रतिज्ञा की बात सुचारु (रूप में) पालन नहीं करोगे, तो (तुम्हारे) पूर्वज नरक में पड़ जाएँगे । १८ । कैकेयी की वह बात उन्हें बाण-सी लगी। मानो उसने उनके हृदय को भेद दिया हो—मानो (उससे उनके) प्राण (निकल) गये हों। (फल-स्वरूप) राजा अचेतन होकर गिर पड़े। उनकी आँखों से (अश्रु-) जल बह रहा था । १९ । इस प्रकार राजा स्त्री के अधीन हो गये। वे वचन के बन्धन में आ (फँस) गये। स्त्री का लोभी बहुत दुःख को प्राप्त होता है, उसका विवेक, ज्ञान (नष्ट हो) जाता है । २० । यदि स्त्री के वश होकर (कोई) उसका अनुसरण करे, तो वह पुरुष समस्त पाप कर सकता है। इसे सत्य मानो कि स्त्री अविद्या है। उसे मूर्तिमती व्याधि समझो । २१ । राजा अचेत होकर पड़ गये। यह (बात) दूसरा कोई जान नहीं पाया था। रात तो बड़े दुःख में बीत गयी और अरुणोदय का समय हो गया । २२ । गुरु वसिष्ठ झट से उठ गये और शीघ्रता से (राज-)सभा में आ गये। उन्होंने सुमन्त से कहा—'घर में जाओ और राजा को बुलाकर यहाँ लाओ'। २३ । उस समय सुमन्त मैं नहि

प्रधाने चरण वंद्या नृप तणा, दीठा रायने दुःखिया घणा,
विकल वेशे मूके निःश्वास, नेत्रे जळ अति वदन उदास । २५ ।
मंत्री बोल्यो करी विनति, सभा मांह्य चालो भूपति,
सरव साहित्य तत्पर कर्युं आज, तमने बोलावे गुरु महाराज । २६ ।
वचन सुमन्त तणां सांभळी, राये रडवा मांड्युं वळी,
अरे सुमन्त, सुण कहुं आ दिश, मारुं मरण आव्युं छे शीश । २७ ।
ते माटे उतावळो जई आव्य, तुं अहीं रामने तेडी लाव्य,
सुणी रायनां शोकवचन, सुमंतने दव लाग्यो तन । २८ ।
पड्यो त्रास मुख ऊडी गयुं, नव जाणे रायने शुं दुःख थयुं,
चिंतातुर थई मंत्री एह, रामधाम भणी चाल्यो तेह । २९ ।
जेम कळाहीन ग्रहणे रवि थाय, एम थईने निस्तेज सुमंत जाय,
संसारताप तपियो जन, जेम आवे मुमुक्षु संतसदन । ३० ।

चल दिये और कैकेयी के भवन में आ गये । जहाँ राजा दशरथ पड़े हुए थे, वहाँ सुमन्त आकर खड़े रह गये । २४ । मंत्री (सुमन्त) ने राजा के चरणों को प्रणाम किया, राजा को बहुत दुखी देखा । (उन्हें दिखायी दिया कि) वे व्याकुल रूप में आह भर रहे हैं, आँखों में पानी है और मुख उदास है । २५ । मंत्री ने विनती करते हुए कहा—'हे राजा, सभा में चलिए । आज गुरु महाराज ने समस्त सामग्री सज्ज की है और वे आपको बुला रहे हैं' । २६ । सुमन्त की बातें सुनने के बाद राजा ने रोना शुरू किया । वे बोले—'हे सुमन्त, सुनो, मैं कहता हूँ—यहाँ मेरी मौत सिर पर आ गयी है । २७ । इसलिए, तुम शीघ्रता-पूर्वक (राम के यहाँ) हो आओ, तुम राम को यहाँ बुला लाओ ।' राजा की ये शोक-युक्त बातें सुनकर सुमन्त के शरीर में दुख-रूपी दवाग्नि लग गयी । २८ । उन्हें भय (अनुभव) हुआ, मुख (का रंग) उड़ गया । वे नहीं जानते थे कि राजा को क्या दुख हो गया । तब (वे) मंत्री चिन्तातुर होकर राम के भवन की ओर चल दिये । २९ । जैसे ग्रहण-काल में सूर्य कला-हीन, अर्थात् निःस्तेज हो जाता है, वैसे निःस्तेज होकर सुमन्त (वहाँ से) जा रहे थे । वे श्रीराम के यहाँ उस प्रकार आ रहे थे, जिस प्रकार संसार के ताप से तप्त मनुष्य मुमुक्षु के रूप में किसी सन्त के घर आ जाता हो । ३० ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

संतसदन आवे मुमुक्षु, आत्मप्राप्ति-सुख काज रे,
एम सुमंत आव्यो उतावळो, ज्यां बिराजे श्रीरघुराज रे। ३१।

जिस प्रकार कोई मुमुक्षु आत्म-सुख की प्राप्ति के लिए किसी सन्त के सदन आ जाता हो, उस प्रकार सुमन्ता शीघ्रता-पूर्वक वहाँ गये, जहाँ श्रीराम विराजमान थे। ३१।

* * *

अध्याय—७ (कौसल्या का शोक)

राग धनाश्री

रंगमहेलमां पोढ्या राम, सीता सेवतां पूरणकाम,
ब्राह्म मुहूरतमां रघुवीर, ऊठ्या निद्रा तजी रणधीर। १।
कर्युं स्नान दान जप होम, द्विज धेनु पूज्या पति-व्योम,
एम करतां थयुं छे प्रभात, आवी नमिया लक्ष्मण भ्रात। २।
पहेर्यां वस्त्र आभूषण सार, कुंडळ मुगट तिलक झळकार,
बेठा आसन थईने स्वस्थ, सुमित्रीनी ग्रीवे मूकी हस्त। ३।
एटले त्यांहां आव्यो सुमंत, मुख करमायुं महा दुःखवंत,
आवी नमियो ते रामने पाय, हसी बोल्या त्यारे रघुराय। ४।

अध्याय—७ (कौसल्या का शोक)

श्रीराम रंगभवन में लेटे (हुए) थे। सीता उन पूर्णकाम (स्वामी) क सेवा कर रही थी। रणधीर रघुवीर श्रीराम ब्राह्म मुहूर्त पर निद्रा का त्याग करके उठ गये। १। उन्होंने स्नान, दान, जप और हवन किया; ब्राह्मण, गाय और व्योमपति सूर्य का पूजन किया। (उनके) ऐसा करते हुए सबेरा हो गया, तो बन्धु लक्ष्मण ने आकर उनको प्रणाम किया। २। उन्होंने सुन्दर वस्त्र तथा आभूषण, कुण्डल तथा मुकुट पहने थे। उनका लगाया तिलक झलक रहा था। लक्ष्मण के गले में हाथ डाले हुए, वे स्वस्थ-मन होकर आसन पर विराजमान हो गये। ३। इतने में वहाँ सुमन्त आये। उनका मुख म्लान हुआ था, वे अति दुखी (दिखायी दे रहे) थे। उन्होंने आकर राम के चरणों को प्रणाम किया। तब राम हँसकर बोले। ४। 'हे सुख-राशि सुमन्त, आइए। आप मन में उदास क्यों हो गये हैं? आप अधिकारी व्यक्ति, नहीं

आवो सुमंत सुखना राशि, थया छो क्यम चित्त उदासी ?
अधिकारी छो मुख्य प्रधान, मुख करमायुं कमळ समान । ५ ।
तमो ज्येष्ठ बंधु सम म्हारे, शी व्यथा प्रगटी छे तमारे ?
रामनां सुणी हेतवचन, थयो गद्‌गद आंसु लोचन । ६ ।
कर जोडीने बोल्यो सुमंत, स्थिर मन करी धीरजवंत,
केकईने मंदिर छे राय, तमने तेडे छे त्यां रघुराय । ७ ।
सुणी राम ऊठ्या तत्काळ, साथे मंत्री सुमित्राबाळ,
चाल्या भूषण मंडित तन, लाजे कोटिक मीनकेतन । ८ ।
नीरखे लोक सहु भगवान, नेत्रे करतां स्वरूपनुं पान,
आज मंगळ दिन विशेक, थशे रामने राज्याभिषेक । ९ ।
आपणा भाग्य तणो नहि पार, एम वातो करे नरनार,
एवे आव्या केकईने घेर, जुए तो थई विपरीत पेर । १० ।
राम साथ सुमित्री सुमंत, दीठा रायने महा दुःखवंत,
पिताने पाये लाग्या राम, कर जोडी ऊभा अभिराम । ११ ।
स्फुंद स्फुंद रडे छे राय, नेत्रथी जळ चाल्युं जाय,
जाणे मदगळ पडियो कूप, पासे बेठी सिंहणी रूप । १२ ।

मुख्य मन्त्री हैं। आपका मुख (म्लान) कमल के समान मुरझा गया है। ५। आप हमारे (लिए) ज्येष्ठ बन्धु के समान हैं। आपके लिए क्या व्यथा उत्पन्न हो गयी है ?' राम के प्रेम-भरे वचन सुनकर वे गद्‌गद हो गये। उनकी आँखों में आँसू भर आये। ६। धैर्यवान् सुमन्त ने मन को स्थिर करके हाथ जोड़कर कहा--' हे रघुराज, राजा कैकेयी के मन्दिर में हैं। आपको वहाँ बुलाया है'। ७। यह सुनकर श्रीराम तत्काल उठ गये। साथ में मंत्री सुमन्त तथा लक्ष्मण थे। आभूषणों से मण्डित शरीरधारी वे जब चले, तो (उन्हें देखकर) करोड़ों कामदेव लज्जित हो रहे थे। ८। सब लोग भगवान् राम को निहारते थे और आँखों से उनकी सुन्दरता का पान करते थे। (वे कहते—) 'आज विशेष मंगल दिन है; राम का राज्याभिषेक होगा। ९। (अब) अपने भाग्य का कोई पार नही है'--पुरुष और नारियाँ ऐसी बातें कर रहे थे। इस प्रकार वे कैकेयी के भवन आ गये, देखा तो विपरीत बात हो गयी थी। १०। लक्ष्मण और सुमन्त के साथ राम ने राजा को अत्यधिक दुखी देखा। (फिर) अभिराम-राम पिताजी के पाँव लगे और हाथ जोड़कर खड़े रहे। ११। राजा फूट-फूटकर रो रहे थे; उनकी आँखों से (अश्रु-) जल वह रहा था। मानो (मदोन्मत्त) हाथी कुएँ में गि

त्यारे राम केकई पूछे, कहो मात आ कारण शुं छे ?
रायने शी व्यथा थई मन ? क्यम भूमि कर्युं छे शयन ? । १३ ।
बोली केकई सांभळ राम, अन्य दुःख नथी आ ठाम,
मने आप्यां 'तां बे वरदान, राय पासे लीधां मागी मान । १४ ।
राम चौद वरस जाय वन, भरत भोगवे राज्यासन,
में माग्यां निशाए वचन, सुणी खेद पाम्या छे राजन । १५ ।
नथी बीजुं दुःख लगार, माटे पडिया छे पृथ्वी मोझार,
राम कहे सुणो माता मारी, मारे पाळवी आज्ञा तमारी । १६ ।
मारो भरत करे जो राज, तो हुं प्रसन्न घणो छुं आज,
आप्युं वरदान तमने राजन, मारे पाळवुं सत्य वचन । १७ ।
एवुं सांभळी लक्ष्मण वीर, क्रोधवंत थया रणधीर,
करी विकट भृकुटि कपोल, फरके अधर रीसे राताचोळ । १८ ।
शेषनागनो अवतार जेह, तेणे नव सहेवायुं तेह,
जाणे केकईने हवडां मारुं, तेणे अघटित कर्म विचार्युं । १९ ।
राम-आज्ञा विना न बोलाय, माटे क्रोध थंभाव्यो काय,
एवे आव्या त्यां गुरुदेव, सुण्युं सकळ वृत्तांत ज एव । २० ।

गया हो और कैकेयी सिंहनी-स्वरूप पास में बैठी हो । १२ । तब राम ने कैकेयी से पूछा--' कहो माँ, इसका क्या कारण है ? राजा को मन में क्या व्यथा हुई ? वे भूमि पर शयन क्यों कर रहे हैं ? ' । १३ । (इसपर) कैकेयी बोली--' सुनो राम, इस स्थान पर कोई अन्य दुख नहीं है । मान लो, (राजा ने) मुझे दो वरदान दिये थे । राजा से वे मैंने माँग लिये । १४ । राम चौदह बरस (तक) वन में जाए और भरत राजगद्दी का भोग करे । मैंने रात में ये वचन माँग लिये । उन्हें सुनकर राजा दुख को प्राप्त हो गए हैं । १५ । इसलिए वे भूमि पर पड़ गये हैं । ' उन्हें कोई दूसरा अल्प-सा (भी) दुःख नही है । (इसपर) राम ने कहा-- ' मेरी मैया, मुझे तुम्हारी आज्ञा का पालन करना है । १६ । मेरा भरत यदि राज करे, तो मैं आज बहुत प्रसन्न हूँ । राजा ने तुम्हें वरदान दिया है, तो सचमुच मुझे उसका पालन करना है ' । १७ । ऐसा सुनकर रणधीर वीर लक्ष्मण गुस्सा हो गये । उन्होंने भौंहें टेढ़ी कीं । उनके गाल और होंठ क्रोध से लाल-लाल होकर फड़क रहे थे । १८ । जो शेष-नाग का अवतार थे, उन (लक्ष्मण) से यह सहन नहीं हुआ । उन्हें [illegible]--कैकेयी को अभी मार डालूँ--उन्होंने ऐसा अघटित (अपूर्व) कर्म मैं नह। १९ । परन्तु बिना राम की आज्ञा के वे नहीं बोलते । इसलिए

बेठा मुनिवर शीश डोलावी, विचार्युं मन विपरीत भावी,
अरे दैव तणी गति मोटी ! आपणी मति सरवे खोटी । २१ ।
नम्या राम गुरुने पाय, कर जोडी बोल्या रघुराय,
आपो आज्ञा हुं जाउं वन, आंसु आव्यां मुनिने लोचन । २२ ।
गुरु पिता ने केकई मात, त्रणेने नमिया जुग-तात,
आव्या कौशल्याने मंदिर, राम साथे लक्ष्मण वीर । २३ ।
छे रामना मनमां शूर, मारवा छे अनेक असुर,
माटे मनमां छे आनंद, आव्या कौशल्याघर नभचंद । २४ ।
जाय अमृत लेवा सुपर्ण, जेम वंदे विनता चर्ण,
एम माताचरणे राम, आवी नमिया पूरणकाम । २५ ।
कौशल्याने कह्युं वर्तमान, जे केकईए माग्युं वरदान,
पितानुं पाळवाने वचन, माता आज्ञा आपो जाउं वन । २६ ।

उन्होंने क्रोध को रोक लिया । इतने में वहाँ गुरुदेव (वसिष्ठ) आ गये । उन्होंने समस्त समाचार सुन लिया । २० । मुनिवर मस्तक को हिलाते हुए बैठ गये । उन्होंने मन में सोचा कि भावी विपरीत है । अरे ! दैव की गति बड़ी (विपरीत) है, जब कि अपनी मति पूर्णतः खोटी है । २१ । (अनन्तर) रघुराज राम ने गुरुजी के चरणों को प्रणाम किया और हाथ जोड़कर बोले--'आप आज्ञा दीजिए, तो मैं वन जाता हूँ ।' (यह सुनकर) गुरुजी की आँखों में आँसू आ गए । २२ । (फिर) गुरु, पिता और कैकेयी माता--तीनों को जगत्पिता (श्रीराम) ने नमस्कार किया और वे कौसल्या के भवन में आ गये । राम के साथ बन्धु लक्ष्मण थे । २३ । श्रीराम के मन में उत्साह था । उन्हें अनेक राक्षसों को मारना था । इसलिए उनके मन में उत्साह था । (ऐसी स्थिति में) वे आकाश के चन्द्र-से कौसल्या के भवन में आ गये । २४ । अमृत लाने के लिए जब सुपर्ण गरुड़ चला गया, ★ तो उसने अपनी माता विनता के चरणों का जैसे वन्दन किया, वैसे ही पूर्णकाम राम ने आकर माता (कौसल्या) के चरणों को नमस्कार किया । २५ । कैकेयी ने जो वरदान माँग लिया था, उस सम्बन्ध में समाचार श्रीराम ने कौसल्या से कहा (और कहा)— 'हे माँ, आज्ञा दो, मैं पिताजी के वचन का पालन करने के लिए वन

★ टिप्पणी—कद्रू और विनता सपत्नियाँ थीं । किसी शाप के कारण विनता कद्रू की दासी हो गयी थी । विनता के पुत्र सुपर्ण अर्थात् गरुड़ ने दासता से मुक्ति का उपाय कद्रू से पूछा, तो उसने अमृत की माँग की । अमृत देवलोक में था । गरुड़ माता से अनुमति लेकर उसे प्रणाम करके इस अद्भुत कार्य को सफल करने के [illegible] से चल दिया । अनेक आपत्तियों का सामना करते हुए उसने अमृत प्राप्त किया

रामनां सुणी एवां वचन, धीकी ऊठ्यो दावानळ तन,
मूरछा खाई पडियां मात, शुद्धि गई थयां पृथ्वीपात । २७ ।
वागे वज्रनो घा विपरीत, पडे शिर तूटी आभ अनीत,
जाय लोभियानुं सहु धन, जेम ओचिंतो फोडे लोचन । २८ ।
जेम सहस्र वींछीनो डंख, एम दुःख थयुं आडे अंक,
सुकायो कंठ नव बोलाय, नेत्रेथी जळ चाल्युं जाय । २९ ।
वागी अवधपुरीमां हाक, रडे प्रजा सहु चडी चाक,
सुण्युं रामने वन ते काळ, नग्रमांहे पडी हडताळ । ३० ।
जोई मातनुं दुःख अपार, भरायुं रामनेत्रमां वार,
पासे बेठा श्रीभगवान, कौशल्याने कर्यां सावधान । ३१ ।
माताए जोयुं रामनुं मुख, मनमां अति पाम्यां दुःख,
मारा श्यामसलूणा तन, बाप ! ए शुं बोल्यो वचन ? । ३२ ।
रंगमां भंग कोणे कीधो ? मारो हरख हरीने लीधो ।
हुताशन प्रगट्यो मुज तनमां, तुंने नहि जावा देउं वनमां । ३३ ।

जाऊँगा' । २६ । श्रीराम की ऐसी बातें सुनते ही उसके शरीर में दावानल धधक उठा । माता (कौसल्या) मूर्च्छित होकर पड़ गयी; उसकी सुध-बुध खो गयी, तो वह पृथ्वी पर गिर पड़ी । २७ । मानो, वज्र का विपरीत घाव लग गया हो; मानो सिर पर आकाश टूट पड़ा हो; मानो लोभी का समस्त धन (लुट) गया हो; मानो किसी ने सहसा आँखों को फोड़ डाला हो । २८ । जैसे सहस्रों विच्छुओं का डंक हुआ हो, वैसे (उन्हें) दुख हुआ, जिसकी कि कोई सीमा न थी । उसका गला सूख गया; वह नहीं बोलती थी । उसकी आँखों से (अश्रु-) जल बह रहा था । २९ । अयोध्यापुरी में कोलाहल मच गया । चक्कर खाकर समस्त प्रजा रो रही थी । उस समय श्रीराम की वह बात सुनकर नगर में हड़ताल हो गयी । ३० । माता के अपार दुःख को देखते ही भगवान् श्रीराम की आँखों में पानी भर आया । (फिर) वे कौसल्या के पास बैठ गये और उन्होंने उन्हें सचेत कर लिया । ३१ । जब माता कौसल्या ने राम के मुख को देखा, तो वह मन में अति दुःख को प्राप्त हो गयी । (उसने कहा)—' मेरे श्यामसलोने पुत्र, हे तात, तुम ने यह क्या बात कही ? । ३२ । (यह) रंग में भंग किसने किया ? मेरा आनन्द किसने छीन लिया ? मेरी देह में यज्ञ की-सी आग प्रकट (उप्पन्न) हो गयी है । मैं तुम्हें वन में नहीं जाने दूँगी । ३३ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

वनमां तुजने नहि जावा देउं, लागे कोमळ अंगे ताप रे,
एवां वचन कहीने कौशल्याजी, करवा लाग्यां विलाप रे। ३४।

मै तुम्हें वन में नहीं जाने दूंगी। तुम्हारे कोमल अंग में ताप लग जाएगा।' ऐसी बाते कहकर कौसल्या विलाप करने लगी। ३४।

* * *

अध्याय—८ (कौशल्या-श्रीराम-संवाद)

राग गोडी

त्यारे माता कौशल्याजी बोलियां हो वाला रे,
तुंने नहि जावा दउं वन, कुंवर काला रे। १।
घणी कोमळ छे तारी देहडी, हो वाला रे,
मारी लाडकवाया तन, कुंवर काला रे। २।
तने गुप्त राखुं मारी वाडीमां, हो वाला रे,
बीजुं अवर न जाणे, ज्यम कुंवर काला रे। ३।
में तो तुज विण रहेवाये नहि, हो वाला रे,
मुंने मूकीने जाशो क्यम ? कुंवर काला रे। ४।
पाये कंकर कंटक खूचशे, हो वाला रे,
नहि चलाये वसमी वाट, कुंवर काला रे। ५।
वेठवी शीत आतप ने वृषा, हो वाला रे,
क्यम ओळंगशो गिरि घाट ? कुंवर काला रे। ६।

अध्याय—८ (कौसल्या-श्रीराम-संवाद)

तब माता कौसल्या बोलीं—'रे प्यारे (बच्चे), रे नासमझ कुँवर, मैं तुझे वन नहीं जाने दूँगी। १। रे प्यारे (बच्चे), मेरे लाड़ले प्यारे पुत्र, अबोध कुँवर, तेरी देह तो बहुत कोमल है। २। रे बच्चे, रे अबोध कुँवर, तुझे मैं उद्यान में गुप्त (रूप में छिपाकर) रखती हूँ, जैसे (जिससे कि) तुझे दूसरा कोई नही जान पाए। ३। रे (बच्चे), मुझसे तो तेरे विना नहीं रहा जाता। हे अबोध कुँवर, मुझे छोड़कर तू कैसे जाएगा ? ।४। रे प्यारे, तेरे पाँवों में कंकड़ और काँटे चुभेंगे। रे नासमझ कुँवर, तुझसे दुर्गम वाट में नहीं चला जाएगा। ५। रे प्यारे, तुझसे ठण्ड, धूप तथा वर्षा सहन नहीं होगी। रे नासमझ कुँवर, तू

व्याघ्र सिंह वनमां घणा, हो वाला रे,
सर्प सौहर ने वृक रक्ष, कुंवर काला रे। ७ ।
रजनीचर साथे जुद्ध थशे, हो वाला रे,
कोण करशे तमारी पक्ष ? कुंवर काला रे। ८ ।
वनमां वल्कल क्यम पहेरशो ? हो वाला रे,
तजी वस्त्र आभूषण सार, कुंवर काला रे। ९ ।
अहीं जमता भोजन भावतां, हो वाला रे,
क्यम करशो वनफळ आहार ? कुंवर काला रे। १० ।
तजी सज्जा भमरपलंगनी, हो वाला रे,
क्यम पोढशो पृथ्वीमांह्य ? हो काला रे। ११ ।
तारे बालपणमां वन शुं ? हो वाला रे,
मारुं वचन मानी रहो आंह्य, कुंवर काला रे। १२ ।
मारे किया जनमनां करम हशे ? हो वाला रे,
ते आवीने नडियां आज, कुंवर काला रे। १३ ।
ते दैवे रंगमां भंग कर्यो, हो वाला रे,
कर्युं वन तजीने राज, कुंवर काला रे। १४ ।
वात सांभळी वंन जवा तणी, हो वाला रे,
वहेरे करवत काळजामांह्य, कुंवर काला रे। १५ ।

पर्वत तथा घाट कैसे (लाँघकर) पार करेगा ? । ६ । रे प्यारे, रे अबोध कुमार, वन में बहुत बाघ, सिंह, साँप, सूअर और भेड़िये तथा रीछ होते हैं । ७ । रे प्यारे, (वहाँ) राक्षसों से युद्ध होगा । रे अबोध कुँवर, (वहाँ) तेरी सहायता कौन करेगा ? । ८ । रे प्यारे, रे अबोध कुँवर, सुन्दर वस्त्रों और आभूषणों को त्याग कर तू वन में वल्कल कैसे पहनेगा ? । ९ । रे लाड़ले, रे नासमझ कुँवर,(यहाँ तो)तू (मन-)भावन भोजन करता है, (वहाँ) तू वन्यफलों को कैसे भक्षण करेगा ? । १० । रे प्यारे, रे अबोध कुमार, (भ्रमरों के पलंग-की-सी-अर्थात् कमल-) फूल-सी (मृदु) शय्या का त्याग करके तू (वहाँ) भूमि पर कैसे लेटेगा ? । ११ । रे प्यारे, तुझे बचपन में वन (-वास) कैसे ? रे अबोध कुमार, मेरी बात मानकर यहाँ रह जा । १२ । रे प्यारे, रे अबोध कुमार, मेरे किस जन्म के वे कर्म होंगे जिन्होंने आकर आज (मुझे) तंग किया ? । १३ । रे प्यारे, रे अबोध कुमार, उस दैव ने रंग में भंग किया, जिससे राज्य का त्याग करके तूने वन(-वास) किया । १४ । रे प्यारे, रे अबोध कुमार, मैंने (तेरे) वन जाने की बात सुनी, तो (मुझे जान पड़ा, मेरे)

दव लाग्यो मारा अंगमां, हो वाला रे,
हावे नासीने जईए क्यांय कुंवर काला रे। १६।
मारो पापी प्राण जतो नथी, हो वाला रे,
हशे कोण करमना भोग, कुंवर काला रे। १७।
एम कहीने रुए रुदेफाट ते, हो वाला रे,
क्यम सहेवाय पुत्र वियोग ? कुंवर काला रे। १८।
एवां वचन सुणी बोल्या रामजी, हो माता रे,
तमे धीरज राखो मन, सुणो सुखदाता रे। १९।
पाछो आवीश थोडा दिवसमां, हो माता रे,
आपो आज्ञा हुं जाउं वन, सुणो सुखदाता रे। २०।
मारे आज्ञा पितानी पाळवी, हो माता रे,
रहेवुं चौद वरस वनमांह्य, सुणो सुखदाता रे। २१।
अवध वीत्या पछे नहि रहुं, हो माता रे,
वहेलो आवीश निज पुरमांह्य, सुणो सुखदाता रे। २२।
नव वचन मिथ्या करुं तातनुं, हो माता रे,
जो पश्चिम ऊगे सूर, सुणो सुखदाता रे। २३।
जेणे आज्ञा ओळंगी मा-बापनी, हो माता रे,
ते पापी पुत्र असुर, सुणो सुखदाता रे। २४।

कलेजे में आरा चीर रहा है। १५। रे प्यारे, (मुझे जान पड़ा कि) मेरे अंग में दवाग्नि लग गयी है। रे नासमझ कुँवर, अब हम भागकर कहाँ जा सकते हैं ? । १६। रे प्यारे, मेरे प्राण तो (निकलकर) नहीं जा रहे है ? रे नासमझ कुँवर, किन कर्मो के ये भोग है ? । १७। रे लाड़ले, रे अबोध कुँवर, पुत्र-वियोग कैसे सहा जाए ? ' ऐसा कहते हुए वह कलेजा फाड़कर रोने लगी। १८। ऐसी बातें सुनकर श्रीराम बोले—' हे माता, सुनो सुख-दायिनी (माता); तुम मन में धीरज रखो। १९। हे माता, थोड़े दिन में मैं लौट आऊँगा। हे सुखदात्री, सुनो, (मुझे) आज्ञा दो, मैं वन जाता हूँ। २०। हे माता, मुझे पिता की आज्ञा का पालन करना है। हे सुखदात्री, सुनो, मैं वन में चौदह बरस (तक) रहूँगा। २१। हे माता, अवधि के बीतने के पश्चात् (वहाँ वन में) नहीं रहूँगा। हे सुखदात्री, सुनो, मैं शीघ्र अपने नगर में आऊँग। २२। हे माता, हे सुखदात्री, सुनो, यदि सूर्य पश्चिम में उदित हो आए, तो भी मैं पिता के वचन को झूठा नहीं करूँगा। २३। हे माता, हे सुखदात्री सुनो, जिसने माता-पिता की आज्ञा का उल्लंघन किया,

जे मातपिता गुरुदेवनुं, हो माता रे,
नव पाळे आज्ञावचन, सुणो सुखदाता रे। २५।
ते प्राणी जीवतो मूओ जाणजो, हो माता रे,
अजा कंठे जेवो स्तन, सुणो सुखदाता रे। २६।
तेनो मिथ्या धरम सहु जाणजो, हो माता रे,
जेवुं कपटी केरुं ध्यान, सुणो सुखदाता रे। २७।
जेम अदातानुं ऊंचुं मंदिर, हो माता रे,
जेम लोभियानुं तत्त्वज्ञान, सुणो सुखदाता रे। २८।
एम मनुष्यदेह तेनो मिथ्या, हो माता रे,
जेवो उदरमांहे कृमीजंत, सुणो सुखदाता रे। २९।
जेणे मातपितानी आज्ञा पाळी, हो माता रे,
शुभ पुत्र ते सुकृतवंत, सुणो सुखदाता रे। ३०।
ते माटे में रहेवाय नहि, हो माता रे,
जाय तातनुं सत्य वचन, सुणो सुखदाता रे। ३१।
हावे आशिष देई आज्ञा आपो, हो माता रे,
निश्चे जावुं मारे वन, सुणो सुखदाता रे। ३२।

(समझो) वह पुत्र पापी तथा असुर है। २४। हे माता, हे सुखदायिनी, सुनो, जो माता, पिता (तथा) गुरुदेव के वचन का पालन नहीं करता, उस प्राणी को जीवित होते हुए भी मृत समझो। हे माता, हे सुखदात्री, सुनो, वह बकरी के कंठ में स्थित स्तन जैसा (निरर्थक) होता है। २५-२६। हे माता, हे सुखदायिनी, सुनो, जैसे कपटी व्यक्ति का ध्यान व्यर्थ होता है, वैसे ही उसके सब धर्म को झूठा समझो। २७। हे माता, हे सुखदायिनी, सुनो, जिस प्रकार अदाता अर्थात् कृपण का ऊँचा (बड़ा) प्रासाद, अथवा जिस प्रकार लोभी मनुष्य का तत्त्व-(दर्शन-सम्बन्ध)-ज्ञान व्यर्थ होता है, जैसे पेट में कृमी-जन्तु होते हैं, उसी प्रकार, हे माता हे सुखदात्री, सुनो, उस मनुष्य की देह व्यर्थ होती है। २८-२९। हे माता, हे सुखदात्री, सुनो, जिसने माता-पिता की आज्ञा का पालन किया वह पुत्र शुभ एवं सुकृतवान् (पुण्यवान्) है। ३०। इसलिए हे माता, हे सुखदायियी, सुनो, मुझसे नहीं रहा जाता। ३१। हे माता, हे सुखदायी, सुनो, अब आशीर्वाद देकर मुझे आज्ञा दो। मैं निश्चय-पूर्वक वन में जाता हूँ। ३२।

वलण (तर्ज़ बदल कर)

वनमां मारे निश्चे जावुं, आज्ञा आपो मात रे,
एवुं सांभळी कौशल्याए करवा, मांड्यो आंसुपात रे । ३३ ।

मुझे वन में निश्चय ही जाना है । हे माता, मुझे आज्ञा दो ।' ऐसा सुनकर, कौसल्या ने आँसू बहाना आरम्भ किया । ३३ ।

* * *

अध्याय—९ (कौशल्या को राम द्वारा आश्वासन देना)

राग परजियो

त्यारे कौशल्याए निश्चे जाण्युं, जे जशे वनमां राम,
निःश्वास मूके अधर सूके, चित्त रह्युं नहि ठाम । १ ।
हो पुत्र मुजने मूकीने, क्यम जाय छे तुं वन ?
अति वेदना वाटे हशे, घणुं कोमळ छे तुज तन । २ ।
पाणी लागे परदेशनां, जाण्युं माताए मन साथ,
माटे औषधिमणि बांधियो, रघुवीर केरे हाथ । ३ ।
दृष्टिए दोरो बांधियो, विष जंतु न करे घात,
ते माटे औषधि-महोरा बांध्या, जतन करीने मात । ४ ।
ए पूरणब्रह्म अखंड छे, अविच्छेद्य अज अविनाश,
पण मात वात्सल्यना वडे, घणो प्रेम जणवे तास । ५ ।

अध्याय—९ (कौशल्या को राम द्वारा आश्वासन देना)

तव कौसल्या ने निश्चय-पूर्वक जान लिया कि (अब) राम वन में जाएगा । वह आह भर रही थी, उसके होंठ सूख गये । उसका मन स्थिर नहीं रह सका । १ । उसने कहा—' हे पुत्र, मुझे छोड़कर तू वन में कैसे जा रहा है ? तेरा शरीर बहुत कोमल है, (अतः) तुझे मार्ग में बहुत वेदना होगी ' । २ । परदेश के जलवायु का उसके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव होगा—यह माता ने मन में जान लिया, तो उसने श्रीराम के हाथ में औषधि-युक्त मणि बाँध दी । ३ । बुरी दृष्टि से बचाने के लिए मंत्र-सिद्ध डोरा बाँध दिया । विषैले जन्तु उनका नाश न करें, इस हेतु से माता ने यत्न-पूर्वक औषधियों से युक्त कवच बाँध दिये । ४ । वे तो अखण्ड, अविच्छेद्य, अजन्मा तथा अविनाशी ब्रह्म हैं । परन्तु (उस समय) वात्सल्य के योग से माता में उनके प्रति बहुत प्रेम उत्पन्न हुआ है । ५ । अनन्तर उस समय माता ने (पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश—इन)

पछे जनुनीए पंचभूतनी, करी प्रार्थना ते काळ,
सहु मळी मारा रामनी, करजो सदा संभाळ। ६ ।
इंदिरापति उमियापति, शचिपति प्रजापति देव,
मुनि सप्त अष्ट वसु सदा, तमो रक्षा करजो एव। ७ ।
नव ग्रह दश दिग्पाळ जे, रुद्र एकादश जाण,
रवि द्वादश रक्षा करजो, पितृ मरुत प्रमाण। ८ ।
यक्षगण गंधर्व किन्नर, सिद्ध चारण जेह,
सहु देव ने उपदेव करमज, देव कहिये तेह। ९ ।
सहु चराचरना जीव जे, जळ सरित सिंधु वन,
वळी अध उरध ने मध्यमां, राखजो प्राणजीवन। १० ।
एम स्तुति कीधी सरबनी, कौशल्याए तेणी वार,
मुखवचन कहेतां थाय गद्गद, नेत्र आंसुधार। ११ ।

पाँचों महाभूतों से प्रार्थना की—सब मिलकर मेरे राम की सदा रक्षा करो। ६। हे इन्दिरापति विष्णु, हे उमापति शिवजी, हे शचीपति इन्द्र, हे प्रजापति ब्रह्मा, हे देवताओ, हे सप्तर्षियो[1], हे अष्ट वसुओ[2], तुम निश्चय ही (मेरे राम की) रक्षा करो। ७। हे नव ग्रहो[3], हे दस दिक्पालो[4], हे ज्ञानी ग्यारह रुद्रो[5], हे बारह रवियो[6], हे पिता मरुत्, तुम निश्चय ही (मेरे राम की) रक्षा करो। ८। जिनको देव कहना चाहिए, ऐसे हे यक्षगण, गंधर्वो, किन्नरो, सिद्धो, चारणो, सब देवो और उपदेवो तथा कर्मदेवो, चराचर सृष्टि के जीवो, तुम जल, नदी, समुद्र, वन, इनके अतिरिक्त अधस्, ऊर्ध्व और मध्य दिशाओं में (मेरे) जीवन के प्राण श्रीराम की रक्षा करो। ९-१०। कौसल्या ने उस समय सब की इस प्रकार स्तुति की। मुँह से ऐसी बात कहते हुए, वह गद्गद हो उठी और उसके नेत्रों से आँसुओं की धारा चल पड़ी। ११। जो

टिप्पणी—१ सप्तर्षि: कश्यप, अत्रि, भरद्वाज, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि और वसिष्ठ। अथवा: मरीचि, अत्रि, अंगिरस, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वसिष्ठ। २ अष्ट वसु: धर, ध्रुव, सोम, आप, अनिल, अनल, प्रत्यूष और प्रभास। अथवा: द्रोण, प्राण, ध्रुव, अर्क, अग्नि, दोष, वसु और विभावसु। ३ नव ग्रह: सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु। ४ दश दिक्पाल (दस दिशाओं के स्वामी तथा रक्षक): इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, सोम, ईशान, अनन्त और ब्रह्म। ५ ग्यारह रुद्र: रैवत, अज, भीम, भव, वाम, वृषाकपि, अजैकपाद, उग्र, अहिर्बुध्न्य, बहुरूप और महान्। अथवा: वीरभद्र, शम्भु, गिरीश, अजैकपाद, अहिर्बुध्न्य, पिनाकी, अपराजित, भुवनाधीश्वर, कपाली, स्थाणु और भव। ६ बारह रवि: विवस्वान्, अर्यमा, पूषन्, त्वष्टा, सविता, भग, धाता, विधाता, वरुण, मित्र, रुद्र और विष्णु।

आदि पुरुष अविनाश जे, स्थिति उदे कृत संहार,
ते रघुपतिने पुत्र जाणे, माताप्रेम अपार । १२ ।
वह्नि असुर कुळदहन कानन, मुनि मन मानसहंस,
अज्ञानतम छेदक दिवाकर, प्रणतपाळ प्रशंस । १३ ।
जे भक्तचातक तणा जळधर, अखिल पूरणकाम,
ब्रह्मांड कोटि रोम तन, त्रिश्वना आत्माराम । १४ ।
जेना कटाक्षे काळ कंपे, जे देव केरा देव,
ते कौशल्याना शोकजळमां बूडिया ततखेव । १५ ।
जद्यपि ए भगवान छे, पण भक्तवत्सल ईश,
करुणावचन सुणी मातानां, गद्गद थया जुगदीश । १६ ।
रुदे भरायुं रामनुं, जोई मातानुं कल्पांत,
ते समाने शोके करी, ध्रूजी धरा दुःखवंत । १७ ।
त्यारे वीर लक्ष्मण बोलिया, केकई उपर रीस,
महाराज आज्ञा आपो मुजने, छेदुं एनुं शीश । १८ ।
ज्यारे तमो वनमां जशो, त्यारे पिता तजशे प्राण,
निर्मळ बंधु भरत ते, नहि करे राज्य प्रमाण । १९ ।

(वस्तुतः) आदिपुरुष, अविनाशी है, जो (ब्रह्माण्ड की) उत्पत्ति, स्थिति और सहार करनेवाले हैं, उन श्रीराम को कौसल्या पुत्र समझती है। उसका मातृप्रेम अपार है। १२। वे असुरों के कुल रूपी वन के लिए अग्नि हैं; मुनियों के मानस रूपी सरोवर में (विहार करनेवाले) हंस हैं; अज्ञान रूपी अँधेरे का नाश करनेवाले सूर्य हैं, प्रणतों के पालक और प्रशंसक है। १३। जो भक्त रूपी चातकों के लिए मेघ हैं, जो अखिल जनों के मनोरथों को पूर्ण करनेवाले हैं, जिनके शरीर के रोम-रोम में कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड (निर्मित) है, जो विश्व के आत्माराम हैं, जिनके कटाक्ष से काल (-देवता) काँप उठते है, जो देवों के देव हैं, वे कौसल्या के शोक रूपी जल में तत्क्षण डूब गये। १४-१५। यद्यपि वे भगवान् हैं, तथापि वे भक्त-वत्सल ईश्वर है। इसलिए (वात्सल्य भाव से भक्ति करनेवाली कौसल्या) माता के करुण वचन सुनकर, वे जगदीश (श्रीराम) गद्गद हो गये। १६। माता द्वारा किया जानेवाला वह कल्पान्त, अर्थात् बहुत रुदन देखकर राम का हृदय (करुणा से) भर उठा (उमड़ उठा)। उस समय शोक से दुखी होकर धरती (भी) काँप उठी। १७। तब कैकेयी पर क्रोध करके भाई लक्ष्मण बोले—' महाराज, मुझे आज्ञा दो, तो मैं उसका मस्तक काट दूँगा। १८। जब तुम वन में जाओगे, तब

सहु अजोध्या उज्जड थशे, ने बूडशे सहु राज,
क्लेश केरुं मूळ केकई, तेने छेदुं आज । २० ।
ते माटे एने मारतां, आज टळे सहुनुं दुःख,
ज्यम वासना छेदतां साधु, पामे आत्मा सुख । २१ ।
रघुवीर कहे बाप वीरा, ए शी बोल्यो वाण ?
सहसा न करीए काज विपरीत, ज्यां लगी तनमां प्राण । २२ ।
आपणे माता सरव सरखी, एम जाणो मन,
आपणो धरम न मूकिये, जो पडे हवडां तन । २३ ।
नथी दुःखदाता कोई कोनुं, मिथ्या ते संदेह,
सहु पोताने करमे करी, भोगवे सुखदुःख जेह । २४ ।
त्यारे लक्ष्मण कहे हुं नहि रहुं, तम विजोग निरवाण,
तेडी जाओ मने साथे, नीकर तजीश मारा प्राण । २५ ।
त्यारे सुमित्राजी बोलियां, सांभळो रघुराय,
तम वियोगे क्षण एक एणे, घेर नहि रे'वाय । २६ ।
ते माटे एने साथ तेडो, कहुं साची वाण,
एकठा बे बांधव रहो, तो धीरज आवे प्राण । २७ ।

पिताजी प्राण त्याग देंगे । भाई भरत (मन से) निर्मल है; वह निश्चय ही राज्य नहीं करेगा । १९ । समस्त अयोध्या उजाड़ हो जाएगी और समस्त राज्य डूब जाएगा । (इस सब) क्लेश या दुःख की जड़ कैकेयी है । (अतः) मैं आज उसे छेद अर्थात् काट डालूँगा । २० । इसलिए जिस प्रकार वासना को काट डालने पर साधु आत्मिक सुख को प्राप्त हो जाता है, उस प्रकार उसे मार डालने पर आज सबका दुःख टल जाएगा ' । २१ । (यह सुनकर) श्रीराम ने कहा—' ओ तात ! ओ भाई, वह कैसी बात कही ? जब तक शरीर में प्राण हैं, तब तक हमें सहसा विपरीत काम नहीं करना चाहिए । २२ । मन में समझो कि अपने लिए सब माताएँ समान हैं । यद्यपि अभी शरीर छूट जाए, तथापि हमें अपना धर्म नहीं छोड़ना चाहिए । २३ । कोई किसी का दुःखदाता नहीं है । वह (कैकेयी के विषय में) मिथ्या है । सबको अपने-अपने कर्म के अनुसार सुख-दुःख का भोग करना है ' । २४ । तब लक्ष्मण ने कहा— ' तुम्हारे वियोग में मैं नहीं रह सकूँगा । मुझे साथ में ले चलो, नहीं तो मैं अपने प्राण त्याग दूँगा ' । २५ । तब सुमित्रा ने कहा—' हे रघुराज, सुनो । तुम्हारे विरह में इससे एक क्षण (भी) घर में नहीं रहा जाएगा । २६ । इसलिए, इसे साथ ले जाओ । मैं सच्ची बात कहती

बाळपणामां मात राखे, वृद्धपणे सुत धीर,
तन वेदना जाणे त्रिया, रणमां संभाळे वीर। २८।
एवां सुमित्रानां वचन सुणीने, बोल्या श्रीरघुनाथ,
वारु माता वीरने, हुं तेडीश मारी साथ। २९।
थयो हर्ष लक्ष्मणने तदा, हा कही श्रीरघुवीर,
वन जवाने तत्पर थया, माताए मूकी धीर। ३०।
कल्पांत करतां कौशल्याजी, बोलियां तेणे ठाम,
वर्ष चर्तुदश तुज विना, हुं क्यम काढीश राम ? । ३१।
मारा लाडकवाया लालजी, क्यारे देखीश तारुं मुख ?
भूख्या-तरस्या वनमां थशो, कोण पूछशे सुखदुःख ? । ३२।
केकईनी वाणी खरी करी, पाळ्युं पितानुं वचन,
हवे मारी आज्ञा भंग करी, क्यम जाय छे तुं वन ? । ३३।
त्यारे राम कहे हो मात, चिंता नव करशो मनमांह्य,
थोडा दिवसमां तम कने, आवीश पाछो आंह्य। ३४।
त्यारे आज्ञा पाळीश अति घणी मानजो साचुं माय,
घणां वरस मारे तमारी, करवी छे सेवाय। ३५।

हूँ। दो भाई इकट्ठा रहो, तो प्राणों में धीरज आएगा। २७। बचपन में माता रक्षा करती है, वुढ़ापे में धैर्यवान पुत्र रक्षा करता है। पुत्र की वेदना स्त्री जानती है, तो युद्ध में बन्धु रक्षा करता है'। २८। सुमित्रा की ऐसी बातें सुनकर श्रीराम ने कहा—' बहुत अच्छा ! हे माता, मैं इस भाई को अपने साथ ले जाऊँगा'। २९। जब राम ने 'हाँ' कहा, तब लक्ष्मण को आनन्द हो गया। वे (दोनों) वन में जाने के लिए तैयार हो गये, तो माता धीरज खो बैठी। ३०। कल्पान्त करती हुई कौसल्या उस स्थान पर बोली, 'हे राम, तुम्हारे बिना मैं चौदह वर्ष कैसे काटूँगी ? । ३१। लाड़ में पले मेरे लाल, तुम्हारा मुँह मैं (फिर) कव देख सकूँगी ? तुम वन में भूखे-प्यासे हो जाओगे, तो तुम्हारा सुख-दुख कौन पूछेगा ? । ३२। तुमने कैकेयी के वचन को सत्य किया और पिताजी के वचन का पालन किया। (फिर भी) अब मेरी (ही) आज्ञा का उल्लंघन करके तुम वन में कैसे जा रहे हो ?'। ३३। तव राम ने कहा, 'हे माँ, तुम मन में चिन्ता न करना। मैं थोड़े दिन में यहाँ तुम्हारे पास लौट आऊँगा। ३४। तब मैं तुम्हारी आज्ञा का बहुत-बहुत पालन करूँगा। हे माँ, इसे सत्य मानो। मुझे तुम्हारी बहुत बरस सेवा करनी है'। ३५। तो भी माता (कौसल्या)

तोये माता रोतां रहे नहि, नथी आवती मन धीर,
आकाशवाणी थई तदा, बोली वचन गंभीर । ३६ ।
हे कौशल्याजी ! रामनी चिंता न करशो लेश,
सर्व ठामे विजय थाशे, कुशल रहेशे एश । ३७ ।
ए सच्चिदानंद ब्रह्मपूरण, कोई न जाणे पेर,
कारज करवा देवनुं, अवतर्या छे तम घेर । ३८ ।
शेषनो अवतार लक्ष्मण, सीता लक्ष्मीस्वरूप,
ए राम श्रीभगवान छे, बह्मांड कोटी भूप । ३९ ।
आकाशवाणी सांभळी, मनमां विचार्युं माय,
पण मुख कहेवातुं नथी, जे राम वनमां जाय । ४० ।
पछे प्रदक्षिणा करी मातनी, चरणे नम्या श्रीराम,
कर जोडी सन्मुख रह्या, ऊभा पोते पूरणकाम । ४१ ।
त्यारे कौशल्याए हृदे साथे, चांपिया रघुवीर,
मोकळे मुखेथी रुदन करतां, मूकी मननी धीर । ४२ ।
ते समानुं दुःख शोक जे, कविए ते न कहेवाय,
रघुवीर केरे नेत्र आंसु, धार चाली जाय । ४३ ।

रोने से नहीं रही—अर्थात् वह रोती ही रही । उसके मन में धीरज नहीं आ रहा था । तब (इतने में) आकाशवाणी हो गयी—वह गम्भीर वचन बोली । ३६ । 'हे कौसल्या, राम की लेश-भर भी चिन्ता न करो । सब स्थानों में उसकी विजय होगी । वे सकुशल रहेंगे । ३७ । वे सच्चिदानन्द पूर्णब्रह्म हैं । कोई भी उनके ढंग को नहीं जानता । वे देवों का कार्य सम्पन्न करने के लिए तुम्हारे घर अवतरित हैं । ३८ । लक्ष्मण शेष के अवतार हैं; सीता लक्ष्मी-स्वरूपा है । वे भगवान् राम कोटि-कोटि ब्रह्माण्डों के राजा है' । ३९ । (इस प्रकार) आकाशवाणी को सुनकर माता कौसल्या ने मन में विचार किया । परन्तु उससे उसके द्वारा मुख से नहीं कहा जा रहा था कि राम वन में जाएँ । ४० । अनन्तर माता की परिक्रमा करके श्रीराम ने उसके चरणों को प्रणाम किया । फिर वे पूर्णकाम (श्रीराम) स्वय हाथ जोड़े हुए (उसके) सम्मुख खड़े रहे । ४१ । तब कौसल्या ने रघुवीर राम को हृदय से लगा लिया और मन का धीरज खोकर मुक्त मुख-स्वर से (गला फाड़कर) वह रुदन करती रही । ४२ । उस समय का जो दुख और शोक था, कवि द्वारा (भी) वह नहीं कहा जा सकता । श्रीराम के नेत्रों से आँसुओं की धारा बहती जा रही थी । ४३ । फिर माता कौसल्या ने यह निश्चय ही

पछी निश्चे जाण्युं माताए, वन जवानुं रघुनाथ,
करुणा करीने कौशल्याए, मूक्यो मस्तक हाथ । ४४ ।
चरणे नमी चाल्या तदा, आज्ञा ग्रही अभिराम,
श्रीजानकीने मंदिर आव्या, लक्ष्मण साथे राम । ४५ ।

वलण (तर्ज़ बदल कर)

श्रीराम लक्ष्मण सहित, आव्या सीतानी पास रे,
आज्ञा आपो जनकतनया, अमो करी आवुं वनवास रे । ४६ ।

जान लिया कि श्रीराम को वन जाना है, तो उसने करुणापूर्वक उनके मस्तक पर हाथ रखा । ४४ । तब अभिराम राम ने आज्ञा ली और उसके चरणों को नमस्कार करके वे चल दिये । (वहाँ से) वे लक्ष्मण-सहित सीता के भवन में आ गये । ४५ ।

श्रीराम लक्ष्मण-सहित सीता के पास आ गये (और बोले—) 'हे सीता, हमें आज्ञा दो, हम वनवास करके आते है' । ४६ ।

* * *

अध्याय—१० (सीता-राम-वसिष्ठ संवाद)

राग आशावरी

श्रीरामचंद्र आव्या निज मंदिर, जोयुं जानकीए रूप,
राज्यचिह्न कांईये नव दीठां, उदासी त्रिभुवन भूप । १ ।
कमळनेत्र आरक्त थयां छे, करमायुं मुख-गात्र,
पछे करुणा वचने सीतानी साथ, बोल्या जनक-जामात्र । २ ।
सुणो साधवी केकईए माग्युं, रायनी पासे वचन,
ते माटे अमो वर्ष चतुर्दश, जईने रहीशुं वन । ३ ।

अध्याय—१० (सीता-राम-वसिष्ठ संवाद)

श्रीराम अपने भवन में आ गये, तो सीता ने उनके रूप को देखा । उसने (उनके शरीर पर राज परिवार के पुत्र के लिए उचित वस्त्र, आभूषण आदि) राज-चिह्न कुछ नहीं देखे; (बल्कि) त्रिभुवन के राजा (श्रीराम उसे) उदास (दिखायी दे रहे) थे । १ । कमल-से उनके नेत्र कुछ लाल हो गये थे, मुख तथा अन्य अंग मुरझा गये थे । अनन्तर श्रीराम सीता से करुण शब्दों में (यों) बोले । २ । 'हे साध्वी, सुनो । कैकेयी ने राजा से वचन माँगा । उस कारण से हम वन में जाकर चौदह वर्ष रहेंगे । ३ । पिताजी की आज्ञा का पालन करें—निश्चय ही

पितानी आज्ञा पाळवी निश्चे, मारो एह ज धर्म,
ते माटे तमे रहेजो मंदिरमां, माता पासे पर्म । ४ ।
सर्व मातानी सेवा करजो, पाळजो धर्म अशेष,
केकई कौशल्या सुमित्रामां, नव अंतर गणशो लेश । ५ ।
सदाकाळ अहीं रहेजो सुंदरी, नव जाशो तातने घेर,
एवां वचन सांभळी जानकी, वळतां रुदन करे बहु पेर । ६ ।
अहो नाथ ! हुं दासी तमारी, विजोग नव सहेवाय,
तम विना हुं क्यम रहुं एकली ? एक घडी जुग थाय । ७ ।
जळ विना जळचर क्यम जीवे ? जो करिये क्रोड उपाय,
हुं छाया तमारा देह तणी प्रभु, कहो क्यम अळगी थाय । ८ ।
कनक कांति ज्यम दीप शिखा, रवि रश्मि सदा रहे पूरी,
ते कल्पान्ते विलक्षण न थाय, ज्यम परिमल ने कस्तूरी । ९ ।
एम हुं तमथी क्यम रहुं वेगळी ? सुणीए श्रीरघुराय,
ज्यम सद्विवेक साधुनुं रुदे तजी, कल्पान्ते नव जाय । १० ।
तम विना मंदिरमां हुं नहि रहुं, स्वामी सुणो सुखराशि,
ते माटे मने साथे तेडो, सेवा करवा दासी । ११ ।

मेरा यही धर्म है । उस कारण से तुम (हमारी) श्रेष्ठ माता के पास घर में रहो । ४ । सब माताओं की सेवा करो; (गृहिणी या कुलवधू के) धर्म का पूर्ण रूप से पालन करो । कैकेयी, कौसल्या और सुमित्रा में अल्प-सा भी अन्तर न मानो । ५ । हे सुन्दरी, सब काल (नित्य) यहीं रहो; (अपने) पिता के घर मत जाओ ।' ऐसी बातें सुनकर, वह अनन्तर बहुत प्रकार से रुदन करने लगी । ६ । उसने कहा—' हे नाथ, मैं आपकी दासी हूँ । (मुझसे) वियोग सहन नहीं होता । आपके विना मैं अकेली कैसे रहूँ ? (मेरे लिए) एक घड़ी युग (-समान) हो जाएगी । ७ । यद्यपि करोड़ों उपाय करें, तथापि बिना जल के जलचर जीव कैसे जीवित रहेंगे ? हे प्रभु, मैं आपकी देह की छाया हूँ । कहिए, वह कैसे अलग हो जाएगी ? । ८ । जैसे सोना और उसकी कान्ति, दीपक और उसकी ज्योति, सूर्य और उसकी किरण सदा पूर्ण अर्थात् एक-रूप रहते हैं, जैसे कस्तूरी और उसकी सुगन्ध कल्पान्त में भी एक दूसरे से अलग नहीं होतीं । (वैसे आप और मैं एकरूप हैं) मैं आपसे कैसे अलग रह सकती हूँ ? हे रघुराज, सुनिए, जैस सद्विवेक साधु के हृदय को कल्पान्त में भी छोड़कर नही जाता, वैसे आप के बिना (आपको छोड़कर) मैं (राज-) मन्दिर में नहीं रहूँगी । हे सुखराशि स्वामी,

त्यारे राम कहे तमो आवेथी, मुंने थाय घणी जंजाळ,
कोमळ चरणे चलाशे नहि, वळी वनमां सिंह ने व्याळ । १२ ।
आतप शीत वृषा गिरि कंटक, क्यम सहेवाशे दुःख ?
सीता कहे तमने दुःख स्वामी, तो मारे क्यांथी सुख ? । १३ ।
मन मारुं मधुकर छे ते, तम चरणकमळ अनुराग,
जो स्वामी साथे नहि तेडो तो, हुं करीश देहनो त्याग । १४ ।
सीतानां एवां वचन सांभळी, संतोष्या मन राम,
अरे प्रिया तमो पूछो गुरुने, जो आज्ञा करे अभिराम । १५ ।
गुरु आज्ञाए तेडी जाउं तो, कोई न करे निंदाय,
लोक तणो अपवाद न लागे, कारज सिद्धि थाय । १६ ।
त्यारे गुरुने कहाव्युं जनकसुताए, आव्या तत्क्षण मुन्य,
आसन पूजन चरणे नमीने, सीता बोल्यां वचन । १७ ।
हुं स्वामी साथे वनमां जाउं छुं, करवा पतिसेवाय,
माटे आज्ञा आपो गुरुनाथ, विजोगे में एकलां नव रहेवाय । १८ ।

सुनिए, उस कारण से सेवा करने के लिए दासी के रूप में मुझे साथ ले चलिए '। ९-११ । तब श्रीराम ने कहा—' तुम्हारे (वन में) आने से मुझे बहुत उलझन हो जाएगी । (तुमसे) कोमल चरणों से चला नहीं जाएगा; सिवा इसके वन में सिंह और साँप होते हैं । १२ । धूप, शीत, वर्षा, पर्वत, काँटे (आदि से उत्पन्न होनेवाला यह) दुःख कैसे सहन होगा ? ' (इसपर) सीता ने कहा—' हे स्वामी, आपको दुःख है, तो मुझे कहाँ से सुख होगा ? । १३ । मेरा मन भ्रमर है—उसे आपके चरण-कमलों के प्रति प्रेम है । हे स्वामी, यदि मुझे अपने साथ नही ले जाएँगे, तो मैं देह-त्याग करूँगी '। १४ । सीता की ऐसी बातें सुनकर श्रीराम मन में संतुष्ट हो गये । (फिर उन्होंने कहा—) ' हे प्रिये, तुम गुरुजी से पूछो; यदि वे आज्ञा दें, तो मैं गुरु की आज्ञा से तुम्हें ले जाऊँगा; तब कोई निन्दा नहीं करेगा । (उससे हमें) लोगों का अपवाद नहीं लगेगा और कार्य (भी) सिद्ध हो जाएगा '। १५-१६ । तब सीता ने गुरुजी को सन्देश (निमंत्रण) भेजा, तो मुनि (वसिष्ठ) तत्क्षण आ गये । (उन्हें) आसन प्रदान कर उनका पूजन करके तथा चरणों को नमस्कार करके सीता ने यह बात कही । १७ । ' मैं पति की सेवा करने के लिए अपने स्वामी के साथ वन में जा रही हूँ । इसलिए हे गुरुजी, मुझे आज्ञा दीजिए । पति के वियोग में मुझसे अकेली नहीं रहा जाएगा '। १८ । ऐसा सुनकर गुरुजी गद्‌गदित-कण्ठ हो गये—अर्थात्

एवुं सांभळी गद्गद कंठ थया गुरु, आंसु आव्यां लोचन,
पछे मुनि वसिष्ठ रघुवीरनी प्रत्ये, बोल्या परम वचन । १९ ।
अहो राम तमो तेडो निश्चे, जनक-सुताने साथ,
लक्ष्मणने पण तेडी जाओ, निज संगे श्रीरघुनाथ । २० ।
आज्ञा आपी गुरु आव्या पाछा, भूपति केरी पास,
वृत्तांत जाण्युं राजाए, जाये त्रणे वनवास । २१ ।
मुखे बोलातुं नथी दुःखे करी, पीडा घणी मन व्यापी,
अरे मुनि, में शुं कृत्य कीधुं ? हुं क्या जन्मनो पापी ? । २२ ।
त्रिगुणात्मक ए अपत्य मारां, जाये वनमां आज,
हजु पापी प्राण जतो नथी, ते शुं करवा रह्यो छे काज ? । २३ ।
एम राजा तलसे तन पछाडे, खूट्युं नेत्रनुं नीर,
सुणो श्रोताजन शुं करवा हवो, पछे पोते श्रीरघुवीर ?। २४ ।
वहेंची आप्युं घणुं धन विप्रने, अंध पंगुने त्यांहे,
वळी जे को दुर्बळ तेने आप्युं, पोताना पुरमांहे । २५ ।

उनका गला रुँध गया। उनकी आँखों में आँसू आ गये। अनन्तर मुनि वसिष्ठ ने रघुवीर राम के प्रति (ये) उत्तम वचन कहे । १९ । 'हे राम, तुम निश्चय ही सीता को साथ ले जाओ। हे रघुनाथ। अपने साथ लक्ष्मण को भी ले जाओ'। २० । गुरु (वसिष्ठ श्रीराम को ऐसी) आज्ञा देकर राजा (दशरथ) के पास वापस आ गये। (उनसे) राजा ने (यह) समाचार जान लिया कि तीनों जने वनवास के लिए जा रहे हैं। २१ । दुःख में (उनसे) मुख से बोला नहीं जा रहा था। उनके मन को बड़ी पीड़ा ने व्याप्त कर लिया। (उन्होंने कहा—) 'हे मुनि, मैंने (ऐसा) क्या काम किया ? मैं किस जन्म का पापी हूँ ? ये मेरे त्रिगुणात्मक बच्चे आज वन में जा रहे हैं। (फिर भी) अब भी मुझ पापी के प्राण नहीं निकले जा रहे हैं; तो वे क्यों और क्या करने (क्यों) अब तक (शरीर में) रहे हैं ? । २२-२३ । इस प्रकार, राजा (दशरथ) बहुत व्याकुल हो गये। उनका शरीर लुढ़क गया। आँखों से (बहनेवाला) अश्रुजल (भी) कम हो गया। हे श्रोताजनो, सुनिए, अनन्तर रघुवीर राम ने स्वयं क्या किया। २४ । (तब) श्रीराम ने वहाँ बहुत धन ब्राह्मणों, अंधों और पंगुओं को बाँट दिया। सिवा इसके अपने नगर में जो कोई दुर्बल अर्थात् दरिद्र थे, उन्हें (भी) धन दिया। २५ । असीत, कण्व, दुर्वासा, अत्रि और कौशिक (विश्वामित्र) आदि जो (भी) मुनि थे, उनके घर श्रीराम ने बहुत-सा धन पहुँचवा

असीत कण्व दुरवासा आदे, अत्रि ने कौशिक मुन्य,
तेने घेर पहोंचाड्युं रामे, घणुंएक आप्युं धन । २६ ।
वळी चाकर मित्र पोताना सेवक, तेने घणुंएक आप्युं,
भाट बंदीजन आदे सरवे, जाचकनुं दुःख काप्युं । २७ ।
माताओ सरवेने घेर, पहोंचाड्युं तेणी वार,
सहस्र वरस लगी खूटे नहि एम, वस्तु मोकली अपार । २८ ।
पोताना घरनी छे संपति, भारे पदारथ भोग,
ते सरवे गुरुने घेर मोकली, पोते लीधो जोग । २९ ।
वसिष्ठ गुरुनो पुत्र ज कहीए, सुयज्ञ एवुं नाम,
तेने पोतानां जे वस्त्र आभूषण, ते पहेराव्यां राम । ३० ।
तेनी वधुने सीताजीए, पहेराव्या निज शणगार,
पोताना रथमां बेसाडी, घेर मोकल्यां सार । ३१ ।
घणी गुरुने घेर पहोंचाडी वस्तु, कहेतां न आवे पार,
गुरुने भावे भजे नहिं तेना डहापणने धिक्कार ! ३२ ।
गुरुने घेर संकीरण आपदा, आपणे सुख अभिराम,
संपति सरवे वळी जाओ तेनी, जे गुरुने न आवी काम । ३३ ।

दिया । २६ । इसके अतिरिक्त, जो सेवक, मित्र, अपने स्वयं के सेवक थे, उन्हें बहुत-सा धन दिया । (उसी प्रकार) भाट, बन्दीजन आदि सबका तथा याचकों का (धन के अभाव से उत्पन्न) दुःख काट दिया—अर्थात् धन देते हुए दूर किया । २७ । उस समय, सब माताओं के घर धन पहुँचवा दिया । सहस्र वर्ष तक जो कम (अर्थात् समाप्त) नहीं होंगी, ऐसी अनगिनत वस्तुएँ (उनके घर) भेज दीं । २८ । अपने स्वयं के घर की (जो) सम्पत्ति थी, (जो) विपुल मात्रा में भोग्य पदार्थ थे, श्रीराम ने वे सब गुरुजी के घर भेज दिये और स्वयं (संन्यासी-सा) योगमार्ग ग्रहण किया । २९ । गुरु वसिष्ठ के (एक) पुत्र ही था । उसका नाम 'सुयज्ञ' कहिए । उसे श्रीराम ने अपने स्वयं के जो वस्त्र तथा आभूषण थे, वे पहना दिये । ३० । सीता ने उसकी पत्नी को अपने शृंगार अर्थात् वस्त्र तथा आभूषण पहना दिये । (तदनन्तर) अपने सुन्दर रथ में बैठाकर (श्रीराम ने) उन्हें घर भेज दिया । ३१ । उन्होंने श्रीगुरु के घर (इतनी) बहुत वस्तुएँ पहुँचा दी—(कि उन्हें) कहने (या गिनाने) में पार नहीं आएगा । जो गुरु की प्रेमपूर्वक सेवा नहीं करता, उसकी बुद्धिमानी का धिक्कार है । ३२ । (जिसके) गुरु के घर (धन आदि की) तंगी तथा आपत्ति हो और अपने घर सुन्दर सुख (-सुविधा) हो,

एम यथायोग सहुने धन आप्युं, रघुपति तेणी वार,
पछे सीता लक्ष्मण साथे आव्यां, केकई भुवनमोझार। ३४।
कौशल्यादि माताओ सरवे, आवी केकईने द्वार,
इष्ट मित्र बंधुजन सज्जन, मळियुं तेणे ठार। ३५।

वलण (तर्ज़ बदल कर)

मळ्युं सहु केकईने मंदिर, शोक रुदे नव माय रे,
तत्पर थई रघुवीर आव्या, लाग्या पिताने पाय रे। ३६।

और यदि वह गुरु के काम नहीं आयी हो, तो वह सब सम्पत्ति जल जाए। ३३। श्रीराम ने इस प्रकार सबको यथायोग्य रूप से धन दिया। अनन्तर वे सीता और लक्ष्मण के सहित कैकेयी के भवन में आ गये। ३४। कौसल्या आदि सब माताएँ (भी) कैकेयी के (भवन के) द्वार पर आ गयीं। उस स्थान पर इष्ट-मित्र, बन्धुजन (आदि) भले लोग इकट्ठा हो गये। ३५।

सब कैकेयी के भवन में इकट्ठा हो गये। उनके हृदय में शोक नहीं समा रहा था। (इतने में) तैयार होकर रघुवीर राम आ गये और पिताजी के चरणों में लग गये। ३६।

* * *

अध्याय—११ (राम का वन के प्रति गमन)

राग रामग्री

पिता पासे आव्या रघुराय, करी प्रदक्षिणा लाग्या पाय,
सन्मुख ऊभा जोडी पाण, साथे सीता लक्ष्मण जाण। १।
सुमंते रायने बेठा कर्या, अति दुःख सागर शोक भर्या,
अरे दैव तें आ शुं कर्युं? मारे राम जतां कांई न ऊगर्युं। २।

अध्याय—११ (राम का वन के प्रति गमन)

रघुनाथ पिताजी के पास आ गये और उनकी परिक्रमा करके उनके पाँव लग गये। (तदनन्तर) हाथ जोड़कर वे उनके सम्मुख खड़े हो गये। समझिए, (उस समय) उनके साथ सीता और लक्ष्मण (भी) थे। १। सुमन्त ने राजा को बैठा दिया। (उस समय) दुःख रूपी सागर-से वे अति शोक से भरे-पूरे हो गये। (उन्होंने कहा—) 'हाय! दैव ने यह क्या किया? मेरे राम के जाने पर कुछ नहीं बचा'। २।

पछे राजा धीरज राखी प्राण, रघुवीर प्रत्ये बोल्या वाण,
अरे राम जो जाओ वन, तो शकट भरी ल्यो साथ धन । ३ ।
साथे राखो घणी सेन्याय, प्रधान संपत्ति ल्यो रघुराय,
वाहन वस्त्र आभूषण मुखे, करी आश्रम रहो वनमां सुखे । ४ ।
दशरथनां एवां सुणी वचन, कर जोड़ी कहे जुग-जीवन,
अरे तात संपत्ति शुं करुं ? हुं वनमां जईने तप आचरुं । ५ ।
वनफूल अंग करीश परिधान, नव जोइए सेन्याय प्रधान,
एवुं सांभळ्युं केकई जदा, वनफूल लावी मूक्यां तदा । ६ ।
करी मूक्यां तां घरमां तैयार, पहेराव्यां रामलक्ष्मण सार,
सीतानां वस्त्र आभूषण जेह केकईए उतराव्यां तेह । ७ ।
वनफूल पहेराव्यां सुन्दरी, त्यारे वसिष्ठ बोल्या क्रोध करी,
अरे राणी तुं निरदे घणी, राज बुडाड्युं तें पापणी । ८ ।
जानकीनां आभूषण चीर, शुं करवा उतराव्यां अधीर,
एम घणां कह्यां छे गुरुए वचन, पछी अकळाईने बोला राजन ९ ।

अनन्तर प्राणों (मन) में धीरज रखते हुए राजा ने श्रीराम से यह बात कही—' हे राम, यदि वन में जाओगे, तो साथ में गाड़ी-भर धन ले जाओ । ३ । साथ में बड़ी सेना रख लो । हे रघुराज, सचिव, सम्पत्ति (भी साथ में) ले लो । वाहन, वस्त्र, आभूषण साथ में लेकर वन में आश्रम बनाकर सुख-पूर्वक रहो ' । ४ । दशरथ की ऐसी बातें सुनकर जगज्जीवन श्रीराम ने हाथ जोड़ते हुए कहा, ' हे तात, मैं सम्पत्ति (लेकर) क्या करूँ ? वन में जाकर तो मै तपस्या करूँगा । ५ । मैं वनफूल अर्थात् वल्कल शरीर में परिधान करूँगा । (मुझे) सेना तथा सचिव नहीं चाहिए ' । जब कैकेयी ने ऐसा सुना, तब उसने वल्कल लाकर (वहाँ) रख दिये । ६ । (वल्कल) घर में तैयार करके रखे हुए थे । वे सुन्दर वल्कल राम और लक्ष्मण को पहना दिये । सीता के जो वस्त्र और आभूषण (पहने हुए) थे, उन्हें (भी) कैकेयी ने उतरवा दिया । ७ । जब उस सुन्दरी को वल्कल पहनवाये, तब वसिष्ठ क्रोध-पूर्वक बोले—' री रानी, तुम बहुत निर्दय हो । री पापिणी, तुमने राज्य को डुबा डाला । ८ । री अधीर स्त्री, तुमने सीता के आभूषणों और वस्त्रों को (क्यों) उतार दिया ? ' इस प्रकार गुरु (वसिष्ठ) ने बहुत बातें कही । (उसके) पश्चात् राजा (दशरथ) व्याकुल होकर बोले । ९ । ' री पापिणी, उठो, यहाँ से चली जाओ । जल जाए तुम्हारी बुद्धि ! तुम अभागिन बहुत निर्दय हो । तुम्हारी माँ ने

अर ऊठ अहींथी तुं जा पापणी, बळी जाओ बुद्धि तुज तणी,
मंद-भाग्यणी निरदे घणी, तारी जनुनीए शुं करवा जणी ?। १० ।
अति सुकमार ए मारा तन, दुरमुखी तें आज काढ्या वन,
शुं करुं जो बंधायो वचन ? निकर तुजने पमाडुं पतन । ११ ।

दोहा

ऐवुं कहीने मंगावियां, वस्त्र आभूषण सार,
ते सीताने पहेरावियां, जेनी शोभानो नहि पार । १२ ।
पछे भूपतिए वैदेहीने, बेसाडी खोळामांय,
मस्तक कर मूक्यो तदा, घणुं रुदन करे राय त्यांय । १३ ।

सोरठा

मारी कुळवधू अति सुकुमार, में तमने दुखियां बहु कर्यां,
मारा जीव्याने धिक्कार, में बाळक काढ्यां वन विषे । १४ ।
क्यम सहेशो वनमां दुःख ? आतप शीत वृषा तणुं,
करमाशे सुकोमळ मुख, पाये कठण कंकण घणां खूंचशे । १५ ।
मारी कुळदीपक वय बाळ, क्यां कहेशे वात सुखदुःखनी ?
तारा अंग तणी संभाळ, ते कोण करशे महावन विषे । १६ ।

तुम्हें क्यों जन्म दिया ? । १० । मेरे वे पुत्र अति सुकुमार है । री दुर्मुखी, तुमने उन्हें आज वन में निकाल दिया । क्या करूँ जो कि वचन से बँधा हूँ । नहीं तो तुम्हें नाश को प्राप्त कराता—अर्थात् तुम्हारा संहार कर डालता ' । ११ ।

ऐसा कहकर (उन्होंने) सुन्दर वस्त्र और आभूषण मँगवा लिये और सीता को पहनवा दिये, जिससे उसकी शोभा की कोई सीमा न (रही) थी । १२ । अनन्तर राजा ने सीता को गोद में बैठा लिया, उसके मस्तक पर हाथ रखा । तब वे बहुत रुदन करने लगे । १३ ।

(शोक करते हुए वे बोले—) ' री मेरी अति सुकुमार कुलवधू, मैंने तुम्हें बहुत दुखी किया । मेरे जीवन को धिक्कार हो जब कि मैंने अपने बालकों को वन में डाल दिया । १४ । धूप, ठण्ड, वर्षा के दुःख (कष्ट) को तुम वन में कैसे सहन करोगी । तुम्हारा सुकोमल मुख कुम्हला जाएगा, कठोर कंकड़ पाँवों में बहुत चुभेंगे । १५ । छोटी उम्र की मेरी कुलदीपक बच्ची, तुम (अपने) सुख-दुख की बात कहाँ (किससे) कहोगी ? बड़े वन में तेरे शरीर की रक्षा (देखभाल) कौन करेगा ? । १६ ।

मारा डहापणने धिक्कार, आज स्त्रीवश हुं क्यम थयो ?
मारुं उज्जड थयुं घरबार, जाय राम-लक्ष्मण ने जानकी । १७ ।
मारा तनमां लागी लाह्य, हुं क्या जाउं ने क्यां रहुं ?
मारो पापी प्राण न जाय, हजु हुं दुःख जोवाने रह्यो । १८ ।
एम राजा करे कल्पांत, आखे आंसुनी धारा बहे,
सहु सभा थई दुःखवंत, जाणे पूर आवी नदी शोकनी । १९ ।
पछे जानकीने ते दीश, अमूल्य आभूषण आपियां,
पछे राये दीधी आशिष, तारो जश थाजो त्रिलोकमां । २० ।
जे पोतानो रथ कहेवाय, ते महीपतिए त्यां मंगावियो,
पछी कह्युं सुमंतने राय, बेसाडी तेडी जा रामने । २१ ।
सुरसरी तट वनमांय, जने त्यां लगी रथ हांकी करी,
थोडा दिवस रही त्यांय, पछे रामने तेडीने आवजे । २२ ।
पछे जगत तणी जे माय, तेणे श्वसुरनी प्रदक्षिणा करी,
कर जोडीने लाग्या पाय, त्यारे रुदन करे घणुं रायजी । २३ ।
चांप्यां कौशल्याए रुदे साथ, माता आक्रंद घणुं करे,
सीताने शिर मूकी हाथ, पछे आशिष अविचळ ऊचरे । २४ ।

मेरी बुद्धिमानी का धिक्कार हो ! मै आज स्त्री के अधीन कैसे हो गया ? जब राम, लक्ष्मण और जानकी (वन) जा रहे है, तो मेरा घरबार उजाड़ हो गया । १७ । मेरे शरीर मे लाग लग गयी है; मैं (अव) कहाँ जाऊँ और कहाँ रहूँ ? मेरे (ये) पापी प्राण (निकलकर) नही जा रहे है—आज (यह) दुख देखने के लिए मैं जीवित रह गया हूँ ' । १८ । इस प्रकार राजा बहुत विलाप कर रहे थे; उनकी आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी । समस्त सभा दुःखी हो गयी । मानो, शोक की नदी में बाढ़ आ गयी । १९ । अनन्तर राजा ने सीता को उस समय अमूल्य आभूषण दे दिये; उसके पश्चात् आशिष दिया—' तुम्हारा यश त्रिभुवन में (व्याप्त) हो जाए ' । २० । जो रथ उनका अपना कहाता था, राजा ने उसे वहाँ मँगा लिया और फिर सुमन्त से कहा—' (इसमें) राम (लक्ष्मण और सीता) को बैठाकर ले जाओ । २१ । गंगा नदी के तटवर्ती वन में, वहाँ तक रथ को हाँककर ले जाओ । वहाँ थोड़े दिन रहकर फिर राम (लक्ष्मण और सीता) को ले आओ । २२ । बाद में जगत की जो माता ही थी, उस सीता ने (अपने) ससुर की परिक्रमा की; फिर हाथ जोड़कर पाँव लग गयी, तब राजा ने बहुत रुदन किया । २३ । (तत्पश्चात्) माता कौसल्या ने उसे हृदय से लगा

चौपाई

सुमन्त लाव्यो रथ जोतरी, मांह्य बेसाड्यां सीता सुन्दरी,
सरव सासुने चरणे नमी, रथ बेठां गुरुपद परणमी । २५ ।
थया तत्पर बे वीर सुजाण, लीधां धनुष भाथा ने बाण,
पिता तणे तव नमिया पाय, गुरुचरण वंद्या रघुराय । २६ ।
वसिष्ठे आशिष दीधी घणी, ज्यां लगी तपे चन्द्र दिनमणि,
त्यां लगी अखंड रहेजो सदा, विजय पामजो रण सर्वदा । २७ ।
पछे राम सहु माताने नम्या, पिता गुरुने पद परणम्या,
जानकी बेसाड्या रथमाहे, रामलक्ष्मण वे चाल्या त्यांहे । २८ ।
दशरथ पड्या कल्पांत ज करे, माता सहु लोचन जळ भरे,
नग्र बारणे आव्या राम, रुए लोक सहु ठामोठाम । २९ ।
प्राण विना देह होय जदा, अवधपुरी एवी थई तदा,
भक्त मित्र ने विप्र प्रजाय, ते सहु रामनी पूंठळ जाय । ३० ।
दूर जई ऊभा रघुवीर, सर्व प्रजाने आपी धीर,
कर जोडी कहे छे श्रीराम, हवे तमो सर्व पाछा जाओ गाम। ३१ ।

लिया । तब उसने बहुत विलाप किया । फिर सीता के मस्तक पर हाथ धरते हुए अविचल रूप से आशीर्वाद कह दिया । २४ ।

सुमन्त रथ जोतकर लाये, तो सीता सुन्दरी को अन्दर बैठा दिया । सब सासुओं के चरणों को नमस्कार करके और गुरु (वसिष्ठ) के पदों को प्रणाम करके वह रथ में बैठ गयी । २५ । वे दोनों सुजान बन्धु (प्रस्थान के लिए) तैयार हो गये । उन्होंने धनुष, भाथा और बाण लिये । फिर श्रीराम (और लक्ष्मण) ने पिताजी के चरणों को नमस्कार किया; गुरु (वसिष्ठ) के चरणों को नमस्कार किया । २६ । तो वसिष्ठ ने उन्हें बहुत आशीर्वाद दिया— जब तक चंद्र और सूर्य तपते रहेंगे, तब तक सदा अखण्ड (निर्विघ्न) रहो, युद्ध में नित्य विजय को प्राप्त हो जाओ । २७ । फिर राम ने सब माताओं को नमस्कार किया, पिताजी और गुरुजी के पदों को प्रणाम किया । (इधर) सीता रथ में बैठायी गयी; तब राम और लक्ष्मण दोनों वहाँ (उस ओर) चल दिये । २८ । दशरथ लेटे हुए थे, वे वहुत रो रहे थे । सब माताओं के नेत्रों में जल भर आया । जब राम नगर-द्वार में आ गये । सब लोग स्थान-स्थान पर रो रहे थे । २९ । बिना प्राणों के जैसी देह होती है, तब अयोध्यापुरी वैसी ही हो गयी । भक्त, मित्रजन और ब्राह्मण, प्रजाजन सब राम के पीछे-पीछे चल दिये । ३० । दूर जाकर श्रीराम

थोडा दिवसमां आवुं अमो, माटे जाओ नग्रमां सरवे तमो,
एवुं सांभळी सरवे जन, आव्या पुरमां करता रुदन । ३२ ।
केटला भक्त ब्राह्मण ने मित्र, ज्ञानी तपस्वी परम पवित्र,
ते श्रीरामनी साथे थया, निश्चे वचन मुखथी बोलिया । ३३ ।
जो प्राण अमारो जाशे अहीं, संग तमारो मूकीशुं नहीं,
राम संग चाल्या बळ पूर, पडी सांज आथमियो सूर । ३४ ।
आव्या राम तमसाने तीर, तटे ऊतर्या श्रीरघुवीर,
हवे अवधपुरीमां आनन्द कशा? प्रवेशी राम जतां अवदशा । ३५ ।
ज्यम जतां शुद्ध विवेक ज सार, अज्ञान प्रवेशे रुदे मोझार,
कौशल्या आदे राणीओ जेह, केकईने मंदिर बेठी तेह । ३६ ।
गुरुनी आदे सज्जन सहु, वींटी रायने बेठुं बहु,
नथी चित्त राजानुं ठाम, घडी बे घडीए बोले राम । ३७ ।
राम विजोग तणुं दु:ख जेह, कोईए सहेवतुं नथी तेह,
सहु माताए मन मरण आदर्युं, झेर पीवाने तत्पर कर्युं । ३८ ।

खड़े हो गये और उन्होंने सब प्रजा को धीरज बँधा दिया। फिर हाथ जोड़कर उन्होंने कहा—' अब तुम सब ग्राम में वापस जाओ '। ३१। थोड़े दिनों में हम (लौट) आते हैं, इसलिए तुम सब नगर में (लौट) जाओ '। ऐसा सुनकर सब लोग रोते हुए नगर में आ गये। ३२। (फिर भी) कितने ही भक्त, ब्राह्मण और मित्र, ज्ञानी, परम पवित्र तपस्वी राम के साथ (रह गये) थे। वे निर्धार-पूर्वक यह वचन बोले। ३३। ' यदि यहाँ हमारे प्राण (भी) जाएँ, तो भी तुम्हारा साथ नहीं छोड़ेंगे। ' राम के साथ पूरी सेना चल दी। शाम हो गयी; सूर्य अस्त हो गया। ३४। (आगे बढ़ते हुए) राम तमसा के तट (तक) आ गये। और (वहाँ) तट पर ठहर गये। (इधर) अब अयोध्या में कितना आनन्द (रहा) होगा? राम के (वहाँ से) निकल जाते ही (उसमें उस प्रकार) अवदशा प्रविष्ट हो गयी, जिस प्रकार शुद्ध सुन्दर विवेक ही के (निकल) जाने पर हृदय में अज्ञान प्रविष्ट हो जाता है। कौसल्या आदि जो रानियाँ थीं, वे (तब) कैकेयी के भवन में बैठी रहीं। ३५-३६। (इधर) गुरुजी आदि सब भले लोग राजा को भलीभाँति घेरकर बैठे थे। राजा का चित्त ठिकाने नहीं था। वे घड़ी दो घड़ी (अवधि) पर ' राम ' कहा करते थे। ३७। राम के विरह का जो दु:ख (उन्हें अनुभव हो रहा) था, वह किसी के भी द्वारा सहन नहीं हो सकता था। ।ब माताओं ने मन में मरण स्वीकार करने की सोची और पीने के लिए

त्यारे बोल्या वसिष्ठ कहुं ते मन धरो:एम सहसा प्राणघात नव करो,
राम जशे लंकामोझार, करशे रावणकुळ संहार। ३९।
कुशळ चौद वरसे आवशे, हेते मळशे बोलावशे,
जो हुं जूठी कहेतो होउं वाण, तो मुजने राघवनी आण। ४०।
गुरुनां एवा वचन सुणी, सहुने धीरज आवी मन,
विश्वास आव्यो ने मन ठर्युं, माटे विषपान कोईए नव कर्युं। ४१।
वाल्मिकनी मूळ काव्यनी कथा, तेनो अरथ ए छे सर्वथा,
कोई कहेशे मिथ्या कह्युं एह, ते माटे निवर्त्यो संदेह। ४२।
अवधपुरीमां ए गत थई, रह्या राम तमसा-तट जई,
पत्र पाथर्यां पृथ्वीमांहे, श्रमित थई सहु सूतां त्यांहे। ४३।

वलण (तर्ज़ वदल कर)

सूता सर्वे श्रमित थईने, तमसा-तटे विख्यात रे,
बे पहोर रजनी वही गई त्यारे, श्रीरामे विचारी वात रे। ४४।

* * *

विष तैयार किया। ३८। तब वसिष्ठ ने कहा—'मैं जो कह रहा हूँ, उसपर ध्यान दो। सहसा इस प्रकार आत्मघात न कर लो। राम लंका में जाएँगे और रावण के कुल का संहार करेंगे। ३९। चौदह वर्षों के पश्चात् वे सकुशल (लौट) आएँगे (फिर सबसे) प्रेमपूर्वक मिलेंगे तथा बुलाएँगे। यदि मैं यह बात झूठी कहता होऊँ, तो मुझे राम की शपथ है'। ४०। गुरु (वसिष्ठ) के ऐसे वचन सुनकर सबको मन में धीरज आ गया; विश्वास (अनुभव) हुआ तथा मन स्थिर हो गया। इसलिए (उनमें से) किसी ने (भी) विष-पान नहीं किया। ४१। वाल्मीकि के मूल काव्य की यह कथा है—उसका पूर्णतः यह अर्थ है। कोई कहेगा कि मैंने वह झूठ कहा, इसलिए मैंने सन्देह का निराकरण कर दिया। ४२। (इधर) अयोध्या में यह स्थिति हो गयी, तो (उधर) राम तमसा नदी के तट पर जाकर ठहर गये। भूमि पर (पेड़ के) पत्तों को बिछा दिया। वे सब थके-माँदे होकर वहाँ सो गये। ४३।

सब थके-माँदे होकर विख्यात तमसा के तट पर सो गये। जब दो पहर रात बीत गयी, तब श्रीराम ने यह बात सोची। ४४।

* * *

अध्याय—१२ (श्रीराम द्वारा तमसा तथा गंगा को पार करना)

राग सामेरी

रघुवीर तमसा-तट रह्या, ते विचार करता मन,
रथ सहित वींटी रामने, सूता सकळ पुर-जन। १ ।
ते सरवे निद्रा-वश थया, मध्य निशा गई छे त्यांह,
त्यारे राम लक्ष्मण जानकी, बेठा भणे जण रथमांह्य। २ ।
सुमंत ने कहे हांक्य रथ, अंतरिक्ष मार्ग आज,
ज्यम जाणे नहि को अवधवासी, तेम करवुं काज। ३ ।
पछे सुमंते रथ चलाव्यो, आकाशमारग त्यम,
शृंगवेर मांहे ऊतर्या, ज्या गुह्यकनो आश्रम। ४ ।
ते गंगाजी ना तीर ऊपर, आविया श्रीराम,
नमस्कार कर्या जाह्नवीने, पोते पूरण-काम। ५ ।
त्या राम-लक्ष्मण जानकी, साथे सुमंत प्रधान,
ते सगर-कुल-तारिणी गंगा, मांह्य कीधां स्नान। ६ ।

अध्याय-१२ (श्रीराम द्वारा तमसा तथा गंगा को पार करना)

श्रीराम तमसा नदी के तट पर ठहर गये। वे मन में विचार कर रहे थे। (अयोध्या) नगरी के समस्त लोग रथ-सहित राम को घेरकर सोये हुए रहे थे। १। (जब तक) वे सब निद्राधीन हो गये, तब (तक) आधी रात बीत गयी थी। तब राम, लक्ष्मण और सीता तीनों जने रथ में बैठ गये। २। (श्रीराम ने) सुमन्त से कहा—'आज आकाशमार्ग से रथ चला दो। जिससे कोई भी अयोध्यावासी (हमारा जाना) नहीं जाने, ऐसे (ढंग से यह) काम करो। ३। अनन्तर सुमन्त ने आकाश मार्ग से वैसे ही रथ चलाया। (फिर) वे (लोग) शृंगवेरपुर में उतर गये, जहाँ गुह का आश्रम था। ४। तब श्रीराम गंगा नदी के उस तीर पर आ गये। स्वयं पूर्णकाम (श्रीराम) ने गंगा को नमस्कार किया। ५। तब राम, लक्ष्मण और सीता ने सचिव सुमन्त के साथ, सगर-कुल का उद्धार @ करनेवाली उस गंगा में स्नान किया। ६।

@ टिप्पणी—श्रीराम के एक सुविख्यात पूर्वज राजा सगर ने अश्वमेध यज्ञ किया, तो यज्ञीय घोड़े को चुराकर इन्द्र पाताल में ले गया। घोड़े की खोज में सगर के साठ सहस्र पुत्र चल दिये। वे खोज करते-करते पाताल में पहुँचे, तो वहाँ कपिल-मुनि ध्यानस्थ थे। उनकी तपस्या में बाधा उत्पन्न होने के कारण उन्होंने क्रोधपूर्वक सबको भस्म कर दिया। तदनन्तर सगर के परपोते भगीरथ ने तपस्या द्वारा स्वर्ग की गंगा को प्रसन्न कर लिया। अनेक बाधाओं को दूर करते हुए वह गंगा की धारा को

सुरसरीनी स्तुति करी, रामे आचर्यु नित्य कर्म,
पछे ऊतर्या एक वड तळे, आसन रचीने पर्म। ७।
पेला विप्र जाग्या प्रभाते, नव दीठा रथ रघुवीर,
त्यारे रुदन करवा मांड्युं, सरवे मूकी मननी धीर। ८।
रथचकनो चीलो न दीठो, विचार्युं मन साथ,
गया हशे पाछा अवधपुर, रथ बेसीने रघुनाथ। ९।
ते सर्वे आव्या नगरमां, मळवा तणी मन आश,
रघुवीरने दीठा नहि, त्यारे थया छेक निराश। १०।
रह्या राम गंगा-तीर उपर, वड तळे ते जाण,
ते दिवस आहार कर्यो नहि, दिन बे थया निरवाण। ११।
त्यां रात श्रीरघुवीर रह्या, पछे थयो प्रातःकाळ,
स्नान-संध्या आचर्यां, जे धर्मना प्रतिपाळ। १२।
वड-दूध सिंची जटा बांधी, भस्म चरची अंग,
ज्यम होय जोगी निरंजनी, त्यम शोभता श्रीरंग। १३।

फिर सुरनदी गंगा का स्तवन करके राम ने नित्य कर्मों का आचरण किया। अनन्तर वटवृक्ष के तले एक उत्तम आसन तैयार करके वे ठहर गये। ७। जब (इधर तमसा के तट पर) वे विप्र सबेरे जग गये, तब उन्होंने रथ और श्रीराम को नहीं देखा, तब मन का धीरज खोकर, वे सब रुदन करने लगे। ८। रथ के चक्रों की खोज (लीक) न देखी, तो मन में सोचा कि राम रथ में बैठकर अयोध्या वापस गये होंगे। ९। मन में (राम के) मिल जाने की आशा लिये हुए, वे सब नगर में आ गये। जब श्रीराम को नहीं देखा, तब वे निराश हो गये। १०। समझिए कि राम गंगा के तट पर वटवृक्ष के तले रह गये। उस दिन उन्होंने कोई आहार नहीं ग्रहण किया। (इस प्रकार) निश्चय ही दो दिन हो गये। ११। राम रात को वहाँ रहे। फिर सवेरा हो गया। जो (राम स्वयं) धर्म के प्रतिपालक हैं, उन्होंने स्नान-संध्या (जैसे नित्यकर्म) को सम्पन्न किया। १२। उन्होंने बरगद का दूध छिड़ककर (बालों की) जटा बाँध ली; शरीर में भस्म मल लिया। (तब) राम वैसे ही शोभायमान (दिखायी दे रहे) थे, जैसे वे कोई निरंजनी योगी हों। १३। जिस समय राम ने (बालों की) जटा में बरगद का दूध छिड़क दिया,

---

पाताल में ले गया; तदनन्तर गंगा-जल से सगर के पुत्रों अर्थात् भगीरथ के पूर्वजों का उद्धार हो गया। इस दृष्टि से गंगा को सगर-कुल की उद्धारिणी कहा है।

रामे जटामां दूध वडनुं, सींचियुं जेणी वार,
त्यारे सुमंते कल्पांत कीधुं, नेत्र आंसु धार । १४ ।
रघुवीर वळता बोलिया, सुमंत प्रत्ये वाण,
हे वीर, हावे जाओ वहेला, अवधपुरीमां जाण । १५ ।
अमो नाव बेसी गंगाजी, ऊतरशुं पेले पार,
तमो अमारी चिंता न करशो, जईशुं वनमोझार । १६ ।
रायने धीरज आपजो, संभाळजो पुरकाज,
रूडी पेरे प्रजाने पाळजो, नीति साथे राज । १७ ।
वळी इष्ट-मित्र गुरु पिताने, कहेजो मुझ परणाम,
चौद वरस वीत्या पछी, अमो आवीशुं निज गाम । १८ ।
सुमंत एवुं सांभळी, करतो रुदन अपार,
रघुवीर-चरणे शीश मूकी, पड्यो तेणी वार । १९ ।
महाराज तेडो साथ मुझने, आवुं सेवा काम,
तम विना नहि जाउं पुर विषे, शुं मुख देखाडुं राम । २० ।
ठालो रथ लई तम विना, पुर जाउं जेणी वार,
तो आत्महत्या करे तत्क्षण, मात-पिता परिवार । २१ ।

तब सुमन्त ने बहुत रुदन किया । उनकी आँखों से आँसुओं की धारा चल रही थी । १४ । (फलस्वरूप) बाद में श्रीराम ने सुमन्त से यह बात कही—' हे भाई, समझ लो, अब तुम शीघ्रतापूर्वक अयोध्या में जाओ । १५ । हम नाव में बैठकर गंगा के उस तट पर उतरेंगे । हम (तदनन्तर) वन में जाएँगे—तुम हमारी चिन्ता न करना । १६ । राजा को धीरज बँधाओ, नगर सम्बन्धी कार्य-को सम्हाल लेना । राजनीति के साथ (अनुसार) प्रजा का भलीभाँति पालन करो । १७ । फिर इष्ट-मित्रों को, गुरुजी और पिताजी को मेरा प्रणाम कह देना । चौदह वरस बीत जाने के पश्चात् हम अपने गाँव (नगर लौट) आएँगे ' । १८ । ऐसा सुनने पर सुमन्त ने बहुत रुदन किया और उस समय वे श्रीराम के चरणों में मस्तक रखकर पड़ गये । १९ । (वे बोले—) ' हे महाराज, मुझे अपने साथ ले चलिए । मैं आपकी सेवा के काम आऊँगा । बिना आपके मैं नगर नहीं जाऊँगा । हे राम, मैं (वहाँ) कौन मुँह दिखाऊँ ? । २० । बिना आपके (आपको लिये हुए) मैं रिक्त रथ नगर में जिस समय ले जाऊँगा, उस समय आपके माता-पिता परिवार-सहित तत्क्षण आत्मघात कर लेंगे । २१ । इसलिए, हे पुराणपुरुष, सुनिए । मैं आपके साथ

माटे तमारी साथ आवीश, सुणो पुरुष पुराण,
जो तेड़ी नहि जाओ मुझने तो, तजीश मारा प्राण । २२ ।
नीकर पाछा चालो पुरमां, दस दिवस रही आंही,
राये कह्युं छे वन फेरवी, पाछा लावजे पुरमांही । २३ ।
एवां स्नेह-वायक सांभळी, थया द्रवित श्रीरघुनाथ,
सुमंत चांप्यो रुदे साथे, मस्तक मूक्यो हाथ । २४ ।
तमे डाह्या छो सुमंत माटे, राखो मनमां धीर,
आज्ञा पाळो माहरी, घेर जाओ निश्चे वीर । २५ ।
राम घणां करुणावचन कहीने, समजाओ धरी नेह,
लोपाई नहि रामनी आज्ञा, वळ्यो पाछो तेह । २६ ।
श्रीराम लक्ष्मण जानकीने, नम्यो मन उचाट,
सुमंत रथ हांकी वळ्यो, ते अवधपुरनी वाट । २७ ।
सुमंत महादु:खवंत थईने, वळ्यो पाछो त्यांय,
गंगा ऊतरवा रामजी, पछे विचारे मन मांह्य । २८ ।
त्यां जाह्नवी निर्मळ वहे, गुह्यक तणो आश्रम,
घणा भीळ कोळी किरात रहे छे, घाट शोभा रम्य । २९ ।

आऊँगा । यदि आप मुझे नहीं ले जाएँ, तो मैं अपने प्राणों को त्याग दूँगा । २२ । नहीं तो यहाँ दस दिन रहकर (फिर) नगर में लौट चलिए । राजा ने (भी) कहा है कि वन में घुमाकर आपको नगर में लौटा लाएँ ' । २३ । ऐसे स्नेह-भरे वचन सुनकर श्रीराम दया से विह्वल हो उठे । उन्होंने सुमन्त को हृदय से लगा लिया और उनके मस्तक पर हाथ रखा । २४ । (फिर उन्होंने कहा—) ' हे सुमन्तजी, तुम समझदार हो । इसलिए मन में धीरज रखो । हे वन्धु, मेरी आज्ञा का पालन करो और निश्चयपूर्वक घर (लौट) जाओ ' । २५ । इस प्रकार (श्रीराम ने) स्नेह धारण करते हुए (अर्थात् स्नेहपूर्वक) करुणा से युक्त वहुत वचन कहकर सुमन्त को समझा दिया, तो उन्होंने श्रीराम की आज्ञा का उल्लंघन नहीं किया; वे पीछे (जाने के लिए) मुड़ गये । २६ । चिन्तातुर मन से सुमन्त ने श्रीराम, लक्ष्मण और जानकी को नमस्कार किया और रथ को हाँककर वे अयोध्या के मार्ग पर मुड़ गये । २७ । अति दुखी होकर सुमन्त वहाँ से पीछे मुड़ गये । (इधर) श्रीराम गंगा के पार उतर गये । फिर वे मन में सोचते रहे । २८ । वहाँ गंगा निर्मल (रूप से) बह रही थी; गुह का आश्रम था और बहुत-से भील, कोल तथा किरात रहते थे । उस घाट की शोभा

सहु गुह्यकमां सरदार छे, घोराय तेनु नाम,
ते कर्म नाविकनुं करे छे, गंगा-तीरे ठाम। ३०।
गया रामजी घाट उपर, ज्यां गुह्यकनो आश्रम,
भाई पार अमने उतारो, राम कहे पूरण-ब्रह्म। ३१।
जेना नामनी नौका वडे, भवसिंधु तरता जन,
ते प्रार्थना पोते करे, बोलता दीन वचन। ३२।
घोराय कहे तमे कोण छो ? कोण माता-पिता ने गाम,
शे कारण तमे नीकळ्या ? कहो शुं छे तमारुं नाम ? । ३३।
रघुवीर कहे घोराय सुण, पुर अयोध्या कहेवाय,
सूरज-वंशी सत्य-पालक, भूप दशरथ राय। ३४।
अमो पुत्र छे ते रायने, वळी आज्ञाकारी चार,
हुं राम ने आ वीर लक्ष्मण, साथे सीता नार। ३५।
वरदान माग्युं अपरमाते, राय पासे वचन,
आज्ञा पितानी पाळवा, अमो निकळ्या छे वन। ३६।
ते माटे पार उतार अमने, जवुं वनमां जाण,
मन-वांछित सुख पामशे, ने थशे तुज कल्याण। ३७।

रमणीय थी। २९। समस्त गुह्यकों का एक सरदार था। उसका नाम 'घोराय' था। वह नाविक का काम किया करता था। उसका (निवास-)स्थान गगा के तट पर था। ३०। श्रीराम घाट पर गये जहाँ गुह्यक का आश्रम था। (फिर उन) पूर्णब्रह्म ने उससे यों कहा—' हे भाई, हमें (गंगा के) पार उतार दो '। ३१। जिनके नाम की—अर्थात् नाम रूपी नाव से लोग भवसागर को पार कर जाते हैं, वे (श्रीराम) दीन वचन (वाणी में) बोलते हुए स्वयं प्रार्थना कर रहे थे। ३२। (यह सुनकर) घोराय ने कहा (पूछा)—' तुम कौन हो ? कौन है तुम्हारे माता-पिता और कौन गाँव है तुम्हारा ? किस कारण से तुम (घर से) निकले ? कहो, क्या नाम है ? '। ३३। (इसपर) श्रीराम ने कहा—" हे घोराय, सुनो। हमारा नगर 'अयोध्या' कहाता है। दशरथराज नामक (वहाँ के) सूर्यवंशीय, सत्यपालक राजा हैं। ३४। फिर उन राजा के हम चार आज्ञाकारी पुत्र हैं। मैं हूँ राम, यह बन्धु लक्ष्मण है और साथ में मेरी स्त्री सीता है। ३५। (हमारी) सौतेली माता ने राजा से वचन के रूप में वरदान माँग लिया और पिताजी की आज्ञा का पालन करने के लिए हम वन में जाने के लिए निकले हैं। ३६। समझ लो, इसलिए हमें पार उतार दो, तो हम वन में जाएँगे।

एवां वचन श्रीरामनां, सुण्यां सत्य प्रमाण,
त्यारे माता गुह्यक तणी, घरमां थकी बोली वाण । ३८ ।
अरे पुत्र सुण ए रामने, नव उतारीश तुं पार,
में सांभळ्युं मुनि-मुख थकी, ते कारण कहुं निरधार । ३९ ।
एक शल्या थई गई सुन्दरी, एनी चरण-रज परताप,
माटे नाव नारी थई जशे, जो स्पर्श करशे आप । ४० ।
सुणी माता-वाणी कहे गुह्यक, सत्य ए निरधार,
कंई चेटक छे तम चरण-रजमां, नहि उतारुं पार । ४१ ।
पाषाणथी ए काष्ठ कूळूं, थाय नारी रूप,
पछे उद्यम शो करिये अमो ? सांभळो रघु-कुल-भूप । ४२ ।
माटे रूडी पेरे पग पखालुं, जळ वडे हुं आज,
त्यार पछी नावमां, तमने बेसाडुं महाराज । ४३ ।
एवुं सांभळी रघुवर हस्या, पछे बोल्या मधुर वचन,
ज्यम त्यम करी भाई पार उतारो, माने ज्यम तुझ मन । ४४ ।
पछी मंदिरमां बेसाडिया, रघुवीरने आसन,
लावियो भरी कुंभ पोते, गंगाजळ पावन । ४५ ।

(इससे) तुम मनचाहे सुख को प्राप्त हो जाओगे और तुम्हारा कल्याण होगा " । ३७ । श्रीराम के ऐसे निश्चित रूप में सत्य वचन सुने; तब गुह्यक की माता घर के भीतर से यह बात बोली । ३८ । 'अरे बेटे, सुनो । इस राम को तुम पार उतार न देना । मैंने मुनियों के मुख से (जो) सुना है, वह कारण सचमुच कह देती हूँ । ३९ । एकशिला उनके चरणों की धूली के प्रताप से सुन्दर स्त्री हो गयी । इसलिए (मुझे लगता है), यदि यह स्वयं स्पर्श करे, तो नाव नारी हो जाएगी ' । ४० । माता का वचन सुनकर गुह्यक ने कहा—' यह निश्चय ही सत्य है । (इसलिए) मैं तुम्हें (गंगाजी के) पार नहीं उतार दूँगा । ४१ । पत्थर से यह काठ (की नाव) कोमल है—वह नारी रूप (में परिवर्तित) हो जाएगी । हे रघुकुल (में उत्पन्न) राजा, सुनो, फिर हम क्या काम करें ? इसलिए मैं आज (तुम्हारे) पाँवों को पानी से अच्छी तरह से धोऊँगा । हे महाराज, उसके बाद तुम्हें नाव में बैठाऊँगा ' । ४२-४३ । ऐसा सुनकर श्रीराम मुस्करा दिये और फिर (यों) मधुर वचन बोले—' तुम्हारा मन जैसा चाहता हो, जैसे तैसे वैसा करके, हे भाई, (हमें) पार उतार दो ' । ४४ । अनन्तर (गुह्यक ने अपने) मन्दिर अर्थात् आश्रम में श्रीराम को आसन पर बैठा लिया और

काष्ठनी कथरोट लावी, तेह मूकी धर्ण,
ते मध्ये धोया जतनथी, रघुवीर केरा चर्ण । ४६ ।
लूछी पछे निज गोदमां, पद मूकिया परिधान,
पछी राम-पद-जळ सहु कुटुंबे, मळी कीधुं पान । ४७ ।
देवनां दुंदुभि गडगड्यां, थई पुष्प-वृष्टि अपार,
धन्य धन्य कहेता नर सकळ, एना भाग्यनो नहि पार । ४८ ।
जे चरणथी गंगा थयां, मुनि-पत्नी थई निष्पाप,
शिव विरंचि सहस्र-लोचन, जे रज इच्छे आप । ४९ ।
मायापति ए शुद्ध चेतन जगद्गुरु रघुवीर,
ते प्रभुना पग धोई पीधुं, गुह्यके त्यां नीर । ५० ।
रघुवीर-पद-परतापथी, ऊपनी भक्ति अपार,
फळ-मूळ लावी त्रणे जणने, कराव्यो छे आहार । ५१ ।
गुह्यके लीधा स्कंध उपर, शोभता श्रीरंग,
पछे नावमां बेसाडिया, ते सीता-लक्ष्मण संग । ५२ ।

पवित्र गंगा-जल भरकर वह स्वयं एक घड़ा लाया । ४५ । फिर वह काठ की एक कठौती ले आया और उसने उसमें धरा हुआ पानी छोड़ दिया । (तदनन्तर) उसने उसमें श्रीराम के चरणों को यत्न-पूर्वक धो लिया । ४६ । अनन्तर अपने (पहने हुए) वस्त्र से उन चरणों को पोंछने के बाद अपनी गोद में धरा रखा । फिर समस्त परिवार (के लोगों) ने श्रीराम के चरण-जल को पी लिया । ४७ । (तब) देवों की दुन्दुभी गड़गड़ाहट के साथ बज उठी और (आकाश या देवलोक से) अपार पुष्पवर्षा हो गयी । सब लोग कहते रहे—"धन्य, धन्य ! इसके (सद्-) भाग्य की कोई सीमा नहीं है' । ४८ । जिन (के) चरण से गंगाजी उत्पन्न हो गयीं, जिससे (गौतम) मुनि स्त्री (अहल्या) पापमुक्त हो गयी (अर्थात् उसका उद्धार हो गया), जिस (चरण की) धूलि (को पाने) की अभिलाषा स्वयं शिवजी, ब्रह्मा तथा इन्द्र किया करते है, वे श्रीराम जगद्गुरु हैं, मायापति हैं, शुद्ध चैतन्य हैं; उन प्रभु के चरणों को धोकर गुह्यक ने वहाँ (चरण-तीर्थ) पी लिया । ४९-५० । श्रीराम के चरणों के प्रताप से (गुह्यक के मन में) असीम भक्ति उत्पन्न हो गयी । (तदनन्तर) फल-मूल लाकर उसने उन तीनों जनों को आहार करा दिया । ५१ । (फिर) गुह्यक ने श्रीराम को कंधे पर (बैठा) लिया । (उस समय) वे शोभायमान (दिखायी दे रहे) थे । (तत्पश्चात्) उसने उन्हें लक्ष्मण और सीता सहित नाव में बैठा दिया । ५२ । गुह्यक ने नाव खे दी और

नाव खेड्युं गुह्यके, उतार्या गंगा-तीर,
ज्यम जोगी पामे निवृत्ति, एम पाम्या पेली तीर। ५३।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

तीर गंगाने ऊतर्या, नावमांथी रघुराय रे,
घणी स्तुति कीधी गुह्यके, कर जोडी लाग्यो पाय रे। ५४।

उन्हें गंगा के पार उतार दिया। जैसे कोई योगी निवृत्ति को प्राप्त होता है, वैसे श्रीराम (लक्ष्मण और सीता) दूसरे तट को प्राप्त हो गये। ५३।

श्रीराम नाव में से गंगा के तट पर उतर गये, तो गुह्यक ने हाथ जोड़कर उनकी बहुत स्तुति की। (तदनन्तर) वह उनके पाँव लग गया। ५४।

* * *

अध्याय—१३ (श्रीराम का चित्रकूट में आगमन)

राग मारु

राम ऊतर्यो गंगा पार, साथे सीता सुमित्रा-कुमार,
पछे नाविक प्रत्ये वचन, हसी बोल्या कमळ-लोचन। १।
माग्य माग्य आपुं वर हुंय, मुजने घणो वहालो तुंय,
पूरुं सकळ मनोरथ आज, तें कर्युं घणुं मारुं काज। २।
नम्यो गुह्यक जोडी पाण, बोल्यो गद्गद कंठे वाण,
निज भक्ति आपो रघुनाथ, मारे मस्तक मूको हाथ। ३।
सुणी राम थया प्रसंन, तेणे दीधुं आलिंगन,
जा तुं भक्ति करजे मारी, अंते सद्गति थाशे तारी। ४।

अध्याय—१३ (श्रीराम का चित्रकूट में आगमन)

श्रीराम गंगा के पार उतर गये। उनके साथ में सीता और लक्ष्मण थे। फिर कमल-नयन श्रीराम मुस्कराते हुए उस नाविक से यह वचन बोले। १। 'माँग लो, माँग लो। मैं तुम्हें वर देता हूँ। तुम मुझे बहुत प्यारे (लग रहे) हो। मैं तुम्हारे समस्त मनोरथ आज पूर्ण कर दूँगा। तुमने मेरा बड़ा काम किया है'। २। (इसपर) हाथ जोड़कर गुह्यक सद्गदित कण्ठ से यह वचन बोला—'हे रघुनाथ, आप मुझे अपनी भक्ति (का वर) प्रदान कीजिए; मेरे मस्तक पर अपना हाथ रखिए'। ३। यह सुनकर राम प्रसन्न हो गये; उन्होंने उसका आलिंगन किया (और कहा—), 'जाओ, तुम मेरी भक्ति करो। अन्त में तुम्हारी सद्गति

एम करुणा करी भगवान, थयुं गुह्यकने सहु ज्ञान,
पाम्यो पद-रज निर्मळ गात्र, थयो राम कृपानुं पात्र । ५ ।
नमी रामने आव्यो घेर, करे भक्ति अति सुख-भेर,
मूक्युं नाविक केरुं कर्म, थयो राम अनुग्रह पर्म । ६ ।
ते दिवसथी पाम्यो अधिकार, घोराजा थयो विश्व-विस्तार,
भोगवे राजधानी भोग, मन श्रीरघुवीर संजोग । ७ ।
राम ऊतर्या गंगातीर, पडी रात्रि रह्या रणधीर,
बीजे दिवसे आव्या प्रयाग, त्यां स्नान कर्युं महाभाग । ८ ।
त्यांथी आव्या पूरणब्रह्म, भारद्वाज तणे आश्रम,
ऋषि रामने मळिया हेत, विनय भक्ति प्रेम समेत । ९ ।
भारद्वाजे करी स्वागत्य, संतोष्या छे घणुं रघुपत्य,
जाण्युं सर्व मुनि मनमांय, आव्या रामने मळवा त्यांय । १० ।
भारद्वाजने आश्रम धीर, एक रजनी रह्या रघुवीर,
बोल्या मुनि सहु पूरणकाम, रहो चौद वरस अहीं राम । ११ ।

(मुक्ति) हो जाएगी ' । ४ । इस प्रकार भगवान् राम ने कृपा की, तो गुह्यक को समस्त (आत्म-) ज्ञान (प्राप्त) हो गया । राम के पदरज (के प्रताप) से वह पवित्र देह को प्राप्त हो गया और श्रीराम की कृपा का पात्र बन गया । ५ । श्रीराम को नमस्कार करके वह (अपने) घर आ गया । वह बहुत सुख-सहित भक्ति करता रहा । उसने नाविक का काम छोड़ दिया । उनपर (अब) श्रीराम का बहुत अनुग्रह हो गया । ६ । उस दिन से वह गुह्यकराज घोराय अधिकार को प्राप्त हो गया और (उसका नाम) विश्वभर के विस्तार को प्राप्त हो गया । वह अपनी राजधानी (में सुख) का भोग करता था । फिर भी उसका मन श्रीराम के साथ एकात्म बना रहा । ७ । (इधर) रणधीर राम गंगा के (दूसरे) तीर पर उतर गये । (वहाँ) रात हुई, तो वे (वहाँ) रह गये । वे महाभाग दूसरे दिन प्रयाग में आ गये । वहाँ उन्होंने (गंगा-स्नान) किया । ८ । वहाँ से वे पूर्णब्रह्म श्रीराम भरद्वाज ऋषि के आश्रम आ गये । वे ऋषि स्नेह, विनम्रता, भक्ति और प्रेम के साथ उनसे मिले । ९ । भरद्वाज ने उनका स्वागत किया । उससे श्रीराम बहुत सन्तुष्ट हो गये । सब मुनि मन में यह समझ गये, तो वे राम से वहाँ मिलने के लिए आ गये । १० । भरद्वाज के आश्रम में धीर पुरुष श्रीराम एक रात भर ठहर गये । सब मुनियों ने उनसे कहा—' हे पूर्णकाम श्रीराम, चौदह वर्ष तक यहीं रहिए ' । ११ । तो रघुवीर ने कहा—' हे ऋषिराज, मेरे द्वारा

रघुवीर कहे ऋषिराय, में आ ठामे न रहेवाय,
पासे रह्या विचारी मन, आवे मात-पिता पुरजन। १२।
मारी संगे ते कष्ट ज पामे, माटे रहेवाय नहि आ ठामे,
एवुं कहीने ऊठ्या रघुवीर, चाल्या जाय प्रयागने तीर। १३।
सिद्धवड छे त्यां गम्भीर, देवी सावित्री छे महाधीर,
त्यां लगी भारद्वाज आविया, तेने वळावीने पाछा गया। १४।
सावित्रीदेवीनुं पूजन, कर्युं सीताए निर्मळ मन,
प्रागतीरे सिद्धवड ठाम, त्यां संकल्प कर्यो श्रीराम। १५।
वन जईने आवीशुं ज्यारे, करीशुं अहीं रहीने त्यारे,
करावीशुं ब्राह्मणने भोजन, वळी संत जे निर्मळ मन। १६।
त्यारे बे लक्ष आपीशुं गाय, एवुं बोल्या श्रीरघुराय,
त्यांथी चाल्या जानकी-कंथ, चिंतव्यो चित्रकूटनो पंथ। १७।
सीता लक्ष्मण साथे धीर, चित्रकूट चढ्या रघुवीर,
ते गिरि महा रम्य विशाळ, तरु सफळ छे भूमि रसाळ। १८।
तेनी उपर चढ्या राम, भक्त-वत्सल पूरणकाम,
गिरि आश्रम छे पावन, त्यां रहे छे वाल्मीक मुन्य। १९।

इस स्थान पर नहीं रहा जाए। (क्योंकि) हम पास ही रहे हैं, ऐसा मन में सोचकर माता-पिता तथा नगर के लोग (यहाँ) आएँगे। १२। मेरे साथ वे कष्ट को ही प्राप्त होंगे। इसलिए इस स्थान पर न रहा जाए'। ऐसा कहकर श्रीराम उठ गये और प्रयाग के (नदी-) तट पर चले गये। १३। वहाँ गम्भीर सिद्धवट है, महाधैर्यशालिनी सावित्री देवी है। वहाँ तक भरद्वाज आ गये और उन्हें बिदा करके वापस गये। १४। (तदनन्तर) सीता ने निर्मल मन से सावित्री देवी का पूजन किया। वहाँ प्रयाग-तट पर (जहाँ) सिद्धवट है, (उस) स्थान पर श्रीराम ने (यह) संकल्प किया। १५। 'वन जाकर जब (लौट) आऊँगा, तब यहाँ रहकर (यह) करूँगा: ब्राह्मणों तथा उनके अतिरिक्त और जो निर्मल-मनवाले सन्त हैं, उनको भोजन कराऊँगा। १६। तब दो लाख गायें (दान में) प्रदान करूँगा'। इस प्रकार श्रीराम बोले। वहाँ से जानकीपति श्रीराम चित्रकूट के मार्ग का चिन्तन करते हुए, अर्थात् उसे लक्ष्य करके चल दिये। १७। धैर्यशील रघुवीर सीता और लक्ष्मण-सहित चित्रकूट पर्वत पर चढ़ गये। वह पर्वत बहुत रम्य और विशाल है। (वहाँ के) पेड़ फल-युक्त थे और भूमि रसमयी अर्थात् उपजाऊ थी। १८। भक्त-वत्सल पूर्णकाम श्रीराम (सीता और लक्ष्मण-

जे नारदना उपदेशे, थया आदिकवि शुभ वेशे,
जेनी शांत मति छे मोटी, करी रामायण शतकोटी । २० ।
एवा वाल्मीकि रहे ते ठार, तेनी पासे मुनि छे अपार,
त्यां गया पोते रघुराय, जई लाग्या मुनिने पाय । २१ ।
रघुवीरने दीठा ज्यांहे, घणुं हरख्या मुनि मनमांहे,
उठाड्या रामने तेणी वार, भेट्या मुनिवर प्रेम अपार । २२ ।
पछे सर्व मुनिने राम, पाये लागी कर्या परणाम,
घणुं हरख्या वाल्मीक मुंन्य, फळमूळ कराव्या अशन । २३ ।
धन्य दिवस घड़ी महाराज, रामदर्शन पाम्यो आज,
सहु बेठा थई सुखवंत, कह्युं मुनिने वरतांत । २४ ।
हवे रहो अहीं कहे मुनिजन, चित्रकूट करो पावन,
एवुं सांभळी श्रीरघुवीर, करी इच्छा रहेवानी धीर । २५ ।
जोई विशाळ भूमि पवित्र, बांधी पर्णकुटी त्यां विचित्र,
तरुछाया घणी छे रसाळ, शिला स्फटिक भोम्य विशाळ । २६ ।

सहित) उस पर्वत पर चढ़ गये । उस पर्वत पर पवित्र आश्रम था । वहाँ वे वाल्मीकि मुनि रहते थे, जो नारद मुनि के उपदेश से शुभ वेश से युक्त आदिकवि हो गये और जिनकी शान्त मति (सचमुच) महान् थी तथा जिन्होंने शतकोटि रामायणों की रचना की थी । १९-२० । ऐसे वे वाल्मीकि उस स्थान पर रहते थे, उनके साथ बहुत-से (अन्य) मुनि (भी रहते) थे । श्रीराम स्वयं वहाँ गये, और (पास जाकर) मुनि के पाँव लग गये । २१ । जब रघुवीर को देखा, तो वाल्मीकि मुनि मन में बहुत आनन्दित हो गये । मुनिवर ने उस समय राम को उठा लिया, अपार प्रेम से उनको गले लगा लिया । २२ । अनन्तर राम ने सब मुनियों के पाँव लगकर प्रणाम किया । वाल्मीकि मुनि बहुत आनन्दित हो गये । उन्होंने (श्रीराम) आदि को फल-मूल का भोजन कराया । २३ । (फिर वे बोले—) ‘ हे महाराज, यह दिवस और घड़ी धन्य है—आज हमें श्रीराम के दर्शन प्राप्त हो गये ’ । सब सुखी होकर बैठ गये, तो श्रीराम ने मुनि को वृत्तान्त कहा (सुनाया)। २४ । (तब मुनिजन बोले)—‘ अब यहाँ रहिए और चित्रकूट को पावन कीजिए ’ । ऐसा सुनकर धीर पुरुष श्रीराम ने वहाँ रहने की अभिलाषा की । २५ । (वहाँ की) विशाल और पवित्र भूमि को देखकर उन्होंने एक विचित्र (अद्भुत) पर्णकुटी बना ली । वहाँ पेड़ों की घनी और रसयुक्त (आनन्दप्रद) छाया थी, स्फटिक की शिला से युक्त विशाल भूमि थी । २६ । वहाँ आश्रम बनाकर

त्यां रह्या करीने आश्रम, साचवे निज कुळनो धर्म,
रहे अनेक मुनिवर त्यांय, करी आश्रम परवतमांय । २७ ।
मुनि-पत्नीओ मळवा आवे, जानकीने हरखे बोलावे,
वन भील-किरात प्रमुख, रामने जोई पाम्या सुख । २८ ।
भात-भातनां वनफळ जेह, लावी रामने आपे तेह,
आवे भीलडीओ भाग्यवान, सीतानो करती घणां मान । २९ ।
वन-भूषणना कंई साज, करी लावे सीताने काज,
राम सेवा करे वनवासी, ते मानी ले छे अविनाशी । ३० ।
जे प्रभुने करवा प्रसन्न, करे जप तप जोग जगन,
ते माने छे वनचरनी सेव, वखाणे छे तेने घणुं देव । ३१ ।

वलण (तर्ज़ बदल कर)

देवता वखाणे छे वनवासीने, रह्या चित्रकूट रघुवीर रे,
ह्वे अवधपुरीनी कहुं कथा, सुणो श्रोता थई मतिधीर रे । ३२ ।

* * *

वे ठहर गये और अपने कुल के अनुसार धर्म का निर्वाह किया करते। वहाँ उस पर्वत-प्रदेश में आश्रम बनाकर अनेक बड़े-बड़े मुनि रहते थे। २७। (वहाँ) मुनियों की स्त्रियाँ सीता से मिलने आतीं; वे उसे आनन्द-पूर्वक बुला लेतीं। वन में रहनेवाले भीलों और किरातों के मुखिया श्रीराम को देखकर सुख को प्राप्त हो गये। २८। वे तरह-तरह के जो वन्य फल (मिलते) थे, उन्हें लाकर श्रीराम को दिया करते। भाग्यवती भीलनियाँ आया करतीं और सीता का बहुत सम्मान किया करतीं। २९। वे वन्य-आभूषणों के कुछ साज वनाकर सीता के लिए लाया करतीं। इस प्रकार वन के वे (भील, किरात आदि) निवासी (श्रीराम की) सेवा किया करते। अविनाशी भगवान् श्रीराम (भी) उसे स्वीकार किया करते थे। ३०। जो प्रभु को प्रसन्न करने के लिए जप, तप, योग-साधना, यज्ञ करते हैं, वे (भी) इन वनवासियों की सेवा महान् (सेवा के रूप में) मानते हैं। देवता (तक) उसकी बहुत प्रशंसा करते हैं। ३१।

देवता उन वनवासियों की प्रशंसा करते हैं। श्रीराम (सीता और लक्ष्मण सहित) चित्रकूट पर रह गये। हे श्रोताओ, अब धीरमति होकर सुनिए, अब मैं अयोध्या सम्बन्धी कथा कहता हूँ। ३२।

* * *

अध्याय—१४ (सुमंत का अयोध्या में आगमन और दशरथ का स्वर्गवास)

राग वेराडी

सुमंत संचर्यो रे, मारगे करतो जाय रुदन,
रथ हांकी वळ्यो रे, पस्ताय छे अति घणुं निज मन। १।
अरे हुं अभागियो रे, वनमां मूकीने आव्यो राम,
मुंने जनुनीए जन्म्यो वृथा रे, करवा आवुं निर्दय काम। २।
देखशे रथ राम विना रे, पामशे मात-पिता घणुं दुःख,
ज्यारे मने पूछशे रे, त्यारे हुं शुं देखाडीश मुख ?। ३।
सुमंत एम शोचतो रे, रोई रोई रातां थयां लोचन,
अश्व झूरे घणुं रे, पग पाछा पडे दुर्बळ तन। ४।
अवधपुर आवियुं रे, दीठी नगरी प्रेत समान,
लोक सहु रुदन करे, जे ज्यां ते त्यां मूकी भान। ५।
ज्यारे राम वन गया रे, पुरमांहे पडी छे हरताळ,
देह ज्यम प्राण विना रे, त्यम थई अवधपुरी ते काळ। ६।
प्रधान त्यां परवर्यो रे, पुरमां ढांकी पोतानुं मुख,
केकईने आंगणे रे, रथ छोड्यो थयुं अति घणुं दुःख। ७।

अध्याय—१४ (सुमन्त का अयोध्या में आगमन और दशरथ का स्वर्गवास)

सुमन्त (अयोध्या की ओर) चल पड़े। मार्ग में वे रोते हुए जा रहे थे। वे रथ को हाँकते हुए मुड़ गये, तो अपने मन में बहुत पछता रहे थे (ग्लानि अनुभव कर रहे थे)। १। 'अरे मैं अभागा हूँ, श्रीराम को वन में छोड़कर आ गया। माता ने मुझे व्यर्थ ही जन्म दिया, जो मैं यह निर्दय काम करने आ गया। २। जब रथ को बिना राम के देखेंगे, तो उनके माता-पिता बड़े दुख को प्राप्त होंगे। जब वे मुझसे पूछेंगे, तो मैं उन्हें क्या मुँह दिखाऊँ ?। ३। सुमन्त इस प्रकार शोक करते रहे; रोते-रोते उनकी आँखें लाल हो गयीं। घोड़े घुल-घुलकर सूख गये। उनके पाँव (मानो) पीछे पड़ रहे थे। उनके शरीर दुबले हो गये थे। ४। अयोध्या नगरी (निकट) आ गयी। वह तो प्रेत के समान दीख पड़ी। जो जहाँ थे, वहाँ भान खोकर, सब लोग रुदन कर रहे थे। ५। जब से श्रीराम वन गये, तब से नगर में हड़ताल पड़ गयी है। जैसे बिना प्राण के देह होती है, वैसे उस समय अयोध्या नगरी बिना राम के (निष्प्राण) हो गयी। ६। अपने मुख को ढाँके हुए सचिव (सुमन्त) वहाँ नगर में गये और उन्होंने कैकेयी के आँगन में रथ को

मंदिरमां मंत्री गयो रे, ज्यां छे दशरथ भूप सुजाण,
सहु साथ वींटी वळ्या रे, रायना कंठे आव्या छे प्राण। ८।
सुमंते त्यां जई रे, कीधा रायजीने परणाम,
भूपति बोलिया रे, सुमंत क्यां मूकी आव्यो राम ? । ९ ।
लक्ष्मण जानकी रे, प्राण-वल्लभ मारो रघुवीर,
मारुं सर्वस्व धन गयुं रे, ह्वे हुं क्यम करी राखुं धीर ? । १० ।
सुमंत तें शुं कर्युं रे ? रामने शीद मूकी आव्यो वन ?
मंदिर मारुं उज्जड थयुं रे, कोणे फोड्यां मारां लोचन ? । ११ ।
हुं अंधनी लाकडी रे, रामने चोरी गयुं कोण आज ?
दैवे दुःख दीधुं घणुं रे, में शां कर्यां हशे कूडां काज ? । १२ ।
मने मूकी क्यां गया रे ? आवो मारा राम कुंवर सुकुमार,
मारी आज्ञा कोण पाळशे रे ? कोण चलावशे राजवहेवार? । १३ ।
वैदेही क्यां गई रे ? सुन्दर चंपक कळी सुकुमार,
आवो मेरी मावडी रे ? में तुंने दीधुं दुःख अपार । १४ ।
ह्वे मुख नथी देखतो रे, लाड़कवाया लक्ष्मण वीर,
आवो डाह्या दीकरा रे, मारुं तन-मन-धन रघुवीर । १५ ।

खोल दिया। उन्हें बहुत दुख हो गया। ७। भवन में जहाँ ज्ञानी राजा थे, वहाँ सचिव गये। तो सब (लोगों) ने साथ में उन्हें घेर लिया। राजा के प्राण कण्ठ तक आये हुए थे। ८। वहाँ जाकर सुमन्त ने राजा को प्रणाम किया। तो उन्होंने कहा (पूछा)—'हे सुमन्त, राम को कहाँ छोड़कर आये ? । ९। हे लक्ष्मण, हे जानकी, हे मेरे प्राणप्रिय रघुवीर, (जान पड़ता है)। मेरा सब धन (लुट) गया। अब मैं कैसे धीरज रखूँ ? । १०। हे सुमन्त, तुमने क्या किया ? राम को किसलिए वन में छोड़कर आ गये ? मेरा मन्दिर उजड़ गया। मेरी आँखों को किसने फोड़ डाला ? । ११। मुझ अंधे की लकड़ी श्रीराम को आज कौन चुराकर ले गया ? दैव ने (मुझे) बहुत दुख दिया। मैंने (ऐसे) कौन बुरे कर्म किये होंगे ? । १२। मुझे छोड़कर कहाँ गये ? हे मेरे सुकुमार कुँवर राम, (वापस) आ जाओ। मेरी आज्ञा का पालन कौन करेगा ? राजकाज कौन चलाएगा ? । १३। सीता कहाँ गयी ? वह तो सुन्दर सुकोमल चम्पक कली है। अरी मेरी मैया, आ जाओ। मैंने तुम्हें बहुत दुख दिया। १४। हे लाड़ले-प्यारे वीर लक्ष्मण, अब तुम्हारा मुँह अभी (मुझे) नहीं दिखायी दे रहा है। हे मेरे समझदार बेटे, मेरे तन-मन-धन रघुनाथ, (वापस) आ जाओ। १५। हे विधाता, तुमने (यह) क्या

हे विधि तें शुं कर्युं रे ? लूटी लीधुं देखाडीने सुख,
आवुं को' ने थाय नहि रे, हा हा दैवे दीधुं घणुं दुःख । १६ ।
बाळक बाळपणे रे, में पापीए काढ्यां वन,
सुमंत साचुं कहे रे, क्यांथी तुं पाछो आव्यो प्राण-जीवन? । १७ ।
क्यां लगी संग कर्यो रे, क्यांथी तुं पाछो आव्यो घेर ?
रामे त्यां शुं कर्युं रे, ते मांडी कहे मुझने पेर । १८ ।
सुमंत थयो गळगळो रे, नेत्र सजळ थई बोल्यो वाण,
महाराज, में घणुं कह्युं रे, पण पाछा न वळ्या पुरुष-पुराण । १९ ।
हुं शृंगवेर सुधी गयो रे, त्रण दिवस लगी रह्या निराहार,
मने पाछो वाळियो रे, गुह्यके उतार्यो गंगा पार । २० ।
दक्षिण दिशा भणी रे, गंगा ऊतरीने गया राम,
तमने घणा करी रे, रघुपतिए कह्या छे प्रणाम । २१ ।
सुणी एवुं भूपति रे, रुंरुं लाग्यो हुताशन,
गाढे स्वर थकी रे, राये कीधुं शोक रुदन । २२ ।
कंठ मळी गयो रे, अंग पछाड़े अवनीमांय,
राम-विजोगनो रे, अंगे अग्नि लाग्यो त्यांय । २३ ।

किया ? तुमने सुख (रूपी धन) दिखाकर लूट लिया। किसी का भी ऐसा दुख नहीं रहा होगा। हाय ! दैव ने (मुझे) बड़ा दुख दिया। १६ । हाय रे ! बच्चों को बचपन में ही मैं—पापी ने वन में डाल दिया। हे प्राणजीवन सुमन्त, तुम सच कहो, तुम कहाँ से वापस आ गये ? । १७ । तुमने कहाँ तक (उनका) साथ किया ? तुम कहाँ से घर वापस आ गये ? राम ने वहाँ क्या किया ? वह बात ठीक करके (व्यवस्थित रूप से) बता दो'। १८ । (यह सुनकर) सुमन्त बहुत गद्‌गद हो गये। आँखों के अश्रु-जल पूर्ण होते हुए वे (यह) बात बोले—'हे महाराज, मैंने तो बहुत कहा; परन्तु वे पुराणपुरुष (श्रीराम) पीछे नहीं मुड़ गये। १९ । मैं शृंगवेरपुर तक गया। वे तीन दिन तक निराहार रहे। (तब) उन्होंने मुझे पीछे लौटा दिया और गुह्यक ने उन्हें गंगा के उस पार उतार दिया। २० । गंगा को पार करके श्रीराम दक्षिण दिशा में गये। रघुपति ने आपको बहुत-बहुत प्रणाम कहा है'। २१ । राजा ने ऐसा सुना, तो मानो उनके रोएँ-रोएँ में आग लग गयी और भारी स्वर में वे शोकपूर्वक रुदन करने लगे। २२ । उनका गला भर आया। उन्होंने शरीर धरती पर गिरा (लुढ़का) दिया। तब राम के वियोग से उत्पन्न आग शरीर में लग गयी। २३ । फिर राजा ने

आरत नादथी रे, पोकार्युं राये रामनुं नाम,
देह मूकी दशरथे, प्राण गया कहेतां हे राम। २४।

वलण (तर्ज़ बदल कर)

राम राम रघुवीर कहेतां, तज्या भूपे प्राण रे,
हाहाकार हवो तदा, सहु रुदन करे निर्वाण रे। २५।

आर्त स्वर से राम का नाम (लेकर) पुकारा। राजा दशरथ ने देह छोड़ दी। 'हे राम' कहते-कहते उनके प्राण निकल गये। २४।

'राम', 'राम' 'रघुवीर' कहते हुए राजा ने प्राण त्याग दिये। तब हाहाकार हो गया। सब अवश्य ही रुदन करते रहे। २५।

* * *

अध्याय—१५ (भरत और शत्रुघ्न का अयोध्या में आगमन)

राग भैरव

सुणो श्रोताजन गति कर्मनी, क्यां रामने वनवास,
क्यां मरण दशरथनुं ए अकळ गत्य अविनाश। १।
सुत चार दशरथरायने, महापराक्रमी बळवंत,
पण अंतकाळे राय पासे, नथी एके तन। २।
त्यारे प्रधाने पोकार करियो, पड्या ज्यारे भूप,
राम राम कहेता मरण पाम्या, थया रामस्वरूप। ३।
नगरमां हाहाकार थयो, करती प्रजा आक्रंद,
कौशल्या सुमित्रा आदे, रुए राणीवृंद। ४।

अध्याय—१५ (भरत और शत्रुघ्न का अयोध्या में आगमन)

हे श्रोता जनो, कर्म की गति कैसी होती है, सुनिए। कहाँ श्रीराम का वनवास और कहाँ दशरथ राजा की मृत्यु! अविनाशी भगवान् की वह गति अगम्य होती है। १। दशरथ के चार महापराक्रमी तथा बलवान पुत्र थे। परन्तु मृत्यु के समय राजा के पास एक भी पुत्र नहीं था। २। जब राजा (मृत के रूप में) पड़ गये, 'राम', 'राम' कहते-कहते मृत्यु को प्राप्त हुए और राम-स्वरूप हो गये, तब सचिव (सुमन्त) चिल्ला उठे। ३। नगर में हाहाकार मच गया। प्रजा विलाप करने लगी। कौसल्या, सुमित्रा आदि रानी-वृन्द रोने लगीं। ४।

एक दुःख रामवियोगनुं, बीजुं राजा पाम्या मर्ण,
जेम वींछी करडे शीश ऊपर, डशे पन्नग चर्ण। ५।
जेम चोर लूंटी जाय, वळतो अंग मारे घाय,
अग्नि लाग्यो घर विषे, ते समे चाल्यो वाय। ६।
ए दुःख न आवे कह्यामां, हारे कविनी वाण,
एम राणीओ रोती घणुं, विलाप करीने जाण। ७।
त्यारे वसिष्ठे वार्या सहुने, न करशो रुदन,
जे थनारुं ते थयुं हवे, धीरज राखो मन। ८।
तेडावो उतावळा, भरत ने शत्रुघन,
राज्यासन बेठा पछी, भूपने थाय दहन। ९।
पछी अंग दशरथरायनुं, तेलमां राख्युं तेह,
तेडवा मोकल्या भरतने, सुमंत मंत्री जेह। १०।
गुरु कहे तुं नव कहीश, कंई भरतने ए उपाय,
जे वन गया रघुवीर, पाम्या मरण दशरथराय। ११।
जो सांभळशे एवुं भरतजी, तत्काळ तजशे प्राण,
कह्या विना तुं लाव्य तेडी, उतावळो निर्वाण। १२।

एक दुःख तो राम के वियोग का था; और दूसरा यह था— राजा मृत्यु को प्राप्त हुए। (यह) मानो (ऐसे हुआ कि) ऊपर मस्तक में बिच्छू डस गया हो और (नीचे) पाँव में साँप काट गया हो। ५। अथवा मानो चोर (किसी को) लूट गया हो और तत्पश्चात् (किसी ने) शरीर पर आघात कर दिया हो; अथवा मानो घर में आग लग गयी हो और उस समय हवा भी चलने लगी हो। ६। (कवि द्वारा भी) वह दुःख कहने में नहीं आता। कवि की वाणी (उसे कहते-कहते) हार जाती है। समझिए, इस प्रकार, रानियाँ विलाप करते हुए बहुत रो रही थीं। ७। तब वसिष्ठ ने सबको रोक लिया और कहा— 'रुदन न करो। जो होनेवाला था, वह हो गया। अब मन में धीरज धारण करो। ८। भरत और शत्रुघ्न को शीघ्रता-पूर्वक बुला लें। (भरत के) राजगद्दी पर बैठने के पश्चात् राजा का दहन होगा'। ९। अनन्तर उन्होंने दशरथ के (मृत) शरीर को तेल में रख दिया और भरत को बुलाकर लाने के लिए सचिव सुमन्त को भेज दिया। १०। (उन्हें भेजते समय) गुरु (वसिष्ठ) ने कहा— 'जिससे श्रीराम वन गये और राजा दशरथ मृत्यु को प्राप्त हुए, वह बात तुम कहीं भरत से न कहना। ११। यदि भरत ऐसा सुनेंगे, तो वे तत्काल प्राण त्याग देंगे। (इसलिए) बगैर बताये,

सुमंत सत्वर लेई रथ, मारगे चाल्यो जाय,
हवे भरत छे मोसाळमां तेने अपशुकन बहु थाय। १३।
मामाना मंदिर विषे, सूता सज्जा मोझार,
त्यारे भरनिद्रामां स्वप्न आव्युं निशाए निरधार। १४।
कृष्ण वस्त्र पहेरी कामनी, कर ग्रह्युं तेलनुं पात्र,
तेणे भरतने शीश ढोळ्युं, आवी अकस्मात। १५।
त्यारे भरत झबकी जागिया, ते करवा लाग्या रुदन,
तव पासे मातुल वर्गनां, आवी मळ्यां सहु जन। १६।
भरतजी कहे मामा सुणो, मने आव्युं घोर स्वप्न,
माटे अवधमां उत्पात कांई एक, हशे मोटुं विघन। १७।
अमो चार बंधु ने पिता, विपरीत कांई ए वात,
अमो पांच जणमां एक जणनी, होय निश्चे घात। १८।
एवुं सूचवे छे शुकन फळ, एम कही करे छे रुदन,
संग्रामजिते समजाव्या, भरत ने शत्रुघन। १९।
एम करतां अरुण उदे हवो, ने थयो प्रातःकाळ,
त्यारे आज्ञा लई मामा तणी, तत्पर थया बे बाळ। २०।

निश्चय ही शीघ्रता-पूर्वक उन्हें ले आओ'। १२। (तदनन्तर) सुमन्त शीघ्र ही रथ लेकर (केकय नगर के) मार्ग पर चले गये। अब (इधर) भरत ननिहाल में थे, तो उन्हें बहुत अपशकुन हो गये। १३। वे अपने मामा के घर शय्या में सोये हुए थे; तब रात को निश्चय ही प्रगाढ़ निद्रा में उन्होंने (यह) सपना देखा— काला वस्त्र पहनकर एक स्त्री ने हाथ में तेल का पात्र लिया और यकायक आते हुए उसने भरत के मस्तक पर तेल मल लिया। १४-१५। तब भरत चौंककर जाग उठे। तो वे रोने लगे। तब उनके पास मामा के पक्ष के सब लोग आकर इकट्ठा हो गये। १६। तो भरत ने कहा— 'हे मामा, सुनिए। मुझे एक भयावह सपना दिखायी दिया। इसलिए (स्पष्ट है कि) अयोध्या में कुछ-एक उत्पात तथा बड़ा संकट (उत्पन्न) हो जाएगा। १७। हम चार बन्धुओं तथा पिता के सम्बन्ध में वह कोई विपरीत बात हो। हम पाँच जनों में से एक का निश्चय ही घात होगा। १८। वह शकुन इस प्रकार फल सूचित कर रहा है।' —ऐसा कहकर वे रुदन करता रहे। (तदनन्तर) भरत और शत्रुघ्न को संग्रामजित ने समझाया (सान्त्वना दी)। १९। ऐसा करते-करते अरुणोदय हो गया और सवेरा हो गया। तब वे दोनों लड़के (अपने) मामा से आज्ञा लेकर (अयोध्या जाने के

नीकळी ऊभा नग्र बहारे, शुकन जोवा माट,
वेगे दीठी ऊडती रज, अवधपुरती वाट । २१ ।
त्यारे देखायो रथ दूरथी, झांखुं धजानुं चीर,
हय हळवे हळवे हींडता, झूरतां नेत्रे नीर । २२ ।
सुमंत बेठो सुनमुनो, छे शोकसागर पूर,
रघुनाथ लीला संभारी, मनमांहे रडतो शूर । २३ ।
वस्त्र करी आंसु लूहे, रातां थयां छे लोचन,
सुमंतने ओळखी धाया, बन्यो केकईतन । २४ ।
आवता जोईने ऊतर्यो, ते धीरज राखी मन
पछे सुमंते बे वीरने, त्यांहां दीधुं आलिंगन । २५ ।
त्यारे भरत कहे ओ भाईमारा, कुशळ छे रघुनाथ ?
मुज पिता लक्ष्मण वीर आदे, सुखी छे सहु साथ ? २६ ।
तारुं मुख क्यम करमाई गयुं ? रातां थयां लोचन,
तुज कांति क्यम झांखी थई ? मुज कहो सत्य वचन । २७ ।
सुमंत कहे ओ भरतजी, छे कुशळ श्रीरघुनाथ,
मुंने तेडवा मोकल्यो छे माटे चालो मारी साथ । २८ ।

लिए) तैयार हो गये । २० । (मामा के घर से) निकलकर वे शकुन देखने के लिए नगर के बाहर—खड़े रह गये, तो अयोध्या नगरी के मार्ग पर उन्होंने तेज़ी से उड़ती हुई धूल देखी । २१ । तब दूर से रथ दिखायी दिया । उसके ध्वज का वस्त्र धुंधला दिखायी दे रहा है । घोड़े धीरे-धीरे चल रहे हैं और उनकी आँखों से (अश्रु-) जल झर रहा है । २२ । सुमन्त शून्य मन से बैठे हुए हैं । उनका शोक-सागर उमड़ रहा है । वे शूर पुरुष (भी) श्रीराम की लीला का स्मरण करके मन में रो रहे है । २३ । वे वस्त्र से आँसू पोंछ रहे हैं । उनकी आँखें लाल हो गयी है । सुमन्त को पहचानकर वे दोनों कैकेयी-पुत्र दौड़ पड़े । २४ । मन में धीरज रखते हुए वे उन्हें आते देखकर (रथ से) उतर गये । फिर सुमन्त ने उन दोनों भाइयों को वहाँ गले लगाया । २५ । तब भरत ने कहा— ‘ हे मेरे बन्धु, रघुनाथ कुशल से तो है ? मेरे पिता, भाई लक्ष्मण आदि सब साथ ही सुखी तो हैं ? । २६ । तुम्हारा मुँह क्यों कुम्हला गया है ? आँखें लाल क्यों हो गयी हैं ? तुम्हारी कान्ति निस्तेज क्यों हो गयी है ? मुझे सच्ची बात कह दो ’ । २७ । (इसपर) सुमन्त ने कहा— ‘ हे भरत, श्रीराम सकुशल हैं । तुम्हें ले जाने के लिए मुझे भेजा है । इसलिए मेरे साथ चलो ’ । २८ । अनन्तर भरत और

पछे बेठा रथमां बेउ जणा, भरत ने शत्रुघन,
निज सेन साथे आविया, ते अवधपुर पावन । २९ ।
त्यारे भरते दीठी अयोद्धा, ज्यम प्राणरहित शरीर,
लूंट्या सरखा लोक दीठा, सहुने नेत्रे नीर । ३० ।
सुमंते रथ राख्यो तदा, ते केकई केरे घेर,
ऊतर्या बे वीर त्यारे जाणी विपरीत पेर । ३१ ।
छत्रभंग दीठुं भरतजीए, शोकातुर सहु जन,
मंदिरमां सहु बेठुं दीठुं, वींटीने राजन । ३२ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

राजन पाम्या मरण दीठा, भरते तेणी वार रे,
त्यारे मूर्च्छा खाईने पड्या, तत्क्षण हवो हाहाकार रे । ३३ ।

शत्रुघ्न दोनों जने रथ में बैठे गये और अपनी सेना सहित वे पावन भूमि अयोध्या आ गए । २९ । तब भरत ने अयोध्या को देखा— मानो वह निष्प्राण-शरीर हो । लोग लूटे हुए-से देखे । सब की आँखों में (अश्रु-) जल था । ३० । तब सुमन्त ने कैकेयी के भवन में रथ रख दिया, फिर वे दोनों भाई उतर गये । वे विपरीत बात समझ गये । ३१ । भरत ने छत्र भग्न हुआ देखा; समस्त लोग शोक से व्याकुल देखे और भवन में सब लोगों को राजा को घेरकर बैठे देखा । ३२ ।

भरत ने उस समय राजा को मृत्यु को प्राप्त हुए देखा, तब वे मूर्च्छित होकर गिर पड़े, तत्क्षण हाहाकार मच गया । ३३ ।

* * *

अध्याय—१६ (दशरथ की दाह-क्रिया)

रागवेराडी

मूर्च्छा खाईने पड्या भरतजी, गई छे शुद्ध ने सान,
सुमंते भरतने बेठा कर्या, त्यारे बोल्या थई सावधान । १ ।

अध्याय—१६ (दशरथ की दाह-क्रिया)

मूर्च्छित होकर भरत गिर पड़े । उनकी चेतना और संज्ञा चली गयी थी । सुमन्त ने भरत को (उठाकर) बैठा दिया, तब वे सचेत होकर बोले । १ । तीव्र शोक से उन्होंने रुदन किया । उनकी आँखें लाल हो

घणा शोकथी रुदन कर्युं, थयां लोचन राते वर्ण,
हो सुमंत तुं कहेने साचुं, पिता क्यम पाम्या मर्ण ? २ ।
क्यां छे राम रघुपति ? करुणासागर परम उदार,
हावे सुमंत तुं मेळवने, मारा प्राण तणा आधार। ३ ।
आ थयुं ओचिंतुं अनरथ ? पिता गया सुरलोक !
पण रामचंद्रना चरण जोईने, समशे मारो शोक। ४ ।
पिता समान राम छे मारे, वडील बंधु रघुवीर,
मारे माथे छत्र ज ए छे, मुगटमणि रणधीर। ५ ।
एवुं कही मरडाई ऊठ्या, राममंदिर जावा भर्थ,
कोई नथी बोलतुं कहेतुं नथी, जे रामने गयानो अर्थ। ६ ।
त्यारे रुदन करे छे कौशल्याजी, त्यां आवीने लाग्या पाय,
प्राणजीवन मुज राम ज क्यां छे? कहो मुंने साचुं माय। ७ ।
रुदे ताडन करीने रुदन करतां, कौशल्या कहे वाण,
अरे बाप राम वन गया ने, राजाए तजिया प्राण। ८ ।
एवुं वचन सुणीने भरते, ते पृथ्वी पछाड्युं शीश,
रुदन करता गाढा स्वरथी, आळोटता अवनीश। ९ ।

गयीं। (उन्होंने कहा—), 'हे सुमन्त, तुम सत्य कहो, पिताजी मृत्यु को कैसे प्राप्त हो गये ? । २। रघुपति राम, जो करुणा के सागर तथा परम उदार हैं, कहाँ है ? हे सुमन्त, मेरे प्राणों के आधार श्रीराम को मुझसे मिला दो । ३। यह तो अनपेक्षित अनर्थ हो गया कि पिताजी सुरलोक सिधारे। फिर भी श्रीराम के चरणों को देखने पर मेरा शोक शान्त हो जाएगा। ४। मेरे ज्येष्ठ बन्धु श्रीराम मेरे लिए पिता के समान हैं। वे रणधीरों के मुकुट-मणि श्रीराम मेरे मस्तक पर (मानो मेरी रक्षा करनेवाला) छत्र ही है'। ५। ऐसा कहते हुए भरत श्रीराम के भवन जाने के लिए मुड़कर उठ गये। (फिर भी) राम के चले जाने की बात (कारण) कोई न बोल रहा था, न (उनसे) कह रहा था। ६। तब कौसल्या रो रही थी। भरत (वहाँ) आकर उनके पाँव लग गये (और बोले—), 'हे माँ, मुझे सत्य बताओ, मेरे जीवन के प्राण राम कहाँ है?'। ७। छाती पीटकर कौसल्या ने रुदन करते हुए यह बात कही—'अरे तात, राम वन गया और राजा ने प्राण त्याग दिये'। ८। ऐसी बात सुनकर भरत ने भूमि पर सिर पटक दिया और वह घोर स्वर में रोते रहे तथा भूमि पर लोटते-पोटते रहे। ९। (वे बोले) 'राम वन गये। उनके वियोग से राजा निश्चय ही चल बसे। हे मेरे पापी प्राणो,

रघुपति वन गया तो विजोगे, राय मूआ निरवाण,
हजु शा माटे जता नथी, ओ मारा पापी प्राण ? १० ।
साचो स्नेह जणाव्यो राये, नव सह्यो रामवियोग,
हुं अभागियो जीवुं छुं, ए कोण करमना भोग ? ११ ।
एम विलाप करीने रुए भरतजी, अखंड आंसुधार,
भरत रडतां एके काळे, रोयुं सरव ते ठार । १२ ।
कल्पांतनो वरसाद ज वरस्यो, दुःखनो दरियो पूर,
वाणीथकी न कहेवाय कविए, मंद थई मति उर । १३ ।
वज्रथकी घणी कठोर थाये कविनी वाणी जेह,
तोये कहेतां घणी हार पामे, छे शोक भरतनो जेह । १४ ।
एवे समे तहां वसिष्ठ आव्या, ज्यां थई रह्यो शोक अनर्थ,
त्यारे गुरुपद उपर मस्तक मूकी, पडिया पोते भर्थ । १५ ।
हो गुरुदेव कहो मुंने साचुं, राम गया क्यम वन ?
भूपति मरण पाम्या शा माटे ? क्यम थयां साथे विघन? १६ ।
गुरु कहे तमारी माताए माग्यां, रायनी पासे वचन,
मारो भरतजी राज करे ने, रघुपति जाये वन । १७ ।

तुम अब किसलिए नहीं जा रहे हो ? । १० । राजा ने तो (राम के प्रति) सच्चा प्रेम दिखला दिया । उन्होंने राम का वियोग नहीं सहन किया । परन्तु अभागा मैं जीवित रह रहा हूँ । वह किस कर्म का भोग है ? ' । ११ । इस प्रकार विलाप करते हुए भरत रो रहे थे । (उनकी आँखों से) अश्रु-धारा अखंडित चल रही थी । भरत रोते रहे, तो उस एक ही समय उस स्थान पर सब रो रहे थे । १२ । मानो कल्पान्त (प्रलय) के समय की (-सी) बरसात हो गयी, दुख-रूपी समुद्र में बाढ़ आ गयी । कवि द्वारा (उस शोक का वर्णन करके) वाणी से कहा नहीं जा सकता । उसकी मति मन्द पड़ गयी । १३ । यदि कवि की वाणी वज्र से कठोर हो जाए, तो भी भरत का जो शोक था, उसे (वर्णन करते हुए) कहने में वह बड़ी हार को प्राप्त हो जाएगी । १४ । जहाँ यह शोक और अनर्थ हो रहा था, वहाँ ऐसे समय पर वसिष्ठ आ गये । तब गुरुजी के चरणों पर मस्तक रखे हुए भरत स्वयं पड़ गये । १५ । (वे बोले—) ' हे गुरुदेव, मुझे सत्य कहिए कि राम वन क्यों गये ? राजा किसलिए मौत को प्राप्त हुए ? ये विघ्न (एक) साथ में कैसे हो गये ? ' । १६ । तो गुरुजी ने कहा, ' तुम्हारी माता ने राजा से वचन माँग लिये— मेरा भरत राज करे और राम वन जाए । १७ । जान लो,

चौद वरसनी अवध करी छे, वन रहेवानी जाण,
रामविजोगे करीने राये, तत्क्षण तजिया प्राण। १८।
ते माटे तमो सुणो भरत, राज्यासन वेसो आज,
त्यार पछी थाय दहन रायनुं क्रियाकर्मनुं काज। १९।
एवुं सांभळी भरते कर्युं, पछी ऊंचे स्वरे रुदन,
शरीर सर्व सुकाई गयुं, ने पृथ्वी पछाडे तन। २०।
जेम पुष्पकळी पर पडे वीजळी, केळ उपर दिग्पाळ,
मुक्ता अग्निमांहे पडे, एवी दशा थई तत्काळ। २१।
अरे अभागणी केकई सहुने, तें दुःख दीधुं नेट,
में पूर्वे महापाप कर्यां हशे, ते जन्म्यो तुज पेट। २२।
पछे सरव सांभळतां हस्त ऊंचो करी, बोल्या भरतजी वाण,
जो हुं राज करुं तो मुजने, रघुपति केरी आण। २३।
पृथ्वी केरा विप्र जेटला, तेने पमाडे पतन,
ते पाप मारे शिर जो हुं, भोगवुं राज्यासन। २४।
श्रीरामचंद्रनी सेवा मूकी, जो हुं करुं ए काज,
तो व्यभिचारिणी विधवा केरा, गर्भमां आवुं आज। २५।

उसने वन में रहने की चौदह वर्ष की अवधि (निर्धारित) की है। (और) राम के वियोग से राजा ने तत्क्षण प्राण त्याग दिये। १८। इसलिए हे भरत, सुनो, आज तुम राजगद्दी पर बैठो। उसके पश्चात् राजा का दहन तथा क्रियाकर्म सम्बन्धी काम होगा'। १९। ऐसा सुनने के पश्चात् भरत ने ऊँचे स्वर में रुदन (आरम्भ) किया। उनका सब शरीर सूख गया और उसे वे भूमि पर लुढ़काते रहे। २०। मानो फूल की कली पर बिजली पड़ गयी हो, अथवा केले (के पौधे) पर दिक्पाल गज (कूदकर) पड़ गया हो, अथवा आग में मोती पड़ गया हो। (उस समय उसकी जैसी दशा हुई हो,) तत्काल उसकी वैसी दशा हो गयी। २१। (वे बोले—) 'री अभागिन कैकेयी, निश्चय ही तुमने सबको दुख दिया है। मैंने पूर्वजन्म में महा पाप किये होंगे, (इसलिए ही) तो तुम्हारे पेट से मैंने जन्म लिया'। २२। अनन्तर भरत ने सबके सुनते हुए, हाथ ऊपर किये यह बात कही— 'यदि मैं राज करूँ, तो मुझे श्रीराम की सौगन्ध है। २३। पृथ्वी में जितने ब्राह्मण हों उनको मैं पतन अर्थात् मृत्यु को प्राप्त कराऊँ (मार डालूँ) तो जो पाप होगा, वह मेरे सिर आ जाए, यदि मैं राज्यासन का भोग करूँ। २४। श्रीरामचन्द्र की सेवा को छोड़कर यदि मैं यह काम करूँ, तो मैं व्यभिचारिणी विधवा के गर्भ

राज कर्यानुं जो मन होय मारे तो कोढी थाजो शरीर,
रजस्वलाना रुधिर जेवुं मारे, राज्याभिषेकनुं नीर । २६ ।
श्रीरघुवीरनी राजधानी ते, जो हुं भोगवुं आज
तो मातृगमनी हुं थाउं, जो हुं करुं अवधपुरीनुं राज । २७ ।
वन भोगवे रघुवीर ने जो, हुं राज करुं वळी एह,
तो गुरुवध ब्रह्महत्यानुं पातक, मुज शिर लागे तेह । २८ ।
मृगजळ मांहे अगस्त बूडे, जो पश्चिम ऊगे सूर,
सर्प सुपर्णने भक्ष करे, विधु वरसे अग्नि पूर । २९ ।
मशक मेरु उखेडी नाखे, गंगाने वळगे पाप,
जातवेदमां पतंग नाचे, आकाशनुं करे माप । ३० ।
ए दैवजोगे थाय एटलुं, सर्वे अघटित काज,
पण गुरु तमारा चरणनी आण मुंने, जो करुं हुं राज । ३१ ।
एवुं कहीने घणी गाळो दीधी, केकईने तेणी वार,
त्यारे गुरु कहे ए शु करे केकई ? मंथरा केरो विचार । ३२ ।
त्यारे भरते ऊठीने मंथरा केरा, केश झाल्या करी रीस,
क्रोध करीने खडग ग्रह्युं कर, छेदवा एनुं शीश । ३३ ।

में आज स्थान प्राप्त कर जाऊँ । २५ । यदि मेरा मन राज करना चाहे, तो मेरा शरीर कोढ़ी बन जाए और मेरे राज्याभिषेक का जल रजस्वला के रक्त जैसा हो जाए । २६ । यदि मैं आज श्रीरघुवीर की राजधानी का भोग करूँ, यदि मैं अयोध्या का राज करूँ, तो मैं मातागमनी हो जाऊँ । २७ । रघुवीर (उधर) वन(-वास) भोग रहे हैं और फिर मैं वह राज करूँ, तो गुरु के वध का तथा ब्रह्महत्या का वह पाप मेरे सिर लग जाए । २८ । यदि मृगजल में अगस्त्य मुनि (जिन्होंने समुद्र का जल पीकर उसे सुखा डाला था) डूब जाएँ, यदि सूर्य पश्चिम में उदित हो जाए, यदि सर्प गरुड़ को खा डाले, यदि चन्द्र आग का रेला बरसा दे, यदि मच्छड़ मेरु पर्वत उखाड़ डाले, यदि गंगा को पाप हड़प ले, यदि आग में पतंग नाच ले, यदि आकाश को कोई नाप ले, यदि दैवयोग से इतना यह समस्त अघटित (अभूतपूर्व) कार्य हो जाए, तो भी, हे गुरुजी, यदि मैं राज करूँ, तो मुझे आपके चरणों की शपथ है ' । २९-३१ । ऐसा कहकर उस समय उन्होंने कैकेयी को बहुत गालियाँ दीं । तब गुरु वसिष्ठ ने कहा, 'वह कैकेयी क्या कर सकती है ? यह तो मन्थरा का विचार था ' । ३२ । तब भरत ने उठकर क्रोध-पूर्वक मन्थरा के बाल पकड़ लिये और क्रोध से उसके मस्तक को काट देने के लिए हाथ में

त्यारे भरतनो हाथ वसिष्ठे झाल्यो, स्त्रीहत्या न करीश,
पछे घणी पाटुओ मारी भरते, कुब्जाने करी रीस । ३४ ।
हवे भरत तणुं पण कठण सांभळी, वसिष्ठे विचार्युं मन,
पछे राम तणी जे चरणपादुका, मूकी सिंहासन । ३५ ।
चामर छत्र कराव्युं तेने, राख्यो राजवहेवार,
पछे भरतनी पासे भूपतिने कराव्यो अग्निसंस्कार । ३६ ।
त्यारे सात सें राणीओ सती थई जे पतिव्रता कहेवाय,
भूपनी साथे तेह बळी, ज्यम सूर्यमां किरण समाय । ३७ ।
कौशल्या सुमित्रा थयां तत्पर, बळवाने जेणी वार,
त्यारे वार्या वसिष्ठे तमे नव वळशो, शिक्षा दीधी अपार । ३८ ।
शास्त्र प्रमाणे वचन काढीने, बोल्या तेणी वार,
तेने बळवानुं कांई कारण नहि, जे पुत्रवंती होय नार । ३९ ।
कौशल्या कहे राम वन गया, ने भूपति पाम्या मर्ण,
हावे जीवीने अमो शुं करीए ? नथी सुखनुं कांई आचर्ण । ४० ।

खड्ग ग्रहण किया । ३३ । तब वसिष्ठ ने (इस भय से) भरत का हाथ पकड़ लिया कि वह स्त्री-हत्या न करे । फिर भरत ने क्रोध-पूर्वक उस कुब्जा को बहुत लातें जमा दीं । ३४ । अब भरत के उस दृढ़ प्रण को सुनकर वसिष्ठ ने मन में (यह) विचार किया (और उसके अनुसार) राम की जो पादुकाएँ थीं उन्हें सिंहासन पर रख दिया, उनपर छत्र, चामर आदि धरवाया; इस प्रकार राज्य (सम्वन्धी परिपाटी के अनुसार) व्यवहार सम्पन्न किया । तदनन्तर भरत द्वारा राजा का अग्नि-संस्कार करा दिया । ३५-३६ । तब (दशरथ की) सात सौ रानियाँ, जो प्रतिव्रता कहाती थीं, सती हो गयी । राजा (के शव) के साथ वे जल गयीं और जैसे सूर्य में किरणें समा जाती हों, वैसे वे समा गयीं । ३७ । जिस समय कौसल्या और सुमित्रा जल जाने के लिए तत्पर हो गयीं, तब 'तुम नहीं जल जाओगी' कहते हुए वसिष्ठ ने उनको रोक लिया और बहुत उपदेश दिया । ३८ । उस समय शास्त्रों द्वारा प्रमाणित वचन निकालकर वे बोले— 'जो स्त्री पुत्रवती हो, उसे (सती के रूप में) जल जाने का कोई कारण नहीं है' । ३९ । (इसपर) कौसल्या ने कहा— 'राम वन में गया और राजा मृत्यु को प्राप्त हुए, तो अब जीवित रहकर हम क्या करें ? (हमारे लिए) कोई भी आचरण सुख का, अर्थात् सुखदायी नहीं है' । ४० । तब गुरुजी ने कहा— 'राम तुम से मिलकर फिर वन में जाएँगे और चौदह वर्ष बीत जाने पर वे इस पावन नगर में लौट

त्यारे गुरु कहे तमने राम मळीने, वळता जाशे वन,
चौद वरस वीत्या पछी, पाछा आवशे पुर पावन । ४१ ।
त्यारे तमे सुख पामशो अति घणुं, थाशे रूडां काज,
सहस्र एकादश वरस लगी, अहींयां रघुवीर करशे राज । ४२ ।
एम समजाव्यां सुमित्रा कौशल्या, गुरु वसिष्ठे तेह,
बळवा न दीधां नृप साथे, निवर्त्यो संदेह । ४३ ।
मुनि वाल्मीकना मूळ काव्यनो, एह जथारथ अर्थ,
ते माटे श्रोताजन संदेह, नव करशो कोई व्यर्थ । ४४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

व्यर्थ संदेह करवो नहि श्रोता, ए मूळकाव्यनो अर्थ रे,
कहे दास गिरधर रामने मळवा, पछी थया तत्पर भर्थ रे । ४५ ।

आएँगे । ४१ । तब तुम अत्यधिक सुख को प्राप्त हो जाओगी और सुन्दर कार्य सम्पन्न होंगे । राम ग्यारह सहस्र वर्ष तक यहाँ राज करेंगे '। ४२ । इस प्रकार गुरु वसिष्ठ ने कौसल्या और सुमित्रा को समझा दिया और उन्हें राजा (के शव) के साथ जल जाने नहीं दिया । उनका सन्देह दूर हो गया । ४३ । वाल्मीकि मुनि के मूल काव्य का यह यथार्थ अर्थ है । इसलिए हे श्रोताजनो, (इस घटना की सचाई के बारे में) आप कोई व्यर्थ सन्देह न करें । ४४ ।

हे श्रोताओ, व्यर्थ सन्देह न कीजिए; (क्यों कि) मूल काव्य का यही अर्थ है । गिरधरदास कवि कहते हैं— अनन्तर राम से मिलने के लिए भरत तत्पर हो गये । ४५ ।

*　　　*　　　*

अध्याय–१७ (भरत-वसिष्ठ-संवाद)

राग विलावल

एम दहनक्रिया दशरथनी करी, रजनी दुःखमां अनुसरी,
मनमां धीरज राखी घणी, उत्तरक्रिया करी राजा तणी । १ ।

अध्याय—१७ (भरत-वसिष्ठ-संवाद)

इस प्रकार दशरथ राजा की दहन क्रिया सम्पन्न की । (तदनन्तर) रात दुःख में (ही) व्यतीत हुई । मन में बहुत धीरज रखते हुए (भरत ने) राजा की उत्तरक्रिया की । १ । उन्होंने नाना प्रकार के दान दिये;

नानाविधनां आप्यां दान, कुळ रीते कर्युं विधान,
बीजे दिवसे थयो प्रातःकाळ, भरते विचार कर्यो तत्काळ । २ ।
तज्यां आभूषण नानरंग, वस्त्र मूकी धर्यां वल्कल अंग,
बांधी जटा जोगी होय जेम, अंग भस्म चरची छे तेम । ३ ।
तत्पर भरत थया तेणी वार, रामने मळवा वनमोझार,
गुरु वसिष्ठने कहे महाराज, रामने मळवा चालो आज । ४ ।
मुनि कहे अति रुडुं ए काम, पाळजो आज्ञा करे जे राम,
वागी हाक नगरमां तदा, भरत जाय मळवा सर्वदा । ५ ।
एवुं सांभळी पुरना लोक, चाल्या सर्व तजीने शोक,
सकळ सैन्य आदे परधान, भरत साथ चाल्या बळवान । ६ ।
गुरु वसिष्ठ आदे द्विज जेह, सरवे रथमां बेठा तेह,
पालखीए बेसाड्यां मात, सुमित्रा कौशल्या विख्यात । ७ ।
केकई रही घेर सर्वथी, भरत तेनुं मुख जोता नथी,
भरत शत्रुघन चाले पाय, चाले संग प्रधान प्रजाय । ८ ।
अवधवासी जन नर ने नार, नीकळ्यां सरव तजी घरवार,
नग्र रक्षा करवा ते काळ, गुरुए घणा मूक्या रखवाळ । ९ ।

कुल-रीति के अनुसार विधि (सम्पन्न) की। दूसरे दिन प्रातःकाल हो गया, तो भरत ने तत्काल विचार किया । २ । उन्होंने आभूषणों तथा नाना रंगों के वस्त्रों का त्याग करके शरीर पर वल्कल धारण किये । जैसे वे कोई जोगी हों, वैसे उन्होंने (बालों की) जटा बाँध ली और अंग में भस्म लगा लिया । ३ । उस समय भरत वन में राम से मिलने (जाने) के लिए तैयार हो गये और गुरु वसिष्ठ से बोले— 'महाराज, आज राम से मिलने चलिए'। ४ । तो मुनि ने कहा— 'वह कार्य अति सुन्दर है । राम जो आज्ञा देंगे, उसका पालन करना'। तब नगर में घोषणा हुई कि भरत राम से मिलने के लिए निश्चय ही जा रहे हैं । ५ । ऐसा सुनते ही नगर के सब लोग शोक छोड़कर चल दिये । समस्त सेना, मंत्री इत्यादि बलशाली भरत के साथ चल दिये । ६ । गुरु वसिष्ठ इत्यादि जो ब्राह्मण थे, वे सब रथ में बैठ गये । कौसल्या और सुमित्रा जैसी सुविख्यात माताओं को पालकियों में बैठा दिया । ७ । सब (माताओं में) से कैकेयी (अकेली) घर में रह गयी । भरत तो उसका मुँह (तक) नहीं देखा करते थे । भरत और शत्रुघ्न पैदल चल रहे थे । उनके साथ मंत्री और प्रजा (-जन) चल रहे थे । ८ । अवधवासी जो-जो पुरुष और स्त्रियाँ थीं, वे सब घर-बार का त्याग

जे मारगे रघुपति गया, ते मारग सरवे चालिया,
गुरुना रथ पासे ते काळ, वाम दक्षिण चाले वे बाळ । १० ।
वसिष्ठ कहे हो भरत सधीर, नहि चलाय कोमळ पद वीर,
माटे बाप बेसो रथमांहे, चालजो राम समीपे त्यांहे । ११ ।
भरत कहे नव कहेशो तमो, गुरुआज्ञा जो बेसुं अमो,
रघुपति चर्ण चालीने गया, तेथी अमो शुं कोमळ थया । १२ ।
स्वामी राम हुं सेवक वटे, तो माथाभेर चालवुं घटे,
हुं अपराधी रघुवर तणो, शुं देखाडीश मुख दामणो ? १३ ।
मारो जन्म भूतळ नव थात, तो शुं करवा वन रघुवर जात,
भरत एम कहीने रोता जाय, धीरज आपे छे मुनिराय । १४ ।
एवां भरतनां सुणी वचन, खेद पामे छे सरवे जन,
मारग चालतां मांह्योमांह्य नरनारी सहु कहे छे त्यांय । १५ ।
केकई पापणी केरे पेट, जन्म भरतनो न घटे नेट,
कागविष्ठा वेष्टित अश्वत्थ, कल्पतरु कर्मनासा तटस्थ । १६ ।

करके निकले । उस समय गुरुजी ने नगर की रक्षा करने के लिए बहुत-से पहरेदार रख दिये । ९ । जिस मार्ग से श्रीराम गये थे, उसी मार्ग से सब चले जा रहे थे । गुरुजी के रथ के पास से दायें और बायें वे दोनों लड़के चल रहे थे । १० । (तब) वसिष्ठ ने कहा— 'हे धैर्यवान् तथा वीर भरत, तुम कोमल पदों से न चलना । इसलिए हे तात, रथ में बैठो और उधर राम के पास चलो' । ११ । (इसपर) भरत बोले, 'गुरुजी की आज्ञा से हम बैठेंगे भी— परन्तु आप (ऐसा) न कहिए । श्रीराम तो पाँवों से चलकर, अर्थात् पैदल गये । हम क्या उनसे कोमल हो गये ? । १२ । राम स्वामी हैं— (यदि) मैं सेवक हूँ, तो मेरे लिए अपने मस्तक के बल ही चलना योग्य होगा । परन्तु मै राम का अपराधी हूँ; तो अपना यह दयनीय मुँह क्या दिखाऊँ ? । १३ । यदि भू-तल पर मेरा जन्म न होता, तो रघुवर क्यों वन में जाते ? ' ऐसा कहकर भरत रोते-रोते जा रहे थे और मुनिवर वसिष्ठ उन्हें धीरज बँधा रहे थे । १४ । भरत के ऐसे वचन सुनकर सब लोग खेद को प्राप्त हो गये । वहाँ मार्ग में चलते-चलते बीच-बीच में सब स्त्री-पुरुष (यों) कह रहे थे । १५ । 'पापिनी कैकेयी के पेट से भरत का जन्म होना निश्चय ही उचित नहीं घटित हुआ । (मानो यह ऐसे ही हुआ—) जैसे— कौए की विष्ठा से घिरा हुआ पीपल (का बीज) हो, अथवा कर्मनाशा नदी के तट पर कल्पवृक्ष (उत्पन्न हुआ) हो । १६ । कैकेई के उदर से सुन्दर

काग उदरथी कोकिल सार, एम केकई कूख भरत अवतार,
एम वात परस्पर करता लोक, ते भरत सांभळी पामे शोक । १७ ।
अपकीर्ति एवी सुणी अपार, गुरुने भरत पूछे तेणी वार,
कहो महाराज केकई पापणी, एणे अपकीर्ति कीधी आपणी । १८ ।
पूर्वे पाप एणे शुं कर्युं, जे आवुं विपरीत कर्म आचर्युं ?
त्यारे वसिष्ठ कहे सुण राजकुमार, एनां पापनो कहुं विचार। १९ ।
बाळपणमां ए दुरमति, ज्यारे पिता तणे घेर रहेती हती,
त्यारे कोईक मुनिवर आव्या त्यांय, राये राख्या मंदिरमांय। २० ।
चातुर मास रह्या मुनिराय, राजा नित्य करतो सेवाय,
एक दिन धरवा बेठा ध्यान, त्यारे आवी पासे केकई अज्ञान । २१ ।
करमां काजळ लावी सुखे, कर्युं लेपन मुनिवरने मुखे,
एम बाळकबुद्धि हांसी करी, जाग्या मुनि ध्यान अनुसरी । २२ ।
मुख उपर फेरवियो हाथ, कर काळो थयो काजळ साथ,
ते जोईने क्रोध वस्यो मन आप, तत्क्षण मुनिए दीधो शाप । २३ ।
जेणे मुज हांसी करी निःशंक, तेनुं मुख काळुं थजो कलंक,
एवुं सांभळी मातपिताय, मुनिवरने तव लाग्यां पाय । २४ ।

कोयल जन्म लेती है, वैसे ही कैकेयी की कोख से भरत अवतरित हुए'। लोग ऐसी बात परस्पर कह रहे थे। उसे सुनकर भरत शोक को प्राप्त हो गये। १७। उस समय ऐसी असीम अपकीर्ति सुनकर भरत ने गुरुजी से पूछा— 'महाराज, कहिए, कैकेयी पापिनी ने कैसे अपनी अपकीर्ति की। १८। उसने पहले क्या पाप किया था, जो ऐसा विपरीत कर्म वह कर बैठी ?' तब वसिष्ठ ने कहा, 'हे राजकुमार सुनो। मैं उसके पाप-सम्बन्धी विचार कहता हूँ। १९। जब बचपन मे वह दुर्मति स्त्री अपने पिता के घर रहती थी, तब कोई एक श्रेष्ठ मुनि वहाँ आ गये। राजा ने उन्हें अपने प्रासाद में रख दिया (ठहरा दिया)। २०। वे मुनि-राज (वहाँ) चातुर्मास भर रह गये। राजा उनकी सेवा नित्य करते रहे। एक दिन जब वे ध्यान धरने बैठ गये, तो नासमझ कैकेयी उनके पास आ गयी। २१। वह हाथ मे काजल लायी और उसने सुख-पूर्वक (मौज में) मुनिवर के मुँह में लेपन कर दिया। इस प्रकार उसने बाल-बुद्धि से (मुनि का) उपहास किया। फिर ध्यान के पूर्ण होने पर मुनिवर जाग उठे। २२। उन्होंने मुँह पर हाथ फेर लिया, तो उनका हाथ काजल से काला हो गया। वह देखकर मुनि स्वय क्रोध-वश हो गये और उन्होंने उसे तत्काल शाप दिया। २३। 'जिसने निर्भयतापूर्वक

ए बाळक भूली महाराज, आप अनुग्रह कीजे आज
मुनि कहे मटे न वायक जेह, भवोभव भूंडी कहेवाशे एह । २५ ।
पण एने हस्त थाशे जश तदा, ए स्वामीने वश करशे सर्वदा,
माटे सुणो भरत ए सत्य वचन, ज्यारे युद्ध करवाने गया राजन । २६ ।
त्यारे रथचक्रमां घाल्यो हाथ, पामी जन जीत्या नरनाथ,
त्यां राये वचन आप्युं दई मान, ते समे जोई माग्युं वरदान । २७ ।

वलण (तर्ज़ वदलकर)

वरदान माग्युं राय पासे, रामने मोकल्या वन रे,
ए कलंक काळुं रह्युं जुगोजुग, सुणो भरत वचन रे । २८ ।

मेरा उपहास किया, उसका मुख कलंक से काला हो जाए'। ऐसा (शाप) सुनकर (बालिका कैकेयी के) माता-पिता मुनिवर के पाँव लग गये। २४। (उन्होंने कहा—) 'इस बालिका ने भूल की; आप शाप के बदले आज अनुग्रह कीजिए।' तो मुनि ने कहा, 'वह (शाप-सूचक) वचन तो नहीं मिट जाएगा, जिससे कि यह प्रत्येक जन्म में बुरी कहलाएगी। २५। परन्तु तब भी उसके हाथों यश (-युक्त वात) हो जाएगी और वह अपने पति को सदा वश में किये रहेगी'। (वसिष्ठ ने कहा—) हे भरत, यह सच्ची बात सुनो। उस कारण जव राजा (दशरथ) युद्ध करने गये, तब उसने रथ के पहिये में हाथ डाल दिया। वह कीर्ति को प्राप्त हो गयी और राजा जीत गये[1]। २६-२७।

उसने राजा से वचन माँगा और राम को वन में भेज दिया। हे भरत, यह वचन सुनो, यह काला कलंक (उसके नाम में) युग-युग रहा है। २८।

* * *

अध्याय—१८ (अयोध्यावासियों का चित्रकूट की ओर गमन)

राग मारु

सुणी भरते केकईनी वात, चाले करता आंसुपात,
बोल्या सुमंत साथे वचन, जे मारग गया प्राणजीवन । १ ।

अध्याय—१८ (अयोध्यावासियों का चित्रकूट की ओर गमन)

भरत ने कैकेयी-सम्बन्धी यह वात सुनी। वे आँसू वहाते हुए चल रहे थे। वे सुमन्त से यह वात बोले— 'जिस मार्ग से मेरे जीवन के प्राण (राम) गये, उस मार्ग से तुम शीघ्र चलो और मुझसे वे

[1] देखिए : वाल-काण्ड, अध्याय १०

ते मारग तुं वहेलो चाल, मने मेळव्य दीनदयाळ,
एम कहेतां चाल्या जाय, खूंचे कंकर कोमळ पाय। २ ।
एवे आव्युं गंगातीर रम्य, शृंगवेर गुह्यक आश्रम,
त्यांहां रहे छे घोराजन, तेणे दूरथी दीठुं सैन्य। ३ ।
मनामांहे विचारी वात, आवता हशे रामना भ्रात,
राज्य लईने काढ्या वन, तोये करवाने जाय विघन। ४ ।
एवुं जाणीने बुद्धिवान, वगडाव्युं ढोल-निशान,
ते सुणी भील कोल किरात, आव्या टोळे मळी असंख्यात। ५ ।
करमां धनुष सायक शस्त्र, तेनी पासे एकेकुं वस्त्र,
लेई सैन्य घोराय प्रमुख, युद्ध करवा ऊभो सन्मुख। ६ ।
जोई असंख्य वनचर जन, बोल्या भरतशुं शत्रुघन,
आ को दुष्ट आव्या आणे ठार, आपो आज्ञा करुं संहार। ७ ।
त्यारे सुमंत बोल्या व्यक्त, ए गुह्यक छे रामनो भक्त,
माटे जुद्ध न करशो वीर, मळो एने राखी मन धीर। ८ ।
भरत कहे ऊभा रहो आ ठार, हुं जईने पूछुं समाचार,
एवुं कहीने आप्या त्यांहे, ऊभो गुह्यक राजा ज्यांहे। ९ ।

दीनदयालु मिला दो'। ऐसा कहते हुए वे चलते रहे। उनके कोमल पाँवों में कंकड़ चुभ रहे थे। १-२। इतने में गंगा का रमणीय तट आ गया, (जहाँ) शृंगवेरपुर में गुह का आश्रम था। वहाँ घोराज (गुहराज) रहता था। उसने दूर से सेना को देखा। ३। उसने मन में यह बात सोची—(यह) राम का भाई आ रहा होगा। उसने राज लेकर राम को वन में भेज दिया। फिर भी वहाँ (राम के जीवन मे) विघ्न (उत्पन्न) कराने जा रहा है। ४। उस बुद्धिमान् (घोराय) ने ऐसा समझकर ढोल-नगाड़े बजवा दिये। उसे सुनकर असंख्य भील, कोल, किरात टोली-टोली में इकट्ठा होकर आ गये। ५। उनके हाथों में धनुष और बाण जैसे शस्त्र थे; उनके पास एक-एक ही वस्त्र था। (फिर) मुखिया घोराय सेना लेकर युद्ध करने के लिए सम्मुख खड़ा हो गया। ६। (इधर) अनगिनत वन्य जनों को देखकर शत्रुघ्न भरत से बोले— 'ये कौन दुष्ट इस स्थान पर आये हैं? आज्ञा दो तो उनका संहार कर दूँ'। ७। तब सुमन्त बोले कि स्पष्ट रूप में यह गुह राम का भक्त है। अतः हे भाई, युद्ध न करो, मन मे धीरज रखते हुए उससे मिल तो लो'। ८। (यह सुनकर) भरत ने कहा— 'तुम यहाँ खड़े रहो, मैं जाकर समाचार पूछ लेता हूँ'। ऐसा कहकर वे वहाँ आ गये, जहाँ गुहराज (घोराय) खड़ा था। ९। जब

दीठा आवता भरतने ज्यारे, घोराजा आव्यो सन्मुख त्यारे,
मळ्या भरतजी तेणी वार, कह्यो पोतानो सर्व विचार । १० ।
सुणी सजळ नेत्र थयो राय घोराजा लाग्यो भरतने पाय,
कहे भरत तुं मोटो देव, तें करी रघुवरनी सेव । ११ ।
हुं अभागियो पामुं दुःख, थयो रामचरणथी विमुख,
एम कही थया बंन्यो द्रवित, ऊपनी त्यां परस्पर प्रीत । १२ ।
निज आश्रममां घोराय, तेडी लाव्यो सहित सेनाय,
गंगातीर विषे उपवन, त्यांहां ऊतर्या सरवे जन । १३ ।
राये मोकल्या भील अपार, लाव्या वनफळ तेणी वार,
आप्यां वहेंची सरवे साथ, करी स्वागत गुह्यकनाथ । १४ ।
एक भरत विना ते दन, फळ खाधां सरवे जन,
भरत कहे करुं भोजन त्यारे, करुं रामनुं दरशन ज्यारे । १५ ।
कह्यां गुरुए अतिसे वचन, त्यारे पाणी कर्युं प्राशन,
ज्यां रात्रि रह्या'ता राम, सुमंते देखाड्यो ठाम । १६ ।
ते रजमां आळोटयां भर्थ, घणुं रुदन कर्युं समर्थ,
पछे रात्रि पडी निरधार, सूता सरवे तेणे ठार । १७ ।

भरत को आते देखा, तो घोराय सामने आ गया । उस समय भरत (उससे) मिल गये । अपना सब विचार कह दिया । १० । उसे सुनकर राजा घोराय की आँखें सजल हो गयीं; (फिर) वह भरत के पाँव लग गया । भरत ने कहा— ' तुम बड़े देवता हो; (क्यों कि) तुमने राम की सेवा की है । ११ । मैं अभागा दुख को प्राप्त हो गया —मैं राम की सेवा से विमुख हो गया ।' ऐसा कहने पर वे दोनों शोक से विह्वल हो उठे और उन दोनों में परस्पर प्रेम उत्पन्न हो गया । १२ ॥ (तदनन्तर) घोराय भरत को सेना-सहित अपने आश्रम में ले आया । वहाँ गंगा के तट पर उपवन में सब लोग ठहर गए । १३ । उस समय राजा घोराय ने बहुत-से भीलों को भेजा, जो वन्य फल ले आये । (तदनन्तर) गुहराज ने स्वागत करते हुए सबको (फल) बाँट दिये । १४ । सिवा एक भरत के, अन्य सब लोगों ने उस दिन फल खा लिये । भरत ने कहा— ' मैं तभी भोजन करूँगा, जब मैं राम के दर्शन कर लूँगा । १५ । (परन्तु) जब गुरुजी ने बहुत बातें कहीं (समझाया) तब भरत ने पानी पी लिया । (तत्पश्चात्) जहाँ राम रात में रहे थे, वह स्थान सुमन्त ने (भरत को) दिखा दिया । १६ तो भरत उस (स्थान की) धूली में लोट गये और उस समर्थ (व्यक्ति) ने बहुत रुदन किया । अनन्तर

थयो ज्यारे प्रात:काळ, आव्या घाट उपर तत्काळ,
सहु अवधपुरीना जन, नाह्या गंगामां निर्मळ मन । १८ ।
मंगावी राये नाव अपार, सर्वे उतर्या गंगापार,
चाल्यो घोराजा तव साथ, हींडे झाली भरतनो हाथ । १९ ।
लीधा साथे भील भूपाळ, करवा फळ जळ तृण संभाळ,
एम चाले सरव समाज, आव्या प्रयाग तीरथराज । २० ।
मळ्या भारद्वाज मुनिराय, कर्या दरशन लाग्या पाय,
सरवे समरे जानकीकंथ, चाल्या चित्रकोटने पंथ । २१ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पंथे चाले भरतजी, कहेता रामकथाय रे,
पावन गिरि चित्रकूट उपर, शुं करता हवा रघुराय रे । २२ ।

* * *

जब रात हो गयी, तो सब निश्चय ही उस स्थान पर सोते रहे । १७ । जब प्रात:काल हो गया, तो तत्काल वे तट पर आ गये । (तदनन्तर) अयोध्या के सब लोगों ने निर्मल मन से गंगा में स्नान किया । १८ । (तत्पश्चात्) राजा (घोराय) ने बहुत-सी नावें मँगा लीं, तो सब गंगा के पार उतर गए । तब घोराय भी उनके साथ चल दिया । वह भरत का हाथ थामे हुए चल रहा था । १९ । फल, जल, (शय्या या आसन बनाने के लिए) घास को सम्हाल लेने के लिए राजा (घोराय) ने साथ में भीलों को ले लिया । इस प्रकार समस्त समाज चल रहा था । वे तीर्थराज प्रयाग आ गये । २० । (वहाँ) मुनिराज भरद्वाज मिले, तो उनके दर्शन कर भरत उनके पाँव लग गये । सब सीता-कान्त श्रीराम का स्मरण कर रहे थे । (इस प्रकार) वे चित्रकूट के पथ पर चल दिये । २१ ।

राम की कथा कहते हुए भरत मार्ग पर चल रहे हैं (थे) । (तब इधर) पावन चित्रकूट पर्वत पर श्रीराम क्या कर रहे थे ? । २२ ।

* * *

अध्याय—१९ (श्रीराम-भरत-भेंट)

राग सामेरी

चित्रकूटमां रह्या रघुपति, अति रम्य स्थळ पावन,
फळ लेवा लक्ष्मणजी गया, ते गिरि पासे वन। १।
श्रीराम आपे आहुति, करे होम अग्निमांहे,
सामग्री कर लेई ऊभां, जनकतनया त्यांहे। २।
तेणे समे एक सुदर्शन, गांधर्व नामे जेह,
जातो हतो आकाशमारग, स्वइच्छाए तेह। ३।
तेणे दीठां जानकी, अति सुंदर रूप अनूप,
ते हरण करवा आवियो, धरी काग केरुं रूप। ४।
पापीए आवी झडप मारी, ग्रहवाने तेणी वार,
पृथ्वी उपर पडचां सीता कर्यो मुखपोकार। ५।
आ जुओने महाराज मुजने, चांच मारे काग,
ते सांभळीने जायुं रामे कोपिया महाभाग। ६।
कुशनी सळी करमांहे लेईने नाखी श्रीरघुराय,
ते बाण थईने काग पूंठळ, धायुं विद्युतप्राय। ७।

अध्याय—१९ (श्रीराम-भरत-भेंट)

श्रीराम चित्रकूट में रह गये। वह स्थान बहुत रम्य तथा पवित्र था। (एक समय) लक्ष्मण फल लेने गये। उस पर्वत के पास ही वन था। १। श्रीराम होम कर रहे थे; अग्नि में आहुतियाँ डाल रहे थे। सीता हाथ में (आहुति की) सामग्री लेकर वहाँ खड़ी थी। २। उस समय एक गन्धर्व, जिसका नाम सुदर्शन था, आकाश मार्ग से स्वेच्छया जा रहा था। ३। उसने सीता को देखा, जिसका रूप अति-सुन्दर अनुपम था। कौए का रूप धारण करके वह (सुदर्शन नामक गन्धर्व) उसका अपहरण करने के लिए आ गया। ४। उस समय उस पापी ने (सीता को) पकड़ लेने के हेतु झपट्टा मारा, तो सीता भूमि पर पड़ गयी। वह मुँह से चीख उठी। ५। 'हे महाराज, देखिए तो मुझपर कौआ चोंच मार रहा है।' वह सुनकर राम ने (उस ओर) देखा, तो वे महाभाग क्रुद्ध हो उठे। ६। (तदनन्तर) दर्भ का तिनका हाथ में लेकर श्रीराम ने फेंक दिया, तो वह बाण होकर कौए के पीछे बिजली की भाँति दौड़ने लगा। ७। बाण को आते देखकर वह (गन्धर्व)

आवतुं देखी बाण, नाठो कागरूपे तेह,
थयुं पूंठळ बाण श्रीरघुवीर केरुं जेह। ८।
ब्रह्मलोक सुधी भम्यो, जाण्युं निश्चे आव्युं मर्ण,
अपराधी श्रीरघुवीरनो, कोईए न राख्यो शर्ण। ९।
एटले त्यां नारद मळ्या, गांधर्व लाग्यो पाय,
आ रामबाण थकी मुंने, राखो शरण ऋषिराय। १०।
त्यारे नारद कहे हे मूरख, तुं जा राम केरी पास,
ते शरणवत्सल छे सदा, नम चरण थईने दास। ११।
एवुं सांभळी तत्काळ आव्यो, चित्रकूट ज मांहे,
साष्टांग आवी नम्यो, श्रीरघुवीर चरणे त्यांहे। १२।
घणी स्तुति कीधी दीन वचने, पामियो मन लाज,
आ बाणथी राखो मने, नव मारशो महाराज। १३।
रघुवीर कहे रे बाण मुज, पाछुं फरे नहि सत्य,
अभिमानी तुजने करुं शिक्षा, धारी तें दुरमत्य। १४।
एक पत्नीव्रत एकवचन, वळी एकबाण ए ज टेक,
एवुं कही ते शरे फोडचुं, सव्य लोचन एक। १५।

कौए के रूप से भाग गया। श्रीराम का वह बाण पीछे था। ८। वह ब्रह्मलोक तक घूमा। उसने जान लिया कि (अब) निश्चय ही मौत आ गयी। रघुवीर राम के अपराधी को कोई भी अपनी शरण में नहीं रख सका। ९। इतने में वहाँ नारद मुनि मिले, तो वह गन्धर्व उनके पाँव लग गया (और बोला,)— 'हे ऋषिराज, रघुवीर के इस बाण से मेरी रक्षा कीजिए'। १०। तब नारद ने कहा— 'रे मूर्ख, तू राम के पास जा। वे तो सदा शरणागत-वत्सल है। दास बनकर उनके चरणों का वन्दन कर'। ११। ऐसा सुनकर वह तत्काल चित्रकूट ही में आ गया। उसने तब श्रीराम के चरणों को साष्टांग नमस्कार किया। १२। (फिर) उसने दीन शब्दों में (श्रीराम की) स्तुति की। वह मन में लज्जा को प्राप्त हो गया। वह बोला— 'महाराज, मुझे इस बाण से बचाइए, मार न डालिए'। १३। (यह सुनकर) श्रीराम ने कहा, 'मेरा बाण सचमुच पीछे नहीं फिरता। रे अभिमानी, तुझे दण्ड देता हूँ, तूने दुर्मति धारण की है। १४। मैं एक पत्नीव्रती हूँ, एकवचन (-व्रती) हूँ। इसके अतिरिक्त एकबाण ही मेरी प्रतिज्ञा है। —ऐसा कहकर उन्होंने उस बाण से कौए की दायीं आँख फोड़ डाली। १५। एक आँख को फोड़कर श्रीराम कौए से बोले— 'रे कौए, तेरे शरीर में दोनों आँखों

एक नेत्न फोडी काग साथे, बोलिया रघुवीर,
बे नेत्रनी एक दृष्टि, तारे हशे काग शरीर। १६।
तें चंचुप्रहार कर्यो ते माटे करजे विष्ठा आहार,
प्रेतपिंड स्पर्श्या विना नहि थाय तेमनो उद्धार। १७।
एवुं कहीने जावा दीधो, तेमने तेणी वार,
रघुवीर चरणे नमी, तत्क्षण गयो ते निरधार। १८।
हावे श्रोताजन सावधान थईने, सुणो तेह चरित्न,
चित्नकूट पासे आविया, ते भरत पुण्य पवित्न। १९।
ते समे लक्ष्मण आवता, फळ लेई निज आश्रम,
घणुं सैन्य दीठुं आवतुं, ऊभा विचारे मन। २०।
पोता तणो ध्वज ओळख्यो, लक्ष्मणे तेणी वार,
मन विचार्युं ए केकईए, मोकल्युं सैन्य अपार। २१।
एवुं जाणीने बहु बाण मूक्यां, लक्ष्मणे करी क्रोध,
सुसवाट करतां आवियां, सेन्या उपर अवरोध। २२।
त्यारे सैन्य सरवे खळभळ्युं जोई दिव्य बाण प्रचंड,
शत्नुघने तव बाण मूकी, शर कर्यां शत खंड। २३।
वनमांहेथी सहु ऋषि नाठा, आव्या रघुवीर पास,
महाराज दळ आव्युं घणुं, ते जोई पाम्या त्रास। २४।

में एक ही दृष्टि होगी। १६। तूने (सीता के शरीर में) चोंच से आघात किया, इसलिए तू विष्टा का आहार कर (विष्टा खा)। (फिर) प्रेत-पिण्ड को वगैर स्पर्श किये उसका उद्धार नहीं होगा'। १७। ऐसा कहकर श्रीराम ने उस समय कौए को जाने दिया। तो उनके चरणों को नमस्कार करके वह निश्चय-पूर्वक तत्क्षण चला गया। १८। हे श्रोताजनो, अब सावधान होकर वह चरित्न (लीला) सुनिए। वे भरत पुण्य(-भूमि) पवित्न चित्नकूट के पास आ गये। १९। उस समय लक्ष्मण फल लेकर अपने आश्रम की ओर आ रहे थे। (तब) उन्होंने बड़ी सेना देखी, तो वे मन में विचार करते हुए खड़े रह गये। २०। उस समय लक्ष्मण ने अपने ध्वज को पहचाना, तो मन में सोचा कि कैकेयी ने यह बहुत बड़ी सेना भेजी है। २१। ऐसा समझकर लक्ष्मण ने क्रोध-पूर्वक बहुत बाण चला दिये। वे (बाण) सू-सू करते हुए विना रुकावट के सेना पर आ गये। २२। तब उन प्रचण्ड (संख्या में) दिव्य बाणों को देखकर समस्त सेना घबरा उठी, तो शत्नुघ्न ने बाण छोड़कर उन बाणों को शतखण्ड कर डाला (उनके सौ-सौ टुकड़े कर डाले)। २३।

तव धीरज आपी विप्रने, पछे उठिया रणधीर,
कर धनुषवाण ग्रही तदा चालिया श्रीरघुवीर । २५ ।
ओळख्यो ध्वज पोता तणो, त्यारे पाम्या हरख अपार,
पछी लक्ष्मणनी पासे जईने, बोल्या जुगदाधार । २६ ।
हे वीर ! शुं करवा वढे तुं, अजाण्यो थई आज ?
आपणो ए भाई आवे, भरत मळवा आज । २७ ।
सहु अवधवासीए दूरथी, दीठा श्रीअविनाश,
ज्यम उदयाचळनी उपर शोभे, सूरज तेज प्रकाश । २८ ।
एम रामलक्ष्मण गिरि उपर शोभता शुभअंग,
ते भरते दीठा भक्तवत्सल, आव्यो मन उमंग । २९ ।
साष्टांग करता आवता, भरतजी तेणी वार,
ज्यम आवे मळवा मातने, सुत धरी स्नेह अपार । ३० ।
सहु अवधवासी हरखिया, जोईने पूरणकाम,
परस्पर देखाडता, ओ पेला ऊभा राम । ३१ ।
ते जोई सरवे लोक दोडचा, ऊछळयो अति प्रेम,
पडे आखडे पाषाणमां, चालता उठी एम । ३२ ।

(इधर) वन में से सब ऋषि भाग चले और श्रीराम के पास आ गये (और बोले—), ' हे महाराज, बड़ी सेना आ गयी है । उसे देखकर हम भय को प्राप्त हो गये है ' । २४ । तब उन ब्राह्मणों को धीरज बँधाया और फिर वे रणधीर श्रीराम उठ गये । हाथ में धनुष लेकर तब वे चल दिये । २५ । उन्होंने अपने ध्वज को पहचाना, तो वे अपार हर्ष को प्राप्त हो गये । अनन्तर लक्ष्मण के पास जाकर वे जगदाधार राम बोले । २६ । ' हे भाई, अज्ञान होकर आज तुम क्यों झगड़ाकर रहे हो ? आज अपना यह वन्धु भरत मिलने के हेतु आ रहा है । २७ । सब अयोध्यावासियों ने दूर से ही अविनाशी भगवान् श्रीराम को देखा । जिस प्रकार उदयाचल पर सूर्य का तेज और प्रकाश शोभा देता है, उस प्रकार पर्वत पर राम और लक्ष्मण अपने शुभ अंगों से शोभायमान हो रहे थे । भरत ने जब भक्त-वत्सल राम को देखा, तो मन में उमंग (उभर) आ गयी । २८-२९ । (फिर) भरत उस समय साष्टांग नमस्कार करते आ रहे थे, जैसे कोई पुत्र अपार स्नेह धारण करके अपनी माता से मिलने आता हो । ३० । पूर्णकाम श्रीराम को देखकर समस्त अयोध्यावासी आनंदित हो गये । वे एक-दूसरे को (यह कहकर) दिखा रहे थे— वह वे राम खड़े है । ३१ । उन्हें देखकर सब लोग दौड़ते चले । (उनके

त्यारे सर्व पहेलां भरत आव्या, राम केरी पास,
भरतने जोई भगवान सामा, आविया अविनाश । ३३ ।
पछे धीरज छोडी रामचरणे, मूक्युं भरते शीश,
दंडनी पेरे पड्या कही, प्रणत पाही ईश । ३४ ।
रघुवीर केरा चरण सिंच्या, नेत्र आंसुधार,
त्यारे प्रेमे गद्गद थई बोल्या राम जुगदाधार । ३५ ।
हे भरत ऊठो भाई मारा प्राणवल्लभ वीर,
पछे कर ग्रहीने भरतने, उठाडिया रणधीर । ३६ ।
करुणा करी भीड्या पछे, भरतने हृदया साथ,
अति प्रेम आव्यो परस्पर, गद्गद थया रघुनाथ । ३७ ।
शत्रुघ्ने साष्टांग करियो मळ्या लक्ष्मण भर्थ,
पछे अवधवासी नम्या चरणे, रामने समरथ । ३८ ।
विप्रने मळिया रामजी, मित्रने भेट्या धीर,
सहु सैन्यना परणाम झील्या, एवा श्रीरघुवीर । ३९ ।
सुमंत ने घोराय आवी, नम्या रघुपति चरण,
गुरुने कर्या साष्टांग लक्ष्मण, सहित अशरण-शरण । ४० ।

मन में) बहुत प्रेम उमड़ उठा । ऐसे (दौड़ते हुए) वे पत्थरों में अटक-अटक कर गिर पड़ते, (फिर) उठकर चल देते । ३२ । तब सबसे पहले भरत राम के पास आ गये । उन्हें देखकर अविनाशी भगवान् श्रीराम सामने आ गये । ३३ । तत्पश्चात् धीरज खोकर भरत ने श्रीराम के चरणों में मस्तक रख दिया, अर्थात् झट से झुका किया और 'हे भगवान्, (मुझ) प्रणत की रक्षा कीजिए'—कहते हुए वे दण्डवत् ढंग से गिर पड़े । ३४ । आँखों से बहनेवाली अश्रु-धारा से उन्होंने श्रीराम के चरणों का सिंचन किया, तब जगदाधार श्रीराम प्रेम से गद्गद होकर बोले । ३५ । 'हे मेरे भाई भरत, हे प्राण-वल्लभ बन्धु, उठो ।' फिर हाथ पकड़कर रणधीर श्रीराम ने भरत को उठा लिया । ३६ । तदनन्तर उन्होंने भरत को करुणा-पूर्वक हृदय से लगा लिया । (उन दोनों में) परस्पर बहुत प्रेम उमड़ आया, तो श्रीराम गद्गद हो उठे । ३७ । शत्रुघ्न ने साष्टांग नमस्कार किया; लक्ष्मण और भरत (एक-दूसरे से) मिल गये । तदनन्तर अवधवासी लोगों ने समर्थ श्रीराम के चरणों को नमस्कार किया । ३८ । श्रीराम ब्राह्मणों से मिले । उन धीर पुरुष ने मित्रों से भेंट की । समस्त सेना के प्रणाम स्वीकार किये । ऐसे हैं श्रीरघुवीर ! । ३९ । (तदनन्तर) सुमन्त और घोराय ने आकर श्रीराम के चरणों को नमस्कार

वसिष्ठे आशिष दीधी, हज्यो जय कल्याण,
हे रामजी तव मात आव्यां मळो जई निरवाण । ४१ ।
एवां वचन गुरुनां सांभळी, सत्वर थया रघुवीर,
जेम गाय पासे वच्छ आवे, सजळ प्रेम अधीर । ४२ ।
रामने दीठा आवता, माताए जेणी वार,
सुखासन मुकावी पृथ्वी उपर, ऊतर्या निरधार । ४३ ।
श्रीरामे जई साष्टांग करिया, नम्या जोडी हाथ,
प्रेमे मळचा बे मातने, गद्गद थया रघुनाथ । ४४ ।
रघुवर कहे ओ मात कहोने, कुशळ छे मम तात ?
एवुं सांभळी माताए करवा मांड्यो आंसुपात । ४५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

आंसुपात करतां मात बंन्यो, मूकी मननी धीर रे,
विधवा देखी मातने, रोवा लाग्या श्रीरघुवीर रे । ४६ ।

* * *

किया । (फिर) निराधारों के आधार श्रीराम ने लक्ष्मण-सहित गुरुजी को साष्टांग नमस्कार किया । ४० । (तब) वसिष्ठ ने आशीर्वाद दिया— 'जय और कल्याण हो ।' (और बोले—) 'हे राम, तुम्हारी माताएँ आयी हैं । निश्चय ही उनसे मिलो' । ४१ । गुरुजी के ऐसे वचन सुनकर राम त्वरायुक्त हो गये और जैसे गाय के पास बछड़ा आता है, वैसे वे सजल-नेत्र तथा अधीर होकर (माता की ओर) गये । ४२ । जिस समय माताओं ने श्रीराम को आते हुए देखा, तो पालकियों को भूमि पर रखवाकर वे निश्चय-पूर्वक उतर गयीं । ४३ । श्रीराम ने (उनके पास) जाकर साष्टांग नमस्कार किया और हाथ जोड़कर नमन किया । वे दोनों माताओं से प्रेम-पूर्वक मिले । (उस समय) श्रीराम गद्गद हो उठे । ४४ । (फिर) श्रीराम ने कहा, 'ओ माताओ, कहो, मेरे पिताजी सकुशल तो हैं न ? ऐसा सुनते ही उन माताओं ने (रुदन करते हुए) आँसू बहाना आरम्भ किया । ४५ ।

दोनों माताएँ आँसू बहाती रहीं । वे मन का धीरज खो बैठीं । (तब) माताओं को विधवा (रूप में) देखकर श्रीरघुवीर रोने लगे । ४६ ।

* * *

अध्याय—२० (राम द्वारा दशरथ की उत्तर-क्रिया)

राग आशावरी

त्यारे रोता श्रीरघुवर ज कहे छे, पितानी शी थई पेर ?
विघन सकळ क्यम आव्यां अम घेर ? दैवे कीधो केर । १ ।
त्यारे गुरु कहे तमारे विजोगे, राये तजिया प्राण,
राम राम करतां देह तजियो, गया मोक्षपंथ निरवाण । २ ।
सतीओ सात सें मळीने रायनी, साथे कर्यं सहगमन,
भरते घणा अघरा सम खाधा, ना बेठा राज्यासन । ३ ।
एवुं सुणीने नेत्रकमळमां, चाली आंसुधार,
राम रडंतां रोयुं सरवे वरत्यो हाहाकार । ४ ।
घणो विलाप कर्यो रघुनाथे, प्राकृत जन अनुरूप,
अहो तात तमो सत्यना सागर, धर्मधोरिंधर रूप । ५ ।
दशरथ वीर प्रतापिक महाबळी सुर सकळमां ख्यात,
भूप मुगटमणि भूपति केरा रविकुळमां विख्यात । ६ ।
जेणे वृषपरवाने मार्यो युद्धे, शुक्र मनावी हार,
देव सकळनी साहे करी, तेवा प्राक्रमवंत अपार । ७ ।

अध्याय—२० (राम द्वारा दशरथ की उत्तर-क्रिया)

तब रोते-रोते श्रीराम कह रहे थे— 'पिताजी को क्या बात हुई (पिताजी-सम्बन्धी क्या घटना हुई) ? हमारे घर सब विघ्न कैसे आ गये ? (हाय !) दैव ने सत्यानाश कर डाला'। १। जब गुरुजी ने कहा— 'तुम्हारे वियोग के कारण राजा ने प्राण त्याग दिये। 'राम', 'राम', कहते हुए उन्होंने देह त्याग दी। वे अवश्य मोक्ष मार्ग पर सिधारे। २। सात सौ पतिव्रता स्त्रियों ने मिलकर राजा के साथ सहगमन किया। भरत ने बहुत कठिन सौगन्धें लीं। वे राजगद्दी पर नहीं बैठे'। ३। ऐसा सुनते ही (श्रीराम की आँखों से) अश्रु-धारा बहने लगी। श्रीराम के रोते रहने पर सब रोने लगे और हाहाकार मच गया। ४। प्राकृत (साधारण) मनुष्य के अनुरूप श्रीराम ने बहुत विलाप किया। (वे बोले—) 'हे तात, आप सत्य के सागर थे, धर्म-धुरन्धर-स्वरूप थे। ५। दशरथ वीर, प्रतापी तथा महाबलवान् थे, समस्त देवों में प्रसिद्ध थे। वे राजा राजाओं के मुकुट-मणि और रवि-कुल में विख्यात थे। ६। जिन्होंने (देवों और दैत्यों के) युद्ध में वृषपर्वा को मार डाला और (दैत्य-गुरु) शुक्र को पराजय स्वीकार करा

एम घणो विलाप कर्यो रघुनाथे, मानुषी चेष्टा काज,
एतो पूरण ब्रह्म अखंड अनामय, कोटी ब्रह्मांडना राज । ८ ।
आनंद रूप सदा सुखसागर, मायापति भगवान,
शोक ने मोह नथी ए प्रभुने, जणावे मानुष मान । ९ ।
त्यारे वसिष्ठ कहे हो रघुपति हावे, शोक तजो बुद्धिमान,
प्रयागमां जईने तात तणी, करो उत्तरक्रिया विधान । १० ।
पछे आश्रममां सहुने उतार्या, सैन्य प्रजा गुरुजन,
सीताजी सासुने मळियां, करतां शोक रुदन । ११ ।
स्नान कराव्युं सीताने पछे, माताए लीधां उछंग,
पर्णकुटीमां मळीने वेठां, त्रणे जण एक संग । १२ ।
हावे रघुपति चाल्या त्यां थकी पोते आव्या प्रयाग ज मांह्य,
वसिष्ठ वाल्मीकि आदे सकळ मुनि, साथे आव्या त्यांह्य । १३ ।
तीरथराजमां स्नान करीने, श्राद्ध कर्युं श्रीराम,
उत्तरक्रिया करी तातनी, पाम्या छे सुरधाम । १४ ।

दी, जिन्होंने समस्त देवों की सहायता की, वे वैसे ही वहुत प्रतापवान् थे ' । ७ । इस प्रकार मानवीय चेष्टा के लिए (रूप में) श्रीराम ने बहुत विलाप किया । (परन्तु वस्तुतः) वे तो अखण्ड, अनामय पूर्णब्रह्म हैं, करोड़ों ब्रह्माण्डों के राजा हैं । ८ । वे मायापति भगवान् आनन्द-रूप तथा सदासुख के सागर है । उन प्रभु के लिए कोई शोक तथा मोह नहीं है; फिर भी वे (इस प्रकार व्यवहार में) मानव से समानता दिखा रहे थे, अर्थात् मानवीय लीला प्रदर्शित कर रहे थे । ९ । तब वसिष्ठ ने कहा, ' हे रघुपति, हे बुद्धिमान्, अब शोक छोड़ दो । प्रयाग में जाकर पिताजी की उत्तरक्रिया विधि (सम्पन्न) करो ' । १० । तत्पश्चात् राम ने सेना, प्रजा(-जन), गुरुजन—सबको आश्रम में ठहरा दिया । (फिर) सीता सासुओं से मिली, तब वे बहुत शोक एवं रुदन करती रहीं । ११ । फिर माताओं ने सीता को स्नान कराया और गोद में (बैठा) लिया । तीनों जनी मिलकर एक साथ पर्ण-कुटी में बैठ गयीं । १२ । अब वहाँ से श्रीराम स्वयं चल दिये और प्रयाग ही में आ गये । वसिष्ठ, वाल्मीकि आदि सब मुनि (भी) उनके साथ वहाँ आ गये । १३ । तीर्थराज (प्रयाग) में स्नान करके श्रीराम ने श्राद्ध किया और पिताजी की उत्तर-क्रिया की । (तब) पिताजी देवलोक को प्राप्त हो गये । १४ । कितने ही कवि ऐसा ही कहते हैं कि राजा दशरथ स्वर्ग में रहे हैं । परन्तु (वस्तुतः) दशरथ मोक्ष को प्राप्त हो गये हैं—

कवि केटला एम ज कहे छे, स्वर्ग रह्या छे राय,
पण मोक्ष पाम्या छे दशरथ ए कथा, उत्तरकांडे कहेवाय । १५ ।
जेना नाम थकी नर पामर, पापी मोक्ष पळाय,
तो दशरथनी गतिनुं शुं कहेवुं पुत्र जेना रघुराय । १६ ।
एम उत्तरक्रिया पितानी करी, चित्रकूटमां आव्या राम,
पछे सर्व तणी संभाळ करी जे, पोते पूरणकाम । १७ ।
घोराजाए मंगाव्युं अगणित, फळ जळ तृण ने अन्न,
सुमंते वहेंची अपाव्युं सर्वने पहोंचाडे सेवक जन । १८ ।
कोई आहार करे कोई ए नथी करता, राखी मनमां धीर,
ना करे भोजन तेने मारा सम छे, बोल्या श्रीरघुवीर । १९ ।
त्यारे अवधवासीए आज्ञा मानी, फळ खाधां तेणी वार,
अमृतना करतां वळी रामे, मूक्यो स्वाद अपार । २० ।
पछे पर्णकुटीमां राम गया, कर्यो माताने घणो बोध,
जेणे करी मोह निवृत्ति पामे, शोकरहित अविरोध । २१ ।
एम रामे घणो आग्रह करीने, माताने कराव्यो आहार,
पछे जानकीने पासे लई जननिए फळ खाधां तेणी वार । २२ ।

वह कथा उत्तर-काण्ड में कही जाएगी । १५ । रघुनाथ श्रीराम जिनके ऐसे पुत्र हैं कि जिनके नाम से पामर पापी नर मोक्ष (को प्राप्त कर) जाते हैं, उन दशरथ की गति के बारे में मैं क्या कहूँ ? । १६ । इस प्रकार पिताजी की उत्तर-क्रिया करके श्रीराम चित्रकूट में (लौट) आये । तत्पश्चात् पूर्णकाम श्रीराम स्वयं सब की देखभाल करते थे । १७ । (इधर) घोराय ने अपार फल, जल, तृण और अन्न मँगा लिया । (फिर) सुमन्त ने (वह सब) सबके लिए बाँट दिया और सेवक-जनों ने (सबके पास) पहुँचवा दिया । १८ । मन में धैर्य रखते हुए कोई भोजन करता था, तो कोई नहीं करता था । (यह देखकर) श्रीराम ने कहा— 'जो भोजन नहीं करेगा, उसे मेरी शपथ है'। १९ । तब अयोध्यावासियों ने आज्ञा मानी और उस समय फल खा लिये । राम ने फिर (उन वस्तुओं में) अमृत से भी अधिक अपार स्वाद डाल रखा था । २० । तदनन्तर श्रीराम पर्ण-कुटी में गये और उन्होंने माताओं को बहुत उपदेश दिया, जिससे बिना किसी बाधा के शोकरहित होकर वे मोह से निवृत्ति प्राप्त कर गयीं । २१ । इस प्रकार अनुरोधपूर्वक बहुत हठ करके श्रीराम ने माताओं को भोजन कराया, फिर उस समय माताओं ने सीता को पास लेकर फल खा लिये । २२ । गुरु वसिष्ठ, भरत, शत्रुघ्न,

गुरु वसिष्ठ भरत शत्रुघन लक्ष्मण, सुमंत ने घोराय,
ए सहुने लेईने भोजन करवा, बेठा श्रीरघुराय। २३।
एम भोजन करीने सुखिया थया, सहु अवधपुरीनो साथ,
रजनी थई एम करतां त्यारे, बोल्या श्रीरघुनाथ। २४।
अरे भाई सहु शयन करो, हवे निशा विषे निरवाण,
मारगमां घणुं श्रमित थया छो, माटे निद्रा करो जाण। २५।
पछे राम आज्ञाए करीने सर्वे ज्यां त्यां सूता जन,
एक आसने राम सूता, भरत लक्ष्मण शत्रुघन। २६।
एम दर्भनां आसन पत्र नवांकुर, आच्छादन करी तांह्य,
श्रीरघुवीर ह्रदेमां राखी, सूता पृथ्वी मांह्य। २७।
पछी कौशल्या ने सुमित्रा पोढ्यां, पर्णकुटी पावन,
जानकीने मध्ये लेई माता, जाणे प्राण-जीवन। २८।
ए रीते सहु निशा निर्गमी, सुखिया थया सहु लोक,
प्रातःकाळ हवो त्यारे बोलवा लाग्यां, पंखी विशेक। २९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पंखी लाग्यां बोलवाने, हवो प्रातःकाळ रे,
सरव पहेला ऊठीने, गुरुने पाये लाग्या चार बाळ रे। ३०।

लक्ष्मण, सुमन्त और घोराय—सब को (साथ) लेकर (फिर) श्रीराम भोजन करने बैठ गये। २३। इस प्रकार सब अयोध्यावासियों के साथ भोजन करके सब सुखी हो गये। ऐसा करते-करते रात हो गयी। तब श्रीराम बोले। २४। 'हे भाइयो, अब रात में सब अवश्य सो जाओ। मार्ग में बहुत थक गये हो, इसलिए नींद लो (सो जाओ)। २५। फिर श्रीराम की आज्ञा से सब लोग जहाँ-तहाँ सो गये। (इधर) एक (ही) आसन अर्थात् शय्या पर श्रीराम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न सो गये। २६। इस प्रकार वहाँ कुशासन, पत्र, नव-अंकुर बिछाकर सब लोग श्रीराम को हृदय में रखते हुए भूमि पर सो गये। २७। फिर उस पावन पर्णकुटी में कौसल्या और सुमित्रा दोनों माताएँ सीता को बीच में लेकर लेट गयीं। वे सीता को जीवन के प्राण समझती थीं। २८। इस प्रकार समस्त रात बीत गयी। सब लोग सुखी हो गये। जब प्रातःकाल हो गया, तब पक्षी असाधारण रूप में बोलने लगे। २९।

पक्षी बोलने लगे— (अब) प्रातःकाल हो गया। (श्रीराम आदि) वे चारों लड़के सबसे पहले उठकर गुरुजी के पाँव लगे। ३०।

* * *

अध्याय—२१ (श्रीराम-भरत-संवाद)

राग सामेरी

प्रातःकाळे ऊठ्या बंधु, सहित पूरणकाम,
स्नान संध्या करी बेठा, स्फटिक शिला राम। १ ।
सज्जन, गुरुजन, पुर-प्रजा, बंधु सकळ परिवार,
सहु वींटी बेठा रामने, शोभा तणो नहि पार। २ ।
रघुवीर सज्जन वृंद-वेष्टित, शोभता तेणी वार,
नक्षत्रमंडळ मध्यमां, ज्यम शोभे अत्रिकुमार। ३ ।
एम सभा सरवे मळी बेठी, राम केरी पास,
सहु एक दृष्टे निरखता, रघुवीर रूप प्रकाश। ४ ।
ते समे जनकपुरी थकी, आव्या जनक राजन,
तेमणे जाणी बात जे गयां, राम सीता वन। ५ ।
ते सांभळी ऊठिया ज्यम त्यम, दुःखी थया भूपाळ,
सहु साथ तेडी नीकळ्या, थई चित्रकूटनी भाळ। ६ ।
अनुचरे आवीने कह्युं, जे आवे मिथुलानाथ,
सुणी राम ऊठी चाल्या सन्मुख, तेडीने सहु साथ। ७ ।

अध्याय—२१ (श्रीराम-भरत-संवाद)

सबेरे पूर्णकाम श्रीराम (लक्ष्मण आदि) वन्धुओं सहित उठ गये और स्नान, संध्या करके स्फटिक शिला पर बैठ गये। १। सज्जन, गुरुजन, अयोध्यानगरी के प्रजाजन, बन्धु तथा समस्त परिवार सब राम को घेर कर बैठ गये। वहाँ की शोभा की कोई सीमा नहीं थी। २। जिस प्रकार नक्षत्र-मण्डल में (तारों के समूह में) चन्द्र शोभायमान होता है, उसी प्रकार उस समय सज्जनों के समूह द्वारा घिरे हुए राम शोभायमान हो रहे थे। ३। इस प्रकार समस्त सभा (मण्डली) मिलकर राम के पास बैठ गयी। श्रीराम के रूप-प्रकाश को सब एक दृष्टि से, अर्थात् एकटक देख रहे थे। ४। उस समय जनकपुरी (मिथिला) से राजा जनक आ गये। उन्होंने यह बात जान ली थी कि राम और सीता वन गये हैं। ५। उसे सुनकर राजा जनक जैसे-वैसे उठ गये—वे दुखी हो गये। फिर सबको साथ लेकर निकले। उन्हें चित्रकूट का पता चल गया। ६। सेवकों ने आकर कहा—'मिथिलाधिपति पधारे हैं।' तो श्रीराम उठकर और सबको साथ लेकर उनके सम्मुख चल दिये। ७। उस समय वहाँ तक पास ही मिथिलाधिपति आ गये। राम को देखकर राजा धीरज खो बैठे। और

एटले पासे आविया, मिथुलापति तेणी वार,
रामने जोई गई धीरज नृपनी, चाली आंसुधार। ८ ।
पछे भेटिया रघुवीरने, चांपिया हृदय साथ,
जामाता चारेने मळी, रोया सुनयना-नाथ। ९ ।
वसिष्ठना पद परणम्या, सहुने कर्या परणाम,
पछी आविया आश्रम विषे, आदर कर्यो बहु राम। १० ।
त्यां वृक्षछाया मंडप नीचे, बेठा सरवे जन,
जोई वेश तापस रामनो, घणुं जनक सोचे मन। ११ ।
कौशल्याने मळ्यां राणी, सुमित्रा शुचि मन,
जानकीने रुदे चांपी, करे मात रुदन्। १२ ।
पछे दैवगत विपरीत जाणी, शोक समाव्यो मात,
त्यारे कौशल्याए कही मांडी, अवधपुरनी वात। १३ ।
पछे शिबिर करीने ऊतर्या, जनकपुरनो सहु परिवार,
सभा करी बेठा सहु, मनमांहे दुःख अपार। १४ ।
मध्यमां राजे राम पासे, गुरुजन प्रमुख,
सहु प्रजाजन वींटी रह्या, बंधु भरत सन्मुख। १५ ।
त्यारे वसिष्ठे कही वात सरवे, जनकने तेणी वार,
भरतनी भक्ति नीम सुणी, मन पाम्या दुःख अपार। १६ ।

(उनकी आँखों से) अश्रु-धारा वह चली। ८। तदनन्तर वे श्रीराम से मिले और उन्होंने उनको हृदय से लगा लिया। जनक अपने चारों जामाताओं से मिलकर रो पड़े। ९। उन्होंने वसिष्ठ के पदों को प्रणाम किया तथा (अन्य) सब (गुरुजनों) को प्रणाम किया। तत्पश्चात् वे आश्रम में आ गये, तो राम ने उनका आदर (-सत्कार) किया। १०। (फिर) सब लोग वहाँ वृक्ष की छाया में मण्डप में बैठ गये। श्रीराम के तापस के-से वेश को देखकर राजा ने मन में बहुत चिन्ता (अनुभव) की। ११ (सुनयना) रानी शुद्ध मन से कौसल्या और सुमित्रा से मिली। (तदनन्तर) सीता को हृदय से लगा कर वह रो उठी। १२। फिर दैवगति को प्रतिकूल जानकर उस माता ने शोक को शान्त कर लिया; तब कौसल्या ने अयोध्या की बात कहना आरम्भ किया। १३। अनन्तर जनकपुर के सब परिवार (के लोग) शिविर बनाकर ठहर गये। (फिर) सब सभा लगाकर बैठ गये। उनके मन में अपार दुख था। १४। बीच में राम शोभायमान थे; उनके पास ही प्रमुख गुरुजन थे। सब प्रजाजन सामने बन्धु भरत को घेरकर (बैठे) रहे। १५। तब उस समय वसिष्ठ

पछी विचार्युं ए काळबळ, कहेवा न सूझी वात,
सहु सभा अणबोली रही, नीरखे त्यां जुगतात । १७ ।
त्यारे भरतजी ऊभा थया, कर जोडीने तेणी वार,
रघुवीर सन्मुख बोलिया, सुणतां सभाजन सार । १८ ।
महाराज राजाधिराज हावे, पधारो पुरमांहे,
बंधु बाळक प्रजाने पाळो, सदा रहीने त्यांहे । १९ ।
करो काम पूरण दासनां, विनति धरो चित्त आज,
कलंक मारे शिर चड्युं, ते उतारो महाराज । २० ।
हुं अपराधी तम तणो, ते शरण राखो नाथ,
तमो दीनबंधु झालो प्रभु, हुं दीन केरो हाथ । २१ ।
छो प्रणतपाळ दयाळ निर्मळ, अजीत बोध अगाध,
पूरो मनोरथ दासना, करो क्षमा मुज अपराध । २२ ।
एवुं कही भरत गद्गद थया, चाल्यां नेत्रे आंसु-नीर,
त्यारे बोल्या श्रीरघुवीर, करुणा वचन मृदु गंभीर । २३ ।
हे भाई भरत कह्यां तमो, ते वचन सरवे सत्य,
पण आपणा कुळ तणी रीति, जाणो छो तमे गत्य । २४ ।

ने जनक से सब बात कह दी । तो भरत की भक्ति तथा नेम सुनकर वे मन में अपार दुख को प्राप्त हो गये । १६ । फिर उन्होंने सोचा कि वह तो काल का बल (प्रभाव) है, उन्हें कहने के लिए बात न सुझायी दी । समस्त सभा अनबोली, अर्थात् मूक रह गयी । वहाँ जगत्पिता (सब) निरख रहे थे । १७ । तब उस समय हाथ जोड़कर भरत खड़े रह गये और रघुवीर राम के सम्मुख बोले । समस्त सभाजन उसे भली भाँति सुन रहे थे । १८ । 'हे महाराज, राजाधिराज, अब नगर में पधारिए । वहाँ नित्य रहते हुए आप बन्धुओं, बालकों और प्रजा (-जनों) का पालन कीजिए । १९ । मुझ सेवक की इच्छाओं को पूर्ण कीजिए । आज मेरी विनती को मन में रखिए । हे महाराज, मेरे सिर पर कलंक चढ़ (लग) गया है, उसे उतार (मिटा) दीजिए । २० । हे नाथ, मैं आपका अपराधी हूँ, तो मुझे अपनी शरण में रखिए । आप दीन-बन्धु हैं, मुझ दीन का हाथ पकड़ लीजिए । २१ । आप प्रणतों के पालक हैं, दयालु, निर्मल हैं, अजित हैं, आपका ज्ञान अथाह है । मुझ दास के मनोरथ पूर्ण कीजिए; मेरे अपराधों को क्षमा कीजिए' । २२ । ऐसा कहते हुए भरत गद्गद हो गये । उनकी आँखों में अश्रुजल (भर) आया । तब श्रीराम करुणा-भरे, कोमल परन्तु, गम्भीरतापूर्वक ये वचन बोले । २३ । "हे भाई भरत,

ते माटे में क्यम भंग थाये, तात केरुं वचन ?
लांछन लागे कुळ विषे, थाय पूर्वज नरकपतन । २५ ।
जुओ पिताए केवुं वचन पाळयुं, नव डगावी मत्य,
ते कारण तजिया प्राण पण, नव जावा दीधुं सत्य । २६ ।
पाळवाने पितृवचन हुं, नीकळ्यो वनमोझार,
जो आवुं अवधि वीत्या विना, मुंने सहु करे धिक्कार । २७ ।
वरस चतुर्दश वन रही, करुं देवऋषिनां काम,
एम पितावाणी सत्य करीने, आवीश पाछो गाम । २८ ।
त्यारे भरत कहे महाराज पळशे, पितानुं सत्य वचन,
वरस चौद रहो सुखे, जे अवधपुर उपवन । २९ ।
नीकर मुझने करो आज्ञा, हुं जाउं वनमां नाथ,
तमो अवधपुरमां पधारो तेडी सीता लक्ष्मण साथ । ३० ।
हुं दास केरे निमित्ते, स्वामी तमारे जे वन,
तेणे करी अपकीर्ति मारी, थाय चौद भोवन । ३१ ।
माटे पधारो प्रभु पुर विषे, तो थाय सर्व सनाथ,
हुं शोक सिंधुमांहे बूडुं, झालो मारो हाथ । ३२ ।

तुमने जो बातें कहीं, वे सब सत्य हैं। परन्तु तुम (हमारे) कुल की रीति तथा गति (स्थिति) जानते हो । २४ । इसलिए मेरे द्वारा पिताजी के वचन का भंग (उल्लंघन) कैसे होगा ? (उससे) कुल में लांछन लगेगा, पूर्वज नरक में पड़ जाएँगे । २५ । देखो, पिताजी ने वचन को कैसे पालन किया । मृत्यु उन्हें विचलित नहीं कर पायी । उस (वचन) के लिए उन्होंने प्राण त्याग दिये; परन्तु अपनी प्रतिज्ञा को जाने नहीं दिया । २६ । मैं पिताजी के वचन का पालन करने के लिए वन में जाने को निकला हूँ । यदि बिना अवधि के व्यतीत हुए, मैं (लौट) आऊँ, तो सब मेरा धिक्कार करेगे । २७ । चौदह बरस (तक) मैं वन में रहते हुए देवों और ऋषियों का काम (सम्पन्न) करूँगा । इस प्रकार पिताजी की वाणी अर्थात् कही बात को सत्य करके ग्राम में लौट आऊँगा " । २८ । तब भरत ने कहा— 'महाराज, यदि अयोध्या के उपवन में चौदह वर्ष आप सुखपूर्वक रहें, तो पिताजी के प्रतिज्ञा-सम्बन्धी वचन का पालन तो होगा (ही) । २९ । नहीं तो हे नाथ, मुझे आज्ञा दीजिए, मैं वन में जाऊँगा । सीता और लक्ष्मण को साथ में लेकर आप अयोध्या में पधारिए । ३० । हे स्वामी, मुझ दास के निमित्त आपका जो वन-गमन हुआ, उससे चौदह भुवनों में मेरी अपकीर्ति हो जाएगी । ३१ ।

जो गमे तो वन करो पूरण, चतुर्दश दिन आंह्य,
चौद वरस ते जाणजो, ए चतुर्दश दिन दिन मांह्य । ३३ ।
ज्यम मनुष्यनो एक संवत्सर, थाय देवनो एक दिन,
ए न्याये करीने जाणजो, त्यम अमारे स्वामिन । ३४ ।
एम अमो प्राकृत जीव छे, तमे देव छो उत्कर्ष,
चौद दिन जे तमारा, ते अमारे चतुर्दश वर्ष । ३५ ।
ज्यमत्यम करी प्रभु पधारो, तमो अवधपुरीमां आज,
पुर आवतां जे पाप थाय, ते मारे शिर महाराज । ३६ ।
रघुवीर कहे एम थाय नहि, अघटित कर्म असत्य,
एकवाण ने एकपत्नी व्रत, एकवचन मारे सत्य । ३७ ।
मेरु चळे दिगपाळ डोले, पश्चिम ऊगे सूर,
पृथ्वी अवळी थाय, वरसे चन्द्र अग्नि नूर । ३८ ।
समुद्र सात मरजाद मूके, ए थाय अघटित जाण,
पण वचन भंग न थाय में, सुणो भरत साची वाण । ३९ ।

इसलिए, हे प्रभु, आप नगर में पधारिए; तो सब सनाथ हो जाएँगे। मैं शोक-सागर में डूब रहा हूँ, मेरा हाथ पकड़ लीजिए (और मुझे बचाइए) । ३२ । यदि चाहें तो यहाँ वन (-वास) चौदह दिन में पूर्ण कर लीजिए । और उन चौदह दिनों में चौदह वर्ष समझिए । ३३ । जैसे मनुष्यों का एक संवत्सर (वर्ष) देवों का एक दिन (बराबर) होता है, वैसे हे हमारे स्वामी, उस न्याय से (अवधि को पूर्ण) समझ लीजिए । ३४ । वैसे तो हम प्राकृत (साधारण संसार के) जीव हैं, आप श्रेष्ठ देव हैं । (उस दृष्टि से) आपके जो चौदह दिन हैं, वे हमारे लिए चौदह वर्ष हैं । ३५ । हे प्रभु, जैसे-वैसे करके आज आप अयोध्या में पधारिए । हे महाराज, आपके नगर में आने में जो पाप होगा, वह मेरे सिर हो' । ३६ । (यह सुनकर) श्रीराम ने कहा— 'ऐसा अघटित असत्य कर्म नहीं होगा । मेरे लिए एक बाण, एक पत्नीव्रत तथा एकवचन (व्रत) सत्य हैं । ३७ । मेरु पर्वत विचलित होगा, दिग्पाल कम्पित हो जाएँगे, सूर्य पश्चिम में निकलेगा, पृथ्वी टेढ़ी या उल्टी हो जाएगी, चन्द्रमा अग्नि का-सा तेज बरसा देगा, सातों ❀ समुद्र अपनी मर्यादा का त्याग कर देंगे । —समझो कि वे असम्भाव्य बातें भी (घटित) हो जाएँगी । परन्तु, हे भरत, मेरी सत्य बात सुनो, मेरे द्वारा (पिताजी के) वचन का भंग (उल्लंघन) नहीं हो

❀ टिप्पणी : सात समुद्र-क्षीर, दधि, घृत, इक्षु, मधु, मदिरा और लवण ।

ते माटे भाई जाओ तमो, हवे अवधपुर मोझार,
रूडी रीते पाळजो सहु, प्रजा ने परिवार। ४०।
एवां वचन सुणी श्रीरामनां, थया लोक सर्वे निराश,
रोमांचित थया भरतजी, मुखे मूकता निश्वास। ४१।
ते दिवस एम वही गयो, पछे मूकी मननी धीर,
कल्पांत घणुं भरते कर्युं, हा नव कही रघुवीर। ४२।
सायंकाळ थयो तदा, आज्ञा करी गुरुनाथ,
गया संध्या करवा रामजी, त्यारे ऊठया सरवे साथ। ४३।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सहु साथ ऊठयो ते समे, भरते विचार्युं मन रे,
में रहेवाशे नहि रामवियोगे, माटे पाडुं तन रे। ४४।

सकेगा। ३८-३९। इसलिए, हे भाई, तुम अब अयोध्यानगरी में जाओ और अच्छी रीति से समस्त प्रजा तथा परिवार का पालन करो'। ४०। श्रीराम की (कही हुई) ऐसी बातें सुनकर सब लोग निराश हो गये। भरत रोमांचित हो गये, वे मुख से आहें भरते रहे। ४१। वह दिवस तो इस प्रकार बीत गया। फिर भरत ने मन का धीरज खो देकर (रो-रोकर) कल्पान्त कर दिया। फिर भी श्रीराम ने 'हाँ' नहीं कहा। ४२। शाम हो गयी, तब गुरुदेव ने आज्ञा दी। (उसके अनुसार) श्रीराम संध्या करने चल दिये, तब सब लोग साथ में उठ गये। ४३।

उस समय सब (लोग) साथ में उठ गये, तो भरत ने मन में (यह) सोचा—राम का वियोग होने पर मैं (जीवित) नहीं रहूँगा; अतः मैं अपनी देह का त्याग कर दूँगा। ४४

* * *

अध्याय—२२ (श्रीराम द्वारा भरत को सान्त्वना देना)

राग मारु

पडी निशा रवि थयो अस्त, त्यारे ऊठयो ते साथ समस्त,
गुरु सहित गया श्रीराम, सेवा वंदन करवा काम। १।

अध्याय २२— (श्रीराम द्वारा भरत को सान्त्वना देना)

सूर्य का अस्त हुआ, तो रात हो गयी। तब वे सब साथ ही उठ गये। गुरु के साथ श्रीराम सेवा, वन्दना (आदि) काम करने के लिए चले गये। १। उनके साथ लक्ष्मण और शत्रुघ्न थे। वे (इधर) पावन

साथे लक्ष्मण शत्रुघन, परिचर्या करे पावन,
तेवे भरतने आव्यो लाग, त्यांथी ऊठी चाल्या महाभाग। २ ।
गिरि उपर जईने दूर त्यां काष्ठ मेळव्यां शूर,
मूक्यो अग्नि तेह मोझार, कर्यो बळवाने निश्चे विचार। ३ ।
अग्नि पूंठे प्रदक्षिणा फरता, कर जोडीने स्तुति करता,
रघुवीरने अर्प्युं मन, मुख बोलता एम वचन। ४ ।
ज्यां हुं पामुं जन्मनिवास, थाउं रघुवर केरो दास,
एम कही थया तत्वर त्यांहे झंपलावाने अग्निमांहे। ५ ।
त्यारे वाल्मीक मुनि महाराज, दीठुं करतां विपरीत काज,
तत्क्षण धाया मुनिनाथ, आवी झाल्यो भरतनो हाथ। ६ ।
रुदे साथे आलिंगन दीधुं, मन भरतनुं शीतळ कीधुं,
अल्या भरत आ शुं करे काम ? पाळ आज्ञा करे जे राम। ७ ।
तुं डाह्यो बुद्धिवंत कहेवाय, सहसा करे आत्महत्याय,
माटे धीरज राखो मन, ए वाते थाय मोटुं विघन। ८ ।
त्यारे भरत कहे मुनिराय, में तो राम बिना न रहेवाय,
ते माटे पाडुं मारो देह, घणो पापी अमंगळ एह। ९ ।

परिचर्या (सेवाटहल) कर (ही) रहे थे कि (उधर) उस समय भरत को अवसर मिल गया। तो वे महाभाग उठकर वहाँ से चल दिये। २। तब पर्वत पर दूर जाकर उन्होंने आवेश में लकड़ियाँ इकट्ठा कीं और उनमें अग्नि डालकर निश्चय ही जल जाने का विचार (निर्णय) कर लिया। ३। वे अग्नि के पास से प्रदक्षिणा करते रहे (और तत्पश्चात्) हाथ जोड़कर स्तवन करते रहे। उन्होंने श्रीराम को मन समर्पित किया और वे मुँह से ऐसी बात बोलने लगे। ४। 'जहाँ (कहीं) मैं जन्म तथा निवास को प्राप्त हो जाऊँ, मैं श्रीराम का दास (ही) हो जाऊँ।' ऐसा कहकर वे अग्नि में साहसपूर्वक कूदने के लिए तैयार हो गये। ५। तब मुनिनाथ महाराज वाल्मीकि ने (उन्हें ऐसा) विपरीत काम करते देखा, तो वे तत्क्षण दौड़ पड़े और (वहाँ) आकर उन्होंने भरत का हाथ पकड़ लिया। ६। (फिर) उन्होंने (भरत को) हृदय से लगाकर आलिंगन किया और उनके मन को शान्त कर दिया। (वे बोले) 'हे भरत, यह क्या (कैसा) काम कर रहे ? जो आज्ञा राम देंगे, उसका पालन करो। ७। तुम समझदार और बुद्धिमान् कहाते हो और सहसा आत्मघात करने जा रहे हो। अतः मन में धीरज रखो। उस बात से बड़ा विघ्न (उत्पन्न) हो जाएगा'। ८। तब भरत ने कहा, 'हे मुनिराज मुझसे बिना राम के

हुं कहेवायो केकईनो तन, जे कारण जाय रघुपति वन,
माटे शुं करुं जीवीने आज ? त्यारे बोल्या श्रीमुनिराज । १० ।
सुण भक्त शिरोमणि भर्थ, एवो लावीश नहि मन अर्थ,
करे शुं करवा तुं क्लेश ? रामने नथी अंतर लेश । ११ ।
तारी विश्वमां रूडी ख्यात, नथी कहेतुं को भूंडी वात,
साक्षात् ए श्रीहरि राम, अवतर्या करवा सुर-काम । १२ ।
भूमिनो उतारवा भार, करवा असुर तणो संहार,
कह्युं भविष्य सकळ मुनिराज, रावणादिक वधनुं काज । १३ ।
ते करी पछी आवशे घेर, त्यारे पामशो सुख बहु पेर,
एम समजाव्या घणुं भर्थ, तेडी लाव्या मुनि समर्थ । १४ ।
नित्य कर्म करी रघुवीर, पूछे लक्ष्मणने रणधीर,
एवे भरत गया छे क्यांहे, जुवोने तेडी लावो आंहे । १५ ।
एवे भरतनो झाली हाथ, तेडी लाव्या त्यां मुनिनाथ,
समश्यामां सूचवियुं तेह, भरत करता हता कृत्य जेह । १६ ।

नहीं रहा जाता । इसलिए मैं देह-त्याग कर रहा हूँ— वह तो बहुत पापी तथा अमंगल (जो) है । मैं (उस) कैकेयी का पुत्र हूँ, जिसके कारण श्रीराम वन में जा रहे हैं । इसलिए मै आज (अब) जीवित रहकर क्या काम कर सकता हूँ ?' तब मुनिराज वाल्मीकि बोले । ९-१० । 'हे भक्त-शिरोमणि भरत, सुनो । मन में ऐसा अर्थ (विचार) मत लाओ । तुम (किसलिए) ऐसा क्लेश कर रहे हो ? राम को इससे लेश(-भर) भी अन्तर नहीं आता है । ११ । विश्व में तुम्हारी अच्छी कीर्ति है । कोई भी (तुम्हारे विषय में) बुरी बात नहीं कहता । वे श्रीहरि (भगवान्) राम के रूप में देवों का कार्य करने, भूमि का भार उतारने तथा असुरों का संहार करने के लिए प्रत्यक्ष अवतरित हो गये हैं । समस्त मुनिवरों ने भविष्य कहा है कि रावण आदि का वध-सम्बन्धी कार्य करने के पश्चात् वे घर (लौट) आएँगे । तब तुम बहुत प्रकार से सुख को प्राप्त करोगे ।' इस प्रकार समर्थ मुनि (बाल्मीकि) ने भरत को बहुत समझा लिया और वे उन्हें ले आये । १२-१४ नित्य कर्म (सम्पन्न) करके श्रीराम ने रणधीर लक्ष्मण से पूछा— 'भरत इस समय कहाँ गया है ? उसे देखकर यहाँ ले आओ' । १५ । इतने में भरत का हाथ पकड़कर मुनिनाथ वाल्मीकि वहाँ ले आये । उन्होंने संकेत से वह कृत्य सूचित किया, जो भरत कर रहे थे । १६ । ऐसा सुनकर श्रीराम ने भरत को हृदय से कसकर लगा लिया । तो भरत के मन में दुःख उत्पन्न हो गया । फिर

एवुं सांभळी श्रीरघुनाथ, भीडया भरतने हृदया साथ,
दु:ख ऊपन्युं भरतने मन, मोकळे मुख करता रुदन । १७ ।
सहु साथ आवी मळ्यो त्यांहे, रघुनाथ ऊभा छे ज्यांहे,
ज्यम करुणा विरहे भूप, एम भरतने रघकुळ भूप । १८ ।
राम जोई भरत दु:ख मन, हृदे चांपीने करता रुदन,
मारा बांधव एम न कीजे, क्षत्रीधर्म संभाळ लीजे । १९ ।
तमो छो डाह्या घणुं शुं कहीए ? मोटानी आज्ञामां रहीए,
पृथ्वीनुं पड जो फ्‌री जाय, तो में हवडां न पुरमां अवाय । २० ।
त्यारे भरत कहे महाराज, साथे मुंने तेडो सेवा काज,
राम कहे एम ना थाय वीर, मारी आज्ञा पाळो मतिधीर । २१ ।
चौद वरस पूरां पावन, तेथी अधिक चतुर्दश दिन,
पंदरमा दिवसनी मध्याह्न, हुं तमने मळीश देई मान । २२ ।
साची अवध करुं छुं आंहे, त्यारे हुं आवीश पुरमांहे,
सरवे सांभळतां श्रीराम, एम बोल्या पूरणकाम । २३ ।
पछे करुणा करी रघुनाथ, भरतने शिर मूक्यो हाथ,
शोक हरण कर्यो श्रीराम, भरतनुं मन पाम्युं विराम । २४ ।

वे खुले मुँह से (गला फाड़कर) रुदन करते रहे । १७ । जहाँ राम खड़े थे, वहाँ सब साथ आकर मिल गये । जैसे राजा (प्रजा के दु:ख के अवसर पर) करुणा की बौछार करते हैं, वैसे रघुकुल-भूप श्रीराम ने भरत के प्रति करुणा (की वर्षा) की । १८ । राम भरत के मन के दु:ख को देखकर उन्हें हृदय से लगाकर रोते रहे और बोले— ‘ मेरे भाई, ऐसा मत करो; क्षत्रिय-धर्म का निर्वाह करो । १९ । तुम समझदार हो । हम बहुत क्या कहें ? बड़ों की आज्ञा में रहो । पृथ्वी का पाट यदि फिर भी जाए, तो मेरे द्वारा अभी नगर में नहीं आया जायगा ’ । २० । तब भरत ने कहा— ‘ महाराज, मुझे अपने साथ सेवा के लिए ले लीजिए ’ । तो राम ने कहा— ‘ हे भाई, ऐसा नहीं होगा । हे धीरमति (भरत) मेरी आज्ञा का पालन करो । २१ । चौदह वर्ष पूर्ण हो जाएँ, तब से अधिक चौदह दिन हो जाने पर पंदरहवें दिन मध्याह्न में मैं तुम्हारा मान रखते हुए, अर्थात् तुम्हारी बात मानते हुए तुमसे मिलूँगा । २२ । मैं सचमुच अवधि यहाँ पूर्ण करूँगा, तब नगर में आ जाऊँगा । ’ सबको सुनाते हुए पूर्णकाम श्रीराम इस प्रकार बोले । २३ । तदनन्तर श्रीराम ने करुणा-पूर्वक भरत के सिर पर हाथ रखा । उन्होंने उनके शोक को दूर किया, तो भरत का मन विराम को प्राप्त हो गया । २४ । उस समय राम की आज्ञा से सबने

राम आज्ञा थकी तेणी वार, सरवे कर्यो फळनो आहार,
मुनि मात बंधु ने प्रजाय, सहुने खवडाव्यां फळ रघुराय । २५ ।
गया जनक पोताने शिबिर, जाण्या सत्यवचन रघुवीर,
सुनेना तेडी सीता संग, गयां निज आसन मनभंग । २६ ।
सीता लाग्यां पिताने पाय, रुदे चांपी रोया घणुं राय,
कुळदीपक पुत्री मारी, विश्वमां नथी उपमा तारी । २७ ।
घणुं दोहलुं वसवुं वन, बाप राखजे धीरज मन,
सीताने एम घणुं समजाव्यां, निज आश्रम प्रत्ये वळाव्यां । २८ ।
एम पांच दिवस परिवार, रह्यो चित्रकोट मोझार,
जाणे अवधवासी जन त्यांहे, अहींथी नव जइए पुरमांहे । २९ ।
आज्ञा रघुवीरनी न लोपाय, रामे आग्रह करी न कहेवाय,
विचारी पछे पूरणकाम, गुरु साथे बोल्या राम । ३० ।

वलण (तर्ज़ वदलकर)

श्रीराम बोल्या गुरु साथे, सुणो मुनि महाराज रे,
सहु साथने तेडी जाओ पुरमां, तो थाय अमारुं काज रे । ३१ ।

फलाहार ग्रहण किया । मुनियों, माताओं, बन्धुओं और प्रजा (-जनों) को—सबको श्रीराम ने फल खिला दिये । २५ । (तदनन्तर) जनक राजा अपने शिविर में गये । उन्होंने श्रीराम को सत्यवचन (अर्थात् अपने वचन के पक्के) समझ लिया । सुनयना रानी, सीता को साथ में लेकर टूटे मन से अपने स्थान गयी । २६ । सीता अपने पिताजी के चरणों में लग गयी, तो उसे गले लगाये हुए राजा (जनक) बहुत रोये । (वे बोले—) 'हे मेरी कुलदीपक पुत्री, विश्व में तेरी कोई उपमा नहीं है । २७ । वन में रहना बड़ा संकट है । (फिर भी) हे लाल (बिटिया) मन में धीरज रखो ।' सीता को इस प्रकार बहुत समझा दिया और वे अपने आश्रम की ओर मुड़ गये । २८ । इस प्रकार वह परिवार पाँच दिन चित्रकूट में रहा । वहाँ अवधवासी लोगों ने कल्पना की (सोचा) कि हम यहाँ से नगर में न (लौट) जाएँ । २९ । (इधर) श्रीराम की आज्ञा की उपेक्षा नहीं की जा रही थी, (उधर) राम द्वारा हठपूर्वक नहीं कहा जा रहा था । तदनन्तर पूर्णकाम श्रीराम विचार करके गुरुजी से बोले । ३० ।

श्रीराम गुरुजी से बोले— 'हे मुनि महाराज, सुनिए । (यदि) आप सबको साथ में लेकर नगर में जाइएगा, तो हमारा काम (सिद्ध) हो जाएगा' । ३१ ।

* * *

अध्याय–२३ (भरत का अयोध्या के प्रति प्रत्यागमन)

राग मेवाडो

सरवे साथ मळीने बेठो, चित्रकूट मोझार जी,
स्फटिक शिला पर राम बिराजे, पासे ब्रह्मकुमार जी। १ ।
सन्मुख सरव अवधपुरवासी, बंधु आदे परिजन जी,
ते सरव सांभळतां गुरुनी प्रत्ये, बोल्या राम वचन जी। २ ।
महाराज हावे पधारो अवधपुर, तेडीने सर्वे साथ जी,
सरवे राज प्रजा ने बंधु, संभाळो मुनिनाथ जी। ३ ।
तमारे भरुंसे छे भरत शत्रुघन, राखजो मस्तक हाथ जी,
घटे तेवी शिखामण देजो, समरथ जो मुनिनाथ जी। ४ ।
तमे अमारे दशरथ सम छो, छत्र मुगटमणि जाण जी,
गुरु पितामां भेद न गणवो, एम कहे वेद पुराण जी। ५ ।
त्यारे मुनिवर कहे हो राम सुणो, सहु थाशे रूडां काज जी,
पण भरते प्रतिज्ञा कठण करी छे, माटे नहि करे राज जी। ६ ।
त्यारे तत्क्षण भरत सभामां, ऊठीने बोल्या तेणी वार जी,
निश्चे वात हुं कहुं छुं हावे, नहि जाउं पुर मोझार जी। ७ ।

अध्याय २३— (भरत का अयोध्या के प्रति प्रत्यागमन)

सब साथ मिलकर चित्रकूट में बैठ गये। श्रीराम स्फटिकशिला पर विराजमान हो गये। उनके पास ब्रह्मकुमार (मुनि वसिष्ठ) थे। १। उनके सामने समस्त अयोध्यावासी, बन्धु आदि (अन्य) परिजन थे। उन सबके सुनते हुए श्रीराम गुरुजी से यह वचन बोले। २। 'हे महाराज, सबको साथ में लेकर आप अब अयोध्या जाइए। हे मुनिनाथ, समस्त राज्य की प्रजा और बन्धुओं की देखभाल कीजिए। ३। भरत और शत्रुघ्न आप के भरोसे हैं। उनके मस्तक पर हाथ रखिए। हे मुनिनाथ, आप समर्थ हैं, बन सके वैसी उन्हें सीख दीजिए। ४। आप हमारे लिए राजा दशरथ के समान हैं, समझिए कि हमारे लिए छत्र तथा मुकुटमणि हैं। वेद तथा पुराण ऐसा कहते हैं कि गुरु और पिता में अन्तर न मानो'। ५। तब मुनिवर ने कहा— 'हे राम सुनिए। सब काम अच्छे होंगे। परन्तु भरत ने कठिन (दृढ़) प्रतिज्ञा की है। इसलिए वे राज नहीं करेंगे'। ६। तब उस समय भरत तत्क्षण उठकर सभा में बोले— 'मैं निश्चयपूर्वक बात कहता हूँ कि मैं अब नगर में नहीं जाऊँगा। ७। आपके आये बगैर यदि मैं नगर में प्रवेश करूँ, तो मुझे निश्चय ही गुरुजी

तमो आव्या विना जो हुं प्रवेशुं, नगरमांहे निरवाण जी,
तो गुरुना चरण तमारा पदनी, निश्चे मुजने आण जी । ८ ।
हुं नदीग्राम पासे तप साधीश, मूकी माया जंजाळ जी,
जो अवध वीतशे आव्यानी तो, प्राण तजीश तत्काळ जी । ९ ।
एवुं कठण पण सुणी भरतनुं, द्रवित थया रघुनाथ जी,
त्यारे रत्नजडित्र पोतानी पादुका, आपी भरतने हाथ जी । १० ।
भरते लईने जटामां बांधी, तत्क्षण तेणी वार जी,
भरतनी भक्ति जोईने सुरमुनि, वखाण करता अपार जी । ११ ।
ज्यम शिवने मस्तक चंद्र बिराजे, एम शोभे पादुका शीश जी,
तेणे करीने भरतनो सर्वे, विरह शम्यो ते दिश जी । १२ ।
पछे रामे बोलाव्या बे जणने, जे सुमंत ने शत्रुघन जी,
भाई तमो गुणवान छो डाह्या, पाळजो मुज वचन जी । १३ ।
राज चलावो रूडी परे, पिताना जेवी रीत जी,
न्याये करीने वरतजो कारज, नव करजो विपरीत जी । १४ ।
परनो द्रोह परधन परदारा ते, स्वपने न लावजो मन जी,
उल्लंघन नव करजो निगम पथ, नव जाजो मारग अन्य जी । १५ ।

के चरणों और आपके पदों की शपथ है । ८ । माया-जंजाल का त्याग कर, मैं नन्दीग्राम में (रहकर) तप की साधना करूँगा । यदि अवधि बीत जाए और आप नहीं आएँ, तो मैं तत्काल प्राण त्याग दूँगा'। ९ । भरत का ऐसा दृढ़ प्रण सुनकर राम द्रवित हो गएँ (प्रेम से विह्वल हो गये) । तब उन्होंने अपनी रत्न-जड़ी पादुकाएँ भरत के हाथ (सौंप) दीं । १० । उन्हें लेकर उस समय भरत ने उन्हें जटाओं में बाँध लिया । भरत की (ऐसी) भक्ति देखकर देवों और मुनियों ने उनकी बहुत प्रशंसा की । ११ । जिस प्रकार शिवजी के मस्तक पर चन्द्र विराजमान है, उस प्रकार (भरत के) मस्तक पर पादुकाएँ शोभायमान हो रही थी । उससे भरत का सब विरह (-जन्य दु.ख) उस समय शान्त हो गया । १२ । तदनन्तर सुमन्त और शत्रुघ्न दोनों को श्रीराम ने बुला लिया और कहा--'हे भाइयो, तुम गुणवान् तथा समझदार हो । मेरी बात (आज्ञा) का पालन करो । १३ । पिताजी की जैसी रीति थी, उस सुन्दर रीति से राज चलाओ । न्याय-पूर्वक कार्य करो और कोई (बात) विपरीत न करो । १४ । दूसरे के प्रति द्रोह (-भाव), परधन और पर-स्त्री को सपने (तक) में मन में न लाओ । वेद-(-विहित) मार्ग का उल्लंघन न करो तथा अन्य (विपरीत) मार्ग पर न जाओ । १५ । सदा सन्तों

सदा सेवजो संत गुरु, दुर्जनथी रहेजो दूर जी,
साधु दुर्बळ गौ-ब्राह्मण, प्रतिपालन करजो सुर जी । १६ ।
घणो कलेश दुःख आवे त्यारे, राखवी धीर संभाळ जी,
कथाकीर्तन पुराणश्रवणथी, स्वधर्मे निर्गमजो काळ जी । १७ ।
वर्णाश्रमनो धर्म न तजिये, प्राण जतां निरधार जी,
नित्यमेव मन साथे करिये, सारासार विचार जी । १८ ।
दैवे आपी होय घणी संपत्ति, तेनुं न करीए मान जी,
जगत सहु एक आत्मा जोजो, पूरण दृष्टि समान जी । १९ ।
कुसंगमां रहेजो न क्षणुं एक, थाशे बुद्धिनो नाश जी,
लोभी लंपट विषयी कामी, ते थकी रहेजो निराश जी । २० ।
परनुं भूंडुं जो चिंतवशो तो, पामशो दुःख अपार जी,
प्रजा पाळजो रूडी पेरे, चलावजो राजवहेवार जी । २१ ।
गुरुने पूछीने पगलुं भरजो, कहे ते करजो काम जी,
माताओनी सेवा करजो, ए ठरवानो ठाम जी । २२ ।
अमृतनी वृष्टि थाय जेवी, एवां रामवचन जी,
सुणतां शीतळ थया सर्व जन, धीरज आवी मन जी । २३ ।

और गुरुओं की सेवा करो । दुर्जनों से दूर रहो । देवों, साधुओं, दुर्बलों, गौवों और ब्राह्मणों का प्रतिपालन करो । १६ । (जब) बहुत दुख और क्लेश आए, तब धीरज रखना चाहिए । (हरि-) कथा, कीर्तन और पुराणों के श्रवण से स्वधर्म के अनुसार काल व्यतीत करो । १७ । प्राणों के जाने पर भी निश्चय-पूर्वक वर्णाश्रम धर्म का त्याग न करो । मन से सार-असार-विवेक नित्यमेव करो । १८ । यदि दैव ने सम्पत्ति दी हो, तो उसका अभिमान मत करो । समस्त जगत् में पूर्णतः सम-दृष्टि से एक आत्मा (ही) देखो । १९ । एक क्षण (-भर) तक कुसंगति में नहीं रहो । (ऐसी संगति से) बुद्धि-नाश होगा । (जो) लोभी, लम्पट, विषयी और कामी हों, उनसे निराश अर्थात् कोई भी आशा-आकांक्षा न रखते हुए रहो । २० । यदि दूसरे का बुरा सोचोगे, तो अपार दुख को प्राप्त हो जाओगे । सुचारु रीति से प्रजा का पालन करो और राजकाज चलाओ । २१ । गुरुजी से पूछकर (किसी भी काम में) आगे बढ़ो; वे जो कहेंगे, वह काम करो । माताओं की सेवा करो । वह स्वस्थ हो जाने का स्थान है ' । २२ । जिस प्रकार अमृत की वर्षा (शीतल, सुखद तथा जीवनदायिनी) होती है, उस प्रकार राम के ऐसे वचन थे । उन्हें सुनकर सब लोग शान्त हो गये, तथा उनके मन में धीरज उत्पन्न हो

ह्यावे जनकरायने कहे छे रघुपति, तमो जाजो अवधपुर ज्यांहे जी,
राजकाज संभाळीने वळता, जाजो जनकपुर मांहे जी, । २४ ।
तमो अमारे माथे छत्र छो, वृद्ध वडील अमित जी,
जई शीखवजो शत्रुघनने, राजकाजनी रीत जी । २५ ।
एम सुमंत शत्रुघन जनक गुरुने, सोंपणी कीधी राम जी,
पछे माताओनी पासे आव्या, पोते पूरणकाम जी । २६ ।
साष्टांग करीने चरणे लाग्या, बोल्या विनय वचन जी,
माताजी हवे मंदिर पधारो, धीरज राखी मनमां जी । २७ ।
अवधवासी जन सहु दुःख पामे, वसवुं गिरि पाषाण जी,
शीतळ जळ फळ आहार ने आतप, भूमिशयन निरवाण जी । २८ ।
हुं चौद वरस वीत्या पछी आवीश, चिंता न करशो मारी जी,
सर्व ठेकाणे विजय हुं पामीश, आशिष फळशे तमारी जी । २९ ।
तमारा पुण्ये करीने माता, कुशल थशे सहु काज जी,
गुरु, सुमंत, शत्रुघन मळीने, चलावशे शुभ राज जी । ३० ।
त्यारे रुदन करंतां माता कहे छे, शुं कहुं तमने राम जी ?
सर्व वात विधिए करी अवळी, वणसाड्युं सहु काम जी । ३१ ।

आया । २३ । अब श्रीराम जनकराजा से बोले— 'जहाँ अयोध्यानगरी है, वहाँ जाना और राजकाज की देखभाल करके, तदनन्तर आप जनकपुर में जाना । २४ । आप वृद्ध तथा बहुत ज्येष्ठ हैं, तो हमारे सिर पर छत्र (जैसे) हैं । (अतः अयोध्या में) जाकर शत्रुघ्न को राज-काज की पद्धति सिखाइए ' । २५ । इस प्रकार पूर्णकाम श्रीराम ने सुमन्त, शत्रुघ्न, जनक और गुरुजी को (उत्तरदायित्व) सौंप दिया और फिर वे स्वयं माताओं के पास आ गये । २६ । साष्टांग नमस्कार करके वे उनके पाँव लग गये और (इस प्रकार) विनम्रता-पूर्वक वचन बोले— 'हे माताजी, अब तुम घर जाओ । मन में धीरज रखो । २७ । पर्वत और पत्थरों पर रहना, ठण्डा पानी (पीना), फलाहार करना, धूप तथा भूमि पर सोना—इससे निश्चय ही सब अयोध्यावासी लोग दुख को प्राप्त हो जाएँगे । २८ । चौदह बरस व्यतीत होने के पश्चात् मैं (लौट) आऊँगा । मेरे बारे में कोई चिन्ता न करो । मैं सब स्थानों में विजय को प्राप्त हो जाऊँगा— तुम्हारा आशिष फलित (यथार्थ सिद्ध) हो जाएगा । २९ । हे माता, तुम्हारे पुण्य (के बल) से समस्त कार्य—शुभ (मंगलदायी सिद्ध) होंगे और गुरु (वसिष्ठ), सुमन्त, शत्रुघ्न मिलकर राज शुभ (मंगलकारी) रूप से चलाएँगे ' । ३० । तब रुदन करते हुए माता ने कहा— 'हे राम, मैं

अमो अनाथनी संभाळ लेजो, रघुवरकुळना दीप जी,
तमो त्रणे जण विखूटां नव पडशो, रहेजो सदा समीप जी । ३२ ।
एवुं कही पछे जनकसुताने, भेटयां बंन्यो मात जी,
रूप सुकोमळ जोई सीतानुं, करतां आंसुपात जी । ३३ ।
अरे बाप तने बाळपणामां, दैव दीधो वनवास जी,
मारी मीठी हावे क्यारे मळीशुं ? क्यारे बेसीशुं पास जी । ३४ ।
पछे राम-लक्ष्मणने रुदेशुं चांप्या, सुमित्रा कौशल्याए त्यांय जी,
सुनयना सीताने मळियां, दुःख पाम्यां मन मांह्य जी । ३५ ।
सीताए मातने धीरज आपी, निवर्त्यो संदेह जी,
थयां तत्पर पछे पुर जवाने, सुखासन बेठां तेह जी । ३६ ।
सैन्य सकळ सावधान थयुं, वळी अवधपुरना लोक जी,
सजळ नेत्रे थई रामने भेटयां मनमां थयो घणो शोक जी । ३७ ।
सुमंत शत्रुघन आदे सरवे, मळियो प्रजानो साथ जी,
गुरु वसिष्ठने पाये लाग्या, लक्ष्मण शुं रघुनाथ जी । ३८ ।
जनकरायने भुज भरी भेटया, विनविया बहु पेर जी,
पांच दिवस अयोध्यामां रही, पछी जाजो तमारे घेर जी । ३९ ।

तुमसे क्या कहूँ ? विधाता ने समस्त बात विपरीत कर डाली, समस्त कार्य को बिगाड़ डाला । ३१ । हे रघुवर, कुल के दीपक, हम अनाथों की रक्षा करो । तुम तीनों जने (एक-दूसरे से) मत बिछुड़ जाओ, सदा समीप रहो ' । ३२ । ऐसा कहकर फिर दोनों माताएँ जानकी से मिलीं । उसका सुकोमल रूप देखकर वे आँसू बहाती रहीं । ३३ । (वे बोलीं—) ' हे मैया, तुम्हें बचपन में (ही) दैव ने वनवास दिया । मेरी मीठी—लाडली (बेटी), अब (हम) कब मिल सकेंगी, कब पास बैठ सकेंगी ' । ३४ । तदनन्तर वहाँ सुमित्रा और कौसल्या ने राम और लक्ष्मण को हृदय से लगा लिया । सुनयना सीता से मिली । वे मन में दुख को प्राप्त हो गयीं । ३५ । सीता ने माताओं को ढाढ़स बँधा दिया, तो उनका सन्देह दूर हो गया । तब वे (अयोध्या) नगर (लौट) जाने को तैयार हो गयीं और पालकियों में बैठ गयीं । ३६ । समस्त सेना सावधान हो गयी । इसके अतिरिक्त अयोध्या के लोग अश्रुपूर्ण नेत्रों से राम से मिले । उन्हें मन में बहुत शोक अनुभव हो गया । ३७ । सुमन्त, शत्रुघ्न आदि सब प्रजा के साथ हो लिये । लक्ष्मण और राम गुरु वसिष्ठ के पाँव लग गये । ३८ । श्रीराम ने जनकराजा को बाहुओं में लेकर गले लगाया और बहुत प्रकार से विनती की— ' पाँच दिन अयोध्या में रहकर तदनन्तर अपने घर

घोराजा आवी चरणे नम्यो त्यारे, बोल्या श्रीरघुराय जी,
राय तमो घणो उपकार कर्यो, ने राखी मारी लाज जी। ४०।
फळ, जळ, तृण पहोंचाडच्युं सहुने, जथाजोग सुणो धीर जी,
अवधपुरना लोक सकळने, सुखिया कीधा वीर जी। ४१।
हवे जाओ घेर सुख पामशो बहुविध, रहेजो निर्मळ मन जी,
भरतनी पासे जई आवजो कोई दिन, पासे छो राजन जी। ४२।
एवां दीनदयाळनां वचन सुणी, थयो गद्‌गद गुह्यकराय जी,
कृपानाथ सहु कृपा तमारी, हुं पामरथी शुं थाय जी। ४३।
पछी नमी रायने चाल्या भरतजी, गुरु जनक तेणी वार जी,
चित्रकूट उपरथी ऊतर्यां, प्रजा सैन्य परिवार जी। ४४।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

परिवार सरवे चालियो, साथे अवधपुरनी प्रजाय रे,
मन नथी जवानुं पुर विषे, पण आज्ञा करी रघुराय रे। ४५।

* * *

जाइए'। ३९। घोराय ने भी आकर चरणों को नमस्कार किया, तो श्रीराम उससे बोले— 'हे राजा, तुमने (हमारा) बहुत उपकार किया और हमारी लाज (प्रतिष्ठा) रख ली। ४०। हे धीर पुरुष, तुमने सबको यथायोग्य रूप से फल, जल, (आसन के लिए) तृण पहुँचवा दिया। हे भाई, अयोध्या के सब लोगों को तुमने सुख किया। ४१। अब तुम घर जाओ। तुम बहुत प्रकार के सुख को प्राप्त हो जाओगे। निर्मल मन से रहो। हे राजन्, तुम तो पास ही हो, (इसलिए) किसी दिन भरत के पास हो आओ'। ४२। गुह्यक-राज दीनदयालु (भगवान् राम) की ऐसी बातें सुनकर गद्‌गद हो गया। (फिर वह बोला-) 'हे कृपानाथ, सब आपकी कृपा है। (नहीं तो) मुझ पामर से क्या हो सकता है'। ४३। तदनन्तर उस समय राम को नमस्कार करके भरत, गुरु वसिष्ठ और जनक चल दिये। प्रजा, सेना और परिवार (के समस्त लोग) चित्रकूट पर से उतर गये। ४४।

समस्त (राज-) परिवार चल दिया, तो उसके साथ अयोध्या की प्रजा थी। (वस्तुतः) उनको मन में नगर में जाना नहीं था, फिर भी श्रीराम ने (वैसी) आज्ञा दी थी। ४५।

* * *

अध्याय—२४ (चित्रकूट-वासी ब्राह्मणों का राम के प्रति कथन तथा पलायन)
राग वेराडी

हवे चित्रकोटथी चाल्या सरवे, अवधवासी तेणी वार,
भरतजीए साष्टांग कर्यो, छे पछे दूर जई निरधार। १ ।
भरत नमतां नमिया सरवे, सजळ थयां लोचन,
प्रयाग आव्या त्यारे वळतो, आथमियो छे दन। २ ।
तीरथराजने तीरे ऊतर्या, मन रघुवरनुं ध्यान,
घोराजाए फळ जल आप्युं, करियुं छे सन्मान। ३ ।
पछे प्रातःकाळे ऊठी चाल्या, आव्या गंगातीर,
त्यां घोराजाए राख्या सहुने, स्वागत कीधी वीर। ४ ।
हवे त्यां थकी आव्या नंदीग्राममां, बारणे बेठा भरतजी,
उपवनमांहे आश्रम कीधो, तप करवा समरथजी। ५ ।
राम तणी जे चरणपादुका, शीश धरी महाभाग,
कनक कामनी आदे सुखनो, भरते कीधो त्याग। ६ ।
वटपय सिंची बांधी जटा ने, वल्कल वेष्टित अंग,
अन्य तपस्वी साधु केटला, आवी रह्या छे संग। ७ ।

अध्याय २४— (भरत और शत्रुघ्न का अयोध्या में आगमन)

अब उस समय समस्त अयोध्यावासी लोग चित्रकूट से चल दिये। तत्पश्चात् (कुछ) दूर जाकर भरत ने निश्चयपूर्वक साष्टांग नमस्कार किया। १। भरत के (इस प्रकार) नमस्कार करते ही सब लोगों ने नमस्कार किया। उनकी आँखें सजल हो गयीं। तब वे प्रयाग आ गये; तत्पश्चात् दिन (सूर्य) का अस्त हो गया। २। वे (सब) तीर्थराज (त्रिवेणी) के तट पर ठहर गये। उनके मन श्रीराम के ध्यान में (मग्न) थे। (वहाँ) घोराय ने फल और जल दिया, तथा (सब का) सम्मान कर लिया। ३। तदनन्तर सवेरे उठकर वे चल दिये और गंगा के तट पर आ गये। वहाँ घोराय ने सबको रख दिया, अर्थात् ठहरा दिया और उस वीर पुरुष ने (सबका) स्वागत किया। ४। अब वहाँ से नन्दीग्राम में आ गये। (वहाँ गाँव के) द्वार पर भरत बैठ गये। उन्होंने उन समर्थ व्यक्ति ने तपस्या करने के लिए उपवन में आश्रम (तैयार) कर लिया। ५। राम की चरण-पादुकाओं को उन महाभाग भरत ने मस्तक पर रख लिया तथा कनक (सोना आदि धन), कामिनी आदि (-सम्बन्धी) सुखों का त्याग कर दिया। ६। उन्होंने बरगद के दूध को सींचकर (बालों की) जटा बाँध ली और

रामचरित्र ते कहे सांभळे, अहरनिश अनुराग,
अन्यविरक्त ते विस्मे पाम्या, जोई भरतनो त्याग। ८ ।
हावे गुरु सुमंत शत्रुघन आदे, मात प्रजा परिवार,
जनकसहित अवधपुर आव्या, सरवे राजद्वार। ९ ।
रामपादुका मूकी सिंहासन, सभा करीने तेणी वार,
पछे शत्रुघन ने सुमंत चलावे, राजकाज वहेवार। १० ।
गुरुनी आज्ञा प्रमाणे वरते, पाळे पोतानो धर्म,
शत्रुघननी हाक घणी ते, लोक माने छे पर्म। ११ ।
पांच दिवस रह्या जनक अवधपुर, चलाव्यो राजवहेवार,
पछे वसिष्ठनी आज्ञा मागी, गया ते मिथुलापुर मोझार। १२ ।
नंदीग्राममां भरत रह्या, शत्रुघन चलावे राज,
वसिष्ठमुनि नित्य आवे सभामां, शीखवता सहु काज। १३ ।
राज ए रीते अवधपुरीमां, कारज चाल्युं जाय,
हावे राम रह्या छे चित्रकोटमां, तेनी कहुं कथाय। १४ ।
भरत वळावी राम ने लक्ष्मण, आव्या निज आश्रम,
पछी सीता सहित मळीने बेठा, पोते पूरणब्रह्म। १५ ।

शरीर में वल्कल लपेट (पहन) लिये। तो कितने ही अन्य तपस्वी साधु आकर उनके साथ रह गये। ७। वे (भरत) उन्हें दिन-रात प्रेमपूर्वक रामचरित्र सुनाते और वे सुन लिया करते। भरत के त्याग को देखकर वे अन्य विरागी लोग विस्मय को प्राप्त हो गये। ८। अब गुरु (वसिष्ठ), सुमन्त, शत्रुघ्न, माताएँ, प्रजा (-जन), परिवार आदि सब जनक के साथ अयोध्या में आ गये और राज (-प्रासाद के) द्वार पर ठहर गये। ९। उस समय सभा लगाकर सिंहासन पर राम की पादुकाएँ रख दीं। तदनन्तर शत्रुघ्न और सुमन्त राजकाज सम्बन्धी व्यवहार चलाने लगे। १०। वे गुरुजी की आज्ञा के अनुसार बर्ताव करते और अपने धर्म का पालन करते। शत्रुघ्न का बड़ा प्रभाव था, जिसे लोग बहुत मानते थे। ११। जनक राजा अयोध्या में पाँच दिन रहे और उन्होंने राज्य-व्यवहार चला दिया। तदनन्तर वसिष्ठ से आज्ञा (अनुमति) माँगकर (विदा लेकर) वे मिथिलानगरी में चले गये। १२। (इधर) भरत नन्दीग्राम में रह गये और (उधर) शत्रुघ्न राज किया करते थे। वसिष्ठ मुनि नित्य (राज-) सभा में आते और सब काम सिखाते। १३। उस प्रकार अयोध्या-नगरी में राजकाज चलता रहा था। अब (इधर) राम चित्रकूट में रह गये थे। मैं (अब) उनकी

भरतनी भक्ति, भाव लोकनो, मातनो शोक अपार,
ते संभारी थया गद्‌गद रघुपति, कहेता वारंवार। १६।
त्यार पछी श्रोताजन सुणजो, राम रह्या छे ज्यांहे,
चित्रकोटना विप्र सकळने, मळ्या एकठा त्यांहे। १७।
भक्तिरहित बहिरमुख ब्राह्मण, दंभी कर्मजड जेह,
ते सर्वे रामनी पासे आव्या, कहेवा लाग्या एह। १८।
सुणो राम तमो अहीं नव रहेशो, जाओ बीजा वनमांहे,
सुंदर नार तमारी छे माटे, असुर आवशे आंहे। १९।
त्यारे अमने विघन करशे अति धणुं, आवशे निशिचर जूथ,
हजु जाण्युं नथी माटे नथी आव्या, अधरमी असुर वरूथ। २०।
दंडक वनमां रहे छे घणा, खर दुखर त्रिशिरा जेह,
ए आवशे अहीं तो अमारां सरवे, घर भंग करशे तेह। २१।
ते माटे तमो अहींथी जाओ, लेई स्त्री सुंदर वेश,
नहि तो अमारे जवुं पडशे, घर मूकीने दूर विदेश। २२।
वाल्मीकमुनि घणुं वारे छें, पण विप्र अति अज्ञान,
नथी जाणता रूप रामनुं, मिथ्या जातिमान। २३।

कथा कहता हूँ। १४। भरत को बिदा करके राम और लक्ष्मण अपने आश्रम में (लौट) आये। तत्पश्चात् पूर्णब्रह्म राम स्वयं सीता-सहित साथ में बैठ गये। १५। भरत की भक्ति, लोगों का (प्रेम-) भाव, माताओं का अपार शोक —इनको स्मरण करके श्रीराम गद्‌गद हो गये। उसे वे बारबार कहते रहे। १६। हे श्रोताजनो, सुनिए। उसके पश्चात् जहाँ राम रहते थे, वहाँ चित्रकूट के समस्त ब्राह्मण मिलकर इकट्‌ठा हो गये। १७। जो ब्राह्मण भक्ति-रहित, बहिर्मुख, दम्भी तथा कर्मजड़ थे, वे सब राम के पास आ गये और यह कहने लगे। १८। 'हे राम, सुनिए, आप यहाँ न रहिए, (किसी) दूसरे वन में जाइए। आपकी स्त्री सुन्दर है। अतः यहाँ असुर आएँगे। १९। (यहाँ) राक्षसों के समूह आएँगे, तब हमारे लिए बहुत विघ्न (उत्पन्न) करेंगे। अभी तक उन्होंने नहीं जाना है, इसलिए उन अधर्मी असुरों के दल नहीं आये। २०। दण्डक वन में खर, दूखर (दूषण), त्रिशिरा आदि जो बहुत-से राक्षस रहते हैं, वे यहाँ आएँगे, तो हमारे सबके घर तोड़ डालेंगे। २१। इसलिए आप अपनी सुन्दर स्वरूपवाली स्त्री को लेकर यहाँ से चले जाइए। नहीं तो हमें अपने घर छोड़कर दूर विदेश में जाना पड़ेगा'। २२। वाल्मीकि मुनि बहुत रोक रहे थे, फिर भी वे

त्यारे राम कहे मुनिवर नव बीशो धीरज राखो मन,
जो कोई असुर अहीं आवशे तो, हुं निश्चे पमाडुं पतन । २४ ।
हुं असुरने हणवा नीकळ्यो छुं वन, पाळवा तमने विप्र,
माटे निरभे थकी तमो आश्रम रहो, वरतो सुख आनंद क्षिप्र । २५ ।
एम घणां वचन कही धीरज आपी, रघुपतिए तेणी वार,
पण ब्राह्मण सहु अविश्वासी तेणे, नव मान्युं निरधार । २६ ।
पछे निशा विषे सहु विप्र पलाया, निज कुटुंब लेई साथ,
एक वाल्मीकि विना गया सौ ब्राह्मण, ओळख्या नहि रघुनाथ।२७।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

ओळख्या नहि रघुनाथने, गया विप्र ऊठीने सत्य रे,
प्रातःकाळ हवो तदा, त्यारे श्रीरामे जाणी वात रे । २८ ।

* * *

अति अज्ञानी ब्राह्मण मिथ्या अभिमान के कारण राम के स्वरूप को नहीं जानते थे । २३ । तब राम ने कहा— 'हे मुनिवरो, आप न डरिए । मन में धीरज रखिए । यदि कोई असुर यहाँ आए, तो मैं निश्चय ही उसको पतन, अर्थात् मौत को पहुँचा दूँगा । २४ । मैं असुरों को मार डालने और आप ब्राह्मणों का परिपालन (रक्षण) करने के लिए (घर से निकलकर) वन में आया हूँ । इसलिए हे ब्राह्मणो, निर्भयता से आप आश्रमों में रहिए, शीघ्र ही सुख तथा आनन्द वरतिए ' । २५ । इस प्रकार,श्रीराम ने उस समय बहुत-सी बातें कहकर (उन्हें) ढाढ़स बँधा दिया । परन्तु वे सब ब्राह्मण उनके प्रति अविश्वासी थे, इसलिए उन्होंने निश्चय ही (उनका कहा) नहीं माना । २६ । तदनन्तर रात में अपने-अपने परिवार को साथ में लेकर सब ब्राह्मण (वहाँ से) भाग गये । सिवा एक वाल्मीकि के सब ब्राह्मण भाग गये; क्योंकि उन्होंने श्रीराम को नहीं पहचाना था । २७ ।

उन ब्राह्मणों ने श्रीराम को नहीं पहचाना । इसलिए वे सचमुच उठकर चले गये । जब सवेरा हो गया, तब राम ने यह बात जान ली । २८ ।

* * *

अध्याय २५— (बाल्मीकि-श्रीराम-संवाद)

राग धनाश्री

ब्राह्मण ऊठी गया सहु राते जी,
ते रघुपतिए जाण्युं प्रभाते जी,
घणुं दुःख धरीने शोचे श्रीराम जी;
वाल्मीकमुनि आव्या तेणे ठाम जी। १ ।

ढाळ

ते ठाम आव्या मुनि वाल्मीक, रामशुं बोल्या तदा,
तमो शुं करवा करो शोचना ? ए विप्र सकळ गया जदा। २ ।
नथी जाणता ए रूप तमारुं, ईश्वरता गुण ओज,
सौ ब्राह्मण ए अज्ञान छे, शिर वहे मिथ्या बोज। ३ ।
सुणो राम जेणे ओळख्या नहि, प्रभु जे साक्षात,
धिक्कार तेना ज्ञानने, शुं थयुं द्विजकुळ जात। ४ ।
तेनां कर्म ते विकर्म सहु, आचार ते अनाचार,
तेनी विद्या सर्वे व्यर्थ ज्यम, खर यथा चंदनभार। ५ ।
ज्यम मुग्धा बत्तीश-लक्षणी, सुंदरी चतुर अनूप,
पति सेवा अनुकूळ नहि, तो बळो तेनुं रूप। ६ ।

अध्याय २५— (बाल्मीकि-श्रीराम-संवाद)

सब ब्राह्मण रात में उठकर चले गये; वह राम ने सबेरे जाना। इसका बहुत दुख अनुभव करते हुए श्रीराम चिन्तित हो गये, तो उस स्थान पर वाल्मीकि मुनि आ गये। १।

उस स्थान पर वाल्मीकि मुनि आ गये। तब वे राम से बोले— 'जब कि वे ब्राह्मण चले गये हैं, तो आप चिन्ता क्यों कर रहे हैं। २। वे आपके स्वरूप, ईश्वरता, गुण और ओज को नहीं जानते। वे समस्त ब्राह्मण अज्ञान हैं, वे सिर पर ज्ञान का बोझ व्यर्थ वहन कर रहे हैं। ३। हे राम, सुनिए। जो साक्षात् भगवान् हैं, ऐसे आपको जिन्होंने नहीं पहचाना, उनके ज्ञान का धिक्कार है। (उनके) ब्राह्मण-कुल में उत्पन्न होने से क्या हुआ। ४। उनके (किये) कर्म सब विकर्म (व्यर्थ कर्म) हैं; उनके आचार (धर्म-सम्बन्धी आचरण) तो अनाचार हैं; जैसे गधे को लगाया हुआ बहुत-सा चन्दन व्यर्थ होता है, वैसे उनकी सर्व विद्याएँ व्यर्थ हैं। ५। जिस प्रकार कोई स्त्री मुग्धा, बत्तीस लक्षणों से युक्त,

एम शास्त्र वेद पुराण भणिया, भजिया नहि भगवान,
ते स्वारथी जड नीच जाणो, उदर पोषण ध्यान । ७ ।
भगवंतनी भक्ति विना, नव पामे को सद्गत्य,
नथी आपती फळ अन्य विद्या, एह जाणो सत्य । ८ ।
किरातनुं तीर्थाटण जेम, अंत्यजनो आचार,
एम सर्व विद्या व्यर्थ जो, नव भजिया जुगदाधार । ९ ।
ए प्रकारे रघुवीरशुं, बोलिया वाल्मीक मुन्य,
त्यारे राम कहे हवे अमो, अहींथी जईशुं बीजे वन । १० ।
मुनि कहे सहु द्विज तेडी लावुं, तमो रहो महाराज,
राम कहे जाउं सर्वथा, मारे करवुं छे वहु काज । ११ ।
चित्रकूट मूकी राम जाशे, आगळ दंडकवन,
अरण्यकांडमां ते कथा हवे, कहेवाशे पावन । १२ ।

* * *

सुन्दरी, चतुर तथा अनुपमेय होने पर भी यदि वह पति सेवा के लिए अनुकूल (-मना) न हो, तो उसकी सुन्दरता जल जाए (जल जाने ही योग्य, अर्थात् पूर्णतः व्यर्थ है), उसी प्रकार जिन्होंने शास्त्रों, वेदों, पुराणों को तो पढ़ा, परन्तु भगवान् का भजन नहीं किया, उन्हें स्वार्थी, जड़ (-मति) तथा नीच समझिए । उनका ध्यान तो उदर-भरण पर ही रहता है । ६-७ । बिना भगवान् की भक्ति के, कोई भी सद्गति को प्राप्त नहीं हो जाता । अन्य विद्याएँ कोई फल नहीं प्रदान करतीं । उसे सत्य समझिए । ८ । जैसे किरात (आखेटक) का तीर्थाटन, अन्त्यज का आचार, व्यर्थ होता है, वैसे यदि कोई जगदाधार भगवान् की भक्ति न करें, तो उनकी समस्त विधाएँ व्यर्थ होती हैं ' । ९ । वाल्मीकि मुनि श्रीराम से इस प्रकार बोले, तो राम ने कहा— ' अब हम यहाँ से दूसरे वन जाएँगे ' । १० । (यह सुनकर) मुनि ने कहा— ' हे महाराज, मैं सब ब्राह्मणों को बुलाकर लाता हूँ; आप (यहीं) रहिए ।' तो राम ने कहा— ' मैं निश्चय ही जाऊँगा । मुझे बहुत-से काम करने हैं ' । ११ । श्रीराम चित्रकूट को छोड़कर आगे दण्डकारण्य में जाएँगे । अब वह पावन कथा अरण्य-काण्ड में कही जाएगी । १२ ।

* * *

अयोध्या कांडनी कथा कही, पूरण अरथ सहित,
गातां सुणतां शीखतां जन, थाय विशद पुनित । १३ ।
मूरख कंई जाणे नहि, हरिकथा रसनो स्वाद,
हरिजन सुखे सादरे, श्रद्धा सहित रहित प्रमाद । १४ ।
मतिमंद आगळ मिथ्या रस, ए कथा न धरे कान,
ज्यम भस्ममां आहुति, जेवुं बधिर आगळ गान । १५ ।
सुवास कंजनी भ्रमर ले, सुख दादुरने नहि लेश,
चकोर सेवे चंद्रने, सुख नहि कुक्कुट वेश । १६ ।
हंस मुक्ताफळ चरे ते, बग ना जाणे स्वाद,
घन गरजनाए मोर नाचे, उलूक नहि आह्लाद । १७ ।
खर न जाणे स्वर गानमां, भोजन खटरस काग,
विषयी लंपट न जाणे, हरिभक्ति विरति भाग । १८ ।
ते रामकथाना रसिक जन, रघुनाथ-भक्त सुजाण,
सुणी मग्न डोले प्रेममां कहे, करे अमित वखाण । १९ ।

मैंने अयोध्याकाण्ड की कथा पूर्ण अर्थ-सहित कह दी । उसको गाने, श्रवण करने तथा सीखने पर लोग शुद्ध एवं पुनीत हो जाएँगे । १३ । मूर्ख लोग हरि-कथा के रस का स्वाद नहीं जानते । (केवल) हरि-जन, अर्थात् भगवान् के भक्त ही श्रद्धा के साथ और दोष-रहित होकर सुख-पूर्वक उसका आदर करते हैं । १४ । जिस प्रकार भस्म में आहुति डालना, अथवा बहरे के सामने गाना व्यर्थ होता है, उसी प्रकार मन्दमति व्यक्ति के सामने हरि-कथा रस (प्रस्तुत करना) व्यर्थ होता है। उस कथा की ओर वह कान नहीं देता—उसे नहीं सुनता । १५ । कमल की सुगन्ध को भ्रमर (ही) ग्रहण कर लेता है; मेंढ़क को उसका लेश-मात्र भी सुख नहीं अनुभव होता । चकोर चन्द्र की भक्ति करता है (और उसमें सुख प्राप्त करता है), परन्तु मुर्गे को उससे सुख नहीं आता । १६ । हंस मोतियों को खाता है; परन्तु (उनके) स्वाद को बगुला नहीं जानता । मेघ-गर्जना होने पर मोर नाच उठता है, परन्तु उल्लू को उससे कोई आनन्द नहीं आता । १७ । गधा गान-सम्बन्धी स्वर नहीं जानता; कौआ षड्रस भोजन (का स्वाद) नहीं जानता । उसी प्रकार विषयी लम्पट व्यक्ति हरि-भक्ति, वैराग्य जैसे भाग्य को नहीं जानता । १८ । (उस प्रकार) राम कथा के वे रसिक जन, सुज्ञानी राम-भक्त ही उसे सुनकर प्रेम में मग्न होकर झूमते हैं, उसका कथन करते हैं और उसकी अपार प्रशंसा करते हैं । १९ । समस्त भगवद्भक्तों

सहु भगवतीनी कृपाए, गुरु इष्ट करुणावान,
ए अयोध्याकांडनी कथा कही, यथामति अनुमान । २० ।
वाल्मीकि रामायण थकी, प्राकृत कर्यो विस्तार,
मांही संमत छे नाटक तणो, ते मेळव्यो अनुसार । २१ ।
संस्कृतथी प्राकृत कर्युं, पण अरथनो एक भाव,
पतितपावन रामायण, भवसिंधु तरवा नाव । २२ ।
चोपाई आठ सें एकावन, पंचवीस अध्याय सार,
ए कथा अयोध्या कांडनी, पूरण कर्यो विस्तार । २३ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

विस्तार कर्यो यथा बुद्ध, रामकथा गुणवान रे,
दास गिरधर निमित्तमात्र ए, करता श्रीभगवान रे । २४ ।

।। अयोध्या काण्ड समाप्त ।।

तथा इष्टदेवता कृपालु गुरु की कृपा से मैंने अपनी बुद्धि तथा कल्पना के अनुसार अयोध्या काण्ड की कथा कही है । २० । वाल्मीकि रामायण से (कथा-सूत्र लेकर) मैंने प्राकृत (अर्थात् जनभाषा गुजराती) में (उसका) विस्तार किया है। जो (वाल्मीकि-सम्मत-नाटक-धारा में से हनुमान) नाटक में से सम्मत है, उसे (उपरोक्त) कथा-तत्त्व के अनुकूल (समझकर) मैंने उसमें मिला दिया है । २१ । मैंने उसका संस्कृत से प्राकृत, अर्थात् जनभाषा गुजराती में रूपान्तर किया है। फिर भी दोनों में अर्थ के विचार से एक ही भाव है। पतितों को पावन कर देनेवाला यह रामायण (लोगों के लिए) संसार-रूपी सागर को पार करने के लिए (साधन-रूप) नौका है । २२ । (इस अयोध्या काण्ड में) सुन्दर आठ सौ इक्यावन चौपाइयाँ तथा पचीस अध्याय हैं। मैंने (इस प्रकार) अयोध्या काण्ड की कथा का पूरा विस्तार किया है । २३ ।

मैंने गुणवती रामकथा का अपनी बुद्धि के अनुसार विस्तार किया है। (फिर भी यह) गिरधरदास तो निमित्त (मात्र) है। (वस्तुतः) श्रीभगवान् (राम ही) इसके कर्ता, अर्थात् रचयिता हैं । २४ ।

।। अयोध्या काण्ड समाप्त ।।

अरण्य काण्ड

अध्याय—१ (श्रीराम का अत्रि ऋषि के आश्रम में आगमन)

राग धनाशरी (धनाक्षरी)

श्रीगुरु-चरणे सदा शिर नामुं जी,
श्रीपुरुषोत्तमनी कृपा फळ पामुं जी।
रघुवीरलीला सुखद अपार जी,
कंई एक वातनो करुं विस्तार जी। १।

ढाळ

विस्तार करुं रघुनाथलीला, जथाबुद्ध अनुसार,
श्रीगणपति सरस्वती शिवजी, उमा करजो सार। २।
सहु संतने चरणे नमुं, कर जोडी लागुं पाय,
बाळक जाणी दया करजो, गाउं राम कथाय। ३।
बाल कांड ने अयोध्या कांडनी, कथा कही पावन,
अरण्य कांड कथा कहुं ते, श्रोता धरजो मन। ४।
आधार रामायण तणो, वाल्मीकि जेनुं नाम,
हनुमान नाटकनी कथा, मांहे मेळवी अभिराम। ५।

अध्याय—१ (श्रीराम का अत्रि ऋषि के आश्रम में आगमन)

श्रीगुरु के चरणों में मैं मस्तक नवाता हूँ और (भगवद्-स्वरूपी) श्रीपुरुषोत्तम गुरुदेव की कृपा रूपी फल को प्राप्त करता हूँ। रघुवर राम की लीला बहुत सुखदायी है। (उसमें से) कुछ एक बातों का विस्तार (अब) मैं (यहाँ) करता हूँ। १। मैं अपनी बुद्धि के अनुसार श्रीरघुनाथ की लीला का विस्तार (-पूर्वक वर्णन) करता हूँ। हे गणेशजी, हे सरस्वतीजी, हे शिवजी, हे उमाजी, (मेरी) सहायता कीजिएगा। २। समस्त सन्तों के चरणों में मैं मस्तक नवाता हूँ और हाथ जोड़कर उनके पाँव लग जाता हूँ। (हे सन्तो,) मुझे बालक समझकर (मुझपर) दया कीजिएगा, जिससे मैं श्रीराम की कथा का गायन कर सकूँ। ३। मैंने बाल काण्ड और अयोध्या काण्ड की पावन कथा कह दी। (अब) अरण्य काण्ड की कथा कहूँगा। हे श्रोताओ, उसपर मन धरिए, अर्थात् उसपर ध्यान दीजिए। ४। इस कथा का आधार है वह रामायण,

जय जानकीवर जगत भूषण, भक्तवत्सल भूप,
धर्मस्थापन अवतर्या भू, अखिल मंगळ रूप। ६ ।
नीलोत्पलदलश्याम सुंदर, जटा मुगट विशाळ,
राजीवलोचन दुःखमोचन, अभय वरद कृपाळ। ७ ।
कटी तुणीर शर कर धनुष धर, सौमित्र सीता संग,
पितुवचन पाळक सत्यव्रत, वन नीकळ्या श्रीरंग। ८ ।
चित्रकूटमां आवी रह्या, वाल्मीकि मुनि रहे ज्यांहे,
सहु साथशुं रघुनाथ मळवा, भरत आव्या त्यांहे। ९ ।
घणां कह्यां वचन विवेकनां, भरतने श्रीरघुवीर,
पादुका आपी शोक सरवे, समाव्यो रणधीर। १० ।
गया अवधवासी मळी सरवे, अवधपुरनी मांहे,
नंदीग्राम पासे भरत बेठा, तप करवाने त्यांहे। ११ ।
पछी रामचन्द्रे विचार्युं, बोलिया लक्ष्मण साथ,
आ ठाम दीठा आपणे, वळी आवशे सहु साथ। १२ ।

जिसका नाम है वाल्मीकि-रामायण। (साथ ही) उसमें हनुमान-नाटक की रम्य कथा गूँथ दी है। ५। जगद्-भूषण, भक्त-वत्सल, जानकी-पति, राजा राम की जय हो, जो अखिल मंगल स्वरूप हैं तथा (सद्-) धर्म की स्थापना के लिए अवतरित हैं। ६। वे नील-कमल के दलों के-से श्याम वर्ण के हैं। मस्तक पर जटा रूप सुन्दर तथा विशाल मुकुट है। वे कमल-नेत्र हैं, दुःख से मुक्त करनेवाले तथा अभय वर के दाता एवं कृपालु हैं। ७। उनकी कटि में तरकस बँधा है; हाथ में बाण और धनुष धारण करनेवाले वे पितृ-वचन-पालक सत्यव्रती श्रीराम, लक्ष्मण और सीता सहित वन की ओर प्रस्थान कर निकले। ८। चित्रकूट में आकर वे (वहाँ) रहे, जहाँ वाल्मीकि मुनि रहते थे। (तब) भरत श्रीराम से मिलने के लिए सबके साथ वहाँ आ गये। ९ श्रीराम ने भरत से विवेक-पूर्ण बहुत बातें कहीं। (फिर उन्हें) पादुकाएँ देकर उन रणधीर ने उनके समस्त शोक का शमन किया। १०। श्रीराम का अत्रि-ऋषि के आश्रम में आगमन हुआ। (तदनन्तर) सब अयोध्यावासी लोग मिलकर अयोध्यापुरी में (लौट) गये। (तब) भरत तपस्या करने के लिए वहाँ (पास ही) नंदिग्राम के निकट बैठ गये। ११। (फिर) श्रीराम ने विचार किया और लक्ष्मण से कहा— 'इस स्थान पर (लोगों ने) हमें देखा है; फिर सब साथ में आएँगे। १२। यदि अयोध्यावासी लोग यहाँ लगातार दिनरात आते रहें, तो हमें कष्ट होगा। इसलिए हे भाई,

जो अवधवासी आवशे अहीं, निरंतर दिनरात,
तो उपाधि थशे आपणे, माटे जईए अहींथी भ्रात । १३ ।
एम विचारी रघुनाथजी, तत्पर थया बे वीर,
कटी कस्या भाथा धनुष लीधां, चालिया रणधीर । १४ ।
वाल्मीक मुनिने नम्या वळता, जोडीने जुग हाथ,
पछी सीता लक्ष्मण सहित चाल्या, त्यां थकी रघुनाथ । १५ ।
चित्रकूट उपरथी ऊतर्या, चितव्यो दक्षिण पंथ,
नमस्कार करी ते भूमिने, चालिया सीताकंथ । १६ ।
आगळ श्रीरघुनाथजी, मध्यमां छे सीताय,
पूंठे लक्ष्मण आवता, एम मारग चाल्या जाय । १७ ।
अनेक आश्रम मुनि तणा, आवता मारग मांहे,
ते मुनि आग्रह करी राखे, रहेता रघुवर त्यांहे । १८ ।
कंई वरस कंई एक मास रहे, कंई पक्ष कंई एक रात,
खटमास कंई बे मास कंई, दिन पांच ने कंई सात । १९ ।
एम मारगमां रहेता थका, चालता श्रीरघुवीर,
एवे सिंहाद्रि पर्वत विषे, आविया छे रणधीर । २० ।

यहाँ से हमें जाना चाहिए'। १३। राम द्वारा ऐसा विचार करने पर दोनों बन्धु (वहाँ से) जाने के लिए तत्पर हो गये। उन्होंने कमर में भाथे कसकर बाँध लिये, धनुष लिये और वे दोनों रणधीर (वहाँ से) चल दिये। १४। तत्पश्चात् दोनों हाथ जोड़कर उन्होंने वाल्मीकि को नमस्कार किया। फिर श्रीराम, सीता और लक्ष्मण सहित वहाँ से चल दिये। १५। वे चित्रकूट पर से उतर गये और उन्होंने दक्षिण की ओर जानेवाले मार्ग (पर जाने) का विचार किया। (फिर) उस भूमि को नमस्कार करके सीता-पति श्रीराम चल दिये। १६। श्रीराम आगे (चलते) थे; बीच में सीता (चल रही) थीं; पीछे लक्ष्मण आ रहे थे। (इस प्रकार) वे मार्ग में चले जा रहे थे। १७। मार्ग में अनेक मुनियों के आश्रम पड़ते। वे मुनि आग्रह करके रखते, अर्थात् ठहराना चाहते, तो श्रीराम वहाँ रह जाते। १८। कहीं वे (एक) वरस रहते, तो कहीं एक महीना; कहीं एक पखवारा ठहरते, तो कहीं एक रात; कहीं छः महीने रहते, तो कहीं दो महीने; कहीं पाँच दिन ठहरते, तो कहीं सात दिन। १९। इस प्रकार रणधीर श्रीराम मार्ग में ठहरते जाते और (फिर) चल देते। (आगे वढ़ते-वढ़ते) उस समय वे सह्य पर्वत

त्यां आश्रम छे अत्रि तणो, अनसूया सती कहेवाय,
थया जेना पुत्र ब्रह्मा, विष्णु ने शिवराय । २१ ।
विधि चन्द्रमा शिव दुर्वासा, विष्णु दत्तात्री रूप,
एम देव त्रणे अवतर्या, जेनी कीरति तेज अनूप । २२ ।
साक्षात् पूरणब्रह्म स्वामी, दत्त जे कहेवाय,
ते सिंहाद्रि पर मळ्या पोते, भेटचा श्रीरघुराय । २३ ।
जेम गंगाने यमुना मळे, एक गौर ने एक श्याम,
एम दत्तने रघुवीर मळिया, बंन्यो पूरणकाम । २४ ।
जेनो नाश कल्पांते नथी, अवधूत वेशे एह,
स्वर्गथी आवे देवता, नित्य पूजन करवा तेह । २५ ।

पर आये[1] । २० । वहाँ अत्रि ऋषि का आश्रम था । उनकी स्त्री 'सती अनसूया' कहाती थी, जिसके ब्रह्मा, विष्णु और शिवजी पुत्र (-रूप में उत्पन्न) हो गये थे[2] । २१ । जिनकी कीर्ति तथा तेज बेजोड़ है, ऐसे—(वे) तीनों देवता—ब्रह्मा चन्द्र के, शिव दुर्वासा के और विष्णु दत्तात्रेय के रूप में— इस प्रकार अवतरित हो गये । २२ । वे प्रत्यक्ष पूर्णब्रह्म, जो स्वामी दत्तात्रेय कहाते हैं, सह्याद्रि पर मिले और राम स्वयं उनके गले लग गये । २३ । जिस प्रकार गंगा में जमुना मिल जाती है (और) उनमें से एक (गंगा) धवल (वर्णीय जल-वाली) है तथा एक (जमुना) श्याम (जल-वाली) है, उसी प्रकार (श्याम शरीर-धारी) श्रीराम (गौर शरीर-धारी) दत्त से मिले । वे दोनों पूर्णकाम हैं । २४ जिनका नाश कल्पान्त में भी नहीं होता, वे (दत्त) अवधूत (संन्यासी) वेश में हैं । देवता उनका पूजन करने के लिए नित्य स्वर्ग से आया करते हैं । २५ । उन दत्तात्रेय के दर्शन करके देव लौट जाते हैं ।

१ टिप्पणी—उत्तर भारत में प्रचलित मान्यता के अनुसार, अत्रि ऋषि का आश्रम चित्रकूट (जि० बाँदा, उत्तर प्रदेश) के समीप बताया जाता है । परन्तु दाक्षिणात्य-विशेषतः महाराष्ट्र में प्रचलित मान्यता के अनुसार, यह आश्रम सह्याद्रि (-सिंहाद्रि, सिंहाचल) की एक पूर्वगामी शाखा में स्थित प्रयाग वन में है । यह स्थान माहुर ग्राम (जि० यवतमाल) के समीप है और यवतमाल से लगभग ६४ कि. मी. दूर है ।

२ टिप्पणी—एक पौराणिक कथा के अनुसार अत्रि ऋषि ने पुत्र-प्राप्ति के हेतु तपस्या की थी । तब उससे प्रसन्न होकर ब्रह्मा, विष्णु और शिव—तीनों देव उनके सम्मुख प्रकट हुए और उन्होंने वरदान माँगने को ऋषि से कहा । तो अत्रि ऋषि ने कहा—आप मेरे यहाँ पुत्र रूपों मे आविर्भूत हो जाइए । फलस्वरूप ब्रह्मा सोम (चन्द्र) के, विष्णु दत्त के, तथा शिवजी दुर्वासा के रूप में अवतीर्ण हुए और ये तीनो अत्रि-अनसूया के पुत्र कहलाये ।

ते दत्तात्रीनुं करी दरशन, जाय पाछा देव,
एम अमर अर्चन नमन सेवा, आचरे नित्यमेव । २६ ।
ते दत्तात्रीनुं करी दरशन, जाय पाछा देव,
अनुष्ठान पंचाळेश्वरीमां, जप करे महाभाग । २७ ।
मध्याह्ने भिक्षा मागता, करवीरपुरनी मांहे,
सिंहाद्रि सांजे आवता, निवास करता त्यांहे । २८ ।
एवा दत्तात्रीने मळ्या रघुपति, हरख्या अन्योअन्य,
पछी अत्रि ऋषिनी पास आव्या, पोते जुगजीवन । २९ ।
ते मुनि तणे चरणे नम्या, लक्ष्मण सहित रघुनाथ,
अनसूयाने करी वंदना, त्रण जण लाग्या पाय । ३० ।
सतीए घणी आशिष दीधी, सीताने तेणी वार,
शिर हस्त मूकी अनसूयाए लीधां अंक मोझार । ३१ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अंकमां लीधां जानकीने, अनसूया जे मात रे,
रामलक्ष्मण मुनि पासे बेठा, करता परस्पर वात रे । ३२ ।

* * *

इस प्रकार देव (दत्तात्रेय का) पूजन, नमन, सेवा नित्यमेव सम्पन्न करते हैं। २६ । वे महाभाग दत्तात्रेय ऐसे तो नित्य ही प्रातःस्नान प्रयाग में करते हैं, पांचालेश्वर में अनुष्ठान तथा जप किया करते हैं। २७ । वे मध्याह्न काल में करवीरपुर (महाराष्ट्र में स्थित कोल्हापुर) में भिक्षा माँगते हैं और शाम को सह्याद्रि पर आकर निवास करते हैं[3] । २८ । इस प्रकार श्रीराम दत्तात्रेय से मिले, तो वे दोनों आनन्दित हो गये। तदनन्तर जगज्जीवन राम स्वयं अत्रि ऋषि के पास आ गये। २९ । लक्ष्मण-सहित श्रीराम ने उन मुनि के चरणों को नमस्कार किया और सती अनसूया को प्रणाम करके वे तीनों जने उनके पाँव लग गये। ३० । उस समय, सती अनसूया ने सीता को बहुत आशीर्वाद दिये और सिर पर हाथ रखकर उसे गोद में (बैठा) लिया। ३१ ।

३ टिप्पणी—पौराणिक मान्यता के अनुसार (अ) समस्त देवता प्रति दिन दत्तात्रेय के पूजन के लिए देवलोक से उपर्युक्त स्थान पर आया करते है। (आ) प्रयाग वन, माहुर, (गोदावरी तटस्थ) पांचालेश्वर तथा करवीरपुरी (-कोल्हापुर, महाराष्ट्र) दत्तात्रेय के विहार-स्थल हैं। वस्तुतः दत्तात्रेय-भक्ति-सम्प्रदाय का प्रचार महाराष्ट्र में व्यापक रूप मे है। वहाँ त्रिमुखी दत्तात्रेय की उपासना का प्रचलन है। जान पडता है कवि गिरधरदास राम कथा सम्बन्धी इस विषय में महाराष्ट्र की परम्परागत मान्यता से प्रभावित हैं।

जब (इधर) अनसूया माता ने सीता को गोद में (बैठा) लिया, तो (उधर) राम और लक्ष्मण मुनि के पास बैठ गये। (फिर) वे (तीनों) परस्पर बातें करते रहे। ३२।

* * *

अध्याय—२ (अनसूया द्वारा सीता को पतिव्रता-धर्म का उपदेश तथा श्रीराम द्वारा रेणुका की वन्दना और दक्षिण की ओर गमन)

राग देसाख

मुनिए पूछ्युं रामने त्यांहे, जे कारण नीकळ्या वनमांहे,
ते वृत्तांत तेणे सरवे मांडी कह्युं रे। १।

ढाल

ते वृतांत सरवे मांडी कह्युं, मुनिवरने श्रीरघुराय,
पछी अनसूया करुणा करी बोल्यां, सांभळ हो सीताय। २।
स्त्रीने स्वामीनी सेवा करवी, मोक्षधर्म छे एह,
साची वात पतिने कहेवी, राखवो नहि संदेह। ३।
अंध पंगु ने दरिद्री, रोगी, व्यसनी, पापी, कामी,
पण इंद्र समान सतीए गणवो, जे पोतानो स्वामी। ४।
आपतकाळे दुःख वेळाए, रहिये स्वामीनी साथ,
अखंड आज्ञा पाळिये सत्वर, क्यारे न दुभिये नाथ। ५।

अध्याय—२ (अनसूया द्वारा सीता को पतिव्रता-धर्म का उपदेश तथा श्रीराम द्वारा रेणुका की वन्दना तथा दक्षिण की ओर गमन)

वहाँ (अत्रि) मुनि ने राम से (वह) कारण पूछा, जिससे वे वन में (रहने के लिए अयोध्या से) निकल आये, तो उन्होंने वह सब वृत्तान्त विस्तार-पूर्वक कह दिया। १। श्रीराम ने वह समस्त वृत्तान्त विस्तार-पूर्वक मुनिवर से कह दिया। तदनन्तर अनसूया करुणा-पूर्वक बोली— 'हे सीता, सुनो। २। स्त्री अपने पति की सेवा करे; (क्योंकि) वह (उसे) मोक्ष (को प्राप्त करानेवाला) धर्म है। वह उससे सच्ची बात कह दे; (मन में) कोई सन्देह नहीं रखे। ३। जो अपना पति है, वह अंधा, पंगु और दरिद्र, रोगी, व्यसनी, पापी तथा कामी (भी) हो, तो भी पतिव्रता स्त्री उसे इन्द्र के समान समझे। ४। आपत्ति के समय तथा दुःख के प्रसंग में हम पति के साथ रहें; उसकी आज्ञा का अखण्ड (अनवरत, सतत) पालन झट से करें। कभी भी पति को अप्रसन्न या दुखी न करे। ५। पतिव्रता का वही धर्म है कि यद्यपि भगवान् ने बहुत

छे दु:खी तन द्विज निरधार, गळत कोढ थयो छे अपार,
कृशकाय कंपे घणुं वाय, चाले अंगथी रुधिरप्रवाह । २८ ।
मुनिए जाण्युं आहावे अंग, केम मळीश रामनी संग,
पछे कंथा पोतानी जेह, काढी दूर मूकी तेह । २९ ।
तेने सोंप्यो सरवे रोग, धरी बेठा सुंदर भोग,
एटले आव्या श्रीराम, भक्तजनना पूरणकाम । ३० ।
ऊठी मळ्या मुनि शरभंग, रुदे साथ चांप्या श्रीरंग,
सुमित्रीने भेट्या आह्लाद, सीताने दीधो आशीर्वाद । ३१ ।
बेसाड्या छे उत्तम आसन, कराव्यां फळ मिष्ट प्राशन,
घणा आवी मळ्या त्यां मुन्य, करवा रघुपतिना दर्शन । ३२ ।
कंथा दूर मूकी छे जेह, मांहे छे रूज कंपे तेह,
त्यारे लक्ष्मण मुनिने पूछे, पेली कंथा कंपे ते शुं छे । ३३ ।
शरभंग कहे महाराज, सुणो सत्य वचन कहुं आज,
ए देह तणां जे कर्म, न छूटे भोगव्या विण पर्म । ३४ ।
ज्ञानी पंडित राय ने रंक, भोगवे सहु आडे अंक,
तमो आवता जाणी आज, व्याधि दूर राखी महाराज । ३५ ।

देखा,) निश्चय ही उस ब्राह्मण का शरीर बहुत दुखी (दुख-भरा) है। पहले उसे बहुत (तीव्र रूप से) कुष्ठरोग हो गया है। उसका कृश शरीर वायु (के झोंके तक) से बहुत काँप उठता है। उसके शरीर से रक्त-प्रवाह वह रहा है। २८। मुनि ने समझा— ऐसे अंग से मैं श्रीराम से कैसे मिलूँ ? तो फिर उन्होंने अपनी जो कंथा (गुदड़ी) थी, उसे निकालकर दूर रख दिया। २९। उसे समस्त रोग सौंप दिया और सुन्दर भोग्य सामग्री धारण करके वे बैठ गये। इतने में भक्त जनों की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले श्रीराम आ गये। ३०। शरभंग मुनि उठकर श्रीराम से मिले, तो उन्होंने उन्हें हृदय से लगा लिया। वे लक्ष्मण से मिले और उन्होंने सीता को आशीर्वाद दिया। ३१। उन्होंने (श्रीराम, लक्ष्मण और सीता को) उत्तम आसन पर बैठा दिया और उन्हें मधुर फलों का आहार करा दिया। (तब) श्रीराम के दर्शन करने के लिए बहुत-से मुनि वहाँ आकर इकट्ठा हो गये। ३२ जो कंथा दूर रखी हुई थी, उसमें वह रोग काँप रहा था। यह देखकर लक्ष्मण ने मुनि से पूछा— 'वह कंथा काँप रही है,— वह क्या है ?'। ३३। (तब) शरभंग ने कहा— 'महाराज, सुनिए। मैं आज सच्ची बात कहता हूँ। देह के (पूर्व-कृत) जो कर्म हैं, वे विना पूरे भोगे, नहीं छूटते। ३४।

हुं घणुं दुःख पामुं देह, राम मळवा राखी छे एह,
ते थयुं तमारुं दरशन, आज मूकीश मारुं तन । ३६ ।
राम कहे हो मुनि सुखराश, कांई मागो अमारी पास,
मुनि कहे नथी भावना अन्य, उष्णे जळे नाहवानुं मन । ३७ ।
मुंने स्नान करावो तेह, पछी मूकीश मारी देह,
वळी कहु छुं तमने राम, मारी असुर करो सुरकाम । ३८ ।
सुणी रामे कर्युं संधाण, मूक्युं पाताळमां अग्निबाण,
नीकळ्युं जळ उष्ण अपार, तेनो कुंड थयो तेणी वार । ३९ ।
तेमां स्नान कर्युं मुनि जेह, थई तत्क्षण दिव्य ज देह,
तेवे आव्युं विमान ज त्यांहे, बेसी गया सत्यलोक ज मांहे । ४० ।
सहु मुनिए कर्यो जयजयकार, पाम्या शरभंग एम उद्धार,
एवां राघव केरां चरित्र, कहेतां सुणतां थाय पवित्र । ४१ ।

ज्ञानी, पंडित, राजा और रंक—सबको बिना (पद-) भेद के (पूर्व-कर्म का फल) भोगना पड़ता है। हे महाराज, आपको आते हुए जानकर मैंने आज अपनी व्याधि को दूर रख दिया। ३५। मैं इस देह से बहुत दुख को प्राप्त हो रहा हूँ। (फिर भी) राम से मिलने के लिए मैंने उसे रखा है। वे (ये) आपके दर्शन हो गये, तो आज मैं अपनी देह को छोड़ दूँगा'। ३६। (यह सुनकर) राम ने कहा— 'हे सुख-राशि मुनि, हमारे पास से कुछ माँग लो।' तो मुनि बोले— 'मुझे और कोई इच्छा नहीं है— (केवल) उष्ण पानी से मैं स्नान करना चाहता हूँ। ३७। मुझे आप स्नान कराइए; तत्पश्चात् मैं अपनी देह का त्याग कर दूँगा। इसके अतिरिक्त, हे राम, मैं आपसे कहता हूँ— असुरों को मारकर देवों का काम (पूर्ण) कीजिए'। ३८। यह सुनकर राम ने (शर-) संधान किया और पाताल में अग्निबाण चला दिया; तो (वहाँ से) बहुत-सा उष्ण जल निकल आया। उस समय उसका एक कुण्ड तैयार हो गया। ३९। जब मुनि ने उसमें स्नान किया, तो तत्क्षण उसकी देह दिव्य ही हो गयी। उस समय वहाँ विमान आ गया और मुनिवर उसमें बैठकर सत्यलोक ही में चले गये। ४०। सब मुनियों ने (यह देखकर) जय-जयकार किया। इस प्रकार शरभंग मुनि उद्धार को प्राप्त हो गये। श्रीराम की ऐसी (चरित्र-) लीलाएँ कहते और सुनते हुए पवित्र हो जाते हैं। ४१।

(जो) पुरुष और नारियाँ (ऐसी लीलाओं का कथन और श्रवण करते हैं, वे) पावन हो जाते है। श्रीराम का चरित्र ऐसा पावन है।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पावन थाये नर ने नारी, एवुं पावन रामचरित्र रे,
कहे दास गिरधर जे श्रवण करशे ते थाशे पुण्यपवित्र रे। ४२।

गिरधरदास कवि कहते हैं, जो उसका श्रवण करेंगे, वे पुण्यवान् तथा पवित्र हो जाएँगे। ४२।

* * *

अध्याय—४ (श्रीराम की सुतीक्ष्ण से भेट, मन्दकर्ण की कथा और श्रीराम का अगस्त्याश्रम के निकट आगमन)

राग सामेरी

शरभंग मुनि गया सत्य लोके, रह्या एक दिन रघुवीर,
पछे त्यांथी चाल्या दंडकवनमां, गौतमीने तीर। १।
मारग मांहे चालता छे, अनेक मुनिवर साथ,
वन मांहे अस्थि पड्यां द्विजनां, पूछ्युं श्रीरघुनाथ। २।
मुनि कहे सुणो महाराज मार्या, असुरे विप्र अनेक,
ते तणां अस्थि अपार पडियां, कहेतां न आवे छेक। ३।
पछे रोमांचित द्रवीभूत थईने बोल्या श्रीरघुवीर,
हवे असुर सरवे मारीश हुं, एवं कहीने आपी धीर। ४।
पछे सुतीक्ष्ण मुनि तणे आश्रम, आविया श्रीराम,
मुनिए घणी स्वागता करी, रह्या त्रण दिवस ते ठाम। ५।

अध्याय—४ (श्रीराम की सुतीक्ष्ण से भेट, अगस्त्य ऋषि की कथा और श्रीराम का अगस्त्याश्रम के निकट आगमन)

शरभंग मुनि सत्यलोक में गये; (तदनन्तर) श्रीराम (वहाँ) एक दिन ठहर गये। तत्पश्चात् वे दण्डक वन के अन्दर गौतमी, अर्थात् गोदावरी नदी के तट की ओर जाने के लिए चल दिये। १। अनेक बड़े-बड़े मुनि मार्ग में उनके साथ चल रहे हैं (थे)। वन में (एक स्थान पर) ब्राह्मणों की अस्थियाँ पड़ी थीं। (उन्हें देखकर) श्रीरघुनाथ ने पूछा। २। तब मुनियों ने कहा— ‘हे महाराज, सुनिए। असुरों ने अनेक विप्रों को मार डाला, तो उनकी बहुत-सी हड्डियाँ पड़ी हैं— (इस बारे में) पूरा-पूरा नहीं कहा जा सकता’। ३। तदनन्तर श्रीरघुवीर रोमांचित तथा करुणा से विह्वल होकर बोले— ‘मैं अब सब असुरों को मार डालूँगा।’ ऐसा कहकर उन्होंने उन्हें धीरज बँधाया। ४। फिर

सुतीक्ष्णे एक खड्ग आप्युं, रामने तत्काळ,
त्यां थकी आगळ चालिया, गौतमीतीर विशाळ । ६ ।
सुतीक्ष्ण साथे थया वळी, बीजा विप्र अपार,
एवे पंचाळेश्वर तीर्थ आव्युं, मारगमां निरधार । ७ ।
त्यां विवर छे भूमि विषे, मांहे थाय अद्भुत गान,
ते सांभळी मुनिवरने पूछे पोते श्रीभगवान । ८ ।
द्विज कहे सुणो रघुनाथजी, थाय गान ते कहुं वात,
एक मंदकरण ब्राह्मण हतो, ते रहेतो अहीं विख्यात । ९ ।
दश सहस्र वर्ष ज तप कर्युं, ते द्विजे आणे ठार,
त्यारे इंद्रे मोकली अप्सरा, तपभंगने निरधार । १० ।
रंभा, घृताची, मेनका, ए आदे आवी पंच,
तेणे सुस्वरेथी गान मांड्युं, कामने परपंच । ११ ।
ते गान सुणतां मुनि जाग्या, थयो तपनो भंग,
अप्सराने जोई मोह पाम्या, काम व्याप्यो अंग । १२ ।
मुनि कहे स्त्री अमने वरो, त्यारे बोली अबळा बाण,
वैभोग सरवे जोईए अमारे, सुंदर मंदिर जाण । १३ ।

श्रीराम सुतीक्ष्ण मुनि के आश्रम आ गये, तो मुनि ने उनका बहुत स्वागत किया। वे उस स्थान पर तीन दिन रह गये । ५ । सुतीक्ष्ण ने राम को तत्काल एक खड्ग दिया। (फिर) वे वहाँ से आगे गौतमी के विशाल तट की ओर चल दिये । ६ । फिर सुतीक्ष्ण के साथ दूसरे अनेकानेक ब्राह्मण थे। (उनके आगे बढ़ने पर) उस समय निश्चय ही मार्ग में पांचालेश्वर नामक तीर्थक्षेत्र आ गया । ७ । (देखा कि) वहाँ भूमि में एक विवर है। उसमें अद्भुत (मधुर) गायन हो रहा है। उसे सुनकर श्रीभगवान् ने स्वयं मुनिवर से पूछा । ८ । तो ब्राह्मण ने कहा— हे रघुनाथजी, सुनिए। जिस (कारण) से गायन हो रहा है, वह बात कहता हूँ। मन्दकर्ण नामक एक ब्राह्मण है। वह विख्यात ब्राह्मण यहाँ रहता था । ९ । उस ब्राह्मण ने इस स्थान पर दस सहस्र वर्ष तपस्या की; तब निश्चय-पूर्वक उसका तपोभंग कर देने के लिए इंद्र ने अप्सराएँ भेज दीं । १० । रम्भा, घृताची, मेनका आदि वे पाँच अप्सराएँ आ गयीं। उन्होंने काम (-भाव) के प्रपंच के हेतु मधुर स्वर में गायन आरम्भ किया। ११ । उस गायन को सुनकर मुनि जग उठे, तो उनकी तपस्या का भंग हो गया। अप्सराओं को देखकर वे मोह को प्राप्त हो गये। उनके अंग को काम ने व्याप्त कर दिया । १२ । मुनि ने कहा— 'हे

तपने बळे मुनिए रच्युं मणिभवन भोम्य मोझार,
त्यां अप्सरा साथे रही, भोगवे भोग अपार। १४।
ते गान करे छे अप्सरा, रीझवे द्विजने रंग,
एवुं सुणी पेठा गुफामां, पछे रामलक्ष्मण संग। १५।
घणी सेवा कीधी मंदकरणे, रह्या एक दिन त्यांहे,
पछी रामलक्ष्मण जानकी, चालियां ते वनमांहे। १६।
रामनी साथे सुतीक्ष्ण छे, अन्य बीजा ब्रह्म,
त्यांथी सरवे आविया, एक मुनि तणे आश्रम। १७।
अगस्त केरो बंधु ते, महामति एवुं नाम,
तेणे रामने आदर कर्यो, उतारिया शुभ ठाम। १८।
एक रात्रि त्यां रघुवर रह्या, पछे चालिया रणधीर,
अगस्तनो आश्रम दीठो, दूरथी रघुवीर। १९।
आश्रम पूंठळ एक जोजन, कदळी वन सार,
वन सघन वृक्ष फळे सदा शाखा गगन विस्तार। २०।
पक्षी पशु निवरे विचरे, जळाशय शुभ ज्यांहे,
वळी शास्त्रनी चर्चा करे, खग जरठ बेठा त्यांहे। २१।

नारियो, हमारा वरण करो'। तब एक स्त्री ने यह बात कही—'समझिए कि हमें सब वैभव (तथा) सुन्दर भवन चाहिए'। १३। (यह सुनकर) मुनि ने तपस्या के बल से भूमि के अन्दर रत्नमय भवन बना लिया और (तब से) वे वहाँ अप्सराओं-सहित रहकर अपार भोगभोग रहे हैं। १४। वे अप्सराएँ गान कर रही है और आनन्द-पूर्वक मुनि को रिझा रही है। यह सुनने के अनन्तर, श्रीराम लक्ष्मण के साथ उस गुफा मे प्रविष्ट हो गये। १५। मन्दकर्ण ने उनकी बहुत सेवा की; वे वहाँ एक दिन रह गये। तदनन्तर राम, लक्ष्मण और जानकी उस वन में (आगे) चल दिये। १६। श्रीराम के साथ सुतीक्ष्ण तथा अन्यान्य ब्राह्मण थे। वहाँ से वे सब एक मुनि के आश्रम में आ गये। १७। वे (मुनि) अगस्त्य के बन्धु थे। उनका नाम था महामति। उन्होंने राम का आदर (-सत्कार) किया और शुभ (पावन) स्थान में उन्हें ठहरा दिया। १८। रणधीर श्रीराम वहाँ एक रात ठहर गये और तदनन्तर (वहाँ से) चल दिये। (कुछ आगे बढ़ने पर) श्रीराम ने दूर से (ही) अगस्त्य मुनि का आश्रम देखा। १९। उन्होंने देखा— आश्रम के पीछे एक योजन (फैला हुआ) सुन्दर कदलीवन है। वह वन सघन है, उसमें वृक्ष सदा फलते हैं, उनकी शाखाएँ आकाश में विस्तार को प्राप्त हुई हैं। २०। जहाँ शुभ

पंडित ज्यम बोलता होय, एम शिष्य ठामोठाम,
वेदाध्ययन त्यां करे वाडव, मठ घणा मुनि धाम। २२।
कोई सांख्य, पातंजल भणे, कोई मीमांसा ने न्याय,
वेदान्त ने व्याकरण कोई, एम वाद करता जाय। २३।
को समाधिमां मग्न छे, को मुनि धरता ध्यान,
को कथा कहे इतिहासनी, को श्रवण करता पान। २४।
को मुनि करता योगसाधन, तपे को तपरूप,
को हरि अरचा तणी सेवा, करे भाव अनूप। २५।
एवुं देखतां रघुवीर लक्ष्मण, थया मन प्रसन्न,
त्यारे सुतीक्षणने पूछता, जे ज्येष्ठ दशरथ-तन। २६।
अरे मुनि आ उपवन कोनुं, पुण्य स्थळ पावन,
महानुभाव रहे छे कोण अहीं, ते कहो सत्य वचन। २७।
त्यारे सुतीक्ष्ण कहे सांभळो, राजीवलोचन राम,
अगस्त्य मुनि रहे छे अहीं, आ वन आश्रम ठाम। २८।

जलाशय हैं, वहाँ पक्षी और पशु (एक-दूसरे के प्रति) वैर-हीन होकर विचरण करते हैं। इसके अतिरिक्त, बूढ़े पक्षी शास्त्र-सम्बन्धी चर्चा करते हुए बैठे रहते। २१। जैसे पंडित जन बोल रहे हों, वैसे स्थान-स्थान पर (ऋषि के) शिष्य अध्ययनार्थी होने पर भी पंडितों के समान बोल रहे हैं। वहाँ ब्राह्मण वेदों का अध्ययन कर रहे हैं। (वहाँ) मुनियों के निवास-स्थान तथा मठ बहुत हैं। २२। कोई सांख्यशास्त्र पढ़ रहा है, तो कोई पातंजल योगशास्त्र, कोई मीमांसा (तो) और (कोई) न्याय पढ़ रहा है। कोई वेदान्त (तो) और (कोई) व्याकरण पढ़ रहा है। इस प्रकार कोई-कोई (शास्त्र-सम्बन्धी) वाद कर रहे हैं। २३। कोई-कोई समाधि में मग्न है, तो कोई-कोई मुनि ध्यान धरे हुए हैं; कोई इतिहास की कथा कह रहा है, तो कोई-कोई श्रवण का आनन्द-रस-पान कर रहे हैं। २४। कोई-कोई मुनि योग-साधना कर रहे हैं, तो कोई-कोई तपस्या-रूपी अग्नि में तप रहे हैं। कोई-कोई भगवान् हरि की पूजन-सम्बन्धी सेवा अद्वितीय श्रद्धा-पूर्वक कर रहे हैं। २५। ऐसा देखने पर रघुवीर और लक्ष्मण मन में प्रसन्न हो गये। तब दशरथ के जो ज्येष्ठ पुत्ररत्न हैं, उन राम ने सुतीक्ष्ण से पूछा। २६। 'हे मुनि, यह उपवन किसका पुण्य-पावन स्थान है? यहाँ कौन महानुभाव रहते हैं— वह सच्ची (-सच्ची) बात बताइए।' २७। तब सुतीक्ष्ण ने कहा— 'हे राजीव-लोचन राम, सुनिए। यहाँ अगस्त्य मुनि रहते हैं।

जेणे आतापि वातापि, ईल्वण, असुर मार्या अर्थ,
समुद्र केरुं पान कीधुं, एवा छे समरथ । २९ ।
रघुवीर कहे हो सुतीक्षण, केम मारिया बळवान,
अगस्त्यनी उत्पत्ति कहो, केम कर्युं सागरपान । ३० ।
त्यारे सुतीक्षण कहे रामजी, हुं जाणुं सरवे गत्य,
अथ इति तमने कहुं, कुंभज तणी उतपत्य । ३१ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

उत्पत्ति कहुं कुंभज ऋषिनी, कथा जे पावन रे,
सुतीक्षण वळता बोलिया, तमो राघव धरजो मन रे । ३२ ।

यह वन उनका आश्रम-स्थान है । २८ । जिन्होंने आतापि, वातापि और इल्वण नामक असुरों को मार डाला और उस हेतु से समुद्र (-जल) को पी डाला, ऐसे वे समर्थ (मुनि) है '। २९ । (इसपर) रघुवीर ने कहा – ' हे सुतीक्षण, उन बलवान मुनि ने (उन असुरों को) कैसे मार डाला ? (साथ ही) अगस्त्य की उत्पत्ति (की कथा) कहिए । उन्होंने समुद्र (के जल को) कैसे पी डाला ? ' । ३० । तब सुतीक्षण ने कहा— ' हे रामजी, मैं सब गतियों (-स्थितियों) को जानता हूँ । (अतः) कुम्भज (अगस्त्य) की उत्पत्ति (के सम्बन्ध में) अथ से इति तक आप से कहता हूँ ' । ३१ ।

' मैं अगस्त्य ऋषि की उत्पत्ति कहता हूँ, जिसकी कथा पावन है । ' फिर सुतीक्षण ने कहा— ' हे राघव, आप (उसपर) मन धरिए, अर्थात् ध्यान दीजिए ' । ३२ ।

* * *

अध्याय—५ (सुतीक्षण द्वारा श्रीराम को अगस्त्य की कथा सुनाना)

राग देशाख

सुतीक्षण कहे सांभळो रघुपति, पावन पुण्य पवित्र,
विस्तारी तमने संभळावुं, अगस्त्यनुं जन्मचरित्र । १ ।

अध्याय—५ (सुतीक्षण द्वारा श्रीराम को अगस्त्य की कथा सुनाना)

सुतीक्षण ने कहा— ' हे रघुपति, सुनिए । अगस्त्य का पावन, पुण्य (शुभ) तथा पवित्र जन्म (-जीवन) चरित्र विस्तार करते हुए आपको सुनाता हूँ । १ । जो मित्रावरुण नामक ब्रह्मवेत्ता धीर मुनिवर

मित्रावरुण नामे जे मुनिवर, रहेता सिंधुतीर,
तप अनुष्ठान क्रिया जप करता, ब्रह्मवेत्ता मुनिधीर। २ ।
सागर केरी छोळो आवे त्यारे, पोतानी वस्तु तणाय,
कोई दिन आसन वस्त्र कमंडळ, कोई दिन पात्र ज जाय। ३ ।
अकळाया मुनि सिंधु उपर, थया घणुं क्रोधवान,
हावे उदे करुं एक पुत्र एवो, करे सागर जळनुं पान। ४ ।
पछे मृत्तिकानो एक कुंभ कर्यो, मूक्युं शुक्र पोतानुं ते मांहे,
कुंभनुं जत्न करीने मूक्यो, एकांत स्थळमां त्यांहे। ५ ।
ज्यारे पूरा मास थया त्यारे, घट भांगीने नीकळ्यो पुत्र,
अद्भुत आकृति सहित छे अंगे, यज्ञोपवीत कटी सूत्र। ६ ।
अगस्त्य एवुं नाम ज पाड्युं, मोटो थयो ते तन,
पितानी आज्ञा मागी आव्यो, काशीक्षेत्र पावन। ७ ।
त्यां संपूरण विद्या भणियो, पछे पाम्यो तन यौवन,
हावे कन्या सुन्दर मळे तो परणुं, एम विचार्युं मन। ८ ।
एक कान्यकुब्ज देशनो राजा, तेने घणी कन्याय,
त्यां आवीने करी याचना, कन्या एक मुनिराय। ९ ।

समुद्र-तट पर रहते थे, वे तप, अनुष्ठान क्रिया और जप करते रहते थे। २। (तट पर) सागर की लहरें आतीं, तब उनकी अपनी वस्तुएँ बह जातीं। किसी दिन आसन, वस्त्र (या) कमण्डलु, तो किसी दिन पात्र ही (बह) जाता। ३। इससे मुनि समुद्र पर झुँझला उठे। (फिर) वे बहुत क्रोधायमान हो गये। (तो उन्होंने निश्चय किया कि) अब मै एक ऐसा पुत्र उत्पन्न करूँगा, जो समुद्र के पानी को पी डालेगा। ४। तदनन्तर उन्होंने मिट्टी का एक कुम्भ बना लिया और उसमें अपना शुक्र (वीर्य) डाल दिया। उन्होंने उस कुम्भ को वहाँ एकान्त स्थान में सम्हाल कर रख दिया। ५। जब पूरे (नौ) महीने हो गये, तब उस कुम्भ को तोड़कर उसमें से एक पुत्र निकल आया। उसकी अद्भुत आकृति, अर्थात् डीलडौलवाले शरीर में यज्ञोपवीत और कटिसूत्र (भी) था। ६। उसका नाम 'अगस्त्य' रखा। (फिर यथा-काल) वह पुत्र बड़ा हो गया। (फिर) पिताजी से आज्ञा माँगकर वह पावन काशी क्षेत्र में आ गया। ७। वहाँ उसने समस्त विद्या पढ़ ली। अनन्तर उसका शरीर यौवन को प्राप्त हो गया। उसने मन में यह सोचा, अब कोई सुन्दर कन्या मिले, तो ब्याह कर लूँ। ८। (उधर) कान्यकुब्ज देश का एक राजा था। उसके बहुत कन्याएँ थीं। मुनिराज

त्यारे राजा कहे हजु नानी छे, वरजोग थशे जेणी वार,
त्यारे तमे आवजो आपीश, मुनिवर कन्या एक निरधार । १० ।
एवुं वचन सांभळीने गया पाछा, अगस्त्य मुनिवर जेह,
पछी थोडे काळे स्वयंवर करी राये, कन्या परणावी तेह । ११ ।
त्यारे अगस्त्य ने तो भूली गयो, परणावी सहु कन्याय,
राजकुंवरने ज्यां त्यां आपी, निवृत्ति पाम्यो राय । १२ ।
पछे दिवस केटले अगस्त्य आव्या, कन्या लेवा क़ाज,
पूजा अर्चा भूपतिए करी, मन भय पाम्यो राज़ । १३ ।
त्यारे अगस्त्य कहे राय कन्या लाव्य, तें मुजे कही'ती जेह,
एवुं सुणी नृप थयो चिंतातुर, गयो मंदिरमां तेह । १४ ।
राणीने सहु वृतांत कह्युं जे, भूली गयो हुं आप,
हावे कन्यानी ना कहीश मुनिने तो, निश्चे देशे शाप । १५ ।
त्यारे सतीशिरोमणि राणी बोली, राखो धीरज महाराज,
द्वादश बरसनो पुत्र छे आपणे, तेथी सरशे काज । १६ ।

ने वहाँ आकर एक कन्या की माँग की । ९ । तब राजा ने कहा— 'अभी यह छोटी है; जिस समय वरण करने योग्य (विवाह-योग्य) हो जाएगी, तब आप आइए । हे मुनिवर (तब) मैं निश्चय ही एक कन्या दूँगा' । १० । ऐसा वचन सुनकर वे अगस्त्य मुनि लौट गये । तदनन्तर थोड़े ही समय में राजा ने स्वयम्वर सम्पन्न करते हुए उस कन्या का विवाह करा दिया । ११ । तब वह (राजा) अगस्त्य को तो भूल गया । (इससे एक-एक करके) उसने सब कन्याओं का विवाह करा दिया । (कन्याएँ) जहाँ-तहाँ राजपुत्रों को (विवाह में) देकर राजा निवृत्ति को प्राप्त हो गया । १२ । कितने ही दिनों के पश्चात् अगस्त्य मुनि कन्या ले जाने के लिए (राजा के पास) आ गये । (फिर) उस राजा ने उनकी पूजा-अर्चा तो की; (फिर भी) वह मन में भय को प्राप्त हो गया । १३ । तब अगस्त्य ने कहा— 'हे राजा, आपने जो मेरे लिए कही थी, वह कन्या लाओ' । ऐसा सुनकर राजा चिन्तातुर हो गया और वह प्रासाद में चला गया । १४ । उसने रानी से समस्त वृत्तान्त कह दिया— 'मैं स्वयं भूल जो गया हूँ; अब यदि मुनि से कन्या के विषय में ना कहूँ, तो वे निश्चय ही अभिशाप देंगे' । १५ । तब वह सती-शिरोमणि रानी बोली— 'हे महाराज, धैर्य रखो । अपना बारह वर्ष का एक पुत्र है । उससे काम बन जाएगा । १६ । कन्या का वेश बनाते हुए उसे स्त्री के आभूषण तथा वस्त्र पहना दो । विधि

स्त्रीनां आभूषण वस्त्र पहेरावो, करी कन्यानो वेष,
विधिए थकी करो दान कन्यानुं, मुनिने आपो एश । १७ ।
कुंभज ऋषि ए सफळ मंत्री भणी, संकल्प करशे ज्यारे,
कन्या जाणी प्रतिग्रह करशे, थशे ए नरनी नार त्यारे । १८ ।
पछी राय कुंवर शणगारी लाव्यो, सभामांहे ते दन,
अद्भुत वेश कन्यानो जोईने, मुनिवर हरख्या मन । १९ ।
त्यारे भूपतिए सहु भोग सहित, कन्या आपी वहु मान,
अगस्त्य मुनिए स्वस्ति कही, लीधुं कन्यानुं दान । २० ।
मंत्र भणीने हस्त ग्रह्यो त्यारे, तत्क्षण थई ते नार,
भूपति मनमां आनंद पाम्यो, वरत्यो जयजयकार । २१ ।
आशीर्वाद अगस्त्ये दीधो, पूरण थयां मनकाम,
राजा प्रत्ये मुनिवर कहे ए, कन्यानुं शुं नाम । २२ ।
त्यारे वळतो राय विचारी बोल्यो, अर्थ करी अभिराम,
पुरुष तणी मुद्रा लोपी माटे, लोपामुद्रा नाम । २३ ।
अगस्त्य लेई काशीमां आव्या, मांड्यो गृहस्थाश्रम,
नित्य कर्म पोतानुं करता, तपस्वी निर्मल ब्रह्म । २४ ।

के अनुसार कन्या दान करो और मुनि को वह दो । १७ । जब वे अगस्त्य ऋषि फलयुक्त मंत्र पढ़कर संकल्प करेंगे, और उसे कन्या समझ कर उसको स्वीकार करेंगे, तब वह नर से नारी बन जाएगा '। १८, (इसके अनुसार) राजा उस दिन पुत्र को (कन्या रूप में) सजाकर सभा में ले आया । उस कन्या के अद्भुत वेश को देखकर मुनिवर मन में आनन्दित हो गये । १९ । तब राजा ने समस्त भोग (विलास की सामग्री) सहित बहुत सम्मान पूर्वक (मुनि को) कन्या प्रदान की । (इधर) अगस्त्य मुनि ने 'स्वस्ति' कहकर कन्या का दान (स्वीकार कर) लिया । २० । (जब) उन्होंने मन्त्र पढ़कर हाथ थाम लिया, तब वह (राजपुत्र) तत्क्षण नारी-रूप हो गया । राजा मन में आनन्द को प्राप्त हो गया और (तब) जय-जयकार हो गया । २१ । (फिर) मुनिवर अगस्त्य ने आशीर्वाद दिया । उनके मन की कामनाएँ पूर्ण हो गयीं । (तत्पश्चात्) उन्होंने राजा से पूछा— 'इस कन्या का क्या नाम है ?' । २२ । तो फिर विचार करके और सुन्दर अर्थ प्रकट करते हुए वह बोले — "पुरुष की मुद्रा (रूप) लुप्त हो गयी है, अतः इसका नाम 'लोपामुद्रा' है" । २३ । (तदनन्तर) अगस्त्य उसे लिये हुए काशी में आ गये और उन्होंने गृहस्थाश्रम (का जीवन) आरम्भ किया ।

हावे हिमाचळनो पुत्र ज कहीए, विंध्याचळ गिरिवर्ण,
ते वसिष्ठ साथे वेर करीने, आव्यो अगस्त्यने शर्ण । २५ ।
श्रीरामचंद्र कहे सुणो सुतीक्ष्ण, कहो मुजने ए नाट,
वसिष्ठ अने विंध्याचळने, वळी वेर थयुं शा माटे । २६ ।
सुणो रघुपति एक समे रहे, वसिष्ठ उत्तर देश,
त्यारे कामदुधा धेनु पोताने आश्रम राखी एश । २७ ।
एक दिवस ते चरवा गई'ती, धेनु वनमोझार,
ते वनमां एक खोह छे मोटी, ऊंडो खाड अपार । २८ ।
कामदुधा ते पडी खाडमां, रोध थयो त मांहे,
त्यारे खोळवा नीकळ्या वसिष्ठ मुनिवर, जोता आव्या त्यांहे। २९ ।
पछी कामधेनुए दूध स्रवी, निज खाड भर्यो निरधार,
ते पयमांहे तरीने उपर, धेनु नीकळी बहार । ३० ।
वसिष्ठे विचार्युं ए खाड ज खोटो, पुरुं एने निरवाण,
एक परवत लावी नाखुं एमां, तो पुराय निश्चे जाण । ३१ ।
हिमाचळने पुत्र घणा छे, तेमांथी लावुं एक,
तेने लावी ए खाडमां नाखुं, टाळुं दुःख विशेक । ३२ ।

वे तपस्वी, निर्मल अर्थात् निष्पाप ब्राह्मण अपने नित्य कर्म करते रहे । २४ । अब गिरिवर विंध्याचल को हिमालय का पुत्र ही कहिए । वह वसिष्ठ के साथ वैर धारण करके अगस्त्य की शरण में आ गया । २५ । (यह सुनकर) श्रीरामचन्द्र ने कहा— 'सुनिए हे सुतीक्ष्ण, मुझे वह (कथा) अवश्य कहिए । वसिष्ठ और विश्वामित्र का फिर वैर किस-लिए हो गया' ? । २६ । तो सुतीक्ष्ण ने कहा— 'हे रघुपति, सुनिए । एक समय वसिष्ठ ऋषि उत्तर देश में रहते थे । उन्होंने (तब) एक कामदुग्धा नामक कामधेनु अपने आश्रम में रखी थी । २७ । एक दिन वह गाय वन में चरने के लिए गयी थी । उस वन में एक बड़ी गुफा थी—(वस्तुतः) वह एक बहुत गहरी खाई थी । २८ । कामदुग्धा उस खाई में गिर पड़ी । उसे (बाहर आने में) रुकावट पड़ गयी । तब मुनिवर वसिष्ठ उसे खोजने के लिए निकले, तो देखते (-देखते) वहाँ आ गये । २९ । तदनन्तर उस कामधेनु ने अपना दूध निःसृत कर दिया, तो निश्चय ही वह खाई भर गयी । उस दूध में तैरकर वह गाय बाहर निकल गयी । ३० । (इधर) वसिष्ठ ने विचार किया कि यह खाई खोटी है, उसे मैं निश्चय ही पाट दूँगा । समझिए, एक पर्वत लाकर डाल दूँ, तो वह निश्चय ही भर जाएगी । ३१ । हिमालय के बहुत पुत्र हैं, उनमें से किसी एक को लाऊँगा । उसे लाकर इस खाई

पछी हिमाचळने घेर ज आव्या वसिष्ठ तेणी वार,
पोतानुं वृत्तांत कहीने, जाच्यो एक कुमार। ३३।
त्यारे हिमगिरिए आज्ञा आपी. विंध्याचळने त्यांहे,
वसिष्ठ साथे चाल्यो तत्क्षण, विचारतो मनमांहे। ३४।
ऐ मुनि मुजने लेई जाय छे, पूरवा खाड मोझार,
एवुं जाणी वसिष्ठने मूकी, नाठो तेणी वार। ३५।
अगस्त्य केरे शरणे आव्यो, वसिष्ठे विचार्युं मन,
हावे विरोध कोण करे अगस्त्य साथे बीजो लावुं तन। ३६।
पाछा फरीने वसिष्ठ मुनिवर, आव्या हिमाचळ घेर,
भाई पुत्र ए तारो नासी गयो छे, करी मुज साथे वेर। ३७।
माटे बीजो आप मने गरीब होय ते, जेथी सरे मुज काम,
पछी पुत्र एक पांगळो हतो, गिरि आबु तेनुं नाम। ३८।
हिमाचळे ते आप्यो तत्क्षण, लेई चाल्या मुनिजन,
ते खाडमां आबुने मूक्यो, प्रसन्न थयुं छे मन। ३९।
हावे विंध्याचळ एम वेर करीने, आव्यो अगस्त्यनी पास,
वचन आप्युं जे कहो ते करुं, एम थईने रह्यो छे दास। ४०।

में डाल दूँगा और वह असाधारण दु:ख टाल दूँगा। ३२। फिर वसिष्ठ उस समय हिमालय के घर ही आ गये और अपना वृत्तान्त कहकर उन्होंने उसका एक पुत्र माँग लिया। ३३। तब हिमालय ने वहाँ विंध्याचल को (वसिष्ठ के साथ जाने की) आज्ञा दी। (तदनुसार) वह वसिष्ठ के साथ तत्क्षण चल दिया। (फिर भी) वह मन में सोचता रहा। ३४। वे मुनि उस खाई में भर डालने के लिए मुझे ले जा रहे हैं। ऐसा समझकर वह उस समय वसिष्ठ को छोड़कर भाग गया। ३५। (और) वह अगस्त्य की शरण में आ गया। (इधर) वसिष्ठ ने मन में विचार किया—अब अगस्त्य का विरोध कौन करे ? (हिमालय का) कोई दूसरा पुत्र लाऊँगा। ३६। (अत:) पीछे मुड़कर मुनिवर वसिष्ठ (फिर) हिमालय के घर आ गये (और बोले—) 'भाई, तुम्हारा वह पुत्र मुझसे शत्रुता करके भाग गया है। ३७। इसलिए मुझे दूसरा (पुत्र) दो, जो सरल स्वभाव वाला हो और जिससे मेरा काम बन जाए'। फिर (हिमालय का) दूसरा एक पंगु पुत्र था। उसका नाम था आबू। ३८। हिमालय ने तत्क्षण वह दिया, तो मुनि अगस्त्य उसे लेकर चल दिये। उन्होंने आबू को खाई में डाल दिया, तो उनका मन प्रसन्न हो गया। ३९। अब विंध्याचल ऐसा वैर

अगस्त्य केरो शिष्य थयो पछे, रह्यो ते दक्षिण देश,
लक्ष योजननो ऊंचो परवत, महा अभिमानी वेश । ४१ ।
एम ऊंचो वधवा मांड्यो अतिशे, स्वर्गमां थयो अंधकार,
त्यारे अगस्त्य पासे ईंद्रे आवी, कह्यो गिरिनो समाचार । ४२ ।
अगस्त्य त्यांथी आवी पोते, पर्वत केरी पास,
साष्टांग करीने पडियो पृथ्वी, सूतो यथा अवकाश । ४३ ।
त्यारे अगस्त्य कहे हो विंध्याचळ, हावे सूतो रहेजे आप,
मुज आज्ञा विना ऊठीश, तो तुंने बाळीश दईने शाप । ४४ ।
पछे ते दिवसना अहीं रह्या छे, आ दंडकवन मोझार,
पत्नी सहित निज आश्रम बांधी, अगस्त्य रह्या आ ठार । ४५ ।
सुतीक्ष्ण कहे सुणो रघुकुळभूषण, समरथ श्रीभगवान,
हावे बीजुं चरित्र कहुं कुंभजनुं, जे कर्युं सागरनुं पान । ४६ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सागरजळनुं पान कीधुं, एवा मित्रावरुणना तन रे,
सुतीक्ष्ण वाणी बोलिया, तमो राघव धरज्यो मन रे । ४७ ।

(धारण) करके अगस्त्य के पास आ गया (और बोला—), 'मैंने (आप को) वचन दिया, आप जो कहिए, सो करूँगा'। वह इस प्रकार उनका दास होकर रहा था । ४० । अनन्तर वह अगस्त्य का शिष्य हो गया और वह दक्षिण देश में रह गया । लक्ष योजन ऊँचा वह पर्वत महा अभिमानी रूपवाला था । ४१ । इस प्रकार से (अभिमान-पूर्वक) उसने अतिशय ऊँचा बढ़ना आरम्भ कर दिया, तो स्वर्ग में अन्धकार हो गया । तब इंद्र ने अगस्त्य के पास आकर (विंध्य) पर्वत-सम्बन्धी समाचार कह दिया । ४२ । तब अगस्त्य स्वयं वहाँ से (विंध्य) पर्वत के समीप आ गये, तो साष्टांग नमस्कार करते हुए वह पृथ्वी पर पड़ गया और यथा अवकाश सोया रहा । ४३ । तब अगस्त्य ने कहा— 'विंध्याचल, तुम अब सोये रह जाओ । यदि बिना मेरी आज्ञा के उठोगे, तो तुम्हें शाप देकर जला डालूँगा'। ४४ । तदनन्तर उस दिन से वह यहाँ इस दण्डक वन में रहा है । अगस्त्य भी अपना आश्रम बनाकर पत्नी सहित इस स्थान पर रह गये (हैं) । ४५ । (फिर) सुतीक्ष्ण ने कहा, 'रघुकुल-भूषण, हे समर्थ श्रीभगवान्, सुनिए । अगस्त्य का दूसरा चरित्र (-लीला) कहता हूँ, जिससे उन्होंने समुद्र को पी डाला । ४६ ।

सागर के जल को पी डाला— मित्रावरुण के ऐसे वे पुत्र (अगस्त्य),

हैं'। सुतीक्ष्ण ने यह वात कही— 'हे राघव, आप ध्यान दीजिए'। ४७।

* * *

अध्याय—६ (अगस्त्य द्वारा तीन दैत्यों का संहार और समुद्र-पान)

देशी चालती

सुतीक्ष्ण कहे सुणो दशरथनंदन, पावन पुण्य पवित्र,
विस्तारी तमने संभळावुं, अगस्त्य ऋषिनुं चरित्र। १।
असुर त्रणे बंधु कपटी, वनमां रहेता तेह,
घणा मुनिवर मार्या तेणे कपट करीने जेह। २।
आतापी थाय फळरूपे, वातापी थाय दातार,
इल्वण आश्रम करी कारमो, रहेतो वनमोझार। ३।
आदर करीने तेडी लावे, मुनिवरने निज घेर,
कारमां फळ खवडावे तेने, जळ पाय रूडी पेर। ४।
त्यारे पेट फाडीने असुर नीकळे, विप्र ते पामे मरण,
एम घणाक मुनिवर मार्या, एवुं करे आचरण। ५।
पछे ब्राह्मण सरवे टोळे मळीने, आव्या अगस्त्यनी पासे,
स्वामी सर्वनुं मृत्यु आव्युं, हावे केम रहेवाशे। ६।

अध्याय—६ (अगस्त्य द्वारा तीन दैत्यों का संहार और समुद्र-पान)

सुतीक्ष्ण ने कहा— 'हे दशरथ-नन्दन, अगस्त्य ऋषि के पावन, पुण्य (शुभ), पवित्र चरित्र का विस्तार करते हुए आपको सुनाता हूँ। १। तीन (ऐसे) वे कपटी असुर वन्धु उस वन में रहते थे, जिन्होंने कपट करके वहुत मुनिवरों को मार डाला था। २। (उनमें से एक) आतापि फल रूप वन जाता, (दूसरा) वातापि दाता हो जाता, तो (तीसरा) इल्वण अद्भुत सुन्दर आश्रम वनाकर वन में रहता। ३। वह आदर करते हुए मुनियों को वुलाकर अपने घर लाया करता। उन्हें वह अद्भुत सुन्दर फल खिलाया करता और सुन्दर ढंग से पानी पिलाया करता। ४। तव पेट फाड़कर (वह फल रूप वना हुआ आतापि नामक) असुर (वाहर) निकलता और वे ब्राह्मण मृत्यु को प्राप्त हो जाते। इस प्रकार उन्होंने वहुत-से मुनिवरों का मार डाला था। वे ऐसा आचरण किया करते थे। ५। तदनन्तर सव ब्राह्मण समूह में एकत्रित होकर अगस्त्य के पास आ गये (और वोले-) 'हे स्वामी सव की मौत आ गयी! अव हमसे कैसे (जीवित) रहा जाएगा? । ६।

पेट फाडीने मारे सहुने, कपट करी मति पाप,
शंभु तणुं वरदान ज पाम्या, माटे न लागे शाप । ७ ।
एवां वचन सुणीने अगस्त्य ज ऊठ्या, आव्या असुरने घेर,
त्यारे पापीए ऊठीने आदर कीधो, मुनि पूज्या बहु पेर । ८ ।
महाराज परोणा अम घेर हावे, रहो आजनो दन,
आ फळजळ अंगीकार करो ने, अमने करो पावन । ९ ।
त्यारे अगस्त्य कहे आज पावन, करवा आव्यो छुं आंहे,
आतापी थयो सुंदर फळ पाकां, वातापीए आप्यां त्यांहे । १० ।
पछी अगस्त्य मुनि फळ अशन करीने, हाथ फेरव्यो पेट,
पेलो असुर उदरमां बळवा लाग्यो, कांई नव चाल्युं नेट । ११ ।
त्यारे वातापीए हांक ज मारी, बोल्यो उदरथी तेह,
मने जठराग्निमां बाळी पचाव्यो, तमने मारशे एह । १२ ।
एवां वचन सुणी बंन्यो जण ऊठ्या, शस्त्र ग्रहीने हाथ,
त्यारे धनुषबाण ग्रही युद्ध करी मार्यो, वातापीने मुनिनाथ । १३ ।
एम आतापी वातापी बंन्यो, मार्या मुनिवर शूर,
त्यारे इल्वणे जाण्युं मुजने मारशे, नाठो त्यांथी भूर । १४ ।

उन पाप बुद्धियों ने कपट करते हुए पेट फाड़कर सबको मार डाला । वे शिवजी के वरदान को प्राप्त हो गये, अतः उन्हें शाप नहीं लगता । ७ । ऐसी बातें सुनकर अगस्त्य उठ ही गये और उन असुरों के घर आ गये । तब उस पापी (इल्वण) ने उठकर मुनि का आदर (-सत्कार) किया और बहुत प्रकार से उनका पूजन किया । ८ । (वह बोला—) 'महाराज, अब आप अतिथि (के रूप से) हमारे घर आज के दिन रहिए । ये फल तथा जल स्वीकार कीजिए और हमें पावन कर लीजिए' । ९ । तब अगस्त्य ने कहा— 'मैं आज (तुम्हें) पावन करने के लिए यहाँ आया हूँ ।' (तदनन्तर) आतापि सुन्दर पक्व फल हो गया, तो वातापि ने (अगस्त्य को) वहाँ वे फल प्रदान किये । १० । तत्पश्चात् फलों को खाकर अगस्त्य मुनि ने पेट पर हाथ फेर लिया । (तब) वह (आतापि) असुर पेट में जल जाने लगा । निश्चय ही उसकी कुछ न चली । ११ । तब वातापि ने उसे पुकार ही लिया, तो वह पेट में से बोला— '(इस मुनि ने) मुझे जठराग्नि में जलाकर पचा लिया; वह तुम्हें मार डालेगा' । १२ । ऐसी बातें सुनकर वे दोनों जने हाथों में शस्त्र लेकर उठ गये । तब हाथ में धनुष-बाण लेकर युद्ध करते हुए मुनिवर ने वातापि को मार डाला । १३ । शूर मुनिवर ने

त्रिभुवनमां कोईए नहि राख्यो, अगस्त्य ऋषिनो चोर,
ज्यांहां जाय त्यां मुनिवर, पूंठे फरता करता जोर । १५ ।
पछे असुर आवी सागरमां पेठो, जळरूपे थई एह,
मुनिवरे आवी माग्यो पण, नव काढी आप्यो तेह । १६ ।
पछे कळशोद्भव क्रोधातुर थईने, उतार्युं अभिमान,
भरी अंजलि मंत्र भणी कर्युं, सागरजळनुं पान । १७ ।
ते जळवत् आव्यो असुर उदरमां, एम त्रैणे पाम्या पतन,
सिंधु सरवे सुकाई गयो ने, तलखे जळचर जन । १८ ।
सहु देवे मळी कुंभज ऋषि केरी, प्रार्थना करी त्यारे,
पछे दिवस केटले करुणा करी, मुनि सागर भरियो वारे । १९ ।
क्षारसमुद्र थयो ते माटे, मोती तेमां थाय,
रत्न पाके माटे रत्नाकर, ए अगत्यनो महिमाय । २० ।
अगस्त्यमुनिनां चरित्र घणां छे, ए विण बीजां अन्य,
ए राम तमारा भजन प्रतापे, मोटा थई गया मुनिजन । २१ ।

आतापि और वातापि दोनों को इस प्रकार मार डाला। तब इल्वण यह जान चुका कि ये मुझे मार डालेंगे। (अतः) वह लुच्चा वहाँ से भाग गया। १४। अगस्त्य ऋषि के उस चोर को त्रिभुवन में किसी ने (भी) (अपने यहाँ आश्रय देकर) नहीं रख लिया। (फिर) जहाँ-जहाँ वह जाता वहाँ-वहाँ वे मुनिवर बल प्रयोग करते और पीछे-पीछे घूमते रहते। १५। तदनन्तर वह असुर आकर समुद्र में जल-रूप होकर प्रविष्ट हो गया। तब मुनिवर ने आकर समुद्र से वह माँग लिया, परन्तु उसने (उस असुर को) निकालकर नहीं दिया। १६। तत्पश्चात् अगस्त्य ने क्रोधातुर होकर उसके घमण्ड को छुड़ा दिया। उन्होंने मंत्र पढ़ते हुए अंजलि भर-भर कर समुद्र के जल को पी डाला। १७। वह असुर (इल्वण) भी जलवत् (मुनिवर के) पेट में आ गया। इस प्रकार वे तीनों पतन (विनाश) को प्राप्त हो गये। (परन्तु ऐसा करने पर) समस्त समुद्र सूख गया और जलचर जीव प्यास से व्याकुल हो गये। १८। तब सब देवों ने इकट्ठा होकर अगस्त्य ऋषि से प्रार्थना की। तो कितने ही दिनों के पश्चात् मुनि ने करुणा करके समुद्र को पानी से भर दिया। १९। इसलिए वह समुद्र खारा हो गया। उसमें मोती होते हैं। उसमें रत्न उत्पन्न होते हैं, इसलिए वह 'रत्नाकर' (कहाता) है। अगस्त्य की यह महिमा है। २०। अगस्त्य मुनि की (चरित्र-सम्बन्धी) लीलाएँ इसके अतिरिक्त

ते अगस्त्यनो पेलो आश्रम, आव्यो श्रीरघुराय,
श्रीराम लक्ष्मण आनंद पाम्या, सुणी अगस्त्य केरी कथाय । २२ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अगस्त्य केरी कथा सुणीने, हरख्या श्रीरघुराय रे,
पछे विद्यार्थीए रामने दीठा, त्यारे मुनिने कहेवा जाय रे । २३ ।

* * *

दूसरी अन्य बहुत हैं । हे राम, वे मुनि महोदय आपके भजन के प्रभाव से बड़े हो गये हैं' । २१ । हे श्रीरघुराय, उन अगस्त्य मुनि का वह आश्रम आ गया । (इस प्रकार) अगस्त्य की कथा सुनकर श्रीराम लक्ष्मण आनन्द को प्राप्त हो गये । २२ ।

अगस्त्य की कथा सुनकर श्रीरघुराज आनन्दित हो गये । तत्पश्चात् (अगस्त्य के) विद्यार्थियों ने श्रीराम को देखा । तब वे मुनि से कहने के लिए गये । २३ ।

* * *

अध्याय—७ (श्रीराम का अगस्त्याश्रम में स्वागत तथा जटायु से भेंट)

राग सोरठ

अनेक शिष्ये कह्युं आवी, सुणो मुनि महाराज,
राम-लक्ष्मण-जानकी आवे, आपणे आश्रम आज । १ ।
एवुं सांभळीने अगस्त्य हरख्या, ऊठिया तेणी वार,
रघुनाथने तेडवा चाल्या, साथे विप्र अपार । २ ।
मुनि कहे तप जप जोग साधन, समाधि अनुष्ठान,
जेने पामवा करीए सहु ते, आव्या श्रीभगवान । ३ ।
एवुं कही उतावळा, सामा गया घटजात,
एवे दीठा सन्मुख आवता, सीता सहित बे भ्रात । ४ ।

अध्याय—७ (श्रीराम का अगस्त्याश्रम में स्वागत तथा जटायु से भेंट)

अनेक शिष्यों ने आकर कहा— 'हे मुनि महाराज, सुनिए । राम, लक्ष्मण और जानकी आज हमारे आश्रम आ रहे हैं' । १ । ऐसा सुनकर अगस्त्य आनन्दित हो गये । उस समय वे उठ गये और श्रीरघुनाथ को बुलाने के लिए चल दिये । उनके साथ बहुत से ब्राह्मण (भी) थे । २ । मुनि ने कहा— 'जिन्हें प्राप्त होने के लिए तप, जप, योग-साधना, समाधि अनुष्ठान सब करते है, वे श्रीभगवान् आ गये' । ३ । ऐसा

त्यारे राम लक्ष्मण नम्यां आवी, अगस्त्य केरे पाय,
आशिष देई मुनिए पछी, चांप्या हृदे रघुराय। ५ ।
निज आश्रमे लावी पछे, बेसाडिया आसन,
रघुवीरने वींटी करी, बेठा सहु मुनिजन। ६ ।
जाचक ज्यम दातार पूंठे, मुनि शोभे तेम,
स्वागत बहु विधिए करी, पूछी कुशळता प्रेम। ७ ।
ऋषिपत्नी वेष्टित जानकी, मळी बेठां मंडळ मांहे,
ज्यम आदि माया भगवती, पूंठे अनंत शक्ति त्यांहे। ८ ।
समाचार पूछे सीताने, मुनिपत्नीओ बहु पेर,
ज्यम घटे त्यम कह्युं जानकी, जे थयुं कारण घेर। ९ ।
मुनि पत्नी कहे रे जानकी, कहो क्यांये तम भरथार,
त्यारे सीताए समस्या करी, देखाडिया तेणी वार। १० ।
आ श्यामसुंदर सुभग तन, मम स्वामी श्रीरघुवीर,
पेला गौर लक्ष्मण नाम ए मुज, दियर बळवान वीर। ११ ।
एवां वचन सुणी सीता तणां, हरखी सहु द्विज-नार,
सौभाग्य रहेजो कुशळ तम आशिष दीध अपार। १२ ।

कहकर अधीर हुए अगस्त्य सामने गये। इतने में उन्होंने दोनों बन्धुओं को सीता-सहित आते हुए सामने देखा। ४। तब राम और लक्ष्मण ने आकर अगस्त्य के चरणों को नमस्कार किया। मुनि ने (भी) आशीर्वाद देकर, अनन्तर रघुराज को हृदय से लगा लिया। ५। उन्होंने अपने आश्रम में लाने के पश्चात् (उनको) आसन पर बैठा दिया। श्रीराम को घेरकर समस्त मुनि जन बैठ गये। ६। याचक जैसे दाता के पीछे होते हैं, वैसे (श्रीराम के समीप) वे मुनि सुशोभित (दिखायी दे रहे) थे। उन्होंने बहुत प्रकार से स्वागत करके प्रेमपूर्वक उनकी कुशल पूछी। ७। जैसे आदिमाया भगवती के पीछे अनन्त शक्तियाँ होती हैं, वैसे ही वहाँ सीता ऋषियों की पत्नियों के मण्डल में उनके द्वारा घिरी बैठी। ८। (फिर) मुनि-पत्नियों ने सीता से बहुत प्रकार के समाचार पूछे, तो उसने जैसे घर में घटित हुआ, और जो उसका कारण हुआ, वैसे कह दिया। ९। (तत्पश्चात्) मुनि-पत्नियों ने कहा, हे सीता, कहो, तुम्हारे पति कहाँ हैं'? तो उसने उस समय संकेत करके दिखा दिया। १०। (उसने कहा—) 'वे श्यामसुन्दर सुभग शरीरधारी श्रीरघुवीर मेरे स्वामी हैं और उन गोरे का नाम लक्ष्मण है। वे वलवान तथा वीर (पुरुष) मेरे देवर हैं। ११। सीता की ऐसी

घणो आग्रह करीने अगस्त्य, राखिया श्रीअविनाश,
आतिथ्य बहु विधिए कर्युं, रह्या राम त्यां एक मास । १३ ।
अखंड चाप ने अक्षय भाथा, शस्त्र कवच अभेद,
ते अगस्त्ये आदर करी, रामने आप्या वेद । १४ ।
वळी महा अमोघ प्रचंड एक, आपियुं तीक्ष्ण बाण,
ज्यम नवे ग्रहमां रवि प्रतापिक, एवो ते निरवाण । १५ ।
अगस्त्य कहे हो राम थाय ज्यारे, युद्ध रावण साथ,
आ बाण छेल्लुं मूकजो, ज्यय पामशो रघुनाथ । १६ ।
मुनि तणो महिमा वधारवा, कर्युं रामे अंगीकार,
एक मास रह्या पछे थया सत्वर, जावा वनमोझार । १७ ।
अगस्त्यने कहे रामजी कहो, अमे रहीये क्यायें,
अमने बतावो शुभस्थळ, निवास करीए त्यांहे । १८ ।
मुनि कहे गोदावरीतट, पंचवड छे सार,
पवित्र छे ते भोम माटे, राम रहो ते ठार । १९ ।

बातें सुनकर ब्राह्मणों की वे समस्त स्त्रियाँ आनन्दित हो गयीं । उन्होंने उसे बहुत आशीर्वाद दिये—तुम्हारा सौभाग्य कुशल रहे । १२ । अगस्त्य ने बहुत हठ करके श्रीअविनाशी श्रीराम को ठहरा लिया और बहुत प्रकार से उनका आतिथ्य किया । श्रीराम वहाँ एक महीना ठहर गये । १३ । फिर अगस्त्य ने रामको अखण्ड धनुष और अक्षय तूणीर, शस्त्र, अभेद्य कवच आदर-पूर्वक दिये । १४ । इनके अतिरिक्त उन्होंने एक महा अमोघ, प्रचण्ड तथा तीक्ष्ण बाण दिया । जिस प्रकार नौ ग्रहों में रवि (सबसे अधिक) प्रतापी है, उस प्रकार बाण (सबसे अधिक) तीक्ष्ण था । १५ । (फिर) अगस्त्य ने कहा— 'हे राम, जब रावण के साथ युद्ध होगा, तब आप यह बाण अन्त में छोड़ दीजिए । हे रघुनाथ, (उससे) आप विजय को प्राप्त होंगे' । १६ । श्रीराम ने मुनि की महिमा को बढ़ाने के हेतु उसे स्वीकार किया । एक महीना वहाँ रहकर फिर वे वन में जाने के लिए तत्पर हो गये । १७ । राम ने अगस्त्य से कहा— 'कहिए, हम कहाँ रहें ? हमें कोई शुभ स्थान बताइए । हम वहाँ निवास करेंगे' । १८ । (तब) मुनि बोले— 'गोदावरी के तट पर पाँच वट वृक्षों से युक्त सुन्दर स्थान, अर्थात् सुन्दर पंचवटी है । वह भूमि पवित्र है । अतः हे राम, उस स्थान पर रहिए' । १९ । तदनन्तर मुनि से आज्ञा लेकर रणधीर श्रीरघुवीर (आगे) निकले और पंचवटी के मार्ग पर स्वयं चल दिये । २० । वहाँ

पछे आज्ञा मागी मुनि तणी, नीकळ्या श्रीरघुवीर,
पंचवटी मारग चाल्या, पोते श्रीरणधीर। २०।
जानकीने मध्य राखी, जाय चाल्या त्यांहे,
एक परवत जेवो प्रौढ पक्षी बेठो मारग मांहे। २१।
लक्ष्मण कहे महाराज, आ कोई असुर पक्षीरूप,
एम कही चढाव्युं धनुष उपर, बाण पन्नगभूप। २२।
त्यारे जटायु बोल्यो पछे, तमो कोण छो बे वीर,
शुं करवा मारो मने ? साचुं कहो रणधीर। २३।
रघुवीर कहे राय दशरथ, अवधपुर छे ज्यांहे,
ते तणा अमो पुत्र बे, नीकळ्या छीए वनमांहे। २४।
तुं कोण पक्षीरूप छे ? दीसतो मोटी काय !
त्यारे जटायु तव बोलियो, तमो सुणो श्रीरघुराय। २५।
अरुण केरा पुत्र छीए अमो, वीर बे बळवान,
गीध जाति पक्षी छुं हुं, जटायु अभिधान। २६।
मुज ज्येष्ठ बंधु संपाति, ते रहे सागर-तीर,
राय दशरथ साथ मारे, मित्राई छे रघुवीर। २७।
ज्यारे स्वर्गमां राजा गया, देवोने करवा साह्य,
त्यारे अमो रहेता एकठा, घणी प्रीत मांहोमांह्य। २८।

जानकी को मध्य में रखकर वे चले जा रहे थे। उस मार्ग में पर्वत जैसा एक प्रचण्ड पक्षी बैठा था। २१। (उसे देखकर) लक्ष्मण ने कहा— 'महाराज, पक्षी के रूप में यह कोई असुर है'। ऐसा कहते हुए सर्पराज शेष के अवतार लक्ष्मण ने धनुष पर बाण चढ़ा दिया। २२। फिर तब जटायु बोला— 'आप दो वीर कौन हैं ? मुझे क्यों मार रहे हैं ? हे रणधीर, सच (-सच) कहिए'। २३। तब (इसपर) रघुवीर ने कहा— 'जहाँ अयोध्या है, वहाँ के राजा दशरथ थे। उनके हम दो पुत्र वन में (जाने को) निकले हैं। २४। पक्षी के रूप में तुम कौन हो ? तुम्हारा शरीर बड़ा दिखायी दे रहा है'। तो तब जटायु बोला— 'हे श्रीरघुराज, आप सुनिए। २५। (सूर्य के सारथी) अरुण के हम दो बलवान तथा वीर पुत्र हैं। मैं गीध जाति का पक्षी हूँ और मेरा नाम जटायु है। २६। मेरा ज्येष्ठ बन्धु है सम्पाति। वह समुद्र के तट पर रहता है। हे रघुवीर, राजा दशरथ के साथ मेरी मित्रता है। २७। जब देवों की सहायता करने के लिए राजा स्वर्ग में गये थे, तब हम इकट्ठा रहते थे। हममें (परस्पर) गाढ़ी प्रीति है। २८।

ते तणा तमो पुत्र बंन्यो, राम-लक्ष्मण वीर,
कहो सुखी छे मम बंधु दशरथ, प्रतापी रणधीर। २९।
एवुं सांभळी रघुवीरने, जळ भरायुं लोचन,
द्विजरायने सरवे कह्युं जे, पाम्या राय पतन। ३०।
ते सुणी गीधे रुदन कीधुं, संभारी निज हेत,
पछे जटायुने मळ्या पोते, राम प्रेम समेत। ३१।
पिता सम छो तमो मारे, सुणो पक्षीराज,
माटे देखाडो शुभ ठाम, रहेवा तणो अमने आज। ३२।
त्यारे जटायु कहे रहो सुखे, आ पंचवटी मोझार,
हुंये पण रहुं छुं अहीं, आ वन विषे निरधार। ३३।
जो काम पडशे तमारे तो, करीश आवी सहाय,
पछे जटायुने मते करी त्यां, रह्या श्रीरघुराय। ३४।
गौतमी गंगातटे, वड पंच छे जे ठार,
त्यां पर्णकूटी रची सुंदर, रह्या जुगदाधार। ३५।
बेसवानो मंडप कर्यो, आगळ घणो विस्तार,
पासे वहे गोदावरीनुं, नीर निर्मळ सार। ३६।

आप राम और लक्ष्मण बन्धु दोनों उनके पुत्र हैं। कहिए, मेरे बन्धु वे प्रतापी रणधीर दशरथ सुखी तो हैं'? २९। यह सुनने पर रघुवीर की आँखों में (अश्रु-) जल भर आया। (फिर) उन्होंने उस पक्षिराज (जटायु) से वह सब कहा, जिससे राजा (देह-) पात अर्थात् मृत्यु को प्राप्त हो गये'। ३० ' वह सुनकर गीध (जटायु) ने अपने प्रेम का स्मरण करते हुए रुदन किया। तदनन्तर राम स्वयं प्रेम के साथ जटायु से मिले। ३१। (वे बोले—) 'हे पक्षिराज, सुनो, तुम मेरे पिता समान हो। अतः हमें रहने के लिए आज कोई शुभ स्थान दिखा दो'। ३२। तब जटायु ने कहा— 'इस पंचवटी में सुख-पूर्वक रहिए। मैं भी निश्चय ही यहाँ इस वन में रहता हूँ। ३३। यदि आपको कोई काम पड़ जाए, तो मैं आकर सहायता करूँगा'। तदनन्तर श्रीरघुराज, जटायु के मत (परामर्श) के अनुसार वहाँ रह गये। ३४। गौतमी गंगा अर्थात् गोदावरी के तट पर जिस स्थान पर पाँच वट वृक्ष थे, वहाँ सुन्दर पर्णकुटी बनाकर (जगत् के आधार) श्रीराम रह गये। ३५। (पर्णकुटी के) सामने बैठने के लिए बहुत विशाल मण्डप बना दिया। पास (ही) में गोदावरी का निर्मल सुन्दर पानी बहता है। ३६। वहाँ सीता ने एक शुभ उद्यान तैयार किया। उसमें नाना

त्यां सीताए शुभ बाग रचियो, पुष्प नाना रंग,
तुलसी तणुं वन वावियुं, केवडो, डमरो संग। ३७।
पक्षी बोले बहु भातनां, वहे शीत मंद समीर,
एवी शोभा करीने पंचवटीमां रह्या श्रीरघुवीर। ३८।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रह्या श्रीरघुवीर पोते पंचवटी मोझार रे,
सहु आव्या मळवा रामने, मुनि पाम्या हरख अपार रे। ३९।

रंगों के पुष्प (खिलते) थे। उसमें तुलसी का वन भी रोप लिया, अर्थात् पौधे लगाकर वन तैयार किया। साथ में केवड़ा और दौना (भी लगाया) था। ३७। (वहाँ) बहुत प्रकार के पक्षी बोलते थे; शीतल, मन्द पवन बहता रहता था। श्रीरघुवीर ऐसी शोभा से युक्त होकर पंचवटी में रह गये। ३८।

श्रीरघुवीर स्वयं पचवटी में रह गये, तो सब राम से मिलने आ गये। मुनि असीम हर्ष को प्राप्त हो गये। ३९।

* * *

अध्याय—८ (पंचवटी में राम-लक्ष्मण-सीता की दिनचर्या)

राग-सोरठ गरबानी देशी

पंचवटीमां श्रीरघुवीर विराजता जो,
सेवा करतां सीतालक्ष्मण संग जो,
कुळनो धर्म पोतानो सरवे पाळतां जो,
लीला करतां नित्य नित्य नौतम रंग जो। पंच०। १।
पासे वहे छे निर्मळ जळ गोदावरी जो,
ठाम ठाम मठ छाई रह्या मुनि धीर जो,

अध्याय—८ (पंचवटी राम-लक्ष्मण-सीता की दिनचर्या)

पंचवटी में श्रीरघुवीर विराजमान रहते थे। उनके साथ (रहते हुए) सीताजी और लक्ष्मण उनकी सेवा किया करते। वे सब अपने कुल-धर्म का पालन किया करते। वे नित्य नित्य नवीनतम आनन्द के साथ लीलाएँ किया करते। १। पास ही में गोदावरी का निर्मल पानी बहता है। धीर (प्रवृत्ति वाले) मुनि स्थान-स्थान पर मठ बनाकर रह गये (हैं)। गोदावरी (गंगा) के तट पर फल-युक्त वृक्षों की घनी छाया है। मन्द, सुगंधि-युक्त तथा शीतल पवन बहता है। २।

सफळ सघन तरुछाया तट गंगा तणुं जो,
चाले मंद सुगंधी शीत समीर जो। पंच०। २।

पर्णकूटी पासे सीताए वाडी करी जो,
वाव्यां छे मांहे तुलसी केरां वृंद जो,
जाई जूई मुचकंद ने मारवो मोगरो जो,
खटपट गुंजे लेता मधु मकरंद जो। पंच०। ३।

गुलाब चंपक डमरो चंबेली मालती जो,
हिंडोळा खाती करेणी, आंबा साख जो,
जामफळी दाडम नारंगी कदळी जो,
मंडप उपर लचके लूमी-द्राक्ष जो। पंच०। ४।

नाळियेर जंबवीर फणस ने फोफळी जो,
सीताफळी शतपत्रा कुंद कल्हार जो,
चोपासे मघमघतो महेके केवडो जो,
भातभातनां फूल्यां फूल अपार जो। पंच०। ५।

तरु पर पंखी शब्द करे सोहामणा जो,
बक पारावत चकवा-चकवी भृंग जो,
हंस कारंडव चकोर चातक कोकिला जो,
कपोत खंजन आदि ललित विहंग जो। पंच०। ६।

पर्णकुटी के पास सीता ने (छोटा-सा) उद्यान तैयार किया (है)। उसमें तुलसी के पौधों के समूह लगाये हैं। (वहाँ) जाही, जूही, मुचकन्द, मरुआ और मोगरा है। भौंरे गुंजन करते हुए (फूलों में से) मधुर मधु (ग्रहण कर) लेते हैं। ३। (वहाँ) गुलाब, चम्पा, दवना, चमेली और मालती (के पौधे या लताएँ) हैं। कनेर और आम्रवृक्ष की शाखाएँ झूले की तरह झूलती हैं। (वहाँ) अमरूद, अनार नारंगी, कदली है। मण्डप के ऊपर अंगूर के गुच्छे लटक रहे हैं। ४। (वहाँ) नारियल, शतपत्रा, कुन्द, श्वेत कमल हैं। केवड़ा चारों ओर बहुत महमहा रहा है। (वहाँ) भाँति-भाँति के अनगिनत फूल खिले (हुए) हैं। ५। पेड़ों पर शोभायमान दिखायी देनेवाले अर्थात् सुन्दर पक्षी बोलते (चहकते) हैं। बगुले, पारावत (कबूतर), चक्रवाक-चक्रवाकी भ्रमर, हंस, कारंडव (बत्तख), चकोर, चातक, कोयल, कपोत, खंजन आदि मनोहर पक्षी (वहाँ मधुर स्वर में बोलते रहते) हैं। ६। भूमि पर मोर पर फैलाते हुए नृत्य किया करते हैं। मैना, तोते 'जय जय

भूमि उपर मोर कळा करी नाचता जो,
मेना पोपट बोले जयजय राम जो,
सारस सुन्दर शब्द करे सोहामणा जो,
पियुने बोलावे बपैया पूरणकाम जो। पंच०। ७।

एवां खग मृगने जोई सीता मन सुख पामतां जो,
प्रभुने देखाडे लांबा करी करकंज जो,
जे जगतजननी आदिमाया भगवती जो,
ते लीला करे छे जनमन करवा रंज जो। पंच०। ८।

क्यारे प्रभु कळी कुसुमनी भरता केशमां जो,
क्यारे करता केसर-आड कपाळ जो,
एम जनकसुताने रघुपति लाड लडावता जो,
सकळ विश्वमां नहि उपमा समतोल जो। पंच०। ९।

वनवासी सहु रघुपति पासे आवता जो,
महा बडभागी कोल किरात आभीर जो,
ते पडिया भरी-भरी वनफळ मेवा लावता जो,
तुंबीफळ भरी लावे पावन खीर जो। पंच०।१०।

साधन जप तप जोग जगन दुर्लभ सदा जो,
जे पदरज इच्छे ब्रह्मा त्रिपुरार जो,

राम' बोलते हैं। सुहावने सारस सुन्दर अर्थात् मधुर शब्द बोलते हैं। पूर्णकाम हुआ पपीहा अपने प्रिय को बुलाता रहता है। ७। ऐसे पक्षियों और मृगों को देखकर सीताजी मन में सुख को प्राप्त हो जाती और करकमल को बढ़ाते हुए प्रभु राम को (यह) सब दिखा देतीं। जो (वस्तुतः स्वयं) जगज्जननी आदिमाया भगवती हैं, वे (सीताजी) जनमानस का रंजन करने के हेतु लीला किया करती हैं। ८। कभी (-कभी) प्रभु (रामचन्द्र सीताजी के) वालों में फूलों की कलियाँ सजा देते तो कभी (-कभी उसके) भाल पर केसर का तिलक लगा देते। इस प्रकार रघुपति जनक-सुता सीताजी को लाड़ लड़ाते। उसकी समतुल्य उपमा विश्व में (कहीं) नहीं है। ९। सब वनवासी, रघुपति राम के पास आया करते। कोल, किरात, आभीर (जैसे वनवासी सचमुच) महा भाग्यवान हैं। वे वन-फल तथा मेवे दोने भर-भर कर लाया करते हैं। वे तूँबे में भरकर पावन खीर लाते हैं। १०। जप, तप, योग, यज्ञ जैसी साधना से (भी) जो दुर्लभ हैं, जिनकी पद-धूलि

ते अच्युत आदर करी तेने बोलावता जो,
करता तेनी सेवा अंगीकार जो। पंच० ।११।

मोटा मुनिवर आवे दर्शन कारणे जो,
मंडळ मळी बेसे मंडप एकांत जो,
तेनी साथे करता चर्चा वारता जो,
आत्मनिरूपण भक्ति तणा सिद्धांत जो। पंच० ।१२।

ते प्रभु धर्म निगमपथ पाळक अवतर्या जो,
निज इच्छाए करवा लीला अपार जो,
मुनिमनरंजन लाड पाळवा भक्तनां जो,
वनमां वसिया दशरथ राजकुमार जो। पंच० ।१३।

ए पुरुषोत्तम पूरणानंद ज्ञानस्वरूप छे जो,
जेने शास्त्र निगम उपनिषद गाय जो,
ते प्रभु प्रकट्या भक्त तणां दुःख टाळवा जो,
जन गिरधर गुण गातां तृप्त न थाय जो। पंच० ।१४।

* * *

(पाने की) कामना ब्रह्मा और शिवजी (भी) करते हैं, वे अच्युत भगवान् राम आदर-पूर्वक उन (वनवासियों) को बुलाया करते और उनकी सेवा को स्वीकार किया करते हैं। ११। बड़े(-बड़े) मुनिवर (श्रीराम के) दर्शन के निमित्त आया करते। एकान्त मण्डप में वे मण्डल में इकट्ठा होकर बैठ जाते। श्रीराम उनके साथ आत्म-निरूपण भक्ति के सिद्धान्तों की चर्चा तथा (तत्सम्बन्धी) बातचीत किया करते। १२। वे धर्म तथा वेद-पथ के पालक प्रभु राम अवतरित हो गये (हैं)। अपनी इच्छा के अनुसार अनगिनत लीलाएँ करने के लिए, मुनियों के मन का रंजन करने और भक्तों के लाड़ पूर्ण करने के लिए दशरथ राजा के प्रभु श्रीराम वन में बस गये। १३। वे (प्रभु राम) पुरुषोत्तम, पूर्णानन्द और ज्ञानस्वरूप हैं। जिन (की महिमा) को शास्त्र वेद, उपनिषद् (भी) गाते हैं, वे प्रभु (श्रीराम) भक्तों के दुःख को दूर करने के हेतु प्रकट हो गये हैं। गिरधरदास उनके गुणों को गाते हुए तृप्त नहीं हो रहे हैं। १४।

* * *

अध्याय–९ (शम्बर की मृत्यु और शूर्पणखा का पंचवटी के निकट आगमन)

राग सारंग

पंचवटीमां राम रह्या छे, आनन्दमां दिन जाय,
सेवा करे रघुवीरनी भावे, लक्ष्मण ने सीताय। १।
भीलडीओनां जूथ मळीने, सीताने जोवा आवे,
भात-भातना वनफळ मेवा, पडिया भरी-भरी लावे। २।
मृगनां टोळां चरवा आवे, सीतानी वाडीमांहे,
ते जनकसुतानुं रूप जोई, सहु चकित थई रहे त्यांहे। ३।
निज कुळ केरो धर्म पाळता, धर्मधोरिंधर धीर,
परिचर्या सहु सीता करे, फळ लावे लक्ष्मण वीर। ४।
नित्ये सौमित्री फळ लावीने, मूके सीता पास,
श्रीरामने आरोगावीने वळतां, पोते करे फळ ग्रास। ५।
सीता जाणे जे लक्ष्मण वनमां, करता हशे फळ आहार,
एवुं जाणी फळ नथी आपतां, कहेतां नथी निरधार। ६।
राम आज्ञा विना फळ नथी खाता, पोते लक्ष्मण वीर,
आगल्युं भविष्य विचारीने, नथी कहेता श्रीरघुवीर। ७।

अध्याय–९ (शम्बर की मृत्यु और शूर्पणखा का पंचवटी के निकट आगमन)

पंचवटी में श्रीराम रहे हैं। दिन आनन्द में बीत रहे हैं! लक्ष्मण और सीता प्रेम-पूर्वक रघुवीर राम की सेवा करते हैं। १। भीलनियों की टोलियाँ (साथ में) मिलकर सीता को देखने के लिए आया करती हैं और दोने भर-भर कर भाँति-भाँति के वन्य फल और मेवे लाया करती हैं। २। सीता के उद्यान में हिरनों के झुंड चरने के लिए आया करते। वे सब जनक-सुता सीता का (सुन्दर) रूप देखकर, चकित हो वहाँ रहते। ३। धर्मशील श्रीराम अपने कुल के (आचार सम्बन्धी) धर्म का पालन करते। सीता उनकी सेवा करती, तो बन्धु लक्ष्मण फल लाया करते। ४। लक्ष्मण नित्य फल लाकर सीता के पास रख देते। (इधर) सीता श्रीराम को भोजन कराकर, तत्पश्चात् स्वयं फल भक्षण कर लेती। ५। सीता समझती कि लक्ष्मण वन में फलाहार जो करते है। ऐसा समझकर वे न उन्हें फल देतीं, न निश्चय ही (कुछ) कह देतीं। ६। भाई लक्ष्मण स्वयं बिना श्रीराम की आज्ञा के फल नहीं खाते। अगले भविष्य का विचार करके श्रीरघुवीर भी कुछ न कहते। ७। (इस प्रकार) लक्ष्मण सदा निराहार रह जाते, परन्तु भूख उनके शरीर को पीड़ा नहीं पहुँचाती। इस रीति से नित्य

सौमित्री सदा उपवासी रहे, पण क्षुधा न पीडे तन,
ए रीते नित्यमेव आचरे, हरख शोक नहि मन। ८।
श्रीराम जानकी पर्णकूटीमां, पोढे निशाए ज्यारे,
लक्ष्मण बारणे चोकी करता, निद्रा करे नहि त्यारे। ९।
एम क्षुधा निद्रा बे जीती लक्ष्मणे, सेवतां श्रीरघुवीर,
ब्रह्मचर्यव्रत पाळे सदा, एवा जतिशिरोमणि धीर। १०।
हावे एक दिवस लक्ष्मणजी पोते, फळ लेवा गया वन,
ते महावनमां एक वांसनुं जाळुं, दीठुं गंभीर सघन। ११।
ते जाळामां एक असुर बेठो छे, तप करवा धरी हेज,
संबर नामे शूर्पणखानो सुत, रावणनो भाणेज। १२।
साठ सहस्र संवत्सर केरुं, बेठो लईने नीम,
आराधन शंकरनुं करतो, थई छे तपनी सीम। १३।
तेने नथी देखतुं बारणेथी कोई, बेठो वांसना भोथा मांहे,
काळशस्त्रनी करी कामना, तप आचरतो त्यांहे। १४।
जो काळशास्त्र शिव आपे तो करुं, सकळ देवनो नाश,
एवुं आदरी गुप्त बेठो छे, तप करवाने तास। १५।

ही वे आचरण किया करते। इस सम्बन्ध में न उनके मन में हर्ष था, न शोक। ८। जब रात में श्रीराम और जानकी पर्णकुटी में लेट जाते, तो लक्ष्मण द्वार पर पहरा देते; तब वे नहीं सोते। ९। इस प्रकार श्रीरघुवीर की सेवा करते हुए लक्ष्मण ने भूख और निद्रा दोनों को जीत लिया। वे सदा ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते। ऐसे वे धीर पुरुष यति- (सन्यासी) शिरोमणि थे। १०। अब एक दिन लक्ष्मण फल लेने के लिए स्वयं वन में गये, तो उन्होंने उस महावन में एक गम्भीर घनी बाँस की कोठी देखी। ११। उस कोठी में एक असुर धैर्य धारण करके (-धैर्य पूर्वक) तप करने बैठा है (था)। वह शम्बर नामक (असुर) शूर्पणखा का पुत्र और रावण का भांजा था। १२। वह साठ सहस्र वर्ष का (व्रत-तप सम्बन्धी) नेम स्वीकार करके बैठा था। वह शिवजी की आराधना किया करता। उसके तप की (अवधि सम्बन्धी) सीमा हो गयी है (थी)। १३। वह बाँस की कोठी के अन्दर ऐसा बैठा था कि उसे कोई भी द्वार में से नहीं देख पाता। वह काल खड्ग की कामना से वहाँ तपस्या करता रहा। १४। यदि शिवजी काल शस्त्र प्रदान करें, तो मैं समस्त देवों का नाश कर डालूँगा—ऐसा प्रारम्भ (में विचार) करके वह तप करने के लिए गुप्त (रूप से)

त्यारे लक्ष्मण मन विचार करे छे, आ वांस करुं छेदन,
तो वाघवरु संताई रहे नहि, निष्कंटक थाय वन। १६।
एटले काळशस्त्र पडयुं शिवनुं, विद्युतवत् चळकार,
त्यारे लक्ष्मणे करमां लेईने जोयुं, दीठी तीक्ष्ण धार। १७।
लक्ष्मण कहे तुं कोनुं शस्त्र? त्यारे वाचा थई तेणी वार,
हुं शिवनुं शस्त्र ते आप्युं असुरने, तपनुं फळ निरधार। १८।
पछे लक्ष्मणे शिवनो मंत्र भणीने, मूक्युं तत्क्षण त्यांहे,
ते जाळुं कपाईने पडयुं वेगळुं, छेदायो असुर ते मांहे। १९।
असुर पडयो बे भाग थई, गयुं शस्त्र पाछुं शिवलोक,
सौमित्रीए जाण्युं को मुनि छेदाया, पाम्या घणुं मनशोक। २०।
पछी फळ लेई आव्या पंचवटीमां, पस्ताया मनमांह्य,
वनमां जे कांई वात नीपनी, ते कही रघुवरने त्यांय। २१।
त्यारे श्रीरघुवर हसीने बोल्या, सांभळ मारा वीर,
ए मुनि नहि रावणनो भाणेज, शूर्पणखा-सुत रणधीर। २२।

बैठा है (था)। १५। तब (उस कोठी को देखते हुए) लक्ष्मण ने मन में विचार किया—इस बाँस (की कोठी) को छेद डालूँ, तो वाघ छिपकर न रह सकेंगे और यह वन निष्कण्टक हो जाएगा। १६। इतने में शिवजी का वह काल शस्त्र गिर पड़ा। उसका चमकार विजली का(-सा) था। तब लक्ष्मण ने उसे हाथ में लेकर देखा, उसकी तीक्ष्ण धार देखी। १७। लक्ष्मण ने कहा (पूछा)— 'तू किसका शस्त्र है?' तब उस समय वाणी (ध्वनि उत्पन्न) हुई— 'मैं शिवजी का शस्त्र हूँ (जो) उन्होंने असुर को दिया है। यह निश्चय ही (उसकी) तपस्या का फल है'। १८। तदनन्तर लक्ष्मण ने शिवजी का मंत्र पढ़कर उसे तत्क्षण वहाँ छोड़ दिया, तो वह कोठी कटकर दूर अलग पड़ गयी और अन्दर (बैठे हुए) असुर को (भी) छेद डाला। १९। वह असुर दो खण्ड होकर गिर पड़ा, (और इधर) वह शस्त्र शिवलोक लौट गया। (इसे देखकर) लक्ष्मण ने समझा कि कोई मुनि काटा गया (है)। (इसलिए) वे मन में बहुत शोक को प्राप्त हो गये। २०। तदनन्तर वे फल लेकर पंचवटी में आ गये। (तब) वे मन में पछता रहे थे। वन में जो कोई बात घट गयी थी, उन्होंने वह श्रीराम से वहाँ कह दी। २१। तब श्रीरघुवीर हँसकर बोले— 'मेरे भाई, सुनो। वह मुनि नहीं, रावण का भांजा और सूर्पणखा का रणधीर पुत्र है। २२। वह असुर मारा गया, अतः (अब) बहुत राक्षस यहाँ आएँगे। इसलिए,

ए असुर मरायो माटे आवशे, घणां निशाचर आंहे,
माटे सावधान थई रहेजो वीरा, हावे आ वनमांहे । २३ ।
एवां वचन सुणीने लक्ष्मण केरो, शोक शम्यो निर्वाण,
पछी भाथा धनुष कवच धरी रहेता, सज्ज थई फरता जाण । २४ ।
हावे लंकामां शूर्पणखा रहे, तेने आव्युं घोर स्वप्न,
ते निशा विषे झबकीने जागी, जाण्युं पुत्र पतन । २५ ।
पछी चार निशाचरी साथे लेईने, चाली प्रातःकाळ,
ज्यां सुत बेठो तप करवाने, त्यां आवी तत्काळ । २६ ।
जुए तो जाळुं कपायुं, दीठुं पुत्र तणा बे भाग,
पछी विलाप करवा लागी वनिता, आणी सुत अनुराग । २७ ।
कल्पांत करती कहे कामनी, सखीओशुं तेणी वार,
हवे खेप करीने खोळी काढुं, एनो मारणहार । २८ ।
आ वनमांहे हशे ए वेरी, झालुं जईने आज,
भक्षण करुं ते दुष्ट तणुं, तो होलाय मारी दाझ । २९ ।
एवे मनुष्य तणां पगलां दीठां, पडियां पृथ्वी मांहे,
शूर्पणखा कहे सुतनो वैरी, दीसे छे को आंहे । ३० ।

हे भाई, अब इस वन में सावधान होकर रहना । २३ । ऐसे वचन सुनने पर लक्ष्मण का शोक निश्चय ही मिट गया । तत्पश्चात्, इसलिए कि वे भाथा, धनुष और कवच धारण करके रहते और (शस्त्रों से) सजकर घूमते । २४ । अब (इधर) लंका में शूर्पणखा रहती थी । उसे भयावह स्वप्न (देखने में) आया । तो वह रात में चौंककर जाग उठी । उसने (अपने) पुत्र का नाश हुआ समझा । २५ । तदनन्तर सवेरे चार राक्षसियों को साथ में लेकर वह चल दी और वहाँ तत्काल आ गयी, जहाँ उसका पुत्र तपस्या करने बैठा था । २६ । उसने देखा, वह कोठी कटी हुई थी और पुत्र दो टुकड़ों में कट गया था । तदनन्तर वह स्त्री पुत्र के प्रति प्रेम पाले हुए (अनुभव करते हुए) विलाप करने लगी । २७ । कल्पान्त करती हुई वह स्त्री उस समय सखियों से बोली— ' अब इसके हत्यारे को मैं (इधर-उधर) घूमकर खोज निकालूँगी । २८ । वह वैरी इस वन में (ही) होगा; आज मैं जाकर (उसे) पकड़ लूँगी । उस दुष्ट को खा डालूँ, तो (ही) मेरा वैर शान्त हो जाएगा ' । २९ । इतने में उसने भूमि में मनुष्य के पड़े अर्थात् अंकित हुए पदों (के चिह्नों) को देखा, तो शूर्पणखा ने कहा— ' मेरे पुत्र का कोई वैरी यहाँ दिखायी दे रहा है । ३० । हे सखियो,

सुणो सखी को योद्धो मोटो, मनुष्य मध्ये महावीर,
माटे साम दाम छळ बळ करी झालुं, मारुं थईने धीर । ३१ ।
पछे सोळ वरसनी थई सुन्दरी, मुग्धा गोरे गात्र,
जेना रूप थकी ब्रह्मादिक, मोह पामे नरमात्र । ३२ ।
पीन पयोधर कटी केसरी, तन सूक्ष्म कोमळ चर्ण,
जघनस्थळ रंभा भुज करी कर, चतुरा चंपक वर्ण । ३३ ।
विधुमुखी मृगनयनी चपळा, पहेर्यां चोळी चीर,
अलंकार तनमंडित जोईने मुनिवर मूके धीर । ३४ ।
एम बनी-ठनीने चाली बाळा, फरती वनमोझार,
साथे सुन्दर सखीओ बब्बे, बे पासे निरधार । ३५ ।
तेवतेवडी सखीओ साथे, चाले लटकती चाल,
उरमंडळने कटी कंपावे, उघाडे उदर विशाळ । ३६ ।
एवी थई शूर्पणखा चालती, जती दृष्टे त्यांहे,
त्यारे दूर थकी लक्ष्मणने दीठा, वीणता फळ वनमांहे । ३७ ।

सुनो ! वह योद्धा तथा मनुष्यों में महावीर होगा । अतः मैं उसे साम, दाम, छल और बल से पकड़ूँगी और धैर्य से युक्त होकर उसे मार डालूँगी । ३१ । तदनन्तर वह सोलह वर्ष की मुग्धा तथा गौर शरीर-वाली ऐसी सुन्दरी हो गयी, जिसके रूप से नर मात्र (ही नहीं) ब्रह्मा आदि (तक) मोह को प्राप्त हो जाते । ३२ । उसके स्तन पीन (बड़े पुष्ट) थे, कटि सिंह की-सी थी, शरीर सूक्ष्म अर्थात् इकहरा था, पाँव कोमल थे । उसके जघन-स्थल (जाँघें) रम्भा अर्थात् केले के तने-से थे, भुज हाथी की सूँड-से थे । वह चतुर स्त्री चम्पक वर्ण की थी । वह चन्द्र-मुखी, मृगनयनी तथा चपल (-गति) थी । उसने चोली और वस्त्र पहना था । उसके अलंकारों से सुशोभित शरीर को देखकर मुनिवर (तक) धीरज खो बैठते । ३३-३४ इस प्रकार बन-ठनकर वह बाला चल दी । वह वन में घूमती-फिरती रही । साथ में दो-दो सखियाँ निश्चय पूर्वक दोनों ओर (चल रही) थीं । ३५ । उतनी ही सखियों के साथ वह लचकती चाल से चल रही थी । वह उदर-मण्डल (पेट) और कटि को कँपा रही थी और अपने विशाल उदर को उघाड़, अर्थात् अनावृत कर रही थी (किये हुए थी) । ३६ । ऐसी (सज्ज) होकर शूर्पणखा चल रही थी और वहाँ देखती जा रही थी । तब उसने दूर से वन में फल बीनते हुए लक्ष्मण को देखा । ३७ । उन्होंने कंधे पर धनुष रखा था और कटि में सुन्दर तुणीर बाँधा था । तब उस

स्कंधे भराव्युं कोदंड बांध्या, कटीए भाथा सार,
त्यारे शूर्पणखाए ते सखीओने, देखाड्या तेणी वार । ३८ ।
पेलो वीर फरे छे एणे, मार्यो मारो तन,
माटे छळबळ करी पमाडुं एने, निश्चे आज पतन । ३९ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

पमाडुं आज पतन एने, एम कहे भगिनी रावण तणी,
एवे लक्ष्मण पासे आवी ऊभी, तेना रूपनी शोभा अति घणी । ४० ।

* * *

समय शूर्पणखा ने सखियों को वे (लक्ष्मण) दिखा दिये । ३८ । (उसने कहा–)' वह वीर घूम रहा है, उसने मेरे पुत्र को मार डाला । अतःछल-बल से उसे आज निश्चय ही पतन (नाश, मृत्यु) को प्राप्त कर देतीं हूँ । ३९ ।

उसे आज पतन को प्राप्त कर देती हूँ ' । रावण की भगिनी ने ऐसा कहा । इतने में वह लक्ष्मण के पास आकर खड़ी रही । उसके रूप की शोभा बहुत अधिक थी । ४० ।

* * *

अध्याय—१० (शूर्पनखा का विरूपीकरण)

राग बिहागडो

आवी आसुरी लक्ष्मण पासे, ऊभी सन्मुख करती हास,
हावभाव कटाक्ष करंती, नेत्रे उत्तम नेह धरंती । १ ।
मोह पमाडे रतिरस तंत्र, प्रयोजे मन्मथना मंत्र,
चंचळ करती चीर नवरंग, देखाडे छे पोतानुं अंग । २ ।
मंद हास्य करी मृगनेण, बोली लक्ष्मण प्रत्ये वेण,
हे समरथ राजकुमार, हुं करवा इच्छुं भरथार । ३ ।

अध्याय—१० (शूर्पनखा का विरूपीकरण)

वह आसुरी (राक्षसी) लक्ष्मण के पास आ गयी और सामने खड़ी मुस्कराती रही । वह हाव-भाव तथा (आँखों से) कटाक्ष करती और आँखों में उत्कट स्नेह धरती रही, अर्थात् प्रकट करती रही । १ । रति-रस तंत्र द्वारा वह (देखनेवालों को) मोह को प्राप्त करा देती थी । वह कामदेव के मंत्र का प्रयोग कर रही थी । वह अपने रंगीन वस्त्र को चंचल करती थी (हिला देती थी) और अपने स्वयं के अंग को दिखा रही थी । २ । वह मृगनयना मन्द हास्य करते हुए लक्ष्मण से यह बात बोली-

हजु हुं छुं कुंवारी जात खोळुं छुं वरने दिनरात,
फरुं जोती स्वामीनो पंथ, मारा जेव्यो मळ्यो नहि कंथ। ४ ।
आज ईश्वर मेळव्या तमने, पामी हरख वरो हवे अमने,
तम योग्य ज हुं छुं नारी, माटे परणो मने सुखकारी। ५ ।
विधिए मेळव्यो संयोग, भोगवो मन-गमता भोग,
एवां सांभळी मधुर वचन, मोह पाम्या नहि लक्ष्मण मन। ६ ।
छे रामकृपाना पात्र, विषय स्वप्ने नथी तलमात्र,
एनो जोई सुन्दरतानो वेश, नव मोह्या जे साक्षात् शेप। ७ ।
इंद्रिजित जति छे विरक्त, रघुवीर चरणे आसक्त,
करी वासना मूळ छेदन, तेनुं चंचळ नव थाय मन। ८ ।
जेणे कर्युं अमृतनुं पान, ते पीए न हळाहळ आन,
रविने तन न करे बाधा, पूजे नहि प्रेत विष्णु आराध्या। ९ ।
जेने घेर काम गोधन, ते न होय दरिद्री जन,
जेने आंगणे सुरतरु लीख, ते शुं करवाने मागे भीख ? १० ।

'हे समर्थ राजकुमार, मैं (किसी को) पति (रूप में वरण) करना चाहती हूँ। ३। अब (तक) मैं कुमारी (श्रेणी की) हूँ और दिन-रात वर को खोज रही हूँ। पति का मार्ग देखती हुई—अर्थात् पति की खोज करती हुई मैं घूम रही हूँ, परन्तु मुझे मेरे योग्य पति नहीं मिला। ४। आज भगवान् ने आपसे मिला दिया, (अतः) मैं हर्ष को प्राप्त हो गयी। आप अब मेरा वरण कीजिए। मैं आपके योग्य ही नारी हूँ; अतः मुझ सुखकारिणी से परिणय कीजिए। ५। विधाता ने संयोग (अवसर) प्राप्त करा दिया है, तो (मेरे साथ) मनचाहे भोगों का उपभोग कीजिए।' ऐसे मधुर वचन सुनने पर (भी) लक्ष्मण का मन मोह को प्राप्त नहीं हुआ। ६। वे तो राम-कृपा के पात्र हैं (थे)। (उनके) स्वप्न तक में तिल-भर भी विषय (-सुख का विचार) नहीं था। (अतः) उसके सौन्दर्य-युक्त वेश को देखकर वे लक्ष्मण, जो साक्षात् शेप भगवान् (के अवतार) थे, मोहित नहीं हो गये। ७। वे इंद्रियों को जीतनेवाले (मानो) कोई विरागी यति ही हैं, जो श्रीरघुवीर के चरणों में आसक्त हैं। उन्होंने वासना को मूल में (ही) काट डाला (है), अतः उनका मन चंचल नहीं होता। ८। जिसने अमृत का पान किया हो, वह अन्य (पेय के रूप में) हलाहल नहीं पीता। सूर्य के शरीर में कोई बाधा नहीं हो जाती। जिसने विष्णु की आराधना की हो, वह (फिर कभी) प्रेत का पूजन नहीं करता। ९। जिसके घर कामधेनु रूपी धन हो, वह मनुष्य

नंदनवननो भ्रमर निवास, न ले अर्कपुष्पनी वास,
आम आत्मलाभे जे संतुष्ट, ते न थाय विषयथी पुष्ट । ११ ।
एवा लक्ष्मण साहस धीर, बोल्या वचन मृदु गंभीर,
सुण सुंदरी साची वात, तुं वरवा ईच्छे साक्षात । १२ ।
मारे माथे वडील छे अत्न, रघुवीर सीता शिरछत्र,
ते छे शिवपारवती जेवां, मुज मातपिता गुरु तेवां । १३ ।
पेली पंचवटीमां रहे छे, निजधर्म सदा शिव वहे छे,
तेनी आज्ञा विना न परणाय, जो आ पृथ्वी रसाताळ जाय । १४ ।
ऊगे पश्चिम दिनमणि आज, न करुं ए सहसा काज,
रामआज्ञा विना सतबंध, तुज साथे न थाय संबंध । १५ ।
एवां वचन सुणीने नार, आवी पंचवटी मोझार,
रह्या वनमां लक्ष्मणवीर जतिधर्म धोरिंधर धीर । १६ ।
शूर्पणखा सखीने कहे छे, ए त्रणे जण तो अहीं रहे छे,
हमणां प्रपंच करीने मळीशुं, त्रणे जणने निशाए गळीशुं । १७ ।

(कभी भी) दरिद्र नहीं हो सकता। जिसके आँगन में सुरतरु (कल्प-वृक्ष) हो, वह भीख क्यों माँगेगा ? १० । नन्दनवन का निवासी भ्रमर (कभी भी) आक के फूल की गन्ध नहीं (सूँघ) लेता। इस प्रकार आत्म (-सुख के) लाभ से जो संतुष्ट हो, वह (कभी भी) विषय (-सुख) से पुष्ट नहीं होता । ११ । ऐसे वे साहसी और धीर पुरुष लक्ष्मण मृदु (परन्तु) गम्भीर वचन वोले—' हे सुन्दरी, सच्ची बात सुनो। तुम प्रत्यक्ष (मेरा) वरण करना चाहती हो । १२ । (परन्तु) यहाँ मेरे गुरुजन, रघुवीर और सीता, मेरे मस्तक पर (शिरस्-) छत्र (के समान ही) हैं। जैसे (मेरे लिए) शिवजी और पार्वती हैं, वैसे ही वे (रघुवीर और सीता मेरे लिए) पिता-माता तथा गुरु हैं । १३ । उस पंचवटी में वे रहते हैं और अपने कल्याणकारी धर्म का सदा पालन करते हैं। यद्यपि यह पृथ्वी रसातल में जाए, तो भी विना उनकी आज्ञा के मैं (किसी के साथ) विवाह नहीं करूँगा । १४ । सूर्य आज पश्चिम में भी उदित हो जाए, तो भी मैं यह काम सहसा नहीं करूँगा। बिना राम की आज्ञा के तुम्हारे साथ भाँवर विधि द्वारा स्थापित होनेवाला ऐसा सम्बन्ध नहीं होगा।' १५ । ऐसे वचन सुनकर वह नारी पंचवटी में आ गयी। (उधर) वे यति धर्म-धुरंधर, धीर पुरुष लक्ष्मण वन में रह गये । १६ । (उधर) शूर्पणखा ने सखियों से कहा—ये तीनों जने तो यहाँ वन में रहते हैं। हम अब छल-कपट करके (उनसे) मिलेंगी और तीनों जनों को रात में निगल जाएँगी । १७ । ऐसे कपट (-पूर्ण)

एवुं कपट विचारी करण, आवी लागी सीताने चरण,
भाभीजी तमे करुणा लावो, मुंने लक्ष्मणने परणावो । १८ ।
आज लगी हुं तरुण कुमारी, छुं कामातुर व्रेहे दुःख भरी,
माटे शरण तमारे आवी, लख्यो छे मुज ए वर भावी । १९ ।
हुं करीश तमारी सेवाय, छुं कुळवंत प्रतिव्रताय,
तमो स्त्रीनी गति सहु जाणो, ते माटे दया मुजपर आणो । २० ।
में मन साथे वर्या एह, छे एना मनमां संदेह,
एने आज्ञा आपो निरधार, करो आ रतिनो उपकार । २१ ।
माटे परणावो एवुं जाणी, हुं देराणी तमो जेठाणी,
सीताए सुण्यां एवां वचन, घणुं मनमां थयां ते प्रसन्न । २२ ।
भले विधिए मेळवी जोड, एना रूप विषे नथी खोड,
जानकीए वीनविया राम, सुणो विनति पूरणकाम । २३ ।
आ कन्या आवी वरवा काज, आपो आज्ञा लक्ष्मणने आज,
मळी जोड ए लक्ष्मण सरखी, एने जोईने हुं घणुं मन हरखी । २४ ।

साधन का विचार करके वह (पंचवटी में) आकर सीता के पाँव लग गयी (और बोली—) 'हे भाभीजी, आप (मुझपर) दया कीजिए और मेरा लक्ष्मण से विवाह करा दीजिए । १८ । आज तक तरुण कुमारी अर्थात् कन्या मैं कामातुर तथा विरह के दुःख से भरी-पूरी (रहा गयी)हूँ । अतः आपकी शरण में आ गयी । (मेरे भाग्य में) वह भावी वर (के रूप में) लिखा है । १९ । मैं आपकी सेवा करूँगी । मैं कुलवती और पतिव्रता हूँ । आप स्त्री की सब गति (स्थिति) को जानती तो हैं । इसलिए मुझपर दया कीजिए । २० । मैंने उनका मन से वरण किया, (परन्तु) उनके मन में सन्देह है । उन्हें अवश्य आज्ञा दीजिए । इस रीति से (प्रकार) मेरा उपकार कीजिए । २१ । अतः ऐसा जानकर कि मैं देवरानी हूँ और आप जिठानी हैं, (मेरा उनसे) परिणय कराइए । सीता ने ऐसी बातें सुनीं, तो वह मन में बहुत प्रसन्न हो गयी । २२ । अच्छा ही हुआ कि विधाता ने इनकी जोड़ी मिला दी (क्यों कि) इसके रूप में तो कोई दोष नहीं है । तव जानकी ने राम से विनती की— 'हे पूर्णकाम, (मेरी) विनती सुनिए (मान लीजिए) । २३ । यह कन्या विवाह करने के लिए आ गयी है । लक्ष्मण को आज आज्ञा दीजिए । उन लक्ष्मण के समान यह योग्य जोड़ मिल गयी । उसे देखकर मैं मन में बहुत आनंदित हो गयी हूँ । २४ । हे महाराज, मुझे आनन्द होगा । वह सेवा-कार्य करेगी ।' जो श्याम शरीरधारी सर्वात्मा भगवान् (ही) हैं, वे रघुवीर यह बात सुनकर हँस

मारे गंमत थशे महाराज, करशे परिचर्या काज,
सुणी वचन हस्या रघुवीर, जे सर्वात्मा श्याम शरीर । २५ ।
चर अचर परीक्षक चित्त, जे मायाचक्र चालक नित्य,
करता हरता पाळक पोते, ते निशाचरी ओळखी जोते । २६ ।
ज्यम रुदे परीक्षा वचने, वरणाश्रम ते क्रियारचने,
ज्यम भूतदयाए ज्ञान, शब्द उत्तरे पंडित मान । २७ ।
प्रेमे करी जणाये भक्ति, साचो स्नेह होय आसक्ति,
दाने करी उदार कहेवाय, शूरपणुं रणमां जणाय । २८ ।
नीति लक्षणे करी राजन, एम आसुरी ओळखी मन,
त्यारे राम कहे जा नारी, वरशे लक्ष्मण तुजने विचारी । २९ ।
राम सन्मुख घूँघट ताणी, हती बोली ते विनता वाणी,
लखो अंक मारा करमांहे, वांची परणशे मुजने त्यांहे । ३० ।
रघुवीर कहे सुण नारी, मारे एक पत्नीव्रत भारी,
तुज करनो करुं हुं स्पर्श, तो जाये मुज व्रत उत्कर्ष । ३१ ।

पड़े । २५ । जो चर और अचर के मन के पारखी हैं, जो नित्य ही माया-चक्र के चालक हैं, जो स्वयं (विश्व के) कर्ता (निर्माता), हरण-कर्ता एवं पालन-कर्ता हैं, उन्होंने देखते ही निशाचरी को पहचान लिया । २६ । जैसे (व्यक्ति के) वचन (बोलने आदि) से उसके हृदय की परख हो जाती है, जैसे क्रिया (-कर्म) सम्बन्ध व्यवस्था से (व्यक्ति के) वर्ण और आश्रम की पहचान हो जाती है, जैसे (किसी द्वारा प्रदर्शित) भूत-दया से (उसके) ज्ञान का परिचय हो जाता है, जैसे (प्रश्न के) उत्तर में प्रस्तुत शब्दों से पंडित की प्रतिष्ठा या स्तर को जाना जा सकता है, जैसे प्रेम द्वारा भक्ति विदित हो जाती है, सच्चे स्नेह से आसक्ति हो जाती है, जैसे दान से (व्यक्ति) उदार कहाता है और शूरता युद्ध में जानी जाती है, नीति-लक्षण से राजा की परख हो जाती है, वैसे ही श्रीराम ने (उसकी बातों से) मन में उसे राक्षसी जान लिया । तब राम ने कहा, 'हे नारी, जाओ । लक्ष्मण विचार करके तुम्हारा वरण करेंगे । ' २७-२९ । राम के सामने वह घूँघट ताने (ओढ़े) हुए थी । वह विनीत वाणी में बोली— 'मेरे हाथ पर चिह्न लिखिए (अंकित कीजिए) । उसे पढ़कर वे वहाँ मेरे साथ परिणय करेंगे । ' ३० । (यह सुनकर) रघुवीर ने कहा— 'हे नारी, सुनो । मेरा दृढ़ एक-पत्नी-व्रत है । तुम्हारे हाथ को स्पर्श करूँ, तो मेरे व्रत का उत्कर्ष नष्ट हो जाएगा । ३१ । इसलिए तुम्हारी पीठ पर मैं आज्ञा लिख देता हूँ । तब वह अबला उलटी हो गयी—अर्थात्

तुज पृष्ठे लखुं आज्ञाय, त्यारे अवळी थई अवळाय,
लीधी दर्भसळी निरधार, रामे लखियुं पृष्ठ मोझार । ३२ ।
ए रावणनी भगिनी प्रमाण, शूर्पणखा निशाचरी जाण,
एनां करण नासिका जेह, निश्चये छेदन करशो तेह । ३३ ।
पछी जीवती मूकजो धीर, स्त्रीहत्या न करशो वीर,
एवुं लखी मोकली राम, चाली अवळा जाण्युं थयुं काम । ३४ ।
सौमित्री शुं हसी बोली धीरे, जुओ वांचो लख्युं तम वीरे,
वांच्या लक्ष्मणे अक्षर तेह, त्यारे निवर्त्यो संदेह । ३५ ।
आव्य अवळा तुं एकांत, परणुं तुजने तजी भ्रांत,
पेली सखीओने करी दूर, लेई चाल्या एकांते सुर । ३६ ।
चोटलो ग्रही पृथ्वी पाडी, चांपी चरण थकी घणुं ताडी,
काढ्युं खड्ग विद्युत समान, तेनां छेद्यां नासिका ने कान । ३७ ।

वलण (तर्ज़ वदलकर)

नासिका छेदी नारनी, वळी काप्या वंने कान रे,
चीस पाडीने नाठी त्यांथी, तन थयुं गेरु समान रे । ३८ ।

राम की ओर पीठ करके खड़ी हो गयी। तो राम ने निश्चय-पूर्वक दर्भ की सलाई (तिनका) ली और उसकी पीठ पर (यह) लिख दिया । ३२ । 'इसे निश्चय ही रावण की शूर्पणखा नामक भगिनी राक्षसी समझो। उसके जो कान और नाक है, उन्हें निश्चय ही काट डालो । ३३ । हे धैर्यशील, फिर उसे जीवित छोड़ देना। हे भाई, तुम स्त्री-हत्या न करना।' ऐसा लिखकर राम ने उसे भेज दिया, तो वह स्त्री 'काम (सफल) हुआ' जानकर (वहाँ से) चल दी । ३४ । (लक्ष्मण जहाँ थे, वहाँ आकर) वह हँसकर लक्ष्मण से धीरे से वोली— 'देखिए, पढ़िए आपके भाई ने (जो) लिखा है।' जव लक्ष्मण ने उन अक्षरों को पढ़ा, तव उनके सन्देह का निराकरण हो गया । ३५ । (तदनन्तर) उन्होंने कहा— 'हे नारी, तुम एकान्त में आओ। सन्देह को त्याग कर मैं तुमसे परिणय करूँगा।' (फिर इस प्रकार) उन सखियों को दूर करके, वह उत्साह से उसे लेकर एकान्त में चले गये । ३६ । उसकी वेनी को पकड़कर उन्होंने उसे भूमि पर गिरा दिया और पाँवों से दबाकर उसे खूब पीट लिया। (तदनन्तर) उन्होंने विद्युत-सा (चमकता हुआ) खड्ग निकाल लिया और उसकी नाक और कानों को काट डाला । ३७ ।

(लक्ष्मण ने) उस नारी की नाक छेद दी, इसके अतिरिक्त उसके दोनों कान (भी) काट डाले, तो वह चीखकर वहाँ से भाग गयी। उसका शरीर (बहते रक्त से) गेरू के समान हो गया । ३८ ।

अध्याय–११ (खर-दूषण-वध)

राग मेवाडो

शूर्पणखा केरां करण नासिका, लक्ष्मणे छेद्यां ज्यारे जी,
प्रचंड रूप थई रुधिरे गळती, नाठी निशाचरी त्यारे जी। १।
मनमां भय जाणे मारशे मुजने, ऐवो पामी त्रास जी,
उतावळी ते आवी अभागणी, खरदूषणनी पास जी। २।
वृत्तांत सर्वे कह्युं पोतानुं, करवा लागी रुदन जी,
तमारे काजे गई'ती लेवा, एक नारीरूप रतन जी। ३।
मनुष्य मध्ये बे वीर छे बळिया, पंचवटी मोझार जी,
तेणे आवी गति मुज कीधी, तमने छे धिक्कार जी। ४।
खरदूषण एवुं समजीने बोल्या, ते मनुष्य आपणो आहार जी,
असुर चतुर्दश मोकलिया, जाओ करी आवो संहार जी। ५।
असुर चतुर्दश साथे तेडी, शूर्पणखा आवी त्यांहे जी,
तेवे समे लक्ष्मणजी आव्या पंचवटीनी मांहे जी। ६।
त्यारे जनकसुता जोई हसवा लाग्यां, क्यां छे देराणी मारी जी?
परणीने शुं गुप्त ज राखी, दियरजी तमारी नारी जी। ७।

अध्याय–११ (खर-दूषण-वध)

जब लक्ष्मण ने शूर्पणखा के कान और नाक काट डाले, तब वह निशाचरी प्रचण्ड रूप-धारी हो गयी और रक्त के झरते हुए भाग गयी। १। वह मन में यह भय मानती थी कि यह मुझे मार डालेगा। ऐसे भय को वह प्राप्त हो गयी। (तदनन्तर) वह अभागिनी अधीरता-पूर्वक खर-दूषण के पास आ गयी। २। उसने उनसे अपना सब वृत्तान्त कह दिया और वह रुदन करने लगी। (वह बोली—) 'तुम्हारे लिए एक नारी रूपी रत्न लेने के लिए मैं गयी थी। ३। (परन्तु) पंचवटी में, मनुष्यों में दो बलवान वीर हैं। उन्होंने मेरी ऐसी गति कर डाली। तुम्हें धिक्कार है।' ४। खर-दूषण ऐसा समझकर बोले— 'वे मनुष्य तो हमारे अपने आहार (की वस्तु) हैं। उन्होंने चौदह असुरों को (यह आदेश देते हुए) भेज दिया— 'जाओ, (उनका) संहार करके आओ।' ५। (उधर) उस समय, लक्ष्मण पंचवटी में (लौट) आ गये। तब सीता (उन्हें) देखकर हँसने लगी (और बोली)— 'मेरी देवरानी कहाँ है? हे देवरजी, विवाह करके अपनी स्त्री को क्या गुप्त रखा है? । ७। लक्ष्मण ने जो काम किया था, वह कह दिया, तब श्रीराम बोले— 'अब

जे कृत्य कीधुं ते कह्युं लक्ष्मणे, त्यारे बोल्या श्रीरघुवीरजी,
हवे असुर आवशे युद्ध करवा, माटे तत्पर रहेजो धीर जी । ८ ।
एटले असुर चतुर्दश आव्या, शूर्पणखा केरी साथ जी,
चौद बाण मूकीने तत्क्षण, मार्या तेने रघुनाथ जी । ९ ।
शूर्पणखाने हणवा शर काढयुं, लक्ष्मणे जेणी वार जी,
त्यारे राम कहे हो वीरा एनो, नव करशो संहार जी । १० ।
जो हशे जीवती निशाचरी ए तो, लावशे वळी असुर जी,
आपणे पण ए कृत्य करवुं छे, हणवा निशिचर भूर जी । ११ ।
पछे शूर्पणखा नाठी रोती आवी, खरदूषणनी पास जी,
अरे भाई हवे नव करशो, जीव्या केरी आश जी । १२ ।
ए तो नीम लईने नीकळ्या छे वन, करवा असुर संहार जी,
एवुं सुणीने ऊठ्या तत्क्षण, राक्षस बळिया अपार जी । १३ ।
खर-दूषण ने त्रिशिरा त्रणे, चाल्या योद्धा जेह जी,
सहस्र चतुर्दश राक्षस संगे, करे गर्जना तेह जी । १४ ।
खरनुं मुख ते खरना जेवुं, दूषणनुं कूबडुं वदन जी,
त्रिशिराने शिर त्रणज मोटां, भूधर जेवां तन जी । १५ ।
त्रण पुत्र छे दूषण केरा, ते सेनापति कहेवाय जी,
कपाली प्रमाथी ने स्थूललोचन, नाम एवां महाकाय जी । १६ ।

असुर युद्ध करने आएँगे । अतः हे धैर्यधारी, तत्पर रहना । ८ । इतने में चौदह राक्षस शूर्पणखा के साथ आ गये, तो श्रीराम ने चौदह बाण चला कर उन्हें तत्क्षण मार डाला । ९ । (परन्तु) जिस समम लक्ष्मण ने शूर्पणखा को मार डालने के लिए बाण निकाला, तब राम ने कहा— 'हे भैया, उसका संहार न करना । १० । यदि वह राक्षसी जीवित रहे, तो वह इनके अतिरिक्त (और भी) राक्षस लाएगी । हमें भी वह कार्य करना है, लुच्चे राक्षसों को मार डालना है । ११ । तदनन्तर शूर्पणखा भाग गयी और रोती हुई खर-दूषण के पास आ गयी (और बोली—), 'अरे भाइयो, जीवित रहने की आशा अब न करना । १२ । जान पड़ता है,) वे तो असुरों का संहार करने का व्रत लेकर (ही) वन की ओर निकल आये हैं ।' ऐसा सुनकर तत्क्षण वे बहुत बलवान राक्षस उठ गये । १३ । खर, दूषण और त्रिशिरा तीनों जने योद्धा चल दिये । उनके साथ चौदह सहस्र राक्षस गर्जन कर रहे थे । १४ । खर का मुख खर—अर्थात् गधे का-सा था, तो दूषण का बदन कूवड़ा (टेढ़ा) था । त्रिशिरा के तो तीन बड़े-बड़े मुँह थे । उनके शरीर पर्वत जैसे थे । १५ ।

ते सरवे युद्ध करवा चाल्या, पंचवटी पावन जी,
विपरीत वायु तेणे समे वायो, थया घणा मानशुकन जी । १७ ।
ज्यारे असंख्य दळ रघुपतिए दीठुं आवतुं जेणी वार जी,
त्यारे लक्ष्मणने कहे, लई सीताने, जाओ पर्वत मोझार जी । १८ ।
पछे जनकसुताने तेडी लक्ष्मण, चढिया पर्वतशीश जी,
पंचवटीमां सज्ज थई ऊभा, पोते श्रीजगदीश जी । १९ ।
एवे समे त्यां असुरज आव्या, ग्रही गिरिवर पाषाण जी,
श्रीरामचंद्र मूके छे चोदिश, अमोघ तीक्ष्ण बाण जी । २० ।
दारुण युद्ध थयुं ते वेळा, वढता करीने खेप जी,
वर्णवतां विस्तार ज पामे, माटे कह्युं संक्षेप जी । २१ ।
पछे राक्षस चौद सहस्र संहार्या, रघुपतिए तेणी वार जी,
त्यारे तेणे समे त्यां दूषण धायो, करतो मारामार जी । २२ ।
बे शर मूकी रामे वळतां, काप्या तेना हाथ जी,
शिर छेद्युं पछे दूषण केरुं, समर्थ श्रीरघुनाथ जी । २३ ।

दूषण के तीन पुत्र थे। वे (उस निशाचर-सेना के) सेनापति कहाते थे। वे कपाली, प्रमाथी और स्थूललोचन ऐसे नामधारी महाकाय (बड़े शरीरवाले राक्षस) थे। १६। वे सब युद्ध करने के लिए पावन (भूमि) पंचवटी (की ओर) चल दिये। उस समय विपरीत (अर्थात् उलटी, प्रतिकूल) वायु बह रही थी। उन्हें बहुत अपशकुन (भी) हो गये। १७। जिस समय श्रीराम ने अनगिनत (राक्षसों के) दल को आते देखा, तब उन्होंने लक्ष्मण से कहा— 'सीता को लेकर पर्वत (-प्रदेश) के अन्दर जाओ।' १८। अनन्तर लक्ष्मण सीता को लेकर पर्वत-शिखर पर चढ़ गये। (इधर) श्रीजगदीश श्रीराम स्वयं सज्ज होकर पंचवटी में खड़े रहे। १९। उस समय बड़े पर्वत और पाषाण लेकर असुर ही आ गये, तो श्रीराम चारों दिशाओं में (चारों ओर) अचूक और तीक्ष्ण बाण चलाने लगे। २०। उस समय दारुण युद्ध हो गया। एक-दूसरे पर प्रहार करते हुए वे लड़ रहे थे। उसका वर्णन करने पर (यह ग्रन्थ) विस्तार को प्राप्त होगा, अतः मैंने संक्षेप में कहा (है)। २१। अनन्तर उस समय रघुपति राम ने चौदह सहस्र राक्षसों का संहार किया। तब उस समय दूषण वहाँ दौड़ा हुआ आ गया। वह मारा-मारी करता था। २२। उसके विरुद्ध राम ने दो बाण चलाकर उसके हाथ काट डाले। तदनन्तर दूषण का सिर छेद डाला। ऐसे समर्थ हैं श्रीरघुनाथ। २३। तब उसके वे तीन पुत्र अपने पिता का पक्ष अर्थात् सहायता करने के लिए आ गये,

त्यारे त्रण पुत्र तेना ते आव्या, करवा पिताजीनो पक्ष जी,
तेने श्रीरघुवीरे मार्या, जोतां सहु प्रत्यक्ष जी। २४।
पछे त्रिशिराए युद्ध अति घणुं कीधुं, जोतां नव रहे धीर जी,
सफळ मंत्र भणी बाण ज मूके, रणमांहे रघुवीर जी। २५।
एवा स्वामी कार्तिकनी आपेली जे, सांग हती निरधार जी,
ते रामचंद्रनी उपर मूकी, निष्फळ थई तेणी वार जी। २६।
पछे त्रण बाण मूकी त्रिशिरानां, छेद्यां त्रणे शीश जी,
त्यारे बंधुमरण जोईने खर धायो, धरतो मनमां रीस जी। २७।
तेणे दारुण युद्ध आरंभ्युं, राक्षस महा बळवंत जी,
असुर शस्त्र मूके बहुविधनां, छेदे ते भगवंत जी। २८।
करे गर्जना खर मुख गाढे, खळभळियुं ब्रह्मांड जी,
ध्रुजी धरा ने सिंधु ऊछळ्या, गिरिनां शिखर थयां खंड जी। २९।
जुद्ध जोवाने अमर सहु आव्या, अंतरिक्ष बेसी विमान जी,
खरनुं दारुण जुद्ध देखीने, महारथी मूके मान जी। ३०।
रामने अंगे अगस्त्य तणुं छे कवच आपेलुं जेह जी,
शक्ति एक मूकीने राक्षसे, छेदी नाख्युं तेह जी। ३१।

तो श्रीराम ने सब के द्वारा प्रत्यक्ष देखते रहते उन्हें मार डाला। २४। फिर त्रिशिरा ने (ऐसा) अति विकट युद्ध किया कि जिसे देखने पर धैर्य नहीं रहेगा। श्रीराम उस युद्ध में सफलतापूर्वक मंत्र पढ़कर बाण चलाते रहे। २५। (तदनन्तर) स्वामी कार्तिक द्वारा निश्चय ही दी हुई जो साँग थी, वह (त्रिशिरा ने) राम पर चला दी। परन्तु उस समय वह निष्फल, अर्थात् व्यर्थ (सिद्ध) हो गयी। २६। अनन्तर (श्रीराम ने) तीन बाण चलाकर त्रिशिरा के तीनों सिर छेद डाले। तब भाई की मौत को देखकर खर मन में क्रोध धारण करते हुए दौड़ आया। २७। वह राक्षस महा बलवान् था। उसने दारुण युद्ध आरम्भ किया। वह असुर बहुत प्रकार के शस्त्र चला देता, तो भगवान् राम उन्हें काट डालते। २८। (फिर) खर ने मुँह से घोर गर्जन किया, तो ब्रह्माण्ड भयभीत हो उठा। पृथ्वी काँप उठी, समुद्र उछल पड़े और पर्वतों के शिखर (टूटकर) खंड-खंड हो गये। २९। समस्त देव युद्ध देखने के लिए विमानों में बैठकर आकाश में आ गये। खर द्वारा किया जाने वाला युद्ध देखकर महारथियों ने अपने युद्ध-सम्बन्धी घमंड को त्याग दिया। ३०। राम के अंग में अगस्त्य द्वारा दिया हुआ जो कवच था, उसे (खर) राक्षस ने एक शक्ति अस्त्र चलाकर छेद डाला। ३१।

एवुं जोई सहु देवज कंप्या, असुर तणुं बळ पूर जी,
वसिष्ठदत्त एक बाण हतुं ते, साध्युं रघुपति शूर जी । ३२ ।
ते बाणे खरनुं मस्तक छेद्युं, पडियो पृथ्वी मोझार जी,
पछे शेष असुर मार्या रघुवीरे, वरत्यो जयजयकार जी । ३३ ।
देव दुंदुभि वाग्या नभमां, जय धुनि चाली पुर जी,
पुष्पवृष्टि रघुवरनी उपर, करता सरवे सुर जी । ३४ ।
राक्षस सरवे मुक्ति पाम्या, कर्युं दंडकवन पावन जी,
निर्मळ जश विस्तर्यो दशे दिशे, देव कहे धन्य धन्य जी । ३५ ।
ज्यम शुद्ध ज्ञाने करी स्थूळ लिंग देहे, कारण पावन थाय जी,
एम वन पावन करी पंचवटीमां, शोभे श्रीरघुराय जी । ३६ ।
पछे लक्ष्मण सीता आवी नमियां, रघुपति केरे चर्ण जी,
सुमित्रासुतने भुज करी भेट्या, पोते अशरणशर्ण जी । ३७ ।
हवे चौद सहस्रमां एक ऊगरी, रावण भगिनी त्यांहे जी,
ते शूर्पणखा रुधिरे गळती, आवी लंकामांहे जी । ३८ ।

असुर का ऐसा पूरा बल देखकर समस्त देव काँप उठे। फिर वसिष्ठ द्वारा दिया हुआ एक बाण था, उसे प्रतापी राम ने संधान किया। ३२। (राम ने) उस बाण से खर के मस्तक को छेद डाला, तो वह (मस्तक) पृथ्वी पर गिर गया। तत्पश्चात् श्रीराम ने शेष असुरों को मार डाला, तो जय-जयकार हो गया। ३३। (तब) देवों के नगाड़े आकाश में बज उठे और जय-घोष पूरे जोर से चलता रहा। (फिर) सब देव रघुवीर के ऊपर पुष्प-वृष्टि करते रहे। ३४। (इस प्रकार श्रीराम के हाथों मरकर) समस्त राक्षस मुक्ति को प्राप्त कर गये। (उन्हें नष्ट करके) श्रीराम ने दण्डकारण्य को पावन कर दिया। उनकी निर्मल कीर्ति दसों दिशाओं में फैल गयी। देव 'धन्य', 'धन्य' कहते हैं (थे)। ३५। जिस प्रकार शुद्ध (आत्म-) ज्ञान से स्थूल लिंग देह शुद्ध हो जाती है, उस प्रकार (अपवित्र राक्षसों को नष्ट कर) वन को पावन करके श्रीराम पंचवटी में शोभायमान हैं (थे)। ३६। तदनन्तर लक्ष्मण और सीता ने आकर रघुपति के चरणों को नमस्कार किया, तो अशरण-शरण (अर्थात् निराधारों के आधार) श्रीराम ने लक्ष्मण का बाहुओं में (कसकर) आलिंगन किया। ३७। अब वहाँ चौदह सहस्रों में से एक (मात्र) रावण-भगिनी (शूर्पणखा) शेष रह गयी। (शरीर से) रक्त के झरते रहते वह शूर्पणखा (तदनन्तर) लंका में आ गयी। ३८।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

लंकामां आवी रुदन करती, ज्यां बेठो रावण भूप रे,
सभा सरवे विस्मय पामी, जोई शूर्पणखानुं रूप रे। ३९।

* * *

वह रुदन करती हुई लंका में वहाँ आ गयी, जहाँ राजा रावण बैठा था। शूर्पणखा के रूप को देखकर समस्त सभा विस्मय को प्राप्त हो गयी। ३९।

* * *

अध्याय—१२ (स्वर्णमृग को देखकर सीता का मोहित होना)

राग धन्याश्री

शूर्पणखा केरुं जोई कुरूप जी, वळतो पूछे लंकाभूप जी,
कोणे दुःख दीधुं कहे राखी धीर जी ?
त्यारे शूर्पणखा बोली सांभळ वीर जी। १ ।

ढाळ

वीर सांभळ हुं गई'ती, दंडक वनमोझार,
त्यां पंचवटीमां आवी रह्या, को बंन्यो राजकुमार। २ ।
राम-लक्ष्मण नाम तेनुं, संग सीता नार,
त्रण लोकमां रूप एवुं, नथी कर्युं किरतार। ३ ।

अध्याय—१२ (स्वर्णमृग को देखकर सीता का मोहित होना)

शूर्पणखा के कुरूप रूप को देखकर फिर लंकाधिपति रावण ने पूछा— 'धीरज रखते हुए कह दो कि (तुम्हें) किसने दुख दिया।' तब शूर्पणखा बोली— 'हे भाई, सुनो। १ ।

हे भाई, सुनो। मैं दण्डक वन में गयी थी। वहाँ पंचवटी में कोई दो (जने) राजकुमार आकर रहे हैं। २। उनके नाम है राम और लक्ष्मण। उनके साथ सीता (नामक) नारी है। विधाता ने तीनों लोकों में (अन्यत्न कहीं भी) ऐसा रूप निर्मित नहीं किया (है)। ३। मैंने ऐसा विचार किया था कि इस सुन्दरी को रावण के

में विचार्युं आ सुंदरी, लेई जाउं रावण काज,
मुज वीर पामे घणुं, रूडुं शोभे एनुं राज। ४।
हुं तारे काजे लेवा गई'ती, सुंदरी सुंदर वान,
तारी बहेन जाणी छेद्यां मारां, नासिका ने कान। ५।
मुज पुत्र शंबर मारियो, खर दुखर त्रिशिरा जेह,
चौद सहस्र राक्षस संगाथे, रामे मार्या तेह। ६।
दंडकारण्यमां विप्र सहु करे, होम जप तप,
हवे ब्राह्मणने लई आपशे, ते राम तारुं राज। ७।
धिक्कार तारा पराक्रमने, तुज राज बूड्युं आज,
तुं छतां मुज आवी गति थई, लीधी तारी लाज। ८।
माटे ऊठ शुं बेसी रह्यो? जई साध्य तारुं काम,
ए सीता लावे हरण करी तो, रावण तारुं नाम। ९।
एवां वचन सुणी रावणे वळतो, कर्यो मन विचार,
कांई कपट करीने हरीने लावुं रामनी ए नार। १०।
एवुं विचारी लंकेश ऊठ्यो, बेठ्यो रथमोझार,
मारीच मामो तप करे छे, आव्यो तेणे ठार। ११।

लिए ले जाऊँ; मेरा भाई (उससे) बहुत सुख प्राप्त करे और उसका राज अच्छे प्रकार से शोभायमान हो। ४। मैं तुम्हारे लिए ऐसी सौन्दर्यवती सुन्दरी (नारी) लेने के लिए गयी थी, (परन्तु) मुझे तुम्हारी बहन जान कर उन्होंने मेरी नाक और कानों को छेद डाला। ५। मेरे पुत्र शम्बर को मार डाला। (फिर) खर, दूषण और त्रिशिरा तथा उनके साथ में जो चौदह सहस्र राक्षस थे, उन्हें राम ने मार डाला। ६। (फिर) समस्त ब्राह्मण दण्डकारण्य में होम, जप और तप कर रहे हैं। अब वह राम तुम्हारा राज्य लेकर ब्राह्मणों को दे देगा। ७। तुम्हारे पराक्रम को धिक्कार है। तुम्हारा राज्य आज डूब गया। तुम्हारे होते हुए मेरी ऐसी दशा हो गयी और तुम्हारी लाज ली (तुम्हारी प्रतिष्ठा मिट्टी में मिला दी है)। ८। अतः उठो। बैठे क्या रहे? जाकर अपना कार्य सिद्ध कर लो। उस सीता का अपहरण कर लाओ, तो ही तुम्हारा रावण नाम (चरितार्थ) है।' ९। ऐसे वचन सुनकर रावण ने फिर मन में विचार किया— कुछ कपट करके मैं राम की वह स्त्री अपहरण करके लाऊँगा। १०। ऐसा विचार करके लंकेश रावण उठ गया और रथ में बैठ गया। और उसका मामा (जहाँ) तप कर रहा था, उस स्थान पर वह आ गया। ११। पूर्वकाल में (जब) राम के बाण से

पूरवे रघुपति शर तणी, जे झपट लागी अंग,
ऊडी पड्यो सागरतटे, बेठो थई मन भंग। १२।
मातुल जाणी पोतानो, आव्यो रावण त्यांहे,
सन्मान करी आसन बेसाड्यो, मळ्या मांहोमांहे। १३।
पछी नम्र थईने मधुर वचने, बोल्यो रावण राय,
एक कारज तम सरखुं पड्युं, माटे करो मुज करुणाय। १४।
पंचवटीमां रह्या आवी, राम-लक्ष्मण वीर,
तेणे शूर्पणखानां करण-नासा, करी छेदन धीर। १५।
शंबर आदे खर-दुखर, सहुनो कर्यो संहार,
शत्रु अग्नि थई बाळशे ए, असुरवन निरधार। १६।
ते माटे मामा मृग थई त्यां, जा तुं हवडां ऊठ,
त्यारे राम-लक्ष्मण आवशे, मारवाने तुज पूंठ। १७।
त्यारे हरण सीतानुं करी, हुं लई जईश लंका मांहे,
पछे राम-लक्ष्मणने हणीशुं, आवशे त्यांहे। १८।
एवां वचन सुणी मारीच बोल्यो, धीरज राखी मन,
ज्यम जाळ वाणी मूरखनी, पंडित करे छेदन। १९।

उत्पन्न वायु का झपट्टा (उसके) शरीर को लग गया था, तो वह उड़कर समुद्र-तट पर जा पड़ा था। (तब से) वह (वहीं) मनोभंग होकर बैठा हुआ था। १२। उसे अपना मामा समझकर (अर्थात् उस नाते से) वह वहाँ आ गया, तो उसने सम्मान करके आसन पर बैठा दिया। वे (रावण और मारीच) परस्पर मिल गये। १३। तत्पश्चात् नम्र होकर (लंका का) राजा रावण मधुर शब्दों में बोला— 'एक काम तुम्हारे योग्य पड़ा, अतः मुझपर दया करो। १४। राम और लक्ष्मण (दो) भाई पंचवटी में आकर रह गये हैं। उन्होंने शूर्पणखा के कान और नाक को छेद डाला। १५। शम्बर, खर, दूषण आदि सब का संहार कर डाला। (अब वह) शत्रु आग बनकर इस असुर-(-समाज) रूपी वन को निश्चय ही जला देगा। १६। इसलिए हे मामा, मृग (रूप) बनकर तुम वहाँ जाओ। अब उठो। तब राम और लक्ष्मण तुम्हें मारने के लिए (तुम्हारे) पीछे आएँगे। १७। तब सीता का अपहरण करके, मैं उसे लंका में ले जाऊँगा। अनन्तर राम-लक्ष्मण वहाँ आएँगे, तो उन्हें (भी) मार डालूँगा। १८। ऐसी बातें सुनकर मारीच मन में धीरज रखकर वैसे बोला जैसे मूर्ख के शब्द-जाल को पंडित काट डालता हो। १९। 'हे रावण, वे (राम और लक्ष्मण) यज्ञ

हे रावण पूरवे यागरक्षण, करवा आव्या एह,
त्यारे वीश कोटि सहित मार्या, सुबाहुने तेह। २०।
एक शरे भेदी ताडिका, एम कर्युं प्राक्रम त्यांहे,
मने झपट लागी शर तणी, ते पड्यो आवी आंहे। २१।
ए वात संभारुं तदा, भय उपजे छे मन,
जाणे हवडां मारशे शर, भेदशे मुज तन। २२।
ते रामने तुं मनुष्य जाणे, अरे रावण मूढ,
साक्षात् ए भगवान छे, जेनी गति अविगत गूढ। २३।
आदि नारायण पुरुष, पूरणब्रह्म माया ईश,
पृथ्वीनो भार उतारवा थया, प्रगट ए जुगदीश। २४।
तुज हृदे पर त्रंबक पड्युं'तुं, लेईने भांग्युं तेह,
तुंने जीवनदान आप्युं, भूली गयो क्यम एह? २५।
तुं भूंडुं ईच्छे ते तणुं, रघुवीर केरुं आज,
शुं भलुं तारुं थशे रावण, एम करतां काज? २६।
जेणे अमृत आहार कराविये, तेने विख देईए केम?
निवास रहेवा आप्यो, तेनुं बाळिये घर जेम। २७।

की रक्षा करने के लिए आ गये थे, तब उन्होंने बीस करोड़ (राक्षसों) सहित सुबाहु को मार डाला। २०। एक बाण से ताड़का को विदीर्ण कर दिया। इस प्रकार उन्होंने वहाँ पराक्रम किया। (तदनन्तर) मुझे बाण का झपट्टा लग गया, तो मैं यहाँ आकर गिर पड़ा। २१। जब मैं उस बात का स्मरण करता हूँ, तो मेरे मन में (यह) भय उत्पन्न हो जाता है (कि) मानो वे अभी बाण मार देंगे और मेरे शरीर को भेद देंगे। २२। हे मूर्ख रावण, उन राम को तुम मनुष्य समझ रहे हो। वे (राम) साक्षात् भगवान् हैं, जिनकी गति अविगत (अज्ञात) तथा गूढ है। २३। वे आदि पुरुष नारायण हैं, पूर्ण ब्रह्म हैं, माया के ईश्वर हैं। वे जगदीश पृथ्वी का भार उतार डालने के लिए प्रकट हो गये हैं। २४। तुम्हारे हृदय (छाती) पर जो शिव-धनुष पड़ गया था, उसे लेकर उन्होंने तोड़ डाला, तुम्हें जीवन दान दिया। तुम उसे कैसे भूल गये? २५। आज तुम उन रघुवीर का बुरा चाह रहे हो। हे रावण, ऐसा काम करने से, तुम्हारा क्या भला होगा? २६। जिसने अमृत का आहार करा दिया, उसे विष कैसे दें? जिसने निवास करने दिया, उसके घर को कैसे जला दें? २७। अतः धर्म-(संगत) मार्ग से चलें। हे रावण, सच्ची बात सुनो। परनारी की अभिलाषा करने पर निश्चय ही प्राण (छिन)

माटे धरमपंथे चालिये, सुण रावण साची वात,
परनारीनां अभिलाष करतां, जाशे निश्चे प्राण। २८।
माटे सद्विवेक ज राखीए गुरुवचन धरीए मन,
कपटबुद्धे करी कोनुं, न करीए हेलन। २९।
वेदना जोई पर तणी, उपकार करीए सत्य,
सहु भूतमां भगवंत जोईए, एह साची मत्य। ३०।
आ देह क्षणभंगुर छे, अस्थिर भोग अनेक,
माटे परमारथ साधीए करी सारासार विवेक। ३१।
जे शंभु तारा इष्ट ते पण, भजे नित्ये राम,
ते तणी स्त्री जे मात सम, शुं ईच्छे अघटित काम ? ३२।
ते माटे सांभळ दशानन, करी मैत्री रघुवर साथ,
तुंने अभे करीने थापशे, मूकशे मस्तक हाथ। ३३।
एम मारीचे कह्यां वचन बहु जे, अविद्यातरु छेदन,
मद-अंध निज अभिमानथी, एकु न समज्यो मन। ३४।
करी क्रोध रावण बोलियो, अरे मूरख दंभी दुष्ट !
शुं शीखवे छे मुजने, करी राम केरी पुष्ट ? ३५।

जाएँगे। २८। अतः मन में सद्विवेक ही रखें, गुरु के वचन पर मन (ध्यान) दे। कपट बुद्धि से किसी की तिरस्कार-पूर्वक अवहेलना न करें। २९। दूसरे की वेदना देखकर सचमुच (उसका) उपकार करें। सब प्राणियों में भगवान् (का अस्तित्व) देखें।— वही सच्ची बुद्धि (-मानी) है। ३०। यह देह क्षण-भंगुर है; अनेकानेक भोग अस्थिर (नाशवान्) हैं। अतः सारासार विवेक करके परमार्थ-साधन करें। ३१। जो शिवजी तुम्हारे इष्ट (-देव) हैं, वे भी राम का नित्य भजन करते हैं। उनकी स्त्री माता के समान जो है। अतः क्या (ऐसा) अघटित काम (करना) चाहते हो ? ३२। इसलिए, हे दशानन, सुनो। रघुवर से मित्रता करो। (तब) वे अभय देकर (राज-पद पर सदा के लिए) तुम्हें स्थापित कर देंगे—मस्तक पर (वरद-) हस्त रखेंगे।' ३३। मारीच ने (रावण से) इस प्रकार बहुत-सी बातें कह दीं, जो अविद्या-रूपी वृक्ष को काट डालनेवाली हैं। (परन्तु) स्वाभिमान से मदान्ध (होकर) वह रावण मन में एक भी नहीं समझ पाया। ३४। परन्तु क्रोध करके रावण बोला 'अरे मूर्ख, दम्भी, दुष्ट ! राम का समर्थन करते हुए तू मुझे क्या सिखा रहा है ? ३५। राम का कितना बल है ? उस मनुष्य की क्या महत्ता ? मेरा कहा यदि तू नहीं

रामनुं केटलुं जोर छे ! ए मनुष्यना शा भार ?
मारुं कह्युं जो नहि करे तो, मारीश तुजने ठार । ३६ ।
एम कही रावणे हाथ नाख्यो, खड्ग उपर जाण,
त्यारे मारीच मन कंपियो, ए मारशे निरवाण । ३७ ।
ए दुष्टने हस्ते करीने, थशे मुज अवगत्य,
जो रामने हाथे मरुं तो, मुक्ति पामुं सत्य । ३८ ।
ए अर्थी दोष न विचारे, वळी अभिमानी जेह,
वळी मूरख कांई समजे नहि, ए अंध तणे तेह । ३९ ।
एम विचारी मारीच बोल्यो, रावण साथ वचन,
मारे कारज करवुं तमारुं, माटे चालो हे राजन ! ४० ।
एवुं कही बेठा बंन्यो जण, रथमांहे तेणी वार,
वायुवेगे हांक्यो रथ, आव्या पंचवटी मोझार । ४१ ।
रह्यो रावण गुप्त थईने वनमां, वृक्षकुंजनी मांहे,
पछी मारीच बेमुखी मृग थईने, तत्क्षण आव्यो त्यांहे । ४२ ।
सीताए वाडी करी छे, मृग आव्यो तेने ठार,
कुंदन जेवी त्वचा झळके, शोभानो नहि पार । ४३ ।

करेगा, तो तुझे मार डालूँगा । ' ३६ । समझिए कि ऐसा कहकर रावण ने शस्त्र (उठाकर तानने के हेतु उस) में हाथ डाला । तब मारीच मन में काँप उठा । (उसे जान पड़ा) वह मुझे निश्चय ही मार डालेगा । ३७ । उस दुष्ट के हाथों (से मौत को प्राप्त होने पर) मेरी दुर्गति ही होगी । (परन्तु) यदि श्रीराम के हाथों मर जाऊँ, तो सत्य ही मैं मुक्ति को प्राप्त हो जाऊँगा । ३८ । वह स्वार्थी किसी दोष का विचार नहीं कर रहा है । इसके अतिरिक्त, वह अभिमानी जो है । फिर वह मूर्ख कुछ भी नहीं समझ रहा है । उस (बात) में वह अंध है । ३९ । ऐसा विचार करके मारीच रावण से यह बात बोला— ' मुझे तुम्हारा कार्य करना है । अतः हे राजा चलो । ' ४० । ऐसा कहने पर वे दोनों जने उस समय रथ में बैठ गये । (रावण ने) वायु-वेग से रथ चला दिया और वे पंचवटी में आ गये । ४१ । रावण वृक्षों के कुंज के अन्दर गुप्त होकर (अर्थात् छिपकर) वन में रह गया । तदनन्तर मारीच दोमुँहा हिरन बनकर तत्क्षण वहाँ आ गया । ४२ । सीता ने (जो) उद्यान तैयार किया था, उस स्थान में वह मृग आ गया । उसकी त्वचा कुंदन (सोने) जैसी झलक रही थी, उसकी सुन्दरता की कोई सीमा नहीं थी । ४३ । उस पर रत्न जैसे बुट्टे झलक रहे थे, नाना प्रकार के नाना रंग थे । (मानो) ऐसे

मणि जेवा बुट्टा झळकता, बहु रंग नाना भात,
भूले ब्रह्मा जोई करतव, सृष्टिमां नहि ए जात । ४४ ।
एक मुखे चरतो हरित तृण, बीजे निहाळे चोपास,
ते सीताए दीठो तदा, त्यारे पड्यो मोहनो पाश । ४५ ।
ए जक्तजनुनी अंबिका जे, इंदिरा गुणखाण,
ते मोह पामे नहि कदा, करे मनुष्यलीला जाण । ४६ ।
ते माटे श्रोताजन सुणो, नव करशो ते संदेह,
जाणी जोईने जानकी, आचरे लीला एह । ४७ ।
मृग देखी मोह्यां जानकी, एनी त्वचा अति सुकुमार,
तेनी करावुं कंचुकी, मुज अंग शोभे सार । ४८ ।
एवुं विचारी रघुनाथ प्रत्ये, वदे सीता वाण,
महाराज आ मृग जुओ पेलो, त्वचा कनक प्रमाण । ४९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

त्वचा कनकना जेवी एनी, बुट्टा मणि समान रे,
माटे ए मृग मारी कंचुकी मुजने सिवडावो भगवान रे । ५० ।

(निर्माण-) कार्य को देखकर ब्रह्मा भी भूल गया हो । सृष्टि में उस जैसी कोई और जाति नहीं है । ४४ । वह मृग एक मुख से हरी घास चर रहा था, तो दूसरे (मुँह) से चारों ओर निहार रहा था । जब सीता ने उसे देखा तब मोह का पाश उस पर पड़ गया (अर्थात् वह मोहित हो गयी) । ४५ । (वस्तुतः) जो जगज्जननी अंबिका है, गुण-खनि लक्ष्मी है, वह तो कदापि मोह को प्राप्त नहीं हो सकती । (परन्तु) समझिए कि वह मनुष्य-लीला कर रही है । ४६ । इसलिए हे श्रोता जनो, सुनिए । उसमें सन्देह न करना । सीता जानते और देखते हुए भी उस (मानव) लीला का आचरण कर रही थी । ४७ । मृग को देखकर जानकी मोहित हो गयी । (उसने सोचा—) उसकी चमड़ी अति कोमल है । उसकी कंचुकी (चोली) बनवा लूँ, (तो) मेरे अंग में वह सुन्दर रूप से शोभायमान होगी । ४८ । ऐसा विचार करके सीता रघुनाथ के प्रति (यह) बात बोली— 'हे महाराज, यह देखिए वह मृग जिसकी त्वचा सोने-की-सी है । ४९ ।

उसकी त्वचा कनक जैसी है, तो (उस पर के) बूट्टे रत्नों के समान हैं । अतः हे भगवान्, उस मृग को मारकर (उसके चर्म की) मेरे लिए कंचुकी सिलवा दीजिए ।' ५० ।

अध्याय—१३ (स्वर्णमृग को देख सीता का राम के प्रति अनुरोध)

राग गरबानी देशी

रूप जोई रढ लागी रामाने, सावज सुंदर वान जी,
जनकनंदिनी कहे रघुपतिने, सुणीए श्रीभगवान।
मृगने मारो जी। १।
त्वचा रूपाळी बुट्टावाळी, जाणे कुंदनमणि जडिया जी,
विधि विश्वकर्मा जोईने भूले, एनी सृष्टिमां नथी निमाडिया
मृगने मारो जी। २।
ऊठो स्वामी विलंब न करशो, हेलामां हणी आवो जी,
ए मृगचर्म लावी मुजने, कांचलडी सिवडावो। मृगने०। ३।
त्यारे रघुपति कहे तमो सुणो सुंदरी, ए शी बोल्यां वाणी जी?
ए चर्मनी चोळी कोण ज पहेरे? वात विचारो राणी। वात०। ४।
आवो रूपाळो मृग क्यम हणीए ? कंचन जेवी काया जी,
ए मिथ्यारूपने जोई मोह पाम्यां, शी लागी तमने
माया ? वात०। ५।

अध्याय—१३ (स्वर्णमृग को देख सीता का राम के प्रति अनुरोध)

उस श्वापद के सुन्दर डील-डौल और रूप को देखकर उस स्त्री को (उसके प्रति) चाव (उत्पन्न) हो गया। (तब) सीता रघुपति से बोली—'हे श्रीभगवान्, सुनिए। इस मृग को मार डालिए। १। उसकी त्वचा सुन्दर तथा बुट्टेदार है—मानो (उसमें) सोना तथा रत्न जड़ दिये हों। विश्वकर्मा विधाता (तक) उसे देखकर (भान) भूल जाए—उसकी सृष्टि ऐसी कोई अन्य वस्तु निष्पन्न नहीं हुई (है)। २। हे स्वामी, उठिए। विलम्ब न करना। क्षण में उसे मारकर आइए। वह मृगछाला लाकर मेरे लिए कंचुकी सिलवा दीजिए।' ३। तब रघुपति ने कहा—'हे सुन्दरी, तुम सुनो। तुम यह क्या बात बोली ? उस चर्म की चोली कौन पहनेगी ? हे रानी, इस बात का विचार करो। ४। ऐसे मृग को सुन्दर कैसे कहें ? उसकी काया कंचन जैसी तो है। (फिर भी) उस मिथ्या रूप को देखकर तुम मोह को प्राप्त हो गयी हो। क्या तुम्हें (भी) माया लग गयी ? (क्या तुम भी माया के अधीन हो गयी ?)'। ५। (इस पर सीता ने उत्तर दिया—) 'हे स्वामी, मुझे स्वप्न में (तक) माया तथा मोह (वश में) नहीं (कर सकते) हैं। मैं यमर्थ ही हठ नहीं कर रही हूँ। मैं

स्वामी माया मोह मुजने नथी स्वपने, हठ नथी करती ठाली जी,
हुं जाणुं तमारुं हेत छे केवुं, तमने केवी छुं वहाली ? मृग० । ६ ।
महाराज जन्म मध्ये नथी में मृग दीठो, आवो रूपाळो रंगे जी,
एना चर्म तणी चोळी सिवडावी, पहेरावो मारे अंगे। मृग० । ७ ।
अरे जनकसुता शां घेलां काढो? ए चर्म तणी शी चोळी जी?
आपणे अवधपुरीमां जईशुं,त्यारे सरवे करशे ठठोळी। वात०। ८ ।
विना अपराधे रत्न सरीखुं, सावज ते क्यम हणीए जी ?
दया राखीए प्राणी उपर, सहुने आत्मा गणीए । वात० । ९ ।
आवडी दया हती दिलमां त्यारे, धनुषवाण शीद धार्या जी?
शा अपराधे सुबाहु ताडिका, आदे निशाचर मार्यां? मृग० । १० ।
सुंदर नारी वरवा आवी, तेनो शो हतो वांक जी ?
ते नारीनां करण नासिका, छेद्यां आडे आंक । मृग० । ११ ।
आरे रामा ! ते रावणनी भगिनी, आवी'ती करवा विघ्न जी,
कपट जाण्युं तेना अंतरनुं, माटे अंग कर्यां छेदन । वात० । १२ ।
सुबाहु ताडिका आदे असुर ते, विप्रने करना विघन जी,
नित्य ऊठी मुनिवरने पीडे, माटे पमाड्या पतन । वात० । १३ ।

जानती हूँ कि आपका प्रेम कैसा है, मैं तुम्हें कैसी प्यारी हूँ । ६ । हे महाराज, रंग में ऐसा सुन्दर मृग मैंने जीवन में (कभी) नहीं देखा। (अत:) उसके चमड़े की चोली सिलवाकर मेरे अंग में पहना दीजिए । '७ । (यह सुनकर श्रीराम ने कहा—) 'अरी जनक-सुता, क्या नासमझ का-सा बर्ताव कर रही हो ? उस चर्म की कैसी चोली ? हम जब अयोध्या पुरी में जाएँगे, तो सब तुम्हारा परिहास करेंगे । ८ । बिना किसी अपराध के वह रत्न-सा श्वापद कैसे मार दें ? प्राणियों पर दया रखें। सब की आत्मा को (समान) माने । ९ । (सीता ने कहा—) '(यदि) मन में इतनी दया थी, तो तब (आपने) धनुष-बाण किसलिए धारण किये ? सुबाहु, ताड़का आदि निशाचरों को उनके किस अपराध के कारण मार डाला ? । १० । (एक) सुन्दर नारी विवाह करने के लिए आ गयी थी, उसका क्या दोष था ? उस स्त्री के कान और नाक आपने हठपूर्वक काट डाले । ' ११ । (राम ने इसपर कहा—) 'हे नारी, वह तो रावण की भगिनी (थी, जो) विघ्न करने के लिए आ गयी थी। उसके मन के कपट को मैंने जान लिया, अत: उसके (कान-नाक जैसे) अंग छेद डाले । १२ । सुबाहु, ताड़का आदि वे असुर ब्राह्मणों के लिए विघ्न (उत्पन्न) कर देते थे। वे नित्य उठकर बड़े-बड़े मुनियों को पीड़ा

एवो धर्म विचारी हणो छो असुरने, तो मृगया क्षत्रीनो धर्म जी,
त्यारे एने मारतां अधरम शानो ? कोण निंदे करतां
ए कर्म ? मृग० । १४ ।
स्व-ईच्छाथी मृगया करतां, अनेक मारी आवो जी,
मारे सारु एक मृगने मारतां, मोटी दया मन लावो । मृग० । १५ ।
अरे बाळा, एवुं शुं बोलो ? हुं एकपत्नीव्रत कहावुं जी,
जो अंतर होय तो वनमां साथे, शीद तेडीने लावुं ? वात० । १६ ।
आवडी हठ नव करीए थोडामां, छो सदगुण संदोह जी,
आपणे घेर शी न्यून छे ? राणी ! ए चर्म उपर शो
मोह ? वात० । १७ ।
वरस चतुर्दशमां हावे स्वामी छे, बाकी थोडा दिन आंहे जी,
त्यारे पूँठे ए कंचुकी पहेरी, मारे जावुं अवधपुर मांहे । मृग० । १८ ।
ते माटे मनोरथ पूरो मारा, स्वामी विचारी मन जी,
ए कह्युं नहि करो त्यारे हुं हवडां, पाडीश मारुं तन । मृग० । १९ ।
एवी हठ लई बेठां सीताजी, करवाने लाग्यां रुदन जी,
त्यारे आश्वासन करी धीरज आपी, समर्प्यां स्नेहवचन ।
मृग० । २० ।

पहुँचाया करते । अतः उन्हें पतन (नाश, मृत्यु) को प्राप्त करा दिया ।' १३ । (यह सुनकर सीता ने कहा—) 'ऐसे धर्म का विचार करके आपने असुरों को मार डाला था। (तब) तो मृगया करना क्षत्रिय का धर्म ही है। तब उस (मृग) को मारने में अधर्म कैसा ? वह कर्म करने पर कौन निन्दा करेगा ? १४ । आप अपनी इच्छा से मृगया करते हुए अनेक (मृगों) को मारकर आते हैं (और इधर) मेरे लिए एक सुन्दर मृग को मारने में मन में बड़ी दया ला रहे हैं ।' १५ । (इसपर राम ने कहा—) 'अरी नारी, ऐसा क्या बोल रही हो ? मैं एक-पत्नी-व्रती कहाता हूँ। यदि अन्तर हो, तो (तुम्हें) साथ में लेकर वन में किसलिए लाता ? । १६ । थोड़े में इतना हठ न करना। तुम तो सद्‌गुणों की राशि हो। अपने घर क्या कमी है ? अरी रानी, उस (मृग-) चर्म पर क्या मोह है ?' १७ । (सीता बोली-) 'हे स्वामी, (वनवास के) चौदह वर्षों में से अब यहाँ थोड़े दिन शेष हैं। उसके पश्चात् तब उस (की) कंचुकी को पहनकर मुझे अयोध्या पुरी में जाना है । १८ । इसलिए, हे स्वामी, मन में विचार करके मेरे इस मनोरथ को पूर्ण कीजिए। वह कहा हुआ आप नहीं करते हैं; तब तो मैं अपने

सीतानुं कारज करवाने थया, तत्पर श्रीरणधीर जी,
आगल्युं भविष्य विचारी पोते, ऊठ्या श्रीरघुवीर । मृग० । २१ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

ऊठ्या श्रीरघुवीर पोते, तत्पर थई तेणी वार रे,
धनुषबाण ग्रही कर विषे, पछे चाल्या जुगदाधार रे । २२ ।

* * *

शरीर को त्याग दूँगी । ' १९ । सीता ऐसा हठ लेकर बैठ गयी और रुदन करने लगी । तब राम ने उसे सान्त्वना देते हुए धीरज बँधाया और स्नेह (-भरे) वचन कह दिये । २० । (तदनन्तर) रणधीर श्रीराम सीता का काम करने के लिए तत्पर हो गये और स्वयं अगले भविष्य का विचार करके वे उठ गये । २१ ।

उस समय जगदाधार श्रीरघुवीर स्वयं तैयार होकर उठ गये और तत्पश्चात् हाथ में धनुष-बाण लेकर चल दिये । २२ ।

* * *

अध्याय—१४ (राम द्वारा स्वर्णमृग का वध तथा लक्ष्मण के प्रति सीता के दुर्वचन)

राग आशावरी

जानकीजीनुं वचन पाळवा, ऊठ्या पूरणब्रह्म,
आगळ काम जे करवुं पोताने, ते कोई न जाणे मर्म । १ ।
लक्ष्मणने कहे साचवजो, सीताने आणे ठार,
सावधान थई रहेजो वीरा, असुर फरे छे अपार । २ ।
एवुं कही कोदंड चढाव्युं, शर कीधुं संधाण,
मृगने मारवा चाल्या तत्क्षण, पोते पुरुषपुराण । ३ ।

अध्याय–१४ (श्रीराम द्वारा स्वर्णमृग का वध तथा लक्ष्मण के प्रति सीता के दुर्वचन)

पूर्ण ब्रह्म (-स्वरूप) श्रीराम जानकी के वचन का पालन करने के लिए उठ गये । उन्हें स्वयं आगे जो काम करना था, उसका मर्म कोई नहीं जानता है । १ । उन्होंने लक्ष्मण से कहा— ' किसी अन्य स्थान पर (ले जाकर) सीता की रक्षा करना । हे बन्धु, सावधान होकर रहना । (यहाँ) बहुत असुर विचरण करते हैं । ' २ । ऐसा कहकर पुराण

रामने देखीने मृग नाठो, पूठळ रघुवर जाय,
गौतमी केरे पूरव भागे, ते उपकंठ पळाय। ४ ।
ए नीलकंठ भोगीन्द्र वज्रधर, विधि आदे सुर तेह,
जेना चरणतणी रज ईच्छे सर्वे, पोते ईश्वर तेह। ५ ।
जे पद वज्रांकुश-ध्वज-मंडित, सकळ तीरथनुं धाम,
ते प्रभु मायामृगनी पूँठळ, फरता ठामोठाम। ६ ।
पछे दूर जईने बाण ज मूक्युं मार्यो मृगने त्यांहे,
त्यारे प्रचंड देह थयो राक्षसनो, पडीओ पृथ्वीमांहे। ७ ।
तेना अंगथी तेज नीकळ्युं, चैतन्य आत्मा जेह,
रघुपतिना मुखमांहे प्रवेश्युं, मुक्ति पाम्यो तेह। ८ ।
जे गति पामे विरक्त योगी, करतां जप, तप, ध्यान,
ते गति आपी सहेजे असुरने एवा श्रीभगवान। ९ ।
परम दयाळु कृपानिधि केशव, विश्वना प्राण-आधार,
एवा प्रभुने न भजे जे जन, तेने छे धिक्कार। १० ।

पुरुष श्रीराम ने धनुष चढ़ा दिया, बाण संधान किया और वे मृग को मार डालने के लिए स्वयं तत्क्षण चल दिये। ३। रघुवर श्रीराम को देखकर वह मृग भाग गया, तो वे उसके पीछे (-पीछे) गये। वह गौतमी (गोदावरी) के पूर्व भाग में निकट-वर्ती स्थान में (भाग) गया। ४। शिवजी, शेष, इंद्र, ब्रह्मा आदि वे समस्त देवता जिनके चरणों की धूलि की इच्छा करते हैं, वे श्रीराम स्वयं ईश्वर हैं। ५। जिनके पद वज्र, अंकुश (जैसे दिव्य) चिह्नों से विभूषित तथा समस्त तीर्थों के धाम हैं, वे प्रभु श्रीराम माया-मृग के पीछे (-पीछे) स्थान-स्थान भ्रमण कर रहे थे। ६। अनन्तर श्रीराम ने दूर जाकर बाण ही चला दिया और वहाँ मृग को मार डाला। तब वह मृग-शरीर राक्षस का प्रचंड शरीर हो गया और पृथ्वी पर गिर गया। ७। उसके अंग से तेज निकला, जो (वस्तुत:) चैतन्य (-स्वरूप) आत्मा है और जो श्रीराम के मुख में प्रविष्ट हो गया। (इस प्रकार) वह (असुर) मुक्ति को प्राप्त हो गया। ८। विरागी, योगी जप, तप, ध्यान करते हुए जिस गति को प्राप्त हो जाते हैं, वह गति श्रीराम ने सहज ही में (एक) राक्षस को प्रदान की। ऐसे हैं भगवान् श्रीराम। ९। भगवान् केशव (अर्थात् विष्णु, उनके अवतार श्रीराम) पदम दयालु तथा कृपानिधि हैं। वे विश्व के प्राणों के आधार हैं। जो लोग ऐसे प्रभु का भजन (अर्थात् भक्ति) नहीं करते, उन्हें धिक्कार है। १०। जगदाधार श्रीराम ने उस स्थान पर एक आघात से

एह प्रकारे श्रीरघुवीरे, मृग मार्यो ते ठार,
पछे श्रमित थई एक पीपळा हेठळ, बेठा जुगदाधार । ११ ।
हावे पंचवटीमां रही छे सीता, पर्णकुटीमां ज्यांय,
लक्ष्मण बारणे रक्षा करता, धनुषबाण ग्रही त्यांय । १२ ।
जेम शांतिनी रक्षा ज्ञान करे, सद्‌बुद्धि केरी विवेक,
एम लक्ष्मणजी साचवता सीता जेने मोटी टेक । १३ ।
त्यारे रावणे जाण्युं राम गया, पण लक्ष्मण छे आश्रम,
माटे कपट करीने काढुं अहींथी, कारज थाये ज्यम । १४ ।
पछे रामना जेवो स्वर काढीने, रावणे पाडी रीर,
हुं महासंकटमां पड्यो छुं माटे, धाजो लक्ष्मण वीर । १५ ।
ते सीताए सांभळियुं त्यारे, पडियो मनमां शोक,
अकळविकळ थई बोल्यां, जाण्या दुखिया पुण्यश्लोक । १६ ।
अरे दियरजी, जाओ उतावळा, हांक मारे तम वीर,
कांई असुर तणा संकटमां आव्या, दुखिया हशे रघुवीर । १७ ।
भाई विना कोण भीड ज भांगे, रणमां जईने आज ?
माटे जाओ उतावळा आळस मूकी, करो बंधुनुं काज । १८ ।

उस मृग को मार डाला । तदनन्तर वे थककर एक पीपल के तले बैठ गये । ११ । अब (इधर) पंचवटी में जहाँ पर्णकुटी में सीता रह गयी है (थी), वहाँ लक्ष्मण धनुष-बाण लेकर द्वार पर (खड़े होकर उसकी) रक्षा कर रहे थे । १२ । जिस प्रकार (आत्म-) ज्ञान (आत्म-) शान्ति की और विवेक सद्‌बुद्धि की रक्षा करता है, उस प्रकार जिनकी टेक (प्रतिज्ञा) बहुत बड़ी है, वे लक्ष्मण सीता की (रक्षा के हेतु) देख भाल कर रहे थे । १३ । तब रावण ने यह जान लिया कि श्रीराम चले गये हैं, फिर भी लक्ष्मण आश्रम में हैं । अतः (उसने विचार किया-) मैं कपट करके यहाँ से उन्हें निकाल दूँ तो जैसे (जिससे) मेरा कार्य (सिद्ध) हो जाएगा । १४ । अनन्तर श्रीराम के स्वर जैसा स्वर उत्पन्न करके रावण चिल्ला उठा । 'हे भाई लक्ष्मण, मैं बड़े संकट में पड़ गया हूँ । अतः दौड़ कर आ जाना ।' १५ । सीता ने वह सुना, तब उसके मन में शोक उत्पन्न हुआ । (फिर) उसने पुण्य श्लोक श्रीराम को दुखी समझा और आकुल-व्याकुल होकर वह बोली । १६ । 'हे देवरजी, सत्वर जाओ । तुम्हारे भाई तुम्हें पुकार रहे हैं । वे असुरों के (निर्मित) किसी संकट में आ गये हैं । रघुवीर दुखी होंगे । १७ । बिना भाई के, युद्ध में जाकर कौन आज संकट में सहायता कर सकता है ? अतः आलस्य

रणे बंधु ने मित्र संकटे, वृद्धपणामां नार,
विषमकाळमां पुत्र पिताने, संभाळे निरधार । १९ ।
ते माटे वहारे जाओ लक्ष्मण, असुरे वींट्या तम वीर,
एम सीताजी गभराई गयां ने, मूकी मननी धीर । २० ।
त्यारे लक्ष्मण कहे सीताजी सुणो कांई, ए छे कपट वचन,
बाकी संकटमां रघुवीर न आवे, मानजो साचुं मन । २१ ।
जे चर-अचर ना बीजरूप वळी, स्वामी नियंता एव,
कोटि ब्रह्मांडपति ए रघुवर, सरवे देवना देव । २२ ।
जेना कटाक्षे काळ ज कंपे, लोकपति माने त्रास,
ते प्रभु संकटमां नव आवे, कल्पांते अविनाश । २३ ।
जो सूरज अफळाये अंधारे, वह्निने व्यापे शीत,
आ जगत जो भक्षण करे काळने, एम थाये विपरीत । २४ ।
पण संकटमां नव आवे रघुपति, अमोघ बळ महिमाय,
असुर तणी कांई माया हशे माटे, भय नव धरशो माय । २५ ।

छोड़कर शीघ्र (चले) जाओ और भाई का काम करो । १८ । युद्ध में बंधु और संकट में मित्र, बुढ़ापे में स्त्री और विषम (विकट) काल में पुत्र पिता की निश्चय ही देखभाल (रक्षा) करता है । १९ । इसलिए हे लक्ष्मण, असुरों ने तुम्हारे भाई को घेर लिया है, इसलिए उनकी सहायता के लिए जाओ ।' इस प्रकार सीता घबरा गयी और मन का धीरज खो गयी । २० । तब लक्ष्मण ने कहा— 'हे सीताजी, सुनिए । वे कुछ कपट के वचन (जान पड़ते) हैं । नहीं तो, रघुवीर संकट में नहीं आ सकेंगे । मन में यह बात सच्ची मानना । २१ । जो चर और अचर (सजीव और निर्जीव) के बीज-स्वरूप हैं, इसके अतिरिक्त स्वामी, नियन्ता ही हैं, कोटि-कोटि ब्रह्माण्डों के स्वामी हैं, वे रघुवर राम देवों के देव हैं । २२ । जिनके कटाक्ष से (प्रत्यक्ष) काल ही काँप उठता है, लोक-पाल भय मानते हैं, वे अविनाशी प्रभु श्रीराम कल्पान्त तक में संकट में नहीं आएँगे । २३ । यदि सूर्य अँधेरे में (किसी वस्तु से) टकरा जाए, अग्नि को ठंड व्याप्त करे, यदि यह जगत् काल को भक्षण कर ले, ऐसी विपरीत स्थिति यदि हो जाए, तो भी रघुपति संकट में नहीं आएँगे । इस प्रकार श्रीराम की अमोघ शक्ति तथा महिमा है । (जान पड़ता है,) यह कुछ असुरों की माया होगी । अतः हे माता, भय धारण न करना ।' २४—२५ । तब सीता बोली— 'यह असुरों की माया नहीं है । मैंने उनका स्वर पहचाना है । आलस्य छोड़कर तुम शीघ्र

त्यारे सीता कहे नथी माया असुरनी, में ओळख्यो एमनो साद,
तमो जाओ उतावळा आळस मूकी, पोकारे छे आर्तनाद । २६ ।
त्यारे लक्ष्मण कहे में नव जवाय, मुंने सोंपी गया छे राम,
के असुर आवी हरी जाये तमने, विघ्न करे आ ठाम । २७ ।
त्यारे क्रोध करीने सीता कहे छे, जोयुं तमारुं हेत,
तमो बांधवनुं भूडुं ईच्छो, अंतरकपट समेत । २८ ।
एवां अघटित वचन सीताए कह्यां, घणां वांकां तीक्ष्ण जाण,
ते बाण जेवां लक्ष्मणने वाग्यां, जाणे जाये प्राण । २९ ।
हृदय भेदायुं लक्ष्मणनुं जाणे, तप्त शस्त्रना घाय,
तन निस्तेज थयुं तेणी वेळा, मनमां थई पीडाय । ३० ।
पछे गद्गद कंठे कर जोडीने, बोल्या लक्ष्मण वाण,
अरे जानकी ए शुं बोल्यां ? अघटित वचन प्रमाण । ३१ ।
में तो यथारथ वात कही, नथी बोल्यो कांई अन्याय,
तेना साक्षी पंचभूत ने सूरज, सांभळो साचुं माय । ३२ ।
तमो मात हुं पुत्र तमारो एवुं जाणुं छुं मन,
ईश्वर जाणी हुं सेवा करुं, नथी कपटनी वात स्वपन । ३३ ।

जाओ। वे आर्त स्वर में पुकार रहे हैं।' २६। तब लक्ष्मण ने कहा— 'मुझसे नहीं जाया जाता। श्रीराम (आपको) मुझे इसलिए सौंप गये हैं कि असुर आकर आपको अपहरण करके ले जाएँगे, वे इस स्थान पर (कुछ) विघ्न (उपस्थित) कर देंगे।' २७। तब क्रोध करके सीता कहती है (=बोली)— 'तुम्हारा (बन्धु-) प्रेम देख चुकी। आन्तरिक कपट के साथ तुम भाई का बुरा चाह रहे हो।' २८। सीता ने ऐसे अघटित वचन कह दिये। समझिए कि वे बहुत कुटिल तथा तीक्ष्ण थे। वे बाण जैसे लक्ष्मण को (घाव करते हुए) ऐसे लग गये, मानो (उससे अब) उनके प्राण (निकल) जाएँगे। २९। मानो, तप्त शस्त्रों के घाव से लक्ष्मण के हृदय को भेदा गया हो (जिससे) उनका शरीर निस्तेज हो गया। उस समय उनके मन में पीड़ा (उत्पन्न) हो गयी। ३०। तदनन्तर हाथ जोड़ कर लक्ष्मण गद्गद कंठ से यह बात बोले— 'हे सीताजी, आप यह क्या बोली ? निश्चय ही वे अघटित वचन हैं। ३१। मैंने तो यथार्थ बात कही कुछ अन्याय की बात तो नहीं कही। हे माता, सच्ची बात सुनिए, पंच महाभूत और सूर्य उसके साक्षी हैं। ३२। आप माता हैं, तो मैं आपका पुत्र हूँ—मैं मन में ऐसा ही जानता हूँ। (श्रीराम को) भगवान् जानकर मैं सेवा करता हूँ।

पण माता तमने कहेवां न घटे, एवां मरमवचन,
शुं करुं राम नथी जो पासे, नीकर मूकुं तन । ३४ ।
एवुं कही लक्ष्मणनी आंखे, चाली आंसुनी धार,
पछी मढीनी पूंठळ लीक ज ताणी धनुष तणी तेणी वार । ३५ ।
अरे जानकी अमो आव्या विण, जो तमो नीकळो बहार,
तो रामचंद्रनी आण छे तमने, सत्यें वचन निरधार । ३६ ।
अमो आव्या विण आण ओळंगी, मढीमां पेसे जेह,
तो बळीने भस्म थजो ते प्राणी, निश्चे कहुं छुं एह । ३७ ।
एम आण दईने चाल्या लक्ष्मण, मळवाने रघुवीर,
सीताजीनां वचन संभारे, ने नेत्रमां चाले नीर । ३८ ।
श्रुति आधारे स्वरूप खोळवा, संत प्रवेशे ज्यम,
संसारतापे जीव तप्यो, जाय सद्गुरुने आश्रम । ३९ ।
ज्यम तृषावंत जाह्नवी जळ उपर, पीवा तत्क्षण जाय,
तेम रामनी पासे लक्ष्मण आवे, सत्वर पंथ पळाय । ४० ।
रामनां पगलां ध्वजांकुश मंडित, पडियां पृथ्वीमांहे,
ते पगलां जोता लक्ष्मण आव्या, रघुपति बेठा ज्यांहे । ४१ ।

स्वप्न में भी कोई कपट की बात नहीं है । ३३ । परन्तु हे माता, ऐसे मर्म (-भेदी) वचन बोलते हुए आपको शोभा नहीं देता । मैं क्या करूँ, जो राम पास नहीं हैं । नहीं तो, मैं शरीर त्याग दूँ ।' ३४ । ऐसा कहते ही लक्ष्मण की आँखों से आँसुओं की धारा बह चली । तदनन्तर, उन्होंने उस समय कुटी के पीछे धनुष से रेखा ही खींच दी । ३५ । (वे बोले-)— 'हे जानकी, बिना हमारे (लौट) आये, यदि आप बाहर निकलें, तो आपको श्रीराम की शपथ है । मेरी बात निश्चय ही सत्य है । ३६ । मैं निश्चय-पूर्वक यह कह रहा हूँ कि बिना हमारे लौट आये, जो यह रेखा लाँघकर कुटी में प्रवेश करेगा, वह प्राणी जलकर भस्म हो जाएगा ।' ३७ । इस प्रकार शपथ दिलाकर लक्ष्मण श्रीराम से मिलने के लिए चल दिये । वे सीता की (कही) बातों को स्मरण कर रहे थे और उनकी आँखों से (अश्रु-) जल बह रहा था । ३८ । जिस प्रकार सन्त आत्म-स्वरूप की खोज करने के लिए श्रुति (वेद) के आधार से (आत्म-स्वरूप में) प्रविष्ट हो जाता है, अथवा संसार के ताप से जीव तप्त हो जाता है, तो वह सद्गुरु के आश्रम में जाता है, अथवा प्यासा मनुष्य गंगा के जल के पास उसे पीने के लिए तत्क्षण चला जाता हो, उस प्रकार लक्ष्मण श्रीराम के पास आ रहे थे । वे मार्ग में शीघ्रता से जा रहे थे । ३९-४० । श्रीराम

अश्वत्थ हेठळ बेठा छे मनमोहन सुंदर श्याम,
त्यारे कंज समुं करमायुं दीठुं, लक्ष्मणनुं मुख राम। ४२।
पछी सौमित्रीए जई सत्वर मूक्युं, रामने चरणे शीश,
भाई सीताने एकली मूकी, तुं क्यम आव्यो आ दीश ? ४३।
त्यारे लक्ष्मणजीने रडवुं आव्युं, चाली आंसुधार,
महाराज मुजने दुःख थयुं जाणे, देह तजुं आ वार। ४४।
को असुरे हाक ज मारी वनमां, लेईने मारुं नाम,
ते साद सुणीने सीताए मुजने, मोकलियो आ ठाम। ४५।
वळी वचनबाण मार्या छे मुजने, भेदायुं सहु अंग,
कहेवाय नहि ए वाणी जाणे, प्राण तजुं श्रीरंग। ४६।
पछे लक्ष्मणने रुदे चांपी, आपी धीरज श्रीरघुवीर,
एवां स्त्रीओनां मन अधीर होय माटे, दुःख नव धरीए धीर। ४७।
पुण्यपवित्र छो बांधव मारा, शोक समावो सर्व,
हुं जाणुं छुं तमने नथी स्वप्ने, मोह काम मद गर्व। ४८।

के ध्वज, अंकुश (जैसे दिव्य) चिह्नों से विभूषित पाँव भूमि में पड़े, अर्थात् अंकित हो गये थे। उन पाँवों (के चिह्नों) को देखते हुए लक्ष्मण वहाँ आ गये, जहाँ श्रीराम बैठे थे। ४१। मनमोहन सुन्दर श्याम (शरीर-धारी) श्रीराम पीपल के पेड़ तले बैठे हैं (थे)। तब उन्होंने लक्ष्मण के मुख को कमल के समान म्लान देखा। ४२। तदनन्तर लक्ष्मण ने सत्वर जाकर श्रीराम के चरणों में मस्तक रखा, (तो उन्होंने पूछा—) 'हे भाई, सीता को अकेली छोड़कर तुम इस समय कैसे आ गये ?'। ४३। तब लक्ष्मण को रुलाई आ गयी; (आँखों से) आँसुओं की धारा बहती चली। (वे बोले-) 'हे महाराज, मुझे (ऐसा) दुख हो गया कि मैं समझ रहा हूँ, इस समय देह त्याग दूँ। ४४। किसी असुर ने मेरा नाम लेकर वन में मुझे पुकारा। वह स्वर सुनकर सीताजी ने मुझे इस स्थान (की ओर) भेज दिया। ४५। इसके अतिरिक्त उन्होंने वचन रूप बाण मुझपर चला दिये और मेरे समस्त अंग (अर्थात् हृदय) को भेद डाला। वह वाणी कही नहीं जाती। हे श्रीरंग, मानो मैं प्राण त्याग दूँ।' ४६। तदनन्तर श्रीरघुवीर ने लक्ष्मण को हृदय से लगा लिया और उन्हें धीरज बँधा दिया। (और कहा—) 'ऐसी स्त्रियों का मन अधीर हो जाता है, अतः हे धैर्यशाली, तुम (उस बारे में) दुख (धारण) न करो। ४७। मेरे भाई, तुम पुण्य (-वान तथा) पवित्र हो। अतः समस्त शोक का लोप हो जाए। मैं जानता हूँ कि तुम्हें स्वप्न में

एम समाधान लक्ष्मणनुं करीने, ऊठ्या श्रीरघुनाथ,
पंचवटी भणी चाल्या पोते, ग्रही लक्ष्मणनो हाथ। ४९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

लक्ष्मण केरो हाथ झाली, रघुपति आश्रम जाय रे,
हवे पंचवटीमां रावण आव्यो, तेनी कहुं कथाय रे। ५०।

* * *

भी मोह, काम, मद तथा गर्व नहीं (हो सकता) है।' ४८। इस प्रकार श्रीरघुनाथ लक्ष्मण का समाधान करके उठ गये। और लक्ष्मण का हाथ पकड़कर वे स्वयं पंचवटी की ओर चल दिये। ४९।

रघुपति श्रीराम लक्ष्मण का हाथ पकड़े हुए आश्रम (की ओर) जा रहे थे। अब (इधर) रावण पंचवटी में आ गया। उसकी कथा कहता हूँ। ५०।

* * *

अध्याय—१५ (रावण द्वारा सीता का अपहरण)

राग सामेरी

ज्यारे पंचवटीथी नीकळ्या, चालिया पन्नगभूप,
त्यारे दशानन त्यां आवियो, धरी जोगी केरुं रूप। १।
शेली शींगी पावडी, शिर जटा झोळी संग,
ज्यम होय योगी निरंजनी, एम धरी विभूति अंग। २।
एवुं कपट करीने आवियो, मन हरण करवा चाह,
ज्यम चंद्रमंडळ जानकीने, आवे ग्रहवा राह। ३।

अध्याय—१५ (रावण द्वारा सीता का अपहरण)

जब पंचवटी से सर्पराज शेष (के अवतार लक्ष्मण) चल दिये, तब रावण योगी का रूप धारण करके वहाँ आ गया। १। उसके मस्तक पर जटाएँ थीं। जिस प्रकार कोई निरंजनी योगी हो, उस प्रकार उसने अपने अंग में विभूति लगा दी थी; और (उसके पास) सेली, सींगी और खड़ाऊँ थीं, सिर पर जटा थी तथा साथ में झोली थी। २। ऐसा कपट करके वह आ गया। उसके मन में (सीता का) अपहरण करने की इच्छा

ज्यम हरणी ग्रहवा व्याघ्र आवे, अग्नि पासे पतंग,
चार्वाक ज्यम वेदांत आगळ, गरुड पास पन्नग। ४।
ज्यम शिवनी पासे काम आवे, भस्म थावा तेह,
तेम जानकीनी पास आव्यो, पापी रावण एह। ५।
ते सीताजीनुं रूप दीठुं, रावणे तेणी वार,
त्रैलोकमां एवुं नथी, कोटि रति अवतार। ६।
हवे देव सर्वे गुप्तरूपे, रह्या नभमां जोय,
ते परस्पर वातो करे हवे, रावणकुळ क्षय होय। ७।
एणे आदिशक्ति मात उपर, करी कुदृष्टि जाण,
माटे आजथी रावणने बेठी, अवदशा निरवाण। ८।

थी। जिस प्रकार राहु ग्रह चद्र-मण्डल (को ग्रसने के हेतु उस) के पास आता है, उस प्रकार रावण रूपी राहु जानकी रूपी चन्द्र-मण्डल के पास आ गया। ३। जिस प्रकार हिरनी को पकड़ने के लिए नाघ आता हो, अग्नि के पास पतंग आता हो, वेदान्ती व्यक्ति के पास चार्वाक‡ आता हो, गरुड़ के पास सर्प आता हो, अथवा जिस प्रकार शिवजी के पास कामदेव भस्म हो जाने के लिए ही आ गया हो, उस प्रकार वह पापी रावण (नष्ट हो जाने के लिए ही) सीता के पास आ गया। ४-५। उस समय रावण ने सीता के उस रूप को देखा, (तो उसने स्वीकार किया कि) ऐसा (रूप) त्रिभुवन में नहीं है, वह (मानो) करोड़ों रतियों का (सम्मिलित) अवतार है। ६। अब सब देवता गुप्त रूप से आकाश में से देखते रहे। वे परस्पर बातें कर रहे थे कि अब रावण का नाश हो जाएगा। ७। समझिए कि उसने आदि शक्ति (जगत् की) माता पर बुरी दृष्टि की (उसकी ओर बुरी दृष्टि से देखा है)। अतः आज से रावण के लिए निश्चय ही अवदशा (आ) बैठी है। ८। जिस प्रकार कामधेनु की अभिलाषा करने के कारण कार्तवीर्य सहस्रार्जुन[1] क्षय को प्राप्त हो गया

टिप्पणी:— ‡ चार्वाक : नास्तिक (वेद-विरोधी) जड़वाद का प्रातिनिधिक एक आचार्य, जो बृहस्पति का शिष्य था। उसके अनुसार भौतिक जगत् ही सत्य है, परमात्मा परलोक-स्वर्ग-नरक आदि कल्पना मात्र है, भौतिक सुख ही परम श्रेयस्कर है।

टिप्पणियाँ:— १ कार्तवीर्य सहस्रार्जुन : हैहयाधिपति सहस्रार्जुन अथवा कार्तवीर्य जन्मतः कर-विहीन था। उसने आराधना द्वारा श्रीगणेश को प्रसन्न कर लिया, तो उन्होंने उसे सहस्र हाथों से युक्त सुन्दर शरीर प्रदान किया। इससे वह 'सहस्रकर' भी कहाता है। उसने बाहुबल से समस्त पृथ्वी को जीत लिया था। एक समय शिकार के लिए घूमते-घूमते वह जमदग्नि ऋषि के आश्रम में आ गया। उस ऋषि ने कामधेनु (जो उसे इन्द्र से प्राप्त हुई थी) की सहायता से सहस्रार्जुन का स्वागत सत्कार किया।

कामधेनुना अभिलाषथी, क्षय पाम्यो सहस्रार्जुन,
थयो भस्म जालंधर तथा धर्यु पारवती पर मन। ९।
एम रावण आवी बोलियो, वैदेही प्रत्ये वाण,
आ वनमां तुं एकली स्त्री, स्वामी तारो कोण? १०।
त्यारे सीता वळतां बोलियां, सुणो महापुरुष मतिधीर,
काकुस्थकुल पुर अयोध्या मम स्वामी श्रीरघुवीर। ११।

और पार्वती पर मन लगा दिया, तो (फल-स्वरूप) जलन्दर दैत्य[2] भस्म हो गया, उस प्रकार सीता की अभिलाषा करने के कारण रावण की स्थिति हो जाएगी।' ९। रावण आकर सीता से इस प्रकार वचन बोला— 'इस वन में तुम अकेली स्त्री हो। तुम्हारा पति कौन है?।' १०। तब प्रत्युत्तर में सीता बोली— 'हे धीर-मति महापुरुष, सुनिए। काकुत्स्थ[3] कुल (में उत्पन्न राजाओं) की नगरी अयोध्या है। रघु[4] (-कुल में उत्पन्न) वीर श्रीराम मेरे पति हैं। ११। शिवजी के धनुष को तोड़कर श्रीराम ने मेरा वरण किया और दशानन रावण के घमण्ड का हरण किया—ऐसे

तदनन्तर वह राजा कामधेनु को बलात् अपने साथ ले जाने लगा। कुछ दिनों पश्चात् जब जमदग्नि के पुत्र परशुराम विद्याध्ययन करके लौट आये, तो कामधेनु को चुरानेवाले सहस्रार्जुन को दण्ड देने के लिए उद्यत हो गये। वाद में परशुराम ने सहस्रार्जुन का वध किया।

२ जलंदर दैत्य : समुद्र और गंगा के पुत्र जलंदर दैत्य ने त्रिभुवन को जीत लिया था। एक समय नारद से उसने पार्वती की सुन्दरता की प्रशंसा सुनी, तो वह उसके प्रति आसक्त हो गया। फिर उसने पार्वती को लाने के हेतु राहु को भेज दिया, तो शिवजी ने राहु को भगा दिया। तदनन्तर शिवजी और जलंदर का युद्ध हुआ। एक दिन जलंदर शिवजी का रूप धारण कर पार्वती के पास गया था। जलंदर अपनी पत्नी वृंदा के शील के वल से अजेय था। अत: शिवजी के सहायक भगवान् विष्णु ने जलंदर का वेश धारण करके वृंदा का शील भंग कर दिया। उससे शिवजी के हाथों उस दैत्य का वध हो गया।

३ काकुत्स्थ कुल : ककुत्स्थ राम के पूर्वजों में से एक ईक्ष्वाकु-वंशोत्पन्न परम प्रतापी राजा था। आडिवक से जब इन्द्र युद्ध कर रहा था, तव देवों की सहायता करते हुए उसने इन्द्र को वृषभ अर्थात् बैल बनाया और उसकी पीठ पर आरूढ़ होकर उसने युद्ध में विजय प्राप्त की थी। इसलिए उसे 'ककुत्स्थ' उपाधि प्राप्त हो गयी। ऐसे परम प्रतापी राजा के नाम पर उसका वंश या कुल 'काकुत्स्थ कुल' कहा जाता है— राम उसी वंश में उत्पन्न थे।

४ रघु-कुल : रघु राम के पूर्वजों में से एक ईक्ष्वाकु-कुलोत्पन्न राजा था। वह अयोध्या का प्रथम राजा था। वह परम प्रतापवान् तथा उदार था। उसकी महत्ता के कारण उसका कुल 'रघुकुल' कहा जाता है। रघु-कुल में उत्पन्न होने के कारण राम को रघुवीर, राघव कहते हैं।

चंडांशनुं कोदंड खंडी, वर्या मुजने राम,
दशानननो दर्प हरियो, एवा पूरणकाम । १२ ।
ते प्रभुनी हुं सुंदरी छुं जनकतनया जाण,
पाळवा पितृवचन आव्यां, वन विषे परमाण । १३ ।
जेणे हण्यां सुबाहु ताडिका, खर दुखर त्रिशिरा जेह,
विरूप कीधी शूर्पणखाने, एवा समरथ एह । १४ ।
हवे रावण कुंभकरण तणो करी, कुळ सहित निपात,
अवधपुरमां पछे जईशुं, सुणो जोगी वात । १५ ।
माटे एक क्षण बेसो तमो, आवशे हमणां राम,
आतिथ्य पूजन तमारुं, करशे यथा अभिराम । १६ ।
त्यारे रावण कहे हो सुंदरी, तुं एकली शे आंहे,
को हरण करी जाशे तने, फरे असुर अति वनमांहे । १७ ।
जानकी कहे तुं नथी जोगी, कपटी दीसे कोई;
तुं वचन बोले छळ तणां, वळी कपट दृष्टे जोय । १८ ।
सुणी कहे रावण अरे हर हर, हुं अतिथि आज,
हुं भूख्यो छुं कांई आप्य भिक्षा, थाय मारुं काज । १९ ।

हैं वे पूर्णकाम श्रीराम । १२ । समझिए कि मैं उन प्रभु राम की स्त्री (तथा) जनक राजा की कन्या हूँ । पिताजी के वचन का पालन करने के लिए, वे निश्चय ही वन में आ गये हैं । १३ । जिन्होंने सुबाहु, ताड़का, खर, दूषण, त्रिशिरा को मार डाला और शूर्पणखा को विद्रूप कर दिया, वे (राम) ऐसे सामर्थ्यशील हैं । १४ । हे योगी, मेरी बात सुनिए । अब रावण और कुम्भकर्ण का कुल-सहित निःपात करके हम अयोध्यापुरी में लौट जाएँगे । १५ । अतः एक क्षण आप बैठिए, अभी राम आएँगे । वे यथायोग्य (सुन्दर रूप से) आपका आतिथ्य और पूजन करेंगे ।' १६ । तब रावण ने कहा— 'हे सुन्दरी, तुम यहाँ अकेली हो । कोई अपहरण करके तुम्हें (ले) जाएगा । इस वन में वहुत राक्षस घूमते-फिरते हैं ।' १७ । (यह सुनकर) जानकी ने कहा— 'तुम योगी नहीं हो, कोई कपटी दिखायी दे रहे हो । तुम छल-कपट-पूर्ण बातें कर रहे हो । इसके अतिरिक्त कपट-दृष्टि से देख रहे हो ।' १८ । यह सुनकर रावण वोला— 'अरी ! हर-हर ! आज मैं अतिथि हूँ । मैं भूखा हूँ, (अतः मुझे) कुछ भिक्षा दो, तो मेरा काम वन जाएगा ।' १९ । उस समय समस्त देवता, जो आकाश में गुप्त रूप से (यह देख) रहे थे, सीता से विनम्रता-पूर्वक (ऐसे) वचन कहते रहे और उसकी वे स्तुति करते

ते समे सुर सहु गुप्तरूपे, रह्या अंतरिक्ष जेह,
विनयवचन कहेता जानकीने, स्तुति करता तेह । २० ।
हे जगतजनुनी जाओ तमो, लंका विषे निरधार,
बंध छोडो अमारा, करो रावणकुळ संहार । २१ ।
जो स्पर्श करशे तमारो, थशे भस्म रावण भूप,
माटे गुप्त रूप करो तमारुं, धरो छाया रूप । २२ ।
तमारे मिषे आवशे, रघुवीर लंकामांहे,
त्यारे असुरकुळ संहारशे, माटे जाओ सत्वर त्यांहे । २३ ।
पछी सूर तणी साखे करी, कर्युं गुप्त रूप अनुप,
कारज करवा देवनुं तव धर्युं छायारूप । २४ ।
फळ लेई करमां जानकी, आपवा आव्यां त्यांहे,
कर आव्या रेखा बारणे, तव रावणे ग्रही ब़ांहे । २५ ।
कर ग्रही लीधां जानकी, अंतरिक्ष तेणी वार,
रावणे रूप प्रगट कर्युं, तव थयो हाहाकार । २६ ।
सीताने रथमां बेसाड्यां, पोते बेठो मांहे,
उतावळो रथ हांकियो, पछी वायुवेगे त्यांहे । २७ ।

रहे । २० । 'हे जगज्जननी, तुम निश्चय ही लंका में जाओ, हमारे बन्धन छोड़ दो (काट दो) और रावण-के कुल का संहार करो । २१ । यदि राजा रावण तुम्हें स्पर्श करे, तो वह (जलकर) भस्म हो जाएगा । अतः अपने रूप को गुप्त करो और छाया रूप को धारण करो । २२ । तुम्हारे निमित्त श्रीराम लंका में आएँगे और तब असुर-कुल का संहार करेंगे । अतः तुम वहाँ शीघ्रता से जाओ ।' २३ । तदनन्तर सीता ने देवताओं को साक्षी करके अपने अनुपम रूप को गुप्त कर दिया और देवों का कार्य करने के हेतु तब छाया रूप धारण किया । २४ । (फिर) हाथ में फल लेकर सीता (रावण को) देने के लिए वहाँ आ गयी । (जब उसने हाथ बढ़ा दिया तो) उसका हाथ (लक्ष्मण द्वारा खींची हुई) रेखा रूपी द्वार में (से बाहर) आ गया; तब रावण ने वहाँ उसे पकड़ लिया । २५ । उस समय हाथ पकड़कर रावण ने जानकी को आकाश में ले लिया और अपना रूप प्रकट किया । तब हाहाकार मच गया । २६ । उसने सीता को रथ में बैठा दिया और (फिर) स्वयं भी अन्दर बैठ गया । तत्पश्चात् उसने वहाँ (से) शीघ्रता-पूर्वक रथ को वायु-वेग से चला दिया । २७ । (रथ के अन्दर) जानकी भयभीत होकर बहुत आक्रन्दन कर रही थी । उसकी आँखों से अश्रु-धारा चल रही थी; वह

भयभीत थईने जानकी, करतां घणुं आक्रंद,
नेत्र आंसुधार चाले, पड्यां असुरने फंद । २८ ।
रुदन सुणी सीता तणुं, वन पक्षी तरुवर रोय,
भय पामी नाठा मुनि सहु, ऊभा रह्या नहि कोय । २९ ।
रुदन करतां जाय सीता, आर्तनाद अपार,
हा राम ! हा लक्ष्मण ! धनुर्धर, धाओ मारी वहार । ३० ।
सीता विचारे मन विषे जे, करम कीधुं आप,
में लक्ष्मणने कुवचन कह्यां ते, लाग्युं मुजने पाप । ३१ ।
कोई करशे छळ साधु पुरुषने, कहेशे कुवचन जेह,
घणुं दुःख भोगवशे अहीं, पछी नरके पडशे तेह । ३२ ।
एम रुदन करतां जाय सीता, रटे रसना राम,
रथ हांकी रावण जाय छे, दक्षिण दिशा अभिराम । ३३ ।

वलण (तर्ज़ वदलकर)

दक्षिण दिशाए जाय रावण, आणी मन उन्माद रे,
एवे जटायुए सांभळ्युं सीतानो आर्तनाद रे । ३४ ।

* * *

उस राक्षस के वन्धन में पड़ जो गयी थीं । २८ । सीता का रुदन सुनकर, वन के पक्षी और तरुवर रो पड़े । भय को प्राप्त होकर सब मुनि भाग गये; (वहाँ) कोई भी खड़े नहीं रहे । २९ । सीता आर्त स्वर में अपार रुदन करती हुई जा रही थी— 'हा राम ! हा लक्ष्मण ! हे धनुर्धरो ! मेरी सहायता के लिए दौड़ो । ' ३० । सीता ने मन में विचार किया— 'मैंने जो स्वयं कर्म किया, मैंने लक्ष्मण से जो दुर्वचन कहे, उसका मुझे पाप लग गया । ३१ । जो कोई किसी साधु पुरुष के साथ कपट (-पूर्ण व्यवहार) करे, दुर्वचन कहे, तो वह यहाँ बहुत दुःख का भोग करेगा और (मृत्यु के) पश्चात् नरक में पड़ जाएगा । ' ३२ । (इधर) सीता इस प्रकार रुदन करते-करते जा रही थी; जिह्वा से राम (का नाम) रट रही थी । (उधर) रावण बिना रुके रथ को दक्षिण दिशा की ओर चलाता जा रहा है (था) । ३३ ।

वन में उन्माद लाते हुए (अनुभव करते हुए, उन्मत्त होकर) रावण दक्षिण दिशा की ओर जा रहा है (था) । उस समय जटायु ने सीता का आर्तनाद सुना । ३४ ।

* * *

अध्याय—१६ (रावण द्वारा जटायु को आहत करना और सीता को अशोक-वन में रखना)

राग धनाक्षरी

सीता करती विविध विलाप जी, सुणी जटायुने थयो परिताप जी,
धाईने आव्यो ते पक्षीराज जी, क्यम जाय पापी करी,
विपरीत काज जी। १ ।

ढाळ

करी काज विपरीत जाय छे, अल्या ऊभो रहे मतिमंद,
करी हरण रघुवरनी प्रिया, ज्यम ग्रहे राहु चंद्र। २ ।
ब्रह्मवंशमां चंडाळ प्रगट्या, आचरण उत्तम शुंय,
दीपक थकी ज्यम थाय काजळ, एवो प्रगट्यो तुंय। ३ ।
धिक्क डहापण ताहरुं, तप तेज बळ धिक्कार,
एवां वचन पंखीनां सुणी, मूक्यां रावणे बाण अपार। ४ ।
चंचु वडे ते बाण काप्यां, गाजियो द्विजराज,
पछे रावणनो रथ भांगी नाख्यो, कर्युं एवुं काज। ५ ।

अध्याय—१६ (रावण द्वारा जटायु को आहत करना और सीता को अशोक-वन में रखना)

सीता विविध (प्रकार से) विलाप कर रही थी। उसे सुनकर जटायु को परिताप अनुभव हो गया। वह पक्षिराज दौड़कर आ गया। (उसने सोचा–) यह पापी विपरीत काम करके कैसे जा सकता है। १।

(उसने कहा—) 'अरे मन्द-मति, तुम विपरीत काम करके जा रहे हो, खड़े रहो (ठहर जाओ)। जैसे राहु चन्द्र को ग्रस लेता हो, वैसे तुमने रघुवीर राम की प्रिया का अपहरण किया है। २। (वस्तुतः) क्या तुम्हारा आचरण उत्तम है? परन्तु (मानो, तुम्हारे रूप में) ब्रह्मा के वंश में चण्डाल ही प्रकट हो गया है। जिस प्रकार दीपक से काजल उत्पन्न होता है, उस प्रकार (ब्रह्मा के वंश में) तुम उत्पन्न हुए हो। ३। तुम्हारी समझदारी को धिक्कार है! तुम्हारे जप, तप, बल को धिक्कार है।' उस पक्षी के ऐसे वचन सुनकर रावण ने (उसकी ओर) असंख्य बाण चला दिये। ४। तो उस पक्षिराज ने अपनी चोंच से उन बाणों को काट डाला और वह गरज उठा। तदनन्तर उसने रावण के रथ को तोड़ डाला। उसने ऐसा काम किया। ५। उसने (रावण के) सारथी के मस्तक को तोड़कर फेंक दिया और क्रोध धारण करके रावण

चूंटी नाख्युं चंचुए करी, सारथिनुं शीश,
दश मुगट लई रावण तणा, कर्या चूर्ण ते धरी रीस । ६ ।
अलंकार तोड्या अंगथी, वळी फाडी नाख्यां वस्त्र,
एम रावणने अकळावियो, भागी नाख्यां सरवे शस्त्र । ७ ।
एम युद्ध घणुं कर्युं जटायुए, आणी अंतर रीस,
कोची नाख्यां चंचुए करी, रावणनां दश शीश । ८ ।
घणी धार चाली रुधिरनी, वळी अंग थई पीडाय,
पछे रावण नाठो नग्न थई ते, मूकीने सीताय । ९ ।
पछे आगळ जई ऊभो रहीने, विचारे मन साथ,
अपकीर्ति थाशे माहरी, जीत्यो पक्षीए लंकानाथ । १० ।
त्यारे जटायुने कहे रावण तुज मरण क्यम थाय जाण ?
जो साचुं नव कहे तो तने छे, राम केरी आण । ११ ।
ते आण मानी पंखी बोल्यो, वचन सुणीने कर्ण,
ज्यारे पंख ऊपडे मारी त्यारे, निश्चे पामुं मर्ण । १२ ।
एवुं सांभळीने रावण धायो, करी क्रोध अपार,
तेणे जटायुने झालियो, त्यारे थयो हाहाकार । १३ ।

के दसों मुकुट लेकर उन्हें चूर-चूर कर दिया । ६ । उसके शरीर पर के आभूषणों को तोड़ डाला, इसके अतिरिक्त उसके वस्त्रों को फाड़ डाला । इस प्रकार रावण को भयभीत करा दिया, तो उसने भागते हुए सब शस्त्रों को फेंक दिया । ७ । इस प्रकार मन में क्रोध लाते हुए उसने घोर युद्ध किया और रावण के दसों मस्तकों को चोंच से कोंच दिया । ८ । (तो) रक्त की बड़ी धारा बह चली; उसके अतिरिक्त उसके शरीर में पीड़ा होती रही । तदनन्तर नंगा होकर वह रावण सीता को छोड़कर भाग गया । ९ । (परन्तु) आगे जाकर उसने फिर खड़े होते हुए, अर्थात् ठहरकर मन में विचार किया कि मेरी (ऐसी) अपकीर्ति हो जाएगी— लंकानाथ रावण को एक पक्षी ने जीत लिया । १० । तब रावण ने जटायु से कहा, 'जानते हो तुम्हारी मृत्यु कैसे होगी ? यदि सत्य न कहोगे, तो तुम्हें राम की शपथ है ।' ११ । कानों से उसकी ऐसी बात सुनकर उस पक्षी (जटायु) ने उस शपथ को स्वीकार करते हुए कहा— 'जब मेरे पंख उखड़ेंगे तब मैं निश्चय ही मृत्यु को प्राप्त हो जाऊँगा । १२ ।' ऐसा सुनकर रावण बहुत क्रोध करके दौड़ा, और उसने जटायु को पकड़ लिया । तब हाहाकार हो गया । १३ । तदनन्तर (रावण ने जटायु के) पंख पकड़ कर और हाथ से वार करके नष्टप्राय कर डाला तो उसके अंग से बहुत

पछे पांखो झाली वार करशुं, फांसी नाखी त्यांहे,
घणुं रुधिर चाल्युं अंगथी, पड्यो विकळ पृथ्वी मांहे। १४।
पछी रावण चाल्यो त्यां थकी, सीता चढावी स्कंध,
अवाचक थई पड्यो पंखी, छूट्या देहना बंध। १५।
सीताए घणे शोक करीओ, जटायुनो जाण,
श्रीराम मळतां लगी तारा, रहेजो पंखी प्राण। १६।
देह त्यागीओ मुज अर्थ माटे, थजो तुज कल्याण,
कहेतां गई एम जानकी, माटे रह्या एना प्राण। १७।
आकाशमारग लेई चाल्यो, रूवे सीता त्यांहे,
मातंग पर्वत उपर बेठा, पांच वानर ज्यांहे। १८।
नल नील जांबुवान सुग्रीव, पांचमो हनुमंत,
विलाप सुणी सीता तणो, ते थया छे दुःखवंत। १९।
ते कपीने जोई जानकीए, भूषण नांख्या त्यांहे,
चीर केरो पदर फाडी, नाख्यो पर्वत मांहे। २०।
पछी रावणने जोई कोपियो हनुमंत तेणी वार,
जेनो महिमा व्यास वाल्मीके, वखाण्यो छे अपार। २१।

रक्त बह चला और वह विकल होकर भूमि पर गिर गया। १४। तत्पश्चात् सीता को कंधे पर चढ़ाकर, अर्थात् रखकर रावण वहाँ से चल दिया। (इधर) वह पक्षी चुप होकर गिर पड़ा। उसकी देह के बन्धन (मानो) छूट गये। १५। समझिए कि तब सीता ने जटायु के विषय में बहुत शोक किया। (वह बोली—) 'हे पक्षिराज, श्रीराम के तुमसे मिलने तक (तुम्हारे) प्राण रह जाएँ। १६। तुमने मेरे लिए प्राण त्याग दिये, अतः तुम्हारा कल्याण हो।' सीता ऐसा कहते हुए गयी। अतः उस (जटायु) के प्राण रह गये। १७। रावण सीता को लिए आकाश मार्ग से जा रहा था, तो वहाँ वह रुदन करती रही, जहाँ मातंग पर्वत पर पाँच वानर बैठे हुए थे। १८। वे थे नल, नील, जाम्बवान, सुग्रीव और पाँचवाँ था हनुमान। सीता के विलाप को सुनकर वे दुखी हो गये। १९। उन कपियों को देखकर सीता ने अपने आभूषण वहाँ (उनकी ओर) फेंक दिये, वस्त्र का पल्लव फाड़कर पर्वत पर फेंक दिया। २०। तदनन्तर उस समय रावण को देखकर वह हनुमान क्रुद्ध हो गया, जिसकी महिमा का व्यास और वाल्मीकि ने अपार बखान किया है। २१। रुद्र का जो अवतार है, वह कपि हनुमान हाथ में गदा लेकर उछल पड़ा। उस हनुमान ने आकर रावण के साथ घोर युद्ध किया। २२। तब पराजित होकर रावण ने

कपि रुद्रनो अवतार जे, कूद्यो गदा ग्रहीने हाथ,
हनुमंते आवीने कर्युं घणुं युद्ध रावण साथ। २२।
त्यारे हार्यो रावण माया कीधी, थयो अंतरधान,
रावण दीठो नहि त्यारे, पाछा वळ्यो हनुमान। २३।
पछे आभूषण सीता तणां, बांधियां पालवमांहे,
ऋषिमुक पर्वत दाटियां, हनुमंतजीए त्यांहे। २४।
हवे लंकामाँ लेई आवियो, जानकीने अघवंत,
घणी प्रार्थना करी सीतानी, तेणे बेसाडी एकान्त। २५।
हुं तने पटराणी करुं, तुं मने भज हो नार,
एम कालावाला घणा करीआ, रावणरहित विचार। २६।
नथी थतो आग्रह स्पर्शनो छे शापनो भय मन,
ए राम रावण एक छे, सुण सीता मुज वचन। २७।
अमो बंनो जण छुं एकराशि, नथी कांईये भेद,
मारी अवज्ञा शाने करे? माटे मुंने वर तुं वेद। २८।
चित्रा नक्षत्रमां राम परण्या, हुं हरी लाव्यो सत्य,
चित्र नक्षत्र ते तुला राशि, एक छे ए मत्य। २९।

माया की और वह अन्तर्धान हो गया। (फिर) जब हनुमान रावण को नहीं देख पाया (अर्थात् रावण नहीं दिखायी दिया) तो वह पीछे मुड़ गया। २३। तदनन्तर हनुमान ने सीता के आभूषणों को उस पल्लव में बाँध दिया और वहाँ ऋष्यमूक पर्वतपर (भूमि में) गाड़कर रख दिया। २४। अब (इधर) वह पापी (रावण) सीता को लंका में ले आया। (फिर) उसने उसे एकान्त में बैठा दिया और उससे बहुत विनती की। २५। 'हे नारी, मैं तुम्हें पटरानी बनाऊँगा; तुम मेरा वरण करना।' इस प्रकार रावण ने विवेकहीन होकर गिड़गिड़ाहट के साथ बहुत चापलूसी की। २६। उसे स्पर्श-सम्बन्धी कोई आग्रह नहीं था, (क्यों कि) उसके मन में शाप सम्बन्धी भय था। (फिर उसने कहा—) 'हे सीता, मेरी बात सुनो। वह राम और रावण एक ही हैं। २७। हम दोनों जने (जन्मना) एक-राशि हैं, (अतः हम दोनों में) कोई भेद नहीं है। मेरी अवज्ञा किसलिए कर रही हो? अतः समझदार होकर तुम मेरा वरण करो। २८। यह सत्य है, राम ने तुमसे चित्रा नक्षत्र पर परिणय किया, और मैं हरण कर तुम्हें लाया। वह मत भी है कि चित्रा नक्षत्र और तुला राशि दोनों एक (-योग) हैं। २९। अतः हे भामिनी, मेरा वरण करो। मैं बलवान रावण राजा हूँ।' रावण के ऐसे वचन सुनकर फिर

माटे भामिनी मुजने भजो, हुं बळियो रावणराय,
एवां वचन सुणी रावण तणां पछे बोलियां सीताय। ३०।
अरे मूर्ख रावण मंदबुद्धि मलिन तस्कर अंध,
पतंग ज्यम दीपने मळवा, एम इच्छे संबंध ? । ३१।
अल्या राम रावण एकरूपे, जाणे छे तुं जेय,
वे एकराशि गणे छे ज्यम वायस ने वैनतेय। ३२।
शृगाल ने सिंह एकराशि पण आवे केम समान ?
तरणी तम ने मेरु मशक, सुधा ने सुरापान। ३३।
दरिद्री दातार कुरकुट, कुंजर राशि एक,
काशी ने वळी कर्मनाशा, हरख हाण विशेक। ३४।
कपटी ने कमळासन जेवो, कूबडो ने काम,
समान एवा जाणजे तुं, रावण ने ए राम। ३५।
अल्या कामे जीत्युं सर्वने पण बाळियो शिवनाथ,
दहन अग्नि करे सहु पण, न चाले घन साथ। ३६।
अल्या गांजे छे तुं सर्वने, नव करीश मुजशुं आळ,
क्षण मांहे थईश भस्म बळी मुंने स्पर्शतां तत्काळ। ३७।

सीता बोली। ३०। 'हे मन्द-बुद्धि रावण, हे मलिन (पापी), हे अन्धे (अर्थात् विवेकरूपी नेत्रों से रहित) चोर! जिस प्रकार पतंग दीप से मिले, उस प्रकार तुम (मेरे) सम्बन्ध की कामना कर रहे हो। ३१। अरे राम और रावण को जो तुम एकरूप समझ रहे हो, वह वैसे ही है जैसे तुम कौआ और गरुड़—इन दोनों को एक-राशि समझ रहे हो। ३२। सियार और सिंह एक-राशि हैं; परन्तु वे समान कैसे हो सकते हैं ? सूर्य और अन्धकार, मेरु और मच्छड़, सुधा-पान और सुरा-पान, दरिद्र और दाता, कुक्कुट (मुर्गा) और कुंजर (हाथी)—एक-राशि हैं। इनके अतिरिक्त काशी और कर्मनाशा, (लाभ से होनेवाला) आनन्द और विशेषरूप हानि (से होनेवाला दुःख), कपटी और कमलासन (ब्रह्मा), कूबड़ा और काम (-देव-सा सुन्दर)— इन्हें जिस प्रकार तुम समान समझते हो, उस प्रकार रावण और इन राम को समान समझना। ३३-३५। अरे, कामदेव ने सबको जीत लिया, परन्तु शिवनाथजी ने उसे जला डाला। अग्नि सबको जलाती है, परन्तु मेघ से उसकी एक भी नहीं चलती। ३६। अरे, तुम सबको सता रहे हो; परन्तु तुम मुझसे खोटा व्यवहार या उपद्रव न करना। मुझे स्पर्श करते ही तुम तत्काल क्षण में जलकर भस्म हो जाओगे। ३७। जान लो, राम और लक्ष्मण दोनों थोड़े ही

श्रीराम लक्ष्मण आवशे, थोडा दिवसमां जाण,
कुळ सहित तुज संहार करशे, कहुं सत्य प्रमाण । ३८ ।
एवां वचन सुणी सीता तणां, मन विचार्युं दशशीश,
भावी हशे ते वात बनशे, जेह करशे ईश । ३९ ।
पछे अशोक वाडीमांहे राखी, सीताने तेणी वार,
एक राक्षसी त्रिजटा नामे, पासे मूकी सार । ४० ।
रावणे तेने शीखवी, तुं मळी रहेजे अंग,
वळी सीताने समजावजे, ज्यम करे मारो संग । ४१ ।
चोकी करवा जानकीनी, मूकिया रखवाळ,
पांच कोटी निशाचर महा, अधम तनु विकराळ । ४२ ।
अनेक बीजी राक्षसी, बिवडावती नित्यमेव,
ते मध्ये त्रिजटा विवेकी छे करे सीतानी सेव । ४३ ।
पछे सीताजीए अवधपुरनी, कही सर्वे रीत्य,
ते धीरज आपे जानकीने, थई परस्पर प्रीत्य । ४४ ।
बाई काल रघुपति आवशे मुकावशे करी युद्ध,
माटे चिंता नव करशो तमो, निज ठाम राखो वुद्ध । ४५ ।

दिन में आ जाएँगे और तुम्हारा कुल-सहित संहार करेंगे—मैं निश्चय ही सत्य कह रही हूँ ।' ३८ । सीता के ऐसे वचन सुनकर दशानन ने मन में (यह) विचार किया—भगवान जो करे, जैसी होनी हो, वैसी वह बात बन जाएगी । ३९ । तदनन्तर उस समय रावण ने सीता को अशोक उद्यान में रख दिया और उसके पास त्रिजटा नामक एक राक्षसी को रख दिया । ४० । रावण ने उसे यह सीख दी— 'तुम स्वयं सीता के साथ मिल-जुल कर रहना; फिर उसे इस प्रकार समझा देना, जिससे वह मेरा साथ (स्वीकार) करे ।' ४१ । उसने सीता पर निगरानी रखने के लिए पाँच करोड़ महा अधम तथा विकराल शरीर-धारी निशाचर पहरेदार (नियुक्त कर) रखे । ४२ । (उनके अतिरिक्त) अनेक अन्य राक्षसियाँ उसे नित्य ही डराती थीं । (परन्तु) उनके बीच (केवल) त्रिजटा विवेकी थी । वह सीता की सेवा करती थी । ४३ । तदनन्तर सीता ने अवधपुरी की समस्त गति-विधि उससे कह दी, तो उसने उसे धीरज बँधा दिया । (इस प्रकार) उन दोनों में परस्पर प्रेम (उत्पन्न) हो गया । ४४ । (उसने कहा—) 'देवी, कल रघुपति आएँगे । (फिर रावण से) युद्ध करके (तुम्हें) मुक्त करेंगे । अतः तुम चिन्ता न करना । बुद्धि को अपने स्थान, अर्थात् स्थिर रखो ।' ४५ । इस

एम अशोकवनमां रही सीता, रटे रसना राम,
हवे दंडकवनमां रघुपति करता हवा शुं काम ? । ४६ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

करता हवा शुं राम-लक्ष्मण, आव्या मृग मारी करी,
कहे दास गिरिधर सहु भाव धरीने श्रोताजन बोलो श्रीहरि । ४७ ।

* * *

प्रकार सीता अशोक-वन में रहती थी। वह जिह्वा से राम-नाम रटती थी। अब (उधर) राम दण्डक वन में क्या काम कर रहे होंगे ? ४६ ।

अब राम और लक्ष्मण क्या कर रहे होंगे ? वे मृग को मारकर आ गये। गिरधरदास कहते हैं, " हे श्रोता-जनो, सब श्रद्धा धारण करके ' श्रीहरि ' बोलिए। "

* * *

अध्याय—१७ (सीता के वियोग के कारण श्रीराम का विलाप करना)

राग वेराडी

मृगने मारी करी रे, आश्रम आवे छे दशरथतन,
कोलाहल पंखी करे रे, मारगे थाय छे मानशुकन । १ ।
लक्ष्मणने राम कहे रे, भाई कांई विपरीत दीसे वात,
जाणुं कांई विघ्न थयुं रे, आश्रममां नथी जनकनी जात । २ ।
एम कहेता रघुपति रे, आव्या पंचवटी मोझार,
सूनी पडी पर्णकुटी रे, नव दीठी सीता नार । ३ ।
ज्यम देह प्राण विना रे, उदक विना सर शोभे जेम,
मुख्य नासिका विना रे, फळ विण तरुवर दीसे तेम । ४ ।

अध्याय—१७ (सीता के वियोग के कारण श्रीराम का विलाप करना)

श्रीराम मृग को मारकर आश्रम आ रहे थे, तो पक्षी कोलाहल कर रहे थे और मार्ग में अपशकुन हो रहे थे। १ । (यह देखकर) श्रीराम ने लक्ष्मण से कहा— ' भाई, कोई विपरीत वात (हुई) दिखायी दे रही है। मैं समझ रहा हूँ कि कुछ विघ्न हो गया है और जनक-कन्या आश्रम में नहीं है। ' २ । ऐसा कहते हुए रघुपति पंचवटी में आ गये, तो पर्णकुटी सूनी पड़ी हुई थी और स्त्री सीता को (वहाँ) नहीं उन्होंने देखा। ३ । जिस प्रकार बिना प्राणों के देह, अथवा बिना पानी के

एम सीता विना गुफा रे, रामे सूनी दीठी तेणी वार,
मुनि सहु नासी गया रे, दिशाओ शून्य थई निरधार। ५ ।
त्यारे राम व्याकुल थया रे, आंखे चाली आंसुधार,
हो लक्ष्मण साचु कहे रे, क्यां छे जनकसुता सुकुमार ? । ६ ।
ऐवुं कही धरणी ढळ्या रे, मूर्छा खाईने श्रीरघुवीर,
लक्ष्मणजीए बेठा कर्या रे, आंसु लूछे ने आपे धीर। ७ ।
सीता सीता करे रे विलपे छे एम रघुकुळदीप,
रुदन करे घणुं रे, नव देखे सीताने नेत्रसमीप। ८ ।
चंद्रमुखी क्यां गई रे ? हो मृगनयनी दे दरशन,
तने में दूभी नथी रे, शा माटे रीस चढी तुज मन। ९ ।
हो जनकनी नंदनी रे, सुंदर चंपककळी सुकुमार,
गौरी गजगामिनी रे, प्रिय मुज प्राण तणो आधार। १० ।
हो गुण-सरिता सती रे, साध्वी परम मनोहर रूप,
तुं दरशन दे मने रे, केम नाखी गई मोहने कूप ? । ११ ।

सरोवर शोभा (नहीं) देता है—अर्थात् पूर्णतः शोभा-रहित होता है, वैसे ही बिना नाक के मुख और बिना फलों के तरुवर (भी शोभा-रहित) दीखते हैं; उस प्रकार, राम ने उस समय बिना सीता के (अर्थात सीता के अभाव में) उस गुफा (में स्थित पर्णकुटी) को सूनी (शोभा-रहित) देखा। सब मुनि भाग गये थे और (समस्त) दिशाएँ निश्चय ही शून्य (सूनी) हो गयी थीं। ४-५ तब राम व्याकुल हो गये। उनकी आँखों से अश्रु-धारा बह चली। 'हे लक्ष्मण, सच (-सच) कहो, वह सुकुमार सीता कहाँ है ? ' ६। ऐसा कहते हुए श्रीरघुवीर मूर्च्छित होकर धरती पर लुढ़क पड़े; (तब) लक्ष्मण ने उन्हें बैठा दिया और आँसू पोंछकर उन्हें धीरज बँधा दिया। ७। वे 'सीता', 'सीता' कह रहे थे; इस प्रकार रघुकुल-दीपक श्रीराम विलाप कर रहे थे। वे बहुत रुदन कर रहे थे (क्यों कि) अपनी आँखों से कहीं पास ही सीता को नहीं देख पा रहे थे। ८। (वे बोले—) 'हे चंद्रमुखी, तुम कहाँ गयी हो ? हे मृगनयनी, मुझे दर्शन दो। मैंने तुम्हें नहीं दुखाया था, तो मन में क्यों क्रुद्ध हो गयी हो ? ९। हे जनक-नंदिनी, हे सुन्दर सुकुमार चम्पा-कली, हे गौरी, हे गजगामिनी, हे प्रिये, मेरे प्राणों के हे आधार, हे गुण-सरिता, हे सती, हे परम मनोहर-स्वरूपा साध्वी ! तुम मुझे दर्शन दो। तुम मुझे मोह के कूप में फेंककर कैसे गयी ? १०-११। अहो, दैव (हमारे प्रति) रूठ गया है। ऐसा विपरीत काम कैसे हो गया ? उसे कौन हरण

अहो दैव रूठियो रे, केम थयुं विपरीत काज ?
कोण ए हरि गयुं रे ? कोणे लीधी अमारी लाज ? । १२ ।
वनवास पूरण करी रे, ज्यारे जईशुं अवधपुरमांहे,
माता गुरु पूछशे रे, त्यारे शुं मुख देखाडीशुं त्यांहे ? । १३ ।
जानकी तुज विना रे, नहि जाउं पुरमांहे निरवाण,
तुज वियोगथी रे, नथी रहेवातुं तलसे प्राण । १४ ।
पंचवटी तणां रे, तरुवरने पूछे रघुवीर,
कोई कहेतुं नथी रे, त्यारे रुदन करे रणधीर । १५ ।
एम करतां निशा थई रे, ऊग्यो औषधिपति नभमांहे,
त्यारे रघुपति बोलिया रे, सुमित्रासुत साथ त्यांहे । १६ ।
जाणे विधुने बींधीए रे, लक्ष्मण लाव्य तुं शर ने चाप,
ए किरण बाळे मने रे, नथी सहेवातो तन परिताप । १७ ।
नव गमे विरहीने रे, चंदन, चंद्र ने शीत समीर,
उपचार गमे नहि रे, जाये ज्ञान, विवेक ने धीर । १८ ।
हळाहळ जाणे सुधा रे, कोमळ कुसुम ते जाणे कुलीश,
एम विरह जणावता रे, माया नाटक करता ईश । १९ ।

कर ले गया ? हमारी लज्जा (प्रतिष्ठा) किसने (छीन) ली ? १२ । जब हम वनवास (की अवधि) पूर्ण करके अयोध्या में (लौट) जाएँगे, तो माता, गुरु पूछेंगे, तब वहाँ हम क्या मुँह दिखाएँ ? १३ । हे जानकी, बिना तुम्हारे मैं निश्चय ही नगर में न जाऊँगा । तुम्हारे वियोग के कारण रहा नहीं जा रहा है । मेरे प्राण तड़प रहे हैं । ' १४ । (तत्पश्चात्) श्रीराम पंचवटी के पेड़ों से पूछ रहे थे, परन्तु कोई कुछ नहीं कह रहा था । तब वे रणधीर राम रुदन करने लगे । १५ । ऐसा करते-करते रात हो गयी और आकाश में चंद्र का उदय हो गया । तब वहाँ श्रीराम लक्ष्मण से बोले । १६ । 'लगता है, हम चंद्र को भेद डालें । हे लक्ष्मण, तुम धनुष और बाण लाओ । (उसकी) वे किरणें मुझे जला रही हैं । शरीर से (वह) परिताप नहीं सहा जा रहा है । ' १७ । विरही को चन्दन, चन्द्र और शीतल पवन अच्छे नहीं लगते । उसे कोई (शीतल-) उपचार नहीं भाता । उसका ज्ञान, विवेक और धीरज (छूट) जाता है । १८ । वह अमृत को हलाहल समझता है, कोमल फूल को वज्र समझता है । इस प्रकार श्रीराम विरह (का दुःख) जतला रहे थे, वे भगवान (वस्तुतः) माया का नाटक कर रहे थे । १९ ।

प्रात: समे थयो रे त्यारे, लक्ष्मणने कहे राम,
भाई चालो वन विशे रे, शोधीए सीताने अभिराम। २०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

शोधवा चाल्या सीताने, ते जोता ठामोठाम रे,
वन शिखिर सरिता सरोवर, फरता लक्ष्मण-राम रे। २१।

* * *

(जब) प्रात:काल हो गया, तब राम ने लक्ष्मण से कहा-- 'भाई, वन में चलिए और हम सुन्दरी सीता की खोज करें।' २०।

(तत्पश्चात्) श्रीराम और लक्ष्मण सीता को खोजने के लिए चल दिये। वे स्थान-स्थान पर देख (खोज) रहे थे और वन, पर्वत, नदियाँ, सरोवर (जैसे स्थानों में) भ्रमण कर रहे थे। २१।

* * *

अध्याय—१८ (श्रीराम-लक्ष्मण का पंचवटी से गमन)

राग सारंग

श्रोताजन सहु भावे सुणजो, राखी मनमां धीर,
ज्यम मनुष्य प्राकृत चेष्टा करे, एम करता श्रीरघुवीर। १।
जेनुं शिव सनकादि ध्यान धरे छे, वेद वखाणे रूप,
ते आत्माराम रघुपति ए छे, कोटि ब्रह्माण्डना भूप। २।
पूर्ण पुरुषोत्तम रघुनंदन, सर्व द्रष्टा एक पोते,
आ विश्व जेनो भास ज कहीए, ए जगतना कारण जोते। ३।

अध्याय—१८ (श्रीराम-लक्ष्मण का पंचवटी से गमन)

हे श्रोता-जनो, मन में धीरज रखते हुए आप सब प्रेमपूर्वक सुनिएगा। जिस प्रकार (साधारण) प्राकृत, अर्थात् सांसारिक मनुष्य चेष्टा करता हो, उस प्रकार श्रीरघुवीर (लीला) कर रहे थे। १। जिनका ध्यान शिवजी, सनकादि धारण करते है, जिनके रूप का बखान वेद करते हैं, वे आत्माराम (भगवान्) और करोड़ों ब्रह्माण्डों के राजा श्रीराम ही है। २। रघुनन्दन राम पूर्ण पुरुषोत्तम हैं, स्वयं एक सर्व-द्रष्टा हैं। यह विश्व, जिसको (हम) आभास ही कहते हैं, उस जगत् का वे (श्रीराम) कारण है। जो प्रभु शुद्ध, चैतन्यमय, मायापति है, जो (सर्व-) व्यापक तथा एकमात्र अजित है, वे प्रभु राम माया का अभिप्राय (और)

जे शुद्ध चैतन्य मायापति प्रभु, व्यापक एक अजीत,
ते माया तणो अभिप्राय देखाडे छे, मायिक जननी रीत । ४ ।
अंधकूपमां रवि नव बूडे, मृगजळमांहे चंद्र,
कल्पवृक्ष भिक्षा नव मागे, न मशक मारे गजेंद्र । ५ ।
एम रघुवीर ज मोह न पामे, जे पोते पूरणकाम,
पण अवतारलीला मनुष्य तणी, ते दाखवता ए राम । ६ ।
ज्यम स्वप्नमां पतिव्रतानो स्वामी मरण पामे महाभाग,
पछे जागे त्यारे ज्यमनुं त्यम छे, पोतानुं सौभाग्य । ७ ।
एम अखंड ज्ञान अमोघ ईश्वरता, धर्म स्थापन अवतार,
ते प्रभुने मायामय जाणे, ते जनने धिक्कार । ८ ।
एम अपार लीला अटपटी छे, जाणे विरला कोय,
जे विमुख जीवने मोह पमाडे, भक्तने अति सुख होय । ९ ।
हावे वनमां श्रीरघुवीर फरता, लक्ष्मण साथे आप,
हो सीता हो सीता कहेता, करता वचन आलाप । १० ।
पशु पंखी तरु गिरि सरिता ने पृथ्वी पूछे राम,
सर्व मळी मुजने देखाडो, जनकसुतानुं ठाम । ११ ।

माया से प्रभावित मनुष्य की (व्यवहार) पद्धति दिखा रहे हैं । ३-४ । अंधकार भरे कुएँ में सूर्य और मृगजल में चंद्र नहीं डूब जाता; कल्पवृक्ष भिक्षा नहीं माँगता; मच्छड़ बड़े हाथी को नहीं मार सकता । ५ । उस प्रकार जो स्वयं पूर्णकाम हैं, वे रघुवीर ही (कभी भी) मोह को प्राप्त नहीं हो सकते । परन्तु ये राम मनुष्य की-सी अवतार लीला दिखा रहे थे । ६ । जिस प्रकार स्वप्न में पतिव्रता स्त्री (देखती हो कि उस) का महा भाग्यवान् पति मृत्यु को प्राप्त हुआ हो, परन्तु अनन्तर जब वह जागृत हो जाती है, तब (उसे विदित हो जाता है कि) उसका सुहाग जैसा-का-वैसा है, उस प्रकार (श्रीराम) अखण्ड ज्ञान और अमोघ ईश्वरता से युक्त तथा (सद्-) धर्म की स्थापना के लिए अवतरित हैं, (फिर भी) उन प्रभु को जो मायामय समझ रहे हों, उन लोगों को धिक्कार है । ७-८ । कोई विरला ही जानता है कि यह अपार लीला उलझन-भरी है और जो (भगवान् से) विमुख लोगों को मोह को प्राप्त कराती है, उस (लीला) से भक्तों को सुख हो जाता है । ९ । अब श्रीरघुवीर लक्ष्मण के साथ स्वयं वन में घूम रहे हैं (थे) । वे 'हा सीते', 'हा सीते' वचन (शब्द) कहते और (ऐसे ही) वचन अलापते रहे । १० । श्रीराम पशु-पक्षियों से, वृक्षों, पर्वतों और नदियों से, पृथ्वी से पूछ (कह)

मृग कोकिला चकोर चातक, राजहंस ने मोर,
मेना पोपट पारेवांने पूछे कौशल्या-राजकिशोर। १२।
कारंडव चक्रवाक भ्रमरने, पूछे पूरणकाम,
कोई जनकसुता देखाडो मुजने, एम ज कहेता राम। १३।
नकुळ शुकरने, शृगाल शशकने, तरु गिरिवरने पूछे,
अरे लक्ष्मण कोई नथी बोलतुं, कहेने कारण शुं छे? । १४।
अरे वीर लाव्य धनुष बाण, हुं छेदुं गिरि ने वृक्ष,
कोई सीतानी शुद्ध नथी कहेतुं, देखे छे प्रत्यक्ष। १५।
एम अज अजीत आनंदरूप ते सीतानो विरह करता,
वन वन प्रत्ये श्रीरघुनन्दन, व्याकुळ थईने फरता। १६।
पाषाण तरुने आलिंगन करता, पोते जुगदाधार,
ते दिव्य रूप धरी विमान बेसी जाय वैकुंठमोझार। १७।
एम जड चैतन्यने मोक्ष आपता, फरता दीनदयाळ,
एम पंचवटी थी उत्तर पासे, जोयुं वन सुविशाळ। १८।

रहे थे— 'सब मिलकर मुझे सीता का (ठहरने का) स्थान दिखा दो।' ११। कौसल्या-राजकिशोर अर्थात् श्रीराम मृग, कोयल, चकोर, चातक, राजहंस, मोर, मैना, तोते, कबूतर (जैसे पक्षियों) से पूछ रहे थे। १२। वे पूर्णकाम राम कारण्डव (हंस की जाति का पक्षी-विशेष), चक्रवाक, भ्रमर से पूछ (कह) रहे थे— 'कोई मुझे सीता दिखा दे।' राम ऐसा ही कह रहे थे। १३। वे नेवलों और सूअरों से, सियारो और खरगोशों से, पेड़ों और पर्वतों से पूछ रहे थे। (फिर बोले—) 'हे लक्ष्मण, कोई नहीं बोल रहा है। कहो इसका क्या कारण है? १४। अरे भाई, धनुष-बाण लाओ, मैं पर्वतों और वृक्षों को छेद डालता हूँ। वे प्रत्यक्ष देख तो रहे हैं; फिर भी, कोई भी सीता का पता नहीं कहता।' १५। इस प्रकार अजन्मा, अजित, आनन्द-स्वरूप वे श्रीरघुनन्दन राम सीता के विरह (के दुःख) को प्रकट कर रहे थे और व्याकुल होकर एक वन से दूसरे की ओर जा रहे थे। १६। वे जगत् के आधार श्रीराम स्वयं पाषाणों और वृक्षों का आलिंगन करते जाते और वे (पाषाण और वृक्ष) दिव्य रूप धारण कर विमान में बैठकर वैकुण्ठ में जाते थे। १७। इस प्रकार दीन-दयालु श्रीराम जड़ और चैतन्य—सबको मोक्ष प्रदान करते हुए घूमते रहे। ऐसा करते हुए उन्होंने पंचवटी से उत्तर की ओर एक बहुत विशाल वन देखा। १८। उस दण्डक वन को देखकर श्रीराम पंचवटी में लौट आये। आश्रम को देखकर वे निराश हो गये और उस समय दक्षिण दिशा की

ते दंडकवन जोई आव्या पाछा पंचवटी मोझार;
निराश थया ते आश्रम जोई, चाल्या दक्षिणमां तेणी वार। १९।
ज्यम अहंदेह-बुद्धि मूकीने, विचरे निरंजन योगी,
ज्यम संसारमाया विरक्त तजे वळी उरग जीरण देह भोगी। २०।
ज्यम काया तजीने जाय प्राण, वळी त्यागे तपस्वी काम,
पवित्र त्यागे भ्रष्ट कर्म एम, पंचवटी तजी राम। २१।
ज्यम संसार दुःख विवेकी त्यागे संत तजे परद्रोह,
ज्यम भगवती परनिंदाने तजे वळी ज्ञानी तजे ज्यम मोह। २२।
एम रामे पंचवटीने तजी पछी चालिया दक्षिण पंथ,
हे सीता! हे सीता! करता, जाता जानकी-कंथ। २३।
पछी आगळ जातां पगलां दीठां, राक्षसनां निरधार,
बार हाथ लांबां ते दीसे, पहोळां छे कर चार। २४।
तेनी पासे कुमकुम अंकित, सूक्ष्म ने शोभावंत,
एवां सीताजीनां पगलां दीठां, जोता ते भगवंत। २५।

ओर चल दिये। १९। जिस प्रकार कोई निरंजनी योगी अहंदेह बुद्धि का त्याग करके विचरण करता हो, जिस प्रकार कोई विरागी संसार-सम्बन्धी माया का त्याग करता हो और फिर जीर्ण केंचुल का त्याग किये हुए सर्प की भाँति जीवन का भोग करता हो, जिस प्रकार शरीर को छोड़कर प्राण (निकल) जाते है, फिर तपस्वी काम का त्याग करता हो, जिस प्रकार पवित्र (आचरण करनेवाला) व्यक्ति भ्रष्ट कर्म का त्याग कर देता हो, उस प्रकार श्रीराम ने पंचवटी का त्याग किया। २०-२१। जिस प्रकार विवेकवान् व्यक्ति सांसारिक दुःख का त्याग करता हो, सन्त दूसरे का द्रोह करना छोड़ देता हो, जिस प्रकार भगवती (भगवद्-भक्त) पर-निन्दा का त्याग करते हो, फिर जिस प्रकार ज्ञानी मोह का त्याग करता हो, उस प्रकार राम ने पंचवटी का त्याग किया और वे दक्षिण (दिशा की ओर जानेवाले) मार्ग पर चल दिये। 'हे सीता', 'हे सीता' करते (कहते) हुए सीता-पति राम जा रहे थे। २२-२३। तदनन्तर आगे जाते हुए उन्होंने निश्चय ही राक्षस ही के पद (-चिह्न) देखे। वे बारह हाथ लम्बे दिखायी दे रहे थे। वे चार हाथ चौड़े थे। २४। उनके पास ही कुंकुम-अंकित, पतले और शोभावान (सुन्दर) ऐसे सीता के पद (-चिह्न) देखे। भगवान् राम उन्हें देखते रहे। २५। श्रीरघुवीर ने मोतियों की एक माला पड़ी हुई देखी, तो उन्होंने उसे (उठा) लिया और हृदय से लगा लिया और अनन्तर वे आँखों में (अश्रु-)

एक मोतीनी माळा पडली दीठी, ते लीधी श्रीरघुवीर,
हृदे संगाथे चांपी वळता, नेत्रमां भरता नीर। २६।
एम सीतानी परिशोध करता, जाता बंन्यो वीर,
पछी आगळ जातां जटायु दीठो, पर्वत प्राय शरीर। २७।
रक्तबिंब देखाय दूरथी, किंशुक फाल्यो जेम,
एम रक्त पांखो विण पडियो, पंखी देखाय छे तेम। २८।
असुर जाणीने बाण चढाव्युं, लक्ष्मणे तेणी वार,
पासे आव्या त्यारे रामनाम धुनि, श्रवण पडी निरधार। २९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रामनामने जपतो पंख, धूनि सांभळी धीर रे,
जटायुने ओळख्यो त्यारे, धाई आव्या रघुवीर रे। ३०।

जल भरते रहे। २६। इस प्रकार सीता की खोज करते हुए वे दोनों बन्धु जा रहे थे। फिर आगे जाने पर उन्होंने पर्वतप्राय शरीरधारी जटायु को देखा। २७। वह दूर से ही रक्त बिम्ब (-सा लाल) दिखायी दे रहा था, जैसे पलाश ही फूला (हुआ) हो, उस प्रकार रक्त-सा लाल (परन्तु) पंखहीन पक्षी पड़ा हुआ दिखायी दिया। २८। उस समय लक्ष्मण ने उसे असुर समझकर (धनुष पर) बाण चढ़ा लिया और जब वे उसके पास आ गये, तब निश्चय ही रामनाम की ध्वनि सुनायी पड़ी। २९।

वह पक्षी रामनाम का जप कर रहा था। उसकी ध्वनि उन धीर पुरुष ने सुनी, तो जटायु को पहचाना। तब रघुवीर दौड़कर (उसके समीप) आ गये। ३०।

* * *

अध्याय—१९ (श्रीराम-जटायु-भेंट, जटायु का निर्वाण)

राग धनाक्षरी

श्रीरामे दीठा जटायुने ज्यारे जी, आव्या पासे धाई ते वारे जी,
महादुःख पामे पंखी वेद जी, ते जोईने रघुपति पाम्या खेद जी। १।

अध्याय—१९ (श्रीराम-जटायु-भेंट : जटायु का निर्वाण)

जब श्रीराम ने जटायु को देखा, तो उस समय वे उसके पास दौड़ते हुए आ गये। वह पक्षी बड़े दुःख और वेदना को प्राप्त हो रहा था। उसे देखकर

ढाळ

मन खेद पाम्या रघुपति, जोई वेदना पंखी तणी,
ज्यम पुत्रनुं दुःख जोई माता, एम ते त्रिभुवनधणी। २ ।
वृत्तान्त सहु तेणे कह्युं, सुणी दुःखी थया रघुनाथ,
उपकार मान्यो पंखी तणो, मुकियो मस्तक हाथ। ३ ।
महाराज आ गति करी मारी, दशानन मतिमंद,
में तमने मळवा प्राण राख्यो, सुणो रघुकुळ-चंद। ४ ।
करी हरण सीता तणुं रावण, गयो लंकामांहे,
में युद्ध कर्युं पण मने पीडी, विकळ कीधो आंहे। ५ ।
एवुं सुणीने रघुनाथजी, व्याकुळ थया मन तेह,
एक दुःख सीतानुं हवुं, बीजुं पंखीनुं दुःख जेह। ६ ।
पछी राममूर्ति ध्यान राखी, करी एकाग्र मन,
प्राण मूक्यो पंखीए, रघुवीर आगळ तन। ७ ।
विमान लेईने विधि आव्यो थयो दिव्य स्वरूप,
विष्णुलोके ते गयो, पाम्यो मोक्ष अनुप। ८ ।

श्रीराम खेद को प्राप्त हो गये। १। उस पक्षी की वेदना को देखकर रघुपति मन में (वैसे ही) खेद को प्राप्त हो गये, जैसे पुत्र का दुःख देखकर माता (दुःख को प्राप्त) हो जाती है। ऐसे हैं वे त्रिभुवन के स्वामी। २। उसने समस्त वृत्तान्त कह दिया, तो रघुनाथ उसे सुनकर दुखी हो गये। उन्होंने पक्षी का उपकार माना और उसके मस्तक पर हाथ रख लिया। ३। (उस पक्षी ने कहा—) 'हे महाराज, उस मन्द-मति दशानन ने मेरी यह स्थिति कर डाली। हे रघुकुल के चन्द्र, सुनिए, मैंने आपसे मिलने के हेतु ही (अब तक) प्राण (शरीर में) रखे हैं। ४। सीता का अपहरण करके रावण लंका में गया है। मैंने युद्ध तो किया, परन्तु उसने मुझे यहाँ पीड़ा पहुँचाकर विकल कर डाला।' ५। ऐसा सुनने पर श्रीराम मन में व्याकुल हो गये, (क्योंकि) एक दुःख सीता-सम्बन्धी था, जबकि दूसरा पक्षी जटायु-सम्बन्धी (उत्पन्न हो गया) था। ६। तत्पश्चात् (जटायु) पक्षी ने मन को एकाग्र करके श्रीराम की मूर्ति पर ध्यान रखा और श्रीराम के सम्मुख प्राण त्याग दिये। ७। वह दिव्य स्वरूप (में परिवर्तित) हो गया; तब ब्रह्मा विमान लेकर आ गया और वह विष्णु-लोक, अर्थात् वैकुंठ में चला गया। वह अनुपम मोक्ष को प्राप्त हो गया। ८। पूर्णकाम राम ने उसे अपना तथा माता-पिता का भक्त समझकर अपने हाथों से उसकी दाह-क्रिया और उत्तर-

निज भक्त मातापिता तणो, ते जाणी पूरणकाम,
तेनी दाहक्रिया उत्तरक्रिया ते स्वहस्ते करी राम। ९।
जेवी क्रिया दशरथरायनी करे, तेम करी त्यां ततखेव,
सहु जटायुने वखाणता, सुरपति आदि देव। १०।
एवा भक्तवत्सल शरणपालक, दीनबंधु दयाळ,
पछे चाल्या दक्षिण दिशा, दशरथ तणा बे बाळ। ११।
एवे आविया यमुनागिरि, उपर चढ्या रघुवीर,
मुख रटण करता जानकीनुं, द्रवित चित्त गतधीर। १२।
ते पर्वत छे कैलास सरखो, गहन वन गंभीर,
कोकिला बपैया मोर बोले, कळांकुर ने कीर। १३।
शिवपार्वती बेठां त्यांहां, करे ज्ञानगोष्ठित वात,
मुख रटण करतां रामनुं, पासे रह्यां गिरिजात। १४।
एवे दूरथी रघुनाथ दीठा, शिवे तेणी वार,
जय सच्चिदानंद पूरणब्रह्म, एम कही कर्या नमस्कार। १५।
त्यारे पार्वती पूछे तदा, कोने नम्या जोडी हाथ ?
कल्याण रूप कहो मुंने, नित्य भजो कोने नाथ ?। १६।

क्रिया सम्पन्न कर दी। ९। उसने दशरथ राजा की जैसी क्रिया की (थी) वैसी ही (क्रिया जटायु की भी) वहाँ तत्क्षण कर दी। इन्द्र आदि सब देव जटायु का बखान करते रहे। १० इस प्रकार श्रीराम भक्त-वत्सल, शरण में आये हुए लोगों के पालक, दीनबन्धु एवं दयालु हैं। अनन्तर वे दोनों दशरथ-पुत्र दक्षिण दिशा की ओर चल दिये। ११। उस समय वे यमुना गिरि आ गये। श्रीराम उस पर चढ़ गये। मन में शोक से विह्वल और धीरज खोये हुए वे (श्रीराम) मुख से जानकी का नाम रटते रहे। १२। वह पर्वत कैलास के सरीखा है। (वहाँ का) वन गहन और गम्भीर था। उसमें कोयल, चातक, मोर, सारस और तोते बोल रहे थे। १३। वहाँ शिवजी और पार्वती बैठे थे और आत्म-ज्ञान सम्बन्धी बातें कर रहे थे। शिवजी मुख से राम-नाम रटते रहे। पास में गिरिजा, अर्थात् पार्वती थी। १४। उस समय शिवजी ने इतने में राम को दूर से देखा, तो 'जय सच्चिदानन्द पूर्ण ब्रह्म' ऐसा कहकर उन्होंने नमस्कार किया। १५। तब पार्वती ने पूछा— 'आपने हाथ जोड़कर किसे नमस्कार किया ? हे कल्याण-रूप नाथ, मुझे बताइए कि आप नित्य किसे भजते रहते हैं।' १६। (इसपर) शिवजी ने कहा— 'हे सुन्दरी, सुनो। वे रविकुलभूषण राम है। मैंने उन्हें नमस्कार किया, जो

शिव कहे सांभळ सुंदरी, रविवंशभूषण राम,
नमस्कार में तेने कर्या, जे अखिल पूरणकाम । १७ ।
करुं स्मरण कीर्तन ध्यान तेनुं, देवना जे देव,
त्यारे पार्वतीजी बोलियां, सांभळो श्रीमहादेव । १८ ।
ए राम तो रडता फरे, स्त्रीने वियोगे आज,
विरहे करीने भ्रंश पामी, बुद्धि श्रीमहाराज । १९ ।
महादेव कहे सुणो साध्वी, नव जाणे तुं ए मर्म,
ए लीला विग्रह देह धार्यो, अवतार पूरणब्रह्म । २० ।
हुं वेद विधि भोगींद्र जेनो, जाणीए नहि पार,
ने भक्त माटे सगुण लीला, करे छे जे अपार । २१ ।
वळी राम वनमां चालता, आलिंगता शिला वृक्ष,
विमान बेसी जाय ते, धरी दिव्य देह प्रत्यक्ष । २२ ।
त्यारे पार्वती पूछे तदा, शिव सुणो मारा स्वाम,
आ वृक्ष ने पाषाण, आलिंगन करे क्यम राम ? । २३ ।
शिवजी कहे ते तरु तळे थयुं, हशे स्मरण भजन,
वळी शिला उपर बेसीने, तप कर्युं हशे मुनिजन । २४ ।

(वस्तुतः) समस्त (जगत्) की इच्छाओं के पूर्ति-कर्ता हैं । १७ । जो राम देवों के देव हैं, मैं उनका स्मरण, कीर्तन और ध्यान किया करता हूँ ।' तब पार्वती बोलीं— हे श्रीमहादेव, सुनिए । १८ । 'ये राम तो आज स्त्री के वियोग के कारण रुदन करते हुए भ्रमण कर रहे हैं । हे महाराज, विरह से उनकी बुद्धि भ्रंश को प्राप्त हो गयी है (उनकी बुद्धि भ्रष्ट या भ्रमित हो गयी है) ।' १९ । (यह सुनकर) महादेव बोले— 'हे साध्वी, सुनो, तुम वह मर्म (गुह्य) नहीं जानती । इन्होंने लीला से विग्रह देह धारण किया है-- वे अवतार-रूप पूर्ण ब्रह्म हैं । २० । मैं तथा वेद, विधाता, भोगीन्द्र शेष जिनके पार (सीमा) को नहीं जान सकते, वे (भगवान्) भक्तों के लिए (ऐसी) सगुण लीला कर रहे हैं, जो (वस्तुतः) अपार है । २१ । इसके अतिरिक्त, श्रीराम वन में चल रहे हैं; शिलाओं और वृक्षों का आलिंगन कर रहे हैं; तो वे (शिलाएँ और वृक्ष) प्रत्यक्ष दिव्य शरीर धारण करके विमान में बैठकर जाते हैं ।' २२ । तब पार्वती ने पूछा-- (कहा)— 'हे मेरे स्वामी शिवजी, सुनिए । श्रीराम उन वृक्षों और पाषाणों का आलिंगन क्यों कर रहे हैं ?' २३ । (इस पर) शिवजी ने कहा— 'उन पेड़ों तले (भगवान् के नाम का) स्मरण और भजन हुआ होगा । फिर मुनिजनों ने शिलाओं पर बैठकर तप किया

रघुवीर तेने मोक्ष आपे, भजन संचित भाग,
ते सीताने मिशे करीने, आलिंगता अनुराग । २५ ।
त्यारे सती कहे हुं जोउं परीक्षा, होय जो भगवान,
शिव कहे लेतां परीक्षा, पामशो अपमान । २६ ।
शिव घणुं घणुं वारियां पण, सतीए न मान्युं त्यांहे,
पछी सीताजीनुं रूप धरीने, गयां मारग मांहे । २७ ।
रघुवर हसीने बोलिया, क्यां फरो वनमां आज ?
दाक्षायणी तजी पशुपति, कोण शुं इच्छो काज ? । २८ ।
एवुं सांभळी सती लाजियां, वळ्यां पाछां तत्काळ,
शिव पासे आवी कह्युं नहि, पण जाणियुं पशुपाळ । २९ ।
सतीए सीतानुं रूप लीधुं, शिवे जाण्युं मन,
ते दिवसथी कर्यो त्याग सतीनो, आसन आप्युं भिन्न । ३० ।
उमियाए जाण्युं तजी मने, उतार्यो अनुराग,
पछे दक्ष केरा जज्ञमां, सतीए कर्यो देहत्याग । ३१ ।

होगा । २४ । (भगवद्-) भजन के कारण जो संचित सद्भाग्य (पुण्य) हो, उससे रघुवीर उन्हें मोक्ष प्रदान कर रहे हैं। वे सीता के बहाने उनका अनुराग-पूर्वक आलिंगन करते जा रहे हैं। ' २५ । तब सती पार्वती ने कहा— 'यदि वे भगवान् हों, तो मैं उनकी परीक्षा करके देखती हूँ ।' तब शिवजी बोले— 'परीक्षा करते हुए तुम अपमान को प्राप्त हो जाओगी ।' २६ । (इस प्रकार समझाते हुए) शिवजी ने उसे बहुत-बहुत रोक लिया, परन्तु वहाँ सती न मान गयी। अनन्तर वह सीता का रूप धारण करके (श्रीराम के) मार्ग पर (चली) गयी । २७ । श्रीराम ने (उसे देखते हुए) हँसकर कहा (पूछा)— 'आज आप वन में क्या कर रही हैं ? हे दाक्षायणी (दक्ष प्रजापति की कन्या, आप) पशुपति (शिवजी) को छोड़कर किस कार्य की कामना कर रही हैं ? ' २८ । ऐसा सुनकर सती लज्जित हो गयी और तत्काल पीछे (जाने को) मुड़ गयी। शिवजी के पास आकर उसने (कुछ भी) नहीं कहा। फिर भी उन पशुपति ने (अन्तर्ज्ञान से) जान लिया । २९ । शिवजी ने मन में जान लिया कि सती ने सीता का रूप (ग्रहण कर) लिया था। उस दिन से उन्होंने सती का (पत्नी रूप से) त्याग किया और उसे अलग आसन दिया । ३० । उमा ने मन में यह जान लिया कि (शिवजी ने उसके प्रति) अनुराग उतार दिया है— (अर्थात् शिवजी का प्रेम कम हो गया है) । तदनन्तर दक्ष (प्रजापति) के यज्ञ में सती ने

पछे हिमाचळने घेर प्रगट्यां, पार्वती जेनुं नाम,
तप करीने परण्यां शंभुने, पाम्यां सदा निज ठाम । ३२ ।
ज्यारे रामचरित्र सुण्युं सकळ, कह्यो शिवे कथानो मर्म,
त्यारे जथारथ समज्यां, सती जाण्या राम पूरण ब्रह्म । ३३ ।
एम शिवे मान्या इष्ट माटे, तज्यां सती ते माट,
पछे रामलक्ष्मण ऊतर्या, यमुनागिरिने घाट । ३४ ।
ते वन सकळ जोता थका, दक्षिण दिशा मोझार,
त्यां थकी आगळ चालिया रघुवीर जुगदाधार । ३५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

चाल्या जुगदाधार त्यांथी, साथे लक्ष्मण वीर रे,
सीतानी परिशोध करता, आव्या कृष्णवेणीने तीर रे । ३६ ।

* * *

देह-त्याग कर दिया । ३१ । फिर हिमालय के घर (कन्या के रूप में) वह उत्पन्न हुई, जिसका उस रूप में पार्वती नाम था । (तदनन्तर यथा-समय) उसने तप करके शिवजी से विवाह किया और तब (फिर) वह अपने स्थान (पद) को प्राप्त हो गयी । ३२ । (तत्पश्चात्) जब उसने समस्त राम-चरित्र सुना और शिवजी ने उसे कथा का मर्म (रहस्य) कह दिया, तब सती (पार्वती राम-चरित्र को) यथार्थ (रूप से) समझ गयी और राम को पूर्ण ब्रह्म जान गयी । ३३ । इस प्रकार शिवजी ने (उस बात को) इष्ट मान लिया, अतः उसके लिए सती का त्याग कर दिया था । तत्पश्चात् राम और लक्ष्मण यमुना-पर्वत की घाटी उतर गये । ३४ । उस समस्त वन को देखते हुए जगदाधार रघुवीर उससे दक्षिण दिशा की ओर वहाँ से आगे चल दिये । ३५ ।

वहाँ से जगदाधार श्रीराम चल दिये । उनके साथ बन्धु लक्ष्मण थे । (आगे बढ़ते-बढ़ते) वे सीता की खोज करते-करते कृष्णा-वेण्णा नदी के तीर पर आ गये । ३६ ।

* * *

अध्याय—२० (कबन्ध-शाप-विमोचन)

राग मारु

लक्ष्मण साथे श्रीरघुवीर, आव्या कृष्णवेणीने तीर,
स्नान करवाने पेठा त्यांहे, रामे डूबकी मारी जळमांहे । १ ।
घडी एक रह्या मांही ज्यारे, लक्ष्मणने दु:ख प्रगट्युं त्यारे,
नव दीठा रघुवर आप, त्यारे करवा लाग्या विलाप । २ ।
जाण्युं बूड्या श्रीरघुवीर, त्यारे लक्ष्मण मूकी धीर,
पछे कृष्णाने शोषवा जाण, चढाव्युं छे अग्निनुं बाण । ३ ।
मूके अग्न्यास्त्र लक्ष्मण ज्यारे, रामजळथी नीसर्या त्यारे,
मळ्या लक्ष्मणने अति हेते, हसी बोल्या प्रेम समेते । ४ ।
त्यांहां कर्युं शिव स्थापन राम, तेनुं क्षेत्री बाहु ऐवुं नाम,
ज्यां-ज्यां गया रघुपति एवं, त्यां त्यां स्थाप्या श्रीमहादेव । ५ ।
कृष्णवेणी थकी रघुवीर, चाल्या आगळ श्रीरणधीर,
त्यांहां बेठो छे एक कबंध, तेणे मारग कीधो बंध । ६ ।

अध्याय—२० (कबन्ध-शाप-विमोचन)

लक्ष्मण के साथ श्रीराम कृष्णा-वेण्णा के तीर पर आ गये, तब वहाँ स्नान करने के लिए श्रीराम ने पानी में प्रवेश किया और डुबकी लगायी । १ । जब वे अन्दर एक घड़ी-भर रह गये, तो लक्ष्मण को दु:ख अनुभव हो गया । जब उन्होंने स्वयं रघुवर को नहीं देखा, तब वे विलाप करने लगे । २ । लक्ष्मण को जान पड़ा कि श्रीरघुवीर डूब गये, तब उन्होंने धीरज खो दिया । अनन्तर उन्होंने कृष्णा का जल सोख लेने के हेतु (धनुष पर) एक अग्नि-बाण चढ़ा दिया § । ३ । जब लक्ष्मण अग्नि-अस्त्र छोड़ ही रहे थे, तो ही राम पानी से (बाहर) निकल आये । (फिर) वे लक्ष्मण से स्नेह-पूर्वक मिले और हँसते हुए प्रेम से बोले । ४ । वहाँ रघुपति राम ने शिव जी (की प्रतिमा) की स्थापना की । उसका नाम 'बाहु क्षेत्र' है । वे इस प्रकार जहाँ-जहाँ गये, वहाँ-वहाँ उन्होंने महादेव (शिव की प्रतिमाओं) की स्थापना की । ५ । रणधीर श्रीरघुवीर कृष्णा-वेण्णा से आगे चल दिये । वहाँ एक कबन्ध (मस्तक-रहित शरीर, ऐसा शरीरधारी एक राक्षस) बैठा हुआ था । उसने मार्ग को (रोक

---

§ टिप्पणी : पौराणिक मान्यता है कि कृष्णा नदी विष्णु स्वरूपा है । श्रीराम साक्षात् विष्णु ही हैं । अतः कृष्णा के जल में प्रवेश करते ही वे जल के साथ एकात्म होकर अदृश्य-से हो गये ।

जोजन द्वादशना बे हस्त, ते पसारीने बेठो स्वस्थ,
तेनुं मस्तक उदरमोझार, नथी चरण तणो आकार। ७ ।
राम लक्ष्मण आप्या त्यारे, समेटी लीधा कर मोझारे,
एवुं जोई कबंधनुं रूप, मूक्युं बाण त्रिभुवन भूप। ८ ।
गया ते कबंधना प्राण थयो दिव्यरूप निर्वाण,
रामनी स्तुति तेणे करी, पोतानी करतूत विस्तरी। ९ ।
हुं कश्यपनो सुत एस, हतो दनुज तणो मुज वेष,
में करी गर्जना एक बार, सुणी मुनिवर बीन्या अपार। १० ।
सरवे मळी दीधो शाप, तुं कबंध थजे मतिपाप,
एम रहेजो दुःखी तुज प्राण, शीश चरण विना निरवाण। ११ ।
एवो सांभळी द्विजनो शाप, में अनुग्रह पूछ्यो आप,
मुनि कहे रघुकुळ मोझार, त्यां राम धरशे अवतार। १२ ।
ते मारशे तुजने बाण, गति आपशे पुरुष पुराण,
वज्र मार्युं इंद्रे पछे नेट, शिर पेसी गयुं मुज पेट। १३ ।

कर) बन्द किया था। ६। उसके दोनों हाथ बारह योजन (लम्बे) थे। वह उन्हें फैलाकर शान्त और स्थिर बैठा हुआ था। उसका मस्तक उसके उदर में था। उस (के शरीर) में पाँवों का कोई आकार नहीं था। ७। जब (वहाँ) राम और लक्ष्मण आ गये, तो उसने उन्हें हाथों में समेट लिया। कबन्ध के ऐसे रूप को देखकर त्रिभुवन के राजा (राम) ने एक बाण छोड़ दिया। ८। उससे उस कबन्ध के प्राण निकल गये, तो वह निश्चय ही दिव्य रूप (में परिवर्तित) हो गया। (फिर) उसने राम की स्तुति की और अपनी करतूत का विस्तार-सहित वर्णन किया। ९। (उसने कहा—) "मैं कश्यप का पुत्र हूँ; (परन्तु) मेरा वेश (रूप) दानव का था। मैंने एक बार गर्जन किया। उसे सुनकर मुनिवर बहुत भयभीत हो गये। १०। उन सबने मुझे (यह) शाप दिया— 'रे पाप-मति, तू कबन्ध हो जाए। इस प्रकार निश्चय ही मस्तक और चरण-रहित होने पर तुम्हारे प्राण दुखी हो जाएँ।' ११। ब्राह्मणों के ऐसे शाप को सुनकर मैंने स्वयं उनसे अनुग्रह पूछा, तो मुनियों ने कहा— 'उधर रघुकुल में श्रीराम अवतार धारण करेंगे। १२। वे पुराण पुरुष तुझे बाण (से) मार डालेंगे और (सद्-) गति प्रदान करेंगे।' तत्पश्चात् इन्द्र ने निश्चय ही वज्र मार दिया, तो मेरा मस्तक मेरे पेट में घुस गया। १३। इन्द्र ने (फिर) मेरे पाँव छेद डाले। उस दिन से मुझसे कहीं भी नहीं जाया जाता।

छेद्या सुरपति ए मुज पाय, ते दिवसनुं में कंई न जवाय,
बेठो त्यारनो थईने उचाट, नित्य जोतो तमारी वाट । १४ ।
आज मळिया पूर्व संबंध, हुं पतितना छोड्या बंध,
थयो चतुर्भुज निरवाण, शंख चक्र गदा पद्म पाण । १५ ।
पीत वसन तनु घनश्याम, शोभे रूप सुंदर ज्यम काम,
वंदी रामचरण तेणी वार, पछे बेठो विमान मोझार । १६ ।
बोल्यो रघुवर प्रत्ये वाण, तमो सांभळो सारंगपाण,
आगळ ऋषिमुख पर्वत साथ, रहे छे सुग्रीव कपिनो नाथ । १७ ।
ते शुं करशो मित्राई महाराज, तेथी सरसे तमारुं काज,
एम कही गयो वैकुंठमांहे, जयजयकार थयो छे त्यांहे । १८ ।
एम कबंध उद्धार्यो राम, पाळ्युं अधम उद्धारण नाम,
जे को भावे भणे नरनार, तेना पुण्य तणो नहि पार । १९ ।
जोगी लायक जे गति कहीए, भक्ति करतां जे गति पैये,
ते गति आपे असुरने मारी, हरि सम नहि को उपकारी । २० ।

मैं तब से अधीर होकर नित्य आपकी प्रतीक्षा करता रहा हूँ । १४ । आज वे पूर्व-काल के सम्बन्ध जुड़ गये और आपने मेरे बन्धनों को छुड़ा दिया । '' (तदनन्तर) वह निश्चय ही चतुर्भुज (-धारी) तथा शंख-चक्र-गदा-पद्म-पाणि हो गया (अर्थात् विष्णु-स्वरूप हो गया; उसके चार हाथ हो गये और हाथों में शंख, चक्र, गदा और कमल थे) । उसका वस्त्र पीला था, शरीर मेघ-सा श्याम हो गया । उसका रूप सुन्दर था, जैसे वह कामदेव ही हो । उस समय उसने श्रीराम के चरणों का वन्दन किया और तदनन्तर वह विमान में बैठ गया । १५-१६ । वह रघुवीर से यह बात बोला— ' हे शारंग-पाणि, सुनिए । आगे ऋष्यमूक पर्वत पर वानर-राज सुग्रीव रहता है । १७ । हे महाराज, उससे मित्रता करना, उससे आपका काम पूर्ण होगा । ऐसा कहकर वह वैकुण्ठ में चला गया, तो वहाँ जय-जयकार हो गया । १८ । इस प्रकार राम ने कबन्ध का उद्धार किया और अपने ' अधम-उद्धारक ' नाम का निर्वाह किया (अपने इस नाम को चरितार्थ किया) । जो कोई नर या नारी (राम की इस लीला का वर्णन) करेगा या पढ़ेगा, उसके पुण्य का कोई पार नहीं है । १९ । जो गति योगियों के योग्य (प्राप्य) कहनी चाहिए, भक्ति करने पर जो गति प्राप्त हो जाती है, वही गति श्रीराम ने उस असुर को मारकर प्रदान की । हरि के समान अन्य कोई उपकार-कर्ता नहीं है । २० ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नहि उपकारी हरिसम बीजो, जेने निगम अगम मुनि गाय रे,
हावे राम आव्या शबरीने आश्रमे, तेनी कहुं हुं कथाय रे। २१।

* * *

जिस (की महिमा) का गान निगमागम (वेद और तत्सम्बन्धी शास्त्र) और मुनि किया करते हैं, उस हरि के समान अन्य कोई उपकार-कर्ता नहीं है (तदनन्तर) अब राम शबरीके आश्रम (के प्रति) आ गये। मैं उस सम्बन्ध में कथा (अब) कहता हूँ। २१।

* * *

अध्याय—२१ (श्रीराम-शबरी-भेंट)

राग मेवाडी

हवे श्रोताजन सहु भावे सुणजो, पावन राम-कथाय जी,
गातां सुणतां नर ने नारी, पापी पावन थाय जी। १।
एक शबरी नामे नारी भीलडी, रहेती वन मोझार जी,
ते भावे भक्ति करती हरिनी मनमां प्रेम अपार जी। २।
नित्ये हरिनुं नाम जपंती, तप आचरती तेह जी,
एम वही गया दिवस केटला, वृद्ध थई छे देह जी। ३।
तेने जाण थयुं जे राम ज आव्या, नीकळ्या छे वनमांहे जी,
त्यारे शबरीए जाण्युं हुं स्वागत करीने राखीश प्रभुने आंहे जी। ४।

अध्याय—२१ (श्रीराम-शबरी-भेंट)

हे श्रोता-जनो, आप सब अब पावन राम कथा का प्रेम-पूर्वक श्रवण कीजिएगा। उसका गायन और श्रवण करने पर पापी नर और नारी पावन हो जाते हैं। १। शबरी नामक एक भील जाति की स्त्री वन में रहती थी। वह प्रेम-पूर्वक हरि की भक्ति किया करती थी। उसके मन में अपार (भगवद्-) प्रेम था। २। वह नित्य हरि के नाम का जप किया करती थी और तपस्या किया करती थी। इस प्रकार (करते हुए) कितने ही दिन बीत गये, तो उसकी देह, (अर्थात् वह) वृद्ध हो गयी। ३। उसे यह ज्ञान हो गया कि राम ही (इधर) आ गये हैं— वे वन में (आने के लिए) निकले हैं। तब शबरी ने यह समझा (सोचा) कि मैं स्वागत करके प्रभु (राम) को यहाँ रख लूँगी। ४। वह नित्य नये-नये (ताज़े-

ते नित्य नवा फल लावी मूके, जोती प्रभुनी वाट जी,
वासी थाय त्यारे काढी नाखे, धरती मन उचाट जी। ५।
जे फळ फूल ज सारुं देखे, ते लावे निज आश्रम जी,
आ फळ मीठां हरिने अर्पीश, एम विचारे मर्म जी। ६।
त्यारे अंतरजामीए जाण्यो सरवे, तेना मननो भाव जी,
पछे तेना आश्रम प्रत्ये आव्या, जानकी जीवन नाथ जी। ७।
नित्य मुनि तेनी निंदा करता, दुःख देता बहु पेर जी,
ते अनाथ बंधु बिरद पाळवा, हरि आव्या तेने घेर जी। ८।
आपणे आश्रम राम आवशे, मुनि एम जाणे मन जी,
ते मुनि सर्वेनुं मान टाळवा, न गया जुगजीवन जी। ९।
पछे दूर थकी तेणे दीठा प्रभुने, गौर श्याम बे वीर जी,
जटा मुगट मंडित धनुसायक, भुजप्रलंब रणधीर जी। १०।
एवा प्रभुने जोई प्रमदा, सन्मुख आवी धाई जी,
करी प्रणाम ते पडी दंडवत् रामना जुगपद साही जी। ११।

ताज़े) फल लाकर रख देती और प्रभु की राह देखा करती। जब फल बासी हो जाते, तब वह उन्हें निकालकर फेंक देती। वह मन में अधीरता धारण करती रही। ५। वह जो-जो फल और फूल ही सुन्दर देखती, उन्हें अपने आश्रम में लाया करती। मैं ये मीठे फल हरि को समर्पित कर दूँगी— वह ऐसा सारगर्भित विचार करती रहती। ६। तब अन्तर्यामी भगवान ने उसके मनके समस्त प्रेम को जान लिया। तदनन्तर वे जानकी-जीवन नाथ (श्रीराम) उसके आश्रम के प्रति आ गये। ७। मुनि उसकी नित्य निन्दा करते रहते और उसे बहुत प्रकार से दुःख दिया करते। (परन्तु) अपने 'अनाथ-वन्धु' विरुद का निर्वाह करने के हेतु श्रीहरि, अर्थात् श्रीराम उसके घर आ गये। ८। (इधर) मुनि मन में यह समझ रहे थे कि हमारे आश्रम में राम आएँगे। (परन्तु) उन मुनियों के इस अभिमान को दूर करने के लिए जगज्जीवन श्रीराम (वहाँ) नहीं गये। ९। तदनन्तर उसने प्रभु को—गोरे लक्ष्मण तथा साँवले राम—दोनों बन्धुओं को दूर से देखा। वे रणधीर प्रभु जटा-रूपी मुकुट से सुशोभित थे, हाथ में धनुष-बाण लिये हुए थे; उनके बाहु विशेष रूप में लम्बे थे। १० ऐसे प्रभु राम को देखकर वह स्त्री दौड़ते हुए सम्मुख आ गयी और प्रणाम करके, उनके दोनों पदों को पकड़े हुए दण्डवत् पड़ गयी। ११। उसने आनन्दाश्रुओं से उनके चरणों ही को सींच लिया। अपार प्रेम से वह गद्गद हो उठी। उस समय करुणा-पूर्ण

हरख आंसुए चरणज सिंच्या, गद्गद प्रेम अपार जी,
करुणा वचन कहीने रघुपतिए, उठाडी तेणी वार जी । १२ ।
पछे निज आश्रम तेडी लावी, बेसाड्या छे आसन जी,
पूजा करी फळ मूक्यां लावी, कराव्यां प्रभुने अशन जी । १३ ।
शीतळ जळ फळ पुष्प पत्रथी, प्रसन्न कर्या रघुवीर जी,
पछे पोताना पट पदरे करीने, नाखे शीत समीर जी । १४ ।
भीलडी केरुं भाग्य वखाणे, देव सकळ एनुं कर्म जी,
जे प्रभु जप तप जज्ञे दुर्लभ, जोगी न जाणे मर्म जी । १५ ।
ते प्रभु शबरीना फळ आरोगे, वखाणे छे वारंवार जी,
एक भावने वश भगवान थाय, नथी नीच-ऊंचेना विचार जी । १६ ।
पछी शबरी प्रत्ये बोल्या श्रीरघुपति, माग्य माग्य वरदान जी,
त्यारे शबरी कहे तमो शरण राखो, मोक्ष आपो भगवान जी । १७ ।
एवुं कहेतामां विमान ज आव्युं, दिव्य देह थई नार जी,
ते शबरी विमानमां बेसी, गई वैकुंठ मोझार जी । १८ ।
एवी कृपा करी करुणानिधिए, नारी पामी अपवर्ग जी,
देव पुष्पनी वृष्टि करता, दुंदुभि वाग्यां स्वर्ग जी । १९ ।

वचन कहकर रघुपति ने उसे उठा लिया । १२ । तदनन्तर वह प्रभु को बुलाकर ले आयी और उसने उनको आसन पर बैठा दिया । (फिर) उनका पूजन करके उसने रखे हुए फल लाकर उन्हें खाने को दिये (खिलाये) । १३ । शीतल जल, फल, पुष्प, पत्र से उसने रघुवीर को प्रसन्न कर दिया । अनन्तर अपने वस्त्र के पल्लव से वह शीतल हवा करती रही (उसे पंखे की भाँति हिलाती रही) । १४ । समस्त देव उस भीलनी के भाग्य का और उसके इस कर्म का बखान करते रहे । जो प्रभु जप, तप, यज्ञ से (भी) दुर्लभ है, योगी भी जिनके मर्म को नहीं जानते, वे प्रभु शबरी के फल खा रहे थे । और बार-बार बखान कर रहे थे । एक (केवल) प्रेम से ही भगवान वश हो जाते हैं । उनके पास ऊँच-नीच का विचार नहीं है । १५-१६ । तदनन्तर श्रीरघुपति शबरी से बोले— 'माँग लो, (कोई) वरदान माँग लो ।' तब शबरी ने कहा— 'हे भगवान, आप (मुझे अपने) आश्रय में रखिए और मोक्ष प्रदान कीजिए ।' १७ । ऐसा कहते ही विमान ही आ गया और उस स्त्री ने दिव्य देह धारण की । (फिर दिव्य देह-धारी) वह शबरी विमान में बैठ गयी और वैकुण्ठ में गयी । १८ । करुणा-निधि (भगवान् राम) ने ऐसी कृपा की और वह स्त्री मोक्ष को प्राप्त हो गयी । (तब)

एम शबरीनो उद्धार करीने, चाल्या त्यांथी रघुवीर जी,
त्यारे लक्ष्मण कहे उपदेश करो मने, अध्यात्मज्ञान रघुवीरजी । २० ।
पछे लक्ष्मणने उपदेश कर्यो छे, रामगीता तेनुं नाम जी,
एक अखंड जे व्यापक आत्मा, निश्चे कराव्यो राम जी । २१ ।
सारासार विवेक करीने, निःसंशय कर्युं मन जी,
पूर्ण सत्य शाश्वत जे ज्ञानघन, अगजगमां दरशन जी । २२ ।
आ प्रपंच सर्वे मिथ्या जणाव्यो, रज्जुसर्प मृगतोय जी,
जेम हतुं तेम जाण्युं जथारथ, सर्वत्र आत्मा जोय जी । २३ ।
एम लक्ष्मणने उपदेश करी, विरूपाक्षीए आव्या राम जी,
पछे पंपा सरोवरतीरे आव्या, पोते पूरणकाम जी । २४ ।
विश्रांतिस्थान त्यां छे शिवकेरुं, वळी शोभे विश्रांति वन जी,
स्फटिक गुहा त्यां सुंदर दीसे, स्फटिकशिला पावन जी । २५ ।

देव पुष्पवृष्टि कर रहे थे । स्वर्ग में नगाड़े बज उठे । १९ । शबरी का इस प्रकार उद्धार करके रणधीर श्रीराम वहाँ से चल दिये । तब लक्ष्मण ने कहा—'हे रघुवीर, मुझे अध्यात्म ज्ञान का उपदेश दीजिए ।' २० । अनन्तर श्रीराम ने लक्ष्मण को उपदेश दिया । उस (उपदेश-वचनावली) का नाम 'राम-गीता' है । राम ने यह निश्चित कर दिया कि आत्मा (परमात्मा) एक, अखण्ड और व्यापक है । २१ । फिर सार-असार-विवेक (के उपदेश) से (लक्ष्मण के) मन को संशय-रहित कर दिया । (फिर कहा—) परमात्मा पूर्ण सत्य है, शाश्वत है, ज्ञान-घन है और निर्जीव और सजीव (सब) में उनके दर्शन होते हैं (उनका अस्तित्व है) । २२ । उन्होंने (लक्ष्मण को) इस समस्त प्रपंच को रस्सी-सर्प तथा मृग-जल की भाँति मिथ्या जतला दिया (रस्सी सर्प नहीं है, फिर भी उसमें सर्प का और मृग-जल में पानी का आभास मात्र होता है । इस प्रकार वस्तुतः यह संसार कुछ नहीं है, फिर भी दिखायी देता है—जो दिखायी देता है, वह सब मिथ्या है, आभास है) तो लक्ष्मण ने सर्वत्र एक ही आत्मा को देखते हुए जो जैसे था, उसे वैसे ही यथार्थ रूप में जान लिया । २३ । इस प्रकार लक्ष्मण को उपदेश देकर श्रीराम विरूपाक्षी (क्षेत्र) आ गये । तदनन्तर पूर्ण काम राम स्वयं पम्पा सरोवर के तट पर आ गये । २४ । वहाँ शिवजी का विश्राम-स्थान है, इसके अतिरिक्त वह विश्रान्ति-वन शोभायमान भी है । वहाँ एक सुन्दर स्फटिक गुफा दिखायी दी । वहाँ एक पवित्र स्फटिक शिला थी । २५ । श्रीरघुवीर पम्पा सरोवर के तट पर जाकर उस स्फटिक शिला पर बैठ गये (फिर) वे लक्ष्मण की गोद में सिर रखकर लेटे रहे । २६ ।

ते स्फटिकशिला उपर जई बेठा, पंपा सरोवर तीर जी,
लक्ष्मणना खोळामां शिर मूकी सूता श्रीरघुवीर जी। २६।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सूता श्रीरघुवीर पोते, लक्ष्मणजी उछंग रे,
पछे सीताजीने संभारीने, विरह धरता अंग रे। २७।

श्रीरघुवीर स्वयं लक्ष्मण की गोद में (सिर रखकर) लेटे रहे। फिर सीता को स्मरण करके विरह (का दुःख) शरीर में (मन में) अनुभव करने लगे। २७।

* * *

अध्याय—२२ (श्रीराम द्वारा पशु-पक्षियों को अभिशाप देना और उनपर अनुग्रह करना)

राग सामेरी

शीतळ छाया तरु तणी, पंपा सरोवर तीर,
लक्ष्मण उछंगे शीश मूकी, सूता श्रीरघुवीर। १।
सीता तणो विरह थयो, चाल्यां नेत्रे आंसुधार,
वनमांहे पशु पंखी क्रीडे, बोले शब्द अपार। २।
ते सुणी श्रीरघुवीरने, मन चडी सबळी रीस,
पछे शाप दीधो ते समे, सर्वने श्रीजुगदीश। ३।
रघुवीर कहे कोकिला तारो, खूटजो स्वर रंग,
मृग मृगी तमने मारजो, पारधी करतां संग। ४।

अध्याय—२२ (श्रीराम द्वारा पशु-पक्षियों को अभिशाप देना और उनपर अनुग्रह करना)

पम्पा सरोवर के तट पर पेड़ों की शीतल छाया (फैली हुई) थी। (वहाँ) लक्ष्मण की गोद में सिर रखकर श्रीरघुवीर लेटे रहे। १। उन्हें सीता का विरह (-दुख) अनुभव हो रहा था। उनकी आँखों से अश्रु-धारा चल रही थी। (उस समय) वन में पशु-पक्षी क्रीड़ा कर रहे थे और बहुत बोल रहे थे। २। उसे सुनकर श्रीजगदीश श्रीरघुवीर के मन में बहुत क्रोध (उत्पन्न) हो गया। तदनन्तर उस समय उन्होंने उन सब को शाप दिया। ३। रघुवीर ने कहा—'री कोयल, तुम्हारे स्वर की तान कम हो जाए। हे मृग और मृगी, एक-दूसरे का सग करते तुम्हें आखेटक मार डाले।' ४। वहाँ जो हाथी और हथनी सम्भोग कर रहे

त्यां संग करतां हतां त्यारे, करी करणी जेह,
रघुवीरे तेने शाप दीधो, वचन बोल्या तेह । ५ ।
हस्तिणी हस्ति सांभळो तमो, ज्यारे करशो संग,
त्यारे सात दिन मूर्छा थशे, ए गजेन्द्र केरे अंग । ६ ।
मोरने कहे थाओ नपुंसक, नव गणी मारी लाज,
थशे जन्म मध्ये संग ते, एक वार सुण सिंहराज । ७ ।
चकवा चकवीने कहे, थजो तमारो वियोग,
हुं विरहीने देखी करी, तमे भोगवो जो भोग । ८ ।
एम शाप सुणीने सकळ खग मृग, पाम्यां मन परिताप,
रघुवीर शरणे आवियां, पूछवा अनुग्रह आप । ९ ।
रघुवीर कहे हे कोकिला तुज कहुं शाप संबंध,
तारो वसंतऋतुमां स्वर ऊघडशे पछी रहेशे बंध । १० ।
मृग मृगीने कहे मारशे, जो दिवस करशो संग,
निरभे थशो रजनी विषे, माटे निशाए रमजो रंग । ११ ।
हस्तिने कहे त्रिया संग करतां, थशे बे घड़ी मूर्छाय,
मोरनां आंसुबिंदुए करी, वंशवृद्धि थाय । १२ ।

थे, उनको रघुवीर ने शाप दिया, और वह बात कही— 'रे हाथी और हथनी, तुम सुनो । जब तुम सम्भोग करोगे, तब उस गजेन्द्र (हाथी) के अंग सात दिन अचेतन हो जाएँगे ।' ५-६ । उन्होंने मोर से कहा— 'तुम मुझसे लज्जा नहीं मानते, (अतः) तुम नपुंसक हो जाओ ।' (तदनन्तर वे सिंह से बोले) 'हे सिंहराज, सुनो । जन्म में (केवल) एक वार तुम्हें समागम होगा ।' ७ । उन्होंने चकवा-चकवी से कहा— 'मुझ विरही को देखकर भी तुम सम्भोग का भोग कर रहे हो, तो तुम्हारा (एक-दूसरे से) वियोग हो जाए ।' ८ । ऐसे शाप को सुनकर समस्त पक्षी और पशु मन में परिताप (पछतावा, ग्लानि) को प्राप्त हो गये, तो वे अनुग्रह पूछने के लिए स्वयं रघुवीर की शरण में आ गये । ९ । (तब) श्रीराम ने कहा— 'री कोयल, तुम्हें शाप के बारे में कहता हूँ । वसन्त ऋतु में तुम्हारा स्वर खुल जाएगा और तत्पश्चात् बन्द रहेगा ।' १० । उन्होंने मृग और मृगी से कहा— 'यदि तुम दिवस में समागम करोगे, तो (आखेटक तुम्हें) मार डालेगा; (परन्तु) तुम रात में निर्भय हो जाओगे, अतः रात में आनन्द-पूर्वक क्रीड़ा करना ।' ११ । उन्होंने हाथी से कहा— 'स्त्री-संग करने पर तुम दो घड़ी मूर्च्छित हो जाओगे ।' (फिर मोर के बारे में उन्होंने कहा—) 'मोर के अश्रु-बिन्दुओं से उसके वंश का

चकवा चकवीने कहे, रहेशे निशा तम वियोग,
दिवसे मळशो दंपती त्यारे, थशे तम संजोग। १३।
सिंहने कहे एक वार संगे, प्रजा थाशे एक,
विश्व सहुने उज्जड करे, जो सृष्टि थाय अनेक। १४।
एम सर्वनो अनुग्रह कर्यो, समर्थ श्रीरघुवीर,
लक्ष्मण सहित विराजता, पंपा सरोवर तीर। १५।
अरण्य कांड तणी कथा, ए पूरण थई पावन,
बुद्धि प्रमाणे कही जथारथ, ते सुणो श्रोताजन। १६।
अपार गुण रघुवर तणा, नव पार तेनो थाय,
अगाध जळसिंधु भर्यो, ते घटमां केम भराय ?। १७।
अनेक कवि आगळ थया, वळी थशे बीजा अनंत,
केटला हमणां गाय छे पण, पामे नहि को अंत। १८।
हरिकथा अमृत स्वाद अद्भुत श्रवणथी सुख थाय,
हरिभक्ति केरुं मूळ पहेलुं श्रवणथी एक कहेवाय। १९।

विस्तार होता जाएगा।' १२। उन्होंने चकवा-चकवी से कहा— 'तुम्हारा वियोग रात में ही रहेगा; तुम दम्पति दिवस में मिल पाओगे और तब तुम्हारा संयोग हो पाएगा।' १३। (तदनन्तर) उन्होंने सिंह से कहा—'एक बार के समागम से तुम्हारे एक सन्तति उत्पन्न हो जाएगी। यदि तुम्हारे अनेक सन्तानें हो जाएँ, तो वे समस्त विश्व को उजाड़ कर देंगी।' १४। समर्थ रघुवीर ने इस प्रकार सब पर अनुग्रह किया। (तदनन्तर) वे लक्ष्मण सहित पम्पा सरोवर के तट पर विराजमान रहे। १५। अरण्य काण्ड की यह पावन कथा यहाँ पूर्ण हो गयी। मैंने उसे अपनी बुद्धि के अनुसार यथार्थ रूप से कहा। हे श्रोताजनो, उसे सुनिए। १६। श्रीरघुवीर के गुण अपार हैं— उनकी कोई सीमा नहीं हो सकती। अथाह जल से समुद्र भर गया है, उसे घट में कैसे भर दिया जा सकता है ? (अर्थात् श्रीराम के गुण समुद्र-जल के समान अथाह हैं, उन्हें छोटी-सी रचना में किस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है ?)। १७। इससे पूर्व अनेक कवि हो गये हैं। फिर (आगे, भविष्य में भी) अनगिनत हो जाएँगे। कितने ही अभी (श्रीरघुवीर के गुणों का) गान कर रहे हैं; फिर भी कोई उनके अन्त को प्राप्त नहीं हो पा रहा है। १८। श्रीहरि की कथा-रूपी अमृत का स्वाद अद्भुत है। उस कथा के श्रवण से सुख प्राप्त होता है। एक केवल श्रवण (मात्र) हरि-भक्ति का सर्व-प्रथम मूलाधार कहाता है। १९। सिवा विषयी

वळी विषयी पामर मुमुक्षुने, प्रिय लागे एह,
जे जीवन्मुक्त ब्रह्मवेत्ता श्रवण करता तेह । २० ।
हरिकथानो अधिकार सहुने, नपुंसक नर नार,
जे सादरे नव सांभळे, ते जीवनने धिकार । २१ ।
सुधाने सेवतां मद चढे वळी, अज्ञ उन्मत्त थाय,
कथामृते टाळे मोह मत्सर, त्रिविध ताप पळाय । २२ ।
सुधानो अधिकार सुरने, नहितर पामे रंच,
हरिकथामृत अधिकार सहुने रायरंक ऊंचनीच । २३ ।
वळी गंगा पावन करे सहुने, मांहे बूडतां जाय प्राण,
हरिकथामांहे बूडतां, ते पामे पद निरवाण । २४ ।
ए अधिकता हरिकथानी ते, जाणे विरला कोय,
जेनी उपर केशव करे करुणा, तेनी मति एवी होय । २५ ।
ते माटे जन आळस तजी करो, कथा-अमृत-पान,
ए थकी अघ सहु परजळे, थाय प्रसन्न श्रीभगवान । २६ ।

पामरों के वह (कथा) मुमुक्षु लोगों को प्रिय लगती है। जो जीवन्मुक्त (तथा) ब्रह्मवेत्ता हों, वे उसका श्रवण करते रहते हैं। २०। नपुंसक, पुरुष, स्त्री— सबको हरिकथा का (श्रवण-पठन सम्बन्धी) अधिकार है। (अतः) जो आदर-पूर्वक उसे नहीं सुनते, उनके जीवन को धिक्कार है। २१। अमृत का सेवन करते-करते मद चढ़ता है; फिर उससे अज्ञ जन उन्मत्त हो जाते हैं। परन्तु (हरि-) कथा-रूपी अमृत से मोह-मत्सर (जैसे विकार) और (आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक जैसे) त्रिविध ताप (दूर हो) जाते हैं। २२। अमृत (-पान) का अधिकार (केवल) देवों को (प्राप्त) है। उनके अतिरिक्त और कोई अल्प (अमृत) को भी प्राप्त नहीं हो सकता। परन्तु हरिकथा रूपी अमृत का अधिकार राजा-रंक, ऊँच-नीच सबको (प्राप्त) है। २३। इसके उपरान्त गंगा सबको पावन तो करती है, (फिर भी) उसमें डूब जाने पर प्राण निकल जाते हैं। (परन्तु) हरि-कथा (रूपी गंगा) में डूब जाने पर वे (लोग) मोक्ष-पद को प्राप्त हो जाते है। २४। (अमृत, गंगा आदि से) हरि-कथा की यह अधिकता (विशेषता) है। उसे कोई विरला ही जानता है। (वस्तुतः) जिस पर केशव अर्थात् भगवान् करुणा करते हों, उसी की मति ऐसी (हरि-कथा में अनुरक्त) होती है। २५। इसलिए हे लोगो, आलस्य का त्याग करके हरि-कथा रूपी अमृत का पान कीजिए। उससे सब पाप जल जाते हैं और श्री भगवान् प्रसन्न हो जाते

ए अर्थ वाल्मीकि तणो, हनुमान नाटक सार,
ए निगम संमत मेळवीने, कर्यो छे विस्तार। २७।
पद सातसें अडताळीस पूरां अध्याय थया बावीश,
अरण्य कांड कथा कही, ते कृपा श्रीजुगदीश। २८।

वलण (तर्ज बदलकर)

जुगदीश केरी कृपाए जे, प्राकृत रामकथा करी,
दास गिरधर निमित्त मात्र, ए करता पोते श्रीहरि। २९।

॥ अरण्य कांड समाप्त ॥

*　　　*　　　*

हैं। २६। वाल्मीकि के हनुमान् नाटक का यह सार (-भूत अर्थ) है। मैंने उसमें वेद-सम्मत अर्थ मिलाकर उसका विस्तार कर दिया है। २७। इस काण्ड में सात सौ अड़तालीस पद पूर्ण हो गये हैं। इसके बाईस अध्याय हो गये हैं। मैंने (जो रामायण के) अरण्य काण्ड की कथा कही है, वह तो श्रीजगदीश की कृपा है। २८।

श्रीजगदीश की कृपा से मैंने प्राकृत (अर्थात् लोकभाषा गुजराती) में रामकथा की जो रचना की, उसके लिए यह (कवि) गिरधरदास तो निमित्त मात्र है। (वस्तुतः) भगवान् श्रीहरि स्वयं उसके कर्ता (निर्माता) हैं। २९।

॥ अरण्य काण्ड समाप्त ॥

*　　　*　　　*

किष्किंधा काण्ड

अध्याय—१ (सुग्रीव आदि वानरों द्वारा राम-लक्ष्मण को देखना और हनुमान का राम के पास जाना)

राग धनाक्षरी

श्रीपुरुषोत्तम परम कृपाळ जी, भक्तवत्सल प्रभु दीनदयाळ जी,
शरणागतनी करो संभाळ जी, तमारो सेवक छुं मतिबाळ जी। १।

ढाळ

छुं बाळमति सेवक तमारो, स्वामी पड्यो तम शर्ण,
भक्तवत्सल बिरह जाणी, राखो प्रभु निज चर्ण। २।
वंदुं वारंवार जुगपद, तमारा महाराज,
तम कृपाए रघुवीर जश कहुं राखजो मुज लाज। ३।
सहु भगवतीना चरणनी रज, लई चढावुं शीश,
अनुग्रह करो सर्वे मळी तो, गाउं गुण जुगदीश। ४।

अध्याय—१ (सुग्रीव आदि वानरों द्वारा राम-लक्ष्मण को देखना और हनुमान का राम के पास जाना)

हे परम कृपालु गुरु पुरुषोत्तम जी, हे भक्त-वत्सल तथा दीनदयालु प्रभु, मुझ शरणागत की रक्षा कीजिए— मैं आपका बाल-बुद्धि अर्थात् नासमझ सेवक (जो) हूँ। १

हे स्वामी, मैं आपका बाल-बुद्धि सेवक हूँ; आपकी शरण में पड़ा हुआ हूँ। हे प्रभु, अपने 'भक्त-वत्सल' विरुद (उपाधी) को जानकर (उसका ध्यान रखते हुए) मुझे अपने चरणों (के आश्रय) में रखिए। २ हे महाराज, आपके दोनों चरणों को मैं बारबार प्रणाम करता हूँ। मैं आपकी कृपा (के बल) से श्रीरघुवीर की कीर्ति (का वर्णन करके) कहता हूँ। मेरी लज्जा की रक्षा करना। ३ मैं समस्त भगवद्-भक्तों के चरणों की धूली लेकर अपने मस्तक पर चढ़ाता हूँ। सब मिलकर मुझपर अनुग्रह करें, तो (जिससे) मैं जगदीश (भगवान राम) के गुणों का गान कर सकूं। ४ सत्संग से समस्त ताप दूर हो जाते हैं, दुःख पूर्णतः टल जाते हैं।

सत्संगथी सहु ताप जाये, टळे दुःख अशेष,
एवा भक्त ने भगवंत मांहे, नथी अंतर लेश। ५ ।
ए जोयामां तो समान दीसे, इतर जन ने संत,
ओळखाय आचरणे करी, जे महापुरुष महंत। ६ ।
ब्रह्मानंदमां सदा डोले, संत आनंदघन,
विषयी जन डोले विषयमां, मलिन जेनां मन। ७ ।
समान बक ने मराल उज्ज्वळ, जोया मांहे प्रशंस,
ज्यारे क्षीर जळ जुदां करे, त्यारे जणाय ते हंस। ८ ।
जेम वायस ने वळी कोकिला ते, समान श्याम जणाय,
वसंतमां पिक राग पंचम, आलापीने गाय। ९ ।
स्फटिक मुक्ता श्वेत सम पण, मूले मोती जणाय,
तक्र पयनुं पान करतां, स्वादथी ओळखाय। १० ।
एम इतर जन ने भक्तमां अंतर घणुं कहेवाय,
विषयथी दुःख ऊपजे, सत्संगथी सुख थाय। ११ ।

ऐसे भक्तों और भगवान में अणु (भर) तक अन्तर नहीं होता। ५ अन्य लोग और सन्त दीखने में तो समान दिखायी देते हैं; (परन्तु) जो महापुरुष महन्त (श्रेष्ठ साधु) होते हैं, वे आचरण से (अन्य लोगों से भिन्न) पहचाने जाते हैं। ६ सन्त सदा ब्रह्मानन्द में झूमते रहते हैं। वे (मानो) आनन्द के मेघ ही होते हैं। परन्तु जिनका मन मलिन, अर्थात् पापी होता है, वे विषयी लोग विषय (-सम्बन्धी सुख-भोग) में झूमते रहते हैं। ७ (जिस प्रकार) बगुला और हंस समान रूप से उज्ज्वल (उजले, श्वेत) अतएव प्रशंसनीय होते हैं, परन्तु जब दूध और पानी को (उनमें से) एक अलग कर देता है, तब वह हंस (रूप से) जाना जाता है; फिर जिस प्रकार कौआ और कोयल (दोनों) समान (रूप से) काले दिखायी देते हैं, परन्तु वसन्त ऋतु में कोयल पंचम राग (स्वर) अलापते हुए गाती है, (उससे कोयल की कौए से भिन्नता स्पष्ट हो जाती है); (जिस प्रकार) स्फटिक और मोती समान रूप से श्वेत होते हैं, परन्तु मूल्य से मोती पहचाना जाता है; (जिस प्रकार) छाछ और दूध (दोनों के समान रूप से श्वेत दीखने पर भी) पीने पर उनके स्वाद से (अलग-अलग) जाने जाते हैं; उस प्रकार अन्य (साधारण) मनुष्य और भक्त (के समान दिखायी देते रहने पर भी दोनों) में बहुत अन्तर कहा जाता है। विषय-भोग से दुःख उत्पन्न होता है, तो सत्संग से सुख (उत्पन्न) हो जाता है। ८-११ जिस प्रकार स्पर्श मात्र से पारस लोहे को बढ़िया सोना बना देता है, उस प्रकार सन्त

जेम पारस लोहनुं करे कांचन, स्पर्श मात्रे अनुप,
एम संत खलने करे साधु, आपे रहे निजरूप। १२।
एवा भगवतीना चरण वंदुं, नमुं वारंवार,
तम कृपाए रघुवीर केरो, करुं जश विस्तार। १३।
रघुवंशमां दशरथने घेर, प्रगटिया पूरणकाम,
ते पाळवा पितृवचन वनमां, नीकळ्या श्रीराम। १४।
पंचवटीमां रह्या आवी, सीता लक्ष्मण साथ,
जानकीनुं हरण करीने, गयो लंकानाथ। १५।
ते खोळवाने नीकळ्या, वनमांहे श्रीरघुवीर,
सौमित्री साथे आविया, पंपा सरोवर तीर। १६।
ए कथा पूर्वे कही जथारथ, विस्तारी एक मन,
हावे किष्किधा काण्डनी कथा कहुं, सुणो श्रोताजन। १७।
पंपा सरोवरने तटे, सुंदर स्फटिक शिलाय,
त्यां विराजे रघुवीर लक्ष्मण, अधिक तन शोभाय। १८।
लक्ष्मण उछंगे शीश मूकी, शयन कीधुं राम,
ज्यम शेषसज्या हरि पोढे, क्षीरसागर ठाम। १९।

खल को साधु बना देता है और (इतना ही नहीं, वरन्) उसे अपना, अर्थात् सन्त-स्वरूप प्रदान किये रहता है। १२ मैं ऐसे भक्तों के चरणों का वन्दन करता हूँ, बारबार उन्हें प्रणाम करता हूँ। (हे भक्तो,) मैं आपकी कृपा से रघुवीर राम के यश का विस्तार (-पूर्वक-वर्णन) कर रहा हूँ। १३ (कहा जा चुका है कि) रघुवंश में दशरथ के घर (पुत्र के रूप में) पूर्णकाम राम प्रकट हो गये और वे पिता के वचन का पालन करने के लिए (राज्य और घर का त्याग करके) निकल कर वन में चले गये। १४ वे सीता और लक्ष्मण-सहित पंचवटी में आकर ठहर गये। (वहाँ से) लंकापति रावण जानकी का अपहरण करके चला गया। १५ (तदनन्तर) उसे खोजने के लिए श्रीराम वन में चले गये और पम्पा सरोवर के तट पर लक्ष्मण-सहित आ गये। १६ (इससे) पहले, मैंने एक (-निष्ठ) मन से विस्तार करते हुए यह कथा यथार्थ रूप से कही है। हे श्रोताजनो, सुनिए, अब मैं किष्किन्धा काण्ड की कथा कहता हूँ। १७ पम्पा सरोवर के तट पर एक सुन्दर स्फटिक शिला थी। वहाँ राम और लक्ष्मण विराजमान हो गये। उनके शरीर बहुत शोभायमान थे। १८ जिस प्रकार क्षीर-सागर में अपने स्थान पर भगवान् विष्णु शेष रूपी शय्या पर सोये, अर्थात् लेटे हुए रहते हों, उस प्रकार (भगवान् विष्णु के अवतार) राम ने (शेष

ते समे ऋषिमूक परवत उपर, बैठा वानर पंच,
नळ नील जांबुवान सुग्रीव, मारुति बळ संच । २० ।
ज्यम कनकाद्रिनां पंचशृंग, एम शोभंता ते अजीत,
ज्यम उदयाचळ पर एक काळे, ऊगिया आदित्य । २१ ।
रघुवीर केरुं कारज करवा, अवतरिया कपिराज,
महाभूत जाणे प्रगट्या एम, शोभंता शुभ काज । २२ ।
सुग्रीवे दीठा राम लक्ष्मण, सरोवरनी तीर,
लक्ष्मण उछंगे शीश मूकी, शयन कर्युं रघुवीर । २३ ।
सुग्रीव डरप्यो मन विषे, जोई धनुर्धारी जेह,
रखे वालीए मोकल्या, मुंने मारवाने एह । २४ ।
एम विचारी सुग्रीव ऊठ्यो, एकलो तेणी वार,
राम-लक्ष्मण भणी धायो, गदा कर ग्रही सार । २५ ।
हनुमंतजीए वारियो, सहसा न करीए काज,
हुं परीक्षा करी आवुं त्यां लगी, ऊभा रहो कपिराज । २६ ।

के अवतार) लक्ष्मण की गोद में सिर रखे हुए शयन किया । १९ उस समय ऋष्यमूक पर्वत पर (ये) पाँच वानर बैठे हुए थे— नल, नील, जाम्बवान, सुग्रीव और बल-राशि हनुमान । २० जैसे सुवर्ण (मेरु) पर्वत के पाँच शिखर (शोभायमान) हों, वैसे वे अपराजित वानर वीर शोभायमान थे । मानो (उनके रूप में) उदयाचल पर एक ही समय (पाँच) सूर्य उदित हो गये हों । २१ (वस्तुतः) वे श्रेष्ठ कपि राम का कार्य (सम्पन्न) करने के लिए अवतरित हो गये थे । मानो (उनके रूप में पाँचों) महाभूत ही प्रकट हो गये हों । इस प्रकार शुभ कार्य के लिए वे शोभायमान थे । २२ सुग्रीव ने उस सरोवर के तट पर राम और लक्ष्मण को देखा— राम लक्ष्मण की गोद में सिर टिकाये सो गये थे । २३ उन धनुर्धारियों को देखकर सुग्रीव मन में डर गया (आशंकित हो गया); 'उन्हें कदाचित् मुझे मार डालने के लिए बाली ने भेजा है'— ऐसा सोचकर सुग्रीव उस समय अकेला उठ गया और हाथ में एक अच्छी गदा लेकर, राम-लक्ष्मण की ओर दौड़ा । २४-२५ (यह देखकर) हनुमान ने उसे (यह कहते हुए) रोका— 'यकायक (बिना ठीक से सोचे) ऐसा काम हम न करें । हे कपिराज, मैं (उनकी) परीक्षा करके आता हूँ, तब तक (यहाँ) खड़े रहो (ठहरो) ।' २६ तो सुग्रीव ने कहा— 'हे हनुमान, सुनो । निश्चय ही आज रात को एक सपना मेरे देखने में आया । उस सम्बन्धी विचार मैं तुम्हें बताता हूँ । २७ मानो कि कोई दो वीर आ-

सुग्रीव कहे सुणो मारुति, आज निशाए निरधार,
मने स्वप्न एवुं आवियुं, ते कहुं तमने विचार। २७।
जाणे वीर बे को आविया, तेणे मार्यो वालीराज,
मने किष्किधानुं राज आप्युं, एवुं कीधुं राज। २८।
ते वीर दीठा आज में, त्यारे ऊपन्यो मन त्रास,
हनुमंत कहे कांई भय नथी, तमे राखजो विश्वास। २९।
तमो राय अहीं ऊभा रहो, नव करशो मन चिंताय,
जोउं वीर बे ए कोण छे? हुं करी आवुं परीक्षाय। ३०।

वलण (तर्ज़ वदलकर)

हुं करी आवुं परीक्षा जईने, एम कहीने कपिवर जाय रे,
हनुमंत वेगे आवियो, ज्यां विराज़े श्रीरघुराय रे। ३१।

गये और उन्होंने बाली को मार डाला। उन्होंने मुझे किष्किन्धा का राज्य दिया— उन्होंने ऐसा काम किया। २८ मैंने आज उन वीरों को देखा। तब मेरे मन में भय उत्पन्न हुआ।' (इसपर) हनुमान ने कहा— '(इसमें) कोई भी भय (की बात) नहीं है— (इसका) तुम विश्वास रखना। २९ हे राजा, तुम यहाँ खड़े रहो (ठहरो)। मन में (कोई) चिन्ता न करो। देखता हूँ— ये दो वीर कौन हैं। मैं (अभी) परीक्षा करके आता हूँ। ३०

(वहाँ) जाकर मैं परीक्षा करके आता हूँ।' ऐसा कहते हुए वह कपिवर (हनुमान) चला गया और वहाँ वेग-पूर्वक आ गया, जहाँ श्रीरघुराज विराजमान थे। ३१

* * *

अध्याय—२ (हनुमान द्वारा राम की परीक्षा करना तथा हनुमान-राम भेंट)

राग मारु

दीठा हनुमंते बे वीर, शोभे स्फटिक शिला रणधीर,
राजे लक्ष्मण ने रामचंद्र, जाणे बृहस्पति ने वळी इंद्र। १।

अध्याय—२ (हनुमान द्वारा राम की परीक्षा करना तथा हनुमान-राम भेंट)

हनुमान ने उन दो वीरों को देखा। वे रणधीर स्फटिक-शिला पर शोभायमान थे। लक्ष्मण और रामचन्द्र (वहाँ) शोभायमान थे, मानो बृहस्पति और इन्द्र ही हों। १ अथवा मानो वे वीर विरागी तपस्वी हों;

के उदासी तपस्वी वीर, के उदार ने बीजो धीर,
ज्ञान विज्ञान जश ने पुन्य, सिद्ध साधकमां नथी न्यून । २ ।
जेम आनंद ने समाधान, जेवा निर्गुण ने गुणवान,
आनंद मोक्ष बोध वैराग, एवा कपिए दीठा महाभाग । ३ ।
वड वृक्ष तळे बे वीर, बेठा पंपा सरोवरतीर,
जोई विस्मे थयो हनुमंत, दीसे वीर को महाबळवंत । ४ ।
वड उपर कपिवर चढियो, लाग्यो कूदवा ते गडगडियो,
कहे छे लक्ष्मणने देवेश, भाई जो आ कपिनो वेश । ५ ।
एने वज्र कछोटो छाजे, वळी कनकनुं कोपीन राजे,
ए कपिवर महा बळवंत, एनुं नाम हशे हनुमंत । ६ ।
एवां रामना सुणी वचन, हनुमंत विचारे मन,
मारी माते कह्युं हतुं मुजने, सुत ओळखशे जे तुजने । ७ ।
कोपीन कनक कछोटो ओळखशे, छे गुप्त ते परगट लखशे,
तेने स्वामी जाणजे सूत्र, तेनी सेवा तुं करजे पुत्र । ८ ।

अथवा उनमें से एक उदार तथा दूसरा धीर हो, अथवा वे ज्ञान और विज्ञान हों, अथवा वे यश और पुण्य हों। उनके (क्रमशः) सिद्ध और साधक होने में कोई त्रुटि नहीं थी। जैसे आनन्द और सन्तोष हों, जैसे निर्गुण और सगुण हों, जैसे आनन्द और मोक्ष हों, बोध (ज्ञान) और वैराग्य हों— ऐसे उन महाभागों को उस कपि ने देखा (उस कपि को वे ऐसे जान पड़े)। २-३ पम्पा सरोवर के तट पर वटवृक्ष के तले वे दो वीर बैठे हुए थे। उन्हें देखकर हनुमान चकित हो गया। (उसने सोचा,) ये कोई महा बलवान वीर दिखायी दे रहे हैं। ४ वह कपिवर बरगद पर चढ़ गया और (ऊपर से) धमाधम कूदने लगा। तब देवेश राम ने लक्ष्मण से कहा— 'भाई इस कपि के वेश को देखो। ५ वज्र-कछोटा इसे शोभा दे रहा है। इसके अतिरिक्त, सोने का कौपीन शोभायमान हो रहा है। यह कपिवर महा बलवान है। इसका नाम हनुमान होगा।' ६ राम की ऐसी उक्तियों को सुनकर हनुमान ने मन में सोचा— "मेरी माता ने मुझसे कहा था— 'हे पुत्र, जो तुझे पहचाने, जो तेरे स्वर्ण कौपीन और (वज्र) कछोटे को पहचाने, जो गुप्त है, उसे प्रकट रूप में जो देख पाए, उसे हे पुत्र, अपना स्वामी समझ ले; हे पुत्र, तू उसकी सेवा करना।' (माता) अंजना ने जो कहा था, वे स्वामी तो मुझे मिल गये। (अब) मैं परीक्षा (करके तो) देख लूँ कि उनमें कितना पराक्रम है, उनमें कितनी शक्ति है।" ७-९ ऐसा विचार करके उस बलवान हनुमान

कह्युं ' तुं अंजनीए जेह, मुजने स्वामी मळिया तेह,
जोउं परीक्षा पराक्रम जेमां, केटलुं एक बळ छे एमां । ९ ।
एम विचारीने हनुमंत, तरु शाखा नाखी बलवंत,
लक्ष्मणे शर मूकी निवारी, त्यारे गाज्यो कपि बळ भारी । १० ।
पंच परवत ऊंचकी लाव्यो, नाखवा राम उपर आव्यो,
रामे सज्ज कर्युं कोदंड, शर पंच मूक्यां प्रचंड । ११ ।
उडाड्या करथी गिरि पांच, लागी झपट ते बाणनी आंच,
तेणे करीने उड्यो आकाश, हनुमंत भम्यो घणुं तास । १२ ।
त्यारे वायु मळ्यो आकाश, सुण पुत्र ए छे अविनाश,
साक्षात् ए श्रीभगवंत, आव्या करवा असुरनो अंत । १३ ।
आदि नारायण ने शेष, आव्या स्थापवा धर्म अशेष,
मारे था तुं रामनो दास, सेवा करजे सदा रही पास । १४ ।
सुणी वायुनी वाणी कपीश, आवी नाम्युं रामने शीश,
अहं दासोऽस्मि कही वाणी, राखो शरणे सारंगपाणि । १५ ।
कर जोडीने मारुत-तन, स्तुति करतो दीन वचन,
जय रघुकुळकमळ-सुभानु, जय खल-वन-दहन कृशानु । १६ ।

ने (उनपर) पेड़ की शाखा फेंक डाली। (इधर) लक्ष्मण ने वाण छोड़कर उसका निवारण किया, तो तब उस कपि ने बहुत ज़ोर से गर्जना की। १० वह पाँच पर्वत उठाकर लाया और राम पर उन्हें गिराने के लिए आ गया। (तब) राम ने धनुष सज्ज किया और पाँच प्रचण्ड बाण चला दिये। ११ (फल-स्वरूप हनुमान के) हाथ से वे पाँच पर्वत उड़ा दिये गये। उन बाणों की जो झपट लग गयी, उससे उसे चोट लगी। उससे हनुमान आकाश में उड़ गया और वह बहुत समय तक चक्कर खाते हुए घूमता रहा। १२ तब आकाश में उससे वायुदेव मिला। वह बोला—' अरे पुत्र, सुनो, ये तो अविनाशी हैं, ये साक्षात् भगवान् हैं, (जो) असुरों का अन्त करने आ गये हैं। १३ ये आदि नारायण और शेष (हैं, जो) धर्म की निःशेष स्थापना करने के लिये आये हुए हैं। इसलिए, तुम राम के दास बन जाओ और सदा (उनके) पास रहते हुए उनकी सेवा करो।' १४ वायु की यह बात उस कपि ने सुनी (मानी) और आकर उसने राम के सामने सिर नवाया। उसने (शब्दों में) कहा-- ' हे सारंग-पाणि, मैं (आपका) दास हूँ, मुझे अपनी शरण में रखिए।' १५ तदनन्तर वह वायु-पुत्र हाथ जोड़कर दीन वचनों से युक्त स्तुति करने लगा-- ' हे रघुकुल रूपी कमल (को विकसित कर देनेवाले)

जय वैकुंठनाथ रमेश, जय आदि नारायण शेष,
जय ब्रह्म सनातन ईश, जय मायापति जुगदीश । १७ ।
जय मंगलरूप निधान, जय भक्तवत्सल भगवान,
परमेश्वर पूरणकाम, जय विश्वना आत्माराम । १८ ।
जय जीवना अंतरयामी, साक्षी द्रष्टा चराचर स्वामी,
पुरुषोत्तम पूर्णानंद, मधुहंता मुरारि मुकुंद । १९ ।
जय यज्ञना कारणरूप, नमुं वेदान्तवेद्य स्वरूप,
धर्म स्थापन तव अवतार, नमुं रामने वारंवार । २० ।
एम स्तुति करी हनुमंत, सुणी प्रसन्न थया भगवंत,
स्नेह ऊपन्यो श्रीरघुनाथ, चांप्यो मारुति रुदया साथ । २१ ।
एम हरिहर भेट्या ज्यारे, जयजयकार कर्यो सुर त्यारे,
दीधी रघुपतिए आशिष, चिरंजीवी तुं रहेजे कपीश । २२ ।
तपे रवि-शशी ज्यां लगी धरणी, वळी वेद विधि कहे वरणी,
रहेजे अक्षय त्यां लगी तुंय, सत्य वचन कहुं छुं हुंय । २३ ।

सूर्य, (आपकी) जय हो। हे खलजन रूपी वन को जला डालनेवाले अग्नि-देव, (आपकी) जय हो। १६ हे वैकुण्ठ के स्वामी तथा रमा-पति, जय हो। हे शेषशायी आदि नारायण, जय हो। हे ब्रह्म, हे सनातन ईश्वर, जय हो। हे माया-पति, हे जगदीश, जय हो। १७ हे मंगल-रूप निधान, जय हो। हे भक्त-वत्सल भगवान, जय हो। हे परमेश्वर, हे पूर्णकाम, जय हो। हे विश्व के आत्माराम, जय हो। १८ हे जीवों के अन्तर्यामी, हे चराचर के साक्षी, द्रष्टा एवं स्वामी, जय हो। हे पुरुषोत्तम, हे पूर्णानन्द, हे मधु नामक राक्षस को मारनेवाले, हे मुर दैत्य के शत्रु, हे मुकुन्द (मुक्ति-दाता), जय हो। १९ हे यज्ञ के कारण-रूप, जय हो। हे वेदान्त-वेद्य (ब्रह्म-) स्वरूप, आपको मैं नमस्कार करता हूँ। धर्म की स्थापना के लिए आपने अवतार धारण किया है। ऐसे आप राम को मैं बारबार नमस्कार करता हूँ।' २० हनुमान ने ऐसी स्तुति की। उसे सुनकर भगवान श्रीरघुनाथ राम प्रसन्न हो गये; उन्हें (उसके प्रति) स्नेह उत्पन्न हो गया और उन्होंने हनुमान को हृदय से लगा लिया। २१ इस प्रकार जब हरि (अर्थात् विष्णु के अवतार राम) और हर (अर्थात् शिवजी के अवतार हनुमान) मिल गये, तब देवों ने जय-जयकार किया। (फिर) श्रीराम ने आशीर्वाद दिया— 'हे कपीश, तुम चिरंजीवी (बने) रहो। २२ मैं यह सत्य वचन कह रहा हूँ— जब तक सूर्य और चन्द्र हों, जब तक धरती हो, जब तक ब्रह्मा वेदों का वर्णन करता रहे, तब तक तुम अक्षय

अवतार अंश तुं हरनो, तुं छे भाग अमारा चरनो,
थयो अंजनी गर्भसंभूत, तारुं वाधजो बल अद्‌भुत। २४।
एवां वचन सुणी हनुमंत, घणुं सुख पाम्यो बळवंत,
पछी लक्ष्मणने पाये लाग्यो, निज स्वामी पामी अनुराग्यो। २५।
लाग्यो चांपवा रामना चर्ण, कह्युं निज दुःख अशरण-शर्ण,
हनुमंत कहे जुगदीश, छे सुग्रीव कपिनो ईश। २६।
पेला ऋषिमुक पर्वत मांहे, वालीना भयथी रहे त्यांहे,
तेने आपो अभय वरदान, पोतानो ते करो भगवान। २७।
तेशुं मैत्री करो महाराज, तेथी सरशे आपणुं काज,
राम कहे सुण हो हनुमंत, एवो सुग्रीव छे बळवंत। २८।
वाली साथे थयुं केम वेर? एनां मातपिता कोण पेर?
वाली सुग्रीवनी उत्पत्य, मुजने संभळावो सत्य। २९।
सुग्रीवने शुं छे दुःख? केम रहेवायुं छे ऋषिमुक?
अथ इति सहु विस्तार, मुजने कहो वायुकुमार। ३०।

बने रहो। २३ तुम शिवजी (अर्थात् रुद्र) के अंशावतार हो; तुम हमारे चरु के भाग (से उत्पन्न हुए) हो। तुम अंजना के गर्भ से उत्पन्न हुए हो। तुम्हारा बल अद्‌भुत रूप से बढ़ जाए।' २४ ऐसे वचनों को सुनकर वह बलवान हनुमान बहुत सुख को प्राप्त हो गया। अनन्तर वह लक्ष्मण के पाँव लगा। अपने स्वामी को (इस प्रकार) प्राप्त करके उनके प्रति अनुरक्त हो गया। २५ वह राम के चरण दवाने लगा। उसने अशरणों की शरण उन राम को अपना दुःख वता दिया। हनुमान ने कहा— 'हे जगदीश, सुग्रीव नामक कपियों का राजा है। २६ वहाँ उस ऋष्यमूक पर्वत पर वह बाली के भय से रहता है। हे भगवान, उसे अभय वरदान दीजिए और उसे अपना बना लीजिए। २७ हे महाराज, उससे मित्रता कीजिए, उससे आपका काम पूरा हो जाएगा।' (इसपर) राम ने कहा— 'हे हनुमान, सुनो। (यदि) सुग्रीव इस प्रकार बलवान हो, तो (बताओ) बाली के साथ उसका बैर क्यों हो गया? उनके माता-पिता कौन और किस प्रकार के (कैसे) हैं? मुझे बाली और सुग्रीव की उत्पत्ति सचमुच बता दो। २८-२९ सुग्रीव को क्या दुःख है? वह ऋष्यमूक पर क्यों रहता है? हे वायु-कुमार, मुझे यह अथ से इति (तक) सब विस्तार-पूर्वक बता दो। ३०

वलण (तर्ज़ बदलकर)

वायुकुमार ते कहो मुजने, क्यम प्रगट्या ए बळवंत रे ?
एवां वचन रघुपतिनां सांभळी, पछी बोल्यो कपि हनुमंत रे। ३१।

हे वायु-कुमार, मुझसे वह कह दो कि वे बलवान (वानर) किस प्रकार उत्पन्न हो गये ?' रघुपति के ऐसे वचन सुनने के पश्चात् कपि हनुमान बोला। ३१

* * *

अध्याय—३ (बाली-सुग्रीव के जन्म की कथा; बाली-दुंदुभि-युद्ध)

राग चोपाई

कहे हनुमंत सुणो भगवान, एक समे धरता विधि ध्यान,
त्यारे आव्यो मनमां प्रेम अपार, आंसुनुं बिंदु पड्युं ते वार। १।
तेथी वानर एक प्रगट्यो ते ठाम, रुक्षराज कपि तेनुं नाम,
ते विधिने वहालो घणुं त्यांहे, फरतो हींडे उपवन मांहे। २।
ते एक समे आव्यो कैलास, ज्यां सुंदर सरोवर छे सुखराश,
छे पारवतीनो दुस्तर शाप, जो ते पुरुष जळ स्पर्शे आप। ३।
पुरुष टळीने थाय प्रमदा, रुक्षराज त्यां नाह्यो तदा,
तत्क्षण नर फीटी थयो नार, सुंदर वेश अति सुकुमार। ४।

अध्याय—३ (बाली-सुग्रीव के जन्म की कथा; बाली-दुंदुभि-युद्ध)

हनुमान बोला— "हे भगवान, सुनिए। एक समय जब विधाता ध्यान धारण किये हुए थे, तब उनके मन में अपार प्रेम (उत्पन्न) हो आया। उस समय (उनकी आँख से) अश्रु की एक बूंद गिर पड़ी। १ उससे उस स्थान पर एक वानर उत्पन्न हुआ। उस कपि का नाम 'ऋक्षराज' था। वह विधाता का बहुत लाड़ला था। वह वहाँ उपवन में घूमता-फिरता रहा। २ वह (घूमते-घूमते) एक समय कैलास पर आ गया। वहाँ सुख-राशि स्वरूप एक सरोवर है। उसे पार्वती का (यह) दुस्तर अभिशाप था कि जो पुरुष स्वयं उसके जल को स्पर्श करे, वह पुरुष (रूप को) बदलकर प्रमदा (नारी) हो जाएगा। ऋक्षराज ने तब वहाँ स्नान किया। तत्क्षण उसका नर (-रूप) नष्ट होकर वह स्त्री (-रूप) हो गया। वह नारी सुन्दर वेश की तथा अति सुकुमार थी। ३-४ रम्भा

रंभा थकी छे अद्‌भुत रूप, तन मंडित अलंकार अनुप,
सुंदर अंग आभूषण चीर, ते नारी ऊभी सरोवर तीर। ५।
त्यारे जता हता क्यांय इंद्र ने रवि, तेणे दीठी नारी अभिनवी,
ते मोह पामी ऊतर्या नर्प, धीरज गई खळियो कंदर्प। ६।
ते स्त्रीनी उपर पड्युं एव, पाछा वळी गया लाज्या देव,
शुक्र सूरजनुं ग्रीवाए अड्युं, हवे इंद्रनुं वीर्य मस्तके पड्युं। ७।
तेथी बे पुत्र थया तत्काळ, वानरवेश प्रचंड विशाळ,
त्यारे ब्रह्माने थई चिंता घणी, करी प्रार्थना उमिया तणी। ८।
थयी प्रसन्न पारवती जदा, रुक्षराज नर कीधो तदा,
पछी तेडी रुक्षने सहित कुमार, विधि आव्या मृतलोक मोझार। ९।
पर्वत ऋषिमुक पास विशेक, रच्युं नगर किष्किधा एक,
रुक्षराजने आप्युं तेह, थाप्यो भूप करी विधिए एह। १०।
बंन्यो पुत्रनां पाड्यां नाम, विधि गयो सत्यलोक ज धाम,
वासववीर्य शीश अनुसर्युं, वाली नाम ते सुतनुं धर्युं। ११।

से भी उसका रूप अति अद्‌भुत था। उसका शरीर वढ़िया आभूषणों से अलंकृत था। उसके अंग पर सुन्दर आभूषण और वस्त्र थे। ऐसी वह नारी उस सरोवर के तट पर खड़ी रह गयी थी। ५ तब इन्द्र और सूर्य कहीं जा रहे थे। उन्होंने उस अभिनव (रूप-धारिणी) नारी को देखा, तो मोह को प्राप्त होकर वे राजा (वहाँ) उतर गये। उनका धैर्य नष्ट हो गया और उनका वीर्य स्खलित हो गया। ६ उनका वह वीर्य उस समय उस स्त्री पर पड़ गया, तो वे देव पीछे मुड़कर, अर्थात् लौटकर चले गये; (क्योंकि) वे लज्जित हो गये थे। सूर्य का वीर्य (उस स्त्री की) ग्रीवा में अटक गया और अब इन्द्र का वीर्य मस्तक पर पड़ गया। ७ उससे तत्काल दो पुत्र उत्पन्न हो गये, जो प्रचण्ड विशाल वानर-वेशधारी थे। तब ब्रह्मा को बहुत चिन्ता हो गयी, तो उन्होंने उमा से प्रार्थना की। ८ जब पार्वती प्रसन्न हुई, तब उसने ऋक्षराज को (पुनः) पुरुष वना दिया। अनन्तर ऋक्षराज को कुमारों सहित लिये हुए विधाता मृत्युलोक में आ गये। ९ ऋष्यमूक पर्वत के समीप उन्होंने किष्किन्धा नामक एक नगर का निर्माण किया और वह ऋक्षराज को प्रदान किया। विधाता ने राजा के रूप में उसकी (वहाँ) स्थापना की। १० विधाता ने दोनों पुत्रों के नाम रखे और वे अपने धाम अर्थात् सत्यलोक चले गये। इन्द्र का वीर्य (उस नारी के) मस्तक का अनुसरण करता हुआ आया था; अतः (उससे उत्पन्न) उस पुत्र का नाम 'बाली' रखा। ११ सूर्य का वीर्य (उस

पड्या सूरजनो ग्रीवाए काम, तेनुं पाड्युं सुग्रीव नाम,
घणा दिवस एम करतां गया, पुत्र बंन्यो ते प्रौढा थया । १२ ।
वालीने सोंप्युं सहु राज, गयो रुक्ष तप करवा काज,
मयकन्या तारा शुभमति, ते परण्यो वाळी महासती । १३ ।
सुषेणकन्या रूमा जेह, सुग्रीव सुंदरी परण्यौ जेह,
मोटो वाली लघु सुग्रीव, करे राज सुख बळना शिव । १४ ।
त्यारे इंद्रे आवी तत्काळ्, वालीने घाली जयमाळ,
रणमां सदा विजय कहेवाय, सन्मुख शत्रु निर्बळ थाय । १५ ।
सूरज आव्यो सुग्रीव कने, सुग्रीव पासे सोंप्यो मुंने,
मारा गुरु सूरज प्रकाश, आज्ञा मानी रह्यो हुं पास । १६ ।
संभाळजे तुं एने सदा, एम कही गयो दिनकर तदा,
पछे वालीने सुत अंगद थयो, महा बळियो तारानो जायो । १७ ।

दोहरा

हनुमंत कहे रघुपति सुणो, राजीवलोचन राम,
एक महिषासुरनो दीकरो, दुंदुभि तेनुं नाम । १८ ।

नारी की) ग्रीवा पर पड़ा था, अतः (उससे उत्पन्न उस) पुत्र का नाम 'सुग्रीव' रखा। ऐसा करते-करते बहुत दिन व्यतीत हुए। वे दोनों पुत्र (तब तक) प्रौढ़ हो गये। १२ बाली को समस्त राज्य सौंपकर ऋक्षराज तप करने के लिए चला गया। मय के तारा नामक शुभ-मति तथा महा-साध्वी कन्या थी; बाली ने उससे परिणय किया। १३ सुषेण के रूमा नामक जो कन्या थी, सुग्रीव ने उस सुन्दरी से विवाह किया। बाली बड़ा था और सुग्रीव छोटा। सुख और बल की मानो जिनमें सीमा ही थी, ऐसे वे दोनों राज्य करने लगे। १४ तब इन्द्र ने तत्काल (वहाँ) आकर बाली को (ऐसी) जयमाला पहना दी, जिससे युद्ध में वह सदा विजयी कहाए और उसके सम्मुख शत्रु निर्बल हो जाए। १५ (फिर) सुग्रीव के पास सूर्य देव आ गये और मुझे उसे सौंप दिया। सूर्य मेरे विख्यात गुरु थे, इसलिए उनकी आज्ञा को मानते हुए मैं (सुग्रीव के) पास रह गया। १६ तब ऐसा कहते हुए सूर्य चले गये— 'तुम इसे सदा सम्हाल लेना।' अनन्तर बाली के 'अंगद' नामक पुत्र (उत्पन्न) हो गया। वह महा बलवान (पुत्र) तारा के उत्पन्न हुआ।" १७

(फिर) हनुमान ने कहा— "हे राजीव-लोचन राम, सुनिए।

महाबळियो ते असुर थयो, फरतो पृथ्वीमांहे,
कोई जोद्धो तेने मळ्यो नहि, जुद्ध करवाने त्यांहे। १९।
पछी जमराजा पासे गयो, कहे जुद्ध करो मुज साथ,
के वढनारो देखाडो को, सळवळे छे मुज हाथ। २०।
त्यारे दुंदुभिने जमराज कहे, तुं जा किष्किधामांहे,
तुज साथे वढशे कपि, बाली रहे छे त्यांहे। २१।
एवुं सुणी किष्किधा आवियो, रजनीचर तेणी वार,
सिंहनाद करी प्रौढो थयो, शत जोजन विस्तार। २२।
ते नाद सांभळी वालीने, चढियो मनमां क्रोध,
तत्क्षण सन्मुख आवियो, जुद्ध करवाने जोध। २३।
बळवंत वीर बे बाझिया, मल्लजुद्ध करता त्यांहे,
एक मुष्टि मारी वालीए, दुंदुभिना शिरमांहे। २४।
ते असुर भूमि ढळी पड्यो, त्यारे कीधो पाद-प्रहार,
दुंदुभि मृत्यु पामियो, प्राण गया तेणी वार। २५।
पछी चरण झाली ते शव तणा, उछाळ्युं नभमांहे,
मृतक देह आवी पड्यो, ऋषिमुक पर्वत ज्यांहे। २६।

महिषासुर के एक पुत्र था। उसका नाम था 'दुन्दुभी'। १८ वह असुर महा बलवान हो गया, वह पृथ्वी में (इधर-उधर) भ्रमण करता रहा। वहाँ उसे युद्ध करने के लिए कोई योद्धा नहीं मिला। १९ तो अनन्तर वह यमराज के पास गया और बोला— 'मेरे साथ युद्ध करो, अथवा कोई जूझनेवाला दिखा दो। मेरे हाथ फड़क रहे हैं।' २० तब यमराज ने दुन्दुभी से कहा— 'तुम किष्किन्धा में जाओ। वहाँ बाली रहता है। वह वानर तुमसे लड़ेगा।' २१ ऐसा सुनकर वह राक्षस उस समय किष्किन्धा आ गया और सिंहनाद करते हुए सौ योजन विस्तार-वाला प्रचण्ड (बड़ा) हो गया। २२ उस ध्वनि को सुनते ही बाली के मन में क्रोध उत्पन्न हो गया और फिर वह योद्धा युद्ध करने के लिए तत्क्षण सामने आ गया। २३ वे दोनों योद्धा बलवान वीर (पुरुष) थे। वे वहाँ मल्ल-युद्ध करने लगे। बाली ने दुन्दुभी के सिर पर एक घूँसा जमा दिया। २४ तो वह असुर अचेत होकर भूमि पर गिर गया; तब बाली ने उसपर पाँव से प्रहार किया (लात जमायी)। (फलतः) दुन्दुभी मृत्यु को प्राप्त हो गया, उसके प्राण उस समय निकल गये। २५ फिर (बाली ने) उस प्रेत के पाँव पकड़कर उसे आकाश में उछाल दिया, तो जहाँ ऋष्यमूक पर्वत है, (वहाँ) उसका मृत-शरीर (शव) आकर गिर

घणां ऋषि रहे छे तिहां, ते पाम्या मन परिताप,
सहुमां मुख्य मातंग मुनि, तेणे दीधो शाप। २७।
जेणे कर्म आवुं कर्युं, ते आवे परवतमांहे,
तो बळीने भस्म थजो तदा, एवुं बोल्या त्यांहे। २८।
माटे वालीए नव जवाय त्यां, ऋषिमुक परवतमांहे,
ते दिननुं तन असुरनुं खोखुं पडियुं त्यांहे। २९।
ते करंक उपर ऊगिया, सप्त ताड तरु जेह,
एक दिवस मातंग मुनि, मळ्या वालीने तेह। ३०।
पाये लागी पूछियुं, कहो मुजने मुनिदेव,
कोने हाथे मरण मुज, थाशे निश्चे एव। ३१।
मुनि कहे सुण वाली तुं, कहुं तुज साचो बोल,
पेला करंक उपर ऊगिया, सप्त ताड थई गोळ। ३२।
ते वींधे एक बाणथी, एवो वळियो जेह,
ते नर तुजने मारशे, सत्य मानजे एह। ३३।
एवुं कही मुनिवर गया, सांभळो श्रीरघुराय,
हवे वेर थयुं बे वीरने, तेनी कहुं कथाय। ३४।

गया। २६ वहाँ बहुत ऋषि रहते थे। (उस शव के गिरने से) वे मन में ग्लानि को प्राप्त हो गये। उन सब में मातंग मुनि मुख्य थे। उन्होंने अभिशाप दिया। २७ वे वहाँ ऐसा बोले-- 'जिसने ऐसा कर्म किया है, (यदि) वह इस पर्वत पर आ जाए, तो वह तब जलकर भस्म हो जाए।' २८ इसलिए वहाँ ऋष्यमूक पर्वत पर बाली को नहीं जाना चाहिए। उस दिन का उस राक्षस का शरीर-- वह कंकाल वहाँ पड़ा हुआ है। २९ उस अस्थि-पंजर पर सात ताल वृक्ष उत्पन्न हुए हैं। एक दिन मातंग मुनि बाली से मिले। ३० तो (उसने) पाँव लगकर (उससे) पूछा। वह बोला, 'हे मुनिदेव, मुझसे कहिए-- मेरी मौत निश्चित रूप से किसके हाथों है।' ३१ तो मुनि ने कहा— 'हे बाली, तुम सुनो। मैं तुम्हें सच्ची बात कह रहा हूँ-- उस अस्थि-पंजर पर सात ताल वृत्ताकार होकर उगे हैं। ३२ ऐसा कोई बलवान मनुष्य जो उन्हें एक बाण से बेध सके, तुम्हें मार पाएगा। यह सत्य मानना।' ३३ ऐसा कहते हुए मुनिवर चले गये। हे रघुराज, सुनिए— उन दो भाइयों में (क्यों) बैर उत्पन्न हो गया— उसकी कथा मैं अब कहता हूँ।" ३४

वलण (तर्ज़ बदलकर)

तेनी कहुं कथाय, ज्यम वेर थयुं बे वीरने,
ते सुणतां संदेह जाय, हनुमंत कहे रणधीरने। ३५।

हनुमान ने रणधीर राम से कहा-- 'जिससे उन दो भाइयों में बैर (उत्पन्न) हो गया, (अब) मैं उसकी कथा कहता हूँ। उसे सुनने पर (आपका) सन्देह दूर हो जाएगा।' ३५

* * *

अध्याय—४ (सुग्रीव और बाली के वैर का कारण तथा राम-सुग्रीव का परस्पर वचन-बद्ध हो जाना)

राग सामेरी

अंजनीसुत कहे सांभळो, तमो स्वामी श्रीमहाराज,
सुग्रीव वाली किष्किधामां, करता निर्भय राज। १।
त्यारे दुंदुभिनो पुत्र कहीए, मयासुर तेनुं नाम,
ते पिता केरुं वेर लेवा, आव्यो तेणे ठाम। २।
तेणे वाली साथे युद्ध कर्युं, पछे हारियो रणमांय,
एक विवरमां पाताळ मारग, नासी पेठो त्यांय। ३।
ते असुरनी पूंठे थया, सुग्रीव - वाली वीर,
ते गुफामांहे पेठो वाली, युद्ध करवा धीर। ४।

अध्याय—४ (सुग्रीव और बाली के वैर का कारण तथा राम-सुग्रीव का परस्पर वचन-बद्ध हो जाना)

अंजनी-सुत हनुमान ने कहा— "हे स्वामी, हे श्रीमहाराज (राम), आप सुनिए। किष्किन्धा में वाली और सुग्रीव निर्भयता से राज कर रहे थे। १ तब दुन्दुभी के एक पुत्र (उत्पन्न) हुआ। कहिए, उसका नाम मयासुर था। वह पिता का बदला लेने के लिए उस स्थान पर आ गया। २ उसने वाली के साथ युद्ध किया; वहाँ फिर वह हार गया, तो वहाँ से पाताल की ओर जानेवाले मार्ग पर वह भागकर एक विवर में पैठ गया। ३ सुग्रीव और बाली (दोनों) बन्धु उस असुर का पीछा करने लगे। फिर धैर्यशाली वाली युद्ध करने के लिए उस गुफा में प्रविष्ट हो गया। ४ रक्षा करने के लिए सुग्रीव पीछे उस विवर के मुख पर ठहर

ते विवरने मुख रह्यो सुग्रीव, रक्षा करवा पूंठ,
मांहे बंन्यो बळिया युद्ध करे, मारे परस्पर मूंठ। ५।
एम घणां दिन त्यां वही गया, नव मरण पाम्यो तेह,
त्यारे सूनुं देखी आव्या पुरमां, यक्ष-किन्नर जेह। ६।
उजाडवा लाग्या नगर सुग्रीवे जाणी वात,
त्यारे गुफाने मुख ढांकियो, एक प्रौढ गिरि विख्यात। ७।
सुग्रीव आव्यो नगरमां, कर्या यक्ष-किन्नर दूर,
वीश मास वीती गया, नव आव्यो वाली शूर। ८।
त्यारे सरवे जाण्युं मूवो वाली, थयुं विपरीत काज,
प्रजा प्रधाने मळी बेसाड्यो, सुग्रीवने त्यां राज। ९।
पछे वीश मासे वालीए, मार्यो निशाचर भूर,
आव्यो गुफाने बारणे, गिरि ढांक्यो दीठो शूर। १०।
सुग्रीवने दीठो नहि त्यारे, चड्यो मनमां क्रोध,
ए बंधु मुजने गयो मूकी, न करी मारी शोध। ११।
ए वीर शानो वेरी मारो, धार्युं विपरीत काज,
मुंने मुवो जाणी नगरमां जई, बेठो करवा काज। १२।

गया। अन्दर वे दोनों बलवान (वीर) युद्ध करने लगे। वे एक-दूसरे के घूँसे जमाते थे। ५ इस प्रकार वहाँ बहुत दिन बीत गये, (परन्तु) वह (असुर) मृत्यु को प्राप्त नहीं हुआ। तब यक्ष और किन्नर (किष्किन्धा को) सूना, अर्थात् अरक्षित (तथा रक्षक-रहित) देखकर नगर में आ गये। ६ वे नगर को उजाड़ डालने लगे। सुग्रीव ने जब यह बात जान ली, तो उसने एक बड़े विख्यात पर्वत से उस गुफा के मुख को ढँक दिया। ७ (फिर) सुग्रीव नगर में आ गया और (उसने) यक्ष-किन्नरों को दूर किया (भगा दिया)। (तदनन्तर) बीस मास बीत गये, (फिर भी) शूरवीर बाली नहीं (लौट) आया। ८ तब सबने समझ लिया कि बाली (अब) मर गया; यह बड़ा विपरीत काम हो गया। तो वहाँ प्रजा और मंत्रियों ने मिलकर सुग्रीव को राज्यासन पर बैठा दिया। ९ अनन्तर बीस महीने होने पर बाली ने उस दुराचारी (या मूढ़) राक्षस को मार डाला और वह गुफा के द्वार पर आ गया तो उस शूर पुरुष ने उसे पर्वत से ढँका देखा। १० उसने (जब) सुग्रीव को नहीं देखा, तो तब उसके मन में क्रोध उत्पन्न हो गया। 'यह भाई मुझे छोड़कर चला गया है; उसने मेरी खोज (तक) नहीं की। ११ यह भाई कैसा? मेरा बैरी है। (जान पड़ता है,) उसने विपरीत कार्य स्वीकार किया है। मुझे मरा हुआ

एणे काम शत्रुनुं कर्युं, मुज लाज लोपी सुख,
हवे तजुं एने सर्वथा, नव जोउं एनुं मुख। १३।
देश तजीए दया विण, स्नेहरहित बंधु मित्र,
गुरु ज्ञानहीन दुर्मुखी नारी, ते तजीए अपवित्र। १४।
एवुं विचारीने धायो वाली, शस्त्रने लेईने शूर,
सुग्रीवने मारवा आव्यो, नगरमां बलपूर। १५।
सुग्रीव नाठो त्यां थकी, नळ नील जांबुवंत,
हुं सहित साथे आविया, ऋषिमुक परवत अंत। १६।
सुग्रीवने हणवा तदा धायो, पूंठळ लीधी वाट,
नव अवायुं परवत विषे, मुनि शापना भय माट। १७।
छे बळे बंन्यो बराबर, सुग्रीव वाली राय,
पण पछे विजयमाळा कंठमां, तेणे करी नव जिताय। १८।
पछे नगरमां वाली रह्यो, निज राज करतो तेह,
सुग्रीवनी स्त्री घेर राखी, रूमा नामे जेह। १९।
ते दिवसनो सुग्रीव दुःखी, रहे छे गिरि मोझार,
अमो चार जण पासे रह्या छे, करवा एनी सार। २०।

समझकर नगर में जाते हुए वह राज करने बैठा होगा। १२ मेरे प्रति लज्जा को छोड़कर सुख से उसने शत्रु का (-सा) काम किया है। अब मैं इसका सब प्रकार से त्याग करूँगा। उसका मुख (तक) न देखूँगा। १३ बिना दया के, देश त्याग दें; स्नेह-रहित बन्धु और मित्र को छोड़ दें। ज्ञान-हीन गुरु तथा दुर्मुखी अपवित्र नारी को छोड़ दें। १४ ऐसा विचार करके शूर बाली शस्त्र लिए हुए दौड़ा और वह मानो बल का रेला-सा सुग्रीव को मारने के लिए नगर में आ गया। १५ तो वहाँ से सुग्रीव भाग गया। अन्त में नल, नील, जाम्बवान और मैं (हनुमान)—उसके साथ ऋष्यमूक पर्वत पर आ गये। १६ तब वह सुग्रीव को मारने के लिए दौड़ा, परन्तु फिर उसने पीछे की राह पकड़ी, (क्योंकि) मुनि के शाप के भय के कारण उसे पर्वत पर नहीं आना है। १७ सुग्रीव और राजा बाली बल में दोनों बराबर हैं, फिर भी (बाली के) कंठ में विजय-माला होने से वह जीता नहीं जा रहा है। १८ अनन्तर बाली नगर में रह गया। वह अपना राज कर रहा है। उसने सुग्रीव की स्त्री को घर में रखा है, जिसका नाम रूमा है। १९ उस दिन से सुग्रीव दुखी है, वह पर्वत के अन्दर रह रहा है। उसकी सहायता करने के लिए हम चार जने उसके पास रहते हैं। २० इस प्रकार हे श्याम-शरीरी रघुपति,

ए प्रकारे थयुं वेर जे, सुग्रीव वाली वीर,
ए उत्पत्ति तमने कही, रघुपति श्याम शरीर । २१ ।
सुग्रीव मेळव्य मुजने, रघुवीर कहे हनुमंत,
कराव्य मैत्री एनी साथे, वायुपुत्र बळवंत । २२ ।
एना शत्रुने मारी करीने, अपावुं निज नार,
राज्यासन सुग्रीवने हुं, बेसाडुं निरधार । २३ ।
हनुमंत एवुं सांभळीने, गयो सुग्रीव पास,
वृत्तान्त सहु मांडी कह्यो, ए राम छे अविनाश । २४ ।
ए वचन सुणीने सूरजनंदन, पामियो आनंद,
धन्य वीर तुं हनुमंत मुजने, मेळव्या जगबंध । २५ ।
अनेक वानर साथ सुग्रीव, आव्यो तेणी वार,
साष्टांग करी रघुवीर चरणे, नम्यो भानुकुमार । २६ ।
बे कर ग्रही सुग्रीवने, उठाड्यो रघुनाथ,
हृदय साथे चांपियो, मेलियो मस्तक हाथ । २७ ।
मळी स्वस्थ थई बेठा पछे, सुग्रीव ने रघुराय,
वानर सभा जोई रामने, मनमांहे हरख न माय । २८ ।

सुग्रीव और बाली— इन भाइयों में, जो बैर है, उसकी उत्पत्ति मैंने आपसे कही है।" २१ (यह सुनकर) श्रीराम ने हनुमान से कहा— 'हे बलवान वायुकुमार, मुझसे सुग्रीव को मिला दो, उसके साथ मित्रता करा दो। २२ उसके शत्रु को मारकर मैं उसकी अपनी स्त्री उसे दिलाऊँगा और निश्चय ही सुग्रीव को राज्यासन पर बैठाऊँगा।' २३ ऐसा सुनकर हनुमान सुग्रीव के पास गया और उसने समस्त समाचार ठीक से बताते हुए कहा— 'वे राम अविनाशी (भगवान) हैं।' २४ उस बात को सुनते ही सूर्य-नन्दन सुग्रीव आनन्द को प्राप्त हुआ और बोला— 'हे हनुमान, तुम वीर धन्य हो, जो तुमने मुझसे जगद्वंद्य भगवान को मिलाया है।' २५ उस समय अनेक वानरों सहित सूर्यकुमार सुग्रीव आ गया और उसने रघुवीर राम के चरणों को साष्टांग नमस्कार किया। २६ (तब) श्रीराम ने दोनों हाथ पकड़कर सुग्रीव को उठाया, हृदय से लगा लिया और उसके मस्तक पर हाथ रखा। २७ अनन्तर सुग्रीव और रघुराज, दोनों (एक-दूसरे से) मिलने से चिन्ता-रहित (होकर) बैठ गये। राम को देखकर वानर-सभा (दल) को आनन्द मन में नहीं समा रहा था। २८ अनन्तर हनुमान ने वहाँ उस स्थान पर अग्नि प्रज्वलित की। (फिर) सुग्रीव और श्रीराम दोनों को दोनों ओर बैठा दिया। २९ फिर अग्नि की साक्षी में

पछे अग्नि त्यां चेताावियो, मारुतिए तेण ठाम,
बे पास बेउ बेसाडिया, सुग्रीव ने श्रीराम। २९।
अग्नि केरी साक्षीए, पछे कर्यो मित्राचार,
कपि सर्वे हरख पाम्या, थयो जयजयकार। ३०।
राम कहे स्त्रीने राज आपवुं, मारुं वाली कीश,
कहे सुग्रीव सीता शोधी मंगावुं, मारीए दशशीश। ३१।
पछे सुग्रीव तेडी चालियो, सौमित्रि श्रीरघुनाथ,
ऋषिमुक परवत आवीने, मळी बेठा सरवे साथ। ३२।
एक मनोहर मंडप रच्यो, कर्युं सभा केरुं काम,
एक सुंदर आसन रचीने, बेसाडिया श्रीराम। ३३।
सुग्रीव कहे एक ब्रह्मराक्षस, सुंदर नारी संग,
आकाश मारग लई जतो, ते दीठो अमे श्रीरंग। ३४।
घणुं रुदन करती कामनी, तेणे दीठां अमने आंहे,
त्यारे चीर पदरे बांधी भूषण, नाखियां गिरिमांहे। ३५।
रघुवर कहे ते लावो क्यां छे, जोउं ए अलंकार,
सीता मळ्या सम थशे मुजने, मानीश हुं उपकार। ३६।

दोनों में मित्राचार करवा दिया, तो समस्त कपि हर्ष को प्राप्त हो गये। वहाँ जयजयकार हो गया। ३० (तदनन्तर) राम ने कहा— 'मैं (तुम्हें तुम्हारी) स्त्री और राज्य दूँगा; वानर बाली को मार डालूँगा।' तो सुग्रीव ने कहा— 'सीता को खोजकर मँगवा (लिवा) लाऊँगा। हम दशानन को मार डालेंगे।' ३१ फिर लक्ष्मण और श्रीराम को लेकर सुग्रीव चल दिया। सब साथ में ऋष्यमूक पर्वत पर आकर इकट्ठा बैठ गये। ३२ (वहाँ) एक मनोहर मण्डप बनवा दिया और सभा का काम (आरम्भ) किया। एक सुन्दर आसन तैयार करके श्रीराम को (उसपर) बैठा दिया। ३३ (तदनन्तर) सुग्रीव ने कहा— 'एक ब्रह्मराक्षस साथ में एक सुन्दर स्त्री को आकाश मार्ग से लिये जा रहा था। हे श्रीरंग, हमने उसे देखा। ३४ वह स्त्री बहुत रुदन कर रही थी। उसने (भी) हमें यहाँ देखा। उसने तब वस्त्र के आँचल में आभूषण बाँधकर पर्वत पर गिरा दिये।' ३५ यह (सुनकर) रघुवीर ने कहा— 'उन्हें लाओ। कहाँ हैं (वे)? उन आभूषणों को देख लूँ। मुझे सीता के मिलने के समान हो जाएगा। मैं (तुम्हारे) उपकार मानूँगा।' ३६ तो हनुमान ने आभूषण और वस्त्र (का टुकड़ा) लाकर दिये, तो साथ ही उन्हें हृदय

हनुमंतजीए लावी आप्यां भूषण ने पटचीर,
ते रुदे साथे चांपीने, गद्‌गद थया रघुवीर। ३७।
पछे सीताने विरहे करी, घणुं रुदन करता राम,
रघुवीर रोतां सरवे रोया, थयो शोक समान। ३८।
सुग्रीव आपे धीरज बहु, एम ना कीजे नाथ,
शोध मंगावुं सीतानी, मुज संग बळिया साथ। ३९।
जो जानकी नव मेळवुं, तो सुणो सारंगपाण,
तो कल्प सुधी नरकमां, हुं पडुं निश्चे जाण। ४०।
नळ नील जांबुवान वळी, हनुमंतजी मुज साहे,
भूगोळ ऊंधुं करी नाखे, काळने कर साहे। ४१।
एवां वचन सुणी सुग्रीवनां पछी बोलिया रघुपत्य,
सुण कपिपति हुं करुं प्रतिज्ञा, मानजे तुं सत्य। ४२।
तुंने राज-स्त्री आप्यो विना, जो मंगावुं परिशोध,
मुंने आण दशरथ रायनी, ए प्रतिज्ञा अवरोध। ४३।
एम परस्पर आप्यां वचन, आनंदियो सहु साथ,
हनुमंत आदे कपि सरवे, सेवता रघुनाथ। ४४।

से लगाये हुए रघुवीर गद्‌गद हो उठे। ३७ फिर सीता के विरह से राम बहुत रुदन करते रहे। रघुवीर के रोते रहने से सब रो पड़े। सबको समान शोक (अनुभव) हो गया। ३८ सुग्रीव ने बहुत ढाढ़स बँधाया (और कहा)— 'हे नाथ, ऐसा न कीजिए। सीता की खोज लगवाऊँगा। मेरे साथ बलवान साथी हैं। ३९ हे चाप-पाणि, सुनिए। यदि आपसे जानकी न मिला दूँ, तो समझिए कि मैं निश्चय ही कल्प तक नरक में पड़ जाऊँ। ४० नल, नील, जाम्बवान, इनके सिवा हनुमान मेरे मित्र हैं। हम भू-गोल को उलटकर पटक देंगे, काल का हाथ पकड़ेंगे।' ४१ सुग्रीव के ऐसे वचन सुनने के पश्चात् श्रीराम बोले— 'हे कपि-पति, सुनो। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ। तुम (उसे) सत्य समझना। ४२ बिना तुम्हें राज और स्त्री दिये, यदि मैं (सीता की) खोज करवाऊँ, तो मुझे दशरथ राजा की सौगन्ध है। यह मेरी प्रतिज्ञा है; उसमें कोई विरोध नहीं है।' ४३ इस प्रकार उन दोनों ने परस्पर अभिवचन दिये और सब साथ ही आनन्दित हो गये। (तदनन्तर) हनुमान आदि सब कपि रघुनाथ की सेवा करने लगे। ४४

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सेवता श्रीरघुवरने, जे कपि मोटा वळवंत रे,
ए राम-लक्ष्मण रह्या ऋषिमूक, संतोष्या सुखवंत रे। ४५।

वे कपि जो बड़े और वलवान थे, श्रीराम की सेवा करते रहे। (इस प्रकार) वे राम और लक्ष्मण ऋष्यमूक पर्वत पर ठहर गये। वे सुखी तथा सन्तुष्ट हो गये। ४५

* * *

अध्याय—५ (राम द्वारा सप्त ताल वृक्षों को छेदना; सुग्रीव द्वारा बाली को ललकारना; तारा-वाली-सम्वाद)

राग मारु

प्रतिज्ञा करी अन्योअन्य, पछे बोल्या श्रीराम वचन,
सुण सुग्रीव तुं मुज वाण, मारुं वालीने एके बाण। १।
त्यारे सुग्रीव कहे महाराज, वालीवध एम नहि थाय आज,
पेला सप्त ताड एक बाण, जे को वींधे पुरुष प्रमाण। २।
तेथी वालीए निश्चे मरे, ब्रह्मादिकथी ते नव ऊगरे,
तव बाण मूक्युं रघुवीर, वींध्या सप्त ताड रणधीर। ३।
मारी खोखाने ठोकर चरण, ऊडी पडियुं दिगंतर धर्ण,
पछे सुग्रीवने कहे राम, हवे कर वाली साथे संग्राम। ४।

अध्याय—५ (राम द्वारा सप्त ताल वृक्षों को छेदना; सुग्रीव द्वारा बाली को ललकारना; तारा-वाली-सम्वाद)

श्रीराम और सुग्रीव ने एक-दूसरे के विषय में (इस प्रकार) प्रतिज्ञा की। फिर श्रीराम ने यह बात कही— 'हे सुग्रीव, तुम मेरी बात सुनो, मैं एक (ही) बाण से बाली को मार डालूँगा।' १ तब सुग्रीव ने कहा— 'हे महाराज, आज ऐसे ही बाली का वध नहीं हो सकता है। (कहते हैं,) जो कोई पुरुष सचमुच उन सात ताल वृक्षों को एक ही बाण से बेध पाए, उसके द्वारा बाली निश्चय ही मरेगा, ब्रह्मा आदि द्वारा भी वह नहीं बचाया जा पाएगा।' तब रणधीर राम ने बाण छोड़ा और सातों तालों को बींध डाला। २-३ (फिर) उन्होंने पाँव से उस अस्थि-पंजर को ठोकर लगा दी, तो वह दिगन्तर में (जाकर) धरती पर गिर गया। अनन्तर राम सुग्रीव से बोले— 'अब बाली के साथ युद्ध करो। ४ मैं तुम्हारे

तुज पूंठे आवुं छुं हुंय, मन भय नव राखीश तुंय,
बंन्यो बंधु छे रूपे समान, विचार्युं एम श्रीभगवान। ५।
ओळखवाने सुग्रीवनुं रूप, घाली माळ त्रिभुवन भूप,
पछे आज्ञा आपी श्रीरंग, चाल्यो सुग्रीव पामी उमंग। ६।
करी गर्जना जई पुर पास, पड्यो सर्व नगरने त्रास,
जाण्युं वाली महाबळ शिव, आव्यो जुद्ध करवा सुग्रीव। ७।
ते सुणीने ऊठ्यो तत्काळ, ग्रही हस्तमां गदा विशाळ,
ते समे आवी तारा राणी, बोली कर जोडीने वाणी। ८।
स्वामी सांभळो मुज वचन, जुओ वात विचारी मन,
युद्ध करवा जशो नहि आज, कांई कारण छे महाराज। ९।
आटला दिन सुग्रीव वीर, तमथी डरतो मन अधीर,
भय पामी नव आवतो आंहे, रह्यो कायर थई गिरिमांहे। १०।
आज युद्ध करवाने आव्यो, एटलुं बळ क्यां थकी लाव्यो ?
कोई जोध मळ्यो एने आज, पाम्यो पक्ष मोटो थयुं काज। ११।
बाकी एनुं शुं बळमान ? थयो तेने बळे बळवान,
में सुणी छे एवी वात, राय दशरथ घेर साक्षात्। १२।

पीछे आ रहा हूँ, (अतः) तुम मन में कोई भय न रखो।' त्रिभुवन के राजा श्रीभगवान राम ने ऐसा विचार करके कि दोनों बन्धु रूप में समान हैं, सुग्रीव के रूप को पहचानने के लिए उसे एक माला पहना दी। फिर श्रीराम ने आज्ञा दी और सुग्रीव उत्साह-उमंग को प्राप्त होकर चल दिया। ५-६ नगर के पास जाकर उसने गर्जना की, तो समस्त नगर को आतंक अनुभव हो गया। (साक्षात्) महान बल की (चरम) सीमा-सा बाली समझ गया कि सुग्रीव युद्ध करने के लिए आया है। ७ उसे सुनते ही बाली तत्काल उठा; उसने विशाल गदा हाथ में ली, उस समय रानी तारा आयी और हाथ जोड़कर यह बात बोली। ८ 'हे स्वामी, मेरी बात सुनो। इस बात पर मन में विचार कर देखो। हे महाराज, आज तुम युद्ध करने नहीं जाओगे; (इसका) कुछ कारण है। ९ इतने दिन अधीर मनवाला भाई सुग्रीव तुमसे डरता रहा। वह भय को प्राप्त होकर यहाँ नहीं आता था; डरपोक बनकर पर्वत में रहता था। १० (परन्तु) आज वह युद्ध करने आया है। इतना बल वह कहाँ से लाया ? उसे आज कोई योद्धा (अवश्य) मिल गया है। किसी बड़े पक्ष (-पाती) को वह प्राप्त हो गया है, तो उसका काम हो गया। ११ नहीं तो शेष (अकेले) उसकी क्या औकात ? वह उसके बल से बलवान हुआ है।

त्यांहां जन्म धर्यो जुगदीश, ब्रह्म पूरण माया ईश,
पाळवाने पितानुं वचन, ते प्रभु नीकळ्या छे वन । १३ ।
सीता सुंदरी तेनी वरीश, गयो हरण करी दशशीश,
तेनी शोध करतां वनमांहे, राम-लक्ष्मण आव्या आंहे । १४ ।
मळ्यो सुग्रीव ए निरधार, ते साथे कर्यो मित्राचार,
प्रभुनी प्रेरणाए प्रबुद्ध, आव्यो सुग्रीव करवा युद्ध । १५ ।
ते माटे जशो नहि नाथ, जीतशो नहि सुग्रीव साथ,
निश्चे मारशे तमने राम, छे समर्थ पूरणकाम । १६ ।
जेना भय थकी कंपे काळ, जेनी आज्ञा माने लोकपाळ,
ते प्रभुए धर्यो अवतार, उतारवाने भूमिनो भार । १७ ।
धर्मस्थापन करवा काज फरे भूतळमां महाराज,
माटे मानो मारुं वचन, जो कुशळ ईच्छो स्वामीन । १८ ।
सांभळी तारानी एवी वाणी, बोल्यो वाली अहंता आणी,
जयमाळ मारे छे ग्रीव, मने नहि जीते सुग्रीव । १९ ।
अमो बे बंधुने विरोध, शुं करवा राम करशे क्रोध ?
न कर्यो तेमनो अपराध, शुं करवा मने हणशे साध ? । २० ।

मैंने ऐसी बात सुनी है कि राजा दशरथ के घर साक्षात् पूर्णब्रह्म, मायाधीश, जगदीश ने जन्म ग्रहण किया है । वे प्रभु पिता के वचन के पालन के लिए वन की ओर निकल आये है । १२-१३ रावण उसकी सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी पत्नी सीता को अपहरण करके ले गया है । वन में उसकी खोज करते हुए राम-लक्ष्मण यहाँ आ गये हैं । १४ निश्चय ही यह सुग्रीव उनसे मिला है और उनके साथ उसने मित्रता की है । उन प्रभु (राम) की प्रेरणा से प्रबुद्ध बना हुआ सुग्रीव युद्ध करने के लिए आया है । १५ उस कारण, हे नाथ, तुम वहाँ न जाना । आज तुम सुग्रीव को नहीं जीत पाओगे । निश्चय ही राम तुम्हें मारेंगे, राम तो समर्थ और पूर्णकाम है । १६ जिनके भय से काल (तक) काँपता है, जिनकी आज्ञा लोकपाल (भी) मानते हैं, उन प्रभु ने भूमि का (पाप-) भार उतारने के लिए अवतार धारण किया है । १७ वे महाराज धर्म की स्थापना करने के लिए भू-तल पर भ्रमण कर रहे हैं । इसलिए, हे स्वामी, यदि अपनी कुशल की कामना कर रहे हो, तो मेरी बात मानो ।' १८ तारा की ऐसी बात सुनकर बाली (मन में) अहंकार लाकर, अर्थात् घमंड से बोला— 'मेरे गले में जयमाला है, (इसलिए) सुग्रीव मुझे नहीं जीत पाएगा । १९ हम दो भाइयों में विरोध है । राम (मेरे प्रति) किसलिए क्रोध करेगा ? मैंने उसका कोई अपराध

धर्मस्थापक पूरणब्रह्म, ते क्यम करशे अधर्म,
जो ए प्रभु हशे प्रत्यक्ष, कदापि एनो नव करशे पक्ष। २१।
विना विरोध ए निष्काम, शुं करवा मने मारशे राम,
जो मुंने हणशे रघुपत्य, निश्चे पामीश हुं सद्गत्य। २२।
हरि हाथे मरण संबंध, छूटशे जनम-मरणना बंध,
ते माटे सांभळ सती एह, बन्ने वाते निःसंदेह। २३।
नथी सुग्रीवनो कांई भार, क्षणमांहे मनावुं हार,
प्रभुथी भवनुं दुःख वामुं, राम हाथे परम पद पामुं। २४।
सुण साधवी चिंता मूकी, नथी बोलतो हुं कांई चूकी,
एवुं कहीने इन्द्रकुमार, आव्यो युद्ध करवा पुर बहार। २५।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पुर बहार आवी आरंभ्युं, बन्ने बळिया वीर रे,
एक एकने मारे गदा, नव हार पामे को धीर रे। २६।

* * *

तो नहीं किया है। वह साधु पुरुष मुझे किसलिए मारेगा? २० जो धर्म-संस्थापक पूर्णब्रह्म (कहाता) हो, वह (स्वयं) अधर्म कैसे करेगा? यदि वह प्रत्यक्ष भगवान हो, तो वह उसका पक्षपात कदापि नहीं करेगा। २१ वह निष्काम राम बिना किसी विरोध के मुझे किसलिए मारेगा? (फिर) यदि रघुपति मुझे मारेगा, तो मैं निश्चय ही सद्गति को प्राप्त हो जाऊँगा। २२ हरि (भगवान) के हाथों मेरी मृत्यु का सम्बन्ध होने से जन्म-मरण के बन्धन छूट जाएँगे। इसलिए हे सती, सुनो। ये दोनों बातें सन्देह-रहित हैं। २३ (मेरे लिए) सुग्रीव का कोई बोझ नहीं है, मैं क्षण में उसे हार मनवाऊँगा और (दूसरे) प्रभु राम द्वारा भव-दुःख से छूट जाऊँ, तो उनके हाथों परम पद को प्राप्त हो जाऊँगा। २४ हे साध्वी, चिन्ता छोड़कर सुन लो। मैं कुछ मिथ्या धारणा से नहीं बोल रहा हूँ।' ऐसा कहते हुए इन्द्र-पुत्र बाली युद्ध करने के लिए नगर के बाहर आ गया। २५

नगर के बाहर आकर दोनों बलवान वीरों ने (युद्ध) आरम्भ किया। एक-दूसरे पर वे गदा से प्रहार करते थे। उनमें से कोई भी धीर पुरुष हार को नहीं प्राप्त हो रहा था। २६

* * *

अध्याय—६ (सुग्रीव-वाली-संग्राम और राम द्वारा वाली का वध)

राग मारु

पछी वाली क्रोधे गडगडियो, सुग्रीव उपर रीसे चढियो,
बाझ्या बन्ने वीर बळवंत, रीसे राता अधर डशे दंत । १ ।
गदा मूकीने बन्ने वीर, मल्लयुद्ध करे रणधीर,
मुष्टि-प्रहार करे पद-घाय, शीशे शीश कूटे महाकाय । २ ।
पद प्रहारे ध्रूजे छे धर्ण, थयो सूरज धूंधळ वर्ण,
कंप्या दिग्गज सळक्यो शेष, भय पाम्या ते अमर अशेष । ३ ।
जेवा मेरु ने मंद्राचळ, एहवा छे कपि-स्थळ सबळ,
पडछंदा पडे पदघाय, दारुण युद्ध कोईए नव जोवाय । ४ ।
करे वाली सुग्रीव संग्राम, हाहाकार थयो ते ठाम,
विजयमाळा वालीने ग्रीव, तेथी हार पाम्यो सुग्रीव । ५ ।
बल क्षीण थयुं तेणी वार, सुग्रीवे सहेवातो नथी मार,
थयो दुखियो जाणे आव्युं मर्ण, ऊठे बेसे पडे छे धर्ण । ६ ।

अध्याय—६ (सुग्रीव-वाली-संग्राम और राम द्वारा वाली का वध)

अनन्तर वाली क्रोध से गरज उठा और सुग्रीव पर क्रोध-पूर्वक चढ़ दौड़ा। दोनों बलवान बन्धु जूझने लगे। मारे क्रोध के वे दाँतों से लाल-लाल होंठ काट (चबा) रहे थे। १ वे दोनों रणधीर बन्धु गदाओं को त्यजकर मल्ल-युद्ध करने लगे। वे (एक-दूसरे पर) घूँसों से प्रहार करते, पाँवों से आघात करते (लातें जमाते)। वे महाकाय (वानर एक-दूसरे के) मस्तक से मस्तक टकराते। २ (उनके) पदों के आघात के कारण धरती काँपने लगी, सूर्य (उड़ी हुई धूल के कारण) धुँधले वर्ण का हो गया (धुँधला दिखायी देने लगा)। दिग्गज काँप उठे; शेष विचलित हो उठा; समस्त देव भय को प्राप्त हो गये। ३ जैसे मेरु और मन्दर पर्वत हैं, वैसे कपियों का यह स्थान दृढ़ (अविचल) था। पदाघातों की प्रतिध्वनियाँ हो रही थीं। ऐसा दारुण युद्ध किसी के द्वारा भी देखा नहीं जा सकता था। ४ जब वाली और सुग्रीव युद्ध कर रहे थे, तो उस स्थान पर हाहाकार मच गया। वाली के गले में विजय-माला थी, इसलिए सुग्रीव हार को प्राप्त हो गया। ५ सुग्रीव का बल क्षीण हो गया, इसलिए उससे मार सही नहीं जा रही थी। वह दुखी हो गया, मानो कि मौत ही आ गयी। वह (बारबार) उठता, बैठता और धरती पर गिर पड़ता। ६ तब सुग्रीव ने राम का स्मरण किया (और कहा)—' हे सुन्दर श्याम, बचाने

त्यारे सुग्रीवे समर्या श्रीराम, वारे धाजो ते सुंदर श्याम,
ते सुणीने आव्या रघुवीर, साथे लक्ष्मणजी रणधीर। ७ ।
जुए रामलक्ष्मण रही दूर, बळ अतुलित वाली शूर,
दीठो सुग्रीव पाम्यो हार, बळ क्षीण थयुं निरधार। ८ ।
विजयमाळ तणो महिमाय, दृष्टिए बळ हरण ज थाय,
वाली सन्मुख रहे जे कोय, तेनुं बळ आकर्षण होय। ९ ।
एम जाण्युं श्रीभगवंत, कपटे आणुं वालीनो अंत,
छे करतुं अकरतुं समर्थ, तोय वैर नथी करता व्यर्थ। १० ।
पछे कोप्या पुरुष पुराण, कर्युं धनुषे शर संधाण,
तरु ओथे रही भगवन, मार्युं बाण वालीने तन। ११ ।
रूदे भेद्युं ते बाण कराळ, तेणे वाली पड्यो तत्काळ,
त्यारे पासे आव्या रघुवीर, कपि सहित सौमित्री धीर। १२ ।
वालीए तव दीठा राम, कोटी कंदर्प सुंदर श्याम,
राखी धीरज बोल्यो वचन, वाली कहे सुणो श्रीभगवन। १३ ।

के लिए दौड़िए।' वह सुनकर राम आ गये; उनके साथ रण-धीर लक्ष्मण था। ७ राम-लक्ष्मण ने दूर रहकर देखा— शूर बाली का बल बेजोड़ है। उन्होंने देखा कि सुग्रीव हार को प्राप्त हो गया है; उसका बल निश्चय ही क्षीण हो गया है। ८ यह उस विजय-माला की महिमा है कि (उसकी ओर) दृष्टि (-पात करने) से बल का हरण ही हो जाता है; (यदि) बाली के सम्मुख जो कोई रह जाता है तो उसका बल आकृष्ट हो जाता है। ९ श्रीभगवान ने ऐसा जान लिया; (तो सोचा कि) बाली का अन्त कपट से लाऊँगा (बाली को कपट से मारूँगा)। वे तो कर्तुं अकर्तुं-समर्थ हैं; फिर भी वे बैर भी व्यर्थ (अकारण) नहीं करते। १० फिर भी वे पुराण-पुरुष राम क्रुद्ध हो गये। उन्होंने धनुष पर बाण सन्धान किया। भगवान राम ने पेड़ की ओट में खड़े रहकर बाली के शरीर पर बाण मारा। ११ उस कराल बाण ने हृदय को भेद डाला, तो बाली तत्काल गिर गया। तब वानर सुग्रीव और धीरवीर लक्ष्मण सहित रघुवीर उसके पास आ गये। १२ बाली ने राम को देखा— वे सुन्दर श्याम शरीर-धारी राम मानो करोड़ों कामदेव ही थे। फिर धीरज धारण करके बाली ने यह बात कही। वह बोला— 'हे भगवान, सुनिए। १३ (मैंने सुना है कि) रघुकुल में (आपके रूप में) प्रभु प्रकट हो गये हैं। वे यहाँ धर्म की स्थापना करने के लिए आये हैं। हे राम, ऐसा अनुचित काम करना आपके लिए योग्य नहीं है। १४ आपने छल

प्रभु प्रगट्या रघुकुळमांहे, धर्म स्थापवा आव्या आंहे,
आवुं करवुं अनुचित काम, तमने न घटे हे राम । १४ ।
छळ भेद करी मुंने मार्यो, गयो क्षत्रीधर्म तमारो,
एकपत्नी-व्रत करो अन्या, आज वरी अपकीर्ति कन्या । १५ ।
सत्यवंत प्रतापी धीर, रणपंडित छो रघुवीर,
भेद्युं कपट करी मुज तन, लाग्युं रविकुळमां लांछन । १६ ।
एवुं कर्म कर्युं रघुराय, अपकीर्ति त्रिलोकमां थाय,
ज्यम मृगने मारे किरात, तमो एम कर्युं जग-तात । १७ ।
मने मारवो तो चेतावी, तो हुं जाणत जात जे फावी
राम कहे अल्या पारधी जेह, क्यां मारे मृग चेतावी तेह ? । १८ ।
तुं नोहे कंई योद्धो वीर, कपि वनचर जात अधीर,
छुं वनचर पण मारां कर्म, छे विदित त्रिलोकमां पर्म । १९ ।
तमो कर्ता अकर्ता समर्थ, तम आगळ मुज बळ व्यर्थ,
पण अधरम शो हतो मारो ? जुओ धरम विचारी तमारो । २० ।
धर्म-स्थापन तम अवतार, मने मार्यो अधर्म अपार,
राम कहे सत्य व्रत छे मारुं, विना अधरम कोने न मारुं । २१ ।

और भेदभाव-पूर्वक मुझे मारा है, अतः आपका क्षात्र धर्म (नष्ट हो) गया है। आप एक-पत्नी व्रती ने आज अपकीर्ति नामक दूसरी कन्या का वरण किया है। १५ हे रघुवीर, आप तो सत्य-वान्, प्रतापी, धीर रण-पंडित हैं। (फिर भी) कपट करके मेरे शरीर को भेद दिया है, (इसलिए) रघुकुल में लांछन लग गया है। १६ हे रघुराज, आपने ऐसा कर्म किया है, (जिससे) आपकी त्रिभुवन मे अपकीर्ति हो जाएगी। हे जगत् के पिता, जैसे कोई किरात (जंगली) मृग को मारता है, वैसे ही आपने किया है। १७ मुझे मारना था, तो चेतावनी देकर मारते। (तब) मैं मानता कि आप स्वयं सफल हुए।' (इसपर) राम ने कहा— 'अरे, जो बहेलिया हो, वह मृग को चेतावनी देकर कहाँ मारता है? १८ तू कोई योद्धा वीर तो नहीं है। तू तो जाति का अधीर वनचर है। मैं भी वनचर हूँ, फिर भी मेरे कर्म त्रिलोक में परम विदित (विख्यात) हैं।' १९ (यह सुनकर बाली ने कहा—) 'आप तो कर्ता-अकर्ता, अर्थात् कर्तु-अकर्तु-समर्थ हैं। आपके सामने मेरा बल व्यर्थ है। परन्तु मेरा क्या अधर्म था? अपने धर्म का विचार करके तो देखिए। २० आपका अवतार धर्म की स्थापना के लिए है, (परन्तु) मुझे आपने मारा है। यह तो अपार अधर्म है।' तब राम ने कहा— 'मेरा व्रत सत्य है।

राखी अनुजवधू तें पर्म, एथी बीजो कयो रे अधर्म ?
रूमा रामा सुग्रीवनी जेह, लाग्युं पाप ते भोगव्युं एह । २२ ।
ते माटे में तुजने मार्यो, मोटो अधर्म एह विचार्यो,
वाळी कहे तमो सुग्रीव साथ, ए शुं मैत्री करी रघुनाथ । २३ ।
मने मळ्या होत महाराज, तो हुं करत तमारुं काज,
जई रावण मारत रणमां, सीताने लावत एक क्षणमां । २४ ।
ए रावण मारो चोर, सुणो कौशल राजकिशोर,
में वगलमां घाल्यो एने, पुत्रपारणे बांध्यो तेने । २५ ।
एमां शुं करवुं'तुं काज ? एने बांधीने लावत आज,
पण भलुं थयुं आचरण, तम हाथे पाम्यो मरण । २६ ।
मारा भाग्य तणो नहि पार, मारां पूरव पुण्य अपार,
सुणी प्रसन्न थया रघुराज, वाली जिवाडुं तुजने हुं आज । २७ ।
तने आपुं जीवित दान, माग्य माग्य कपि वरदान,
वाली कहे सुणीए रघुराय, आवुं मरण फरी नव थाय । २८ ।
अंतकाळनी सारु जोगी, करे भजन ब्रह्मरस भोगी,
अंते पामे ते मोक्ष निदान, पण पासे क्यांथी भगवान ? । २९ ।

मैं विना अधर्म के किसी को नहीं मारता । २१ तूने छोटे भाई की स्त्री को (वलपूर्वक) रख लिया है-- 'अरे, इससे वड़ा दूसरा कौन-सा अधर्म है ? सुग्रीव के रूमा नामक जो स्त्री है, उसका तूने भोग किया; उससे तुझे पाप लगा है। उस कारण से मैंने तुझे मारा; तूने इसे वड़ा अधर्म समझा है।' २२ तव बाली बोला— 'हे रघुनाथ, आपने सुग्रीव के साथ यह क्या (कैसी) मित्रता की ? हे महाराज, आप मुझसे मिले होते, तो मैं आपका काम कर देता। जाकर रावण को युद्ध में मार देता और एक क्षण में सीता को लाता। २३-२४ हे कौशल-राज-किशोर, सुनिए। वह रावण मेरा चोर है। मैंने उसे बगल में ठूंस रखा था, उसे पुत्र के पालने पर बाँध दिया था। २५ उसमें क्या काम करना होता ? उसे बाँधकर आज ला देता। परन्तु यह भला व्यवहार हो गया कि आपके हाथों मैं मृत्यु को प्राप्त हो गया हूँ। २६ मेरे भाग्य का कोई पार नहीं है, मेरा पूर्व-कृत पुण्य अपार है।' यह सुनकर रघुराज प्रसन्न हो गये (और बोले)-- 'हे वाली, आज मैं तुझे (पुनः) जीवित कर दूंगा। २७ तुझे जीवन-दान दूंगा। हे कपि, माँग, वरदान माँग।' (तव) वाली ने कहा— 'हे रघुराज सुनिए। ऐसी मौत फिर से नहीं होगी। २८ अन्तकाल में योगी भजन (भक्ति) करते हुए ब्रह्मरस का भोग (पान)

दृष्टिगोचर ते प्रभु आज, मारी पासे ऊभा छो महाराज,
आथी लाभ बीजो धरी मन, कोण कारण राखुं तन ? । ३० ।
धन्य सुग्रीव बंधु वीर, मने मेळव्या श्रीरघुवीर,
न होय वीर गुरु तुं मारो, उपकार शो मानीश तारो ? । ३१ ।
कराव्युं रामनुं दरशन, आपी अपावी गति मुजने धन्य,
सुण बंधव चतुर सुजाण, हुं मूकुं छुं मारा प्राण । ३२ ।
हवे करजो तुं नगरनुं राज, अंगदने आपजो युवराज,
एवुं कही काढी कंठेथी माळ, घाली सुग्रीवने विजयमाळ । ३३ ।
सुणो रघुपति दीनदयाळ, मुज पुत्रनी करजो संभाळ,
छो भक्तवत्सल श्रीरंग, अंगद छे तमारे उछंग । ३४ ।
एवुं कही राम सांनिध्य जाण, तज्या वालीए तत्क्षण प्राण,
पाम्यो सद्गति इंद्रकुमार, गयो वैकुंठमां तेणी वार । ३५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

वैकुंठमां ते गयो वाली, मूक्युं रामनी सांनिध्य तन रे,
पछी तारा राणी वाली तणी, ते आवी करती रुदन रे । ३६ ।

करता है। अन्त में वह मोक्ष को प्राप्त हो जाता है; (फिर भी) उसके पास (उस समय) भगवान कहाँ से होते है ? २९ हे महाराज, वे आप प्रभु आज मुझे दृष्टिगोचर हो रहे हैं, आप मेरे पास खड़े हैं। इससे दूसरे लाभ की आकांक्षा को मन में रखकर मैं किस कारण शरीर रख दूँ ? ३० बंधु वीर सुग्रीव, तुम धन्य हो, (क्योंकि तुमने) मुझे श्रीरघुवीर मिला दिये। तुम मेरे भाई नहीं हो, गुरु हो; मैं तुम्हारा क्या उपकार मानूँ ? ३१ तुमने राम के दर्शन करा दिये और मुझ धन्य को (सद्-) गति प्रदान की और करवायी। हे चतुर सुजान बंधु, सुनो। मैं (अब) अपने प्राण त्याग रहा हूँ। ३२ अब तुम नगर का राज करो, अंगद को युवराज पद दो।' ऐसा कहकर उसने गले की विजय-माला निकाल ली और सुग्रीव को पहना दी। ३३ (फिर वह बोला—) 'हे दीन-दयालु रघुपति, सुनिए। मेरे पुत्र की देखभाल कीजिए। हे श्रीरंग, आप भक्त-वत्सल हैं। अंगद को आपकी गोद में (डाल दिया) है।' ३४ समझिए कि ऐसा कहकर राम के सान्निध्य में बाली ने तत्क्षण प्राण त्याग दिये। तब वह इन्द्र-पुत्र सद्गति को प्राप्त हुआ और उस समय वह वैकुण्ठ में गया। ३५

बाली ने राम की सन्निधता में शरीर छोड़ दिया और वह वैकुण्ठ में गया। अनन्तर बाली की (स्त्री) रानी तारा रुदन करती हुई आ गयी। ३६

अध्याय—७ (तारा का विलाप, सुग्रीव का राज्याभिषेक)

राग सारंग

हवे वाली तणी राणी छे तारा, सतीशिरोमणि जेह,
पछी अंगद पुत्रने आगळ करीने, रणमां आवी तेह। १ ।
त्यारे कर जोडी रघुवीरनी प्रत्ये, तारा बोली वाण,
हवे एक बाण मूकीने मुजने, मारो सारंगपाण। २ ।
हे अयोध्यापति तमे मारा पतिने, शुं करवाने मार्यो ?
हुं पतिव्रताने विधवा करी, शणगार उतार्यो मारो। ३ ।
एम कही पछी वाली पासे, बेठी तारा राणी,
विविध प्रकारे विलाप करंती, रोती मधुर स्वर ताणी। ४ ।
त्यारे श्रीरघुपतिए पासे आवीने, ताराने समजावी,
बाई शुं करवा कल्पांत करे छे ? ए लखित वात जे भावी। ५ ।
तुं कोनो शोक करे छे सुंदरी, कहे मुजने ते वचन,
जो देहनो शोक तो ए तुज, पासे पड्युं ते तन। ६ ।

अध्याय—७ (तारा का विलाप, सुग्रीव का राज्याभिषेक)

अब बाली के तारा नामक रानी थी, जो सती-शिरोमणि (सर्वश्रेष्ठ पतिव्रता) थी। अनन्तर वह अपने पुत्र अंगद को आगे करके युद्ध-भूमि में आ गयी। १ तब हाथ जोड़कर तारा राम के प्रति यह बात बोली—'हे सारंग-पाणि (शार्ङ्ग नामक धनुष को धारण करनेवाले भगवान विष्णु, अर्थात् विष्णु के अवतार), एक बाण चलाकर मुझे मार डालिए। २ हे अयोध्या-पति, आपने मेरे पति को क्यों मार डाला ? मुझ पतिव्रता को विधवा बनाकर आपने मेरे (सुहाग-सूचक) शृंगार को (क्यों) उतार दिया।' ३ ऐसा कहकर, फिर तारा रानी बाली के पास बैठ गयी। वह विविध प्रकार से विलाप करती रही और (स्वाभाविक) मधुर स्वर को तानकर (अर्थात् तार स्वर में) रोती रही। ४ तब पास आते हुए रघुपति ने तारा को समझा दिया—'हे देवी, कल्पान्त क्यों कर रही हो ? जो भावी (होनी) होती है, वह तो लिखी हुई (विधाता द्वारा पूर्व-निर्धारित) बात होती है। ५ हे सुन्दरी, मुझसे वह बात तो कहो कि तुम किसका (किसके लिए) शोक कर रही हो। यदि तुम देह के लिए शोक कर रही हो, तो वह देह तो तुम्हारे पास पड़ी हुई है। ६ वह पंच महाभूतों का बना शरीर अनित्य, अशाश्वत तथा नाशवान होता है। वह

अनित्य अशाश्वत नाशवान ए, पंचभूतनुं शरीर,
ते कर्मानुसारे थाय जाय, तेनो शोक करे नहि धीर। ७ ।
तुं कहीश हुं आत्माने रडुं छुं, ए मोटो अविवेक,
अखंड अज अविनाशी आत्मा, चैतन्य द्रष्टा एक। ८ ।
अपरिछिन्न माटे ए पूरण, जाय न आवे जेह,
दुःखरहित माटे सुखसागर, अमर आत्मा एह। ९ ।
ते माटे बे ए मध्ये जेनो, शोक करे ते फोक,
नाशवंतनुं दुःख शुं धरवुं? अखंडनो शो शोक? । १० ।
एम रामे ताराने उपदेशी, प्रतिबोध बहु दीधो,
राम वचन-अगस्त्ये शोकनो, सिंधु शोषी लीधो। ११ ।
पछी तारा समजी पाये लागी, रघुपतिने तेणी वार,
मस्तक कर मूकीने वळता, बोल्या जगदाधार। १२ ।
अरे तारा सुग्रीवने वर, तुज रहेशे सत्य प्रमाण,
मुज आज्ञाए पतिव्रत तारुं, नहि भागे निरवाण। १३ ।
कोईए नहि करे निंदा तारी, माटे वचन मुज पाळ,
पछे सुग्रीवने ते तारा सोंपी, नंखावी छे वरमाळ। १४ ।

तो कर्म के अनुसार (उत्पन्न) हो जाता है और (नष्ट हो) जाता है। धीर व्यक्ति उसके लिए शोक नहीं करता। ७ (यदि) तुम कहोगी— मैं आत्मा के लिए रो रही हूँ, (तो) यह तो बड़ा अविवेक है। आत्मा तो अखण्ड, अजन्मा, अविनाशी तथा चैतन्यमय एवं द्रष्टा होती है। ८ वह अपरिछिन्न होती है; इसलिए वह पूर्ण होती है— जो न जाती है, न आती है। यह दुःख-रहित, अर्थात् सुख का सागर होती है। यह आत्मा अमर होती है। ९ इसलिए (इन शरीर और आत्मा) दोनों के बीच (में से) तुम किसी के लिए भी जो शोक कर रही हो, वह व्यर्थ है। नाशवान के लिए दुःख क्यों धारण करें? अखण्ड के लिए क्या शोक करे? ' १० इस प्रकार राम ने तारा को उपदेश देते हुए बहुत प्रतिबोध (ज्ञान) करा दिया। राम के वचन रूपी अगस्त्य ने शोक रूपी सागर को सोख डाला। ११ अनन्तर तारा समझ गयी और वह उस समय रघुपति के पाँव लग गयी। तो उसके मस्तक पर हाथ रखते हुए जगदाधार श्रीराम फिर उससे बोले। १२ 'अरी तारा, तुम सुग्रीव का वरण करो। मेरी बात तुम्हारे लिए सत्य तथा प्रमाण-सहित रहेगी। मेरी आज्ञा के कारण तुम्हारा पातिव्रत्य निश्चय ही नहीं नष्ट होगा। १३ कोई भी तुम्हारी निन्दा नहीं करेगा। इसलिए मेरी बात का पालन करो।' अनन्तर

एम देवचरित्र छे घणां अटपटां, अघट घटावे जेह,
ए जोई कोई अन्य मनुष्य करे तो, पडे नरकमां तेह । १५ ।
जळ उपर जेणे पृथ्वी राखी, स्थंभ विना आकाश,
एवा प्रभु छे एक स्वतंत्र ज, अखंड अजित अविनाश । १६ ।
ते प्रभु करे करावे करतव, ते थाय सत्य प्रमाण,
ते जोईने को अन्य करे तो, नरक पडे निरवाण । १७ ।
पछी ताराने पटराणी करीने, सोंपी सुग्रीवने हाथ,
पछी सुग्रीव पासे वाली केरी, करावी क्रिया रघुनाथ । १८ ।
वळी अंगदने पोतानो कर्यो, शिर हस्त मूक्यो रघुवीर,
हावे सुग्रीवने कहे जाओ नगरमां, राज्य करो मति धीर । १९ ।
अमो ऋषिमुक उपर रही गाळीशुं, चोमासुं चार मास,
त्यारे सुग्रीव कहे प्रभु तमे पधारो, पहोंचे मारी आश । २० ।
सुणो मित्र मुज भाई भरत ते, भोगवे छे वनवास,
त्यारे हुं केम पुरमां प्रवेश करुं ? दुःख जोई थयो छुं उदास । २१ ।
ज्यम नानां बाळक मूकीने, विदेश जाय मात,
तेम हुं आव्यो छुं एने मूकी, पुण्य पवित्र ए भ्रात । २२ ।

उन्होंने तारा सुग्रीव को सौंप दी और उससे उसे वरमाला पहनवा दी । १४ जो अघटित को घटित कर देता हो, उस देवता के चरित्र ऐसे बहुत अटपटे होते हैं । उन्हें देखकर कोई अन्य मनुष्य ऐसा करे, तो वह नरक में पड़ जाता है । १५ पानी के ऊपर जिसने पृथ्वी रख दी है, जिसने बिना स्तम्भ के आकाश रखा है, ऐसे वह प्रभु एक सर्वथा स्वतन्त्र ही है, अखण्ड, अजित एवं अविनाशी है । १६ वह भगवान जादू (का-सा कार्य) करता है, कराता है और वह सत्य तथा प्रमाण होता है । उसे देखकर कोई दूसरा वैसा करता हो, तो वह अन्त में नरक में पड़ जाता है । १७ अनन्तर श्रीराम ने तारा को पटरानी के रूप में सुग्रीव के हाथ सौंप दिया; फिर सुग्रीव के द्वारा बाली की (अन्त्येष्टि-) क्रिया करवायी । १८ इसके अतिरिक्त रघुवीर ने अंगद को अपना बना लिया और उसके मस्तक पर हाथ रखा । अब वे सुग्रीव से बोले— 'नगर में जाओ और धीर बुद्धि से राज्य करो । १९ हम ऋष्यमूक पर रहकर चौमासे के चारों मास व्यतीत करेंगे ।' तब सुग्रीव बोला— 'हे प्रभु, आप (मेरे यहाँ) पधारिए और मेरी कामना पूर्ण कीजिए ।' २० तो राम ने कहा— 'हे मित्र, मेरा भरत नामक बन्धु वनवास का भोग कर रहा है । तब मैं नगर में कैसे प्रवेश करूँ ? उसका दुःख देखते हुए मैं उदास हो गया हूँ । २१ जैसे छोटे

पछी लक्ष्मणने मोकलिया पोते, किष्किंधा मोझार,
राज्याभिषेक कर्यो विधिए थकी, सुग्रीवनो तेणी वार । २३ ।
अंगदने सेनापति थाप्यो, वरत्यो जय जयकार,
सुग्रीव राज्य चलावे नित्ये, राजनीति वहेवार । २४ ।
पछी ऋषिमूक उपर राम रह्या छे, साथे लक्ष्मण वीर,
श्रीरघुवीरनी सेवा करता, अंजनीसुत रणधीर । २५ ।
एवे ग्रीष्मऋतु वीती गई, आव्या चोमासाना दन,
विद्युत चमके नभ घन गाजे, वरसे परजन्य । २६ ।
तरु कुसुमित शोभे नवपल्लव, रम्य गिरि चोपास,
मधुपनिकर गुंजारव करता, लेता मकरंद वास । २७ ।
वास लेता मधुकर गुंजे, वृष्टि अगणित थाय,
त्यारे लक्ष्मणने रघुवीर देखाडे, वर्षाऋतु शोभाय । २८ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

वर्षाऋतुनी शोभा अद्‌भुत, घन गाजे नभमांय रे,
मोर कळा करी नाचता, बपैया बोले त्यांय रे । २९ ।

बच्चों को छोड़कर माता परदेश जाती हो, वैसे ही उसे छोड़कर मैं आ गया हूँ। वह मेरा भाई पुण्यवान तथा पवित्र है।' २२ फिर उन्होंने स्वयं लक्ष्मण को किष्किन्धा में भेज दिया। उसने उस समय विधि के अनुसार सुग्रीव का राज्याभिषेक कर दिया। २३ अंगद को सेनापति बना दिया। तो जय-जयकार हो गया। सुग्रीव राजनीति के अनुसार नित्य राज करता रहा। २४ अनन्तर श्रीराम बन्धु लक्ष्मण सहित ऋष्यमूक पर्वत पर रह गये। (वहाँ) रणधीर अंजनीसुत हनुमान श्रीराम की सेवा करता था। २५ इस प्रकार ग्रीष्म ऋतु बीत गयी; चौमासे के दिन आ गये। विद्युत् चमकने लगी, आकाश में बादल गरजने लगे और वर्षा होने लगी। २६ उस रम्य पर्वत के चारों ओर वृक्ष फूल गये; नये पल्लव शोभायमान हो रहे थे। भ्रमर गुँजारव करते थे; वे मकरन्द तथा सुगन्ध लेते थे। २७ सुगन्ध लेते हुए भ्रमर गुंजारव करते थे। वर्षा अपार हो रही थी। तब श्रीराम ने लक्ष्मण को वर्षाऋतु की शोभा दिखा दी। २८

वर्षा ऋतु की शोभा अद्‌भुत थी। आकाश में बादल गरज रहे थे। मोर अपने परों को सुन्दर ढंग से फैलाकर वहाँ नाच रहे थे और चातक बोल रहे थे। २९

अध्याय—८ (वर्षा और शरद ऋतु का वर्णन)

राग मलार

रघुवीर कहे तुं जोने लक्ष्मण, वर्षा ऋतु शोभाय रे,
वनवेली कुसुमित बोले पतत्री, शब्द सुंदर थाय रे। १ ।
देखी वारिद मोर नाचे, करे मुदित कळाय रे,
ज्यम विरतिवंत हरिभक्तने देखी, हरख पामे काय रे। २ ।
घनमांहे दमक दामनी ज्यम, खळ प्रीत स्थिर नव रहे क्यमे रे,
घन वरसे नीचो ऊतरी, ज्यम विद्या पामी बुध नमे रे। ३ ।
आघात बुंद गिरि सहे, खळ वचन साधु जेम रे,
लपटायो कर्दम भूमि पर, जीवने माया तेम रे। ४ ।
नदी क्षुद्र भरी ऊभराई चाली, जळ दशो दिश जाय रे,
ज्यम सूक्ष्म धन पामीने खळ, अभिमान करी इतराय रे। ५ ।
समेटी जळ ज्यां त्यां थकी ते, नीची भोम्य भराय रे,
सद्‌गुण सरवे समेटी ज्यम, सज्जन रुदये समाय रे। ६ ।

अध्याय—८ (वर्षा और शरद ऋतु का वर्णन)

रघुवीर राम ने कहा, ‘ हे लक्ष्मण, तुम वर्षा ऋतु की शोभा देखो। वन में उत्पन्न लताएँ फूली हुई हैं। पक्षी बोल रहे हैं। उनकी ध्वनि सुन्दर (मीठी) होती है। १ मेघों को देखकर मोर नाचने लगे हैं। वे आनन्दित होकर परों को सुन्दर रीति से फैलाते हैं, जैसे कोई विरक्ति-युक्त व्यक्ति की काया हरि-भक्त को देखकर हर्षित हो जाती है। २ बिजली बादल में (चंचलता पूर्वक वैसे ही) चमक रही है, जैसे खल की प्रीति (चंचल होने से) स्थिर (स्थायी) नहीं होती। बादल नीचे उतरकर (पृथ्वी के निकट आते हुए) बरस रहे हैं, जैसे विद्या प्राप्त करके विद्वान विनम्र हो (झुक) जाते हैं। ३ बारिश की बूँदों का आघात पर्वत (वैसे ही) सह रहे हैं, जैसे साधु जन खल के (कठोर) वचनों को सहन करते हैं। भूमि में कीचड़ (वैसे ही) लिपट गया है, जैसे जीव को माया लिपट गयी हो। ४ क्षुद्र नदी भरकर उभरी हुई चल रही है; उसका पानी दसों दिशाओं में फैलता जा रहा है, जैसे थोड़ा धन प्राप्त करने पर (भी) खल जन अभिमान के कारण इतराते जाते हैं। ५ जहाँ-तहाँ से जल सिमटकर नीची भूमि में भर रहा है, जैसे समस्त सद्‌गुण सिमटकर सज्जन के हृदय में समा जाते हैं। ६ नदियों का समस्त जल मिलकर

सर्व सरिताजळ मळीने, जळनिधिमां जाय रे,
ज्यम जीव पामी हरिपदने, अचळ निरभे थाय रे। ७ ।
हरित भूमि तरण संकुल, नव जणाये पंथ रे,
पाखंडवाद मते करी थाय, गुप्त ज्यम सद्ग्रंथ रे। ८ ।
दादुर धूनि चोदिश करे, जाणे पढे बटुक अनेक रे,
नव पल्लव थयां विटप ज्यम, मळ्यो साधकने विवेक रे। ९ ।
थया जवासा पत्रहीण ज्यम, रूडे राज्य खळ उद्यम रे,
कंई धूळ खोळी नव जडे, तजे क्रोध धरमी ज्यम रे। १० ।
भूमि शोभे शस्यसंपन्न, जेवी उपकारीनी संपत्य रे,
त्यम निशामां खद्योत चमके, ज्यम दंभी समाज दुर्मत्य रे। ११ ।
क्यारीओ फूटी चाले जळ, नव रोकायो निरधार रे,
ज्यम तोडी कुळ मरजादा त्रिया, ज्यां त्यां करे व्यभिचार रे। १२ ।
कृषि सुधारे कृषिवंत ज्यम, मोह मद तजे बुधवंत रे,
पछे शस्य निर्मळ थाय ज्यम, ज्ञानी शोभे मोहने अंत रे। १३ ।

समुद्र में (मिलने) जा रहा है (और वहाँ स्थिर हो जाता है), जैसे जीव हरि-पद को प्राप्त होकर स्थिर तथा निर्भय हो जाता है। ७ घास से पूर्ण (भरी हुई) भूमि (घास से आच्छादित हो जाने से) हरी-हरी हो गयी है और मार्ग समझ नहीं पड़ रहा है, जैसे पाखण्डवाद के मत से (वेदादि) सद्ग्रन्थ लुप्त हो जाते हैं (अतएव दिखायी नहीं देते हैं)। ८ मेंढ़क चारों दिशाओं में बोल रहे हैं, मानो अनेक बटु (वेद आदि) पढ़ रहे हों। पेड़ों में नव पल्लव (उत्पन्न) हो गये हैं, जैसे साधकों को विवेक प्राप्त हो गया हो। ९ जवासा पत्तों-रहित हो गया है, जैसे खल जनों के उद्यम से रहित होने पर राज्य सुन्दरता से युक्त हो जाता है। धूल कहीं खोजने पर भी नहीं मिल रही है, जैसे धर्मशील व्यक्ति क्रोध तज देता है (जिससे उसमें क्रोध खोजने पर भी नहीं मिलता)। १० भूमि शस्य (फसल) से सम्पन्न होकर शोभायमान हो गयी है, जैसे उपकारी व्यक्ति की सम्पत्ति शोभा-युक्त होती है। जैसे दम्भी लोगों के समाज में दुर्मति होती है, वैसे रात को जुगनू चमकते हैं। ११ क्यारियों के टूट जाने से पानी बहता जा रहा है, निश्चय ही वह नहीं रोका जाता, जैसे स्त्रियाँ कुल-मर्यादा को तोड़कर जहाँ-तहाँ व्यभिचार कर रही हों। १२ किसान (निराई आदि करके) खेती को (वैसे ही) सुधार रहे हैं, जैसे ज्ञानी व्यक्ति मोह और मद को (चुन-चुनकर) त्याग देता हो। फिर (खेत में) अन्न (फसल) निर्मल हो जाता है, जैसे ज्ञानी व्यक्ति मोह का अन्त (नाश) करने पर शोभायमान

पंथी मारग पडे रपटी, मलिन अंबर थाय रे,
ज्यम अशुभ करमे करी साधु, विषयमां लेपाय रे। १४।
त्यारे चक्रवाक देखाय नहि, पामी काळधर्म पळाय रे,
विविध जंतु भूमि ज्यम, रूडे राज वृद्धि प्रजाय रे। १५।
उषर भूमि तृण न जामे ज्यम, हरिजन हृदये काम रे,
पंथी ज्यां त्यां रोकाया, ज्यम ज्ञाने इंद्रिय ठाम रे। १६।
क्यारे मारुत प्रबळ ज्यांहां त्यांहे, मेघने लई जाय रे,
ज्यम कपूत आचरणे करी, कुळधर्म दूर पळाय रे। १७।
क्यारे दिवसे घनघटा, वळी क्यारे प्रगटे पतंग रे,
जाय आवे ज्ञान ज्यम, पामी कुसंग सुसंग रे। १८।
एम वर्षा ऋतु वही गई वळती, आवी शरद सुजाण रे,
अरे लक्ष्मण जोने शोभा, कहे छे रघुपति वाण रे। १९।
कास फूल्यो श्वेत रंगे, क्षमा छाई तेम रे,
वृद्धा अवस्था वर्षा ऋतुने, आवी शोभे जेम रे। २०।

होता हो। १३ पथिक (पाँव) फिसलकर मार्ग में गिर जाते हैं, (उससे) उनके वस्त्र मलिन हो जाते हैं, जैसे साधु पुरुष अशुभ कर्मों द्वारा विषय (-विकार) में लिप्त हो जाते हैं। १४ तब चक्रवाक नहीं दिखायी दे रहे हैं (वे कहीं भाग गये हैं), जैसे काल (कलियुग) को प्राप्त होने पर (सद्-)धर्म भाग जाते हैं (जिससे कहीं भी सद्धर्म का अस्तित्व नहीं दिखायी देता)। भूमि पर विविध प्रकार के जन्तु उत्पन्न हो गये हैं, जैसे सुन्दर राज्य में प्रजा की वृद्धि हो जाती है। १५ ऊसर भूमि में घास (तक) नहीं जम पाती, जैसे हरि-जन (भगवद्भक्त) के हृदय में काम (-विकार) नहीं टिक पाता। पथिक जहाँ-तहाँ रुके हुए है, जैसे ज्ञान से इंद्रियाँ (बुरे मार्ग पर जाने से रोक देने के कारण) स्थिर हो जाती हैं। १६ कभी प्रबल वायु जहाँ चलती है, वहाँ मेघों को ले जाती है, जैसे कुपुत्र के (बुरे) आचरण से कुल धर्म दूर भाग जाते हैं। १७ कभी दिवस में घनघटा छा जाती है (तो अँधेरा छा जाता है, प्रकाश लुप्त हो जाता है), तो कभी सूर्य प्रकट हो जाता है (और प्रकाश फैल जाता है), जैसे कुसंगति और सुसंगति को प्राप्त होने पर (व्यक्ति का) ज्ञान (क्रमशः) लुप्त हो जाता है और आ जाता है। १८ इस प्रकार वर्षा ऋतु बीत गयी और तत्पश्चात् शरद ऋतु आ गयी। (फिर) रघुपति राम ने यह बात कही— 'हे लक्ष्मण, (इसकी) शोभा देख लो। १९ जैसे क्षमा फैल जाती है, वैसे कास श्वेत रंग में फूल गया है। (अब) वर्षा ऋतु की

अगस्त्य पंथ उदे थयो, शोषवा मांड्युं वार रे,
ज्यम लोभीना परितापथी, संतोष जाये सार रे। २१।
सर सरित जळ स्वादिष्ट निर्मळ, शोभतुं महाभाग रे,
ज्यम ज्ञानी पामी मोह् ममता, करे ज्ञानी त्याग रे। २२।
प्रगट्यां खंजन शरदमां ज्यम, पामी समय सुकृत रे,
पंकरहित थई धरा ज्यम, तजे राय अनीत रे। २३।
जळ अल्पमां थाये विकळ, मच्छ पामे परिताप रे,
बहु कुटुम्बीजन हीण धन, ते पामे ज्यम संताप रे। २४।
घनरहित निर्मळ शोभतुं, ऋतु शरदमां आकाश रे,
निर्मळ हरिजन शोभता ज्यम, तजे विषयनी आश रे। २५।
क्यहुं क्यहुं वृष्टि शरदमांहे, अल्प थाये मेह रे,
ज्यम कोई पामे भक्ति मारी, भक्त विरला जेह रे। २६।
त्यजी नगर चाल्या नृप वणिक, तापस भिखारी जाण रे,
हरि भक्ति पामी चार आश्रम, तजे श्रम निरवाण रे। २७।

वृद्धावस्था आ गयी है— मानो वह (कास के श्वेत रंग के फूलों-रूपी श्वेत बालों से) शोभायमान हो गयी हो। २० अगस्त्य तारे का उदय हुआ, तो उसने (मानो) मार्ग में (स्थित) पानी को सोखना आरम्भ किया है, जैसे लोभी के परिताप से सुन्दर सन्तोष चला जाता है। २१ तालाबों और नदियों का स्वादिष्ट तथा निर्मल जल वैसे ही शोभायमान है, जैसे (विकार-रहित) महा भाग्यवान ज्ञानी व्यक्ति ज्ञान को प्राप्त करने पर मोह-ममता का त्याग कर देता हो (और उससे शोभा पाता हो)। २२ जैसे (अनुकूल) समय पाकर सुकृत (पुण्य) आ जाते है, वैसे ही शरद ऋतु में (अनुकूल काल पाकर) खंजन पक्षी आ गये हैं। जैसे राजा अनीति का त्याग कर देता हो, वैसे धरती कीचड़-रहित हो गयी है। २३ थोड़े जल में मछलियाँ व्याकुल हो रही हैं, और परिताप को प्राप्त हो रही हैं, जैसे बहुत कुटुम्बी जन-वाला व्यक्ति धन-हीन हो जाने पर सन्ताप को प्राप्त हो जाता है। २४ शरद ऋतु में मेघ-रहित तथा निर्मल आकाश वैसे ही शोभायमान है, जैसे हरि-जन (भगवद्-भक्त) विषय (-सुख) की आशा का त्याग करते हैं और निर्मल (अन्तःकरण-वाले) होकर शोभायमान होते हैं। २५ शरद ऋतु में मेघ कम होते हैं और कहीं-कहीं अल्प-सी वर्षा होती है, जैसे जो कोई मेरी भक्ति को प्राप्त करते हों, ऐसे भक्त विरले ही होते हैं। २६ यह जानकर (कि शरद ऋतु आ गयी है) राजा, व्यापारी, तापसी और भिखारी (क्रमशः विजय, व्यापार, तपस्या और

सुखी मच्छ नीर अगाधना, ज्यम हरि शरणे जन रे,
फूल्यां कमळ सर शोभतुं, ज्यम ब्रह्म सगुण धन्य रे। २८।

दुःखी चक्रवाक निशागमन, खळ जोई परसंपत्य रे,
अति तृषातुर चातक दुःखी, ज्यम शिवद्रोहीने विपत्य रे। २९।

शरद आतप दिवसनो हरे, इंदु ते परिताप रे,
ज्यम संत दरशन शरणथी, थाय मुक्त त्रिविध ताप रे। ३०।

चकोर सरवे चंद्र नीरखे, ज्यम हरि जुए हरिजन रे,
वीत्या मशक हिम त्रासथी, द्विजद्रोह कुळनाशन रे। ३१।

भूमि जीव वर्षा तणा ते, गया शरद विलाई रे,
सद्गुरु-कृपाए जाय ज्यम, संशय भरम समुदाई रे। ३२।

एम वर्षा ऋतु वीती गई, आवी निर्मळ शरद प्रबुद्ध रे,
अरे बाप लक्ष्मण ! सीतानी, हजी न पाम्या कांई शुद्ध रे। ३३।

भिक्षा के लिए) नगर छोड़कर चले जा रहे हैं, जैसे हरि की भक्ति को प्राप्त होकर अन्त में चारों आश्रमवाले (नाना प्रकार की साधनाओं के) श्रम का त्याग कर देते हैं। २७ अथाह जल में रहनेवाली मछलियाँ सुखी हैं, जैसे श्रीहरि की शरण में रहनेवाले (भक्त) जन होते हैं। खिले हुए कमलों से सरोवर वैसे ही सुशोभित हो रहा है, जैसे (निर्गुण) ब्रह्म सगुण होने पर धन्य होता है। २८ रात्रि का आगमन होने पर चक्रवाक वैसे ही दुखी हो रहे हैं, जैसे खल जन दूसरे की सम्पत्ति को देखकर (दुखी) हो जाते हैं। चातक अत्यधिक प्यास से व्याकुल एवं दुखी हो रहे हैं, जैसे शिव-द्रोहियों को विपत्ति प्राप्त हो जाती है (और वे दुखी हो जाते हैं)। २९ शरद ऋतु में दिवस की धूप के दुःख को चन्द्र दूर कर देता है, जैसे सन्तों के दर्शन और आश्रय से (साधक) त्रिविध ताप से मुक्त हो जाता है। ३० समस्त चकोर चन्द्र को निरख रहे हैं, जैसे हरि-जन हरि को देखते रहते हैं। मच्छड़ हिम के भय से वैसे ही नष्ट हो गये हैं, जैसे ब्राह्मणों के प्रति द्रोह करने से कुल का नाश हो जाता है। ३१ वर्षा काल में भूमि पर उत्पन्न जीव शरद ऋतु के आने पर वैसे ही नष्ट हो गये हैं, जैसे सद्गुरु की कृपा से संशय, भ्रम के समूह नष्ट हो जाते हैं। ३२ इस प्रकार वर्षा ऋतु बीत गयी; निर्मल, प्रबुद्ध शरद ऋतु आ गयी है। (फिर भी) हे तात लक्ष्मण, हम सीता की किसी भी खोज को नहीं प्राप्त हो गये हैं। ३३

वलण (तर्ज़ बदलकर)

कंई शुद्ध न पाम्या सीतानी, आवी शरद ऋतु पावन रे,
एम विरहे व्याकुळ थया वळता, रघुपति शोचे मन रे। ३४।

* * *

हम सीता की किसी भी खोज को प्राप्त नहीं हुए हैं। (अब) पावन शरद ऋतु आ गयी है।' इस प्रकार श्रीराम विरह से व्याकुल हो गये और फिर मन में शोक करने लगे। ३४

* * *

अध्याय—९ (लक्ष्मण द्वारा सुग्रीव को स्मरण दिलाना तथा सुग्रीव द्वारा सीता की खोज के लिए कपियों को भेजना)

राग मारु

गया चोमासा दन, आवी शरद ऋतु पावन,
लक्ष्मणने कहे छे राम, भूल्यो सुग्रीव आपणुं काम। १।
थयो राज्यमदे करी मातो, नारीसंग विषे रंग रातो,
तारा रूमा मळी रूपवान, भोगवे करी आसव-पान। २।
पाम्युं चित्त विषयमां लीन, थयो मरकट तेने अधीन,
एने करवी घटे शिक्षाय, आपणो ए मित्र कहेवाय। ३।
चाले कुपंथ सज्जन जेह, लावीए सद्मारग तेह,
माटे लक्ष्मण जा तुं त्यांहे, तेडी लाव्य सुग्रीवने आंहे। ४।

अध्याय—९ (लक्ष्मण द्वारा सुग्रीव को स्मरण दिलाना तथा सुग्रीव द्वारा सीता की खोज के लिए कपियों को भेजना)

चौमासे के दिन बीत गये और पावन शरद ऋतु आ गयी। (तब) राम ने लक्ष्मण से कहा—'सुग्रीव हमारे काम को भूल गया है। १। (जान पड़ता है कि) वह राज्यमद के कारण उन्मत्त हुआ है, स्त्रियों की संगति सम्बन्धी आसक्ति में लीन हुआ है। रूपवती तारा और रूमा (जैसी स्त्रियाँ) मिलने पर वह मद्य-पान करते हुए उनका भोग कर रहा है। २। उसका चित्त विषय (-सुख) में लीनता को प्राप्त हुआ है—(फिर) यह मर्कट उनके अधीन हो गया है। उसे दण्ड देना उचित है—यह तो हमारा मित्र कहाता है। ३। जो सज्जन बुरे मार्ग पर चलने लगे, उसे सन्मार्ग पर लाएँ। इसलिए हे लक्ष्मण, तुम वहाँ जाओ, और सुग्रीव

जो न माने वचन कपिराय, तो करजे एने शिक्षाय,
ए भूली गयो आपणुं काज, माटे दंड देवो घटे आज । ५ ।
करे भक्त-ब्राह्मणनो जे द्वेष दंड देवो घटे तेने एश,
हरिहरनां निंदे चरित्र, करे परने पीडा अपवित्र । ६ ।
सद्पात्रनुं करे अपमान, बळ पामी करे अभिमान,
वरते वेद विरुद्धने पंथ, करे हिंसा निंदे सद्ग्रंथ । ७ ।
जे सज्जन मित्रने वाहाय, ते कृतघ्नी अधर्मी कहेवाय,
जे को करता छळ पाखंड, एटलाने देवो दंड । ८ ।
बळ होय तो करीए शिक्षाय, नहि तो तजीए तेने सर्वथाय;
माटे जा तुं सुग्रीव पास, ना माने तो करजे नाश । ९ ।
चाल्यो लक्ष्मण सुणीने वचन, अति क्रोध धरीने मन,
करे धनुष्यबाण ग्रही सार, आव्यो किष्किधा मोझार । १० ।
गयो आगळ हनुमंत त्यांहे, चेताव्यो सुग्रीव छे ज्यांहे,
रामे मोकल्या लक्ष्मण आज; गयो भूली शुं रामनुं काज ? । ११ ।
कहे सुग्रीव घणुंए थाशे, हळवे हळवे शुद्धि मंगावशे,
एम गणकार्युं नहि ज्यारे, रामानुज कोप्यो तेणी वारे । १२ ।

को बुलाकर यहाँ लाओ । ४ । यदि वह कपिराज हमारी बात न मानता हो, उसे दण्ड दो । वह हमारा काम भूल गया है, इसलिए उसे आज दण्ड देना उचित है । ५ । जो भक्तों और ब्राह्मणों से द्वेष करता हो, उसे दण्ड देना उचित है । जो अपवित्र (पापी) दूसरे को पीड़ा पहुँचाए, जो सत्पात्र— बड़े योग्य, आदरणीय व्यक्ति का अपमान करे, जो बल को प्राप्त होने पर (उसपर) अभिमान करता हो, जो वेद-विरुद्ध मार्ग पर चलता हो, जो हिंसा करता हो, जो (वेदादि) सद्ग्रन्थों की निन्दा करता हो, जो सज्जन मित्र को धोखा देता हो— वह तो कृतघ्न और अधार्मिक कहाता है । जो कोई छल और पाखण्ड करते हों, उतनों को दण्ड दो । ६-८ । यदि शक्ति हो, तो उसे दण्ड दें; नहीं तो उसे सब प्रकार से छोड़ दें । इसलिए, तुम सुग्रीव के पास जाओ । यदि वह न माने, तो उसका नाश कर दो । ' ९ । वह बात सुनकर लक्ष्मण मन में अति क्रोध धारण करके चल दिया । हाथ में सुन्दर धनुष-बाण लिये हुए वह किष्किन्धा में आ गया । १० । (तब)हनुमान आगे गया और जहाँ सुग्रीव था, वहाँ (जाकर) उसने चेतावनी दी— ' राम ने आज लक्ष्मण को भेजा है; तुम राम का काम भूल गये क्या ? ' ११ । तो सुग्रीव ने कहा— ' (वह)बहुत प्रकार से होगा । हौले-हौले खोज करवाएँगे । ' जब इस प्रकार उसने नहीं माना,

कर्यो धनुष तणो टंकार, थयो नगरमां हाहाकार;
नाठा वानर पामी त्रास, आव्या सर्व सुग्रीवनी पास । १३ ।
त्यारे सुग्रीव डरियो मन, हनुमंत शुं बोल्यो वचन ?
एमनो क्रोध समावो आज, चालो करीए श्रीरामनुं काज । १४ ।
ऊठ्यो सुग्रीव मन भय आणी, करी आगळ बंन्यो राणी,
सुमित्रा-सुतनी स्तुति कीधी, चरणनी रज शिर पर लीधी । १५ ।
बोली राणीओ देईने मान, अमने आपो हेवातन दान,
पाम्यो शांत एवुं सुणी शेष, त्यारे ऊतर्यो क्रोध अशेष । १६ ।
लेई अनेक वानरने साथ, राम पासे आव्यो कपिनाथ,
पाहि पाहि कही मुखे वाणी, राखो चरणे सारंगपाणि । १७ ।
एवुं कही नम्यो रामने चर्ण, त्यारे बोल्या अशरणशर्ण;
अरे सुग्रीव पाम्यो राज, तेणे भूली गयो अम काज । १८ ।
चार मास चोमासुं वाम्या, पण शुद्ध सीतानी न पाम्या,
त्यारे सुग्रीव कहे महाराज, निश्चे करुं तम काज । १९ ।

तो उस समय रामानुज लक्ष्मण क्रुद्ध हो उठा । १२ । उसने धनुष का टनत्कार किया, तो नगर में हाहाकार मच गया । वानर भय को प्राप्त होकर भाग गये और वे सब सुग्रीव के पास आ गये । १३ । तब सुग्रीव मन में डर गया । तो हनुमान ने क्या बात कही ? (वह बोला—) 'उनके क्रोध को आज शान्त करो; चलो, श्रीराम का काम कर दें । ' १४ । मन में भय अनुभव करते हुए सुग्रीव उठ गया और उसने दोनों रानियों को आगे कर लिया । उसने लक्ष्मण की स्तुति की और उसके चरणों की धूली मस्तक पर चढ़ा ली । १५ । (लक्ष्मण का) आदर करके रानियाँ बोलीं— 'हमें सुहागदान दीजिए । ' ऐसा सुनकर शेष (का अवतार लक्ष्मण) शान्ति को प्राप्त हुआ, तब उसका क्रोध पूरा उतर गया । १६ । (तदनन्तर) अनेक वानरों को साथ लिये हुए कपिराज (सुग्रीव) राम के पास आ गया और मुँह से बोला— 'रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए । हे सारंग-पाणि, हमें (अपने) चरणों (के आश्रय) में रखिए । ' १७ । ऐसा कहते हुए सुग्रीव ने राम के चरणों को नमस्कार किया; तब अशरणों के लिए शरण-स्वरूप श्रीराम बोले— 'हे सुग्रीव, तुम राज्य को प्राप्त हो गये, तो उससे हमारा काम भूल गये । १८ । चौमासे के चारों मास बीत गये, परन्तु हम सीता की खोज न पा सके । ' तब सुग्रीव बोला, 'हे महाराज, मैं निश्चय ही आपका काम करूँगा ' । १९ । ऐसा कहकर बलवान सुग्रीव ने अनगिनत बन्दरों और रीछों को बुलावा भेजा । सातों द्वीपों के जो भी

एम कही सुग्रीव बळवंत, तेड्या मरकट रीछ अनंत,
सप्त द्वीप तणा कपि जेह, तेडाव्या दूत मोकली तेह । २० ।
आव्या असंख्य वानर त्यांहे, गिरि वृक्ष ग्रही करमांहे,
कूदे ऊछळे पाडे चीस, आवी मळिया ते सरवे कीश । २१ ।
बोल्यो सुग्रीव ते शुं वचन, कपि सरवे धरजो मन,
करवुं आपणे रामनुं काज, कोई आळस नव करशो आज । २२ ।
काळने करीए शिक्षाय, मेळवीए रामने सीताय,
त्यां सुधी रहेवुं सहुने पास, करवुं कारज थईने दास । २३ ।
त्यारे पहेलो जे को जाय आप, तेने ब्रह्महत्यानुं पाप,
ए कर्या विना जे घर जाय, ते कपि मातुगमनी थाय । २४ ।
ए कारजमां जे करे खोटाई, तेने माथे छे रामदुवाई,
जे को करशे आळस अभिमान, तेनां छेदीश नाक ने कान । २५ ।
एवां सुणी सुग्रीवनां वचन, सरवे कपिवर कंप्या मन,
सहु वनचरने लागी धाक, वागी रविसुत केरी हाक । २६ ।
कपिसैन्य जोई रणधीर, मनमां हरख्या श्रीरघुवीर,
कहे सुग्रीवने रघुराय, मुजने घणी चिंता थाय । २७ ।

कपि थे, उन सबको दूत भेजकर बुला लिया । २० । (फल-स्वरूप) असंख्य वानर हाथों में पर्वत, वृक्ष लेकर वहाँ आ गये । वे सब बन्दर मिलकर आ गये— वे कूदते थे, उछलते थे, चीत्कार करते थे । २१ । उन सबसे सुग्रीव ने क्या बात कही ? (वह बोला--) ' हे समस्त कपियो, मेरी बात मन में रखो । हमें श्रीराम का काम करना है । इसलिए कोई भी आज आलस्य न करना । २२ । काल को (भी) दण्ड दें; राम से सीता की भेंट करा दें । तब तक सबको पास रहना है और (राम के) सेवक होकर काम करना है । २३ । तब जो कोई (यहाँ से इस काम को छोड़कर) स्वयं चला जाए, उसे ब्रह्म-हत्या का पाप होगा । इसे बिना (पूर्ण) किये, जो घर (लौट) जाएगा, वह कपि मातृ-गमनी होगा । २४ । उस काम में जो कोई खोटापन करेगा, उसके माथे राम-दुहाई है । जो कोई आलस्य और अभिमान करेगा, मैं उसके नाक और कान काट डालूँगा । ' २५ । सुग्रीव के ऐसे वचन सुनकर सब कपि मन में काँप उठे । समस्त वनचरों को आतंक (अनुभव) हुआ । वे रविसुत सुग्रीव के प्रताप से प्रभावित हो गये । २६ । वानर-सेना को देखकर रणधीर श्रीरघुवीर मन में आनन्दित हो गये । (फिर) रघुराज ने सुग्रीव से कहा— ' मुझे बहुत चिन्ता हो रही है । २७ । यह अपरिमित कपि सेना मिल तो गयी,

आ मळ्युं कपिसैन्य अपार, ए शुं खाशे ? शो करशे आहार ?
त्यारे बोल्यो रूमापति वाणी, तमे सांभळो पुरुषपुराणी । २८ ।
फळ फूल पत्र कंद मूळ, करशे आहार कपि अनुकूळ,
जो नहि मळे बीजुं अन्न, तो ए करशे पवन प्राशन । २९ ।
गिरिवर तरुवर शस्त्र समस्त, एमने न जोईए कांई वस्त्र,
एवुं सुणीने हस्या श्रीराम, पाम्या हर्ष ते पूरणकाम । ३० ।
पछे सुग्रीवे विचारी मति, कर्यो नळने सेनापति,
करवा सीतानी परिशोध, देश देश मोकलिया जोध । ३१ ।
जोयुं पृथ्वी ने पाताळ, स्वर्गलोक मांहे जोई भाळ,
सप्त द्वीप भूमि नव खंड, जोया छप्पन देश अखंड । ३२ ।

परन्तु ये क्या खाएँगे, वे क्या आहार करेंगे ?' तब रूमा-पति सुग्रीव ने यह बात कही--'हे पुराण-पुरुष, आप सुनिए । २८ । ये कपि अपने अनुकूल फल, फूल, पत्ते, कन्द, मूल का आहार करेंगे । यदि कोई दूसरा खाद्य न मिले, तो ये पवन प्राशन करेंगे । २९ । (इनके लिए) पर्वत, वृक्ष समस्त शस्त्र है; उन्हें कोई भी वस्त्र नहीं चाहिए ।' ऐसा सुनते ही पूर्णकाम श्रीराम हँस पड़े और हर्ष को प्राप्त हो गये । ३० । अनन्तर सुग्रीव ने (विवेक) बुद्धि से विचार किया, नल को सेनापति बना दिया और सीता की खोज करने के लिए देश-देश में योद्धाओं को भेज दिया । ३१ । उन्होंने पृथ्वी और पाताल (में) देखा, स्वर्गलोक में पता लगाने का यत्न किया । सातों द्वीपों[1], नवों खण्डों[2] तथा अखण्ड छप्पन देशों[3] में देखा । ३२ । सरोवर, नदियाँ, पर्वत, उपवन--सबमें खोज करके

१. सप्त द्वीप—पुराणों की मान्यता के अनुसार पृथ्वी के बड़े-बड़े भाग 'द्वीप' कहाते हैं। ये द्वीप सात माने गये हैं:— जम्बु, प्लक्ष, शाल्मली, कुश, क्रौंच, शाक और पुष्कर ।

२. नव खण्ड—पुराणों की एक अन्य मान्यता के अनुसार पृथ्वी के विशिष्ट, विशाल भाग 'खण्ड' कहाते है। पृथ्वी के निम्नलिखित नौ खण्ड बताये जाते हैं—, इलावृत्त, भद्राश्व, हरिवर्ष, किंपुरुषवर्ष, केतुमाल, रम्यक, भरतवर्ष, हिरण्मय और उत्तर कुरु। [दूसरी मान्यता के अनुसार : भरतखण्ड, पुष्करखण्ड, हरिखण्ड, रम्यखण्ड, सुवर्णखण्ड, इलावृत्तखण्ड, कौरवखण्ड, किन्नरखण्ड, केतुमालखण्ड । तीसरी मान्यता के अनुसार : इन्द्रखण्ड, कशेरूखण्ड, ताम्रखण्ड, गभस्तिखण्ड, नागखण्ड, वारुणखण्ड, सौम्यखण्ड, ब्रह्मखण्ड और भरतखण्ड]

३. छप्पन देश—प्राचीन काल में भारत के अन्तर्गत छप्पन प्रदेश विशेष माने जाते थे। ये नीचे लिखे अनुसार है—

कोसल, कुरु, पांचाल, शूरसेन, जांगल, आर्यावर्त, यामुन, माथुर, मत्स्य, सारस्वत, मरुधन्व, गुर्जर, आभीर, मागध, सौवीर, आनर्त, मलय, विदर्भ, कीटक, कान्यकुब्ज,

सर सरिता गिरि उपवन, सरवे खोळी वळ्या कपिजन,
न जड्यां तेने सीता अनूप, नथी ओळखता तेनुं रूप । ३३ ।
रामनी ज्ञानशक्ति सीता, मूळ माया जे परम पुनीता,
ते तो भेदु विना केम जडे ? बीजा बापडा भूमि आथडे । ३४ ।
ज्यम अहंममता करी जन, पामी विभ्रम बुद्धि मन,
गुरुशरण विना निदान, कहो ते क्यम पामे ज्ञान ? । ३५ ।
एम वानर फरीने आव्या, नव सीतानी शुद्धि लाव्या,
त्यारे सुग्रीवे तेणी वार, मोकल्या दक्षिण देश मोझार । ३६ ।
खट वानर महा बळवंत, कोपे काळनो आणे अंत,
दश सहस्त्र कपि तेनी साथ, आपी आज्ञा ते कपिनाथ । ३७ ।
नळ नील ने जांबुवंत, ऋषभ अंगद ने हनुमंत,
चाल्या तत्पर थई तेणी वार, पूछे रामने वायुकुमार । ३८ ।
केवुं छे जानकीजीनुं रूप ? आपो एधाणी रघुकूळ भूप,
कहो अंतरनी कांई वात, त्यारे बोल्या श्रीजगतात । ३९ ।

कपिजन लौट आये। उन्हें अनुपम (सुन्दरी) सीता नहीं मिली। (वस्तुतः) वे उसके रूप को नहीं पहचानते थे। ३३। सीता, जो (वस्तुतः) राम की ज्ञान-शक्ति है, जो मूल माया तथा परम पवित्र (स्त्री) है, बिना भेद को जाननेवाले कैसे मिलेगी ? (जो भेद नहीं जानते, वे) बेचारे अन्य जन पृथ्वी पर उस प्रकार भटकते रहेंगे, जिस प्रकार अहंता-ममता के कारण लोगों की बुद्धि और मन भ्रम को प्राप्त हो जाते हैं। बिना गुरु की शरण में गये, कहिये, वे ज्ञान को कैसे प्राप्त होंगे। ३४-३५। इस प्रकार वानर भ्रमण करके (लौट) आये, परन्तु वे सीता की खोज नहीं ला पाये। तब सुग्रीव ने उस समय उन्हें दक्षिण देश में भेज दिया। ३६। (वहाँ) छः महाबलवान वानर थे, जो क्रोध में (आने पर) काल (तक) को अन्त तक ला सकते थे। कपिराज ने उनके साथ दस सहस्र वानरों को (भी जाने की) आज्ञा दी। ३७। नल, नील और जाम्बवान, ऋषभ, अंगद और हनुमान उस समय तैयार होकर चल दिये। (तब) हनुमान ने राम से पूछा। ३८। 'जानकीजी का रूप कैसा है ? हे रघुकुल के राजा, (पहचान के लिए कोई) चिह्न दीजिए। कोई अन्दर की बात

सुराष्ट्र, पाण्डुदेश, विदेह, कुशावर्त, कोक, चेक, सिंधु, सोराष्ट्र, मैथिल, कैकेय, द्विकूटक, शाल्व, कर्नाटक, आवंत्य, निषध, पौंड्र, मद्र, वंग, अंग, कलिंग, कारुष, सृंजय, आंध्र, त्रिगर्त, द्राविड, मालव, केरल, कोकल, उशीर, कुंतल, कंबोज, भोज, कंक, मधु, महाराष्ट्र, अर्ण। (इस सम्बन्ध में अन्यान्य नाम-सूचियाँ भी प्रस्तुत की जाती हैं।)

सुण मारुति सीता अनूप, नथी त्रिभुवनमां एवुं रूप,
एना अंग तणी जे सुवास, अर्ध जोजन चाले प्रकाश। ४०।
मुख कर्पूर गंध सुठाम, अहोरात्रि जपे मुज नाम;
जे समीपनां वृक्ष पाषाण, बार हाथ लगी निरवाण। ४१।
जपतां हशे नाम ज मारुं, सुण अंतर वात उचारुं;
ज्यारे नीकळ्या वन निरधार, त्यारे केकई घर मोझार। ४२।
पहेराव्यां केकैए वनकूळ, अमो पहेर्या जाणी अनुकूळ,
सीताने पहेरावा मूक्यां ज्यारे, नेत्र समश्या करी अमो त्यारे। ४३।
ते माटे न धर्या वनचीर, छानी वात ए कहेजे वीर,
पोतानी मुद्रिका रघुनाथ, घाली अंजनीसुतने हाथ। ४४।
निश्चे ओळखी सीताने जाणी, आ तुं आपजे मुज एधाणी,
सुणी पाये लाग्यो कपि धीर, शिर हस्त मूक्यो रघुवीर। ४५।
जा तुं सीतानी सुध लावजे, विजय पामी वहेलो आवजे,
ऊड्या आकाशमां पछे कीश, रामचरणे नमावी शीश। ४६।

(भी) बताइए।' श्री जगतिपता श्रीराम बोले। ३९। 'हे हनुमान, सुनो। सीता अनुपम है; ऐसा रूप त्रिभुवन में दूसरा नहीं है। उसके अंगों की जो सुगन्ध है, वह स्पष्ट रूप से आधे योजन जाती है। ४०। मुख से कपूर की गन्ध निकलती है। वह दिन-रात मेरे नाम का जाप करती है। (उससे) बारह हाथ (अन्तर) तक जो वृक्ष और पाषाण हैं, वे मेरे नाम ही का जाप करते रहते है। सुनो, (अब) अन्दर की बात कहता हूँ। जब हम वन की ओर (जाने के लिए) निश्चय-पूर्वक निकले तब हम कैकेयी के घर में (गये) थे। ४१-४२। तो कैकेयी ने हमें वल्कल पहनवा दिये; हमने तो अनुकूल जानकर पहन लिये। परन्तु जब सीता को पहनने के लिए (वल्कल) दिये, तो हमने उसे आँखों से संकेत किया था। ४३। इसलिए उसने वे वनचीर नहीं धारण किये। हे भाई, यह गुप्त बात बता दो। (तदनन्तर) श्रीराम ने अपनी अँगूठी हनुमान के हाथ में डाल दी। ४४। सीता को निश्चित (रूप में) पहचानते हुए सीता को जानकर यह मेरा संकेत-चिह्न उसे दो।' यह सुनकर वह धैर्यशील कपि रघुवीर के पाँव लग गया, तो उन्होंने उसके मस्तक पर हाथ रखा। ४५। (फिर वे बोले--) 'तुम जाओ, सीता की खोज ले आओ। विजय को प्राप्त होकर शीघ्र आ जाओ।' (फिर) वह वानर राम के चरणों में मस्तक नवाकर आकाश में उड़ गया। ४६।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

शीश नमावी रामचरणे, च्चाल्यो वीरज विचित्र रे,
कहे दास गिरधर सुणो श्रोता, हावे कहुं हनुमंत चरित्र रे। ४७।

* * *

श्रीराम के चरणों में सिर नवाकर वह अद्भुत वीर चल दिया। कवि गिरधर दास कहता है— 'हे श्रोताओ, अब मैं हनुमान-चरित्र कहता हूँ।' ४७।

* * *

अध्याय—१० (दग्ध वन में ब्रह्मराक्षस से भेंट एवं वानरों का गुहा में प्रवेश)

राग आशावरी

हावे ऋषिमुक उपर राम रह्या छे, सेवे सुग्रीव राज,
अनेक देशना कपि आव्या छे, करवा रामनुं काज। १।
शोधने अरथे गया केटला, केटला रामनी पास,
अनेक प्रकारनी रमत करे छे, रीझवे रमानिवास। २।
केटला गान करीने नाचे, गाय राग उपगीत,
राग मूर्छना रागणी, साधे सप्त ताल संगीत। ३।

अध्याय—१० (दग्ध वन में ब्रह्मराक्षस से भेंट एवं वानरों का गुहा में प्रवेश)

(कवि कहते हैं--) अब ऋश्यमूक पर्वत पर राम ठहरे हैं। राजा सुग्रीव उनकी सेवा कर रहा है। राम का काम करने के लिए अनेक देशों के वानर आये हैं। १। कितने (ही वानर) खोज के लिए गये, तो कितने ही राम के पास (ठहरे) हैं। वे अनेक प्रकार की क्रीड़ा करते हैं और रमा-निवास (भगवान विष्णु, अर्थात् उनके अवतार श्रीराम) को रिझाते हैं। २। कितने ही गायन करते हुए नाचते हैं। वे राग और उपगीत (उपराग)[1] गाया करते हैं। राग, रागिनियाँ[2], मूर्च्छना[3],

---

१. उपगीत—गान विद्या के अनुसार गौण राग।

२. रागिनी—गान विद्या के अनुसार मिश्र या गौण राग।

३. मूर्च्छना—गान विद्या के अनुसार गायन में से प्रत्येक दो-दो स्वरों के मध्यस्थ तीन सूक्ष्म स्वरांश। स्वरों के तीन ग्रामों के सन्दर्भ में मूर्च्छनाएँ इक्कीस मानी जाती हैं।

प्रबंध खंड रचना ने द्रुपद, त्रण ग्राम पद छंद,
बहुविधि कळा करे कपिवर एम, रीझवे रघुकुळचंद । ४ ।
हावे श्रोताजन सावधान थईने, सुणजो एके मन,
पेला कपिवर दक्षिण देश गया, तेमां मुख्य अंजनीतन । ५ ।
रषभ नील नळ जांबुवान बली, अंगद ने हनुमंत,
चाल्या रामचरण शिर नामी, ऊछळता बळवंत । ६ ।
त्यारे वन एक दीठुं दग्ध थयेलुं, आव्या ते मोझार,
त्यारे अचेत थईने कपि त्यां पडिया, पाम्या दुःख अपार । ७ ।
पछी रामनुं स्मरण कर्युं सहु कपिए, त्यारे थया सावधान,
एटले एक ब्रह्मराक्षस आव्यो, तनु परवत समान । ८ ।
पहोळुं मुख करी भक्षण करवा, जेवो आव्यो धाई,
त्यारे अंगदे क्रोध करीने तेने, पछाड्यो बे पद साही । ९ ।

सात ताल[1] से युक्त संगीत सिद्ध करते हैं । ३ । प्रबन्ध तथा खण्ड रचना, ध्रुपद, तीन ग्राम[2] से युक्त पद और छन्द गाते हैं । इस प्रकार श्रेष्ठ कपि बहुत प्रकार की कलाएँ प्रदर्शित करते हैं और रघुकुल-चन्द्र श्रीराम को रिझाते हैं । ४ । अब हे श्रोताजनो, सावधान तथा एकाग्रमन होकर सुनिए । वे कपि (जो) दक्षिण देश में गये, उनमें अंजनी-सुत हनुमान मुख्य था । ५ । ऋषभ, नील, नल, जाम्बवान के अतिरिक्त अंगद और हनुमान नामक वे बलवान वानर श्रीराम के चरणों में सिर नवाकर उछलते-कूदते चल दिये । ६ । तब उन्होंने एक जला हुआ वन देखा । वे उसमें आ गये । तब अचेत होकर सब कपि वहाँ पड़ गये । वे अपार दुःख को प्राप्त हो गये । ७ । फिर (जब) उन सब कपियों ने राम का स्मरण किया, तब वे सचेत हो गये । इतने में एक ब्रह्म-राक्षस (वहाँ) आ गया । उसका शरीर पर्वत के समान था । ८ । वह (जब) मुँह को चौड़ा फैलाकर उन्हें खाने के लिए दौड़ता हुआ आ गया, तब अंगद ने क्रोध-पूर्वक दोनों पाँव पकड़कर उसे पछाड़ डाला । ९ । (तब) उसका (राक्षस) रूप नष्ट होकर वह दिव्य रूपधारी हो गया, तो हनुमान ने उससे पूछा— ' हे भाई, तुम (पहले) कौन थे ? असुर कैसे हो गये थे ?

---

१. सप्त ताल—गीत, वाद्य और नृत्य में क्रिया की गति का काल-दर्शक परिमाण ' ताल ' कहाता है । (वस्तुतः) एकताल, द्विताल, त्रिताल आदि लगभग तीस ताल गिनाये जाते हैं ।

२. तीन ग्राम—स र ग म प ध नी—इन सात स्वरों के समूह को गान-विद्या में 'ग्राम' कहते हैं । ये ग्राम तीन हैं :— षड्ज, मध्यम और गान्धार ।

ते राक्षस मटी दिव्यरूप थयो, तेने पूछे वायुकुमार,
भाई कोण हतो ? क्यम असुर थयो'तो ? कहे मुजने विस्तार । १० ।
त्यारे दिव्यरूप कहे कपि सांभळो, हुं डंडीऋषिनो तन,
वरस अष्टादश केरो थयो, त्यारे रमतो हतो आ वन । ११ ।
त्यारे एक समे वनदेवी आवी, भक्षण मुजने कीधो,
पिताए जाण्युं तव क्रोध करीने, घोर शाप ते दीधो । १२ ।
आ वन बळीने भस्म थजो जे, थयुं विपरीत आचर्ण,
आ वनमां कोई प्राणी आवे, ते निश्चे पामजो मर्ण । १३ ।
ते शापे करीने भस्म थयुं वन, हुं थयो ब्रह्मराक्षस रूप,
जोजन बार लगी जीवहिंसा, करतो कर्म करूप । १४ ।
मुज निमित्ते जे वन बाळियुं, थयो अनेक जीवनो नाश,
ते पातक मारे शिर बेठुं, ए अकळ गति अविनाश । १५ ।
ते आज तमारा दर्शनथी, हुं पाम्यो गति महाराज,
जे अर्थे करी तमे जाओ छो, सिद्ध थशे तम काज । १६ ।
एवुं कही गयो भुवन पोताने, डंडीऋषिनो पुत्र,
पछी वानर सर्वे भूख्या थया, कंई आहार मळ्यो नहि सूत्र । १७ ।

मुझे विस्तार-पूर्वक बताओ ।' १० । तब वह दिव्यरूप (-धारी) बोला— "हे कपि, सुनो । मैं दण्डी ऋषि का पुत्र हूँ । मैं अठारह वर्ष का हो गया, तब इस वन में खेला करता था । ११ । तब एक समय एक वनदेवी (वहाँ) आयी और उसने मुझे खा डाला । (जब) पिता ने यह जान लिया, तब क्रोध-पूर्वक उन्होंने उसे घोर शाप दिया । १२ । 'यह वन जलकर भस्म हो जाए । इस वन में कोई प्राणी आ जाए, तो वह निश्चय ही मृत्यु को प्राप्त हो जाए ।' तो विपरीत व्यवहार हो गया । १३ । उस शाप से यह वन जलकर भस्म हो गया और मैं ब्रह्म-राक्षस रूपधारी हो गया । मैं चार योजन (अन्तर) तक जीव-हिंसा जैसा भद्दा कर्म करता रहा । १४ । मेरे निमित्त जो वन जलाया गया, उसमें अनेक जीवों का नाश हो गया । वह पाप मेरे सिर बैठा है । यह तो अविनाशी भगवान की अगम्य गति (लीला) है । १५ । हे महाराज, मैं आज तुम्हारे दर्शन से (सद्-)गति को प्राप्त हो गया हूँ । जिस हेतु से तुम जा रहे हो, तुम्हारा वह कार्य सफल होगा ।" १६ । ऐसा कहकर दण्डी ऋषि का वह पुत्र अपने भुवन के प्रति चला गया । अनन्तर सब वानर भूखे हो गये थे । कोई भी आहार उन्हें नहीं मिला था । १७ । उस दग्ध वन में पत्ते, फूल, फल, मूल कुछ भी नहीं मिलता था । आहार

ते दग्धवनमां कंईये मळे नहि, पत्र फूल फळ मूळ,
आहार खोळता फरता सर्वे, कपि थया व्याकुळ । १८ ।
ते वन बहार एक विवरज आव्युं, दीठुं गुफानुं मुख,
पंखी नीकळे पेसे तेमां, ते जोई पाम्या सुख । १९ ।
प्रवेश्या सर्वे तेह विवरमां, थयो आगळ हनुमंत,
त्यारे कपि सर्वे त्यां पड्या, तत्क्षण थईने मूर्छावंत । २० ।
पछे पोताना पूंछ वडे करी, बांध्या हनुमंते तेणी वार,
त्यारे आगळ जातां प्रकाशज आव्यो, वन एक शोभा अपार । २१ ।
त्यारे सावचेत थया मारुतस्पर्शे, कपि सहु चाल्या जाय,
जेम संतनी पूंठे मुमुक्षु फरे, एम मारुति पूंठे पळाय । २२ ।
त्यारे आगळ जातां कनकनां मंदिर, सुंदर शोभा विशाल,
ते जोई कपि सहु विस्मे पाम्या, रचना दीठी रसाळ । २३ ।
एटले एक खेचरी आवीने, ऊभी तेणे ठाम,
देवकन्या अति सुंदर रूपे, सुप्रभा तेनुं नाम । २४ ।
त्यारे अंजनीपुत्रे पूछ्युं तेने, कहे बाई तुं छे कोण ?
आ मणिजडित्र सोनानां मंदिर, कोण तणां निरवाण ? । २५ ।

खोजते हुए वे सब कपि घूमने लगे । वह व्याकुल हो गये । १८ । उस वन के बाहर एक विवर ही (देखने में) आ गया । उन्होंने एक गुफा का मुख देखा । उसमें से पक्षी (बाहर) निकल रहे थे और (अन्दर) प्रवेश कर रहे थे । वह देखकर वे सुख को प्राप्त हो गये । १९ । (फिर) वे सब उस विवर में प्रविष्ट हो गये । हनुमान (सबके) आगे हो गया । तब समस्त कपि तत्क्षण मूर्च्छित होकर वहाँ गिर पड़े । २० । फिर उस समय हनुमान ने अपनी पूँछ से (सबको) बाँध लिया । तब आगे जाने पर प्रकाश आ गया । उस वन में अपार शोभा थी । २१ । तब वायु के स्पर्श से सब कपि सचेत हो गये और चले गये । जैसे सन्त के पीछे मुमुक्षु जन घूमते हैं, वैसे वे हनुमान के पीछे चले जा रहे थे । २२ । तब आगे जाने पर, एक सुन्दर शोभायुक्त विशाल स्वर्ण-मन्दिर को देखकर सब कपि विस्मय को प्राप्त हो गये । उन्होंने उसकी सुन्दर रचना देखी । २३ । उतने में एक खेचरी (यक्षिणी) आकर उस स्थान पर खड़ी हो गयी । वह देवकन्या रूप में अति सुन्दर थी । उसका नाम सुप्रभा था । २४ । तब हनुमान ने उससे पूछा— 'हे देवी, कहो, तुम कौन हो ? रत्न-जड़े ये सोने के मन्दिर किसके द्वारा निर्मित हैं ? २५ । गुफा में ये जो सुवर्ण-मन्दिर हैं, उनमें कौन रहता है ? (यहाँ) दूसरा कोई

गुफामांहे कांचननां मंदिर, कोण रहेतुं ए मांहे ?
बीजुं कोई देखातुं नथी, तुं एकली क्यम छे आंहे ? । २६ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

आंही केम रही छे तुं एकली, के कहीने सत्य वचन रे,
पछी सुप्रभा वळती ऊचरे, तमे सांभळो मारुततन रे । २७ ।

* * *

दिखायी नहीं दे रहा है । तो यहाँ तुम अकेली कैसे (रहती) हो ? २६ ।

यहाँ तुम अकेली क्यों रहती हो ? वह बात सच-सच कह दो । अनन्तर सुप्रभा प्रत्युत्तर में बोली— 'हे मरुत्कुमार, तुम सुनो ।'

* * *

अध्याय—११ (सुप्रभा द्वारा मयासुर की कथा कहना और स्वयं सद्‌गति प्राप्त करना)

राग धनाशरी

खेचरी बोली सुण कपिराज जी, वात पूरवनी कहुं महाराज जी,
असुर एक रहेतो मयासुर नाम जी, ते तप करतो आणे ठाम जी । १ ।

ढाळ

आ ठाम तप करतो हतो, ते मयासुर बळवंत,
तेणे आराधन कर्युं ब्रह्मानुं, प्रगट्युं तप तेज अनंत । २ ।
त्यारे चितातुर थई विधि आव्या, शुं मागशे वरदान,
आवी आप्युं दर्शन असुरने, त्यारे बोलियो बळवान । ३ ।

अध्याय—११ (सुप्रभा द्वारा मयासुर की कथा कहना और स्वयं सद्‌गति प्राप्त करना)

उस खेचरी ने कहा— "हे कपिराज, सुनो । हे महाराज, मैं पूर्व-काल की बात कहती हूँ । मयासुर नामक एक असुर (यहाँ) रहता था । वह इस स्थान पर तप करता था । १ ।

मयासुर नामक वह बलवान असुर तप करता था । उसने ब्रह्मा की आराधना की, तो उस तप के कारण उसके असीम तेज उत्पन्न हुआ । २ । तब इस चिन्ता से व्याकुल होकर ब्रह्माजी आ गये कि यह (न जाने) क्या वरदान माँगेगा । उन्होंने आकर उस असुर को दर्शन दिये, तब वह बलवान (असुर) बोला । ३ । 'हे विधाता, मुझे वरदान दो ।' तब

वरदान आपो विधि मुंने, त्यारे ब्रह्माए कही वाण,
नथी थयुं तप हजु पूरण तारुं, माटे सुण निरवाण। ४ ।
हवे आजथी तुं गुप्त रही, तप साध निर्मळ मन,
छानो रहे तुं गुफामां, ज्यम जाणे नहि को जन। ५ ।
एवुं कही विधिए विवर रचियुं, वन सरोवर काज,
कर्या महेल कनक तणा, असुरने रहेवा काज। ६ ।
मय दैत्यने राख्यो अहीं, पछे विधि बोल्या वाण,
आ विवर बहार नीकळे तो, जाए तारा प्राण। ७ ।
गया प्रजापति एवुं कही, रह्यो असुर आणे ठार,
तेणे ब्रह्मा केरुं कपट जाण्युं, कर्यो मन विचार। ८ ।
जो विवर बहार नीकळुं तो, मरण पामुं आप,
मुज तप थकी विधि आविया, ऊलटो दीधो शाप। ९ ।
माटे क्षय करुं सहु देवनो, असुरनी वृद्धि थाय,
एवुं विचारीने मंत्र मेला, जपंतो महाकाय। १० ।
ते जाणतो मंत्र बहु, आसुरी विद्या एव,
कल्याण इच्छे असुरनुं, पामे पराजय देव। ११ ।

ब्रह्मा ने यह बात कही— 'तेरा तप अब (तक) पूर्ण नहीं हुआ। इसलिए सुन ले। ४। अब आज से तू गुप्त रहकर निर्मल मन से तप का साधन कर। तू गुफा में गुप्त (रूप से) रह, जिससे (तुझे) कोई भी जन नहीं जान पाए।' ५। ऐसा कहते हुए विधाता ने एक विवर, सुन्दर वन और सरोवर का निर्माण किया। उस असुर के रहने के लिए विधाता ने सोने के प्रासाद बना लिये। ६। मय दैत्य को यहाँ रखा और फिर विधाता यह बात बोले— 'यदि तू इस विवर के बाहर निकलेगा, तो तेरे प्राण (निकल) जाएँगे।' ७। ऐसा कहते हुए विधाता चले गये और वह असुर इस स्थान पर रह गया। (जब) उसने ब्रह्मा के कपट को जान लिया, तो उसने मन में विचार किया। ८। यदि मैं विवर के बाहर निकलूँ, तो स्वयं मृत्यु को प्राप्त हो जाऊँगा। मेरे तप से तो विधाता आये थे, (उन्हें मुझे वरदान देना चाहिए था, परन्तु उलटे) उन्होंने मुझे अभिशाप दिया है। ९। इसलिए मैं सब देवों का नाश कर डालूँगा, (ताकि) असुरों का उत्कर्ष हो जाए। ऐसा विचार करके वह महाकाय असुर मन्त्र-समूह का जप करने लगा। १०। वह बहुत मन्त्र तथा आसुरी विद्या भी जानता था। वह असुरों के कल्याण की कामना करता था, जिससे देव पराजय को प्राप्त हो जाएँ। ११। इन्द्र ने उस विपरीत काम को

ते इंद्रे जाण्युं काज विपरीत, गयो ब्रह्मा पास,
एक हेम-कन्या करी विधिए, नाम हेमा तास। १२।
महा रूपवंत रसाळ भूषण, एवी नीरखी नार,
ते कन्या लेई इंद्र आव्यो, विवर केरे द्वार। १३।
कन्या प्रवेशी विवरमां, बारणे ऊभो इंद्र,
असुरे दीठी सुंदरी मृगलोचनी मुखचंद्र। १४।
ते मयासुर मोह पामियो, जोई रंभा रूप प्रमाण,
हे सुंदरी वर्य मुजने, एम असुर बोल्यो वाण। १५।
त्यारे कन्या कहे बारणे चालो, वरुं तमने आज,
ऐवुं सांभळतामां ऊठियो, जाणे थयुं मारुं काज। १६।
तेने मकरध्वजनां बाण वाग्यां, थयो कामे अंध,
भूल्यो वचन ब्रह्मा तणुं, नव जाण्यो मरण संबंध। १७।
बारणे आव्यो कन्या वरवा, असुर कामी जेह,
त्यारे इंद्रे मार्युं वज्र शिरमां, मरण पाम्यो तेह। १८।
पछी हेमाने राखी इहां, हुं देवकन्या साथ,
मुंने अनुचरी सोंपी करी, गयो स्वर्गमां सुरनाथ। १९।

(जब) जान लिया, तो वह ब्रह्मा के पास गया। (फिर) ब्रह्मा ने एक स्वर्ण (की-सी) कन्या उत्पन्न की। उसका नाम हेमा था। १२। वह महा रूपवती तथा सुन्दर आभूषणों से युक्त थी। ऐसी कन्या को लेकर इन्द्र विवर के द्वार पर आया। १३। वह कन्या विवर में प्रवेश कर गयी, तो इन्द्र द्वार पर खड़ा रहा। असुर ने उस मृग-नयनी तथा चन्द्रमुखी को देखा। १४। तो वह मयासुर रम्भा के रूप के बराबर (रूप को) देखकर मोह को प्राप्त हो गया और उससे ऐसी बात बोला— 'हे सुन्दरी, मेरा वरण करो।' १५। तब उस कन्या ने कहा, 'द्वार पर चलो, तो मैं आज तुम्हारा वरण करूँगी।' ऐसा सुनते ही वह उठ गया। उसने समझा—मेरा काम (सफल) हो गया। १६। उसे कामदेव के बाण लग गये थे, (इसलिए) वह काम (-विकार) से अन्धा हो गया था। वह ब्रह्मा की बात भूल गया; उसने मृत्यु सम्बन्धी बात नहीं समझी। १७। जब वह कामी असुर उस कन्या का वरण करने के लिए द्वार पर आ गया, तो इन्द्र ने उसके सिर पर वज्र मार दिया। (उससे) वह मृत्यु को प्राप्त हो गया। १८। अनन्तर (इन्द्र ने) हेमा को मुझ देवकन्या सहित रख दिया। मुझे सेविका के रूप में सौंपकर सुरनाथ इन्द्र स्वर्ग में चला गया। १९। कितने ही दिन हेमा (यहाँ) रहती थी। अनन्तर वह

केटला दिन हेमा रही, पछे जावा मांड्युं वहार,
ते कन्या प्रत्ये कर जोडीने, में पूछियुं तत्काळ । २० ।
मुंने मूकीने क्यम जाओ छो ? एकली आणे ठार,
शी गति थाशे माहरी ? एवुं सुणी बोली नार । २१ ।
थोडा दिवसमां राम केरा, दूत मळशे सत्य,
पछी दर्शन करजे रामनुं, त्यारे पामीश तुं सद्‌गत्य । २२ ।
एवुं कही ते कन्या गई, विधिलोकमां निरधार,
ते दिवसनी हुं रही छुं, एकली आणे ठार । २३ ।
तमे दूत श्रीरघुवीरना, में ओळख्या थयुं काम,
तम विना को बीजा थकी, नव अंवाये आ ठाम । २४ ।
कहो वीर क्या छे रामजी ? मुंने मेळवो महाराज,
कल्याण थाये माहरुं, जो करुं दर्शन आज । २५ ।
हनुमंत कहे ऋषिमुक उपर, विराजे श्रीराम,
अनेक सेवक सेवता, भक्तना पूरण काम । २६ ।
पछे सुप्रभाए कर्युं पूजन, दिव्य फळ जळ आहार,
सर्वे कपि संतोषिया, तृप्त थया तेणी वार । २७ ।

बाहर जाने लगी, तो मैंने हाथ जोड़कर उस कन्या से तत्काल पूछा । २० । 'मुझे छोड़कर क्यों जा रही हो ? मैं इस स्थान पर अकेली हूँ । मेरी क्या गति होगी ?' ऐसा सुनकर वह स्त्री बोली । २१ । 'थोड़े दिन में सचमुच राम का दूत (तुमसे) मिलेगा । अनन्तर तुम उनके दर्शन करोगी, तब तुम सद्‌गति को प्राप्त हो जाओगी ।' २२ । ऐसा कहकर वह कन्या निश्चय ही ब्रह्म-लोक चली गयी । उस दिन से मैं इस स्थान पर अकेली रह रही हूँ । २३ । तुम रघुवीर के दूत हो । मैंने जान लिया कि मेरा काम हो गया । तुम्हारे अतिरिक्त किसी दूसरे द्वारा इस स्थान पर नहीं आया जा सकता । २४ । हे वीर, रामजी कहाँ हैं ? हे महाराज, मुझे उनसे मिलवा दो । यदि मैं उनके दर्शन आज करूँ, तो मेरा कल्याण होगा ।" २५ । (इसपर) हनुमान ने कहा— 'ऋष्यमूक पर श्रीराम विराजमान हैं । भक्तों की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले (उन श्रीराम) की सेवा अनेक सेवक कर रहे हैं ।' २६ । अनन्तर सुप्रभा ने उसका पूजन किया; दिव्य फल, जल और आहार देकर सब कपियों को सन्तुष्ट किया । उस समय वे तृप्त हो गये । २७ । (फिर) हनुमान ने कहा— 'हे देवी, बाहर जाने का जो मार्ग हो, वह दिखा दो ।' तब सुप्रभा ने कहा— 'आँखें बन्द करो, तो वह कार्य हो जाएगा ।' २८ । तब सब

हनुमंत कहे बाई देखाडो, मारग जवानो जेह,
त्यारे सुप्रभा कहे नेत्र मींचो, थशे कारज एह । २८ ।
त्यारे सहु कपिए नेत्र मींच्यां, मंत्र भणियो धीर,
क्षणमांहे आवी रह्या, ऊभा सिंधु केरे तीर । २९ ।
लोचन उघाड्यां त्याहरे, दीठो सिंधु शत जोजन,
पेली गुफा नारी न दीठी, आश्चर्य पाम्या मन । ३० ।
संसार दुःखवेष्टित प्राणी, विकळ थाये जेम,
तेने ज्ञान आपी गुरु बारणे काढे, करे सुखियो तेम । ३१ ।
ए प्रकारे कपि सर्व ऊभा, जलनिधिने तीर,
ते कृपा मानी रामनी, मन कर्युं निश्चे वीर । ३२ ।
पेली सुप्रभा तजी विवर चाली, आवी रघुवर पास,
साष्टांग नमी रामने चरणे, स्तुति करी सुखराश । ३३ ।
उपदेश तेने कर्यो प्रभुअे, आप्युं ज्ञान अभेद,
तेने बद्रिकाश्रम मोकली, प्रगट्यो हृदे निर्वेद । ३४ ।
ते ध्यान धरी थोडा दिवसमां, पामी पद निर्वाण,
हवे सिंधुतीरे कपि ऊभा, विचार करता जाण । ३५ ।

कपियों ने आँखें मूँद लीं और धीरज के साथ मन्त्र पढ़ा, तो क्षण में समुद्र के तट पर आकर वे खड़े हो गये । २९ । (जब) उन्होंने आँखें खोलीं, तो उन्होंने (सामने) सौ योजन (विशाल) सागर देखा । वह गुफा और वह नारी नहीं देखी, तो मनमें वे आश्चर्य को प्राप्त हो गये । ३० । जिस प्रकार कोई प्राणी सांसारिक दुःखों से घिरा होने पर विकल हो जाता है और उसे गुरु ज्ञान देकर बाहर निकालता हो, तथा उसे सुखी कर देता हो, उस प्रकार समस्त कपि (सुप्रभा द्वारा बाहर निकाले जाकर) समुद्र के तट पर खड़े हो गये । उसे राम की कृपा समझकर उन्होंने अपने मन को दृढ़ कर लिया । ३१-३२ । वह सुप्रभा उस विवर को छोड़कर चली गयी और राम के पास आ गयी । उसने सुखराशि श्रीराम के चरणों को नमस्कार करके उनकी स्तुति की । ३३ । फिर प्रभु राम ने उसे उपदेश दिया, अभेद ज्ञान प्रदान किया; फिर उसे बदरिकाश्रम के प्रति भेज दिया । (उसके) हृदय में (वहाँ) शान्ति उत्पन्न हो गयी । ३४ । ध्यान धारण करके थोड़े दिनों में वह निर्वाण पद को प्राप्त हो गयी । (इधर) अब समझिए, कपि समुद्र तट पर विचार करते हुए खड़े हो गये । ३५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

विचार करता कपि सर्वे, दीठो सिंधु शत जोजन रे,
नव पाम्या शुद्धि सीतानी, घणी चिंता प्रगटी मन रे। ३६।

समस्त कपि विचार करते रहे। उन्होंने सौ योजन (विस्तीर्ण) समुद्र को देखा। (अब तक) हम सीता की खोज नहीं प्राप्त कर सके, इसलिए उनके मन में घोर चिन्ता उत्पन्न हो गयी। ३६।

* * *

अध्याय—१२ (वानरों की सम्पाति से भेंट)

राग सारंग

हावे सिंधुतीरे कपि सर्वे ऊभा, चिंता करता मन,
कहो भाई हावे केम करीशुं ? आव्यो सागर शत जोजन। १।
सीतानी कांई शुद्धि जडी नहि, वाट जुए छे राम,
आपणे पाछुं जवाय नहि त्यां, कर्या विना ए काम। २।
वळी कायर थई जो पाछा जईए, तो देखाडीए शुं मुख ?
ते करतां मरवुं ए उत्तम, सहेवाय नहि ते दुःख। ३।
एवुं विचारी काष्ठ एकठां, करीआं तेणी वार,
सरवे कपि बळवा थया ऊभा, अग्नि मूक्यो ते मोझार। ४।
त्यारे जांबुवान कहे सांभळो भाई, एम सहसा न तजीए प्राण,
धीरज राखो एम करतां थशे, अपकीर्ति निर्वाण। ५।

अध्याय—१२ (वानरों की सम्पाति से भेंट)

अब समस्त कपि मन में चिन्ता करते हुए समुद्र-तट पर खड़े रह गये। 'कहो भाई, अब हम क्या करें ? (यह तो) सौ योजन (विस्तीर्ण) समुद्र (बीच में) आ गया। १। सीता की कोई खोज नहीं मिली है; (उधर) राम बाट जोह रहे हैं। बिना यह काम किये हम वहाँ नहीं लौट सकते। २। इसके अतिरिक्त, कायर बनकर (यदि हम) पीछे जाएँ, तो क्या मुँह दिखाएँ ? (इसलिए) उसकी अपेक्षा मरना उत्तम है। वह दुःख नहीं सहा जाता।' ३। ऐसा विचार करके उस समय उन्होंने लकड़ियाँ इकट्ठा कीं और सब कपि जल जाने के लिए खड़े रह गये। उन्होंने उनमें आग डाल दी। ४। तब जाम्बवान ने कहा— 'सुनो भाइयो, इस प्रकार सहसा प्राण नहीं त्याग दें। धीरज रखो। ऐसा करने पर निश्चय

त्यारे मारुति कहे जांबुवान तमो, वृद्ध छो माटे आज,
जो कांई सूझ बतावो अमने, तो थाये रूडां काज । ६ ।
त्यारे रींछपति हनुमंतने कहे, तमो रामकृपाना पात्र,
तमथी काम थशे निश्चे, सहु दूर थशे दुःखमात्र । ७ ।
वळी मुद्रिका रामे आपी तमने, अमर करी छे काय,
माटे विघ्न कशुं नडशे नहि तमने, निर्भे कारज थाय । ८ ।
एवां वचन सुणीने अग्नि चेताव्यो, मारुतीए तेणी वार,
परीक्षा जोवा माटे प्रवेश्या, अग्निमां वायुकुमार । ९ ।
पण आंच न लागी अंग कपिने, रामभजन प्रताप,
जेना नाम थकी टळे त्रिविधि, भवना भौतिक ताप । १० ।
एम हनुमंते त्रण वार झंपलाव्युं, बळवा अग्निमांहे,
पण रामकृपाए थयो ते शीतळ, आंच न लागी त्यांहे । ११ ।
ते समे सर्वे जेजेकार कर्यो ने, चांप्या हृदे हनुमंत,
तम जेवो पृथ्वीमां बीजो, नथी कोई बळवंत । १२ ।
एटले अरुणनो पुत्र संपाति, आव्यो तेणे ठार,
क्षुधातुर मुख पहोळुं करी आव्यो, करवा कपिनो आहार । १३ ।

ही अपकीर्ति हो जाएगी ।' ५ । तब हनुमान ने कहा— 'तुम वृद्ध हो । इसलिए आज यदि हमें कोई युक्ति बताओ, तो अच्छे काम हो जाएँगे ।' ६ । तब ऋक्ष-पति जाम्बवान से हनुमान से कहा— 'तुम राम की कृपा के पात्र हो । तुमसे निश्चय ही यह काम होगा (और) सब दुःख मात्र दूर हो जाएँगे । ७ । इसके अतिरिक्त, राम ने तुम्हें मुद्रिका दी है, तुम्हारी काया को अमर (अविनाशी) बनाया है । इसलिए तुम्हें कोई भी विघ्न बाधा नहीं पहुँचा पाएगा । तुमसे निर्भयता से काम हो जाएगा । ८ । ऐसी बातें सुनकर वायुकुमार हनुमान ने उस समय अग्नि प्रज्वलित कर दी और परीक्षा कर देखने के लिए वह अग्नि में प्रविष्ट हो गया । ९ । परन्तु उन राम के भजन (भक्ति) के प्रताप से उस कपि के अंग में कोई आँच न लगी, जिनके नाम से संसार के त्रिविध--भौतिक ताप टल जाते हैं । १० । इस प्रकार हनुमान जल जाने के हेतु अग्नि में तीन वार कूद पड़ा । परन्तु राम की कृपा से वह (अग्नि) ठण्डी हो गयी; (इसलिए) वहाँ उसे कोई आँच नहीं लगी । ११ । उस समय सबने जय-जयकार कर दिया और हनुमान को हृदय से लगा लिया (और कहा--) 'पृथ्वी में तुम जैसा कोई दूसरा बलवान नहीं है ।' १२ । इतने में अरुण का पुत्र सम्पाति उस स्थान पर आ गया । वह भूख से व्याकुल होकर मुँह को चौड़ा फैलाये

तेने जोई सहु रामस्मरण करी, कहेता परस्पर वात,
आ जटायु जेवो पंखी दीसे भाई, जाणे एनो भ्रात। १४।
एवां कपिनां वचन सुण्यां गीधे, नवी पांखो फूटी तेणी वार,
त्यारे हरखी संपाति आव्यो, सहुने पाये लाग्यो निरधार। १५।
तमे रामदूत ओळख्या में निश्चे, क्यां छे कहो रघुनाथ ?
जटायु बंधु मारो छे ते तमे, शुं जाणो छो भ्रात ? । १६।
त्यारे कपिवर कहे ते जटायुने मार्यो, रावणे युद्ध करी जाण,
तातना जेवी क्रिया करी रामे, आप्युं पद निरवाण। १७।
ज्यारे मरण सांभळ्युं बंधु तणुं त्यारे, संपाति रोवा लाग्यो,
अरे भाई गयो मळ्या विना, मारे नाशे वियोग न भाग्यो। १८।
एम घणा विलाप कर्या संपातिए, संभारी निज वीर,
पछी आश्वासन करी छानो राख्यो, कपिए आपी धीर। १९।
त्यारे संपाति कहे अरुण-पुत्र अमो, बंधु बे बळवान,
बाळपणमां ऊड्या, सूरजमंडळ जोवा मान। २०।

हुए कपियों को खाने के लिए आ गया। १३। उसे देखते ही सब राम का स्मरण करके परस्पर वात करने लगे--' भाई, यह तो जटायु जैसा पक्षी दिखाई दे रहा है। मानो उसका भाई हो।' १४। उस गीध ने उन कपियों की ऐसी वातें सुनीं, उस समय उसके नये पंख फूट आये। तब आनन्दित होकर सम्पाति (उनके पास) आ गया और निश्चय-पूर्वक उन सबके पाँव लगा। १५। (फिर वह बोला—) ' तुम राम के दूत हो— मैंने अवश्य पहचाना है। कहो—रघुनाथ कहाँ हैं ? जटायु मेरा वन्धु है। हे भाइयो, तुम उसे जानते हो क्या ? ' १६। तब कपिवरों ने कहा— ' जान लो कि रावण ने युद्ध करके उस जटायु को मार डाला है। (तब) राम ने अपने पिता की-सी उसकी (अन्त्येष्टि) क्रिया की और उसे निर्वाण पद दिया।' १७। जब अपने बन्धु की मृत्यु (की बात) सम्पाति ने सुनी, तब वह रोने लगा। (वह बोला--) ' अरे भाई, बिना (मुझसे) मिले तुम गये। मुझसे तुम्हारा वियोग दूर नहीं हो गया (तुम्हारा वियोग सदा के लिए बना रहा)।' १८। अपने भाई का स्मरण करते हुए सम्पाति ने इस प्रकार बहुत विलाप किया। अनन्तर वानरों ने उसे सान्त्वना देते हुए और धीरज बँधाते हुए चुप कर दिया। १९। तब सम्पाति ने कहा-- ' हम अरुण के पुत्र--दो भाई बलवान थे। मान लो, बचपन में सूर्य-मण्डल को देखने के लिए उड़ गये। २०। जब (सूर्य के) तेज से हम झुलसने लगे, तो जटायु पीछे मुड़ गया, परन्तु मैं हठ-पूर्वक सूर्य-मण्डल तक गया, तो मेरे पंख जल गये। २१। फिर उस समय व्याकुल

त्यारे तेजे दाझवा लाग्या, त्यारे जटायु पाछो वळियो,
हुं ममते करी गयो रविमंडळ लगी, पांखो मारी बळियो। २१।
पछे व्याकुळ थईने पडियो त्यांथी, पृथ्वी उपर तेणी वार,
पांखो बळी तेणे पीडा पाम्यो, प्रगट्युं दुःख अपार। २२।
पेला पर्वतमां एक मुनिवर रहे छे, चंद्रऋषि तेनुं नाम,
हुं जई तेने चरणे लाग्यो, स्तुति करी ते ठाम। २३।
त्यारे मुजने जोईने दया मन आवी, प्रसन्न थया मुनिनाथ,
तत्क्षण मुजने शीतळ करीओ, मस्तक मूकी हाथ। २४।
त्यारे चंद्रऋषि कहे रामदूत ज्यारे, आवशे सिंधु तीर,
त्यारे उगशे तुजने नवी पख, तेनुं दर्शन करतां वीर। २५।
ते दिवसनो हुं आंही रहुं छुं, जोतो तमारी वाट,
आज मूंने नवी पांखो आवी, ते तम दर्शन माट। २६।
हवे कहो कपिवर क्यां जाओ छो? करवाने शुं काज?
तमे मने उपकार कर्यो, माटे कहो मुज सरखुं काज। २७।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

कांई काज कहो मुज सरखुं कपिवर, क्यम आव्या आ ठार रे?
एवां वचन सांभळी संपातिनां, पछे बोल्या अंजनीकुमार रे। २८।

होकर मैं वहाँ से पृथ्वी पर गिर पड़ा। पंख जल गये थे, उससे मैं पीड़ा को प्राप्त हुआ, मुझे अपार दुःख उत्पन्न हो गया। २२ उस पर्वत (प्रदेश) में एक मुनिवर रहता है। उनका नाम है चन्द्रऋषि। मैं जाकर उसके चरणों में लगा। मैंने उस स्थान पर उनकी स्तुति की। २३। तब मुझे देखकर मुनिवर के मन में दया उत्पन्न हुई। (मेरे स्तवन से) वे प्रसन्न हो गये। (फल-स्वरूप) मुनि ने मेरे मस्तक पर हाथ रखकर मुझे शीतल कर दिया। २४। तब चन्द्रऋषि ने कहा—'हे भाई, जब राम के दूत समुद्र-तट पर आएँगे, तब उनके दर्शन करते ही तुम्हारे नये पंख उग आएँगे।' २५। उस दिवस से मैं तुम्हारी राह देखते हुए यहाँ रहा हूँ। आज मेरे नये पंख आ गये हैं; यह तुम्हारे दर्शन के कारण है। २६। हे कपिवरो, अब कहो, कहाँ जा रहे हो? क्या काम करने जा रहे हो? तुमने मेरा उपकार किया है, अतः मेरे योग्य काम बताओ। २७।

हे कपिवरो, मेरे योग्य कोई काम बताओ। इस स्थान पर कैसे आ गये?" सम्पाति की ऐसी बातें सुनने के पश्चात् अंजनी-कुमार हनुमान बोला। २८।

* * *

अध्याय—१३ (सम्पाति द्वारा वानरों को परामर्श देना, जाम्बवान और हनुमान द्वारा अपने-अपने बल का वर्णन करना)

राग सामेरी

हनुमंत वळता बोलियो, सुण संपाति द्विजराज,
अमो नीकळ्या छीए कपि सहु, रघुवीर केरे काज। १।
सीता प्रिया श्रीरामनी, करी गयो दशानन हर्ण,
तेनी शुद्धि अर्थे अमो आव्या, शोधता गिरि अर्ण। २।
ते शुद्धि कंई पाम्या नहि माटे, थाय चिंता अपार,
त्यारे संपाति कहे सांभळो, मुज वचन वायुकुमार। ३।
ओ पेली लंका हुं देखुं छुं, बेट सिंधु मांहे,
आंहां थकी शत जोजन छे, करे राज रावण त्यांहे। ४।
त्यां जानकी ध्यानस्थ बेठां, अशोकवन मोझार,
मुज पृष्ठ उपर बेसो सहु, लेई जाउं त्यां निरधार। ५।
आ परवतमां मुज पुत्र छे, शत एक बळिया जाण,
तेने बोलावी तमने पहोंचाडुं, लंकामां निरवाण। ६।
सुणी वचन संपातिनां सर्वे, कर्यो मन विचार,
अपकीर्ति थाय आपणी, जो ए उतारे पार। ७।

अध्याय—१३ (सम्पाति द्वारा वानरों को परामर्श देना, जाम्बवान और हनुमान द्वारा अपने-अपने बल का वर्णन करना)

(इसके) अनन्तर हनुमान बोला— 'हे पक्षिराज सम्पाति, सुनो। हम सब कपि रघुवीर के काम के लिए निकले है। १। रावण श्रीराम की प्रिया सीता का अपहरण कर गया है। हम उसकी खोज के हेतु पर्वत तथा अरण्य ढूँढते हुए (यहाँ तक) आ गये हैं। २। हम उसकी किसी भी खोज को नहीं प्राप्त हो गये हैं, इसलिए हमें अपार चिन्ता हो गयी है।' तब सम्पाति बोला, 'हे वायु-कुमार, मेरी बात सुनो। ३। मैं यह वह लंका देख रहा हूँ, जो समुद्र में द्वीप है। यहाँ से वह सौ योजन दूर है। वहाँ रावण राज करता है। ४। वहाँ अशोक वन में जानकीजी ध्यानस्थ बैठी हैं। तुम सब मेरी पीठ पर वैठो, तो मैं निश्चय ही वहाँ ले जाऊँगा। ५। जान लो, इस पर्वत में मेरे एक सौ बलवान पुत्र हैं। उन्हें बुलाकर मैं तुम्हें निश्चय ही लंका में पहुँचवा दूँगा।' ६। सम्पाति की ये बातें सुनकर सब (कपियों) ने मन में विचार किया कि यदि वह

त्यारे रींछपति कहे गीधने, करी अमने आज्ञा राम,
माटे सरळ पंथ देखाडो अमने, थाये रूडु काम । ८ ।
गीध कहे आ मलयाचळ गिरि पर, तरु प्रौढ सघन,
चंदन केरुं वृक्ष छे तेनी, शाखा शत जोजन । ९ ।
ते डाळ लंकामां प्रवेशी, तेनी उपर थईने जवाय,
पण नाग वींट्या छे घणा, शीतळ थवाने काय । १० ।
विखज्वाळ ते नाखे घणी, तमो नव जवाय त्यांहे,
शत जोजन सिंधु ओळंगो तो, जाओ लंका मांहे । ११ ।
एवुं कही नमस्कार करी गीध, गयो निज आश्रम,
पछी कपि सरवे विचारता, कहो हवे करवुं क्यम ? । १२ ।
मारुति कहे ओ रुक्षपति, हुं पूछुं तमने वात,
कहो बळ तमारुं केटलुं ? कंई कारज करुं साक्षात । १३ ।
जांबुवान वळता बोलियो, मुज बळ तणो नहि पार,
पण क्षीण पाम्युं जोर मुज ते, कहुं सत्य विचार । १४ ।
जे समे बळिने घेर वामन, त्रिविक्रिम भगवान,
विराट रूप धर्युं तदा, ब्रह्मांड अखिल समान । १५ ।

(हमें समुद्र के) पार उतरवा दे, तो हमारी अपकीर्ति हो जाएगी । ७ । तब ऋक्ष-पति जाम्बवान ने गीध (सम्पाति) से कहा— 'हमें राम ने आज्ञा दी है । इसलिए हमें सीधा मार्ग दिखा दो, तो अच्छा काम हो जाएगा ।' ८ । (इसपर) गीध ने कहा— 'इस मलय पर्वत पर बड़े (परिपक्व) सघन वृक्ष हैं । (उनमें) एक चन्दन वृक्ष है, उसकी शाखा शत योजन (लम्बी) है । ९ । वह शाखा लंका में प्रवेश कर गयी है । उसके ऊपर होकर जाया जा सकता है । परन्तु अपने शरीर को शीतल करने के लिए बहुत नाग उसे लिपटे हुए हैं । १० । वे बड़ी-बड़ी विष (-भरी) ज्वालाएँ (मुँह से) निकालते हैं, (अतः) तुमसे वहाँ नहीं जाया जाएगा । यदि तुम सौ योजन (चौड़े) समुद्र को लाँघ लोगे, तो लंका में जा पाओगे ।' ११ । ऐसा कहकर वह गीध (कपियों को) नमस्कार करते हुए अपने आश्रम (की ओर) चला गया । फिर सब कपि विचार करने लगे— 'कहो, अब क्या करना है ।' १२ । (तब) हनुमान ने कहा— 'हे ऋक्षपति, मैं तुमसे एक बात पूछता हूँ । कहो, तुम्हारा बल कितना है ? मैं कुछ कार्य का साक्षात् करूँगा ।' १३ । अनन्तर जाम्बवान बोला— 'मेरे बल का कोई पार नहीं है । परन्तु सच्चाई का विचार (करके) कहूँगा— मेरा वह बल क्षीणता को प्राप्त हो गया है । १४ । जिस समय बलि के घर वामन

ते समे हुं जे वैद सुषेण, बळिया बे विख्यात,
एक दिवसमां विराटनी, प्रदक्षिणा करी सात । १६ ।
ते दिवसनुं बळ घट्युं माहे, कहुं बीजो फेर,
हुं मेरु उपर गयो एक दिन, मन्मतथी मदफेर । १७ ।
मन विचार्युं रथ झालुं रविनो, तलप मारी त्यांहि,
ते रवि तणा रथचक्रनी, लागी झपट पगमांहि । १८ ।
ते दिवसना थया बादला पग, घट्युं सामर्थ्य काम,
हावे थयो हुं वृद्ध माटे, न चाले मुज हाम । १९ ।
हावे तमारुं पराक्रम कहो, अंजनी सुत बळवंत,
कहो तमो ऊडचो केटलुं ? त्यारे बोलियो हनुमंत । २० ।
ज्यारे जन्म मारो थयो, त्यारे भूख लागी तात,
रविबिंबने फळ जाणीने, हुं ऊडचो करवा ग्रास । २१ ।
गयो रविमंडल लगी हुं, एक फाळथी उत्कर्ष,
संजोग ते दिन ग्रहणनो, आव्यो राहु करवा स्पर्श । २२ ।
में जाण्युं ए फळ लेशे मारुं, कर्युं युद्ध संदेह,
पछी सिंहिका सुतने मारियो, गयो इंद्र पासे तेह । २३ ।

ने त्रिविक्रम भगवान का विराट रूप धारण किया, तब वे अखिल ब्रह्माण्ड के समान हो गये, उस समय मैं और वैद्य सुषेण दोनों बलवान और विख्यात थे। मैंने एक दिन में उस विराट-रूपधारी (भगवान) की सात परिक्रमाएँ कीं। १५-१६। उस दिन का मेरा बल घट गया है। दूसरी बात कहता हूँ— मैं एक दिन हठपूर्वक तथा मद से भरे हुए अर्थात् उन्मत्त होकर मेरु पर्वत पर गया था। १७। मन में विचार किया कि सूर्य के रथ के चक्र को पकड़ लूँ। तब मैंने छलाँग लगायी। तो सूर्य के रथ के चक्र का झपट्टा मेरे पाँव में लग गया। १८। उस दिन से मेरे पाँव नकली (-से हलके तथा दुर्बल) हो गये हैं: काम करने की सामर्थ्य घट गयी। (फिर) अब मैं वृद्ध हो गया हूँ। मेरी हिम्मत नहीं चलती। १९। हे बलवान अंजनी-कुमार, अब तुम अपना पराक्रम बताओ। कहो, तुम कितने उड़ गये हो?' तब हनुमान बोला— २०। 'जब मेरा जन्म हुआ, तब मुझे बहुत भूख लगी। तो सूर्य-बिम्ब को फल समझकर उसे निगल डालने के लिए मैं उड़ गया। २१। मैं एक छलांग से उत्कर्ष, अर्थात् ऊँचाई को प्राप्त होते हुए सूर्य-मण्डल तक गया। संयोग से वह दिन ग्रहण का था: तब राहु (सूर्य को) स्पर्श करने आ गया। २२। मैं समझा— यह मेरा फल लेगा, तो मैंने इस सन्देह से (उससे) युद्ध किया। फिर सिंहिका

तेनी पक्ष करीने इंद्र आव्यो, लई सैन्य अपार,
घणुं जुद्ध ते साथे कर्युं, तेने मनावी हार । २४ ।
ते समे हुं वरदान पाम्यो, थया देव प्रसन्न,
मुज अधिक बळ लाध्युं तदा, थयो वर थकी बळवंत । २५ ।
एवां वचन सुणी हनुमंतनां, बोलियो जांबुवान,
तम पराक्रमनो पार नहि, नव थाय कोणे मान ? । २६ ।
पण मित्र सुग्रीव तमारो, ते थयो महा दुःखवंत,
त्यारे शा माटे मार्यो नहि, कहो वालीने हनुमंत ? । २७ ।
नगरमांथी काढी मूक्यो, हता आपण साथ,
त्यारे तमो केम सांखी रह्या ? दुःखियो थयो कपिनाथ । २८ ।
त्यारे वाली साथे केम न चाल्युं, कहो ए अभिप्राय,
तमथकी नहोतो ए बळी शुं, तमे नव जिताय ? । २९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नव जितायो वाली शा माटे ? कहो मुजने वृत्तांत रे,
एवां रींछपतिनां वचन सुणीने, बोल्यो श्रीहनुमंत रे । ३० ।

राक्षसी के उस पुत्र—राहु को मैंने मारा, तो वह इन्द्र के पास गया । २३ । उसका पक्षपात करते हुए इन्द्र अपार सेना लेकर आ गया, तो मैंने उसके साथ घमासान युद्ध किया और उसे हार मनवायी । २४ । उस समय देव मुझपर प्रसन्न हो गये और मैं वरदान को प्राप्त हो गया । तब मुझे अधिक बल प्राप्त हो गया । मैं उस वर से बलवान हो गया । ' २५ । हनुमान की ऐसी बातें सुनकर जाम्बवान बोला— ' तुम्हारे पराक्रम का कोई पार नहीं है, (अतः) तुम्हारे प्रति किसे अभिमान नहीं हो । २६ । परन्तु सुग्रीव तुम्हारा मित्र है । वह बहुत दुखी हो गया था । हे हनुमान, बताओ, तब तुमने बाली को क्यों नहीं मारा ? २७ । उसे नगर में से निकाल डाला, तो हम उसके साथ थे । तब तुम सहन करते हुए कैसे रह गये ? वह कपि-पति सुग्रीव (तब) दुखी हो गया था । २८ । यह बात बताओ कि तब बाली के साथ (तुम्हारी) कैसे नहीं चली ? वह तुमसे बलवान नहीं था । फिर क्या वह तुमसे नहीं जीता जा सकता था ? २९ ।

तुमने बाली को क्यों नहीं जीता ? मुझे वह वृत्तान्त बताओ । ' ऋक्षपति जाम्बवान के ऐसे वचन सुनकर श्रीहनुमान बोला । ३० ।

*　　*　　*

अध्याय—१४ (हनुमान द्वारा शाप पाने की घटना का वर्णन)

राग सामेरी

हनुमंत वळता बोलियो, सुणो रींछपति विख्यात,
संदेह निवारुं हुं तमारो, कहुं बाळपणानी वात । १ ।
वनमांहे हुं फरतो सदा, त्यां मुनि तणा आश्रम,
हुं नित्ये हेलण करुं तेनुं, समजुं नहि कंई मर्म । २ ।
पात्र फोडुं मुनि तणां, वळी फाडुं वनकुळ चीर,
आश्रम लई जाउं ऊचकी, वळी मूकुं सागरतीर । ३ ।
एम बाळचेष्टा करुं नित्ये, अकळाया सहु ब्रह्म,
सरवे मळी एक गिरि उपर, रह्या करी आश्रम । ४ ।
एक समे हुं गयो वळतो, निशामां ते ठार,
ते गिरि लीधो कर विषे, जई मूक्यो सागर पार । ५ ।
ज्यारे प्रभाते ऊठ्या मुनि, त्यारे नवे दीठुं ते वन,
चोफेर सागर घूघवे, जोई सोच पाम्या मन । ६ ।
ए कपिए कायर कर्या, शो उपाय करीए आप ?
एने ब्रह्मानुं वरदान छे, माटे न लागे शाप । ७ ।

अध्याय—१४ (हनुमान द्वारा शाप पाने की घटना का वर्णन)

अनन्तर हनुमान बोला, " हे विख्यात ऋक्ष-पति, सुनो । मैं तुम्हारे सन्देह का निवारण करता हूँ । (उसके लिए) मैं बचपन की बात कहता हूँ । १ । मैं जिस वन में सदा भ्रमण किया करता, वहाँ मुनियों के आश्रम थे । मैं उनकी नित्य अवहेलना करता, क्योंकि मैं कोई भी मर्म नहीं समझ पाता था । २ । मैं मुनियों के बर्तन फोड़ डालता; इसके अतिरिक्त उनके वल्कल के वस्त्र फाड़ देता; उनके आश्रमों को उठाकर ले जाता और फिर समुद्र-तट पर डाल देता । ३ । इस प्रकार मैं नित्य बाल-चेष्टा किया करता था, तो वे समस्त ब्राह्मण ऊब गये और वे सब मिलकर एक पर्वत पर आश्रम बनाकर रहने लगे । ४ । अनन्तर एक समय रात में मैं उस स्थान पर गया । मैंने उस पर्वत को हाथ पर उठा लिया और समुद्र के पार जाकर छोड़ दिया । ५ । सबेरे, जब मुनि उठ गये, तब उन्होंने उस वन को नहीं देखा । चारों ओर समुद्र गरज रहा था । उसे देखकर वे मन में चिन्ता को प्राप्त हो गये । ६ । इस कपि ने तो हमें अति सताया है । हम स्वयं क्या उपाय करें ? इसे ब्रह्मा का वरदान (प्राप्त) है, इसलिए इसे शाप नहीं लगेगा । ७ । उन सबमें एक मुख्य मुनि थे ।

ते सर्वमां एक मुख्य मुनि, शक्तिऋषि तेनुं नाम,
सहु विप्रने धीरज आपी, गया विधिने धाम। ८ ।
कह्यं दुःख सर्व प्रजापतिने, मुनिवरे तेणी वार,
अंजनीसुत दुःख दे घणुं, ते पीडे अमने अपार। ९ ।
विष्णुए चिरजीवी कर्यो माटे, थयो निर्भय आप,
वरदान वळी आप्युं तमो, माटे न लागे शाप। १० ।
हवे शुं करीए पितामह ? रहीए जई कोण ठार ?
ए अमारी केडे पड्यो, कपि रुद्रनो अवतार। ११ ।
त्यारे ब्रह्मा कहे शक्तिऋषि, उपाय कहुं एक जाण,
एने शाप दो वररूप जेवो, लागशे निरवाण। १२ ।
एवुं सुणीने मुनिवर आविया, हुं हतो जेणे ठार,
मुज साथे बोल्या क्रोध करी, शक्तिऋषि तेणी वार। १३ ।
रघुवंश मांहे प्रभु प्रगट्या, नारायण निरधार,
स्थापन करवा धर्मनुं, हरवा भूमिनो भार। १४ ।
ते अवधपुरपति राय, दशरथपुत्र श्री रघुवीर,
ते पाळवा पितुवचन वनमां, आवशे रणधीर। १५ ।

उनका नाम शक्तिऋषि था। सब ब्राह्मणों को ढाढस बँधाते हुए वे ब्रह्मा के धाम (लोक) चले गये। ८। उस समय उन मुनिवर ने प्रजापति से समस्त दुःख कहा। (कहा कि) वह अंजनी-कुमार (हमें) बहुत दुःख दे रहा है, वह हमें अपार पीड़ा पहुँचाता है। ९। (भगवान) विष्णु ने उसे चिरजीवी बना दिया है, इसलिए वह स्वयं निर्भय हो गया है। उसके अतिरिक्त, तुमने उसे वरदान दिया है, इसलिए उसे (किसी का कोई) शाप नहीं लग पाता। १०। हे पितामह, हम अब क्या करें ? हम जाकर किस स्थान पर रहें ? रुद्र का अवतार वह कपि हमारे पीछे पड़ा है।' ११। तब ब्रह्मा ने कहा—'हे शक्तिऋषि जान लो, मैं एक उपाय कहता हूँ। उसे ऐसा शाप दो, जो उसे निश्चय ही वर-स्वरूप जैसा लग जाए।' १२। ऐसा सुनकर वे मुनिवर (वहाँ) आ गये, जिस स्थान पर मैं था। उस समय शक्तिऋषि मुझसे क्रोध-पूर्वक बोले। १३। 'रघुवंश में प्रभु नारायण निश्चय ही धर्म की स्थापना करने के लिए और भूमि के भार का हरण करने के लिए उत्पन्न हो गये हैं। १४। वे अयोध्या नगर के राजा दशरथ के पुत्र श्रीरघुवीर हैं। पिता के वचन का पालन करने के लिए वे रणधीर वन में आएँगे। १५। वे तुम्हारे स्वामी होंगे; वे देवता (तुमपर) कृपा करेंगे। तुम उनके सेवक बनोगे; तब तुम बल से

ते थशे स्वामी ताहरा, करशे कृपा सुर,
तुं थईश सेवक ते तणो, त्यारे वाधशे वळपुर । १६ ।
अरे सुण कपिवर कहुं तने, ए सत्य वाणी मुज,
तने रामजी मळतां लगी, वळ क्षीण रहेजो तुज । १७ ।
त्यां लगी रहेजो गुप्त बळ, तुं नहि पामे रण जीत,
एवां वचन सुणी मुनिवर तणां, त्यारे उपनी मुंने प्रीत । १८ ।
ते शाप में वर मानियो, घणुं हरख्यो मनमांह्य,
मुज माताए पूर्वे कह्युं 'तुं, वचन मळियुं त्यांह्य । १९ ।
पछे किष्किधामां आवीने, रह्यो सुग्रीव केरी पास,
अनुदिन पंथ निहाळतो, रहुं स्वामी मळवा आश । २० ।
मुनिवचन माटे वालीने, नव मरायो निरधार,
ए संदेह तम तणो, कह्यो पूरवनो विस्तार । २१ ।
हवे स्वामी रघुवीर मळिया, करी करुणा प्रेम,
माटे विजय पामुं सर्व ठामे, थाय मंगळ क्षेम । २२ ।
ए कथा कहेता वारमां, बळ वाध्युं रामकृपाय,
हवे काळ जीती वश करुं, तो इतर शुं कहेवाय ? । २३ ।

भरे-पूरे होकर वढ़ जाओगे । १६ । हे कपिवर, सुनो, मैं तुमसे कहता हूँ। मेरी यह वाणी (बात) सत्य है । तुमसे रामजी के मिलने तक तुम्हारा बल क्षीण रह जाए । १७ । तव तक तुम्हारा वल गुप्त रहेगा । तुम युद्ध में जीत को नहीं प्राप्त हो जाओगे । ' तव मुनिवर के ऐसे वचन सुनने पर मुझे उनके प्रति प्रेम उत्पन्न हो गया । १८ । उस शाप को मैंने वर माना । मैं मन में बहुत आनन्दित हो गया । मेरी माता ने पूर्वकाल में जो कहा था, तब उससे वह बात मेल खा गयी । १९ । अनन्तर मैं किष्किन्धा में आकर सुग्रीव के पास रह गया । स्वामी से मिलने की आशा में मै प्रतिदिन बाट जोहता रहा । २० । निश्चय ही उन मुनि के वचन के कारण मैंने बाली को नहीं मार पाया । तुम्हारा यह सन्देह था । (उसके निराकरण के लिए) मैंने पूर्व (-कथा) का विस्तार कर लिया । २१ । अब स्वामी (के रूप में) रघुवीर मुझसे कृपा और प्रेम-पूर्वक मिल गये हैं । अत: मैं सब स्थान पर विजय को प्राप्त करूँगा । (उससे) मंगल-कुशल हो जाएगा । २२ । यह कहते समय मेरा बल राम-कृपा से वढ़ रहा है । अब काल (तक) को जीतकर वश में कर सकूँगा, तो दूसरे की क्या कही जाए । २३ । जिसपर राम कृपा करते हैं,

जेनी उपर राम कृपा करे, थाय निर्बळ ते बळवान,
तरण तोडे वज्रने, जो सहाय श्री भगवान। २४।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

भगवान जेने सहाय करता, तेनां संकट दूर पळाय रे,
जांबुवानने हनुमंत कहे, ए रामकृपा महिमाय रे। २५।

* * *

वह बलहीन (भी हो) तो बलवान हो जाता हैं। भगवान यदि सहायता करें, तो घास (का तिनका तक) वज्र को तोड़ पाएगी।" २४

हनुमान ने जाम्बवान से कहा— 'भगवान जिसकी सहायता करते हों, उसके संकट दूर हो जाते हैं। यह राम की कृपा की महिमा है।' २५।

* * *

अध्याय—१५ (हनुमान का समुद्रोल्लंघन के लिए तैयार होना; रामकथा-महिमा)

राग मेवाडो

श्रोताजन सहु सुणजो भावे, हनुमंतचरित्र प्रबंध जी,
अन्य पुराणमां एह कथा छे, शक्तिऋषिनो संबंध जी। १।
हावे अंजनीसुतनो महिमा जाण्यो, कपि सहु लाग्या पाय जी,
तमथी काम थशे ए निश्चे, बीजा थकी नहि थाय जी। २।
तमो रामना परम प्रिय छो, सेवक भक्त अनन्य जी,
वळी मुद्रिका पोतानी आपी छे तमने, रामे विचारी मन जी। ३।
माटे तमो ए कारज करशो, अमने थयो विश्वास जी,
एम कही सहु पाये लाग्या, स्तुति करता ज्यम दास जी। ४।

अध्याय—१५ (हनुमान का समुद्रोल्लंघन के लिए तैयार होना; रामकथा-महिमा)

हे श्रोताजनो, आप सब प्रेमपूर्वक हनुमान के चरित्र सम्बन्धी यह प्रबन्ध (प्रकरण) सुनिए। (हनुमान-) शक्तिऋषि के सम्बन्ध के बारे में वह कथा अन्य पुराणों में (उपलब्ध) है। १। अब सब कपियों ने हनुमान की महिमा जान ली, तो वे उसके पाँव लगे (और बोले)— 'तुमसे वह काम निश्चय ही हो जाएगा, (किसी) दूसरे से नहीं हो सकता। २। तुम श्रीराम के परम प्रिय सेवक और अनन्य भक्त हो। इसके अतिरिक्त, श्रीराम ने मन में विचार करके अपनी अँगूठी तुम्हें दी है। ३। अतः हमें

त्यारे रामनुं स्मरण कर्युं हनुमंते, ध्यान धर्युं एक-मन जी,
रघुपतिरूप रुदेमां राखी, मारुति बोल्यो वचन जी। ५ ।
सुणो भाई हुं जाउं छु निश्चे, लावुं सीतानी शोध जी,
पंथ विषे कांई नहि थाय मारो, रामकृपाए रोध जी। ६ ।
ज्यां लगी हुं जई आवुं ओळंगी, सागर शत जोजन जी,
त्यां लगी रहेजो तमो आ ठामे, धीरज राखी मन जी। ७ ।
करी गर्जना एवुं कही थयो, तत्पर तेणी वार जी,
एक महेन्द्र पर्वत उपर चढीने, ऊभो वायुकुमार जी। ८ ।
सहु कपिने कहे चारे पासे, झालो गिरि महाकाय जी,
हुं ऊडुं त्यारे डगे नहि ज्यम, लागशे पद पडघाय जी। ९ ।
त्यां ऊभो स्मरण करे रघुपतिनुं, चितव्यो दक्षिण पंथ जी,
चित्त एकाग्र करीने ध्यानमां, राख्या जानकीकंथ जी। १० ।
जुए देवता रही आकाशे, करे परस्पर वात जी,
ए मारुति सीतानी शोध लेवाने, जाय छे बळ विख्यात जी। ११ ।

यह विश्वास हो गया है, तुम वह कार्य कर पाओगे।' ऐसा कहकर वे सब उसके पाँव लग गये और जैसे कोई दास अपने स्वामी की स्तुति करे, वैसे वे उसकी स्तुति करते रहे। ४। तब हनुमान ने श्रीराम का स्मरण किया, एकाग्र मन से ध्यान धारण किया। (फिर) रघुपति के रूप को हृदय में रखते हुए हनुमान ने यह बात कही। ५। 'भाइयो, सुनो। मैं निश्चय ही जाऊँगा और सीता का पता लगा लाऊँगा। श्रीराम की कृपा से मेरे मार्ग में कोई अवरोध (उत्पन्न) नहीं होगा। ६। जब तक मै सौ योजन (चौड़े) इस सागर को लाँघते हुए जाकर (लौट) आऊँगा, तब तक मन में धीरज रखते हुए तुम इस स्थान पर रहो।' ७। ऐसा कहते हुए उसने गर्जन किया और उस समय वह (लंका की ओर जाने के लिए) सिद्ध हो गया। (फिर) महेन्द्र नामक एक पर्वत-पर चढ़कर वायुपुत्र हनुमान खड़ा हो गया। ८। उसने सब कपियों से कहा— 'इस महाकाय (प्रचण्ड आकार के) पर्वत को चारों ओर से पकड़े रखो, जिससे जब मैं उड़ान भर दूँ, तब वह नहीं हिल पाए। (उससे) मेरे पाँव का प्रतिघात हो जाएगा। ९। वहाँ खड़े रहकर उसने रघुपति का स्मरण किया और दक्षिण दिशावाले मार्ग को (ठीक से) देखा। (फिर) चित्त को एकाग्र करके उसने जानकी-पति श्रीराम को ध्यान में रख दिया। १०। (उस समय) आकाश में (उपस्थित) रहकर देव देख रहे थे और परस्पर (यह) बात कह रहे थे— 'वह मारुती सीता की खोज करने के लिए जा रहा है।

हावे जळनिधि ओळंगी जाशे, अंजनीसुत बळवंत जी,
सीतानी शोध लावशे वळतां, चडशे श्रीभगवंत जी । १२ ।
ए कथा सुंदर कांडमां, आगळ कहेवाशे विस्तार जी,
रघुपति केरां जश पावन, शत कोटी चरित्र अपार जी । १३ ।
जे शीखे गाय सुणे भणे करे मनन, ध्यान ने वखाण जी,
आ लोके सुख पामे घणुं, परलोके गति निरवाण जी । १४ ।
श्रीरघुवीर कृपा करे तेने, जे करे ए अभ्यास जी,
निर्मळ जश जुगमां थाय तेनो, पहोंचे मननी आश जी । १५ ।
आवो मानुषदेह नहि आवे फरीने, देवने दुर्लभ जेह जी,
सकळ कर्म तन करवा समरथ, द्वार मोक्षनुं एह जी । १६ ।
देह धरी जेणे सुणी न हरिकथा, भज्या नहि भगवान जी,
आत्महत्यारो जाणवो तेने, जीवता प्रेत समान जी । १७ ।
चोथो कांड जे किष्किधा, कर्यो पूर्ण यथामति एह जी,
पद चारसें पूरां वळी, अध्याय पंचदश जेह जी । १८ ।

उसका बल विख्यात है । ११ । अब बलवान हनुमान समुद्र को लाँघकर जाएगा और सीता का पता लगाएगा । अनन्तर श्रीभगवान श्रीराम (लंका पर) चढ़ाई, अर्थात् आक्रमण करेंगे ।' १२ । आगे सुन्दर काण्ड में वह कथा विस्तार-पूर्वक कहनी है । श्रीरघुपति का यश पावन है, उनके सौ करोड़ (अर्थात् अनगिनत) चरित्र अपार है । १३ । जो उनके चरित्र को सीखता हो (अर्थात् उससे बोध लेता हो), उसका गान करता हो, श्रवण करता हो, पठन करता हो, मनन, ध्यान और बखान करता हो, वह इस लोक में बहुत सुख को तथा परलोक में निर्वाण गति (मोक्ष) को प्राप्त हो जाता है । १४ । श्रीरघुपति उसपर कृपा करते हैं, जो उसका अभ्यास करता है । जगत् में उसका निर्मल यश (प्रसारित) हो जाता है और उसके मन की आशाएँ पूर्ण हो जाती हैं । १५ । देवों के लिए (भी) जो दुर्लभ है, ऐसी यह मनुष्य-देह बारबार नहीं प्राप्त होती । यह (मनुष्य-) देह समस्त कर्म करने में समर्थ है । वह तो मोक्ष का द्वार है । १६ । जिसने (मनुष्य-) देह धारण करके (अपने कानों से) हरिकथा न सुनी, भगवान का भजन नहीं किया, उसे आत्म-हत्यारा समझ लो । वह तो प्रेत के समान जीवित रहता है । १७ ।

* * *

(गिरधर कवि कहते हैं—) जो (रामायण का) किष्किन्धा नामक यह चौथा काण्ड है, इसे मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार पूर्ण किया है ।

हवे सुंदर कांड कहेवाशे निर्मळ, सुणजो श्रोताजन जी,
सादर श्रद्धाए करी प्रेमे, रामचरित्र पावन जी। १९।

छंद

पावन जश रघुवीरना, जे सुणे नरनारी सदा,
ते शुभ पदारथ चार पामे, दु:खी नव होये कदा। २०।
त्रण तापनो परिताप वामे, सुख पामे अति घणुं,
आदरे अवलंबन करे, नित्यमेव रामकथा तणुं। २१।
कळिमांहे साधन क्षीण पाम्यां, जोग जप तप नव सधे,
हरिनाम महिमा बळ घणुं, दिन दिन प्रताप अधिक वधे। २२।
ते माटे तन, मन, धन अरपी, सुधा सेवो हरिकथा,
कल्याणकर्ता पापहर्ता, रामना गुण सर्वथा। २३।
तज आश अवर उपाश, इंद्रियविषय ममता परिहरो,
अविनाश केरा दास थई, भवनाश हरिगुण विस्तरो। २४।

उसमें चार सौ पूर्ण पद अर्थात् छन्द हैं; फिर पन्द्रह अध्याय हैं। १८। हे श्रोता-जनो, अब निर्मल सुन्दर काण्ड (उसमें प्रस्तुत) पावन रामचरित्र का आदर-सहित, श्रद्धा और प्रेम से श्रवण कीजिए। १९।

जो स्त्री-पुरुष रघुवीर राम का पावन यश सदा सुनते हैं, वे (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष नामक) चारों पदार्थों को प्राप्त हो जाते हैं; वे कभी भी दुखी नहीं हो जाते। २०। जो नित्य ही रामकथा का आदर-पूर्वक अवलम्बन करते हैं, उनका (आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक नामक) तीनों तापों से उत्पन्न परिताप कम (अर्थात् नष्ट) हो जाता है और वे अति विपुल सुख को प्राप्त हो जाते है। २१। कलियुग में साधनाएँ क्षीणता को प्राप्त हो गयी है— योग, जप, तप सिद्ध नहीं हो जाते हैं। (फिर भी उसमें) हरिनाम की महिमा का बल बहुत है। उसका प्रताप दिन-ब-दिन अधिकाधिक बढ़ता जा रहा है। २२। इसलिए (राम के चरणों में) तन, मन, धन अर्पित करते हुए हरिकथा रूपी अमृत का सेवन कीजिए। श्रीराम के गुण सब प्रकार से कल्याणकारी तथा पापहारी हैं। २३। (अत: हे मनुष्य,) आशा तथा अन्य इच्छाओं का त्याग करो, इन्द्रिय-सम्बन्धी ममता का परिहार करो। अविनाशी भगवान का दास होते हुए सांसारिक (दु:खों का) नाश करनेवाले हरि-गुणों का विस्तार (-पूर्वक गुण-गान) करो। २४। जो मनुष्य-देह धारण करके श्रीरघुवीर से स्नेह करता हो, वह सम्पूर्ण पापों से मुक्त होकर बहुत आसानी से संसार रूपी

धरी मनुषदेह सनेह, श्रीरघुवीर साथे जे करे,
ते अखिल पाप-विमुक्त थईने, भवसागर सहेजे तरे । २५ ।
जे जीवनमुक्ता ब्रह्म तरपण, हरिचरित्र तजे नहि,
करे अनादर हरिकथानो, तेने पशुघ्नी गणवो सहि । २६ ।
अपवर्ग स्वर्ग थकी घणुं, सुख भक्तिमां कहे छे मुनि,
वळी अन्य साधनथी अधिक जे, रामनाम तणी धूनि । २७ ।
ए अधिकता हरिकथानी ते, पुराण निगमागम कहे,
धन्य धन्य ते जन दास गिरधर, हरिचरण शरण सदा रहे । २८ ।

॥ किष्किन्धा काण्ड समाप्त ॥

सागर को तैर जाता है । २५ । जो जीवन-मुक्त तथा ब्रह्म को तृप्त किये हुए हों, वे (भी) हरि-चरित्र (के पठन, श्रवण आदि) का त्याग नहीं करते । जो हरिकथा का अनादर करता है, उसे सचमुच पशु-हत्यारा गिनो (समझो) । २६ । मुनि मोक्ष तथा स्वर्ग से भी अधिक सुख भक्ति में बताते हैं । इसके अतिरिक्त, अन्य साधनाओं से रामनाम का स्वाद अधिक (लाभकारी) है । २७ । श्रीराम की कथा की वह ऐसी बड़ाई, पुराण तथा निगमागम (वेद और शास्त्र) बताते हैं । गिरधरदास कहते हैं कि जो सदा हरिचरणों की शरण में रहते हैं, वे लोग धन्य है, धन्य हैं । २८ ।

॥ किष्किन्धा काण्ड समाप्त ॥

सुन्दर काण्ड

अध्याय—१ (कवि की प्रास्ताविक उक्ति)

राग धनाक्षरी

श्रीपति सुंदर सुखना धाम जी, भक्तवत्सल प्रभु पूरण काम जी,
मंगळदायक लायक नाम जी, समरण करतां आपे अभिराम जी। १ ।

ढाळ

अभिराम थाये नाम लेतां, पामे अविचळ ठाम,
एवा पुरुषोत्तम पदकमळ जुगने, नमी करुं प्रणाम। २ ।
सहु भगवती संतने वंदु, कवि मोटा जेह,
होय दोष प्राकृत काव्यमां, कांई क्षमा करजो तेह। ३ ।
चरित्र कहुं रघुवर तणां जे, पावन रामकथाय,
मुज वाणी पहोंचे जेटली, तेटलुं में कहेवाय। ४ ।
बाळ कांड ने अयोध्या, अरण्य किष्किधाय,
ए कथा पूरण कही हवे, सुंदर कांड कथाय। ५ ।

अध्याय—१ (कवि की प्रास्ताविक उक्ति)

भगवान श्रीपति सुख के निवास-स्थान हैं; प्रभु भक्त-वत्सल तथा (भक्त-जनों की) कामनाओं की पूर्ति करनेवाले हैं। उनका नाम सुयोग्य तथा मंगल-दायक है। उसका स्मरण करते ही वे आनन्द प्रदान करते हैं। १।

(जिनका) नाम लेते ही आनन्द हो जाता है और अविचल स्थान को (भक्त-जन) प्राप्त हो जाते है, उन (भगवद्-स्वरूप) गुरु पुरुषोत्तम के दोनों पद-कमलों को मैं सिर नवाकर प्रणाम करता हूँ। २। साथ ही समस्त भगवद्भक्त सन्तों को तथा जो भी बड़े कवि हैं, उनका वन्दन करता हूँ। (मेरे द्वारा प्रस्तुत) इस प्राकृत (जनभाषा गुजराती) भाषा के काव्य में (यदि) कुछ दोष हुए हों, तो उन्हें क्षमा करें। ३। मैं श्रीरघुवीर का जो चरित्र है, जो पवित्र रामकथा है, वह कह रहा हूँ। मेरी वाणी जहाँ तक पहुँच सकती हो, उतना मेरे द्वारा कहा जाएगा। ४।

जय जानकीवर जगतपति, काकुत्स्थ कुळना दीप,
दशरथसुवन करुणानिधि, जय अवधनाथ अधिप । ६ ।
आज्ञा पितानी पाळवा, नीकळ्या वनमोझार,
संगे लक्ष्मण जानकी लेई, चाल्या जुगदाधार । ७ ।
चित्रकूटमां केटला दिन रही, गया दंडक वनमांहे,
पछे पंचवटीमांहे वस्या, गोदावरी तट ज्यांहे । ८ ।
रावणे हरण कर्युं तदा, सीता तणुं तेणी वार,
तेनी शोध करवा राम लक्ष्मण, नीकळ्या निरधार । ९ ।
ऋषिमुख पर्वत आविया, त्यां मळिया रुद्रस्वरूप,
सुग्रीव साथे मैत्री कीधी, मार्यो वाली भूप । १० ।
राज्य आप्युं सुग्रीवने, तांहां रह्या श्रीजुगदीश,
पछे शोध सीतानी करवा, मोकल्या बहु कीश । ११ ।
दक्षिण दिशामां मोकल्या, खट कपि महाबळवंत,
नळ नील जांबुवान अंगद, रषभ ने हनुमंत । १२ ।

(मैंने) बाल काण्ड, अयोध्या काण्ड, अरण्य काण्ड और किष्किन्धा काण्ड की कथा पूर्ण कही है। अब सुन्दर काण्ड की कथा कहूँगा। ५। हे जानकीवल्लभ, हे जगत् के स्वामी, हे काकुत्स्थ कुल के दीप, (आपकी) जय हो। हे करुणा-निधि दशरथ-पुत्र, हे अयोध्यानाथ, हे अधिपति, (आपकी) जय हो। ६। जगत् के आधार (श्रीराम) पिता की आज्ञा का पालन करने के लिए वन में जाने के हेतु (अयोध्या से) निकले और साथ में लक्ष्मण तथा सीता को लेकर चल दिये। ७। कितने ही दिन चित्रकूट में रहकर वे दण्डक वन में गये। अनन्तर पंचवटी में, जहाँ गोदावरी नदी का तट है, वे बस गये। ८। तब उस समय रावण ने सीता का अपहरण किया, तो उसकी खोज करने के लिए राम और लक्ष्मण निश्चय-पूर्वक चल दिये। ९। वे ऋष्यमूक पर्वत पर (जब) आ गये, तो वहाँ (उनसे) रुद्र-स्वरूप हनुमान मिल गया। (फिर) उन्होंने सुग्रीव से मित्रता की और (वानरों के) राजा बाली को मार डाला। १०। श्रीजगदीश राम ने वहाँ सुग्रीव को राज्य प्रदान किया और अनन्तर सीता की खोज करने के लिए (सुग्रीव ने) अनेकानेक वानरों को भेज दिया। ११। उसने इन छः महाबलवान कपियों को दक्षिण दिशा में भेजा— नल, नील, जाम्बवान, अंगद और हनुमान। १२। वे समुद्र-तट पर आ गये, तो दिङ्मूढ़ होकर खड़े रह गये,

ते आविया सागरतटे, ऊभा थई दिग्मूढ,
ते सिंधु शत जोजन छे, गंभीर महागति गूढ। १३।
हनुमंतनी स्तुति सरवे, वीनव्या तेणी वार,
तम विना ए कोण ओळंगे, बळवंत वायुकुमार। १४।
कूदवा सागर थया सत्वर, मारुति ततखेव,
महेंद्र पर्वत उपर चढीने, उभा महाबळी देव। १५।
गत कांडमां ए कथा कही ते सकळ विस्तार,
वाल्मिकी नाटक तणो संमत, मेळवी निरधार। १६।
हावे सुंदर कांड कथा कहुं, हनुमंत लाव्या शुद्ध,
पछे सैन्य लई रघुवीर चढ्या, असुरशुं करवा युद्ध। १७।
सिंधु ऊपर पाज बांधी, ऊतर्या पेले तीर,
त्यां विभीषण आवी मळ्यो, रावण तणो जे वीर। १८।
ए कथा सुंदर कांड मांहे, कहेवाशे विस्तार,
रघुवीर जश वर्णन करुं, ते यथामति अनुसार। १९।
माटे श्रोताजन सावधान थईने, सुणो रामचरित्र,
जे श्रवण मंगल हृदे अमृत, अखिल पुण्यपवित्र। २०।

(क्योंकि सामने) सौ-योजन (विस्तीर्ण) गम्भीर तथा महान् गूढ़ स्थिति वाला समुद्र (फैला हुआ) था। १३। उस समय सबने हनुमान की स्तुति करते हुए उससे विनती की— 'हे बलवान वायुकुमार, बिना तुम्हारे इसे कौन लाँघ देगा।' १४। तत्क्षण सागर पर छलाँग लगाने के लिए हनुमान तत्पर हो गया। वह महाबलवान देव महेन्द्र पर्वत पर चढ़कर खड़ा रह गया। १५। पिछले काण्ड में वह समस्त कथा निश्चय ही वाल्मीकि-नाटक से सम्मत— अर्थात् उसके आधार पर विस्तार-पूर्वक कही है। अब सुन्दर काण्ड की कथा कहता हूँ। (उसमें कहा जाएगा–) हनुमान सीता की (खोज) पता लाया। फिर सेना लेकर रघुवीर ने असुरों से युद्ध करने के लिए आक्रमण किया। १६-१७। उन्होंने समुद्र पर सेतु बनवाया और वे उस पार उतर गये। रावण का भाई विभीषण वहाँ आकर (श्रीराम से) मिला। १८। यह कथा विस्तार के साथ सुन्दर काण्ड में कही जाएगी। मैं अपनी मति के अनुसार रघुवीर के उस यश का वर्णन करूँगा। १९। इसलिए हे श्रोताजनो, सावधान होकर वह राम-चरित्र सुनिए, जो श्रवण करने से मंगलदायी है, हृदय के लिए अमृत ही है और जो पूर्णतः पावन-पवित्र है। २०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पवित्र थाये चरित्र सुणतां, पावन जश रघुराय रे,
कर जोडीने कहे दास गिरधर, सुंदर कांड कथाय रे। २१।

रघुराज का यश पावन है। उनके चरित्र को सुनने पर (श्रोता-जन) पवित्र हो जाते हैं। कवि गिरधरदास (अब) हाथ जोड़कर सुन्दर काण्ड की कथा कहने जा रहे हैं। २१।

* * *

अध्याय—२ (हनुमान द्वारा समुद्र का उल्लंघन)

राग सामेरी

हावे श्रोताजन सावधान थईने, सुणो रामकथाय,
शत जोजन सिंधु ओळंगवा हनुमंत तत्पर थाय। १।
महेन्द्र पर्वत उपर चढीने, कर्युं प्रौढ शरीर,
अवतार रुद्रप्रताप झळके, सूरजवत् महावीर। २।
वज्रकछोटो कटीप्रदेशे, झळके कनक कोपीन,
मुख पूंछाग्रे रक्त दीसे, प्रवाळ सरखुं पीन। ३।
कपाळ चपळा सम चळकतुं, त्रिगुण यज्ञोपवीत,
लांगूल लांबुं कर्युं ऊंचुं केश देश अमित। ४।

अध्याय—२ (हनुमान द्वारा समुद्र का उल्लंघन)

हे श्रोता-जनो, अब सावधान होकर रामकथा सुनिए। सौ योजन (विस्तीर्ण) समुद्र का उल्लंघन करने के लिए हनुमान तत्पर हो गया। १। महेन्द्र पर्वत पर चढ़कर उसने (अपने) शरीर को प्रचण्ड बना दिया। प्रतापी रुद्र का अवतार महावीर (हनुमान) सूर्य की भाँति (तेज में) जगमगा रहा था। २। उसके कटि-प्रदेश में वज्र (-सा कठिन) कछोटा तथा स्वर्ण-कौपीन चमक रहे थे। उसका मुख तथा पूँछ का पीन (पुष्ट तथा कठिन) अग्र भाग प्रवाल (मूँगे) की भाँति आरक्त दिखायी दे रहा था। ३। भाल बिजली की भाँति जगमगा रहा था; त्रिगुण से युक्त यज्ञोपवीत (जनेऊ) पहना हुआ था। उसने अपनी पूँछ को दीर्घ तथा ऊंचा कर दिया। उसके बालों का फैलाव असीम था। ४। इस प्रकार बलवान धीर महावीर वायु-पुत्र हनुमान ने उड़ान भरने के लिए पूँछ को

एवा मारुति महावीर धीर, समीरसुत बळवंत,
ऊडवा पूंठ पछाडीने, करी गर्जना ते अनंत। ५ ।
भुभुकार नाद कर्यो तदा, खळभळ्युं सकळ भूगोळ,
धरा कंपी ते समे, थयां सिंधुजळ अंडोळ। ६ ।
एम खळभळ्यां पाताळ साते, नभ थयो धुनिकार,
चळ्या दिग्गज शेष कंप्यो, मेरु ने मंदार। ७ ।
ब्रह्मांडमां भरपूर व्याप्यो, शब्द जे भुभुकार,
ते सांभळ्यो ऋषिमुक पर्वत जगद्‌ जुगदाधार। ८ ।
सुग्रीव लक्ष्मणशुं कहे, रघुपति तेणी वार,
भाई थयो तत्पर मारुति, कूदवा सागर पार। ९ ।
एम नाद व्याप्यो दश दिशा, घुरघुर भयंकर घोर,
छूटी समाधि शिव तणी, गयो ब्रह्मलोके शोर। १० ।
ब्रह्मा कहे सहु देवने, जाय कपि करवा काज,
विमान बेसी जोवा आव्या, देवशुं सुरराज। ११ ।

झटका दिया और असीम गर्जना की। ५ । (जब) उसने भुभुकार ध्वनि की, तब समस्त भू-मण्डल मारे डर के काँप उठा। उस समय धरती काँप उठी और समुद्र का जल ज़ोर से हिलकोरे लेने लगा। ६ । उस प्रकार सातों पाताल[1] कम्पायमान हो उठे, आकाश प्रतिध्वनित हो गया। दिग्गज चलायमान हुए; शेष, मेरु और मन्दर पर्वत काँप उठे। ७ । जो भुभुकार ध्वनि ब्रह्माण्ड में भरी-पूरी व्याप्त हो गयी, उसे ऋष्यमूक पर्वत पर जगत्‌ के आधार श्रीराम ने सुना। ८ । उस समय रघुपति ने सुग्रीव और लक्ष्मण से कहा— 'भाइयो, सागर के पार कूद जाने के लिए हनुमान तत्पर हो गया है।' ९ । उस प्रकार उस भयंकर घोर भुभुकार ध्वनि ने दसों[2] दिशाओं को व्याप्त किया। तो शिवजी की समाधि टूट गयी; ब्रह्मलोक में कोलाहल मच गया। १० । तो ब्रह्मा ने सब देवों से कहा— '(वह) वानर (श्रीराम का) काम करने के लिए जा रहा है।' (तब) विमान में बैठकर देवराज इंद्र देवों सहित देखने के लिए आ गया। ११ । (इधर) अनन्तर पूँछ

१. सप्त पाताल— अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल और पाताल। अन्य मान्यता के अनुसार— भूतल, भवागतल, भिन्नतल, आदितल, आधारतल, सर्वातल, उभयानुकुलतल।

२. दश दिशाएँ— पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर (चार मुख्य दिशाएँ), आग्नेय, नैऋत्य, वायव्य, ईशान्य (चार उपदिशाएँ), ऊर्ध्व तथा अधस्।

पछे पूंछ शीश चढावीने, कंपावियां सहु रोम,
गर्जना करी मारी तलप, हनुमंत ऊड्यो व्योम। १२।
महेंद्र पर्वत चांपियो ते, गयो तरत पाताळ,
अंग झपटथी प्रसर्यो पवन ते, प्रलय समो तत्काळ। १३।
एम कूदिया हनुमंतजी, आकाशमारग जाय,
पद हस्त चपळ हलावता, ते ऊछळता महाकाय। १४।
वळी तलप उपर तलप मारे, वायुथी वेग अपार,
दिव्य बाण छूट्युं चापथी, जाणे रामनुं निरधार। १५।
एम जाय ऊड्या गगनमारग, मारुति बळवंत,
आश्चर्य करता देवता, जोता सकळ हनुमंत। १६।
त्यारे इंद्रे जोवाने परीक्षा, बळ तणो महिमाय,
एक रंभादेवी मोकली, तेनी प्रौढ पर्वत काय। १७।
ते मुख पहोळुं करी ऊभी, आप मारग मांहे,
तेना मुखमांहे प्रवेश्यो, अंजनीसुत त्यांहे। १८।
पछे करणमारग नीकळ्यो, सूक्ष्म करीने रूप,
ते स्तुति करी गई देव पासे, हरखियो सुरभूप। १९।

मस्तक के ऊपर उठाये हुए हनुमान ने समस्त बाल हिलाये— हिलाकर बिखेर दिये। फिर गर्जना करके छलाँग लगाते हुए वह आकाश में उड़ गया। १२। उसने ज्यों ही महेन्द्र पर्वत को दबा दिया, त्यों ही तुरन्त वह पाताल में (धँस) गया। (हनुमान के) अंग के झपट्टे से हवा तत्काल प्रलय की-सी प्रसारित हो गयी। १३। इस प्रकार हनुमान कूद (उछल) पड़ा और आकाश मार्ग से आने लगा। वह महाशरीरी (वानर) पाँव और हाथ हिला रहा था और उछलता-लपकता जा रहा था। १४। फिर वह छलाँग पर छलाँग लगा रहा था; उसका वेग वायु (वेग) से भी अपार था। मानो निश्चय ही राम का ही कोई दिव्य बाण (उनके रूप में) धनुष से छूटा हो। १५। इस प्रकार बलवान हनुमान गगन-मार्ग से उड़ते हुए जा रहा था। समस्त देव हनुमान को (इस प्रकार) जाते देखकर आश्चर्य कर रहे थे। १६। तब उसके बल की महिमा की परीक्षा करने के लिए (उन्होंने) रंभा नामक एक देवी (अप्सरा) को भेज दिया। उसकी काया पर्वत-सी प्रचण्ड थी। १७। वह स्वयं मार्ग में मुख को चौड़ा फैलाये हुए खड़ी हो गयी, तो हनुमान उसके मुँह में प्रविष्ट हो गया। १८। फिर सूक्ष्म रूप बनाते हुए वह कर्ण-मार्ग से बाहर निकला। तब वह देवी उनकी स्तुति करके

त्यारे समुद्रे मैनाक पर्वत, मोकल्यो तेणी वार,
मन जाण्युं श्रमित थयो हशे, क्षणस्थंभे वायुकुमार । २० ।
छेदवा मांडी पांखो त्यारे, इद्रे गिरिनी त्यांहे,
त्यारे हिमाचळनो पुत्र ए, संतायो सागर मांहे । २१ ।
सिंधुए तेने कह्युं जे, तुं आप्य जई विश्राम,
ते गिरि वधियो गगनमारग, कह्युं कपिने काम । २२ ।
हे महापुरुष ! क्षण एक मुज पर, विरामो धरी धीर,
हनुमंतने कंई श्रम नथी, जेने रुदे श्रीरघुवीर । २३ ।
पछे टेकी दीधी हाथनी त्यारे गयो ते पाताळ,
मुख रामनामनी गरजना, करी मारी पोते फाळ । २४ ।
त्यारे सिंहिका नामे आसुरी, छे राहु जनो पुत्र,
ते पहोळुं मुख करीने रही, तेणे साध्युं छायासूत्र । २५ ।
पंखी आदे जाय जे को, गगनमारग त्यांहे,
ते सूत्रसंकलना थकी, आवी पडे मुखमांहे । २६ ।
बार योजन वदन पहोळुं, विकास्युं ते नार,
तेना मुखमांहे हनुमंतजी, आवी पड्यो निरधार । २७ ।

देवों के पास चली गयी। तो देव-राज इंद्र आनन्दित हो गया। १९। तब उस समय समुद्र ने मैनाक पर्वत को भेज दिया; क्योंकि उसने मन में समझा कि वायु-कुमार (यदि) थक गया हो, तो क्षण भर (उसपर विश्राम के लिए) ठहर जाए। २०। जब इंद्र ने पर्वतों के पंख काटना आरम्भ किया था, तब हिमालय का वह पुत्र वहाँ सागर में छिप गया था। २१। समुद्र ने उससे यह कहा— ' तुम जाकर (हनुमान को अपने ऊपर) विश्राम करने दो ', तो वह पर्वत आकाश-मार्ग में वढ़ गया। उसने कपि (हनुमान) को काम बताया। २२। ' हे महापुरुष, धीरज धारण करके एक क्षण मुझपर विश्राम करो। ' (वस्तुतः) जिसके हृदय मे श्रीरघुवीर थे, उस हनुमान को कोई थकावट (अनुभव) नहीं हो रही थी। २३। (फिर भी) अनन्तर उसने हाथ (ज्यों ही) टिकाये, त्यों ही (उनके दबाव से) वह (धँसकर) पाताल में गया। फिर उसने मुख से राम-नाम की गर्जना करते हुए स्वयं छलाँग लगा दी। २४। तब राहु जिसका पुत्र था, वह सिंहिका नामक असुरी विशाल मुख फैलाये हुए (पड़ी) थी। उसनें (हनुमान की) छाया के सूत्र को पकड़ लिया। २५। पक्षी आदि जो (भी) कोई वहाँ आकाश-मार्ग से जाता, उसके (छाया-) सूत्र को (पकड़ते हुए) खींचने से वह उसके मुख में आ गिरता। २६।

ते उदर मांहे प्रवेश्यो, वळतुं विचार्युं मन,
पछी पेट फाडी नीकळ्यो, बळवंत वायुतन । २८ ।
ज्यम विषयपाश समस्त तोडी, विरक्त जे बुधवंत,
परमारथ मारग नीकळे, एम नीकळ्यो हनुमंत । २९ ।
ते सिंहिका पामी मरण, वळतां ऊडियो कपिराज,
त्यारे लंकादेवी आडी आवी, करवा विपरीत काज । ३० ।
ते मारग रोध करी रही, कपिए कर्यो पादप्रहार,
त्यारे क्रोध करी मुख विकासीने, आवी करवा आहार । ३१ ।
पछे रामस्मरण मुखे करी, कोपिया हनुमंत,
तेना शिर विषे एक मुष्टि मारी, पडी मूर्छावंत । ३२ ।
पद तणी ठोकर थी उडाडी, पडी लंका मांहे,
ते लंकणी तन थयुं कच्चर, विकळ थई छे त्यांहे । ३३ ।
लंकणी पडतां नगर हाल्युं, थयो भूमिकंप,
त्यारे दशानन डरियो तदा, मन थयो खेद अजंप । ३४ ।

उस नारी ने अपने मुँह को बारह योजन (चौड़ा फैलाकर) विकसित कर दिया, तो निश्चय ही हनुमान आकर उसके मुँह में गिर गया । २७ । (जब) वह उसके पेट मे प्रविष्ट हो गया, तो फिर उसने मन में विचार (पूर्वक निर्णय) किया । (उसके अनुसार) वह बलवान वायु-नन्दन उसके पेट को फाड़कर बाहर निकल आया । २८ । जिस प्रकार कोई व्यक्ति बुद्धिमान और विरक्ति-युक्त हो, वह विषय (-विकारों) के समस्त पाशों को तोड़कर परमार्थ-मार्ग पर निकल जाता है, उस प्रकार (सिंहिका के आयोजन से) हनुमान निकल गया । २९ । वह सिंहिका मृत्यु को प्राप्त हो गयी, तो अनन्तर कपिराज हनुमान उड़ गया । तब विपरीत (प्रतिकूल) कार्य करने के लिए लंकादेवी बीच में आ गयी । ३० । वह मार्ग में अवरोध करके रही थी, तो कपि ने उस पर पाँव से प्रहार किया । तब क्रोध करके वह मुँह फैलाये हुए (कपि को) खा डालने के लिए आ गयी । ३१ । फिर हनुमान मुख से राम-नाम का स्मरण करते हुए क्रुद्ध हुआ और उसने उसके सिर पर घूँसा जमाया; (फल-स्वरूप) वह मूर्छित होकर गिर पड़ी । ३२ । (तदनन्तर) उसने पाँव की ठोकर से उसे उड़ा दिया, तो वह लंका में गिर गयी । (फलतः) उस लंकिनी की देह छिन्न-भिन्न हुई; वह वहाँ विकल हो गयी । ३३ । लंकिनी के गिर जाने पर नगर हिल उठा, (मानो) भू-कम्प हो गया । तब रावण डर गया । उसे मन में व्याकुलता और खेद हो गया । ३४ । इस प्रकार

एम सिंधु शत जोजन ओळंगी, पामियो कपि पार,
नगर मांहे पेसवानो, कर्यो मन विचार । ३५ ।
एक क्रौंचा नामे कनिष्ठ भगिनी, रावण केरी तेह,
तेनो स्वामी इंद्रे मार्यो, घरघर नामे जेह । ३६ ।
ते क्रौंचाने रावणे स्थापी, लंकारक्षा काज,
ते आवी सन्मुख रही ऊभी, रोकियो कपिराज । ३७ ।
हनुमंतने झाली करी, मूकियो मुख मोझार,
ते उदर मांहे उतारी, मुख बीडियुं तेणी वार । ३८ ।
तेनुं पेट फाडी नीकळ्यो, ते मरण पामी त्यांहे,
एवे सांज पडी दिन आथम्यो, त्यारे गया लंका मांहे । ३९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

लंकामां गयो अंजनीसुत, निशाए निरधार रे,
रामकृपाए विघ्न टळियां, पाम्यो सिंधु पार रे । ४० ।

* * *

सौ योजन (विस्तीर्ण) समुद्र को लाँघकर कपि (हनुमान) उस पार को प्राप्त हो गया । फिर उसने नगर में प्रवेश करने का मन में विचार किया । ३५ । रावण के क्रौंचा नामक एक कनिष्ठ भगिनी थी । इन्द्र ने उसके स्वामी को मार डाला था, जिसका नाम घरघर था । ३६ । तबसे लंका की रक्षा के लिए रावण ने उसे प्रतिष्ठित कर रखा था । वह सम्मुख आकर खड़ी रह गयी और कपिराज हनुमान को रोका । ३७ । उसने हनुमान को पकड़कर मुख में डाल दिया; फिर उसे पेट में उतारकर उस समय उसने मुख मींच लिया । ३८ । (तब) हनुमान उसके पेट को फाड़कर वहीं बाहर निकल आया । उस समय (तक) शाम हो गयी, दिन (सूर्य) का अन्त हो गया, तब वह लंका के अन्दर गया । ३९ ।

रात को अंजनी-कुमार निर्धार-पूर्वक लंका में (प्रवेश कर) गया, राम की कृपा से (मार्ग में आये हुए) विघ्न टल गये और वह समुद्र के पार को प्राप्त हो गया । ४० ।

* * *

अध्याय—३ (सीता को खोजते हुए हनुमान का इंद्रजित, विभीषण और कुम्भकर्ण के प्रासादों में गमन)

राग परज

हनुमंत लंकामां प्रवेश्यो, निशाए निर्धार,
सूक्ष्म रूप धरीने जोता, करता मन विचार। १।
क्यम जडशे हावे जानकी मुने ? रह्यां हशे कोण ठाम ?
घेरघेर फरता चिंता धरता, करता कळाए काम। २।
ज्यम साधक आत्मप्राप्ति अर्थे, खोळे सारासार विचार,
ज्यम महायात्रामां विछोह थयो होय, मातने खोळे कुमार। ३।
ज्यम महा वैद वनमांहे नीकळ्यो, शोधे संजीवन मूळी,
ज्यम महावराहरूप हरिए धरीने, शोधी धरा समूळी। ४।

अध्याय—३ (सीता को खोजते हुए हनुमान का इंद्रजित, विभीषण और कुम्भकर्ण के प्रासादों में गमन)

हनुमान रात को निश्चय-पूर्वक लंका में प्रविष्ट हो गया। सूक्ष्म रूप धारण करके वह (इधर-उधर) देख (खोज) रहा था और मन में विचार कर रहा था। १। मुझे जानकीजी कैसे मिलेंगी ? वे किस स्थान पर रहती होंगी ? (इस सम्बन्ध में) वह चिन्ता करते हुए घर-घर घूम रहा था; वह यह काम आवेश के साथ कर रहा था। २। जिस प्रकार कोई साधक आत्म (-ज्ञान की) प्राप्ति के लिए सार-असार की विवेक-पूर्वक खोज करता हो, जिस प्रकार किसी बड़ी यात्रा में (पुत्र का माता से) वियोग हुआ हो, तो वह पुत्र माता को खोजता रहता हो, जिस प्रकार कोई महान वैद्य वन में निकल आया हो और संजीवनी मूरी को खोजता हो, जिस प्रकार भगवान हरि (विष्णु) ने महावराह[1] का रूप धारण करके मूल-सहित अर्थात् सम्पूर्ण पृथ्वी को खोज लिया था,

१. वराह रूपधारी विष्णु : पूर्वकाल में हिरण्याक्ष नामक एक महाप्रतापी असुर था। वह कश्यप और अदिति का पुत्र तथा हिरण्यकशिपु का भाई था। वह देवों को बहुत पीड़ा पहुँचाने लगा, तो उनकी रक्षा के लिए भगवान विष्णु ने उससे लड़ना शुरू किया। अपनी हार होते देख, वह पृथ्वी को लेकर समुद्र में छिप गया। तब भगवान ने वराह का रूप (अवतार) धारण किया और अपने एक दाँत पर पृथ्वी को उठाकर बाहर निकाला तथा उसकी स्थापना शेष के मस्तक पर कर दी। तदनन्तर उन्होंने हिरण्याक्ष को भी मार डाला।

ज्यम सागर मांहे मुकुंद शोध्या, मच्छरूप धरी वेद,
सद्गुरुने ज्यम शोधे मुमुक्षु, पामी जथा निर्वेद । ५ ।
एम सीताने खोळे कपि, तेने नथी देखातुं कोय,
एवे इंद्रजितनुं मंदिर दीठुं हेमरत्नमय सोय । ६ ।
ते मंदिरमां हनुमंत प्रवेश्या, अदृश्य थई निरधार,
त्यारे रावणसुत शुक्रजित सुलोचना, पोढ्यां पलंग मोझार । ७ ।
शेषनागनी ए छे कन्या, इंद्रजितनी राणी,
जेना रूपथकी रति लज्जा पामे, मान मूके इंद्राणी । ८ ।
एना रूपनी उपमा लायक, भूतळमां नथी नारी,
तेने जोई हनुमंत विस्मे पाम्या, शुं ए हशे जनककुमारी ? । ९ ।
एटले इंद्रजितनी साथे बोली, सतीशिरोमणि जेह,
अरे स्वामी, तमारा पिताए कर्यो छे, मोटो अधरम एह । १० ।

अथवा भगवान मुकुन्द अर्थात् विष्णु ने मत्स्य-रूप[1] धारण करते हुए समुद्र में वेदों की खोज की हो, जिस प्रकार कोई मुमुक्षु सद्गुरु की खोज करता है और जिस प्रकार वह निर्वेद (शान्ति) को प्राप्त हो जाता हो, उस प्रकार वह कपि (हनुमान) सीता को खोज रहा था। उसे कोई भी नहीं देख पा रहा था। उस समय उसने इंद्रजित के स्वर्ण-रत्नमय भवन को देखा। ३-६। निश्चय ही अदृश्य होकर हनुमान उस भवन में प्रविष्ट हो गया। तब रावण-सुत इंद्रजित और (उसकी स्त्री) सुलोचना (दोनों) पलंग पर लेटे हुए थे। ७। इंद्रजित की वह रानी (स्त्री) शेषनाग की कन्या थी, जिसके रूप से (कामदेव की स्त्री) रति लज्जा को प्राप्त हो जाती और इंद्राणी (इन्द्र-पत्नी शची अपने सौन्दर्य-सम्बन्धी) मान को छोड़ देती। ८। उसके रूप की उपमा के लिए योग्य स्त्री पृथ्वी-तल पर नहीं थी। उसे देखकर हनुमान विस्मय को प्राप्त हो गया। (उसे लगा—) क्या यही तो जनक-कन्या नहीं होगी ? । ९। इतने में वह (सुलोचना) जो पतिव्रताओं में श्रेष्ठ थी, इंद्रजित से बोली—

---

१. मत्स्य रूपधारी विष्णु—पूर्वकाल में शंख नामक एक असुर (जो समुद्र का पुत्र था) समुद्र में रहता था। उसने अपने प्रताप से समस्त देवों और लोकपालों को पराजित किया और उन्हें स्वर्ण-पर्वत की गुफा में आश्रय लेने को वाध्य किया। तदनन्तर देवों को नित्य दुर्बल बनाये रखने के हेतु उसने चारो वेदो को नष्ट करना चाहा। एक वार जब भगवान विष्णु निद्राधीन थे, तब उसने वेदो पर आक्रमण किया, तो वे भागते हुए समुद्र में जाकर छिप गये। फिर भगवान् ने मत्स्य अवतार धारण कर समुद्र में प्रवेश किया और वेदों को पुनः प्राप्त करते हुए शखासुर का वध किया।

जनकनी तनया लक्ष्मीरूप जे रामचंद्रनी राणी,
ते सती उपर करी कुदृष्टि, हरण करीने आणी। ११।
ते पापे करीने राज्य जशे, नव करशो जीव्यानी आश,
परस्त्रीनो अभिलाष करंतां, थाशे कुळनो नाश। १२।
जे साधुनी सेवा उपर द्वेष करे, गुरुआज्ञा तणो करे भंग,
तिरस्कार करे जे मातपितानो, परस्त्रीनो करे संग। १३।
ब्रह्मत्व हरण करे ब्राह्मणनुं, जीवनी हिंसा करे वेद,
निंदे चरित्र जे हरिहरनुं, सद्ग्रंथनो करे उच्छेद। १४।
ते पापीनुं मरण थाय वहेलुं, अपजश रहे जुगमांहे,
एवां सुलोचनानां वचन सुणी, रावणसुत बोल्यो त्यांहे। १५।
अरे सुंदरी साचुं कह्युं तें, धर्मन्यायनां वचन,
पण शुं करुं जो ए पिता छे माटे, हुं समजी रहुं छुं मन। १६।
भलुं भूंडुं जे तात करे, पण में कंइ नव कहेवाय,
जो अन्य होय तो नव सांखुं, तेने करुं शिक्षाय। १७।
माटे सुण सती जे कांई भावी हशे, ते थाशे तेवी पेर,
सुखदुःख सरवे लख्या प्रमाणे, मैत्री अथवा वेर। १८।

'हे स्वामी, आपके पिता ने यह बड़ा अधर्म किया है। १०। उस सती पर कुदृष्टि करते हुए वे अपहरण कर उसे लाये हैं, जो जनक की लक्ष्मी-स्वरूपा कन्या है और रामचन्द्र की स्त्री है। ११। उस पाप से राज्य (नष्ट हो) जाएगा; जीवों (की रक्षा) की आशा नहीं कर पाओगे। पर-स्त्री की अभिलाषा करने पर कुल का नाश हो जाता है। १२। जो साधु-पुरुषों की सेवा से द्वेष करता हो, जो गुरु की आज्ञा का भंग करता हो, जो माता-पिता से तिरस्कार करता हो, जो परस्त्री का संग करता हो, जो ब्राह्मण के ब्राह्मणत्व का हरण करता हो, जो जीव की हिंसा करता हो, जो हरि और हर (शिव) के चरित्र की निन्दा करता हो, जो (वेद आदि) सद्ग्रन्थों का उच्छेद करता हो, उस पापी की शीघ्र मौत हो जाती है और संसार में अपकीर्ति (शेष) रह जाती है।' वहाँ सुलोचना के ऐसे वचन सुनकर रावण-सुत इंद्रजित बोला। १३-१५। 'हे सुन्दरी, तुमने सत्य कहा है— ये धर्म और न्याय-संगत वचन हैं। फिर भी मैं क्या करूँ? वे पिता हैं, इसलिए मन में मानकर रह जाता हूँ। १६। पिताजी जो भी भला-बुरा कर रहे हों, फिर भी मुझसे कुछ नहीं कहा जाता। यदि कोई अन्य हो, तो सहन न करूँगा, उसे दण्ड दूँगा। १७। इसलिए हे सती, सुनो, जो कुछ होनी हो,

जेवुं कर्म होय जीव तणुं, तेवी सूझ पडे मनमांहे;
एम नरनारीए वात करी, ते सुणी हनुमंते त्यांहे । १९ ।
मनमां विचार्युं ए सीता न होय; पण सतीशिरोमणि सार;
धन्य धन्य बुद्धि ए नारीनी; जोगमाया अवतार । २० ।
एम करी सराहना त्यांथी चाल्या, मारुतसुत बळवंत,
पछे विभीषण केरे मंदिर आव्या, दीठुं शोभावंत । २१ ।
हरिनो परम भक्त विभीषण छे, नहि रज तमनी प्रवृत्ति,
सहित दया क्षमा शांति करुणा; रहित हिंसानी प्रकृति । २२ ।
सत्त्वगुणाकर रहितमानमद, शमदम लक्षणयुक्त,
शुभ संकल्प हरिचरणवासना, विषयसंगथी मुक्त । २३ ।
निशा समे हरिकीर्तन करता, जंत्र लेई करमांहे,
एवा वैष्णवमणि विभीषणने देखी; विचारे मारुति त्यांहे । २४ ।
जे राक्षसवंशमां भक्तराज छे, आश्चर्य ए निरधार,
जेम वायसकुळमां उदे कोकिला, वंशवने घनसार । २५ ।

वह बात उस समय हो जाएगी । समस्त सुख-दुःख, मित्रता वा बैर–लिखे अनुसार होता है । १८ । जीव का जैसा कर्म हो, वैसे मन में (उसे) सुझायी देता है । ' इस प्रकार उन पुरुष और स्त्री ने बातचीत की । हनुमान ने उसे वहाँ सुना । १९ । तो उसने मन में सोचा— ' यह सीता तो नहीं है; (फिर भी) कोई भली सती-शिरोमणि है । इस नारी की बुद्धि धन्य है, धन्य है । वह योगमाया का अवतार (जान पड़ती) है । ' २० । इस प्रकार उसकी सराहना करते हुए बलवान हनुमान वहाँ से चल दिया । फिर वह विभीषण के घर आ गया । उसने उसे शोभायमान देखा । २१ । विभीषण भगवान हरि का परम भक्त था । उसमें रजोगुण और तमोगुण की प्रवृत्ति नहीं थी । उसकी प्रकृति दया, क्षमा, शान्ति, करुणा से युक्त और हिंसा से रहित थी । २२ । वह सत्त्वगुण का भंडार था, मान और मद से रहित था, शम-दम के लक्षणों से युक्त था । उसका संकल्प शुभ था, हरि-चरणों में उसकी अभिलाषा थी, वह विषय-संग से मुक्त था । २३ । वह रात के समय हाथ में (वाद्य) यंत्र लेकर हरि-कीर्तन कर रहा था । हनुमान ने विभीषण की ऐसी हरि-भक्ति देखी, तो वहाँ वह विचार करने लगा । २४ । ' यह जो राक्षस-वंश में कोई श्रेष्ठ (हरि-) भक्त है, निश्चय ही आश्चर्य है । जैसे कौओं के कुल में कोयल उत्पन्न होती है, अथवा बाँस के वन में कपूर होता है, अथवा विष्णु-स्वरूप अश्वत्थ (पीपल) वृक्ष कौए की विष्ठा में

कागविष्ठा-वेष्टित ज्यम ऊगे, अश्वत्थ विष्णुरूप,
एम असुरवंशमां ए प्रगट्या छे, भक्तशिरोमणि भूप । २६ ।
सद्गुण सकळ अलंकृत पूरण, ए विभीषण हरिजन,
तेने जोईने प्रसन्न थया, हनुमंत विचारे मन । २७ ।
लंकामां राम आवशे त्यारे, करशे एनुं काज,
रावणने मारीने निश्चे, आपशे एने राज । २८ ।
एवुं कही नमस्कार करी त्यांथी, चाल्या वायुकुमार,
पछी कुंभकर्णनुं मंदिर जोयुं, दुर्गंध दीठी अपार । २९ ।
ज्यम मंद्राचळ पडियो होये, एवो ऊंघे छे असुर,
नाक बोले जाणे मेघ गडगडे, वायु चाले बळपुर । ३० ।
एनो जन्म सहु जाय छे मिथ्या, एम कही हनुमंत,
पछे कुंभकर्णनुं घर तजी चाल्या, दुर्गंध दीठी अनंत । ३१ ।
ज्यम अग्निहोत्री तजे अत्यंजनुं घर, साधु तजे विषयवात,
एम अनाचार जे ठाम देखे, ते तजे मारुतजात । ३२ ।
एम घेरघेर जोता फरता मारुति, नव दीठां सीताय,
त्यारे निराश थई नेत्रे जळ भरता, चित्त करता चिंताय । ३३ ।

घिरे हुए उत्पन्न होता है, वैसे ही असुर-वंश में यह कोई भक्त शिरोमणि राजा उत्पन्न हुआ है । २५-२६ । यह विभीषण समस्त सद्गुणों से विभूषित हरि-भक्त है । उसे देखकर हनुमान प्रसन्न हो गया और उसने मन में सोचा । २७ । 'जब लंका में राम आएँगे, तो इनका काम करेंगे । वे रावण को मारकर निश्चय ही इन्हें राज्य देंगे ।' २८ । ऐसा (मन-ही-मन) कहते हुए हनुमान उसे नमस्कार करके वहाँ से चल दिया । अनन्तर उसने कुम्भकर्ण का भवन देखा । वहाँ उसने अपार दुर्गन्ध देखी । २९ । वह असुर वैसे ही सोया (हुआ दिखायी दे रहा) था, जैसे मंदर पर्वत ही पड़ा हुआ हो, उसकी नाक (खर्राटे की) ध्वनि उत्पन्न करती थी, मानो मेघ ही गड़गड़ा रहा हो । (साँस-उसाँस से) वायु पूरी शक्ति के साथ चल रही थी । ३० । 'इसका समस्त जन्म मिथ्या हो जाएगा'— ऐसा कहते हुए हनुमान कुम्भकर्ण के घर का त्याग करके चल दिया, उसने वहाँ अपार दुर्गन्ध (ही) देखी थी । ३१ । जिस प्रकार अग्निहोत्री अन्त्यज के घर को त्याग देता है, साधु विषय (-भोग) की बात त्यज देता है, उस प्रकार पवन-पुत्र हनुमान ने उस स्थान को छोड़ दिया, जिसपर उन्होंने अनाचार देखा । ३२ । इस प्रकार हनुमान घर-घर देखते हुए घूम रहा था; (परन्तु) उसने सीता को कहीं नहीं

अरे रामवियोगे सीताए, शुं कर्यो हशे देहत्याग ?
के सागरमां झंपलाव्युं हशे ? मने मळ्यां नहि महाभाग । ३४ ।
हुं खोळवा आव्यो खेप करी, सिंधु ओळंग्यो शत जोजन,
ते श्रम मारो मिथ्या गयो, एम मारुति शोचे मन । ३५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

मनमां शोचे मारुति, नव जड्यां जनकतनयाय रे,
कहे दास गिरधर ज्यम मळ्यां सीता, तेनी कहुं कथाय रे । ३६ ।

देखा । तब निराश होकर वह नेत्रों में (अश्रु) जल भरते हुए मन में चिन्ता करने लगा । ३३ । 'अरे, राम के वियोग से क्या सीता ने देह-त्याग (तो नहीं) किया होगा ? या सागर में वे कूद (तो नहीं) गयी होंगी ? (अतः) महाभाग्यवती नहीं मिली हैं । ३४ । मैं लंबी यात्रा करके उन्हें खोजने के लिए आया हूँ । मैंने सौ योजन (विस्तीर्ण) समुद्र का उल्लंघन किया है । मेरा यह परिश्रम व्यर्थ हो गया है ।' इस प्रकार हनुमान मन में चिन्ता करने लगा । ३५ ।

हनुमान मन में शोक करने लगा— मुझे जनक-तनया नहीं मिलीं । गिरधरदास कहते हैं, अब मैं, जैसे सीताजी मिल गयीं, उस सम्बन्धी कथा कहूँगा । ३६ ।

* * *

अध्याय—४ (रावण के शयन-गृह में हनुमान का आगमन)

राग मारु

हनुमंते जोयुं लंका गाम, नव दीठो सीतानो ठाम,
बळवंतने सरवे सहेल, पछे आव्यो रावणने महेल । १ ।
त्यां निशा विषे दसानन, करे छे होम विघ्ननाशन,
छे रावणने असंख्य राणी, ते मां मंदोदरी पटराणी । २ ।

अध्याय—४ (रावण के शयन-गृह में हनुमान का आगमन)

हनुमान ने लंकानगर देखा, (परन्तु) उसने सीता का स्थान नहीं देखा । बलवान को सब (कुछ) आसान ही (प्रतीत होता है) फिर (आगे जाने पर) रावण का प्रासाद आ गया । १ । वहाँ रात को रावण विघ्न-नाशन नामक होम कर रहा था । रावण के अनगिनत रानियाँ थीं । उनमें मन्दोदरी पटरानी थी । २ । नागिनी, पद्मिनी,

नागणी, पद्मणी, गांध्रवी, किन्नरी, देवकन्या, मानवी,
आसुरी आदे नारी अनेक, जेना रूपथी वळियो छेक । ३ ।
जेना चरणकमळनी वास, गुंजे खटपद चारे पास,
मोटा मुनिवर मूके धीर, लाजे चपळा ते चमके चीर । ४ ।
एवी नारीओ कपिए नीरखी, सुंदरी सरवे रति सरखी,
पोढियो पुष्पशय्यामांहे, हनुमंते दीठी त्यांहे । ५ ।
पोते इंद्रिजित महावीर, न पाम्या मोह नव गई धीर,
ऊर्ध्वरेता प्रिय घणुं राम, जेने स्वप्न विषे नहि काम । ६ ।
एवा वज्रदेही निप, फर्लेरे जोता करीने खेप,
जेम घटमांहे आकाश, निर्लेप व्यापक अवकाश । ७ ।
एम हनुमंत सघळे फरता, विशे संकल्प मन नथी करता,
पछे मंदोदरीने मंदिर आव्या, जोता जोता महावीर । ८ ।
निद्रावश थई पोढ़ी पलंग, मुखचंद्र कनक तनरंग,
ऊभा अदश्य रूपे त्यां सोय, मन जाण्युं ए जानकी ज होय । ९ ।

गन्धर्वी, किन्नरी, देवकन्या, मानवी, आसुरी आदि (जाति की रावण के) अनेक (ऐसी) स्त्रियाँ थीं, जिनके रूप (के प्रभाव) से वह बदल गया था, जिनके चरण-कमलों की सुगन्ध के कारण चारों ओर भ्रमर गुंजारव करते रहते थे और जिन्हें देखकर बड़े-बड़े मुनिवर (तक) धीरज खो बैठते। उनके जगमगाते वस्त्रों के सामने बिजली (भी) लज्जित हो जाती थी। ३-४। कपि हनुमान ने उस समय उन नारियों को देखा। वे सब रति के समान सुन्दर थीं। वे पुष्प-शय्याओं में सोयी हुई थीं। हनुमान ने वहाँ (ऐसी नारियों को) देखा। ५। वह महावीर हनुमान तो स्वयं जितेंद्रिय था, इसलिए (उन नारियों को देखकर) वह न मोह को प्राप्त हुआ, न उनका धैर्य नष्ट हो गया। वह राम के बहुत प्रिय भक्त और ऊर्ध्वरेता था, जिसके स्वप्न में भी काम-विकार नहीं (उत्पन्न होता) था। ६। उस समय वह वज्रदेही तथा निर्लेप (विषय विकारों से अप्रभावित) हनुमान घूमते-घूमते देख रहा था, जिस प्रकार घट में (प्रतिबिंबित) होने पर भी आकाश निर्लेप (अप्रभावित) एवं व्यापक बना रहता है। उस प्रकार हनुमान सब स्थानों पर घूमते हुए भी उनके विषय में मन में कोई आसक्ति नहीं रखता था। अनन्तर देखते-देखते (खोजते हुए) वह महावीर मन्दोदरी के भवन में आ गया। ७-८। वह निद्रावश होकर पलंग पर लेटी हुई थी। उसका मुख चन्द्रमा के समान था; शरीर का रंग सोने-का-सा था। वह (हनुमान) वहाँ

सूती पवित्रपणे पतिव्रता, हशे ये भूमिजा सत्यधूता,
थई स्फुरणा कह्युं'तु जे राम, नथी स्मरण थतुं रामनाम । १० ।
सुंघी जोयुं मारुतिए मुख, मदगंध जोई पाम्या दुःख;
न होय सीता जे जनककुमारी, आ दीसे छे असुरनी नारी । ११ ।
एटले करी होम निरविघन, आव्यो रावण रंगभोवन,
त्यारे ऊठे मंदोदरी राणी, धोया पतिपद निर्मळ पाणी । १२ ।
पछी पधराव्यो पर्यंकमांहे, पतिसेवा करंती त्यांहे,
दीठो वायुसुते दशानन, जोई क्षोभ पाम्यो घणुं मन । १३ ।
निद्रावश थयां वे जण, ज्यारे अंजनीसुत मनमां विचारे,
लेउं ऊंचकी अहींथी पलंग, जई नाखुं सिंधु जळसंग । १४ ।
नीकर लई जाउं ऋषिमुक, जोई रघुपति पामे सुख,
के रावणने मारुं आ ठार, नथी आज्ञा जुगदाधार । १५ ।
एम विचारे मारुति मन, एवे राणीने आव्युं स्वप्न,
जागी झवकीने तेणी वार, कहे छे रावण प्रत्ये विचार । १६ ।

अदृश्य रूप से खड़ा रह गया और मन में समझ गया कि वह जानकी ही है । ९ । यह पतिव्रता पवित्रता के साथ सोयी है । सत्यव्रत से पवित्र हुई यह भूमिकन्या ही होगी । परन्तु उसे वह स्मरण हुआ, जो राम ने कहा था । (उसने देखा कि) उसे रामनाम का स्मरण नहीं हो रहा था । १० । (फिर) हनुमान ने उसके मुख को सूँघकर देखा, तो मद्य की बास (को आते) देखकर वह दुःख को प्राप्त हो गया । (तब विश्वास हुआ कि) जो सीता जनक-कुमारी हैं, वह यह नहीं है । यह कोई असुर की स्त्री दिखायी दे रही है । ११ । इतने में निर्विघ्न नामक होम करके रावण रंग-भवन में आ गया । तब रानी मन्दोदरी उठ गयी । उसने स्वच्छ पानी से पति के चरण धोये । १२ । अनन्तर उसे सम्मान-पूर्वक पलंग पर ले आकर वह वहाँ पति की सेवा करती रही । (जब) वायु-कुमार ने रावण को देखा, तो उसे देखकर वह मन में बहुत क्षोभ को प्राप्त हो गया । १३ । जब वे दोनों जने निद्रा-वश हो गये, तो अंजनी-कुमार ने मन में सोचा— यहाँ से पलंग को उठाकर ले लूँ और जाकर समुद्र के जल में फेंक दूँ । १४ । नहीं तो उसे ऋष्यमूक पर्वत पर ले जाऊँगा, उसे देखकर रघुपति सुख को प्राप्त हो सकेंगे । या इस स्थान पर रावण को मार डालूँगा— (परन्तु) जगदाधार श्रीराम की ऐसी आज्ञा तो नहीं है । १५ । हनुमान मन में ऐसा विचार कर ही रहा था, तो उस समय रानी ने एक सपना देखा ।

स्वामी आपो सीताने आज, नहि तो थाशे विपरीत काज,
मने आव्युं हवडां स्वप्न, तेमां सूचव्या मानशुकन । १७ ।
एक वानरे उजाड्युं वन, मार्यो अखेकुमार मुज तन,
तेणे बाळ्युं लंकागाम, पछे सैन्य लई आव्या राम । १८ ।
तेणे तमने मार्या कुळसहित, कुंभकरण आदे इंद्रजित,
माटे स्वामी विचारो मर्म, ए तो राम छे पूरणब्रह्म । १९ ।
तेनी राणी सीता लई आज, जाओ रामशरण महाराज,
नथी मनुष्य राम निरवाण, अवतर्या छे ए पुरुषपुराण । २० ।
तमो सर्व जीव्युं थई धीर, पण नहि जिताय रघुवीर,
परस्त्रीनो अभिलाषी अधम, कहो सुख पामे ते क्यम ? । २१ ।
बांधी छाती उपर पाषाण, तरे सागर एवो कोण ?
विषपान करे नर जेह, तेथी अमर न थाये तेह । २२ ।
सर्पने मुख घालतां हाथ, केम दंश करे नहि नाथ ?
माटे राम साथे वैर पामी, केम सुखे वरतशो स्वामी । २३ ।

उस समय चकित होकर वह जग गयी । (फिर) उसने रावण से यह विचार (बात) कहा । १६ । 'हे स्वामी, सीता आज (लौटा) दीजिए; नहीं तो विपरीत काम हो जाएगा । मैंने अभी एक स्वप्न देखा । उसमें अपशकुन सूचित हैं । १७ । एक वानर ने वन को उजाड़ डाला और मेरे पुत्र अक्षकुमार को मार डाला । उसने लंका-नगरी को जला डाला । फिर राम सेना लेकर आये । १८ । उन्होंने आपको, कुम्भकर्ण, इंद्रजित आदि को कुल-सहित मार डाला । इसलिए हे स्वामी, इसके मर्म पर विचार करो । वे राम तो पूर्ण ब्रह्म हैं । १९ । हे महाराज, उनकी रानी सीता को लेकर आज आप राम की शरण में जाइए । राम निश्चय ही मनुष्य नहीं हैं । वे तो पुराण-पुरुष अवतरित हुए हैं । २० । आपने धीर पुरुष होकर सब जीता है, फिर भी रघुवीर को आप नहीं जीत पाएँगे । कहिए पर-स्त्री का अभिलाषी अधम पुरुष सुख को कैसे प्राप्त हो पाएगा । २१ । जो छाती पर पत्थर बाँधकर सागर को तैरकर (पार) करे, ऐसा कौन है ? जो नर विष-पान करता हो, वह उससे अमर नहीं हो जाता । २२ । हे नाथ, सर्प के मुख में हाथ डालने पर वह कैसे दंश नहीं करेगा ? इसलिए हे स्वामी, राम के साथ वैर को प्राप्त होकर आप सुख में कैसे रहेंगे ? २३ । कहिए, तो मैं राम की शरण में जाऊँ और उनकी स्तुति करके मृत्यु से बचा लूँ । वे

कहो तो हुं जाउं रामने शरण, स्तुति करीने उगारुं मरण,
दयाळु छे ए श्रीभगवान, मागी लावुं ए वात निदान । २४ ।
राणीनां सुणी एवां वचन, हसी बोल्यो तव राजन,
तुं चिंता करे छे शाने? नथी मरण मूकतुं कोने । २५ ।
नीच - ऊंच, राय ने रंक, सर्वे भोगवे आडे अंक,
प्राचीन करम तेणे अनुसार, वर्ते जीव सकळ संसार । २६ ।
जे थनार होय ते थाय, पण पाछी न आपुं सीताय,
एटलुं सर्वे वर्तमान, तेणे सुण्युं हनुमंते काम । २७ ।
एक अनुचरी मोकली राय, जोने शुं करे छे सीताय;
तेनी पूंठे चाल्यो हनुमंत, आव्यो अशोक वन वळवंत । २८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

बळवंत श्रीहनुमंत आव्यो अशोकवाडी मांह्य रे,
त्यारे अशोक तरुनी तळे बेठां, दीठां सीता त्यांह्य रे । २९ ।

* * *

श्रीभगवान दयालु हैं। मैं यह बात निश्चय ही माँगकर ले आऊँगी । २४ । तब रानी के ऐसे वचन सुनकर रावण हँसकर बोला— 'तू किसलिए चिन्ता कर रही है। मृत्यु किसी को नहीं छोड़ती । २५ । नीच-ऊँच, राजा और रंक सब चरम सीमा तक भोग तो भोगते हैं। संसार में समस्त जीव पूर्व कर्म के अनुसार व्यवहार करते हैं । २६ । जो होनेवाला हो, वह हो जाए। परन्तु मैं सीता न दूँगा।' हनुमान ने इतना सब समाचार (सम्वाद) अपने कानों से सुना । २७ । (तदनन्तर) राजा ने यह देखने के लिए एक दासी को भेजा कि सीता क्या कर रही है। बलवान हनुमान उसके पीछे-पीछे चला गया और अशोक वन में आ गया । २८ ।

बलवान हनुमान अशोक वन में आ गया। तब, उसने वहाँ अशोक वृक्ष के तले बैठी हुई सीता को देखा । २९ ।

* * *

अध्याय—५ (राम की मुद्रिका को देखकर सीता द्वारा शोक करना)

राग भैरवी

हनुमंत आव्या अशोकवनमां, दीठां जनककुमार,
पांच कोटी राक्षसी, करे रक्षा तेणे ठार। १ ।
त्यां जानकी ध्यानस्थ बेठां, अशोक तरुनी छांये,
चोपास वृक्ष-पाषाणमां, रामनाम धूनि थाय त्यांहे। २ ।
सीताना मुखनी सुगंधी, चाले कर्पूर वंत,
अंगे मृगमद वासना जोई, मळ्युं सहु दृष्टांत। ३ ।
त्यां गुप्त रूपे अंजनीसुत, आवी लाग्या पाय,
हनुमंत हरख ने शोक पाम्या, जोई तदा सीताय। ४ ।
पासे मूकी मुद्रिका, पछे चढ्या तरुवर डाळ,
सूक्ष्म रूपे तरुलतामां, गुप्त रह्या ते काळ। ५ ।
पाछली रजनी खट घडी छे, ध्यानमां सीताय,
नखशिख मूर्ति रामनी, अवलोकतां जगमाय। ६ ।
त्यारे मुद्रिका दीठी नहि, कर विषे तेणी वार,
जानकी जाग्यां ध्यानथी, नेत्र उघाड्यां निरधार। ७ ।

अध्याय—५ (राम की मुद्रिका को देखकर सीता द्वारा शोक करना)

(जब) हनुमान अशोक वन में आ गया, तो उसने जनक-कन्या सीता को देखा। (उसे दिखायी दिया कि) उस स्थान पर पाँच करोड़ राक्षसियाँ रखवाली कर रही हैं। १। वहाँ अशोक वृक्ष की छाया में सीता ध्यानस्थ बैठी हुई थी। वहाँ चारों ओर (के) वृक्षों और पाषाणों में (से) राम-नाम ध्वनि (उत्पन्न) हो रही थी। २। सीता के मुँह की कपूर की-सी सुगन्ध फैल रही थी। उसके अंग से कस्तूरी की गन्ध को निकलते देखने पर (हनुमान को राम द्वारा बताया हुआ) समस्त दृष्टान्त (संकेत यथार्थ रूप में) मिल गया। ३। (त्यों ही) अंजनी-सुत हनुमान वहाँ गुप्त रूप से आते हुए (सीता के) पाँव लगा। तब सीता को देखकर वह आनन्द तथा (साथ ही) शोक को प्राप्त हो गया। ४। उसने (सीता के) पास अँगूठी रख दी और अनन्तर वह पेड़ की शाखा पर चढ़ गया। उस समय वह वृक्ष और लता में सूक्ष्म रूप से गुप्त रह गया। ५। रात की अन्तिम छः घड़ियों में जगन्माता सीता ध्यान में (लीन हुई) बैठी थीं और राम की नख (से) शिख (तक अर्थात् सम्पूर्ण) मूर्ति का अवलोकन कर रही थी। ६। तब उसने (राम के) हाथ में उस समय मुद्रिका नहीं

पासे पडेली मुद्रिकानुं, थयुं त्यां दर्शन,
करमांहे लईने रुदे चांपी, आंसु आव्या लोचन । ८ ।
हे मुद्रिके मुज मात कहे तुंने, कोण लाव्युं आंहे ?
सौमित्री साथे रघुपति, साचुं कहे छे क्यांहे ? । ९ ।
शुं प्राणपतिए मुज उपरथी, उतार्यो छे प्रेम,
चरअचरना नायक रामनी, तुं कहे स्वस्ति क्षेम । १० ।
प्रभु तजीने तुं केम आवी ? ते रह्या कोण ठार ?
एम कही विलाप करे घणा, वैदेही तेणी वार । ११ ।
हे राम, हे लक्ष्मण धनुर्धर, पराक्रमी रणधीर,
विहारी सरज्युतीरना, मुंने दर्शन द्यो रघुवीर । १२ ।
एक हारनुं अंतर हतुं, ज्यारे करता आलिंगन,
ते प्रभुनुं अंतर हतुं, बिच सिंधु पर्वत वन । १३ ।
वाल्मीक मुनिए करी छे जे, भविष्य रामकथाय,
में बाळपणामां सुणी छे ते, मळयो नहि अभिप्राय । १४ ।

देखी, तो वह ध्यान से जागृत हो गयी और उसने निश्चय (-पूर्वक) ही आँखें खोलीं । ७ । तो वहाँ पास में पड़ी हुई मुद्रिका का उसे दर्शन हुआ। (फिर) उसने उसे हाथ में लेकर हृदय से (दृढ़ता-पूर्वक) लगा लिया। उसकी आँखों में आँसू (भर) आये । ८ । (तत्पश्चात् वह उससे बोली—) 'हे मुद्रिका, मुझे यह बात बता दो, तुझे यहाँ कौन लाया? सच (-सच) कह दे, सौमित्र सहित रघुपति कहाँ हैं ? ९ । (मेरे) प्राण (-प्रिय) पति ने मुझ से प्रेम उतार (कम कर) दिया है क्या ? तू चराचर के नायक राम की क्षेम-कुशल कह दे । १० । प्रभु को छोड़कर तू कैसे आ गयी ? वे किस स्थान पर ठहरे हैं ?' इस प्रकार कहते हुए सीता उस समय बहुत विलाप करने लगी । ११ । (वह बोली—) 'हे राम, हे लक्ष्मण, हे धनुर्धर, हे पराक्रमी रणधीर ! हे सरयू-तट पर विहार करनेवाले रघुवीर, मुझे दर्शन दीजिए । १२ । जब (आप मेरा) आलिगन करते, तो एक हार का अन्तर रहता; (वह भी आपको सहन नहीं होता था) । (परन्तु अब) उन्हीं प्रभु से (बहुत) अन्तर पड़ गया है— बीच में समुद्र, पर्वत और वन हैं । १३ । वाल्मीकि मुनि ने राम-कथा सम्बन्धी जो भविष्य (-कथन) किया है, उसे मैंने बचपन में सुना है; (परन्तु) उसका अभिप्राय (यथार्थ) नहीं मिला है ।' १४ । (उस कथा में कहा है—) 'एक कपि ने आकर इस अशोक वन को निश्चय ही उजाड़ डाला । लंका को जलाकर वह पीछे लौट गया और जगदाधार

एक कपिए आवी उजाड्यु आ, अशोक वन निरधार,
ते लंका बाळी गयो पाछो, चड्या जुगदाधार । १५ ।
सिंधु उपर पाज बांधी, ऊतर्या महाराज,
कुळ सहित रावण मारीने, विभीषणने आप्युं राज । १६ ।
एवुं भविष्य बोल्या छे मुनि ते थयुं नहि कंई काम,
ते काव्य शुं मिथ्या गयुं ? हजी मळ्या नहि मुंने राम । १७ ।
हे मुद्रिके ! मुज विरहथी, पाम्या विरति प्राणआधार,
थया गुप्त जोगीना ध्यानमां, के चढ्या भक्तनी वहार । १८ ।
हा हा राम राजीवलोचन, द्यो मुंने दरशन,
दशकंठ - रिपु विषकंठ - मित्र, शीतळ करो मुज मन । १९ ।
हा प्राणवल्लभ, प्राणजीवन, प्राणपति मुज नाथ,
आ शोकसिंधु बूडतां, प्रभु ग्रहो आवी हाथ । २० ।
मृगचर्म ईच्छाए करी, कंचुकी कारण मन,
में परम साधु छळ्या लक्ष्मण, कह्यां मर्मवचन । २१ ।
ते पाप माटे तजी मुजने, निश्चे श्रीभगवंत,
कल्पांत करतां जानकी एम, सुणे ते हनुमंत । २२ ।

(राम) ने (लंका पर) आक्रमण किया । १५ । महाराज (राम ने) समुद्र पर पुल बनवा दिया और वे (इस पार) उतर गये । (फिर) उन्होंने रावण को कुल-सहित मारकर विभीषण को राज्य दिया । १६ । मुनि ने इस प्रकार भविष्य कहा है । (परन्तु उसके अनुसार) कोई काम नहीं हुआ । क्या वह काव्य झूठा पड़ गया ? मुझसे अब भी राम नहीं मिले हैं । १७ । हे मुद्रिके, विरह के कारण मेरे प्राणाधार मुझसे विरक्ति को (तो नहीं) प्राप्त हो गये हैं । (कदाचित्) वे योगियों के ध्यान में गुप्त हो गये हों, अथवा भक्तों की सहायता के लिये दौड़ गये हों । १८ । हा, राजीव-लोचन राम, मुझे दर्शन दीजिए । हे दशकण्ठ (रावण) के शत्रु, हे विष-कण्ठ (शिवजी) के मित्र, मेरे मन को शीतल कर दीजिए । १९ । हे प्राण-वल्लभ, हे प्राण-जीवन, हे प्राण-पति, हे मेरे नाथ, हे प्रभु, इस शोक-सागर में मेरे डूबते रहने पर, आकर मेरे हाथ को थाम लीजिए । २० । कंचुकी (बना लेने) के हेतु मैंने मृग-चर्म की अभिलाषा की । मैंने परम साधु (-स्वरूप) लक्ष्मण को सताया, उनसे मर्म (चुभते) वचन कहे । २१ । निश्चय ही उस पाप के लिए श्रीभगवान ने मुझे त्याग दिया है । हनुमान ने जानकी को इस प्रकार कल्पान्त (शोक) करते सुना । २२ । तो फिर उसने अशोक वृक्ष में गुप्त रहते हुए गान

पछे गुप्त रहीने अशोक उपर, करवा मांड्युं गान,
कल्पांत मूकी सीताए, सुणवाने धरिया कान। २३।
छे रुद्रनो अवतार जे, साक्षात् श्रीहनुमंत,
ते रुद्रवीणा सुस्वरेथी, करे गान अनंत। २४।
मूळथी रामचरित्र सर्वे, गावा मांड्युं त्यांहे,
मंगळ ध्वनि ऊठ्यो तदा, ते अशोकना तरुमांहे। २५।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अशोक तरुथी धूनि ऊठी, सुणतां धरीने प्रीत रे,
कहे दास गिरधर सुणो श्रोता, कहुं रुद्रवीणागान रे। २६।

करना आरम्भ किया। तो सीता ने शोक (करना) छोड़कर (वह गान) सुनने के लिये (उस ओर) कान लगाये। २३। जो साक्षात् रुद्र का अवतार है, वह हनुमान रुद्र-वीणा के-से सुस्वर में अनन्त गान करने लगा। २४। उसने वहाँ मूल से समस्त राम-चरित्र का गान करना आरम्भ किया। तब उस अशोक के वृक्ष में से मंगल ध्वनि सुनायी देने लगी। २५।

अशोक वृक्ष में से ध्वनि उत्पन्न होने लगी, तो सीता प्रेम धारण करके सुनती रही। गिरधरदास कहते हैं— हे श्रोताओ, सुनिए। मैं वह रुद्र-वीणा गीत कहता (सुनाता) हूँ। २६।

* * *

अध्याय—६ (अशोक-वन में हनुमान द्वारा राम-चरित्र का गान और सीता की व्याकुलता)

राग विलावल

अवधपुरीनो राजियो, राय दशरथ जोते,
तेने घेर प्रगट थया, पुत्र परिब्रह्म पोते। अवध०। १

अध्याय—६ (अशोक-वन में हनुमान द्वारा राम-चरित्र का गान और सीता की व्याकुलता)

अयोध्यापुरी के दशरथराय नामक जो राजा थे, उनके घर परि(-पूर्ण) ब्रह्म स्वयं पुत्र रूप में प्रकट हुए। १। (दशरथ के) राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न नामक उन चार बलवान पुत्रों में राम को श्रीभगवान समझिए। २। रघुनाथ राम ने अनेक राक्षसों सहित ताड़का

राम लक्ष्मण ने भरतजी, शत्रुघन बळवंत,
ते चारे पुत्रमां रामजी, जाणो श्रीभगवंत। अवध०। २
तेणे मार्यां सुबाहु ने ताडिका, अनेक निशिचर साथ,
यज्ञ कराव्यो विश्वामित्रनो, रक्षा करी रघुनाथ। अवध०। ३
कोदंड खंडी चंडीशनुं वर्यां जनककुमारी,
भृगुपति गर्व उतारियो, पुरमां आव्या मोरारि। अवध०। ४
त्यारे अपर माते वर मागियो, राय पासे वचन,
आज्ञा पितानी पाळवा, राम नीकळ्या वन। अवध०। ५
सीता लक्ष्मण संगमां, चित्रकूटमां आव्या,
त्यां भरत आवी मळ्या भावशुं, बोध करीने वळाव्या। अवध०। ६
त्यां थकी आव्या गोदावरी, रह्या पंचवटी मांहे,
असुर घणाने मारिया, खर दुखर आदे त्यांहे। अवध०। ७
त्यारे सीतानुं हरण करी गयो, रावण लंकानो ईश,
ते खोळवाने पोते नीकळ्या, वनमां श्रीजुगदीश। अवध०। ८
पछी सुग्रीव साथे मैत्री करी, मार्यो वानर वाली,
शोध लेवा कपि मोकल्या, जोवा जनकनी बाळी। अवध०। ९

और सुबाहु को मार डाला, विश्वामित्र के यज्ञ को (पूरा) करवाया और (उसकी) रक्षा की। ३। उन्होंने शिवजी के धनुष को भग्न कर दिया और जनक-कन्या (सीता) का वरण किया। (फिर) भृगु (-कुल)-पति (परशुराम) का गर्व छुड़ाया और तदनन्तर वे मुरारि (भगवान राम) नगर में पधारे। ४। तव (पहले दिये हुए) अभिवचन के आधार पर अन्य माता (कैकेयी) ने राजा से वर माँग लिया। (फल-स्वरूप) पिता की आज्ञा का पालन करने के लिये राम वन में चले गये। ५। साथ में सीता और लक्ष्मण थे। वे चित्रकूट आ गये। वहाँ भरत आकर प्रेम-पूर्वक मिल गया, तो उसे बोध (उपदेश) करके उन्होंने लौटा दिया। ६। वहाँ से वे गोदावरी (-तट) आ गये और पंचवटी में रहे। उन्होंने वहाँ खर, दूषण आदि अनेकानेक असुरों को मार डाला। ७। तब लंका का राजा रावण सीता का अपहरण करके (उन्हें ले) गया। उन्हें खोजने के लिए श्रीजगदीश स्वयं वन में गये। ८। अनन्तर उन्होंने सुग्रीव के साथ मित्रता करके वानर बाली को मार डाला। (फिर) उन्होंने जनक की कन्या सीता की खोज करने, उसे देखने के लिए वानरों को भेज दिया। ९। (फिर) रघुकुल-केतु श्रीराम ने सेना को लेकर (आगे) संचरण किया; सागर पर सेतु बनवा लिया; फिर वे समुद्र के तीर पर उतर गये और

श्रीराम सेना लईने संचर्या, बांधी सागर सेतु,
जळनिधि तीरे ऊतर्या, रह्या रघुकुळ केतु। अवध०। १०
पछी जुद्ध करी रावण मारियो, विभीषणने राज आप्युं,
जानकी लेई अवध गया, देवनुं दुःख काप्युं। अवध०। ११
एम चरित्र अशेष श्रीरामनां, ते गायां हनुमंते,
सुंदर स्वरना गानथी, शीश डोलाव्युं अनंते। अवध०। १२
जड चेतन मोह पामियुं, स्थंभ्यां सरितानां वारि,
पशुपक्षी तन्मय थयां, निद्रित निशिचर नारी। अवध०। १३
पाछली रातनो चंद्रमा, रथ स्थिर थयो ज्यारे,
पाषाण प्रसर्या जळ थई, वायु थंभ्यो ते वारे। अवध०। १४
सहु राक्षस निद्रावश थया, राक्षसी मोह पामी,
रुद्रवीणा स्वरगानथी, सुद्धि सरवनी वामी। अवध०। १५
एवां चरित्र सुणी चिद्रूपनां, मंगळ धुनि मन मोह्युं,
तन्मय थईने जानकी, चारे पासे जोयुं। अवध०। १६
दीठुं नहि ज्यारे कोईने, त्यारे मनमां विचारे,
कांईक कपट दीसे छे असुर तणुं, कोण चरित्र उचारे? । अवध०। १७

ठहर गये। १०। फिर युद्ध करके उन्होंने रावण को मारा और विभीषण को राज्य प्रदान किया। (तदनन्तर) वे जानकी को लेकर अयोध्या (लौट) गये। (रावण के बन्दीगृह से मुक्त करके) उन्होंने देवों के दुःख को नष्ट कर दिया। ११। इस प्रकार हनुमान ने श्रीराम के सम्पूर्ण चरित्र का गान किया। सुन्दर (मधुर) स्वर में किये हुए गान से शेषनाग (तक) ने सिर हिलाया। १२। (गान सुनकर) जड़-चेतन मोह को प्राप्त हो गये; नदियों के जल (-प्रवाह) स्तब्ध हो गये; पशु-पक्षी तन्मय हो गये और (रखवाली करनेवाली) राक्षस-स्त्रियाँ निद्राधीन हो गयीं। १३। रात के अन्तिम भाग में जब चन्द्रमा का रथ स्थिर हो गया, तब पाषाण (भी द्रवित होने से) जल (-रूप) होकर फैल गये। उस समय वायु भी स्तब्ध हो गयी। १४। समस्त राक्षस निद्रावश हो गये; राक्षसियाँ मोह को प्राप्त हो गयीं। इस प्रकार रुद्र-वीणा के-से स्वर में किये गान से सब की सुध-बुध खो गयी। १५। चित्-स्वरूप भगवान राम के इस प्रकार के चरित्र सुनने पर उस मंगल ध्वनि (धुन) से सीता का मन मोहित हुआ। वह तन्मय होकर चारों ओर देखने लगी। १६। जब उसने किसी को नहीं देखा, तब मन में सोचा— किसी असुर का यह कुछ कपट दिखायी दे रहा है। (न जाने) किसने (प्रभु के चरित्र का)

त्यारे सीताने महाविरह थयो, धीरज गई सहु मनथी,
निश्चे कर्युं मनने विषे, प्राण तजुं हवे तनथी। अवध०। १८
फांसी घाली पछे कंठमां, वेणीनी लट ताणी;
रघुपतिनुं समरण करी, मुखे बोल्या वाणी। अवध०। १९
हे प्रभु ! ज्यां ज्यां देह धरुं, त्यां थाउं दासी तमारी;
स्वामीनी मूरति ध्यानमां, राखी जनककुमारी। अवध०। २०
त्यारे विपरीत दीठुं वायुसुते, सीता देह तजे जेवे,
गर्जना करी रामनामनी, कपि ऊतर्या तेवे। अवध०। २१

वलण (तर्ज़ बदलकर)

उतर्या अशोक उपरथी, त्यारे पासे आव्या हनुमंत रे,
जय राम जय राम जय राम कहीने, प्रगट थया बळवंत रे। २२।

* * *

उच्चारण (गान) किया है। १७। तब सीता के मन को बड़ा विरह अनुभव हुआ। उसके मन का समस्त धैर्य छूट गया। (फिर) उसने मनमें निश्चय किया— अब मैं शरीर से प्राणों को त्याग दूँगी। १८। फिर बेनी की लट को तानकर उन्होंने गले में फाँसी डाल ली और रघुपति का स्मरण करते हुए मुँह से यह बात बोली। १९। 'हे प्रभु, जब-जब मैं देह धारण करूँ, तब-तब मैं आपकी दासी हो जाऊँ।' (फिर) जनककुमारी ने अपने स्वामी की मूर्ति ध्यान में रख ली। २०। तब पवनकुमार ने (कुछ) विपरीत देखा। जिस समय सीता देह त्यागने को ही थी, उस समय रामनाम का गर्जन करके वह कपि (नीचे) उतर गया। २१।

अशोक वृक्ष पर से बलवान हनुमान नीचे उतर गया, तब वह (सीता के) समीप आ गया और 'राम की जय हो', 'राम की जय हो', 'राम की जय हो' कहते हुए (सामने) प्रकट हो गया। २२।

* * *

अध्याय—७ (सीता-हनुमान-भेंट, हनुमान द्वारा फल-भक्षण)

राग सामेरी

एम प्राण तजतां जानकी जोई, पाम्या कपिवर दुःख,
रघुनाथ पासे जईश त्यारे, शुं देखाडीश मुख ? । १ ।
एम विचारी ऊतर्या तत्क्षण, प्रगटिया हनुमंत,
साष्टांग करी जानकीचरणे, लागिया बळवंत । २ ।
पछी रह्या सन्मुख हाथ जोडी, ऊभा पवनकुमार,
हे कल्याणी ! मुज वात सुणो, छे कुशळ जुगदाधार । ३ ।
अंजनीसुतनां वचन सुणीने, सीता हरख्यां मन,
केशपाश काढी कंठथी, बोल्यां हेतवचन । ४ ।
शाली सुकाये जे समे, ते समे वरसे मेह,
ज्यम मळे अमृत अंतकाळे, अमर थाये तेह । ५ ।
महाजळनिधिमां बूडतां ज्यम, मळे आवी नाव,
एम मारुतिने जोई सीता, ऊपन्यो अति भाव । ६ ।

अध्याय—७ (सीता-हनुमान-भेंट, हनुमान द्वारा फल-भक्षण)

इस प्रकार जानकी को प्राणों का त्याग करते देखकर कपिवर हनुमान दुःख को प्राप्त हो गया । (उसने सोचा—) मैं (जब) श्रीराम के पास जाऊँगा, तब उन्हें क्या मुँह दिखाऊँ । १ । इस प्रकार विचार करके हनुमान तत्क्षण (वृक्ष से) उतर गया और (सीता के सम्मुख) प्रकट हो गया । (फिर) साष्टांग नमस्कार करके वह बलवान सीता के पाँव लगा । २ । अनन्तर पवनकुमार हनुमान उसके सामने हाथ जोड़े खड़ा रहा । (वह बोला—) 'हे कल्याणी, मेरी बात सुनिए । जगदाधार श्रीराम सकुशल हैं । ' ३ । अंजनी-कुमार की ये बातें सुनते ही सीता मन में आनन्दित हो गयी । (फिर) केश-पाश कण्ठ से निकालते हुए वह प्रेम-भरे वचन बोली । ४ । (उसे जान पड़ा कि यह ऐसा ही हुआ जैसे) जिस समय धान सूखने लग गया हो, (ठीक) उसी समय मेघ बरसा हो । अथवा जैसे (किसी के) अन्तकाल में उसे अमृत मिल गया हो, और वह अमर हो गया हो; अथवा महासागर में (किसी के) डूबते रहने पर जैसे उसे नाव आकर मिल गयी हो, वैसे ही हनुमान को देखकर सीता को (जान पड़ा और मन में) अत्यधिक प्रेम उत्पन्न हो गया । ५-६ । (फिर वह बोली—) 'हे मंगलदायक वीर, हे मंगल-स्वरूप, तुम कौन हो ? तुम कहाँ से आ गये हो ? कहाँ रहते हो ? मुझे सच्ची बात बता दो । ' ७

हे मंगळदायक वीर, मंगळरूप छे तुं कोण ?
क्यां थकी आव्यो क्यां रहे ? मने कहे साची वाण ? । ७ ।
मारुति कहे हे मात ! हुं छुं, राम केरो दास,
सुत वायुनो कपिरूप, मुज हनुमंत नाम प्रकाश । ८ ।
श्रीरामे मुंने मोकल्यो, करवा तमारी शोध,
तम कृपाए सिंधु ओळंगी, आवियो अविरोध । ९ ।
किष्किंधाए प्रभु रह्या छे, राम लक्ष्मण साथ;
त्यां वाली वानर मारियो, सुग्रीव कर्यो कपिनाथ । १० ।
आभूषण ने चीरपालव, नाख्यां'तां तमो जेह,
में जतन करीने राख्यां हतां, रामने आप्यां तेह । ११ ।
मुंने सुद्धि लेवा मोकल्यो, मुद्रिका आपी हाथ,
थोडा दिवसमां आवशे, मा कुशळ छे रघुनाथ । १२ ।
सुणी वचन वायुपुत्रनां, संतोष पाम्या सीत,
हे वीर कहे कंई वात छानी, आवे मुजने प्रतीत । १३ ।
हनुमंत कहे मुजने कह्युं, एकांत श्रीरघुवीर,
केकै तणे मंदिर तमो, धरतां हतां वनचीर । १४ ।

(इसपर) हनुमान ने कहा— 'हे माता, मैं राम का दास हूँ। मैं वायु (-देव) का वानर-रूप पुत्र हूँ। मेरा नाम हनुमान विख्यात है। ८। आपकी खोज करने के लिये श्रीराम ने मुझे भेजा है। आपकी कृपा से, बिना किसी विरोध (अवरोध) के समुद्र को लाँघकर आ गया हूँ। ९। प्रभु राम लक्ष्मण-सहित किष्किन्धा में ठहरे हुए हैं। वहाँ उन्होंने बाली नामक वानर को मार डालकर सुग्रीव को कपि-पति (वानरों का राजा) बना दिया। १०। आपने जो आभूषण और वस्त्र का आँचल फेंक दिया था, मैंने उन्हें सम्हालकर रखा था और राम को वे दिये हैं। ११। उन्होंने मुझे (आपकी) खोज करने के लिये भेजा; (तब) मुझे अपने हाथ की मुद्रिका दी थी। हे माता, रघुनाथ सकुशल हैं, वे थोड़े दिनों में आ जाएँगे।' १२। वायु-पुत्र हनुमान के ये वचन सुनकर सीता सन्तोष को प्राप्त हो गयी (और बोली—) 'हे भाई, कोई गुप्त बात तो बता दो, (जिससे तुम्हारे प्रति) मुझे विश्वास हो जाए।' १३। (तब) हनुमान ने कहा— 'श्रीरघुवीर ने मुझसे एकान्त में कहा— कैकेयी के भवन में आप वनचीर (वल्कल) पहनने जा रही थीं। १४। तब आँख के संकेत से (श्रीराम ने आपके द्वारा) वल्कलों को उतरवा दिया।' सीता बोली—

त्यारे नेत्र समस्याए करी, उतरावियां वनकुळ,
सीता कहे हनुमंतजी, खरी वात ए अनुकूळ। १५।
पण क्यारे रघुपति आवशे, टाळशे मारुं दुःख,
तन श्याम सुंदर कमळ सरीखुं, क्यारे देखीश मुख ? । १६।
मारुति कहे त्यां मेळव्युं छे, कपि सैन्य अपार,
अहीं थोडा दिनमां आवशे जाणजो जुगदाधार। १७।
ज्यारे सैन्य वानरनुं सुण्युं, त्यारे बोलियां सीताय,
भाई तुं सरखा कपिए करीने, रावण केम जिताय ? । १८।
एवां वचन सीतानां सुणी, धर्युं स्थूळ रूप प्रचंड,
जाणे मंद्राचळ मेरु तदा, उजाडशे ब्रह्मांड। १९।
एवुं भीमरूप देखाडियुं, महावज्र देह कराळ,
राक्षसनुं कुळ मारवा जाणे, अवतर्यो होय काळ ! । २०।
ते जोई सीता विचारे, ए रुद्रनो अवतार,
वैदेहीए विनति करी, पछी समाव्युं तेणी वार। २१।
हनुमंत कहे हुं सरीखा, छे कपि जोध अनेक,
रघुवीर पासे ते रह्या, हुं आव्यो एकाएक। २२।

'हे हनुमान, यह सच्ची और अनुकूल बात है। १५। परन्तु, रघुपति कब आएँगे ? मेरे दुःख को (कब) दूर करेंगे ? उनका शरीर श्याम सुन्दर कमल सदृश है। उनके मुख को मैं कब देखूँगी।' १६। हनुमान बोला— 'उन्होने वहाँ अपार कपि-सेना इकट्ठा की है। समझ लीजिए, जगदाधार श्रीराम थोड़े (ही) दिनों में यहाँ आएँगे। १७।' जब सीता ने 'वानरों की सेना' (की बात) सुनी, तो वह बोली— 'भाई, तुम जैसे वानरों द्वारा रावण को कैसे जीता जाएगा ?' १८। सीता की ऐसी बातें सुनकर हनुमान ने प्रचण्ड स्थूल रूप धारण किया; मानो मन्दर पर्वत (अथवा) मेरु ही हो, (जो) तब ब्रह्माण्ड (तक) को नष्ट कर सके। १९। उसने प्रचण्ड रूप— महान वज्र (-सा) कराल शरीर (धारण कर) दिखा दिया। मानो (उस रूप में) राक्षसों के कुल को मार डालने के लिए काल ही अवतरित हो गया हो। २०। उसे देखकर वैदेही सीता ने विचार किया कि यह तो रुद्र का ही अवतार है। उस समय उसने जब विनती की, तो फिर वह (साधारण रूप में) समा (सिकुड़) गया। २१। हनुमान ने कहा— 'मेरे समान अनेक कपि योद्धा हैं। वे रघुवीर के पास ठहर गये हैं; मैं तो यकायक आ गया हूँ। २२। मैं निश्चय ही रावण को मार सकता हूँ, लंका को उलटकर समुद्र-जल में डाल सकता हूँ।

मने नथी आज्ञा रामनी, मारुं रावणने निरधार,
लंका ऊंधी करी नाखुं, सागर जळमोझार । २३ ।
हवे माता मुजनें भूख लागी, आज्ञा आपो आज,
आ वनमां फळ पाक्यां, घणां ते करुं भक्षण काज । २४ ।
त्यारे सीता कहे भाई पडेलां, फळ खाओ जईने शूर,
रावणे रक्षा करवा मूक्या, साठ सहस्र असुर । २५ ।
एवुं सांभळी सीता तणे, चरणे नम्या कपिराज,
रघुवीर केरुं स्मरण करीने, चाल्या करवा काज । २६ ।
वनमां जई ऊभा रह्या, पछी विचार्युं हनुमंत,
रावण मुंने शुं जाणशे जे, आव्यो'तो बळवंत । २७ ।
तरु उपाडीने पृथ्वी उपर, पछाडे तेणी वार,
ते गगन मांहे उछाळता, करे पक्व फळनो आहार । २८ ।
एम वन सकळ उज्जड कर्युं, तरु भमता व्योम,
मुखकुंडमांहे राममंत्रे, करे फळनो होम । २९ ।
जे रामनाम स्मरण करे, जेनी सघन शीतळ छांये,
सीता तणी चोपासनां, तरु रहेवा दीधां त्यांये । ३० ।

फिर भी (ऐसा करने की) मुझे राम की आज्ञा नहीं है । २३ । हे माता, अब मुझे भूख लगी है । (अतः) आज मुझे आज्ञा दीजिए । इस वन में बहुत फल पक गये हैं, इसलिये उन्हें खाऊँगा । २४ । तब सीता ने कहा— 'भाई, जाकर (नीचे) गिरे हुए फल खाओ । रावण ने रखवाली करने के लिए साठ सहस्र असुर रखे हैं । ' २५ । ऐसा सुनकर उस कपिराज ने सीता के चरणों को नमस्कार किया और रघुवीर का स्मरण करके वह अपना काम करने को चल दिया । २६ । वन में जाकर वह खड़ा रहा । फिर उसने सोचा— रावण मुझे कैसे जान पाएगा कि कोई बलवान (यहाँ) आया था । २७ । (तदनन्तर) वह उस समय पेड़ों को उखाड़कर पृथ्वी पर पटकने लगा । वे आकाश में उछलते, तो वह पके हुए फलों को खाता रहा । २८ । इस प्रकार उसने समस्त वन को उजाड़ डाला । (उसके द्वारा उछाले हुए) वृक्ष आकाश में भ्रमण कर रहे थे । राम-मन्त्र के साथ (पढ़ते-पढ़ते) मुख रूपी कुण्ड में वह फलों का हवन करने लगा । २९ । उसने वहाँ सीता के चारों ओर के वृक्षों को (सुरक्षित) रहने दिया, जो रामनाम का स्मरण कर रहे थे और जिनकी शीतल घनी छाया में सीता बैठी हुई थी । ३० । रक्षकों ने उस कपि को सुन्दर वन उजाड़ते देखा, तो वे समस्त असुर गर्जन करते हुए आ गये और लड़ाई

रक्षके दीठो कपि ते, उजाडतो वन सार,
सहु-असुर आव्या गाजता, ते करे मारोमार । ३१ ।
विकराळ रूप धर्युं तदा, अंजनीनंदन त्यांहे,
सो-बसो बांधे पूंछडे, झापटे पृथ्वी माहे । ३२ ।
ज्यम फाटे फळ तुंबी तणां, एम पाम्या मरण असुर,
ते तणां शव सिंधुमां नाखे, उछाळीने शूर । ३३ ।
ते साठ सहस्र असुरमां, ऊगर्या कोई एक त्यांहे,
ते रावण पासे पोकारता, आव्या लंका मांहे । ३४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

लंकामां रावणनी पासे, आवी कर्यो पोकार रे;
एक वानरे उजाड्युं वन, वळी रक्षक मार्या अपार रे । ३५ ।

करने लगे । ३१ । तब वहाँ हनुमान ने विकराल रूप धारण किया और सौ-दो सौ (असुरों को एक साथ) पूँछ से बाँधकर वह भूमि पर पटकता रहा । ३२ । जिस प्रकार (पटकने पर) तूँबी के फल फट जाते हैं, उस प्रकार (पटकने पर छिन्न-विच्छिन्न होकर) असुर मृत्यु को प्राप्त हो गये । फिर उस शूर (कपि) ने उनके शव उछालकर समुद्र में डाल दिये । ३३ । वहाँ उन साठ सहस्र असुरों में से जो कुछ एक बच गये, वे चीखते-पुकारते हुए लंका में रावण के पास आ गये । ३४ ।

लंका में रावण के पास आकर उन्होंने शिकायत की कि एक वानर ने वन को उजाड़ डाला है, इसके अतिरिक्त उसने असंख्य रक्षकों को मार डाला है । ३५ ।

* * *

अध्याय—८ (अशोक-वन में हनुमान द्वारा राक्षसों का संहार)

राग मारु

समाचार सुण्या दशानन, हसी बोल्यो तव राजन,
ए वनचरना शा भार ? एने बांधी लावो आ ठार । १ ।

अध्याय—८ (अशोक-वन में हनुमान द्वारा राक्षसों का संहार)

(लंका के) राजा रावण ने (जब) यह समाचार सुना, तब वह हँसकर बोला— ' उस वनचर का क्या बोझ (मजाल) है ? उसे बाँधकर इस स्थान पर लाओ । ' १ । (फिर) उसने अस्सी सहस्र योद्धाओं को

ऐंशी सहस्र मोकल्या जोध, ते आव्या करीने क्रोध,
मुख्य जंबुमाली छे तेमां, बळ अतुलित कहीए जेमां। २।
आव्यो त्रिशूळ गहीने हाथ, जोई कोपे चढ्या कपिनाथ,
एक मुष्टि ते शिरमां मारी, भमी भूमि पड्यो ते सुरारि। ३।
पछे असुर सर्वने ताड्या, पूंछे बांधी-बांधीने पछाड्या,
जाण्युं रावणे ते परतक्ष, योद्धा मोकलिया एक लक्ष। ४।
तेमां सेनापति छे पंच, मल्ल प्रतिमल्ल बळना संच;
जंघ प्रजंघ ने रे जंघन आव्या क्रोध करीने मन। ५।
तेने दीठा ज्यारे कपिनाथ घणुं जुद्ध कर्युं तेनी साथ;
पछे सरवनो आण्यो अंत, रण गाज्या बळी हनुमंत। ६।
जे मुवा हनुमंतने हस्त, ते पाम्या उद्धार समस्त,
एम विजय पाम्या रणधीर, सिंहनाद कर्यो पछी वीर। ७।
एक देवीनुं देवळ त्यांये, हनुमंते दीठुं वनमांये,
अर्ध योजनमां विस्तार, स्थंभ सहस्र मणिमय सार। ८।
शिला स्फटिक केल कंचन, ऊंचु शिखर शोभे छे गगन,
इष्टदेवी ते रावण केरी; नित्ये पूजा थाय घणेरी। ९।

भेज दिया। वे क्रोध करके आ गये। उसमें मुख्य था जम्बुमाली, जिसके बल को अतुल्य (बेजोड़) कहिए। २। वह हाथ में त्रिशूल लिये हुए आ गया। उसे देखकर कपिनाथ हनुमान क्रोध में आ गया। उसने मस्तक पर एक घूँसा जमा दिया, तो वह सुरारि (देवों का शत्रु-राक्षस) भूमि पर गिर पड़ा। ३। अनन्तर उसने समस्त असुरों को पीट लिया और पूँछ से बाँध-बाँधकर पटक डाला। रावण ने जब स्पष्ट रूप से इसकी जानकारी पायी, तो उसने एक लाख योद्धा भेज दिये। ४। उसमें पाँच सेनापति थे— मल्ल और प्रतिमल्ल, जो मानो बल का संचय ही थे; तथा जंघ, प्रजंघ और जंघन। वे मन में क्रोध करके आ गये। ५। जब उन्होंने कपिवर हनुमान को देखा, तो उन्होंने उसके साथ बड़ा युद्ध किया। फिर वह उन सबका अन्त ले आया— अर्थात् उसने सबका अन्त कर दिया। (इस प्रकार) बलवान हनुमान ने युद्ध-भूमि में अपने नाम का डंका बजा दिया। ६। हनुमान के हाथों जो मर गये, वे समस्त उद्धार को प्राप्त हो गये। इस प्रकार वह रणधीर विजय को प्राप्त हो गया। फिर उस वीर ने सिंहनाद किया। ७। वहाँ वन में हनुमान ने देवी का एक मन्दिर देखा। वह आधे योजन तक फैला हुआ (अर्थात् विस्तीर्ण) था। उसके सहस्रों सुन्दर रत्नमय स्तम्भ थे। ८। वहाँ की शिलाएँ स्फटिक की थीं;

करे नित्य रुधिरनुं पान, ले छे ब्राह्मणनुं बळिदान,
दीठुं देवळ कपिए ज्यारे, मूळमांथी उखेड्युं त्यारे। १०।
कर्युं चूर्ण तत्क्षण तास, ते उछाळ्या उपल आकाश,
पक्षी नभमां ऊडे ज्यम, एवा पाषाण भमता त्यम। ११।
महापाप तणुं स्थळ जाणी, ना रहेवा दीधी एंधाणी,
पछे दीर्घरूप मदमाता, फरे रामचरित्र ज गाता। १२।
देवळना उछाळ्या पाषाण, पड्या नग्रमां थयां बुंबाण,
लोक कहे वरस्यो वरसाद, नासे करता बुंबापात। १३।
जाण्या रावणे ते समाचार, भांग्युं देवळ जोध संघार,
आपी आज्ञा करीने क्रोध, चढ्यो अक्षेकुमार महाजोध। १४।
बीजा साथे सप्त कुमार, वळी सैन्य तणो नहि पार,
ज्यां वनमां रह्या हनुमंत, त्यां आव्या असुर बळवंत। १५।
तव अक्षे कर्यो सिंहनाद हनुमंतने दीधो साद,
अल्या वनचर वानरवेश, ऊभो रहे मुज सन्मुख देश। १६।

(उन्हें जोड़ने के लिए प्रयुक्त) चूना (गारा) सोने का था। आकाश में उसका उत्तुंग शिखर शोभायमान था। वह (देवी) रावण की इष्ट देवी थी। नित्य उसकी बड़ी पूजा होती थी। ९। वह नित्य रक्त प्राशन करती थी और ब्राह्मण का बलिदान ग्रहण करती थी। जब वानर ने उस मन्दिर को देखा, तब उसने उसे मूल से उखाड़ लिया। १०। उसने उसका तत्क्षण चूर्ण कर डाला और पत्थर आकाश में उछाल दिये। जैसे पक्षी आकाश में (मँडराते हुए) उड़ते है, वैसे उस समय पत्थर भ्रमण करने लगे। ११। उसे महापाप का स्थल समझकर उसने उसका चिह्न (तक) न रहने दिया। फिर प्रचण्ड रूपधारी तथा प्रमत्त हनुमान राम-चरित्र ही का गान करते हुए भ्रमण करने लगा। १२। मन्दिर के (जो) पत्थर उछाले हुए थे, वे जब नगर में गिर गये, तो कोलाहल मच गया। लोगों ने कहा-- (पत्थरों की) वर्षा हो रही है। अतः वे चीखते-पुकारते हुए भागने लगे। १३। रावण को ये समाचार विदित हुए कि मन्दिर भग्न हो गया है और योद्धाओं का संहार हो गया है। तो उसने क्रोध करते हुए आज्ञा दी, तो महायोद्धा अक्षयकुमार चढ़ दौड़ा। १४। उसके साथ अन्य सात (राज-) कुमार थे। इसके अतिरिक्त (साथ ली हुई) सेना का कोई पार नहीं था। जहाँ वन में हनुमान ठहरा हुआ था, वहाँ वे वलवान असुर आ गये। १५। तब अक्षय ने सिंहनाद किया, और हनुमान को पुकारा (ललकारा)। वह बोला— 'अरे वानर-वेशधारी

हमणां करुं तारो संघार, मारुं नाम तो अक्षेकुमार,
एवां सांभळी गर्ववचन, त्यारे बोल्यो मारुततन। १७।
अल्या अक्षय नाम तुज व्यर्थ, हवडां तुज क्षय करुं अर्थ,
अल्या भूली घणुं तारी फोई, अक्षय नाम पाड्युं शुं जोई ? । १८ ।
एवुं सांभळतां चढी रीस, लागी झाळ ते पगथी शीश,
कर्युं धनुष चढावी सज्ज, मूक्यां अनेक बाण महाधज्ज । १९ ।
झाले मारुति आवतां एह, भांगी नाखे छे तत्क्षण तेह,
मारे कपिवर तरु पाषाण, घणा असुरना लीधा प्राण । २० ।
एम जुद्ध थयुं छे अपार, कहेतां ग्रंथ पामे विस्तार,
सप्त पुत्र आदे सैन्य जेह, अंजनीसुते मार्युं तेह । २१ ।
पछे हणियो अक्षयकुमार, देव करता जयजयकार,
पुत्रमरण दशानने जाण्युं, मनमांहे घणुं दुःख आण्युं । २२ ।
कपिनुं बळ जाणी विशेक, राक्षसी मोकली लक्ष एक,
तेनां परवत प्राय शरीर, जोई महारथी मूके धीर । २३ ।

वनचर, मेरे सम्मुख (इस) स्थान पर खड़ा रह। १६। अब मैं तेरा संहार करूँ, (तो ही) मेरा नाम अक्षयकुमार (चरितार्थ) है।' तब इस प्रकार के गर्व-सूचक शब्द सुनकर वायु-कुमार बोला। १७। 'अरे अक्षय, तेरा नाम व्यर्थ (अर्थहीन) है। मैं अभी तेरा यहाँ क्षय (नाश) कर देता हूँ। अरे, तेरी फूफी ने बड़ी भूल की। क्या देखकर उसने तेरा नाम अक्षय रखा।' १८। ऐसा सुनते ही उसे क्रोध आ गया। उसके पाँव से सिर तक (क्रोध की) आग (की ज्वाला) लग गयी। उसने धनुष को चढ़ाकर सज्ज किया और अनेक अति कठिन बाण चला दिये। १९। उन्हें आते-आते हनुमान ने पकड़ लिया और तत्क्षण उन्हें तोड़ डाला। (फिर) उस कपिवर ने (असुरों को) वृक्षों और पाषणों से मारा और अनेकानेक के प्राण लिये। २०। इस प्रकार (वहाँ) अपार युद्ध हो गया था। उसका वर्णन करने पर यह ग्रन्थ विस्तार को प्राप्त हो जाएगा। (रावण के) सात पुत्र आदि (के साथ) जो सेना थी, उसे अंजनी-कुमार ने मार डाला। २१। फिर उसने अक्षय-कुमार की हत्या की, तो देव जय-जयकार करने लगे। जब दशानन ने पुत्र की मृत्यु (सम्बन्धी वार्ता) जान ली, तो वह मन में बहुत दुःख लाया— अर्थात् उसे मन में बहुत दुःख हुआ। २२। (फिर) कपि के बल को विशेष (महत्त्वपूर्ण) समझकर उसने एक लाख राक्षसियों को भेज दिया। उनके शरीर पर्वत-प्राय थे। उन्हें देखते ही महारथी (तक) धैर्य त्याग देते। २३। उनके शरीर में

गज अयुत तणां बळ तन, मुख पहोळां अकेक योजन,
हनुमंते विचारी वात, धर्या तेटलां तन साक्षात । २४ ।
रूप सूक्ष्म धरीने त्यांये, प्रवेश्या तेनां मुखमांहे,
कर्यां उदरमां रूप विशाळ, तेनां पेट फोड्यां तत्काळ । २५ ।
एम कौतक कर्युं तेणी वारे, राक्षसी मरण पामी त्यारे,
एम कीधो सर्वनो नाश, थयो रावण सुणीने उदास । २६ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

उदास थयो ते सुणीने रावण, कर्युं कपिए विपरीत काज रे,
पछे इंद्रजितने आज्ञा आपी, लाव्य झाली वानरने आज रे । २७ ।

दस-दस सहस्र हाथियों का बल था । उनके मुख अनेक योजन चौड़े थे । हनुमान ने मन में एक बात सोची और प्रत्यक्ष उतने ही शरीर धारण किये । २४ । फिर वहाँ सूक्ष्म रूप धारण करके उनके मुखों में वह प्रविष्ट हो गया । (फिर) अपने रूपों को उसने (उन राक्षसियों के) पेटों में विशाल बना दिया, और उनके पेट तत्काल फाड़ डाले । २५ । इस प्रकार (हनुमान ने) उस समय लीला की । तब (समस्त) राक्षसियाँ मौत को प्राप्त हो गयीं । इस प्रकार उसने सबका संहार कर डाला । यह सुनकर रावण उदास हो गया । २६ ।

यह सुनकर रावण उदास हो गया (कि उस) कपि ने विपरीत काम कर दिया । अनन्तर उसने इन्द्रजित को आज्ञा दी— 'आज उस वानर को पकड़कर ले आओ ।' २७ ।

* * *

अध्याय—९ (हनुमान द्वारा इंद्रजित की दुर्दशा करना और हनुमान का ब्रह्मपाश में आबद्ध होकर रावण की राजसभा में आना)

राग धन्याक्षरी

आज्ञा मागी चढ्यो इंद्रजित जी, जे महाजोद्धो बळ·अतुलित जी,
रावणे पूछ्युं ब्रह्मा प्रत्ये जी, महूरत आपो जिताये ए शरते जी । १ ।

अध्याय—९ (हनुमान द्वारा इंद्रजित की दुर्दशा करना और हनुमान का ब्रह्मपाश में आबद्ध होकर रावण की राजसभा में आना)

इंद्रजित, जो महान योद्धा था और जिसका बल बेजोड़ था, आज्ञा लेकर चढ़ दौड़ा । तो रावण ने ब्रह्मा से कहा— '(ऐसा) मुहूरत (खोजकर) बता दो, जबकि इस प्रतिद्वंद्विता में (प्रतिद्वंद्वी) जीता

ढाळ

जिताय वानर सर्वथा, त्यारे विधि बोल्या वचन,
जाओ झलाशे ए कपि निश्चे, तजो चिंता मन। २ ।
इंद्रजित सेना लेई आव्यो, अशोक वनमोझार;
सिंहनाद कीधो मेघनादे, धरा कंपी अपार। ३ ।
भुभुकार नाद करी तदा, कोपे चढ्या कपिराज,
पछे मारुति मेघनाद वढता, जुए देवसमाज। ४ ।
एक असुरनी सांग लीधी, झडपीने हनुमंत,
ते सांगथी सहु सैन्य मार्युं, गाजियो बळवंत। ५ ।
एक तलप मारी ते समे, अंजनीपुत्र सुजाण,
इंद्रजित केरा करथकी, लीधां धनुष ने बाण। ६ ।
ते बाणथी रावणी केरो, मुगट पाड्यो त्यांहे,
तव इंद्रजित धनुष बीजुं, गह्युं निज करमांहे। ७ ।
ब्रह्मपाश मेल्युं मंत्र भणी, कर्युं कपिनुं बंधन अंग,
त्यारे तन वधार्युं मारुति, जाणे पुष्ट पर्वतशृंग। ८ ।

जाए। १। वह वानर सब प्रकार से (कैसे) जीता जाए।' इस पर विधाता ने यह बात कही— 'जाओ, निश्चय ही यह कपि पकड़ा जाएगा। मन की चिन्ता छोड़ दो।' २। (तदनन्तर) इंद्रजित अशोक वन के अन्दर सेना लिये हुए आ गया। जब उसने सिंहनाद किया, तो पृथ्वी बहुत काँप उठी। ३। तब उस कपिवर ने भुभुकार किया, वह क्रुद्ध हो गया। फिर हनुमान और इंद्रजित लड़ते रहे, तो (आकाश में से) देव-समुदाय देखता रहा। ४। हनुमान ने झपटकर एक राक्षस से साँग (छोटी बरछी छीन) ली। उस साँग से उसने समस्त सेना को मार डाला। (इस प्रकार) उस बलवान (कपि) ने अपने नाम का डंका बजा दिया। ५। सुजान अंजनी-कुमार ने उस समय एक छलाँग लगा दी और इंद्रजित के हाथ से धनुष और बाण (छीन) लिये। ६। फिर उस बाण से उसने रावण-पुत्र इंद्रजित का मुकुट वहाँ गिरा डाला। तब इंद्रजित ने हाथ में दूसरा धनुष ग्रहण किया। ७। (तदनन्तर) उसने मंत्र पढ़ते हुए ब्रह्मपाश डालकर कपि हनुमान के शरीर को आबद्ध किया। तब हनुमान ने अपने शरीर को (इतना) बढ़ा दिया, कि मानो वह कोई पुष्ट (प्रचण्ड) पर्वत-शिखर ही हो। ८। उस शूर ने उस पाश के बंधन को काटकर एक साँग चला दी, उससे इंद्रजित के रथ को भग्न कर

ते पाशबंधन तोडीने, एक सांग मारी शूर,
इंद्रजितनो रथ भांगियो, सारथि कीधो चूर। ९ ।
कर्यो नग्न फाडी वस्त्र त्यारे, नाठो असुरकुमार,
एक विवरमां पेठो तदा, भय पामीने तेणी वार। १० ।
पाषाण मोटो मूकियो ते, गुफामुख हनुमंत,
ते खबर जाणी रावणे, त्यारे थयो महा दुःखवंत। ११ ।
पछी प्रार्थना करी विधि तणी, हो पितामह महाराज,
तमे जाओ त्यां उतावळा, वानर झलावो आज। १२ ।
पुत्रनुं जीवितदान मुजने, आपो जई आ दन,
एवुं सुणी आव्या अशोकवन, ब्रह्म विचारी मन। १३ ।
इंद्रजितने ब्रह्मा कहे, तुं नीकळे हावे बहार,
कुमार कहे नहि नीकळुं, मुंने कपि मारे मार। १४ ।
करी प्रार्थना हनुमंतनी, परमेष्ठीए ततखेव,
हे वज्रदेही ! वचन मारुं, सत्य कर तुं देव। १५ ।
मुज पाशथी बंधाईने तुं, चाल रावण पास,
पछी पराक्रम देखाडजे, कह्युं मान रघुवरदास। १६ ।

डाला और सारथी को चूर-चूर कर डाला। ९। तब उसके वस्त्र को फाड़ते हुए उसने नंगा कर दिया, तो वह असुर-कुमार भाग गया। तब उस समय भय को प्राप्त होकर वह एक विवर में पैठ गया। १०। हनुमान ने उस गुफा (विवर) के मुख में एक बड़ा पत्थर रख दिया। रावण को जब यह समाचार विदित हुआ, तब वह अति दुखी हो गया। ११। अनन्तर उसने विधाता से प्रार्थना की— 'हे महाराज पितामह, तुम वहाँ शीघ्रता से जाओ और उस वानर को पकड़वाओ। १२। (वहाँ) जाकर इस दिन (आज) मुझे पुत्र का जीव-दान दो।' ऐसा सुनते ही ब्रह्मा मन में विचार करते हुए अशोक वन में आ गया। १३। (फिर) ब्रह्मा ने इंद्रजित से कहा— 'तुम अब बाहर निकल आओ।' तो (रावण-) कुमार ने कहा— 'मैं नहीं निकल सकता— मुझे वह कपि बहुत मारता-पीटता है।' १४। (तत्पश्चात्) परमेष्ठी (ब्रह्मा) ने तत्क्षण हनुमान से विनती की— 'हे वज्रदेही, हे देव, मेरी बात को तुम सत्य कर दो। १५। मेरे पाश में (अपने को) बँधवाते हुए तुम रावण के पास चलो। फिर पराक्रम दिखला देना। हे रघुवर राम के दास, मेरी कही मान लो।' १६। ऐसा कहते हुए विधाता ने पाश डाल दिया, और हनुमान को बाँध लिया गया। फिर वह बलवान

एवुं कही विधिए पाश मूक्यो, बंधाया हनुमंत,
पछी विवरमांथी नीकळ्यो, इंद्रजित ते बळवंत । १७ ।
तेणे दोर मोटा लावीने, बांधियो पवनकुमार,
ते बंधन कंई नव लेखवे, हनुमंत मन मोझार । १८ ।
संसारना बंधन विषे, देखाय ज्ञानी जेम,
पण अंतरमांहे मुक्त छे, हनुमंत जाणो तेम । १९ ।
शक्रारि ने वळी परमेष्ठी, ते लेई चाल्या हनुमंत,
पछे रावण केरी सभामांहे, आविया बळवंत । २० ।
मारग विषे मारे असुर ते, अनेक शस्त्रना घाय,
महावज्र देहमां वागतां, ते सर्व भांगी जाय । २१ ।
हनुमंतने जोई रावणने मन, चडी सबळी रीस,
अधर पीसे दंतशुं, रातो थयो दशशीश । २२ ।
त्यारे बंधन सर्वे तोडियुं, वायुसुते तेणी वार,
पछे कुंडाळुं करी पूंछासन, बेठा सभा मोझार । २३ ।
त्यारे रावण पूछे रीसथी, अल्या मर्कट छे तुं कोण ?
तुं दूत कोनो, क्यांथी आव्यो ? कहे साची वाण । २४ ।

इंद्रजित विवर में से बाहर निकल गया । १७ । उसने मोटी रस्सी लाकर हनुमान को बाँध दिया । (परन्तु) हनुमान उस बंधन को मन में कुछ भी नहीं मान रहा था । १८ । जिस प्रकार ज्ञानी व्यक्ति संसार के बंधनों में (उलझा हुआ) दिखायी तो देता है, परन्तु वह अन्दर से मुक्त होता है, हनुमान को उस प्रकार (आबद्ध होने पर भी मुक्त) समझिए । १९ । इंद्रजित और उसके अतिरिक्त ब्रह्मा— (दोनों) हनुमान को लिये हुए चले । अनन्तर वह बलवान (कपि) रावण की सभा में आ गया । २० । मार्ग में असुरों ने उस पर अनेक शस्त्रों से आघात किये; परन्तु उसकी वज्र (-सी कठिन) देह में लगते ही वे सब टूट जाते थे । २१ । हनुमान को देखते ही रावण के मन में अत्यधिक क्रोध उत्पन्न हो गया । उसने दाँतों से होंठ चबाये । (मारे क्रोध के) रावण लाल हो गया । २२ । तब उस समय हनुमान ने समस्त बंधन तोड़ डाले और फिर वह सभा में (पूँछ को) कुंडलाकार बनाते हुए उस पुच्छासन पर बैठ गया । २३ । तब रावण ने क्रोध से पूछा— ' अरे मर्कट, तू कौन है ? तू किसका दूत है ? कहाँ से आया है ? सच्ची बात कह दे । ' २४ । (इस पर) हनुमान बोला— ' रे दुष्ट मच्छड़, रे पापी, रे दुर्मतिवान ! मैं तेरे कुल का काल हूँ । मैं तेरा अन्त करने के लिए

हनुमंत कहे रे दुष्ट मशक, पापी दुरमतिवंत,
तुज कुळ तणो हुं काळ छुं, अवतर्यो करवा अंत । २५ ।
तुज रुदेपरथी धनुष लेईने, भंग कीधुं तास,
जेणे जिवाड्यो तुजने, ते रामनो हुं दास । २६ ।
जेणे सुबाहु ताडिका मार्या, करी यज्ञरक्षाय,
तुज भगिनी केरां करण-नासा, छेदी ते रघुराय । २७ ।
खर दुखर त्रिशरा आदि मार्या, असुर जे बळवंत,
हुं दास छुं ते रामनो; मुज नाम ते हनुमंत । २८ ।
तने शिक्षा करवा आवियो, कर्यो सकळ दळ संघार,
अशोकवन उजाडी मार्या, अक्षय आदि कुमार । २९ ।
इंद्रजितने में गांजियो, टाळ्यो देवळ केरो ठाम,
ए विना वळी बीजुं करुं, पण नथी आज्ञा राम । ३० ।
ते मने क्यम नव ओळखे ? सुण दुष्ट लोचन अंध,
काले रघुवर आवशे, करी सागर सेतु बंध । ३१ ।
दश शीश छेदी ताहरां, दश दिशामां बळिदान,
ते आपशे अयोध्यापति, तुं सत्य सुणजे कान । ३२ ।

अवतरित हूँ । २५ । जिसने (तेरे) हृदय पर से धनुष (उठा) लेकर उसे तोड़ डाला और जिसने तुझे जिला दिया, उस राम का मैं दास हूँ । २६ । जिसने सुबाहु और ताड़का को मार डाला और (विश्वामित्र के) यज्ञ की रक्षा की, जिसने तेरी बहन के कान-नाक को छेद डाला, वह रघुराज राम है (जिसका मैं दास हूँ) । २७ । खर, दूषण, त्रिशिरा आदि जो बलवान राक्षस थे, उनको जिसने मार डाला, उस राम का मैं दास हूँ । मेरा नाम हनुमान है । २८ । मैं तुझे दण्ड देने आ गया हूँ । मैंने (तेरे) समस्त दल का संहार कर डाला है । अशोक वन को उजाड़कर मैंने (तेरे) अक्षय आदि कुमारों को मार डाला है । २९ । मैंने इंद्रजित को सता दिया, मंदिर के स्थान को हटा दिया (उद्ध्वस्त कर डाला) । इसके अतिरिक्त, मैं दूसरा (भी कुछ) कर सकता हूँ, परन्तु राम की (मुझे वैसा करने की) आज्ञा नहीं है । ३० । मुझे तू कैसे नहीं पहचान रहा है ? रे दुष्ट, रे आँखों के अंधे, सुन । सागर पर सेतु बनाकर कल रघुवर राम आएँगे । ३१ । वे अयोध्यापति तेरे दसों मस्तकों को छेदकर दसों दिशाओं में बलिदान देंगे । कानों से इस सत्य को तू सुन लेना । ३२ । जैसे घर में कोई कुत्ता आकर कोई वस्तु लेकर जाता है, रे चोर, तू वैसे ही अपहरण करके सीता को

घरमां थकी ज्यम श्वान आवी, वस्तु लेईने जाय,
अरे तस्कर एम लाव्यो, हरण करी सीताय । ३३ ।
सुणी रावणे मन विचार्युं, ए वज्रदेही जाण,
स्वामी उपासक सत्यवचनी, नहि मरे निर्वाण । ३४ ।
त्यारे रावण कहे रे कपि तारुं, मरण कहे मने सत्य,
हनुमंत कहे हुं अमर छुं, ते जाणजे दुरमत्य । ३५ ।
रावण कहे रे ब्रह्मादिकनो, थाये काळे नाश,
माटे मरण तारुं थाय नहि क्यम ? कहे सत्य प्रकाश । ३६ ।
हनुमंत कहे अमो कपि केरुं, पूंछमां जीवन,
जो पूंछ बाळे अमारुं तो, पडे निश्चे तन । ३७ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पछे निश्चे पडे तन कपिनुं, जो पूंछ बाळे सत्य रे,
एवां वचन सुणीने रावणे, करी बाळवानी मत्य रे । ३८ ।

* * *

लाया है । ' ३३ । रावण ने यह सुनकर मन में सोचा— इसे तो वज्रदेही समझो; अपने स्वामी का उपासक, सत्य-वचनी अन्ततः मरेगा तो नहीं । ३४ । तब रावण ने कहा— ' रे कपि, मुझे अपनी मौत का सच्चा रहस्य बता दे । ' तो हनुमान ने कहा— ' मैं अमर हूँ— इसे रे दुर्मति, जान लेना । ' ३५ । (फिर) रावण बोला— ' यथाकाल ब्रह्मा आदि (तक) का नाश होता है, अतः तेरी मौत कैसे नहीं होगी ? तू स्पष्ट रूप से सत्य कह दे । ' ३६ । (इस पर) हनुमान ने कहा— ' हम कपियों का पूँछ में ही जीवन होता है । (अतः) यदि हमारी पूँछ को जला दे पाओ, तो निश्चय ही हमारा शरीर छूट जाएगा । ३७ ।

यदि मेरी पूँछ को सचमुच जला पाओ, तो कपि का शरीर निश्चय ही छूट जाएगा । ' ऐसी बातें सुनते ही रावण ने (हनुमान की) पूँछ को जलवाने का विचार किया । ३८ ।

* * *

अध्याय—१० (हनुमान द्वारा लंकादहन, हनुमान-ब्रह्मा भेंट)

राग सोरठ

हनुमंत केरां वचन सुणीने, हसियो रावणराय,
पछी पूंछ बाळवा कारण सर्वे, करवा लाग्या उपाय। १।
अनेक वस्त्र भींजवी तेलमां, वींट्यां कपिने पूंछ,
त्यम त्यम लांगूल लांबुं वधे छे, देखीतुं महागूंछ। २।
ज्यम बोलतां वाणी वधे पंडितनी, महाकविनी पदरचनाय,
एम पटकुळ ज्यम लावी वींटे, त्यम लांगूल लांबुं थाय। ३।
त्यारे घणां गोदडां लावी गामनां, बोळ्यां तेल मोझार,
ते भींजवता घृत-तेल ज खूट्युं, नावे पूंछनो पार। ४।
पछे अग्नि चेतावा लाग्या सर्वे, नव चेते ते ठाम,
अनेक उपाय करीने थाक्या, स्पर्श करे नहि नाम। ५।
त्यारे रावण कहे लावो हुं चेतावुं, बेठो जईने पास,
त्यारे वेद-जात-वायुनी प्रार्थना, करी हनुमंत प्रकाश। ६।
थयो ओचिंतो भडको ज्यारे, फूंक मारी दशानन,
तव दाढीमूछ बळी रावणनी, वरवुं थयुं छे वदन। ७।

अध्याय—१० (हनुमान द्वारा लंकादहन, हनुमान-ब्रह्मा भेंट)

हनुमान की बातें सुनकर राजा रावण हँस पड़ा। फिर वे सब पूँछ को जलाने के लिए उपाय (व्यवस्था) करने लगे। १। अनेक वस्त्र तेल में भिगोकर वे उन्हें उस कपि की पूँछ में लपेटते जाते, वैसे-वैसे पूँछ लम्बी बढ़ती जा रही थी। वह बड़ी अंटी-सी दीखने लगी। २। जैसे बोलते-बोलते किसी पण्डित की वाणी वृद्धि को प्राप्त हो जाती है, जैसे महाकवि की पद्य-रचना विस्तार को प्राप्त हो जाती है, वैसे ही, (जब) वे वस्त्र लाकर लपेटते जाते थे, वैसे-वैसे पूँछ लम्बी होती जा रही थी। ३। तब नगर में से बहुत गुदड़ियाँ लाकर उन्होंने तेल में भिगो दीं। उन्हें भिगवाते-भिगवाते घी और तेल ही समाप्त हो गया, परन्तु पूँछ का अन्त नहीं आ रहा था। ४। फिर सब आग सुलगाने लगे, (परन्तु) वह नहीं सुलग रही थी। अनेक उपाय करके वे थक गये। परन्तु वह नाम मात्र भी स्पर्श नहीं कर रही थी। ५। तब रावण ने कहा— 'लाओ, मैं सुलगाता हूँ।' (ऐसा कहते हुए) वह जाकर पास में बैठ गया। तब हनुमान ने स्पष्टतया अग्नि और वायु से प्रार्थना की। ६। जब रावण ने फूँक दिया, तो एकदम भभूका उत्पन्न हो गया। तब (उससे) उसकी दाढ़ी-मूँछ जल गयी और उसका मुख भद्दा हो गया।७। लंकापति रावण ने बहुत

घणुं पाप कर्युं छे लंकापतिए, कहेतां न आवे पार,
तेनुं अर्ध प्रायश्चित्त कर्युं हनुमंते, लाज्यो तेणी वार। ८।
पछी प्रचंड ज्वाळा प्रगटी तत्क्षण, कूद्या कपि हनुमंत,
प्रथम रावणना महेलज उपर, बेठा जई बळवंत। ९।
नासे त्रासे सर्व राणीओ, लागी भोवनमां लाय,
तलप मारता कूदे कपिवर कोणे न ज्वाळ सहेवाय। १०।
छूट्यो प्रभंजन तेणे समे, घणी मारी झपट चोपास,
त्यम हनुमंत फेरवे वाळधि, बाळ्या सर्व आवास। ११।
नगर लंकामां लाय ज लागी, लोक करे पोकार,
ज्यम कल्पांते रुद्र ज कोप्यो, करवाने संघार। १२।
भडभडाट सहु भोवन ज लागे, मणि धातु पाषाण,
अति घणो दुखियो थयो दशानन, लोक करे बुंबाण। १३।
हनुमंतने बाळे छे एवी, कोणे सीताने कही वात,
त्यारे ध्यान धरीने जठराग्निने, पूछी जोयुं मात। १४।
त्यारे अग्नि कहे चिंता नव करशो, ए रहेशे कुशळ क्षेम,
लंकानगर बाळीने जाशे, रघुपति पासे प्रेम। १५।

पाप किया था, जिसका कहने में कोई पार नहीं आता है। हनुमान ने (मानो) उसका उसे आधा प्रायश्चित् करा दिया। उस समय वह (रावण) लज्जित हुआ। ८। फिर तत्क्षण प्रचण्ड ज्वाला उत्पन्न हो गयी, तो कपिवर हनुमान कूदने लगा। वह बलवान कपि जाकर (सबसे) पहले रावण के प्रासाद ही पर बैठ गया। ९। (फलतः) सब रानियाँ भय से भागने लगीं। भवन में आग लग गयी। (फिर) वह कपिवर छलाँग लगाते हुए कूदता जा रहा था। किसी के द्वारा भी ज्वाला (की आँच) सही नहीं जा रही थी। १०। उस समय तेज हवा चलने लगी; (मानो) वह चारों ओर ज़ोर से झपट पड़ी। वैसे ही हनुमान पूँछ को (इधर-उधर) घुमाने लगा, तो सब घर जलने लगे। ११। लंकानगरी में आग लग गयी, तो लोग चीखते-पुकारते रहे। जैसे कल्पान्त काल में संहार करने के लिए रुद्र ही क्रुद्ध हो गया हो। १२। रत्न, धातु, पत्थर सहित समस्त भवन ही ज़ोर से जलने लगे, तो रावण अत्यधिक दुखी हो गया। लोग चीत्कार कर रहे थे। १३। (उस समय) सीता से किसी ने ऐसी बात कही कि हनुमान को जलाया जा रहा है। तब मात सीता ने ध्यान धारण करके जठराग्नि से पूछा। १४। तब अग्नि ने कहा—'चिन्ता नकरो। वह सकुशल रहेगा और लंकानगर को जलाकर प्रेम-पूर्वक

हावे त्रीजा भागनी लंका बाळी, समर्थ वायुतन,
विभीषण आदि भगवती केरां, उगार्यां भोवन । १६ ।
एवुं काज करीने कूद्या त्यांथी, आव्या सिंधु तीर,
सागरमांहे बुझावा मांड्युं, पूंछ पोतानुं वीर । १७ ।
जळ-जंतु बळवा लाग्यां, त्यारे, जळनिधि वोल्या वाणी,
राखो बारणे पूंछ तमारुं, हुं छोळे छांटुं पाणी । १८ ।
ते वचन मानीने मारुति वळता, बेठा सिंधुतीर,
पूंछ शीतळ कर्युं सिंधुए तत्क्षण, छोळे उछाळ्यु नीर । १९ ।
ते समे हनुमंतने ललाटे, थयो श्रम परिस्वेद,
ते श्रमबिंदु सागरमां पड्युं, एक माछळीए गळ्युं वेद । २० ।
पुत्र मकरध्वज तेनो थयो, ते हनुमंतनो कहेवाय;
पराक्रम तेनु कहेवाशे आगळ, जुद्धकांडमां कथाय । २१ ।
हवे हनुमंतने श्रीरघुवीर प्रतापे, नव दाझ्या कांई तन,
ज्यम नामप्रतापे पीधुं हळाहळ, शोभ्या पंचवदन । २२ ।
एवुं अद्‌भुत काम करीने विचारे, मारुतसुत मनमांहे,
में नव जवाय सीताने मळ्या विण, माटे जाउं त्यांहे । २३ ।

रघुपति के पास जाएगा । ' १५ । अब समर्थ वायु-कुमार हनुमान ने एक तिहाई अंश लंका जला डाली । (फिर भी) विभीषण आदि भगवद्‌भक्तों के भवन बचा रखे । १६ । ऐसा काम करने पर हनुमान ने वहाँ से छलाँग लगायी और वह समुद्र-तट पर आ गया । उस वीर ने समुद्र में अपनी पूँछ को बुझाना आरम्भ किया । १७ । तब (जब) जलचर जल जाने लगे, तो समुद्र ने यह बात कही— ' अपनी पूँछ बाहर रखो; मैं लहरों से पानी उछालता हूँ । ' १८ । यह बात मानकर हनुमान फिर समुद्र-तट पर बैठ गया । समुद्र ने तत्क्षण लहरों से पानी उछाल दिया, और उसकी पूँछ को (बुझाकर) ठण्डा कर दिया । १९ । उस समय हनुमान के भाल पर श्रम से पसीना उत्पन्न हो गया था । उस पसीने की बूंद समुद्र में गिर गयी तो समझिए कि उसे एक मछली ने निगल लिया । २० । (फलतः) उसके मकरध्वज नामक एक पुत्र (उत्पन्न) हो गया, जो हनुमान का (पुत्र) कहाता है । उसका प्रताप आगे युद्ध काण्ड की कथा में कहा जाएगा । २१ । पंचमुख अर्थात् शिवजी ने हलाहल पिया था, परन्तु जैसे राम-नाम के प्रताप से (उन्हें कोई हानि नहीं पहुँची; बल्कि) वे शोभायमान (ही) हो गये, वैसे श्रीरघुवीर के प्रताप से हनुमान शरीर में कहीं भी नहीं जला । २२ । ऐसा अद्‌भुत काम करने पर पवनकुमार ने मन में

वळी पूछशे मुजने रघुपति, कहेशे शुं करी आव्यो काज,
त्यारे मारुं प्राक्रम मारे मुखथी, कहेतां आवे लाज । २४ ।
माटे ब्रह्मा रहे छे रावण पासे, जाउं उतावळो तत्र,
विधि पासे लेई जाउं लखावी, आ वर्तमाननो पत्र । २५ ।
एवुं कह्युं छे शास्त्रमांहे जे, निज प्राक्रम बळ तीर्थ,
जश धरम विधा पुरुषारथ, भजन दान निज अर्थ । २६ ।
एटली वात न शोभे कहेतां, न कहेवी पोताने मुख,
अन्य कहेने आपण सुणीए, त्यारे शोभे सुख । २७ ।
एम विचारी सूक्ष्म रूपे, चाल्या अदृश्य बळवंत,
एकांतमां ब्रह्माजी पासे, आवी बोलिया हनुमंत । २८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

हनुमंत कहे हो प्रजापति, हुं जाउं छुं ज्यां रघुराज रे,
आ पराक्रम जे में कर्युं ते, पत्र लखी आपो आज रे । २९ ।

* * *

विचार किया— मुझे बिना सीता से मिले नहीं जाना चाहिए, इसलिए मैं वहाँ जाऊँगा । २३ । इसके अतिरिक्त मुझसे रघुपति पूछेंगे कि मैं क्या काम करके आया, तब अपने पराक्रम को अपने मुख से कहने में मुझे लज्जा आएगी । २४ । अतः ब्रह्माजी, रावण के पास रहते हैं, मैं वहाँ झट से जाऊँगा और उन (विधाता) से इस घटना सम्बन्धी पत्र लिखवाकर ले जाऊँगा । २५ । (नीति-) शास्त्र में ऐसा कहा है— अपना पराक्रम, बल, अपनी की हुई तीर्थ-स्थलों की यात्रा, कीर्ति, धर्म (सम्बन्धी आचार), विद्या, पुरुषार्थ, (अपना किया हुआ भगवद्-) भजन और अपने धन का दिया हुआ दान— इतनी बातें (अपने मुँह) कहते शोभा नहीं देतीं; (अतः) इन्हें अपने मुँह न कहना चाहिए । कोई दूसरा कहे और हम सुनें— तब उससे प्राप्त सुख शोभा देता है । २६-२७ । ऐसा विचार करते हुए बलवान हनुमान सूक्ष्म रूप धारण करके अदृश्य होकर चल दिया । फिर एकान्त में ब्रह्मा के पास आते हुए बोला । २८ ।

हनुमान बोला— 'हे प्रजापति, जहाँ रघुराज हैं, (वहाँ) मैं जा रहा हूँ । मैंने यह जो पराक्रम किया है, उसे पत्र में लिखकर आज मुझे दीजिए ।' २९ ।

* * *

अध्याय—११ (सीता से मिलकर हनुमान का राम के पास लौटना)

राग मेवाडो

वचन सुणी विधि प्रसन्न थया, हनुमंतने कहे धन्य धन्य जी,
धन्य पुरुषार्थ डहापण तारुं, समर्थ वायुतन जी। १ ।
एवुं कही पछे लख्यो विधिए, श्रीरामनी उपर पत्र जी,
वर्तमान सहु तेमां लखियुं, आप्यो कपिने तत्र जी। २ ।
ते ब्रह्मपत्र करमां लेई चाल्या, आव्या जानकी पास जी,
करी वंदना गद्‌गद थईने, चरणे नमियो दास जी। ३ ।
माता मुजने आज्ञा आपो, हुं जाउं ज्यां रघुवीर जी,
संदेशानी वाट जोता हशे, रामलक्ष्मण रणधीर जी। ४ ।
त्यारे जानकी गद्‌गद थईने बोल्यां, अति दुःख प्रगट्युं मन जी,
साचुं कहे भाई क्यारे मळशे ? मुजने प्राणजीवन जी। ५ ।
मूळ थकी दुःख छे मुज मनमां, पतिविरहने रोग जी,
वळी ते मधे दुःख बीजुं प्रगट्युं, वीरा तारो विजोग जी। ६ ।
त्यारे कर जोडीने कपिवर कहे छे, धीरज राखो मात जी,
हवे थोडा दिवसमां मळशे तमने, आवशे अहीं जगतात जी। ७ ।

अध्याय—११ (सीता से मिलकर हनुमान का राम के पास लौटना)

यह बात सुनकर ब्रह्माजी प्रसन्न हुए और हनुमान से बोले— 'धन्य, धन्य ! हे समर्थ वायु-कुमार, तुम्हारा पुरुषार्थ तथा समझदारी धन्य है।' १। ऐसा कहकर ब्रह्माजी ने श्रीराम के नाम पत्र लिखा। उसमें समस्त समाचार लिखा और वह पत्र वहीं कपि हनुमान को दिया। २। ब्रह्माजी द्वारा लिखित वह पत्र हाथ में लिए हुए वह चल दिया और सीता के पास आ गया। वन्दन करके उस दास ने गद्‌गद होते हुए उसके चरणों को नमस्कार किया। ३। (फिर वह बोला—) 'हे माता, मुझे आज्ञा दीजिए, तो मैं जहाँ रघुवीर हैं, (वहाँ) जाऊँगा। वे रणधीर राम और लक्ष्मण सन्देश की प्रतीक्षा कर रहे होंगे।' ४। तब सीता गद्‌गद हो उठी और बोली। तब उसके मन में अति दुःख उत्पन्न हो गया था। 'हे भाई, सच (-सच) कहो, मेरे जीवन के प्राण मुझसे कब मिलेंगे ? ५। पहले से मेरे मन में दुःख तो हो ही रहा है— (क्योंकि मुझे) पति-विरह का रोग है। उसके बीच हे भाई, दूसरा दुःख उत्पन्न हो गया है—(वह है) तुम्हारे वियोग का।' ६। तब कपि ने हाथ जोड़कर कहा— 'हे माता, धीरज रखिए। अब थोड़े ही दिनों में जगत्पिता यहाँ आएँगे और आपसे

माटे मात मुंने कंई आपो एंधाणी, छानी वात कहो आज जी,
त्यारे वेणी तणो मणि छोडी आप्यो, आ तुं लेई जा कपिराज जी। ८ ।
छानी वात कहेजे प्रभुने, रहेतां चित्रकूट मोझार जी,
लक्ष्मणजी वनमांहे गया'ता, फळ लेवा एक वार जी। ९ ।
रघुपतिना खोळामां शिर मूकी, निद्रा करी में जाण जी,
त्यारे मारा ललाटे प्रभुए, केसर-आड करी निरवाण जी। १० ।
ए वात अंतरनी कहेजे वीरा, मारा घणा करी परणाम जी,
वानर सैन्या लई रघुपति, क्यम आवशे आणे ठाम जी। ११ ।
छे शत जोजन सिंधु वचमां, क्यम ऊतरशे पार जी?
एवां वचन सुणी सीतानां, वळतां बोल्या पवनकुमार जी। १२ ।
सेतु बांधशे सागर पर वा, शोषशे मूकी बाण जी,
वा करशे पाज्य मुज पूंछ तणी, तेथी ऊतरशे निरवाण जी। १३ ।
जळ उपर जेणे पृथ्वी राखी, स्थंभ विना आकाश जी,
तो सागर केरो भार केटलो ? माता राखो विश्वास जी। १४ ।
जे उदरमांहे जठराथी जाळवे, गर्भने श्रीभगवान जी,
ए कळा जडे नहि कोईने करावे, मांस विषे पयपान जी। १५ ।

मिलेंगे। ७। इसलिए, हे माता, मुझे कोई चिह्न दीजिए (और) आज कोई गुप्त बात कहिए।' तब उसने बेनी में से मणि निकालकर दी और कहा— 'हे कपिराज, तुम यह ले जाओ। (फिर) प्रभु से यह गुप्त बात कहना— चित्रकूट में रहते, एक बार फल लेने के लिए लक्ष्मण वन में गये हुए थे। ८-९। समझ लो, (उस समय) मैं रघुपति की गोद में सिर रखे हुए सो रही थी (लेटी हुई थी)। तब मेरे ललाट पर प्रभु ने निश्चय ही केसर का आड़ा तिलक अंकित किया था। १०। हे भाई, यह अन्दर की (अर्थात् गुप्त) बात मेरी ओर से बहुत-बहुत प्रणाम करके कहना। (परन्तु बताओ,) रघुपति वानर-सेना को लिये हुए इस स्थान पर कैसे आएंगे ? ११। बीच में सौ योजन (चौड़ा) समुद्र है; तो वे कैसे (इस) पार उतरेंगे ?' सीता की ऐसी बातें सुनने पर पवन-कुमार फिर बोला। १२। 'वे सागर पर सेतु बनाएँगे अथवा बाण छोड़कर उसे सोख डालेंगे, अथवा मेरी पूँछ का पुल बनाकर वे उससे निश्चय ही (पार) उतरेंगे। १३। पानी के ऊपर जिन्होंने पृथ्वी को रखा है, बिना स्तम्भ के आकाश को जिन्होंने (धर) रखा है, उनके लिए सागर का क्या बोझ ? हे माता, (इस सम्बन्ध में) विश्वास रखिए। १४। जो श्रीभगवान (माँ के) उदर के अन्दर गर्भ को जठर से सम्हालते है, जो मांस के अन्दर

एक क्षणमां ब्रह्मांड उदे करे, पाळे तथा करे भंग जी,
साह्यक बीजो संग नहि ते, शुं न करे श्रीरंग जी ? । १६ ।
एवुं कही साष्टांग करी पछे, चाल्या वायुतन जी,
त्यारे सीताए कल्पांत कर्युं, जळ भरियुं लोचन जी । १७ ।
पछे लंकागिरिने शिखर चढी, दिव्य रूप धर्युं तत्काळ जी,
उत्तर पंथ चितवी हनुमंते, कूदीने मारी फाळ जी । १८ ।
त्यारे जयजयकार करी कहे सुर सहु, निज दुःख हेतु संबंध जी,
हवे वहेला आवजो रामने तेडी, छोडो अमारा बंध जी । १९ ।
त्यारे हनुमंत कहे चिंता नव करशो, धरजो मनमां धीर जी,
काल बपोरे सिंधुतीरे, आवशे श्रीरघुवीर जी । २० ।
एवुं कही पछे सिंधु ओळंगी, आव्या मारुत-तन जी,
जांबुवान आदे सहु मळिया, दीधां आलिंगन जी । २१ ।
सरवे कपि हनुमंतने देखी, पाम्या हरख अपार जी,
को प्रदक्षणा करी पाये लागे, वंदे वारंवार जी । २२ ।

दुग्ध-पान कराते हैं और ऐसी कला (उनके अतिरिक्त) किसी दूसरे से नहीं करायी जा पाती, जो एक क्षण में ब्रह्माण्ड का निर्माण करते हैं, उसका पालन करते है, तथा उसको नष्ट (भी) कर देते हैं और (इस काम में) उनका कोई साथी भी साथ नहीं होता, वे भगवान श्रीरंग क्या नहीं कर पाएँगे ? ' १५-१६ । ऐसा कहते हुए वायु-कुमार ने साष्टांग नमस्कार किया और फिर वह चल दिया । तो सीता की आँखों में अश्रु-जल भर आया और उसने कल्पान्त अर्थात् बहुत शोक किया । १७ । फिर हनुमान ने लंका के पर्वत पर चढ़कर तत्काल दिव्य रूप धारण किया और उत्तर की ओर जानेवाले मार्ग का चिन्तन करके उसने कूदकर छलाँग लगा दी । १८ । तब अपने दुःख के निराकरण के सम्बन्ध के विचार से समस्त देवों ने जयजयकार करते हुए कहा—' अब झट से राम को बुला लाना और हमारे बन्धन को छुड़वा देना । ' १९ । तब हनुमान ने कहा— ' चिन्ता न करें । मन में धीरज धारण करना । कल सबेरे श्रीरघुवीर समुद्र-तट पर आएँगे । ' २० । ऐसा कहने के पश्चात् हनुमान समुद्र लाँघकर आ गया, तो जाम्बवान आदि सब उससे मिले और उन्होंने उसका आलिंगन किया । २१ । हनुमान को देखते ही समस्त कपि असीम आनन्द को प्राप्त हो गये । कोई उसकी परिक्रमा करके उसके पाँव लगता, (तो कोई) बारबार उसका वन्दन करता । २२ । कोई-कोई कपि उसके घुटनों तथा जाँघों, कोई-कोई हाथों और पूँछ का चुम्बन करते । कोई-कोई फूल

को जानु-जंघा को हस्त-पूंछने, चुंबन करता कीश जी,
पुष्प लावी को पूजे प्रेमे, को देता आशिष जी। २३।
एम ब्रह्मानंदमां मग्न थया कपि, पूछे सहु समाचार जी,
त्यारे हनुमंत कहे कुशळ छे जानकी, मळ्यां मुजने निरधार जी। २४।
सकळ वृतांत लख्युं छे पत्रमां, ब्रह्माए निरवाण जी,
चालो प्रभुनी पासे त्यारे, थशे तमने सहु जाण जी। २५।
एवुं कही पछे चाल्या तत्क्षण, आव्या ऋषिमुख पास जी,
त्यां सुग्रीव केरुं मधुवन छे, फळ पक्व रम्य तरुवास जी। २६।
ते वनमांहे पेठा सर्वे, फळ खाधां निरधार जी,
तरु उपाड्यां रक्षक मार्या, मन अभिमान अपार जी। २७।
ते अनुचर नाठा आव्या ऋषिमुख, बोल्या नामी शीश जी,
वृत्तांत सर्वे कह्युं सुग्रीवने, सुणी हरख्यो पति कीश जी। २८।
त्यारे सुग्रीव कहे रघुपति प्रत्ये, कपि करी आव्या काज जी,
नहि तो मारुं मधुवन ते, को नव मोडे महाराज जी। २९।

लाकर प्रेम से उसका पूजन करते, तो कोई-कोई आशीर्वाद देते रहे। २३। इस प्रकार वानर ब्रह्मानन्द में मग्न हो गये। (फिर) सब ने समाचार पूछा। तब हनुमान बोला— 'जानकीजी सकुशल हैं। वे मुझसे निश्चय ही (सचमुच) मिली थीं। २४। ब्रह्माजी ने समस्त समाचार निश्चय ही पत्र में लिखा है। (पहले) प्रभु के पास चलो; तब तुम्हें समस्त जानकारी (प्राप्त) हो जाएगी।' २५। ऐसा कहने पर वे तत्क्षण चल दिये और ऋष्यमूक के समीप आ गये। वहाँ सुग्रीव का मधुवन था। उसमें पक्व फल तथा वृक्षों के तले रम्य निवास-स्थान था। २६। उस वन में सब प्रविष्ट हो गये और उन्होंने निर्धार-पूर्वक फल खाये। उन्होंने पेड़ उखाड़ दिये, रक्षकों को पीटा। उनके मन में (अपने किये कार्य पर) अपार अभिमान था। २७। तब (सुग्रीव के) वे सेवक भाग गये और ऋष्यमूक आ गये। (फिर) उन्होंने सिर नवाकर कहा। उन्होंने समस्त समाचार सुग्रीव से कहा, तो वह कपि-पति आनन्दित हो गया। २८। तब सुग्रीव ने रघुपति से कहा— 'वानर कार्य (सिद्ध) करके आये हैं; नहीं तो महाराज, मेरे उस मधुवन को कोई (भी) उध्वस्त नहीं कर पाएगा।'[1] २९। इतने में गर्जन करते हुए (वे कपि) आ गये। वे

---

१. मधुवन—यह सुग्रीव का विहार-उपवन था। यह इन्द्र के नन्दन-वन के समान वृक्षों और लताओं से युक्त था; उसमें अमृतोपम मधुर फल थे। वह सुग्रीव के पूर्वजो को देवों से प्राप्त हुआ था। उसमें देवता तक प्रवेश नही कर सकते थे।

एटले आव्या करी गर्जना, कहेता जयजय राम जी,
मंगळधुनि सुणी जोई हनुमंतने, ऊठी सभा अभिराम जी। ३०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अभिराम पामी सभा सर्वे, थई छे महा सुखवंत रे,
किष्किधापति अयोध्यापति ऊठ्या, आवता देखी हनुमंत रे। ३१।

'जय-जय रामजी की' कह रहे थे। उस मंगल ध्वनि को सुनकर और हनुमान को देखकर उस सुन्दर सभा में बैठे हुए वे समस्त लोग उठ गये। ३०।

समस्त (कपि-) समाज आनन्द को प्राप्त हो गया; वे सब बहुत सुखी हो गये। हनुमान को आते देखकर किष्किन्धा-पति सुग्रीव और अयोध्या-पति श्रीराम उठ गये। ३१।

* * *

अध्याय—१२ (वानरों द्वारा राम से समाचार कहना)

राग सोरठ

ज्यम सुपर्ण अमृत लेईने आवे, विनता केरो वत्स,
ज्यम मृतसंजीवनी साधी आवे, बृहस्पतिनो सुत कच्छ। १।

अध्याय—१२ (वानरों द्वारा राम से समाचार कहना)

जिस प्रकार विनता का पुत्र सुपर्ण (गरुड़) अमृत लेकर आ गया, जिस प्रकार (देवगुरु) बृहस्पति का पुत्र कच[1] मृतक को पुनर्जीवित कर देने

१. कच—देवों और दैत्यो के संग्राम में मृत दैत्यो को दैत्य-गुरु शुक्राचार्य संजीवनी मन्त्र से जीवित कर देता था। इसलिए दैत्यों का वल कम नही होता था। तब देवों ने अपने गुरु वृहस्पति के पुत्र कच को शुक्राचार्य के पास उसका शिष्यत्व स्वीकार करके संजीवनी प्राप्त करने के लिए भेज दिया। दैत्यों ने इस चाल को जान लिया, तो वे उसे मार डालने का यत्न करने लगे। एक बार उन्होने उसे मारकर उसकी देह के टुकड़ों को सियारों को खिला दिया। दूसरी बार उसे मारकर समुद्र में फेंक दिया। तीसरी बार उन्होने उसे जलाकर उसका भस्म मदिरा में डाला और वह मदिरा शुक्राचार्य को पिला दी। परन्तु शुक्राचार्य की कन्या देवयानी कच से प्रेम करने लगी थी। वह हठपूर्वक अपने पिता द्वारा उसे जीवित करवा देती। अन्त में जब शुक्राचार्य ने कच को लौटा लाने के हेतु सजीवनी मन्त्र पढ़ा, तो भस्मरूप में पेट में रहनेवाले कच को वह मन्त्र प्राप्त हो गया। वह उसके पेट को फाड़कर बाहर आ गया। फिर उसने मृत शुक्राचार्य को मन्त्रबल से जीवित कर दिया और देवलोक की ओर प्रस्थान किया।

एम हनुमंत अति हरख भर्या, ते करीने आव्या काज,
साष्टांग करीने चरणे लाग्या, प्रसन्न थया रघुराज । २ ।
घणी वार शिर मूकी रह्या, हनुमंत प्रभुने पाय,
त्यारे मारुतिने मस्तक कर मूकी, उठाड्या रघुराय । ३ ।
भुज भरीने आलिंगन दीधुं, चांप्या रुदिया साथ,
पछे हरखआंसु प्रेमे थई गद्‌गद, बोल्या श्रीरघुनाथ । ४ ।
अरे धन्य धन्य मारुतसुत बळिया, तुं करी आव्यो काज,
पछे सभा करी रामनी सन्मुख, बेठो सर्व समाज । ५ ।
त्यारे प्रथम वृत्तांत कह्या वालीसुत, अंगदे मांडी वात,
अहींथी नीकळतां शापमुक्त थयो, दंडीऋषिनो जात । ६ ।
पछे विवरमांहे सुप्रभा मळी, त्यांथी गया सिंधुतीर,
त्यां गीधजाति संपाति मळ्यो, जे जटायु केरो वीर । ७ ।
पछे मारुतसुत सिंधु ओळंग्या, चढी परवतने शीश,
एटली वात अमो जाणुं छुं सुणीए श्रीजुगदीश । ८ ।
पछे रामे हनुमंत सामु जोयुं, त्यारे बोल्या वायुकुमार,
महाराज सुखी छे जनकनंदिनी, अशोकवन मोझार । ९ ।

वाली संजीवनी विद्या सिद्ध करके आ गया, उस प्रकार हनुमान अपने उस कार्य को सम्पन्न करके आ गया, तो (अपनी सफलता के कारण) अति आनन्दित हो गया। (फिर) साष्टांग नमस्कार करके वह रघुराज राम के पाँव लगा, तो वे प्रसन्न हो गये। १-२। हनुमान प्रभु के चरणों में बहुत समय (तक) सिर रखे हुए रहा, तब उसके मस्तक पर हाथ रखकर रघुराज ने उसे उठा लिया। ३। बाँहों में भरकर श्रीराम ने उसका आलिंगन किया, हृदय से (दृढ़ता-पूर्वक) लगा लिया। फिर (उनकी आँखों में) आनन्दाश्रु आ गये। तब प्रेम से गद्‌गद होकर वे बोले। ४। 'हे बलवान पवन-कुमार, धन्य हो, धन्य हो, (जो) तुम काम (सिद्ध कर) आये हो।' फिर समस्त समाज राम के सम्मुख इकट्ठा होकर बैठ गया। ५। तब बाली-सुत अंगद ने (सबसे) पहले समाचार विस्तार से कह दिया। उसने कहा—'यहाँ से प्रस्थान करने पर दण्डी ऋषि का पुत्र (हनुमान के दर्शन से) शाप-मुक्त हो गया। ६। फिर एक विवर में सुप्रभा मिली; वहाँ से हम समुद्र-तट पर गये। वहाँ गृध्र जाति में उत्पन्न सम्पाति मिला, जो जटायु का भाई है। ७। अनन्तर पवन-कुमार ने पर्वत-शिखर पर चढ़कर समुद्र को लाँघ लिया। हे श्रीजगदीश, सुनिए, मैं इतनी ही बातें जानता हूँ।' ८। फिर राम ने वायुकुमार हनुमान की

घणुं कृश थयां छे तमारे वियोगे, चिंता करे दिनरात,
हुं मुद्रिका आपी पाये लाग्यो, कही कुशळनी वात । १० ।
तमारा नामनी सुधाए करीने, तनमां रह्यो छे प्राण,
में जईने त्यां धीरज आपी, सुद्ध लाव्यो निरवाण । ११ ।
एटलुं कही रघुवीरने आप्यो, चूडामणि साक्षात,
वळी विस्तारीने कही रामने, चित्रकूटनी वात । १२ ।
ते सुणीने गद्‌गदकंठ थया, मणि रुदेमां चांप्यो रघुवीर,
विरहे व्याकुळ थईने रघुपति, नेत्रे भरता नीर । १३ ।
जे अज अजित त्रिगुणातीत पूरण, रहित उदय-अवसान,
ते सीता वियोगना शोकसिंधुमां, मग्न थया भगवान । १४ ।
पछे अंजनीसुतने पूछे छे वळी, पोते पूरणब्रह्म,
तुं केम गयो मेळाप थयो ते ? कहे मुजने सहु मर्म । १५ ।
त्यां जई शुं प्राक्रम कीधुं ते ? कहे मुजने सहु मर्म,
एम सर्व वात मांडी कहे मुजने, एम पूछे रघुनाथ । १६ ।

ओर देखा । तब वह बोला— "महाराज, अशोक वन में जनक-नन्दिनी सकुशल हैं । ९ । (फिर भी) आपके वियोग से वे बहुत कृश हो गयीं हैं; मन में दिन-रात चिन्ता कर रही हैं । मुद्रिका देकर मैं उनके पाँव लगा और आपके क्षेम-कुशल की बात कह दी । १० । आपके नाम के, अर्थात् नामरूपी अमृत से उनके शरीर में प्राण (शेष) रह गये हैं । मैंने जाकर उनको ढाढ़स बँधा दिया और मैं निश्चय ही खोज-पता लाया हूँ । ११ । इतना कहकर उसने साक्षात् (सीता की) दी हुई चूड़ा-मणि दी । फिर उसने चित्रकूट वाली बात विस्तार-पूर्वक कह दी । १२ । वह सुनते ही रघुवीर राम बहुत गद्‌गद हो गये—उनका गला रुँध गया और उन्होंने वह मणि हृदय से लगा ली । तब रघुपति विरह से व्याकुल होकर आँखों में आँसू भरते रहे । १३ । जो भगवान (वस्तुतः) अजन्मा, अजित, सत्त्व-रज-तम इन तीनों गुणों से पूर्णतः रहित हैं, वे सीता के वियोग के कारण शोकरूपी समुद्र में मग्न हो गये (डूब गये) । १४ । इसके अतिरिक्त, अनन्तर पूर्णब्रह्म (-स्वरूप) राम ने स्वयं अंजनी-सुत से पूछा—" तुम कैसे गये ? भेंट कैसे हुई ? यह सब मर्म (-भरी बात) मुझसे कह दो । १५ । वहाँ जाकर तुमने क्या पराक्रम किया ? रावण से तुम क्या बोले ? ऐसी समस्त बात मुझसे ठीक-ठीक कह दो ।" श्रीराम ने (हनुमान से) इस प्रकार कहा । १६ । तब हनुमान ने ब्रह्मा द्वारा लिखित पत्र श्रीराम के हाथों में थमा दिया (और कहा—) "महाराज,

त्यारे रघुवीरना करमां आप्यो, मारुतिए ब्रह्मपत्र,
महाराज ए पत्र विधि लख्यो छे, वर्तमान सहु तत्र । १७ ।
श्रीरामे लेई लक्ष्मणने आप्यो, वांचवाने ते काळ,
पछे उकेल्यो सहु सभा सांभळतां, वांचे सुमित्राबाळ । १८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सुमित्रासुते कर कागळ लीधो, थई एकचित्त सभा सर्वत्र रे,
कहे दास गिरधर सुणो श्रोता, वांचे लक्ष्मणजी ब्रह्मपत्र रे । १९ ।

यह पत्र ब्रह्माजी ने लिखा है। वहाँ (उसमें) समस्त समाचार है।' १७। श्रीराम ने उस समय (पत्र) लेकर लक्ष्मण को पढ़ने के लिए दिया। फिर सुमित्रा-नन्दन ने उसे खोला और समस्त सभा (-जनों) के सुनते हुए पढ़ना आरम्भ किया। १८।

सुमित्रा-सुत लक्ष्मण ने हाथ में वह पत्र लिया, तो सभा सर्वत्र एक-चित्त हो गयी। गिरधरदास कहते हैं, हे श्रोताओ, सुनिए, लक्ष्मणजी ब्रह्मा द्वारा लिखित पत्र पढ़ने जा रहे हैं। १९।

* * *

अध्याय—१३ (लक्ष्मण द्वारा ब्रह्मा का पत्र पढ़ना)

राग दोहा

कनकपत्र विधिए लख्यो, श्रीरामनी उपर जेह,
ते लाव्या हनुमंतजी, आप्यो प्रभुने तेह । १ ।
ते करमां लेई रघुपति, हरख्या जुगदाधार,
पछे वांचवा कारण आपियो, लक्ष्मणने तेणी वार । २ ।
ते करमां लेई अनंतजी, उकेल्यो निरवाण,
सुणतां सहु वानरसभा, लक्ष्मण वांचे जाण । ३ ।

अध्याय—१३ (लक्ष्मण द्वारा ब्रह्मा का पत्र पढ़ना)

विधाता ने प्रभु श्रीराम के प्रति जो स्वर्ण-पत्र (पर पत्र) लिखा, उसे हनुमान ले आया और उसने उन्हें दिया। १। उसे हाथ में लेते ही जगदाधार रघुपति आनंदित हो गये और फिर उस समय उन्होंने पढ़ने के हेतु वह लक्ष्मण को दिया। २। उसे हाथ में लेकर अनन्त (शेष के अवतार) लक्ष्मण ने खोल लिया और समझिए कि समस्त वानर-सभा

प्रथम स्तुति रघुवीरनी, पछे हनुमंत चरित्र,
ते सावधान एकचित्त सुणो, श्रोता पुण्यपवित्र। ४।

छंद

जय जय अनंत कोटी ब्रह्मांड, नायक अज अजित अखंड,
पति वैकुंठ जग प्रतिपाळ, व्यापक श्रीनिकेतन दयाळ। ५।
अंकुर मूळ माया कंद, गुरु जग सत्य चिद् आनंद,
कारणरूप धारण तत्त्व, चैतन्य सगुण निरगुण सत्त्व। ६।
नमुं वेदांतवेद्य स्वरूप, मायाचक्र चालाक भूप,
शोषक दैत्यजळधि अगस्त्य, छेदक देवबंध समस्त। ७।
हरता भार भूमि दुष्ट, करता धरम भक्ति पुष्टि,
चातुक भक्त जळद समाज, भवगज विदारक मृगराज। ८।
संत चकोर चंद्र अमीश, हरि मम जनक त्रिभुवन ईश,
मंगळरूप तव अवतार, स्थापन परम धरम उदार। ९।

के सुनते रहते (अर्थात् वानर-सभा को सुनाते हुए) उसे वे पढ़ने लगे। ३। (उस पत्र में सबसे) पहले रघुवीर राम की स्तुति थी और (उसके) पश्चात् हनुमान-चरित्र था। हे पुण्य-शील तथा पावन श्रोताओ, उसे एकाग्र चित्त से सुनिए। ४। हे अनगिनत करोड़ों ब्रह्माण्डों के नायक, हे अज, हे अजित, हे अखंड (ब्रह्म, आपकी) जय हो, जय हो। आप वैकुण्ठलोक के स्वामी हैं, जगत के प्रतिपालक हैं, (सर्व-) व्यापक हैं, श्री अर्थात् सम्पत्ति-ऐश्वर्य के मानो निवास-स्थान हैं, दयालु हैं। ५। आप मायारूपी कन्द के मूल अंकुर हैं, जगत् के गुरु हैं, सच्चिदानन्द हैं। आप (ब्रह्माण्ड के) कारण-रूप हैं, धारण-तत्त्व-रूप हैं, चैतन्य-स्वरूप है, सगुण तथा निर्गुण सत्त्व हैं। ६। आपका स्वरूप वेदान्त द्वारा ही जानने योग्य है, आप माया के चक्र के चालक हैं, (ब्रह्माण्ड के) अधिपति हैं। आप दैत्यरूपी समुद्र का शोषण करनेवाले अगस्त्य हैं, देवों के समस्त बन्धनों को काट देनेवाले हैं। मैं आपको नमस्कार करता हूँ। ७। आप भूमि के दुष्ट-जन रूपी भार का हरण करनेवाले हैं; धर्म और भक्ति को पुष्ट करनेवाले हैं; भक्तों रूपी चातकों के लिए मेघ-समूह हैं, भव (जगत्) रूपी हाथी को विदीर्ण करनेवाले मृगराज (सिंह) हैं। ८। सन्तों रूपी चकोरों के लिए अमृत-पति चन्द्रमा हैं; आप श्रीहरि मेरे जनक तथा त्रिभुवन के ईश्वर हैं। आपका अवतार मंगल-रूप है, वह परम उदार धर्म की स्थापना के लिए हुआ है। ९।

जय जय मीन कमठ वराह, नरहरि त्रिविक्रम भृगुनाह,
दशरथ सुवन श्रीरघुवीर धारण, सत्यव्रत रणधीर। १०।
लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न प्रागट्य चतुर व्यूह पावन,
मुनि मख रक्ष त्रिय उद्धार, निशिचर ताडिका संहार। ११।
शिव कोदंड खंडन राम, तनया जनक पूरणकाम,
पाळक पितु वचन वनवास, गौतमी गंगातीर निवास। १२।
गोद्विज संत संकटहरण, भवरुज वैद करुणाकरण,
मनुजाकृति धृत सुरकाज, पद पद पृथ्वी तीरथराज। १३।
कोटि मनोज तनु कमनीय, नमुं नित भूमिजा रमणीय,
तव गुण शमन त्रिविधि ताप, हरता नाम कळिमळ पाप। १४।

आप मत्स्य, कूर्म, वराह, नरसिंह, त्रिविक्रम वामन और भृगु-पति परशुराम (के रूप में इससे पहले अवतरित हो चुके) हैं। जय हो, जय हो। आप (अब) दशरथ-पुत्र, सत्यव्रत के धारी तथा रणधीर श्रीरघुवीर (राम के रूप में अवतरित) हैं। १०। आप, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न-(कुल) चारों का पावन व्यूह[२] प्रकट हो गया है। आपने (विश्वामित्र आदि) मुनियों के यज्ञ की रक्षा की, (गौतम ऋषि की) नारी अहल्या का उद्धार किया तथा (सुबाहु आदि) निशाचरों तथा ताड़का का संहार किया। ११। आप वे राम हैं, जो शिवजी के धनुष को तोड़ डालनेवाले हैं, और जनक-तनया (सीता) की कामना की पूर्ति करनेवाले हैं। आप पिता के वचन के पालन के हेतु वन-वास (स्वीकार) करके गोदावरी नदी के तट पर निवास कर चुके हैं। १२। आप गायों, ब्राह्मणों तथा सन्तों के संकटों का निराकरण करनेवाले हैं, सांसारिक रोगों के लिए वैद्य हैं, (भक्त-जनों के प्रति) करुणा करनेवाले हैं। आपने देवों के (कार्य के) लिए मनुष्य-देह धारण की है और पृथ्वी को पद-पद पर तीर्थराज बना दिया है। १३। आपका शरीर करोड़ों कामदेवों का-सा कमनीय (अति सुन्दर) है; आप नित्य भूमिजा सीता के रमण अर्थात्

---

२. व्यूह—'व्यूह' का अर्थ है समूह, विशिष्ट रचना। 'मानस' में कहा है—भगवान ने शरण में आये हुए देवों, ऋषि-मुनियों, गौ-रूप-धारिणी पृथ्वी को अभिवचन दिया कि वे अपने अंशों सहित सूर्य-वंश में अवतार ग्रहण करेंगे।

'अंसन्ह सहित मनुज अवतारा लेहऊँ दिनकर वंस उदारा। (बाल० १८७)

राम भगवान के पूर्ण अवतार माने जाते हैं। स्वयं भगवान, शेष, शंख और चक्र-चारों विशिष्ट रचना-क्रम (व्यूह) से राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न के रूप में अवतरित थे। यही व्यूहावतार है।

राजीवनयन श्यामल गात्र, अद्‌भुत करम जनकजमात्र,
सद्‌गुण अलंकृत सुखराश, सुणो एक विनति अविनाश । १५ ।
लंकापुरीथी लखितंग, सेवक कमळभू तव अंग,
आव्यो इहां वायुतन, कूद्यो सिंधु शत जोजन । १६ ।
टाळ्यां विघ्न पंथ अमित, खोळ्युं नगर सर्व अभीत,
सीता तणी पाम्यो सुद्ध, आपी मुद्रिका मळ्यो बुद्ध । १७ ।
उजाड्युं अशोक चंडीधाम, मार्या असुर करी संग्राम,
हणिया अखे आदि कुमार, शूरा वीर ओज अपार । १८ ।
ए विण असुर मार्या ओक, पडियो दशाननने शोक,
चढियो इंद्रजित अमोघ, विद्यावंत बळगुण ओघ । १९ ।
तेशुं कर्युं जुद्ध अनंत, नाठो रावणी बळवंत,
पेठो विवरमां लेई प्राण, गाज्यो पवनपुत्र सुजाण । २० ।

पति है । मैं आपको नमस्कार करता हूँ । आपका गुण (-गान आधि-भौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक—इन) तीनों प्रकार के तापों का शमन करनेवाला है; आपका नाम कलि(-युग में किये जाने वाले पाप रूपी) मैल को दूर करनेवाला है । १४ । आप राजीव-नयन, श्याम-गात्र है, जनक के अद्‌भुत कर्म करनेवाले जामाता है । आप सद्‌गुणों से विभूषित तथा सुख की (साक्षात्) राशि हैं । हे अविनाशी (भगवान), एक विनती सुनिए । १५ । लंकापुरी से यह पत्र लिखने वाला आपका सेवक, आपके शरीर से उत्पन्न कमल में जन्म लेनेवाला (-कमलोद्‌भव) ब्रह्मा । वायुपुत्र हनुमान सौ योजन (चौड़ा) समुद्र पर से कूद पड़ा और यहाँ आ गया । १६ । मार्ग में उसने असंख्य विघ्न दूर कर दिये; निर्भय होकर समस्त नगर को ढूँढ लिया और सीता की खोज को वह प्राप्त हो गया । वह बुद्धिमान (हनुमान) उससे मिला और उसने उसे (आपकी) मुद्रिका दी । १७ । उसने अशोक वन और चंडीदेवी का स्थान (मन्दिर) उजाड़ दिया; युद्ध करके असुरों को मार डाला । उसने (युद्ध में) अक्षय आदि उन (राज-) कुमारों को मार डाला, जो शूर, वीर थे, तथा जिनका तेज अपार था । १८ । उनके अतिरिक्त, राक्षस-दल को मार डाला । उससे रावण को शोक हो गया । (तदनन्तर) इंद्रजित, जो अचूक (अस्त्र-शस्त्र-) विद्याओं से युक्त तथा (मानो) बल एवं गुणों का ओघ (ही) था, चढ़ दौड़ा । १९ । उसने उससे असीम युद्ध किया, तो वह बलवान रावण-पुत्र भाग गया । (फिर) वह प्राण लेकर विवर में प्रविष्ट हो गया । इस प्रकार सुजान पवन-कुमार के नाम का डंका वज गया । २० । उसने

ऐवुं कर्युं अद्‌भुत काम, ते तम प्रतापे श्रीराम,
में जई प्राथ्यों हनुमंत, त्यारे बंधायो बळवंत । २१ ।
लाव्या नगरमांहे प्रमुख, जोई भय पाम्यो दशमुख,
बाळी लंक आडे अंक, थई तव कनक केरी लंक । २२ ।
ए हनुमंत ने छे धन्य सेवक स्वामीभक्त अनन्य,
स्वामीतणुं एवुं काज, बीजे थाय नहि महाराज । २३ ।
ए में लख्युं सर्व सत्य, साचुं मानजो रघुपत्य,
राखे सदा चरण निवास, कहे कर जोडी गिरधरदास । २४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

ब्रह्मपत्र सुणी कपि सहित हरख्या श्रीरघुनाथ,
धन्य धन्य कही मारुति, चांप्यो रुदया साथ । २५ ।

इस प्रकार (जो) अद्‌भुत कार्य किया, हे श्रीराम, वह आपके प्रताप से ही हुआ। (तदनन्तर) मैंने (युद्ध स्थल में) जाकर हनुमान से प्रार्थना की, तब वह बलवान आबद्ध किया गया। २१। (सेना के) मुख्य (अग्रणी) उसे नगर में ले आये, तो उसे देखकर दशानन भय को प्राप्त हो गया। जब उसने अभूतपूर्व रूप से लंका को जला दिया, तब वह लंका सोने की हो गयी। २२। (आपका) वह अनन्य स्वामी-भक्त सेवक हनुमान धन्य है। हे महाराज, स्वामी का ऐसा कार्य किसी दूसरे से नहीं हो पाएगा। २३। हे रघुपति, मैंने यह सब सत्य (ही) लिखा है; इसे सत्य समझिएगा। कवि गिरधरदास हाथ जोड़कर कहते हैं—(ब्रह्माजी ने अन्त में लिखा—) मेरा सदा अपने चरणों में निवास रहने दीजिए। २४।

ब्रह्मा द्वारा लिखित उस पत्र को कपियों के साथ ही सुनकर श्रीरघुनाथ आनंदित हुए और उन्होंने 'धन्य, धन्य !' कहते हुए हनुमान को हृदय से लगा लिया। २५।

* * *

अध्याय—१४ (हनुमान द्वारा लंका का वर्णन करना)

राग मारु

सुणी ब्रह्मपत्र पावन, पाम्या आश्चर्य सर्वे जन,
त्यारे हरख्या घणुं रघुनाथ, चांप्यो मारुति रुदया साथ । १ ।

अध्याय—१४ (हनुमान द्वारा लंका का वर्णन करना)

ब्रह्मा द्वारा लिखा हुआ वह पावन पत्र सुनकर सब लोग आश्चर्य को प्राप्त हो गये। तब श्रीराम (भी) बहुत आनन्दित हो गये और उन्होंने

प्राणवल्लभ पवनकुमार, तुं ने शो करुं हुं उपकार ?
कह्यां रामे करुणा वचन, त्यारे बोल्या मारुततन । २ ।
जो आज्ञा करो महाराज, तो लावुं जानकीने आज,
कहो तो रावणने जई मारुं, कुळ राक्षसनुं संहारुं । ३ ।
त्यारे बोल्या दशरथतन, भाई धीरज राखो मन,
हजी करवुं छे काज अपार, घणुं जुद्ध थाशे ते ठार । ४ ।
पण पूछुं तने हनुमंत, केवी लंका छे शोभावंत,
लोक शो पाळे छे धर्म ? कहो राक्षस केरुं कर्म । ५ ।
हनुमंत कहे गंढवंक, त्रण सें गाउ लांबी छे लंक,
एकवीश कोटी बार लक्ष, पुरमां मंदिर छे प्रत्यक्ष । ६ ।
एकेक घरमां दश दश वास, सोळ माळना ऊंचा आवास,
तेनी विगत कहुं विस्तारी, एक एकथी शोभा सारी । ७ ।
पांच लक्ष आरसनां धाम, सात लक्ष त्रांबानां काम,
पांच कोटी कनकनां विख्यात, रत्न-हीरा तणां कोटी सात । ८ ।

हनुमान को हृदय से लगा लिया । १ । (फिर वे बोले—) 'हे प्राण-वल्लभ पवन-कुमार, मैं तुम्हारा क्या (प्रति-) उपकार करूँ ?' (जब) राम ने करुणा से युक्त ये वचन कहे, तब हनुमान बोला—। २ । 'महाराज, यदि आप आज्ञा दें, तो मैं आज (ही) जानकीजी को ले आऊँगा । कहिए तो जाकर रावण को मार डालूँगा (और) राक्षसों के कुल का संहार कर दूँगा ।' ३ । तब दशरथ-तनय राम ने कहा— 'हे भाई, मन में धीरज रखो । अब अपार काम करना है । उस स्थान पर बड़ा युद्ध हो जाएगा । ४ । परन्तु, हे हनुमान, मैं तुमसे यह पूछता हूँ— लंका कैसी शोभायमान (सुन्दर) है ? लोग किस धर्म का पालन करते है ? राक्षसों के कर्म (सम्बन्धी बात भी) कह दो ।' ५ । (इस पर) हनुमान बोला— 'लंका का गढ़ तो बाँका है । वह लंका तीन सौ योजन लम्बी (विशाल) है । उस नगर में प्रत्यक्ष इक्कीस करोड़ बारह लाख भवन हैं । ६ । एक-एक मकान में दस-दस निवास-स्थान है । वे सोलह-सोलह मालों (खण्डों, मंज़िलों) वाले निवास-स्थान हैं । उनकी स्थिति विस्तार-पूर्वक कहता हूँ । एक-एक की शोभा दूसरे से (अधिक) सुन्दर है । ७ । वहाँ पाँच लाख संगमरमर के घर हैं, सात लाख ताँबे के कामवाले (अर्थात् ताँबे की कारीगरी किये हुए) हैं । पाँच करोड़ सोने के विख्यात भवन हैं, रत्नों तथा हीरों के सात करोड़ है । ८ । शिवजी के नौ करोड़ देवालय हैं । (उनमें) तीनों काल बड़ी पूजा होती है । असुरों के घरों में अग्निहोत्र

शिवनां देवळ छे नव कोटी, थाय त्रिकाळ पूजा मोटी,
अग्निहोत्र असुरने घेर, थाय वेदाध्ययन बहु पेर। ९।
रुद्राक्ष-विभूति संग, करे धारण निशिचर अंग,
कर्या रावणे वेदना खंड, देवने दे छे घणो दंड। १०।
तप दारुण करता असुर, जपे मलिन मंत्र महाभूर,
नहि दया राक्षसने लेश, रहित आचार अपवित्र लेश। ११।
गौब्राह्मण सुरने पीडे, नित्य हिंसा करता हींडे,
त्रण लोकनो वैभव जेह, छे रावणना घरमां तेह। १२।
जेने सुंदरीओ छे असंख्य, करे निशदिन क्रीडा निःशंक,
जेने पुत्री-जामात्र अपार, पुत्रपौत्र तणो नहि पार। १३।
लंकामां एक विभीषण भक्त, जे छे तम साथे आसक्त,
बाकी सर्वे असुर छे अधरमी, निरदे अपवित्र हिंसा करमी। १४।

चलता रहता है और बहुत प्रकार से वेदों का अध्ययन हुआ करता है। ९। राक्षस शरीर पर भस्म के साथ रुद्राक्ष धारण करते हैं। रावण ने वेदों के खण्ड बना लिये हैं (अर्थात्) वेदों को विभिन्न खण्डों में विभक्त किया है।[1] (फिर भी) वह देवों को बहुत दण्ड देता है। १०। वे महाकपटी राक्षस दारुण तप करते हैं और मलिन अर्थात् अपवित्र मन्त्रों का जाप करते रहते हैं। राक्षसों में जरा भी दया नहीं है। वे (सद्-) आचार-रहित हैं, उनका वेश भी अपावन है। ११। वे गायों-ब्राह्मणों तथा देवों को पीड़ा पहुँचाते हैं और नित्य हिंसा करते हुए घूमते रहते हैं। तीनों लोकों का जो (भी) वैभव है, वह रावण के भवनों में (भरा हुआ) है। १२। उसके असंख्य सुन्दर स्त्रियाँ हैं और वह निःशंक होकर रात-दिन क्रीड़ा (भोग-विलास) करता रहता है। उसके कन्याएँ और जामाता अनगिनत हैं, पुत्रों-पौत्रों का तो कोई पार (ही) नहीं है। १३। लंका में (केवल) एक विभीषण (ऐसा) भक्त है, जो आपके प्रति आसक्त है। शेष समस्त असुर धर्म-रहित हैं, निर्दय और अपवित्र हैं, हिंसाचारी हैं।' १४। हनुमान ने (जब) ऐसी बात कही, तो उसे सुनकर जगत्पिता श्रीराम हँस

---

१. एक मान्यता के अनुसार रावण वेदों तथा समस्त शास्त्रों का ज्ञाता था। वाल्मीकि रामायण में भी उसे वेद-विद्या-सम्पन्न बताया गया है। उसने शाखाओं के क्रम के अनुसार वेदों का विभाजन किया— वेदों के खण्ड बना लिये। उसके नाम पर ऋग्वेद का एक भाष्य और वेदों का एक पद-पाठ भी उपलब्ध है। उड़िया भाषा के बलराम रामायण के अनुसार उसने वैदिक मन्त्रों का सम्पादन करके वेदों की एक नयी शाखा को प्रतिष्ठित किया था।

कुछ विद्वान वेदों के ज्ञाता रावण को लंकापति रावण से भिन्न व्यक्ति मानते है।

एवी कही हनुमंते वात, ते सुणीने हस्या जुगतात,
एमनां तप होमने धिक्कार, न जाण्यो जेणे तत्त्वविचार। १५।
जे शास्त्र सुण्यां ते व्यर्थ, जेणे आत्मा न जाण्यो समर्थ,
जेवी सर्पनी शांति प्रमाणो, एवी क्रिया असुरनी जाणो। १६।
जेवुं विधवानुं रूप यौवन, अत्यंजनुं जेवुं रम्य भोवन,
जारनां शुभ आचरण, जेवुं तस्करनुं डहापण। १७।
दंभी तणुं भजन ने ध्यान, जेम भूत दया विण ज्ञान,
ए सर्वे ज्यम मिथ्या जाणो, एवां असुरना कर्म प्रमाणो। १८।
सुन हनुमंत निश्चे जाण, मारे हणवा असुर निरवाण,
करे राक्षस जे अनाचार, मारे करवो तेनो संहार। १९।
लंका हनुमंते बाळी ज्यारे, सोनानी पृथ्वी थई त्यारे,
पाम्या आश्चर्य पूरणकाम, जांबुवानने पूछे राम। २०।

पड़े। (वे बोले—) 'उनके तप और होम को धिक्कार है, जिन्होंने कोई तत्त्व (ब्रह्म-) सम्बन्धी विचार नहीं जाना है। १५। जिन्होंने समर्थ होने पर भी आत्मा को नहीं जाना, उन्होंने जो भी शास्त्रों का श्रवण किया हो, वह व्यर्थ है। साँप की शान्ति जैसी होती है, असुरों की (धर्म-सम्बन्धी इन) क्रिया वैसी ही व्यर्थ समझ लो। १६। विधवा का रूप और यौवन जैसे (अर्थहीन) होता है, अन्त्यज का रम्य भवन जैसे (व्यर्थ) होता है, जार व्यक्ति का आचरण जैसा शुभ (अर्थात् पूर्णतः अशुभ, अपवित्र) होता है, चोरों की समझदारी जैसे (व्यर्थ) होती है, दम्भी व्यक्ति द्वारा किया हुआ भजन और ध्यान जैसे व्यर्थ होता है, जैसे विना भूत-दया के ज्ञान (व्यर्थ) होता है,— उन सबको जैसे मिथ्या (झूठा, अतएव व्यर्थ) समझ लो, वैसे (ही व्यर्थ) राक्षसों के (धर्म-सम्बन्धी) उन कर्मों को समझो। १७-१८। सुनो— हे हनुमान, यह निश्चय समझ लो, निश्चय ही मुझे असुरों को मार डालना है; जो राक्षस अनाचार कर रहे हों, मुझे उनको मारकर उनका संहार करना है।' १९। (इधर) हनुमान ने जब लंका को जलाया, तब वह सोने की हो गयी। (यह जानकर) पूर्ण-काम श्रीराम आश्चर्य को प्राप्त हो गये। उन्होंने जाम्बवान से पूछा। २०। हे ऋक्षराज, एक बात बता दो। मुझे प्रत्यक्ष सन्देह हो गया है। तुम बहुत काल के अपार वृद्ध हो, ब्रह्मा के अवतार हो[1]। २१।

१. जाम्बवान—कहते है कि जाम्बवान ब्रह्मा की जमुहाई से उत्पन्न हुआ। अतः वह ब्रह्मा का पुत्र कहाता है।

कहो रींछपति एक वात, मने संदेह थयो साक्षात्,
घणा काळना वृद्ध अपार, तमो ब्रह्मा तणो अवतार। २१।
माटे कहो लंकानी उत्पत्य, पूर्वे कोणे वसावी सत्य ?
केम सागरमांथी थयो बेट ? ते कहो अथ इति नेट। २२।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अथ इति कहो लंका केरी, रींछपति बळवान रे,
एवां रामचंद्रनां वायक सुणीने, बोल्या जांबुवान रे। २३।

इसलिए बता दो— लंका की उत्पत्ति कैसे हुई ? पूर्वकाल में सचमुच उसे किसने बसा लिया ? सागर में द्वीप कैसे हो गया ? अथ से इति (तक) वह ठीक से कह दो। २२।

हे बलवान ऋक्षपति, लंका की अथ से इति तक बात बता दो!' श्रीरामचन्द्र की ऐसी बातें सुनकर जाम्बवान बोला। २३।

* * *

अध्याय—१५ (जाम्बवान द्वारा स्वर्ण लंका की उत्पत्ति की कथा कहना)

राग सामेरी

जांबुवान कहे सुणो रामजी, पूर्वे ग्रह्यो गज ग्राहे,
त्यारे हरि आव्या गरुडे बेसी, करवा गजनी साहे। १।

अध्याय—१५ (जाम्बवान द्वारा स्वर्ण लंका की उत्पत्ति की कथा कहना)

जाम्बवान ने कहा— "हे रामजी, सुनिए। पूर्वकाल में (जब) ग्राह (नक्र, मगर) ने गज (हाथी) को पकड़ लिया,[1] तब भगवान विष्णु

टिप्पणी— १. गज-ग्राह : कर्दम प्रजापति के देवहूती से उत्पन्न जय और विजय नामक पुत्र थे। वे परम विष्णु-भक्त और यज्ञ-कर्म में प्रवीण थे। एक समय मरुत्त राजा के यज्ञ में जय 'ब्रह्मा' और विजय 'याजक' हो गया। उस यज्ञ के पश्चात् दक्षिणा के विषय में दोनों में संघर्ष उत्पन्न हो गया। तब जय ने विजय को 'ग्राह (मगर)' बन जाने और विजय ने जय को 'गज (हाथी)' बनने का अभिशाप दिया। तदनन्तर जब वे भगवान विष्णु की शरण में गये, तो उन्होंने उन्हें उनका यथासमय उद्धार करने का अभिवचन दिया। फिर जय-विजय ग्राह और गज बनकर गंडकी नदी के पास रहने लगे। एक दिन जब गज (-जय) ने स्नान के लिए नदी में ज्यों ही प्रवेश किया, त्यों ही ग्राह (विजय) ने उसे पकड़कर पानी में खींच लिया। उस समय गज ने भगवान विष्णु को रक्षा के लिए बुलाया, तो उन्होंने तत्काल वहीं आकर ग्राह को मार डाला और गज की रक्षा की। उस समय दोनों का उद्धार हो गया।

त्यारे चक्र मूकी छेदियो, नक्रने तेणी वार,
त्यां गति आपी ग्राहने, गजनो कर्यो उद्धार। २।
रमारमण तव चालिया, वैकुंठ प्रत्ये जाय,
तव क्षुधा लागी गरुडने, वीनव्या वैकुंठराय। ३।
त्यारे विष्णु कहे ए कलेवर, गजग्राहनां छे जेह,
हुं जाउं छुं वैकुंठमां, जा भक्ष कर तुं तेह। ४।
त्यारे गरुडे आवी कुणप, बेउनां, ग्रह्यां चंचुमांहे,
मन जाण्युं जे करुं भक्ष ए, एकांत जईने तांहे। ५।
एटले एक शरभंग राक्षस, तेणे माग्यो भाग,
तेने मारियो विनतासुते, मेरु गयो महाभाग। ६।
ते मेरु उपर जांबुनुं एक, वृक्ष प्रौढ अपार,
एक शाखा उपर बेठो जई, तेनो शत जोजन विस्तार। ७।
साठ सहस्र वालखिल्य ऋषि, टिंगाया हता ते डाळ,
वळी गरुडने भारे करी, भांगी पडी तत्काळ। ८।

गरुड़ पर विराजमान होकर गज की सहायता करने के लिए आ गये। १। तब उस समय उन्होंने चक्र छोड़कर (चलाकर) नक्र को छेद डाला। उन्होंने वहाँ उस नक्र को (सद्-) गति (मुक्ति) प्रदान की और गज का उद्धार किया। २। फिर तब (भगवान) रमा-रमण चल दिये और वैकुण्ठ के प्रति गमन करने लगे। तब गरुड़ को भूख लगी थी, (इसलिए) उसने वैकुण्ठराज (भगवान विष्णु) से विनती की। ३। तब विष्णु ने कहा— 'जाओ, ये जो गज और ग्राह के कलेवर हैं, उन्हें तुम खा लो; मैं वैकुण्ठ में जा रहा हूँ।' ४। तब गरुड़ ने आकर उन दोनों के शव चोंच में पकड़ लिये और मन में सोचा, मुझे जो खाना है, उसे एकान्त में (ले) जाकर वहाँ भक्षण करना चाहिए। ५। इतने में शरभंग नामक एक राक्षस ने (उनमें से) अपना भाग माँग लिया, तो विनता-पुत्र गरुड़ ने उसे मार डाला और वह महा भाग्यवान मेरु पर्वत पर गया। ६। उस मेरु पर्वत पर जम्बु (जामुन) का एक अपार प्रचण्ड वृक्ष था। (वहाँ) जाकर वह (गरुड़) उसकी एक शाखा पर बैठ गया। उसका फैलाव सौ योजन था। ७। उस शाखा से साठ सहस्र वालिखिल्य (नामक) ऋषि टँगे हुए थे।[2] फिर गरुड़ के भार से वह (शाखा) तत्काल टूटकर गिर

टिप्पणी— २. बालिखिल्य : प्रजा की उत्पत्ति के लिए प्रजापति ब्रह्मा ने जब तपस्या आरम्भ की, तो उस समय उसके बालों से साठ सहस्र पुत्र उत्पन्न हो गये। वे अँगूठे के मध्यभाग के बराबर ऊँचे थे। ये साठ सहस्र पुत्र ऋषि माने गये और

गरुडे जाण्युं मुनि चंपाशे, ग्रही शाखा करमोझार,
गज-नक्र चंचुमां ग्रहीने, ऊड्यो तेणी वार। ९।
कश्यपऋषि बेठा हता, आवीने पूछ्युं त्यांहे,
हे पिता ! कहो आ शाखा हवे जईने मूकुं क्यांहे। १०।
ए पुत्र संकटमां पड्यो, कश्यपे जाण्युं मन,
पछे वालखिल्यनी स्तुति करीने, उतार्या मुनिजन। ११।
पछे पुत्रने कह्युं प्रजापतिए, जा तुं दक्षिण देश,
लंकागिरिनी उपर जईने, भक्ष करजे एश। १२।
ते गिरि सागर मध्यमां छे, आव्यो तेणे ठार,
त्यां गरुड आवी ग्राह-गज तन, तणो कीधो आहार। १३।
ते भक्ष करीने अस्थि नाख्यां, गरुडे त्यांहां साक्षात,
ते तणो त्रिकुटाचळ थयो, तमे सुणो रघुवर वात। १४।

जाने लगी। ८। तो गरुड़ ने जान लिया कि ये मुनि दब-कर मर जाएँगे, (इसलिए) उसने उसे हाथ में पकड़ लिया। गज और नक्र (के मृत शरीरों) को चोंच में पकड़े हुए वह उस समय (वहाँ से) उड़ गया। ९। (उस समय जहाँ) कश्यप ऋषि बैठे हुए थे, वहाँ आकर उसने पूछा— 'हे पिताजी[३] कहिए, अब जाकर इस शाखा को कहाँ छोड़ दूँ ?' १०। कश्यप ने मन में जान लिया कि यह पुत्र संकट में पड़ा है। तो फिर उन्होंने मुनिजन वालिखिल्यों की स्तुति करके उन्हें उतार दिया। ११। फिर प्रजापति ने अपने पुत्र (गरुड़) से कहा— 'तुम दक्षिण देश जाओ और लंका के पर्वत पर जाकर इन्हें खा लो।' १२। वह पर्वत समुद्र के मध्य (भाग) में है। उस स्थान पर गरुड़ आया। वहाँ आकर उसने ग्राह और गज के शरीरों को खा डाला। १३। फिर प्रत्यक्ष गरुड़ ने उन्हें खाकर उनकी हड्डियाँ वहाँ

'वालिखिल्य' कहलाये। (कुछ पुराणों में उन्हें ब्रह्मा के पौत्र बताया गया है।) वालिखिल्य सूर्य के अनन्य भक्त थे; वे सूर्यलोक में रहते थे और पक्षियों की भाँति एक-एक दाना चुगा करते थे। वे वट-वृक्ष या जामुन के वृक्ष की शाखा से लटकते हुए तपस्या करते थे। कश्यप की यज्ञशाला में एक बार वे यज्ञ-कर्म के लिए उपस्थित हो गये, तो उनके शरीरों को देखकर इंद्र ने उनकी दिल्लगी उड़ायी। तब क्रुद्ध होकर उन्होने नये इन्द्र को प्रतिष्ठित करने का संकल्प किया और उसके लिए एक यज्ञ का आयोजन किया। तदनन्तर कश्यप ने उन्हें उचित उपदेश देते हुए इन्द्र के स्थान पर नये इन्द्र का निर्माण करने के बदले पक्षियों के इन्द्र का निर्माण करने की सूचना दी। आगे चलकर उनके यज्ञ के फल-स्वरूप गरुड़ की उत्पत्ति हुई, जिसे 'खगेन्द्र' माना गया।

टिप्पणी— ३. गरुड़ कश्यप ऋषि और विनता का पुत्र है।

पेली शाखा शत जोजननी, हती कनक केरी जाण,
ते सिंधु नाखी तदा, थयो बेट त्यां निरवाण। १५।
ते बेटमां विधिए रच्युं, लंका नगर विख्यात;
महा कनक मणिमय धाम सुंदर, कोट पाछळ सात। १६।
ते जांबुनंदनी भोम नीचे, मलिन थई'ती आप;
ते लंका बाळी हनुमंते, लाग्यो अग्नि केरो ताप। १७।
त्यारे देखाई शुद्ध कनकभूमि, सुणो श्रीरघुवीर,
ए प्रकारे लंका थई, उत्पत्ति कही रणधीर। १८।
सुग्रीव कहे श्रीरामने, तमो सुणो श्रीमहाराज,
प्रयाण करीए आपणे, शुभ महुरत छे वळी आज। १९।
रघुपति कहे हावे चालवुं भाई, नव लगाडो वार,
सुग्रीवे कपिनुं सैन्य सहु, तत्पर कर्युं तेणी वार। २०।
शरदऋतुनो मास आश्विन, पक्ष उज्ज्वळ जेह,
विजयादशमी चंद्रवासर, श्रवण कहीए तेह। २१।

फेंक दीं। हे रघुवीर, आप यह बात सुनिए। उन (हड्डियों) से त्रिकूटाचल बन गया। १४। समझिए कि (जम्बु वृक्ष की) सौ योजन विस्तारवाली वह शाखा सोने की थी। उसने तब उसे समुद्र में फेंक दिया। उससे वहाँ निश्चय ही एक द्वीप (का निर्माण) हो गया। १५। विधाता ने उस द्वीप में विख्यात लंकानगर का निर्माण किया। उसमें स्वर्ण-रत्नमय बड़े-बड़े भवन हैं और पीछे सात सुन्दर कोट (दुर्ग) हैं। १६। (कालान्तर में) जम्बुनद (सोने) की वह भूमि नीचे अपने-आप मलिन हो गयी थी। हनुमान ने (जब) उस लंका को जला दिया, तो अग्नि की आँच उसे लग गयी। १७। हे रघुवीर, सुनिए। तब वह स्वर्णभूमि (आग में तप्त हो जाने पर) शुद्ध दिखायी देने लगी है। इस प्रकार लंका (सोने की) हो गयी। हे रणधीर (श्रीराम), मैंने (लंका की) उत्पत्ति (की कथा) कही।" १८। (तदनन्तर) सुग्रीव श्रीराम से बोले— 'हे श्रीमहाराज, आप सुनिए। हमें प्रयाण करना चाहिए; फिर आज ही शुभ मुहूरत है।' १९। (इसपर) रघुपति ने कहा— 'भाई, अब चलना है; समय (देर) मत लगाओ।' तो उस समय सुग्रीव ने समस्त सेना सज्ज की। २०। (उस समय) शरद ऋतु का आश्विन मास था; पक्ष उज्ज्वल (उजाले का अर्थात् शुद्ध) था। विजया दशमी थी, वार सोमवार था, और कहिए कि नक्षत्र श्रवण था। २१। (इस प्रकार के) अभिजित मुहूर्त पर श्रीराम

अभिजित महुरत मांहे रामे, प्रयाण कीधुं सार,
अढार पद्म सैन्या संगाथे, चढ्या सूरजकुमार। २२।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

चढ्यो सूरजकुमार सुग्रीव, अढार पद्म दळ साथ रे,
शुभ महुरतमां प्रयाण कीधुं, लक्ष्मण ने रघुनाथ रे। २३।

ने सुन्दर (रीति से) प्रयाण किया। अठारह पद्म सेना सहित सूर्य-पुत्र सुग्रीव (लंका की ओर) चढ़ दौड़ा। २२।

सूर्य-पुत्र सुग्रीव चढ़ दौड़ा। (उसके) साथ अठारह पद्म सेना थी। (इस प्रकार) श्रीराम और लक्ष्मण ने शुभ मुहूर्त पर (लंका की ओर जाने के लिए) प्रयाण किया। २३।

* * *

अध्याय—१६ (राम का सेना-सहित समुद्र-तट पर आगमन; रावण द्वारा विचार-विनिमय)

राग सोरठ

जीतवा रावणरायने, रघुवर चड्या तेणी वार रे,
सहु कपि तणो सरदार सुग्रीव, सैन्यनो नहि पार रे। १ ।
हनुमंत स्कंधे राम चढिया, चाप शर ग्रही हाथ,
ज्यम गरुड उपर श्रीपति, एम शोभता रघुनाथ। २ ।
अंगद केरे स्कंध बेठा, लक्ष्मणजी तेणी वार,
ज्यम ऐरावत पर इंद्र शोभे, नंदी पर त्रिपुरार। ३ ।

अध्याय—१६ (राम का सेना-सहित समुद्र-तट पर आगमन; रावण द्वारा विचार-विनिमय)

उस समय रावण राजा को जीतने के लिए रघुवर श्रीराम ने आक्रमण किया। समस्त कपियों का प्रमुख सुग्रीव था और उसकी सेना की कोई सीमा नहीं थी। १। हाथ में धनुष और बाण लेकर राम हनुमान के कन्धे पर चढ़ बैठे। जैसे गरुड़ पर रमापति (भगवान विष्णु) शोभा देते हों, वैसे (हनुमान के कन्धे पर) राम शोभायमान थे। २। उस समय लक्ष्मण अंगद के कन्धे पर बैठ गया। जैसे इन्द्र ऐरावत पर शोभायमान होता हो, नन्दी पर त्रिपुरारि शिवजी शोभायमान होते हों, वैसे अंगद के कन्धे पर

विशाळ वृक्ष उपाडीने, कपिए ग्रह्यां करमांहे,
ते छत्र करता रामने, नव पल्लव चंमर त्यांहे। ४।
जय बोलावी रघुनाथनी, दळ चाल्युं दक्षिण देश,
चिक्कार करता चालता, गिरि सम कपिना वेश। ५।
भुभुकार नाद हुंकार करता, कूदता बळवान,
कर मांहे गिरि उछाळता, ते कुसुम गेंद समान। ६।
केटलाक कपिए वृक्ष झाल्यां, केटलाके पाषाण,
केटलाक कर नख दंत करडे, करे महा बुंबाण। ७।
जय जय धुनि कही गर्जता, पदप्रहारे ध्रूजे धर्ण,
सिंधुजळ ऊछळ्यां, सूरज थयो धूंधळ वर्ण। ८।
दिग्गज डग्या ने शेष सळक्यो, भूमि न सहे भार;
एम चाली सेन्या रामनी, कहेतां न आवे पार। ९।
जोजन दश विस्तार पहोळी, कपि सेन्या जाय;
मारग तणां पाषाण तरु, ते भांगी भूको थाय। १०।

लक्ष्मण शोभायमान दिखायी दे रहा था। ३। वानरों ने विशाल वृक्ष उखाड़कर हाथों में लिये थे। उन्होंने वहाँ राम के लिए उनके छत्र बना लिये। उनमें वहाँ नये-नये पत्तों के चँवर भी थे। ४। वे 'रघुनाथ राम की जय' बोल रहे थे। (इस प्रकार) वह (वानर-) सेना दक्षिण देश (की ओर) चल रही थी। वे वानर चीत्कार करते हुए चल रहे थे। उनका वेश (रूप) पर्वतों के समान था। ५। वे बलवान (वानर) भुभुकार ध्वनि करते हुए हुंकार भर रहे थे, और कूद रहे थे। वे हाथों में पर्वतों को फूलों तथा गेंदों के समान उछाल रहे थे। ६। कितने ही कपियों ने वृक्ष पकड़ लिये थे, तो कितनों ही ने पाषाण। कितने ही हाथों के नाखूनों और दांतों को चबा रहे थे और बड़ा चीत्कार कर रहे थे। ७। 'जय हो', 'जय हो' की ध्वनि करते हुए वे गरज रहे थे। उनके पावों के प्रहारों से धरती काँप रही थी। (उससे) समुद्र का पानी उछल रहा था; (उड़ी हुई धूल के कारण) सूर्य धुँधले वर्ण का हो गया था। ८। दिग्गज डगमगा उठे और शेष क्षुब्ध हो गया। भूमि भार सहन नहीं कर पा रही थी। इस प्रकार राम की सेना चल रही थी। उसे कहते (उसका वर्णन करते) हुए पार नहीं पा सकते हैं। ९। विस्तार में दस योजन चौड़ी वह कपि-सेना चल रही थी। मार्ग में पाषाण और वृक्ष थे, वे टूटकर चूर-चूर होते जा रहे थे। १०। एक-दूसरे के सिर पर पाँव रखकर वे कपि कूद रहे थे। कोई-कोई पृथ्वी पर चल रहे थे, तो कोई-

एक एकना शिर विषे पग दई, कूदता कपि तास,
को पृथ्वी उपर हींडता, को ऊडता आकाश। ११।
जय राम जय जय राम कहीने, गर्जता महावीर,
एम कपि सेन्या सहित आव्या, राम सागरतीर। १२।
दश योजनमां ऊतरी सेन्या, शोर थाय अमित,
भुभुकार व्याप्यो दशे दिशा, सिंधु थयो भयभीत। १३।
ते खबर थई लंका विषे, ज्यां बेठो रावणराय,
श्रीराम आव्या सागरतीरे, लेई कपि सेन्याय। १४।
एवुं सांभळीने दशानन तव, चमकियो मनमांहे,
सभा विषे तेडाव्या सहु, जे अधिकारी त्यांहे। १५।
इंद्रजित आदे पुत्रने वळी, प्रहस्त आदि प्रधान,
ए विना अन्य असुर तेडाव्या, सभामां दई मान। १६।
ते सर्व साथ विचार करवा, लाग्यो रावण भूप,
भाई! आपणे हावे शुं करवुं? ते कहो समय अनुप। १७।
दशरथ तणा सुत आविया, ऊतर्या सागरतीर,
कपि सेन्या ते साथे घणी, हनुमंत सरखा वीर। १८।

कोई आकाश में उड़ रहे थे। ११। वे महान वीर कपि 'राम की जय', 'राम की जय', 'राम की जय' कहते हुए गर्जन कर रहे थे। इस प्रकार (चलते-चलते) श्रीराम कपिसेना सहित समुद्र-तट पर आ गये। १२। दस योजन विस्तीर्ण स्थान पर वह सेना उतर गयी। (तब) असीम शोर हो रहा था। दसों दिशाओं को भुभुकार ने व्याप्त कर दिया। समुद्र भयभीत हो गया। १३। लंका में, जहाँ राजा रावण बैठा हुआ था, वहाँ उसे यह खबर (विदित) हो गयी— 'कपि-सेना को लिये हुए श्रीराम समुद्र-तट पर आ गये हैं।' १४। तब ऐसा सुनते ही दशानन मन में चौंक उठा। वहाँ जो अधिकारी थे, उन सबको उसने सभा में बुला लिया। १५। इन्द्रजित आदि पुत्रों तथा उनके अतिरिक्त प्रहस्त आदि मन्त्रियों, उनके अतिरिक्त अन्य असुरों को सम्मान-पूर्वक सभा में निमन्त्रित किया। १६। (उनके आने के पश्चात्) राजा रावण उन सबके साथ विचार-विनिमय करने लगा। (वह बोला—) 'हे भाइयो, हम अब क्या करें, समय के अनुरूप वह कह दो। १७। दशरथ के पुत्र आ गये हैं और समुद्र-तट पर उतर (ठहर) गये हैं। उनके साथ बड़ी कपि-सेना है, हनुमान जैसे वीर हैं। १८। शत्रु, सर्प और अग्नि— इन तीनों को छोटा न मानें। वे क्षण मात्र में विघ्न (प्रस्तुत) कर सकते हैं। अतः उनका

शत्रु, सर्प ने अग्नि तणे, न गणवां लघु एह,
करे विघ्न ते क्षणमात्रमां, माटे धीरीए नहि तेह । १९ ।
एक वानरे लंका प्रजाळी, अक्षे आदि असुर,
ते हणी निर्भय गयो पाछो, मळ्युं कपिदळ पूर । २० ।
ते माटे पूछुं सर्वने कहो, हवे करवुं केम ?
निश्चे विचार कहो सहु, मुज कुशळ थायजेम । २१ ।
एवां वचन सुणी रावण तणां, पछी बोल्या पुत्र प्रधान,
महाक्रोध आणी कहे वाणी, करी मन अभिमान । २२ ।
अरे राय शुं चिंता करो, ए रामना शा भार ?
शुं युद्ध करशे कपि ए ? वर-वानर आपणो आहार । २३ ।
राम लक्ष्मण मनुष्य बे, करी तप थया कृशकाय,
कपि भालु रींछ मर्कट, ते थकी शुं थाय ? । २४ ।
आज दैवे मोकल्युं घेर बेठां, भक्ष आपणुं एह,
तमे निर्भे थई रहो भूपति, चिंता न करशो तेह । २५ ।
एम शक्रजित अतिकाय, देवतांक नरांतकनी आद,
वज्रदृष्टि महोदर, करता घणो बकवाद । २६ ।

भरोसा नहीं करना चाहिए । १९ । (पहले) एक वानर ने लंका जला डाली थी, अक्षय आदि असुरों को मार डालकर वह निर्भयता-पूर्वक लौट गया (और अब) पूरा कपि-दल मिला हुआ है । २० । इसलिए मैं सबसे पूछ रहा हूँ— कहो, अब कैसे करें । (तुम) सब निश्चय-पूर्वक अपना विचार कह दो, जिससे मेरी कुशल हो जाए ।' २१ । रावण की ऐसी बातें सुनने के पश्चात् उसके पुत्र और मन्त्री बोलने लगे । बड़ा क्रोध लाते (—अनुभव करते हुए) तथा मन में अभिमान करते हुए वे बोले । २२ । 'हे राजा, आप चिन्ता क्या कर रहे हैं ? उस राम की सामर्थ्य क्या है ? वे कपि क्या युद्ध करेंगे ? नर और वानर तो अपना भक्ष्य हैं । २३ । राम और लक्ष्मण— ये दोनों मनुष्य तप करते हुए शरीर से कृश (दुबले-पतले) हो गये हैं । (इसके अतिरिक्त) कपियों, भालुओं-रीछों और वानरों से क्या हो जाएगा ? २४ । आज हमारे (घर) बैठे-बैठे हमारा यह भक्ष्य भाग्य ने घर भेज दिया है । हे राजा, आप निर्भय होकर रहिए— उनकी कोई चिन्ता न करना ।' २५ । इन्द्रजित, अतिकाय, देवान्तक, नरान्तक, वज्रदृष्टि, महोदर आदि इस प्रकार बहुत बकवास करते रहे । २६ । उस समय उस स्थान पर सभा में विभीषण बैठा हुआ था । कानों से राम की निन्दा सुनकर उसके मन में अपार क्रोध (उत्पन्न)

ते समे सभामां विभीषण, बेठा हता ते ठार,
रामनी निंदा श्रवण सुणी मन, थयो क्रोध अपार। २७।
महापुरुष पावन विभीषण, सद्गुण गंगा नीर,
ज्यम वायस केरी सभामां, राजहंस बेठो धीर। २८।
पुरुष परमारथ वृक्षनां, जे सत्य सिंधु न्याय,
भक्ति ज्ञान वैराग सागर, विवेकी कहेवाय। २९।
एवा विभीषण जे विचक्षण तेणे, सुण्यां असुर वचन,
पछे सभामांहे बोलिया, घणुं क्रोध आणी मन। ३०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

मनमांहे आणी क्रोध बोल्यो, विभीषण तेणी वार रे,
ते श्रोताजन सहु सांभळो, करुं संक्षेप वर्णन रे। ३१।

हो गया। २७। विभीषण तो पवित्र (आचार-विचार वाला) महापुरुष था। मानो वह सद्गुण रूपी गंगा का जल था। जैसे कौओं की सभा में कोई धैर्यशील राजहंस ही बैठा हो। २८। वह परमार्थ रूपी वृक्ष का पुष्प, सत्य और न्याय का सागर, भक्ति ज्ञान और वैराग्य का समुद्र तथा विवेकवान कहाता था। २९। इस प्रकार जो विचक्षण था, उस विभीषण ने असुरों की उक्तियों को सुना, तो फिर मन में क्रोध धारण करके वह सभा में बोला। ३०।

उस समय मन में क्रोध धारण करके विभीषण (जो) बोला, हे समस्त श्रोताजनो, उसे आप सुनिए। मैं संक्षेप में उसका वर्णन करते हुए कहूँगा। ३१।

* * *

अध्याय—१७ (अपमानित हो जाने पर विभीषण का राम की शरण में जाने के लिए प्रस्थान)

राग विभास

निंदा सुणी रघुवीरनी त्यारे थयो विभीषणने खेद,
जथारथ पोते जाणे छे प्रभुने, निर्गुण सगुण अभेद। १।

अध्याय—१७ (अपमानित हो जाने पर विभीषण का राम की शरण में जाने के लिए प्रस्थान)

तब रघुवीर राम की निन्दा सुनकर विभीषण को खेद हुआ। वह स्वयं भगवान के निर्गुण और सगुण रूपों के अभिन्नत्व को जानता था। १।

ते सभामांहे पछे बोल्या विभीषण, नीतिवचन निरधार,
रावणतणा प्रधानपुत्र शुं, क्रोध करी तेणी वार। २ ।
अल्या दुष्ट दुर्जन पामर पापी, बोलो विचारी मन,
शुं दशमुखने अनर्थ समझावो, मिथ्या गर्व वचन। ३ ।
जे स्थिति उद्‌भव संहरण कारण, कोटी ब्रह्मांडना ईश,
जे जीवना जीवन सकळ कर्मना, फळदाता जुगदीश। ४ ।
ते राम आव्या सागरतीरे, साथे सैन्य अपार,
ए राक्षसनो संहारज करशे, उतारशे भूभार। ५ ।
ए हनुमंतनुं बळ सही न शकायुं, अखेकुमारने मार्यो,
इंद्रजित नासी विवरमां पेठो, ते ब्रह्माए उगार्यो। ६ ।
गोपदवत जेणे सिंधु ओळंग्यो, बाळ्युं लंका गाम,
असुर अनेक संहारी पाछो, निर्भय गयो निज ठाम। ७ ।
ते रामने तमे मनुष्य जाणो, जेणा हासनो महिमा अपार,
तेने भक्ष करवा इच्छो, तमारी बुद्धिने धिक्कार। ८ ।

फिर उस समय उस सभा में रावण के मन्त्रियों और पुत्रों के प्रति क्रोध अनुभव करते हुए विभीषण निश्चय-पूर्वक नीति-युक्त वचन बोला। २। 'अरे दुष्टो, दुर्जनो, पामरो, पापियो, मन मे विचार करके तो वोलो, मिथ्या गर्व भरे वचनों से रावण को क्या अनर्थ (की वाते) समझा रहे हो ? ३। जो उद्‌भव, स्थिति और संहार के कारण है, जो करोड़ों ब्रह्माण्डों के ईश्वर हैं, जो जीवों के जीवन हैं, जो समस्त कर्मो के फल देनेवाले जगदीश हैं, वे राम समुद्र-तट पर आ गये हैं। उनके साथ में अपार सेना है। वे राक्षसों का संहार ही करेंगे और भूमि के (पाप-) भार को उतार देंगे। ४-५। तुम (लोग) एक हनुमान के बल को सहन नहीं कर पाये। उसने अक्षयकुमार को मार डाला। इन्द्रजित भागकर विवर में प्रविष्ट हो गया, तो ब्रह्मा ने उसे उबार लिया। ६। जिसने समुद्र का गो-पद की भाँति उल्लंघन किया और लंका-नगर को जला दिया, वह हनुमान अनेक असुरों का संहार करके निर्भयता-पूर्वक फिर अपने स्थान लौट गया। ७। जिनके दास की महिमा (ऐसी) अपार है, उन राम को तुम मनुष्य समझ रहे हो और उसे खा डालना चाहते हो। तुम्हारी बुद्धि को धिक्कार है। ८। अरे, जिस प्रकार चोर चन्द्र की निन्दा करता है, कौआ मोती की (निन्दा) करता है, उस प्रकार तुम उन रघुपति की निन्दा कर रहे हो, जो महा-भाग्यवान तथा पुण्यश्लोक हैं। ९। शिवजी और सनक आदि जिनका ध्यान करते हैं, विधाता और शेष जिनका स्तवन करते हैं, जिनकी महिमा

अल्या निशापतिने निंदे तस्कर, मुक्ताने जेम काग,
एम तमो रघुपतिने निंदो, जे पुण्यश्लोक महाभाग। ९।
जेनुं शिव सनकादि ध्यान धरे छे, स्तवन करे विधि शेष,
जेनी अपार महिमा वेद कहे, जे देव तणो देवेश। १०।
ए दशरथनो पुण्यपर्वत जेनी, त्रिलोकमां कीर्ति व्यापी,
ए तमारा कुळनो क्षय करशे, तेने मनुष्य जाणो छो पापी। ११।
केवळ वनचर नथी ए वानर, अवतर्या सहु देव,
निज दुःख जाणी हणवा तमने, करे छे प्रभुनी सेव। १२।
जेणे सहस्रार्जुननो नाश कर्यो, हण्या अशेष क्षत्री धीर,
ते भृगुपतिनो गर्व उतार्यो, एवा श्रीरघुवीर। १३।
हे मूर्ख रावण तुजने काढ्यो, धनुष तळेथी जेणे,
सर्वे नृपनो दर्प हरीने, कोदंड भांग्युं तेणे। १४।

को वेद अपार कहते हैं, जो देवों के (भी) देवेश हैं, जिनकी कीर्ति त्रिलोक में व्याप्त है, वे (राम) दशरथ के (मानो) पुण्य के पर्वत ही है, वे तुम्हारे कुल का क्षय कर डालेंगे। हे पापियो, उन्हें तुम मनुष्य समझ रहे हो। १०-११। वे वानर मात्र वनचर नहीं हैं, (उनके रूप में) समस्त देव अवतरित हैं। अपने दुःख (का कारण) समझकर तुम्हें मार डालने के लिए प्रभु राम की सेवा कर रहे हैं। १२। जिसने सहस्रार्जुन का नाश किया और धैर्यशाली क्षत्रियों को निःशेष मार डाला उस भृगुपति परशुराम[1] (तक) का उन्होंने गर्व छुड़ा दिया। ऐसे (प्रतापी) हैं श्रीरघुवीर। १३। रे मूर्ख रावण, जिन्होंने तुझे धनुष के तल से छुड़ा लिया, उन्होंने समस्त राजाओं का घमण्ड छुड़ाते हुए धनुष को तोड़ डाला। १४। उन राम को सीता सौंपकर तू जाकर उनके चरणों में लग जा और दीन वचनों में विनती करते हुए उनसे दान में अभय माँग

---

१. कार्तवीर्य कर-हीन रूप में उत्पन्न हो गया था। परन्तु उसने गणेश की आराधना की, तो उस देवता ने प्रसन्न होकर उसे सहस्र हाथ प्रदान किये— तब से वह सहस्रकर, सहस्रार्जुन कहाने लगा। उसने समस्त पृथ्वी को जीतकर सैकड़ों यज्ञ किये। उससे प्राप्त बल से वह प्रजा को सताने लगा। उसने परशुराम के पिता जमदग्नि की कामधेनु चुराने का यत्न किया था। आगे चलकर परशुराम ने उसका वध किया। तब सहस्रकर के पुत्रों ने जमदग्नि का वध किया। अतः परशुराम ने मारे क्रोध के पृथ्वी को निःक्षत्रिय बनाने की प्रतिज्ञा करके उनका वध किया।

परशुराम भृगु कुलोत्पन्न था, अतः उसे भृगु-पति, भृगु-कुलपति कहते है। ऐसे प्रतापी परशुराम का गर्व राम ने छुड़ाया था। राम के सामने परशुराम निस्तेज हो गया था। (बालकाण्ड—देखिए)।

ते रामने तुं सीता सोंपी, जईने चरणे लाग्य,
करी विनंति दीन वचनथी, अभय दान तुं माग्य। १५।
शरणागतवत्सल छे रघुपति, नहि जुअे अवगुण तारा,
माटे सुण रावण ए परम हितकारी, बोल मानेज मारा। १६।
ज्यम औषध कटु लागे पण टाळे, मूळ रोग निरवाण,
एम हमणां कठिन लागे मुज वायक, परिमाणे कल्याण। १७।
आ सर्व मळ्या छे कुबुद्धि तने, करशे विपरीत पेर,
अल्या जाणी जोईने मूरख रावण, शीद खाय छे झेर? १८।
एम घणां वचन विभीषणे कह्यां, ते नीतिनां जेणी वार,
त्यारे प्रधान आदे इंद्रजितने, चढियो क्रोध अपार। १९।
अल्या विभीषण तुं बोल विचारी, डहापण जाण्युं तारुं,
शुं करीए जो राजबंधु छे, नीकर हवडां मारुं। २०।
अल्या वहालो थईने वेर वधारे, जा तुं तारे घेर,
जीवतो मूकीए जाणी जोईने, नहि तो हणीए ठेर। २१।
रावणने कहे जुओ तम बंधु, केवळ कहे छे कूडुं,
शत्रुनो पक्ष करीने बोले, आपणुं इच्छे भूंडुं। २२।

ले। १५। रघुपति शरणागतों के प्रति वत्सल हैं; वे तेरे अवगुण नहीं देखेंगे। इसलिए रे रावण, सुन और मेरी इन बातों को परम हितकारी मान लेना। १६। जैसे औषधी कड़वी लगती है, परन्तु वह रोग को निश्चय ही मूल से टाल देती, वैसे ही मेरे वचन अभी तुझे कठोर लगते हों, पर परिणाम में (उनसे) तेरा कल्याण ही होगा। १७। ये सब कुबुद्धि वाले मिल गये हैं और तुझसे (तेरे हित के) प्रतिकूल बातें कर रहे हैं। अरे मूर्ख रावण, तू जानते-देखते हुए किसलिए विष खा रहा है?' १८। जिस समय विभीषण ने इस प्रकार नीति की बहुत बातें कहीं, तब मन्त्री आदि को तथा इन्द्रजित को अपार क्रोध आ गया। १९। वह बोला— 'अरे विभीषण, तू विचार करके बोल। तेरा सयानापन मैं जानता हूँ। हम क्या करें— तू राजबन्धु जो है, नहीं तो, मैं अभी मार डालता। २०। अरे, लाड़ला होकर भी तूने वैर बढ़ा दिया है। तू अपने घर चला जा। जानते-देखते हम तुझे जीवित छोड़ रहे हैं, नहीं तो इस स्थान पर मार डालते।' २१। फिर वह रावण से बोला— 'आप अपने भाई को देखिए, वह केवल कपट (-भरी बात) कह रहा है। वह शत्रु का पक्षपात करके बोल रहा है और हमारा बुरा चाहता है।' २२। तब विभीषण ने कहा— 'तुम सबने मिलकर रावण को भ्रष्ट कर डाला। तुम राज्य

त्यारे कहे विभीषण तमो सर्व मळीने रावणने कर्यो भ्रष्ट,
राज बोळवा बेठा छो, उपजावी कुबुद्धि स्पष्ट । २३ ।
अल्या प्रधान रायने नियमे राखे, गजने अंकुश एक,
मंत्र नागने, ज्ञान चतुरने, ज्ञानीने विवेक । २४ ।
स्त्रीने लज्जा, साधकने गुरु, समुद्रने मरजाद,
एम रायने नियमे राखे नित्ये, प्रधान रहित प्रमाद । २५ ।
हावे तारुं राज नहि रहे रावण, निश्चे साचुं मान,
तने संगी सर्वे दुष्ट मळ्या, ज्यम वृकनी पासे श्वान । २६ ।
एवां वचन सुणीने रावण ऊठ्यो क्रोध करी निरधार,
डाबा पगनी पाटु मारी, विभीषणने तेणी वार । २७ ।
अल्या मूरख रामनो पक्ष करे तो, जा तुं तेनी पास,
बांधो मारो एवुं कहीने, देखाड्यो बहु त्रास । २८ ।
त्यारे तेणे समे मुकाव्यो आवी, रावण केरी मात,
अरे पुत्र तुं रामशरण जा, नहि तो करशे घात । २९ ।
त्यारे रावण कहे जा अहींथी, तारुं नथी अमारे काम,
चढावी लावजे सैन्या जा, शुं करशे तारो राम ? । ३० ।

को डुबाने के लिए बैठे हो, (इसलिए) रावण (के मन) में स्पष्ट रूप में कुबुद्धि उत्पन्न कर दी है । २३ । हे मन्त्रियो, राजा को (नीति-) नियम से (वश में) रखते हैं, जैसे एक अंकुश हाथी को (वश में) रखता है, अथवा मन्त्र नाग को, ज्ञान चतुर (व्यक्ति) को और विवेक ज्ञानी को (वश करके) रखता है; लज्जा स्त्री को, गुरु साधक को, (तट-) मर्यादा समुद्र को (उचित मार्ग पर) रखती है । इस प्रकार मन्त्री प्रमाद रहित होकर राजा को नित्य नियम से वश में रखते हैं । २४-२५ । रे रावण, यह निश्चय ही सत्य समझ कि अब तेरा राज्य नही रहेगा । जैसे भेड़िये के पास कुत्ते इकट्ठा होते है, वैसे तुझे समस्त दुष्ट साथी मिले हैं । ' २६ । ऐसी बातें सुनकर रावण निश्चय ही क्रोध करके उठ गया और उसने उस समय बायें पाँव से विभीषण पर प्रहार किया । २७ । (फिर वह बोला—) 'अरे मूर्ख, राम का पक्षपात कर रहा है, तो उसके पास चला जा । ' (फिर) 'बाँध लो', 'मार दो', ऐसा कहते हुए उसने (विभीषण को) बहुत भय दिखाया । २८ । तब उस समय रावण की माता (उसे) छुड़ाने के लिए (सभा में) आ गयी । (वह बोली—) 'अरे पुत्र तू राम की शरण में चला जा, नहीं तो (यह रावण तेरी) हत्या करेगा । ' २९ । तब रावण बोला— 'यहाँ से (निकल) जा । तेरा हमसे कोई काम नहीं

एवुं सांभळी विभीषण ऊठ्या, तत्क्षण तेणी वार,
चार प्रधान पोताना संगे, लीधा ते निरधार। ३१।
रावणने कहे विभीषण तुं छे, मारो मोटो भ्रात,
माटे तुज आज्ञाथी अमो जाउं छुं, रामशरण साक्षात्। ३२।
एवुं कही विभीषण चाल्या, लेई पोताना परधान,
ज्यम काया छोडी पंचप्राण ते, जाय यथा अवसान। ३३।
कल्पांते महाभूत मळे, ज्यम स्वरूपमां निरधार,
एम विभीषण त्यांथी ऊठी चाल्या, साथे मंत्री चार। ३४।
ज्यम वायस केरा मेळामांथी, ऊठी जाय मराळ,
खळ निंदक केरी मंडळीमांथी, ऊठे साधु दयाळ। ३५।
एम चार मंत्री शुं चाल्या विभीषण, रामशरण निरधार,
उरध पंथ उड्या पांचे जण, आव्या सिंधु पार। ३६।
पृथ्वी उपर ऊतरी ऊभा, चैतन्यतणे प्रदेश,
पंचे राक्षसने जोईने भय, पाम्या कपि अशेष। ३७।

है। आक्रमण करवाते हुए सेना को ला— तेरा राम (हमारा) क्या करेगा ?' ३०। उस समय ऐसा सुनकर विभीषण उसी क्षण उठ गया। उसने निश्चय-पूर्वक अपने चार मन्त्रियों को साथ में लिया। ३१। (फिर) विभीषण ने रावण से कहा— 'तू मेरा ज्येष्ठ बन्धु है। इसलिए तेरी आज्ञा से मैं प्रत्यक्ष राम की शरण में जा रहा हूँ।'। ३२। ऐसा कहते हुए विभीषण अपने मन्त्रियों को लेकर (उस प्रकार) चल दिया, जैसे मृत्यु के समय पाँचों प्राण देह को छोड़कर चले जाते हैं। ३३। जिस प्रकार कल्पांत के समय (ब्रह्म-) स्वरूप में महाभूत मिल जाते हैं, उस प्रकार विभीषण वहाँ से उठकर चल दिया (और राम से मिला)। उसके साथ में चार मन्त्री थे। ३४। जिस प्रकार कौओं के मेले में से हंस उड़ (निकल) जाता है, जिस प्रकार खलों और निन्दकों की मण्डली में से दयालु साधु पुरुष उठ जाता है, उस प्रकार (उन दुष्ट राक्षसों की सभा में से) विभीषण चार मन्त्रियों सहित निश्चय-पूर्वक राम की शरण के लिए चला गया। वे पाँचों ऊर्ध्व मार्ग से उड़ गये और समुद्र के पार आ गये। ३५-३६। (फिर) वे पृथ्वी पर उतरकर चैतन्य (भरे) प्रदेश में खड़े हो गये। तो उन पाँच राक्षसों को देखकर समस्त वानर भय को प्राप्त हो गये। ३७।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अशेष वानर भय पाम्या, जोई राक्षस देह दीर्घ घणी,
पछे विभीषण कर जोडीने ऊभा, करे विनति कपिवर तणी । ३८ ।

बहुत बड़ी देहवाले उन राक्षसों को देखकर समस्त वानर भय को प्राप्त हो गये। फिर विभीषण हाथ जोड़कर खड़ा रहा और उसने उन कपिवरों से विनती की । ३८ ।

* * *

अध्याय—१८ (राम-विभीषण भेंट)

राग धन्याश्री

वानरे दीठा राक्षस पंच जी, जाण्युं आव्या कपटनो करी संच जी,
कपि लेई धाया वृक्ष पाषाणजी,त्यारे विभीषण बोल्या जोडी पाण जी ।१।

ढाळ

पाण जोडी बोल्या विभीषण, सुणो सहु कंपि कर्ण,
हुं कनिष्ठ बंधु रावण, केरो रघुपति शर्ण । २ ।
हो कपि, तमारे पाये लागुं, तमो सेवक छो रणधीरनां,
पतित पावन पदकमळ, मुंने देखाडो रघुवीरनां । ३ ।
मने काढी मूक्यो रावणे, ते करो प्रभुने जाण,
हुं आव्यो होउं छळकपटथी, तो श्रीराम केरी आण । ४ ।

अध्याय—१८ (राम-विभीषण भेंट)

वानरों ने (जब) उन पाँच राक्षसों को देखा, तो उन्होंने समझ लिया कि वे कपट से समूह बनाकर आ गये हैं। तो वे वानर वृक्ष और पाषाण लेकर दौड़े। तब हाथ जोड़कर विभीषण बोला । १ । हाथ जोड़कर विभीषण बोला— 'हे समस्त कपियों, कानों से सुन लो। मैं रावण का (सबसे) छोटा भाई हूँ और रघुपति की शरण में आ गया हूँ। २ । हे कपियो, मैं तुम्हारे पाँव लगता हूँ, तुम रणधीर (श्रीराम) के सेवक (जो) हो। मुझे रघुवीर के पतितों को पावन कर देनेवाले— पद-कमलों को दिखा दो (दर्शन करा दो) । ३ । मुझे रावण ने (घर से) निकाल दिया है— यह प्रभु राम को विदित करा दो। यदि मैं छल-कपट से आया होऊँ, तो मुझे श्रीराम की सौगन्ध है । ४ । इसलिए

माटे मेळवो मने सीतावल्लभ, जेनुं ध्यान शिव ब्रह्मा धरे,
वेद वागीश विनायक जेनुं, स्तवन शेष सनक करे। ५ ।
कोटी ब्रह्मांडाधीश जे प्रभु, भक्त माटे अवतर्या,
लीलाविग्रह तन धर्युं छे, भार भूतळना हर्या। ६ ।
अज अजित आत्माराम व्यापक, निर्गुण एक निष्कर्म,
तत्त्वमसि यह मेळवी, वेदांत कहे छे ब्रह्म। ७ ।
व्याकरण साधे शब्दने, निश्‍च करे छे रूपने,
जेना नामना करे अर्थ अगणित, देखाडो रविकुळ भूपने। ८ ।
पंतजलि अष्टांगयोगे, साधन करी पामे यति,
कहे निरंजन जे रूपने, ते देखाडो सीतापति। ९ ।
प्रकृति पुरुषने विवेके कहे, सांख्य तत्त्वातीत,
ते दशरथात्मज मेळवो जे, अखंड एक अजित। १० ।

मुझे उन सीता-वल्लभ श्रीराम से मिला दो, जिनका ध्यान शिवजी और ब्रह्मा धारण किया करते हैं और जिनका वेद, वागीश्वरी सरस्वती, गणेशजी, शेष, सनकादि स्तवन किया करते हैं। ५। जो प्रभु करोड़ों ब्रह्माण्डों के अधीश्वर हैं वे भक्तों के लिए अवतरित हैं। उन्होंने लीला-विग्रह शरीर धारण किया है और भूतल के भार को दूर किया है। ६। वे अजन्मा, अजित, (सर्व-) व्यापक आत्माराम हैं। वे एकमात्र निर्गुण और निष्कर्म हैं। 'तत्त्वमसि' पदवी को मिलाते हुए वेदान्त उन्हें 'ब्रह्म' कहता है। ७। व्याकरण (शास्त्र) शब्द का (रूप-) साधन करता है और उसके रूप का निर्धारण करता है। वह (व्याकरण) जिनके नाम के अनगिनत अर्थ (सिद्ध) करता है, मुझे उन रवि-कुल-भूषण राजाराम दिखा दो (मुझे) उनके दर्शन करा दो। ८। पतंजलि[1] के अष्टांग योग के अनुसार साधना करते हुए (लोग) विश्राम को प्राप्त होते हैं। वह (योग-शास्त्र) जिनके रूप को 'निरंजन' कहता है, उन सीतापति श्रीराम के (मुझे) दर्शन करा दो। ९। सांख्य शास्त्र प्रकृति और पुरुष के विचार से जिन्हें 'तत्त्वातीत, अर्थात् तत्त्वों के परे' कहता है, उन एकमेव अखंड तथा अजित दशरथात्मज श्रीराम से (मुझे) मिला दो। १०। जो मीमांसक (मीमांसा शास्त्र के अनुसार)

---

१. पतंजलि विख्यात ऋषि थे। उन्होंने पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' ग्रंथ की महाभाष्य नामक व्याख्या प्रस्तुत की। इसके अतिरिक्त उन्होंने 'काठक धर्मसूत्र', 'छन्दोविचिति' आदि ग्रथ लिखे। उन्होने योगसूत्रों की रचना की। 'पातंजल योगसूत्र' से उनका नाम अमर हो गया है।

मीमांसक जे कर्ममारग, थकी पामे ब्रह्मने,
ते मेळवो मित्रकुळभूषण, श्रेष्ठ माने कर्मने । ११ ।
न्याय कहे एक ईश्वर करता, पार न जडे जीवने,
जीव अनेक ते अज्ञानी, नथी जाणता ते शिवने । १२ ।
ते मेळवो मुंने अवधपति, अजराजपुत्र कुमार,
जेनी भक्ति करतां भव तरे, जन मोक्ष पामे सार । १३ ।
एवां विभीषणनां वचन सुणी, थया चकित कपिवर मात्र,
तत्काळ आव्या खबर कहेवा, ज्यां छे शामळगात्र । १४ ।
समुद्रकांठे सभा करीने, बेठा श्रीरघुवीर,
अष्ट यूथपति सुग्रीव आदे, सौमित्री रणधीर । १५ ।
महाराज रावण तणो बंधु, कनिष्ठ विभीषण जेह,
अति दीन थई करे विनंति, तम शरण आव्यो तेह । १६ ।
एवुं सुणी जोयुं सुग्रीव सामुं, रघुवीरे तेणी वार,
विचार करी रघुवीर साथे, बोल्या अर्ककुमार । १७ ।
ए रावण बंधु कपट करी, अहीं आव्यो होये आज,
कांई दगो आपणशुं करे, त्यारे शुं करीए महाराज ? १८ ।

कर्म-मार्ग से जिन ब्रह्म को प्राप्त हो जाता है और कर्म को श्रेष्ठ मानता है, उन रवि कुलभूषण श्रीराम से (मुझे) मिला दो । ११ । न्याय शास्त्र कहता है—ईश्वर एकमात्र कर्ता है, जीवको उसका पार नहीं प्राप्त हो जाता । जीव तो अनेक और अज्ञान हैं, वे शिव को नहीं जान पाते । १२ । अयोध्या-पति, अजराज के पुत्र दशरथ के कुमार उन (शिव-स्वरूप) श्रीराम से मुझे मिला दो, जिनकी भक्ति करने से लोग भव (-सागर) को तैर जाते हैं और सुन्दर मोक्ष को प्राप्त हो जाते हैं । ' १३ । विभीषण के ऐसे वचन सुनकर वे कपिवर मात्र चकित हो गये और वे तत्काल यह समाचार कहने के लिए आ गये, जहाँ श्याम-शरीरधारी श्रीराम थे । १४ । समुद्र-तट पर सभा आयोजित करके श्रीरघुवीर बैठ गये । (वहाँ) सुग्रीव आदि आठ यूथों (समूहों, दलों) के प्रमुख तथा रणधीर लक्ष्मण (उपस्थित) थे । १५ । (उन वानरों ने कहा—) ' महाराज, रावण का विभीषण नामक जो कनिष्ठ बन्धु है, वह अति दीन होकर विनती कर रहा है । वह आपकी शरण में आया है । ' १६ । ऐसा सुनते ही श्रीराम ने उस समय सुग्रीव की ओर देखा । तो विचार करके वह सूर्य-पुत्र राम से बोला । १७ । ' रावण का वह भाई कपट करके आज यहाँ आया होगा । यदि वह हमसे कुछ छल-कपट करे, तो;

जांबुवान कहे प्रभुशरण आव्यो, शुद्ध चित्त जेह,
त्यारे पोतानो तेने करो, छे बिरद तमारुं एह। १९।
अंगद कहे ए बात खरी, पण तेडावो एने पास,
एने बोलावी ल्यो परीक्षा, पछी करो चरणनो दास। २०।
सुषेण कहे समो कठिन छे, माटे करो विचारी काम,
ए राक्षस रावण तणो बंधु, आव्यो आणे ठाम। २१।
एम करवा मांड्या तर्क बहु, बुद्धि तणे अनुसार,
पछे सेवटिये करी गर्जना त्यां, बोल्या पवनकुमार। २२।
हनुमंत कहे हुं गयो'तो, लंकामां एने घेर,
आचरण शुभ छे ए तणां, हुं जाणुं सर्वे पेर। २३।
तमो असुर देखो उपरथी, मांहे परम साधु इष्ट,
ज्यम फणस कंटकनुं भर्युं, अंतर मधुर स्वादिष्ट। २४।
विरह तमारुं शरणवत्सल, वज्र पंजर रूप,
माटे पासे तेडी भक्तने, करो अभय रविकुळ भूप। २५।

महाराज, तब हमें क्या करना चाहिए।' १८। (तदनन्तर) जाम्बवान ने कहा— 'जो शुद्ध चित्त से प्रभु की शरण में आया है, उसे तब अपना बना लीजिए। वह आपका प्रण है।' १९। (तत्पश्चात्) अंगद ने कहा— 'यह बात सच्ची तो है, फिर भी उसे अपने पास बुला लीजिए। उसे बुलाकर परीक्षा कर लीजिए और (यदि उचित हो, तो) फिर उसे अपना दास बना लीजिए।' २०। (तत्पश्चात्) सुषेण ने कहा— 'समय कठिन है। अतः विचार करके काम कीजिए। यह राक्षस रावण का बंधु है, जो इस स्थान पर आया है।' २१। इस प्रकार अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार उन्होंने बहुत तर्क करना आरम्भ किया। अनन्तर अन्त में गर्जना करते हुए वहाँ हनुमान बोला। २२। हनुमान ने कहा— 'मैं लंका में उसके घर गया था। उसका आचरण शुभ (शुद्ध) है, यह मैं सब प्रकार से जानता हूँ। २३। तुम उसे ऊपर से असुर (रूप में) देख रहे हो, (परन्तु) वह अन्दर से परम अभीष्ट (प्रवृत्तिवाला) साधु पुरुष है, जैसे कटहल (ऊपर से) काँटों से भरा हुआ होता है, (फिर भी) अन्दर मधुर और स्वादिष्ट होता है। २४। हे रविकुल-भूप, आपका विरुद (उपाधि) 'शरणागत-वत्सल' है। वह वज्र पंजर स्वरूप (अभेद्य, अपरिवर्तनीय) है; अतः उस भक्त को पास बुला लाकर उसे निर्भय कीजिए।' २५। हनुमान की ऐसी बातें सुनकर सब के चित्त शान्त हो गये, जैसे अन्य शास्त्रों के तर्कों में वेदान्त

एवां वचन सुणी हनुमंतनां, थयां चित्त सर्वनां शांत,
ज्यम इतर शास्त्रना तर्कमां, निश्चे करे वेदांत। २६।
श्रीरामचंद्रे करी आज्ञा, अंगदने निरधार,
त्यारे तेडी लाव्या विभीषणने, कर ग्रही तेणी वार। २७।
विभीषणे दीठा रामने, थयो सजळ लोचन त्यांहे,
रघुवीर चरणे शीश मूकी, पड्यो पृथ्वी मांहे। २८।
लंकेश आप्यो एवुं कहीने, हस्या श्रीजुगदीश,
कल्याणदायक अभयकर, कर मूक्यो एने शीश। २९।
पछे कर ग्रही उठाडियो, चांप्यो रुदे भगवान,
आशिष दीधी विभीषणने, अति आदरमान। ३०।
ज्यां लगी रवि-शशी तपे धरणी, लोकनाथ समाज,
तुं चिरंजीव तिहां लगी, करजे लंकानुं राज। ३१।
ज्यम अंजनिसुत चिरजीवी, तूं पण एवो जाण,
एम प्रसन्न थई जानकी-वल्लभ, बोल्या वचन प्रमाण। ३२।
पछे लक्ष्मणने भेट्या विभीषण, यूथपतिने त्यांहे,
पुष्पवृष्टि करी देवे, दुंदुभि नभ मांहे। ३३।

ही (चिन्तक के मन को) निश्चय-युक्त (स्थिर) कर देता है। २६। (तदनन्तर) श्रीरामचन्द्र ने निश्चय-पूर्वक अंगद को आज्ञा दी; तब वह उसी समय हाथ थामकर विभीषण को ले आया। २७। जब विभीषण ने राम को देखा, तो वहीं उसकी आँखें सजल हो गयीं। (फिर) वह रघुवीर राम के चरणों में मस्तक रखकर भूमि पर पड़ा रहा। २८। फिर 'लंकेश आ गया' ऐसा कहकर श्रीजगदीश राम हँस दिये। उन्होंने उसके सिर पर अपना कल्याणकारी तथा अभयदान देनेवाला हाथ रखा। २९। फिर भगवान ने हाथ पकड़कर उसे उठा लिया और हृदय से लगा लिया। (अनन्तर) उन्होंने अति आदर और सम्मान के साथ विभीषण को आशीर्वाद दिया। ३०। 'जब तक सूर्य और चंद्र धरती पर तपते रहेंगे, दिग्पालों का समूह रहेगा, तब तक तुम चिरंजीवी होकर लंका का राज करना। ३१। जैसे अंजनी-कुमार हनुमान चिरंजीवी है, वैसे ही तुम भी (अपने को) समझो।' प्रसन्न होकर सीता-वल्लभ राम ने इस प्रकार प्रमाणभूत बात कही। ३२। फिर विभीपण लक्ष्मण से, वैसे ही (वानर-) दलों के प्रमुखों से मिला। (तब) देवों ने आकाश में दुन्दुभि बजाते हुए पुष्प-वर्षा की। ३३।

पछे राम सन्मुख रह्या ऊभा, विभीषण तेणी वार,
जुग हस्त संपुट गिरा गद्‌गद, स्तुति करता सार। ३४।

वलण (तर्ज बदलकर)

सार स्तुति करता विभीषण, जोडीने जुग पाण रे,
कहे दास गिरधर सुणो श्रोता, थाय परम कल्याण रे। ३५।

फिर उस समय विभीषण राम के सम्मुख खड़ा रह गया; और वह दोनों हाथ जोड़कर गद्‌गद वाणी में स्तुति करने लगा। ३४।

दोनों हाथ जोड़कर विभीषण सुन्दर स्तुति करने लगा। कवि गिरधरदास कहते हैं— 'हे श्रोताओ, (उस स्तुति को) सुनिए; उससे परम कल्याण होगा।' ३५।

* * *

अध्याय—१९ (विभीषण द्वारा राम का स्तवन)

राग छंद

ज्यम राम राजीवनयन, करुणा-अयन जनसुखदायक,
दु:ख-दवन सीतारवन, मंगळभवन त्रिभुवननायक। १।
ज्यम श्यामसुंदर सुभग, तनघन कोटी काम प्रभा हरे,
शिरजटा मुगट विशाळ, भुज कोदंड शर भाथा धरे। २।
ज्यम अरूप अद्वैत ब्रह्म निर्गुण, वाणी मन पहोंचे नहि,
ते भक्त कारण सगुण तनु, धरी भार हणवाने महा। ३।

अध्याय—१९ (विभीषण द्वारा राम का स्तवन)

हे राजीव-नयन, हे करुणायन, हे जन-सुखदायक राम, हे (भक्तों के) दु:ख को जला डालनेवाले सीता-रमण, हे मंगल के (साक्षात्) भवन त्रिभुवन-नायक (राम), आपकी जय हो। १। आपको घनश्याम सुन्दर सुभग शरीर (कान्ति में) करोड़ों कामदेवों की कान्ति का हरण कर देता है (अर्थात् उसे फीका कर देता है)। आपका सिर पर जटाओं का (मानो) विशाल मुकुट है; आप हाथों में धनुष बाण और तरकस धारण किये हुए हैं। (हे राम,) आपकी जय हो। २। आप (वस्तुत:) अरूप, अद्वैत, निर्गुण ब्रह्म हैं। वाणी और मन आप तक पहुँच नहीं पाता। (फिर भी) आपने भक्तों के निमित्त पृथ्वी के (पाप-) भार को हटा देने के लिए सगुण शरीर धारण किया है। (हे राम,) आपकी जय हो। ३। आपने

कोदंड खंड प्रचंड निशिचर ताडिकादि विदारयं,
वनगवन सीतारमण पदरज कोटी जीव उद्धारयं। ४।
जय सच्चिदानंद ब्रह्म पूरण अज अजित अनामयं,
ब्रह्मांड व्यापक अगजग सगुण निर्गुण अव्ययं। ५।
सुरबंध छेदक असुरभेदक पंथवेदक पालयं,
जय शरणवत्सल दीनबंधु अभय कर करुणालयं। ६।
जाणे नहि जगजीवन तमने अज्ञाने करी आवर्या,
जे काम-कर्दम कळ्या मूरख मोह मायाना भर्या। ७।
भवयोनि नाना भ्रमत निशदिन फाळ कर्म गुणे करी,
नव पामे ते विश्राम सुख तव चरण शरण विना हरि। ८।
करी अनादर तव भक्तिनो जे विमत्तज्ञान सदा वहे,
सुखरहित केवळ ऊगरे श्रम मंदभागी विबुध कहे। ९।

(जनक की मिथिला) में शिवजी का प्रचण्ड धनुष खण्डित कर डाला। आपने ताड़का आदि निशाचरों को विदीर्ण कर डाला। हे सीतारमण, वन-गमन करते हुए आपने अपने पदों की धूलि से करोड़ों जीवों का उद्धार किया। (हे राम, आपकी जय हो)। ४। हे सच्चिदानन्द, हे पूर्ण ब्रह्म, हे अज, हे अजित, हे अनामय, हे चेतन-अचेतन-सहित ब्रह्माण्डों को व्याप्त करनेवाले, हे सगुण (ब्रह्म), हे निर्गुण ब्रह्म, हे अव्यय, आपकी जय हो। ५। हे देवों के बन्धनों को छुड़ानेवाले, हे असुरों को छिन्न-भिन्न कर देनेवाले, हे वेदों के पंथ का संरक्षण करनेवाले, हे शरणागत-वत्सल, हे दीन-बन्धु, हे भक्तजनों को अभय करनेवाले, हे करुणालय, आपकी जय हो। ६। हे जगज्जीवन, जो मूर्ख जन काम (आदि विकारों) के कीचड़ में फँसे हुए हैं और मोह-माया (के प्रभाव) से भरे पड़े हैं, जिन्हें आपने अज्ञान से आच्छादित कर रखा है, वे आपको नहीं जानते। ७। (इसलिए) वे रात-दिन काल और कर्म के गुणों के अनुसार अनेकानेक सांसारिक योनियों में भ्रमण करते रहते हैं। हे हरि, बिना आपके चरणों की शरण (में आये), वे विश्राम और सुख को नहीं प्राप्त हो जाते। ८। जो आपकी भक्ति का अनादर करते हुए मत्त होकर ज्ञान सदा वहन करते अर्थात् ग्रहण किये हुए रहते हैं, उनके लिए सुख-रहित केवल श्रम (ही) शेष रह जाते हैं। ऐसे लोगों को चतुर (ज्ञानी) जन मन्द भागी—अभागे कहते हैं। ९। जो सदा स्वयं नवांग से युक्त अर्थात् नवविद्या भक्ति प्रेम-सहित करते हैं, उनके सुख की तुलना स्वर्ग, भूमि (मृत्यु-लोक), मोक्ष के सुख से भी कभी भी नहीं की जा सकती। १०। (आपके) जिन पदों की अनन्त (शेष), अनंग, अजर-अमर देवता, अजन्मा नित्य सेवा करते

भक्ति तमारी अंग नवयुत प्रेम सहित करे सदा,
सुख स्वर्ग भू अपवर्ग तुलना अवर नव आवे कदा। १०।
जे पद अनंत अनंग अजरी अमर अज नित सेवता,
त्रैलोक्यपावन जळ विमळ जे गंग पदनख निर्गता। ११।
जे रमाकर लालित पंदाबुज ध्यानमां जोगी धरे,
मम शीश पाम्युं शरण छे यह अभयदान कीधुं करे। १२।
मम तामसी योनि अधम तन मलिन मन धीभ्रम हरी,
कोण जन्म संचित कर्म फळ प्रभु अंगीकृत करुणा धरी। १३।
अहो नाथ तव गुण गाय निर्मळ श्रवण कीर्तन जे करे,
तजी त्रास रहित प्रयास भवजळ वत्स पद इव ते तरे। १४।
मागुं हवे वर नाथ जोडी हाथ हरि तमने कहुं,
जन्मोजन्म तव दास गिरधर चरण सदा रहुं। १५।

दोहा

विभीषणनी एवी स्तुति सुणी, प्रसन्न थया रघुनाथ,
भुज भरी भेट्या फरी फरी, मस्तक मूक्यो हाथ। १६।

रहते हैं, आपके जिस पद के नख से वह गंगा निकली है, जिसका विमल जल त्रिलोक को पावन करता है, रमा (लक्ष्मी) के हाथों से लालित आपके जिन पद-कमलों को योगी ध्यान में धारण करते हैं— अर्थात् ध्यान करते हैं, मेरा मस्तक उन पदों की शरण को प्राप्त हो गया है। आपने अपने हाथ से (मुझे) अभयदान दिया है। ११-१२। मेरी योनि (वंश) तामसी है, शरीर अधम है, मन मलिन (पापी) है। (फिर भी) मेरी बुद्धि का भ्रम हरण किया है। मेरे किस (पूर्व-) जन्म के कर्म-फल के संचित होने पर आप प्रभु ने मुझपर करुणा की है। १३। अहो नाथ, आपके निर्मल गुणों की गाथा का जो श्रवण और कीर्तन करते हैं, वे भय का त्याग करके प्रयास-रहित अर्थात् आसानी से इस भव (-सागर) के जल को गो-वत्स के पद निर्मित गढ़े में भरे हुए जल की भाँति तैरकर (पार कर) जाते हैं। १४। हे नाथ, मैं अब आपसे वर माँग रहा हूँ। हे हरि, मैं हाथ जोड़ (वही) कह रहा हूँ। '— कवि गिरधरदास कहते हैं कि विभीषण ने कहा— मैं आपके चरणों की शरण में जन्म-जन्मान्तर में सदा रह जाऊँगा। १५।

विभीषण द्वारा की हुई ऐसी स्तुति सुनकर रघुनाथ राम प्रसन्न हो गये। (फिर) उसे बारबार बाँहों में भरते हुए वे उससे मिले और उन्होंने उसके मस्तक पर (वरद-) हस्त रखा। १६।

* * *

अध्याय—२० (समुद्र का राम की शरण में आना)

राग आशावरी

विभीषणनी एवी स्तुति सांभळी, बोल्या श्रीरणधीर,
जेवा अमो छुं चार बंधु, एम पांचमो तुं मुज वीर। १ ।
पछी हनुमंत पासे लंका करावी, वेळु तणी तेणी वार,
चार समुद्रनुं नीर मंगाव्युं, क्षणुं नव लागी वार। २ ।
पछे विभीषणने अभिषेक करीने, आप्युं लंकानुं राज,
राज्यतिलक स्वहस्ते करीने, बोल्या श्रीमहाराज। ३ ।
हावे लंकामां राज अविचळ करजे, एवुं कह्युं रघुराय,
देवे दुंदुभिनाद कर्या ने पुष्पनी वृष्टि थाय। ४ ।
त्यारे तेणे समे त्यां सुग्रीव कहे, एक सुणो विनति राम,
लंका आपी विभीषणने, ते कर्युं वगर विचार्युं काम। ५ ।
कदापि रावण शरण आवशे, सीताने लेई आज,
त्यारे रावणने शुं आपशो वळती ? कहो मुजने महाराज। ६ ।
त्यारे रघुपति कहे जो आवशे, शरणागत करी हेत,
त्यार मारी अयोध्या आपीश एने, वैभव राज समेत। ७ ।

अध्याय—२० (समुद्र का राम की शरण में आना)

विभीषण द्वारा की हुई ऐसी स्तुति सुनकर श्रीरणधीर श्रीराम बोले— '(हे विभीषण,) जैसे हम चार बन्धु हैं, वैसे तुम मेरे पाँचवें बन्धु हो।' १। अनन्तर उन्होंने उस समय हनुमान द्वारा बालू की लंका (की आकृति) बनवा ली और (पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर - इन) चारों समुद्रों का पानी मँगवा लिया। उसे लाने में क्षण तक समय (विलम्ब) नहीं लगा। २। फिर उन्होंने विभीषण का अभिषेक करके उसे लंका का राज्य प्रदान किया। अपने हाथ से राज-तिलक लगाते हुए महाराज श्रीराम बोले। ३। 'अब तुम लंका में अविचल रूप से राज्य करना।' जब रघुराज राम ने ऐसा कहा, तो देवों ने दुन्दुभियों को बजाते हुए गर्जन किया और (उनके द्वारा) फूलों की वर्षा भी हो गयी। ४। तब उस समय वहाँ सुग्रीव ने कहा— 'हे राम, एक विनती सुनिए। आपने विभीषण को लंका प्रदान की, परन्तु वह काम तो आपने बिना सोचे-विचारे किया है। ५। आज सीता को लेकर रावण कदाचित् शरण में आएगा—आत्म-समर्पण करेगा। हे महाराज, मुझे बताइए कि तब आप फिर रावण को क्या देंगे।' ६। तब रघुपति

हुं करीश तप वनमां जई, राज करशे रावणराय,
पण विभीषणने जे लंका आपी, ते मिथ्या नव थाय। ८।
एवां वायक सुणी प्रभुनां, थया गद्गद सर्वे साथ,
धन्य धन्य सहु देवज कहे छे, सत्य वचन रघुनाथ। ९।
पछे स्वस्थ थईने बेठा सर्वे, सभा केरी ते ठाम,
त्यारे मधुर वचनथी पूछे वळता, विभीषणने श्रीराम। १०।
कहो केम करी सिंधु शत जोजन, ऊतरीए पेली पार ?
कांई उपाय होय ते कहो मुंने, तमो विश्वश्रवाना कुमार। ११।
त्यारे विभीषण कहे करो प्रार्थना, तमो सिंधु तणी महाराज,
आपे मार्ग जो जळनिधि त्यारे, थाय आपणुं काज। १२।
त्यारे सागरनी पूजा करी रामे, प्रार्थना रघुवीर,
दर्भ आसन पर बेठा पोते, सिंधु केरे तीर। १३।
फळजळ वर्जित निराहार सहु, बेठा तट मोझार,
एम सागरनी प्रार्थना करता, पोते जुगदाधार। १४।
एक रावणकेरो दूत आव्यो, हतो शार्दूल नामे त्यांहे,
ते सर्वे चर्चा पेर्य जोई, गयो पाछो लंकामांहे। १५।

ने कहा—' यदि रावण प्रेम-पूर्वक शरण में आए, तो तब मैं वैभव तथा राज्य सहित अपनी अयोध्या उसे दूँगा। ७। मैं वन में जाकर तपस्या करूँगा और (उधर) राजा रावण राज करेगा। परन्तु मैंने विभीषण को जो लंका दी है, वह झूठ नहीं हो पाएगा।' ८। प्रभु के ऐसे वचन सुनते ही सब एक साथ गद्गद हो उठे। सब देवों ने ही कहा—' धन्य धन्य ! रघुनाथजी सत्य-वचन हैं।' ९। सभा के उस स्थान पर जब सब शान्त होकर बैठ गये, तब श्रीराम ने मधुर वाणी में विभीषण से फिर से पूछा। १०। ' कहो, इस सौ योजन (विस्तीर्ण) समुद्र के उस पार किस प्रकार उतर पाएँगे। हे विश्रवा के पुत्र, कोई उपाय हो, तो तुम मुझे वह बताओ।' ११। तब विभीषण ने कहा—' हे महाराज, आप समुद्र से प्रार्थना कीजिए। तब समुद्र जो मार्ग देगा, उससे अपना काम बन जाएगा।' १२। तब राम ने समुद्र की पूजा करके उससे प्रार्थना की और वे स्वयं समुद्र-तट पर दर्भ के आसन पर बैठ गये। १३। वे फल और जल का आहार-पान छोड़कर समुद्र-तट पर निराहार बैठे रहे। इस प्रकार स्वयं जगदाधार श्रीराम ने समुद्र से प्रार्थना की। १४। (उस समय) वहाँ रावण का शार्दूल नामक एक दूत आया था। वह समस्त आचरण-व्यवहार की पद्धति देखकर लंका में लौट गया। १५।

रावणने कहे राम आव्या छे, जळनिधि केरे तीर;
कपिनुं सैन्य अपरिमित छे, त्यांहां मळ्यो तमारो वीर । १६ ।
लंका आपी विभीषणने, कर्युं राजतिलक निरधार,
एवी खबर सांभळी रावण मनमां, पाम्यो खेद अपार । १७ ।
त्यारे शुक नामे एक असुर हतो ते, बोलाव्यो रावणराय,
तुं सागर पार जई कहे सुग्रीवने, जे मित्र अमारो थाय । १८ ।
तारे सीतानुं शुं कारण छे ? तुं जाने तारे घेर,
ए रामने अर्थे रावण साथे, शाने करे छे वेर ? । १९ ।
एवां वचन सुणी शुकरूप थईने, आव्यो सेन्यामांहे,
छानो रहीने कहेवा लाग्यो, सुग्रीव बेठो ज्यांहे । २० ।
तुं सेना सर्वने लेईने सुग्रीव; जा किष्किधा गाम,
रावण तुजने मित्र मानशे; शुं करशे ए राम ? । २१ ।
तुं पक्ष करीने शीद आव्यो ? तारे सीतानुं शुं काज ?
जो वचन अमारुं नहि माने तो, मारीशुं तुजने आज । २२ ।
त्यारे सुग्रीवे तेने झाल्यो तत्क्षण, प्रगट्यो असुर महाकाय,
पछे मारवा लाग्या वानर सर्वे, मुष्टिपदना घाय । २३ ।

उसने रावण से कहा— 'समुद्र के तट पर राम आ गये हैं। (उनके साथ) कपियों की अपार सेना है। वहाँ आपका भाई उनसे मिला है। १६। (राम ने) उसे लंका प्रदान की है। और निश्चय-पूर्वक उसका राज्य-तिलक किया है।' रावण ऐसा समाचार सुनते ही मन में अपार खेद को प्राप्त हो गया। १७। (वहाँ) शुक नामक एक असुर था। तब रावण ने उसे बुला लिया (और उससे कहा)— "तुम समुद्र के पार जाकर उस सुग्रीव से कहो, जो हमारा मित्र है। १८। तुम्हें सीता से क्या काम है ? तुम अपने घर जाओ। उस राम के लिए रावण से किसलिए बैर कर रहे हो ?" १९। ऐसे वचन सुनकर वह शुक-रूप होकर (तोते का रूप धारण करके कपियों की) सेना में आ गया और जहाँ सुग्रीव बैठा हुआ था, वहाँ गुप्त रहते हुए कहने लगा। २०। 'हे सुग्रीव, तुम समस्त सेना को लेकर अपने किष्किन्धा नगर (लौट) जाओ, तो रावण तुम्हें मित्र मानेगा। यह राम (तुम्हारे लिए) क्या करेगा ?। २१। तुम उसका पक्षपात करते हुए क्यों आ गये हो ? सीता से तुम्हें क्या काम ? यदि हमारी बात नहीं मानोगे, तो हम तुम्हें आज मार डालेंगे ?'। २२। तब सुग्रीव ने (उस तोते को) तत्क्षण पकड़ लिया, तो (तोते का रूप त्यजकर) वह महाकाय

त्यारे पोकार करियो असुरे, मुजने छोडावो श्रीराम,
'भाई जावा द्यो एने मारशो नहि,' एम बोल्या पूरणकाम । २४ ।
तेने मूकी दीधो ते जतां नभ बोल्यो, वाकां वचन ते दीस,
तेवे झालीने बंधीखाने नाख्यो, चढी अंगदने रीस । २५ ।
हावे त्रण दिवस वीत्या राम मागे, मारग सिंधु पास,
पण मार्ग न आप्यो जळनिधिए, छे उपवासी अविनाश । २६ ।
त्यारे श्रीरघुपतिए विचार्युं मनमां, थयो एने मद निर्वाण,
आज सर्वे जळ शोषुं एनुं, मूकी जातवेदनुं बाण । २७ ।
पछे क्रोध करी कोदंड चढाव्युं, शर कीधुं संधान,
मंत्र ब्रह्मासनो थाप्यो तेने मुख, कोप्या श्रीभगवान । २८ ।
तेणे समे सिंधु तप्त थयो, अकळायां जळचर जात,
त्यारे सरिता सहित धरी रूप त्यां आव्यो, रामशरण विख्यात । २९ ।
जळनिधि आवी चरणे लाग्यो, जोडीने जुग हाथ,
पाहि पाहि शरणागतवत्सल, श्रीपति श्रीरघुनाथ । ३० ।

असुर (रूप में) प्रकट हो गया। फिर उसे समस्त वानर घूँसों तथा पदाघात से पीटने लगे। २३। तब वह असुर चीखने-पुकारने लगा (और बोला—), 'हे राम, मुझे छुड़ाइए।' (यह सुनकर) पूर्णकाम श्रीराम ने यों कहा—'भाई, जाने दो; उसे नहीं मारना।' २४। (तब वानरों ने) उसे छोड़ दिया, तो आकाश में जाते हुए उसने उस स्थान से कुटिल वचन कहे। तब अंगद को क्रोध आया, तो उसने उसे उस समय पकड़कर बंदी-गृह में डाल दिया। २५। राम समुद्र से मार्ग माँग रहे थे, (उसे) अब तीन दिन बीत गये। परन्तु समुद्र ने मार्ग नहीं दिया। (इधर) अविनाशी भगवान (राम) निराहार रह गये थे। २६। तब रघुनाथ ने मन में विचार किया (माना) कि इसे असीम मद (घमण्ड) हो गया है। (अतः) अग्निबाण चलाकर मैं आज इसका समस्त जल सोख लेता हूँ। २७। फिर क्रोध से उन्होंने धनुष चढ़ा लिया और शर सन्धान किया (निशाना लगा लिया)। उस बाण के मुख में ब्रह्मास्त्र सम्बन्धी मंत्र स्थापित किया। (उस समय) श्रीभगवान क्रुद्ध हो गये थे। २८। उस समय समुद्र तप्त हो गया, तो (उसमें रहनेवाले) जलचर-वर्ग अकुला उठे। तब नदियों सहित (साकार मानव-) रूप धारण करके वह वहाँ विख्यात राम की शरण में आ गया। २९। दोनों हाथ जोड़कर आते हुए समुद्र उनके पाँव लगा (और बोला)—'हे शरणागत-वत्सल श्रीपति रघुनाथ,

त्यारे रघुपति कहे अल्या अभिमानी, तुं न माने दीधा विण मार,
हवे चाप चढेलुं बाणज पाछुं, नहि ऊतरे निरधार। ३१।
माटे अमोघ बाण ए मारुं ज्यां मूकुं, त्यांहे प्रल्ले थाय,
त्यारे कर जोडीने अंबुनिधि बोल्यो, सुणीए श्रीरघुराय। ३२।
एक पश्चिम देशमां मरुदैत्य रहे छे, पीडे गो द्विज संत,
तेनी उपर ए बाण मूको, ते पाप करे छे अनंत। ३३।
तव श्रीरामे अग्न्यास्त्र बाण ते, मूक्युं पश्चिम देश,
शिर छेद्युं ते मरुदैत्यनुं, पृथ्वी पडियुं एश। ३४।
पडतामां जळ सर्वे शोष्युं, पृथ्वी तणुं निरधार,
पछी देश वस्यो ते मारवाड नामे, अद्यापि ऊंडुं वार। ३५।
ते देशमां जळ स्वल्प रह्युं, पण सफळ सदा रहे वृक्ष,
रामबाणनो महिमा जोजो, हजुये छे प्रत्यक्ष। ३६।
पछी दिव्य रत्न वडे पूजा कीधी, जळनिधिए रघुवीर,
अनेक वस्त्र आभूषण अर्प्यां, संतोष्या रणधीर। ३७।

रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए।' ३०। तब रघुपति बोले, 'अरे अभिमानी, बिना मारे, तुम नहीं मानोगे। अब धनुष पर चढ़ा हुआ यह बाण निश्चय ही फिर नहीं उतरेगा। ३१। इसलिए अपने इस अमोघ बाण को मैं जहाँ छोड़ दूँ, वहाँ प्रलय हो जाएगा।' तब हाथ जोड़कर समुद्र बोला— 'हे रघुराज, सुनिए। ३२। पश्चिम देश में 'मरु' नामक एक दैत्य रहता है। वह गायों, ब्राह्मणों और सन्तों को पीड़ा पहुँचा रहा है। वह अपार पाप कर रहा है, (अतः) उसपर यह बाण छोड़िए।' ३३। तब राम ने वह अग्नि-अस्त्र (से युक्त) बाण पश्चिम देश की ओर चला दिया और उस मरु दैत्य का सिर काट डाला। फिर वह (बाण) पृथ्वी पर गिर गया। ३४। पड़ते-पड़ते उसने पृथ्वी के समस्त जल को निश्चय ही सोख लिया। अनन्तर (वहाँ) 'मारवाड़' नामक देश बस गया, (जहाँ) अब भी पानी गहराई से ही निकलता है। ३५। उस देश में पानी बहुत कम है, फिर भी (वहाँ के) वृक्ष सदा फलयुक्त रहते हैं। (इस प्रकार) राम-बाण की महिमा तो देखिए, जो अब भी प्रत्यक्ष (रूप में अस्तित्व में) है। ३६। फिर समुद्र ने रत्नों से श्रीराम का पूजन किया, उन्हें अनेक वस्त्र और आभूषण समर्पित किये और उन रणधीर को सन्तुष्ट किया। ३७। अनन्तर समुद्र ने मोतियों से थाल भरकर श्रीराम पर वृष्टि कर दी, उनकी अपार स्तुति करते हुए उनके क्रोध को शान्त कर लिया और

पछे मुक्ताफळनो थाळ भरीने, वधाव्यां सिंधुए राम,
स्तुति अपार करी क्रोध समाव्यो, प्रसन्न कर्या ते ठाम। ३८।
त्यारे सहु कपिए प्रार्थना कीधी, रघुपतिनी तेणी वार,
कृपानाथ ए पट आभूषण, ते करो अंगीकार। ३९।
संग्राममां वनकूळ घटे नहि, माटे धरीए एह,
त्यारे भक्तवचन पाळवाने, श्रीरामे पहेर्या तेह। ४०।
मणिमय मुगट मनोहर कुंडळ, अंगद कंकण हार,
लक्ष्मणने वळी पहेराव्या घणुं, शोभ्या देव मोरार। ४१।
एम अंगीकार करी सागर केरी, पूजा श्रीरघुराय,
देवे जयजयकार कर्यो ने, पुष्पनी वृष्टि थाय। ४२।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पुष्पवृष्टि वरसावे देवता, करता जयजयकार रे,
पछे सर्वे सांभळतां सागर प्रत्ये, बोलिया जुगदाधार। ४३।

* * *

उन्हें उसी स्थान पर प्रसन्न कर लिया। ३८। तब उस समय सब कपियों ने रघुपति से प्रार्थना की— 'हे कृपालु नाथ, इन वस्त्रों और आभूषणों को स्वीकार कीजिए। ३९। युद्ध (-भूमि) में (आपको) वल्कल शोभा नहीं देंगे; इसलिए इन्हें धारण कीजिए।' तब भक्त के कथन का निर्वाह करने के लिए श्रीराम ने उन्हें धारण किया। ४०। उन्होंने रत्नमय मुकुट, मनोहारी कुण्डल, अंगद, कंकण और हार धारण किये। फिर उन्होंने बहुत (वस्त्राभूषण) लक्ष्मण को पहना दिये। इससे वे भगवान मुरारि (विष्णु के अवतार राम) शोभायमान हो गये। ४१। इस प्रकार श्रीराम ने समुद्र द्वारा की हुई पूजा को स्वीकार किया, तो देवों ने जय-जयकार किया और (उस समय) पुष्प-वर्षा (भी) हो गयी। ४२।

देवों ने पुष्पवर्षा कर दी, तो जय-जयकार हो गया। फिर जगदाधार श्रीराम सबके सुनते रहते हुए समुद्र के प्रति इस प्रकार बोले। ४३।

* * *

अध्याय—२१ (सेतु का निर्माण)

राग धन्याश्री

सागर प्रत्ये कहे रघुराय जी, हवे लंका जवानो कहो उपाय जी,
सिंधु बोल्यो सुणो महाराज जी, मुज पर बांधो पाषाणनी पाज जी । १ ।

ढाळ

पाज बांधो पाषाणनी, ऊतरो पेली पार,
नळ वानरने कर वर थकी, तरशे उपर निरधार । २ ।
ए बाळपणमां नळ कपि, रहेतो हतो वनमांहे,
मातंग ऋषि नित्य आवता, पंपा सरोवर ज्यांहे । ३ ।
मुनि स्नान करीने वस्त्र धोता, शिला उपर जेह,
नळ कपि आवी नाखे ग्रहीने, दूर जळमां तेह । ४ ।
वळी मुनि खोळी काढतां, नळ नाखतो नितमेव,
मातंग ऋषिए क्रोध करीने, शाप दीधो एव । ५ ।
नळने हाथे पाषाण तरजो, जळ विषे निरधार,
ते मुनिवचन मिथ्या नहि, छे सत्य जुगदाधार । ६ ।
ते माटे नळने हाथे बंधावो, सुवेळु लगी पाज,
सैन्यसहित शत जोजन सिंधु, ऊतरो महाराज । ७ ।

अध्याय—२१ (सेतु का निर्माण)

रघुपति ने सागर से कहा—'अब लंका में जाने का उपाय कह दो।' तो समुद्र बोला—'महाराज, सुनिए, मुझपर पत्थरों से पुल बनवा लीजिए। १। पत्थरों से पुल बनवा लीजिए और उस पार उतर जाइए। वे पत्थर नल वानर के हाथ से (उसे प्राप्त) वर के कारण निश्चय ही (पानी के) ऊपर तैरते रहेंगे। २। यह नल वानर बचपन में वन में रहता था। (उस वन में) जहाँ पम्पा सरोवर है, वहाँ नित्य-प्रति मातंग नामक ऋषि आया करते। वे मुनि स्नान करके जिस शिला पर वस्त्र धोया करते, उसे लेकर नल वानर दूर जल में डाल देता। ३। पर फिर वे मुनि उसे खोज निकालते, तो (फिर) उसे नित्यप्रति फेंक देता। ४। तो मातंग ऋषि ने क्रोध करते हुए यह अभिशाप दिया। ५। नल के हाथ (से फेंके हुए) पत्थर निश्चय ही पानी पर तैरते रहें। हे जगदाधार, उन मुनि के वचन झूठ नहीं, सत्य हैं। ६। इसलिए नल के हाथों सुवेल तक पुल बनवा लीजिए। (फिर) हे महाराज, सौ योजन (विस्तीर्ण) समुद्र को सेना-सहित पार कर दीजिए।' ७।

पछी आज्ञा मागी एवुं कही, थयो सागर अंतरध्यान,
धन्य धन्य कहीने नळने बोलाव्यो, पासे श्रीभगवान। ८।
भाई तारे हाथे तरे छे, पाषाण जळमां जेह,
माटे सावध थईने सिंधु उपर, पाज बांधो एह। ९।
एवां वचन सुणी सहु कपिवरने, सुग्रीवे आज्ञा करी,
गिरि लावतां करी गर्जना, ग्रही हस्तमां शिर पर धरी। १०।
नळे पाज बांधवा मांडी, सिंधु उपर त्यांहे,
तुंबी फळवत् तरे जळमां, स्पर्श करता मांहे। ११।
ज्यम सद्‌गुरुनी कृपाए, भवजळ तरे छे जंत,
ज्यम सिद्धि मंत्र प्रयोगे साधक, थाय छे बळवंत। १२।
एम नळ तणा कर स्पर्शथी, जळमां तरे पाषाण,
सहु कपिवर लावे गिरि, करे गर्जना बुंबाण। १३।
वानर पद्म अढार छे, वळी रींछ बोतेर कोटी,
छप्पन कोटी गोलांगूल जेनी, काया बळवंत मोटी। १४।
जळमांहे सर्वे मूकता, गिरिशिखर लावी त्यांहे,
नळ स्पर्श कर करी ठेलतो, ते जाय सागर मांहे। १५।

फिर ऐसा कहते हुए समुद्र ने आज्ञा माँगी और वह अन्तर्धान हो गया। (तदनन्तर) 'धन्य, धन्य!' कहते हुए भगवान श्रीराम ने नल को अपने पास बुला लिया। ८। (वे बोले—) 'हे भाई, तुम्हारे हाथों पानी पर पाषाण तैरते हैं। इसलिए सावधान रहते हुए समुद्र पर पुल बना लो।' ९। ऐसी बातें सुनकर सुग्रीव ने समस्त कपियों को आज्ञा दी। (तदनन्तर) वे हाथों में पकड़कर तथा मस्तक पर रखकर पर्वत लाते हुए गर्जन कर रहे थे। १०। (फिर) वहाँ नल ने समुद्र पर पुल बनवाना आरम्भ किया। उसके स्पर्श करते ही (पाषाण) तूँबी के फलों की भाँति तैरने लगे। ११। सद्‌गुरु की कृपा से जिस प्रकार जीव भव (-रूपी समुद्र के) जल को तैरकर पार कर जाता है, जिस प्रकार साधक सिद्धि दिलानेवाले मंत्र के प्रयोग से बलवान हो जाता है, उस प्रकार नल के स्पर्श से पत्थर पानी में तैरने लगे। (उस समय) समस्त कपिवर पर्वत (उठा-उठाकर) ला रहे थे और कोलाहल तथा गर्जन कर रहे थे। १२-१३। वानर अठारह पद्म थे, तो रीछ बहत्तर करोड़ थे। (साथ ही) छप्पन करोड़ गोलांगूल (जाति के वानर) थे जिनके शरीर बड़े बलवान थे। १४। पर्वत-शिखर ला-लाकर वे सब वहाँ पानी में डालते, तो नल उन्हें हाथ से स्पर्श करते हुए

सहुना थकी लावे अधिक, गिरिशिखर पवनकुमार,
वाल्मीके गणना करी छे, ते कहुं करी विस्तार। १६।
चार लक्ष गिरि पूंछडे वींट्या, शिर उपर खट लक्ष,
बे लक्ष ते बे हाथमां, एम लावता परतक्ष। १७।
कांई बगलमां कांई स्कंध उपर, लावता बळवंत,
आश्चर्य पामे रघुपति एम, जोई बळ हनुमंत। १८।
अभिमान नळने आवियुं जे, थयुं मुजथी काज,
त्यारे प्रथम दिवसे आठ योजन, बंधाई ते पाज। १९।
ते रात्रिए एक मच्छ आव्यो, पाज सर्व गळी गयो,
प्रभाते जुए तो कांई न दीठुं, शोक सरवेने थयो। २०।
जाण्युं पाज भांगी रावणे, जणाव्युं श्रीरामने,
महाराज श्रम मिथ्या गयो, कोणे वणसाड्युं ए कामने? २१।
जे वरुणनो अवतार छे, जेनुं शरभ वानर नाम,
तेने कह्युं तुं शोध कर, एम बोलिया श्रीराम। २२।

ठेल देता। तब वे सागर में चले जाते। १५। (इधर) हनुमान सबसे अधिक पर्वत-शिखर ला रहा था। वाल्मीकि ने उनकी जो गिनती की है, उसे मैं विस्तार के साथ कहता हूँ। १६। उसने चार लक्ष पर्वत पूँछ से लपेट लिये थे, सिर पर छः लाख रखे थे। दो लाख दोनों हाथों में (उठाये हुए) थे। इस प्रकार वह प्रत्यक्ष (स्वयं) ला रहा था। १७। वह बलवान (हनुमान) कुछ (पर्वत) बगल में (दबाकर), तो कुछ कन्धों पर (रखकर) ला रहा था। इस प्रकार हनुमान के बल को देखकर श्रीराम आश्चर्य को प्राप्त हो गये। १८। (उस समय) नल को अभिमान (अनुभव) होने लगा— मुझसे (ही) काम हो रहा है। तब उसने पहले दिन आठ योजन पुल बनवा लिया था। १९। उस रात को कोई एक मत्स्य (बड़ी मछली) आ गया और वह सब पुल को निगल गया। (इधर) सवेरे (उठकर) देखा, तो वे कुछ भी नहीं देख पाये, तो सबको शोक हो गया। २०। उन्होंने समझा कि रावण ने पुल को तोड़ डाला और श्रीराम को वह बतला दिया। (वे बोले—) 'हे महाराज, (हमारा सारा) परिश्रम व्यर्थ हो गया। किसने यह काम विगाड़ डाला?' २१। (इसपर) श्रीराम ने उस वानर से कहा, जो वरुण का अवतार था और जिसका नाम शरभ वानर था, तुम खोज कर लो। राम ने उससे ऐसा कहा। २२। तो वह सागर में पैठ गया और दो मत्स्यों को पकड़कर लाया। (तब) उन्होंने श्रीराम से कहा— 'हमारा कोई बच्चा उसे निगल गया

ते प्रवेश्यो सागर विषे, लाव्यो झालीने बे मच्छ,
तेणे कह्युं रघुनाथने, को गळी गयो अम वच्छ। २३।
आश्चर्य पाम्या एम सुणी, पछी कह्युं तेने राम,
त्यारे मच्छ लाव्या पाज वळी, स्थापन करी ठाम। २४।
मच्छे कह्युं रघुवीरने अमो, पाज तळे रहीशुं जदा,
त्यारे रहेशे ठाम नहि तो, गळी जशे जळचर तदा। २५।
एवुं सुणीने नळ तणुं, वळतुं ऊतर्युं अभिमान,
गर्वगंजन कर्यो तेनो, लीला करी भगवान। २६।
बांधवा मांडी पाज वळती, नळे मूकी गर्व,
हनुमंत आदे लावता, महा प्रौढ पर्वत सर्व। २७।
केटलाक कवि कहे छे लख्युं, पाषाण उपर रामनाम,
पण ए असंभव वात छे, नव करे एवुं काम। २८।
सहु कपि उपासक रामना, महा अनन्य कहीए जेह,
रामनाम उपर चरण मूकी, केम चाले तेह ?। २९।
माटे श्रोताजन सहु सांभळो, संदेह निवर्तुं एह,
हनुमान नाटकमां कह्युं छे, कहुं जथारथ तेह। ३०।

है।' २३। यह सुनकर राम आश्चर्य को प्राप्त हो गये और फिर उन्होंने उनसे (कुछ) कहा, तो वे मत्स्य फिर से पुल ले आये और उन्होंने उस स्थान पर उसको स्थापित किया (रख दिया)। २४। (फिर) उन मत्स्यों ने श्रीराम से कहा— जब हम पुल के नीचे रहेंगे, तब वह स्थिर रह पाएगा। नहीं तो उसे (अन्य) जलचर निगल डालेंगे। २५। ऐसा सुनने पर नल का अभिमान फिर नष्ट हो गया। (इस प्रकार) उन्होंने उसका अभिमान नष्ट कर दिया। भगवान राम ने (ऐसी) लीला की। २६। (तदनन्तर) नल ने घमण्ड का त्याग करके फिर से सेतु बनाना आरम्भ किया। तो हनुमान आदि सब महा प्रचण्ड पर्वत लाने लगे। २७। कितने ही कवि कहते हैं कि (नल ने) पाषाणों पर राम-नाम लिखा था। परन्तु यह बात असम्भव (जान पड़ती) है। वह ऐसा काम नहीं कर सकता। २८। (कारण यह है कि) वे समस्त कपि, जिनको राम के महान अनन्य उपासक कहते हैं, राम-नाम पर पाँव रखते हुए कैसे चले जाते ? २९। इसलिए हे समस्त श्रोता-जनो, सुनिए। उस सन्देह को मैं दूर करता हूँ। हनुमन्नाटक में (जो) कहा है, उसे मैं यथार्थ रूप से कह रहा हूँ। ३०। मुख से राम-नाम का स्मरण करते हुए नल पाषाण डालता जाता। उसने उस पद्धति से उन्हें निश्चय ही जोड़

मुखे रामनाम स्मरण करी, नळ मूकतो पाषाण,
तेणे करीने परस्पर ते, जोडाया निरवाण । ३१ ।
नानामोटा नीचाऊँचा, वक्र गिरि ते काळ,
श्रीरामनाम प्रतापथी, बेठा बरोबर ढाळ । ३२ ।
ज्यम होय चोक जडाव चोरस, उपर चोंट्या एम,
पांच दिवसे पाज पूरण, थई कुशळ क्षेम । ३३ ।
शत योजन लांबी सत्तर पहोळी, एक जोजन ऊंची त्यांहे,
नळे आवी प्रणाम कीधो, राम बेठा ज्यांहे । ३४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

बेठा ज्यां श्रीरघुपति, आवी नळे कर्यो प्रणाम रे,
पाज पूरण थई जाणी, प्रसन्न थया श्रीराम रे । ३५ ।

दिया । ३१ । छोटे-बड़े, नीचे-ऊँचे, टेढ़े-मेढ़े पर्वत उस समय राम-नाम के प्रताप से ठीक ढंग से बैठ गये । ३२ । जैसे चौक (के पत्थरों) का जड़ाव होता है, वैसे ही वे (पत्थर, पर्वत आदि) चिपक गये । और कुशल-क्षेम-पूर्वक वह पुल पाँच दिन में पूरा हो गया । ३३ । तब वह पुल सौ योजन लम्बा, सत्रह योजन चौड़ा और एक योजन ऊँचा बन गया । फिर जहाँ श्रीराम बैठे हुए थे, वहाँ आकर नल ने प्रणाम किया । ३४ ।

तो जहाँ श्रीरघुपति बैठे हुए थे । नल ने (वहाँ) आकर उन्हें प्रणाम किया । श्रीराम यह जानकर प्रसन्न हो गये कि पुल पूर्ण हो गया है । ३५ ।

* * *

अध्याय—२२ (रामेश्वर की स्थापना, राम द्वारा समुद्र पार करना, रावण के दूत द्वारा राम की सेना देखना)

राग मारु

ज्यारे बंधाई पूरण पाज, त्यारे प्रसन्न थया रघुराज,
शिवस्थापन कीधुं राम, तेनुं रामेश्वर छे नाम । १ ।

अध्याय—२२ (रामेश्वर की स्थापना, राम द्वारा समुद्र पार करना, रावण के दूत द्वारा राम की सेना देखना)

जब सेतु पूर्ण (रूप से) बनाया गया, तब रघुराज श्रीराम प्रसन्न हो गये । उन्होंने शिवजी (के लिंग) की (वहाँ) स्थापना की । उसका नाम 'रामेश्वर' है । १ । राम ने वहाँ अनेक मुनियों को बुला लिया और

त्यां तेडाव्या मुनि अनेक, रामे कर्यो शिवने अभिषेक,
एम रामे स्थाप्या शिव जेह, सेतुबंध रामेश्वर तेह । २ ।
ते पूरण सेतुबंधनी पासे, कपि सहु मुनि आवी बेसे,
पछे सुणतां सभाय, पोते बोल्या श्रीरघुराय । ३ ।
मम स्थापन आ महादेव, जे को भावे करे एनी सेव,
तेतो मनवांछित फळ पामे, कोटि जनमनां किल्बिष वामे । ४ ।
चढावे गंगाजळ लावी जेह, चार पदारथ पामे तेह,
जे राखे शिव उपर स्नेह, मुंने घणो वल्लभजन तेह । ५ ।
राखे मुजशुं अनन्य आसक्त, शिवद्रोह करे मम भक्त,
ना थाउं प्रसन्न तेने को काळ, ते प्राणीने गणवो चंडाळ । ६ ।
एम श्रीमुखे श्रीरघुवीर, बोल्या वाणी मृदुल गंभीर,
पछे रामेश्वरने करी नमस्कार, सेतु पर चड्या जुगदाधार । ७ ।
ज्यारे सुग्रीव विभीषणे करी विनति, हनुमंत स्कंधे बेठा रघुपति,
अंगद उपर सुमित्राकुमार, चाल्युं सैन्य तेणी वार । ८ ।
दे छे कपि एक एकने साद, वजाडे गाल करे सिंहनाद,
कूदे ऊछळे पाडे चीस, कपिदळ जोई हरख्या जुगदीश । ९ ।

शिवजी का अभिषेक कर लिया। इस प्रकार राम ने जिस शिवजी की स्थापना की, वह सेतु-बन्ध रामेश्वर है। २। उस पूर्ण सेतुबन्ध के पास समस्त कपि और मुनि आकर बैठ गये। तदनन्तर समस्त सभा (-जनों) के सुनते हुए स्वयं श्रीराम बोले। ३। 'मेरे द्वारा ये महादेवजी स्थापित है। जो कोई भक्ति-भाव से इनकी सेवा करे, वह मनोवांछित फल को प्राप्त हो जाएगा और उसके करोड़ों जन्मों का पाप (दोष) नष्ट हो जाएगा। ४। जो कोई गंगा-जल लाते हुए इन पर चढ़ाएगा, वह (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष नामक) चारों पदार्थों को प्राप्त हो जाएगा। जो शिवजी के प्रति स्नेह धारण करेगा, वह मेरा बहुत प्रियजन हो जाएगा। ५। कोई मेरा भक्त मेरे प्रति अनन्य आसक्ति तो रखे, (परन्तु) शिवजी के प्रति द्रोह करे, तो मैं किसी भी समय उससे प्रसन्न नहीं हो सकता। उस प्राणी को चण्डाल समझो। ६। इस प्रकार श्रीरघुवीर अपने श्रीमुख से कोमल परन्तु गम्भीर वाणी (स्वर) में बोले। अनन्तर जगदाधार श्रीराम रामेश्वर को नमस्कार करके सेतु पर चढ़ गये। ७। जब सुग्रीव और विभीषण ने विनती की, तो रघुपति हनुमान के कन्धे पर बैठ गये। (इधर) लक्ष्मण अंगद के कन्धे पर बैठ गया। उस समय समस्त सेना चल पड़ी। ८। कपि एक-दूसरे को पुकार रहे थे; गाल बजा रहे थे, सिंहनाद कर रहे थे, कूद रहे थे, उछल रहे थे, चीख-चीत्कार कर रहे थे। उस

व्याप्यो विश्वमांहे भुभुकार, चाल्युं कपिदळ पूर अपार,
जाय रामसैन्य बळवान, जुए देव चढीने विमान । १० ।
समाता नथी पाजमोझार, कूदे आकाशमां तेणी वार,
मूके एकएक शिर पर पाय, एम ऊछळता कपि जाय । ११ ।
कपि रींछ भालु मर्कट, चाले सेतु उपर संघट,
करमां ग्रह्यां तरुवर पाषाण, कूदे कपि करता बुंबाण । १२ ।
पाज उपर सैन्य न माय, राम रावण जीतवा जाय,
चार घटिकामां तेणी वार, सैन्य ऊतर्युं पेली पार । १३ ।
आव्या सुवेळुए श्रीराम, कर्यो मुकाम तेणे ठाम,
ऊतर्युं सर्व सैन्य ते ठार, दश योजनमां विस्तार । १४ ।
राम सुवेळु आव्या ज्यारे, लंकानगर खळभळ्यु त्यारे,
शुकने राख्यो तो बंधनठाम, तेने छोडाव्यो श्रीराम । १५ ।
वंदी रामचरण तेणी वार, गयो असुर ते लंकामोझार,
रावणने कह्या सहु वर्तमान, रामसेन्या तणुं अनुमान । १६ ।

कपि-दल को देखते हुए जगदीश श्रीराम आनन्दित हो उठे । ९ । (कपियों का) भुभुकार विश्व में व्याप्त हो रहा था । कपि-दल का अपार रेला चल रहा था । (इस प्रकार) राम की बलवती सेना जा रही थी, तो देव विमानों में बैठकर देख रहे थे । १० । वे कपि पुल पर समा नहीं रहे थे; (अतः) वे उस समय आकाश पर उछल रहे थे । वे एक-दूसरे के सिर पर पाँव (तक) रख रहे थे । इस प्रकार वे उछलते हुए जा रहे थे । ११ । कपि, रीछ, भालू, मर्कट—सब सेतु पर साथ में चल रहे थे । उन्होंने हाथों में बड़े-बड़े पेड़ और पाषाण लिये थे । वे चीत्कार करते हुए कूद रहे थे । १२ । पुल पर सेना समा नहीं रही थी । (ऐसी उस सेना के साथ) राम रावण को जीतने के लिए जा रहे थे । उस समय चार घड़ियों में सेना उस पार उतर गयी । १३ । श्रीराम सुवेल में आ गये और उन्होंने उस स्थान पर पड़ाव डाला । समस्त सेना उस स्थान पर उतर गयी, जो विस्तार में दस योजन था । १४ । जब राम सुवेल आ गये, तब लंकानगर घबड़ा उठा । शुक (नामक राक्षस) को तो बन्दी-गृह में रखा था; श्रीराम ने उसे छुड़वा दिया । १५ । उस समय वह असुर श्रीराम के चरणों को नमस्कार करके लंका में गया और उसने रावण से समस्त समाचार तथा राम की सेना के विषय में अनुमान कहा । १६ । (वह बोला—) ' मूर्तिमान (प्रत्यक्ष) समुद्र श्रीभगवान राम से मिला और उन्होंने पुल बनवा दिया । इस प्रकार राम (समुद्र के) पार उतर आये

मळ्यो सागर मूर्तिमंत, सेतु बंधावी श्रीभगवंत,
एम पार ऊतर्या राम सुवेळुए कर्यो छे मुकाम । १७ ।
तमारो संदेशो जेह, में कह्यो सुग्रीवने तेह,
नव चळ्यो रविपुत्र लगार, मने बांधीने मार्यो मार । १८ ।
त्यारे मुकाव्यो श्रीरघुवीर, महादयाळु छे श्यामशरीर,
मानो मारुं सत्य वचन, आपो जानकी हे राजन । १९ ।
तमथी राम नहि जिताय, जाओ शरण तो महासुख थाय,
एवां वचन सुण्यां दशशीश, त्यारे चढी मनमां घणी रीस । २० ।
मूरख शत्रुनां करे छे वखाण, अल्या हवडां हरीश तुज प्राण,
एवुं कही पछे रावणे शूर, तेड्यो शुकसारण जे असुर । २१ ।
अल्या समाचार जई लाव्य, सेनानी गणना करी आव्य,
जोजे मुख्य जोद्धा छे कोण, तेनु करी आवो परिमाण । २२ ।
एवां वचन सुणीने एश, आव्यो धरी वानरनो वेश,
जोतो सैन्यमां फरतो एह, त्यारे विभीषणे ओळख्यो तेह । २३ ।
झाल्यो कपिए तेणी वार, तेने मारवा मांड्यो मार,
लेई गया ते रामनी पास, त्यारे हसीने पूछे अविनाश । २४ ।

हैं और सुवेल में ठहर गये हैं । १७ । आपका जो सन्देश था, वह मैंने सुग्रीव को बताया । (परन्तु) वह सूर्यपुत्र (सुग्रीव) थोड़ा भी विचलित नहीं हुआ; (बल्कि) उन्होंने मुझे बाँधकर बहुत पीट लिया । १८ । तब श्रीरघुवीर ने मुझे छुड़वा दिया । वे श्याम-शरीरधारी (श्रीराम) बहुत दयालु हैं । हे राजा, मेरी बात को सच्ची मानिए और जानकी उन्हें (लौटा) दीजिए । १९ । आपसे राम को जीता नहीं जा सकता । उनकी शरण में जाएँगे, तो आपको महान सुख (प्राप्त) हो जाएगा ।' रावण ने ऐसी बातें सुनीं; तब उसके मन में बड़ा क्रोध उत्पन्न हो गया । २० । 'मूर्ख, शत्रु की प्रशंसा कर रहा है ? अरे, मैं अभी तेरे प्राण छीन लेता हूँ ।' ऐसा कहने के पश्चात् उस शूर रावण ने, शुकसारण नामक जो असुर था, उसे बुला लिया । २१ । (फिर उससे कहा—) 'अरे, जाकर समाचार ले आओ; सेना की गिनती करके आओ । जो-जो मुख्य योद्धा हैं, वे कौन हैं, उनकी गणना करके आओ ।' २२ । ऐसे वचन सुनकर वह वानर का वेश धारण करके आ गया । वह सेना में देखता हुआ घूम रहा था, तब विभीषण ने उसे पहचान लिया । २३ । उस समय कपियों ने उसे पकड़ लिया और उसे पीटना शुरू किया । (फिर) वे उसे राम के पास ले गये, तब उन अविनाशी (भगवान) ने हँसते हुए पूछा । २४ । 'कहो भाई, तुम

कहे भाई तुं अहीं केम आव्यो ? शा माटे कपिनो वेश लाव्यो ?
शुकसारण कहे महाराज, मने रावणे मोकल्यो आज । २५ ।
जोवा सैन्य सकळ समुदाय, तेनी करवाने गणनाय,
राम कहे सुणो कपि तजी गर्व, एने सैन्य देखाडो सर्व । २६ ।
कोई मारशो नहि अन्याय, दळ देखाडीने करो विदाय,
पछे जोई सकळ दळ पूर, गयो लंकामां ते असुर । २७ ।
सोळ माळनुं गोपुर जेह, छे कनकमणिमय तेह,
अर्ध जोजनमां विस्तार, जाणे रत्न तणो गिरि सार । २८ ।
तेनी उपर असुर भूपाळ, बेठो सभा करी ते काळ,
त्यां आव्या शुकसारण दूत जोई रामसेन्या अद्भुत । २९ ।
त्यारे रावण तेने पूछे, कहे कपिनुं सैन्य केटलुं छे ?
तेमां कोण कोण छे जोध ? मुजशुं करे रणमां विरोध । ३० ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

विरोध करे मुज साथे जोधा एवा, कोण छे त्यां बळवंत रे,
त्यारे वचन सुणी रावण तणां, बोल्यो शुकसारण गुणवंत रे । ३१ ।

यहाँ क्यों आये हो ? वानर का वेश किसलिए लाये (धारण किये हुए) हो ।' (तब) शुकसारण ने कहा— 'महाराज, मुझे आज रावण ने समस्त सेना-समुदाय (दल) को देखने और उसकी गणना करने के लिए भेजा है ।' तो राम ने कहा— 'हे कपियो, सुनो, अहंकार का त्याग करके इसे समस्त सेना दिखा दो । २५-२६ । इसे कोई अन्याय-पूर्वक न मारे । उसे (सेना-) दल दिखाकर बिदा करो ।' अनन्तर समस्त दल को पूरा देखकर वह असुर लंका में (लौट) गया । २७ । जो सोलह खण्डोंवाला गोपुर था, वह स्वर्ण तथा रत्नमय था । उसका विस्तार आधा योजन था । मानो वह कोई रत्नों का सुन्दर पर्वत ही हो । २८ । उसपर असुरों का राजा (रावण) उस समय सभा आयोजित करके बैठा हुआ था । राम की अद्भुत सेना को देखकर दूत शुकसारण वहाँ आ गया । २९ । तब रावण ने उससे पूछा— 'कपियों की सेना कितनी (बड़ी) है, कह दो । उसमें कौन-कौन योद्धा है, जो युद्ध (-भूमि) में मेरा विरोध (सामना) करेंगे । ३० ।

वहाँ कौन (-कौन) बलवान योद्धा हैं, जो मेरा विरोध (सामना) करेंगे ?' तब रावण के ये वचन सुनकर गुणवान (दूत) शुकसारण बोला । ३१ ।

अध्याय—२३ (शुकसारण द्वारा कपि-सेना का वर्णन)

राग बिलावल चोपाई

शुकसारण कहे सुणो हो राय, कहुं तमने कपिदळनी संख्याय,
जुओ पेलो सुग्रीव कपिनो ईश, शोभे छे श्वेत छत्र जेने शीश । १ ।
किष्किधावासी वालीनो लघु वीर, गज साठ सहस्रनुं बळ छे शरीर,
कपि आठ पद्म तणो ए नाथ, रामे मैत्री करी जेनी साथ । २ ।
विश्वकर्मानो नळ कपि अवतार, जे पंपा सरोवरनो रहेनार,
सप्त ताड जेनुं ऊंचुं शरीर, एक पद्म योधापति रणधीर । ३ ।
ताम्रगिरि गौतमीतटवासी, अग्निनो पुत्र नीळ बळराशि,
एक पद्म कपिनो ते स्वामी, बळ वाध्युं शरण रामनुं पामी । ४ ।
तारा तणो सुत अंगद वीर, संध्या समान जेनुं श्याम शरीर,
सप्त ताड समो प्रौढ अंग, जेणे कर्यो वासववज्रनो भंग । ५ ।
सरिता पुलिंदातटनो निवासी, एवो वालीनो पुत्र अंगद सुखराशी,
अवतार चंद्र तणो ए कहेवाय, जेनी साथे पांच पद्म सेनाय । ६ ।

अध्याय—२३ (शुकसारण द्वारा कपि-सेना का वर्णन)

शुकसारण ने कहा— 'हे राजा, सुनिए । मैं आपको कपि-दल की संख्या बता रहा हूँ । देखिए, कपियों के अधिपति उस सुग्रीव को (देखिए), जिसके मस्तक पर श्वेत छत्र शोभायमान है ।१। वह किष्किन्धा का निवासी तथा बाली का छोटा भाई है । उसका शरीर साठ सहस्र हाथियों के बल से युक्त है । आठ पद्म कपियों का यह (वही) स्वामी है, जिसके साथ राम ने मित्रता की है । २ । विश्वकर्मा (विधाता) का अवतार वह कपि नल है, जो पम्पा सरोवर का निवासी है और जिसका शरीर सात ताल ऊँचा है । वह रणधीर एक पद्म योद्धाओं का स्वामी है । ३ । अग्नि का पुत्र नील (साक्षात्) बल-राशि है; वह गौतमी (गोदावरी) के तटवर्ती ताम्रगिरि का निवासी है । वह एक पद्म कपियों का स्वामी है । राम की शरण को प्राप्त होने पर उसका बल बढ़ गया है । ४ । वीर अंगद तारा का पुत्र है, जिसका शरीर संध्या के (वर्ण के) समान श्याम वर्ण का है; तथा सात ताल समान प्रचण्ड है और जिसने इन्द्र के वज्र को भग्न कर दिया था । ५ । ऐसा पुलिन्दा नदी के तट का निवासी, बाली का पुत्र अंगद (मानो) सुखराशि है । जिसके साथ पाँच पद्म सेना है, वह (अंगद) चन्द्र का अवतार कहाता है । ६ । अब कुमुद नामक वह कपि है, जो समुद्र-तट का (निवासी) है और जो रूप के पर्वत के समान बहुत श्वेत (वर्ण से युक्त) है । वह नित्य गोमती नदी से जल-पान करता है ।

हावे कुमुद कपि सिंधुतट केरो, रूपाद्रि जेवो श्वेत घणेरो,
नित्ये करे गोमती जळपान, ज्यारे ए जन्म्यो महाबळवान । ७ ।
त्यारे कूद्यो चंद्रमंडळ ग्रहवा सुर, कर्यो एणे गिरि गोमताचळ चूर,
एवो कुमुद जेनी गति महामोटी, जेनी साथे कपि मळ्या पचास कोटी।८।
काशीनो निवासी धूम्रकेतु धीर, जांबुवंत केरो कहावे लघु वीर,
बार कोटी रींछ तणो सरदार, जांबुवंत ब्रह्मानो अवतार । ९ ।
निवासी नर्मदातट जळपान, सुग्रीवनो मित्र देह वज्र समान,
दीर्घायुष वृद्ध माने रघुनाथ, साठ कोटी रींछ जेनी साथ । १० ।
पीत वर्ण तन पहाड समान, मेरु पर्वतनो वासी बळवान,
नाम केसरी हनुमंतनो पिताय, तेनी साथे साठ कोटी सेनाय । ११ ।
गंधमादन कुबेर अवतार, रहे छे, पत्र-गंगानी पार,
तुंगभद्रानुं करे जळपान, साठ सहस्र गज सम बळवान । १२ ।
भेरी समान जेनो स्वर घोर, जेनी साथे कपि त्रण कोटी कठोर,
सुषेण धन्वंतरीनो अंश एह; कैलासशृंग समान जेनो देह । १३ ।

जब वह महाबलवान (कपि) जन्म ग्रहण कर चुका, तो वह देवों को पकड़ने के लिए चन्द्र-मण्डल की ओर कूद पड़ा; उसने गौतमाचल नामक पर्वत को चूर कर दिया था। इस प्रकार का वह कुमुद (नामक कपि) है, जिसकी गति बहुत बड़ी है, और जिसके साथ पचास करोड़ कपि मिले हुए—अर्थात् इकट्ठा हुए हैं। धूम्रकेतु नामक वीर काशी का निवासी है। वह जाम्बवान का लघु भ्राता कहाता है। वह बारह करोड़ रीछों का स्वामी है। (फिर) जाम्बवान तो ब्रह्मा का अवतार है। ७-९। वह नर्मदा के तट का निवासी है, उस (नदी) का जल प्राशन करता है। वह सुग्रीव का मित्र है और उसकी देह वज्र के समान (कठिन) है। राम उसे दीर्घायुष्यमान तथा वृद्ध समझते हैं, जिसके साथ साठ करोड़ रीछ हैं। १०। पीले वर्ण के तथा पर्वत सदृश शरीरवाला एक मेरु पर्वत का निवासी बलवान कपि है। उसका नाम केसरी है और वह हनुमान का पिता है। उसके साथ साठ करोड़ सेना है। ११। गन्धमादन नामक कपि कुबेर का अवतार है। वह पत्र-गंगा के पार रहता है। वह तुंगभद्रा से जल-पान करता है। वह साठ सहस्र हाथियों के समान बलवान है। १२। जिसका स्वर भेरी (नगाड़े) का-सा घोर (भीषण-गम्भीर) है, जिसके साथ तीन करोड़ कठोर-शरीरी कपि हैं, जिसकी देह कैलाश पर्वत के शिखर के समान (प्रचण्ड) है, वह सुषेण (कपि) धन्वन्तरी का अंश है। १३। इन्द्र का वह मित्र (सुषेण) इच्छाचारी (अर्थात् इच्छा की गति की-सी

इंद्रनो मित्र छे इच्छाचारी, जाणे सकळ औषधि उपगारी,
कमळपत्र सम कोमळ अंग, एकवीश कोटी कपि तेनी संग । १४ ।
केसरीसुत कहीए हनुमंत, अवतार रुद्रनो महाबळवंत,
जेणे प्रजाळ्युं लंकागाम, कोणे न थाय एवां एनां काम । १५ ।
भण्यो सूरजनी पासे विद्याय, चाल्यो रविरथनी आगळ पाछे पाय,
मेरु सपक्ष होय एवुं तन, अगियार कोटी तणो राजन । १६ ।
गिरि विंध्याचळनो वासी मयंद, शरीर पुष्ट तेनुं जाणे गयंद,
बळवंत काळना सरखो क्रोध, तेनी साथे सित्तरे कोटी जोध । १७ ।
गवाक्ष गोकर्ण गिरिनो निवासी, तेनी कपि सप्त कोटी बलराशी,
शरभ वानर ते वरुणनो अंश, तेनी साथे कोटी पंचाणुं अवतंश । १८ ।
दधिमुख सिंधु तणो अवतार, कोटी बेतालीश जोद्ध जुजार,
द्विविध वानर रहेतो मधुवन, तेनी साथे मर्कट कोटी छप्पन । १९ ।
ऋषिमुखनो वासी तारक ने मातंग, शत कोटी वानर तेनी संग,
तक्षक नागनो अवतार कीश, तेनी साथे सैन्या कोटी चाळीश । २० ।

गति से भ्रमण करनेवाला) है। वह समस्त उपयुक्त औषधियों को जानता है। उसकी देह कमल-पत्र-सी कोमल है। उसके साथ इक्कीस करोड़ कपि हैं। १४। केसरी के पुत्र को हनुमान कहते हैं। वह रुद्र का महाबलवान अवतार है, जिसने लंकानगर को जला डाला। उसके जैसे ऐसे काम किसी (दूसरे) द्वारा नहीं हो पाएँगे। १५। उसने सूर्य से विद्या सीखी है। वह सूर्य के रथ के आगे, पीछे पाँवों (अर्थात् उलटे पाँवों, रथ की ओर मुँह करके) चला था। उसका शरीर ऐसा (जान पड़ता) है, मानो पक्षों सहित मेरु पर्वत ही हो। वह ग्यारह करोड़ कपियों का राजा है। १६। मयन्द नामक वानर विन्ध्याचल का निवासी है; उसका शरीर पुष्ट है; मानो वह हाथी ही हो। काल का-सा उसका क्रोध प्रबल है। उसके साथ सत्तर करोड़ योद्धा हैं। १७। गवाक्ष गोकर्ण पर्वत का निवासी है। उसकी सात करोड़ बल-राशि (सेना) है। शरभ वानर वरुण का अंश है। उसके साथ पंचानब्बे करोड़ भूषण (जैसे सैनिक) हैं। १८। दधिमुख सागर का अवतार है। उसके पास बयालीस करोड़ लड़ाकू योद्धा हैं। द्विविध नामक वानर मधुवन में रहता है। उसके साथ छप्पन करोड़ मर्कट हैं। १९। तारक और मातंग नामक वानर ऋष्यमूक पर्वत के निवासी हैं। उनके साथ सौ करोड़ वानर हैं। तक्षक नामक वानर (तक्षक) नाग का अवतार है। उसके साथ

पणछ कपि ते पवनस्वरूप, दश कोटी जोद्धा तणो ते भूप,
श्वेताचळ पर्वतनो रहेनार, गज कपि नामे बळियो अपार । २१ ।
जुगल पद्म कपि तेनी साथ, एवा अनेक बीजा छे कपिनाथ,
हिमाचळनो वासी सुनाभ, जेणे मान्यो रामसेवामां अति लाभ । २२ ।
महाबळियो जेनी मोटी मति, ते सात कोटी जोद्धानो पति,
त्रिकुटाचलनो महाबली नाम, चौद कोटी जोद्धानो स्वाम । २३ ।
शैलाचलनो रिपुमर्दन, बत्रीश कोटी पति कपिजन,
अन्य कपि बळिया सहु सरदार, तेनुं सैन्य कहेतां न आवे पार । २४ ।

छंद

नव पार थाये कपिदळनो, शुकसारण कहे भूपति,
महारथी मोटा मान मूके, कहेतां लाजे सरस्वती । २५ ।
हावे संख्या कहुं महापद्मनी, बुद्धि थकी गणना करी,
ते मूरख जन सुणी मोह पामे, चतुर राखे चित्त धरी । २६ ।
ज्यारे सहस्र कोटी थाय त्यारे, एक शंकु बुध कहे,
एवा सहस्र शंकु मळे तदा, अरबुद एक थई रहे । २७ ।

चालीस करोड़ सेना है । २० । पणछ नामक वह कपि पवन-स्वरूप है । वह दस क़रोड़ योद्धाओं का राजा है । श्वेताचल पर्वत पर रहनेवाला गज नामक कपि अपार बलवान है । २१ । उसके साथ दो पद्म कपि हैं । इस प्रकार के कपियों के अनेक अन्यान्य राजा (राम की सेना में) हैं । हिमाचल का वासी (एक) सुनाभ नामक कपि है जिसने राम की सेवा में अति लाभ माना है और जिसकी बुद्धि अति बलवती है । ऐसा वह कपि सात करोड़ योद्धाओं का स्वामी है । त्रिकूटाचल का (निवासी) महाबली नामक कपि चौदह करोड़ योद्धाओं का स्वामी है । २२-२३ । शैलाचल का (निवासी) रिपुमर्दन नामक कपि बत्तीस करोड़ कपिजनों का स्वामी है । अन्य कपि तथा समस्त अग्रणी बलवान हैं । उनकी सेना का कहने में पार नहीं आ पाएगा । २४ । शुकसारण ने (राक्षसों के) राजा से कहा— कपिसेना का पार नहीं हो पाता । बड़े-बड़े महारथी उसके सामने मान (घमण्ड) को छोड़ देते हैं । उसे कहते हुए सरस्वती (तक) लज्जित हो जाएगी । २५ । अब अपनी बुद्धि से गणना करते हुए, मैं महापद्म की संख्या कहता हूँ । मूर्खजन उसे सुनते हुए मोह को प्राप्त हो जाते हैं, तो चतुरजन मन में धारण कर रखते हैं । २६ । जब सहस्र करोड़ हो जाते हैं, तब बुधजन उस (संख्या) को एक 'शंकु' कहते हैं । ऐसे

अरबुद सहस्रनी अवधिए, एक वृंद ते कहेवाय छे,
एवा सहस्र वृंद मळे तदा, एक पद्म संख्या थाय छे। २८।
एवां पद्म अष्टादश कपिबळ, रींछ बोतेर क्रोड छे,
मर्कट छप्पन कोटि बळिया, असुर हणवा होड छे। २९।
दश योजनमां पडाव पडियो, संख्या कपि सैन्या तणी,
नव पामे बीजा पेसवा, एम चोकसाई कीधी घणी। ३०।
तेनी मध्य श्रीरघुवीर लक्ष्मण, गौरश्याम विराजता,
सन्मुख अष्ट प्रधान बेठा, गोष्ठि करता गाजता। ३१।
हुं जाणु छुं राय तम थकी, नहि राम जिताशेय रे,
एक समे आवे कृतांत चढी तो, तेने झाली वश करे। ३२।
माटे मळो जईने रामने, आपो जनकतनया सती,
ते अभय तमने आपशे, छे शरणवत्सल रघुपति। ३३।
जे नमे जईने रामने, तेने अभय कर मस्तक धरे,
दास गिरधर दीन उपर, दया श्रीरघुवीर करे। ३४।

एक सहस्र शंकु हो जाते हैं, तब एक 'अर्बुद' हो जाता है। २७। सहस्र अर्बुदों की अवधि से बनी उस (संख्या) को एक 'वृन्द' कहा जाता है। इस प्रकार के सहस्र वृन्द जब मिल जाते हैं, तब वह संख्या एक 'पद्म' हो जाती है। २८। कपिसेना इस प्रकार के अठारह पद्म हैं; रीछ बहत्तर करोड़ हैं; (फिर) छप्पन करोड़ बलवान मर्कट हैं। वे असुरों को मार डालने के लिए होड़ लगाये हुए हैं। २९। इतनी संख्यावाली कपियों की सेना का दस योजन (विस्तीर्ण) भूमि पर पड़ाव लग गया है। (वहाँ) ऐसी बहुत सावधानी बरती है कि कोई दूसरा अन्दर पैठ न पाए। ३०। उसके बीच गौर और श्याम वर्णवाले लक्ष्मण और राम विराजमान हो रहे हैं। सामने आठ मंत्री बैठे हुए हैं, जो विचार-गोष्ठी कर रहे हैं और गरज रहे हैं। ३१। मैं जानता हूँ— हे राजा, आपसे राम को जीता नहीं जा पाएगा। एक समय (कभी) कृतान्त आक्रमण कर आए, तो भी वे उसे पकड़कर अपने बस में कर लेंगे। ३२। इसलिए जाकर राम से मिलिए और सती जनक-तनया उन्हें (लौटा) दीजिए। वे आपको अभय (दान) देंगे। रघुपति शरणागतों के प्रति वत्सल हैं। ३३। जो जाकर राम का नमन करता है, उसके मस्तक पर वे अभय- (वरदान देनेवाला) कर रखते हैं। कवि गिरधर-दास कहते हैं, श्रीरघुवीर दीनों पर दया करते

दोहा

शुकसारणनां वचन सुणी, हसियो रावणराय,
अल्या मूरख अधिकता शी करे ? ए कपिनरथी शुं थाय ? । ३५ ।
मुज प्रताप जाणे सहु, शिव सुरपति दिग्पाल,
तो कपि-भालुथी क्यम डरुं ? छुं काळ तणो हुं काळ । ३६ ।
एम क्रोध करीने दशवदन, बोल्यो गर्व धरी मन,
ते काळविवश माने नहि, जे शिक्षा हितवचन । ३७ ।
खेत फळे फूले नहि, जो वरसे अमृतमेह,
शत विरंचि सम गुरु मळे, पण मूरख न समजे तेह । ३८ ।

हैं । ' ३४ । शुकसारण की ये बातें सुनकर राजा रावण हँस पड़ा । 'अरे मूर्ख, अत्युक्ति क्या कर रहा है ! उन कपियों और नरों से क्या होगा ? ३५ । शिवजी, इन्द्र और दिग्पाल— सब मेरे प्रताप को जानते हैं । तो मैं कपियों-भालुओं से कैसे डर सकता हूँ ? मैं तो काल का काल हूँ । ' ३६ । मन में गर्व धारण करते हुए रावण इस प्रकार क्रोध से बोला । जो शिक्षा (-प्रद) और हितकारी बात होती है, उसे काल के अधीन हुआ (व्यक्ति) नहीं मानता । ३७ ।

यदि अमृत-भरा मेघ बरसे, तो भी खेत नहीं फल रहा था - फूल रहा था । सौ विधाताओं के समान गुरु मिल जाए, तो भी मूर्ख उसे नहीं जान पाता है । ३८

* * *

अध्याय—२४ (गोपुर पर विराजमान रावण के मुकुटों को लक्ष्मण द्वारा छेदना)

राग धवळ घनाक्षरी

शुकसारणे कह्युं दशमुखने, कपिदळनी संख्याय जी,
हावे सुवेळु पर्वतनी पासे, शुं करता हता रघुराय जी ? १ ।

अध्याय—२४ (गोपुर पर विराजमान रावण के मुकुटों को लक्ष्मण द्वारा छेदना)

(दूत) शुकसारण ने रावण को वानरों की सेना (के सैनिकों) की संख्या बतायी । अब सुवेल पर्वत के पास श्रीराम क्या कर रहे हैं ? १ । आठों दलों के (प्रमुख) कपिवरों की सभा आयोजित करके वहाँ रघुपति बैठ गये । उस समय हाथ ऊँचा करके (ऊपर उठाते हुए उस संकेत

सभा करी त्यां रघुपति बेठा, अष्ट यूथ कपिनाथ जी,
ते समे विभीषण देखाडे रामने, ऊंचो करीने हाथ जी। २।
जुओ महाराज, पेलो रावण चढियो, गोपुर उपर एह जी,
दश छत्र मस्तक पर शोभे, रवि सम झळके तेह जी। ३।
बे पास थाय चम्मर ऊभां, आपे सेवक उपभोग जी,
गांधर्व गाय अप्सरा नाचे, तान ताल संयोग जी। ४।
मणिजडित मुगट शिर झळके, विद्युतवंत अलंकार जी,
एम सिंहासन पर बेठो रावण, धरतो मन अहंकार जी। ५।
ते रावण केरा छत्रनी छाया, आवी पडी रामने शीश जी,
त्यारे क्षोभ थयो मनमां तेणी वेळा, चढी लक्ष्मणने रीस जी। ६।
पछी धनुष उपर बाण चढावी, मूक्युं सुमित्राकुमार जी,
रावणनां दश मुगट, छत्र दश, उडयाड्यां तेणी वार जी। ७।
त्यारे मनमां अति भय पाम्यो दशानन, नाठो थई भयभीत जी,
मन जाण्युं हवडां मुंने मारत, थात वात विपरीत जी। ८।
रंगमहेलमां आव्यो वळतो, भय ऊपन्यो अति मन जी,
ते ज दिवसनुं नथी भावतुं, रावणने जळ-अन्न जी। ९।

से) विभीषण ने राम को दिखाया (और कहा—)। २। 'देखिए महाराज, उस गोपुर पर वह (देखिए) रावण चढ़ गया है। उसके मस्तकों पर दस छत्र शोभायमान हैं। वे सूर्य के समान जगमगा रहे हैं। ३। दोनों ओर चँवर खड़े (किये गये) हैं और सेवक उपभोग्य (वस्तुएँ) दे रहे हैं। गन्धर्व गा रहे है। अप्सराएँ नृत्य कर रही हैं। (वहाँ) तान और ताल का संयोग (परस्पर मेल) हो रहा है। ४। उसके सिरों पर रत्न-जटित मुकुट जगमगा रहे हैं और उसके आभूषण (मानो) विजली से युक्त हैं। इस प्रकार रावण सिंहासन पर बैठा हुआ है। वह मन मे अहंकार धारण किये हुए हैं।' ५। (उस समय) रावण के उन छत्रों की आती (अर्थात् फैलती) हुई छाया राम के मस्तक पर पड़ गयी। तब उस समय लक्ष्मण के मन में क्षोभ उत्पन्न हुआ और उसे क्रोध आ गया। ६। फिर सुमित्रा-कुमार लक्ष्मण ने धनुष पर वाण चढ़ाकर चला दिया, तो उसी समय उसके द्वारा रावण के दसों मुकुट और दसों छत्र उड़ा दिये गये। ७। तब रावण मन में बहुत भय को प्राप्त हो गया और भयभीत होकर वह भाग गया। उसे मन में जान पड़ा कि यदि वह (शत्रु) मुझे मार डालता, तो विपरीत बात हो जाती। ८। (तब) वह लौटकर रंग-भवन में

अहर्निश तन थयो अजंपो, निद्रा न आवे नेण जी,
भग्न थयो मनसुवा मध्ये, कोनुं बोल्युं गमे नहि वेण जी। १०।
सुणो श्रोता समर्थनी साथे, वेर करे जन जेह जी,
सुख-शांति क्यारे नव पामे, ठरी नव बेसे तेह जी। ११।
लक्ष्मणे छत्र ने मुगट उडाड्यां, रावणनां तेणी वार जी,
त्यारे सर्व सभाए वखाण्या तत्क्षण, सुमित्रा-सुतने अपार जी। १२।
एम सुवेळुए कपिसेन्या साथे, विराजे श्रीरघुराय जी,
ए संबंध अहीं पूरण थयो जे, सुंदर कांड कथाय जी। १३।
हवे युद्ध कांड आगळ कहेवाशे, राम-रावण संग्राम जी,
पछी दशमुखने हणीने जाशे अवधपुर, लक्ष्मण सीताराम जी। १४।
ए सुंदर कांड थयो संपूरण, हरि गुरु संत कृपाय जी,
पद सात सें सात पूरां, अध्याय चोवीस कहेवाय जी। १५।
वाल्मीकि-रामायणनो अर्थ ए, कर्यो प्राकृत पद-बंध जी,
हनुमंत नाटक केरो एमां, मेळवी लीधो संबंध जी। १६।

आ गया। उसके मन में बहुत भय उत्पन्न हुआ था। उसी दिन से रावण को अन्न-जल नहीं जँचने लगा। ९। दिन रात उसका शरीर व्याकुल होता रहा। उसे ठीक नींद (भी) नहीं आती थी। उसका मनोरथ बीच में ही भग्न हो गया। (इसलिए) किसी का बोलना (तक) उसे अच्छा नहीं लगता था। १०। सुनिए हे श्रोताओ, समर्थ के साथ जो बैर करता है, वह सुख-शान्ति को कभी नहीं प्राप्त होता। वह स्थिरता से नहीं बैठ पाता। ११। उस समय (जब) सुमित्रा-सुत लक्ष्मण ने रावण के छत्र और मुकुट उड़ा दिये, तब समस्त सभा (-जनों) ने तत्क्षण उनकी अपार प्रशंसा की। १२। इस प्रकार श्रीरघुराज सुवेल पर कपि-सेना के साथ विराजमान थे। जो सुन्दर काण्ड की कथा है, वह प्रकरण यहाँ पूर्ण हो गया। १३। अब आगे युद्ध काण्ड कहा जाएगा, जिसमें राम-रावण-संग्राम (का वर्णन) है। अनन्तर रावण की हत्या करके राम, सीता और लक्ष्मण अयोध्या जाएँगे। १४। भगवान हरि, गुरु और सन्तों की कृपा से यह सुन्दर काण्ड संपूर्ण हो गया। इसमें पूर्ण सात सौ सात पद (छन्द) चौबीस अध्यायों में कहे गये हैं। १५। मैंने वाल्मीकि कृत रामायण का अर्थ प्राकृत (जनभाषा गुजराती में) में पद्य-बद्ध किया है। उसमें मैंने हनुमन्नाटक का प्रकरण (यथास्थान) मिला लिया है। १६। इसके पद-पद में श्रीराम के गुणों की ओर संकेत है, जो अधम जनों का उद्धारकर्ता कहाते हैं।

पदे पदे पावन ए रामगुण, अधम उद्धारण कहावे जी,
जे श्रवण कीर्तन भावे करे ते, फरी गर्भवास नव आवे जी। १७।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नव आवे फरी गर्भवास ते जन, जे राखे राम रुदे धरी,
कहे दास गिरधर निर्मळ श्रोता, एक वार बोलो श्रीहरि। १८।

॥ सुन्दर काण्ड समाप्त ॥

जो (लोग) इसका श्रवण तथा कीर्तन प्रेम-पूर्वक करते है, वे (पीछे) फिरकर अर्थात् फिर से गर्भ-वास करने नहीं आएँगे। (अर्थात् उन्हें फिर से जन्म नहीं लेना पड़ेगा)। १७।

जो राम को हृदय में धारण कर रखते हों, वे लोग फिर से गर्भवास करने नहीं आएँगे। कवि गिरधरदास कहते हैं— हे पवित्र (-मना) श्रोताओ, एक बार 'श्रीहरि' बोलिए। १८।

॥ सुन्दर काण्ड समाप्त ॥

युद्ध काण्ड

अध्याय—१ (कवि की प्रास्ताविक उक्ति; रावण का मन्त्रियों से विचार-विनिमय करना और सीता के समीप जाना)

राग धन्याश्री

श्री पुरुषोत्तम पूर्णानंद जी, मंगळमूर्ति सुखना कंद जी,
अंतरजामी चैतन्यचंद जी, विश्वना आत्मा सुर मुनि वंद्य जी । १ ।

ढाळ

वंदे नित्य सुर नर मुनिवर, अखिल पूरणकाम,
एवा पुरुषोत्तम पदकमळ जुगने, नमी करुं प्रणाम । २ ।
तव कृपाए करुणानिधि, कहुं रसिक रामचरित्र,
यथामतिए गाउं गुण जश, करुं वाणी पवित्र । ३ ।
कृत ध्यान त्रेतामां क्रतु, परिचर्या द्वापर सार,
केशवकीर्तन थकी कळिमां, पामे जीव निस्तार । ४ ।

अध्याय—१ (रावण का मन्त्रियों से विचार-विनिमय करना और सीता के समीप जाना)

हे पूर्ण आनन्द-स्वरूप (गुरुवर) श्री पुरुषोत्तमजी, हे मंगल-मूर्ति और हे सुख के कन्द (-स्वरूप गुरुदेव), हे अन्तर्यामी, हे चैतन्य (-स्वरूप) चन्द्रमा, हे देवों और मुनियों के लिए वंद्य विश्वात्मा (-स्वरूप) गुरुदेव ! हे अखिल पूर्णकाम परमेश्वर, आपको देव, नर और मुनिवर नित्य नमस्कार करते हैं। ऐसे हे पुरुषोत्तम, आपके दोनों पद-कमलों का नमन करते हुए मैं आपको प्रणाम करता हूँ। १-२। हे करुणा-निधि, आपकी कृपा से मैं रसात्मक राम-चरित्र कहता हूँ। मैं अपनी बुद्धि के अनुसार उनके गुणों और कीर्ति का गान करता हूँ और अपनी वाणी को पवित्र कर लेता हूँ। ३। कृत अर्थात् सत्ययुग में (मनुष्य अपने उद्धार के लिए) ध्यान करते थे, त्रेतायुग में यज्ञ करते थे, द्वापरयुग में सुन्दर परिचर्या (सेवा) करते थे। (परन्तु) कलियुग में (भगवान केशव (के गुणों) के कीर्तन से जीव (भव-सागर) से निस्तार को प्राप्त हो जाते हैं। ४। वे समस्त साधन (इस कलियुग में) नष्ट हो गये

गत सार साधन सहु थयां, बीजा नथी अवर उपाय,
हरिनाम तरवा जीवने, संसारसागर नाव। ५ ।
एम विचारीने कर्यो आदर, गावा गुण जगदीश,
सहु कविजन भगवती साधु, चरण नामुं शीश। ६ ।
वाल्मीकि रामायण थकी, प्राकृत कर्यो विस्तार,
हनुमंत नाटक मेळवी, पदबंध रचना सार। ७ ।
बाळ कांड ने अयोध्या, आरण्य किष्किधाय,
सहित सुंदर पंच कांडनी, कही पूर्वकथाय। ८ ।
सागर उपर सेतु बांधी, ऊतर्या रघुवीर,
कपिसेन साथे सुवेळुए, रह्या श्रीरणवीर। ९ ।
जोवडावी चर्या दशानन, कपिदळ कर्युं गणनाय,
दश छत्र पाड्यां लक्ष्मणे, त्यारे थई घणी चिंताय। १० ।
परम ग्लानि पामियो मन, रावण तेणी वार,
ते कथा सुंदर कांड विषे, वर्णवी कह्या विस्तार। ११ ।

हैं। (अब उद्धार के) दूसरे अन्य उपाय नहीं हैं। (इस युग में) जीव के लिए संसार-रूपी सागर को तैरकर पार जाने की नाव है—(केवल) हरि-नाम। ५। ऐसा विचार करके जगदीश (भगवान राम) के गुण-गान का मैंने आरम्भ किया है। मैं मस्तक नवाकर समस्त कविजनों, भगवद्भक्तों तथा साधुओं के चरणों को नमस्कार करता हूँ। ६। मैंने वाल्मीकि-रामायण (के आधार) से प्राकृत (जनभाषा गुजराती) में (राम की कथा का) विस्तार किया है। उसमें हनुमन्नाटक (के कथा, भाव, प्रसंग आदि) को मिलाकर सुन्दर पद्य-बद्ध रचना की है। ७। (इससे) पहले मै बाल-काण्ड और अयोध्या-काण्ड, अरण्य-काण्ड, किष्किन्धा-काण्ड सहित सुन्दर-काण्ड—इन पाँच काण्डों की कथा कह चुका हूँ। ८। (यह कहा जा चुका है कि) सागर-पर पुल बनाकर रघुवीर (उस पार) उतर गये। वे रणधीर राम कपि-सेना सहित सुवेल पर ठहर गये। ९। रावण ने (शुकसारण को भेजकर राम और उनकी सेना की) चर्या दिखलवायी, अर्थात् उसकी जानकारी प्राप्त करवायी, तथा कपि-सेना की गणना करवायी। (फिर) लक्ष्मण ने रावण के दसों छत्रों को गिरा डाला। तब उसे बहुत चिन्ता हो गयी। १०। उस समय रावण मन में परम ग्लानि को प्राप्त हो गया। उस कथा का विस्तार-सहित वर्णन सुन्दर-काण्ड में किया। ११। अब मैं युद्ध-काण्ड की कथा कहने जा रहा हूँ।

हावे युद्ध कांड कथा कहुं, ते श्रोता धरजो मन,
रणमांहे कोप्या रामजी, कर्युं रावणकुळ नाशन। १२।
ते कथानो विस्तार अद्भुत, कहुं यथामति अर्थ,
हरिनाम अंकित वाणी नहि ते, काव्य जाणो व्यर्थ। १३।
ज्यारे रावणनां दश छत्र पाड्यां, मूकी अनंते बाण,
त्यारे व्याकुळ थई दशवदन आव्यो, सभामां निर्वाण। १४।
पछे पोताना जे प्रधान प्रिय, तेने पूछे रावण वात,
हुं इच्छुं छुं मनकामना ते, कहो मुंने साक्षात्। १५।
सुणो मंत्री छे मुज मन विषे, संकल्प बे चिताय,
रामलक्ष्मण संहारुं ने, जानकी वश थाय। १६।
ए रातदिवस चिंता दहे, माटे पूछुं तमने वात,
ए बे कारज सिद्धि पामे, करो एवुं भ्रात। १७।
त्यारे वज्रदृष्टि प्रधान कहे छे, राखो राय विश्वास,
हमणां लेई आवुं जानकीने, बेसाडुं तम पास। १८।
रावण कहे मुंने ब्रह्मा केरो, शाप छे वळी एह,
आग्रहे परस्त्री संग करतां, भस्म थाये देह। १९।

श्रोता उसकी ओर मन (ध्यान) दें। (उसमें कहा जाएगा -) श्रीराम रण में क्रुद्ध हो गये और उन्होंने रावण के कुल का नाश कर डाला। १२। उस कथा की व्यापकता बड़ी है। (फिर भी) मैं अपनी (अल्प) बुद्धि के अनुसार उसका अर्थ कहने जा रहा हूँ। जो वाणी हरि-नाम से अंकित अर्थात् युक्त न हो, उसके द्वारा प्रस्तुत काव्य व्यर्थ समझिए। १३। जब अनन्त (शेष के अवतार लक्ष्मण) ने बाण छोड़कर रावण के दसों छत्रों को गिरा डाला, तब दशानन व्याकुल होकर निश्चय-पूर्वक सभा में आ गया। १४। अनन्तर उसने अपने जो प्रिय मंत्री थे, उनसे यह बात पूछी। 'मैं मन में जो कामना कर रहा हूँ, उसके विषय में मुझसे स्वयं कह दो। हे मंत्रियो, मेरे मन में दो संकल्पों के बारे में चिन्ता है। (एक) राम-लक्ष्मण का संहार (कैसे) करना है और (दूसरे) जानकी मेरे वश (कैसे) हो जाए। १५-१६। यह चिन्ता (रूपी आग मेरे मन में) रात-दिन जल रही है, इसलिए मैं तुमसे यह बात पूछ रहा हूँ। हे बन्धुओ, ये दोनों कार्य सिद्धि को प्राप्त हो जाएँ, ऐसा (कुछ) कर दो। १७। तब वज्रदृष्टि नामक मंत्री ने कहा— 'हे राजा, विश्वास रखिए। मैं अभी जानकी को ले आता हूँ, और आपके पास बैठा देता हूँ।' १८। (तब) रावण ने

माटे एनी मेळे आवे सीता, प्रसन्न थई मनमांहे,
उपाय एवो करो सत्वर, तमो जाओ त्यांहे । २० ।
त्यारे विद्युतजिह्वा प्रधान बीजो, बोलियो तेणी वार,
हुं कपट रची माया देखाडुं, सीताने निरधार । २१ ।
त्यारे रावण हरख्यो मन विषे, भाई भलो मंत्री तुंय,
छे ते थकी अधिकार तुजने, घणो आपीश हुंय । २२ ।
ज्यम मदपानीने मळे भंगी, जारने स्त्रीय राज,
ज्यम लीमनां फळ पक्व जोईने, हरखे कागसमाज । २३ ।
एम रावण हरख्यो मन विषे, जोई मंत्रीबळ ते ठाम,
पछे आज्ञा आपी दशवदन, जाओ करी आवो ए काम । २४ ।
ते कपट रचवा गयो वळतो, पामी मन उल्लास,
त्यारे पहेलो रावण आवी बेठो, सीता केरी पास । २५ ।
जानकी बेठां नीची दृष्टे, रामचरणे मन,
पासे आवी बोलवा लाग्यो, रावण दुष्ट वचन । २६ ।

कहा— 'इसके अतिरिक्त मुझे ब्रह्मा का यह अभिशाप है कि बलात् परस्त्री का भोग करने पर मेरी यह देह भस्म हो जाएगी । १९ । इसलिए स्वयं सीता मन में (मेरे प्रति) प्रसन्न होकर आ जाए और मिल जाए, ऐसा कोई उपाय झट से करो । तुम वहाँ (उसके पास) जाओ ।' २० । तब उस समय विद्युज्जिह्व नामक एक दूसरा मंत्री बोला— 'मैं निश्चय ही कपट करके सीता को माया दिखा देता हूँ ।' २१ । तब रावण मन में आनन्दित हो गया (और बोला)— 'हे भाई, तुम भले मंत्री हो । (यदि ऐसा हो) तो मैं तुम्हें जितना अधिकार तुम्हारा है, उससे अधिक (अधिकार) दूँगा ।' २२ । जैसे मद्यपी को भंग मिल गयी हो, जार को स्त्री-राज्य मिल गया हो, जैसे नीम के फल को पक्व हुए देखकर कौओं का समुदाय आनन्दित हो जाता हो, वैसे उस स्थान पर अपने मंत्रियों के बल को देखकर रावण मन में आनन्दित हो गया । फिर उसने आज्ञा दी— 'जाओ यह काम करके आ जाओ ।' २३-२४ । तदनन्तर वह (मंत्री) मन में उल्लास को प्राप्त होकर कपट करने चला गया । तब (उससे) पहले रावण सीता के पास आकर बैठ गया । २५ । (वहाँ) आँखें झुकाये हुए सीता राम के चरणों में मन लगाकर बैठी हुई थी । (तब) उसके पास आकर रावण दुष्टता-पूर्ण बातें बोलने लगा । २६ ।

उस समय रावण सीता से दुष्टता-पूर्ण बातें बोलने लगा । कवि

वलण (तर्ज बदलकर)

दुष्ट वचन बोलतो रावण, सीताशुं तेणी वार रे,
कहे दास गिरधर जे जन अभिमानी, तेने न होय विवेक विचार रे। २७।

गिरधरदास कहते हैं— जो लोग अभिमानी होते हैं, उनमें विवेक-विचार नहीं होता (वे विवेक के साथ विचार नहीं कर सकते) । २७ ।

* * *

अध्याय—२ (रावण का सीता को राम की मृत्यु की खबर सुनाना—सीता का विलाप—सरमा का सीता को आश्वस्त करना—रावण द्वारा मन्दोदरी को सीता के पास भेजना)

राग देशाख

ज्यम हरिणी समीपे व्याघ्र ज आवे सिंह करिणी पास,
तेम सीता समीपे रावण आवीने, बोल्यो वचन प्रकाश। १ ।
हे सीता सुण निश्चे वात कहुं, जेथी सरे मुज अर्थ,
आटला दिन तें धीरज राखी, ते सर्व थई व्यर्थ। २ ।
हावे वर तुं मुने तजी संदेह, था लंकानी राणी,
मंदोदरी तारी सेवा करशे, पटराणी तने जाणी। ३ ।
तुं आशा राखे छे जेनी, ते थयुं तारा पतिनुं मर्ण,
ते माटे मुजने उवेखीने, रहीश तुं कोने शर्ण ?। ४ ।

अध्याय—२ (रावण का सीता को राम की मृत्यु की खबर सुनाना—सीता का विलाप—सरमा का सीता को आश्वस्त करना—रावण द्वारा मन्दोदरी को सीता के पास भेजना)

जैसे हरिणी के समीप बाघ आ गया हो, हथिनी के पास सिंह आ गया हो, वैसे ही सीता के समीप रावण आते हुए स्पष्ट रूप में बोला। १। 'हे सीता, मैं तुमसे निश्चय-पूर्वक यह बात कह रहा हूँ, जिससे मेरा उद्देश्य पूर्ण हो गया है। इतने दिन तुमने धीरज (धारण कर) रखा था, वह सब व्यर्थ हो गया। २। अब सन्देह छोड़कर तुम मेरा वरण करो और लंका की रानी बन जाओ। तुम्हें पटरानी समझकर मन्दोदरी तुम्हारी सेवा करेगी। ३। तुमने जिसपर आशा (लगा) रखी है, तुम्हारे उस पति की मृत्यु हो गयी है। इसलिए (अब) मेरी उपेक्षा करते हुए तुम किसकी शरण में रहोगी। ४। सुनो, हे सुन्दर जनक-सुता, मैं तुमसे वह समाचार कह देता हूँ।' सागर

ते वर्तमान कहुं तुजने सुण, जनकसुता अभिराम,
सागर उपर पाज बांधीने, सुवेळुए ऊतर्या राम। ५।
त्यारे मारो प्रधान प्रहस्त निशाए, गयो हतो ते ठार,
सर्व सेन्या निद्रावश जाणी, प्राक्रम कीधुं अपार। ६।
तेणे तुज पतिनुं शिर छेद्युं, मार्या बीजा जोध अनंत,
लक्ष्मण नासी गयो अवधपुर, जे तुं कहेती बळवंत। ७।
सुग्रीव अंगद विभीषण केरां, शिर छेद्यां तेणी वार,
जांबुवान हनुमंतना काप्या, कर-पद त्यां निरधार। ८।
राक्षस गळी गया अन्य सैन्य, कपि मर्कट केरुं जेह,
सेतुभंग करी सागर मध्ये, कारज कीधुं एह। ९।
एवुं वर्तमान सीतानी आगळ, जूठुं कह्युं दशशीश,
एटले आव्यो विद्युतजिह्वा, कपट करीं ते दीश। १०।
मायामय शिर धनुष्य रामनुं, कर ग्रही लाव्यो तेह,
ते लावी सीतानी पासे मूक्युं, कृत्रिम मिथ्या जेह। ११।
श्यामसुंदर मुख कंठनाळथी, रुधिर स्रवे छे जाण,
किरीट कुंडळ मंडित शुभ झळके, कान्ति सूरज प्रमाण। १२।

पर पुल बनवाकर राम सुवेल पर ठहर गये। ५। तब मेरा प्रहस्त नामक मंत्री उस स्थान पर रात में गया था। उसने (राम की) समस्त सेना को निद्रावश जानकर अपार पराक्रम किया। ६। उसने तुम्हारे पति का सिर छेद डाला और अन्य असंख्य योद्धाओं को मार डाला। जिसे तुम बलवान कहती हो, वह लक्ष्मण भागकर अयोध्या चला गया है। ७। उसने उस समय सुग्रीव, अंगद और विभीषण के मस्तक (भी) छेद डाले, जाम्बवान और हनुमान के हाथ और पाँव वहाँ निश्चय ही काट डाले। ८। कपियों, मर्कटों की जो सेना थी, उसे अन्य राक्षस निगल गये। उन्होंने सागर में सेतु को भग्न कर डाला। उन्होंने ऐसा यह काम किया।' ९। रावण ने सीता के समक्ष ऐसा झूठा समाचार कहा; तो इतने में उस स्थान पर विद्युज्जिह्व कपट करके आ गया। १०। वह राम का मायामय सिर और धनुष हाथ में लिये हुए आ गया। (वस्तुतः) जो (सिर और धनुष) कृत्रिम (अतएव) मिथ्या था, उसे लाकर उसने सीता के पास डाल दिया। ११। समझिए कि उस श्यामसुन्दर मुख के कण्ठ-नाल से रक्त झर रहा था। (फिर भी) किरीट, कुण्डलों से विभूषित वह मंगल रूप में झलक रहा था। उसकी कान्ति सूरज की-सी थी। १२। उसके बाल घुँघराले-कुटिल थे, नाक

कुंचित केश कुटिल शुक नासा, अधरदंत द्युति चळके,
आरक्त नेत्रकमळ केसरनुं, तिलक भालमां झलके। १३।
एवुं दीठुं जनकनंदिनी, मूर्छा आवी त्यांहे,
ज्यम कदळी उपर वीज पडे एम, थई पड्यां पृथ्वीमांहे। १४।
दग्ध थाय ज्यम हिये कमलिनी, गुलीकने वह्नि ताप,
एम शोकमां दग्ध थयां वैदेही, महा दुःख पाम्यां आप। १५।
पछे मूर्छा वळी ते शिर जोई, द्रष्टे दीठुं पृथ्वी मोझार,
करवा मांड्युं ऊंचे स्वरथी, शोकरुदन तेणी वार। १६।
हा हा नाथ अयोध्यानायक, राजीवनेत्र रघुराज,
अनंत गुणसंपन्न जगमोहन, आ शुं कर्युं महाराज ? । १७।
कोमळ चरणे वनपर्वतमां, चाल्या चतुर्दश वर्ष,
मुज अर्थे घणो शोक धरीने, श्रम कर्यो उत्कर्ष। १८।
मुज माटे वाली मार्यो, सुग्रीवशुं मैत्री कीधी,
मारुति पासे शोध करावी, संभाळ मारी लीधी। १९।
सागर उपर सेतु बंधावी, आव्या सुवेळु ठाम,
छेल्ले वारे तमने घटे नहि, आवुं करवुं काम। २०।

तोते (की चोंच) की-सी थी; होंठों और दाँतों की कान्ति चमक रही थी, नेत्र-कमल आरक्त थे; भाल पर केसर का तिलक चमक रहा था। १३। (जब) जनक-नन्दिनी ने ऐसा (मस्तक) देखा, तब उसे मूर्च्छा आ गयी और जैसे कदली पर बिजली गिर जाए (तो वह जैसी गिर जाती हो), वैसे वह भूमि पर गिर पड़ी। १४। जैसे पाले से कमलिनी दग्ध हो जाती है, जैसे लता अग्नि के ताप से दग्ध हो जाती है, वैसे सीता शोक-(रूपी अग्नि) में जल गयी। वह स्वयं बड़े दुःख को प्राप्त हो गयी। १५। मूर्च्छा के दूर हो जाने पर वह धरती पर (रखे) उस सिर की ओर देखने लगी और उस समय उसने शोक से उच्च स्वर में रुदन करना आरम्भ किया। १६। 'हाय, हाय, हे अयोध्या-पति राजीवनेत्र रघुराज, हे अनन्त गुणों से सम्पन्न जगन्मोहन, हे महाराज, आपने यह क्या किया ? १७। आप अपने कोमल चरणों से चौदह वर्ष वन और पर्वत में भ्रमण करते रहे। आपने मेरे कारण बहुत शोक करते हुए अत्यधिक परिश्रम किया। १८। 'मेरे निमित्त बाली को मार डाला और सुग्रीव से मित्रता की। हनुमान द्वारा मेरी खोज करायी और मेरा ध्यान रखा। १९। समुद्र पर सेतु बनवाकर सुवेल नामक स्थान पर आप आ गये। (परन्तु) अन्तिम समय ऐसा काम

हे अवधपति हावे तमो विना मुंने, कोण छोडावशे अहींथी ?
प्रभु विदेश मांहे मूकी गया हावे, मेळाप थाशे क्यांथी ? । २१ ।
हे भूधरनो अवतार सौमित्री, क्यम गया बंधुने मूकी ?
वनआज्ञा पाळी वर्ष चतुर्दश, अंते सेवा चूकी । २२ ।
भरत कौशल्याजी पूछशे तमने, त्यारे शो देशो जवाप ?
सूरजवंशमां दूषण लाग्युं, एम करे छे विलाप । २३ ।
वाल्मीके काव्य करी ते में सुणी, जूठी पडी सहु आज,
अहो प्राणनाथ, मुज वियोग टाळो, पासे तेडो महाराज । २४ ।
एम सीता रडतां पशुपंखी सहु, रोयां वृक्ष पाषाण,
ए दुःख कहेतां कविनी वाणी, कुंठित थाये जाण । २५ ।
पछे रावण प्रत्ये कहे जानकी, तुं मारे जनक समान,
माटे अग्निप्रवेश कराव्य मने, सहगमन करुं हुं निदान । २६ ।
एवां वचन सुणीने रावण लाज्यो, ए सती नहि चूके सत्य,
एम विचारी ऊठी गयो ते, लंकामां भूपत्य । २७ ।

करना आपके लिए उचित नहीं है । २० । हे अयोध्या-पति, आपके बिना मुझे अब यहाँ से कौन छुड़ाएगा ? हे प्रभु, आप मुझे विदेश में छोड़कर चले गये, अब कहाँ से (किस तरह) मिलना होगा ? २१ । हे शेष के अवतार लक्ष्मणजी, तुम वन्धु को छोड़कर कैसे गये ? चौदह वर्ष वन में रहते हुए तुमने आज्ञा का पालन किया, (परन्तु) अन्त में सेवा चूक गयी । २२ । जब भरत और कौशल्याजी आपसे पूछेंगे, तब तुम क्या उत्तर दोगे ? सूर्यकुल में (अब) दोष लग गया है ।' इस प्रकार वह विलाप कर रही थी । २३ । (वह फिर वोली-) 'वाल्मीकि ने जो काव्य किया, उसे मैंने सुना है । वह आज झूठा पड़ गया है । अहो प्राणनाथ, मेरे वियोग को टाल दीजिए— (मुझे) अपने पास बुलाइए ।' २४ । सीता के इस प्रकार रोते रहने पर समस्त पशु-पक्षी, वृक्ष, पाषाण रोने लगे । समझिए, उस दुःख को कहते हुए कवि की वाणी कुण्ठित हो रही है । २५ । फिर जानकी रावण से बोली— 'तुम तो (मेरे लिए) मेरे पिता के समान हो । इसलिए मुझे अग्निप्रवेश करा दो, मैं अवश्य सहगमन करूँगी (सती हो जाऊँगी) ।' २६ । ऐसी बात सुनकर रावण लज्जित हो गया । (उसने सोचा) यह सती अपनी प्रतिज्ञा से नहीं टलेगी ।' ऐसा विचार करके वह राजा उठकर लंका में चला गया । २७ । इस प्रकार एक घड़ी (भर के लिए) मोह को प्राप्त हो गयी । फिर उसने ध्यान धारण करके देखा, तो उसने

एम सीता एक घडी मोह पाम्यां, पछी जोयुं धरी ध्यान,
त्यारे ए कर्तव्य मिथ्या जाण्युं, कुशळ छे श्रीभगवान । २८ ।
तेणे समे विभीषणनी राणी, शरमा एवुं नाम,
ते तत्क्षण आवी जानकी पासे, गुप्त रूपे ते ठाम । २९ ।
ते कही जाय छे नित्ये आवी, लंकानुं वर्तमान,
असुर तणी सहु माया जाणे, ते नारी गुणवान । ३० ।
ते शरमा आवी पाये लागी, जानकीने तेणी वार,
अरे माता शा माटे रुओ छो ? कहो मुजने निरधार । ३१ ।
आ शीश-धनुष्य कृत्रिम छे निश्चे, असुरमाया बळवान,
एवुं कही शरमाए स्पर्श कर्यो, त्यारे थयुं अंतरध्यान । ३२ ।
पवने करी अकस्मात वळी, दीप बुझाये जेम,
जलद जाळमां इंद्रधनुष थाये, गुप्त थयुं छे तेम । ३३ ।
छे कुशळ सुवेळुए राम-सौमित्री, शरमा बोली वाणी,
माता शोक तजो ए मिथ्या, असुरनुं कर्तव्य जाणी । ३४ ।
पछे जनकनंदिनीए ते नव दीठुं, प्रसन्न थयां तेणी वार,
धन्य धन्य तुं शरमा राणी, चांपी हृदय मोझार । ३५ ।

जान लिया कि यह काम मिथ्या (मायावी) है, श्रीभगवान सकुशल हैं । २८ । उस समय विभीषण की पत्नी, जिसका नाम सरमा था, गुप्त रूप से उस स्थान पर सीता के पास तत्क्षण आ गयी । २९ । वह नित्य (वहाँ आकर) लंका का समाचार कहकर जाया करती थी । वह असुरों की समस्त माया को जानती थी । वह गुणवती नारी थी । ३० । सरमा (नामक वह स्त्री) उस समय आकर सीता के पाँव लगी । 'अरी माता किसलिए रो रही हो ? मुझे निश्चय ही कह दो । ३१ । ये मस्तक और धनुष निश्चय ही कृत्रिम हैं । असुरों की माया बलवान होती है ।' ऐसा कहकर सरमा ने उन्हें स्पर्श किया, तब वे अदृश्य हो गये । ३२ । जिस प्रकार पवन द्वारा यकायक दीप बुझाया जाता है, जिस प्रकार (पवन से) मेघ-जाल में इंद्र-धनुष गुप्त हो जाता है, उसी प्रकार वे (सिर और धनुष दोनों) गुप्त हो गये । ३३ । फिर सरमा ने यह बात कही— 'राम और लक्ष्मण सुवेल पर सकुशल हैं । हे माता, असुरों का यह मिथ्या (मायावी) काम है, यह जानकर शोक करना छोड़ दो ।' ३४ । फिर जब सीता ने उन्हें न देखा, (सीता को वे नहीं दिखायी दिये,) तो उस समय वह प्रसन्न हो गयी । (वह बोली—) 'हे सरमा रानी, तुम धन्य हो, धन्य हो ।'

अरे माता मुंने शोकसागरमां, तुं थई नाव समान,
वळी माया असुरनी तुं समजे, मने आप्युं अभयनुं दान । ३६ ।
आशिष दीधी सीताए, तुं थाजे लंकानी राणी,
मने महादुःखमांथी मुक्त करी, आवी तत्क्षण वेळा जाणी । ३७ ।
एवे समये आकाशवाणी थई, हे सीता न धरशो शोक,
सुवेळुए कपिदळ साथे छे, सुखिया पुण्यश्लोक । ३८ ।
ते वचन सुणी सीता मन हरख्यां, शोकविगत थयुं मन,
हावे लंकामां रावण शुं करतो, ते सुणो श्रोताजन । ३९ ।
नव थयां सीता स्वाधीन त्यारे, मनमां थई चिंताय,
पछे एकांतमां मंदोदरी साथे, बोल्यो रावणराय । ४० ।
हे शुभ कल्याणी राणी जा तुं, अशोकवन मोझार,
तुं लाव्य सीताने मारी पासे, ज्ञानबोध करी सार । ४१ ।
कपटथकी नव चळी जानकी, माटे प्रार्थुं तुं ज,
जो सीताने समजावी लावे, तो सुख थाये मुज । ४२ ।

फिर उसने उसे दृढ़तापूर्वक हृदय से लगा लिया । ३५ । (वह फिर बोली—) 'री माँ, तुम तो मेरे लिए इस शोक-सागर में नाव के समान हो गयी हो । इसके अतिरिक्त तुम असुरों की माया समझ सकती हो । तुमने मुझे अभयदान दिया है ।' ३६ । (फिर) सीता ने उसे आशीर्वाद दिया— 'तुम लंका की रानी बनोगी । समय (की कठिनाई) को जानकर तुम तत्क्षण आ गयी और मुझे तुमने महादुःख में से मुक्त कर दिया है ।' ३७ । उस समय आकाशवाणी हो गयी— 'हे सीता, तुम शोक न धारण करो । पुण्य-श्लोक (भगवान राम) सुवेल पर कपि-सेना-सहित सकुशल हैं ।' ३८ । वह बात सुनकर सीता मन में आनन्दित हो गयी— उसका मन शोक-विगत (अर्थात् शोक से मुक्त) हो गया । हे श्रोताजनो, अब यह सुनिए कि लंका में रावण क्या कर रहा था । ३९ । (जब) सीता उसके अधीन नहीं हुई, तब उसके मन में चिन्ता उत्पन्न हो गयी । अनन्तर, राजा रावण एकान्त में मन्दोदरी से बोला । ४० । 'हे शुभ-कल्याणी रानी, तुम अशोक वन में जाओ । ज्ञान सम्बन्धी सदुपदेश देते हुए तुम सीता को मेरे पास लाओ । ४१ । सीता कपट से अर्थात् कपट करने पर भी विचलित नहीं हुई । इसलिए मैं तुम्हीं से प्रार्थना कर रहा हूँ । यदि तुम सीता को समझा (-बुझा) कर ला पाओगी तो मुझे सुख होगा । ४२ । ऐसी बातें सुनने पर पतिव्रतमण्डन सती रानी मन्दोदरी पति की आज्ञा को प्रमाण मानकर मुस्कराते हुए

एवां वचन सुणीने पतिव्रतमंडन, सती मंदोदरी राणी,
सुहास्य वदन करी ऊठी ते वेळा, पतिआज्ञा परमाणी । ४३ ।
निष्कलंक विधुवदनी आवी, अशोकवन मोझार,
त्यां सीता पासे त्रिजटा बेठी, करे छे वात विचार । ४४ ।
त्यारे दूर थकी जोई मंदोदरीने, त्रिजटा बोली वाण,
तमारा दर्शन करवा भूमिजा, मयजा आवे जाण । ४५ ।
एटले आवी शरणे लागी, हरख्यां जानकी मन,
पछे मंदोदरीने उठाडीने, दीधुं आलिंगन । ४६ ।
ज्यम भागीरथीने मळे गौतमी, इंदिराने इंद्राणी,
ज्यम उमियाने सावित्री मळे, एम मळ्यां सीताने राणी । ४७ ।
परस्पर आनंद पामी बेठां, सुख थयुं अन्योअन्य,
राणी कहे धन्य दिवस आजनो, पामी तम दर्शन । ४८ ।
त्यारे जानकी कहे क्यम आव्या राणी, कहो ते मुजने वात,
पछे मंदोदरी कहे तमने पूछवा, प्रश्न एक सुणो मात । ४९ ।
कहेवुं घटे नहि तमने पण, एक वात कहुं छुं पर्म,
पतिआज्ञा परमाणज करवी, मुख्य ए मारो धर्म । ५० ।

उस समय उठ गयी । ४३ । वह निष्कलंक-चन्द्रानना अशोक वन में आ गयी । वहाँ सीता के पास त्रिजटा बैठी हुई थी । वह उससे बातचीत तथा विचार-विनिमय कर रही थी । ४४ । तब मन्दोदरी को दूर से देखकर त्रिजटा ने यह बात कही— 'हे भूमि-कन्या, समझ लो कि तुम्हारे दर्शन करने के लिए, मयजा (मन्दोदरी) आ रही है । ४५ । इतने में आते हुए वह पाँव लग गयी, तो सीता मन में आनन्दित हुई । फिर उसने मन्दोदरी को उठाते हुए उसका आलिंगन किया । ४६ । जिस प्रकार भागीरथी से गौतमी (गोदावरी) मिल जाए, लक्ष्मी से इंद्राणी (शची) मिल जाए, जिस प्रकार उमा से सावित्री मिल जाए, उसी प्रकार सीता से रानी मन्दोदरी मिल गयी । ४७ । वे परस्पर (मिलने से) आनन्द को प्राप्त होकर बैठ गयीं । एक-दूसरी को सुख अनुभव हो रहा था । (फिर) रानी ने कहा, 'तुम्हारे दर्शन को प्राप्त होने से आज का दिन धन्य है ।' ४८ । तब जानकी बोली— 'हे रानी, कैसे आयी हो ? मुझसे वह बात तो कह दो ।' फिर मन्दोदरी बोली— 'हे माता, सुनो, तुमसे एक प्रश्न पूछने के लिए आयी हूँ । ४९ । तुमसे पूछना उचित तो नहीं है । फिर भी एक परम (महत्वपूर्ण) बात कहती हूँ । पति की आज्ञा प्रमाण ही माननी चाहिए— यह मेरा

जक्तजनेता तमो जानकी, जगतपिता रघुराय,
पण पतिआज्ञाए प्रश्न ज पूछुं, क्रोध न करशो माय। ५१।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

माता क्रोध न करशो, पूछुं अध्यात्मपक्षनी रीत रे,
अद्वैत ब्रह्म एक सर्वात्मा, एम वेदांत बोले अमित रे। ५२।

मुख्य धर्म है। ५०। हे जानकी, तुम जगन्माता हो, रघुराज जगत्पिता है। परन्तु पति की आज्ञा से ही मैं यह प्रश्न पूछ रही हूँ। (अतः) हे माता, क्रोध न करना। ५१।

हे माता, क्रोध न करना। मैं अध्यात्म पक्ष की रीति (के विषय में) पूछ रही हूँ। वेदान्त असीम रूप से यह कहता है कि ब्रह्म अद्वैत है, एक है, सर्वात्मा है।' ५२।

* * *

अध्याय—३ (मन्दोदरी-सीता-सम्वाद)

राग काफी

कहे मंदोदरी सांभळो सीता, मारुं वचन ते परम पुनिता,
राम-रावणमां शो भेद ? एक आत्मा व्यापक वेद। १।
सर्व भूतमां राम समान, सर्व द्रष्टा ने सत्तावान,
एक जळ ने अनेक तरंग, एक आकाश बहु घट संग। २।

अध्याय—३ (मन्दोदरी-सीता-सम्वाद)

मन्दोदरी बोली— 'हे परम पवित्र सीता, मेरी यह बात सुनो। राम और रावण में क्या भेद है ? समझो कि दोनों में एक ही सर्व-व्यापक (परमात्मा) आत्मा (के रूप में विद्यमान) है। १। राम समस्त भूतों में समान (रूप से अस्तित्व में) हैं। वे सर्वद्रष्टा और सत्तावान हैं। जल एक होता है और लहरें अनेक होती हैं। आकाश एक होता है, परन्तु घट (-घट) के साथ अनेक (आकाश दिखायी देते) हैं। २। एक धागे में अनगिनत मणियाँ (पिरोयी हुई) होती हैं। सोना एक होता है, (परन्तु उससे बने) आभूषण अनेक होते हैं। ॐ-कार एक होता है, (परन्तु उससे उत्पन्न) मात्राएँ अनेक होती हैं।

एक सूत्रमां मणि अपार, एक सुवर्ण बहु अलंकार,
एक ॐकार माला अनेक, किर्ण विपुल ने दिनमणि एक। ३ ।
एक मृत्तिका कुंभ अपार, तरु एक बहु फळ सार,
ए सकळ चराचर भूत, राम व्यापक एक अद्भुत। ४ ।
माटे करतां रावण शुं प्रीत, कहो शुं तमारे विपरीत ?
छे सर्वदेही एक राम, तो लंकेश जुदो कोण ठाम। ५ ।
एवो प्रश्न कर्यो ज्यारे राणी, सुणी बोल्यां वैदेही वाणी,
हे सती तमो जे कही वात, तेनो उत्तर कहुं सुण मात। ६ ।
एक अभेद व्यापक राम, नथी ए विण ठालो ठाम;
सुणो सुंदरी कहुं ते रीत, नभ व्यापक सहु घट पूत। ७ ।
घट भंग थतां आकाश, नथी फूटतुं कंई अवकाश,
एम विश्वनो थातां नाश, नथी भंग थतो अविनाश। ८ ।
आ जगत मायानो प्रपंच छे, असत्य अशाश्वत संच,
जेम मृगजळ केरुं पूर, वंध्या वेलीनां फळ अंकुर। ९ ।

किरणें बहुत होती हैं और सूर्य एक (मात्र) होता है। ३। मिट्टी एक रहती है, (परन्तु उससे निर्मित) कुम्भ असंख्य होते हैं। वृक्ष एक होता है, (परन्तु उसमें लगनेवाले) सुन्दर फल बहुत होते हैं। इन समस्त चर और अचर भूतों (पदार्थों) को एक (मात्र) राम अद्भुत रूप से व्याप्त करनेवाले हैं (व्याप्त किये हुए हैं)। ४। इसलिए कहो, रावण से प्रेम करने पर तुम्हारे लिए क्या विपरीत (अनुचित) बात हो जाएगी। राम तो एक मात्र सर्वदेही (अर्थात् समस्त देहधारियों की देहों को ही धारण किये हुए) हैं; फिर लंकापति उनसे कौन अलग स्थान है (अर्थात् रावण उनसे भिन्न कैसे है) ? ' ५। जब (लंका की) रानी ने ऐसा प्रश्न किया, तो उसे सुनकर वैदेही ने यह बात कही, ' हे सती, हे माता, तुमने जो बात कही, उसका उत्तर मैं कहती हूँ। उसे सुन लो।' ६। राम एक हैं, अभेद (अभेद्य) हैं, (सर्व-) व्यापक हैं; बिना उनके कोई भी स्थान रिक्त नहीं है— अर्थात् ऐसा कोई भी स्थान नहीं है, जहाँ उनका अस्तित्व नहीं है, अतएव जो रिक्त कहा जा सकता हो। हे सुन्दरी, सुनो, मैं वह (विचार-) प्रणाली कह रही हूँ। आकाश (सर्व-) व्यापक है; उससे समस्त घट पूर्ण भरे हुए (व्याप्त) हैं। ७। (परन्तु) घट के भग्न हो जाने पर भी आकाश नहीं फट जाता, कहीं अवकाश (रिक्त स्थान) नहीं हो जाता। उसी प्रकार, विश्व का नाश हो जाने पर भी अविनाशी (भगवान राम) भग्न नहीं हो जाते। ८। यह जगत् माया का प्रपंच (मिथ्या

पामे स्वप्ने संपदा जेम, दरिद्रीना मनोरथ तेम;
वंध्या-सुवन ख-पुष्प कहेवाय, जेम शशक-शृंग मिथ्याय। १० ।
एम वाचारंभण जक्त, नथी आदि अंतमां सत्य;
मध्य मांहे स्फुर्युं छे असत्य, पण मिथ्या मायानुं कृत्य । ११ ।
सत्य आत्मा माटे एह, सत्य सरखुं भासे तेह,
आत्मामां आरोपण ए आळ, नथी विश्व साचुं त्रण काळ । १२ ।
साचुं कनक मिथ्या अलंकार, मिथ्या तरंग ने साचुं वार,
घट मिथ्या साची मृत्य, एम जोतां ए वस्तु अकृत्य । १३ ।
रघुनंदन अभेद एक, तेमां आरोप मिथ्या अनेक;
तेमां रावण आदे जगत, क्यां छे विचारी अव्यक्त । १४ ।
ब्रह्मानंद स्वरूपने जोतां, ब्रह्म भासे द्वैत बुध खोतां,
मिथ्या रावण राम ए सत्य, नावे समान कृत-अकृत्य । १५ ।

विस्तार मात्र) है; वह असत्य, अशाश्तत (वस्तुओं का) संकलन (मात्र) है। जिस प्रकार मृगमरीचिका में आयी हुई बाढ़ (मिथ्या होती है), बाँझ लता के फूल और अंकुर (व्यर्थ) होते हैं, उसी प्रकार इस माया-निर्मित जगत के पदार्थ व्यर्थ होते हैं । ९ । जिस प्रकार कोई स्वप्न में सम्पत्ति को प्राप्त हो जाए, तो उसकी वह सम्पत्ति मिथ्या होती है, उसी प्रकार दरिद्र व्यक्ति के मनोरथ भी व्यर्थ होते हैं । यह जगत् वैसे ही व्यर्थ है, जैसे वंध्या (स्त्री) का पुत्र और आकाश का फूल (अर्थहीन, मिथ्या) कहा जाता है (अर्थात् बाँझ के पुत्र पैदा होने और आकाश में फूल उत्पन्न होने की बात निरर्थक है), जैसे खरगोश के सींग मिथ्या होते हैं । १० । उसी प्रकार, यह जगत् वाणी से निर्मित उच्च ध्वनि (जैसा) है. (जो उत्पन्न होते ही नष्ट हो जाता है) । वह न आरम्भ में सत्य है, न अन्त में । मध्य में भी यह (जगत) असत्य (मिथ्या) रूप में स्फुरित है; पर वह भी माया की मिथ्या करनी (ही) है । ११ । (केवल परमात्मा स्वरूप) आत्मा सत्य है; इसलिए वह (जगत्) सत्य के समान आभासित होता रहता है । आत्मा में उसका आरोप करना मिथ्या है । यह विश्व तीनों काल सत्य नहीं है । १२ । सोना सत्य है; (परन्तु उससे निर्मित) आभूषण मिथ्या होते हैं । लहरें मिथ्या होती हैं, (परन्तु वे जिसमें निर्मित हैं वह)पानी सत्य है । घट मिथ्या हैं, (परन्तु जिससे वे निर्मित हैं, वह) मिट्टी सत्य है । इस प्रकार देखने पर वह वस्तु (कार्य, बात, जो तुमने कही है) करने योग्य नहीं है । १३ । रघुनन्दन अभेद्य तथा एक हैं । उनमें किये हुए अनेक आरोप मिथ्या हैं । अव्यक्त (ब्रह्म) का विचार करने पर उनमें रावण आदि जगत कहाँ है ? १४ । ब्रह्मस्वरूप को देखने पर

सच्चिदानंद पुरुष पुराणी, तेने जाणो मंदोदरी राणी,
अप तेज भू वायु आकाश, जोतां रूप ए मिथ्या भास । १६ ।
त्रिभुवन छे मायानुं चित्र, छे मिथ्या पण भास्युं विचित्र,
त्यां रावण कोण बिचारो, एम अद्वैत बुद्ध विचारो । १७ ।
जेम सकळ ब्रह्मांड अनेक, तेमां आकाश व्यापक एक,
त्यांहां घटाकाश ते शुं एह, ज्यां महदाकाश समूह । १८ ।
एम निर्विकार जे राम, त्यांहां द्वैत गोष्ठि कोण ठाम,
त्यारे मंदोदरी कहे सीता, प्रश्न पूछुं परम पुनीता । १९ ।
कहो एकदेशी छे राम, के व्यापक सर्व अकाम,
परिच्छिन्न के पूरण एह, टाळो माता मुज संदेह । २० ।
त्यारे जानकी बोल्यां वचन, सुण मयतनया पावन,
छे सर्वव्यापक रघुराय, पण अद्वैत बुद्ध जणाय । २१ ।

ब्रह्मानन्द अनुभव होता है, जब कि बुद्धि खोकर देखने पर ब्रह्म द्वैत स्वरूप आभासित होता है। वस्तुतः रावण मिथ्या है और यह (ब्रह्मस्वरूप) राम सत्य है। कृत्य और अकृत्य— स्वीकार करने योग्य और अयोग्य दोनों समान नहीं हो सकते । १५ । सच्चिदानन्द ब्रह्म (राम) पुराण-पुरुष हैं। हे रानी मन्दोदरी, उन्हें जान लो। जल, तेज, पृथ्वी, वायु और आकाश— इन पंच महातत्त्वों के बने रूप को देखने पर समझ में आता है कि वह मिथ्या आभास (मात्र) है। १६ । त्रिभुवन माया द्वारा निर्मित चित्र है। वह है तो मिथ्या, परन्तु वह विचित्र आभासित होता है। वहाँ बेचारा रावण कौन है? इस प्रकार अद्वैत-बुद्धि से विचार करो। १७ । जिस प्रकार सकल ब्रह्माण्ड अनेक-रूप है, उसमें आकाश ही एकमात्र (सर्व-) व्यापक है, उसी प्रकार राम चराचर ब्रह्माण्ड में व्याप्त हैं। जहाँ महत् आकाश समूह रूप में प्रतिबिम्बित दिखायी देता है, वहाँ घट में प्रतिबिम्बित आकाश क्या है? १८ । उस प्रकार, जो राम निर्विकार हैं, वहाँ (उनमें) किस स्थान पर द्वैतभाव की बात हो पाएगी?' तब मन्दोदरी बोली, 'हे परम पुनीता सीता, मैं एक प्रश्न पूछती हूँ। १९ । यह कह दो कि राम एकदेशी हैं, अथवा वे निष्काम रूप में सबके लिए व्यापक हैं? वे परिछिन्न हैं अथवा पूर्ण हैं? हे माता, मेरे इस सन्देह का निराकरण कर दो।' २० । तब जानकी ने यह बात कही— 'हे पावन मय-तनया (मन्दोदरी), सुनो। रघुराज सर्वव्यापक हैं; परन्तु उनका वह रूप अद्वैत बुद्धि से ही जाना जा पाता है। २१ । जिसे सच्चे

जेने सद्‌गुरु साचा मळे, द्वैतवासना तेनी टळे,
ज्यारे विलय त्रिपुटी पामी, ज्यां वेदनी वाणी विरामी । २२ ।
ज्यां नहि ध्येय ध्याता ध्यान, नहि ज्ञेय ज्ञाता ने ज्ञान,
वामी द्वैतभावनी सुरता, नहि क्रिया करण ने करता । २३ ।
त्यांहां एक अखंड छे राम, सर्वव्यापक पूरणकाम,
त्यां रावण कोण अनिता ? त्यांह कोण मंदोदरी सीता ? २४ ।
दृष्ट श्रुत ए सर्वे नाश, जाणो एक राम अविनाश,
जे छे शाश्वत वस्तु वेद, अज्ञाने तेमां आरोप्या भेद । २५ ।
रज्जुसर्पनी भ्रान्ति तास, जेम शुक्तिमां रजत प्रकाश,
शाखाहीन विटप कहेवाय, निशाए तनो चोर जणाय । २६ ।
एम मिथ्या जगतनो भास, आत्मा मांहे आरोपे तास,
अध्यारोप तणो अपवाद, करीने जुओ मूकी प्रमाद । २७ ।
माटे तजो ए मिथ्या भास, एकात्मा जुओ पूर्ण प्रकाश,
हे मयकन्या गुणवान, विचारो थईने सावधान । २८ ।

सद्‌गुरु मिलते हैं, उसका द्वैत भाव टल जाता है । जहाँ त्रिपुटी विलय को प्राप्त हो जाती है, जहाँ वेदों की वाणी विराम को प्राप्त हो जाती है, जहाँ ध्येय, ध्याता और ध्यान (का अन्तर) नहीं रहता, जहाँ ज्ञेय, ज्ञाता और ज्ञान (का अन्तर) नहीं रहता, जहाँ द्वैत भाव का भान कम हो जाता है और कृत्य, करनी तथा कर्ता (का अन्तर) नहीं रहता, वहाँ एकमेव, अखण्ड, सर्वव्यापक, पूर्णकाम राम होते हैं। वहाँ रावण कौन अन्य है ? वहाँ मन्दोदरी और सीता कौन है ? २२-२४ । जो देखा जाता है, जो सुना जाता है, वह सब नाशवान है । एकमात्र राम को अविनाशी समझ लो । समझो कि जो वस्तु (ब्रह्म) शाश्वत है, उसमें अज्ञान से भेद अर्थात् भिन्न-भिन्न रूप आरोपित हैं । २५ । जिस प्रकार रज्जु (रस्सी के स्थान) में सर्प (होने) की भ्रान्ति हो जाती है (रज्जु को देखने पर वह साँप जान पड़ती है), जैसे सीपी में चाँदी प्रकट रूप में दिखायी देती है, जैसे जिसे शाखाहीन पेड़ कहते हैं, उसे रात में देखने पर वह चोर जान पड़ता है, (वस्तुतः वहाँ साँप नहीं है, चाँदी नहीं है, चोर नहीं हैं, फिर भी वैसा प्रतीत होता है) उसी प्रकार जगत् का भास (दिखायी देना) मिथ्या है; वह तो (परमात्मा-स्वरूप) आत्मा में आरोपित (मात्र) है । उस अध्यारोप का अपवाद (खण्डन) करके गलती को छोड़कर देखो । २६-२७ । इसलिए इस मिथ्या भास को (सच्चा मानना) छोड़ दो और एकमेव (परम-) आत्मा को पूर्ण प्रकट (रूप में सर्वत्र) देख लो । हे गुणवती

दृष्टि अद्वय रूडे प्रकार, जुओ वस्तु छे निर्विकार,
नथी कहेवा सांभळवानुं त्यांहे, छे सर्वनो अवधि ज्यांहे। २९।
तेने कहीए आत्माराम, एक अभेद पूरणकाम,
जे ए रूपमां पाम्यो तदात्म, तेने कहीए समाधि आत्म। ३०।
त्यां मन वाणी लय पामी, त्रिअवस्था वृत्ति विरामी,
रह्यो कैवल्य ज्ञान स्वरूप, ए पक्षे नथी रावण भूप। ३१।
हावे राणी सुणो धरी लक्ष, वळी कहुं एक बीजो पक्ष,
आदि ब्रह्म एक अविनाश, तेना जीव थया चिदाभास। ३२।
ज्यम जळमां सवितांबिब, तेनुं नाम धर्युं प्रतिबिंब,
एम मायामां ईश्वर केरुं, प्रतिबिंब पड्युं अति नेरुं। ३३।
थया अंश ईश्वरना जीव, माया पक्षी अज्ञानी अतीव,
नव जाणे हरिनुं रूप, पड्या मोह विषयने कूप। ३४।
करमे करी वाध्यां कर्म, पछे भूल्यां पोतानो धर्म,
तेणे जन्ममरण संसार, भोगवे दुःख वारंवार। ३५।

मयकन्या, सावधान होकर इसका विचार करो। २८। भली भाँति अद्वैत दृष्टि से देखो, तो (दिखायी देगा कि ब्रह्म नामक) वस्तु निर्विकार है। वहाँ कहने-सुनाने के लिए कुछ भी नहीं है, जहाँ सबकी अवधि (समाप्ति) है। २९। उसे एक, अभेद्य, पूर्णकाम आत्माराम कहना चाहिए। जो इस रूप में तदात्मता को प्राप्त हो गया, उसे आत्मा (जीव) की समाधि (अवस्था) कहना चाहिए। ३०। वहाँ (उस समाधि अवस्था में) मन और वाणी विलय को प्राप्त हो जाती है, त्रि-अवस्थाएँ और वृत्तियाँ विराम को प्राप्त हो जाती हैं। समझो कि ऐसी दशा में (व्यक्ति) कैवल्य ज्ञान-स्वरूप रह गया। इस पक्ष में (इस दृष्टि से) राजा रावण (का कोई अस्तित्व) नहीं रह जाता। ३१। हे रानी, अब ध्यान देकर सुन लो। इसके अतिरिक्त, मैं एक दूसरा पक्ष कहती हूँ। आदि ब्रह्म एक और अविनाशी है। उसके (उससे) चिदाभास स्वरूप जीव हो गये। ३२। जिस प्रकार पानी में सूर्य के बिम्ब (आभासित) होते हैं और उनका नाम प्रतिबिम्ब धारण किया गया— माना गया, उसी प्रकार, माया में ईश्वर का बड़ा न्यारा प्रतिबिम्ब पड़ गया। ३३। (वह जीवात्मा कहाता है। इस प्रकार) ईश्वर के अंश 'जीव' हो गये; वे माया के पक्ष में अतीव अज्ञान हो गये। वे हरि (भगवान) के रूप को नहीं जानते। वे मोह तथा विषय (-सुख की लालसा) के कुएँ में गिरे हुए हैं। ३४। कर्म से कर्म बढ़ते गये और वे अपने धर्म को भूल गये। उसके कारण संसार में उनका

कंई संचित पूरवनुं पुन्य, मळे संत संगत पावन,
हरिकीर्तन श्रवण कथाय, करे निशदिन संतसेवाय। ३६।
त्यारे समजे सारासार, मुमक्षु ते थाय निरधार,
पछी सद्गुरु शरणे जाय, त्यारे भक्त विवेकी थाय। ३७।
भक्ति करतां हरिने पामे, त्यारे जन्ममरण दुःख वामे,
ज्यारे श्रीहरि करुणा आणे, त्यारे जीव हरिने जाणे। ३८।
बाकी एनुं नथी बळ लेश, जीव अज्ञानी माया वेश,
जीव कामी ने अल्पज्ञ, प्रभु निष्कामी सर्वज्ञ। ३९।
जीव अनेक ने परतंत्र, एक ईश्वर आप स्वतंत्र,
विकारी जीव कर्मना कर्ता, ईश्वर फळदाता ने भर्ता। ४०।
पंच महाभूत जीवनी देह, सच्चिदानंद विग्रह एह,
जीवने दुःख क्लेश अपार, हरि सुख-सिंधु रहित-विकार। ४१।
जीवने जन्ममरण जमदंड, काळना काळ ईश अखंड,
जीवथी न सरे कंई अर्थ, ईश कर्तुं-अकर्तुं समर्थ। ४२।

जन्म और मरण हो जाता है और बारबार वे दुःख का भोग करते रहते हैं। ३५। कुछ संचित पूर्वपुण्य से किसी जीव को पावन सत्संगति मिलती है। उससे वह रात-दिन हरि का कीर्तन और हरि-कथा का श्रवण तथा सन्तों की सेवा करता है। ३६। तब उसकी समझ में सार-असार आ जाता है। वह व्यक्ति (तब) निश्चय ही मुमुक्षु हो जाता है। फिर वह सद्गुरु की शरण में जाता है, तब वह भक्त विवेकवान हो जाता है। ३७। (मनुष्य) भक्ति करने पर हरि, अर्थात् भगवान को प्राप्त हो जाता है; तब (उसके) जीव के जन्म-मरण का दुःख घट जाता है। जब श्रीहरि करुणा करते हैं, तब जीव हरि (भगवान) को जान पाता है। ३८। शेष रूप में (अन्यथा), उसका लेश-भर भी बल नहीं है; (क्योंकि) जीव अज्ञान रहते हुए माया के वश में रहता है। जीव कामी तथा अल्पज्ञ होता है; (जब कि) प्रभु निष्काम तथा सर्वज्ञ होता है। ३९। जीव अनेक और परतंत्र— पराधीन होते हैं, तो ईश्वर एक तथा स्वयं स्वतन्त्र होता है, जीव विकारी, (अतएव) कर्मो का कर्त्ता होता है, तो ईश्वर (कर्मों के) फल का दाता एवं भर्ता (सबका भरण-पोषण करनेवाला) होता है। ४०। जीव की देह तो (पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश जैसे) पंच महाभूतों की बनी हुई होती है, (जब कि) सच्चिदानन्द (प्रभु) उनका विग्रह होता है। जीव के दुःख और क्लेश अपार होते हैं, तो प्रभु सुख का सागर होता है तथा विकार-रहित होता है। ४१। जीव के जन्म

माटे जीव ने श्रीभगवान, कहो ते क्यम आवे समान ?
ए बे पक्ष करी अभिराम, सम नावे रावण ने राम। ४३।
आदि अंत सर्वनो जेह, एक ईश्वर कहीए तेह,
हे मयकन्या प्रत्यक्ष, करो एह स्वरूपनो लक्ष। ४४।
एवां जक्तमातानां वचन, ते मंदोदरीए धर्यां मन,
थई ब्रह्मानंदमां मग्न, लागी स्वरूप विषे ए लग्न। ४५।
थयुं बंध बोलवुं त्यारे, स्थिति थई स्वरूपमां त्यारे,
ते आनंद अंतरमां ठारी, मग्न थई मयदैत्यकुमारी। ४६।
सावधान थईने जागी, पछे सीताने चरणे लागी,
थई गद्‌गद कहे छे राणी, हे जक्तमाता कल्याणी। ४७।
मारो संशय निवृत्त कीधो, ब्रह्मानंदनो लहावो दीधो,
ते दिवस घडीने धन्य, थाय सत्संग पावन। ४८।

और अन्त होता है तथा उसे यम द्वारा दण्ड दिया जाता है, तो ईश्वर काल का भी काल और अखण्ड होता है। जीव से कोई भी अर्थ पूर्ण नहीं होता, तो ईश्वर कर्तुमकर्तुं समर्थ (अर्थात् कोई बात करने तथा उसे नष्ट करने में समर्थ) होता है। ४२। इसलिए कह दो, जीव और श्रीभगवान (दोनों एक दूसरे के) समान कैसे हो सकते हैं ? इन दो सुन्दर पक्षों (वैचारिक पहलुओं) के कारण रावण और राम समान नहीं हो सकते। ४३। जो सबके आदि और अन्त (के कारण) हैं, उन्हें एकमात्र ईश्वर कहना चाहिए। हे मयकन्या मन्दोदरी, उस भगवान के स्वरूप को प्रत्यक्ष ध्यान से देखो।' ४४।

जगन्माता सीता के ऐसे वचनों को मन्दोदरी ने मन में रखा। वह ब्रह्मानन्द में मग्न हो गयी। वह (भगवद्-) स्वरूप में एकाग्र चित्त से संलग्न हो गयी। ४५। जब उसकी स्थिति (भगवत्-) स्वरूप में (लीन) हो गयी, तब उसका बोलना बन्द हो गया। मयदैत्य की वह कन्या (मन्दोदरी) उस आनन्द को अन्तःकरण में धारण करते हुए मग्न हो गयी। ४६। (कुछ समय पश्चात्) वह सावधान होकर (मानो) जग गयी; फिर वह सीता के पाँव लगी। गद्‌गद होकर (मन्दोदरी) रानी बोली— 'हे कल्याणकारिणी जगन्माता। ४७। तुमने मेरे संशय का निराकरण कर दिया और ब्रह्मानन्द का उपभोग (मुझे) करा दिया। वह दिवस तथा घड़ी धन्य है, जब (किसी को) पावन सत्संग (प्राप्त) हो जाता है। ४८। आत्म (-ज्ञान-) विचार एक ऐसा विचार है, जिसमें

आत्मविचार जेमां एक, थाय सारासार विवेक,
बीजो लाभ नथी ए समान, जेथी टळे सकळ अज्ञान । ४९ ।
करी प्रदक्षिणा पाये लागी, पछें सीतानी आज्ञा मागी,
वैदेहीने मान्यां गुरुरूप, जेथी पामी ज्ञान अनुप । ५० ।
पछे चाली मंदोदरी भाम, प्रवेशी लंकामां निजधाम,
दशानन बेठो तो ज्यांहे, आवी राणी मंदोदरी त्यांहे । ५१ ।

वलण (तर्ज़ वदलकर)

त्यां आवी मंदोदरी, ज्यां बेठो रावणराय,
शिखामण दे छे स्वामीने, कर जोडी लागी पाय । ५२ ।

*　　*　　*

सार-असार (विवेक) उत्पन्न हो जाता है। उसके समान कोई दूसरा लाभ नहीं है, जिससे समस्त अज्ञान दूर हो जाता है। ' ४९ । (इतना कहने के पश्चात्) सीता की परिक्रमा करके वह उसके पाँव लगी और फिर उसने उससे आज्ञा माँगी। उसने वैदेही को गुरु-रूप माना, जिससे वह परम अनुपम (आत्म-) ज्ञान को प्राप्त हो गयी । ५० । अनन्तर वह भामिनी—मन्दोदरी चल दी और लंका में अपने घर में प्रविष्ट हो गयी। जहाँ रावण बैठा हुआ था, वहाँ रानी मन्दोदरी आ गयी। ५१ ।

मन्दोदरी वहाँ आ गयी, जहाँ राजा रावण बैठा हुआ था। (फिर) वह हाथ जोड़कर उसके पाँव लगी और अपने स्वामी को सीख देने लगी। ५२ ।

*　　*　　*

अध्याय—४ (रावण-मंदोदरी-संवाद)

राग सोरठ

पछे मयकन्या वाणी वदे, स्वामी सुणो अभिप्राय,
में प्रश्न बहुविधना कर्या, पण नव चळ्यां सीताय । १ ।

अध्याय—४ (रावण-मंदोदरी-संवाद)

अनन्तर मयकन्या मन्दोदरी यह बात बोली— ' हे स्वामी मेरी बात सुनिए। मैंने बहुत प्रकार के प्रश्न किये, परन्तु सीता विचलित नहीं हुईं। १ । वे तो साक्षात् विश्व की माता है, जिनका नाम महालक्ष्मी है।

साक्षात् ए विश्वनी माता, महालक्ष्मी जेनुं नाम,
कुदृष्टि करी तमो ते उपर, नहि कुशळ थाये स्वाम । २ ।
तमे आदर्यो छे नाश कुळनो, धरी सती अभिलाख,
पण स्पर्श करतां अग्नि केरो, बळी थाशो राख । ३ ।
कोटी विद्यावंत मळी जो, करे अनेक उपाय,
कल्पांत काळे जानकी, वश तमारे नहि थाय । ४ ।
ते माटे हठ मूकीने राणा, तजो असद आचर्ण,
मन कर्म वचने कायाथी, जाओ रघुपतिने शर्ण । ५ ।
सीता सोंपो रामने जई, स्वामी लागो पाय,
करशे क्षमा अपराध सहु, छे दयाळु रघुराय । ६ ।
बाकी सीतानो अभिलाख ए छे, मरण केरी ठाम,
कुळनाश थाशे जशे लंका, माटे मूको माम । ७ ।
कर घालतां सर्पना मुखमां, डंश न करे केम,
पान करतां हळाहळनुं, मरण पामे जेम । ८ ।
एम ग्रहण करतां परस्त्रिया, परधन परसतां हाथ,
अनर्थ थाये अति घणो, ते सत्य मानो नाथ । ९ ।

आपने उनपर कुदृष्टि की है (उन्हें बुरी दृष्टि से देखा है), इसलिए हे स्वामी, (उससे) कुशल नहीं होगी । २ । आपने कुल का नाश आरम्भ किया (जब कि) आपने (ऐसी) सती की अभिलाषा की । परन्तु (उन सती रूपी) अग्नि को स्पर्श करते ही आप जलकर राख हो जाएँगे । ३ । यदि कोटि (-कोटि) विद्यावान् मिलकर अनेक उपाय कर लें, तो भी कल्पान्त काल में भी जानकी आपके वश नहीं हो जाएँगी । ४ । इसलिए हे राजा, हठ छोड़कर बुरा आचरण (दुराचरण) छोड़ दीजिए और मन-कर्म-वचन से, काया से रघुपति की शरण में जाइए । ५ । हे स्वामी, जाकर सीता राम को सौंप दीजिए और उनके पाँव लग जाइए । रघुराज दयालु हैं; (अतः) वे समस्त अपराध क्षमा करेंगे । ६ । अन्यथा, आपकी सीता सम्बन्धी अभिलाषा आपकी मृत्यु का स्थान हो जाएगी, कुल का नाश होगा, लंका (हाथ से निकल) जाएगी । इसलिए इस प्रण को छोड़ दीजिए । ७ । साँप के मुँह में हाथ डालने पर वह दंश कैसे नहीं करेगा ? जिस प्रकार हलाहल पीने पर मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं, उसी प्रकार पर-स्त्री को ग्रहण करने से (भोग करने से), हाथ से परधन को स्पर्श करने से, अति बड़ा अनर्थ हो जाता है । हे नाथ, इसे सत्य समझिए । ८-९ । देखिए, परम

जुओ परम साधु विभीषण, जोई तमारो अविवेक,
रघुवीर शरणे ते गया, त्यारे कर्यो राज्याभिषेक। १०।
ते जन्ममरणरहित थया, जेणे झाल्युं राघव शर्ण,
स्वामी तमो हाथे करी शीद, मागी ल्यो छो मर्ण ? ११।
पाषाण तार्या जळ विषे, एवा प्रतापी रघुवीर,
ते सुवेळुए ऊतर्या, साथे कपि रणधीर। १२।
क्यां करो स्वामी द्वेष तेनो, जे परमेश्वर परमाण ?
माटे राघवने जानकी सोंपी, शरण रहो निरवाण। १३।
एवां वचनरूपी पुष्पे पूज्यो, राणीए रावण भूप,
पछी हसी बोल्यो दशवदन, जे महा अभिमानी रूप। १४।
हे सुंदरी विधु कमळवदनी, कल्याणी सुण वात,
तुं वचन बोले जेटलां ते, सत्य छे साक्षात। १५।
पण वेर कर्युं में राम शुं ते, जाणे त्रणे लोक,
जो हावे मूकुं पुरुषारथ तो, जीव्युं थाये फोक। १६।
ए विभीषण शरणे गयो, थयो चिरंजीवी दास,
पण परिणामे पामशे, कल्पांत काळे नाश। १७।

साधु विभीषण आपके (ऐसे) अविवेक को देखकर रघुवीर की शरण में गये; तब उन्होंने उनका राज्याभिषेक किया। १०। जिन्होंने राघव राम की शरण पकड़ ली (अपना ली), वे जन्म-मरण-रहित, अर्थात् मुक्त हो गये। हे स्वामी, आपने अपने हाथों से मृत्यु क्यों माँग ली है। ११। रघुवीर ऐसे प्रतापी हैं कि उन्होंने पानी में पत्थर तैरा दिये। वे (इस समय) सुवेल पर उतर गये हैं। उनके साथ रणधीर कपि (भी) हैं।१२। हे स्वामी, जो परमेश्वर के समान है, उनसे द्वेष क्यों कर रहे हैं ? इसलिए राघव राम को जानकी सौंपकर उनकी शरण में निश्चय ही रह जाइए।' १३।

रानी ने राजा रावण का वचनरूपी फूलों से इस प्रकार पूजन किया। फिर दशानन, जो (मानो) महान अभिमान का रूप ही था, हँसकर बोला। १४। 'हे सुन्दरी, चंद्रमुखी, कमलवदनी, कल्याणी, (मेरी) बात तो सुनो। तुमने जितनी बातें कहीं, वे प्रत्यक्ष सत्य हैं। १५। परन्तु, मैंने राम से (जो) वैर किया है; उसे तीनों लोक जानते हैं। यदि अब मैं पुरुषार्थ छोड़ दूं, तो मेरा जीना व्यर्थ हो जाता है। १६। (तुमने कहा—) वह विभीषण राम की शरण में गया है, वह उसका चिरंजीवी सेवक हो गया है। परन्तु अन्त में वह (भी) कल्पान्त काल में नाश को प्राप्त हो

ते माटे देहनो लोभ, धरीने कायर थाये मन,
तेमां सार्थक शुं जीव्यातणुं ? नथी अमर कोईए जन। १८।
जीव्या कदापि कल्प लगी, पुरुषार्थ न कर्यो लेश,
तेनुं जीव्युं मिथ्या जाणजो, जेवो नाभि मध्ये केश। १९।
एक वार मरवुं ज्यारे त्यारे, सर्वने संसार,
पण पराक्रम कांई नव कर्युं, ते जीव्याने धिक्कार। २०।
जेणे जगत मांहे अवतरी, कर्यो जश पराक्रम नाम,
आ लोकमां थाए रूडी कीर्ति, परलोके शुभ ठाम। २१।
ए आदिपुरुष अवतर्या, छे रघुनंदन राम,
भूभार हरवा धर्मस्थापन, करवा सुरनां काम। २२।
छे हरि ईश्वर भगवान ए, हुं जाणुं छुं साक्षात,
पण हवे शरण जवाय नहि ते, सुण सती कहुं वात। २३।
करी मारी साथे कामना, युद्धनी श्रीरघुवीर,
सागर उपर सेतु बांधी, आव्या आणी तीर। २४।
ते पूरी न करुं कामना, रघुनाथ केरी आज,
जो सीता सोंपुं जई मळुं, तो जाय मारी लाज। २५।

जाएगा। १७। इसलिए, देह के प्रति लोभ धारण करने पर मन कायर हो जाता है। उसमें जीवन का क्या सार्थक है ? कोई भी मनुष्य अमर नहीं है। १८। कल्प (-भर) जीवित रहने पर भी किसी ने थोड़ा भी पुरुषार्थ नहीं किया हो, तो उसका जीवन वैसा ही व्यर्थ समझो, जैसा नाभि के अन्दर बाल का होना होता है। १९। इस संसार में सबको किसी-न-किसी समय एक बार मरना है; परन्तु (यदि) उन्होंने कोई भी पराक्रम नहीं किया हो तो उनके जीवन को धिक्कार है। २०। जिसने जगत में अवतरित होकर कीर्ति, पराक्रम और नाम को प्राप्त किया, इस लोक में तो उसकी सत्कीर्ति हो जाती है और परलोक में उसे शुभ (कल्याणकारी) स्थान प्राप्त हो जाता है। २१। रघुनन्दन राम (के रूप में) पृथ्वी का भार दूर करने के लिए, धर्म की स्थापना करने के लिए और देवों का काम सम्पन्न करने के लिए वे आदिपुरुष अवतरित हो गये हैं। २२। मैं जानता हूँ कि वे साक्षात् हरि भगवान ईश्वर हैं। परन्तु, हे सती, सुनो, मैं (यह) बात कहता हूँ कि मैं उनकी शरण में नहीं जाऊँगा। २३। श्रीरघुवीर ने मुझसे युद्ध करने की कामना की है। (इसलिए तो) वे सागर पर सेतु बनवाकर अन्य (इस) तट पर आ गये हैं। २४। मैं आज रघुनाथ की उस कामना को (यदि) पूर्ण न करूँ और यदि सीता उन्हें सौंप दूँ, जाकर

एणे मारी सारु श्रम कर्यो, मेळव्युं दळ युद्धकाम,
हावे पुरुषारथ शो माहरो, जो मळु जईने राम । २६ ।
माटे सुंदरी सुण निश्चे करवुं, युद्ध रघुवर साथ,
पामीश रूडी गति जे थशे, मरण हरिने हाथ । २७ ।
ए अमारा युद्ध तणो यश, विस्तार थाशे ज्यांहे,
मारा गुण पण राम साथे, गवाशे जगमांहे । २८ ।
माटे सीता नहि आपुं हवे, उद्यम करुं युद्ध काज,
रघुवीर केरी कामना मारे, पूरण करवी आज । २९ ।
एवां पुरुषारथनां वचन, रावणनां सुणी निरधार,
राणी मंदोदरी तणा मनमां, चिंता व्यापी अपार । ३० ।
भावि तणुं बळ विचारी, पछे गई निज भोवन,
त्यारे गोपुर उपर चढ्यो रावण, लेई सभाना जन । ३१ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

गोपुर उपर सभाजन, लेई चढ्यो रावणराय रे,
त्यां मानभंग थयो दशानन, तेनी कहुं कथाय रे । ३२ ।

* * *

उनसे मिलूँ, तो मेरी लाज (प्रतिष्ठा मिट) जाएगी । २५ । उन्होंने मेरे लिए परिश्रम किया है, युद्ध की कामना से सेना इकट्ठा की है । तो अब यदि मैं जाकर राम से मिलूँ, तो मेरा क्या पुरुषार्थ है ? २६ । इसलिए, हे सुन्दरी, सुन लो । मुझे रघुवीर राम से निश्चय ही युद्ध करना है । यदि हरि के हाथों मेरी मृत्यु हो जाए, तो मैं अच्छी गति को प्राप्त हो जाऊँगा । २७ । जहाँ हमारे इस युद्ध के यश का विस्तार (फैलाव) हो जाएगा, वहाँ (साथ ही) जगत में राम के (गुण के) साथ मेरे गुण भी गाये जाएँगे । २८ । इसलिए, मैं अब सीता नहीं (लौटा) दूँगा । मैं युद्ध के लिए परिश्रम करूँगा । मुझे आज रघुवीर की युद्ध-कामना पूर्ण करनी है ।' २९ । रावण के इस प्रकार के निर्धार-सहित (कहे हुए) वचन सुनकर रानी मन्दोदरी के मन में अपार चिन्ता व्याप्त हो गयी । ३० । होनी के बल का विचार करते हुए वह फिर अपने घर गयी । तब सभा-जनों को (साथ में) लेकर रावण गोपुर पर चढ़ गया । ३१ ।

राजा रावण सभा-जनों को लेकर गोपुर पर चढ़ गया । वहाँ रावण का मान भंग हो गया, (गिरधरदास कहते हैं—) मैं (अब) उसकी कथा कहूँगा । ३२ ।

* * *

अध्याय—५ (सुग्रीव-रावण-मल्लयुद्ध)

राग धन्याश्री

गोपुर चढियो असुर भूपाळ जी, जे छे ऊंचुं खट दश माळ जी,
त्यां जई बेठो सिंहासन जी, पासे ऊभा सेवकजन जी। १।

ढाळ

सेवकजन उपभोग आपे, रावणने तेणी वार,
अलंकार झळके अंगना, मणि हीराजडित अपार। २।
दशशीश उपर मुगट झळके, तेज सूरज समान,
ते तेजना चळकाटथी थई, दिशाओ दीप्तमान। ३।
त्यारे विभीषणे कह्युं रामने, कंईक करवा कौतुक काज,
पेलो गोपुर उपर चढ्यो रावण, जुओ तो महाराज। ४।
रघुपतिए दीठो दशानन, झळके मुगट दश शीश,
त्यारे सुवेळु गिरि पर चढ्या, सहु सभा लेई जुगदीश। ५।
एक हस्त झाल्यो विभीषणे, बीजो ग्रह्यो हनुमंत
ते शोभा जोवा लंकानी, चढ्या सुवेळु भगवंत। ६।

अध्याय—५ (सुग्रीव-रावण-मल्लयुद्ध)

जो सोलह खण्ड (मंजिल) ऊँचा था, उस गोपुर पर असुरों का राजा (रावण) चढ़ गया। वह वहाँ जाकर सिंहासन पर बैठ गया। उसके पास सेवकजन खड़े थे। १।

उस समय सेवकजन रावण को उपभोग (करने योग्य वस्तुएँ) देने लगे। उसके शरीर पर रत्नों तथा हीरों से जटित अनगिनत आभूषण चमक रहे थे। २। उसके दसों मस्तकों पर मुकुट जगमगा रहे थे। उनका तेज सूर्य (के तेज) के समान था। उस तेज की जगमगाहट से दिशाएँ दीप्तिमान हो गयी थीं। ३। तब विभीषण ने राम से कुछ लीला करने को कहा। (वह बोला—) 'महाराज, देखिए तो, वह गोपुर पर रावण चढ़ गया है।' ४। (तो) रघुपति ने रावण को देखा (उन्हें दिखायी दिया कि) उसके दसों मस्तकों पर मुकुट झलक रहे हैं। तब वे जगदीश श्रीराम समस्त सभा (-जनों) को लेकर सुवेल पर्वत पर चढ़ने लगे। ५। विभीषण ने उनका एक हाथ थाम लिया था, तो दूसरा हनुमान ने पकड़ लिया था। (उस समय) भगवान राम लंका की उस शोभा को देखने के लिए सुवेल पर चढ़ गये। ६। (तदनन्तर) उस (पर्वत-) शिखर पर सभा आयोजित करके रघुकुलचन्द्र (श्रीराम) बैठ

ते शिखर उपर सभा करीने, बेठा रघुकुळचंद्र,
ज्यम उदयाचळ पर बाळ सूरज, ऐरावत पर इंद्र। ७।
समाज लेई गिरिशिखर बेठा, जाणे देवसभाय,
सृष्टि सहित ज्यम -वेदनारायण, एम शोभे रघुराय। ८।
एम वानरवेष्टित राम बेठा, सुवेळुने शीश,
त्यारे शोभा जोई रावण तणी, चढी सुग्रीवने मन रीस। ९।
वंदी चरण रघुवीरना त्यांथी, कूदियो कपिराज,
झडप मारी रावण उपर, कर्युं मोटुं काज। १०।
ज्यम वज्र पडे पर्वतनी उपर, एम पड्यो कपिनाथ,
झडप मारी छत्र पाड्यां, मुगट बीजे हाथ। ११।
ज्यारे छत्र मुगट पाड्यां तदा, गभरायो घणुं दशशीश,
पछी सुग्रीवने एक पाटु मारी, चढी मनमां रीस। १२।
त्यारे सुग्रीवे एक मुष्टि मारी, रावणना रुदेमांहे,
एम एक घडी बे वीरने, मल्लयुद्ध थयुं छे त्यांहे। १३।
सोळ माळना गोपुर उपर, थाय भडाका अपार,
त्यारे लंकामांहे शोक पडियो, थयो हाहाकार। १४।

गये। (वे वैसे ही शोभायमान थे) जैसे उदयाचल पर बाल-सूर्य हो, (अथवा) ऐरावत पर इन्द्र (विराजमान) हो। ७। अपने (अनुगामी-) समाज को (साथ में) लिये हुए वे उस पर्वत-शिखर पर बैठ गये। मानो (वह सभा) देव-सभा ही हो। जैसे वेद-नारायण (वेद-स्वरूप परमेश्वर) सृष्टि-सहित (शोभायमान होते) हों, वैसे ही रघुराज राम (अपने अनुयायियों सहित) शोभायमान थे। ८। इस प्रकार सुवेल (पर्वत) के शिखर पर वानरों द्वारा घिरे हुए राम बैठे हुए थे। तब रावण की शोभा देखकर सुग्रीव के मन में क्रोध आ गया। ९। (फिर) उस कपिराज ने रघुवीर के चरणों को नमस्कार करके वहाँ से छलाँग लगा दी और रावण पर झपट पड़ते हुए उसने बड़ा काम किया। १०। जैसे वज्र पर्वत पर गिर पड़ता हो, वैसे वह कपिनाथ (सुग्रीव) कूद पड़ा। झपट्टा मारकर उसने (एक हाथ से) छत्र गिरा दिये और दूसरे हाथ से मुकुट गिरा डाले। ११। जब छत्र और मुकुट गिराये गये, तब दशानन बहुत घबड़ा उठा। फिर मन में क्रुद्ध होकर रावण ने सुग्रीव को एक लात जमा दी। १२। तब सुग्रीव ने रावण के हृदय पर एक घूँसा जमा दिया। इस प्रकार उन दो वीरों का एक घड़ी (-भर) वहाँ मल्ल-युद्ध चल रहा था। १३। (उस समय) सोलह खण्डोंवाले उस गोपुर पर असीम

एक एकने पदघाव मारे, करे मुष्टिप्रहार,
गोपुर उपर गर्जना थाय, होकारे होकार। १५।
त्यारे लोक कहे हनुमंत आव्यो, जेणे बाळी लंक,
पाछो वळी शुं विघ्न करशे ? कपि बळियो निःशंक। १६।
रावणे घाल्यो बाथमां, रूमापतिने त्यांहे,
सुग्रीव जाण्युं प्राण जाशे, अकळायो मनमांहे। १७।
पछे रावण केरा कर विषेथी, वछूट्यो जोई लाग,
त्यारे तरणि-तन नाठो तदा, ते मूकावीने माग। १८।
मृगेंद्र केरी झपटमांथी, जांबुक जेम पळाय,
घरधणी जागे चोर भागे, एम नाठो राय। १९।
ज्यम सर्पमुखथी मूषक छूटे, सुग्रीव नाठो एम,
सुवेळु पर आवियो, सुग्रीव कुशळ क्षेम। २०।
सहु कपिए दीठो रायने, त्यारे कर्यो जयजयकार,
श्रीरामे चांप्यो हृदय साथे, वखाण्यो बहु वार। २१।

धक्कमधक्का हो रहा था। तब लंका में शोक छा गया (लोग शोक करने लगे)और हाहाकार मच गया। १४। (रावण और सुग्रीव) एक-दूसरे को लातें जमा रहे थे, और मुष्टि-प्रहार कर रहे थे। गोपुर पर गर्जन हो रहा था। वे हुँकार पर हुँकार भर रहे थे। १५। तब लोगों ने कहा—'जिसने लंका को जलाया था, (वही) हनुमान (फिर से) आ गया है। फिर सिवा उसके वह (अब) क्या विघ्न (उत्पन्न) करेगा ? वह कपि तो बलवान और निःशंक है।' १६। वहाँ रावण ने रूमापति सुग्रीव को हाथों में लपेट लिया। सुग्रीव ने समझा कि (अब) प्राण (निकल) जाएँगे, तो वह मन में व्याकुल हो गया। १७। अनन्तर अवसर देखकर वह रावण के हाथों से छूट गया। तब वह सूर्य-पुत्र (सुग्रीव) रावण के मार्ग को टालकर भाग गया। १८। जिस प्रकार मृगेन्द्र (सिंह) की पकड़ में से सियार भाग जाता हो, गृहस्वामी के जाग उठने पर (वहाँ घर में आया हुआ) चोर भाग जाता हो, उस प्रकार (कपियों का वह) राजा (सुग्रीव) भाग गया। १९। जिस प्रकार साँप के मुख से चूहा छूट गया हो, उसी प्रकार (रावण की पकड़ से छूटकर) सुग्रीव भाग गया। (इस प्रकार) सुग्रीव कुशल-क्षेम-पूर्वक सुवेल पर आ गया। २०। जब समस्त कपियों ने (अपने) राजा को देखा, तब उन्होंने जय-जयकार किया। श्रीराम ने उसे हृदय से लगा लिया और अनेक बार उसकी सराहना की। २१। फिर सुवेल पर से उतरकर राम अपने (निवास-) स्थान

पछे सुवेळुथी ऊतरी, स्वस्थान आव्या राम,
जूथपति आदे सर्व बेठा, सभा करी ते ठाम। २२।

वलण (तर्ज बदलकर)

सभा करी ते ठाम बेठा, विचारे रघुवीर रे,
पछी विभीषणनी साथे बोल्या, गुणसागर रणधीर रे। २३।

* * *

(लौट) आये। (तदनन्तर) यूथपति आदि सब की सभा आयोजित करके वे उस स्थान पर बैठ गये। २२।

सभा का आयोजन करके उस स्थान पर रघुवीर राम बैठ गये और विचार करने लगे। फिर गुणसागर रणधीर राम विभीषण से बोले। २३।

* * *

अध्याय—६ (अंगद की दूतकर्म के लिए नियुक्ति और उसका रावण की सभा में आगमन)

राग विलावल

सभा करीने रघुपति बेठा, पासे लक्ष्मण हनुमंत,
सुग्रीव विभीषण पासे बेसाड्या, जे राजनीति गुणवंत। १।
श्रीरामचंद्र छे चतुरशिरोमणि, समर्थ राजाधिराज,
राजनीतिनो धर्मज पाळे, लोक तणा हित काज। २।
सुणो विभीषण जुद्ध कर्या विण, रावण ते नहि माने,
ए समजी सीता नहि आपे, माटे विलंब करीए शाने ?। ३।

अध्याय—६ (अंगद की दूतकर्म के लिए नियुक्ति और उसका रावण की सभा में आगमन)

सभा आयोजित करके रघुपति बैठ गये; पास ही लक्ष्मण और हनुमान थे। उन्होंने सुग्रीव और विभीषण को पास बैठा लिया, जो राजनीति में गुणवान, अर्थात् प्रवीण थे। १। श्रीरामचन्द्र चतुर-शिरोमणि थे, समर्थ राजाधिराज थे। वे लोगों के हित के हेतु राजनीति सम्बन्धी धर्म का पालन करते थे। २। (वे विभीषण से बोले—) 'हे विभीषण, सुनो। बिना युद्ध किये वह रावण तो नहीं मानेगा। यह समझकर (ही) वह सीता को नहीं (लौटा) दे रहा है। इसलिए विलम्ब क्यों करें ?' ३।

त्यारे विभीषण कहे महाराज सुणो, कंई धीरज मनमां धरीए,
शाम दाम दंड भेद करीने, शत्रुने वश करीए। ४ ।
शाम ते शत्रुने समजावी, वात न्यायनी कहीए,
कोई शाणा पासे शीखज कहावी, धीरज ग्रहीने रहीए। ५ ।
ते न माने तो दाम देखाडी, करीए लालचथी लाचार,
तो लोभ थकी वेर जाय वीसरी, वश वरते निरधार। ६ ।
ते दाम थकी वश थाय नहि तो, करीए कंई छळभेद,
ते मायाजाळमां मोह ज पामे, शत्रु वश थाय वेद। ७ ।
एम कशी वातमां केद न आवे, त्यारे दईए दंड,
ते माने नहि पछी विना जे, मूरख लंपट लंठ। ८ ।
एम समय प्रमाणे कारज साधवुं, सुणीए सीताकांत,
ज्यम मंत्र थकी वश थाय मणिधर, उदके अग्नि शांत। ९ ।
आत्मज्ञाने भवसागर तरीए, शमदामे जीतीए मन,
विवेके जीतीए काम क्रोध मोह, भक्तिबळे भगवन। १० ।

तब विभीषण ने कहा— ' महाराज, सुनिए। मन में कुछ धीरज तो धारण करें और साम, दाम, दण्ड तथा भेद के द्वारा शत्रु को वश में करें। ४। 'साम' के अनुसार उस शत्रु को समझाते-बुझाते हुए न्याय की बात कहें। किसी समझदार व्यक्ति द्वारा उसे सिखावन दिलायी जाए। अत: आप धीरज धारण करके रहें। ५। यदि इससे वह न मानता हो, तो उसे दाम (धन आदि) दिखाकर लालच से विवश करें। तब लोभ के कारण वैर को भूलकर वह निश्चय ही वश में आ जाएगा। ६। यदि वह दाम से वश में नहीं आ रहा हो, तो छल-कपट से कुछ भेद कर दें। उस माया-जाल में वह मोह ही को प्राप्त हो जाएगा। समझ लें कि (इससे) शत्रु वश में हो जाएगा। ७। इस प्रकार किसी भी प्रकार की बात से वह मोह को प्राप्त नहीं होता हो, तो उसे दण्ड दें। फिर जो बिना मार (दण्ड) के नहीं मानता हो, वह मूर्ख, लम्पट और लंठ (ही) होगा। ८। हे सीताकान्त, सुनिए, इस प्रकार समय के अनुसार कार्य सिद्ध करना है। जिस प्रकार मन्त्र से नाग वश में आ जाता है, पानी से आग शान्त हो जाती है (बुझ जाती है), जिस प्रकार आत्मज्ञान से संसाररूपी सागर को तैर जाएँ, शम और दम से मन को जीत लें, विवेक से काम, क्रोध, मोह (जैसे विकारों) को जीत लें, भक्ति के बल पर भगवान को प्राप्त कर लें, (उसी प्रकार शत्रु को साम, दाम, भेद, दण्ड से वश में कर लेना चाहिए)। ९-१०। जिस प्रकार पण्डित (विद्वान व्यक्ति) सभा (में

सभा जीते ज्यम पंडित ते, व्युत्पत्तिनुं बळ धरीने,
पाषाण नीचे कर आवे, ते काढीए कळे करीने । ११ ।
माटे शा भेद करीने समजावो, रावणने निरधार,
विष्टि करवा मोकलो जे होय, चतुरशिरोमणि सार । १२ ।
वायक एवां सुणी विभीषणनां, राघव थया प्रसन्न,
पछे सुग्रीव सामुं जोईने बोल्या, प्रेमे हेत-वचन । १३ ।
अरे सुग्रीव जुओ आपणा साथमां, होये चतुर गुणवंत,
तत्क्षण तेने खोळी काढो, जे जाणे कळा अनंत । १४ ।
लंकामां तेने मोकलीए, शिष्टाई करवा धीर,
एकलो जईने पाछो आवे, एवो छे को वीर ? । १५ ।
ज्यम गरुड एकलो अमृत लाव्यो, देव पमाड्या हार,
वळी गुरुपुत्र संजीवनी साधीने, गयो स्वर्ग मोझार । १६ ।
ज्यम हनुमंत सिंधु ओळंगीने, सीतानी सुध लाव्यो,
अनेक विघ्न टाळीने वाटे, ऋषिमुख उपर आव्यो । १७ ।

विपक्षियों) को व्युत्पत्ति के वल को धारण करके जीत लेता है, (जिस प्रकार) पत्थर के नीचे हाथ फँस जाए, तो कला (चतुराई) से उसे निकाल लेना चाहिए, (उस प्रकार बुद्धि-वल और चतुराई से शत्रु को जीत लेना चाहिए) । ११ । इसलिए रावण को निश्चय ही साम, भेद (आदि की नीति) से समझा दीजिए । (अतः) जो सुन्दर (प्रवीण) चतुर शिरोमणि हो, उसे मध्यस्थता करने को भेज दीजिए ।' १२ । विभीषण की ऐसी बातें सुनकर राम प्रसन्न हो गये । फिर सुग्रीव की ओर देखकर प्रेम-पूर्वक यह बात बोले । १३ । 'हे सुग्रीव, देखो तो, अपने साथ (जो) कोई चतुर तथा गुणवान हो, जो अनन्त कलाओं को जानता हो, उसे तत्क्षण (झट से) खोज निकालो । १४ । उसे धीर (पुरुष) को लंका में मध्यस्थता (दौत्य कर्म) करने के लिए हम भेज दें । अतः (देखो) जो अकेला जाकर पीछे (लौट) आ सके, ऐसा कोई वीर है ? १५ । जिस प्रकार गरुड़ अकेले अमृत ले आया और उसके द्वारा देव हार को प्राप्त कराये गये (हराये गये), इसके अतिरिक्त जिस प्रकार (देवों के) गुरु (बृहस्पति) का पुत्र (कच) संजीवनी विद्या को सिद्ध करके स्वर्ग में (लौट) गया, जिस प्रकार हनुमान समुद्र को पार करके सीता की खोज (करके ले आया), मार्ग में अनेक विघ्नों का निवारण करके ऋष्यमूक पर्वत पर (लौट आया), उस प्रकार जो रावण से मध्यस्थता करके तुरन्त इस स्थान पर (लौट) आ सके, ऐसा यदि कोई अपने साथ हो, तो इस समय उसे दिखा

एम विष्टि करी रावणनी साथे, तुरत आवे ठार,
आपणा साथमां होय एवो, तेने देखाडो आ वार । १८ ।
पछे सर्वे परस्पर जोवा लाग्या, वानर रहेता जेह,
त्यारे विभीषण दीठो वालीपुत्रने, अंगद बेठो तेह । १९ ।
ज्यम रत्नपरीक्षक खोळी काढे, भारे हळवुं नंग,
तेने जोईने विभीषण बोल्या, सांभळीए श्रीरंग । २० ।
अंगदने मोकलो सर्वथा, शिष्टाई करवा त्यांहे,
ए बळ लक्षण गुण संपूरण, छे जाणे नीतिमांहे । २१ ।
ज्यम नव ग्रहमां दिनकर तेजस्वी, शस्त्रमां सुदर्शन,
विषधरमां धरणीधर जेवो, खगमां हरिवाहन । २२ ।
एम वानरमांहे चतुर छे अंगद, निश्चे जाणो राम,
त्यारे विभीषणनां एवां वचन सांभळी, हरख्या पूरणकाम । २३ ।
पछे अंगदने आज्ञा करी पोते, ऊठ्यो तेणी वार,
रघुवीर सन्मुख कर जोडीने, वचन बोल्यो निरधार । २४ ।
मने रावण साथे विष्टि करवा, मोकलो छो ते ठाम,
प्रभु एमां ते शुं मुजने बताव्युं, भारे मोटुं काम ? । २५ ।

दो ।' १६-१७-१८ । फिर जो वानर (वहाँ) उपस्थित थे, वे सब परस्पर (एक दूसरे की ओर) देखने लगे । तब विभीषण ने बाली के पुत्र अंगद की ओर देखा । वह (वहाँ) बैठा हुआ था । १९ । जिस प्रकार रत्न-परीक्षक खोजकर भारी और बहुमोल हीरा निकालता है उस, प्रकार उसे देखकर विभीषण बोला— 'हे श्रीरंग, सुनिए । २० । शिष्टता-पूर्वक सब प्रकार से मध्यस्थता करने के लिए अंगद को वहाँ भेज दीजिए । वह बल, लक्षणों और गुणों से परिपूर्ण है और (दूत-) नीति का भी जानकार है । २१ । हे राम, यह निश्चय जानिए कि जिस प्रकार (चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र आदि) नौ ग्रहों में सूर्य (सर्वाधिक) तेजस्वी है, शस्त्रों में सुदर्शन (सर्वश्रेष्ठ) है, सर्पों में जैसा शेषनाग है, पक्षियों में गरुड़ है, उस प्रकार वानरों में अंगद (सर्वाधिक) चतुर है ।' तब विभीषण की ऐसी बातें सुनते ही पूर्णकाम राम आनन्दित हो गये । २२-२३ । फिर उन्होंने स्वयं अंगद को आदेश दिया, तो वह उस समय उठ गया और रघुवीर राम के सामने हाथ जोड़कर निश्चय-पूर्वक बोला । २४ । 'हे प्रभु, रावण से मध्यस्थता करने के लिए आप उस स्थान पर मुझे भेज रहे हैं । इसमें मुझे आपने कौन बड़ा भारी काम बताया है । २५ । महाराज,

महाराज रजा आपो तो बांधी लावुं, रावणने आंहे,
लंका उखेडी ऊंधी करीने, नाखुं सागर मांहे। २६।
त्यारे श्रीरघुवीर हसीने बोल्या, थई चित्त मांहे प्रसन्न,
रावण पासे विष्टि करवा, जा तुं वालीतन। २७।
जो माने रावण तो सारुं, कहेतां नीति विचार,
नहि तो जुद्ध करीने मारशुं, अंते ए निरधार। २८।
एवुं सांभळी अंगद चाल्यो, वंदी रघुपति पाय,
ओचिंतो लंकामां आव्यो, वालीपुत्र महाकाय। २९।
सभा करीने रावण बेठो, त्यां आव्यो बळवंत,
अंगदने जोई सहु सभा खळभळी, शुं आव्यो हनुमंत ? ३०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

हनुमंत जाणी भय पाम्या सर्वे, रावण डरप्यो मन रे,
सभास्तंभ पूंठे राखी अंगद, करी बेठो पूंछासन रे। ३१।

* * *

यदि आप मुझे अनुमति दें तो मैं रावण को बाँधकर यहाँ लाऊँगा, (अथवा) लंका को उखाड़कर औंधी करके सागर में फेंक दूँगा।' २६। तब चित्त में प्रसन्न होकर श्रीरघुवीर हँसते हुए बोले— 'हे वालीपुत्र, तुम रावण के पास मध्यस्थता (दूतकर्म) करने के लिए जाओ। २७। नीति-विचार कहने पर यदि रावण मान जाए तो ठीक है, नहीं तो अन्त में यह निश्चय है कि मैं युद्ध करके उसे मारूँगा।' २८। ऐसा सुनकर अंगद रघुपति के चरणों का वन्दन करके चल दिया। (वहाँ से) वह महाकाय बाली-पुत्र अंगद लंका में आ गया। २९। (जहाँ) रावण सभा आयोजित करके बैठा हुआ था, वहाँ बलवान अंगद आ गया। अंगद को देखकर समस्त सभा घबड़ा उठी। (उन्हें लगा—) क्या हनुमान आया है ? ३०।

उसे हनुमान समझकर सब भय को प्राप्त हो गये। रावण (भी) मन में डर गया। फिर सभा (-गृह के स्तम्भ) की ओर पीठ करके अंगद पुच्छासन बनाकर बैठ गया। ३१।

* * *

अध्याय—७ (रावण-अंगद-संवाद, अंगद का उपदेश रावण के प्रति)

राग आशावरी

रावण केरी सभा मध्ये, आव्यो वालीकुमार,
ते जोई सहु भय पामिया, करे मांहोमांहे विचार । १ ।
छत्र मुगट एके पाडियां, बाळ्युं नगर हनुमंत,
वळी आ को त्रीजो वानर आव्यो, दीसे छे बळवंत । २ ।
त्यारे अंगद कहे अल्या परजन आवे, मळवाने विख्यात,
ते सभा मूरख जाणजो, जे न पूछे आदर वात । ३ ।
एम कहीने रावण सन्मुख, बेठो वालीतन,
स्तंभ पृष्ठे राखीने कर्युं, गोळ पूंछासन । ४ ।
रावणना करतां ऊंचे आसन, बेठो थईने धीर,
तृणमात्र लेखवतो नथी, ए असुरने महावीर । ५ ।
त्यारे रावण हसीने बोलियो, कहे कपि तुं छे कोण ?
कोणे मोकल्यो ? तुं केम आव्यो ? सभामां निर्वाण । ६ ।
वालीसुवन कहे दशानन, मुज नाम अंगद आज,
हुं दूत श्रीरघुवीरनो, आव्यो विष्टि करवा काज । ७ ।

अध्याय—७ (रावण-अंगद संवाद, अंगद का उपदेश रावण के प्रति)

रावण की सभा में (जब) बालीकुमार अंगद आ गया, तो उसे देखकर सब भय को प्राप्त हो गये और वे आपस में विचार करने लगे । १ । एक (बानर) ने छत्रों और मुकुटों को गिराया था; हनुमान ने नगर को जला डाला था, फिर यह कौन तीसरा वानर आ गया है। यह भी बलवान दिखाई दे रहा है । २ । तब अंगद ने कहा— ‘अरे, कोई सुविख्यात पराया व्यक्ति मिलने के लिए आया हो, तो जो आदरपूर्वक बात नहीं पूछती हो, उस सभा को मूर्ख (लोगों की सभा) समझ लो । ’ ३ । ऐसा कहते हुए अंगद रावण के सामने बैठ गया । (सभागृह के) स्तम्भ को पीठ पीछे रखकर (उसकी ओर पीठ करके) उसने पूंछ का गोल आसन बना लिया । ४ । अपने उस आसन को रावण (के आसन) से ऊंचा कर लेने पर वह धैर्यपूर्वक बैठ गया । वह महावीर उस असुर को तिनके-भर भी नहीं गिन रहा था । ५ । तब हँसकर रावण बोला— ‘हे कपि, कह दे, तू कौन है ? तुझे किसने भेजा ? तू अन्त में इस सभा में कैसे आ गया ? ’ ६ । (इसपर) अंगद ने कहा, ‘हे दशानन, आज मेरा नाम अंगद है । मैं श्रीरघुवीर का दूत हूँ । मैं (यहाँ) मध्यस्थता करने के हेतु

हावे सीता आपी रामने, जो मळो लंकाराय,
मृत्यु तमारुं ऊगरे ने, राज निर्भय थाय। ८।
हे दशानन, आ देह पामी, वरते निर्मळ मन,
विस्तार पामे जगतमां जश, तेनुं जीव्युं धन्य। ९।
सद्बुद्धिए सदा विवेके, धरीए ते अंतरज्ञान,
सद्पुरुषनो संग करीए, टाळीए अज्ञान। १०।
नव कहीए कोईने दुष्ट वायक, न करीए हेलन,
सर्वेनुं रूडुं चिंतवीए, ज्यम सुखी होये जन। ११।
पराया गुणने वंदीए, वळी करीए पर उपकार,
आत्मा जोईने एक सहु, करीए सारासार विचार। १२।
काम क्रोध ने लोभ मत्सर, होय अंतर मांहे,
तेहने शत्रु जाणीए, टाळीए तत्क्षण त्यांहे। १३।
आ अशाश्वत देह जाणीने, टाळीए अशुभ आचर्ण,
हुं करता अभिमान मूकी, रहीए हरिने शर्ण। १४।
गुण दोषथी निर्बंध थईने, वरतीए संसार,
जळ विषे रहे छे कमळ पण, नव थाय स्पर्श लगार। १५।

आ गया हूँ। ७। हे लंकाराज, अब सीता राम को (लौटा) देकर यदि तुम (उनसे) मिल जाओ, तो तुम्हारी मृत्यु टल जाएगी और तुम्हारा राज्य निर्भय हो जाएगा। ८। हे दशानन, इस देह को प्राप्त होकर जो निर्मल मन से आचरण करता है, उसका यश जगत में विस्तार को प्राप्त हो जाता है; उसका जीवन धन्य होता है। ९। (इसलिए) सदा सद्बुद्धि और विवेक से मन में (सदसद् सम्बन्धी) ज्ञान धारण करें, सत्पुरुष की संगति करें और अज्ञान को टाल दें। १०। किसी से दुष्ट वचन (दुर्वचन) न कहें, किसी की अवहेलना (अनादर) न करें। सबके भले की कामना करें जिससे सब लोग सुखी हो जाएँ। ११। दूसरे के गुणों का वंदन करें (आदर करें); इसके अतिरिक्त परोपकार करें। समस्त (प्राणियों की) आत्मा को एक देखकर (जानकर) सार-असार विवेक करें। १२। (यदि) अन्तःकरण में काम, क्रोध, लोभ और मत्सर (जैसे विकार) हों, तो उन्हें शत्रु समझें और उन्हें वहीं हटा दें। १३। इस देह को अशाश्वत समझकर अशुभ आचरण को टाल दें। 'मैं कर्ता हूँ' ऐसे अभिमान को छोड़कर हरि की शरण में रहें। १४। गुण-दोष से मुक्त रहते हुए संसार में व्यवहार करें। कमल पानी में रहता तो है, फिर भी उसका उससे तनिक भी स्पर्श नहीं होता (उसी प्रकार संसार में रहते हुए

इंद्रियो नियमे राखीए, सत्कर्मथी निर्वाण,
भगवद्भजनमां योजना, मन तणी करीए जाण । १६ ।
रमीए आत्मारामममां, तजीए विषयनी आश,
प्रपंच मिथ्या मानीए, जे असद् जगदाभास । १७ ।
परनिंदा परहिंसा स्वपने, चिंतवीए नहि मन,
परदारा परधन विषे चित्त, नव राखीए राजन । १८ ।
सद्गुरु वचन विश्वास धरीए, राखीए सद्भाव,
सतसमागम नित सेवीए; भवसिंधु तरवा नाव । १९ ।
कलेश काळ दुःख आवे पण, नव मूकीए स्वधरम,
यथान्याये राज्य करीए, राखीए शम दम । २० ।
दया क्षमा उपरति शान्ति, भक्ति ज्ञान वैराग्य,
आनंद सद्विद्या समाधि, राखीए अनुराग । २१ ।
विद्या तन धन रूप यौवन, न करीए अभिमान,
काळे करीने भोग सर्वे, नाश थाय निदान । २२ ।
कोई समे महासुख पामीए, त्यारे गर्व न करीए वीर,
को समे दुःखदरिद्र आवे, मूकीए नहि धीर । २३ ।

भी सांसारिक गुण-दोषों से निर्लिप्त रहें) । १५ । (अपनी) इन्द्रियों को निश्चय ही सत्कर्म-पूर्वक वश में रखें । समझ लें कि मन की भगवद्भजन में योजना करें— मन को भगवद्भजन में लगाएँ । १६ । आत्माराम में (हृदय में स्थित भगवान में) रममाण रहें, विषय (-भोग) की आशा त्याग दें । जो असत्य (मिथ्या) और (केवल) जगत् का आभास है, उस संसार को मिथ्या मान लें । १७ । मन में परनिन्दा, परहिंसा का विचार स्वप्न (तक) में नहीं करें । हे राजा, पर-स्त्री और परधन में मन न (लगाये) रखें । १८ । सद्गुरु के वचन के प्रति विश्वास धारण करें, (उसके प्रति) मन में सद्भाव रखें । भवरूपी सागर को तैरकर (पार) जाने के हेतु सत्संग का नित्य सेवन करें— सत्संग करें । १९ । क्लेश, दुःख, मृत्यु आ जाए, तो भी स्वधर्म का त्याग न करें । यथान्याय (न्यायपूर्वक) राज्य करें, शम (शान्ति) और दम (इन्द्रिय-दमन) रख लें । २० । दया, क्षमा, उपरति, शान्ति, भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, (सात्विक) आनन्द, सद्विद्या, समाधि, अनुराग का अंगीकार कर रखें । २१ । विद्या, शरीर, धन, रूप, यौवन के विषय में अभिमान न करें । काल के अनुसार सब भोग (भोग्य-पदार्थ) अन्त में नष्ट हो जाते हैं । २२ । हे भाई, किसी समय महासुख को प्राप्त हो जाएँ, (तो भी) तब गर्व न करें (और) किसी

ते माटे हो लंकापति, मुज वचन मानो सत्य,
रघुनाथ साथे करो प्रीति, ए ज साची मत्य । २४ ।
छे राम केवळ गुणनिधि, वळी दीनवत्सल एह,
गुणदोष शरणागत तणा, मन लावशे नहि तेह । २५ ।
माटे करो मैत्री सर्व भावे, धारी मनमां धीर,
एकबाण ने एकपत्नी व्रत, एकवचन श्रीरघुवीर । २६ ।
ते माटे आपो जानकी, करो राम साथे प्रीति,
निरभय थकी वरतो पछे, भोगवो राज अभीत । २७ ।
एवां वचन सुणी अंगद तणां, बोलियो रावणराय,
अल्या कपि हुं सर्वज्ञ छुं, मने शी करे शिक्षाय ? । २८ ।
घणी रामनी मोटप करी, तुं वखाणे शुं कीश,
पण त्रिभुवनमां मुज समो, कोण छे बळियो ईश ? २९ ।
में देव जीती वश कर्या, वळी लोकपति आधीन,
हुं रामने क्यम नमुं हावे ? पामे प्रभुता हीन । ३० ।
ए रामथी शुं थवानुं छे ? शो करशो उपकार ?
निज करमथी सुख दुःख सर्वे, भोगवे संसार । ३१ ।

समय दुःख तथा दरिद्रता आ जाए, तो धीरज न छोड़ें । २३ । इसलिए, हे लंकापति, मेरी बात तो सत्य मान लो । रघुनाथ राम से प्रेम करो । यही सच्ची बुद्धि (-संगत बात) है । २४ । राम तो केवल गुण-निधि हैं, फिर वे दीनों के प्रति वात्सल्य-युक्त (दीन-वत्सल) हैं, वे शरणागत (व्यक्ति) के गुण-दोष मन में नहीं रखते । २५ । इसलिए मन में धीरज धारण करके उनसे सर्वभाव से मित्रता करो । श्रीरघुवीर एकबाणी, एकपत्नी व्रती और एकवचनी हैं । २६ । इसलिए जानकी लौटा दो और राम से प्रेम करो । अनन्तर निर्भयता से व्यवहार करो और निर्भय रहकर राज्यका भोग करो । ' २७ ।

अंगद के ऐसे वचन सुनकर राजा रावण बोला— ' अरे कपि, मैं सर्वज्ञ हूँ; मुझे तू कैसी सिखावन दे रहा है ? २८ । हे मर्कट, राम की बहुत बड़ाई करते हुए तू क्या प्रशंसा कर रहा है ? परन्तु त्रिभुवन में मेरे समान (दूसरा) कौन बलवान ईश्वर (ऐश्वर्यधारी) है ? २९ । मैंने देवों को जीतकर (उन्हें) अपने वश में कर लिया, फिर लोकपालों को अधीन कर लिया । मैं राम को अब कैसे नमस्कार करूँ ? उससे मेरी प्रभुता हीनता को प्राप्त हो जाएगी । ३० । इस राम से क्या होनेवाला है ? वह क्या उपकार कर पाएगा ? संसार तो अपने-अपने कर्म के अनुसार समस्त सुखों या दुखों का भोग करता है । ३१ । तू कह रहा है कि वह

तुं कहेशे ए भगवान छे, पण अमारे शुं काम ?
अमो उपासक छुं शिव तणा, क्यम नमुं जईने राम ? ३२ ।
में वेर बांध्युं राम साथे, लाव्यो सीता नार,
हावे जईने हुं मळुं तो, करे सहु धिक्कार । ३३ ।
कहेशे डर्यो ए रामथी, जई मळ्यो रावणराय,
जो पश्चिम ऊगे सूर्य पण कपि, काम ए नव थाय । ३४ ।
ज्यम दंत गजना नीकळ्या ते, न चोंटे ठरी ठाम,
में वेर कीधुं राम साथे, शीश साटे काम । ३५ ।
ज्यम कृपण धन भोरिंग मणि, सिंह मूछ केरो बाळ,
ते जीवतां कर नव चढे, एम जाणजे कपिबाळ । ३६ ।
जई कहे तारा रामने, करगरे नहि थाय काम,
हुं जीवतां सीता तणुं मुख, देखशे नहि राम । ३७ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

एम नहि देखे मुख सीतानुं, हुं जीवतां निरधार रे,
एवां वचन सुणी रावण तणां, पछे बोल्यो वालीकुमार रे । ३८ ।

भगवान हैं, परन्तु वह हमारे किस काम का ? मैं तो शिवजी का उपासक हूँ; (फिर) मैं जाकर राम को नमस्कार क्यों करूँ ? ३२ । मैंने राम से बैर ठान लिया है और मै उसकी स्त्री सीता को लाया हूँ । अब यदि मैं जाकर उनसे मिलूँ, तो सब मेरा धिक्कार करेंगे । ३३ । (संसार यह) कहेगा कि राजा रावण राम से डरकर (उससे) मिल गया । रे कपि, यदि सूर्य पश्चिम में निकले, तो भी यह काम (मुझसे) नहीं होगा । ३४ । जिस प्रकार हाथी के दाँत निकल आये हों, तो फिर वह किसी एक स्थान पर चिपका नहीं रहता (वह पराक्रम करता फिरता है) उस प्रकार (शक्ति-सम्पन्न होकर) मैंने (जब कि) राम से बैर कर लिया है (मोल लिया है), तो मैं अपने मस्तक से ही सौदा तय करूँगा । ३५ । रे बन्दर के बच्चे, ऐसा समझ ले कि जीवित रहते हुए कृपण का धन, सर्प की मणि, सिंह की मूंछ का बाल किसी के हाथ नहीं लग पाता, (वैसे ही मेरे जीते जी सीता किसी को प्राप्त नहीं होगी) । ३६ । तू जाकर अपने राम से कह दे कि दीनतापूर्वक गिड़गिड़ाहट से विनती करने से काम नहीं होगा । मेरे जीते जी राम सीता का मुख (तक) देख नहीं पाएगा । ३७ ।

'मेरे जीवित रहते हुए (राम) निश्चय ही सीता का इस प्रकार मुख (तक) देख नहीं पाएगा ।' रावण की ऐसी बातें सुनने के पश्चात् वाली-कुमार अंगद बोला । ३८ ।

अध्याय—८ (रावण-अंगद-सम्वाद; अंगद द्वारा राम का महिमा-गान)

राग धन्याश्री

अंगद बोल्यो सुण राजन जी, आवडो गर्व करे शुं मन जी ?
नथी ओळखतो रामनुं रूप जी, जोने विचारी अंतरमां भूप जी। १ ।

ढाळ

जो विचारी मन भूपति, ए मनुष्य न होये राम,
एवुं पराक्रम नव थाय, बीजे ईश्वर केरुं काम। २ ।
तुं जेनुं आराधन करे, जे सदाशिव भगवान,
ते पण भजे छे रामने, नित्ये धरे छे ध्यान। ३ ।
ए तारा स्वामी तणा स्वामी, जो विचारी पेर,
माटे स्वामीद्रोही थईश तुं, करी राम साथे वेर। ४ ।
इंद्र ब्रह्मा लोकपति, जेनी माने छे आज्ञाय,
जेना कटाक्षे काळ कंपे, ते छे ए रघुराय। ५ ।
शिवसनकादिक शेष जेनुं, धरे जोगी ध्यान,
गुण गाय निर्मळ वेद जेना, ते स्वयं भगवान। ६ ।
ते रामशुं तुं मैत्री कर, हे दशानन मति मूढ,
जे कर्तुं अकर्तुं करवा समर्थ, गति जेनी गूढ। ७ ।

अध्याय—८ (रावण-अंगद-सम्वाद; अंगद द्वारा राम का महिमा-गान)

अंगद बोला, 'हे राजा, सुन ले। तू अपने मन में इतना गर्व क्या कर रहा है ? तू राम के रूप को नहीं पहचान रहा है। हे राजा, अन्तःकरण में विचार करके तो देख। १।

हे राजा, (यदि) मन में विचार करके देख, तो (समझ में आएगा कि), ये राम मनुष्य नहीं हैं। ऐसा पराक्रम किसी दूसरे से नहीं होगा—यह तो ईश्वर की (ही) करनी है। २। तू जिनकी आराधना करता है, जो वे सदाशिव भगवान है, वे भी राम की भक्ति करते हैं, वे नित्य उनका ध्यान करते हैं। ३। इस बात को विचार करके देख; ये तेरे स्वामी के स्वामी हैं। इसलिए राम से बैर करके तू स्वामी-द्रोही हो जाएगा। ४। जिसकी आज्ञा इन्द्र, ब्रह्मा तथा लोकपाल मानते हैं, जिसके कटाक्ष से काल (तक) काँप उठता है, वह ये (ही) रघुराज राम हैं। ५। शिवजी, सनत्कुमार आदि (ऋषिवर), शेष तथा योगी जिनका ध्यान करते हैं, जिनके निर्मल गुणों का गान वेद करते रहते हैं, वे (ही ये) स्वयं भगवान हैं। ६। रे मूढ़-मति दशानन, उन राम से तू मित्रता कर, जो

उत्पत्ति पालन सृष्टिनुं, संहार करता जेह,
सर्वना कारण ए अकारण, राम कहीए तेह। ८।
ते भक्त माटे अवतर्या, उतारवा भूभार,
धर्मनुं स्थापन करवा, दुष्टनो संहार। ९।
अपराध कोटी करी प्राणी, शरण आवे जेह,
तेना दोष सर्वे दूर करीने, अभय आपे एह। १०।
ते प्राणीने करे पोतानो, एवा शरणवत्सल नाथ,
कल्याण थशे दशानन, कर मैत्री रघुवीर साथ। ११।
त्यारे रावण कहे रे अल्या मर्कट, छानो रहे निरधार,
तारा रामने हुं जाणुं छुं, शुं वखाणे बहु वार? १२।
अल्या बंदीजन थई रामनो, वश वखाणे ज्यम भाट,
कीर्ति करवा नीकळ्यो शुं? बोले बारे वाट। १३।
हुं जाणुं छुं एनुं पराक्रम, ए शुं करशे काज?
जेणे वानरशुं मैत्री करी, ए न होये क्षत्रीराज। १४।
वनमांहे वनफळ आहार करीने, थयो निर्बळ देह,
वळी वानरसेन्या मेळवी, शुं युद्ध करशे एह? १५।

कर्तुमकर्तुं समर्थ हैं और जिनकी गति गूढ़ है। ७। जो सृष्टि की उत्पत्ति, पालन और संहार के कर्ता हैं, वे सबके कारण (कर्ता) और अकारण (विनाशकर्ता) हैं— उन्हीं को हम राम कहते हैं। ८। वे भक्तों के लिए पृथ्वी का भार उतारने के हेतु, (सद्-) धर्म की स्थापना करने और दुष्टों का संहार करने के हेतु अवतरित हो गये हैं। ९। जो प्राणी कोटि-कोटि अपराध करने पर भी उनकी शरण में आता है, उसके सब दोषों (पापों) को दूर करके वे उसे अभय (-दान) देते हैं। १०। उस प्राणी को वे अपना लेते हैं। ऐसे वे शरणागत-वत्सल स्वामी हैं। रे दशानन, तेरा कल्याण होगा— तू रघुवीर के साथ मित्रता कर।' ११।

तब रावण ने कहा— 'अरे मर्कट, निश्चय ही चुप रह जा। मैं तेरे राम को जानता हूँ। बहुत बार (बार-बार) उसका क्या बखान कर रहा है। १२। अरे राम का बन्दीजन होकर, जैसे कोई भाट करता है, वैसे, तू राम के यश का बखान कर रहा है। वह क्या कीर्ति प्राप्त करने चल दिया है? तू यह तो (भाग जाने की) बाट के बहाने बोल रहा है। १३। मैं उसके पराक्रम को जानता हूँ। यह क्या काम कर पाएगा? जिसने वानरों से मित्रता की, वह तो क्षत्रियराज नहीं हो सकता। १४। वन में वन्य फल खाने से उसकी देह बलहीन हो गयी है।

अल्या रावण म्हारुं नाम, मुजने शो करे तुं बोध ?
हुं पंडित केरो पंडित छुं, वळी क्रोध केरो क्रोध । १६ ।
तृण नाखे जेम अग्नि उपर, शिव उपर पंच बाण,
एम शीख तारी मारी उपर, थाय मिथ्या वाण । १७ ।
अल्या मशक मुजने शीखवे शुं, हुं नथी अज्ञान,
तमो जाणो छो जे छळ करीने, छेतरीए बलवान । १८ ।
पण जुद्ध कर्या विण नहि आपुं, जानकीने आज,
जई कहे तारा रामने, करगरे नहि थाय काज । १९ ।
अल्या मर्कट कहे मुजने, पिता तारो कोण ?
एवां वचन सुणी रावणतणां, पछे अंगद बोल्यो वाण । २० ।
अरे पापी मारा पिताने, हजु जाणतो नथी तुंय,
जेणे तुंने काखमां घाल्यो, गयो भूली शुंय । २१ ।
पछे चार निधिमां स्नान करीने, आव्यो पाछो घेर,
तने बांधियो मुज पारणे, में मारियो बहु पेर । २२ ।
अधोमुखे त्यां राखियो, चोरने बांधे ज्यम,
मुखमांहे में पदप्रहार कीधा, गयो भूली क्यम ? २३ ।

फिर वानर-सेना इकट्ठी करके यह क्या युद्ध कर पाएगा ? १५ । अरे, मेरा नाम रावण है । मुझे तू क्या उपदेश दे रहा है । मैं पण्डितों का पण्डित हूँ; इसके अतिरिक्त मैं (मानो) क्रोध का क्रोध हूँ । १६ । जिस प्रकार कोई अग्नि में घास डाल दे, (तो वह स्वयं जल जाती है) जैसे शिवजी पर कामदेव ने बाण चला दिये, (तो वह स्वयं जल गया) उसी प्रकार तेरा उपदेश, तेरी बातें, मुझपर व्यर्थ हो जाती हैं । १७ । अरे मच्छड़, मुझे तू क्या शिक्षा दे रहा है ? मैं अज्ञान तो नहीं हूँ । तू समझता है कि बलवान को छल-कपट पूर्वक धोखा दे दें (और काम बना लें) । १८ । परन्तु आज मैं बिना युद्ध किये जानकी नहीं (लौटा) दूँगा । जाकर अपने राम से कह दे, गिड़गिड़ाने से काम नहीं होता । १९ । अरे मर्कट, मुझसे कह दे कि तेरा बाप कौन है ।' रावण की ऐसी बातें सुनने के पश्चात् अंगद यह बात बोला । २० । 'अरे पापी, मेरे पिता को तू अब भी नहीं जानता ? जिसने तुझे बगल में ठूँस दिया था, उसे भूल गया क्या ? २१ । अनन्तर चारों समुद्रों में स्नान करके वह घर लौट आया, (फिर उसने) तुझे मेरे पालने के ऊपर बाँध दिया और (तब) मैंने तुझे बहुत प्रकार से मारा था । २२ । जिस प्रकार चोर को बाँधकर रखते हैं, वैसे वहाँ तुझे (बाँधकर) अधोमुख रखा था । मैंने तेरे मुँह पर लातें जमा दी थीं । उसे तू

पौलस्त्यमुनिए आवीने, मुकाव्यो मागी भीख,
अपमान पाम्यो अति घणुं, तोये न लागी शीख। २४।
ते वाली केरो पुत्र हुं, मुज नाम अंगद जाण,
अयोध्यापति रघुवीरनो हुं, दूत छुं निरवाण। २५।
तुज रुदे परथी धनुष्य लेईने, जेणे कीधुं भंग,
त्यां मान मोडी रायनां, सीता वर्या श्रीरंग। २६।
एक बाणे मारी ताडिका, सुबाहु आदे असुर,
त्यां वीश कोटी पिशीतासन, मारी कीधा चूर। २७।
तारी भगिनी शूर्पणखा करी, करणनासारहित,
खर दूखर त्रिशिरा मारिया, चौद सहस्र राक्षस सहित। २८।
ते रामनी अर्धांगना, तुं हरी लाव्यो जांबुक,
ते सुखे क्यम रहेशो हवे भाई? पडी मोटी चूक। २९।
ज्यम होमशाळा मांहेथी पुरोडाश लेई जाय श्वान,
एम हरी लाव्यो जानकी, तस्कर थई अज्ञान। ३०।
हावे खोळी मारग चोरनो, आव्या सुवेळ भगवंत,
ते राज आपशे विभीषणने, लेशे तारो अंत। ३१।

कैसे भूल गया? २३। (तदनन्तर) पुलस्त्य मुनि ने आकर भीख माँगकर (तुझे) छुड़ा लिया था। तू अति बड़े अपमान को प्राप्त हो गया था। तुझे (उससे) कोई शिक्षा नहीं प्राप्त हो गयी है। २४। मैं उस बाली का पुत्र हूँ। जान ले कि मेरा नाम अंगद है। मैं निश्चय ही अयोध्यापति रघुवीर राम का दूत हूँ। २५। जिन्होंने तेरी छाती पर से धनुष (उठा) लेकर उसे भग्न कर डाला, जिन श्रीरंग राम ने (अनेक) राजाओं के मान (घमण्ड) को छुड़ाकर सीता का वरण किया, जिन्होंने एक बाण से ताड़का, सुबाहु आदि असुरों को मार डाला, वहाँ बीस करोड़ राक्षसों को मारकर चूर-चूर कर दिया, जिन्होंने तेरी बहन शूर्पणखा को कर्ण-नाक-रहित कर दिया और चौदह सहस्र राक्षसों सहित खर-दूषण-त्रिशिरा को मार डाला, हे सियार, उन राम की स्त्री को तू अपहरण करके लाया है। हे भाई, तू सकुशल कैसे रह पाएगा? बड़ी भारी भूल हो गई है। २६-२९। जिस प्रकार हवन-गृह में से कोई कुत्ता पुरोडाश लेकर (भाग) जाए, उस प्रकार, हे चोर, अज्ञान बनकर तू जानकी को अपहरण कर लाया है। ३०। अब चोर के मार्ग को खोजते हुए भगवान राम सुवेल आ गये हैं। वे विभीषण को राज्य देंगे और तेरा अन्त कर देंगे। ३१। अरे मूर्ख रावण,

अल्या मूरख रावण, करी नाख्या वेदना तें खंड,
ते माटे रघुवीर अवतर्या छे, देवा तुजने दंड । ३२ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

दंड देशे अंत लेशे, ज्यारे कोपशे जगदीश रे,
एवां वचन अंगदनां सांभळी, पछे चढी रावणने रीस रे । ३३ ।

* * *

तूने वेदों के टुकड़े-टुकड़े कर डाले हैं। इसलिए तुझे दण्ड देने के लिए रघुवीर राम अवतरित है । ३२ ।

जब जगदीश राम क्रोध करेंगे, तब वे (तुझे) दण्ड देंगे, तेरा अन्त (नाश) कर डालेंगे ।' अंगद की ऐसी बातें सुनने के पश्चात् रावण को क्रोध आ गया । ३३ ।

* * *

अध्याय—९ (रावण-अंगद-सम्वाद)

राग मारु

घणुं क्रोधे चढ्यो दशानन, रीसे रातां थयां छे लोचन,
अग्निमां घृत होवे ज्यम, ज्वाळा नखशिख लागी त्यम । १ ।
अल्या वनचर बोल विचारी, वारेवारे शुं कहे छे विस्तारी,
लाज लोपी बोले छे धूर्त, सांखी रहुं छुं जाणीने दूत । २ ।
अल्या रावण मारुं नाम, नथी दीठां तें मारा काम,
बंधीवान कीधा में देव, तेनी पासे करावुं छुं सेव । ३ ।

अध्याय—९ (रावण-अंगद-सम्वाद)

रावण बहुत क्रुद्ध हो गया । क्रोध से उसकी आँखें लाल हो गयीं । जिस प्रकार अग्नि में घी का हवन कर दें (तो वह जैसे प्रज्वलित हो जाती है), उस प्रकार (अंगद की बातों ने उसकी क्रोधाग्नि के लिए घी का काम कर दिया, तो) उसके नखशिखा में ज्वाला (आग) लग गयी । १ । (वह बोला-)' अरे वनचर, विचार करके बोल । बारबार विस्तार करते हुए क्या कह रहा है ? तू धूर्त लाज खोकर बोल रहा है । तुझे दूत समझकर मैं चुप रहा हूँ । २ । अरे, मेरा नाम रावण है । तूने मेरे कार्यों को नहीं देखा । मैंने देवों को बन्दी बना लिया है और उनके द्वारा मैं

नंदनवनमां पुष्प अपार, इंद्र गूंथी लावे छे हार,
मारां वस्त्र धूए छे कृशानु, धरे दीपक नित्ये भानु । ४ ।
मारु पाणी भरे रस-ईश, चंद्र छत्र धरे मुज शीश,
लखे दफतर सरस्वती नार, वायु पूंजो वाळे मुज द्वार । ५ ।
पुरोहित ब्रह्मा कहेवाय, नित्य नारद तुमर गाय,
मारा इष्टदेव महादेव, करुं त्रिकाळ जेनी सेव । ६ ।
तेवो रावण हुं बळवंत, आणुं नर-वानरनो अंत,
त्यारे अंगद कहे मतिपाप, शीद मिथ्या करे छे आलाप ? ७ ।
एक कपिबळ न थयुं सहन, जेणे उजाड्युं अशोकवन,
जेणे राक्षस मार्या अपार, सात पुत्रशुं अखेकुमार । ८ ।
गयो लंका बाळीने कुशळ, त्यारे क्यां गयुं तुं तुज बळ ?
एवा अनेक कपि छे बळिया, रामदूत ते न जाय कळिया । ९ ।
जे राम त्रिभुवनपति, तेने मनुष्य जाणे मंदमति,
ज्यम वेकळो गंगा समान, ते न होय क्यारे अज्ञान । १० ।

(अपनी) सेवा करवा रहा हूँ । ३ । नन्दन वन में अनगिनत फूल हैं। इन्द्र उनके हार बनाकर लाता है । अग्निदेव मेरे वस्त्र धोता है । सूर्य नित्य दीप धारण किये रहता है।४। रसों का स्वामी वरुण मेरा (मेरे लिए) पानी भर देता है, तो चन्द्र मेरे मस्तक पर छत्र धरता है । नारी सरस्वती मेरे कार्यालय के कामकाज (का विवरण) लिखती है, तो वायुदेव मेरे द्वार पर झाड़ू लगाते हुए स्वच्छता करता है । ५ । ब्रह्मा मेरा पुरोहित कहाता है, तो नारद और तुम्बरू नित्य गाया करते हैं । मेरे इष्टदेव हैं महादेव शिवजी, जिनकी मैं तीनों काल सेवा कर रहा हूँ । ६ । इस प्रकार मैं रावण बलवान हूँ, मैं नरों-वानरों का नाश कर दूँगा ।' तब अंगद ने कहा—'रे पापमति, तू मिथ्या प्रलाप क्यों कर रहा है । ७ । उस एक कपि का बल तुझसे सहन नहीं हुआ, जिसने (तेरे) अशोक वन को उजाड़ डाला था, जिसने असंख्य राक्षसों को तेरे पुत्र अक्षकुमार सहित मार डाला था । ८ । जब वह लंका को जलाकर सकुशल चला गया, तब तेरा बल कहाँ गया था ? ऐसे अनेक बलवान कपि हैं । राम के वे दूत तेरी समझ में नहीं आ रहे हैं । ९ । रे मन्दमति, जो राम त्रिभुवन के स्वामी हैं, उन्हें तू मनुष्य समझ रहा है । रे अज्ञान, जिस प्रकार छोटा नाला गंगा के समान कभी भी नहीं हो सकता, उस प्रकार साधारण मनुष्य और राम समान नहीं हैं । १० । ऐरावत और कोई दूसरा हाथी, (अथवा) उच्चैश्रवा

ऐरावत ने बीजा मातंग, उच्चैःश्रवा ने अन्य तुरंग,
ज्यम आगियो ने वळी भानु, क्यम दादुर ने गरुड समान ? ११ ।
वायुनंदन वानर अन्य, पशु बीजां ने शंभुवाहन,
ज्यम पारस ने पाषाण, कल्पवृक्ष बीजां तरु जाण । १२ ।
ज्यम भूमिसर्प फणीपाळ, ना'वे समान बक ने मराळ,
एम रामने मानुष आन, तेने मूरख जाणे समान । १३ ।
अल्या पामी तुं शिव वरदान, तेणे मस्त थयो करे मान,
आदि माया भवानी छे सीता, लेशे भोग तमारो अभीता । १४ ।
रणमंडळमां करशे कुंड, तेमां होमशे राक्षस रुंड,
पूर्णाहुति समे करी रीस, श्रीफळवत् होमशे दश शीश । १५ ।
तुं वनचरने मारवा किरात, आव्या सुवेळुए जगतात,
एवुं कह्युं ज्यारे अंगद योध, बोल्यो रावण करीने क्रोध । १६ ।
अल्या पामर मर्कट जात, ए रामे मार्यो तुज तात,
आप्युं सुग्रीवने ए राज, दास थई करे तेनुं काज । १७ ।

(इन्द्र का घोड़ा) और कोई अन्य घोड़ा—दोनों समान नहीं हो सकते। फिर जिस प्रकार जुगनू और सूर्य समान नहीं हो सकते, उस प्रकार राम और कोई अन्य मनुष्य समान नहीं हैं। मेंढ़क और गरुड़ कैसे समान हो सकते हैं। ११। वायुनन्दन हनुमान और कोई अन्य वानर, (अथवा) शिवजी का वाहन नन्दी और कोई अन्य पशु समान नहीं हैं। समझ ले कि पारस और (साधारण) पत्थर तथा कल्पवृक्ष और अन्य वृक्ष जिस प्रकार समान नही हैं, उस प्रकार राम और अन्य मनुष्य समान नहीं हैं। १२। जिस प्रकार कोई भूमि (पर रेंगनेवाला साधारण)-सर्प और फणिपाल शेषनाग, (अथवा) हंस और बगुला समान नहीं हो सकते, उसी प्रकार राम और अन्य मनुष्य (समान नहीं हैं, उन) को मूर्ख ही समान समझता है। १३। अरे, तू शिवजी के वरदान को प्राप्त हो गया और उससे अभिमान करते हुए तू उन्मत्त हो गया है। सीता आदिमाया, भवानी हैं। वे निर्भयतापूर्वक तेरे रूप में भोग ग्रहण करेंगी। १४। राम (मानो) रणभूमि में (होम-) कुण्ड बनाएँगे; उसमें राक्षसों के मस्तकों का हवन करेंगे, (और) पूर्णाहुति के समय क्रोध-पूर्वक तेरे दसों मस्तक श्रीफल (नारियल) की भाँति होम में डाल देंगे। १५। तुझ (जैसे) वनचर (पशु) को मार डालने के लिए जगत्पिता राम सुवेल पर आये हैं।' जब योद्धा (वीर) अंगद ने ऐसा कहा, तो रावण क्रुद्ध होकर बोला। १६। 'अरे पामर, मर्कट के बच्चे, राम ने तेरे बाप को मार

एवा रामने स्वामी गणियो, हजु रह्यो तुं पितानो रणियो,
तारी माए कर्यो व्यभिचार, तने पुत्रने छे धिक्कार। १८।
तारा वेरी सुग्रीव ने राम, तेनो थई रह्यो छुं तुं गुलाम,
माटे सेवा मूकी रामचरण, जो तुं आवे मारे शरण। १९।
तो सुग्रीवने मारुं आज, तने आपुं किष्किधानुं राज,
अंगद कहे करे मिथ्या वक्त, तारो पुरुषारथ जाणे छे जग्त। २०।
सहस्रार्जुन बांधीने राख्यो, बळिराजाए कारागृहे नाख्यो,
बळिरायनी दासी एक बाळी, नाख्यो कंदुकवत् उछाळी। २१।
मुज पिताए घाल्यो कक्ष, ते तुं रावण जो परतक्ष,
त्यारे क्यां गयुं तुं तुज बळ? हवे मिथ्या बके छे व्यंडळ। २२।
मारा तातने देव वखाणे, पाम्या परम गति रामबाणे,
काळना काळ ईश्वर एव, करे शिव ब्रह्मा जेनी सेव। २३।
छे अखंड एक अविनाश, एवुं जाणी थयो छुं दास,
हवे तुजने मारवा राम, थया सत्वर पूरणकाम। २४।

डाला और यह राज्य सुग्रीव को दे दिया। तू दास होकर उसका काम कर रहा है। १७। ऐसे राम को स्वामी समझ रहा है और अब तू अपने पिता का देनदार रहा है। तेरी माँ ने व्यभिचार किया है। तुझ जैसे पुत्र को धिक्कार है। १८। तेरे वैरी हैं—सुग्रीव और राम; उनका तू दास होकर रह रहा है। इसलिए यदि तू राम के चरणों की सेवा करना छोड़कर मेरे आश्रय में आएगा, तो मैं आज सुग्रीव को मार डालूँगा और तुझे किष्किन्धा का राज्य सौंप दूँगा।' (यह सुनकर) अंगद बोला, 'तू यह झूठी बात कह रहा है। संसार तेरे पुरुषार्थ को जानता है। १९-२०। तुझे सहस्रार्जुन ने बाँधकर रखा था। तुझे बलिराज ने कारागृह में डाल दिया था, बलिराज की दासी ने, एक लड़की ने तुझे गेंद की भाँति उछाल डाला था। २१। मेरे पिता ने तुझे बगल में ठूँस दिया था; प्रत्यक्ष देख, तू वही रावण है। रे नपुंसक, अब (जो) तू मिथ्या बक रहा है, तो तब तेरा बल कहाँ गया था? २२। देव (तक) मेरे पिता का बखान करते हैं, वह राम के बाण से परम गति को प्राप्त हो गया है। वे (राम) काल के काल हैं, जिनकी शिवजी और ब्रह्मा सेवा करते है। वे अखंड, एक, अविनाशी (भगवान) हैं। ऐसा समझकर मैं उनका दास हो गया हूँ। वे पूर्णकाम राम अब तुझे मार डालने के लिए त्वरायुक्त (अतिशीघ्र काम करने के लिए उद्यत) हो गये है। २३-२४। जब श्रीजगदीश कोप करेंगे, तो युद्ध में तेरे मस्तकों को पीस डालेंगे। मूर्ख को सीख किस लिए

ज्यारे कोपशे श्रीजगदीश, रणमां रडवडशे तुज शीश,
मूरखने शीख दईए शाने ? दंड दीधा विना नव माने । २५ ।
शुं करुं जो आज्ञा नथी राम, बाकी मारुं तने आ ठाम,
एवां वचन अंगदना विरोधी, सुणी बोल्यो दशमुख क्रोधी । २६ ।
अल्या मारवा इच्छे छे मुज, जोईए केटलुंक बळ छे तुज,
देखाड पराक्रम तारुं नहि तो हवडां हुं तुजने मारुं । २७ ।
थयो ऊभो अंगद महाकाय, सभामांहे रोप्यो एक पाय,
पछे बोल्यो करी पण तेह, सुण रावण कहुं छुं एह । २८ ।

राग दोहा

अंगद कहे सुण दशवदन, डगावे जो मुज पाय,
तो जीत्यो हुं सर्वथा, हार्या श्रीरघुराय । २९ ।
पछे युद्ध करशे नहि, जशे राम अवधपुर मांहे,
कपि सहु निज स्थानक जशे, पछे रह्यां जानकी आंहे । ३० ।
में पण कर्युं श्रीरघुपति बळे, जो उपाडे मुज पाय;
तो हुं तारो सेवक थई रहुं, सत्य वचन कहुं राय । ३१ ।

दें ? वह तो बिना दण्ड दिये नहीं मानता । २५ । क्या करूँ ? जो राम की आज्ञा (जो) नहीं है । अन्यथा, मैं तुझे इसी स्थान पर मार डालता ।' अंगद के ऐसे विरोध-भरे वचन सुनकर रावण क्रुद्ध होकर बोला । २६ । 'अरे, मुझे मारना चाहता है ? देखूँ तो तेरा कितना बल है । दिखा दे अपना पराक्रम, नहीं तो मैं अभी तुझे मार डालता हूँ ।' २७ । (इसपर) वह महाकाय अंगद खड़ा हो गया, उसने सभा (-गृह) में एक पाँव रोप दिया । फिर वह प्रण करते हुए बोला—' रे रावण, सुन ले, मैं यह कह रहा हूँ । २८ । अंगद ने कहा, ' रे रावण, सुन ले । तू यदि मेरे पाँव को हिला दे, तो (मान लूँगा कि) तू सब प्रकार से जीत गया और श्रीरघुराज हार गये । २९ । फिर राम युद्ध नहीं करेंगे और अयोध्या (लौट) जाएँगे; सब वानर अपने-अपने स्थान जाएँगे और अनन्तर जानकी यहाँ रह गयी (समझ ले) । ३० । मैंने रघुपति के बल पर प्रण किया है कि यदि तू मेरा पाँव उखाड़ (हटा) सके, तो मैं तेरा सेवक बनकर रहूँगा । हे राजा, मैं यह सत्य बात कह रहा हूँ, । ३१ ।

राग सोरठा

एवुं पण सुणी रावणराय, आज्ञा करी सहु जोधने,
ते वळग्या अंगद पाय, पण लेश मात्र हाले नहि । ३२ ।
चढ्यो असुरने श्वास, चरण अंगदनो नव खस्यो,
पछे बेठा थईने निराश, ज्यम मेरु अचळ चळे नहि । ३३ ।
ज्यम जानकी स्वयंवर ठार, चळ्यु न त्रंबक शिव तणुं,
एम रावणसभा मोझार, पद रोपी अंगद रह्या । ३४ ।
ज्यम कामी तणा मोहमंत्र, चळे न मन सती नारनुं,
ज्ञानी चित्त स्वतंत्र, डगे न जोई संसारदुःख । ३५ ।
जुओ रामकृपानो प्रताप, निर्बळ थाय बळियो घणुं,
स्पर्शता कपिपद आप, हरण थयुं बळ असुरनुं । ३६ ।

राग मारु

एम जोद्धा थाक्या सर्व, बळ भाग्युं ने ऊतर्यो गर्व,
ऊठ्यो रावण तेणी वार, अल्या ए कपिना शा भार ? ३७ ।

ऐसा प्रण सुनकर राजा रावण ने समस्त योद्धाओं को आदेश दिया। वे अंगद के पाँव को हिलाने लगे, परन्तु वह लेश मात्र भी नहीं हिला। ३२। (उठाने का यत्न करते-करते) असुरों का साँस चढ़ गया (दम फूल गया, परन्तु) अंगद का पाँव नहीं हट गया। फिर वे निराश होकर बैठ गये। जिस प्रकार मेरु पर्वत नहीं हिलता। ३३। जिस प्रकार जानकी के स्वयम्वर के स्थान पर (राजाओं द्वारा) शिवजी का धनुष नहीं हिला, उस प्रकार रावण की राजसभा में अंगद (दृढ़ता-पूर्वक) पाँव रोपकर रह गया। ३४। जिस प्रकार कामी जन के मोहमंत्र से सती नारी का मन (तनिक भी) विचलित नहीं हो जाता, जिस प्रकार ज्ञानी व्यक्ति का चित्त उसके अपने अधीन रहता है और संसार के दुखों को देखकर वह नहीं डिग जाता, उस प्रकार असुरों के यत्न करते रहने पर भी अंगद का पाँव नहीं हिला। ३५। राम की कृपा का प्रताप तो देखो— उससे बड़ा वलवान निर्बल हो जाता है (अथवा राम की कृपा होने पर निर्बल भी बहुत वलवान हो जाता है)। (अंगद)वानर के पाँव को स्पर्श करते ही असुरों के वल का हरण हो गया। ३६।

इस प्रकार समस्त योद्धा थक गये; उन सबका वल (मानो) भाग गया और उनका घमण्ड उतर गया। उस समय रावण उठ गया (और उसने सोचा—) इस कपि का क्या वल है ? ३७।

आव्यो चाली ज्यारे दशानन, त्यारे विचार्यु अंगदे मन,
(बोल्यो छुं घणुं मूकीने मन, शत्रुओंना थाय उष्ण तन) । ३८ ।
पण कठण कर्यु छे में आज, कदापि थाय विपरीत काज,
ए रावण बळियो प्रकाश, एणे करमांहे तोळ्यो कैलास । ३९ ।
माटे जुक्ति करुं उत्कर्ष, मुज चरण करे नहि स्पर्श,
पद ग्रहवा आव्यो दशानन, हसी बोल्यो वालीनो तन । ४० ।
अल्या शीद नमे मुजने चरण ? तेथी नहि ऊगरे तुज मरण,
माटे रामचरण जई लाग्य, ऊगरे मृत्यु अभयवर माग्य । ४१ ।
एवुं सुणी थोभ्यो दशशीश, लाज्यो मनमां चढी घणी रीस,
कर्यो होकारो तेणी वार, बांधी झालो कपिने निरधार । ४२ ।
अंगदने मारवा बोल्यो त्राडी, शस्त्र वीजळी सरखुं काढी,
करी गर्जना वालीतन, सभामांहे कोप्यो बळवंत । ४३ ।
रावणना हृदयमोझार, कर्यो अंगदे पुच्छनो प्रहार,
चरण अंगूठे मुगट उडाड्या, पदप्रहारे असुरने ताड्या । ४४ ।

जब दशानन चलते हुए (आगे) आ गया तब अंगद ने मन में विचार किया कि मैंने दिल खोलकर अर्थात मनचाहा बहुत कहा है; उससे शत्रुओं का शरीर (रक्त) गर्म हो जायगा । ३८ । 'मैंने तो आज कठिन प्रण किया है—(न जाने) कदाचित् विपरीत काम हो जाए । यह रावण तो स्पष्ट रूप में (विख्यात) बलवान; है इसने अपने हाथ से कैलास पर्वत तोला (उठाया) था । । ३९ । इसलिए (अब) मैं (कोई) उत्तम युक्ति (आयोजित) करता हूँ, जिससे वह मेरे चरण को स्पर्श (ही) न कर सके ।' (इतने में जब) रावण पाँव पकड़ने के लिए आ गया, तो बाली-सुत अंगद हँसकर बोला । ४० । 'अरे, मेरे चरणों को क्या नमस्कार कर रहा है ? उससे तेरी मौत तो नहीं टलेगी । इसलिए तू जाकर राम के पाँव लग जा, और अभय वर दान में माँग ले, जिससे तेरे सिर पर से मौत तो टल जाएगी ।' ४१ । ऐसा सुनकर दशानन रुक गया; वह लज्जित हुआ, फिर भी उसे मन में क्रोध आ गया । उसने उस समय हुंकार भर दी और (कहा—) निश्चय ही इस कपि को बाँध लो । ४२ । उसने गरजकर अंगद को मार डालने को कहा और बिजली जैसा शस्त्र निकाल लिया । तो बाली-सुत ने गर्जना की । वह बलवान वानर कुपित हो गया । ४३ । (फिर) अंगद ने रावण के हृदय (-स्थल) पर पूँछ से आघात किया; पाँव के अँगूठे से उसके मुकुट उड़ा दिये और पद-प्रहारों (लातों) से उस राक्षस को पीट लिया । ४४ । सुवेल पर्वत पर

ज्यां सुवेळुए बेठा राम, मुगट जई पड्या तेणे ठाम,
त्यारे सर्वे विचार्युं मन, आ पराक्रम वालीतन । ४५ ।
चौद कोशनो सभामंडप, रच्यो विश्वकर्मा करी खप,
अंगद स्थंभ झाल्यो हाथे, मंडप उखेडी लीधो माथे । ४६ ।
कर्या मूर्छित राक्षस सर्व, उतार्यो दशशीशनो गर्व,
त्यांथी कूदीने मारी फाळ, आव्यो सुवेळुए तत्काळ । ४७ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

तत्काळ अंगद आव्यो, सभामंडप लेई शीश रे,
दूरथी दीठो आवतो, त्यारे विस्मय पाम्या जुगदीश रे । ४८ ।

* * *

जहाँ राम बैठे हुए थे, उस स्थान पर जाकर वे मुकुट गिर गये। तब सबने मन में सोचा (मान लिया) कि यह तो बाली-कुमार अंगद का ही पराक्रम है । ४५ । विश्वकर्मा (विधाता) ने परिश्रम करके चौदह कोस (दीर्घ आकार का) सभा-मण्डप बनाया था। अंगद ने हाथ से उसके खम्भे पकड़ लिये और मंडप को उखाड़कर मस्तक पर (उठा) लिया । ४६ । समस्त राक्षसों को उसने मूर्च्छित कर दिया और दशानन का गर्व उतार (छुड़ा) दिया। (फिर) वहाँ से कूदकर छलाँग लगाते हुए वह तत्काल सुवेल आ गया । ४७ ।

सभा-मण्डप मस्तक पर लिये हुए अंगद तत्काल सुवेल आ गया। जगदीश राम ने जब उसे दूर से आते देखा; तब वे विस्मय को प्राप्त हो गये । ४८ ।

* * *

अध्याय—१० (अंगद द्वारा रावण का मण्डप लौटाना; युद्ध का आरम्भ)

राग धन्याश्री

अंगद आव्यो मंडप लेई शीशजी, आश्चर्य पाम्या ते जोई जुगदीश जी,
आपी लाग्यो प्रभुने पाय जी, मंडप मूक्यो राम सभाय जी । १ ।

अध्याय—१० (अंगद द्वारा रावण का मण्डप लौटाना; युद्ध का आरम्भ)

अंगद सिर पर वह मण्डप लिये हुए (जब) आ गया, तो उसे देखकर जगदीश राम आश्चर्य को प्राप्त हो गये। (फिर) उसने उस मण्डप को राम की सभा के ऊपर रख छोड़ा और वह प्रभुजी के पाँव लग गया । १ ।

ढाळ

रामसभानी उपर मूक्यो, मंडप तेणी वार,
साष्टांग करी पछी रामचरणे, लाग्यो वालीकुमार । २ ।
पछी अंगदने उठाडीने, चांप्यो रुदे रघुनाथ,
वारंवार वखाण करीने, मस्तक मूक्यो हाथ । ३ ।
जे दशाननना दश मुगट, उडाड्या वालीतन,
ते वहेंची आप्या रामे सहुने, सुणो श्रोताजन । ४ ।
विभीषण सुग्रीव हनुमंत, अंगद जांबुवान,
नळ नील शरभ गवाक्ष सुषेण, वीर महाबळवान । ५ ।
एम मणिजडित ते मुगट घाल्या, दशे जणने शीश,
सहु सभा सुणतां बोलिया पछी, अंगदशुं जुगदीश । ६ ।
अरे भाई करशे राज विभीषण, ज्यारे लंका मांहे,
त्यारे मंडप विण ए सभा सर्वे, शोभशे नहि त्यांहे । ७ ।
ते माटे जई मूकी आव पाछो, हतो तेमनो तेम;
विरंचिकृत बीजा थकी, नीपजे एवो केम ? ८ ।
एवुं सुणी मंडप लेई चाल्यो, त्यांथी वालीकुमार,
हतो तेम रोपीने आव्यो, क्षणुं न लागी वार । ९ ।

बाली के पुत्र अंगद ने उस समय उस मण्डप को राम की सभा के ऊपर रख दिया और साष्टांग नमस्कार करते हुए वह राम के पाँव लग गया । २ । अनन्तर रघुनाथजी ने अंगद को उठाकर हृदय से लगा लिया और बारबार उसका बखान करते हुए उसके मस्तक पर हाथ रखा । ३ । हे श्रोताजनो, सुनिए । अंगद ने दशानन के जो दस मुकुट उछाल दिये थे, राम ने वे सबको बाँट दिये । ४ । विभीषण, सुग्रीव, हनुमान, अंगद, जाम्बवान, नल, नील, शरभ, गवाक्ष और सुषेण (जैसे जो) महाबलवान वीर थे, उन दस जनों ने अपने-अपने मस्तक पर वे रत्न-जटित मुकुट इस प्रकार रख लिये । फिर समस्त सभा के सुनते हुए जगदीश अंगद से बोले । ५-६ । 'अरे भाई, जब विभीषण लंका में राज करेंगे, तब वहाँ बिना मण्डप के वह समस्त सभा शोभायमान नहीं हो पाएगी । ७ । इसलिए (वहाँ लौट) जाकर यह जैसा था वैसा रखकर लौट आओ । ब्रह्मा द्वारा निर्मित (ऐसे मण्डप) जैसा दूसरों से कैसे बन पाएगा ? । ८ । ऐसा सुनकर बाली-कुमार मण्डप लेकर वहाँ से चल दिया और क्षण भर समय न लगते वह उसे जैसा था वैसे रखकर (लौट)

अंगदे कह्युं पछी रामने सहु, रावणनुं वर्तमान,
में शिखामण दीधी घणी, पण न माने अज्ञान । १० ।
पयस्नान कराविये कागने पण, राजहंस न थाय,
पाईए पन्नगने पय-शर्करा, मुख थकी विष न जाय । ११ ।
ढोल मूरख ने पशु वळी, दुर्मुखी जे नार,
ए दंड विण माने नहि, एने मारनो अधिकार । १२ ।
ते माटे सुणो महाराज, हावे निश्चे करवुं युद्ध,
पामशो नहि एम सीताने, आदर्या विण विरुद्ध । १३ ।
एवां वचन सुणी अंगद तणां, त्यारे कोप्या श्रीरघुनाथ,
तत्पर थया संग्राम करवा, धनुष्य लीधुं हाथ । १४ ।
कोदंडनी प्रत्यंचा चढावी, कर्यो छे टंकार,
ब्रह्मांड सर्वे खळभळ्युं, गिरि सिंधु भूकंपार । १५ ।
सहु सैन्यने आज्ञा करी, कपिपति सुग्रीव जेह,
जय बोलावी रघुवीरनी, तत्पर थया सहु तेह । १६ ।
भुभुकार व्याप्यो दश दिशा, सिंहनाद करता कीश,
गिरि वृक्ष ग्रहीने ऊछळ्या, कपि पाडता मुख चीस । १७ ।

आया । ९ । फिर अंगद ने राम से रावण सम्बन्धी समस्त समाचार कह दिया । (वह बोला-) 'मैंने उसे बहुत सिखावन तो दी, परन्तु उस अज्ञान ने उसे नहीं माना । १० । कौए को दूध से स्नान कराएँ, फिर भी वह राजहंस नहीं हो जाता । सर्प को दूध-शक्कर पिला दें, फिर भी उसके मुँह का विष नहीं नष्ट होता । ११ । ढोल, मूर्ख और पशु, इनके अतिरिक्त, स्त्री जो दुर्मुखी हो—ये बिना दण्ड के नहीं मानते । उन्हें ताड़न करने का अधिकार है (ये ताड़न किये जाने योग्य हैं) । १२ । इसलिए हे महाराज, सुनिए । अब निश्चय ही युद्ध करना है । उसके विरुद्ध बिना युद्ध आरम्भ किये, इस प्रकार आप सीता को प्राप्त नहीं कर पाएँगे ।' १३ । तब अंगद के ऐसे वचन सुनने पर श्रीरघुनाथ कुपित हो गये । (फिर) वे युद्ध करने के लिए उद्यत हो गये और उन्होंने हाथ में धनुष्य ग्रहण किया । १४ । उन्होंने धनुष पर डोरी चढ़ाते हुए टंकार कर दी । उससे समस्त ब्रह्माण्ड काँप उठा, तो पर्वत, समुद्र, भूमि (सब) कम्पायमान हो गये । १५ । जब कपि-पति सुग्रीव ने समस्त सैन्य को आज्ञा दी, तब वे सब (कपि) 'रघुवीर की जय' बोलते हुए तैयार हो गये । १६ । उनका भुभुकार दस दिशाओं में व्याप्त हो गया । वानर सिंहनाद करने लगे । मुख से चीत्कार करते हुए वे पर्वत, वृक्ष लेकर

कोट उपर कपि चढ़िया, करे महा बुंबाण,
कांगरा तोडी कोटना, मारता पूरमां जाण। १८।
हळमेखळ लंकामां थयुं, सहु करे हाहाकार,
ते खबर सांभळी रावणे, मोकल्युं सैन्य अपार। १९।
पछी असुर ने वानर तणुं, युद्ध थवा लाग्युं त्यांहे,
ऊभे दळनी पदरजे, अंधकार थयो नभ मांहे। २०।
ते समे रावण गोपुर उपर, चड्यो जोवा युद्ध,
संग्राम दारुण थाय छे त्यां, असुर कीश विरुद्ध। २१।
अने राक्षस शस्त्र ग्रहीने, नीकळ्या पुर बहार,
वानरनां पूतळां करीने, बांध्यां पग मोझार। २२।
ते सर्वमां सेन्यापति, ध्रूमाक्ष चढियो त्यांहे,
तेणे अनेक वानर मारिया, रामनी सेन्या मांहे। २३।
ते समे मोटुं वृक्ष लेईने, धायो मारुत-तन,
धूम्राक्षनो रथ भंग करीने, सारथि पमाड्यो पतन। २४।
ते त्रिशूल ग्रहीने धायो तदा, हनुमंत उपर जाण,
एक मुष्टि मारी मारुतिए, हर्या तेना प्राण। २५।

उछलने-कूदने लगे। १७। वे कपि दुर्ग पर चढ़ गये। वे बड़ा गर्जन कर रहे थे। समझ लें कि किले के कंगूरे तोड़-तोड़कर वे नगर में फेंकने लगे। १८। लंका में खलबली मच गयी। सब हाहाकार करने लगे। रावण ने यह समाचार सुनते ही अपार सेना को भेज दिया। १९। फिर असुरों और वानरों का वहाँ युद्ध होने लगा। सेनाओं के पाँवों की धूली से आकाश में अन्धकार हो गया (फैल गया)। २०। उस समय युद्ध देखने के लिए रावण गोपुर पर चढ़ गया। वहाँ (युद्ध-भूमि में) असुरों का वानरों के विरुद्ध दारुण संग्राम हो रहा था। २१। और राक्षस शस्त्र धारण करके नगर के बाहर निकल पड़े। उन्होंने वानरों के पुतले बनाकर पाँवों में बाँध लिये थे। २२। उन सबका प्रमुख सेनापति धूम्राक्ष वहाँ चढ़ दौड़ा। उसने राम की सेना में से अनेक वानरों को मार डाला। २३। उस समय पवनकुमार (हनुमान) बड़ा वृक्ष लिये हुए दौड़ा और (उससे) उसने धूम्राक्ष के रथ को भग्न करके सारथी को पतन को प्राप्त कराया (मार गिराया)। २४। तब समझिए कि वह (धूम्राक्ष) त्रिशूल लेकर हनुमान पर दौड़ा तो हनुमान ने उसको एक घूँसा जमाते हुए उसके प्राण छीन लिये। २५। जिस प्रकार पक्व (अच्छी तरह से सेंका हुआ) मिट्टी

ज्यम पक्व मृद घट थाय चूरण, एम पडियो देह,
ते खबर रावणने थई त्यारे, खेद पाम्यो तेह । २६ ।
पछी वज्रदृष्टि मोकल्यो, तेणे कर्युं युद्ध अपार,
त्यारे वालीसुत धायो तदा, मारतो अगणित मार । २७ ।
गिरि वृक्ष ने पाषाण लेईने, प्रहार करतो जाण,
ते निवारण करतो तदा, त्यां असुर मूकी बाण । २८ ।
एक वृक्ष मोटुं कर विषे, लई झापट्युं निरधार,
वज्रदृष्टि कर्यो चूरण, गाज्यो वालीकुमार । २९ ।
त्यार पछी आव्यो असुर, अंकपरण एवुं नाम,
मारुतिए पदप्रहार कीधो, तेने मार्यो ठाम । ३० ।
त्यारे असुरसेना हार पामी, हवो तव संहार,
ते जाणीने दशमुखने, मन थयो शोक अपार । ३१ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

शोक थयो दशमुखना मनमां, चिंता करतो अपार रे,
पछे पिता केरी आज्ञा मागी, चढ्यो इंद्रजित कुमार रे । ३२ ।

का घट (भारी आघात होने पर) चूर-चूर हो जाता है, उस प्रकार (घूंसे से चूर-चूर होकर) उसकी देह गिर गयी । जब रावण को यह समाचार प्राप्त हो गया, तब वह खेद को प्राप्त हो गया । २६ । अनन्तर (रावण ने) वज्रदृष्टि को भेज दिया । उसने असीम युद्ध किया । तब बाली-कुमार अंगद दौड़ा और वह उसपर अपार आघात करने लगा । २७ । समझिए कि वह पर्वत, वृक्ष और पाषाण लेकर प्रहार कर रहा था । वह असुर बाण चला(-चला)कर तब उनका निवारण करता रहा । २८ । तो हाथ में एक बड़ा पेड़ लेकर (अंगद) उसपर निर्धारपूर्वक झपट पड़ा और उसने वज्रदृष्टि को चूर-चूर कर डाला । (यह देखकर) अंगद गरज उठा । २९ । उसके अनन्तर एक (और) असुर आ गया । उसका नाम अंकपर्ण था । तो हनुमान ने उसपर पाँव से प्रहार किया और उसे उसी स्थान पर मार डाला । ३० । तब असुर-सेना हार को प्राप्त हो गयी । तब (बहुत) संहार हो गया था । यह जानकर दशानन को मन में अपार शोक हो गया । ३१ ।

दशानन को मन में शोक अनुभव हो गया । वह अपार चिन्ता करने लगा । अनन्तर पिता की आज्ञा माँगते हुए (राज-)कुमार इन्द्रजित चढ़ दौड़ा । ३२ ।

* * *

अध्याय—११ (इंद्रजित द्वारा राम की सेना को नागपाश में आबद्ध करना)

राग मारु

चढ्यो इंद्रजित महा जोध, जेनो समर त्रिलोक विरोध,
वाजे वाजित्र नाना प्रकार, बेठो रथमांहे सतीकुमार। १ ।
चतुरंगणी सेना साथ, घणां शस्त्र ग्रह्यां छे हाथ,
आव्यो रणमां ज्यारे इंद्रजित, नाठा वानर पामी भीत। २ ।
इंद्रजिते कर्यो सिंहनाद, चढ्यो सुग्रीव सुणतां साद,
करमां ग्रही वृक्ष पाषाण, कूद्या कपि करता बुंबाण। ३ ।
गाजीने राम कहेता कीश, मारे मुष्टि असुरने शीष,
इंद्रजित सामो सुग्रीव, वढे बन्यो बळना शिव। ४ ।
जांबुमाली सामा हनुमंत, जंघ असुर ने जांबुवंत,
सुषेण ने विद्युतमाली, महोदर सामो सुत वाली। ५ ।
शुक सारण ने नळ नील, अतिकाय शरभ बळ शील,
एम भीरु भडे छे अपार, एक एक न पामे हार। ६ ।
थयो अति दारुण संग्राम, मोटा महारथी मूके माम,
एम करतां निशा पडी त्यांहे, अंधकार थयो नभ मांहे। ७ ।

अध्याय—११ (इंद्रजित द्वारा राम की सेना को नागपाश में आबद्ध करना)

वह महान योद्धा, इन्द्रजित, चढ़ दौड़ा, जिसने त्रिभुवन के विरोध में युद्ध किया था। (उस समय) नाना प्रकार के बाजे बज रहे थे। सती मन्दोदरी का वह पुत्र रथ में बैठा हुआ था। १। उसके साथ चतुरंगिनी (अर्थात् पदाती, अश्वदल, रथदल और हस्तिदल) सेना थी। उन लोगों ने बहुत शस्त्र हाथों में ग्रहण किये थे। (जब इस प्रकार) इन्द्रजित युद्ध-भूमि में आ गया, तो भय को प्राप्त होकर वानर भागने लगे। २। (जब) इन्द्रजित ने सिंहनाद किया, तो उस ध्वनि को सुनते ही सुग्रीव चढ़ दौड़ा। हाथों में पेड़ और पत्थर लेकर वानर चीख-चीत्कार करते हुए कूदने लगे। गर्जना करते हुए वानर 'राम' कह रहे थे और असुरों के मस्तकों पर घूँसे जमाते जा रहे थे। इंद्रजित के सामने सुग्रीव आया हुआ था। वे दोनों बल की सीमा ही थे। ३-४। जम्बुमाली के सामने हनुमान था। जंघासुर और जाम्बवान, विद्युन्माली और सुषेण, एक-दूसरे के सामने थे। महोदर के सम्मुख बाली-सुत अंगद था। ५। शुक और (शुक-)सारण के सामने (क्रमशः) नल और नील थे; अतिकाय और बलशाली शरभ एक-दूसरे से कोई भी हार को प्राप्त नहीं हो रहा था। ६। (इस प्रकार वहाँ) अति दारुण संग्राम हो गया। बड़े-बड़े महारथियों ने अभिमान छोड़ दिया। ऐसा

त्यारे कोइए नव ओळखाय, त्यां असुर कपि अफळाय,
पछे इंदु ऊग्यो छे आकाश, त्यारे थयो सर्वत्र प्रकाश । ८ ।
युद्ध करवा मांड्युं इंद्रजित, करे बाणनी वृष्टि अमित,
जई आकाश-मारगमांहे, इंद्रजित अदृश्य रह्या त्यांहे । ९ ।
त्यांथी मारे बाण सघन, जाणे वरसे छे परजन्य,
वागे आवी कपिने शीश, कूदे ऊछळे पाडे चीस । १० ।
त्यारे बोल्या पुरुषपुराण, जुओ आवे छे क्यांथी बाण ?
जोयुं हनुमंते नभमांहे, मेघनाद जड्यो नहि त्यांहे । ११ ।
पछे कोप्यो ते असुरकुमार, सर्पास्त्र मूक्युं तेणी वार,
कोटी सर्प थया उत्पन्न, तेणे बांध्या कपिनां तन । १२ ।
पडी अचेत सेन्या मात्र, कर्यां बंधन सहुनां गात्र,
वाग्यां रामलक्ष्मणने बाण, पड्या अचेत थई निरवाण । १३ ।
पोते करवा प्रभु मंत्र सत्य, आप्या बंधनमां रघुपत्य,
पराक्रम करी एवुं अमित, ऊतर्यो पृथ्वी उपर इंद्रजित । १४ ।

करते-करते रात हो गयी और वहाँ आकाश में अँधेरा हो गया । ७ । तब किसी के द्वारा कोई पहचाना नहीं जा रहा था । वहाँ असुर और वानर (दोनों) व्याकुल हो गये । फिर (जब) आकाश में चाँद उदित हो गया, तब सब ओर प्रकाश हो गया । ८ । (फिर) इन्द्रजित ने युद्ध आरम्भ किया; वह असंख्य बाणों की बौछार करने लगा । वह आकाश-मार्ग पर जाकर वहाँ अदृश्य होकर रह गया । ९ । वहाँ से वह बहुत बाण छोड़ने लगा—मानो (तब बाणों की) बारिश ही हो रही थी । जब वे बाण कपियों के मस्तकों में लग जाते, तब वे उछलते-कूदते और चीखते-चिल्लाते । १० । तब पुराण-पुरुष राम बोले—'देखो तो बाण कहाँ से आ रहे हैं ?' तो हनुमान ने आकाश की ओर देखा; फिर भी इन्द्रजित वहाँ नहीं मिला । ११ । फिर वह राक्षस-कुमार क्रुद्ध हो गया और उसने उस समय सर्पास्त्र छोड़ दिया । उससे करोड़ों सर्प उत्पन्न हो गये और उन्होंने वानरों के शरीर आबद्ध कर डाले । १२ । समस्त सेना अचेत होकर (गिर) पड़ी, (क्योंकि) सब (सैनिकों) के शरीर बद्ध किये हुए थे । राम-लक्ष्मण को भी बाण लग गये, तो वे भी अन्त में अचेत होकर गिर पड़े । १३ । प्रभु रघुपति राम अपने मंत्र को सत्य करने के लिए बन्धन में आ गये । इस प्रकार अपार पराक्रम करके इन्द्रजित पृथ्वी पर उतर गया । १४ । उसने सबको मूर्च्छित देखा, तब उसके मन में गर्व बढ़ गया । (फिर) प्रमुख (-प्रमुख) असुरों के मृत

तेणे मूर्छित दीठा सर्व, त्यारे वाध्यो मनमां गर्व,
मुख्य असुरनां मृतक शरीर, लेवडावीने चाल्यो वीर। १५।
वाजे वाजित्र बहुविध त्यांहे, इंद्रजित आव्यो पुरमांहे,
कह्या रावणने समाचार, त्यारे मनमां हरख्यो अपार। १६।
चांप्यो पुत्रने रुदया साथ, वखाणे घणुं लंकानाथ,
पछे त्रिजटाने बोलावी, आपी आज्ञा कह्युं समजावी। १७।
बेसाडी पुष्प विमान मांहे, लेई जा सीताने रण ज्यांहें,
रामसहित देखाय सेन्याय, जो मुजने भजो सीताय। १८।
सुणी रावण केरां वचन, त्रिजटा आवी अशोकवन,
जानकीने विमाने बेसाडी, फेरवी सहु सैन्य देखाडी। १९।
रामलक्ष्मण सहित सेन्याय, दीठा मूर्छित तव सीताय,
दीठा बंधनमां पुण्यश्लोक, जोईने पाम्यां जानकी शोक। २०।
घणुं रुदन करे वैदेही, देखी बंधन प्राणसनेही,
त्रिजटा त्यां घणुं समजावे, सीताने मन धीरज न आवे। २१।
एवे विभीषण केरी राणी, आवी शरमा ते संकट जाणी,
जानकीने कर्यो बोध, जेथी जाय अज्ञान विरोध। २२।

शरीरों को लिवा लेकर वह वीर चल दिया। १५। तब बहुत प्रकार के बाजे बज रहे थे; (जब) इन्द्रजित नगर में (लौट) आ गया। उसने रावण से समाचार कह दिया, तब वह (रावण) मन में बहुत आनन्दित हो उठा। १६। लंकापति रावण ने (तब) अपने पुत्र को हृदय से लगा लिया और उसकी बहुत प्रशंसा की। अनन्तर त्रिजटा को बुलाकर उसे आज्ञा देते हुए समझाकर कहा। १७। 'विमान में बैठाकर जानकी को वहाँ ले जाओ जहाँ रणभूमि है, और राम-सहित सेना दिखा दो, जिससे वह मेरी सेवा करने लग जाएगी।' १८। रावण की ऐसी बातें सुनकर त्रिजटा अशोक वन में आ गयी और जानकी को विमान में बैठाकर घुमाते हुए उसे समस्त सेना दिखा दी। १९। तब सीता ने राम-लक्ष्मण सहित सेना मूर्च्छित पड़ी हुई देखी। पुण्यश्लोक राम-लक्ष्मण को बन्धन में पड़े देखा, तो यह देखकर सीता शोक को प्राप्त हो गयी। २०। (फल-स्वरूप) सीता अपने प्राण-प्रिय को बन्धन में देखकर बहुत रुदन करने लगी। तो वहाँ त्रिजटा ने सीता को बहुत समझाया-बुझाया; फिर भी उसे मन में धीरज नहीं हो रहा था। २१। उस समय विभीषण की रानी (स्त्री) सरमा उस संकट को जानते हुए (वहाँ) आ गयी। उसने जानकी को (इस प्रकार) बहुत उपदेश दिया, जिससे उसका अज्ञान

बाई, कुशळ छे पूरणकाम, करे मनुष्यनाटक जाणो राम,
जेनां नामनां स्मरण संबंध, छूटे जीत संसारनां बंध। २३।
ते प्रभुने बंधन ए आळ, कंपे जेना कटाक्षे काळ,
सच्चिदानंद सुख संदोह, करे लीला मानुष्य मनमोह। २४।
हवडां ऊठशे जुगदाधार, करशे रावणकुळ संहार,
गई शरमा एम समजावी, त्रिजटा वाडीमां श्रीने लावी। २५।
सीताने बेसाड्यां निज ठार, कह्यो रावणने समाचार,
हावे रणमां ते शुं थाय, पामी मूर्छा सकळ सेन्याय। २६।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सैन्य सकळ सहित बंधाया, रामलक्ष्मण नागपाश रे,
मांहे केटला कपि सावचेत छे, जे अनन्य रामना दास रे। २७।

* * *

और विरोध (विपरीत भाव) टल जाए। २२। (उसने कहा-) 'हे देवी, पूर्णकाम राम सकुशल हैं। समझ लो कि राम मनुष्य का (-सा) नाटक कर रहे हैं (मानवीय लीला कर रहे हैं)। जिनके नाम के स्मरण से जीव के सांसारिक बन्धन छूट जाते हैं जिनके कटाक्ष से काल (तक) काँप उठता है, उन प्रभु को बन्धन प्राप्त हो गये हैं—यह झूठा आरोप है। वे सच्चिदानन्द, सुख-राशि प्रभु मन को मोहित करनेवाली नर-लीला कर रहे हैं। २३-२४। वे जगदाधार अभी उठ जाएँगे और रावण के कुल का संहार कर डालेंगे।' इस प्रकार समझाते हुए सरमा चली गयी। तो त्रिजटा उद्यान में सीता को ले आयी। २५। उसने सीता को उसके अपने स्थान पर बैठा दिया और रावण से समाचार कह दिया। अब रणभूमि में क्या हो सकता है? समस्त सेना मूर्च्छा को प्राप्त हो गयी थी। २६।

समस्त सेना-सहित राम-लक्ष्मण को नागपाश में आबद्ध किया था। (फिर भी) उसमें कितने ही ऐसे वानर सचेत थे, जो राम के अनन्य दास थे। २७।

* * *

अध्याय—१२ (सुग्रीव आदि द्वारा राम-लक्ष्मण की रक्षा करना और नागपाश से मुक्त होने पर वानरों का युद्ध के लिए तैयार हो जाना)

राग धन्याश्री

त्यारे विभीषण बोल्यो सुग्रीव साथ जी,
एक वात कहुं ते सुणो कपिनाथ जी,
जो असुर नाखशे शस्त्र पाषाण जी,
तो वागशे अंगे पुरुषपुराण जी। १।

ढाळ

पुराणपुरुष बे रामलक्ष्मण, थया मूर्छित आंहे,
को असुर कंकर नाखशे, तो वागशे तनमांहे। २।
एवां वचन सुनी विभीषण तणां, हता सुचेत कपिवर जेह,
तेणे पुच्छनो मंडप रच्यो, रघुवीर उपर तेह। ३।
राय दशरथनो पुण्यपर्वत, रविवंशमंडन राम,
सर्वे कपि वींटाई पूंठळ, बेठा तेणे ठाम। ४।
पछे खोळी काढ्या विभीषणे, हनुमंतने तेणी वार,
सुषेण पासे आवीने, करे परस्पर विचार। ५।

अध्याय—१२ (सुग्रीव आदि द्वारा राम-लक्ष्मण की रक्षा करना और नागपाश से मुक्त होने पर वानरों का युद्ध के लिए तैयार हो जाना)

तब विभीषण सुग्रीव से बोला, 'हे कपिनाथ, एक बात मैं कह रहा हूँ, उसे सुनो। यदि असुर शस्त्र और पाषाण फेंक दें, तो वे पुराणपुरुष राम (और लक्ष्मण) के शरीर में लग जाएँगे (घाव कर देंगे)। ये दोनों पुराणपुरुष राम और लक्ष्मण यहाँ मूर्च्छित हो गये हैं। कोई असुर कंकड़ फेंक दे, तो उनके शरीर में वह लग जाएगा।' १-२। विभीषण की ऐसी बातें सुनकर जो कपिवर सचेत थे, उन्होंने रघुवीर (राम और लक्ष्मण) पर पुच्छों से मण्डप (-सा) बना लिया। ३। राम राजा दशरथ के पुण्य के (मानो) पर्वत ही हैं, सूर्यवंश के आभूषण हैं—(ऐसा समझकर) उनकी ओर पीठ किये हुए सब कपि (उनके चारों ओर से) उन्हें घेरकर उस स्थान पर बैठ गये। ४। अनन्तर उस समय विभीषण ने हनुमान को खोज निकाला। फिर वे (दोनों) सुषेण के पास आकर परस्पर विचार करने लगे। ५। तब वह कपिवर, जो सुग्रीव का ससुर था और जिसका

जे श्वसुर छे सुग्रीवनो, सुषेण जेनुं नाम,
हनुमंत विभीषणशुं तदा, बोल्यो वचन अभिराम। ६ ।
घणी औषधि छे द्रोणागिरि पर, लावे को आ वार,
तो रामलक्ष्मण हवडां ऊठे, सैन्यशुं निरधार। ७ ।
विभीषण कहे भाई इंद्रजिते, बांधिया नागपाश,
माटे औषधिनुं कारण नहि, ए सत्य वचन प्रकाश। ८ ।
सहु सैन्यमां बन्धन थकी, ऊगर्या आपण चार,
रामने बंधन कर्यां पूंठे, रह्या ते निरधार। ९ ।
सुग्रीव कहे सहु सैन्यशुं, हुं अंगद रहीशुं आंहे,
रामलक्ष्मणने लेई तमो भाई, जाओ किष्किधा मांहे। १० ।
हुं तथा अंगद बे जणा, करी रावणकुळ संहार,
पछे सीताने लेई आवीशुं, एम कहे अर्ककुमार। ११ ।
एटले थई आकाशवाणी, न करशो चिंताय,
सैन्यशुं हवडां ऊठशे, सौमित्र ने रघुराय। १२ ।
ते सुणी सहुने धीरज आवी, वींटी बेठा पास,
तव रामे नेत्र उघाडियां, जोता हवा अविनाश। १३ ।
निज भक्त वींटी बेठा पासे, जोयुं तो निज संग,
मरालवेष्टित मानसर, एम शोभता श्रीरंग। १४ ।

नाम सुषेण था, हनुमान और विभीषण से यह भली बात बोला। ६ । 'द्रोणगिरि पर बहुत औषधियाँ हैं। यदि कोई इस समय उन्हें ले आए, तो राम-लक्ष्मण निश्चय ही अभी सेना में (सचेत होकर) उठ जाएँगे।' ७ । (इसपर) विभीषण ने कहा—'भाई, इन्द्रजित ने नागपाश बाँध दिये हैं। इसलिए औषधि (लाने) का कोई कारण नहीं—मेरी यह बात स्पष्ट रूप से सत्य है। ८ । समस्त सेना में से हम चार बच गये हैं। राम को आबद्ध कर दिये जाने के पश्चात् भी हम निश्चय ही (सचेत) रह गये हैं।' ९ । (फिर) सुग्रीव ने कहा, 'समस्त सेना में से मैं और अंगद यहाँ रहेंगे। (अतः) हे भाई, तुम राम और लक्ष्मण को लेकर किष्किन्धा में जाओ। १० । मैं और अंगद दोनों जने रावण के कुल का संहार कर डालेंगे और फिर सीता को लेकर आ जाएँगे।' सूर्य-पुत्र (सुग्रीव) ने ऐसा कहा। ११ । तो इतने में आकाशवाणी हो गयी, 'तुम चिन्ता न करना, सेना में अभी लक्ष्मण और राम (सचेत होकर) उठ जाएँगे।' १२ । यह सुनकर सबको धीरज हो गया और वे उन्हें घेरकर उनके निकट बैठ गये, तब अविनाशी राम ने आँखें खोलीं और वे देखने लगे। १३ । जब

सुग्रीवने कहे तमो तेडी, सहुने जाओ किष्किधाय,
अमो रावण जीती आवशुं, एम बोल्या श्रीरघुराय। १५।
एवां वचन सुणीने थयो गद्गद, सुग्रीव तेणी वार,
महाराज, ए क्यम थाय अघटित ? व्यर्थ एह विचार। १६।
रवि तजी रश्मि जाय क्यां ? जळ तजे लहरी क्यम ?
घट मृत्तिकाने कनक कान्ति, भिन्न थाय न ज्यम। १७।
एम तमो स्वामी अमारा, प्रभु अमो तमारा दास,
तन, धन, प्राण जतां लगी, अमो रहुं तमारी पास। १८।
एवां स्नेहवचन सुग्रीवनां, सुणी राम थया प्रसन्न,
पछी गरुड केरुं स्मरण कीधुं, आव्यो विनतातन। १९।
हरिवाहनने जोई विलय पाम्या, सर्प तेणी वार,
मुक्त बंधन थयां सहुनां, वर्त्यो, जयजयकार। २०।
पद्म अष्टादश कपि सेन्या, ऊठी छे तत्काळ,
पुष्पवृष्टि करी देवे, पूज्या दशरथबाळ। २१।

उन्होंने अपने साथ में अपने भक्तों को घेरकर पास में बैठे हुए देखा। जिस प्रकार हंसों द्वारा घिरा हुआ मानसरोवर (शोभायमान) होता हो, उस प्रकार श्रीरंग (राम) शोभायमान हो रहे थे। १४। (फिर) वे सुग्रीव से बोले—'तुम सबको साथ में बुला लेकर किष्किन्धा चले जाओ। हम रावण को जीतकर आएँगे।' इस प्रकार श्रीरघुराज बोले। १५। उस समय ऐसी बातें सुनकर सुग्रीव गदगद् हो उठा। वह बोला—'महाराज यह अघटित कैसे हो सकता है ? यह विचार (योजना) तो व्यर्थ है। १६। किरणें सूरज को छोड़कर कहाँ जाएँगी ? पानी का त्याग लहरें कैसे करेंगी ? जिस प्रकार घट और मिट्टी तथा कान्ति और सोना (एक-दूसरे से) भिन्न (अलग) नहीं हो जा पाते, उस प्रकार (हम आपसे दूर नहीं हो सकते; क्योंकि) हमारे स्वामी आप प्रभु हैं और हम आपके दास हैं। तन, धन और प्राणों के निकल जाने तक हम आपके पास रहेंगे।' १७-१८। सुग्रीव की ऐसी स्नेह-भरी बातें सुनकर राम प्रसन्न हो गये। फिर उन्होंने विनता-कुमार गरुड़ का स्मरण किया, तो वह आ गया। १९। उस समय भगवान विष्णु के उस वाहन को—गरुड़ को देखते ही सर्प विलय को प्राप्त हो गये (नष्ट हो गये)। सबके बन्धन खुल (छूट) गये, तो जयजयकार हो गया। २०। इस प्रकार अठारह पद्म कपि-सेना तत्काल उठ गयी। तो देवों ने पुष्प-वर्षा की और दशरथ-कुमार (राम) का पूजन किया। २१। फिर सचेत होकर वीर राम

सावधान थईने ऊठिया, पछे राम-लक्ष्मण वीर,
एम मनुष्य नाटक करे जे, ब्रह्मांडपति रणधीर। २२।
कोदंड सायक सज्ज करी, रामे कर्यो टंकार,
भूगोळ सर्वे खळभळ्युं, पाम्यो रावण भीति अपार। २३।
भुभुकार नाद करी तदा, कूदिया सर्वे कीश,
लंका घेरी चोदिशा, पुर प्रवेश्या ते दिश। २४।
पाडवा मांड्या भवन कपिए, करे लोक पोकार,
ते जोई रावण खेद पाम्यो, चिंता करतो अपार। २५।
रावणे तव आज्ञा करी, चढियो प्रहस्त प्रधान,
वीस क्षोणी सेना लेईने, चालियो बळवान। २६।
ते समे वायो घोर वायु, थया मानशकुन,
ते अज्ञानी अभिमानशुं, नव लेखवे कांई मन। २७।
पछी बन्यो दळ भेळां थयां, ते शोभा नव कहेवाय,
संग्राम केरी झडी लागी, परस्पर युद्ध थाय। २८।
विभीषण कहे छे रामने, तमो सुणो श्रीभगवान,
आ रावण केरो मुख्य मंत्री, ए छे महाबळवान। २९।

और लक्ष्मण उठ गये। इस प्रकार ब्रह्माण्ड के स्वामी रणधीर (राम) मनुष्य का नाटक—नरलीला कर रहे थे। २२। (तदनन्तर) धनुष और बाण सज्ज करके राम ने टंकार की, तो समस्त भू-गोल विचलित हो उठा; रावण (भी) अपार भीति को प्राप्त हो गया। २३। तब भुभुकार ध्वनि करते हुए समस्त कपि (उछलने-)कूदने लगे। उन्होंने लंका को चारों दिशाओं से घेर लिया; फिर उस समय वे नगर में प्रविष्ट हो गये। २४। (उधर) कपियों ने घरों को ढहाना आरम्भ किया, तो लोग चीखने-चिल्लाने लगे। यह देखकर रावण खेद को प्राप्त हो गया। वह अपार चिन्ता करने लगा। २५। तब रावण ने आज्ञा दी, तो प्रहस्त नामक मंत्री चढ़ दौड़ा। वह बलवान (राक्षस) बीस अक्षौहिणी सेना लेकर चल दिया। २६। उस समय प्रचण्ड हवा चलने लगी। अपशकुन होने लगे। फिर भी उस अज्ञान ने अभिमान के कारण उन्हें मन में कुछ नहीं माना। २७। अनन्तर दोनों सेनाएँ (युद्ध में) मिल गयीं (भिड़ गयीं)। उसकी शोभा को बताया नहीं जा पाएगा। संग्राम में झड़पा-झड़पी होने लगी। (उन दोनों सेनाओं में) परस्पर युद्ध होने लगा। २८। (तब) विभीषण ने राम से कहा—'हे श्रीभगवान, आप सुनिए। यह रावण का मुख्य मंत्री है। यह महाबलवान है। २९। इसने युद्ध करके वरुण को

एणे वरुण जीत्यो जुद्ध करी, बांधी लाव्यो लंका मांहे,
जेणे जीत्यो जमरायने, ते आव्यो जुद्धने आंहे। ३०।
ते समे आवी नम्यो प्रभुने, नील वानर जेह,
महाराज मने आज्ञा करो, हुं हणुं हवडां एह। ३१।
पछी रामआज्ञा लेई चाल्यो, नील महा बळवंत,
तेणे प्रहस्त उपर नाखियो, एक गिरि प्रौढ अनंत। ३२।
ते बाण मारी कर्यो चूरण, प्रहस्ते तेणी वार,
एम सात पर्वत नाखिया, ते निवार्या निरधार। ३३।
प्रहस्त अग्निपुत्रनुं जुद्ध, जुए श्रीरघुवीर,
एटले धायो नळकपि ते, महाबळियो रणधीर। ३४।
तेणे ताड केरा वृक्षशतनो, कर्यो किल्लो हस्त,
ते एके काळे झापट्यो तव, थयो चूर्ण प्रहस्त। ३५।
रथ सहित मारी चूर्ण कीधो, गाजिया नळ-नील,
पछी अन्य सेना असुरनी ते, निवारी बळशील। ३६।
नळ-नीलने रामे वखाण्या, थयो जयजयकार,
समाचार जाण्या रावणे त्यारे, थयो खेद अपार। ३७।

जीता था और वह उसे बाँधकर लंका में ले आया था। जिसने यमराज को जीता था वह यहाँ युद्ध के लिए आ गया है।' ३०। उस समय नील नामक जो वानर था, उसने आकर प्रभु को नमस्कार किया। (वह बोला-) 'महाराज, मुझे आज्ञा दीजिए, तो मैं इसे अभी मार डालता हूँ।' ३१। फिर राम की आज्ञा लेकर (प्राप्त करके) महाबलवान नील चल दिया। उसने एक अपार प्रचण्ड पर्वत प्रहस्त पर डाल दिया। ३२। उस समय बाण छोड़कर प्रहस्त ने उसे चूर-चूर कर दिया। इस प्रकार (नील ने उसपर) सात पर्वत गिरा दिये, परन्तु प्रहस्त ने उनका निर्धारपूर्वक निवारण किया। ३३। (इधर) श्रीरघुवीर प्रहस्त और अग्नि-पुत्र नील का युद्ध देख रहे थे। इतने में नल वानर दौड़ा। वह तो महाबलशाली रणधीर था। ३४। उसने ताड़ के सौ (सैकड़ों) वृक्षों का हाथ में (जितना हाथ में समा जाए उतना) गट्ठर बना लिया और उससे एकदम आघात किया, तो प्रहस्त चूर-चूर हो गया। ३५। उसे रथ सहित मारकर पीस डाला। तब नल-नील गरज उठे। फिर उन बलशाली वानरों ने असुरों की अन्य सेना का निवारण कर दिया। ३६। तो राम ने नल-नील की प्रशंसा की। (तब) जयजयकार हो गया। (जब) रावण ने यह समाचार जान लिया (रावण को यह समाचार विदित हो गया) तब उसे अपार

सुण्युं मरण मंत्री तणुं त्यारे, कोपियो दशशीश,
पछे जुद्ध करवा थयो तत्पर, धरी मनमां रीस । ३८ ।

पछे जोध सहु सांप्रद कर्या, पुरमांहे वागी हांक,
वांजित्र वाजे अति घणां, सुणी पडे श्रोत्रे धाक । ३९ ।

ते समे रावण पासे आवी, सती मंदोदरी नार,
माल्यवंत प्रधान साथे, अतिकाय कुमार । ४० ।

शीश नमाव्युं स्वामीने, कर जोडी लागी पाय,
त्यारे राणीने घणुं मान दईने, बोल्यो रावणराय । ४१ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

राय रावण कहे राणी, क्यम आव्यां शे काज रे ?
त्यारे कर जोडी मयतनया बोली, एक बात सुणो महाराज रे । ४२ ।

* * *

खेद हो गया । ३७ । जब मंत्री की मृत्यु (की खबर) सुनी, तो रावण कुपित हो गया । अनन्तर वह मन में क्रोध करते हुए युद्ध करने के लिए तत्पर हो गया । ३८ । फिर उसने समस्त योद्धाओं को योग्य अर्थात् सज्ज बना लिया । (तब) नगर में कोलाहल मच गया । अतिअधिक वाद्य बजने लगे । उन्हें सुनकर (मानो) कानों में बधीरता आ गयी। ३९ ।

उस समय (उसकी) स्त्री सती मन्दोदरी रावण के पास आ गयी । साथ में माल्यवान नामक मंत्री और (राज-)कुमार अतिकाय था । ४० । उसने अपने स्वामी (पति) के सामने मस्तक नवाया और हाथ जोड़कर वह उसके पाँव लगी । तब रानी का बहुत सम्मान करते हुए राजा रावण बोला । ४१ ।

राजा रावण ने कहा—' हे रानी, कैसे आयी हो ? क्या काम है ? ' तब हाथ जोड़कर मय-तनया मन्दोदरी बोली, ' हे महाराज, एक बात सुनिए । ' ४२ ।

* * *

अध्याय—१३ (मन्दोदरी-रावण-सम्वाद)

राग चोपाई

मंदोदरी कहे सुणो राजन, कंई एक वात विचारो मन,
शाने कुळनो नाश ज करो ? वणमोते शा माटे मरो ? १ ।
रामनी साथे वेर ज करी, कहो कोण बेठो छे ठरी ?
माटे हठ मूको तमे राय, राम कदापि नहि जिताय । २ ।
हावे युद्ध करवा नव जशो, जय नहि पामो हळवा थशो,
तम स्वामी शिवनो रिपु काम, ते शुं मैत्री करी तमे स्वाम । ३ ।
ते माटे कोप्या शिवराय, पामशो मरण जय नहि थाय;
स्वामी तमो जीत्युं त्रिलोक, काम जीत्या विण सर्व फोक । ४ ।
कामे घणाने फजेत कर्या, योगी मुनि तपसी छेतर्या;
अनेक राणीजाया जेह, रणमांहे अटवाया तेह । ५ ।
मुकाव्यां महापुरुषनां मान, काम एवो दुर्जय बळवान,
एम जाणी तजो विपरीत काज, हावे क्षमा राखो महाराज । ६ ।
पतिव्रता सीता अभिराम, ते सोंपी रामने करो प्रणाम,
जो रघुपति शरण जाओ निरवाण, तो कंथ तमारुं थाय कल्याण । ७ ।

अध्याय—१३ (मन्दोदरी-रावण-सम्वाद)

मन्दोदरी ने कहा, 'हे राजन, सुनिए । मन में एक बात पर कुछ विचार तो कीजिए । कुल का नाश ही आप क्यों करने जा रहे है ? दावानल में आप किसलिए मरने जा रहे है ? १ । राम से बैर ही करके, कहिए कि कौन टिककर बैठा है ? इसलिए हे राजा, आप हठ छोड़ दीजिए (क्योंकि) राम कदापि नहीं जीते जा पाएँगे । २ । (इसलिए) आप युद्ध करने नहीं जाइए । आप जय को नहीं प्राप्त हो सकेंगे, आप अप्रतिष्ठित हो जाएँगे । आपके स्वामी शिवजी का शत्रु कामदेव है । हे स्वामी, आपने उससे मित्रता की है । ३ । इसलिए शिवराजजी क्रुद्ध हो गये है । (उससे) आप मृत्यु को प्राप्त हो जाएँगे; आपकी जय नहीं हो सकेगी । हे स्वामी, आपने त्रिभुवन को तो जीत लिया है, (परन्तु) बिना काम को जीते वह सब व्यर्थ है । ४ । काम ने बहुतों की दुर्दशा कर दी है— उसने योगियों, मुनियों, तपस्वियों को ठग लिया है । उसने अनेक राजकुमारों को युद्ध में नष्ट कर डाला है । ५ । उसने महापुरुषों के मान को छुड़ाया है । इस प्रकार काम दुर्जय और बलवान है । हे महाराज, ऐसा जानकर आप विपरीत काम करना छोड़ दीजिए । अब मुझे क्षमा कीजिए । ६ ।

ए शरणागतवत्सल छे नाथ, तमारे मस्तक मूकशे हाथ,
अवगुण एक धरशे नहि मन, अभयदान देशे स्वामीन । ८ ।
पछी निर्भय राज नग्रनुं करो, अखंड भोग भुक्तिने ठरो,
परनिंदा परधन परनार, एह तज्यां ते धन्य संसार । ९ ।
विरोध हिंसा ने अभिमान, एह तजे तव शोभे ज्ञान,
देह धर्यानो लाभ ज एक, सत्य आचरण आचरे जेह । १० ।
हुं जाणती सर्वज्ञ छो तमो, पण हवे मूरख जाण्या अमो,
तमारे कोण वातनी कमी ? अणिमादिक रही पाये नमी । ११ ।
सुरतरु कामधेनु स्वाधीन, देव थई रह्या चाकर दीन,
पद्मिनी अपार तम छाया तळे, जे देखी ब्रह्मादिक चळे । १२ ।
तोये सीताने लाव्या हरी, ए अंतकाळनी बुद्धि फरी,
ज्यारे निकट आवे अवसान, त्यारे जाय विवेक ने ज्ञान । १३ ।
जे ग्रह जक्तने पीडा करे, ते तम बंधीवान थई फरे,
सहु विश्वने दंडे यमराज, ते तमथी बीतो फरे आज । १४ ।

सीता सुन्दरी पतिव्रता है । उसे राम को सौंपकर उनको प्रणाम कीजिए । यदि आप अन्त में रघुपति की शरण में जाएँगे, तो हे कान्त, आपका कल्याण हो जाएगा । ७ । हे नाथ, वे शरणागत-वत्सल हैं, वे आपके मस्तक पर (अभयदान देनेवाला) हाथ रखेंगे । वे आपका एक भी अवगुण मन में नहीं रखेंगे और हे स्वामी, आपको अभय (दान) देंगे । ८ । फिर आप निर्भयता-पूर्वक (लंका-) नगर का राज्य कीजिए, अखण्ड भोगों का उपभोग करते रहिए । परधन, परनिन्दा और परस्त्री का जो त्याग करता है, वह संसार में धन्य है । ९ । (कोई जब) विरोध (शत्रुता), हिंसा और अभिमान को छोड़ देता है, तब उसका ज्ञान शोभायमान होता है । जो सत्य आचरण करता हो, उसे ही देह धारण करने से एक लाभ ही होता है । १० । मैं जानती हूँ कि आप सर्वज्ञ हैं; फिर भी अब मैं आपको मूर्ख समझ रही हूँ । आपको किस बात की कमी है ? अणिमा आदि (सिद्धियाँ) आपके चरणों में झुककर रह गयी हैं । ११ । कल्पवृक्ष, कामधेनु आपके अधीन हैं; देव आपके दीन सेवक होकर रह रहे हैं । जिन्हें देखकर ब्रह्मा आदि तक विचलित हो जाते हैं, ऐसी अनगिनत पद्मिनी (जाति की) स्त्रियाँ आपकी छाया में रहती हैं । १२ । (फिर भी) आप अपहरण करके सीता को लाये हैं । (जान पड़ता है,) यह आपकी अन्तकाल (लानेवाली) बुद्धि फिर गयी है । जब मृत्यु निकट आती है, तब (मनुष्य का) विवेक और ज्ञान नष्ट हो जाता है । १३ ।

पण आवां कर्म थकी क्षय थशे, कुटुंब राज पुर सर्व जशे,
माटे करो प्रीत रघुवरनी साथ, थाय कुशळ कहुं मानो नाथ । १५ ।
ए सीता काळ अनळनी झाळ, ते तम कुळ दहन करशे भूपाळ,
तमो कहो छो हुं जीतीश राम, ते मूको मिथ्या मन काम । १६ ।
तमो सर्व पुरुषार्थ ईश, पण सहस्रार्जुने धर्या दीपक शीश,
तेने मार्यो भृगुपति कळा हरी, जेणे एकवीश वार नक्षत्री करी । १७ ।
एवा फरशुधर पूरणकाम, पण तेनुं तेज हरी लीधुं राम,
ते रामने क्यम जीतशो नाथ ? मानो वचन जोडी कहुं हाथ । १८ ।
तमने राख्या बगल मोझार, जे वाली बळवंत अपार,
ते कपिने मार्यो एक बाण, एवा राम छे पुरुपपुराण । १९ ।
जेणे मच्छरूप धरी वाळ्या वेद, शंखासुरनो करियो छेद,
कूर्म थई धर्यो भूतळ भार, सागर मथन कर्यो मोरार । २० ।
उर्वी स्थापी शूकर थई, हिरण्याक्षने मार्यो जई,
हिरण्यकश्यपु हणियो नरहरि, प्रह्लाद भक्तनी रक्षा करी । २१ ।

जो (शनि आदि) ग्रह जगत को पीड़ा पहुँचाते हैं, वे आपके बन्दीवान होकर घूम रहे हैं। यमराज समस्त विश्व को दण्ड देता है, वह आज आपसे भयभीत होकर घूमता है। १४। परन्तु ऐसे कर्मों से (आपका) क्षय हो जाएगा; कुटुम्ब, राज्य, नगर सब नष्ट हो जाएँगे। इसलिए रघुवर से प्रेम कीजिए। हे नाथ, मेरी कही मानिए, तो कुशल होगी। १५। यह सीता कालाग्नि की ज्वाला है। हे राजा, वह आपके कुल का दहन कर देगी। आप कह रहे है— मैं राम को जीत लूँगा। (परन्तु) मन की इस मिथ्या कामना को छोड़ दीजिए। १६। आप समस्त पुरुषार्थों के ईश्वर हैं; फिर भी कार्तवीर्य सहस्रार्जुन ने आपके मस्तक पर दीप रखा था (अर्थात् आप दीया उठानेवाले सेवक बनाये गये थे)। उसके तेज को दूर करके उन भृगुपति परशुराम ने उसे मार डाला। जिन्होंने (पृथ्वी को) इक्कीस बार निःक्षत्रिय कर डाला था, ऐसे थे वे पूर्णकाम भगवान परशुराम। परन्तु राम ने उनके तेज का भी हरण कर लिया। हे नाथ, उन राम को आप कैसे जीत पाएँगे ? मेरी बात मानिए— मैं हाथ जोड़कर कह रही हूँ। १७-१८। जो वाली असीम बलवान था, उसने आपको बगल में (ठूँसकर) रख लिया था। उस कपि को (राम ने) एक ही बाण से मार डाला; ऐसे हैं (वे) पुराणपुरुष राम। १९। जिन्होंने मत्स्य रूप धारण करके वेदों की रखवाली की और

वामन थई जाच्यो बळिराय, मघवानी करी रक्षाय,
फरशुरामे नक्षत्री करी, मातपिता आज्ञा अनुसरी। २२।
दशरथ घेर राम अवतार, प्रगट थया हरवा भूभार,
ए पूरण ब्रह्म स्वयं भगवान, जेने आदि मध्य नहि अवसान। २३।
जेना कटाक्षे कंपे काळ, जे सृष्टि उदय हरता प्रतिपाळ,
ते ज राम छे ए निरवाण, जेने वश थल-चरना प्राण। २४।

शंखासुर[1] का वध किया, जिन्होंने कूर्म रूप[2] होकर भूतल का भार धारण किया और फिर भगवान मुरारि ने सागर को मथ लिया; जिसने शूकर (सूअर, वराह) होकर हिरण्याक्ष[3] को मार डाला और पृथ्वी की प्रतिष्ठापना की, जिन्होंने नरसिंह (के रूप में अवतरित) होते हुए हिरण्यकशिपु का वध किया और भक्त प्रह्लाद की रक्षा की, जिन्होंने वामन (रूप में अवतरित) होते हुए बलिराज से याचना की और (उसे पाताल में डालकर) इन्द्र की रक्षा की, जिन्होंने परशुराम के रूप में अवतरित होकर माता-पिता की आज्ञा का पालन करते हुए पृथ्वी को निःक्षत्रिय कर डाला, वे स्वयं दशरथ के घर राम रूप में अवतरित होते हुए भूमि का भार उतारने के लिए प्रकट हो गये हैं। वे भगवान राम स्वयं पूर्ण ब्रह्म हैं, जिनका कोई आदि, मध्य तथा अन्त नहीं है। २०-२३। जिनके कटाक्ष से काल काँप उठता है, जो सृष्टि का निर्माण करनेवाले हैं, उसके प्रतिपालक तथा संहारक हैं, जिनके वश में चराचर के प्राण रहते हैं, निश्चय ही वे ही ये राम हैं। २४। जो अन्तर्यामी हैं, जो घटघट में, अर्थात् प्रत्येक वस्तु में निवास कर रहे हैं, उन राम को आप कैसे जीत

१—मत्स्यरूप—शंखासुर : समुद्र में निवास करनेवाले शंखासुर नामक समुद्र-पुत्र ने अपने बल और प्रताप से समस्त देवों को आतंकित एव पराजित किया। देव फिर से प्रबल न हो जाएँ, इस उद्देश्य से उसने वेदों को नष्ट करना चाहा और उन्हें चुराकर समुद्र में छिपा दिया। वेदों के चुराये जाने पर समस्त लोक संत्रस्त हो गये। तब ब्रह्मा की प्रार्थना के अनुसार भगवान विष्णु ने मत्स्य का अवतार धारण किया और समुद्र में शंखासुर का वध करके वेदों को मुक्त किया।

२—कूर्मरूप : समुद्र-मन्थन के अवसर पर जब मन्दराचल रूपी मथानी नीचे की ओर जाने लगी, तब भगवान विष्णु ने कूर्म का अवतार धारण करके अपनी पीठ पर उस मथानी को टिकाये रखा।

३—हिरण्याक्ष : यह कश्यप-दिति का पुत्र दैत्य था और हिरण्यकशिपु का भाई था। उसने देवों को पराजित किया और वह पृथ्वी को लेकर भागते हुए समुद्र में गया। तब भगवान विष्णु ने उसका पीछा किया और वराह रूप धारण करके उसका वध किया और पृथ्वी को अपनी डाढ़ों पर उठाते हुए पानी में से बाहर निकाला।

ते रामने तमो क्यम जीतशो, जे अंतर्यामी घट घट वस्यो,
जो स्वामी करो कोटी उपाय, पण भक्ति विना ए वश नहि थाय । २५ ।
ए भक्तने वश छे हरि, जोयुं सर्व सिद्धांत ज करी,
माटे खोळो पाथरी कहु छुं आज, तमो रामने जोडी हाथ । २६ ।
जनकनंदिनी सोंपो आज, रामशरण जाओ महाराज,
जे रघुपतिनो चोर थई फरे, ते शिव ब्रह्माथी नहि ऊगरे । २७ ।
माटे जो इच्छो कल्याण, तो मानो नाथ ए मारी वाण,
एवां वचन राणीनां सुणी, पछी हसी बोल्यो लंकानो धणी । २८ ।

दोहा

रावण कहे सुण सुंदरी, सतीशिरोमणि नार,
तुं कहे छे ते सर्वे खरुं, पण एनो कहुं विचार । २९ ।
में वेर ज बांध्युं रामशुं, थयुं जगतमां जाण,
हावे जो हुं जई मळुं, तो थाये जशनी हाण । ३० ।
पुरुषारथ शो माहरो ? लोक करे निंदाय,
कहेशे रामना भय थकी, बीन्यो रावणराय । ३१ ।

पाएँगे ? हे स्वामी यद्यपि आप करोड़ों उपाय करें, फिर भी ये विना भक्ति के आपके वश में नहीं हो जाएँगे । २५ । समस्त सिद्धान्तों से ही मैंने देखा है कि वे हरि केवल एक भक्त के ही अधीन हो जाते हैं । इसलिए, हे नाथ, मैं आँचल पसारकर कह रही हूँ कि आप राम के हाथ जोड़कर आज जनक-नन्दिनी उन्हें सौंप दीजिए और हे महाराज, राम की शरण में जाइए । यदि आप रघुपति के चोर बनकर घूमते रहेंगे, तो शिव और ब्रह्मा द्वारा भी नहीं बचाये जाएँगे । २६-२७ । इसलिए हे नाथ, यदि आप अपने कल्याण की कामना कर रहे हों, तो मेरी यह बात मानिए । रानी की ऐसी बातें सुनने के पश्चात् लंका का स्वामी (रावण) हँसकर बोला । २८ ।

रावण ने कहा, ' सुनो, हे सुन्दरी, सती-शिरोमणि नारी, तुम (जो) कहती हो, वह सब सच्चा है; परन्तु मैं इस सम्बन्ध में एक विचार कहता हूँ । २९ । मैंने राम से बैर ठान लिया है, यह जगत में (सबको) विदित हो गया है । (अतः) यदि अब मैं जाकर उससे मिलूँ, तो मेरी कीर्ति की हानि हो जाएगी । ३० । (फिर) मेरा क्या पुरुषार्थ है ? लोग मेरी निन्दा करेंगे (और) कहेंगे कि राम के भय से राजा रावण डर गया है । ३१ । मै पुरुषार्थी असुर हूँ । मेरे बल, पराक्रम की महिमा है ।

हुं छुं असुर पुरुषारथी, बळ प्राक्रम महिमाय,
मैत्री करतां रामशुं, जश मारा सहु जाय । ३२ ।
हुं जाणु छुं भगवान ए, पूरणब्रह्म जगदीश,
पृथ्वीनो भार उतारवा, प्रगट थया छे ईश । ३३ ।
वेर करतां शुं में कर्युं, आरंभ्युं मोटुं काज,
हावे मळतां रामने, आवे छे मन लाज । ३४ ।
नथी मुकातुं मान में, नमुं नहि सुण नार,
ज्यारे त्यारे जक्तमां, मरवुं एक ज वार । ३५ ।
वळी जुद्ध करतां ए रामशुं, मरण थशे मुज जाण,
तो मारी सत्कीर्ति थशे, त्रिलोकमां निरवाण । ३६ ।
जेणे अवतरी आ जगतमां, न कर्यो जश विस्तार,
ते प्राणी जीवता मूवा, प्रेतरूप संसार । ३७ ।
थोडुं जीवी जश कर्यो, ते नर अमर जाण,
कल्प लगी जीव्या घणुं, जशरहित निरवाण । ३८ ।
तो ते जन जीवता मूवा, पुरुषारथ विण जेह,
माटे मरण में आदर्युं, जशना साटे देह । ३९ ।

(फिर) राम से मैत्री करने पर मेरी समस्त कीर्ति चली जाएगी । ३२ । मैं जानता हूँ कि वह भगवान है, पूर्णब्रह्म है, जगदीश है । (उसके रूप में) ईश्वर पृथ्वी के भार को उतारने के हेतु प्रकट हो गया है । ३३ । बैर करते हुए मैंने क्या किया ? (उससे) मैंने बड़ा काम आरम्भ किया है । अब राम से मिलने में मन में लज्जा आ रही है । ३४ । हे नारी, सुन लो । मेरे द्वारा अभिमान नही छोड़ा जाता है । मैं नहीं झुकूँगा । जब हो तब तो जगत में एक ही बार मरना है । ३५ । फिर समझ लो, उस राम से युद्ध करते-करते मेरी मृत्यु हो जाएगी; तब अन्त में त्रिभुवन में मेरी सत्कीर्ति हो जाएगी । ३६ । जिन्होंने इस जगत में अवतरित होकर (अर्थात् जन्म लेकर) अपनी कीर्ति की वृद्धि नहीं की, वे प्राणी जीवित रहने पर भी मरे हैं— संसार में प्रेत रूप में रहते हैं । ३७ । किसी ने थोड़ा जीवित रहते हुए कीर्ति (प्राप्त) की, तो उस नर को कीर्ति रूप से अमर समझ लो । कोई निश्चय ही यशहीन होकर कल्प तक जीवित रहे, तो जो विना पुरुषार्थ के (जीवित रहे) हैं, वे मनुष्य जीवित रहते हुए भी मृत (के बराबर) हैं । इसलिए, मैंने कीर्ति के (मूल्य के) बदले में देह की मृत्यु का आदर (स्वीकार) किया है । ३८-३९ । फिर मन में

वळी मुज मनमां अभिलाप छे, नर वानरना शा भार ?
मारे साह्यक छे घणा, वळिया जोद्ध अपार । ४० ।
लक्ष पुत्र सवा लक्ष तन, कुंभकरण मुज वीर,
काळ जीतीने वश करे, एवा छे रणधीर । ४१ ।
माटे रामने नहि नमुं, नहि आपुं सीताय,
निश्चे कहुं छुं सुंदरी, जे थनार होय ते थाय । ४२ ।
रावण बोल्यो वळ करी, मन आणी अभिमान,
त्यारे राणीए निश्चे जाणियुं, ए नहि माने अज्ञान । ४३ ।
जेवी भक्ति व्यभिचारी तणी, दंभिकनो वैराग्य,
परद्रोही ज्ञानी ज शो, कपटीनो अनुराग । ४४ ।
भ्रष्ट तणो आचार ज्यम, सूम तणुं ज्यम दान,
एवुं डहापण जाणजो, रावणनुं जे ज्ञान । ४५ ।
एने माथे आवियुं, मरण नजीक निरवाण,
माटे ए माने नहि, ज्यां लगी घटमां प्राण । ४६ ।

अभिलापा है, तो नरों और वानरों का क्या भार ? (क्योंकि) असंख्य बलवान योद्धा मेरे सहायक है । ४० । मेरे एक लाख पुत्र हैं, उनके सवा लाख पुत्र हैं, कुम्भकर्ण (जैसा) मेरा बन्धु है । काल (तक) को जीतकर वे अपने वश में कर सकते है— ऐसे वे रणधीर हैं । ४१ । इसलिए हे सुन्दरी, मैं निश्चय-पूर्वक कहता हूँ— जो होनेवाला हो, वह हो जाए; मैं न राम को नमस्कार करूँगा (राम के सामने नहीं झुकूंगा), न ही सीता (लौटा) दूंगा । ' ४२ ।

मन में अभिमान लाते हुए (करते हुए) रावण यह बल-पूर्वक बोला, तब रानी मन्दोदरी ने यह निश्चित रूप में समझ लिया कि यह अज्ञान (व्यक्ति) नहीं मान जाएगा । ४३ । जिस प्रकार व्यभिचारी व्यक्ति की भक्ति (व्यर्थ) होती है, दम्भी का वैराग्य (निरर्थक) होता है, उस प्रकार रावण का ज्ञान व्यर्थ है । ज्ञानवान व्यक्ति ही परद्रोही हो तो क्या ? (उसका ज्ञानी होना व्यर्थ है) । कपटी का अनुराग व्यर्थ होता है । ४४ । जिस प्रकार नीति-धर्म के मार्ग से भ्रष्ट मनुष्य का (धार्मिक) आचार व्यर्थ होता है, जिस प्रकार कंजूस का दान (अर्थहीन) होता है, समझो कि रावण की जो समझदारी थी, ज्ञान था, उसी प्रकार व्यर्थ है । ४५ । निश्चय ही इनके सिर पर मौत निकट आ गयी है । इसलिए जब तक घट (देह) में प्राण हों, तब तक ये नहीं मानेगे । ४६ । फिर ऐसा विचार

पछे एम विचारी मयसुता, गई निज मंदिरमांहे।
हवे रावण जुद्ध करवा चढ्या, तत्पर थईने त्यांहे। ४७।

वलण (तर्ज बदलकर)

तत्पर थईने चढ्यो रावण, जुद्ध करवा तेणी वार रे।
कहे दास गिरधर शुं वखाणुं, तेनी शोभानो नहि पार रे। ४८।

* * *

करके मय-सुता मन्दोदरी अपने घर चली गयी। अब वहाँ रावण ने सज्ज होकर युद्ध करने के लिए आक्रमण किया। ४७।

उस समय तैयार होकर रावण ने युद्ध करने के हेतु आक्रमण किया। गिरधरदास कहते हैं— क्या बखान करें ? उसकी शोभा का कोई पार नहीं था। ४८।

* * *

अध्याय—१४ (रावण का युद्धभूमि में आगमन)

राग भुजंगीनी देशी

चढ्यो राय लंका तणो युद्ध करवा,
जाणे कोपियो विश्वना प्राण हरवा।
वागी हाक पुरमां असुर सर्व मळिया,
वाहन सैन्य साजी चढ्या जुद्धे बळिया। १।
लक्ष पुत्र पोता तणा काळभाथी,
सवा लक्ष तेना चढिया संग साथी।

अध्याय—१४ (रावण का युद्धभूमि में आगमन)

लंका के राजा रावण ने युद्ध करने के हेतु (राम की सेना पर) आक्रमण किया। मानो विश्व के प्राणों का हरण करने के लिए वह क्रुद्ध हो गया था। उसके प्रताप का प्रभाव (या दवदबा) नगर में छा गया, तो समस्त असुर इकट्ठा हो गये। वे बलवान (योद्धा) युद्ध करने के लिए वाहन और सेना सज्ज करके चढ़ दौड़े। १। उसके अपने, काल के समान भयकारी एक लाख पुत्र थे। उसके सवा लाख संगी-साथी (भी)

मंत्री महारथी सारथि संग शूरा,
जाणे जुद्धनी पेर परपंच पूरा । २ ।
चतुरंग सेना चढी राय साथे,
धर्या शूरवीरे विजयपत्र माथे ।
फाटे सिंधु जेवो प्रलयकाळ केरो,
एवुं दळ देखाये घटाटोप घेरो । ३ ।
सकळ सैन्य मध्ये कनक मेरु जेओ,
दीसे रत्नमय रायनो रथ तेवो ।
रच्यो छे स्वहस्ते विरंचि सुवाने,
नथी जोड त्रिलोकमां ए समाने । ४ ।
रवि सहस्रनुं तेज रथमांहे चळके,
कनक कळश मणिमय धजा दंड झळके ।
बेठो राय रथमां सजी शस्त्र भाथा,
पहेर्या कवच अंगे अभेटोप हाथा । ५ ।
शिर पर छत्र दश ते सूरज पत्र तेवां,
चरम वींजणा वीजळी ज्योति जेवा ।

चढ़ दौड़े । साथ में शूर मन्त्री, महारथी, सारथी थे । वे युद्ध की रीतियाँ और (छल-कपट भरी) युक्तियाँ पूर्णत: जानते थे । २ । राजा के साथ (पदाती, अश्व-दल, हस्ति-दल और रथ-दल अर्थात्) चतुरंग सेना चढ़ दौड़ी । (मानो उन) शूर-वीरों ने मस्तक पर विजय-पत्र धारण किये थे । प्रलयकालीन समुद्र जैसा क्षुब्ध होकर उछलता हो, (रावण की) सेना उसी प्रकार, क्षुब्ध होकर (उत्साह-उमंग से उछलती हुई) चल रही थी । उसी प्रकार (प्रलयकारी) घनघटा से (घिरे समुद्र की भाँति) वह सेना (रावण के चारों ओर) घिरी हुई दिखायी दे रही थी । ३ । राजा रावण का रत्नमय रथ समस्त सेना के बीच स्वर्ण मेरु जैसा दीख रहा था । उसे विधाता ने अपने हाथों से भलीभाँति बनाया था । उसके समान जोड़ (का रथ) त्रिभुवन में नहीं था । ४ । उस रथ में सहस्र सूर्यों का तेज जगमगा रहा था; सुवर्ण कलश और रत्नमय ध्वज-दण्ड चमक रहे थे । उस रथ में राजा रावण शस्त्र और तरकस सज्ज करके बैठा हुआ था । उसने शरीर पर कवच, अभयटोप और दस्ते धारण किये थे । ५ । दसों सिरों पर जो छत्र थे, वे (मानो) दस सूर्यों से युक्त सूर्य-पत्र जैसे (अति तेजस्वी) थे; चॅवर और पंखे विद्युज्ज्योतियों जैसे थे । श्यामकर्ण घोड़े

श्यामकर्ण घोडा जोड्या रथ राजे,
जेने जोई उच्चैःश्रवा अश्व लाजे। ६।
गाजे घूघरी घणघणे घंट घंटा,
खांडां खडखडे वांकटा वीर कंटा,
हय हणहणे पाणीपंथा नचंता।
चाले जल-अनळमां आकाशे मचंता। ७।
चाले घूमता गज्ज चित्कार करता,
सिंचे शेरीओ मद मातंग झरता।
अंबाडी तपे तेज रविबिंब जाणे,
थाये घंटनो घोर सहेवाय कोणे। ८।
गाजे दुंदुभि गडगडे छे त्रंबाळु,
गोमुख भेरी रणतुर वाजे रसाळु।
परवत प्राय चाले जातुधान शूरा,
सिंहनाद करता जुद्धे वीर पूरा। ९।

(रथ में) जुते थे, जिन्हें देखकर उच्चैःश्रवा[1] घोड़ा (भी) लज्जित हो जाता हो। ऐसा वह रथ शोभायमान था। ६। (पाँवों में बँधी) पायल गरज रही थी; छोटे-बड़े घण्टे घनघना रहे थे। बाँके वीरों द्वारा लिये हुए खड्ग और कटारें (जैसे शस्त्र) खटखटा रहे थे। पानी की धारा की तरह (उछलते-कूदते) नाचते हुए घोड़े हिनहिना रहे थे और पानी, आग तथा आकाश में वे उमंग और आवेश के साथ (समान रूप से) चल रहे थे। ७। ठाटबाट से (झूमते हुए) हाथी चीत्कार करते हुए चल रहे थे। मद (-रस) बहाते हुए वे गलियों को सींच रहे थे। अम्बारियाँ तप्त अर्थात् तेजस्वी थीं; मानो वे सूर्य-बिम्ब ही हों। घण्टों का (ऐसा) गर्जन हो रहा था कि उसे किसी के द्वारा सहा नहीं जा रहा था। ८। दुन्दुभियाँ गरज रही थीं। नौबत गड़गड़ा रही थी। गोमुख, भेरियाँ (तुरहियाँ), रणतूर्य (वीर) रस उत्पन्न करते हुए बज रहे थे। पर्वत-से दिखायी देनेवाले, अर्थात् प्रचण्ड शरीरधारी शूर राक्षस चल रहे थे। वीरता से भरे-पूरे (वे लोग) युद्ध के लिए (जाते हुए) सिंहनाद कर रहे थे। ९। नाल (तोपें, आग्नेयास्त्र विशेष) जंजाल (एक अस्त्र विशेष) और वाण तथा भाले छूट रहे थे। तेज की (मानो)

१—उच्चैःश्रवा नामक घोड़ा समुद्र में से निकला, जब देवों और दानवों ने अमृत की प्राप्ति के लिए समुद्र का मन्थन किया था। वह इन्द्र को दिया गया था। पौराणिक मान्यता के अनुसार वह श्वेतवर्ण, सप्तमुखी तथा ऊँचे कानोंवाला था।

छूटे नाल जंजाल ने बाण भाला,
फरे चक्र मुदगर त्रिशूल तेज ज्वाळा।
गदा सांग फरसी तुमर खड्ग हाथे,
चाले गाजतां जोद्धनां जूथ साथे। १०।

पदप्रहार भारे धराधार कंपे,
डग्यो अहि कमठ कोल दिग्भूमि चंपे।
एवा सेन शुं ते रावण राय चढ़ियो,
देखी देवने त्रास मनमांही पडियो। ११।

आव्यो रीसे दशशीश रणमांहे ज्यारे,
नाठा वानरो त्रास पामीने त्यारे।
त्यारे विभीषणने रघुनाथ पूछे,
मारुं सैन्य नाठुं कहो केम शुं छे? १२।

सुणी वाणी रघुनाथनी शीश डोल्यो,
जोडी हाथने रावणानुज बोल्यो।
महाराज जुद्धे चढ्यो लंकास्वामी,
वाध्यो गर्व बहोळो परिवार पामी। १३।

साथे पुत्रपौत्र जामात्र घणेरां,
मंत्री महारथी छे मानी राय केरां।

ज्वाला-से दिखायी देनेवाले चक्र, मुद्गर, त्रिशूल फिर (घुमाये जा) रहे थे। गदाएँ, साँगें, फरसा (परशु) तोमर, खड्ग हाथ में लेकर योद्धाओं के दल साथ में गर्जन करते हुए चल रहे थे। १०। उनके पदाघातों के बोझ से (मानो) पृथ्वी का आधार ही काँप रहा था। (शेष) नाग, कूर्म, कोल (वराह) डगमगा रहे थे। दिगन्त तक भूमि विचलित हो उठी थी। इस प्रकार (की) सेना-सहित राजा रावण चढ़ दौड़ा, तो उसे देखकर देवताओं के मन में भय उत्पन्न हो गया। ११। जब दशानन क्रोध से रणभूमि में आ गया, तब वानर भय को प्राप्त होकर भाग गये। तब राम ने विभीषण से पूछा— 'मेरी सेना तो भाग गयी; कहो, (अब) यह कैसे (हुआ) है, क्या (हुआ) है ? । १२। राम की यह बात सुनकर रावणानुज विभीषण ने सिर हिलाया और हाथ जोड़कर कहा— 'हे महाराज, लंका का स्वामी युद्ध के लिए चढ़ दौड़ा है। विशाल परिवार को प्राप्त होने के कारण उसका गर्व बढ़ गया है। १३। उसके साथ बहुत पुत्र, पौत्र और जामाता हैं। उस राजा के महारथी मंत्री बहुत

बळिया छे जातुधान कोटान कोटी,
जेनी रण विषे जुद्धमां ख्यात मोटी। १४।
घणो साज साजी रावणराय चढियो,
झळके मध्यमां रथ मणिरत्न जडियो।
दीठो सुग्रीवे ए वैभव शत्रु केरो,
रीसे रातो मन क्रोध व्यापो घणेरो। १५।
रघुनाथने पाय ते शीश नामी,
चढ्यो जुद्ध करवा कपिनाथ स्वामी।
व्याप्यो नाद भुभुकार कपि हांक मारे,
थयो कंप अंडोळ भूगोळ त्यारे। १६।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

भूगोळ सर्वे खळभळ्युं, चढ्यो जुद्धे कपिनो नाथ रे,
नळ नील आदे यूथपति ते, चढ्या सुग्रीवनी साथ रे। १७।

* * *

(अभि-) मानी हैं। (उसके साथ ऐसे) कोटि-कोटि बलवान राक्षस हैं, जिनकी रणभूमि में युद्ध सम्बन्धी बड़ी ख्याति है।' १४। बहुत बड़ी सज्जा (तैयारी) करके राजा रावण युद्ध के लिए चढ़ दौड़ा। मणि-रत्नों से जटित उसका रथ बीच में जगमगा रहा था। जब सुग्रीव ने शत्रु का वह वैभव देखा, तो वह क्रोध से लाल हो गया। उसके मन में बहुत क्रोध व्याप्त हो गया। १५। रघुनाथ राम के चरणों में सिर नवाकर वह कपियों का नाथ अर्थात् स्वामी (राजा) सुग्रीव युद्ध करने के लिए चढ़ दौड़ा। उसकी भुभुकार ध्वनि फैल गयी। उस कपि ने (जब) हाँक लगायी, तब भू-गोल (पृथ्वी) डोलते हुए कम्पयुक्त हो उठा। १६।

समस्त भू-गोल भय-कम्पित हो उठा। (क्योंकि) कपियों का राजा युद्ध के लिए चढ़ दौड़ा। सुग्रीव के साथ नल-नील आदि यूथ-पति (भी) चढ़ दौड़े। १७।

* * *

अध्याय—१५ (रावण के बाण से लक्ष्मण का मूर्छित हो जाना)

राग मारु

रावण सामो चढ्यो सुग्रीव, साथे जथपति बळना शिव,
एक मोटो गिरि ग्रही हाथ, नाख्यो दशमुख पर कपिनाथ । १ ।
रावणने तव मूक्युं बाण, कर्यो पर्वत पिष्ट प्रमाण,
पछे सुग्रीवना हृदे मांहे, दश बाण ज मार्यां त्यांहे । २ ।
ऊछळ्यो सुग्रीव तेणी वार, नाख्यो बीजो गिरि निरधार,
कर्यो ते वळी चूरण जाण, वेध्यो सुग्रीवने शत बाण । ३ ।
थयो मूर्छित कपिपति त्यांहे, रुधिरधारा चाली तन मांहे;
ते समे ऊछळ्या विकराळ, अष्टादश क्षोणी कपिकाळ । ४ ।
मारे वृक्ष गिरि पाषाण, थाय वृष्टि करे बुंबाण,
रावण नथी गणतो लगार, जेम गिरि पर मेघनी धार । ५ ।
दशानने मूक्यां बहु बाण, कर्युं सर्वे निवारण जाण,
ज्यम वादी कुतर्क अनेक, निवारण करे पंडित एक । ६ ।

अध्याय—१५ (रावण के बाण से लक्ष्मण का मूर्छित हो जाना)

रावण के सामने सुग्रीव चढ़ दौड़ा, तो उसके साथ (नल-नील) आदि यूथ-पति थे, जो बल की सीमा (ही) थे। कपिपति सुग्रीव ने हाथ में एक बड़ा पर्वत लेकर दशानन पर गिरा दिया। १। तब रावण ने बाण चलाकर उस पर्वत को चूर्ण के बराबर कर दिया। फिर उसने वहाँ सुग्रीव के हृदय (-स्थल) पर ही दस बाण चला दिये। २। उस समय सुग्रीव उछल उठा और उसने निश्चयपूर्वक दूसरा पर्वत फेंक दिया। समझिए कि फिर रावण ने उसे चूर-चूर कर डाला और सुग्रीव को सौ बाणों से बींध डाला। ३। (फलतः) कपिपति वहाँ मूर्च्छित हो गया और फिर उसके शरीर से रक्त की धारा बहने लगी। उस समय अठारह अक्षौहिणी काल-से विकराल कपि उछल उठे। ४। वे वृक्ष, पर्वत और पाषाण फेंकने लगे। उनकी (मानो) वर्षा (ही) होने लगी। वे चीख-चीत्कार कर रहे थे। जिस प्रकार पर्वत पर मेघ (-जल) की धारा पड़ने से वह उसे कुछ नहीं मानता, उस प्रकार रावण (वृक्ष-पर्वत-पाषाणों की) वर्षा-धारा को कुछ भी नहीं गिन (समझ) रहा था। ५। दशानन ने बहुत बाण छोड़े और समझिए कि सबका निवारण कर दिया, जिस प्रकार वाद करनेवाला अनेक कुतर्क करता हो, फिर भी अकेला पंडित उन (सब) का निवारण करता है। ६। अनन्तर उसने अनगिनत बाण छोड़े

पछी मूक्यां नाराच अमित, कर्या सहु कपि जर्जरीभूत,
लेई रामनी आज्ञा त्यारे, धाया सात कपि तेणी वारे। ७ ।
मयंद शरभ गवय गंधमादन, गवाक्ष कुमुद द्विविद बळवान,
साते धाया ग्रही पाषाण, रावणे उडाड्या मूकी बाण। ८ ।
करमांथी ते गिरिने निवार्या, सातेने शर शत शत मार्या,
पड्या व्याकुळ थई निरवाण, थयुं सेन मांहे भंगाण। ९ ।
जोई रावणनुं प्राक्रम, कोप्या लक्ष्मण जे जतिधर्म,
राम आज्ञा मागी तेणी वार, रण चडिया सुमित्राकुमार। १० ।
आवी सन्मुख करियो होकार, कीधो धनुष तणो टंकार,
बोल्या लक्ष्मण करीने रीस, अल्या मूरख तस्कर दशशीश। ११ ।
आप सीताने हो मतिमंद, शीद कुळनो करावे निकंद ?
नहि तो मारीश आणे ठाम, मोकलीश कृतांतने धाम। १२ ।
बोल्यो रावण रीसे खुंखारी, अल्या तपसी बोल विचारी,
हुं जीवतां जानकी स्पष्ट, तमो नथी देखता दृष्ट। १३ ।
एवुं सांभळी पवनकुमार, धायो गिरि लई कर मोझार,
क्रोधे मार्यो रावण शिर त्यम, पडे वीज ओचिंती ज्यम। १४ ।

और सब कपियों को जर्जर कर डाला। तब उस समय राम की आज्ञा लेकर सात कपि दौड़े। ७। मयन्द, शरभ, गवय, गन्धमादन, गवाक्ष, कुमुद और द्विविद-ये सात बलवान वानर पाषाण लेकर दौड़े, तो उन (पाषाणों) को रावण ने बाण छोड़कर उड़ा दिया। ८। उनके हाथों में से आनेवाले पर्वतों का निवारण किया और सातों पर सौ-सौ बाण छोड़े। (फलस्वरूप) वे अन्त में व्याकुल होकर गिर गये, तो सेना में भगदड़ मच गयी। ९। रावण के इस पराक्रम को देखकर, लक्ष्मण जो यतिधर्म निभा रहा था, क्रुद्ध हो गया। उस समय वह सुमित्राकुमार राम से आज्ञा लेकर रणभूमि में चढ़ दौड़ा। १०। सामने आकर उसने हुंकार भरी, धनुष का टनत्कार किया। फिर लक्ष्मण क्रोध से बोला— 'अरे मूर्ख, चोर दशानन। ११। सीता (लौटा) दो। रे मन्दमति, कुल का संहार क्यों करा रहे हो ? नहीं तो मैं तुम्हें इस स्थान पर मार डालूँगा और कृतान्त (यम) के घर भेज दूँगा।' १२। (तब) क्रोध से गुर्राते हुए रावण बोला— 'अरे तापस, सोच-विचारकर बोल। मेरे जीवित रहते, यह स्पष्ट है कि तुम (लोग) जानकी को आँखों से देख (तक) नहीं पाओगे।' १३। ऐसा सुनकर पवनकुमार हनुमान हाथ में पर्वत लिये हुए दौड़ा और उसने वह रावण के सिर पर वैसे ही पटक

झाल्यो आवतो वीस भुजाय, चोळी नाखी कर्यो पिष्ट प्राय,
रीसे मारुति तव गडगडियो, रावणना रथ उपर चढियो । १५ ।
रावणे कर्यो पदनो प्रहार, पाडी नाख्यो पृथ्वी मोझार,
त्यारे लेई गिरि करमां विशाळ, धाया नळ कपि तेणे काळ । १६ ।
नाख्यो रावण उपर जेवे, कर्यो चूर्ण मूकी शर तेवे,
मार्या नळने हृदे पंच बाण, त्यारे कोप्यो कपि निर्वाण । १७ ।
तव जप्यो ब्रह्मदत्त मंत्र, कोटी कोटी थया नळ तत्र,
लाग्या रावणशुं जुद्ध करवा, जाणे प्रगट्या प्राण ज हरवा । १८ ।
जोई नळ कपिनुं महा वीर्य, उभय सैन्य करे आश्चर्य,
ज्यां जुए त्यां नळ छे अपार, मारे रावणने घणो मार । १९ ।
कर्यो अनेक राक्षसनो नाश, ज्यम वनने बाळे हुताश,
एक मुहूरत एवुं रह्युं, दशशीशे ना जाये सह्युं । २० ।
मूक्युं ब्रह्मास्त्र करीने कोप, नळ थया त्यारे सर्व अलोप,
पछी रह्यो एक नळ प्राय, ज्यम रवि उदे तारा विलाय । २१ ।

डाला, जैसे अकस्मात बिजली गिर जाती हो । १४ । (फिर भी) रावण ने बीसों हाथों से उसे आते हुए पकड़ लिया और मसल डालते हुए पिष्टप्राय (चूरा-सा) कर डाला (पीस डाला) । तब क्रोध से हनुमान ने भुभुकार किया और वह रावण के रथ पर चढ़ गया । १५ । तो रावण ने उसपर पाँव से आघात किया और पृथ्वी पर गिरा दिया । तब उस समय हाथ में एक प्रचण्ड पर्वत लेकर नल कपि दौड़ा । १६ । जिस समय उसने वह रावण पर गिरा दिया, उस समय उसने (रावण ने) बाण छोड़कर उसे चूर-चूर कर डाला । (फिर) उसने नल के हृदय (-स्थल) पर पाँच बाण छोड़े, तब वह कपि असीम रूप से क्रुद्ध हो उठा । १७ । तब उसने ब्रह्मा द्वारा दिये हुए मंत्र का जाप किया; तो वहाँ कोटि-कोटि नल (वानर उत्पन्न) हो गये । वे रावण से युद्ध करने लगे । मानो उसके प्राणों का ही हरण करने के लिए वे उत्पन्न हो गये हों । १८ । नल कपि की महती वीरता को देखकर दोनों सेनाओं ने आश्चर्य अनुभव किया । जहाँ देखें, वहाँ अनगिनत नल थे और वे (नल) रावण पर बहुत आघात कर रहे थे । १९ । जैसे आग वन को जला देती है, वैसे उन्होंने (क्रोधाग्नि में जलाते हुए) अनेक राक्षसों का संहार कर डाला । एक मुहूर्त भर ऐसा ही (चलता) रहा; वह रावण द्वारा सहा नहीं गया । २० । तो उसने क्रोध से ब्रह्मास्त्र छोड़ा, तब समस्त नल लुप्त हो गये । फिर जैसे सूर्योदय होने पर तारे विलीन हो जाते हैं, वैसे ही (ब्रह्मास्त्र प्रकट

पछी देई रावणने साद, कर्यो रामानुजे सिंहनाद,
चढ्यो क्रोध लक्ष्मणने अपार, कर्यो धनुष तणो टंकार। २२।
त्यारे रावण बोल्यो वाणी, अल्या शुं देखाडे चाप ताणी?
तुं मनुष्यनो पुत्र प्रमाणे, रणमां जुद्ध करी शुं जाणे? २३।
तें कर्यो छे पुरुषार्थ? अल्या कहे मुजने ते अर्थ,
एवुं सांभळी लक्ष्मण वीर, घणां बाण मूक्यां रणधीर। २४।
जई चोंट्यां रावणने अंग, घणुं रुधिर चाल्युं ते संग,
ब्रह्मशक्ति काढी दशशीश, मंत्रयुक्त करी ते दीश। २५।
लक्ष्मण उपर मूकी अमोघ, ज्यम प्रलयवीजनो ओघ,
दीठी आवती लक्ष्मण वीर, मूक्युं ब्रह्मास्त्र धरीने धीर। २६।
चाल्युं घूघवतुं ते प्रचंड, कर्या शक्ति तणा बे खंड,
अग्रभाग ऊछळियो त्यांहे, वाग्यो लक्ष्मणना हृदेमांहे। २७।
पड्या लक्ष्मण मूर्छासहित, थया श्वासोश्वास रहित,
पीडा पाम्या सौमित्री अपार, थयो सैन्यमां हाहाकार। २८।

होने पर) समस्त मायावी नल लुप्त हो गये और प्राय: एक ही कपि सच्चा नल (शेष) रह गया। २१। अनन्तर रावण को पुकार (-ललकार) कर लक्ष्मण ने सिंहनाद किया। लक्ष्मण को अपार क्रोध आ गया था। उसने धनुष की टंकार कर दी। २२। तब रावण ने यह बात कही— 'अरे धनुष तानकर क्या दिखा रहा है? तू तो मनुष्य के पुत्र के समान है; तू युद्धभूमि में युद्ध करना क्या जाने? । २३। अरे मुझे यह बात तो कह दे कि तूने क्या पुरुषार्थ किया है?' ऐसा सुनकर रणधीर वीर लक्ष्मण ने बहुत बाण छोड़ दिये। २४। वे जाकर रावण के शरीर में धँस गये, तो साथ ही बहुत रक्त बहने लगा। (तब) दशानन ने ब्रह्म-शक्ति निकाली और उसे उस समय मंत्र-युक्त (अभिमंत्रित) कर दिया। २५। उसने वह लक्ष्मण पर चला दी; (वह वैसे ही चली) जैसे वह प्रलयकाल की बिजली का ओघ ही हो। उसे आते देखकर वीर लक्ष्मण ने धीरज धारण करते हुए ब्रह्मास्त्र छोड़ा। २६। वह प्रचण्ड अस्त्र घहराता हुआ चला और उसने उस शक्ति के दो टुकड़े कर डाले। (फिर भी) उसका अग्रभाग वहाँ उछल गया और वह लक्ष्मण के हृदय में (आघात करते हुए) लग गया। २७। (फलत:) लक्ष्मण मूर्च्छित होकर गिर गया— वह साँस-उसाँस रहित हो गया (उसकी साँस का चलना वन्द हो गया)। लक्ष्मण अपार पीड़ा को प्राप्त हो गया। (यह देखकर) सेना में हाहाकार मच गया। २८।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

हाहाकार थयो सैन्यमां ज्यारे पड्या लक्ष्मण वीर रे,
ते समे करमां गदा लेई धायो, मारुतसुत रणधीर रे। २९।

* * *

जब वीर लक्ष्मण गिर गया, तब सेना में हाहाकार हो गया। उस समय रणधीर पवनकुमार हाथ में गदा लेकर दौड़ा। २९।

* * *

अध्याय—१६ (व्याकुल होकर रावण का युद्धभूमि से लौट जाना और कुम्भकर्ण को जगा देना)

राग सामेरी

हनुमंत धायो ते समे, कर गदा ग्रही निरवाण,
प्रलय समे ज्यम रुद्र कोपे, लेवा जगतना प्राण। १।
ते गदा मारी भंग कीधो, रावणनो रथ जेह,
पछे तरु गिरि पाषाणनी, वृष्टि करी ज्यम मेह। २।
त्यारे राय बेठो बीजे रथ, कर ग्रह्यां दश कोदंड,
बहु बाण मूकी रावणे, तरुगिरि कर्या शत खंड। ३।
एक बाण मार्युं मर्ममां, मूर्छा थई हनुमंत,
वालीसुवन धायो तदा, मुष्टि करी बळवंत। ४।

अध्याय—१६) व्याकुल होकर रावण का युद्धभूमि से लौट जाना और कुम्भकर्ण को जगा देना)

अन्त में, उस समय हाथ में गदा लेकर हनुमान दौड़ा, जैसे प्रलयकाल में जगत् के प्राण लेने के लिए रुद्र क्रुद्ध होकर (दौड़ता हुआ) जाता हो। १। उसने गदा मारकर रावण का जो रथ था, उसे भग्न कर डाला। अनन्तर जिस प्रकार, मेघ वृष्टि करता है, उस प्रकार वह वृक्षों, पर्वतों और पाषाणों की वृष्टि करने लगा। २। तब राजा रावण दूसरे रथ में बैठा; उसने हाथों में दस धनुष धारण किये। (फिर) रावण ने बहुत बाण छोड़कर उन वृक्षों और पर्वतों को शतखण्ड कर डाला (उनके सैकड़ों टुकड़े कर डाले)। ३। (फिर) उसने मर्म स्थान पर एक बाण मारा, तो हनुमान मूर्च्छित हो गया। तब बलवान बाली-सुत अंगद घूँसा बनाते हुए

ते रावणना रुदेमांहे मारी, अंगदे करी रीस,
पछे चूंटी नाख्युं कर वडे, ते सारथिनुं शीश । ५ ।
सावचेत थई एक सांग मारी, रावणे तेणी वार,
ते अंगदना अंगमां वागी, पड्यो पृथ्वी मोझार । ६ ।
त्यारे मारुतसुत लक्ष्मण तणी, त्यां वळी छे मूर्छाय,
ते युद्ध करवा ऊठिया, त्यारे बोल्या श्रीरघुराय । ७ ।
अरे भाई श्रमित थया तमो, हवे ऊभा रहो क्षण वीर,
एम कहीने मारुति स्कंधे, चड्या श्यामशरीर । ८ ।
टंकार करियो धनुषनो, त्यारे कडकडियुं ब्रह्मांड,
पछे रावण सन्मुख जुद्ध करवा, आव्या ब्रह्म अखंड । ९ ।
महा क्रोध करी शर मुकियां, कर्यो सैन्यनो संहार,
चाली सरित शोणितनी तेमां, तणाया गज तोखार । १० ।
छेदाय कोना कर चरण, ऊठतां कोनां शीश,
एम राक्षसनो संहार करियो, कोपिया जगदीश । ११ ।
एम बाण मूकियां रघुपति जे, संहारक सर्वत्र,
दश बाणथी रावण तणां, उडाडियां दश छत्र । १२ ।

दौड़ा । ४ । अंगद ने क्रोध से रावण के हृदय पर (घूँसा) जमाया। फिर उसने उसके सारथी का सिर हाथ से चोंट डाला । ५ । उस समय सचेत होकर रावण ने एक साँग मार दी, तो वह अंगद के शरीर में लग गयी । (फलतः) वह भूमि पर गिर गया । ६ । तब (तक) वहाँ पवन-कुमार हनुमान की और लक्ष्मण की मूर्च्छा चली गयी । तो वे युद्ध करने के लिए उठ गये । तब श्रीरघुराज राम बोले । ७ । 'अरे भाइयो, तुम थक गये हो । हे भाइयो, क्षण भर खड़े रहो ।' ऐसा कहकर श्याम-शरीरी श्रीराम हनुमान के कंधे पर चढ़ गये । ८ । उन्होंने धनुष की टंकार की, तब ब्रह्माण्ड कड़कड़ा उठा । अनन्तर अखण्ड ब्रह्म (-स्वरूप) राम युद्ध करने के लिए रावण के सम्मुख आ गये । ९ । उन्होंने बड़े क्रोध से बाण चलाये और सेना का संहार कर डाला । तब रणभूमि में रक्त की नदी बहने लगी । उसमें हाथी और घोड़े बह गये । १० । (इसके अतिरिक्त) किसी-किसी सैनिक के चरण काटे गये; किसी-किसी के सिर (कटकर) उड़ गये । इस प्रकार उन्होंने राक्षसों का संहार किया । जगदीश राम (इतने) क्रुद्ध हो गये थे । ११ । इस प्रकार रघुपति ने जो बाण छोड़ दिये, वे सर्वत्र संहारक (सिद्ध) हो गये । उन्होंने दस बाणों से रावण के दसों छत्र उड़ा दिये । १२ । उन धीर

धजा चामर छेदियां, दश धनुष काप्यां धीर,
दश मुगट पृथ्वी पाडिया, पछे बोल्या श्रीरघुवीर । १३ ।
अरे दुरीजन जीवतो, तुंने मूकुं छुं हुं आज,
सहु भोग भोगव्य घेर जईने, करी ले सहु काज । १४ ।
स्त्रीओने वळी पुत्रने तुं पूछ, जईने त्यांहे,
पछे मुज साथे जुद्ध करवा, आवजे तुं आंहे । १५ ।
हवें जीव्यानी आशा न राखीश, सत्य कहुं निरवाण,
एवां वचन सुणीने रावण, मनमां क्षोभ पाम्यो जाण । १६ ।
मन एम जाण्युं मारशे, हमणां मुंने ए राम,
एम विचारीने रावण नाठो, मूकीने संग्राम । १७ ।
ज्यम देशत्याग दरिद्र पीड्यो, करे जन निरधार,
एम रावण नाठो रणथकी आव्यो नगर मोझार । १८ ।
पछे शोकातुर थई सभा मध्ये, बेठो जई दशशीश,
दवनो बळ्यो जेवो तरु, राहु ग्रस्यो रजनीश । १९ ।
ए रीते तेजक्षीण थईने, बेठो सिंहासन,
छत्र चामर वस्त्र भूषण, नथी गमतुं मन । २० ।

(पुरुष) ने—श्रीरघुवीर ने (रावण के) ध्वज, चँवर छेद डाले, दसों धनुष काट दिये और दसों मुकुट पृथ्वी पर गिरा दिये। फिर वे बोले। १३। 'अरे दुर्जन, मैं तुझे आज जीवित छोड़ रहा हूँ। घर जाकर समस्त भोगों का उपभोग कर ले, समस्त काम (पूर्ण) कर ले। १४। वहाँ जाकर (अपनी) स्त्रियों से, उनके अतिरिक्त, पुत्रों से पूछ ले (अनुमति प्राप्त कर ले); फिर मुझसे युद्ध करने के लिए तू यहाँ आ जाना। १५। मैं अन्त में सत्य कह रहा हूँ, अब तू जीवित रहने की आशा न रख पाएगा।' समझिए कि ऐसे वचन सुनकर रावण मन में क्षोभ को प्राप्त हो गया। १६। उसने मन में यह जान लिया कि 'ये राम मुझे अभी मार डालेंगे।' ऐसा विचार कर युद्ध (-भूमि) छोड़कर रावण भाग गया। १७। जिस प्रकार दरिद्रता पीड़ित मनुष्य निर्धार-पूर्वक देश-त्याग करता है, उस प्रकार (राम से आतंकित होकर) रावण युद्ध-भूमि से भाग गया और नगर में आ गया। १८। अनन्तर शोक से व्याकुल होते हुए दशानन जाकर सभा में बैठ गया। जैसे वृक्ष आग से जल गया हो, चन्द्रमा राहु द्वारा ग्रसित हो, (तो वह जैसा तेजोहीन दिखायी देता हो) उस प्रकार क्षीणतेज (फीका) होकर वह (रावण) सिंहासन पर बैठ गया। उसके मन को छत्र, चामर, वस्त्र, आभूषण नहीं भा रहे थे। १९-२०। रघुवीर राम

भये करी रघुवीरने, सर्वत्र देखे राम,
उदास थईने चिंता करतो, रावण तेणे ठाम। २१।
पछे महोदर मंत्री पोतानो, तेने तेड्यो पास,
हे मित्र! हावे हुं शुं करुं? मुंने रामनो बहु त्रास। २२।
आज पराजय जुद्धमांहे पाम्यो, थयुं घणुं अपमान,
एवां वचन सुणी रावण तणां, पछे बोलियो परधान। २३।
जो कुंभकरण तम वीरने, हावे उठाडो महाराज,
ते जुद्ध करवा जाय त्यारे, थाय सरवे काज। २४।
राम लक्ष्मण सहित वानर, सैन्य ए गळी जाय,
एवां वचन सुणी आपी दशानने, मंत्रीने आज्ञाय। २५।
त्यारे महोदर विरूपाक्ष बे जण, चालिया तेणी वार,
दश लक्ष राक्षस संग लई, आव्या कुंभकरणने द्वार। २६।
चार सहस्र पखाल मद्यनी, हस्ती उपर तेह,
अपार पशु अन्नना पर्वत, भक्ष करवा जेह। २७।
जगाडवा मांड्यो पछे, कुंभकरणने ते दीश,
वजाडवा लाग्या घणां, वाजित्र एने शीश। २८।

के भय से वह सर्वत्र राम (ही) देख रहा था। उदास होकर उस स्थान पर (भी) रावण चिन्ता कर रहा था। २१। अनन्तर उसने अपने मंत्री महोदर को अपने पास बुला लिया (और उससे कहा—), 'हे मित्र, अब मैं क्या करूँ? मुझे राम से बहुत भय लग रहा है। २२। आज युद्ध में मैं पराजय को प्राप्त हो गया हूँ; (इससे) मेरा बहुत अपमान हो गया है।' रावण के ऐसे वचन सुनने के पश्चात् मंत्री (महोदर) बोला। २३। 'हे महाराज, यदि अपने बन्धु कुम्भकर्ण को अब उठाएँ, तो वह युद्ध करने के लिए जाएगा और तब समस्त कार्य (सिद्ध) हो जाएगा। २४। वह राम-लक्ष्मण सहित वानर सेना को निगल जाएगा।' ऐसी बातें सुनकर रावण ने मंत्री को आज्ञा दी। २५। समझिए कि तब उस समय महोदर और विरूपाक्ष—दो जने चल दिये। वे साथ में दस लाख राक्षसों को लेकर कुम्भकर्ण के (भवन के) द्वार पर आ गये। २६। हाथियों पर मद्य की चार लाख पखालें रखकर वे चल दिये। (साथ में) अनगिनत पशु और अन्न के पर्वत खाने के लिए (लिये जा रहे) थे। २७। उस समय उन्होंने कुम्भकर्ण को जगाना आरम्भ किया। वे उसके मस्तक के पास बहुत से वाद्य बजाने लगे। २८। उन्होंने कुम्भकर्ण के कानों में भेरियों की ध्वनि की (भेरियाँ बजा दीं)। वाद्यों की वह घोर

कुंभकरणना करणमांहे, कर भेरी नाद,
घणो घोर ते वाजित्रनो, संभळाय स्वर्गे साद । २९ ।
हस्तिनी हारो हृदय उपर, चलावे छे तेह,
पण कुंभकरण नथी जागतो, छे महा निद्रित जेह । ३० ।
अनेक तरु नाकमां घाले, सर्पनो नहि पार,
ते श्वास केरा सपाटामां, ऊठी पडे पुर बहार । ३१ ।
ते कुंभकरणने जगाडवा, एम कर्या अनेक उपाय,
लेशमात्र ते नव लेखवे, सहुने थई चिंताय । ३२ ।
कर्णमां बेसाडी तदा, पछी स्त्रीओ किन्नरी जेह,
ते सुस्वरेथी सुंदरी, मांहे गान करती एह । ३३ ।
ते गान अंतर ऊतर्युं, घटश्रोत जाग्यो भूर,
आळस मोडी बेठो थयो, लोचन उघाड्यां क्रूर । ३४ ।
क्रूर लोचन रातां छे, जाणे ऊघडी अग्नि खाण,
एम कुंभकरण जागीने बोल्यो, प्रधान प्रत्ये वाण । ३५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

प्रधान प्रत्ये वाणी बोल्यो, कुंभकरण तेणी वार रे,
कहो क्यम जगाड्यो मुंने आ वेळा ? शी भीड पडी निरधार रे? ३६ ।

ध्वनि स्वर्ग (तक) में सुनी गयी । २९ । उन्होंने हाथियों का दल उसके हृदय-स्थल पर चला दिया । परन्तु कुम्भकर्ण, जो महा-निद्रित (गहरी नींद में) था, नहीं जग रहा था । ३० । उसकी नाक में अनेक वृक्ष डाले गये; सर्पों का तो पारावार नहीं था । वे साँस के झपट्टे से उड़कर नगर के बाहर गिर जाते थे । ३१ । कुम्भकर्ण को जगाने के लिए वे (इस प्रकार) अनेक उपाय कर रहे थे । परन्तु वह उन्हें लेशमात्र भी नहीं गिन रहा था, तो सबको चिन्ता (अनुभव) हो गयी । ३२ । तब फिर उन्होंने उसके कानों में किन्नरी स्त्रियों को बैठा दिया । वे सुन्दरियाँ उनमें सुस्वर गायन करने लगीं । ३३ । वह गायन उसके अन्दर उतर गया, तो मूढ़ कुम्भकर्ण जग गया । (आलस्य से) अँगड़ाई लेते हुए वह बैठ गया और उस मूढ़ ने आँखें खोलीं । ३४ । उस क्रूर की आँखें लाल थीं; मानो आग की खान ही खुल गयी हो । इस प्रकार कुम्भकर्ण जगकर मंत्रियों के प्रति यह बात बोला । ३५ ।

उस समय कुम्भकर्ण मंत्रियों के प्रति यह बात बोला— 'कहो, मुझे इस समय तुमने क्यों जगा दिया ? निश्चय ही तुम्हें क्या आवश्यकता पड़ी है ?' । ३६ ।

* * *

अध्याय—१७ (कुंभकर्ण के बल का परिचय, रावण-कुंभकर्ण-संवाद, कुंभकर्ण का रणभूमि की ओर गमन)

राग सारंग

कुंभकरण जागीने बेठो, कर्युं मदिरापान,
अनेक पशु अन्नमांस तणो ते, आहार कर्यो बळवान । १ ।
तृप्त थयो छे लोचन लूछी, पूछी प्रधानने वात,
कहो मुजने जगाड्यो शा माटे ? शी भीड पडी मुज भ्रात ? २ ।
त्यारे जे थयुं ते वृत्तांत कह्युं, मंत्रीए तेणी वार,
ते सुणीने घटश्रोत्रज ऊठ्यो, आव्यो सभा मोझार । ३ ।
ज्यारे ऊभो थयो त्यारे गगन लगी, मोटुं रूप दीसे विकराळ,
ज्यम काजळनो गिरि ऊंचो दीसे, के प्रगट थयो जाणे काळ । ४ ।
त्यारे विभीषणे रामने देखाड्या, जुओ पेलो ऊठयो कुंभकर्ण,
ते जोईने सहु आश्चर्य करे, जाणे पर्वत काजळ वर्ण । ५ ।
विभीषण कहे एनो जन्म थयो, त्यारे वरत्यो हाहाकार,
त्रीश सहस्त्र स्त्रीने ते समे, गळी गयो निरधार । ६ ।

अध्याय—१७ (कुंभकर्ण के बल का परिचय, रावण-कुंभकर्ण-संवाद, कुंभकर्ण का रणभूमि की ओर गमन)

कुम्भकर्ण जगकर उठ बैठा, तो उसने मदिरा-पान किया, (फिर) उसने उस बलवान (असुर) ने अनेक पशुओं के मांस तथा (अन्य प्रकार के) अन्न का आहार (ग्रहण) किया । १ । वह (तब) तृप्त हो गया, तो आँखों को पोंछते हुए उसने (रावण के) मंत्रियों से यह बात पूछी, 'कह दो, मुझे किसलिए जगा दिया ? मेरे भाई पर कौन-सा संकट आ पड़ा है ? ' । २ । तब उस समय मंत्रियों ने जो हो गया था, उस सम्बन्ध में समाचार कह दिया । वह सुनकर कुम्भकर्ण उठ ही गया और सभा में आ गया । ३ । जब वह (जाने के लिए) खड़ा हो गया, तब उसका आकाश तक बड़ा (ऊँचा) रूप (वैसे ही) विकराल दिखायी दे रहा था, जैसे कज्जल का पर्वत ऊँचा दिखायी देता हो; अथवा मानो काल ही प्रकट हो गया हो । ४ । तब विभीषण ने (यह कहते हुए) राम को दिखा दिया— ' वह देखिए, कुम्भकर्ण उठ गया है । ' उसे देखकर सब आश्चर्य अनुभव करने लगे । मानो वह कोई काजल के रंग का पर्वत ही हो । ५ । फिर विभीपण ने कहा— ' इसका (जब) जन्म हुआ, तब हाहाकार मच गया था । उसने उस समय निश्चय ही तीस सहस्र स्त्रियों को निगल

वळी एक समे सुरपतिनी साथे, जुद्ध करतो एह,
त्यारे ऐरावतनुं पुच्छ झालीने, पृथ्वी पछाड्यो तेह । ७ ।
ते तणां दांत काढीने मार्यो, इंद्रने तेणी वार,
इंद्रे घणा वज्रप्रहार कर्या पण, अंगे न लाग्या लगार । ८ ।
एवो कुंभकरण छे बळियो, विभीषणे कही एम वाण,
तेणे समे मारुतसुत कूद्यो, आव्यो लंकामां जाण । ९ ।
सभा भणी ते जातो हतो, घूमतो ज्यम गजराज,
त्यारे अंजनीपुत्रे प्राक्रम कीधुं, ते बीजे न थाय काज । १० ।
ओचिंता आवी बाथ ज मारी, कुंभकरणने तन,
कटी लगी ऊंचक्यो पोते, पछे विचार्युं मन । ११ ।
जो पृथ्वी उपर आडो नाखुं तो, चंपाय लंका गाम,
पछे ऊभो मूकीने कुंभकरणने, आव्यो पोताने ठाम । १२ ।
घटश्रोत्र मदमां मग्न छे माटे, नव जाण्युं कंई त्यांहे,
पछे सभामांहे चालीने आव्यो, रावण बेठो ज्यांहे । १३ ।
त्यारे रावणे मान दई बेसाड्यो, कनक तणे आसान,
कुंभकरण बोल्यो मेघगर्जवत्, रावण साथ वचन । १४ ।

डाला था । ६ । इसके अतिरिक्त, एक समय (जब) वह सुरपति इन्द्र से युद्ध कर रहा था, तब उसने ऐरावत की पूँछ को पकड़कर उसे पृथ्वी पर पटक दिया । ७ । (फिर) उस समय उसके दाँत को उखाड़कर इन्द्र को उससे पीटा । इन्द्र ने वज्र से बहुत आघात किये, परन्तु उसके बदन में थोड़ा भी (घाव) नहीं लग गया । ८ । कुम्भकर्ण ऐसा बलवान है ।' विभीषण ने ऐसी बात कही, तो उस समय पवनकुमार हनुमान कूद गया (उसने छलाँग भर दी) और समझिए कि वह लंका में आ गया । ९ । जैसे गजराज चलता हो, वैसे वह सभा की ओर ठाटबाठ से जा रहा था; तब अंजनीकुमार हनुमान ने पराक्रम किया । ऐसा कार्य किसी दूसरे द्वारा नहीं हो जाएगा । १० । उसने यकायक आकर कुम्भकर्ण के शरीर को बाँहों में पकड़ लिया । और उसे अपनी कमर तक (ऊपर) उठा लिया । फिर उसने मन में सोचा । ११ । यदि इसे पृथ्वी पर आड़ा फेंक दूँ, तो लंकानगर दब जाएगा । फिर कुम्भकर्ण को खड़ा करके छोड़कर वह अपने स्थान पर आ गया । १२ । कुम्भकर्ण नशे में चूर था, इसलिए वह वहाँ कुछ भी नहीं समझ पाया । फिर वह चलकर सभा में आ गया, जहाँ रावण बैठा हुआ था । १३ । तब रावण ने उसका सम्मान करते हुए उसे स्वर्णासन पर बैठा लिया; तो रावण से कुम्भकर्ण मेघ-गर्जन-से

अरे भाई मुंने केम जगाड्यो ? शुं संकट आव्युं आज ?
भीड सकळ हुं भागुं तारी, कहे मुजने ते काज । १५ ।
त्यारे रावणे सहु वृत्तांत कह्युं, हरी लाव्यो सीता जेह,
राम लक्ष्मण कपि सैन्या लेई, आव्या युद्ध करवाने तेह । १६ ।
हुं युद्धमांहे पराजय पाम्यो, थयुं मारुं अपमान,
ते माटे में तुजने जगाड्यो, भीड पडी बळवान । १७ ।
त्यारे कर कपाळे दईने बोल्यो, कुंभकरण कहे सुण भ्रात,
भाई सर्वे खेल खोटो रची हावे, मुजने शी कहे छे वात ? १८ ।
पण बुद्धि कर्मानुसारिणी वरते, लोक कहे ते सत्य,
ज्यारे विनाश थवानो होय त्यारे, ऊपजे विपरीत मत्य । १९ ।
तुं जानकी शुं करवाने लाव्यो ? क्षय थाशे कुळ सर्व,
हवे रामनी साथे वेरज बांध्युं, भूल्यो करीने गर्व । २० ।
ए नारायण अवतरिया निश्चे, वानर सर्वे देव,
मुंने नारदजीए कह्युं'तुं पूर्वे, जाणुं छुं हुं एव । २१ ।
पण भावि होनारुं ते नव चूके, डहापण सर्वे जाय,
तें काढी मूक्यो विभीषणने त्यारे, पेठी पुरमां अवदशाय । २२ ।

स्वर में यह बात बोला । १४ । 'अरे भाई, मुझे किसलिए जगा दिया ? आज क्या संकट आया है ? मैं तुम्हारे समस्त संकट को दूर करूँगा । मुझे वह काम तो बता दो ।' १५ । तब रावण ने वह समस्त समाचार कहा कि किस प्रकार वह सीता को अपहरण कर लाया है और राम-लक्ष्मण कपि-सेना लेकर (किस प्रकार) युद्ध करने के लिए आ गये हैं । १६ । (फिर वह बोला—) 'मैं युद्ध में पराजय को प्राप्त हो गया हूँ; मेरा अपमान हुआ है । इसलिए मैंने तुम्हें जगवा दिया है । (मुझ पर) बड़ा संकट आ पड़ा है ।' १७ । तब सिर पर हाथ मारकर कुम्भकर्ण बोला । उसने कहा, 'भाई, सुनो । अरे भाई, तुमने यह सारा खोटा खेल रचा है । अब मुझसे क्या बात कह रहे हो । १८ । परन्तु बुद्धि कर्मानुसारिणी काम करती है । ऐसा लोग जो कहते हैं, वह सत्य है । जब विनाश होनेवाला हो तब विपरीत बुद्धि उत्पन्न हो जाती है । १९ । तुम जानकी को क्या करने के लिए लाये हो ? तुम्हारे समस्त कुल का क्षय हो जाएगा । (फिर भी) अब मैं अपने समस्त अभिमान को भूलकर राम से बैर ही साध लूँगा । २० । ये (इनके रूप में) नारायण ही अवतरित हैं (तथा) सब वानर देव हैं । (चूँकि) मुझे नारद ने पूर्वकाल में कहा था, मैं ऐसा (यह सब) जानता हूँ । २१ । परन्तु

चंद्र विनानी रजनी जेवी, दीपक विना जेवुं धाम,
विभीषण विना तुं एवुं जाणजे, उज्जड लंका गाम। २३।
परनारी पावकनी ज्वाळा, जेवी विषनी वेली,
मोक्षमार्गनो रोध करी नाखे, नरककुंडमां ठेली। २४।
अल्या नव जिताई जानकीने, तो क्यम जिताशे राम ?
जो स्वाधीन सीता नव थई त्यारे, लाव्यानुं शुं काम ? २५।
त्यारे रावण कहे ए कोटी उपाये, जानकी वश नव थाय,
एक राम विना बीजा अवर पुरुष पर, दृष्टि एनी नव जाय। २६।
त्यारे कुंभकरण कहे कपट करीने, धर तुं रामनुं रूप,
सीता भजशे त्यारे तुंने, थई जा तेवो अनुरूप। २७।
त्यारे रावण कहे रामरूप धरुं, पण गुण ते न आवे त्रण,
एकवचन एकबाण वळी, एकपत्नीव्रत पावन। २८।
ए त्रणे गुण मुजमांहे नथी, माटे ओळखे जानकी आप,
तो तत्क्षण बाळी भस्म करे, दे सीता मुजने शाप। २९।

भविष्य में जो होनेवाली हो, वह नहीं टलती। (इसमें) सब समझदारी (नष्ट हो) जाती है। (इसलिए जब से) तुमने विभीषण को (घर से) निकाल दिया, तब (से) नगर में अवदशा प्रविष्ट हो गयी है। २२। जिस प्रकार बिना चंद्र की रात (शोभाहीन) होती है, जिस प्रकार बिना दीये के घर होता है, विभीषण के अभाव में लंकाग्राम को उसी प्रकार उजाड़ समझिए। २३। परनारी अग्नि की ज्वाला जैसी होती है, विष की वल्ली जैसी होती है। मोक्ष मार्ग में अवरोध उत्पन्न करते हुए वह (मनुष्य को) नरक कुण्ड में धकेल देती है। २४। अरे, तुमसे जानकी जीती नहीं गयी, तो राम को कैसे जीत पाओगे ? यदि सीता तुम्हारे अधीन नहीं हो गयी, तब उसे लाने का क्या प्रयोजन ? '। २५। तब रावण बोला, 'कोटि-कोटि उपायों से वह जानकी मेरे वश नहीं हो रही है। बिना एक राम के उसकी दृष्टि दूसरे किसी अन्य पुरुष की ओर नहीं जाती है।' २६। तब कुम्भकर्ण बोला, 'कपट करके तुम राम का रूप धारण कर लो। तब सीता तुम्हारी सेवा करेगी। (इसलिए) उसके अनुरूप बन जाओ।' २७। तब रावण बोला, 'मैं राम का रूप तो धारण कर पाऊँगा, परन्तु एकवचन (होना), एकबाण (होना), फिर पवित्र एक-पत्नी व्रत— (जैसे राम के) ये तीन गुण (मुझमें) नहीं आएँगे। २८। ये तीन गुण मुझमें नहीं हैं, इसलिए जानकी स्वयं मुझे पहचान जाएगी। तो वह मुझे शाप देगी और तत्क्षण मुझे जलाकर भस्म कर डालेगी। २९।

माटे राम-लक्ष्मणनो पराजय कर्या विण, सिद्धि नथी सुण वीर,
एवां वचन सुणीने ऊठ्यो वळतो, कुंभकरण रणधीर। ३०।
राम रावण बंन्योनें नमियो, कहेतो गयो एम वाण,
हावे मारी वाट न जोशो वीरा, जुद्धमां जशे मुज प्राण। ३१।
पछी अपार सेना लेईने आव्यो, रणमांहे कुंभकरण,
ते जोई वानर सर्वे नाठा, आव्या रघुपति शरण। ३२।
त्यारे ऊभा थया अष्ट यूथपति ते, नम्या रामने पाय,
कुंभकरणशुं जुद्ध करवाने, चाल्या लेई आज्ञाय। ३३।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

आज्ञा लीधी रामनी, पछी अष्ट यूथपति जाय रे,
श्रोताजन सहु सांभळो, कहुं कुंभकरणनी कथाय रे। ३४।

* * *

इसलिए, हे भाई, सुन लो, राम-लक्ष्मण की पराजय किये बिना सिद्धि नहीं प्राप्त हो सकेगी।' फिर ऐसे वचन सुनने के पश्चात् रणधीर कुम्भकर्ण उठ गया। ३०। उसने राम और रावण दोनों को नमस्कार किया और वह ऐसी बात कहता हुआ चल दिया— 'हे भाई, मेरी बाट मत जोहना; युद्ध में मेरे प्राण चले जाएँगे।' ३१। अनन्तर कुम्भकर्ण अपार सेना लेकर युद्ध (-भूमि) में आ गया। उसे देखकर समस्त वानर भाग गये और रघुपति राम की शरण में आ गये। ३२। तब आठों यूथों के वे स्वामी खड़े रह गये और उन्होंने राम के चरणों को नमस्कार किया। (फिर) आज्ञा लेकर वे कुम्भकर्ण से युद्ध करने के लिए चल दिये। ३३।

आठों यूथपतियों ने आज्ञा ली और अनन्तर वे (युद्ध-भूमि की ओर) चल दिये। (कवि गिरधरदास कहते हैं—) हे श्रोताजनो, आप सब सुन लीजिए—मैं (अब) कुम्भकर्ण की कथा कहने जा रहा हूँ। ३४।

* * *

अध्याय—१८ (वानर-कुंभकर्ण-संग्राम; सुग्रीव द्वारा कुंभकर्ण का विरूपीकरण)

राग मारु

आव्यो कुंभकरण काळभाथी, जाणे घूमतो मकनो हाथी,
तेने जोई यूथपथि आठ, चढ्या सेन तणो सजी ठाठ। १ ।
कुंभकरणे कर्यो सिंहनाद, कंप्या कपिवर सुणतां साद,
गिरि तरुवर ने पाषाण, मारे कपिवर करता बुंवाण। २ ।
नथी वागतुं तेने अंग, जाणे परवंत केरुं शृंग,
कहे छे आ जुद्ध ते शे लेखे ? एम कहीने उवेखे। ३ ।
करमां एक मुद्गळ झाली, रामना भणी आव्यो चाली,
ते समे वानरे एके काळ, करी पाषण वृष्टि विशाळ। ४ ।
पडे पुष्प कूर्मनी पृष्ठ, एम ते नथी गणतो नष्ट,
जेवो गिरि उपर परजन्य, एम लेखवतो नथी मन। ५ ।
कुंभकरण करे पदप्रहार, थाय वानरनो संहार,
झाली मसळे मशकवत् दिले, चाले पासे कपिने पीले। ६ ।

अध्याय—१८ (वानर-कुंभकर्ण-संग्राम; सुग्रीव द्वारा कुंभकर्ण का विरूपीकरण)

काल-सा भयकारी कुम्भकर्ण (युद्ध-भूमि में) आ गया; मानो वह कोई मदोन्मत्त हाथी ही हो। उसे देखकर (कपि-) सेना के आठों यूथपति ठाट से सज्ज होकर चढ़ दौड़े। १। कुम्भकर्ण ने सिंहनाद किया, तो उस ध्वनि को सुनते ही कपिवर काँप उठे। (फिर भी) वे कपिवर चीख-चीत्कार करते हुए पर्वत, वृक्ष और पाषाण (फेंककर उसे) मारने लगे। २। (परन्तु) वे उसके शरीर में घाव करते हुए नहीं लग रहे थे। मानो वह पर्वत का कोई शिखर ही हो। वह बोला—यह युद्ध वह किस कारण से (महत्त्वपूर्ण) माने ? (इस युद्ध का क्या महत्त्व है !) ऐसा कहते हुए वह कपियों की उपेक्षा कर रहा था। ३। (फिर) हाथ में एक मुद्गर लेकर वह चलते हुए राम की ओर आ गया। उस समय वानरों ने बड़े पाषाणों की बौछार एक ही समय (एक साथ) की। ४। (जैसे) कछुए की पीठ पर फूल पड़ जाएँ (तो जैसे वह उनकी परवाह नहीं करता) वैसे ही वह (नष्ट) मरमिटा उसे कुछ नहीं गिन रहा था। जिस प्रकार पर्वत पर वर्षा हो जाए, तो वह उसकी परवाह नहीं करता, उस प्रकार वह (कुम्भकर्ण) मन में उस (पाषाण-वृक्ष आदि की वर्षा) को कुछ भी नहीं मान रहा था। ५। (फिर) कुम्भकर्ण पाँवों से प्रहार करने लगा, तो वानरों का संहार होने लगा। वह उन्हें पकड़कर मच्छड़ की भाँति मन:पूर्वक (चाहे जैसा) मसल देता और उनके

ते जोईने कूद्या हनुमंत, मोटो परवत लेई बळवंत,
नाख्यो असुरनी उपर जेवे, झाल्यो आवतो गिरिने तेवे । ७ ।
तेने चूरण कर्यो एक हस्ते, पछी त्रिशूळ ग्रह्युं मदमस्ते,
ते त्रिशूळे भराव्या हनुमंत, पछाड्या पृथ्वी बळवंत । ८ ।
आवी मूरछा पड्या बळशील, त्यारे धाया नळ ने नील,
तेने अकेकी मुष्टि मारी, थया मूर्छित गाज्यो सुरारि । ९ ।
धाया चार कपि बळवान, शरभ गवाक्ष गंधमादन,
चोथो वृषभ गयो तेणी वार, कुंभकरणे ते झाल्या चार । १० ।
बेने आकाश मांहे उछाळ्या, बेने पृथ्वी उपर पडताळ्या,
गाज्यो कुंभकरण ते प्रचंड, त्यारे खळभळ्युं सकळ ब्रह्मांड । ११ ।
झाल्या अनेक वानर जेह, मेली मुखमां गळी गयो तेह,
कोई कपि जठरामां बळिया, केटला करणमां थईने नीकळिया । १२ ।
कंई नीकळ्या नासिकामांथी, सरवे वानर नाठा त्यांथी,
घटश्रोत्रनी वागी हाक, तेणे पृथ्वी चढावी चाक । १३ ।

पास जाता तथा उनको सताता रहा । ६ । यह देखकर बलवान हनुमान एक बड़ा पर्वत लेकर कूद पड़ा । जिस समय उसने वह उस असुर पर गिरा दिया, तो उस समय उसे आते हुए ही उसने पकड़ लिया । ७ । उसे उसने एक हाथ से चूर्ण कर डाला । फिर उस मदोन्मत्त (असुर) ने त्रिशूल ले लिया । उसने उस त्रिशूल में बलवान हनुमान को फँसा दिया और उसे पृथ्वी पर पटक डाला । ८ । जब वह बलशाली (वानर) मूर्च्छा आने से गिर पड़ा, तब नल और नील दौड़े तो उसने उनमें से प्रत्येक को घूँसा जमाया । (फलतः) वे मूर्च्छित हो गये, तो वह देवों का शत्रु-कुम्भकर्ण गरज उठा । ९ । यह देखकर चार बलवान कपि उसकी ओर दौड़े । शरभ, गवाक्ष और गन्धमादन—ये तीन थे, और (उनके साथ) उस समय वृषभ नामक चौथा कपि (भी) दौड़ गया । (परन्तु) कुम्भकर्ण ने उन चारों को पकड़ लिया । १० । उसने दोनों को आकाश में उछाल दिया, और दोनों को पृथ्वी पर पटक दिया । फिर कुम्भकर्ण ने प्रचण्ड गर्जना की, तो समस्त ब्रह्माण्ड भय से काँप उठा । ११ । जिन अनेक वानरों को उसने पकड़ लिया, उन्हें मुँह में डालकर वह निगल गया । कुछ कपि तो उसके जठर (की आग) में जल गये; परन्तु कितने ही उसके कानों के मार्ग से (बाहर) निकल गये । १२ । कुछ उसकी नाक में से निकल गये । (इस प्रकार) वे सब वहाँ से भाग गये । (फिर भी) कुम्भकर्ण का आतंक फैल गया । उसने पृथ्वी चक्र की-सी गति को प्राप्त

ते समे जोई सैन्य भंगाण, चढ्यो सुग्रीव वळियो जाण,
कुंभकरण ने भानुकिशोर, तेणे जुद्ध कर्युं महा घोर। १४।
घटश्रोत्रे ग्रह्यो सुग्रीव, घाल्यो काखमांहे बळ शिव,
पछी बोल्यो आनंदभेर, आज वाळ्युं में वीरनुं वेर। १५।
कर्युं वालीए रावणने जेवुं, आज में पण कीधुं तेवुं,
अकळायो सुग्रीव पछी त्यांहे, घणी दुरगंधी ते मांहे। १६।
कोची काख सुग्रीवे ते वार, बेठो नीकळी स्कंध मोझार,
कुंभकरणनां नाक ने कान, दंते करीने छेद्यां बळवान। १७।
पछी कूद्यो करी गर्जनाय, आव्यो ज्यांहां छे श्रीरघुराय,
थयो कपिमां जयजयकार, वखाण्यो रामे सूरजकुमार। १८।
सुग्रीवे छेद्यां नासिका कर्ण, नथी जाणतो दुष्टाचर्ण,
जेम देहपीडा न जाणे जोगी, देहाध्यासरहित ब्रह्मभोगी। १९।
एम न लह्युं असुरे निरवाण, ते थयुं दशाननने जाण,
नासाकरणरहित कर्यो वीर, सुणी रावणे मूकी धीर। २०।

करा दी। १३। समझिए कि उस समय अपनी सेना को तितर-बितर हुए देखकर बलशाली सुग्रीव चढ़ दौड़ा। (फिर) कुम्भकर्ण और सुग्रीव अति घोर युद्ध करने लगे। १४। कुम्भकर्ण ने सुग्रीव को पकड़ लिया और बल की उस सीमा (-से वानर) को उसने काँख में ठूँस दिया। फिर हर्ष-विभोर होते हुए वह बोला, 'आज मैंने भाई का वैर पूरा किया है (मैंने बदला लिया है)। १५। जिस प्रकार बाली ने रावण के साथ (व्यवहार) किया था, उसी प्रकार मैं भी (तेरे साथ) कर रहा हूँ।' फिर वहाँ सुग्रीव व्याकुल हो उठा; क्योंकि उसमें बहुत दुर्गन्धि थी। १६। उस समय उसकी काँख में छेद करते हुए (वहाँ से) निकलकर सुग्रीव उसके कंधे पर बैठ गया। फिर उस बलवान ने कुम्भकर्ण की नाक और कान दाँतों से छेद डाले। १७। अनन्तर गर्जना करके वह (वहाँ से) कूद पड़ा और जहाँ श्रीराम थे, वहाँ आ गया। तब कपियों में जय-जयकार हो गया और राम ने उस सूर्यपुत्र (सुग्रीव) की प्रशंसा की। १८। वह कुम्भकर्ण, जो दूषित आचरणवाला था, (वैसे ही) नहीं जान पाया कि सुग्रीव ने उसकी नाक और कान छेद डाले है, जैसे कोई देह सम्बन्धी भान-रहित, और ब्रह्मानन्द का भोग करनेवाला योगी देह की पीडा को नहीं जान सकता। १९। इस प्रकार वह असुर तो उसे निश्चय ही नहीं समझ पाया, परन्तु उसकी जानकारी रावण को प्राप्त हो गयी। 'भाई को नाक-कान-हीन कर डाला है'—यह सुनकर रावण धीरज खो

पछे नापिक मोकल्यो त्यांहे, आव्यो कुंभकरण छे ज्यांहे,
वांस गगन चुंबित ते दिश, बांध्युं मोटुं आदर्श तेने शीश । २१ ।
कुंभकरणनी सन्मुख धरियुं, त्यारे अवलोकन एणे करियुं,
घटश्रोत्रे जोयुं मुख ज्यारे, नासाकरण न दीठां त्यारे । २२ ।
तेमांथी चाले रुधिर प्रवाह, जाणे गिरिशृंग गेरु सरिताय,
एवुं जोई मन पाम्यो खेद, ऊपन्यो देह थकी निर्वेद । २३ ।
आवी स्मृति तेने मन, जे सुग्रीवे कर्यां छेदन,
देह कुरूप थई निरधार, हावे व्यर्थ जीव्युं धिक्कार । २४ ।
जो जीवूं तो पामुं दुःख, रावणने शुं देखाडुं मुख ?
हावे निश्चे मारे मरवुं, थयो विरूप जीवी शुं करवुं ? २५ ।
एवुं कही करी गर्जना घोर, थयो त्रण भोवनमां शोर,
क्रोधे रामनी सन्मुख चाल्यो, मेदनी सहित मेरु तव हाल्यो । २६ ।
आवतो जोई रावणने वीर, ऊठ्या लक्ष्मणजी रणधीर,
रामचरणे नमाव्युं शीश, आपी आज्ञा श्रीजुगदीश । २७ ।

बैठा । २० । अनन्तर उसने एक नाई को भेजा । वह (नाई) वहाँ आ गया जहाँ कुम्भकर्ण था । उस स्थान पर एक गगनचुम्बी बाँस था । उसके अग्रभाग में उसने एक बड़ा दर्पण बाँध लिया । २१ । उसे कुम्भकर्ण के सम्मुख पकड़ रखा; तब उसने उसे देखा । जब कुम्भकर्ण ने उसमें अपना मुख (प्रतिबिम्बित) देखा, तब उसने नाक और कान नहीं देखे । २२ । उससे रक्त-प्रवाह चल रहा था; जान पड़ता था कि (मानो) पर्वत-शिखर से गेरू की नदी ही (बह रही) हो । ऐसा देखकर वह मन में खेद को प्राप्त हो गया और उसे देह के प्रति निर्वेद (उदासीनता) उत्पन्न हो गयी । २३ । (फिर) उसके मन को उसकी स्मृति हो आयी कि सुग्रीव ने उन्हें छेद डाला है । निश्चय ही देह कुरूप हो गयी है, तो अब व्यर्थ ही जीवित रहने को धिक्कार है । २४ । यदि मैं जीवित रहूँ, तो दुःख को प्राप्त हो जाऊँगा । (अब) रावण को क्या मुँह दिखाऊँ ? अब मुझे निश्चय ही मरना है । मैं कुरूप हो गया हूँ, तो जीवित रहकर क्या करना है ? । २५ । ऐसा कहकर उसने घोर गर्जन किया, तो तीनों भुवनों में शोर मच गया । (तदनन्तर) वह क्रोध से राम के सम्मुख चल दिया, तो पृथ्वी-सहित मेरु पर्वत हिल उठा । २६ । रावण के उस बन्धु को आते देखकर रणधीर लक्ष्मण उठ गया । उसने श्रीजगदीश राम के चरणों में मस्तक नवाया, तो उन्होंने उसे आज्ञा दी । २७ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

जुगदीश केरी आज्ञा लेई चाल्या लक्ष्मणजी तेणी वार रे,
कुंभकरणनी साथे जई, जुद्ध करवा मांड्युं अपार रे। २८।

* * *

उस समय जगदीश राम की आज्ञा लेकर लक्ष्मण चल दिया। उसने (आगे बढ़कर) कुम्भकर्ण से असीम युद्ध करना आरम्भ किया। २८।

* * *

अध्याय—१९ (राम-कुंभकर्ण-युद्ध; राम द्वारा कुंभकर्ण का वध)

राग सोरठ

कुंभकरण सामा लक्ष्मण आव्या, मूकियां बहु बाण रे,
ते सपक्ष थाये गुप्त तनमां, प्रवेशे निरवाण रे। १।
अमोघ शर लक्ष्मण तणां, वागे कुंभकरणने तन रे,
ते असुर लेश न लेखवे, नव क्षोभ पामे मन रे। २।
ज्यम पंडित केरा वचनथी, नव थाय खळने क्षोभ रे,
करे दान दाता याचकने, तृप्त न थाये लोभ रे। ३।
एम कुंभकरण माने नहि, शर लक्ष्मण केरां जेह रे,
त्यारे गदा ग्रहीने धायो विभीषण, बंधु सन्मुख तेह रे। ४।

अध्याय—१९ (राम-कुंभकर्ण-युद्ध; राम द्वारा कुंभकर्ण का वध)

कुम्भकर्ण के सामने (विरोध में) लक्ष्मण आ गये। उन्होंने बहुत बाण चला दिये; परन्तु वे पक्ष-सहित अन्त में उसके शरीर में प्रविष्ट हो गये और गुप्त हो गये। १। लक्ष्मण के अमोघ बाण कुम्भकर्ण के शरीर में लग रहे थे; परन्तु वह असुर उन्हें न गिन रहा था, न ही उसका मन क्षोभ को प्राप्त हो रहा था। २। जिस प्रकार किसी पण्डित के वचनों से खल को क्षोभ नहीं अनुभव होता, (अथवा) जिस प्रकार दानी पुरुष याचक को दान देता है, परन्तु उसका लोभ तृप्त नहीं हो जाता, उसी प्रकार लक्ष्मण के जो बाण थे, उन्हें कुम्भकर्ण नहीं मान रहा था (उनका महत्त्व मानकर बिलकुल विचलित नहीं हो रहा था)। तब (यह देखकर) विभीषण गदा लेकर अपने उस बन्धु के सामने

अल्या मारी सन्मुख एक क्षण, तुं ऊभो रहे अनुकूल रे,
रावण विखवेलीनां फळ, तमो सरव अनरथ मूळ रे। ५ ।
एवुं सुणीने कुंभकरण कहे, तुं विभीषण धिक्कार रे,
कुळमां कलंक उदे थयो, करवा दहन अंगार रे। ६ ।
ज्यम सिंहना कुळमां थाय जांबुक, एम प्रगट्यो शंढ रे?
कायर थई गयो शत्रुशरण, लाज नहि तुंने लंठ रे। ७ ।
अल्या कुळ लजाव्युं अमारुं, कोण करे जुद्ध तुज साथ रे,
एम कही धायो राम सन्मुख, मुद्गळ ग्रहीने हाथ रे। ८ ।
त्यारे धनुष ग्रही ऊठ्या तदा, श्रीराम रणरंगधीर रे,
कुंभकरण साथे जुद्ध करवा, चाला श्रीरघुवीर रे। ९ ।
शर चढावीने सज्ज थया, शत्रुशुं बोल्या वाण रे,
घटश्रोत्र सुण मुज बाणथी, हवे जशे तारा प्राण रे। १० ।
त्रिलोकने पीड्युं तमो, कर्यो पृथ्वीने बहु भार रे,
ते दुष्ट तमने हणवाने, अमो लीधो छे अवतार रे। ११ ।
मारे रावणकुळ संहारवुं, देवनुं करवुं काज रे,
पछे लंकामां निरभे थकी, करशे विभीषण राज रे। १२ ।

दौड़ा। ३-४। (वह बोला—) 'अरे मेरे सामने अनुकूल होकर (मेरी ओर मुँह करके) तू एक क्षण भर खड़ा रह जा। तुम सब रावण की विष-वल्ली के फल हो, अनर्थ के मूल हो।' ५। ऐसा सुनते ही कुम्भकर्ण ने कहा, 'रे विभीषण, तुझे धिक्कार है। तू (राक्षस-) कुल में कलंक (-रूप) उत्पन्न हो गया है, उसे जलाने के लिए अंगार बन गया है। ६। जिस प्रकार सिंह के कुल में सियार उत्पन्न हो जाए, उस प्रकार तू षण्ढ-षण्ड-नपुंसक (राक्षस कुल में) प्रकट हो गया है। तू कायर होकर शत्रु की शरण में गया है। तुझ लंठ को लज्जा नहीं (आ रही) है। ७। अरे तूने हमारे कुल को लज्जित कर दिया है; (अतः) तेरे साथ कौन युद्ध करेगा?' ऐसा कहते हुए (विभीषण का अनादर करके) वह हाथ में मुद्गर लेकर राम के सामने दौड़ा। ८। तब रणरंगधीर श्रीराम धनुष लेकर उठ गये। श्रीरघुवीर कुम्भकर्ण से युद्ध करने चल दिये। ९। बाण चढ़ाकर वे सज्ज हो गये और शत्रु (कुम्भकर्ण से) यह बात बोले—'हे कुम्भकर्ण, सुनो, मेरे बाण से अब तुम्हारे प्राण (छीन लिये) जाएँगे। १०। तुमने तीनों लोकों को पीड़ित किया और पृथ्वी के लिए बहुत (पापों का) भार (उत्पन्न) कर दिया। ऐसे तुम (समस्त) दुष्टों को मार डालने के लिए हमने अवतार धारण किया है। ११। मुझे रावण के कुल का संहार

एवुं वचन सुणी कुंभकरण बोल्यो, सांभळ दशरथतन रे,
तुं जन्मान्तरनो वेरी अमारो, जाणु छुं हुं मन रे। १३।
पण मोटा होय ते मुख न कहे, आपणुं बळ सामर्थ्य रे,
ते अणबोल्यो रणमां वढे, साधे पोतानो अर्थ रे। १४।
शुं करुं जो हतो निद्रावश, बाकी देखाडत बळ भार रे,
वळी उजाडत त्रिलोकने, करुं सृष्टिनो संहार रे। १५।
एवुं सांभळी सज्ज थई रामे, मूक्यां बाण अपार रे,
ते कुंभकरण मुख करी पहोळुं, गळी गयो तेणी वार रे। १६।
ज्यम बिल मांहे प्रवेशे, पछी सर्प नव देखाय रे,
एम कुंभकरणना मुख विषे, सहु बाण गुप्त ज थाय रे। १७।
ते रामबाणे उदरमां करी, अंत्रजाळ छेदन रे,
पण पीड कंई पामे नहि, नथी लेखवतो ते मन रे। १८।
एम गळी गयो ते असंख्य शर, पण न पामे ते हार रे,
एवुं जोई चितातुर थया, सहु कपि तेणी वार रे। १९।

करना है और देवों का कार्य (सम्पन्न) करना है। फिर निर्भयता से विभीषण लंका में राज करेगा।'। १२। ऐसे वचन सुनकर कुम्भकर्ण बोला— 'रे दशरथ-कुमार, सुन ले। मैं मन में समझता हूँ कि तू हमारा जन्म-जन्मान्तर का बैरी है। १३। परन्तु जो बड़ा होता है, वह अपना बल-सामर्थ्य अपने मुँह से नहीं कहता। वह तो अनबोला (ही) युद्ध (-भूमि) में युद्ध करता है और अपना हेतु सिद्ध करता है। १४। मैं क्या करता, जो कि मैं निद्राधीन हो गया था; नहीं तो मैं अपना बल दिखा देता। इसके अतिरिक्त मैं त्रिलोक को उजाड़ डालता। (अब) मैं सृष्टि का संहार कर देता हूँ।' १५। ऐसा सुनकर सज्ज होते हुए राम ने अनगिनत बाण चला दिये। (परन्तु) उस समय मुँह विशाल करके (फैलाकर) कुम्भकर्ण ने उन्हें निगल डाला। १६। जिस प्रकार सर्प बिल में प्रवेश करते हैं और अनन्तर दिखायी नहीं देते, उस प्रकार कुम्भकर्ण के मुख के अन्दर (राम के) समस्त बाण (प्रविष्ट हो गये और) गुप्त हो गये। १७। राम के उन बाणों ने (कुम्भकर्ण के) पेट में अंतड़ियों के जाल को छेद डाला। परन्तु वह पीड़ा को कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ; मन में वह उनको (कुछ भी) नहीं मान रहा था। १८। इस प्रकार उसने असंख्य बाणों को निगल डाला; परन्तु वह हार को प्राप्त नहीं हो रहा था। ऐसा देखकर उस समय समस्त कपि चिन्तातुर हो गये। १९। (फिर) हाथ में तोमर लिये हुए कुम्भकर्ण राम की ओर

घटश्रोत्र धायो राम उपर, तोमर ग्रहीने हाथ रे,
त्यारे दिव्यशक्ति बाण मंत्री, मूक्युं श्रीरघुनाथ रे। २०।
प्रलय अग्नि स्थापियो, बाणने अग्रे राम रे,
आकर्ण पर्यंत खेंचीने, मूकियुं तेणे ठाम रे। २१।
मुद्‌गल सहित कर छेदियो, आकाश ऊड्यो तेह रे,
ज्यम उरग ऊडे सपक्ष नभमां, एम ऊड्यो तेह रे। २२।
पछे बीजे हस्ते गदा ग्रही, धायो कुंभकरण ते ठाम रे,
त्यारे सूरज मंत्र भणीने, बीजुं बाण मूक्युं राम रे। २३।
ते बाणे बीजो हस्त छेद्यो, समरथ श्रीअविनाश रे,
पहोळुं मुख करी धायो असुर, जाणे करशे विश्वनो ग्रास रे। २४।
बे बाण मूकी बे चरण, छेदिया श्रीरघुवीर रे,
त्यारे कुंभकरण पृथ्वी पड्यो, ते विकळ थईने शरीर रे। २५।
पछे पेटभेर चालवा मांड्युं, मुख करी विकराळ रे,
फूंफाडा मारे फूंकना, जाणे प्रलय अग्नि ज्वाळ रे। २६।
ते ज्वाळे करीने कपि दाझे, पाडता बहु चीस रे,
पछे भीमकाळास्त्र शर चढावी, कोप्या श्रीजुगदीश रे। २७।

दौड़ा, तब श्रीराम ने एक दिव्य शक्ति (से युक्त) बाण अभिमंत्रित कर छोड़ दिया। २०। राम ने बाण के अग्र (छोर) पर प्रलयाग्नि स्थापित की और उसे आकर्ण खींचकर उस स्थान पर छोड़ दिया। २१। उस बाण ने कुम्भकर्ण का हाथ मुद्‌गर-सहित काट डाला, वह (हाथ) आकाश में उड़ गया। २२। अनन्तर दूसरे हाथ में गदा लेकर कुम्भकर्ण उस स्थान पर दौड़ा, तब राम ने सूर्य-मंत्र का पाठ कर दूसरा बाण चला दिया। २३। उस बाण से समर्थ अविनाशी भगवान राम ने (कुम्भकर्ण का) दूसरा हाथ छेद डाला। (तब) वह असुर मुख को चौड़ा फैलाकर दौड़ा। जान पड़ता था कि (अब) वह विश्व को ही ग्रस्त कर डालेगा। २४। (अनन्तर) श्रीरघुवीर ने दो बाण चलाकर (कुम्भकर्ण के) दोनों पाँव छेद डाले; तब शरीर के विकल होने पर कुम्भकर्ण पृथ्वी पर गिर गया। २५। फिर मुख को विकराल बनाकर वह पेट के बल चलने लगा। वह फूँकते हुए फूत्कार कर रहा था, जान पड़ता था कि वे (फूत्कार) प्रलयाग्नि की ज्वालाएँ ही हों। २६। उन ज्वालाओं में कपि झुलसने लगे, तो वे बहुत चीखते-चिल्लाते रहे। अनन्तर श्रीजगदीश भीमकालास्त्र चढ़ाते हुए क्रुद्ध हो उठे। २७। उस बाण से उन्होंने कुम्भकर्ण का सिर छेद डाला, तो वह वैसे ही गिर पड़ा, जैसे महान वज्र

ते बाणे करीने कुंभकरणनुं, शिर कर्युं छेदन रे,
महावज्रे करी पर्वततणुं, ज्यम शिखर थाय पतन रे। २८।
शिर असुरनुं गर्जना करतुं, ऊछळ्युं आकाश रे,
विमान लेईने देव नाठा, पामी मनमां त्रास रे। २९।
ते मस्तक लंकामां पड्युं, त्यारे चंपायां बहु धाम रे,
अनेक राक्षस मरण पाम्या, शिर थकी ते ठाम रे। ३०।
हावे कुंभकरण मरते थके, कर्यो देव जयजयकार रे,
करी पुष्पवृष्टि राम उपर, दुंदुभिनाद अपार रे। ३१।
कंई शेष सेन्या रही हती, कुंभकरण केरी जेह रे,
घणुं भय पामी नाठा सहु, गया लंकामां तेह रे। ३२।
समाचार रावणने कह्यो जे, पाम्यो मरण महाकाय रे,
त्यारे सिंहासन उपर थकी, पड्यो विकळ थईने राय रे। ३३।
पछे रावण लाग्यो विलाप करवा, दुःख धरीने मन रे,
आज बंधु पाखे माहरे, सहु दिशा थई गई शून्य रे। ३४।
ते जाणीने इंद्रजित आव्यो, रावण केरी पास रे,
अरे तात, शुं करवा रुओ ? जेनो जन्म तेनो नाश रे। ३५।

से पर्वत का शिखर (टूटकर) गिर जाता हो। २८। उस असुर का वह सिर गर्जन करता हुआ आकाश में उछल गया, तो देव मन में भय को प्राप्त होकर विमानों को लिये हुए भाग गये। २९। (फिर) वह मस्तक लंका में गिर पड़ा; तब उससे बहुत घर दबाये गये; उस स्थान पर अनेक राक्षस उस सिर (के आघात) से मृत्यु को प्राप्त हो गये। ३०। अब कुम्भकर्ण की मृत्यु हो जाने पर देवों ने जय-जयकार किया। उन्होंने राम पर पुष्प-वृष्टि की और अपार दुन्दुभिनाद किया। ३१। कुम्भकर्ण की जो कुछ सेना शेष रही थी, उसके समस्त सैनिक भय को प्राप्त होकर भाग गये और लंका में गये। ३२। उन्होंने रावण से यह समाचार कहा कि महाकाय कुम्भकर्ण मौत को प्राप्त हो गया। तब राजा रावण विकल होकर सिंहासन पर से गिर पड़ा। ३३। अनन्तर रावण मन में दुःख धारण करते (अनुभव करते) हुए विलाप करने लगा। (वह बोला-) 'आज मेरे बन्धु के बिना (मेरे लिए) समस्त दिशाएँ शून्य हो गयी हैं।' ३४। यह जानकर इन्द्रजित रावण के पास आ गया (और बोला-) 'हे तात, क्या करने (किसलिए) रो रहे हो ? जिसका जन्म होता है, उसका नाश (भी) होता है। ३५। मृत्युलोक में अवतरित होकर कोई भी चिरजीवी नहीं होता। इसलिए किसलिए शोक धारण

मृत्युलोक मांहे अवतरी, नथी चिरणजीवी कोय रे,
माटे शोक शुं करवा धरो ? जे होनारुं ते होय रे। ३६।
नर वानरे ज्यारे कुंभकरणने, मार्यो निश्चे जाण रे,
हुं जाणुं हवे काळ विपरीत, आवियो निरवाण रे। ३७।
माटे क्षमा राखो पिता हावे, धरो धीरज मन रे,
ज्यारे त्यारे जगतमां पडे, एक वार ज तन रे। ३८।
एम बोध बहु पुत्रे कर्यो, समजाव्यो रावणराय रे,
त्यारे आज्ञा मागी प्रधाने, पछे जुद्ध करवा जाय रे। ३९।
महा बळिया सुत रायना, वळी चार मंत्री जेह रे,
देवांतक ने नरांतक वळी, त्रिशिरा नामे तेह रे। ४०।
वळी शक्रजितनो कनिष्ठ बंधु, नाम तेनुं अतिकाय रे,
ते चतुरंगदळ साथे लेईने, जुद्ध करवा जाय रे। ४१।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

जाये जुद्ध करवाने रणमां, रावणसुत अतिकाय रे,
वळी राजकुंवर बीजा अति घणा, वळी मंत्री जे कहेवाय रे। ४२।

* * *

कर रहे हो ? जो होनेवाला हो, वह होगा ही। ३६। यह निश्चय-पूर्वक समझ लो कि नर, वानर जिस किसी ने कुम्भकर्ण को मार डाला है, मैं जानता हूँ, उसके लिए अन्त में अब विपरीत काल आ गया है। ३७। इसलिए अब क्षमाभाव रखो, मन में धीरज रखो। जगत् में जब हो तब एक बार ही (प्रत्येक) का शरीर छूट जाता है।' ३८। इस प्रकार राजा रावण को उसके पुत्र ने बहुत उपदेश दिया समझाया (-बुझाया)। तब मंत्री ने आज्ञा माँगी और फिर वह युद्ध करने के लिए चल दिया। ३९। राजा (रावण) के महा बलवान पुत्र चल दिये; उनके अतिरिक्त जो चार मंत्री थे, वे चतुरंग दल साथ में लेकर युद्ध करने के लिए गये। उनके नाम थे—देवान्तक, नरान्तक और त्रिशिरा तथा अतिकाय। वह इंद्रजित का कनिष्ठ बन्धु था। ४०-४१।

रावण-सुत अतिकाय युद्ध करने के लिए रण (-भूमि) की ओर चल दिया। उसके साथ फिर अन्य अनेकानेक राजपुत्र थे। उनके अतिरिक्त-ऐसे भी व्यक्ति थे जो मंत्री कहाते थे। ४२।

* * *

ते बाणे करीने कुंभकरणनुं, शिर कर्युं छेदन रे,
महावज्रे करी पर्वततणुं, ज्यम शिखर थाय पतन रे। २८।
शिर असुरनुं गर्जना करतुं, ऊछळ्युं आकाश रे,
विमान लेईने देव नाठा, पामी मनमां त्रास रे। २९।
ते मस्तक लंकामां पड्युं, त्यारे चंपायां बहु धाम रे,
अनेक राक्षस मरण पाम्या, शिर थकी ते ठाम रे। ३०।
हावे कुंभकरण मरते थके, कर्यो देव जयजयकार रे,
करी पुष्पवृष्टि राम उपर, दुंदुभिनाद अपार रे। ३१।
कंई शेष सेन्या रही हती, कुंभकरण केरी जेह रे,
घणुं भय पामी नाठा सहु, गया लंकामां तेह रे। ३२।
समाचार रावणने कह्यो जे, पाम्यो मरण महाकाय रे,
त्यारे सिंहासन उपर थकी, पड्यो विकळ थईने राय रे। ३३।
पछे रावण लाग्यो विलाप करवा, दुःख धरीने मन रे,
आज बंधु पाखे माहरे, सहु दिशा थई गई शून्य रे। ३४।
ते जाणीने इंद्रजित आव्यो, रावण केरी पास रे,
अरे तात, शुं करवा रुओ ? जेनो जन्म तेनो नाश रे। ३५।

से पर्वत का शिखर (टूटकर) गिर जाता हो। २८। उस असुर का वह सिर गर्जन करता हुआ आकाश में उछल गया, तो देव मन में भय को प्राप्त होकर विमानों को लिये हुए भाग गये। २९। (फिर) वह मस्तक लंका में गिर पड़ा; तब उससे बहुत घर दबाये गये; उस स्थान पर अनेक राक्षस उस सिर (के आघात) से मृत्यु को प्राप्त हो गये। ३०। अब कुम्भकर्ण की मृत्यु हो जाने पर देवों ने जय-जयकार किया। उन्होंने राम पर पुष्प-वृष्टि की और अपार दुन्दुभिनाद किया। ३१। कुम्भकर्ण की जो कुछ सेना शेष रही थी, उसके समस्त सैनिक भय को प्राप्त होकर भाग गये और लंका में गये। ३२। उन्होंने रावण से यह समाचार कहा कि महाकाय कुम्भकर्ण मौत को प्राप्त हो गया। तब राजा रावण विकल होकर सिंहासन पर से गिर पड़ा। ३३। अनन्तर रावण मन में दुःख धारण करते (अनुभव करते) हुए विलाप करने लगा। (वह बोला-) 'आज मेरे बन्धु के बिना (मेरे लिए) समस्त दिशाएं शून्य हो गयी हैं।' ३४। यह जानकर इन्द्रजित रावण के पास आ गया (और बोला-) 'हे तात, क्या करने (किसलिए) रो रहे हो? जिसका जन्म होता है, उसका नाश (भी) होता है। ३५। मृत्युलोक में अवतरित होकर कोई भी चिरजीवी नहीं होता। इसलिए किसलिए शोक धारण

मृत्युलोक मांहे अवतरी, नथी चिरणजीवी कोय रे,
माटे शोक शुं करवा धरो ? जे होनारुं ते होय रे। ३६।
नर वानरे ज्यारे कुंभकरणने, मार्यो निश्चे जाण रे,
हुं जाणुं हवे काळ विपरीत, आवियो निरवाण रे। ३७।
माटे क्षमा राखो पिता हावे, धरो धीरज मन रे,
ज्यारे त्यारे जगतमां पडे, एक वार ज तन रे। ३८।
एम बोध बहु पुत्रे कर्यो, समजाव्यो रावणराय रे,
त्यारे आज्ञा मागी प्रधाने, पछे जुद्ध करवा जाय रे। ३९।
महा बळिया सुत रायना, वळी चार मंत्री जेह रे,
देवांतक ने नरांतक वळी, त्रिशिरा नामे तेह रे। ४०।
वळी शक्रजितनो कनिष्ठ बंधु, नाम तेनुं अतिकाय रे,
ते चतुरंगदळ साथे लेईने, जुद्ध करवा जाय रे। ४१।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

जाये जुद्ध करवाने रणमां, रावणसुत अतिकाय रे,
वळी राजकुंवर बीजा अति घणा, वळी मंत्री जे कहेवाय रे। ४२।

* * *

कर रहे हो ? जो होनेवाला हो, वह होगा ही। ३६। यह निश्चय-पूर्वक समझ लो कि नर, वानर जिस किसी ने कुम्भकर्ण को मार डाला है, मैं जानता हूँ, उसके लिए अन्त में अब विपरीत काल आ गया है। ३७। इसलिए अब क्षमाभाव रखो, मन में धीरज रखो। जगत् में जब हो तब एक बार ही (प्रत्येक) का शरीर छूट जाता है।' ३८। इस प्रकार राजा रावण को उसके पुत्र ने बहुत उपदेश दिया समझाया (-बुझाया)। तब मंत्री ने आज्ञा माँगी और फिर वह युद्ध करने के लिए चल दिया। ३९। राजा (रावण) के महा बलवान पुत्र चल दिये; उनके अतिरिक्त जो चार मंत्री थे, वे चतुरंग दल साथ में लेकर युद्ध करने के लिए गये। उनके नाम थे—देवान्तक, नरान्तक और त्रिशिरा तथा अतिकाय। वह इंद्रजित का कनिष्ठ बन्धु था। ४०-४१।

रावण-सुत अतिकाय युद्ध करने के लिए रण (-भूमि) की ओर चल दिया। उसके साथ फिर अन्य अनेकानेक राजपुत्र थे। उनके अतिरिक्त-ऐसे भी व्यक्ति थे जो मंत्री कहाते थे। ४२।

* * *

अध्याय—२० (लक्ष्मण द्वारा महोदर-अतिकाय आदि का वध; इन्द्रजित का युद्ध के लिए आगमन)

राग सामेरी

त्यारे महोदर अतिकाय चढिया, साथे राजकुमार,
चतुरंग सैन्या साथे लेईने, आव्या रणमोझार। १।
वाजित्र वाजे अति घणां, मगदळ करे चिक्कार,
शूरवीर ते सिंहनाद करता, हणहणे तोखार। २।
त्यारे गीध पक्षी गयो बेसी, अतिकाय केरे शीश,
तेने मानशुक्न सूचव्या, पण गणतो नथी ते दिश। ३।
एवुं असुरनुं दळ जोईने, कपिसैन्य धायुं त्यांहे,
वानर-असुरनुं थावा लाग्युं, जुद्ध मांहोमांहे। ४।
गिरि वृक्ष ने पाषाणवृष्टि, करे छे बहु कीश,
ते आवतां झाले असुर, मारता करीने रीस। ५।
कपि अस्थि लेई राक्षस तणां, मारे असुरना शिरमांहे,
ते पुंगीफलवत् थाय चूरण, फाटे घट सम त्यांहे। ६।
वळी कपि करडे असुर केरां, नासिकां ने कर्ण,
त्यां रुधिरधारा चालती, दळ दीसे लोहितवर्ण। ७।

अध्याय—२० (लक्ष्मण द्वारा महोदर-अतिकाय आदि का वध; इन्द्रजित का युद्ध के लिए आगमन)

तब महोदर और अतिकाय ने आक्रमण किया। उनके साथ राजपुत्र (भी) थे। वे साथ में चतुरंग सेना लेकर रण (-भूमि) में आ गये। १। अत्यधिक वाजे बज रहे थे। मदोन्मत्त हाथी चिघाड़ रहे थे। शूरवीर (सैनिक) सिंहनाद कर रहे थे, तो घोड़े हिनहिना रहे थे। २। तब अतिकाय के सिर पर गिध पक्षी बैठ गया। उससे अपशकुन सूचित हो गये, परन्तु वह उस समय उन्हें नहीं गिन रहा था। ३। उस प्रकार के असुरों की सेना को देखकर कपि-सेना वहाँ दौड़कर आ गयी। (फिर) वानरों और असुरों के बीच परस्पर युद्ध होने लगा। ४। वानर पर्वतों, वृक्षों और पाषाणों की बहुत वृष्टि करने लगे। (परन्तु) उन्हें आते (-आते) राक्षस पकड़ लेते और क्रोध करके (उनसे कपियों को) मारते थे। ५। (इधर) वानर राक्षसों की हड्डियाँ लेकर उन राक्षसों के सिर पर आघात करते थे। (तब) वे पूगी (सुपाड़ी) के फल की भाँति चूर-चूर हो जाते और वहाँ घड़ों-से (टूटकर) नष्ट हो जाते। ६। इसके

दळ भंग जोईने कोप्यो जे, नरांतक राजकुमार,
श्याम करण तुरी उपर बेठा, आवियो तेणी वार। ८ ।
जाणे उच्चैःश्रवानो वीर हय, गरुडना सरखो वेग,
तेनी उपर राजकुंवर चढ्यो, आवी थयो भेगाभेग। ९ ।
झळकतुं विद्युतलता जेवुं, खड्ग झाल्युं पाण,
चोपास कपिने मारतो, एम कर्युं दळभंगाण। १० ।
एके घाए सहस्र वानर, मारतो रणमांहे,
तेणे कपि अष्टादश लक्ष मार्या, कर्युं प्राक्रम त्यांहे। ११ ।
एवो अनर्थ जोईने, धायो वालीसुत बळवंत,
आकाशमारग ऊछळ्यो, करी गरजना ते अनंत। १२ ।
पछे क्रोधे मारी अंगदे, एक मुष्टि मस्तक मांहे,
अश्व सहित मारी कर्यो, चूरण नरांतकने त्यांहे। १३ ।
त्यारे महोदर महापार्श्व, त्रिशिरा देवान्तक निरधार,
ए चारे मळीने अंगद उपर, करवा मांड्यो मार। १४ ।
एम अंगद संकटमां पड्यो, त्यारे कपि धाया चार,
नळ नील ने वळी ऋषभ साथे, चोथो वायुकुमार। १५ ।

अतिरिक्त वानर असुरों के नाकों और कानों को काट डालते, तो वहाँ रक्त की धारा बह चलती। (तब) वह सेना रक्तवर्ण दिखायी देती रही। ७। अपने दल को भग्न होते देखकर राजपुत्र नरान्तक क्रुद्ध हो उठा। उस समय वह श्यामवर्ण घोड़े पर बैठा और (आगे) आ गया। ८। मानो वह (घोड़ा) उच्चैःश्रवा का भाई था। उसका वेग गरुड़ के वेग के सदृश था। उसपर राजकुमार चढ़ गया और साथ ही साथ वह आ गया। ९। उसने विद्युल्लता जैसा चमकता हुआ खड्ग हाथ में पकड़ लिया था। वह चारों ओर (के) कपियों को (उससे) मारता रहा। इस प्रकार उसने (वानर-) दल को भग्न (तितर-बितर) कर डाला। १०। रण-भूमि में वह एक ही आघात से सहस्र वानर मारता जा रहा था। उसने आठ लाख कपि मार डाले। (इस प्रकार) उसने वहाँ पराक्रम किया। ११। ऐसा अनर्थ देखते ही बलवान बाली-पुत्र (अंगद) दौड़ा। वह आकाश मार्ग पर उछल गया। वह अपार गर्जना कर रहा था। १२। अनन्तर अंगद ने क्रोधपूर्वक (उस असुर के) मस्तक पर एक घूँसा जमाया और वहाँ नरान्तक को उसके घोड़े सहित मारकर उसे चूर-चूर कर डाला। १३। तब महोदर, महापार्श्व, त्रिशिरा और देवान्तक इन चारों ने निर्धारपूर्वक मिलकर अंगद को मारना आरम्भ किया। १४। इस

ते नळे मार्यो महोदर वळी, नीले त्रिशिरा जाण,
लीधा देवान्तक महापार्श्वना, हनुमंत ऋषभे प्राण । १६ ।
एम अंगदने उगारियो, मार्या चारेचार असुर,
अतिकाय तव कोपे चढ्यो, वजडावियां रणतुर । १७ ।
ते राजकुंवर रथमांहे बेठो, जोड्या सहस्र तोखार,
तेनी रसी एक सारथिए ग्रही छे निरधार । १८ ।
इंद्रजित जेवो पराक्रमी, अतिकाय स्थूळ शरीर,
ते युद्ध करवा आवियो, सिंहनाद करतो वीर । १९ ।
त्यारे तेनी सामा गवाक्ष गवय, शरभ कुमुद ने मयंद,
अतिकाय आवतो आंतरीने, युद्ध करे महाद्वंद । २० ।
ते सर्वने मूर्छित करी, चाल्यो आगळ अभिराम,
सारथिने कहे हांक रथ, ज्यां होय लक्ष्मण-राम । २१ ।
आवतो जोईने विभीषणने, पूछ्युं श्रीरघुवीर,
आ कोण आव्यो रथमां वेसी, जुद्ध करवा धीर । २२ ।
त्यारे विभीषण कहे रावण केरो, कुंवर ए अतिकाय,
महा पराक्रमी बळवंत छे, वानरे नहि जिताय । २३ ।

प्रकार अंगद संकट में पड़ गया । तव (ये) चार कपि दौड़े—नल, नील इनके अतिरिक्त साथ में ऋषभ था और चौथा था पवनकुमार हनुमान । १५ । नल ने महोदर को मार डाला । फिर समझिए कि नील ने त्रिशिरा को मार डाला । हनुमान और ऋषभ ने देवान्तक और महापार्श्व के प्राण लिये । १६ । इस प्रकार उन्होंने अंगद को बचा लिया और चारों ही चारों असुरों को मार डाला । तव अतिकाय क्रोध से चढ़ दौड़ा । उसने रणतूर्य बजवा दिये । १७ । वह राजकुमार रथ में बैठा हुआ था । उस (रथ) में एक सहस्र घोड़े जोते हुए थे । उनकी रस्सी (लगाम) एक सारथी ने निर्धार-पूर्वक ग्रहण की थी । १८ । अतिकाय इन्द्रजित जैसा पराक्रमी था । वह स्थूल-शरीरी था । (जव) वह युद्ध करने के लिए आ गया, (तब) वह सिंहनाद कर रहा था । १९ । तब उसके सामने गवाक्ष, गवय, शरभ, कुमुद और मयन्द गये । (आगे) आते हुए अतिकाय उन्हें रोककर महान (अति घोर) द्वंद्व युद्ध करने लगा । २० । उन सबको अचेत करते हुए वह अभिराम (राजकुमार) आगे चला । वह सारथी से बोला— ' जहाँ राम-लक्ष्मण हों, (वहाँ) रथ हाँक लो । ' २१ । उसे आते देखकर श्रीरघुवीर ने विभीषण से पूछा— ' रथ में बैठकर यह कौन धीर पुरुष युद्ध करने के लिए आ रहा है ? ' २२ ।

आ रथ आव्यो छे ब्रह्माए, ए अभेद्य वज्रस्वरूप,
एवुं वचन सुणीने रामचरणे, नम्या पन्नगभूप। २४।
आज्ञा मागी रामनी, सज थया लक्ष्मण वीर,
अतिकाय साथे युद्ध करवा चालिया रणधीर। २५।
धनुष पर संधान करी, सौमित्र मूके बाण,
ते आवतां अतिकाय छेदे, शरे शर निरवाण। २६।
रावण तणो सुत प्राक्रमी, अस्त्रविद्याए समर्थ,
लक्ष्मणजी जे जे बाण मूके, करे तेने व्यर्थ। २७।
अतिकाय ने लक्ष्मण तणुं, थयुं जुद्ध दारुण त्यांहे,
शोणितनी सरिता वही, थयो संगम सागर मांहे। २८।
घणुं बळ दीठुं अतिकायनुं, कोप्या अनंत अपार,
ब्रह्मास्त्र शरसंधान करीने, मुकियुं तेणी वार। २९।
ज्यम प्रलय केरी वीज चमके, एम चाल्युं बाण,
ते बाणथी अतिकायनुं, शिर छेदियुं निरवाण। ३०।
ते समे कपिसेना विषे, वरतियो जयजयकार,
असुर केरुं सैन्य नाठुं गयुं पुर मोझार। ३१।

तब विभीषण बोला, 'यह रावण का अतिकाय नामक पुत्र है। वह महा पराक्रमी तथा बलवान है। वह वानरों द्वारा नहीं जीता जाएगा। २३। उसे यह रथ ब्रह्माजी ने दिया है। यह वज्र-स्वरूप अभेद्य है।' ऐसी बात सुनकर सर्पाधिप शेष (के अवतार लक्ष्मण) ने राम के चरणों को नमस्कार किया। २४। वीर लक्ष्मण ने राम से आज्ञा माँगी और वे सज्ज हो गये। (फिर) रणधीर वीर अतिकाय से युद्ध करने के लिए चल दिये। २५। धनुष पर सन्धान करके लक्ष्मण बाण छोड़ने लगे। उनके आते ही अतिकाय अन्त में बाण से बाण काटता जाता। २६। रावण का वह पुत्र पराक्रमी था, अस्त्र-विद्या में समर्थ था। लक्ष्मण जो-जो बाण चलाते, उन्हें वह व्यर्थ कर देता। २७। वहाँ अतिकाय और लक्ष्मण का दारुण युद्ध हुआ; रक्त की नदी बहने लगी और उसका सागर से संगम हो गया। २८। अनन्त (शेष के अवतार) लक्ष्मण ने अतिकाय का बहुत बल देखा, तो वे क्रुद्ध हो गये। (फिर) उस समय उन्होंने ब्रह्मास्त्र (से युक्त) शर का सन्धान करके छोड़ दिया। २९। जिस प्रकार प्रलय की बिजली चमकती हो, उस प्रकार (चमकते हुए) बाण चला। अन्त में उस बाण से लक्ष्मण ने अतिकाय का सिर छेद डाला। ३०। उस समय कपि-सेना में जयजयकार हो गया। (फलस्वरूप) असुरों की सेना भाग गयी

समाचार जाण्या दशमुखे, अतिकाय केरुं मर्ण,
त्यारे मूर्छा आवी रायने, खेदथी पडियो धर्ण। ३२।
घणा पुत्र मित्र जामात्र शूरा, मरण पाम्या जेह,
राय तेने संभारीने, रुदन करतो तेह। ३३।
सावधान करियो इंद्रजिते; रावणने तेणी वार,
पछी धीरज आपी युद्ध करवा, चढ्यो सतीकुमार। ३४।
चतुरंग सेना साथ लीधी, कर्युं रक्ते स्नान,
रक्तभूषण रक्त अम्बर, कर्यां तन परिधान। ३५।
पछी शक्ति केरो हवन करियो, कुंड रची रणमांहे,
माहे सरसव मंत्री होमिया, मद्यमांस घणुं वळी त्यांहे। ३६।
रणदेवीने करी प्रसन्न, भोग समर्प्या बहु रीत,
वाजित्र बहु वजडावियां, जुद्धे चढ्यो इंद्रजित। ३७।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

इंद्रजित चढियो जुद्ध करवा, बेठो रथ मोझार रे,
चारे पासे कोट रचियो, सेना तणो निरधार रे। ३८।

* * *

और वह (लंका) नगर में गयी। ३१। अतिकाय की मृत्यु सम्बन्धी समाचार (जब) राजा दशानन ने जान लिये, तब उसे मूर्च्छा आ गयी; वह खेद से धरती पर गिर गया। ३२। जो मृत्यु को प्राप्त हुए, उन अपने अनेक शूर पुत्रों, मित्रों और दामादों को स्मरण करके राजा (रावण) रुदन करने लगा। ३३। उस समय इन्द्रजित ने रावण को सचेत कर लिया और अनन्तर उसे ढाढ़स बँधाकर वह सती मन्दोदरी का पुत्र युद्ध करने के लिए चढ़ दौड़ा। ३४। उसने साथ में चतुरंग सेना ली, रक्त में स्नान किया। (फिर) उसने रक्त (-से लाल) आभूषण, लाल वस्त्र तन पर धारण कर लिये। ३५। अनन्तर उसने रण (-भूमि) में कुण्ड बनाते हुए शक्ति (देवी) के नाम हवन किया। फिर उसमें सरसों को अभिमंत्रित करके, इसके अतिरिक्त बहुत मद्य और मांस वहाँ होम में डाल दिया। ३६। युद्ध की अधिष्ठात्री देवी—रण-देवी को प्रसन्न करके उसने बहुत प्रकार से भोग समर्पित कर दिये (चढ़ाये)। (फिर) इंद्रजित ने बहुत वाद्य बजवा दिये और वह युद्ध के लिए चढ़ दौड़ा। ३७।

इन्द्रजित रथ में बैठ गया और युद्ध करने के लिए चढ़ दौड़ा। उसने निर्धार-पूर्वक अपने चारों ओर सेना की चहारदिवारी बना ली। ३८।

* * *

अध्याय—२१ (इन्द्रजित के द्वारा राम की सेना को अचेत कर देना)

राग मारु

आव्यो इंद्रजित रणमांहे, रघुवीरनुं सैन्य छे ज्यांहे,
त्यारे कपिदळ थयुं सावधान, मारोमार करे बळवान। १ ।
चारे पासे कपिए घेर्यो, अकळाव्यो सुत रावण केरो,
मुखें बोलता जय जय राम, मारे वृक्ष गिरि ते ठाम। २ ।
त्यारे अदृश्य थयो इंद्रजित, करतो आकाश जईने अनित्य,
त्यांहां रही मूके बाण अपार, जाणे अखंड मेघनी धार। ३ ।
चारे पासे कपि सहु जोय, तेने नथी देखतुं कोय,
आवे वीजळी सरखां बाण, छेदे कपिनां शिर पद पाण। ४ ।
कोटि वानर पाम्या मर्ण, पड्या निर्जीव थईने धर्ण,
त्यारे वर्त्यो हाहाकार, ते बळियो मेघनाद अपार। ५ ।
शत बाण मूक्यां इंद्रजित, खील्या राम ने लक्ष्मण सहित,
करमांथी पाड्यां शरासन, पड्या मूर्छित थई भगवान। ६ ।

अध्याय—२१ (इन्द्रजित के द्वारा राम की सेना को अचेत कर देना)

इन्द्रजित युद्ध-भूमि में (वहाँ) आ गया, जहाँ राम की सेना थी। तब कपि-सेना सावधान हो गयी। (फिर) वे बलवान कपि आघात करने लगे। १। कपियों ने (जब) चारों ओर से घेर लिया, तो रावण का वह पुत्र—इन्द्रजित—आकुल-व्याकुल हो गया। (वे कपि) मुख से 'जय-जय राम (की)' बोल रहे थे और उस स्थान पर वृक्षों और पर्वतों से आघात कर रहे थे। २। तब इन्द्रजित अदृश्य हो गया। वह आकाश में जाकर (युद्ध-कर्म की दृष्टि से) अनीति (से युक्त काम) करने लगा। वहाँ रहकर वह अनगिनत बाण छोड़ने लगा; मानो मेघ की अविरल धारा ही हो। ३। वह चारों ओर सब कपियों को देखता था, परन्तु उसे कोई नहीं देख पाता था। उसके बाण बिजली-से आ रहे थे। ४। (फ़लतः) करोड़ों वानर मृत्यु को प्राप्त हो गये। वे निर्जीव होकर धरती पर गिर गये। तब हाहाकार मच गया। (इस प्रकार) इन्द्रजित अपार बलवान (सिद्ध हो) गया। ५। फिर इन्द्रजित ने सौ बाण चला दिये और लक्ष्मण-सहित राम को कील डाला। भगवान राम के हाथ से धनुष गिरा दिया गया और वे मूर्च्छित होकर गिर गये। ६। (वस्तुतः) राम, जो अभेद्य आत्माराम हैं, उस स्थान पर मानवीय लीला जतला रहे थे। इसके अतिरिक्त, इन्द्रजित ने अनेक बाण चला दिये और अनेक

जणवी मानुषी लीला ते ठाम, जे अभेद्य छे आत्माराम,
वळी मूक्यां इंद्रजित बाण, लीधा अनेक वानरना प्राण। ७ ।
अष्टादश बाणे सुग्रीव पाड्यो, छ बाणे गंधमादन ताड्यो,
बार बाणे ऋषभ ने मयंद, नीलने बाण मार्यां द्वंद। ८ ।
रुक्षपाळने मार्यां सात, कर्यो खट बाणे नळने पात,
गवय गवाक्ष अंगद जेह, पाड्या त्रण बाणे करी तेह। ९ ।
दधिमुख शरभने द्वादश तन, सोळ बाणे पावकलोचन,
चौद बाणे सुक्षेण केसरी, हेमकूटने वींध्यो त्रणे करी। १० ।
सुमुख दुर्मुख ने ज्योर्तिमुख, दश बाणे पमाड्या तेने दुःख,
गौरमुखने पाड्यो चार बाण, पंचशरे दधिमुख निर्वाण। ११ ।
कर्या मूर्छित सहु कपिमात्र, पड्या भूमि शिथिल थयां गात्र,
करी सकळ सैन्य मूर्छित, ऊतर्यो भूमि उपर इंद्रजित। १२ ।
पाम्यो विजय जीतीने राम, इंद्रजिते कर्युं एवुं काम,
वजडाव्यां वाजित्र अपार, आव्यो लंकामां सतीनो कुमार। १३ ।
ऊठी रावण पुत्रने भेट्यो, ताप बंधुमरणनो मेट्यो,
शाबाश कर्युं रूडुं काम, राख्युं तें मारुं नाम। १४ ।

वानरों के प्राण लिये। ७। उसने अठारह बाणों से सुग्रीव को गिरा दिया; छः बाणों से गन्धमादन को प्रताड़ित किया। बारह बाणों से ऋषभ और मयन्द को तथा दो बाणों से नील को मार गिराया। ८। ऋक्षपाल पर सात बाण मारे, तो नल को छः बाणों से गिरा दिया। जो गवय, गवाक्ष तथा अंगद (नामक योद्धा) थे, उन्हें तीन बाणों से गिरा दिया। ९। दधिमुख और शरभ को बारह बाणों से, पावकलोचन को सोलह बाणों से, चौदह बाणों से सुषेण और केसरी को; और तीन बाणों से हेमकूट को बींध डाला। १०। सुमुख, दुर्मुख और ज्योतिर्मुख नामक उन (वानरों) को दस बाणों से दुःख को प्राप्त करा दिया। गौरमुख को चार बाणों से और अन्त में दधिमुख को पाँच बाणों से गिरा दिया। ११। उसने मात्र सब कपियों को मूर्च्छित कर दिया। वे भूमि पर गिर पड़े। उनके शरीर शिथिल हो गये। इस प्रकार समस्त सेना को मूर्च्छित करके इन्द्रजित (नीचे) धरती पर उतर गया। १२। राम को जीतकर इन्द्रजित विजय को प्राप्त हो गया। इस प्रकार उसने काम किया। उसने अपार वाद्य बजवा दिये (और अन्त में) वह सती-पुत्र लंका में आ गया। १३। तब उठकर रावण अपने पुत्र से मिला; (तब) बन्धु की मृत्यु का दुःख मिट गया। (वह

एम रीझ्यो रावणराय, हवे सुवेळुए शुं थाय ?
कपि सैन्य पड्युं'तुं जेह, तेमां ऊगर्या बे जण तेह । १५ ।
एक विभीषण ने हनुमंत, चिरणजीवी ए बे बळवंत,
ते बेठा आवी रामनी पास, देखी विपरीत थया छे उदास । १६ ।
रामलक्ष्मणनुं जोई मुख, मनमां घणुं पाम्या दुःख,
पछी मूकी मननी धीर, रोवा लाग्या ते बंन्यो वीर । १७ ।
निश्चे आव्यो भाई विपरीत काळ, पडिया ज्यारे रघुकुळबाळ,
एम बे जण शोचे आप, करे विविध प्रकार विलाप । १८ ।
एम करतां निशा थई ज्यारे, गया सैन्यमां मारुति त्यारे,
जोया सर्व कपिने हलावी, थाक्या नाम देईने बोलावी । १९ ।
पड्या सर्व थईने अचेत, तेमां जांबुवान छे सावचेत,
तेने बेठो कर्यो बळवंत, रींछपति कहे हो हनुमंत । २० ।
भाई सुखी छे लक्ष्मण-राम, कहो बेठा छे कोण ठाम ?
एवुं सुणी रोया मारुततन, बोल्या गद्गद थईने वचन । २१ ।

बोला—) 'साधु, साधु । तुमने अच्छा काम किया, तुमने मेरा नाम रख लिया (मेरी प्रतिष्ठा स्थिर रखी)' । १४ । इस प्रकार रावण सन्तुष्ट हो गया । अब (इधर) सुवेल पर क्या हो रहा है ? जो कपि (पक्ष की) सेना गिर गयी थी, उसमें से दो जने बच गये थे । १५ । एक था विभीषण और (दूसरा) था हनुमान । वे दोनों बलवान व्यक्ति चिरजीवी थे । वे राम के पास आकर बैठ गये । उस विपरीत बात को देखकर वे उदास हो गये । १६ । राम-लक्ष्मण के मुख को देखकर वे मन में बहुत दुःख को प्राप्त हो गये । फिर मन का धीरज खोकर दोनों वीर रोने लगे । १७ । (वे बोले—) 'जब कि रघुकुल के बच्चे गिर गये हैं, तो हे भाई, निश्चय ही प्रतिकूल काल आ गया है ।' इस प्रकार वे दोनों जने स्वयं शोक करने लगे । वे विविध प्रकार से विलाप करने लगे । १८ । ऐसा करते-करते जब रात बीत गयी, तब हनुमान सेना में चला गया । उसने सब कपियों को हिलाकर देखा; नाम ले-लेकर उन्हें बुलाते हुए वह थक गया । १९ । वे सब अचेत होकर गिर गये थे; उनमें (केवल) जाम्बवान सचेत था । उस बलवान को उसने बैठा लिया, तो वह ऋक्षपति बोला, 'हे हनुमान ! हे भाई ! क्या लक्ष्मण और राम सकुशल हैं ? कहो, वे किस स्थान पर बैठे हैं ।' ऐसा सुनकर पवनकुमार रो पड़ा । (फिर) गद्गद होते हुए वह यह बात बोला । २०-२१ । 'हे जाम्बवान ! मुझसे क्या पूछ रहे हो ! भगवान सेना-सहित पड़े हुए हैं ।

शुं पूछो छो मुंने जांबुवान ? सैन्य सहित पड्या छे भगवान,
मनुष्यलीला करी रघुराय, हावे करवो कवण उपाय ? २२ ।

एवां वचन सुणी रुक्षराज, आव्या ज्यां विराजे महाराज,
त्रणे जण मळी बेठा पास, जोई रामने मूके निश्वास । २३ ।

विभीषण ने वायुकुमार, रुक्षपति मळी करता विचार,
कहो भाई हावे करवुं क्यम ? साधो समय थाये सुख ज्यम । २४ ।

वळता बोल्या रींछपति त्यांहे, जो लावो द्रोणाचळ आंहे,
तेनी औषधि पवन पसार, ऊठे सकळ सैन्य निरधार । २५ ।

अहींथी योजन छे कोटी चार, क्षीरसिंधुनी पेली पार,
ते आवे निशामां आ ठार, तो सरे अर्थ नव लागे वार । २६ ।

एवुं सुणी ऊठ्या वायुतन, थया सत्वर बोल्या वचन,
त्रण पहोरमां लावुं द्रोणाचळ, रामकृपानुं छे मुजमां बळ । २७ ।

तमो रक्षण सहुनुं करजो, आवे असुर तेने संहरजो,
घणी धीरज धरजो मन, प्राणपतिनुं करजो जतन । २८ ।

रघुनाथ मनुष्य लीला कर रहे हैं । अब क्या उपाय करना है ? ' । २२ । ऐसे वचन सुनकर ऋक्षराज (जाम्बवान वहाँ) आ गया, जहाँ महाराज (राम) विराजमान थे । वे तीनों जने मिलकर (राम के) समीप बैठ गये और राम को देखकर आह भरने लगे । २३ । (तदनन्तर) विभीषण, हनुमान और जाम्बवान मिलकर विचार करने लगे । (एक ने कहा—) ' कहो भाई अब क्या करना है ? जिससे सुख हो जाए, ऐसा अवसर (के अनुकूल उपाय) करो । ' २४ । फिर वहाँ ऋक्षपति जाम्बवान बोला, ' यदि यहाँ द्रोणाचल को लाओगे, तो उसकी औषधियों की हवा फैलने पर समस्त सेना निश्चय ही उठ जाएगी । २५ । वह यहाँ से चार करोड़ योजन (दूर) क्षीर समुद्र के उस पार है । यदि वह रात (की रात) में इस स्थान पर आ जाए, तो हमारा हेतु पूरा होगा और देर नहीं लगेगी । ' २६ । ऐसा सुनते ही पवनकुमार उठ गया और सिद्ध होकर यह बात बोला— ' मैं तीन पहरों में द्रोणाचल ले आऊँगा; मुझमें राम की कृपा का बल है । २७ । तुम सबकी रक्षा करना; यदि असुर आएँ, तो उनका संहार करना । मन में बहुत धीरज धारण करना और प्राणपति (भगवान राम) की रक्षा करना । २८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

प्राणपतिनुं जतन करजो, धरजो मनमां धीर रे,
एवुं कही द्रोणाचळ लेवा, चाल्या हनुमंत वीर रे। २९।

* * *

प्राणपति की रक्षा करना; मन में धीरज धारण करना।' ऐसा कहकर वीर हनुमान द्रोणाचल को लाने के लिए चल दिया। २९।

* * *

अध्याय—२२ (हनुमान द्वारा औषधि लाना; राम की सेना का मूर्छा-निवारण)

राग मारु

हावे द्रोणाचळ लेवाने काजे, कूद्यो वायुतन,
आकाशमारग जाय छे ऊड्यो, भय नथी धरतो मन। १।
रामनामनुं स्मरण करे मुख, मारे मनोमन फाळ,
निशा विषे निरभे थकी जातो, वज्रदेही विकराळ। २।
समुद्र सरिता द्वीप गिरि ते, ओळंग्या तेणी वार,
मनथी अधिको वेग छे जेनो, एवो वायुकमार। ३।
पछे द्रोणाचळनी पासे आवीने, ऊभा श्रीहनुमंत,
ते पर्वतने चिंतवियो पोते, लेवाने बळवंत। ४।

अध्याय—२२ (हनुमान द्वारा औषधि लाना; राम की सेना का मूर्छा-निवारण)

अब पवनकुमार ने द्रोणाचल को ले आने के हेतु छलाँग लगा दी। वह आकाश-मार्ग से जा रहा था। वह मन में कोई भय नहीं रख रहा था (अनुभव कर रहा था)। १। वह मुख से रामनाम का स्मरण (जाप) कर रहा था। वह मन-ही-मन (मन की गति के साथ एकात्म होते हुए) छलाँग (पर छलाँग) लगा रहा था। विकराल वज्र-(की-सी) देह धारण करनेवाला वह (कपि) निर्भयता-पूर्वक रात में जा रहा था। २। उसने उस समय समुद्रों, नदियों, द्वीपों, पर्वतों को लाँघ लिया। जिसका वेग मन (के वेग) से अधिक था, ऐसा था वह पवनकुमार हनुमान। ३। फिर द्रोणाचल के पास आकर हनुमान खड़ा रह गया। उस बलवान ने पर्वत को स्वयं लिवा ले जाने के हेतु उसका चिन्तन किया। ४। जिस प्रकार अगस्त्य ने समुद्र का चिन्तन किया, जिस प्रकार कोई चोर राजा के

ज्यम अंबुनिधिने अगस्त्य चिंतवे, तस्कर नृपभंडार,
ज्यम कुठारपाणि वृक्ष चिंतवे, युवतीरूपने जार। ५ ।
एम द्रोणाचळने चिंतवे कपिवर, स्तुति करता कर जोड,
तुं परउपकारी पर्वत छे, माटे पूर अमारा कोड। ६ ।
तुज नामस्मरणथी रोग ज नासे, त्रासे तन परिताप,
हुं याचक तुजने याचवा आव्यो, माटे औषधि मुजने आप। ७ ।
जे जगदुद्धारक रामलक्ष्मण, थया मूर्छित सैन्य सहित,
तुजने जश आपवाने कारण, लीला करी छे अजित। ८ ।
एम हनुमंते घणी करी प्रार्थना, त्यारे बोल्यो गिरि द्रोण,
प्रत्यक्ष मूर्ति थईने कहे, अल्या तुं मर्कट छे कोण ? ९ ।
देवने दुर्लभ औषधि मारी, ते तुंने केम अपाय ?
जा नहि आपुं कोण छे एवा, लक्ष्मण ने रघुराय ? १० ।
एवुं सांभळी कपिवर कोप्या, बोल्या क्रोधवचन,
अल्या जडबुद्धि पाषाण रुदे, कंई ज्ञान नथी तुज मन। ११ ।
ज्यम वायसने विवेक नहि, मद्यपानीने तत्त्वविचार,
ज्यम दया नहि निर्दय हिंसकने, व्यसनीने आचार। १२ ।

(धन-) भण्डार का चिन्तन करता हो, जिस प्रकार लकड़हारा (हाथ में कुल्हाड़ी लेकर) वृक्ष सम्बन्धी विचार करता हो, जिस प्रकार जार पुरुष युवती के रूप का चिन्तन करता हो, उस प्रकार वह कपिवर द्रोणाचल का चिन्तन करने लगा। वह हाथ जोड़कर उसका स्तवन करने लगा। (वह बोला—) 'तुम परोपकारी पर्वत हो; अतः हमारी कामना पूर्ण करो। ५-६। तुम्हारे नाम के स्मरण ही से रोग नष्ट हो जाते है, शरीर के परिताप भयभीत हो जाते हैं। मैं याचक (के रूप में) तुमसे याचना करने आया हूँ। अतः मुझे औषधि दो। ७। जो जगत् के उद्धार-कर्ता हैं, वे राम-लक्ष्मण सेना-सहित मूर्च्छित हो गये हैं। (वस्तुतः) तुम्हें यश दिलाने के निमित्त वे अजित (होने पर भी पराजित होने की) लीला कर रहे हैं।' ८। इस प्रकार हनुमान ने बहुत प्रार्थना की, तब द्रोणगिरि बोला। वह प्रत्यक्ष मूर्तिमान होकर बोला— 'अरे मर्कट, तू कौन है ? ९। मेरी औषधियाँ देवों के लिए भी दुर्लभ हैं, तुझे मैं वे कैसे दूँ ? चला जा, मैं नहीं देता। ऐसे कौन है वे लक्ष्मण और राम ?' १०। ऐसा सुनकर वह कपिवर क्रुद्ध हो उठा; वह क्रोध-भरे वचन बोला— 'अरे, जड़बुद्धि पाषाण-हृदय ! तेरे मन को कोई ज्ञान नहीं (तेरे मन को कुछ ज्ञात नहीं है)। ११। जिस प्रकार कौए में विवेक नहीं होता, मद्यपी

धर्मशास्त्र ते भ्रष्ट न जाणे, मूढनो विद्याभ्यास,
जारने शील कृपणने धर्म शुं, कपटीने विश्वास। १३।
एम तुं निर्दय जड नथी जाणतो, राम कामनुं हेत,
माटे हवडां तुंने चूर्ण करी नाखुं, शिक्षा करुं अचेत। १४।
एम कही पछे पूंछ वधार्युं, प्रचंड चक्राकार,
शेषनागना जेवुं करीने, बांध्यो गिरि तेणी वार। १५।
पछे मूळ थकी उखेडी लीधो, द्रोणाचळ हनुमंत,
आकाशमारग लेईने चाल्या, उछळता बळवंत। १६।
ज्यम झळके कांति सुदामा पर्वत, रविमंडळ रथसाज,
ज्यम उरगपति उरवी लेई ऊडे, एम ऊड्या कपिराज। १७।
ज्यारे एक पहोरे रजनी रही त्यारे, आव्या सुवेळु ज्यांहे,
ते समे शीत प्रभंजन छूट्यो, प्रसर्यो सेनामांहे। १८।
द्रौण औषधिनो वायु लाग्यो, सैन्य ऊठ्युं तेणी वार,
श्रीरामलक्ष्मण सावचेत थया ने, वर्त्यो जयजयकार। १९।

में तत्व-विचार नहीं होता, जिस प्रकार निर्दय हिंसक में दया नहीं होती, व्यसनी में (पवित्र) आचरण नहीं होता, जिस प्रकार भ्रष्ट (आचरण वाला व्यक्ति) धर्मशास्त्र नहीं जान पाता, मूढ़ विद्याभ्यास (करना) नहीं जानता, उस प्रकार तुझ निर्दय को राम के कार्य का उद्देश्य विदित नहीं है। जार के लिए शील क्या है? कृपण के लिए (दान सम्बन्धी) धर्म क्या है? कपटी के लिए विश्वास क्या है? उस प्रकार तू निर्दय, जड़ (-बुद्धि) राम के कार्य का हेतु नहीं जान रहा है। इसलिए मैं तुझे अभी चूर-चूर कर डालूँगा। रे अचेत, तुझे दण्ड दूँगा। १३-१४। ऐसा कहकर उसने अपनी पूँछ को प्रचण्ड चक्राकार वढ़ाते हुए फैला दिया और उसे शेष-नाग-सा बनाते हुए उसने उस समय द्रोणगिरि को बाँध लिया। १५। फिर हनुमान ने उसे मूल से उखाड़ लिया और वह बलवान कपि उसे लेकर आकाश-मार्ग से उछलते हुए चल दिया। १६। जिस प्रकार सुदामा (नामक) पर्वत की कान्ति जगमगाती है, सूर्य-मण्डल का सुसज्ज रथ चलता है, जिस प्रकार सर्पों का स्वामी शेष पृथ्वी को लिए हुए उड़ता है, उस प्रकार वह कपिराज उड़ रहा था। १७। जब एक पहर रात (शेष) रही, तब (तक) वह वहाँ आ गया, जहाँ सुवेल है। उस समय शीतल वायु चलने लगी और वह सेना में फैल गयी। १८। द्रोण पर्वत पर उत्पन्न एवं स्थित औषधियों की (गन्ध लिए हुए) हवा जब लग गयी, उस समय वह सेना (सचेत होकर) उठ गयी। श्रीराम और लक्ष्मण सचेत हो गये और (उस स्थान पर) जय-जयकार हो गया। १९। सबके शरीर

सर्वनां अंग नवीन थयां, तलमात्र रह्यो नहि घाव,
त्यारे अरुण उदय त्यां सभा करीने, बेठा श्रीरघुराय। २०।
ते मारुति मूकी आव्या पूर्वस्थळ, द्रोणाचळने त्यांहे,
आवी महावीरे साष्टांग कर्या, श्रीरघुपति बेठा ज्यांहे। २१।
श्रीरामे उठाडी अंजनीसुतने, चांपियो रुदियो साथ,
धन्य धन्य कही आशिष दीधी, मस्तक मूक्यो हाथ। २२।
प्राणदातार थयो तुं सहुनो, सांभळ हो हनुमंत,
तुज विना कोण साह्य करे, आ रणमांहे वळवंत। २३।
त्यारे कर जोडीने कहे अंजनीसुत, समर्थ श्रीरघुराय;
ए सर्वे तमारी कृपानुं फळ छे, मुजथी कंई नव थाय। २४।
एम अंजनीसुतनां वचन सुणीने प्रसन्न थया मोरार;
सर्वे कपिजन आनंद पाम्यां, करता जयजयकार। २५।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

वर्त्यो जयजयकार, सहु कपि भेट्या हनुमंतने,
वळी श्रीमुखे जुगदाधार, वखाणे घणुं वळवंतने। २६।

नवीन (-से) हो गये; (किसी के शरीर में कोई) तिल मात्र तक घाव नहीं (शेष) रहा। तब (तक) अरुणोदय हो गया, तो श्रीरघुनाथ सभा आयोजित करके बैठ गये। २०। (तब) हनुमान द्रोणाचल को उसके अपने पूर्व-स्थान पर छोड़कर वहाँ आ गया। जहाँ रघुपति बैठे हुए थे, वहाँ आकर उस महावीर ने उन्हें साष्टांग नमस्कार किया। २१। तो श्रीराम ने उस अंजनी-सुत को उठाते हुए अपने हृदय से लगा लिया। 'धन्य! धन्य!' कहते हुए आशीर्वाद दिया और उसके मस्तक पर (वरद-) हस्त रखा। २२। (फिर वे बोले—) 'हे हनुमान, सुनो। तुम सबके लिए प्राणदाता हो गये हो। हे बलवान, विना तुम्हारे इस युद्ध में कौन सहायता करेगा?। २३। तब हाथ जोड़कर अंजनी के उस पुत्र ने कहा—' हे समर्थ श्रीरघुराय, वह तो आपकी कृपा का बल है। (नहीं तो) मुझसे कुछ भी नहीं हो पाएगा।'। २४। अंजनी सुत हनुमान के ऐसे वचन सुनकर भगवान मुरारि (विष्णु के अवतार राम) प्रसन्न हो गये। समस्त कपिजन आनन्द को प्राप्त हो गये और उन्होंने जय-जयकार किया। २५।

(वहाँ) जय-जयकर हो गया। (फिर) समस्त कपि हनुमान से मिले। फिर जगदाधार श्रीराम ने अपने मुख से उस बलवान (कपिवर) की बहुत प्रशंसा की। २६।

* * *

अध्याय—२३ (कुम्भ-निकुम्भ का वध, इंद्रजित द्वारा उत्पन्न कृत्या का नाश, इंद्रजित द्वारा सीता का मायावी मस्तक हनुमान को दिखाना)

राग धन्याश्री

हनुमंते करियुं अद्भुत काज जी,
त्यारे वानर प्रत्ये बोल्या कपिराज जी।
सहु अग्नि लगाडो लंकामां आज जी,
एवुं सुणी ऊठ्यो कीश समाज जी। १।

ढाळ

समाज कपिनो चालियो सुणी, सुग्रीव केरुं वचन,
कोट ओळंगी प्रवेश्या, पुरमांहे सहु कपिजन। २।
देवदार केरां वृक्ष करमां, गगनचुंबित जेह,
ते सळगावी कपि कूदिया, कोटानकोटी तेह। ३।
घणो वायु वायो ते समे, लंकामां लागी लाय,
सहु लोक हाहाकार करता, कोलाहल बहु थाय। ४।
ते जाण रावणने थयुं, त्यारे खेद पाम्यो मन,
जे द्रोणाचळ हनुमंत लाव्यो, कर्या सहु सजीवन। ५।
वळी वानर आव्या लंकामां, बाळवा मांड्या धाम,
ए ऊजड करशे पुर सकळ, को नहि रहे आ ठाम। ६।

अध्याय—२३ (कुम्भ-निकुम्भ का वध, इंद्रजित द्वारा उत्पन्न कृत्या का नाश, इंद्रजित द्वारा सीता का मायावी मस्तक हनुमान को दिखाना)

हनुमान ने अद्भुत कार्य किया, तब कपिराज सुग्रीव वानरों से बोला— 'आज तुम सब लंका में आग लगा दो।' ऐसा सुनकर वानर-समाज उठ गया। १।

सुग्रीव का यह वचन सुनकर कपियों का समुदाय चल दिया। दुर्ग की चहारदीवारी को लाँघकर समस्त कपिजन नगर में प्रविष्ट हो गये। २। कोटि-कोटि कपि देवदारु वृक्ष, जो गगनचुम्बी थे, हाथों में लेकर उन्हें सुलगाते हुए कूद पड़े। ३। उस समय बहुत तेज हवा बह चली। लंका में आग लग गयी, तो सब लोग हाहाकार करने लगे। (वहाँ) बहुत कोलाहल मच गया। ४। हनुमान द्रोणाचल ले आया और उसने समस्त लोगों को स-जीव (पुनर्जीवित) कर दिया, यह जानकारी रावण को प्राप्त हो गयी, तब वह मन में खेद को प्राप्त हो गया। ५। इसके

राजकुंवरने आज्ञा करी, जंग प्रजंघ ने विरूपाक्ष,
ते तत्पर थईने चालिया वळी, क्रोधन ने शोणिताक्ष। ७।
वळी कुंभकरणना पुत्र बे जेनुं, कुंभ-निकुंभ एवुं नाम,
परजन्यास्त्र मूकी अग्नि, सरवे समाव्यो ते ठाम। ८।
पछी बाण मारी सर्व वानर, काढ्या पुरथी बहार,
रणमांहे आवी राक्षसे, युद्ध आरंभ्युं ते ठार। ९।
घटश्रोत्रना पुत्रे तदा, रणमां कर्युं जुद्ध घोर,
मारवा मांड्युं कपिदळ त्यारे, धायो भानुकिशोर। १०।
कुंभना करमां थकी लीधुं, सुग्रीवे कोदंड,
करी गर्जना पछी भंग कीधुं, धनुषना बे खंड। ११।
सुग्रीव कुंभने थयुं पछे, मल्लयुद्ध मुहूरत एक,
पद पडघाए मेदनी कंपे, मारे घाय अनेक। १२।
सुग्रीवे मार्यो कुंभने, धायो निकुंभ तेणी वार,
आवतो रोक्यो तेहने, कर्युं जुद्ध पवनकुमार। १३।
निकुंभना शिर विषे मारी, मुष्टि एक हनुमंत,
तत्काळ पाम्यो मरण ते, एम असुर हण्या बळवंत। १४।

अतिरिक्त, वानर लंका में आ गये हैं और उन्होंने घरों को जलाना आरम्भ किया है। ये तो समस्त नगर को उजाड़ बना देंगे—इस स्थान पर कोई नहीं रह पाएगा। ६। (फिर) उसने जंघ, प्रजंघ और विरूपाक्ष - इन राजपुत्रों को आज्ञा दी, तो वे सज्ज होकर चल दिये। उनके अतिरिक्त क्रोधन और शोणिताक्ष (भी) चल पड़े। फिर कुम्भकर्ण के दो पुत्र, जिनके नाम कुम्भ और निकुम्भ थे, चल दिये। उन्होंने पर्जन्यास्त्र छोड़कर उस स्थान पर सबको शान्त कर दिया (आग बुझा दी)। ७-८। अनन्तर बाण चलाकर सब वानरों को नगर के बाहर निकाल डाला। (फिर) युद्धभूमि में आकर राक्षसों ने उस स्थान पर युद्ध शुरू किया। ९। तब कुम्भकर्ण के पुत्रों ने युद्ध-भूमि में घोर युद्ध किया। वे कपि-दल का संहार करने लगे, तब सुग्रीव दौड़ा। १०। सुग्रीव ने कुम्भ के हाथ से धनुष (छीन) लिया; उसने गर्जना की और फिर उस धनुष को दो टुकड़ों में तोड़ डाला। ११। फिर सुग्रीव और कुम्भ का एक मुहूर्त भर मल्ल-युद्ध हो गया। उनके पदाघातों से पृथ्वी काँप रही थी। वे (एक-दूसरे पर) अनेक आघात कर रहे थे। १२। (अन्त में) सुग्रीव ने कुम्भ को मार डाला; उस समय निकुम्भ दौड़ा। आते ही उसे पवनकुमार हनुमान ने रोक लिया और उससे युद्ध किया। १३। हनुमान ने निकुम्भ के

राजकुंवर सरवे आव्यां'ता, घणा राक्षस लेईने जेह,
हनुमंत सुग्रीवे मळीने, सर्व मार्या तेह। १५।
ते खबर जाणी रावणे, त्यारे मोकल्या त्रण वीर,
विशालाक्ष ने मकराक्ष नामे, अक्ष ए रणधीर। १६।
ते राक्षसे युद्ध कर्युं दारुण, कोपिया श्रीराम,
महाबाण मूकी त्रणे जणने, मारिया ते ठाम। १७।
ते पूंठे चढियो शक्रजित, रच्यो कुंड रणमां जाण,
तेणे होम करीने उपजावी, एक कृत्तिका निरवाण। १८।
ते कृत्तिकानी उपर बेठो, पराक्रमी इंद्रजित,
आकाशमारग जई रह्यो, करतो ते युद्ध अमित। १९।
तेनी बाणवृष्टिए करी, घणा कपि पाम्या मर्ण,
कोनां हस्त शिर चरण तूटे, नासिका ने कर्ण। २०।
ज्यारे इंद्रजिते कपिदळ करवा मांड्युं संहार,
त्यारे लोकप्राणेशे कह्युं, आवी रामने निरधार। २१।

सिर पर एक घूँसा जमा दिया, तो वह तत्काल मरण को प्राप्त हो गया। इस प्रकार (सुग्रीव, हनुमान ने) बलवान असुरों को मार डाला। १४। बहुत से राक्षस लेकर जो समस्त राजकुमार आये हुए थे, उन सब को हनुमान और सुग्रीव ने मिलकर मार डाला। १५। (जब) रावण वह समाचार जान गया, तब उसने तीन वीरों को भेज दिया। वे विशालाक्ष, मकराक्ष और अक्ष नामक रणधीर वीर थे। १६। उन राक्षसों ने दारुण युद्ध किया। (उसमें) श्रीराम क्रुद्ध हो गये और उन्होंने बड़े बाण चलाकर उन तीन जनों को उसी स्थान पर मार डाला। १७। उसके पश्चात् इन्द्रजित ने (फिर से) चढ़ाई की। समझिए कि उसने युद्ध-भूमि में एक (यज्ञ-) कुण्ड की रचना की। उसने अन्त में होम करके एक कृत्यका[1] को उत्पन्न कर दी। १८। पराक्रमी इन्द्रजित उस कृत्यका पर बैठ गया और आकाशमार्ग पर जाकर ठहर गया। वह (वहाँ से) अपार युद्ध करने लगा। १९। उसकी की हुई बाणों की वर्षा से बहुत कपि मृत्यु को प्राप्त हो गये। कुछ के हस्त, कुछ के सिर, कुछ के पाँव कुछ की नाक और कान टूट गये। २०। इन्द्रजित ने जब (इस प्रकार) कपि-सेना का संहार करना आरम्भ किया, तब लोक-प्राणेश (वायु के पुत्र हनुमान) ने आकर राम से निर्धार-पूर्वक कहा। २१। 'हे श्रीमहाराज,

---

१ कृत्यका या कृत्या एक राक्षसी होती है, जिसे कोई योद्धा या तांत्रिक अनुष्ठान करके उत्पन्न करता है और अपने शत्रु के विनाश के हेतु प्रयुक्त करता है।

अंगिरास्त्रे करी कृत्तिकाने, छेदो श्रीमहाराज,
मेघनाद माने हार जे, वळी थाय त्यारे काज। २२।
ते सुणी रामे मूकियुं, अंगिरास्त्र केरुं बाण,
ते रामबाणे कृत्तिका बळी, भस्म थई निरवाण। २३।
इंद्रजित तव कोपे चढ्यो, सिंहनाद कीधो घोर,
ब्रह्मांड सर्व खळभळ्युं, गयो ब्रह्मलोके शोर। २४।
पछे वृष्टि करतो शर तणी, नभमां रही वळ पूर,
अंधकार अतिशे आवर्युं तेणे, देखाये नहि सुर। २५।
कोटान कोटि कपि केरो, कर्यो रणसंहार,
अष्टजूथपति मूर्छित कर्या, त्यारे कोप्या जुगदाधार। २६।
कोदंड सज करी शर चढाव्युं, राम रणरंगधीर,
इंद्रजित साथे जुद्ध करवा, ऊभा श्रीरघुवीर। २७।
एक बाण मूकी शक्रजितनुं, धनुष काप्युं राम,
बीजुं मार्युं मुगटमां, पृथ्वी पड्यो ते ठाम। २८।
कार्मुक त्रीजुं मूकियुं, रावणी उपर जेह,
ते बाण केरी झपटथी, तत्काळ ऊड्यो एह। २९।

अंगिरास्त्र से इस कृत्या को छेद डालिए। यदि इन्द्रजित हार मान ले, तो फिर तब काम (पूरा) हो जाएगा।' २२। यह सुनकर राम ने अंगिरास्त्र वाला बाण छोड़ दिया; अन्त में राम के उस बाण से कृत्या जलकर भस्म हो गयी। २३। तब इन्द्रजित क्रुद्ध हो गया और उसने घोर सिंहनाद किया। उससे समस्त ब्रह्माण्ड भय-कम्पित हो उठा। उसकी ध्वनि ब्रह्मलोक तक गयी। २४। अनन्तर आकाश में रहते हुए उसने पूरे बल से बाणों की बौछार की। उससे अत्यधिक अन्धकार फैल गया। (इसलिए) सूर्य नहीं दिखायी दे रहा था। २५। उसने कोटि-कोटि कपियों का युद्ध में संहार कर डाला; आठों यूथ-पतियों को मूर्च्छित कर दिया। तब जगदाधार राम क्रुद्ध हो गये। २६। फिर रणरंगधीर राम ने धनुष सज्ज करके उस पर बाण चढ़ा लिया। (इस प्रकार) श्रीरघुवीर राम इन्द्रजित से युद्ध करने के लिए खड़े (सिद्ध) हो गये। २७। राम ने एक बाण छोड़कर इन्द्रजित का धनुष काट डाला; दूसरा मुकुट पर मारा और उसे उस स्थान पर पृथ्वी पर गिरा दिया। २८। उन्होंने रावण-पुत्र पर जो तीसरा बाण छोड़ा, उस बाण के झपट्टे से वह तत्काल उड़ गया। २९। (और) मूर्च्छित होकर इन्द्रजित लंका में जाकर गिर गया। (जब) वह सचेत होकर उठ गया, तब फिर उसने वहाँ कपटपूर्ण

मूर्छित थई जईने पड्यो, इंद्रजित लंकामांहे,
सावचेत थईने ऊठियो, पछे कपट रचियुं तांहे । ३० ।
तेणे मायामय निरमाण कीधुं, जानकीनुं रूप,
कनक रथमां बेसाडी, अलंकार चीर अनुप । ३१ ।
एवुं कपट रचीने आवियो, रणमांहे असुरकुमार,
आवतो जोई गिरि लेई धायो, जे रुद्रनो अवतार । ३२ ।
हनुमंतजी पासे गया, इंद्रजित ऊभो ज्यांहे,
वायुपुत्नने तव देखाडी, कृत्रिम सीता त्यांहे । ३३ ।
अल्या जो कपि तुज इष्टदेवी, जनकतनया जेह,
ए अंगना रघुवीरनी, मुज पिता लाव्यो तेह । ३४ ।
अमारा कुळनो क्षय कर्यो, सहु असुरनो संहार,
जातुधान कुळवन दहन करवा, अग्निशिखा ए नार । ३५ ।
कुंभकरण आदे निशाचर, एणे कर्या भक्षण जाण,
ए कृत्य प्रकटी त्नेता युगमां, भोग लेवा निरवाण । ३६ ।
ते माटे कपि मारुं एने, टाळुं असुरनुं दुःख,
ए कलहकारणीनो वध करतां, थाशे अमने सुख । ३७ ।

आयोजन किया । ३० । उसने सीता का मायामय रूप निर्मित किया और उसे अनुपम आभूषणों और वस्त्रों से युक्त कराकर सुवर्णमय रथ में बैठा लिया । ३१ । इस प्रकार की कपट-पूर्ण योजना करके वह राक्षस-कुमार युद्ध-भूमि में आ गया । (तब) उसे आते देखकर, हनुमान, जो रुद्र का अवतार था, एक पर्वत लेकर दौड़ा । ३२ । जहाँ इन्द्रजित खड़ा था, हनुमान वहाँ (उसके) निकट गया । तब इन्द्रजित ने वहाँ हनुमान को कृत्रिम सीता दिखा दी । ३३ । (फिर वह बोला—) 'रे कपि, जो जनक-तनया सीता तेरी इष्टदेवी है, रघुवीर की उस स्त्री को मेरे पिताजी ले आये । ३४ । उसने हमारे कुल का क्षय (नाश) कर दिया, समस्त असुरों का संहार कर डाला । वह नारी राक्षस-कुल रूपी वन का दहन करने के लिए (मानो) अग्नि-शिखा (ही बन गयी) है । ३५ । समझ ले, कुम्भकर्ण आदि निशाचरों को उसने खा डाला है । (मानो) त्नेता युग में वह कोई कृत्या भोग स्वीकार करने के हेतु अन्त में प्रकट हो गयी है । ३६ । इसलिए रे कपि, मैं उसे मार डालता हूँ और असुरों के दुःख को दूर करता हूँ । इस कलहकारिणी का वध करने पर हमें सुख होगा ।' । ३७ । ऐसा कहते हुए उस रावण-पुत्र इन्द्रजित ने अपने हाथ में खड्ग ग्रहण किया और वहाँ उस कृत्रिम सीता का वध कर

एम कही वचन रावणसुते, ग्रह्युं खड्ग निज कर मांहे,
कृत्रिम सीता तणो वध कर्यो, इंद्रजिते त्यांहे। ३८।
ते देखाड्युं हनुमंतने, रामने जई कहे आज,
जे जाय ऊठी अयोध्यामां, हवे शुं छे काज? ३९।
एवुं जोईने हनुमंतजीए, सत्य मान्युं त्याहे,
सीता तणो वध देखतां, पड्या विकळ पृथ्वी मांहे। ४०।
इंद्रजित त्यांथी गयो पुरमां, करी कपट प्रकार,
मारुति मूर्छित थई पड्या, देहशुद्धि नहि लगार। ४१।

वलण (तर्ज बदलकर)

देहशुद्धि भूल्या मारुति, क्षण एक रही मूरछाय रे,
पछे सावचेत थईने बेठा, त्यारे रुदन करे कपिराय रे। ४२।

डाला। ३८। उसने वह हनुमान को दिखाया (और कहा—) 'आज जाकर राम से कह दे। फिर यदि वह (यहाँ से) उठकर (निकलकर) अयोध्या में चला जाए, तो हमारे लिए (फिर) क्या काम (शेष) है।' ३९। हनुमान ने ऐसा देखकर उसे सत्य मान लिया। सीता के वध को देखते ही वह विकल होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। ४०। (इस प्रकार) कपट भरी बात करके इन्द्रजित वहाँ से नगर में चला गया। (इधर) हनुमान मूर्च्छित होकर गिर पड़ा। उसे देह की अल्प-सी भी सुध-बुध नहीं रही थी। ४१।

हनुमान देह सम्बन्धी सुध-बुध भूल गया। उसकी मूर्च्छा एक क्षण-भर रह गयी। फिर वह सचेत होकर बैठ गया। तब वह कपिराज रुदन करने लगा। ४२।

* * *

अध्याय—२४ (सीता के वध सम्बन्धी समाचार पाकर राम का व्यथित होना, लक्ष्मण द्वारा उन्हें समझाना, विभीषण द्वारा इन्द्रजित के विनाश का उपाय बताना)

राग वेराडी

हावे कृत्रिम सीतानो वध जोईने, मारुति करता रुदन,
हुं समाचार शो कहीश रामने, एम सोचता मन। १।

अध्याय—२४ (सीता के वध सम्बन्धी समाचार पाकर राम का व्यथित होना, लक्ष्मण द्वारा उन्हें समझाना, विभीषण द्वारा इन्द्रजित के विनाश का उपाय बताना)

अब कृत्रिम सीता के वध को देखकर हनुमान रुदन करने लगा। वह मन में ऐसा विचार कर रहा था—मैं राम को क्या समाचार बता

में घणां काम करी हरख पमाड्या, प्रसन्न कर्या श्रीराम,
सीताशोकहरण रघुपतिए, पाड्यूं मारुं नाम। २।
ते आ समाचार में क्यम कहेवाशे, शोकसिंधुनी वात,
एम शोचना करता रामनी पासे, आव्या मारुतजात। ३।
ऊभा रह्या आवी अधोवदने, नेत्रे आंसुधार,
त्यारे सरव कपि थया व्याकुळ जोईने, दुखिया पवनकुमार। ४।
पछी चिंतातुर थई राम पूछे छे, मारुतसुतने वात,
हे प्राणसखे ! तने शुं दुःख प्रगट्युं ? ते कहे मुजने भ्रात। ५।
त्यारे मारुतसुत कहे इंद्रजिते कर्यो, जानकीनो वध आज,
रणमां लावीने मुज देखतां, कीधुं कूडुं काज। ६।
एवुं वचन सांभळी अज अजित, सुखसिंधु आत्माराम,
ते मानुषी लीला जणावा माटे, कलेश करता आम। ७।
आंसु चोधारा चाल्यां नेत्रमां, प्रगट्यो शोक अपार,
रघुपति रोतां रोया सरवे, वरत्यो हाहाकार। ८।
एके काळे शोक ऊछळ्यो, दुःखनो दरियो पूर,
कहेतां कुंठित थाय कविनी, वाणी रोकाये उर। ९।

दूं ? । १ । मैंने बहुत काम करके श्रीराम को आनन्द को प्राप्त कराया, उन्हें प्रसन्न किया। (तभी तो) रघुपति ने मेरा नाम 'सीताशोकहरण' रख दिया है। २। सो मेरे द्वारा यह समाचार कैसे कहा जाएगा ? शोक-सागर की बात कैसे कही जाएगी ? —ऐसी चिन्ता करते हुए पवनकुमार हनुमान राम के पास आ गया। ३। वह वहाँ आकर अधो-मुख (सिर झुकाये) खड़ा रह गया; उसकी आँखों से अश्रुधारा चल रही थी। तब सब कपि पवनकुमार को दुखी देखकर व्याकुल हो गये। ४। फिर चिन्तातुर होकर राम ने हनुमान से वह बात पूछी— 'हे प्राणसखा, तुम्हारे लिए क्या दुःख उत्पन्न हुआ है ? हे भाई, मुझे वह कह तो दो।' ५। तब हनुमान ने कहा— 'इन्द्रजित ने आज सीता का वध किया। उसे युद्धभूमि में लाकर मेरे देखते हुए (मेरे समक्ष) ऐसा कुटिल काम किया।' ६। ऐसी बात सुनकर वे अजन्मा, अजित, सुख-सिंधु (-स्वरूप) आत्माराम (श्रीराम) मानुषी लीला (प्रदर्शित) करने के लिए यहाँ क्लेश (दुःख व्यक्त) करने लगे। ७। उनकी आँखों से मूसलाधार अश्रुधाराएँ चलने लगीं। उनका अपार शोक (इस प्रकार) प्रकट हो गया। रघुपति के रोने लगते ही सब रोने लगे। (इस प्रकार वहाँ) हाहाकार मच गया। ८। एक ही समय शोक उछल उठा; दुःख के समुद्र में ज्वार

एम शोकसागरमां बूड्या सर्वे, रुदन करे रघुवीर,
त्यारे धीरज आपीने समजावे, लक्ष्मणजी रणधीर। १०।
हे ब्रह्मांडनायक पूरणब्रह्म, शुं करवा धरो छो शोक ?
जेनो आकार बंधायो ते जाय, नाशवंत सहु लोक। ११।
माटे विवेकवज्र ग्रहीने, मोहगिरी चूर्ण करो महाराज,
आपणा गुरुए ज्ञान कह्युं छे, तेह विचारो आज। १२।
तमो सर्व देवना देव परिब्रह्म, आनंदमूरति वेद,
मायानो संभ्रम होय न तमने, ए लीला नाटक भेद। १३।
तमो थकी जानकी अळगां क्यां छे, प्रभा दीपनी ज्यम,
कनककांति ज्यम सूर्यकिरण वळी, देहने छाया त्यम। १४।
ते कल्पांते काळे थाय न अळगी, एम जाणो सीताय,
जगतपिता जगदीश तमो छो, ए छे जगतनी माय। १५।
ए इच्छाशक्ति तमारी सीता, ते क्यम थाये दूर ?
जे द्वैतभाव आरोपे तेने, जाणवा मूरख भूर। १६।

आ गया। उसे कहने में (उसका वर्णन करते हुए) कवि की वाणी कुण्ठित हो जाती है। मानो हृदय को (उस दुःख ने) रोक रखा हो। ९। इस प्रकार सब शोक-सागर में डूब गये। रघुवीर रुदन कर रहे थे। तब रणधीर लक्ष्मण उन्हें ढाढ़स बँधाते हुए समझाने लगे। १०। (वे बोले—) 'हे ब्रह्माण्ड-नायक, हे पूर्णब्रह्म, आप क्यों यह शोक धारण कर रहे हैं ? जिसका आकार बँधा हुआ है, (जो उत्पन्न हुआ है), वह (नष्ट हो) जाता है। समस्त लोक नाशवान हैं। ११। इसलिए, हे महाराज, विवेकरूपी वज्र ग्रहण करके आप मोहरूपी पर्वत को चूर कर डालिए। अपने गुरू ने जो ज्ञान कहा है (ज्ञानोपदेश दिया है), उसका आज विचार कीजिए। १२। समझिए कि आप सब देवों के देव हैं, परब्रह्म हैं, आनन्द-मूर्ति हैं। आपको माया का (अर्थात् माया द्वारा उत्पन्न) सम्भ्रम नहीं होता। यह तो लीला-स्वरूप नाटक का प्रकार है। १३। आपसे जानकी अलग कहाँ है ? जिस प्रकार दीप की कान्ति (उससे अभिन्न) होती है, कनक की कान्ति होती है, सूर्य की किरण होती है, फिर देह की छाया होती है, उस प्रकार आपकी सीता (आपसे अभिन्न) है। १४। वह कल्पान्त काल तक में (आपसे) अलग नहीं हो जाएगी। सीता को इस प्रकार समझिए। आप तो जगत्पिता, जगदीश हैं और वे जगत की माता हैं। १५। सीता आपकी इच्छा-शक्ति हैं, वे आपसे कैसे दूर हो जाएँगी। जो आपमें द्वैतभाव का आरोप करते हैं, उन्हें अति मूर्ख समझना चाहिए। १६। इसलिए शोक छोड़कर धीरज रखिए। आज

माटे शोक मूकीने धीरज राखो, हणो रावणने आज,
बंधी पड्या ते देव छोडावो, दुःख टाळो महाराज । १७ ।
एम भोगीन्द्रे घणां वचन कह्यां, जेवां विवेकसिंधु रतन,
ते सुणीने रघुपति जोई रह्या छे, करीने नीचुं वदन । १८ ।
त्यारे विभीषणे पोतानो मंत्री, मोकल्यो हतो अशोकवन,
ते सीतानी शोध जोईने आव्यो, ज्यां बेठा जुगजीवन । १९ ।
ते प्रधान श्रीरघुवीरनी साथे, बोल्यो हसीने वाण,
सर्व सभा सांभळतां कहे छे, सुणिये पुरुषपुराण । २० ।
महाराज सुखी छे जनकनंदनी, अशोकवन मोझार,
पासे त्रिजटा गान करे छे, चरित्र तमारां सार । २१ ।
त्यारे रामे विभीषण सामुं जोयुं, वचन सुणीने तेह,
पछी विभीषण कहे ते वात खरी छे, एमां नहि संदेह । २२ ।
ए मंत्रीने मोकल्यो'तो में, जोवा कारण त्यांहे,
ते क्षेमकुशळता जोई सीतानी, पाछो आव्यो आंहे । २३ ।
ते माटे सुखी छे जनकनंदनी, अशोक वनमां जाण,
ए वात जो कंई जूठी होय तो, तमारा पदनी आण । २४ ।

रावण की हत्या कीजिए । हे महाराज, जो देव बन्दीगृह में पड़े हैं, उन्हें छुड़ा दीजिए, उनका दुःख दूर कीजिए' । १७ । इस प्रकार भोगीन्द्र (शेष के अवतार लक्ष्मण) ने विवेक-सागर में उत्पन्न रत्नों जैसे (मूल्यवान) बहुत वचन कहे । उन्हें सुनकर रघुपति राम मुख नीचे झुकाये देखते रहे । १८ । तब विभीषण ने अपने (जिन) मंत्रियों को अशोक वन में भेज दिया था, वे सीता की खोज करके (सीता का पता लगाकर, सीता सम्बन्धी समाचार प्राप्त करके वहाँ) आ गये, जहाँ जगज्जीवन श्रीराम बैठे हुए थे । १९ । वे मंत्री हँसते हुए श्रीरघुवीर से यह बात बोले । वे समस्त सभा के सुनते रहते बोले— 'हे पुराण-पुरुष, सुनिए । हे महाराज, जनक-नन्दिनी अशोक वन में सकुशल हैं । उनके पास आपके सुन्दर चरित्रों (लीलाओं) का गान त्रिजटा कर रही है ।' २०-२१ । तब ये बातें सुनकर श्रीराम ने विभीषण की ओर देखा । फिर विभीषण ने कहा— 'इसमें कोई सन्देह नहीं है, यह बात सत्य है । २२ । मैंने इन मंत्रियों को देखने के लिए वहाँ भेजा था । वे सीता की क्षेम-कुशल देखकर यहाँ लौट आये हैं । २३ । इसलिए समझिए कि सीता अशोकवन में सुखी हैं । यदि यह बात कहीं झूठी हो, तो आपके चरणों की सौगन्ध है । २४ । इसे इन्द्रजित की माया समझिए । उसे देखकर लोग मोह को प्राप्त हो जाते

ए इंद्रजितनी माया जाणो, मोह पामे जोई लोक,
हनुमंते दीठुं ए करत्रिम, मिथ्या सरवे लोक। २५।
एवां विभीषण केरां वचन सांभळी, हरख्या जुगदाधार,
सुमित्री सहित कपि आनंद पाम्या, वरत्यो जेजेकार। २६।
वखाण्यो विश्रवासुतने त्यां, श्रीमुखे श्रीरघुवीर,
अरे भाई ! आ महादुःखमां तमो, आपी धारण धीर। २७।
एवी इंद्रजितनी अटपटी माया, जाणी श्रीरघुनाथ,
तेना मरण तणो विचार ज पूछे, ग्रही विभीषणनो हाथ। २८।
अरे विभीषण, कहो ए क्यम मरशे, रावणसुत बळवंत ?
ए विद्यावंत मायावी घणो छे, ए चिंता मुज मन। २९।
विभीषण कहे जेणे बार वर्ष, तज्यां होय निद्रा ने आहार,
चौद वर्ष पाळ्युं होय जेणे, ब्रह्मचर्य निरधार। ३०।
ऐवो पुरुष जो होय आ समे, अमोघ इंद्रियजित,
तो ते निश्चे जीते एने, तेथी मरे इंद्रजित। ३१।
वळी सुणो नाथ, एक वात मर्मनी, ते मध्ये छे विचार,
में चरचा जोवडावी एनी, हवडां आणी वार। ३२।

हैं। हनुमान ने (जो देखा) वह सब कृत्रिम मिथ्या, निरर्थक देखा है।' २५। विभीषण की ऐसी बातें सुनकर जगदाधार श्रीराम आनन्दित हो उठे। लक्ष्मण-सहित (समस्त) कपि आनन्द को प्राप्त हो गये। (वहाँ फिर) जयजयकार हो गया। २६। (अनन्तर) श्रीरघुवीर ने वहाँ अपने मुख से विश्रवा-सुत विभीषण की प्रशंसा की। (वे बोले—) 'अरे भाई, इस महा दुःख में तुमने स्वयं धीरज धारण करके हमें ढाढ़स बँधाया है।' २७। (इस प्रकार) श्रीरघुनाथ ने ऐसी अटपटी माया को जान लिया। फिर विभीषण का हाथ थामकर उन्होंने उसकी मृत्यु सम्बन्धी विचार ही पूछा। २८। 'हे विभीषण, कह दो कि यह बलवान् रावण-पुत्र कैसे मरेगा। मायावी विद्या का यह बड़ा धारक (जानकार) है। (अतः) मेरे मन में यह चिन्ता है। २९। (इसपर) विभीषण बोला— 'जिसने निद्रा और आहार का बारह वर्ष त्याग किया हो, जिसने निर्धार-पूर्वक चौदह वर्ष ब्रह्मचर्य पालन किया हो, ऐसा जो कोई इन्द्रियों को अचूक जीतनेवाला पुरुष इसके सामने हो, तो वह निश्चय ही इसे जीत पाएगा, उससे इन्द्रजित मरेगा। ३०-३१। इसके अतिरिक्त हे नाथ, एक मर्म की बात सुनिए। उसके बीच यह विचार है—अभी किसी अन्य समय इसकी चर्चा मेरे द्वारा जोड़नी है (चर्चा का सम्बन्ध

एक निकुंभला देवी छे, एनी इष्टमांत निरवाण,
मेघनाद बेठो ते मंदिर, साधन करवा जाण। ३३।
ते निकुंभलाना देवळमांहे, कुंड रच्यो छे त्यांहे,
मलिन मंत्र जपी होम करे, आपे आहुति ते मांहे। ३४।
ते कुंड मांहेथी रथ नीकळशे, अश्व सारथि सहित,
ते रथ पर आरूढ थशे, पछे नहि मरे इंद्रजित। ३५।
ए चार वार जय पामी गयो वळी, होम पूरण थशे आज,
पछे कोई थकी मेघनाद मरे नहि, सत्य कहुं महाराज। ३६।
माटे होम तणो विध्वंस करो, जई उतावळा आ वार,
वळी पूर्वे कह्यो तेवो पुरुष होय तो, मरे रावणनो कुमार। ३७।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

कुमार रावणनो मरे जो होय, पुरुष एवो धीर रे,
एवां वचन सुणीने लक्ष्मण सामुं, जोयुं श्रीरघुवीर रे। ३८।

* * *

जोड़ना है)। ३२। निकुंभला नामक निश्चय ही इसकी एक इष्ट मातृ-देवी है। समझिए कि उसके मन्दिर में इन्द्रजित साधना करने के लिए बैठा है। ३३। उसने वहाँ निकुंभला के मन्दिर में एक कुण्ड बना लिया है। वह मलिन मंत्र का जाप करके होम कर रहा है और उसमें आहुति डाल रहा है। ३४। उस कुण्ड में से अश्वों और सारथी सहित एक रथ निकलेगा। उस रथ पर (यदि) इन्द्रजित आरूढ़ हो जाए, तो फिर वह नहीं मरेगा। ३५। यह चार बार जय को प्राप्त होकर (लौट) गया है। फिर आज होम पूरा हो जाएगा। हे महाराज, मैं सत्य कहता हूँ, तत्पश्चात् इंद्रजित किसी भी के द्वारा नहीं मरेगा। ३६। इसलिए इस समय शीघ्रता से जाकर उस होम का विध्वंस कर डालिए। इसके अतिरिक्त पहले जैसा कहा है, वैसा कोई पुरुष हो, तो (उसके हाथों) वह रावण-पुत्र इंद्रजित मर सकेगा। ३७।

यदि ऐसा कोई धीर पुरुष हो, तो रावण का पुत्र (उसके हाथों) मरेगा।' ऐसी बातें सुनकर श्रीरघुवीर ने लक्ष्मण की ओर देखा। ३८।

* * *

अध्याय—२५ (निकुम्भला में जाकर लक्ष्मण आदि द्वारा इन्द्रजित के यज्ञ का ध्वंस करना, इन्द्रजित-लक्ष्मण-युद्ध)

राग मारु

लक्ष्मण सामुं जोयुं रघुनाथ, त्यारे ऊठीने जोड्या हाथ,
बोल्यो सुमित्री सुणो महाराज, आपो आज्ञा मुजने आज। १।
तमारी कृपाए निरवाण, आज लेउं इंद्रजितना प्राण,
लक्ष्मणे व्रत पाळ्युं छे जेह, राम जाणे छे सरवे तेह। २।
माटे आज्ञा आपी रघुनाथ, लक्ष्मणने शिर मूक्यो हाथ,
बतावी अस्त्र मंत्रनी जुक्त, रुदे चांपी बोल्या स्नेहे युक्त। ३।
करजो इंद्रजित वध काज, वहेला वरजो जय पामी आज,
एवुं सुणी लक्ष्मण शिर नामी, चाल्या राम कृपा बळ पामी। ४।
साथे विभीषण ने हनुमंत, मयंद शरभ ने जांबुवंत,
फणस केसरी द्विविदनी आद, चाल्या कपि करता सिंहनाद। ५।
पंथ कठण निकुंभला केरो, ते देखाड्यो विभीषणे नेरो,
अंगद उपर बेठा सौमित्र, ऊड्या आकाशे वीर्य विचित्र। ६।

अध्याय—२५ (निकुम्भला में जाकर लक्ष्मण आदि द्वारा इन्द्रजित के यज्ञ का ध्वंस करना, इन्द्रजित-लक्ष्मण-युद्ध)

जब श्रीराम ने लक्ष्मण की ओर देखा, तो उन्होंने उठकर हाथ जोड़े। फिर वे सुमित्रा-कुमार लक्ष्मण बोले, 'हे महाराज, मुझे आज आज्ञा दीजिए। १। आपकी कृपा से अन्ततः मैं इन्द्रजित के प्राण लूँगा।' लक्ष्मण ने व्रत का जो पालन किया था, उस सबको राम जानते थे। २। इसलिए राम ने लक्ष्मण को आज्ञा देते हुए उनके सिर पर हाथ रखा। (फिर) उन्हें अस्त्र-मंत्र की युक्तियाँ बता दीं और उन्हें हृदय से लगाकर वे स्नेह-पूर्वक बोले। ३। 'इंद्रजित के वध का कार्य आज पहले सम्पन्न करो जय को प्राप्त होकर उसका वरण करो।' ऐसा सुनकर लक्ष्मण सिर नवाकर राम की कृपा के बल को प्राप्त होकर चल दिये।। ४। उनके साथ विभीषण और हनुमान, मयन्द, शरभ और जाम्बवान, फनस, केसरी आदि थे। वे कपि सिंहनाद करते हुए चले जा रहे थे। ५। निकुम्भला का मार्ग कठिन (दुर्गम) था। (फिर भी) विभीषण ने निकटवाला (मार्ग) दिखा दिया। लक्ष्मण अंगद (के कंधे) पर बैठे हुए थे। वे विचित्र वीर आकाश में उड़ रहे थे। ६। लंकापति (विभीषण) आगे था; उसके पीछे समस्त कपि चले जा रहे थे। निकुंभला

थया आगळ लंकाराय, पूंठे सहु कपि चाल्या जाय,
ते निकुंभला केरे स्थान, सप्त दुर्ग छे वज्र समान। ७।
नग्र बारणे गिरि मोझार, घणुं सैन्य मूक्युं छे ते ठार,
रच्युं छे ते देवळ गिरि कोरी, तेमां आसुरी देवी कठोरी। ८।
करे अनेक भूत रक्षाय, ते ओळंगीने कपिवर जाय,
सरवे आव्या देवीने भोवन, बेठो दीठो रावणनो तन। ९।
रक्तोदके कर्युं छे स्नान, रक्त वस्त्र अंगे परिधान,
सप्त शव पाथरियां त्यांहे, वज्रासन करी बेठो ते मांहे। १०।
आपे आहुति विप्रनुं मांस, अस्थिमाळा कंठे अवतंस,
मृत सर्प वींट्या छे माथे, द्विज दंतनो शरूवो ग्रह्यो हाथे। ११।
तेणे होम करे कुंडमांहे, मलिन मंत्र जपे छे त्यांहे,
थयो पूर्णाहुति समे ज्यारे, रथ अडधो नीकळियो त्यारे। १२।
एटले आवी पहोंच्या हनुमंत, पराक्रम कर्युं महा बळवंत,
पाछळ भूत रह्यां'तां जेह, पुच्छ झापटे झूड्यां तेह। १३।
कुंड उपर वायुतन मोटो, पर्वत करियो पतन;
कुंड विध्वंस कर्यो तेणी वार, अग्नि विखरायो निरधार। १४।

के उस स्थान पर वज्र के समान सात दुर्ग थे। ७। उस स्थान पर, उस पर्वत को तराश-काटकर उस देवालय का निर्माण किया हुआ था। उसमें कठोर आसुरी देवी थी। ८। अनेक पिशाच उसकी रक्षा कर रहे थे। वे कपिवर उसे लाँघकर अन्दर गये। (जब) वे सब देवी के मन्दिर में आ गये, तो उन्होंने रावण के पुत्र (इंद्रजित) को बैठे देखा। ९। उसने रक्तोदक से स्नान किया था; शरीर पर रक्त-वस्त्र परिधान किये थे। वहाँ उसने सात शव बिछाये थे। फिर उन (के बीच) में वह वज्रासन लगाकर बैठा हुआ था। १०। वह ब्राह्मणों का मांस आहुति के रूप में चढ़ा रहा था। उसने अस्थिमालाएँ आभूषणों के रूप में पहनी थीं। उसने मरे हुए साँप मस्तक पर लपेटे थे और ब्राह्मणों के दाँतों का बना (कमण्डल जैसा) पात्र हाथ में ग्रहण किया था। ११। वह उससे कुण्ड में होम कर रहा था और वहाँ मलिन मंत्र का जाप कर रहा था। जब पूर्णाहुति का समय हो गया, तब उसमें से आधा रथ निकल आया। १२। इतने में हनुमान आकर पहुँच गया और उस महाबलवान ने पराक्रम किया। पीछे जो पिशाच रहे थे, उसने उन्हें पूँछ के आघात से पीट लिया। १३। फिर पवनकुमार ने उस कुण्ड पर बड़ा पर्वत गिरा दिया और उस समय कुण्ड का विध्वंस कर डाला, तो निश्चय ही आग बिखर गयी (कम हो

ऋषभ धर्म तणो अवतार, तेणे पात्र फोड्यां ते ठार,
कुंडमांहे कर्यां मळमूत्र, अकळाव्यो घणुं सतीपुत्र । १५ ।
पाम्यो खेद इंद्रजित एव, शुं कोप्यो आज आराध्य देव ?
दीठा वानर करता विरोध, त्यारे ऊठ्यो आणी मन क्रोध । १६ ।
करवा मांड्यो कपिए मार, शैल वृक्ष ने मुष्टि प्रहार,
मेघनादे मंगाव्यो रथ, बेठो तेनी उपर समर्थ । १७ ।
साथे लीधुं सैन्य अपार, निकुंभलार्थी नीकळ्यो बहार,
दीठा लक्ष्मण सैन्य सहित, रीसे रातो थयो इंद्रजित । १८ ।
त्यारे करवा मांड्युं युद्ध, इंद्रजित सौमित्री विरुद्ध,
पाम्या राक्षस मरण अपार थयो, अनेक कपिनो संहार । १९ ।
मूके लक्ष्मण जे जे बाण, ते छेदे मेघनाद प्रमाण,
इंद्रजित तणां शर जेह, छेदी नाखे छे लक्ष्मण तेह । २० ।
थाय युद्ध संहार समान, जुए देव चढीने विमान,
कोप्यो रावणी करीने रीस, मूक्यां अनेक बाण ते दिश । २१ ।
लक्ष्मण उपर अखंड धार, रवि ढांक्यो थयो अंधकार,
पछे कोप्या रामानुज त्यांहे, दिव्य बाण मूक्यां रणमांहे । २२ ।

गयी) । १४ । ऋषभ धर्म (यम) का अवतार था । उसने उस स्थान पर पात्र फोड़ डाले । जब उसने कुण्ड में मल-मूत्र विसर्जित किया, तो सती मन्दोदरी का पुत्र इन्द्रजित बहुत व्याकुल हो उठा । १५ । उस समय इन्द्रजित खेद को प्राप्त हो गया (उसने सोचा—) आज आराध्य देव क्रुद्ध हो गया है । उसने जब वानरों को विरोध करते देखा, तब मन में क्रोध करके वह उठ गया । १६ । (इधर) कपियों ने पर्वत शिखरों, वृक्षों तथा घूंसों से आघात करना आरम्भ किया, तो इन्द्रजित ने रथ मंगा लिया और वह समर्थ (असुर) उस पर बैठ गया । १७ । उसने साथ में अपार सेना ली और वह निकुम्भला से बाहर निकल पड़ा । (जब) इंद्रजित ने लक्ष्मण को सेना-सहित देखा, तो वह क्रोध से लाल हो उठा । १८ । तब इंद्रजित ने लक्ष्मण के विरुद्ध युद्ध करना आरम्भ किया । (उस युद्ध में) अनगिनत राक्षस मृत्यु को प्राप्त हो गये; (वैसे ही) अनेक कपियों का संहार हो गया । १९ । लक्ष्मण जो-जो बाण छोड़ रहा था, उन्हें इन्द्रजित सचमुच छेदता रहा । इन्द्रजित के जो बाण थे, उन्हें लक्ष्मण छेद डाल रहा था । २० । युद्ध में (दोनो दलों का) समान संहार हो रहा था । देव विमान में बैठकर उसे देख रहे थे । (फिर) रावण-पुत्र इन्द्रजित ने उस स्थान पर क्रोध करके अनेक बाण चला दिये । २१ ।

शरजाळ छेदी ततखेव भेद्युं, रावणीनुं तन एव,
थयो त्यारे सूरजनो प्रकाश, कर्यो सकळ नाराचनो नाश । २३ ।
विवेके करीने ज्यमे संत, छेदी नाखे क्रोध अनंत,
ज्ञानी आत्मज्ञाने तत्काळ, छेदे संसार-दुःखनी जाळ । २४ ।
ए प्रकारे छेद्यां शर सर्व, उतार्यो इंद्रजितनो गर्व,
मूके सायक शेष विशेक, एकनां ते थाय अनेक । २५ ।
ज्यम करतां सुपात्रने दान, कीर्ति विस्तरे मेरु समान,
करतां कुळवंतने उपकार, ज्यम विस्तरे सुजश अपार । २६ ।
एम लक्ष्मणे मूक्यां बाण, तेणे जय कीधो निरवाण,
पछी मूक्युं अनंते अग्न्यास्त्र, मेघनादे मूक्युं पर्जन्यास्त्र । २७ ।
त्यारे पवनास्त्र मूक्युं भोगींद्र, संरपास्त्र मूक्युं जित-इंद्र,
मूक्युं गरुडास्त्र सहस्रवदन, पर्वतास्त्र मूक्युं सतीतन । २८ ।
तव लक्ष्मणे मूक्युं वज्रास्त्र, इंद्रजिते मूक्युं शिवशस्त्र,
ब्रह्मास्त्र मूक्युं सुमित्रातन, ते शिवास्त्र पमाड्युं पतन । २९ ।

लक्ष्मण पर (बाणों की) अविरल धारा बह रही थी। सूरज ढँक गया और अन्धकार हो गया। अनन्तर वहाँ लक्ष्मण क्रुद्ध हो गया और उसने रणभूमि में दिव्य बाण चला दिये। २२। उसने बाण-जाल को छेदकर उस समय तत्काल इन्द्रजित का शरीर छिन्न-भिन्न कर डाला। तब सूर्य का प्रकाश फैल गया और (फिर) उसने समस्त बाणों का नाश कर डाला। २३। जिस प्रकार कोई सन्त विवेक से अपार क्रोध छेद डालता है (क्रोध का शमन करता है), समझिए कि कोई ज्ञानी पुरुष आत्मज्ञान से तत्काल सांसारिक दुःख के जाल को जिस प्रकार काट देता है, उस प्रकार लक्ष्मण ने समस्त बाणों को छेद डाला और इन्द्रजित का गर्व छुड़ा दिया। फिर शेष के अवतार लक्ष्मण ने विशिष्ट (प्रकार के) बाण चला दिये; वे एक से अनेक उत्पन्न हो रहे थे। २४-२५। जिस प्रकार सुपात्र को दान देने से (दाता की) कीर्ति मेरु-सदृश विस्तार को प्राप्त हो जाती है, जिस प्रकार कुलवान का उपकार करने से अपार सुयश फैल जाता है, उस प्रकार लक्ष्मण ने जो बाण चलाये उनसे उन्होंने अन्त में जय प्राप्त कर ली। तदनन्तर लक्ष्मण ने अग्नि-अस्त्र चला दिया, तो इन्द्रजित ने पर्जन्यास्त्र फेंक दिया। २६-२७। तब भोगीन्द्र (शेष के अवतार लक्ष्मण) ने पवनास्त्र चला दिया, तो इन्द्रज़ित ने सर्पास्त्र छोड़ दिया। सहस्रवदन (शेष के अवतार लक्ष्मण ने इधर से) गरुड़ास्त्र चला दिया। (फिर) इन्द्रजित ने शिवास्त्र फेंक दिया, तो

एम वीर बंन्यो बळवान, ऊतर्या अस्त्रविधाए समान,
बंन्यो चतुर शिरोमणि वीर, रणपंडित रणना धीर। ३०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रणधीर बंन्यो युद्ध करे, जुए देवसंग्राम संवाद रे,
पछी रावणसुत कोपे चढ्यो, तेणे गाजी कर्यो सिंहनाद रे। ३१।

* * *

सुमित्राकुमार ने ब्रह्मास्त्र चला दिया। उससे शिवास्त्र पतन को प्राप्त कर दिया गया। २८-२९। इस प्रकार दोनों बलवान वीर अस्त्र विद्या में सम-समान उतर गये (सिद्ध हो गये)। वे दोनों वीर चतुरशिरोमणि थे, रणभूमि में धीर रण-पण्डित थे। ३०।

दोनो रणधीर युद्ध कर रहे थे; उस युद्ध को देव देख रहे थे। फिर रावण-सुत इन्द्रजित क्रुद्ध हो उठा, तो उसने गरजते हुए सिंहनाद किया। ३१।

* * *

अध्याय—२६ (इन्द्रजित का वध)

राग आशावरी

सिंहनाद कीधो इंद्रजिते, कर्यो धनुषटंकार,
पछे पंच शर संधान करीने, मूक्यां तेणी वार। १।
वीजळी सरखां चमकतां, सुसवाट करतां जाण,
जाणे फोडशे मंदार मेरु, एवां तीक्षण बाण। २।
तेणे अंग भेद्युं सुमित्रीनुं, मर्म वाग्यां जेह,
पण भोगींद्रनो अवतार लक्ष्मण, सहन कीधां तेह। ३।

अध्याय—२६ (इन्द्रजित का वध)

उस समय इन्द्रजित ने सिंहनाद किया, (फिर) धनुष की टंकार की और पाँच बाण सन्धान करके चला दिये। १। समझिए कि वे बिजली के सदृश चमक रहे थे और सनसना रहे थे। वे ऐसे तीक्ष्ण बाण थे कि जान पड़ता था, वे मन्दर और मेरु पर्वत (तक) को फोड़ डालेंगे। २। जो बाण मर्म-स्थान पर लग गये, उन्होंने लक्ष्मण के शरीर को भेद डाला; परन्तु भोगीन्द्र शेष के अवतार लक्ष्मण ने उन्हें सहन किया। ३। तब

पछे बाण नव मूक्यां तदा, लक्ष्मणे तेणी वार,
ललाट फोड्युं शक्रजितनुं, चाली रुधिरनी धार। ४।
पछे विकळ थई मेघनाद कोप्यो, लक्ष्मण उपर जाण,
त्यारे विभीषण धायो तदा, कर गदा ग्रही निरवाण। ५।
मेघनाद बोल्यो मर्मवायक, नीतिनां तेणी वार,
अरे काका कुळ लजाव्युं, तमने छे धिक्कार। ६।
तमो रामने शरणे जई, कर्युं बंधु कुळनाशन,
एमां रूडा तमने कोण कहेशे, जुओ विचारी मन। ७।
तमे कहेशो हुं शरण जईने, थयो अंमर जाण,
वळी मोक्ष अंते आपशे, ए राम पुरुषपुराण। ८।
पण अंते को अमर नथी, थाय ब्रह्मादिकनो नाश,
वळी वेरभावे मोक्ष ते पण, आपे छे अविनाश। ९।
करी झांखी कीर्ति कुळ तणी, नव कर्यो जश लवलेश,
घणुं जीव्यां तेणे शुं थयुं, जेवो व्यंडळ केरो वेश। १०।
पछे क्रोध करी कोदंड ताण्युं, कही वचन विपरीत,
ते गदा उठाडी कर थकी, शर मूकीने इंद्रजित। ११।

फिर लक्ष्मण ने उस समय नौ बाण चला दिये और इन्द्रजित का ललाट फोड़ डाला, तो रक्त की धारा बहने लगी। ४। फिर समझिए कि विकल होकर इन्द्रजित लक्ष्मण पर क्रुद्ध हो उठा, तो तब अन्त में हाथ में गदा लिये हुए विभीषण (उसकी ओर) दौड़ा। ५। उस समय इन्द्रजित नीति सम्बन्धी मार्मिक वचन बोला — "हे काका, तुमने कुल को लज्जित किया है—तुम्हें धिक्कार है। ६। तुमने राम की शरण में जाकर बन्धु के कुल का नाश किया है। मन में विचार करके तो देखो, इसमें तुम्हें कौन भला कहेगा। ७। तुम कहोगे, 'समझो, मैं शरण में जाकर अमर हो गया हूँ; इसके अतिरिक्त ये पुराणपुरुष राम अन्त में मोक्ष प्रदान करेंगे'। ८। परन्तु अन्त में कोई भी अमर नहीं है। ब्रह्मा आदि तक का नाश हो जाएगा। इसके अतिरिक्त अविनाशी भगवान वैर-भाव से व्यवहार करने पर भी मोक्ष प्रदान करते (ही) हैं। ९। तुमने कुल की कीर्ति को निस्तेज किया है, लव मात्र भी यश नहीं (प्राप्त) किया है। तो नपुंसक जैसा वेश करके बहुत जीवित रह गये, तो उससे क्या हुआ?"। १०। अनन्तर क्रोध करके इन्द्रजित ने विपरीत बातें कहते हुए धनुष तान (चढ़ा) लिया और बाण चलाकर (विभीषण के) हाथ में से गदा को उड़ा दिया। ११। फिर उसने विभीषण के हृदय पर पाँच बड़े बाण मार दिये। वे उसके

पछी विभीषणना हृदयमां, पंच बाण मार्यां प्रौढ,
ते मर्ममां वाग्यां तदा, त्यारे थई रह्या दिग्मूढ । १२ ।
त्यां विकळ थई विभीषण पड्या, त्यारे धायो जांबुवान,
एक मुष्टि मारी बळ करी, ते वागी वज्र समान । १३ ।
रावणीनो रथ कर्यो चूरण, अश्व सारथि सहित,
ते विकळ थई पृथ्वी पड्यो, ऊभो थयो इंद्रजित । १४ ।
त्यारे एक काळे कपि सर्वे, करवा मांड्यो मार,
थाय वृष्टि तरु-पाषाणनी, वळी मुष्टि ने पदप्रहार । १५ ।
पण इंद्रजित पराक्रमी, रणपंडित चतुर सुजाण,
निवारण करतो सरवने, मूकी चारे पास बाण । १६ ।
आकाशमारग उतपत्यो, गयो मेघमंडळ ज्यांहे,
जुद्ध करवा लाग्यो त्यां जई, मूके बाण रही नभमांहे । १७ ।
त्यारे लक्ष्मणने लई स्कंधउपर, ऊड्या मारुततन,
जुद्ध करवा लाग्या नभ जई, रही ऊंचा शत जोजन । १८ ।
इंद्रजित ऊंचो बार जोजन, रह्या शत जोजन हनुमंत,
त्यां थकी लक्ष्मण जुद्ध करे, मारता बाण अनंत । १९ ।

मर्म-स्थल पर लग गये; तब वह दिङ्मूढ़ हो गया । १२ । वहाँ (जब) विभीषण विकल होकर गिर पड़ा, तब जाम्बवान दौड़ा । उसने बलपूर्वक एक घूँसा जमा दिया; वह वज्र के समान लग गया । १३ । उसने (फिर) रावण-पुत्र इन्द्रजित के रथ को अश्वों और सारथी-सहित चूर-चूर कर डाला, तो वह विकल होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा । (फिर) इन्द्रजित (सँभलकर) खड़ा हो गया । १४ । तब समस्त कपियों ने एक ही समय (एक साथ) आघात करना आरम्भ किया । पेड़ों और पत्थरों की, इसके अतिरिक्त घूँसों और लातों की बौछार होने लगी । १५ । परन्तु इन्द्रजित तो पराक्रमी, रण-पण्डित तथा चतुर सुज्ञ था । चारों ओर बाण चलाते हुए वह उन सबका निवारण करता रहा । १६ । वह आकाश मार्ग पर उछल उठा और जहाँ मेघमण्डल (घनघटा) था वहाँ (पहुँच) गया । वहाँ जाकर वह युद्ध करने लगा । वह आकाश में रहते हुए बाण चलाने लगा । १७ । तब लक्ष्मण को कंधे पर लेकर पवनकुमार हनुमान ने उड़ान भरी । वह आकाश में जाकर सौ योजन ऊँचा(-ई पर) रहते हुए युद्ध करने लगा । १८ । इन्द्रजित बारह योजन ऊँचा(-ई पर) था, तो हनुमान सौ योजन (ऊँचाई पर) रह गया । वहाँ से लक्ष्मण युद्ध करने लगे । उन्होंने अनगिनत बाण चला दिये । १९ । (जब) बाणों की मार सहन

शर मार सहन थयो नहि, ऊतर्यो धरा इंद्रजित,
त्यारे पृथ्वी उपर आविया, हनुमंत लक्ष्मण सहित । २० ।
बे वीरना तनमांहे चोट्यां, शोभतां शर ज्यम,
जाणे कळाकरनां पिच्छ, वा गिरि पर तरुवर त्यम । २१ ।
पछी लक्ष्मणे एक दिव्य शर, काढी कर्युं संधान,
शिवनेत्र केरा अग्नि जेवो, दिवाकर मध्याह्न । २२ ।
मंत्र-न्यासयुक्त कर्युं तदा, थयो वज्रीभूत अखंड,
छे मुद्रांकित राम नामनुं, ते चढाव्युं कोदंड । २३ ।
लक्ष्मणे मन चिंतव्युं, जो होय ब्रह्मपूरण राम,
शुद्ध चैतन्य सनातन, मायापति पूरणकाम । २४ ।
एकपत्नीव्रत सूरजवंशी, होय रघुवर आज,
तो इंद्रजित मरजो हवे, आ बाणथी महाराज । २५ ।
हुं निराहारी ब्रह्मचारी, बार वरस पर्यंत,
रघुवीर चरणे आसक्ति होय तो, आवजो एवो अंत । २६ ।
होय सती सीता साध्वी, वळी दास अनन्य हनुमान,
तो इंद्रजितनुं शिर छेदाजो, आवजो अवसान । २७ ।

नहीं हुई, तो इन्द्रजित धरा पर उतर गया। तब हनुमान (भी) लक्ष्मण सहित पृथ्वी पर आ गया। २०। उन दोनों वीरों के शरीरों में (बाण) धँस गये; वे (बाण) उस प्रकार शोभायमान थे, जिस प्रकार मोर के पर (शोभायमान) होते हैं, अथवा पर्वत पर वृक्ष होते हैं। २१। फिर लक्ष्मण ने एक दिव्य बाण निकालकर सन्धान किया। वह मानो शिवजी के नेत्र की अग्नि (ज्वाला) जैसा था, अथवा मध्याह्न के सूर्य जैसा था। २२। उसने उसे मंत्रन्यास युक्त किया, तब वह अखण्ड वज्रीभूत (वज्र-सा) हो गया। वह राम-नाम की मुद्रा से अंकित था। उसे धनुष पर चढ़ा दिया। २३। (फिर) लक्ष्मण ने मन में (यों) चिन्तन किया— 'यदि राम पूर्णब्रह्म हों, शुद्ध चैतन्य (स्वरूप) तथा सनातन पूर्णकाम मायापति हों, आज यदि सूर्यवंशीय रघुवर एकपत्नी-व्रती हों, तो हे महाराज, इस बाण से अब इन्द्रजित मर जाए। २४-२५। (यदि) मैं (सच्चे अर्थों में) बारह वर्षों से निराहार तथा ब्रह्मचारी रहा होऊँ, (यदि) मेरी प्रीति रघुवीर राम के चरणों में हो, तो (इस बाण से) इसका अन्त आ जाए। २६। यदि सीता साध्वी एवं सती (पतिनिष्ठा) हो, इसके अतिरिक्त हनुमान अनन्य दास हो, तो इन्द्रजित का सिर (इस बाण से) कट जाए और उसे मौत आ जाए'। २७। ऐसा कहकर लक्ष्मण

एवुं कही आकर्ण सुधी, खेंचियुं नाराच,
पछी मूकियुं लक्ष्मणे त्यां, वीजळी सरखुं साच । २८ ।
झळके मुखे चळके पूंखे, सुसवाट करतुं जाण,
सहु दिशाओ दीपावतुं, धनुषथी छूट्युं बाण । २९ ।
इंद्रजिते जाण्युं मारशे, ए बाण मुजने आप,
ते छेदवा सामुं चढाव्युं, बाण तीक्ष्ण चाप । ३० ।
एटले शर लक्ष्मण तणुं, आवीने वाग्युं त्यांहे,
एक भुजा सहित शिर छेदियुं, ते पड्यो पृथ्वीमांहे । ३१ ।
ते भुज पड्यो पुरमां जई, शिर ऊछळ्युं आकाश,
नभमां भमीने पड्युं पाछुं, कमळवदन प्रकाश । ३२ ।
ते पडतुं झील्युं शरभ वानर, लीधुं छे करमांहे,
मेघनाद पाम्यो मरण एम, जयजयकार वरत्यो त्यांहे । ३३ ।
पुष्पवृष्टि करी देवे, लक्ष्मण उपर जाण,
दुंदुभि केरो नाद करीने, बोले जय जय वाण । ३४ ।
रघुवीर चिंता करे छे, कहे सुग्रीव आगळ वात,
घणी वार थई क्यम आव्यो नहि, ए रणथकी मुज भ्रात ? ३५ ।

ने उस बाण को कान तक खींच लिया, फिर उसने उसे वहाँ सचमुच बिजली सदृश चला दिया । २८ । वह मुख भाग में चमक रहा था, पिछले पर वाले भाग में दमक रहा था । समझिए कि वह सनसनाहट कर रहा था । वह समस्त दिशाओं को प्रकाशित कर रहा था । ऐसा वह बाण धनुष से निकल पड़ा । २९ । इन्द्रजित यह समझ गया कि यह बाण स्वयं मुझे मार डालेगा, इसलिए उसे छेदने के लिए विरोध में उसने धनुष पर एक तीक्ष्ण बाण चढ़ा लिया। ३०। इतने में लक्ष्मण का वाण वहाँ आकर उसे लग गया और उसने एक भुजा-सहित उसके मस्तक को छेद डाला । (फिर) वह भूमि पर पड़ गया । ३१ । वह हाथ जाकर नगर में गिर गया, तो सिर आकाश में उछल गया । अनन्तर वह कमल-की सी कान्तिवाला मुख (मस्तक) आकाश में भ्रमण कर गिर गया । ३२ । उसे गिरते हुए शरभ वानर ने लोक लिया और हाथ में ले लिया । इस प्रकार, इन्द्रजित मृत्यु को प्राप्त हो गया, तो वहाँ जयजयकार हो गया । ३३ । समझिए (तब) देवों ने लक्ष्मण पर पुष्प-वर्षा की और दुन्दुभी का नाद करते हुए (दुन्दुभी वजाते हुए) वे 'जय'! 'जय'! बोलने लगे । ३४ । (इधर) रघुवीर राम चिन्ता कर रहे थे । वे बोले, 'हे सुग्रीव, आगे की बात कहो । बहुत समय हो गया है, (फिर भी) मेरा

इंद्रजित ए घणो बळियो छे, मुज बाळ सुकोमळ वीर,
सुग्रीव कहे चिंता न करशो, राखो मनमां धीर । ३६ ।

प्रभु हमणां लक्ष्मण आवशे, जय पामीने महाराज,
एटले लक्ष्मण कपि सहित, आव्या करीने काज । ३७ ।

इंद्रजित साथे जुद्ध करी घणुं, थया श्रमित सौमित्र,
आवता जोईने ऊठिया, रघुवीर पुण्यपवित्र । ३८ ।

लक्ष्मणे आवी शीश नाम्युं, रामने तेणी वार,
रघुवीरे चांप्या हृदेशुं, गद्गद थया छे अपार । ३९ ।

इंद्रजित केरो वध कह्यो, शरभे देखाड्युं शीश,
पछी सभा करी सुषेण प्रत्ये, बोल्या श्रीजुगदीश । ४० ।

अरे सुषेण लक्ष्मणने, कांई करो औषध आज,
पछी रामआज्ञा थकी वैदे, कर्युं रूडुं काज । ४१ ।

सावधान लक्ष्मणने कर्या, दृढ थयुं सर्वे अंग,
पछी सुवेळुए सभा करीने, बेठा छे श्रीरंग । ४२ ।

भाई उस रणभूमि से कैसे नहीं आ गया । ३५ । वह इन्द्रजित बहुत बलवान है (जब कि) मेरा भाई सुकोमल बच्चा है ।' (तब) सुग्रीव ने कहा—'आप चिन्ता न कीजिए । मन में धीरज रखिए । ३६ । हे प्रभु, हे महाराज, जय को प्राप्त होकर लक्ष्मण अभी आ जाएँगे ।' इतने में लक्ष्मण काम (पूरा) करके कपियों सहित आ गया । ३७ । इन्द्रजित से बड़ा युद्ध करके लक्ष्मण थक गया था । उसे आते हुए देखकर पुण्य-पवित्र (मनवाले) रघुवीर उठ गये । ३८ । उस समय लक्ष्मण ने (वहाँ) आकर सिर झुकाकर राम को नमस्कार किया, तो राम ने उन्हें हृदय से लगा लिया । वे अपार गद्गद हो उठे थे । ३९ । (तदनन्तर) इन्द्रजित के वध का समाचार कहा गया । शरभ ने (इन्द्रजित का) मस्तक (भी) दिखाया । फिर सभा आयोजित करके श्रीजगदीश राम सुषेण से बोले । ४० । 'हे सुषेण, लक्ष्मण के लिए आज कुछ औषधि (का आयोजन) तो कर लो ।' फिर राम की आज्ञा से वैद्य (सुषेण) ने अच्छा काम किया । ४१ । उसने लक्ष्मण को सचेत कर दिया । उसके समस्त अंग दृढ़ हो गये (अर्थात् घाव भर गये) । फिर सुवेल पर सभा आयोजित करके श्रीराम बैठ गये । ४२ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

श्रीरंग बेठा सभा करी, कपि सेवा करे सुखभेर रे,
हवे इंद्रजितनो भुज पड्यो पुरमां, तेनी शी थई पेर रे ? ४३ ।

* * *

श्रीराम सभा आयोजित करके बैठ गये, तो कपि सुख से भरे-पूरे होकर सेवा करने लगे। अब इन्द्रजित का (जो) हाथ नगर में गिर गया, उसकी क्या बात (स्थिति) हो गयी ? ४३ ।

* * *

अध्याय—२७ (इन्द्रजित की भुजा के आँगन में गिर जाने से सुलोचना को उसके वध का समाचार मिलना, भुजा द्वारा समाचार लिख दिया जाना)

राग काफी

लक्ष्मण विजय करीने आव्या, इंद्रजितनुं मस्तक लाव्या,
तन भूमि पड्युं रण ज्यांहे, भुज ऊडी आव्यो पुरमांहे । १ ।
इंद्रजितनुं आंगणुं जेह, मणिबंध रच्युं छे तेह,
आवी ते चोकमां पड्यो हस्त, अलंकार सहित समस्त । २ ।
अंगना इंद्रजितनी त्यांहे, ते सुलोचना मंदिरमांहे,
शेषनाग तणी ए कुमारी, सुंदरी रूपशोभा सारी । ३ ।
परम सतीशिरोमणि मेहेरी, गुण लावण्य सागर लेहेरी,
जेनुं रूप जोई रति लाजे, उपमा नथी एने काजे । ४ ।

अध्याय—२७ (इन्द्रजित की भुजा के आँगन में गिर जाने से सुलोचना को उसके वध का समाचार मिलना, भुजा द्वारा समाचार लिख दिया जाना)

लक्ष्मण विजय (प्राप्त) करके आ गया। वह (अपने साथ) इन्द्रजित का मस्तक ले आया। उसका मस्तक तो जहाँ युद्ध हो गया था, उस भूमि पर पड़ गया था और उसकी भुजा नगर में उड़ आयी थी । १ । इन्द्रजित (के प्रासाद) का जो आँगन था, उसे रत्नों से जड़ते हुए बनाया था। समस्त आभूषणों सहित आते हुए वह हाथ उस आँगन में गिर पड़ा । २ । इन्द्रजित की स्त्री सुलोचना तब घर के अन्दर थी। वह शेषनाग की कन्या थी, वह सुन्दरी सुन्दर रूप तथा शोभा से युक्त थी । ३ । वह स्त्री परम सतियों में शिरोमणि ही थी। मानो वह गुणों और लावण्य के सागर की कोई लहर ही हो। जिसके रूप को देखते हुए रति (तक)

एनो जोई सुंदरता वेश, मोह पामे मोटा मुनेश,
कामदेवने काम उपजावे, चंद्र चंपक कनक लजावे। ५।
अंगनो जे सुवास महेके छे, एक कोश सुधी ते बहेके छे,
जे नैषधरायनी राणी, काव्यमां दमयंती वखाणी। ६।
ते पण शेषकन्या सम ना'वे, एवी रावणसुतवधू कहावे,
मीनाकारी महेलमां बाळी, बेठी हेमहिंडोळे रूपाळी। ७।
अंगना झळके अलंकार, जाणे विद्युतनो चमकार,
विधुवदनी कलंकरहित, मुखकमळ सुहास्य सहित। ८।
देव गंधर्व किन्नर कुंवरी, एवी अनेक छे पासे किंकरी,
ते सुलोचनानी नित्यमेव, अहोरात्री करे छे सेव। ९।
किन्नरकन्याओ शची समान, करे मधुर स्वरेथी गान,
को वजाडे वीणा ने मृदंग, कोई शणगार सजाती अंग। १०।
को सखी सन्मुख झुलावे, कोई वात करीने रिझावे,
कोई चामर वींजण योग, कोई सखी आपे उपभोग। ११।

लज्जित हो जाती हो, उस (नारी) के लिए कोई (योग्य) उपमा नहीं थी। ४। उसके सौन्दर्य और वेश को देखकर बड़े-बड़े श्रेष्ठ मुनि (तक) मोह को प्राप्त हो जाते थे। वह (सौन्दर्य और वेश) कामदेव के मन में भी काम-विकार उत्पन्न कर देता था; चन्द्रमा, चम्पक और कनक (भी) को लज्जित कर देता था। ५। उसके अंग से जो सुगन्ध महकती थी, वह एक कोस तक फैली हुई रहती थी। नैषधराज नल की दमयन्ती नामक जो स्त्री थी और काव्य में (कविजन) जिसके सौन्दर्य का वखान करते हैं, वह भी शेष-कन्या सुलोचना के (सौन्दर्य की तुलना में) बराबर नहीं आ पाती। ऐसी वह (सुलोचना) रावण के पुत्र (इन्द्रजित) की वधू कहाती थी। (तब) मीनाकारी किये हुए प्रासाद में वह सुन्दर कन्या झूले पर बैठी हुई थी। ६-७। उसके शरीर पर आभूषण जगमगा रहे थे; मानो वह बिजली की चमकाहट हो। वह निष्कलंक चन्द्रमुखी थी। उसका कमल-सा मुख सुहास्य से युक्त था। ८। देवों, गन्धर्वों और किन्नरों की कन्याएं तथा ऐसी ही अनेक कन्याएं उसके पास दासियाँ थीं। वे दिन-रात नित्यप्रति सुलोचना की सेवा किया करती थीं। ९। (इन्द्र-पत्नी) शची के समान (रूपवती) किन्नर कन्याएँ (उस समय) मधुर स्वर में गान कर रही थीं। कोई-कोई वीणा और मृदंग वजा रही थीं, तो कई उसके अंग में शृंगार सजा रही थीं। १०। कोई सखी सामने से झुला रही थी, तो कोई बातें करते हुए उसे रिझा रही थी। कोई चँवर और

पारिजातनां पुष्प ज लावे, सखी हार गूंथीने पहेरावे,
एम आनंदमां सुलोचन, बेठी पतिपदशुं जेनुं मन। १२।
ते समे इंद्रजितनो हस्त, चोकमां पड्यो आवी तटस्थ,
वीखबिंदु सुधामां ज्यम, पडे आवी थयुं छे त्यम। १३।
दासीए आवी जोयुं त्यांहे, दीठुं विपरीत चोक ज मांहे,
तेणे कह्युं सतीने आवी, बाई आज खूट्युं तम भावी। १४।
आकाशमारगथी अस्त, पड्यो स्वामीनो हस्त,
आपणां चोक मांहे एह, पड्यो हवडां में दीठो तेह। १५।
ऐवुं सुणतां पडी छे फाळ, बेबाकळी ऊठी बाळ,
रत्नपादुका पहेरी पाय, झलके चीर जाणे चपलाय। १६।
बे सखीने स्कंधे धरी पाणि, चाली बारणे आवी राणि,
जुओ तो चोकमां पड्यो हाथ, निश्चे ओळख्यो ए कर नाथ। १७।
पंच मुद्रिका रत्नखचित, मणि कंकण बाजु सहित,
ओळखी हस्त ते सुलोचना, आवी मूर्छा पडी रे अंगना। १८।

पंखे झुला रही थी, तो कोई सखी उपभोग्य वस्तुएँ उसे प्रदान कर रही थी। ११। कोई सखी पारिजातक के फूल लायी थी और उनका हार गूँथकर उसे पहना रही थी। इस प्रकार सुलोचना, जिसका मन पति के पदों में ही (लगा हुआ) था, सानन्द बैठी हुई थी। १२। उस समय इन्द्रजित का हाथ आकर आँगन में एक ओर गिर पड़ा। जिस प्रकार, अमृत में विष की बूँद आकर गिर पड़े, उसी प्रकार (वहाँ) हो गया। १३। तब दासी ने आकर देखा, तो उसने आँगन ही में विपरीत देखा। उसने आकर सती सुलोचना से कहा— 'हे देवी, आज आपका भावी (जड़ से) उखाड़ दिया गया है। १४। आपके स्वामी का हाथ आकाश-मार्ग से नीचे गिर पड़ा है— मैंने उसे देखा है।'। १५। ऐसा सुनते ही वह कन्या सहम उठी; फिर भयभीत होकर उठ गयी। उसने रत्न-पादुकाएँ पहनीं। उसका वस्त्र चमक रहा था, मानो बिजली ही हो। १६। दो सखियों के कन्धों पर हाथ रखे हुए वह स्त्री चल पड़ी और द्वार पर आ गयी। उसने देखा, (तो दिखाई दिया कि) आँगन में हाथ पड़ा हुआ है। उसने निश्चित रूप से पहचाना कि वह हाथ उसके अपने स्वामी का है। १७। (उस हाथ की अँगुलियों में) रत्न-जटित पाँच मुद्रिकाएँ (पहनी हुई) थीं; रत्न-कंकण थे। वह (हाथ) भुज-बन्द-सहित था। सुलोचना ने उस हाथ को पहचाना, तो वह नारी मूर्च्छा के आने से गिर पड़ी। १८। फिर सचेत होकर वह विलाप करने लगी। उसने अपने आपको भूमि पर

थई सचेत करंती विलाप, पछाडे पृथ्वी पोताने आप,
करे ताडन शीश ने रुदे, शोक रुदन करंती वदे। १९।
जाय लोभीनुं सर्वस्व धन, थाय मच्छ वियोगे जीवन,
एम कंथवियोगे ते नार, शेषकन्या रुवे छे अपार। २०।
सहु सखीओए शीख पमाडी, सावचेत करीने बेसाडी,
स्वामीनो भुज लई निरधार, चांप्यो हृदयाशुं तेणी वार। २१।
कहे छे रुदन करंती भाम, हा हा नाथ, आ शुं कर्युं काम ?
पूरणब्रह्म सनातन राम, हती जीतवानी मोटी हाम। २२।
ते रामने समरप्या प्राण, तमे ईच्छ्युं तमारुं कल्याण,
पाम्या प्राणपति क्यम मर्ण ? हावे हुं रहीश कोने शर्ण। २३।
वर्तमान मरणनुं काज, लखी देखाडो मुजने आज,
पछी खडियो, कागळने कलम, पासे मूक्यां लखो थयुं क्यम ? २४।
कोणे मार्या तमने कंथ ? कर आव्यो ते आकाश पंथ,
त्यारे शरीर रह्युं छे क्यांहे, लखी देखाडो कागळमांहे। २५।

लुढ़का लिया। वह मस्तक और छाती पीटने लगी। (फिर) शोक से रुदन करती हुई वह बोली। १९। किसी लोभी (मनुष्य) का सर्वस्व-धन (नष्ट हो) गया हो, (अथवा) कोई मछली पानी से बिछुड़ गयी हो, (तो उसे जिस प्रकार दुःख हो गया हो) उस प्रकार अपने पति से बिछुड़ जाने के कारण वह स्त्री, शेष की कन्या (सुलोचना दुःखी हो गयी और) अपार रुदन करने लगी। २०। समस्त सखियों ने उसे सीख को प्राप्त कराया (उचित सीख दी) और उसे सचेत करके बैठा दिया। (फिर) उसने अपने स्वामी की भुजा उठा लेकर उस समय निश्चय-पूर्वक हृदय से लगा ली। २१। वह भामिनी रुदन करते हुए बोली— 'हा! हा! हे नाथ, यह आपने क्या काम किया? राम तो सनातन पूर्ण-ब्रह्म हैं; उन्हें जीत लेने के लिए आपने बड़ी हिम्मत धारण की थी। २२। उन्हीं राम को आपने अपने प्राण समर्पित कर डाले। आपने अपना कल्याण चाहा था। (परन्तु) हे प्राणपति, आप मरण को कैसे प्राप्त हो गये? अब मैं किसकी शरण में रहूँगी? । २३। वर्तमान समय (इस समय) के अपने मृत्यु-सम्बन्धी कार्य (-कारण) को आज लिखकर मुझे दिखा दीजिए।' फिर उसने खड़िया, कागज और लेखनी (उस भुज के) पास रख दी (और बोली) 'लिख दीजिए कि यह कैसे हुआ। २४। हे कान्त, आपको किसने मार डाला? आपका यह हाथ आकाश मार्ग से आ गया है। तो फिर शरीर कहाँ रह गया है? यह इस कागज पर लिखकर दिखा

जो हुं शुद्ध पतिव्रता होय, लखाजो मुज सत्यथी सोय,
त्यारे चैतन्य थई कर त्यांहे, ग्रही कलम लख्युं पत्रमांहे । २६ ।
जे थयुं रणमां वृत्तांत, लख्युं सहु भागीने भ्रांत,
होम-विध्वंस जुद्ध-विस्तार, लख्युं प्रथम ते पत्र मोझार । २७ ।
हे प्रिये, जे सुत सुमित्र, महातपसी ने पुण्यपवित्र,
निद्राजित लक्ष्मण निराहारी, शुद्ध सतवादी ने ब्रह्मचारी । २८ ।
ते लक्ष्मणे छेद्युं मुज शीश, लई गया ज्यांहां छे जुगदीश,
रणमां पड्युं छे मुज तन, पृथ्वी उपर थईने पतन । २९ ।
अहीं ऊडीने आव्यो एक भुज, वर्तमान जणावा तुंज,
हुं ओळंग्यो मायानदी घाट, पेली तीरे जोउं छुं तारी वाट । ३० ।
स्वदेहे गया विभीषण शर्ण, हुं गयो देह त्यागीने त्रण,
कर्या मित्र में श्रीजगदीश, मूकी कृपणता अर्प्युं शीश । ३१ ।
माटे आ दुःखरूप संसार, तजी रामशरण गयो नार,
रामचरणे रहेतां टळ्युं दुःख, हुं पाम्यो छुं ब्रह्मानंद सुख । ३२ ।

दीजिए । २५ । यदि मैं शुद्ध (आचारवती) पतिव्रता होऊँ, तो मुझे वह सत्यतापूर्वक लिखकर दिखा दीजिए ।' तब वह हाथ चैतन्यमय (सजीव) हो गया और लेखनी लेकर उसने पत्र में यह लिख दिया । २६ । युद्ध-भूमि में जो घटित हुआ उसका वर्णन लिखा । उससे सबका भ्रम दूर हो गया । उसने पत्र में पहले यज्ञ के विध्वंस सम्बन्धी-वृत्तान्त तथा युद्ध का विस्तार-सहित समाचार लिख दिया । २७ हे प्रिया, सुमित्रा के (लक्ष्मण नामक) जो पुत्र हैं, वे बड़े तपस्वी तथा पुण्य-पवित्र (आचरणवाले) हैं । वे लक्ष्मण निद्रा पर विजय प्राप्त किये हुए हैं, निराहारी हैं, शुद्ध सत्यवादी तथा ब्रह्मचारी हैं । २८ । उन लक्ष्मण ने मेरा मस्तक (धड़ से) छेद डाला और जहाँ जगदीश (राम) है, वहाँ उसे वे ले गये हैं । युद्ध में पतन होकर (गिरकर) मेरा शरीर भूमि पर पड़ा हुआ है । २९ । तुमको समाचार बतलाने के लिए मेरा एक हाथ उड़कर यहाँ आ गया है । मैंने माया-रूपी नदी के घाट को लाँघ डाला है और अब मैं उस पार तुम्हारी बाट जोह रहा हूँ । ३० । विभीषण अपनी देह से (देह-सहित श्रीराम के) आश्रय में गये हैं, तो मैं तीनों देहों का त्याग कर (उनकी शरण में) गया हूँ । मैंने जगदीश राम को मित्र बना लिया है और कृपणता छोड़कर अपना मस्तक (उनको) समर्पित किया है । ३१ । इसलिए हे नारी, इस दुःख-स्वरूप संसार को छोड़कर मैं राम की शरण में गया हूँ । राम की शरण में रहने से (मेरा) दुःख टल गया है और मै ब्रह्मानन्द (से युक्त) सुख को

एम हस्ते लखी घणी वात, वांचीने स्त्री करे आंसुपात,
ते समे पशुपंखी सर्व, रोवा लाग्यां तजीने गर्व । ३३ ।
त्यारे सखीए कर्यो प्रतिबोध, जे थकी टळे शोक विरोध,
पछे स्वामी तणो कर जेह, सुखासन मांहे मूक्यो तेह । ३४ ।
साथे पत्र मूक्यो ते मांहे, पोते घोडी उपर चढी त्यांहे,
करवा स्वामी साथे सहगमन, शीश लेवा चाली शुभ मन । ३५ ।
संग चाले अनेक वेत्रधार, आवी रावणनी सभा मोझार,
ज्यां बेठो छे सिंहासन राय, त्यां आवी सुंदरी लागी पाय । ३६ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पाये लागी श्वसुरने, आवी सुलोचना तेणी वार रे,
स्वामी तणुं वर्तमान कहीने, रुदन करती अपार रे । ३७ ।

* * *

प्राप्त हो गया हूँ । ३२ । इस प्रकार उस हाथ ने बहुत-सी बात लिख दी । उसे पढ़कर वह स्त्री आँसू बहाने लगी । उस समय गर्व को छोड़कर समस्त पशु-पक्षी रोने लगे । ३३ । तब सखियों ने प्रतिबोध किया, जिससे उसका शोक तथा विरोध टल गया । अनन्तर उसने अपने पति का जो हाथ था, उसे पालकी में रख दिया । ३४ । उसके साथ उसमें वह पत्र छोड़ दिया और वहाँ वह घोड़ी पर चढ़कर बैठ गयी । वह अपने पति के साथ सहगमन करने (सती होने) के लिए शुद्ध मन से मस्तक लेने के हेतु चल दी । ३५ । उसके साथ अनेक वेत्रधारी (सेवक) चल दिये । (इस प्रकार) वह रावण की सभा में आ गयी । जहाँ राजा सिंहासन पर बैठा हुआ था, वहाँ आकर वह सुन्दरी स्त्री उसके पाँव लगी । ३६ ।

उस समय सुलोचना आकर अपने ससुर के पाँव लगी और अपने स्वामी के सम्बन्ध में समाचार कहकर वह अपार रुदन करने लगी । ३७ ।

* * *

अध्याय—२८ (रावण का शोक, सुलोचना का मन्दोदरी की सूचना के अनुसार पति का सिर माँगने के लिए राम के पास आना)

राग वेराडी

सुलोचनाए शीश नमावीने, करवा मांड्युं रुदन,
त्यारे रावण महादुःख पाम्यो, जोईने बोल्यो दीन वचन । १ ।
अरे सती कुलदीपक देवी, तुं क्यम रुवे कहे थई स्वस्थ ?
त्यारे सुलोचनाए देखाड्यो तत्क्षण, स्वामीनो पत्र ने हस्त । २ ।
ज्यारे शक्रजितनुं मरण सांभळ्युं, विकळ थयो दशशीश,
मूर्छा आवी थयो अचेतन, पृथ्वी पड्यो असुरीश । ३ ।
पछे सावचेत थई गाढा स्वरथी, रोतो रावणराय,
ते समे हाहाकार ज वरत्यो, कविए ते न कहेवाय । ४ ।
सभा सर्व त्यांहां रोवा लागी, दशमुख करतो विलाप,
वीस नेत्रथी आंसु चाले, पृथ्वी पछाडे आप । ५ ।
अरे दैव तें आ शुं कीधुं ? गयो पाटवीपुत्र,
इंद्रजित जतां हावे सर्व गयुं, मारुं उज्जड थयुं घरसूत्र । ६ ।

अध्याय—२८ (रावण का शोक, सुलोचना का मन्दोदरी की सूचना के अनुसार पति का सिर मांगने के लिए राम के पास आना)

मस्तक नवाते हुए सुलोचना ने रुदन करना आरम्भ किया । तव रावण बड़े दुःख को प्राप्त हो गया । वह (यह देखकर) यह दीन वचन बोला । १ । 'अरी सती, कुलदीपक (-स्वरूपा) देवी, निर्भय और स्थिर-चित्त होकर कह दो कि तुम क्यों रो रही हो ।' तब सुलोचना ने अपने पति का पत्र और हाथ तत्क्षण (उसे) दिखा दिया । २ । जव असुराधीश रावण ने इन्द्रजित की मृत्यु (की बात) सुनी, तो वह विकल हो गया । (उसे) मूर्च्छा आ गयी, वह अचेतन हो गया और भूमि पर गिर पड़ा । ३ । अनन्तर सचेत होकर राजा रावण घोर स्वर में रोने लगा । उस समय (जो) हाहाकार मच गया, वह कवि द्वारा कहा नहीं जा रहा है । ४ । (फिर) वहाँ समस्त सभा रोने लगी । रावण विलाप कर रहा था । उसकी बीसों आँखों से आँसू वह रहे थे । उसने स्वयं को पृथ्वी पर लुढ़का दिया था । ५ । (वह बोला—) 'अरे दैव, तूने यह क्या किया ? मेरा ज्येष्ठ पुत्र (युवराज) चला गया । इन्द्रजित के चले जाने पर अब सब गया; मेरी घर-गृहस्थी उजड़ गयी । ६ । अरे पुत्र, तेरे बल के लिए (बल पर) तो मैंने राम से बैर कर लिया । (परन्तु) आज मेरा एक गोइयाँ, साथी

अरे पुत्र तुज बळ माटे में, कर्युं रामशुं वेर,
आज बेल्य भागी गई माहरी, वरत्यो मोटो केहेर। ७।
में जाण्युं मारे इंद्रजित ने, कुंभकरण बळवान,
तो कोण मात्र ए राम-लक्ष्मण, जो काळना झाले कान। ८।
ए बे पांखो तूटी गई मारी, अपंग थयो हुं आज,
मारा जीव्याने धिक्कार छे हावे, बूड्युं लंकानुं राज। ९।
अरे पुत्र मूकीने गयो, ए घटे नहि निरवाण,
में जाण्युं होत तो तुज साटे, हुं आपत मारो प्राण। १०।
एवे समे त्यां मंदोदरी आवी, ताडन करती तन,
अन्य राणीओ आवी मळी, सहु करती शोक रुदन। ११।
राणी मंदोदरी पुत्र संभारीने, करती विविध विलाप,
अरे दैव, मुंने करी वांझणी, शुं पूर्वे कर्युं हशे पाप ? । १२।
में आचर्यां नहि होय जप तप, पूरण कर्यो पंक्तिभेद,
कुशब्द कह्या हशे साधुने, शिव विष्णु निंदा करी वेद। १३।
के हरिकीर्तनमां भंग कर्यो हशे, हरण कर्यो परलाभ,
के साधु सतीने शीश ज कूडां, आळ चढाव्यां आभ। १४।

भाग गया—उससे बड़ा प्रलय मच गया है। ७। मैं अपने इन्द्रजित और कुम्भकर्ण को बलवान समझता था। जो काल के कान पकड़ सकते थे, उनके होते हुए ये राम-लक्ष्मण कौन हैं। ८। ये मेरे दोनों पंख टूट गये हैं, तो आज अब मैं अपंग हो गया हूँ। मेरे जीवित रहने को धिक्कार है। अब लंका का राज नष्ट हो गया। ९। अरे पुत्र, तू मुझे छोड़कर गया है; यह निश्चय ही शोभा नहीं दे रहा है। यदि मैं यह जानता होता, तो तेरे बदले में मैं अपने प्राण दे डालता।' । १०। उस समय अपने शरीर (छाती) को पीटती हुई मन्दोदरी वहाँ आ गयी। अन्य रानियाँ (भी) आ गयीं और सब मिलकर शोक और रुदन करने लगीं। ११। रानी मन्दोदरी अपने पुत्र का स्मरण करते हुए विविध (प्रकार से) विलाप कर रही थी। (वह बोली—) 'अरे दैव, तूने मुझे बाँझ बना डाला। मैंने पूर्वकाल में क्या पाप किया होगा। १२। मैंने जप और तप का आचरण नहीं किया हो। मैंने पूर्ण रूप से पंक्ति-भेद किया हो। किसी साधु से बुरे वचन (दुर्वचन) कहे हों। जान लो कि शिवजी और विष्णु की निन्दा की होगी। १३। अथवा, मैंने हरि-कीर्तन में बाधा उत्पन्न कर दी हो, अथवा दूसरे को पहुँचनेवाला लाभ छीन लिया हो; अथवा इधर किसी साधु या साध्वी ही के सिर पर दोष या झूठे आरोप लगा दिये

के क्षुधार्थीने भूख्यो उठाड्यो, भोजन करतां जाण,
के निर्मुख काढ्यो अतिथि में, गुरुद्रोह कर्यो निरवाण । १५ ।
ते पापे करीने हुं दुःख पामी, दैव कोप्यो निरधार,
इंद्रजित जेवो पुत्र मुंने हावे, क्यांथी मळे संसार । १६ ।
एम कही पछी सुलोचनाने, भीडी रुदया मांहे,
तेह समय शोकरुदनथी, पृथ्वी कंपी त्यांहे । १७ ।
त्यारे रुदन करंती शेषकन्या कहे, आणी आपो मुंने शीश,
मारे स्वामी साथे सहगमन करवा, विलंब थाय आ दिश । १८ ।
त्यारे रावण क्रोध करीने कहे, अल्या चालो जोध अपार,
लावीए सत्वर पुत्रनुं शिर, करी रामलक्ष्मणनो संहार । १९ ।
अथवा हुं त्यां मरण ज पामुं, जाउं पुत्रनी पास,
इंद्रजित जतां मारे कांई न ऊगर्युं, निष्फळ थई सहु आश । २० ।
एम रावण क्रोध करीने कहे, महा दुखियो थयो जाण,
त्यारे सुलोचनानी साथे बोली, राणी मंदोदरी वाण । २१ ।
अरे बाप जा तुं रामनी पासे, लाव्य मागीने शीश,
निश्चे तुजने आपशे ते छे, दयाळु श्रीजुगदीश । २२ ।

हों । १४ । अथवा समझ लो कि भूख से पीड़ित किसी मनुष्य को भोजन करते रहते भूखों उठाया हो, अथवा किसी अतिथि को निराश करके जाने दिया हो, अथवा मैंने निश्चय ही गुरु-द्रोह किया हो । १५ । उस पाप के कारण मैं इस दुःख को प्राप्त हो गयी हूँ । निश्चय ही (मुझपर) दैव क्रुद्ध हो गया है । अब इस संसार में इन्द्रजित जैसा पुत्र कहाँ से मिलेगा । ' १६ । ऐसा कहने के पश्चात्, उसने सुलोचना को हृदय से लगा लिया । (तब) वहाँ उस समय शोक तथा रुदन से पृथ्वी काँप उठी । १७ । अतिशय रुदन करती हुई शेष-कन्या सुलोचना बोली— ' (मेरे स्वामी का) मस्तक लाकर मुझे दे दो । इस समय मेरे स्वामी के साथ सहगमन में विलम्ब हो रहा है । ' । १८ । तब रावण ने क्रोध करते हुए कहा— ' अरे, असंख्य योद्धा चल दें—राम-लक्ष्मण का संहार करके हम पुत्र का सिर सत्वर ले आएँ । १९ । अथवा मैं वहाँ मृत्यु ही को प्राप्त हो जाऊँगा और अपने पुत्र के पास जाऊँगा । इन्द्रजित के चले जाने पर मेरे लिए कुछ नहीं शेष रहा है; (मेरी) समस्त आशा निष्फल हो गयी है । ' । २० । रावण ने क्रोध से इस प्रकार कहा । समझिए कि वह अति दुखी हो गया था । तब रानी मन्दोदरी सुलोचना से यह बात बोली । २१ । ' अरी मैया, तू राम के पास जा और मस्तक माँगकर

धरमधोरींधर भक्तवत्सल, प्रभु करुणासिंधु उदार,
दीनबंधु शरणागत त्राता, दशरथ राजकुमार। २३।
एकपत्नीव्रत जानकीजीवन, अवर ते मात समान,
एकबाण एकवचन सत्यनिधि, एवा छे भगवान। २४।
ते रामनां तुं दरशन करजे, अंत समे सुण माय,
ए जन्म धर्यानो परम लाभ छे, जे थकी बंध मुकाय। २५।
वळी रामनी पासे परम भक्त छे, सुग्रीव जांबुवंत,
न्यायसिंधु विभीषण ने अंगद, अनन्य दास हनुमंत। २६।
ए सर्वे रामभक्त माटे तुंने, नहि करे को अंत्राय,
माटे कुलवधू सुखे शीश लाव्य तुं, जाय जई रघुराय। २७।
एवुं वचन सुणीने सुलोचना बोली, रावण प्रत्ये वाण,
जे परसतीनो अभिलाष करे तेनुं, नहि थाये कल्याण। २८।
एम कही पछे चाली त्यांहांथी, हस्त धरी सुखासन,
आगळ पालखी पूंठे अश्वनी, चढी चाली शुभ मन। २९।
विद्वज्जन बृहस्पति जेवा विचक्षण, साथे लीधा तेह,
सहस्र दासीओ जोडे सुवेळुए, आवी सुलोचना एह। ३०।

ला। वे श्रीजगदीश दयालु हैं; वे निश्चय ही तुझे (सिर) देंगे। २२। वे प्रभु धर्मधुरंधर, भक्त-वत्सल हैं; वे उदार करुणा-सिन्धु हैं। राजा दशरथ के वे पुत्र दीन-बन्धु हैं, शरणागतों के रक्षक हैं। २३। जानकी-जीवन (श्रीराम) एक पत्नीव्रती है। (उनके लिए) अन्य (स्त्रियाँ) तो माता के समान हैं। वे एकबाण तथा एकवचन, सत्य को ही निधि समझनेवाले हैं। ऐसे हैं वे भगवान। २४। मैया, सुन ले, अन्तिम समय तू उन राम के दर्शन कर ले। वह तो इस जन्म ग्रहण करने का परम लाभ है, जिससे बन्धन मुक्त कर दिये जाते हैं। २५। इसके अतिरिक्त, राम के पास उनके परम-भक्त सुग्रीव और जाम्बवान हैं; न्याय-सिन्धु विभीषण और अंगद हैं, अनन्य दास हनुमान हैं। २६। ये सब राम के भक्त हैं। इसलिए कोई भी तेरे बारे में आपत्ति नहीं उठाएगा। अतः री कुलवधू, तू सुखपूर्वक मस्तक ले आ। जाकर रघुनाथ राम से उसकी याचना कर।' २७। ऐसा वचन सुनकर सुलोचना ने रावण से यह बात कही— 'जो पर-स्त्री की अभिलाषा करता है, उसका कल्याण नहीं होता।' २८। ऐसा कहकर फिर वह पालकी में वह हाथ रखकर वहाँ से चल दी। आगे पालकी चल रही थी। पीछे घोड़े पर (चढ़) बैठकर वह शुद्ध मन से चल दी। २९। उसने साथ में बृहस्पति जैसे

ज्यम आवे विश्रांति संतगृहे, एम आवी शेषकुमारी,
पछी घोडी उपरथी ऊतरी, चाली हंसगमन ते नारी । ३१ ।
त्यारे अनेक वानर वेष्टित बेठा, राम लक्ष्मण बे वीर,
त्यां कपि आवीने कहेवा लाग्या, सुणो श्रीरणधीर । ३२ ।
जुओ महाराज सीताजी आव्यां, ओ पेलां निरवाण,
रावणे भय पामीने त्यांथी, मोकली दीधां जाण । ३३ ।
एवां वानर केरां वचन सुणीने, बोल्या अयोध्या ईश,
भाई सीतानुं मुख नाहि देखीए, ज्यां लगी जीवे दशशीश । ३४ ।
ते आवती जोईने रामे पूछ्युं, विभीषणने निरधार,
त्यारे लंकेशे ओळखी इंद्रजितवधू, रुदन कर्युं तेणी वार । ३५ ।
नेत्रे जळ गद्‌गद कंठेथी, बोल्या विभीषण वाणी,
सुणो महाराज ए शेषनी कन्या, इंद्रजितनी राणी । ३६ ।
ए सती केरुं नाम ज लेतां, बळी जाय सर्व पाप,
ए स्वामी तणुं शिर लेवा आवी, सहगमन करवा आप । ३७ ।
जेना पद-अंगुष्ठ रविकिरण पडे नहि, न पामे दरश सुर रीत,
ते रणमां शिर लेवा आवी, ए दैवगति विपरीत । ३८ ।

विचक्षण विद्वज्जन लिये। (फिर) एक सहस्र दासियों सहित सुलोचना सुवेल आ गयी । ३० । जिस प्रकार, सन्त के घर विश्रान्ति आ जाती है, उस प्रकार वह शेष-कन्या (सुवेल पर) आ गयी। फिर घोड़ी पर से उतरकर हंस-गति से वह नारी (आगे) चली गयी । ३१ । तब राम और लक्ष्मण—दोनों बन्धु अनेक वानरों से घिरे हुए बैठे थे। वहाँ वानर आकर कहने लगे— 'हे रणधीर, सुनिए । ३२ । हे महाराज, देखिए, निश्चय ही ये वे सीताजी आ गयी हैं। समझिए कि भय को प्राप्त होकर रावण ने वहाँ से उन्हें भेज दिया है।' ३३ । वानरों के ऐसे वचन सुनकर अयोध्याधीश राम बोले— 'भाइयो, जब तक दशशीश (रावण) जीवित हो, तब तक हमें सीता का मुख नहीं देखना है।' ३४ । उसे आती हुई देखकर राम ने विभीषण से निश्चयपूर्वक (जान लेने के हेतु) पूछा, तब उस लंकाधिपति (विभीषण) ने इन्द्रजित की स्त्री को पहचाना और उस समय वह रोने लगा । ३५ । आँखों में (अश्रु-) जल लिये हुए, गद्‌गद कण्ठ से विभीषण ने यह बात कही— 'हे महाराज, सुनिए । ये शेष की कन्या है, इन्द्रजित की स्त्री है । ३६ । इस सती का नाम लेने ही से सब पाप जल जाते हैं। ये स्वयं अपने स्वामी का सिर लेने तथा सहगमन करने के लिए आ गयी है । ३७ । जिसके पाँव के अँगूठे पर सूर्य की

एम कहीने विभीषण रोया, विस्तारी सती गुणख्यात,
एटले आवी सुलोचना, लागी रामचरण साक्षात। ३९।
साष्टांग करीने पडी प्रभुना, पद सिंच्या अश्रुधार,
सुलोचना प्रभुना पाये शिर, मूकी रही घणी वार। ४०।
त्यारे करुणावचन बोल्या श्रीरघुपति, ऊठ हवे हे मात,
अक्षय सुख हुं आपुं तुंने, जे मागे ते साक्षात। ४१।
पछी ऊठी सुलोचना सन्मुख ऊभी, बे कर जोडी नारी,
नखशिख मूरति रामचंद्रनी, ध्यानमांहे उतारी। ४२।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

उतारी मूरति ध्यानमां, ते राखी हृदय मोझार रे,
पछे गद्गद कंठे स्तुति करती, सुलोचना तेणी वार रे। ४३।

* * *

किरण (तक) नहीं पड़ पाती थी, जिसके दर्शन को देव तक (नीति-संगत) रीति से नहीं प्राप्त कर पाते, वह रणभूमि में (पति का) मस्तक लेने के लिए स्वयं आ गयी है। यह दैवगति विपरीता है।' ३८। ऐसा कहकर विभीषण उस सती के गुणों की ख्याति को विस्तारपूर्वक बताते हुए रोने लगा।' इतने में सुलोचना आ गयी और वह प्रत्यक्ष राम के पाँव लग गयी। ३९। वह दण्डवत् नमस्कार करते हुए पड़ी रही। उसने प्रभु राम के चरणों को आँसुओं की धारा से सींच लिया। (इस प्रकार) सुलोचना प्रभु राम के चरणों पर मस्तक रखे हुए बहुत समय तक पड़ी रही। ४०। तब श्रीरघुपति करुणा से युक्त यह बात बोले— 'हे माता, अब उठ जाओ। यदि तुम प्रत्यक्ष माँगो, तो मैं तुम्हें अक्षय सुख (तक) प्रदान करूँगा।' ४१। फिर सुलोचना उठ गयी। वह नारी दोनों हाथ जोड़कर सम्मुख खड़ी रह गयी। उसने रामचन्द्र की नख से शिखा तक मूर्ति को अपने ध्यान में उतार लिया (अंकित कर लिया)। ४२।

उसने (प्रभु रामचन्द्र की) मूर्ति को ध्यान में उतारकर उसे हृदय के भीतर रख लिया। फिर, उस समय सुलोचना ने गद्गद कण्ठ से उनकी स्तुति की। ४३।

* * *

अध्याय—२९ (सुलोचना द्वारा राम का स्तवन)

दोहा

चढी विमान सुर सकळ नभ, रह्या जुए धरी धीर,
सुलोचना मधुरे स्वरे, स्तवती श्रीरघुवीर। १।

छंद भुजंगी

जयजयराम रघुवीर विषकंठमित्ना,
रमानाथ रघुनाथ राजीवनेत्ना।
चालक चक्रमाया चपल चारुगात्ना,
जीवन जानकीनाथ जनकजामात्ना। १।
नमो निर्गुणं गुणमयं गुण अगारं,
नमो विश्व हेतु अहेतु अपारं।
नमो विश्वव्यापरी विश्वंभर विधाता,
नमो विश्वतनु विश्वपति विश्वत्नाता। २।
नमो शुद्ध चैतन्य साक्षीप्रकाशं,
नमो इंद्रियातीत सहु क्षेत्नवासं।

अध्याय—२९ (सुलोचना द्वारा राम का स्तवन)

समस्त देव विमानों में बैठकर तथा धैर्य धारण कर आकाश में से देख रहे थे। (तब) सुलोचना श्रीरघुवीर राम का मधुर स्वर मे स्तवन करने लगी। १।

हे विषकण्ठ (शिवजी) के मित्र रघुवीर राम, आपकी जय हो, जय हो। हे रमा-नाथ (भगवान विष्णु के अवतार) कमल-नयन रघुनाथ राम, हे चंचल माया-चक्र के चालक, हे चारुगात्र (सुन्दर शरीरधारी) श्रीराम, हे जगज्जीवन, हे जानकी-नाथ, हे जनक के जामाता, आपकी जय हो, जय हो। १। हे निर्गुण (ब्रह्म, आपको नमस्कार है), हे गुणमय, हे गुणों के आगार (निवास-स्थान), आपको नमस्कार है। हे विश्व के हेतु (कारण, निर्माता), हे विश्व के अहेतु (संहारक), हे अपार (असीम), आपको नमस्कार है। हे विश्व-व्यापी, हे विश्वम्भर, हे विधाता, आपको नमस्कार है। हे विश्वतनु (विश्व ही जिनका शरीर है), हे विश्व-पति, हे विश्व-रक्षक, आपको नमस्कार है। २। हे शुद्ध चैतन्य (-स्वरूप), हे (सर्व-) साक्षी और (समस्त ब्रह्माण्ड को) प्रकाश (देनेवाले, प्रकट कर देनेवाले राम), आपको नमस्कार है। हे इन्द्रियातीत (इन्द्रियों के परे अस्तित्व

नमो ज्ञानगम्यं परापार भूपं,
अजं शाश्वतं ब्रह्म वेद स्वरूपं । ३ ।
सृष्टि उद्‌भवं पाल संहारकारं,
विधि विष्णु शिव रूप त्रिगुणांगधारं ।
लीलाविग्रहं सच्चिदानंद रूपं,
अविच्छिन्न आदि अखंडं अनुपं । ४ ।
जनकजापति श्रीपति भूपवीरं,
नमुं दशरथी राम रणरंगधीरं ।
नमो भक्तचिंतामणि कामधेनुं,
शरण्यसुरतरु माहात्म्य ए अप्रमेनुं । ५ ।
भूतल अवतर्या चतुरव्यूह चापपाणि,
वनमां नीकळ्या देवनुं दुःख जाणी ।
जातुधान हणवा अभय भक्त करवा,
निगम धर्म धरवा भूमि भार हरवा । ६ ।

रखनेवाले), हे समस्त क्षेत्रों (स्थानों, शरीरों) में निवास करनेवाले, आपको नमस्कार है। हे ज्ञानगम्य, हे परापर (परात्पर, सर्वश्रेष्ठ) राजा, आपको नमस्कार है। हे अजन्मा, हे शाश्वत, हे ब्रह्म, हे वेद-स्वरूप, आपको नमस्कार है। ३। हे सृष्टि के उद्‌भव-कर्ता (निर्माता) पालन-कर्ता तथा संहार-कर्ता, (आपको नमस्कार है)। हे विधि, विष्णु और शिव-स्वरूप, हे (सत्त्व, रज तथा तम नामक) तीनों गुणों के आधार, हे लीला-विग्रह (रूप-धारी), हे सच्चिदानन्द-रूपी (राम), हे अविच्छिन्न, हे (समस्त ब्रह्माण्ड के) आदि (आरम्भ, मूल), हे अखण्ड, हे अनुपमेय, आपको नमस्कार है। ४। हे जनक-कन्या सीता के पति, हे श्री (लक्ष्मी) के पति (विष्णु-स्वरूप), हे वीर राजा, हे रणरंगधीर दाशरथी राम, आपको मैं नमस्कार कर रही हूँ। हे भक्तों के लिए चिन्तामणि-स्वरूप, हे (भक्तों के लिए) कामधेनु (-स्वरूप राम), आपको नमस्कार है। हे शरण में जाने योग्य सुरतरु (कल्पवृक्ष), इस अप्रमेय (अपार) माहात्म्य (के धारी), आपको नमस्कार है। ५। हे चाप-पाणि (हाथ में धनुष धारण करनेवाले), आप चतुर्व्यूह (स्वयं तथा शंख, चक्र, गदा के साथ) सहित इस भू-तल पर अवतरित हो गये हैं। देवों के दुःख को जानकर आप, राक्षसों की हत्या करने के लिए तथा भक्तों को भय-रहित करने के लिए वेदों में प्रतिपादित धर्म की प्रति स्थापना करने के लिए और भूमि का (पाप-रूपी) भार दूर करने के लिए, दिव्य शक्ति के धारियों का उद्धार

दैवी तारवा मारवा दुष्ट पापी,
पुण्यश्लोक कीर्ति रही विश्वव्यापी।
घनश्याम तन काम कोटी विराजे,
शोभा मुखनी जोईने कंज लाजे। ७ ।
मुगट रत्न हीरा खचित शीश सोहे,
तिलक केसरी भालमां मन मोहे।
कुंडळ करण मणि झळहळे ज्योत सारी,
जाणे सेवता ए ज रूपे तमारी। ८ ।
केयूर कंकणं मेखलासूत्र राजे,
अंगद मुद्रिका मुक्तनी माळ भ्राजे।
सोहे पीत उपवीत ने पीत वासं,
विधुरश्मि जेवी मुखे मंदहासं। ९ ।
अभय सुखदाता सुबाहु अजानु,
दहनदु:ख अज्ञान भानु कृषानु।
चरण चारु सुकुमार नखचंद्रवेषा,
धजा वज्र अंकुश यव आदि रेषा। १० ।

करने के लिए और दुष्ट पापियों को मार डालने के लिए, आप भू-तल पर अवतरित हैं। आपकी पुण्य-श्लोक कीर्ति विश्व-व्यापी होकर रही है। आपके मेघ-श्याम शरीर में मानो करोड़ों कामदेव विराजमान हैं। आपके मुख की शोभा को देखकर कमल लज्जित हो जाता है। ६-७। मस्तक पर रत्नों और हीरों से जटित मुकुट शोभायमान है। भाल पर लगाया हुआ केसरी तिलक (दर्शकों के) मन को मोहित कर रहा है। कानों में पहने हुए कुडलों के रत्नों की सुन्दर ज्योति झिलमिला रही है। जान पड़ता है कि इसी रूप में वे आपकी सेवा कर रहे हैं। ८। (आपके शरीर में धारण किये हुए) केयूर, कंकण और मेखला-सूत्र शोभायमान हो रहे हैं। अंगद, मुद्रिका और मोतियों की माला शोभायमान हो रही है। पीले रंग वाला जनेऊ और पीत (पीला) वस्त्र सोह रहे हैं। आपके मुख पर मन्द मुस्कराहट चन्द्र-किरण जैसी दिखायी दे रही है। ९। आपके सुन्दर आजानुबाहु (घुटनों तक लम्बे बाहु भक्त जनों के लिए) अभय और सुख के दाता हैं। आप दु:ख तथा अज्ञान को जला डालनेवाले, तीव्र किरणों से युक्त सूर्य हैं। आपके चरण सुन्दर हैं, सुकोमल हैं; उनके नख चन्द्रमा की कान्ति का वेश धारण किये हुए हैं; वे (चरण) ध्वज, वज्र, अंकुश, यव आदि (शुभ) रेखाओं (-चिह्नों) से युक्त हैं। १०। सरयू नदी के

हरे पीर पद तीरसर्जुविहारी,
पावन पदरजे विप्रनी नार तारी।
कर्युं अंध्री जळपान ते वारवारं,
तेणे उद्धर्युं दुष्टकुल कर्णधारं। ११।
जेथी वनचरी दुःख संसार वामी,
एवा चर्णनुं शर्ण हुं आज पामी।
सदा लालितं जे रमा सेव्यमानं,
करी एक आशे धरे जोगी ध्यानं। १२।
गिरि शैल वनचर सरिता विराजं,
करी पुनित भूत पदपदे तीर्थराजं।
धर्यो देह गो सुर द्विज हेतकारी,
कीर्ति विस्तरी विश्वमां दोषहारी। १३।
सनक वागीशं नारदं शेषीशानं,
विशद विक्रमं ते करे गीतगानं।
मुनि सिद्ध योगी लीलारूप ध्येयं,
मंगलमुज्ज्वलं शिव सदा नाम गेयं। १४।

तट पर विहार करनेवाले आपके पाँव (भक्तजनों की) पीड़ा का हरण करते हैं। आपने अपने पवित्र पद-रज से विप्र (गौतम ऋषि) की नारी (अहल्या) का उद्धार किया है। कर्णधार (नाविक) केवट ने बारबार आपके (पद के) अँगूठे के (तीर्थ-सदृश) जल का पान किया और उसने (उससे) अपने दुष्ट अर्थात् पाप-दोष से युक्त कुल का उद्धार किया है। ११। जिनसे वन-चारिणी (शबरी भीलनी) दुःखमय संसार से मुक्त हो गयी, जो लक्ष्मी द्वारा सदा लालित तथा सेवा किये जाते हैं और योगी ब्रह्म की प्राप्ति की एक मात्र आशा से जिनका ध्यान धारण करते हैं, ऐसे आपके उन चरणों की शरण को मैं प्राप्त हो गयी हूँ। १२। पर्वत, शिखर, वनचर प्राणी, नदियाँ आदि के समीप विराजमान होते हुए आपने उन्हें पवित्र बना दिया है। आपके पद-पद पर उत्तम तीर्थ उत्पन्न हो गये हैं। गायों, देवों और ब्राह्मणों का कल्याण करने के लिए, आपने देह धारण की है और अपनी दोष (पाप)-हारिणी कीर्ति का विश्व में विस्तार किया है। १३। सनक (आदि ऋषि), वागीश्वरी (सरस्वती), नारद, शेष तथा ईशान आपके प्रकट पराक्रम का गीत-गान करते हैं। मुनियों, सिद्धों, योगियों के लिए आपके लीला-रूप ध्येय (ध्यान करने योग्य) हैं; आपका मंगल और उज्ज्वल नाम शिवजी के द्वारा सदा गाया

राखो चरण शरणे मुने रामचंद्रं,
प्रभु पाहि मां प्रणत जन राघवेन्द्रं ।
पूरो दीन जन कामना पूर्णकामी,
सदा रामचरणे नमामि नमामि । १५ ।

दोहा

गुणसागर नागर निपुण, धर्म सत्यव्रत धीर,
अखिल शोकसंकटहरण, जय जय श्रीरघुवीर । १६ ।

* * *

जाने योग्य है । १४ । हे रामचन्द्र, अपने चरणों की शरण में मुझे रखिए, हे प्रभु राघवेन्द्र, मुझ प्रणत जन की रक्षा कीजिए । हे पूर्णकामा, मुझ दीन जन की कामना को पूर्ण कीजिए । हे राम, मैं आपके चरणों को सदा नमस्कार करती हूँ, नमस्कार करती हूँ । १५ ।

हे गुण-सागर, निपुण नागर, धर्म तथा सत्य व्रत के धारक, धीर (पुरुष), समस्त शोक और संकटों का हरण करनेवाले श्रीरघुवीर, आपकी जय हो, जय हो । १६ ।

* * *

अध्याय—३० (सुलोचना द्वारा इन्द्रजित के मुख को हँसाना, सुलोचना का सती हो जाना)

राग धन्याश्री

सुलोचना कहे छे सुणो महाराज जी,
शरणागतनी प्रभु राखो लाज जी ।
आज हुं पामी तम दर्शन जी,
तेणे करी छूटी विदेहीनां बंधन जी । १ ।

अध्याय—३० (सुलोचना द्वारा इन्द्रजित के मुख को हँसाना, सुलोचना का सती हो जाना)

सुलोचना ने कहा, 'हे महाराज, सुनिए । (मुझ) शरणागता की लाज रखिए । मैं आज आपके दर्शन को प्राप्त हो गयी हूँ । उससे मैं विदेह के बन्धन से मुक्त हो गयी हूँ । १ ।

ढाळ

बंधन छूटी देहनुं हावे, शिर आपो मुज स्वामी तणुं,
सहगमन करवा पति साथे, मने विलंब थाये घणुं। २।
वर्तमान जाण्युं नाथनुं, पंचप्राण तो तत्क्षण गया,
पण देह निमित्त शिर मागवा आवी, ते आपो करीने मया। ३।
एवुं सुणी प्रसन्न थया रघुपति, धन्य शेषकन्या साधवी,
सहु स्त्रीओमां रत्नरूप छे, ज्यम नदीओ मध्ये जाह्नवी। ४।
त्यारे सुग्रीव जांबुवान कहे, एने आपो शिर महाराज,
ए सती परम पतिव्रता छे, सहु स्त्रीमां शिरताज। ५।
रघुवीर कहे बाई तें क्यम जाण्युं, जे शिर लाव्या आ ठाम ?
त्यारे सुलोचना कहे कहुं जथारथ, सुणो पूरणकाम। ६।
एक हस्त पतिनो पड्यो आवी, मुज चोकमां निरधार,
तेणे रण तणुं वर्तमान सर्व, लख्युं पत्रमोझार। ७।
ते माटे मने मालम थयुं, शिर लाव्या आणे ठार,
मुंने आपो जाउं समागमे, रघुपति परम उदार। ८।
हुं अयाचक याचवा आवी, प्रभु जाणी आज,
अनाथनाथ अवधपति, आज राखो मारी लाज। ९।

मैं देह के बन्धन से मुक्त हो गयी हूँ; अब (मुझे) मेरे स्वामी का सिर दीजिए। पति के साथ सहगमन करने में मुझे बहुत विलम्ब हो रहा है। २। मैंने अपने पति का समाचार जान लिया, तो (ही) मेरे पाँचों प्राण निकल गये। परन्तु देह के निमित्त सिर माँगने आ गयी हूँ; ममता (कृपा) करके वह दीजिए।' ३। ऐसा सुनकर रघुपति प्रसन्न हो गये (और बोले)— 'शेष की यह साध्वी कन्या धन्य है। जिस प्रकार नदियों में गंगा होती है, उस प्रकार समस्त स्त्रियों में यह रत्न रूप (सर्वोत्तम) है। ४। तब सुग्रीव और जाम्बवान ने कहा— 'हे महाराज, इसे सिर दीजिए। यह स्त्री परम पतिव्रता है, समस्त स्त्रियों में सिरताज अर्थात् सर्वश्रेष्ठ है।' ५। राम ने कहा— 'देवी, यह तुमने कैसे जाना कि वह सिर इस स्थान पर आ गया है?' तब सुलोचना ने कहा, 'हे पूर्णकाम, जैसा है, वैसा मैं कह देती हूँ। ६। निश्चय ही मेरे आँगन में मेरे पति का एक हाथ आकर पड़ गया था। उसने पत्र में युद्ध सम्बन्धी समस्त समाचार लिख दिया। ७ इसलिए मुझे विदित हो गया कि सिर इस स्थान पर आ गया है। हे परम उदार रघुपति, मुझे वह दीजिए, तो मैं उनके साथ जा पाऊँ। ८। आपको प्रभु समझकर मैं आज अयाचक होने पर

एम कही तदा रघुवीरने, देखाड्यो भुजपत्र,
सर्व सभा ते देखतां, आश्चर्य पाम्यां तत्र । १० ।
अमने पतीज पडे नहि एम, कपि सहु कहे वाण,
ए मृतक हस्ते पत्र लखियो, मनाये नहि जाण । ११ ।
माटे अमो कहीए सत्य ए, मस्तक करे जो हास,
तो वात साची मानीए, अमने आवे विश्वास । १२ ।
त्यारे राम कहे भाई सत्य छे, ए पत्र केरी वात,
ते सती ते शुं नव करे, तेनो महिमा घणो विख्यात । १३ ।
पछे रामआज्ञाए सुग्रीवे आप्युं, मस्तक तेणी वार,
सुलोचनाए हृदे चांपी, रुदन कीधुं अपार । १४ ।
चीरनो पालव पाथरीने, मूक्युं तेमां शीश,
पछी बे कर जोडी स्तुति करे, सुलोचना ते दिश । १५ ।
हे प्राणवल्लभ प्राणजीवन, राखो मारी लाज,
एक वार हास करो प्रभु, ज्यम सभा देखे आज । १६ ।
क्षमा करो अपराध मारो, स्नेह धरो मुज साथ,
किंकरी जाणी दया आणी, दोष टाळो नाथ । १७ ।

भी याचना करने आयी हूँ। हे अनाथों के नाथ अवध-पति, आज मेरी लाज रखिए।' ९। तब ऐसा कहते हुए उसने वह भुज तथा पत्र राम को दिखा दिया। समस्त सभा वहाँ उन्हें देखते ही आश्चर्य को प्राप्त हो गयी। १०। (फिर भी) समस्त कपियों ने यह बात कही— 'हमें ऐसा तो विश्वास नहीं हो रहा है। समझिए कि यह बात मानी नहीं जा सकती कि इस मृतक ने हाथ से पत्र लिखा है। ११। इसलिए यदि यह मस्तक हँस दे, तो हम उसे सत्य कहेंगे, तो ही हम उसे सच्ची बात कहेंगे और हमें विश्वास हो जाएगा।' १२। तब राम बोले— 'हे भाइयो, इस पत्र की बात सत्य है। वह सती क्या नहीं कर पाएगी? उसकी महिमा अति विख्यात है।' १३। तदनन्तर राम की आज्ञा से सुग्रीव ने उस समय वह मस्तक दिया। तो सुलोचना ने उसे हृदय से लगाकर अपार रुदन किया। १४। (फिर) अपने वस्त्र का आँचल (फैलाते हुए) बिछाकर उसने उसपर वह सिर रख दिया। अनन्तर उस स्थान पर दोनों हाथ जोड़कर सुलोचना स्तुति करने लगी। १५। 'हे प्राण-वल्लभ, हे प्राण-जीवन, मेरी लाज रखिए। हे प्रभु, एक बार हँस देना जैसे कि यह सभा आज देख सके। १६। मेरे अपराध को क्षमा कीजिए। मेरे प्रति स्नेह धारण कीजिए। मुझे (अपनी) दासी समझकर (मुझपर) दया

चतुरशिरोमणि स्वामी मारा, अतुल बळ गुण कर्म,
देखाडो आज रामने, मारो पतिव्रतधर्म। १८।
एम घणां वचन सतीए कह्यां, पण हस्युं नहि शिर तेह,
सुलोचना कहे शुं करुं हुं, प्रथम चूकी एह। १९।
जो तेडावत मुज पिताने तो, करत आवी सार,
नव मरण पामत प्रभु, करत ते शत्रुनो संहार। २०।
एवुं कहेतामां शिर हस्युं, खडखड कमळवदन प्रकाश,
जमणुं नेत्र उघाडीने ते, जुए चारे पास। २१।
इंद्रजित केरुं मृतक मस्तक, हस्युं जेणी वार,
आश्चर्य पाम्या सर्व को, कपि सहित जुगदाधार। २२।
सुग्रीवे पूछ्युं रामने, कहो कृपा करी महाराज,
शुं वचन ए सतीए कह्युं, जे हस्युं मस्तक आज। २३।
रघुवीर कहे एणे कह्युं जुद्धमां, तेडावत जो मुज तात,
ते शेष साह्य करत तमारी तो, क्यमे मरण नव थात। २४।
ते शेषनो अवतार लक्ष्मण, एणे मारियो इंद्रजित,
तो साह्य ए शुं करत मारी, जेणे कर्युं विपरीत। २५।

करते हुए, हे नाथ, इस दोष को टाल दीजिए। १७। हे मेरे चतुर-शिरोमणि स्वामी, आपका बल, गुण तथा कर्म अतुल्य (बेजोड़) है। मेरे पतिव्रत धर्म (का परिणाम) आज राम को दिखा दीजिए।' १८। इस प्रकार, सती सुलोचना ने बहुत बातें कहीं, फिर भी वह सिर नहीं हँस सका। तो सुलोचना बोली, 'मैं क्या करूँ? पहले ही यह भूल हो गयी है। १९। यदि मैं (पहले ही) अपने पिता को बुला लेती, तो वे आकर भला कर देते; (तब) मेरे स्वामी मौत को प्राप्त न होते; वे शत्रु का संहार कर देते।' २०। उनके ऐसा कहते ही वह सिर खिलखिलाकर हँस पड़ा। उसका कमल-सा मुख प्रकाश-युक्त, अर्थात् उज्ज्वल हो उठा। (फिर) दाहिना नेत्र खोलकर उसने चारों ओर देखा। २१। जिस समय, इन्द्रजित का मृत मस्तक, अर्थात् मृत इन्द्रजित का मस्तक हँस पड़ा, तब सब कोई, समस्त कपियों सहित जगदाधार राम अचरज को प्राप्त हो गये। २२। (तब) सुग्रीव ने राम से पूछा, 'हे महाराज, कृपा करके कहिए—इस सती ने ऐसी क्या बात कही, जिससे कि आज यह मस्तक हँस पड़ा।' २३। (तो इसपर) श्रीराम ने कहा— 'इसने यह कहा, यदि मेरे पिता बुलाये जाते, तो शेष तुम्हारी सहायता करते; तब फिर (उनकी) किसी भी प्रकार मौत नहीं हो जाती।' २४। उस शेष का अवतार है—

तारा पिताए मार्यो मुजने, शेष जे कहेवाय,
एम जाणी इंद्रजितनुं शिर ते हस्युं ए अभिप्राय। २६।
एवां वचन सुणी रघुरायनां, लाग्युं लक्ष्मणजीने दुःख,
रोमांचित गद्‌गद थया, करमायुं कोमळ मुख। २७।
एम सौमित्रीने मोहमाया, व्यापी तेणी वार,
सुलोचना सामुं जोई रुए, आंखे आंसुधार। २८।
रुदन करता कहे लक्ष्मण, सुणो श्रीरघुराय,
जामात्रने में मारियो, ए घणो कर्यो अन्याय। २९।
राम कहे भाई क्षत्रीनो छे, धर्म जे संग्राम,
रणमां हणे पुत्र पिताने, न गणे संबंध ते ठाम। ३०।
वळी अनित्य देहनो धर्म छे, ते निश्चे थाये नाश,
माटे शोक न करीए वीर मारा, धरीए ज्ञानप्रकाश। ३१।
तोये लक्ष्मण छाना रहे नहि, जोई सुलोचनानुं मुख,
त्यारे रघुपति गद्‌गद थया, लाग्युं लक्ष्मणजीनुं दुःख। ३२।

लक्ष्मण ! उसने इन्द्रजित को मार डाला। 'जिसने विपरीत बात कर दी, वह मेरी सहायता क्या करता ! । २५। जिसे शेष कहा जाता है, तेरे उसी पिता ने मुझे मार डाला है।' —ऐसा जानकर इन्द्रजित का मस्तक हँस पड़ा। —यह इसका अभिप्राय है।' २६। श्रीराम की ऐसी बातें सुनते ही लक्ष्मण को दुःख हो गया। वह रोमांचित तथा गद्‌गद हो गया। उसका कोमल मुख म्लान हो गया। २७। इस प्रकार, उस समय लक्ष्मण को मोह-माया व्याप्त कर गयी। वह सुलोचना को सामने देखकर रोने लगा। (उसकी) आँखों से आँसुओं की धारा चल पड़ी। २८। रुदन करते-करते लक्ष्मण बोला, 'हे रघुराज, सुनिए। मैंने जामाता को मार डाला—मैंने यह बड़ा अन्याय किया है।' २९। (इसपर) राम ने कहा, 'हे भाई, संग्राम (करना) ही क्षत्रिय का धर्म है। युद्ध में पुत्र पिता को भी मार डालता है—उस स्थान पर वह उस सम्बन्ध (नाते) का ध्यान नहीं रखता। ३०। इसके अतिरिक्त, अनित्य (क्षणिक) होना देह का (गुण-) धर्म है। वह निश्चय ही नष्ट हो जाती है। इसलिए हे मेरे भाई, शोक नहीं करना चाहिए, ज्ञान-रूपी प्रकाश धारण करना चाहिए।' ३१। (फिर भी) सुलोचना के मुख को देखते हुए लक्ष्मण चुप नहीं रह सका। तब रघुपति गद्‌गद हो गये, उन्हें लक्ष्मण का दुःख अनुभव हुआ। ३२। उनकी आँखों में पानी भर आया। (फिर) राम करुणा भरे वचन बोले— 'हे सती, तुम्हारे पति को मैं निश्चय ही

जळ भराई आव्युं नेत्रमां, बोल्या राम करुणा वाण,
अरे सती तारा स्वामीने, हुं जिवाडुं निरवाण। ३३।
रची आपुं बीजुं नगर लंका, तेमां रहो जई आज,
सहस्र कल्प लगी स्त्रीपुरुष, तमो करो निरभे राज। ३४।
एम प्रसन्न थई प्रभुए कह्युं, त्यारे बोली सुलोचन,
आज तमारा चरणनुं दरशन, पामियां पावन। ३५।
फरी आवो जोग मळे नहि, अंतसमे श्रीभगवान,
हवे शरण पाम्यां तमारुं, नथी लाभ एह समान। ३६।
जन्म धरीने ज्यारे त्यारे, मरवुं एक ज वार,
हरि जोई भोगवे जगतने, तेना जीव्याने धिक्कार। ३७।
सुलोचनानां वचन सुणी, थया राम करुणावान,
लक्ष्मणजीनो शोक समियो, सुणी एवुं ज्ञान। ३८।
रघुवीर कहे बाई धन्य तुजने, जस कर्यो ते जाण,
पतिव्रतामंडन तजी माया, थजो तुज कल्याण। ३९।
पछी आज्ञा मागी रामनी, सुलोचना तेणी वार,
रघुवीर चरणे नमी चाली, शीश लई ते नार। ४०।

जीवित कर दूँगा। ३३। दूसरा लंकानगर निर्मित करके मैं (तुम्हें) दूँगा, आज जाकर उसमें रह जाओ। तुम स्त्री-पुरुष सहस्र कल्प तक निर्भयतापूर्वक राज्य करो। ३४। प्रसन्न होकर प्रभु राम ने इस प्रकार कहा, तब सुलोचना बोली, 'मैं आज आपके पवित्र चरणों के दर्शन को प्राप्त हो गयी हूँ। ३५। हे श्रीभगवान्, अन्त के समय फिर से ऐसा अवसर नहीं मिलेगा। अब आपकी शरण को हम प्राप्त हो गये हैं; इसके समान (कोई दूसरा) लाभ नहीं है। ३६। जन्म धारण करके जब हो, तब एक ही बार मरना है। हरि को देखकर भी (भगवान के दर्शन करने पर भी) जो संसार के भोग भोगता हो, उसके जीने को धिक्कार है।' ३७। सुलोचना की बातें सुनकर राम करुणा से युक्त हो गये। ऐसा ज्ञान (ऐसी ज्ञान की बातें) सुनकर लक्ष्मण का शोक शान्त हो गया। ३८। (फिर) रघुवीर ने कहा, 'हे देवी, तुम धन्य हो; समझ लो, तुमने इससे यश (कीर्ति को) प्राप्त किया है। तुम पतिव्रता-मण्डना ने माया का त्याग किया है। तुम्हारा कल्याण हो। ३९। फिर उस समय सुलोचना ने राम से आज्ञा माँगी और उनके चरणों को नमस्कार करके वह स्त्री (अपने पति का) सिर लेकर चल दी। ४०। 'हे महाराज, मैं सहगमन करती हूँ।' सती ने ऐसी बात कही, 'तब तक निश्चय ही लंका में कोई भी

महाराज हुं सहगमन करुं, एम सती कहे छे वाण,
त्यां लगी को वानर न आवे, लंकामां निरवाण। ४१।
एवुं कहीने चाली त्यांथी, आवी रणमोझार,
इंद्रजितनुं तन लीधुं त्यांथी, पड्युं हतुं जे ठार। ४२।
चिता रची सागरतटे, ते चंदनकाष्ठ अपार,
त्यां रावण मंदोदरी आव्यां, साथे सहपरिवार। ४३।
देवांगनाशुं देव जोता, चढी नभ विमान,
सुलोचनाए कर्युं तदा, पछे सिंधुजळमां स्नान। ४४।
पति चितामां पधरावियो, आचर्यो विधिवहेवार,
प्रदक्षिणा करी पोते बेठी, कर्यो अग्निसंस्कार। ४५।
दुंदुंभि वाग्यां देवनां, थई पुष्पवृष्टि अपार,
विमानमां बेठां पछे, दिव्य देह धरी नरनार। ४६।
ते स्वर्गमां गयां दंपती, धन्य धन्य कहे छे देव,
रघुवीरनी करुणा थकी, सद्‌गति थई सत्यमेव। ४७।
मंदोदरी रावणे घणुं, कल्पांत करियुं त्यांहे,
पछे समुद्रमांहे स्नान करीने, गया लंकामाहे। ४८।
इंद्रजितनी ए गति थई, सतीतणुं सत्य प्रकाश,
ए कथा अग्निपुराणमां कही, सत्यवतीसुत व्यास। ४९।

वानर न आए।' । ४१ । ऐसा कहकर वह वहाँ से चल पड़ी और रणभूमि में आ गयी। जिस स्थान पर इन्द्रजित शरीर पड़ा हुआ था, उसने वहाँ से वह लिया। ४२ । फिर उसने समुद्र-तट पर चन्दन की असंख्य लकड़ियों से चिता रची। वहाँ रावण और मन्दोदरी परिवार-सहित आ गये। ४३। देवांगनाओं सहित देव विमानों में बैठकर आकाश में चढ़कर देखने लगे। तब अनन्तर सुलोचना ने समुद्र-जल में स्नान किया। ४४। फिर पति (के शरीर) को चिता में लिवा लायी, विधि के अनुसार व्यवहार सम्पन्न किये; (फिर) परिक्रमा करके स्वयं (चिता में) बैठ गयी और अग्नि-संस्कार कर दिया। ४५। (तब) देवों की दुन्दुभियाँ बज उठीं। (उस समय) अपार पुष्प-वर्षा हो गयी। (फिर) वे पुरुष-स्त्री (पति-पत्नी) दिव्य शरीर धारण करके विमान में बैठ गये। ४६। वह दम्पती (इस प्रकार) स्वर्ग में गये। देव 'धन्य, धन्य!' कह रहे थे। रघुवीर की कृपा से (उन दोनों की) सचमुच सद्‌गति हो गयी। ४७। वहाँ मन्दोदरी और रावण ने बहुत शोक किया। अनन्तर समुद्र में स्नान करके वे लंका में गये। ४८। इन्द्रजित की यह (जो) गति हो गयी, वह सती

वलण (तर्ज बदलकर)

व्यास तणां ए वचन छे, अग्निपुराण कथाय रे,
कहे दास गिरधर हावे, लंकामां शुं करतो रावणराय रे । ५० ।

* * *

(सुलोचना) के पतिव्रता-व्रत का परिणाम था । सत्यवती-सुत (मुनि) व्यास ने यह कथा अग्नि पुराण में कही है । ४९ ।

ये व्यास के वचन हैं, अग्नि-पुराण में यह कथा है । अब (कवि) गिरधरदास कहते हैं, (सुनिए) राजा रावण लंका में क्या कर रहा है । ५० ।

* * *

अध्याय—३१ (रावण के आदेश के अनुसार अहि-महीरावण द्वारा राम-लक्ष्मण को लेकर महिकावती जाना)

राग सामेरी

हावे रावण चितातुर थयो ते, बेठो मंदिरमांहे,
पुत्र बंधु आदि सर्वे, मरण पाम्या त्यांहे । १ ।
हवे कोने मोकलुं रण विषे, हुं युद्ध करवा काज,
वळी शत्रुनुं बळ अधिक, दिन दिन वृद्धि पाम्युं आज । २ ।
एम विचारे छे दशानन, मन करे सोच अपार,
त्यारे विद्युतजिह्वा मंत्री विचक्षण, बोल्यो तेणी वार । ३ ।
महाराज सुणो एक विनति, तम मित्र छे रणधीर,
अहिरावण महिरावण नामे बळिया बंन्यो वीर । ४ ।

अध्याय—३१ (रावण के आदेश के अनुसार अहि-महीरावण द्वारा राम-लक्ष्मण को लेकर महिकावती जाना)

अब रावण चिन्तातुर हो गया और वह (राज-) मन्दिर में बैठ गया । वहाँ पुत्र, बन्धु आदि सब मरण को प्राप्त हो गये थे । १ । 'युद्ध करने के लिए मैं अब युद्ध-भूमि में किसे भेज दूँ ? इसके अतिरिक्त, आज शत्रु का बल दिन-ब-दिन अधिक वृद्धि को प्राप्त हो रहा है ।' २ । दशानन इस प्रकार विचार कर रहा था । वह मन (-ही-मन) अपार शोक कर रहा था । तब उसका एक बुद्धिमान मन्त्री विद्युज्जिह्व उस समय बोला । ३ । 'हे महाराज, एक विनती सुनिए ।

ते हितकारी छे आपणा, तेने तेडावो महाराज,
राम-लक्ष्मणने हरी जशे तो, थशे आपणुं काज । ५ ।
एवां वचन सुणीने हरखियो, संतोष पाम्यो तत्र,
पछे वीर बे तेडाविया, रावणे लखीने पत्र । ६ ।
ते वीर बंन्यो आविया, मळ्या रावणने महायोध,
अहंकारने ज्यम आवी भेटे, काम ने वळी क्रोध । ७ ।
कुंभकरण ने इंद्रजितनुं, वर्तमान कहीने राय,
पछे रावण लाग्यो रुदन करवा, रुदे शोक न माय । ८ ।
अहि महि कहे तमे धीरज राखो, दुःख न धरशो राज,
रजनी विषे अमो हरी जईशुं, राम-लक्ष्मणने आज । ९ ।
बलिदान दईशुं देवीने, बे वीरने लई त्यांहे,
पछी सेन्यानो संहार करजो, तमो रहीने आंहे । १० ।
ते सुणी सुख पाम्यो दशानन, थयुं जाणे काम;
पण मूरख मन नथी जाणतो, जे ब्रह्म पूरणकाम । ११ ।
ते समे प्रधान विभीषण तणा, जोता हता चरचाय,
ते गुप्तरूपे सुणी गया, ज्यां विराजे रघुराय । १२ ।

अहिरावण-महीरावण नामक आपके रणधीर मित्र है। वे दोनों भाई बलवान है । ४ । वे आपके हित-कर्ता (हितैषी) हैं। हे महाराज, उन्हें बुलवाइए। वे राम-लक्ष्मण को हरण करके जाएँगे, तो अपना कार्य सिद्ध हो जाएगा।' ५ । ऐसी बातें सुनकर रावण आनन्दित हो गया और वह वहाँ सन्तोष को प्राप्त हो गया। तत्पश्चात् रावण ने पत्र लिखकर उन दो बन्धुओं को बुलवा लिया । ६ । वे दोनों बन्धु आ गये। वे महायोद्धा रावण से वैसे ही मिल गये, जैसे काम और क्रोध आकर अहंकार से मिल गये हों । ७ । उनसे कुम्भकर्ण और इन्द्रजित सम्बन्धी समाचार कहकर राजा रावण रोने लगा। उसके हृदय में शोक नहीं समा रहा था । ८ । तब अहि-मही ने कहा, 'हे राजा, तुम धीरज धारण करो; दुःख न करो। आज हम रात को राम-लक्ष्मण को हरण कर ले जाएँगे । ९ । वहाँ ले जाकर हम उन दो भाइयों को देवी पर बलि चढ़ाएँगे। फिर तुम यहाँ रहकर सेना का संहार कर लेना।' १० । यह सुनकर दशानन सुख को प्राप्त हो गया। उसने समझ लिया कि काम हो गया। परन्तु वह मूर्ख मन में उन्हें नहीं जान पा रहा था, जो पूर्णकाम ब्रह्म हैं । ११ । उस समय विभीषण के मन्त्री यह चर्चा-व्यवहार देख रहे थे। वे गुप्त रूप से सुनकर वहाँ गये जहाँ रघुराज विराजमान थे । १२ ।

तेणे आवी विभीषणने कह्युं, अहि महि तणुं वर्तमान,
त्यारे विभीषणे पासे तेडाव्या, सुग्रीव ने हनुमान। १३।
भाई सुणो आज निशा विषे, कंई करशे कपट असुर,
माटे कपि सर्वे जागजो, सावधान थईने शूर। १४।
एवुं सुणीने रघुवीर पाछळ, रच्यो कपिए कोट,
आकाश लगी ऊंचो दुर्ग रच्यो, पूंछ केरी ओट। १५।
ठेर ठेर कपि पाषाण-तरु ग्रही, बेठा थई सावधान,
मध्यमां राख्या रामजी, घणुं जतन करी बळवान। १६।
पछी एम करतां निशा थई, महा घोरतम तेणी वार,
त्यारे अहि-महि बे बंधु आव्या, सुवेळु मोझार। १७।
चारे पासे कपि केरो, कोट दीठो त्यांहे,
अणुमात्र मारग नव जड्यो, जवा रामसेना मांहे। १८।
पछी आकाशमार्गे उतपत्या, ते असुर बळिया जाण,
कोट ओळंगी अदृश्य रूपे ऊतरिया निरवाण। १९।
पछी घारण नाख्युं सर्वने, थया कपि निद्रावान,
महिकावती पति आविया, ज्यां सूता छे भगवान। २०।

उन्होंने आकर विभीषण से अहि-मही सम्बन्धी समाचार कह दिया। तब विभीषण ने सुग्रीव और हनुमान को अपने पास बुला लिया (और कहा)। १३। 'सुनो भाइयो, आज रात में असुर कुछ कपट करेंगे। इसलिए सब शूर कपि सावधान होकर जागते रहिए। १४। ऐसा सुनकर कपियों ने उन रघुवीरों के पीछे एक कोट (चहारदीवारी से युक्त दुर्ग) का निर्माण किया। अपनी पूँछों की ओट उन्होंने आकाश तक ऊँचा एक दुर्ग बना लिया। १५। सावधान होकर कपि स्थान-स्थान पर पाषाण और वृक्ष लेकर बैठ गये। बीच में उन बलवानों ने बहुत जतन से राम (-लक्ष्मण) को रख लिया। १६। फिर ऐसा करते-करते उस समय महा घोरतम रात हो गयी। तब अहि-मही दोनों भाई सुवेल के अन्दर आ गये। १७। तो उन्होंने वहाँ चारों ओर कपियों का (बनाया हुआ) कोट देखा। उन्हें राम की सेना के अन्दर जाने के लिए अणु मात्र (तक) मार्ग नहीं मिला। १८। फिर समझिए कि वे बलवान असुर आकाश मार्ग में उछल गये और कोट को लाँघकर अन्त में अदृश्य रूप से उतर गये।१९। अनन्तर सब पर नींद की औषधी प्रयुक्त की, तो कपि निद्राधीन हो गये। फिर महिकावती के वे स्वामी (वहाँ) आ गये, जहाँ भगवान राम (-लक्ष्मण) सो गये थे। २०। राम और लक्ष्मण मृगछाले की शय्या

मृगचर्म केरी सज्जा उपर, पोढ्या लक्ष्मण-राम,
त्यांहां असुरे घारण नाखियुं, मोहनिद्रा जेनुं नाम। २१।
जेना स्मरणथी जाय घोरतम, अज्ञान आवरण जेह,
ते प्रभुए मानुषलीला जणावा, करी अंगीकृत तेह। २२।
पछी चर्मसज्जा ऊंचकीने, माथे मूकी वीर,
राम-लक्ष्मणनुं हरण करीने, चाल्या बे मतिधीर। २३।
आकाशमारग जई करी, पछी ऊतर्या भूमांहे,
एक विवर पृथ्वीमां रच्युं'तुं, गहन दुर्गम त्यांहे। २४।
ते योजन शतसहस्र लांबुं, पेठा ते मोझार,
सप्त घडीमां नीकळ्या ते, असुर पेली पार। २५।
पछी योजन तेर सहस्रनो, दधिसमुद्र जे कहेवाय,
ते ओळंगी चाल्या असुर, निज नगरमांहे जाय। २६।
ते तणुं नगर महिकावती, महा रम्य अति विस्तार,
शतगुणी शोभा लंका करतां, अधिक रचना सार। २७।
ते नगरमां निज सदनमां जई, मूकी छे सज्जाय,
वळी नागपाशे बंधन करी, त्यां राख्या श्रीरघुराय। २८।

पर लेटे हुए थे। वहाँ (जाकर) उन असुरों ने (उनपर) निद्रा की औषधी प्रयुक्त की, जिसका नाम मोह-निद्रा था। २१। जिनके स्मरण से अज्ञान का जो भी घोरतम आवरण हो, वह निकल जाता है, उन प्रभु राम ने उस (औषधी) को स्वीकार करके मनुष्य-लीला प्रदर्शित कर दी। २२। फिर मृग-चर्म की शय्या को उठाकर उन बन्धुओं ने सिर पर रख लिया। (इस प्रकार) वे दोनों धीरमति (असुर) राम-लक्ष्मण का अपहरण करके चल दिये। २३। अनन्तर आकाश मार्ग से जाकर वे फिर से पृथ्वी पर उतर गये। वहाँ पृथ्वी (भूमि) में एक गहन और दुर्गम विवर बनाया हुआ था। २४। वह शत सहस्र योजन लम्बा था। उसके अन्दर वे असुर पैठ गये और फिर सात घड़ियों में उस (विवर के) पार निकल गये। २५। तदनन्तर तेरह सहस्र योजन (दीर्घ) समुद्र था, जो दधि समुद्र कहाता है। उसे लाँघते हुए वे असुर (आगे) चल दिये और अपने नगर (पहुँच) गये। २६। उनकी महिकावती नामक नगरी बहुत रम्य तथा अति विशाल थी। लंका से उसकी शोभा सौ गुना (अधिक) थी, उसकी रचना अधिक सुन्दर थी। २७। उस नगरी में अपने घर के अन्दर जाकर उन्होंने वह शय्या रख दी। फिर उसे नागपाश से आबद्ध करके वहाँ श्रीरघुराज (और लक्ष्मण) को रख दिया। २८। जिस प्रकार कोई

ज्यम लावे आत्मारामने, काम क्रोध आवरणमांहे,
एम अहि-महिए रामल-क्ष्मण, गुप्त राख्या त्यांहे । २९ ।
नगर बारणे एक देवी छे, भद्रकाळी तेनुं नाम,
ते देवळ शत योजन ऊंचुं, कनकमणिनुं काम । ३० ।
वळी रक्षा अर्थे आणी तीरे, समुद्रकांठे ज्यांहे,
वीश कोटी पिशिताशन लेईने, रह्यो मकरध्वज त्यांहे । ३१ ।
एम महिरावणना महेलमां, रह्या राम-लक्ष्मण भ्रात,
हवे सुवेळुए पछी शुं थयुं, वीती गई सर्वे रात । ३२ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

रजनी सर्वे वीती गई, थयो अरुण उदय ते ठाम रे,
त्यारे कपि सर्वे जागिया, नव दीठा लक्ष्मण-राम रे । ३३ ।

काम-क्रोध के आवरण से आत्मा-रूपी ब्रह्म राम को आच्छन्न कर रख लेता हो, उस प्रकार अहि-मही ने राम-लक्ष्मण को वहाँ गुप्त, अर्थात् छिपाकर रख दिया । २९ । नगर के द्वार पर एक देवी थी । उसका नाम भद्रकाली था । वह देवालय सौ योजन ऊँचा था । वह सोने और रत्नों का काम था (सोने और रत्नों से निर्मित था) । ३० । इसके अतिरिक्त, वहाँ रक्षा के लिए दूसरे तीर पर, समुद्र-तट पर मकरध्वज बीस करोड़ राक्षसों को लिए हुए रह गया । ३१ । इस प्रकार महिकावती के प्रासाद में वे बन्धु, राम और लक्ष्मण, रह गये । अब फिर सुवेल में क्या हो गया ? सारी रात बीत गयी । ३२ ।

सारी रात बीत गयी । उस स्थान पर अरुणोदय हो गया । तब समस्त कपि जाग उठे, तो उन्होंने राम और लक्ष्मण को नहीं देखा । ३३ ।

* * *

अध्याय—३२ (हनुमान का राम-लक्ष्मण की खोज के लिए महिकावती की ओर गमन, हनुमान-मकरध्वज-भेंट)

राग वेराडी

हावे प्रातसमे वानर सहु जाग्या, न दीठा लक्ष्मण-राम,
त्यारे व्याकुल थई एकएकने पूछे, क्यां गया पूरणकाम ? । १ ।

अध्याय—३२ (हनुमान का राम-लक्ष्मण की खोज के लिए महिकावती की ओर गमन, हनुमान-मकरध्वज-भेंट)

अब प्रातःकाल में (जब) समस्त वानर जाग गये, तो उन्होंने राम-

नळ नील अंगद सुग्रीव विभीषण, जांबुवान हनुमंत;
ए आदे कपि सर्व खोळता, रोता थई दुःखवंत। २ ।
हा हा नाथ, सखा प्रिय बंधु, भक्तवत्सल रणधीर,
आ समे कहो क्यां गुप्त थया ? द्यो दर्शन श्रीरघुवीर। ३ ।
पछी सर्वे कपिए चारे पासे, जोवा मांड्युं तेणी वार,
त्यारे असुर तणां त्यां पगलां दीठां, पडियां पृथ्वीमोझार। ४ ।
ते बार गाउ लगी पगलुं चाल्युं, पेठुं गुफानी मांहे,
त्यारे विवरने मोढे सर्व बेठा, शोकातुर थई त्यांहे। ५ ।
कपि सर्व थया आकुळव्याकुळ, करवा मांड्युं रुदन,
त्यारे सर्वने छाना राखीने वळता, विभीषण बोल्या वचन। ६ ।
भाई राम-लक्ष्मणनुं हरण करी गया, अहि-महि बंने वीर,
हावे तेह तणो विचार करो, तमो राखो मनमां धीर। ७ ।
तमो शोरबकोर न करशो कोईए, जो वात लंकामां जाय,
तो सूनुं देखीने जुद्ध करवाने, आवशे रावणराय। ८ ।
माटे गुप्त खोळ काढो कोई ठामे, राम रह्या होय ज्यांहे,
पछी सर्वे मळी हनुमंत प्रार्थ्या, स्तुति करता सहु त्यांहे। ९ ।

लक्ष्मण को (कहीं) नहीं देखा। तब व्याकुल होकर वे एक-दूसरे से पूछने लगे, 'पूर्णकाम भगवान् कहाँ गये ?'। १। विभीषण तथा नल, नील, अंगद, सुग्रीव, जाम्बवान, हनुमान आदि समस्त कपि (उन्हें) खोजने लगे; वे दुःखी होकर रोने लगे। २। 'हा हा नाथ ! हे सखा ! हे प्रिय बन्धु ! हे भक्त-वत्सल ! हे रणधीर ! कहिए, इस समय आप कहाँ गुप्त हो गये हैं ? हे श्रीरघुवीर, (हमें) दर्शन दीजिए।' ३। फिर उस समय समस्त कपियों ने चारों ओर देखना (खोजना) आरम्भ किया। तब उन्होंने वहाँ भूमि पर असुरों के पाँव (पद-चिह्न) देखे। ४। (उन्होंने देखा कि) बारह योजन तक पाँव चले गये हैं और फिर गुफा में प्रविष्ट हो गये हैं। तब वहाँ शोकातुर होकर वे सब उस विवर के मुँह के पास बैठ गये। ५। वे समस्त कपि आकुल-व्याकुल हो गये और उन्होंने रोना शुरू किया। तब सबको चुप करने के पश्चात् विभीषण ने यह बात कही। ६। 'हे भाइयो, अहि-मही (नामक) दो बन्धु राम-लक्ष्मण का अपहरण कर (ले) गये हैं। अब तुम उनका विचार करो; मन में धीरज रखो। ७। तुम में से कोई भी चीख-चिल्लाहट न करे। यदि यह बात लंका में (विदित हो) जाए, तो राजा रावण (यह स्थान) शून्य (राम-लक्ष्मण-रहित) देखकर युद्ध करने के लिए आएगा। ८। इसलिए जहाँ राम रह गये हों, उस स्थान

अहो मारुति, तमो छे बळिया, रामना दास अनन्य,
माटे तमो विना कोण शोध ज लावे, अमो सर्व छुं दीन । १० ।
ज्यम पंडित शास्त्र-अर्थ शोधे, वळी मच्छरूप धरी वेद,
वळी पकव मुमुक्षु गुरुने खोळे, पामी जथा निर्वेद । ११ ।
तत्त्व सहित ज्यम व्यष्टि समष्टि, शोधे संत सुजाण,
पछी साक्षात्कार ते प्राप्त करे छे, आत्मानो निरवाण । १२ ।
एम काम-क्रोध अहि-महि मारीने, आत्माराम देखाडो,
अरे हनुमंत, तमे उपकार करी, अमने हरख पमाडो । १३ ।
त्यारे वळतां वचन मारुती कहे, सुणो विभीषण ने सुग्रीव,
हुं ब्रह्मांड सर्वे खोळी लावुं, राम नेत्रराजीव । १४ ।
पण तमो सेनानी रक्षा करजो, धरजो मनमां धीर,
हुं लीधा विना पाछो नहि आवुं, राम-लक्ष्मण बे वीर । १५ ।
एम कही चाल्या वायुसुत, समरी जुगदाधार,
रींछपति नळ नील ने अंगद, साथे लीधा चार । १६ ।

की गुप्त रूप से खोज करो।' तदनन्तर सबने मिलकर हनुमान से प्रार्थना की। वे वहाँ उसकी (इस प्रकार) स्तुति करने लगे। ९। 'हे हनुमान, तुम बलवान हो, राम के अनन्य दास हो। इसलिए बिना तुम्हारे कोई भी (राम का) पता नहीं ला पाएगा। हम सब दीन (असहाय) है। १०। जिस प्रकार कोई पण्डित शास्त्र के अर्थ की खोज करता है, फिर (जिस प्रकार) भगवान ने मत्स्य रूप धारण करके वेदों को खोज निकाला, फिर जिस प्रकार निर्वेद को प्राप्त होकर परिपक्व (बुद्धि वाला कोई) मुमुक्षु (सुयोग्य) गुरु की खोज करता है, (जिस प्रकार) कोई सुज्ञ सन्त व्यष्टि और समष्टि में (ब्रह्म-) तत्त्व को खोज लेता है और तदनन्तर वह अन्त में परमात्मा का साक्षात्कार प्राप्त कर लेता है; उस प्रकार काम और क्रोध रूपी अही-मही को मारकर आत्माराम (राम) को दिखा दो। हे हनुमान, तुम हमारा उपकार करके, हमें आनन्द को प्राप्त करा दो।' ११-१३। तब हनुमान ने फिर यह बात कही— 'हे विभीषण और सुग्रीव, सुन लो। समस्त ब्रह्माण्ड में ढूँढकर मैं राजीव-नेत्र राम को ले आऊँगा। १४। परन्तु तुम सेना की रक्षा करो; मन में धीरज धारण करो। मैं राम-लक्ष्मण —दोनों भाइयों को विना लिये, नहीं लौट आऊँगा। १५। ऐसा कहकर, पवनकुमार हनुमान जगदाधार श्रीराम का स्मरण करते हुए चल दिया। उसने ऋक्षपति जाम्बवान, नल, नील और अंगद —इन चारों को साथ में लिया। १६। वे पाँवों (के निशानों) को देखते-देखते विवर

ते पगलुं जोई विवरमां पेठा, मांहे घणो अंधकार,
चारे जण मूर्छा पाम्या, थयो पवन बंध जेणी वार। १७।
पछी निज पूंछे चारेने बांधी, उतपतिया हनुमंत,
सात सहस्र योजन गुफा छे, पाम्या तेनो अंत। १८।
विवर बहार नीकळ्या त्यारे, लाग्यो शीत पवन,
त्यारे चारे जण सावचेत थया ने, शाता आवी तन। १९।
पछी दधिसमुद्रने कांठे आव्या, चोकी बेठी छे ज्यांहे,
वीश कोटी पिशिताशन लेईने, रह्यो मकरध्वज त्यांहे। २०।
त्यारे पांच कपिए वेश पालट्यो, धर्यां कापडी रूप,
पछे असुर तणी सेनामां थईने, चाल्या वनचरभूप। २१।
ते असुरे पूछ्युं कोण तमो छो ? क्यां जाओ छो आज ?
कपिवर कहे अमो नीकळ्या छुं भाई, तीरथ करवा काज। २२।
भाई महिकावती नगरी जोवानुं, अमने घणुं छे मन,
असुर कहे क्यम सिंधु ऊतरशो, तेर सहस्र योजन। २३।
त्यारे कहे कापडी अमारा गुरुए, आप्यो छे एक मंत्र,
ते जपतां ऊडीने जईशुं, सेजे अमो स्वतंत्र। २४।

में पैठ गये। उसमें घना अँधेरा था। जिस समय पवन (का बहना) बन्द हो गया, उस समय वे चारों जने मूर्च्छा को प्राप्त हो गये। १७। अनन्तर उन चारों को अपनी पूँछ से बाँधकर हनुमान उछल पड़ा। वह गुफा सात सहस्र योजन (लम्बी) थी। (फिर भी) हनुमान (उछलते-कूदते हुए) उसके अन्त को प्राप्त हो गया। १८ (जब) वह विवर के बाहर निकल गया, तब शीतल पवन लग गया। तब वे चारों जने सचेत हो गये और उनके शरीरों को स्वास्थ्य लाभ हो गया। १९। अनन्तर वे दधि-समुद्र के तट पर आ गये, जहाँ (रक्षा के लिए) चौकी स्थापित हुई थी। वहाँ मकरध्वज बीस करोड़ राक्षसों को (साथ में) लेकर रहता था। २०। तब इन पाँचों कपियों ने भेस बदल लिया और यात्रा करनेवाले साधुओं का रूप धारण किया। फिर वे वनचर-भूप (वन्य जीवों के राजा, वनचरों में श्रेष्ठ व्यक्ति) असुरों की सेना में से होते हुए चले गये। २१। उनसे एक असुर ने पूछा, 'तुम कौन हो ? आज कहाँ जा रहे हो ?' तो उस कपिवर ने कहा, 'हे भाइयो, हम तीर्थ-यात्रा करने के लिए निकले हैं। २२। भाइयो, हमें महिकावती नगरी देखने की बड़ी इच्छा है।' (तब) असुर ने कहा, 'तेरह सहस्र योजन (दीर्घ) इस समुद्र को कैसे पार करोगे ?'। २३। तब एक साधु ने कहा, 'हमारे गुरु ने हमें एक मन्त्र दिया है। उसको

त्यारे राक्षस कहे तमो छो कपटी, पछी मारवा मांड्यो मार,
त्यारे हनुमंतरूपे प्रगट थईने, करियो छे हुंकार । २५ ।
चार चार कोटीना भारा बांध्या, असुर पूंछडे जेह,
पृथ्वी उपर पछाडी नाखे, दधिसमुद्रमां तेह । २६ ।
एम वीश कोटी राक्षसने मार्या, हनुमंते तेणी वार,
त्यारे क्रोध करीने मकरध्वज धायो, कीधुं युद्ध अपार । २७ ।
त्यारे मुष्टि एक हृदेमां मारी, क्रोध करी बळवंत,
ते पृथ्वी पड्यो तेनी उपर चढीने, बेठा कपि हनुमंत । २८ ।
कहे मारुती मकरध्वज तुजने, मारीश आणी वार,
कोण छे तुजने छोडावनार ? तेनुं स्मरण कर निरधार । २९ ।
मकरध्वज कहे जो होय आ समे, पिता मारा हनुमंत,
तो आवी मुजने मुकावे, ने आणे तारो अंत । ३० ।
एवुं सुणतां मारुति विस्मे पाम्या, संदेह प्रगट्यो मन,
अल्या हुं हनुमंत छुं अंजनीनंदन, तुं क्यम मारो तन ? । ३१ ।
पछे हृदे उपरथी ऊतर्या पोते, कर ग्रही पूछी वात,
त्यारे मकरध्वजे बोलावी तत्क्षण, आवी पोतानी मात । ३२ ।

जपते हुए हम उड़कर जाएँगे । हम स्वतन्त्र हैं । '। २४ । तब राक्षस बोला, ' तुम कपटी हो । ' फिर वे (राक्षस) उन्हें मारने लगे । तब हनुमान ने अपने (मूल) रूप में प्रकट होकर हुँकार भर दिया। २५ । उसने चार-चार करोड़ असुरों के जो गट्ठर अपनी पूँछ से (बाँधकर) बना लिये, उन्हें पृथ्वी पर पटककर दधि-समुद्र में डाल दिया । २६ । इस प्रकार हनुमान ने उस समय बीस करोड़ राक्षसों को मार डाला । तब मकरध्वज क्रोध से दौड़ा और उसने अपार युद्ध किया । २७ । तब बलवान हनुमान ने क्रोध से एक घूँसा उसके हृदय-स्थल पर जमा दिया, तो वह पृथ्वी पर गिर पड़ा । फिर कपिवर हनुमान उसके ऊपर चढ़ बैठा । २८ । हनुमान ने मकरध्वज से कहा, ' मैं इस समय तुझे मार डालूँगा । तुझे छुड़ानेवाला कौन है ? निश्चय ही उसका स्मरण कर । ' । २९ । (इसपर) मकरध्वज ने कहा, ' यदि इस समय मेरे पिता हनुमान होते, तो आकर मुझे छुड़ाते और तेरा अन्त कर देते । ' ३० । ऐसा सुनते ही हनुमान विस्मय को प्राप्त हो गया । (फिर भी) उसके मन में सन्देह उत्पन्न हो गया । (वह बोला—) ' अरे मैं अंजनीनन्दन हनुमान हूँ । तू मेरा पुत्र कैसे है ? । ३१ । फिर उसकी छाती पर से वह उतर गया और उसके हाथ

वलण (तर्ज़ बदलकर)

माता आवी, मकरध्वजनी, लागी हनुमंतने पाय रे,
पछे तेणे कही विस्तारी सर्वे, पुत्रनी जन्मकथाय रे। ३३।

को थामकर उसने यह बात पूछी। तब मकरध्वज ने अपनी माता को बुला लिया, तो वह तत्क्षण आ गयी। ३२।

मकरध्वज की माता आकर हनुमान के पाँव लग गयी। तदनन्तर उसने अपने पुत्र के जन्म की कथा विस्तार-पूर्वक कह दी। ३३।

* * *

अध्याय—३३ (हनुमान-मकरी-भेंट, हनुमान का देवी के मन्दिर में प्रवेश कर बैठ जाना)

राग धन्याश्री

मकरी कहे छे सुणो महाराज जी,
लंकादहननुं तमे कर्युं काज जी।
पूच्छ बुझावा आव्या सिंधुमांहे जी,
त्यारे परस्वेद-बिंदु पडियुं त्यांहे जी। १।

ढाळ

परस्वेद-बिंदु ललाटेथी पड्युं सिंधुमांहे,
ते समे हुं पासे हती, में गळ्यु तत्क्षण तांहे। २।
तम स्वेदथी ए पुत्र प्रगट्यो, मकरध्वज एवुं नाम,
अहिरावणे पुररक्षा करवा, मूक्यो आणे ठाम। ३।

अध्याय—३३ (हनुमान-मकरी-भेंट, हनुमान का देवी के मन्दिर में प्रवेश कर बैठ जाना)

मकरी बोली, 'सुनिए हे महाराज! आपने लंका को जलाने का काम (पूरा) किया और (तदनन्तर) आप समुद्र में पूँछ बुझाने के लिये आ गये। तब आपके पसीने की एक बूंद वहाँ गिर गयी। १।

आपके ललाट से पसीने की एक बूंद समुद्र में गिर पड़ी। उस समय, मैं पास ही थी। वहाँ मैंने उसे तत्क्षण निगल लिया। २। आपके स्वेद (पसीने) से यह पुत्र उत्पन्न हो गया। इसका नाम मकरध्वज है। नगर की रक्षा करने के लिए अहिरावण ने इस स्थान पर उसे रख

ए पुत्र तमारो पराक्रमी, तम आकृति महाराज,
स्वामी, ए सेवक छे तम तणो, जे सोंपो ते करे काज । ४ ।
कहो तमे आव्या शे अर्थे, अहीं शुं तमारे काम ?
हनुमंत कहे लाव्यो असुर, करी हरण लक्ष्मण-राम । ५ ।
मकरी कहे ते छे सुखी, राख्या गुप्त मंदिरमांहे,
काले होम करशे देवीनो, लेई जशे ते समे त्यांहे । ६ ।
माटे देवळमां जई गुप्त रहेजो, आवशे असुर ते ठाम,
त्यारे अहि-महिने मारजो, लावजो लक्ष्मण-राम । ७ ।
तेर सहस्र योजन नगर छे, अहीं थकी दूर अपार,
वचमांहे आडो दधिसिंधु, केम ऊतरशो पार ? । ८ ।
ते माटे तमो पांचे कपि, मुज पृष्ठे बेसो आज,
लेई जाउं तमने पेली तीरे, थाय सत्वर काज । ९ ।
एवुं सुणीने पंचे मळी, कीधो एकांत विचार,
विश्वास एनो न करीए, एम बोल्या वालीकुमार । १० ।
भाई कदापि ए कपट करीने, बोळे सागरमांहे,
ए पक्षपाती शत्रुनी रहे, तेनी राखी आंहे । ११ ।

लिया है । ३ । हे महाराज, यह आपका पुत्र पराक्रमी है, आपकी ही आकृति है (आपका ही प्रतिरूप है) । हे स्वामी, यह आपका सेवक है । आप जो सौंप देंगे, वह काम यह कर देगा । ४ । कहिए, आप किस हेतु से आये हैं ? यहाँ आपका क्या काम है ? ' (इसपर) हनुमान ने कहा— ' राम और लक्ष्मण को हरकर असुर (यहाँ) ले आये हैं । ' ५ । मकरी बोली, ' वे सुखी (सकुशल) हैं । (असुरों ने) उन्हें मन्दिर में गुप्त रूप से (छिपाकर) रखा है । कल वे देवी के नाम होम सम्पन्न करेंगे, तो वे उन्हें लेकर वहाँ जाएँगे । ६ । इसलिए मन्दिर में जाकर गुप्त रूप से रहिए । असुर उस स्थान पर आ जाएँगे । तब अहि-मही को मार डालिए और राम-लक्ष्मण को ले आइए । ७ । यहाँ से तेरह सहस्र योजन की अपार दूरी पर वह नगर है । बीच में आड़ा यह दधि-सागर है । आप उसके पार कैसे उतर पाएंगे ? । ८ । इसलिए आप पाँचों कपि आज मेरी पीठ पर बैठ जाइए । मैं आपको लेकर उस पार जाऊँगी । इससे आपका काम शीघ्र हो जाएगा । ' ९ । ऐसा सुनकर उन पाँचों जनों ने मिलकर एकान्त में विचार (-विमर्श) किया । तब बालीकुमार अंगद बोला, ' इसका विश्वास न करें । १० । हे भाइयो, कभी यह कपट करके सागर में डुबो डालेगी । यह शत्रु की पक्षपातिनी बनी रहेगी; (क्योंकि)

त्यारे मारुति कहे तमो चारे, रहो आणे ठार,
हुं रामकृपाए सिंधु ओळंगी, जईश पेली पार। १२।
तेर सहस्र योजन दधिसिंधु, ओळंग्यो हनुमंत,
दीठुं नगर महिकावती, महारम्य शोभावंत। १३।
ते नगर पाछळ विकट दुर्गम, दुर्ग छे एकवीश,
घणा रजनीचर त्यां रक्षा करवा, मूकिया असुरीश। १४।
पछी अणु प्रमाण रूप सूक्ष्म, धर्युं मारुततन,
पुरमां प्रवेश कर्यो तदा, घणी धीरज राखी मन। १५।
मालम थयुं नहि कोईने, जे आवियो हनुमंत,
पछे भद्रकाळी तणे मंदिर, प्रवेश्यो बळवंत। १६।
ते देवळमांहे घणा असुर, करे कपट जप अनुष्ठान,
भ्रष्ट शास्त्रना जपे मंत्र मलिन, प्रयोग होम विधान। १७।
पछे अदश्य थईने निशाए, मांहे प्रवेश्या कपिभूप,
डाबी पूंठे ते देवीने धरी, बेठा दिव्यस्वरूप। १८।
सिंदूरर्चचित तन दीर्घ, विकराळ मुख लोचन,
जिह्वा प्रलंब चतुर्भुजा, एवा थया मारुततन। १९।

यह उसके द्वारा यहाँ रखी हुई है।' ११। तब हनुमान ने कहा, 'तुम चारों (जने) इस स्थान पर रह जाओ। मैं राम की कृपा से समुद्र को लाँघकर उस पार जाऊँगा।' १२। (तदनन्तर) हनुमान तेरह सहस्र योजन (विशाल) दधि-सागर को लाँघ गया; और उसने बहुत रम्य तथा शोभावान महिकावती नगरी को देखा। १३। उस नगर के पीछे इक्कीस विकट दुर्गम दुर्ग थे। असुरों के राजा ने उसकी रक्षा करने के लिए वहाँ बहुत राक्षसों को रख दिया था। १४। तदनन्तर पवनकुमार ने अणु-प्रमाण सूक्ष्म रूप धारण किया और तब मन में धीरज रखते हुए नगर में प्रवेश किया। १५। जब हनुमान आ गया, तो किसी को भी विदित नहीं हुआ। अनन्तर वह बलवान कपि भद्रकाली के मन्दिर में प्रविष्ट हो गया। १६। उस देवालय में बहुत असुर कपट के साथ जप और अनुष्ठान कर रहे थे। वे भ्रष्ट शास्त्रों के मलिन मन्त्रों का जाप कर रहे थे और होम विधि का प्रयोग कर रहे थे। १७। अनन्तर वह कपिराज रात को अदृश्य होकर अन्दर प्रवेश कर गया और उसने देवी को पीछे डाल दिया और (स्वयं) दिव्य रूप धारण करके बैठ गया। १८। उसका बड़ा शरीर सिंदुर-चर्चित था; मुख और नेत्र विकराल थे; उसकी जिह्वा बहुत लम्बी थी और उसके चार भुजाएँ थीं—वायु-कुमार हनुमान इस प्रकार

पछे देवळ केरां द्वार भीडी, बेठा मंदिरमांहे,
प्रभातकाळ हवो तदा सहु, असुर आव्या त्यांहे। २०।
अहि-महि पूजा सिद्ध करीने, आव्या तेणी वार,
तेणे घणी स्तुति करी मातनी, पण ऊघडे नहि द्वार। २१।
त्यारे बोल्यां देवी मारुति, मांहेथी स्वर अति घोर,
अल्या वचन मारुं, सांभळो, तमो असुर मूको शोर। २२।
आटला दिन हुं गई हती, लंकामां लेवा भोग,
अल्या धन्य छे तमो असुरने, भलो मेळव्यो संजोग। २३।
में वानरनो संहार कर्यो, खप्पर भरियुं त्यांहे,
तमो राम-लक्ष्मण लाविया, ते माटे आवी आंहे। २४।
हुं प्रसन्न थई छुं आज तमने, करो कहुं ते काम,
मने भोगपूजा समरपी, पछे लावो लक्ष्मण-राम। २५।
मद्यमांसथी हुं तृप्त थई, हवे रुचे नहि लगार,
माटे पंचामृत पकवान्न लावो, करीश तेनो आहार। २६।
एवुं सुणीने कहे वृद्ध असुर, आज थयां मात प्रसन्न,
हवे विघ्न एके नहि नडे, अहि-महि हरख्या मन। २७।

(रूपधारी) हो गया। १९। फिर देवालय के द्वार बन्द करके वह उसके अन्दर बैठ गया। (जब) प्रातःकाल हो गया, तब समस्त असुर वहाँ आ गये। २०। उस समय अहि-मही पूजा (की सामग्री) सिद्ध करके (वहाँ) आ गये। उन्होंने देवी-माता की बहुत स्तुति की, परन्तु द्वार नहीं खुल रहा था। २१। तब हनुमान-रूपी देवी अति घोर स्वर में बोली, 'अरे मेरी बात सुन लो; तुम असुर कोलाहल बन्द कर दो। २२। इतने दिन मैं भोग लेने के लिए लंका में गयी थी। अरे तुम असुर धन्य हो, तुम असुरों से मुझे अच्छे संयोग ने मिला दिया। २३। मैंने वानरों का संहार कर डाला और वहाँ (उनके रक्त से) खप्पर भर दिया। तुम राम-लक्ष्मण को ले आये हो, इसलिए मैं यहाँ आ गयी हूँ। २४। मैं आज तुम पर प्रसन्न हो गयी हूँ; (अतः) मैं जो काम कह दूँ, उसे कर दो। मुझे (पहले) भोग और पूजा समर्पित करते हुए फिर राम और लक्ष्मण को ले आओ। २५। मैं मद्य और मांस से तृप्त हो गयी हूँ, अब वह मुझे तनिक भी अच्छा नहीं लगता। इसलिए पंचामृत तथा पकवान लाओ, मैं उसका आहार करूँगी (उसे खा लूँगी)।' २६। ऐसा सुनकर वृद्ध असुर बोले, 'आज माताजी प्रसन्न हो गयी हैं। अब एक भी विघ्न आड़े नहीं आएगा।' (यह जानकर) अहि-मही मन में आनन्दित हो गये। २७।

ते मंदिर तत्क्षण ऊघड्युं, दरशन पाम्या तेह,
आश्चर्य सर्वे पामिया, जोई रूप अद्भुत एह । २८ ।
पकवान्न मेवा विविधना पछे मंगाव्या ते ठार,
मारुतिदेवीए तदा कर्यो, सकळ अमृत आहार । २९ ।
पछें तृप्त थईने बोलिया, हवे लावो लक्ष्मण-राम,
पछी मनोरथ पूरुं तमारा, सकळ जे मनकाम । ३० ।
एवुं सुणी मन आनंद पाम्या, असुर अहिमहि जेह,
त्रीश कोटी असुर साथे, लेवा चाल्या तेह । ३१ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

लेवा चाल्या राम-लक्ष्मणने, अहि-महि बंन्यो वीर रे,
ते मंदिरे उघाडी मांहे प्रवेश्या, ज्यां पोढ्या श्रीरणधीर रे । ३२ ।

* * *

वह मन्दिर तत्क्षण खुल गया और वे (देवी के) दर्शन को प्राप्त हो गये। उस अद्भुत रूप को देखकर सब आश्चर्य को प्राप्त हो गये। २८। अनन्तर उन्होंने उस स्थान पर विविध प्रकार के पकवान और मेवे मँगवा लिये; तब हनुमान-स्वरूपा देवी ने पंचामृत (आदि) समस्त का आहार ग्रहण कर लिया। २९। फिर तृप्त होकर वह (हनुमान) बोला, 'अब ला दो राम और लक्ष्मण को, अनन्तर मैं तुम्हारे मनोरथ, जो भी तुम्हारी समस्त मनःकामनाएँ हों, पूर्ण करूँगा।' ३०। ऐसा सुनकर जो अहि-मही (नामक) असुर थे, वे मन में आनन्द को प्राप्त हो गये और साथ में तीस करोड़ असुरों को लेकर वे (राम-लक्ष्मण को) लाने के लिए चल दिये। ३१।

अहि-मही नामक दोनों बन्धु राम-लक्ष्मण को ले आने के लिए चल दिये और वे उस प्रासाद को खोलकर अन्दर प्रविष्ट हो गये, जहाँ श्रीरणधीर (राम और लक्ष्मण) लेटे हुए (निद्राधीन) थे। ३२।

* * *

अध्याय—३४ (भद्रकाली के मन्दिर में अहि-महीरावण द्वारा राम-लक्ष्मण को ले जाना, राम द्वारा हनुमान का पूजन, हनुमान का स्व-रूप में प्रकट हो जाना)

राग सामेरी

अहि-महि तणा मंदिर विषे, ज्यां पोढ्या लक्ष्मण-राम,
ते लेवा सारु असुर सर्वे, आव्या तेणे ठाम। १ ।
त्यां आवीने आकर्षियो, नागपाश तेणी वार,
मोहनिद्रा निवारण करी, त्यारे जाग्या जुगदाधार। २ ।
मृगचर्मसज्या उपर, बेठा थया लक्ष्मण-राम,
त्यारे सौमित्री कहे अहीं केम आपण, आव्या पूरणकाम ? ३ ।
रघुवीर कहे रे भाई हावे, धीरज राखो मन,
ए हरण करी आपणने लाव्या, असुर पापी जन। ४ ।
आपणे भार उतारवो, पृथ्वी तणो निरधार,
त्यारे अहिरावण महिरावण तणो पण, करीशुं संहार। ५ ।
पछे राम-लक्ष्मणने कराव्यां, पंचामृतथी स्नान,
अमल अंबर पवित्र लावी, कराव्यां परिधान। ६ ।
शणगार सुंदर पहेराव्या, शुभ चंदन चरच्यां अंग,
पुष्पनी माळा कंठ घाली, शोभिया श्रीरंग। ७ ।

अध्याय—३४ (भद्रकाली के मन्दिर में अहि-महीरावण द्वारा राम-लक्ष्मण को ले जाना, राम द्वारा हनुमान का पूजन, हनुमान का स्व-रूप में प्रकट हो जाना)

जहाँ राम और लक्ष्मण लेटे हुए (सोये हुए) थे, उस अहि-मही के प्रासाद के अन्दर उन्हें ले जाने के लिए समस्त असुर आ गये। १। वहाँ आते ही उन्होंने उस समय नागपाश को खींच लिया और मोह-निद्रा का निवारण कर दिया; तब जगदाधार राम जग गये। २। राम और लक्ष्मण मृग-छाले की शय्या पर बैठ गये। तब लक्ष्मण बोला, 'हे पूर्णकाम राम, हम यहाँ कैसे आ गये ?' ३। तो रघुवीर राम ने कहा, 'अरे भाई, अब मन में धीरज रख लो। ये असुर पापी लोग हमें हरण कर लाये हैं। ४। हमें निश्चय ही पृथ्वी का (पाप रूपी) भार उतारना है। तब अहिरावण-महीरावण का भी संहार कर देंगे।' ५। फिर उन्होंने राम-लक्ष्मण को पंचामृत से स्नान कराया और मल-रहित (स्वच्छ) पवित्र वस्त्र लाकर उन्हें परिधान (धारण) करवाया। ६। उन्होंने सुन्दर शृंगार पहनवाया (धारण करवाया); शुभ चन्दन शरीरों में लगवाया। फूलमाला गले में पहना दी, तो श्रीरंग (राम) शोभायमान हो गये। ७। फिर इस प्रकार के श्याम-सुन्दर, जगन्मोहन, कोटि-काम-स्वरूप

एवा श्यामसुंदर जगतमोहन, कोटी कामस्वरूप,
पधराविया पछे कनक रथमां, जुगल रविकुळ भूप । ८ ।
एक राणी महिरावण तणी चंद्रसेना तेनुं नाम,
ते स्त्रीए दीठा रामने, मोह पामी तेणे ठाम । ९ ।
तेने कामभाव उदे थयो, जोई रूप श्रीरघुवीर,
मूर्ति उतारी ध्यानमां, थई समाधि मतिधीर । १० ।
ध्यानस्थ थई मंदिर विषे, ते ठरी बेठी नार,
रथमां बेसाडी राम-लक्ष्मणने, चाल्या असुर अपार । ११ ।
वाजित्र आगळ वाजतां, थाय चमर चारे पास,
शेरीए लोक जोवा मळ्या, जे कोटी कामनिवास । १२ ।
मोह पामी नारी नगरनी, जोई रामरूप रसाळ,
पछे परस्पर वातो करे, ए हशे कोना बाळ ? १३ ।
एक त्रिया कहे तमे शुं जाणो, अनर्थ एह अपार,
भोग आपवा भद्रकाळीने, आण्या राजकुमार । १४ ।
एवुं सुणी हाहाकार वरत्यो, करे सहु कल्पांत,
लोक कहे ए कुशळ रहेजो, थजो असुरनो अंत । १५ ।

उन रविकुल के राजाओं (राजकुमारों) को सुवर्ण रथ में (बैठाकर) वे (मन्दिर के पास) ले आये । ८ । महीरावण के एक पत्नी थी । उसका नाम चन्द्रसेना था । उस स्त्री ने राम को देखा, तो वह उसी स्थान पर (उनके प्रति) मोह को प्राप्त हो गयी । ९ । श्रीरघुवीर राम के रूप को देखकर उसमें काम-भाव उदित हो गया । उसने ध्यान (करते हुए अपने मन) में उनकी मूर्ति को उतार लिया और वह धीरमति स्त्री समाधि अवस्था को प्राप्त हो गयी । १० । वह स्त्री अपने मन्दिर में ध्यानस्थ हो गयी और (वहीं) वह स्थिर (अविचल) बैठ गयी । फिर राम-लक्ष्मण को रथ में बैठाकर असंख्य असुर चल दिये । ११ । आगे बाजे बज रहे थे, चारों ओर चँवर (डुलाये जा रहे) थे । जो करोड़ों कामदेवों के (साक्षात्) निवास ही थे, उन राम को देखने के लिए लोग गली में इकट्ठा हो गये । १२ । राम के मधुर रूप को देखते हुए नगर की नारियाँ मोह को प्राप्त हो गयीं । फिर वे परस्पर बातें करने लगीं कि ये किसके पुत्र होंगे । १३ । तो एक स्त्री ने कहा, ' तुम क्या जानो, यह अपार अनर्थ हो रहा है । भद्रकाली को भोग चढ़ाने के हेतु ये राजकुमारों को लाये हैं । ' १४ । ऐसा सुनते ही हाहाकार मच गया । सब अत्यधिक शोक करने लगे । वे लोग कह रहे थे (कामना कर रहे थे) कि ये सकुशल रह

पछे भद्रकाळी तणे मंदिर, लाविया रणधीर,
देवी सन्मुख ऊभा राख्या, राम-लक्ष्मण वीर । १६ ।
हनुमंते दीठा रामने, कर्या मनोमन नमस्कार,
हनुमंतनो जोई वेश अद्भुत, हस्या जुगदाधार । १७ ।
सहु सामग्री पूजा तणी, असुरे ते मूकी पास,
श्रीराम-लक्ष्मण पूजा करता, स्वहस्ते अविनाश । १८ ।
मारुतिदेवी पूजता, रघुवीर पूरणब्रह्म,
अंजनीसुत संकोच पामे, को न जाणे मर्म । १९ ।
हनुमंत अंगे तेल-सिंदुर, चर्चियुं श्रीरघुवीर,
धूप दीप ने पुष्पमाळा, शोभे रक्त शरीर । २० ।
श्रीरामे सिंदुर-तेल चर्च्युं, मारुतिने तन,
ते माटे अद्यापि चढे छे, सुणो श्रोताजन । २१ ।
ए सेवक स्वामी राम माटे, कर्युं अंगीकार,
ने सदाये लागे प्रिय वळी, कहुं बीजो प्रकार । २२ ।
शनिश्चरनुं भूषण कहीए, तेल-सिंदुर जेह,
तेने चरणे चांपियो, अंजनीपुत्रे एह । २३ ।

जाएँ और असुरों का अन्त हो जाए । १५ । अनन्तर वे उन रणधीरों को भद्रकाली के मन्दिर में ले आये । फिर राम-लक्ष्मण (दोनों) बन्धुओं को देवी के सम्मुख खड़ा कर रखा । १६ । हनुमान ने राम को देखा, तो उन्हें मन-ही-मन नमस्कार किया । (इधर) हनुमान के उस अद्भुत वेश को देखकर जगदाधार राम हँस दिये । १७ । उन असुरों ने पूजा की समस्त सामग्री पास में ही रखी । (तब) अविनाशी भगवान श्रीराम और लक्ष्मण अपने हाथों से पूजा करने लगे । १८ । पूर्णब्रह्म रघुवीर राम हनुमान-स्वरूप देवी की पूजा कर रहे थे, तो अंजनीसुत हनुमान संकोच को प्राप्त हो गया । (परन्तु) यह मर्म (रहस्य) कोई भी नहीं जान पाया । १९ । श्रीरघुवीर ने हनुमान के शरीर में तेल और सिन्दुर मल दिया । धूप-दीप प्रज्वलित किया और पुष्पमाला पहनायी, तो (हनुमान का) लाल-लाल शरीर शोभायमान (हो गया) था । २० । हे श्रोताजनो, सुनिए, श्रीराम ने हनुमान के शरीर में सिन्दुर और तेल मल दिया था; उस कारण आज तक (हनुमान की प्रतिमा पर) सिन्दुर और तेल चढ़ता है । २१ । वह सेवक है, तो राम उसके स्वामी हैं; इसलिए उसने (सिन्दुर-तेल को) स्वीकार किया और वह उसे सदा प्रिय लगता है । इसके अतिरिक्त, मैं दूसरे प्रकार से कहता हूँ । २२ । सिन्दुर और तेल को जिस

वळी पनोती सहु लोक कहे पण, शनिश्चर एक रूप,
तेनी पूजाए तेल-सिंदूर, चढे अंग अनुप। २४।
ए प्रकारे हनुमंतजीए, पूजन कर्युं अंगीकार,
पूजा करी एम राम-लक्ष्मण, ऊभा तेणे ठार। २५।
वाजित्र वाजे अति घणां, असुर हरखे मन;
अहि-महि करमां शस्त्र लेईने, बोल्या गर्ववचन। २६।
अल्या तमारे करवुं होय तेनुं, स्मरण करी ल्यो जाण,
आ भवानीने भोग हवडां, आपीशुं निरवाण। २७।
रघुवीर कहे मुज स्मरण करीने, प्राणी पाप मुकाय,
त्यारे स्मरण कोनुं हुं करुं, छुं ब्रह्मांड केरो राय। २८।
पण प्राणसखा हनुमंत मारो, वज्रदेही सुर,
जेनुं नाम लेतां विघ्न कोटी, थाय क्षणमां दूर। २९।
अमो स्मरण करीए ते तणुं, छे घणो वल्लभ एह,
अमो जाणुं छुं क्षणमांहे, हवडां प्रगट थाशे तेह। ३०।
पछे खड्ग उघाडां करी असुरे, ग्रह्यां जेणी वार,
ते समे रूप प्रगट कर्युं, गाजियो पवनकुमार। ३१।

शनीश्वर का भूषण कहना चाहिए, उसे अंजनीकुमार हनुमान ने पाँव से दबा लिया था। २३। फिर समस्त लोग शनि की दशा कहते हैं, परन्तु शनीश्वर तो (हनुमान के साथ) एकरूप है। इसलिए उसके अनुपम अंग पर पूजा में तेल-सिन्दुर चढ़ाया जाता है। २४। इस प्रकार हनुमान ने पूजा को स्वीकार किया। इस प्रकार पूजन करके राम और लक्ष्मण उस स्थान पर खड़े रह गये। २५। वाद्य अत्यधिक वज रहे थे; असुर मन में आनन्दित हो रहे थे। तब हाथों में शस्त्र लेकर अहि-मही गर्व-भरे ये वचन बोले। २६। 'अरे, जान लो, तुम्हें जिसका स्मरण करना हो, कर लो। मैं निश्चय ही अब इस भवानी को भोग समर्पित करूँगा।' २७। (इसपर) रघुवीर ने (मन में) कहा, 'मेरा स्मरण करके प्राणी पाप को छुड़ाते हैं; तब मैं अब किसका स्मरण करूँ? मैं तो ब्रह्माण्ड का राजा हूँ। २८। परन्तु हनुमान मेरा प्राण-सखा है, वह देव वज्रदेही है। जिसका नाम लेने पर करोड़ों विघ्न क्षण में दूर हो जाते हैं, ऐसे हम उसका स्मरण करें। वह हमें बहुत प्यारा है। हम जानते हैं कि वह अब क्षण में प्रकट हो जाएगा।' २९-३०। अनन्तर जिस समय असुरों ने खड्ग खोलकर (खड्गों के आवरण को हटाकर) ग्रहण किया, उस समय पवन-कुमार हनुमान ने अपने (मूल) रूप को प्रकट किया और वह गरज उठा। ३१।

वलण (तर्ज बदलकर)

वायुकुमार प्रगट्यो तदा, करी गर्जना घोर प्रचंड रे,
अशेष असुर भय पामिया, खळभळ्युं सकळ ब्रह्मांड रे। ३२।

* * *

तब वायुकुमार (अपने मूल रूप में) प्रकट हो गया और उसने प्रचण्ड घोर गर्जना की। उससे समस्त असुर भय को प्राप्त हो गये। समस्त ब्रह्माण्ड भयभीत होकर काँप उठा। ३२।

* * *

अध्याय—३५ (अहिरावण का वध, अहिरावण-महीरावण के जन्म की कथा)

राग मारु

धर्युं दीर्घ रूप हनुमंत, जाणे विश्वनो करशे अंत,
करी गर्जना घोर घुराव, थया आसुरीना गर्भस्राव। १।
लीधा ऊंचकी लक्ष्मण-राम, स्कंध बेसाड्या अभिराम,
वधार्युं रूप ऊंचुं आकाश, करवा मांड्यो असुरनो नाश। २।
पूंछ झापटे केटला पाड्या, कोने चरण झालीने पछाड्या,
कोनां करथकी उडाड्यां शीश, पदघाए मारे करी शीश। ३।
एम वज्रदेही महावीर, मार्या असुर घणा रणधीर,
अहिरावणने पाटु एक मारी, पाम्यो मरण पड्यो ते सुरारि। ४।

अध्याय—३५ (अहिरावण का वध, अहिरावण-महीरावण के जन्म की कथा)

हनुमान ने विशाल रूप धारण किया। जान पड़ता था कि वह (अब) विश्व का अन्त कर डालेगा। उसने जब घोर गर्जना की, तो असुरियों के गर्भ गिर गये। १। फिर हनुमान ने राम-लक्ष्मण को उठा लिया और दोनों प्रियजनों को कंधे पर बैठा लिया। उसने अपने रूप को आकाश तक ऊँचा बढ़ा लिया और वह असुरों का विनाश करने लगा। २। वह पूँछ के झपट्टे से कितनों को गिरा डालता था, किसी-किसी को पाँव पकड़कर पटक डालता था। किसी-किसी का सिर हाथ से उछाल रहा था, तो (किसी-किसी को) क्रोध से पदघात से मार डाल रहा था। ३। इस प्रकार उस वज्रदेही महावीर ने बहुत रणधीर असुरों को मार डाला। उसने अहिरावण को एक लात जमा दी, तो देवों का वह शत्रु मौत को प्राप्त हो गया और गिर पड़ा। ४। बन्धु की मृत्यु को देखकर उस समय

जोई बंधुमरण निरधार, कोप्यो महिरावण तेणी वार,
थयो सांप्रद करवा युद्ध, सैन्य तेडाव्युं करीने क्रोध । ५ ।
पछी नीकळ्या पुरनी बहार, महिरावण ने पवनकुमार,
छे महिरावण महाबळवान, पाम्यो छे तप करी वरदान । ६ ।
न पामे हनुमंतथी मर्ण, विचार्युं एम अशरणशर्ण,
भाथां धनुष्य स्मर्या तेणी वार, आव्यां तत्क्षण त्यां निरधार । ७ ।
बंन्यो वीरे ग्रह्यां करमांहे, ऊतर्या पृथ्वी उपर प्रभु त्यांहे,
रामे कर्यो धनुषटंकार, महिरावण तव कोप्यो अपार । ८ ।
महिरावण मूके छे बाण, ते छेदे छे पुरुषपुराण,
राम बाण मूके छे अखंड, वागे असुरने अंग प्रचंड । ९ ।
तनमांथी रुधिर स्रवे ज्यारे, उदे थाय महिरावण त्यारे,
पडे बिंदु ते पृथ्वीमोझार, तेना प्रगटे छे असुर अपार । १० ।
महिरावण थया कोटानकोटी, एवी असुरनी माया मोटी,
ते तद्वत असुर समस्त, धाया राम उपर ग्रही शस्त्र । ११ ।

महीरावण निश्चय ही क्रुद्ध हो गया । वह सम्प्रति युद्ध करने को (सन्नद्ध) हो गया और उसने क्रोध करके सेना को बुला लिया । ५ । तदनन्तर महीरावण और पवनकुमार नगर के बाहर निकल गये । महीरावण महा बलवान था। तपस्या करके वह वरदान को प्राप्त हो गया था । ६ । वह हनुमान से मौत को प्राप्त नहीं हो रहा है, —अशरणों के लिए आश्रय-भूत श्रीराम ने ऐसा विचार किया और उसी समय अपने भाथे और धनुष का स्मरण किया, तो वे वहाँ निश्चय ही तत्क्षण आ गये । ७ । दोनों भाइयों ने उन्हें हाथों में ले लिया; फिर प्रभु राम (और लक्ष्मण) वहाँ भूमि पर उतर गये । (जब) राम ने धनुष की टंकार की, तब महीरावण अपार क्रुद्ध हो उठा । ८ । (फिर) महीरावण (जो) बाण चलाता, उन्हें पुराण-पुरुष राम छेद डालते । (इधर से) राम अखण्ड (अनवरत) रूप से बाण चला रहे थे; वे उस असुर के प्रचण्ड अंग पर आघात करते थे । ९ । जब (महीरावण के) शरीर से रक्त झरता, तब उससे (अनेकानेक) महीरावण उत्पन्न हो जाते । (जो) रक्त-बिन्दु भूमि पर पड़ जाते, उनसे अनगिनत असुर प्रकट हो जाते । १० । (इस प्रकार) कोटि-कोटि महीरावण (उत्पन्न) हो गये । उस असुर की माया ऐसी बड़ी थी । उसके समान वे समस्त असुर शस्त्र लेकर राम की ओर दौड़े । ११ । वे बहुत प्रकार से आघात करने लगे, तो उस समय राम विस्मय को प्राप्त हो गये । असुरों का बल (इस प्रकार) बढ़ गया, तो

करवा लाग्या बहुविध मार, राम विस्मे पाम्या तेणी वार,
वाध्युं असुर तणुं बळ जोते, हनुमंत सामुं पोते। १२।
त्यारे मारुति कहे महाराज, आ तो दीसे छे विपरीत काज,
माटे पूछी आवुं एनुं मर्ण, तमो जुद्ध करो अशरणशर्ण। १३।
एम कहीने ऊड्या हनुमंत, सागर ओळंग्या बळवंत,
पेली मकरी पोतानी जेह, आवी वृत्तांत पूछ्युं तेह। १४।
त्यारे मकरी कहे महाराज, सुणो उत्पत्ति कहुं एनी आज,
एक समे देवांगना रंभा, जती'ती स्व-इच्छाए असंभा। १५।
भृगु बेठा'ता मारग मांहे, ते पासे थई चाली त्यांहे,
ते मुनिने नमी नहि तास, अभिमानथी कीधुं हास। १६।
भृगुने तव चढियो क्रोध, दीधो शाप ते पामी विरोध,
मुने नमी नहि पापिणी, माटे रंडा तुं थाजे सापिणी। १७।
तामसी घोर वनमां फरजे, नित्य जीवनी हिंसा करजे,
एवो शाप सुणी ते कर्ण, लागी रंभा मुनिने चर्ण। १८।
मुज अनुग्रह करो मुनिदेव, त्यारे बोल्या भृगु ततखेव,
आखा दिवस मध्ये क्षण एक, थईश पद्मिनी रूप विशेक। १९।

उन्होंने अपने सम्मुख हनुमान को देखा। १२। तब हनुमान बोला, 'महाराज, यह तो विपरीत काम दिखायी दे रहा है, इसलिए मैं इसकी मौत (का उपाय) पूछकर आ जाता हूँ। तब तक हे अशरण-शरण, आप युद्ध करते रहें।' १३। ऐसा कहकर हनुमान उड़ गया। उस बलवान ने सागर को लाँघ लिया और जहाँ उसकी अपनी वह मगरी थी, वहाँ आकर उसने (उससे) वह बात पूछी। १४। तब मगरी ने कहा, 'महाराज, सुनिए, मैं आज इसकी उत्पत्ति (की कथा) कहती हूँ। एक समय, देवांगना रम्भा अपनी इच्छा से बेरोकटोक जा रही थी। १५। मार्ग में भृगु ऋषि बैठे हुए थे। वह उनके पास से होकर वहाँ (से) चली गयी; (परन्तु) उसने मुनि को नमस्कार नहीं किया, (वरन्) अभिमान से हँस दिया। १६। तब भृगु को क्रोध आ गया; विरोध भाव को प्राप्त होकर उन्होंने उसे अभिशाप दिया, 'री पापिनी, तूने मुझे नमस्कार नहीं किया, इसलिए री राँड, तू साँपिन हो जाए। १७। तू तामसी घोर वन में घूमती-फिरती रह जाना और नित्य जीवों की हिंसा करना।' ऐसे उस शाप को अपने कानों से सुनते ही रम्भा उन मुनि के पाँव लगी। १८। (वह बोली—) 'हे मुनिदेव, मुझपर अनुग्रह कीजिए।' तब तत्क्षण भृगु ऋषि बोले, 'सम्पूर्ण दिन के अन्दर तू एक क्षण (-भर के लिए)

कोई समे तुने देखशे रवि, उदे काम थशे अनुभवी,
पठशे तुज पर रवि-कंदर्प, त्यारे देह मुकाशे सर्प । २० ।
त्यारे पामीश मूळ स्वरूप, एवुं बोल्या मुनिवर भूप,
ते रंभा थई सर्पिणी त्यांहे, फरती हींडें घोर वनमांहे । २१ ।
एक समे ते थई पद्मिणी, त्यारे मोह पाम्या दिनमणि,
पड्युं रेत अमासने दिन, तेना भाग थया बे भिन्न । २२ ।
पडतामां थई सर्पिणी एह, आवी मुखमां पड्युं वीर्य तेह,
अहिमुखमां थयुं जे रोध, तेनो प्रगट्यो अहिरावण जोध । २३ ।
पृष्ठ परसी पड्यो महिमांहे, तेनो महिरावण थयो त्यांहे,
पछे रंभा पामी उद्धार, थया बळिया ते असुर अपार । २४ ।
तेणें नगर महिकावती जाण, वसावीने रह्या निरवाण,
कहे मकरी हुं एटलुं जाणुं, वीजुं जाण्या विना शुं वखाणुं ? २५ ।
रक्तबिंदुना रावण थाय, कहुं ते जाणवानो उपाय,
महिरावणने घेंर छे नार, चंद्रसेना पृथ्वीनो अवतार । २६ ।

पद्मिनी स्वरूपा विशिष्ट नारी बन जाएगी । १९ । किसी समय तुझे सूर्य देख लेगा, तो उसमें काम-भाव उत्पन्न हो जाएगा और (भोग का) अनुभव होगा, (सो) तुझपर सूर्य का वीर्य गिर जाएगा, तब तू सर्प देह को छुड़ा पाएगी । २० । तब तू अपने मूल स्वरूप को प्राप्त हो जाएगी ।' वे मुनिवर-राज इस प्रकार बोले । वह रम्भा वहाँ साँपिन हो गयी और घोर वन में घूमती-फिरती रही । २१ । एक समय वह पद्मिनी हो गयी, तो (उसे देखते ही) सूर्य मोह को प्राप्त हो गया । उसका वीर्य अमावस के दिन गिर गया । उसके दो अलग (-अलग) भाग हो गये । २२ । उस (वीर्य) के गिरते हुए (गिर जाने के समय) वह (फिर) साँपिन हो हो गयी; तब वह वीर्य आकर उसके मुँह में गिर पड़ा । उसके सर्प-मुख में जो (वीर्य) अवरुद्ध हो गया, उससे अहिरावण नामक योद्धा उत्पन्न हो गया । २३ । (वीर्य का दूसरा भाग) उसकी पीठ को स्पर्श करके भूमि पर गिर गया; उससे वहाँ महीरावण उत्पन्न हो गया । फिर रम्भा उद्धार को प्राप्त हो गयी । (इधर) वे असुर अपार बलवान हो गये । २४ । समझिए, महिकावती नामक नगर बसाकर वे अन्त में (उसमें) रहने लगे ।' (तदनन्तर) मगरी ने कहा, 'मैं इतना ही जानती हूँ । बिना जान लिये दूसरी बात का वर्णन मैं क्या करूँ ? । २५ । (उसके) रक्त-बिन्दुओं से (मही-) रावण हो जाते हैं —मैं उसे जान लेने का उपाय कह देती हूँ । महीरावण के घर (उसके) एक स्त्री है —वह

तेने जईने पूछो आज, तेनुं मरण कहेशे महाराज,
एवुं सुणीने ऊड्या हनुमंत, आव्या नग्रमांहे बळवंत । २७ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

बळवंत श्रीहनुमंत आव्या, महिकावती मोझार रे,
सूक्ष्म रूप धरीने पेठा, ज्यां रायनुं राजद्वार रे । २८ ।

* * *

चन्द्रसेना पृथ्वी का अवतार है । २६ । जाकर उससे आज पूछ लीजिए । हे महाराज, वह आपसे उसकी मौत (के बारे में) बता देगी ।' ऐसा सुनते ही वह बलवान कपि हनुमान उड़ गया और (महिकावती) नगर में आ गया । २७ ।

बलवान कपि श्रीहनुमान महिकावती में आ गया और सूक्ष्म रूप धारण करके, वह वहाँ प्रवेश कर गया, जहाँ राजद्वार था । २८ ।

* * *

अध्याय—३६ (चन्द्रसेना द्वारा हनुमान को महीरावण के करोड़ों रूपों की उत्पत्ति का कारण बताना; हनुमान द्वारा उसकी मृत्यु की व्यवस्था करना)

राग आशावरी

राजद्वारमां आव्या मारुति, सूक्ष्म रूपे त्यांहे,
महिरावणनी राणी चंद्रसेना, बेठी महेल ज मांहे । १ ।
समाधिस्थ बेठी विधुवदनी, राम स्वरूपनुं ध्यान,
एकलग्न रघुवरमूर्तिमां, नथी कंई बीजुं भान । २ ।
ज्यारें महिरावण शणगारी रामने, लेई चाल्यो जेणी वार,
त्यारे चंद्रसेना जोईने मोह पामी, व्याप्यो काम अपार । ३ ।

अध्याय—३६ (चन्द्रसेना द्वारा हनुमान को महीरावण के करोड़ों रूपों की उत्पत्ति का कारण बताना; हनुमान द्वारा उसकी मृत्यु की व्यवस्था करना)

वहाँ हनुमान सूक्ष्म रूप से राजद्वार पर आ गया, तो (उसने देखा कि) महीरावण की स्त्री चन्द्रसेना प्रासाद में ही बैठी हुई थी । १ । वह चन्द्रानना (चन्द्रसेना) श्रीराम के स्वरूप का ध्यान करती हुई समाधिस्थ बैठी थी । वह श्रीरघुवर की मूर्ति में एकाग्र-चित्त लगाये हुए थी । उसे (किसी) अन्य (का) कोई भान नहीं था । २ । जिस समय महीरावण

मन एम जाण्युं स्वामी थाय मारा, पूरे मनोरथ काम,
ए अभिप्राये ध्यान धरे छे, बेठी तेणे ठाम। ४ ।
त्यारे मारुतिए त्यां आवी, जगाडी ध्यानमांथी ते नार,
नेत्र उघाडी जुए तो पासे, ऊभा पवनकुमार। ५ ।
अरे भाई तुं कोण छे कपिजन, क्यम आव्यो कहे बात,
त्यारे नमस्कार सतीने करी वळता, बोल्या मारुतजात। ६ ।
अरे मात संकटमां पड्या छे, रघुपति रणमोझार,
रक्तबिंदुना उदे थाय छे, महिरावण ते अपार। ७ ।
तेने शो उपाय ज करीए, क्यम पामे ए नाश,
तमो जाणो छो माटे हुं आव्यो, पूछवाने तम पास। ८ ।
त्यारे सती कहे सुण अंजनीनंदन, मुंने मेळव रघुराय,
जो मारो मनोरथ पूर्ण करे तो, कहुं ए तुजने उपाय। ९ ।
जो तेडी लावे रघुपतिने आंही, पीडा टाळे मारी,
हनुमंत कहे महिरावण मूवा पछी, लावुं अवधविहारी। १० ।

सजाकर राम को लेकर चल दिया, तब उन्हें देखकर चन्द्रसेना मोह को प्राप्त हो गयी। उसे अपार काम-भाव व्याप्त कर गया। ३। वह मन-ही-मन जान गयी कि ये मेरे स्वामी हों, वे मेरे मनोरथ की, अभिलाषा की पूर्ति करें। इस हेतु से उसने ध्यान धारण किया था और वह उस स्थान पर बैठी हुई थी। ४। तब हनुमान ने वहाँ आकर उस स्त्री को ध्यान में से जगा दिया। (जब) उसने आँखों को खोलकर देखा, तो (दिखायी दिया कि) पवन-कुमार पास ही खड़ा है। ५। (उसने पूछा—) 'हे भाई कपिवर, तुम कौन हो? कैसे आ गये? क्या बात कहते हो (कहना चाहते हो)? तब उस सती को नमस्कार करके फिर वह पवन-पुत्र बोला। ६। 'अरी माता, रघुपति युद्ध-भूमि में संकट में फँस गये हैं। रक्त की बूँदों से असंख्य महीरावण उत्पन्न हो रहे हैं। ७। उसका क्या उपाय करें? ये नाश को कैसे प्राप्त हो जाएँगे? तुम (इन बातों को) जानती हो, (इसलिए) तुम्हारे पास यह पूछने के लिए आ गया हूँ?'। ८। तब सती (चन्द्रसेना) ने कहा, 'हे अंजनीनन्दन, सुनो। मुझसे रघुनन्दन को मिला दो। यदि तुम मेरे मनोरथ को पूर्ण कर पाओगे, तो मैं तुमको वह उपाय बता दूँगी। ९। यदि तुम रघुपति को यहाँ ले आओगे, तो मेरी पीड़ा टल जाएगी।' इसपर हनुमान ने कहा, महीरावण के मर जाने के पश्चात्, मैं अवधविहारी श्रीराम को ले आऊँगा।' १०। फिर वज्रदेही हनुमान ने वहाँ चन्द्रसेना को अभिवचन

पछे वज्रदेहीए वचन ज आप्युं, चंद्रसेनाने त्यांहे,
तारा पूरण मनोरथ करवा लावीश, रामचंद्रने आंहे । ११ ।
त्यारे चंद्रसेना कहे सुणो मारुति, कहुं ए कारण एव,
महिरावणें पूर्वे उग्र तप करियुं, आराध्या महादेव । १२ ।
प्रसन्न थया शिव प्रगट्या तत्क्षण, माग्य माग्य वरदान,
त्यारे महिरावण कहे मुजने आपो, अमोघ वर भगवान । १३ ।
हुं रणमां युद्ध करुं त्यारे मुज पर, अमृतवृष्टि थाय,
सजीव थाय मुज रक्तबिंदु, ए वर आपो शिवराय । १४ ।
त्यारे अस्तु कही शिव चाल्या तत्क्षण, वर आपी तेणी वार,
पाताळ मांहे कुंड भर्यो छे, ते अमृत केरो सार । १५ ।
ते शिव-आज्ञाए भ्रमर लक्षावधि, सुधा चंचु भरी तेह,
ते युद्ध समे महिरावण उपर, वृष्टि करे छे एह । १६ ।
ते अमृतस्राव थकी रक्तबिंदु, सजीव थाय निरवाण,
ते माटे ते कोईए जिताय नहि, वळी मरण न पामे जाण । १७ ।
माटे भ्रमर आवता बंध करो तो, आवे एनो काळ,
एवां वचन सुणीने अंजनीनंदन, गया तरत पाताळ । १८ ।

ही दे दिया, 'तुम्हारे मनोरथ को पूर्ण करने के लिए, मैं रामचन्द्र को यहाँ ले आऊँगा।' ११। तब चन्द्रसेना बोली, 'हे हनुमान, सुनो। मैं वह कारण ही बताती हूँ। महीरावण ने पूर्वकाल में उग्र तप किया और महादेव (शिवजी) की आराधना की। १२। (उससे) शिवजी प्रसन्न हो गये और वे तत्क्षण प्रकट हो गये। (उन्होंने कहा—) 'माँग लो, वरदान माँग लो।' तब महीरावण बोला, 'हे भगवान, मुझे यह अमोघ (अटल) वर दीजिए। १३। मैं (जब) युद्ध-भूमि में युद्ध करूँगा, तब मुझपर अमृत की वर्षा हो जाए। मेरे रक्त की बूँदें सजीव हो जाएँ —हे शिवराजजी, मुझे यह वर दीजिए।' १४। उस समय 'तथास्तु (ऐसा हो जाए)' कहते हुए वर देकर शिवजी तत्क्षण (वहाँ से) चले गये। उस अमृत का एक सुन्दर कुण्ड पाताल में भरा हुआ है। १५। शिवजी की आज्ञा से लाखों भौंरे अपनी-अपनी चोंच (मुँह) में अमृत भरकर युद्ध के समय महीरावण पर उसकी बौछार कर देते हैं। १६। उस अमृत-स्राव से (महीरावण के) रक्त-बिन्दु निश्चय ही सजीव हो जाते हैं (उनमें से प्रत्येक से एक-एक महीरावण-सा असुर उत्पन्न हो जाता है। इसलिए वह किसी से नहीं जीता जाता। फिर समझिए कि उस कारण से वह मरण को प्राप्त नहीं हो रहा है। १७। इसलिए यदि भौंरों का आ जाना बन्द

अमृतकुंड उपर जई जोयुं, दीठुं ते प्रत्यक्ष,
स्थूळ रूपे शिलिमुख अमृत लेई, जाय लक्षानुलक्ष। १९।
पछी हनुमंते त्यां रोध कर्यो, जे खटपद केरो त्यांहे,
त्यारे अमृत सर्वे बंध थयुं, ते जातुं हतुं जुद्ध मांहे। २०।
त्यां लोकपाळनुं रक्षण छे, कुंड अमृत उपर जेह,
ते साक्षात् रुद्रावतार हनुमंतने, जोई नव बोल्या तेह। २१।
ते भ्रमर मध्ये एक मोटो हतो, सहु भ्रमर तणो सरदार,
तेने वायुकुमारे झाल्यो तत्क्षण, मारवा मांड्यो मार। २२।
तेणे अंजनीसुतनी स्तुति करी, आव्यो शरणागत तेणी वार,
प्राणदान प्रभु आपो मुने, हुं करीश कंई उपकार। २३।
तेनुं वचन लेईने पासे राख्यो, खटपदने हनुमंत,
पछी रामचंद्रनी पासे आव्या, मारुतसुत बळवंत। २४।
रघुपतिने कह्युं प्रभु तमो हावे, मूको ब्रह्मास्त्र बाण,
ए सकळ रूप महिरावणनां ते, नाश थशे निरवाण। २५।
पछे रामे ब्रह्मशर क्रोध करीने, मूक्युं तेणी वार,
अनेक रूपशुं महिरावणनो, करियो छे संहार। २६।

कर पाओगे, तो इसे मौत आ जाएगी।' ऐसी बातें सुनकर अंजनी-नन्दन हनुमान तत्काल पाताल गया। १८। अमृत-कुण्ड के ऊपर जाते हुए उसने प्रत्यक्ष देखा कि बड़े-बड़े रूप वाले लाखों-लाखों भ्रमर अमृत लेकर जा रहे हैं। १९। अनन्तर हनुमान ने वहाँ उन भौंरों को रोक दिया, तब जो युद्ध (-भूमि) की ओर (ले जाया) जा रहा था, उस समस्त अमृत का आना बन्द हो गया। २०। वहाँ कुण्ड पर जिन लोकपालों की रखवाली थी, वे साक्षात् रुद्र के अवतार हनुमान को देखकर कुछ नहीं बोल सके (कर सके)। २१। उन भौंरों के बीच एक बड़ा (भौंरा) था, वह समस्त भौंरों का नेता था। उसे वायुकुमार ने तत्क्षण पकड़ लिया और उसे मारना आरम्भ किया। २२। तो उसने अंजनी-सुत की स्तुति की और वह उसी समय उसकी शरण में आ गया, (उसने आत्मसमर्पण किया)। (वह बोला—) 'हे प्रभु, मुझे प्राणदान दीजिए; मैं आपका कुछ उपकार (भला) कर सकता हूँ।' २३। तो (वैसा) अभिवचन लेकर हनुमान ने उसे अपने पास रखा। फिर वह बलवान पवनकुमार राम के पास आ गया। २४। उसने राम से कहा, 'हे प्रभु, आप अब ब्रह्मास्त्र (से युक्त) बाण चला दीजिए। उससे महीरावण के ये समस्त रूप निश्चय ही नष्ट हो जाएँगे।' २५। अनन्तर उस समय राम ने क्रोध से ब्रह्म-शर छोड़

वळी महिरावण तणुं सैन्य हतुं, घणा राक्षस बळिया त्यांहे,
ते पूंछ वडे बांधी हनुमंते, नाख्या सागर मांहे । २७ ।
एम अहिमहिरावण मार्या रामे, वरत्यो जयजयकार,
देवे दुंदुभिनाद कर्यो, ने पुष्पनी वृष्टि अपार । २८ ।
ते समे श्रीरघुवीरे चांप्यां, हनुमंत ह्रदिया साथे,
धन्य धन्य मारुतसुत तुजने, वखाण कर्यां रघुनाथे । २९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रघुनाथ पूछे हनुमंतने, शुं करी आव्यो काज रे,
जे महिरावण सरखो असुर बळियो, मृत्यु पाम्यो आज रे । ३० ।

दिया और महीरावण के अनेक रूपों का संहार कर डाला । २६ । इसके अतिरिक्त, वहाँ महीरावण की (जो) सेना थी, उसमें अनेक बलवान राक्षस थे । उन्हें हनुमान ने पूँछ से बाँधकर समुद्र में फेंक दिया । २७ । इस प्रकार, राम ने अहि-महीरावण को मार डाला, तो जयजयकार हो गया । देवों ने दुन्दुभि-नाद किया (दुन्दुभियाँ बजा दीं) और फूलों की अपार वर्षा की । २८ । उस समय श्रीरघुवीर ने हनुमान को हृदय से लगा लिया । फिर हे पवन-कुमार, तुम धन्य हो, धन्य हो !' (कहते हुए) श्रीरघुनाथ ने उसका बखान किया (सराहना की), । २९ ।

(तदनन्तर) राम ने हनुमान से पूछा, 'तुम क्या (कैसा) काम करके आ गये हो, जिससे महीरावण जैसा बलवान असुर आज मृत्यु को प्राप्त हो गया । ३० ।

* * *

अध्याय—३७ (चन्द्रसेना के यहाँ राम-लक्ष्मण का आगमन, पलंग के भंग होने पर वर देते हुए उनका चल देना)

राग मारु

रघुपति पूछे मारुतसुतने, तुं जई आव्यो क्यांहे,
शे उपाये करी महिरावण, मृत्यु पाम्यो आहे ? । १ ।

अध्याय—३७ (चन्द्रसेना के यहाँ राम-लक्ष्मण का आगमन, पलंग के भंग होने पर वर देते हुए उनका चल देना)

रघुवीर ने हनुमान से पूछा, 'तुम कहाँ जाकर आये हो ? किस उपाय से यहाँ महीरावण मृत्यु को प्राप्त हो गया ? ' । १ । ऐसा सुनते ही

एवुं सुणीने हनुमंतनुं, मुख करमायुं साक्षात,
प्रभु अंतरजामी छो तमो, नथी अजाणी कांई वात । २ ।
वृत्तांत कह्युं सहु मारुति, उत्पत्ति शिव वरदान,
एक बंधनमां हुं आव्यो छुं, ते सुणो श्रीभगवान । ३ ।
महाराज राणी महिरावणनी, चंद्रसेना एनुं नाम,
तेने ईच्छा छे प्रभु तमारी, जोई रूप व्याप्यो काम । ४ ।
तेणे महिरावणनुं मृत्यु बताव्युं, सुणो श्रीमहाराज,
तेने में आप्युं वचन प्रभु, थयुं एवुं काज । ५ ।
एवां वचन सुणी हनुमंतनां, पछी बोल्या श्रीरघुवीर,
रे प्राणसखा तुं जाणे छे मुज, धरम कारण धीर । ६ ।
एकपत्नीव्रत जे महारुं, नथी अजाण्युं तुने आज,
तुं चतुर थई भूलो पड्यो, क्यम थाय एवुं काज ? । ७ ।
पण वचन जे तें आपियुं, मारे करवुं सत्य प्रमाण,
जो वचन तारुं जाय तो, मुज लाज गई निरवाण । ८ ।
माटे चंद्रसेनानी पासे चालो, सत्य करीए एह,
विवेके करी समजावीए, कंई कळाए करी तेह । ९ ।

हनुमान का मुख प्रत्यक्ष मुरझा उठा। (वह बोला—) 'हे प्रभु, आप अन्तर्यामी हैं, तो आपके लिए कोई भी बात अज्ञात नहीं है।' २। अनन्तर हनुमान ने (महीरावण की) उत्पत्ति, शिवजी से वरदान (की प्राप्ति), —(आदि का) समस्त वृत्तान्त कहा। (फिर वह बोला,—) मैं एक बन्धन में उलझ गया हूँ। हे श्रीभगवान, वह सुनिए। ३। महाराज, महीरावण के एक स्त्री है; उसका नाम है चन्द्रसेना। हे प्रभु, उसे आपके प्रति इच्छा (आसक्ति उत्पन्न हो गयी) है, (क्योंकि) आपको देखकर उसे काम-भाव व्याप्त कर गया है। ४। हे श्रीमहाराज, सुनिए। उसने महीरावण की मृत्यु (की युक्ति) बतायी। हे प्रभु, मैंने उसे एक अभिवचन दिया है, (तभी तो) ऐसा काम हो गया। ५। हनुमान की ऐसी बातें सुनने के पश्चात् श्रीरघुवीर बोले, 'हे प्राणसखा, तुम मुझे धर्म-कारण धीर (धर्म-कार्य परायण, धीर) पुरुष के रूप में जानते हो। ६। मेरा जो एक-पत्नीव्रत है, वह तुम्हें अज्ञात नहीं है। तुम चतुर होकर भी भुलावे में आ गये हो। (परन्तु) ऐसा काम कैसे हो जाएगा? । ७। फिर भी, तुमने जो अभिवचन दिया है, वह मुझे सत्य प्रमाणित करना है। यदि तुम्हारा वचन (व्यर्थ हो) जाए, तो निश्चय ही मेरी लाज गयी (समझ लो)। ८। इसलिए चन्द्रसेना के पास चलो, उस वचन को सत्य कर लें।

एवुं कही हनुमंत साथे, राम-लक्ष्मण वीर,
चंद्रसेना घेर आव्या, सत्यव्रत रणधीर। १०।
त्यारे राणीए आदर थकी, पूजा करी बहु पेर,
आनंदशुं आसन पर, पधराविया निज घेर। ११।
पेला भ्रमरने आज्ञा करी'ती, हनुमंते प्रथमे त्यांहे,
तेणे पाया कोर्या पलंगना, पेठो सूक्ष्म थईने मांहे। १२।
रंभापत्र प्रमाणे राख्युं, उपर दळ साबूत,
मांहे पाया सहु पोला कर्या, क्षणमांहे ते अद्भुत। १३।
मारुति कहे रे चंद्रसेना, पधार्या श्रीराम,
माटे सज्या तुं सावधान कर, पूरे मनोरथ काम। १४।
विराजशे प्रभु पलंगे, तारे अमारे ए शरत,
जो भांगी पडशे पलंग ए तो, ऊठी जाशे तरत। १५।
चंद्रसेना कहे प्रभु दृढ पलंग छे, पधारे हावे आंहे,
हनुमंत-लक्ष्मण बहार बेठा, राम गया घरमांहे। १६।
पलंगे जई बेठा प्रभु त्यारे, भांगी पड्यो ततखेव,
रघुवीर हसीने ऊठिया, आव्या बारणे अवश्यमेव। १७।

विवेक से किसी कला (युक्ति) द्वारा उसे समझा दें।' ९। ऐसा कहकर सत्यव्रती रणधीर बन्धु —राम और लक्ष्मण हनुमान के साथ चन्द्रसेना के घर आ गये। १०। तब उस रानी ने राम का आदर-पूर्वक बहुत प्रकार से पूजन किया और आनन्द के साथ अपने घर आसन पर उन्हें ले आयी। ११। वहाँ हनुमान ने पहले ही उस भ्रमर को आज्ञा दी थी। (उसके अनुसार) वह सूक्ष्म रूप होकर उस पलंग के अन्दर पैठ गया और उसने उसके पाँवों को कुरेद डाला। १२। केवल केले के पत्ते के प्रमाण-भूत दल (आवरण) सुरक्षित रखा। अन्दर से समस्त पाँवों को अद्भुत रीति से (कुरेदकर) क्षण (मात्र) में पोला कर दिया। १३। (फिर) हनुमान चन्द्रसेना से बोला, 'श्रीराम पधारे हैं। इसलिए तुम शय्या सावधानी से बना लो, वे तुम्हारी कामना पूर्ण करेंगे। १४। प्रभु पलंग पर विराजमान होंगे। तुम्हारे-हमारे बीच यह शर्त है। (परन्तु) यदि यह पलंग भग्न हो (गिर) जाए, तो वे तुरन्त उठकर जाएँगे।' १५। तो चन्द्रसेना बोली, 'हे प्रभु, यह पलंग दृढ़ है, अब यहाँ पधारिए।' (तब) हनुमान और लक्ष्मण बाहर बैठ गये और राम घर के अन्दर गये। १६। (जब) प्रभु रामचन्द्र जाकर पलंग पर बैठ गये, तब तत्क्षण वह टूट गया। तो श्रीराम हँसते हुए उठ गये और अवश्य ही द्वार पर

त्यारे क्रोध करी चंद्रसेना बोली, पामी मन परिताप,
अल्या कपि तें कपट कीधुं, देईश तुजने शाप। १८।
तें मंच कोराव्यो माहरो, पछे बेसाड्या रघुराय,
मने छळ करीने छेतरी, माटे करुं तुंने शिक्षाय। १९।
एम क्रोध करी बोली सती, हनुमंतशुं तेणी वार,
त्यारे सजळ नेत्रे राम सामुं, जोयुं पवनकुमार। २०।
पछे कृपा करी प्रभुए तदा, तेने मस्तक मूक्यो हाथ,
तेनो क्रोध सर्वे समावियो, हसी बोल्या श्रीरघुनाथ। २१।
अरे सती चिंता नव करीश, नव थईश चित्त अधीर,
एकपत्नीव्रत छे माहरे, माटे राख्य मनमां धीर। २२।
मारी मूरति हवडां ध्यानमां, तुं भोगव्य करीने प्रीत्य,
पछी आगळ करी अर्धांगना, तुंने आपीश सुख बहु रीत्य। २३।
हूं द्वापरमांहे धरीश जे वारे, कृष्ण अवतार,
त्यारे सत्यभामा तुं थईश, मुज पटराणी निरधार। २४।
वरदान एवुं आपियुं, चंद्रसेनाने भगवान,
पछे राम मूर्ति रुदे राखी, धरवा बेठी ध्यान। २५।

आ गये। १७। तब क्रुद्ध होकर चन्द्रसेना बोली। वह मन में ग्लानि को प्राप्त हो गयी। (वह बोली—) 'अरे कपि, तुमने कपट किया है। मैं तुम्हें शाप दूँगी। १८। तुमने मेरे मंच को कुरेदवा लिया और फिर रघुराज को ऊपर बैठवाया। मुझे छल से तुमने ठग लिया है, इसलिए तुम्हें मैं दण्ड देती हूँ।' १९। वह सती स्त्री उस समय हनुमान से क्रोध पूर्वक इस प्रकार बोली; तब हनुमान ने सजल आँखों से राम की ओर देखा। २०। तब फिर प्रभु रामचन्द्र ने कृपा करके उस (नारी) के मस्तक पर हाथ रखा और उसके समस्त क्रोध को शान्त किया। फिर श्रीरघुनाथ हँसकर बोले। २१। 'अरी सती, चिन्ता न करना, तुम चित्त में अधीर न होना। मेरा एक-पत्नीव्रत है। इसलिए मन में धीरज रखो। २२। अभी तो मेरी मूर्ति को ध्यान में प्रीति-पूर्वक भोग लेना; फिर आगे तुम्हें अपनी अर्धांगिनी (स्त्री) बनाकर मैं तुझे बहुत प्रकार से सुख प्रदान करूँगा। २३। द्वापर युग में जिस समय मैं कृष्ण अवतार धारण करूँगा, तब तुम निश्चय ही सत्यभामा नामक मेरी पटरानी बनोगी।' २४। भगवान राम ने चन्द्रसेना को इस प्रकार वरदान दिया। फिर वह राम की मूर्ति को हृदय में रखकर ध्यान धारण करने बैठ

एम समाधान सहुनुं कर्युं, समर्थ श्रीरघुपत्य,
ए कथा अग्निपुराणमां छे, व्यासवाणी सत्य । २६ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सत्यवतीसुत व्यासे कही छे, अग्निपुराण कथाय रे,
कहे दास गिरधर एक वार बोलो, जय जय श्रीरघुराय रे । २७ ।

गयी । २५ । इस प्रकार श्रीरघुपति ने सबको सन्तुष्ट किया । यह कथा अग्नि-पुराण में है । महर्षि व्यास की वाणी सत्य है । २६ ।

सत्यवती के पुत्र व्यास ने यह कथा अग्निपुराण में कही है । कवि गिरधरदास कहते हैं, " (हे सज्जनो) एक बार 'श्रीरघुराज की जय हो, जय हो ' बोलिए । " २७ ।

* * *

अध्याय—३८ (हनुमान का राम-लक्ष्मण को लेकर आगमन; रावण का युद्ध के लिए प्रस्थान)

राग मेवाडो

एम चंद्रसेनाने वरदान आप्युं, पाळ्युं वचन रणधीर जी,
मकरध्वजने तेडाव्यो तत्क्षण, पोते श्रीरघुवीर जी । १ ।
राज आप्युं तेने महिकावतीनुं, बेसाड्यो आसन जी,
पछी राम-लक्ष्मणने स्कंधे लेईने, कूद्या वायुतन जी । २ ।
दधिसमुद्र ओळंगी आव्या, आणी तीरे रघुराय जी,
त्यां नळ नील ने अंगद मळिया, लाग्या रामने पाय जी । ३ ।

अध्याय—३८ (हनुमान का राम-लक्ष्मण को लेकर आगमन; रावण का युद्ध के लिए प्रस्थान)

इस प्रकार रणधीर श्रीरघुवीर ने चन्द्रसेना को वरदान दिया और (हनुमान द्वारा दिये हुए) अभिवचन का निर्वाह किया; (तदनन्तर) उन्होंने स्वयं तत्क्षण मकरध्वज को बुला लिया । १ । उन्होंने उसे महिकावती का राज्य दिया और उसे राज्यासन (राजगद्दी) पर बैठा दिया । अनन्तर वायुपुत्र हनुमान राम और लक्ष्मण को कंधे पर लेकर कूद पड़ा (उड़ान भर दी) । २ । (इस प्रकार) दधि-समुद्र को लाँघकर श्रीरघुराज दूसरे तट पर आ गये । वहाँ नल, नील और अंगद श्रीराम से मिले और उनके पाँव लगे । ३ । फिर सब इकट्ठा होकर चल दिये और सुवेल पर

पछी सरव एकठा थईने चाल्या, आव्या सुवेळु मोझार जी,
सुग्रीव विभीषण मळ्या रामने, वरत्यो जेजेकार जी । ४ ।
सैन्य सकळ हरख्युं वानरनुं, जोई कुशळ भगवंत जी,
सर्व सभा करी महिकावतीनुं, रामे कह्युं वरतंत जी । ५ ।
हनुमंतने वारंवार वखाण्या, धन्य धन्य पवनकुमार जी,
हे प्राणसखे ! एवो हुं तुजने, शो करुं प्रतिउपकार जी । ६ ।
सुणो विभीषण सुग्रीव सर्वे, सत्य कहुं छुं वाण जी,
आ मारुति सरखो पृथ्वीमां को, नथी वळियो निरवाण जी । ७ ।
एणे मारां कारज बहु कीधां, दुर्घट न कहेवाय जी,
एम घणी सराहना करी हनुमंतनी, द्रवित थया रघुराय जी । ८ ।
त्यारे विभीषण कहे प्रभु शुं न करे जे, सेवे तमारा चर्ण जी,
ते भय नव पामे काळ थकी जेणे, ग्रह्युं तमारुं शर्ण जी । ९ ।
ज्यम पन्नगने वळी पांखो आवे, सिंह पर्वतने शीश जी,
शूरो ने वळी रणमां चढियो, पंडित ने प्रसन्न वागीश जी । १० ।

आ गये। (वहाँ) सुग्रीव और विभीषण राम से मिल गये, तो जयजयकार हो गया । ४ । भगवान राम (और लक्ष्मण) को सकुशल (लौटे हुए) देखकर वानरों की समस्त सेना आनन्दित हो गयी । (फिर) सबकी सभा आयोजित करके राम ने महिकावती (में घटित बातों) का समाचार कह दिया । ५ । उन्होंने (यह कहते हुए) बारबार हनुमान की सराहना की, 'पवनकुमार, तुम धन्य हो, धन्य हो ! हे प्राणसखा, इस प्रकार का मैं तुम्हारा क्या प्रत्युपकार कर सकता हूँ ? । ६ । हे विभीषण, हे सुग्रीव, मैं सब बातें सत्य कह रहा हूँ —निश्चय ही इस हनुमान के समान पृथ्वी में कोई भी अन्य बलवान नहीं है । ७ । इसने हमारे बहुत काम किये हैं। उसके लिए कोई काम दुर्घट नहीं कहा जा सकता।' इस प्रकार रघुराज ने हनुमान की बहुत प्रशंसा की । वे द्रवित हो गये । ८ । तब विभीषण बोला, 'हे प्रभु, जो आपके चरणों की सेवा किया करता हो, वह क्या नहीं कर पाएगा ? जिसने आपका आश्रय ग्रहण किया हो, वह काल से भी भय को प्राप्त नहीं होगा । ९ । जिस प्रकार एक तो पहले साँप है, और फिर उसके पंख निकल जाएँ (तो वह जैसे अधिक शक्तिशाली बन जाता हो); जिस प्रकार एक तो पहले सिंह है, दूसरे वह पर्वत के मस्तक अर्थात् शिखर पर चढ़ गया हो, जिस प्रकार एक तो कोई पहले ही से शूर है, दूसरे फिर वह युद्ध-भूमि में चढ़ दौड़ा हो, जिस प्रकार एक तो कोई पण्डित है, फिर दूसरे उसपर वाणी की देवी सरस्वती प्रसन्न हो गयी हो, जिस प्रकार एक

दातार ने वळी द्रव्य सांपडे, वैद्य ने विद्या संजीव जी,
मुमुक्षुने वळी सद्‌गुरु मळिया, थया प्रसन्न असुरने शिवजी । ११ ।
अमूल्य रत्न आभूषण जडियुं, नृप निष्कंटक राज जी,
एम महाबळीने वळी दास तमारो, ते शुं न करे एवुं काज जी । १२ ।
एवां वचन सुणीने रघुपति हरख्या, प्रसन्न थया हनुमंतजी,
एम सभा सहित सुवेळुए बेठा, लक्ष्मण ने भगवंत जी । १३ ।
हावे रावण केरा अनुचर फरता, चरया जोवा त्यांहे जी,
तेणे जई वृत्तांत कह्युं सहु, दशमुख बेठो ज्यांहे जी । १४ ।
अहिमहिनो संहार करीने, आव्या लक्ष्मण राम जी,
कुशल सुवेळुए सभा करीने, बेठा तेणे ठाम जी । १५ ।
एवां वचन सुणीने दशमुख कंप्यो, निष्फल थई सहु आश जी,
अति घणी चिंता मनमां प्रगटी, छेक थयो छे निराश जी । १६ ।
इंद्रजित सरखो पुत्र गयो वळी, कुंभकरण जेवो भाई जी,
अहिमहि सरखा मित्र प्रधान, ते काळे नाख्या खाई जी । १७ ।

तो कोई दानी पुरुष है, फिर दूसरे उसे धन मिल गया हो, जिस प्रकार एक तो कोई वैद्य है, फिर दूसरे उसे संजीवनी विद्या प्राप्त हो गयी हो, जिस प्रकार एक तो कोई मुमुक्षु है, फिर दूसरे उसे सद्‌गुरु मिल गये हों, एक तो कोई असुर है, फिर दूसरे उसपर शिवजी प्रसन्न हो गये हों, जिस प्रकार किसी आभूषण में अमूल्य रत्न जड़ गया हो, (जिससे उसकी शोभा अत्यधिक बढ़ गयी हो), किसी राजा को निष्कण्टक राज्य प्राप्त हो गया हो, उस प्रकार ये हनुमान एक तो (मूलतः) महाबलवान् हैं, फिर दूसरे वे आपके दास हैं, तो वे ऐसा काम क्या नहीं कर पाएँगे ?' १०-१२ । ऐसी बातें सुनते ही रघुपति आनन्दित हो गये; हनुमान भी प्रसन्न हो गये । इस प्रकार, लक्ष्मण और भगवान राम सभा-सहित (सभाजनों सहित) सुवेल पर बैठ गये थे । १३ । अब रावण का कोई एक अनुचर वहाँ चलनेवाला व्यवहार (कामकाज आदि) देखने के लिए घूम रहा था। उसने रावण जहाँ बैठा था वहाँ जाकर समस्त समाचार कह दिया । १४ । (वह बोला—) 'अहि-मही का संहार करके राम और लक्ष्मण आ गये हैं और उस स्थान पर —सुवेल पर सभा आयोजित करके सकुशल बैठे हुए हैं ।' १५ । ऐसी बातें सुनते ही रावण काँप उठा; (क्योंकि) उसकी समस्त आशा निष्फल हो गयी थी । उसके मन में बहुत बड़ी चिन्ता उत्पन्न हो गयी । वह नितान्त निराश हो गया । १६ । (वह सोचने लगा—) इन्द्रजित जैसा पुत्र (मारा) गया; उसके अतिरिक्त कुम्भकर्ण जैसा

हावे शुं करवुं छे मारे जीवीने, आ दुःखरूपी संसार जी,
कुटुंब सर्वनो नाश थयो, हावे जीव्याने धिक्कार जी। १८।
एम रावण चित्तमां चिंता करे, मन आव्यो स्मशान वैराग जी,
पछी सावधान थयो जुद्ध करवाने, दलमां लाग्यो दाग जी। १९।
जेटलुं सैन्य पोतानुं हतुं ते, सज्ज कराव्युं सोय जी,
पडो फेरव्यो पुर पोताने, जोध रहे नहि कोय जी। २०।
चतुरंग दळ साजी रावण, नीकळ्यो पुरनी बहार जी,
नाना प्रकारनां वाजित्र वाजे, शस्त्र करे चळकार जी। २१।
सैन्यनी संख्या नव थाय कोणे, जोध घणा बळवंतजी;
पर्वत जेवा हस्ती घूमता, हणहणे हय नहि अंत जी। २२।
रथ-पदातिनो पार जडे नहि, खच्चर ऊंट महिष जी,
तेनी उपर राक्षस बेठा, पापी तणा जे ईश जी। २३।
सहस्र वीजळी जेवो झळकतो, रावणनो रथ जेह जी,
विधि विश्वकर्मा जोई मोह पामे, एवो अद्भुत तेह जी। २४।

भाई गया। अहि-मही सरीखे वे मित्र और मन्त्री काल ने खा डाले हैं। १७। अब इस दुःख-स्वरूप संसार में जीवित रहकर मुझे क्या करना है ? समस्त कुटुम्ब का नाश हो गया है, तो ऐसे जीवित रहने को धिक्कार है। १८। इस प्रकार रावण मन में चिन्ता कर रहा था। उसके मन में स्मशान-वैराग्य उत्पन्न हो गया। फिर युद्ध करने के लिए वह दत्तचित्त हो गया; उसके दल में धब्बा (जो) लग गया था। १९। उसकी अपनी जितनी सेना थी, उसे उसने सज्ज करवा दिया। कोई भी योद्धा शेष न रह जाए, इस दृष्टि से उसने अपने नगर में ढिढोरा बजवा लिया। २०। फिर चतुरंग दल को सजाकर (सज-धज के साथ सज्ज करके) रावण नगर के बाहर निकल पड़ा। (तब) नाना प्रकार के बाजे बज रहे थे; शस्त्र चमक रहे थे। २१। उस सेना की गिनती किसी द्वारा भी न हो पाती। उसके योद्धा बहुत बलवान थे। पर्वत जैसे (प्रचण्ड शरीरधारी) हाथी घूम रहे थे। घोड़े हिनहिना रहे थे। उस सेना की कोई सीमा नहीं थी। २२। खच्चरों, ऊँटों, भैंसों, रथों और पदातियों का कोई पार नहीं मिल रहा था। जो पापियों के (पापों के) ईश्वर ही थे, ऐसे राक्षस उनपर बैठे हुए थे। २३। रावण का जो रथ था वह सहस्र विद्युतों जैसा जगमगा रहा था। वह ऐसा अद्भुत था कि विधाता विश्वकर्मा (तक) उसे देखते ही मोह को प्राप्त हो जाते हैं। २४। रावण अस्त्रों और शस्त्रों से शरीर को विभूषित करके उस रथ में बैठ गया था। वहाँ उसके दसों

अस्त्र शस्त्र तन मंडित बेठो, रावण ते रथमांहे जी,
दशशीश उपर छत्र चळकतां, चामर वींजण त्यांहे जी । २५ ।
दश कोदंड ग्रही वीश भुजा, रथ बेठो रावणराय जी,
एम युद्ध करवाने रणमां आव्यो, ज्यां छे कपिसेनाय जी । २६ ।
ते जोईने वानर सर्वे ऊठ्या, मनमां लावी क्रोध जी,
जय बोलावी रामनी चाल्या, जुद्ध करवाने जोध जी । २७ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

जुद्ध करवाने कपि कूद्या, नाद थयो भुभुकार रे,
पछे ऊभे दळ संग्राम करवा, मांड्यो तेणी वार रे । २८ ।

* * *

मस्तकों पर छत्र चामर और व्यंजन (पंखे) जगमगा रहे थे । २५ । राजा रावण बीस हाथों में दस धनुष लेकर रथ में बैठा हुआ था । इस प्रकार वह युद्ध-भूमि में युद्ध करने के लिए वहाँ आ गया, जहाँ कपि-सेना (विद्यमान) थी । २६ । उसे देखते ही मन में क्रोध लाते हुए (मन में क्रुद्ध होकर) समस्त वानर उठ गये और वे योद्धा 'राम की जय' बोलते हुए युद्ध करने के लिए चल दिये । २७. ।

वानर युद्ध करने के लिए उछलने-कूदने लगे । भुभुकार ध्वनि होने लगी । फिर उसी समय उभय सेनाओं ने युद्ध करना आरम्भ किया । २८ ।

* * *

अध्याय—३९ (रावण का राम-लक्ष्मण और विभीषण से युद्ध; रावण-विभीषण-संवाद)

राग मारु

महाक्रोध करीने रावण आव्यो, जुद्ध करवाने तेणी वार,
तेनी उपर तरु पाषाण गिरिनो, वानर करता मार । १ ।

अध्याय—३९ (रावण का राम-लक्ष्मण और विभीषण से युद्ध; रावण-विभीषण-संवाद)

उस समय रावण बड़े क्रोध से युद्ध करने के लिए आ गया, तो वानर उसपर पेड़ों, पत्थरों और पर्वतों से आघात करने लगे । १ । उस समय महा दारुण युद्ध आरम्भ किया गया । समस्त वानर क्रुद्ध हो गये थे ।

महादारुण जुद्ध मंडायुं ते समे, कोपिया सहु कीश,
प्रोढ पर्वत मारता, फाटे असुरनां शीश। २।
रींछ मरकट कपि भालु, उछळ्या चोहो पास,
पदघाव मुष्टि वज्र मारे, करे असुरनो नाश। ३।
करनखे करीने नेत्र फोडे, करण-नासा जेह,
कपि करडता दंते करी, थया विरूप राक्षस तेह। ४।
रावण तणा रथ उपर चढीने, कूदी करता खंड,
ते रथ उपर मळमूत्र करी, मारे झापट पूंछ प्रचंड। ५।
एम कपितणुं बळ जोईने, कोप्यो रावणराय अपार,
दिव्य बाण मूकी कपिसेना, करी तारोतार। ६।
सुसवाट करतां चालतां, वीजळी सरखां बाण,
ते अंग भेदे कपि तणां, तत्काळ जाये प्राण। ७।
घणो मार जोई रावण तणो, दशे दिशा नाठा कीश,
कोना कर-पद तूटता ते कपि पाडे चीश। ८।
दळभंग जोईने कोपिया, पछे राम रणरंगधीर,
शर चाप चढावी रावण सन्मुख, ऊभा श्रीरघुवीर। ९।

वे प्रचण्ड पर्वतों से आघात कर रहे थे। असुरों के मस्तक फट जाते थे। २। चारों ओर से रीछ, मर्कट, कपि और भालू कूद रहे थे और वज्र के-से पदाघात और मुष्टि-घात (घूँसे) कर रहे थे। (इस प्रकार) वे असुरों का नाश कर रहे थे। ३। वे कपि हाथों के नाखूनों से आँखें फोड़ते थे, कानों और नाकों को दाँतों से काटते थे। इससे वे राक्षस विद्रूप हो गये। ४। वे रावण के रथ पर चढ़कर और कूदकर उसके टुकड़े-टुकड़े करने लगे। वे रथ पर (चढ़कर) मल-मूत्र (विसर्जित) कर रहे थे। वे अपनी प्रचण्ड पूँछों से उसपर आघात कर रहे थे। ५। कपियों के इस प्रकार बल को देखकर राजा रावण अपार क्रुद्ध हो गया। (फिर) वह दिव्य बाणों को चला (-चला) कर कपि-सेना को तार-तार करने लगा (छिन्न-भिन्न और तितर-बितर) करने लगा। ६। उसके विद्युत् जैसे बाण साँय-साँय करते हुए चल रहे थे। उनसे कपियों के अंग छिन्न-भिन्न होने लगे। (फल-स्वरूप) उनके प्राण तत्काल (निकल) जाते। ७। रावण की ऐसी बड़ी मार को देखकर वानर दसों दिशाओं में भागने लगे। किसी-किसी के हाथ-पाँव टूट जाते, तो वे कपि चीखते-चिल्लाते (चीत्कार कर देते)। ८। फिर अपने दल को भग्न होते देखते ही रणरंगधीर श्रीरघुवीर राम क्रुद्ध हो उठे और धनुष पर बाण चढ़ाकर

छूटवा मांड्यां धनुषथी, रामनां बाण प्रचंड,
राक्षस तणो संहार वळियो, वृष्टि थाय अखंड। १०।
ते जोईने दशकंध कोप्यो, कर्या अनेक उपाय,
पण अमोघ शर श्रीरामनां, रावणे नव छेदाय। ११।
पछे रावणे मूक्यां पंचशर, ब्रह्मास्त्र एके काळ,
विद्युतलता के पंचाग्नि, पंच प्राण काळ कराळ। १२।
सच्चिदानंदनुं अंग भेदी, गयां पेली पार,
पण प्रभु पाछा नव खस्या, वळी मूकीने ते ठार। १३।
ज्यम खळ अति निंदा करे, नव पामे साधु खेद,
अपार घन वरसतां गिरिने, व्यथा नव थाय वेद। १४।
एम रावणनां पंच बाण वाग्यां, खस्या नहि रणधीर,
पछे चाप चढाव्यां सप्त शर, रणपंडित श्रीरघुवीर। १५।
ते क्रोध करीने मूकियां, सीतापतिए त्यांहे,
रावण तणुं ते ह्रदे भेदी, पड्यां लंकामांहे। १६।
क्षणेक मूर्छित रह्यो रथमां, व्यथा थई दशशीश,
सावधान थई पछे ऊठियो, जुद्ध करवाने ते दीश। १७।

रावण के सम्मुख खड़े रह गये। ९। राम के प्रचण्ड बाण धनुष से छूटने लगे, तो राक्षसों का संहार होने लगा। फिर इस प्रकार अखण्ड (बाणों की) वर्षा हो रही थी। १०। उसे देखकर रावण अपार क्रुद्ध हो गया। उसने अनेक उपाय (आयोजित) किये। परन्तु रावण द्वारा राम के अमोघ बाण नहीं छेदे जा रहे थे। ११। अनन्तर रावण ने ब्रह्मास्त्र से युक्त पाँच बाण एक ही समय चला दिये। वे (मानो) विद्युल्लताएँ थीं या पाँच अग्नियाँ ही थीं, जो (विपक्षी) के पाँचों प्राणों के लिए कराल काल (के बराबर) थीं। १२। वे (बाण) सच्चिदानन्द (राम) के अंग को भेदकर उस पार चले गये। परन्तु प्रभु राम उस स्थान को छोड़कर पीछे नहीं हट गये। १३। जिस प्रकार कोई खल जन अति निन्दा करता हो, तो भी साधु उससे खेद को नहीं प्राप्त हो जाता, समझिए कि (जिस प्रकार) पर्वत पर मेघ के अपार बरसते रहने पर भी, उसे उससे कोई व्यथा नहीं अनुभव होती, उसी प्रकार रावण के पाँच बाण लग गये, फिर भी उससे रणधीर श्रीराम हट नहीं गये। अनन्तर रण-पण्डित रघुवीर ने सात बाण धनुष पर चढ़ा दिये। १४-१५। वहाँ सीतापति राम ने उन्हें क्रोध से चला दिया; वे रावण के हृदय को भेदकर लंका में (जाकर) गिर गये। १६। दशानन एक क्षण भर रथ में अचेत हो गया, उसे व्यथा

त्यारे लक्ष्मण कहे रघुवीरने, प्रभु करो तमो विश्राम,
हुं रावण साथे जुद्ध करुं, तम प्रतापे श्रीराम। १८।
एवुं कहीने अर्धचंद्र शर, मूकियुं पन्नग-ईश,
रावण तणा सारथि केरुं, छेदियुं तव शीश। १९।
दश बाण मूकी दशाननना, काप्यां दश कोदंड,
वळी कवच छेद्युं अंगथी, पंच बाण मूकी प्रचंड। २०।
वळी विभीषणे तेणे समे, अष्ट बाण मूक्यां रणमाहे,
तेणे रावणना रथ तणा घोडा, अष्ट मार्या त्यांहे। २१।
वळी एक बाणे धजा छेदी, भांग्यो रथ शर वीश,
त्यारे बीजा रथ पर बेठो रावण, गाजियो दशशीश। २२।
प्रल्ले अग्निवत् कोप करी, ब्रह्मशक्ति काढी संहारवा,
ते परम दारुण तेजस्वी, मूकी विभीषणने मारवा। २३।
ते शक्ति दीठी लक्ष्मणे, जाण्युं विभीषणने मारशे,
ए शरणागत छे आपणो, एने बीजो कोण उगारशे। २४।

(अनुभव) हो गई। (फिर भी) वह फिर से सावधान होकर, उस स्थान पर युद्ध करने के लिए उठ गया। १७। तब लक्ष्मण ने रघुवीर से कहा, 'हे प्रभु, आप विश्राम कीजिए। हे श्रीराम, आपके प्रताप के बल पर मैं रावण से युद्ध करूँगा।' १८। ऐसा कहकर उस सर्प-पति अर्थात् शेष (के अवतार लक्ष्मण) ने अर्धचन्द्र बाण चला लिया। तब उसने रावण के सारथी के मस्तक को छेद डाला। १९। उसने दस बाण चलाकर रावण के दसों धनुष काट डाले। इसके अतिरिक्त, पाँच प्रचण्ड बाण चलाकर उसने उसके अंग पर (पहना हुआ) कवच छेद डाला। २०। फिर विभीषण ने उस समय युद्ध-भूमि में आठ बाण चला दिये और उनसे वहाँ रावण के रथ के आठों घोड़ों को मार डाला। २१। इसके अतिरिक्त उसने एक बाण से ध्वजा छेद डाली, बीस बाणों से रथ को भग्न कर डाला। तब दशानन रावण दूसरे रथ में बैठ गया और वह गरज उठा। २२। प्रलयकाल की अग्नि की भाँति क्रोध करते हुए उसने (सबका) संहार करने के हेतु एक ब्रह्म-शक्ति निकाल ली। वह परम दारुण तथा तेजस्वी थी। उसे विभीषण को मार डालने के लिए (रावण ने) चला दिया। २३। उस शक्ति को (जब) लक्ष्मण ने देखा, तो उसने समझ लिया कि यह विभीषण को मार डालेगी। (उसने सोचा—) यह अपना शरणागत है। इसे दूसरा कौन बचाएगा? । २४। ऐसा विचार करके लक्ष्मण ने उस समय, एक बाण चला दिया। उसने उस

एम विचारी एक बाण मूक्युं, लक्ष्मणे तेणी वार,
ते शक्तिना त्रण भाग करिया, छेदी छे निरधार । २५ ।
ते ख़ंड पडतां पृथ्वी पर, थया दग्ध असुर अति घणा,
जो लक्ष्मण ए छेदत नहि तो, प्राण हरत विभीषण तणा । २६ ।
मानभंग पाम्यो दशानन, ब्रह्मशक्ति व्यर्थ गई जदा,
त्यारे रावण ते विभीषणनी साथे, क्रोधे करी बोल्यो तदा । २७ ।
अल्या नपुंसक धिक्कार तुजने, शत्रुने शरणे गयो,
तुं असुरकुळमां अवतरीने, कुबुद्धि कायर थयो । २८ ।
अल्या अमे तारुं कर्युं पालन, ते सर्व मिथ्या गयुं,
ज्यम भस्ममां अवदान आपे, एम तुज पर ते थयुं । २९ ।
अल्या मृतकने शणगार ज्यम, परणावी पद्मिनी षंढने,
कृतघ्नीने उपकार ज्यम, गुण करीए लंपट लंठने । ३० ।
एम अमे तुजने पाळियो, ज्यम पाळे पयथी सर्पने,
ते आज शत्रुनो थयो, मूकी सकळ कुळदर्पने । ३१ ।

शक्ति के तीन टुकड़े कर डाले और उसे निश्चय ही छेद डाला । २५ । उन खण्डों के पृथ्वी पर पड़ने से अत्यधिक (संख्या में) असुर जल गये । यदि लक्ष्मण उस (शक्ति) को न काटते, तो वह विभीषण के प्राणों को हर लेती । २६ । जब ब्रह्मशक्ति व्यर्थ हो गयी, तो दशानन मान-भंग (अपमान) को प्राप्त हो गया । तब रावण क्रुद्ध होकर विभीषण से बोला । २७ । 'अरे, नपुंसक, तू शत्रु की शरण में गया है, (अतः) तुझे धिक्कार है । असुरों के कुल में उत्पन्न होकर भी तू कुबुद्धिशील और कायर हो गया है । २८ । अरे, हमने तेरा परिपालन किया, वह सब मिथ्या (व्यर्थ) हो गया । जिस प्रकार कोई भस्म में अवदान (आहुति-द्रव्य अर्पित कर) दे (तोवह व्यर्थ हो जाता है), उस प्रकार हमने तेरे लिए जो किया, वह तुझपर व्यर्थ (सिद्ध) हो गया है । २९ । अरे (जिस प्रकार) मृतक के लिए शृंगार (सजाना) व्यर्थ (हो जाता) है, किसी पद्मिनी (जाति की) स्त्री का परिणय षण्ढ (नपुंसक) से करा दें, तो वह व्यर्थ हो जाता है; जिस प्रकार कृतघ्न का उपकार करें या लम्पट-लण्ठ का गुण (-गान) करें, तो वह व्यर्थ ही हो जाता है, उसी प्रकार हमने तेरा लालन-पालन किया, वह वैसे ही व्यर्थ हो गया है । जैसे साँप को कोई दूध से (दूध पिलाकर) पाल ले, (तो वह साँप विष का त्याग नहीं करता, बल्कि पालनेवाले को भी काट सकता है) वैसे ही हमने तुझे पाला है; फिर भी (तू साँप की भाँति, हमारे प्राणों का शत्रु हो गया है) तू आज (हमारे

कुळमां कलंक उदे थयो, कुळ तणो करवा नाश,
ज्यम वांस बाळे सकळ वन, करी प्रगट अंग हुताश । ३२ ।
अल्या कुळतणो क्षे कराव्यो, तुज बंधुने धिक्कार,
इंद्रजितने तें मराव्यो, कही सकळ मर्मविचार । ३३ ।
जेनुं घर फूट्युं तेनुं कर्म फूट्युं, एम कहे शास्त्र-पुराण,
एवां वचन सुणी रावणतणां, बोल्या विभीषण वाण । ३४ ।
अल्या मंदबुद्धि मलिन पापी, शी बोले जूठी जल्पना ?
पहेलो विचार सूझ्यो नहि हवे, मिथ्या शी करे कल्पना ? । ३५ ।
तें तारे हाथे क्षय कर्युं कुळ, शीद लाव्यो सीता करी हर्ण ?
रघुवीर शरणे हुं गयो, जेथी टळे जन्म ने मर्ण । ३६ ।
दुर्भागी में तुजने कह्यां, घणां वचन हेतु मर्मनां,
ते मान्यां नहि हावे तारी मेळे, भोगव्य फळ जे कर्मनां । ३७ ।
रूडी शीख देतां पाटु मारी, काढी मूक्यो मुजने,
अल्या प्रह्लादे ज्यम पिता तजियो, एम तज्यो में तुजने । ३८ ।

विरोध में) समस्त कुलाभिमान को छोड़कर शत्रु (पक्ष) का (साथी) हो गया है । ३०-३१ । (तेरे रूप में) कुल का नाश करने के लिए कुल में कलंक ही उत्पन्न हो गया है । अरे, जिस प्रकार अपने अंग में से आग प्रकट करते हुए बाँस समस्त वन को जला डालता है, उस प्रकार तूने (हमारे सम्बन्ध में शत्रुता-रूपी आग उत्पन्न करते हुए) हमारे कुल का नाश करवा डाला है । तुझ बन्धु को धिक्कार है । समस्त मर्म-भरा विचार करते हुए, तूने इन्द्रजित को मरवा डाला है । शास्त्र और पुराण इस प्रकार कहते हैं कि 'जिसका घर फूट पड़ा (जिसके घर में फूट पड़ गयी) उसका कर्म (भाग्य) भी फूट गया (फूट जाता है) ।' रावण की ऐसी बातें सुनकर विभीषण ने यह बात कही । ३२-३४ । 'अरे मन्द बुद्धिवाले, मलिन पापी, झूठी जल्पना (बकवास) क्या कर रहा है ? पहले तुझे (सद्-) विचार नहीं सुझायी दिया और अब मिथ्या (झूठी, व्यर्थ) कल्पना क्या कर रहा है ? । ३५ । तूने अपने हाथों से कुल का क्षय कर डाला है । अपहरण करके सीता को तू क्यों ले आया ? मैं तो रघुवीर की शरण में गया हूँ, जिससे जन्म और मृत्यु टल जाएँगे (मुक्ति मिल जाएगी) । ३६ । रे अभागे, मैंने तुझे मार्मिक हेतु भरी बहुत बातें कही थीं, उन्हें तूने नहीं माना था । अब तेरे किये कर्म के जो फल होंगे, उन्हें तू स्वयं भोग लेना । ३७ । सुन्दर शिक्षा देने पर (भी) तूने मुझे लात मारी और मुझे (घर से) निकाल दिया । अरे, जिस प्रकार प्रह्लाद ने पिता को त्याग

एवां विभीषणनां वचन सुणी, बोल्या रावण रीसे जाण,
अल्या लक्ष्मणे तने उगार्यो, नहि तो लेत तारा प्राण। ३९।
पण हवे जो तुं मारु प्राक्रम, नाम रावण मुज तणुं,
अल्या तुंने जेणे राखियो, लक्ष्मणने हवडां हणुं। ४०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अल्या हणुं हवणां लक्ष्मणने, जेणे ब्रह्मशक्ति करी खंड रे,
एम कहीने कोप्यो दशानन, जाणे उजाडशे ब्रह्मांड रे। ४१।

* * *

दिया, उस प्रकार मैंने तुझे त्यज दिया है।' ३८। समझिए कि विभीषण की ऐसी बातें सुनकर रावण क्रोध से बोला, 'अरे, लक्ष्मण ने तुझे बचा लिया, नहीं तो मैं तेरे प्राण लेता। ३९। परन्तु, अब मेरा पराक्रम देख —मेरा नाम रावण है। अरे, तुझे जिसने (बचा) रखा है, अब उस लक्ष्मण को मार डालता हूँ। ४०।

अरे, जिसने ब्रह्म-शक्ति को खण्डित कर डाला, उस लक्ष्मण को मैं अभी मार डालता हूँ।' ऐसा कहते हुए दशानन क्रुद्ध हो उठा —मानो, (अब) वह ब्रह्माण्ड को उजाड़ डालेगा। ४१।

* * *

अध्याय—४० (रावण द्वारा प्रेरित शक्ति से लक्ष्मण का मूर्च्छित हो जाना)

राग मारु

कोप्यो रावण तेणी वार, मारुं लक्ष्मणने निरधार,
मारो विजयी पुत्र इंद्रजित, एणे मार्यो करीने अनीत। १।
पुत्रनुं वेर लेउं आज, त्यारे होलाय मारी दाझ,
एवुं कही काढी शक्ति एक, धगधगती तेज विशेक। २।

अध्याय—४० (रावण द्वारा प्रेरित शक्ति से लक्ष्मण का मूर्च्छित हो जाना)

रावण उस समय क्रुद्ध हो गया। 'मैं निश्चयपूर्वक लक्ष्मण को मार डालूँगा। मेरे विजेता पुत्र इन्द्रजित को इसने अनीति से मारा है। १। आज मैं पुत्र की मृत्यु का बदला लेता हूँ; तब मेरी जलन (की आग) बुझेगी।' ऐसा कहते हुए उसने एक शक्ति निकाल ली, जो विशिष्ट तेज से (इस प्रकार) धधक रही थी, जैसे सहस्र सूर्य उदित हो गये हों। जिस

सहस्र सूर्य ऊग्या होय ज्यम, जेवी जिह्वा कृतांतनी त्यम,
प्रलय मेघ तणी मुख्य वीज, सर्व अग्नितणुं ज्यम बीज। ३।
के समेटी सप्त कोटी मंत्र, शक्तिरूपे थया एक तंत्र,
एवी अमोघ शक्ति जेह, मय नामाए आपी'ती तेह। ४।
दशानन पोतानो जमात्र, कर्युं' तुं दान जाणीने पात्र,
नहोती काढी रावणराज, राखी'ती जीवरक्षण काज। ५।
काढी लक्ष्मणने हणवा तेह, मंत्र न्यासयुक्त करी एह,
पछे मूकी शक्ति दशशीश, चाली गर्जना करती ते दिश। ६।
नव खंडवती धरास्थान, ते समे थई कंपायमान,
ऊछळ्या सिंधु डोल्या दिगपाळ, गिरिशिखर पड्यां ते काळ। ७।
पळ्या देव लेईने विमान, ऊभे सेन्या थई भयवान,
चाली सांग करती सुसवाड, जाणे विश्वनो करशे उजाड। ८।
दीठी आवती ते हनुमंत, डाबे हाथे झाली बळवंत,
त्यारे शक्ति थई स्त्रीरूप, सुंदरी वरस सोळ अनुप। ९।

प्रकार कृतान्त यमदेव की जिह्वा होती है, उस प्रकार वह चमक रही थी। जिस प्रकार प्रलय मेघ में मुख्य बिजली (तेजस्वी) होती है, अथवा समस्त अग्नियों में बिजली (तेजोयुक्त) होती है, उस प्रकार वह शक्ति तेजस्वी थी। अथवा सात करोड़ मन्त्रों को इकट्ठा करने से कोई एक तन्त्र उस शक्ति के रूप में उत्पन्न हुआ (जान पड़ता था)। ऐसी वह अमोघ शक्ति थी, जो उसे मय नामक असुर ने प्रदान की थी। २-४। अपने जामाता दशानन को योग्य समझकर मय दानव ने उसे वह प्रदान की थी। राजा रावण ने उसे (कभी) निकाला नहीं था। उसने जीव (आत्म-) रक्षा के लिए वह रख दी थी। ५। उसने लक्ष्मण को मार डालने के लिए निकालकर उसे मन्त्र-न्यास से युक्त कर दिया। फिर रावण ने उसे चला दिया, तो वह उस दिशा में गर्जना करती हुई चल दी। ६। नौ खण्ड वाली पृथ्वी उस समय कम्पायमान हो गयी (नव-खण्ड पृथ्वी काँप उठी)। समुद्र उछल उठे, दिग्पाल डोलने लगे; पर्वत-शिखर उस समय (ढहते हुए) गिर पड़े। ७। देव विमानों को लेकर भाग गये; उभय सेनाएँ भययुक्त (भयभीत) हो गयीं। वह साँग साँय-साँय करती हुई चल दी। मानो वह विश्व को उजाड़ कर दे। ८। बलवान हनुमान ने उसे आते हुए देखा, तो उसने उसे बायें हाथ से पकड़ लिया। तब वह शक्ति सोलह वर्ष की अनुपम सुन्दर स्त्री हो गयी (स्त्री-रूप में परिवर्तित हो गयी)। ९। (फिर) वह हनुमान से यह बात बोली, 'हे वायु-कुमार, छोड़ दो, मुझे

बोली हनुमंत साथे वचन, मूक्य मूक्य मुंने वायुतन,
हे मारुति, तुं ब्रह्मचारी, क्यम ग्रहण करे परनारी ? १० ।
हुं रावणनी कन्या आज, जाउं सौमित्रने वरवा काज,
एवुं सुणी इंद्रजित योगींद्र, लाज्या मनमां ते मूकी बळीन्द्र । ११ ।
चाली शक्ति थई मूळरूप, दीठी आवती पन्नगभूप,
तेने छेदवा तत्क्षण जाण, खेंच्युं धनुष चढावीने बाण । १२ ।
एटले आवी शक्ति तेणी वार, चोंटी लक्ष्मण हृदय मोझार,
नीकळी भेदी पृष्ठे तत्काळ, पृथ्वी फोडीने गई पाताळ । १३ ।
पड्या लक्ष्मणजी तेणी वार, पृष्ठे चाली रुधिरनी धार,
निष्चेष्टित पड्या थई ज्यम प्रेत, श्वासोश्वासरहित अचेत । १४ ।
ज्यारे पड्या सुमित्राकुमार, कर्यो विभीषणे तव पोकार,
ते सुणी पडी रामने फाळ, पासे धाईने आव्या तत्काळ । १५ ।
सरवे कपि मन पाम्या त्रास, वींटी बेठा लक्ष्मणनी पास,
सर्वे कल्पांत करता अपार, ते समे वर्त्यो हाहाकार । १६ ।
बेठा राम लक्ष्मणनी पास, घणुं रुदन करे अविनाश,
राम रोतां रोया कपिमात्र, जोई जोईने सुमित्रीनुं गात्र । १७ ।

छोड़ दो । हे हनुमान, तुम ब्रह्मचारी हो, तो पर-स्त्री को कैसे स्वीकार कर रहे हो ? । १० । मैं रावण की कन्या हूँ । मैं आज लक्ष्मण का वरण करने के लिए जा रही हूँ ।' ऐसा सुनते ही वह जितेन्द्रिय योगीन्द्र हनुमान मन-ही-मन लज्जित हो गया और फिर उस बलेन्द्र (बल के राजा) ने उसे मुक्त कर दिया । ११ । (तदनन्तर) वह शक्ति अपने मूल रूप को प्राप्त होकर चल दी । सर्पराज शेष (के अवतार लक्ष्मण) ने उसे आते हुए देखा । समझिए कि उसे तत्क्षण छेद डालने के लिए उसने धनुष पर बाण चढ़ाते हुए खींच लिया । १२ । इतने में उस समय वह शक्ति आकर लक्ष्मण के हृदय (-स्थल) पर (आघात करती हुई) लग गयी । पीठ को भेदते हुए वह पीछे निकल आयी और पृथ्वी को फोड़कर तत्काल पाताल में चली गयी । १३ । उस समय लक्ष्मण गिर पड़ा और उसकी पीठ से रक्त की धारा चल पड़ी । वह साँस-उसाँस रहित, अचेत होकर प्रेत-जैसा होते हुए निश्चेष्ट पड़ गया । १४ । जब लक्ष्मण गिर गया, तब विभीषण चिल्ला उठा । वह चीख राम को सुनायी दी, तो वे तत्काल दौड़ते हुए उसके पास आ गये । १५ । समस्त कपि मन में भय को प्राप्त हो गये और वे लक्ष्मण के पास उन्हें घेर कर बैठ गये । सब अपार शोक करने लगे । उस समय हाहाकार मच गया । १६ । अविनाशी भगवान राम

धनुष पर खेंच्युं छे बाण, एम पड्या सुमित्री निरवाण,
लक्ष्मणने लीधा रामे उछंग, पछी रुदन करे श्रीरंग। १८।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

श्रीरंग राम रुदन करे, जणावे मानुषी लीला अपार रे,
लक्ष्मणजीने उछंगमां लईने, करता विविध विलाप रे। १९।

लक्ष्मण के पास बैठ गये। वे बहुत रुदन कर रहे थे। राम के रोते रहने पर समस्त कपि लक्ष्मण के शरीर को देख-देखकर रो रहे थे। १७। धनुष पर बाण खींचा हुआ था —इस रूप में लक्ष्मण अन्त में पड़े हुए थे। (अनन्तर) श्रीरंग राम ने लक्ष्मण को गोद में उठा लिया और फिर वे रुदन करने लगे। १८।

श्रीरंग श्रीराम रुदन कर रहे थे। (इस प्रकार) वे अपार मानवीय लीला प्रदर्शित कर रहे थे। लक्ष्मण को गोद में लेकर वे विविध प्रकार (से) विलाप कर रहे थे। १९।

* * *

अध्याय—४१ (लक्ष्मण को मूर्च्छित हुए देखकर श्रीराम का विलाप करना)

राग विलाप

मारा लाडकवाया वीर, लक्ष्मण, बोलो रे बाळा,
हावे क्यम राखुं धीर? लक्ष्मण बोलो रे बाळा।
एम रुदन करे रघुवीर, लक्ष्मण बोलो रे बाळा,
चाले नेत्रे चोधारां नीर, लक्ष्मण बोलो रे बाळा। ल० १।
कहो वीरा तमने शुं थयुं रे? बोलो वचने विख्यात,
तुं नेत्र उघाडी जो मुज सामुं, कहे सुखदुःखनी वात। ल० २।

अध्याय—४१ (लक्ष्मण को मूर्च्छित हुए देखकर श्रीराम का विलाप करना)

'मेरे लाड़ले भाई लक्ष्मण, हे बच्चे, बोलो (न रे)! मैं अब धीरज कैसे रखूँ? रे लक्ष्मण, बोलो (न रे बच्चे)!' रघुवीर राम इस प्रकार रुदन कर रहे थे (रोते-रोते बोल रहे थे)। 'रे लक्ष्मण, बोलो (न रे) बच्चे।' उनकी आँखों से चार धाराओं से (अश्रु-) जल बह रहा था। (वे बोले—) 'रे लक्ष्मण, बोलो (न रे) बच्चे। हे लक्ष्मण०। १। हे भाई, कह तो दो कि तुम्हें क्या हो गया है। परिचित (स्वर में) बात तो कहो। तुम मेरे सामने आँखों को खोलकर सुख-दुःख की वात तो वता

तें त्रिभुवनमां कीर्ति विस्तारी, बाळ अवस्थामांहे,
भाई मुंने एकलो मूकी चाल्यो, फरी हावे मळीशुं क्यांहे ? । ल० ३ ।
वरस चतुरदश वनमां साथे, फळजळ आप्यां अमने,
अमो एवा निर्दय न कह्युं कोई दिन, फळ खावानुं तमने । ल० ४ ।
तें चौद वरस निद्रा नव कीधी, रह्या सदा उपवासी,
माटे रिसाई नथी बोलतो आम साथे, आवी छे उदासी । ल० ५ ।
तें त्रिभुवनविजयी इंद्रजितने, कष्ट करीने मार्यो,
पराक्रम तारुं कह्यामां न आवे, निर्मळ जश विस्तार्यो । ल० ६ ।
मुज मरजी माफ़क सेवा करतो कपटरहित व्रतधारी,
हावे बंधव क्यम नथी बोलतो ? कोण पाळशे आज्ञा मारी ? । ल० ७ ।
हुं अवधपुरीमां जईने हावे, शुं देखाडीश मुख ?
तुज विना हुं थयो दामणो, दैवे क्यम दीधुं आवुं दुःख ? । ल० ८ ।
उत्तर शो हुं आपीश ? पूछशे, भरत शत्रुघन भ्रात,
तारुं मरण सांभळीने, नहि जीवे सुमित्रा मात । ल० ९ ।
पुत्र विना परिवार ज सूनो, त्रिया विना घर ज्यम,
बंधव विना नहि बेल ज कोनी, मित्र विना शो मर्म ? । ल० १० ।

दो । हे लक्ष्मण० । २ । तुमने बाल्यावस्था में त्रिभुवन में अपनी कीर्ति को फैला दिया है । हे भाई, मुझे अकेला छोड़कर तुम चले गये हो । तो अब फिर से हम कब मिलेंगे ? हे लक्ष्मण० । ३ । तुमने हमें साथ में (रहकर) वन में चौदह बरस फल और जल दिया । उस समय हम निर्दय ने किसी भी दिन तुम्हें फल खाने को नहीं कहा । हे लक्ष्मण० । ४ । तुमने चौदह वर्ष नींद नहीं ली, तुम सदा अनशन किये हुए रह गये । इसलिए रूठकर तुम हमसे नहीं बोल रहे हो । तुम्हें ऐसी उदासी आ गयी है । हे लक्ष्मण० । ५ । तुमने बहुत कष्ट उठाकर त्रिभुवन के विजेता इन्द्रजित को मार डाला । तुम्हारा पराक्रम कहने में नहीं आ सकता (कहा नहीं जा सकता) । तुमने (जगत् में) अपने निर्मल यश का विस्तार किया है । हे लक्ष्मण० । ६ । तुम मेरी इच्छा के अनुसार मेरी सेवा कर रहे थे । तुम कपट रहित थे, व्रतधारी थे । हे बन्धु, अब क्यों नहीं बोलते ? मेरी आज्ञा का पालन (अब) कौन करेगा ? हे लक्ष्मण० । ७ । मैं अवधपुरी में जाकर अब कौन मुंह दिखाऊँ ? विना तुम्हारे मैं दीन (-हीन) हो गया हूँ । दैव ने ऐसा दुःख (मुझे) क्यों दिया ? हे लक्ष्मण० । ८ । (जब) भाई भरत और शत्रुघ्न पूछेंगे, तो मैं क्या उत्तर दे सकूंगा ? तेरी मौत (की वार्ता) सुनकर सुमित्रा माता जीवित नहीं रह पाएगी । हे लक्ष्मण० । ९ ।

ऊठो बंधव वार ज लागे, मारवो रावणराय,
आपणे अवधपुरीमां जईए, संगे लई सीताय। ल० ११।
हावे रावणने हणवा माटे, आव्या'तो रूडो दाव,
ते दैवे कारज विपरीत कीधुं, तेडे आवेलुं वूड्युं नाव। ल० १२।
रघुपति एम विलाप करे, जोई लक्ष्मणनुं वदन,
पछी आंसु लूछी धीरज आपी, विभीषण वोल्या वचन। ल० १३।

वलण (तर्ज बदलकर)

नीतिवचन कही विभीषणे, श्रीरामने आपी धीर रे,
श्रोताजन सहु सांभळो, पछी शुं करता रघुवीर रे? १४।

बिना पुत्र के परिवार (वैसे) ही सूना हो जाता है, जैसे बिना स्त्री के घर होता है। बिना बन्धु के जोड़ी कैसे बन सकती है? बिना मित्र के (मनुष्य के लिए) मर्म-स्थान क्या हो सकता है? हे लक्ष्मण०। १०। हे बन्धु, उठ जाओ। देर ही हो रही है। हमें रावण को मारना है। हम सीता को साथ में लेकर अयोध्यापुरी में जाएँ। हे लक्ष्मण०। ११। रावण को मारने के लिए अब सुन्दर दाँव आया हुआ था। उस काम को दैव ने विपरीत कर डाला। लायी हुई नाव डूब गयी। हे लक्ष्मण०। १२। लक्ष्मण के मुँह को देखते हुए रघुपति राम इस प्रकार विलाप कर रहे थे। तदनन्तर विभीषण ने उनके आँसू पोंछकर ढाढ़स बँधाते हुए यह बात कही। हे लक्ष्मण०। १३।

श्रीराम को ढाढ़स बँधाते हुए विभीषण ने नीतियुक्त बातें कह दीं। हे समस्त श्रोताजनो, सुनिए, फिर रघुवीर क्या करते हैं। १४।

* * *

अध्याय—४२ (राम द्वारा राक्षस-सेना का संहार; रावण द्वारा ब्रह्माण्ड राममय देखना)

राग सोरठ

सुणो श्रोताजन सावधान थई, एम रुदन कीधुं राम,
ए प्रभु मनुष्यचेष्टा करे जे, ब्रह्मपूरण काम। १।

अध्याय—४२ (राम द्वारा राक्षस-सेना का संहार; रावण द्वारा ब्रह्माण्ड राममय देखना)

हे श्रोताजनो, सावधान होकर सुनिए। राम ने इस प्रकार रुदन किया। वे प्रभु राम, जो (वस्तुतः) पूर्णकाम ब्रह्म हैं, मनुष्य की-सी चेष्टा

अज अजित सुखसिंधु सदा छे, अमोघ ज्ञान अखंड,
क्षणमांहे सृष्टि उदे करे, क्षणमां भांजे ब्रह्मांड । २ ।
विश्वना आत्मा राम पोते, प्रकाशक जगदीश,
जे जगतगुरु जगनियंता, भगवान माया ईश । ३ ।
ते प्रभुने शोक मोह, आव्रणरहित अविनाश,
पण जन्मकारण जणावे; ए माया मनुष्यविलास । ४ ।
भोगींद्र लक्ष्मणजी तदा, तेने शुं करे कोई हाण ?
बळी थाय भस्म ब्रह्मांड जेना, श्वासथी निरवाण । ५ ।
ए लीला गावा दासने करे, राम मनुष्यचरित्र,
हावे श्रोताजन सावधान थई, सुणो कथा पुण्य पवित्र । ६ ।
रोता राखी रामने, पछी बोल्या विभीषण वाण,
महाराज राखो क्षमा हावे, धीरज पुरुष पुराण । ७ ।
ए क्षत्री केरो धर्म छे, सुख दुःखे जन्म ने मर्ण,
माटे शत्रु ऊभो सांभळे, तजो मायानुं आवर्ण । ८ ।

(मनुष्य-लीला) कर रहे थे । १ । वे अजन्मा, अजित, नित्य सुखसागर हैं, वे अमोघ (कभी न चूकनेवाले अर्थात् व्यर्थ न होनेवाले) हैं, (साक्षात्) ज्ञान हैं, अखण्ड (अर्थात् जिसका कभी खण्डन नहीं हो पाएगा) हैं । वे क्षण में सृष्टि का निर्माण कर सकते हैं, तो क्षण में ब्रह्माण्ड को भग्न अर्थात् नष्ट कर सकते हैं । २ । राम स्वयं विश्व की आत्मा हैं; वे विश्व को प्रकाशित कर देनेवाले जगदीश हैं । जो भगवान (राम स्वयं) जगद्गुरु तथा जगन्नियन्ता हैं, वे माया के ईश (माया-पति, माया के स्वामी) हैं । ३ । उन प्रभु (राम) को शोक-मोह (जैसे विकार) नहीं (अनुभव होते) हैं । वे अविनाशी (भगवान् अज्ञान तथा माया के) आवरण-रहित हैं । परन्तु (मनुष्य-) जन्म लेने के कारण वे मनुष्य का माया (-जन्य लीला-) विलास दिखला रहे हैं । ४ । जिसकी साँस से ब्रह्माण्ड जलकर निश्चय ही भस्म हो सकता है, वह भोगीन्द्र (शेष भगवान्) लक्ष्मण (के रूप में अवतरित) है । तब उसकी कोई क्या हानि कर सकता है ? । ५ । अपने दासों के लिए उसका लीला-गान कराने के लिए, राम मनुष्य-चरित्र प्रस्तुत कर रहे हैं । हे श्रोता जनो, अब सावधान होकर यह पुण्य-पवित्र कथा सुनिए । ६ । राम को (कुछ समय के लिए) रोते हुए रखकर (कुछ समय के लिए रोने देकर) फिर विभीषण ने यह बात कही । हे महाराज, हे पुराण पुरुष, क्षमा (शान्ति) और धीरज रखिए । ७ । सुख और दुख, जन्म और मृत्यु के सम्बन्ध में यह क्षत्रियों का धर्म है ।

सावधान थईने शत्रुनो, करो पराजय महाराज,
पछी लक्ष्मणनो उपाय करिये, थाय सुख ज्यम आज। ९।
एवुं सुणीने रघुवीर कोप्या, ऊठिया तेणी वार,
संग्राम अरथे सज थया, कर्यो धनुष्यनो टंकार। १०।
ब्रह्मांड सर्वे खळभळ्युं, डोल्या दशे दिगपाल,
आसुरी केरा गर्भ गळिया, धुनी गई पाताळ। ११।
पछी रावणने रघुवीर कहे, अल्या ऊभो रहे तुं आंहे,
ते शक्ति मारी सुमित्रीने, हावे जाईश क्यांहे ?। १२।
एवुं कहीने मूकवा लाग्या, राम तीक्ष्ण बाण,
एकनां थाय अनेक भेदे, असुरने निरवाण। १३।
ज्यम रेणुकनी वारे धाया, फरशुधर निरधार,
सहस्रबाहुने हणी कर्यो, क्षत्रीनो संहार। १४।

शत्रु आपका यह विलाप खड़ा होकर सुन रहा है। अतः आप माया के आवरण को छोड़ दीजिए। ८। हे महाराज, सावधान होकर शत्रु की पराजय कर दीजिए। अनन्तर लक्ष्मण का उपाय कीजिए, जिससे आज (हम सबको) सुख हो जाए।'। ९। ऐसा सुनते ही रघुवीर राम क्रुद्ध हो गये और उसी समय उठ गये। वे युद्ध के लिए सज्ज हो गये और उन्होंने धनुष की टंकार कर दी। १०। तो समस्त ब्रह्माण्ड भय से काँप उठा, दसों दिक्पाल विचलित हो उठे। असुरियों के गर्भ गिर गये। (वह टंकार-) ध्वनि पाताल में गयी। ११। फिर राम रावण से बोले, 'अरे, तू यहाँ खड़ा रह जा। तूने लक्ष्मण पर शक्ति चला दी है, तो अब कहाँ जा पाएगा ?'। १२। ऐसा कहते हुए राम तीक्ष्ण बाण चलाने लगे। वे एक से अनेक हो रहे थे और निश्चय ही असुरों को छिन्न-भिन्न कर रहे थे। १३। जिस प्रकार (आवश्यकता के समय) माता रेणुका की सहायता के लिए परशुधारी परशुराम निर्धार-पूर्वक दौड़ा और कार्तवीर्य सहस्रकर की हत्या करके उसने क्षत्रियों का संहार कर डाला;[1]

---

[1] रेणुका ··· परशुराम ··· कार्तवीर्य सहस्रकर : कार्तवीर्य कर-हीन अवस्था में जन्मा था; परन्तु उसने गणेश की आराधना की; उससे प्रसन्न होकर उन्होंने उसे सहस्र हाथ प्रदान किये। इस कारण वह सहस्रकर या सहस्रबाहु कहाने लगा। जमदग्नि ऋषि की कामधेनु बलात् छीनकर वह चला गया, तो अनन्तर परशुराम ने उसका वध किया। परन्तु पिता के आदेश से इस हिंसा के पाप के क्षालनार्थ वह तपस्या करने चला गया। उस समय कार्तवीर्य के पुत्रों ने जमदग्नि का वध किया, माता रेणुका भी क्षत-ग्रस्त हो गयी। परशुराम के लौटने पर रेणुका की सूचना के अनुसार परशुराम ने पिता के वध का बदला चुकाने के लिए पृथ्वी को इक्कीस बार निःक्षत्रिय कर डाला।

षडानने वळी संघार्यु, तारकासुर दळ ज्यम,
एम लक्ष्मणने शोके करी, रघुवीर कोप्या त्यम । १५ ।
घणा असुरनो संहार करियो, शर चढावी चाप,
ज्यम स्नान करतां प्रयागमां, जाय कोटी जनमनां पाप । १६ ।
एम रामबाण अमोघ चाले, सकळ मंत्रे जेह,
सुसवाड करतां चमकतां, वीजळी सरखां तेह । १७ ।
ते समे सेन्या केटली त्यां, हणी दशरथतन,
वाल्मिकमुनिए करी गणना, सुणो श्रोताजन । १८ ।
दस सहस्र मदगळ मत्त वारण, त्रीस सहस्र तुरंग,
पंच सहस्र मणि कनक रथ ते, स्वार महारथी संग । १९ ।
पायदळ शत क्रोड ज्यारे, हणे जुद्ध संबंध,
एटला सेन्या संहारे त्यारे, नाचे एक कबंध । २० ।

इसके अतिरिक्त, (जिस प्रकार) षड़ानन स्कन्द ने तारकासुर और उसके दल का संहार कर डाला,[१] उस प्रकार, लक्ष्मण के शोक के कारण, रघुवीर राम क्रुद्ध हो उठे और धनुष पर बाण चढ़ाते हुए उन्होंने बहुत असुरों का संहार किया। जिस प्रकार प्रयाग में स्नान करने से करोड़ों जन्मों के पाप (धुल) जाते हैं, और पापी का उद्धा रहो जाता है, उस प्रकार राम के बाणों से युद्ध-भूमि में धराशायी होते हुए रक्त-स्नान होने से असुरों के करोड़ों जन्मों के पाप धुल गये; फलतः वे उद्धार को प्राप्त हो गये। १४-१६। इस प्रकार राम के बाण अचूक चलते थे, जिनमें समस्त मंत्र स्थापित थे। वे (बाण) साँय-साँय करते हुए चलते थे और बिजली की भाँति चमकते थे। १७। उस समय दाशरथी राम ने वहाँ कितनी सेना मार डाली, उसकी गणना वाल्मीकि ऋषि ने की है। हे श्रोता जनो, उसे सुनिए। १८। जिनके गण्ड-स्थलों से मद-रस झर रहा था, ऐसे दस सहस्र मत्त हाथी, तीस सहस्र घोड़े, रत्नों तथा सुवर्ण के (बनाये हुए) पाँच सहस्र रथ महारथी सवारों सहित नष्ट हो गये। शत करोड़ पदाती (सैनिक) वे जब युद्ध में मार डालते हों, इतनी सेना का जब वे संहार करते हों, तब एक कबन्ध नाचने लगता है। १९-२०

---

१ षड़ानन स्कन्दः शिव-पार्वती के पुत्र स्कन्द के छः मुख थे; अतः वह 'षड़ानन' स्कन्द कहाता था। तारकासुर नामक असुर ने पृथ्वी में उत्पात मचाया; उसके सामने देवों की एक न चली। तब कहा गया कि शिवजी का पुत्र उसका वध करेगा। अर्थात् स्कन्द का जन्म इसी हेतु हो गया। वह देवों का सेनापति नियुक्त हुआ। पौराणिक मान्यता के अनुसार उसने केवल सात दिन की अवस्था में तारकासुर का वध किया।

एवा कोटी कबंध ऊठीने नाचे, शिर रहित जेणी वार,
त्यारे रामधनुषनी घूघरी एक, वाजे त्यां निरधार। २१।
आ तो चतुर्दश घूघरी वागी, वाजवा एके काळ,
चार घडी पर्यंत वागी, वरत्यो प्रल्लेकाळ। २२।
रावण तणी जे सकळ सेन्या पडी तेणी वार,
नव गणती थाये शेषनागे, थयो एम संहार। २३।
एकलो रावण रह्यो रणमां, थयो मन भयभीत,
जाण्युं मने हवडां मारशे, एम थयुं विभ्रमचित्त। २४।
देखवा लाग्यो राम ते, सर्वत्र सहु जनरूप,
ऊभे सैन्यमां ज्यां जुवे त्यां, देखे रविकुळभूप। २५।
नथी देखातुं कंई अन्य बीजुं, राम विना तेणी वार,
कोटानकोटी दशरथी, देखाय छे निरधार। २६।
दशे दिशामां राम देखे, पृथ्वी ने आकाश,
कपि राक्षस पशु पंखी, रामरूप प्रकाश। २७।
त्यारे विकळ थईने नेत्र मींच्यां, दशमुखे जोई राम,
ते अंतरमां देखवा लाग्यो, राम पूरणकाम। २८।

इस प्रकार के मस्तक-रहित कबन्ध जिस समय उठकर नाचने लगते हैं, तब वहाँ निश्चय ही राम के धनुष का एक घुँघरू बजने लगता है। २१ (तब) ये तो सचमुच एक ही समय, चौदह घुँघरू बज उठे—चार घड़ियों तक वे बजते रहे, तो (जान पड़ा कि) प्रलय काल आ गया। २२। (इस स्थिति में) रावण की जो समस्त सेना उस समय गिर गयी, उसकी गणना शेषनाग द्वारा (तक) नहीं हो पाएगी। इस प्रकार (वहाँ) संहार हो गया। २३। रणभूमि में अकेला रावण (शेष) रह गया; वह मन में भयभीत हो गया था। उसने समझ लिया कि मुझे ये अभी मार डालेंगे। इस प्रकार उसका चित्त भ्रम में पड़ गया। २४। वह सर्वत्र समस्त लोगों के रूप में राम को ही देखने लगा। दोनों सेनाओं में जहाँ वह देखता, वहाँ वह रविकुल के राजा राम को ही देखता। २५। उस समय राम के सिवा वह दूसरा कुछ भी नहीं देख रहा था। वह निश्चय ही करोड़ों-करोड़ों दाशरथी राम देख रहा था। २६। दसों दिशाओं में, पृथ्वी पर तथा आकाश में वह राम को ही देख रहा था। कपि, राक्षस, पशु, पक्षी (सब) राम-रूप में ही (प्रकट हुए) दिखायी दे रहे थे। २७। तब राम को देखकर रावण ने व्याकुल होते हुए आँखें बन्द कर लीं, तो वह अन्तःकरण में (भी) पूर्णकाम राम को ही देखने

मन बुद्धि चित्त अहंकार सर्वे, रामरूप जणाय,
दश इंद्रियो पंच प्राण ने, पंच भूत जे कहेवाय। २९।
वळी विषय मात्रा चार देहे, त्रि अवस्था भोग स्थान,
एम स्थूल सूक्ष्म सकळ वस्तु, जणाये भगवान। ३०।
अकळाई नेत्र उघाडियां ने, जोयुं लंकाभूप,
रथ सारथि हय शर धनुष, ते दीठां रामस्वरूप। ३१।
अणुरेणु पर्यंत राममय, ब्रह्मांड आखुं राम,
थयो रामरूप तदात्म रावण, ठालो नहि कंई ठाम। ३२।
त्यारे रावण मन भय पामियो, सर्वत्र जोई जगदीश,
रथमांहेथी कूदी पड्यो, पछी नाठो ते दशशीश। ३३।
त्यारे पूंठळ धाया राम जाणे, मारवा निरवाण,
रावण नाठा जीव लेई जाणे, हर्या हवडां प्राण। ३४।

लगा। २८। मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, दसों इन्द्रियाँ[1], पाँचों प्राण[2], और जो पंचमहाभूत[3] कहाते हैं, वे समस्त (भूत) उसे रामरूप दिखायी दे रहे थे। २९। इसके अतिरिक्त (समस्त) विषय,[4] मात्राएँ[5] या अंग चारों शरीर[6], तीनों अवस्थाएँ[7], भोग-स्थान[8]—इस प्रकार स्थूल और सूक्ष्म समस्त वस्तुएँ भगवान (-स्वरूप) दिखायी देने लगीं। ३०। व्याकुल होकर लंका के राजा रावण ने आँखें खोलीं और देखा, तो उसने रथ, सारथी, घोड़े, बाण, धनुष—सबको राम-स्वरूप देखा। ३१। अणु-रेणु पर्यन्त (उसके लिए) राममय था; सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड उसे राममय (दिखायी दे रहा) था। रावण (स्वयं) राम-रूप (राम के साथ) तदात्म हो गया। कोई भी स्थान रिक्त नहीं था (अर्थात् ऐसा कोई भी स्थान नहीं था, जहाँ राम न हो)। ३२। तब (इस प्रकार) जगदीश राम को सर्वत्र देखकर रावण मन में भय को प्राप्त हो गया, तो वह रथ से कूद पड़ा और भाग गया। ३३। तब उसने समझा, मुझे मारने के लिए निश्चय ही राम मेरे पीछे दौड़ रहे हैं, तो वह जी छोड़कर भागने लगा।

---

१ **दस इन्द्रियाँ**—नेत्र, कान, नाक, जीभ, त्वचा नामक पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ तथा हाथ, पाँव, वाणी, गुदा और उपस्थ नामक पाँच कर्मेन्द्रियाँ—कुल दस २ **पाँच प्राण**—प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान। ३ **पाँच महाभूत**—पृथ्वी, आप (जल), तेज (अग्नि), वायु और आकाश। ४ **विषय**—(कर्णेन्द्रिय का) शब्द, (नेत्रेन्द्रिय का) रूप, (घ्राणेन्द्रिय या नाक का) गन्ध, (जिह्वेन्द्रिय का) रस और (त्वचा का) स्पर्श। ५ **मात्राएँ**—इंद्रियाँ या अंग, वस्तुओं के कण। ६ **चार शरीर**—स्थूल, सूक्ष्म, कारण और महाकारण ७ **तीन अवस्थाएँ**—उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय। ८ **भोग-स्थान**—सुखोपभोग करने के साधन के रूप में शरीर।

त्यारे लंकामां आव्यो तदा, सहु लोक दीठा राम,
ज्यांहां त्यांहां जाये दशानन, देखे दशरथी ते ठाम। ३५।
पछे एम करतां आवियो, मंदोदरीनी पास,
हो राणी, मुजने राख तुं, एम बोलतो बहु श्वास। ३६।
ज्यारे सतीनी पासे गयो, त्यारे शांति पाम्यो मन,
सुण राणी, में कर्यो पुरुषारथ, मारियो सुमित्रातन। ३७।
पण रहेवायुं नहि रण विषे, रामबाणथी में आज,
हुं नासी आव्यो तुज कने, करी एवुं मोटुं काज। ३८।
पण रह्यो छे एक राम हावे, जीतवो निरधार्य,
उपाय ते सत्वर करुं ज्यम, थाय मारुं कार्य। ३९।
मने असुरगुरुए मंत्र आच्यो छे, मृत्युंजय तेनुं नाम,
अनुष्ठान तेनुं करीने, पछे जईने जीतुं राम। ४०।
त्यारे कर जोडी राणी कहे, सुणो स्वामी कहुं छुं सत्य,
हावे शुं करवा साधन करो ? नहि जिताये रघुपत्य। ४१।

उसे जान पड़ा, अभी उन्होंने मेरे प्राणों को हर लिया है। ३४। तब वह लंका में आ गया। तब भी उसने समस्त लोग राम-रूप ही देखे। (इस प्रकार) जहाँ-जहाँ रावण जाता, उस-उस स्थान पर दाशरथी राम ही देखता। ३५। फिर इस प्रकार घूमते हुए वह मन्दोदरी के पास आ गया। वह बहुत साँस लेते हुए अर्थात् हाँफते हुए बोला—'हे रानी, मेरी रक्षा करो।' ३६। जब वह सती मन्दोदरी के पास गया, तब उसका मन शान्ति को प्राप्त हो गया। (वह बोला—) 'हे रानी, सुनो। मैंने पुरुषार्थ किया है—मैंने लक्ष्मण को मार डाला है। ३७। फिर भी युद्ध-भूमि में राम के बाणों से मेरे द्वारा (सुरक्षित) नहीं रहा जा रहा है। (इसलिए) ऐसा बड़ा काम करके मैं तुम्हारे पास दौड़ता हुआ आ गया हूँ। ३८। परन्तु अब निश्चय ही एक (अकेला) राम ही जीतने को (शेष) रह गया है। जब मेरा काम हो जाएगा, तब मैं उसका उपाय झट से करूँगा। ३९। मुझे असुरों के गुरु ने एक मंत्र दिया है। उसका नाम है—मृत्युंजय। उसका अनुष्ठान करने के पश्चात् मैं जाकर राम को जीत लूँगा।' ४०। तब हाथ जोड़कर रानी मन्दोदरी ने कहा, 'हे स्वामी, सुनिए, मैं सच कह रही हूँ। अब क्या करने के लिए साधना (अनुष्ठान) कर रहे हैं ? (आप द्वारा) रघुनाथ को नहीं जीता जा पाएगा। ४१। इतने युद्ध में (उन्हें) नहीं जीत लिया; (वरन्) समस्त कुल का नाश कर लिया। समस्त सेना का नाश हो गया है, तो अब

आटले युद्धे न जीत्या, कर्यो सकळ कुळनो नाश,
सहु सैन्य केरो क्षय थयो, हावे जीत्यानी शी आश ? । ४२ ।
माटे सीता सोंपी रामने, जई नमो स्वामी पाय,
बाकी मरणथी नहि ऊगरो, जो करो कोटी उपाय । ४३ ।
धर्मधोरींधर छे प्रभु, शरणागतवत्सल नाथ,
ते अभय करशे स्वामी तमने, मस्तक मूकी हाथ । ४४ ।
एम घणां वचन सतीए कह्यां, पण न मान्यां ते ठाम,
अरे हुं रावण पुरुषारथी, क्यम नमुं हावे राम ? । ४५ ।
पुरकोट हेठळ पृथ्वी कोरी, गुफा रची छे ज्यांहे,
सहु सामग्री लेई साधन करवा, रावण बेठो त्यांहे । ४६ ।
एक काळनेमी निशाचर तेने, तेडावी कही वाण,
तुं बेस जई द्रोणाचळ पासे, कपट रचीने जाण । ४७ ।
कदाचि गिरि लक्ष्मण अर्थे, लेवा आवे हनुमंत,
त्यारे विघ्न करजे तेने तुं, वा मारजे बळवंत । ४८ ।
एवुं सुणी राक्षस लेई घणा, गयो काळनेमी त्यांहे,
ते विप्र-वेश करी कपट रचीने, बेठो मारगमांहे । ४९ ।

जीत लेने की क्या आशा है ? । ४२ । इसलिए जाकर सीता राम को सौंप देते हुए राम के चरणों को नमस्कार कीजिए। अन्यथा यद्यपि करोड़ों उपाय कर लें, तो भी मरण से नहीं बच पाएँगे । ४३ । हे नाथ, प्रभु राम धर्म-धुरन्धर हैं, वे शरणागतवत्सल हैं (शरण में आये हुओं के प्रति स्नेह रखते हैं)। हे स्वामी, वे आपके मस्तक पर हाथ रखते हुए आपको भय-रहित बना देंगे।' ४४। उस सती ने इस प्रकार बहुत बातें कहीं, फिर भी उस स्थान पर (रावण ने) उन्हें नहीं माना। (वह बोला-) 'अरे, मैं रावण पुरुषार्थी हूँ। फिर अब मैं राम को क्यों नमस्कार करूँ ? '। ४५ । नगर-कोट के नीचे भूमि को खोदकर जहाँ एक गुफा बनायी हुई थी, वहाँ समस्त सामग्री लेकर रावण साधना (अनुष्ठान) करने के लिए बैठ गया। ४६ । कालनेमी नामक एक निशाचर था। उसे बुलाकर उसने यह बात कही, 'द्रोणाचल के पास जाकर तुम कपट करके, अर्थात् कपट वेश धारण करके बैठ जाओ। समझे ? । ४७। हनुमान कदाचित् लक्ष्मण के लिए पर्वत ले जाने के लिए आ जाएगा। तब तुम उसके लिए विघ्न (बाधा) उत्पन्न कर लो अथवा उस बलवान (कपि) को मार डालो।' ४८ । ऐसा सुनकर कालनेमी बहुत राक्षसों को लेकर वहाँ गया। वह कपट से विप्र-वेश

हावे रावण बेठो होम करवा, मृत्युंजय अनुष्ठान,
हावे राम वळिया रणथकी ज्यारे, नाठो रावण अज्ञान । ५० ।

वलण (तर्ज बदलकर)

अज्ञान रावण नाठो ज्यारे, मूकी मननी धीर रे,
कहे दास गिरधर सुणो श्रोता, हवे शुं करता रघुवीर रे ? । ५१ ।

*　　　*　　　*

धारण करके रास्ते में बैठ गया । ४९ । अब (उधर) रावण मृत्युंजय अनुष्ठान सम्बन्धी होम करने के लिए बैठ गया । अब (इधर) जब अज्ञानी रावण रण-भूमि में से भाग गया, तो बलशाली राम लौट गये । ५० ।

जब मन में धीरज छोड़कर अज्ञानी रावण भाग गया, तो अब रघुवीर क्या कर रहे होंगे ? गिरधरदास कहते हैं, हे श्रोताओ, उसे सुनिए । ५१ ।

*　　　*　　　*

अध्याय—४३ (हनुमान का द्रोणाचल की ओर जाना, मार्ग में मकरी को शाप से मुक्त कर देना)

राग सामेरी

हावे रावण नाठो भय पामी, त्यारे पाछा वळ्या रघुवीर,
पछे लक्ष्मण पासे आवी बेठा, मूकी मननी धीर । १ ।
धनुष बाण नाखीने बेठा, लेई लक्ष्मणने उछंग,
सुमित्रासुतनुं वदन जोईने, रुदन करे श्रीरंग । २ ।

अध्याय—४३ (हनुमान का द्रोणाचल की ओर जाना, मार्ग में मकरी को शाप से मुक्त कर देना)

अब रावण भय को प्राप्त होकर भाग गया; तब रघुवीर राम पीछे लौट गये । फिर वे मन का धीरज खोते हुए लक्ष्मण के पास आकर बैठ गये । १ । धनुष और बाण फेंककर लक्ष्मण को गोद में लेते हुए वे बैठ गये । फिर लक्ष्मण के मुँह की ओर देखते हुए (श्रीरंग रमा-पति विष्णु के अवतार) राम रोने लगे । २ । इतने में सूर्य का अस्त हो गया; तब

एटले सूरज अस्त थयो त्यारे, सुषेण बोल्यो वाण,
सुणो रघुपति अरुण उदे थतां, लक्ष्मणना जशे प्राण। ३ ।
माटे द्रोणाचळ परवत उपर छे, अमृतवेली नाम,
ते रातोरातमां कोई जई आवे, लावे आणे ठाम। ४ ।
सूरज ऊगता पहेलां लावे, तो जीवे लक्ष्मण वीर,
एवां वचन सुणी सहु वानर सामुं, जोयुं राम रणधीर। ५ ।
पण सरवे नीचां वदन करीने, जोई रह्यां तेणे ठाम,
त्यारे तेणे समे मारुतसुत ऊठ्या, कर्या प्रभुने प्रणाम। ६ ।
कृपानाथ मने आज्ञा आपो, हुं जाउं लेवाने आज,
त्रण पहोरमां लावुं द्रोणाचळ, तम करुणाए महाराज। ७ ।
त्यारे गद्गद थई मारुतसुत प्रत्ये, बोल्या श्रीरघुनाथ,
हे प्राणप्रिय ! तुं वहेलो आवजे, मस्तक मूक्यो हाथ। ८ ।
पछे रामचरण बंदीने ऊड्या, मारुति उत्तर पंथ,
मुखे गर्जना रामनामनी, ध्यानमां सीताकंथ। ९ ।
शिर पर लांगुल मूकी उड्या, आकाशमारग जाय,
फाळ उपर घणी फाळ ज मारे, वज्रदेही महाकाय। १० ।

सुषेण ने यह बात कही, 'हे रघुपति, सुनिए। अरुणोदय होते ही लक्ष्मण के प्राण निकल जाएंगे। ३। इसलिए, द्रोणाचल (नामक पर्वत) पर अमृतवल्ली (नामक जो वल्ली) है, उसे रात की रात में कोई जाकर इस स्थान पर ले आए। ४। सूर्य के उदित होने से पूर्व उसे ले आए, तो भाई लक्ष्मण जीवित रहेंगे।' ऐसी बातें सुनकर रणधीर राम ने समस्त वानरों की ओर देखा। ५। परन्तु उस स्थान पर वे सब नीचे मुँह करके (सिर झुकाये) देखते रहे। तब उस समय हनुमान उठ गया और उसने प्रभु राम को प्रणाम किया। ६। (वह बोला—) 'हे कृपालु नाथ, मुझे आज्ञा दीजिए, तो मैं ले आने के लिए आज (अभी) जाऊँगा। हे महाराज, आपकी करुणा से तीन पहर में द्रोणाचल को ले आऊँगा।' ७। तब श्रीरघुनाथ गदगद होकर पवनकुमार से बोले, 'हे प्राण-प्रिय, तुम शीघ्र आ जाना' और उन्होंने उसके सिर पर हाथ रखा। ८। अनन्तर राम के चरणों को नमस्कार करके हनुमान उत्तर दिशा की ओर उड़ गया। मुख में राम नाम का घोष था, तो ध्यान (चित्त) में सीतापति श्रीराम थे। ९। मस्तक के ऊपर पूँछ को उठाये हुए वह उड़ गया। वह आकाश-मार्ग से (आगे) जा रहा था। वह वज्रदेही, महाशरीरी हनुमान छलाँग पर बड़ी छलाँग लगाते हुए जा रहा था। १०। इस

एम बे घडीमां गिरि द्वीप ओळंगी, ऊतर्या पेली पार,
त्यारे द्रोणाचळनी आणीपा दीठो, चंद्राचळ गिरि सार। ११।
ते शिवना कैलास ज सरखो, उज्ज्वळ कर्पूरवंन,
विधु सरखो तेजस्वी शीतल, ऊंचो एक जोजन। १२।
ते पर्वतनी पासे बेठो, काळनेमी जे असुर,
त्यांहां पुरातनी सरोवर छे सुंदर, निर्मळ वारि पूर। १३।
वन सोहामणुं सफळ सघन छे, तेमां रच्यो आश्रम,
अनेक राक्षस शिष्य कर्या, थई बेठो निर्मळ ब्रह्म। १४।
जाणे तपस्वी मा'नुभाव जेवो, बेठो थई ते ठार,
अग्निहोत्रनो कुंड रच्यो त्यां, वेदाध्ययन थाय सार। १५।
काळनेमी एम कपट करीने, बेठो रची एवो घाट,
चपळ चित्ते करी चारे दिशाए, जोतो हनुमंतनी वाट। १६।
त्यारे तेणे समे हनुमंतने लागी, जळ पीवानी तृषाय,
ते आश्रम सरोवर जोईने ऊतर्या, पृथ्वी उपर महाकाय। १७।
आश्रम पासे आव्या चाली, सत्वर मारुततन,
त्यारे कपटी मुनिए आदर करियो, आप्युं छे आसन। १८।

प्रकार, दो घड़ियों में पर्वतों और द्वीपों को लाँघकर उस पार उतर गया। तब उसने द्रोणाचल के इस ओर चन्द्राचल नामक रम्य पर्वत देखा। ११। वह शिवजी के कैलास (पर्वत) के समान, कपूर-सा उज्ज्वल, चन्द्रमा के समान तेजस्वी और शीतल तथा एक योजन ऊँचा था। १२। कालनेमी नामक जो असुर था, वह उस पर्वत के पास बैठा हुआ था। वहाँ सुन्दर स्वच्छ जल से भरा-पूरा एक पुरातन सरोवर था। १३। (वहाँ) फलों से युक्त बहुत घना वन था। उसमें (उस असुर ने) आश्रम बना लिया था। उसने अनेक राक्षसों को शिष्य बना लिया और निर्मल अर्थात् पवित्र आचारवान ब्राह्मण होकर (ब्राह्मण-रूप धारण करके) वह बैठा हुआ था। १४। मानो, किसी महानुभाव तपस्वी जैसा बनकर वह उस स्थान पर बैठ गया था। वहाँ अग्निहोत्र के लिए कुण्ड निर्मित था और सुन्दर (ढंग से) वेदाध्ययन चल रहा था। १५। कालनेमी इस प्रकार कपट-पूर्वक (रूप धारण) किये हुए ऐसा षडयंत्र रचकर बैठ गया था। वह चपल (चौकन्ने) मन से चारों दिशाओं में हनुमान की बाट जोह रहा था। १६। तब उस समय हनुमान को प्यास लग गयी। (अतः) उस आश्रम और सरोवर को देखकर वह महाकाय (कपि आकाश मार्ग से) पृथ्वी पर उतर गया। १७। वह पवनकुमार झट से चलकर

आवो बेसो महानुभाव रहो, सुखे घणा दिन आंहे,
ज्ञानी पुरुषने गोठे घणुं वळी, सतसंग होय ज्यांहे। १९।
तम सरखा महापुरुष पधार्या, करीशुं गोष्ठि ज्ञान,
त्यारे मारुति कहे मने तृषा लागी, मारे करवुं छे जळपान। २०।
कहे कपटमुनि ओ पेलुं सरोवर, सुखे पीओ जळ त्यांहे,
जळपान करीने वहेला आवजो, मारा आश्रम मांहे। २१।
पछे अंजनीसुत सरोवरमां पेठा, जळ पीवा तेणी वार,
त्यारे दीर्घरूप एक मगरी आवी, चरण ग्रह्यो निरधार। २२।
ते मगरीने जोई मनमां क्रोध चढ्यो हनुमंत,
बारणे काढी पछाडी तेने, पृथ्वी उपर बळवंत। २३।
त्यारे मगरीनो देह मूकी तत्क्षण, थई देवांगना नार,
ते सन्मुख ऊभी मारुतिने, कर जोडीने कर्या नमस्कार। २४।
अंजनीपुत्रे पूछ्युं तेने, कहे बाई तुं छे कोण?
त्यारे दिव्यरूप कहे पूर्वे हती हुं, देवांगना निरवाण। २५।

उस आश्रम के पास आ गया। तब उस कपटी मुनि ने उसका सम्मान किया और (बैठने को) आसन दिया। १८। (फिर वह बोला—) 'हे महानुभाव, आइए, बैठिए। यहाँ बहुत दिन सुख से रहिए, जहाँ (आप जैसे) ज्ञानी पुरुष से घनिष्ट मित्रता हो जाएगी, इसके अतिरिक्त, सत्संग (भी) हो जाएगा। १९। आप सरीखे महापुरुष पधारे हैं, तो हम (आत्म-) ज्ञान सम्बन्धी गोष्ठी (बातचीत) करेंगे।' तब हनुमान ने कहा, 'मुझे प्यास लगी है। (अतः) मुझे जलपान करना है।' २०। उस कपट (वेश-धारी) मुनि ने (फिर) कहा, 'यह वह सरोवर है। वहाँ (जाकर) सुख-पूर्वक पानी पीजिए। जल-प्राशन करके मेरे आश्रम में शीघ्रता से आ जाना। २१। अनन्तर उस समय हनुमान पानी पीने के लिए सरोवर में पैठ गया। तब एक बड़े रूपवाली (प्रचण्ड) मगरी आ गयी और उसने निर्धारपूर्वक (दृढ़ता से) उसका पाँव पकड़ लिया। २२। उस मगरी को देखकर हनुमान को मन में क्रोध आ गया। (फलतः) उस बलवान ने उसे द्वार पर निकालकर भूमि पर पटक दिया। २३। तब वह (मगरी) मगरी की देह को छोड़कर एक देवांगना बन गयी और हनुमान के सम्मुख खड़ी रहकर उसने हाथ जोड़ते हुए उसे नमस्कार किया। २४। (तदनन्तर) हनुमान ने उससे पूछा, 'हे देवी, तुम कौन हो?' तब उस दिव्य-रूपिणी ने कहा, 'मैं निश्चय ही पूर्व काल में देवांगना थी। २५। मैंने देवल

देवळऋषिने नमी नहि माटे, मुजने दीधो शाप,
पछे स्तुति करी मुनिवरनी वळती, पूछ्यो अनुग्रह आप । २६ ।
मुनिवर कहे हनुमंत आवशे, लेवा द्रोणाचळ ज्यारे,
तेना पदनो स्पर्श करंतां, उद्धार पामीश त्यारे । २७ ।
पछे ते दिवसनी मगरी थई हुं, रहेती आणे ठार,
आज प्रभु तम चरण प्रतापे, पामी छुं उद्धार । २८ ।
पण पेलो बेठो राक्षस मुनि थईने, करवा तमने विघन,
एवुं कहीने ऊडी अप्सरा, गई ते स्वर्गभोवन । २९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

स्वर्गभोवन गई अप्सरा, तेणे चेताव्या हनुमंत रे,
जळपान करीने आव्या पाछा, आश्रम पासे बळवंत रे । ३० ।

नामक ऋषि को नमस्कार नहीं किया, इसलिए उन्होंने मुझे अभिशाप दिया। अनन्तर मुनिवर की स्तुति करके मैंने पुनः स्वयं अनुग्रह पूछा (अनुग्रह करने की विनती की) । २६ । तो मुनिवर ने कहा, 'जब हनुमान द्रोणाचल को ले जाने के लिए आएँगे, तब उनके पाँव को स्पर्श करते ही तुम उद्धार को प्राप्त हो जाओगी । २७ । फिर उस दिन से मैं मगरी हो गयी और इस स्थान पर रहने लगी । हे प्रभु, आज आपके चरणों के प्रताप से मैं उद्धार को प्राप्त हो गयी हूँ । २८ । परन्तु वह राक्षस, मुनि बनकर आपके लिए विघ्न (उत्पन्न) करने के लिए बैठा है।' ऐसा कहकर वह अप्सरा उड़ गयी और स्वर्ग-लोक चली गयी । २९ ।

वह अप्सरा स्वर्ग-लोक चली गयी । (परन्तु) उसने हनुमान को प्रेरित किया। (फिर) वह बलवान कपि जल-प्राशन करके आश्रम के पास लौट आया । ३० ।

* * *

अध्याय—४४ (हनुमान द्वारा कालनेमी का वध और द्रोणाचल को ले आना)

राग सामेरी

जळपान करी हनुमंत आव्या त्यारे, बोलियो मुनि मर्म,
महाराज आवो पधारो करो, पावन मुज आश्रम । १ ।

अध्याय—४४ (हनुमान द्वारा कालनेमी का वध और द्रोणाचल को ले आना)

जल-प्राशन करके हनुमान (आश्रम के पास) आ गया; तब वह

हनुमंत कहे ल्यो करुं पावन, आवो मळीए मुनिराय,
पछे कालनेमीना शिर विषे, एम मार्यो मुष्टिघाय। २।
ते असुर भमी पृथ्वी पड्यो, तत्काळ तजिया प्राण,
पांच योजन विस्तर्यो, देह पड्यो छे निरवाण। ३।
त्यारे शिष्य राक्षस जे हता, ते नाठा तेणी वार,
तेने पुच्छे बांधीने पछाड्या, मारुतिए निरधार। ४।
त्यारे रहेता'ता चंद्रगिरि पर, गांधर्व चतुर्दश सहस्र,
ते धुनि सुणीने युद्ध करवा, आव्या ग्रही कर शस्त्र। ५।
हनुमंते जाण्युं युद्ध करतां, लागशे घणी वार,
पछे पुच्छ वधारी भारो बांध्यो, पछाड्या पृथ्वी मोझार। ६।
त्यां थकी ऊड्या मारुति, आव्या द्रोणाचळनी पास,
हनुमंते प्रार्थना करी, ते पर्वत केरी प्रकाश। ७।
हो द्रोणाचळ, सुण विनति, पड्या लक्ष्मण रणमोझार,
एक सांग मारी रावणे, थया निश्चेष्टित निरधार। ८।

मुनि यह मर्म-भरी बात बोला, 'हे महाराज, आइए, पधारिए, मेरे आश्रम को पावन कीजिए।' १। तो हनुमान बोला, 'लो, पावन कर देता हूँ। हे मुनिराज, आओ, हम मिल लें।' फिर उसने कालनेमी के सिर पर एक मुष्ठिघात किया (घूँसा जमाया)। २। तो वह असुर लोट-पोटकर भूमि पर गिर पड़ा और उसने तत्काल प्राण त्यज दिये। (तब) उसकी देह पाँच योजन विशाल हो गयी और अन्त में (भूमि पर) पड़ी हुई रह गयी। ३। तब उसके शिष्य जो (वस्तुतः) राक्षस ही थे, वे उस समय भाग जाने लगे, तो हनुमान ने उन्हें पूँछ से बाँधकर निश्चय पूर्वक पटक डाला। ४। तब चन्द्रगिरि पर चौदह सहस्र गन्धर्व रहते थे, वे उस ध्वनि को सुनकर हाथों में शस्त्र लिए हुए युद्ध करने के लिए आ गये। ५। हनुमान समझ गया कि युद्ध करने से (लक्ष्य तक पहुँचने के लिए) बहुत समय लग जाएगा। इसलिए (इस विलम्ब को टालने के हेतु) उसने पूँछ को बढ़ाते हुए उनका गट्ठर बाँध लिया और भूमि पर उन्हें पटक डाला। ६। (तदनन्तर) वहाँ से मरुत्-पुत्र हनुमान उड़ गया और द्रोणाचल के पास आ गया; (फिर) उसने प्रकट रूप में पर्वत से (इस प्रकार) प्रार्थना की। ७। 'हे द्रोणाचल, मेरी विनती सुनो। लक्ष्मण जी युद्ध-भूमि में पड़े हुए हैं। रावण ने उन्हें एक साँग (शक्ति) मारी, तो (उसके आघात से) वे निश्चय ही निश्चेष्ट (अचेत) हो गये हैं। ८। इसलिए, मुझे औषधी दो, मैं आज (उसे) लेने के लिए आ

माटे आप्य मने औषधि, हुं लेवा आव्यो आज,
रविउदे पहेलो जाउं त्यां, त्यारे थाय रूडुं काज। ९।
गिरि कहे एक वार लेई गयो'तो, कपि मुने निरधार,
गुण ने उपाधि अति घणी, वळी आव्यो बीजी वार। १०।
जा हवे हुं नथी आपतो, औषधि तुजने जाण,
एवां वचन सुणीने कोपिया, पछे मारुतसुत निरवाण। ११।
अल्या खल मूरख अभिमानी, जे समजे नहि ते विमुख,
तेने कारज कंई कहेवुं नहि, हा नव कहे ते मुख। १२।
पछे पूंछ शेषाकृति करी गिरि बांधियो तेणी वार,
समूळ लीधो उखेडीने, चाल्या पवनकुमार। १३।
आकाशमारग जाय ऊड्या, महाबळी हनुमंत,
रामकृपाए भार ते नथी, लेखवता बळवंत। १४।
त्यारे भरतजी रहेता हता, जे नंदीग्राम मोझार,
ते रात्रीए भरतने आव्युं, दुःस्वप्न निरधार। १५।
एक काळपुरुषे आवीने, गळ्यो दक्षिण बाहु त्यांहे,
त्यारे भरत झबकी जागिया, चिंता करे मनमांहे। १६।

गया हूँ। सूर्योदय से पहले वहाँ जा पाऊँ, तो तब काम ठीक हो जाएगा।'। ९। (इस पर) उस पर्वत ने कहा, 'हे कपि, तुम मुझे निश्चय ही एक बार ले गये थे। मेरे गुण और उपाधी (पदवी) बहुत बड़ी है, इसलिए तुम लौटकर दूसरी बार आ गये हो। १०। जाओ, समझ लो, अब मैं तुम्हें औषधी नहीं दूँगा'। ऐसी बातें सुनते ही फिर पवनकुमार असीम क्रुद्ध हो गया। ११। (फिर) वह बोला, 'अरे, खल, मूर्ख, अभिमानी, जो नहीं समझते वे विमुख अर्थात् इससे दूर हो जाते हैं। उसके बारे में उन्हें यदि कुछ कहना नहीं है, तो वे मुख से हाँ नहीं कहते। १२ अनन्तर पवनकुमार ने अपनी पूँछ शेषनाग के समान दीर्घाकार बनाकर उसी समय पर्वत को उससे बाँध लिया और उसे मूल-सहित उखाड़कर वह चल दिया। १३ महाबलवान हनुमान आकाश मार्ग से उड़ते हुए जाने लगा। वह बलवान (कपि) राम की कृपा से (उस पर्वत के) भार को गिन नहीं रहा था। १४ तब भरत नन्दीग्राम में रहता था। उस रात भरत ने निश्चय ही एक दुःस्वप्न (अशुभ स्वप्न) देखा। १५। (उसने देखा—) एक काल पुरुष ने आकर वहाँ दाहिना बाहु निगल लिया। तब भरत हड़बड़ाकर जाग उठा और वह मन में चिन्ता करने लगा। १६। उस समय गुरु वसिष्ठ पास में ही थे, तो

ते समे गुरु पासे हता, कह्युं वसिष्ठने वर्तमान,
त्यारे मुनि कहे तम बंधुने, कंई विघ्न छे ते स्थान । १७ ।
जे हरण सीतानुं थयुं, रामरावणनो संग्राम,
ते विदित छे मुनि भरतने, माटे शोचे तेणे ठाम । १८ ।
शांति हवन पछे कराव्यो, भरतनी पासे एव,
रात्रिए बे जण बेठा छे, त्यां भरत ने गुरुदेव । १९ ।
एटले त्यां आकाशमार्गे, आवता हनुमंत,
ज्यम आवे भडको अग्निनो, झळहळे जोत्य अनंत । २० ।
एम द्रोणाचळ लेई मारुति, जाता हता नभमांहे,
ते भरतजी ने वसिष्ठे, तेजबिंब दीठुं त्यांहे । २१ ।
मुनिराय भय पाम्या घणुं, त्यारे भरते आपी धीर,
पछे धनुष पर शर चढाव्युं, करी स्मरण श्रीरघुवीर । २२ ।
ते बाण वळतुं मूक्युं, हनुमंतने वाग्युं त्यांहे,
श्रीरामस्मरण करीने मारुति, पड्या पृथ्वीमांहे । २३ ।
ज्यारे धुनि सुणी रामनामनी, गया भरत ऊठी पास,
जुए तो पर्वत सहित, कपि पड्यो रामनो दास । २४ ।

उसने उनसे यह समाचार कह दिया। तब वसिष्ठ मुनि ने कहा— तुम्हारे बन्धु के लिए उस स्थान पर कोई विघ्न उत्पन्न हो गया है । १७ । सीता का जो अपहरण हो गया, तथा राम-रावण का संग्राम जो चल रहा था, वह मुनि और भरत को विदित था। अतः वे उस स्थान पर चिन्ता करने लगे । १८ । फिर (वसिष्ठ ने) भरत द्वारा ही हवन करवाया। समझिए कि (तदनन्तर) भरत और गुरुदेव (वसिष्ठ) दोनों जने रात में वहाँ जागते हुए बैठे रहे । १९ । इतने में वहाँ आकाशमार्ग से हनुमान जा रहा था। जिस प्रकार आग की ज्वाला उत्पन्न होती है और वह ज्योति असीम रूप से जगमगाने लगती है, उस प्रकार (जगमगाते हुए) द्रोणाचल को लेकर हनुमान आकाश में जा रहा था। तो वहाँ भरत और वसिष्ठ ने उस तेज़-बिम्ब को देखा। २०-२१ मुनिराज बड़े भय को प्राप्त हो गये, (फिर भी) तब भरत ने उन्हें ढाढ़स बँधाया। फिर श्रीरघुवीर का स्मरण करके उसने धनुष पर बाण चढ़ा दिया। २२ फिर उसने वह बाण चला दिया, तो वह वहाँ हनुमान को लग गया। तब वह श्रीराम का स्मरण करते हुए भूमि पर गिर पड़ा। २३ जब भरत ने 'राम नाम' ध्वनि (शब्द) सुनी, तो वह उठकर उसके पास गया। उसने देखा कि राम का कोई दास एक कपि पर्वत-सहित पड़ गया है। २४ तब

त्यारे प्रेमे करी हितवचन बोल्या, भरतजी तेणी वार,
अरे भाई रामनो भक्त कहे तुं, कोण छे निरधार ? । २५ ।
त्यारे हनुमंते सहुने वात कही जे, रण तणा समाचार,
अचेत थई त्यां पड्या लक्ष्मण, निश्चेष्टित निरधार । २६ ।
ते औषधिने काज लाव्यो, द्रोणाचळगिरि आज,
प्रभात पहेलुं जवाशे नहि तो, थशे विपरीत काज । २७ ।
त्यारे भरत कहे शाबाश छे तुजने, धन्य छे हनुमंत,
चारकोटी योजनथी लाव्यो, गिरि तुं बळवंत । २८ ।
तुं ईश्वर केरुं रूप छे, नव थाय बीजे काज,
माटे चिंता नव करशो तमो, पहोंचाडुं हवडां आज । २९ ।
हुं दास छुं रघुवीरनो, वळी कनिष्ठ बंधु जाण,
मुज नाम भरत कहे सहु, अहीं रह्यो छुं निरवाण । ३० ।
हुं रणियो छुं श्रीरामनो, अपराधी पूरण आज,
संभारे छे प्रभु केरी सुरत, कोई दिन मने महाराज ? । ३१ ।
हनुमंत कहे प्रभु क्षणे क्षणे, ले छे तमारुं नाम,
हवे आज्ञा आपो मुजने, त्यां छे जरूरनुं काम । ३२ ।

उस समय भरत उससे प्रेमपूर्वक हितकारी वचन बोला, 'अरे भाई राम के भक्त, कह दो, सचमुच तुम कौन हो ।' २५ । तब हनुमान ने रण-भूमि सम्बन्धी जो समाचार थे, वे समस्त कह दिये । (उसने कहा—) 'वहाँ लक्ष्मणजी सचमुच निश्चेष्ट होकर पड़े हुए हैं । २६ । मैं आज (अभी) औषधी के निमित्त द्रोणाचल को ले आया हूँ । प्रभात काल के पहले न जाया जाए, तो कार्य विपरीत (प्रतिकूल) हो जाएगा ।' २७ । तब भरत बोला, 'हे हनुमान ! साधु है ! तुम धन्य हो (जो कि) तुम बलवान चार करोड़ योजन (की दूरी) से पर्वत लाये हो । २८ । तुम भगवान के ही रूप हो । किसी दूसरे से ऐसा काम न हो पाएगा । इसलिए तुम चिन्ता न करना । मैं आज अभी तुम्हें पहुँचवा देता हूँ । २९ समझ लो कि मैं (भी) राम का सेवक हूँ; इसके अतिरिक्त उनका कनिष्ठ बन्धु हूँ । सब मेरा नाम 'भरत' कहते हैं । मैं निश्चय ही यहाँ रहता हूँ । ३० । मैं राम का ऋणी हूँ, आज पूर्णतः अपराधी हूँ । हे महाराज, क्या प्रभु राम किसी दिन मेरा स्मरण करते हैं ? । ३१ । (इसपर) हनुमान ने कहा, 'प्रभु राम क्षण-क्षण तुम्हारा नाम लेते हैं । अब मुझे आज्ञा दीजिए, तो वहाँ आवश्यक काम हो जाएगा । ३२ । सूर्योदय के पहले जाऊँ, तो तब भाई लक्ष्मण जीवित रहेंगे ।' तब भरत ने कहा, 'हे हनुमानजी, तुम

रविउदे पहेलां जाउं त्यारे जीवे लक्ष्मण वीर,
त्यारे भरत कहे हनुमंतजी, तमो राखो मनमां धीर। ३३।
रवि उगतां पहेलां पहोंचाडुं, लंकामां निरधार,
पर्वत सहित मुज बाण उपर, बेसो पवनकुमार। ३४।
आश्चर्य पाम्या मारुति, सुणी भरतवायक एह,
धन्य रामबंधु राम जेवा, होय निःसदेह। ३५।
चरण वंदी भरतना, ऊठिया मरुततन,
स्वामी तमो कहो छे खरुं, छे बोलो सत्य वचन। ३६।
पण दास छुं रघुवीरनो हुं, आज्ञा वरती जाण,
मारुं बळ पराक्रम जाणे छे, रघुपति पुरुषपुराण। ३७।
माटे रामकृपाए जईश हुं, क्षणमहीं तेणे ठाम,
कहे भरत कहेजो प्रभुने, मारा घणा करी प्रणाम। ३८।
पछी ऊठ्या नमी ते भरतने, आकाशमारगे जाय,
हजु मारुति आव्यो नहि, चिंता करे रघुराय। ३९।
एटले रजनी खट घडी, पाछली रही निरधार,
उत्तर दिशा ऊगे रवि, एम आव्यो पवनकुमार। ४०।

मन में धीरज रख लो। ३३। मैं तुम्हें सूर्योदय के पहले निश्चय ही लंका में पहुँचवा दूँगा। हे पवनकुमार, मेरे बाण पर तुम पर्वत-सहित बैठ जाओ।' ३४। भरत की यह बात सुनकर हनुमान आश्चर्य को प्राप्त हो गया। (उसने सोचा—) राम का यह बन्धु धन्य है, वह निःसन्देह राम जैसा है।' ३५। (फिर) भरत के चरणों को नमस्कार करके पवनकुमार उठ गया (और बोला—) 'हे स्वामी, तुम कह रहे हो, वह सत्य है। जो बोलोगे, वह सत्य बात ही होगी। ३६। (फिर भी) मैं रघुवीर का दास हूँ; समझो कि इसके अतिरिक्त उनकी आज्ञा है। पुराण-पुरुष रघुवीर मेरे बल और पराक्रम को जानते हैं। ३७। इसलिए मैं राम की कृपा से उस स्थान पर क्षण में जा पाऊँगा।' (इस पर) भरत ने कहा, 'प्रभु को मेरे बहुत बहुत प्रणाम कहना।' ३८। अनन्तर हनुमान भरत को नमस्कार करके उठ गया और आकाश मार्ग से जाने लगा। (इधर) रघुराज चिन्ता कर रहे थे कि अभी तक हनुमान (क्यों) नहीं आया। ३९। इतने में सचमुच छः घड़ी रात शेष रह गयी। पवनकुमार इस प्रकार आ रहा था कि जान पड़ता था कि उत्तर दिशा में सूर्य उदित हो गया हो। ४० तब समस्त कपि कहने लगे, 'हे श्रीमहाराज, सुनिए। देखिए तो,

त्यारे कपि सर्वे कहेवा लाग्या, सुणो श्रीमहाराज,
जुओ आ अरुण उदे थयो, हवे शुं करीशुं काज ? । ४१ ।
त्यारे राम कहे हजु खट खडी, पाछली रजनी सोय,
उत्तर दिशा क्यम सूरज ऊगे ? ए शुं कारण होय । ४२ ।
एम कही रामे बाण काढ्युं, राहुमुख विकराळ,
ए सूरजमंडळ करुं ग्रसण, आ वाणथी तत्काळ । ४३ ।
त्यारे वैद्य सुषेण बोलियो, ए सूरज नोहे महाराज,
हनुमंत आव्या द्रोणाचळ लेई, थयां रूडां काज । ४४ ।
एटले हनुमंत ऊतर्या, मूक्यो पर्वत पृथ्वी मोझार,
साष्टांग करी रामने चरणे, लाग्यो पवनकुमार । ४५ ।

वलण (तर्ज़ वदलकर)

पवनकुमार आवी पाये लाग्यो, रघुपतिने निरधार रे,
रामे ऊठाडी हनुमंतने, पछी चांप्यो रुदे मोझार रे । ४६ ।

* * *

हो गया। अब हम क्या काम करेंगे ? ' । ४१ । तब राम ने कहा, ' अब भी छः घड़ी रात शेष है। फिर उत्तर दिशा में सूर्य का उदय कैसे हो सकता है ? इसका क्या कारण है ? ' । ४२ । ऐसा कहते हुए राम ने एक विकराल राहु-मुख बाण निकाल लिया। (उन्होंने विचार किया कि) मैं इस बाण से सूर्य-मण्डल को तत्काल निगल डालूंगा । ४३ । तब सुषेण वैद्य बोला, ' हे महाराज, यह सूर्य-मण्डल नहीं है। (यह तो) हनुमान द्रोणाचल को लेकर आ रहा है। अच्छे काम हो गये हैं। ' ४४ । इतने में पवन-कुमार हनुमान (आकाश मार्ग से) उतर गया; उसने भूमि पर पर्वत रख दिया। फिर वह साष्टांग नमस्कार करते हुए श्रीराम के पाँव लगा । ४५ ।

निश्चय ही पवन-कुमार हनुमान आकर रघुपति राम के पांव लगा, तो उसे उठाते हुए उन्होंने फिर उसे हृदय से लगा लिया । ४६ ।

* * *

अध्याय—४५ (लक्ष्मण का सचेत हो जाना)

राग मारु

भेट्या हनुमंतने रघुनाथ, पछी मस्तक मूक्यो हाथ,
प्राणवल्लभ पवनकुमार, तें कर्यो मने घणो उपकार । १ ।
मळ्या मारुतिने कपि सर्व, जोई कारज मूक्यो गर्व,
पछी सुषेण वैद प्रकाश, ऊठी आव्यो द्रोणाचळ पास । २ ।
कर्यो पर्वतने नमस्कार, जेनी शोभा तणो नहि पार,
औषधि केरी परीक्षा कीधी, मंत्रबळे आकर्षी लीधी । ३ ।
तेनो रस काढ्यो तेणी वार, भर्यो पात्रमांहे निरधार,
लक्ष्मणने शक्ति वागी'ती ज्यांहे, ते मध्ये रस मूक्यो त्यांहे । ४ ।
संचर्यो सर्व संधिने संग, थयुं कंचन सरखुं अंग,
नथी देखातो अंगे घाय, एवो औषधिनो महिमाय । ५ ।
ऊठ्या आळस मोडी अनंत, जेम ऊठे निद्रावंत,
नम्या रामचरण अभिराम, भेट्या लक्ष्मणने श्रीराम । ६ ।

अध्याय—४५ (लक्ष्मण का सचेत हो जाना)

रघुनाथ राम हनुमान से मिले और फिर उन्होंने उसके मस्तक पर हाथ रखा। (तत्पश्चात् वे बोले—) 'हे प्राण-वल्लभ पवन-कुमार, तुमने मेरा बड़ा उपकार किया है। १। (तदन्तर) समस्त कपि हनुमान से मिले। उन्होंने उसके कार्य को देखकर (अपनी-अपनी शक्ति के विषय में अपना-अपना) अभिमान छोड़ दिया। फिर सुषेण वैद्य उठकर द्रोणाचल के पास आ गया। २। उसने उस पर्वत को नमस्कार किया, जिसकी शोभा की कोई सीमा नहीं थी। (फिर) उसने औषधी की परीक्षा की और उसे मंत्र-बल से खींच लिया। ३। उसने उसी समय उसका रस निकाल लिया और निश्चय के साथ एक पात्र में भर लिया। लक्ष्मण को जहाँ शक्ति लग गयी थी, उस (से बने घाव) में उसने तब रस डाल दिया। ४। वह रस समस्त जोड़ों में फैल गया, तो उसका शरीर सोने जैसा हो गया। (तब) उसके शरीर में घाव नहीं दिखायी दे रहे थे। उस औषधी की महिमा इस प्रकार थी। ५। (फिर) अनन्त अर्थात् शेषनाग का अवतार लक्ष्मण अँगड़ाई लेकर वैसे ही उठ गया, जैसे कोई निद्रिस्त मनुष्य उठ गया हो। (तदनन्तर) उसने अभिराम राम के चरणों को नमस्कार किया, तब वे लक्ष्मण से मिले—उन्होंने लक्ष्मण को गले लगाया। ६। जगदाधार राम (लक्ष्मण को) देखकर आनन्दित हो गये।

जोई हरख्या जुगदाधार, कपि करता जयजयकार,
मुख्य वानर केटला जेह, कर्या सजीव सुषेणे तेह। ७।
करवा सगरात्मजनो उद्धार, ज्यम भगीरथ लाव्या गंगा सार,
तेणे पृथ्वी करी पावन, एम कीधुं ते मरुततन। ८।
ऊगे रवि चक्रवाक आसक्त, करे प्रकाश सर्वे जक्त,
ज्यम चंद्र चकोरने अर्थ, चातक अर्थे मेघ समर्थ। ९।

कपियों ने जयजयकार किया। जो कितने ही, अर्थात् अनेकानेक वानर मर गये थे, उनको सुषेण ने सजीव (पुनर्जीवित) कर दिया। ७ जिस प्रकार सगर के पुत्रों का उद्धार करने के लिए भगीरथ[1] सुन्दर गंगा को ले आये थे, उससे उन्होंने पृथ्वी को पावन कर दिया था, उस प्रकार उस पवन-कुमार ने कर दिया (अर्थात् केवल लक्ष्मण को ही नहीं, बल्कि अन्य सैनिकों को भी लाभ पहुँचाया गया)। ८। सूर्य अपने प्रति आसक्त चक्रवाक (-चक्रवाकी) के लिए उदित होता है[2] फिर भी वह समस्त जगत के लिए प्रकाश उत्पन्न करता है। जिस प्रकार चन्द्र चकोर

१ सगर-पुत्र…भगीरथ…गंगा : इक्ष्वाकु-कुलोत्पन्न राजा सगर ने अश्वमेध यज्ञ किया और यज्ञीय घोड़े को भ्रमण के लिए छोड़ दिया। उसके पीछे उसकी रक्षा के लिए सगर के साठ सहस्र पुत्र चल रहे थे। इन्द्र ने ईर्ष्या-वश इस घोड़े को चुराकर पाताल में कपिल मुनि के पीछे छिपा रखा। सगर-पुत्र घोड़े को खोजते-खोजते पाताल में पहुँच गये, तो उनके आगमन से कपिल मुनि की तपस्या में बाधा उत्पन्न हो गयी। तब मुनि ने अभिशाप देकर उन सबको जलाकर भस्म कर डाला। आगे चलकर, सगर के पौत्र अंशुमन और प्रपौत्र दिलीप को कपिल ने सगर-पुत्रों के उद्धार के लिए स्वर्ग से गंगा को लाने का परामर्श दिया। अंशुमन और दिलीप ने तपस्या की, परन्तु वे गंगा को स्वर्ग से लाने में असफल रहे। तदनन्तर दिलीप के पुत्र भगीरथ ने कठोर तपस्या करके गंगा को प्रसन्न कर लिया। अनेक संकटों का सामना करते हुए भगीरथ अपनी तपस्या के बल पर गंगा को पाताल तक ले जाने में सफल हुआ। गंगा-जल से सगर-पुत्रों का उद्धार हो गया।

२ सूर्य-चक्रवाक : चक्रवाक, जिसे 'चकवा' भी कहते हैं, एक पक्षी है, जो जाड़े में नदियों और बड़े जलाशयों के किनारे दिखायी देता है और वैशाख तक रहता है। इसे अपनी मादा से बहुत प्रेम होता है। कवि मान्यता के अनुसार, यह रात के समय अपने जोड़े से अलग हो जाता है। पानी मे इन दोनों के बीच एक कमल का पत्ता आता है। इस वियोग को वे दोनों सहन नही कर पाते और वे दोनों आर्त स्वर में एक-दूसरे को पुकारते रहते हैं। सूर्योदय के पश्चात् वे दोनों—पक्षी-पक्षिणी-मिल जाते हैं। सूर्य मानो उनके लिए ही उदित हो जाता है।

एम लक्ष्मण केरे काज, लाव्या औषधि ए कपिराज,
तेथी थयुं घणानुं काम, पछी आज्ञा करी श्रीराम । १० ।
ऊठ्या मारुति पाछा त्यांहे, लीधो द्रोणाचळ करमांहे,
चाल्या मूकवा पवनकुमार, जाण्या रावणे ते समाचार । ११ ।
जे ऊठ्या लक्ष्मण बळवंत, लाव्यो द्रोणाचळ हनुमंत,
पाछो मूकवा जाये वेद, ते सुणी मन पाम्यो खेद । १२ ।
पछी रीस करीने विशेक, मोकल्या राक्षस शत एक,
जाओ जई हणो पवनकुमार, द्रोणाचळ लावो लंका मोझार । १३ ।
एवुं सुणी ते चाल्या असुर, पंथे आडा आवी रह्या भूर,
एटले जाता दीठा कपिराय, त्यारे करवा मांड्यो अंतराय । १४ ।

के लिए[1] तथा सामर्थ्यशाली मेघ चातक के लिए[2] उदित होता है, (फिर भी सारे संसार को उनसे लाभ पहुँचता है) उसी प्रकार लक्ष्मण के लिए कपिराज हनुमान यह औषधी लाया, फिर भी उससे अनेकों का काम हो गया। अनन्तर श्रीराम ने आज्ञा दी। ९-१० । तो हनुमान उठ गया और उसने वहाँ द्रोणाचल को हाथ पर (उठा) लिया। हनुमान (जब) उसे छोड़ने के लिए चल दिया (तब) रावण को यह समाचार विदित हुआ। ११ । बलवान लक्ष्मण जो (पुनर्जीवित होकर) उठ गया है, (उसका कारण यह है कि) हनुमान (औषधी से युक्त) द्रोणाचल ले आया है; अब वह उसे फिर रख देने के लिए जा रहा है—यह सुनकर (रावण) मन में खेद को प्राप्त हो गया। १२ । फिर उसने क्रोध-पूर्वक एक सौ राक्षसों को (यह आदेश देकर) भेज दिया, जाओ, जाकर पवन-कुमार को मार डालो और द्रोणाचल को लंका में ले आओ। ' १३ । ऐसा सुनते

१ चकोर-चन्द्रमा : एक प्रकार का बड़ा पहाड़ी तीतर 'चकोर' कहाता है। एक कवि-प्रसिद्धि के अनुसार यह पक्षी चन्द्रमा का बड़ा प्रेमी है और उसकी किरणों से प्राप्त अमृत रस से जीवित रहता है। चन्द्रमा के दर्शन के हेतु, यह नित्य आकाश की ओर एकटक देखता रहता है—यहाँ तक कि आग की चिनगारियों को चन्द्र-किरणें समझकर निगल जाता है, सख्त धूप सहन करता रहता है। चंद्र मानो अपने इस भक्त को सन्तुष्ट करने के हेतु उदित हो जाता है।

२ चातक-मेघ : चातक पक्षी, जिसे 'पपीहा' भी कहते हैं, वर्षा काल में बहुत बोलता है। इसके विषय में यह कवि मान्यता है कि यह नदी, तालाब आदि का संचित जल नहीं पीता, केवल बरसता हुआ पानी पीता है। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि यह केवल स्वाती नक्षत्र की बूंदों से अपनी प्यास बुझाता है। इन बूंदों को भी वह तभी ग्रहण करता है, जब वे मेघ से सीधे आती हैं। उनको पकड़ने के लिए अपनी चोंच वह टेढ़ी नहीं कर लेता। कविजन इसे एकनिष्ठ प्रेम और भक्ति का प्रतीक मानते हैं। मेघ मानो चातक के लिए ही बरसता है।

हनुमंत थया तव स्वस्थ, लीधो द्रोणाचळ एक हस्त;
मारी झापट लांगूल केरी, असुरनां अस्थि नाख्यां वेरी। १५।
राक्षस मरण पाम्या ते ठार, त्यांथी चाल्या पवनकुमार;
मूक्यो द्रोणाचळने स्वस्थान, पाछा आव्या ज्यांछे भगवान। १६।
वंद्या रघुपति केरा पाय, पछी कही नंदीग्रामकथाय,
भरत तणां जे विनयवचन, कह्यां रामने वायुतन। १७।
तमारुं स्मरण कर छे ते ठाम, घणुं करीने कह्या छे प्रणाम,
सुणी भरत तणा वर्तमान, त्यारे द्रवित थया भगवान। १८।
भरतनो प्रेम नेम संभारी, चाल्युं रामनां नेत्रमां वारि;
अहो बंधु ए भरत समान, एवा निर्मळ ने गुणवान। १९।
थयो नथी थशे नहि जक्त, एवुं कहीने रोयां रघुपत्य,
मन करी पोतानुं धीर, बोल्या सुग्रीवशुं रघुवीर। २०।
भाई हवे न करवी वार, मारवो रावणने निरधार,
नथी गोठतुं मुजने आंहे, मारे जावुं अवधपुरमांहे। २१।

ही वे असुर चल दिये और मार्ग में आड़े आकर ठहर गये। इतने में उन्होंने कपिराज हनुमान को जाते देखा, तब वे विघ्न उपस्थित करने लगे। १४। (फिर भी) हनुमान तब चुप रह गया। उसने एक हाथ पर द्रोणाचल को लिया और पूँछ का झपट्टा लगा दिया, तथा उन असुरों की हड्डियों को (तोड़कर) बिखेर डाला। १५। (जब) उसी स्थान पर वे राक्षस मरण को प्राप्त हो गये, तो पवन-कुमार वहाँ से चल दिया उसने द्रोणाचल को उसके अपने मूल स्थान पर रख दिया और वह वहाँ लौट आया, जहाँ भगवान राम थे। १६। उसने रघुपति राम के चरणों को नमस्कार किया और फिर नन्दीग्राम सम्बन्धी बात कही। पवनकुमार ने भरत के कहे हुए जो विनय-वचन थे, उन्हें राम से कह दिया। १७। (वह फिर बोला—) 'वे आपका उस स्थान पर स्मरण कर रहे हैं। उन्होंने आपको बहुत-बहुत प्रणाम कहे हैं।' तब भरत का समाचार सुनते ही भगवान राम (प्रेम से) द्रवित हो गये। १८। भरत के प्रेम और नेम (व्रत) का स्मरण होने पर राम के नेत्रों से (अश्रु-) जल बहने लगा। 'अहो! इस भरत के समान ऐसा निर्मल (-मना) और गुणवान बन्धु जगत में न (उत्पन्न) हुआ और (भविष्य में) न होगा।' ऐसा कहकर रघुपति रुदन करने लगे। (फिर) अपने मन में धीरज धारण करते हुए रघुवीर सुग्रीव से बोले। १९-२०। 'भाई, अब विलम्ब नहीं करना है, रावण को निश्चय ही मारना है। मुझे यहाँ अच्छा नहीं लग रहा है। मुझे अवधपुरी में जाना है। २१।

वलण (तर्ज बदलकर)

अवधपुरीमां निश्चे जावुं, एम कहे छे पुरुषपुराण रे,
त्यारे तेणे समे रघुवीर साथे, विभीषण बोल्यो वाण रे। २२।

* * *

'मुझे अवधपुरी निश्चय ही (यथाशीघ्र) जाना है।' वे पुराण-पुरुष ऐसा कह रहे थे। तब उस समय विभीषण ने रघुवीर से यह बात कही। २२।

* * *

अध्याय—४६ (वानरों द्वारा रावण के अनुष्ठान को भंग कर देना)

राग धन्याश्री

विभीषण कहे सुणो जगजीवन जी,
रावण बेठो करवा गुप्त हवन जी।
इंद्रजितना जेवुं करे साधन जी,
मृत्युंजय मंत्र जपे दशानन जी। १।

ढाळ

जपे मंत्र मृत्युंजय दशानन, ते पूरण थशे अनुष्ठान,
पछे कोई थकी मरशे नहि, कहुं सत्य ए भगवान। २।
माटे विघ्न करो कंई त्यां जई, जे होम पूरण न थाय,
एवुं सुणतामां दश कपि ऊठ्या, नम्या रामने पाय। ३।

अध्याय—४६ (वानरों द्वारा रावण के अनुष्ठान को भंग कर देना)

विभीषण ने कहा, 'हे जगज्जीवन, सुनिए। रावण गुप्त रूप से हवन करने बैठा है। वह इन्द्रजित सदृश साधना कर रहा है। वह मृत्युंजय मंत्र का जाप कर रहा है। १। दशानन मृत्युंजय मंत्र का जाप कर रहा है। (यदि) वह अनुष्ठान पूरा हो जाएगा तो हे भगवान, मैं यह सत्य कह रहा हूँ, वह फिर किसी से भी नहीं मरेगा। २। इसलिए, वहाँ जाकर कुछ विघ्न उत्पन्न कर लीजिए, जिससे उसका होम पूर्ण नहीं हो पाए।' ऐसा सुनते ही ये दस कपि उठ गये और उन्होंने राम के चरणों

गवाक्ष वालीपुत्र अंगद, गवय जांबुवंत,
पावकलोचन नील नळ, केशरी शरभ हनुमंत। ४ ।
ते दशे जणा दश दिशा, जीते एवा बळिया त्यांहे,
दश सहस्र वानर संग लेई, ते आव्या लंकामांहे। ५ ।
सहु घरेघर खोळ्यां कपिए, जड्यो नहि लंकेश,
एम सकळ पुरमां वळ्या शोधी, गुप्त स्थान अशेष। ६ ।
जे मळे राक्षस मारगमां, तेने मारता कपि ठार,
पछे एकला हनुमंत आव्या, विभीषणने द्वार। ७ ।
त्यारे विभीषणनी राणी शरमा, पूछ्युं तेने जाण,
तेणे रावण केरुं गुप्त स्थानक, देखाड्युं निरवाण। ८ ।
नगर केरा कोट नीचे, विवर छे अंधकार,
तेनी आगळ भोंयरुं छे, प्रकाश अति विस्तार। ९ ।
ते सांभळीने कपि आव्या, विवर केरे द्वार,
काढी नाखी शिला मुखथी, पेठा तेह मोझार। १० ।
अनेक राक्षस असुर मार्या, प्रवेश्या ते मांहे,
मोटुं भयंकर भोंयरुं, विस्तीर्ण दीठुं त्यांहे। ११ ।
ते मध्ये मोटुं देवळ छे, देवी तणुं कहेवाय,
तेनी आगळ कुंड रचीने, बेठो रावणराय। १२ ।

को नमस्कार किया—गवाक्ष, बाली-पुत्र अंगद, गवय, जाम्बवान, पावक-लोचन, नील, नल, केसरी, शरभ और हनुमान। ३-४। वे ऐसे बलवान थे कि वहाँ वे दस जने दस दिशाओं को जीत सकते। वे अपने साथ दस सहस्र वानरों को लेकर लंका में आ गये। ५। उन कपियों ने घर-घर (जाकर) खोज लिया, परन्तु लंकाधिपति नहीं मिला। इस प्रकार समस्त गुप्त स्थानों में खोजकर वे सब नगर में लौट आये। ६। जो राक्षस मार्ग में मिलते, उन्हें वे कपि मार डालते। अनन्तर अकेला हनुमान विभीषण के द्वार पर आ गया। ७। समझिए कि उसने तब विभीषण की स्त्री सरमा से पूछा; तो अन्त में उसने रावण का गुप्त स्थान दिखा दिया। ८। नगर के कोट के नीचे एक अँधेरे से भरा विवर था। उसके आगे एक अति विशाल तलघरा (तहखाना) था। ९। यह सुनकर वे कपि विवर के द्वार पर आ गये और उसके मुख पर से शिला निकाल (कर हटा) दी फिर वे उसके अन्दर पैठ गये। १०। उन्होंने अनेक राक्षसों, असुरों को मार डाला, (तभी) वे अन्दर प्रविष्ट हो सके। वहाँ उन्होंने एक बड़ा भयावह तथा विशाल तल-घरा देखा। ११। उसके अन्दर एक बड़ा

वज्रासने बेठो दशानन, करी रक्ते स्नान,
अनेक मस्तक होमवाने, मूक्यां छे ते स्थान। १३।
आहुति आपी कुंडमां, मद्यमांसनी ते मांहे,
पछी मृत्युंजयनो मंत्र जपतो, एकाग्रे थई त्यांहे। १४।
ते जोई कपि आश्चर्य पाम्या, कहे परस्पर वाण,
जीव्या तणी आशा हजु, नथी मुकतो निरवाण। १५।
क्षे थयो सरवे कुळ तणो, नथी मानतो हजु हार,
प्रभुता न जाणी रामनी, एना ध्याननने धिक्कार। १६।
एम कही कपिए शिला नाखी, कुंड कीधो भंग,
मळमूत्र ते मध्ये कर्यां, यज्ञपात्र फोड्यां संग। १७।
फाडी नाख्यां वस्त्र करियो, नग्न ते अज्ञान,
नखे ऊझरड्युं अंग पण, नथी मूकतो ते ध्यान। १८।
दश वदन फाडी रावणनां, भरी धूळ ते मुखमांहे,
अनेक यत्न कर्या तदा, पण जागतो नथी त्यांहे। १९।
नव ध्यान मूक्युं रावणे, त्यारे कपिए कर्यो विचार,
पछी अंगद लाव्यो ते समे, ग्रही राणी मंदोदरी नार। २०।

देवालय था, जो देवी का (मन्दिर) कहाता था। उसके सामने कुण्ड बनाकर राजा रावण बैठा हुआ था। १२। रक्त में स्नान करके रावण वज्रासन लगाये हुए बैठा था। उस स्थान पर होम में डालने के लिए अनेक मस्तक रखे हुए थे। १३। उसने उस कुण्ड में रक्त-माँस की आहुतियाँ चढ़ा दीं और फिर एकाग्र-चित्त होकर वह वहाँ मृत्युंजय मंत्र का जाप कर रहा था। १४। यह देखकर कपि आश्चर्य को प्राप्त हो गये। उन्होंने एक दूसरे से कहा, 'अब भी जीवित रहने की आशा को निश्चय ही यह नहीं छोड़ रहा है। १५। समस्त कुल का क्षय हो गया, अब भी यह हार नहीं मानता। वह राम की प्रभुता को नहीं जानता। इसके ध्यान को धिक्कार है।' १६। ऐसा कहकर उन कपियों ने एक शिला फेंककर उस कुण्ड को तोड़ डाला। उसके अन्दर मल-मूत्र विसर्जित किया; साथ ही यज्ञ-पात्र भी फोड़ डाले। १७। उन्होंने वस्त्र फाड़ डाले और उस नासमझ को नग्न कर दिया। उसके शरीर को नाखूनों से नोच दिया, फिर भी वह ध्यान नहीं छोड़ रहा था। १८। उन्होंने रावण के दसों मुख फाड़ दिये और उन में धूल भर दी। उन्होंने तब अनेक यत्न किये, फिर भी वह वहाँ नहीं जग रहा था। १९। रावण ने (इस प्रकार) जब ध्यान करना नहीं त्यज दिया, तब कपियों ने (आपस में) विचार-(विमर्श) किया। तदनन्तर अंगद

ते सुंदरी सुकुमार सती, तेने लाव्यो रावण पास,
नग्न करवा मांडी कपिए, फाडता ग्रही वास। २१।
त्यारे राणीए पोकार कर्यो, ज्यम सुणे रावण कान;
करे नग्न आ वानर मुंने, बळी जाओ तमारुं ध्यान। २२।
तम छतां मारी लाज लेछे, मुकावो स्वामीन,
हावे शोभा गई सहु तमारी, एम कही करे छे रुदन। २३।
ते रुदन सुणी राणी तणुं, पछी ऊठ्यो रावणराय,
क्रोध करीने कपि पूंठळ, चारे पासे धाय। २४।
हनुमंत अंगदने तदा, घणो कर्यो मुष्टिमार,
केटला झाली रोळिया, केटलाने पदप्रहार। २५।
पछी नासी छूट्या सर्व वानर, वधारीने वेर,
सुवेळुए आवी कही, रघुवीरने सहु पेर। २६।
महाराज रावणने उठाड्यो, यज्ञ कीधो भंग,
आवशे हवडां युद्ध करवा, सैन्य लेई चतुरंग। २७।
एवां वचन सुणी कपिवर तणां, सज थयां श्रीरघुवीर,
कटी कस्या भाथा धनुष ग्रहीने, बेठा श्रीरणधीर। २८।

उसी समय (जाकर रावण की) स्त्री मन्दोदरी रानी को ले आया। २०। वह सुन्दरी सुकुमार सती (साध्वी) थी। उसे वह रावण के पास ले आया। (फिर) वे कपि उसके वस्त्रों को खींचकर उसे नग्न करने लगे। २१। तब रानी ऐसे चिल्ला उठी कि रावण अपने कानों से उसे सुन ले। (वह बोली—) 'ये वानर मुझे नग्न कर रहे हैं—जल जाए तुम्हारा ध्यान। २२। हे स्वामी, आपके होते हुए ये मेरी लाज ले रहे हैं। मुझे छुड़ा लो। अब तुम्हारी सारी शोभा चली गयी।' ऐसा कहकर वह रुदन करने लगी। २३। फिर रावणराज उस रुदन को सुनते ही उठ गया और क्रोध से कपियों के पीछे चारों ओर दौड़ने लगा। २४। तब उसने हनुमान और अंगद पर बहुत घूँसे जमा दिये। उसने फिर कितनों को ही पकड़कर कुचल डाला, तो कितनों ही पर पद-प्रहार किया। (लातें जमायीं)। २५। फिर समस्त वानर वैर को बढ़ाकर भागते हुए (रावण से) छूट गये और उन्होंने सुवेल पर आकर रघुवीर राम से समस्त बात कह दी। २६। (वे बोले—) 'हे महाराज, हमने रावण को उठवा दिया; यज्ञ को भग्न कर डाला। अब वह चतुरंग सेना लेकर युद्ध करने के लिए आ जाएगा।' २७। उन कपिवरों की ऐसी बातें

हावे रावणे तेडी राणीने, पछी गयो निज भोवन,
ते जुद्ध करवा थयो तत्पर, धर्यां भूषण तन। २९।
मंदोदरी कहे स्वामी तमने, हजु न आवी लाज,
तमो मरण निश्चे पामशो, नहि जिताये रघुराज। ३०।
त्यारे रावण कहे आज छेल्लुं युद्ध छे, हार अथवा जीत,
रामने मारुं के मरुं हुं, नथी धरतो भीत। ३१।
हे प्रिये चिंता शीद करे? सुख दुःख देह संजोग,
छूटको नथी भोगव्या विना, कर्म केरा भोग। ३२।
एवुं कही लेई शेष सेन्या, चढ्यो रावणराय,
वाजित्र वाजे अति घणां, शिर छत्र चामर थाय। ३३।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

छत्र चामर थाय शिर पर, चढ्यो रावण भूप रे,
आवतो जोईने ऊठ्या पोते, सुंदर श्यामस्वरूप रे। ३४।

* * *

सुनकर श्रीरणधीर श्रीरघुवीर सज्ज हो गये। वे कमर में भाथा दृढ़ता पूर्वक बाँधकर और (हाथ में) धनुष लेकर बैठ गये। २८।

अब (उधर) रावण रावण रानी मन्दोदरी को बुला लेकर फिर अपने भवन लौट गया और वह युद्ध करने के लिए तैयार हो गया। उसने शरीर पर (वीरोचित) आभूषण धारण किये। २९। (यह देखकर) मन्दोदरी बोली, 'हे स्वामी, तुम्हें अब भी लज्जा नहीं आ रही है। तुम निश्चय ही मृत्यु को प्राप्त हो जाओगे, राम जीत लिये नहीं जाएँगे।' ३० तब रावण बोला, 'आज यह अन्तिम युद्ध है—उसमें हार होगी या जीत! मैं राम को मार डालूँ या (स्वयं) मर जाऊँगा। मैं भय नहीं अनुभव करता। ३१। हे प्रिये, तुम चिन्ता किसलिए कर रही हो? सुख-दुःख, देह—(सब) संयोग (की बात) है। (पूर्वकृत) कर्म का भोग बिना भोग लिये नहीं छूटता।' ३२। ऐसा कहकर, राजा रावण ने शेष सेना (साथ में) ली और आक्रमण किया। उस समय बाजे अत्यधिक बज रहे थे। उसके सिर पर छत्र और चामर (शोभायमान) थे। ३३।

राजा रावण (जब) चढ़ दौड़ा, (तब) उसके सिर पर छत्र और चामर (धरे हुए) थे। उसे आते देखकर सुन्दर श्याम-स्वरूपधारी रघुवीर राम स्वयं उठ गये। ३४।

* * *

अध्याय—४७ (श्रीराम-रावण-संग्राम)

राग मारु

आव्यो रथमां बेसी रावण भूप, क्रोधे जाणे काळस्वरूप,
साथे हळदळ, गजदळ पूर, मारु राग आलापे शूर। १ ।
बाजे रणतुर भेरी वाद, मोटा शूर करे सिंहनाद,
जोई आवतुं सैन्य असुर, धायुं सन्मुख कपिदळ पूर। २ ।
सामासामी मंडायुं जुद्ध, करे वानर असुर विरुद्ध,
कपि ग्रही कर तरु पाषाण, मारे असुरने करतां बुंवाण। ३ ।
चढाव्यां राये दश कोदंड, चाले बाणनी धार अखंड,
ज्यम थाय वृष्टि परजन्य, एम बाण मूके राजन। ४ ।
थावा लाग्यो कपिनो संहार, त्यारे वरत्यो हाहाकार,
ते समे राम लक्ष्मण वीर, ऊठ्या युद्ध करवा रणधीर। ५ ।
आव्या रावण सन्मुख राम, पद रोपी ऊभा एक ठाम,
रावणने रथ वाहन साजे, पृथ्वी उपर राम विराजे। ६ ।

अध्याय—४७ (श्रीराम-रावण-संग्राम)

रथ में बैठकर राजा रावण (युद्ध-भूमि में) आ गया। क्रोध में मानो वह काल का ही रूप था। उसके साथ में पूरा अश्व-दल और गज-दल था। शूर योद्धा मारु राग अलाप रहे थे। १। रण-तूर्य तथा भेरी (नगाड़े) जैसे वाद्य बज रहे थे। (योद्धा) उच्च स्वर में सिंहनाद कर रहे थे। असुरों की आती हुई उस सेना को देखकर पूरा कपि-दल (उसके) सामने दौड़ा। २। आमने-सामने युद्ध आरम्भ किया गया। वानर और असुर एक-दूसरे के विरुद्ध (लड़ रहे) थे। कपि हाथों में वृक्ष और पाषाण लेकर असुरों को चीखते-चिल्लाते हुए पीट रहे थे। ३। राजा रावण ने दसों धनुष चढ़ा लिये। (उसके चलाये हुए) बाणों की अखण्ड धारा चलने लगी। जैसे पर्जन्य वृष्टि होती हो, वैसे राजा रावण बाण चला रहा था। ४। (फलतः) कपियों का संहार होने लगा, तो हाहाकार मच गया। उस समय (दोनों) रणधीर बन्धु (राम-लक्ष्मण) युद्ध करने के लिए उठ गये। ५। राम रावण के सम्मुख आ गये और पाँव रोपकर (दृढ़ता-पूर्वक टेककर) एक स्थान पर (अविचल) खड़े रह गये। रावण का वाहन रथ शोभायमान था, तो राम भूमि पर विराजमान थे। ६। ऐसा जानते ही (देव-गुरु) बृहस्पति ने इन्द्र से कहा, '(राम के लिए) रथ भेज दो।' (परन्तु) रावण के आतंक से देवेश

एवुं जाणी भ्रेस्पति समरथ, कह्युं इंद्रने मोकल रथ,
रावणना भयथी सुरेश, पामे भय जाणे करशे द्वेष । ७ ।
गुरुए कह्यो सर्व मर्म, अल्या राम ए पूरणब्रह्म,
त्यारे सुरपतिए तेणी वार, मोकल्यो रथ रण मोझार । ८ ।
मातलि सारथि अश्व सहित, ऊतर्यो पृथ्वी उपर ते अजित,
ज्यां ऊभा छे जुगदाधार, रथ लावी राख्यो ते ठार । ९ ।
सूत ऊतर्यो तेणे ठाम, रघुपतिने कीधा छे प्रणाम,
मातलि कहे श्रीरघुवीर, पधारो रथमां रणधीर । १० ।
इंद्रे मोकल्यो तम काज, अंगीकार करो महाराज,
हरख्या राम ए रथ अनुभवियो, धन्य सुरपति समो साचवियो । ११ ।
गुरुचरण तणुं करी ध्यान, पछी रथमां बेठा भगवान,
उदयाचळ पर दिनकर ज्यम, राम रथ पर शोभे त्यम । १२ ।
ज्यांहां हतो रथ पर दशमुख, त्यांहां रामे राख्यो सन्मुख,
रावणे रथ दृष्टे कळियो, इंद्र पर रीसे बळियो । १३ ।
पछी क्रोधे करीने वचन, राम साथे बोल्यो दशानन,
अल्या ऊभो रहे रघुनाथ, जोईए जुद्ध कर मारी साथ । १४ ।

इन्द्र भय को प्राप्त हो गया । उसे जान पड़ा कि (इससे) रावण द्वेष करने लगेगा । ७ (फिर) गुरु ने उससे समस्त मर्म (रहस्य) कहा, 'अरे, राम पूर्ण ब्रह्म हैं ।' तब उसी समय सुरपति इन्द्र ने रणभूमि में रथ भेज दिया । ८ । उसका अजित सारथी मातली घोड़ों सहित पृथ्वी पर उतर गया और जहाँ जगदाधार श्रीराम थे, उस स्थान पर रथ लाकर उसने रख दिया । ९ । उस स्थान पर वह सारथी उतर गया । उसने रघुपति को नमस्कार किया । (तदनन्तर) मातली ने रघुवीर से कहा, 'हे रणधीर, रथ में पधारिए (आकर बैठिए) । १० । इन्द्र ने इसे आपके लिए भेजा है । महाराज, इसे स्वीकार कीजिए । (तब) राम आनन्दित हो गये और उन्होंने उस रथ को स्वीकार किया । (वे बोले—) 'सुरपति इन्द्र धन्य हैं । उन्होंने आवश्यकता के समय का ध्यान रखा (और सहायता की है)' । ११ । गुरु के चरणों का ध्यान करके फिर भगवान राम रथ में बैठ गये । जिस प्रकार उदयाचल पर सूर्य शोभायमान होता है, उसी प्रकार राम उस रथ में शोभायमान थे । १२ । जहाँ रावण रथ में था, वहाँ राम ने अपने रथ को (उसके रथ के) सम्मुख खड़ा करवा दिया । जब रावण को रथ दिखायी दिया, तो वह इन्द्र के प्रति क्रोध-रूपी अग्नि से जल उठा । १३ ।

आज बळ देखाडुं मारुं, कपि सहित तुंने संहारुं,
राम कहे मूरख दुरीजन, शीद बोले छे गर्ववचन ? । १५ ।
कर्यो पापी तें कुळनो नाश, ज्यम कानन बाळे हुताश,
संतति संपत्ति बळ मानी, हरी लाव्यो सीता अभिमानी । १६ ।
करी नाख्या तें वेदना खंड, दीधो देवताने घणो दंड,
कर्यो अधर्मनो भूभार, तुज अर्थे में लीधो अवतार । १७ ।
माटे मारी तुजने आज, मारे करवुं छे देवनुं काज,
हमणां हणीश तुंने करी जुक्ति, बीजे अवतार आपीश मुक्ति । १८ ।
रावण कहे अल्या तुं राम चंद्र, हुं राहु भयंकर छुं तमींद्र,
खग्रास करीश समग्र, सर्व जोधामां हुं छुं अग्र । १९ ।

अनन्तर रावण ने राम से क्रोध-पूर्वक यह बात कही, 'अरे, रघुनाथ, खड़े रह जाओ (ठहर जाओ) । मेरे साथ युद्ध करके देखना । १४ । आज मैं अपना बल दिखा देता हूँ । मैं कपियों सहित तुम्हारा संहार कर डालूँगा ।' (इस पर) राम ने कहा, 'रे मूर्ख दुर्जन, गर्व से यह बात किसलिए बोल रहे हो? । १५ । रे पापी, तुमने अपने कुल का (वैसे ही) नाश किया है, जैसे आग वन को जला डालती है । तुम अभिमानी सन्तति और सम्पत्ति को बल मानकर सीता को अपहरण कर लाये हो। १६। तुमने वेदों के टुकड़े-टुकड़े कर डाले, देवों को बड़ा दण्ड दिया, अधर्म (पाप) का भूमि के लिए भार बना दिया । मैंने तुम्हारे (विनाश के) लिए अवतार धारण किया है । १७ । इसलिए आज तुम्हें मारकर मुझे देवों का कार्य (सम्पन्न) करना है । अभी मैं तुम्हें युक्ति से मार डालूँगा और दूसरे (अर्थात् आगामी) अवतार (-काल) में तुम्हें मुक्ति प्रदान करूँगा ।'* । १८ । (यह सुनकर) रावण बोला, 'अरे तू रामचन्द्र है,

---

* पौराणिक मान्यता के अनुसार, एक दिन ब्रह्मा के मानस-पुत्र सनकादि ऋषि स्वच्छन्द विचरण करते हुए वैकुण्ठ में जा पहुँचे । उन्हें साधारण व्यक्ति समझकर जय-विजय नामक द्वारपालों ने उन्हें रोक लिया, तो सनकादि ने उन्हें शाप दिया, 'तुम विष्णु भगवान के निकट रहने योग्य नहीं हो, अतः शीघ्र ही यहाँ से पापमयी असुर योनि में जाओ ।' इस शाप के कारण जब वे वैकुण्ठ लोक से नीचे गिरने लगे, तो उन कृपालु महात्माओं ने कहा, 'तीन जन्मों में इस शाप को भोगने के पश्चात् भगवान तुम्हारा उद्धार करेंगे और तुम फिर यहाँ आओगे ।' फलतः जय-विजय अपने प्रथम जन्म में हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु के रूप में उत्पन्न हुए, जिन्हें भगवान ने क्रमशः वराह रूप में और नरसिंह रूप में अवतरित होकर मार डाला । अपने दूसरे जन्म में जय-विजय क्रमशः रावण और कुम्भकर्ण हुए । तत्पश्चात् वे दोनों शिशुपाल और दंतवक्त्र के रूप में तीसरा जन्म ग्रहण करेंगे और भगवान श्रीकृष्ण के हाथों मारे जाकर उद्धार को प्राप्त हो जाएँगे ।

मारे बाणे मेरु ने मंदार, थाये चूर्ण न लागे वार,
तो तुं मानव ते कोण मात्र ? बळहीण ने कोमळ-गात्र । २० ।
ज्यां लगी जीवुं छुं हुंय, नहि देखे सीतानुं मुख तुंय,
एवां वचन कह्यां दशशीश, ते सुणी कोप्या श्रीजुगदीश । २१ ।
सीतापतिए कर्यो सिंहनाद, ते गयो सत्यलोके साद,
कर्यो धनुष तणो टंकार, भूमिकंप थयो तेणी वार । २२ ।
राम मूके छे तीक्ष्ण बाण, ते कृतांत तणा ले प्राण,
सामां रावणना शर छूटे, रामबाण थकी ते तूटे । २३ ।
शर तणो थाये सुसवाट, जाणे विद्युत अग्नि उमाड,
राम रावण केरुं युद्ध, थयुं दारुण कोप विरुद्ध । २४ ।
देवताए मूकी जोई धीर, वढे रावण ने रघुवीर,
मूक्युं रावणे त्यां सरपास्त्र, रामे साध्युं गरुडनुं अस्त्र । २५ ।
अग्निबाण मूक्युं दशशीश, परजन्यास्त्र मूक्युं जुगदीश,
वातास्त्र मूक्युं वीस-हाथ, पर्वतास्त्र मूक्युं रघुनाथ । २६ ।

तो मैं तम (अंधकार) का अधिपति भयंकर राहु हूँ (अर्थात् राहु जिस प्रकार चन्द्र को ग्रस लेता है, उस प्रकार, मैं राहु तुझ जैसे चन्द्र को निगल डालूँगा) । मैं तेरा पूर्ण ग्रास करूँगा (तेरा खग्रास-ग्रहण हो जाएगा) । मैं समस्त योद्धाओं में आगे (श्रेष्ठ) हूँ । १९ । मेरे बाण से मेरु और मन्दर पर्वत तक देर न लगते चूर्ण हो सकते हैं । तब तू मानव कौन बड़ा है—तू तो बलहीन और कोमल-शरीरी है । २० । जब तक मैं जीवित हूँ, तब तक तू सीता का मुख तक नहीं देख पाएगा ।' दशानन ने ऐसी बातें कही । उन्हें सुनते ही श्रीजगदीश राम क्रुद्ध हो उठे । २१ । फिर सीता-पति राम ने सिंहनाद किया । उसकी ध्वनि सत्य-लोक में पहुँच गयी । (जब) उसने धनुष की टंकार की, तो उस समय भू-कम्प हो गया । २२ । राम ने तीक्ष्ण बाण चलाया, जान पड़ता था कि वह कृतान्त तक के प्राण ले लेंगे । सामने से रावण के जो बाण चलते थे, वे राम के बाण से टूट जाते थे । २३ । बाणों की साँय-साँय ध्वनि हो रही थी, मानो विद्युत-पात से उत्पन्न आग धधक रही हो । एक-दूसरे के विरुद्ध दारुण कोप से (भरे-पूरे) राम-रावण का युद्ध (इस प्रकार) चल रहा था । २४ । देव धीरज खोकर देख रहे थे कि रावण और राम बढ़ रहे थे । वहाँ रावण ने सर्पास्त्र छोड़ा, तो राम ने गरुड़ास्त्र सिद्ध किया । २५ । रावण ने अग्नि-बाण चला दिया, तो जगदीश राम ने पर्जन्यास्त्र छोड़ दिया । रावण ने वातास्त्र फेंक दिया, तो रघुनाथ ने पर्वतास्त्र

एम अस्त्र विद्याए समान, ऊतर्या बन्यो बळवान,
मूक्यां रावणे बाण अपार, रवि ढांक्यो थयो अंधार। २७।
दिव्य बाण मूक्युं अविनाश, छेदी शरजाळ कीधो प्रकाश,
लंकापतिए मूक्युं एक बाण, महातेजस्वी प्रचंड प्रमाण। २८।
अनिवार अमोघ कहेवाय, जई वाग्युं ते रामने पाय,
वाम चरण भेदी तेणी वार, नीकळी गयुं पेली पार। २९।
नथी चिह्न जणातुं तेह, सच्चिदानंद विग्रह एह,
कर्युं वीर्य दशानन वीर, ना डग्या राम रणरंगधीर। ३०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रणरंगधीर रघुवीर न डग्या, भेद्यो बाण कराळ रे,
ते जोई सर्वे कपि बळिया, उछळ्या एके काळ रे। ३१।

* * *

प्रेरित किया। २६। अस्त्र-विद्या में दोनों बलवान वीर इस प्रकार समान उतर गये (सिद्ध हो गये)। (फिर) रावण ने असंख्य बाण चला दिये और सूर्य को ढँक दिया, तो अन्धकार हो गया। २७। (तदनन्तर) अविनाशी भगवान राम ने एक दिव्य बाण चला दिया और बाण-जाल को काटकर प्रकाश कर दिया। (फिर) लंकापति ने एक महातेजस्वी प्रचण्ड आकारवाला बाण चला दिया। २८। वह बाण अनिवारणीय तथा अमोघ कहाता था। वह जाकर राम के पाँव में लग गया। उस समय बायें पाँव को भेदकर वह उस पार निकल गया। २९। फिर भी सच्चिदानन्द भगवान राम ने उस भेद दिये जाने का चिह्न (लक्षण) नहीं दिखाया। (इधर) वीर दशानन ने वीरता तो (प्रदर्शित) की, फिर भी रणरंग-धीर श्रीराम विचलित नहीं हो गये। ३०।

(यद्यपि) कराल बाण ने (पाँव को) भेद डाला; (फिर) भी रणरंगधीर रघुवीर विचलित नहीं हुए। यह देखकर समस्त बलवान कपि एक साथ ही उछल उठे (अर्थात् क्रोध से उछल-कूद करते हुए रावण की सेना की ओर चढ़ दौड़े)। ३१।

* * *

अध्याय—४८ (वानरों द्वारा राक्षसों का संहार)

राग छन्द हरिगीत

ऊछळ्या कपि सहु एके काळे, रावणदळ उपर तदा,
रणमां पड्यां'तां असुरनां ते, शस्त्र कर ग्रही सर्वदा। १।
पाषाण तरु पदघाय मुष्टि, कपि असुरने मारता,
ज्यम परमारथने बळे ज्ञानी, प्रपंच दळ संहारता। २।
एम राम उपासक निर्मळ वानर, हणे दनुज ज्यम तम रवि,
उपमेय उपमा ते तणी, दष्टांत करी कहे छे क़वि। ३।
परमारथ बाणे करी, अभिमान मुगट चूरण कर्या,
निराश चक्रे लोभ भाथा, छेदन करी हेलां हर्यां। ४।
अभेद कवच त्रय अवस्थानां, सुरता खड्गे ते हण्यां,
शम वृत्ति शस्त्र अडोळ ग्रहीने, द्वेष धनुष काप्यां घणां। ५।
संतोष शक्तिए करी छेदी, सांग तृष्णा सर्वदा,
हरिभक्ति असिए पाप सारथि, तणां शिर छेद्यां तदा। ६।
स्वरूप साक्षात्कार शस्त्रे, सिद्धिपताका भेदयं,
बोध फरशीधर तीक्ष्ण, ग्रही मोहध्वज छेदयं। ७।

अध्याय—४८ (वानरों द्वारा राक्षसों का संहार)

तब समस्त कपि एक ही समय (एक साथ) रावण की सेना पर टूट पड़े। उन्होंने युद्ध-भूमि में जो असुर गिर गये थे, उनके प्रकार के शस्त्र सब हाथ में ले लिये। १। वे कपि पाषणों, वृक्षों, पदाघातों और घूँसों से असुरों को मारने लगे। जिस प्रकार, परमार्थ (ज्ञान) के बल से कोई ज्ञानी व्यक्ति सांसारिक (विकार आदि के) दल का संहार करता है, जिस प्रकार सूर्य अँधेरे को नष्ट करता है, उसी प्रकार राम के उपासक शुद्ध (-मना) वानर राक्षसों को मार डालते थे। कवि उसे उपमेय और उपमान द्वारा दृष्टान्त (उदाहरण) देते हुए कह रहा है। २-३। (राम के भक्तों ने) परमार्थ-रूप वाण से अभिमान-मुकुट को चूर-चूर कर डाला। निरीहता-चक्र से लोभ-रूप भाथों को छेदकर बोझ को दूर कर दिया। ४। तीन अवस्थाओं के अभेद्य कवच को स्मरण-रूपी खड्ग से नष्ट कर डाला। शमवृत्ति-रूपी दृढ़ शस्त्र को लेकर उन्होंने द्वेष-रूपी वहुत धनुपों को काट डाला। ५। सन्तोष-रूपी शक्ति (साँग) से तृष्णा-रूपी साँग को सब प्रकार से छेद डाला। तव हरि-भक्ति-रूपी तलवार से पाप-रूपी सारथियों के सिर काट डाले। ६। भगवद्-स्वरूप के साक्षात्कार-रूपी शस्त्र से

अनुसंधान परिघ ग्रहीने, अविद्या रथ चूरण कर्यो,
निवृत्ति शस्त्रे प्रवृत्ति परिवार, असुर तणो हर्यो। ८।
विरक्ति अचळ गदा ग्रहीने, काम कुंजर मारियां,
मद मान क्रोध अहं पदाति, शमदमास्त्रे निवारिया। ९।
संकल्प विकल्प द्वेष हय, समाधान शक्ति संहार्यं,
भीडमाल आशा कल्पना, ते मनोज्य फरशी विदार्यं। १०।
ए प्रकारे कपि रामभक्ते, असुरनी सेन्या हणी,
मांहे तणाया हय गज असुर, चाली सरित शोणित तणी। ११।
रगदोळे रोळे असुरने, कपि चरण ग्रहीने पछाडता,
करडे ऊझरडे कंठ मरडे, मुष्टिघाते ताडता। १२।
शमळी सिचाणा काग गरधव, भक्ष रुडुं भावियुं,
पिशाच भैरव भूत तेने, पर्व मोटुं आवियुं। १३।
शक्ति शिकोतर तृप्ति थई जे, आमीश रक्तनी भोग्यणी,
करी ताल असुर कपाळ केरी, गाय नाचे जोग्यणी। १४।

सिद्धि-रूपी पताका भेद डाली, तो (आत्म-) बोध-रूपी परशु को लेकर उसकी तीक्ष्ण धार से मोह-स्वरूप ध्वज को फाड़ डाला। ७। अनुसन्धान-रूपी परिघ लेकर अविद्या-रूपी रथ को चूर-चूर कर डाला, तो निवृत्ति-रूपी शस्त्र से प्रवृत्ति-परिवार के असुरों को पराजित कर दिया। ८। विरक्ति-रूपी अचल गदा को लेकर काम-रूपी हाथियों को मार डाला, तो शम-दम-रूपी अस्त्रों से मद, मान, क्रोध, अहंकार-रूपी पदातियों का निवारण किया। ९। सन्तोष-रूपी शक्ति से संकल्प-विकल्प द्वेष-रूपी घोड़ों का संहार किया, तो मनोजय (मनोनिग्रह-) रूपी परशु से आशा, कल्पना-रूपी गोफनों को विदीर्ण कर डाला। १०। इस प्रकार, राम-भक्त कपियों ने असुरों की सेना को मार डाला। रक्त की नदी बह रही थी। उसमें घोड़े, हाथी, असुर बहने लगे। ११। कपि उन (असुरों) को धूल में रगड़ते और मसलते थे। वे (उन्हें) पाँव पकड़कर पटक डालते थे। वे उन्हें नाखूनों से खरोंचते-नोचते थे, गला मरोड़ते थे, मुष्ठिघातों से ताड़न करते थे। १२। चीलों, सचानों (बाज़ों), कौओं और गिद्धों को यह बढ़िया भक्ष्य अच्छा लग रहा था। पिशाचों, भैरवों, भूतों के लिए यह बड़ा पर्व (काल) ही आ गया था। १३। मांस और रक्त का भोग (स्वीकार) करनेवाली जो शक्ति देवियाँ और भूतनियाँ थीं, तृप्त हो गयीं। योगिनियाँ असुरों के कपालों के करताल बनाकर गाती और नाचती थीं। १४। इस प्रकार राक्षसों की सेना का निर्दालन

एम दळ दळ्युं राक्षस तणुं, कपि रींछ मरकट कूदता,
को असुर पृथ्वी तरफडे, पदघाय मारी खूंदता । १५ ।
संहार वाळी शत्रुनो, पूछी कुशळता निज साथनी,
दास गिरधर विजे करी, जय बोलावी रघुनाथनी । १६ ।

दोहा

जय बोलावी रघुनाथनी, कूदे कीश अपार,
ते जोई कोप्यो दशवदन, हवे करुं कपिनो संहार । १७ ।

* * *

किया, तो कपि, रीछ और मर्कट उछलने-कूदने लगे । कोई असुर पृथ्वी पर तड़पता (पाया जाता), तो उसे वे लातों से कुचलते थे । १५ । शत्रु का पूर्ण नाश करके उन्होंने अपने साथियों की कुशल-क्षेम पूछी । कवि गिरधरदास कहते हैं—विजय (प्राप्त) करने के कारण रघुनाथ की जय बोली जाय । १६ ।

रघुनाथ की जय बोलते हुए वानर असीम रूप से उछलते-कूदते थे । वह देखकर दशानन क्रुद्ध हो गया; उसने निश्चय किया—मैं अब (इन) कपियों का संहार कर डालूंगा । १७ ।

* * *

अध्याय—४९ (राम द्वारा रावण-वध)

राग मारु

कोप्यो रावण तेणी वार, हावे करुं कपिनो संहार,
शरवृष्टि करे दशशीश, नासे वानर पाडे चीस । १ ।
दळ भंग जोई ते ठाम, रावण सामा आव्या श्रीराम,
मूके रावण जे जे बाण, छेदे छे ते पुरुषपुराण । २ ।

अध्याय—४९ (राम द्वारा रावण-वध)

रावण उस समय क्रुद्ध हो गया । (उसने तय किया—) मैं अब कपियों का संहार कर डालूंगा । (फिर) वह बाणों की बौछार करने लगा, तो वानर चीखने-चिल्लाने लगे और वे [illegible] । अपनी सेना को उस स्थान पर भग्न होते; अर्थात् [illegible] पुराण पुरुष

बंन्यो जण करता सिंहनाद, मांड्यूं जुद्ध तजीने प्रमाद,
थयो दारुण ते संग्राम, घणुं क्रोधे चढ्या श्रीराम। ३ ।
त्रैलोकमां भय उपजाव्यो, जाणे प्रल्ले काळ शुं आव्यो!
थयो सूरज धूंधळ वर्ण, देखाये भयंकर आचर्ण। ४ ।
अंधकार नभ थयुं एव, विमान मूकी नाठा सहु देव,
वरसे मेघ रुधिरनो त्यांहे, नक्षत्र तूटी पडे भूमांहे। ५ ।
घणा पात विद्युतना थाय, त्यांहां वायु भयंकर वाय,
पृथ्वी सहित साते पाताळ, डोलायमान थयां ते काळ। ६ ।
डोल्या दिग्गज मेरु मंदार, ऊछळ्या साते सागरनां वार,
एम समे वरत्यो विपरीत, करे संग्राम बंन्यो अजित। ७ ।
एक काळ महाकाळ ज्यम, वढे छे राम रावण त्यम,
दावाग्नि वडवानळ जोड, एम जुद्ध करे बांधी होड। ८ ।
सामासामी अड्या छे रथ, बंन्यो सारथि चतुर समर्थ,
को कोना हय नथी हठता, एक एकनां शर नथी घटतां। ९ ।

श्रीराम रावण के सामने आ गये और रावण जो जो बाण चलाता, उसे वे छेद डालते। २। उन दोनों जनों ने सिंहनाद किया और दोष को त्यजकर युद्ध आरम्भ किया। वह युद्ध दारुण हो गया; तो श्रीराम क्रोधपूर्वक चढ़ दौड़े। ३। उन्होंने त्रिभुवन में भय उत्पन्न कर दिया। जान पड़ता था कि प्रलय काल आ गया। सूर्य धुंधले वर्ण का हो गया। (वहाँ) भयंकर आचरण दिखायी दे रहा था। ४। आकाश में भी अँधेरा हो गया, तो समस्त देव विमानों को छोड़कर भाग गये। वहाँ रक्त का मेघ बरस रहा था। नक्षत्र टूटकर भूमि पर गिरने लगे। ५। बड़ा विद्युत्पात हो गया। वहाँ हवा भयंकर रूप से चलने लगी। उस समय पृथ्वी सहित सातों पाताल[1] कम्पायमान हो गये। ६। दिग्गज और मेरु तथा मन्दर (पर्वत) डोलने लगे। सातों समुद्रों का पानी उछलने लगा। इस प्रकार काल विपरीत हो गया। वे दोनों पराजित न होते हुए युद्ध कर रहे थे। ७। एक ही समय जिस प्रकार एक-एक काल और महाकाल बढ़ते हों, उस प्रकार राम और रावण (एक-दूसरे के सामने) बढ़ रहे थे। जिस प्रकार दावाग्नि और वड़वाग्नि की जोड़ी लड़ती हो, उसी प्रकार होड़ लगाकर वे युद्ध करने लगे। ८। रथ (एक-दूसरे के) आमने-सामने अड़ गये थे; दोनों सारथी चतुर तथा सामर्थ्यशील थे। किसी के भी घोड़े (पीछे)

१ सप्त पाताल : अनल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल, और पाताल। अथवा—भूतल, भवांगतल, भिन्नतल, आदितल, आधारतल, सर्वातल, उभयानंकुलतल।

राम रावण केरां बाण छूटे, गरजना करतां जाण,
एम अखंड जुद्ध दिन सात, थयुं रातदिवस विख्यात । १० ।
पण राम रावणे क्षण एक, नथी विश्राम कीधो विशेक;
पछे कोप्या श्रीरघुराज, हवे मारुं रावणने आज । ११ ।
मूक्यां रघुपतिए चार बाण, चार हय मार्या निरवाण,
एक बाण मूक्युं जुगदीश, छेद्युं सारथि केरुं शीश । १२ ।
बे बाण मुगट छत्र पाड्यां, धजादंड छेदीने उडाड्यां,
अर्धचंद्र नामे एक बाण, ते काढ्युं पछे पुरुषपुराण । १३ ।
नवग्रहमांहे ज्यम भानु, एम तेजस्वी दीप्तमान,
ते बाण मूक्युं जुगदीश, छेद्यां रावणनां दश शीश । १४ ।
ते पड्यां ज्यारे पृथ्वी मोझार, बीजां नवां थयां तेणी वार,
मूक्युं रविचक्र बीजुं बाण, ते मस्तक छेद्यां निरवाण । १५ ।
वळी थयां तेवां दश शीश, त्यारे विस्मे पाम्या अवधीश,
थया चिंतातुर सहु देव, करे वात परस्पर एव । १६ ।

नहीं हट रहे थे। एक-दूसरे योद्धा के बाण भी कम नहीं हो रहे थे । ९ । समझिए कि राम और रावण के बाण गर्जना करते हुए छूट रहे थे। इस प्रकार सात दिन तक रात-दिन वह विख्यात युद्ध अनवरत चल रहा था। १० । परन्तु राम और रावण ने एक क्षण तक विशेष रूप से विश्राम नहीं किया। फिर श्री रघुराज क्रुद्ध हो गये (उन्होंने प्रतिज्ञा की—) आज मैं रावण को मार डालूँगा। ११ । राम ने चार बाण चला दिये और निश्चय ही (रावण के रथ के) चारों घोड़े मार डाले। (फिर) जगदीश राम ने एक बाण चलाया और (रावण के) सारथी का मस्तक काट डाला। १२ । उन्होंने दो बाणों से (रावण के) मुकुट और छत्र गिरा दिये और ध्वज-दण्डों को छेदकर उड़ा दिया। अनन्तर पुराण-पुरुष श्रीराम ने एक अर्धचन्द्रमक बाण निकाल लिया। १३ । जैसे नौ ग्रहों[1] में सूर्य होता है, वैसे ही (समस्त बाणों में) वह (बाण) तेजस्वी और दीप्तिमान था। जगदीश राम ने वह बाण चला दिया और रावण के दसों मस्तकों को छेद डाला। १४ । (परन्तु) जब वे पृथ्वी पर गिर गये, तब उस समय दूसरे नये (मस्तक) उत्पन्न हो गये। तो राम ने सूर्यचक्र नामक दूसरा बाण चलाया और उन मस्तकों को (भी) अन्त में काट डाला। १५ । फिर वहाँ वैसे ही दस सिर उत्पन्न हो गये, तब अवधेश राम आश्चर्य को प्राप्त हो गये। समस्त देव चिन्तातुर हो गये

१-नव ग्रह : रवि, सोम (चंद्र), मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु ।

छेदे छे मस्तक श्रीराम, नवां उगे छे ते ठाम,
पूरवे पूज्या एणे शिवराय, शिव छेदी करी कमळ पूजाय। १७।
ते माटे थाय छे नवां शीश, देव कहे ए कृपा जुओ ईश,
त्यारे राजाधिराज विशेक, चिंतातुर थया क्षण एक। १८।
शिर फरीफरीने नवां थाय, केम मरशे ए रावणराय ?
त्यारे मातलि सारथि जेह, बोल्यो रामनी साथे तेह। १९।
हे सर्वात्मा अंतरजामी, सुणो थरचर नायक स्वामी,
अमृतकुंपी एना हृदे मांहे, फोडो बाण मूकीने त्यांहे। २०।
प्रभु रावण मरशे त्यारे, छेदो अमृत कूपिका ज्यारे,
राम प्रसन्न थया सुणी वाण, काढ्युं अगस्तदत्त एक बाण। २१।
सुरमां जेम सुरपति सूत्र, अंडजमां जेवो विनतापुत्र,
ज्यम सकळ नागमां अनंत, सर्वे वानरमां हनुमंत। २२।
ज्यम वेदांत शास्त्र मोझार, ज्यम सविता तेजस्वीमां सार,
शस्त्रमात्रमां सुदर्शन, वन सकळमां नंदनवन। २३।

और परस्पर ऐसी बात कहने लगे 'श्रीराम मस्तक काटते जा रहे हैं; फिर भी उनके स्थान पर नये (मस्तक) उत्पन्न हो रहे हैं। पूर्वकाल में इस (रावण) ने शिवजी की पूजा की थी। उसने अपने मस्तक (रूपी कमल) को काटकर उस (मस्तक-) कमल से उनका पूजन किया था। १६-१७। इसलिए, ये नये-नये मस्तक उत्पन्न हो रहे हैं। देवों ने कहा, हे भगवान, यह कृपा (का फल) तो देखिए। तब राजाधिराज राम एक क्षण भर के लिए विशेष-रूप से चिन्तातुर हो गये। १८। मस्तक फिर-फिर से नये-नये रूप में उत्पन्न हो रहे हैं, तो (फिर) यह राजारावण कैसे मरेगा। तब मातली नामक जो उनका सारथी था, वह राम से बोला, 'हे सर्वात्मा, अन्तर्यामी, हे चराचर के नायक और स्वामी, सुनिए। इसके हृदय में अमृत की एक कुप्पी है। बाण चलाकर उसे वहीं फोड़ दीजिए। १९-२०। हे प्रभु, जब (आप) अमृत की कुप्पी फोड़ डालेंगे, तब रावण मरेगा।' यह बात सुनकर राम प्रसन्न हो गये। उन्होंने अगस्त्य ऋषि का दिया हुआ एक बाण निकाल लिया। २१। देवों में जिस प्रकार सुरपति अर्थात् इन्द्र (सर्वोपरि) हैं, पक्षियों में जिस प्रकार विनता-पुत्र गरुड़ है, जिस प्रकार समस्त नागों में अनन्त (शेष सर्वश्रेष्ठ) है, समस्त वानरों में हनुमान है, जिस प्रकार शास्त्रों में वेदान्त है, जिस प्रकार तेजस्वी वस्तुओं में (तेज का सार-भूत) सूर्य है, शस्त्रों में सुदर्शन है, समस्त वनों में नन्दन वन है, जिस प्रकार तीर्थों में प्रयाग (सर्वश्रेष्ठ)

ज्यम तीरथ मांहे प्रयाग, एवुं बाण काढ्युं महाभाग,
रामे लीधुं ते कर मोझार, मंत्र युक्त कर्युं तेणी वार । २४ ।
शेष कूर्म वराह समुद्र, शशी तरणि अग्नि वायु इंद्र,
शिव कुबेर वरुण ने यम, सप्त ऋषि पंच भूत ने ब्रह्म । २५ ।
ए सर्वनुं सामर्थ जेह, बाण अग्र मूक्युं छे तेह,
ते शर धनुषे कर्यो संधान, सहस्र सूरज सम दीप्तमान । २६ ।
स्थाप्युं ब्रह्मास्त्र तेने अंत, पछी ताण्युं आकर्ण पर्यंत,
कह्युं रामना करमां बाणे, कूपी सहित हरीश एना प्राणे । २७ ।
मूक्युं बाण ते श्रीरघुवीर, चाल्युं गर्जना करतुं गंभीर,
पडे सहस्र विद्युत थई उदे, एम पड्युं ते रावणने रुदे । २८ ।
वक्षस्थळ कूपी सहित विदार्युं, तेणे आयुष्य सर्व संघार्युं,
पड्युं छिद्र गवाक्षना जेवुं, पृष्ठे पार नीकळियुं तेवुं । २९ ।
त्यांथी ऊछळ्युं बाण ते दिश, छेद्यां रावणनां दश शीश,
पछी रामभाथामां आवी, पाछुं पेठुं ते बाण समावी । ३० ।

है, उसी प्रकार श्रीराम ने समस्त बाणों में एक महाभागवान् (सर्वश्रेष्ठ) बाण निकाला । फिर राम ने उसे हाथ में लिया और उसी समय उसे मंत्र-युक्त कर दिया । २२-२४ । शेष, कूर्म, वराह, समुद्र, चन्द्रमा, सूर्य, अग्नि, वायु, इन्द्र, शिव, कुबेर, वरुण और यम, सप्तर्षि[1], पंचमहाभूत[2] और ब्रह्म—इन सबकी जो सामर्थ्य है, उसे उन्होंने बाण की नोक पर स्थापित किया । सहस्रों सूर्य के समान दीप्तिमान उस बाण को धनुष पर सन्धान किया । २५-२६ । उसके अन्त्य भाग पर उन्होंने ब्रह्मास्त्र स्थापित किया, फिर उस (धनुष की प्रत्यंचा) को कान तक खींच लिया तो उस बाण ने राम के कान में कहा, 'मैं उस कुप्पी सहित उसके प्राणों को हर लूँगा ।' २७ । श्रीरघुवीर ने वह बाण चला दिया, तो वह गम्भीर गर्जन करता हुआ चल दिया । जिस प्रकार सहस्र बिजलियाँ उदित होकर गिर जाएँ, उस प्रकार वह रावण के हृदय (-स्थल) पर लग गया । २८ । उसने उस कुप्पी के साथ (रावण के) वक्षःस्थल को विदीर्ण कर डाला और उसकी समस्त आयु को नष्ट (समाप्त) किया । (उसके वक्षःस्थल में) गवाक्ष जैसा छिद्र हो गया और वह उसी प्रकार पार निकल गया । २९ । वहाँ से उसी दिशा में वह बाण उड़ गया और उसने रावण के दसों मस्तकों

१ सप्तर्षि : कश्यप, अत्रि, भरद्वाज, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि, वसिष्ठ । अथवा—मरीचि, अत्रि, अंगिरस, पुलस्ति, पुलह, क्रतु, वसिष्ठ ।

२ पंच महाभूत : पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश ।

घणुं क्रोधे भराया छे राम, बीजुं बाण काढ्युं ते ठाम,
त्यारे लक्ष्मण झाल्या हाथ, हावे क्षमा करो रघुनाथ। ३१।
प्रभु मृत्यु पाम्यो दशशीश, थयुं जुद्ध पूरण आ दिश,
त्यारे धनुष भाथा ते ठाम, आप्यां लक्ष्मणने श्रीराम। ३२।
अवतारकृत्य अमारे आज, थयुं पूरण कहे महाराज,
पड्यो रावण रणमोझार, वरत्यो विश्वमां जयजयकार। ३३।

वलण (तर्ज़ वदलकर)

जयजयकार वरत्यो विश्वमां, ज्यारे पड्यो रावणराय रे,
दुंदुंभि वाग्यां देवनां, पुष्पनी वृष्टि थाय रे। ३४।

को काट दिया। फिर पुनः आकर राम के तूणीर में घुसकर समा गया। ३०। राम बड़े क्रोध से भरे-पूरे हो गये थे। उन्होंने उसी स्थान पर दूसरा बाण निकाला। तब लक्ष्मण ने उनका हाथ थाम लिया (और कहा—) 'हे रघुनाथ, अब क्षमा कीजिए।' ३१। 'हे प्रभु, दशानन मृत्यु को प्राप्त हो गया है। इस स्थान पर यह युद्ध पूर्ण हो गया है।' तब श्रीराम ने धनुष और तूणीर उसी स्थान पर लक्ष्मण को दे दिये। ३२। (फिर) महाराज श्रीराम ने कहा, 'आज हमारा अवतार-कार्य समाप्त हो गया।' (जब) रावण युद्ध-भूमि पर गिर गया, तो विश्व में जय-जयकार हो गया। ३३।

जब राजा रावण (युद्ध-भूमि में) गिर गया, तो विश्व में जय-जयकार हो गया। देवों की दुन्दुभियाँ बज उठीं और फूलों की वृष्टि हो गयी। ३४।

* * *

अध्याय—५० (रावण की दाह-क्रिया और उत्तर-क्रिया)

राग वेराडी

हावे पृथ्वी उपर मरण पामीने, पडियो रावणराय,
पुष्ट अंगेथी रुधिर नीकळे, मुगट शिर पृथ्वी रोळाय। १।

अध्याय—५० (रावण की दाह-क्रिया और उत्तर-क्रिया)

अब रावणराज मृत्यु को प्राप्त होकर भूमि पर गिर पड़ा। उसके पुष्ट शरीर से रक्त (निकलते हुए) बह रहा था। उसके मुकुट और

ते जोई विभीषणने मूर्छा आवी, विकळ थया तेणी वार,
त्यारे सुग्रीव आवीने बेठा कर्या, पछी शाता वळी निरधार । २ ।
त्यारे विभीषण रावण पासे बेठा, ने करवा मांड्युं रुदन,
आंखे आंसुनी धारा चाले, विकळ थया घणुं मन । ३ ।
रावणने पड्यो जोईने विभीषण, करता विविध विलाप,
अहो वीर रणधीर विजेकृत, अमोघ तेज प्रताप । ४ ।
परम दारुण तप अग्नि जेवो, काळना सरखो क्रोध,
हावे फरी एवो क्यांथी मळशे, रावण बंधव जोध ? । ५ ।
अधिक वैभव सुरपतिना करतां, संतति संपति युक्त,
देव सकळनो गरव हर्यो जेणे, प्राक्रम बळ संयुक्त । ६ ।
जेने कारण आदि पुरुष अवतर्या, हरि ईश्वर भगवान,
निर्गुण ब्रह्मने सगुण कर्या, जेनुं योगी धरे छे ध्यान । ७ ।
ए रावण सीताने हरी लाव्यो, कर्यो अमने उपकार,
रामनी साथे मैत्री करावी, जश पाम्यो विस्तार । ८ ।

मस्तक धूल में (पड़कर) मैले हो गये । १ । यह देखकर विभीषण को मूर्च्छा आ गयी । वह उस समय विकल हो गया । तब सुग्रीव ने (वहाँ) आकर उसे बैठा लिया और फिर उसे निश्चय ही शान्ति अनुभव हुई । २ । तब विभीषण रावण के पास बैठ गया और रोने लगा । उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगी । वह मन में बहुत विकल हो गया । ३ । रावण को (मृत) पड़ा देखकर विभीषण विविध प्रकार से विलाप करने लगा । (वह बोला—) 'अहो मेरा बन्धु रणधीर, विजेता, अमोघ रूप से तेज और प्रताप से युक्त था । ४ । उसका तप अग्नि का-सा दारुण था, उसका क्रोध काल का-सा था । अब फिर वन्धु रावण जैसा योद्धा कहाँ से मिलेगा ? । ५ । उसका वैभव सुरपति इन्द्र (के वैभव) से भी अधिक था । वह सन्तति और सम्पत्ति से युक्त था । जिसने समस्त देवों का गर्व हरण किया, वह पराक्रम और बल से युक्त था । ६ । जिसके कारण आदि पुरुष, भगवान हरि, ईश्वर अवतरित हो गये, योगी जिसका ध्यान धारण करते हैं, उस निर्गुण ब्रह्म को जिसने सगुण (रूपधारी) करा दिया, वह रावण अपहरण करके सीता को लाया और उसने (उस प्रकार) हमारा उपकार किया । उसने राम के साथ (हमारी) मित्रता करा दी । वह (राम के हाथों मरकर) बड़े यश को प्राप्त हो गया है । ७-८ जगत् में जहाँ (जब) तक सूर्य, चन्द्र और धरती रहेगी, वहाँ तक उसकी कीर्ति फैली रहेगी । श्रीरघुवीर के गुणों के साथ (जगत्) इसकी

कीर्ति विस्तरी एनी जगतमां, ज्यांहां लगी रवि शशी धरणी,
श्रीरघुवीरना गुणनी साथे, गवाशे एनी करणी । ९ ।
अहो मारे आज बंधव पाखे, दिशा पडी गई शून्य,
मुष्टि थकी करे निज रुदे ताडण, विभीषण करता रुदन । १० ।
एवा विलाप सांभळी विभीषणना, त्यारे पासे आव्या रघुवीर,
पछी कर ग्रहीने समजावे पोते, वचन कहे रणधीर । ११ ।
तमो विवेकमूर्ति थईने विभीषण, आ शुं करो छो रुदन ?
ए नाशवंतनो शोक न धरिये, जुओ विचारी मन । १२ ।
आ मायिक जग डंबर जेवुं, मृगजळ पिंड ब्रह्मांड,
आकार तेज विकार अशाश्वत, जाणजो स्थिर अखंड । १३ ।
माटे करवो घटे नहि शोक ज तेनो, जे मोहरूप संसार,
एवां वचन रामनां सुणीने विभीषण, छाना रह्या तेणी वार । १४ ।
पछी राणीओ सर्व अग्र मंदोदरी, आवी ते रणमांहे,
पासे बेसीने रुदन करंती, रावण पडियो ज्यांहे । १५ ।
विविध प्रकारे राणी मंदोदरी, करती शोकविलाप,
ते सुणी मोटा मुनिवर जोगी, धीरज मूके आप । १६ ।

करनी का भी गान करेगा । ९ । अहो, आज मेरे लिए बन्धु पक्ष में दिशा शून्य पड़ गयी है । ' विभीषण रुदन करते-करते अपनी मुट्ठियों से वक्षःस्थल पर आघात कर रहा था। १० । तब रणधीर रघुवीर राम विभीषण के इस प्रकार के विलाप को सुनकर उसके पास आ गये । फिर उन्होंने स्वयं उसके हाथ को पकड़कर समझा लिया। वे यह बात बोले । ११ । ' हे विभीषण, तुम विवेक की मूर्ति होकर भी यह रुदन क्यों कर रहे हो ? इस नाशवान का शोक न करें । मन में विचार करके तो देखो । १२ । यह माया द्वारा निर्मित जगत् आडम्बर है । पिण्ड और ब्रह्माण्ड मृगजल जैसा है । आकार, तेज, विकार अशाश्वत है । (अतः) जो स्थिर और अखण्ड हो, उसे जान लो । १३ । इसलिए, जो मोह-रूप संसार है, उसके लिए (तुम्हारा यह) शोक करना योग्य नहीं है । ' उस समय राम की ऐसी बातें सुनकर विभीषण (रोना बन्द करके) चुप हो गया । १४ । अनन्तर उस युद्ध-भूमि में मन्दोदरी सब रानियों के आगे रहते हुए आ गयी । जहाँ रावण पड़ा हुआ था, वहाँ उसके पास बैठ कर वह रुदन करने लगी । १५ । रानी मन्दोदरी विविध प्रकार से शोककर रही थी । उसे सुनकर बड़े-बड़े मुनिवर तथा योगी (तक) स्वयं धीरज खो बैठते । १६ । (वह बोली—) ' हे स्वामी, मैंने बहुत समझा दिया

अरे स्वामी में घणुं समजाव्या, न मान्युं मारुं वचन,
संतति संपत्ति नाश करीने, खोयुं अंते तन । १७ ।
अहो नाथ रघुनाथनी साथे, भलुं भजव्युं तमो वेर,
त्रिभुवनमां कीरति विस्तारी, गवाशे घेरेघेर । १८ ।
हो प्राणपति तम अर्थे करीने, रघुपति नीकळ्या वन,
कर्यां काम घणां तमारा निमित्ते, पृथ्वी करी पावन । १९ ।
हावे सृष्टिमां नीपजशे नहि, तम जेवो पुरुष प्रतापी,
जेने अर्थे करी राम अवतर्या, त्रिलोकमां कीर्ति व्यापी । २० ।
अहो दैवगति जुओ विपरीत, जेने लोकपति लागे पाय,
तेह पुरुष आजे रणमां पडियो, मस्तक भूमि रोळाय । २१ ।
एम घणा विलाप राणीना सुणी, जळ लोचन भरायुं राम,
पछी सतीनी पासे आवीने बेठा, शिक्षा करे पूरणकाम । २२ ।
अरे पुण्यपावनी सतीशिरोमणी, ज्ञानविवेकनी खाण,
ए नाशवंतनो शोक शुं करवा, करे छे तुं निरवाण ? । २३ ।
मूळ दृष्टि घालीने तुं, शुं छे एमां सत्य ?
आ जगत सर्व मायानुं चित्र छे, जेवुं छे स्वप्न असत्य । २४ ।

था, फिर भी तुमने मेरी बात नहीं मानी । सन्तति, सम्पत्ति का नाश करके तुमने अन्त में (अपना) शरीर भी खो दिया । १७ । अहो नाथ, तुमने रघुवीर राम से भला ही वैर ठान लिया । आपने (उसके द्वारा) त्रिभुवन में अपनी कीर्ति फैला दी—(अब) वह घर-घर गायी जाएगी । १८। हे प्राण-पति, तुम्हारे लिए रघुपति राम घर से निकलकर वन में आ गये । तुम्हारे निमित्त उन्होंने बहुत काम किये और पृथ्वी को पावन बना लिया । १९ । अब तुम जैसा प्रतापी पुरुष सृष्टि में उत्पन्न नहीं होगा, जिसके लिए राम अवतरित हो गये और जिनकी कीर्ति त्रिलोक में व्याप्त हो गयी है । २० । अहो देखो तो दैवगति (कैसी) विपरीत है । लोक-पति जिसके पाँव लगते थे, वह पुरुष आज युद्ध-भूमि में गिर पड़ा है, उसका मस्तक भूमि पर धूल में मैला हो गया है । ' २१ । इस प्रकार रानी मन्दोदरी का बड़ा विलाप सुनकर राम ने नेत्रों में अश्रु-जल भर लिया (नेत्रों में अश्रुजल भर गया) । फिर वे पूर्ण काम राम उस सती के पास आकर बैठ गये और उसे उपदेश देने लगे । २२ । (वे बोले—) ' हे पुण्यवती, पावन सती शिरोमणि, हे ज्ञान और विवेक की खान ! इस नाशवान का निश्चय ही तुम किसलिए शोक कर रही हो । २३ । मूलभूत बात पर दृष्टि लगाकर तुम देख लो, इसमें क्या सत्य है ? यह

पंचभूतनी नाशवंत देह, विकारी अशाश्वत रूप,
माटे आत्मा तणो तुं कर विचार, अविनाशी अखंड अनुप । २५ ।
माटे मोह तजी मन धीरज राखी, घेर जाओ हे मात,
एहनी क्रिया कर्या पछी वरजे, विभीषणने विख्यात । २६ ।
पतिव्रत धर्म तारो नहि भागे, तुं लंकानी राणी,
राज्यासननी भोक्ता तुं, ज्यम इंद्र तणी इंद्राणी । २७ ।
श्रीरामने वचने मोह गयो, मंदोदरीनो तेणी वार,
रघुपतिने पाये नमी राणी, गई लंका मोझार । २८ ।
पछी विभीषणे रामनी आज्ञा मागी, ने रावणनी देह लीधी,
सिंधु गामनी सरितातट जई, दाहक्रिया त्यां कीधी । २९ ।
मयतनया विण अन्य राणीओ, तेमां केटली जेह,
सहगमन कर्युं तेणे स्वामी साथे, भस्म थई छे तेह । ३० ।
पछी लंकामां सहु साथ ज आव्यो, स्नान करी निरधार,
उत्तरक्रिया विधिए करावी, विभीषण पासे सार । ३१ ।

समस्त जगत् माया का चित्र है, वह स्वप्न जैसा मिथ्या है । २४ । पंच महाभूतों की बनी यह देह नाशवान होती है, वह विकारी होती है, अशाश्वत-स्वरूप होती है । इसलिए तुम आत्मा का विचार करो—वह अविनाशी, अखण्ड और अनुपम होती है । २५ । इसलिए हे माता, मोह को त्यजकर, मन में धीरज धारण करते हुए तुम घर जाओ और इसकी (अन्त्य) क्रिया करने के पश्चात्, तुम विख्यात-नामा विभीषण का वरण कर लो । २६ । (ऐसा करने पर भी) तुम्हारा पतिव्रत धर्म नष्ट नहीं हो जाएगा, तुम लंका की रानी (बनी) रहोगी । जिस प्रकार इन्द्र की इन्द्राणी शची है, उसी प्रकार तुम (लंका के) राज्यासन का भोग करने वाली (बनी) रहोगी । ' २७ । उस समय श्रीराम की बातों (को सुनने) से रानी मन्दोदरी का मोह दूर हो गया । फिर वह रघुपति के चरणों को नमस्कार करके लंका में चली गयी । २८ । तदनन्तर विभीषण ने राम से आज्ञा माँगी और रावण की देह (उठवा) ली । फिर समुद्रगामिनी नदी के तट पर जाकर वहाँ दाह-क्रिया की । २९ । मय-तनया मन्दोदरी के अतिरिक्त (रावण की) जो स्त्रियाँ थीं, उनमें से अनेकों ने अपने पति के साथ सहगमन किया और वे (चिता में जलकर) भस्म हो गयीं । ३० । अनन्तर वे सब स्नान करके लंका में साथ ही चले गये । तब विधाता (ब्रह्मा ने) विभीषण द्वारा भलीभाँति उत्तर-क्रिया करवायी । ३१ ।

ब्रह्मा ने विभीषण द्वारा रावण की उत्तर-क्रिया करवा दी । अनन्तर

वलण (तर्ज़ बदलकर)

विभीषण पासे ब्रह्माए करावी, उत्तरक्रिया रावण तणी,
पछे प्रजाजन लेई विभीषण आव्या, तेडवाने त्रिभुवन धणी । ३२ ।

विभीषण प्रजाजनों को साथ में लेकर त्रिभुवन के स्वामी श्रीराम को बुलाने के लिए आ गया । ३२ ।

*   *   *

अध्याय—५१ (विभीषण का राज्याभिषेक, देव आदि का राम के दर्शन के लिए आगमन)

राग धन्याश्री

रावणनी करी क्रिया विधान जी,
विभीषण चाल्या ज्यां छे भगवान जी।
लंकापुरनी प्रजाजन साथ जी,
आवी नमिया चरण रघुनाथ जी । १ ।

ढाळ

रघुनाथचरणे नम्या विभीषण, प्रजाजन वळी जेह,
एक प्रधान उगर्यो विद्युतजीभ्या, आवी नमियो तेह । २ ।
वळी अन्य राक्षस ऊगर्या, युद्ध मांहेथी तेणी वार,
निरवैर थई ते नम्या आवी, रामने निरधार । ३ ।

अध्याय—५१ (विभीषण का राज्याभिषेक, देव आदि का राम के दर्शन के लिए आगमन)

रावण की क्रिया-विधि सम्पन्न करके विभीषण (वहाँ) चला गया, जहाँ भगवान राम (ठहरे हुए) थे। उसके साथ लंकापुरी के प्रजाजन भी थे। उन्होंने आकर श्रीराम के चरणों को नमस्कार किया । १ ।

विभीषण ने तथा उनके साथ जो प्रजानन आये थे, उन्होंने श्रीराम के चरणों को नमस्कार किया। (रावण के मंत्रियों में से) विद्युज्जिह्व नामक एक मंत्री बचा हुआ था। उसने आकर नमस्कार किया । २ । इसके अतिरिक्त, युद्ध-भूमि में उस समय जो अन्य राक्षस बचे हुए थे, उन्होंने भी निश्चय ही वैर-हीन होते हुए (वहाँ) आकर राम को नमस्कार

ते समे विभीषणे हाथ जोडी, वीनव्या श्रीराम,
महाराज पुरमां पधारो, भक्तना पूरणकाम । ४ ।
विरंचिनिर्मित नगर ते, प्रभु जुओ दृष्टे आज,
त्यां पधारी पावन करो, मुज मनोरथ महाराज । ५ ।
त्यारे राम हसीने बोलिया, सुणी विभीषणनां वचन,
मुज भक्त ज्यां वासो वसे, ते सदा छे पावन । ६ ।
में दान करीने आपी तमने, लंका जे कहेवाय,
सुणो विभीषण साचुं कहुं, त्यां अमो नव्य अवाय । ७ ।
तेनां घरनुं अन्न लेवाय नहि, कर्युं कन्यादान विशुद्ध,
गोदान कर्युं सद्पात्रने, न खवाय तेनुं दूध । ८ ।
एम लंका दान करी में तमने, ते माटे न अवाय,
वळी भरतजीने मळ्या विना में, पुरमां नव पेसाय । ९ ।
भरतने मळीने करीशुं ज्यारे, स्नान मंगळ जोग,
त्यारे पूंठे तांबूल आदे, भोगवीशुं सहु भोग । १० ।
पछी सुग्रीव लक्ष्मणने कह्युं, तमो जाओ लेई कपिजन,
सुमुहूरतमां विभीषणने, बेसाडो राज्यासन । ११ ।

किया । ३ । उस समय हाथ जोड़कर विभीषण ने श्रीराम से विनती की, 'हे भक्तों की अभिलाषाओं को पूर्ण करनेवाले महाराज, (अब) नगर में पधारिए । ४ । हे प्रभु, विधाता द्वारा निर्मित इस नगर को आज आप अपनी आँखों से देखिए । हे महाराज, वहाँ पधारकर मेरे मनोरथ को पूर्ण कीजिए ।' ५ । तब विभीषण की ये बातें सुनकर राम हँसते हुए बोले, 'मेरे भक्त जहाँ निवास करते हैं, वह (स्थान) सदा पावन ही होता है ।' ६ । जो (नगरी) लंका कहाती है, मैंने वह तुम्हें दान में दी है । हे विभीषण, सुनो, मैं सत्य कहता हूँ, वहाँ हम नहीं आ सकते । ७ । जिस घर विशुद्ध मन से कन्या-दान किया हो, उस घर का अन्न नहीं ग्रहण कर सकते । किसी सत्पात्र (सुयोग्य व्यक्ति) को गोदान दिया हो, तो उस गाय का दूध नहीं पी सकते । ८ । इस प्रकार मैंने तुम्हें लंका दान में दी है, इसलिए मैं नहीं आ सकूँगा । फिर बिना भरत से मिले मुझसे नगर में प्रवेश नहीं किया जाएगा । ९ । जब मैं भरत से मिलकर मंगल-स्नान-योग करूँगा, तब उसके पश्चात् मैं ताम्बूल (बीड़ा) आदि समस्त भोगों का उपभोग कर लूँगा । १० । अनन्तर उन्होंने सुग्रीव और लक्ष्मण से कहा, 'तुम कपि-जनों को लेकर जाओ और सुमुहूर्त पर विभीषण को राजगद्दी पर प्रतिष्ठित करवा दो । ११ । (फिर) रावण जिस किसी की

जेनी वस्तु आणी होय रावणे, तेने आपजो जई त्यांहे,
वळी मुक्त करजो देवने, जे होय बंधी मांहे । १२ ।
एवां वचन सुणी श्रीरामनां, सौमित्र मित्रकुमार,
गया लंकामां विभीषणनी साथे, कपि तणो नहि पार । १३ ।
पछे राज्य बेसाड्या विभीषणने, सुमुहूरत जोई त्यांहे,
त्यारे विभीषणनी आण वरती, सकळ लंका मांहे । १४ ।
मंदोदरीए कुंड रचियो, अग्निनो तेणी वार,
तेमां पेसी शुद्ध थईने, नीकळी ते बहार । १५ ।
रामआज्ञाए मंदोदरी वरी, विभीषणने त्यांहे,
वरतियो जयजयकार सहु, हरखी प्रजा पुरमांहे । १६ ।
पछे सुग्रीव आदे सहु कपि, मुख्य जे कहेवाय,
तेने वस्त्र भूषण आपियां, विभीषणे करीने पसाय । १७ ।
वळी वस्तु जे कंई हती जेनी, सोंपी तेने तेह,
मुक्त कीधा देव सरवे, हता बंधी जेह । १८ ।
पछे सरवे कपिने देखाडी ते, लंकानी रचनाय,
विभीषण सहित पछी आविया, ज्यां विराजे रघुराय । १९ ।

(जो भी) वस्तु लाया हो, वह वहाँ जाकर उसे लौटा दो। अनन्तर जो बन्दीशाला में हों, उन देवों को मुक्त कर दो।' १२। राम की ऐसी बातें सुनकर लक्ष्मण और सुग्रीव विभीषण के साथ लंका में गये। (उनके साथ गये हुए) कपियों की तो कोई सीमा ही नहीं थी। १३। फिर उन्होंने सुमुहूर्त देखकर वहाँ विभीषण को राजगद्दी पर बैठा दिया। तब (से) विभीषण की सत्ता समस्त लंका में (स्थापित) हो गयी। १४। उस समय मन्दोदरी ने अग्नि का एक कुण्ड बना लिया और उसमें प्रविष्ट होकर शुद्ध होते हुए वह बाहर निकल आयी। १५। फिर राम की आज्ञा के अनुसार मन्दोदरी ने वहाँ विभीषण का वरण किया, तो जय-जयकार हो गया। (इससे) नगर की समस्त प्रजा आनन्दित हो गयी। १६। तत्पश्चात् जो मुख्य कहे जाते थे, सुग्रीव आदि उन समस्त कपियों को विभीषण ने प्रसन्न होकर वस्त्र और आभूषण प्रदान किये। १७। फिर जो कुछ वस्तुएँ जिस-जिसकी (रावण द्वारा लायी हुई) थीं, वे उन्हें सौंप दीं। जो देव बन्दी थे, उन सबको मुक्त कर दिया। १८। अनन्तर उसने समस्त कपियों को लंका की रचना (की विशेषता) दिखा दी। फिर वे सब विभीषण सहित वहाँ आ गये, जहाँ रघुराज राम विराजमान थे। १९। विभीषण ने श्रीरघुनाथ के चरण पकड़ते हुए साष्टांग नमस्कार

सांष्टांग करी विभीषण नम्या, ग्रही चरण श्रीरघुनाथ,
त्यारे वचन बोल्या रामजी, एने मस्तक मूकी हाथ । २० ।
अरे विभीषण करजो अचळ, तमो लंका केरुं राज,
जेवा ध्रुव बळी उपमन्यु तेनी, पंक्तिमां तमो आज । २१ ।
आशीर्वचन एवुं कही, पछे बेसाड्या सम्मुख,
ते समे सर्वे देव आव्या, मळवा पामी सुख । २२ ।
इंद्र ब्रह्मा सदाशिव, तेत्रीश कोटी देव,
अष्ट वसु ने मरुतगण, रुद्र एकादश एव । २३ ।
आदित्य द्वादश यक्ष गंध्रव, किन्नर चारण सिद्ध,
अष्ट नायिका दिग्पाळ दश, यम वरुण रिध सिध निध । २४ ।

किया । तब उसके मस्तक पर हाथ रखते हुए श्रीराम बोले । २० । ' हे विभीषण, तुम लंका का अचल रूप से राज्य करना । ध्रुव, बलिराज, उपमन्यु[1] की जो श्रेणी है, आज से तुम उस (श्रेणी) में विराजमान हो गये हो । ' २१ । ऐसा आशीर्वाद देकर उन्होंने उसे अपने सम्मुख बैठा लिया । उस समय समस्त देव, आठों वसु[2] और मरुद्गण[3], ग्यारहों रुद्र[4],

---

१ **उपमन्यु :** शिव आदि पुराणों की मान्यता के अनुसार, उपमन्यु दरिद्र माता-पिता का पुत्र था । उसे एक बार दूध पीने को मिला, तो घर आने पर वह अपनी माता से दूध माँगने लगा । माता उसे आटे में पानी मिलाकर देने लगी । उसने कहा—पूर्वजन्म में तुमने शिवजी की उपासना न की होगी, अतः उनकी अवकृपा से तुम्हें इस स्थित में रहना पड़ रहा है । तदनन्तर उपमन्यु ने शिवजी को प्रसन्न कर लेने का उपाय पूछा और उसके अनुसार तपस्या द्वारा उन्हें प्रसन्न कर लिया । शिवजी ने उसकी भक्ति की परीक्षा की और उसमें सोलहों आने खरा उतरने पर उन्होंने उसे वरदान दिया । शिवभक्त उपमन्यु अमर कीर्ति को प्राप्त हो गया ।

२ **आठ वसु :** वसु विशिष्ट श्रेणी के देव माने गये हैं । ये आठ हैं—ध्रुव, घोर, सोम, आप, अनल, अनिल, प्रत्यूष, प्रभास । अथवा—द्रोण, प्राण, ध्रुव, अर्क, अग्नि, दोष, वसु, विभावसु ।

३ **मरुद्गण :** ' मरुत् ' का अर्थ है ' वायु ' । मरुद्गण विशिष्ट श्रेणी के देवों का वर्ग है । इसमें कुल उनचास देव है । वस्तुतः ये सब वायु ही के विभिन्न रूप हैं । ये हैं—प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, नाग, कृकल, कूर्म, देवदत्त, धनंजय इत्यादि ।

४ **ग्यारह रुद्र :** वीरभद्र, शम्भु, गिरीश, अजैकपाद, अहिर्बुध्न्य, पिनाकी, अपराजित, भुवनाधीश्वर, कपाली, स्थाणु, भुव । अथवा—भूतेश, नीलरुद्र, कपाली, वृजवाहन, त्र्यंबक, महाकाल, भैरव, मृत्युंजय, कामेश, योगेश, शंकर ।

सहस्त्र अठ्याशी मुनिमंडळ, भूत तत्त्व स्वरूप,
सप्त द्वीप ने नव खंडना, आवी मळ्या सहु भूप । २५ ।
सहु आव्या मळवा रामने, वाजे घणां वाजित्र,
रघुवीरनां दरशन करीने, थया पुण्यपवित्र । २६ ।
ते मध्ये शिव विधि इंद्र आदे, हता मुख्य जे देव,
तेणे स्तुति करी श्रीरामनी, बेठा सभा करी एव । २७ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सभा करीने बेठा सर्वे, नारद तुमर वाय रे,
तेणे समे हनुमंतनी साथे, बोल्या श्रीरघुराय रे । २८ ।

बारहों आदित्य[1], यक्ष, गन्धर्व, किन्नर, चारण, सिद्ध, आठों नायिकाएँ[2], दसों दिक्पाल[3], यम, वरुण, ऋद्धि-सिद्धि, निधियाँ[4], अठासी सहस्र ऋषियों का समुदाय, मूल तत्त्व स्वरूप (पाँचों) महाभूत[5] आ गये । सातों द्वीपों[6] और पृथ्वी के नवों खण्डों[7] के अधिपति आकर श्रीराम से मिले । २२-२५ । सब राम से मिलने के लिए आ गये, तो बहुत वाद्य बजने लगे । सब रघुवीर राम के दर्शन करके पुण्यवान तथा पावन हो गये । २६ । उनके बीच शिव, ब्रह्मा, इन्द्र आदि जो मुख्य-मुख्य देव हैं, उन्होंने श्रीराम की स्तुति की और वे सभा आयोजित करके ही बैठ गये । २७ ।

नारद, तुम्बरू, वायु, आदि सब (वहाँ) सभा का आयोजन करके बैठ गये । उस समय श्रीरघुराज राम हनुमान से बोले । २८ ।

* * *

१ **द्वादश आदित्य :** मित्र, रवि, सूर्य, भानु, खग, पूष्णि, हिरण्यगर्भ, मरीचि, आदित्य, सविता, अर्क, भास्कर । दूसरी मान्यता के अनुसार विवस्वान्, अर्यमा, पूषा, त्वष्टा, सविता, भग, धाता, विधाता, वरुण, मित्र, शक्त, उरुक्रम । बारह सूर्यों के नामों की अन्यान्य सूचियाँ भी उपलब्ध है । २ **अष्ट नायिकाएँ :** आठ नायिकाओं के विषय में विभिन्न मान्यताएँ उपलब्ध हैं । यहाँ इन्द्र की आठ नायिकाएँ अपेक्षित है । ये है—उर्वशी, मेनका, रम्भा, पूर्वचिति, स्वयम्प्रभा, भिन्नकेशी, जनवल्लभा, घृताची या तिलोत्तमा । ३ **दश दिक्पाल :** 'दिक्पाल' दिशाओं के पालक, अर्थात् अधिष्ठाता देव हैं । ये तथा उनकी निर्धारित दिशाएँ हैं—इन्द्र (पूर्व), अग्नि (आग्नेय), यम (दक्षिण), निर्ऋति (नैऋत्य), वरुण (पश्चिम), मरुत् (वायव्य), कुबेर (उत्तर), ईश (ईशान्य), ब्रह्मा (ऊर्ध्व), अनन्त (अधस्) । ४ (**अष्ट) निधियाँ :** अणिमा, महिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाश्य, ईशिता, वाशिता, प्राकाम्य । ५ **पंच महाभूत :** पृथ्वी, आप (जल), तेज (अग्नि), वायु, आकाश । ६ **सप्त द्वीप :** पृथ्वी के विशाल भाग को 'द्वीप' कहते हैं । पौराणिक मान्यता के अनुसार ये द्वीप सात हैं—जम्बु, प्लक्ष, शाल्मली, कुश, क्रौंच, शाक, पुष्कर । ७ **नव खण्ड पृथ्वी :** पौराणिक मान्यता के अनुसार पृथ्वी के बड़े-बड़े भाग 'खण्ड' कहाते हैं । ये नौ हैं—इलाश्व, भद्राश्व, हरिवर्ष, किंपुरुष, केतुमाल, रम्यक, भरतवर्ष, हिरण्य, उत्तर कुरु । नौ खण्डों के नामों के विषय में विभिन्न मान्यताएँ विद्यमान है ।

अध्याय—५२ (हनुमान का अशोकवन में जाना, सीता को राम के समीप लाया जाना)

राग चोपाई

हनुमंतने कहे छे श्रीराम, हवे सीताने लावो आ ठाम,
मंगळ स्नान करावी त्यांहे, जानकीने पछे लावो आंहे। १।
एवां वचन कह्यां श्रीभगवंत, सुणी चाल्या विभीषण हनुमंत,
साहित्य सरवे लेवाने त्यांहे, गया विभीषण लंकामांहे। २।
अशोकवन आव्या मारुति, ज्यां वेठां छे सीता सती,
ज्यम धेनु प्रत्ये आवे वच्छ प्रशंस, मानसरोवर जाये हंस। ३।
ज्यम विनतासुत लक्ष्मीदर्शन, एम आव्या अशोकमां मारुततन,
सीताजीने साष्टांग ज कर्यो, त्यारे जानकीए कर मस्तक धर्यो। ४।
कंठे प्राण आव्या होय ज्यम, को अमृतपान करावे त्यम,
एम हनुमंतने जोई हरख्यां सती, त्यारे वज्रदेहीए करी विनति। ५।
माता सुखी छे श्रीरघुवीर, मार्यो दशानन ते रणधीर,
विभीषणने बेसाड्या राज, हुं आव्यो तमने तेडवा काज। ६।

अध्याय—५२ (हनुमान का अशोकवन में जाना, सीता को राम के समीप लाया जाना)

श्रीराम ने हनुमान से कहा, 'अब सीता को इस स्थान पर ले आओ। वहाँ मंगल स्नान करवाकर फिर सीता को यहाँ ले आओ।' १। श्रीभगवान राम ने ऐसी बातें कहीं, तो उन्हें सुनकर विभीषण और हनुमान चले गये। फिर समग्र सामग्री लाने के लिए विभीषण लंका में गया। २। (इधर) हनुमान अशोक वन में आ गया, जहाँ सती सीता बैठी हुई थी। जिस प्रकार बछड़ा गाय के निकट आ जाता हो, हंस मानसरोवर के पास आ जाता हो, जिस प्रकार विनता-सुत गरुड़ लक्ष्मी के दर्शन के लिए आ जाता हो, उसी प्रकार पवन-कुमार हनुमान अशोक वन में (सीता के पास) आ गया। उसने जानकी सीता को (जब) साष्टांग नमस्कार किया, तब उसने उसके मस्तक पर हाथ रखा। ३-४। जिस प्रकार किसी के प्राण कण्ठ तक आ गये हों, और तभी उसे कोई अमृत पान कराए, तो वह जिस प्रकार आनन्दित हो जाता हो, उस प्रकार हनुमान को देखते ही सती सीता आनन्दित हो गयी। तब वज्रदेही हनुमान ने उससे विनती की। ५। 'हे माता, श्रीरघुवीर सकुशल हैं। उन रणधीर ने दशानन को मार डाला है, और विभीषण को राज्य पर (राजगद्दी पर) बैठा दिया है।

एवुं सुणी हरख्यां सीता मन, बोल्यां हनुमंत साथे वचन,
अरे मारुति मारे काज, ते बहु श्रम कर्यो कपिराज। ७।
घणुं कष्ट कर्युं मारी वती, ते जाणे छे सरव अयोध्यापति,
माटे दिन दिन बळ अदकेरुं हजो, तेज प्रताप अधिक वाधजो। ८।
एटले आव्या विभीषण त्यांहे, सरव साहित्य लेई वाडी मांहे,
सीताने चरणे नाम्युं शीश, त्यारे जानकीए दीधी आशिष। ९।
अरे विभीषण वीर प्रचंड, करो लंकानुं राज अखंड,
सूरज चंद्र तपे ज्यां लगी, चिरणजीवी रहेजो त्यां लगी। १०।
एम सुणी सतीनां आशिष वचन, विभीषण तव हरख्या घणुं मन,
पछे बे कर जोडीने निरधार, विभीषण स्तुति करता तेणी वार। ११।
जय जग्तजनुनी जगतकारिणी, अखिल वैराट तत्त्वधारिणी,
प्रणवरूपिणी गुणसरिताय, आनंदवर्धनी जनकसुताय। १२।
आदि माया इंदिरा गुणखाण, आदि पुरुषनी इच्छा जाण,
प्रभुए आपी छे आज्ञाय, मारे मंगळ स्नान करो हवे माय। १३।

(फिर) मैं आपको बुलाकर ले जाने के लिए आ गया हूँ।' ६। ऐसा सुनकर सीता मन में आनन्दित हो गयी। उसने हनुमान से यह बात कही, 'हे हनुमान, हे कपिराज़, मेरे लिए तुमने बहुत परिश्रम किया है। ७। मेरे लिए तुमने बहुत कष्ट उठा लिया है। उस सबको अयोध्या-पति (श्रीराम) जानते हैं। इसलिए तुम्हारा बल दिन-ब-दिन अधिक बढ़ जाए, तेज और प्रताप अधिकाधिक बढ़ जाए।' ८। इतने में समग्र सामग्री लेकर विभीषण वहाँ उस उद्यान में आ गया। उसने सीता के चरणों में अपना मस्तक झुकाकर नमस्कार किया। तब सीता ने उसे आशीर्वाद दिया। ९। 'हे प्रचण्ड वीर विभीषण, तुम लंका का अखण्ड राज करना। जब तक सूर्य और चन्द्र तपते रहेंगे, तब तक तुम चिरजीवी बने रहना।' १०। तब सती सीता के ऐसे आशीर्वाद सुनकर, विभीषण मन में बहुत आनन्दित हो गया। फिर उस समय दोनों हाथ जोड़कर वह निर्धार-पूर्वक स्तुति करने लगा। ११। 'हे जगज्जननी, हे जगत्कारिणी, हे अखिल विराट (ब्रह्माण्ड के) तत्त्वों को धारण करनेवाली (आपकी जय हो)। हे प्रणव-रूपिणी, हे गुण-सरिता, हे आनन्द-वर्धिनी जनक-सुता, आपकी जय हो। १२। आप आदिमाया हैं, आप गुण-खनि इन्दिरा (लक्ष्मी) हैं। समझिए कि आप आदि-पुरुष की इच्छा (-स्वरूपा) हैं। मुझे प्रभु राम ने यह आज्ञा दी है। इसलिए हे माता, अब आप मंगल स्नान करें।' १३। (इसपर) जानकी बोली, 'प्रभु ने तो (मंगल

जानकी कहे प्रभुए नथी कर्युं, त्यार पहेलुं हुं क्यम आचरुं ?
त्यारे हनुमंत कहे कह्युं छे रघुवीर, अमने आज्ञा करी रणधीर। १४।
मळी शरमा त्रिजटा बे जणी, वेणी उकेली सीता तणी,
तेणे समे मंदोदरी नार, आवी लेई सकळ उपचार। १५।
मरदन तेल सुगंधीवान, पछे कराव्युं मंगळ स्नान,
सूरज कान्ति आभूषण सार, त्रिभुवन दुर्लभ जे अलंकार। १६।
ते पहेराव्यां जानकीने अंग, अमल अंबर सुंदर नवरंग,
रत्नजडित्र पालखी मोझार, सीताने बेसाड्यां तेणी वार। १७।
संगे चाल्युं सेन्य विचित्र, आगळ वाजे बहु वाजित्र,
नमी राणीओ ने त्रिजटाय, अम पर कृपा राखजो माय। १८।
करी स्तुति अति करुणा वचन, त्रण जणीए भरियां लोचन,
पछी सीताए समाधान ज कर्युं; तेनुं हेत हृदेमां धर्युं। १९।
मनवांछित आप्यां वरदान, संतोषी त्रणे गुणवान,
पछी जत्ने करी विभीषण राजन, चलाव्युं त्यां थकी सुख आसन।२०।
ज्यम अमूल्य रत्न धरे पेटीमांहे, एम जनकसुताने राख्यां त्यांहे,
ज्यम संत हृदयनुं ज्ञान अपार, न जणावे बाहेर निरधार। २१।

स्नान) नहीं किया है; उनसे पहले मैं कैसे करूँ ?' तब हनुमान ने कहा, 'यह रघुवीर ने कहा है; उन रणधीर ने हमें ऐसी आज्ञा दी है।' १४। (तत्पश्चात्) सरमा और त्रिजटा दोनों जनी सीता की बेनी खोलने लगीं। उस समय नारी मन्दोदरी समस्त उपचार (की सामग्री) लेकर आ गयी। १५। उन्होंने सीता का सुगन्धियुक्त तेल से मर्दन किया। फिर उसे मंगल स्नान करवा लिया। (वहाँ) सूर्य की कान्ति से युक्त सुन्दर आभूषण थे, जो त्रिभुवन (तक) में दुर्लभ हैं। १६। उन नारियों ने सीता को वे आभूषण तथा स्वच्छ, सुन्दर, नवरंगों से युक्त वस्त्र पहनवा दिये। फिर उन्होंने उसी समय सीता को रत्न-जटित पालकी में बैठा दिया। १७। साथ में अनोखी सेना चलने लगी। आगे-आगे बहुत वाद्य बज रहे थे। (तब) रानियों और त्रिजटा ने नमस्कार किया (और कहा—), 'हे माता, हम पर कृपा राखिए।' १८। उन तीनों स्त्रियों ने (आँसुओं से) आँखों को भर लेते हुए अति करुण शब्दों में स्तुति की। फिर सीता ने उनका समाधान कर दिया और उनका प्रेम अपने हृदय में धारण कर लिया। १९। उन्हें मनोवांछित वरदान दिये और उन तीनों गुणवती नारियों को सन्तुष्ट किया। अनन्तर राजा विभीषण ने वहाँ से वह पालकी यत्न-पूर्वक चलवा दी। २०। जिस प्रकार कोई अमूल्य

एम सुख आसन करी आच्छादन, त्यांथी चलाव्युं हरखी मन,
डाबे पासे विभीषण गुणवंत, जमणी पासे चाले हनुमंत । २२ ।
ज्यम उमिया साथे स्कंध गणपति, एम चाले विभीषण मारुति,
वाजे वाजित्र चाले वेत्रधार, आव्या ए रीते सेना मोझार । २३ ।
चामर विंजन करता जाण, खमा खमा बोले मुख वाण,
पछी शिबिका राखी ते ठार, पृथ्वी ऊतर्यां जनककुमार । २४ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

जनककुमारी ऊतर्यां, मूकियुं, पृथ्वी सुख आसन रे,
पछी चरणे चाली जाय छे, ज्यां विराजे जुगजीवन रे । २५ ।

रत्न पेटी में रखता हो, उसी प्रकार उन्होंने जनक-सुता सीता को वहाँ रख दिया । जिस प्रकार हृदय में स्थित अपार ज्ञान, कोई सन्त निश्चय-पूर्वक बाहर नहीं दिखाता हो, उस प्रकार पालकी को आच्छादित करके (जिससे सीता बाहर नहीं दिखायी दे) उन्होंने मन में आनन्दित होते हुए चला दिया । बायीं ओर गुणवान विभीषण और दायीं ओर हनुमान चल रहे थे । २१-२२ । जिस प्रकार उमा के साथ स्कन्द और गणेशजी चलते हों, उस प्रकार (सीता के साथ) विभीषण और हनुमान चल रहे थे । वाद्य बज रहे थे, वेत्रधारी चल रहे थे । इस प्रकार वे सेना में आ गये । २३ । समझिए कि चामर हिलाते हुए वे पंखा कर रहे थे और मुख से 'क्षेम-कुशल रहे' जैसे वचन बोल रहे थे । अनन्तर उन्होंने उस स्थान पर शिविका रख दी और सीता (उसमें से) भूमि पर उतर गयी । २४ ।

भूमि पर जब वह पालकी रख दी, तो जनक-कुमारी सीता (नीचे) उतर गयी । फिर वह पैदल (उस ओर) चलने लगी, जहाँ जगज्जीवन श्रीराम विराजमान थे । २५ ।

* * *

अध्याय—५३ (राम के कठोर वचन सुनकर सीता द्वारा अग्नि-दिव्य करना)

राग मेवाडो

ज्यारे सीता नीकळ्यां सुख आसनमांथी, अद्‌भुत रूपे जाण जी,
ज्यम आभमांहे वीजळी चमके, वा ऊघडे रत्ननी खाण जी । १ ।

अध्याय—५३ (राम के कठोर वचन सुनकर सीता द्वारा अग्नि-दिव्य करना)

समझिए कि जब सीता अद्‌भुत रूप के साथ पालकी में से (बाहर)

एम गजगमनी तन भूषणमंडित, चालीने आव्यां त्यांहे जी,
देव गंधर्व किन्नर सिद्ध नायक, चकित थया मन मांहे जी । २ ।
त्यारे आवतां जोई एम जनकसुताने, बोल्या पुरुषपुराण जी,
मारी पासे नव आवशो सीता, दूर रहो निरवाण जी । ३ ।
रावण हरण करी गयो तमने, रह्यां त्यांहां खटमास जी,
लोकापवाद लाग्यो तेणे करी, विश्वमां थयुं प्रकाश जी । ४ ।
लोक कहेशे रह्यां रावणने घेर, सुंदर रूपे एह जी,
त्यां शीलव्रत क्यम रह्युं हशे ? ए मोटो संदेह जी । ५ ।
माटे दिव्य करी मुज पासे, आवो तो करुं अंगीकार जी,
ते वचनबाण सीताने वाग्यां, ऊभां रह्यां तेणी वार जी । ६ ।
आंखे आंसुनी धारा चाली, दुःख प्रगट्युं घणुं मन जी,
ज्यम कदळी उपर वीज पडे, एम तप्त थयुं छे तन जी । ७ ।
पछी धीरज राखी सीता बोल्यां, हे जगदात्मा रघुराय जी,
आनंदकंद प्रभु अंतर्यामी, अखिल ब्रह्मांड निकाय जी । ८ ।

निकली, तो ऐसा लग रहा था, जैसे आकाश में (से) बिजली चमक (कर प्रकट हो) रही हो, अथवा रत्नों की खान खुल (कर उनकी आभा बाहर प्रकट हो) रही हो । १ । इस प्रकार वह गजगामिनी तथा आभूषणों से सुशोभित-शरीरी सीता चलते-चलते वहाँ आ गयी । तो देव, गन्धर्व, किन्नर, सिद्ध, नायक मन में चकित हो गये । २ । तब जनक-सुता सीता को इस प्रकार आती हुई देखकर पुराण-पुरुष राम बोले, ' हे सीता, मेरे पास (इस प्रकार) मत आना; तुम निश्चय ही (मुझसे) दूर रह जाओ । ३ । अपहरण करके रावण तुम्हें ले गया था । तुम वहाँ छः मास रह चुकी हो । उससे लोकापवाद हो गया है और वह विश्व में प्रकट रूप से फैल गया है । ४ । लोग यह कहेंगे कि अपने सुन्दर रूप के साथ यह रावण के घर में रह गयी थी । वहाँ इसका शील-व्रत कैसे (सुरक्षित) रह गया होगा ? इसमें बड़ा सन्देह है । ५ । इसलिए यदि तुम कोई दिव्य करके मेरे पास आओगी, तो मैं (तुम्हें) स्वीकार करूँगा । ' (राम के) ये शब्द-रूपी बाण सीता को लग गये । वह उस समय (वहीं-की-वहीं) खड़ी रह गयी । ६ । उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी और मन में बड़ा दुःख उत्पन्न हो गया । जिस प्रकार कदली (के पौधे) पर बिजली गिर जाए, (तो वह जैसे झुलस जाएगा) उसी प्रकार उसे अनुभव हो गया, अर्थात् उसी प्रकार उसकी देह सन्तप्त हो उठी । ७ । अनन्तर धीरज धारण करके सीता बोली, ' हे जगदात्मा रघुराज, हे आनन्द-

में घणा दिवस महा दुःख वेठ्युं, प्रभु तमारे विजोग जी,
आज चरणने शरणे आवी, तम दर्शन संजोग जी । ९ ।
कठिन कर्म तोये रह्यां मारां, प्रभु तजो विण अपराध जी,
नथी चूकी ध्यान तम चरण तणुं, हे अखंड बोध अगाध जी । १० ।
ज्यम अमृत केरुं पात्र भरीने, करवा माड्युं पान जी,
ते हेला मांहे हळाहळ थई गयुं, एम मारे भगवान जी । ११ ।
मृगेन्द्रने शरणे जातां ज्यम, जांबुक मध्ये खाय जी,
सुपर्ण पासे जातां सरपे, दंश कर्यो रघुराय जी । १२ ।
भागीरथी सिंधु शरणें गई त्यारे, सागर कहे नथी ठाम जी,
एम तमारे शरणे आवी, किंकरी पूरण काम जी । १३ ।
तोये तमने पतीज न आवे, तो सुणो श्रीमहाराज जी,
ज्यम अग्निमां सुवर्ण तपावे, एम तपुं हुं आज जी । १४ ।
एवुं कही पछे आज्ञा आपी, वानरने सीताय जी,
काष्ट मंगावी कुंड रचाव्यो, जुए छे सर्व सभाय जी । १५ ।

कन्द प्रभु, आप अखिल ब्रह्माण्डों के समूह के अन्तर्यामी हैं । ८ । हे प्रभु आपके वियोग से मैंने बहुत दिन महान दुःख सहन किया । आज आपके चरणों की शरण में आ गयी हूँ—आपके दर्शन का संयोग (प्राप्त) हुआ है । ९ । मेरे (पूर्व-कृत) कर्म फिर भी कठिन ही गये हैं । (तभी तो) हे प्रभु, आप मुझे बिना मेरे किसी अपराध के तज रहे हैं । हे अखण्ड (ब्रह्माण्ड) के अथाह ज्ञान को रखनेवाले (प्रभु), मैं आपके चरणों के ध्यान से नहीं चूक गयी हूँ । १० । जिस प्रकार अमृत का पात्र भरकर कोई उसे पीने लग गया हो और क्षण में वह हलाहल बन गया हो, उसी प्रकार, हे भगवान मेरे बारे में हो रहा है । ११ । जिस प्रकार सिंह की शरण में जाते हुए किसी को बीच में सियार खा डाले, अथवा गरुड़ के पास (रक्षा के लिए) जाते हुए किसी को साँप ने काटा हो, हे रघुराज, (उसी प्रकार मेरी स्थिति हो गयी है), भागीरथी (गंगा जैसी कोई नदी) समुद्र की शरण में गयी हो, तब उसने कहा हो, ' (तुम्हारे लिए) स्थान नहीं है, ' उसी प्रकार हे पूर्णकाम राम, मैं आपकी दासी आपकी शरण में आ गयी हूँ (और आप मुझे आश्रय देना अस्वीकार कर रहे हैं)। १२-१३ । हे श्रीमहाराज, सुनिए, फिर भी आपको विश्वास ही नहीं हो रहा है । जिस प्रकार आग में सोना तपाया जाता है, उसी प्रकार मैं आज तप्त हो हो रही हूँ । ' १४ । इस प्रकार कहने के पश्चात् सीता ने वानरों को आज्ञा दी । उसने लकड़ियाँ मँगाकर कुण्ड बनवा लिया, तो समस्त सभा

भडभडाट मांहे अग्नि लाग्यो, प्रगटी प्रचंड ज्वाळ जी,
त्यारे जनकसुता सावधान थयां, मांहे झंपलाववा ते काळ जी । १६ ।
रघुपति चरणे चित्त राखी करी, प्रदक्षणा तेणी वार जी,
पण करी ज्वाळमां पडियां सीता, कही सत्य त्रण वार जी । १७ ।
पृथ्वी कंप थयो तेणी वेळा, त्रिलोक डोल्युं त्यांहे जी,
ते समे घणो घणो उत्पात थयो, ज्यारे सीता प्रवेश्यां मांहे जी । १८ ।
एक घटिका पर्यंत गुप्त रह्यां, ते अग्निमां निरधार जी,
महा दिव्य रूप धरीने जानकी, नीकळ्यां पछे बहार जी । १९ ।
पेहेलां पृथ्वीमां गुप्त थयां'तां, धर्युं'तुं छाया तन जी,
अरण्य कांडमां तेह कथा कही, सुणो श्रोता धरीने मन जी । २० ।
ते मूळ रूपे पाछां नीकळ्यां, पृथ्वी थकी निरधार जी,
ए सीता रामनी चिद्‌शक्ति, नथी गई रावणने द्वार जी । २१ ।
ते संबंध जाणे छे श्रोता, ज्ञानी विचिक्षण भक्त जी,
पण शुद्ध-अशुद्ध तणी ज परीक्षा, ते शुं जाणे जक्त जी ? । २२ ।
ते माटे अग्निमां प्रवेशी, जानकी नीकळ्यां बहार जी,
देव मुनिजन आनंद पाम्या, वरत्यो जयजयकार जी । २३ ।

यह देख रही थी । १५ । उस (कुण्ड) में भभक के साथ आग सुलगने लगी; (फिर) प्रचण्ड ज्वालाएँ उत्पन्न हो गयीं । तब सीता उस समय उसमें कूदने के लिए सावधान (तत्पर) हो गयी । १६ । उस समय उसने रघुपति के चरणों में चित्त लगाये हुए उनकी परिक्रमा की और प्रण करके तथा सत्य को तीन वार कहकर वह ज्वालाओं में कूद पड़ी । १७ । उस समय भू-कम्प हो गया; त्रिभुवन डोलने लगा । जब सीता उसमें प्रविष्ट हो गयी, उस समय, इस प्रकार बड़ा उत्पात हो गया । १८ । सीता निश्चय ही एक घड़ी तक उस अग्नि में गुप्त रह गयी और अनन्तर बड़ा दिव्य रूप धारण करके वह बाहर निकल आयी । १९ । पहले (पूर्वकाल में) वह भूमि में गुप्त हो गयी थी और उसने छाया-देह धारण की थी। हे श्रोताओ, मन लगाकर (ध्यान से) सुनिए, वह कथा अरण्य काण्ड में कही थी । २० । वह (सीता) अब निश्चय ही मूल रूप से पृथ्वी में से निकल गयी । (वस्तुतः) सीता राम की चिद्-शक्ति है—वह रावण के द्वार पर नहीं गयी थी । २१ । ज्ञानी श्रोता और विचक्षण भक्त उस सम्बन्ध को जानते हैं । परन्तु यह शुद्ध और अशुद्ध की ही परीक्षा थी । उसे जगत् क्या जान सकता है ? । २२ । इसलिए जानकी अग्नि में प्रवेश कर गयी और वाहर निकल आयी । (यह देखकर) देव और मुनिजन

दिव्य देह तन भूषण-मंडित, जोई हरख्यो कपि साथ जी,
पछे जनकसुता चालीने आव्यां, ज्यां बेठा रघुनाथ जी। २४।
त्यारे प्रेमे गद्‌गद थईने ऊठ्या, रमापति जुगदीश जी,
पछे वैदेहीए आवी मूक्युं, रघुपति चरणे शीश जी। २५।
त्यारे जनकसुतानो कर झालीने, उठाड्यां तेणी वार जी,
वाम भाग बेसाड्यां रामे, वरत्यो जयजयकार जी। २६।
पछे जुगल रूपनी स्तुति करी सर्वे, शिव ब्रह्मा मुनिराय जी,
नारद ऊभा जंत्र वजाडे, चरित्र रामनां गाय जी। २७।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

चरित्र मंगळ गाय रामनां, सहु सभा हरखी मन रे,
पछे रघुपति सन्मुख कर जोडीने, ब्रह्मा बोल्या वचन रे। २८।

* * *

आनन्द को प्राप्त हो गये। (फिर) जयजयकार हो गया। २३। साथ ही उसकी दिव्य देह को, आभूषणों से मण्डित शरीर को देखकर कपि आनन्दित हो गये। तत्पश्चात् सीता चलकर वहाँ आ गयी, जहाँ रघुनाथ राम बैठे हुए थे। २४। जगदीश भगवान विष्णु (अर्थात् उनके अवतार राम) प्रेम से गदगद होकर उठ गये। फिर वैदेही सीता ने रघुपति के चरणों पर मस्तक रखा। २५। तब उस समय जनक की उस कन्या सीता को हाथ पकड़कर राम ने उठा लिया और अपने बायें भाग में (बायीं ओर) बैठा लिया, तो जय जयकार हो गया। २६। अनन्तर शिवजी, ब्रह्मा, श्रेष्ठ मुनि—सबने राम के उस युगल रूप (सपत्नीक रूप की) स्तुति की। नारद खड़े रहकर वाद्य (वीणा) बजा रहा था और राम के चरित्र (लीला) का गान करने लगा। २७।

जब वह राम के मंगल चरित्र का गान कर रहा था, तो समस्त सभा मन में आनन्दित हो गयी। तदनन्तर ब्रह्मा ने रघुपति के सामने हाथ जोड़कर यह बात कही। २८।

* * *

अध्याय—५४ (राम की आज्ञा से शिवजी द्वारा राक्षसों के शवों का व्यवस्था करना, इन्द्र द्वारा अमृतवृष्टि करके मृत वानरों को पुनर्जीवित करना)

राग सामेरी

परमेष्ठी कहे रघुवीरने, लेई सीता लक्ष्मण साथ,
आनंदथी हवे अवधपुरमां, पधारो रघुनाथ। १।
सच्चिदानंद अखंड व्यापक, ब्रह्म पूरणकाम,
निज चरण केरो दास जाणी, कहो मुने कंई काम। २।
रघुवीर कहे हो प्रजापति, तमो रची पूर्वे लंक,
ते दहन कीधी मारुति, थई क्षीण शोभा अंक। ३।
ते करो पाछी हती तेवी, अधिक शोभा जेह,
में लंका केरुं दान कीधुं, विभीषणने एह। ४।
मारो विभीषण राज करशे, ए नगर मोझार,
ते दहन पुर शोभे नहि, माटे करवी रचना सार। ५।
एवुं सुणी विधिए मनोमय, निर्माण कीधुं जाण,
हती तेथी अधिक शोभा, थई तदा निरवाण। ६।
त्यारे सदाशिव ते समे बोल्या, सुणो श्रीमहाराज,
कंई करो आज्ञा मुजने, ते करुं सत्वर काज। ७।

अध्याय—५४ (राम की आज्ञा से शिवजी द्वारा राक्षसों के शवों की व्यवस्था करना, इन्द्र द्वारा अमृतवृष्टि करके मृत वानरों को पुनर्जीवित करना)

ब्रह्मा ने रघुवीर राम से कहा, 'हे रघुनाथ, सीता और लक्ष्मण को साथ में लेकर अब आप आनन्द-पूर्वक अवधपुर में पधारिए। १। हे सच्चिदानन्द, हे अखण्ड और (सर्व-) व्यापक ब्रह्म, हे पूर्णकाम (भगवान राम), मुझे अपने चरणों का दास समझकर कुछ काम बताइए।' २। (इसपर) रघुवीर राम ने कहा, 'हे प्रजापति, आपने पूर्वकाल में लंका का निर्माण किया। उसे हनुमान ने जला डाला, तो उसकी शोभा के चिह्न क्षीण हो गये हैं। ३। (इसलिए) उसकी शोभा पहले जैसी थी, वैसी ही, उससे जो अधिक हो, बना दीजिए। मैंने विभीषण को लंका दान में दे दी है। ४। मेरा विभीषण इस नगर में राज करेगा। उस दहन के कारण यह नगर शोभा नहीं दे रहा है, इसलिए इसकी रचना सुन्दर बनानी है।' ५। ऐसा सुनकर, समझिए कि विधाता ने उस नगर का मानसिक (मन के अनुकूल) निर्माण कर दिया। तब पहले से भी निश्चय ही उसकी शोभा अधिक हो गयी। ६। तब शिवजी उस समय बोले,

रघुवीर कहे महादेवजी, कल्याण रूप कृपाळ,
तमारी सैन्या भूत भेरव, तेडावो तत्काळ । ८ ।
रणमांहे जे राक्षस पड्या, पामी मरण निरधार,
वानर विना ते असुर तन लेई, नाखे सिंधु मोझार । ९ ।
महादेवे तव आज्ञा करी, निज सैन्यने ते काळ;
पिशाच भैरव भूत शाकणी, वीर ने वैताळ । १० ।
भूतावळीए कर्यां भक्षण, असुर तन तेणी वार,
तेना अस्थि नाख्यां सिंधुमां, क्षणए न लागी वार । ११ ।
तन रहेवा दीधां कपि तणां, जे पड्यां पृथ्वीमांहे,
राक्षस विना भोमी करी, अद्‌भुत कारण तांहे । १२ ।
त्यारे सभामां सुरपति ऊठ्यो, कर जोडी ते ठाम,
महाराज हुं सेवक तमारो, कहो मुने कांई काम । १३ ।
रघुवीर हसीने बोलिया; सुणो सुरपति समरथ,
तमे कर्यो अति उपकार मुने, मोकल्यो रणमां रथ । १४ ।

'हे श्रीमहाराज, सुनिए। मुझे कुछ आज्ञा दीजिए, तो मैं वह काम शीघ्रता से कर दूंगा।' ७। तो रघुवीर राम ने कहा, 'हे कल्याण-स्वरूप तथा कृपालु महादेव, अपनी भूतों और भैरवों की सेना को तुरन्त बुला लीजिए। ८। युद्ध-भूमि में जो (वानर और) राक्षस गिर गये और सचमुच मौत को प्राप्त हो गये, (उनमें से) वानरों (के शवों) को छोड़कर, उन असुरों के (मृत) शरीरों को लेकर वे समुद्र में डाल दें।'। ९। तब उसी समय महादेव शिवजी ने अपनी सेना को आज्ञा दी। (फल-स्वरूप) पिशाचों, भैरवों, भूतों, पिशाचिनियों, (शिवजी के) गणों तथा वेतालों और भूतावलियों ने (आकर) उसी समय असुरों के शरीरों को खा डाला फिर उन्होंने क्षण की देर न लगते, उनकी अस्थियों को समुद्र में फेंक दिया। १०-११। कपियों के जो शरीर भूमि पर पड़ गये थे, उन्हें (वैसे ही) रहने दिया। (इस प्रकार) भूमि को राक्षस-हीन कर दिया। वहाँ (उसमें) इसका हेतु अद्‌भुत है। १२। तब उस सभा में सुर-पति इन्द्र हाथ जोड़कर उसी स्थान पर खड़ा हो गया (और वोला),— 'महाराज मैं (भी) आपका सेवक हूँ। मुझे कुछ काम वताइए।' १३। तो रघुवीर हँसते हुए बोले, 'हे समर्थ सुरपति, सुनिए। आपने मेरा वहुत उपकार किया है—आपने (मेरे लिए) रण-भूमि में रथ भेज दिया था। १४ उस रथ से मैंने रावण को जीत लिया और आज मैं विजय को प्राप्त हो गया हूँ।' तव इन्द्र ने कहा, 'हे प्रभु, हे महाराज, आप वड़े दयालु

ते रथे करी में रावण जीत्यो, विजय पाम्यो आज,
त्यारे इंद्र कहे प्रभु तमो मोटा, दयाळु महाराज। १५।
किंचित् सेवा जीवनी ते, मानी ल्यो छो नाथ,
अघ भस्म थाये मेरु सम जो, चित्त धरे तम साथ। १६।
क्षणमांहे कोटी ब्रह्मांड रचना, रचो इच्छा काज,
तम कृपाए अधिकार सहु, अमो भोगवीए महाराज। १७।
प्रभु एमां ते में शुं कर्युं ? तमो सदा समरथ रूप,
रघुनाथ कहे एक वात कहुं, सांभळ सुरपति भूप। १८।
सहु शास्त्रनो छे महत निश्चे, सुणो कहुं ते आप,
नहि पुण्य पर उपकार सम, परपीडा सम नहि पाप। १९।
हावे मारे अर्थे प्राण तज्या छे, सरव कपिए जेह,
आज अमृत केरी वृष्टि करी, जिवाडो सरवे तेह। २०।
एवां वचन रघुवीरनां, सुणी शचिपति निरधार,
पीयूष मेघने करी आज्ञा, वरस्यो तेणी वार। २१।
ते अमृतनी वृष्टि थकी थया, सजीवन सहु कपिजन,
जाणे निद्रामांथी ऊठिया, एम दढ थयां छे तन। २२।

हैं। १५। हे नाथ इस जीव की (इस जन की, अर्थात् मेरी) किंचित् सेवा को आप बड़ी मान रहे हैं। यदि कोई आपके साथ अपना चित्त रखे, तो उसका मेरु पर्वत समान (प्रचण्ड) पाप (भी जलकर) भस्म हो जाता है। १६। आप अपनी इच्छा (की पूर्ति) के लिए क्षण (-भर) में कोटि-कोटि ब्रह्माण्डों का निर्माण करते हैं। हे महाराज, हमें अपनी कृपा से समस्त अधिकारों का भोग कराते रहें। १७। हे प्रभु, इसमें मैंने क्या किया है ? आप तो सदा (से ही) समर्थ राजा रहे है।' (इस पर) रघुनाथ राम ने कहा, 'हे सुरपति, हे सुर-राज, एक बात कह रहा हूँ। उसे सुनिए। १८। समस्त शास्त्रों का निश्चय ही यह मत है—मैं स्वयं उसे कह रहा हूँ, सुनिए। परोपकार के समान कोई (दूसरा) पुण्य (-प्रद कार्य) नहीं है, तथा पर-पीड़ा के समान कोई (दूसरा) पाप नहीं है। १९। अब मेरे लिए जिन समस्त कपियों ने प्राण त्याग दिये हैं, आज अमृत की वर्षा करके उन सबको जीवित कर दीजिए।' २०। शचि-पति इन्द्र ने श्रीरघुवीर की ऐसी बातें सुनकर सचमुच अमृत के मेघ को आज्ञा दी, तो वह उसी समय बरस पड़ा। २१। समस्त कपिजन अमृत की उस वर्षा से सजीव (पुनर्जीवित) हो गये। मानो, वे निद्रा में से ही उठ गये हों—उनके शरीर ऐसे दृढ़ (जान पड़ते) थे। २२। उन

रघुवीर चरणे नम्या आवी, वरत्यो जयजयकार,
सहु कपि जीव्या तेणे करीने, हरख्या जुगदाधार। २३।
पछे विभीषणनी साथे बोल्या, राम पूरणकाम,
हावे अमने आज्ञा आपो, तो जईए अमारे गाम। २४।
वरस चतुर्दश थयां अमने, नीकळ्या वनमां जाण,
जो अवध ए वीती जशे, तो भरत तजशे प्राण। २५।
तमे सुखे अहीं रहीने करो भाई, लंकापुरनुं राज,
माटे भक्तशिरोमणि हावे अमने, आज्ञा आपो आज। २६।
एवां वचन सुणी विभीषणे, ग्रह्या रघुपतिना चर्ण,
गद्गद कंठे बोलिया, प्रभु राखो मुजने शर्ण। २७।
अहीं मुने मूकी जाओ छो तमो, अवधपुर रघुराय,
विजोग तमारो एक क्षण, मुने कल्प कोटी थाय। २८।
वळी तमो कहेशो राज कर तुं, लंकापुर मोझार,
पण तेथी तम दरशन अधिक, कोटी गणुं सुख सार। २९।
मने नथी अपेक्षा राजनी, हुं सत्य कहुं छुं आज,
तम दर्शन उपर वारी नाखुं, त्रिलोकनुं हुं राज। ३०।
प्रभु तमारा जे भक्त कहावे, तम कृपाना पात्र,
ते जाणे तृण सम मोक्ष तो, ए राज ते कोण मात्र ?। ३१।

सबने आकर रघुवीर के चरणों को नमस्कार किया, तो जयजयकार हो गया। समस्त कपि (पुनर्) जीवित हो गये। इससे जगदाधार श्रीराम आनन्दित हो गये। २३। अनन्तर पूर्ण-काम राम विभीषण से बोले, 'अब हमें आज्ञा दो, तो हम अपने गाँव जाएँ। २४। समझो कि वन के लिए (घर से) निकले, हमें चौदह वर्ष हो गये। यदि यह अवधि बीत जाए, तो भरत प्राण त्यज देगा। २५। हे भाई, तुम यहाँ सुखपूर्वक रहते हुए लंकापुर का राज करो। इसलिए हे, भक्त-शिरोमणि, अब आज हमें आज्ञा दे दो।' २६। ऐसी बातें सुनते ही विभीषण ने रघुपतिराम के पाँव पकड़ लिये और वह गदगद कण्ठ से बोला, "हे प्रभु, मुझे अपनी शरण में रखिए। २७। हे रघुराज, आप मुझे यहाँ छोड़कर अवधपुर जा रहे हैं। आपके वियोग का एक क्षण मेरे लिए करोड़ों कल्प हो जाएगा। २८। इसके अतिरिक्त, आप कह रहे हैं— 'तुम लंका में राज करो'—परन्तु उससे आपके दर्शन करोड़ों गुना अधिक सुन्दर हैं। २९। मैं आज सत्य कह देता हूँ, मुझे राज्य की आकांक्षा नहीं है। मैं आपके दर्शन पर त्रिभुवन का राज्य निछावर कर डालूँगा। ३०। हे प्रभु,

जे पुष्प विमान कुबेरनुं हतुं, लंकापुर मोझार,
ते लेईने आव्या विभीषण, ज्यां बेठा जुगदाधार । ४० ।

वलण (तर्ज वदलकर)

ज्यां बेठा श्रीरघुनाथजी, त्यां आव्युं पुष्प विमान रे,
शोभा तेनी अति घणी जोई, हरख्या श्रीभगवान रे । ४१ ।

* * *

फिर लंका में चला गया और उसने मंत्रियों को राज्य सौंप दिया तथा वहाँ नगर-रक्षक भी (नियुक्त कर) रखे । ३९ । लंकापुरी में कुवेर का जो पुष्पक विमान था, उसे लेकर विभीषण वहाँ आया, जहाँ जगदाधार श्रीराम वैठे हुए थे । ४० ।

जहाँ श्रीरघुनाथ बैठे हुए थे, वहाँ पुष्पक विमान आ गया । उसकी अत्यधिक शोभा को देखते ही श्रीभगवान राम आनन्दित हो गये । ४१ ।

* * *

अध्याय—५५ (पुष्पक में विराजमान होकर राम आदि का अयोध्या की ओर प्रस्थान; युद्ध काण्ड का उपसंहार)

राग धवळ धन्याश्री

पुष्प विमान विभीषण लाव्या, शोभा तणो नहि पार जी;
चंद्रमंडळ सरखुं ते दीसे, कनकमणिमय सार जी । १ ।
ईच्छा प्रमाणे ते विस्तार पामे, नानुं मोटुं थाय जी,
थोडा घणा जेटला जन बेसे, तेटला सर्व समाय जी । २ ।

अध्याय—५५ (पुष्पक में विराजमान होकर राम आदि का अयोध्या की ओर प्रस्थान; युद्ध काण्ड का उपसंहार)

विभीषण पुष्पक विमान को ले आया । उस (विमान) की शोभा का कोई अन्त नहीं था । स्वर्ण-रत्नमय वह सुन्दर विमान चन्द्र-मण्डल सदृश दिखायी देता था । १ । वह (अपने स्वामी की) इच्छा के अनुसार विस्तार को प्राप्त हो सकता था, छोटा-वड़ा हो सकता था । कम या वहुत जितने भी लोग बैठें, उतने सव उसमें समा सकते थे । २ । उसके

ते मध्ये एक कनक सिंहासन, पदिक जडित्र प्रकाश जी,
दिव्य रत्न मुक्ताफळ केरी, झळके झालर चोपास जी। ३ ।
एवुं विमान कुबेर तणुं, लाव्यो'तो रावण जेह जी,
ते विभीषण लाव्या प्रभु अर्थे, जावा अवधपुर तेह जी। ४ ।
पछी शुभ मुहूर्तमां ऊठ्या रघुपति, ग्रही सीतानो हाथ जी,
हीरा केरां पगथियां पर, चढ्या श्रीरघुनाथ जी। ५ ।
वाम भाग वैदेहीने लई, बेठा सिंहासन जी;
श्रीघनश्याम दामनी राजे, जोडी जगत मोहन जी। ६ ।
पछी पद्म अष्टादश वानर चढिया, गोलांगुल छप्पन कोटी जी,
बहोतेर कोटी रींछ ज बळिया, जांबुवंत मति मोटी जी। ७ ।
वळी विभीषण केरुं असंख्य दळ ते, चढ्युं विमान मोझार जी,
नाना प्रकारनां वांजित्र वाजे, घूघरीना घमकार जी। ८ ।
अष्ट जूथपति आठे खूणे, ऊभा चारे पास जी,
रत्नसिंहासन उपर राजे, रघुपति रमा निवास जी। ९ ।
लक्ष्मणजी अंगदजी ऊभा, बे पासे बे वीर जी,
मणिजडित्र डांडीना चमर, कर ग्रही करता धीर जी। १० ।

मध्य भाग में सोने का एक सिंहासन था—हीरों से जड़ा हुआ वह सिंहासन तेजस्वी था। दिव्य रत्नों तथा मोतियों की झालर उसके चारों ओर जगमगा रही थी। ३। रावण जिसे लाया था, उस कुबेर के विमान को विभीषण प्रभु रामचन्द्र के लिए अयोध्या जाने के हेतु ले आया। ४। अनन्तर शुभ मुहूर्त पर रघुपति राम सीता का हाथ थाम लेते हुए उठ गये। फिर वे हीरे की सीढ़ियों पर से चढ़ गये। ५। बायें भाग में (बायीं ओर) सीता को लेकर वे सिंहासन पर विराजमान हो गये। घनश्याम श्रीराम तथा विद्युत्-सी सीता की जगत् को मोह लेनेवाली यह जोड़ी शोभायमान थी। ६। फिर (उस विमान में) अठारह पद्म वानर तथा छप्पन करोड़ गोलांगुल, बड़े बुद्धिमान जाम्बुवान के बहत्तर करोड़ बलवान रीछ चढ़ गये। ७। तदनन्तर विभीषण का असंख्य (अनन्त) सेना-दल विमान में चढ़ गया। (उस समय) नाना प्रकार के वाद्य बज रहे थे, घुंघरुओं की घनघनाहट हो रही थी। ८। आठों यूथ-पति आठों कोणों में चारों ओर खड़े थे। रमा-निवास भगवान विष्णु के अवतार रघुपति राम रत्न-सिंहासन पर विराजमान थे। ९। दोनों ओर दो वीर लक्ष्मण और अंगद खड़े थे। वे धीर पुरुष रत्न-जटित दण्डों वाले चामर हाथ में लेकर झुला रहे थे। १०। फिर रघुपति राम से आज्ञा लेकर

पछी रघुपतिनी आज्ञा मागी, सहु देव गया निज लोक जी,
रावण मरण पाम्यो तेणे, बंध छूटा थया विशोक जी। ११।
ज्यारे सर्व स्वस्थ थई ने बेठा, विमानमां शुभ ठाम जी,
त्यारे गुरुनुं स्मरण करी अयोध्यानो, पंथ चितव्यो राम जी। १२।
पछे सीतापतिए आज्ञा आपी, विमान ऊड्युं आकाश जी,
उत्तर पंथे चाल्युं तत्क्षण, दिनमणि जेवो प्रकाश जी। १३।
हावे अवधपुरीमां राम आवशे, वर्तशे सुख आनंद जी,
उत्तर कांडमां ते कहेवाशे, चरित्र जे नौतम छंद जी। १४।
हावे युद्ध कांड ते पूर्ण थयो, कह्यां रघुपति केरां चरित्र जी,
गातां सुणतां नर ने नारी, पापी थाय पवित्र जी। १५।
जथा मतिए वर्णन कीधां, श्रीराम तणां गुणग्राम जी,
ए वैष्णवजनने वहाला लागे, विनोदनो विश्राम जी। १६।
श्रीपुरुषोत्तमनी परम कृपाए, करी कथा बुधमान जी,
कविजन कोई ए खोड मा देशो, सुणी प्राकृत आख्यान जी। १७।
मंगळकारी हरिना गुण छे, पतित पावन सार जी,
पदबंध ए प्राकृत वाणी पण, शास्त्र तणो आधार जी। १८।

समस्त देव अपने-अपने लोक चले गये। रावण मृत्यु को प्राप्त हो गया, उनका बन्धन छूट गया, (इसलिए) वे शोक-रहित हो गये थे। ११। जब वे (कपि आदि) सब विमान के अन्दर शुभ स्थान पर स्वस्थ-चित्त होकर बैठ गये, तब गुरु का स्मरण करके राम ने अयोध्या के मार्ग का चिन्तन किया। १२। फिर सीता-पति राम ने आज्ञा दी, तो विमान आकाश में उड़ गया। वह तत्क्षण उत्तर (दिशा की ओर जानेवाले) मार्ग पर चल दिया। उसका तेज सूर्य का-सा था। १३।

अब अयोध्यापुरी में राम आएँगे, उससे (सब को) सुख और आनन्द होगा। वह चरित्र उत्तर काण्ड में सुन्दर छन्दों में कहा जाएगा। १४।

अब युद्ध काण्ड पूर्ण हो गया। उसमें रघुपति की लीलाएँ कही हैं। उन्हें गाते तथा सुनते हुए पापी पुरुष और स्त्रियाँ पवित्र हो जाएँगे। १५। मैंने श्रीराम के गुण-समूह का यथामति वर्णन किया है। (मुझे विश्वास है कि) यह वैष्णव जनों को प्यारा लगेगा; उनके लिए वह मनोविनोद-पूर्ण विश्राम हो जाएगा। १६। गुरु श्रीपुरुषोत्तम की परम कृपा से मैंने यह कथा अपनी बुद्धि के अनुसार रची है। प्राकृत (अर्थात् जनभाषा गुजराती में लिखित यह) आख्यान सुनकर कविजन इसे कोई दोष न दें। १७। हरि के गुण मंगलकारी हैं, वे सुन्दर तथा पतितों को पावन

वाल्मीकि रामायण केरो ए, अर्थ लीधो छे जाण जी,
हनुमान नाटक मांहे संमत मेळव्यो छे निरवाण जी। १९।
पद अढारसें पंचवीश पूरां, अध्या' पंचावन जी,
राग ढाळनी चाल्य जूजवी, युद्ध कांड पावन जी। २०।
पतितपावन अधमउधारण, रामतणा गुण सार जी,
सहु वैष्णव केरी परम कृपाए, कीधो ए विस्तार जी। २१।
पदभंग कोईए नव करशो, संत विवेकी जन जी,
जेवा तेवा पण हरिना गुण छे, अखिल विश्व पावन जी। २२।
भावे श्रद्धा सहित सुणे जे, पावन रामकथाय जी,
मनवांछित फळ ते जन पामे, शत्रु तणो क्षय थाय जी। २३।

वलण (तर्ज बदलकर)

थाय शत्रुक्षय ते विजय पामे, जे सुणे श्रद्धाए करी,
कर जोडी कहे दास गिरधर, श्रोताजन बोलो श्रीहरि। २४।

॥ युद्ध काण्ड समाप्त ॥

कर देनेवाले हैं। यह पद्य-बन्ध (काव्य) प्राकृत (जन-) भाषा में है, फिर भी उसके लिए शास्त्र का आधार है। १८। समझिए कि वाल्मीकि रामायण से यह अर्थ (भाव) लिया है। (फिर) उसमें हनुमन्नाटक की सम्मति (अभिप्राय) भी निश्चय ही मिला दी है। १९। इस (काण्ड) में पूरे अठारह सौ पचीस पद (छन्द) और पचपन अध्याय हैं। यह पवित्र युद्ध काण्ड रागों तथा अवरा हों की विविध प्रकार की धुन में प्रस्तुत है। २०। पतितपावन तथा अधम-उधारन श्रीराम के गुण सुन्दर है। समस्त वैष्णवों की परम कृपा से मैंने कथा का विस्तार किया है। २१। हे सन्तो, विवेकवान लोगो, कोई भी इसका पदभंग न करे। उनमें जैसे भी हो, वैसे ही अखिल विश्व को पावन कर देनेवाले भगवान हरि के गुण (गाये) हैं। २२। प्रेम और श्रद्धा सहित जो इस पवित्र राम-कथा को सुनेंगे, वे लोग मनोवांछित फल को प्राप्त हो जाएँगे और उनके शत्रुओं का नाश हो जाएगा। २३।

जो श्रद्धा से इसे सुनेंगे, उनके शत्रु-पक्ष का क्षय हो जाएगा और वे विजय को प्राप्त हो जाएँगे। कवि गिरधरदास हाथ जोड़कर कहते हैं—हे श्रोताजनो, 'श्रीहरि (की जय!)' बोलिए। २४।

॥ युद्ध काण्ड समाप्त ॥

विषयानुक्रमणिका

बालकाण्ड

युद्धकाण्ड

नोट—उत्तरकाण्ड की विषयानुक्रमणिका द्वितीय खण्ड के आरम्भ में देखिये।

द्वितीय खण्ड (उत्तरकाण्ड)

विषयानुक्रमणिका

गिरधर-कृत रामायण

उत्तर काण्ड

अध्याय—१ (कवि की प्रास्ताविक उक्ति; रूपकात्मक शैली में रामकथा-सार)

राग धन्याश्री

श्रीगुरुपद शुभ सुरतरु-रूप जी, शीतळ छाया सुखद अनुप जी,
शरण रह्याथी टळे त्रिविध ताप जी, दीनता वामे थाये निष्पाप जी । १।

ढाळ

निष्पाप थाये सेवतां पद, जुगल श्रीगुरुदेवनां,
त्रय ताप वामे सुफळ पामे, करे जो नित्य सेवना । २ ।
ते पुरुषोत्तमपदने नमुं, कर जोडी वारंवार,
तम कृपाए रघुवीर जश कहुं, यथामति विस्तार । ३ ।
बाळ कांड ने अयोध्या, आरण्य किष्किधाय,
सुंदर ने युद्ध कांडनी कही, सकळ एह कथाय । ४ ।

अध्याय—१ (कवि की प्रास्ताविक उक्ति; रूपकात्मक शैली में रामकथा-सार)

श्रीगुरु के शुभ चरण कल्प-तरु-स्वरूप हैं; उसकी छाया शीतल, सुखद तथा अनुपम है । उसकी शरण में रहने से (आधिभौतिक, आधि-दैविक और आध्यात्मिक) तीनों प्रकार के ताप दूर हो जाते हैं, दैन्य नष्ट हो जाता है और (पाप धुलकर) साधक निष्पाप हो जाता है । १ ।

श्रीगुरुदेव के युगल पदों की सेवा करने से (साधक) निष्पाप हो जाता है । यदि कोई उनकी नित्य सेवा करे तो, उसके तीनों (प्रकार के) ताप नष्ट हो जाते हैं और वह सु-फल को प्राप्त हो जाता है । २ । उन सद्गुरु पुरुषोत्तमजी के पदों को मैं हाथ जोड़कर बारबार नमस्कार करता हूँ । (हे गुरुदेव,) मैं आपकी कृपा के बल पर श्रीरघुवीर राम के यश का यथामति विस्तार (-पूर्वक वर्णन) कर रहा हूँ । ३ । मैंने (इससे पहले) बाल काण्ड और अयोध्या काण्ड, अरण्य काण्ड, किष्किन्धा काण्ड, सुन्दर काण्ड, और युद्ध काण्ड की समस्त कथा कही है । ४ ।

हावे उत्तर कांड कथा कहुं, आवशे पुर विषे महाराज,
सहु अवधपुरमां आनंद थाशे, राम करशे राज । ५ ।
ते श्रोताजन सावधान थईने, सुणजो एक मन,
मंगळदायक रामना गुण, अखिल जग पावन । ६ ।
अहंकार दुर्धर दशानन, अहंदेह बुद्ध लंकापुरी,
कुंभकरण ते क्रोध जाणो, हिंसा अति जेणे आचरी । ७ ।
इंद्रजित ते काम कहीए, लोभ ते अतिकाय,
महामद प्रहस्त प्रधान प्रमुख, जेने वश वरते राय । ८ ।
देवांतक ने नरांतक, अज्ञान ने वळी दंभ,
शोक क्लेश कुतर्क आदे, घणा असुर खळ स्थंभ । ९ ।
अहंदेह लंकाने बळे, रावणे कर्यो अनरथ,
सहु देव बंधीवान कीधा, जे हता समरथ । १० ।
वासुदेव चित्तने विषे, मन चंद्रमा निरवाण,
ब्रह्मा बुद्धिमांही राख्या, अहंदेह रुद्र प्रमाण । ११ ।

अब उत्तर काण्ड की कथा कहने जा रहा हूँ। (यह कहा जा चुका है कि श्रीराम लक्ष्मण, सीता, विभीषण आदि समस्त लोगों सहित पुष्पक विमान में बैठकर अयोध्या की ओर प्रस्थान कर चुके हैं। फिर यथा-समय) महाराज राम अयोध्या नगरी में आ जाएँगे। उस कारण अयोध्यापुरी में आनन्द हो जाएगा। (यथासमय राज्याभिषेक होगा और) राम राज्य-शासन करने लगेंगे। ५। हे श्रोताजनो, सावधान होकर एकाग्र मन से श्रीराम के मंगल-दायक तथा अखिल जगत् को पावन कर देनेवाले गुणों (की महिमा) को सुनिएगा। ६। दुर्धर अहंकार मानो दशानन रावण है; अहंदेह-बुद्धि लंकापुरी है। कुम्भकर्ण को वह क्रोध समझिए, जिससे बहुत हिंसामय आचार किया गया है। ७। उस इन्द्र-जित को काम कहें, तो लोभ को अतिकाय (नामक राक्षस)! महान मद मानो प्रहस्त नामक वह प्रमुख मंत्री है, जिसके अधीन होकर राजा रावण आचार-व्यवहार (काम-काज) कर रहा था। ८। अज्ञान और उसके अतिरिक्त दम्भ मानो देवान्तक और नरान्तक है। शोक, क्लेश, कुतर्क आदि अनेक असुर मानो खलता के स्तम्भ हैं। ९। रावण ने अहंदेह (-बुद्धि-स्वरूपा) लंका के बल पर अनर्थ मचा दिया। जो समर्थ (समझे जाते) थे, उन समस्त देवों को उसने बन्दी बना दिया। १०। अहंकार-रूप रावण ने भगवान वासुदेव को चित्त के भीतर, चन्द्रमा को मन में, ब्रह्मा को बुद्धि में और अहंदेह-बुद्धि में रुद्र को (बन्दी बनाकर)

सूर्य चक्षु वरुण रसना, घ्राणे अश्वनीकुमार,
अग्नि मुखे पाणि पुरंदर, दिग श्रवण मोझार। १२।
एम देव बंधीवान कीधा, दशानन अहंकार,
ते हणवा कारण राम प्रगट्या, नारायण अवतार। १३।
अंतःकरण ते अयोध्या, सरज्युं सुषुमणा जाण,
विषयलोक पुरमां वसे, वासना कोट प्रमाण। १४।
शुद्ध मन ते राय दशरथ, कहुं तेनो अर्थ,
दश इंद्रि वाहन तेह माटे, मंन ते दशरथ। १५।
सत्क्रिया शक्ति कौशल्या, धर्यो ज्ञानरूपी गर्भ,
ते ज्ञानथी हवा पुत्र जेने, राम आत्मा अर्भ। १६।
सुबुद्धि ते सुमित्रा, कल्पना केकै अधम,
संतोष शत्रुहन विवेक लक्ष्मण, भरत ते सुधरम। १७।
संयम जनकनी पुत्री थई, जे सीता शांतिरूप,
तेहने आत्माराम परण्या, कोटी ब्रह्मांडना भूप। १८।
त्यारे कल्पना केकैए माग्युं, दशरथ पासे वचन,
ते सीता लक्ष्मण संग लेईने, राम वसिया वन। १९।

रख दिया; सूर्य को आँखों में, वरुण को जिह्वा में, अश्विनीकुमारों को नाक में, अग्नि को मुख में, पुरन्दर इन्द्र को हाथों में, दिक्पालों को कानों में—इस प्रकार अहंकार रूपी दशानन ने सब देवों को वन्दी बना दिया। उसे मार डालने के लिए भगवान नारायण के अवतार राम प्रकट हो गये हैं। ११-१३। समझिए कि अन्तःकरण अयोध्या है, सुषुम्णा नाड़ी सरयू नदी है; कोटि-कोटि संख्या में वासनाएँ विषय-लोक के नगर में रहती हैं। १४। शुद्ध मन ही राजा दशरथ है। इस ('दशरथ' संज्ञा का) मैं अर्थ बता देता हूँ। दसों इन्द्रियाँ उसके लिए—शुद्धमनःरूप दशरथ के लिए (दस रथ) जैसे वाहन हैं। १५। सत्क्रिया शक्ति रूपी कौसल्या ने ज्ञान रूपी गर्भ को धारण किया। उस ज्ञान (रूपी गर्भ) से उसके एक पुत्र (उत्पन्न) हुआ; (परम-) आत्मा ही शिशु राम के रूप में आविर्भूत हो गया। १६। सुबुद्धि (मानो) सुमित्रा है, तो कल्पना अधम (प्रकृति-धारिणी) कैकेयी है। सन्तोष शत्रुघ्न (के रूप में प्रकट हो गया) है, तो विवेक लक्ष्मण है और सद्धर्म भरत (के रूप में उत्पन्न हो गया) है। १७। संयम रूपी जनक की पुत्री वह हो गयी है, जो शान्ति-स्वरूपा सीता (कहाती) है। करोड़ों ब्रह्माण्डों के राजा आत्माराम ने उससे विवाह किया। १८। तक कल्पना रूपी कैकेयी ने

मायामृग छेदवा प्रवेश्या, निरंजन रणधीर,
कपट शब्दनी पूंठे धाया, विवेक लक्ष्मण वीर। २०।
त्यारे सीताजीनुं हरण कीधुं, दशानन अहंकार,
अहंदेह लंका मांहे राख्यां, वींटी आसुरी दुराचार। २१।
वैराग्य हनुमंत शुद्धि लेवा, गयो तेणे ठाम,
सीताने मळी बाळ्युं पछे, अहंदेह लंका गाम। २२।
पछी सीतानुं समाधान करीने, आव्यो रघुवर पास,
मोहसागर उपर सेतु बांधी, ऊतर्या अविनाश। २३।
सद्‌भाव विभीषणे त्रास देखाड्यो, अहंकाररूपी दशशीशने,
पछे विभीषण ते शरण आव्यो, आत्माराम जुगदीशने। २४।
रामचंद्रे मारिया, अहंकृति रावणरूप,
अहंदेह लंकामां स्थाप्यो, भाव विभीषण भूप। २५।
पछे ज्ञानकळा जे शांति सीता, तेने भेट्या आत्माराम,
स्वानंद विमानमां बेसीने, पछे चालिया निज धाम। २६।

(शुद्धमनःस्वरूप) दशरथ से वचन (वर) माँग लिया, तो (फल-स्वरूप) सीता और लक्ष्मण को साथ में लेकर राम वन में वस गये। १९। निरंजन स्वरूप रणधीर श्रीराम माया स्वरूप मृग को मारने के लिए (वन के भीतरी भाग में) प्रविष्ट हो गये, तो कपट शब्द से वीर (बन्धु) लक्ष्मण उनके पीछे दौड़े। २०। तब अहंकार रूपी दशानन ने (शान्ति-स्वरूपा) सीता का अपहरण किया और अहंदेह-बुद्धि रूपी लंका में उसे रख दिया और दुराचारिणी असुरियाँ (आसुरी प्रवृत्तियाँ) उसे घेरे हुए रह गयीं। २१। वैराग्य रूपी हनुमान उसकी खोज करने के लिए उस स्थान पर गया और सीता से मिलने के पश्चात् उसने अहंदेह-बुद्धि लंका नगरी को जला डाला। २२। फिर सीता को सन्तुष्ट करते हुए वह रघुवीर राम के पास आ गया। (तदनन्तर) मोह रूपी समुद्र पर सेतु बनाकर अविनाशी भगवान राम (उस पार) उतर गये। २३। अहंकार रूपी दशानन को सद्‌भाव रूपी विभीषण ने भय दिखा दिया। फिर विभीषण जगदीश आत्माराम की शरण में आ गया। २४। (यथाकाल) रामचन्द्र ने अहंकार रूपी रावण को मार डाला और अहंदेह-बुद्धि रूपी लंका में सद्‌भाव रूपी विभीषण की राजा के रूप में स्थापना की। २५। अनन्तर जो ज्ञान, कला और शान्ति स्वरूपा सीता है, उससे आत्माराम मिल गये और स्वानन्द रूपी विमान में बैठकर फिर अपने घर की ओर चल दिये। २६।

वलण (तर्ज बदलकर)

निजधाम अवधपुरीमां चाल्या, विमान बेसी रघुराय रे,
कहे दास गिरधर सुणो श्रोता, हावे उत्तर कांड कथाय रे। २७।

*　　　*　　　*

रघुराज विमान में बैठकर अपने स्थान अर्थात् अवधपुरी की ओर चले गये। कवि गिरधरदास कहते हैं, हे श्रोताओ, अब उत्तर काण्ड की कथा का श्रवण कीजिए। २७।

*　　　*　　　*

अध्याय—२ (राम का अयोध्या की ओर गमन; सीता को राम द्वारा स्थलों और घटनाओं का परिचय देना; अगस्त्य के आश्रम में आगमन)

राग मारु

पुष्प विमानमां बेठा राम, चाल्या भक्तना पूरणकाम,
साथे सीता ने लक्ष्मण वीर, विभीषण आदे कपि रणधीर। १।
पृथ्वीथी बे सहस्र योजन, ऊंचुं विमान गगन,
ज्यम पूनम तणो चंद्रमाय, रोहणी वर पश्चिम जाय। २।
सागरमां नाव चाले ज्यम, ए रीते चाले विमान त्यम,
वाजे नाना प्रकार वाजित्र, गाय वानर रामचरित्र। ३।
घणघणाट घंटाना थाय, जाणे मेघ तणी गर्जनाय,
मेघश्याम शोभे रघुवीर, चमके चपळा सीतानुं शरीर। ४।

अध्याय—२ (राम का अयोध्या की ओर गमन; सीता को राम द्वारा स्थलों और घटनाओं का परिचय देना; अगस्त्य के आश्रम में आगमन)

भक्तों की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले राम पुष्पक विमान में बैठकर जा रहे थे। उनके साथ सीता, बन्धु लक्ष्मण, विभीषण तथा (सुग्रीव) आदि रणधीर कपि थे। १। वह विमान पृथ्वी से दो सहस्र योजन ऊँचाई पर से आकाश में, चल रहा था। जिस प्रकार रोहिणी-पति पूर्णिमा का चन्द्रमा पश्चिम की ओर जाता है, जिस प्रकार समुद्र में नौका चलती है, उस प्रकार, उसी रीति से वह विमान चल रहा था। (उस समय) नाना प्रकार के वाद्य बज रहे थे, वानर राम-चरित्र का गान कर रहे थे। । २-३। घण्टों की घनघनाहट हो रही थी।

वैदेहीने देखाडे छे राम, अनुक्रमे करीने बहु ठाम,
जो आ लंका तुं जनकदुलारी, वधी निरमित शोभा सारी। ५।
आ रणभूमि विस्तार अमित, अहीं मार्या लक्ष्मणे इंद्रजित,
कुंभकरण आदे आ ठाम, हण्युं राक्षसकुळ अभिराम। ६।
अहीं जुद्ध कर्युं सप्त दिन, त्यारे मरण पाम्यो दशानन,
आ जुओ बांधी सागर पाज, नळ नील तणुं ए काज। ७।
आ मलयाचळ विंध्याचळ सारो, आ किष्किधा ज्यां वालीने मार्यो,
आ पंपासर मारुति मळियो, कर्यो मित्र में सुग्रीव वळियो। ८।
आंहीं शबरीने आप्यो उद्धार, हणियो कबंधने आ ठार,
आ गंगा गौतमी पंचवटी, खर-दुखरनी सेना आवटी। ९।
आंहीं जटायु पाम्यो मर्ण, आंहीं करी गयो रावण तने हर्ण,
जो वैदेही पेला आश्रम, मुनि तणा देखाय छे रम्य। १०।
शरभंग सुतीक्ष्ण ने मंदकर्ण, जे मुनिवरनां रूडां आचर्ण,
सुमुखी जो अगस्त्याश्रम, पेलो चित्रकोट अनुपम। ११।

(जान पड़ता था कि) मानो मेघ की गर्जना ही हो रही हो। मेघ की भाँति श्याम-शरीर श्रीराम शोभायमान थे; सीता की देह विद्युत् जैसी जगमगा रही थी। ४। राम अनुक्रम से अनेक स्थान सीता को दिखाने लगे। (वे बोले-) 'हे जनककुमारी देखो यह लंका। उसकी (विधाता द्वारा) निर्मित समस्त शोभा (कैसी) वृद्धि को प्राप्त हुई है। ५। (देखो) यह रणभूमि, जिसका विस्तार असीम है। लक्ष्मण ने यहीं इन्द्रजित को मार डाला। (मैंने) उस अभिराम राक्षस-कुल के कुम्भकर्ण आदि (राक्षसों) को इसी स्थान पर मार डाला। ६। मैंने यहीं सात दिन युद्ध किया; तब दशानन मौत को प्राप्त हो गया। यह देखो सागर पर बनाया हुआ सेतु। यह नल-नील का किया काम है। ७। (देख लो) यह सुन्दर मलयाचल और विन्ध्याचल। यह किष्किन्धा है, जहाँ मैंने बाली को मार डाला। यहाँ पम्पासर के पास (मुझसे) हनुमान मिला। (यहीं) मैंने बलवान सुग्रीव को मित्र बना लिया। ८। (देखो) यहाँ मैंने शबरी का उद्धार किया, इस स्थान पर कबन्ध को मार डाला। (देखो) यह गोदावरी गंगा और पंचवटी। (यहाँ पर) मैंने खर-दूषण की सेना को अवरुद्ध किया था। ९। यहाँ जटायु मौत को प्राप्त हो गया और यहीं से अपहरण करके रावण तुम्हें ले गया था। हे वैदेही, वे मुनियों के आश्रम (कैसे) रम्य दिखायी दे रहे हैं। १०। जिन मुनिवरों के आचार-व्यवहार अच्छे रहे हैं, वे शरभंग,

पेलो आश्रम भरिद्वाज, पूंठे आवशे तीरथराज,
पेलुं शृंगवेरपुर गंगा, जेमां स्नान कर्ये भवभंगा । १२ ।
मारो भक्त वसे छे किरात, जे घोराय जगतविख्यात,
देखाये दूर नंदीग्राम, ज्यां भरते कर्यो विश्राम । १३ ।
राम जोई अगस्त्याश्रम, सीताने कहे पूरणब्रह्म,
करता जईए मुनिदर्शन, सीता कहे चालो प्राणजीवन । १४ ।
सुणो सीता कहे भगवंत, लोपामुद्रा जो पूछे वृत्तांत,
कहेजो सकळ कथा विख्यात, न कहेशो सेतुबंधनी वात । १५ ।
आपी आज्ञा विमानने त्यांहे, क्षणमां ऊतर्युं पृथ्वीमांहे,
आवी रह्यो मुनिआश्रम पास, मांहेथी ऊतर्या अविनाश । १६ ।
शिष्य दोडी गया ते ठाम, मुनिने कह्युं आव्या श्रीराम,
हरखे ऊठीने चाल्या अगस्त्य, संगे लीधा ते शिष्य समस्त । १७ ।
भेट्या रामने त्यां मुनिजन, ब्रह्मानंद पाम्या मुनि मन,
रामे कुंभजने तेणी वार, साष्टांग कर्यो निरधार । १८ ।

सुतीक्ष्ण और मन्दकर्ण (नामक) मुनि (यहाँ रहते) हैं। हे सुमुखी, देखो वह अगस्त्य ऋषि का आश्रम और वह (देखो) अनुपम चित्रकूट । ११ । वह भरद्वाज का आश्रम है। उसके पश्चात् तीर्थराज प्रयाग आएगा। वह शृंगवेरपुर है। वह (देखो) गंगा, जिसमें स्नान करने से सांसारिक बन्धन भग्न हो जाते हैं। १२ । यहाँ मेरा एक किरात भक्त रहता है, जो घोराय (घोराज, गुहराज) नाम से जगत में विख्यात है। दूर वह नन्दिग्राम दिखायी दे रहा है, जहाँ भरत विश्राम कर रहा है। १३ । पूर्णब्रह्म राम ने अगस्त्याश्रम को देखकर सीता से कहा, 'हम मुनि के दर्शन करके (आगे) जाएँ।' (तब) सीता बोली, 'हे जीवन-प्राण, चलिए।' । १४ । फिर भगवान राम ने कहा, 'हे सीता, सुनो। यदि लोपामुद्रा समाचार पूछे, तो समस्त विख्यात कथा, तो कह दो, फिर भी सेतु-बन्ध की बात न कहना।' । १५ । (तदनन्तर) राम ने वहीं विमान को आदेश दिया, तो वह भूमि पर एक क्षण में उतर गया और मुनि के आश्रम के पास आकर ठहर गया। (तब) उसमें से अविनाशी भगवान उतर गये। १६ । (उन्हें देखते ही) शिष्य उस स्थान पर (से) दौड़कर गये और उन्होंने मुनि से कहा, 'श्रीराम पधारे हैं।' तो आनन्द-पूर्वक उठते हुए अगस्त्य चले। उन्होंने समस्त शिष्यों को साथ में ले लिया। १७ । वहाँ मुनिवर श्रीराम से मिले, तो वे मन में ब्रह्मानन्द को प्राप्त हो गये। फिर उस समय राम

ज्यम वाचस्पति शचिनाथ, एम मळ्या मुनि रामनी साथ,
प्रेमे पुलकित नेत्रमां नीर, मुनि हरख्या ते जोई रघुवीर । १९ ।
नम्यां लक्ष्मणजी ने सीताय, दीधी आशिष त्यां मुनिराय,
सुग्रीव विभीषण आद्य, नम्या सर्वे मुनिने आह्लाद । २० ।
आप्युं आश्रममां आसन, त्यांहां बेसाड्या श्रीभगवन,
रामस्तवन करे घटजात, जय लक्ष्मीपति जगतात । २१ ।
सच्चिदानंद पूरणब्रह्म, निरोपाधिक ने नैष्कर्म्य,
जय अव्याप्त काम अजित, सर्वव्यापक मायातीत । २२ ।
घणी स्तुति करी ते ठाम, त्यारे प्रसन्न थया श्रीराम,
कह्युं रघुवरे सहु वर्तमान, जे मार्यो रावण बळवान । २३ ।
मुनि कृपा तमारी एह, पाम्यो हुं रणमां जय जेह,
लोपामुद्राए तेणी वार, सीताने चांप्यां हृदयमोझार । २४ ।
बेसाड्यां पछे शुभ आसन, जानकीनुं कर्युं पूजन,
पूरण प्रेमे मुनिपत्नीओ तास, मळी बेठां सीतानी पास । २५ ।

ने अवश्य ही कुम्भज (अगस्त्य) को साष्टांग नमस्कार किया । १८ । जिस प्रकार वाचस्पति बृहस्पति शचीपति इन्द्र से मिलते हों, उसी प्रकार अगस्त्य मुनि राम से मिले । वे प्रेम से पुलकित हो गये । उनकी आँखों में अश्रु-जल भर आया । रघुवीर राम को देखकर वे मुनि आनन्दित हो गये । १९ । लक्ष्मण और सीता ने जब नमस्कार किया, तब वहाँ मुनिवर ने उन्हें आशीर्वाद दिया । फिर सुग्रीव, विभीषण आदि सबने आनन्द-पूर्वक मुनि को नमस्कार किया । २० । आश्रम में उन्होंने उन्हें आसन दिया और वहाँ उस पर श्रीभगवान को बैठा लिया । (तदनन्तर) घटोत्पन्न (अगस्त्य) मुनि ने श्रीराम का (इस प्रकार) स्तवन किया, 'हे जगत्पिता लक्ष्मीपति (भगवान विष्णु के अवतार), आपकी जय हो । २१ । हे सच्चिदानन्द पूर्णब्रह्म, हे निरुपाधिक तथा नैष्कर्म्य ब्रह्म, हे काम (जैसे विकार) से अव्याप्त तथा अजित (ब्रह्म), हे सर्वव्यापी तथा माया से अतीत (ब्रह्म), आपकी जय हो ।' । २२ । इस प्रकार उन्होंने उस स्थान पर राम की बहुत स्तुति की; तब श्रीराम प्रसन्न हो गये । (तदनन्तर) रघुवीर राम ने वह समस्त समाचार कहा, जिस प्रकार उन्होंने बलवान रावण को मार डाला । २३ । (वे बोले—) 'हे मुनि, यह आपकी कृपा है, जो मैं रण-भूमि में जय को प्राप्त हो गया हूँ ।' उस समय लोपामुद्रा ने सीता को हृदय से लगा लिया । २४ । तदनन्तर उसने सीता को शुभ आसन पर बैठा लिया और उसका पूजन

लोपामुद्रा कहे हो सीताय, कहो हरण तणी जे कथाय,
सीताए कह्युं मांडी तेह, रावण हरण करी गयो जेह । २६ ।
मुने लेवा कारण रघुनाथ, मेळव्यो कपिसैन्यनो साथ,
शत योजन सिंधु ठाम, पाळ बांधीने ऊतर्या राम । २७ ।
त्यांहां थयु छे युद्ध अपार, कर्यो रावणकुळ संहार,
विभीषणने आप्युं राज, मने लेईने आव्या महाराज । २८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

महाराज मुजने तेडी आव्या, हण्यो एम दशानन रे,
एवी वात सांभळी सीतानी, मुनिपत्नी बोल्यां वचन रे । २९ ।

किया। फिर पूर्ण प्रेम से वे (समस्त) मुनि-पत्नियाँ सीता के पास इकट्ठा होकर बैठ गयीं। २५ लोपामुद्रा बोली, 'हे सीता अपने अपहरण की जो कथा है, वह कह दो।' तो सीता वह कथा कहने लगी, जैसे कि रावण उसे हरण कर ले गया। २६। (फिर वह बोली—) 'मुझे (प्राप्त कर) लेने के हेतु रघुनाथजी ने कपि-सेना की संगति प्राप्त की। (अनन्तर) सौ योजन विस्तारवाले समुद्र पर उस स्थान पर सेतु बनाकर राम (उस पार) उतर गये। २७। फिर वहाँ अपार युद्ध हो गया और उन्होंने रावण के कुल का संहार कर डाला। (तदनन्तर) महाराज राम ने विभीषण को राज्य प्रदान किया और मुझे लेकर वे आ गये। २८।

श्री महाराज राम ने दशानन को इस प्रकार मार डाला और वे मुझे लेकर आ गये।' सीता की ऐसी बात सुनकर मुनि-पत्नी लोपामुद्रा ने ये बातें पूछीं। २९।

* * *

अध्याय—३ (सीता-लोपामुद्रा-संवाद, भरद्वाज के आश्रम में राम का आगमन, राम के आदेश से हनुमान का भरत से मिलना)

राग आसावरी

अगस्त्यनी जाया हसीने बोल्यां, जनकसुता सुणो आज,
एमां रामे ते शुं पराक्रम कीधुं, जे सागर बांधी पाज ? । १ ।

अध्याय—३ (सीता-लोपामुद्रा-संवाद, भरद्वाज के आश्रम में राम का आगमन, राम के आदेश से हनुमान का भरत से मिलना)

अगस्त्य की स्त्री हँसते हुए बोली, 'हे जनक-सुता, आज (अभी मेरी बात) सुन लो। सागर पर जो सेतु बना लिया, उसमें राम ने क्या

एक बाण मूकीने क्यम नव शोष्यो, सिंधुजळने त्यम,
मारा स्वामीए ज्यम पान कर्युं, एम रामे कर्युं नहि क्यम ? । २ ।
त्यारे जनकसुता कहे श्रीरामचंद्रनुं, अतुलित बळ छे त्यांहे,
एक बाणे करीने समुद्र साते, भस्म करे क्षणमांहे । ३ ।
पण अनेक जीव सागरमां रहे छे, तेनी ते हिंसा थाय,
ते माटे सागर नव शोष्यो, छे दयाळु श्रीरघुराय । ४ ।
वळी रामनी पासे अनेक कपिवर, हता महाबळवान,
एके काळे साते समुद्रनुं, करे मारुति पान । ५ ।
पण मूत्र तमारा स्वामी केरुं, जाणी मनमां त्यम,
ते छूवे नहि कोई वानर ए तो, पान करे वळी क्यम ? । ६ ।
माटे सेतुबंध करी पार ऊतर्या, सैन्य सहित भगवान,
एवां जनक सुतानां वचन सुणी, मुनि पत्नी थयां छे प्रसन्न । ७ ।
पछे अगस्त्य केरी आज्ञा मागी, नम्या सहु द्विजने तेणी वार,
रघुनाथ सहु साथने लेईने, बेठा विमान मोझार । ८ ।
त्यां थकी पुष्पविमान चलाव्युं, पोते पूरणब्रह्म,
प्रयागराजने तीर ऊतर्या, ज्यां भारद्वाजनो आश्रम । ९ ।

पराक्रम किया ? । १ । वैसे ही उन्होंने एक बाण चलाकर समुद्र-जल को क्यों नहीं सोख लिया ? मेरे पति ने जिस प्रकार समुद्र-जल का पान किया (और उसे सुखा डाला) था, उस प्रकार राम ने क्यों नहीं किया ? । २ । तब जनक-सुता सीता बोली, ' श्रीरामचन्द्र का (निश्चय ही) वहाँ (उस विषय में) अतुल्य बल तो है । वे एक बाण से सातों समुद्रों को एक क्षण में भस्म कर सकते हैं । ३ । फिर भी समुद्र में अनेक जीव रहते हैं । (जल को प्राशन करके सुखा देने से) उनकी तब हिंसा हो जाती । इसलिए उन्होंने सागर को नहीं सोख लिया । श्रीरघुराज (इस प्रकार) दयालु हैं । ४ । इसके अतिरिक्त राम के पास अनेक महाबलवान कपि है । (उनमें से एक) हनुमान (ही) सातों समुद्रों को एक ही समय पी सकता है । ५ । (परन्तु समुद्र) आपके पति का मूत्र है । मन में इस प्रकार मानकर कोई भी वानर उसे छुएगा तक नहीं । फिर वे उसे कैसे पिएँगे । ६ । इसलिए भगवान राम सेतु-बन्ध करके सेना-सहित उस पार गये । ' सीता की ऐसी बातें सुनकर वह मुनि-पत्नी प्रसन्न हो गयी । ७ । तत्पश्चात् अगस्त्य मुनि से (जाने की) आज्ञा माँगी । उस समय सबने उस ब्राह्मण को नमस्कार किया और श्रीराम सबको साथ में लेकर विमान में बैठ गये । ८ । पूर्णब्रह्म ने पुष्पक विमान

त्यां भारद्वाजशुं सरव मुनिवर, मळवा आव्या रघुराय,
ज्यम मोटी नदीनुं पूर चढीने, सागर प्रत्ये जाय। १०।
एम अनेक मुनिवर रामने मळिया, पाम्या मन उल्लास,
भारद्वाजने साष्टांग कर्या त्यां, पोते रमानिवास। ११।
भारद्वाज कहे, धन्य घडी आज, मळ्या अयोध्यानाथ,
पछे श्रीरघुवीरने पूंठळ वींटी, बेठा मळी मुनि साथ। १२।
त्यारे भारद्वाज कहे रघुवर तमने, अवध मूके महाराज,
वर्ष चतुर्दश दिवस त्रयोदश, पूरण थयां छे आज। १३।
त्यारे श्रीरघुवीरने स्मृति आवी, ज्यारे नीकळ्यां'ता वन,
त्यारे तीरथराजमां स्नान करीने, पण कर्युं'तुं भगवन। १४।
ए वन पूरण करी आवशुं ज्यारे, एम बोल्या'ता रघुराय,
त्यारे आंहां ब्रह्मभोजन करावी, बे लक्ष आपीशुं गाय। १५।
ते वचन सत्य करवा माटे त्यां, पोते जुगदाधार,
निर्माण करी स्वईच्छाए धेनु, कामदुर्गाशी अपार। १६।
पछे अन्नपूर्णानुं स्मरण कर्युं ते, आवी ऊभी त्यांहे,
तेणे भातभातनां शाकपाक, निरमाण कर्यां क्षणमांहे। १७।

स्वयं वहाँ से चला लिया और वे तीर्थराज प्रयाग में (नदी-)तट पर उतर गये, जहाँ भरद्वाज का आश्रम था। ९। वहाँ भरद्वाज जैसे समस्त मुनिवर राम से मिलने के लिए आ गये। जिस प्रकार किसी बड़ी नदी में आयी हुई बाढ का पानी (उमड़ते) हुए सागर की ओर जाता है, उस प्रकार (आते हुए) अनेक मुनिवर राम से मिल गये और मन में उल्लास को प्राप्त हो गये। वहाँ स्वयं रमानिवास विष्णु के अवतार राम ने भरद्वाज को साष्टांग नमस्कार किया। १०-११। फिर भरद्वाज बोले, 'आज की यह घड़ी धन्य है, जबकि हमसे अयोध्यानाथ श्रीराम मिल गये हैं। अनन्तर (समस्त) मुनि इकट्ठा होकर एक साथ श्रीराम को घेर कर बैठ गये। १२। तब भरद्वाज ने, श्रीराम से कहा, 'हे महाराज, आपको अयोध्या छोड़े आज चौदह वर्ष और तेरह दिन पूर्ण हो गये हैं।'। १३। तब भगवान राम को स्मरण हो गया कि जब वे वन की ओर जाने के लिए निकले थे, तब उन्होंने तीर्थराज में स्नान करके एक प्रण किया था। उस समय रघुराज राम ने कहा था, जब मैं वनवास पूर्ण करके आऊँगा, तब मैं ब्राह्मण-भोजन करवाकर दो लाख गायें दान में दूँगा। १४-१५। उस वचन को सत्य करने के लिए जगदाधार राम ने स्वयं वहाँ अपनी इच्छा से कामधेनु जैसी अपार गायें उत्पन्न कीं। १६।

जे प्रभुने चरणे सदा रहे लक्ष्मी, तेने शी वातनी न्यून ?
पछे गौदान उपर दक्षणा आपी, द्विजने करावी भोजन । १८ ।
पछे भरतनुं पण मनमांहे विचार्युं, अवध पूरण थई आज,
ते माटे अंजनीसुत साथे, बोल्या श्रीमहाराज । १९ ।
अरे मारुति जाओ तमे जई, करो भरतने जाण,
अवध थई माटे आशा मूकी, तत्क्षण तजशे प्राण । २० ।
वळी शृंगवेरमां भक्त छे मारो, गुह्यक घोराजन,
तेने जाण करीने जाओ वळता, नंदीग्राम पावन । २१ ।
एवां वचन सुणीने वायुवेगे, चाल्या पवनकुमार,
ते घोराजाने मंदिर आव्या, शृंगवेर मोझार । २२ ।
नमस्कार करी पासे जईने कह्युं, आव्या श्रीरघुवीर,
घोराय सुणी थयो तत्क्षण ऊभो, गद्गद प्रेम अधीर । २३ ।
पछी हनुमंतने भेट्या भावे, स्वागत कीधुं अपार,
ते बंन्यो भक्त मळीने आव्या, नंदीग्राम मोझार । २४ ।

फिर अन्नपूर्णा का स्मरण किया, तो वह वहाँ आकर खड़ी हो गयी। उसने क्षण में भांति-भांति के शाक और अन्न निर्मित किये। १७। जिन प्रभु के चरणों (के आश्रय) में सदा लक्ष्मी रहती है, उन्हें किस बात की न्यूनता हो सकती है। उन्होंने गोदान देकर फिर उस पर दक्षिणा देते हुए ब्राह्मणों को भोजन करवा दिया। १८। तदन्तर उन्होंने मन में भरत के प्रण का विचार किया। (उनके ध्यान में आया कि) उसकी अवधि आज पूर्ण हो रही है। इसलिए श्रीमहाराज राम हनुमान से बोले। १९। 'हे हनुमान, जाओ, तुम जाकर भरत को जानकारी करा दो। (नहीं तो) अवधि पूर्ण हो गयी, इसमे (मेरे आने की) आशा छोड़कर वह तत्क्षण प्राण त्यज देगा। २०। उसके अतिरिक्त शृंगवेरपुर में मेरा गुह्यक—गुह राजन नामक एक भक्त है। उसे भान कराते हुए फिर पावन नन्दिग्राम में जाओ।'। २१। ऐसी बातें सुनते ही पवनकुमार वायु-गति से चला गया। वह शृंगवेरपुर में गुहराज के प्रासाद में आ गया। २२। उनको नमस्कार करके उसके पास जाते हुए हनुमान बोला, 'श्रीरघुवीर पधारे हैं।' यह सुनते ही गुहराज प्रेम और अधीरता से गद्गद होते हुए तत्क्षण खड़ा हो गया। २३। फिर उसने प्रेम-पूर्वक हनुमान को गले लगाया और उसका अपार स्वागत किया। (तदनन्तर) ये दोनों भक्त मिलकर नन्दिग्राम में आ गये। २४। अब (इधर नन्दिग्राम में) भरत राम की बाट जोह रहा था। (वह सोच रहा था—)

हावे भरत रामनी वाट जुए छे, वीत्या चतुर्दश वर्ष,
हजु राम ते क्यम नव आव्या ? विरह थयो उत्कर्ष । २५ ।
अहो नाथ मुजने विसार्यो, कपटी जाणीने आज;
दुर्भागी अपराधी माटे, मुने त्यज्यो महाराज । २६ ।
अहो वीर लक्ष्मण बडभागी, तेडी गया प्रभु साथ,
वनमां फळ जळ स्वागत सेवा, करीने थयो सनाथ । २७ ।
हुं थयो जोगी रह्यो विजोगी, दु:ख पामुं छुं मन,
निश्चे त्यज्यो रघुपतिए मुजने, जाणी केकईनो तन । २८ ।
अवध विधि हजुये ना आव्या, अवधपति महाराज,
शुं करुं हावे जीवीने ? माटे देह तजुं हुं आज । २९ ।
एवुं विचारी कुंड रच्यो त्यां, अग्निनो निरधार,
तेनी पासे ऊभा रह्या भरतजी, स्नान करी तेणी वार । ३० ।
श्रीरघुवीरनुं ध्यान धर्युं, पछे करी एकाग्रे मन,
मुगट कुंडळ पीतांबर मंडित, सुभग सुहास्य वदन । ३१ ।
एम ध्यान धर्युं बे पहोर लगी, पछी बोल्या वचन प्रकाश,
ज्यां ज्यां जन्म धरुं त्यां थाउं, श्रीरघुपतिनो दास । ३२ ।

चौदह वर्ष बीत गये, (फिर भी) अब (तक) राम कैसे नहीं आये ? उनके विरह का तो चरम उत्कर्ष हो गया । २५ । अहो नाथ, (क्या) आपने मुझे आज कपटी समझकर भुला दिया है ? हे महाराज, मैं अभागा, अपराधी हूँ—इसलिए (क्या) आपने मुझे छोड़ दिया । २६ । अहो भाई लक्ष्मण बड़े भागवान हैं, जिन्हें प्रभु बुलाकर अपने साथ ले गये हैं। वे वन में उनको फल, जल, देते हुए और उनकी स्वागत-सेवा करते हुए सनाथ हो गये । २७ । मैं तो योगी हो गया—वियोगी (ही) रह गया। मैं मन में (इससे) दुख को प्राप्त हो रहा हूँ । मुझे कैकेयी का पुत्र समझकर निश्चय ही रघुपति राम ने त्यज दिया है । २८ । अवधि बीत गयी, फिर भी अयोध्या के स्वामी महाराज राम नहीं आ गये हैं। अब मैं जीवित रहकर क्या करूँ ? इसलिए मैं आज देह-त्याग दूँगा । २९ । इस प्रकार विचार करके भरत ने निश्चय-पूर्वक वहाँ अग्नि का एक कुण्ड बना लिया । उसी समय स्नान करके वह उसके पास खड़ा हो गया । ३० । अनन्तर मन को एकाग्र करते हुए उसने श्रीरघुवीर का ध्यान किया—वे राम मुकुट, कुण्डल तथा पीताम्बर धारण किये हुए थे, वे सुन्दर तथा सुहास्य-वदन थे । ३१ । भरत ने इस प्रकार की राम की मूर्ति का ध्यान दो पहर तक धारण किया । फिर वह यह बात स्पष्ट रूप से बोला,

एम स्तुति करीने अग्निकुंडमां, भरत पडे जेणी वार,
एवे समे त्यां आव्या तत्क्षण, गुह्यक पवनकुमार । ३३ ।
अकस्मात आवीने कह्युं, हो भरत, आव्या श्रीराम,
तीरथराजने तीर ऊतर्या, भक्तना पूरणकाम । ३४ ।
एवां वचन सुणीने भरतजी हरख्या, तत्क्षण थया सचेत,
वधामणी रघुवीरनी सुणतां, मन ऊपन्युं अति हेत । ३५ ।
ज्यम महासिंधु जळमांहे बूडतां, आवे ओचिंतुं नाव,
तृषातुर चकोर जाणी ऊगे, रोहिणीवर ए भाव । ३६ ।
ज्यम उष्णकाळमां सर सुकातां, जीव पामे परिताप,
पछी ओचिंतुं वारि घन वरसे, शाली सुकातां आप । ३७ ।
एम हनुमंते कही वधामणी, भरतने कर्यो नमस्कार,
त्यारे भरते मारुतसुतने लईने, भीड्या हृदय मोझार । ३८ ।

'मैं जहाँ-जहाँ जन्म ग्रहण करूँ, वहाँ-वहाँ रघुपति राम का सेवक (ही) बन जाऊँ । ३२ । इस प्रकार स्तुति करके भरत जिस समय उस अग्नि-कुण्ड में कूद रहे थे, उसी समय वहाँ गुहराज और पवनकुमार तत्क्षण आ गये । ३३ । उन्होंने अकस्मात् आकर कहा, 'हे भरतजी, श्रीराम पधार रहे हैं । भक्तों की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले वे श्रीराम तीर्थराज (प्रयाग अर्थात् त्रिवेणी) के तट पर ठहर गये हैं ।' । ३४ । ऐसी बातें सुनकर भरत आनन्दित हो गया और वह तत्क्षण सचेत हो गया । रघुवीर राम के शुभागमन (के समाचार) को सुनते ही उसके मन में (उनके प्रति) बहुत स्नेह उत्पन्न हो गया । ३५ । जिस प्रकार महासागर में किसी के डूबते रहते (समय) अकस्मात् नाव (उसके पास) आ जाए, जिस प्रकार चकोर को प्यास से व्याकुल जानकर रोहिणी-पति चन्द्रमा उदित हो जाए, (तो उसे जो आनन्द होगा) उसी प्रकार की बात भरत के बारे में हो गयी (और वह हर्ष-विभोर हो गया) । ३६ । जिस प्रकार, ग्रीष्म काल में सरोवर के सूख जाने पर (उसमें रहनेवाले) प्राणी ग्लानि को प्राप्त हो जाते हैं, (उसी प्रकार राम के विरह के कारण भरत की स्थिति हो गयी); फिर जिस प्रकार, धूप में शाली के सूखने लगते ही अकस्मात् मेघ पानी बरसा दे, तो वह जैसे पुनश्च लहलहाने लगती है, उसी प्रकार (जब) हनुमान ने (श्रीराम के) शुभागमन की बात बतायी, और भरत को नमस्कार किया, तब भरत ने वायुकुमार को (अपने पास खींच) लेकर अपने हृदय से लगा लिया । ३७-३८ । (फिर वह बोला—) 'अहो उपकारी प्राण-सखा, कहो तो भगवान राम कहाँ हैं ।

अहो उपकारी प्राणसखे ! कहो क्यांहां छे भगवान ?
मुने प्राण तजंतां तमे कराव्युं, अमृत केरुं पान । ३९ ।
पछी संतोषीने वेठा आसन, भरत गुह्यक हनुमंत,
ब्रह्मानंद पामीने भरतजी, पूछे छे वरतांत । ४० ।

वलण (तर्ज बदलकर)

वृत्तांत पूछे छे भरतजी, कहो क्यां आव्या रघुवीर रे,
एवां वचन सुणीने बोलिया, पछे मारुतसुत रणधीर रे । ४१ ।

* * *

प्राणों को त्याग देते समय तुमने मुझे अमृत-पान करा दिया है । ' । ३९ । अनन्तर तृप्त होकर भरत, गुहक और हनुमान आसन पर बैठ गये; तो भरत ने ब्रह्मानन्द को प्राप्त होकर समाचार पूछा । ४० ।

भरत, ने समाचार पूछा— ' कहो तो रघुवीर कहाँ आ गये हैं ? ' ऐसे वचन सुनने के पश्चात् रणधीर वायुकुमार हनुमान बोला । ४१ ।

* * *

अध्याय—४ (भरत-हनुमान-भेंट, अयोध्या में राम के स्वागत की तैयारियाँ, राम-भरत भेंट)

राग सामेरी

हनुमंत कहे रे भरतजी, रामे हण्यो रावण भूप,
पछे सीताने लेईने आव्या बेसी, पुष्पविमान अनुप । १ ।
प्रयाग तीरे ऊतर्या, भारद्वाजना आश्रम मांहे,
मुने आगळ मोकल्यो छे, कहेवा तमने आंहे । २ ।

अध्याय—४ (भरत-हनुमान-भेंट, अयोध्या में राम के स्वागत की तैयारियाँ, राम-भरत भेंट)

हनुमान ने कहा, ' हे भरत जी, राम ने रावण का वध किया । तत्पश्चात् सीता जी को लेकर वे अद्भुत पुष्पक विमान में बैठकर आ गये हैं । १ । वे प्रयाग में (गंगा के) तट पर भरद्वाज मुनि के आश्रम में ठहर गये हैं । तुमसे (यह समाचार) कहने के लिए उन्होंने मुझे आगे यहाँ भेजा है । २ । (अब) रघुनाथ जी प्रभात काल में सीता-सहित यहाँ आ

ते प्रभाते अहीं आवशे, सीता सहित रघुनाथ,
साथे विभीषण सुग्रीव छे, सहु कपि वळियो साथ। ३ ।
त्यारे भरत कहे हनुमंतजी, तमो रहेता नित्ये पास,
कोई दिन मुने संभारता, प्रभु जाणी पोतानो दास। ४ ।
हनुमंत कहे हुं शुं कहुं ? धन्य भरत पूरणकाम,
नथी विसार्या क्षण एक तमने, रह्या ज्यां ज्यां राम। ५ ।
अरे भरतजी ! धन्य छे तमने, आ जगतमां आज,
संसारभोग सकळ तज्या, वळी शक्रपद सम राज। ६ ।
त्यारे भरत कहे जो चळे मेरु, पश्चिम ऊगे सूर,
सरितपति मरजाद मूके, बूडे अगस्त्य मृगजळ पूर। ७ ।
भागीरथीने पाप वळगे, तजे क्षितिभार अनंत,
अग्नि तजे दाहशक्ति जो, अधोगति पामे संत। ८ ।
ए दैवजोगे थाय अवळुं, अमोघ जे कहेवाय,
पण वासना मुने राज केरी, स्वपनमां नव थाय। ९ ।
एवां वचन सुणी गद्गद थया, हनुमंत घोराजन,
ब्रह्मानंद वरत्यो भरतने, जे आव्या प्राणजीवन। १० ।

जाएँगे। उनके साथ विभीषण और सुग्रीव हैं, साथ ही समस्त बलवान कपि हैं।'। ३। तब भरत बोला, 'हे हनुमान, तुम तो नित्य उनके पास रह रहे हो। मुझे अपना दास जानते हुए क्या प्रभु राम मुझे किसी दिन स्मरण करते हैं ?। ४। (इस पर) हनुमान ने कहा, 'मैं क्या कहूँ ? तुम पूर्णकाम भरत धन्य हो। राम जहाँ-जहाँ रहे, (वहाँ-वहाँ) एक क्षण (तक) तुम्हें नहीं भूले हुए थे। ५। हे भरतजी, आज इस जगत में तुम धन्य हो। तुमने समस्त सांसारिक भोगों को, इसके अतिरिक्त, इन्द्र-पद के समान राज्य (-पद) को त्याग दिया है।'। ६। तब भरत बोला, 'सूर्य पश्चिम दिशा में उदित हो जाए, सरिता-पति सागर अपनी मर्यादा छोड़ दे, मृग-मरीचिका की बाढ़ में अगस्त्य मुनि (जो समुद्र के समस्त जल को पीकर सुखाने की क्षमता रखते हैं) डूब जाएँ, (समस्त पापों को धुला देनेवाली) गंगा को पाप लग जाए, शेषनाग पृथ्वी के बोझ को त्याग दे (उतार दे), अग्नि अपनी दाह शक्ति छोड़ दे, सन्त अधोगति को प्राप्त हो जाएँ, —ये जो अमोघ कहे जाते हैं, वे भी दैवयोग से (इस प्रकार) विपरीत हो जाएँ, फिर भी मुझे राज्य (प्राप्त करने) की इच्छा स्वप्न (तक) में नहीं हो सकती।' । ७-८-९ । ऐसे वचन सुनकर हनुमान तथा गुहराज गद्गद हो गये। प्राणों के लिए

ते समे नंदीग्राम मांहे, हता शत्रुघन,
भरते तेडावीने कह्युं, तत्काळ हेतवचन। ११।
अरे शत्रुघन तुं जा उतावळो, अवधपुरमां आज,
कर जाण जईने सर्वने, जे आव्या श्रीरघुराज। १२।
गुरु प्रजा मात प्रधान आदे, तेडीने सहु साथ,
प्रभाते वहेला आवजो, सामा जवा रघुनाथ। १३।
एवुं सुणीने उतावळा, गया शत्रुघन पुरमांहे,
वधामणी रघुवीरनी, सहु साथने कही त्यांहे। १४।
ते सुणी हरख्यां गुरु माता, सुमंत आदे प्रधान;
पुरमांहे चाली वारता, जे आव्या श्रीभगवान। १५।
कौशल्याए आज्ञा करी, सुमंतने तेणी वार;
दश सहस्र हस्ती भरी साकर, वहेंची पुर मोझार। १६।
वधाईना वाजित्र वाजे, सकळ पुर दरबार;
जे रामविजोगे कृष हतां, थयां प्रफुल्लतन नर नार। १७।
वसिष्ठ मुनिए सभा करी, मेळव्यो सकळ उपचार,
दरबार उपर कळश ध्वज ते, चढाविया तेणी वार। १८।

जीवन-रूप श्रीराम आ गये हैं, इसलिए भरत को ब्रह्मानन्द अनुभव हो गया। १०। उस समय शत्रुघ्न नन्दिग्राम में (ही) था। उसे बुलाकर भरत ने उससे स्नेहपूर्वक यह बात कही। ११। 'हे शत्रुघ्न, तुम शीघ्रता से आज ही अवधपुर जाओ। जाकर सबको विदित करा दो कि श्रीरघुराज आ गये हैं। १२। गुरु, प्रजा (-जन), माताएँ, मन्त्री, आदि सबको साथ ही बुलाकर प्रभात काल में श्रीरघुवीर की अगुवानी के लिए आगे जाने के लिए पहले ही आ जाना।' । १३। ऐसा सुनकर शत्रुघ्न शीघ्रता से (अयोध्या) नगर में गया और वहाँ सबसे साथ ही रघुवीर राम के शुभ आगमन की बात कह दी। १४। वह सुनकर गुरु, माताएँ, सुमन्त आदि मन्त्री आनन्दित हो गये। नगर में यह समाचार फैल गया कि श्रीभगवान आ गये हैं। १५। उस समय कौसल्या ने सुमन्त को आज्ञा दी, 'दस सहस्र हाथियों पर शक्कर लादकर नगर में बाँट दो।' । १६। समस्त पुर तथा राजसभा में बधावे के निमित्त वाद्य बजने लगे। राम के वियोग के कारण जो स्त्री-पुरुष कृश हो गये थे, उनके शरीर प्रफुल्लित हो गये। १७। वसिष्ठ मुनि ने सभा आयोजित की और समस्त उपचार (उपकरण, साधन) इकट्ठा करवा लिये। उस समय उन्होंने राजसभा के ऊपर कलश और ध्वज चढ़वा

घणां दान माताए कर्यां, गौ मणि वस्त्र अमूल्य,
मंदिर सकल शणगारियां, सुरपति भोवन सम तुल्य। १९।
सुमंतने आज्ञा करी, गुरु वसिष्ठे तेणी वार,
सामा जवा तत्पर कर्युं, चतुरंग सैन्य अपार। २०।
वरण अढारे थई सत्वर, नारी नर वृद्ध बाळ,
पुर बहार सर्वे नीकळ्यां, पहेरी पट भूषण ते काळ। २१।
श्रीमंत वणिक कुबेर सरखा, अवधपुरना जेह,
वळी विप्र वाचस्पति सरखा, नीकळ्या सहु तेह। २२।
बेठी माताओ सुखासन, रथ उपर श्रीगुरुदेव,
सुमंत शत्रुघ्न बंन्यो, पाळा चाले एव। २३।
हस्ती चौद सहस्र उपर, नोबत वाजे सार,
चतुरंग सेन्या नीकळी, वाजित्रनो नहि पार। २४।
ज्यम जूथ मृगनां तृषातुर, गंगाजळ पीवा जाय,
एम मळवा श्रीरघुवीरने, चाली अवधपुरनी प्रजाय। २५।
ब्रह्मानंद सुखमांहे सर्वे, चाले मारगमांहे,
हावे नंदीग्राममां प्रभाते, भरतजी ऊठ्या त्यांहे। २६।

(लगवा) दिये। १८। माताओं ने बहुत गायें, रत्न तथा अमूल्य वस्त्र दान में दिये। समस्त घर सुर-पति इन्द्र के भवन के सम-तुल्य सजा लिये। १९। उस समय, गुरु वसिष्ठ ने सुमन्त को आदेश दिया और (उसके अनुसार) उसने अगुवानी के लिए जाने के हेतु अपार चतुरंग सेना सिद्ध कर दी। २०। उसी समय अठारहों वर्णों (जातियों) के स्त्री-पुरुष, वृद्ध-बालक, सब (बढ़िया) वस्त्र तथा आभूषण पहनकर झट से सिद्ध होते हुए नगर के बाहर चल पड़े। २१। अवधपुर में जो व्यापारी कुबेर के समान धनवान थे, फिर जो ब्राह्मण बृहस्पति के समान (बुद्धिमान) थे, वे सब निकल पड़े। २२। माताएँ पालकियों में बैठ गयीं; श्रीगुरु रथ में विराजमान हो गये। सुमन्त और शत्रुघ्न दोनों पैदल ही चल दिये। २३। चौदह सहस्र हाथियों पर (रखे हुए) नगाड़े सुन्दर बज रहे थे। (साथ ही) चतुरंग सेना चलने लगी। (बजनेवाले) वाद्यों का पारावार नहीं था। २४। जिस प्रकार प्यास से व्याकुल मृगों का झुण्ड गंगा-जल पीने के लिए जाता हो, उसी प्रकार अवधपुर की प्रजा श्रीरघुवीर से मिलने के लिए (शीघ्रतापूर्वक) चल दी। २५। सब मार्ग में ब्रह्मानन्द और सुख के साथ जा रहे थे। अब उधर नन्दिग्राम में भरत जाग उठे। २६। वे नित्य के नियम (अर्थात् कार्य नियम-पूर्वक) पूर्ण

नित्यनियम करीने चालिया, रामनी सन्मुख एह,
किरातपति श्रीशोकहारण, संग चाल्या तेह । २७ ।
भारद्वाजना आश्रम विषे, ऊठ्या प्रभाते राम,
स्नान संध्या आचर्यां, लक्ष्मण सहित ते ठाम । २८ ।
विमानमां बेठा पछे सहु, साथ लई भगवान,
पावनपुर अयोध्या भणी, ते चलाव्युं पुष्पविमान । २९ ।
ते विमान आवतुं देखाड्युं, भरतने श्रीहनुमंत,
दूरथी जोई आकाशमां, थया द्रवित करुणावंत । ३० ।
केकईसुते साष्टांग करियो, विमान देखी व्योम,
भरतने जोई रघुनाथजीए, विमान उतार्युं भोम । ३१ ।
पछी सीता लक्ष्मण सहित पोते, ऊतर्या रघुनाथ,
त्यां अवधने साष्टांग करियो, रामे जोडी हाथ । ३२ ।
एटले दीठा भरतने, नमस्कार करता तांहे,
तदाकार छे जे अष्ट भावे, राम रघुवरमांहे । ३३ ।
कृषकाय रामवियोगथी, वनकुळ कर्युं परिधान,
तन भस्म चर्ची जटा बांधी, जोग रूप निधान । ३४ ।

करके राम की अगुवानी के लिए आगे चले गये । उनके साथ किरात-पति गुह तथा श्रीराम (तथा सीता) के शोक का हरण करनेवाले हनुमान चल दिये । २७ । (इधर) प्रभात काल में भरद्वाज के आश्रम में राम जाग उठे । उन्होंने लक्ष्मण-सहित उसी स्थान पर स्नान-संध्या विधि को सम्पन्न किया । २८ । फिर सबको साथ में लेकर भगवान राम विमान में बैठ गये । (तदनन्तर) उन्होंने वह पुष्पक विमान पावनपुरी अयोध्या की ओर चला दिया । २९ । हनुमान ने भरत को उस विमान को आते हुए दिखा दिया । उसे दूर से ही आकाश में देखकर वह करुणावान (भरत) द्रवित हो उठा । ३० । फिर विमान को आकाश में देखकर उस कैकेयी-सुत भरत ने साष्टांग नमस्कार किया । (तब) भरत को देखते ही रघुनाथ ने विमान भूमि पर उतार दिया । ३१ । तदनन्तर राम सीता और लक्ष्मण सहित स्वयं (नीचे) उतर गये । फिर उन्होंने हाथ जोड़कर वहाँ अयोध्या को साष्टांग नमस्कार किया । ३२ । इतने में राम ने वहाँ नमस्कार करते हुए भरत को देखा, जो रघुवर राम के साथ आठों भावों[1] से तदाकार हो गया था । ३३ । वह राम के वियोग के

१ अष्टभाव—कम्प, रोमांच, स्फुरण, प्रेमाश्रु, स्वेद, हास्य, प्रलास्य और गायन ।

एवा भरतने जोई राम धाया, मूकी सौनो साथ;
ज्यम वच्छ विरहे धेनु दोडे, एम आव्या नाथ। ३५।
परदेशथी ज्यम पिता आवे, पुत्र हरखे मन,
वळी घणे काळे पतिव्रतानो, ज्यम मळे स्वामीन। ३६।
एम स्नेह करीने रामचरणे, भरते मूक्युं शीश,
दंड पेरे पड्या भूमि, द्रवित थई ते दिश। ३७।
ज्यम लोभीनुं धन गयुं आवे, जन्मान्धनां लोचन,
अंतसमे ज्यम अमृत पाये, सुखी थाये जन। ३८।
दरिद्रीने चिंतामणि, ज्यम मळे आपतकाळ,
एम भरतने सुख ऊपन्युं, मळी रामने ते काळ। ३९।
अश्रुए करीने चरण सींच्या, प्रभु तणा तेणी वार,
नाथे उठाडी भरतने, भीड्या हृदय मोझार। ४०।

कारण कृश-काय (दुबले-पतले शरीरवाला) हो गया था। उसने वल्कल पहने थे, शरीर में भस्म मला था, (सिर पर) जटाएं बाँधी थीं। वह (मानो) योग-स्वरूप (योगी) हो गया था। ३४। इस प्रकार के (रूपधारी) उस भरत को देखकर राम सबका साथ छोड़कर दौड़े। जिस प्रकार बिछुड़े हुए बछड़े की ओर गाय दौड़ती हो, उस प्रकार स्वामी (राम) भरत की ओर दौड़े। ३५। जिस प्रकार विदेश से पिता आ जाए, तो पुत्र का मन आनन्दित हो उठता है, (उसी प्रकार राम आ गये, तो भरत आनन्दित हो उठा।) इसके अतिरिक्त, बहुत काल के पश्चात् पतिव्रता नारी से उसका पति मिल जाए, तो वह जैसे हर्ष-विभोर हो जाती है, उसी प्रकार राम के मिल जाने पर भरत हर्ष-विभोर हो गया और उसने वैसे ही स्नेह से राम के चरणों पर सिर रखा। वह भूमि पर दण्ड-वत् पड़ गया। ३६-३७। जिस प्रकार, किसी लोभी का गया हुआ (खोया हुआ) धन (उसके पास फिर से) आ जाए, (तो वह जैसे आनन्दित हो जाएगा) अथवा जन्म से अन्धे (व्यक्ति) को आँखें प्राप्त हो जाएँ, अथवा मृत्यु के समय (कोई) मरणासन्न व्यक्ति जिस प्रकार अमृत प्राप्त कर ले, (तो वह जैसे सुखी हो जाएगा), उसी प्रकार (चौदह वर्षों के विरह के दुःख को सहन करने के पश्चात्, राम को पुनः प्राप्त करने पर समस्त) लोग सुखी हो गये। ३८। जिस प्रकार विपत्ति के समय किसी दरिद्र व्यक्ति को चिन्तामणि मिल जाए (तो वह जैसे सुख अनुभव करेगा), उसी प्रकार उस समय राम से मिलने पर भरत के लिए सुख उत्पन्न हो गया। ३९। उसने उस समय प्रभु

एक घटिका रह्यां चांपी, भरतने रघुवीर,
आंसु चाल्यां नेत्रमां, थया गद्गद प्रेम धीर । ४१ ।
ज्यम क्षीरसागर ऊछळे, देखी पूर्णिमानो चंद्र,
एम मळ्या भरतने रामजी, ज्यम विष्णुने योगेंद्र । ४२ ।
पछी लक्ष्मणने भरतजी भेट्या, बंधु स्नेह सहित,
सुग्रीवादि विभीषण मळ्या, मन ऊपनी अति प्रीत । ४३ ।
बंधु साधु विरक्त भक्त, ने ज्ञानी परम उदार,
ए पंच प्रकारे भरत पूरण, राममय तदाकार । ४४ ।
एम वखाणे छे भरतने, मळी सर्व मंडळ त्यांहे,
घोरायने पछे राम मळिया, हरखिया मनमांहे । ४५ ।
पछी सीताने चरणे नम्या, भरतजी तेणी वार,
वनहेतु मनमां विचारीने, करता रुदन अपार । ४६ ।
हे मात ! मारा जन्मथी, दुःख थयुं तमने नेट,
हुं क्लेशकारी अवतर्यो, दुर्भाग्यणीने पेट । ४७ ।

राम के चरणों को आँसुओं से धो लिया, तो उन नाथ (राम) ने भरत को उठाते हुए हृदय से लगा लिया । ४० । श्रीरघुवीर (राम भरत को हृदय से लगाते हुए एक घड़ी तक (खड़े) रह गये । उनकी आँखों से आँसू बह रहे थे । वे प्रेम से अधीर और गद्गद हो गये । ४१ । जिस प्रकार पौर्णिमा के चन्द्र को देखकर क्षीरसागर (ज्वार के आने से) उमड़ उठता है, उस प्रकार रामचन्द्र को देखकर भरत जी का हृदय-सागर प्रेम से उमड़ उठा । जैसे कोई बड़ा योगी और भगवान् विष्णु मिल जाते हों, वैसे ही भरतऔरराम मिल गये । ४२ । अनन्तर वन्धुप्रेम-सहित भरत लक्ष्मण से मिल गये; सुग्रीव आदि कपि तथा विभीपण भी (भरत से) मिल गये । तब उनके मन में बहुत प्रेम उत्पन्न हो गया । ४३ । वन्धु, साधु-प्रकृति, विरक्त, भक्त और परम उदार ज्ञानी पुरुष—इन पाँचों प्रकार से भरत राम से पूर्णतः तदाधार हो गया था । ४४ । इस प्रकार समस्त मण्डली ने मिलकर वहाँ भरत का वखान किया । फिर राम गुहराज से मिले और मन में आनन्दित हो गये । ४५ । तदनन्तर उस समय भरत ने सीता के चरणों को नमस्कार किया और मन में अपने आपको उसके वन-वास का कारण समझकर वह अपार रुदन करता रहा । ४६ । (वह वोला—) ' हे माता, मेरे जन्म से तुम्हें वहुत दुःख हो गया । मैं क्लेशकारी एक अभागिनी के उदर से उत्पन्न हो गया हूं ' । ४७ । फिर उस समय सीता ने भरत को सान्त्वना दी ।

पछे सीताजीए कर्युं सांत्वन, भरतनुं तेणी वार,
हे वीर, समर्थ धीर ज्ञानी, सकळ गुणभंडार ! । ४८ ।
मनमां न एवुं लावशो तमो, निर्मळ बंधु आज,
इच्छा प्रभुनी हती एवी, करवां'तां बहु काज । ४९ ।
पछे भरत केरो कर ग्रही प्रभु, चढ्या पुष्पविमान,
सहु साथने मांहे बेसाडी, आज्ञा करी भगवान । ५० ।
विमान चलाव्युं त्यां थकी, आकाशमारग जाण,
नंदीग्राम समीप आवी, ऊतर्युं निर्वाण । ५१ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

ऊतर्युं नंदीग्राम पासे, पुष्पविमान ते ठार रे,
एटले आवी अवधपुरनी, प्रजा सैन्य अपार रे । ५२ ।

(वह बोली—) 'हे भाई, हे समर्थ धीर ज्ञानी, सकल गुणों के भण्डार ! हे निर्मल (निष्पाप) बन्धु, आज तुम मन में ऐसी (कोई बात) मन में न लाना । प्रभु की इच्छा थी—उन्हें बहुत काम करना था ।' ४८-४९ । तदनन्तर भगवान प्रभु रामचन्द्र भरत के हाथ को पकड़कर पुष्पक विमान में चढ़ गये । (उसी प्रकार) उन्होंने आज्ञा देते हुए सबको साथ ही (विमान के) अन्दर बैठा लिया । ५० । समझिए कि उन्होंने वहाँ से आकाश मार्ग से विमान को चला दिया । (फिर) वह (विमान) अन्त में नन्दिग्राम के निकट आकर उतर गया । ५१ ।

पुष्पक विमान नन्दिग्राम के पास उस स्थान पर उतर गया । इतने में अयोध्या की अपार प्रजा और सेना (वहाँ) आ गयी । ५२ ।

* * *

अध्याय—५ (श्रीराम आदि का अयोध्या-वासियों से मिलना)

राग धवळ धन्याश्री

ज्यम क्षीरसागरने तट जई बेसे, विष्णुवाहन बळवान जी,
एम नंदीग्रामनी पासे ऊतर्युं, ओचिंतुं पुष्पविमान जी । १ ।

अध्याय—५ (श्रीराम आदि का अयोध्या-वासियों से मिलना)

जिस प्रकार विष्णु का वाहन बलवान गरुड़ क्षीर-सागर के तट पर जाकर बैठ जाता हो, उसी प्रकार पुष्पक विमान नन्दिग्राम के पास

पछे पृथ्वी उपर सर्वे ऊतर्या, सेना सहित रघुनाथ जी,
ते ग्राम समीपे उपवन मांहे, पडाव कर्यो सहु साथ जी। २।
पछे पुष्पकने आज्ञा करी रामे, जा तुं कुबेर आवास जी,
अमो चिंतवीए त्यारे आवजे, पाछुं अमारी पास जी। ३।
त्यारे पुष्पक त्यांथी गयुं अलकापुरी, प्रभु आज्ञा परमाणी जी,
हावे सभा करी बेठा उपवनमां, पोते पुरुषपुराणी जी। ४।
ते समे सोळ पद्मदळ साथे, आव्या शत्रुघन जी,
अवधपुरीनी प्रजा संगाथे, गुरु माता परिजन जी। ५।
चौद सहस्र हस्ती पर वाजे, नोबत अति घनघोर जी,
वळी धजा पताका नेजा झलके, अन्य वाजित्रनो शोर जी। ६।
ते आवतुं जोईने रघुवर उठ्या, सभा सहित निरधार जी,
शत्रुघ्न साष्टांग करता, आवी पड्या तेणी वार जी। ७।
प्रणत पाहि कही सत्वर मूक्युं, रघुपति चरणे शीश जी,
शत्रुसूदनने उठाडीने, भेट्या श्रीजुगदीश जी। ८।
पछी सुमंतने सीतापति मळिया, बंधव जेवो जाणी जी,
लक्ष्मणने बंन्यो जण मळिया, आनंद उरमां आणी जी। ९।

(जाकर) अचानक उतर गया। १। अनन्तर राम सेना तथा (अन्य) सबके साथ भूमि पर उतर गये। उन्होंने उन सबके साथ उस गाँव के समीप एक उपवन में पड़ाव डाला। २। फिर राम ने पुष्पक विमान को आदेश दिया— 'तू कुबेर के घर जा। जब हम चिन्तन करेंगे (स्मरण करेंगे) तब हमारे पास फिर लौट आना।'। ३। तब प्रभु राम की आज्ञा को प्रमाण मानकर पुष्पक विमान वहाँ से अलकापुरी चला गया। अब (इधर) उपवन में पुण्य पुरुष राम स्वयं सभा आयोजित करके बैठ गये। ४। उस समय शत्रुघ्न सोलह पद्म सेना सहित आ गया। उसके साथ अयोध्या की प्रजा, गुरु, माताएँ तथा परिजन (सेवक) थे। ५। चौदह सहस्र हाथियों पर (रखे हुए) नगाड़े अति घनघोर (ध्वनि में) बज रहे थे। अन्य बाजों का निनाद हो रहा था। इसके अतिरिक्त, ध्वजाएँ, पताकाएँ और ध्वज जगमगा रहे थे। ६। इसे आते देखते ही श्रीराम सभा (-जनों) सहित निर्धार-पूर्वक उठ गये। उसी समय शत्रुघ्न साष्टांग नमस्कार करते हुए (भूमि पर) पड़ गया। ७। 'प्रणत पाहि (प्रणाम करनेवाले की रक्षा कीजिए)।' कहते हुए उसने झट से रघुपति राम के चरणों में मस्तक (झुका) रखा। तो उसे (शत्रुघ्न को) उठाकर श्रीजगदीश राम ने गले लगा लिया। ८।

त्यारे सुमंतने रिपुदमने मूक्युं, सीताचरणे शीश जी,
अक्षय मंगळदायक सतीए, दीधी घणी आशिष जी । १० ।
अष्ट जूथपति तेने मळिया, विभीषण आदे सर्वे जी,
भाव जोई बंधु मंत्रीनो, मूक्यो सर्वे गर्व जी । ११ ।
एटले आव्या ब्रह्मनंदन मुनि, ब्रह्मवेत्ता निरधार जी,
शांति क्षमाना पर्वत जेवा, गुरु वसिष्ठ उदार जी । १२ ।
रथथी ऊतर्या रामने देखी, रोमांचित जळ लोचन जी,
गुरुने जोईने धाया रघुपति, नमिया पद पावन जी । १३ ।
जुग चरण ग्रही साष्टांग कर्या, अष्ट भावे जुगदाधार जी,
त्यारे हस्त ग्रही उठाड्या रामने, भीड्या हृदय मोझार जी । १४ ।
ज्यम वाचस्पतिने इंद्र मळे, एम मळ्या वसिष्ठने राम जी,
त्यारे गद्गद कंठे वाणी बोल्या, ब्रह्मतनय ते ठाम जी । १५ ।
हें जगतवंद्य रघुवीर तमारुं, दुर्लभ छे दर्शन जी,
पुराण पुरुषोत्तम जगदात्मा, संकट दुःखमोचन जी । १६ ।

फिर सीतापति राम सुमन्त से उसे बन्धु जैसा मानकर मिले। वे दोनों जने हृदय में आनन्द अनुभव करते हुए लक्ष्मण से मिले। ९। तब सुमन्त और शत्रुघ्न ने सती सीता के चरणों में मस्तक रखा, तो उसने उन्हें अक्षय मंगलदायक बहुत आशीर्वाद दिये। १०। (अनन्तर) आठों यूथपति और विभीषण आदि सब उनसे मिले; बन्धु (शत्रुघ्न) तथा मन्त्री (सुमन्त) का प्रेम देखते हुए उन सबका गर्व छूट गया। ११। इतने में ब्रह्मानन्द ब्रह्मवेत्ता मुनि (वसिष्ठ) निर्धारपूर्वक आ गये। वे गुरु वसिष्ठ उदार (-चरित्र) तथा शान्ति और क्षमा के पर्वत जैसे थे। १२। राम को देखते ही वे रथ से उतर गये; वे रोमांचित हो गये थे तथा उनकी आँखों में (अश्रु-) जल भरा हुआ था। गुरु को देखते ही राम दौड़े और उन्होंने उनके पावन चरणों को नमस्कार किया। १३। जगदाधार राम ने आठों भावों से युक्त होते हुए (गुरु के) दोनों चरणों को पकड़कर साष्टांग नमस्कार किया। तब हाथ पकड़कर गुरु ने राम को उठा लिया और हृदय से लगा लिया। १४। जिस प्रकार इन्द्र वाचस्पति गुरु से मिल जाता हो, उसी प्रकार राम (गुरु) वसिष्ठ से मिल गये। तब वे ब्रह्म-तनय उस स्थान पर गद्गद कण्ठ से यह बात बोले, । १५। ' हे जगद्वन्द्य रघुवीर, आपके दर्शन दुर्लभ हैं। हे पुराणपुरुषोत्तम, हे जगदात्मा, हे संकट-दुःख-मोचन, आपने रावण का वध करके देवों को मुक्त करा दिया है।' तब राम बोले, हे महाराज,

रावणकुळ हणी देव मुकाव्या, ए कर्युं रूडुं काज जी,
त्यारे राम कहे ए तमारी कृपानुं, महिमाबळ महाराज जी । १७ ।
गुरुभक्तने सुर मुनि वंदे, शिव, ब्रह्मा ने शेष जी,
रोग काळ भयथी मुकावे, गुरुकृपा होय लेश जी । १८ ।
त्यारे सीताजी ने लक्ष्मण आदि, लाग्यां गुरुने पाय जी,
सीताने मस्तक कर मूकीने, बोल्या त्यां मुनिराय जी । १९ ।
हे गंगे, जगदंबे पावनी, तमो रामनी कीर्ति विस्तारी जी,
तुं प्रणवरूपिणी विदेहशक्ति, ब्रह्मांड रचनाकारी जी । २० ।
अनंत कल्याण सौभाग्य तमने, हो सदा रामपद प्रीति जी,
पछें लक्ष्मण ने विभीषणने मळिया, सुग्रीवने कपि सहित जी । २१ ।
एटले सर्वे माता आवी, बेठी सुख आसन जी,
वेत्रधार आगळ दोडे छे, अनेक दासी जन जी । २२ ।
ऊर्मिला माल्यवी श्रुतकीर्ति वधू, आव्यां तेणी वार जी,
सुमंते सूचना करी ते वेळा, धाया जुगदाधार जी । २३ ।
त्यारे पालखीओ भूमि पर मूकी, पडदा कीधा दूर जी,
एटले दीठा राम आवता, मात ऊधरक्युं उर जी । २४ ।

यह तो आपकी कृपा की महिमा तथा सामर्थ्य है । १६-१७ । देव, मुनि, शिवजी, ब्रह्मा और शेष गुरु-भक्त की वन्दना करते हैं । लेश भर भी गुरु-कृपा हो जाए, तो वह रोग और काल के भय से मुक्त करा देती है । ' । १८ । तब सीता और लक्ष्मण आदि गुरु के पाँव लग गये । तो वहाँ सीता के मस्तक पर हाथ रखकर मुनिराज बोले । १९ । हे गंगा, हे पावन जगदम्बा, आपने राम की कीर्ति का विस्तार किया है । आप प्रणव-रूपिणी हैं, विदेह-शक्ति हैं, ब्रह्माण्ड की रचना करनेवाली हैं । २० । आपको अनन्त कल्याण तथा सौभाग्य (प्राप्त) हो, आपकी प्रीति सदा राम के पदों में हो । ' अनन्तर वे लक्ष्मण और विभीषण से तथा कपीश्वर सुग्रीव से प्रेम-पूर्वक मिल गये । २१ । इतने में पालकियों में बैठकर समस्त माताएँ आ गयीं । उनके आगे वेषधारी, अनेक दासियाँ तथा (सेवक) जन दौड़ रहे थे । २२ । उस समय ऊर्मिला, माण्डवी तथा श्रुतकीर्ति—(कुल-) वधुएँ भी आ गयीं । सुमन्त ने (इस सम्बन्ध में) उस समय सूचना दी, तो जगदाधार राम दौड़े । २३ । तब (सेवकों ने) पालकियों को भूमि पर रख दिया और पर्दों को दूर कर दिया । इतने में उन माताओं ने राम को आते देखा, तो उनका हृदय खिल उठा । २४ । (तदनन्तर) चतुर-शिरोमणि राम ने (सबसे) पहले कैकेयी

चतुरशिरोमणि रघुपति प्रथमे, नम्या केकईने पाय जी,
गद्‌गद थईने आशिष दीधी, मन पामी लज्जाय जी। २५।
पछी सुमित्राने मळी आव्या, कौशल्या पासे राम जी,
साष्टांग करी चरणे शिर मूक्युं, पोते पूरणकाम जी। २६।
रामने उठाड्या थई गद्‌गद, बेसाड्या उछंग जी,
निज अश्रुए करी कौशल्या, शिर सींच्युं श्रीरंग जी। २७।
ज्यम वच्छने धेनु वहाल करे, एम जनुनी थयां द्रवित जी,
वारंवार मुख जुए रामनुं, मात प्रसन्न अति चित्त जी। २८।
हे राजहंस मारा राम सुकोमळ, मूकी अवध सरोवर मान जी,
कंटकवनमां वरस चतुर्दश, दुःख वेठ्युं गुणवान जी। २९।
मारा रामचंद्रने आवृत कीधो, वनरूपी जे राहु जी,
हावे शुद्ध मंडल थयुं पाम्यां, तम दर्शन अवगाह जी। ३०।
वरस चतुर्दशनी हती रजनी, अवधपुरी मोझार जी,
ते आज उदय थयो दिनमणि, फूल्यां पुरजन कमळ अपार जी। ३१।

के चरणों को नमस्कार किया; (तब) उसने गद्‌गद होकर उन्हें आशीर्वाद दिया। वह मन में लज्जा को प्राप्त हो गयी थी। २५। फिर पूर्णकाम राम सुमित्रा से मिलकर कौसल्या के पास आ गये और स्वयं साष्टांग नमस्कार करते हुए उन्होंने उसके चरणों पर मस्तक रखा। २६। तो कौसल्या ने गद्‌गद होते हुए श्रीराम को उठा लिया और गोद में बैठा लिया; उसने अपने आँसुओं से उनके मस्तक को सींच लिया। २७। जिस प्रकार गाय बछड़े को प्यार करती है, उसी प्रकार जननी (कौसल्या राम को प्यार करते हुए) द्रवित हो गयी। वह राम के मुख को बार-बार देख रही थी। वह मन में अति प्रसन्न हो गयी थी। २८। (फिर वह बोली,) हे मेरे सुकोमल राम, हे राजहंस, तुमने अयोध्या रूपी मानसरोवर को छोड़ दिया था और काँटों भरे वन में तुम गुणवान ने दुःख झेला। २९। मेरे राम रूपी चन्द्र को वन रूपी जो राहु है, उसने आवृत करके (ग्रास करके छिपाकर) रखा था; वह अब शुद्ध पूर्ण मण्डलाकार हो गया (मुक्त होकर पूर्ण रूप से प्रकट हो गया) है। अब हम तुम्हारे दर्शन-रूप अवगाहन को प्राप्त हो गयी है। ३०। अवधपुरी में चौदह बरस के लिए (मानो) रात रही थी। (अब) आज सूर्य का उदय हो गया है। (उससे) नगर-निवासी अपार जन रूपी कमल प्रफुल्लित हो गये हैं। ३१। रघुवीर रूपी नवरंग मेघ को वियोग रूपी पवन ने दूर कर दिया था। हमारी इंद्रियाँ और प्राण कृश हो गये थे। तब हमारे शरीर-रूपी खेत

वियोग-वायुए दूर कर्यो, नवरंग मेघ रघुवीर जी,
त्यारे कृश थया करण प्राण अमारा, सुकायां क्षेत्र-शरीर जी। ३२।
ते संजोग जळनी वृष्टिए करीने, पुष्ट थयां अभिराम जी,
आज अवधिमृतकमां प्राण प्रवेश्या, चैतन्य पूरणकाम जी। ३३।
वियोग अगस्त्ये शोषण कीधो, अवधि-सागर भोग जी,
तरफडतां'तां मीन सकळ जन, पाम्यां जळसंजोग जी। ३४।
एम घणां वचन कहीने संतोष्यां, माता मन सुख पाम्यां जी,
पछे लक्ष्मण सीताए सर्वे माताने, आवी त्यां शिर नाम्यां जी। ३५।
त्यारे मळवानो मनोरथ पुरजनने, जाणी ऊठ्या राम जी,
पछे जनकसुताने हृदये चांप्यां, माताए ते ठाम जी। ३६।
लक्ष्मणने शिर भुज मूकीने, दीधा आशीर्वाद जी,
उछंगमां बेसाड्यां माते, वैदेही आह्लाद जी। ३७।
अरे बाप कुळदीपक साधवी, सतीशिरोमणि सार जी,
वरस चतुर्दश वनमां वसीने, वेठ्युं दुःख अपार जी। ३८।
त्रण भगिनीओने त्यां मळियां, ऊलट अंग न माय जी,
मुनि पत्नीओ सहुने सीता, तत्क्षण लाग्यां पाय जी। ३९।

सूख गये थे। ३२। वे संयोग (मिलन) रूपी जल की बौछार से (अब) पुष्ट तथा मनोरम हो उठे हैं। आज अवधपुरी रूपी मृत-देह में पूर्णकाम चैतन्य-स्वरूप राम रूपी प्राणों ने प्रवेश किया है। ३३। अवध-पुरी रूपी सागर के सुखोपभोग रूपी जल का वियोग रूपी अगस्त्य ने शोषण कर लिया था। उससे समस्त जन रूपी मीन (मछलियाँ) तड़प रहे थे; आज वे मिलन रूपी जल को (पुनश्च) प्राप्त हो गये हैं। ३४। इस प्रकार बहुत-से वचन कहते हुए (कौसल्या) माता तृप्त हो गयी और वह मन में सुख को प्राप्त हो गयी। अनन्तर लक्ष्मण और सीता ने वहाँ आकर समस्त माताओं को शिर-साष्टांग नमस्कार किया। ३५। तब यह जानकर पुरवासी लोगों की मिलने की इच्छा को पूर्ण करना है, राम उठ गये। अनन्तर उसी स्थान पर माता ने सीता को हृदय से लगा लिया। ३६। लक्ष्मण के सिर पर हाथ रखते हुए उसे आशीर्वाद दिये। माता ने प्रसन्नतापूर्वक सीता को अपनी गोद में बैठा लिया। ३७। (वह बोली—) 'अरी तात (मैया), कुल-दीपिका साध्वी, सुन्दर सती-शिरोमणि, चौदह वर्ष वन में रहते हुए तुमने अपार दुःख झेल लिया। ३८। (अनन्तर) वह (सीता) अपनी तीनों बहनों से (ऊर्मिला, माण्डवी और श्रुति-कीर्ति से) मिल गयी, तो उनका उत्साह अंग में समा नहीं रहा था।

विप्र सकळने मळ्यां प्रेमशुं, भेट्या श्रीरघुवीर जी,
करी वंदना चरणे लाग्या, धरमधोरींधर धीर जी । ४० ।
पछे कौतक एक कर्युं करुणानिधि, सुणो श्रोता बुधवान जी,
अनेक रूप धरीने सहुने, भेट्या श्रीभगवान जी । ४१ ।
जेटला पुरजन परिजन आदे, तेटलां धरियां रूप जी,
यथायोग्य जेने घटे जेवुं, मळ्या एम रविकुल भूप जी । ४२ ।
जेने मळे ते एम ज जाणे, मुज उपर घणो प्रेम जी,
एम श्रीरघुपतिने मळीने सर्वे, पाम्यां मंगळक्षेम जी । ४३ ।
एवी अद्भुत लीला लक्ष्मीवरनी, सुरनर मुनि मोह पामे जी,
श्रवण करे जे नर ने नारी, दुकृत दुःख सहु वामे जी । ४४ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

वामे दुकृत दुःख सकळ सुणी, पामे पदारथ चार रे,
कहे दास गिरधर एवे समे, आव्या भूप जनक तेणी वार रे । ४५ ।

* * *

फिर वह समस्त मुनि-पत्नियों के पाँव लग गयी । ३९ । (इधर) धर्म-धुरन्धर धीर (-मति) श्रीराम समस्त विप्रों से प्रेम-पूर्वक मिले और उनका वन्दन करते हुए वे उनके पाँव लग गये । ४० । हे बुद्धिमान श्रोताओ, सुनिए, अनन्तर करुणा-निधि राम ने एक लीला (प्रदर्शित) की । श्रीभगवान राम अनेक रूपों को धारण करके सब से मिल गये । ४१ । (वहाँ) जितने नगर-वासी लोग तथा सेवक आदि थे, उन्होंने उतने रूप धारण किये । रवि-कुल-भूषण राम इस प्रकार जिससे जैसा योग्य हो, (उस प्रकार) यथा योग्य (रीति से) मिल गये । ४२ । जिस (-जिस) से वे मिले, वह तो ऐसा ही समझ रहा था कि मुझी से भगवान का बहुत प्रेम है । इस प्रकार राम से मिलकर सब मंगल-क्षेम (-कुशल) को प्राप्त हो गये । ४३ । इस प्रकार लक्ष्मीवर (भगवान विष्णु के अवतार राम) की अद्भुत लीला (प्रदर्शित) हो गयी । उसे देखते हुए देव, मनुष्य और मुनि मोह को प्राप्त हो गये । जो पुरुष और स्त्रियाँ इसका श्रवण करते हैं, उनके समस्त दुष्कृतों (पापों) और दुखों का क्षय हो जाता है । ४४ ।

(इस लीला का) श्रवण करने से (लोगों के) समस्त पाप तथा दुःख घट जाते हैं (कम होते-होते नष्ट हो जाते हैं) और वे लोग (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष नामक) चारों पदार्थों को प्राप्त हो जाते हैं । कवि गिरधरदास कहते हैं, उस समय (वहाँ) राजा जनक आ गये । ४५ ।

* * *

अध्याय—६ (श्रीराम आदि द्वारा मंगल-स्नान करना)

राग सामेरी

अनि हां रे आव्या जनकनृप तेणी वार,
चतुरंग सेन्या सहित परिवार।
अनि हां रे राम-लक्ष्मणने मळिया विदेह,
जोई जानकीने ऊपन्यो मन स्नेह। १ ।

ढाळ

स्नेह ऊपन्यो विदेह नृपने, जोई सीता-रघुवीरने,
सुनयनाने मळ्यां सीता, नेत्र रोकी नीरने। २ ।
सुमंत ने शत्रुघने त्यां सेवकने हलकारिया,
जे आव्या ते सरवने, सनमान करी उतारिया। ३ ।
जे पद्म शोडष राजदळ वळी, पुर प्रजा छे अति घणी,
सहु कपि मर्कट रींछने वळी, सेन्या जे विभीषण तणी। ४ ।
वळी सरव देशना राय आव्या, मळवा श्रीरघुनाथने,
ते सैन्यसंख्या शी कहुं, कर भार लेई निज हाथने। ५ ।

अध्याय—६ (श्रीराम आदि द्वारा मंगल-स्नान करना)

और अब उस समय राजा विदेह अर्थात् जनक चतुरंग सेना तथा परिवार सहित आ गये और वे राम तथा लक्ष्मण से मिले। सीता को देखकर उनके मन में (उसके प्रति) स्नेह उत्पन्न हो गया। १।

(अब और) सीता और राम को देखकर विदेह जनक को (उनके प्रति) स्नेह उत्पन्न हो गया। आँखों में आँसुओं को रोकते हुए सीता (अपनी माता) सुनयना से मिल गयी। २। (इधर) सुमन्त और शत्रुघ्न ने सेवकों को जोर से पुकार कर बुलाया और जो (भी) आ गये थे उन सबको सम्मान करते हुए ठहरा लिया। ३। राजा जनक का जो सोलह पद्म सेना-दल (आ गया) था, उसके अतिरिक्त (मिथिला) नगरी की (जो) अपार प्रजा (आ गयी) थी, समस्त कपि, मर्कट, रीछ (जो आये हुए) थे, फिर विभीषण की जो सेना (आ पहुँची) थी, उन सबको सुमन्त और शत्रुघ्न ने ठहरा लिया। ४। इसके अतिरिक्त समस्त देशों के राजा राम से मिलने के लिए हाथों में कर-भार लिए हुए आ गये थे। उनकी सेना की संख्या की क्या बात कहूँ ? । ५। अनेक मुनिवर,

अनेक मुनिवर मळ्या आवी, गांधर्व चारण अपसरा,
भाटबंदी कीर्ति बोले, भानुकुळ जश गुणभर्या। ६।
वाजे अष्टादश क्षोयणी, वाजित्र ते सहुनां मळी,
सेन्या तणी संख्या न थाये, कविए नव जाये कळी। ७।
लक्षानुलक्ष विशाळ डेहेरा, जरी तणा निरधार,
उपवनमां ऊभा कराव्या, सुमंते तेणी वार। ८।
मांहे स्थंभ रत्न जडाव छे, वळी झालर मुक्ताफळ तणी,
शिर शिखर कंचन तणां झळके, जे मध्ये जडिया मणी। ९।
पृथ्वी तणा सहु रायने, ते शिबिरमांहे उतारिया,
वळी जथाजोगे मुनि सहु ते, शिबिरमांहे पधारिया। १०।
निज सैन्यशुं जनके पोतानुं, शिबिर त्यां जुदुं कर्युं,
एम हळीमळी रघुवीरने, संतोष पामी सहु ठर्युं। ११।
सहु शिबिर मध्ये रामनुं छे, विशाळ अति ऊंचुं घणुं,
ज्यम पर्वत मध्ये मेरु शोभे, तेज अदकुं ते घणुं। १२।
त्यां गुरुं बंधु मात साथे, रह्या श्रीरघुनाथ,
मांहे अंतरगृहमां राजती, कुळवधू चारे साथ। १३।

गन्धर्व, चारण, अप्सराएँ आकर (राम से) मिल गये। भाट और बन्दी जन रविकुल का महिमा-भरा यश गा रहे थे। ६। समस्त अठारह अक्षौहिणी सेना के वाद्य मिलकर बज रहे थे। उस सेना की कोई गिनती ही नहीं (हो सकती) थी। कवि द्वारा उसका आकलन नहीं किया जा पाता। ७। उस समय सुमन्त ने जरी के बने हुए लाख-लाख डेरे (तम्बू) उपवन में निर्धार-पूर्वक खड़े करवाये। ८। उनके अन्दर रत्न जड़े हुए खम्भे थे, उसके अतिरिक्त मोतियों की झालरें थीं। जिनमें रत्न जड़े हुए थे, ऐसे सोने के शिर-शिखर (कलश-कँगूरे) झलक रहे थे। ९। (सुमन्त और शत्रुघ्न ने) पृथ्वी के समस्त राजाओं को उस शिविर में ठहरा दिया। उनके अतिरिक्त यथायोग्य रूप से समस्त मुनि उस शिविर में पधार गये। १०। वहाँ जनक ने अपनी सेना के साथ अपना शिविर अलग बनवा लिया। इस प्रकार रघुवीर राम से हिल-मिल कर सन्तोष को प्राप्त होते हुए, वे सब (लोग) ठहर गये। ११। समस्त शिविरों के बीच राम का (शिविर) अति विशाल तथा बहुत ऊँचा था। जिस प्रकार समस्त पर्वतों में मेरु शोभायमान होता है, उसी प्रकार उसका तेज विशिष्ट था। १२। वहाँ श्रीराम गुरु, बन्धुओं तथा माताओं सहित ठहर गये। उसके अन्तर्गृह में चारों वधुएँ (एक-) साथ शोभायमान

ज्यम शान्ति पासे क्षमा रहे, एम श्री कौशल्या पास,
बारणे मंडप सभा मध्ये, बेठा श्रीअविनाश। १४।
त्यां जनक आदे अनेक नृपति, सुग्रीव आदे कपींद्र,
वळी विश्रवानो पुत्र विभीषण, पुण्य पंडित इंद्र। १५।
त्यांहां विराजे मुनि सकळ, घणा शिष्य साथे लाविया,
अष्टांग योग समाधि आदे, करम मूकी आविया। १६।
एम नंदीग्राम समीप वनमां, मळ्यो सर्वे साथ,
सभा सहित वस्त्रमंडपमां, विराजे रघुनाथ। १७।
सुमंत शत्रुघन करे छे, सरवनी संभाळ,
सहुने शिबिरमां उतार्या ते, विप्र ने भूपाळ। १८।
सुमंते सेवक सोंपिया, जे सेवा मांहे प्रवीण,
वैभोग जोई रघुकुळ तणो, सुरभोग पाम्यो क्षीण। १९।
सहु साथमां रघुनाथशुं, गुरु वसिष्ठ बोल्या त्यांहें,
मंगळ स्नान कर्या विना, प्रवेशाय नहि पुरमांहे। २०।
एवां गुरुवायक सुणी ऊठ्या, भरत शत्रुघन,
जटा उकेली राम लक्ष्मण तणी, निर्मळ मन। २१।

थीं। १३। जिस प्रकार शान्ति के समीप क्षमा रहती है, उसी प्रकार कौसल्या के पास श्री अर्थात् लक्ष्मी-स्वरूपा सीता रह गयी थी। सभा-मण्डप में द्वार पर श्री अविनाशी भगवान राम बैठे हुए थे। १४। वहाँ जनक आदि अनेक राजा, सुग्रीव आदि कपीन्द्र (कपिश्रेष्ठ) थे, उनके अतिरिक्त पुण्यवानों तथा पण्डितों में इन्द्र-सा अर्थात् श्रेष्ठ विश्रवा-पुत्र विभीषण था। १५। वहाँ समस्त मुनि विराजमान थे। वे अपने साथ बहुत शिष्य लाये थे। १६। इस प्रकार नन्दिग्राम के समीप वन में सब एक साथ एकत्रित हो गये। वस्त्रों के बनाये हुए मण्डप में राम सभा-(-जनों) सहित विराजमान थे। १७। सुमन्त और शत्रुघ्न सबकी देखभाल कर रहे थे। उन्होंने समस्त विप्रों और राजाओं को शिविर में ठहरा लिया था। १८। सुमन्त ने उन सेवकों को (वहाँ) नियुक्त कर रखा था, जो सेवा (-कार्य) में प्रवीण थे। रघुकुल के उस वैभव से युक्त लोगों को देखते हुए देवों का (सुख-) भोग क्षीणता को प्राप्त हो गया। १९। (अनन्तर) वहाँ गुरु वसिष्ठ सबके साथ श्रीराम से बोले—'बिना मंगल-स्नान किये नगर में प्रवेश नहीं करना चाहिए। २०। गुरु के ऐसे वचन सुनकर भरत, और शत्रुघ्न उठ गये। उन्होंने निर्मल मन से राम-लक्ष्मण की जटाओं को खोल दिया। २१। अनन्तर उन्होंने

पछे सुगंधी बहु भातनी, ते करी मरदन अंग,
ते केश चोळी कर्या निरमळ, उष्ण जळने संग। २२।
मज्जन करावी अंग चंदन, चरचियां तेणी वार,
पछे सुमन्ते पहेरावियां, नौतम पट अलंकार। २३।
ते धर्या अंगे राम लक्ष्मण, शोभानो नहि पार,
जोई रूप लाजे मीनकेतन, रसिक राजकुमार। २४।
भरतने आपी हती रामे, पादुका निज जेह,
वरस चतुर्दश थयां बांधी, जटा मध्ये तेह। २५।
ते स्वहस्ते छोडी जटा, उकेली जुगजीवन,
पछी स्नान कराव्युं भरत सहित, सुमंत शत्रुघन। २६।
त्यारे सीताए सासुने त्यां, नवडावियां निरधार,
नौतम चोळी चीर अंगे, धराव्या शणगार। २७।
कोटिक चरु कंचन भरी, जळ उष्ण मूक्यां त्यांहे,
नवरावियां सहु राय-ऋषिने, हरखिया मन मांहे। २८।
सहु मुनि तणी पूजा रची, कर्या दान श्रीरघुनाथ,
एवे समे थयो भोजन तणो, त्यारे ऊठिया सहु साथ। २९।

बहुत प्रकार के सुगन्ध-युक्त द्रव्यों से उनके शरीरों का मर्दन किया। फिर उन्होंने ऊष्ण जल से उनके बालों को मल-मलकर स्वच्छ किया। २२। (तदनन्तर) स्नान कराकर उन्होंने उसी समय उनके अंग में चन्दन चर्चित किया। फिर सुमन्त ने उन्हें नवीनतम वस्त्र और आभूषण पहनवा दिये। २३। राम-लक्ष्मण ने (जब) उनको शरीर पर धारण कर लिया, तो उनकी शोभा का कोई पार न था। उनके रूप को देखकर कामदेव तथा रसिक राजकुमार लज्जित हो गये। २४। राम ने भरत को जो अपनी पादुकाएँ दी थीं, उन्हें अपनी जटाओं में भरत द्वारा बाँधे हुए चौदह बरस हो गये थे। २५। उन जटाओं को जगज्जीवन राम ने स्वयं अपने हाथों से खोल दिया। अनन्तर उन्होंने सुमन्त और शत्रुघ्न-सहित भरत को स्नान करवा लिया। २६। तब सास ने वहाँ सीता को निर्धार-पूर्वक नहलवा लिया, उसके अंग पर नवीनतम चोली और वस्त्र तथा श्रृंगार पहनवा लिये। २७। वहाँ (अनन्तर) सोना डालकर करोड़ों चरु (देग, चौड़े मुँहवाले पात्र) ऊष्ण जल भर-भरकर रख दिये थे। उससे समस्त राजाओं और ऋषियों को नहलवा दिया, तो वे मन में आनन्दित हो गये। २८। (तत्पश्चात्) श्रीरघुनाथ राम ने समस्त मुनियों का पूजन करके दान दिये। इतने में भोजन का समय हो गया; तब सब साथ ही

कोटान कोटी पाटला, रूपा तणा ते ठार,
ते वस्त्रमंडपमां नखाव्या, बेसवा तेणी वार। ३०।
मुनि भूप राक्षस कपि मळ्या, करी एक पंक्ति धीर,
ते सरवने लेई भोजन करवा, बेठा श्रीरघुवीर। ३१।
अंतरगृहमां स्त्रीओ सर्वे, माता आदे जेह,
मुनि पत्नीओने संग लेई बेठां, भोजन करवा तेह। ३२।
कोटिक थाळो कनकनी, मणि जडित नाना रंग,
जळपात्र जांबुनद तणां, वारि सुगंधी संग। ३३।
पकवान्न नाना भातनां, खटरस विंजन स्वाद,
भोजन चार प्रकारनां, घृत शर्करा पय आद। ३४।
ते आरोगीने सरव ऊठ्या, थया तृप्त जन,
जोई वैभव लाजे लोकपति, उपमा न बीजी अन्य। ३५।
पछी पानबीडां आपियां, गुण त्रयोदश संजुक्त,
आरोगतां जन सकळ, व्याधि थकी थाये मुक्त। ३६।

उठ गये। २९। उस स्थान पर चाँदी के कोटि-कोटि पीढ़े (चौकियाँ) थे; वे वस्त्र-मण्डप में बैठने के लिए उस समय डाल दिये (बिछा दिये)। ३०। फिर धीरे-धीरे एक पंक्ति बनाकर (एक ही पंक्ति में) मुनि, राजा, राक्षस, वानर इकट्ठा हो (कर बैठ) गये। उन सबको साथ में लेकर श्रीराम भोजन करने के लिए बैठ गये। ३१। (उधर) अन्तर्गृह में, माताएँ आदि जो समस्त स्त्रियाँ थीं, वे मुनि-पत्नियों को साथ में लेकर भोजन करने बैठ गयीं। ३२। नाना रंगों के रत्नों से जड़े हुए सोने के करोड़ों थाल थे। साथ में जम्बुनद सोने के जल-पात्र थे। उनमें सुगन्धित जल था। ३३। अनेकानेक प्रकार के मिष्ठान्न, छः[1] रसों से युक्त स्वादिष्ट व्यंजन, घी शक्कर दूध युक्त चार[2] प्रकार के भोज्य पदार्थ खाकर सब लोग उठ गये। वे तृप्त हो गये। (वहाँ के) वैभव को देखकर लोक-पाल (दिक्पाल) लज्जित हो गये। उसकी कोई अन्य उपमा न थी। ३४-३५। अनन्तर तेरह गुणों से युक्त, पान के बीड़े दे दिये

१ छः रस—मधुर, खट्टा, तीखा, कड़ुवा, नमकीन, तीता।

२ **चार प्रकार के भोज्य पदार्थ**—भक्ष्य (रोटी आदि चबाकर खाने योग्य); लेह्य—(पंचामृत, रायता आदि चाटकर खाने योग्य); पेय (दूध, मट्ठा आदि पीने योग्य); चोष्य—ऊख आदि चूसने योग्य अथवा—शुष्क, पक्व, स्निग्ध तथा विदग्ध।

३ बीड़े के तेरह गुण—कड़ुवाहट, सुगन्ध, स्निग्ध, ऊष्णता, मधुरता, क्षार, तीताई, जंतुघ्नता, दुर्गन्धि-नाशकता, पित्तहारित्व, कफनाशकता, मुख की शोभा की वर्धकता, मुख-शुद्ध-कारित्व, कामाग्नि-वर्धकता।

ते समे जुदी रसोई करावी, जनक भूपे त्यांहे,
सहु साथशुं भोजन कर्युं, पोताना डेरा मांहे । ३७ ।
आनंदमां एम त्रैण दिवस, रह्या नंदीग्राम,
पछी सुमुहूरत आप्युं गुरु, पुर प्रवेश्यानुं राम । ३८ ।
ते समे गुरुआज्ञा थकी, ऊठिया श्रीरघुवीर,
बंधु सहित रथमांहे बेठा, रावणरिपु रणधीर । ३९ ।
योग पुष्याकर सुभग तिथि, ग्रह वार पूरणकाम,
श्रीरामचंद्रने चंद्र दशमो, सुमुहूरत अभिराम । ४० ।
तत्पर थया सहु भूपति, मुनि सहित बेठा यान,
सुग्रीवादिकने बेसाड्या वाहन उपर भगवान । ४१ ।
वधू सहित बेठां मात शिबिका, हरख पामी मन,
अनेक रथमां बेसाडी, मुनिपत्नीओ पावन । ४२ ।
वाजित्र वाजे अति घणां, शोभा तणो नहि पार,
सहु साथशुं रघुनाथ आव्या, अवधपुर मोझार । ४३ ।
रथमां बिराजे रामलक्ष्मण, धर्युं छत्र मारुततन,
बे पास रही चम्मर करे, भरत ने शत्रुघन । ४४ ।

कि उन्हें खाने पर लोग समस्त व्याधियों से मुक्त हो जाते हैं । ३६ । उस समय जनक राजा ने वहाँ (अपने लिए) अलग रसोई बनवा ली और अपने शिविर में सबको साथ में लेकर भोजन किया । ३७ । (वे लोग) इस प्रकार तीन दिन नन्दिग्राम में आनन्द के साथ रह गये । फिर नगर में राम के प्रविष्ट होने के लिए गुरु (वसिष्ठ) ने मुहूर्त (खोजकर) बता दिया । ३८ । उस समय रावण-रिपु रणधीर श्रीराम गुरु की आज्ञा के अनुसार उठ गये और बन्धुओं सहित रथ में बैठ गये । ३९ । (उस समय) पुष्य नक्षत्र में सूर्य का योग, सौभाग्यवर्धक तिथि, ग्रह, दिन कामना को पूर्ण करनेवाला था । रामचन्द्र के लिए चन्द्रमा दसवाँ था— (इस प्रकार) वह सुन्दर सुमुहूर्त था । ४० । समस्त राजा उद्यत हो गये और मुनियों सहित सवारियों में बैठ गये । (स्वयं) भगवान राम ने सुग्रीव आदि को वाहनों में बैठा दिया । ४१ । माताएँ वधुओं सहित शिबिकाओं में बैठ गयीं । वे मन में हर्ष को प्राप्त हो गयी थीं । उन्होंने पावन (पुण्यवती) मुनि-पत्नियों को अनेक रथों में बैठा दिया । ४२ । बहुत वाद्य बज रहे थे । (उस समय) शोभा की कोई सीमा नहीं थी । (इस प्रकार) सबके साथ राम अयोध्या नगरी में आ गये । ४३ । राम-लक्ष्मण रथ में विराजमान थे । पवन-कुमार हनुमान ने उन पर छत्र धर लिया

दुंदुभि बाजे देवनां, पुष्पनी वृष्टि थाय,
घणुं अवधपुर शणगारियुं, शी वरणवुं शोभाय ? । ४५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

शी वरणवुं शोभा अवधपुरनी, ज्यारे प्रवेश्या जुगदाधार रे,
देवराजपुर रसपतिपुरथी, अधिक रचना सार रे । ४६ ।

* * *

था । भरत और शत्रुघ्न दोनों ओर (खड़े) रहकर चामर झुला रहे थे । ४४ । देवों की दुन्दुभियाँ बज रही थीं । फूलों की वृष्टि हो रही थी । अयोध्या को बहुत सजाया गया था । उसकी शोभा का क्या वर्णन करना है ? । ४५ ।

(कवि कहता है—) जब जगदाधार राम (अन्दर) प्रविष्ट हो गये, तब की अयोध्या की शोभा का क्या वर्णन करना है ? देवों के राजा की नगरी (अमरावती) और रसपति (चन्द्रमा) की नगरी (चन्द्रपुरी अथवा रसेश कृष्ण की द्वारिका) से अयोध्या की रचना (अधिक) सुन्दर थी । ४६ ।

* * *

अध्याय—७ (अयोध्यापुरी की शोभा का वर्णन)

राग सोरठ-गरबानी देशी

अवधपुरीनी शोभा ते हुं शी कहुं जो,
सप्तपुरीमां प्रथमे जेनुं नाम जो ।
हती तेथी शोभा शतगणी त्यारे थई जो,
ज्यारे प्रवेश्या सुखसिंधु श्रीराम जो । अवध० १ ।

अध्याय—७ (अयोध्यापुरी की शोभा का वर्णन)

सप्तपुरियों में जिसका नाम (सर्व) प्रथम (आता) है, मैं उस अयोध्या नगरी की क्या शोभा बताऊँ ? उसकी पहले जो शोभा थी, वह उससे सौ(-सौ) गुना अधिक हो गयी, जब सुख-सिन्धु श्रीराम उसमें प्रविष्ट हो गये । १ । समस्त राजा, ऋषि, वानर उसकी रचना को देख रहे थे ।

सकळ राजऋषि वानर ते रचना जुए जो,
चकित थईने नीरखे चारे पास जो।
पुरनी बाहेर वाटिका वन रळियामणां जो,
सघन सफळ तरु फूल्यां फूल सुवास जो। अवध० २।
गगनचुंबित ऊंचां, लताओ भूमि लळी जो,
शीतळ छाया रविकिरण ना देखाय जो।
तेमां क्रीडा करे छे मृग कस्तूरिया जो,
ललित विहंगना शब्द सोहागी थाय जो। अवध० ३।
मान सरोवर जेवां सर घणां शोभतां जो,
पाछळ बांधी स्फटिकमणिनी पाळ जो।
मणि सोपान कमळ फूल्यां पच रंगनां जो,
खटपद गुंजे क्रीडे कीर मराळ जो। अवध० ४।
एवी रचना जोता राजमारग सहु आवता जो,
सरयूने कर्या श्रीरामे नमस्कार जो।
पछे पुरमां प्रवेश्या पुरुषोत्तम आनंदशुं जो,
वाजित्र वाजे थाये जय धुनिकार जो। अवध० ५।
पुरनो दुर्ग ऊंचो करी शेष फणाकृति जो,
बुरज दीरघ दरवाजे वज्रकमाड जो।

वे चकित होकर चारों ओर ध्यान से देख रहे थे। नगर के बाहर सुन्दर वाटिकाएँ और वन (उपवन) थे। उनमें सघन तथा फल-युक्त वृक्ष थे, उनमें सुगन्ध-युक्त फूल खिले हुए थे। २। (वहाँ के) वृक्ष गगन-चुम्बी ऊँचे थे; लताएँ भूमि पर झुकी हुई थी। (वहाँ) शीतल छाया (ऐसी घनी) थी (कि) सूर्य की किरण (तक) नहीं दिखायी देती थी। उनमें कस्तूरी-मृग क्रीड़ा कर रहे थे। सुन्दर पक्षियों के शब्द सुन्दर (सुखावह मधुर) थे। ३। (वहाँ) मानसरोवर जैसे बहुत से सरोवर शोभायमान थे। उनके तट स्फटिक-मणियों के बनाये हुए थे। उनमें रत्नों की बनी सीढ़ियाँ थीं। उनके अन्दर पंचरंगी कमल खिले हुए थे। भौंरे गुंजारव कर रहे थे। तोते और हंस क्रीड़ा कर रहे थे। ४। इस प्रकार की रचना को देखते हुए समस्त लोग राजमार्ग से आ रहे थे, तो पुरुषोत्तम श्रीराम ने सरयू नदी को नमस्कार किया और अनन्तर नगर में आनन्द-सहित प्रवेश किया। तब वाद्य बज रहे थे और जय-जयकार ध्वनि हो रही थी। ५। नगर का दुर्ग ऊँचा था। उसकी आकृति शेष के फन की-सी थी। उसमें बड़े-बड़े बुर्ज थे; वज्र-से (कठिन, दृढ़)

कोटनी उपर वृक्ष विशाळ विराजतां जो,
वड जांबु ने अशोक आंबा झाड जो। अवध० ६।
चोवीस योजन अवधपुरीनो विस्तार छे जो,
तेमां शोभे चोसठ मोटां बजार जो।
तेनी मध्ये राजमारग अति मोकळो जो,
पंकरहित सुंदर शेरी सकुमार जो। अवध० ७।
सकळ देशनी वस्तु भरी छे बजारमां जो,
धनद जेवा त्यां वणिक बेठा छे अनेक जो।
ऊंचां मंदिर छजां झरूखा अटारीओ जो,
कनकमणिमय झळके तेज विषेक जो। अवध० ८।
घेर घेर कंचन कळश तोरण मोती तणां जो,
ध्वज पताका पवित्र अमंगळ उपचार जो।
अष्टमासिद्ध नवे निध वास करी रही जो,
समान बुद्धि छे सर्व नरनार जो। अवध० ९।
सर्वे पुण्यमारगमां स्वधर्म पाळता जो,
कोने न पीडे दरिद्र, दुःख ने रोग जो।

किवाड़ों वाले द्वार थे। बरगद, जामुन, अशोक और आम के विशाल वृक्ष कोट पर विराजमान थे। ६। अयोध्यापुरी का विस्तार चौबीस योजन था। उसमें बड़े-बड़े चौंसठ हाट (बाजार) शोभायमान थे। उसके बीच बहुत खुला (प्रशस्त) राजमार्ग था। (वहाँ की) गलियाँ कीचड़-रहित अर्थात् स्वच्छ तथा सुन्दर-सुकोमल थीं। ७। बाजारों में समस्त देशों की वस्तुएँ भरी हुई थीं। वहाँ कुबेर जैसे अनेक बनिये बैठे हुए थे। ऊँचे-ऊँचे प्रासादों के छज्जे, झरोखे, अटारियाँ स्वर्ण-रत्नमय थे। वे विशेष तेज से चमक रहे थे। ८। घर-घर पर सोने के कलश थे, मोतियों के तोरण (वन्दनवार) थे। पवित्र ध्वज-पताकाएँ थीं—(मानो वे अमंगल का उपचार अर्थात् नाश का उपाय) कर रही थीं। वहाँ आठों सिद्धियाँ[1] तथा नवों निधियाँ[2] निवास कर रही थीं। (वहाँ के) समस्त स्त्री-पुरुष सम-बुद्धि थे। ९। वे सब पुण्य-मार्ग पर (चलते हुए) स्वधर्म का पालन किया करते थे। दरिद्रता, दुख और

१ अष्ट सिद्धियाँ—अणिमा, महिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाश्य, ईशिता, प्राकाम्य।

२ नव निधियाँ—हय, गज, रथ, दुर्ग, भाण्डार, अग्नि, रत्न, धान्य प्रमदा। अथवा कामधेनु, अंजन, सिद्धपादुका, अन्नपूर्णा, कल्पतरु, चिन्तामणि, घुटिका, कलक, पारस।

शोक वियोग ईर्ष्या मद कोने नहि जो,
स्वर्गतुल्य भोगवतां सर्वे भोग जो। अवध० १०।
पापी तस्कर कपटी के पुरमां नथी जो,
चारे वर्ण स्वधर्मने पंथ पळाय जो।
दंड जती कर पुष्पने बंधन जाणजो जो,
नर एकपत्नी त्रिया सहु पतिव्रताय जो। अवध० ११।
ज्यारे अभ्यागत नव आवे पोताने आंगणे जो,
त्यारे घरमां भोजन न करे कोय जो।
एवां पुण्यपरायण नरनारी व्रत आचरे जो,
घेर घेर हरिकथा हरिमंदिर होय जो। अवध० १२।
त्रिकाळ धेनु दूझे माग्या मेह झरे जो,
वेदाध्ययन करे वाडव रूडी पेर जो।
विप्रने घेर अग्निहोत्रना कुंड छे जो,
याचना करवा नव जाय कोने घेर जो। अवध० १३।
शास्त्रनी चर्चा करता सहु पंडित मळी जो,
न्याय मीमांसा पातंजल सांख्य वेदांत जो।

रोग किसी को भी पीड़ित नहीं कर रहे थे। किसी को भी शोक, (प्रियजनों से) विरह, ईर्ष्या, मद (घमण्ड) नहीं था। सब स्वर्ग-तुल्य भोगों का भोग करते रहते थे। १०। उस नगर में पापी, चोर, कपटी (-लोग) नहीं थे। चार वर्ण स्वधर्म के पन्थ का निर्वाह कर रहे थे। समझ लीजिए कि 'दण्ड' यतियों के हाथों में थे और 'वन्धन' फूलों के (ही) थे। समस्त पुरुष एक-पत्नी-व्रती थे और स्त्रियाँ पतिव्रता थीं। ११। जब अपने आँगन में कोई अतिथि नहीं आता हो, तो तब कोई भी घर में भोजन नहीं करता था। इस प्रकार पुण्य-परायण नर-नारी व्रतों का आचरण किया करते थे। घर-घर हरिकथा (चलती) थी (हरिकथा का पठन-श्रवण चलता था) और हरि-मन्दिर था। १२। (अयोध्या में) गायें तीनों (प्रातः, मध्याह्न और सन्ध्या) काल दूध देती थीं। माँग लिया जाए—अर्थात् जब आवश्यकता हो, तब मेघ बरसता था। ब्राह्मण भली भाँति वेदों का अध्ययन किया करते थे। ब्राह्मणों के घर (-घर) अग्निहोत्र के कुण्ड थे। कोई भी किसी के घर याचना करने नहीं जाता था। १३। समस्त पण्डित इकट्ठा होकर न्याय, मीमांसा, पातंजल योग, सांख्य, वेदान्त, व्याकरण आदि शास्त्रों पर चर्चा किया करते थे और आत्म-स्वरूप (ब्रह्म-स्वरूप) का निर्धारण करते थे। वे तत्त्व-विचार

व्याकरण आदे आत्मस्वरूप निश्चे करे जो,
तत्त्व विचारे टाळे मननी भ्रांत जो। अवध० १४।
एवा पुरमां प्रवेश्या श्रीरघुनाथजी जो,
नरनारीने हैये हरख न माय जो।
ओचिंतो आनंदनो सागर ऊलट्यो जो,
गिरिधारी प्रभुने जोवा सहु जाय जो। अवध० १५।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सहु जोवा ऊभां रघुवीरने, ते मूकी घरनां काम रे,
जेनो जेवो भाव छे तेवां, दरशन आपता राम रे। १६।

*　　　　*　　　　*

से अपने मन की भ्रान्ति को दूर किया करते थे। १४। इस प्रकार के उस नगर में श्रीरघुनाथ राम प्रविष्ट हो गये, तो नर-नारियों को आनन्द हो गया, जो (उनके हृदय में) नहीं समा रहा था। (मानो) अकस्मात आनन्द का सागर उमड़ उठा। (कवि गिरधरदास कहते हैं) गिरिधारी प्रभु को देखने के लिए सब (लोग) चले गये। १५।

अपने-अपने घर को छोड़कर सब (लोग) रघुवीर राम को देखने के लिए खड़े रह गये। (उस समय) जिस-किसी का जैसा-जैसा भाव था, वैसे-वैसे उसे दर्शन दे रहे थे। १६।

*　　　　*　　　　*

अध्याय—८ (श्रीराम के आगमन के उपलक्ष्य में महोत्सव सम्पन्न करना)

राग धोळनी देशी

साहेली रे आनंद अति घणो,
आज पधार्या रे अयोध्या मांहे राम।
मंगळ दिन आज सोहामणो,
थयां सहु जन रे मन पूरणकाम।
साहेली रे आनंद अति घणो। १।

अध्याय—८ (श्रीराम के आगमन के उपलक्ष्य में महोत्सव सम्पन्न करना)

हे सखी, (आज) बहुत बड़ा आनन्द हो रहा है, (क्योंकि) आज अयोध्या में राम पधारे हैं। आज मंगल तथा सुहावना दिन है। सब

पूजा सामग्री लेईने हाथमां,
ऊभी कोटिक रे सुंदर नगरनी नार।
वधावे छे श्रीरघुनाथने,
थाळ मोतीनी रे मांहे पुष्प अपार। साहेली रे० २।
हरखी नरखीने लेती ओवारणां,
देती आशिष रे जीवो क्रोड वरीश।
लोचन संफळ करे पोता तणां,
माने त्रूठ्यां रे आज उमिया ने ईश। साहेली रे० ३।
पूजा करीने उतारे रे आरती,
भारती भणे रे रूडां मंगळ गीत।
सहु त्रिया तनमन वारती,
ठारती नेत्र रे ऊग्यो अवधआदित्य। साहेली रे० ४।
जी रे अवधीसरोवर शोभतुं,
तेमां कुमुदिनी रे सहु नारी अशेष।
ते प्रफुल्लित थई मन लोभतुं,
ज्यारे ऊग्यो रे रामचंद्र निशेश। साहेली रे० ५।

लोगों के मन की कामनाएँ पूर्ण हो गयी हैं। हे सखी, बहुत बड़ा आनन्द हो रहा है। १। हाथों में पूजा की सामग्री लिए हुए नगर की करोड़ों सुन्दर नारियाँ खड़ी हैं और श्रीरघुनाथ का स्वागत कर रही हैं। मोतियों के थालों में असंख्य फूल (रखे हुए) हैं। हे सखी०। २। उन (श्रीराम) को देखकर उनकी आरती उतारते हुए वे आनन्दित हो गयी हैं और वे आशीर्वाद दे रही हैं— 'करोड़ों वर्ष जीओ।' वे (राम के दर्शन से) अपने नेत्रों को सफल कर रही हैं। वे मान रही हैं कि आज उमा और महेश जी (उन पर) प्रसन्न हो गये हैं। हे सखी०। ३। पूजन करने के पश्चात् वे आरती उतार रही हैं। वे सरस्वती-सी स्त्रियाँ (राम पर) तन-मन निछावर कर रही हैं। वे नेत्रों को स्थिर करके (अर्थात् अविचल दृष्टि से) देख रही हैं। विरह-जन्य अन्धकार को दूर करने वाले) अयोध्या के सूर्य का उदय हो गया है। हे सखी०। ४। अयोध्या रूपी सरोवर शोभायमान हो रहा है। उस (नगरी) की समस्त नारियाँ (अर्थात् उनके मन उस नगरी रूपी सरोवर में) उत्पन्न मानो कुमुदिनियाँ हों। जब राम रूपी चन्द्र उदित हो गया, तब उनकी मन रूपी कुमुदिनियाँ प्रफुल्लित हो गयी हैं। उनके मन ललचाने लगे हैं। हे सखी०। ५। घर की जालियों में से धूप का धुआँ फैल रहा है;

धूमे धूप मंदिरने रे जाळिये,
गोखे दीवा रे घृतना कर्या सार।
चढी ललना जुए छे माळिये,
जोतां नीरखे रे कौशल राजकुमार। साहेली रे० ६।

पूर्या साथिया चोक मोती तणा,
बांध्या तोरण रे हाथा कुमकुम द्वार।
वेर्यां चंपा फूल शेरी घणां,
चुवा चंदन रे छांट्या अत्तर अपार। साहेली रे० ७।

वाजे वाजित्र नाना प्रकारनां,
नाचे अपसरा रे आगळ गुणीजन गाय।
चाले जूथ बहु छठीदारनां,
मुखे बोलता रे महराजाने खमाय। साहेली रे० ८।

शोभे सीता सासुना साथमां,
श्रुतकीर्ति रे माल्यवी ऊर्मिलाय,
सदा जेना चित्त निज नाथमां,
सहुनी मध्ये रे राजे जनकसुताय। साहेली रे० ९।

झरोखों में घी के सुन्दर दीप रखे हुए हैं। मालों पर चढ़कर ललनाएँ देख रही हैं। देखते हुए वे कोशल के राजकुमार को ध्यान से निरख रही हैं। हे सखी०। ६। उन्होंने (मंगलसूचक) स्वस्तिक चिह्न अंकित करके चौक मोतियों से पूरे थे। द्वार-द्वार पर तोरण बाँधे थे। और कुंकुम से (मंगल-सूचक) हाथ (चिह्न) अंकित किये थे। गलियों में चम्पा के बहुत-से फूल बिखेर दिये थे—वहाँ चन्दन को चुवाकर बनाया हुआ अपार इत्र छिड़का दिया था। हे सखी०। ७। (देखिए) नाना प्रकार के वाद्य बज रहे हैं। (उस शोभायात्रा के) आगे अप्सराएँ नाच रही हैं और (गायक) कलाकार गा रहे हैं। बहुत से चोवदारों का दल (आगे) चल रहा है। वे मुख से 'महाराज की कुशल हो' बोल रहे हैं। हे सखी०। ८। सीता सासुओं के साथ में शोभायमान है। (साथ में) श्रुतकीर्ति, माण्डवी और ऊर्मिला (भी शोभायमान) हैं। जिनका चित्त अपने-अपने पतियों में सदा (निरत) रहता है, ऐसी वे जनक-कन्याएँ सबके बीच शोभायमान हैं। हे सखी०। ९। जो (सीता) जगज्जननी है, कृपालु है, आदिमाया

जे छे जक्तजनुनी कृपावती,
आदि माया रे इंदिरा महाभाग,
तेने पुरनारी वधावती,
देती आशिष रे रहेजो अचळ सौभाग्य। साहेली रे० १०।

नभ दुंदुभि बाजे अमर तणां,
पुष्पवृष्टि रे क्षण क्षण मांहे थाय।
एवां सुख आपता अति घणां,
राजद्वारे रे आव्या श्रीरघुराय। साहेली रे० ११।

रथ हाथी घोडा शिबिका घणी,
त्यां पदातिनो रे नव आवे पार।
शोभे छे सेन्या चतुरंगिणी,
वाजे घूघरा रे गज घंटा अपार। साहेली रे० १२।

थाय छत्र चामर ने वींजणा,
ध्वजा नेजा रे झळके जाणे वीज।
शांति भणे विप्र अति घणा,
जाणे ऊग्युं रे आज आनंद बीज। साहेली रे० १३।

जी रे आनंदसिंधु ऊछळ्यो,
जोई रघुपति रे पूरण चंद्र प्रकाश।

एवं महाभाग्यवती (साक्षात्) लक्ष्मी है, उसे नगर की स्त्रियाँ बधावा दे रही हैं और आशीर्वाद दे रही हैं कि उसका सौभाग्य अचल रहे। हे सखी०। १०। आकाश में देवों की दुन्दुभियाँ बज रही हैं; प्रतिक्षण पुष्पों की वर्षा हो रही है। इस प्रकार (सबको) सुख देते हुए श्रीरघुराज राम राजद्वार पर आ गये हैं। हे सखी०। ११। रथ, हाथी, घोड़े, शिविकाएँ बहुत हैं। वहाँ पदातियों का कोई पार नहीं है। (साथ में) चतुरंग सेना शोभायमान है। (वहाँ) असंख्य घुँघरू तथा हाथियों के गले में बँधे हुए घण्टे अपार बज रहे हैं। हे सखी०। १२। (वहाँ) छत्र, चामर और पंखे हैं। ध्वज तथा झंडे जगमगा रहे हैं, वे मानो बिजलियाँ ही हों। अनेकानेक विप्र शान्ति (-पाठ) कर रहे हैं। मानो आज आनन्द का बीज ही उग आया हो। हे सखी०। १३। रघुपति रूपी प्रकाशवान पूर्ण चन्द्रमा को देखकर आनन्द-सागर उमड़ उठा और (उस चन्द्र-प्रकाश को देखकर) सबके लिए वियोगरूपी धूप

विजोग आतप सहुनो टळ्यो,
बलिहारी रे जाये गिरिधरदास। साहेली रे० १४।

टल गयी है। कवि गिरधरदास ऐसे राम पर बलिहारी हो रहे हैं। हे सखी०। १४।

* * *

अध्याय—९ (श्रीराम का राज्याभिषेक)

राग धन्याश्री

रघुपति आव्या गोपुरद्वार जी, तेनी शोभा दीसे अपार जी,
त्यां छे मूर्ति सरस्वती ने गणेश जी, पोते करी पूजा तेनी परमेश जी। १।

ढाळ

करी प्रथम पूजा विनायकनी, गोपुर केरे द्वार,
पछे प्रवेश्या सिंघ पोळमां, दशरथ राजकुमार। २।
ज्यम प्रवेशे परमेष्ठिना, मुख विषे चारे वेद,
वळी वृत्रासुरने मारीने, शचिरमण आवे अभेद। ३।

अध्याय—९ (श्रीराम का राज्याभिषेक)

रघुपति राम गोपुर-द्वार पर आ गये; (तब) उनकी शोभा असीम दिखायी दे रही थी। वहाँ सरस्वती और गणेशजी की प्रतिमाएँ थीं। स्वयं परमेश्वर (राम) ने उनका पूजन किया। १।

राजा दशरथ के पुत्र राम ने गोपुर के द्वार पर पहले गणेशजी का पूजन किया और अनन्तर सिंह-द्वार के अन्दर प्रवेश किया। २। जिस प्रकार (ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद और सामवेद नामक) चारों वेद परमेष्ठी ब्रह्मा के मुख में प्रवेश करते हैं, इसके अतिरिक्त, वृत्रासुर का वध[1] करके शची-पति (इन्द्र) बिना किसी भेद-भाव के (अर्थात् पूर्ण रूप से शत्रु-रहित होकर अपनी नगरी में) आ गये थे, उस प्रकार असुर-कुल का

१ **वृत्रासुर और इन्द्र :** वृत्र नामक असुर इन्द्र का, अर्थात् समस्त देवों का प्रमुख शत्रु था। उसने तपस्या करके ब्रह्मा को प्रसन्न कर लिया, तो फल-स्वरूप ब्रह्मा से उसे यह वरदान प्राप्त हुआ—'आज से तुम अमर हो गये; लोह, काष्ठ के किसी भी गीले या शुष्क शस्त्र से, दिन या रात में, तुम्हारी मृत्यु नहीं होगी।' फिर उस असुर ने इन्द्र को पराजित किया। तदनन्तर इन्द्र ने अनेक दिनों तक युद्ध करके दधीचि ऋषि की हड्डी से बने 'व्रज्र' नामक हथियार से वृत्रासुर का वध किया।

एम असुर कुळसंहार करीने, पुरमां प्रवेश्या राम;
राजद्वारे अंतरगृहमां, आव्या पूरणकाम। ४।
माताए उतारी आरती, वधाव्या भरी मोतीथाळ,
पधराविया शुभ आसने, रघुपति दीनदयाळ। ५।
पछे सुमन्ते सन्मान करीने, उतार्या सहु राय,
यथायोग निवास आप्या, सुखी सहु जन थाय। ६।
वळी विभीषण सुग्रीवने, कपि सहित आप्यो वास,
स्थळ सुंदर उतार्या मुनि, सेवा करवा सोंप्या दास। ७।
वधू सहित माता मंदिरमां, पामतां ब्रह्मानंद,
क्षणे क्षणे नीरखतां हरखी, रघुपति मुखचंद। ८।
ते समे गुरुए विनव्या, कही मधुर वचन अपार,
महाराज, राज तमारुं हावे, करो अंगीकार। ९।
रघुनाथ कहे महाराज जे, आज्ञा करो आ दीश,
हुं सदा सेवक तमारो ते, लेई चढावुं शीश। १०।

संहार करके राम (अयोध्या) नगर में प्रविष्ट हो गये। फिर राजद्वार से पूर्णकाम राम अन्तर्गृह में आ गये। ३-४। तो माताओं ने आरती उतार ली और मोतियों से भरे थाल लेकर (आशीर्वाद देते हुए) मोती (-अक्षत-फूल आदि) बिखेरते हुए (हर्षपूर्वक) दीनदयालु राम की आवभगत की। उन्होंने (तदनन्तर) उनको लाते हुए आसन पर बैठा दिया। ५। अनन्तर सुमन्त ने सम्मान-पूर्वक समस्त राजाओं को ठहरा लिया। उन्हें यथायोग्य निवास (-स्थान) प्रदान किया। उससे वे समस्त लोग सुखी हो गये। ६। फिर विभीषण और सुग्रीव को समस्त कपियों सहित निवास (-स्थान) प्रदान किया (अर्थात्) उन्हें उचित स्थानों पर बसा लिया। सुन्दर स्थलों पर मुनियों को ठहरा लिया और सेवा करने के लिए उन्हें सेवक सौंप दिये। ७। माताएँ प्रासाद के अन्दर वधुओं सहित ब्रह्मानन्द को प्राप्त हो रही थीं। वे क्षण-क्षण राम के मुखरूपी चन्द्र को देख-देखकर आनन्दित हो रही थीं। ८। उस समय अपार मधुर वचन कहते हुए गुरु (वसिष्ठ) ने विनती की—' हे महाराज, अब अपने राज्य को स्वीकार कीजिए।'। ९। तो राम बोले, ' हे महाराज, इस स्थान पर आप जो आज्ञा देंगे, उसे मैं शिरोधार्य करूँगा—मैं तो सदा आपका सेवक हूँ।'। १०। तदनन्तर उस समय गुरु ने सुमन्त को आदेश दिया तो (उसके अनुसार) उसने राज (-पद) के जो-जो उपचार (साधन-सामग्री) है, उन सबको इकट्ठा किया। ११। श्वेत छत्र और श्वेत चामर, श्वेत

आज्ञा करी गुरुए पछे, सुमंतने तेणी वार,
साहित्य सरवे मेळव्युं जे, राजनो उपचार। ११।
श्वेत छत्र ने श्वेत चामर, श्वेत गज तोखार,
पंच पल्लव सप्त मृत्तिका, चार समुद्रनुं वार। १२।
दिव्य सिंहासन कनक मणिमय, जडित्र नौतम जेह,
महा दीप्तमान सभा विषे, लावीने मूक्युं तेह। १३।
ते सभामां सहु भूपति मुनि, मा'नुभाव महंत,
शिव ब्रह्मा सुरपति आदे, आव्या देव अनंत। १४।
त्यां रघुपतिनो कर ग्रही, गुरु वसिष्ठे तेणी वार,
ते सिंहासन पधराविया, शुभ लग्नमां निरधार। १५।
वाम भागे जानकीने, बेसाड्यां निरवाण,
नौतम पट अलंकार अंगे, पहेर्यां परम सुजाण। १६।
पछे वेदमंत्रे कर्यो विप्रे, रामने अभिषेक,
स्वस्तिवाचन बोलता, आशिष वचन अनेक। १७।

हाथी (और) श्वेत घोड़ा, पाँच प्रकार के पल्लव[1], सात प्रकार की मिट्टियाँ,[2] चारों समुद्रों[3] का जल, स्वर्ण-रत्नमय दिव्य तथा महा दीप्तिमान सिंहासन, जो नवीनतम रूप से (रत्न आदि से) जड़ा हुआ था, —ऐसा (समस्त) साहित्य लाकर उसने सभा (-गृह) में रख दिया। १२-१३। उस सभा में समस्त राजा, मुनि, महानुभाव (महात्मा), महन्त, शिवजी, ब्रह्मा, सुरपति इन्द्र आदि असंख्य देव आ गये। १४। उस समय वहाँ गुरु वसिष्ठ ने रघुपति राम का हाथ थाम लिया और निर्धार-पूर्वक शुभ लग्न (मुहूर्त) पर उन्हें लिवा लाते हुए सिंहासन पर बैठा दिया। १५। अन्त में उन्होंने सीता को उनकी बायीं ओर बैठा दिया। उस परम सुजान (सीता) ने अंग में नवीनतम वस्त्र तथा आभूषण पहन लिये थे। १६। अनन्तर विप्रों ने वेद-मन्त्रों से राम का अभिषेक किया; स्वस्ति-वचन करते हुए उन्होंने अनेक आशीर्वादों का उच्चारण किया। १७। उस समय जय-जय-ध्वनि होने लगी, पुष्प-वृष्टि हो गयी तथा दुन्दुभियों की ध्वनि होने

---

१ पंच पल्लव : आम्र, पीपल, वट (बरगद), गूलर और पिप्परजटी (पाकर) नामक पाँच वृक्षों के पत्ते।

२ सप्त मिट्टियाँ : अश्व, गज, रथ, चतुष्पथ, गोष्ठ, वल्मीक, ह्रद, (अथवा) गोष्ठ, वेदिका, कितव, ह्रद, कपित, क्षेत्र, चतुष्पथ तथा स्मशान—इन स्थानों की मिट्टी।

३ चार समुद्र : पूर्व, दक्षिण, पश्चिम तथा उत्तर समुद्र।

प्रथम तिलक कर्युं वसिष्ठे, दीधो आशीर्वाद,
ते समे जयधुनि पुष्पवृष्टि, थाय दुंदुभिनाद । १८ ।
पछे सकळ राये कर्यां, कुमकुम तिलक तेणी वार,
ललाट अक्षत चोढिया, रघुवीरने निरधार । १९ ।
सहु भूपति लाव्या हता जे, भेट नाना भात,
श्रीरामने ते करी अर्पण, नम्या नृप साक्षात । २० ।
पुरना सकळ वहेवारिया, श्रीमंत मोटा जेह,
तेणे भावे करीने भेट मूकी, राम आगळ तेह । २१ ।
अप्सरा नाचे गाय गंधर्व, वाजे बहु वाजित्र,
नारद मुनि वीणा वजाडे, गाय रामचरित्र । २२ ।
ते समे हरख्या भरतजी, फोडियो धनभंडार,
आपियां जाचक विप्रने, बहुविधि दान अपार । २३ ।
रत्नसिंहासन शोभता, सीता सहित रघुवीर,
ते जोडी राजे जगतमोहन, गौर श्याम शरीर । २४ ।
शिर छत्र चामर थाय छे, बोले खमा छडीदार,
पुरजन परिजन ज्ञाति गुरुजन, हरखनो नहि पार । २५ ।

लगी (दुन्दुभियाँ बजायी जाने लगीं) । १८ । अनन्तर उसी समय समस्त राजाओं ने (राम को) कुंकुम-तिलक लगा दिया और भाल-प्रदेश पर (कुंकुम-तिलक पर) अक्षत चिपका दिये । १९ । समस्त राजाओं ने, जो-जो अनेक प्रकार के उपहार वे लाये थे, उन्हें साक्षात् (स्वयं) राजा राम को समर्पित करते हुए नमस्कार किया । २० । नगर के जो-जो बड़े-बड़े धनवान महाजन थे, उन सबने राम के सम्मुख प्रेम-पूर्वक उपहार अर्पित किये । २१ । उस समय अप्सराएँ नृत्य कर रही थीं, गन्धर्व गा रहे थे, बहुत वाद्य बज रहे थे । नारद मुनि वीणा बजा रहे थे और राम-चरित्र का गान कर रहे थे । २२ । उस समय भरतजी हर्ष-विभोर हो गये थे । उन्होंने धन-भण्डार खुला कर दिया और याचकों और विप्रों को बहुत प्रकार के अपार दान दिये । २३ । श्रीराम सीता-सहित रत्न-सिंहासन पर शोभायमान थे । गौर (शरीर-धारिणी सीता) और श्याम (शरीरधारी राम) की जगत् को मोह लेनेवाली वह जोड़ी शोभायमान थी । २४ । उनके सिर पर छत्र और चामर थे । चोबदार 'खमा-खमा' शब्द बोल रहे थे । पुरवासी लोगों, सेवक-जनों, ज्ञातिजनों और गुरु-जनों के हर्ष का कोई पारावार नहीं था । २५ । अनन्तर शिवजी, ब्रह्मा,

पछे शिव ब्रह्मा सुरपति आदे, ऊठिया सहु देव,
श्रीरामनी स्तुति करी, बेठा सभामां ततखेव। २६।
त्यारे बंदीजननो वेश धरीने, वेद आव्या त्यांहे,
ऊभा रहीने स्तवन करता, सभामंडप मांहे। २७।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सभामंडपमां वेद चारे, थई आविया बंदीजन रे,
ते सनमुख ऊभा कर जोडीने, करता रामस्तवन रे। २८।

सुरपति इन्द्र आदि समस्त देव उठ गये; उन्होंने श्रीराम की स्तुति की और तदनन्तर तत्क्षण वे सभा में बैठ गये। २६। तब बन्दीजनों का वेश धारण करके वेद वहाँ आ गये और सभा-मण्डप में खड़े होकर (श्रीराम की) स्तुति करने लगे। २७।

तब चारों वेद बन्दी-जन होकर (अर्थात् बन्दी-जनों का रूप धारण कर सभा-मण्डप में) आ गये और वे हाथ जोड़े सामने खड़े होकर राम की स्तुति करने लगे। २८।

* * *

अध्याय—१० (वेदों द्वारा राम का स्तवन)

प्रबन्ध

महाराज अवधविहारी, जय राम रमापति स्वामी !
जयजय जगदीशा सुरमुनि ईशा, प्रणतपाल हरती दशशीशा।
भूपति वेदपति वागीशा, पूरण पुरुषोत्तम परमेशा; अज अजित आनंदरूप, गुण देश काळ रुजरहित अवस्था, निरगुण एक अखंड अनामय, अविचळ अविरल व्यापक; विश्वसनातन मूर्ति सर्वात्मा

अध्याय—१० (वेदों द्वारा राम का स्तवन)

हे अवध-विहारी महाराज, हे रमापति (विष्णु के अवतार) स्वामी राम, आपकी जय हो। हे जगदीश, हे सुरों और मुनियों के ईश्वर, हे प्रणत-पाल, हे दशशीश रावण के विनाशक, आपकी जय हो, जय हो। हे भूपति, वेद-पति, हे वागीश, हे पूर्ण पुरुषोत्तम परमेश्वर, हे अज, अजित, हे आनन्द-रूप, हे गुणों, देशों और (तीनों) कालों से उत्पन्न रोगों

देह चित्त प्राण गुण अक्षप्रवर्तक; रसिक देव आकाश एव, निरलेप नियामक; सत असत प्रकाशक। सर्व उरालय अंतरजामी, कर्मपाळ मायापति स्वामी, सर्वनियंता, सृष्टि उद्भव पालन करता, शासन शिक्षा पोषण भरता, धारण चैतन शक्ति धरता, कारण रहित स्वतंत्र विचरता, अंते विश्व सकळ संहरता, उरण नाभि इव अखिल स्वराट् यथावकाश, एक रोमकूप कोटि ब्रह्मांड, यह अद्भुत लीला गति अपार, अज शंकर सरस्वती शेष अहं नहि विदित मुनि सनकादिक योगी, ब्रह्मनिष्ठ तप योग समाधि, साधनवंता, महदमहंता, हे भगवंता, गति अनंता, जान परे नहीं। गुप्त मर्म ज्यों, पूरण ब्रह्म यह रूप अजन्मा, जन्म धर्यो सुर गोद्विज कारण, अधम उधारण, दुष्ट विदारण, धरम स्थापन, भू रक्षापन,

---

अर्थात् विकृतियों से रहित जिनकी अवस्था है, ऐसे हे निर्गुण, एक, अखण्ड, अनामय, अविचल तथा अविरल, (फिर भी) सर्व-व्यापक (ब्रह्म राम), आपकी जय हो। हे विश्व-सनातन मूर्ति, हे सर्वात्मा, देह-चित्त-प्राण-गुणों तथा अक्षों (इन्द्रियों) के प्रवर्तक (आपकी जय हो)। हे रसिक देव, हे आकाश ही जैसे निर्लेप, हे (सबके) नियामक, हे सत्-असत् के प्रकाशक, हे सबके हृदय-मन्दिर में निवास करनेवाले, अन्तर्यामी, हे समस्त कर्मों, कालों तथा माया के पति स्वामी (राम, आपकी जय हो)। वे सर्व-नियन्ता, हे सृष्टि के उद्भव और पालन करनेवाले, हे (समस्त विश्व का) शासन, शिक्षा (अनुशासन), पोषण और भरण करनेवाले (राम, आपकी जय हो)। हे (समस्त विश्व को) धारण करनेवाले, चैतन्य तथा शक्ति के धारक, हे कारण-रहित तथा स्वतन्त्र रूप से विचरण करनेवाले, हे अंत काल में समस्त विश्व का संहार करनेवाले, हे अखिल ब्रह्माण्ड को मकड़ी की नाभि में यथावकाश स्थान देनेवाले स्वयंप्रकाशी तथा सबके प्रकाशक ब्रह्म, (आपकी जय हो), आपके एक-एक रोम-कूप में कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड हैं। आपकी यह अद्भुत लीला है। आपकी गति अपार है। ब्रह्मा, शिवजी, सरस्वती शेष, विष्णु (अथवा सूर्य) और सनकादिक मुनियों, ब्रह्मनिष्ठ योगियों, तप-योग-समाधि की साधना करनेवाले महान महात्माओं को भी वह विदित नहीं है। हे भगवान, आपकी अनन्त गति किसी गुप्त मर्म की भाँति उनकी समझ में नहीं आती। हे पूर्णब्रह्म, आपका ऐसा ही रूप है। (स्वयं) अजन्मा होने पर भी आपने देवों, गौओं और विप्रों के निमित्त जन्म ग्रहण किया है और आपने अधमों का उद्धार किया, दुष्टों का संहार किया, धर्म की स्थापना की, भूमि की रक्षा की है। भक्तों के

प्रगट भये प्रभु भक्तनके हितकारी; महाराज अवधविहारी
जय राम रमापति स्वामी । १ ।

जय जय सुखसागर, अति उजागर, वैरागर नागर गुण आगर, अति उदार सच्चिदानंद, आनंदकंद, लीलावतार, प्रभु निग्रह अनुग्रह करतुं अकरतुं स्वामी समरथ, एक-पत्नीव्रत एक-बाण एक-वचन सत्यनिधि, धरमधुरंधर, पतितपावन, मुनिमन-भावन, चरित्र सोहावन, शोक नशावन, मंगळमुज्जवळ, अमित गति गुण, रोग वियोग सकळ दु:खदावन, अवधीराज राजाधिराज, नृपचंद्रचूडामणि रविकुळकमळ प्रकाशक दिनकर, कोटि काम लावण्यरूप, ब्रह्मांडभूप, कीर्ति अनुप, तव भक्ति बिना भटकत निशदिन सो जीव पडे संसारकूप, जप जोग क्रिया तप शुष्क बोध कल्याण करत नहीं, अहो नाथ तव उपासना बिन मिथ्या साधन श्रमित होई ज्युं तुं साव-धाती, यह निश्चे वेदान्तवेद्य ब्रह्मण्यदेव

हितकर्ता आप प्रभु (यहाँ) प्रकट हो गये हैं। हे अवध-विहारी महाराज, हे रमापति (विष्णु के अवतार) स्वामी राम, आपकी जय हो । १ ।

हे सुख-सागर, हे अति तेजस्वी, हे (गुण) वैरागर (गुणरूपी हीरों की खान), हे नागर तथा गुणों के आगार, हे अति उदार सच्चिदानन्द, हे आनन्द-कन्द, हे लीलावतार, हे निग्रह (नियमन) तथा अनुग्रह करनेवाले प्रभु, हे कर्तुमकर्तुं-समर्थ (निर्माण और विनाश करने में समर्थ) स्वामी राम, आपकी जय हो, जय हो । हे एक-पत्नी-व्रती, हे एक-बाण और एकवचन, हे सत्य-निधि, हे धर्म-धुरन्धर, हे पतित-पावन, हे मुनियों के मन को प्रिय लगनेवाले, हे सुन्दर चरित्र के धारी, हे शोक-नाशक, हे उज्ज्वल मंगल के कर्ता, हे अमित गति और गुणों के धारक, हे रोग-वियोग के समस्त दु:ख को जलाकर नष्ट करनेवाले, आपकी जय हो । हे अयोध्या के राजा, हे राजाधिराज, हे नृपचन्द्र-चूडामणि, हे रवि-कुल रूपी कमल को (प्रकाश देते हुए) विकसित करनेवाले दिनकर, हे करोड़ों कामदेवों के लावण्य-स्वरूप, हे ब्रह्माण्ड के राजा, आपकी कीर्ति बेजोड़ है । बिना आपकी भक्ति किये जो जीव रात-दिन भटकते रहते हैं, वे जीव (पुन: पुन:) संसार रूपी कुएँ में गिर जाते हैं । जप, योग, तपस्या आदि क्रिया तथा शुष्क (ज्ञान-) उपदेश कोई कल्याण नहीं करता । अहो नाथ, बिना आपकी उपासना के (समस्त) साधना मिथ्या है । उसे अपनाने पर (जीव) थक जाता है । (हे राम) आप तो (सेवक, भक्त रूपी) शिशु

शरणागत वत्सल, दीनदयाळ, भूमि पाताळ अपवर्ग स्वर्गमां यह सुख नाहीं, जो सुख हे तव दरशनमांही, सेवा समरण संत समागम, धन्य धन्य सो कहे निगमागम, हे रघुनायक अति सुखदायक, सबसुरनायक, रिपुखळघायक, भजवे लायक; सीताराम चरण पंकज पर जन गिरिधर बलिहारी; महाराज अवधबिहारी जय राम रमापति स्वामी । २ ।

दोहा

अनिह अखंड अजित अमल, अमोघ बळ मतिधीर,
अगाध बोध अविनाश अज, जय जय श्रीरघुवीर । १ ।
सकळ सभा सुणतां तदा, विनविया एम राम,
वेद स्तुति करीने गया, ज्यांहां ब्रह्म निज धाम । २ ।
अहिपुर नरपुर अमरपुर, ऊमग्यो सकळ समाज,
सरव लोक सुखिया थया, ज्यारे रघुपति बेठा राज । ३ ।

* * *

की धात्री हैं । हे वेदान्त द्वारा वेद्य, हे ब्रह्मण्य देव, हे शरणागत-वत्सल, हे दीन-दयालु, यह निश्चित है कि जो सुख आपके दर्शन से हो जाता है, वह भूमि (पृथ्वी), पाताल अपवर्ग (मुक्ति) या स्वर्ग में भी नहीं है। निगमागम कहते हैं कि आपकी सेवा, (नाम-) स्मरण, सन्तों की संगति (जो करता है, वह) धन्य है। हे अति सुखदायक रघुनायक, हे समस्त देवों के नायक, हे शत्रु के दलों का विनाश करनेवाले, हे भजन किये जाने योग्य, आप सीताराम के चरण-कमलों पर यह सेवक गिरधर बलिहारी है। हे अवध-विहारी महाराज, हे रमापति (विष्णु) के अवतार स्वामी राम, आपकी जय हो । २ ।

हे अनिह, अखण्ड, अजित, अमल, अमोघ-बल, हे धीरमति, हे अगाध-बोध (रूप), हे अविनाशी, हे अजन्मा श्रीरघुवीर, आपकी जय हो, । १ । तब वेदों ने समस्त सभा के सुनते रहते, इस प्रकार राम से विनय की। वे उनकी स्तुति करके जहाँ उनका अपना निवास-स्थान है, वहाँ अर्थात् ब्रह्मलोक चले गये । २ । अहिपुर, नरपुर, अमरपुर (नागलोक, नरलोक और देवलोक) के समस्त समाज उत्साह उमंग से भर उठे । जब रघुपति राम राज्यासन पर प्रतिष्ठित हुए, तब समस्त लोक (-समाज) सुखी हो गये । ३ ।

* * *

अध्याय—११ (सीता-राम की रूप-माधुरी)

राग धन्याश्री

आज रघुवर बेठा राज, मंगळ सोहलो,
पाम्यो आनंद सकळ समाज, मंगळ सोहलो। (टेक) ।
मोक्षदायनी पुरी अयोध्या, फूली कनकने फूल,
रामराज सुखदायक सहुने, नहि अन्य ए समतुल्य । मं० १ ।
पाम्यो उदय ज्यारे रघुकुळदिनमणि, अभय थया सहु लोक,
टळी वियोग घोरतम रजनी, जनमन कोक विशोक । मं० २ ।
खळ तस्कर जे दुष्ट अभिमानी, ते उलूक थया छे अंध,
संजोग सरोज फूल्यां तव छूट्यां, सजन मधुकरना बंध । मं० ३ ।
सीताराम रत्न सिंहासन, राजे अद्भुत जोडी,
आभूषण अंबरनी उपमा, जे कहीए ते थोडी । मं० ४ ।

अध्याय—११ (सीता-राम की रूप-माधुरी)

आज रघुवर राम राज (-गद्दी) पर बैठ गये हैं, (अतः) मंगल आनन्दोत्सव हो रहा है। समस्त समाज आनन्द को प्राप्त हो गया है, (क्योंकि राम के राज्याभिषेक के निमित्त) मंगल आनन्दोत्सव हो रहा है। (टेक)। मोक्षदायिनी अयोध्यापुरी में मानो सुवर्ण के फूल खिल गये हैं (अयोध्या में बनाये हुए स्वर्ण-कलश आदि फूलों-से जान पड़ रहे हैं)। रामराज्य सबके लिए सुख-दायी हो रहा है। उसके समान, उससे तुलना करने योग्य अन्य कोई (राज्य) नहीं हो सकता है। मंगल०।१। जब (से) रघु-कुल में रामरूपी सूर्य उदय को प्राप्त हो गये हैं, तब (से) समस्त लोक निर्भय हो गये हैं; वियोग (से उत्पन्न दुःख) रूपी (अन्धकार से परिपूर्ण) रात समाप्त हो गयी है और जनमानस रूपी चक्रवाक शोक-रहित हो गये हैं। मंगल०।२। जो खल जन, चोर तथा (दुर्) अभिमानी दुष्ट जन-रूपी उल्लू हैं, वे (राम-रूपी सूर्य के उदित हो जाने के कारण) अन्धे हो गये हैं। संयोग (मिलन) रूपी कमल खिल गये, तो सज्जन रूपी भ्रमरों के बन्धन छूट गये हैं। (कवि-प्रसिद्धि के अनुसार रात के समय भ्रमर कमल की पंखुड़ियों के अन्दर बन्द रहते हैं।) मंगल०।३। सीता और राम की अद्भुत जोड़ी रत्न-सिंहासन पर शोभायमान है। (उनके द्वारा पहने हुए) आभूषणों और वस्त्रों की उपमा जिससे भी कहें, वह थोड़ी ही है—अर्थात् वे अनुपम हैं। मंगल०।४। श्री अर्थात् सीता और राम मानो विद्युत् और मेघ

श्रीघनश्माम दामनी जाणे, रविबिंब पर राजे,
कोटि काम वारे छबी उपर, रूप जोई रति लाजे। मं० ५।
मणिमय मुगट कुंडळ मकराकृत, चलके चपल नवीन,
ज्यम घनघटा उपर रवि उदे थयो, सुधा सरोवर मीन। मं० ६।
केसरी तिलक कपोल असित कच, नासिका चिबुक सुदेश,
कृपा रंग अयन नयन युग, वंक भ्रकुटी धनुवेश। मं० ७।
अधर बिंब द्विज पदीक पंक्ति मानुं, विधु रश्मि चळकार,
कंबु कंठ त्रिवली वैजयंती, मुक्ता कनक मणि हार। मं० ८।
विशाळ हृदय स्कंध पुष्ट अति, भुज आजानु सुकुमार,
कडां सांकळां अंगद मुद्रिका, नखमणि चंद्राकार। मं० ९।
उदर उदार त्रिरेख रोमावळी, कटी किंकणी रमणीय,
नाभि गंभीर शुचि कुंडिका रसकी, जानुज्जंघा कमनीय। मं० १०।

हैं, जो रत्न-सिंहासन स्वरूप रवि-बिम्ब पर विराजमान हैं। (राम की) छवि पर कोटि-कोटि कामदेव निछावर हो जाते हैं और सीता के रूप को देखकर रति लज्जित हो रही है। मंगल०।५। (राम ने) रत्नमय मुकुट (पहना) है। (उनके द्वारा) मकराकृत (मत्स्याकार) कुण्डल (धारण किये हुए) हैं। (वे ऐसे चमक रहे हैं कि जान पड़ता है कि) अभिनव बिजली ही चमक रही हो। मानो (घनश्याम राम रूपी) घन-घटा पर (मुकुट रूपी) रवि का उदय हो गया हो और (लावण्य स्वरूप) अमृत के सरोवर में (कुण्डल-स्वरूप) मत्स्य विचरण (कर रहे) हों। मंगल०।६। भाल पर केसरिया तिलक (लगाया हुआ) है। काले (-काले) बाल हैं; नाक और चिबुक (ठुड्ढी) सुदेश अर्थात् सुन्दर है। दोनों विशाल नेत्र करुणा के रंग से रँगे हुए तथा रस से परिपूर्ण हैं। टेढ़ी भ्रुकुटियाँ (भौंहें) धनुषाकृति हैं। मंगल०।७। मैं मानता हूँ—उनके होंठ बिम्बाफल (के समान लाल) हैं; दाँत मानो हीरे की पंक्ति हैं, जिनकी चमकाहट मानो (राम के) मुख-चन्द्रमा की किरण (-सी) है। कण्ठ कम्बु अर्थात् शंख-सा है। मंगल०।८। हृदय अर्थात् वक्षःस्थल विशाल है; कंधे अति पुष्ट हैं, सुकुमार बाहु आजानु अर्थात् घुटनों तक (पहुँचनेवाले, दीर्घ) हैं। (हाथों में) कड़े, जंजीर, अंगद और अँगूठियाँ हैं। (अर्ध-) चन्द्राकार नाखून रत्न जैसे हैं। मंगल०।९। उदर पर उदार (विशाल) तीन रेखाओं-सी रोमावली है। कटि में रमणीय किंकिणी है। नाभि गम्भीर (गहरी) है—मानो पवित्र रस की वह कोई कुण्डिका (छोटा कुण्ड) हो। उनके घुटने तथा जंघाएँ सुन्दर हैं। मंगल०।१०। उनके

पदसरोज पावन नख मणिगण, कोटी तीरथनुं धाम,
शरणागत सुरतरु फळदायक, पावन पूरणकाम । मं० ११ ।
नखशिख शोभा राम जानकी, मनोहर मूर्ति अनुप,
गिरधर मनमंदिरमें सदा बसो, जुगल किशोर स्वरूप । मं० १२ ।

दोहा

रतनसिंहासन रघुपति, राजे जुगदाधार,
सुरपुर नरपुर नागपुर, वरत्यो जयजयकार । १३ ।

* * *

पावन चरण-कमल तथा नख रूपी रत्न-समुदाय (मानो) कोटि (-कोटि) तीर्थों के धाम हैं । वे शरणागत को (अभीष्ट) पावन फल देनेवाले मानो कल्प-वृक्ष हैं, उनकी कामनाओं को पूर्ण करनेवाले हैं । मंगल० । ११ । राम और सीता की (पद-) नख से लेकर शिखा तक की शोभा तथा उनकी मनोहर मूर्तियाँ अनुपम हैं । (कवि कहता है—) मुझ गिरधर कवि के मन रूपी मन्दिर में उन किशोर-अवस्था वाली जोड़ी का स्वरूप सदा बस जाए । मंगल० । १२ ।

जगदाधार रघुपति राम रत्न-सिंहासन पर शोभायमान हो रहे हैं । (इस मंगल आनन्दोत्सव के अवसर पर) सुर-पुर (देव-लोक), नर-पुर (नरलोक) तथा नाग-पुर (नाग-लोक अर्थात् पाताल) में जय-जयकार हो हो रहा । १३ ।

* * *

अध्याय—१२ (आनन्दोत्सव के पश्चात् राम द्वारा सुग्रीव आदि को विदा करना)

राग सोरठ

ज्यारे राज बेठा रघुपति, त्यारे वरत्यो जयजयकार रे,
वळी जाचकने बहु दान आप्यां, तेनो कहेतां न आवे पार रे । १ ।

अध्याय—१२ (आनन्दोत्सव के पश्चात् राम द्वारा सुग्रीव आदि को विदा करना)

जब रघुपति राम राजगद्दी पर बैठ गये, तो जय-जयकार हो गया । फिर (अनन्तर) राम, आदि ने याचकों को बहुत दान दिया; उसे कहते हुए पार नहीं पहुँच पाते । १ । समस्त राजाओं ने उपहार समर्पित किये । तदनन्तर नगर के अधिकारी, महाजन, धनवान लोग निर्मल मन

सहु भूप भेट करी रह्या, पछे आव्यां नगरना जन रे,
अधिकारी वहेवारिया, श्रीमंत निरमळ मन रे। २ ।
मूकी भेटो नाना भातनी, कर्यो रघुपतिने जुहार रे,
पछे प्रसन्न थई प्रभुए बेसाड्या, निज सभा मोझार रे। ३ ।
लक्ष्मणजी ने भरतजी, वळी शत्रुघन ने सुमंत रे,
ए चारेने पासे बोलावीने, बेसाड्या भगवंत रे। ४ ।
सहु सभाजन जोतां तदा, करी कृपा श्रीभगवान रे,
अधिकार आप्यो ते समे, तेने कर्या मुख्य प्रधान रे। ५ ।
तमो चारना मत प्रमाणे हुं, चलावीश आ राज रे,
माटे तमो ए संभाळजो, एम बोल्या श्रीमहाराज रे। ६ ।
एवां वचन सुणी सहु सभा हरखी, बोलता धन्य धन्य रे,
रामना गुण आचरण लीला, कहेता अन्योअन्य रे। ७ ।
ते समे बहु वाजित्र वाजे, मंगळ उछव थाय रे,
तरिया तोरण बांध्या घेर घेर, मानुनी मंगळ गाय रे। ८ ।
ते समे आप्यां दान अति घणां, जाचकने श्रीराम रे,
ते भूपति सरखा थया, मन सकळ पूरण काम रे। ९ ।

से आ गये। २। उन्होंने नाना प्रकार के उपहार दे दिये और रघुपति राम को जोहार (प्रणाम) किया। तत्पश्चात् प्रसन्न होकर प्रभु राम ने उन्हें अपनी सभा में बैठा दिया। ३। भगवान राम ने लक्ष्मण और भरत, उनके अतिरिक्त शत्रुघ्न और सुमन्त इन चारों को अपने पास बुलाकर बैठा लिया। ४। समस्त सभाजनों के देखते (-उनके सामने) श्रीभगवान ने उन पर कृपा करके उन्हें अधिकार प्रदान किये और उस समय मुख्य मन्त्री (नियुक्त) किया। ५। 'तुम चारों जनों के मन के अनुसार मैं यह राज्य संचालित करूँगा। इसलिए तुम यह सम्हाल लेना' इस प्रकार महाराज श्रीराम बोले। ६। ऐसी बातें सुनकर समस्त सभा आनन्दित हो गयी और सभाजन बोले— 'धन्य धन्य।' फिर वे राम के गुण तथा आचरण-लीला एक-दूसरे से कहने लगे। ७। उस समय बहुत वाद्य बज रहे थे; मंगल उत्सव हो रहा था; घर-घर उन्होंने पल्लवों के तोरण बाँध लिए थे और नारियाँ मंगल (-गीत) गा रही थीं। ८। उस समय श्रीराम ने याचकों को बहुत-बहुत दान दिये, तो वे राजाओं-से हो गये। उनके मन की समस्त कामनाएँ पूर्ण हो गयीं। ९।

वळी माताए आप्यां घणां, रथ अश्व गौ भू दान रे,
मणि कनक अंबर मुक्ताफळ, थया द्विज कुबेर समान रे। १०।
खट दश दिवस लगी दान अपायां, अधिक दिन दिन सार रे,
एम सोळ दिवस सोहलो वरत्यो, अवधपुर मोझार रे। ११।
भावतां भोजन सरवेने, नृप कपि सहित पुरजन रे,
याचक मुनि सुर ब्रह्मा शिव, संतोष पाम्या मन रे। १२।
पछी जथाजोगे सरवेने, शिरपाव आप्या राम रे,
ते आज्ञा पामी स्तुति करीने, गया निज निज धाम रे। १३।
आदरे वळाव्या भूपने, ते गया निजपुर मांहे रे,
सुग्रीव विभीषण आद कपि, रघुपतिए राख्या त्यांहे रे। १४।
एक पंक्तिए सहु करे भोजन, नवीन विविध प्रकार रे,
सरवने पीरसे जानकी जे, जगतजनुनी सार रे। १५।
आनंदमां दिन जाय सहुना, सेवंता अविनाश रे,
जातां न जाणे दिवस निशा, एम वीती गया खट मास रे। १६।
ते सरव मनमां जाणे एम, सदा रहिये अहीं सुखभेर रे,
रखे राम आपणने कहे, जे जाओ तमारे घेर रे। १७।

इसके अतिरिक्त माताओं ने बहुत रथ, घोड़े, गायें, भूमि, रत्न, सोना, वस्त्र, मोती दान में दिये, तो ब्राह्मण कुबेर सरीखे (धनवान) हो गये। १०। उन्होंने प्रति दिन अधिकाधिक मात्रा में सोलह दिनों तक दान दिया। इस प्रकार अयोध्या में सोलह दिन आनन्दोत्सव सम्पन्न हो गया। ११। (देश-देश के) राजाओं और कपियों सहित नगर-जनों को, सबको मनभाया भोजन मिल गया। याचक, मुनि, देव, ब्रह्मा, शिव मन में सन्तोष को प्राप्त हो गये। १२। अनन्तर राम ने उन सबको यथायोग्य सिरोपाव (सम्मानसूचक पहनावा, खिलअद) दिया और वे आज्ञा को प्राप्त होकर (आज्ञा मिलने पर राम की) स्तुति करके अपने-अपने घर (चले) गये। १३। राम ने सब राजाओं को आदर-पूर्वक विदा किया, तो वे अपने-अपने नगर चले गये। (परन्तु) विभीषण तथा सुग्रीव आदि कपियों को राम ने वहीं रख लिया। १४। सब एक ही पंक्ति में बैठकर नव-नवीन तथा विविध प्रकार के (भोज्य पदार्थों से युक्त) भोजन किया करते। जगज्जननी सीता सबको भली-भाँति (भोजन) परोसा करती। १५। सब अविनाशी भगवान राम की सेवा किया करते थे। (इस प्रकार) सबके दिन आनन्द में व्यतीत हो रहे थे। दिन और रातें बीतते ध्यान में नहीं आते थे। इस प्रकार छः महीने बीत गये। १६।

एम परस्पर वातो करे, सुग्रीव विभीषण आद्य रे,
ते सर्व भावे रामने, सेवता तजीने प्रमाद रे। १८।
एक समे समग्र सभा भरीने, बेठा श्रीरघुनाथ रे,
त्यारे मधुर वचने बोलिया, प्रभु सुग्रीव विभीषण साथ रे। १९।
अरे कपिपति लंकापति, मुज वचन धरजो मन रे,
मुज अर्थे घर मूक्यां तमो ते, थया छे बहु दन रे। २०।
हावे पधारो सरवेने लेई हे, सखा भक्त सुजाण रे,
तमो परम स्नेही माहरा, मने वहाला छो प्रिय प्राण रे। २१।
एवां वचन सुणी रघुवीरनां, आव्यां नेत्र आंसु नीर रे,
तन रोमांचित गद्‌गद थया, पछी बोल्या राखी धीर रे। २२।
हे नाथ! नहि जईए अमो, तम सेवा तजीने आज रे,
नथी जाणतां अमो स्वप्नमां, संसार घरनां काज रे। २३।
तम वियोगे रहेवाय नहि, शुं करीए जईने त्यांह रे,
दरबार केरुं काम नीचुं, करीशुं रही आंह रे। २४।

वे सब मन में यह मान रहे थे कि यहीं सदा के लिए सुख-पूर्वक रहें। कदाचित् राम हमसे कहेंगे,—तुम अपने-अपने घर जाओ। १७। इस प्रकार सुग्रीव, विभीषण आदि परस्पर बातें किया करते थे। असावधानता को छोड़कर वे राम की सेवा किया करते थे, (अतः) वे सब राम को प्रिय लगते थे। १८। एक समय प्रभु श्रीरघुनाथ राम सबकी सभा आयोजित करके बैठ गये। तब वे मधुर शब्दों में सुग्रीव और विभीषण से बोले। १९। 'हे कपिपति, हे लंका-पति, मेरी बात मन में रख लो। मेरे लिए तुमने घर छोड़ दिया, उसे बहुत दिन हो गये हैं। २०। (अतः) हे मेरे मित्रो, ज्ञानी भक्तो, अब सबको लेकर (अपने-अपने घर) जाओ। तुम मेरे परम सनेही हो, मुझे मेरे अपने प्राणों के बराबर लाड़ले, प्यारे हो।' ।२१। रघुवीर की ऐसी बातें सुनते ही उनकी आँखों में अश्रु-जल (भर) आया; उनके शरीर रोमांचित हो उठे। वे गद्‌गद हो उठे। फिर मन में धीरज धारण करके बोले। २२। 'हे नाथ, आपकी सेवा को छोड़कर हम आज नहीं जा सकते। हम स्वप्न (तक) में संसार तथा घर के काम-काज को नहीं जानते। २३। आपके वियोग में रहा नहीं जाएगा। (अतः) वहाँ जाकर क्या करें? यहाँ रहकर आपकी राजसभा का (छोटा-सा-छोटा) काम (भी) हम करेंगे। २४। आपकी संगति तथा दर्शन से (अधिक बड़ा)

तम समागम दरशन थकी, नथी लाभ बीजो अन्य रे ?
सुख स्वर्ग ने अपवर्ग तेथी, अधिक तम दरशन रे । २५ ।
तम चरण रहीने चरण सेवा, करीशुं सुखभेर रे,
हे नाथ ! हवे कहेशो नहि, अमने जवानुं घेर रे । २६ ।
त्यारे राम कहे तमने हुं राखुं, सदा मारी पास रे,
पण रह्याथी थाये घणो सहु, लोकमां उपहास रे । २७ ।
कहेशे राम अर्थे राज मूकी, पक्ष करी बहु पेर रे,
पण अंते भिखारी थया, नव गया पाछा घेर रे । २८ ।
संसार सर्वे एम कहे माटे, जुओ विचारी वीर रे,
मुज भक्ति करजो सदा त्यां रही, राखजो मन धीर रे । २९ ।
हे प्राणवल्लभ ! नथी तमथी, वेगळो हुं लगार रे,
सदा स्वतंतर वास करी, रह्यो तम हृदय मोझार रे । ३० ।
जेवा भरत लक्ष्मण शत्रुघन, मुज वीर वल्लभ जाण रे,
तेवा विभीषण सुग्रीव तमो मुने, वहाला जीवनप्राण रे । ३१ ।
हुं घणो बळियो अजित दुर्जय, ब्रह्मांडनो अधिपत्य रे,
पण भक्त आधीन छुं, सिद्धांत ए मुज सत्य रे । ३२ ।

कोई दूसरा लाभ नहीं है । स्वर्ग-सुख तथा मोक्ष से (भी) आपके दर्शन (हमारे लिए) अधिक (बड़े) हैं । २५ । हम आपके चरणों के पास रहते हुए आपकी चरण-सेवा सुख-पूर्वक करेंगे । हे नाथ, अब न कहना कि हमें घर जाना है ।' । २६ । तब राम बोले, 'मैं तुम्हें अपने पास सदा (के लिए) रख तो सकता हूँ, परन्तु तुम्हारे (यहाँ) रहने से समस्त लोक (जगत्) में उपहास हो जाएगा । २७ । लोग कहेंगे—राम के लिए इन्होंने राज्य छोड़कर बहुत प्रकार से उनका पक्षपात किया, परन्तु अन्त में ये भिखारी हो गये और (पुनः) अपने घर लौट नहीं जा पाये । २८ । समस्त संसार इस प्रकार कहेगा, इसलिए हे भाइयो, विचार करके देख लो । वहाँ रहते हुए तुम मेरी नित्य प्रति भक्ति करना, मन में धीरज रखना । २९ । हे प्राण-वल्लभो, मैं तुमसे थोड़ा-सा भी भिन्न नहीं हूँ । सदा स्वतन्त्र रहते हुए भी मैं तुम्हारे हृदय में रह रहा हूँ । ३० । समझ लो कि मेरे भाई भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न जैसे मुझे प्रिय हैं, वैसे ही हे विभीषण और सुग्रीव, तुम मेरे लिए प्रिय हो, मेरे जीवन-प्राण हो । ३१ । मैं बहुत बलवान हूँ, अजित और दुर्जय हूँ, ब्रह्माण्ड का अधिपति हूँ । फिर भी मैं भक्तों के अधीन होता हूँ । सचमुच यह मेरा सिद्धान्त है ।' । ३२ । जगदाधार राम इस प्रकार विभीषण और

एम विभीषण सुग्रीवशुं, बोलिया जुगदाधार रे,
घणी वार शिक्षा ज्ञान उपदेश करीने, समजाविया तेणी वार रे। ३३।
पछी नाना विधनां वस्त्र भूषण, पहेराव्यां निरवाण रे,
बे छत्र बे सिंहासन आप्यां, कनकमणिनां जाण रे। ३४।
एम सर्व कपिने प्रभुए आप्यां, पट आभूषण सार रे,
एक अंजनीसुत विना सहुने, पहेराव्यां निरधार रे। ३५।
त्यारे सर्वे मनमां विचार करे छे, सहुने राम अनुकूळ रे,
पण हनुमंत सामुं केम नथी जोता ? नथी आपता पटकुळ रे। ३६।
उपकार कर्यो एणे मेरु जेवडो, कहेतां न आवे पार रे,
कोई थकी नव थाय एवुं, कर्युं काम पवनकुमार रे। ३७।
एवी आशंका सौना मन केरी, जाणी पोते रघुवीर रे,
त्यारे हनुमंतने पासे बेसाडीने, बोल्या श्रीरणधीर रे। ३८।

वलण (तर्ज बदलकर)

रणधीर कहे मारुति तुं, अनन्य भक्त महाभाग रे,
हुं सदा रह्यो तुज रुदेमां, पण मुज पासे कंई माग रे। ३९।

* * *

सुग्रीव से बोले। उसी समय उन्होंने उन्हें बहुत बार ज्ञानोपदेश देते हुए समझा दिया। ३३। अनन्तर उन्होंने उन्हें अन्त में नाना प्रकार के वस्त्र और आभूषण पहना दिये। समझिए कि उन्होंने उन्हें दो छत्र और स्वर्ण-रत्न के दो सिंहासन प्रदान किये। ३४। (तदनन्तर) उसी प्रकार प्रभु राम ने सब कपियों को सुन्दर वस्त्र और आभूषण दे दिये—एक हनुमान के बिना (हनुमान को छोड़कर) सबको निश्चयपूर्वक (वस्त्राभूषण) पहना दिये। ३५। तब सबने मन में विचार किया कि राम सबके अनुकूल हैं, परन्तु हनुमान की ओर क्यों नहीं देख रहे हैं ? उसे वस्त्र क्यों नहीं दे रहे हैं ?। ३६। उसने उनका मेरु-जैसा उपकार किया है, कहते हुए उसका पार नहीं आता। पवनकुमार ने जो काम किया है, वैसा किसी के द्वारा नहीं हो पाएगा। ३७। सबके मन की ऐसी आशंका स्वयं रणधीर रघुवीर श्रीराम ने जान ली, तब हनुमान को अपने पास बैठाकर वे बोले—। ३८।

रणधीर राम ने कहा, 'हे हनुमान, तुम महाभाग्यवान अनन्य भक्त हो। मैं सदा तुम्हारे हृदय में रहता हूँ। फिर भी मुझसे कुछ माँग लो।' । ३९।

* * *

अध्याय—१३ (सीता द्वारा हनुमान को रत्नमाला प्रदान करना,
हनुमान के हृदय में राम का निवास दिखायी देना)

राग विलावल

कहे रघुपति सुण मारुततन,
तुं मने वहालो छे तन मन धन।
माटे माग्य माग्य मनवाञ्छित आज,
पूरुं तारा सकळ मनोरथ काज। १।
त्यारे कर जोडी बोल्या हनुमंत,
सुणीए करुणासिंधु भगवंत।
जो प्रसन्न थया मुने त्रिभुवन धणी,
तो आपो भक्ति तम चरण ज तणी। २।
अन्य ईच्छा कशी मारे नथी,
सत्य वचन कहुं छुं सरवथी।
एवुं सुणी प्रसन्न थया रघुनाथ,
हनुमंतने शिर मूक्यो हाथ। ३।
त्यारे जनकसुताए तेणी वार,
आप्यां सहुने वस्त्र अलंकार।
सुग्रीव विभीषण आदे जेह,
कपि सहुने पहेराव्यां तेह। ४।

अध्याय—१३ (सीता द्वारा हनुमान को रत्नमाला प्रदान करना,
हनुमान के हृदय में राम का निवास दिखायी देना)

रघुपति राम बोले, 'हे पवनकुमार, सुनो। तन-मन-धन से तुम मेरे प्रिय हो। इसलिए, आज तुम कुछ मनोवांछित मांग लो। मैं तुम्हारे समस्त मनोरथ, कार्य पूर्ण करूँगा। १।' तब हाथ जोड़ते हुए हनुमान बोला, 'हे करुणा-सिन्धु भगवान, सुनिए। त्रिभुवन के स्वामी (आप) यदि मुझपर प्रसन्न हो गये हों, तो आप मुझे अपने चरणों ही की भक्ति प्रदान कीजिए। २। मुझे कोई अन्य इच्छा नहीं है। —मैं सब प्रकार से यह बात सत्य कह रहा हूँ।' ऐसा सुनकर रघुनाथ राम प्रसन्न हो गये और उन्होंने हनुमान के सिर पर हाथ रखा। ३। तब उस समय जनक-सुता ने सबको वस्त्र और आभूपण प्रदान किए— सुग्रीव, विभीषण आदि जो भी (वहाँ) थे, उन्हें तथा समस्त कपियों को पहनवा दिये। ४।

एक हती अमूल्य मणिनी माळ,
ते हनुमंतने घाली तत्काळ।
सकळ पृथ्वीनी समृद्धि अमूल्य,
ना'वे ते माळा सम तुल्य। ५।
ते पोते कंठे घाली हनुमंत;
जई सभामांथी बेठो एकांत।
दंते करीने फोडता मणि त्यांहे,
जुए श्रीराम छे ए मणिमांहे। ६।
एम सकळ मणि फोड्या ज्यारे,
हसीने सुग्रीव बोल्यो तेणी वारे।
अरे हनुमंत, जणव्यो कपिनो स्वभाव,
नथी तमने सारासारनो भाव। ७।
आवो दिव्य हार क्यम नाख्यो त्रोडी?
अमूल्य मणि सहु नाख्यो फोडी?
कर्युं घणुं अविवेकनुं काम,
जुए सभा सकळ सांनिध्य श्रीराम। ८।
कहे हनुमंत, सुणो कपिराज,
में अज्ञाने नथी कर्युं ए काज।

(उसके पास) अनमोल रत्नों की एक माला थी। उसने वह तत्काल हनुमान को पहना दी। समस्त पृथ्वी की अनमोल समृद्धि भी उस माला के समान, अर्थात् उससे तुलनीय नहीं हो सकती। ५। हनुमान ने स्वयं उसे अपने गले में डाल दिया और सभा में से निकलकर एक एकान्त स्थान पर वह बैठ गया। वहाँ वह दाँतों से रत्नों को फोड़ने लगा। वह देख रहा था कि उन रत्नों में श्रीराम हैं (अथवा नहीं)। ६। इस प्रकार, जब उसने समस्त रत्न फोड़ डाले, तो उस समय सुग्रीव बोला— 'अरे हनुमान, तुमने कपि के स्वभाव को (प्रकट रूप में) दिखला दिया— तुम्हें सार-असार का कोई विवेक नहीं है। ७। ऐसा दिव्य हार तुमने कैसे तोड़ डाला? समस्त अमूल्य रत्न (क्यों) फोड़ डाले? तुमने बहुत अविवेक का (अविवेक से) काम कर डाला है।' राम के सन्निध बैठे हुए समस्त सभा-जन यह देख रहे थे। ८। (इसपर) हनुमान ने कहा— 'हे कपिराज, सुनो। मैंने अज्ञान से यह काम नहीं किया। मैंने देखना चाहा कि उनमें अवध-विहारी राम है या नहीं। मैंने मन में ऐसा विचार करके

जोयुं एमां छे श्रीअवधबिहारी,
माटे फोड्या मणि मन एम विचारी । ९ ।
एमां नव दीठा मारा प्राणआधार,
राम विना मिथ्या शो पाषाण गळे भार ?
त्यारे सुग्रीव कहे, तम रुदे हनुमंत,
गुप्त राख्या हशे श्रीभगवंत । १० ।
सुणी एवां वचन मारुति तेणी वार,
नखे निज हृदय चीर्युं निरधार ।
ते समे सर्वे दीठा मांहे राम,
सीता सहित प्रभु पूरणकाम । ११ ।
रत्नसिंहासन जुगलकिशोर,
राजे छबी कोटी मदन चित्तचोर ।
जेवा सभामां बेठा जुगदाधार,
तेवा हनुमंत हृदय मोझार । १२ ।
सकळ सभाए दीठा रघुराय,
रूंए रूंए रामनाम धुनि थाय ।
एवुं जोई ऊठ्या सकळ सभाजन,
गद्गद कंठे द्रवित लोचन । १३ ।

इन रत्नों को फोड़ डाला है । ९ । (परन्तु) मैंने अपने प्राणों के आधार (राम उनमें) नहीं देखे । विना राम के, वे मिथ्या (सारहीन) पाषाण क्या गले का भार नहीं हैं ?' तब सुग्रीव बोला, 'हे हनुमान, तुमने अपने हृदय में श्रीभगवान को गुप्त (छिपाये) रखा होगा ।' १० । उस समय ऐसी बातें सुनकर, हनुमान ने अपने नाखूनों से निर्धार-पूर्वक अपने हृदय को चीर दिया । उस समय सबने (उसके) अन्दर पूर्णकाम प्रभु राम को सीता-सहित देखा । ११ । (उन्होंने देखा कि) रत्न-सिंहासन पर युगल-किशोर (अर्थात् राम और सीता) की कोटि (-कोटि) कामदेवों के चित्त को चुरानेवाली छवि शोभायमान है— जिस समय जगदाधार राम सभा में बैठे हुए हैं, उसी समय हनुमान के हृदय में (भी विराजमान) हैं । १२ । समस्त सभा ने (हनुमान के हृदय में) रघुराज को देखा; उसके रोएँ-रोएँ से राम-नाम की ध्वनि निकल रही थी । ऐसा देखते ही समस्त सभा-जन उठ गये— वे गद्गद हो उठे, उनके नेत्र (आँसुओं से) द्रवित अर्थात् गीले हो गये । १३ । हनुमान की महिमा को देखकर वे उसकी परिक्रमा करके

जोई हनुमंत तणो महिमाय,
करी प्रदक्षिणा लागे पाय ।
ते समे ऊठ्या पोते रघुवीर,
भीड्या हृदेमां मारुति रणधीर । १४ ।
हतुं तेवुं हृदय तेणी वार,
पासे लेई बेठा पछी प्राणाधार ।
एवो अद्भुत महिमा अंजनीसुत केरो,
जोई सहुने आव्यो विश्वास घणेरो । १५ ।
सहु सभा सुणतां बोल्या रघुराज,
सुणो विभीषण सुग्रीवादिक आज ।
हुं रहुं छुं सदा भक्तना हृदयमांहे,
तेने मूकी नथी जातो क्षण क्यांहे । १६ ।
तेम मुजमां सदा भक्तनो वास,
हुं तेने वश छुं, मारे वश दास ।
ते मुने जाणे छे तन मन धन्य,
मुने प्रिय नथी ते विण को अन्य । १७ ।

छंद

नथी अन्य प्रिय मुज भक्त सम, वैकुंठ लक्ष्मी प्रजापति,
मुज देह प्रभुता प्राण आदे, तेथी अधिक भक्त प्रति प्रीति । १८ ।

उसके पाँव लग गये । उस समय रघुवीर स्वयं उठ गये और रणधीर हनुमान को उन्होंने हृदय से लगा लिया । १४ । उस समय (हनुमान का) हृदय वैसा ही (चीरा हुआ) था । अनन्तर प्राणाधार राम उसे अपने पास लेकर बैठ गये । अंजनी-कुमार की ऐसी अद्भुत महिमा देखकर सबको बड़ी श्रद्धा हो गयी । १५ । समस्त सभा के सुनते रहते, रघुराज बोले— ' हे विभीषण, सुग्रीव आदि (प्रिय जनो), आज यह सुन लो— ' मैं सदा भक्तों के हृदय में निवास करता हूँ, उन्हें छोड़कर क्षण-भर भी मैं कहीं नहीं जाता । १६ । उसी प्रकार मुझ में सदा भक्तों का निवास रहता है । मैं उनके वश रहता हूँ— मेरे वश मेरे दास (सेवक-भक्त) होते हैं । वे मुझे अपना तन-मन-धन समझते है । उनके अतिरिक्त मुझे कोई दूसरा प्रिय नहीं है । १७ ।

अपने भक्त के समान मुझे वैकुण्ठ, लक्ष्मी, प्रजापति ब्रह्मा भी प्रिय नहीं है । मुझे अपनी देह, प्रभुता, प्राण आदि से भी भक्तों के प्रति अधिक प्रीति होती है । १८ ।

ज्यां वेचे त्यांहां वेचाउं निशदिन, भक्त अधीन हुं रहुं,
मुज थकी मारा भक्त केरी, अधिकता तमने कहुं। १९।
हुं असुर मारुं सुर उगारुं, सम विषमता मन ग्रही,
नीच ऊंच कर्मनो फळप्रदाता, जीवने भुक्तावुं सही। २०।
ब्रह्मांड कोटीमांह्य मारी वृत्ति, सघळे विस्तरी,
वळी ज्यांहां जेवो त्यांहां तेवो, देखाडुं लीला करी। २१।
मुज भक्तने सम विषम नहि, जेने शत्रु मित्र समान छे,
अवगुण कोना नव जुए, जेने एक मारुं ध्यान छे। २२।
मन, क्रम, वचन, काया थकी, जेणे वृत्ति मने अर्पण करी,
वळी कीटथी ब्रह्मा लगी जाणे, सकळ एकरूपे हरि। २३।
अनेक गुण माया तणा, तेमां लुब्ध न थाये कदा,
पोते निजरूपे रहे स्वतंतर, सेवे मुजने सर्वदा। २४।
ते माटे मुजथी अधिक मम जन, स्पृहा नहि जेने मोक्षवी,
प्रत्यक्ष देखे सर्वमां मुने, तजे वात परोक्षनी। २५।
माटे घणी ममता मुने तेनी, अहरनिश रक्षा करुं,
एवा भक्तने वश दास गिरिधर, थई सदा पूंठळ फरुं। २६।

(मेरे भक्त) जहाँ मुझे बेचते हैं, वहाँ मैं रात-दिन बिक जाता हूँ। (इस प्रकार) मैं भक्तों के अधीन रहता हूँ। मुझसे भी मेरे भक्त की (कैसी) बड़ाई है, यह मैं तुमसे अब कहता हूँ। १९। मैं मन में समता और विषमता ग्रहण करके असुरों को मार डालता हूँ और देवों की रक्षा करता हूँ। मैं ऊँच-नीच कर्म का (भले-बुरे कर्म का) फलदाता हूँ और जीव को सही मुक्ति प्रदान करता हूँ। २०। कोटि-कोटि ब्रह्माण्डों में मेरी वृत्ति को सबने फैला दिया है। इसके अतिरिक्त जहाँ जिस समय होता हूँ, वहाँ वैसी लीला करके दिखा देता हूँ। २१। जिसे शत्रु और मित्र समान (प्रतीत) होते हैं, ऐसे मेरे भक्त को कोई सम या विषम नहीं (प्रतीत) होता। जिसे केवल एकमात्र मेरा ही ध्यान होता है, ऐसा मेरा भक्त किसी के भी अवगुन नहीं देखता। २२। जिसने मन, वचन और शरीर से अपनी वृत्ति मुझे समर्पित की है, इसके अतिरिक्त कीट से लेकर ब्रह्मा तक जो एकरूप से सबको 'हरि' ही जानता है; माया के अनेक गुण होते हैं, उनमें जो कदापि लुब्ध नहीं होता, जो स्वयं निज-रूप में स्वतन्त्र होता है, परन्तु मुझे सब प्रकार से भजता है, इसलिए जिसे मोक्ष की भी इच्छा नहीं होती, ऐसा मेरा भक्त मुझसे भी अधिक (बड़ा) होता है। वह प्रत्यक्ष सबमें मुझे देखता है और परोक्ष की बात छोड़ देता है। २३-२५।

दोहा

मुने सरव भावे भजे, ज्यां त्यां मुजने जोय,
सुणो सुग्रीव एवा भक्तथी, बीजुं वहालुं नहि कोय । २७ ।
एवां श्रीरघुपतिनां वचन सुणी, संतोष्या सहु जन,
महिमा जोई हनुमंतनो, विस्मे पाम्या मन । २८ ।
पछे विभीषण सुग्रीवने, करी आज्ञा श्रीरघुराय,
ते तत्पर थईने ऊठिया, नम्या रामने पाय । २९ ।

* * *

इसलिए मुझे उसके सम्बन्ध में बड़ी ममता होती है, मैं उसकी दिन-रात रक्षा किया करता हूँ ।' गिरधरदास कवि कहते हैं— 'इस प्रकार मैं भक्तों के वश में रहकर सदा उसके पीछे-पीछे घूमता रहता हूँ । २६ ।

(ऐसा मेरा भक्त) मुझे सर्वभाव से भजता है, जहाँ-तहाँ मुझे ही देखा करता है । हे सुग्रीव, सुनो, ऐसे भक्त से मुझे दूसरा कोई भी प्यारा नहीं है ।' २७ । रघुपति की ऐसी बातें सुनकर सब लोग सन्तुष्ट हो गये और हनुमान की महिमा को देखते हुए मन में विस्मय को प्राप्त हो गये । २८ । अनन्तर श्रीरघुराज ने विभीषण और सुग्रीव को आज्ञा दी, तो वे तैयार होकर (प्रस्थान करने के लिए) उठ गये और उन्होंने राम के चरणों को नमस्कार किया । २९ ।

* * *

अध्याय—१४ (सुग्रीव आदि द्वारा सबसे विदा होकर अपने-अपने घर जाना)

राग सामेरी

अनीहां रे ऊठ्या सुग्रीव विभीषण राय,
कौशल्या सुमित्राने लाग्या पाय ।
अनीहां रे वस्त्र आभूषण आप्यां ते दिश,
सरव माताए दीधी आशिष । १ ।

अध्याय—१४ (सुग्रीव आदि द्वारा सबसे विदा होकर अपने-अपने घर जाना)

अब यहाँ राजा सुग्रीव और विभीषण उठ गये और वे कौसल्या और सुमित्रा के पाँव लगे । अब यहाँ उन सब माताओं ने उन्हें उस स्थान पर वस्त्र और आभूषण प्रदान किये और आशीर्वाद दिया । १ ।

ढाळ

आशिष दीधी माताए, हजो कुशळ तमने सर्वदा,
दिन दिन अधिक सुख पामजो, दुःख क्लेश नहि होये सदा। २।
भाई तमो अमारा रामने, उपकार कीधो अति घणो,
तम साहेथी जानकी पाम्यां, दशवदन रणमां हण्यो। ३।
एवुं सुणी कर्यो साष्टांग रविसुते, वळी विश्रवातने,
एम प्रणमी सहु मातने पछी, आव्या श्रीरघुवर कने। ४।
साष्टांग नमिया रामचरणे, नेत्रे आंसुधार,
गद्‌गद्‌ गिराए बोलिया, हे प्रभु प्राणआधार। ५।
दया राखजो अमो दीन उपर, दास जाणी चरणना,
विसारशो नहि नाथ अमने, मानी लेजो शरणना। ६।
प्रभु मात पिता भ्रात अमारा, सरवस धन वल्लभ तमो,
तमो विना प्रियकर जगतमां, नथी जाणता बीजुं अमो। ७।
माटे कृपानाथ, संभाळ लेजो, बाहे ग्रह्यानी लाज,
कोई दिन संभारी कहावजो, अम सेवक सरखुं काज। ८।
सुग्रीव विभीषणनां वचन एवां, सुण्यां श्रीरघुनाथ,
हेते करी आलिंगन दीधुं, मस्तक मूक्यो हाथ। ९।

माताओं ने उन्हें आशीर्वाद दिया— 'तुम्हारी सदा कुशल हो। दिन-प्रति-दिन तुम अधिकाधिक सुख को प्राप्त हो जाना और तुम्हें दुःख और क्लेश कदापि न हो जाए। २। हे भाइयो, तुमने हमारे राम का बहुत बड़ा उपकार किया है। तुम्हारी सहायता से उसने जानकी को पुनः प्राप्त किया और युद्ध में रावण को मार डाला'। ३। ऐसा सुनकर रवि-सुत सुग्रीव ने तथा उसके अतिरिक्त विश्रवा-सुत विभीषण ने उन्हें साष्टांग नमस्कार किया। इस प्रकार समस्त माताओं को प्रणाम करने के पश्चात् वे रघुवीर राम के पास आ गये। ४। उन्होंने राम के चरणों को साष्टांग नमस्कार किया। उनकी आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी। सद्गदित स्वर में बोले, 'हे प्राणों के आधार प्रभु, हमें अपने चरणों के दास समझकर हम दीनों पर दया रखना। हे नाथ, अपनी शरण में आये समझकर हमें भूल न जाना। ५-६। हे प्रभु, आप हमारे माता-पिता हैं, भ्राता हैं, सर्वस्व हैं, धन हैं, (प्राणों के) वल्लभ हैं। हम किसी दूसरे को इस जगत् में अपना प्रियकर नहीं समझते। ७। इसलिए हे कृपालु नाथ, हमारी बाँह पकड़कर हमारी लज्जा सम्हाल लेना। किसी दिन हमें स्मरण करते हुए हम सेवकों के योग्य कोई काम कहना।' ८। श्रीरघुनाथ

सर्वने भेट्या भावशुं, पछे बोल्या स्नेहवचन,
तमो सदा भक्ति करजो मारी, अरपी मुजमां मन । १० ।
हुं नथी तमथी वेगळो, सत्य मानजो निरधार,
रह्यो वास करी तम हृदयमां, मने वहाला भक्त अपार । ११ ।
माटे सुखे जाओ सखा तमो, चिंता कशी करशो नहि,
कंई आवशे प्रस्तुत त्यारे, तेडावीश तमने अहीं । १२ ।
एवुं कही सहु सभा संगे, ऊठिया रघुनाथ,
बंधु सहित चाल्या वळावा, सरव कपिनो साथ । १३ ।
पुर बारणे आव्या सहु, ऊभा रह्या ते ठार,
पछी नम्या विभीषण रामने, कर जोडीने तेणी वार । १४ ।
सुग्रीव अंगद नील नळ, शरभ ने जांबुवंत,
मयंद गवय गवाक्ष आदे, कपि सकळ बळवंत । १५ ।
सरवे प्रभुपद परणम्या, भरतने भेट्या त्यांहे,
लक्ष्मण शत्रुघन मारुतिने, मळ्या मांहेमांहे । १६ ।
सहु कपि मळ्या हनुमंतने, वळी वखाण्या बहु वार,
सुग्रीव बोल्या थई गद्गद, धन्य धन्य पवनकुमार । १७ ।

राम ने सुग्रीव और विभीषण की ऐसी बातें सुनीं और प्रेमपूर्वक उनका आलिंगन किया तथा उनके मस्तक पर हाथ रखा । ९ । उन्होंने सबको प्रेम से गले लगाया और तदनन्तर वे स्नेह-युक्त वचन बोले, 'अपना मन मुझपर समर्पित करते हुए तुम सदा मेरी भक्ति करना । १० । यह निश्चय ही सत्य समझना कि मैं तुमसे अलग नहीं हूँ । मैं तुम्हारे हृदय में निवास करता हूँ । मुझे भक्त असीम रूप से प्रिय लगते हैं । ११ । इसलिए हे सखाओ, तुम सुख के साथ चले जाओ, मन में अल्प-सी भी चिन्ता न करना । कहीं कोई (बात) प्रस्तुत हो आए, तब मैं तुम्हें यहाँ बुलवा लूँगा ।' १२ । ऐसा कहकर रघुनाथ राम समस्त सभा के साथ उठ गये और बन्धुओं सहित समस्त कपियों के साथ उन्हें विदा करने के लिए चले । १३ । वे सब नगर के द्वार पर आ गये । उस स्थान पर वे खड़े रह गये (रुक गये) । फिर उस समय विभीषण ने हाथ जोड़कर राम को नमस्कार किया । १४ । (तत्पश्चात्) सुग्रीव, अंगद, नील, नल, शरभ, जाम्बवान, मयन्द, गवय, गवाक्ष आदि समस्त बलवान कपियों ने प्रभु राम के चरणों को प्रणाम किया । उन्होंने वहाँ भरत को गले लगाया और बीच-बीच में वे लक्ष्मण, शत्रुघ्न और हनुमान से प्रेमपूर्वक मिले । १५-१६ । समस्त कपि हनुमान से प्रेमपूर्वक मिले, फिर उन्होंने बहुत बार उसका बखान किया (प्रशंसा

तम जेवो नहि आ जगतमां, बडभागी बीजो कोय,
पदपंकज प्रभुना सेवशो नित्य, सांनिध्य रहीने सोय । १८ ।
हे महाबळी, माया राखजो, अमो भूलशो नहि मन;
प्रभुसेवामां स्मरति अमारी, करावजो कोई दन । १९ ।
एम कही प्रभुने चरण नमीने, चाल्या वीरज विचित्र,
निज निज स्थानक सहु गया, कपि गाता रामचरित्र । २० ।
लंका विषे विभीषण गया, साथे तेडी सर्व समाज,
पछी वळावी पुरमां वळ्या, बंधु सहित रघुराज । २१ ।
एक मारुति विना सर्व मंडळ, कर्युं रामे विदाय,
सेवा संभारी सर्वनी, गद्गद थया रघुराय । २२ ।
पछी धर्मराज चलावता, रही अवधपुरमां राम,
बंधु सहित अंजनीसुत, सेवता पूरणकाम । २३ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पूरणकामने सेवता, मनमां आनंद न माय रे,
एम राज करता रघुपति, नित्य हरखे पुरनी प्रजाय रे । २४ ।

की) । (तदनन्तर) गद्गद होकर सुग्रीव बोला, 'हे पवनकुमार, तुम धन्य हो, धन्य हो । १७ । तुम जैसा भाग्यवान इस जगत् में दूसरा कोई नहीं है । तुम नित्य प्रभु के सन्निध रहते हुए उनके पद-कमलों की सेवा करना । १८ । हे महाबली, हमारे प्रति ममत्व रखना, हमें मन में न भूल जाना । प्रभु की सेवा करते हुए किसी दिन हमारा स्मरण करना ।' १९ । ऐसा कहते हुए वे विलक्षण वीर पुरुष राम के चरणों को नमस्कार करके चले गये । वे सब कपि राम के चरित्र का गान करते हुए अपने-अपने स्थान चले गये । २० । अपने साथ अपने सब समाज (साथी-संगियों) को बुला लेकर विभीषण लंका में चला गया । (तत्पश्चात्) उनको विदा करके रघुराज राम अपने बन्धुओं सहित नगर में लौट गये । २१ । रघुनाथ राम ने एक (अकेले) हनुमान को छोड़कर समस्त कपि-मण्डली को विदा किया; सबकी सेवा को स्मरण करते हुए वे गद्गद हो उठे । २२ । अनन्तर अयोध्या में रहते हुए राम धर्म के अनुसार राज करते रहे । हनुमान (लक्ष्मण आदि) बन्धुओं सहित पूर्णकाम राम की सेवा करता था । २३ ।

वह पूर्णकाम (भगवान राम) की सेवा किया करता था । उसके मन में आनन्द नहीं समाता था । इस प्रकार रघुपति राम राज करते थे, (तब) अयोध्यापुरी की प्रजा नित्य आनन्दित रहा करती थी । २४ ।

* * *

अध्याय—१५ (श्रीराम की राज्यव्यवस्था और दिन-चर्या)

राग मारु

हावे अवधपुरीमां राज करे छे, राजीवलोचन राम,
राजनीतिनो धर्मज पाळे, भक्तना पूरणकाम। १।
माता गुरुनी आज्ञा पाळे, कुळनो धर्म आचरता,
गौब्राह्मण सुर अग्नि पूजा, नित्य नियम सहु करता। २।
प्रजा पाळे छे पुत्रनी पेरे, स्नेह धरे सहु साथ,
सहुने सरखो भाव जणावे, सर्वज्ञ श्रीरघुनाथ। ३।
देशमां तस्कर जार दुष्ट नहि, हिंसारहित सहु जन,
वर्णाश्रम निज धर्म ज पाळे, वरते निरमळ मन। ४।
रोग दरिद्र वियोग न पीडे, नहि विरोध ने वेर,
चिंता शोक नहि मन कोने, सहुने लीलालहेर। ५।
देवने दुर्लभ भोग भोगवे, मनवांछित सुखकारी,
नर सहु एकपत्नीव्रत पाळे, पतिव्रता सहु नारी। ६।

अध्याय—१५ (श्रीराम की राज्यव्यवस्था और दिन-चर्या)

भक्तों की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले राजीव-लोचन राम अब अयोध्या में राज्य कर रहे हैं (थे)। वे राजनीति के अनुसार अपने धर्म अर्थात् कर्तव्य का निर्वाह कर रहे थे। १। वे माताओं और गुरु की आज्ञा का पालन करते थे और अपने कुलधर्म के अनुसार आचरण करते थे। वे गौओं, ब्राह्मणों, देवों का तथा अग्नि का पूजन करते थे, अपने नित्य के (स्वाध्याय आदि) नियमों का अनुसरण करते थे। २। सर्वज्ञ राम अपनी प्रजा का पालन अपने पुत्र (अर्थात् सन्तान) का-सा करते थे, सबके प्रति स्नेह-भाव धारण करते और सबके प्रति समान प्रेम दिखाते थे। ३। उस देश में चोर, जार तथा दुष्ट जन नहीं (रह गये) थे। समस्त लोग हिंसा-रहित अर्थात् अहिंसक थे। वे अपने-अपने वर्णाश्रम धर्म ही का पालन करते थे तथा निर्मल मन से व्यवहार करते थे। ४। रोग, दरिद्रता तथा (प्रियजनों का) वियोग किसी को भी पीड़ा नहीं पहुँचाता था, किसी को किसी के प्रति विरोध तथा वैरभाव नहीं था। किसी के मन में कोई चिन्ता और शोक नहीं था। सबको आनन्द और उत्साह अनुभव होता था। ५। वे देवों के लिए भी दुर्लभ अपने मनोवांछित सुखदायी भोगों का उपभोग करते थे। समस्त पुरुष एकपत्नी व्रत का पालन करते थे; समस्त नारियाँ पतिव्रता थीं। ६। वे (प्रजाजन) अपने-अपने माता-

मात पिता गुरु वृद्धने माने, पूजे पित्री इष्टदेव,
मातपिता वहेलुं बाळक न मरे, करे संत द्विज सेव। ७।
एम अवधपुरीनां नर ने नारी, सरवे पुण्यपवित्र,
आनंदमां निश वासर घेरघेर, गाये रामचरित्र। ८।
माग्या मेह वरसे मही उपर, जळ निरमळ अनुकूळ,
तृणसंकुल अन्न पाके अति घणुं, स्वादिष्ट फळ ने फूल। ९।
नदी वापिका कूप सरोवर, सदा भर्युं रहे नीर,
कंज प्रफुल्लित खटपद गुंजे, खग रव करता तीर। १०।
वाटका वन विचित्र सोहागी, लळी रह्यां फळ फूले,
धीर समीर त्रिविधनो चाले, पत्रे पतत्री झूले। ११।
शीतळ छाया सघन वृक्ष छे, सरजु गंगाने तीर,
ठामठाम वृंद तुलसीनां, मठ छाई रह्या मुनि धीर। १२।
स्नान करवा नर नारी केरा, जुदा रच्या छे घाट,
वळी अधिक शोभा छे राजघाटनी, जुदी हय गयनी वाट। १३।

पिता और गुरु तथा वृद्धों का आदर करते थे; वे पितरों तथा इष्टदेवों का पूजन करते थे। माता-पिता के पहले कोई बालक नहीं मरता था। वे लोग सन्तों तथा ब्राह्मणों की सेवा करते थे। ७। इस प्रकार अयोध्या के समस्त स्त्री-पुरुष पुण्यवान तथा पवित्र (आचार-विचार वाले) थे। वे रात-दिन आनन्द-पूर्वक राम के चरित्र का गान किया करते थे। ८। माँग के अनुसार अर्थात् लोग जब चाहते थे, तब, मेघ बरसता था; पानी स्वच्छ तथा (स्वास्थ्य के विचार से) अनुकूल था। भूमि घास से भरी-पूरी थी। उससे अति विपुल अनाज पैदा होता था। स्वादिष्ट फल तथा फूल (पैदा होते थे। ९। नदियों, वापिकाओं, कुओं, सरोवरों में पानी सदा भरा रहता था। उनके तटों पर कुन्ज प्रफुल्लित थे; उनमें भौंरे गुन्जन करते रहते थे, पक्षी मधुर बोलते रहते थे। १०। वाटिकाएँ और वन (उपवन) विचित्र तथा रमणीय थे, वे फलों और फूलों (के बोझ) से लदकर झुके हुए रहते थे। (मन्द, शीतल तथा सुगन्धि-युक्त अर्थात्) तीनों प्रकार की वायु धीमी गति से चलती थी। पक्षी पत्तों पर झूलते थे। ११। सरयू नदी के तट पर सघन वृक्ष थे; उनकी छाया शीतल थी। स्थान-स्थान पर तुलसी के वृन्द (पौधों के समूह, झुरमुट) थे। मठों में धैर्यशील मुनि रहते थे। १२। पुरुषों और स्त्रियों के लिए स्नान करने के हेतु अलग-अलग घाट निर्मित थे। फिर राजघाट की शोभा (सबसे) अधिक थी। घोड़ों और हाथियों के लिए अलग-अलग रास्ते थे। १३। (नदी के) तट पर

रच्यां देवळ अंबिकानां तीरे, शिवालयनो नहि पार,
एम सरजुनी शोभा अति घणी, वहे छे निर्मळ पूरण वार । १४ ।
रत्ननी खाण्यो गिरिमां ऊघडी, ज्यां त्यां लक्ष्मी प्रकाश,
अष्टमां सिद्धि नवे निधि रही करी, अवधपुरीमां वास । १५ ।
वसिष्ठ विश्वामित्र कुंभज ऋषि, भारद्वाज आदे जेह,
अवधपुरीमां वास करीने, रह्या मुनिवर सहु तेह । १६ ।
अगस्त्यना मुखनी कथा सांभळे, नित्यमेव श्रीराम,
गुरुनी आज्ञा प्रमाणे वर्ते, लोक तणा हितकाम । १७ ।
वळी राजद्वारमां चार मंडपनी, रचना करावी त्यांहे,
ज्यां जेवुं कारज त्यां तेवुं, आचरता ते मांहे । १८ ।
एक सभामंडप बीजो मुक्तमंडप, वळी न्यायमंडप एवुं नाम,
विनोदमंडप चोथो कहीए, एम रचना करावी राम । १९ ।
हावे राजमंडपमां राजकाजनो, चाले सहु वहेवार,
प्रधान पटावत बलिया बेसे, ज्यां जेने अधिकार । २० ।

अम्बिका के मन्दिरों का निर्माण किया था; शिव-मन्दिरों की गिनती ही नहीं हो सकती थी। इस प्रकार सरयू नदी की शोभा अति बहुत थी। वह निर्मल पानी से पूर्ण (भरी रहकर) बहती थी। १४। पर्वतों में रत्नों की खानें खुली हुई थीं। जहाँ-तहाँ लक्ष्मी का प्रकाश (फैला रहता) था। अयोध्यापुरी में आठों सिद्धियाँ और नवों निधियां निवास करके रही थीं। १५। जो वसिष्ठ, विश्वामित्र, कुम्भज (अगस्त्य), भारद्वाज ऋषि आदि समस्त श्रेष्ठ ऋषि थे, वे सदा अयोध्यापुरी में निवास करके रह गये। १६। अगस्त्य के मुख से श्रीराम नित्य कथा सुना करते थे और लोगों के हित की कामना करते हुए वे गुरु की आज्ञा के अनुसार व्यवहार करते थे। १७। इसके अतिरिक्त उन्होंने वहाँ राजद्वार के पास चार मण्डपों का निर्माण करवाया था और जहाँ जैसा काम आ पड़ता, वहाँ उसमें वे वैसा आचरण करते थे। १८। उनके ऐसे नाम थे— एक का (नाम) सभा-मण्डप था, दूसरे का मुक्त-मण्डप था, फिर तीसरे का था न्याय-मण्डप। चौथे को विनोद-मण्डप कहना चाहिए— इस प्रकार राम ने रचना करा दी थी। १९। अब राज-मण्डप में राज-काज सम्बन्धी समस्त व्यवहार चलता था। जहाँ जिसका अधिकार था, उसके अनुसार मन्त्री तथा बलशाली पटवारी बैठते थे। २०। फिर न्यान-मण्डप में (बैठकर) राम न्याय करते थे, (इस काम में) कोई पाखण्ड नहीं चलता था। न्याय-अन्याय देखकर वे उन्हें जो देने योग्य हो, वह दण्ड देते थे। २१। अब मुक्त-मण्डप में

वळी न्यायमंडपमां न्याय चूकवे, चाले नहि पाखंड,
न्याय अन्याय जोई दे छे तेने, देवो घटे जे दंड । २१ ।
हवे मुक्तमंडपमां मुक्तमंडळी, बेसे मुनिजन संत,
त्यां आत्मनिरूपण सद्विचार थाये, सारासार अनंत । २२ ।
वळी विनोदमंडपमां मळी बेसे, सखा मित्र ते ठाम,
हास्यविनोदनी वारता करता, तेनी साथे राम । २३ ।
एम चारे मंडपमां पोते पधारे, जेनो समय थाय ज्यारे,
वळी क्यारे असवारी मृगया चढता, उपवन जाता क्यारे । २४ ।
वळी क्यारे खेलावता तुरी नवा लेई, क्यारे बेसे गज रथ,
वळी क्यारे चरण चालीने जाता, शिव पूजवा समरथ । २५ ।
वळी क्यारे मातानी पासे बेसीने, करता घरनी वात,
रामना गुण डहापण वाणी जोई, सुख पामे घणुं मात । २६ ।
रंगमहेलमां जनकसुताशुं, रमता रूडी रीत,
नाना प्रकारना भोग भोगवता, जे अवाप्तकाम अजित । २७ ।
चारे बंधुना रंगमहेल छे जुदा, ते महा सुख पर्व,
पण मातमंदिरमां एक पंक्तिए, भोजन करता सर्व । २८ ।

मुक्त-मण्डली अर्थात् मुनिजन तथा सन्त बैठते थे। वहाँ आत्म (-ज्ञान) निरूपण तथा अनन्त अर्थात् ब्रह्म सम्बन्धी सद्विचार और सारासार विचार (-विनिमय) चलता था। २२। फिर उस स्थान पर विनोद-मण्डप में सखा तथा मित्र इकट्ठा होकर बैठते थे। राम उनके साथ हास्य-विनोद की बातें करते थे। २३। जिसका जैसा समय होता था, उसके अनुसार राम स्वयं चारों मण्डपों में (से प्रत्येक में) पधारते थे। इसके अतिरिक्त, कभी-कभी वे घोड़े पर सवार होकर मृगया के लिए चले जाते, तो कभी उपवन में (भ्रमण के लिए) जाते थे। २४। फिर कभी कोई नया घोड़ा लेकर उसे खेलवाते, तो कभी हाथी पर या रथ में बैठ जाते थे। फिर कभी समर्थ राम शिव का पूजन करने के लिए पैदल चले जाते थे। २५। इसके अतिरिक्त वे कभी माताओं के पास बैठकर घर (-गिरस्थी) सम्बन्धी बातें करते थे। (तब) राम के गुणों को और समझदारी की भाषा को अर्थात् बातों को देखकर माताएँ बड़े सुख को प्राप्त हो जाती थीं। २६। राम रंग-प्रासाद में जनक-सुता से सुन्दर ढंग से रमण किया करते थे। जो राम (स्वयं) काम से अव्याप्त थे और अजित थे, वे उसे नाना प्रकार के भोग भुगवाते थे। २७। चारों बन्धुओं के अलग-अलग रंगमहल थे। वे (स्थान) मानो महान् सुखों के पर्व-स्थान ही थे। परन्तु माताओं के

सुरपति सुखथी कोटिगणुं सुख, भोगवे भोग अपार,
प्रजा सरव एम जाणे रामने, जीवन प्राण आधार। २९।
रामराज सहुने सुखदायक, वर्ते ब्रह्मानंद,
शिव ब्रह्मा सुरपति वखाणे, अवधपुरीनो आनंद। ३०।

वलण (तर्ज बदलकर)

आनंद वखाणे अवधपुरनो, मळी सहु देव समाज रे,
सुणो श्रोताजन कहे दास गिरधर, एम रघुपति करता राज रे। ३१।

* * *

मन्दिर में वे सब एक पंक्ति में (बैठकर) भोजन किया करते थे। २८। वे इन्द्र के सुख से कोटि-कोटि गुना अधिक सुख तथा अपार भोगों का भोग करते थे। समस्त प्रजा इस प्रकार राम को जीवन का आधार समझती थी। २९। राम-राज्य सबके लिए सुखदायी था। उसमें ब्रह्मानन्द रहता था। शिवजी, ब्रह्मा तथा इन्द्र (तक) अवधपुरी के आनन्द की सराहना करते थे। ३०।

समस्त देव-समाज इकट्ठा होकर अवधपुर के आनन्द का बखान करता था। कवि गिरधरदास कहते हैं, हे श्रोताजनो, सुनिए। रघुपति राम इस प्रकार राज कर रहे थे। ३१।

* * *

अध्याय—१६ (श्रीराम द्वारा सन्त-असन्त के लक्षणों का वर्णन करना)

राग बिलावल चोपाई

एक समे गया राम उपवन, साथे छे भरत ने मारुततन,
बेठा बागमां जुगदाधार, चरणसेवा करे पवनकुमार। १।
ते समे भरते पूछ्युं जोडी हाथ, कहो करुणा करी मुजने नाथ,
संत असंतना लक्षण जेह, कहो समजावी जुदां करी तेह। २।

अध्याय—१६ (श्रीराम द्वारा सन्त-असन्त के लक्षणों का वर्णन करना)

एक समय राम एक उपवन गये; उनके साथ भरत और हनुमान थे। जब उस उद्यान में जगदाधार राम बैठ गये, तब पवनकुमार उनकी चरण-सेवा करने लगा। १। उस समय भरत ने हाथ जोड़कर पूछा, 'हे नाथ, कृपा करके कहिए— सन्त और असन्त के जो लक्षण हैं, उन्हें अलग-अलग

सुणी एवां भरतनां विनय वचन; बोल्या प्रभु थईने चित्त प्रसन्न,
अरे भरत मुज भक्त सुजाण, सदा ईच्छे ते सर्वनुं कल्याण । ३ ।
सरव सुखकर सरव सनेही, जाणे मुने एक सरवनो देही,
पर उपकारी ने परम दयाळ, सदा एकरस रहे सरव काळ । ४ ।
परदुःखे दुःखी परसुखे सुखी माने, मन क्रम वचन दुखावे नहि कोने,
सदा संतोषी ने परम उदार, भक्ति मारी एक आत्मविचार । ५ ।
रहित मान मद लोभ अहंकार, विषय प्रपंच न सुपने वेहेवार,
शत्रु मित्र सम हरख ने शोक, मुज विण तृण सम जाणे त्रिलोक । ६ ।
सदा जेनुं मन रहे मुज रंगे रातुं, संकल्परहित भक्तिरस मातुं,
सूक्ष्म स्थूल पवित्र निष्कामी, दुःखे नहि शोक हरखे न सुख पामी । ७ ।
कामीनुं काम विषे ज्यम मन, लोभीने प्रिय लागे ज्यम धन,
एम जाणे मुने म्हारो दास, रहे सदा संसार सुखथी उदास । ८ ।

करके समझाकर कहिए ।' २ । भरत के ऐसे विनय (विनम्र) वचन सुनकर प्रभु राम चित्त में प्रसन्न होते हुए बोले, 'हे (प्रिय) भरत, मेरे भक्त सुजान होते हैं, वे सदा सबके कल्याण की कामना करते हैं । ३ । वे सबके लिए सुखकर होते हैं, सबके प्रति स्नेह करते हैं; मुझे अकेले को सबका देही समझते हैं अर्थात् समझते है कि मैं सबके शरीरों का धारी हूँ । वे परोपकारी और परम दयालु होते हैं । वे सदा सब काल एकरस होते हैं । ४ । वे दूसरे के दुःख से दुखी होते हैं, तो दूसरे के सुख में अपना सुख मानते हैं । वे किसी को मन, कर्म तथा वचन से दुःख नहीं देते । वे सदा सन्तोषी तथा परम उदार होते हैं, उनके लिए मेरी भक्ति ही आत्म (-कल्याण का) विचार होता है । ५ । वे मान, मद, लोभ तथा अहंकार-रहित होते हैं; वे सपने में भी भोग-विलास के विषयों का तथा छल-कपट का व्यवहार नहीं करते । वे शत्रु और मित्र को तथा हर्ष और शोक को समान समझते हैं; वे मेरे विना त्रिभुवन को तृणवत् (घास के तिनके के बराबर) मानते हैं । ६ । जिनका मन सदा मेरे रंग में रँगा रहता है, और विना किसी संकल्प के मेरी भक्ति रूपी रस में डूबा रहता है, वे मेरे भक्त होते हैं । सूक्ष्म तथा स्थूल रूप से पवित्र तथा निष्काम होते हैं । दुःख में वे शोक नहीं करते, तो सुख को प्राप्त होकर वे आनन्दित नहीं होते । ७ । कामी मनुष्य का मन काम में जैसे (रमा) रहता है, लोभी मनुष्य को धन जिस प्रकार प्रिय लगता है, उसी प्रकार मेरा दास मुझे (प्रिय) मानता है । वह संसार के सुखों से सदा उदास रहता है । ८ । वह शम, दम से युक्त होता है; विवेक-विचार, भक्ति, वैराग्य, ज्ञान से युक्त तथा दृढ़-प्रतिज्ञ होता है ।

शमदमवंत विचार विवेक, भक्ति वैराग्य ज्ञान दृढ टेक,
मम चरणे रहे सदा जेनुं मन, मुज विना वात रुचे नहि अन्य। ९ ।
देखे सुणवे मुने चितवे चंत, जाणे मारी रचना ब्रह्मांड अनंत,
सर्व भावे करी मुजने भजे, विषय प्रपंच कपट छळ तजे। १० ।
एवा भगवती विरला जेह, विश्व सहुने पावन करे तेह,
भक्तनो द्रोह जे कोई करे, पछी मम शरणे जो अनुसरे। ११ ।
त्यारे में तेनुं रक्षण नव थाय, पामे सुख जो तेने शरणे जाय,
मम द्रोही महाजन शरणे रहे, ते थाय अभय अपवर्ग ज लहे। १२ ।
महाजननो एवो महिमाय सुणो, भरत कहे श्रीरघुराय,
शुद्ध संत कहीए तेहने, एवा गुण अंतर जेहने। १३ ।
ते जनशुं जेने लाग्या रंग, तेनुं नाम कहीए सतसंग,
एवा पुरुष जो एक क्षण मळे, तो जन्ममरण ते जीवनुं टळे। १४ ।

दोहा

एवा भक्त मुज प्राणप्रिय, हुं ते एक स्वरूप,
तेने वश वरतुं सदा, जदपि त्रिभोवन भूप। १५ ।

जिसका मन सदा मेरे चरणों में लगा रहता है, मेरे सिवा कोई अन्य बात जिसे अच्छी नहीं लगती, वही मेरा भक्त है। ९। वह मुझे ही देखता है, मेरी ही सुनता है, मेरा ही चिन्तन करता है; अनन्त ब्रह्माण्ड को मेरी ही रचना मानता है। वह समस्त भाव से मुझे भजता है। वह (भोग्य) विषयों, प्रपंच तथा छल-कपट को तज देता है। १०। इस प्रकार के मेरे भक्त विरले होते हैं, जो समस्त विश्व को (अपने अस्तित्व से) पावन कर देते हैं। जो कोई मेरे भक्त के प्रति द्रोह करता है और तदनन्तर यदि वह मेरी शरण में आ जाए, तब भी मेरे द्वारा उसकी रक्षा नहीं हो सकती; यदि वह उस (भक्त) की शरण में जाए, तो वह सुख को प्राप्त हो जाता है। मुझसे द्रोह करनेवाला यदि ऐसे महान् जन (भक्त) की शरण में रहता हो, तो वह (भी) भयरहित हो जाता है और मुक्ति ही प्राप्त कर लेता है। ११-१२। महान् भक्तजनों की ऐसी महिमा है।' श्रीरघुराज राम ने फिर कहा, 'हे भरत, सुनो। गुणों की दृष्टि से ऐसा अन्तर जिनमें होता है, उन्हें शुद्ध सन्त कहना चाहिए। ऐसे व्यक्ति के प्रति जिसे प्रेम होता है, उसका नाम सत्संग कहना चाहिए। ऐसे पुरुष किसी को यद्यपि एक क्षण भी मिल जाएँ, तो भी उसका जन्म-मरण टल जाता है— अर्थात् उसे मुक्ति मिलती है। १३-१४।

ए गुण साधुना कह्या, छे पावन सुखद अपार,
सुणो भरत हावे कहुं, चळ लक्षण दुराचार । १६ ।

चोपाई

विषयी कामी लंपट दुरभागी, परनिंदा परत्रिय अनुरागी,
परधन हरवा करे चतुराई, उपर अजवाळुं मन कुटिलाई । १७ ।
परसंपत्य देखी मन दाझे, सतसंग करतां शठ लाजे,
थाय प्रसन्न चित्त परदु:ख देखी, करे द्वेष रूडो गुण पेखी । १८ ।
निंदे निगमागम वेद पुराण, अहंममता मद केरी खाण,
जो कोई पुण्य पंथ अनुसरे, तो तेनी चेष्टा खळ करे । १९ ।
ब्रह्मज्ञानी थई करे बकवाद, साधु भक्त शिर धरे अपवाद,
जन्म करम मारां निरमळ जेह, वाद कहे मिथ्या तेह । २० ।
साधुना सरखो धरे शुभ वेश, दंभ करीने देखाडे परमेश,
भ्रष्ट करे सद्मारग गूढ, कल्पित पंथ चलावे मूढ । २१ ।

ऐसे भक्त मेरे लिए प्राणों के समान प्रिय होते हैं; मैं और वे एक-स्वरूप (एकरूप) हैं। यद्यपि मैं त्रिभुवन का राजा हूं, तो भी मैं सदा उनके वश रहता हूं। १५। मैंने साधुओं के ये गुण कहे। वे अपार पावन तथा सुखद होते हैं। हे भरत, सुन लो, अब मैं दुराचारी खल जन के लक्षण कहता हूँ। १६।

वह (दुराचारी, दुर्जन) विषयी (विषय-सुख में मग्न), कामी, लम्पट अतएव दुर्भागी होता है। वह पर-निन्दा और पर-स्त्री के प्रति अनुराग रखता है। वह दूसरे के धन का अपहरण करने के हेतु चतुराई बरतता है। ऊपर से उज्ज्वल होता है, परन्तु मन में कुटिलता होती है। १७। दूसरे की सम्पत्ति को देखकर उसका मन जलने लगता है। वह शठ सत्संग करने में लज्जा अनुभव करता है। दूसरे के दुःख को देखकर वह चित्त में प्रसन्न हो जाता है और दूसरे के अच्छे गुणों को देखकर उससे वह द्वेष करने लगता है। १८। वह निगमागम, वेद-पुराण की निन्दा करता है। वह अहंकार, ममत्व (अपने प्रति आसक्ति) और मद की खान होता है। यदि कोई पुण्य के मार्ग का अनुसरण करता हो, तो खल उसका उपहास करता है। १९। खल पुरुष ब्रह्मज्ञानी बनकर बकवास करता है, साधु और भक्त के सिर पर अपवाद थोप देता है। हमारे जन्म और कर्मों के निर्मल (पाप-रहित) होने पर भी वह विवाद करके उन्हें मिथ्या बताता है। २०। वह साधु का-सा शुभ वेश धारण करता है और दम्भ

गुरु थई हरण करे परधन, लेउं एवुं सरवश जाणे एम मन,
पछी तेने कपटे कुपंथ देखाडे, पर-नारीने ते छळ करी पाडे । २२ ।
तेना स्वामी साथे करावे वेर, ते भोगवे पोते बहु पेर,
जीवने भमावे जूठा करी उपदेश, ज्यम अत्यंज गृह मग्न थाये मेष । २३ ।
ए प्रकारे वाहे सहु लोकने, वित्त हरे नव हरे शोकने,
उपरथी देखाडे घणो त्याग, अंतरमां विषयशुं अनुराग । २४ ।
वचन वोले ते वज्र समान, करे कुतर्क घणुं अभिमान,
एवा खळनो संग जो एक क्षण करे, निश्चे ते प्राणी नरक संचरे । २५ ।
अपार गुण साधुना गूढ, तोय तेमां अवगुण खोळे मूढ,
निज अवगुणने पूंठ धरे, रंचक गुण ते आगळ करे । २६ ।
लोलुप कामी लंपट घणा, गमे संग खळने ते तणा,
ज्यां सद्विचार निरूपण थाय, त्यां थकी पापी ते ऊठी जाय । २७ ।

करके भगवान-जैसा दिखाता है। वह गूढ़ मार्ग से सन्मार्ग को भ्रष्ट कर देता। वह मूढ़ कल्पित (साधना-) पन्थ को चलाता है। २१। वह गुरु बनकर परधन का अपहरण करता है, उसका मन करता है कि वह (स्वयं) दूसरे का सर्वस्व (हड़प) ले। फिर वह कपट से उसे बुरा मार्ग दिखाता है। वह पर-स्त्री को छल-कपट से अधःपतित कर देता है। २२। उसके पति के साथ उसका वैर कराता है और वह स्वयं उसका बहुत प्रकार से उपभोग कर लेता है। वह झूठा उपदेश देते हुए जीव को (भ्रम में डालकर) भ्रमण कराता है और जिस प्रकार भेड़ (आनन्द में) मग्न होकर अन्त्यज के घर में रहती है, फिर वहाँ वह मारी जाती है, (उसी प्रकार खल मनुष्य को विनाश के स्थान पर पहुँचा देता है)। ऊपर से वह बहुत त्याग दिखाता है, परन्तु अन्दर से उसे सुख-भोग के विषयों से प्रेम होता है। २३-२४। वह वज्र के समान कठोर वचन बोलता है, वह बहुत अभिमान-पूर्वक कुतर्क करता है। इस प्रकार के खल जन की संगति यदि कोई एक क्षण तक भी कर ले, तो वह प्राणी नरक में संचार करेगा। २५। साधु पुरुष में अपार गूढ़ गुण होते हैं, परन्तु वह मूढ़ (खल पुरुष) उनमें अवगुण खोज लेता है। अपने बड़े अवगुण को वह पीछे अर्थात् छिपाये रखता है और अपने अल्प-से गुण को आगे दिखाता देता है। २६। वह (खल जन) लोलुप, कामी तथा बहुत लम्पट होता है। उसको खलों की संगति अच्छी लगती है। जहाँ सद्विचार का निरूपण होता रहता है, वहाँ से वह पापी उठकर चला जाता है। २७। उसे सत्संगति अच्छी नहीं

राणी जानकी राम नृप, भक्तिज्ञानमय रूप,
गिरिधर शांति प्रजा अनुज, विवेक विराग अनुप। ३५।

* * *

सीमा ही था। प्रजा निर्भय तथा राम के अनुकूल थी। उसे नित्य-नित्य मंगलमूलक तथा मनोवांछित फल तथा सुखोपभोग (प्राप्त होते) थे। ३४। कवि गिरधरदास कहते हैं— रानी जानकी और राजा राम मानो भक्ति और ज्ञान के रूप हैं; प्रजा मानो शान्ति-रूप है, तो विवेक, विराग मानो अनुपम लघु भ्राता हैं। ३५।

* * *

अध्याय—१७ (राम द्वारा वर्णाश्रम धर्म का वर्णन करना)

राग धन्याश्री

स्थिर मने सुणजो श्रोता सरवजी, एक समे आव्युं मोटुं परवजी,
अनुज संगाथे श्रीभगवान जी, चाल्या करवा गंगामां स्नान जी। १।

ढाळ

सरजु गंगामां स्नान करवा, चाल्या श्रीरघुनाथ,
गुरु मित्र बंधु प्रधान आदे, अवर द्विजनो साथ। २।
वळी अवधपुरनी प्रजा सरवे, नारी नर वृद्ध बाळ,
ते स्नान करवा सरव चाल्यां, जाणीने पुण्यकाळ। ३।
त्यां स्नान करी बहु दान, विधिवत् आप्यां श्रीरघुवीर,
पछे सभा करी बेठा प्रभु, सरजु गंगाने तीर। ४।

अध्याय—१७ (राम द्वारा वर्णाश्रम धर्म का वर्णन करना)

हे समस्त श्रोताओ, स्थिर मन से अर्थात् एकाग्र मन से सुनिए। एक समय बड़ा पर्व आ गया, तो श्रीभगवान राम अपने छोटे भाइयों के साथ (सरयू) गंगा में स्नान करने चले गये। १।

श्रीरघुनाथ राम सरयू गंगा में स्नान करने के लिए गुरु, मित्र, बन्धु, मन्त्री आदि के तथा अन्य ब्राह्मणों के साथ चले गये। २। इनके अतिरिक्त अयोध्या नगरी की समस्त प्रजा—अर्थात् नारी-नर, वृद्ध-बालक सब उस (पर्व) को पुण्य (-प्रद) काल समझकर स्नान करने के लिए चले गये। ३। प्रभु रघुवीर राम ने वहाँ स्नान करके विधिवत् बहुत दान

त्यां ब्राह्मण क्षत्री वैश्य आदे, शूद्रजन समुदाय,
सन्मुख ते आवी रह्या, ज्यां बेठा श्रीरघुराय। ५ ।
छे सघन छाया वृक्षनी, शीतळ सदा सुख राश,
धीर समीर सुगंध भरियो, चालतो चोपास। ६ ।
एवो समय जोई श्रीराम बोल्या, सुणो सकळ प्रजाय,
मुज वचन श्रवणे धारजो, मन मानजो शिक्षाय। ७ ।
देवने दुरलभ मनुष्यदेह छे, सकळ गुण भंडार,
ते निश्चे करीने मानजो, नहि मळे वारंवार। ८ ।
आ जगतमां एवो जन्म उत्तम, पामीने जे जन,
जेणे आत्मसाधन नव कर्युं, धिक्कार तेनुं तन। ९ ।
वळी एवो देह पण अशाश्वत, क्षणमांहे वणसी जाय,
ए थकी नरक ने स्वर्ग वळी, अपवर्ग पंथ पळाय। १० ।
महा निषिद्ध करमे नरक पामे, काम्य कर्मे स्वर्ग,
निज धर्म निष्कामे भजे मुने, ते पामे अपवर्ग। ११ ।

दिये; अनन्तर वे सरयू गंगा के तट पर सभा आयोजित करके बैठ गये। ४। जहाँ रघुराज राम बैठे हुए थे, वहाँ उनके सामने आते हुए ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र आदि (समस्त वर्णों के) जन-समुदाय ठहर गये। ५। वहाँ वृक्षों की घनी, शीतल तथा सदा सुख की राशि-सी (बनी रहनेवाली) छाया थी। चारों ओर सुगन्ध-भरा मन्द-मन्द पवन चल रहा था। ६। ऐसा समय (अवसर) देखकर श्रीराम बोले, 'हे समस्त प्रजा (-जनो) सुनिए। मेरे वचनों को कानों में धारण करो—अर्थात् मेरे वचनों की ओर कान दो—ध्यान-पूर्वक सुनो और मन में उन्हें शिक्षा (-प्रद) समझ (कर ग्रहण कर) लो। ७। यह मनुष्य-देह देवों (तक) को दुर्लभ है, वह समस्त गुणों का भण्डार है। यह निश्चय-पूर्वक समझ लो कि वह (देह) बार-बार नहीं मिलती। ८। इस जगत में जिस मनुष्य ने ऐसे उत्तम जन्म को प्राप्त होकर (भी) आत्म-साधना नहीं की हो, उसकी देह को धिक्कार है। ९। इसके अतिरिक्त, ऐसी देह भी अशाश्वत है, वह क्षण में बिगड़ते-बिगड़ते नष्ट हो जाती है। (फिर भी) इससे ही (मनुष्य) नरक और स्वर्ग के अतिरिक्त, मुक्ति (को प्राप्त) कर जाता है। १०। (मनुष्य) बड़े-बड़े निषिद्ध कर्मों से नरक को प्राप्त हो जाता है, तो काम्य (अभीष्ट) कर्मों से स्वर्ग को। (फिर) जो अपने-अपने धर्म का निष्काम (वृत्ति से) पालन करते हुए मुझे भजता हो, वह मुक्ति को प्राप्त हो जाता है। ११। इसलिए शरीर सम्बन्धी समस्त गर्व

माटे सर्व गर्व शरीरनो तजी, नीमे राखे तन,
निज धर्ममां वर्ते सदा, मुजमां आरोपी मन । १२ ।
हावे वरणाश्रमना धर्म कहुं, भाई सुणो श्रवणे तेह,
कर्म द्वादश विप्रने, वेदे कह्यां छे जेह । १३ ।
दान लेवुं आपवुं, भणे भणावे विद्याय,
ऋतु करावे पोते करे, ए खट करम समुदाय । १४ ।
शम दम उपरति तितिक्षा, श्रद्धा सात्त्वकी समाधान,
ए विना वळी छे कर्म बीजां, विप्र धर्म विधान । १५ ।
शुचि शान्ति आर्जव मौन्य धृति, दया सत्य निरहंकार,
ब्रह्मने जाणे जथारथ, ए ब्राह्मणनो वहेवार । १६ ।
क्षत्री प्रजानुं करे पालन, पूजे गो द्विज देव,
करे युद्ध शूरपणे सदा, तप यज्ञ करता एव । १७ ।
कृषिकर्म वाणिज्य पशुपालन, वैश्य कर्म विचार,
क्षत्री ब्राह्मणने नामे चाले, पोताने वहेवार । १८ ।
त्रणे वरणनी आज्ञा पाळे, सेवे शूद्र सुजाण,
मुने भजी रही निज धर्ममां, तेनुं थाय परम कल्याण । १९ ।

को छोड़कर (भले) मनुष्य तन को निर्मल (पाप-रहित) रखता है और मुझमें मन को आरोपित (अर्थात् पूर्णतः मग्न) रखते हुए सदा अपने-अपने धर्म का आचरण करता है । १२ । अव मैं वर्णाश्रम धर्म बताता हूँ । हे भाइयो, अपने कानों से उसे सुनो । वेदों ने ब्राह्मण के जो बारह कर्म बताये हैं, वे ये हैं—दान स्वीकार करना और देना, विद्या सीखना और सिखाना, ऋतु अर्थात् यज्ञ करना और कराना—इन छः कर्मो का समुदाय (प्रथम) है । १३-१४ । (दूसरे छः हैं—) शम (शान्ति), दम (इन्द्रिय-निग्रह), उपरति (वैराग्य), तितिक्षा (सहिष्णुता), श्रद्धा तथा सात्त्विक सन्तोष । फिर इन (बारह कर्मो) के अतिरिक्त धर्म-विधान के अनुसार ब्राह्मण के दूसरे (भी) कर्म हैं । १५ । ब्राह्मण के ये व्यवहार-कर्म हैं—शुचि (शुद्धता), शान्ति, आर्जव (ऋजुता, सरलता), मौन, धृति (धैर्य), दया, सत्य, निरहंकारता । वह ब्रह्म को यथार्थ रूप से जानता है । १६ । क्षत्रिय प्रजा का पालन करता है । वह गौओं, ब्राह्मणों और देवों का पूजन करता है । वह सदा तप तथा यज्ञ करते हुए ही शौर्य के साथ युद्ध करता है । १७ । वैश्य के विचार से उसके कर्म हैं—कृषि कर्म, वाणिज्य और पशु-पालन । क्षत्रिय ब्राह्मण के नाम से अपने व्यवहार चलाता है । १८ । सुजान शूद्र (उपर्युक्त) तीनों वर्णो की आज्ञा का पालन

मंत्रोक्त मारग वेदनो, द्विज क्षत्रीने अधिकार,
तंत्रोक्त मारग शास्त्रविधिए, वैश्य वर्ते सार । २० ।
हवे ब्रह्मचारी प्रथम वयमां, पाळे व्रत प्रचंड,
अष्ट प्रकारे त्याग त्रियनो, ऊर्धरेत अखंड । २१ ।
वळी बीजो आश्रम गृहस्थनो, छे धर्म निर्मळ जेह,
करे संग ते निज पत्नीनो, त्रिय अन्यशुं नहि स्नेह । २२ ।
माता पिता गुरुनी करे सेवा, पित्री श्राद्ध प्रमाण,
गो विप्र सुर अग्नि अतिथि, पूजे पाळे जाण । २३ ।
करे उपार्जन निज न्यायथी, अन्न द्रव्य वस्तु पवित्र,
करे पोषण निज परिवारनुं, सुणे मारां विशद चरित्र । २४ ।
विवाहकर्म मृतक क्रिया, आचरे निज कुळ रीत,
एवो धर्म गृहस्थाश्रमनो, पाळजो आणी प्रीत । २५ ।

करता है। अपने-अपने धर्म का पालन करते रहते हुए जो मुझे भजता रहता है, उसका परम कल्याण हो जाता है । १९ । ब्राह्मणों और क्षत्रियों का अधिकार वेदों का मन्त्रोक्त मार्ग है, तो वैश्य शास्त्र-विधि के अनुसार सुन्दर तंत्रोक्त मार्ग का अनुसरण करता है । २० । अब (आयु की) प्रथम अवस्था में ब्रह्मचारी प्रचंड (ब्रह्मचर्य) व्रत का पालन करता है। वह आठों प्रकार से स्त्री का त्याग[1] करता है, वह अखण्ड रूप से ऊर्ध्व-रेता[2] बना रहता है । २१ । फिर दूसरा आश्रम गृहस्थ (-आश्रम) है, जो निर्मल (धर्म माना जाता) है। वह (गृहस्थाश्रमी) अपनी पत्नी का संग (उपभोग) करता है; वह किसी अन्य स्त्री से स्नेह नहीं करता । २२ । वह माता-पिता तथा गुरु की सेवा करता है, (धर्म-) प्रमाण के अनुसार पितरों का श्राद्ध करता है। समझिए कि वह गौओं, ब्राह्मणों, देवों, अग्नि, अतिथियों का पूजन करता है, उनका पालन (अर्थात् रक्षण) करता है । २३ । वह न्याय-पूर्वक अपने लिए अन्न, द्रव्य तथा पवित्र वस्तुओं की प्राप्ति कर लेता है। वह अपने परिवार का पोषण करता है और मेरी विशद चरित्र-लीलाओं का श्रवण करता है । २४ । वह अपने कुल की नीति के अनुसार विवाह-कर्म, मृतकों की क्रिया का आचरण करता है। प्रेम लाते हुए अर्थात् प्रेम से इस गृहस्थाश्रम के धर्म का पालन करता है । २५ । (तदनन्तर) पति-पत्नी अपने पुत्र को घर (-गिरस्ती) सौंपकर

१ स्त्री-संग के आठ अंग—स्मरण, कीर्तन, क्रीड़ा, दर्शन, गुह्य भाषण, चिन्तन, निश्चय और संयोग।

२ ऊर्ध्व-रेता—योग की विशिष्ट क्रियाओं द्वारा साधना करनेवाला वह साधक या सिद्ध जो अपने वीर्य की रक्षा करता है और ब्रह्मरंध्र की ओर ले जाता है। पूर्ण ब्रह्मचारी, जैसे, हनुमान, भीष्म ।

निज पुत्रने घर सोंपी जाये, दंपती वनमांहे,
वानप्रस्थपणुं ते पाळे, शील व्रत रही त्यांहे। २६।
सहु भोगनो त्याग करे, फळ आहार भूमिशयन,
वनकुलवेष्टित अंग राखे, तप करे जई वन। २७।
ह्रावे छेल्लो आश्रम संन्यासी जेने, सरव कर्मनो न्यास,
शिखासूत्रनो परित्याग तेने, जाणजो संन्यास। २८।
ब्रह्मीभूत थई विचरे जगतमां, तजे देह इंद्रि अध्यास,
परमहंसपण तेने कहीए, अखंड दृष्टि प्रकाश। २९।
जोबनपणे स्त्रीने तजी, संन्यास ले जो कोय,
ऋतु जाय त्रियनां अफळ, तेटली बाळहत्या होय। ३०।
स्त्री प्रसन्न थई जो आज्ञा दे, वैराग पामी प्राय,
त्यारे दोष नहि ते पुरुषने, एवो निगम केरो न्याय। ३१।
एम चार वरण ने चार आश्रम, तणां पाळे कर्म,
तेमां रही मुजने भजे त्यारे, सफळ थाये धर्म। ३२।
ते माटे सर्वे प्रजानन, सांभळो मुज वचन,
परनिंदा परधन परत्रिया, स्वपने न धरशो मन। ३३।

वन में जाते हैं और वहाँ शील व्रत का निर्वाह करते हुए रहकर वानप्रस्थाश्रम का आचरण करते हैं। २६। वे समस्त भोगों का परित्याग करके फलाहार करते हैं, भूमि पर सो जाते हैं। वन में जाकर वे शरीर को वल्कलों से वेष्टित अर्थात् वल्कल पहनकर तप करते हैं। २७। अब अन्तिम आश्रम संन्यासी का अर्थात् संन्यासाश्रम है, जिसमें समस्त कर्मों का त्याग करना होता है। वे शिखा और सूत्र का त्याग करते हैं। उसे संन्यास (-आश्रम) समझ लो। २८। वे ब्रह्मी-भूत होकर जगत में विचरण करते हैं; देह और इन्द्रियों के मिथ्या ज्ञान और चिन्तन को तज देते हैं; उस (अवस्था) को परमहंसत्व कहना चाहिए; उनकी दृष्टि निरन्तर (ब्रह्मज्ञान रूपी) प्रकाश पर होती है। २९। युवावस्था में स्त्री का त्याग करके यदि कोई संन्यास ग्रहण कर ले, तो उससे स्त्री का ऋतु-काल फल-हीन हो जाता है; उतनी ही बाल-हत्या हो जाती है। ३०। स्त्री प्रायः वैराग्य को प्राप्त होते हुए यदि प्रसन्न होकर आज्ञा दे, तो तब (युवावस्था में संन्यास ग्रहण करने में) पुरुष का कोई दोष नहीं होता। निगम (वेद-शास्त्र) का ऐसा न्याय (निर्णय) है। ३१। इस प्रकार जब मनुष्य चार वर्णों और आश्रमों के कर्मों का पालन करते हैं, और उनमें रहते हुए मुझे भजते हैं, तब उनका धर्म सफल हो जाता है। ३२। इसलिए हे समस्त

गो विप्र सुर गुरु तीर्थ साधु, निगम भक्त सुजाण,
ए अष्ट अंगज माहरां, जे निंदे मूढ अजाण । ३४ ।
ते पापी पामे अधोगति, महा निकट नरक निवास,
पछे नीच योनि अवतरे, फळ भोगवे दुःख राश । ३५ ।
निज धरम नीतिए करी, मुजने भजो निरभेद,
आ लोकमां सुख पामशो, परलोक मुक्ति वेद । ३६ ।
एवी शिक्षा सुणी रघुवीरनी, थयां लोक चित्त प्रसन्न,
पछे राम साथे आविया, निज अवधपुर पावन । ३७ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अवधपुरमां राम आव्या, करी प्रजाने शिक्षाय रे,
धर्म राज्यने चलावे छे, वरते छे निज न्याय रे । ३८ ।

* * *

प्रजाजनो, मेरी बात सुनो । पर-निन्दा, पर-धन, पर-स्त्री के प्रति मन न लगाना । गौ, विप्र, सुर, गुरु, तीर्थ-क्षेत्र, साधुजन, निगम (वेद-शास्त्र) और सुजान भक्त—ये मेरे ही आठ अंग हैं; जो उनकी निन्दा करता है, वह मूढ़ तथा अज्ञानी होता है । ३३-३४ । वह पापी अधोगति को प्राप्त हो जाता है; वह बड़े विकट नरक में निवास करता है । अनन्तर वह नीच योनि में उत्पन्न हो जाता है और फलस्वरूप दुःख-राशि का भोग करता है । ३५ । (यदि) नीति-पूर्वक अपने धर्म का पालन करते हुए मुझे अभिन्न भाव से (मद्रूप होकर) भजोगे, तो इस लोक में सुख को तथा समझो कि परलोक में मुक्ति को प्राप्त हो जाओगे । ३६ । रघुवीर राम द्वारा दी हुई ऐसी शिक्षा सुनकर लोग चित्त में प्रसन्न हो गये । तदनन्तर वे राम के साथ अपनी पावन अयोध्यापुरी में आ गये । ३७ ।

प्रजा को शिक्षा अर्थात् उपदेश देकर राम अयोध्यापुरी में आ गये । फिर वे धर्म के अनुसार राज्य करते रहे । वे अपने न्याय (-विवेक) के अनुसार व्यवहार किया करते थे । ३८ ।

* * *

अध्याय—१८ (शत्रुघ्न के द्वारा लवणासुर का वध करना)

राग मारु

सुणो श्रोता थई सावधान, करो चरित्र सुधारस पान,
एम राज करे रघुवीर, पाळे प्रजा धरमना धीर। १।
एक समे श्रीदेव मोरार, बेठा मुक्तमंडप मोझार,
पासे बेठा भक्तजन भ्रात, करे धरम नीतिनी वात। २।
जुमनातीर तणा तेणी वार, आव्या लोक ते करता पोकार,
द्वारपाळे कर्युं तव जाण, सुणी बोल्या पुरुषपुराण। ३।
अरे कोणे पीडी प्रजा मारी ! कोण थयो ऐवो दुराचारी ?
सरवे लोके कर्यो नमस्कार, ऊभा कर जोडीने तेणी वार। ४।

अध्याय—१८ (शत्रुघ्न के द्वारा लवणासुर का वध करना)

हे श्रोताओ, सावधान होकर सुनिए; (राम के) चरित्र रूपी अमृत-रस का पान कीजिए। धर्म-पालन में धीर पुरुष रघुवीर राम, इस प्रकार राज्य कर रहे थे और प्रजा का पालन कर रहे थे। १। एक समय श्रीदेव मुरारि[1] अर्थात् भगवान राम मुक्ता-मण्डप में बैठे हुए थे। उनके पास भक्तजन तथा बन्धु बैठे थे और (वे सब) धर्म तथा नीति सम्बन्धी बातें कर रहे थे। २। उस समय यमुना-तट के (निवासी) लोग चीखते-पुकारते (सहायता की याचना करते हुए) आ गये; तब द्वारपालों ने उसका (राम को) समाचार बता दिया। उसे सुनकर पुराणपुरुष भगवान राम बोले। ३। 'अरे, मेरी प्रजा को कौन पीड़ा पहुँचा रहा है ? कौन ऐसा दुराचारी हो गया है ?' तो उस समय उन सब लोगों ने नमस्कार किया और हाथ जोड़कर वे खड़े रह गये। ४। दर्शन करते ही

---

१ **मुरारि**—कश्यप और दनु के पुत्रों में से एक पुत्र का नाम मुर था। उसने शिवजी की आराधना करके उनसे यह वर प्राप्त किया था कि वह (दानव) जिसके हृदय पर हाथ रखे, वह मर जाएगा। श्वेतदीप में श्रीकृष्ण का इससे युद्ध हुआ और उन्होंने लड़ते-लड़ते उसे उसके अपने हृदय पर हाथ रखने को विवश किया, तब वह मारा गया। मुर दानव के शत्रु होने से श्रीकृष्ण (अर्थात् कृष्णरूपधारी विष्णु भगवान भी) मुरारि कहाते है।

एक दूसरी पौराणिक मान्यता के अनुसार ब्रह्मा के अंश से उत्पन्न ताल-जंघ नामक दैत्य के मुर नामक एक पुत्र था। उसने समस्त देवो-सहित विष्णु को भी पराजित किया; अतः उन्हें बदरिकाश्रम के समीप एक गुफा में योगमाया का आश्रय लेना पड़ा। मुर उनका पीछा करता हुआ, वहाँ भी पहुँचा, तो विष्णु ने अपनी योगमाया से एक देवी का निर्माण करके उसके हाथों मुर का वध करवाया। अतः वे मुरारि कहाते है।

दरशन करतां पाम्या घणुं सुख, निवेद्युं नाथ आगळ दुःख,
महाराज सुणो एक वात, अमो पुत्र तमो छो तात । ५ ।
देश मथुरा जुमनातीर, छे दुष्ट असुर महावीर,
मधु दैत्यनो पुत्र ते ठाम, तेनुं लवणासुर एवुं नाम । ६ ।
ते पापी करे अन्याय, तेथी गौ ब्राह्मण पीडाय,
हिंसा करता डरे नहि मन, घणा मनुष्यो पमाड्या पतन । ७ ।
अमोए दुःख नव सहेवाय, माटे कहेवा आव्या रघुराय,
करो श्रीपति साहे अमारी, छो प्रजापति देव मोरारि । ८ ।
लोकनां सुणी एवां वचन, रामने क्रोध प्रगट्यो मन,
फरके अधर भ्रूकटी कपोळ, रीसे नेत्र थयां राताचोळ । ९ ।
अल्या बेठो छुं हुं विद्यमान, पीडे मारी प्रजाने अज्ञान,
मंगाव्युं कोदंड तेणी वार, दुष्टनो करुं हवडां संहार । १० ।
रामनां सुणी क्रोधवचन, सभामांहे ऊठ्या शत्रुघन,
बोल्या वचन जोडीने हाथ, मुने आज्ञा आपो हे नाथ । ११ ।

वे बहुत सुख को प्राप्त हो गये; (फिर) उन्होंने स्वामी राम के सम्मुख अपना दुःख निवेदन किया। (वे बोले), 'महाराज, हमारी एक बात सुनिए। हे तात, हम आपके पुत्र (-जैसे) हैं। ५। यमुना के तट पर मथुरा नामक एक देश है। उसमें एक महावीर (परन्तु) दुष्ट असुर है। उस स्थान पर मधु दैत्य का पुत्र है। उसका नाम लवणासुर है। ६। वह पापी अन्याय (-पूर्वक राज्य) कर रहा है। उससे गौ-ब्राह्मणों को पीड़ा हो रही है। हिंसा करने से उसका मन नहीं डरता। (उस कारण) अनेकानेक मनुष्य पतन को प्राप्त हो गये हैं। ७। हमसे वह दुःख नहीं सहा जा रहा है; इसलिए हे रघुराज, हम कहने आये हैं। हे श्रीपति, आप हमारी सहायता कीजिए। हे मुरारि देव, आप प्रजापति (प्रजाजनों के स्वामी) हैं। ८। लोगों की ऐसी बातें सुनते ही राम के मन में क्रोध उत्पन्न हो गया। उनके अधर, भौंहें, गाल फड़क उठे; क्रोध से नेत्र लाल-लाल हो गये। ९। 'अरे मैं बैठा हूँ—मैं विद्यमान (जीवित) हूँ—मेरी प्रजा को वह अज्ञान पीड़ा पहुँचा रहा है।' (ऐसा कहते हुए) उन्होंने उसी समय धनुष मँगा लिया (और कहा)—'मैं अभी उस दुष्ट का संहार कर दूँगा।' । १०। राम के ये क्रोध से कहे वचन सुनते ही शत्रुघ्न सभा में उठ गया। हाथ जोड़कर वह बोला, 'हे नाथ, मुझे आज्ञा दीजिए। ११। हे प्रभु, आपकी कृपा से मैं आज उस दुष्ट को मार डालूँगा और शुभ काम करूँगा।' (तब) पुराण-पुरुष राम ने उसे

प्रभु तम करुणाए आज, मारुं दुष्ट करुं शुभ काज,
करी आज्ञा पुरुषपुराण, आपी मंत्रशक्ति दिव्य बाण। १२।
अस्त्रयुक्ति बतावी अपार, शत्रुघन चढ्या तेणी वार,
त्रण क्षोहणी दळ लेई साथ, चाल्या छे श्रुतकीर्तिनाथ। १३।
आवी ऊतर्या जुमनातीर, त्यां मळ्या घणा मुनिवर धीर,
उत्पत्ति असुरनी जेह, विप्रे कही शत्रुघनने तेह। १४।
आराध्या पूर्वे उमानाथ, शिवे त्रिशूळ आप्युं एने हाथ,
एनी पासे त्रिशूळ जो होय, त्यां लगी न मारी शके कोय। १५।
माटे कहुं एक एनो उपाय, ज्यारे आहार लेवाने ए जाय,
उघाडो गुफा तव अनुकूळ, हरी लावो ए रुद्र त्रिशूळ। १६।
त्यारे क्षीण थशे बळ एह, पछी मरशे निःसंदेह;
मुनिवचन सुणी निरधार, हर्युं त्रिशूळ ना लागी वार। १७।
पछे घेर्यो असुरने त्यांहे, दारुण युद्ध थयुं मांहोमांहे,
दुष्ट वचन बोल्यो रही सामो, अल्या रामे मार्यो मुज मामो। १८।

आज्ञा दी और उसे मन्त्र (-युक्त) शक्ति तथा दिव्य बाण प्रदान किया। १२। (फिर) अस्त्र-सम्बन्धी अपार युक्तियाँ बता दीं, तो उसी समय शत्रुघ्न (मथुरा पर आक्रमण करने के लिए) चढ़ दौड़ा। श्रुत-कीर्ति-पति शत्रुघ्न तीन अक्षौहिणी सेना साथ में लेकर चल पड़ा। १३। (तदनन्तर) वह यमुना-तट पर ठहर गया। वहाँ अनेकानेक धीर-गम्भीर मुनिवर उससे मिल गये। (उनमें से) एक ब्राह्मण ने शत्रुघ्न से उस असुर की उत्पत्ति (-सम्बन्धी) जो (कथा) थी, वह कह दी। १४। उस (असुर) ने पूर्वकाल में उमापति शिवजी की आराधना की थी। (फल-स्वरूप) शिवजी ने इसके हाथ एक त्रिशूल प्रदान किया। इसके पास जब तक त्रिशूल हो, तब तक इसे कोई भी मार नहीं पाएगा। १५। इसलिए मैं इसका एक उपाय बताता हूँ—जब आहार (खोज) लेने के लिए यह जाएगा, तब अनुकूल (समय समझकर उसकी) गुफा खोल दो और हरण करके शिवजी का वह त्रिशूल ले आओ। १६। तब उसका बल क्षीण हो जाएगा।' उस मुनि की ये बातें सुनकर निश्चयपूर्वक शत्रुघ्न ने उस त्रिशूल को हर लिया। उसमें उसे देर न लगी। १७। अनन्तर उसने उस असुर को वहीं घेर लिया। उन (दोनों) के बीच दारुण युद्ध होने लगा। वह दुष्ट (असुर) सामने (खड़ा) रहकर यह बात बोला, 'अरे, राम ने मेरे मामा को मार डाला है। १८। उस रावण का मैं भला भानजा हूँ। तुम चारों को मारकर मैं वैर का बदला लूँगा।' उस

ते रावणनो हुं भाणेज सार, वेर लेउं हणी तम चार,
सुणी वचन असुरनां वाम, ते साथे कर्यो घोर संग्राम। १९।
शत्रुघने काढ्युं एक बाण, जे आप्युं हतुं पुरुषपुराण,
ब्रह्मानुं सर्जेलुं जेह, मधु कैटभ मार्या तेह। २०।
जेवो प्रलयनो हुताशन, मूक्यो ते शर शत्रुघन,
तेणे असुरनुं छेद्युं शीश, मृत्यु पामी पड्यो ते दिश। २१।
मुनिए कर्यो जयजयकार, लोक हरख पाम्या छे अपार,
अयोध्यामां गई ते वात, सुणी प्रसन्न थया जुगतात। २२।
छत्र चामर सिंहासन, रामे मोकलियां ते दन,
मथुरापुर केरुं राज, शत्रुघनने आप्युं महाराज। २३।
जेवी अवधपुरी कहेवाय, एवी थई मथुरानी शोभाय,
समुद्र पर्यंत शत्रुघन, करे राज ते निरमळ मन। २४।

असुर के ऐसे टेढ़े वचन सुनकर शत्रुघ्न ने उसके साथ घोर संग्राम किया। १९। शत्रुघ्न ने एक वही बाण निकाल लिया, जो उसे पुराण-पुरुष राम ने दिया था, तथा जिसका निर्माण ब्रह्मा ने किया था, जिस (बाण) से (भगवान ने) मधु और कैटभ[1] को मार डाला था। २०। शत्रुघ्न ने प्रलय काल की अग्नि जैसे उस बाण को चला दिया, और उससे उस असुर के सिर को छेद डाला। वह उसी स्थान पर मृत्यु को प्राप्त होकर गिर गया। २१। (यह देखकर) मुनियों ने जय-जयकार किया। (समस्त) लोग अपार हर्ष को प्राप्त हो गये। (जब) अयोध्या में यह समाचार पहुँच गया, तो उसे सुनकर जगत्पिता राम प्रसन्न हो गये। २२। महाराज राम ने उसी दिन छत्र, चामर और सिंहासन भेज दिये और मथुरा का राज्य शत्रुघ्न को प्रदान किया। २३। अयोध्यापुरी की शोभा जैसी कही जाती है मथुरा की शोभा वैसी ही हो गयी थी। (तदनन्तर) शत्रुघ्न निर्मल मन से समुद्र तक (की भूमि पर) राज्य करने लगा। २४। वह अपने कुल के धर्म का आचरण करता था, जो वेदों द्वारा क्षत्रिय का

---

१ **मधु और कैटभ**—मधु-कैटभ दोनों सुविख्यात असुर थे। एक पौराणिक मान्यता के अनुसार, वे ब्रह्मा के स्वेद (पसीने) की बूंदों से उत्पन्न हो गये थे। दूसरी मान्यता है कि उनकी उत्पत्ति ब्रह्मा के तमोगुण से हो गयी थी। देवी भागवत तथा महाभारत के अनुसार, वे भगवान विष्णु के कान के मैल से उत्पन्न हो गये थे। इन्होंने तपस्या करके ब्रह्मा से अजेयता का वर प्राप्त किया। इनके साथ विष्णु को पचास सहस्र वर्ष लड़ना पड़ा। अन्त में विष्णु ने उन्हें मोहित करके अपनी गोद में बैठाकर उनका वध किया। इससे भगवान विष्णु 'मधुसूदन' तथा 'कैटभारि' कहाते हैं।

आचरे निज कुळनो धर्म, जे कह्युं वेदे क्षत्रीनुं कर्म,
प्रजा लोक पामे घणुं सुख, स्वपने नहि कोने दुःख। २५।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

नहि दुःख दरिद्र वियोग कोने, नहि तस्कर-पीडा रोग रे,
सहु लोक भजता रामने, भोगवे विधविध भोग रे। २६।

* * *

कर्तव्य बताया गया है। प्रजाजन बहुत सुख को प्राप्त हो गये। स्वप्न (तक) में किसी को कोई दुःख नहीं था। २५।

किसी को न कोई दुःख, दरिद्रता, (प्रियजनों का) विरह था, न चोरों से कोई पीड़ा तथा रोग था। सब लोग राम को भजते रहते और भाँति-भाँति के भोगों का भोग करते रहते थे। २६।

* * *

अध्याय—१९ (एक ब्राह्मण-पुत्र की असमय मृत्यु; श्रीराम द्वारा एक शूद्र तपस्वी का वध करना)

राग धन्याश्री

लवणासुरने पमाड्यो पतन जी, मथुरामां राज करे शत्रुघन जी,
हावे रघुपति पोते शुं करतां काज जी, अवधपुरीनुं चलावे राज जी। १।

ढाळ

राज करता रघुपति ते, अवधपुर मोझार,
निज प्रजा सुख पामे घणुं, चाले वर्णाश्रम वहेवार। २।

अध्याय—१९ (एक ब्राह्मण-पुत्र की असमय मृत्यु; श्रीराम द्वारा एक शूद्र तपस्वी का वध करना)

शत्रुघ्न ने लवणासुर को पतन को प्राप्त करा दिया और वह मथुरा में राज्य करने लगा। अब रघुपति राम स्वयं क्या कर रहे थे? वे तो अयोध्यापुरी का राज्य कर (ही) रहे थे। १।

रघुपति राम अयोध्यापुरी में राज्य कर रहे थे। उनकी अपनी प्रजा बहुत सुख को प्राप्त हो गयी थी। (वहाँ) वर्णाश्रम व्यवस्था के अनुसार व्यवहार चलता था। २। उस समय बिना आयु की अवधि पूर्ण हुए

अकाळमृत्यु न थाय कोनुं, अवधविण ते वार,
मातपिता पहेलुं बाळक न मरे, रामराज मोझार। ३।
ते समे एक ब्राह्मण तणो सुत, मृत्यु पाम्यो त्यांहे,
महाशोक प्रगट्यो तेहने, रहेतो अवधपुरमांहे। ४।
मृत पुत्र लेईने दंपती, आव्यां तदा दरबार,
आक्रंद करतां अति घणुं, रोतां करी पोकार। ५।
त्यारे सभा करी श्रीराम बेठा, मन्त्री बंधु मांहे,
ते सभामां शब नाखियुं, ब्राह्मणे जईने त्यांहे। ६।
पछी रुदन करतो विप्र बोल्यो, सुणो श्रीरघुराय,
अधर्म तमो शो आचर्यो? तम राज्यमां अन्याय। ७।
माबाप पहेलो पुत्र माहरो, मरण पाम्यो आज,
अधर्म शो एवो थयो? छे राम केरुं राज। ८।
ते जिवाडो आ पुत्र नहि तो, देईश तमने शाप,
एवां वचन सुणी श्रीरामजी, मन पामिया परताप। ९।
ते समे बेठा हता नारद, सभामां निरधार,
कर जोडी प्रभुए पूछ्युं, कहो सत्य ब्रह्मकुमार। १०।

किसी की असमय मृत्यु नहीं होती थी। (अर्थात्) राम-राज्य में कोई भी बालक अपने माता-पिता से पहले नहीं मर जाता था। ३। (परन्तु) उस समय वहाँ एक ब्राह्मण का पुत्र मृत्यु को (असमय) प्राप्त हो गया। वह अयोध्या (ही) में रहता था। ४। तब वे ब्राह्मण पति-पत्नी अपने मृत पुत्र को लेकर दरबार में आ गये। वे बहुत बड़ा आक्रन्दन कर रहे थे और चीखते-पुकारते (सहायता के हेतु दुहाई देते हुए) रो रहे थे। ५। तब श्रीराम सभा का आयोजन करके मन्त्रियों और बन्धुओं के बीच बैठे हुए थे। उस ब्राह्मण ने वहाँ जाकर उस सभा में (अपने पुत्र का) शव रख दिया। ६। अनन्तर वह ब्राह्मण रुदन करते हुए बोला, 'हे रघुराज, सुनिए। आपने किस अधर्म का आचरण किया है? आपके राज्य में अन्याय हो गया है। ७। आज मेरा पुत्र माता-पिता के (अर्थात् हमारे) पहले मृत्यु को प्राप्त हो गया है। इस प्रकार का क्या अधर्म हो गया है? यह तो राम (ही) का राज्य है। ८। इसलिए इस पुत्र को जीवित कर दीजिए; नहीं तो मैं आपको अभिशाप दूँगा।' ऐसे वचन सुनकर श्रीराम मन में ग्लानि को प्राप्त हो गये। ९। उस समय निश्चय ही नारद सभा में बैठे हुए थे। तो प्रभु राम ने हाथ जोड़कर उनसे पूछा, 'हे ब्रह्मकुमार, आप सत्य कहिए। १०। आज किस पाप से ब्राह्मण का यह पुत्र मृत्यु

शे पापथी ए पुत्र द्विजनो, मरण पाम्यो आज ?
मुज राज्यमां अन्याय शो, जे थाय विपरीत काज। ११।
एवो प्रश्न सुणी रघुवीरनो, बोलिया वीणापाण,
आ समयमां को शूद्र करतो, हशे तप निरवाण। १२।
अधिकार नहि तप तणो तेने, निगम बोले न्याय,
ते पापथी ए पुत्र द्विजनो, मरण पाम्यो प्राय। १३।
एवुं वचन सुणी नारद तणुं, ऊठिया जुगदाधार,
समरण कर्युं पुष्पक तणुं, आवियुं तेणी वार। १४।
पछी धीरज आपी विप्रने, समरथ श्रीरघुनाथ,
प्रभु चढ्या पुष्प विमान पर, लेई सैन्य मंत्री साथ। १५।
सहु पृथ्वीमां शोधवा लाग्या, सरिता गिरि पुर वन,
गिरि कंदरा तट सरोवर, शोधता जुगजीवन। १६।
पछी एम करतां आविया, दक्षिण दिशा मोझार,
समुद्रतीरे सघन वनमां, प्रौढ गिरि छे सार। १७।
ते गिरि उपर भील एक, तप करवा बेठो त्यांहे,
धूम्रपान करतो अधोमुखे, धरी कामना मनमांहे। १८।

को प्राप्त हो गया है ? मेरे राज्य में क्या अन्याय हो गया है, जिससे ऐसा विपरीत काम हो गया है (विपरीत घटना हो गयी है) ?' । ११। रघुवीर का ऐसा प्रश्न सुनकर वीणा-पाणि नारद बोले, 'निश्चय ही इस समय कोई शूद्र तपस्या कर रहा होगा। १२। उसे तप करने का अधिकार नहीं है—निगम (वेदशास्त्र) ने यही न्याय (निर्णय) कर लिया है। सम्भवत: उस पाप के कारण ब्राह्मण का यह पुत्र आज मृत्यु को प्राप्त हो गया है। १३। नारद की ऐसी बातें सुनते ही जगदाधार राम उठ गये। उन्होंने पुष्पक विमान का स्मरण किया तो वह उसी समय (वहाँ) आ गया। १४। अनन्तर समर्थ प्रभु श्रीरघुनाथ उस ब्राह्मण को सान्त्वना देकर (ढाढ़स बंधाकर) सेना और मन्त्रियों को साथ में लिये हुए पुष्पक विमान में चढ़कर बैठ गये। १५। वे नदियों, पर्वतों, नगरों-गाँवों, वनों में—समस्त पृथ्वी में खोज करने लगे। जगज्जीवन राम पर्वतों में, गुफाओं में, सरोवरों के तट पर खोज कर रहे थे। १६। इस प्रकार (खोज) करते हुए फिर वे दक्षिण दिशा की ओर आ गये। (वहाँ) समुद्र-तट पर सघन वन के अन्दर एक प्रचण्ड रम्य पर्वत था। १७। वहाँ उस पर्वत पर एक भील तप करने बैठा हुआ था। वह मन में एक विशिष्ट कामना धारण किये हुए अधोमुख होकर धूम्रपान कर रहा था (धूएँ में विशिष्ट

श्रीरामे दीठो तेहने, पूछियुं आवी पास,
अल्या शे अर्थे तुं तप करे छे? कहे सत्य प्रकाश। १९।
कोण गोत्र गुरु कुळ वरण तुज? कोण वेद मंत्र प्रमाण?
शे अर्थे करतो कष्ट काया, भ्रष्ट जन्मे जाण। २०।
त्यारे धूम्रपानी बोलियो, हुं वरणमांहे किरात,
स्वर्गफळने पामवाने, तप करुं दिनरात। २१।
त्यारे राम कहे ले स्वर्ग तुजने, पमाडुं हुं आज,
एम कही एक बाण धनुष्ये, चढाव्युं महाराज। २२।
ते बाणे करी शीश छेदियुं, पामियो मरण किरात,
प्रभुकृपाए ते भीलनो, दिव्य देह थयो साक्षात्। २३।
विमान आव्युं ते समे, शोभा तणो नहि पार,
ते मांहे बेसीने गयो, थई दिव्य स्वर्ग मोझार। २४।
एटले आव्यो सुरपति, ज्यां हता श्रीजुगदीश,
साष्टांग करी रघुपति चरणे, इंद्रे नाम्युं शीश। २५।
मघवापति कर जोडी बोल्यो, सुणो श्रीमहाराज,
हुं आज्ञावर्ती तमारो, प्रभु कहो मुने कांई काज। २६।

मुद्रा में पड़ा हुआ था)। १८। (जब) श्रीराम ने उसे देखा तो उसके पास आकर पूछा—'अरे, तू किस हेतु से (किसलिए) तप कर रहा है? स्पष्ट रूप से सच (-सच) कह दे। १९। तेरा कौन गोत्र है? तेरा कौन गुरु है? कौन कुल और कौन वर्ण है? तेरा प्रमाण-मूल कौन वेद और मन्त्र है? समझ ले कि इस भ्रष्ट जन्म में तू किस हेतु से यह शारीरिक कष्ट कर रहा है (शरीर को कष्ट दे रहा है?)'। २०। तब वह धूम्र-पानी (तापस) बोला, 'मैं वर्ण से किरात हूँ। मैं स्वर्ग-फल को प्राप्त होने के हेतु दिन-रात तप कर रहा हूँ।'। २१। तब महाराजा राम बोले, 'ले, ले यह स्वर्ग तुझे आज ही प्राप्त करा देता हूँ।' ऐसा कहते हुए उन्होंने एक बाण धनुष पर चढ़ा दिया। २२। उस बाण से उस किरात का सिर छेद डाला, तो वह मृत्यु को प्राप्त हो गया। प्रभु राम की कृपा से उस भील की देह प्रत्यक्ष दिव्य हो गयी। २३। उस समय (वहाँ) एक विमान आ गया। उसकी शोभा की कोई सीमा नहीं थी। वह किरात दिव्य -(रूप) होकर उसमें बैठकर स्वर्ग में चला गया। २४। इतने में सुरपति इन्द्र (वहाँ) आ गया, जहाँ श्रीजगदीश रघुपति राम थे। उसने साष्टांग नमस्कार करते हुए उनके चरणों में सिर नवा लिया। २५। फिर इन्द्र हाथ जोड़े हुए बोला, 'हे श्रीमहाराज, सुनिए। मैं आपका

रघुवीर कहे मुज पुर विषे, एक ब्राह्मण केरो अपत्य,
मातपिता पहेलो मरण पाम्यो, जिवाडो ते सत्य । २७ ।
एवुं सुणीने आश्चर्य पाम्यो, इंद्र तेणी वार,
प्रभुकृपाए हूं भोगवुं, सुरलोकनो अधिकार । २८ ।
विश्वना आत्माराम छो, जीवना जीवनप्राण,
ते प्रभु प्राकृत मनुष्य थई, मुज साथ बोले वाण । २९ ।
एम कही पुष्पविमान बेठो, इंद्र तेणी वार,
रघुनाथ वळता आविया, निज अवधपुर मोझार । ३० ।
अमृतबिंदु इंद्रे मूक्युं, पुत्रना मुखमांहे,
तत्काळ ऊठी थयो बेठो, बाळक जीव्यो त्यांहे । ३१ ।
रघुनाथ चरणे नमी चाल्यो, इंद्र स्वर्ग मोझार,
ते विप्र आनंद पामियो, वरतियो जयजयकार । ३२ ।
क्षणमांहे सरजे विश्व सहु, पोषण करे परमेश,
वळी जिवाडे सहु जगतने, जेनी सत्ता चैतन्य लेश । ३३ ।
जेना कटाक्षे काळ कंपे, लोकपति समुदाय,
ते इंद्र पासे विप्र बाळक, जिवाड्यो रघुराय । ३४ ।

आज्ञाकारी हूँ । हे प्रभु, मुझे कोई काम बताइए । '। २६ । तो रघुवीर ने कहा, ' मेरे नगर में एक ब्राह्मण का पुत्र माता-पिता के पहले मृत्यु को प्राप्त हो गया है; उसे सचमुच जिला दो । '। २७ । ऐसा सुनकर इन्द्र उस समय आश्चर्य को प्राप्त हो गया । (उसने सोचा—) ' मैं प्रभु राम की कृपा से देव-लोक के अधिकार का उपभोग कर रहा हूँ । २८ । वे राम विश्व के आत्मा हैं, जीवों के जीवन तथा प्राण हैं । वे प्रभु प्राकृत अर्थात् साधारण मर्त्य मनुष्य (के रूप में उत्पन्न) होकर मेरे साथ मनुष्य-वाणी में बोल रहे है । २९ । ऐसा (मन में) कहते हुए उस समय इन्द्र पुष्पक विमान में बैठा । फिर रघुनाथ राम अपनी अयोध्या नगरी में लौट आये । ३० । (तदनन्तर) इन्द्र ने उस (ब्राह्मण के) पुत्र के मुख में अमृत की बूंद डाल दी; तो वह बालक वहाँ जीवित हो गया और उठकर बैठ गया । ३१ । (तत्पश्चात्) इन्द्र राम के चरणों को नमस्कार करके स्वर्ग में चला गया । (पुत्र के जीवित हो जाने पर) वह विप्र आनन्द को प्राप्त हो गया । (यह जानकर सर्वत्र) जय-जयकार हो गया । ३२ । जिनकी सत्ता चैतन्यमय है, वे परमेश्वर राम क्षण में समस्त विश्व का निर्माण करते है, पोषण करते हैं, इसके अतिरिक्त समस्त जगत् को जीवित रखते हैं, और जिनके कटाक्ष से काल (तथा)

ए चरित्र लौकिक जाणजो, मानुषी लीला काम,
महानुभाव जाणे महिमा ए, जे ब्रह्म पूरणकाम । ३५ ।
एम विचारी श्रोता सहु, संदेह न करशो कोय,
साक्षात् ए पूरण प्रभु, पण धरम पाळे सोय । ३६ ।
ते विप्र बाळक जिवाड्यो, सेवा करी बहु पेर,
रथमां बेसाडी त्रणे जणने, वळाव्यां निज घेर । ३७ ।
एवां चरित्र अद्‌भुत रामनां, जे सुणे नर ने नार,
करे कृपा तेने रघुपति, पामे पदारथ चार । ३८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

चार पदारथ पामे ते जन, संकट सरवे जाय रे,
कहे दास गिरधर सुणो श्रोता, पावन रामकथाय रे । ३९ ।

* * *

लोकपतियों का समुदाय काँप उठता है, उन्हीं रघुराज राम ने इन्द्र के द्वारा ब्राह्मण के उस (मृत) पुत्र को (पुनः) जीवित कर दिया । ३३-३४ । (राम के इस चरित्र को लौकिक तथा उनकी लीला को मानुषी लीला समझिए । जो पूर्णकाम राम ब्रह्म हैं, उनकी ऐसी महिमा को (केवल) महानुभाव (ही) समझ पाते हैं । ३५ । हे समस्त श्रोताओ, ऐसा विचार करके कोई भी संशय न करना । (ये राम) साक्षात् पूर्ण प्रभु (पूर्ण ब्रह्म) हैं; परन्तु ये अपने धर्म (कर्तव्य) का पालन करते हैं । ३६ । राम ने ब्राह्मण के उस पुत्र को जीवित किया । (तदनन्तर) उन्होंने बहुत प्रकार से उनकी सेवा की । फिर उन तीनों जनों को रथ में बैठाकर उनके अपने घर लौटा दिया । ३७ । जो पुरुष और स्त्रियाँ रघुपति राम के ऐसे अद्‌भुत चरित्रों को सुनते हैं, उन पर वे (राम) कृपा करते हैं । फल-स्वरूप वे (लोग) धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जैसे चारों पदार्थों को प्राप्त हो जाते हैं । ३८ ।

वे लोग चारों पदार्थों को प्राप्त हो जाते हैं; उनके समस्त संकट (दूर हो) जाते हैं । कवि गिरधर दास कहते हैं, हे श्रोताओ, राम की पावन कथा को सुनिए । ३९ ।

* * *

अध्याय—२० (गिद्ध और उल्लू का शाप-मुक्त हो जाना)

राग सोरठ

एक समे रघुनाथजी, बेठा पुष्पविमान,
दरशन करवा अगस्त्यनां, चाल्या श्री भगवान। एक० १।
साथे अनुचर छे घणां, डाह्यो मंत्री सुमंत,
चम्मर करता श्रीरामने, वायुसुत बळवंत। एक० २।
ते विमान आकाशे चालतुं, आव्युं महावनमांहे,
एटले एक कौतुक थयुं, बे पक्षी वढे त्यांहे। एक० ३।
एक उलक बीजो गीध छे, आव्या करता पोकार,
न्याय करो प्रभु अम तणो, टाळो क्लेश अपार। एक० ४।
त्यारे रामे विमान स्थंभावियुं, बोल्या मधुरी वाण,
कहो भाई शी बढवाड छे? बोलो सत्य प्रमाण। एक० ५।
त्यारे उलूक वचन वळतुं वदे, मारुं घर हतुं ज्यांहे,
काढी मूक्यो मने त्यां थकी, गीध रह्यो छे ते मांहे। एक० ६।
त्यारे गीध कहे प्रभु सांभळो, निश्चे छे मुज धाम,
ए उलूक तो मारे गळे पडे, शिक्षा करो श्रीराम। एक० ७।

अध्याय—२० (गिद्ध और उल्लू का शाप-मुक्त हो जाना)

एक समय श्रीभगवान रघुनाथ राम पुष्पक विमान में बैठ गये और अगस्त्य ऋषि के दर्शन करने के लिए चल दिये। एक०। १। उनके साथ बहुत सेवक थे, बुद्धिमान मन्त्री सुमन्त (भी) था। बलवान पवनकुमार हनुमान चामर झुला रहा था। एक समय०। २। वह विमान आकाश में चलते (-चलते) एक महान वन में अर्थात् वन के ऊपर आ गया। इतने में एक लीला हो गयी। वहाँ दो पक्षी (आपस में) झगड़ रहे थे। एक०। ३। एक उल्लू था और दूसरा गिद्ध था—वे चीखते-पुकारते हुए (दुहाई देते हुए राम के विमान के पास) आ गये। (वे बोले—) ' (हे राम,) न्याय कीजिए—हमारे इस अपार कलह को दूर कीजिए। ' एक०। ४। तब राम ने विमान को रोकते हुए खड़ा अर्थात् स्थिर कर दिया और मधुर स्वर में कहा, ' भाइयो, कह दो, क्या झगड़ा है ? प्रमाण के साथ सत्य बता दो। ' एक०। ५। तब उल्लू ने उलटे (अर्थात् प्रत्युत्तर में) कहा—' मेरा घर जहाँ था, वहाँ से मुझे हटा देकर (भगाकर) उसमें यह गिद्ध रह रहा है। ' एक०। ६। तब गिद्ध बोला—' हे प्रभु, सुनिए, निश्चय ही वह मेरा घर है। यह उल्लू तो मेरे

अल्या गीध, तारुं घर क्यां हतुं, के दहाडानुं ते ठार,
सत्य वचन मुजने कहे, पूछे विश्वाधार । एक० ८ ।
त्यारे गीध कहे नहोती धरा, जे दहाडानी आंहे,
त्यारे वृक्ष उपर में माळो कर्यो, ते दिवसनो त्यांहे । एक० ९ ।
त्यारे उलूक कहे ज्यारे ईश्वरे, पृथ्वी करी निरमाण,
त्यार पछी तरु उपर, में माळो कर्यो जाण । एक० १० ।
एवुं सुणीने हस्या रघुनाथजी, गीधनो कर्यो तिरस्कार,
अल्या उलूक कहे ते तो सत्य छे, भूमि तरुनो आधार । एक० ११ ।
भूमि विना तरु होय नहि, जूठी गीधनी वाण,
वृक्ष आधार माळा तणो; साचो उलूक प्रमाण । एक० १२ ।
एवुं कहीने कोप्या श्रीरामजी, गीध पर अविनाश,
बाण काढ्युं एने मारवा, बोली वाणी आकाश । एक० १३ ।
हे राम, न हणशो ए गीधने, एनी सुणो उतपत्त,
ए पूरवे हतो मच्छ देशनो, भूपति ब्रह्मदत्त । एक० १४ ।

गले पड़ रहा है। श्रीराम, उसे दण्ड दीजिए।' एक० । ७ । (इस पर) विश्वाधार (राम) ने पूछा—'अरे गिद्ध, तुम्हारा घर कहाँ था ? अथवा वह किस दिन से था या किस स्थान पर था ? मुझसे सच्ची बात बता दो।' एक० । ८ । तब गिद्ध बोला, 'जिस दिन यहाँ धरती नहीं थी तब उस दिन मैंने उस वृक्ष पर एक घोंसला बना लिया और उस दिन से वहाँ (रह रहा) हूँ।' एक० । ९ । तब उल्लू बोला—'समझिए कि जब भगवान ने पृथ्वी का निर्माण किया, उसके अनन्तर मैंने पेड़ पर घोंसला बना लिया।' एक० । १० । ऐसा सुनकर रघुनाथ राम हँस पड़े और उन्होंने गिद्ध के प्रति तिरस्कार (व्यक्त) किया (और कहा), 'अरे, यह उल्लू (जो) कह रहा है, वही तो सत्य है। भूमि वृक्ष के लिए आधार होती है। एक० । ११ । बिना भूमि के वृक्ष नहीं हो सकता। (अतः) इस गिद्ध की बात झूठी है। वृक्ष घोंसले के लिए आधार (-भूत) होता है। (अतः) उल्लू द्वारा प्रस्तुत प्रमाण ही सत्य है।' एक० । १२ । ऐसा कहते हुए अविनाशी श्रीराम गिद्ध पर क्रुद्ध हो उठे और उन्होंने उसे मार डालने के लिए बाण निकाल लिया। (तब) आकाश-वाणी हुई। एक० । १३ । 'हे राम, इस गिद्ध को न मारना। इसकी उत्पत्ति तो सुनिए। पूर्वकाल में यह मत्स्य देश का ब्रह्मदत्त नामक राजा था।' एक० । १४ । वह गौतम मुनि के अधीन था और उसकी बहुत प्रकार से सेवा करता था। एक दिन इसने उस (मुनि) को अपने घर

ते अंकित मुनि गौतम तणो, सेवा करे बहु पेर,
एक दिवस एणे तेडिया, भोजन करवाने घेर। एक० १५।
तेणे मांस पकाव्युं रे पाकमां, मूक्युं मुनिवर पास,
ते जोईने गौतम ऋषि कोपिया, थयां चित्तमां उदास। एक० १६।
शाप दीधो मुनिए तदा, भूपने तेणी वार,
अल्या पापी तुं गीध पक्षी थजे, करजे मांसनो आहार। एक० १७।
त्यारे स्तुति करी राजाए घणी, पूछ्यो अनुग्रह एव,
दया ऊपनी द्विजने घणी, बोल्या मुनि ततखेव। एक० १८।
अल्या प्रगट थया छे पोते प्रभु, दशरथरायने द्वार,
दरशन थाशे ते रामनुं, संभाषण जेणी वार। एक० १९।
त्यारे उद्धार थाशे तुज तणो, स्वर्गलोक निवास,
ते अवसर आज एने मळ्यो, पाम्यो पद अविनाश। एक० २०।
एवुं सुणीने श्रीरामे कृपा करी, पक्षी उपर एव,
द्विजनी देह पडी त्यांहां, थयो तत्क्षण देव। एक० २१।
चरण वंदी श्रीरामना, बेठो विमान मोझार,
नाक प्रत्ये ते पक्षी गया, थयो जयजयकार। एक० २२।

भोजन करने के लिए बुला लिया।' एक०। १५। 'उसने रसोई में मांस पका दिया और उस मुनिवर के पास रख दिया। उसे देखकर गौतम ऋषि क्रुद्ध हो गया, वह मन में उदास हो गया।' एक०। १६। (फिर) उस मुनि ने उस राजा को उसी समय अभिशाप दिया—'अरे पापी, तू गिद्ध पक्षी हो जाए और मांस का आहार करता रह जाए।' एक०। १७। 'तब राजा ने (ऋषि की) बहुत स्तुति की और (तदनन्तर) अनुग्रह ही पूछा। (तब) उस ब्राह्मण ऋषि को (उसके प्रति) बहुत दया उत्पन्न हो गयी और वह तत्क्षण बोला। एक०। १८। 'अरे, दशरथ राजा के द्वार (घर) स्वयं प्रभु (भगवान) प्रकट हो गये हैं। जिस समय तुझे राम के दर्शन होंगे, तथा उनसे बातचीत होगी, तब तेरा उद्धार होकर तू स्वर्ग-लोक में निवास करेगा। इसे आज वह अवसर मिल गया है और यह अविनाशी (अक्षय) पद को प्राप्त हो गया है।' एक०। १९-२०। ऐसा सुनकर राम ने उन पक्षियों पर कृपा की, तो उसका शरीर वहाँ गिर गया और वह तत्क्षण देव (-स्वरूप में परिवर्तित) हो गया। एक०। २१। (तदनन्तर) श्रीराम के चरणों का वन्दन करके वह विमान में बैठ गया। वह स्वर्ग-लोक की ओर चला गया, तो जय-जयकार हो गया। एक०। २२। रघुपति राम इस प्रकार से अधमों के उद्धार-कर्ता

एवा अधम उद्धारण रघुपति, दीनानाथ दयाळ,
गीध उलूकने उद्धारिया, छूट्यां करम ते काळ । एक० २३ ।
प्रभु उपर पुष्पवृष्टि करी, देवे तेणी वार,
पछे विमान चलाव्युं त्यां थकी, दक्षिण दिशा मोझार । एक० २४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

दक्षिण दिशा विमान चलाव्युं, पोते पूरणकाम रे,
अगस्त्य मुनिनां दरशन करवा, आश्रम आव्या राम रे । २५ ।

हैं, दीनों के नाथ तथा दयालु हैं। उन्होंने गिद्ध और उल्लू का उद्धार किया, तो वे उस समय कर्म (-बन्धन) से छूट गये । एक० । २३ । देवों ने उस समय प्रभु राम पर पुष्प-वृष्टि की। तदनन्तर राम ने वहाँ से दक्षिण दिशा की ओर विमान को चला दिया । एक० । २४ ।

पूर्णकाम राम ने स्वयं दक्षिण दिशा की ओर विमान को चला दिया। (फिर) वे अगस्त्य ऋषि के दर्शन करने हेतु उनके आश्रम]आ गये । २५ ।

* * *

अध्याय—२१ (श्रीराम-अगस्त्य-संवाद, सत्यवान-उपाख्यान, अन्नदान-महिमा)

राग धन्याश्री

अगस्त्यने आश्रम आव्या राम जी, मुनिने कीधा दंड प्रणाम जी,
जोई रघुपतिने ऊठ्या मुनिजन जी, भुज भरी दीधुं आलिंगन जी । १ ।

ढाळ

आलिंगन दीधुं रामने, हरखिया कुंभज मुन्य,
मुने कर्यो पावन रामजी, आज दिवस घडीने धन्य । २ ।

अध्याय—२१ (श्रीराम-अगस्त्य-संवाद, सत्यवान-उपाख्यान, अन्नदान-महिमा)

(एक समय) राम अगस्त्य ऋषि के आश्रम में आ गये; उन्होंने उस मुनि को दण्डवत नमस्कार किया। रघुपति को देखते ही वे मुनि उठ गये और उन्होंने बाँहों में भरकर उनका आलिंगन किया । १ ।

कुम्भज अर्थात् अगस्त्य मुनि ने राम का आलिंगन किया; वे आनन्दित हो गये और बोले, 'हे रामजी, आपने मुझे पावन कर दिया ।

आसन उपर पधराविया, कर्यो विनय वहु सत्कार,
वळी पक्व फळ जळ मिष्ट, प्रभुने कराव्यो छे आहार । ३ ।
पछे जुग्म कंकण हेम हीरा, रत्नजडित विशाळ,
ते पहेराव्यां श्रीरामने कर, अगस्त्य तत्काळ । ४ ।
थया प्रसन्न कंकण जोईने, पूछ्युं मुनिने राम,
कृतविधि वस्तु स्वर्गनी, क्यांथी तमारे धाम ? । ५ ।
त्यारे घटोद्भव कहे सुणो प्रभु, ए कंकणनी बहु वात,
ए मनुष्यलोके नव मळे, दुर्लभ सदा साक्षात् । ६ ।
एक राय वैद्रभ देशनो, सत्यवान ए अभिधान,
ते तपस्वी पुण्यवंत महा, कीधां अपरिमित दान । ७ ।
मणि कनकभूषण अश्व गज रथ, कर्यां दान अपार,
एक अन्नदान विना सहु, आपियुं छे निरधार । ८ ।
एक समये मृगया नीकळ्यो, वन एकलो भूपाळ,
त्यां आयुर्दा आवी रह्यो, त्यारे थयो तेनो काळ । ९ ।
ते पुण्यना प्रतापथी, धर्यो दिव्य देह तेणी वार,
विमानमाँ बेसी तदा नृप, गयो स्वर्ग मोझार । १० ।

आज यह दिन और घड़ी धन्य है'। २ । (तदनन्तर) उन्होंने लाते हुए उन्हें आसन पर बैठा दिया, बहुत विनय-पूर्वक उनका सत्कार किया। फिर उन्होंने प्रभु को पक्व तथा मीठे फल का आहार कराया तथा जल-प्राशन करा दिया । ३ । अनन्तर अगस्त्य ने हीरे तथा रत्न जड़े हुए सोने के कंकणों की जोड़ी राम के हाथों में तत्काल पहनवा दी । ४ । श्रीराम कंकणों को देखकर प्रसन्न हो गये । फिर उन्होंने मुनि से पूछा,— 'विधाता द्वारा बनायी हुई यह स्वर्ग की वस्तु आपके घर कहाँ से (कैसे) आ गयी है ?' । ५ । तब अगस्त्य ने कहा, 'हे प्रभु सुनिए, मैं इन कंकणों के बारे में बात कहता हूँ । ये मनुष्य-लोक में नहीं मिलते, वे साक्षात् (सचमुच) सदा दुर्लभ हैं । ६ । विदर्भ देश का एक राजा था। उसका नाम सत्यवान था । वह महान तपस्वी और पुण्यवान था । उसने अपरिमित दान दिया था । ७ । उसने रत्न और सोने के आभूषण, घोड़े, हाथी और रथ अपार रूप से दान में दिये थे । उसने निश्चय ही एक अन्नदान के अतिरिक्त सब (दान में) दिया था । ८ । एक समय वह राजा मृगया के लिए अकेला वन में निकल गया । वहाँ उसकी आयु की मर्यादा पूरी हो आयी तब उसका अवसान (अन्त) हो गया । ९ । उस राजा ने उस पुण्य के प्रताप से उस समय दिव्य शरीर धारण किया और तब विमान में

त्यां भोग नाना भातना, ते भोगवतो राजन,
पण अन्नदान कर्युं नथी, माटे क्षुधा पीडे तन। ११।
विधिने कह्युं मुने क्षुधा पीडे, आहार आपो आज;
में भूख्या रहेवातुं नथी, नव गमे सुख महाराज। १२।
एवां वचन सुणी ते रायनां, बोल्या प्रजापति भगवान,
हुं खावा शुं आपुं तने? नथी कर्युं ते अन्नदान। १३।
एम घणां वचन विधिए कह्यां, पण हठ ग्रह्यो राजन,
प्रजापति तव कोपिया, पछे बोल्या क्रोधवचन। १४।
तुं प्रेत थई निज तन तणा, कर मांस तणो आहार,
ते कदापि खूटे नहि, एम बोल्या पद्मकुमार। १५।
हे राम! विधिना वचनथी, थयो भूत ते राजन,
ते भक्षण करवा देह तणुं, नित्य आवतो आ वन। १६।
परमेष्ठीने वचने करी, खूटे नहि तन तेह,
एम वही गया दिन केटला, अकळायो राजा एह। १७।

बैठकर स्वर्ग में चला गया। १०। वहाँ वह राजा नाना प्रकार के भोगों का उपभोग करता था; परन्तु उसने (अपने जीवन में कभी) अन्न-दान नहीं दिया था। इसलिए उसके शरीर को भूख पीड़ा पहुँचा रही थी। ११। तो उसने विधाता से कहा, 'मुझे भूख सता रही है—मुझे भोजन दो। हे महाराज, मुझसे भूखा नहीं रहा जा रहा है। यह (स्वर्ग-) सुख मुझे नहीं भा रहा है।'। १२। उस राजा की ऐसी बातें सुनकर प्रजापति भगवान (ब्रह्मा) बोले, 'तुमने अन्नदान (कभी) नहीं दिया है, (अतः) मैं तुम्हें खाने को क्या दूँ?'। १३। इस प्रकार विधाता ने (और भी) बहुत बाते कहीं, परन्तु उस राजा ने हठ कर लिया, तो प्रजापति तब क्रुद्ध हो गये। फिर वे क्रोध से युक्त वचन बोले। १४। 'तुम प्रेत होकर अपने ही शरीर का मांस भक्षण करते रहो—वह (शरीर) कभी समाप्त नहीं हो जाएगा।' इस प्रकार पद्मकुमार[1] अर्थात् ब्रह्मा बोले। १५। हे राम, विधाता की बात के अनुसार वह राजा भूत बन गया और अपनी देह (का मांस) खाने के लिए इस वन में नित्य आ जाता था। १६। परमेष्ठी विधाता के वचन (के बल) से वह शरीर कभी भी समाप्त नहीं हो रहा था। इस प्रकार कई दिन बीत गये, तो वह राजा व्याकुल हो गया। १७। वह राजा प्रेत (-आत्मा) का रूप धारण करके

१ पद्म-कुमार—भगवान विष्णु की नाभि में उत्पन्न कमल से ब्रह्मा का जन्म हुआ; अतः उसे पद्मकुमार कहा जाता है।

नित्य भक्ष करवा आवतो, धरी प्रेत केरुं रूप,
वळी देव थईने जाय पाछो, स्वर्गमां ते भूप। १८।
सुणो रघुपति अन्न दान मोटुं, सरवथी निरवाण,
अन्न विना अन्य उपायथी, नव रहे कोना प्राण। १९।
ज्यम शांति सम नहि सुख बीजुं, गुरु सम नहि सेव,
उदार सम धनवंत नहि, शंभु समान नहि देव। २०।
ज्यम तिथिमां द्वादशी मोटी, तीरथ मांहे प्रयाग,
नहि मंत्र हरिना नाम सम, ब्रह्मयज्ञ सम नहि याग। २१।
एम दानमां अन्नदान छे, बीजुं न ए सम तुल्य,
जे थकी थाये तृप्त जन, ते माटे एह अमूल्य। २२।
कंई विधि नहि अन्नदानमां, नहि देश काळ सुजाण,
क्षुधार्थीने आपवुं, नहि पात्रनुं परमाण। २३।
ते माटे हो सीतापति, महिमा घणो अन्नदान,
पेलो राय नित्ये मांस भक्षी, बेसी जाय विमान। २४।
एक समे प्रार्थना करी, पूछ्युं विधिने राय,
महाराज, आवुं करम मारुं, कहो केम मुकाय ? । २५।

नित्य भक्षण करने के लिए आ जाता था और फिर देव होकर स्वर्ग में लौट जाता था। १८। हे रघुपति, सुनिए, अन्न-दान सबसे परे, बड़ा है। बिना अन्न के किसी अन्य उपाय से किसी के भी प्राण नहीं रह सकते। १९। जिस प्रकार शान्ति के समान कोई दूसरा सुख नहीं है, गुरु के समान कोई सेव्य (सेवा करने योग्य) नहीं होता, उदार के समान कोई (सच्चा) धनवान नहीं होता, शिवजी के समान कोई अन्य देवता नहीं है, जिस प्रकार तिथियों में द्वादशी बड़ी (महिमाशाली मानी जाती) है, तीर्थ-स्थलों में प्रयाग (श्रेष्ठ माना जाता) है, हरि के नाम-मंत्र के समान कोई और मन्त्र नहीं है, ब्रह्म-यज्ञ के समान कोई और यज्ञ नहीं है, उसी प्रकार (समस्त) दानों में अन्न-दान (सर्वोपरि) है, दूसरा कोई (दान) इसके तुल्य (समान) नहीं है। उससे लोग तृप्त हो जाते हैं, इसलिए वह अनमोल (माना जाता) है। २०-२२। अन्न-दान (करने) की कोई (विशिष्ट) विधि नही है; समझ लीजिए कि उसका कोई देश और काल (निर्धारित) नहीं है। (बस) वह भूखे को देना है—उसमें पात्र (-अपात्र) का कोई अन्य प्रमाण नहीं है। २३। इसलिए हे सीतापति, अन्न-दान की महिमा बड़ी है। वह राजा नित्य मांस खाकर विमान में बैठकर जाता था। २४। एक समय उस राजा ने प्रार्थना करते हुए

त्यारे प्रजापतिने दया आवी, बोल्या स्नेह वचन,
अगस्त्यनां दर्शन थकी, तृप्ति थशे राजन। २६।
एवां वचन सुणी धाता तणां, मुज पासे आव्यो राय,
दुःख निवेद्युं पोतातणुं, कर जोडी लाग्यो पाय। २७।
में हाथ मूक्यो शीश तेने, सुणी श्रीभगवान,
तव भक्तिना परतापथी, आप्युं अभे वरदान्। २८।
क्षुधानिवरती ते तणी, थयो सदा तृप्ति प्राण,
टळी गयुं प्रेततणुं तदा, सुख पामियो निरवाण। २९।
ते राय पासे हतां कंकण, विधि निरमित जेह,
मने आपीने गयो स्वर्गलोके, सुणो राघव तेह। ३०।
ते में तमने आपियां, रघुपति कंकण आज,
कर्युं पान अमृत तणुं भूपे, सुणो श्रीमहाराज। ३१।
एवां वचन सुणी मुनिवर तणां, थयां प्रसन्न श्रीरघुनाथ,
वळी प्रश्न बीजो पूछियो, कुंभज मुनिनी साथ। ३२।

विधाता से पूछा, 'हे महाराज, मेरा यह कर्म किस प्रकार छुड़ाया जाएगा। २५। तब प्रजापति को (उस पर) दया आ गयी, तो वे स्नेह-युक्त वचत बोले, 'हे राजा, अगस्त्य ऋषि के दर्शन करने पर तुम्हें तृप्ति हो जाएगी।'। २६। विधाता के ऐसे वचन सुनते ही वह राजा मेरे पास आ गया; उसने अपना दुःख निवेदन किया और वह हाथ जोड़कर (मेरे) पाँव लग गया। २७। मैंने उसके सिर पर हाथ रखा और कहा, हे श्रीभगवान, सुनिए; आपकी भक्ति के प्रताप से मैंने उसे अभय का वरदान दिया। २८। (फलतः) उसकी क्षुधा-निवृत्ति हो गयी (उसकी भूख मिट गयी) और उसके प्राण तृप्त हो गये। तब उसका प्रेत (-आत्मा) स्वरूप टल गया और वह अन्त में सुख को प्राप्त हो गया। २९। उस राजा के पास ये कंकण थे, जो विधाता द्वारा निर्मित थे। हे राघव, सुनिए, वह राजा मुझे (कंकण) देकर स्वर्ग-लोक चला गया। ३०। हे रघुपति, आज मैंने वे कंकण आपको दिये हैं। श्रीमहाराज, सुनिए। उस राजा ने (स्वर्ग में) अमृत-पान कर लिया।'। ३१। मुनिवर कुम्भज अगस्त्य के ऐसे वचन सुनकर श्रीरघुनाथ प्रसन्न हो गये। फिर उन्होंने उनसे दूसरा प्रश्न कर लिया। ३२।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

कुंभजऋषिने रामे पूछ्यो, प्रश्न तेणी वार रे,
ते श्रोताजन सहु सांभळो, कहुं तेनो करी विस्तार रे। ३३।

उस समय राम ने कुम्भज मुनि (-अगस्त्य) से एक प्रश्न किया। हे समस्त श्रोताजनो, सुनिए। मैं विस्तार करते हुए उसे बताता हूँ। ३३।

* * *

अध्याय—२२ (श्रीराम-अगस्त्य-संवाद, दण्डकारण्य की उत्पत्ति सम्बन्धी कथा)

राग मारु

श्रीअवधबिहारी अगस्त्यने पूछे, कहो मुनिवर वात,
आ वनकेरुं नाम पड्युं क्यम, दंडकारण्य विख्यात ? । १ ।
पूरवतणी उत्पत्ति एनी, कहो सकळ विस्तार,
श्रीरामनां एवां वचन सुणी, बोल्या मित्रावरुणकुमार। २ ।
सुणो राम आ ठामे हतो, एक दंडक नामे देश,
तेनो विस्तार शत जोजननो, राय दंडक नामे नरेश। ३ ।
ते सूरजवंशी मनुपुत्र ज कहिये, इक्ष्वाकु जेनुं नाम,
तेनो पुत्र एक दंडक राजा, राज करे अभिराम। ४ ।

अध्याय—२२ (श्रीराम-अगस्त्य-संवाद, दण्डकारण्य की उत्पत्ति सम्बन्धी कथा)

श्रीअवध-विहारी राम ने अगस्त्य से पूछा, 'इस वन का यह विख्यात नाम दण्डकारण्य कैसे पड़ गया ? हे मुनिवर, मुझे यह बात बताइए। १। पूर्वकाल में में इसकी उत्पत्ति कैसे हुई—यह सब विस्तार से कहिए।' श्रीराम के ऐसे वचन सुनकर मित्रावरुण[1] के पुत्र मुनि अगस्त्य बोले। २। 'हे राम, सुनिए। इस स्थान पर दण्डक नामक एक देश था। उसका विस्तार सौ योजन था। उसका दण्डक नामक राजा था। ३। वह सूर्य-वंशीय था। जिसका नाम इक्ष्वाकु था, वह मनु ही का पुत्र था। उस (इक्ष्वाकु) का एक दण्डक नामक पुत्र राजा के रूप में यहाँ भली-भाँति राज्य कर रहा था। ४। वह राजा एक समय मृगया के लिए वन में

१ मित्रा-वरुण—मित्रावरुण नामक ऋषि का वीर्य उर्वशी को देखने पर स्खलित हुआ और एक कमल तथा कुश पर गिर गया; इससे अगस्त्य और वसिष्ठ की उत्पत्ति हुई। कुम्भ में उत्पन्न होने के कारण अगस्त्य कुम्भज, घटोद्भव कहाते है। 'अगस्त्य' शब्द का अर्थ है अगं। अर्थात् पर्वतों का स्थम्भन करनेवाला।

ते समे एक वनमांहे नीकळ्यो, मृगया कारण राय,
त्यां मुनिवरना आश्रम बहु दीठा, पवित्र सकळ शोभाय। ५ ।
ते आश्रम जोतो आव्यो राजा, भृगुना आश्रममांहे,
अति सुंदर शोभा जोईने राजा, बेठो घडी एक त्यांहे। ६ ।
त्यारे भृगु ऋषि घरमांहे हता नहि, करवा गया'ता स्नान,
एक कन्या ऋषिनी कुंवारी हती, महा रूपवंती गुणवान। ७ ।
ते भृगुतनया दश वरस तणी, तेनुं आरज्या एवुं नाम,
ते जोईने राजा मोह्यो तत्क्षण, प्रगट थयो मन काम। ८ ।
पछी स्थळ एकांत जोई जोरावरी, राय संग कर्यो तेणी वार,
ते कन्या पडी त्यां मूर्च्छित थईने, करती हाहाकार। ९ ।
त्यारे लज्जा पाम्यो दंडक राजा, अश्वे थयो अस्वार,
उतावळो निज पुरमां आव्यो, भूल्यो विवेक विचार। १० ।
हावे भृगु ऋषि स्नान करी घेर आव्या, दीठो महा उत्पात,
पछी चितातुर थई द्विज बाळकने, पूछी मुनिए वात। ११ ।
त्यारे तेणे कह्युं एक राय आव्यो'तो, अश्व बेसीने आंहे,
ते तुरी बारणे बांधी पेठा, तमारा आश्रम मांहे। १२ ।

निकल गया। उसने वहाँ बड़े-बड़े मुनियों के अनेक आश्रम देखे। वे समस्त पवित्र तथा शोभायमान थे। ५। उन आश्रमों को देखते हुए राजा, भृगु ऋषि के आश्रम आ गया। (वहाँ की) अति रम्य शोभा देखकर वह राजा एक घड़ी वहाँ बैठ गया। ६। तब भृगु ऋषि तो घर में नहीं थे। वे स्नान करने गये थे। उस ऋषि के एक बड़ी रूपवती तथा गुणवती कुमारी कन्या थी। ७। भृगु ऋषि की वह कन्या दस वर्ष की थी। उसका नाम आर्या था। उसे देखते ही राजा, उस पर तत्क्षण मोहित हो गया और उसके मन में काम विकार उत्पन्न हो गया। ८। फिर उस स्थान को एकान्त देखकर राजा ने उस समय बलात् उसके साथ सम्भोग किया। (फल-स्वरूप) वह कन्या मूर्च्छित होकर वहाँ गिर पड़ी और (फिर सचेत हो जाने पर) हाहाकार करने लगी। ९। तब दण्डक राजा लज्जा को प्राप्त हो गया। वह घोड़े पर आरूढ़ हो गया और शीघ्रता से अपने नगर में आ गया। वह विवेक-विचार भूल गया था। १०। अब भृगु ऋषि (जब) स्नान करके घर आ गये, तो उन्होंने उस महान उत्पात को देखा। फिर चिन्तातुर होकर उस ब्राह्मण (भृगु) ने अपनी बालिका से वह बात पूछी। ११। तब उसने कहा, 'घोड़े पर बैठकर कोई एक राजा यहाँ आ गया था। अपने घोड़े को द्वार पर

पछी उतावळो ते नीकळी नाठो, करम करी राजन,
एवां वचन सुणीने भृगु ऋषि कोप्या, रक्त थयां लोचन। १३।
जे पापीए मुज आश्रममां आवी, करम कर्युं अघटित,
ते राय बळीने भस्म थजो, तेनुं नग्र राजकुळ सहित। १४।
द्रव्य देश पशु मनुष्य वृक्ष, वळी काष्ठ धातु पाषाण,
ज्यां लगी एनुं राज होय, ते भस्म थजो निरवाण। १५।
एम भृगुना मुखथी वचन नीकळ्युं, जेवी शेषमुख ज्वाळ,
ते कह्या प्रमाणे देश राय, बळी भस्म थयो तत्काळ। १६।
ते दिवसथी देश सकळ थयो, उज्जड शत जोजन,
पशु पक्षी तरु मनुष्य ठरे नहि, न मळे तृण जळ अन्न। १७।
सुणो राघव एम करतां वीत्यां, संवत्सर शत सात,
त्यां लगी रायनो देश सकळ, ते शून्य पड्यो साक्षात्। १८।
पछी एक समे विंध्याचळ पासे, आव्या नारद मुन्य,
ते गिरिने परस्पर क्लेश करावा, बोल्या कपट वचन। १९।
अल्या तुज करतां घणो मेरु ऊंचो, तुं नीचो निरवाण,
एवी विरोध वात कहीने त्यांथी, चाल्या वीणापाण। २०।

बाँधकर उसने आपके आश्रम में प्रवेश किया। १२। अनन्तर ऐसा कर्म करके वह राजा शीघ्रता से निकलकर भाग गया।' ऐसी बातें सुनते ही भृगु ऋषि क्रुद्ध हो उठे। उनकी आँखें लाल-लाल हो गयीं। १३। 'जिस पापी ने मेरे आश्रम में आकर यह अघटित कर्म किया है, वह राजा अपने नगर तथा राज-कुल (परिवार) सहित जलकर भस्म हो जाए। १४। द्रव्य, देश, पशु, मनुष्य, वृक्ष, फिर काष्ठ, धातु, पाषाण—जहाँ तक इसका राज्य हो, वह निश्चय ही भस्म हो जाए।'। १५। भृगु के मुख से ऐसी बात (उस प्रकार) निकल गयी, जिस प्रकार शेष के मुख से (अग्नि-) ज्वाला निकलती है। (फलतः) उनके कहे अनुसार वह देश, वह राजा जलकर तत्काल भस्म हो गया। १६। उस दिन से यह शत योजन (विस्तृत) समस्त देश उजाड़ हो गया। (यहाँ) पशु, पक्षी, वृक्ष, मनुष नहीं टिक पाते; (क्योंकि यहाँ) तृण, जल, अन्न नहीं मिलता। १७। हे राघव, सुनिए। ऐसा करते-करते सात सौ संवत्सर बीत गये। तब तक उस राजा का यह समस्त देश प्रत्यक्ष सूना-सूना होकर रह गया। १८। तदनन्तर एक समय नारद मुनि विन्ध्याचल के पास आ गये। परस्पर कलह उत्पन्न करने के हेतु उन्होंने उस पर्वत से कपट से यह बात कही। १९। 'अरे, तुझसे मेरु पर्वत तो बहुत ऊँचा है,

पछे विंध्याचळ वधवाने मांड्यो, मनमां धरी अहंकार,
तेणे रविमंडळ आच्छाद्युं, थयो सहु लोकमांहे अंधकार । २१ ।
त्यारे देव सकळ मळी वात विचारी, करीए कांई जतन,
मुनि अगस्त्य गुरु ए गिरिना छे, मानशे तेनुं वचन । २२ ।
सुणो राम हुं ते समे रहेतो, वाराणसी मोझार,
सुरपति आदे देव सकळ त्यां, आवी कर्यो पोकार । २३ ।
त्यारे हुं गंगातट मूकी आव्यो, विंध्याचळनी पास,
मने गुरु जाणी साष्टांग कर्यो, गिरि पृथ्वी पडियो तास । २४ ।
त्यारे वचन कह्युं में सुण विंध्याद्रि, सूतो रहेजे आंहे,
हुं तीर्थयात्रा करी आवुं तांहां लगी, रहेजे पड्यो भूमांहे । २५ ।
मुज आज्ञा विना जो ऊठीश अहींथी, सुण विंध्याचळ वाण,
तो भस्म करीश बाळीने, क्षणमां शाप देईने जाण । २६ ।
मुज शाप तणो भय मनमां धरी, गिरि सूतो रह्यो छे आंहे,
ते दिवसनो हुं पण निश्चे, वसियो आ वन मांहे । २७ ।

तू निश्चय ही छोटा है ।' ऐसी विरोध (वैर) उत्पन्न करनेवाली बात कहकर वीणा-पाणि नारद वहाँ से चले गये । २० । अनन्तर विन्ध्याचल ने मन में अहंकार धारण करके (ऊँचा) बढ़ना आरम्भ किया । उससे रवि-मण्डल (तक) आच्छादित हो गया । (फल-स्वरूप) समस्त जगत् में अन्धकार हो गया । २१ । तब समस्त देवों ने इकट्ठा होकर यह बात सोची—कोई यत्न (उपाय) कर लेना चाहिए । अगस्त्य मुनि इस पर्वत के गुरु हैं । (अतः) यह उनकी बात मान जाएगा । २२ । हे राम, सुनिए ! मैं उस समय वाराणसी में रहता था । तो इन्द्र आदि समस्त देव वहाँ आकर सहायता के लिए चीखने-पुकारने लगे । २३ । तब गंगा-तट छोड़कर मैं विन्ध्याचल के पास आ गया । मुझे गुरु मानते हुए उस पर्वत ने साष्टांग नमस्कार किया और वह भूमि पर पड़ा रहा । २४ । तब मैंने यह बात कही—' रे विन्ध्याद्रि, सुन ले । यहाँ (ऐसा ही) सोया हुआ (लेटा हुआ) रह जा । मैं तीर्थयात्रा करके लौट आता हूँ—तब तक भूमि पर पड़ा रहना । २५ । रे विन्ध्याचल सुन ले । विना मेरी आज्ञा के यदि तू उठ जाए, तो यह समझ ले कि मैं तुझे अभिशाप देकर क्षण में जलाते हुए भस्म कर डालूँगा । २६ । मेरे शाप के भय को मन में रखते हुए वह पर्वत यहाँ सोया हुआ रह गया है और उस दिन से मैं भी निश्चय-पूर्वक इस वन में रह गया हूँ । २७ । मैंने इन्द्र से कहकर (उसके द्वारा) ओषधियों से युक्त वर्षा करवा दी । (फलतः यहाँ) अनेक प्रकार की

इंद्रने कहीने औषधि केरो, वरसाव्यो परजन्य,
अनेक प्रकारनी ऊगी वनस्पति, सघन थयुं छे वन। २८।
आ दंडक रायनो देश हतो माटे, दंडकारण्य कहेवाय,
ए उत्पत्ति दंडक वन केरी, कही तमने रघुराय। २९।
एवुं सुणी रघुपति मुनि चरणे लाग्या, आज्ञा मागी त्यांहे,
पछी पुष्प विमानमां बेसीने पोते, आव्या अवधपुरमांहे। ३०।

वलण (तर्ज बदलकर)

अवधपुरमां राम आव्या, करी अगस्त्यनां दरशन रे,
पछे राज चलावे पोतानुं, सहु हरखे पुरना जन रे। ३१।

वनस्पतियाँ उग गयीं और यह वन घना हो गया। २८। यह दण्डक राजा का देश था, इसलिए (यह वन) दण्डकारण्य कहाता है। हे रघुराज, मैंने आपको (इस प्रकार) दण्डक वन की उत्पत्ति बता दी है।'। २९। ऐसा सुनकर रघुपति राम मुनि अगस्त्य के पाँव लग गये और उन्होंने वहाँ (से जाने की) आज्ञा माँगी। फिर पुष्पक विमान में बैठकर प्रभु राम स्वयं अवधपुरी में (लौट) आये। ३०।

अगस्त्य मुनि के दर्शन करके राम अवधपुर में आ गये। फिर अपना राज करने लगे, तो नगर के लोग आनन्दित हो गये। ३१।

* * *

अध्याय—२३ (श्वान-यति-संवाद)

दोहा

सुधासिंधु रघुवीर कथा, पुनित मधुर भरपूर,
मग्न थाय जन मीन मन, जाय ताप दुःख दूर। १।
रामकथा सर मान सम, मुक्ता अरथ अनेक,
चरे विवेकी हंस जन, तीक्ष्ण बुद्धि विषेक। २।

अध्याय—२३ (श्वान-यति-संवाद)

रघुवीर राम की कथा (मानो) पवित्र तथा मधुर अमृत (-से रस) का भरा-पूरा सागर है। (यदि) मनुष्य का मन रूपी मत्स्य उसमें मग्न हो जाए, तो उसके (आधिभौतिक आदि) ताप तथा दुःख दूर हो जाएँगे। १। राम-कथा मान-सरोवर के समान है; उसमें अनेक अर्थ-

रत्नाकर सम हरिकथा, पदपद अर्थ रतंन,
मांहे प्रवेशी काढता, मरजीवा जे जंन। ३ ।
रामराज अवधी नगर, गत दुःख व्याधि वियोग,
चंद्रकळा दिनदिन बढे, सकळ सुमंगळ भोग। ४ ।
न्याय धर्म वरते सदा, राजशिरोमणि साध,
जति चढाव्यो गयंद पर, श्वान तणे अपराध। ५ ।

राग मारु

सुणो श्रोता तजीने प्रमाद, कहुं श्वान जतिनो संवाद,
करे राज्य रघुपतिने त्यांहे, एक संन्यासी रहे पुरमांहे। ६ ।
ते सरजुमां करीने स्नान, आव्यो पुरमां थई सावधान,
चाल्यो राजमारग मोझार, एक श्वान बेठो छे ते ठार। ७ ।
ते वेळा तेणे धुणाव्युं शीश, लाग्या छांटा चढी छे रीस,
जतिए करी क्रोध अपार, कर्या श्वानने दंडना प्रहार। ८ ।

रूपी मोती हैं। उसमें प्रखर तथा विशिष्ट बुद्धि से युक्त विवेकी जन रूपी हंस विचरण करते हैं (और अर्थ रूपी मोतियों को चुगते रहते हैं)। २। हरि-(राम-) कथा रत्नाकर अर्थात् समुद्र के समान है; उसके प्रत्येक पद में अर्थ रूपी रत्न हैं; जो लोग गोता लगाते हुए समुद्र में से मोतियों, रत्नों को निकालनेवाले होते हैं, वे (हरिकथा रूपी) उस (समुद्र) में (डुबकी लगाते हुए) प्रवेश करके अर्थ रूपी रत्नों को निकाल लेते हैं। ३। राम-राज्य ऐसा एक समस्त सीमाओं के परे स्थित नगर है, जिसमें (रहने पर) दुःख, व्याधि और वियोग दूर होकर नष्ट हो जाता है। जिस प्रकार चन्द्र-कला दिन-ब-दिन बढ़ती जाती है, उसी प्रकार समस्त सुमंगलकारी भोग (उस नगर में) बढ़ते ही रहते हैं। ४। राज-शिरोमणि साधु-प्रकृति राजा राम उसमें सदा न्याय और धर्म के अनुसार आचरण करते हैं। उन्होंने (एक समय) एक कुत्ते के विषय में किये अपराध के कारण एक संन्यासी को हाथी पर चढ़ाकर बैठाया था। ५।

हे श्रोताओ, आलस्य छोड़कर सुनिए। मैं श्वान और यति के संवाद को बता रहा हूँ। रघुपति जब राज्य कर रहे थे, तब वहाँ नगर में एक संन्यासी रहता था। ६। वह सरयू नदी में स्नान करके सावधान होकर नगर में आ रहा था। वह राज-मार्ग पर चल रहा था। उस स्थान पर एक कुत्ता बैठा हुआ था। ७। उस कुत्ते ने उस समय अपना मस्तक हिलाया, तो (उससे उछली हुई पानी की) बूंदें (उस संन्यासी के शरीर पर) पड़ गयीं; तब उसे क्रोध आ गया। तब उस संन्यासी ने

श्वान कहे, अल्या शो अधरम ? रामराज्यमां मारे क्यम ?
प्रभु पासे चालो अन्यायी, लीधो देईने राम दुवाई । ९ ।
घंट अदलनी दोरी ज्यांहे, श्वान मुखशुं खेंची त्यांहे,
सभा करीने बेठा श्रीराम, घंटनाद सुण्यो ते ठाम । १० ।
अरे लक्ष्मण, जो तुं आज, कोण आव्यो दुःखी शे काज ?
सुमित्री जई तेडी लाव्या, श्वान संन्यासी बंन्यो आव्या । ११ ।
जतिने बेसाडो आसन, पूछे श्वानने जुगजीवन,
अल्या कहो तमारी वढवाड, शाने काजे करो छो राड । १२ ।
बोल्यो श्वान ते नामी शीश, सुणो सत्य वचन जुगदीश,
हुं बेठो हतो मारगमांहे, जतिए मुने मार्यो त्यांहे । १३ ।
सुणी श्वानवचन अभिराम, संन्यासीने पूछे श्रीराम,
जतिने कहे ब्रह्म अखंड, केम श्वानने मार्यो दंड ? । १४ ।
संन्यासी कहे सुणो भगवान, हुं जतो'तो करीने स्नान;
एणे शीश धुणाव्युं श्रीरंग, अपावन कर्युं मुज अंग । १५ ।

असीम क्रोध-पूर्वक उस कुत्ते पर अपने दण्ड से प्रहार कर दिये । ८ । (इसपर) कुत्ता बोला, 'अरे यह कैसा अधर्म है ? राम-राज्य में (मुझे) आप कैसे पीट रहे हैं । हे अन्यायी, प्रभु के पास चलो ' ऐसा कहकर उसने राम की दुहाई देते हुए उसे अपने साथ लिया । ९ । जहाँ न्यायालय की डोरी थी, वहाँ (जाकर) उस कुत्ते ने अपने मुँह से उसे खींच लिया । उस समय श्रीराम सभा आयोजित करके बैठे हुए थे, तो उन्होंने उस स्थान पर घंटानाद को सुना । १० । (वे बोले—) 'अरे लक्ष्मण, तुम (जाकर) देखो तो, आज कौन आया है, किस कारण से वह दुखी है ? ' (तब) जाकर लक्ष्मण उन्हें बुला ले आया—कुत्ता और संन्यासी दोनों (वहाँ) आ गये । ११ । जगज्जीवन राम ने यति को आसन पर बैठा लिया और कुत्ते से कहा, 'अरे अपना झगड़ा—तो कह दो । किस काम के लिए तुम झगड़ा कर रहे हो ? ' । १२ । (इसपर) वह कुत्ता सिर झुकाते हुए बोला, 'हे जगदीश, सच्ची बात सुनिए । मैं मार्ग में बैठा हुआ था, तो वहाँ इस यति ने मुझे पीटा ' । १३ । उस कुत्ते की यह बात सुनकर अभिराम श्रीराम ने यति से पूछा । अखण्ड-ब्रह्म राम ने उस यति से पूछा, 'आपने कुत्ते को दण्ड से कैसे (किस कारण से) मारा ? ' । १४ । तो संन्यासी बोला, 'हे भगवान, सुनिए । मैं स्नान करके जा रहा था । हे श्रीरंग, (तब) इसने सिर हिलाया और (उछली हुई बूँदों से) मेरे शरीर को अपवित्र कर दिया । १५ । इस कारण मेरे नित्यकर्म में

नित्य कर्मने लागी वार, ते माटे में कीधो प्रहार,
कहे श्वान सुणो महाराज, करो न्याय अमारो आज । १६ ।
मारे वसवुं मारग मांहे, नहि धाम जे रहीए त्यांहे,
कंई मळे तो करीए अशन, वृषा आतप शीत सहन । १७ ।
करुं ज्यम त्यम देह निर्वाह, पूरव कर्म छूटुं अवगाह,
एक ईश्वर स्वामी अमारो, नथी आशरो अन्य विचारो । १८ ।
ते विश्वंभर पोषण करतो, जंतुमात्रनां पेट ज भरतो,
एने जोई आवतो आ दिश, जाणीने नथी धुणाव्युं शीश । १९ ।
ए तो जातिस्वभाव अमारो, एणे शा माटे मुजने मार्यो ?
जो हुं कोपुं तदा भगवंत, तो ए संन्यासीनो आणु अंत । २० ।
पण में क्षमा राखी मन, दंडप्रहार सह्यो में तन,
हुं जाणुं आवुं रामनुं राज, तेमां क्यम थाये कूडुं काज ? । २१ ।
छे तेवुं हुं बोल्यो तम साथ, घटे तेवुं करो हे नाथ,
श्वाननां सुणी दीन वचन, द्रवीभूत थया भगवंत । २२ ।
बोल्या क्रोध करी श्रीराम, जतिए कर्युं कूडुं काम,
धरी वेष रूडो थई साध, मार्यो पशुने विना अपराध । २३ ।

विलम्ब हो गया । इसलिए मैंने उसपर प्रहार कर दिया ।' (इसपर) उस कुत्ते ने कहा, 'हे महाराज, सुनिए । आप आज हमारा न्याय कीजिए । १६ । मुझे मार्ग पर ही रहना है—मेरे कोई घर तो नहीं है, जिसमें मैं वहाँ रह जाऊँ । कुछ मिलता है, तो खा लेता हूँ । मैं (वहीं) वर्षा, धूप, शीत सहन करता रहता हूँ । १७ । मैं जैसे-तैसे ही देह-निर्वाह अर्थात् उपजीविका कर लेता हूँ और पूर्व-कृत कर्म से मुक्त हो छूट जाता हूँ (जाना चाहता हूँ) । एक ईश्वर ही हमारा स्वामी है; हमारे लिए कोई दूसरा आश्रय नहीं है । १८ । वह विश्वम्भर ईश्वर हमारा पोषण करता है, जन्तु मात्र का पेट भर ही देता है । इन्हें इस स्थान पर आते देखकर तो मैंने—अर्थात् जान-बूझकर तो मैंने सिर नहीं हिलाया था । १९ । यह तो हमारा जाति-गत स्वभाव है, तो इन्होंने मुझे किसलिए मारा ? हे भगवन्, यदि मैं क्रुद्ध हो जाऊँ, तो तब इस संन्यासी का अन्त कर दे सकता हूँ । २० । परन्तु मैंने मन में क्षमा-भावना रखी है—मैंने शरीर पर किये दण्ड-प्रहार को सहन किया है । मैं ऐसा जानता हूँ कि राम का राज्य है, उसमें बुरा काम कैसे हो सकता है । २१ । जैसा है वैसा मैंने आपसे कहा है । हे नाथ, जैसा उचित हो, वैसा आप करें ।' उस कुत्ते के ये दीन वचन सुनकर भगवान राम द्रवित हो गये । २२ । (फिर)

मारो भय नथी धरता मन, शुं थयुं पाम्या उत्तम तन ?
कंपे मारी कटाक्षे काळ, आज्ञा पाळे सदा लोकपाळ । २४ ।
मुज भयथी तपे छे भानु, वायु चंद्र भूमि ने कृशानु,
हुं छुं कर्म तणो फळदाता, को न थाय विमुखनो त्राता । २५ ।
जीव कर्म करे छे जेवुं, भुक्तावुं तेने सुखदुःख तेवुं,
हुं विश्वंभर विश्वनो राय, सहु सृष्टि छे मारी प्रजाय । २६ ।
हुं छुं निग्रह अनुग्रह करता, उद्भव पालण ने संहरता,
शुं करुं धर्यो क्षत्रीमां देह ? माटे धर्म पाळुं छुं एह । २७ ।
करे विप्र कोटी अपराध, तोय में ना दुभाये साध,
छे रघुकुलनी एवी रीति, ना थाये कल्पांते अनीति । २८ ।
ना करुं शिक्षा तो थाय भ्रष्ट, पमाडे रंक जीवने कष्ट,
ते माटे करो एक उपाय, करी सेवकने आज्ञाय । २९ ।

श्रीराम क्रोध-पूर्वक बोले, 'यति ने तो यह बुरा काम किया है । सुन्दर वेश धारण करके और साधु बनकर उन्होंने इस पशु को बिना किसी अपराध के पीटा है । २३ । वे मेरे सम्बन्ध में कोई भय मन में नहीं रखते हैं । वे उत्तम शरीर को प्राप्त हो गये हैं, (फिर भी) उससे क्या हुआ ? मेरे कटाक्ष से काल (तक) काँप उठता है; लोकपाल मेरी आज्ञा पालन करते हैं । २४ । मेरे भय से सूर्य तपता है; वायु, चन्द्र, भूमि और अग्नि (अपने-) अपने धर्म का पालन करते हैं । मैं तो कर्म के फल देनेवाला हूँ । मुझसे विमुख हो जानेवाले का कोई भी रक्षक नहीं हो सकता । २५ । जीव जैसा कर्म करता है, मैं उसे वैसे ही फल का भोग करवाता हूँ । मैं विश्वम्भर (विश्व का भरण-पोषण करनेवाला) हूँ, विश्व का राजा हूँ । समस्त सृष्टि मेरी प्रजा है । २६ । मैं (सबका) नियमन करता हूँ; (सबपर) अनुग्रह करता हूँ । (सबका) उद्भव, पालन और संहार करता हूँ । मैं क्या कर सकता हूँ ? मैंने क्षत्रिय वर्ण में देह धारण की है । इसलिए (क्षत्रिय के) इस धर्म का पालन कर रहा हूँ । २७ । यदि कोई ब्राह्मण कोटि (-कोटि) अपराध करे, तो भी मेरे द्वारा उस भले को नहीं दुखाया जाता । रघुकुल की ऐसी रीति है कि (उसके द्वारा) कल्पान्त (तक) में कोई अनीति नहीं बरती जा सकती । २८ । यदि उसे दण्ड न दूँ, तो (सबको मेरे न्याय के सम्बन्ध में) भ्रम (अनुभव) हो जाएगा । उससे रंक (दरिद्र, निम्न स्तर के) जीवों को कष्ट को प्राप्त कराया जाएगा । इसलिए एक उपाय आयोजित कर लो ।' ऐसा कहते हुए उन्होंने अपने सेवकों को आदेश दिया । २९ । 'इस मन्दमति

ए जतिने चढाओ गयंद, फेरवो पुरमां मतिमंद,
अन्य वरणथी वर अधिकार, पूज्य माटे राखो एनो भार। ३०।
जति ते जे जीते अविवेक, देखे सर्वत्र आत्मा एक,
ना जाणे मुने घटघट वास, त्यारे मिथ्या तेनो संन्यास। ३१।
एवं कहीने मंगाव्यो मातंग, फेरव्यो बेसाडीने उतंग,
एवी शिक्षा करी रघुवीर, राख्यो धर्मपंथ मतिधीर। ३२।
रामराज्यनो एवो न्याय, जेमां अघटित कर्म न थाय,
वारंवार वखाणे लोक, सुणीने जन थाय विशोक। ३३।
चौद लोकमां चाली ख्यात, जति श्वान विरोधनी वात,
एवा राम गरीबनिवाज, स्वामी सकळ तणा सिरताज। ३४।
धरी मनुष्य तणो अवतार, एवा राम भजो नरनार,
एम सहस्र एकादश वर्ष, राम राज कर्युं उत्कर्ष। ३५।

यति को हाथी पर बैठा दो और नगर में घुमा दो। अन्य वर्णों से इसका (ब्राह्मण होने से) अधिकार बड़ा है, वह पूज्य है। इसलिए इसके बड़प्पन की रक्षा करो। ३०। यति वह है, जो अविवेक को जीत लेता है और सर्वत्र एक ही आत्मा को देखता है (अर्थात् सबकी आत्मा में ईश्वर को ही देखता है)। यदि वह मुझे घट-घट में निवास करनेवाले के रूप में नहीं जानता, तो तब उसका संन्यास (ग्रहण करना) मिथ्या है।'। ३१। ऐसा कहकर उन्होंने एक हाथी मँगा लिया और उस यति को उस पर बैठाकर (नगर में) घुमवा लिया। धीर-मति रघुवीर राम ने उस यति को ऐसा दण्ड देकर अपने धर्म-पन्थ का अनुसरण किया। ३२। राम-राज्य का न्याय (-दान) इस प्रकार होता था, जिसमें अघटित कर्म नहीं होता था। लोग इसका बारबार बखान करते थे और उसे सुनकर अन्य लोग शोक-रहित हो जाते थे। ३३। यति और श्वान के वैर-विरोध की बात के द्वारा राम की कीर्ति चौदह[1] लोकों में फैल गयी। राम इस प्रकार दीनों के रक्षक थे, सबके स्वामी तथा मस्तक-मुकुट अर्थात् सर्वश्रेष्ठ थे। ३४। जिन्होंने मनुष्य का अवतार (रूप) धारण किया (और इस प्रकार राज किया) हे नर-नारियो, उनका भजन करो। इस प्रकार राम ने ग्यारह सहस्र वर्ष उत्कर्ष-प्रद राज्य किया। ३५।

---

१ चौदह भुवन—उद्ध्र्व—भूलोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक और सत्यलोक। अधः–अतल, वितल, सुतल, रसातल, तलातल, महातल और पाताल।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

एवुं राज रामे कर्युं अवधपुर, सहस्र एकादश वर्ष रे,
पुत्रनी पेरे प्रजा पाळे, नहि अधर्म केरो स्पर्श रे। ३६।

* * *

इस प्रकार राम ने अवध-पुर में ग्यारह सहस्र वर्ष राज्य किया। उन्होंने प्रजा का पुत्र की भाँति पालन किया। उसमें अधर्म का स्पर्श तक नहीं होता था। ३६।

* * *

अध्याय—२४ (सीता-सीमन्तोत्सव; सीता की वन-गमन सम्बन्धी अभिलाषा)

राग सामेरी

अनिहां रे सुणो श्रोता जन थई सावधान,
करो रूडुं रामकथामृत पान।
जे थकी जन्म-मरण जाये रोग,
सुखे भोगवे परमानंद भोग। १।

ढाळ

भोग परमानंद पामे, वामे जन्म मरण व्यथा,
तें माटे सेवो सर्वदा भाई, अमृतरूपी हरिकथा। २।
महाराज राजाधिराज करता, राज अवधीपुर तणुं,
गुरु मात अनुज वधूजन हरखे, प्रजा सुख पामे घणुं। ३।

अध्याय—२४ (सीता-सीमन्तोत्सव; सीता की वन-गमन सम्बन्धी अभिलाषा)

अब हे श्रोता-जनो, सावधान होकर सुनिए। राम-कथा रूपी सुन्दर (मधुर) अमृत का पान कीजिए, जिससे जन्म-मरण का रोग टल जाता है, अर्थात् जन्म-मरण के चक्कर से छूटकर मुक्ति मिल जाती और (मनुष्य) सुख-पूर्वक परमानन्द का भोग करता है। १।

मनुष्य उससे परम आनन्द के भोग को प्राप्त हो जाता है और उससे जन्म-मरण की व्यथा नष्ट हो जाती है। इसलिए, हे भाइयो, सदा हरि-कथा रूपी अमृत का सेवन कीजिए। २। महाराज राजाधिराज श्रीराम अयोध्यापुरी का राज्य कर रहे थे। (उस राज्य में) गुरु, माताएँ, लघु बन्धु, बधूएँ आनन्दित हो रहे थे और प्रजा बहुत सुख को

एवुं राज निरविघ्न रामनुं, ते सुर वखाणे स्वर्गमां,
जे सुख पामे अवधवासी, ते नथी अपवर्गमां । ४ ।
केटलाक दिन वही गया पूंठे, आव्यो समय सोहामणो,
सगर्भा सीताजी थयां, आनंद वाध्यो अति घणो । ५ ।
जे जगतमाता प्रणवरूपिणी, जनकतनया शुभमति,
ते वैदीहीए गर्भ धरियो, अधिक तन शोभा सती । ६ ।
पंचमासी तणी रक्षा, सीताने बांधी तदा,
सहु अवधमां आनंद वरत्यो, सोहलो मंगळ सदा । ७ ।
ते समे आवी वसंत ऋतु, वन वृक्ष फूल्यां अति घणां,
मकरंद लेवा मधुप गुंजे, पक्षी शब्द सोहामणा । ८ ।
कुसुमित किंशुक शोभता, त्रिविधि पवन रुचिकर वहे,
मोरिया आम्र अति घणा, शुक पिक शब्द मधुर कहे । ९ ।
ऋतुराजमां क्षिति तणो रस, तरुशाखाए प्रसर्यो तदा,
नर नारी केरां नेत्रमां, आवी मदन वसियो सदा । १० ।

प्राप्त हो रही थी । ३ । इस प्रकार राम का राज्य विघ्न-रहित था । स्वर्ग में देव भी उसका बखान करते थे । अयोध्या के निवासी, जिस सुख को प्राप्त हो जाते थे, वह मोक्ष (तक) में नहीं है । ४ । कितने ही दिन बीत गये और तदनन्तर सुहावना समय आ गया । सीता गर्भवती हो गयीं, तो (सर्वत्र) आनन्द बहुत अधिक बढ़ गया । ५ । जो (वस्तुतः) जगन्माता, प्रणव-रूपिणी है, उस शुभ-मति जनक-तनया सीता ने गर्भ धारण किया, तो उस सती की देह अधिक शोभायमान हो गयी । ६ । पाँचवें मास में तब सीता को पंचमासी[1] की रक्षा बाँधी गयी । तो समस्त अयोध्या में आनन्द हो गया और सदा की भाँति आनन्दोत्सव सम्पन्न हुआ । ७ । उस समय वसन्त ऋतु आ गयी, तो वन में अति सघन रूप से वृक्ष फूल गये । मधु (-पान कर) लेने के लिए भौंरे गुंजन करने लगे और पक्षी सुन्दर अर्थात् मधुर शब्द बोलने लगे । ८ । प्रफुल्लित होकर पलाश वृक्ष शोभायमान हो गये । मन्द, सुगन्धि-युक्त और शीतल अर्थात् तीनों प्रकार की हवा रोचक ढंग से बहने लगी । आम के पेड़ अति बहुत बौर गये; तोते और कोकिल मधुर स्वर में बोलने लगे । ९ । तब वसंत ऋतु में भूमि का रस वृक्षों की शाखाओं में फैल गया और नर-नारियों की

---

१ पंचमासी—प्रथम वार गर्भ धारण करनेवाली स्त्री के गर्भ के पाँचवें मास में किया जानेवाला एक लौकिक संस्कार; इसमें गर्भवती की कोंछ भरते हैं, उसे कुछ धन, वस्त्र आदि देते हैं और एक प्रकार की राखी बाँधते हैं ।

एवी वसंत ऋतुनी शोभा जोईने, रघुपति तत्पर थया,
श्रीजानकीने संग लेई वन, क्रीडा करवाने गया। ११।
कुसुमित वन एकांत स्थळमां, विराज्या रघुकुळमणि,
जनकतनया संग शोभे, लीला करता अति घणी। १२।
ते समे हास्यविनोदमां, प्रभु बोल्या अति हरखे करी,
अरे प्रिये! तुं माग्य मुजशुं, कामना मनमां धरी। १३।
जे इच्छा होय ते करुं पूरण, प्रसन्न थई कहुं छुं तुने,
तारुं स्वरूप गुण लावण्य जोई, अति हेत ऊपन्युं छे मुने। १४।
त्यारे हसी बोल्यां मधुर वचने, सीताजी तेणे समे,
हुं जाणे वनमां जई रहुं, मुज चित्त विषे एवुं गमे। १५।
प्रभु पंच रात्री वन रही, ऋषिपत्नीनां दरशन करुं,
एवी इच्छा मुजने थाय छे, ते स्वामी तमने कहुं खरुं। १६।
त्यारे राम कहे हो वैदेही, वर्ष चतुर्दश वन रही,
वन वेदना पामी घणुं, तोये हजु तृप्ति थई नहीं? । १७।
पछे भविष्य आगलुं विचारी, रघुवीर बोल्या थई दुःखी,
अरे अवश्य तुजने मोकलीश, वन जोवा कारण विधुमुखी। १८।

आँखों में कामदेव आकर नित्य प्रति बस गया। १०। वसन्त ऋतु की ऐसी शोभा देखकर रघुपति राम तैयार हो गये और सीता को साथ में लेकर वन-क्रीड़ा करने के लिए चले गये। ११ रघुकुलमणि श्रीराम फूलों से भरे-पूरे उस वन में एकान्त स्थान पर विराजमान हो गये। सीता उनके साथ शोभायमान थी। वे (दोनों) बहुत लीला (क्रीड़ा-विहार) करने लगे। १२। उस समय हास्य-विनोद में प्रभु राम अति आनन्द-पूर्वक बोले, 'अरी प्रिया अपने मन में धारण की हुई कामना मुझसे (पूरी कराने के हेतु) कह दो। १३। तुम्हारी जो इच्छा हो, उसे मैं पूर्ण करूँगा। मैं प्रसन्न होकर यह कह रहा हूँ। तुम्हारे रूप, गुण और लावण्य को देखते हुए मुझे (तुम्हारे प्रति) बहुत स्नेह उत्पन्न हो गया है।'। १४। तब उस समय सीता हँसते हुए मधुर शब्दों में बोली, 'मान लो, मुझे लग रहा है कि मैं वन में जाकर रह जाऊँ। १५। हे प्रभु, पाँच रातों तक वन में रहते हुए ऋषि-पत्नियों के दर्शन कर लूँ। हे स्वामी, मैं आपसे सच कह रही हूँ कि मुझे ऐसी इच्छा हो रही है।'। १६। तब राम ने कहा, 'हे वैदेही, तुम चौदह वर्ष वन रही थीं; वन में बहुत वेदना (दुःख) को प्राप्त हो गयी थीं; फिर अब भी तृप्ति नहीं हो गयी?'। १७। तदनन्तर आगे की होनी का विचार

एवुं कही पछी आव्या मंदिर, सीता साथे रघुपति,
ते बीजुं कोई जाणे नहि, जे गहन ईश्वरनी गति । १९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

गति ईश्वरनी गहन छे, ते नव जाणे को जन रे,
कहे दास गिरधर सुणो श्रोता, हावे सीता जाशे वन रे । २० ।

करते हुए राम दुःखी होकर बोले, 'अरी चन्द्र-मुखी, मैं वन देखने के हेतु तुम्हें वन में अवश्य भेज दूंगा ।' । १८ । ऐसा कहने के पश्चात् राम सीता-सहित अपने प्रासाद में आ गये । ईश्वर की जो गहन गति है, उसे कोई नहीं जान सकता । १९ ।

ईश्वर की गति गहन होती है । उसे कोई भी मनुष्य नहीं जान पाता । कवि गिरधरदास कहते हैं, हे श्रोताओ, सुनिए, अब सीता वन में जाएगी । २० ।

* * *

अध्याय—२५ (लोकापवाद को सुनकर राम द्वारा सीता को वन में छोड़ आने का लक्ष्मण को आदेश देना)

राग धन्याश्री

मंदिर आव्यां सीता ने राम जी,
पछी पोते विचार्युं पूरणकाम जी ।
तेडाव्या नगरना रक्षक जेह जी,
चोकीवाळा फरता तेह जी । १ ।

ढाळ

जे फरता नित्ये नग्रमांहे, चोकीवाळा ज्यांहे,
तेने पासे तेडी पूछता, पोते रघुपति त्यांहे । २ ।

अध्याय—२५ (लोकापवाद को सुनकर राम द्वारा सीता को वन में छोड़ आने का लक्ष्मण को आदेश देना)

सीता और राम अपने प्रासाद में (वन से लौट) आये । अनन्तर स्वयं पूर्णकाम राम ने (कुछ) विचार किया और नगर के जो रक्षक थे, उनमें से उन पहरेदारों को बुला लिया, जो (समाचार प्राप्त करने के हेतु इधर-उधर) घूमते रहते थे । १ ।

कहो भाई, पुरना लोक सरवे, चाले छे निज धर्म;
ते सुखी छे के दुःखी छे, मुजने कहो ते मर्म । ३ ।
वळी राजा छुं हुं नग्रनो, मने निंदे वंदे कोय;
को रूडी भूंडी वात मारी, करे छे पुर सोय ? । ४ ।
ते जथारथ मुजने कहो, नव लावशो मन लाज;
त्यारे ग्रामरक्षक बोलिया, तमे सुणो श्रीमहाराज । ५ ।
पुरमांहे लोक सकळ सुखी, नथी दुःख रोग विजोग;
निज धर्म पाळे प्रजा सहु, मनवांछित भोगवे भोग । ६ ।
सत्कीर्ति स्तवन करे तमारी, परम भक्त सुजाण,
परनिंदा परधन परत्रिया, स्वपने नहि निरवाण । ७ ।
पण एक अघटित वात सुणी, प्रभु कहेतां आवे लाज,
तमो खरुं पूछ्युं माटे कहुं छुं, प्रगट करीने लाज । ८ ।
एक रजक रहे छे पुर विषे, महा दुष्ट पापी जन,
तेणे त्रियाने ताडन करी, कांई द्वेष आणी मन । ९ ।

जो नगर में नित्य घूमते थे, वे प्रहरी जहाँ थे, वहाँ से उनको स्वयं रघुपति राम ने अपने यहाँ पास बुलाकर पूछ लिया । २ । 'हे भाइयो, कहो कि नगर के सब लोग अपने-अपने धर्म के अनुसार चल रहे हैं (अथवा नहीं) । वे सुखी है अथवा दुःखी हैं—मुझसे यह मार्मिक बात कह दो । ३ । इसके अतिरिक्त, मैं नगर का राजा हूँ । मेरी प्रशंसा करता हो, तो कोई मेरी वन्दना करता हो (मेरी प्रशंसा करता हो ।) नगर में कोई मेरे बारे में भली-बुरी बात करता हो । वही यथार्थ रूप में मुझसे कह दो—मन में कोई लज्जा मत अनुभव करो ।' तब ग्राम-रक्षक बोले, 'श्रीमहाराज, आप सुनिए । ४-५ । नगर में समस्त लोग सुखी है, (किसी को) कोई दुःख, रोग अथवा (प्रियजनों का) वियोग नहीं है । समस्त प्रजा अपने-अपने धर्म का पालन कर रही है और मनोवांछित भोगों का उपभोग कर रही है । ६ । वह आपकी सत्कीर्ति की स्तुति कर रही है, वह आपकी परम भक्त है, सुजान है । वह परनिन्दा नहीं करती । निश्चय ही स्वप्न तक में वह परधन तथा पर-स्त्री को नहीं ला रही है । ७ । परन्तु मैंने एक अघटित बात सुनी है । हे प्रभु, उसे कहते हुए मुझे लज्जा आ रही है । आपने मुझे सच्ची बात पूछी (कहने को कहा), इसलिए मैं आज (अभी) उसे प्रकट (स्पष्ट करके, स्पष्ट रूप से) कह रहा हूँ । ८ । नगर में कोई एक धोबी रहता है; वह महा दुष्ट तथा पापी मनुष्य है । मन में कुछ द्वेष धारण करके उसने अपनी स्त्री को पीट

ते रिसाई निज पियेर गई, रही पिताना घरमांहें,
तेणे फरी तेडी नहि तेने, वीत्या बहु दिन त्यांहे। १०।
पछे एक समे तेनो पिता, ग्रही पुत्री केरो हाथ,
मूकवा आव्यो जामात्रने घेर, विनय करी ते साथ। ११।
त्यारे रजक क्रोधे बोलियो, निज श्वशुर प्रत्ये वाण,
एने मारे मंदिर राखुं नहि, जो जाय मारा प्राण। १२।
हुं ते राम नहि जे रावणने घेर, स्त्री रही खट मास,
पाछी तेने लावी संघरी, पड्यो मोह-विषयने पास। १३।
ज्यम रामे राखी सीताने, एम हुं न राखुं ए नार,
लांछन लागे मारा कुळमां, करे सहु धिक्कार। १४।
अमो शुद्ध जाति रजकनी, जगतना कहाडुं डाघ,
मुज शिर उपर चढे कलंक जो, ए स्त्रीशुं करुं अनुराग। १५।
हुं लंपट नहि कांई राम जेवो, नहि राखुं घरमांहे,
मारे एनुं मुख जोवुं नहि, ज्यांहां लगी जीवुं आंहे। १६।
महाराज, ते चंडाळ एवं, बोल्यो दुष्ट वचन,
एवुं सुणी श्रीरघुवीरने, घणो खेद उपन्यो मन। १७।

लिया। ९। (फलतः) वह क्रुद्ध होकर अपने पीहर चली गयी और (वहीं) अपने पिता के घर में रह रही थी। उसने भी उसे (अपने घर) पुनः नहीं बुला लिया। (इस स्थिति में) वहाँ बहुत दिन बीत गये। १०। अनन्तर एक दिन अपनी कन्या का हाथ पकड़े हुए उसका पिता उसे दामाद के घर छोड़ देने के लिए आ गया और उसने उससे (इस सम्बन्ध में) विनती की। ११। तब वह धोबी अपने ससुर से क्रोध से यह बात बोला—' यद्यपि मेरे प्राण भी जाएँ, तो भी मैं इसे अपने घर में नहीं रखूँगा। १२। मैं वह राम तो नहीं हूँ, जिसने जो स्त्री रावण के घर छः मास रह गयी थी, उसे फिर से लाकर (घर में रखते हुए) अपना लिया और जो मोह-विषय में पड़ गया है। १३। जिस प्रकार, राम ने सीता को रख लिया, उस प्रकार मैं इस स्त्री को नहीं रख लूँगा। (यदि रख लूँ तो) मेरे कुल में कलंक लग जाएगा और सब मेरा धिक्कार करेंगे। १४। धोबी की शुद्ध जातिवाला हूँ; मैं जगत के दाग छुड़ाता हूँ। यदि इस स्त्री से मैं प्रेम करूँ, तो मेरे सिर कलंक लग जाएगा। १५। मैं राम जैसा कुछ लम्पट तो नहीं हूँ—मैं (इसे) घर में नहीं रख सकता। जहाँ तक मैं जीवित रह जाऊँ, तब तक मुझसे इसका मुख नहीं देखा जाएगा। १६। हे महाराज, वह चण्डाल ऐसी दुष्ट बात

ते रजकना दुर्वाक्यथी, घणुं रुदे तप्युं रणधीर,
पछे एकांत जई प्रभुए बोलाव्या, पासे लक्ष्मण वीर। १८।
अरे भ्रात, सुण एक बात कहुं, कोई जाणे नहि ज्यम आंहे,
रथमां बेसाडी सीताने, मूकी आव्य तुं वनमांहे। १९।
आपणे लाव्या लंकाथी श्रीय, मारी दशमुख एव,
अग्नि प्रवेशी शुद्ध थई, तेना साक्षी छे मुनि देव। २०।
ए गंगाजळ जेवी निर्मळ छे, सहु जाणे आडे अंक,
पण दुष्ट रजके महेणुं दीधुं, माथे चढाव्युं कलंक। २१।
ते माटे सीता में तजी, हुं कहुं सत्य वचन,
बोले कठण वायक लोक ते, सहेवाय नहि में मन। २२।
एवां वचन सुणीने सुमित्रीने, लागी नखशिख झाळ,
ए रजक एवुं बोले क्यम ? एनी जीभ छेदुं तत्काळ। २३।
ए दुष्ट केरां वचनथी, क्यम तजाय सीता आज ?
ए अज्ञाने बोल्यो हशे, माटे विचारो महाराज। २४।
पाखंडी दुर्मति वेद निंदे, पंडित न करे त्याग,
वळी राजहंस तजे नहि, जो मुक्ता निंदे काग। २५।

बोला।' ऐसा सुनते ही श्रीरघुवीर राम के मन में बहुत खेद उत्पन्न हो गया। १७। उस धोबी के दुष्ट वचन से रणधीर प्रभु राम का हृदय बहुत तप्त हो गया। अनन्तर एकान्त में जाकर उन्होंने अपने पास भाई लक्ष्मण को बुला लिया। १८। (वे बोले-) अरे भाई, सुनो, एक बात (इस प्रकार) कह रहा हूँ, जिस प्रकार यहाँ उसे कोई जान नहीं पाए। सीता को रथ में बैठाकर तुम वन में छोड़कर आ जाओ। १९। रावण को मारकर ही हम सीता को लंका से लाये हैं। वह अग्नि में प्रविष्ट होकर शुद्ध हो गयी, इसके साक्षी मुनि और देव हैं। वह गंगा-जल जैसी निर्मल है—इसे सब (लोग) सर्वोपरि जानते है। परन्तु एक धोबी ने ताना दिया है और हमारे सिर पर कलंक लगा दिया है। २०-२१। इसलिए मैंने सीता को छोड़ दिया है—मैं यह सच्ची बात कह रहा हूँ। लोग कठोर बात बोलेंगे, उसे मेरे मन द्वारा सहा नहीं जा पाएगा'। २२। ऐसे वचन सुनने पर लक्ष्मण के नख से चोटी तक आग लग गयी। (वह बोला—) 'यह धोबी ऐसा कैसे बोल रहा है ? मैं तत्काल उसकी जीभ को छेद डालता हूँ। २३। उस दुष्ट की बातों से हमारे द्वारा सीता को आज कैसे छोड़ दिया जाए ? वह तो अज्ञान से बोला होगा। इसलिए हे महाराज, विचार कर लीजिए। २४।

दादुर निंदे कमळने, शीलीमुख तजे न सरोज,
कायर निंदे शूरने पण, तजे नहि तन ओज । २६ ।
कुबुद्धि निंदे संतने, पूजे विवेकी तेह,
वळी तस्कर निंदे चन्द्रने, पण चकोर न तजे स्नेह । २७ ।
एम गुणसरिता जानकी, सहसा तजी नव जाय,
ए रजकना लेउं प्राण हवडां, सुणो श्रीरघुराय । २८ ।
आटला दिन दुःख वेठियुं, हवडां थयो विश्राम,
वळी क्लेश क्यां ऊभो करो छो ? क्षमा राखो राम । २९ ।
सहु जगत जाणे जानकीने, परम साधवी रूप,
विना अपराध न घटे तजवी, ते रविकुळ भूप । ३० ।
अपराध कोटी करे को, तम शरण आवे जन,
तो तेने पाळो छो प्रभु, आज शुं विचार्युं मन ? । ३१ ।
जानकी तजतां जगतमां, अपजश थशे महाराज,
अणछतुं कलंक उदे करी, शीद विस्तारो छो आज । ३२ ।

पाखण्डी, दुर्बुद्धि लोग वेदों की निन्दा करते हैं, फिर भी पंडित जन उन (वेदों) का त्याग नहीं करते । इसके अतिरिक्त, यद्यपि कौए मोतियों की निन्दा करते हों, तो भी राजहंस उनको नहीं छोड़ देता । २५ । मेंढक कमल की निन्दा करता हो, तो भी भ्रमर उस कमल का त्याग नहीं करते । कायर शूर की निन्दा करे, तो भी वह (शूर मनुष्य) अपने शरीर की ओजस्विता का त्याग नहीं करता । २६ । कुबुद्धिवाला मनुष्य सन्तों की निन्दा करता है, फिर भी विवेकवान मनुष्य (उनका त्याग नहीं करते और) उनका पूजन ही करते हैं । फिर चोर चन्द्र की निन्दा करता है, फिर भी चकोर अपने (चन्द्र सम्बन्धी) प्रेम को नहीं छोड़ देता । २७ । इसी प्रकार, गुण-सरिता सीता को यकायक नहीं छोड़ा जाए । हे रघुराज, सुनिए । मैं इस रजक के अभी प्राण लूंगा । २८ । इतने दिन हमने दुःख सहन किया, अभी (कुछ) विश्राम हो रहा है, फिर (आप पुनः) क्लेश क्यों खड़ा (उत्पन्न) कर रहे है ? हे राम, क्षमा भावना रखिए । २९ । समस्त जगत् सीता को परम साध्वी के रूप में जानता है । (अतः) हे रविकुल-राज, बिना किसी अपराध के उसका त्याग करना उचित नहीं है । ३० । यदि कोई मनुष्य कोटि (-कोटि) अपराध करे और वह आपकी शरण में आ जाए, तो भी, हे प्रभु, आप (उसे क्षमा करके) उसका पालन करते हैं । (फिर) आपने मन में क्या सोच रखा है । ३१ । हे महाराज, जानकी का त्याग कर देने पर जगत् में

एम अनंते घणां वचन कहीने, नेत्र भरियां नीर,
त्यारे धीरज आपी भ्रातने, पछी बोल्या श्रीरघुवीर। ३३।
अरे लक्ष्मण, ए चतुराई सरवे, जावा दे तुं आज,
ए सीताने मूकी आव वन, कर शीघ्र कहुं ते काज। ३४।
हुं जाणुं छुं ए साधवी छे, धरमधारण धीर,
पण लोकनो अपवाद में, नथी सहेवातो सुण वीर। ३५।
लोकापवाद थकी जगतमां, डर्यो नहि जे जन,
ते जीवतां मृत जाणवो, धिक्कार तेनुं तन। ३६।
माटे प्रभाते ए जानकी, वन लेई जा निरवाण,
ए विषे बोलीश नहि फरी, मुज सत्य वचन प्रमाण। ३७।
निदान वात कही जदा, पण करी श्रीरघुवीर,
त्यारे लक्ष्मण अणबोल्या, रह्या गई सकळ मननी धीर। ३८।
वारु प्रभु, हुं प्रभाते लेई, जईश श्री वनमांहे,
पछी ऊठी आव्या निज भोवन, शोचे सुमित्री त्यांहे। ३९।

(आपकी) अपकीर्ति हो जाएगी। आप आज उस गुप्त कलंक को प्रकट करते हुए उसे फैला क्यों रहे हैं ? । ३२ । इस प्रकार लक्ष्मण ने बहुत बातें कह दीं। उनके नेत्र अश्रु-जल से भर गये। तब अपने भाई को ढाढ़स बँधाते हुए श्रीरघुवीर फिर बोले। ३३। 'अरे लक्ष्मण, इस समस्त चतुराई को आज जाने दो। इस सीता को तुम वन में छोड़कर आ जाओ। मैं (जो) कह रहा हूँ, वह काम शीघ्रता से कर लो। ३४। मैं जानता हूँ कि यह साध्वी है, धर्म (पतिव्रत-) धारिणी तथा धैर्यशील है। परन्तु, हे भाई सुन लो, मुझसे लोकापवाद नहीं सहा जा रहा है। ३५। जो मनुष्य जगत में लोकापवाद से नहीं डरता, उसे जीवित रहने पर भी मृत समझना है। उसके शरीर को धिक्कार है। ३६। इसलिए जानकी को (कल) प्रभात काल में सचमुच तुम वन में ले जाओ। मेरे वचन को सत्य तथा प्रमाण समझकर इस सम्बन्ध में फिर से न बोलना।'। ३७। श्रीरघुवीर राम ने जब अन्त में प्रण करके बात कह दी, तब लक्ष्मण चुप रहा। उसके मन का समस्त धीरज जाता रहा। ३८। (वह बोला—) 'हे प्रभु, ठीक है मैं श्री (सीता) को लेकर प्रभात काल में वन में जाऊँगा।' तदनन्तर लक्ष्मण उठकर अपने घर चले गये और वहाँ दुःख करते रहे। ३९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सुमित्री करता शोचना, नव निद्रा आवी रात रे,
एम रजनी दुःखमां वही गई, ऊठ्या ज्यारे थयो प्रभात रे। ४०।

* * *

लक्ष्मण शोक करते रहे। उन्हें रात में नींद नहीं आयी। इस प्रकार दुःख में रात व्यतीत हुई और जब प्रातःकाल हो गया, तो लक्ष्मण उठ गये। ४०।

* * *

अध्याय—२६ (सीता-त्याग)

राग भैरव

सीताजीने वन मोकलवा, करी आज्ञा श्याम-शरीर,
रही रात घटिका चार पाछली, ऊठ्या लक्ष्मण वीर। १।
तत्पर थई रथ जोडी आव्या, सीताजीने भोवन,
करी वंदना जनकसुतानी, बोल्या दीन वचन। २।
हे माता! तमने वन देखाडवा, आज्ञा करी महाराज,
माटे सावधान थई रथमां बेसो, चालो जईए आज। ३।
एवां लक्ष्मणजीनां वचन सुणीने, सीता हरख्यां मन,
जाण्युं मारो मनोरथ सफळ कर्यो, मुने प्रसन्न थया भगवन। ४।
उपवनमां एकांत स्थळे, में प्रभुने कह्युं'तुं जेह,
वन जोवानी इच्छा मुजने, सफळ वचन कर्युं तेह। ५।

अध्याय—२६ (सीता-त्याग)

श्याम-शरीरी श्रीराम ने सीता को वन में छोड़ देने का आदेश दिया। जब अन्तिम चार घड़ी रात रह गयी, तो उनका बन्धु लक्ष्मण उठ गया। १। (फिर) सज्ज होकर रथ को जोतकर वह जनक-सुता सीता के भवन आ गया। उसकी वन्दना करके वह दीन वाणी में बोला। २। 'हे माता, महाराज (राम) ने आपको वन दिखाने की आज्ञा दी है। इसलिए सावधान होकर रथ में बैठ जाइए। चलिए, आज ही जाएँ।'। ३। लक्ष्मण के ऐसे वचन सुनकर सीता मन में आनन्दित हो गयी। उसने मान लिया कि भगवान ने मेरे मनोरथ को सफल कर दिया है, मुझपर वे प्रसन्न हो गये हैं। ४। मैंने उपवन में एकान्त में प्रभु से, जो यह कहा था कि मुझे वन में जाने की इच्छा है; उस बात को उन्होंने

एवुं जाणीने हरख्यां मनमां, ऊठ्यां जनककुमारी,
वस्त्राभूषण साथे लीधां, अनेक सामग्री सारी। ६।
रघुपतिचरणे शीश नमावी, बोल्यां मधुर वचन,
महाराज! हुं लक्ष्मणजी साथे, जई आवुं छुं वन। ७।
नेत्रनी समस्या नाथे करी, पण बोल्या नहि मुख वाण,
पछी सरव सामग्री लईने सीता, रथमां बेठा जाण। ८।
त्यारे लक्ष्मणजीए रथ हांक्यो ते, उतावळो तेणी वार,
पुरजन कोईए जाणे नहि, एम नीकळ्यां नग्रनी बहार। ९।
वायुवेगे रथ हांके लक्ष्मण, सीता बेठां ते मांहे,
अपशकुन बहु थाय मारगे, आव्या गंगातट ज्यांहे। १०।
विष्णुचरणजा पार ऊतरी, दक्षिण पंथ पळाय,
आगळ जातां विकट वन आव्युं, त्यारे थई चिंताय। ११।
व्याघ्र वरु ने अजगर मोटा, पक्षी बोले क्रूर,
अंधकार वन परवत संकुळ, नव देखाये सूर। १२।
मनुष्यमात्र को नव मळे वनमां, नहि ऋषिना आश्रम,
विकट पंथ दारुण वन मध्ये, हय पाम्या घणुं श्रम। १३।

सफल कर दिया है। ५। ऐसा समझकर सीता मन में आनन्दित हो गयी और उठ गयी। उसने साथ में वस्त्र, आभूषण तथा अनेक प्रकार की सुन्दर सामग्री ली। ६। फिर रघुपति के चरणों में सिर नवाते हुए वह मधुर वचन (स्वर में) बोली, 'महाराज, मैं लक्ष्मणजी के साथ वन में जाकर (लौट) आती हूँ।'। ७। तो उसके नाथ (पति, स्वामी) ने नेत्रों से संकेत तो किया, परन्तु वे मुख से कोई बात नहीं बोले। अन्त में समझिए कि समस्त सामग्री लेकर सीता रथ में बैठ गयी। ८। तब लक्ष्मण ने रथ को उसी समय शीघ्रता से चला दिया। सीता उस प्रकार नगर से बाहर निकल गयी, जिससे कि नगर का कोई भी मनुष्य यह जान नहीं पाया। ९। लक्ष्मण ने उस रथ को वायुवेग से चला दिया। सीता उसके अन्दर बैठी हुई थी। जब वह गंगा-तट की ओर जा रही थी, तो मार्ग में अनेक अपशकुन हो रहे थे। १०। (विष्णु के चरणों से उत्पन्न) गंगा के पार उतर कर वे दक्षिण दिशा के मार्ग पर चल दिये। आगे जाने पर विकट वन आ गया, तब सीता को चिन्ता होने लगी। ११। (वहाँ) बाघ, भेड़िया, बड़े-बड़े अजगर तथा पक्षी क्रूर अर्थात् कर्कश भयावह स्वर में बोल रहे थे। पर्वतों से संकुल तथा अन्धकार से भरे उस वन में सूर्य दिखायी नहीं दे रहा था। १२। उस वन में न कोई मनुष्य

एवुं भयंकर वन जोई सीता, भय घणुं पाम्यां मन,
पछे गद्‌गद कंठे लक्ष्मण साथे, बोल्यां दीन वचन। १४।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

मन भय पामी गद्‌गद कंठे, बोल्यां सीता वचन रे,
मारा दियरजी मुंने आंहां क्यम लाव्या ? आ तो दीसे दारुण वन रे। १५।

* * *

मिल रहा था, न किसी ऋषि का आश्रम (दीख रहा) था। उस दारुण वन के अन्दर विकट मार्ग में घोड़े भी बहुत श्रम अर्थात् थकावट को प्राप्त हो गये। १३। ऐसे उस भयावह वन को देखकर सीता मन में बहुत भय को प्राप्त हो गयी। फिर गद्‌गद कण्ठ (वाणी) से वह लक्ष्मण से ये दीन वचन बोली। १४।

मन में भय को प्राप्त होते हुए गद्‌गद कण्ठ से सीता दीन वचन बोली, 'मेरे देवरजी, यहाँ कैसे (क्यों) लाये हो ? यह तो दारुण वन दिखायी दे रहा है'। १५।

* * *

अध्याय—२७ (सीता की उक्ति लक्ष्मण के प्रति)

राग शोक रामग्री

हावे जनकसुता शोकातुर थईने बोल्यां, लक्ष्मण साथ वचन रे,
हो दियर जी,
तमो मुजने आंहां क्यम तेडी लाव्या ? आ तो दिसे छे दारुण वन रे,
हो दियर जी। १।
नथी आश्रम मुनिवर केरा, ऊजड वन दीसे रे, हो दि०,
को असुर आवशे आंहे, हावे शुं करीशुं रे ? हो दि०। २।

अध्याय—२७ (सीता की उक्ति लक्ष्मण के प्रति)

अब जनक-सुता सीता शोकातुर होकर लक्ष्मण से यह बात बोली, 'हे देवरजी, तुम मुझे यहाँ कैसे (क्यों) ले आये हो ? यह तो दारुण वन दिखायी दे रहा है। हे देवरजी०। १। हे देवरजी, यहाँ मुनियों के आश्रम नहीं हैं। यह तो उजाड़ वन दिखायी दे रहा है। यहाँ कोई असुर आ जाएगा, तो अब मैं क्या करूँ। हे देवरजी०। २। हे देवरजी, मेरा दायाँ अंग तथा नेत्र, बाहु फड़क रहे हैं। बहुत अपशकुन

मारुं दक्षिण अंग ने नेत्र, भुजा फरके रे, हो दि०,
घणा थाय छे मानशुकन, रुदे मारुं धडके रे, हो दि० । ३ ।
मुने दिवस लागे छे उदास, रवि तेज आछां रे, हो दि०,
आपणे घणो भोगव्यो वनवास, माटे हींडो पाछां रे, हो दि० । ४ ।
मूवां पक्षी बोले छे कराळ, हावे शुं थाशे रे ? हो दि०,
वृक व्याघ्र मारे घणी फाळ, जाणी आवी खाशे रे, हो दि० । ५ ।
नथी संगे को सेवक जन, कोनी हूंफ धरिये रे, हो दि०,
आपण एकलडां आवे वन, फाटीने मरिये रे, हो दि० । ६ ।
मुज अबळानी बुध नरस, में माग्युं एवुं रे, हो दि०;
वेठ्युं दुःख चतुरदश वरस, हवे वन केवुं रे ? हो दि० । ७ ।
कोण जाणे शुं हशे होनार, कर्मगति मारी रे, हो दि०,
तेवो उपजे मन विचार, डहापण जाय हारी रे, हो दि० । ८ ।
रथ पाछो वाळो हो वीर, झाझुं शुं कहिये रे ? हो दि०,
हावे गई मारा मननी धीर, कहो क्यम रहिये रे ? हो दि० । ९ ।
नथी बोलता थई घणी वार, तमो मुज साथे रे, हो दि०,
शुं तजी मुजने प्राणआधार, निरदे थई नाथे रे ? हो दि० । १० ।

हो रहे है। मेरे हृदय में धड़कन हो रही है। हे देवरजी० । ३ । (यहाँ) सूर्य का तेज है, (फिर भी) मुझे दिवस उदास प्रतीत हो रहा है। हमने बहुत वनवास भोग लिया है। इसलिए पीछे लौट जाएं (चले)। हे देवरजी० । ४ । हे देवरजी, ये मुए पक्षी विकराल (स्वर में) बोल रहे हैं। अब क्या होगा ? भेड़िये, बाघ, बड़ी-बड़ी छलाँगें लगाते हैं, मानो आकर खा जाएँगे। हे देवरजी० । ५ । हे देवरजी, कोई सेवक जन साथ में नहीं है। (अब) सहायता के लिए किसका आधार ग्रहण करें ? हम तो अकेले वन में आ गये हैं। (अब) हम मारे दुःख के मर ज़ाएँगे। हे देवरजी० । ६ । हे देवरजी, मुझ अबला की बुद्धि बिगड़ गयी, अर्थात् भ्रष्ट हो गयी, जब कि मैंने ऐसा (वन-गमन) माँग लिया। चौदह वर्ष हमने वन-वास सहन किया है, तो अब यह वन (-वास) कैसा ? हे देवरजी० । ७ । हे देवरजी, कौन जानता है कि क्या होनी है। मेरी कर्म-गति (ऐसी ही) है। तब तो समझदारी के नष्ट हो जाने पर मन में ऐसा विचार उत्पन्न हो गया था। हे देवरजी० । ८ । हे देवरजी, रथ पीछे घुमा दो। हे भाई, बहुत क्या कहें। अब मेरे मन का धीरज (नष्ट हो) गया है। कहो, तो (अब) कैसे रहें। हे देवरजी० । ९ । हे देवरजी, बहुत समय हो गया है (जबसे) तुम

कांई कपट तमारे मन, दीसे मोटी एडी रे, हो दि०,
बाकी शीद लावो आवे वन, एकलडी तेडी रे ? हो दि० । ११ ।
जो न कहो खरेखरी वाण्य, जथारथ जेवुं रे, हो दि०,
तमने रामचरणनी आण्य, करवुं छे केवुं रे ? हो दि० । १२ ।
एवुं सुणी सुमित्री समरथ, कंपाव्या रोम रे, हो दि०,
दूर वन जई राख्यो पछे रथ, ऊतरिया भोम रे, हो दि० । १३ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

भोम ऊतरिया लक्ष्मणजी, एक वृक्ष तळे निरधार रे,
त्यां जनकसुताने उतारी, बेसाड्यां पृथ्वी मोझार रे । १४ ।

मुझसे नहीं बोल रहे हो । मेरे प्राणों के आधार मेरे पति ने निर्दय होकर मुझे क्या त्याग दिया है ? हे देवरजी० । १० । हे देवरजी, तुम्हारे मन में कुछ न कुछ कपट है, जब कि तुम इस प्रकार (घोड़ों को बहुत तेजी से चलाने के लिए) बड़ी एड़ लगाते दिखायी दे रहे हो । नहीं तो, अकेली को बुलाकर तुम मुझे वन में शीघ्रता से इस प्रकार क्यों लाये हो । हे देवरजी । ११ । हे देवरजी, जो जैसी हो, वैसी बात सच्ची-सच्ची यदि तुम न कहोगे, तो तुम्हें राम के चरणों की सौगन्ध है । (कहो) कैसे करना है ? हे देवरजी० । १२ । ऐसा सुनते ही समर्थ लक्ष्मण का रोम-रोम काँप उठा । वन के अन्दर दूर जाकर उसने रथ को (खड़ा) रख दिया और वह भूमि पर उतर गया । १३ ।

भूमि पर एक वृक्ष के तले, लक्ष्मण निश्चय ही उतर गया । फिर सीता को उतारकर उसने उसे भूमि पर बैठा दिया । १४ ।

* * *

अध्याय—२८ (सीता को वन में छोड़कर लक्ष्मण का राम के समीप आगमन)

राग आशावरी

सुमित्रीए सीताजीने भूमि बेसाड्यां, ने परदक्षिणा करी त्यांहे,
साष्टांग नमन करी शिर मूक्युं, जानकीना पदमांहे । १ ।

अध्याय—२८ (सीता को वन में छोड़कर लक्ष्मण का राम के समीप आगमन)

लक्ष्मण ने सीता को भूमि पर बैठा दिया और वहाँ उसकी परिक्रमा की । फिर उसे साष्टांग नमस्कार करते हुए उसके चरणों में उसने

एम नमस्कार करीने पछे लक्ष्मणे, ओचिंतु रडी दीधुं,
अरे माता तमने तज्यां रामे, अघटित कारज कीधुं। २ ।
एक दुष्ट रजकना मे'णा माटे, कर्यो तमारो त्याग,
में घणुं कह्युं पण मान्युं न प्रभुए, उतार्यो अनुराग। ३ ।
हुं शुं करुं माता ? मुजने कीधी, आज्ञा श्रीरघुवीर,
त्यारे तमने हुं वन मूकवा आव्यो, राखी मनमां धीर। ४ ।
एवां लक्ष्मणजीनां वचन सुणी, थई सीताने मूर्छाय,
ज्यम कदळी उपर वीज पडे, वा थाय वज्रनो घाय। ५ ।
ज्यम तेजहीण थाये मुक्ताफळ, पडतां अग्नि मांहे,
एम मूर्छित थईने सीता पडियां, थयां अचेतन त्यांहे। ६ ।
त्यारे वनदेव्या पंचतत्त्वने सोंप्यां, लक्ष्मणे जनककुमारी,
पछे इंद्रजितरिपु रथमां बेठा, थई शोकातुर भारी। ७ ।
पछी रथ हांकीने चाल्या लक्ष्मण, मूकी सीताने वन,
आंसु चोधारे रुदन करंतां, रातां थयां लोचन। ८ ।
एम अवधपुरीमां आव्या सुमित्री, नम्या रामने पाय,
सर्व नग्रमां जाण थयुं जे, रामे तज्यां सीताय। ९ ।

मस्तक रखा। १। ऐसा नमस्कार करने के पश्चात् लक्ष्मण यकायक रो पड़ा। (वह बोला,) 'अरी माँ, राम ने तुम्हारा त्याग किया है। उन्होंने यह अघटित काम किया है। २। एक दुष्ट रजक द्वारा दिये गये ताने के कारण, उन्होंने तुम्हारा त्याग किया है। मैंने उन्हें बहुत बता दिया, परन्तु प्रभु ने उसे नहीं माना और तुम्हारे प्रति प्रेम छोड़ दिया। ३। हे माता, मैं क्या करूँ ? श्रीरघुवीर ने मुझे आदेश दिया है। तब मैं मन में धीरज रखते हुए तुम्हें वन में छोड़ने के लिए आ गया हूँ।' ।४। लक्ष्मण की ऐसी बातें सुनते ही सीता को मूर्च्छा आ गयी। जिस प्रकार कदली पर बिजली गिर जाती हो, अथवा वज्र का आघात हो गया हो, अथवा आग में पड़ जाने पर मोती तेजोहीन हो जाता है, उस प्रकार (लक्ष्मण के वचन रूपी विद्युत या वज्र का उसपर आघात हो गया और) सीता मूर्च्छित होकर गिर पड़ी—वह वहाँ अचेतन हो गयी। ५-६। तब इन्द्रजित के शत्रु लक्ष्मण ने उस जनक-कुमारी सीता को वनदेवियों तथा पंच महाभूतों को सौंप दिया और अनन्तर वह अति शोकातुर होकर रथ में बैठ गया। ७। (इस प्रकार) सीता को वन में छोड़कर लक्ष्मण रथ हाँकते हुए चल दिया। चार-चार धाराओं से आँसू बहाते हुए रोते-रोते उसके नेत्र लाल-लाल हो गये। ८। इस प्रकार रोते-रोते लक्ष्मण अवधपुरी

कौशल्यादिक माता सर्वे, रुदन करे बहु पेर,
रांध्यां अन्न रह्यां अवधमां, शोक पड्यो घेरेघेर । १० ।
हावे नरनारी सहु नग्र तणी, मळी वात करे छे त्यांहे,
शे अपराधे गर्भवती श्रीय, रामे तजी वन मांहे ? । ११ ।
पेला रजकने सर्वे गाळो दे छे, लोक करे धिक्कार,
ए चंडाळ क्यांथी जन्म्यो अवधपुर, देवा दुःख अपार ? । १२ ।
एम अवधवासी शोकातुर सर्वे, सीता तज्यां ज्यारें वन,
ए समे एक संदेह छे मोटो, ते सुणो श्रोता जन । १३ ।
अवधवासी जन सर्वे सुधर्मी, सुमति पुण्य पवित्र,
परम भक्त सीता रघुवरना, वहालुं रामचरित्र । १४ ।
राग द्वेष हिंसा नहि कोने, परनिंदा परद्रोह,
कुतर्क वचन मुखे नव बोले, नहि क्रोध मद मोह । १५ ।
सीताराम पर प्रीति सहुने, जाणे प्राण आधार,
तो ते रामने कुवचन क्यम कहे, स्वप्न विषे निरधार ? । १६ ।

में आ गया और उसने राम के चरणों को नमस्कार किया । (इस समय तक) समस्त नगर को यह जानकारी प्राप्त हो गयी थी कि राम ने सीता का त्याग किया है । ९ । कौसल्या आदि समस्त माताएँ बहुत प्रकार से रुदन कर रही थीं । पकाया हुआ अन्न अयोध्या में (वैसे ही) रह गया (अर्थात् किसी ने भोजन नहीं किया) । घर-घर शोक छा गया । १० । अब वहाँ नगर के सब नारी-नर इकट्ठा होकर (इस सम्बन्ध में) बातचीत करने लगे—किस अपराध से राम ने गर्भवती सीता को वन में त्याग दिया है । ११ । सब लोग उस रजक को गालियाँ दे रहे थे और उसका धिक्कार कर रहे थे । वे बोले ' इस चण्डाल ने अपार दुःख देने के लिए अवधपुर में कहाँ से जन्म लिया ? ' । १२ । जब सीता को वन में छोड़ दिया, तब समस्त अवध-वासी लोग इस प्रकार शोकातुर हो गये । हे श्रोताजनो, सुनिए । इस समय एक बड़ा सन्देह (उत्पन्न हो सकता) है । १३ । अयोध्या के निवासी समस्त लोग सुधर्मी, सुबुद्धि, पुण्यवान, पवित्र थे । वे सीता और रघुवीर राम के परम भक्त थे, उन्हें राम-चरित्र प्रिय था । १४ । किसी को राग-द्वेष, हिंसा-भावना नहीं थी, कोई परनिन्दा तथा परद्रोह नहीं करता था । कोई भी कुतर्क-पूर्ण वचन मुँह से नहीं बोलता था । किसी को क्रोध तथा मद-मोह नहीं अनुभव होता था । १५ । सबको सीता और राम से प्रेम था । वे उन्हें प्राणों के आधार समझते थे । तो फिर उस (रजक) ने राम के सम्बन्ध में दुर्वचन

श्रीरामराज वळी अवधपुरीमां, जन्मनिवासी जेह,
ते रजक एवो क्यम दुष्ट रह्यो छे? ए मोटो संदेह। १७।
जेणे निरभे थईने निंदा करी रामनी, बोल्यो वचन कटु झेर,
सीतानो त्याग कराव्यो एणे, हशे पूरवनुं वेर। १८।
ए संदेह निवरती करवा माटे, कहुं जथारथ जाण;
रजकने वेर सीता साथे, ते कथा छे पद्मपुराण। १९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पद्मपुराणे पाताळ खंडे, शेष वात्सायण संवाद रे,
रामाश्वमेधमां ए कथा छे, सुणो श्रोता तजीने प्रमाद रे। २०।

* * *

कैसे कहे? निश्चय ही उसने स्वप्न में कहा होगा। १६। इसके अतिरिक्त श्रीराम का अयोध्यापुरी में राज्य था। तो जो जन्म से अयोध्या का निवासी है, वह रजक इस प्रकार दुष्ट कैसे रह सकता है। यह बड़ा सन्देह है। १७। जिसने निर्दयता-पूर्वक राम की निन्दा की और विष-भरा कटु वचन कहा, जिसने सीता का त्याग करवा दिया, उसे (सीता के प्रति) पूर्वकाल का वैर था। १८। इस सन्देह का निराकरण करने के हेतु मैं यथार्थ जानकारी कहता हूँ। उस रजक को सीता के प्रति वैर था—इस सम्बन्ध में पद्म पुराण में एक कथा है। १९।

पद्म पुराण के पाताल खण्ड में शेष और वात्स्यायन का संवाद है। 'रामाश्वमेध' में यह कथा है। हे श्रोताजनो, आलस्य छोड़कर उसे सुनिए। २०।

* * *

अध्याय—२९ (रजक की पूर्व-जन्म कथा)

राग धन्याश्री

सुणो श्रोता सहु एके मन जी, पद्मपुराणनी कथा पावन जी,
पाताळ खंडे रामाश्वमेध जेह जी, शेष वात्सायणनो संवाद तेह जी। १।

अध्याय—२९ (रजक की पूर्व-जन्म कथा)

हे श्रोताजनो, आप सब एकाग्र मन से पद्म पुराण की इस पावन कथा को सुनिए। (उस पुराण के अन्तर्गत) पाताल खण्ड में 'रामाश्वमेध' नामक जो प्रकरण है, उसमें शेष और वात्स्यायन का सम्वाद है। १।

ढाळ

संवाद शेष वात्सायण ऋषिनो, रामाश्वमेध कथाय,
गातां सुणतां शीखतां, महा पतित पावन थाय। २।
ज्यारे खट वरसनां हतां सीता, जनकरायने घेर,
कुमारिका सखी साथे रमतां, करतां लीलालहेर। ३।
एक समे वाडीमां गयां, निज साहेली लेई संग,
त्यां सखी साथे द्यूतक्रीडा, रमे नाना रंग। ४।
ते समे सन्मुख वृक्ष पर, बे पक्षी बेठां त्यांहे,
ते शुक शुकी आनंदमां, करे वात मांहोमांहे। ५।
शुक शुकीने श्रवण करावतो, रूडी रामकथा पावन,
त्यारे रमत मूकी सीताजी लाग्यां, सुणवा एके मन। ६।
प्रथमथी रामचरित सहु, कहेवा मांड्युं करी विस्तार,
तादात्म्य सीता श्रवणमां, लागी रह्यां एकतार। ७।
रघुवीर जन्म उछव कथा, बाळ चरित्र क्रतु रक्षाय,
पछे जनकपुर आगमन वळी, धनुभंग श्रीविहीवाय। ८।
केकई वचन प्रस्ताव वन, दशरथ मरण दुःखी लोक,
चित्रकूट भरतागमन, मळिया राम शमन विशोक। ९।

रामाश्वमेध की कथा में शेष और वात्स्यायन ऋषि का सम्वाद है। उसे गाने पर, श्रवण करने पर, सीखने पर महा पतित भी पावन हो जाता है। २। जब जनक राजा के घर सीता छः वर्ष की हो गयी थी, तब वह कुमारिका अपनी सखियों के साथ खेलती थी और आनन्दपूर्वक लीला करती थीं। ३। एक समय अपनी सहेलियों को साथ में लिये हुए वह उद्यान में चली गयी। वहाँ वह अपनी सखियों के साथ द्यूत-क्रीड़ा तथा नाना प्रकार के खेल खेल रही थी। ४। उस समय वहाँ सामने (स्थित) वृक्ष पर दो पक्षी बैठे हुए थे। वे शुक और शुकी आनन्द से आपस में बातचीत कर रहे थे। ५। शुक, शुकी को रम्य और पावन राम-कथा सुना रहा था। तब खेल को छोड़कर सीता एकाग्र मन से वह कथा सुनने लगी। ६। (वह शुक) पहले से लेकर समस्त राम-चरित्र विस्तार से कहने लगा। उसे सुनते हुए सीता उसके साथ एकात्म हो गयी और एकाग्रता से उसमें लगी रही। ७। रघुवीर राम के जन्मोत्सव की कथा, उनका बाल-चरित्र, यज्ञ की रक्षा, अनन्तर मिथिला में आगमन, फिर धनुर्भंग और सीता का विवाह, कैकेयी के वचन से वन की ओर प्रस्थान करना, दशरथ की मृत्यु और उससे लोगों का दुःखी हो जाना,

दंडकारण्य पवित्र करी, पंचवटी कीधो वास,
शूर्पणखा विरूप खरदूखर वध, कृत माया मृगनो नाश । १० ।
त्यारे सीताजीनुं हरण करी, लंका गयो दशानन,
कीरे कथा कही त्यां लगी, पछो रह्यो ग्रहीने मुन्य । ११ ।
ते चरित्र सुणवा जानकी, घणुं थयां आतुर मन,
अधूरी कथा क्यम मूकी एणे ? लागी चटपटी तन । १२ ।
ते वाडीना रखवाळने कह्युं, सीताए ततकाळ,
हे विपिनरक्षक, वृक्ष उपर, नाख हवडां जाळ । १३ ।
आ बे पक्षी ग्रहण करीने, आप्य मुज करमांहे,
एवां वचन सुणी सीता तणां, ते थयो तत्पर त्यांहे । १४ ।
वनरक्षके तव जाळ नाखी, पक्षी झाल्यां जोड,
ते जानकीने सोंपियां, पूरण थया मन कोड । १५ ।
पक्षी ग्रह्यां बे कर विषे, पछी बोलियां जनकसुताय,
अल्या कीर कहे मुजने थयुं जे, रही अधूरी कथाय । १६ ।
अल्या कोनी पुत्री ? कोण सीता ? कोण ते रघुपत्य ?
जे रावण हरण करी गयो, पछी शी थई तेनी गत्य ? । १७ ।

चित्रकूट पर भरत का आगमन हो जाना—(ये घटनाएँ कह दीं) । (फिर उसने कहा—) राम और भरत (एक दूसरे से) मिल गये, तो सबका शोक शान्त हो गया । दण्डकारण्य को (अपने आगमन से) पवित्र करके उन्होंने पंचवटी में निवास किया; शूर्पणखा को विरूप करके खर-दूषण का वध करते हुए उन्होंने माया-मृग का नाश किया । तब सीता का अपहरण करके रावण लंका में चला गया । उस तोते ने वहाँ तक की कथा कही और तदनन्तर वह मौन धारण करके रह गया । ८-११ । जानकी उस चरित्र को सुनने के लिए मन में बहुत उत्कण्ठित हो गयी । उस (शुक) ने कथा अधूरी क्यों छोड़ दी ? (इस विचार से) उसके शरीर (मन) में छटपटाहट होने लगी । १२ । फिर सीता ने तत्काल उस उद्यान के रक्षक से कहा, 'हे वन-रक्षक, अभी इस वृक्ष पर एक जाल डाल दो । १३ । उन दो पक्षियों को पकड़कर मेरे हाथों में रख दो ।' सीता के ऐसे वचन सुनकर वह (वन-रक्षक) वहाँ तत्पर हो गया । १४ । उस वन-रक्षक ने जाल डालकर पक्षियों के उस जोड़े को पकड़ लिया और उन्हें सीता को सौंप दिया, तो उसकी इच्छा पूर्ण हो गयी । १५ । सीता ने पक्षियों को दोनों हाथों में रख लिया और फिर वह बोली, 'अरे तोते, जो हो गया, वह मुझे बता दो—कथा अधूरी रह गयी है । १६ । अरे

त्यारे शुक कहे बाई ! सांभळो, मुनि वाल्मीकने आश्रम,
ते वृक्ष उपर अमो रहेतां, स्त्री पुरुष अनुक्रम । १८ ।
शत कोटी रामचरित्र पावन, कर्युं वाल्मीक मुन्य,
शिष्यने नित्य भणावता, समजावी अरथ रतन । १९ ।
ते सांभळतां नित्ये अमो, कहेता मुनिवर जेह,
एटली स्मरति रही मुने, बाकी गयो भूली तेह । २० ।
अमो पक्षी केरी अल्प बुद्धि, रुदे रहे नहि वात,
हावे आगळ आवडती नथी, ए कथा मुजने मात । २१ ।
जानकी कहे पूरण थया विन, नहि जवा देउं आज,
एम कही पंजर मंगाव्युं, पक्षीने रहेवा काज । २२ ।
पछी पंजरमां घाली तदा, ते शुकीने निरधार,
करमांहेथी शुक जोर करीने, ऊडियो तेणी वार । २३ ।
ते शुकी गर्भवती हती, ते पामी विपरीत योग,
सीताए घाली पिंजरामां, थयो स्वामीविजोग । २४ ।
ततकाळ तेणे प्राण तजिया, शुकी पामी मर्ण,
पस्तावो सीताए कर्यो, पछी काढी नाखी धर्ण । २५ ।

वह किसकी कन्या थी ? सीता कौन थी ? वह रघुपति कौन था, फिर जिसे रावण अपहरण कर गया, उसकी गति क्या हुई । ' । १७ । तब शुक बोला, ' हे देवी, सुनिए । मुनि वाल्मीकि का एक आश्रम है । (उसके पास स्थित) उस वृक्ष पर हम यथाविधि स्त्री-पुरुष रहते हैं । १८ । वाल्मीकि मुनि ने शत कोटि पावन राम-चरित्रों की रचना की है । वे अपने शिष्यों को उसके रत्न-स्वरूप अर्थ को समझाते हुए नित्य सिखाते हैं । १९ । मुनिवर जो कहते हैं, उसे हम नित्य सुना करते हैं । मुझे इतना ही स्मरण रह गया—शेष मैं भूल गया हूँ । २० । हम पक्षियों की बुद्धि अल्प है । हमारे हृदय में कोई बात नहीं रहती । हे माता, अब आगे की यह कथा मुझे नहीं आती । ' । २१ । (यह सुनकर) सीता ने कहा, ' इसके पूर्ण हुए बिना मैं (तुम्हें) आज नहीं जाने दूँगी । ' ऐसा कहकर उन पक्षियों के रहने के लिए उसने एक पिंजड़ा मँगवा लिया । २२ । तब फिर निश्चय-पूर्वक उसने उस शुकी को पिंजरे में डाल दिया, तो (उधर) उसी समय शुक ज़ोर करके हाथ में से उड़ गया । २३ । वह शुकी गर्भवती थी; वह विपरीत योग अर्थात् अपने प्रिय के वियोग को प्राप्त हो गयी । सीता ने उसे पिंजरे में डाल दिया, तो उसे स्वामी का वियोग हो गया । २४ । (फल-स्वरूप) उसने तत्काल प्राणों को छोड़

ते कीरे दीठी कामनी जे, मरण पामी त्यांहे,
कल्पांत घणुं तेणे कर्युं, दुःख पाम्यो मनमांहें । २६ ।
पछी मन विचार्युं मारे मरवुं, जीवुं ते कोण काज ?
त्यां थकी पोपट ऊडियो ते, आव्यो तीरथराज । २७ ।
कीरे करी मन कल्पना, मुज गरभवंती नार,
ते विजोग कराव्यो सीताए, वछोड्यां स्त्री भरथार । २८ ।
माटे जनकतनया जानकी ते, सगर्भा थाये जाण,
त्यारे वियोग स्वामीनो थाजो, सत्य कहुं निरवाण । २९ ।
प्रयागजळमां तन झंपलाव्युं, एवुं कहीने वचन,
ते रजक थईने अवतर्यो, जे अवधपुर पावन । ३० ।
तेणे सीताने वन कढाव्यां, दुष्ट वचन बोल्यो अंध,
वियोग पाड्यो स्वामीनो, ते पूरव जन्मसंबंध । ३१ ।
ए जगतजनुनी जानकी, साक्षात् लक्ष्मी रूप,
वळी जगतपिता श्रीराम ते, कोटी ब्रह्मांडना भूप । ३२ ।

दिया और वह मृत्यु को प्राप्त हो गयी । तो सीता को पछतावा हो गया, फिर उसने उसे (पिंजरे से बाहर) निकालकर भूमि पर डाल दिया । २५ । उस तोते ने स्त्री को देखा, जो वहाँ मृत्यु को प्राप्त हो गयी थी । तो उसने बहुत विलाप किया । वह मन में बहुत दुःख को प्राप्त हो गया । २६ । अनन्तर उसने मन में सोचा, 'मुझे मरना है; मैं जीऊँ (भी) तो किस काम के लिए ।' (फिर) वह तोता वहाँ से उड़ गया और तीर्थराज (प्रयाग) आ गया । २७ । उस तोते ने मन में यह विचार किया, 'मेरी स्त्री गर्भवती है । सीता ने उसे (मुझसे) वियुक्त करा दिया है, स्त्री और पति को अलग कर डाला है । २८ । इसलिए समझिए कि जब जनक-कन्या सीता गर्भवती हो जाएगी, तब उसे स्वामी का वियोग हो जाएगा—मैं निश्चय ही यह सत्य बता रहा हूँ ।' । २९ । ऐसी बात कहते हुए उसने प्रयाग के जल में अपने शरीर को झोंक दिया । वही (तोता) रजक होकर (वहाँ) अवतरित हो गया, जहाँ पावन अयोध्यापुरी है । ३० । उसने सीता को वन में निकलवा दिया । वह अन्धा (विवेकहीन) दुष्टतापूर्ण वचन बोला । उसने पूर्वजन्म के सम्बन्ध के कारण उसे स्वामी का वियोग करा दिया । ३१ । यह जानकी तो जगज्जननी, तथा साक्षात् लक्ष्मी-स्वरूपा है । फिर श्रीराम जगत्पिता तथा कोटि (-कोटि) ब्रह्माण्डों के राजा है । ३२ । ये राम समस्त जीवों द्वारा

सर्व जीव केरा कर्मना, फळप्रदाता ए राम,
तेने नथी कांई आवरण, छे स्वत:सिद्ध पूरणकाम । ३३ ।
पण लोक मारग आचरे, करवा धरम विस्तार,
बाकी रजककेरा वचनथी, क्यम तजे जनककुमार ? । ३४ ।
ए इच्छाशक्ति रामनी, जानकी पुण्यपवित्र,
ते रणसंबंध जणावा माटे, कर्युं एह चरित्र । ३५ ।
माटे तर्क ना करशो अहीं, श्रोता विवेकी जन,
ए प्रभुने नथी शोक मोह, छे ज्ञान आनंद घन । ३६ ।
वळी बीजुं कारण एक छे, सीता त्यज्यानो मर्म,
ते संक्षेपे करीने कहुं जे, जथारथ अनुक्रम । ३७ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अनुक्रमे करी ए कथा कहुं, जे माटे तज्यां सीताय रे,
कहे दास गिरिधर सुणो श्रोता, धरजो मन अभिप्राय रे । ३८ ।

* * *

किये हुए कर्मो के फल देनेवाले हैं । उन्हें (रोकने वाला) कोई आच्छादन नहीं है । वे स्वयंसिद्ध पूर्णकाम भगवान् है । ३३ । फिर भी वे धर्म का विस्तार करने हेतु (साधारण) जनों के मार्ग के अनुसार आचरण कर रहे थे, नहीं तो उस धोबी के वचन के कारण वे जनक-कुमारी को क्यों त्यज देते । ३४ । यह जानकी राम की इच्छा-शक्ति है, वह पुण्यवती तथा पवित्र है । उन्होंने यह ऋण-सम्बन्ध जतलाने के लिए यह चरित्र प्रदर्शित किया । ३५ । इसलिए हे श्रोताओ, विवेकवान लोगो, यहाँ (इस सम्बन्ध में) कोई तर्क न करना । उन प्रभु को कोई शोक तथा मोह नहीं होता । वे तो ज्ञान तथा आनन्द के मेघ ही हैं । ३६ । इसके अतिरिक्त सीता को तज देने का एक रहस्यमय कारण (और) है । मैं वह भी संक्षेप में यथार्थ रूप से क्रमानुसार कह देता हूँ । ३७ ।

मैं अनुक्रम से कथा कह दूँगा, जिसके कारण श्रीराम ने सीता को त्याग दिया । कवि गिरधरदास कहते हैं, हे श्रोताओ, सुनिए; मन में मेरा अभिप्राय धारण कीजिए । ३८ ।

* * *

अध्याय—३० (सीता के परित्याग का राम द्वारा कारण बताना)

राग मारु

सुणो श्रोता सावधान थईने, सीता तज्यानो मर्म,
पूर्वे पितानुं वचन पाळवा, वन गया पूरण ब्रह्म । १ ।
त्यारे आयुष्य हतुं भूपति केरुं, द्वादश वर्षनुं जाण,
पण रामवियोगे दशरथे, तजिया ततक्षण प्राण । २ ।
अकाळ मृत्युए मरण ज पाम्या, रह्या जईने स्वर्ग,
कर्म अशेष हतां माटे ते, नव पाम्या अपवर्ग । ३ ।
पछी वन पूरण करी अवधपुरीमां, आव्या पूरणकाम,
सहस्र एकादश वर्ष लगी, त्यां राज्य कर्युं श्रीराम । ४ ।
पछी विचार्युं प्रभुए पोते, हावे जवुं स्वधाम,
प्रथम पिताने मोक्ष ज आपुं, तो थाये शुभ काम । ५ ।
प्रारब्ध कर्म तणुं फळ सुखदुःख, पापपुन्यथी होय,
ते पूरण भोगव्या विण देहे गुणमय, मोक्ष न पामे कोय । ६ ।
ज्यारे कर्म शुभाशुभनो क्षय आवे, वासना टळे अशेष,
सर्व संगथी मुक्त थाय त्यारे, जाय संसृति क्लेश । ७ ।

अध्याय—३० (सीता के परित्याग का राम द्वारा कारण बताना)

हे श्रोताओ, सावधान होकर सीता को छोड़ देने का रहस्य (-मय कारण) सुन लीजिए। पूर्वकाल में पूर्णब्रह्म स्वरूप राम पिता के वचन का पालन करने के लिए वन में चले गये। १। तब राजा (दशरथ) की आयु, समझिए कि (और) बारह वर्ष की थी। परन्तु दशरथ ने राम के वियोग के कारण तत्क्षण प्राण छोड़ दिये। २। वह अकाल मृत्यु से मृत्यु को प्राप्त हो गया और जाकर स्वर्ग में रह गया। उसके कर्म पूर्ण नहीं हो गये थे, अतः वह मोक्ष को नहीं प्राप्त हो गया था। ३। अनन्तर वन-वास पूर्ण करके पूर्णकाम श्रीराम अयोध्या में आ गये और उन्होंने वहाँ ग्यारह सहस्र वर्षों तक राज्य किया। ४। फिर प्रभु राम ने स्वयं सोचा कि अब मुझे स्वधाम जाना है। पहले पिता को ही मोक्ष प्रदान कर दूँ, तो शुभ काम हो जाएगा। ५। प्रारब्ध कर्म का फल सुख-दुःख तथा पुण्य-पाप के रूप में हो जाता है। त्रिगुणमय देह द्वारा उस उसे पूर्ण रूप से बिना भुगत लिये, कोई भी मोक्ष को प्राप्त नहीं हो सकता। ६। जब शुभ-अशुभ कर्मों का क्षय हो जाता है और वासना पूर्णतः टल जाती है, सब संगों से मुक्ति हो जाती है, तब सांसारिक क्लेश दूर हो जाते हैं। ७।

वेदशास्त्रनी रीति एवी, मोक्ष तणो अनुक्रम,
पण करतुं अकरतुं अन्यथा करतुं, समरथ पूरण ब्रह्म । ८ ।
महापापी प्राणी रामनामथी, मोक्षने पंथ पळाय,
ते दशरथनी गतिनुं शुं कहेवुं, पुत्र जेना रघुराय ? । ९ ।
वळी लोक वेद सहु एम ज कहे छे, अंते ज्यां मति जाय,
थाय गति तेवी ते जननी, एवो छे एक न्याय । १० ।
श्रीराम राम रघुवीरजी कहेतां, तजियां दशरथे प्राण,
तो मोक्ष न पामे शा माटे ? ए हरिनी इच्छा निरवाण । ११ ।
ते दशरथ राजा स्वर्ग रह्या छे, एम विचार्युं राम,
न्याये करी नरपतिने आपुं, हुं मारुं निज धाम । १२ ।
वरष द्वादशनुं आयुष्य बाकी, ते हुं भोगवुं आज,
पण सीताने अरधांग ज राखुं, तो थाय विपरीत काज । १३ ।
हुं धर्म स्थापवा प्रगट्यो भूतळ, पाळवा वेदनां कर्म,
जो जानकी सहित ए राज्य भोगवुं, तो भ्रष्ट थाये निज धर्म । १४ ।

वेदशास्त्र द्वारा प्रस्तुत रीति ऐसी ही है, मोक्ष का अनुक्रम ऐसा ही है। फिर भी पूर्णब्रह्मस्वरूप राम कर्तुमकर्तुं अन्यथा-कर्तुं समर्थ हैं—अर्थात् राम कुछ भी बना सकते हैं, बने हुए को बिगाड़ सकते हैं। ८। महापापी प्राणी (तक) राम-नाम से मोक्ष के मार्ग की ओर जाता है। तो मैं उस दशरथ की गति के बारे में क्या कहूँ, जिसके पुत्र (स्वयं पूर्णब्रह्मस्वरूप) रघुराज राम हैं। ९। इसके अतिरिक्त समस्त लोग और वेद ऐसा ही कहते हैं कि अन्त (-काल) में जहाँ (जिसकी) बुद्धि हो जाती है, उस मनुष्य की वैसी ही गति हो जाती है। इस प्रकार (धर्मशास्त्र का) एक न्याय (निर्णय) है। १०। दशरथ ने 'श्रीराम राम, रघुवीर (राम)' कहते हुए प्राण तज दिये थे, तो वे किसलिए मोक्ष को प्राप्त नहीं हो जाएँगे ? यह तो निश्चय ही भगवान की इच्छा है। ११। राम ने ऐसा विचार किया कि दशरथ राजा स्वर्ग में रह गये हैं, न्याय-पूर्वक मैं राजा (दशरथ) को अपने धाम (का वास) प्रदान करूँगा। १२। उनकी आयु बारह वर्ष शेष है। उसे मैं आज भोग रहा हूँ। फिर भी सीता को अर्धांगिनी के रूप में (साथ में) रख लूँ, तो यह विपरीत काम हो जाएगा। १३। मैं भू-तल पर धर्म की स्थापना करने के लिए, वेदों के (बनाये) धर्म का पालन करने के लिए प्रकट हो गया हूँ। यदि मैं जानकी सहित इस राज्य का भोग कर लूँ, तो मेरा अपना धर्म भ्रष्ट हो जाएगा। १४। ऐसा विचार करके राम ने अपने

एम विचारी पितानुं आयुष्य, रामे कर्युं अंगीकार,
माटे सीतानो परित्याग ज कीधो, मोकल्यां वनमोझार। १५।
रजकने दुष्ट वचन बोलाव्यो, करी प्रेरणा राम,
ते निमित्ते करी तज्यां जानकी, वनमां पूरणकाम। १६।
माटे श्रोताजन संदेह नव करशो, सुणीने एह कथाय,
चरित्र अटपटां ईश्वरनां, नव जणाय ते अभिप्राय। १७।
को हरि इच्छानो पार न पामे, अल्प महा मतिमान,
आकाश तणो ज्यम पार न पामवा, मशक ने गरुड समान। १८।
हावे वैदेहीने वनमां तजीने, लक्ष्मण आव्या घेर,
मूर्छित थईने सीता पडियां, वळती शी थई पेर। १९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

शी पेर थई त्यां सीतानी, जे अचेत पडियां वन रे,
पछी चार घडीए वळी मूर्छा, त्यारे करवा लाग्यां रुदन रे। २०।

* * *

पिताजी की (बारह वर्ष की शेष) आयु को स्वीकार किया। इसलिए ही उन्होंने सीता का परित्याग किया और उसे वन में भेज दिया। १५। राम ने ही यह प्रेरणा की थी कि रजक द्वारा (निन्दा करते हुए) दुष्ट वचन कहलाया जाए। उस निमित्त पूर्णकाम राम ने सीता को वन में छोड़ दिया। १६। इसलिए हे श्रोताजनो, (आशा है,) यह कथा सुनकर आप सन्देह न करेंगे। ईश्वर के चरित्र अटपटे होते हैं, उनका अभिप्राय नहीं समझा जा पाता। १७। अल्प या महाबुद्धिवाला कोई भी मनुष्य (उस प्रकार) भगवान की इच्छा के पार को प्राप्त नहीं हो पाता, जिस प्रकार (अल्प शक्तिमान) मच्छड़ तथा (महाशक्तिमान) गरुड़ दोनों आकाश के पार को प्राप्त करने में समान (रूप से असमर्थ) हैं। १८। अब वैदेही को वन में छोड़कर लक्ष्मण घर लौट आया। (उधर) सीता मूर्च्छित होकर पड़ी थी। फिर (उसकी) क्या दशा हो गयी। १९।

जो सीता वन में अचेत (होकर) पड़ गयी थी, उसकी वहाँ क्या स्थिति हो गयी? चार घड़ियों के पश्चात् उसकी मूर्च्छा (दूर हो) गयी। तब वह रुदन करने लगी। २०।

* * *

अध्याय—३१ (सीता का विलाप)

राग दोहा

ज्यारे जानकीने मूरछा वळी, शाता आवी तन,
पासे लक्ष्मणने दीठा नहि, त्यारे करवा मांड्युं रुदन । १ ।
लोचन जळधारा वहे, अंग पछाडे आप,
पछी सीताए मधुर स्वरे, करवा मांड्यो विलाप । २ ।

राग सोरठ

वैदेही वनमां वलवले, करे विविध विलाप,
हृदय भींजे छे आंसुजळे, पाम्यां अति परिताप । वैदेही० । ३ ।
हो लक्ष्मणजी, तमो क्यां गया, मूकी मुजने वन ?
आवडा निरदय क्यम थया ? दया नव धरी मन । वैदेही० । ४ ।
हवडां मारी पासे हता, क्यां संताया हो वीर ?
मारा सम देखा दो मुंने, आ वेळा रणधीर । वैदेही० । ५ ।
हो अवधपुरीना राजिया, दशरथ राजकुमार,
शे अपराधे मुने तजी, एकली वन मोझार ? । वैदेही० । ६ ।

अध्याय—३१ (सीता का विलाप)

जब सीता की मूर्च्छा दूर होने पर (वह सचेत हो गयी और) उसकी देह में शान्ति आ गयी (अर्थात् उसका मन कुछ शान्त हो गया) तो उसने लक्ष्मण को पास में (कहीं) नहीं देखा; तब उसने रोना आरम्भ किया । १ । उसकी आँखों से (अश्रु-) जल की धाराएं बह रही थीं । उसने अपने शरीर को (भूमि पर) पटक दिया (लुढ़का दिया) । फिर वह (सीता) मधुर स्वर में विलाप करने लगी । २ ।

वैदेही (सीता व्याकुलता-पूर्वक) वन में बड़बड़ा रही थी । वह विविध प्रकार से विलाप करने लगी । उसका हृदय (वक्ष:स्थल) अश्रुजल से भीग रहा था । वह अति ग्लानि को प्राप्त हो गयी थी । वैदेही० । ३ । (वह बोली—-) ' हे लक्ष्मणजी, मुझे वन में छोड़कर तुम कहाँ गये हो ? इतने निर्दय तुम कैसे हो गये ? तुमने मन में (मेरे प्रति बिलकुल) दया नहीं रखी है । वैदेही० । ४ । अभी तो तुम मेरे पास थे, तो हे भाई, (अब) कहाँ गुप्त हो गये हो ? हे रणधीर, मेरी सौगन्ध है, इसी समय मुझे दिखायी दो (अर्थात् मेरे सामने आ जाओ) । वैदेही० । ५ । हे अवधपुरी के राजा, हे राजा दशरथ के पुत्र, आपने (मेरे) किस अपराध के कारण, मुझ अकेली को वन में छोड़ दिया है ? वैदेही० । ६ । हे प्रभु,

प्रभु शरणागतवत्सल तमो, बांहे ग्रह्यानी लाज,
हुं छुं तमारी किंकरी, वहारे धाजो महाराज । वैदेही० । ७ ।
प्रभु मुज अर्थे बहु श्रम कर्यो, हणियो निशिचर साथ,
एटलुं करी अंते तजी, न घटे तमने हो नाथ । वैदेही० । ८ ।
तम चरणसेवा हुं चूकी नथी, राख्युं छे चित्त ठाम,
ते अंतरनी जाणो छो प्रभु, अंतरजामी राम । वैदेही० । ९ ।
तमो वात विस्तारी रजकनी, पाम्या मनमां रोष,
लांछन लागे रविकुळ विषे, जो देशो मुज शिर दोष । वैदेही० । १० ।
माटे सा'य करो मारी शामळा, लावो मनमां महेर,
तेडावो प्रभु पाछी मुने, न करीए आवडो कहेर । वैदेही० । ११ ।
आ वन कंटक छे बिहामणुं, हुं एकलडी नार,
सखा साहेली को संग नहि, रहुं कोने आधार ? । वैदेही० । १२ ।
हो जनक नृपति मुज बापजी, ल्यो पुत्रनी संभाळ,
हो पिता, हुं तमने वहाली घणुं, करो मारी प्रतिपाळ । वैदेही० । १३ ।

आप शरणागत-वत्सल हैं । आप जिनका हाथ पकड़ लेते हैं, उनकी लज्जा के आप रक्षक हैं । मैं तो आपकी दासी हूँ । हे महाराज, सहायता के लिए दौड़ो । वैदेही० । ७ । हे प्रभु, आपने मेरे लिए बहुत परिश्रम किये । (कष्ट उठाये), साथ ही उस राक्षस (रावण) का वध किया । (फिर) इतना करने पर अन्त में मुझे तज दिया है । हे नाथ, यह आपके लिए उचित नहीं है । वैदेही० । ८ । मैं आप की चरण-सेवा करने में नहीं चूकी हूँ, मैंने अपने मन को उसी स्थान पर (अविचल लगाये) रखा है । हे प्रभु, हे अन्तर्यामी राम, आप तो अन्तःकरण की बात जानते हैं । वैदेही० । ९ । आपने उस धोबी की बात को बढ़ा दिया और मन में (मेरे प्रति) रोष को प्राप्त हो गये । यदि आप मेरे सिर पर दोष लगा रहे हों, तो रविकुल में लांछन लग जाएगा । वैदेही० । १० । इसलिए हे श्याम, मेरी सहायता कीजिए, मन में (मेरे प्रति) दया कर लीलिए । हे प्रभु, मुझे पीछे बुला लीजिए । इतना अत्याचार न कीजिए । वैदेही० । ११ । इस वन में भयंकर काँटे हैं और मैं (यहाँ पर) अकेली नारी हूँ । मेरे साथ कोई सखा, कोई सहेली नहीं है, तो मैं किसके आधार से रह जाऊँ ? वैदेही० । १२ । हे जनक राजा, हे मेरे पिताजी, अपनी कन्या की चिन्ता कर लो (उसका ध्यान रख लो) । हे पिताजी, मैं तुम्हारी बहुत लाड़ली हूँ । मेरा प्रतिपालन तो कर लो । वैदेही० । १३ ।

ज्यम मच्छ तरफडे तापे करी, सुकाय सरोवर पाणी,
ज्यम पूरवे वनमां पडी, नैषधरायनी राणी। वैदेही०।१४।
एम वैदेही विलपे अति घणुं, मुखे करतां रुदन,
सीता रोतां रोयां तरु, पशु पक्षी जन। वैदेही०।१५।
तेणी वेळाए कंपी धरा, भूमिजाने शोक,
मनमां रटण करे रामनुं, जीभ्याए पुण्यश्लोक। वैदेही०।१६।
हावे प्राण तजुं हुं माहरो, पाडुं निश्चे तन,
पछी केशनो पाश कंठे धर्यो, त्यारे विचार्युं मन। वैदेही०।१७।
जो हुं त्याग करुं देहनो, तो आत्महत्या थाय,
वळी प्रौढुं पाप लागे मुने, गर्भ केरी हत्याय। वैदेही०।१८।

जिस प्रकार सरोवर के सूखने लग जाने पर मछली ताप से तड़पने लगती है, जिस प्रकार पूर्वकाल में नैषधराज नल की रानी दमयन्ती[1] वन में (अकेली) पड़ गयी थी, उस प्रकार सीता (वन में अकेली पड़ जाने पर) रोते-रोते मुँह से अत्यधिक विलाप कर रही थी। सीता के रोते रहने पर वृक्ष, पशु, पक्षी (आदि) प्राणी रोने लगे। वैदेही।१४-१५। भूमि-कन्या सीता के शोक से उस समय धरती काँप उठी। वह पुण्यश्लोक सती सीता वन में अपनी जिह्वा से राम का नाम रट रही थी। वैदेही०।१६। (वह बोली—) 'अब मैं अपने प्राणों को तज डालती हूँ, निश्चय ही अपनी देह छोड़ दूँगी।' (तदनन्तर) उसने बालों का पाश कण्ठ में डाल दिया। तभी उसने मन में यह विचार किया। वैदेही०।१७। यदि मैं देह-त्याग कर दूँ, तो वह तो आत्म-हत्या होगी। इसके अतिरिक्त गर्भ की हत्या हो जाने से मुझे बड़ा पाप लग जाएगा। वैदेही०।१८। ऐसा विचार करके सीता ने गले से

---

[1] दमयन्ती—निषध देश के सुविख्यात और पुण्यश्लोक राजा नल का वरण विदर्भ देश की राजकन्या दमयन्ती ने स्वयवर-मण्डप मे किया। विवाह के पश्चात् नलराज ने अनेक वर्ष राज्य किया। फिर एक दिन इन्द्र आदि देवों ने नल की प्रशंसा की, जो कलिदेव को बहुत अखर गयी। तदनन्तर एक दिन कलिदेव को नलराज के शरीर में प्रविष्ट होने का अवसर मिला। फिर उसके प्रभाव से नल की बुद्धि भ्रष्ट हो गयी और उसने अपने भ्राता पुष्कर को द्यूत खेलने के लिए निमन्त्रित किया। द्यूत में नल राज्य आदि हार गया, फलस्वरूप पुष्कर ने नल और दमयन्ती को एक-एक वस्त्र-सहित देश के बाहर निकाल दिया। कुछ दिन बाद वन में नल स्वर्ण-पक्षियो को पकड़ने का जब यत्न कर रहा था, तब वे पक्षी उस वस्त्र को लेकर ही उड़ गये। तदनन्तर दमयन्ती जब निद्राधीन हो गयी, तो नल उसे वहीं छोड़कर दूर चला गया। (कुछ दिन बाद घूमते-घूमते चेदि देश के राजा के यहाँ गयी और उसकी पत्नी की दासी के रूप में रहने लगी—।)

एम विचारीने जानकी, काढ्यो कंठेथी पास,
पछे गाढे स्वरेथी रुदन करे, मूके मुख निश्वास। वैदेही०।१९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

निश्वास मूके अधर सूके, करमायुं कमळवदन रे,
ते वन केरां खग मृग आवी, करतां आश्वासन रे। २०।

* * *

केशपाश हटा दिया। फिर वह उच्च स्वर में रुदन करने लगी; मुँह से गहरी साँस ले रही थी। वैदेही०। १९।

वह गहरी साँस ले रही थी, उसके होंठ सूख गये थे और मुख-कमल मुरझा गया था। (उस समय) उस वन के (निवासी) पक्षी और मृग आकर उसे आश्वस्त करने लगे। वैदेही०। २०।

* * *

अध्याय—३२ (वाल्मीकि द्वारा सीता को सान्त्वना देते हुए अपने आश्रम में ले जाना, अन्य विप्रों की अप्रसन्नता)

राग सारंग

एणे प्रकारे सीता एकलडां, वनमां करतां रुदन,
तेणे समे कंद मूळ लेवाने, नीकळ्या वाल्मिक मुन्य। १।
ते मुनिए सीतानुं रुदन सांभळ्युं, पासे आव्या धाई,
मुनिए ओळखी जनकसुता, कहे तुं आंहां क्यांथी बाई ?। २।
अरे सीता, में ओळखी तुजने, जनकनी तनया जाणी,
दशरथसुत श्रीरामचंद्र ते, अवधपतिनी राणी। ३।

अध्याय—३२ (वाल्मीकि द्वारा सीता को सान्त्वना देते हुए अपने आश्रम में ले जाना, अन्य विप्रों की अप्रसन्नता)

इस प्रकार सीता अकेली वन में रुदन कर रही थी। उस समय वाल्मीकि मुनि कन्द-मूल (इकट्ठा कर) लेने के लिए (वन में) जा रहे थे। १। उन मुनि ने सीता का रुदन सुन लिया, तो वे दौड़कर उसके पास आ गये। उन्होंने उस जनक-कन्या को पहचान लिया और कहा—'तुम यहाँ कहाँ से आयी हो ?। २। अरी, सीता मैंने तुम्हें पहचाना है, तुम्हें जनक की कन्या समझ लिया है। तुम दशरथ के पुत्र अयोध्यापति

अरे पुत्री, आ वनमां क्यांथी, तुं एकलडी आज ?
त्यारे सीताए वृत्तांत कह्युं जे, तजी रघुपति महाराज। ४ ।
त्यारे मुनि कहे बाई, चिंता नव करशो, मुने ओळखे छे भगवान,
जनकराय पण मारो मित्र छे, तुं मुज पुत्री समान। ५ ।
तुं जक्तजनुनी जनकसुता छे, लक्ष्मीनो अवतार,
बाई, मनुष्यदेह भूतळमां धरी, तमो लीला करो छो अपार। ६ ।
माटे चाल पुत्री, मुज आश्रममां, हुं पाळीश रूडी पेर,
त्यां ऋषिपत्नीओ साथे रहेजो, सुखी थशो मुज घेर। ७ ।
वळी तारा उदरथी पुत्र प्रगटशे, बळिया बे रणधीर,
महापराक्रमी पुत्र थशे ते, जीतशे श्रीरघुवीर। ८ ।
एम घणां वचन कही धीरज आपी, सीताने मुनिनाथ,
जनकसुताने रोतां राख्यां, मस्तक मूक्यो हाथ। ९ ।
त्यारे सीता मुनिनां वचन सांभळी, संतोष्यां मन जाण,
तमो पिता हुं पुत्री तमारी, एवी बोल्यां वाण्य। १०।
पछी वाल्मीकमुनि सीताने तेडी, आव्या निज आश्रम,
फळ जळ आपी स्वागत कीधुं, उतार्यां अनुक्रम। ११ ।

रामचन्द्र की रानी (स्त्री) हो। ३। अरी कन्या, तुम इस वन में आज अकेली कहाँ से (आ गयी) हो ?' तब सीता ने वह बात कही कि किस प्रकार महाराज रघुपति ने उसका त्याग कर दिया था। ४। तब मुनि बोले, 'हे देवी, तुम चिन्ता न करना। मुझे भगवान राम पहचानते हैं। जनकराज भी मेरे मित्र हैं, (अतः) तुम मेरी पुत्री के समान हो। ५। तुम जगज्जननी जनक-कन्या (सीता) हो, लक्ष्मी का अवतार हो। हे देवी, इस भू-तल पर मनुष्य-देह धारण करके तुम अपार लीला कर रही हो। ६। इसलिए री पुत्री, चलो, मैं अपने आश्रम में तुम्हारा भली भाँति पालन करूँगा। वहाँ ऋषि-पत्नियों के साथ रहना—तुम मेरे घर सुखी हो जाओगी। ७। फिर तुम्हारे उदर से दो बलवान तथा रणधीर पुत्र उत्पन्न होंगे। वे पुत्र महा-पराक्रमी हो जाएँगे और श्रीरघुवीर राम को जीत लेंगे।'। ८। इस प्रकार बहुत बातें कहते हुए मुनिनाथ (वाल्मीकि) ने सीता को ढाढ़स बँधा दिया और रोती हुई उस जनक-कन्या के मस्तक पर हाथ रखा। ९। समझिए कि, तब मुनि के वचन सुनकर सीता मन में संतुष्ट हो गयी और इस प्रकार यह बात बोली—'आप पिता हैं और मैं आपकी पुत्री हूँ'। १०। अनन्तर वाल्मीकि मुनि सीता को बुलाकर अपने आश्रम आ गये। (फिर) उसे फल तथा जल देते हुए

त्यारे अनेक विप्र तेणे समे आव्या, वन मध्येथी अनुप,
वाल्मीकमुनिने पूछवा लाग्या, जोई सीतानुं रूप। १२।
अरे पिता, आ क्यांथी लाव्या ? कोण छे ? कोनी नारी ?
त्यारे मुनिए कह्युं: ए रामनी राणी, सीता जनककुमारी। १३।
एवां वचन सुणी सहु विप्र कहे, ए शीद लाव्या महाराज ?
विघ्न थशे आपणा आश्रममां, नहि रहे कोनी लाज। १४।
एणे रावणनुं कुळ कर्युं निकंदन, मराव्यो मारीच रंक,
वळी लोकापवाद लाग्यो मोटो, एने माथे चड्युं छे कलंक। १५।
आपणा आश्रममां नव जोइए, एनुं सुंदर रूप,
ए छतां उपाधि थाय आपणे, ए तो क्लेशनो कूप। १६।
आपणे ग्राम मूकीने सर्वे, वनमां कीधो वास,
त्यारे उपाधि क्यम संग्रह करीए ? रहीए सदा उदास। १७।
एम तर्कवचन कुटिल घणां बोले, करता शोरबकोर,
ते विप्र कर्मजड कंई नव समजे, केवळ वेदिया ढोर। १८।

उन्होंने उसका स्वागत किया और यथा रीति उसे (अपने यहाँ) ठहरा लिया। ११। तब उस समय उस अनुपम वन में से अनेक ब्राह्मण आ गये और सीता की सुन्दरता को देखकर वे वाल्मीकि से पूछने लगे। १२। ‘हे पिताजी, इसे कहाँ से लाये हैं ? यह कौन है ? यह किसकी स्त्री है ?’ तब मुनि ने कहा, ‘यह राम की स्त्री—सीता, (अर्थात्) जनक राजा की कन्या है।’। १३। ऐसे वचन सुनकर समस्त विप्र बोले, ‘महाराज, इसे आप क्यों लाये हैं ? (इसके आने से) अपने आश्रम में विघ्न (उत्पन्न) हो जाएगा; किसी की लज्जा (प्रतिष्ठा शेष) नहीं रह पाएगी। १४। इसने रावण के कुल का नाश करा दिया, दीन-हीन मारीच को मरवा डाला। इसके अतिरिक्त, इसे बड़ा लोकापवाद लगा हुआ है; इसके मस्तक पर कलंक लगा हुआ है। १५। अपने इस आश्रम में इसका यह सुन्दर रूप (अर्थात् सुन्दर रूपधारिणी यह स्त्री) नहीं (रखनी) चाहिए। इसके (यहाँ) होने पर हमें पीड़ा हो जाएगी—यह तो क्लेश का कुआँ है। १६। हम सबने ग्राम को छोड़कर वन में निवास किया है, तो तब पीड़ा क्यों जुटा लें ? हमें सदा उदासीन (विरक्त) रहना चाहिए’। १७। इस प्रकार उन्होंने बहुत कुटिल तर्क भरे वचन कह दिये—(फिर वे) चीख-चिल्लाहट करते रहे। (परन्तु) वे ब्राह्मण तो कर्म-जड़ थे, वे कुछ नहीं समझ सकते थे—वे तो केवल वैदिक ढोर (वेदों का बोझ ढोनेवाले पशु) थे। १८। उस समय उन बातों को सुनकर

ते वचन सुणीने पासे आव्यां, जनकसुता तेणी वार,
वैदेहीए कर जोडी, सहु विप्रने कर्या नमस्कार। १९।

अरे महाराज, एवुं शुं बोलो, कठण वचन अति वंक,
हावे तमो कहो ते हुं करुं, ज्यम ऊतरे मारुं कलंक। २०।

त्यारे एक विप्र गाजीने बोल्यो, तर्क करीने त्यांहे,
अरे सीता, तुं साधवी होय तो, लाव्य भागीरथी आंहे। २१।

आ आश्रम पासे गंगा आवे, तो अमने सुख थाय,
त्यारे सीता तुजने सती जाणी, पूजीए तारा पाय। २२।

एवां वचन विप्रनां सुणीने, सीता दुःख वाम्यां मनमांहे,
पछी गंगानी स्तुति करवा लाग्यां, गद्‌गद कंठ त्यांहे। २३।

वलण (तर्ज बदलकर)

गद्‌गद कंठे गंगा केरी, स्तुति करतां सीताय रे,
सर्वे मुनिवर पासे ऊभा, जोता ते चर्याय रे। २४।

* * *

वैदेही सीता उनके पास आ गयी और उसने हाथ जोड़कर समस्त विप्रों को नमस्कार कर किया। १९। (फिर वह बोली—) ' हे महाराज, आप ऐसे कठोर अति टेढ़े वचन क्यों बोल रहे हैं ? आप जो कहेंगे, वह मैं करूँगी, जिससे मेरा कलंक उतर जाए '। २०। तब एक ब्राह्मण तर्क करते हुए गरजकर बोला, ' अरी सीता, तुम साध्वी हो, तो यहाँ गंगा को ले आओ। २१। यदि इस आश्रम के पास गंगा आ जाए, तो हमें सुख हो जाएगा। हे सीता, तब हम तुम्हें सती समझकर तुम्हारे चरणों का पूजन करेंगे। '। २२। उन विप्रों के ऐसे वचन सुनकर सीता मन में दुःख को प्राप्त हो गयी। अनन्तर वह वहीं गद्‌गद कण्ठ से गंगा की स्तुति करने लगी। २३।

सीता ने गद्‌गद कण्ठ से गंगा की स्तुति की। समस्त मुनिवर पास में खड़े होकर यह चर्या (अनुष्ठान) देखते रहे। २४।

* * *

अध्याय—३३ (सीता द्वारा गंगा का स्तवन)

राग सिंधुडो दंडकनी चाल

जय विष्णुपादोदकी अखिल जन पुनित-कर,
दानी मनमोदकी सिंधु अंगे ।
अधमउद्धारणी सगरकुळ तारणी,
परम शिवकारणी मात गंगे । जय विष्णु० । १ ।
जय सार सहु तत्त्वनुं मथन विधिए कर्युं,
प्रथम परमेष्ठीनुं पाप वाम्युं ।
तेथी पूजा करी विष्णुना चरणनी,
पुनित नख - वार विस्तार पाम्युं । जय विष्णु० । २ ।

अध्याय—३३ (सीता द्वारा गंगा का स्तवन)

जय हो, हे भगवान विष्णु के चरणों से (उत्पन्न) सरिता (गंगा), हे समस्त लोगों को पवित्र कर देनेवाली, हे (पुण्य का) दान करनेवाली, मन को आनन्दित कर देनेवाली, हे समुद्र की (अंगभूत) अंगना, अधमों का उद्धार करनेवाली, सगर-कुल का तारण (उद्धार)[1] करनेवाली परम कल्याण-कारिणी माता गंगा, तुम्हारी जय हो। हे भगवान विष्णु के० । १ । जय हो, हे (समस्त तत्त्वों के) सार-रूप ! विधाता ने समस्त तत्त्वों का मन्थन किया और उनका सार तुम्हारे रूप में प्रस्तुत किया। उससे प्रथम परमेष्ठी विधाता का पाप नष्ट हो गया।[2] उससे उन्होंने भगवान विष्णु के चरणों का पूजन किया और उनके नखों से प्रवाहित जल (तुम्हारे रूप में) विस्तार को प्राप्त हो गया। हे भगवान विष्णु के० । २ ।

---

१ **सागर-कुल-तारिणी गंगा**—इक्ष्वाकु वंशोत्पन्न अयोध्यापति सगर ने अश्वमेध यज्ञ किया, तो इन्द्र ने यज्ञीय घोड़े को चुराकर पाताल में कपिल ऋषि के आश्रम में छोड़ दिया। सगर के साठ सहस्र पुत्र घोड़े को खोजते-खोजते पाताल में पहुँचे, तो उनके आने से कपिल की तपस्या में बाधा आ गयी। उससे क्रुद्ध होकर उन्होंने उन वीरों को जलाकर भस्म कर डाला। आगे चलकर सगर-कुलोत्पन्न भगीरथ तपस्या द्वारा स्वर्ग की गंगा को धरती पर और पाताल में ले आया। उसके जल से सगर के पुत्रों का उद्धार हो गया। इस दृष्टि से गंगा सगरकुल-तारिणी कहाती है। (अधिक जानकारी के लिए बाल काण्ड, अध्याय २६ देखिए)

२ **विधाता का पाप**—पूर्वकाल में शिवजी ने यज्ञ आरम्भ किया। उस समय ब्रह्मा उमा को देखकर उसके प्रति आसक्त हो गये। इस पाप से मुक्त होने के लिए, श्रेष्ठ ऋषियों के कथन के अनुसार, ब्रह्मा ने समस्त तीर्थों और तत्त्वों का सार निकालकर उसमें स्नान किया; उससे वे पाप-मुक्त हो गये। [अधिक जानकारी के लिए देखिए बाल काण्ड, अध्याय २५]

जय सुरसरी ब्रह्मकटाह विदारणी,
नभगति चारणी धुनि अपारा।
दिलीपसुत कामना सफळ पूरण करी,
अनंगारि धरी शीश धारा। जय विष्णु०। ३।
जय रुद्रशिरवासिनी अखिल अघनाशिनी,
कळिमळत्रासिनी अभयदाता।
पृथ्वी पावन करी धार प्राची दिशी,
चंड धुनि खंड गिरि शरणत्राता। जय विष्णु०। ४।
जय सरितवर जाह्नवी विमळ भोगावती,
नाम मंदाकिनी पापहारी।
भूतळ भागीरथी पुनित प्रभावती,
अलकनंदा सुआनंदकारी। जय विष्णु०। ५।

जय हो, हे सुर-सरिता, हे ब्रह्म-कटाह को विदीर्ण कर देनेवाली, हे आकाश में से (तीव्र) गति से चलनेवाली और अपार ध्वनि उत्पन्न करनेवाली, हे दिलीप के पुत्र[1] (सगर) की समस्त कामनाओं की पूर्ति करनेवाली, अनंग अर्थात् कामदेव के शत्रु[2] भगवान शिवजी ने तुम्हारी उसी धारा को मस्तक पर धारण किया है। जय हो। हे भगवान विष्णु के०। ३। जय हो। हे रुद्र अर्थात् शिवजी के मस्तक से बहनेवाली, हे समस्त पापों का नाश करनेवाली, कलि-मल अर्थात् कलियुग में पाप करनेवालों को भय-भीत कर देनेवाली, हे (पुण्यवानों को) अभय देनेवाली, तुम्हारी धारा ने पूर्व दिशा में पृथ्वी को पावन कर दिया है। हे प्रचण्ड ध्वनि के साथ पर्वतों को खण्ड-खण्ड कर देनेवाली, (सबको) आश्रय देते हुए रक्षा करनेवाली (गंगा), जय हो। हे भगवान विष्णु के०। ४। जय हो, हे श्रेष्ठ सरिता ! जाह्नवी, पवित्र भोगावली तथा पाप-हारिणी मन्दाकिनी तुम्हारे ही नाम हैं। इस भूतल पर (तुम ही) भागीरथी, पुनीत प्रभावती, सात्विक आनन्द देनेवाली अलकानन्दा हो। जय हो।

---

1 **सगर**—[परिचय के लिए देखिए बाल काण्ड अध्याय २६]

2 **कामदेव के शत्रु**—पूर्वकाल में शिवजी विकट तपस्या में लीन होकर बैठे थे। उस समय तारकासुर ने सब देवों को पीड़ित किये रखा था। शिवजी और पार्वती के पुत्र स्कन्द के हाथों उस दैत्य की मृत्यु होनेवाली थी। इसलिए शिवजी का पार्वती से विवाह होना आवश्यक था। अतः देवों ने कामदेव को प्रेरित करके शिवजी को तपस्या से विचलित करने के हेतु भेज दिया। फलतः कामदेव के कारण उनकी तपस्या में बाधा आ गयी, तो क्रुद्ध होकर उन्होंने तीसरा नेत्र खोला और उसे जला डाला। अतः शिवजी को 'अनंगारि' कहते हैं।

जय शेष सनकादि विधि रुद्र शारद स्तवे,
सिद्ध मुनि योगी नित्य सेव्यमानं।
यक्ष रक्षादि नर नाग किन्नर अमर,
पूजी गंधर्व करे गीत गानं। जय विष्णु०। ६।
स्मरतां संकट टळे दर्शने अघ बळे,
स्पर्शता देह विशुद्ध थाये।
स्तवन करतां पामे तत्त्व त्रिलोकनुं,
अंते हरिचरणने शरण जाये। जय विष्णु०। ७।
जय अंब सगरात्मज मोक्षदायक महा,
माहात्म्य गुण अति विशद जह्नुजाता।
दास गिरिधर सदा उभय तटपावनी,
राखीए आज मोरी लाज माता। जय विष्णु०। ८।

दोहा

ए गंगाष्टक पावन परम, जे जपे नर ने नार,
मुक्त थाय महा पापथी, पामे पदारथ चार। ९।

हे विष्णु के०। ५। जय हो शेष, सनकादि (मुनि), विधाता, रुद्र (शिवजी), शारदा (सरस्वती) तुम्हारी स्तुति करते हैं। सिद्धों, मुनियों, योगियों द्वारा तुम्हारी नित्य सेवा की जा रही है। यक्ष, राक्षस, नर, नाग, किन्नर, देव, गन्धर्व आदि तुम्हारा पूजन करते हुए (तुम्हारी महिमा का) गान करते हैं। जय हो। विष्णु के०। ६। (जय हो।) तुम्हारा स्मरण करने से (मनुष्य के) संकट टल जाते हैं; तुम्हारे दर्शन से पाप जल जाते हैं; (तुम्हारे जल को) स्पर्श करने से देह विशुद्ध हो जाती है। तुम्हारा स्तवन करने से वे त्रिलोक के तत्त्व (ब्रह्म) को प्राप्त हो जाते हैं। और अन्त में वह भगवान विष्णु के चरणों की शरण में चले जाते हैं। जय हो। हे विष्णु के०। ७। जय हो, सगर के पुत्रों को महान मुक्ति देनेवाली हे माता, हे जाह्नवी, तुम्हारी महिमा तथा गुण अति विशद (स्पष्ट) हैं। कवि गिरधरदास कहते हैं, (सीता ने कहा—) दोनों तटों (पर रहनेवाले लोगों) को सदा पावन करनेवाली हे माता, आज मेरी लाज की रक्षा करनी है। जय हो। हे विष्णु के०। ८।

(कवि कहता है—) इस परम पावन गंगाष्टक का जो नर और नारी (-जन) जाप करते हैं, वे बड़े (-बडे) पाप से मुक्त हो जाते हैं और (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष नामक) चारों पदार्थों को प्राप्त हो जाते हैं। ९।

स्तुति सुणी जनकसुता तणी, गंगाए तेणी वार,
त्यारे आवी गर्जती, जेनो प्रचंड वेग अपार। १०।

* * *

उस समय गंगा ने जनक-सुता सीता द्वारा की हुई ऐसी स्तुति सुनी; तो तब जिसका वेग प्रचण्ड तथा अपार था, ऐसी वह (गंगा की) धारा गर्जन करती हुई (सीता के समीप) आ गयी। १०।

* * *

अध्याय—३४ (वाल्मीकि के आश्रम के निकट गंगा का आगमन)

राग मारु

स्तुति सांभळीने तेणी वार, धायां गंगा सीताजीनी वहारे,
थयो ओचिंतो गडेडाट, भटकी नाठा ब्राह्मण बारे वाट। १।
आवी प्रचंड गंगानी धार, ऊछळतुं एक योजन वार,
घुघवाट गरजना थाय, फोडे परवत सोंसरी जाय। २।
मूळ मांहेथी वृक्ष उखेडे, ज्यांहां त्यां जळ फरतुं रेडे,
ऊछळ्यां जळ सागर ज्यम, नाठा मुनिवर मूकी आश्रम। ३।
कर्यां आगळ नानां बाळ, सीताशरणे आव्यां तत्काळ,
पाहि पाहि वैदेही कृपावान, राखो शरण अमो छुं अज्ञान। ४।

अध्याय—३४ (वाल्मीकि के आश्रम के निकट गंगा का आगमन)

उस स्तुति को सुनते ही गंगा सीता की सहायता के लिए दौड़ती हुई आने लगी। अकस्मात् गड़गड़ाहट होने लगी, तो चौंककर वे ब्राह्मण बारह बाट होकर भाग गये। १। गंगा की प्रचण्ड धारा बहती हुई आ रही थी। उसका जल एक योजन उछल-उमड़ रहा था। गड़गड़ाहट की ध्वनि के साथ गर्जना हो रही थी; वह पर्वतों को फोड़ रही थी और आरपार फैलती हुई जा रही थी। २। वह मूल-सहित वृक्षों को उखाड़ रही थी। जहाँ-तहाँ उसका जल घूमता-फिरता हुआ बह रहा था। जब सागर-सा जल उमड़ने लगा, तो वे ब्राह्मण आश्रमों को छोड़कर भाग गये। ३। उन्होंने नन्हे-नन्हे बच्चों को आगे किया और वे तत्काल सीता की शरण में आ गये (और बोले—) 'हे कृपालु वैदेही! पाहि-पाहि (रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए)। हमें अपनी शरण में रखिए। हम अज्ञान है। ४। हमने आपकी अवहेलना की। हम मन से कर्मजड़

अमो कर्युं तमारुं हेलन, कर्मजड अभिमानी मन;
छो तमो शुद्ध पतिव्रताय, सरव सतीओ तमारी कळाय। ५ ।
जो छोरुं कछोरुं थाय, पण कोप करे नहि माय,
क्षमा राखो हावे जानकी मात, समावो जळ आव्युं अघात। ६ ।
तणाई जाशे अमारां धाम, त्यारे रहीशुं अमो कोण ठाम ?
तमने वारंवार शिर नामुं, माता जुओ आ बाळक सामुं। ७ ।
एम विप्र कालावाला करे, ऋषिपत्नीओ खोळा पाथरे,
देखी करगरतो मुनि साथ, सीताए कर्यो उंचो हाथ। ८ ।
जळ शमी गयुं ते स्थान, वहेवा लागी ते धार समान;
निवरत्यो भय मुनिवर केरो, सहुने वाध्यो हरख घणेरो। ९ ।
वाल्मीकना आश्रम पास, वहे छे गंगा सूक्ष्म सुखरास;
गंगानी पूजा सीताए करी, सहु मुनिए त्यां स्तुति ऊचरी। १० ।
सकळ विप्रे पाड्युं तेनुं नाम, सीताधारा गंगा तेणे ठाम,
मुनि करतां मंजन पान, जप होम ने तप अनुष्ठान। ११ ।

तथा अभिमानी हैं। आप शुद्ध (पवित्र) पतिव्रता हैं, समस्त सतियाँ आपकी कलाएँ (अंश) हैं। ५। यद्यपि बच्चा नटखट हो, तथापि माता क्रोध नहीं करती। हे माता जानकी, (हमारे प्रति) क्षमा-भावना रखिए। इस जल को शान्त कीजिए—वह तो अपार आ गया है। ६। हमारे घर बह जाएँगे, तब हम किस स्थान पर रहेंगे? हम आपके सामने बार-बार सिर झुका (कर नमस्कार कर) रहे हैं। हे माता, इन बालकों की ओर देखिए'। ७। इस प्रकार उन ब्राह्मणों ने गिड़गिड़ाहट (के साथ प्रार्थना) की; उन ऋषियों की पत्नियों ने आँचल फैलाकर विनती की। साथ ही मुनियों को गिड़गिड़ाते देखकर सीता ने हाथ ऊँचा उठाया (और संकेत किया)। ८। तो पानी उसी स्थान पर शान्त हो गया और वह नदी साधारण नदी के समान बहने लगी। (फलस्वरूप) मुनियों का भय दूर हो गया, तो सबके लिए गहरे आनन्द की वृद्धि हो गयी। ९। वाल्मीकि के आश्रम के पास होकर सुख-राशि गंगा की पतली धारा बहने लगी। (फिर) सीता ने गंगा का पूजन किया, तो समस्त मुनियों ने वहाँ गंगा की स्तुति का पाठ किया, (स्तुति की)। १०। समस्त विप्रों ने उस स्थान की गंगा (की धारा) का नाम 'सीता धारा' रखा। (तब से) मुनि उसमें स्नान करते हैं, उसका जल पीते हैं; जप, होम, तथा तप का अनुष्ठान करते हैं। ११। जिसका जल शीतल, निर्मल है, (ऐसी) उस (गंगा) के तट पर वे मठ (आश्रम) बनाकर रह गये। वे समस्त विप्र

मठ बांधी रह्या तेने तीर, जेनुं शीतळ निर्मळ नीर,
वैदेहीने वखाणता सर्व, ते दहाडेथी विप्रे तज्यो गर्व । १२ ।
एवुं जानकी केरुं चरित्र, सुणतां पापी थाय पवित्र,
आ जगतमां भोगवे सुख भोग, अंते श्रीहरि चरण संजोग । १३ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

संजोग थाये हरिचरणनो, करे श्रवण ए आख्यान रे,
कहे दास गिरिधर कथा अद्‌भुत, सुणो श्रोता थई सावधान रे । १४ ।

सीता का बखान करने लगे और उन्होंने उस दिन से अभिमान का त्याग किया । १२ । सीता के इस प्रकार के चरित्र का श्रवण करने से पापी पवित्र हो जाते हैं; वे इस जगत में सुखोपभोग करते हैं और अन्त में श्रीहरि (राम) के चरणों का योग उन्हें (प्राप्त) हो जाता है । १३ ।

जो इस आख्यान का श्रवण करते हैं, उनको अन्त में श्रीहरि (राम) के चरणों की भेंट प्राप्त हो जाती है । कवि गिरधरदास कहते हैं— हे श्रोताओ, सावधान होकर इस अद्‌भुत कथा का श्रवण कीजिए । १४ ।

* * *

अध्याय—३५ (सीता द्वारा पुत्रों को जन्म देना, उनका नामकरण, उनकी शिक्षा-दीक्षा)

राग धन्याश्री

वालमीक केरा आश्रम मांहे जी, रह्यां सुख पामी सीता त्यांहे जी,
सरवे मुनिए कर्यो एक विचार जी, कोई नव जाणे सीताने आ ठार जी ।

ढाळ

भाई वात ए कहेशो नहि, अन्य को न जाणे मर्म,
ए जनकतनया जानकी, रह्यां आपणे आश्रम । २ ।

अध्याय—३५ (सीता द्वारा पुत्रों को जन्म देना, उनका नामकरण, उनकी शिक्षा-दीक्षा)

सीता वाल्मीकि के आश्रम में रह गयी । वह वहाँ सुख को प्राप्त हो गयी । समस्त मुनियों ने यह विचार किया कि सीता को इस स्थान पर रहते कोई जान न पाए । १ ।

(वे बोले—) भाइयो, यह बात कोई (किसी से) न कहना; यह रहस्य कोई भी न जान पाए जो कि जनक-तनया सीता अपने आश्रम में

एम सीताजी सुख पामियां, पोषण करे मुनिराय,
स्वागत करे मुनिपत्नीओ, आनंदमां दिन जाय। ३।
वाल्मीक मुनिना आश्रमे, ठरी रह्यां जनककुमार,
दिन दिन वृद्धि गर्भ पामे, सीता उदर मोझार। ४।
नव मास त्यां पूरण थया, आव्यो प्रसव केरो दिन,
मुनिपत्नीओ त्यां वृद्ध आवी, पासे रही शुभ मन। ५।
शुभ योग वार नक्षत्र तिथि, शुभ लग्न रवि मध्याह्न,
ते समे सुंदर पुत्र जन्म्या, जुगल रूप निधान। ६।
प्रथम जन्म्यो ते लघु, ते पूंठे आव्यो जेष्ठ,
एम थया प्रसव बे पुत्र ते समे, केंद्रिया ग्रह श्रेष्ठ। ७।
ते समे वाल्मीक स्नान, करता हता गंगा मांहे,
सहु शिष्य दोडीने गया, कही वधामणी जई त्यांहे। ८।
त्यारे वाल्मीके बे कर विषे, लव कुश ग्रह्या'ता जेह,
ते सहित आश्रम आविया, उतावळा मुनि एह। ९।

ठहरी हुई है। २। इस प्रकार (वहाँ) रहते हुए सीता सुख को प्राप्त हो गयी। मुनिराज (वाल्मीकि) उसका पालन करते थे। मुनियों की स्त्रियाँ उसका स्वागत करती थीं। (इस प्रकार उसके) दिन आनन्द में बीत रहे थे। ३। जनक-कुमारी सीता वाल्मीकि मुनि के आश्रम में ठहर कर रह गयी थी। उसके उदर में गर्भ दिन-प्रतिदिन वृद्धि को प्राप्त हो रहा था। ४। (जब) वहाँ (इस प्रकार) नौ मास पूरे हो गये, (तब) प्रसूति का दिन आ गया। तो वृद्ध मुनि-पत्नियाँ वहाँ आकर उसके पास शुभ (कामनाओं से युक्त) मन के साथ रह गयीं। ५। जब शुभ योग, दिन, नक्षत्र, तिथि, तथा शुभ लग्न और सूर्य मध्याह्न पर था, तो उस समय सुन्दर रूप-निधान युगल (जुड़वाँ) पुत्रों ने जन्म लिया। ६। जिसका जन्म पहले हुआ, वह लघु होता है, (जबकि) जो पीछे से जन्म को प्राप्त हो गया, वह ज्येष्ठ होता है। इस प्रकार, जब (समस्त) श्रेष्ठ ग्रह केन्द्रित हो गये थे, उस समय, इस प्रकार दो पुत्रों का जन्म हुआ। ७। उस समय वाल्मीकि गंगा में स्नान कर रहे थे। (तब) समस्त शिष्य दौड़ते हुए गये और उन्होंने वहाँ जाते हुए यह आनन्द का समाचार कहा। ८। तब मुनि वाल्मीकि ने अपने दोनों हाथों में जो लव और कुश ग्रहण किये थे, उनके साथ ही वे शीघ्रता-पूर्वक आश्रम आ गये। ९। अब उनके बायें हाथ में दर्भ की एक शलाका थी, उसे कुश

हावे वाम करमां दर्भनी, एक सळी कुश जाण,
द्विगुणित दक्षिण हस्तमां, तेनुं नाम लव निर्वाण । १० ।
ते सहित कर वाल्मीक मुनि, आविया आश्रम मांहे,
जातकरम करियुं कुंवरनुं, वेदविधिए त्यांहे । ११ ।
अभिषेक कीधो कुश थकी, तेनुं पाडियुं कुश नाम,
लवे अभिषेक कर्यो तदा, लव नाम ते अभिराम । १२ ।
हावे ज्येष्ठ कुश ने लघु लव, महा श्याम सुंदर वेश,
श्रीरामनां प्रतिबिंब तद्वत, जाणे चंद्र दिनेश । १३ ।
वाल्मीके वधाई घणी करी, आपियां दान अनेक,
सहु द्विजे आशीर्वाद दीधो, शांति मंत्राभिषेक । १४ ।
ज्यम शुक्ल पक्षनो चंद्रमा चढे, अधिक अधिक कळाय,
एम कुंवर वृद्धि पामता, दिन दिन मोटा थाय । १५ ।
तन श्याम सुंदर कमळमुख, आकरण नेत्र विशाळ,
रामना सरखी आकृति, बळवान बंन्यो बाळ । १६ ।
तेनुं लालनपालन करे नित्ये, मुनि वाल्मीक जेह,
एम करतां थया मोटा, सात वरसना तेह । १७ ।

समझिए और दाहिने हाथ में दो गुना बड़ी अर्थात् शलाका थी उसका नाम निश्चय ही लव था । १० । हाथों में उन्हें लेकर, उनके साथ ही वाल्मीकि मुनि आश्रम में आ गये और वहाँ उन्होंने वैदिक विधि के अनुसार (उन नवजात शिशुओं का) जातकर्म सम्पन्न किया । ११ । जिसका (अभिषेक) हुआ, उसका अभिराम नाम तब (से) लव (प्रचलित) हो गया । १२ । अब ज्येष्ठ लड़का कुश और छोटा लव (दोनों ही) ही श्यामवर्णीय तथा अति सुन्दर रूपधारी थे । वे दोनों श्रीराम के प्रतिबिम्ब जैसे थे । मानो वे चन्द्र और सूर्य ही थे । १३ । (उस अवसर पर) वाल्मीकि नें बहुत मंगलाचार सम्पन्न किया; अनेक (प्रकार के) दान दिये और शान्तिमन्त्र के साथ अभिषेक करते हुए समस्त ब्राह्मणों ने (उन बालकों को) आशीर्वाद दिया । १४ । जिस प्रकार शुक्ल पक्ष का चन्द्र कला में अधिकाधिक बढ़ता जाता है, उसी प्रकार वे कुमार वृद्धि को प्राप्त हो रहे थे, दिन-प्रतिदिन बड़े होते जा रहे थे । १५ । उनके शरीर साँवले थे; मुख कमल (की भाँति) सुन्दर था, नेत्र आकर्ण (अर्थात् कानों तक फैले हुए) विशाल थे । उनकी आकृति राम की-सी थी । वे दोनों बालक बलवान थे । १६ । मुनि वाल्मीकि उनका नित्य लालन-पालन करते थे । इस प्रकार होते-होते वे (बालक) सात वर्ष के

त्यारे मुंजीबंधन तणो आरंभ, कर्यो त्यां मुनिजन,
वळी कामधेनु स्वर्गभांथी, मंगावी ते दन। १८।
अनेक मुनिवर तेडाविया, त्यांहां थाय मंगळ गीत,
वेदमंत्रे धराव्यां, बे कुंवरने उपवीत। १९।
सहु विप्र राख्या सप्त दिन, भोजन नाना भात,
जे जे पदारथ जोईए ते, आपे कामदुर्गा साक्षात्। २०।
आशिष दीधी सर्व मुनिए; आप्यां बहु वरदान,
लव कुश बंन्यो शोभता, बळ गुण रूप निधान। २१।
भोजन करावी दक्षिणा दीधी, आप्यां वस्त्र अपार,
विदाय कीधा वाल्मीके सौ, विप्रने तेणी वार। २२।
विदाय करी ते कामधेनु, स्वर्गमां निर्वाण,
जानकी हरख्यां अति घणुं, जोई पुत्र परम सुजाण। २३।
पछी वेदाध्ययन बे पुत्रने, मुनिए कराव्युं त्यांहे,
खट शास्त्र सकळ पुराण भणिया, हरखता मन मांहे। २४।

बड़े हो गये। १७। तब वहाँ मुनिजनों ने उनका मौंजी-बन्धन अर्थात् जनेऊ संस्कार आरम्भ किया। फिर उस दिन उन्होंने स्वर्ग में से कामधेनु को मँगा लिया। १८। उन्होंने अनेक मुनियों को बुला लिया। वहाँ मंगल गीतों का गायन हो गया। और वेद-मन्त्रों के (पठन के) साथ उन्होंने उन (बालकों) को जनेऊ धारण करा दिया। १९। (वाल्मीकि ने अपने यहाँ) सात दिनों तक समस्त विप्रों को ठहरा लिया और नाना प्रकार का भोजन कराया। जो-जो पदार्थ चाहिए थे, वे प्रत्यक्ष कामधेनु दे रही थी। २०। सब मुनियों ने (उन बालकों को) आशीर्वाद दिया तथा बहुत वरदान दिये। बल, गुण तथा रूप के निधान वे लव कुश (नामक दोनों) लड़के शोभायमान थे। २१। उस समय वाल्मीकि ने समस्त विप्रों को भोजन कराते हुए दक्षिणा प्रदान की, असंख्य वस्त्र दे दिये और उन्हें विदा कर दिया। २२। अन्त में उन्होंने उस कामधेनु को स्वर्ग की ओर (प्रस्थान कराने के हेतु) विदा कर दिया। अपने परम सुजान पुत्रों को देखते हुए जानकी अत्यधिक आनन्दित हो गयी। २३। अनन्तर मुनि (वाल्मीकि) ने वहाँ उन दोनों पुत्रों को वेदाध्ययन करा दिया (वेद पढ़ाये); छहों शास्त्र[1] और समस्त पुराण[2] पढ़ा दिये। (उन्हें देखते हुए)

१ **छः शास्त्र**—धर्म, सांख्य, वेदान्त, न्याय, काम और योग।
२ **समस्त पुराण**—विष्णु, स्कन्द, अग्नि, मार्कण्डेय आदि अठारह मुख्य पुराण तथा भागवत, नृसिंह आदि अठारह उपपुराण।

धनुर्वेदनी युक्ति सर्वे, मंत्रशास्त्र विवेक,
शस्त्र ग्रहेवानी कळा, वळी अस्त्र मंत्र अनेक। २५।
शतकोटि रामायण पुनित, वाल्मीके करी हती जेह,
बे राघवीने भणावी, सहु अर्थ साथे तेह। २६।
ते रामचरित्रनुं गान करता, पुत्र रूडी पेर,
लव कुशने गावा तेडी लावे, मुनि घेरेघेर। २७।
सप्त स्वर त्रण ग्राम आहे, राग ने उपराग,
ते मेळवी रामचरित्र गाता, मन धरी अनुराग। २८।
एम चौद विद्या कळा चोसठ, राजनीति निधान,
ऋषिए सकळ ते शीखव्युं, भण्या बंन्यो कुंवर समान। २९।

वे मन में आनन्दित होते थे। २४। उन्होंने उनको धनुर्वेद की समस्त युक्तियाँ सिखा दीं, विशिष्ट मन्त्र-शास्त्र सिखा दिया। शस्त्र ग्रहण करने की कला तथा अनेक अस्त्र सम्बन्धी मन्त्र सिखा दिये। २५। वाल्मीकि ने जिन शत-कोटि पुनीत रामायणों की रचना की थी, वे (रामायण) उन राघव (राम के) पुत्रों को समस्त अर्थ के साथ पढ़ाये। २६। (राम के) वे पुत्र राम-चरित्र का गान भली-भाँति करने लगे। मुनि अपने-अपने घर उन्हें (रामायण का) गान करने के लिए बुला लेते थे। २७। तो वे मन में प्रेम धारण करके अर्थात् प्रेमपूर्वक सप्त स्वर,[1] तीन ग्राम[2] राग-उपराग[3] आदि को मिलाते हुए राम का चरित्र गाते थे। २८। इस प्रकार वाल्मीकि ऋषि ने उन कुमारों को चौदह विद्याएँ,[4] चौंसठ कलाएँ,[5]

---

१ सप्त स्वर—संगीत विद्या के अनुसार सात स्वर ही मुख्य हैं—षड्ज (सा), ऋषभ (रे), गांधार (ग), मध्यम (म), पंचम (प), धैवत (ध) तथा निषाद (नी)।

२ तीन ग्राम—संगीत विद्या के अनुसार, सप्त स्वरों के समूह को ग्राम कहते हैं ये ग्राम तीन हैं—षड्ज, मध्यम और गाधार।

३ राग-उपराग—संगीत विद्या के अनुसार, सप्त स्वरों में से कम से कम पाँच स्वरों के मेल से बना हुआ वादी-संवादी स्वरों से तथा आरोह-अवरोह से युक्त विशिष्ट स्वर-समुदाय 'राग' कहाता है। खमाज, बिलावल आदि प्रमुख राग है। गौण 'राग' उपराग कहाते है।

४ चौदह विद्याएँ—ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद और सामवेद (नामक ४ वेद), शिक्षा, छन्द, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष, कल्प, न्याय, मीमांसा, पुराण तथा धर्मशास्त्र।

५ चौंसठ कलाएँ—चौसठ कलाओं के नामों के विषय में विद्वानों में मतभेद है। अतः इस विषय में अनेक परम्परागत सूचियाँ है। आम तौर पर, काव्य, अलंकार, नाटक, गायन, लिपि (लेखन), वाणिज्य, पशुपालन, मृगया, कृषि, मल्लविद्या, शकुन शास्त्र, रत्नपरीक्षा आदि चौंसठ कलाएँ मानी जाती है।

अनेक ऋषिना बाळ साथे, रमे बंन्यो वीर,
निज मात ने मुनि तणी आज्ञा, पाळता मति धीर। ३०।
वनमांहेथी कंद मूळ लावी, मूके मुनिवर पास,
सेवा करे माता तणी, मानता मुनिनो त्रास। ३१।
सतसंगे करीने प्राणी ज्यम, वीसरे दु:ख संसार,
एम वीसर्यां श्री विजोगनुं दु:ख, जोई पुत्रने निरधार। ३२।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

वीसर्या श्री विजोगनुं दु:ख, जोई पुत्रने महा रणधीर रे,
दश वरसना थया राघवी, त्यारे मृगया रमता वीर रे। ३३।

राजनीति आदि सब सिखा दिया और वे उन्हें समान रूप से सीख गये। २९। वे दोनों धीरमति बन्धु ऋषियों के अनेक पुत्रों के साथ खेलते थे और अपनी माता तथा गुरु की आज्ञा का पालन करते थे। ३०। वे वन में से कन्द-मूल लाकर मुनिवर (वाल्मीकि) के पास रख देते थे। वे माता की सेवा किया करते थे और मुनि वाल्मीकि से भय अनुभव करते थे। ३१। प्राणी (मनुष्य) सत्संगति से जिस प्रकार सांसारिक दु:ख को भूल जाता है, उस प्रकार अपने पुत्रों को देखते हुए सीता विरह (-जन्य) दु:ख को निश्चय ही भूल गयी। ३२।

अपने रणधीर पुत्रों को देखते हुए सीता अपने विरह-दु:ख को भूल गयी। (इस स्थिति में) राम के वे पुत्र दस वर्ष के हो गये। वे बन्धु (तब) मृगया (शिकार) खेलने लगे। ३३।

* * *

अध्याय—३६ (लव-कुश द्वारा शृंगी ऋषि का वध और उनका ब्रह्म-हत्या के पाप से मुक्त हो जाना)

राग मारु

थया लव कुश दश वरस तणा, त्यारे मृगया रमता वीर,
क्षत्रीधर्म आचरता पोते, धनुष बाण ग्रही धीर। १।

अध्याय—३६ (लव-कुश द्वारा शृंगी ऋषि का वध और उनका ब्रह्म-हत्या के पाप से मुक्त हो जाना)

(जब) लव और कुश दस वर्ष के हो गये, तब वे (दोनों) बन्धु मृगया करने लगे। वे धीर (-मति लड़के) धनुष-बाण ग्रहण करके क्षात्र-

एक समे बे वीर गया छे, मृगया करवा वन,
त्यां गिरिना शिखर उपर बेठा, एक शृंगीऋषि मुनिजन। २।
मृगना जेवी आकृति तेनी, देखाय पर्वत मांहे;
ते बंधु छे वाल्मीक मुनिना, तपने बेठा त्यांहे। ३।
जानकीपुत्रे दीठा तेने, मृग जाण्यो निरधार;
लवकुशे बे बाण चढावी, मूक्यां तेणी वार। ४।
ते आवी वाग्यां ऋषिरुदेमां, तजियां ततक्षण प्राण,
पछे तेने लईने बे जण आव्या, मुनि आश्रम निरवाण। ५।
त्यारे वाल्मीके ओळख्यो बंधु पोतानो, कह्युं लवकुशने त्यांहे,
तमे घणा बळिया थया माटे, मुज वीरने मार्यो आंहे। ६।
अरे पुत्रो लाग्युं पाप तमोने, बेठी ब्रह्महत्याय;
एवां वचन सुणीने पुत्र पस्ताया, शोक करे सीताय। ७।
पछी विधियुक्ते वाल्मीके, कर्यो निज बंधुने संस्कार;
दाहक्रिया उत्तरक्रिया कीधी, शास्त्र तेणे अनुसार। ८।
त्यारे जनकसुताए कह्युं मुनिवरने, जाणी विपरीत काज;
अरे पिता ए तीक्ष्ण घणी छे, सूर्यवंश महाराज। ९।

धर्म के अनुसार आचरण करने लगे। १। एक समय वे दोनों बन्धु वन में मृगया करने गये। वहाँ (उन्होंने देखा कि) पर्वत के शिखर पर शृंगी ऋषि (नामक एक) मुनि बैठे थे। २। पर्वत में उनकी आकृति मृग की-सी दिखायी दे रही थी। (वस्तुतः) वे वाल्मीकि ऋषि के बन्धु थे और वहाँ तपस्या कर रहे थे। ३। जब सीता के उन पुत्रों ने उन्हें देखा, तो वे निश्चय ही उन्हें कोई हिरन समझ बैठे। (इसलिए) लव-कुश ने उस समय (धनुष पर) दो बाण चढ़ाकर चला दिये। ४। वे आकर ऋषि के हृदय (-स्थल) पर लग गये; (फल-स्वरूप) उन्होंने तत्क्षण प्राण छोड़ दिये। अनन्तर वे दोनों जने उन (ऋषि) को लेकर अन्त में (वाल्मीकि) ऋषि के आश्रम आ गये। ५। तब वाल्मीकि ने स्वयं अपने बन्धु को पहचान लिया और वहीं लव-कुश से बोले, 'तुम बहुत बलवान हो गये हो, इसीलिए तो मेरे भाई को यहाँ मार सके। ६। अरे पुत्रो, तुम्हें पाप लगा है, तुम पर ब्रह्म-हत्या बैठ गयी (अर्थात् तुम्हें ब्रह्म-हत्या का दोष लग गया है)।' (मुनिवर की) ऐसी बातें सुनते ही वे लड़के पछताने लगे और सीता शोक करने लगी। ७। अनन्तर वाल्मीकि ने विधि-पूर्वक अपने बन्धु का (मृतक-) संस्कार किया। उन्होंने शास्त्र के अनुसार उनकी दाह-क्रिया तथा उत्तर-क्रिया कर दी। ८।

वळी मोटो प्रताप तम विद्यानो ते, महापराक्रमी थाय,
माटे पुत्र तणो ए दोष निवरति, करो तमो मुनिराय। १०।
वळी लव कुश कहे स्वामी अमने कहो, उपाय करीए तेह,
ब्रह्महत्यानुं महापाप ए, अम शिर बेठुं जेह। ११।
भाई ब्रह्मकमळ एक सहस्र थकी, करो शिवपूजन सुत ज्यारे,
ब्रह्महत्यानुं पाप ऊतरशे, पवित्र थाशो त्यारे। १२।
लव कुश कहे, क्यां ब्रह्मकमळ छे? कहो ते अमने तात,
त्यां थकी लावीने अमो करीए, शिवपूजन साक्षात्। १३।
मुनि कहे नगर अयोध्या पासे, छे ब्रह्मसरोवर त्यांहे,
सहस्र पांखडी केरां थाय छे, ब्रह्मकमळ ते मांहे। १४।
ते कमळे करी श्रीरामचंद्र, शिवपूजन नित्य करे छे,
अनेक योद्धा रक्षा करता, सरोवर पूंठे करे छे। १५।
त्यारे वळता हसी बे बाळक कहे छे, एना शा छे भार?
हमणां लावीए ब्रह्मकमळ, करी रक्षकनो संहार। १६।

(ब्रह्महत्या जैसे) विपरीत काम को घटित जानकर सीता ने तब मुनिवर से कहा, 'हे पिताजी, सूर्यवंश के महाराज बहुत प्रखर (तेजस्वी) होते हैं; । ९। इसके अतिरिक्त आपकी (सिखायी हुई) विद्या का प्रताप भी बड़ा है। (इसीलिए तो) ये महापराक्रमी हो गये हैं। अतः हे मुनिराज, आप मेरे इन पुत्रों के इस दोष (पाप) का निराकरण कर दीजिए।'। १०। फिर लव और कुश बोले, 'हे स्वामी, हमारे सिर पर ब्रह्महत्या का जो यह महापाप बैठा है, उसका कोई उपाय बताइए—वह हम कर लेंगे'। ११। (इस पर वाल्मीकि ने कहा—) 'अरे बच्चो, जब तुम एक सहस्र ब्रह्म-कमलों से शिवजी का पूजन करोगे, तब ब्रह्म-हत्या का पाप उतर जाएगा और तुम पवित्र हो जाओगे।'। १२। (तब) लव कुश बोले, 'हे तात, ब्रह्म-कमल कहाँ है? यह तो हमें बताइए। वहाँ से लाकर हम उनसे प्रत्यक्ष शिवजी का पूजन करेंगे।'। १३। तो मुनि ने कहा, 'अयोध्या नगर के पास वहाँ एक ब्रह्म-सरोवर है। उसमें सहस्र पखुँड़ियों के एक-एक ब्रह्म-कमल हैं। १४। श्रीरामचन्द्र (स्वयं) उन कमलों से शिवजी का नित्य पूजन करते हैं। अनेक योद्धा उस सरोवर की रक्षा करते हैं और वे पीछे (चारों ओर) घूमते रहते हैं।'। १५। तब फिर वे बालक हँसते हुए बोले, 'उनका क्या भार है? (उनकी क्या बड़ी शक्ति है?) हम उन रक्षकों का संहार करके अभी ब्रह्म-कमल लाएँगे। १६। कदाचित् अवधराज

कदापि अवधनो राय राम, जो चढी आवशे त्यांहे,
तो तेने झाली बंधन करी, आंही लावीशुं क्षणमांहे । १७ ।
एवुं कही कर धनुष बाण ग्रही, चाल्या बंन्यो वीर,
चंद्र सूरज तेजस्वी जेवा, धनुर्विद्याना धीर । १८ ।
अवधपंथ पूछीने चाल्या, जेवा सिंहना बाळ,
वन पर्वत ओळंगी आव्या, ब्रह्मसरोवर पाळ । १९ ।
कुशे प्रवेश कर्यो सरोवरमां, तोड्यां कमळ अपार,
रक्षक क्रोध करी आव्या तेनो, लवे कर्यो संहार । २० ।
कोई एक ऊगर्या ते नासी गया, पुरी अयोध्यामांहे,
समाचार सर्वे कह्या जईने, रघुपति बेठा ज्यांहे । २१ ।
महाराज, आपणा सरोवरमां, मुनि बाळक बे बळवंत,
कमळ अति घणां तोड्यां तेणे, मार्या जोद्ध अनंत । २२ ।
एवुं सुणीने शत्रुघन क्रोध करीने, ऊठ्या तेणी वार,
कोणे तोड्यां ए कमळ आपणां ? हवडां करुं संहार । २३ ।
त्यारे श्रीरघुवीर हसीने बोल्या, शत्रुघनशुं वाण,
अरे भाई, जवा दो ए को हशे, मुनिवरनां बाळक जाण । २४ ।

राम यदि वहाँ आक्रमण कर आएँगे, तो उन्हें पकड़कर बन्दी बनाते हुए हम क्षण में यहाँ लाएँगे । ' । १७ । ऐसा कहकर वे दोनों बन्धु हाथ में धनुष-बाण लेकर चले गये । धनुर्विद्या के धारी वे धीर लड़के चन्द्र-सूर्य जैसे तेजस्वी थे । १८ । सिंह के शावक जैसे वे (लड़के) अयोध्या का मार्ग पूछते हुए चले जा रहे थे । (अन्त में) वे वनों और पर्वतों को पार करते हुए ब्रह्म-सरोवर के तट पर आ गये । १९ । (तदनन्तर) कुश ने सरोवर में प्रवेश किया और असंख्य कमल तोड़ लिये (तब जो) रक्षक क्रुद्ध होकर आ गये, उनका लव ने संहार कर डाला । २० । कुछ-एक जो बच गये वे भागते हुए अयोध्यापुरी में आ गये और जहाँ रघुपति राम बैठे हुए थे, वहाँ जाकर उन्होंने समस्त समाचार कह दिया । २१ । ' हे महाराज, दो बलवान ऋषि-पुत्रों ने हमारे सरोवर में अत्यधिक (संख्या में) कमल तोड़ लिए और असंख्य योद्धाओं को (भी) मार डाला है । ' । २२ । ऐसा सुनते ही शत्रुघ्न उसी समय क्रोध करके उठ गया (और बोला—) ' हमारे कमल किसने तोड़ डाले हैं ? मैं उनका अभी संहार कर डालता हूँ । ' । २३ । तब श्रीराम ने हँसते हुए शत्रुघ्न से यह बात कही, ' अरे भाई, जाने दो—समझ लो कि वे किसी मुनिवर के कोई पुत्र होंगे । २४ । वे उस विप्र के आज्ञाकारी होंगे—तुम्हें अभिशाप देंगे । यदि उन बालकों

ए आज्ञाकारी हशे विप्रना, देशे तमने शाप,
ते बाळकने जो कदापि हणीए, तो पण लागे पाप। २५।
एम क्रोध समाव्यो वीर तणो, सुत जाणी पूरणब्रह्म,
पछे कमळ लेई बे वीर गया ते, मुनिवरने आश्रम। २६।
मात जानकी मुनि वाल्मीक जोई, पाम्यां घणुं आश्चर्य,
हरखी परस्पर वात करे ए, पुत्रनुं अद्‌भुत वीर्य। २७।
पछे विधिए करीने वाल्मीकमुनिए, कराव्युं शिवपूजन,
पुत्रने हस्ते चढाव्यां शिवने, ब्रह्मकमळ पावन। २८।
ब्रह्महत्या ऊतरी लवकुशनी, तत्क्षण थया पवित्र,
वारंवार वखाणे सुर मुनि, राघवी केरां चरित्र। २९।

वलण (तर्ज बदलकर)

चरित्र पावन राघवीनां, वखाणे सुर मुनिजन रे,
निज पुत्रने लाड लडावतां, नित्य सीता हरखे मन रे। ३०।

* * *

को हम कदाचित् मार डालें, तो हमें पाप भी लग जाएगा'। २५। पूर्णब्रह्म राम ने (कमल तोड़नेवाले उन तथा-कथित मुनि-पुत्रों को) अपने पुत्र समझते हुए अपने भाई के क्रोध को इस प्रकार (समझाते हुए) शान्त कर दिया। फिर वे दोनों बन्धु कमल लेकर मुनिवर के आश्रम चले गये। २६। उनकी माता जानकी और (गुरु) मुनि वाल्मीकि वह देखकर बहुत आश्चर्य को प्राप्त हो गये और आनन्दित होकर वे परस्पर यह बोले—यह तो इन लड़कों की अद्‌भुत वीरता है। २७। तदनन्तर वाल्मीकि मुनि ने (सीता के) उन पुत्रों द्वारा शिवजी का विधि-पूर्वक पूजन कराया और उनके हाथों वे पावन ब्रह्म-कमल शिवजी को समर्पित करवा दिये। २८। (फलतः) लव-कुश के सिर पर से ब्रह्म-हत्या उतर गयी और वे तत्क्षण पवित्र हो गये। (तदनन्तर) देव और ऋषि राम के उन पुत्रों के चरित्र का बार-बार बखान करते रहे। २९।

देवों और मुनिजनों ने राम के पुत्रों के इस चरित्र का बार-बार बखान किया। सीता का मन अपने पुत्रों का लाड़-प्यार करते हुए नित्य आनन्दित होता था। ३०।

* * *

अध्याय—३७ (सीता का अपने पति द्वारा त्यक्त होने की कथा लव-कुश को सुनाना)

राग काफी

सुणो श्रोता थई सावधान, पावन लवकुशनुं आख्यान,
ब्रह्मकमळे पूज्या शिवराय, तेथी ऊतरी ब्रह्महत्याय। १ ।
पुत्रे वात कही विस्तारी, हरख्यां मुनि ने जनककुमारी,
वखाणे सुतने मुनि भूप, रामना प्रतिबिंब स्वरूप। २ ।
एक समे आदिकविजन, गया गंगामां करवा मंजन,
बेठां आश्रममां वैदेही, पासे पुत्र बे परम सनेही। ३ ।
सीतानी करे चरणसेवाय, भूमिजाने ते हरख न माय,
एकेको पद लेई उछंग, सेवता सुत पामी उमंग। ४ ।
सुखदुःखनी करता वात, सुणी द्रवित थाये घणुं मात,
लवकुशे पूछ्युं तेणी वार, आपणे क्यम रह्यां वन मोझार ? । ५ ।
माता वसवा तणुं कोण गाम ? अमारा तात तणुं शुं नाम ?
कुळ गोत्र कुटुंब ने ज्ञात, कोण वंश पितामह तात ? । ६ ।
थयो जन्म अमारो क्यांहे ? केम वसवुं पड्युं वनमांहे ?
ते वृत्तांत कहो सहु माय, सुणी वचन बोल्यां सीताय। ७ ।

अध्याय—३७ (सीता का अपने पति द्वारा त्यक्त होने की कथा लव-कुश को सुनाना)

हे श्रोताओ, सावधान होकर लव-कुश के पावन आख्यान को सुनिए। उन्होंने ब्रह्म-कमलों से शिवराजजी का पूजन किया, तो उनपर से ब्रह्म-हत्या का पाप उतर गया। १। जब उन पुत्रों ने विस्तार-पूर्वक यह बात कही, तो मुनि (वाल्मीकि) और सीता मन में आनन्दित हो उठे। मुनि ने राजा राम के प्रतिविम्ब-स्वरूप उन लड़कों का बखान किया। २। एक समय आदि-कवि (वाल्मीकि) गंगा में स्नान करने के लिए गये, तो वैदेही (सीता) आश्रम में बैठी हुई थी। उसके पास परम स्नेही दोनों पुत्र थे। ३। वे भूमि-कन्या सीता की चरण-सेवा कर रहे थे, तो उसका आनन्द (हृदय में) समा नहीं रहा था। वे दोनों पुत्र उमंग को प्राप्त होते हुए (अपनी माता के) एक-एक चरण को गोद में लेकर सेवा कर रहे थे (दबा रहे थे)। ४। वे सुख-दुख की बातें कर रहे थे, उसे सुनकर माता बहुत द्रवित हो गयी। उस समय लव-कुश ने पूछा, 'हम वन में क्यों रह रहे हैं। ५। हे माता, हमारे निवास का (मूल) स्थान कौन है ? हमारे पिताजी का क्या नाम है ? कुल-गोत्र, परिवार और जाति कौन है ? वंश कौन है ? पितामह और पिता कौन-कौन हैं। ६। हमारा जन्म

नग्र अवधपुरी पावन, रविकुळमां थया उत्पन्न,
अजना सुत दशरथ सार, तेना पुत्र प्रगट थया चार। ८ ।
राम लक्ष्मण शत्रुघन भरत, चारे बंधु ए महा समरथ,
तेमां राम तमारा पिताय, जे छे कोटी ब्रह्मांडना राय। ९ ।
साक्षात् ए श्रीभगवान, शिव, ब्रह्मा धरे जेनुं ध्यान,
मार्या राक्षस दुष्ट अपार, उतार्यो जेणे भूमिनो भार। १० ।
कर्युं रावणकुळ छेदन, तार्या अनेक पृथ्वीना जन,
वर्ष सहस्र एकादश आज, गयां करतां अयोध्यानुं राज। ११ ।
एक दुष्ट रजकने वचन, मुने तजी प्रभुए आ वंन,
एम आदिथी सर्व कथाय; मांडीने कही पुत्रने माय। १२ ।
भूमिजा थयां गद्‌गद त्यांहे, आंसुधार चाली नेत्रमांहे,
संभारी निज दुःखनी वात, भरायुं रुदे अकस्मात्। १३ ।
वार्यां माताने करतां रुदन, आपी धीरज लूछ्यां लोचन,
एम कायर थाओ क्यम? रुओ तो छे अमारा सम। १४ ।

कहाँ हुआ? हमें वन में क्यों रहना पड़ा है? हे माँ, यह बात तो कह दो।' ऐसी बातें सुनकर सीता बोली। ७। 'अयोध्या नगरी नामक एक पवित्र नगरी है। उसमें रवि-कुल में उत्पन्न अज (नामक राजा) के दशरथ (नामक) पुत्र थे। उनके चार सुन्दर पुत्र उत्पन्न हो गये। ८। वे पुत्र थे— राम, लक्ष्मण, शत्रुघ्न और भरत। वे चारों बन्धु महान् सामर्थ्यशाली थे। उनमें से राम तुम्हारे पिता हैं, जो (वस्तुतः) कोटि (-कोटि) ब्रह्माण्डों के अधिपति हैं। ९। वे साक्षात् श्रीभगवान हैं, जिनका ध्यान शिवजी और ब्रह्माजी धारण किया करते हैं, जिन्होंने असंख्य दुष्ट राक्षसों को मार डाला और भूमि का (पाप-) भार उतार दिया। १०। उन्होंने रावण के कुल का संहार किया और पृथ्वी के अनेक (भले) लोगों का उद्धार किया। अयोध्या का राज्य करते हुए उनके आज ग्यारह सहस्र वर्ष पूर्ण हो गये। ११। एक दुष्ट धोबी की बात से प्रभु ने मुझे इस वन में (पहुँचाकर) छोड़ दिया। इस प्रकार माता ने, अपने पुत्रों को आरम्भ से (लेकर अन्त तक) समस्त कथा विस्तार-पूर्वक सुना दी। १२। (तब) सीता वहाँ गद्‌गद हो उठी। उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगी। अपने दुःख की बात का अकस्मात् स्मरण करते ही उसका हृदय उमड़ उठा। १३। (तब उन पुत्रों ने) रोती हुई अपनी माता को रोक लिया और धीरज दिलाते हुए उन्होंने उसकी आँखें पोंछ दीं। (फिर वे बोले) ' इस प्रकार कातर क्यों हो जाती हो? (यदि) रोओगी, तो हमारी

देहनां सुखदुःख होये जेह, न छूटे भोगव्या विण तेह,
तज्यां विण अपराधे आम, धर्मवंत शाना ए राम ? । १५ ।

शुं करीए ए छे पिताय, करीए बीजाने हवडां शिक्षाय,
माटे राखो हवे मन धीर, सत्यवादी जाण्यां रघुवीर । १६ ।

सुते समजाव्यां कही घणुं ज्ञान, एम कर्युं सीतानुं समाधान,
मातानी सेवा करता कुमार, एम करतां थयां वर्ष बार । १७ ।

वर्ष द्वादशना थया तन, जोईने जानकी हरखे मन,
कहे धरमनीतिनी वात, एम सुखे रह्यां सुत मात । १८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

माता पुत्र सहित सुख पामे, रही एटले एह कथाय रे,
कहे दास गिरिधर सुणो श्रोता, हावे अयोध्यामां शुं थाय रे ? । १९ ।

* * *

शपथ है । १४ । देह के जो सुख-दुख हों, वे बिना भोगे नहीं छूट जाते । जिन्होंने बिना अपराध के तुम्हें त्यज डाला, तो वे राम धर्मशील कैसे ? । १५ । क्या करें जब कि ये पिता हैं । किसी दूसरे को हम अभी दण्ड दे देते । अतः अब मन में धीरज रखो । हमने रघुवीर को सत्यवादी माना है । ' १६ । (फिर) उन पुत्रों ने ज्ञान की बहुत बातें कहते हुए सीता को समझा दिया और उसका इस प्रकार समाधान कर दिया । वे कुमार अपनी माता की (यथायोग्य) सेवा करते थे । इस प्रकार करते-करते बारह वर्ष हो गये । १७ । वे पुत्र बारह वर्ष के हो गये । उन्हें देखते हुए सीता का मन आनन्दित हो जाता था । वह उन्हें धर्म तथा नीति (शास्त्र) की बातें बनाती थी । इस प्रकार माता और पुत्र सुख से रहते थे । १८ ।

माता (सीता) अपने पुत्रों सहित सुख को प्राप्त होती थी । इतने में एक कथा (शेष) रह गयी है । गिरधरदास कहते हैं, हे श्रोताओ, सुनिए, अब अयोध्या में क्या हो रहा था । १९ ।

* * *

अध्याय—३८ (वसिष्ठ-राम-संवाद)

राग मेवाडो

हावे अवधपुरीमां श्रीमहाराज जी,
धरमे निज पाळे चलावे राज जी।
सेवे रघुपतिने बंधु समाज जी,
आज्ञा प्रमाणे करता काज जी। १।

ढाळ

सहु काज करता राजनुं, लेई आज्ञा श्रीरघुवीर तणी,
निज धर्म-कर्मने प्रजा पाळे, गुरु विषे ममता घणी। २।
शत्रुघ्न लक्ष्मण भरतने, तीहां थया बब्बे पुत्र,
स्वरूप बळ विद्यानिपुण, जेणे शोभिये घरसूत्र। ३।
लक्ष्मणना बे पुत्र अंगद, चित्रकेतु नाम,
तक्ष पुष्कल पुत्र बे थया, भरतने अभिराम। ४।
सुबाहु श्रुतसेन नामे, शत्रुघन सुत सार,
ए प्रकारे उत्पन्न खट सुत, सुंदर राजकुमार। ५।
ते पुत्रने परणाविया, विवाह करी शुभ ठाम,
वधू सहित खट सुत शोभिये, जाणे रूपे रति ने काम। ६।

अध्याय—३८ (वसिष्ठ-राम-संवाद)

अब महाराज रघुपति श्रीराम (राज-) धर्म के अनुसार अपनी प्रजा का पालन कर रहे थे और राज्य कर रहे थे। उनकी भ्रातृ-मण्डली उनकी सेवा कर रही थी और उनकी आज्ञा के अनुसार कार्य कर रही थी। १।

वे समस्त (बन्धु) श्रीरघुवीर की आज्ञा (अनुमति) लेते हुए राज्य-सम्बन्धी काम करते थे। वे अपने-अपने धर्म-कर्म तथा प्रजा का पालन करते थे। उनको गुरु (-जनों) के प्रति प्रेम था। २। शत्रुघ्न, लक्ष्मण और भरत तीनों के दो-दो पुत्र हो गये। वे स्वरूपवान, बलशाली और (समस्त) विद्याओं में निपुण हो गये, जिससे घरबार के (व्यवहार-सूत्र) शोभायमान हो गये थे। ३। लक्ष्मण के दो पुत्रों के नाम अंगद और चित्रकेतु थे। भरत के तक्ष और पुष्कल नामक दो सुन्दर पुत्र हो गये। ४। शत्रुघ्न के सुबाहु और श्रुतसेन नामक सुन्दर पुत्र थे। इस प्रकार (उन तीनों के कुल) छः सुन्दर राजपुत्र उत्पन्न हो गये थे। ५। उन पुत्रों के शुभ स्थलों पर (अच्छे कुल की कन्याओं के साथ) विवाह कराये गये। वे

हावे श्रोताजन सहु एक चित्ते, सुणो धरीने धीर,
जे दिवसथी जानकीने, तज्यां श्रीरघुवीर। ७।
ते दिवसथी पुर अयोध्यामां, पडवा मांड्यो काळ,
वृष्टि न थाये देशमां, वरत्यो समय विकराळ। ८।
एम वरस द्वादश वही गयां, थई अनावृष्टि जाण,
सहु पीडावा मांडी प्रजा, दुःख उपन्युं निरवाण। ९।
त्यारे अवधपुरीमां सभा करीने, बेठा श्रीरघुनाथ,
गुरु वसिष्ठने पूछ्युं तदा, प्रभुए जोडी जुग हाथ। १०।
महाराज, मारा राज्यमां, जळवृष्टि थई क्यम बंध ?
तेणे पीडाये मुज प्रजा ते, कहो कोण पाप संबंध ?। ११।
रघुवीर केरां वचन सुणीने, बोल्यां ब्रह्मकुमार,
हे अंतरजामी, जाणो छो तोये, कहुं सत्य विचार। १२।
जे परम साधवी जानकी, साक्षात् लक्ष्मीरूप,
अपराध पाखे सतीने तमो, तजी रघुकुळ भूप। १३।
ते कारण माटे मेघनी, वृष्टि न थाये राम,
माटे यज्ञविधिएथी करो, अश्वमेध जेनुं नाम। १४।

छहों पुत्र अपनी वधू-सहित शोभायमान थे। मानो वे रूप में रति और कामदेव (के रूप) थे। ६। अब श्रोताजनो, आज सब एकाग्रचित्त से तथा धैर्य धारण करके सुनिए। जिस दिन श्रीराम ने सीता का परित्याग किया, उस दिन से अयोध्या नगरी में अकाल पड़ना आरम्भ हो गया। उस देश में वर्षा न हो रही थी; (तब) भयावह समय आ गया। ७-८। समझिए कि इस प्रकार अनावृष्टि (सूखा) रहते हुए बारह वर्ष व्यतीत हुए। समस्त प्रजा का पीड़ित होना आरम्भ हुआ। उससे चरम कोटि का दुःख उत्पन्न हो गया। ९। तब प्रभु श्रीरघुनाथ अयोध्यापुरी में सभा आयोजित करके बैठ गये और उन्होंने दोनों हाथ जोड़कर गुरु वसिष्ठ से पूछा। १०। 'हे महाराज, मेरे राज्य में जल-वृष्टि (वर्षा) क्यों बन्द हो गयी ? उससे मेरी प्रजा पीड़ित हो रही है। कहिए, इसमें किस पाप का सम्बन्ध है?'। ११। रघुवीर की ये बातें सुनकर ब्रह्म-कुमार वसिष्ठ बोले, 'हे अन्तर्यामी, आप तो जानते (ही) हैं। मैं सच्ची बात कह रहा हूँ। १२। हे रविकुल-भूपति, जो जानकी परम साध्वी तथा साक्षात् लक्ष्मी-स्वरूपा हैं, उनका, बिना किसी अपराध के, आपने त्याग किया है। हे राम, उस कारण से (इस देश में) मेघ-वृष्टि नहीं हो रही है। इसलिए जिसका नाम अश्वमेध है, उस यज्ञ को आप यथा-विधि सम्पन्न

एवां वसिष्ठ केरां वचन सुणी, यज्ञ आरंभ्यो रघुवीर,
यज्ञनो मडप रचाव्यो, सरजुगंगाने तीर। १५।
वळी बीजुं कारण यज्ञनुं छे, सुणो श्रोताजन,
रामाश्वमेघनी पद्मपुराणे, कथा छे पावन। १६।
वात्सायण ऋषि प्रत्ये कही, शेषे कही विस्तार,
पाताळ खंडे वर्णवी, अडसठ अध्यायसार। १७।
कहे शेष वात्स्यायण सुनो, एक आसन मतिधीर,
कहुं कथा ए अश्वमेधनी, जेमां चरित्र श्रीरघुवीर। १८।
एक समे श्रीरघुवीर बेठा, सभामां निरधार,
अगस्त्यमुनि त्यां आविया, ऊठी कर्यो बहु सत्कार। १९।
श्रीरामचंद्रे करी पूजा, बेसाड्या आसन,
विनयस्तुति करी बोल्या, पूछे प्रभु मधुर वचन। २०।
एक संदेह मुजमां थयो ते, निवारो घटजात,
मा'नुभाव तमने प्रश्न पूछुं, कहो करी विख्यात। २१।
कुळ सहित में रावण हण्यो, करी जुद्ध लंकामांहे,
ते कोण ज्ञाति गोत्र एनुं, कहो मुजने आंहे। २२।

कीजिए। १३-१४। (गुरु) वसिष्ठ के ऐसे वचन सुनकर रघुवीर राम ने यज्ञ आरम्भ किया। (उसके लिए) उन्होंने सरयू गंगा के तट पर यज्ञ-मण्डप बनवा लिया। १५। हे श्रोताजनो, सुनिए, इसके अतिरिक्त यज्ञ (करने) का एक दूसरा भी कारण था। पद्म पुराण के अन्तर्गत राम के अश्वमेध की पावन कथा (उपलब्ध) है। १६। यह कथा शेष भगवान् ने वात्स्यायन ऋषि को विस्तार-पूर्वक सुनायी थी। यह (उस पुराण के) पाताल खण्ड (नामक भाग) के अन्तर्गत सुन्दर अड़सठ अध्यायों में वर्णित है। १७। शेष भगवान् बोले, 'हे धीरमति वात्स्यायन, एक आसन पर (स्थिरता से विराजमान होकर) सुनिए। मैं अश्वमेध सम्बन्धी वह कथा कहता हूँ, जिसमें श्रीरघुवीर राम का चरित्र (वर्णित) है। १८। एक समय, श्रीरघुवीर सभा (-मण्डप) में एक निश्चय से बैठे हुए थे। वहाँ अगस्त्य मुनि आ गये, तो उन्होंने उठकर उनका बहुत सत्कार किया। १९। प्रभु श्रीरामचन्द्र ने उनका पूजन किया और आसन पर बैठा लिया। फिर उनकी विनयपूर्वक स्तुति की और उनसे मधुर स्वर में पूछा। २०। 'हे घटजात, मेरे मन में एक सन्देह (उत्पन्न हो गया) है, उसका आप निराकरण कीजिए। आप (जैसे) महानुभाव से मैं प्रश्न कर रहा हूँ— आप स्पष्ट करके कहिए। २१। मैंने लंका में युद्ध करके रावण को

एवां वचन सुणी सीतापतिनां, बोल्या मुनिवर वाण,
हे ब्रह्मपूरण रामजी, सर्वज्ञ छो सुजाण । २३ ।
तमो कारण छो सृष्टि तणा, उत्पत्ति स्थिति लयकार,
वळी आत्मा अंतरजामी सहुना, विश्वना आधार । २४ ।
सहु जीव केरा कर्मना, फळप्रदाता छो राम,
अखंड ज्ञान अनिह व्यापक, सकळ पूरणकाम । २५ ।
तोये अजाण्या थईने मुने पूछो, रावणनी उत्पत्य,
मानुषी लीला जणावा, पाळवा अमने सत्य । २६ ।
पछे अगस्त्ये आदि थकी कही, रावणजन्म कथाय,
पौलस्त्यना कुळ विषे प्रगट्यो, सुणो श्रीरघुराय । २७ ।
ते वात सुणी मुनिमुख थकी, जे ब्रह्मकुळमां जात,
सहु सभा सुणतां बोलिया, गद्‌गद थई जुगतात । २८ ।
अहो में कृत आचर्युं, नव करे क्षत्री धीर,
में ब्रह्मकुळनो वध कर्यो, एम बोलिया रघुवीर । २९ ।

कुल-सहित मार डाला । मुझसे यहाँ (अब) कहिए कि उस (रावण) की कौन जाति है, कौन गोत्र है ।' सीतापति राम के ऐसे वचन सुनकर मुनि ने यह बात कही, 'हे पूर्णब्रह्म रामजी, आप सुजान हैं, सर्वज्ञ हैं । २३ । आप सृष्टि के कारण हैं; आप उसकी उत्पत्ति, स्थिति तथा लय के कर्त्ता हैं । इसके अतिरिक्त, आप सबकी आत्मा तथा अन्तर्यामी हैं, विश्व के आधार हैं । २४ । हे राम, आप समस्त जीवों के कर्म के फल देनेवाले हैं । आप अखण्ड, ज्ञान-स्वरूप, अनिह, (सर्व-) व्यापक, सबकी कामनाओं को पूर्ण करनेवाले हैं (अथवा सर्वव्यापक तथा पूर्णकाम हैं) । २५ । आपने अज्ञान (जैसे) होकर मुझसे रावण की उत्पत्ति (की जानकारी) पूछी है । यह सचमुच आपने मानुषी-लीला दिखाने तथा हमसे सत्य का पालन कराने के लिए किया है । २६ । अनन्तर अगस्त्य ने आदि से लेकर रावण के जन्म की कथा कही । (वे बोले—) हे श्रीरघुराज, सुनिए । वह (रावण) पौलस्त्य कुल में उत्पन्न हुआ । २७ । वह (रावण) ब्रह्माजी के कुल में उत्पन्न हुआ था । मुनि (अगस्त्य) के मुख से यह बात सुनी तो जगत्पिता श्रीराम गद्‌गद होकर समस्त सभा के सुनते हुए बोले । २८ । 'अहो, मेरे द्वारा अधर्म का आचरण हुआ है । धीर क्षत्रिय ऐसा नहीं कर सकता । मैंने ब्रह्मकुल (में उत्पन्न हुए रावण आदि) का संहार किया । रघुवीर राम इस प्रकार बोले । २९ । फिर उन्होंने तो धर्म की स्थापना के लिए ब्रह्म-हत्या अंगीकार की थी । फिर भी लोकाचार का मोह होने

पछे धर्मस्थापन ब्रह्महत्या, करी अंगीकार,
ते समे रघुपति खेद पाम्या, मोह लोकाचार। ३०।
ढळी पड्या तव आसन थकी, मूर्छित थई रघुनाथ,
त्यारे अगस्त्ये श्रीरामने, बेठा कर्या ग्रही हाथ। ३१।
कुंभजऋषि कहे सांभळो, सर्वज्ञ श्रीरघुराय,
तव नाम जपतां मात्रमां, महापापी पावन थाय। ३२।
ते तमारे प्रभु पाप शानुं? असंभव ए वात,
विग्रह अनुग्रह सर्वना, करता तमो विख्यात। ३३।
सावधान थई रघुवीर बोल्या, मुनि साथ वचन,
में अवतरी रघुवंशमां, हण्युं ब्रह्मकुळ पावन। ३४।
महापाप ए मुजथी थयुं, ते निवारो मुनिराय;
उपाय कहो ते हुं करुं, ज्यम टळे ब्रह्महत्याय। ३५।
त्यारे घटोद्भव कहे, अरे रघुपति, तमो पुण्यपवित्र;
अवतार कारण धर्मस्थापन, करो मनुष्यचरित्र। ३६।
तमो नियंता सहु जगतना, निर्लेप व्यापक एक,
नथी तमारे शुभ अशुभ कंई, सम विषम नून्य विषेक। ३७।

से वे उस समय खेद को प्राप्त हो गये। ३०। तब रघुनाथ राम मूर्च्छित होकर अपने आसन से लुढ़ककर गिर पड़े। तब अगस्त्य ने हाथ पकड़कर राम को बैठा दिया। ३१। फिर वे कुम्भज अगस्त्य ऋषि बोले, 'हे सर्वज्ञ श्रीरघुराज, सुनिए। आपके नाम मात्र का जाप करने पर महापापी पावन हो जाते है। ३२। तो हे प्रभु, आपको पाप किसका (कैसा)? यह बात असम्भव है। यह विख्यात है कि आप सबका विग्रह (नियंत्रण) करते हैं और सब पर अनुग्रह भी करते हैं। ३३। (तब) सावधान होकर श्रीरघुवीर ने मुनिवर से यह बात कही, 'रघुवंश में अवतरित होकर मैंने पवित्र ब्रह्म-कुल (में उत्पन्न रावण आदि) की हत्या की है। ३४। यह मुझसे महापाप हो गया है, हे मुनिराज, उसका निवारण कीजिए। आप कोई उपाय कहिए, मैं वह कर लूंगा, जिससे वह ब्रह्म-हत्या (का पाप) टल जाए। ३५। तब अगस्त्य ने कहा, अरे रघुपति, आप स्वयं पुण्यवान् पवित्र हैं। (सद्) धर्म की स्थापना आपके अवतार (ग्रहण करने) का कारण है। (फिर भी) आप यह तो मनुष्य-चरित्र (प्रकट) कर रहे हैं। ३६। आप समस्त जगत् के नियन्ता हैं; आप (स्वयं) निर्लेप (पाप आदि के दोष से दूर), (सर्व-) व्यापक एकमेव (ब्रह्म) हैं। आपके लिए कुछ भी शुभ या अशुभ नहीं है, सम या विषम, न्यून या (विशिष्ट रूप से) अधिक कुछ भी नहीं

तथापि धर्मने स्थापन, लोकसंग्रह अर्थ,
उपाय कहुं ते आचरो, जे वेद पंथ समर्थ । ३८ ।
अश्वमेध यज्ञ करो प्रभु, जेथी टळे महापाप,
वळी घटारत रघुवंशमां, प्रभु पुत्ररूपे आप । ३९ ।
कुंभजतणां वायक सुणी, निश्चे थयुं मन राम,
अश्वमेधनो आरंभ करवा, ऊठ्या पूरणकाम । ४० ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पूरणकाम श्रीरामजीए, अश्वमेधनो आरंभ कर्यो,
हावे यज्ञ केरी कथा कहुं, ते श्रोताजन श्रवणे धरो । ४१ ।

है । ३७ । तथापि धर्म-स्थापना तथा लोक-संग्रह के लिए, मैं एक उपाय कहता हूँ । वही कीजिए, जो वेद द्वारा बताया हुआ समर्थ मार्ग है । ३८ । हे प्रभु, आप अश्वमेध यज्ञ कीजिए, जिससे यह महापाप दूर हो जाएगा । इसके अतिरिक्त, हे प्रभु, रघुवंश में पुत्र-रूप में (उत्पन्न) आप (सर्वथा) सुयोग्य हैं । ३९ । अगस्त्य के ये वचन सुनकर पूर्णकाम राम का मन निश्चय से युक्त हो गया और वे अश्वमेध आरम्भ करने के लिए उठ (तत्पर हो) गये । ४० ।

पूर्णकाम श्रीराम ने अश्वमेध का आरम्भ किया । हे श्रोताजनो, श्रवण कीजिए, मैं अब उस (अश्वमेध) यज्ञ की कथा कहता हूँ । ४१ ।

* * *

अध्याय—३९ (राम का अश्वमेध यज्ञ)

राग आशावरी

हावे अश्वमेधनो आरंभ करवा, चाल्या श्रीरघुवीर,
मंडप रचाव्यो चार जोजननो, सरज्युगंगाने तीर । १ ।
देशदेशमां दूत मोकली, मुनिवरने तेडाव्या,
वळी सगासंबंधी राय हता ते, सैन्य सहित तांहां आव्या । २ ।

अध्याय—३९ (राम का अश्वमेध यज्ञ)

अब श्रीरघुवीर अश्वमेध-यज्ञ आरम्भ करने के लिए चले गये । उन्होंने सरयू गंगा के तट पर चार योजन (विशाल) मण्डप बनवा लिया । १ । उन्होंने देश-देश में दूत भेजकर मुनिवरों को बुला लिया ।

सुग्रीव विभीषण नळ नील अंगद, शरभ ने जांबुवान,
गवाक्ष केसरी रसभनी आदे, आवी मळ्या बळवान। ३ ।
वसिष्ठ विश्वामित्र कुंभजऋषि, गौतम ने वामदेव,
भारद्वाज ने याज्ञवल्क्यमुनि, अत्रि अंगिरा एव। ४ ।
नारद असित कपिलमुनि, परवत शुक्राचारज मुन्य,
व्यास हरित परमार बृहस्पति, लोमस ने जातकरन्य। ५ ।
एवा मुनिवर अति घणा आव्या, साथे शिष्य अपार,
चारे वेदपरायण सर्वे, त्रिकाळ ज्ञानी सार। ६ ।
सर्वनी पूजा करी श्रीरामे, बेसाड्या आसन,
अहोभाग्य मोटुं आज मळिया, मा'नुभाव पावन। ७ ।
हुं महापुरुषनां दरशन पाम्यो, यज्ञ निमित्ते आज,
सत्संगति सम लाभ नहि, अपवर्ग स्वर्ग भूराज। ८ ।
सर्व मुनि मांहोमांहे करे चर्चा, आत्मनिरूपण ज्ञान,
तत्त्वसंख्या निर्वेद वखाणे, भक्तियोग ने ध्यान। ९ ।
केटला दिन एम करतां वीत्या, आव्यो समय वसंत,
वसिष्ठ अगस्त्यनी आज्ञाए कर्यो, यज्ञ आरंभ श्रीकंत। १० ।

इसके अतिरिक्त, जो राजा सगे-सम्बन्धी थे, वे वहाँ सेना-सहित आ गये। २। सुग्रीव, विभीषण, नल, नील, अंगद, शरभ और जाम्बवान, गवाक्ष, केसरी रसभ आदि बलवान (वीर) आकर इकट्ठा हो गये। ३। वसिष्ठ, विश्वामित्र, अगस्त्यऋषि, गौतम और वामदेव, भरद्वाज और याज्ञवल्क्य मुनि, अत्रि, अंगिरा, नारद, असित, कपिल मुनि, पर्वत, शुक्राचार्य मुनि, व्यास, पराशर, बृहस्पति, लोमस और जातकर्ण, —ऐसे अति बहुत (संख्या में) मुनिवर आ गये। उनके साथ अपार शिष्य थे। ४-६। श्रीराम ने उन सबका पूजन करके आसन पर बैठा दिया (और वे बोले), 'मेरा आज अहोभाग्य है कि आज पावन महानुभाव इकट्ठा हो गये हैं। मैं आज यज्ञ के निमित्त महापुरुषों के दर्शन को प्राप्त हो गया हूँ। सत्संग के समान (कोई अन्य) लाभ नहीं है— मोक्ष, स्वर्ग, पृथ्वी का राज्य (उसके समान) नहीं है। ७-८। समस्त मुनि आपस में आत्म-ज्ञान सम्बन्धी चर्चा और निरूपण करते थे। वे (ब्रह्म-)तत्त्व, शान्ति, भक्ति, योग और ध्यान का वखान करते थे। ९। इस प्रकार करते-करते कितने ही दिन बीत गये और वसन्त ऋतु आ गयी। (तब) वसिष्ठ और अगस्त्य की आज्ञा से सीता-पति श्रीराम ने यज्ञ आरम्भ किया। १०। अब वेद-विधि के अनुसार (वेद-विधि-प्रमाणित) यज्ञ का सब साहित्य इकट्ठा किया। बन्धु,

हावे यज्ञनुं साहित्य सर्व मेळव्युं, वेदविधिए प्रमाण;
बंधु प्रधान सकळ जन करता, कारज ते निरवाण। ११।
अश्व अनोपम आणीने बांध्यो, मनवेगी श्यामकर्ण,
पीत पूंछ, रक्त वदन ज शोभे, उज्जवळ जेनुं वर्ण। १२।
श्रीरामचंद्र दीक्षा लेई बेठा, आप्यां दान अपार,
साथे सोनानी सीता करीने, बेसाड्यां तेणी वार। १३।
भूमिशयन ब्रह्मचर्य ज पाळे, भोगरहित सुखकारी,
मृगनुं शृंग कटिए खोस्युं, अजिन मेखळाधारी। १४।
आचारज मुनि वसिष्ठ थया, जे यज्ञ कर्मना जाण,
चार दिशाए नीम्या बब्बे, मंत्रवेत्ता निरवाण। १५।
असित देवळ बे पूरव द्वारे, अंगिरा ने गौतम वाम;
जातुकरन्य जाबाली पश्चिम, दक्षिण कश्यप अत्रि नाम। १६।
अगस्त्यमुनि ते कर्म अधिष्ठाता, अध्वर्यु वेदव्यास;
यज्ञ द्वारपाळ कण्वऋषि, ब्रह्मस्थाने विधिनो वास। १७।
हावे आचारज ऋत्विज मळीने, कराव्युं अश्वपूजन,
कनकपत्र तेने शिर बांध्युं, वसिष्ठे लखीने वचन। १८।

मंत्री (आदि) समस्त लोग निश्चय ही यह कार्य कर रहे थे। ११। मनोवेगी श्यामकर्ण अनुपम घोड़ा लाकर उन्होंने बाँधकर रखा। जिसका वर्ण उज्ज्वल था, ऐसे उस (यज्ञीय घोड़े) का लाल-लाल मुख शोभा दे रहा था; उसकी पूँछ पीत वर्ण की थी। १२। श्रीरामचन्द्र दीक्षा लेकर बैठ गये। उन्होंने अपार दान दिये। उन्होंने साथ ही सोने की सीता (-सी प्रतिमा) बनाकर उस समय (पास में) बैठा दी। १३। वे (दीक्षित होकर) भूमि पर सोते थे, ब्रह्मचर्य ही का पालन करते थे, सुखकर उपभोगों से रहित रहते थे। उन्होंने मृग का सींग कटि में खोंस लिया था और (मृग-) चर्म तथा मेखला को धारण किया था। १४। जो यज्ञ-कर्म (विधि) के ज्ञाता थे, ऐसे वे मुनि वसिष्ठ आचार्य हो गये। उन्होंने चारों दिशाओं में दो-दो मंत्र-वेत्ता नियुक्त कर दिये थे। १५। असित और देवल (ऋषि) दोनों पूर्वद्वार पर (नियुक्त) थे, तो अंगिरा और गौतम उत्तर-द्वार पर। जातुकर्ण और जाबाली पश्चिमद्वार पर तथा दक्षिणद्वार पर कश्यप और अत्रि नामक ऋषि (मंत्रवेत्ता के रूप में) नियुक्त थे। १६। अगस्त्य मुनि कर्म-अधिष्ठाता थे, तो वेदव्यास अध्वर्यु थे। कण्व ऋषि यज्ञ के द्वारपाल थे, तो ब्रह्म-स्थान पर (प्रत्यक्ष) विधाता का निवास था। १७। अब आचार्यों और ऋत्विजों ने मिलकर (राम द्वारा) अश्व का पूजन करा

अवधपुरीना राजा दशरथ, मुगटमणि नृप धीर,
रघुवंशी रघुकुळना मंडन, पुत्र तेना रघुवीर। १९।
रावणरिपु खळ दळ बळ गंजन, रणपंडित श्रीराम,
एक बाण, एक पत्नी, वचन एक, भक्तना पूरणकाम। २०।
ते ज रामनो यज्ञतुरी, नृप जीतवा मूक्यो जाण,
जे बळिया होय ते बांधजो भाई, मूकीने आशा प्राण। २१।
एवो पत्र लखीने वसिष्ठ गुरुए, बांध्यो अश्वने शीश,
तेनी पूंठळ रक्षा करवा शत्रुघन, सज्ज थया ते दिश। २२।
श्रीरामचंद्रे शिक्षा घणी दीधी, शत्रुघनने त्यांहे,
अरे भाई, हुं कहुं ते रीते, आचरजे रणमांहे। २३।
जे मदोन्मत्त विरथ वा नपुंसक, पळाय मूकी धीर,
स्त्री विप्र साधुजन साथे, युद्ध करीश न वीर। २४।
वळी शस्त्ररहित मूर्छितनी उपर, करवो नहि घाय,
एम शत्रुघनने समजावीने, शिक्षा करी रघुराय। २५।
त्यारे तेणे समे त्यां जनकतणो सुत, लक्ष्मीनिधि एवुं नाम,
ते हांसी वचन हसीने बोल्यो, सांभळीए श्रीराम। २६।

दिया। (फिर) वसिष्ठ ने स्वर्णपत्र पर वचन लिखकर उसे उस (घोड़े) के मस्तक पर बाँध दिया। १८। अवधपुरी के राजा दशरथ धीर तथा राजाओं के मुकुट-मणि थे। वे रघुवंशीय, रघुकुल के भूषण थे। रघुवीर राम उनके पुत्र हैं। १९। ये श्रीराम रावण-रिपु हैं, खल जनों की सेना के बल को तोड़ डालनेवाले हैं, रण-पण्डित हैं। वे एकबाण, एक-पत्नी (व्रती) तथा एकवचन और भक्तों की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले हैं। २०। समझिए कि उन्हीं राम का यज्ञीय घोड़ा राजाओं को जीतने के लिए छोड़ा है। हे भाई, जो बलवान हो, वह प्राणों की आशा को तजकर, उसे बाँध ले। २१। ऐसा पत्र लिखकर गुरु वसिष्ठ ने उस घोड़े के मस्तक पर बाँध दिया। शत्रुघ्न उसके पीछे उसकी रक्षा के लिए सज्ज हो गया। २२। श्रीरामचन्द्र ने वहाँ शत्रुघ्न को बहुत शिक्षा दी। (वे बोले—) मैं जैसा कहूँ, उस रीति से रणभूमि में बर्ताव करो। जो मदोन्मत्त हो, रथ-रहित अथवा नपुंसक हो अथवा धैर्य छोड़कर भाग जाए, उससे, तथा स्त्री, विप्र, साधुजन से, हे भाई, युद्ध न करना। २३-२४। इसके अतिरिक्त, शस्त्र-रहित व्यक्ति पर, मूर्च्छित पर, आक्रमण करना उचित नहीं है। इस प्रकार रघुराज राम ने शत्रुघ्न को समझाते हुए सीख दी। २५। तब उस समय वहाँ जनक का एक पुत्र था। उसका नाम लक्ष्मीनिधि था।

तमो शिखामण शुं द्यो समजावीने, शत्रुघनने आज,
पण जेवी रीत तमारा कुळनी, तेवुं करशे काज । २७ ।

तमो कह्युं जे स्त्री विप्र ने, शस्त्ररहित जे जन,
तेनी उपर घा नव करवो, बोल्यां एवुं वचन । २८ ।

पण प्रथम तमारा पिताए मार्यो, विप्र श्रवण निरधार,
वळी तमे पौलस्त्यऋषिना, कुळनो करियो छे संहार । २९ ।

वळी नारी ताडिकाने तमो मारी, मूकीने एक बाण,
किरात तपस्वीने वळी हणियो, शस्त्ररहित निरवाण । ३० ।

ते दहाडे क्यां धरम गयो'तो ? हवे करो छो वडाई,
एवां शालक केरां वचन सुणीने, बोल्या जनकजमाई । ३१ ।

अरे जनकविदेह तणा सुत छो तमो, शुं जाणो ए रीत ?
वीर रस केरी वात न जाणो, संन्यासीशुं प्रीत । ३२ ।

एवां हांसी वचन परस्पर करता, प्रति उत्तर एम वाळी,
ते सुणी सभाजन सर्वे हसिया, लीधी मांहोमांहे ताळी । ३३ ।

वह हँसते हुए यह हास्य-व्यंग्यपूर्ण बात बोला, 'हे श्रीराम, सुन लीजिए । २६ । आपने आज शत्रुघ्न को समझाते हुए क्या सिखावन दी ? फिर भी, आपके कुल की जैसी रीति है, आप वैसा ही काम करेंगे । २७ । आपने यह कहा है कि जो स्त्री हो, अथवा ब्राह्मण हो, अथवा जो मनुष्य शस्त्र-रहित हो, उसपर आक्रमण नहीं करना । आपने ऐसी बात कही । २८ । परन्तु पहले आपके पिता ने निश्चय ही श्रवण नामक ब्राह्मण को मार डाला । फिर आपने पौलस्त्य ऋषि के कुल का संहार कर डाला । २९ । इसके अतिरिक्त, आपने एक बाण छोड़कर ताड़का नामक नारी को मार डाला । और फिर किरात तपस्वी को मार डाला, जो निश्चय ही शस्त्र-रहित था । ३० । उस दिन आपका धर्म कहाँ गया था, (जो) आज यह अभिमान कर रहे हैं । ' अपने श्यालक के ऐसे वचन सुनकर जनक के जामाता राम बोले । ३१ । 'अरे तुम जनक विदेह के पुत्र हो, तुम इस रीति को क्या जानोगे ! तुम वीर-रस की बात नहीं जानते हो, तुम्हें तो संन्यासियों से प्रेम है । ३२ । इस प्रकार उन्होंने हास्य-(व्यंग्य-)पूर्ण वचन परस्पर कह दिये, इस प्रकार की भाषा में (उत्तर-) प्रत्युत्तर दिये । उन्हें सुनते हुए समस्त सभाजन हँस रहे थे और बीच-बीच में तालियाँ बजा रहे थे । ३३ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

ताळी लेता मांहोमांहे, सर्वे हसिया सभाना जन रे,
एवो आनंद वाध्यो अंगमां, जोई यज्ञमहोत्सव मन रे। ३४।

बीच-बीच में समस्त सभाजन तालियाँ वजा रहे थे और हँस रहे थे। इस प्रकार यह यज्ञ-महोत्सव देखते हुए सब के मन में आनन्द वृद्धि को प्राप्त हो रहा था। ३४।

* * *

अध्याय—४० (पुष्कल-कान्ति-सम्वाद)

राग काफी

आव्यो महुरत केरो दंन, थया तत्पर सर्वे जंन,
शत्रुघननी साथे वीर, अश्वरक्षक जाये धीर। १ ।
ते समे भरत केरो पुत्र, रणपंडित वळियो सूत्र,
तेनुं पुष्कलजी एवुं नाम, जेना रूपथी लाजे काम। २ ।
वरस द्वादशनो छे कुमार, जाणे सकळ विद्या अनुसार,
ते शत्रुघन केरी संग, जावाने शस्त्र सजियां अंग। ३ ।
भाथा टोप कवच कोदंड, धर्या भूषणभार अखंड,
लेई माता तणी आज्ञाय, आवी लाग्यो कौशल्याने पाय। ४ ।
सुमित्रा केकईने नाम्युं शीश, दीधी सर्व माताए आशिष,
पछे चाल्यो त्यां थकी तन, आव्यो पोताने रंगभोवन। ५ ।

अध्याय—४० (पुष्कल-कान्ति-सम्वाद)

मुहूर्त का दिन आ गया, तो समस्त लोग तैयार हो गये। शत्रुघ्न के साथ अश्व-रक्षक धीर वीर (सैनिक) चले गये। १। उस समय (वहाँ) भरत का एक पुत्र था। वह युद्ध (-कला) में पंडित (कुशल) तथा बलवान था। जिसके रूप से कामदेव भी लज्जित हो जाता था, ऐसे उस पुत्र का नाम पुष्कल था। २। वह कुमार बारह वर्ष का था। वह समस्त विद्याओं को यथाक्रम जानता था। शत्रुघ्न के साथ जाने के लिए उसने अपनी देह को शस्त्र आदि से सज्ज किया। ३। उसने तरकस, (सिर-) टोप, कवच, धनुष तथा अखण्ड (युद्ध-सम्बन्धी) आभूपणों अर्थात् अस्त्र-शस्त्रों के बोझ (समूह) को धारण किया। (फिर) वह माता से आज्ञा लिये हुए आकर कौसल्या के पाँव लग गया। ४। (तदनन्तर) उसने सुमित्रा और कैकेयी को सिर झुकाते हुए नमस्कार किया तो उन

वधू पुष्कलजीनी जेह, कांति नामे महासती तेह,
जेना रूप थकी रति लाजे, सुंदरी शुभ वेष विराजे। ६।
वर्ष द्वादशमां वय जेनी, अंग उपमा शी कहुं तेनी ?
छे पतिव्रतमंडन एह, जाणे पति परमेश्वर जेह। ७।
निज स्वामीने आवतो नीरखी, शशिवदनी हैयामां हरखी,
एटले त्यां पुष्कल आव्यो, भरी मोतीने थाळे वधाव्यो। ८।
हसी बोल्यो सुणो हे नार, आज छोडे छे यज्ञतोखार,
रक्षाने जाये शत्रुघन, सेन सहित घणा राजन। ९।
हुं जाउं छुं काकाने संग, जीतवा भूपति रणजंग,
त्यां जावाने विलंब ज थाय, माटे आपो मुंने आज्ञाय। १०।
सुणी नाथनां एवां वचन, सामुं जोयुं भरी लोचन,
पछी ग्रही निज स्वामीनो हाथ, बोली मधुर वचन हे नाथ। ११।
हुं तो दासी तमारी स्वामिन्, एक विनति धरजो मन,
तमे जाणशो जे कंई आश, हशे भोगतणो अभिलाष। १२।

समस्त माताओं ने आशीर्वाद दिया, फिर वह वहाँ से चला गया और अपने रंग-भवन में आ गया। ५। पुष्कल की जो कान्ति नामक पत्नी थी, वह महासती थी। उसके रूप से रति लज्जित हो रही थी। वह सुन्दरी शुभ वेश धारण किये हुए (वह रंग-भवन में) विराजमान थी। ६। जिसकी अवस्था बारह वर्ष की थी, उसके अंग की उपमा मैं क्या कहूँ ? जो पति को परमेश्वर समझती थी, ऐसी वह (कान्ति) पतिव्रता नारियों के लिए मण्डन (भूषण) थी। ७। अपने पति को आते हुए देखकर वह चन्द्रानना हृदय में आनन्दित हो गयी। इतने में वहाँ पुष्कल आ गया, तो उसने मोतियों से थाल भरकर बधावा किया। ८। (तब) वह मुस्कराते हुए बोला, 'हे नारी, सुन लो, आज यज्ञीय घोड़ा छोड़ रहे हैं। अनेक राजाओं (राज-पुरुषों) के साथ तथा सेना-सहित शत्रुघ्न जा रहे हैं। ९। मैं बड़े-बड़े युद्धों में राजाओं को जीतने के लिए चाचाजी के साथ जा रहा हूँ। वहाँ जाने में मुझे विलम्ब हो जाएगा, इसलिए मुझे आज्ञा दो'। १०। अपने पति के ऐसे वचन सुनते ही उसने अश्रु-भरे नेत्रों से सामने देखा। फिर उसने स्वामी के हाथ को थामकर, वह ये मधुर बातें बोली, 'हे नाथ ! । ११। मैं तो आपकी दासी हूँ। हे स्वामी, मेरी एक विनती मन में रखिए (मेरी एक विनती पर ध्यान दीजिए)। आप यह समझते हो कि (सुख-) भोग की ऐसी कोई आशा-अभिलाषा (मेरे मन में) हैं। १२।

पण साचुं कहुं छुं आज, जाओ सुख थकी महाराज,
काकानी पाळजो आज्ञाय, जीतजो पृथ्वीना राय। १३।
करजो जुद्ध रही सन्मुख, नव धरशो मरणनुं दुःख,
थोड़ुं जीवी जो कीरति करीए, घणुं जीव्यानी आश न धरीए। १४।
जशरहित जीव्या घणा दिन, तेणे शुं थयुं काज स्वामिन ?
ऊभे लोकमां अपजश थाय, मनुष्यदेह एळे जाय। १५।
तमे कहेशो भोगवीए भोग, घणुं जीवीने सुखसंजोग,
पण अन्य जन्ममां स्वामिन, आहार निद्रा भय मैथुन। १६।
पशुपक्षीमां ए सुख होय, विषयसंतुष्ट नव थाय कोय,
कोटी कल्प भोगवे काम, तोय जीव न पामे विराम। १७।
हुत होमे अग्निमां ज्यम, वाधे अदकी ज्वाळा त्यम,
एवो वासना केरो प्रवाय, भोगवे नव तृप्ति थाय। १८।
विषेमां दोष देखे ज्यारे, तेनुं मन पाछुं वळे त्यारे,
रोग जेवा ज्यारे भासे भोग, टळे त्यारे ए मूळ संजोग। १९।

फिर भी मैं सत्य कह रही हूँ, हे महाराज, आप सुख-पूर्वक जाइए। अपने काकाजी की आज्ञा का पालन करना, पृथ्वी के राज्य को जीत लेना। १३। सम्मुख रहते हुए युद्ध करना। (मुझे विश्वास है कि) आप मृत्यु-सम्बन्धी कोई दुःख नहीं मानेंगे। यदि अल्प-सा जीवित रहते हुए भी कीर्ति को प्राप्त कर सकते हों, तो वहुत जीवित रहने की आशा न धारण करें। १४। हे स्वामी, (यदि) वहुत दिन यश-रहित जीवित रहें भी, तो उससे क्या कार्य सिद्ध हो जाता है ? उससे (इहलोक और परलोक—) दोनों लोकों में अपकीर्ति हो जाएगी— मनुष्य-देह (उससे) व्यर्थ हो जाती है। १५। आप कहेंगे, (सुख-) भोगों का उपभोग करें, वहुत जीवित रहकर (अधिक) सुख की प्राप्ति हो जाती है। परन्तु हे स्वामी, अन्य जन्म में आहार, निद्रा, भय, मैथुन तो है ही। पशु-पक्षियों को इससे सुख हो जाता है। कोई भी विषय-(सुख) से सन्तुष्ट नहीं हो जाता है। कोटि-कोटि कल्पों तक काम (-सुख) का भोग करता हो, तो भी जीव विश्राम (तृप्ति) को नहीं प्राप्त हो पाता है। १६-१७। जैसे होम की अग्नि में आहुति चढ़ायी जाती है, वैसे उसकी ज्वाला अधिक बढ़ती है। उसी प्रकार वासना का प्रभाव होता है, भोग करते हैं, तो भी उसकी तृप्ति नहीं हो पाती है। १८। जब कोई (सुखोपभोग के) विषयों में दोष देखता है, तब उसका मन उससे पीछे मुड़ जाता है। जब यह (सुख-) भोग रोग जैसा प्रतीत हो जाने लगता है, तब यह (जन्म आदि का) मूल संयोग मूल से टल जाता है। १९।

एवो संसार मिथ्या जाणी, पछी भजवा पुरुष पुराणी,
माटे कहुं छुं जोडीने हाथ, मन धीरज राखजो नाथ । २० ।
ज्यारे युद्ध करो स्वामिन, मुजमां नव धरशो मन,
रखे पूंठ देखाडता पाछी, थशे कुळनी कीर्ति ओछी । २१ ।
रघुकुळमां छे जन्म तमारो, ते परंपरा मन विचारो,
जुओ पितामह केरां कर्म, मार्यो वृषपरवा निज धर्म । २२ ।
करी देव तणी रक्षाय, अद्यपि लोक कीर्ति गाय,
वळी काकाजी केशव राम, मार्यो रावण जेनुं नाम । २३ ।
तमो कहेवाओ तेना पुत्र, कुळदीपक धरमना सूत्र,
माटे राखजो कुळनी लाज, वखाणे ज्यम भूपसमाज । २४ ।
पाछा फरशो धरी जो भीत, तो थाशे मुंने महा विपरीत,
जेठ दियर सहियरनो साथ, देशे महेणां घणां मुंने नाथ । २५ ।
वळी महियेरिया मोझार, कहेशे कायर तुज भरथार,
एम कही समजाव्यो स्वामी, पद नाथ तणे शिर नामी । २६ ।

इस प्रकार संसार को मिथ्या जानकर फिर पुराणपुरुष भगवान् की भक्ति करनी है। इसलिए मैं हाथ जोड़कर कहती हूँ, हे नाथ, मन में धीरज रखिए। २०। हे स्वामी, जब आप युद्ध करेंगे, तब, अपना मन मुझमें न लगाये रखें। कदाचित् आप पीठ दिखायें, तो आपके कुल की कीर्ति कम हो जाएगी। २१। आपका जन्म रघुकुल में हुआ है, उसकी परम्परा का विचार मन में कर लीजिए। अपने पितामह राजा दशरथ का कार्य देखिए— उन्होंने अपने क्षत्रिय धर्म के अनुसार वृषपर्वा को[1] मार डाला। २२। (और) उन्होंने देवों की रक्षा की। (इसलिए) लोग उनकी कीर्ति का गान अब भी कर रहे हैं। फिर आपके चाचाजी केशव (भगवान) राम ने उस (राक्षस राजा) को मार डाला, जिसका नाम रावण था। २३। आप उनके कुल-दीपक, धर्म के सूत्रधार पुत्र कहाते हैं। इसलिए अपने कुल की लाज की रक्षा कीजिए, जिससे राज-समाज (राजा लोग) आपकी प्रशंसा करते रहें। २४। यदि आप भीति धारण करके पीछे फिर जाएँगे, तो मुझे कुछ महा विपरीत हो जाएगा। हे नाथ, (उस स्थिति में) जेठ-देवरजी, अपने साथियों सहित मुझे बहुत ताने देंगे। २५। इसके अतिरिक्त, मैके में आपको कायर पति कहेंगी।' इस प्रकार कहते हुए उसने पति को (उपदेश देकर) समझा दिया और उसके चरणों को नमस्कार किया। २६। उसे पीढ़े पर बैठाकर उसने उसका पूजन किया और मस्तक

१. अधिक जानकारी के लिए देखिए— बाल काण्ड, अध्याय १०।

करी पूजा बेसाडी पाट, कर्युं कुमकुम तिलक ललाट,
चोखा चोडी करी मनुहार, आरोप्यो कंठे पुष्पनो हार । २७ ।
आप्युं तांबूल करी अरचन, पछी दीधुं आलिंगन,
लागी पाये जोडीने हाथ, धरी नेह वळाव्यो नाथ । २८ ।
बेठा पुष्कलजी रथ मांहे, लेई आज्ञा त्रियानी त्यांहे,
खेड्या पवनवेगी तोखार, आव्या ज्यां छे श्रीदेव मोरार । २९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

ज्यांहा विराजे श्रीरघुपति, त्यांहां आव्या पुष्कल वीर रे,
पाये लागी आज्ञा मागी, जोई हरख्या श्यामशरीर रे । ३० ।

पर कुंकुम तिलक लगा लिया । मस्तक पर अक्षत लगाते हुए उनके कल्याण की कामना करते हुए विनती की और गले में फूलों का हार पहना दिया । २७ । पूजन करके उसने (अपने पति को) बीड़ा दिया और फिर उसका आलिंगन किया । (अनन्तर) वह हाथ जोड़कर उसके पाँव लगी और (अन्त में) स्नेह-पूर्वक उसने अपने पति को विदा किया । २८ । पुष्कल वहाँ अपनी स्त्री की आज्ञा लेते हुए रथ में बैठ गया और उसने पवनवेगी (वायु-गति से चलनेवाले) उन घोड़ों को चला दिया । (फिर) वह (वहाँ) आ गया, जहाँ श्रीमुरारि भगवान् अर्थात् राम (विराजमान) थे । २९ ।

जहाँ श्रीरघुपति राम विराजमान थे, वहाँ वीर पुष्कल आ गया । उनके पाँव लगते हुए उसने उनसे आज्ञा माँगी, यह देखकर श्यामशरीरधारी राम आनन्दित हो गये । ३० ।

* * *

अध्याय—४१ (पुष्कल-सहित शत्रुघ्न का च्यवन ऋषि के आश्रम के पास जाना)

राग मेवाडो

फणिधर कहे, सुणो वात्स्यायन मुनि, पावन यज्ञकथाय जी,
पुष्कलजी सज्ज थईने आव्यो, ज्यां बेठा श्रीरघुराय जी । १ ।

अध्याय—४१ (पुष्कल-सहित शत्रुघ्न का च्यवन ऋषि के आश्रम के पास जाना)

फणिधर शेष ने कहा, " हे वात्स्यायन मुनि, उस पावन यज्ञ की कथा सुनिए । पुष्कल सज्ज होकर (वहाँ) आ गया, जहाँ रघुराज श्रीराम बैठे हुए थे । १ । तब पूर्णकाम श्रीराम ने पुष्कल को हृदय से लगाकर अपनी गोद

त्यारे हृदे चांपीने उछंग बेसाड्यो, पुष्कलने श्रीराम जी,
पछे शत्रुघन सुमंतनी साथे, बोल्या पूरणकाम जी। २ ।
अरे भाई, आ पुष्कलने तमो, साचवजो रणमांहे जी,
युद्ध समे एनी पासे रहेजो, रक्षा करजो त्यांहे जी। ३ ।
पछे एवुं कहीने आज्ञा आपी, चाल्या शत्रुघन जी,
पुष्कलजी ते साथे चढियो, भरतजी केरो तन जी। ४ ।
वळी जनक विदेही तणो सुत कहीए, लक्ष्मीनिधि एवुं नाम जी,
ते निज सेन्या लेई साथे चढियो, अश्वरक्षाने काम जी। ५ ।
वळी सुग्रीव अंगद जांबुवान, नळ नील शरभ हनुमंत जी,
गवाक्ष केसरी आदे कपि सहु, चाल्या महाबळवंत जी। ६ ।
वळी अन्य केटला संबंधी राजा, चढिया सैन्या सहित जी,
सुमंत प्रधान पोतानो छे, वळी सेनापति रणजित जी। ७ ।
वैशाख मास पूर्णिमाने दिन, वार लग्न पावन जी,
सरज्युतीर उपरथी अश्वने, छोडी मूक्यो ते दिन जी। ८ ।
नाना प्रकारनां वाजित्र वाजे, सैन्य तणो नहि पार जी,
हाक वागी शत्रुघन केरी, पृथ्वी सहे नहि भार जी। ९ ।
ते अश्व स्वइच्छाए करी चाले, पूंठळ सरवे वीर जी,
गिरि सरिता ओळंगी जाता, राखी मनमां धीर जी। १० ।

में बैठा लिया और फिर वे शत्रुघ्न और सुमन्त से बोले। २। 'हे भाइयो, तुम इस पुष्कल को रण (-भूमि) में सम्हाल लेना। युद्ध के समय इसके पास रहना और वहाँ इसकी रक्षा करना'। ३। ऐसा कहने के पश्चात् उन्होंने उनको (जाने की) आज्ञा दी, तो शत्रुघ्न चल दिया। भरत का पुत्र पुष्कल उसके साथ चला गया। ४। फिर विदेह जनक का पुत्र, जिसका नाम लक्ष्मीनिधि बताते हैं, अपनी सेना के साथ, (उस) घोड़े की रक्षा के कार्य के लिए साथ में चल पड़ा। ५। इसके अतिरिक्त, सुग्रीव, अंगद, जाम्बवान, नल, नील, शरभ, हनुमान, गवाक्ष, केसरी आदि समस्त महाबलवान कपि चले गये। ६। फिर कितने ही सगे-सम्बन्धी राजा सेना सहित चले गये। उनके अतिरिक्त (साथ में) रणजित मन्त्री सुमन्त स्वयं सेनापति था। ७। वैशाख मास की पूर्णिमा का दिन था, वार (दिन), लग्न पावन अर्थात् शुभ थे। उस दिन शरयू के तट पर से अश्व को छोड़ दिया। ८। (उस समय) नाना प्रकार के वाद्य बज रहे थे। सेना का कोई पार नहीं था। शत्रुघ्न का आतंक छा गया था। पृथ्वी उस सेना के भार को नहीं सह पा रही थी। ९। वह घोड़ा अपनी

अदको वेग सरवथी चाले, यज्ञतुरी तेणी वार जी,
स्वइच्छाए करी आव्यो प्रथमे, अहिछत्र नगर मोझार । ११ ।
दमन नामे नृपति महाबळियो, राज करे पुर मांहे जी,
ते श्रीरामचंद्रनो भक्त हतो, माटे युद्ध कर्युं नहि त्यांहे जी । १२ ।
ते राज्यलक्ष्मी सोंपीने मळियो, दमन भूपति नाम जी,
शत्रुसूदननी साथे चाल्यो, अश्वरक्षाने काम जी । १३ ।
हवे त्यां थकी आगळ अश्व गयो, ऋषि च्यवन तणे आश्रम जी,
त्यारे शत्रुघने सुमंतने पूछ्युं, वन देखी महा रम्य जी । १४ ।
आ वनमां आश्रम छे कोनो ? कोण मुनि महानंत जी ?
एवां वचन सुणी शत्रुघन केरां, बोल्यो प्रधान सुमंत जी । १५ ।
एक भृगुवंशमां प्रगट थया छे, च्यवन ऋषि तेनुं नाम जी,
ते आ वनमां आश्रम बांधी, रहे छे आणे ठाम जी । १६ ।
जेणे मानभंग मघवापति कीधो, कराव्यो नृपघेर याग जी,
अश्वनीकुमारने अपाव्यो पोते, यज्ञतणों जे भाग जी । १७ ।

इच्छा से चल रहा था। उसके पीछे (-पीछे) समस्त वीर थे। वे मन में धीरज धारण करके पर्वतों और नदियों को लाँघते हुए जा रहे थे। १०। उस समय वह यज्ञीय घोड़ा सबसे भिन्न असाधारण वेग से चल रहा था। वह अपनी से इच्छा से पहले अहिछत्र (नामक) नगर में आ गया। ११। उस नगर में दमन नामक महा बलवान राजा राज्य कर रहा था। वह रामचन्द्र का भक्त था, इसलिए उसने (घोड़े को रोककर) वहाँ युद्ध नहीं किया। १२। दमन नामक वह राजा अपनी राज्यलक्ष्मी सौंपकर (उन रक्षकों से) मिल गया और (तदनन्तर) घोड़े की रक्षा के कार्य के लिए शत्रुघ्न के साथ चलने लगा। १३। अब वहाँ से वह घोड़ा च्यवन ऋषि के आश्रम (के समीप) गया। तब बड़े रम्य वन को देखकर शत्रुघ्न ने सुमन्त से पूछा। १४। 'इस वन में किसका आश्रम है ? (यहाँ) असीम रूप से महान कौन मुनि (रहते) हैं ?' शत्रुघ्न के ऐसे वचन (प्रश्न) सुनकर मन्त्री सुमन्त बोला। १५। 'भृगु के वंश में एक ऋषि उत्पन्न हो गये। उनका नाम च्यवन ऋषि है, वे (मुनि) इस वन में इस स्थान पर आश्रम बनाकर रहते हैं, जिन्होंने मघवापति इन्द्र के मान को छुड़ा दिया था और राजा के घर यज्ञ करा दिया था, और जिन्होंने स्वयं यज्ञ का जो (यथोचित) भाग था, वह अश्विनीकुमारों को दिलवा दिया था।'। १६-१७। सुमन्त की ऐसी

सुमंतनां एवा वचन सुणी, बोल्या शत्रुघन तेणी वार जी,
ते च्यवन ऋषिनी कथा कहो मुजने, मूळ थकी विस्तार जी । १८ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

मूळ थकी विस्तार एनो, कहो ते मुजने मित्र रे,
एवां शत्रुघननां वचन सुणी, कहे सुमंत च्यवनचरित्र रे । १९ ।

बातें सुनकर शत्रुघ्न उस समय बोला, 'उन च्यवन ऋषि की कथा मूल-सहित विस्तार के साथ मुझे सुना दीजिए । १८ ।

'हे मित्र, मूल से उसका विस्तार करते हुए मुझसे वह कथा कहिए' शत्रुघ्न के ऐसे वचन सुनकर सुमन्त च्यवन-चरित्र कहने लगा । १९ ।

* * *

अध्याय—४२ (च्यवन ऋषि की उत्पत्ति और कथा)

राग धन्याश्री

ऋषि वात्सायनने कहे छे अनंत जी,
शत्रुघन साथे बोल्या सुमंत जी ।
पूर्वे भृगु ऋषि वन मोझार जी,
आश्रम बांधी रहे नरनार जी । १ ।

ढाळ

आश्रम बांधी रहे भृगु ऋषि, अग्निहोत्री त्यांहे,
गया एक समे लेवा समिध, संध्या समे वनमांहे । २ ।
त्यारे दमन नामे असुर आव्यो, कुंड कीधो भंग,
सगर्भ हती मुनिपत्नी तेने, चाल्यो लई निज संग । ३ ।

अध्याय—४२ (च्यवन ऋषि की उत्पत्ति और कथा)

सुमन्त शत्रुघ्न से बोले—अनन्त अर्थात् शेषनाग वात्स्यायन (ऋषि) से कह रहे हैं (थे)—" पूर्वकाल में भृगु ऋषि ने वन में आश्रम बनाया और वे नर-नारी अर्थात् वे पति-पत्नी (उसमें) रहने लगे । १ ।

अग्निहोत्री भृगु ऋषि आश्रम बनाकर वहाँ रहते थे । एक समय शाम के समय, वे वन में समिधा लेने के लिए गये । २ । तब दमन नामक एक असुर (वहाँ) आ गया और उसने (अग्नि-) कुण्ड को भग्न कर

वृक जाय हरणी हरी ज्यम, एम चाल्यो लई मुनिनार,
थयो गर्भस्राव तेणे समे, पड्यो पुत्र पृथ्वी मोझार। ४।
तेजपुंज अग्निशिखा सरखो, बोल्यो क्रोधवचन,
अरे दुष्ट अघटित कृत करे, थजो भस्म बळी तुज तन। ५।
एवुं कहेतामां ते दमन राक्षस, बळ्यो क्षणमां त्यांहे,
मुनि-पत्नी ते सुत लेई वळती, आवी आश्रम मांहे। ६।
एटले भृगु त्यां आविया, पत्नीए कह्युं वरतंत,
ते सुणी मनमां खेद पाम्या, चढ्यो क्रोध अनंत। ७।
अल्या अग्नि हुं सेवुं तुंने, तुं देव छे परतक्ष,
थयुं विघ्न ते क्यम रह्यो सांखी, जोईने निज चक्ष ?। ८।
पछे शाप दीधो अग्निने, सुण वह्नि कहुं एक वात,
तुज देखतां आव्यो असुर, करी गयो महा उत्पात। ९।
तें वार्यो नहि क्यम दुष्टने ? सांखी रह्यो शुं मूढ ?
माटे सरवभक्षी अनल थाजे, शाप दीधो गूढ। १०।

डाला। (च्यवन) ऋषि की पत्नी गर्भवती थी। उसे अपने साथ (बलपूर्वक) लेकर वह चला गया। ३। जिस प्रकार कोई भेड़िया हरिणी को हरण करके चला जाए, उस समय (उस स्त्री के) गर्भ का पतन हो गया और वह (गर्भ) भूमि पर गिर गया। ४। वह अग्नि-ज्वाला के समान तेजःपुंज था; वह क्रोधपूर्ण वचन बोला, ' अरे दुष्ट, तूने यह अघटित काम किया है, (अतः) तेरा शरीर जलकर भस्म हो जाएगा '। ५। उसके ऐसा कहते-कहते ही वह दमन राक्षस क्षण में वहाँ जल गया। फिर मुनि की वह पत्नी अपने पुत्र को लेकर आश्रम में लौट आयी। ६। इतने में भृगु ऋषि वहाँ आ गये, तो उनकी स्त्री ने वह समाचार कह दिया। यह सुनकर वे मन में खेद को प्राप्त हो गये। उन्हें असीम क्रोध आ गया। ७। (वे बोले—) ' अरे अग्नि (-देव), मैं तुम्हारी सेवा किया करता आया हूँ, तुम तो प्रत्यक्ष देव हो। अपनी आँखों से देखते रहने पर भी तुम्हारे लिए विघ्न उत्पन्न हो गया, तो तुम सहन करते हुए कैसे रह गये। '। ८। तदनन्तर उन्होंने (यह कहते हुए) अग्नि को अभिशाप दिया, ' हे अग्निदेव, सुनो, एक बात मैं कह रहा हूँ। तुम्हारे रहते हुए वह असुर आ गया और वह बड़ा उत्पात करके चला गया। ९। तुमने उस दुष्ट का निवारण क्यों नहीं किया ? हे मूढ़ तुम सर्व-भक्षी बन जाओगे। ' ऋषि ने ऐसा गूढ़ अभिशाप दिया। १०।

एवो शाप सुणीने स्तुति कीधी, भृगुतणी हुताश;
कृपानिधि करो अनुग्रह, त्यारे बोल्या वचन प्रकाश। ११।
तुं सरवभक्षी थईश पण, रहेजे सदा पावन,
अपवित्र नहि थाये कदा, एवो कर्यो अनुग्रह मुन्य। १२।
पछी जातकर्म कर्युं ते सुतनुं च्यवन पाड्युं नाम;
थयो मोटो उपवीत आप्युं, भण्यो विद्याकाम। १३।
पछे आज्ञा लेई निज पितानी, ते गयो रेवातीर,
उपकंठे आसन वाळीने, तप करवा बेठो धीर। १४।
दश सहस्र वर्ष ज वही गयां, कर्युं घोर तप ते दिश;
थया राफ उधेईतणां, अंगे वृक्ष जाळां शिष। १५।
पछे एकदा शर्याति राजा, चंद्रवंशी जेह,
सह कुटुंब नीकळ्यो तीरथ करवा, आव्यो वनमां तेह। १६।
ते रह्यो करी विश्राम त्यां, सौ सैन्यशुं राजन,
मंडकी पुत्री रायनी, नीकळी रमवा वन। १७।
ते कन्या रमती आवी, ज्यां तप करे विप्र च्यवन;
छे छिद्र उधेई राफमां, झगमगे मुनि लोचन। १८।

ऐसा अभिशाप सुनकर अग्नि ने भृगु ऋषि की स्तुति की और विनती की) 'हे कृपानिधि, (मुझपर) अनुग्रह कीजिए।' तब वे ऋषि यह बात स्पष्ट रूप से बोले। ११। 'तुम सर्व-भक्षी बन जाओगे, फिर भी सदा पवित्र रह जाओगे। तुम कदापि अपवित्र नहीं हो जाओगे।' उस पर इस प्रकार मुनि ने अनुग्रह किया। १२। अनन्तर उन्होंने उस पुत्र का जात-कर्म किया और उसका नाम च्यवन रख दिया। (जब) वह बड़ा हो गया, तो उसे उपवीत दिया—अर्थात् उसका उपनयन (जनेऊ) संस्कार किया। (अनन्तर) उसने धर्म-कर्म-सम्बन्धी विद्याएँ पढ़ीं। १३। फिर अपने पिताजी की आज्ञा लेकर वह रेवा (नदी) के तट पर आसन लगाकर तपस्या करने बैठ गया। १४। उसने उस स्थान पर घोर तपस्या की। (इस प्रकार) दस सहस्र वर्ष बीत गये। वहाँ उसके शरीर पर दीमक के बमीठे हो गये और सिर पर वृक्ष तथा झुरमुट (उत्पन्न) हो गये। १५। तदनन्तर एक समय शर्याति नामक राजा, जो चन्द्र-वंशीय था, तीर्थ-क्षेत्रों (की यात्रा) के लिए सपरिवार जा रहा था। वह उस वन में आ गया। १६। वह राजा अपनी सेना-सहित वहाँ विश्राम करते हुए ठहर गया। उसकी मण्डुकी नामक कन्या (उस समय) उस वन में खेलने के लिए चली गयी। १७। वह कन्या खेलती हुई वहाँ आ गयी, जहाँ वह

करमांहे लेईने दरभ शलाका, घाली तेह मोझार,
तेणे नेत्र फोड्यां मुनि तणां, नीकळी रुधिरनी धार। १९।
ते समे घणो उत्पात वरत्यो, राय सैन्या मांहे,
थयां बंध सरवे जीवनां, शिश्न गुदा बे त्यांहे। २०।
ते राय जाणी वारता ते, आव्या मुनिवर पास,
करी प्रार्थना परणावी कन्या, गयो भूप आवास। २१।
पछी च्यवन ऋषि ते कन्या साथे, रह्या करी आश्रम,
घणी सेवा करती साधवी, पाळे पोतानो धर्म। २२।
ज्यम अत्रिनी सेवा करे, अनसूया एके मन,
एम सेवा करती च्यवन केरी, वही गया बहु दिन। २३।
एक सहस्र वरस वीती गयां, करतां मुनिनी सेव,
एक समे अश्विनीकुमार आव्या, मुनि आश्रम देव। २४।
सतीए पूजा तेनी करी, बेसाडिया आसन,
सत्कार अतिशे जोईने, ते थया देव प्रसन्न। २५।

च्यवन (नामक) ब्राह्मण तपस्या कर रहा था। दीमक के उस बमीठे में एक छिद्र था। उसमें मुनि की आँखें जगमगाती (हुई दिखायी दे रही) थीं। १८। हाथ में दर्भ की शलाका लेकर उस (कन्या) ने उसके अन्दर डाल दी। उससे मुनिवर के नेत्र फोड़ डाले (गये) और उसमें से रक्त की धारा निकल पड़ी। १९। उस समय राजा की सेना में बड़ा उत्पात मच गया। वहाँ समस्त प्राणियों के शिस्न और गुदा दोनों बन्द हो गये। २०। इस वार्ता (घटना) को जानते ही वह राजा मुनिवर के पास आ गया। उसने उससे प्रार्थना करते हुए उससे अपनी कन्या का विवाह करा दिया और वह अपने निवास-स्थान (चला) गया। २१। अनन्तर च्ययन ऋषि (वहाँ) आश्रम बनाकर उस कन्या के साथ रह गये। वह साध्वी (कन्या) अपने पति की बहुत सेवा करती थी और अपने (पतिव्रता-) धर्म का निर्वाह करती थी। २२। जिस प्रकार अनसूया एकनिष्ठ मन से (अपने पति) अत्रि ऋषि की सेवा करती है, उस प्रकार वह च्यवन की सेवा करती थी। (इस प्रकार) बहुत दिन बीत गये। २३। मुनि की सेवा करते-करते एक सहस्र वर्ष बीत गये। एक समय मुनि के आश्रम में ही अश्विनीकुमार आ गये। २४। तो उस सती ने उनका पूजन करके उन्हें आसन पर बैठा दिया। (उसके द्वारा किये) अत्यधिक सत्कार को देखते हुए वे देव प्रसन्न हो गये। २५। वे बोले, 'अरी साध्वी, आज तुम्हारे मन में जो इच्छा हो, उसका वर (-दान)

अरे साध्वी तुं माग्य वर, जे इच्छा होये आज,
त्यारे सती कहे मुज पति तणां, दृग आपो महाराज। २६।
त्यारे वैद्य कहे इंद्रे अमारो, यज्ञ केरो भाग,
ते बंध कीधो जोरथी, करियो अमारो त्याग। २७।
ते अमने पाछो अपावो, त्यारे च्यवन बोल्या वाण,
तमने अपावुं यज्ञ केरो, भाग निश्चे जाण। २८।
मुनि वचन लेई वैद्ये रच्यो, एक कुंड पूरण वार,
औषधि नाखी तेहमां, मंत्रित कर्यो निरधार। २९।
पछी च्यवन ऋषिनो कर ग्रही, उठाडिया छे त्यांहे,
बे देव त्रीजा मुनि वळता, प्रवेश्या ते मांहे। ३०।
करी स्नान बहार नीकळ्या, उपकंठ ऊभा तेह,
थयुं दिव्य रूप मुनि तणुं, खटदश वरसनी देह। ३१।
अलंकारमंडित तरुण वय, रूपथी लाजे काम,
मुनिपत्नी जोई आश्चर्य पामी, ओळख्या नहि श्याम। ३२।
पछी स्तुति कीधी देवनी, त्यारे सोंपियो भरथार,
ते वैद निज लोके गया, वरतियो जयजयकार। ३३।

माँग लो।' तब सती बोली, 'हे महाराज, मेरे पति के नेत्र (पुनः उत्पन्न कर) दीजिए।'। २६। तब (देवों के उन) वैद्यों ने कहा, 'इन्द्र ने हमारा यज्ञीय भाग बल-पूर्वक बन्द कर दिया है और हमारा परित्याग किया है। २७। वह हमें पुनः दिलवाइए।' तब च्यवन ने यह बात कही, 'समझिए कि मैं निश्चय ही आपको आपका अपना यज्ञीय भाग दिलवा दूंगा।'। २८। मुनि से (इस प्रकार) वचन लेकर उन वैद्यों ने पानी से परिपूर्ण एक कुण्ड का निर्माण किया और उसमें ओषधि डालकर उसे निश्चय-पूर्वक अभिमन्त्रित कर दिया। २९। तत्पश्चात् उन्होंने च्यवन ऋषि का हाथ पकड़कर उन्हें वहाँ (से) उठा लिया और वे दोनों देव तथा तीसरे वे मुनि (तीनों) उस (कुण्ड) में प्रविष्ट हो गये। ३०। उसमें स्नान करके वे बाहर निकल आये और तट पर खड़े रह गये। मुनि का रूप दिव्य हो गया और शरीर (मानो) सोलह वर्ष की (-सी) हो गयी। ३१। वे मुनि अलंकारों से विभूषित तथा युवावस्था के हो गये। उनके रूप से कामदेव (तक) लज्जित हो रहा था। मुनि की स्त्री यह देखकर आश्चर्य को प्राप्त हो गयी। वह उस श्याम-शरीरी (अपने पति) को पहचान नहीं पायी। ३२। अनन्तर उसने उन देवों की स्तुति की, तब उन्होंने उसे उसका पति सौंप दिया। (फिर)वे वैद्य अपने

ते स्त्रीए मुनि आज्ञा थकी, ह्रदमां कर्युं छे स्नान,
अद्‌भुत कांति शोभती, थई रतिरूप समान । ३४ ।
पछी योगमायाने बळे, नीरम्युं विमान मुनीश,
संपन्न तेमां भोग सरवे, अधिक वैभव ईश । ३५ ।
निज स्वामीने लई सुंदरी, चढी ते विमान मोझार,
एक सहस्र दासी सेवती, सेवक तणो नहि पार । ३६ ।
पत्नी सहित एम घणां दिन, भोगव्या मुनिए भोग,
तृप्ति थया पछी त्याग कीधो, ग्रह्या मनमां जोग । ३७ ।
पयोष्णीतीरे सहित पत्नी, रह्या करी आश्रम,
तप, ध्यान ने अनुष्ठान करता, आचरे निज धर्म । ३८ ।
एक समे त्यां शर्याती राजा, आव्यो आश्रम भूप,
मन खेद पाम्यो कूड जाण्युं, जोई ऋषिनुं रूप । ३९ ।
पछे पुत्रीए वरतांत सरवे, कह्यूं मांडी पिताय,
ते सुणी हरख्यो भूपति, लाग्यो मुनिने पाय । ४० ।

लोक (स्वर्ग) में चले गये, तो जय-जयकार हो गया । ३३ । मुनि की आज्ञा से उस स्त्री ने उस कुण्ड में स्नान किया, तो (वाहर आने पर) उसकी अद्‌भुत कान्ति शोभायमान होती हुई वह रति के रूप के सदृश हो गयी । ३४ । अनन्तर उस मुनि ने योगमाया के बल से एक विमान का निर्माण किया । उसमें समस्त भोग तथा अत्यधिक वैभव तथा ऐश्वर्य सम्पन्न (भरा-पूरा) था । ३५ । अपने स्वामी को लेकर वह सुन्दरी उस विमान में चढ़ गयी । (उस समय) एक सहस्र दासियाँ उनकी सेवा कर रही थीं । सेवकों का तो कोई पारावार नहीं था । ३६ । पत्नी-सहित मुनिवर ने इस प्रकार बहुत दिन भोगों का उपभोग किया । तृप्त होने के पश्चात् उन्होंने उनका त्याग कर डाला और मन में योग-धारण किया । ३७ । वे मुनि पयोष्णी (नदी) के तट पर आश्रम वनाकर पत्नी-सहित रह गये । (वहाँ) वे तप, ध्यान और अनुष्ठान करते हुए अपने धर्म का आचरण करते थे । ३८ । एक समय शर्याति नामक वह राजा उस आश्रम में आ गया । वह मन में खेद को प्राप्त हो गया । उन ऋषि के उस रूप को देखकर वह उसे छल-प्रपंच समझ वैठा । ३९ । अनन्तर उसकी कन्या ने अपने पिता को समस्त वृतान्त विस्तारपूर्वक वताया । उसे सुनकर राजा आनन्दित हो गया और मुनि के पाँव लगा । ४० । तव च्यवन ने कहा, ' हे राजा, आज आप अपने घर में

त्यारे च्यवन कहे हो रायजी, करो यज्ञ तम घेर आज,
में वचन आप्युं देवने, ते थाय सिद्धि काज । ४१ ।
पुत्री जामात्रने तेडी राजा, आवियो निज घेर,
आरंभ यज्ञ तणो कर्यो, वरिया मुनि बहु पेर । ४२ ।
अश्विनीकुमारने भाग आप्यो, च्यवन ऋषिए त्यांहे,
मारवा आव्यो इंद्र मुनिने, वज्र ग्रही कर मांहे । ४३ ।
हणवा कारण कर्यो हस्त ऊंचो, थयो हाहाकार,
स्थंभ स्थंभ बोल्या मुनि, स्थंभियो कर तेणी वार । ४४ ।
पीडा घणी थई इंद्रने, स्तविया तदा मुनिजन,
करो क्षमा मुज अपराध, मारो अनुग्रह स्वामिन । ४५ ।
मुनिए कृपा करी इंद्रने कह्युं, आजथी निरधार,
अश्विनीकुमारने यज्ञ केरो, भोग आपो सार । ४६ ।
ते दिवसथी थयो चालतो, यज्ञ केरो भाग,
शिक्षा करी सुरपतिने, एवा च्यवन महाभाग । ४७ ।
आख्यान ए मुनि च्यवननुं, जे सुणे नर ने नार,
महापापथी मुकाय ते, पामे पदारथ चार । ४८ ।

यज्ञ कीजिए। मैंने (अश्विनीकुमार) देवों को अभिवचन दिया है—उस कार्य की उससे सिद्धि हो जाएगी।'। ४१। अपनी कन्या और जामाता को साथ में बुला लेकर वह राजा अपने घर आ गया और उसने यज्ञ का आरम्भ किया। मुनि ने बहुत प्रकार से (दान आदि) व्यवहार किया। ४२। वहाँ च्यवन ऋषि ने अश्विनीकुमारों को (यज्ञीय) भाग प्रदान किया, तो हाथ में वज्र लेकर इन्द्र उस मुनि को मारने के लिए आ गया। ४३। आघात करने के हेतु जब उसने हाथ ऊँचा उठा लिया, तो हाहाकार मच गया। (तब) मुनि बोले, 'रुक जाओ, रुक जाओ' (त्यों ही) उस समय (इन्द्र का हाथ वैसा ही) रुक गया। ४४। उससे इन्द्र को बहुत पीड़ा होने लगी, तो उसने मुनि की स्तुति की (और कहा—) 'हे स्वामी, मेरे अपराध क्षमा कीजिए, मुझ पर अनुग्रह कीजिए।'। ४५। तो मुनि ने कृपा करते हुए इन्द्र से कहा, 'निश्चय ही तुम आज से यज्ञीय सुन्दर (यथोचित) भाग अश्विनीकुमारों को दे दो।'। ४६। उस दिन से यज्ञीय भाग (उन्हें दिया जाता है) दिया जाने लगा। सुरपति इन्द्र (तक) को उन्होंने दण्ड दिया—ऐसे हैं महाभगवान् च्यवन (ऋषि)! । ४७। मुनि च्यवन का यह आख्यान जो नर और नारियाँ सुनते हैं, वे महापाप से मुक्त हो जाते हैं और (धर्म,

सुमंत कहे, हो शत्रुघन ते, च्यवननुं आ वन,
सुंदर स्थळ सोहामणुं, आश्रम छे पावन । ४९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पावन आश्रम मुनि तणो, तिहां आव्या शत्रुघन रे,
च्यवन ऋषिने पाये लाग्या, पाम्या सहु दरशन रे । ५० ।

अर्थ, काम और मोक्ष जैसे) चारों पदार्थो को प्राप्त हो जाते हैं । ४८ ।
सुमन्त ने कहा, हे शत्रुघ्न, उन च्यवन का यह वन है। यह सुन्दर सुहावना स्थान है । उनका (यह) पवित्र आश्रम है । ४९ ।

मुनि (च्यवन का) पावन आश्रम (यहाँ इस वन में) है। वहाँ शत्रुघ्न आ गया और च्यवन ऋषि के पाँव लगा । (फिर) वे समस्त लोग उनके दर्शन को प्राप्त हो गये । ५० ।

* * *

अध्याय—४३ (नीलगिरि का माहात्म्य)

राग परज

च्यवन ऋषिने आश्रम आवी, ऊतरियो सहु साथ,
शत्रुघन आवी पाये नम्या, दीधी आशिष तांहां मुनिनाथ । १ ।
पयोष्णी मांहे स्नान करी, मागी मुनिवरनी आज्ञाय,
पछे त्यां थकी अश्व ते आगळ चाल्यो, पूंठळ वीर पळाय । २ ।
ते अश्व आव्यो वाजीपुरमां, ज्यां सुधर्मी नामे भूपाळ,
ते राय रामनो भक्त हतो माटे, आवी मळ्यो तत्काळ । ३ ।

अध्याय—४३ (नीलगिरि का माहात्म्य)

समस्त लोग साथ (-साथ) च्यवन ऋषि के आश्रम के (निकट) आकर ठहर गये। (फिर) शत्रुघ्न ने आकर उनके चरणों को नमस्कार किया, तो वहाँ उन मुनिवर ने उसे आशीर्वाद दिया । १ । (तदनन्तर) पयोष्णी नदी में स्नान करके उसने मुनिवर से आज्ञा माँगी । फिर वहाँ से घोड़ा आगे जाने लगा । उसके पीछे (-पीछे) वे वीर (भी) जा रहे थे । २ । वह अश्व (आगे बढ़ते-बढ़ते) वाजीपुर में आ गया, जहाँ सुधर्मी नामक राजा (राज्य कर रहा) था । वह राजा राम का भक्त था, इसलिए वह तत्काल आकर (शत्रुघ्न से) मिल गया । ३ । उसने शत्रुघ्न का स्वागत किया, तो वे समस्त

तेणे स्वागत कीधी शत्रुघननी, संतोष्यो सहु साथ,
खानपान बहुविधनां आपी, पाये नम्यो नरनाथ। ४।
तेणे सात सें हस्ती भेट कर्या, श्वेत कांति चंद्र समान,
एम सहस्र रथ कंचन मणिमय, अश्व सारथिवान। ५।
वळी अश्व उज्जवळ दश सहस्त्र ज आप्या, वस्त्र भूषण भंडार,
ते एटलुं आपीने साथे चाल्यो, भूपति तेणी वार। ६।
त्यां थकी आगळ अश्व ज चाल्यो, पूंठळ जोद्ध पळाय,
एटले एक त्यां परवत दीठो, शी कहुं तेनी शोभाय ? । ७।
सुवर्ण रजत मणि स्फटिकनो, मंडित छे शत शृंग,
जेमां घोष थया घणां प्रवाह जळना, गुंजे शुक पिक भृंग। ८।
अनेक वृक्ष विशाळ विराजे, वन सघन चोपास,
अप्सरा सहित देव त्यां आवी, करता विविध विलास। ९।
पासे गंगाना तरंग ऊछळे, उज्जवळ करपुरवंत,
प्रतिबिंब पडे मांहे परवतनुं, तेनी रचना थाय अनंत। १०।
वळी चारे पास भोम रूपानी, झळके तेज अपार,
एवी शोभा जोई शत्रुघन पूछे, सुमंतने तेणी वार। ११।

साथ ही (सम्मानित होने से) तृप्त हो गये। नाना प्रकार का खान-पान देकर उसने शत्रुघ्न के चरणों को नमस्कार किया। ४। फिर उसने चन्द्रमा की भाँति श्वेत कान्ति से युक्त सात सौ हाथी भेंट के रूप में दिये। घोड़ों और सारथियों से युक्त एक सहस्र स्वर्ण-रत्नमय रथ, इसके अतिरिक्त, उज्ज्वल वर्ण के दस सहस्र घोड़े, सुन्दर वस्त्र तथा आभूषण और (धन-)भण्डार प्रदान किये। इतना देते हुए वह राजा उस समय (शत्रुघ्न के) साथ चल पड़ा। ५-६। वहाँ से वह (यज्ञीय) घोड़ा आगे चला जा रहा था। उसके पीछे योद्धा जा रहे थे। इतने में उन्होंने वहाँ एक पर्वत देखा। उसकी शोभा मैं क्या कहूँ ? । ७। उस पर्वत के स्वर्ण, चाँदी, रत्न, स्फटिक से मण्डित सौ (-सौ, अर्थात् सैकड़ों) शिखर हैं, जिनमें नदी-प्रवाह के पानी का बहुत घोष हो रहा है और जहाँ तोते, कोकिल और भ्रमर गुंजन करते हैं (बोलते रहते हैं)। ८। (वहाँ) अनेक विशाल वृक्ष शोभायमान हैं, चारों ओर घना बन है। अप्सराओं सहित देव वहाँ आकर विविध विलास करते हैं। ९। पास ही गंगा की कपूर की-सी उज्ज्वल लहरें उछलती हैं। उस (नदी के जल) में पर्वत का प्रतिबिम्ब पड़ा हुआ है। उससे उस पर्वत की रचना अनन्त हुई-सी जान पड़ती है। १०। इसके अतिरिक्त, उसके

अरे मित्र, आ गिरि विचित्र छे, एनो शो महिमाय ?
एवां वचन सुणीने सुमति बोल्यो, सांभळो कहुं अभिप्राय । १२ ।
नीलगिरि एनुं नाम ज कहिये, स्फटिकनो चोपास,
श्रीपुरुषोत्तम साक्षात् सदा एमां, रह्या करीने वास । १३ ।
अहीं सरवे देव नित्य आवे छे, पूजवा श्रीभगवान,
ए परवतनुं दरशन नव पामे, जे होय अधम अघवान । १४ ।
जे विष्णुभक्तिथी विमुख होय, निज धर्मरहित जे जन,
तील तेल घृत लाक्ष मधु, करे विक्रय जे कंचन । १५ ।
मद्यपानी ने परत्रिय लंपट, परनिंदक मतवादी,
सज्जनवंचक मधुर वस्तु, करे भक्षण रसना स्वादी । १६ ।
पमाडे दुःख पति साध्वी स्त्रीने, भू कन्या विक्रय करता,
विश्वासघात करे पंक्तिभेद, गोद्विजनी वृत्ति हरता । १७ ।
ग्रहण संधिमां भोजन मैथुन, क्षौर करावे जेह,
एवा पापी प्राणी नीलगिरि, स्वपने नव देखे तेह । १८ ।

चारों ओर चाँदी की भूमि (है, जो) अपार तेज से जगमगा रही है। उस समय ऐसी शोभा देखते हुए शत्रुघ्न ने सुमन्त से पूछा । ११ । 'हे मित्र, यह पर्वत विचित्र है । इसकी क्या महिमा है ? ऐसी बातें सुनकर सुमन्त बोला, 'सुनिए, मैं यह बात (मत) कहता हूँ । १२ । उस (पर्वत) का नाम 'नीलगिरि' कह लें । चारों ओर वह स्फटिक का (बना हुआ) है । (मानो) प्रत्यक्ष श्री-पुरुषोत्तम उसमें सदा निवास करके रह रहे हैं । १३ । श्रीभगवान का पूजन करने के लिए समस्त देव नित्य यहाँ आते हैं । जो अधम और पापी हो वह इस पर्वत के दर्शन को प्राप्त नहीं हो जाता (पाता) है । १४ । जो भगवान विष्णु की भक्ति से विमुख होते हैं, जो लोग अपने-अपने धर्म से रहित (अर्थात् धर्म का पालन नहीं करते) हों, जो तिल, तेल, घी, लाख (मोम), मधु, और सोने का विक्रय करते हों, जो मद्यपानी तथा पर-स्त्री के प्रति लम्पट हों, पर-निन्दक पाखण्ड-मत-वादी हों, सज्जनों की वंचना करनेवाले, तथा जिह्वा-स्वादी (अर्थात् स्वादिष्ट वस्तुओं के लोभी) होकर मधुर वस्तुओं का सेवन करते हों, साध्वी स्त्री के पति को दुःख को प्राप्त कराते हों, जो भूमि तथा कन्या विक्रय करते हों, जो विश्वासघात तथा पंक्ति-भेद करते हों, गौ और ब्राह्मण की वृत्ति का हरण करते हों, ग्रहण और सन्धि-काल में भोजन तथा मैथुन करते हों, और क्षौर कराते हों, —ऐसे पापी प्राणी उस नीलगिरि के दर्शन को स्वप्न तक में प्राप्त नहीं हो पाते । १५-१८ । (केवल) महापुण्यवान

महापुण्यवान प्राणी ते पामे, परवतनुं दरशन,
ए पुरुषोत्तमनुं क्षेत्र ज कहीए, मुक्ति तणुं भोवन । १९ ।
नित्ये आवता स्वर्गनिवासी, करवा प्रभु अरचन,
धूप दीप नैवेद्य आरती, करता निर्मळ मन । २० ।
ए प्रभुनो महाप्रसाद मळे, जन अशन करे जो कोय,
ते प्राणी निश्चे परमपद पामे, रूप चतुर्भुज होय । २१ ।
सुमंत कहे सुणो शत्रुघन, ए प्रसादनो महिमाय,
तेह तणुं दृष्टांत कहुं एक, इतिहासनी कथाय । २२ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

कहुं कथा एक इतिहासनी, ते सुणो शत्रुघन रे,
शेष कहे वात्स्यायन ऋषिने, गिरिमहिमा पावन रे । २३ ।

प्राणी (ही) उस पर्वत के दर्शन को प्राप्त हो जाते (पाते) हैं । इसे भगवान् पुरुषोत्तम का क्षेत्र, (अतएव) मुक्ति का भवन ही कहना चाहिए । १९ । स्वर्ग के निवासी (देव आदि) प्रभु की अर्चना करने के लिए नित्य आया करते हैं और वे निर्मल मन से धूप, दीप, नैवेद्य, आरती (जैसी विधियाँ) किया करते हैं । २० । इन प्रभु का महाप्रसाद मिलता है । जो कोई मनुष्य उसे खा लेता है, वह प्राणी निश्चय ही परमपद (मुक्ति) को प्राप्त हो जाता है—उसका चतुर्भुजधारी रूप हो जाता है, अर्थात् उसे सरूपता नामक मुक्ति प्राप्त हो जाती है' । २१ । सुमन्त ने कहा, 'हे शत्रुघ्न, सुनिए, उस प्रसाद की ऐसी महिमा है । इतिहास की एक कथा उसके दृष्टान्त के रूप में कहता हूँ' । २२ ।

'हे शत्रुघ्न सुनिए इतिहास की एक कथा कहता हूँ ।' शेष ने इस प्रकार वात्स्यायन ऋषि से उस पावन पर्वत की महिमा बतायी' । २३ ।

* * *

अध्याय—४४ (नीलगिरि-तीर्थ जाने पर उद्धार हो जाना)

दोहा

वात्स्यायनने शेष कहे, सुणीए हो मुनिजन,
शत्रुघनने सुमंत कहे, गिरिमहिमा पावन ।

अध्याय—४४ (नीलगिरि तीर्थ जाने पर उद्धार हो जाना)

सुमन्त ने शत्रुघ्न से उस पावन गिरि का महात्म कहा—शेष वात्स्यायन से बोले, 'हे मुनिजन, सुनिए । कंचनपुर नामक

राग बिलावळ

कंचनपुर एक नग्र विशाळ, राज करे रत्नग्रीव भूपाळ,
विशालाक्षी एवुं राणीनुं नाम, शोभे रूपे जेवां रति ने काम। १।
ते पुरमां नहि व्याधि ने रोग, घणा दिन वीत्या भोगवतां भोग,
आव्यो तेने वृद्धपणे वैराग, ऊतर्यो विषय परथी अनुराग। २।
राणीशुं बोल्यो ते राय वचन, हावे भोग रुचे नहि मारे मन,
आयुष्य वृथा गयुं आपणुं, हवे साधन करीए मोक्ष ज तणुं। ३।
रायराणी एम करे विचार, एटले आव्यो एक तापस द्वार,
राये कर्युं तेनुं पूजन, कर जोडी बोल्यो तेशुं वचन। ४।
मोक्ष पामवाने महाराज, कंई पावन तीर्थ बतावो आज,
त्यारे तपस्वी कहे सुण राय, पृथ्वीमां तीरथ घणां कहेवाय। ५।
पण नीलगिरि पुरुषोत्तम धाम, आपे धर्म अर्थ मोक्ष ने काम,
गंगासागरनो संगम त्यांहे, पासे गण्डकी विष्णु ते मांहे। ६।
ते स्वतः सिद्धि अरचा भगवान, ब्रह्म प्रतिष्ठित मूरति ज्ञान,
जे शालीग्रामनी पूजा करे, ते जन भवसागरने तरे। ७।

एक विशाल नगर था। उसमें रत्नग्रीव नामक राजा राज कर रहा था। उसकी रानी का नाम विशालाक्षी था। वे (स्त्री-पुरुष) रूप में रति और कामदेव जैसे शोभायमान थे। १। उस नगर में व्याधियाँ और रोग नहीं थे। (इस प्रकार) भोगों को भोगते हुए (उनके) बहुत दिन व्यतीत हो गये। (फिर) वृद्धावस्था में उन्हें विरक्ति हो गयी, (फलतः भोग-विलासों के) विषयों पर से उनका अनुराग उतर गया। २। वह राजा अपनी रानी (पत्नी) से यह बात बोला, 'अब मेरे मन को भोग नहीं भा रहे हैं। अपनी आयु व्यर्थ बीत गयी, अब मोक्ष (-प्राप्ति) ही के लिए साधना कर लें'। ३। राजा और रानी ने ऐसा विचार किया, इतने में कोई एक तापस द्वार पर आ गया। राजा ने उसका पूजन किया और हाथ जोड़कर उससे यह बात कही। ४। 'हे महाराज, मोक्ष को प्राप्त हो जाने के लिए आज कोई पावन तीर्थ (-स्थल) बताइए।' तब तापस बोला, 'हे राजा, सुनिए, पृथ्वी में अनेक तीर्थ कहे जाते हैं। ५। परन्तु (उनमें से) पुरुषोत्तम का नीलगिरि नामक धाम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्रदान करता है। वहाँ गंगा-सागर का संगम है; पास ही गण्डकी नदी है, जिसमें भगवान् विष्णु विराजमान (बनाये जाते) हैं। ६। वह भगवान की पूजा का स्वयम्भू स्थान है; (वहाँ) ब्रह्मा द्वारा प्रतिष्ठित ज्ञान की मूर्ति है। जो शालिग्राम

ए नीलगिरि छे तेनी पास, पामे मोक्ष करे जे वास,
ए गिरिनो महिमा छे घणो, सुणो दृष्टांत कहुं ते तणो । ८ ।

पूरवे किरात पृथुक एवुं नाम, करतो ते जीवहिंसानुं काम,
एक समे चड्यो गिरिने शीश, विष्णुप्रसाद मळ्यो ते दीश । ९ ।

भक्षण करतां छूटी देह, थयो चतुर्भुज तत्क्षण तेह,
बेसी विमान गयो अपवर्ग, देवनां दुंदुभि वाग्यां स्वर्ग । १० ।

ते माटे तांहां जाओ भूप, जुओ जई पुरुषोत्तम रूप,
एवां तापस केरां सुणी वचन, राणी सहित आव्यो राजन । ११ ।

गंडकी गंगामां कर्युं स्नान, पूज्या मुनिवर करी सन्मान,
पछी नीलगिरि चडियो भूपाळ, प्रभु दरशन पाम्यो तत्काळ । १२ ।

विष्णु नैवेद्यनो कीधो आहार, कुटुंब सहित पाम्यो उद्धार,
कहे सुमंत हो शत्रुघन, एवो छे नीलगिरि पावन । १३ ।

का पूजन करता है, वह मनुष्य भव-सागर को पार कर देता है । ७ । वह नीलगिरि उसी के पास है । जो वहाँ निवास करता है, वह मोक्ष को प्राप्त हो जाता । इस पर्वत की महिमा बड़ी है । सुनिए, उस सम्बन्ध में एक उदाहरण कहता हूँ । ८ । पूर्वकाल में पृथुक नामक कोई एक किरात था; वह उस स्थान पर प्राणियों की हिंसा किया करता था । एक समय वह उस पर्वत के मस्तक, अर्थात् एक शिखर पर चढ़ गया, तो उस स्थान पर उसे भगवान् विष्णु का प्रसाद मिल गया । ९ । उसे खा लेने पर (उस किरात की) देह छूट गयी और वह तत्क्षण चतुर्भुज (-धारी) हो गया— अर्थात् उसे सरूपता नामक मुक्ति प्राप्त हो गयी । विमान में बैठकर वह मोक्ष-पद की ओर चला गया, तो स्वर्ग में देवों की दुन्दुभियाँ बजने लगीं । १० । इसलिए हे राजा, आप वहाँ जाइए, और जाकर पुरुषोत्तम के रूप को देखिए ।' उस तापस की ऐसी बातें सुनकर राजा रानी-सहित (वहाँ) आ गया । ११ । उसने गंडकी गंगा में स्नान किया और सम्मान-पूर्वक उस मुनिवर का पूजन किया । तदनन्तर वह राजा नीलगिरि पर चढ़ गया और तत्काल प्रभु के दर्शन को प्राप्त हो गया । १२ । भगवान् विष्णु के प्रसाद को उसने खा लिया और (फल-स्वरूप) परिवार-सहित उद्धार को प्राप्त हो गया ।' सुमन्त ने कहा, 'हे शत्रुघ्न, यह नीलगिरि यह ऐसा पावन (पर्वत) है । १३ ।

दोहा

पावन छे परवत सदा, ज्यां पुरुषोत्तमनो वास,
पापी देखे नहि कदा, प्राणी पुण्यप्रकाश । १४ ।

श्रोताजन सरवे सुणो, कहुं एक एनो मर्म,
ए नीलाचळवासी, प्रभु पुरुषोत्तम परिब्रह्म । १५ ।

ते प्रभु प्रीते पधारिया, देश उडीसा मांहे,
इन्द्रद्युम्न एक भूपति, लाव्यो प्रभुने त्यांहे । १६ ।

जगन्नाथ जेने कहे, नाम सकळ संसार;
महाप्रसादमां भेद नहि, वरणावरण विचार । १७ ।

ए नीलाचळवासी प्रभु, जगन्नाथ जुगदीश,
दरशन करतां दुःख टळे, पाप जाय ते दीश । १८ ।

सुमंते शत्रुघन प्रत्ये, कथा कही तेणी वार,
ते सुणी आगळ चालिया, करी परवतने नमस्कार । १९ ।

* * *

जहाँ पुरुषोत्तम का निवास है, ऐसा यह (नीलगिरि नामक) पर्वत सदा पावन (माना जाता) है । उसे कोई भी पापी कदापि देख नहीं सकता । पुण्य-रूपी प्रकाश से युक्त प्राणी ही उसे देख पाएगा । १४ । हे श्रोता-जनो, 'आप अब सुनिए, मैं इसका एक रहस्य बताता हूँ । इस नीलगिरि पर निवास करनेवाले प्रभु (पुरुषोत्तम) परब्रह्म (ही) हैं । १५ । वे प्रभु पुरुषोत्तम स्वयं प्रेम-पूर्वक उड़िया देश में पधार गये । इन्द्रद्युम्न नामक एक राजा उन प्रभु को वहाँ ले आया । १६ । वे प्रभु पुरुषोत्तम ही हैं, जिनका नाम समस्त संसार जगन्नाथ बताता है । उनके महाप्रसाद में वर्ण-अवर्ण सम्बन्धी कोई अन्तर नहीं होता— अर्थात् ब्राह्मण आदि किसी भी वर्ण का मनुष्य उसे पाने का अधिकारी है । १७ । इस नीलाचल के निवासी प्रभु (पुरुषोत्तम) जगदीश जगन्नाथ (ही) हैं । उनके दर्शन करने से दुःख दूर हो जाता है, और उसका पाप उसी स्थान पर (नष्ट हो) जाता है' । १८ । सुमन्त ने शत्रुघ्न से यह कथा उस समय कह दी । उसे सुनकर उस पर्वत को नमस्कार करते हुए वे (सब) आगे चले गये । १९ ।

* * *

अध्याय—४५ (विद्युन्माली-उग्रदन्त द्वारा अश्व का अपहरण करना और पुष्कल द्वारा उसका वध)

राग आशावरी

नीलगिरिथी अश्व ज चाल्यो, पूंठळ जोध पळाय,
चक्राक नामे नगरमां आव्यो, त्यां छे सुधर्मी राय। १ ।
दमन पुत्र ते राय तणो, तेणे बांधियो यज्ञ तोखार,
पछी तेनी साथे घणुं युद्ध थयुं, कहेतां ग्रंथ पामे विस्तार। २ ।
शत्रुघने ते रायने जीत्यो, छोडाव्या केकाण,
निज सैन्य लेई नृप साथे चाल्यो, अश्वरक्षाने जाण। ३ ।
त्यां थकी तेज:पुरमां आव्यो, आव्यो यज्ञतुरी तत्काळ,
महारम्य नगर छे कनकमणिमय, सत्यवंत भूपाळ। ४ ।
ए विशाळ मंदिर देवतणुं छे, कामाक्षी जेनुं नाम,
ते सरवे कामना पूरण करवा, रही छे तेणे ठाम। ५ ।
स्थंभराय नामे ए पुरमां, करतो पूरवे राज,
तेने संतान कंई उदे थयुं नहि, माटे चिंता करे महाराज। ६ ।

अध्याय—४५ (विद्युन्माली-उग्रदन्त द्वारा अश्व का अपहरण करना और पुष्कल द्वारा उसका वध)

नीलगिरि से (वह यज्ञीय) घोड़ा आगे चला जा रहा था। उसके पीछे (-पीछे) योद्धा जा रहे थे। वह चक्राक नामक नगर में आ गया। वहाँ सुधर्मा नामक राजा (राज कर रहा) था। १। उस राजा के दमन नामक एक पुत्र था। उसने उस यज्ञीय घोड़े को बाँध लिया। फिर उससे (रक्षक योद्धाओं का) बड़ा युद्ध हो गया। उसे कहते हुए यह ग्रन्थ विस्तार को प्राप्त हो जाएगा। २। शत्रुघ्न ने उस राजा को जीत लिया और उस घोड़े को छुड़ा लिया। समझिए (कि फल-स्वरूप) वह राजा अपनी सेना को लेकर उस घोड़े की रक्षा के लिए (शत्रुघ्न के) साथ में चलने लगा। ३। वहाँ से वह तेज:पुर में आ गया— यज्ञीय घोड़ा तत्काल आ गया। वह बड़ा रम्य नगर कनक-मणि-मय था। उसका सत्यवन्त नामक राजा था। ४। उसमें देवी का एक विशाल मन्दिर था, जिसका नाम कामाक्षी था। वह सबकी कामनाओं को पूर्ण करने के लिए वहाँ रही हुई थीं। ५। पूर्वकाल में स्तम्भराय (नामक एक राजा) इस नगर में राज करता था। उसके कोई सन्तान उत्पन्न नहीं हुई, इसलिए वह राजा महान् चिन्ता किया करता था। ६। तब एक समय जावाली ऋषि उस

त्यारे एक समे जाबाली ऋषि ते, आव्या रायने घेर,
आतिथ्य पूजन बहुविध कीधुं, कही सहु दुःखनी पेर। ७ ।
पछी जाबाली ऋषिए विधियुक्ते करी, गौ पुजावी त्यांहे,
त्यारे सत्यवान तेने पुत्र थयो, नृप हरख्यो घणुं मन मांहे। ८ ।
ते पुत्र महाधर्मिष्ठ थयो, लाग्यो करवा पुरनुं राज,
विष्णुभक्तिपरायण पोते, करे परमारथ काज। ९ ।
ते पुर पासे अश्व ज आव्यो, अनुचरे दीठो त्यांहे,
तेणें जाण कर्युं जई भूपतिने, त्यारे हरख्यो घणुं मन मांहे। १० ।
पछी शत्रुघननी सामे गयो, ते सभा सहित राजन,
स्वागत करीने तेडी लाव्यो, सहुने कराव्युं भोजन। ११ ।
ते राये सरवे अरपण कीधुं, राज द्रव्य भंडार,
पछी निज सेन्या लेई साथे चाल्यो, राखवा यज्ञतोखार। १२ ।
हावे त्यां थकी अश्व ते आगळ चाल्यो, आव्युं महा एक वन,
पण श्रोताजन सुणो एक चित्ते, तांहां थयुं मोटुं विघन। १३ ।
छे रावणना सखा विद्युतमाली, ने उग्रदंत एवुं नाम,
ते बंन्यो वीरे जतां हय दीठो, रहेता तेणे ठाम। १४ ।

राजा के घर आ गये, तो उसने बहुत प्रकार से अतिथि-पूजन किया और फिर अपने दुःख की बात कही। ७। अनन्तर जाबाली ऋषि ने (राजा द्वारा) विधि के अनुसार वहाँ गाय का पूजन करवा लिया। तब उसके सत्यवान नामक एक पुत्र हो गया। इससे वह राजा मन में बहुत आनन्दित हो गया। ८। वह पुत्र महान् धर्मनिष्ठ (सिद्ध) हो गया। वह (यथाकाल) नगर का राज करने लगा। वह स्वयं विष्णु-भक्ति-परायण था; (अतः) वह परमार्थ-कार्य किया करता था। ९। (जब) उस नगर के पास वह घोड़ा आ गया, तो उसे वहाँ उसके सेवक ने देखा; तो उसने जाकर राजा को विदित करा दिया, तब वह मन में बहुत आनन्दित हो गया। १०। अनन्तर वह राजा सभा (-जनों) सहित शत्रुघ्न के सम्मुख गया। और (उन सबका) स्वागत करते हुए उन्हें (अपने प्रासाद में) बुला ले आया और सबको भोजन कराया। ११। (फिर) उस राजा ने राज्य तथा धन-भण्डार सब (-कुछ) उसे समर्पित कर दिया और फिर अपनी सेना को लेकर यज्ञीय घोड़े की रक्षा करने के लिए चलने लगा। १२। अब वहाँ से वह घोड़ा आगे चला गया, तो एक बड़ा वन आ गया। परन्तु हे श्रोता-जनो, एकाग्रचित्त से सुनिए, वहाँ एक बड़ा विघ्न (उपस्थित) हो गया। १३। (वहाँ) रावण के विद्युन्माली और उग्रदन्त नामक मित्र थे।

तेणे ओचिंतुं अंधकार करीने, कीधुं हयनुं हरण,
ते आकाश मारगे लईने चाल्या, न गणी भीति मरण । १५ ।
त्यारे ते समे हाहाकार ज वरत्यो, भय पाम्या घणुं मन,
ते अंधकारमां कांई नव सूझे, अकळाया सहु जन । १६ ।
पछी भरतपुत्र पुष्कलजी तेणे, मूक्युं रविनुं बाण,
त्यारे थयो प्रकाश टळ्युं आव्रण, सहु दीप्त दिशा निरवाण । १७ ।
त्यारे करवा लाग्या शोध अश्वनी, दीठो जतां आकाश,
एवुं देखी तदा मरुतसुत कूद्या, क्रोध करीने तास । १८ ।
ते विद्युतमाली साथे कीधुं, हनुमंते घणुं जुद्ध,
तोय दुष्ट न पराजय पाम्यो, पछी विचारी बुद्ध । १९ ।
वाम करे करी झडप ज मारी, अश्व झाल्यो करी रीस,
दक्षिण हस्ते क्रोध करीने, उडाड्युं असुरनुं शीश । २० ।
पछी पुष्कलजीए उग्रदंतने, मार्यो मूकीने बाण,
बंन्यो दुष्टने हणीने लाव्या, यज्ञ तणो केकाण । २१ ।

उन दोनों वीरों ने घोड़े को जाते देखा। वे वहाँ रहते थे। १४। उन्होंने अकस्मात् अन्धकार (उत्पन्न) करके घोड़े का अपहरण कर लिया और वे उसे लेकर आकाश-मार्ग से चले गये। वे मौत के भय को गिनते नहीं थे। १५। तब उस समय हाहाकार ही मच गया। सब (लोग) मन में भय को प्राप्त हो गये। उस अन्धकार में उन्हें कुछ नहीं सुझाई दे रहा था। (फलतः) वे सब लोग आकुल-व्याकुल हो गये। १६। अनन्तर भरत के पुत्र पुष्कल ने सूर्य-बाण चला दिया। तब प्रकाश हो गया, (अन्धकार का) आवरण दूर हो गया और अन्त में समस्त दिशाएँ आलोकित हो गयीं। १७। तब वे घोड़े की खोज करने लगे, तो उन्होंने उसे आकाश (-मार्ग) में जाते देख लिया। तब ऐसा देखते ही पवनकुमार हनुमान क्रोध करके कूद पड़ा। १८। हनुमान ने विद्युन्माली से बड़ा युद्ध किया। (फिर भी) वह दुष्ट पराजय को नहीं प्राप्त हो रहा था; तो फिर उसने (हनुमान ने) अपनी बुद्धि से विचार किया। १९। उसने (फिर) बायें हाथ से लपकते हुए अश्व को क्रोधपूर्वक पकड़ लिया और दायें हाथ से क्रोध के साथ उस असुर का सिर (मरोड़कर) उड़ा दिया। २०। फिर पुष्कल ने बाण चलाते हुए उग्रदन्त को मार डाला। (इस प्रकार) उन दोनों दुष्टों को मार डालते हुए वे यज्ञीय घोड़े को ले आये। २१।

देवे पुष्पनी वृष्टि करीने, वखाण्या घणुं तेणी वार,
शत्रुघन मन आनंद पाम्या, वरत्यो जयजयकार। २२।

सोरठा

वरत्यो जयजयकार, पछी अश्व तांहांथी पाछो वळ्यो,
दक्षिण पंथ मोझार, चाल्या जोद्धा सहु मळी। २३।

(तब) देवों ने पुष्पों की वृष्टि करते हुए उन (दोनों) की उस समय बहुत सराहना की। (फलत:) शत्रुघ्न मन में आनन्द को प्राप्त हो गया। (सब ओर) जयजयकार हो गया। २२।

(सब ओर) जयजयकार हो गया। फिर वह घोड़ा वहाँ से पीछे मुड़ गया। उसके (पीछे-पीछे) वे सब योद्धा मिलकर दक्षिण दिशा के मार्ग पर चलने लगे। २३।

* * *

अध्याय—४६ (आरण्य ऋषि द्वारा शत्रुघ्न को लोमश का परिचय देना और लोमश-कृत रामायण का आरम्भ)

राग धन्याश्री

दक्षिण पंथे वळ्यो तोखार जी,
पूंठळ चाल्युं सैन्य अपार जी।
रक्षा करता महा शूरवीर जी,
अश्व ते आव्यो रेवाने तीर जी। १।

ढाळ

रेवा तणा उपकंठ उपर, आव्यो यज्ञतोखार,
महा दिव्य वन रळियामणुं, शोभा तणो नहि पार। २।

अध्याय—४६ (आरण्य ऋषि द्वारा शत्रुघ्न को लोमश का परिचय देना और लोमश-कृत रामायण का आरम्भ)

वह घोड़ा दक्षिण की ओर जानेवाले मार्ग पर मुड़ गया। उसके पीछे-पीछे अपार सेना जा रही थी। महान् शूर-वीर (योद्धा) उसकी रक्षा कर रहे थे। (आगे बढ़ते-बढ़ते) वह घोड़ा रेवा नदी के तट पर आ गया। १।

वह यज्ञीय घोड़ा रेवा नदी के तट पर आ गया। वहाँ एक महा-दिव्य रमणीय वन था। उसकी शोभा की कोई सीमा नहीं थी। २।

त्यां रम्य आश्रम छे घणां, मुनिवृंद ठामोठाम,
ते मध्ये आश्रम एक मोटो, दीसीए अभिराम। ३।
शत्रुघने सुमन्तने, पूछियुं तेणी वार,
अरे वीर, कहो कोण मुनि मोटा, रहे आणे ठार ?। ४।
सुमति कहे, हो शत्रुघन, मनशील मुनि महानंत,
आरण्य मुनि ज्ञानी महा, वीतराग भक्तिवंत। ५।
एवुं सुणी तदा शत्रुघनने, कर्यो ते वनमां विश्राम,
त्यां सैन्य सरवे उतार्युं, शंकरी तठ अभिराम। ६।
पछे राजमंडळ लेईने, चालिया शत्रुघन,
आरण्यने आश्रम आविया, करवा मुनि दरशन। ७।
सहु राय नमिया मुनिने, त्यारे कर्यो घणो सत्कार,
पछे मधुर वचने मान देई, वेसाड्या तेणी वार। ८।
त्यारे विप्रवर कहे, अरे वीरो, कोण छो तमो आज ?
शे अरथे तमे नीकळ्या ? ते कहो मुने महाराज। ९।
शत्रुघने वरतान्त सरवे, यज्ञ केरुं जेह,
आरण्य मुनिने सरव सुणतां, कह्युं मांडी तेह। १०।

वहाँ बहुत रम्य आश्रम थे। स्थान-स्थान पर मुनि-वृन्द (रहते) थे। (उन लोगों ने) उन (आश्रमों) के बीच एक सुन्दर बड़ा आश्रम देखा। ३। फिर उस समय शत्रुघ्न ने सुमन्त से पूछा, 'हे भाई, कहिए, इस स्थान पर कौन-कौन महान् मुनि रहते हैं ?'। ४। तो सुमन्त ने कहा, 'हे शत्रुघ्न, मनःशील नामक महान् मुनि (यहाँ रहते) हैं, आरण्य नामक मुनि (जो) महान् ज्ञानी, तथा वैराग्यशील तथा भक्ति से युक्त (हैं, यहाँ रहते) हैं'। ५। तब ऐसा सुनकर शत्रुघ्न ने उस वन में विश्राम किया। वहाँ शुभकारिणी रेवा नदी के सुन्दर तट पर समस्त सेना ठहर गयी। ६। अनन्तर राज-मण्डली को लिये हुए शत्रुघ्न चले और मुनि के दर्शन करने के लिए आरण्य (मुनि) के आश्रम में आ गये। ७। समस्त राजाओं ने मुनि को नमस्कार किया; तब उन्होंने (मुनिवर ने) उनका बहुत सत्कार किया। अनन्तर उन्होंने उस समय मधुर वचन कहते हुए उनका सम्मान करके बैठा लिया। ८। तब वे विप्रवर (-मुनि) बोले, 'हे भाइयो, आप कौन हैं ? आज आप किस हेतु से निकलकर आ गये हैं ? हे महाराज, मुझसे यह कहिए। ९। तो शत्रुघ्न ने यज्ञ-सम्बन्धी जो समाचार था, वह सब आरण्य मुनि के सुनते रहते (अर्थात् उनको सुनाते) विस्तार-पूर्वक कह दिया। १०। उसे सुनकर आरण्य मुनि हँसने लगे। फिर प्रेम से गद्गद हो उठे।

ते सुणी हस्या आरण्य मुनि, वळी थया गद्गद प्रेम,
पछे शत्रुघनशुं बोलिया, मुनि वचन मंगळ क्षेम । ११ ।
अरे शत्रुघन सावधान थईने, सुणो कहुं ते आंहे,
लोमशमुनि आव्या'ता पूरवे, मारा आश्रम मांहे । १२ ।
आतिथ्य पूजन में कर्युं, बेसाडिया आसन,
पछे विनय करी लोमश प्रत्ये, में पूछ्युं प्रश्नवचन । १३ ।
महाराज मृत्युलोकमां, धरी जन्म मनुष्यदेह,
कल्याण क्यम थाय जीवनुं ? मने कहो कारण तेह । १४ ।
लोमश मुनि तव बोलिया, मुज साथ मधुर वचन,
भगवाननी भक्ति विना नथी, बीजुं साधन अन्य । १५ ।
जे पूरण ब्रह्म अखंड व्यापक, अंतरजामी राम,
नियंता माया तणा; भक्तना पूरणकाम । १६ ।
उद्भव स्थिति लय सृष्टिना, जीवना जीव प्राण,
ईश्वर तणा ईश्वर हरि छे, वेद जेनी वाण । १७ ।
जे ब्रह्मादि देवना स्वामी, कोटि ब्रह्मांडना राय,
जेना कटाक्षे काळ कंपे, लोकपति समुदाय । १८ ।
एवा प्रभुने सेवीए नित्य, स्मरण करीए नाम,
चरित्र सुणीए गान करीए, अरपीए मन काम । १९ ।

अनन्तर मंगल-क्षेम (-कुशल) पूछकर उन्होंने यह बात कही । ११ । "हे शत्रुघ्न, सावधान होकर सुन लीजिए, जो मैं यहाँ (अभी) कह रहा हूँ । लोमश ऋषि पूर्वलाल में मेरे आश्रम में आये थे । १२ । मैंने उनका आतिथ्य और पूजन किया, आसन पर बैठा लिया । तदनन्तर विनय-पूर्वक मैंने लोमश से यह प्रश्न किया । १३ । 'हे महाराज, मृत्यु-लोक में मनुष्य द्वारा देह धारण करके जन्म लेने पर, जीव का कल्याण कैसे हो सकता है ? वह कार्य मुझसे कहिए ।' १४ । तब लोमश ऋषि मुझसे यह मधुर वचन बोले, 'भगवान की भक्ति के अतिरिक्त दूसरा कोई अन्य साधन नहीं है । १५ । जो पूर्णब्रह्म, अखण्ड, (सर्व-) व्यापक, अन्तर्यामी राम हैं, जो सृष्टि के उद्भव, स्थिति और लय के कर्ता हैं, जो जीवों के जीवन-प्राण (-स्वरूप) हैं, जो ईश्वर के ईश्वर हैं, जो निश्चय ही वेद (-स्वरूप) हैं, जो ब्रह्मा आदि देवों द्वारा नमस्कार करने योग्य हैं, करोड़ों ब्रह्माण्डों के राजा हैं, जिनके कटाक्ष से काल और लोकपति-समुदाय (तक) कांप उठते हैं, ऐसे उन प्रभु की नित्य सेवा करें, उनके नाम का स्मरण करें, उनका चरित्र सुनें, उसका (लीला-) गान करें और अपने मन की (समस्त)

भजीए सदा भगवानने, आसक्तिए अनुदिन,
नित्ये ध्यान धरीए, हरितणुं अरपीए तन मन धन । २० ।
एकांत भक्ति थकी जेवा, हरी थाय प्रसन्न,
ए समान थाये लाभ एवुं, नथी साधन अन्य । २१ ।
सर्वत्र व्यापक छे प्रभु, चर-अचरमां निरधार,
तोय भक्त अरथे धरमस्थापन, धरे छे अवतार । २२ ।
जुगोजुगमां जन्म हरिना, चरित्र निर्मळ कर्म,
ते श्रवण कीर्तन थकी प्राणी, थाय पावन पर्म । २३ ।
हमणां ते प्रगट्या छे प्रभु, श्रीराम पूरणब्रह्म,
साक्षात् लक्ष्मीसहित, पोते न जाणे को मर्म । २४ ।
घणा दुष्ट प्रगट्या पृथ्वीमां, पीडाया ब्राह्मण देव,
तेणे धरमनुं छेदन कर्युं, घणुं पाप प्रगट्युं एव । २५ ।
त्यारे अवतर्या पोते प्रभु, हरवा ते भूमिनो भार,
काकुत्स्थ कुळमां राय दशरथ, अयोध्यापुर सार । २६ ।
माता कौशल्या थकी थया, प्रगट पोते राम,
सुमित्राथी थया लक्ष्मण, शेष पूरणकाम । २७ ।

कामनाओं को (उन्हीं पर) समर्पित करें। उस भगवान् की सदा भक्ति करें, प्रतिदिन उन्हीं के प्रति आसक्त रहें, नित्य उन्हीं हरि का ध्यान धारण करें। अपना तन-मन-धन उन्हें समर्पित करें। १६-२०। जब ऐसी ऐकान्तिक (एकनिष्ठ) भक्ति से भगवान् हरि जैसे प्रसन्न हो जाते हैं, उस (प्रसन्नता) के समान वही लाभ होता है (वह लाभ अनुपम होता है)—(इससे बड़ा) दूसरा कोई साधन नहीं है। २१। चर-अचर में निश्चय ही प्रभु (राम) सर्वत्र व्यापक हैं। उन भक्तों के लिए, (सद्) धर्म की स्थापना के लिए वे प्रभु अवतार ग्रहण करते हैं। २२। भगवान् हरि का (अवतार-रूप में) जन्म युग-युग में होता है। उनके चरित्र और कार्य निर्मल होते हैं। उनके श्रवण और कीर्तन से प्राणी परम-पावन हो जाते हैं। २३। अभी वे पूर्णब्रह्म प्रभु श्रीराम साक्षात् लक्ष्मी-सहित स्वयं आविर्भूत हो गये हैं। इसका मर्म कोई भी नहीं जानता है। २४। इस पृथ्वी में बहुत दुष्ट उत्पन्न हुए थे। उन्होंने ब्राह्मणों और देवों को पीड़ित किया। उन्होंने धर्म का नाश किया। उससे बहुत पाप ही उत्पन्न हो गया। २५। तब भूमि के पाप-रूपी भार को दूर करने के लिए स्वयं प्रभु अवतरित हो गये हैं। सुन्दर अयोध्यापुरी में काकुस्थ वंश में उत्पन्न दशरथ नामक राजा हैं। २६। (उनके पुत्रों के रूप में) माता कौशल्या से स्वयं राम आविर्भूत

केकई थकी बे वीर प्रगट्या, भरत शत्रुघन,
एम पुत्र चारे प्रगटिया, ते चार व्यूह पावन। २८।
तेणे बाळलीला बहु करी, पछे थया तरुण किशोर,
उपवीत पहेर्यां भण्या विद्या, चतुरना चित्त चोर। २९।
पछे विश्वामित्रनी यज्ञरक्षा, करी जुगजीवन,
लोमश कहे आरण्य मुनि, ते कथा कहुं पावन। ३०।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पावन रामचरित्र सरवे, कहुं संक्षेपे समुदाय रे,
आरण्य मुनि कहे शत्रुघनने, सुणे छे सरव सभाय रे। ३१।

हो गये। पूर्णकाम शेष लक्ष्मण के रूप में सुमित्रा से उत्पन्न हो गये हैं। २७। कैकेयी से भरत और शत्रुघ्न नामक दो (जुड़वाँ) भाई प्रकट हो गये हैं। इस प्रकार चार पुत्र पावन चतुर्व्यूह स्वरूप प्रकट हो गये हैं। २८। उन्होंने बहुत बाल-लीला (प्रदर्शित) की; अनन्तर (जब) वे तरुण किशोर हो गये, तब उन्होंने जनेऊ धारण किया और विधाओं को सीख लिया। वे चतुरों के चित्त को चुरानेवाले (सिद्ध हो गये) हैं। २९। अनन्तर जगज्जीवन (राम ने) विश्वामित्र के युद्ध की रक्षा की। लोमश ऋषि ने आरण्य मुनि से जो कही, वह पावन कथा मैं कह रहा हूँ"। ३०।

आरण्य मुनि शत्रुघ्न से बोले, वह समस्त पावन रामचरित्र मैं आनन्द-पूर्वक संक्षेप में कहूँगा। आरण्य मुनि शत्रुघ्न से कहने लगे और समस्त सभा सुनने लगी। ३१।

* * *

अध्याय—४७ (लोमश ऋषि द्वारा रामकथा-कथन)

राग धन्याश्री

ऋषि वात्सायनने कहे छे शेष जी, लोमश बोल्या सुणो हो मुनेश जी,
विश्वामित्रे जाच्या रघुराय जी, यज्ञतणी करवा रक्षाय जी। १ ।

अध्याय—४७ (लोमश ऋषि द्वारा रामकथा-कथन)

शेष ने वात्स्यायन ऋषि से कहा, "हे मुनीश्वर, सुनिए। लोमश ऋषि (आरण्य ऋषि से) बोले— 'यज्ञ की रक्षा करने के लिए विश्वामित्र ने रघुराज राम को माँग लिया। १।

ढाळ

रक्षा करवा यज्ञनी, चाल्या राम-लक्ष्मण वीर,
कर शर अमोघ निखंग कटी, कोदंडधर रणधीर। २ ।
तांहां मार्या सुबाहु ताडिका, करी यज्ञनी रक्षाय,
पछी राम-लक्ष्मण सहित कौशिक, जनकपुरमां जाय। ३ ।
शिव तणुं त्रंबक तोडियुं, रामे स्वयंवर मांहे,
ते लक्ष्मी सीता जनकपुत्री, वर्या पोते त्यांहे। ४ ।
पंदर वरषना रामजी, खट वरषनां सीताय,
ते समे परणी आविया, पुर अयोध्या रघुराय। ५ ।
पछे वरस द्वादश करी लीला, श्री सहित भगवान,
त्यारे अपर माते मागियुं, ते रायनी पासे वचन। ६ ।
ते पितुवचन पाळवा माटे, चालिया पूरणकाम,
सीता लक्ष्मण संग लेईने, वस्या वनमां राम। ७ ।
वरस चतुर्दश वन रहेवा, पण कर्युं ते दिश,
त्यारे अष्टादश वरसनां सीता, राम सत्तावीश। ८ ।
द्वादश वरस पूरण थतां, आव्या पंचवटी मोझार,
तेरमे वर्षे शूर्पणखाने, विरूप करी निरधार। ९ ।

(तदनुसार) राम और लक्ष्मण दोनों भाई यज्ञ की रक्षा करने के लिए (विश्वामित्र के साथ) चले गये। उन धनुर्धारी रणधीरों के हाथों में अमोघ बाण थे और कमर में खड्ग (खोंसे हुए) थे। २। उन्होंने वहाँ (वन में) सुबाहु और ताड़का को मार डाला और यज्ञ की रक्षा की। तदनन्तर राम-लक्ष्मण-सहित कौशिक (विश्वामित्र) जनकपुर में गये। ३। स्वयम्वर (-मण्डप) में राम ने शिवजी के धनुष को तोड़ डाला और उन्होंने स्वयं वहाँ जनक की कन्या लक्ष्मी-स्वरूपा सीता का वरण किया। ४। रघुराज राम पन्द्रह वर्ष के थे, तो सीता छः वर्ष की थी। उस समय वे परिणय करके अयोध्या लौट आये। ५। अनन्तर भगवान राम ने सीता-सहित बारह वर्ष लीला की। तब एक अन्य माता (कैकेयी) ने (दशरथ) राजा से वचन (की पूर्ति) की माँग की। ६। तो पूर्णकाम राम अपने पिता के वचन का पालन करने के लिए चले गये और सीता तथा लक्ष्मण को साथ में लेकर वे वन में बस गये। ७। उस समय उन्होंने उस स्थान पर चौदह वर्ष रहने का प्रण किया। तब सीता अठारह वर्ष की हो गयी और राम [illegible] वर्ष के [illegible] गये। ८। वनवास के बारह वर्ष पूर्ण होने पर वे [illegible] उन्होंने तेरहवें वर्ष में शूर्पणखा को

मारीचने मृग करी रावण, आवियो ते ठाम,
ते मायामृगने हण्यो पोते, राम पूरणकाम । १० ।
माघ मासे कृष्ण-अष्टमी, सूरज आव्यो शीश,
श्री जानकीजीनुं हरण कीधुं, रावणे ते दिश । ११ ।
मारगे जातां जटायुए, जुद्ध कर्युं रावण साथ,
तेने हणी सीता लेई, पुरमां गयो लंकानाथ । १२ ।
पछी राम लक्ष्मण शोध करता, आविया ऋषिमुख,
तांहां वाली वानर मारियो, सुग्रीवने आप्युं सुख । १३ ।
राज्य सोंप्युं सुग्रीवने, रह्या केटला दिन त्यांहे,
पछी सुध लेवा मोकल्या, बळिया कपि भूमांहे । १४ ।
मार्गशीर सुदि दशमीए, मळ्या संपाति हनुमंत,
एकादशीए समुद्र ओळंग्यो, मारुतसुत बळवंत । १५ ।
ते रात्रीए शोध्युं नगर, नव जडी जनकनी बाळ
पछी अशोक वनमां आविया, द्वादशी प्रातःकाळ । १६ ।
मुद्रिका आपी रामनी, कह्यो सीताने संदेश,
अशोक वन उजाडियुं, हण्या असुर महा बळ वेश । १७ ।

पूर्वक विरूप कर दिया । ९ । मारीच को मृग रूप धारण करवाकर, रावण उस स्थान पर आ गया, तो स्वयं पूर्णकाम राम ने उस मायावी मृग को मार डाला । १० । माघ मास की कृष्ण अष्टमी के दिन जब सूर्य मस्तक पर आ गया, तो उस समय उस स्थान से रावण ने जानकी का अपहरण किया । ११ । जटायु ने मार्ग में भाग जाते हुए लंकानाथ रावण से युद्ध किया, तो उसे मार डालकर वह (रावण) सीता को लेकर लंका नगरी में चला गया । १२ । अनन्तर राम और लक्ष्मण (सीता की) खोज करते-करते ऋष्यमूक (पर्वत तक) आ गये । वहाँ उन्होंने बाली का वध किया और सुग्रीव को (राज्य तथा स्त्री की पुनः प्राप्ति का) सुख प्रदान किया । १३ । (फिर) वे सुग्रीव को राज्य सौंपकर वहाँ कितने ही दिन रह गये । अनन्तर खोज करने के लिए उन्होंने अनेक बलवान कपि स्थान-स्थान पर भेज दिये । १४ । मार्गशीर्ष मास की सुदी दशमी के दिन बलवान पवनकुमार हनुमान सम्पाति से मिला और एकादशी के दिन उसने समुद्र का उल्लंघन किया । १५ । उस (दिन) रात में उसने नगर (में) ढूँढ़ लिया, (परन्तु) सीता (कहीं) नहीं मिली । फिर द्वादशी के दिन प्रातःकाल वह अशोक वन में आ गया । १६ । उसने सीता को राम की मुद्रिका (अँगूठी) दी और सन्देश कह दिया । (फिर) उसने अशोक

अक्षेकुमारने मारियो, आव्यो इंद्रजित बळवंत,
चतुर्दशीए बांधिया, ब्रह्मपाशथी हनुमंत । १८ ।
पूनमे लंका प्रजाळी, फरी कूद्या पवनकुमार,
मार्गशीर कृष्ण प्रतिपदा दिन, आव्या सागर पार । १९ ।
मधुवन उजाड्युं षष्ठीए, मळ्या सप्तमी श्रीराम,
वृत्तांत सहु मांडी कह्युं, कपिए कर्युं जे काम । २० ।
प्रयाण कीधुं नवमीए, कपि - सैन्य - शुं रघुवीर,
ते सात दिवसे आविया, श्रीराम सागरतीर । २१ ।
विश्राम करीने त्यां रह्या, कपि-सैन्य ठामोठाम,
पोष सुद चतुर्थीने दिन, मळ्या विभीषणने राम । २२ ।
युक्ति बतावी रामने, ऊतरवा सिंधु पार,
आसन वाळी चार दिन त्यां, बेठा जुगदाधार । २३ ।
पछे नवमीए मळ्या जळनिधि, तेणे पूज्या श्रीरघुनाथ,
सुद नवमीए बांधवा मांडी, पाज मळी कपि साथ । २४ ।
त्रयोदशीए पूरण थई, कूच करी श्रीरघुराय,
चतुर्दशीए चालिया, आव्या सुवेलु द्वितीयाय । २५ ।

वन को उजाड़ डाला और महा बलवान तथा रूप (आकार-प्रकार) के असुरों को मार डाला । १७ । हनुमान ने (रावण के पुत्र) अक्षय-कुमार को मार डाला तो बलवान इन्द्रजित आ गया । उसने चतुर्दशी के दिन हनुमान को ब्रह्मपाश में बाँध दिया । १८ । पूर्णिमा के दिन पवन-कुमार ने लंका को जला डाला, फिर मार्गशीर्ष कृष्ण प्रतिपदा के दिन उसने कूदकर छलाँग लगायी और वह समुद्र के पार आ गया । १९ । षष्ठी (छठी) के दिन (वानरों ने) मधुवन को उध्वस्त कर दिया, सप्तमी के दिन वे राम से मिल गये और उन कपियों ने जो कार्य किया था, उसके विषय में उन्होंने समस्त समाचार विस्तार-पूर्वक कह दिया । २० । (फिर) रघुवीर श्रीराम ने कपियों की सेना सहित (किष्किन्धा से) नौमी के दिन प्रयाण किया और सात दिनों में वे सागर-तट पर आ गये । २१ । वे वहाँ विश्राम करते हुए ठहर गये । स्थान-स्थान पर कपि-सेना (ठहरी हुई) थी । (अनन्तर) पौष सुदी चतुर्थी के दिन राम विभीषण से मिले । २२ । (तब) उसने समुद्र के पार उतर जाने की युक्ति बता दी । (उसके अनुसार) जगदाधार राम आसन बिछाकर चार दिन वहाँ बैठे रहे । २३ । अनन्तर नौमी के दिन समुद्र (स्वयं राम से) मिल गया, उसने श्रीरघुनाथ का पूजन किया । सुदी दशमी के दिन (समस्त)

विश्राम करीने त्यां रह्या, सैन्या सहित रणधीर,
अष्टमीने दिन आविया जे, शुक सारण बे वीर । २६ ।
पछी पोष वदि द्वादशीनो, दिन थयो जेणी वार,
हाजरी लीधी कपिदळनी, पोते सूरजकुमार । २७ ।
त्रयोदशीथी त्रण दिन करी, रावणे सिद्ध सैन्याय,
माघ सुद प्रतिपदा, अंगद विष्टि करवा जाय । २८ ।
पछी बीजथी अष्टमी लगी, वढ्या वानर राक्षस गर्व,
नागपाशे नवमीए, इंद्रजिते बांध्या सर्व । २९ ।
त्यारे गरुड आव्या दशमीए, थया मुक्त बंधन सुर,
एकादशीए युद्ध कर्युं, जे धूमकेतु असुर । ३० ।
द्वादशीए मूर्छित कर्या, राक्षसे सहुने त्यांहे;
त्रयोदशी सावधान थई, जुद्ध कर्युं मांहोमांहे । ३१ ।
चतुर्दशीथी प्रतिपदा लगी, थयुं जुद्ध महाघोर,
पछी नील कपिए मारियो, जे धूमकेतन जोर । ३२ ।

कपियों ने एक साथ मिलकर सेतु बनाना आरम्भ किया । २४ । त्रयोदशी के दिन सेतु पूरा हो गया तो रघुराज राम ने (सेना-सहित) प्रस्थान किया; चतुर्दशी के दिन वे चलते रहे और (अन्त में) द्वितीया के दिन सुवेल पर आ गये । २५ । फिर रणधीर राम सेना-सहित वहाँ विश्राम करते हुए ठहर गये । अष्टमी के दिन शुक और सारण नामक जो दो वन्धु थे, वे आ गये । २६ । अनन्तर जिस समय पौष बदी द्वादशी का दिन आ गया, तो (उस दिन) सूर्य-पुत्र सुग्रीव ने कपि-सेना की उपस्थिति अंकित की । २७ । त्रयोदशी (तेरस) से तीन दिन तक रावण ने अपनी सेना सज्ज की । माघ सुदी प्रतिपदा को अंगद (लंका में) मध्यस्थता (दूतकर्म) करने के लिए चला गया । २८ । अनन्तर दूज से अष्टमी तक वानरों ने गर्व-पूर्वक राक्षसों से युद्ध किया, तो नौमी के दिन इन्द्रजित ने उन सबको नागपाश में बाँध डाला । २९ । तब दशमी के दिन गरुड़ आ गया और उसके द्वारा नागों को नष्ट कर दिये जाने पर वे देव (-स्वरूप वीर) वन्धन से मुक्त हो गये । एकादशी के दिन धूमकेतु नामक जो असुर था, उसने युद्ध किया । ३० । उस राक्षस ने द्वादशी के दिन उन सबको वहाँ मूर्च्छित कर दिया । तेरस के दिन सचेत होने पर दोनों सेनाओं ने परस्पर युद्ध किया । ३१ । चौदस से प्रतिपदा तक वहुत घमासान युद्ध हो गया । फिर नील कपि ने धूमकेतु नामक जो असुर था, उसे वल-पूर्वक मार डाला । ३२ । दूज से चतुर्थी तक राम और रावण का युद्ध हो गया ।

बीजथी ते चतुर्थी लगी, थयो राम-रावण-संग्राम,
रावण पराभव पामियो, ते नाठो मूकी माम। ३३।
पछी कुंभकरणने उठाड्यो, ते आवियो रणमांहे,
चतुर्दशी लगी जुद्ध कर्युं, पछी रामे मार्यो त्यांहे। ३४।
अमासे पाम्यो शोक रावण, बंध रह्युं तव जुद्ध,
फाल्गुन शुद प्रतिपदाए, चढ्यो इंद्रजित विरुद्ध। ३५।
ते चतुर्थी लगी वढ्यो, वळता आव्या राक्षस पंच,
ते पूनम सुधी जुद्ध करी, पछी मरण पाम्या संच। ३६।
फागण वदि प्रतिपदाए, इंद्रजिते कर्यो संग्राम,
सहु सैन्यने घायल कर्युं, तेणे जीतिया श्रीराम। ३७।
औषधि करतां पांच दिन वीत्यां, रह्युं जुद्ध बंध,
पछे लक्ष्मणे इंद्रजित साथे, कर्यो मोटो द्वंद्व। ३८।
अष्टमीथी त्रयोदशी लगी, ते वढ्या करीने रीस,
लक्ष्मणे मार्यो इंद्रजित, दुःख थयो दशशीश। ३९।
सहगमन करियुं सुलोचना, पड्यो ते दिवस संग्राम,
पछे रावण चढियो युद्ध करवा, ऊभा सन्मुख राम। ४०।

उसमें रावण पराजय को प्राप्त हो गया और धीरज खोकर भाग गया। ३३। अनन्तर उसने कुम्भकर्ण को जागृत करके उठा लिया, तो वह युद्ध-भूमि में आ गया। उसने चतुर्दशी तक युद्ध किया, फिर राम ने उसे वहाँ मार डाला। ३४। अमावस के दिन युद्ध बन्द रहा। फागुन प्रतिपदा के दिन इन्द्रजित (राम के) विरोध में चढ़ दौड़ा। ३५। वह चतुर्थी तक लड़ता रहा। फिर पाँच राक्षस (युद्ध-भूमि में) आ गये। उन्होंने पूर्णिमा तक युद्ध किया और (अन्त में) उनका समूह अर्थात् वे (पाँचों) मृत्यु को प्राप्त हो गये। ३६। फागुन बदी प्रतिपदा के दिन इन्द्रजित ने युद्ध किया। उसने समस्त सेना को घायल कर डाला। (इस प्रकार) उसने श्रीराम को जीत लिया। ३७। (फिर) औषध (-उपाय) करते-करते पाँच दिन बीत गये। (उन दिनों) युद्ध बन्द रहा था। अनन्तर लक्ष्मण ने इन्द्रजित से बड़ा द्वन्द्वयुद्ध किया। ३८। अष्टमी से तेरस तक वे (दोनों) क्रोध-पूर्वक लड़ते-झगड़ते रहे। (अन्त में) लक्ष्मण ने इन्द्रजित को मार डाला, तो रावण को दुख हो गया। ३९। (उसकी स्त्री) सुलोचना ने सहगमन किया—अर्थात् वह सती हो गयी। उस दिन संग्राम स्थगित रह गया। अनन्तर रावण युद्ध करने के लिए चढ़ दौड़ा और राम के सामने खड़ा हो गया। ४०। उस

चैत्र सुदि अष्टमी लगी, युद्ध कर्युं महा रणरंग,
पछी नवमीए रावणे मारी, शक्ति लक्ष्मण अंग। ४१।
दशमीए लाव्या द्रोणाचळ, हनुमंतजी तेणी वार,
रह्युं बंध युद्ध ते दिवस, ऊठ्या सुमित्री निरधार। ४२।
एकादशीए मोकल्यो, मातलि इंद्रे त्यांहे,
रथ राखी नमियो चरण, बेठा रघुपति ते मांहे। ४३।
पछे दशानन साथे कर्यो, प्रभुए महा संग्राम,
चैत्र वदि चौदशे मार्यो, रावणने श्रीराम। ४४।
पुष्पनी वृष्टि करी देवे, थयो जयजयकार,
एम विजय पाम्या हणीने, पौलस्त्यनो परिवार। ४५।
माघ सुदि द्वितीयाने दिने, कर्यो युद्ध आरंभ त्यांहे,
ते चैत्र वदि चौदशे पूरण, सीत्याशी दिन मांहे। ४६।
ते मांहे पंदर दिवस पडिया, शोक माटे जेह,
बहोतेर दिवस खरेखरुं, युद्ध थयुं निश्चे एह। ४७।
हावे चैत्र केरी अमासे कर्यो, रावणने संस्कार,
तेने दाहक्रिया उत्तरक्रिया, ते करावी जुगदाधार। ४८।

महान रणरंगधीर रावण ने चैत्र सुदी अष्टमी तक युद्ध किया; फिर उसने एक शक्ति चलाकर लक्ष्मण के शरीर पर मार दी। ४१। उस अवसर पर दशमी के दिन हनुमान द्रोणाचल को ले आया। उस दिन युद्ध बन्द रहा। फिर लक्ष्मण निश्चय-पूर्वक उठ गया। ४२। एकादशी के दिन इन्द्र ने वहाँ मातलि को भेज दिया; उसने रथ को (सामने) रखते हुए रघुपति राम के चरणों को नमस्कार किया, तो वे उसमें बैठ गये। ४३। अनन्तर प्रभु राम ने रावण के साथ बड़ा युद्ध किया और चैत्र की बदी चौदस के दिन रावण को मार डाला। ४४। तो देवों ने फूलों की वर्षा की। (सर्वत्र) जय-जयकार हो गया। इस प्रकार पौलस्त्य (रावण) के परिवार को मार डालकर राम विजय को प्राप्त हो गये। ४५। (राम ने) वहाँ (लंका में) माघ शुक्ला द्वितीया के दिन युद्ध आरम्भ किया था, वह चैत्र वद्या चतुर्दशी के दिन, अर्थात् सत्तासी दिन में पूरा हो गया। ४६। उस (अवधि) में पन्द्रह दिन शोक के कारण (विना युद्ध के) निकल गये। (अर्थात्) समझिए कि सचमुच (प्रत्यक्ष) बहत्तर दिन निश्चय ही युद्ध हो गया। ४७। अब चैत्र की अमावस के दिन (विभीषण ने) रावण का (दाह-) संस्कार कर लिया। जगदाधार राम ने उसकी दाह-क्रिया तथा उत्तर-क्रिया करवा दी। ४८। श्री महाराज

वैशाख सुदि द्वितीया दिने, विभीषणने आप्युं राज,
अक्षे तृतीया जानकीने, मळ्या श्रीमहाराज । ४९ ।
चतुर्थीए चढिया प्रभु, बेठा ते पुष्प विमान,
सीता लक्ष्मण कपिदळ, विभीषण सहित भगवान । ५० ।
भारद्वाजने आश्रम रह्या, पंचमीए पूरणकाम,
षष्ठीए नंदीग्राममां, भरतने मळिया राम । ५१ ।
सप्तमी आव्या अवधपुरमां, राम बेठा राज,
वरस चतुर्दश थयां पूरण, सिध्यां सरवे काज । ५२ ।
ज्यारे रावणे हरण कर्युं तदा, रह्यो सीताराम वियोग,
ते चौद मास ने दिन एकादशे, थयो फरी संजोग । ५३ ।
तेत्रीश वरसनां जानकी, बेंतालीश वरसे राम,
त्यारे अवधपुरमां राज करवा, बेठा पूरणकाम । ५४ ।
वरस एकादश सहस्र सुधी, राज कर्युं महाभाग,
एक रजकना दुर्वचनथी, कर्यो जानकीनो त्याग । ५५ ।
पछे अगस्त्यना उपदेशथी, कर्यो यज्ञ श्रीरघुनाथ,
एम रामचरित्र कह्यां सहु, लोमशे मारी साथ । ५६ ।

राम ने विभीषण को वैशाख की शुक्ला द्वितीया को राज्य प्रदान किया और वे अक्षय तृतीया के दिन सीता से मिल गये । ४९ । तदनन्तर प्रभु भगवान राम चतुर्थी के दिन सीता, लक्ष्मण, कपि-सेना और विभीषण सहित पुष्पक विमान में चढ़ गये और बैठ गये । ५० । वे पूर्णकाम राम पंचमी के दिन भरद्वाज ऋषि के आश्रम में ठहर गये और छठी के दिन नन्दीग्राम में भरत से मिल गये । ५१ । राम सप्तमी के दिन अवधपुर में आ गये और राज्यासन पर बैठ गये । (इस प्रकार) चौदह वर्ष पूर्ण हो गये और समस्त कार्य सिद्ध हो गये । ५२ । जब (से) रावण सीता का अपहरण कर (चला) गया, तब (से) सीता और राम का वियोग रहा; तो चौदह मास और ग्यारह दिन के पश्चात् उनका फिर से मिलन हो गया । ५३ । उस समय सीता तैंतीस बरस की थी, तो राम बयालीस बरस के थे । तब पूर्णकाम राम अयोध्या में राज करने के लिए (सिंहासन पर) बैठ गये । ५४ । उन महाभाग ने ग्यारह सहस्र वर्ष तक राज़ किया । (फिर) एक रजक द्वारा कहे हुए दुर्वचन से उन्होंने सीता का परित्याग कर दिया । ५५ । अनन्तर अगस्त्य के उपदेश से श्रीरघुनाथ राम ने यज्ञ किया । (आरण्य ऋषि बोले—) इस प्रकार लोमश ऋषि ने मुझसे राम के समस्त चरित्र कह दिये । ५६ । इन्हें गाने

ए गातां सुणतां शीखतां, महा पतित पावन थाय,
करे कृपा श्रीरघुवीर अंते, चरणशरण पळाय। ५७।
लोमशे रामायण कही, ए विशद रामचरित्र,
ते शत्रुघन में कह्युं तमने, रसिक पुण्य पवित्र। ५८।
में मळवा माटे रामने, राखियुं छे आ तन,
कंई फेरा वाळ्यो काळ पाछो, करुं नित्य भजन। ५९।
हावे अवधपुरमां जईश हुं, करवा प्रभुदर्शन,
रघुपति सांनिध्य निश्चे, हावे मूकीश मारुं तन। ६०।
एम शत्रुघनने कही कथा, आरण्य मुनिए त्यांहे,
ते सुणीने आश्चर्य पाम्या, हरखिया मनमांहे। ६१।
हावे श्रोताजन सहु सांभळो, रघुपतिचरित्र अपार,
धरमस्थापन भक्त कारण, जुगोजुग अवतार। ६२।
माटे संदेह को करशो नहि, श्रोता विवेकी जन,
भावे करीने रामना गुण, सुणी धरजो मन। ६३।
आटला गुण छे रामना, करे माप संख्या जेह,
ते अल्पबुद्धि जाणवा, जे धरे मन संदेह। ६४।

पर, श्रवण करने पर तथा सीखने-पढ़ने पर महा पतित मनुष्य (भी) पावन हो जाता है। श्रीरघुवीर राम अन्त में उस पर कृपा करते हैं और वह उनके चरणों की शरण में चला जाता है। ५७। लोमश ऋषि ने (जो) रामायण प्रस्तुत किया, उसमें राम का विशद चरित्र है। हे शत्रुघ्न, मैंने वह रसात्मक पुण्य (-प्रद) पवित्र रामायण आपसे कहा है। ५८। मैंने यह शरीर राम से मिलने के हेतु (अब तक धारण कर) रखा है। मैंने कई बार काल अर्थात् यमदेव को लौटा दिया है और मैं नित्य (राम का) भजन किया करता हूँ। ५९। अब मैं प्रभु राम के दर्शन करने के हेतु अयोध्या में जाऊँगा; (वहाँ जाकर) मैं निश्चय ही रघुपति राम के सन्निध अपनी देह को तज दूँगा। ६०। आरण्य मुनि ने वहाँ शत्रुघ्न से इस प्रकार कथा कही। उसे सुनकर वे आश्चर्य को प्राप्त हो गये और मन में आनन्दित हो गये। ६१। अब हे श्रोताजनो, आप सब रघुपति के अपार चरित्र को सुन लीजिए। वे (राम) धर्म की स्थापना के लिए तथा भक्तों के निमित्त (भक्तों का उद्धार करने के लिए) युग-युग में अवतार ग्रहण करते हैं। ६२। इसलिए, हे विवेकवान श्रोताजनो, आप कोई भी सन्देह न करें। प्रेम-पूर्वक राम के गुणों को सुनकर उन्हें मन में धारण कीजिए। ६३। राम के इतने गुण हैं कि उनकी जो नाप और गणना

भूमि रजकण गगनतारा, मेघबिंदु प्रमाण,
बुद्धिवान ते गणना करे, हरिगुण अपरिमित जाण । ६५ ।

ते माटे जन आळस तजी, करो हरिकथामृतपान,
त्रय ताप वामे अभय पामे, मळे श्रीभगवान । ६६ ।

इति श्रीपद्म पुराणमां, पाताळ खंड कहेवाय,
रामाश्वमेधमां वर्णव्यो, छत्रीशमो अध्याय । ६७ ।

वात्स्यायन मुनि प्रत्ये कह्युं, शेषे करी विस्तार,
ते शत्रुघनने निवेद्युं, आरण्य मुनिए सार । ६८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

आरण्य मुनिए शत्रुघनने, कह्युं रामचरित्र रे,
कहे दास गिरिधर जे सुणे भावे, ते प्राणी थाय पवित्र रे । ६९ ।

* * *

करने लगे, अथवा मन में सन्देह धारण करे, उसे अल्पबुद्धि समझना । ६४ । भूमि के रज:कणों के, आकाश के तारों के, मेघ से उत्पन्न जल-बिन्दुओं के प्रमाण की कोई बुद्धिमान गणना (भले ही) कर पाए, परन्तु समझिए कि भगवान हरि (राम) के गुण अपरिमित हैं। ६५ । इसलिए हे लोगो, आलस्य का त्याग करके हरिकथा रूपी अमृत का पान कीजिए, उससे (आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक—) तीनों (प्रकार के) ताप नष्ट हो जाते हैं । वे अभय को प्राप्त हो जाते हैं और (अन्त में) श्रीभगवान राम से मिलते हैं । ६६ । इति । श्रीपद्म पुराण के अन्तर्गत जो पाताल खण्ड नामक खण्ड कहाता है, उसमें प्रस्तुत रामाश्वमेध प्रकरण के छत्तीसवें अध्याय के आधार पर मैंने यह वर्णन किया । ६७ । शेष ने वात्स्यायन मुनि के प्रति यह विस्तारपूर्वक कहा है । उसका सार आरण्य मुनि ने शत्रुघ्न के प्रति निवेदन किया । ६८ ।

आरण्य मुनि ने शत्रुघ्न से राम-चरित्र कह दिया । कवि गिरधरदास कहते हैं, इसे जो प्राणी प्रेम-पूर्वक सुन ले, वह पवित्र हो जाएगा । ६९ ।

* * *

अध्याय—४८ (श्रीराम के दर्शन करने पर आरण्य मुनि द्वारा मोक्ष प्राप्ति)

राग मेवाडो

श्रीरामचरित्र सुणीने शत्रुघन, मनमां थया छे प्रसन्न जी,
आरण्य मुनि पछी त्यां थकी चाल्या, करवा रामदर्शन जी । १ ।
अवधपुरीमां आव्या तत्क्षण, सरजु गंगाने तीर जी,
यज्ञमंडपमां दीक्षा लेईने, ज्यां बेठा श्रीरघुवीर जी । २ ।
मुनिवरने जोई रघुपति ऊठ्या, सभा सहित तेणी वार जी,
उत्तम आसन पर बेसाड्या, पूजन कीधुं अपार जी । ३ ।
अहोभाग्य मोटुं आज मुजने, मळिया मा'नुभाव जी,
मुजने पावन कीधो मुनिवरे, बोल्या जानकीनाथ जी । ४ ।
जे मोटा पुरुष जगतमां विचरे, लोकनुं करवा कल्याण जी,
इच्छारहित उपकार ज करतां, स्वारथ नहि निरवाण जी । ५ ।
तीर्थमां स्नान करे प्राणी सहु, पाप मूकीने जाय जी,
पछे संत चरणना स्पर्श थकी, ते तीरथ पावन थाय जी । ६ ।
एवा पुरुषनो संग करे क्षण, ते जन थाये अभंग जी,
अपवर्ग स्वर्ग नहि ते तुलनाए, जे सुख लव सतसंग जी । ७ ।

अध्याय—४८ (श्रीराम के दर्शन करने पर आरण्य मुनि द्वारा मोक्ष प्राप्ति)

श्रीराम के चरित्र को सुनकर शत्रुघ्न मन में प्रसन्न हो गये हैं (थे)। अनन्तर आरण्य मुनि राम के दर्शन करने के हेतु वहाँ से चले गये। १। वे तत्क्षण अयोध्या में सरयू गंगा के तट पर आ गये, जहाँ दीक्षा ग्रहण करके श्रीरघुवीर राम यज्ञ-मण्डप में बैठे हुए थे। २। उस समय मुनिवर को देखकर राम सभा (-जनों) सहित उठ गये और (मुनिवर को) उत्तम आसन पर बैठा दिया तथा उनका अपार (प्रेमभाव से) पूजन किया। ३। (फिर) सीतापति राम बोले—' आज मेरा बड़ा अहोभाग्य है, (जबकि) आप महानुभाव मिल गये हैं। मुझे आप मुनिवर ने (अपने आगमन से) पावन किया है। ४। जो महान पुरुष लोगों का कल्याण करने के लिए जगत में विचरण करते हैं, वे स्वार्थ की इच्छा से रहित होकर (लोगों का) उपकार ही करते हैं। निश्चय ही उनका कोई स्वार्थ नहीं होता। ५। (जो) प्राणी तीर्थ (-जल) में स्नान करते हैं, वे अपना सब पाप (वहाँ) छोड़कर चले जाते हैं। फिर सन्तों के चरणों के स्पर्श से वे तीर्थ (-स्थल) पावन हो जाते हैं। ६। ऐसे पुरुषों की संगति, जो क्षण के लिए भी करते हैं, वे लोग अभंग (अमर) हो जाते हैं। सत्संग

एम श्रीपति बोल्या श्रीमुखवायक, सुणतां सर्व सभाय जी,
वारंवार वखाणे मुनि, ब्रह्मण्य देव रघुराय जी । ८ ।
पछे आरण्य मुनिए रामचंद्रनुं, धरवा मांड्युं ध्यान जी,
एक दृष्टे करी अंगोअंगनुं, रूप-सुधारस-पान जी । ९ ।
घनश्याम तन मनमोहन छबी, वारुं कोटिक काम जी,
चारु चरणतलकंज सुकोमल, नख मणि-तेजनुं धाम जी । १० ।
कळश छत्र ध्वज अंकुश आदे, रेखा षोडश सार जी,
त्रिविध ताप पाप रुज टाळे, शरणागत आधार जी । ११ ।
जानु जंघा सुकुमार कटीए, पीतांबर परिधान जी,
कटी मृग चर्ममेखला मणिमय, नाभि गंभीर गुणवान जी । १२ ।
उदर उदार विराजे त्रिवली, उन्नत हृदय विशाळ जी,
उत्तरी वस्त्र ने ब्रह्मसूत्र मणि, मुक्ताफळनी माळ जी । १३ ।
स्कंध पुष्ट भुज करीकर कोमळ, आजानबाहु विराजे जी,
कडां सांकळां अंगद मुद्रिका, पूनम-भव विधु लाजे जी । १४ ।

से जो सुख प्राप्त होता है, उसके एक अंश की तुलना में मोक्ष तथा स्वर्ग (का सुख कुछ भी) नहीं है । ७ । समस्त सभा (-जनों) के सुनते हुए श्रीपति राम अपने श्रीमुख से ऐसे वचन बोले । (फिर) रघुराज राम ने उन मुनिवर की, ब्राह्मण देव की बार-बार प्रशंसा की । ८ । अनन्तर आरण्य मुनि ने रामचन्द्र का ध्यान धारण करना आरम्भ किया । वे एकाग्र दृष्टि से उनके अंग-प्रत्यंग के सौन्दर्य रूपी अमृत रस का पान करने लगे । ९ । (उनका रूप इस प्रकार है—) श्रीराम का शरीर मेघ की भाँति श्याम है । उनकी छबि मनमोहक है । मैं उन पर करोड़ों काम-देव निछावर कर देता हूँ । उनके चरण-तल-कमल सुकोमल एवं सुन्दर हैं । उनके नख (मानो) तेज का धाम (निवास-स्थान) हैं । १० । कलश, छत्र, ध्वज, अंकुश आदि (शुभ चिह्न) तथा सोलह (शुभ-सूचक) रेखाएँ उन पर (अंकित) हैं । वे चरण शरण में आनेवालों के लिए आधार(-स्वरूप) हो जाते हैं, तथा उनके तीनों प्रकार के तापों, पापों और रोगों को दूर कर देते हैं । ११ । उनके जानु (घुटने) और जाँघें सुकुमार हैं । उन्होंने कटि में पीताम्बर परिधान किया है । कटि में मृग-चर्म की रत्नमय मेखला है । नाभि गम्भीर और गुणवती है । १२ । उदर पर विशाल त्रिवली विराजमान है । हृदय (छाती) उन्नत और विशाल है । उत्तरीय वस्त्र, ब्रह्म-सूत्र (जनेऊ) तथा रत्नों और मोतियों की माला धारण की हुई है । १३ । कन्धे पुष्ट हैं, भुजाएँ हाथी की

कंबुकंठ उन्नत त्रिरेखा, चारु चिबुक सुदेश जी,
अधरबिंब रद पदिक-पंक्ति सम, मधुर हास्य कुटिलकेश जी । १५ ।
गल्लस्थळ शुभ तीक्ष्ण नासा, राजिवनेत्र विशाळ जी,
अणियाळां आकरण लगी, मांहे कृपारंग करुणाळ जी । १६ ।
वंक भ्रकुटी कोदंड-शी जाणे, कृतांतने कंपावे जी,
केसरी तिलक ललाटे कुमकुम, अक्षत मध्ये सोहावे जी । १७ ।
मकराकृत कुंडळ काने, प्रतिबिंब पडे छे गाल जी,
सुधासरोवरमां रमतां मानु, मदनमच्छनां बाळ जी । १८ ।
अति सुकुमार असित कच, वाळ्यो अंबोडो शिरकेश जी,
ते पर झळके मुगट मणिमय, ज्यम घनघटा दिनेश जी । १९ ।
मुनिमंडळ वेष्टित बेठा, मृगचर्मासिन भगवान जी,
नखशिख छबी आरण्य मुनिए, कर्युं रामनुं ध्यान जी । २० ।
पछी नेत्र द्वारे करीने उतार्या, रुदेमांहे रघुवीर जी,
चार घटिका स्थिर थई ठरिया, राखी मनमां धीर जी । २१ ।

सूँड-सी हैं । कोमल बाहु आजानु अर्थात्, घुटनों तक लम्बे, शोभायमान हैं । वे कड़े, साँकले, अंगद, मुद्रिकाएँ धारण किये हुए हैं । पूर्णिमा का चन्द्र भी (उन्हें देखकर) लज्जित हो जाता है । १४ । उनका कण्ठ शंख-सा तथा उन्नत एवं तीन रेखाओं से युक्त है । चिबुक-प्रदेश सुन्दर है । होंठ बिम्बाफल से (लाल) हैं । दाँत हीरों की पंक्ति के समान हैं । हास्य मधुर है; केश कुटिल (कुंचित, घुँघराले) हैं । १५ । कपोल-स्थल शुभ हैं, नाक तीक्ष्ण अर्थात् नुकीली है । विशाल नेत्र कमल के समान हैं । वे अनियारे (नोकदार) तथा आकर्ण (कानों तक फैले हुए) हैं । वे कृपा और करुणा के रंग से युक्त हैं । १६ । धनुष की भाँति वक्र भौहें मानो कृतान्त (काल देवता तक) को कँपा देती हैं । ललाट पर केसरी तिलक है । उसके बीच में कुंकुम तथा अक्षत शोभायमान है । १७ । कानों में मकराकार कुण्डल हैं, उनका प्रतिबिम्ब गालों में पड़ा है । (सौन्दर्य रूपी) अमृत के सरोवर में मानो मदन रूपी मत्स्य के बच्चे खेल रहे हों । १८ । (मस्तक पर) अति सुकोमल (मृदु) काले-काले बाल हैं । उन बालों का (मस्तक पर) गुच्छा बनाया हुआ है । उन पर रत्नमय मुकुट (उस प्रकार) जगमगा रहा है, जैसे बादलों की घटा पर सूर्य (जगमगाता) हो । १९ । भगवान राम मृग-चर्म पर मुनि-मण्डली द्वारा घिरे हुए बैठे हैं । इस प्रकार नख से शिखा तक दिखायी देनेवाली राम की छबि का ध्यान आरण्य मुनि ने धारण

पछी ब्रह्मरंध्र फाट्युं मुनिवरनुं, नीकल्युं तेज अपार जी,
श्रीरामचंद्रना मुखमां प्रवेश्युं, वरत्यो जेजेकार जी। २२।
सायुज्य मुक्ति पाम्या मुनिवर, सरवे जोतां जाण जी,
आरण्य ऋषिए एणी पेर तजिया, रामनी सान्निध्य प्राण जी। २३।
ते समे देवनां दुंदुभि वाग्यां, पुष्पनी थई वरषाय जी,
सरव मुनिए आशिष दीधी, प्रसन्न थया रघुराय जी। २४।
एम आरण्य मुनिवर मुक्ति पाम्या, कृपा करी श्रीराम जी,
ए कथा सुणे ते जन पामे, धर्म अर्थ मोक्ष ने काम जी। २५।
शेष नाग कहे मुनि वात्स्यायन, एवा देव मोरार जी,
हावे यज्ञतणो तुरी आगळ चाल्यो, तेनो कहुं विस्तार जी। २६।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

विस्तार कहुं ते मुनि आश्रमथी, क्यां गयो यज्ञतणो तुरी,
सहु श्रोताजन सावधान थईने, एक वार बोलो श्रीहरि। २७।

किया। २०। फिर उन्होंने रघुवीर राम को नेत्र-द्वार में से हृदय के अन्दर उतार लिया। वे (उसी अवस्था में) मन में धैर्य धारण करके चार घड़ियों तक अविचल (बैठे) रह गये। २१। तदनन्तर उन मुनिवर का ब्रह्म रन्ध्र फट गया अर्थात् खुल गया और उसमें से अपार तेज निकल आया और श्रीरामचन्द्र के मुख में प्रविष्ट हो गया, तो जय-जयकार हो गया। २२। इस प्रकार, समझिए कि सबके देखते रहते, मुनिवर सायुज्य मुक्ति को प्राप्त हो गये। आरण्य मुनि ने इस प्रकार राम के सान्निध्य में प्राण तज दिये। २३। उस समय देवों की दुन्दुभियाँ बज उठीं और पुष्प की वर्षा हो गयी। सब मुनियों ने आशीर्वाद दिया, तो रघुराज राम प्रसन्न हो गये। २४। इस प्रकार मुनिवर आरण्य मुक्ति को प्राप्त हो गये। राम ने उन पर (इस प्रकार) कृपा की। इस कथा को जो लोग सुनते हैं, वे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष (जैसे चारों पदों) को प्राप्त हो जाते हैं। २५। शेष नाग ने मुनि वात्स्यायन से कहा— 'ऐसे हैं भगवान मुरारि।' अब यज्ञ का घोड़ा आगे जाने लगा। उस सम्बन्ध में विस्तार करते हुए मैं (अब) कहूँगा। २६।

मैं विस्तार करते हुए कह रहा हूँ कि मुनि (आरण्य) के आश्रम से यज्ञीय घोड़ा (आगे) कहाँ गया। हे समस्त श्रोताजनो, आप सावधान होकर एक बार 'श्रीहरि (की जय)' बोलिए। २७।

*   *   *

अध्याय—४९ (रेवा नदी में अश्व का गुप्त हो जाना और शत्रुघ्न द्वारा उसकी पुनःप्राप्ति)

दोहा

आरण्य तणा आश्रम थकी, चाल्यो यज्ञतोखार;
शत्रुघन आदि सहु, पूंठळ जोध अपार। १।

राग मारु

पूंठे अगणित योद्धा वीर, चाल्यो जाय रेवाजीने तीर,
एटले द्रह आव्यो एक, अति ऊंडो ने जळ छे विषेक। २।
ते रेवाना द्रह मोझार, प्रवेश्यो तेमां यज्ञतोखार,
थयो गुप्त देखाय न त्यांहे, हाहाकार थयो सेन्यमांहे। ३।
शत्रुसूदने जाणी वात, त्यारे पाम्या घणुं परिताप,
चितातुर थईने जाण, कहेवा लाग्या ते सहुने वाण। ४।
भाईओ, हावे करीशुं क्यम ? करो खोळ जडे हय ज्यम,
कह्युं एम ज्यारे शत्रुघन, त्यारे सुमंत बोल्यो वचन। ५।
गयो अश्व रेवाजळ मांहे, बीजाथी नव आवे आंहे,
जळमां पेसवानी गति आज, त्रैण जणने छे महाराज। ६।

अध्याय—४९ (रेवा नदी में अश्व का गुप्त हो जाना और शत्रुघ्न द्वारा उसकी पुनःप्राप्ति)

आरण्य मुनि के आश्रम से वह यज्ञीय घोड़ा (आगे) जा रहा था। शत्रुघ्न आदि समस्त अनगिनत योद्धा उसके पीछे (-पीछे) चले जा रहे थे। १।

(उस घोड़े के) पीछे (-पीछे) अनगिनत योद्धा रेवा (नर्मदा) नदी के तट तक चले गये। इतने में एक दह आ गया। उसमें अति विशेष रूप से गहरा जल था। २। यज्ञ का वह घोड़ा नर्मदा नदी के उस दह के अन्दर पैठ गया और गुप्त हो गया। वह वहाँ दिखायी दे नहीं रहा था। इसलिए सेना में हाहाकार मच गया। ३। जब शत्रुघ्न ने इस बात को जाना, तो वह बहुत ग्लानि को प्राप्त हो गया। समझिए कि चिन्तातुर होकर वह सबसे यह बात कहने लगा। ४। 'भाइयो, अब कैसे करें ? तुम उसकी खोज कर लो, जिससे वह घोड़ा मिल जाए।' जब शत्रुघ्न ने इस प्रकार कहा, तो सुमन्त ने यह बात कही। ५। 'यह घोड़ा रेवा के जल के अन्दर गया है, दूसरे (स्थान) से वह यहाँ नहीं आ सकता। हे महाराज, आज पानी में पैठ जाने की गति (केवल) तीन

एक तमो बीजा हनुमंत, त्रीजो पुष्कल महा बुधवंत,
सुणी मंत्रीनां वचन गंभीर, थया तत्पर त्रणे वीर । ७ ।
सैन्य सकळ रह्युं छे बहार, त्रणे पेठा ते द्रह मोझार,
ज्यारे ऊंडा गया जळमांहे, दीठुं पुर एक रमणीय त्यांहे । ८ ।
तेनी मध्ये छे कंचन महेल, शोभा स्वरग तणी तांहां सेल,
तेनी शी वरणवुं शोभाय, जोतां रचना भूले ब्रह्माय । ९ ।
मणिस्थंभ घणां ते मांहे, अश्व बांधेलो दीठो त्यांहे,
महेलमां मणि पर्यंक सार, ते उपर बेठी एक नार । १० ।
छत्र चामर विजन थाय, घणी किंकरी करती सेवाय,
शत्रुघन पुष्कल ने मारुति, त्रण वीर दीठी ते सती । ११ ।
जे विस्मे पाम्या तेणी वार, कर्यो छे देवीने नमस्कार,
ते छे रुद्रदेहा साक्षात्, त्रणे वीरने पूछी वात । १२ ।
कहो भाई, तमारुं शुं नाम ? क्यम आव्या तमो आ ठाम ?
त्यारे मारुतिए ते स्थान, कह्युं यज्ञतणुं वर्तमान । १३ ।
ते सुणीने देवी तत्काळ, घणुं पस्तावा लागी बाळ,
अरे दुभ्या में मोटा साध, कर्यो रामतणो अपराध । १४ ।

लोगों में है । ६ । एक आप हैं, दूसरे हनुमान हैं, तीसरे महाबुद्धिमान पुष्कल हैं ।' मन्त्री सुमन्त के ये गम्भीर वचन सुनकर वे तीनों वीर तत्पर हो गये । ७ । समस्त सेना बाहर खड़ी रह गयी और वे तीनों उस दह के अन्दर पैठ गये । जब वे गहरे पानी में गये, तब उन्होंने वहाँ एक रम्य नगर देखा । ८ । उसके मध्य भाग में एक स्वर्ण-प्रासाद था । वहाँ स्वर्ग की-सी स्वाभाविक शोभा थी । उसकी क्या शोभा बयान करूँ ? उस (प्रासाद की) रचना को देखते हुए ब्रह्मा तक (सुध-बुध) भूल जाते हैं । ९ । उसमें रत्न के अनेक स्तम्भ थे । उन्होंने वहाँ घोड़ा बँधा हुआ देखा । उस प्रासाद के अन्दर एक सुन्दर पलंग था । उस पर एक नारी बैठी हुई थी । १० । (उस पर) छत्र, चामर, पंखे झुलाये जा रहे थे । अनेक दासियाँ उसकी सेवा कर रही थीं । उस सती को शत्रुघ्न, हनुमान और पुष्कल—तीनों वीरों ने देखा । ११ । उसे देखते हुए वे आश्चर्य को प्राप्त हो गये । (फिर) उस समय उन्होंने उस स्त्री को नमस्कार किया । वह तो साक्षात् रुद्र-देहा थी । उसने उन तीनों वीरों से यह बात पूछी । १२ । 'कहो भाइयो, आपका क्या नाम है ? इस स्थान पर आप क्यों आ गये हैं ?' तब हनुमान ने उस स्थान पर (उस स्त्री से) यज्ञ-सम्बन्धी समाचार कह दिया । १३ । वह सुनते ही वह देवी-नारी

अमो अश्व बांध्यो छे एह, लेई जाओ सुखेथी तेह,
एवुं कहीने आप्युं एक अस्त्र, महा अमोघ तीक्ष्ण शस्त्र। १५।
वैरी-विदारण तेनुं नाम, शत्रुघनने आप्युं ते ठाम,
पछे बोली ते देवी वचन, सुण समरथ शत्रुघन। १६।
आगळ मणिभूप साथे जुद्ध, त्यां थशे महा मोटो विरोध,
ते समे मूकजो अस्त्र सार, विजे पामशो एक ज वार। १७।
मंत्रयुक्ति बतावी समस्त, भरतानुजे ग्रह्युं ते हस्त,
मागी देवीतणी आज्ञाय, अश्व छोडीने वीर पळाय। १८।
रेवाजळथी नीकळ्या बहार, त्यारे वरत्यो जयजयकार,
मळ्या सैन्यने शत्रुघन, थयो हरख ते सहुने मन। १९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

हरख वाध्यो सहु वीरने, चाल्या करता जयजयकार रे,
एक देवपुर नामे नग्रमां, पछे आव्यो यज्ञतोखार रे। २०।

तत्काल बहुत पछतावा करने लगी। (वह बोली—) 'अरे मैंने बड़े साधुजन को दुख दिया, मैंने राम का अपराध किया है। १४। मैंने उस घोड़े को बाँध रखा है, उसे सुख-पूर्वक ले जाइए।' ऐसा कहकर उसने एक अस्त्र प्रदान किया। वह (अस्त्र) महा अमोघ तथा तीक्ष्ण था। १५। उसका नाम वैरी-विदारण था। उस (स्त्री) ने उसी स्थान पर वह शत्रुघ्न को प्रदान किया। फिर वह स्त्री यह बात बोली, 'हे समर्थ शत्रुघ्न, सुनिए। १६। आगे मणि नामक राजा से युद्ध होगा। वहाँ बहुत बड़ा विरोध होगा। उस समय यह सुन्दर शस्त्र चला दीजिए, तो एक ही समय (उसे चलाने पर) आप विजय को प्राप्त हो जाएँगे। १७। (तदनन्तर) उसने मन्त्र-सम्बन्धी समस्त युक्ति बता दी, तो उसे (अस्त्र को) भरतानुज शत्रुघ्न ने हाथ में ले लिया। (फिर) देवी से आज्ञा ली और वे (तीनों) वीर अश्व को खोलकर (मुक्त करके) चलने लगे। १८। (जब) वे रेवा के जल में से बाहर निकल आये, तब जय-जयकार हो गया। शत्रुघ्न सेना से मिल गया, तो सबको मन में आनन्द हो गया। १९।

सब वीरों के आनन्द की वृद्धि हो गयी। वे जय-जयकार करते हुए (आगे) जाने लगे। अनन्तर वह यज्ञीय अश्व देवपुर नामक नगर में आ गया। २०।

* * *

अध्याय—५० (वीरमणि के पुत्र चित्रांगद द्वारा यज्ञीय अश्व का अपहरण)

राग सारंग

हावे चक्षुश्रवा कहे सुणो मुनिवर, वात्स्यायन मतिधीर,
ते देवराजपुर केरी रचना, शोभा घणी गंभीर। १ ।
मणि हेम तणां मंदिर छे सर्वे, स्फटिक रत्न जडाव,
गगनचुंबित अति ऊंचां दीसे, शिखरे कळश धजाय। २ ।
बत्रीसलक्षणा पुरुष सकळ छे, घेर घेर पद्मणी नार,
पतिव्रतापणुं पाळे त्रिया सहु, एकपत्नी नर सार। ३ ।
पद्मराग मणि केरी भूमि, स्फटिक छे ते मांहे,
तेणे करी पक्ष शुक्ल कृष्णनो, भेद जणाय न त्यांहे। ४ ।
ते पुर जोईने मोह पामे छे, देवता इच्छे वास,
महापुण्यवान प्राणीनो थाये, पुरमां जन्म निवास। ५ ।

अध्याय—५० (वीरमणि के पुत्र चित्रांगद द्वारा यज्ञीय अश्व का अपहरण)

अब चक्षुश्रवा अर्थात् शेष नाग ने कहा, 'हे धीरमति मुनिवर वात्स्यायन, उस देवराजपुर की रचना की शोभा बहुत गम्भीर अर्थात् प्रभावशालिनी थी। १। (वहाँ के) समस्त घर रत्नों और स्वर्ण के तथा स्फटिक-रत्नों से जड़े हुए थे। उनके शिखरों पर (जो) कलश तथा ध्वज (थे, वे) अत्यधिक ऊँचे, गगन-चुम्बी दिखायी दे रहे थे। २। (वहाँ के) समस्त पुरुष बत्तीस लक्षणों[1] से युक्त थे, तो घर-घर पद्मिनी जाति की नारियाँ थीं। समस्त नारियाँ पातिव्रत-वृत्ति का निर्वाह करती थीं, तो समस्त पुरुष एक-पत्नी (व्रत के पालक) थे। ३। (वहाँ की) भूमि पद्मराग रत्न की बनी हुई थी, उसमें स्फटिक (लगे हुए) थे। उस (कारण) से वहाँ शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष का अन्तर नहीं जाना जा पाता था। ४। उस नगर को देखकर देवता मोह को प्राप्त हो जाते थे और (वहाँ) निवास करने की इच्छा करते थे। उस नगर में जन्म और निवास (केवल) महापुण्यवान लोगों का ही हो सकता था। ५। अब

१ **बत्तीस लक्षण**—मनुष्य-शरीर के अंगों के नीचे लिखे अनुसार शुभ लक्षण माने जाते हैं—(पाँच सूक्ष्म) त्वचा, बाल, अंगुली, दाँत, बोटियाँ। (पाँच दीर्घ) भुज, नेत्र, ठुड्डी, जघा, नाक। (सात आरक्त) करतल, तलुए, अधरोष्ठ, नेत्र, तालु, जिह्वा, नाखून। (छः उन्नत) वक्षःस्थल, कुक्षि, बाल, कंधे, हाथ, मुख। (तीन विस्तीर्ण) वक्षःस्थल, कटि, ललाट। (तीन ह्रस्व) ग्रीवा, जंघा, शिश्न। (तीन गम्भीर) स्वर, कर्ण, नाभि।

हावे वीरमणि राजा ते सुधरमे, राज करे छे त्यांहे,
साक्षात् श्रीमहादेव रह्या छे, वश थईने घरमांहे। ६ ।
वळी चार पुत्र छे बळिया रायने, धनुर्विद्याना धीर,
ते रुकमांगद ने शुभांगद नामे, प्रबुद्ध ने सिंध वीर। ७ ।
ते चार मध्ये रुकमांगद मोटो, कामरूप कहेवाय,
ते सुंदरीओने संग लेईने, नीकळ्यो वनक्रीडाय। ८ ।
ते वन सघन फळफूल-युक्त छे, बोले कारंडव मोर,
कोकिला हंस पारावत पोपट, मेना बपैया चकोर। ९ ।
खटऋतु वास करीने सदा रही, चाले त्रिविध समीर,
सघन कुंजमां कामनीओशुं, क्रीडा करतो वीर। १० ।
नृत्यगान करी रीझवे रंभा, थई रह्यो छे थेइकार,
ते वनमां श्रीरामचंद्रनो, आव्यो यज्ञतोखार। ११ ।
ते दीठो प्रियाए पतिने कह्युं, जुओ अश्व अनोपम रंग,
पछे पत्र वांची रुकमांगदे झाल्यो, पामी हरख उमंग। १२ ।
वाजित्र वाजते पुरमां आव्यो, कही पिताने वात,
त्यारे भूपे ते हय बंधाव्यो तत्क्षण, जानी शंभुनो प्रताप। १३ ।

वीरमणि नामक राजा वहाँ सद्धर्म से राज कर रहा था। उसके घर में साक्षात् भगवान श्रीशिव जी उसके वश होकर रहते थे। ६। फिर उस राजा के चार बलवान तथा धनुर्विद्या के धारी (-धारक) पुत्र थे। रुक्मांगद और शुभांगद, प्रबुद्ध और वीरसिंह नामक (वे चार पुत्र) प्रतापी बन्धु थे। ७। उन चारों में रुक्मांगद बड़ा था, वह कामदेव का रूप (ही) कहाता था। वह सुन्दर स्त्रियों को साथ लेकर वन में क्रीड़ा करने के लिए चला गया। ८। वह वन घना था, फलों-फूलों से युक्त था। उसमें कारण्डव (एक प्रकार का बत्तख), मोर, कोकिल, हंस, पारावत (कपोत), तोते, मैनाएँ, पपीहे और चकोर बोलते रहते थे। ९। छहों ऋतुओं में निवास करते हुए त्रिविध समीर नित्य चला करता था। (ऐसे उस वन के अन्दर) सघन कुंज में वह वीर (रुक्मांगद) कामिनियों सहित क्रीड़ा कर रहा था। १०। रम्भा अप्सरा-सी कई सुन्दर नारियाँ नृत्य और गान करते हुए उसे रिझा रही थीं। वहाँ थय-थयकार हो रहा था। उस वन में श्रीरामचन्द्र का यज्ञीय अश्व आ गया। ११। उसे देखकर प्रिया (पत्नी) ने अपने पति (रुक्मांगद) से कहा, 'देखो वह अनुपम रंग का घोड़ा।' अनन्तर (घोड़े के सिर पर बाँधे हुए उस) पत्र को पढ़कर हर्ष और उमंग को प्राप्त होते हुए रुक्मांगद ने उसे पकड़ लिया। १२।

त्यारे शिवे कह्युं—ओ भूपति, ए हय, बांधवो न घटे आज,
जे पूरण ब्रह्म पुरुषोत्तम कहीए, श्रीरामचंद्र महाराज। १४।
ते प्रभुकेरो यज्ञतुरी नृप, आपीने लागो पाय,
हुं जेनुं ध्यान धरुं छुं नित्ये, ते छे ए रघुराय। १५।
एवां वचन सुणी ते सदाशिव केरां, बोल्यो भूपति वाण,
हावे पुरुषारथ शुं मारुं, जो आपुं पाछो यज्ञकेकाण। १६।
प्रजा पाळवी पुत्र समी, गौब्राह्मण रक्षा पर्म,
रणमां सन्मुख युद्ध ज करवुं, ए क्षत्रीनो धर्म। १७।
माटे कायर थई हावे नव मूकुं, यज्ञतणो हय आज,
वळी तम सरखा स्वामी शिर मारे, चिंता शी महाराज। १८।
एवां वचन सुणी ते वीरमणिनां, प्रसन्न थया महादेव,
भोलानाथ निज भक्तनी साथे, बोल्या वचन ततखेव। १९।
अरे भूप, हवे अश्व न आपीश, कर जईने संग्राम,
तुंने रघुपतिनां दरशन करावुं, तो शंकर मारुं नाम। २०।

वाद्यों के बजते रहते, वह नगर में लौट आया और उसने अपने पिता से यह बात कह दी। तब राजा ने इसे शिवजी का प्रताप समझकर उस घोड़े को तत्क्षण बँधवा लिया। १३। तब शिवजी बोले, 'हे भूपति, इस घोड़े को आज बाँध रखना उचित नहीं है। जिन्हें पुरुषोत्तम पूर्णब्रह्म कहते हैं, उन महाराज प्रभु श्रीरामचन्द्र का यह यज्ञीय अश्व है। हे राजा, उसे (लौटा) देकर उनके पाँव लग जाओ। जिनका मैं नित्य ध्यान धारण किया करता हूँ, वे ये (ही) रघुराज राम हैं।'। १४-१५। भगवान सदाशिव के ऐसे वचन सुनकर वह राजा यह बात बोला, 'यदि मैं इस यज्ञीय घोड़े को लौटा दूँ, तो अब मेरा क्या पुरुषार्थ है ?। १६। प्रजा का पुत्र (सन्तान-) सदृश पालन करना, गो-ब्राह्मणों की परम रक्षा करना, युद्ध में सम्मुख होकर ही युद्ध करना—क्षत्रिय का यह धर्म है। १७। इसलिए कायर होकर मैं आज यज्ञ का घोड़ा नहीं (लौटा) दूँगा। इसके अतिरिक्त, आप जैसे स्वामी मेरे सिर पर (वरद-हस्त रखे हुए) हैं, तो महाराज, क्या चिन्ता है।'। १८। वीरमणि की ऐसी बातें सुनकर भोलानाथ शिवजी प्रसन्न हो गये और उन्होंने अपने शिष्य से तत्क्षण यह बात कही। १९। 'हे राजा, अब घोड़ा न (लौटा) देना। जाकर युद्ध करो। तुम्हें रघुपति राम के दर्शन करा दूँ, तो ही मेरा शंकर नाम (सार्थक) है।'। २०। पीठ थपथपाते हुए श्रीभगवान शिवजी ने राजा को इस प्रकार आज्ञा दी (विदा कर दिया)। तब चतुरंग सेना को सज्ज

एम पूंठ थाबडी आज्ञा आपी, भूपने श्रीभगवान,
त्यारे चतुरंग दळ सिद्ध करी, राये वजडाव्यां निशान । २१ ।
हावे अश्व हार्यो ते रक्षके, कीधुं शत्रुघनने जाण,
त्यारे भरतानुजने क्रोध चढ्यो, अल्या कोणे हर्यो केकाण ? । २२ ।
साची वात कही नहि कोण, चिंतातुर थया मन,
एटले अकस्मात् तांहां आव्या, नारद ब्रह्मातन । २३ ।
त्यारे शत्रुघन पूजा करी पूछ्युं, कहो मुजने मुनिराय,
आ अश्वनुं हरण कर्युं हशे कोणे, मुजने चिंता थाय । २४ ।
त्यारे नारद कहे, सुण दशरथनंदन, देवराजपुर गाम,
पूर्वे देवे वसाव्युं ए पुर, वीरमणि नृप नाम । २५ ।
ते राय शिवनो परम भक्त छे, वश करिया महादेव,
तेणे पोताना मंदिरमां राख्या, करतो नित्ये सेव । २६ ।
वळी चार पुत्र ए भूपतिने, तेमां रुकमांगद छे ज्येष्ठ,
अश्वनुं हरण कर्युं तेणे, सहु वीर मध्ये छे श्रेष्ठ । २७ ।
एवुं वृत्तांत कहीने नारद, पाम्या अंतरधान,
हावे शत्रुघन सावधान थया, ने वजडाव्यां निशान । २८ ।

करके उसने नगाड़े वजवा दिये । २१ । अव (इधर) अश्व का हरण किया (गया) है—इसकी जानकारी रक्षकों ने भरतानुज शत्रुघ्न को करा दी; तब उसे क्रोध आ गया (और वह बोला—) ' अरे घोड़े का किसने अपहरण किया है ? ' । २२ । (परन्तु) सच्ची वात तो किसी ने नहीं कही; तो वह मन में चिन्तातुर हो उठा । इतने में ब्रह्मा के पुत्र नारद मुनि अकस्मात् वहाँ आ गये । २३ । तव उनका पूजन करके शत्रुघ्न ने उनसे पूछा, ' हे मुनिराज, मुझसे कहिए, किसने मेरे घोड़े का अपहरण किया है ? मुझे चिन्ता हो रही है । ' । २४ । तब नारद बोले, ' हे दशरथ-नन्दन, सुनो । देवराजपुर नामक एक ग्राम (नगर) है । पूर्वकाल में देवों ने इस नगर को वसा लिया था । (उसमें) वीरमणि नामक राजा (राज कर रहा) है । २५ । वह राजा महादेव शिवजी का परम भक्त है । उसने उन्हें वश में कर लिया है । उन्हें अपने प्रासाद में रखकर वह नित्य उनकी सेवा किया करता है । २६ । इसके अतिरिक्त, उस राजा के चार पुत्र हैं । उनमें रुक्मांगद ज्येष्ठ है । वह समस्त वीरों में श्रेष्ठ है; उसने उस अश्व का अपहरण किया है ' । २७ । ऐसा समाचार कहते हुए नारद अन्तर्धान को प्राप्त हो गये । अव शत्रुघ्न सावधान हो गया और उसने नगाड़े बजवा दिये । २८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

निशान वाग्यां बे वीरनां, थया युद्ध करवा सावधान रे,
सामसामी रणस्थंभ रोप्या, आव्युं सैन्य समान रे। २९।

* * *

उन दोनों वीरों के नगाड़े बज उठे। वे युद्ध करने के लिए सावधान हो गये। उन्होंने आमने-सामने युद्ध-स्तम्भ लगवा दिये। दोनों की सम-समान (सामर्थ्यशील) सेना (आमने-सामने) आ गयी। २९।

* * *

अध्याय—५१ (वीरमणि-पुष्कल-संग्राम)

राग सामेरी

अनीहां रे शत्रुघने सैन्य कर्युं सावधान,
युद्ध करवाने ऊभा बळवान।
अनीहां रे व्यूहतणी रचना कीधी अपार,
बळिया जोद्ध रह्या तेने द्वार। १।

ढाळ

द्वार व्यूहने जोद्ध राख्या, जुक्त करी बहु पेर,
चतुरंग दळनो दुर्ग रचियो, विकट गति चोफेर। २।
एम व्यूह तणी रचना रची, रणमांहे शत्रुघन,
एटले आव्यो सैन्य साथे, वीरमणि राजन। ३।

अध्याय—५१ (वीरमणि-पुष्कल-संग्राम)

अब यहाँ बलवान शत्रुघ्न ने सेना को सावधान (सतर्क) कर दिया और वह स्वयं युद्ध करने के लिए खड़ा हो गया। अब यहाँ उसने अपार (अभेद्य) व्यूह की रचना की और उसके द्वार पर बलवान योद्धा (खड़े) रह गये। १।

उसने व्यूह के द्वार पर योद्धाओं को (नियुक्त कर) रखा। उसने बहुत प्रकार की युक्तियाँ (भी आयोजित) कर दीं और अपनी चतुरंग सेना की (मानो) चारों ओर एक विकट गतिवाली अर्थात् दुर्गम दुर्ग-भित्ति की रचना की। २। शत्रुघ्न ने युद्ध-भूमि में इस प्रकार व्यूह की रचना की। इतने में राजा वीरमणि सेना-सहित आ गया। ३। उसका रिपुवार नामक जो सेनापति था, वह आगे हो गया। उसके पीछे (-पीछे)

सेनापति आगळ थयो, रिपुवार नामे जेह,
तेनी पूंठळ चार सुत, रायना चढिया तेह । ४ ।
रुकमांगद शुभांगद, वळी वीरसिंघ प्रवुद्ध,
ते कवच भाथा धरी अंगे, आव्या करवा जुद्ध । ५ ।
वळी राय केरो जामात्र छे, वळमित्र नामे जेह,
निज सैन्य लेई थई रथारूढ, चढियो जुद्ध करवा तेह । ६ ।
तेनी पूंठळ वीरमणि नृप, चढ्यो सैन्य अपार,
छत्र चामर थाये, बोले बंदी जश विस्तार । ७ ।
जुद्ध थवा मांड्यु परस्पर, बोलता मारो मार,
सिंहनाद करता शूर, थाये शस्त्रना चळकार । ८ ।
आव्यो पुष्कल सामो रुकमांगद, चढी कनकरथ महावीर,
अभिमानशुं बोलवा लाग्यो, परुष वचन गंभीर । ९ ।
त्यारे पुष्कले बहु बाण मूक्यां, छेद्यां ते नृप तन,
दश बाण मार्यां भरतसुतने, पीडा प्रगटी तन । १० ।
त्यारे पुष्कले तव वीश मार्या, राजकुंवरने त्यांहे,
बंन्यो वीर समान कहावे, निपुण छे जुद्धमांहे । ११ ।

राजा के वे चारों पुत्र चढ़ दौड़े । ४ । रुक्मांगद, शुभांगद, उनके अतिरिक्त वीरसिंह और प्रबुद्ध, शरीर पर कवच तथा भाथे धारण करके युद्ध करने के लिए आ गये । ५ । फिर उस राजा का वलमित्र नामक जो जामाता था, वह भी रथारूढ़ होकर अपनी सेना को (साथ में) लिये हुए युद्ध करने के लिए चढ़ दौड़ा । ६ । उनके पीछे राजा वीरमणि अपनी अपार सेना-सहित चढ़ दौड़ा ! उस पर छत्र और चामर (धरे हुए) थे । वन्दीजन उसकी कीर्ति को विस्तार-सहित बता रहे थे । ७ । एक-दूसरे के बीच युद्ध आरम्भ हो गया । वे योद्धा ' मारो, ' मारो ' बोल रहे थे । शूर योद्धा सिंहनाद कर रहे थे, शस्त्रों की जगमगाहट हो रही थी । ८ । महावीर रुक्मांगद स्वर्ण-रथ में बैठकर पुष्कल के सामने आ गया और अभिमानपूर्वक कठोर और गम्भीर बोलने लगा । ९ । तब पुष्कल ने बहुत बाण छोड़ दिये । (फिर भी) उस राजपुत्र ने उन्हें छेद डाला । उसने दस बाण छोड़ दिये, तो भरत के पुत्र पुष्कल के शरीर में पीड़ा उत्पन्न हो गयी । १० । तब पुष्कल ने वहाँ राजकुमार (रुक्मांगद की ओर) बीस बाण चला दिये । वे दोनों वीर सम-समान कहे गये । वे (दोनों) युद्ध-(-कला) में निपुण थे । जिस प्रकार (पूर्वकाल में) षड़ानन स्कन्द और

ज्यम षडानन ने तारकासुर, एम वढे बे वीर,
पछी पुष्कले दश बाण मार्या, धारी मनमां धीर। १२।
राजपुत्रनो रथ भंग कीधो, अश्व मार्या चार,
ध्वजदंड छेदी हण्यो सूत, पड्यो पृथ्वी राजकुमार। १३।
त्यारे बीजे रथ रुकमांगद बेठो, बोल्यो क्रोधवचन,
हावे जोजे पराक्रम माहरुं, तुं भरत केरा तन। १४।
एवुं कही भ्राम्यकास्त्र मूक्युं, राजकुंवरे त्यांहे,
पुष्कलतणो रथ एक जोजन, उडाड्यो नभमांहे। १५।
पृथ्वी पड्यो पछी भ्रमण करवा, लागियो घणुं तेह,
घणुं जत्न करीने सारथिए, स्थिर कर्यो रथ एह। १६।
पछी सन्मुख आवी पुष्कले, पवनास्त्र मूक्युं तास,
तेणे रुकमांगदनो रथ उडाड्यो, भम्यो घणुं आकाश। १७।

तारकासुर[1] लड़े, उसी प्रकार वे दोनों वीर लड़ रहे थे। अनन्तर मन में धीरज धारण करके पुष्कल ने दस बाण चला दिये। ११-१२। उनसे उसने राजपुत्र (रुक्मांगद के) रथ को भग्न कर डाला और उसके चारों घोड़ों को मार डाला। उसके ध्वज-दण्ड को छेदकर उसने सारथी को मार डाला, तो राजपुत्र (रुक्मांगद) भूमि पर गिर पड़ा। १३। तब रुक्मांगद दूसरे रथ में बैठ गया और क्रोध-भरे वचन बोलने लगा, 'अरे भरत के पुत्र, तू अब मेरा प्रताप देख ले, देख ले।'। १४। ऐसा कहकर उस राजकुमार ने वहाँ भ्राम्यकास्त्र चला दिया और उससे पुष्कल के रथ को आकाश में एक योजन (दूर) उड़ा दिया। १५। अनन्तर वह पृथ्वी पर गिर पड़ा और फिर वह बहुत (जोर से) भ्रमण करने लगा। तो सारथी ने बहुत यत्न करके उस रथ को स्थिर कर लिया। १६। अनन्तर सम्मुख आते हुए पुष्कल ने पवनास्त्र चला दिया और उससे रुक्मांगद के रथ

---

१ **स्कन्द और तारकासुर**—तारकासुर वज्रांग और वरांगी का ब्रह्मदेव के वर से उत्पन्न पुत्र था। इसने पारियात्र पर्वत पर दस सहस्र वर्ष तपस्या करके ब्रह्मा को प्रसन्न कर लिया। वह अमरत्व चाहता था, फिर भी उसने उसे असम्भव जानकर सात दिन अवस्था के शिशु के हाथों मृत्यु होने का वर माँग लिया। उस असुर ने इन्द्र आदि को पराजित किया। शिवजी के पुत्र के हाथों उसका वध होनेवाला था। अतः देवों ने शिवजी से पार्वती से विवाह करने की विनती की। स्कन्द शिव-पार्वती का पुत्र था। उसके उत्पन्न होते ही विष्णु आदि देवों ने विभिन्न अस्त्र उसे प्रदान किये। तत्पश्चात् जन्म के पश्चात् सातवें दिन उसने तारकासुर का वध किया।

ते गयो रविमंडळ लगी, तांहां लाग्युं तेज अपार,
थयो दग्ध रथ हय सारथि, तापे करी तेणी वार। १८।
पछी सर्व संकटहरण हरनुं, कर्युं स्मरण कुमार,
शिवनी कृपाए आवी पाछो, पड्यो पृथ्वी मोझार। १९।
ते रुकमांगद मूरछित थयो, पड्यो विकळ थईने त्यांहे,
त्यारे हवो हाहाकार, वळतो राय सेनामांहे। २०।
ते जोई कोप्यो वीरमणि नृप, आव्यो तेणे ठार,
क्रोध करीने गाजियो, त्यारे धरा कंपी अपार। २१।
पछी राये आवी पुष्कलशुं, करवा मांड्यो संग्राम,
ते भूप केरुं जुद्ध जोई, महारथी मूके माम। २२।
चारे पासे मूकतो, राघवी बाण अपार,
सेनासमुद्रमां एकलो जोई, धाया पवनकुमार। २३।
प्रचंड परवतप्राय तन, तोमर ग्रह्युं छे पाण,
एवा मारुतिने जोईने प्रछी, बोल्यो पुष्कल वाण। २४।

को उड़ा दिया, तो वह आकाश में बहुत भ्रमण करता रहा। १७। वह रवि-मण्डल तक (पहुँच) गया, वहाँ उसे अपार तेज (ताप) लग गया। (फलतः) उस समय उस ताप से रथ, घोड़े और सारथी दग्ध हो गये। १८। अनन्तर उस (राज-) कुमार ने समस्त संकटों का हरण करनेवाले शिवजी का स्मरण किया, तो उनकी कृपा से पीछे आकर वह भूमि पर गिर पड़ा। १९। (फल-स्वरूप) रुक्मांगद मूर्च्छित हो गया। वह विकल होकर वहाँ पड़ गया। तब राजा (वीरमणि) की सेना में हाहाकार मच गया। २०। यह देखकर राजा वीरमणि क्रुद्ध हो उठा और उस स्थान पर आ गया। (जब) वह क्रोध करके गरज उठा, तो पृथ्वी अपार काँपने लगी। २१। अनन्तर आते हुए उसने पुष्कल से युद्ध करना आरम्भ किया। उस राजा के (किये) युद्ध को देखकर महारथी धैर्य को खो बैठने लगे। २२। राघवी अर्थात् रघुकुलोत्पन्न पुष्कल चारों ओर असंख्य बाण चला रहा था। सेना-रूपी समुद्र में उसे अकेले देखकर पवनकुमार हनुमान दौड़ा हुआ आ गया। २३। उसका शरीर पर्वत-जैसा प्रचण्ड था। उसने हाथ में तोमर पकड़ लिया था। ऐसे उस हनुमान को देखने के पश्चात् पुष्कल ने यह बात कही। २४। 'हे महापुरुष, हे कपिराज, आप यहाँ क्या करने आ गये हैं? (मेरे लिए) इस राजा का

हे महापुरुष, तमो शुं करवा, आव्या अहीं कपिराय,
ए भूपना शा भार छे? हवडां करुं शिक्षाय। २५।
हनुमंत कहे, हो वीर सुण, ए भूप बळियो एव,
दानेश्वरी महा शूर छे, एने सहाय श्रीमहादेव। २६।
एवां वचन सुणी हनुमंतनां, धायो बीजो राजकुमार,
महावीरशुं वीरसिंघे करवा मांड्युं जुद्ध अपार। २७।
वळी शुभांगदनी साथे वढतो, लक्ष्मीनिधि बळपूर,
प्रबुद्ध पुत्रनी साथे वळग्यो, सुमद कपिवर शूर। २८।
वीरमणिशुं वढे पुष्कल, थयो तांहां संग्राम,
बळवंत शूरा चतुर पूरा, न मूके को ठाम। २९।
भरतात्मजे दश बाण मार्या, रायनां हृदेमांहे,
त्यारे राजाए शर त्रैण मूक्यां, क्रोध करीने त्यांहे। ३०।
पुष्कल तणुं ललाट वेध्युं, चाली रुधिरनी धार,
रथ भंग कीधो राघवीनो, अश्व मार्या चार। ३१।
त्यारे बीजे रथ कांतिपति, बेठो धरी मन रीस;
पछी कवच टोप धनुष नृपनुं, छेदियुं ते दिश। ३२।

क्या भार है? मैं इसे अभी दण्ड देता हूँ।'। २५। (इस पर) हनुमान बोला, 'हे भाई, सुन लो। यह राजा बलवान ही है। वह बड़ा दानवीर तथा महाशूर है। श्रीमहादेव शिवजी इसके सहायक हैं।'। २६। हनुमान के ऐसे वचन सुनकर दूसरा राजकुमार—अर्थात् वीरसिंह दौड़ा और उसने महावीर हनुमान से अपार युद्ध करना आरम्भ किया। २७। इसके अतिरिक्त बल से परिपूर्ण लक्ष्मीनिधि शुभांगद से लड़ रहा था। (वीरमणि के) प्रबुद्ध नामक पुत्र से शूर कपिवर सुमद लड़ने लगा। २८। वीरमणि से पुष्कल लड़ रहा था। वहाँ (घमासान) संग्राम हो गया। वे (दोनों) बलवान शूर-वीर पूरे-पूरे चतुर पुरुष थे। उनमें से कोई भी अपना स्थान नहीं छोड़ रहा था। २९। भरतात्मज पुष्कल ने राजा के हृदय पर दस बाण मार दिये। तब राजा ने क्रोध करके वहाँ तीन बाण चला दिये। ३०। उस पुष्कल का ललाट बिंध गया; उससे रक्त की धारा बहने लगी। फिर उसने राघवीय पुष्कल का रथ तोड़ डाला और चारों घोड़ों को मार डाला। ३१। तब कान्ति का पति पुष्कल मन में क्रोध धारण करके दूसरे रथ में बैठ गया। फिर उसने उस राजा के कवच, टोप और धनुष को उसी स्थान पर छेद

रथ भंग कीधो रायनो, भेदियुं सर्वे अंग,
तनमांहेथी चाल्युं रुधिर, पुष्कले राख्यो रंग। ३३।
नरपति बेठो अन्य रथ, मन चढ्यो क्रोध अपार,
ज्यम अखंड मेघ तणी झडी, एम मारतो शर-मार। ३४।
संहार करियो सैन्यनो, हय हण्या आणी रीस,
फाटे कुंभस्थळ विशिखथी, पाडता गजवर चीस। ३५।
शोणितनी सरिता वही, गजरथ अश्व तणाय,
ज्यम ताम्रवरणी चढी पूरे, घोर करती जाय। ३६।
पिशाच करता भक्ष भैरव, भूत जे वैताळ,
जोगणी नाचे नग्न कर ग्रही, नर-कपाळनी ताळ। ३७।
वळी सिंचाणा वायस वरु, शूकर शृगाल ने कंक,
सर्वने मोटुं पर्व आव्युं, करे भक्ष निःशंक। ३८।
एम वीरमणिए शरे ढांक्यो, रवि थयुं अंधकार,
ते समे राघवसैन्यमां, वरतियो हाहाकार। ३९।

डाला। ३२। उसने उस राजा के रथ को भग्न कर दिया और उसका अंग छिन्न-भिन्न कर डाला। उसके शरीर से रक्त बहने लगा। इस प्रकार पुष्कल ने (युद्ध-भूमि में) रंग (प्रभाव) जमा रखा। ३३। फिर वह राजा दूसरे रथ में बैठा। उसके मन में अपार क्रोध उत्पन्न हो गया था। जिस प्रकार मेघ से अविरल झड़ी लग जाती है, उस प्रकार वह बाणों की (अविरल) मार कर रहा था। ३४। उसने सेना का संहार कर डाला, (मन में) क्रोध लाते हुए (अर्थात् क्रोधपूर्वक) घोड़ों को मार डाला। बाणों से (हाथियों के) कुम्भस्थल फटते जा रहे थे। हाथी चिंघाड़ रहे थे। ३५। रक्त की नदी बह रही थी। उसमें हाथी, रथ और घोड़े बहते जा रहे थे। जिस प्रकार ताम्रवर्णी नदी बाढ़ आने पर घोर ध्वनि उत्पन्न करती है, उस प्रकार वह (रक्त की नदी) बहती जा रही थी। ३६। पिशाच, भैरव, भूत और वेताल (शवों को) भक्षण कर रहे थे। हाथों में नर-कपाल लेकर ताल देते हुए। जोगिनियाँ नंगी नाच रही थीं। ३७। इसके अतिरिक्त, बाजों (श्येनों), कौओं, भेड़ियों, सूअरों, सियारों और चीलों—सबके लिए बड़ा पर्वकाल (ही) आ गया। वे निःशंक होकर भक्षण करने लगे। ३८। वीरमणि ने बाणों से सूर्य को इस प्रकार ढाँक दिया कि अन्धकार हो गया। उस समय राघव-सेना में हाहाकार मच गया। ३९।

वलण (तर्ज बदलकर)

हाहाकार वरत्यो तदा, वीरमणिए संहार रे,
एवुं जोईने पुष्कल कोपियो, कर्युं रामस्मरण तेणी वार रे। ४०।

* * *

(जब) वीरमणि ने संहार कर डाला, तो (राघवीय पक्ष की) सेना में हाहाकार मच गया। ऐसा देखकर पुष्कल क्रुद्ध हो गया और उसने उस समय राम का स्मरण किया। ४०।

* * *

अध्याय—५२ (वीरमणि की सहायता के लिए शिवजी का आगमन)

राग मारु

कर्युं रामस्मरण तेणी वार, कोप्यो पुष्कल वीर अपार,
मूक्युं दिव्य बाण तत्काळ, तेणे छेदी सकळ शरजाळ। १।
अंधकारनो कीधो नाश, थयो दिनमणि केरो प्रकाश,
पछी रायनी सन्मुख आव्यो, क्रोधवचने करीने बोलाव्यो। २।
अरे! वीरमणि! सुण व्यक्त, तुं छे शिवजीतणो महाभक्त,
हावे जोजे पराक्रम मारुं, तारुं सैन्य सकळ संहारुं। ३।
तुंने त्रैण बाणे निरधार, करुं मूरछित आणी वार,
ना करुं जो मूरछित आप, तो हजो मुजने महापाप। ४।

अध्याय—५२ (वीरमणि की सहायता के लिए शिवजी का आगमन)

वीर पुष्कल ने उस समय श्रीराम का स्मरण किया; वह असीम रूप से क्रुद्ध हो गया। उसने तत्काल एक दिव्य बाण चला दिया और उससे (विपक्षी द्वारा निर्मित) बाणों के समस्त जाल को काट डाला। १। उसने (इस प्रकार) अन्धकार को नष्ट कर डाला; उससे सूर्य का प्रकाश हो गया (फैल गया)। अनन्तर वह राजा के सामने आ गया और क्रोध-भरे वचनों से उसे बुला लिया (पुकार कर कहा—)। २। 'अरे वीर-मणि, स्पष्ट रूप से सुन लो। तुम शिवजी के परम भक्त हो। अब देख लो, मेरा पराक्रम। मैं तुम्हारी समस्त सेना का संहार कर देता हूँ। ३। इस बार मैं तुम्हें निश्चय ही तीन बाणों से मूच्छित कर दूँगा। यदि मैं स्वयं तुम्हें मूच्छित नहीं कर दूँ, तो मुझे महापाप लग जाएगा। ४।

जे जगतपावनी गंग, तेनी निंदा करे जे कुसंग,
तेनो दोष मारे शिर राय, पमाडुं नहि जो मूरछाय। ५।
एम कहीने मूक्युं एक बाण, महा अमोघ तीक्षण जाण,
दीठो आवतो ते शर भूप, तेनी सन्मुख सांध्यो अनुप। ६।
ते शरे शर छेद्यो ज्यारे, लाज्यो पुष्कल तेणी वारे,
बीजुं बाण मूक्युं भर्ततन, छेद्युं ते पण वळी राजन। ७।
त्यारे शोकातुर थयो वीर, गई सरवे मननी धीर,
पछे शूर थयो सावधान, धर्युं गुरु वसिष्ठनुं ध्यान। ८।
संभार्यो पोते श्रीरघुनाथ, त्रीजुं बाण काढी ग्रह्युं हाथ,
मातापिता भक्तिनुं पुन्य, बाण मध्ये मूक्युं रघुतन। ९।
पछी शर कीधो संधाण, वाग्यो राय हृदेमां जाण,
आवी मूरछा पड्या राजन, गतिभंग थईने तन। १०।
हरख्यो पुष्कल तेणी वार, सरवे कहेता जयजयकार,
कर्यो सकळ सेन्यानो अंत, एम विजय पाम्यो बळवंत। ११।

यदि मैं तुम्हें मूर्च्छा को प्राप्त न कराऊँ, तो जो कुसंगति से उस जगतपावनी गंगा की निन्दा करता हो, हे राजा, उसका दोष मेरे सिर पर आ जाए।'। ५। ऐसा कहते हुए उसने एक बाण चला दिया। समझिए कि वह बाण बड़ा अमोघ और तीक्ष्ण था। राजा ने उस शर को आते देखा, तो उसके सामने एक अनुपम बाण का संधान किया,। ६। जब उस शर से उसने बाण को छेद डाला, तो उस समय पुष्कल लज्जित हो गया। फिर उस भरत-तनय ने दूसरा बाण छोड़ दिया, फिर भी राजा ने उसे भी छेद डाला। ७। तब वह वीर (पुष्कल) शोकातुर हो गया; उससे सबके मन का धैर्य छूट गया। तदनन्तर वह वीर सावधान हो गया और उसने गुरु वसिष्ठ का ध्यान धारण किया। ८। फिर उसने श्रीरघुनाथ राम का स्मरण किया और तीसरा बाण निकाल कर हाथ में ले लिया। उस रघु-कुल के पुत्र ने माता-पिता की भक्ति से अर्जित पुण्य बाण में स्थापित कर दिया। ९। फिर वह बाण सन्धान किया। समझिए कि वह उस राजा (वीरमणि) के हृदय पर लग गया। मूर्च्छा के आने से राजा गिर पड़ा। गति भग्न हो जाने से उसका शरीर लुढ़क पड़ा। १०। उससे पुष्कल उस समय आनन्दित हो गया। सब (लोग) 'जय-जयकार' बोलने लगे। फिर उसने समस्त सेना का नाश कर डाला। इस प्रकार बलवान (पुष्कल) विजय को प्राप्त हो गया। ११। फिर महावीर

महावीरे मारी मुष्टि त्यांहे, राजपुत्रतणा हृदेमांहे,
थयो मूरछित तेणी वार, मुखे चाली रुधिरनी धार । १२ ।
जोई बंधु पितानी पेर, धाया वीर बे लेवाने वेर,
शुभांगद प्रबुद्ध एवुं नाम, आव्या करता महासंग्राम । १३ ।
तेणे मारुति साथे त्यांहे, घणुं जुद्ध कर्युं रणमांहे,
निज पुच्छे करी हनुमंत, रथ सहित बांध्या बळवंत । १४ ।
पछाड्या तेने पृथ्वी मोझार, पड्या मूरछित थई निरधार,
रायनो जमात्र बळमित्र, तेने सुमदे कर्यो ज्यम चित्र । १५ ।
वळी सेनापति रिपुवार, सुग्रीवे कर्यो तेनो संहार,
शत्रुघन जय पाम्या एम, पोताना जोद्ध कुशळक्षेम । १६ ।
सरवे राय तणो परिवार, पड्यो मूरछित थई निरधार,
ते जोईने कोप्या महादेव, करमां ग्रह्युं पिनाक ततखेव । १७ ।
बेठा रथमां शंकरराय, चढ्या करवा भक्तनी सहाय,
भूत-प्रेतनी सेना साथ, आव्या रणमां गिरिजानाथ । १८ ।
क्रोध शिवनो काळ समान, आव्या सूर जोवा बेसी विमान,
गिरि डोल्या पृथ्वी चढी चाक, ते समे वागी हरनी हाक । १९ ।

(हनुमान) ने वहाँ राजपुत्र (रुक्मांगद) के हृदयस्थल पर घूँसा जमा दिया, तो वह उस समय मूर्च्छित हो गया। उसके मुँह से रक्त की धारा बहने लगी। १२। अपने बन्धु और पिताजी की यह स्थिति देखकर दोनों भाई बदला लेने के लिए दौड़े। उनके नाम शुभांगद और प्रबुद्ध थे। वे आ गये और बड़ा युद्ध करने लगे। (तब) बलवान हनुमान ने रथ-सहित उन्हें अपनी पूँछ से बाँध लिया। १३-१४। उसने उन्हें पृथ्वी पर पटक डाला, तो निश्चय ही वे मूर्च्छित होकर गिर गये। राजा के बलमित्र नामक एक दामाद था। सुमद ने उसे चित्र जैसा (स्तंभित और अचेत) कर दिया। १५। फिर रिपुवार नामक जो सेनापति था, उसका संहार सुग्रीव ने कर डाला। शत्रुघ्न जय को इस प्रकार प्राप्त हो गया कि उसके अपने योद्धा सकुशल रह गये। १६। राजा का समस्त परिवार निश्चय ही मूर्च्छित होकर गिर पड़ा। यह देखकर शिवजी क्रुद्ध हो उठे और उन्होंने तत्क्षण हाथ में पिनाक (नामक धनुष) ग्रहण किया। १७। गिरिजापति शिवराज जी रथ में बैठ गये और अपने भक्त की सहायता करने के लिए चढ़ दौड़े और भूतों तथा प्रेतों की सेना के साथ युद्धभूमि में आ गये। १८। शिवजी का क्रोध तो काल के समान होता है। उसे देखने के लिए देव विमानों में बैठकर आ गये। पर्वत डोलने लगे, पृथ्वी

वलण (तर्ज बदलकर)

हाक मारी शंकरे, क्यां गयो शत्रुघन रे ?
कहे दास गिरधर सुणो श्रोता, एम कोप्या पंचवदन रे। २०।

* * *

गोल-गोल घूमने लगी। उस समय शिवजी का आतंक छा गया। १९।

शिवजी गर्जन कर उठे—' शत्रुघ्न कहाँ गया ? ' कवि गिरधरदास कहते हैं, हे श्रोताओ, सुनिए, पंचवदन (शिवजी) इस प्रकार क्रुद्ध हो उठे। २०।

* * *

अध्याय—५३ (शत्रुघ्न-शिवजी-संग्राम)

राग छंद

जुद्धे चढ्या पंचवदन, कोप्या क्रोध आणी मन,
करमां ग्रह्युं शूळ पिनाक, करी गर्जना मारी हाक। १।
मस्तक जटाजूट सघन, गजनुं चर्म ओढ्युं तन,
धरी स्मशान विभूत अंग, शोभे अलंकार भुजंग। २।
राजे अर्धचंद्र ललाट, क्रोधे करे भस्म स्वराट,
उपवीत सर्पनुं जगदीश, वहेती गंग निर्मळ शीश। ३।
दीठा सर्व जन परतक्ष, आनन पंच ने त्रिचक्ष,
कंठे रूंढ केरी माळ, करमां ग्रह्युं ब्रह्म कपाळ। ४।

अध्याय—५३ (शत्रुघ्न-शिवजी-संग्राम)

शिवजी युद्ध में चढ़ दौड़े। मन में क्रोध आ जाने से वे क्रुद्ध हो उठे। उन्होंने हाथ में (त्रि-)शूल तथा पिनाक (नामक धनुष) धारण किया। उन्होंने (फिर) चिल्लाते हुए गर्जन किया। १। उनके मस्तक पर घनी-घनी जटाएँ थीं। स्मशान की विभूति (राख) अंग में धारण की थी (लगायी थी) और उस पर सर्प रूपी आभूषण शोभायमान थे। २। ललाट पर अर्ध चन्द्र शोभायमान था। क्रोध से वे (मानो) विश्व को भस्म कर देंगे। जगदीश शिवजी ने सर्प का जनेऊ पहना हुआ था। उनके मस्तक से निर्मल गंगा बह रही थी। ३। समस्त लोगों ने प्रत्यक्ष उनके पाँच मुख तथा तीन नेत्र देखे। उनके गले में रुण्डों (कटे मस्तकों) की

माथे सेन महा विकराळ, भैरव भूत ने वैताळ,
वाजे डाक डमरु शंख, शिंगी पणव गोमुख डंख। ५।
करवा भक्त केरी सहाय, जुद्धें चढ्या शंकरराय,
पोते विराज्या रथमांहे, आव्या रामसेना ज्यांहे। ६।
एवुं जोई शिवनुं रूप, कंपी सकळ सेना भूप,
करी गर्जना घोर प्रचंड, व्याप्यो शब्द सकळ ब्रह्मांड। ७।
ध्रूजी धरा सळक्यो शेष, पर्वत सिंधु सरित अशेष,
डोल्या देव दश दिग्पाळ, जाणें हवो प्रल्ले काळ। ८।
मूक्यां शिवे बाण अपार, गण सहु करे मारो मार,
एवो थयो महासंग्राम; नाठा जोध मूकी माम। ९।
पूरवे त्रिपुर मर्दन ज्यम, व्याप्यो क्रोध शिवने त्यम,
करवा मांड्युं जुद्ध महाघोर, पाडे चीस करता शोर। १०।

माला थी, तो कर में ब्रह्म-कपाल (खोपड़ी) धारण किया हुआ था। ४। साथ में महा विकराल सेना थी—अर्थात् भैरव, भूत और वेताल थे। डाक, डमरू, शंख, सींगी, पणव (ढोल), गोमुख तथा डंके बज रहे थे। ५। इस प्रकार, श्रीशिवराय जी अपने भक्त की सहायता करने के लिए युद्ध-भूमि में चढ़ दौड़े। वे स्वयं रथ में विराजमान हो गये और वहाँ आ गये, जहाँ राम की सेना थी। ६। शिवजी के ऐसे रूप को देखते ही राजाओं की समस्त सेना काँप उठी। उन्होंने (जब) घोर प्रचण्ड गर्जना की, तो समस्त ब्रह्माण्ड में उसकी ध्वनि व्याप्त हो गयी। ७। पृथ्वी डोलने लगी। शेष, समस्त पर्वत, समुद्र, नदियाँ विचलित हो उठे। देव तथा दसों दिक्पाल काँप उठे। मानो प्रलयकाल ही आ गया हो। ८। शिवजी ने असंख्य बाण चला दिये, उनके समस्त गण मार-पीट कर रहे थे। इस प्रकार बड़ा युद्ध हो गया, तो योद्धा साहस खोते हुए भाग गये। ९। पूर्वकाल में त्रिपुर-मर्दन के[1] अवसर पर जिस प्रकार शिवजी को क्रोध व्याप्त कर गया था, उसी प्रकार इस समय हो गया। वे (योद्धा) महा घोर युद्ध करने लगे। कोलाहल मचाते हुए वे चीख-चीत्कार कर रहे

१ त्रिपुर-मर्दन—मयासुर ने ब्रह्मा के कृपा-प्रसाद से तीन पुरों (नगरों) की रचना की। ये नगर क्रमशः लोहमय, रौप्यमय तथा स्वर्णमय थे। तारकासुर के तीन पुत्र ताराक्ष, कमलाक्ष और विद्युन्माली, क्रमशः इन पुरों के अधिपति हो गये। ये तीनों असुर 'त्रिपुर' नाम से विख्यात हो गये। कुछ दिनों के पश्चात् ये अधर्माचरण करने लगे। अन्त में शिवजी ने इन तीन नगरों को उध्वस्त करके जला डाला। उस समय इन तीनों असुरों का भी अन्त हो गया। त्रिपुर-असुरों का संहार करने के कारण शिवजी 'त्रिपुरारि', और 'त्रिपुर-मर्दन' कहाते हैं।

कीधो सेनानो संहार, त्यारे केवो हवो हाहाकार,
बोल्या शंभु क्रोधासक्त, क्यां छे वीरमणि मुज भक्त ? । ११ ।

कोणे कर्यो मूरछित एह ? तेने हणुं निःसंदेह,
एम कही कोप्या शूलपाण, गाज्या मेघगंभीर वाण । १२ ।

वढता नंदी ने हनुमंत, भृंगी सुबाहु बळवंत,
गण चंडांश ने कुशराय, चंड ने सुमद कपि कहेवाय । १३ ।

पुष्कल वीरभद्र समान, भैरव लक्ष्मीनिधि बळवान,
शिवनी साथे शत्रुघन, वढता क्रोध आणी मन । १४ ।

दोहा

क्रोध करी वढता सहु, जोद्धा सरव समान,
पछे पुष्कल उपर कोपिया, जे वीरभद्र बळवान । १५ ।

* * *

थे । १० । (जब) शिवजी ने सेना का संहार कर डाला, तब कैसा हाहाकार हो गया ! शिवजी क्रोधाधीन होकर बोले, ' मेरा भक्त वीरमणि कहाँ है ? ' । ११ । इसे किसने मूर्च्छित कर दिया ? उसे मैं निःसन्देह मार डालूँगा । ' इस प्रकार कहते हुए शूल-पाणि भगवान शिवजी क्रुद्ध हो गये । वे मेघ गर्जना-सी गम्भीर वाणी में गरज उठे । १२ । नन्दी और हनुमान लड़ने लगे, तो श्रृंगी और बलवान सुबाहु तथा गण चण्डांशु और कुशराज परस्पर लड़ने लगे, तो चण्ड और एक कपि जो सुमद कहाता था, लड़ रहे थे । १३ । पुष्कल और वीरभद्र सम-समान (सिद्ध हो रहे) थे, तो भैरव और बलवान लक्ष्मीनिधि समान (सिद्ध हो रहे) थे । शत्रुघ्न मन में क्रोध लाते हुए शिवजी के साथ लड़ रहा था । १४ ।

क्रोध करते हुए समस्त योद्धा लड़ने लगे । वे सब एक-दूसरे के समान (तुल्यबल) थे । फिर वीरभद्र, जो बलवान था, पुष्कल पर क्रुद्ध हो उठा । १५ ।

* * *

अध्याय—५४ (शत्रुघ्न-पुष्कल का मूर्च्छित हो जाना, हनुमान-शिवजी-संग्राम, हनुमान का द्रोणाचल के प्रति गमन)

राग सामेरी

वीरभद्र वळतो कोपियो, शिवतणो गण समरथ,
तेणे गदा मारी भंग कीधो, पुष्कल केरो रथ। १।
त्यारे अन्य रथ आरूढ थई, जुद्ध मांड्युं तेणी वार,
अहोरात्री वढतां वीरने, एम वही गया दिन चार। २।
पछी पुष्कलने लेई ऊडियो, वीरभद्र ते नभ मांहे,
महाघोर जुद्ध कर्युं तदा, जुवे देव सरवे त्यांहे। ३।
पछी पुष्कलने लेई पछाड्यो, पृथ्वी उपर तेणी वार,
त्यारे मूर्छा पाम्यो भरतनो सुत, हवो हाहाकार। ४।
त्यारे शत्रुघन घणुं शोक पाम्या, जोई मूरछित बाळ,
पछी शिवनी साथे जुद्ध करवा, मांडियुं ते काळ। ५।
हावे शत्रुघन ने शिव वढे छे, घोर ते संग्राम,
विमान बेसी देव जोता, जुद्ध मूके माम। ६।
एम अहोरात्री दिन एकादश, जुद्ध थयुं निरधार,
शत्रुघने पछी मूकियुं, ब्रह्मास्त्र तेणी वार। ७।

अध्याय—५४ (शत्रुघ्न-पुष्कल का मूर्च्छित हो जाना, हनुमान-शिवजी-संग्राम, हनुमान का द्रोणाचल के प्रति गमन)

वीरभद्र पुनः क्रुद्ध हो गया। वह तो शिवजी का सामर्थ्यशील गण था। उसने गदा से आघात करके पुष्कल के रथ को भग्न कर डाला। १। तब पुष्कल ने दूसरे रथ में आरूढ़ होकर उसी समय युद्ध आरम्भ किया। इस प्रकार उन (दोनों) वीरों के दिन-रात लड़ते-लड़ते चार दिन बीत गये। २। फिर वीरभद्र पुष्कल को लिये हुए आकाश में उड़ गया। तब उन्होंने (वहाँ) बड़ा युद्ध किया। समस्त देव वहाँ उसे देख रहे थे। ३। अनन्तर उस (वीरभद्र ने) पुष्कल को लेकर उसी समय पृथ्वी पर पटक डाला। तब भरत का वह पुत्र (पुष्कल) मूर्च्छा को प्राप्त हो गया, तो हाहाकार हो गया। ४। उस बच्चे को मूर्च्छित हुए देखकर शत्रुघ्न बहुत शोक को प्राप्त हो गया, तो फिर उसने शिवजी से उस समय युद्ध करना आरम्भ किया। ५। अब शत्रुघ्न और शिवजी लड़ने लगे। उनमें घोर संग्राम हो रहा था। देव विमान में बैठकर उस युद्ध को देख रहे थे। वे धैर्य खो रहे थे। ६। इस प्रकार ग्यारह दिन दिन-रात निश्चय ही युद्ध हो गया। तो फिर उस

मुख विकासी ते शस्त्र गळियुं, एवा ईश अखंड,
पछी पंचवदने मूकियुं, पशुपतास्त्र प्रचंड। ८।
तेणे शत्रुघननुं हृदे भेद्युं, पड्या मूरछित त्यांहे,
त्यारे हाहाकार हवो तदा, ते रामसेनामांहे। ९।
हावे शत्रुघन पुष्कलने लीधा, सारथिए जेह,
रथ मांहे घाली लेई गयो, एकांत राख्या तेह। १०।
एवुं जोईने अंजनीनंदन, गर्जना करी घोर,
शिवतणी सन्मुख जुद्ध करवा, आव्यो पवनकिशोर। ११।
अरे शंभु में ऋषिमुखमां, पूरवे सुण्युं'तुं एह,
शिव रामना महा भक्त छे, वळी परम वैष्णव जेह। १२।
ते तमो अघटित कर्म कीधुं, जाणी जोईने आज,
रामना बंधु पुत्रने तमो, हण्या श्रीमहाराज। १३।
हे ईश, तमने घटे नहि, आ कृत्य करवुं आंहे,
एवां वचन सुणी महावीरनां, पछी बोलिया शिव त्यांहे। १४।
अरे वत्स, तुं कहे ते खरुं, इष्टदेव महारा राम,
पण भक्त आधीन हुं थयो, माटे कर्युं एवुं काम। १५।

समय शत्रुघ्न ने ब्रह्मास्त्र चला दिया। ७। (परन्तु) मुँह को फैलाकर उन्होंने उस शस्त्र को गले के नीचे उतार दिया। ऐसे हैं अच्छेद्य भगवान पंचमुख शिवजी। अनन्तर उन्होंने एक प्रचण्ड पाशुपत अस्त्र चला दिया। ८। उससे शत्रुघ्न का हृदय छिन्न-भिन्न कर दिया तो वह वहाँ मूच्छित हो गया। तब राम की सेना में हाहाकार हो गया। ९। अब (वहाँ) जो सारथी था, उसने शत्रुघ्न और पुष्कल को उठा लिया और उन्हें रथ में रखकर ले गया। उसने उन्हें एकान्त स्थान पर रख दिया। १०। ऐसा देखते ही अंजनी-नन्दन पवनकुमार हनुमान ने घोर गर्जन किया और शिवजी के सम्मुख युद्ध करने के लिए आ गया। ११। (वह बोला—) 'हे शिवजी, मैंने पूर्वकाल में ऋष्यमूक पर्वत पर यह सुना था कि (आप) शिवजी राम के परम भक्त हैं। इसके अतिरिक्त जो परम वैष्णव हैं (विष्णु के परम भक्त है) ऐसे आप ने आज जान-बूझकर ऐसा अघटित कर्म किया है। हे श्रीमहाराज (शिवजी), आपने राम के बन्धु और उनके पुत्र को मार डाला है। १२-१३। हे ईश्वर, यहाँ ऐसा काम करना आपके लिए उचित नहीं है।' महावीर हनुमान के ऐसे वचन सुनकर शिवजी वहाँ फिर बोले। १४। 'अरे वत्स, तुमने कहा, वह सत्य है। मेरे इष्टदेव राम हैं। परन्तु मैं भक्त के वश में हो गया हूँ।

एवुं सुणीने सिंहनाद कीधो, कोप्यो पवनकुमार,
एक प्रौढ परवत शिवनी उपर, नाख्यो तेणी वार। १६।
तेणे शिवतणो रथ भंग कीधो, मारिया तोखार,
त्यारे नंदी उपर ईश बेठा, चढ्यो क्रोध अपार। १७।
महा प्रल्ले केरा अग्निवत्, एक त्रिशूळ झाल्युं हाथ,
हनुमंत उपर नाखियुं, करी जोर गिरजानाथ। १८।
पवनात्मजे आवतुं झाल्युं, कर विषे ततखेव,
ते त्रिशूळ कीधुं भंग तव, कोपिया श्रीमहादेव। १९।
पछी शिवे मारी शक्ति एक, हनुमंतना हृदेमांहे;
क्षणेक मूरछित थई रह्या, अंजनीनंदन त्यांहे। २०।
सावधान थई ऊठ्या पछी, एक ग्रह्युं वृक्ष विशाळ,
बे करे ग्रही शिव अंग उपर, झापट्युं तत्काळ। २१।
शिवतणा तनमां थया कच्चर, रह्या'ता जे नाग,
ज्यांहां त्यांहां ते नासी गया, स्थळ मूकीने महाभाग। २२।
एवुं जोईने मदनारिने, मन चढी सबळी रीस,
बे हस्तमां ग्रही मुशळ मार्युं, मारुतिने शीश। २३।

इसलिए मैंने ऐसा काम किया है।'। १५। ऐसा सुनते ही पवनकुमार ने सिंहनाद किया। वह क्रुद्ध हो गया और उसने उस समय एक प्रचण्ड पर्वत शिवजी पर फेंक दिया। १६। उसने उससे शिवजी के रथ को भग्न कर दिया और घोड़ों को मार डाला। तब भगवान (शिवजी) नन्दी पर बैठ गये। उन्हें अपार क्रोध आ गया। १७। गिरिजापति शिवजी ने प्रलयकाल की महान अग्नि-सा एक त्रिशूल हाथ में पकड़ लिया और बल लगाकर हनुमान पर फेंक दिया। १८। (परन्तु) पवन-कुमार ने उसके आते-आते तत्क्षण उसे हाथ में पकड़ लिया। (फिर) उसने उस त्रिशूल को भग्न कर डाला, तो श्री महादेवजी क्रुद्ध हो उठे। १९। अनन्तर शिवजी ने अंजनी-नन्दन हनुमान के हृदय पर एक शक्ति मार दी, तो वह वहाँ एक क्षण भर मूच्छित होकर पड़ा रहा। २०। अनन्तर (जब) वह सावधान होकर उठ गया, तो उसने एक विशाल वृक्ष ले लिया और दोनों हाथों में लेकर उसने तत्काल शिवजी के शरीर पर पटक दिया। २१। उससे उनके शरीर में (चर्म छिलने से घाव) हो गये और जो महाभाग नाग रहते थे, वे उस स्थान को छोड़कर जहाँ-तहाँ भाग गये। २२। ऐसा देखते ही मदनारि शिवजी के मन में अति क्रोध आ गया, तो उन्होंने दोनों हाथों में एक मूसल लेकर हनुमान के मस्तक पर मार दिया। २३।

ते चुकाव्युं महा विचक्षण, अंजनीनंदन जेह,
पछी पृथ्वी फोडी रसातळमां, गयुं मुशळ तेह । २४ ।
त्यारे वज्रदेहीए करी वृष्टि, वृक्ष ने पाषाण,
ते निरवाण करता तदा, महादेव मूकी वाण । २५ ।
पवनात्मजे पछी नंदी पूंठळ, पुच्छ वींट्युं त्यांहे,
शिव सहित नंदी फेरव्यो, घणी वार ते नभमांहे । २६ ।
त्यारे अकळाया घणुं अनंगारि ज, थया व्याकुळ मन,
वात्सल्य भावे वीर साथे, बोल्या मधुर वचन । २७ ।
अरे अहो ! सीताशोकहारण, महा जति वळवान,
थयो प्रसन्न हुं तुज पराक्रम जोई, माग तुं वरदान । २८ ।
त्यारे मारुति कहे, सुणो स्वामी, सत्य कहुं महाराज,
आ शत्रुघन पुष्कलजी आदे, पड्या मूरछित आज । २९ ।
ते माटे हुं औषध लावुं, द्रोणाचळथी आंहे,
तमो रक्षा करजो त्यां लगी, तन साचवजो रणमांहे । ३० ।
त्यारे शिव कहे, जा सुखे करी, नव धरीश चिंता मन,
हुं रूडी रीते करीश रक्षा, राखीश सौनां तन । ३१ ।

परन्तु जो महा विलक्षण (रण-पंडित) था, ऐसे उस हनुमान ने उसे टाल दिया, तो फिर वह मूसल पृथ्वी को फोड़कर रसातल में चला गया । २४ । तब फिर वज्र-देही हनुमान ने शिवजी पर वृक्षों और पाषाणों की वृष्टि की, तब वे बाण चलाते हुए उनका निवारण करते रहे । २५ । फिर पवनकुमार ने वहाँ नन्दी के पीछे (चारों ओर) अपनी पूँछ लपेट दी और शिवजी सहित नन्दी को अनेक बार आकाश में घुमा दिया । २६ । तब अनंग के शत्रु शिवजी वहुत सहम गये और मन में व्याकुल हो उठे । फिर उस वीर हनुमान से उन्होंने वात्सल्य भाव से (इस प्रकार) मधुर वचन कहे । २७ । 'अरे हे सीता-शोक-हरण, महाबलवान् यति, तुम्हारा प्रताप देखकर मैं प्रसन्न हो गया हूँ । (अतः) तुम (कोई) वरदान माँग लो । ' । २८ । तब हनुमान बोला, 'हे स्वामी, सुनिए, हे महाराज, मैं सत्य कह रहा हूँ । ये शत्रुघ्नजी, पुष्कलजी आदि (वीर) आज मूर्च्छित होकर पड़ गये है । २९ । उनके लिए मैं द्रोणाचल से यहाँ एक ओषधी लाता हूँ । तब तक आप उनकी रक्षा कीजिए—युद्ध-भूमि में उनके शरीरों की देखभाल कीजिए । ' । ३० । तब शिवजी बोले, 'तुम सुख-पूर्वक जाओ, मन में कोई चिन्ता न रखना । मैं भली-भाँति उनकी रक्षा करूंगा, सबके शरीरों को (सकुशल) रख लूँगा । ' । ३१ । शिवजी से ऐसा अभिवचन लेकर

एवुं वचन लेई शंभुतणुं, पछी ऊठ्यो पवनकुमार,
मुखे श्रीरामनुं नाम जपतो, जाय वेगे अपार। ३२।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अपार वेगे अंजनीसुत, ऊड्यो जाय आकाश रे,
श्रीरामकृपाए आवी ऊभो, द्रोणाचळनी पास रे। ३३।

* * *

पवनकुमार फिर उठ गया और अपने मुख से श्रीराम के नाम का जाप करते हुए असीम वेग से चला गया। ३२।

अंजनी-कुमार हनुमान आकाश में असीम वेग से उड़ता हुआ चला गया और श्रीराम की कृपा से द्रोणाचल के पास आकर खड़ा हो गया। ३३।

* * *

अध्याय—५५ (हनुमान द्वारा द्रोणाचल से ओषधी लाना)

राग मारु

द्रोणाचळनी पासे हनुमंत, आवी ऊभा महा बलवंत,
कर्युं लांगूल शेषाकार, बांध्यो गिरिवर तेणी वार। १।
उखेडे परवतने जेवे, एक कौतुक प्रगट्युं तेवे,
त्यां देव मूक्या सुरराय, करवा औषधिनी रक्षाय। २।
लेई आयुध ऊठ्या तेह, शस्त्रमार कर्यो ज्यम मेह,
जोई कोपे चढ्या कपिनाथ, घणुं जुद्ध कर्युं ते साथ। ३।

अध्याय—५५ (हनुमान द्वारा द्रोणाचल से ओषधी लाना)

महा बलवान हनुमान द्रोणाचल के पास आकर खड़ा हो गया। उसने अपनी पूँछ को शेषाकार कर दिया और उससे उस समय उस गिरिवर को बाँध लिया। १। जिस समय उसने उस पर्वत को उखाड़ लिया, उस समय एक आश्चर्य घटित हो गया। वहाँ सुरराज इन्द्र ने उस ओषधी की रक्षा करने के लिए देवों को (नियुक्त कर) रखा था। २। वे आयुध लेकर उठ गये और उन्होंने शस्त्रों की मार करना आरम्भ किया, जैसे मेघ (ही बरस रहा) हो। यह देखकर कपिनाथ हनुमान क्रुद्ध हो गया और उसने उनसे बड़ा युद्ध किया। ३। उनमें से कितने ही देवों ने

तेमांथी केटलाएक देव, नासीने कह्युं इंद्रने एव,
इंद्रे जाण्या श्रीहनुमंत, रामभक्त महा वळवंत। ४ ।
जीते नहि तेशुं करतां विरोध, ते माटे न कर्यो कांई क्रोध,
पछे देव सकळनी साथ, इंद्रे मोकल्या सुरगुरु नाथ। ५ ।
आव्या अंगीरस तेणे ठार, ज्यां रह्या छे पवनकुमार,
ऊभा भ्रेस्पति सन्मुख अग्र, तेनी पूंठळ देव समग्र। ६ ।
स्तुति करवा लाग्या तेह, करुणामृत वाणी जेह,
सुणो श्रोताजन निरधार, वोल्या वाचस्पति तेणी वार। ७ ।

छंद लावणी

जय हनुमंता महा वळवंता, नमो नमो तुजने,
पवनपुत्र प्रणतारति मोचन, धन्य महाभुजने। ८ ।
अंजनीनंदन सूरजशिष्य, महामति फाल्गुनानुजजाता,
सीताशोकहारण भयवारण, शरणागतत्राता। ९ ।
श्रीरामचंद्रना परम प्रिय छो, अनन्य दास कहावो,
कपिवंशना जीवन महाजन, मन करुणा लावो। १० ।

भागकर इन्द्र ही से (यह समाचार) कह दिया। तो इन्द्र ने समझ लिया कि वह महा वलवान रामभक्त हनुमान (ही) है। ४। उसका विरोध करने पर उसे हम जीत नहीं पाएँगे, इसलिए उसने कोई क्रोध नहीं किया। अनन्तर इन्द्र ने उन समस्त देवों के साथ देव-गुरु वृहस्पति को भेज दिया। ५। तो अंगिरस वृहस्पति वहाँ आ गये, जहाँ हनुमान ठहर गया था और वे उसके सम्मुख आगे खड़े रह गये। उनके पीछे समस्त देव (खड़े रह गये) थे। ६। (तदनन्तर) वे स्तुति करने लगे, जो करुणामृत से भरी-पूरी वाणी में थी। हे श्रोताजनो, निश्चयपूर्वक उसे सुनिए। वाचस्पति उस समय बोले। ७।

हे हनुमान आपकी जय हो। हे महावलवान, आपकी जय हो। आपको नमस्कार है, नमस्कार है। प्रणतों को संकटों से मुक्त कर देने वाले हे पवन-कुमार, आप महावाहु धन्य हैं। ८। हे अंजनी-नन्दन, हे सूर्य-शिष्य, हे महामति फाल्गुनानुज (चैत्र) में उत्पन्न, हे सीता-शोक-हारी, हे भय का निवारण करनेवाले, हे शरणागतों के रक्षक, आप श्रीरामचन्द्र के परम प्रिय हैं, आप उनके अनन्य दास कहाते हैं। हे कपि-वंश के जीवन (-स्वरूप) महाजन, मन में करुणा लाइए। ९-१०। हे लंका को जला

लंकादहन गहन गुण गंभीर, क्षय अक्षय करता,
निशिचर विपिन अशोक शोकदा, अद्‌भुत कृत धरता। ११।
प्राणतणा दातार थया, रणमां रामानुजने,
जय हनुमंता महा बळवंता, नमो नमो तुजने। १२।
उदधिक्रमण त्रिविक्रम, केसरीसुत राक्षसहंता,
अग्र सचिव सुग्रीवना, वज्रतनु कीरतिवंता। १३।
पिंग नेत्र ने रक्त वदन शुचि, ऊर्धरेत रहेवुं,
दर्पहा दशानन दीर्घबालधि, काळदंड जेवुं। १४।
महिकावतीपति मरदन, रूप धर्युं जे महाकाळी,
थयो नथी थाशे नहि, स्वामीसेवक तुज टाळी। १५।
तुज नाम थकी भय संकट, रोग वियोग सकळ नासे,
डाकेण शाकेण भूत प्रेत, नाटक चेटक त्रासे। १६।
कहे गिरिधर भूधर भयभंजन, साह्य करो मुजने,
जय हनुमंत महाबळवंता, नमो नमो तुजने। १७।

डालनेवाले, हे गहन गुण-गम्भीर, हे क्षय तथा अक्षय कर देनेवाले, हे अशोक वन में निशाचरों के लिए शोक उत्पन्न कर देनेवाले, हे अद्‌भुत कृतियों के धारी (कर्ता), आप युद्ध-भूमि में राम के अनुज लक्ष्मण के प्राणों को पुनः देनेवाले हो गये। हे हनुमान, आपकी जय हो। हे महाबलवान आपकी जय हो। आपको नमस्कार है, नमस्कार है। ११-१२। हे समुद्र को लाँघनेवाले त्रिविक्रम, हे केसरी-सुत, हे राक्षसों की हत्या करनेवाले, हे सुग्रीव के अग्र (प्रधान) सचिव, हे वज्रदेही, हे कीर्तिमान, आपके नेत्र तथा मुख रक्तिम हैं। आपको शुचि-युक्त ऊर्ध्वरेता रहना है। काल के दण्ड-सी अपनी दीर्घ पूँछ से दशानन के दर्प को नष्ट कर देनेवाले, आपने महाकाली के जिस रूप को धारण किया, उससे हे महिकावती के स्वामी अहिरावण तथा महीरावण का मर्दन करनेवाले, आपको छोड़कर कोई दूसरा स्वामी का (सच्चा) सेवक (आज तक) नहीं हुआ है, (आगे) नहीं होगा। १३-१५। आपके नाम से भय, संकट, रोग, (प्रियजनों से) विरह—सब भाग जाता है। डाकिनियाँ, शाकिनियाँ, भूत-प्रेत, टोटका-टोना भय-भीत हो जाते हैं। १६। कवि गिरिधरदास कहते हैं, हे भू-धर शेष के अवतार लक्ष्मण के (मृत्युसम्बन्धी) भय को दूर करनेवाले मेरी सहायता कीजिए। हे हनुमान, आपकी जय हो, हे महाबलवान आपको नमस्कार है, नमस्कार है। १७।

दोहा

ब्रह्मचारी अविकारी मन, धरम सत्यव्रत धीर,
रुद्र अंश जति वज्रतन, जय जय जय महावीर। १८।
सुरगुरुए एवी स्तुति करी, गद्गद दीन वचन,
ते सुणीने बोल्या मारुति, थई मनमांहे प्रसन्न। १९।

राग मारु

बोल्या प्रसन्न थई हनुमंत, कह्युं बृहस्पतिने वरतन्त;
रामबंधु पुत्र सैन्याय, ते सरवे पाम्या छे मूरछाय। २०।
लेई औषधि जावुं जरूर, माटे क्यां करो मुजने असूर,
एवुं सुणी जे हती गिरिमांहे, देव औषधि आपी त्यांहे। २१।
लेई करमां ते पवनकुमार, आव्या सैन्य पड्युं ते ठार,
शत्रुघन पुष्कळ आदे वीर, अन्य राजकुंवर रणधीर। २२।
कर्यो औषधि केरो स्पर्श, ऊठ्या थई सचेत उत्कर्ष,
लाग्यो औषधि पवन समान, ऊभे सैन्य थयुं सावधान। २३।

आप ब्रह्मचारी हैं, आपका मन अविकारी अर्थात् विकारों से रहित है। आप धर्म तथा सत्यव्रत के धारी हैं। आप रुद्र के अंश (से उत्पन्न) हैं। आप वज्रदेही हैं। हे महावीर, यति आपकी जय हो, जय हो। १८। सुर-गुरु बृहस्पति ने गद्गद होकर दीन वचनों से ऐसी स्तुति की। उसे सुनकर हनुमान मन में प्रसन्न होकर बोला। १९।

प्रसन्न होकर हनुमान बोला और उसने बृहस्पति से यह (समस्त) समाचार कह दिया कि राम के बन्धु शत्रुघ्न तथा बन्धु (भरत) का पुत्र (पुष्कल) तथा सेना— सब मूर्च्छा को प्राप्त हो गये हैं। २०। मैं ओषधी अवश्य लेकर जाऊँगा। इसलिए मुझे देर क्यों करा रहे हैं? ऐसा सुनकर वहाँ उस पर्वत में जो ओषधी थी. वह (निकालकर) देवों ने दे दी। २१। उसे हाथ में लेकर हनुमान उस स्थान पर आ गया, जहाँ सेना पड़ी हुई थी, जहाँ शत्रुघ्न, पुष्कल आदि वीर तथा अन्य रणधीर राजकुमार पड़े हुए थे। २२। हनुमान ने उन्हें ओषधी का स्पर्श करा दिया, तो वे सचेत होकर उठ गये। वह औषधी पवन-सी उन्हें लग गयी, तो दोनों सेनाएँ सावधान हो गयीं। २३। (उस कारण) सब अपार सुख को प्राप्त हो गये। (सबका) आनन्द बढ़ गया और जय-जयकार हो गया। समस्त राजा

सरवे पाम्या सुख अपार, वाध्यो हरख थयो जेजेकार,
मारुतिने वखाणे सहु राय, मुखे धन्य धन्य कहेता जाय । २४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

धन्य धन्य कहेता ऊठ्या सर्वे, फरी करवा मांड्यो संग्राम रे,
वीरमणि ने शत्रुघन, जुद्ध करता तेणे ठाम रे । २५ ।

* * *

हनुमान की प्रशंसा करने लगे और मुँह से 'धन्य ! धन्य !' कहते जा रहे थे । २४ ।

'धन्य ! धन्य !' कहते हुए वे सब उठ गये, तो उन्होंने फिर से युद्ध करना आरम्भ किया । वीरमणि और शत्रुघ्न उस स्थान पर युद्ध करने लगे । २५ ।

* * *

अध्याय—५६ (शिवजी की प्रतिज्ञा के निर्वाह के लिए राम का आविर्भाव)

राग सामेरी

अनिहां रे वीरमणि साथे शत्रुघन, जुद्ध आरंभ्युं करी क्रोध मन,
अनिहां रे सामासामी राख्या छे रथ, मूके छे बाण महा समरथ । १ ।

ढाळ

समरथ शत्रुघने तदा, अग्न्यास्त्र मूक्युं बाण,
मेघास्त्र सांध्युं वीरमणिए, शांति थई निरवाण । २ ।
भरतानुजे वातास्त्र मूक्युं, मेघ कीधा दूर,
त्यारे ते समे पर्वतास्त्र मूक्युं, वीरमणि नृप शूर । ३ ।

अध्याय—५६ (शिवजी की प्रतिज्ञा के निर्वाह के लिए राम का आविर्भाव)

अरे हाँ, अब यहाँ मन में क्रोध करके शत्रुघ्न ने वीरमणि से युद्ध करना शुरू किया । अरे हाँ, अब यहाँ उन्होंने आमने-सामने रथ रख दिये और वे महा सामर्थ्यशील (वीर) बाण चलाने लगे । १ ।

तब समर्थ शत्रुघ्न ने अग्नि-अस्त्र से युक्त बाण छोड़ दिया, तो वीरमणि ने मेघास्त्र सन्धान किया, तो अन्त में शान्ति स्थापित हो गयी (मानो आग बुझ गयी) । २ । (फिर) शत्रुघ्न ने वातास्त्र छोड़ दिया

शत्रुघने वज्रास्त्र मूक्युं, नारायण मणि भूप,
समान ऊतर्या एम बंन्यो, विद्याए तद्रूप। ४।
शिवमंत्र भणी पंच बाण मूक्यां, मणि भूपे तेणी वार,
ते रामानुजने रुदे वाग्यां, थयुं दुःख अपार। ५।
पछे दत्त देवीतणो शर, वैरी विदारण जेह,
शत्रुघने तव मूकियो, मणि भूप उपर तेह। ६।
ते रुदे वाग्यो रायने, पड्यो थई तदा गति भंग,
एम विजे पाम्या शत्रुघन, राख्यो घणो रणरंग। ७।
वळी सैन्य सहु मूर्छित कर्युं, मूर्छास्त्र मूक्युं बाण,
एवो पराजय जोई भक्तनो, कोपे चढ्या शूलपाण। ८।
त्यां रथारूढ थई जुद्ध करवा, चढ्या छे शिवराय,
ते क्रोधथी सहु देव कंप्या, महा प्रलय ज्यम थाय। ९।
महारुद्र केरा क्रोधनी, प्रगटी ते ज्वाळ प्रचंड,
दाझवा लाग्या सरव जन, ते तेज व्याप्युं ब्रह्मांड। १०।
घोर समर वरत्यो तदा, ते उभय सेन्यामांहे,
त्यारे शत्रुघन व्याकुळ थया, धीरज गई छे त्यांहे। ११।

और मेघों को दूर कर दिया। तब उस समय शूर राजा वीरमणि ने पर्वतास्त्र छोड़ दिया। ३। (अनन्तर) शत्रुघ्न ने वज्रास्त्र चला दिया, तो राजा वीरमणि ने नारायणास्त्र चला दिया। इस प्रकार (अस्त्र-) विद्या में दोनों सम-समान उतर गये (सिद्ध हो गये)। ४। फिर उस समय राजा वीरमणि ने शिव-मन्त्र का पठन करते हुए पाँच बाण छोड़ दिये; वे रामानुज शत्रुघ्न के हृदय में लग गये, तो उसे अपार दुःख हो गया। ५। अनन्तर देवी द्वारा दिया हुआ वैरी-विदारण नामक जो बाण था, उसे तब शत्रुघ्न ने राजा वीरमणि की ओर चला दिया। ६। वह राजा के हृदय-स्थल पर लग गया और तब वह गति-भंग होकर गिर पड़ा। इस प्रकार शत्रुघ्न विजय को प्राप्त हो गया। उसने युद्ध में अपना बहुत प्रभाव डाल रखा। ७। इसके अतिरिक्त उसने मूर्च्छास्त्र से युक्त बाण छोड़कर समस्त सेना को मूर्च्छित कर डाला। अपने भक्त की इतनी पराजय हुई देखते ही शूल-पाणि शिवजी क्रुद्ध हो उठे। ८। वे रथ में आरूढ़ होकर युद्ध करने के लिए चढ़ दौड़े। (तब) उनके उस क्रोध से समस्त देव काँप उठे, मानो महा प्रलय ही हो रहा हो। ९। महारुद्र शिवजी के क्रोध से प्रचण्ड ज्वाला उत्पन्न हो गयी। वह समस्त लोगों को जलाने लगी। उसका तेज ब्रह्माण्ड को व्याप्त कर गया। १०। तब

पछे संभार्या श्रीरामने, भरतानुजे तेणी वार,
लोचन सजळ गद्गद गिरा, कर्यो आरत नाद पोकार। १२।
हे दीनबंधु, दयासिंधु, प्रणत दुःखमोचन,
वहारे धाजो अमारी, रघुपति कमळलोचन। १३।
हे राम राम रमापति, संकटहरण स्वामीन,
विहारी सरजुतीरना, रघुवीर जुगजीवन। १४।
एम स्मरण करतां मात्रमां, प्रगट्यां त्यांहां भगवान,
लावण्य कोटि मनोज तन, घनश्याम रूपनिधान। १५।
बेठा हता दीक्षित थई प्रभु, जेवा सरजुतीर,
ते स्वरूपे प्रगट्या त्यहां, सैन्यमां श्रीरघुवीर। १६।
दीक्षित रामे सरवने, आप्यां तदा दरशन,
कर थकी नाखी शस्त्र पाये, पड्या पंचवदन। १७।
पछे कर ग्रही उठाड्या शिवने, भेटिया श्रीराम,
कर जोडी स्तुति करी शिवे, सुणो पूरणकाम। १८।
हे नाथ, में आप्युं हतुं, मणि भूपने वरदान,
ते वचन मारुं पाळियुं, कर्युं सत्य श्रीभगवान। १९।

दोनों सेनाओं में घोर समर हो गया। तब शत्रुघ्न व्याकुल हो गया। उसका धीरज वहाँ छूट गया। ११। फिर उस भरतानुज ने उस समय श्रीराम का स्मरण किया। उसके नेत्र सजल हो गये, वाणी गद्गद हो उठी। उसने आर्त स्वर में (सहायता के लिए) पुकार कर कहा। १२। 'हे दीनबन्धु, हे प्रणतों के दुःख को दूर करनेवाले! हे कमल-लोचन रघुपति, हमारी सहायता के लिए दौड़िए। १३। हे राम, हे राम, हे रमापति (विष्णु के अवतार), हे संकटों का हरण करनेवाले स्वामी, हे सरयू के तट पर विहार करनेवाले, हे जगज्जीवन रघुपति, (हमारी सहायता के लिए दौड़िए)। १४। इस प्रकार स्मरण मात्र करते ही भगवान राम वहाँ प्रकट हो गये। उनका शरीर कोटि-कोटि कामदेवों के लावण्य से युक्त था। वह घनश्याम, रूप का (साक्षात्) निधान था। १५। सरयू के तट पर प्रभु श्रीरघुवीर दीक्षित होकर जैसे (रूप में) बैठे थे, उसी अपने रूप में वे वर्‍... में प्रकट हो गये। १६। दीक्षा ग्रहण किये हुए राम ने तब स... थे, तो पंचवदन शिवजी हाथ से शस्त्र फेंककर उनके पाँव ... अनन्तर श्रीराम ने उनका हाथ पकड़कर उन्हें उठा ... लिया। तो हाथ जोड़कर शिवजी ने (इस प्रकार) ...र्णकाम राम, सुनिए। १८

एवुं कहीने मणि रायने, सहुकुटुंब तेणी वार,
दरशन कराव्यां रामनां, वरतियो जयजयकार। २०।

वळी शत्रुघन हनुमंत आदे, मळ्या श्रीरणधीर,
पछी सैन्य सर्व उठाडियुं, करी कृपादृष्टि रघुवीर। २१।

राय वीरमणिए राज्यलक्ष्मी, देह कुटुंब तेणी वार,
रामार्पण सर्वे करी, पाये नम्यो तेणी वार। २२।

पछी रायना सुत रुकमांगदने, आप्युं रामे राज,
मणि भूपे सेवा बहु करी, संतोष्यो सरव समाज। २३।

वळी शत्रुघनने धीरज आपी, पोते श्रीभगवान,
पछी सदाशिव श्रीराम बंन्यो, थया अंतरध्यान। २४।

ते शत्रुघन पासे रह्यो; देवराजपुरनो नाथ,
अश्वरक्षा अरथ चाल्यो, सेन लईने साथ। २५।

आख्यान ए मणि भूपनुं, जे सुणे नर ने नार;
तेना सरव संकट दुःख टळे, करे कृपा देव मोरार। २६।

हे नाथ, मैंने राजा वीरमणि को अभिवचन दिया था। हे श्रीभगवान, मैंने अपने उस वचन का निर्वाह किया और उसे सत्य कर लिया है।'। १९। ऐसा कहकर (शिवजी ने) उसी समय राजा वीरमणि को उसके परिवार-सहित श्रीराम के दर्शन करा दिये, तो जय-जयकार हो गया। २०। इसके अतिरिक्त श्रीरणधीर रघुवीर शत्रुघ्न और हनुमान आदि से मिल गये। फिर उन्होंने कृपा-दृष्टि करते हुए समस्त सेना को (सचेत कर) उठा लिया। २१। उस समय राजा वीरमणि ने अपनी राज्य-लक्ष्मी, देह तथा परिवार—सब राम को समर्पित कर दिया और उस समय उनके चरणों को नमस्कार किया। २२। अनन्तर राम ने उस राजा के पुत्र रुक्मांगद को राज्य प्रदान किया। (फिर) राजा वीरमणि ने उनकी बहुत सेवा की और समस्त समाज को तृप्त कर दिया। २३। इसके अतिरिक्त स्वयं श्रीभगवान राम ने शत्रुघ्न को ढाढ़स बंधा लिया; फिर सदाशिवजी और श्रीराम दोनों अन्तर्धान हो गये। २४। देवराजपुर का स्वामी शत्रुघ्न के पास ही रह गया और अपनी सेना को साथ में लेकर वह अश्व की रक्षा के लिए चला गया। २५। राजा वीरमणि का यह आख्यान जो पुरुष तथा स्त्रियाँ सुनते हैं, उनके समस्त संकट और दुःख दूर हो जाते हैं, देव मुरारि उनपर कृपा करते हैं। २६।

वलण (तर्ज बदलकर)

करे कृपा तेहने मोरारि, हरे दुःख संकट समुदाय रे,
कहे दास गिरधर सुणो श्रोता, रामाश्वमेध कथाय रे। २७।

उनपर मुरारि भगवान कृपा करते हैं और उनके दुःखों और संकटों के समुदाय का हरण कर लेते हैं। कवि गिरधरदास करते हैं, हे श्रोताओ, रामाश्वमेध की कथा को (आगे) सुन लीजिए। २७।

* * *

अध्याय—५७ (शौनकाश्रम के समीप घोड़े का रुक जाना)

राग सुरती महिमानी चाल

देवराजपुरथी पछी, चाल्यो यज्ञतोखार,
पूंठळ सरवे भूपति, साथे सैन्य अपार। १।
भरत खंड मांहे थई, नीकळ्यो आगळ त्यांहे,
सहु देश ओळंगीने आवियो, हिमकूट गिरि ज्यांहे। २।
ते परवत ऊंचो अति घणो, विस्तारे योजन एक,
वन रसिक रळियामणुं, वृक्ष विशाळ विषेक। ३।
केशुं कदंब ने कदळी, शाल ने ताल तमाल,
धात्री अशोक ने आमली, लीम लविंग रसाळ। ४।
बकुल मंदार ने मालती, चंदन चंपक छोड,
बीली बदाम बद्री घणी, दाडम द्राक्ष अखोड। ५।

अध्याय—५७ (शौनकाश्रम के समीप घोड़े का रुक जाना)

अनन्तर यज्ञ का यह घोड़ा देवराजपुर से (आगे) जाने लगा। उसके पीछे (-पीछे) समस्त राजा (जा रहे) थे। उनके साथ अपार सेना थी। १। भरत खण्ड होकर वह घोड़ा वहाँ (से) आगे चल दिया। (बीच के) समस्त देशों को पार करके वह (वहाँ) आ गया, जहाँ हिमकूट गिरि है। २। वह पर्वत अत्यधिक ऊँचा था। उसमें विस्तार से एक योजन बड़ा एक आनन्दप्रद तथा रमणीय वन था। उसमें विशाल वृक्ष थे। ३। उसमें पलाश, कदम्ब और कदली, शाल, ताल और तमाल, आमला, अशोक और इमली, नीम, लौंग, आम, बकुल, मन्दार और मालती, चन्दन, चम्पक के पौधे, बेल (बिल्व), बादाम, बहुत-से बेर (के पेड़), अनार, अंगूर, अखरोट, नाग, पुंनाग, इलायची, सुन्दर चिरौंजी, खजूर,

नाग पुंनाग इलायची, चारु चीरोजी खजूर,
जाई जूई ने केतकी, सीताफळी रसपूर। ६।
मुचकंद ने मरवो मोगरो, केवडो फणस नारंग,
शतपत्री ने शेवंतरी, वशी रह्या वेणु उत्तंग। ७।
साग सीसम ने सरगवा, श्रीफळी सुखड सार,
वड पीपळ ने पाकरी, करमदी केळ कल्लार। ८।
घुलर गुंदी ने गेगडी, रायण रातीचोळ,
ललित लताओ भूमि लळी, त्रिविध पवन-झकोळ। ९।
ते वनमां एवी फूली, वनस्पति भार अढार,
सदा वसंत सोहामणो, बोले छे पक्षी अपार। १०।
हंस कारंडव कोकिला, क्रीडे कळाकार कीर,
मधुकर गुंजे अति घणा, चाले सुगंधी समीर। ११।
एवा ते वनमां आवियो, रामनो यज्ञतोखार,
ओचिंतो स्थंभी रह्यो, पृथ्वी उपर तेणी वार। १२।
चारे चरण चोंटी रह्या, हाले न चाले एह,
रक्षक जोई विस्मे थया, प्रगट्यो मन संदेह। १३।

मालती, जूही और केवड़ा, रस-पूर्ण सीताफल, मुचकुन्द और मरवा, मोगरा, केवड़ा, कटहल, नारंगी आदि के पेड़-पौधे थे। शतपत्रा और गुलदावदी उत्तुंग बाँसों पर आधार लिये रह गयी थीं। ४-७। उसमें सागौन, सीसम और सहिजन, श्रीफल (नारियल), सुन्दर चन्दन, बरगद, पीपल और पाकर के पेड़ थे। करौंदा, केला और कल्हार के पेड़-पौधे थे। ८। गूलर, गेंदा, और गेगड़ा, लाल-लाल खिरनी के पेड़-पौधे थे। सुन्दर-सुन्दर लताएँ भूमि पर तीनों प्रकार के पवन के झोंकों से झूम रही थीं। उस वन में अठारहों अर्थात् विविध प्रकार की वनस्पतियाँ इस प्रकार फूली हुई थीं। (वहाँ मानो) नित्य मनोरम वसन्तु ऋतु रहती थी। उसमें अनगिनत (प्रकार के) पंछी बोलते रहते थे। बहुत अधिक (संख्या में) भौंरे गुंजारव करते रहते थे। सुगन्ध से युक्त हवा बहती थी। ९-११। राम का यज्ञीय घोड़ा उस समय इस प्रकार के उस वन में आ गया, तो वह उसी समय अचानक भूमि पर (खम्भे जैसा स्थिर) स्तब्ध खड़ा रह गया। १२। उसके चारों पाँव चिपके रहे; वह न हिल रहा था, न चल रहा था। यह देखकर रक्षक विस्मित हो गये; उनके मन में सन्देह उत्पन्न हो गया। १३। तब शत्रुघ्न को यह चिन्ता (अनुभव) हो गयी कि यह घोड़ा स्तब्ध कैसे रह गया। उन्होंने अनेक उपाय किये, फिर भी वह

त्यारे शत्रुघनने चिंता थई, स्थंभ्यो क्यम केकाण ?
अनेक उपाय कर्या पण, चाले नहि निरवाण । १४ ।
पछे मारुतिए निज लांगूल, वींटयुं अश्वने अंग,
खेंचे घणुं खंखारीने, तोये न हाले तुरंग । १५ ।
त्यारे शत्रुघने त्यां सुमंतने, पूछ्युं तेणी वार,
को महापुरुष अहीं होय तो, पूछीए तेनो विचार । १६ ।
त्यारे सेवकने त्यां दोडाविया, चारे दिशाए सुमंत,
रहेता हता ते वनमां, शौनक मुनि महानंत । १७ ।
अनेक मुनिना मंडळमांहे, शोभता शौनक तेह,
हरिना चरित्र वखाणता, आत्मनिरूपण जेह । १८ ।
एवा मुनिने जाणी करी, करवा चाल्या दरशन,
राजमंडळी लेईने, त्यां गया शत्रुघन । १९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

शत्रुघन लेई राजमंडळ, आव्या मुनिवर पास रे,
प्रदक्षणा करी पाये लाग्या, त्यारे मुनिए दीधी आश रे । २० ।

* * *

निश्चय ही चलने नहीं लगता था । १४ । अनन्तर हनुमान ने अपनी पूँछ घोड़े के चारों ओर लपेट ली और उसने उसे बहुत पीटते हुए खींच लिया, फिर भी वह घोड़ा नहीं हिला । १५ । तब शत्रुघ्न ने वहाँ सुमन्त से उस समय पूछा, ‘ यदि यहाँ कोई महापुरुष हो, तो उससे उसका विचार (सलाह) पूछ लें । ’ । १६ । तब सुमन्त ने वहाँ चारों दिशाओं में सेवकों को दौड़ा दिया । उस वन में महात्मा शौनक मुनि रहते थे । १७ । वे (शौनक मुनि) अनेक ऋषियों के मण्डल में शोभायमान थे । वे भगवान हरि के चरित्र का वर्णन कर रहे थे, जो आत्म-तत्त्व का अर्थात् अध्यात्म का निरूपण ही था । १८ । ऐसे उन मुनि की जानकारी कर लेते हुए वे उनके दर्शन करने के लिए चल दिये । राज-मण्डली को (साथ में) लिये हुए शत्रुघ्न वहाँ गया । १९ ।

राज-मण्डली को (साथ में) लिये हुए शत्रुघ्न उन मुनिवर के पास आ गया । प्रदक्षिणा करके वह उनके पाँव लगा, तब मुनि ने उसे आशीर्वाद दिया । २० ।

* * *

अध्याय—५८ (शत्रुघ्न-शौनक-संवाद, राक्षस की पूर्व-जन्म-कथा)

राग आशावरी

हावे शौनक मुनिने पाये लाग्या, शत्रुघन आदे नरेश,
आदर करी सहुने बेसाड्या, कुशळ पूछ्युं मुनेश। १ ।
त्यारे सकळ वृत्तांत कह्युं शौनकने, शत्रुघने तेणी वार,
कहो महाराज वयम स्थंभ्यो अमारो, यज्ञतणो तोखार ? । २ ।
एवां वचन सुणी शौनक मुनि बोल्या, ध्यान धरीने मन,
अश्व स्थंभ्यानुं कारण कहुं, ते सांभळो शत्रुघन। ३ ।
गौड देशमां कावेरी तट, तप करतो द्विज एक,
सात्त्विक एवुं नाम ज तेनुं, करियुं कष्ट विषेक। ४ ।
पछी काळे करीने मरण ज पाम्यो, सात्त्विक ब्राह्मण जेह,
दिव्य रूप धरी विमान बेसी, गयो स्वर्गमां तेह। ५ ।
ते तपना पुण्यप्रभावे करी, भोगवे मनगमता भोग,
अनेक अपसरा साथे रमतो, पाम्यो सुखसंजोग। ६ ।
ते एक समे विमानमां बेसी, संग लेई घणी नार,
मेरुना शिखर उपर ते आव्यो, जेनी छे शोभा अपार। ७ ।

अध्याय—५८ (शत्रुघ्न-शौनक-संवाद, राक्षस की पूर्व-जन्म-कथा)

अब शत्रुघ्न तथा (अन्य) राजा आदि मुनीश्वर शौनक के पाँव लगे, तो उन्होंने उनका सम्मान करते हुए सबको बैठा लिया और कुशल-क्षेम पूछ ली। १ । तब उस समय शत्रुघ्न ने शौनक से समस्त समाचार कह दिया (और कहा—) , हे महाराज, कहिए, हमारा यज्ञीय घोड़ा क्यों अवरुद्ध हो गया ? '। २ । ऐसी बातें सुनकर मन में ध्यान धारण करते हुए शौनक मुनि बोले, ' हे शत्रुघ्न, अश्व के रुक जाने का कारण मैं कहता हूँ—उसे सुनिए। ३ । गौड़ देश में कावेरी नदी के तट पर एक ब्राह्मण तप कर रहा था। उसका नाम ही सात्त्विक था। उसने विशेष रूप से कष्ट (-प्रद तप) किया था। ४ । अनन्तर यथाकाल जो सात्त्विक नामक ब्राह्मण था, वह मृत्यु को प्राप्त हो गया और दिव्य रूप धारण करके विमान में बैठकर स्वर्ग में चला गया। ५ । उस तपस्या से अर्जित पुण्य के प्रभाव से वह मनभाये भोग भोग रहा था। वह अनेक अप्सराओं के साथ क्रीड़ा करता था और संयोग के सुख को प्राप्त हो जाता था। ६ । वह एक समय साथ में अनेक नारियों को लिये हुए विमान में बैठकर मेरु पर्वत के एक ऐसे शिखर पर आ गया, जिसकी शोभा अपार थी। ७ ।

जांबु वृक्षनी तळे बेठो, ज्यां जांबुवती सरिताय,
स्त्रीओ अनेकनी साथे, निःशंक थई क्रीडाय। ८।
त्यां मुनि केटला बेठा तेनी, लाज धरी नहि मन,
वळी अवगणना करी सकळ विप्रनी, बोल्यो व्यंग वचन। ९।
त्यारे मुनिवर क्रोध करी बोल्या, अल्या निर्लज असुर समान,
आसुरी बुद्धि तें करी माटे, असुर थजे अघवान। १०।
एवो मुनिए शाप दीधो, तत्क्षण थयो राक्षस तेणी वार,
पछी कर जोडी अनुग्रह पूछ्यो, मुनिवरने निरधार। ११।
त्यारे महानुभाव मुनि कहे अल्या, जई रहे हिमगिरि वनमांहे,
श्रीरामचंद्रनो यज्ञतुरी ते, फरतो आवशे त्यांहे। १२।
त्यारे स्थंभन करजे तेह तुरी, तुं जुक्ति करी ते ठार,
हनुमंत रामचरित्र गाशे, पामीश तव उद्धार। १३।
सुणो शत्रुघन ते शापथी, राक्षस थयो निरवाण,
आ वन विषे आवी रह्यो, तेणे स्थंभाव्यो केकाण। १४।
माटे मारुति पासे रामकथानुं, गान करावो सार,
ते श्रवण करीने शाप मुकाशे, चालशे तोखार। १५।

(फिर) जहाँ जाम्बुवती नामक नदी है, वहाँ एक जम्बु वृक्ष के तले वह बैठ गया और निःशंक होकर अनेक स्त्रियों के साथ क्रीड़ा करने लगा। ८। वहाँ कितने ही मुनि बैठे हुए थे; उसने उनके प्रति मन में कोई लज्जा धारण नहीं की। इसके अतिरिक्त, उन समस्त विप्रों की उपेक्षा करते हुए वह (कुछ) व्यंग्य वचन बोला। ९। तब वे मुनिवर क्रोध करके बोले, 'अरे, असुर के समान निर्लज्ज (मनुष्य), तूने आसुरी बुद्धि (से कृति) की है, अतः तू पापी असुर हो जा।'। १०। उन मुनिवरों ने जब ऐसा अभिशाप दिया, तो वह तत्क्षण उसी समय राक्षस हो गया। अनन्तर उसने हाथ जोड़कर निश्चय-पूर्वक उन मुनिवरों से अनुग्रह (शाप-मोचन) पूछा। ११। तब उन महानुभाव मुनियों ने कहा, 'अरे, तू जाकर हिम-गिरि के वन में रह जा। श्रीरामचन्द्र का यज्ञीय घोड़ा घूमते घूमते वहाँ आ जाएगा। १२। तब उस स्थान पर कोई युक्ति आयोजित करते हुए उस घोड़े को रोक ले। (उस समय) जब हनुमान राम के चरित्र का गान करेगा, तब तू उद्धार को प्राप्त हो जाएगा। १३। हे शत्रुघ्न, सुनिए। उस अभिशाप से (सात्त्विक नामक) वह (ब्राह्मण) अन्त में राक्षस हो गया है। वह इस वन के अन्दर आकर रह गया है। उसने इस घोड़े को रोक लिया है। १४। इसलिए आप हनुमान द्वारा राम-कथा

एवां वचन सुणी शत्रुघन बोल्या, शौनक प्रत्ये वाण,
अरे महाराज ए विप्र सात्त्विक, महा तपस्वी जाण । १६ ।
ते राक्षसयोनि पाम्यो क्षणमां, निवरत्यो तप महिमाय,
ए करमतणी जे गहन गति ते, कहो मुने मुनिराय । १७ ।
जे कर्मविपाके करीने प्राणी, नर्क-स्वर्गने पामे,
ते कारण कहो विस्तारी जे थकी, संदेह सकळ विरामे । १८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

संदेह जाये मनतणो, कहो करमगति निरधार रे,
एवां शत्रुघननां वचन सुणी, बोल्या शौनक मुनि तेणी वार रे । १९ ।

का सुन्दर गान करा लीजिए। उसे सुनने पर शाप छुड़ाया जाएगा और (आपका यज्ञीय) घोड़ा चलने लगेगा।' । १५ । ऐसी बातें सुनकर शत्रुघ्न शौनक मुनि से यह बात बोला, 'हे महाराज, समझिए कि सात्त्विक नामक ब्राह्मण महातपस्वी था । १६ । (फिर भी) वह क्षण में राक्षस योनि को प्राप्त हो गया है, उसके तप की महिमा का नाश हो गया है। हे मुनिराज, इस कर्म की जो गहन गति होती है, वह मुझसे कहिए । १७ । जिस कर्म-विपाक से प्राणी स्वर्ग वा नरक को प्राप्त हो जाता है, वह कारण विस्तार-पूर्वक कहिए, जिससे मेरे समस्त सन्देह का निराकरण हो जाएगा । १८ ।

निश्चय ही वह कर्म-गति (विस्तार-पूर्वक) कहिए, जिससे मेरे मन का सन्देह (दूर हो) जाएगा।' शत्रुघ्न की ऐसी बातें सुनकर शौनक मुनि उस समय बोले । १९ ।

* * *

अध्याय—५९ (शौनक द्वारा कर्म-विपाक-कथन)

राग बिलावल

शौनक मुनि तव बोल्या वाण, सुणो शत्रुघन चतुर सुजाण,
जे हरण करे परत्रिया परधन, तेने जमना दूत करे बंधन । १ ।

अध्याय—५९ (शौनक द्वारा कर्म-विपाक-कथन)

तब शौनक मुनि ने यह बात कही, 'हे चतुर सुजान शत्रुघ्न, सुनिए। जो पर-स्त्री और पर-धन का अपहरण करता है, उसे यम के दूत आबद्ध कर लेते हैं । १ । वे उसे तमिस्र नामक नरक में फेंक देते हैं, (जहाँ)

तेने नाखे तामिस्र नर्क मोझार, एक सहस्र वरष दुःख सहे अपार,
पछे शूकरयोनि पामे तेह, एवुं पाप करे नर जेह। २।
जे भूत-द्रोह करी उदर ज भरे, निज कुटुंबनुं पोषण करे,
अंधतामिस्र नर्क जेनुं नाम, ते जीवने नाखे तेणे ठाम। ३।
क्लेश पामे त्यांहां प्राणी घणुं, एवुं फळ भोगवे ते तणुं,
जे नर जंतु बंधन करे, दुःख देई तेनुं वित्त हरे। ४।
रौरौ नर्कमां जाय तेह, दुःख पामे पापी जन जेह,
जे निंदे तीरथ ने वेद पुराण, गौ ब्राह्मण भक्त देवने जाण। ५।
तेने नाखे काळसूत्र नरक मोझार, एक सहस्र योजन तेनो विस्तार,
ते सहस्र वरस लगी भोगवे दुःख, एवो खळनिंदक नव पामे सुख। ६।
जे अयोग्य दंड करे थई भूप, वा दंडे भक्त द्विज साधुरूप,
तेने शूकरमूषिक नरक मोझार, नाखीने मारे उपर मार। ७।
कठोर दाढ जमदूत ज तणी, तेमां वेदना पमाडे घणी,
जे गौ ब्राह्मणनी वृत्ति हरे, ते अंधकूप नरके संचरे। ८।

वह एक सहस्र वर्ष अपार दुःख सहन करता है। जो नर ऐसा पाप करता है, वह अनन्तर शूकर (सूअर) योनि में (जन्म) को प्राप्त हो जाता है। २। जो प्राणी (मात्र) का द्रोह करके ही उदर-भरण करता है, अपने परिवार का भरण-पोषण करता है, उसके जीव को (यम-दूत) उस स्थान पर फेंक देते हैं, जिसका नाम अन्धतमिस्र नरक है। ३। वह प्राणी वहाँ बहुत क्लेश को प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार वह अपनी उस कृति का फल भोग लेता है। जो नर अन्य जन्तुओं (प्राणियों, मनुष्यों) को बाँध लेता है, जो ऐसा पापी मनुष्य (दूसरों को) दुःख देकर उनका वित्त हर लेता है, वह रौरव नरक में जाता है और दुःख को प्राप्त हो जाता है। समझिए कि जो तीर्थ-स्थलों और वेद-पुराणों की, गो-ब्राह्मणों तथा भक्तों, देवों की निन्दा करता है, उसे (यम-दूत) कालसूत्र नामक नरक में डालते हैं। उसका विस्तार एक सहस्र योजन है। वह (निन्दक) एक सहस्र वर्ष तक (उसमें) दुःख भोगता है। इस प्रकार खल तथा निन्दक (पापी) सुख को प्राप्त नहीं होते। ४-६। जो राजा होकर अनुचित रूप से किसी को दण्ड देता है, अथवा किसी भक्त, ब्राह्मण वा साधु-स्वरूप (व्यक्ति) को दण्ड देता है, उसे शूकर-मुषक नामक नरक में डालकर (यम-दूत) ऊपर से पीटते हैं। ७। यम-दूतों की डाढ़ें कठोर होती हैं। उनमें (डालकर) वे उसे बहुत वेदना को प्राप्त कराते हैं। जो गौ-ब्राह्मणों की वृत्ति का अपहरण करता है, वह अन्धकूप नामक नरक में

जे परस्व हरण करे पापिष्ट, नव अरपे ब्राह्मण साधु इष्ट;
पोते मधुर अन्न भक्षण करे, ते कृमिभोजन नरके संचरे। ९ ।
जे सुवर्ण मणि चोरे पलकमां, तेने नाखे दुष्टनामा नरकमां,
जे पंक्तिभेद करे अति घणुं, करे पोषण निजे देह ज तणुं । १० ।
तेने कुंभीपाक नाखे तत्काळ, मांहे तप्त तेलनी आवे ज्वाळ;
जे वेदपंथ माथे पग धरे, चंडाळ स्त्रीशुं गमन ज करे। ११ ।
लोहस्थंभ तप्त साथे ते जन, करावे तेशुं आलिंगन;
वळी वैतरणीमां ते अंशने, करावे भक्षण रक्तमांसने। १२ ।
जे दंभे करीने लोकने वाय, धूतीने तेनुं सरवस खाय,
वैशसन नरकने पामे तेह, पछी पामे ते चंडाळनो देह। १३ ।
जे वृषली साथे गमन ज करे, ते पुयनामा नरके संचरे,
जे रजस्वला शुं रमे अज्ञान, तेने रेतकुंडमां करावे पान। १४ ।
लूंटे ग्राम लगाडे लाहे, तेने नाखे अग्निकुंड ज मांहे,
जे कपट करी विख दे पापिष्ठ, ते जीवने अशन करावे विष्ठ। १५ ।

संचरण करता रहता है। ८। जो पापी दूसरे की सम्पत्ति का हरण करता है, जो ब्राह्मणों, तथा साधु पुरुषों को (कुछ भी) समर्पित नहीं करता, परन्तु स्वयं मधुर अन्न भक्षण करता है, वह कृमि-भोजन नामक नरक में संचरण करता रहता है। ९। जो पल-भर में (देखते-देखते) सोना अथवा रत्न चुरा लेता है, उसे दुष्ट नामक नरक में डालते हैं। जो अति बहुत पंक्ति-भेद करता है और अपनी ही देह का पोषण करता रहता है, उसे तत्काल कुम्भीपाक नरक में डालते हैं। उसमें तप्त तेल से ज्वालाएँ निकलती रहती हैं। जो वेदों द्वारा बताये मार्ग पर पाँव रखता है, अर्थात् उसे कुचलता है, चण्डाल स्त्री से सम्भोग करता है, (यम-दूत) लोहे के तप्त खम्भे से उसका आलिंगन कराते हैं। इसके अतिरिक्त, वैतरणी में (उसे डालते हुए) उसके अंगों के भागों का, रक्त-मांस का भक्षण कराते हैं। १०-१२। जो दम्भ-पूर्वक लोगों को जीत लेता है, उन्हें ठगकर उनके सर्वस्व को खा जाता है, वह वैशसन नरक को प्राप्त हो जाता है, फिर वह चण्डाल की देह को प्राप्त करता है—अर्थात् चण्डाल योनि में उत्पन्न हो जाता है। १३। जो वृषली (कुलटा) से सम्भोग करता है, वह पूय नामक नरक में संचरण करता है। जो अज्ञान व्यक्ति रजस्वला से रमण करता है, उसे (यम-दूत) रेतकुण्ड में पान कराते है। १४। जो गाँव को लूटता है और उसमें आग लगा देता है, उसे (यम-दूत) अग्नि-कुण्ड ही में डालते है। जो बड़ा पापी कपट करते हुए विष (खिला)

कूडी साख पूरे जे जन, अधोमुखी नर्कमां थाय पतन,
जे गुरुनो तिरस्कार ज करे, वा ब्राह्मण भक्तनो द्वेष ज धरे । १६ ।
दंश करे तेने वींछी श्वान, पडे असिपत्र नरके अज्ञान,
जे परनो धर्म निंदे अति घणुं, करे अभिमान आचार तणुं । १७ ।
ने नीच योनि अवतरे काक, श्वान शूकर ने बिडाल वराक,
जे जीभ्याने स्वाद करे सुरापान, तेने जम लोहरस पाये निदान । १८ ।
जे जीव अभक्ष्यभक्षण करे, अगम्यागमन कर्म आचरे,
ते पडे अधोमुखी नरक मोझार, वळी जमकिंकर घणो मारे मार । १९ ।
विश्वासघात जे प्राणी करे, ते शूळमुखी नरके संचरे,
जे रूडा पुरुषनुं भूंडुं चहाय, ते सरपदंश नरकमां जाय । २० ।
ए विण नरक घणां छे जेह, पापी जीव भोगवे तेह,
शौनक कहे सुणो शत्रुघन, ए पार न आवे करतां कथन । २१ ।
जेवुं कर्म तेवुं फळ भोगवे, जन्म धरी सुखदुःख जोगवे,
पाप तणुं फळ दुःख जाणजो, पुण्यनुं फळ सुख प्रमाणजो । २२ ।

देता है, उसके जीव को (यम-दूत) विष्ठा भक्षण कराते हैं । १५ । जो मनुष्य कपट-पूर्वक अर्थात् झूठी गवाही देता है, वह अधोमुख नामक नरक में पड़ जाता है । जो गुरु से तिरस्कार ही करता है, अथवा ब्राह्मणों या भक्तों से द्वेष (-भाव) धारण करता है, उसे बिच्छू और कुत्ता काटता है; वह अज्ञानी असि-पत्र नामक नरक में पड़ जाता है । जो पर-धर्म की अत्यधिक निन्दा करता है, जो अपने आचार (-धर्म) के प्रति (वृथा) अभिमान करता है, वह कौए, कुत्ते, सूअर, बिल्ली और भेड़िये की-सी नीच योनि में जन्म लेता है । जो जिह्वा से स्वाद के साथ मदिरा-पान करता है, उसे यम निश्चय ही लोह-रस पिलाता है । १६-१८ । जो जीव अभक्ष्य भक्षण करता है, अगम्या से गमन जैसे कर्म का आचरण करता है, वह अधोमुख नामक नरक में पड़ता है । इसके अतिरिक्त यम के सेवक उसे बहुत पीटते हैं । १९ । जो प्राणी (किसी दूसरे का) विश्वास-घात करता है, वह शूल-मुख नामक नरक में संचार करता है । जो भले लोगों का बुरा चाहता है, वह सर्प-दंश नामक नरक में (पड़) जाता है । २० । इनके अतिरिक्त, जो बहुत-से नरक हैं, पापी जन उनको, (उनमें दुःख को) भोगते रहते हैं । 'शौनक मुनि ने कहा,' हे शत्रुघ्न, सुनिए, इसका कथन करते रहने पर भी पार नहीं आ सकता । २१ । (जीव का) जैसा कर्म हो, वह वैसा फल भोगता है । वह (फिर) जन्म धारण करके सुख-दुख का भोग करता रहता है । पाप का फल दुःख समझना, तो पुण्य का सुख

एवुं बोल्या ज्यारे शौनक मुन्य, ते सुणीने पूछे शत्रुघन,
शे पापे करी दुःख रोग ज थाय, ते महानुभाव कहो मुने कथाय । २३ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

ते कथा कहो शे पापे करी, दुःख रोग थाये तन रे,
एवां शत्रुघननां वचन सुणी, पछे बोल्या शौनक मुन्य रे । २४ ।

प्रमाणित मानना । ' । २२ । जब शौनक मुनि इस प्रकार बोले, तो उसे सुनकर शत्रुघ्न ने पूछा, ' किस पाप से दुःख और रोग ही हो जाता है ? हे महानुभाव, मुझे वह कथा (बात) बताइए (उसका कथन करते हुए मुझसे कहिए) । २३ ।

शरीर में किस पाप से दुःख और रोग (उत्पन्न) हो जाते हैं ? यह मुझसे कहिए । ' शत्रुघ्न के ऐसे वचन सुनने के पश्चात् शौनक मुनि बोले । २४ ।

* * *

अध्याय—६० (शौनक द्वारा कर्म-विपाक-कथन)

राग दोहा

हावे शौनक मुनिवर बोलिया, सुणो रघूपुंगव रणधीर,
पूरव पापे प्राणीने, आवे रोग शरीर । १ ।
तमने तेनो भेद कहुं, अनुक्रम करीने आज,
निश्चे करम विपाकनो, मन धरजो महाराज । २ ।

चोपाई

पूरवे जे मद्यपानी जंत, तेना होये काळा दंत,
अभक्ष्यभक्षण जे जन करे, गुल्म रोग उदरे विस्तरे । ३ ।

अध्याय—६० (शौनक द्वारा कर्म-विपाक-कथन)

अब मुनिवर शौनक बोले, ' सुनिए हे रणधीर रघुपुंगव, पूर्व (-कृत) पाप से प्राणी के शरीर में रोग (उत्पन्न हो) आते हैं । १ । मैं आज अनुक्रम-पूर्वक उसका भेद आपसे कह रहा हूँ । हे महाराज, यह मन में धारण करना कि वह कर्म-विपाक का निश्चय ही (निर्धारित किया परिणाम) है । २ ।

पूर्वकाल में जो जीव मद्यपान करनेवाला रहा हो, उसके दाँत काले होते हैं । जो मनुष्य अभक्ष्य का भक्षण करता है, उसके पेट में गुल्म रोग

उत्तर मुखे करे भोजन पान, तेनुं उदर होय कृमिवान,
मंजारादिकनुं स्पर्श्युं अन्न, तेनुं जे जन करे अशन। ४ ।
तेने मुखे दुर्गंधी होय, तेनी पास न बेसी कोय,
पंक्तिभेदथी भोजन करे, तेने उदरवायु विस्तरे। ५ ।
करे विघ्न भोजन संजोग, तेने थाये अजीरण रोग,
थई धनवंत दान नव करे, मंदाग्नि तेने उदरे। ६ ।
छाहा रोगी विख देनार, वाटपडा पद रोगी अपार,
शून्यवादी अंगे कफ वात, अति विषयीनी निर्बळ जात। ७ ।
जे सरव जन परितापी मूळ, तेना उदरमां आवे शूळ,
जे अग्नि लगाडे वनमोझार, तेने थाय रोग अतिसार। ८ ।
देव जळाशये करे मूत्र विष्ट, होय तेने उदर बंधकष्ट,
गरभपात करे जन जेह, वंझादोष भोगवे तेह। ९ ।
जे सज्जन वंचीं चोरी खाय, तेने उदरे चूक ज थाय,
प्रतिमा भंग करे जे जन, प्रतिष्ठारहित थाय ते तन। १० ।

बढ़ता है। ३। जो मुख से अभीष्ट से अधिक भोजन तथा पान करता है, उसका पेट कृमियों से युक्त हो जाता है। बिल्ली आदि द्वारा छुआ अन्न हो, तो जो मनुष्य उसे खा लेता है, उसके मुख में दुर्गन्धि (उत्पन्न) हो जाती है, (अतः) उसके पास कोई भी नहीं बैठता। जो पंक्ति-भेद-पूर्वक भोजन करता है, उसके पेट में वायु बढ़ती है। ४-५। जो भोजन के योग पर (भोजन मिलने पर) विघ्न उत्पन्न कर देता है, उसे अजीर्ण (अपाचन) रोग हो जाता है। धनवान होने पर भी जो दान नहीं देता, उसके उदर में मन्दाग्नि रोग हो जाता है। ६। (दूसरे को) विष (खिला) देनेवाला पित्त का रोगी हो जाता है, शून्यवादी के शरीर में कफ तथा वात का रोग होता है, तो अति विषयी दुर्बल शरीरधारी का जन्म लेता है। ७। जो समस्त लोगों को मूलतः परिताप उत्पन्न कर देनेवाला होता है, उसके उदर में शूल उत्पन्न हो जाता है। जो वन में आग लगा देता है, उसे अतिसार रोग हो जाता है। ८। देवालय अथवा जलाशय में जो मूत्र या विष्ठा करता है, उसे कष्ट-दायी बद्ध-कोष्ठ रोग हो जाता है। जो मनुष्य गर्भ-पात करता है, वह वन्ध्या रोग का भोग करता है। ९। जो सज्जन की वंचना करते हुए चुराकर खा लेता है, उसके पेट में वेदना ही होने लगती है। जो मनुष्य किसी प्रतिमा (मूर्ति) को भग्न कर देता है, वह देहधारी प्रतिष्ठा-रहित हो जाता है। १०। जो सच्ची बात का खण्डन करते हुए (असत्य के पक्ष में) विवाद करता है और (अपनी बात

जे सत्य वचन खंडी करे वाद, पक्षे बोले तजी मरजाद,
त्याग देखाडी भोगवे भोग, पक्षाघात थाये तेने रोग। ११।
जे जुए एक स्वारथ दृष्टे घणुं, एक नेत्र थाय ते तणुं,
जेना नेत्रमां द्वेष ज घणो, सही न शके सद्गुण को तणो। १२।
जुए जार तस्कर अभिप्राय, नेत्रहीण ते अंध ज थाय;
ब्राह्मण देवनुं चोरे धन, तेनां गळी जाय हस्त ने तन। १३।
तांबुं चोरे रक्तविकार, पांडुरोग कांसुं हरनार;
पिंगट मुरधनी पित्तळ चोर, तिल चोरे तरिया ज्वरनुं जोर। १४।
कंचन चोरे कूबडो थाय, रजतचोरनी श्वेत ज काय;
वात रोग तैल तस्करे, अन्न चोरे ते भूखें मरे। १५।
नग्न फरे जे चोर वस्त्रनो; छिद्रित तन चौरक शस्त्रनो;
असत्य बोलें तो थाय बोबडो, रूपमानी होये कूबडो। १६।
पितापत्नीशुं रमे जे जन, लिंगरहित थाय तेनुं तन;
गुरुपत्नीशुं गमन ज करे, मूत्रकृच्छ तेने विस्तरें। १७।

के) पक्ष में मर्यादा का त्याग करते हुए बोलता है; त्याग दिखलाते हुए भोगों का उपभोग कर लेता है, उसे पक्षाघात (लकवा) रोग हो जाता है। ११। जो स्वार्थ की एकमात्र दृष्टि से बहुत देखता है, उसके एक नेत्र (शेष) रह जाता है। जिसके नेत्र में (दूसरे के प्रति) बहुत द्वेष ही रहता है, जो किसी के सद्गुण को सहन नहीं कर पाता, जो जार तथा चोर के अभिप्राय से देखता है, वह नेत्र-हीन (अर्थात्) अन्धा ही हो जाता है। जो ब्राह्मणों तथा देवों का धन चुरा लेता है, उसके हाथ और अंग सड़-गल जाते हैं। १२-१३। जो (किसी के) ताँबे (के पात्र आदि) को चुराता है, उसे रक्त-विकार हो जाता है और काँसे का अपहरण करनेवाले को पण्डु रोग हो जाता है। पीतल (की वस्तुओं को) चुरानेवाला भूरे बालों का हो जाता है, तो तिल के चोर में तरिया (अँतरा, चौथिया) ज्वर की वृद्धि हो जाती है। १४। सोना चुरानेवाले में कूबड़ आ जाता है, तो चाँदी के चोर की देह श्वेत (सफेद कुष्ठ से युक्त) हो जाती है। तेल के चोर में बात रोग उत्पन्न हो जाता है, तो अन्न चुरानेवाला भूखों मर जाता है। १५। जो वस्त्र का चोर हो, वह (वस्त्र के अभाव में) नंगा घूमने लगता है, तो शस्त्र चुरानेवाले का शरीर छिद्रों से युक्त हो जाता है। कोई असत्य बोलता है, तो वह तुतला हो जाता है, तो अपने रूप का अभिमानी कूबड़ा हो जाता है। १६। जो मनुष्य अपने पिता की पत्नी अर्थात् अपनी माता से रमण करता है, उसका शरीर लिंग-रहित हो जाता

कन्यागमन करे नर जेह, रक्तकुष्ठ थाय तेनी देह,
गमन करे जे भगनी संग, गजकरण रोग थाय तेने अंग। १८।
भ्रातपत्नीशुं जार ज रमे, गुल्मकुष्ठ रुज तेने दमे,
स्वामिनीगमन करे जे जन, दद्रु रोग थाय तेने तन। १९।
पितुभगनी जे जन भोगवे, भगेंद्र रोग ते जन जोगवे,
मातुलपत्नी शुं रमे रंग, जूठुं थाये तेनुं वाम अंग। २०।
पिता-बंधुपत्नी संजोग, तेने हस्त थाये पतरोग,
मित्रनारीशुं रमे जे जार, मृतपत्नी थाये वारंवार। २१।
हरश रोग थाये गोत्रगमन, पुंश्चली पति विस्फोटिक तन,
पुत्र-स्त्रीशुं रमे अनुकूळ, मंद मदन आवे अंग शूळ। २२।
तपस्विनीशुं करे जे स्नेह, तेने निश्चे थाये प्रमेह,
पशुयोनिशुं गमन ज करे, ने प्राण भोग विषे नव ठरे। २३।

है। जो गुरु-पत्नी से सम्भोग करता है, उसमें मूत्रकृच्छ रोग बढ़ जाता है। १७। जो नर कन्या से गमन करता है, उसकी देह में रक्तकुष्ठ हो जाता है (और) जो भगिनी से समागम करे, उसके बदन में गजकर्ण रोग हो जाता है। १८। बन्धु-पत्नी से जो जार पुरुष समागम करता है, उसे गुल्म-कुष्ठ रोग दबा देता है, जो अपनी स्वामिनी के साथ सम्भोग करता है, उसके शरीर में दाद रोग हो जाता है। १९। जो पुरुष अपने पिता की भगिनी का उपभोग करता है, वह मनुष्य भगेन्द्र रोग का भोग करने लगता है। जो मामा की पत्नी अर्थात् अपनी मामी से रमण करता है, उसका बायाँ भाग (अंग) लूला पड़ जाता है। २०। अपने पिता के बन्धु की पत्नी अर्थात् अपनी चाची से जो सम्भोग करता है, उसके हाथ में रक्तकुष्ठ रोग हो जाता है। जो जार पुरुष अपने मित्र की पत्नी से रमण करता है, वह बार-बार मृत-पत्नी हो जाता है, अर्थात् उसकी पत्नी बार-बार मर जाती है। २१। अपनी गोत्रवाली स्त्री से समागम करने-वाले को अर्श रोग हो जाता है, तो पुंश्चली के पति का अर्थात् वेश्या-गमनी का शरीर फुंसियों से युक्त हो जाता है। अपने पुत्र की स्त्री अर्थात् अपनी बहू के प्रति अनुकूल-आसक्त होकर उससे जो समागम करता है, उसके शरीर में शूल उत्पन्न होने लगता है और वह मन्द-काम हो जाता है, अर्थात् उसकी समागमेच्छा उत्तरोत्तर मन्द होती जाती है। २२। जो किसी तपस्विनी से स्नेह कर लेता है, उसे निश्चय ही प्रमेह हो जाता है। जो पशु-योनि ही से समागम करता है, वह प्राणी (नारी के साथ) भोग में नहीं ठहर पाता। २३। जो (अच्छा) वेश दिखाते हुए किसी को

जे वेष देखाडी धूती खाय, तेने रोग जळंधर थाय,
जीवतणी जे हिंसा करे, ते प्राणी नरके संचरे। २४।
एटला दोष संक्षेपे कह्या, ए विण अन्य घणाएक रह्या,
कथन करतां नांवे पार, माटे किंचित् कर्यो विस्तार। २५।
नरनारी जे कृत्य आचरे, ते दुःख पामे रोगे मरे,
हे शत्रुघन शौनक भणे, सर्व जंतु वश करम ज तणे। २६।
जेनी रूडी देह आकृति, रूडा भोग ने रूडी मति,
शुभाचरण सुख परमाणजो, ते पुण्यवान प्राणी जाणजो। २७।
जेनुं कुरूप ने देह रोगिष्ठ, दुःखी दरिद्र कुमति पापिष्ठ,
पण सर्व पापनुं प्रायश्चित एक, श्रीरामनाममहामंत्र विषेक। २८।
कोटी कर्म एथी मुकाय, पापतणी मति सहु टळी जाय,
हरिथी जे विमुख थई फरे, तेने तीरथ पावन नव करे। २९।
लेतां नारायणनुं नाम, पामे धर्म अर्थ मोक्ष ने काम,
ते माटे सुणो शत्रुघन, मानो अमारुं सत्य वचन। ३०।

ठगकर कुछ खा लेता है, उसे जलोदर रोग हो जाता है। जो जीवों की हिंसा करता है, वह प्राणी नरक में संचरण करता है। २४। मैंने इतने दोष संक्षेप में कह दिये हैं। इनके अतिरिक्त, अनेकानेक (शेष) रह गये हैं। उन सबको कहते हुए (मुझसे) पार नहीं आ पाएगा। इसलिए मैंने किंचित् विस्तार किया है। २५। नर-नारी जो बुरा कृत्य कर लेते हैं, उसके फलस्वरूप दुःख को प्राप्त हो जाते हैं और (किसी न किसी प्रकार के) रोग से मर जाते है।' शौनक मुनि बोले, 'हे शत्रुघ्न, समस्त जीव (अपने-अपने) कर्म ही के अधीन रहते हैं। २६। जिसकी देह का आकार (प्रकार डील-डौल) सुन्दर हो, जिसके भोग अच्छे हों और मति (नीयत) अच्छी हो, उसके (पूर्वकृत) आचरण को शुभ तथा सुखदायी प्रमाणित कीजिए और उसे पुण्यवान प्राणी समझिए। २७। जिसकी देह कुरूप और रोगी हो, जो दुःखी और दरिद्र हो, उसे दुर्बुद्धिवाला और बड़ा पापी समझिए। परन्तु समस्त पापों का एक (मात्र) प्रायश्चित है—वह है श्रीराम नाम का विशिष्ट महामन्त्र। २८। उससे कोटि (-कोटि) कर्म छुड़ाये जाते है, पाप (करने) की समस्त मति टल जाती है। हरि से विमुख होकर जो जीव विचरण करता है, उसे कोई भी तीर्थ (-स्थल) पावन नहीं कर पाता। २९। नारायण का नाम लेने पर (मनुष्य) धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त हो जाता है। इसलिए सुनिए, हे शत्रुघ्न मेरी बात को सत्य समझिए। ३०। घोड़े के पास जाकर गुणवान राम-

अश्वनी पासे जई गुणवान, रामचरित्र करावो गान,
तेथी असुरनो थशे उद्धार, तत्क्षण चालशे यज्ञतोखार । ३१ ।

ऐवुं सुणी रिपुसूदन राय, शौनक मुनिने लाग्या पाय,
आज्ञा मागी आव्या त्यांहे, अश्व यज्ञनो थंभ्यो ज्यांहे । ३२ ।

हनुमंते गान कर्युं तेणी वार, तव राक्षस ते पाम्यो उद्धार,
दिव्य रूप ते वेळा थयो, विमान बेसीने स्वरगे गयो । ३३ ।

तत्क्षण चाल्यो यज्ञतोखार, करता सरवे जयजयकार,
इति श्रीपद्म पुराण मोझार, पाताळ खंडे वर्णवी निरधार । ३४ ।

रामाश्वमेधतणी जे कथाय, अडंताळीशमो ए अध्याय,
शेषे वात्स्यायनने कही, शौनकथी शत्रुघन लही । ३५ ।

निश्चे करम विपाक ज तणो, नामतणो महिमा अति घणो,
ते कथा प्राकृतमां करी, श्रोताजन बोलो श्रीहरि । ३६ ।

* * *

चरित्र का गान कराइए । उससे उस असुर का उद्धार हो जाएगा और यज्ञीय घोड़ा तत्क्षण चलने लगेगा । ' ३१ । ऐसा सुनकर शत्रुघ्नराज शौनक मुनि के पाँव लग गया । (फिर) आज्ञा लेकर वह वहाँ आ गया, जहाँ यज्ञ का घोड़ा स्तम्भित हो गया था । ३२ । (तदनन्तर) उस समय हनुमान ने (राम-चरित्र का) गान कर लिया; तब वह राक्षस उद्धार को प्राप्त हो गया । वह उस समय दिव्य रूप (-धारी) हो गया और विमान में बैठकर स्वर्ग में चला गया । ३३ । (इधर) तत्क्षण यज्ञीय घोड़ा चलने लगा, तो सबने जय-जयकार किया । इति । श्रीपद्म पुराण के अन्तर्गत पाताल खण्ड में (इस कथा का) वर्णन निश्चय ही किया गया है । ३४ । राम के अश्वमेध की जो कथा है, उस सम्बन्ध में यह (उसके अन्दर) अड़तालीसवाँ अध्याय है । शेष ने वात्स्यायन को जो श्रवण करायी थी, वह (कथा) शौनक मुनि से शत्रुघ्न ने ग्रहण की । । ३५ । निश्चय ही कर्म-विपाक ही की तथा (राम के) नाम की महिमा अति बड़ी है । मैंने वह कथा प्राकृत में (अर्थात् जनभाषा में—गुजराती में) प्रस्तुत की है । हे श्रोताजनो, बोलिए '' श्री हरि (की जय) ' । ३६ ।

* * *

अध्याय—६१ (कुंडलपुर में घोड़े का आगमन, राजा सुरथ का उपाख्यान)

राग धन्याश्री

त्यां थकी चाल्यो यज्ञकेकाण जी,
सकळ सैन्य तेनी पूंठळ जाण जी।
सेवा घणी करता ते अश्वनी दास जी,
एम करतां आव्यो हिमाचळ पास जी। १।

ढाळ

हिमाचळ पर्वतनी पासे, आव्यो यज्ञतोखार,
त्यां कुंडळपुर नामे नगर, महा रम्य शोभा सार। २।
त्यां अदितिना करणनां, कुंडळ पड्यां ते ठाम,
ते माटे ए नगरनुं पाड्युं, कुंडळपुर एवुं नाम। ३।
त्यां सुरथ नामे राय छे, श्रीरामनो महाभक्त,
वळी सत्यवादी धर्मपालक, जाणे सरवे जगत। ४।
ते राय केरा राज्यमां, सहु प्रजा महा धर्मिष्ठ,
स्वधर्म पाळे वरण चारे, को नहि पापिष्ठ। ५।
परद्रोह परत्रिय परनिंदा, परद्रव्य परहेलन,
तेनी वासना नव थाय स्वपने, एवां निरमळ मन। ६।

अध्याय—६१ (कुंडलपुर में घोड़े का आगमन, राजा सुरथ का उपाख्यान)

वहाँ से वह यज्ञीय घोड़ा (आगे) चला गया। समझिए कि उसके पीछे (-पीछे) समस्त सेना जा रही थी। सेवक जन उस घोड़े की बहुत सेवा किया करते थे। इस प्रकार करते-करते वह (घोड़ा) हिमालय के पास आ गया। १।

यज्ञ का वह घोड़ा हिमालय के पास आ गया। वहाँ कुण्डलपुर नामक एक नगर था। उसकी शोभा बहुत सुरम्य थी। २। उस स्थान पर वहाँ (पूर्वकाल में) अदिति के कानों के कुण्डल गिर गये थे। इसलिए इस नगर का नाम कुण्डलपुर पड़ गया। ३। वहाँ सुरथ नामक राजा था। वह श्रीराम का महान भक्त था। इसके अतिरिक्त समस्त जगत उसे सत्यवादी तथा धर्मपालक के रूप में जानता था। ४। उस राजा के राज्य में समस्त प्रजा बड़ी धर्म-निष्ठ थी। (उसमें) चारों वर्ण (के लोग) अपने-अपने धर्म का पालन किया करते थे। (वहाँ) कोई भी पापी नहीं था। ५। (समस्त लोग) इस प्रकार निर्मल-मना थे कि किसी

अकाळ मृत्यु मरण नहि, कोने न पीडा रोग,
दुःखी दरिद्र नहि को पुरमां, भोगवे महा भोग। ७।
जमलोकमां कोई जाय नहि, एवां पुण्य प्राणी त्यांहे,
आयुष्य पूरण भोगवी, जाय विष्णुलोक ज मांहे। ८।
एक समे यमने कह्युं दूते, सुरथ केरुं चरित्र,
त्यां अमारो अधिकार नहि, सहु प्रजा पुण्य पवित्र। ९।
ते सुणी यम आश्चर्य पाम्या, थया संदेह त्यांहे,
मुनिवेष धरीने धर्म आव्या, कुंडळपुरनी मांहे। १०।
ते सुरथ रायनी सभामां, आविया तेणी वार,
त्यारे भूप ऊठी थयो ऊभो, कर्यो बहु सत्कार। ११।
सिंहासन पर बेसाडी, भूपे करी पूजाय,
मस्तक नमावी स्तवन कीधुं, बोलियो पछे राय। १२।
हे महापुरुष तमो पधार्या, करवा मुने पावन,
सत्संग सम त्रिलोकमां, नथी लाभ बीजो अन्य। १३।
माटे हरिकथानुं श्रवण मुजने, करावो महाराज,
जेथी टळे महा पाप जननां, थाय सरवे काज। १४।

को पर-द्रोह, पर-स्त्री, पर-निन्दा, पर-धन, दूसरे की उपेक्षा के विषय में कोई इच्छा स्वप्न (तक) में नहीं होती थी। ६। न किसी की अकाल मृत्यु होती थी, न किसी को कोई रोग पीड़ा पहुँचाता था। उस नगर में कोई भी दुःखी तथा दरिद्र नहीं था। वे सब बड़े-बड़े (सुखद) भोगों का उपभोग किया करते थे। ७। वहाँ के प्राणी इस प्रकार पुण्यवान थे कि (उनमें से) कोई भी यम-लोक में नहीं जाता था। वे पूर्ण आयु का भोग करके विष्णु-लोक ही में जाते थे। ८। एक समय एक दूत ने यम को सुरथ का चरित्र बताया (और कहा—) 'वहाँ हमारा कोई अधिकार नहीं है; समस्त प्रजा पुण्यवती तथा पवित्र (आचारवती) है।'। ९। यह सुनकर यम आश्चर्य को प्राप्त हो गया। उसे वहाँ इसमें सन्देह हो गया। (अतः) वह मुनिवेश धारण करके कुण्डलपुर के अन्दर आ गया। १०। उस समय यम सुरथ राजा की राजसभा में आ गया। तब वह राजा उठकर खड़ा हो गया और उसने उसका बहुत सम्मान किया। ११। (फिर) राजा ने उसे सिंहासन पर बैठाकर उसका पूजन किया और सिर झुकाकर उसकी स्तुति की। अनन्तर राजा बोला। १२। 'हे महा-पुरुष, आप मुझे पावन करने के लिए पधारे हैं। सत्संग के (लाभ के) समान कोई अन्य लाभ त्रिभुवन में नहीं है। १३। इसलिए हे महाराज,

त्यारे यम हसीने बोलिया, एम शुं कहो राजन ?
ए हरि ते वळी कोण छे ? तेनी शी कथा कीरतन ? । १५ ।
हरिकथा श्रवण थकी तमारुं, शुं थशे कल्याण ?
निज कर्मथी संसार सहु, भोगवे सुख दुःख जाण । १६ ।
पापे करीने नरक पामे, पुण्ये स्वर्गे जाय,
एम कर्मने वश जीव सहु, तो हरिथकी शुं थाय ? । १७ ।
कर्मे करी ब्रह्म थया, सत्यलोक पाम्या तेह,
कर्मे करीने सुरपति, स्वर्गनो राजा जेह । १८ ।
माटे यज्ञयाग करी तमो, नृप करो देव प्रसन्न,
तेणे मनवांछित सुख पामशो, जई रहेशो स्वर्गसदन । १९ ।
माटे हरिकथाथी श्रेय तमारुं, थवानुं शुं राय ?
जे काम्य कर्म करो सदा, भोगवो सुखसमुदाय । २० ।
एवां वचन सुणी यमराजनां, मन खेद पाम्यो भूप,
महा क्रोध करीने बोलियो, अल्या मूरख ब्राह्मणरूप । २१ ।
उत्तम जन्म धिक्कार तारो, धिक छे तुज धर्म,
तुं हरितणी निंदा करीने, श्रेष्ठ माने कर्म । २२ ।

मुझे हरि-कथा का श्रवण कराइए, जिससे लोगों के महापाप टल जाते हैं और समस्त कार्य (सिद्ध) हो जाते है।'। १४। तब यम हँसते हुए बोला, 'हे राजा, आप ऐसा क्यों कहते हैं ? फिर यह हरि कौन है ? उसकी कैसी कथा ? कैसा कीर्तन ? । १५ । उस हरि की कथा के श्रवण से आपका क्या कल्याण होगा ? समझिए कि समस्त संसार अपने कर्म से सुख अथवा दुःख का भोग करता है। १६ । वह पाप करके नरक को प्राप्त हो जाता है, तो पुण्य से स्वर्ग में जाता है। इस प्रकार समस्त जीव कर्म के अधीन होते हैं, तो हरि (कथा) से क्या ? । १७। कर्म करके ब्रह्मा ब्रह्मा हो गये और वे (उस प्रकार) सत्यलोक को प्राप्त हो गये, जिस प्रकार कर्म द्वारा सुरपति इन्द्र स्वर्ग के राजा हो गये हैं। १८। इसलिए हे राजा, आप यज्ञ-याग कीजिए और देवों को प्रसन्न कर लीजिए। उससे आप मनोवाञ्छित सुख को प्राप्त हो जाएँगे और जाकर स्वर्ग-सदन में रह सकेंगे। १९। इसलिए हे राजा, हरिकथा से आपका क्या श्रेय होता है ? यदि आप सदा काम्य कर्म करेंगे, तो सुख-समुदाय का उपभोग कर पाएँगे।'। २०। यमराज की ऐसी बातें सुनकर राजा (सुरथ) मन में खेद को प्राप्त हो गया। (फिर)वह बड़ा क्रोध करके बोला, 'अरे ब्राह्मण रूपधारी मूर्ख। २१। तेरे उत्तम (अर्थात् ब्राह्मण) जन्म को धिक्कार है, तेरे

अल्या विचारी जो वात ऊंडी, शुं बके ज्यम त्यम ?
तुं कर्मजड क़र्मने माने, मोक्ष थाशे क्यम ? । २३ ।
अल्या स्वर्गादिक जे कर्मनां फळ, नाशवंत निषेध,
क्षीण पुण्ये मृत्युलोके, पडे एम कहे वेद । २४ ।
वळी स्वर्गना विषयभोगने, तुं वखाणे अनुकूळ,
पण इंद्र ने शूकरतणुं सुख, ते समे समतुल्य । २५ ।
वळी इंद्र ब्रह्मा आद्य सरवे, अशाश्वत छे जाण,
अक्षर अखंड हरितणुं, पद सदा सुख निरवाण । २६ ।
भगवाननी भक्ति थकी, थया मुक्त जीव अपार,
ध्रुव प्रह्लाद विभीषण पाम्या, अखंड पद निरधार । २७ ।
श्रीवासुदेवनो त्याग करीने, उपासे अन्य देव,
मतिमंद गंगातट तृषित, जई कूप खणावे एव । २८ ।
वळी तीरथ व्रत जप होम तप, मख़ योग अध्ययन दान,
ते आचरतां हरिनाम लेतां, सफळ थाय निदान । २९ ।

धर्म को धिक्कार है, (जो) तू तो हरि की निन्दा करते हुए कर्म (-काण्ड) को श्रेष्ठ मान रहा है । २२ । अरे, गहराई से विचार कर देख ले । जैसा-वैसा (मनमाना) क्यों बक रहा है ? तू कर्म-जड़ (बनकर) कर्म (-क़ाण्ड का महत्त्व) मान रहा है । उससे मोक्ष कैसे (प्राप्त) होगा ? । २३ । अरे, स्वर्ग आदि जो कर्म के फल हैं, वे नाशवान हैं, (अतएव) निषिद्ध हैं । वेद ऐसा कहते हैं कि पुण्य के क्षीण होने पर (जीव फिर) मृत्युलोक में आ पड़ता है । २४ । इसके अतिरिक्त, तू अपने अनुकूल (समझकर) स्वर्ग के विषय-भोगों का बखान कर रहा है, परन्तु इन्द्र का और सूअर का वह (स्वर्गीय) सुख—उस समय दोनों सम-तुल्य होते हैं । २५ । इसके अतिरिक्त समझिए कि इन्द्र, ब्रह्मा आदि सब अशाश्वत हैं । अन्त में हरि के अक्षर अखण्ड पद (ही) सदा सुख के निर्माता होते है । २६ । भगवान (हरि) की भक्ति से असंख्यात जीव मुक्त हो गये हैं । ध्रुव, प्रह्लाद, (और) विभीषण निश्चय ही (उससे) अखण्ड पद को प्राप्त हो गये हैं । २७ । जो श्रीवासुदेव (हरि) का त्याग करके, किसी अन्य देवता की उपासना करता है, वह मति-मन्द (मानो) गंगा-तट पर प्यासा रह जाता है और कहीं अन्यत्र जाकर कुआँ ही खोदने लग जाता है । २८ । इसके अतिरिक्त हैं तीर्थ (-स्थल की यात्रा), व्रत, जप, होम, तप, यज्ञ, योग (-धारणा), (वेद आदि का) अध्ययन, दान । इनका आचरण करते हुए, श्रीहरि का नाम लेने से ही वे निश्चय ही (अन्त में) सफल हो जाते हैं । २९ । विना श्रीनारायण

श्रीनारायणना नाम विण, आचरे साधन जेह,
ऊगरे तेने केवळ श्रम, तुं साव घाती तेह । ३० ।
अच्युतने अर्पण कर्या विण, करे कृति अज्ञान,
ते सम्यक् फळ नव पामे, जेवुं भस्ममां अवदान । ३१ ।
भक्ति कल्पतरु कामधुक्, चिंतामणिथी वरिष्ठ,
ते इच्छित आपे सर्व सुख, वळी सदा अखंड बलिष्ठ । ३२ ।
एवा हरितणी निंदा करे, जे कर्मवादी मूढ,
यमकिंकर नाखे नरकमां, तेने मार मारे गूढ । ३३ ।
शुं करुं जो तुं विप्र छे, माटे धरुं पाछो पाय,
नहि तो बांधी मारुं मार, तुजने करुं घणी शिक्षाय । ३४ ।
तारुं मुख देखाडीश नहि मुने, ते घणी करी निंदाय,
एने काढी मूको पुर थकी, करी सेवकने आज्ञाय । ३५ ।
एवी टेक जोई राजातणी, ने थया धरम प्रसन्न,
पछी प्रगट कीधुं रूप पोते, पाम्या सहु दरशन । ३६ ।
अरे भूपति तुं माग्य वर कंई, मारी पासे आज,
जे इच्छा होये मन विषे, ते पूरुं मनोरथ काज । ३७ ।

के नाम के, जो साधना करता है, उसके लिए केवल (शारीरिक) श्रम ही शेष रह जाते हैं (उसकी साधना फल-हीन हो जाती है) । तू तो उसका नितान्त नाश-कर्ता है । ३० । कोई अज्ञान भगवान अच्युत को बिना अर्पण किये, कोई कृति करता हो, तो जिस प्रकार भस्म में अवदान (आहुति का द्रव्य डालना) व्यर्थ होता है, उस प्रकार उसकी वह कृति व्यर्थ हो जाती है और वह सम्यक् फल को प्राप्त नहीं होता है । ३१ । भक्ति कल्प-वृक्ष, कामधेनु, चिन्तामणि से बढ़कर है । वह समस्त इच्छित सुख प्रदान करती है । फिर वह सदा अखण्ड बलवती होती है । ३२ । जो मूढ़ कर्म (-काण्ड)-वादी इस प्रकार के हरि की (भक्ति की) निन्दा करता है, उसे यम के सेवक नरक में फेंक देते हैं और उसे गूढ़ रूप से मारते-पीटते हैं । ३३ । क्या करूँ, तू विप्र जो है । इसलिए तो मैं पाँव पीछे हटा रहा हूँ । नहीं तो मैं तुझे बाँधकर पीट देता, तुझे बड़ा दण्ड देता । ३४ । तू मुझे अपना मुँह न दिखाना, तूने (हरि की) बहुत निन्दा की है ।' (अनन्तर) उसने सेवकों को आज्ञा दी, 'इस नगर में से इसे बाहर निकाल दो' । ३५ । धर्म (यम) ने उस राजा की ऐसी प्रतिज्ञा देखी और वह प्रसन्न हो गया । फिर उसने अपने रूप को प्रकट कर दिया, तो सब उसके दर्शन को प्राप्त हो गये । ३६ । (तत्पश्चात् यम

हुं धर्मवासी स्वर्गनो, आव्यो जोवा तुज परीक्षाय;
धन्य धन्य छे तुंने भूपति, कुळ धन्य मात-पिताय । ३८ ।
तुज दरशने थाये पतित पावन, पामे मोक्ष निदान,
तारी भक्ति जोई थयो प्रसन्न हुं, माटे माग्य तुं वरदान । ३९ ।
त्यारे सुरथ कहे श्रीरामजीनां, पामुं हुं दर्शन,
त्यां लगी मारी देह पडे नहि, सुणो यमराजन । ४० ।
मुज पुर विषे यमयातना नहि, सर्वे पामे सुख,
वळी शोक रोग वियोग नहि, भोगवे नहि को दुःख । ४१ ।
एवां वचन सुणी राजातणां, ते थया धर्म प्रसन्न,
अस्तु कही निज लोकमां, पछी गया यमराजन । ४२ ।
एवो सुरथ राजा सत्यवादी, भक्त हरिनो जाण,
ते पुरतणा उपवन विषे, आवियो यज्ञकेकाण । ४३ ।
सेवके जई कह्युं रायने, त्यारे हरख्यो मन अपार,
श्रीरामचंद्रनां थशे दर्शन, कर्यो एम विचार । ४४ ।

बोला—) 'हे राजा, आप मुझसे आज कुछ वर तो माँग लीजिए। आपके मन में जो इच्छा हो, उस मनोरथ को, इच्छित कार्य को मैं पूर्ण कर देता हूँ। ३७। मैं धर्म (यम) स्वर्ग का निवासी हूँ। आपकी परीक्षा लेने के लिए (यहाँ) आ गया हूँ। हे भूपति, आप धन्य हैं, धन्य हैं। आपका कुल तथा माता-पिता धन्य हैं। ३८। पतित जन आपके दर्शन से पावन हो जाएगा और अन्त में मोक्ष को प्राप्त हो जाएगा। मैं आपकी भक्ति को देखकर प्रसन्न हो गया हूँ। इसलिए, आप (मुझसे) वरदान माँग लीजिए'। ३९। तब सुरथ बोला, 'मैं श्रीरामजी के दर्शन को प्राप्त हो जाना चाहता हूँ। हे यमराज, सुनिए, तब तक मेरी देह न छूट जाए। ४०। मेरे नगर के अन्दर यम-यातना न हो, सब (लोग) सुख को प्राप्त हो जाएँ। इसके अतिरिक्त (उसमें किसी को) कोई शोक, रोग तथा (प्रियजनों का) वियोग न हो, कोई भी दुःख को न भोगे।' ४१। राजा की ऐसी बातें सुनकर धर्म (यम) प्रसन्न हो गया। '(तथा) अस्तु' कहकर यमराज फिर अपने लोक में चला गया। ४२। राजा सुरथ को ऐसा सत्यवादी तथा भगवान हरि का भक्त समझिए। उस (कुण्डलपुर नामक) नगर के उपवन में वह यज्ञीय घोड़ा आ गया। ४३। तो सेवक ने जाकर राजा से कह दिया, तब वह मन में अपार आनन्दित हो उठा। उसने ऐसा विचार किया कि (अब) श्रीरामचन्द्र के दर्शन होंगे। ४४। अनन्तर राजा ने उस घोड़े को बाँध लिया और नगाड़े

पछी अश्व बांध्यो भूपति, वजडावियां निशान,
रणस्थंभ रोप्यो युद्ध करवा, शूर थया सावधान। ४५।

वलण (तर्ज बदलकर)

ते शूर थया सावधान सरवे, बांध्यो यज्ञतोखार रे,
त्यारे शत्रुघने सुमंतने, पूछियुं तेणी वार रे। ४६।

बजवा दिये। (फिर) युद्ध करने के लिए उसने रण-स्थम्भ रोप लिया, शूरवीर सावधान हो गये। ४५।

समस्त शूरवीर सावधान हो गये, (क्योंकि राजा सुरथ ने) घोड़े को बाँध लिया था। तब उस समय शत्रुघ्न ने सुमन्त से पूछा। ४६।

* * *

अध्याय—६२ (राजा सुरथ की राजसभा में दूतकर्म के लिए अंगद का आगमन)

राग मारु

हावे सुमंतने शत्रुघन पूछे, कोणे बांध्यो यज्ञतोखार ?
ए भूपतिनुं शुं पराक्रम, कहो मुजने विस्तार। १।
त्यारे सुमतिए ते सुरथ रायनुं, कह्युं चरित्र विस्तारी,
अरे शत्रुघन ए समान नथी, बीजो नृप बळधारी। २।
श्रीरामचंद्रनो परम भक्त वळी, सत्यसिंधु रणधीर,
छे दश पुत्र अति बळिया रायने, रणपंडित महावीर। ३।
रिपुजित दुरवार प्रतापी, बळ-मोहक चंपक एव,
हरयक्ष भूरिदेह सुरथी, मोदक ने सहदेव। ४।

अध्याय—६२ (राजा सुरथ की राजसभा में दूतकर्म के लिए अंगद का आगमन)

अब शत्रुघ्न ने सुमन्त से पूछा, 'यज्ञ के घोड़े को किसने बाँध लिया है ? उस राजा का क्या परिचय है ? मुझसे विस्तार से कहिए'। १। तब सुमन्त ने सुरथ राजा का चरित्र विस्तार करते हुए कह दिया। (वह बोला—) 'हे शत्रुघ्न, कोई भी दूसरा राजा इसके समान बलशाली नहीं है। २। वह श्रीरामचन्द्र का परम भक्त है। इसके अतिरिक्त वह सत्य-सिन्धु है, रणधीर है। इस राजा के अति बलवान, रण-पण्डित महावीर दस पुत्र हैं—(वे हैं) रिपुजित, दुर्वार, प्रतापी, बल-मोहक, चम्पक, हरयक्ष, भूरिदेह, सुरथी, मोदक और सहदेव। ३-४। वे दसों दिशाओं को

ए दशे दिशाने जीते एवा, पुत्र दशे बळवान,
वळी ते करतां महा बळियो कहावे, भूपति इंद्र समान। ५ ।
हुं जाणुं छुं तमो सघळे जीत्या, पण ए नृप नहि जिताय,
जो जुद्ध कर्या विना अश्व आपे, कंई एवा करीए उपाय। ६ ।
माटे साम दाम भेदे करी लीजे, श्यामकरण आणी वार,
वालीपुत्रने विष्टि करवा, मोकलीए निरधार। ७ ।
हावे मंत्रीतणां एवां वचन सुणीने, विचार्युं शत्रुघन,
पछे अंगदने पासे तेडीने, बोल्या हेतवचन। ८ ।
अरे वीर, जा कुंडळपुरमां, सुरथ रायनी पास,
विवेक करीने विष्टि करजे, देखाडी अमारो त्रास। ९ ।
तुं वचन बोल्यामां परम चतुर छे, माटे जा निरधार,
ज्यम जुद्ध कर्या विण नमे भूपति, आपे यज्ञतोखार। १० ।
एवां वचन सुणीने अंगद बोल्यो, समरी सीताकंथ,
कुंडळपुरनी शोभा जोईने, चकित थयो बळवंत। ११ ।
पछे राजसभामां आव्यो तत्क्षण, पोते वालीकुमार,
सुरथ राये घणुं मान देईने, बेसाड्यो तेणी वार। १२ ।

जीत सकते हैं— ऐसे बलवान हैं वे दसों पुत्र। इसके अतिरिक्त, उनसे भी अधिक वह स्वयं इन्द्र के समान महा बलवान कहाता है। ५। मैं जानता हूँ कि आपने सबको जीत लिया है, फिर भी (आप से) यह राजा नहीं जीता जा सकेगा। (इसलिए) यदि हो सके तो ऐसा उपाय कीजिए कि वह बिना युद्ध किये घोड़ा (लौटा) दे। ६। इसलिए, इस समय, साम, दाम अथवा भेद से उस श्यामकर्ण घोड़े को (प्राप्त कर) लीजिए। निश्चय ही बाली-पुत्र अंगद को मध्यस्थता करने के लिए भेज दें।'। ७। अब मन्त्री (सुमन्त) की ऐसी बातें सुनकर शत्रुघ्न ने विचार किया और अनन्तर अंगद को अपने पास बुला लाकर वह उससे स्नेह-भरी बात बोला। ८। 'हे भाई, कुण्डलपुर में राजा सुरथ के पास जाओ और हमारा रोबदाब दिखाते हुए विवेक-पूर्वक मध्यस्थता करना। ९। तुम बातें करने में परम चतुर हो। इसलिए निर्धार-पूर्वक चले जाओ। देखो, किस प्रकार बिना युद्ध किये वह राजा झुक जाए और यज्ञ का घोड़ा (लौटा) दे।'। १०। ऐसी बातें सुनकर सीता-पति राम का स्मरण करते हुए अंगद चला गया। वह बलवान (कपि) कुण्डलपुर की शोभा देखकर चकित हो गया। ११। अनन्तर बालीकुमार स्वयं तत्क्षण राज-सभा में आ गया, तो उस समय राजा सुरथ ने उसके प्रति आदर दिखाते

पछे मधुर वचने भूपति बोल्यो, कोण तमो कपिराज ?
कोना पुत्र ? शुं नाम तमारुं ? आव्या छो शें काज ? । १३ ।
त्यारे अंगद कहे : सुणो भूपति, हुं वाली केरो तन,
श्रीरामचंद्रनो किंकर हुं छुं, ए मारा स्वामीन । १४ ।
हुं सीतापतिनो आज्ञाकारी, अंगद मारुं नाम,
ते प्रभु केरो यज्ञतुरी नृप, आव्यो आणे ठाम । १५ ।
शत्रुघन ते पूंठळ छे, श्रीरामचंद्रना वीर,
अन्य घणा पृथ्वीना राजा, साथे छे रणधीर । १६ ।
अनेक देशे जीती जश लीधो, वश कीधा सहु राय;
श्रीरामचंद्रनो प्रताप जाणी, भूपति नमिया पाय । १७ ।
ते शत्रुघन अहीं आव्या छे, ऊतरिया उपवन,
असंख्य सैन्य साथे छे वळी, पृथ्वीना राजन । १८ ।
भरतपुत्र पुष्कल महा वळियो, सुग्रीव ने हनुमंत,
विभीषण आदे जोद्ध घणा ते, काळनो आणे अंत । १९ ।
त्यां वात सुणी जे सुरथ राये, बांध्यो छे तोखार,
त्यारे रामबंधुए मुने मोकल्यो, कहेवा आणे ठार । २० ।

हुए उसे बैठा लिया । १२ । अनन्तर राजा मधुर शब्दों में (स्वर में) बोला, 'हे कपिराज, आप कौन है ? किसके पुत्र हैं ? आपका क्या नाम है ? आप किस काम से आये हैं ? ' । १३ । तब अंगद बोला, 'हे भूपति, सुनिए । मैं वाली का पुत्र हूँ, श्रीरामचन्द्र का सेवक हूँ— वे मेरे स्वामी हैं । १४ । मैं सीतापति (श्रीराम) का सेवक हूँ । मेरा नाम अंगद है । हे राजा, उन प्रभु का यज्ञीय घोड़ा इस स्थान पर आ गया है । १५ । श्रीरामचन्द्र के बन्धु शत्रुघ्न इस (अश्व) के पीछे (-पीछे आ गये) हैं । उनके साथ में पृथ्वी के अनेक अन्य रणधीर राजा हैं । १६ । उन्होंने अनेक देशों को जीतकर यश प्राप्त कर लिया है, समस्त राजाओं को वश में कर लिया है । श्रीरामचन्द्र के प्रताप को जानते हुए वे राजा उनके (शत्रुघ्न के) चरणों को नमस्कार कर चुके हैं । १७ । (ऐसे) वे शत्रुघ्न यहाँ आ गये हैं और उपवन में ठहर गये हैं । उनके साथ में अनगिनत सेना है, उसके अतिरिक्त पृथ्वी के (अनेक) राजा हैं । १८ । महा बलवान भरत-पुत्र पुष्कल तथा सुग्रीव और हनुमान, विभीषण आदि अनेकानेक योद्धा साथ में (आये) है । वे काल (तक) का अन्त ला सकते हैं । १९ । वहाँ उन्होंने सुना कि राजा सुरथ ने यज्ञ के घोड़े को बाँध लिया है, तब राम के बन्धु (शत्रुघ्न) ने मुझे (आपसे)

तमो रामचंद्रना परम भक्त छो, धरम तणा ध्वजरूप,
माटे विरोध करवो नहि घटे तमने, जुओ विचारी भूप । २१ ।
शत्रुघन मन एम विचारे, रामभक्त ए राय,
ते साथे जुद्ध करीए तो, हरिदास तणो द्रोह थाय । २२ ।
माटे अश्व आपीने मळो तो सारुं, वारु नहि विरोध,
ते माटे मुजने मोकलियो, करवा तमने बोध । २३ ।
तमो अश्व आपीने पाये लागो, शत्रुघनने आज,
स्वागत सेवा करो सर्वनी, थाशे रूडां काज । २४ ।
एवां अंगद केरां वचन सुणीने, हसियो सुरथ राय,
अरे वालीनंदन धन्य तुने, तुं चतुर घणो कहेवाय । २५ ।
पण जुओ विचारी धरम अमारो, क्षत्री केरो आज,
जो जुद्ध कर्या विना अश्व आपुं तो, लागे कुळमां लाज । २६ ।
गुरु शिष्य स्वामी सेवक, वळी पिता पुत्र ने वीर,
ते धर्म राखवा माटे क्षत्री, जुद्ध करे रणधीर । २७ ।
जो मळवुं होत मारे पहेलुं तो, बांधत शाने अश्व ?
हावे मारी हांसी थाये, जो मळुं मूकी गर्व । २८ ।

कहने के लिए इस स्थान पर भेज दिया है । २० । आप रामचन्द्र के परम भक्त हैं, धर्म के ध्वज-स्वरूप हैं । इसलिए आपके लिए (उनका) विरोध करना उचित नहीं है । हे राजा, विचार करके देखिए । २१ । शत्रुघ्न मन में ऐसा विचार कर रहे हैं कि ये राजा राम-भक्त हैं; यदि इनके साथ युद्ध करें, तो हरि के दास के प्रति वह विद्रोह होगा । २२ । इसलिए आप यदि अश्व (लौटा) देते हुए उनसे मिलें, तो अच्छा हो जाएगा । विरोध (करना) अच्छा नहीं है । इसलिए उन्होंने मुझे आपका उद्बोधन करने के लिए भेज दिया है । २३ । घोड़ा (लौटा) देते हुए आप शत्रुघ्न के आज ही पाँव लग जाइए और सबका स्वागत तथा सेवा कीजिए, तो अच्छा काम हो जाएगा ' । २४ । अंगद की ऐसी बातें सुनते ही राजा सुरथ हँस पड़ा । (फिर वह बोला—) ' हे बाली-नन्दन तुम धन्य हो । तुम तो बहुत चतुर कहाते हो । २५ । फिर भी आज हमारे क्षत्रिय के धर्म का विचार करके देखो । यदि मैं बिना युद्ध किये अश्व (लौटा) दूं, तो (मेरे) कुल में लज्जा अर्थात् अपकीर्ति का कलंक लग जाएगा । २६ । गुरु हो या शिष्य, स्वामी हो या सेवक, फिर पिता हो, पुत्र अथवा बन्धु हो, रणधीर क्षत्रिय अपने उस (क्षात्र-) धर्म का निर्वाह करने के लिए (उससे भी) युद्ध करता है । २७ । यदि मुझे

माटे अंगद, तुं जई शत्रुघनने, कहे हवडां तत्काळ,
भाई सावधान थाओ जुद्ध करवा, मूकी आळपंपाळ। २९।
तमो रविवंशमां जन्म धरी, शुं कायर थाओ आम ?
वळी क्षत्री केरो मोक्ष धरम छे, करवो जे संग्राम। ३०।
अरे अंगद चतुराई तारी, जाणी में निरवाण,
पण जुद्ध कर्या विण अश्व न आपुं, कहेजे सत्य प्रमाण। ३१।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

जईने कहे तुं शत्रुघनने, एम नहि आपुं केकाण रे,
एवा वायक सुणी सुरथ राजानां, पछे अंगद बोल्यो वाण रे। ३२।

उनसे पहले ही मिलना होता, तो इस अश्व को क्यों बाँधता ? अब अभिमान को छोड़कर यदि मैं उनसे मिल जाऊँ, तो मेरी हँसी हो जाएगी। २८। इसलिए हे अंगद, तुम अभी तत्काल जाकर शत्रुघ्न से कहना—भाई मिथ्या आश्वासन को छोड़कर युद्ध करने के लिए सावधान हो जाइए। २९। आप रवि-कुल में जन्म लेने पर भी यहाँ कायर क्यों हो रहे हैं ? फिर क्षत्रिय का संग्राम करना ही मुख्य धर्म है। ३०। हे अंगद, मैंने निश्चय ही तुम्हारी चतुराई को जान लिया है। फिर भी यह सत्य प्रमाणित मानकर कह देना कि मैं बिना युद्ध किये घोड़ा नहीं दूँगा। ३१।

तुम जाकर शत्रुघ्न से कह दो, मैं ऐसे ही घोड़ा नहीं दूँगा।' राजा सुरथ की ऐसी बातें सुनने के पश्चात् अंगद ने यह बात कही। ३२।

*   *   *

अध्याय—६३ (सुरथ-अंगद-संवाद)

राग धन्याश्री

अंगद बोल्यो, सुणो राजन जी,
तमो निर्बळ जाण्या शत्रुघन जी।
नथी जोयां तमे एमनां काम जी,
जे धरम स्थापवा प्रगट्या राम जी। १।

अध्याय—६३ (सुरथ-अंगद-संवाद)

अंगद बोला, 'हे राजन्, सुनिए। आपने शत्रुघ्न को बलहीन समझ लिया है। आपने उन प्रभु राम के कार्य नहीं देखे हैं, जो धर्म की स्थापना करने के लिए (भूमि पर) प्रकट हो गये हैं। १।

ढाळ

श्रीराम पूरण ब्रह्म प्रगट्या, हरवा भूमिभार,
वळी धर्मनुं स्थापन करवा, दुष्टनो संहार। २।
जेणे मार्या सुबाहु ताडिका, खर दूखर त्रिशिरा जेह,
वळी रावण केरा कुळतणो, संहार कीधो तेह। ३।
ते रामना बंधु शत्रुघन, महाबळी रणधीर,
तेनुं पराक्रम श्रीमुखे, नित्य वखाणे रघुवीर। ४।
जेणे मारियो राक्षस लवणासुर, यमुनातट मोझार,
देश मथुरां कर्यो निरभे, सुखी लोक अपार। ५।
वळी अश्वरक्षा अर्थ जीत्या, पृथ्वीना राजन,
तेने निर्बळ कहो तमो; राय शुं विचारी मन ?। ६।
एक भरतजीनो पुत्र पुष्कल, कोणे नव जिताय,
वळी मारुति महावीर जे, करे काळने शिक्षाय। ७।
तो तमारो शो आशरो ? क्षणमांहे जीते भूप,
पण भक्त जाणी रामना, सत्यवादी धरम स्वरूप। ८।
बाकी जुद्धे नहि जीतो तमो, राघवीने राजन,
माटे अश्व आपी पाये लागो, मानो मारुं वचन। ९।

पूर्णब्रह्म श्रीराम भूमि का (पाप-) भार दूर करने के लिए, फिर धर्म की स्थापना करने के लिए तथा दुष्टों का संहार करने के लिए प्रकट हो गये हैं। २। जिन्होंने सुबाहु, ताड़का, खर-दूषण-त्रिशिरा को मार डाला, इसके अतिरिक्त जिन्होंने रावण के कुल का संहार कर दिया, उन राम के महाबली रणधीर शत्रुघ्न बन्धु हैं उनके पराक्रम का बखान रघुवीर राम अपने श्रीमुख से नित्य किया करते हैं। ३-४। जिन्होंने यमुना-तट पर लवणासुर राक्षस को मार डाला, और मथुरा देश को निर्भय तथा लोगों को अपार सुखी कर दिया, इसके अतिरिक्त जिन्होंने अश्व की रक्षा करने के लिए पृथ्वी के राजाओं को जीत लिया, हे राजा, मन में क्या सोचते हुए उन्हें आप बल-हीन कह रहे हैं। ५-६। (उनके साथ) भरतजी के पुष्कल नामक एक पुत्र हैं, जो किसी के द्वारा जीते नहीं जा सकेंगे। उनके अतिरिक्त महावीर हनुमान हैं, जो काल (तक) को दण्ड दे सकते हैं। ७। तो (फिर) आपका क्या आधार है ? हे राजा, वे आपको क्षण में जीत लेंगे। फिर भी आपको राम के भक्त तथा सत्यवादी और धर्म-स्वरूप समझते हुए उन्होंने यह सन्देश भेजा है। ८। हे राजा, शेष यह है कि आप युद्ध में राघवियों (रघु-कुलोत्पन्नों) को नहीं

एवां वायक वालीपुत्रनां सुणी, बोल्यो सुरथ राय,
अरे अंगद, नोहे रावणसभा, जे रोपे जईने पाय। १०।
आ तो जुद्ध करीने जीतवुं, सन्मुख रही निरधार,
एम छूटशो नहि छळ करे, जाशे तमारो भार। ११।
में दर्शन करवा रामनुं, पण कर्युं सत्य वचन,
माटे अश्व अमथो न आपुं, जो पडे मारुं तन। १२।
रणमांहे मूरछित करुं सहुने, जुद्ध थकी ते ठाम,
श्रीरामने आंहां तेडावुं तो, सुरथ मारुं नाम। १३।
कदापि रण मांहे जो हुं, मरण पामीश आज,
तोय पण सद्गति थाशे, रूडी कीर्ति काज। १४।
में मळवा रघुवीरने, कपि राखी छे आ देह,
ते प्रभु पण पाळशे मारुं, जाणी साचो स्नेह। १५।
सुण अंगद ए सत्य वचन मारुं, प्रतिज्ञा करुं आज,
रण मांहे जीती सर्वने, तेडावुं श्रीमहाराज। १६।
नथी बोलतो अभिमानथी, हुं कहुं निर्मळ मन,
हे भक्तवत्सल प्रभु मुजने, आपशे दरशन। १७।

जीत सकते। इसलिए मेरी बात मान जाइए और अश्व देकर उनके पाँव लग जाइए।'। ९। बाली-पुत्र अंगद के ऐसे वचन सुनकर राजा सुरथ बोला, 'हे अंगद, यह कोई रावण की वह सभा तो नहीं है, जो तुम जाकर पाँव रोप रहे हो। १०। आ जाना और सम्मुख रहकर युद्ध करके जीत लेना। तुम ऐसे नहीं छूट पाओगे। तुम छल-प्रपंच कर रहे हो। तुम्हारा बल निकल जाएगा। ११। मैंने राम के दर्शन करने का प्रण कर लिया है—यह बात सत्य है। इसलिए यद्यपि मेरी देह छूट जाए, तो भी ऐसे ही घोड़ा न दूँगा। १२। मैं युद्ध-भूमि में उस स्थान पर युद्ध करके सबको मूर्च्छित कर दूँगा और यहाँ श्रीराम को लिवा लाऊँगा, तो ही मेरा नाम सुरथ (सार्थक) है। १३। कदाचित् युद्ध-भूमि में यदि मैं आज मृत्यु को प्राप्त हो जाऊँ, तो भी मेरी सद्गति हो जाएगी, इस कार्य से अच्छी कीर्ति हो जाएगी। १४। हे कपि, श्रीरघुवीर से मिलने के लिए मैंने इस देह को (धारण कर) रखा है। मेरे सच्चे स्नेह को जानकर प्रभु मेरे प्रण का निर्वाह कर लेंगे। १५। हे अंगद, सुन लो। मेरा यह वचन सत्य है, मैं आज प्रतिज्ञा कर रहा हूँ, युद्ध-भूमि में सबको जीतकर श्रीमहाराज राम को लिवा ले आऊँगा। १६। मैं यह अभिमान से नहीं बोल रहा हूँ, मैं निर्मल मन से कह रहा हूँ। वे भक्त-वत्सल प्रभु मुझे

माटे वालीनंदन, जई कहो, तमो शत्रुघनने एह,
हावे जुद्ध कर्या विण पामशो नहि, यज्ञवाजी जेह । १८ ।
एवां निश्चे वचन अंगद सुणी, कर्यो सुरथने परणाम,
त्यां थकी ऊठी आवियो, छे सैन्य जेणे ठाम । १९ ।
सहु सभा सुणतां शत्रुघनने, कह्युं ते वरतंत,
नहि अश्व आपे जुद्ध कर्या विण, राय छे बळवंत । २० ।
आश्चर्य पाम्यां सर्व को, सुणी सुरथनो संदेश,
पछी सज्ज थया संग्राम करवा, सकळ सैन्य नरेश । २१ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

नरेश सहु तत्पर थया, जुद्ध करवा तेणी वार रे,
वाजित्र वागे अति घणां, थाये शस्त्रनो चळकार रे । २२ ।

दर्शन देंगे । १७ । इसलिए, हे बाली-नन्दन, जाकर तुम शत्रुघ्न से यह कह दो—यह जो यज्ञीय घोड़ा है, उसे आप बिना युद्ध किये (मुझसे पुनः) प्राप्त नहीं कर पाएँगे ' । १८ । अंगद ने ऐसी निश्चय-युक्त बातें सुनकर सुरथ को प्रणाम किया और उठकर वहाँ से (उस स्थान पर) आ गया जहाँ (शत्रुघ्न की) सेना थी । १९ । समस्त सभा के सुनते रहते, उसने शत्रुघ्न से वह समाचार कह दिया (और बताया—) ' वह राजा बलवान है । वह बिना युद्ध किये घोड़ा नहीं देगा । ' । २० । सुरथ के उस सन्देश को सुनकर सब कोई आश्चर्य को प्राप्त हो गये । अनन्तर समस्त सेनाएँ और राजा युद्ध करने के लिए सज्ज हो गये । २१ ।

समस्त राजा उस समय युद्ध करने के लिए तैयार हो गये । अति बहुत वाद्य बजने लगे और शस्त्रों की चमकाहट होने लगी । २२ ।

* * *

अध्याय—६४ (सुरथ-शत्रुघ्न-संग्राम और पुष्कल का बन्दी हो जाना)

राग सोरठ

राय सुरथ साथे जुद्ध करवा, चढ्या शत्रुघन,
छे वीर शूरा वेश पूरा, पृथ्वीना राजन । १ ।

अध्याय—६४ (सुरथ-शत्रुघ्न-संग्राम और पुष्कल का बन्दी हो जाना)

शत्रुघ्न राजा सुरथ से युद्ध करने के लिए चढ़ दौड़ा । मानो शौर्य ही उस वीर (शत्रुघ्न) के रूप में पूर्णतः प्रकट था और उसके साथ पृथ्वी

चतुरंग दळ हय गज पदाति, रथ तणो नहि पार,
धजा पताका फरफरे, जाणे विद्युतना चळकार। २।
हावे कुंडळपुरपति चढ्यो पोते, साथे निज सेन्याय,
आगळ चढ्या दश पुत्र शूरा, रह्या पूंठळ राय। ३।
वाजित्र वागे अति घणां ते, ऊभे दळ मोझार,
महा जोद्धनां पदप्रहारथी, पृथ्वी सहे नहि भार। ४।
सिंहनाद करता सैन्यमां ते, सामासामी शूर,
एम सुरथने श्रीरामनुं दळ, मळ्युं सागरपूर। ५।
बिरदावळी बंदीजन बोले, ऊभे कुळनी ख्यात,
राग सिंधु गाय गुणीजन, आलापी स्वर सात। ६।
हावे थवा मांड्युं जुद्ध परस्पर, करे मारोमार,
घाय मारे शूर, थाये शस्त्रना चळकार। ७।
रथे रथ ने गजे गज, एम लढे भेरु जोड,
महारथी सामा महारथी, मन सकळ भरिया कोड। ८।

के (अन्य) राजा थे। १। साथ में हय (-दल), गज (-दल), पदाती-दल (और) रथ-दल अर्थात् (जो) चतुरंग दल था, उसकी कोई गिनती ही नहीं थी। ध्वज और पताकाएँ फहर रही थीं, मानो बिजली का ही चमकारा हो रहा हो। २। अब कुण्डलपुर का स्वामी (राजा सुरथ) स्वयं चढ़ दौड़ा। उसके साथ में उसकी अपनी सेना थी। उसके शूर दसों पुत्र आगे चढ़ दौड़े, तो (स्वयं) राजा पीछे रह गया। ३। उभय दलों में अत्यधिक वाद्य बज रहे थे। महायोद्धाओं के पाँवों के आघात से पृथ्वी उनके भार को सहन नहीं कर रही थी। सेनाओं में आमने-सामने (खड़े होकर) शूर (योद्धा) सिंह-नाद कर रहे थे। इस प्रकार श्रीराम की सेना मानो समुद्र के ज्वार-सी सुरथ (की सेना) से मिल गयी। ४-५। बन्दीजन दोनों के कुलों की ख्याति सूचित करनेवाली बिरदावलियाँ बोल रहे थे, तो गुणीजन (गायक कलाकार) सातों सुरों में अलापते हुए सिन्धु राग में अर्थात् सागर के-से गम्भीर स्वर में गा रहे थे। ६। अब परस्पर युद्ध होने लगा। वे आघात पर आघात कर रहे थे। (एक-दूसरे पर) शूर (-वीर प्रतिद्वन्द्वी योद्धा) प्रहार कर रहे थे। शस्त्रों का चमकारा हो रहा था। ७। रथ, रथ से (अर्थात् रथी, रथी से) और हाथी, हाथी से (अर्थात् हाथी पर बैठा हुआ योद्धा हाथी पर बैठे हुए योद्धा से)—इस प्रकार (प्रतिद्वन्द्वी योद्धाओं के) द्वन्द्वी जोड़े लड़ रहे थे। महारथी के सामने विरोध में महारथी लड़ने लगे। सबके मन की हविस

वळी रायना दश पुत्र वढता, वीर महा समरथ,
एक एकना त्यां अड्या आवी, सामासामी रथ। ९।
हावे मोदक सामो कुशध्वज, विमद ने रिपुजित,
पुष्कल ने चंपक वढे, सुरथी सुबाहु अजित। १०।
दुरवार ने लक्ष्मीनिधि, बळ-मोहक अंगद एव,
प्रतापाढ्य ने प्रतापी, सत्यवान ने सहदेव। ११।
हरयक्ष ने नीलरत्न राजा, वढे तेणी वार,
भूरिदेह ने वीरमणि ते, करे जुद्ध अपार। १२।
एम दशे जण पुत्र सामा, करे महा संग्राम,
ते समेनुं जुद्ध जोईने, महारथी मूके माम। १३।
विमान बेसी देव जोता, जुद्ध ते महाघोर,
बुंबाण करता मारता, स्वर तणो थाये शोर। १४।
सुसवाड चाले शरतणी, ज्यम अखंड मेघनी धार,
त्रंबाळु ज्यम घन गडगडे, असि तडितना चळकार। १५।
शूरने अंगे चोटियां शर, अमित शोभे आम,
ज्यम वर्षाऋतुमां कळाकार, नाचता ठामोठाम। १६।

पूरी हो रही थी। ८। इसके अतिरिक्त राजा के वीर महासमर्थ दसों पुत्र लड़ रहे थे। वे वहाँ एक-दूसरे के आमने-सामने रथों में आते हुए अड़ गये। ९। अब मोदक के सामने विरोध में कुशध्वज था। फिर रिपुजित और विमद लड़ रहे थे। पुष्कल और चम्पक तथा सुरथी अजित सुबाहु के साथ लड़ रहे थे। १०। दुर्वार और लक्ष्मीनिधि, बलमोहक और अंगद, प्रतापाढ्य और प्रतापी, सत्यवान और सहदेव, हरियक्ष और राजा नीलरत्न उस समय लड़ रहे थे। भूरिदेह और वीरमणि अपार युद्ध कर रहे थे। ११-१२। इस प्रकार (सुरथ राजा के) दसों जने पुत्र (अपने-अपने प्रतिद्वन्द्वी के) विरोध में महा संग्राम कर रहे थे। उस समय के उस युद्ध को देखकर महारथी धीरज खो बैठे थे। १३। देव विमानों में बैठकर उस महाघोर युद्ध को देख रहे थे। वे (योद्धा एक-दूसरे को) मारते-मारते चीख-चीत्कार कर रहे थे। उनके स्वरों से कोलाहल हो रहा था। १४। जिस प्रकार मेघ की अविरत धारा चलती हो, उस प्रकार (अविरत) चलनेवाले शरों की (वृष्टि से) साँय-साँय ध्वनि हो रही थी। धनुष की टंकार मेघों की गड़गड़ाहट जैसी हो रही थी। तलवारों से विद्युत् का-सा चमकारा हो रहा था। १५। शूर योद्धाओं के अंग में बाण धँस रहे थे, जो (चलते-फिरते समय) असीम रूप से यहाँ

शोणितनी सरिता वही गज, रथ तणाया जाय,
भूत भैरव भक्ष करे, जोगणी नाचे गाय। १७।
हावे चंपक ने पुष्कल वढे छे, बंन्यो ए महावीर,
को पाछो पग मूके नहि, एवा महारथी रणधीर। १८।
पुष्कल सुत ते भरतनो, रायनो चंपक नाम,
तेनुं जुद्ध जोईने देव नाठा, मूकी मननी हाम। १९।
सहु जोद्ध जोता चकित थई, संग्राम मूकी त्यांहे,
एक एकथी नव ओसरे, एवा राजकुंवर रणमांहे। २०।
अस्त्रविद्याए समान बंन्यो, ऊतर्या जेणी वार,
त्यारे सुरथनो सुत कोपियो, कर्यो धनुषनो टंकार। २१।
गुरुस्मरण करीने शर चढाव्युं, दीप्तमान प्रचंड,
आकरण सुधी खेंचियुं, महाबळ करी कोदंड। २२।
पछी चंपके रामास्त्र मूक्युं, मंत्र भणी तेणी वार,
तेणे पुष्कलने बंधन कर्यो, त्यारे हवो हाहाकार। २३।

शोभायमान हो रहे थे। मानो, वर्षा ऋतु में स्थान-स्थान पर मोर नाच रहे हों। १६। रक्त की नदी बहने लगी। उसमें हाथी और रथ बहते हुए जा रहे थे। भूत और भैरव (प्रेतों को) भक्षण कर रहे थे। योगिनियाँ नाच और गा रही थीं। १७। अब चम्पक और पुष्कल लड़ रहे थे। वे दोनों महावीर थे। उनमें से कोई भी पाँव पीछे नहीं हटा रहा था। ऐसे थे वे रणधीर महारथी। १८। पुष्कल भरत का पुत्र था, तो वह राजा (सुरथ) का चम्पक नामक पुत्र था। उनके युद्ध को देखते हुए, मन का धैर्य खोकर देव भाग गये। १९। समस्त योद्धा वहाँ युद्ध छोड़कर अर्थात् लड़ना बन्द करके चकित होकर (पुष्कल-चम्पक नामक योद्धाओं को) देख रहे थे। इस प्रकार (उनमें से) कोई भी राजकुमार एक-दूसरे से पीछे नहीं हट रहा था। २०। जिस समय अस्त्र-विद्या में वे दोनों सम-समान उतर गये (सिद्ध हो गये), तब सुरथ का पुत्र (चम्पक) क्रुद्ध हो उठा और उसने धनुष की टंकार कर दी। २१। उसने अपने गुरु का स्मरण करते हुए एक प्रचण्ड दीप्तिमान (तेजस्वी) बाण चढ़ा लिया। और अत्यधिक बल से धनुष (की डोरी) को आकर्ण, अर्थात् कान तक खींच लिया। २२। अनन्तर उस समय मन्त्र पढ़कर चम्पक ने रामास्त्र चला दिया और उससे पुष्कल को जकड़ लिया। तब हाहाकार मच गया। २३।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

हाहाकार हवो सेन्यामां, ज्यारे बांध्यो पुष्कल वीर रे,
रिपुदमन दुखिया थया, त्यांहां मूकी मननी धीर रे। २४।

* * *

जब वीर पुष्कल आबद्ध कर दिया गया, तब सेना में हाहाकार हो गया। (फलतः) शत्रुघ्न दुखी हो गया। उसने वहाँ मन का धीरज खो दिया। २४।

* * *

अध्याय—६५ (शत्रुघ्न की सेना का मूर्च्छित हो जाना)

राग मारु

ज्यारे बांध्यो पुष्कल बळवंत, त्यारे कोपे चढ्या हनुमंत,
चंपक सामा आव्या महावीर, जुद्ध करवा मांड्युं रणधीर। १।
मूक्यां चंपके बाण अनंत, भांगी नाख्यां ग्रही हनुमंत,
पछी वज्रतनु थया स्वस्थ, मार्युं ताडवृक्ष ग्रही हस्त। २।
ते छेद्युं चंपके मूकी बाण, सिंहनाद कर्यो निरवाण,
ग्रही मदोन्मत मातंग, मार्यो मारुतिए तेने अंग। ३।
चंपके शर मूकी उडाड्यो, पाछो हनुमंत उपर पाड्यो,
मार्या मारुतिने पांच बाण, रुदे मांहे वाग्या निरवाण। ४।

अध्याय—६५ (शत्रुघ्न की सेना का मूर्च्छित हो जाना)

जब बलवान पुष्कल बँध गया, तब हनुमान क्रोध से चढ़ दौड़ा। फिर वह रणधीर महावीर चम्पक के सामने आ गया और उसने युद्ध आरम्भ किया। १। चम्पक ने अनगिनत बाण चला दिये, तो हनुमान ने उन्हें पकड़कर भग्न कर डाला। अनन्तर वह वज्रतनु हनुमान सावधान हो गया और उसने हाथ में लेकर ताल वृक्ष (चम्पक पर) पटक दिया। २। चम्पक ने बाण चलाकर उसे छेद डाला और अन्त में सिंहनाद किया। तो एक मदोन्मत्त हाथी को लेकर हनुमान ने उसके शरीर पर पटक दिया। ३। (तब) चम्पक ने बाण छोड़कर उसे उड़ा दिया और उलटे उसे हनुमान पर गिरा दिया। (फिर) उसने हनुमान पर पाँच बाण चला दिये; वे अन्त में उसके हृदय (-स्थल) पर लग गये। ४। तब वहाँ पवनकुमार क्रुद्ध हो उठा और उसने उसी समय

त्यारे कोप्या त्यां पवनकुमार, झाल्यो राजकुंवर तेणी वार,
ग्रही हस्तने ऊड्या आकाश, छूट्या करथी पाम्यो अवकाश । ५ ।
नभमारगे रहीने त्यांहे, घणुं जुद्ध कर्युं मांहोमांहे,
पछे कर्युं प्राक्रम शिष्य-तरणी, पुच्छे बांधी पछाड्यो धरणी । ६ ।
पड्या चंपक थई मूरछाय, ते देखी धायो सुरथ राय;
मारुतिनी साथे अभिराम, राय करतो महा संग्राम । ७ ।
मारे वृक्ष उपल महावीर, उडाडे सरथी नृप धीर,
भ्राम्य-अस्त्र मूक्युं राजन, ऊड्या आकाशमां वायुतन । ८ ।
हनुमंत भम्या घणी वार, नव आव्यो ते पंथनो पार;
राय मूकतो बाण अपार, वाळ्यो सैन्य तणो संहार । ९ ।
ते जोईने शत्रुघन वीर, आव्या सन्मुख महारणधीर;
मार्यां सुरथने पंच बाण, तेणे भेद्युं ह्रदे निरवाण । १० ।
त्यारे कोपे चढ्यो राजन, वरसाव्यो विशिख परजन्य,
शत्रुघने मूक्या घणा सर्प, गरुडास्त्र मूक्युं तव नर्प । ११ ।

राजकुमार (चम्पक) को पकड़ लिया । (फिर) उसके हाथ को पकड़ कर वह आकाश में उड़ गया । जब वह उसके हाथ से छूट गया, तो वह अवकाश (छुट्टी) को प्राप्त हो गया । ५ । फिर उन्होंने आकाश-मार्ग में ठहर कर वहाँ परस्पर बड़ा युद्ध किया । अनन्तर सूर्य के उस शिष्य (हनुमान) ने पराक्रम प्रदर्शित किया उसे पूँछ से बाँधकर धरती पर पटक डाला । ६ । (फलतः) मूर्च्छित होकर चम्पक गिर गया । यह देखकर राजा सुरथ दौड़ा । फिर वह अभिराम राजा हनुमान से बड़ा संग्राम करने लगा । ७ । महावीर हनुमान ने वृक्ष और पाषाण फेंक दिये, तो उस धीर राजा ने बाणों से उन्हें उड़ा दिया । (फिर) उसने भ्राम्यास्त्र छोड़ दिया, तो उससे पवन-कुमार (आकाश में) उड़ गया । ८ । (फल-स्वरूप) हनुमान ने (आकाश में) बहुत बार भ्रमण किया । (फिर भी) वह उस मार्ग के पार तक न आ रहा था । (इधर) राजा असंख्य बाण चला रहा था । उसने (इस प्रकार) सैन्य का संहार पूरा कर डाला । ९ । यह देखकर महारणधीर वीर शत्रुघ्न सामने आ गया । उसने सुरथ पर पाँच बाण चला दिये और अन्त में उसके हृदय को भेद डाला । १० । तब राजा क्रोध से चढ़ दौड़ा और उसने बाणों की बौछार वरसा दी । शत्रुघ्न ने बहुत सर्प (-बाण) चला दिये, तो उस राजा ने गरुड़ास्त्र चला दिया । ११ । रघु (-कुल तनय) अर्थात् रघु-कुलोत्पन्न पुत्र शत्रुघ्न ने पर्वतास्त्र चला दिया, तो राजा (सुरथ) ने वज्रास्त्र छोड़

पर्वतास्त्र मूक्युं रघुतन, वज्रास्त्र मूक्युं राजन,
रिपुदमने सांध्युं ब्रह्मास्त्र, राये मूक्युं महादेवनुं अस्त्र । १२ ।
अस्त्र विद्याए ते बळवान, एम ऊतर्या बंन्यो समान;
सुरथे शत्रुघनने त्यांहे, ब्रह्मशक्ति मारी रुदे मांहे । १३ ।
आवी मूर्छा पड्या तेणी वार, हवो सैन्यमां हाहाकार,
ते काले जोई भूपति सर्व, धाया वीर धरी मन गर्व । १४ ।
थयुं घोर जुद्ध तेणी वार, कहेतां ग्रंथ पामे विस्तार,
शर चाले बोले सुसवाट, ऊभे सैन्यनो वाळियो डाट । १५ ।
कोप्या विभीषण ने सुग्रीव, तेणे जुद्ध कर्युं छे अतीव,
सुरथ राय तणा दश तन, कर्यो मूरछित पृथ्वीपतन । १६ ।
सुग्रीवे राख्यो रणरंग, कर्यो राय तणो रथ भंग,
बेठो भूपति बीजे रथ, शर चाप ग्रही समरथ । १७ ।
मार्यां सुग्रीवने दश बाण, पड्यो अचेत थई निरवाण,
विभीषणने ते मार्यां वीस, पड्यो लंकापति पाडी चीस । १८ ।
ते समे धायो पवनकुमार, करतो लांगूल केरो मार,
पुच्छे बांध्यो रायनो रथ, पृथ्वीमां पछाड्यो समरथ । १९ ।

दिया; शत्रुघ्न ने ब्रह्मास्त्र फेंक दिया, तो राजा (सुरथ) ने शिवजी का अस्त्र छोड़ दिया। १२। इस प्रकार वे दोनों बलवान (योद्धा) अस्त्र-विद्या में सम-समान सिद्ध हो गये। (फिर) सुरथ ने वहाँ शत्रुघ्न के हृदय पर एक ब्रह्म-शक्ति मार दी। १३। उससे उसे मूर्च्छा आ गयी और वह गिर गया, तो सेना में हाहाकार हो गया। उस समय यह देखकर समस्त राजा मन में अभिमान धारण करके दौड़े। १४। उस समय बड़ा युद्ध हो गया। उसे कहते-कहते यह ग्रन्थ विस्तार को प्राप्त हो जाएगा। (उस समय) बाण चल रहे थे, वे (मानो) साँय-साँय बोल रहे थे। (अन्त में) दोनों सेनाओं का सर्वनाश पूरा हो गया। १५। तो विभीषण और सुग्रीव क्रुद्ध हो उठे। उन्होंने भी अत्यधिक युद्ध किया। उन्होंने सुरथराज के दसों पुत्रों को मूर्च्छित करके भूमि पर गिरा दिया। १६। (इस प्रकार) सुग्रीव ने युद्ध में अपना रंग जमाये रखा। उसने राजा के रथ को भग्न कर डाला। तो वह समर्थ राजा बाण और धनुष लेकर दूसरे रथ में बैठ गया। १७। उसने सुग्रीव पर दस बाण चला दिये, तो वह अन्त में अचेत होकर गिर पड़ा। (फिर) उस (राजा) ने लंकापति विभीषण पर बीस बाण चला दिये, तो वह चीखकर गिर पड़ा। १८। उस समय पवनकुमार दौड़ा और वह पूँछ से आघात

थयो मूरछित क्षण बळवान, पछी ऊठ्यो थई सावधान,
मूक्युं रामास्त्र तेणी वार, करियो बंधन पवनकुमार । २० ।
पछी सैन्य मांहे राजन, मोहनास्त्र मूक्युं ते दिन,
मोह पामी पड्या सहु वीर, गति भंग थई गई धीर । २१ ।
सहु सैन्य थयुं छे अचेत, तेमां मारुति छे सावचेत,
बंधायुं छे रामास्त्रे गात्र, नथी लेखावता तिल मात्र । २२ ।
नथी तोडता बंध प्रमाद, रामास्त्रनी राखी मरजाद,
स्वामी प्रत्ये सेवकनो धर्म, ते पाळ्यो अंजनीसुते पर्म । २३ ।
बेठा शिथिल थई भूमांहे, चारे पासे जुए जे त्यांहे,
सहु सैन्य थयुं अचेतन, जोई वीरे विचार्युं मन । २४ ।
निज पुच्छ तणी करी ओट, सैन्य पाछळ कीधो कोट,
पछी मनमां राखी धीर, बेठा समरे श्रीरघुवीर । २५ ।
ते समे नारद मुनिराय, एकला नभपंथे पळाय,
दीठा रामसैन्याना हवाल, पड्या वीर थई बेहाल । २६ ।

करने लगा । उस समर्थ ने राजा के रथ को पूँछ से बाँध लिया और पृथ्वी पर पटक डाला । १९ । (फलतः) वह बलवान (होने पर भी) क्षण भर मूर्च्छित हो गया । अनन्तर वह सावधान होकर उठ गया । उसने (फिर) उस समय रामास्त्र छोड़ दिया और उस पवनकुमार को आवद्ध कर लिया । २० । अनन्तर उस स्थान पर राजा ने सेना में मोहनास्त्र चला दिया, तो समस्त वीर मोह (सम्मोहन) को प्राप्त होकर गिर पड़े । उनकी गति के भग्न होने पर उनका धीरज छूट गया । २१ । समस्त सेना अचेत हो गयी, उसमें (केवल) हनुमान सचेत था । उसके शरीर को रामास्त्र ने जकड़ लिया था, फिर भी वह उसे तिल मात्र नहीं गिन रहा था । २२ । वह भूल से भी उस बन्धन को नहीं तोड़ रहा था । वह (इस प्रकार) रामास्त्र की प्रतिष्ठा की रक्षा कर रहा था । स्वामी के प्रति सेवक का (कुछ) धर्म (कर्तव्य) होता है । अंजनी-सुत हनुमान ने परम रूप से उसका निर्वाह किया । २३ । वह शिथिल होकर भूमि पर बैठ गया और वहाँ चारों ओर देखने लगा । समस्त सेना अचेत हो गयी है, यह देखकर उस वीर ने मन में विचार किया । २४ । (अनन्तर) उसने अपनी पूँछ से ओट बनाते हुए उस सेना के पीछे (चारों ओर) एक कोट बना लिया फिर मन में धीरज रखते हुए वह बैठ गया और श्रीरघुवीर का स्मरण करने लगा । २५ । उस समय मुनिराज नारद आकाश मार्ग से अकेले जा रहे थे । उन्होंने राम की सेना की स्थिति देखी—(देखा

जोई आव्या सरजुतीर, ज्यांहां बेठा श्रीरघुवीर,
मळ्यो सकळ मुनिनो साथ, बेठा दीक्षा लेई रघुनाथ। २७।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रघुनाथ बेठा दीक्षा लेईने, त्यां आव्या नारद ऋषिराय रे,
सुरथे जीत्या सर्वने, ते मांडी कही कथाय रे। २८।

कि) वीर दुर्गत होकर गिर पड़े हैं। २६। यह देखकर वे सरयू-तट पर आ गये, जहाँ श्रीरघुवीर बैठे हुए थे। समस्त मुनियों का समुदाय वहाँ मिल गया था, अर्थात् समस्त मुनि वहाँ इकट्ठा हो गये थे। श्रीरघुनाथ दीक्षा लेकर बैठे हुए थे। २७।

रघुनाथ (जहाँ) दीक्षा लेकर बैठे हुए थे, वहाँ ऋषिराज नारद आ गये और उन्होंने वह कथा (बात) विस्तार-पूर्वक कह दी कि किस प्रकार राजा सुरथ ने सबको जीत लिया था। २८।

* * *

अध्याय—६६ (राम-नारद-भेंट, सुरथ-उपाख्यान के अन्तर्गत राम के दर्शन के पश्चात् अश्व-प्राप्ति)

राग धन्याश्री

नारदे कही जे सकळ कथाय जी, ते सुणी ऊठ्या श्रीरघुराय जी,
मुनि सभा लेई श्रीभगवान जी, तत्क्षण बेठा पुष्प विमान जी। १।

ढाळ

पुष्प विमानमां प्रभु बेठा, चलाव्युं तेणी वार,
क्षणमांहे आव्या अवधपति, निज दळ पड्युं ते ठार। २।

अध्याय—६६ (राम-नारद-भेंट, सुरथ-उपाख्यान के अन्तर्गत राम के दर्शन के पश्चात् अश्व-प्राप्ति)

नारद ने जो समस्त कथा कही, उसे सुनते ही श्रीभगवान रघुराज राम उठ गये और (साथ में) मुनि-समाज को लिये हुए वे तत्क्षण पुष्पक विमान में बैठ गये। १।

अयोध्या-पति प्रभु रामचन्द्र पुष्पक विमान में बैठ गये और उन्होंने उसे चलाना आरम्भ किया। वे क्षण में उस स्थान पर आ गये, जहाँ उनकी सेना ठहरी हुई थी। २। उन दीन-दयालु ने भूमि पर विमान को

विमान राख्युं भोमी पर, ऊतर्या दीनदयाळ,
करी कृपादृष्टि सर्व प्रत्ये, ऊठिया तत्काळ। ३ ।
उभय सेना तणा जननां, थयां दृढ सहु अंग,
ऊठ्या अश्व गज रथ पदाति, चतुरंग सेना संग। ४ ।
टळे तिमिर ज्यम रवि उदयथी, वळी शरद आगमन घन,
एम रामचंद्रनी कृपादृष्ट, थयां निर्मळ तन। ५ ।
शत्रुघन पुष्कल आदि सहु ते, नम्या रामने पाय;
आनंद सुख पाम्या घणुं, ज्यांहे मळ्या श्रीरघुराय। ६ ।
वळी सुरथ राये राम दीठा, शोभे तन घनश्याम,
मुख हसित राजीव नेत्र सुंदर, लाजे कोटिक काम। ७ ।
एवुं स्वरूप जोई सीतापतिनुं, रोमांचित थयो राय,
साष्टांग करी पड्यो दंडवत्, श्रीरघुपतिने पाय। ८ ।
अपराध जाणी पोतानो, गद्गद थयो निरधार,
प्रभुचरण सिच्या आंसुए, शिर मूकी रह्यो घणी वार। ९ ।

उतार दिया और वे (उसमें से नीचे) उतर गये। ३। उन्होंने सबकी ओर (कृपादृष्टि से देखा) तो उन दोनों सेनाओं के लोगों के समस्त अंग दृढ़ (चंगे, क्षतहीन) हो गये। साथ ही में अश्व (-दल), गज (-दल), रथ-दल और पदाती दल—(समस्त) चतुरंग दल उठ गया। ४। जिस प्रकार सूर्योदय से अन्धकार दूर हो जाता है, (उस प्रकार श्रीराम के आने से मूर्च्छा रूपी अन्धकार दूर हो गया), फिर शरद ऋतु के आगमन पर जिस प्रकार आकाश (निर्मल) हो जाता है, उसी प्रकार रामचन्द्र के आने पर उनकी कृपा-दृष्टि से सब के शरीर निर्मल (क्षत-हीन) हो गये। ५। (अनन्तर) शत्रुघ्न, पुष्कल आदि सबने राम के चरणों को नमस्कार किया। जब श्रीरघुराज उनसे मिल गये, तब वे सब बड़े सुख को प्राप्त हो गये। ६। अनन्तर राजा सुरथ ने राम को देखा—उनका घनश्याम शरीर शोभायमान था; मुख हास्य से युक्त था, नेत्र-कमल सुन्दर थे, (उन्हें देखकर) कोटि-कोटि कामदेव लज्जित हो जाते थे। ७। सीतापति श्रीरघुपति राम के ऐसे स्वरूप को देखकर राजा (सुरथ) रोमांचित हो गया और साष्टांग नमस्कार करते हुए उनके चरणों में दण्डवत् पड़ गया। ८। वह अपने अपराध को जानते हुए निश्चय ही गद्गद हो उठा। उसने आँसुओं से प्रभु राम के चरणों को सींच दिया और बहुत समय (तक उनके चरणों में) सिर झुकाये (पडा) रह गया। ९। अनन्तर भक्तवत्सल प्रभु राम ने स्वयं दोनों हाथों से पकड़कर राजा को उठा लिया। फिर द्रवित होकर उन्होंने

पछे रामे उठाड्यो रायने, पोते ग्रही जुग हाथ,
प्रभु भक्तवत्सल द्रवित थईने, भीड्यो रुदिया साथ। १०।
ते समे वाग्यां दुंदुभि, वरसाव्यां देवे फूल,
सहु भाग्य वखाणे भूपनुं, बीजो नहि ए समतुल्य। ११।
स्तुति घणी करी रामनी, राये सुरथे जोडी हाथ,
मुज दीन केरी प्रतिज्ञा, पाळी तमो हे नाथ। १२।
आज भक्तवत्सल बिरद ते, साचुं कर्युं महाराज,
प्रभु पधार्या पण पाळवा, राखवा मारी लाज। १३।
एम विनयवचन भूपे कह्यां घणां, दीनपणे तेणी वार.
दश पुत्र नमिया रामचरणे, थयो जयजयकार। १४।
पछे सुरथ राजा राजमंडळ, सहित श्रीरघुराय,
ते कुंडळपुरमां गयो तेडी, हैये हरख न माय। १५।
पुरनी प्रजा जोई रामने, हरखी घणुं ते काळ,
शुभ ललित ललना वधावे, भरी पुष्प-मोती थाळ। १६।
घेरघेर धर्यां उपचार मंगळ, चोक चारु बझार,
दरशन करी जन दयानिधिनां, माने सफळ अवतार। १७।

उसे अपने हृदय से लगा लिया। १०। उस समय देवों ने दुन्दुभियाँ बजायीं और फूल बरसा दिये। वे सब राजा के भाग्य को सराहने लगे (और बोले—) 'इसके साथ तुलना करने योग्य और कोई नहीं है।' ११। (तदनन्तर) राजा सुरथ ने हाथ जोड़कर राम की बहुत स्तुति की (और कहा—) 'हे नाथ, आपने मुझ दीन की प्रतिज्ञा का पालन कर दिया है। हे महाराज, आज आपने अपने 'भक्त-वत्सल' बिरुद को सच्चा (सिद्ध) कर दिया। हे प्रभु, आप मेरे प्रण का निर्वाह कराने के लिए, मेरी लाज रखने के लिए पधारे हैं।'। १२-१३। राजा ने इस प्रकार उस समय दीनता से बहुत विनय-वचन कह लिये। (तत्पश्चात्) उसके दसों पुत्रों ने राम के चरणों को नमस्कार किया, तो जय-जयकार हो गया। १४। फिर राजा सुरथ राज-मण्डल-सहित श्रीरघुराज राम को बुलाकर कुण्डलपुर में ले गया, तो उसके हृदय में हर्ष समा नहीं रहा था। १५। उस समय नगर की प्रजा राम को देखकर बहुत आनन्दित हो गयी। (तब) शुभ-लक्षणा सुन्दर ललनाओं ने थालों में फूल और मोती भरकर बधावा किया। १६। घर-घर सुन्दर चौकों में, बाजारों में, मंगल उपचार धारण कराये (गये) और (समस्त) लोग दया-निधि राम के दर्शन करके अपने जन्म लेने को सफल मानने लगे। १७। इस प्रकार

सुख आपता एम सर्वने, राय प्रभु आव्या राजद्वार,
ते ऊतर्यां सुंदर स्थळे, राये कीधी सेवा अपार। १८।
भोजन नाना भातनां, तांबूल बीडां साथ,
ऋषि राजमंडळ सहित पोते, आरोग्यां रघुनाथ। १९।
सहु सैन्यने संतोषियुं, आपियां भोजन पान,
एम सुरथ रायना मंदिरमां, रह्या त्रण दिवस भगवान। २०।
पछे चोथे दिन थया जवा तत्पर, पोते जुगदाधार,
त्यारे राये रामार्पण कर्युं, सहु राज्य धन परिवार। २१।
कर जोडीने स्तुति करी भूपे, बोल्यो दीन वचन,
प्रभु दरशन करवा तमारुं, में राख्युं छे आ तन। २२।
हावे नाथ नीरख्या नेत्रथी, पण पाळ्युं पूरणकाम,
प्रभु शरण आपो चरणनुं, नथी अन्य आशा राम। २३।
एवां वचन सुणी राजा तणां, त्यारे बोल्या श्रीरघुवीर,
तमो रक्षा करवा अश्वनी, जाओ धरी मनमां धीर। २४।
आवजो वळतां अवधपुर, जोवा जग्न महोत्सव त्यांहे,
तमो सदा मारे शरण छो, नथी वेगळा क्षण क्यांहे। २५।

सबको सुख देते हुए प्रभु रामचन्द्र राजद्वार पर आ गये और (वहाँ) एक सुन्दर स्थान पर ठहर गये, तो राजा ने उनकी अपार सेवा की। १८। नाना प्रकार के भोजन (भोज्य पदार्थ) तथा साथ में ताम्बूलों - बीड़ों सहित स्वयं रघुनाथ राम ने ऋषि-मण्डली-सहित भोजन किया। १९। समस्त सेना को खान-पान दिया और सतुष्ट कर दिया। इस प्रकार राजा सुरथ के प्रासाद में भगवान तीन दिन ठहर गये। २०। अनन्तर चौथे दिन जगदाधार राम स्वयं जाने को तैयार हो गये, तब राजा ने समस्त राज्य धन तथा परिवार राम को समर्पित कर दिया। २१। (तदनन्तर) हाथ जोड़कर राजा ने स्तुति की और दीन (स्वर में) ये वचन कहे— 'हे प्रभु, आपके दर्शन करने के लिए मैंने यह शरीर धारण कर रखा था। २२। अब मैंने नेत्रों से आप स्वामी को ठीक से देख लिया है। हे पूर्णकाम, मैंने अपने प्रण का निर्वाह किया है। हे प्रभु, मुझे अपने चरणों में आश्रय दीजिए। हे राम, मेरी कोई अन्य आशा (आकांक्षा) नहीं है।'। २३। तब राजा के ऐसे वचन सुनकर श्रीरघुवीर बोले, 'आप अश्व की रक्षा करने के लिए मन में धीरज धारण करके जाइए। २४। फिर वहाँ अयोध्या में यज्ञ-महोत्सव देखने के लिए आ जाना। आप नित्य मेरी शरण में (रह रहे) हैं, कभी एक क्षण भी अलग नहीं हैं।' २५। अनन्तर प्रभु राम

पछे राय केरा पुत्रने आप्युं, प्रभुए पाछुं राज,
शत्रुघनने शिक्षा कही, वहेला आवजो करी काज। २६।
पछे बेठा पुष्प विमाननमां, मुनिमंडळशुं रघुवीर,
यज्ञमंडपमां आविया प्रभु, सरजुगंगाने तीर। २७।
हावे अश्व त्यांथी चालियो, पूंठळ घणा नरनाथ,
निज सेन लेईने सुरथ राजा, चाल्यो तेनी साथ। २८।
ए कथा सुरथ रायनी, जे सुणे नर ने नार,
केरे कृपा तेने रघुपति, पामे पदारथ चार। २९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

चार पदारथ पामे ते जन, जे कथा सुणे प्रेमे करी,
कहे दास गिरधर सहु भाव धरी, श्रोताजन बोलो श्रीहरि। ३०।

ने राजा के पुत्रों को राज्य पुनः प्रदान किया, शत्रुघ्न को उपदेश दिया (और कहा—) काम पूर्ण करके शीघ्र आ जाना। २६। फिर प्रभु रघुवीर राम मुनि-मण्डली सहित पुष्प-विमान में बैठ गये और सरयू गंगा के तट पर यज्ञ-मण्डप में आ गये। २७। अब घोड़ा वहाँ से (आगे) चला गया। उसके पीछे (-पीछे) अनेकानेक राजा (जा रहे) थे। उनके साथ में राजा सुरथ अपनी सेना को लेकर चल दिया। २८। जो पुरुष और स्त्रियाँ राजा सुरथ की इस कथा को सुनते हैं, उनपर रघुपति कृपा करते हैं और वे (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष नामक) चारों पदार्थों को प्राप्त हो जाते हैं। २९।

वे लोग चारों पदार्थों को प्राप्त हो जाते हैं, जो इस कथा को प्रेम-पूर्वक सुनते हैं। कवि गिरधरदास कहते हैं, हे श्रोताजनो, आप सब प्रेम-भाव धारण करके 'श्रीहरि (की जय)' बोलिए। ३०।

* * *

अध्याय—६७ (वाल्मीकि-आश्रम के समीप लव द्वारा अश्व को बाँध लेना)

राग धन्याश्री

कुंडळपुरथी चाल्यो केकाणजी, निज इच्छाए विचरे जाण जी,
सोळ पद्म दळ पूंठ पळाय जी, वाजित्र वाजे गुणीजन गाय जी। १।

अध्याय—६७ (वाल्मीकि-आश्रम के समीप लव द्वारा अश्व को बाँध लेना)

वह घोड़ा कुण्डलपुर से (आगे) जा रहा था। समझिए कि वह अपनी इच्छा के अनुसार विचरण कर रहा था। उसके पीछे (-पीछे)

ढाळ

गाय गुणीजन विशद कीर्ति, पावन जे रघुकुळ तणी,
जेनुं नाम लेतां जाय अघ, एवा राम राय चूडामणि। २ ।
तेना यज्ञनो हय फर्यो सघळे, जीती नृपवर जश थयो,
अंग वंग कलिंग द्राविड, मरुत तैलंगे गयो। ३ ।
एम अनेक देश फर्यो तुरी, त्यांहां राय जीत्या जेटला,
प्रताप जाणी रामनो, आवी मळ्या नृप केटला। ४ ।
गिरि सरित सर वन पुर विपुल, यज्ञतुरी घाट फर्यो घणे,
पछी एम करतां आवियो, आश्रम मुनि वाल्मीक तणे। ५ ।
ते वन अति रळियामणुं, शुक पीक मृग क्रीडा करे,
वसंत रत फूली सदा, सुरभि त्रिविध गुण विस्तरे। ६ ।
रह्यां ते वन मध्ये जानकी, जे जगतजनुनी इंदिरा,
वाल्मीकना आश्रम विषे, भजे रामने गुण मंदिरा। ७ ।
आदिकवि जे मुनि वाल्मीक, आश्रम नथी ते काळमां,
वरुणने घेर यज्ञ करवा, गया छे पाताळमां। ८ ।

सोलह पद्म सेना जा रही थी। (साथ में) वाद्य बज रहे थे और गुणी जन (अर्थात् गायक कलाकार गीत) गाते (जा रहे) थे। १।

रघुकुल की जो पावन तथा विशद (उज्ज्वल) कीर्ति थी, उसे गुणी-जन (गायक कलाकार) गाते (जा रहे) थे। जिनका नाम लेने पर पाप (नष्ट हो) जाते हैं, ऐसे थे वे राज-चूड़ामणि राम। २। उनके यज्ञ का घोड़ा विचरण कर रहा था। समस्त राजाओं को जीतने पर उनका यश (विस्तार को प्राप्त) हो गया। वह (घोड़ा) अंग, वंग, कलिंग, द्राविड़, मरुत, तेलंग देश में गया। ३। इस प्रकार उस घोड़े ने अनेक देशों में भ्रमण किया और वहाँ जितने राजा थे, उनको जीत लिया (गया)। ४। उस यज्ञीय घोड़े ने अनेक पर्वतों, नदियों, सरोवरों, वनों, नगरों में, तथा घाटों पर भ्रमण किया। इस प्रकार करते-करते अनन्तर वह मुनि वाल्मीकि आश्रम (के पास) आ गया। ५। वह वन अति रमणीय था। उसमें शुक, पिक (कोकिल), मृग कीड़ा करते थे। नित्य वसन्त ऋतु फूली अर्थात् विकसित रहती थी और सुगन्धित वायु अपने त्रिविध गुणों (सुगन्ध, शीतलता और मन्दता) का विस्तार करती थी। ६। उस वन में जानकी, जो (वस्तुतः) जगज्जननी तथा लक्ष्मी है, रहती थी। वह वाल्मीकि के आश्रम में गुणों के (साक्षात्) मन्दिर-सदृश राम का भजन किया करती थी। ७। उस समय, मुनि वाल्मीकि, जो आदि कवि (माने

बे पुत्र सीता तणा लव-कुश, पाळे आज्ञा माता तणी,
फळ जळ लावी आपता, निज धर्म पर ममता घणी । ९ ।
ज्यारे मुनि पाताळे गया, त्यारे कही गया बे भ्रातने,
आपणा वननी रक्षा करजो, सेवजो निज मातने । १० ।
त्यारे एक समे कुश गयो वनमां, दूर फळ लेवा तदा,
लव करे रक्षा वन तणी, कर धनुष्य बाण ग्रही सदा । ११ ।
संगे मुनिना पुत्र नाना, ते साथे वनमां फरे,
एम वृक्ष छाया तळे बेठा, क्रीडा मन-गमती करे । १२ ।
एवे समे ते वन विषे आव्यो, यज्ञतुरी रघुवर तणो,
जाणे कामे हयनुं रूप धरियुं, एम शोभे अति घणो । १३ ।
मुनिबाळके दीठो तदा, लवने कहे, जोने तुरी,
ए हशे कोनो ? केम आव्यो ? शोभतो रूपे करी । १४ ।
एवुं सुणीने लव गयो पासे, झाल्यो हय हस्ते जदा,
कनकपत्र ललाट हतुं ते, छोडीने वांच्युं तदा । १५ ।

जाते) हैं, आश्रम में नहीं थे । वे पाताल में वरुण के घर यज्ञ करने के लिए गये हुए थे । ८ । सीता के दोनों पुत्र— लव और कुश उसकी अर्थात् अपनी माता की आज्ञा का पालन करते थे । वे फल तथा जल (लाकर) देते थे । उन्हें अपने धर्म (कर्तव्य) के प्रति बड़ी ममता थी । ९ । जब मुनि (वाल्मीकि) पाताल में जा रहे थे, तब उन दोनों बन्धुओं से कहकर गये— अपने वन की रक्षा करना और अपनी माता की सेवा करना । १० । तब एक समय कुश फल ले (आने) के लिए वन में दूर चला गया था, तो लव हाथ में नित्य (की भाँति) धनुष-बाण लेकर वन की रक्षा कर रहा था । ११ । उसके साथ में मुनियों के अनेकानेक पुत्र थे । उनके साथ वह वन में घूम रहा था । (उस समय) वे एक वृक्ष की छाया में बैठ गये और मन-भायी क्रीड़ा करने लगे । १२ । उस समय श्रीराम का यज्ञीय घोड़ा उस वन में आ गया । मानो कामदेव ने ही घोड़े का रूप धारण किया था—ऐसी अति (बहुत) उसकी सुन्दरता थी । १३ । जब मुनियों के बालकों ने (उस घोड़े को) देखा, तो लव से कहा, 'इस घोड़े को देखना । यह किसका होगा ? (यहाँ) कैसे आ गया है ? यह रूप (सुन्दरता) से शोभायमान है ।' । १४ । ऐसा सुनकर लव उसके पास गया और जब उसने हाथ से घोड़े को पकड़ लिया, तो उसके मस्तक पर (बाँधा हुआ) जो स्वर्ण-पत्र था, उसे खोलकर पढ़ लिया । १५ । उस पत्र को पढ़कर वह परिचय को प्राप्त हो गया (उसे विदित हो गया) और हँसकर

ते पत्र वांची थयो वाकेफ, बोल्या द्विजतनशुं हसी,
भाई आज आव्यो लाग शुभ, एने वांध्यानी चिंता कशी । १६ ।
जुओ लख्युं महा अभिमानथी, एम केवो वळियो राम छे,
विण दोष मुज माता तजी, माटे मारे एवुं काम छे । १७ ।
शुं थई धरा निरवीर्य जे, एम करे मोटमता घणी,
कोई नथी क्षत्री पृथ्वीमां ? शुं एने माथे छे मणि ? । १८ ।
शुं ए पुरुष पेदा थया ? बाकी नपुंसक वीजा हशे ?
हुं नथी बीतो रामथी, जोउं ए थकी हवे शुं थशे ? । १९ ।
ए पिता भले छे तो भले छे, एणे परभवी मुज मातने,
ते दोष निवरति करुं, घणी शिक्षा आपुं तातने । २० ।
हावे प्रतिज्ञा छे माहरे, एशुं विरोध करुं घणो,
जीत्या विना हय न आपुं, तो खरो सुत सीता तणो । २१ ।
मुनि वाल्मीकनी विद्या तणो, ते प्रताप देखाडुं सर्वने,
तो धावेलो सीयने खरो, जो उतारुं एना गर्वने । २२ ।
एवुं कही नाख्युं अश्वकंठे, अंगवस्त्र पोता तणुं,
रंभा तरुए तुरंग वांध्यो, विप्रसुत वारे घणुं । २३ ।

उन ब्राह्मण-पुत्रों से वोला, 'हे भाइयो, आज शुभ अवसर आ गया। इसे बाँध लेने में कैसी चिन्ता है ? । १६ । देख लो, (जो) महा अभिमान से लिखा (हुआ) है। ऐसे कैसे बलवान राम हैं! उन्होंने विना किसी दोष के मेरी माता का त्याग कर दिया है। इसलिए मुझे इनसे काम है। १७। क्या पृथ्वी निर्वीर्य (वीर-हीन) हो गयी है, जो कि वे इस प्रकार बड़ाई (प्रदर्शित) कर रहे हैं ? क्या पृथ्वी पर कोई क्षत्रिय (शेष) नहीं है ? क्या इनके माथे पर कोई मणि लगी है ? । १८ । क्या ये ही (एकमेव) पुरुष उत्पन्न हो गये हैं ? और क्या शेष सब नपुंसक होंगे ? मैं राम से नहीं डरता हूँ। देखूँ तो अब इनसे क्या होगा। १९ । भले ये पिता हैं, तो भले ही हों—इन्होंने मेरी माता को दुखी किया है। उस दोष का मैं निराकरण कर देता हूँ— मैं पिता को बड़ा दण्ड दे दूंगा। २० । अब मेरी यह प्रतिज्ञा है कि मैं इनका बड़ा विरोध करूँगा। उन्हें विना जीते मैं घोड़ा नहीं दूंगा, तो ही मैं सीता का सच्चा पुत्र हूँ। २१ । मैं मुनि वाल्मीकि की (पढ़ायी हुई) विद्या का प्रभाव सबको दिखाऊँगा। यदि इनके गर्व को छुड़ा दूं, तो ही (माना जाए कि) सीता का दूध मैंने पिया है'। २२ । ऐसा कहते हुए उसने अपना स्वयं का उत्तरीय वस्त्र घोड़े के गले में डाल दिया और केले के पेड़ से उस घोड़े को बाँध दिया। वे

भाई शुं करवा ए अश्व बांधे ? को बळियो भूपतिनो हशे,
ते हवडां आवी लेई जशे, वळी झाली तुजने मारशे । २४ ।
लव कहे, मिथ्या शुं लवो ? तमो जुओ दूर ऊभा रही,
एक समे आवे काळ तो पण, तेने शिक्षा करुं सही । २५ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

सही करुं शिक्षा काळने, एम बोल्यो लव रणधीर रे,
कदळीने थड अश्व बांधी, पछी सज्ज थई ऊभो वीर रे । २६ ।

* * *

विप्र-पुत्र उसे बहुत रोक रहे थे । २३ । (उन्होंने कहा—) 'हे भाई, इस घोड़े को क्या करने के लिए (किसलिए) बाँध रहे हो ? यह तो किसी बलवान राजा का होगा । वह अभी आकर (इसे) ले जाएगा । इसके अतिरिक्त, तुम्हें पकड़कर मारेगा । ' । २४ । (इसपर) लव ने कहा, 'झूठ-मूठ क्यों प्रलाप कर रहे हो ? दूर खड़े रहकर तुम देखो । एक समय काल (तक) आ जाए, फिर भी मैं उसे सचमुच दण्ड दूँगा । २५ ।

मैं सचमुच काल (तक) को दण्ड दूँगा '—रणधीर लव इस प्रकार बोला और उसने केले के तने से घोड़े को बाँध लिया । फिर वह वीर सज्ज होकर खड़ा रह गया । २६ ।

* * *

अध्याय—६८ (लव द्वारा शत्रुघ्न को मूर्च्छित कर देना)

राग सामेरी

हावे कदळीने थड अश्व बांधी, ऊभो लव ते ठार,
ते चितवतो चारे दिशा, जाणे तीक्ष्ण सिंहकुमार । १ ।
एटले आव्या अश्वरक्षक, दीठो हय ते ठार,
मुनिबाळकने पूछ्युं तदा, कोणे बांध्यो यज्ञतोखार ? । २ ।

अध्याय—६८ (लव द्वारा शत्रुघ्न को मूर्च्छित कर देना)

अब कदली के तने से घोड़े को बाँधकर लव उस स्थान पर खड़ा रह गया । वह चारों दिशाओं में देख रहा था, मानो तीक्ष्ण अर्थात् पैनी दृष्टिवाला कोई सिंह-शावक ही हो । १ । इतने में (वहाँ) अश्व-रक्षक आ गये और उन्होंने उस स्थान पर उस घोड़े को देखा, तो मुनियों के बच्चों से पूछा, 'यज्ञ के इस घोड़े को किसने बाँधा है ' । २ । तब ब्राह्मणों के

त्यारे विप्रसुत कहे, पेलो ऊभो श्यामसुंदर वीर,
आकरण नेत्र प्रचंड भुज, महा धनुर्विद्या धीर। ३।
एणे अश्व बांध्यो तमारो, एवी बोल्या बाळक वाण,
ते अश्वरक्षक जोई लवने, थया विस्मय जाण। ४।
एटले दळ चतुरंग आव्युं, अग्र शत्रुघन,
त्यारे अश्वरक्षके कह्युं जई, सुणतां सकळ राजन। ५।
पेले बाळके हय बांधियो, कदळी थड मोझार,
एवुं सुणीने आश्चर्य पाम्या, आव्या तेणे ठार। ६।
ते पुत्रने जोई हस्या सर्वे, पाम्या मन उमंग,
भाई, रमत ऐ शिशुए करी, माटे छोडी लावो तुरंग। ७।
त्यारे वीर सर्वे बोलिया, अल्या बाळक! सुण तुं वाण,
छोडी आप्य हय श्रीरामनो, जावुं अमारे जाण। ८।
त्यारे क्रोध करी लव बोलियो, में बांध्यो यज्ञतोखार,
ते छूटवो हावे कठण छे, नोहे हांसी केरो विचार। ९।
अल्या तस्करो, तमो कोण छो? जे बोलो कायर वाण,
जो दुखतुं होय पेटमां तो, आवो लेवा केकाण। १०।

उन पुत्रों ने कहा, 'वह (देखिए) श्याम-सुन्दर वीर (बालक) खड़ा है। वह आकर्ण-नेत्र (अर्थात् कानों तक फैले हुए, विशाल नेत्रों वाला) तथा प्रचण्ड भुजा-धारी है, वह धनुर्विद्या का महान धारी (या धनुर्विद्या का धैर्य-शील ज्ञाता) है। ३। उसने आपके घोड़े को बाँध लिया है।' उन लड़कों ने ऐसी बात कही, तो समझिए कि वे अश्व-रक्षक लव को देखकर विस्मित हो गये। ४। इतने में चतुरंग दल (वहाँ) आ गया। उसके आगे शत्रुघ्न था। तब जाकर अश्व-रक्षकों ने सब राजाओं के सुनते रहते कहा। ५। उस बालक ने केले के पौधे के तने से घोड़े को बाँध दिया है। ऐसा सुनकर वे आश्चर्य को प्राप्त हो गये और उस स्थान पर आ गये। ६। उस पुत्र (लड़के) को देखते ही वे सब हँस पड़े और मन में उमंग को प्राप्त हो गये। (वे बोले—) 'भाई, इस शिशु ने तो (मन बहलाव के लिए) हँसी-ठठोली की है (खेल-खेल में इसे बाँध लिया है)। इसलिए इस घोड़े को खोलकर ले आओ'। ७। तब वे समस्त वीर बोले, 'अरे बालक, हमारी बात तू सुन ले। मान ले, राम का घोड़ा छोड़कर दे दे, तो हम (चले) जाते हैं।'। ८। तब क्रोध करते हुए लव बोला, 'मैंने यज्ञ के इस घोड़े को बाँधा है। उसका छूटना अब कठिन है। यह कोई हँसी (-खेल) का विचार नहीं है। ९। अरे तस्करो, तुम कौन हो,

हुं जुद्ध कर्यानी वाट जोउं छुं, क्यां छे तारो राम ?
तेने जईने कहो वहेला, आवे आणे ठाम । ११ ।
तमो बाळक जाणी मुजने, सर्वे करो छो आळ,
पण प्राण लेईश सर्वना, छुं काळ केरो काळ । १२ ।
एवां वचन सुणी शत्रुघने, करी सेवकने आज्ञाय,
भाई, छोडी लावो अश्व ए, बाळक थकी शुं थाय ? । १३ ।
ते सुणी वीर सहस्र, आव्या छोडवा केकाण,
त्यारे लवे सज्ज थई धनुष्य ग्रही, मार्या सर्वने बाण । १४ ।
तेणे हस्त काप्या सहस्रना, जेम पडे तरुनां पत्र,
होकारो तव सबळो थयो, सहु वीर कोप्या तत्र । १५ ।
त्यां थवा मांड्युं जुद्ध दारुण, वढे वीर अपार,
शर तणी वृष्टि थाय छे ज्यम, अखंड मेघनी धार । १६ ।
एम भूमिजासुत बाण मूके, थाय गर्जना घोर,
दूरथी सहु राजा जुए, आ बाळकनुं शुं जोर ? । १७ ।

जो ऐसी कायरों-की-सी बात बोल रहे हो ? यदि पेट में दुखता हो, तो घोड़ा ले जाने के लिए आ जाओ । १० । मैं युद्ध करने की प्रतीक्षा कर रहा हूँ । तुम्हारे राम कहाँ हैं ? जाकर उनसे शीघ्र कह दो कि वे इस स्थान पर शीघ्र आ जाएँ । ११ । मुझे बालक समझकर तुम सब कलंक लगा रहे हो । परन्तु मैं सबके प्राण ले लूँगा । मैं काल का काल हूँ ' । १२ । ऐसी बातें सुनते ही शत्रुघ्न ने अपने सेवकों को आज्ञा दी, ' हे भाइयो, इस अश्व को खोलकर ले आओ । इस बच्चे से क्या होगा ' । १३ । यह सुनकर एक सहस्र वीर (सैनिक) घोड़े को छुड़ाने के लिए आ गये । तब लव ने सज्ज होते हुए, धनुष लेकर उन सब की ओर बाण चला दिये । १४ । उनसे उन सहस्र वीरों के हाथ काट (कर गिरा) दिये, जैसे पेड़ के पत्ते कटकर गिर पड़ते हों, वैसे वे कटकर गिर गये । तब ज़ोर की हुंकारी हो गयी (भर दी गयी) और वहाँ (के) वे समस्त वीर क्रुद्ध हो उठे । १५ । वहाँ अति दारुण युद्ध आरम्भ हो गया और वह वीर (बालक) असीम रूप से लड़ने लगा । बाणों की (उस प्रकार) वृष्टि होने लगी, जिस प्रकार मेघ से अखण्ड (जल-) धारा चलती हो । १६ । इस प्रकार भूमिजा सीता का वह पुत्र, लव बाण चला रहा था । (उससे) घोर गर्जन हो रहा था । समस्त राजा दूर से देख रहे थे कि इस बालक का क्या बल है । १७ । (उनमें से कोई बोला—) ' भाई, यह तो बारह वर्ष का कुमार है, (फिर भी) इसके बल

भाई, वरस द्वादशनो कुंवर छे, बळ तणो नहि पार;
एनां चिह्न रूडां दीसे, ए को हशे राजकुमार। १८।
को वीर कहे ए विप्रसुत, पण गुरु समरथ होय;
एम वखाणी वातो करे सहु, कुंवर सामुं जोय। १९।
ते देखतां सीतासुते कर्युं, सेन तारोतार;
दळ सर्व पाम्युं पराजय, त्यारे हवो हाहाकार। २०।
ज्यम वृषाऋतुमां शोभीए, करे कळा केकी जाण,
एम चोंटियां सर्वने अंग, लव तणां जे बाण। २१।
दळभंग जोई शत्रुघने, रथ हंकाव्यो तेणी वार;
सन्मुख आवीने रह्या, लव हतो जेणे ठार। २२।
रिपुसूदने दीठो कुंवर, अद्‌भुत आकृतिरूप;
जाणे शुं बीजा रघुपति, ब्रह्मांड केरा भूप। २३।
त्यारे रिपुदमने पूछ्युं, अल्या कुंवर कोनो तन?
तने विद्या कोणे भणावी? पछे बोल्यो पुत्र वचन। २४।
तने पूछ्यानुं कारण शुं छे? अल्या, जुद्ध कर मुज साथ,
तम थकी हुं बीहतो नथी, जो आवशे रघुनाथ। २५।

का कोई पार नहीं है। इसके लक्षण सुन्दर दिखायी दे रहे हैं। यह कोई राजकुमार (ही) है।'। १८। तो किसी दूसरे वीर ने कहा, 'यह विप्र-सुत है, परन्तु इसका गुरु सामर्थ्यवान होगा।' इस प्रकार उसकी प्रशंसा करते हुए वे सब बातें कर रहे थे और सामने उस कुमार को देख रहे थे। १९। उनके (इस प्रकार) देखते रहने पर सीता-पुत्र लव ने सेना को तितर-बितर कर डाला। (इस प्रकार) समस्त सेना पराजय को प्राप्त हो गयी, तब हाहाकार हो गया। २०। समझिए कि जिस प्रकार वर्षा ऋतु में मोर (पर फैलाकर) नृत्य करते हैं और शोभायमान होते हैं, उस प्रकार लव के जो बाण थे, वे सबके अंग में धँस गये थे (और सैनिक चलते-फिरते समय मोरों-से जान पड़ते थे)। २१। उस समय अपने दल को छिन्न-भिन्न हुए देखकर शत्रुघ्न ने रथ को (आगे) चलवा दिया और जिस स्थान पर लव था, उसके सामने आकर ठहर गया। २२। शत्रुघ्न ने उस कुमार का अद्‌भुत आकृति-स्वरूप देखा—मानो कोई दूसरा ब्रह्माण्ड का राजा रघुपति राम ही हो। २३। तब शत्रुघ्न ने पूछा, 'अरे कुमार, तू किसका पुत्र है? तुझे किसने (धनुर्-)विद्या सिखा दी?' फिर वह बालक बोला। २४। 'तुम्हें (मुझसे यह) पूछने का क्या कारण है? अरे, मेरे साथ युद्ध कर लो। यदि रघुनाथ (भी) आ जाएँ, तो

अल्या, तम सरखा गज तणां यूथने, विदारवाने काज,
ते निश्चे करीने जाणजे, हुं थयो प्रगट सिंहराज । २६ ।

विष्णुवाहन आगळ जथा, उरगे जवाय न ज्यम,
एम रहेतां मुज सन्मुख थाशे, गति तमारी त्यम । २७ ।

एवां वचन सुणीने कोपिया, पछी शत्रुघन तेणी वार,
सिंहनाद करीने लवनी उपर, मूक्यां बाण अपार । २८ ।

सीतासुते ते छेदियां, शत्रुघन केरां बाण,
पछे रिपुदमनना हृदेमां मार्यां, पंच शर निरवाण । २९ ।

ते विशिख वाग्यां मर्ममां, ऊछळ्या रथ मोझार,
शत्रुघन मूरछित थई पड्या, त्यारे हवो हाहाकार । ३० ।

वलण (तर्ज बदलकर)

हाहाकार हवो तदा, थया मूरछित शत्रुघन रे;
एवुं विपरित जोईने कोपिया, पछे धाया मारुततन रे । ३१ ।

* * *

भी मैं तुमसे नहीं डरता हूँ । २५ । अरे, तुम जैसे हाथियों के समुदाय को विदीर्ण कर देने के हेतु मैं सिंह-राज प्रकट हो गया हूँ । यह निश्चय-पूर्वक समझ लेना । २६ । जिस प्रकार विष्णु-वाहन गरुड़ के सामने सर्पों से जाया नहीं जाता, उसी प्रकार मेरे रहते हुए मेरे सामने तुम्हारी स्थिति हो जाएगी । ' । २७ । ऐसे वचन सुनने के पश्चात्, उस समय शत्रुघ्न क्रुद्ध हो उठा और उसने सिंहनाद करते हुए लव पर असंख्य बाण चला दिये । २८ । (फिर भी) शत्रुघ्न के उन बाणों को सीता-सुत लव ने छेद डाला; फिर अन्त में उसने शत्रुघ्न के हृदय पर पाँच बाण चला दिये । २९ । वे बाण उसके मर्म (-स्थल) पर लग गये, तो वह शत्रुघ्न रथ में उछल पड़ा । (फिर) वह मूर्च्छित होकर गिर पड़ा, तब हाहाकार हो गया । ३० ।

(जब) शत्रुघ्न मूर्छित हो गया, तब हाहाकार हो गया । फिर ऐसी विपरीत (बात) देखकर पवनकुमार हनुमान कुपित हो उठा । ३१ ।

* * *

अध्याय—६९ (शत्रुघ्न द्वारा लव को मूर्च्छित कर देना)

राग मारु

थया मूरछित शत्रुघन, त्यारे धाया ते मारुततन,
एक परवत ग्रहीने पाण, आव्या लव सन्मुख निरवाण । १ ।
मूक्युं लवे बाण तेणी वार, उराड्यो गिरि ते निरधार,
वृक्ष पाषाण ग्रही बळवंत, करी वृष्टि घणी हनुमंत । २ ।
सामा राघवी मूके बाण, छेदे सकळ तरु निरवाण,
हनुमंते जाण्युं एम मन, ए हशे जानकीनो तन । ३ ।
माटे उपजी मन करुणाय, बळ जोईने विस्मे थाय,
वळी युद्ध करे पद रोपी, राघवी मारतो शर कोपी । ४ ।
अंजनीसुत बोल्या वचन, कहे भाई तुं कोनो तन ?
सीतापुत्र कहे कपिराज, तारे पूछ्यातणुं शुं काज ? । ५ ।
एम गोष्ठि कर्ये आ ठाम, नहि थाये तमारुं काम,
एम कहीने मूक्युं नाराच, भ्राम्य मंत्र भणीने साच । ६ ।
वाग्युं मारुतिना हृदेमांहे, ऊड्या तत्क्षण नभमां त्यांहे,
भमता घणुं पवनकुमार, धायो पुष्कल तेणी वार । ७ ।

अध्याय—६९ (शत्रुघ्न द्वारा लव को मूर्च्छित कर देना)

(जब) शत्रुघ्न मूर्च्छित हो गया, तब पवनकुमार हनुमान दोड़ा। एक पर्वत हाथ में लिये हुए वह अन्त में लव के सम्मुख आ गया। १। तो उस समय लव ने एक बाण चलाकर उस पर्वत को निश्चय-पूर्वक उड़ा दिया। फिर वह बलवान हनुमान वृक्ष, पाषाण लेकर उनकी वृष्टि करने लगा। २। (इधर) सामने (से) रघुकुलोत्पन्न लव ने बाण चलाते हुए उन समस्त पेड़ों को (तथा पाषाणों को) अन्त में काट डाला। हनुमान मन में यह जान चुका था कि यह जानकी का ही पुत्र होगा। ३। इसलिए उसके मन में करुणा उत्पन्न हो गयी। उस बालक के बल को देखकर वह विस्मय-चकित हो गया। (फिर भी) वह पाँव रोपकर युद्ध करने लगा, तो राघवीय लव क्रुद्ध होकर बाण चलाता रहा। ४। (अनन्तर) अंजनी-सुत हनुमान यह बात बोला, 'हे भाई, तुम किसके पुत्र हो ?' तो सीता के पुत्र लव ने कहा, 'हे कपिराज, तुम्हें यह पूछने से क्या काम (मतलब)। ५। इस स्थान पर इस प्रकार से बातें करने से तुम्हारा काम नहीं बनेगा।' ऐसा कहते हुए उसने सचमुच भ्राम्य मन्त्र पढ़कर एक बाण छोड़ दिया। ६। वह पवनकुमार हनुमान के

ते जोई लव विचारे मन, ए हशे भरतजीनो तन,
दीठो लवने विरथ निरधार, पुष्कल ऊतरियो तेणी वार । ८ ।
पोते धनुष्य बाण ग्रह्यां हस्त, सीतापुत्र थयो छे स्वस्थ,
वरस द्वादशना बे वीर, शोभे धनुर्विद्याना धीर । ९ ।
एम काम ने बीजा वसंत, रवि राकापति तेजवंत;
जेम नव रसमां रुद्र वीर, एम शोभता बे रणधीर । १० ।
सामासामी करे छे विरुद्ध, जुए अंतिक्ष देव ते जुद्ध,
शत्रुघनने वळी मूरछाय, जुए दूर थकी सहु राय । ११ ।
बंन्यो राघवी महा बळवंत; क्रोधे काळनो आणे अंत;
घणुं जुद्ध कर्युं ते कुमार, कहेतां ग्रंथ पामे विस्तार । १२ ।
ऊतर्या अस्त्र विद्याए समान, लव पुष्कल बे बळवान;
लवे काळास्त्र मूक्युं त्यांहे, वाग्युं पुष्कलना हृदेमांहे । १३ ।
थई मूरछा पड्यो भरततन, त्यारे धाया शत्रुघन,
करी बाण-वृष्टि ते दिश, छेदी नाखे करी रीस । १४ ।

हृदय पर लग गया, तो वह वहीं (से) तत्क्षण आकाश में उड़ गया और बहुत घूमता रहा। उस समय पुष्कल दौड़ा । ७ । उसे देखकर लव ने सोचा कि यह भरतजी का (ही) पुत्र होगा। पुष्कल ने लव को रथ-हीन देखा, तो निश्चय-पूर्वक उस समय वह (रथ से नीचे) उतर गया । ८ । उसने स्वयं हाथों में धनुष-बाण ग्रहण किये। वह (अब) स्थिर-चित्त हो गया था। वे दोनों वीर बारह-बारह वर्ष के थे। धनुर्विद्या के धारी वे (दोनों) शोभायमान थे । ९ । एक कामदेव था, तो दूसरा वसन्त था। एक तेजस्वी सूर्य था, तो दूसरा (सतेज) चन्द्रमा। जिस प्रकार नव रसों में[1] रौद्र और वीर रस (शोभायमान) होते हैं, उस प्रकार, वे दोनों रणधीर शोभा दे रहे थे । १० । वे आमने-सामने (खड़े होकर) युद्ध करने लगे, तो देव अन्तरिक्ष में से उस युद्ध को देख रहे थे। शत्रुघ्न की मूर्च्छा उतर गयी। समस्त राजा दूर से (युद्ध) देख रहे थे । ११ । वे दोनों राघवीय महा बलवान थे। वे क्रोध से काल (तक) का अन्त कर सकते थे। उन कुमारों ने बहुत (घमासान) युद्ध किया। उसे कहने से यह ग्रन्थ (बहुत) विस्तार को प्राप्त हो जाएगा । १२ । लव तथा पुष्कल दोनों बलवान कुमार अस्त्र-विद्या में समान उतर गये। लव ने वहाँ कालास्त्र फेंक दिया, वह पुष्कल के हृदय पर लग गया । १३ । भरत का वह पुत्र मूर्च्छित

[1] (साहित्य में) नव रसः—शृंगार, वीर, रौद्र, भयानक, वीभत्स, हास्य, करुण, भक्ति, शान्त ।

रिपुदमन मूके जे जे बाण, सीतापुत्र छेदे निरवाण,
एम जुद्ध थयुं घणी वार, पछी कोप्या केकईना कुमार । १५ ।
एक काढ्युं बाण निरवाण, रामनुं ते आपेलुं जाण,
कह्युं हतुं रघुपतिए जेह, संकटसमे मूकजे एह । १६ ।
ते कर्युं धनुषसंधान, महातेजस्वी दीप्तमान,
ते मूक्युं ज्यारे शत्रुघन, त्यारे लवे विचार्युं मन । १७ ।
आ अग्निवत् झळके बाण, निश्चे मारशे मुजने जाण,
मारी पासे नथी कुश वीर, एवुं कही राखी पछे धीर । १८ ।
आव्यो शर करतो सुसवाट, जाणे प्रले अग्निनो उमाड;
लवे स्मरण कर्युं गुरु केरुं, मूक्युं तीक्ष्ण बाण घणेरुं । १९ ।
शत्रुघननो शर तेणी वार; छेद्यो मध्य थकी निरधार,
तेनो अग्रभाग ऊड्यो त्यांहे, ते वाग्यो लवना हृदेमांहे । २० ।
पड्यो विकळ थईने वीर, थयुं चैतन्यरहित शरीर;
ज्यारे लव पाम्या मूर्छाय, रामसैन्यमां जयजय थाय । २१ ।

होकर (जब) गिर पड़ा, तब शत्रुघ्न दौड़ा, वह उस समय उस स्थान पर बाणों की वृष्टि करने लगा, तो क्रोध करके (लव) उन्हें काट डाल रहा था । १४ । शत्रुघ्न जो-जो बाण चलाता था, सीता-पुत्र लव उसे अन्त में छेदता जाता था । इस प्रकार बहुत समय तक युद्ध हो गया, तो कैकेयी-सुत शत्रुघ्न कुपित हो उठा । १५ । उसने एक निर्वाण बाण निकाल लिया था । समझिए कि राम द्वारा वह बाण दिया (हुआ) था । रघुपति राम ने यह कहा था—इसे संकट के समय छोड़ देना । १६ । शत्रुघ्न ने उस महातेजस्वी दीप्तिमान बाण को धनुष पर संधान किया और उससे जब वह चला दिया, तब लव ने मन में यह विचार किया । १७ । यह बाण अग्नि की भाँति जगमगा रहा है, समझ लें कि मुझे यह निश्चय ही मार डालेगा । मेरे पास भाई कुश तो है नहीं, ऐसा कहते हुए उसने फिर धीरज धारण कर रक्खा । १८ । वह बाण साँय-साँय करता हुआ आ गया, मानो प्रलयकाल की अग्नि का ही लुकाठा हो । फिर लव ने अपने गुरु (वाल्मीकि) का स्मरण किया और एक तीक्ष्ण बाण चला दिया । १९ । उससे उसने उस समय शत्रुघ्न के बाण को मध्य (भाग) में निश्चय ही काट डाला । (फिर भी) उसका अग्रभाग, वहाँ से उड़ गया; वह लव के हृदय पर लग गया । २० । (फलतः) वह वीर (बालक) विकल होकर गिर पड़ा । उसका शरीर चैतन्य-रहित हो गया । जब (इस प्रकार) लव मूर्च्छा को प्राप्त हो गया, तो राम की सेना में

सिंहनाद करे भूपाळ, कहे परस्पर पडियो बाळ,
जुए वेगळेथी नृप धीर, पण पासे न आवे को वीर। २२।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

को वीर पासे अवाय नहि, एवो लव केरो मन त्रास रे,
त्यारे रिपुसूदन रथमांथी ऊतर्या, आव्या कुंवरनी पास रे। २३।

जय-जयकार हो गया। २१। उन राजाओं ने सिंहनाद किया और परस्पर कह दिया कि यह बालक (युद्ध में) गिर पड़ा। वे धैर्यशील राजा दूर से देख रहे थे; फिर भी उनमें से कोई भी वीर पुरुष उसके पास नहीं आ गया। २२।

(उन राजाओं के) मन में लव सम्बन्धी इस प्रकार आतंक (छा गया) था कि (उनमें से) कोई भी वीर पुरुष उसके पास नहीं आ गया। तब शत्रुघ्न रथ में से उतर गया और उस कुमार के पास आ गया। २३।

* * *

अध्याय—७० (सीता के कथन के अनुसार लव को लाने के लिए कुश का गमन)

राग वेराडी

हावे शत्रुघन रथमांथी ऊतर्या ने, आव्या कुंवरनी पास,
सुंदर रूप जोई लव केरुं, बोल्या थईने उदास। १।
आ कुंवर एकलो वनमां क्यांथी ? कोण हशे एनो तात ?
आवो रत्नपुत्र जेणीए जन्म्यो, धन्य धन्य एनी मात। २।
मुख सुंदर आकरण नेत्र एनां, आजानबाहु प्रचंड,
एना कुळमां अजवाळुं करवा, ऊग्यो हतो मार्तंड। ३।

अध्याय—७० (सीता के कथन के अनुसार लव को लाने के लिए कुश का गमन)

अब शत्रुघ्न रथ में से उतर गया और कुमार (लव) के पास आ गया। (फिर) लव के सुन्दर रूप को देखते हुए वह उदास होकर बोला। १। 'यह कुमार वन में अकेला कहाँ से (कैसे) आया है ? इसका कौन पिता है ? जिसने ऐसे पुत्र-रत्न को जन्म दिया, वह उसकी माता धन्य है, धन्य है। २। इसका मुख सुन्दर है। इसकी आँखें आकर्ण अर्थात् कानों तक फैली हुई—विशाल हैं। उसके प्रचंड बाहु घुटनों तक पहुँचनेवाले अर्थात् दीर्घ हैं। (इसके रूप में) मानो इसके कुल को उज्ज्वल बनाने के लिए सूर्य ही उदित हो गया है'। ३। अनन्तर शत्रुघ्न

पछे रिपुदमने उछंगमां लीधो, जोयुं सुहास्य वदन,
रूप जोई निश्वास ज मूके, जळ भरियुं लोचन। ४।
पछी वदन पखाळ्युं शीतळ जळथी, नाख्यो शीत पवन,
तोये मूर्छा वळी नहि लवनी, त्यारे बोल्या शत्रुघन। ५।
जो जाण थशे एनी जनुनीने तो, ते नहि जीवे जाण,
माटे प्रभुनी पासे लेई जाउं, एने जिवाडुं निरवाण। ६।
एवुं कही निज रथमां नाख्यो, लवने तेणी वार,
वाजित्र वाजते वळिया पाछा, छोडीने तोखार। ७।
ते ऋषिना पुत्रे दीठो तेने, लेई जातां बळवंत,
तेणे सीतानी पासे आवीने, कह्युं सकळ वरवंत। ८।
अरे माता को भूपे मार्यो, लवने त्यां निरधार,
ते रथमां घली लेई जाय छे, हवडां आणी वार। ९।
एवुं सांभळी सीताजी थयां, मूरछित तेणे ठार,
ज्यम पडे पूतळी काष्ठनी, एम पडियां छे निरधार। १०।
पछी ऊठीने आक्रंद करे छे, अंग पछाडे आप,
नेत्रे जळ चोधारां चाले, करतां विविध विलाप। ११।

ने उसे (उठाकर) गोद में ले लिया। वह उसके सुहास्य से युक्त मुख को देखता रहा। उसके रूप को देखते ही वह आह भरने लगा। उसकी आँखों में (अश्रु-) जल भर आया। ४। तदनन्तर उसने उसके मुख को ठण्डे पानी से धो लिया, और ठण्डी हवा की। फिर भी लव की मूर्च्छा नहीं गयी, तब शत्रुघ्न बोला। ५। 'यदि इसकी माता को यह जानकारी हो जाएगी, तो समझिए कि वह जीवित नहीं रह पाएगी। इसलिए इसे प्रभु राम के पास ले जाऊँगा और निश्चय ही इसे जिला दूँगा।'। ६। ऐसा कहकर उसने उसी समय लव को अपने रथ में रख दिया और घोड़े को दौड़ाते हुए वह पीछे मुड़ गया। (उस समय) वाद्य बज रहे थे। ७। उन ऋषि-पुत्रों ने शत्रुघ्न को उसे लिये हुए जाते देखा, तो उन्होंने सीता के पास आकर उससे समस्त समाचार कह दिया। ८। (वे बोले—) 'हे माता, किसी राजा ने निश्चय ही वहाँ लव को मार डाला है। अभी इस समय, वह उसे रथ में रखकर ले जा रहा है'। ९। ऐसा सुनते ही सीता उस स्थान पर मूर्च्छित हो गयी और जिस प्रकार काठ की कोई पुतली गिर पड़ती है, उसी प्रकार निश्चय ही वह गिर पड़ी। १०। अनन्तर उठकर वह आक्रन्दन करने लगी। उसने स्वयं अपनी देह को जोर से पटक-सा डाला। उसकी आँखों से अश्रु-जल की चार (-चार)

अरे दैव तें आ शुं कीधुं? दीधुं दुःख अपार,
आज परवश मारो पुत्र पड्यो, कोण करे बूम ने वहार? । १२ ।
ज्येष्ठ कुंवर कुश पासे नथी ने, हुं एकलडी आंहे,
वाल्मीक मुनि तो घेर नथी, कोण वहारे धाशे त्यांहे । १३ ।
हती सूरज-चंद्रमा सरखी, मारे बे बाळकनी जोड,
ते लवने हावे क्यारे देखीश? दैवे दीधी खोड । १४ ।
बे बाळ सजोडे लईने अवधपुर, जावानी हती मारी आश,
ते मनसूबा मन मांहे रह्या, ने दैवे कीधी निराश । १५ ।
अहो रघुपति प्राणनाथ छो, भक्तवत्सल महाराज,
प्रभु बांहे ग्रह्यानी लाज न आवी, कीधुं आवुं काज । १६ ।
चौद वरष वन साथे राखी, रावणशुं जुद्ध कीधुं,
घणी ममता मुज सारु राखी, अंते दुःख शुं दीधुं? । १७ ।
प्रभु तमो करो छो भलुं सरवनुं, समान सरवे अंक,
हुं दुःख पामुं ते मारे कर्मे, नथी तमारो वंक । १८ ।

धाराएँ बहने लगीं। वह विविध प्रकार से विलाप करने लगी। ११। (वह बोली—) 'अरे भाग्य, तूने यह क्या किया? तूने (हमें) अपार दुख दिया है। आज मेरा पुत्र दूसरे के वश (हाथ में) पड़ गया। कौन फरियाद करेगा? कौन सहायता करेगा?। १२। ज्येष्ठ कुमार कुश पास नहीं है और मैं तो यहाँ अकेली हूँ। वाल्मीकि मुनि भी घर पर नहीं हैं, तो सहायता के लिए वहाँ कौन दौड़ेगा। १३। मेरे इन दो बच्चों की जोड़ी सूर्य-चन्द्र की-सी थी। उस लव को अब मैं कहाँ देख सकूँगी? दैव ने दाग लगा दिया है। १४। इन दो बालकों की जोड़ी लेकर अवधपुर जाने की मेरी इच्छा थी। ये योजनाएँ मन में ही रह गयी हैं और दैव ने (इस सम्बन्ध में) मेरी निराशा कर दी है। १५। अहो रघुपति, हे भक्त-वत्सल महाराज, आप मेरे प्राणनाथ हैं। हे प्रभु, मेरी बाँह पकड़कर भी आपने जो ऐसा काम किया है, उसमें आपको कोई लज्जा नहीं आयी। १६। आपने मुझे चौदह बरस साथ में रख लिया, (मेरे लिए) रावण से युद्ध किया। आपने मेरे प्रति बड़ी ममता रखी, फिर अन्त में यह (कैसा) दुःख दे दिया है। १७। हे प्रभु, आप सबका भला करते हैं, आपके लेखे सब समान हैं। मैं जो दुःख को प्राप्त हो गयी हूँ, वह अपने कर्म से, उसमें आपका कोई टेढ़ा भाव तो नहीं है। (आपका कोई दोष नहीं है)।' १८। इस प्रकार उस समय सीता गद्गद कण्ठ से बहुत विलाप कर रही थी। वह लक्ष्मी की अवतार इस प्रकार (विलाप करते

घणुं गद्गद कंठे विलाप करतां, सीताजी तेणी वार,
एम मानुषी लीला जणावे छे, लक्ष्मीनो अवतार । १९ ।
एटले कुश वनमां हतो तेने, मानशुकन थयां त्यांहे,
ते उतावळो चिंता करतो, आव्यो निज आश्रममांहे । २० ।
वळी अन्य ग्रंथोमां एम कह्युं, छे ते सुणो श्रोता धीर,
अवंतिकामां यज्ञ करावा, गयो हतो कुश वीर । २१ ।
मुनिवरने तेडवा आव्यो'तो, उजेणनो भूपाळ,
त्यारे यज्ञ करावा रसपति घेर मुनि, जता हता पाताळ । २२ ।
त्यारे वाल्मीकि मुनिए आज्ञा आपी, कुशने तेणी वार,
ते अनेक विप्र लेई चाल्यो, अवंतिका मोझार । २३ ।
ते पूरण यज्ञ करावी पाछो, आव्यो आश्रममांहे,
मानशुकन घणां थयां मारगे, उचाट करतो त्यांहे । २४ ।
जुए तो माताने रोतां दीठां, निज आश्रम मोझार,
त्यारे तत्क्षण आवी छानां राख्यां, लूछ्यां लोचनवार । २५ ।
अहो मात क्यम रुदन करो छो ? क्यां गयो लव मुज वीर ?
अमो छतां शुं संकट तमने ? राखो मनमां धीर । २६ ।

हुए) मानुषी लीला प्रदर्शित कर रही थी । १९ । कुश वन में था । इतने में उसे वहाँ अपशकुन होने लगे । (इसलिए) वह अधीर होकर चिन्ता करता हुआ अपने आश्रम में आ गया । २० । हे धैर्यशील श्रोताओ, सुनिए, इसके अतिरिक्त, अन्य ग्रन्थों में ऐसा कहा हुआ है कि वीर कुश अवन्तिका (उज्जैन) नगरी में यज्ञ कराने के लिए गया था । २१ । उज्जैन का राजा मुनिवर (वाल्मीकि) को बुलाकर ले जाने के हेतु आया था; तब पाताल में रसपति वरुण के घर यज्ञ कराने के लिए वे जा रहे थे । २२ । तब उस समय, वाल्मीकि मुनि ने कुश को आज्ञा दी, तो अनेक विप्रों को साथ में लेकर वह अवन्तिका नगरी में चला गया । २३ । उस यज्ञ को पूर्ण करवाकर वह आश्रम में लौट आया । रास्ते में उसे बहुत अपशकुन हो गये, तो वहाँ (अधीर होकर) वह चिन्ता करने लगा । २४ । वह देखने लगा, तो उसने माँ को अपने आश्रम में रोती हुई देखा । तब आकर उसने उसे चुप कर रखा और उसके आँसुओं को पोंछ लिया । २५ । (वह बोला—) 'अहो माँ, तुम क्यों रो रही हो ? मेरा भाई लव कहाँ गया है ? मेरे होते हुए तुम्हें क्या संकट है ? मन में धीरज तो रख लो ।' । २६ । तब सीता बोली, 'किसी राजा का कोई पुत्र यज्ञ के घोड़े के साथ आ गया था । लव ने उस (के सिर पर बाँधे

त्यारे सीता कहे को रायतणो, सुत आव्यो यज्ञतोखार,
ते लवे पत्र वांचीने बांध्यो, कदळी थड मोझार। २७।
त्यारे घणुं सैन्य आव्युं ते पूंठे, युद्ध थयुं महा घोर,
तेणे लवने मूरछित कीधो, मार्यो करीने जोर। २८।
ते रथमां घाली लई जाय छे, लवने त्यां निरधार,
ते कह्युं मुने मुनिबाळके, हवडां आणी वार। २९।
ते सुणीने कुश ऊभो थयो तत्क्षण, ग्रह्यां धनुष ने बाण,
पछी निज बळथी धीरज आपी, माताशुं बोल्या वाण। ३०।
हुं हवडां मारुं क्षणमां जई जो, महाबळियो हशे राय,
वा राक्षस गांधर्व किन्नर तो पण, तेने जीतुं माय। ३१।
जदपि महाबळियो काळ हशे, यम इंद्र वरुण कुबेर,
वा ब्रह्मा विष्णु शंकर तो पण, जुद्ध करी लेउं वेर। ३२।
मुज बंधुने मुकावी लावुं, साथे यज्ञतोखार,
तो पुत्र तमारो खरो जाणजो, पण करी कहुं निरधार। ३३।
एम कहीने कुंडमांहेथी, लीधी विभूति संग,
करमां लेईने मंत्री तेने, लेपन कीधी अंग। ३४।

हुए) पत्र को पढ़कर (उस घोड़े को) केले के तने से बाँध दिया। २७। तब उस घोड़े के पीछे (-पीछे) बड़ी सेना आ गयी और (वहाँ) महाघोर युद्ध हो गया। उस (राज-पुत्र) ने लव को बलपूर्वक मार दिया और मूर्च्छित कर डाला। २८। वह वहाँ लव को निश्चय ही रथ में रखकर ले जा रहा है। अभी इस समय मुनियों के इन बालकों ने मुझे यह बता दिया है।'। २९। यह सुनते ही कुश तत्क्षण खड़ा हो गया और उसने धनुष और बाण ले लिये। अनन्तर अपनी शक्ति के अनुसार ढाढ़स बँधाते हुए वह अपनी माता से यह बात बोला। ३०। 'यद्यपि वह राजा महा बलवान हो, तो भी मैं अभी क्षण में जाकर उसे मार डालूँगा। वह कोई राक्षस, गन्धर्व अथवा किन्नर हो तो भी, हे माँ, मैं अभी (आज) उसे जीत लूँगा। ३१। यद्यपि वह महा बलवान काल हो, यम, इन्द्र, वरुण या कुबेर हो, वा ब्रह्मा, विष्णु, शिव ही हो, तो भी मैं युद्ध करके बदला ले लूँगा। ३२। मैं अपने बन्धु को छुड़ाकर, साथ ही यज्ञ के घोड़े को भी ले आऊँगा, तो ही मुझे अपना सच्चा पुत्र जान लेना। मैं निश्चय ही प्रण करके यह कह रहा हूँ।' ३३। ऐसा कहकर साथ ही उसने कुण्ड में से विभूति निकालकर ले ली। हाथ में लेकर उसने उसे मंत्र-अभिभूत करते हुए अपने अंग में लगा लिया। ३४। अनन्तर सीता की

पछी प्रदक्षिणा सीतानी करीने, चरणे नमाव्युं शीश,
माताए कर मस्तक मूक्यो, दीधी अति आशिष। ३५।
पछी गुरुनुं स्मरण करीने, चाल्यो जेवो सिंहनो बाळ,
सेन्या पूंठळ आवी मळियो, उतावळो तत्काळ। ३६।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

तत्काळ आवी मळ्यो सैन्यने, ज्यम सरप पूंठे उरगाद रे,
घणी हांक मारी दूरथी, पछी कीधो छे सिंहनाद रे। ३७।

प्रदक्षिणा करके उसके चरणों में मस्तक नवा लिया, तो माता ने उसके मस्तक पर हाथ रखा और बड़ा आशीर्वाद दिया। ३५। अनन्तर गुरु का स्मरण करके वह सिंह के शावक जैसा चल दिया। (फिर) वह वह अधीरतापूर्वक तत्काल सेना के पीछे आकर उससे मिल गया। ३६।

जिस प्रकार सर्प के पीछे से आकर गरुड़ मिल जाता है, उसी प्रकार वह (कुश) तत्काल आते हुए सेना से मिल गया। उसने दूर से जोर से पुकार लिया और फिर सिंहनाद किया। ३७।

* * *

अध्याय—७१ (कुश द्वारा शत्रुघ्न को उसकी सेना-सहित पराजित करना)

राग धन्याश्री

कुश हाक मारीने बोल्यो वचन जी,
अल्या ऊभा रहो तस्कर दुरिजन जी।
क्यम लेई जाओ छो वीर अमारो जी?
हवडां उतारीश नाद तमारो जी। १।

ढाळ

हवडां उतारीश नाद तमारो, करुं सकळ संहार,
एवां वचन सुणीने वीर सरवे, पाछुं जोयुं तेणी वार। २।

अध्याय—७१ (कुश द्वारा शत्रुघ्न को उसकी सेना-सहित पराजित करना)

(चीखते-) पुकारते हुए कुश ने यह बात कही, 'अरे तस्करो, दुर्जनो, खड़े रह जाओ। मेरे भाई को क्यों लिये जा रहे हो? मैं अभी तुम्हारा घमंड छुड़ा दूंगा। १।

त्यारे दीठो कुशने आवतो, जाणे रूपे श्रीरघुवीर,
कुमार द्वादश वर्षनो, रणपंडित महाबळ धीर। ३ ।
ए तो सरवनो संहार करशे, दीसे एवो प्रचंड,
पछे कुशे सज्ज थईने, चढाव्युं पोतानुं कोदंड। ४ ।
पछी एक काळे सर्वं उपर, मूक्यां अगणित बाण,
अकळाविया सहु रायने, सेन्या करे बुंबाण। ५ ।
एवुं पराक्रम जोई पुत्रनुं, कोप्या शत्रुघन तेणी वार,
निरवाण मंत्रनां बाण दश, मूकियां छे निरधार। ६ ।
वळी कुशे छेद्यां आवतां, सन्मुख शरथी तेह,
त्यारे कोपियो सेनापति छे, मृगेन्द्र नामे जेह। ७ ।
तेणे घणुं जुद्ध कुश साथ कीधुं, कहेतां न आवे पार,
पछी रुद्रशर मूकीने तेने, मारियो निरधार। ८ ।
त्यारे हाहाकार हवो तदा, ज्यारे मार्यो वीर मृगेन्द्र,
तेनो बंधु धायो ते समे, जेनुं नाम छे नागेन्द्र। ९ ।
तेणे कुशनी उपर क्रोध करीने, बाण मूक्यां वीश,
सीतासुते एक बाणथी, शर छेदियां ते दीश। १० ।

मैं अभी तुम्हारे घमण्ड को छुड़ा दूँगा, सबका संहार कर डालूँगा।' ऐसी बातों को सुनते ही समस्त वीरों ने उसी समय पीछे देखा। २। तब उन्होंने कुश को आते देखा, मानो वह रूप से श्रीरघुवीर राम ही हो। वह कुमार बारह वर्ष का था, महा बलवान धीर रण-पण्डित था। ३। वह ऐसा प्रचण्ड दिखायी दे रहा था कि (मानो) वह सबका संहार कर सकेगा। अनन्तर सज्ज होकर कुश ने अपना धनुष चढ़ा दिया। ४। फिर एक ही समय (एक साथ) उसने सबपर असंख्य बाण चला दिये और समस्त राजाओं को भयभीत तथा व्याकुल कर दिया, तो सेना कोलाहल करने लगी। ५। उस पुत्र (लड़के) के ऐसे पराक्रम को देखकर उस समय शत्रुघ्न क्रुद्ध हो गया और निर्वाण-मंत्र के दस बाण उसने निर्धार-पूर्वक चला दिये। ६। फिर कुश ने सामने आते हुए उन बाणों को बाण से छेद डाला। तब मृगेन्द्र नामक जो सेनापति था, वह कुपित हो उठा। ७। उसने कुश से बड़ा युद्ध किया, (जिसे) कहते (अर्थात् जिसका वर्णन करते) पार नहीं आपाएँगे। फिर उसने रुद्र-शर निकाल कर चला दिया और उसे निर्धार-पूर्वक मार दिया। ८। जब वीर मृगेन्द्र को (कुश ने) मार दिया, तब हाहाकार हो गया। फिर उस समय उसका बन्धु दौड़ा, जिसका नाम नागेन्द्र था। ९। उसने क्रोध करके

जेम एक हरिना नामथी, सहु भस्म थाये पाप,
एम सीतानंदन तणा शरनो, प्रौढ अधिक प्रताप । ११ ।
पछी विशिख मूक्युं अर्धचंद्र, कुशे धरी मन रीस,
ते बाणे करीने छेदियुं, नागेन्द्र केरुं शीश । १२ ।
त्यारे क्रोध करीने एके काळे, धाया सर्वे राय,
ते समे युद्ध थयुं घणुं, वरणवी नव कहेवाय । १३ ।
कुश एकले सहु भूपने, मारियां दश दश बाण,
मूरछित थई पृथ्वी पड्या सहु, अचेतन निरवाण । १४ ।
सीतासुते संहार कीधो, हणी सहु सेनाय,
शोणितनी सरिता वही, हय गज तणाया जाय । १५ ।
दळभंग जोई पोतातणुं, कोपिया शत्रुघन,
ए सुते अनरथ बहु कर्यो माटे, पमाडुं एने पतन । १६ ।
एम विचारी एक बाण मार्युं, कुशतणा हृदेमांहे,
तेने व्यथा थई क्षण एक, पाछो थयो सावध त्यांहे । १७ ।
पछी चरण चिंतवी गुरुतणा, मूक्युं कुशे एक बाण,
तेणे शत्रुघननुं हृदे भेद्युं, रुधिर चाल्युं जाण । १८ ।

कुश पर बीस बाण चला दिये, तो उस सीता-पुत्र ने एक ही बाण से उस समय उस स्थान पर उन्हें छेद डाला । १० । जिस प्रकार एक (-मात्र) भगवान हरि के नाम से समस्त पाप भस्म हो जाते है, उसी प्रकार सीता-नन्दन कुश के एक बाण का बहुत अधिक प्रताप (प्रदर्शित हो गया) था । ११ । अनन्तर मन में क्रोध धारण करते हुए, कुश ने एक अर्ध-चन्द्र बाण चला दिया, और उस बाण से उसने नागेन्द्र के मस्तक को छेद डाला । १२ । तब क्रोध करके एक ही समय समस्त राजा दौड़े । उस समय बड़ा युद्ध हो गया, (जिसका) वर्णन करके कहा नहीं जा सकता । १३ । अकेले कुश ने समस्त राजाओं पर दस-दस बाण चला दिये, तो वे सब मूच्छित होकर अन्त में भूमि पर अचेत गिर पड़े । १४ । (इधर) सीता-सुत कुश ने समस्त सेना को मारकर उसका संहार कर दिया । (तब) रक्त की नदी बहने लगी । उसमें घोड़े और रथ बहकर जाने लगे । १५ । अपनी सेना को भग्न हुई देखकर शत्रुघ्न कुपित हो उठा । (उसने सोचा—) 'इस लड़के ने तो बहुत अनर्थ कर दिया है, अतः इसे मैं पतन को प्राप्त करा दूँगा ।' । १६ । ऐसा विचार कर उसने कुश के हृदय पर एक बाण चला दिया । उससे उस (कुश) को एक क्षण व्यथा हो गयी, (फिर भी) वह फिर वहाँ सावधान हो गया । १७ । अनन्तर

ज्यम शैल केरुं शिखर भेदे, वज्रथी सुरराय,
एम शत्रुघन मूरछित थईने, पड्या मृत्यु प्राय । १९ ।
एम पड्युं षोडश पद्म दळ, सहु पृथ्वीना राजन,
रिपुदमन आदे रणमां पड्या, थईने अचेतन तन । २० ।
एवुं जोईने पछी कुश प्रवेश्यो, रामसेनामांहे,
थई चपळ ते चारे दिशा, वीरने शोधे त्यांहे । २१ ।
पछी शत्रुघनना मुख्य रथमां, दीठो ते लव वीर,
तेने ऊंचकीने ह्रदे चांप्यो, धरी मनमां धीर । २२ ।
भणी मंत्र मृत्युंजयतणो, फेरव्यो मुख पर हाथ,
त्यारे नेत्र उघाडी सुचेतन थई, बोल्यो लव कुश साथ । २३ ।
भाई, अयोध्यापति रामनो, में बांधियो तोखार,
तेना वीर आदे राय सहुनो, कर्यो छे संहार । २४ ।
घणुं जुद्ध कर्युं ते साथे पण, मुने पमाड्यो मूर्छाय,
हे वीर तें आ रण विषे, आवी करी मुज सहाय । २५ ।

गुरु के चरणों का स्मरण करके कुश ने एक बाण चला दिया। उससे उसने शत्रुघ्न के हृदय को छेद डाला। समझ लीजिए कि उससे रक्त बहने लगा। १८। जिस प्रकार सुर-राज इन्द्र पर्वत के शिखर को भेद देता हो, उसी प्रकार (कुश ने शत्रुघ्न के हृदय को भेद दिया और फलतः) वह (शत्रुघ्न) मूर्च्छित होकर मृत-प्राय गिर पड़ा। १९। इस प्रकार पृथ्वी के समस्त राजाओं के पराजित होने पर उनकी सोलह पद्म सेना गिर पड़ी (पराजित) हो गयी। शरीर अचेतन हो जाने पर शत्रुघ्न आदि युद्ध-भूमि में गिर पड़े। २०। ऐसा देखकर फिर कुश राम की सेना में पैठ गया और चपल होते हुए (अर्थात् चपलता-पूर्वक) वह वहाँ चारों दिशाओं में अपने भाई को खोजने लगा। २१। अनन्तर उसने शत्रुघ्न के मुख्य रथ में अपने बन्धु लव को देखा, तो उसे उठाकर उसने मन में धीरज धारण करते हुए उसे हृदय से लगा लिया। २२। (फिर) मृत्युंजय मंत्र पढ़कर उसने उसके मुख पर हाथ फेरा, तब आँखें खोलकर लव भली भाँति सचेत होते हुए कुश से बोला। २३। 'भाई, अयोध्या-पति राम का घोड़ा मैंने बाँध लिया और उनके बन्धु तथा समस्त राजाओं का संहार कर डाला। २४। मैंने उनसे बड़ा युद्ध किया, फिर भी उन्होंने मुझे मूर्च्छा को प्राप्त करा दिया। हे भाई, इस युद्ध (-भूमि) में आकर तुमने मेरी सहायता की है। २५। वह घोड़ा कहाँ गया है? उसे

ते क्यां गयो हय ? खोळी काढो, बांधिये तोखार,
जे मुकावाने आवशे, तेनो करीशुं संहार । २६ ।
एवुं वचन सुणीने कुश कहे, में जीत्या सर्व वीर,
वळी दळ सकळ संहारियुं, थयां चैतन्यरहित शरीर । २७ ।
श्रीरामनो हय कुशे जाण्यो, हरखियो महाभाग,
कहे अधर चांपी दंतशुं, भाई भलो आव्यो लाग । २८ ।
पछी वीर बंन्यो सज्ज थया, झालियो यज्ञतोखार,
कदळीना वृक्षे बांधीने, ऊभा रह्या ते ठार । २९ ।
वळी आवे जो कोई अवधथी, एम करे परस्पर हास,
तो साथेथी संहार करीने, जइए माता पास । ३० ।
एम विचारी ऊभा रह्या, बे रघुनंदन त्यांहे,
को जन गया ते सैन्यमांथी, अवधपुर छे त्यांहे । ३१ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अवधपुरमां सरजुतीरे आव्या, सेनामांथी जन रे,
तेणे रण तणी सहु वात कही, ज्यां बेठा जुगजीवन रे । ३२ ।

खोज निकालो । उस घोड़े को हम बाँध लें और जो उसे मुक्त करने आएँगे, उनका हम संहार कर देंगे । ' । २६ । ऐसा वचन सुनकर कुश बोला, ' मैंने समस्त वीरों को जीत लिया है । उसके अतिरिक्त समस्त सेना का संहार कर डाला है और उनके शरीर चेतना-शून्य हो गये हैं ' । २७ । कुश ने जब उस घोड़े को राम का घोड़ा जान लिया, तो वह महा भागवान् आनन्दित हो उठा । फिर दाँतों में होंठ दबाकर वह बोला, ' भाई यह अच्छा अवसर आ गया है । ' । २८ । फिर वे दोनों भाई सज्ज हो गये और उन्होंने उस यज्ञीय घोड़े को पकड़ लिया । उसे केले के पेड़ से बाँध कर वे उसी स्थान पर खड़े रह गये । २९ । फिर वे परस्पर इस प्रकार हास्य-कलाप करने लगे कि यदि कोई अयोध्या से आ जाए, तो उसका संहार करके माता के पास चले जाएँ । ३० । इस प्रकार विचार करके वे दोनों रघुनन्दन (राम के पुत्र) वहाँ खड़े रह गये । (इधर) उस सेना में से कुछ लोग वहाँ अयोध्या में चले गये । ३१ ।

सेना में से (कुछ) लोग अयोध्यापुरी में सरयू-तट पर आ गये और जहाँ जगज्जीवन राम बैठे हुए थे, (वहाँ जाकर) उन्होंने युद्ध-सम्बन्धी समस्त समाचार कह दिया । ३२ ।

*   *   *

अध्याय—७२ (लव-कुश द्वारा सूर्य की स्तुति करके शस्त्रों को प्राप्त करना)

राग दोहा

हावे दीक्षा लई बेठा प्रभु, सरजु केरे तीर,
राजमंडळ ब्रह्मऋषि, वेष्टित श्रीरघुवीर। १ ।
त्यां सेवके आवीने कह्युं, शत्रुघननुं वरतंत,
सैन्यसहित संहार सुणी, विकळ थया भगवंत। २ ।
पछे लक्ष्मणने आज्ञा करी, रघुपतिए तेणी वार;
तत्क्षण रथ उपर चढ्या, साथे सैन्य अपार। ३ ।
काळजित सेन्यापति; लक्ष्मणजी रणधीर;
अपार सेन्या साथे लेई, चाल्या बंन्यो वीर। ४ ।
उतावळा ते आविया, वाल्मीकना वन मांहे;
आवती दीठी बे जणे, अपार सेना त्यांहे। ५ ।
त्यारे कुश बांधवने लव कहे, भाई भांगी गयुं मुज चाप,
हवे शा वडे युद्ध करीश हुं ? प्रगट्यो मन परिताप। ६ ।
त्यारे वळतो बोल्यो वीर कुश, अहीं कोण आपे कोदंड ?
माटे आराधन करो सूर्यनुं, जो थाय प्रसन्न मार्तंड। ७ ।

अध्याय—७२ (लव-कुश द्वारा सूर्य की स्तुति करके शस्त्रों को प्राप्त करना)

अब प्रभु रघुवीर राम सरयू नदी के तट पर (यज्ञ करने के लिए) दीक्षा लेकर बैठे थे। वे राज-मण्डल और ब्रह्मर्षियों द्वारा घिरे हुए थे। १। सेवकों ने वहाँ आकर शत्रुघ्न-सम्बन्धी समाचार बता दिया, तो सेना-सहित उसके संहार (की बात) सुनकर भगवान राम विकल हो गये। २। अनन्तर रघुपति राम ने उस समय लक्ष्मण को आज्ञा दी। (उसके अनुसार) वह तत्क्षण रथ पर आरूढ़ हो गया। उसके साथ अपार सेना थी। ३। कालजित नामक सेनापति और रणधीर लक्ष्मण दोनों वीर साथ में अपार सेना लेकर चल दिये। ४। वे शीघ्रता-पूर्वक वाल्मीकि के वन में आ गये, तो उन दोनों जनों (लव-कुश) ने वहाँ आती हुई उस अपार सेना को देखा। ५। तब लव अपने बन्धु कुश से बोला, 'भाई, मेरा धनुष तो टूट गया है। (अतः) मैं किससे युद्ध करूँ ?' उसके मन में ग्लानि उत्पन्न हो गयी। ६। तब कुश फिर बोला, 'यहाँ धनुष कौन देगा ? इसलिए मार्तण्ड सूर्य की आराधना करो, जिससे वह प्रसन्न हो जाए'। ७। तब उन दोनों भाइयों ने हाथ जोड़े और मन में

त्यारे बे वीरे कर जोडिया, ऊर्ध्व नेत्र धरी धीर,
स्तुति करता दिनकर तणी, साथे बंन्यो वीर । ८ ।

अथ प्रबंध

महाराज रवि तमहरता, जयदेव दिवाकरस्वामी । (टेक)
जयजय तमनाशक, विश्वप्रकाशक, सहस्रकिरण अंबर-चूडामणि ।९।

सूर्यनारायण सकळ विश्वजन चक्षुदेव, राजीव मिलिंद छेदंन बंध जय । भानु विरोचन विभावसु दिनमणि सुखदायक एकचक्र रथ कनकमणिमय । १० ।

सप्तवदन हय अरुण सारथि, वेग विपुल अति अपार पंथे निमिशार्धमां, आदिपुरुष तुं निर्विकार । जय ब्रह्मा विष्णु शिव त्रिगुणात्मक ज्योतिरूप तुं मार्तंड सविता त्रिअंग । जय भास्कर तरणी सुर पतंग, सहु नेत्र प्रकाशक विवस्वान बहुरश्मि हंस द्वादश मूर्ति । सुग्रहावतंस, जय सकळ रोग दुःखहारण भयहर, शरणागत

धैर्य धारण करके आँखें ऊपर (आकाश) की ओर लगायीं । (फिर) वे दोनों बन्धु साथ में सूर्य की स्तुति करने लगे । ८ ।

अन्धेरे का हरण करनेवाले हे महाराज सूर्य, हे स्वामी देव दिवाकर, आपकी जय हो । (टेक) ।

हे तम-नाशक, हे विश्व को प्रकाश देनेवाले, हे सहस्र-किरण, हे अम्बर-चूड़ामणि, आपकी जय हो, जय हो । ९ ।

हे सूर्यनारायण, हे सकल विश्व के जनों के चक्षुदेव, हे कमलों में बन्द भ्रमरों के बन्धन को छेद डालनेवाले, आपकी जय हो । हे भानु, हे विरोचन, हे विभावसु, हे समस्त विश्व को सुख देनेवाले दिनमणि, हे एकमात्र चक्र से युक्त कनक-रत्नमय रथ-वाले, आपकी जय हो ।

आपका घोड़ा सप्त मुख-धारी है, अरुण सारथी है । आपके रथ का वेग अति बड़ा है । आप निमिषार्ध में अपार (आकाश) मार्ग से जाते हैं । आप निर्विकार आदि पुरुष हैं । आपकी जय हो । आप ही ब्रह्मा हैं, विष्णु हैं, शिवजी हैं । आप (सत्त्व, रजस् तथा तमस् गुणमय) त्रिगुणमय हैं । आप ज्योति-स्वरूप है । आप मार्तण्ड हैं, सविता हैं । तीन अंगों के धारी हैं । आपकी जय हो । हे भास्कर, हे तरणि, हे पतंग देव, हे समस्त लोगों के नेत्रों के प्रकाशक, हे विवस्वान, हे बहु-रश्मि, हे हंस, हे द्वादशमूर्ति (रूपधारी), । १ । हे सुन्दर ग्रहों के अवतंस (आभूषण), आपकी जय हो । हे समस्त रोगों और दुःखों का हरण

सुखदायक लायक, मनवांछित फळ रिपु खळ धायक। काळरूप काळात्मा सृष्टि उद्भव पालण प्रले संहारण करता हरता। वृष्टि पोषण वारिशोषण। नमो नमो आदित्य विभाकर, जन आरत हर भक्तवत्सल प्रणति करुणाकर। जन गिरिधर कहे स्तवन करुं तव चरणकमळ शिर नामी; महाराज रवि तमहरता, जयदेव दिवाकर स्वामी। १०-१६।

दोहा

एम स्तवन कर्युं सूरज तणुं, लव कुश निर्मळ मन,
ते सुणीने तत्क्षण तदा, थया गभस्ति प्रसन्न। १७।
अक्षय भाथा अभंग धनुष्य, अभेद कवच अमूल्य,
ते आप्यां बे वीरने, सूरजे त्यां समतुल्य। १८।
त्यारे नमस्कार करी भानुने, लीधां बंन्यो कुमार,
सूर्यदत्त धनु कर ग्रही, कीधो छे टंकार। १९।

करनेवाले, हे भय-हर, हे शरणागतों को सुख देनेवाले, हे (सब प्रकार से) योग्य मनोवांछित फल देनेवाले, हे शत्रु के बल को नष्ट कर देनेवाले, हे कालरूप, हे कालात्मा, हे सृष्टि के उद्भव करनेवाले, पालनकर्ता तथा प्रलय-काल में संहार करनेवाले, हे (सर्व-) कर्ता और हर्ता, हे वर्षा के पोषक तथा जल के शोषक, आपको नमस्कार है, नमस्कार है। हे आदित्य, हे विभाकर, हे लोगों के संकटों का हरण करनेवाले, हे भक्त-वत्सल, हे प्रणतों पर करुणा करनेवाले आपको नमस्कार है। आपकी जय हो, जय हो। कवि गिरधरदास कहते हैं—(उन दोनों ने कहा—) आपके चरण-कमलों में मस्तक झुकाते हुए हम आपका स्तवन करते हैं। हे महाराज तम-हारी रवि, हे देव दिवाकर स्वामी, आपकी जय हो, जय हो। १०-१६।

लव और कुश ने निर्मल मन से इस प्रकार सूर्य का स्तवन किया। तब उसे सुनकर गभस्ति अर्थात् सूर्यदेव प्रसन्न हो गये। १७। (फल-स्वरूप) उन्होंने उन दोनों बन्धुओं को वहाँ (एक-एक) सम-समान अक्षय भाथा, अभंग धनुष, अमूल्य अभेद्य कवच प्रदान किये। १८। तब सूर्य को नमस्कार करके उन दोनों कुमारों ने उन्हें ले लिया और सूर्यदत्त धनुषों को हाथों में लेकर उन्होंने टंकार कर दी। १९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

टंकार कीधी लव कुशे, तेनो थयो नाद अमित रे,
एटले सन्मुख आवी पहोंच्या, लक्ष्मण ने काळजित रे। २०।

लव और कुश ने (जो) टंकार ध्वनि (उत्पन्न) कर दी, उसका नाद हो गया। इतने में लक्ष्मण और कालजित (दोनों) आते हुए सामने पहुँच गये। २०।

* * *

अध्याय—७३ (लव-कुश का रुधि राक्षस और लक्ष्मण से युद्ध करना)

राग मारु

आव्या लक्ष्मण ने काळजित, आठ क्षोहणी सेनासहित,
घणो थाय छे शोरबकोर, जोईने कोप्या राघवना किशोर। १।
सेनाने करी आज्ञा अनंत, ए बे बाळकना ल्यो अंत;
ते समे दोड्या सर्वे वीर, करता जुद्ध न शुद्ध शरीर। २।
मळी लव कुश बंन्यो बाळ, घणां बाण मूके तत्काळ;
चाले शर करतां सुसवाट, जाणे वरसे छे मास अषाड। ३।
आवतां शस्त्र सहुनां छेदे, बाण मूकीने तेनां अंग भेदे;
हस्ति केरां कुंभस्थळ फाडे, पाडे चीस तुरंगम त्राडे। ४।

अध्याय—७३ (लव-कुश का रुधि राक्षस और लक्ष्मण से युद्ध करना)

लक्ष्मण और कालजित आठ अक्षौहिणी सेना-सहित आ गये (तब) बहुत चीख-चिल्लाहट हो रही थी। यह देखकर राम के वे पुत्र क्रुद्ध हो उठे। १। अनन्त (अर्थात् शेष के अवतार लक्ष्मण) ने सेना को आदेश दे दिया, 'इन दोनों लड़कों का अन्त कर दो'। उस समय समस्त वीर दौड़े और वे युद्ध करने लगे। उन्हें शरीरों की कोई सुध-बुध नहीं रही। २। (इधर) लव और कुश दोनों लड़के मिलकर तत्काल अनेकानेक बाण चलाने लगे। वे बाण साँय-साँय करते हुए चल रहे थे, मानो आषाढ़ मास की बरसात हो रही हो। ३। सबके शस्त्रों के आते हुए ही उन्हें वे छेद डालते थे और बाण चलाकर उनके अंग छिन्न-भिन्न कर देते थे। वे हाथियों के कुम्भ-स्थलों को फोड़ते थे। घोड़े चीखते थे और (भय से) हिनहिनाते थे। ४। उस समय वे राघवीय क्रुद्ध हो गये

कोप्या राघवी तेणी वार, करवा मांड्यो सेनानो संहार,
बे वीर मळी पाडी वाट, नाठी रामसेना बारे वाट । ५ ।
एवुं जोईने धायो विचित्र, रुधी राक्षस रामनो मित्र,
ते आव्यो'तो लक्ष्मण साथ, धायो गदा गहीने हाथ । ६ ।
नाखी लवनी उपर तेणी वार, महाप्रचंड जेमां घणो भार,
सीतासुते मार्युं एक बाण, गदा चूर्ण करी निरवाण । ७ ।
तेणे मारी झपट प्रचंड, लवना करमांथी लीधुं कोदंड,
ऊड्यो आकाशे अकस्मात्, जोई विस्मे थया बे भ्रात । ८ ।
जेम फळ ग्रही ऊठे पक्षी, एम नभ गयो आमिषभक्षी,
गुरुस्मरण कर्युं लव शूर, भण्यो अंत्रिक्ष मंत्र चतुर । ९ ।
ऊठ्यो राक्षस पूंठे कुमार, जेम खगपति वेग अपार,
पोतानुं कोदंड थई स्वस्थ, झडपी लीधुं ते जमणे हस्त । १० ।
डाबे हाथे करी देई हाक, तेना मुखमां मारी लपडाक,
ते भम्यो नभमां घणी वार, पछी पडियो पृथ्वी मोझार । ११ ।

और उन्होंने उस सेना का संहार करना आरम्भ किया। उन दोनों भाइयों ने मिलकर (सेना का संहार करते हुए बीच में से जब) रास्ता बनाया, तो राम की सेना बारहो बाट भाग गयी (जहाँ-जहाँ मार्ग दिखायी दिया, वहाँ-वहाँ भाग गयी) । ५ । ऐसा देखकर रुधि नामक राम का एक विलक्षण राक्षस मित्र दौड़ा। वह लक्ष्मण के साथ आया था। वह (तब) हाथ में गदा लेकर दौड़ा । ६ । उसने उस समय वह महा प्रचण्ड गदा लव पर फेंक मारी, जिसका भार बहुत था। (परन्तु) उस सीता-सुत ने एक बाण चला दिया और अन्त में उस गदा को चूर-चूर कर डाला । ७ । (अनन्तर) उस (राक्षस) ने प्रचण्ड झपट्टा मार दिया और लव के हाथ में से धनुष (छीन) लिया; (फिर) वह सहसा आकाश में उड़ गया। (इधर) वे दोनों भाई यह देखकर विस्मित हो गये । ८ । जिस प्रकार कोई पक्षी फल लेकर उड जाता है, उसी प्रकार वह मांसाहारी (राक्षस गदा को लेकर) आकाश में चला चला गया। तो शूर तथा चतुर लव ने गुरु का स्मरण किया और अन्तरिक्ष मन्त्र का पठन किया ।९। (फिर) वह कुमार उस राक्षस के पीछे (-पीछे उस प्रकार) उड़ गया, जिस प्रकार खग-पति गरुड़ अपार वेग से उड़ जाता हो। (फिर) उसने स्थिर (-चित्त) होकर झपटते हुए दाहिने हाथ से अपने धनुष को ले लिया । १० । जोर से चीखते-पुकारते उसने बायें हाथ से उसके मुख पर थप्पड़ जमा दिया, तो वह आकाश में बहुत समय तक भ्रमण करता

पडतां ते थई गयो चूर, लेई धनुष आव्यो लव शूर,
वखाण्यो ते घणुं कुश वीर, एवो लव रणपंडित धीर। १२।
पड्यो असुर ते पृथ्वीमांहे, त्यारे धाया धराधर त्यांहे,
मार्या लवने त्यांहां पंच बाण, ते छेद्यां एक शरथी जाण। १३।
पछी बोल्या हसी लव धीर, अल्या सांभळ लक्ष्मण वीर,
तें मार्यो इंद्रजित अकाज, ते विद्या मुने देखाड आज। १४।
रह्या चौद वरस निराहार, भोग निद्रा तजी निरधार,
आज जुद्ध यथा अवकाश, रणमां करुं तारो नाश। १५।
त्यारे लक्ष्मण पूछे वाण, तारा मातपिता कहे कोण?
कोणे विद्या भणावी तुजने? तारुं नाम कहे भाई मुजने। १६।
हसी बोल्या भूमिजाकुमार, रणमां गोष्टितणो शो विचार?
अल्या मारां जे मातपिताय, ते जाणे छे जगतसमुदाय। १७।
तारे पूछ्या तणुं शुं काम? मारी सन्मुख कर संग्राम,
एम कही मूक्यां शर समरथ, लक्ष्मणजीनो उडाड्यो रथ। १८।

रहा और फिर पृथ्वी पर गिर पड़ा। ११। गिर पड़ने पर वह चूर-चूर हो गया। (इस प्रकार) शूर लव, अपना धनुष (फिर प्राप्त कर) लेते हुए आ गया। (तब) बन्धु कुश ने उसकी बहुत सराहना की। ऐसा था रण-पण्डित तथा धीर-वीर लव। १२। (जब) वह राक्षस पृथ्वी पर गिर पड़ा, तब (धरा-धारक) शेष का अवतार लक्ष्मण वहाँ दौड़ा और उसने लव पर पाँच बाण चला दिये। (फिर भी) समझिए कि उस (लव) ने उन्हें एक बाण से छेद डाला। १३। अनन्तर धैर्यधारी लव हँसते हुए बोला, 'अरे भाई लक्ष्मण, सुन लो। तुमने तो इन्द्रजित को व्यर्थ ही मार डाला। अपनी वह (अस्त्र-) विद्या आज मुझे दिखा दो। १४। तुम चौदह वर्ष निर्धार-पूर्वक निराहार तथा (सुखोप-) भोग और निद्रा का त्याग करके रहे थे। आज (मुझसे) यथावकाश युद्ध कर लो। मैं युद्ध में तुम्हारा नाश कर दूँगा।' १५। तब लक्ष्मण ने यह बात पूछी, 'कह दे, तेरे माता-मिता कौन हैं? तुझे यह विद्या किसने सिखा दी? हे भाई, तू अपना नाम मुझे बता दे।' १६। तो भूमिजा सीता का वह पुत्र हँसते हुए बोला, 'युद्ध भूमि में बातों का क्या विचार है (बातों से क्या मतलब)? अरे, मेरे जो माता-पिता हैं, उन्हें संसार का (लोक-) समुदाय जानता है। १७। मुझसे पूछने से क्या काम? मेरे सम्मुख (खड़े होकर) युद्ध तो कर दो।' ऐसा कहकर उस समर्थ कुश ने बाण छोड़ दिये और लक्ष्मण के रथ को उड़ा दिया। १८। वह रथ बहुत समय आकाश में

भम्यो आकाशमां घणी वार, पछे पडियो ते पृथ्वी मोझार,
थयो ते रथ भांगी चूर, बेठा अन्य रथे महाशूर। १९।
पछे जुद्ध करता बळवान, जुवे देवता बेसी विमान,
मूक्युं गदास्त्र निद्राजित, थई वृष्टि गदानी अमित। २०।
त्यारे लवे मूक्युं चक्र बाण, छेदी सकळ गदा निरवाण,
पर्वतास्त्र मूक्युं जति धीर, वज्रास्त्रे निवार्यु लव वीर। २१।
त्यारे पूंठे सीतासुते जाण, मेल्युं द्वादश सूर्यनुं बाण,
प्रगट्युं तेज उष्ण घणुं एह, ब्रह्मलोक लगी गयुं तेह। २२।
राहु अस्त्र मूक्युं फणीपाळ, लीधुं तेज ग्रही तत्काळ,
पछी कामास्त्र मूक्युं अनंत, कामांतक ते सामुं बळवंत। २३।
लवे भस्म कर्यो शर काम, ते जोई मूकी लक्ष्मणे माम,
मूक्युं अहिपतिए अग्नि अस्त्र, लवे सन्मुख सांध्युं मेघास्त्र। २४।
वळी सर्पास्त्र मूक्युं अहिराज, प्रगट्या कोटिक सर्प समाज,
गरुडास्त्र मूक्युं लव वीर, लय पाम्यां ते सर्प शरीर। २५।

भ्रमण करता रहा और (फिर) पृथ्वी पर गिर पड़ा। भग्न होते हुए वह रथ चूर-चूर हो गया, तो महाशूर (लक्ष्मण) दूसरे रथ में बैठ गया। १९। अनन्तर वे बलवान (फिर से) युद्ध करने लगे। देव विमानों में बैठकर देख रहे थे। निद्रा को जीतनेवाले लक्ष्मण ने गदास्त्र चला दिया, तो असंख्य गदाओं की वृष्टि हो गयी। २०। तब लव ने एक चक्र-बाण चला दिया और अन्त में उन सब गदाओं को छेद डाला। (फिर) उस धैर्यशाली यति (-स्वरूप) लक्ष्मण ने पर्वतास्त्र फेंक दिया, तो वीर लव ने वज्रास्त्र से उसका निवारण किया। २१। तब समझिए कि सीता-सुत लव ने द्वादश सूर्यों द्वारा दिया हुआ बाण सन्धान किया, तो उससे बहुत ऊष्ण तेज उत्पन्न हो गया, जो ब्रह्मलोक तक पहुँच गया। २२। (उधर) फणीपाल (शेष) के अवतार लक्ष्मण ने राहु-अस्त्र चला दिया, जिससे उस (अस्त्र) ने तत्काल उस तेज को ग्रहण (आत्मसात) कर लिया। फिर अनन्त (शेष के अवतार) लक्ष्मण ने कामास्त्र चला दिया। (परन्तु) सामने काम (-देव) का (मानो) अन्त कर देनेवाला बलवान (वीर) था। २३। उस लव ने उस कामबाण को भस्म कर डाला, तो उसे देखकर लक्ष्मण ने धीरज खो दिया। अर्थात् वह विचलित हो उठा। तो अहि-पति (शेष) के अवतार लक्ष्मण ने अग्नि-अस्त्र चला दिया; तब लव ने मेघास्त्र सन्धान किया। २४। अनन्तर अहिराज-स्वरूप लक्ष्मण ने सर्पास्त्र चला दिया,

एम अस्त्र-विद्याए समान, ऊतर्या बंन्यो वीर बळवान,
आठ क्षोहणी सेना सर्व, लवे मारी ऊतार्यो गर्व । २६ ।
पाम्या आश्चर्य लक्ष्मण वीर, विचारे मन मूकी धीर,
नथी लेवातो हवे तोखार, रह्यो यज्ञ अधूरो ते ठार । २७ ।
ए हशे विष्णु ने महादेव, प्रगट्या बाळकरूपे एव,
अहिनायक एम विचारे, अंजनीसुत बोल्या त्यारे । २८ ।
तमो करो विश्राम क्षण वीर, घणुं श्रमित थया छो धीर,
एम कही गाज्यो पवनकुमार, आव्यो लव सन्मुख तेणी वार । २९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

लव सन्मुख आव्या मारुति, ग्रही पर्वत मोटो पाण रे,
एवा अंजनीसुतने जोईने, बोल्यो सीतानंदन वाण रे । ३० ।

* * *

तो करोड़ों सर्पो का समूह प्रकट हो गया। (इधर से) वीर लव ने गरुड़ास्त्र प्रक्षेपित किया, तो उन सर्पों के शरीर लय को प्राप्त हो गये । २५ । इस प्रकार वे दोनों बलवान वीर अस्त्र-विद्या में सम-समान उतर गये। लव ने (लक्ष्मण की) आठ अक्षौहिणी सेना को मार डाला और (विपक्षी का) घमण्ड छुड़ा दिया । २६ । (यह देखकर) वीर लक्ष्मण आश्चर्य को प्राप्त हो गया। वह धीरज खोकर मन में सोचने लगा—अब घोड़े को हम नहीं ले सकते, (फलतः) उस स्थान पर यज्ञ अधूरा रह गया है । २७ । विष्णु और शिवजी ही इन बालकों के रूप में प्रकट हुए होंगे। (जब) अहिनायक (शेष)-स्वरूप लक्ष्मण यह सोच रहा था, तब अंजनीकुमार हनुमान बोला । २८ । 'हे भाई, आप क्षण भर विश्राम कीजिए। आप धैर्यशाली (वीर) बहुत थक गये हैं।' ऐसा कहते हुए पवनकुमार हनुमान गरज उठा और उसी समय लव के सम्मुख आ गया । २९ ।

हाथ में बड़ा पर्वत लेकर हनुमान लव के सम्मुख आ गया। ऐसे उस अंजनी-कुमार को देखकर सीतानन्दन लव ने यह बात कही । ३० ।

* * *

अध्याय—७४ (युद्ध-भूमि में लक्ष्मण का मूर्छित हो जाना और भरत का आगमन)

राग धन्याश्री

मारुति आव्या सन्मुख जेणी वार जी,
त्यारे क्रोधे बोल्यो वैदेहीकुमार जी।
अल्या कपिवर तारुं केटलुं जोर जी,
पण चेतजे हावे लंकानो चोर जी। १।

ढाळ

तुं चोर लंकातणो हवे, चेतजे निरवाण,
एवुं कही हनुमंत उपर, लवे मूक्युं बाण। २।
ते बाणे करी करथी उडाड्यो, पर्वत मोटो प्रौढ,
पछे पंच शर मार्या, हृदेमां मारुतिने गूढ। ३।
ते बाण केरा घायथी, घणी व्यथा व्यापी तन,
जाणे हणुं ए बाळने, पछी विचार्युं ए मन। ४।
ए पुत्र हशे श्रीरामना, छे रूप सादृश जाण,
जानकी उदरथी प्रगटिया, माटे महाबळिया निरवाण। ५।
कदापि एम होय तोये, पुत्र हणाये क्यम ?
माटे रमत जेवुं जुद्ध करुं, नव विघ्न थाये ज्यम। ६।

अध्याय—७४ (युद्ध-भूमि में लक्ष्मण का मूर्च्छित हो जाना और भरत का आगमन)

जिस समय हनुमान सामने आ गया, (उस समय) वैदेही-कुमार लव क्रोध से बोला, 'अरे कपिवर तुम्हारा कितना बल है ? फिर भी हे लंका के चोर, अब सावधान हो जाना। १।

तुम लंका के चोर हो, अब निश्चय ही सावधान हो जाना।' ऐसा कहते हुए लव ने हनुमान पर एक बाण चला दिया। २। उस बाण से उसने उसके हाथ में से बड़े प्रचण्ड पर्वत को उड़ा दिया। फिर हनुमान के हृदय पर पाँच गूढ़ बाण मार दिये। ३। उन बाणों से हुए घावों से हनुमान के शरीर में बहुत बड़ी व्यथा फैल गयी। उसने माना कि इस बालक को मैं मार डालूँगा (परन्तु) फिर उसने मन में विचार किया। ४। समझिए कि यह राम का पुत्र है, इसका रूप राम के रूप-सदृश है। यह जानकी के उदर से उत्पन्न हो गया है। इसलिए निश्चय ही महा बलवान है। ५। कदाचित् ऐसा हो तो इस लड़के को कैसे मारा जाए। इसलिए मैं इस प्रकार खेल जैसा युद्ध करूँगा, जिस प्रकार उसे कोई बाधा

एम विचारी मारुति कूद्या, तलप मारी त्यांहे,
ओचिंता ग्रही सुत घालिया, पोतानी बगलमांहे। ७।
पछी ऊडिया आकाशमां ते, लेई पवनकुमार,
घणुं भमावी पछे मूकिया, ते पुत्र पृथ्वी मोझार। ८।
एवुं जोईने लव कोपियो, ऊछळ्यो ते बळवंत,
लघु लाघवता करीने तदा, पूंछे ग्रह्या हनुमंत। ९।
बे करे ग्रहीने फेरव्या, चाके चडाव्या छेक,
त्यांथी उछाळी नाखिया, जई पड्या जोजन एक। १०।
आश्चर्य पाम्या जोई ते, आकाशमां सहु देव,
त्यारे लवतणी सन्मुख आव्या, लक्ष्मणजी ततखेव। ११।
घणुं जुद्ध कर्युं बे जण मळी, कहेतां न आवे पार,
लक्ष्मण तणी सेना सकळनो, लवे कर्यो संहार। १२।
पछी अधर साथे दंत चांपी, क्रोध आणी मन,
सौमित्रशुं ऊंचे स्वरथी, बोलियो सीतातन। १३।
अरे लक्ष्मण चेत हावे, मारुं तुजने ठार,
माटे साहेक तारो होय ते, बोलाव्य आणी वार। १४।

न हो जाए। ६। ऐसा विचार करके हनुमान कूद गया, उसने जोर से वहाँ छलांग लगा दी। (फिर) उसने यकायक उस लड़के को पकड़कर अपनी बगल में रख दिया। ७। अनन्तर उसे लिये हुए पवनकुमार आकाश में उड़ गया। फिर उसे बहुत घुमाने के पश्चात् पृथ्वी पर रख दिया। ८। ऐसा देखकर वह बलवान क्रुद्ध हो गया और उछल पड़ा। (और) उसने चालाकी से हनुमान को पूंछ से पकड़ लिया। ९। (फिर) दोनों हाथों में लेकर वह उसे (यों) घुमाता रहा, मानो उसे चक्र पर ही पूर्णतः चढ़ा दिया हो। (फिर) वहाँ से उसने उसे उछाल कर फेंक दिया, तो वह (हनुमान) एक योजन पर जाकर गिर पड़ा। १०। यह देखकर आकाश में समस्त देव आश्चर्य को प्राप्त हो गये। तब लक्ष्मण लव के सम्मुख तत्क्षण आ गया। ११। दोनों जनों ने मिलकर बड़ा युद्ध किया, जिसे कहते हुए पार नहीं आ पाएगा। (उसमें) लव ने लक्ष्मण की समस्त सेना का संहार कर डाला। १२। अनन्तर दाँतों से होंठ दबाते हुए (दाँत-होंठ चबाते हुए) लव मन में क्रोध लाकर (क्रुद्ध होकर) ऊँचे स्वर में लक्ष्मण से बोला। १३। 'अरे लक्ष्मण, सावधान हो जाओ; मैं तुम्हें मार डालता हूँ; तो (यदि) तुम्हारा कोई सहायक हो, तो उसे इस समय बुला लो।'। १४। ऐसा कहकर लव ने नादास्त्र

एवुं कही नादास्त्र मूक्युं, लवे बाण प्रचंड,
तेनो गडगडाट थयो घणो, व्याप्यो सकळ ब्रह्मांड । १५ ।
लक्ष्मण तणा हृदेमांहे वाग्युं, बाण तीक्षण तेह,
पड्या मूरछित पृथ्वी उपर, अचेतन थई देह । १६ ।
ते गडगडाट गयो अयोध्यामां, घोर शब्द अपार,
ते सुणीने श्रीराम बोल्या, भरतशुं तेणी वार । १७ ।
अरे भरत कंई उत्पात वरत्यो, लक्ष्मणने रणमांहे,
माटे तमो जावो उतावळा, जुओ शुं थयुं हशे त्यांहे । १८ ।
वळी बाळक ए जईने जुओ, छे जुगल कोना तन ?
छे कोना जेवी आकृति, ते परीक्षा करजो मन । १९ ।
वळी विद्या कोणे भणावी ? कोण गुरु हशे महानंत ?
एम अजाण्या थई प्रभु कहे छे, भरतने भगवंत । २० ।
ए बाळकने जो मारशो, तो थाशे कूडुं काज,
माटे मारी पासे लावजो, रथमांहे घाली आज । २१ ।
एम भरतने शिक्षा करी, समजाविया रणधीर,
समाचार आव्या एटले, जे पड्यो लक्ष्मण वीर । २२ ।

बाण चला दिया । उसकी बड़ी गड़गड़ाहट हो गयी । उसने समस्त ब्रह्माण्ड को व्याप्त कर लिया । १५ । वह तीक्ष्ण बाण (लक्ष्मण के) हृदय पर लग गया, (फलतः) मूर्च्छित होकर वह भूमि पर गिर पड़ा; उसकी देह अचेत हो गयी । १६ । वह गड़गड़हट, वह असीम घोर ध्वनि अयोध्या में (पहुँच) गयी । उसे सुनते ही श्रीराम उस समय भरत से बोले । १७ । 'अरे भरत, रण-भूमि में लक्ष्मण के लिए कुछ उत्पात हो गया है, इसलिए तुम शीघ्रता से चले जाओ और देखो, वहाँ क्या हुआ होगा । १८ । इसके अतिरिक्त जाकर देखो कि वे दोनों बालक किसके पुत्र हैं । उनकी आकृति (डील-डौल) किसकी-जैसी है—मन में उनकी परीक्षा कर लो । १९ । इसके अतिरिक्त, (जान लो कि) उन्हें किसने विद्या सिखायी है ? कौन महात्मा उनका गुरु रहा होगा ।' इस प्रकार, भगवान प्रभु (राम) स्वयं अज्ञान-से होकर भरत से बोले । २० । 'यदि इन बालकों को मारोगे, तो वह बुरा काम हो जाएगा । इसलिए उन्हें रथ में रखकर आज मेरे पास ले आओ ।' । २१ । इस प्रकार सीख देते हुए रणधीर राम ने भरत को समझा दिया । इतने में यह समाचार आ गया कि भाई लक्ष्मण (युद्ध-भूमि में) गिर गया है । २२ । यह सुनते ही श्रीरघुनाथ शोकातुर तथा मन में विकल हो उठे । (तब) भरत ने हाथ जोड़कर राम को

ते सुणी शोकातुर थया, मन विकळ श्रीरघुनाथ,
भरते घणुं समजाविया, रामने जोडी हाथ । २३ ।
पछी आज्ञा मागी चालिया, भरतजी तेणी वार,
वाजित्र वाजे अति घणां, सेनातणो नहि पार । २४ ।

वलण (तर्ज़ वदलकर)

अपार सेना लेईने, आव्या भरतजी तेणी वार रे,
वाल्मीक मुनिना वन विषे, लव कुश रह्या जे ठार रे । २५ ।

वहुत समझा दिया । २३ । अनन्तर भरत उसी समय आज्ञा लेकर चल दिया । वहुत अधिक वाद्य वज रहे थे । उसके साथ की सेना का कोई पारावार नहीं था । २४ ।

उसी समय अपार सेना लेकर भरत वालमीकि मुनि के वन में आ गये, जिस स्थान पर लव-कुश रहते थे । २५ ।

* * *

अध्याय—७५ (भरत-कुश-संवाद)

राग आशावरी

हावे भरतजी सेना लईने आव्या, वाल्मीकना वनमांहे,
त्यारे मारुतिनी मूर्छा वळी ते समे, मळ्यां भरतने त्यांहे । १ ।
पछी केकैसुते बे वीरने दीठा, ऊभा ग्रही कोदंड,
घनश्याम तनु विशाळ लोचन, आजानबाहु प्रचंड । २ ।
ते पुत्रतणुं एवुं रूप जोई, हनुमंतने कहे छे भर्थ,
भाई ए सुत छे राघवना जेवा, वळ गुण रूप समर्थ । ३ ।

अध्याय—७५ (भरत-कुश-संवाद)

अव भरत सेना लेकर वालमीकि के वन में आ गया । तव (तक) हनुमान की मूर्च्छा उतर गयी, तो उस समय वह वहाँ भरत से मिला । १ अनन्तर कैकेयी के उस पुत्र भरत ने उन दो भाइयों को हाथों में धनुष लिये खड़े देखा । उनके शरीर मेघ की भाँति साँवले थे, नेत्र विशाल थे और उनके वाहु आजानु अर्थात् घुटनों तक प्रचण्ड (लम्बे) थे । २ । उन लड़कों के ऐसे रूप को देखकर भरत ने हनुमान से कहा, ' हे भाई, वल, गुण, रूप से समर्थ (सम्पन्न) ये लड़के राम के पुत्रों जैसे (जान पड़ते)

श्रीजानकीने ज्यारे रामे तज्यां, त्यारे हतां गर्भिणी तेह,
को मुनिने आश्रम प्रसव थया हशे, निश्चे सीतासुत एह। ४।
त्यारे मारुति कहे मुजने पण भासे, निश्चे एवुं जाण,
हावे भरत मारुतिने त्यां दीठा, बंन्यो वीरे निरवाण। ५।
त्यारे लवनो कर ग्रहीने कुश बोल्यो, सांभळ मारा वीर,
पेला नर वानर बे वातो करे छे, ए बळिया रणधीर। ६।
माटे श्यामकरणनी रक्षा कर तुं, हुं करुं युद्ध ए साथ,
एम कही कर्यो टंकार धनुष्यनो, शर काढी ग्रह्यो हाथ। ७।
पछी भरतनी प्रत्ये वाणी बोल्यो, कुश राखी मन धीर,
अल्या हुं तुजने जाणुं छुं, निश्चे तुं लक्ष्मणनो वडो वीर। ८।
वळी तुं रणमां शुं करवा आव्यो ? ने शुं छे तारुं नाम ?
एवां वचन सुणीने हस्या भरतजी, बोल्या तेणे ठाम। ९।
अल्या बाळक अश्व अमारो आपीने, जाओ तमारे घेर,
अमो तमने जीवनदान आपीए, शाने करो छो वेर ? । १०।
वळी मातापिता गुरु कोण तमारां ? ने कोण गोत्र अवतार ?
तमे बंन्यो वीरनुं नाम कहो मुने, बाळक छो सुकुमार। ११।

हैं। ३। जब राम ने जानकी का परित्याग किया था, तब वे गर्भवती थीं। किसी मुनि के आश्रम में वे प्रसूत हुई होंगी—निश्चय ही ये सीता के पुत्र हैं'। ४। तब हनुमान बोला, 'समझिए, मुझे भी निश्चय ही ऐसा जान पड़ता है। अब अन्त में उन दो भाइयों ने वहाँ भरत और हनुमान को देखा, तब लव का हाथ थामकर कुश बोला, 'मेरे भाई, सुन लो। वे नर और वानर दोनों बातें कर रहे हैं। वे (दोनों) बलवान तथा रणधीर हैं। ५-६। इसलिए इस श्याम-कर्ण घोड़े की तुम रक्षा करो, मैं उनसे युद्ध करूँगा।' ऐसा कहकर उसने धनुष की टंकार कर दी और एक बाण निकालकर हाथ में ले लिया। ७। अनन्तर कुश मन में धीरज धारण करते हुए भरत के प्रति यह बात बोला, 'अरे, मैं तुम्हें निश्चय ही जान चुका हूँ। तुम लक्ष्मण के बड़े भाई हो। ८। फिर तुम युद्ध-भूमि में क्या करने आये हो ? और तुम्हारा क्या नाम है ?' ऐसी बातें सुनकर भरत हँस पड़ा और वह उस स्थान पर (से) बोला। ९। 'अरे बच्चे, हमारा घोड़ा देकर तू अपने घर चला जा। हम तुझे जीवन-दान (प्राण-दान) देते हैं। (इसलिए) तू वैर किसलिए कर रहा है ?। १०। फिर तेरे माता-पिता और गुरु कौन हैं ? तू किस गोत्र में अवतरित है ? दोनों भाइयों के नाम मुझे बता दे। तू तो सुकुमार बालक है।'। ११।

एवां वचन सुणी कुश चंद्रचूडामणि, हसीने बोल्यो वचन,
भाई जीवन दान देवाने आव्या, गर्व धरीने मन। १२।
पण बे बांधव तारा रण पडिया, त्रीजो पुष्कल धीर,
तेनी क्रिया कर्या पछी जीवन दान तुं, आपजे अमने वीर। १३।
वळी बंधु पुत्रनुं वेर लईश, त्यारे थईश उरणियो आप,
माटे जा तने जीवन दान हुं आपुं, शीद करे संताप ? । १४।
तुं जे रामने बळे करीने, बोले छे थई धीर,
तेने तेडी लाव जोउं केवो छे बळियो, ते तारो रघुवीर। १५।
अल्या तमो जाणो ए पुत्र छेतरी, श्यामकरण लेई जईए,
पण तम सरीखा गजने हणवा, अमो सिंह आ वनमां रहीए। १६।
अल्या बंधु तमारो राम अधरमी, ते जाणे सकळ संसार,
ते तमारो नाद उतारवाने अमो, लीधो छे अवतार। १७।
ज्यम सिंह मूछ, भोरिंग मणि, वळी कृपणनुं धन, सती नार,
ते जीवतां परहाथ चढे नहि, एम ए यज्ञतोखार। १८।
माटे अमने जीत्या विण यज्ञतणो हय, नहि पामो निरवाण,
एवां वांकां वचन सुणी भरतजी कोप्या, ग्रह्यां धनुप ने वाण। १९।

ऐसी बातें सुनकर चन्द्र-सी (तेजस्वी) चूड़ामणि (-स्वरूप) कुश हँसकर बोला, 'हे भाई, मन में गर्व धारण करके तुम जीवन-दान दिलाने आ गये हो। १२। फिर भी तुम्हारे दो भाई रण में गिर पड़े हैं, (फिर) तीसरा धैर्यशील पुष्कल (भी) पड़ा है। हे भाई, उनकी (उत्तर-) क्रिया करने के पश्चात्, तुम हमें जीवन-दान कर लेना। १३। फिर बन्धुओं और पुत्र (की मृत्यु) का तुम बदला लोगे, तब तुम स्वयं ऋण-मुक्त हो जाओगे। इसलिए, जाओ, मैं तुम्हें जीवन-दान दे रहा हूँ। यह दुःख किसलिए कर रहे हो। १४। तुम जिन राम के बल (के आधार) से धैर्यधारी होकर यह बोल रहे हो, उन्हें बुलाकर ले आओ। देख तो लूँ कि तुम्हारे रघुवीर कैसे बलवान हैं। १५। तुम समझ रहे हो कि इन बालकों को ठगकर श्यामकर्ण घोड़े को ले जाएँ। परन्तु, तुम जैसे हाथी को मार डालने के लिए हम सिंह इस वन में रहते हैं। १६। अरे, तुम्हारे बन्धु राम अधर्मी हैं—इसे संसार जानता है। तुम्हारा वह घमण्ड छुड़ाने के लिए हमने अवतार लिया है। १७। जिस प्रकार सिंह की मूँछें, सर्प के सिर पर की मणि, (या) फिर कृपण का धन, सती नारी (का सतीत्व)—उसके अपने जीवित रहते दूसरे के हाथ नहीं आता, उसी प्रकार यह यज्ञीय घोड़ा हमारे रहते हुए दूसरे के हाथ नहीं आ जाएगा। १८।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

धनुषबाण करमां ग्रहीने, कोप्या भरतजी तेणी वार रे,
पछी कुशनी साथे जुद्ध मांड्युं, हनुमंत ने केकैकुमार रे। २०।

इसलिए हमें बिना जीते तुम निश्चय ही इस यज्ञीय घोड़े को प्राप्त नहीं कर पाओगे।' ऐसी टेढ़ी बातें सुनते ही भरत क्रुद्ध हो उठा और उसने धनुष और बाण ग्रहण किया। १९।

उस समय, धनुष-बाण हाथ में लिये हुए भरत क्रुद्ध हो उठा। अनन्तर कैकेयी-सुत भरत और हनुमान ने कुश से युद्ध करना आरम्भ किया। २०।

* * *

अध्याय—७६ (कुश-भरत-संग्राम और राम का युद्ध-स्थल में आगमन)

राग सामेरी

हावे कुशनी सन्मुख करवा मांड्युं, भरते जुद्ध तेणी वार,
क्रोधे करीने केकैसुते, मूकियां बाण अपार। १।
ते भरत जे जे बाण मूके, ते छेदे कुश ततखेव,
ज्यम सर्प केरा समूहने, विडारतो विनतेव। २।
त्यारे भरते कार्तिकवीर्यनो, शर मूकियो तेणी वार,
भार्गवास्त्र मूकी कुशे ते शर, छेदियो निरधार। ३।
त्यारे भरते प्रेरी काळरात्री, थयुं अंधारुं घोर,
प्रकाश कीधो रविअस्त्रे, प्रबळ रामकिशोर। ४।

अध्याय—७६ (कुश-भरत-संग्राम और राम का युद्ध-स्थल में आगमन)

अब उस समय भरत कुश (के सम्मुख खड़ा होकर उस) से युद्ध करने लगा। उस कैकेयी-सुत ने असंख्य बाण चला दिये। १। (परन्तु) भरत जो-जो बाण चलाता था, उसे कुश तत्क्षण काट देता था, जिस प्रकार वैनतेय (गरुड़) सर्प-समूह को विदीर्ण कर देता है (उस प्रकार कुश ने उस बाण-समूह को पूर्णतः काट डाला)। २। तब उस समय भरत ने कार्तवीर्य का बाण चला दिया, तो कुश ने भार्गवास्त्र चलाकर उस बाण को निर्धार-पूर्वक छेद डाला। ३। तब भरत ने काल-रात्रि नामक अस्त्र प्रेरित कर दिया, तो घोर अन्धकार उत्पन्न हो गया। (फिर) राम-किशोर कुश ने रवि-अस्त्र चलाते हुए प्रकाश (उत्पन्न) कर

केकैसुत त्रंबकास्त्र मूक्युं, महा तेजस्वी जेह,
छेद्युं भस्म असुरास्त्र करीने, कुशे ततक्षण तेह । ५ ।
रामास्त्र मूक्युं भरतजी, आव्युं गाजतुं तेणी वार,
ते आवतां कुशे ग्रह्युं करमां, धर्युं निखंग मोझार । ६ ।
त्यारे दिव्य शक्ति हकारी, भरते तदा करी रीस,
रमास्त्र मूकी भूमिजासुते, छेदन करी ते दिश । ७ ।
भरते तदा ब्रह्मास्त्र मूक्युं, तेजवंत विशाळ,
नारायणास्त्रे करी छेद्युं, कुशे ते तत्काळ । ८ ।
एम अस्त्र-विद्याए समान बंन्यो, ऊतर्या ते ठार,
पछी भरत केरा सैन्यनो, कुशे कर्यो संहार । ९ ।
वळी सूर्यमुख एक बाण काढ्युं, सीतापुत्रे त्यांहे,
वीजळी सरखुं चळकतुं, घणुं तेज छे ते मांहे । १० ।
ते कुशे मूक्युं क्रोध करी, गाजतुं घोर अपार,
आवी भरतना रुदेमांहे वाग्युं, हवो हाहाकार । ११ ।
रथमांहेथी उछळी पडिया पृथ्वी, थई मूर्छाय,
रहित श्वासोश्वास विपरीत, अचेतन थई काय । १२ ।

दिया । ४ । (फिर) बलवान भरत ने त्र्यम्बकास्त्र चला दिया, जो महा तेजस्वी था; तो कुश ने असुरास्त्र द्वारा उसे तत्क्षण भस्म कर डाला । ५ । (तदनन्तर) भरत ने रामास्त्र चला दिया । वह उसी समय गर्जन करता हुआ आ गया । (परन्तु) उसके आते हुए कुश ने उसे हाथ में पकड़ लिया और निषंग (तूणीर) में रख दिया । ६ । तब भरत ने क्रोध करके एक दिव्य शक्ति को ललकारा (और प्रेरित किया), तो भूमिजा अर्थात् सीता के पुत्र कुश ने रमास्त्र चलाते हुए उसे उसी स्थान पर छेद डाला । ७ । तब भरत ने एक तेजस्वी और विशाल ब्रह्मास्त्र चला दिया, तो कुश ने उसे तत्काल नारायणास्त्र से काट डाला । ८ । इस प्रकार वे दोनों उस युद्ध-) स्थान पर अस्त्र-विद्या में सम-समान उतर गये । अनन्तर कुश ने भरत की सेना का संहार कर डाला । ९ । फिर सीता-पुत्र कुश ने वहाँ एक सूर्य-मुख बाण निकाला । वह बिजली सदृश चमक रहा था । उसमें बहुत तेज था । १० । कुश ने उसे क्रोध-पूर्वक चला दिया; वह (बाण) अपार गरज रहा था । वह आते हुए भरत के हृदय पर लग गया, तो हाहाकार हो गया । ११ । वह रथ में से उछल कर मूर्च्छित होते हुए भूमि पर गिर गया—उसकी देह विपरीत रूप से श्वासोच्छ्वास-रहित तथा अचेतन हो गयी । १२ । उसी समय हुंकार भरते हुए (हाँक

ते समे होकारो करी, ऊछळ्यां पवनकुमार,
एक प्रौढ परवत कर ग्रही, नाख्यो कुश उपर तेणी वार । १३ ।
त्यारे कुशे तव वज्रास्त्र मूकी, गिरि करियो चूर,
मारुति धाया मुष्टि वाळी, मारवाने शूर । १४ ।
जानकीनंदने पंच शर, मारियां करीने जोर,
तेणे उडाड्या आकाशमां, घणुं भम्यां पवनकिशोर । १५ ।
ते भमीने भूतळ पड्या, अति पीडाया बळवंत,
पछी क्रोध करी कुश अंग वींट्युं, पूंछ श्रीहनुमंत । १६ ।
लघु लाघवता करीने तदा, नीकळ्यो कुश निरधार,
ते पूंछ बे हस्ते ग्रही, फेरव्या पवनकुमार । १७ ।
पछी पृथ्वी उपर पछाड्या, मूरछित थया हनुमंत,
एम सर्वने हणी विजय पाम्यो, कुश थयो यशवंत । १८ ।
हावे भरत पडियो जे समे, रणमां थई मूरछाय,
ते अनुचरे आवी कह्युं, ज्यां बेठा श्रीरघुराय । १९ ।
थया विकळ श्रीरघुनाथजी, सुणी भरतकेरुं पतन,
मानुषीलीला आचरी, घणुं करे राम रुदन । २० ।

लगाते हुए) पवन-कुमार उछल उठा और उसने उस समय एक बड़ा पर्वत हाथ में लेकर कुश पर फेंक दिया । १३ । तब कुश ने वज्रास्त्र चलाकर उस पर्वत को चूर-चूर कर डाला । तो शूर हनुमान मुट्ठियां बांधते हुए (घूंसे) जमाने के लिए दौड़ा । १४ । तो जानकी-नन्दन कुश ने पाँच बाण ज़ोर से चला दिये, उनसे पवनकुमार आकाश में उड़ गया और वहुत भ्रमण करता रहा । १५ । भ्रमण करके वह भूमि-तल पर गिर गया । उस बलवान हनुमान को तब बहुत पीड़ा हो रही थी । अनन्तर उसने क्रोध करके पूँछ से कुश के शरीर को लपेट लिया । १६ । तब किंचित् चतुराई से कुश निश्चय ही छूट गया और उस पूँछ को दोनों हाथों से पकड़कर पवनकुमार को घुमाने लगा । १७ । फिर उसने हनुमान को पृथ्वी पर पटक डाला, तो वह मूर्च्छित हो गया । इस प्रकार सवको मार कर कुश विजय को प्राप्त हो गया और (फल-स्वरूप) कीर्तिमान हो गया । १८ । अब भरत जिस समय मूर्च्छित होकर युद्ध-भूमि में गिर पड़ा, तब एक सेवक ने आकर (वहाँ) कह दिया, जहाँ श्रीरघुराज वैठे हुए थे । १९ । भरत का पतन (सम्बन्धी समाचार) सुनते ही श्रीरघुनाथ राम विकल हो उठे । (फिर) उन्होंने मनुष्य-लीला का आचरण करते हुए बहुत रुदन किया । २० । फिर क्रोध-पूर्वक राम उठ गये । उनका

पछे रीसे करीने राम ऊठ्या, क्रोधे कंप्यां रोम,
वळी यज्ञकंकण तोडी नाख्युं, बंध कीधो होम। २१।
पछे दीक्षा मूकी ऊठिया, थया रथारूढ रघुवीर,
त्यारे अयोध्यापुर खळभळ्युं, सर्वे मूकी मन धीर। २२।
कांई शेष सेना जे हती, ते सरव लीधी साथ,
वळी संबंधी नृप बंधु सुत, लई चाल्या श्रीरघुनाथ। २३।
वाजित्र वाजे अति घणां, थाय शस्त्रनां चळकार,
एम चालियुं चतुरंग दळ, पृथ्वी सहे नहि भार। २४।
ज्यम वर्षा ऋतुमां सुरसरीनुं, पूर निधिमां जाय,
एम वाल्मीक मुनिनां वन विषे, आव्या सेनशुं रघुराय। २५।
त्यां जुए तो निज बंधु पडिया, दळ सहित निरधार,
त्यारे क्षोभ पाम्या रामजी, कर्यो पृथ्वीने नमस्कार। २६।
हे क्षमा, तुज कन्याए मुजने, घणो दीधो दंड,
एवुं कही पछे सज्ज थया, रामे ग्रह्युं कोदंड। २७।
टंकार कीधो धनुषनो, महाघोर तीक्षण नाद,
त्यारे कपिदळ ने विभीषण, ऊठिया सुणतां साद। २८।

रोम-रोम क्रोध से काँप रहा था। फिर उन्होंने यज्ञ-कंकण तोड़कर फेंक दिया और होम को बन्द कर दिया। २१। अनन्तर दीक्षा तजकर रघुवीर उठ गये और रथ पर आरूढ़ हो गये। तब अयोध्यापुर सहम उठा। सबने मन का धैर्य खो दिया। २२। कुछ सेना जो शेष थी, उस सबको श्रीरघुराज राम ने अपने साथ ले लिया। उसके अतिरिक्त सम्बन्धित राजाओं, बन्धुओं, पुत्रों को लेकर वे चल दिये। २३। वाद्य बहुत अधिक बज रहे थे। अस्त्रों का चमकारा हो रहा था। इस प्रकार चतुरंग दल चलने लगा। पृथ्वी उसके भार को सह नहीं पा रही थी। २४। जिस प्रकार वर्षा ऋतु में गंगा की बाढ़ का पानी समुद्र में (मिल) जाता है, उस प्रकार रघुराज राम सेना-सहित वाल्मीकि मुनि के उस वन में आ गये। २५। वहाँ उन्होंने देखा कि निश्चय ही उनके अपने बन्धु सेना-सहित गिरे पड़े है। तब राम क्षोभ को प्राप्त हो गये। (फिर) उन्होंने पृथ्वी को नमस्कार किया। २६। (वे बोले—) 'हे क्षमा (पृथ्वी), तुम्हारी कन्या ने मुझे बड़ा दण्ड दिया है।' ऐसा कहकर फिर वे सज्ज हो गये। उन्होंने हाथ में धनुष ग्रहण किया। २७। उन्होंने (धनुष की) टंकार कर दी, वह ध्वनि महा घोर तथा तीव्र थी। तब उस ध्वनि को सुनते ही कपि-दल और विभीषण (सचेत होकर) उठ

रघुनाथने पाये नम्या, सुग्रीवादिक सहु कीश,
हनुमंते कह्यु रघुवीरने, वृत्तांत सहु ते दीश। २९।
त्यारे विभीषणे देखाडिया, श्रीरामने बे बाळ,
घनश्याम सुंदर मदनमोहन, कोमळ नेत्र विशाळ। ३०।
किशोर वय तन भुज आजानु, मुंजी कोपिन वेष,
यज्ञोपवीत शुभ झळकतां, शिर खींटलियाळा केश। ३१।
एक एक सामुं जोई करता, मंद मधुरी हास,
कर शर धनुष ग्रहीने ऊभा, श्यामकरणनी पास। ३२।
एवा पुत्र जोई श्रीरामने, मंन ऊपन्यु हेत,
मळवा ऊधर्यु उर तदा, वात्सल्य प्रेम समेत। ३३।
ज्यम पूर्णिमानो चंद्र जोईने, ऊछळे सरितानाथ,
एम राम रोमांचित थया, फरकियो दक्षिण हाथ। ३४।
पछे स्नेहे करी रघुवीर बोल्या, मारुतिशुं त्यांहे,
ए बे बाळकने लाव्य झाली, मारी पासे आंहे। ३५।

गये। २८। (फिर) सुग्रीव आदि समस्त वानरों ने रघुनाथ रघुवीर राम के चरणों को नमस्कार किया, तो हनुमान ने उस समय समस्त समाचार बता दिया। २९। तब विभीषण ने श्रीराम को वे दोनों लड़के दिखा दिये, जो घनश्याम, सुन्दर, मनमोहक तथा कोमल (-गात्र) थे और जिनके नेत्र विशाल थे। ३०। उनकी अवस्था किशोरावस्था थी, उनके बाहु आजानु थे। मौंजी-बन्धन (मूँज घास की करधनी) तथा कौपीन (से युक्त) उनका वेश था। शुभ्र जनेऊ झलक रहा था, मस्तक पर घुँघराले बाल थे। ३१। आमने-सामने एक-दूसरे को देखते हुए वे मन्द मधुर मुस्करा रहे थे। वे हाथों में धनुष और बाण लेकर श्याम-कर्ण घोड़े के पास खड़े थे। ३२। ऐसे उन लड़कों को देखते ही श्रीराम के मन में (उनके प्रति) स्नेह उत्पन्न हो गया। तब उनसे मिलने के लिए (मानो) उनका हृदय वात्सल्य प्रेम सहित उत्कण्ठित हो गया। ३३। जिस प्रकार पूर्णिमा के चन्द्र को देखकर सरितानाथ समुद्र उछलने-उमड़ने लगता है, उस प्रकार राम (का हृदय-सागर पुत्र-मुख-रूपी चन्द्रमा को देखकर उछलने लगा। और वे) पुलकित हो गये। उनका दाहिना हाथ फड़कने लगा। ३४। अनन्तर वहाँ रघुवीर राम हनुमान से स्नेह-पूर्वक बोले, 'इन दो बालकों को पकड़कर यहाँ मेरे पास ले आओ। ३५।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

आहीं लाव्य झाली बे पुत्रने, एम बोल्या जुगदाधार रे,
एवां रामचंद्रनां वचन सुणीने, चाल्या पवनकुमार रे। ३६।

उन दो लड़कों को पकड़कर यहाँ ले आओ।' जगदाधार रामचन्द्र इस प्रकार बोले, तो उनके इन वचनों को सुनकर पवन-कुमार चल दिया। ३६।

* * *

अध्याय—७७ (लव-कुश का हनुमान-जाम्बवान आदि आठों यूथपतियों को पराजित करना)

राग मारु

लवकुशनी उपर तेणी वार, आव्या कूदता पवनकुमार,
लवे खाळ्या मूकीने बाण, बोल्या हनुमंत साथे वाण। १।
अल्या नोहे ए अशोक वन, जे उज्जड कर्युं अंजनीतन,
नोहे जुद्ध असुरनुं तास, जे पामे तरु पाषाणे नाश। २।
नोहे द्रोण जे उखेडी लावे, तारुं बळ अमशुं नहि फावे,
वळी सिंधु गोपदवत् जेह, कूदीने लंका बाळी तेह। ३।
एवा नोहे अमो ते जाण, आव्यो झालवाने निरवाण,
अमारी माताने उपकार, तें कीधो घणो पवनकुमार। ४।

अध्याय—७७ (लव-कुश का हनुमान-जाम्बवान आदि आठों यूथपतियों को पराजित करना)

उस समय पवन-कुमार हनुमान कुश और लव की ओर उछलता-कूदता हुआ आ गया, तो लव ने बाण चलाकर उसे रोक लिया और उससे यह बात कही। १। 'अरे अंजनी-तनय, यह कोई अशोक-वन तो नहीं है, जिसे तुमने उजाड कर दिया था। यह कोई उन असुरों के साथवाला युद्ध नहीं है, जो वृक्षों और पाषाणों से नाश को प्राप्त हो जाते हैं। २। यह कोई द्रोणगिरि (भी) नहीं है, जिसे तुम उखाड़ कर लाये थे। तुम्हारा बल हम पर नहीं चल पाएगा। यह कोई गोपद-सा समुद्र भी नहीं है, जिसे कूदकर (लाँघते हुए) तुमने लंका को जला दिया था। ३। समझो कि हम वैसे तो नहीं है, जिन्हें अन्त में तुम पकड़ने के लिए आ गये हो। हे पवन-कुमार, तुमने हमारी माता का बड़ा उपकार किया। ४।

ते संभारी तने कपिराज, जावा देऊं छुं जीवतो आज,
माटे होय जो जीव्यानी आश, तो उतावळो अहींथी नास । ५ ।
एवुं कही शर मार्यो बळवंत, उराड्या आकाशे हनुमंत,
ते समे आव्यो सुग्रीवराज, लवशुं युद्ध करवाने काज । ६ ।
त्यारे बोल्यो वचन कुश वीर, अल्या वनचर जातअधीर,
अल्या अधरमी वानर वाम, कर्यो गुरु तें अधरमी राम । ७ ।
तेनी पासे मराव्यो वीर, भोगवे तेनी स्त्री अधीर,
तमो मरकटने शुं ज्ञान ? जेवो संग तेवी होय सान । ८ ।
गुरु निर्दय कपटी प्रबुद्ध, तेनो शिष्य क्यांथी होय शुद्ध ?
एवुं कहीने मार्युं एक बाण, वाग्युं सुग्रीवने निरवाण । ९ ।
थयो मूरछित सूरजकुमार, धायो जांबुवान तेणी वार,
तेने जोई बोल्यो कुश वीर, अल्या वृद्ध रींछ मतिधीर । १० ।
तुं आव्यो शीद मरवा काज ? राम अरथे आव्या छो व्राज,
एवुं सुणी धायो जांबुवान, ग्रह्या बे सुतने बळवान । ११ ।
छूट्या त्यांथी वैदेहीकुमार, कर्यो एकेको पदनो प्रहार,
तेथी पीडा थई परतक्ष, पछे ऊठ्यो ग्रही एक वृक्ष । १२ ।

हे कपिराज, उसे स्मरण करते हुए मैं आज तुम्हें जीवित जाने दे रहा हूँ। इसलिए, यदि जीवित रहने की इच्छा हो, तो यहाँ से शीघ्रता-पूर्वक भाग जाओ'। ५ । ऐसा कहकर उस बलवान (लव) ने एक बाण चला दिया और उससे हनुमान को आकाश में उड़ा दिया। उस समय लव से युद्ध करने के हेतु सुग्रीवराज आ गया। ६ । तो वीर कुश उससे यह बात बोला, 'अरे जाति से अधीर वनचर, अरे अधर्मी नीच वानर, तुमने उस अधर्मी राम को गुरु कर लिया है। ७ । उसके द्वारा तुमने अपने भाई को मरवा डाला और हे अधीर, तुम उसकी स्त्री का उपभोग कर रहे हो। तुम मर्कट को क्या ज्ञान है ? जैसी संगति होती है, वैसी समझ (बुद्धि) होती है। ८ । गुरु (यदि) निर्दय और प्रबुद्ध कपटी हो, तो उसका शिष्य कहाँ से शुद्ध (नीयत वाला) होगा ?' ऐसा कहकर उसने एक बाण चला दिया, (जो) अन्त में सुग्रीव को लग गया। ९ । उससे वह सूर्य-पुत्र (सुग्रीव) मूर्च्छित हो गया, तो उस समय जाम्बवान दौड़ा। उसे देखकर वीर कुश बोला, 'अरे वृद्ध धीर-मति रीछ, । १० । तुम मरने के लिए क्यों आ गये ? तुम तो राम के लिए दुःख में आ पड़े हो।' ऐसा सुनकर जाम्बवान दौड़ा और उसने (राम के) उन दोनों बलवान पुत्रों को पकड़ लिया। ११ । (परन्तु) वे वैदेही-कुमार वहाँ से (उसके हाथों से) छूट

तरु मारवा आवे जेवे, कुश शर एक नाख्यो तेवे,
वाग्यो मर्म रुदेमां घाय, जांबुवानने थई मूरछाय । १३ ।
त्यारे धाया नळ ने नील, गुणवंत महाबळशील,
तेने जोई भूमिजातन, हसी बोल्यो ते मर्मवचन । १४ ।
अल्या वनचर कीश अचेत, नथी बांधवो सागर सेत,
आ तो शूरवीरनुं छे काम, शीद मरवा आव्या आ ठाम ? । १५ ।
मार्या बे वीरे बे नाराच, बंन्यो वीरने कीधा अवाच,
त्यारे आव्यो वालीकुमार, नाम अंगद बळियो अपार । १६ ।
त्यारे बोल्यो हसी लव वीर, सुण अंगद तुं रणधीर,
अल्या रावणकेरी सभाय, पण करीने ते रोप्यो पाय । १७ ।
पण ते नथी आणे ठाम, आ तो शूरतणो संग्राम,
ज्यां त्यां विष्टि करे बारे वाट, रामे राख्यो जाणी जेम भाट । १८ ।
सुग्रीवे मराव्यो तुज तात, रामे मार्यो ते सकळ विख्यात,
ए शत्रुनुं करतां काज, नथी आवती तुजने लाज ? । १९ ।

गये और उन्होंने एक एक पाँव से उस पर प्रहार किया। उससे उसे प्रत्यक्ष पीड़ा हो गयी, तो फिर वह एक वृक्ष लेकर उठ गया (आघात करने के लिए तैयार हो गया)। १२ । जिस समय वह वृक्ष (से) मारने के लिए आने लगा, तो उस समय कुश ने एक बाण चला दिया। वह जाम्बवान के हृदय जैसे मर्म-स्थान पर लग गया, तो उसे मूर्च्छा आ गयी। १३ । तब गुणवान महाबलशील नल और नील दौड़े। भूमिजा-तनय ने उन्हें देखकर हँसते हुए यह मार्मिक बात कही। १४ । 'अरे वनचरो, नासमझ वानरो, (यहाँ) सागर पर कोई सेतु तो बनाना नहीं है। यह तो शूरों-वीरों का काम है। (इसलिए) इस स्थान पर मरने के लिए क्यों आ गये हो ?'। १५ । (फिर) उन दोनों भाइयों ने दो बाण चला दिये और उन दोनों वीरों को अवाक् कर दिया। तब अंगद नामक अपार बलवान बाली-कुमार आ गया। १६ । तब वीर लव हँसते हुए उससे बोला, 'हे अंगद, सुन लो, तुम रणधीर हो। अरे तुमने रावण की सभा में प्रण करते हुए पाँव रोप दिया था। १७ । परन्तु यह स्थान वह तो नहीं है। यह तो शूरों का संग्राम (-स्थल) है। तुम जहाँ-तहाँ बारहबाट मध्यस्थता करते हो, राम ने भाट-जैसा समझकर तुम्हें रख लिया है। १८ । सुग्रीव ने तुम्हारे पिता को मरवा डाला। क्या इस पर तुम्हें लज्जा नहीं आ रही है ?'। १९ । ऐसे बहुत-से मर्म (-भरे व्यंग्य) वचन सुनने के पश्चात् बाली-पुत्र अंगद क्रुद्ध हो उठा और उसने लव से बड़ा युद्ध किया।

एवां सुणी घणां मरमवचन, पछी कोप्यो वालीनो तन,
घणुं जुद्ध कर्युं लव संग, अंगदे राख्यो रणरंग। २०।
लवे बाण मार्यां पंचाश, वींध्युं अंगदनुं तन तास,
त्यारे धाया ते रशभ मयंद, तेनी साथे कर्यो घणो द्वंद। २१।
जानकीनंदने ते दिश, कर्या मूरछित सरवे कीश,
मर्म वचन सुणावी कर्ण, तेनुं बळ करी लेता हर्ण। २२।
अष्ट जूथपति ए प्रकार, पड्या मूरछित पृथ्वीमोझार,
दळभंग जोई ते ठाम, ग्रही कोदंड कोप्या राम। २३।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

श्रीराम कोप्या कोदंड चढावी, ताणी कर्यो टंकार रे,
त्यारे परवत सहित ते पृथ्वी डोली, ऊछळ्या सिंधु अपार रे। २४।

उस युद्ध में अंगद ने अपना रंग जमाये रखा। २०। लव ने पचास बाण चला दिये और अंगद के शरीर को बेध डाला। तब रसभ और मयन्द दौड़े, तो (लव ने) उनसे बड़ा द्वंद्व (-युद्ध) किया। २१। उस समय जानकी-नन्दन ने समस्त वानरों को मूर्च्छित कर डाला। उनके कानों को मर्म (व्यंग्य) वचन सुनाते हुए वे उनके बल को हरण (नष्ट) कर रहे थे (घटा रहे थे)। २२। इस प्रकार वे आठों यूथ-पति भूमि पर मूर्च्छित होकर गिर पड़े। अपने दल को उस स्थान पर छिन्न-भिन्न होते देखकर राम हाथ में धनुष लेकर क्रुद्ध हो उठे। २३।

धनुष को चढ़ाते हुए राम क्रुद्ध हो उठे। उसे तानकर उन्होंने टंकार कर दी, तब पर्वतों-सहित पृथ्वी डोलने लगी और समुद्र अपार रूप से उछलने लगे। २४।

*   *   *

अध्याय—७८ (लव-कुश के व्यंग्य-वचन राम के प्रति)

राग धन्याश्री

ज्यारे रामे करियो धनुषटंकार जी,
सुणी सीता करतां चिंता अपार जी।

अध्याय—७८ (लव-कुश के व्यंग्य-वचन राम के प्रति)

जब राम ने धनुष की टंकार कर दी, तो उसे सुनकर सीता अपार चिन्ता करने लगी। जिनके बाण की महिमा अतुल्य (बेजोड़) थी, उन प्रभु राम के बल को भूमिजा सीता (भली भाँति) जानती थी। १।

प्रभुनुं बळ जाणे छे भूमिजाय जी,
जेना शरनो अतुल महिमाय जी। १ ।

ढाळ

अमोघ महिमा रामशरनो, जाणी जनकसुताय,
क्यम सहन करशे पुत्र मारा, शिशु कोमळ काय ? । २ ।
एम मोह पाम्यां पुत्रशुं, वात्सल्य प्रेम सनेह,
एवुं जाणीने पछी जानकी, प्रभुस्तवन करतां तेह । ३ ।
हे नाथ, निरदे नव थशो जोई, बाळकनो अपराध,
नहि सहन थाये शर तमारो, बळ अमोघ अगाध । ४ ।
छे व्रत तमारे एक-पत्नी, एक-वचन एक-बाण,
ते आ समे एक-बाणनुं, पण मूकजो निरवाण । ५ ।
प्रभु जाणी आत्मज पोताना, घणी दया धरजो मन,
ज्यम किरण भानु भिन्न नहि, एम तमारे ए तन । ६ ।
एवी स्तुति सीताए करी, सुणी अंतरजामी राम,
मन विचार्युं ज्यम विघ्न नव थाये, पुत्र आ ठाम । ७ ।
पण जुद्ध करुं कांई एक हुं, लौकिक लीला जेह,
ते सुणी विमुख विभ्रम थशे, भक्तने निःसंदेह । ८ ।

जनक-सुता सीता जानती थी कि राम के बाण की महिमा अमोघ है। (उसने सोचा—) 'मेरे पुत्र उसे कैसे सहन कर पाएँगे ? वे तो कोमल-शरीर-धारी शिशु ही हैं।'। २। इस प्रकार पुत्र-सम्बन्धी वात्सल्य प्रेम और स्नेह के कारण वह मोह को प्राप्त हो गयी। फिर ऐसा जानते हुए जानकी प्रभु राम का स्तवन करने लगी। ३। 'हे नाथ, (आशा है कि) बालकों के अपराध को देखकर आप निर्दय न हो जाएँगे। आपके बाण को वे सहन नहीं कर पाएँगे—वह (बाण) तो अमोघ अगाध बल से युक्त हैं। ४। एक-पत्नी, एक-वचन और एक-बाण आपके व्रत हैं। (फिर भी) इस समय आप निर्धार-पूर्वक अपना एक-बाण (प्रण) व्रत छोड़ देना। ५। हे प्रभु, (उन्हें) अपने पुत्र जानकर मन में (उनके प्रति) बहुत दया धारण कीजिए। जिस प्रकार किरणें सूर्य से भिन्न नहीं होतीं, उस प्रकार आपके ये पुत्र (आपसे भिन्न नहीं) हैं।'। ६। सीता ने ऐसी स्तुति की; उसे अन्तर्यामी राम ने सुन लिया। (फिर) उन्होंने मन में (ऐसा) विचार किया, कि इस स्थान पर (उन पुत्रों के लिए) कोई विघ्न उत्पन्न न हो जाए; फिर भी मैं कुछ एक युद्ध तो

पछी धनुष उपर शर चढावी, बोल्या राम वचन,
अल्या पुत्रो, मूको प्रथम शर तमो, न्याय विचारी मन । ९ ।
एवुं सुणीने लव कुशे मूक्यां, बाण जुगल तेणी वार,
रघुवीर पदनी पासे आवी, बाणे कर्यो नमस्कार । १० ।
घणी स्तुति ते बाणे करी, संतर्पिया रघुराय,
पाछां आवी प्रवेशियां निखंगमां, एवो मंत्रनो महिमाय । ११ ।
पछे रामे बे शर मूक्यां, धनुषे चढावी त्यांहे,
भूमिजात्मजे आवतां झडपी, झाल्यां छे करमांहे । १२ ।
वळी पंच शर महाक्रोध करी, मूक्यां पुरुषपुराण,
ते आवतां शर छेदियां, मूकी कुशे दश बाण । १३ ।
श्रीरामे दीठुं बळ अधिक, बे पुत्रनुं ते ठार,
शत बाण मूक्यां क्रोध करीने, कुश उपर तेणी वार । १४ ।
त्यारे कुशे बाण सहस्र ज मूक्यां, रघुपति एक लक्ष,
दश लक्ष सीतानंदने मूकी, छेदियां परतक्ष । १५ ।
करी वृष्टि कोटि शरतणी, रविमंडळ ढांक्युं राम,
कर्यो बाणनो मंडप, थयो अंधकार तेणें ठाम । १६ ।

करूँगा, जो लौकिक लीला हो जाएगा। उसे सुनकर जो (मुझसे) विमुख हैं, उन्हें भ्रम (अनुभव) होगा, तो भक्तों का सन्देह दूर होगा। ७-८। अनन्तर धनुष पर बाण चढ़ाते हुए राम ने यह बात कही, 'अरे पुत्रो, न्याय-सम्बन्धी मन में विचार करके पहले तुम बाण चला दो।' ९। ऐसा सुनकर लव और कुश ने उस समय बाणों की जोड़ी चला दी। उन बाणों ने रघुवीर राम के पास आकर उन्हें नमस्कार किया। १०। उन बाणों ने बहुत स्तुति करके रघुराज राम को तृप्त कर दिया। अनन्तर वे लौट आते हुए तरकस में प्रविष्ट हो गये। मन्त्र की ऐसी महिमा है। ११। तत्पश्चात् राम ने वहाँ दो बाण धनुष पर चढ़ाकर चला दिये। उनके आते रहते सीता के पुत्रों ने झपटकर उन्हें हाथ में पकड़ लिया। १२। फिर पुराणपुरुष ने बड़ा क्रोध करते हुए पाँच बाण चला दिये; उनके आते रहते, कुश ने दस बाण चलाकर उन्हें काट डाला। १३। उस स्थान पर श्रीराम ने अपने दोनों पुत्रों का बल अधिक देखा, तो क्रोध-पूर्वक उन्होंने उसी समय कुश पर सौ बाण चला दिये। १४। तब कुश ने (धनुष से) एक सहस्र बाण ही चला दिये, तो रघुपति राम ने एक लक्ष। (फिर) सीता-नन्दन कुश ने दस लाख बाण चलाते हुए उन्हें प्रत्यक्ष काट । १[illegible] (तदनन्तर) राम ने एक करोड़ बाणों की

त्यारे असंख्य शर मूक्यां कुशे, दिव्यास्त्र मंत्रे तास,
शरजाळ छेदीने कर्यो, उद्योत भानु प्रकाश । १७ ।
विष्णुवाहने जोईने, ज्यम विलय पामे सर्प,
त्रिपुरारिलोचन झाळथी, थाय भस्म बळी कंदर्प । १८ ।
एम भूमिजासुतने शरे, रामबाणनो थयो नाश,
वैमान बेसी देव सरवे, जुए छे आकाश । १९ ।
महा पराक्रम जोई पुत्रनुं, आश्चर्य पाम्या राम,
लवकुशनी साथे मधुर वचने, बोल्या पूरणकाम । २० ।
हे बाळक जोई बळ तमारुं, हुं प्रसन्न थयो घणुं मन,
जे मागो ते हुं आपुं तमने, कहुं सत्य वचन । २१ ।
त्यारे कुश हसीने बोलियो, तमो भला छो दातार,
दानेश्वरी ए भिया जुओ, मोटम तणो नहि पार । २२ ।
अरे तमो जेवा त्रिभुवनमां, नथी निरदे कोय,
जे करम सर्वे छे तमारां, संसार जाणे सोय । २३ ।
कोण कहे तमने धर्मी साधु, सत्यवादी शूर,
तमो वाली वानर मारियो, कपट करीने भूर । २४ ।

वृष्टि की और रवि-मण्डल को ढाँक दिया । (मानो) उन्होंने बाणों का एक मण्डप ही बना दिया, तो (फलतः) उस स्थान पर अन्धकार हो गया । १६ । तब कुश ने दिव्यास्त्र मन्त्र के साथ असंख्य बाण चला दिये और (राम के) उन बाणों के जाल को काटते हुए सूर्य के तेज और प्रकाश को (उत्पन्न) किया । १७ । जिस प्रकार भगवान विष्णु के वाहन गरुड़ को देखकर सर्प विलय को प्राप्त हो जाते हैं, (जिस प्रकार) त्रिपुरारि अर्थात् शिवजी के नेत्र से उत्पन्न अग्नि-ज्वाला से कामदेव जलकर भस्म हो गया, उस प्रकार भूमिजा सीता के पुत्र के बाण से राम के बाणों का नाश हो गया । (उस समय) विमानों में बैठकर समस्त देव आकाश से यह (दृश्य) देख रहे थे । १८-१९। अपने पुत्र के महान पराक्रम को देखकर पूर्णकाम राम आश्चर्य को प्राप्त हो गये, तो वे मधुर शब्दों में लव-कुश से बोले । २० । 'हे बालको, तुम्हारा बल देखकर मैं मन में बहुत प्रसन्न हो गया हूँ । मैं यह सच्ची बात कह देता हूँ कि तुम जो माँग लोगे, वह मैं तुम्हें दे दूँगा ।' २१ । तब कुश हँसकर बोला, 'आप भले दाता (बन गये) हैं । अरे भाई, देखो तो इस दानेश्वर को । (इनके) बड़प्पन की कोई सीमा नहीं है । २२ । अरे त्रिभुवन में आप जैसा कोई (दूसरा) निर्दय नहीं है । आपके (किये) जो सब कार्य हैं, उन्हें संसार जानता है । २३ ।

वळी सीता सरखी साधवी, भागीरथी सम आप,
जेनुं नाम लेतां अधम प्राणी, थाय ते निष्पाप । २५ ।
चिद्रत्न जेवी ते सती, पाळती पतिव्रतधर्म;
विना अपराधे तजी वनमां, एवां तमारां कर्म । २६ ।
ते अम सरखा कोई जाणे छे, बीजा करे नहि वात,
आज समे आव्यो ते माटे, अमो करुं छुं विख्यात । २७ ।
पण जे दहाडे तजी जानकी, सत्कीर्ति गई ते साथ,
बळ पुरुषारथ ने पराक्रम, गयुं जाणजो रघुनाथ । २८ ।
एवा बोल सुणी बे बाळना, जोई रह्या नीचुं राम,
जळ भराई आव्युं नेत्रमां, गद्गद थया ते ठाम । २९ ।
मन एम जाणे पुत्रने हुं, देउं आलिंगन;
पछे करुणारस लेपन करेलां, बोल्यां राम वचन । ३० ।
अरे पुत्रो तमने कोणे भणाव्या ? गुरु तमारा कोण ?
तमो कुंवर कोना क्यम रह्या, आ वन विषे निरवाण ? । ३१ ।

आपको कौन धर्मशील, साधु, सत्यवादी और शूर कहता है। आपने बड़ा कपट करके बाली वानर को मार डाला । २४ । इसके अतिरिक्त, सीता जैसी साध्वी को, जो उस भागीरथी गंगा के समान स्वयं (पवित्र) है, जिसका नाम लेने पर अधम प्राणी भी पाप-हीन अर्थात् पाप-मुक्त हो जाता है, सीता जैसी चिद्रत्न सती को, जो पतिव्रत धर्म का पालन करती है, आपने बिना किसी उसके अपराध के वन में तज दिया है—ऐसे हैं आपके काम । २५-२६ । उन्हें हम जैसे कोई-कोई ही जानते हैं, (उनके बारे में) दूसरे बात (तक) नहीं करते । आज अवसर आ गया, इसलिए हम उन्हें विख्यात (लोक में बहुत विदित) करा रहे हैं । २७ । परन्तु आपने जिस दिन जानकी का परित्याग किया, (उस दिन) उसके साथ (आपकी) सत्कीर्ति (भी) चली गयी है । हे रघुनाथ, समझ लीजिए कि आपका बल, पुरुषार्थ और पराक्रम चला गया है । २८ । उन दो बालकों की ऐसी बातें सुनकर राम नीचे देखते रह गये । उनकी आँखों में (अश्रु-) जल भर आया और वे उस स्थान पर गद्गद हो उठे । २९ । मन में वे समझ रहे थे । (चाह रहे थे) कि इन पुत्रों का आलिंगन कर लें । अनन्तर राम करुणा रस में लिप्त (करुणा-रस से युक्त) वचन बोले । ३० । 'अरे पुत्रो, तुम्हें किसने सिखाया ? तुम्हारे कौन गुरु हैं ? तुम किसके पुत्र हो ? निश्चय ही इस वन में क्यों रह रहे हो' । ३१ । तब वे दोनों जने हँसकर बोले, 'आपकी छताछ ? यदि मुख पर मूँछें हों, तो

त्यारे हसी बोल्या बे जणा, शी तमारे पडपूछ ?
सन्मुख रहीने जुद्ध करो, जो होय मुख पर मूछ। ३२।
तमो क्षत्री थई संग्राम मूकी, करवा मांडी वात,
कायरतणुं ए काम छे, नहि शूरमां विख्यात। ३३।
रणमांहे बंधु पड्या छे, तेनो शोक तजीने आज,
हावे तमारे अम विद्यानुं, पूछ्यातणुं शुं काज ? । ३४।
तमो अयोध्याना राय कहावो, जन्म रविकुळमांहे,
लंकापति रावण हण्यो, देखाडो बळ ते आंहे। ३५।
जोईए तमने केवा भणाव्या, गुरु वसिष्ठ विश्वामित्र,
ते पराक्रम विद्यातणुं, करो प्रगट वीर्य विचित्र। ३६।
वातो करे नथी छूटवुं, पामशो नहि तोखार;
लागतो होय भय तो जाओ, नासी, अवधपुर मोझार। ३७।
नीकर थया त्रियाहीन माटे, ल्यो हावे संन्यास,
छेल्लो आश्रम पाळो जईने, करो वनमां वास। ३८।
शूरवीर हो तो जुद्ध करो, सन्मुख रहीने आज;
नीकर तमारे शस्त्र बांध्या, तणुं शुं छे काज ? । ३९।
अमो सतीकेरा पुत्र छीए, जनमिया आ वनमांहे,
मुनि वाल्मीके विद्या भणाव्यां, पाळ्या अमने आंहे। ४०।

सामने (खड़े) रहकर युद्ध कीजिए। ३२। आपने क्षत्रिय होकर भी युद्ध को छोड़कर बातें करना आरम्भ किया है। यह तो कायर का काम है, शूरों (के विषय) में यह विख्यात नहीं है। ३३। युद्ध-भूमि में आपके बन्धु पड़े हुए हैं। उनके शोक को छोड़कर आज अब हमारी विद्या के बारे में पूछने का क्या हेतु है ? । ३४। आप अयोध्या के राजा कहाते हैं, आपका जन्म रवि-कुल में हुआ है। आपने लंका-पति रावण का वध किया—वह बल यहाँ दिखा दीजिए। ३५। हम देख लें कि आपको गुरु वसिष्ठ और विश्वामित्र ने कैसे सिखाया है। हे विलक्षण वीर, अपनी उस विद्या के पराक्रम को प्रकट कीजिए। ३६। बातें करने से आप नहीं छूट पाएँगे, घोड़े को प्राप्त नहीं कर पाएँगे। यदि डर लगता हो, तो भागकर अयोध्या में चले जाइए। ३७। नहीं तो, आप स्त्री-हीन हो ही गये हैं, इसलिए अब संन्यास ले लीजिए। उस अन्तिम आश्रम का निर्वाह कीजिए, जाकर वन में निवास कीजिए। ३८। यदि शूरवीर हैं, तो आज सम्मुख (खड़े) रहकर युद्ध कीजिए। नहीं तो, आप के शस्त्र बाँध लेने का (ग्रहण कर लेने का) क्या प्रयोजन है। ३९। हम सीता के पुत्र हैं, इस

एवां वचन सुणी लवकुशतणां, थया विकळ श्रीरघुराय,
पछे सीताने विरहे करी, रामने थई मूरछाय । ४१ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

मूरछा आवी पृथ्वी पडिया, ज्यारे संभार्या सीताय रे,
क्षणमात्रमां सावचेत थई, पछे ऊठ्या श्रीरघुराय रे । ४२ ।

* * *

वन में जनमे हैं । वाल्मीकि मुनि ने हमें विद्याएँ सिखा दी हैं और हमारा यहाँ पालन-पोषण किया है । ' । ४० । लव-कुश की ऐसी बातें सुनकर श्रीरघुराज राम विकल हो गये । अनन्तर सीता के विरह के कारण उन्हें मूर्च्छा आ गयी । ४१ ।

जब श्रीरघुराज ने सीता का स्मरण किया, तो मूर्च्छा आने से वे भूमि पर गिर पड़े । (परन्तु) क्षण मात्र में सचेत होकर वे उठ गये । ४२ ।

* * *

अध्याय—७९ (लव-कुश और राम का संग्राम)

राग मारु

हावे श्रोताजन सावधान थई सुणो, लवकुशनुं आख्यान,
ज्यारे मूरछा वळी त्यारे सावधान थईने, ऊठ्या श्रीभगवान । १ ।
त्यारे हनुमंत विभीषणनी मूरछा वळी, आव्या ऊठीने पास,
कर जोडीने बंन्यो जण बोल्या, सुणीए श्रीअविनाश । २ ।
अरे महाराज ए चिरणजीवी छे, तमारा प्रतिबिंबरूप,
बाकी बीजातणुं बळ होय न एवुं, निश्चे रघुकुळ भूप । ३ ।

अध्याय—७९ (लव-कुश और राम का संग्राम)

हे श्रोता-जनो, अब सावधान होकर लव-कुश का आख्यान सुनिए । श्रीभगवान राम की जब मूर्च्छा उतर गयी, तब वे सचेत होकर उठ (कर खड़े हो) गये । १ । तब हनुमान और विभीषण की भी मूर्च्छा उतर गयी, तो वे उठकर (राम के) पास आ गये और दोनों जने हाथ जोड़कर बोले, ' हे श्रीअविनाशी (भगवान राम), सुनिए । २ । हे महाराज, ये आपके

तमारी कटाक्षे काळ ज कंपे, लोकपति समुदाय,
तो आशरो शो ए बाळकनो, जे तमने जीतीने जाय ? । ४ ।
पण वात्सल्य भावे रमाडो छो, प्रभु पुत्र पोताना जाणी,
वळी आश्चर्य शुं जे अंश तमारा, बळिया सारंगपाणि । ५ ।
एवां वचन सुणी एक वृक्ष तळे, प्रभु बेठा शीतळ छांहे,
विभीषण हनुमंत पासे बेठा, वात करे मांहोमांहे । ६ ।
त्यारे दीनानाथे दिवस गण्या, ज्यारे सीताने तज्यां वन;
आज बार वरस ने त्रण मास पर, अधिक थयो एक दिन । ७ ।
त्यारे लव कुशने कहे भाई जो, पेला वृक्ष तळे रघुनाथ,
शो मोटो मनसूबो करे छे, हनुमंत विभीषण साथ ? । ८ ।
त्यारे कुश कहे अरे आपणी माताने, एणे बेसाडी वनमांहे,
माटे एने आपणे क्यम बेसवा दईए, आवी शीतळ छांहे ? । ९ ।
एवुं कहीने कुशे एक मूक्युं, तीक्ष्ण बाण प्रचंड,
ते मध्यमांहेथी वृक्ष उडाड्युं, रह्यो तरुनो दंड । १० ।

पुत्र हैं, आपके प्रतिबिम्ब-स्वरूप है। हे रवि-कुल-भूप, निश्चय ही अन्यथा दूसरों का ऐसा बल नहीं हो सकता। ३। आपके कटाक्ष से काल और लोकपतियों का समुदाय (तक) काँप उठता है। तो ये यदि आपको जीतकर जाएँ, तो इन बालकों को किसका आधार रहेगा ? । ४। परन्तु हे प्रभु, इन्हें अपने पुत्र समझकर आप वात्सल्य भाव से खेला रहे हैं। इसके अतिरिक्त, हे शारंग-पाणि, यदि ये आपके अंश (इतने) बलवान हों, तो इसमें क्या आश्चर्य।'। ५। ऐसी बातें सुनकर प्रभु राम एक वृक्ष के तले शीतल छाया में बैठ गये। विभीषण और हनुमान उनके पास बैठ गये और आपस में बातें करने लगे। ६। तब दीनानाथ राम ने जब से सीता को वन में तज दिया, तब से दिन गिन लिये (उन्होंने देखा कि) आज बारह वर्ष और तीन मास से एक दिन अधिक हो गया है। ७। तब लव ने कुश से कहा, 'भाई, देखो, उस वृक्ष के तले रघुनाथ हैं। वे हनुमान और विभीषण से क्या कोई बड़ा आयोजन कर रहे हैं।'। ८। तब कुश बोला, 'अरे, इन्होंने हमारी माता को इस वन में बैठा (रखा) दिया है। इसलिए हम इन्हें ऐसी शीतल छाया में क्यों बैठने दें।'। ९। ऐसा कहते हुए कुश ने एक प्रचण्ड तीक्ष्ण बाण चला दिया और उससे उस वृक्ष को बीच में (काटकर) उड़ा दिया—(बस,) उस वृक्ष का (केवल) तना (शेष) रह गया। १०। तब रघुनन्दन श्रीराम अपने दोनों सेवकों-सहित चौंक उठे और फिर (उन लड़कों का) यह अद्भुत काम

त्यारे भडकी ऊठ्या रघुनंदन, सेवक बंन्यो साथ,
अद्‌भुत कर्म जोई पछे बोल्या, हसीने श्रीरघुनाथ। ११।
अरे भाई ए नथी थता वश, मुजथी हावे जाण,
माटे कांई एक जुद्ध करीए सन्मुख रही, सुत साथे निरवाण। १२।
एम कहीने आवी ऊभा, रघुपति ग्रही कोदंड,
लव कुश उपर मांड्यां मूकवा, रामे बाण प्रचन्ड। १३।
जे जे बाण रघुपतिनां आवे, ते छेदे लव-कुश वीर,
केटलीक वार एम रमत करी, पछी कोप्या श्रीरणधीर। १४।
प्रलयअग्निनो बाण ज मूक्यो, रघुपतिए तेणी वार,
तेणे तेजबिंबनी ज्वाळा प्रगटी, शुं करशे विश्वसंहार ?। १५।
हावे धनुष्यथकी ते शर छूट्यो, तेनो ताप सह्यो नव जाय,
अग्नितणा अंगारा वरसे, घोर शब्द घणो थाय। १६।
ते जोईने लव सावधान थयो, बे बाण चढाव्यां चाप,
गुरु वाल्मीक केरुं स्मरण करीने, मूक्यां सन्मुख आप। १७।
तेणे आवतुं छेद्युं रामबाण, घणुं क्रोध करीने मन,
त्रैण भाग ते शरना कीधा, गाज्यो जानकीतन। १८।

देखने के पश्चात् हँसकर बोले। ११। 'अरे भाई, समझ लो कि अब ये मेरे द्वारा वश नहीं हो सकते। इसलिए इन पुत्रों के साथ निश्चय ही सम्मुख रहकर कुछ (समय के लिए) युद्ध करें।'। १२। ऐसा कहते हुए रघुपति राम धनुष लिये हुए आकर खड़े रहे और उन्होंने लव-कुश की ओर प्रचण्ड बाण चलाना आरम्भ किया। १३। रघुपति राम के जो-जो बाण आते, उन्हें कुश और लव (दोनों) भाई छेद डालते। बहुत समय तक ऐसा खेल करने के पश्चात् रणधीर राम क्रुद्ध हो उठे। १४। तब उस समय, श्रीराम ने प्रलय (-कारी) अग्नि का ही बाण चला दिया। उससे तेजोयुक्त बिम्ब की (ऐसी) ज्वाला उत्पन्न हो गयी (कि जान पड़ता था कि) क्या यह विश्व का संहार (तो नहीं) कर डालेगी। १५। अब धनुष से वह बाण छूट गया। उसका ताप सहा नहीं जा रहा था। उससे अग्नि के अंगारे बरस रहे थे और बहुत घोर ध्वनि (उत्पन्न) हो रही थी। १६। उसे देखते ही लव सावधान हो गया और उसने दो बाण धनुष पर चढ़ा लिये और गुरु वाल्मीकि का स्मरण करते हुए स्वयं सामने चला दिये। १७। मन में बहुत क्रोध करके उस सीता-तनय लव ने रामबाण के आते रहते तोड़ डाला। उसने उस बाण के तीन टुकड़े कर डाले और गर्जना की। १८। अब आकाश में इन्द्रादिक समस्त देव

हावे आकाशमां सुर सहित अंगना, विमान बेसी एव,
पितापुत्रनुं जुद्ध जुए छे, इंद्रादिक सहु देव । १९ ।
को अल्पबुद्धि आशंका करे, कहेशे अमोघ रामनां बाण,
ते घणांक छेदी नाख्यां लवकुशे, ए तो काव्य अप्रमाण । २० ।
पण अरे भाई सुणो श्रोता समजु, न धरशो संदेह,
करतुं अकरतुं अन्यथा करतुं, ईश्वर समरथ एह । २१ ।
प्रथम सीताए स्तुति करी, श्रीरामनी सुत हेत,
वळी प्रभुने वहाला पुत्र छे, वात्सल्य प्रेम समेत । २२ ।
रामने मन संकल्प एम, रखे पुत्रनो थाय घात,
ते माटे निज शर विफळ कीधां, जाणीने जगतात । २३ ।
वळी पिता करतां पुत्रनी कही, अधिकता जुद्धमांहे,
तेनो यथान्याये अरथ श्रोता, सुणो कहुं छुं त्यांहे । २४ ।
ज्यम कारज केरी अधिकता कह्ये, कारण मोटुं थाय,
वळी नामनो महिमा महत ते, नामी मांहे समाय । २५ ।
एम पराक्रम कहे पुत्रनुं, वधे पिता केरुं मान,
ज्यम रश्मि तेजनुं स्तवन रविमां, पामे पर्यवसान । २६ ।

अपनी-अपनी स्त्रियों सहित विमानों में बैठकर पिता-पुत्र के इस युद्ध को देख रहे थे । १९ । कोई अल्प-मति यह सन्देह करेगा और कहेगा कि राम के बाण तो अमोघ होते थे; (ऐसे) उन अनेकों को लव-कुश ने छेद डाला—यह काव्य (में वर्णित घटना) अप्रमाणित अर्थात् झूठी है । २० । परन्तु अरे भाई समझदार श्रोताओ, सुनिए तो । मन में सन्देह धारण न करना । ये ईश्वर अर्थात् राम कर्तुं, अकर्तुं, अन्यथा कर्तुं समर्थ हैं । २१ । फिर पहले पुत्रों के लिए सीता ने राम की स्तुति की थी। इसके अतिरिक्त, वे वात्सल्य प्रेम से युक्त प्रभु राम के प्रिय पुत्र हैं । २२ । राम के मन में ऐसा निश्चय है कि पुत्रों को आघात होने से बचाये रखें । इसलिए जगत्तात राम ने जान-बूझकर अपने बाणों को विफल कर दिया । २३ । इसके अतिरिक्त, इस युद्ध में पिता से पुत्र की अधिकता (बड़ाई) कही है । हे श्रोताओ, मैं उसका जो यथा-न्याय अर्थ यहाँ कह रहा हूँ, उसे सुन लीजिए । २४ । जिस प्रकार कार्य की अधिकता कहने पर कारण बड़ा (सिद्ध) हो जाता है, इसके अतिरिक्त, नाम की महिमा महती होती है, परन्तु वह (नाम) नामी में ही समाविष्ट रहता है (अर्थात् नाम की महत्ता कहने पर, वह नामी की ही—उस नाम के धारक ही की महत्ता मानी जाती है; उस प्रकार पुत्र का पराक्रम (अधिक) कहते हैं, तो उससे पिता का

माटे लव-कुशे रघुवीरशुं, रण कर्यो अति संग्राम,
लघु लाघवता करीने तदा, घणी हार मनाव्या राम । २७ ।
पछे क्रोधे करीने कुशे मार्युं, मोहनास्त्रनुं बाण,
ते तीक्ष्ण वाग्युं राम हृदेमां, पडिया पुरुष पुराण । २८ ।
पृथ्वीकंप थयो तेणी वेळा, डोल्या दशे दिग्पाळ,
गिरिनां शिखर पड्यां तूटी, खळभळियां साते पाताळ । २९ ।
हावे मूर्छित थईने राम पड्या छे, पृथ्वी उपर ज्यारे,
हनुमंत विभीषण, बंन्यो मळीने, धाया तेणी वारे । ३० ।
घोर युद्ध कीधुं बंन्यो मळीने, राखी नहि मरजाद,
पण सीतासुतना मार थकी ते, पाम्या खेद विषाद । ३१ ।
हावे लंकापति ने लव बे वढता, कुश ने श्रीहनुमंत,
पाछो पग कोईए नथी धरता, चारे जण बळवंत । ३२ ।

मान ही बढ़ता है । जिस प्रकार किरण के तेज का स्तवन रवि के स्तवन में पर्यवसान को प्राप्त हो जाता है, उसी प्रकार पुत्रों की महत्ता अन्त में पिता की महत्ता को ही बढ़ाती है । २५-२६ । इसलिए लव और कुश ने युद्ध-भूमि में राम से बड़ा युद्ध किया और तब चतुराई से राम को बड़ी हार मनवा दी । २७ । अनन्तर कुश ने क्रोध-पूर्वक मोहनास्त्र से युक्त बाण चला दिया । वह तीक्ष्ण बाण पुराण-पुरुष राम के हृदय पर लग गया, तो वे गिर पड़े । २८ । उस समय पृथ्वी काँप उठी; दसों दिक्पाल[1] डोलने लगे । पर्वतों के शिखर टूट पड़े और सातों पाताल[2] हिलने लगे । २९ । अब मूर्च्छित होकर जब राम भूमि पर गिर पड़े, तो उस समय हनुमान और विभीषण दोनों मिलकर (एक साथ) दौड़े । ३० । उन दोनों ने मिलकर घोर युद्ध किया, उसमें उन्होंने कोई सीमा नहीं रखी । परन्तु सीता-सुत कुश और लव की मार से वे खेद और विषाद को प्राप्त हो गये । ३१ । अब लंकापति विभीषण और लव दोनों लड़ने लगे, तो कुश और श्री हनुमान । उनमें से (अपने को) कोई पीछे नहीं (हटा) ले रहा था । समझिए कि वे चारों (ऐसे सम-समान) बलवान थे । ३२ ।

१ दस दिक्पाल—इन्द्र (पूर्व), वह्नि (आग्नेय), यम (दक्षिण), नैऋति (नैऋत्य), वरुण (पश्चिम), मरुत् (वायव्य), कुवेर (उत्तर), ईश (ईशान्य), सोम (ऊर्ध्व), तथा अनन्त (अधस्) ।

२ सप्त पाताल—अतल, वितल, सुतल, रसातल, महातल, तलातल और पाताल । (इसके सम्बन्ध में कुछ अन्य परम्पराएँ भी प्रचलित है ।)

त्यारे लवे काळांतकनो शर मार्यो, विभीषणने तेणी वार,
तेथी विश्रवासुतने मूर्छा थई, पडिया पृथ्वी मोझार। ३३।
पछी कुशे बाण वज्रास्त्र मूकीने, मारुति मूरछित कीधो,
एम जय पाम्या रघुपतिने जीती, रणमां महा जश लीधो। ३४।
हावें श्रोताजन संदेह नव करशो, मूरछित जाणी श्रीराम,
एतो विराम पाम्या पुत्र पोताना, जाणीने पूरणकाम। ३५।
अछेद्य अभेद्य अविनाशी, जगतना जीवन प्राण,
ते जाणी जोईनें नेत्र मींची, पडी रह्या छे पुरुष पुराण। ३६।
एम सरवतणो संहार करीने, विराम पाम्या वीर,
पछी आलिंगन देई आनंद पाम्या, हरख्या छे रणधीर। ३७।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रणधीर बंन्यो राघवी, ते मनमां हरख्या अपार रे,
पछी बंन्यो वीर प्रवेश्या ततक्षण, रामसेना मोझार रे। ३८।

* * *

तब लव ने उस समय विभीषण पर कालान्तक बाण चला दिया, उससे वह विश्रवा-सुत मूर्च्छा आने से भूमि पर गिर पड़ा। ३३। अनन्तर कुश ने वज्रास्त्र बाण चलाकर हनुमान को मूर्च्छित कर दिया। इस प्रकार (कुश और लव) रघुपति राम (और विभीषण तथा हनुमान) को जीतकर जय को प्राप्त हो गये और उन्होंने युद्ध-भूमि में यश प्राप्त कर लिया। ३४। अब हे श्रोताजनो, श्रीराम को मूर्च्छित हुए समझकर सन्देह न करना यह तो पूर्णकाम राम उन (लड़कों) को अपने पुत्र जानकर विराम को प्राप्त हो गये। ३५। वे पुराणपुरुष अच्छेद्य, अभेद्य, अविनाशी हैं, जगत् के जीवन और प्राण हैं। वे जान-बूझकर आँखों को बन्द करके पड़े रहे थे। ३६। इस प्रकार सबका संहार करके वे दोनों वीर (बन्धु) विराम को प्राप्त हो गये। अनन्तर वे रणधीर एक-दूसरे का आलिंगन करके आनन्द को प्राप्त हो गये। वे हर्ष-विभोर हो गये। ३७।

वे दोनों राघवीय रणधीर थे; वे मन में आनन्दित हो गये। अनन्तर वे दोनों बन्धु तत्क्षण राम की सेना में प्रविष्ट हो गये। ३८।

* * *

अध्याय—८० (लव-कुश का विजय प्राप्त करके सीता के पास आगमन)

राग बिलावल

मूरछा पाम्या ज्यारे श्रीरणधीर, त्यारे प्रवेश्या सैन्यमां बंन्यो वीर,
चोदश फरी जोयुं दळ मांहे, ते आव्या राम रह्या छे ज्यांहे । १ ।
मानुषी लीला करी रघुवीर, नेत्र मींची सूता श्यामशरीर,
परदक्षणा करी बंन्यो संग, पछी रामने चरणे नम्या साष्टांग । २ ।
पितानी पदरज वंदी ते दिश, ते पुत्रे लेईने चढावी शीश,
पछी उतार्या प्रभुना अलंकार, मुगट कुंडळ कंकण ने हार । ३ ।
कटी मेखळा कौस्तुभ वनमाळ, ते उतारी लवे पहेर्यां तत्काळ,
वळी लक्ष्मणजीनां आभूषण जेह, कुशे निज अंगे पहेर्यां तेह । ४ ।
बंन्यो पुत्र शोभे अनुरूप, जाणे लक्ष्मण राम अयोध्याना भूप,
पछी रामने रथ बेठा बे वीर, पूंठे बांध्या कपि बळिया धीर । ५ ।
नळ नील सुग्रीव ने हनुमंत, अंगद जांबुवान बळवंत,
पुच्छे ग्रह्या खट कपि कुमार, रथ पूंठळ बांध्या तेणी वार । ६ ।

अध्याय—८० (लव-कुश का विजय प्राप्त करके सीता के पास आगमन)

जब श्रीरणधीर राम मूर्च्छा को प्राप्त हो गये, तब वे दोनों भाई सेना में प्रविष्ट हो गये। उन्होंने सेना में चारों दिशाओं में घूमते हुए देखा और (अन्त में) वे वहाँ आ गये, जहाँ राम (पड़े) रह गये थे। १। श्याम-शरीरधारी रघुवीर (इस प्रकार) मानवीय लीला कर रहे थे, वे आँखें मूँदकर सो गये थे। उन दोनों ने राम की परिक्रमा की और अनन्तर उनके चरणों को साष्टांग नमस्कार किया। २। उस स्थान पर उन दोनों पुत्रों ने अपने पिताजी की चरण-रज की वन्दना की और उसे लेकर सिर पर चढ़ा लिया। अनन्तर उन्होंने प्रभु राम के मुकुट, कुण्डल, कंकण और हार तथा (अन्य) आभूषणों को उतार लिया। ३। उनकी कटि की मेखला, कौस्तुभ मणि और वनमाला को उतारकर लव ने उन्हें तत्काल पहन लिया। इसके अतिरिक्त लक्ष्मण के जो आभूषण थे, उन्हें कुश ने अपने शरीर पर धारण कर लिया। ४। वे दोनों पुत्र (राम के) अनुरूप शोभायमान थे। मानो वे अयोध्या के राजा राम और लक्ष्मण ही हों। अनन्तर, वे दोनों भाई राम के रथ में बैठ गये और उन्होंने उन धीरमति बलवान कपियों को पीछे बाँध लिया। ५। नल, नील, सुग्रीव और हनुमान, अंगद, जाम्बवान—इन बलवान छः कपियों को उन कुमारों ने पूँछ से पकड़ लिया और उसी समय उन्हें रथ के पीछे बाँध लिया। ६।

श्यामकरण हय लीधो संग, चाल्या मन पामी उमंग,
पछी रथ हांकी निज आश्रम जाय, पेला कपिनां अंग ते भूमि रोळाय।७।
ते मध्ये बे जण छे सावचेत, ते एकएकने करता संकेत,
त्यारे जांबुवान कहे हो हनुमंत, ऊठ आपण जुद्ध करीए बळवंत । ८ ।
थाय छे आपणा अंगमां प्रहार, पीडे छे कंटक उपल अपार,
सुणी जांबुवाननां एवां वचन, त्यारे हळवे बोल्या वायुतन । ९ ।
अरे रींछपति, कहुं वात विषेक, हवे धीरज राखी रहो क्षण एक;
त्रिभुवननाथ पड्या मूरछित, बंधु पुत्र सहु सैन्य सहित । १० ।
आ एमना छे जुगलकुमार, जाय छे मुनि आश्रम मोझार,
त्यां छे जानकी निर्मळ मन, ए मीष आपणे थाशे दरशन । ११ ।
ते जगतजनुनी टाळशे दुःख, छोडावी आपणने करशे सुख,
एम छानी वात करे मांहे मर्म, एटले आव्यो मुनि आश्रम । १२ ।
त्यारे रथ राख्यो आश्रमनी बहार, ऊतर्या बंन्यो भूमिजाकुमार;
हावे जनकसुता रह्या छे ठाम, बेठां पद्मासन जपतां श्रीराम । १३ ।
एक सत्य व्रत मनमां धीर, एवे दीठा आवता बंन्यो वीर,
मुगट कुंडळ जोई भूषण सार, जाणे आव्या रामलक्ष्मण निरधार।१४।

उन्होंने श्यामकर्ण घोड़े को साथ में लिया और मन में उमंग को प्राप्त होते हुए वे चल दिये। फिर रथ हाँकते हुए वे अपने आश्रम की ओर जाने लगे, तो कपियों के शरीर भूमि पर धूल में रगड़ते जा रहे थे। ७। उनमें दो जने सचेत थे; वे एक-दूसरे को संकेत कर रहे थे। तब जाम्बवान ने कहा, 'हे हनुमान, उठो हम बलवान इनसे युद्ध करें। ८। हमारे अंग में आघात हो रहे हैं, अनगिनत काँटे और पत्थर हमें पीड़ा पहुँचा रहे हैं।' जाम्बवान की ऐसी बातें वायुकुमार हनुमान ने (जब) सुनीं, तब वह धीमे स्वर में बोला। ९। 'अरे रीछ-पति, मैं एक विशेष बात कहता हूँ—अब एक क्षण धीरज रखे रहो। त्रिभुवन के स्वामी राम बन्धुओं, पुत्रों तथा समस्त सेना-सहित मूर्च्छित पड़े हुए हैं। १०। ये उनके दो पुत्र हैं। वे मुनि (वाल्मीकि) के आश्रम में जा रहे हैं। वहाँ निर्मल-मना जानकीजी हैं। इस बहाने हमें उनके दर्शन होंगे। ११। वे जगज्जननी हमारे दुःख को दूर करेंगी, हमें मुक्त करके सुखी कर देंगी।' इस प्रकार वे चोरी-छिपे मार्मिक बातें कर रहे थे। इतने में मुनि का आश्रम आ गया। १२। तब आश्रम के बाहर रथ को रखकर वे दोनों भूमिजा-कुमार उतर गये। अब सीता जिस स्थान पर रहती थी, वहाँ वह पद्मासन लगाकर श्रीराम (के नाम) जाप करते हुए बैठी

एटलै पासे आव्या तन, ओळखी प्रसन्न थयां छे मन,
लाग्या बंन्यो जण साथे पाय, उछंगे बेसाडी पूछे माय । १५ ।
अरे पुत्र, ए भूपति कोण, जे लाव्या जुद्ध करीने केकाण ?
त्यारे पुत्रे सकळ कथा कही, त्यांहे जेवुं नीपन्युं सेनामांहे । १६ ।
श्रीरामचंद्रनो यज्ञतोखार, आव्यो तो आपणा वनमोझार,
ते बांध्यो अमो विचारी बुद्ध, जीत्या सकळ ते शुं करी जुद्ध । १७ ।
बंधु सहित कर्या मूरछित राम, अश्व लेई आव्या अमो आ ठाम,
ए वात सीताए सुणी, थयां चकित दंतशुं जीभ्या हणी । १८ ।
कर घसीने धुणाव्युं शीश, अरे आ शुं करम थयुं जुगदीश,
कंठ रुंधायो श्वास न माय, ढळी पड्यां तत्क्षण थई मूरछाय । १९ ।

दोहा

हावे जानकीने मूरछा थई, ढळी पड्यां तेणी वार,
शरीर अचेतन थई गयुं; शुद्धि नहि लगार । २० ।

थी । १३ । एक (मात्र) सत्यव्रत का पालन करते हुए वह मन में धीरज धारण किये हुए रहती थी । । इतने में उसने उन दोनों बन्धुओं को आते हुए देखा । उन्हें मुकुट, कुण्डल तथा सुन्दर आभूषण (पहने हुए) देखकर उसे जान पड़ा कि निश्चय ही राम और लक्ष्मण आ गये हैं । १४ । इतने में वे (दोनों) पुत्र उसके पास आ गये, तो उन्हें पहचानकर वह मन में प्रसन्न हो गयी । (फिर) वे दोनों जने एक साथ उसके पाँव लगे, तो उस माता ने उन्हें गोद में बैठाते हुए पूछा । १५ । 'अरे बच्चो, यह कौन राजा है, जिससे युद्ध करके तुम घोड़ा ले आये हो ? ' । तब उसके उन लड़कों ने, जिस प्रकार वहाँ सेना में उन्हें लाभ हो गया, उसकी समस्त कथा कह दी । १६ । 'श्रीरामचन्द्र का यज्ञीय घोड़ा हमारे वन में आ गया था । उसे हमने अपनी बुद्धि के अनुसार विचार करके बाँध लिया था; फिर उन सबको युद्ध करके जीत लिया । १७ । हमने बन्धुओं सहित राम को मूर्च्छित कर दिया है और हम इस अश्व को लेकर इस स्थान आ गये हैं । ' सीता ने जब ऐसी बात सुनी, तो वह चकित हो गयी । उसने दाँतों से अपनी जिह्वा को काट लिया । १८ । उसने हाथ मलते हुए सिर धुन लिया (और कहा)— 'हे जगदीश, यह क्या (कैसा) काम हो गया ? ' उसका गला रुँध गया, उसमें साँस समा नहीं रही थी । (अन्त में) वह तत्क्षण मूर्च्छित होते हुए लुढ़ककर लेट गयी । १९ ।

अब जानकी को मूर्च्छा आ गयी । वह उस समय एक ओर झुककर लेट गयी । उसका शरीर अचेतन हो गया । उसे थोड़ी भी सुध-बुध

त्यारे सावधान पुत्रे कर्यां, वेसाड्यां ग्रही पाण,
जोई विकळता मातनी, सुत दुःख पाम्या जाण । २१ ।
ज्यारे शुद्धि आवी शरीरनी, त्यारे संभारियुं दुःख आप,
नेत्रे जळधारा वहे, करतां विविध विलाप । २२ ।

नहीं रह गयी । २० । तब उसके पुत्रों ने उसे सावधान (सचेत) कर दिया और हाथ थामकर बैठा लिया । समझिए कि अपनी माता की उस विकलता को देखकर वे (दोनों) पुत्र दुःख को प्राप्त हो गये । २१ । जब शरीर की सुध-बुध आ गयी, तब सीता को अपने दुःख का स्मरण हो आया । (तब) उसकी आँखों से अश्रु-जल की धारा बहने लगी और वह विविध प्रकार से विलाप करने लगी । २२ ।

* * *

अध्याय—८१ (सीता का विलाप)

राग शोक वेराडी

ज्यारे सीताने मूरछा वळी रे, त्यारे करतां शोक रुदन,
उदे ताडण करे रे, पृथ्वी पछाडे पोतानुं तन । १ ।
अरे हो पुत्रो तमो रे, पिताने वध करी आव्या क्यम ?
ज्यारे तमो अश्व बांधियो रे, मुने कह्यो न केम पहेलो मर्म ? । २ ।
त्यारे पाछो आपत तुरी रे, जईने हुं लागत प्रभु पाय,
अपराध तमतणो रे, करत क्षमा सरवे रघुराय । ३ ।
में जाण्युं अन्य कोई हशे रे, पृथ्वी तणो राजा बळवंत,
में प्रभुने जाण्या नहि रे, भरत शत्रुघन साथे अनंत । ४ ।

अध्याय—८१ (सीता का विलाप)

जब सीता की मूर्च्छा उतर गयी, तब वह शोक और रुदन करने लगी । वह छाती पीट रही थी और अपनी देह को भूमि पर पछाड़ रही थी । १ । (वह बोली—) 'हे पुत्रो, तुम अपने पिता का वध करके कैसे आ गये ? जब तुमने अश्व को बाँध लिया, तब तुमने मुझे यह मर्म-भरी बात क्यों नहीं बता दी । २ । तब मैं घोड़ा लौटा देती और जाकर प्रभु के पाँव लग जाती । रघुराज तुम्हारे समस्त अपराध को क्षमा कर देते । ३ । मैंने समझा कि वह कोई पृथ्वी का अन्य बलवान राजा होगा; मैंने इसमें प्रभु को भरत, शत्रुघ्न और साथ में अनन्त के अवतार

कुटुंबकलह कर्यो रे, वणसमजे तमो मारा तन,
मारा प्राणजीवन तणां रे, हावे को करावे मुने दर्शन? । ५ ।
हावे जीवीने हुं शुं करुं रे, शुं देखाडुं जगतमां मुख ?
अरे हुं दुर्भाग्यणी रे, हा हा दैवे दीधुं घणुं दुःख । ६ ।
अरे वाम विधि थयो रे, ठरी नव बेठी हुं कोई दन,
में जे धार्युं हतुं रे, ते रह्या मनना मनोरथ मन । ७ ।
में जाण्युं पुत्र लेईने रे, जईशुं समोतां अवध मोझार,
मारी सासु सुख पामशे रे, खोळे बेसाडीशुं बंन्यो कुमार । ८ ।
ते आश निराश थई रे, प्राणपतिए पाड्यो वियोग,
हुं धीरज क्यम धरुं रे? फरी पाछो क्यारे पामीश संजोग? । ९ ।
प्रभु विना अपराधथी रे, तजी मुने एकलडी वनवास,
छेक निरद थया नाथजी रे, फरी नव लीधी मारी तपास । १० ।
हो मुनि तमो क्यां गया रे? तमो विना थयुं विपरीत आ वन,
हावे वहेला आवो तातजी रे, जईने जगाडो प्राणजीवन । ११ ।
वरस द्वादश थयां रे, चाले छे स्वामीवियोगनुं दुःख,
वळी एवामां आवुं थयुं रे, कोने कहीए जो कवाई कूख । १२ ।

लक्ष्मण को नहीं माना । ४ । हे मेरे पुत्रो, बिना (सोचे-) समझे, तुमने पारिवारिक झगड़ा खड़ा कर लिया । मेरे प्राण-जीवन के दर्शन अब मुझे कौन कराएगा । ५ । मैं अब जीवित रहकर क्या करूँ? जगत् में अपना मुख कैसे दिखा दूँ? अरे मैं अभागिनी हूँ । हाय, हाय! दैव ने मुझे बहुत दुःख दिया है । ६ । अरे, मेरे लिए विधाता वक्र हो गये हैं; किसी भी दिन मैं स्थिर (स्वस्थ-चित्त) नहीं बैठ पायी हूँ । मैंने जो मन में धारण किया था, (उसके बारे में) मेरे वे मनोरथ (अधूरे) रह गये हैं । ७ । मैं समझी थी कि अपने पुत्रों को लेकर मैं अनुकूल अवसर मिलने पर अयोध्या में जाऊँगी । मेरी सासजी सुख को प्राप्त हो जाएँगी । मैं इन दोनों पुत्रों को उनकी गोद में बैठा दूँगी । ८ । यह मेरी आशा (अब) निराशा हो गयी है—मुझे प्राण-पति से वियोग हो गया है । मैं धीरज कैसे धारण करूँ? फिर से पुनः और संयोग को कैसे प्राप्त हो पाऊँगी । ९ । हे प्रभु, आपने मुझे बिना किसी अपराध के वनवास के लिए अकेली तज दिया । हे नाथ, आप पूरे-पूरे निर्दय हो गये और फिर मेरी खोज (तक) नहीं (कर) ली । १० । हे मुनिजी, आप कहाँ गये है? आपके बिना (यहाँ) वन में विपरीत बात हो गयी है । हे तात, आप शीघ्रता से आ जाइए और आकर मेरे प्राण-जीवन को जगा दीजिए । ११ । बारह वर्ष हो गये हैं,

विस्मय पाम्यां ते जोई सीता, दीठुं अद्भुत कर्म,
अतुलित बळ ए बाळक केरुं, महा पराक्रम पर्म। १०।
पछी छोड्यो सीताए स्वहस्ते करीने, सर्व कपिनो साथ,
ते जनकसुताने चरणे नमिया, त्यारे मस्तक मूक्यो हाथ। ११।
अरे वीरा, तमो जाओने वहेला, ज्यां छे जुगजीवन,
ते सर्वतर्ण तमो रक्षा करजो, ज्यम नव थाय विघन। १२।
पछी आज्ञा मागी सर्व गया ते, रामसेना मोझार;
त्यारे पाताळमांथी आव्या मुनि वाल्मीक, आश्रम तेणी वार। १३।
त्यारे सीताए सहु समाचार कह्या ते, मुनिवरने वरतंत;
अरे पिता, पुत्रे कर्युं विपरीत, आण्यो सर्वनो अंत। १४।
एवां वचन सुणीने वाल्मीक चाल्या, उतावळा तेणी वार,
जळनुं कमंडळ करमां लेई आव्या, रामसेना जे ठार। १५।
मुख्य जोद्धाने ते जळ छांट्युं, मंत्रीने मुनिराय,
अमृतदृष्टिए करी जोयुं, ऊठी सकळ सेनाय। १६।

गयी। देखने लगी, तो अपार बलवान योद्धा छः कपि बाँधे हुए देखे। ९। उसने (अपने पुत्रों का) यह अद्भुत काम देखा, तो उन्हें देखकर सीता विस्मय को प्राप्त हो गयी। (उसने माना—) इन बालकों का बल अतुल्य (बेजोड़) है; इनका महा पराक्रम परम कोटि का (सर्वोच्च) है। १०। अनन्तर जनक-सुता सीता ने अपने हाथों से सब कपियों को एक साथ ही छोड़ दिया, तो उन्होंने उसके चरणों को नमस्कार किया, तो उसने उनके मस्तक पर हाथ रखा। ११। (वह बोली-) 'अरे भाइयो, तुम शीघ्रता से जहाँ जगज्जीवन हैं, वहाँ चले जाना। जिस प्रकार, उन्हें कोई विघ्न न हो, उस प्रकार तुम उनकी रक्षा करो।'। १२। अनन्तर आज्ञा लेकर वे सब राम की सेना में चले गये। तब उस समय वाल्मीकि मुनि पाताल में से आ गये। १३। तब सीता ने मुनि से समस्त समाचार कह दिये, वृत्तान्त कहा। (फिर वह बोली—) 'हे पिताजी, इन पुत्रों ने तो विपरीत (कार्य) कर दिया है और सबका अन्त कर डाला है।'। १४। ऐसी बातें सुनकर, वाल्मीकि उसी समय शीघ्रता-पूर्वक चल दिये और हाथ में जल-भरा कमण्डलु लिये हुए (वहाँ) आ गये, जिस स्थान पर राम की सेना थी,। १५। फिर मुनिवर ने उस जल को अभिमंत्रित करते हुए मुख्य-मुख्य योद्धाओं पर सींच दिया; और अमृत-दृष्टि से (सबकी ओर) देखा, तो समस्त सेना (सचेत होकर) उठ गयी। १६। सबके शरीर सचेत हो गये, इसमें क्षण तक समय नहीं

ते सावधान थयां शरीर सहुनां, क्षणुं नव लागी वार,
श्रीरामचंद्रने मुनिवर मळिया, वरत्यो जयजयकार। १७।
लक्ष्मण भरत शत्रुघन आदे, अन्य देशना राय,
पुत्र प्रधान मळी सहु लाग्या, मुनिवर केरे पाय। १८।
पछी रामचंद्रनी सन्मुख ऊभा, पोते वाल्मीक मुन्य,
गद्गद कंठे करुणा वचने, रामनुं करता स्तवन। १९।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

श्रीरामचंद्रनी स्तुति करता, मुनि वाल्मीक तेणी वार रे,
ते सांभळतां सुख ऊपजे, थाय पावन नर ने नार रे। २०।

लगा। जब (तदनन्तर) मुनिवर श्रीरामचन्द्र से मिल गये, तो जय-जयकार हो गया। १७। लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न तथा अन्य देशों के राजा, पुत्र, मन्त्री आदि सब मिलकर मुनिवर के पाँव लग गये। १८। फिर स्वयं वाल्मीकि मुनि रामचन्द्र के सम्मुख खड़े रह गये और गद्गद कण्ठ से करुणा-युक्त वचनों में राम की स्तुति करने लगे। १९।

उस समय वाल्मीकि मुनि श्रीरामचन्द्र की स्तुति करने लगे। उसे सुनने पर सुख उत्पन्न हो जाता है और वे (श्रोता) पुरुष और स्त्रियाँ पावन हो जाते हैं। २०।

* * *

अध्याय—८३ (वाल्मीकि द्वारा राम की स्तुति)

छंद त्रोटक

जय राम कृपाळ दयाळ हरि, परमारथ विग्रह देह धरी,
जगकारण आप अहेतु सदा, धृत मानुष रूप न मोह कदा। १।
तरणिकुळ मंडन मौलि मणी, प्रगट्या कमळायुध पाळफणी,
करकंज धरी शर चाप वरं, कृत वीस भुजा दशशीश हरं। २।

अध्याय—८३ (वाल्मीकि द्वारा राम की स्तुति)

हे कृपालु राम, हे दयालु हरि, आपकी जय हो। आप (निर्गुण, निराकार) परम तत्त्व ने, अर्थात् ब्रह्मा ने विग्रह(-स्थूल) देह धारण की है। आप सदा बिना किसी (स्वार्थ आदि) हेतु के जगत के आधार हैं; आपने मनुष्य रूप धारण किया है। (फिर भी) आपको कभी भी कोई मोह (जैसा विकार) नहीं होता। १। आप रवि-कुल की शोभा बढ़ानेवाले

पृथवीतळ पावन पुण्य करी, पद तीरथराज स्वछंद फरी,
हत दुष्ट निशाचर घोरतमं, कृत स्थापन सेत अभे निगमं। ३ ।
जय श्रीपति भूपति भूपपति, यज्ञरूप गिरापति सर्वगति,
सत्त्व शुद्ध प्रकाशक ज्ञानमयं, कृत उद्‌भव व्यापक विश्व अयं। ४ ।
अजरामर सिद्ध गति न लहे, निगमागम पूरण ब्रह्म कहे,
भक्त गो सुर साह्यक सत्यव्रतं, धर्मस्थापन ए अवतार धृतं। ५ ।
अद्‌भुत चरित्र अनुप वरं, कवि वागविलास न मानसरं,
सनकादिक शेष महेश गिरा, नभनायक लायक विप्रवरा। ६ ।
तपयोग समाधि सुध्यान धरे, यह जीवन्मुक्त ज ब्रह्म परे,
तदपि त्यजी ध्यान सुणे चरितं, हरति त्रय ताप गुणा सरितं। ७ ।
मन शील मुनी तजी योगक्रिया, भजते सगुणाकृति रूपतया,
मद मान रहित सदा विचरे, नित्य मुक्त कथामृत पान करे। ८ ।

शिरोमणि, (सीता के रूप में) लक्ष्मी तथा (लक्ष्मण के रूप में) फणिपाल शेष सहित प्रकट हो गये हैं। आपने अपने कर-कमलों में उत्तम वाण तथा धनुष धारण करके बीस भुजाओं वाले और दस सिरोंवाले रावण का हरण अर्थात् नाश किया है। २। आपने (अपने आविर्भाव से) पृथ्वी-तल को पावन एवं पुण्यवान बना दिया है। आप अपने तीर्थराज-स्वरूप पदों से स्वच्छन्द विचरण करते हैं। आपने दुष्ट तथा घोरतम निशाचरों का वध किया और अभय दिलाते हुए वेद और धर्मशास्त्र रूपी सेतु की स्थापना की। ३। हे श्रीपति, भूपति, भूप-पति, हे यज्ञ-स्वरूप, हे गिरा-पति, हे सर्व-गति, आपकी जय हो। आप शुद्ध सत्त्वगुणवान् हैं। सबके लिए प्रकाश-दाता हैं, ज्ञानमय हैं, जगत् के उद्‌भव-कर्ता हैं, इस विश्व को व्याप्त कर देनेवाले हैं। ४। अजरामर देव तथा सिद्ध (आपके अतिरिक्त) और किसी गति को ग्रहण नहीं करते। निगमागम आपको पूर्णब्रह्म कहते हैं। आप भक्तों, गौओं, देवों के सहायक हैं, सत्यव्रतधारी हैं। आपने धर्म की स्थापना के लिए अवतार धारण किया है। ५। आपका चरित्र (लीला) अद्‌भुत तथा उत्तम है। कवि के वाग्विलास द्वारा तथा सनकादि, शेष, शिवजी, सरस्वती, देवों तथा सुयोग्य विप्रवरों (ऋषियों) द्वारा उसका मापन नहीं हो सकता। ६। ये तपस्या, योग, समाधि, सुन्दर ध्यान धारण करते हैं और जीवनमुक्त हो जाते हैं। फिर भी आप ब्रह्म उनसे परे ही रहते हैं। तथापि जो ध्यान का त्याग कर आपका चरित्र सुनते हैं, उनके तीनों प्रकार के ताप को आपकी गुण-रूपी सरिता हरण करती है। ७। मन से योग-साधना करनेवाले मुनि योग-क्रिया का त्याग करके आपके सगुण, साकार रूप को भजते हैं। (फिर) मद और मान-

जय बोध अगाध अखंड अजे, लय पालन विश्व संहार स्रजे,
जयति सत चित आनंदघनं, दावानळ दाहक दुष्ट वनं। ९ ।
अवतार अनामय भूमितलं, विचरी मम वाणी करी सुफलं,
कृत पूरण काम कृपाळ प्रभो, प्रणमामि रमापति राम विभो। १० ।

दोहा

पूरण अंश करुणायतन, कृपासिंधु रणधीर,
सत चित आनंद रूप घन, जय जय श्रीरघुवीर। ११ ।

रहित होकर सदा विचरण करते हैं और नित्य मुक्त रूप से आपकी कथा रूपी अमृत का पान करते हैं। ८। हे ज्ञानमय, हे अगाध, हे अजन्मा, हे विश्व का निर्माण करनेवाले, उसका विलय, पालन तथा संहार करनेवाले, आपकी जय हो। हे सच्चिदानन्द-घन, हे दुष्टरूपी वन को जला डालने वाले दावाग्नि, आपकी जय हो। ९। आप अनामय ने अवतरित होकर भूमि-तल पर विचरण करते हुए मेरी वाणी को (अर्थात् आपके अवतरित होने से साठ सहस्र वर्ष पहले मैंने आपके सम्बन्ध में जो भविष्यवाणी करके काव्य लिखा, उसे) सुफलित बना दिया है। हे कृपालु प्रभु, आपने हमारी कामनाओं को पूर्ण किया है। हे रमापति (भगवान विष्णु के अवतार) राम, हे विभु, मैं आपको नमस्कार करता हूँ। १०।

हे (समस्त) अंशों से युक्त पूर्णावतार, हे करुणायतन, हे कृपा-सिन्धु, हे रणधीर, हे सच्चिदानन्द-स्वरूप घन, हे श्रीरघुवीर राम, आपकी जय हो, जय हो। ११।

* * *

अध्याय—८४ (लव-कुश और सीता का राम के समीप आगमन)

राग भूपाळ

मुनि वाल्मीके रे, स्तुति करी श्रीरघुवीर तणी,
थई प्रसन्न ज रे, बोल्या पछे त्रिभुवनधणी। १ ।
अहो मुनिवर रे, हुं तमारो सेवक सदा,
तमारे वश ज रे, जे कहो ते करुं सरवदा। २ ।

अध्याय—८४ (लव-कुश और सीता का राम के समीप आगमन)

वाल्मीकि मुनि ने श्रीरघुवीर राम की स्तुति की। अनन्तर त्रिभुवन के स्वामी राम प्रसन्न होकर बोले। १। 'अहो मुनिवर, मैं आपका सदा सेवक हूं, आपके वश में (रहता) हूं। आप जो कहते हैं, वह मैं नित्य

तमो आगम रे, वाणी बोल्या छो जेटली,
धरी जन्म ज रे, में लीला कीधी तेटली। ३।
तमो मुजने रे, जे उपकार कर्यो आंहां,
बीजे नव थाय रे, सत्य कहुं त्रिलोकमांहां। ४।
हवे मागो रे, सत्य वचन पाळुं सही,
तम जेवो रे, मारे हेतु बीजो नहि। ५।
लई वचन ज रे, मुनिवर आश्रम आविया,
बे पुत्रने रे, समजावीने तांहां लाविया। ६।
साथे लीधो रे, जे हतो यज्ञतणो तुरी,
राम पासे रे, मुनिवर त्यांहां आव्या फरी। ७।
साष्टांग ज रे, लवकुशे प्रभुचरणे कर्या,
थई प्रसन्न ज रे, श्रीरामे कर मस्तक धर्या। ८।
मुनि बोल्या रे, विनयवचन वाणी कही,
प्रभु पुत्र ज रे, आ तमारो जाणो सही। ९।
मुज आश्रमे रे, जन्म थयो ए सुततणो,
छे बळिया रे, महिमा जेनो अति घणो। १०।
एवुं सुणीने रे, हरख्या श्रीरघुनाथजी,
बे पुत्रने रे, भीड्या हृदया साथ जी। ११।

किया करता हूँ। २। आपने (मेरे विषय में) आगम स्वरूप (अर्थात् भविष्य में होने वाली) जितनी बातें कही थीं, उतनी मैंने जन्म धारण करके लीला-स्वरूप कर दी हैं। ३। आपने यहाँ मेरा जो उपकार किया है, मैं सत्य कहता हूँ, वह त्रिभुवन में किसी दूसरे से नहीं हो पाएगा। ४। अब (कुछ) माँग लीजिए। मैं सचमुच उस वचन का पालन करूँगा। आप जैसे हैं, वैसा मेरा कोई दूसरा हितैषी नहीं है।'। ५। (राम से) वचन ही लेकर मुनिवर अपने आश्रम आ गये और दोनों पुत्रों को समझाकर वे उन्हें वहाँ (राम के समीप) ले आये। ६। उन मुनिवर ने यज्ञ का जो घोड़ा था, उसे अपने साथ ले लिया और वे फिर वहीं राम के पास आ गये। ७। लव और कुश ने प्रभु श्रीराम के चरणों को साष्टांग नमस्कार ही किया, तो प्रसन्न होकर उन्होंने उनके मस्तक पर हाथ रखा। ८। तब मुनि वाल्मीकि बोलने लगे। उन्होंने विनम्र शब्दों में यह बात कही, 'हे प्रभु, इन्हें सचमुच अपने पुत्र ही समझिए। ९। इन पुत्रों का जन्म मेरे आश्रम में हो गया। जिनकी महिमा अति बड़ी है, ऐसे ये बलवान (पुत्र) हैं।'। १०। ऐसा सुनकर श्रीरघुनाथ राम आनन्दित हो गये और

हरख आंसुए रे, शिर सिंच्यां सुतनां सदा,
पछे पुत्रने रे, लेई उछंग बेठा तदा। १२।
सरवे हरख्या रे, जेजेकार करे तहीं,
वृष्टि पुष्पनी रे, दुंदुभि वाग्यां स्वरगमहीं। १३।
दूत मोकल्यो रे, अवधमां कहेवा वधामणी,
पुत्रनी ख्यात रे, सूध पाम्या सीतातणी। १४।
सुणी हरख्यो रे, मात आदे परिवार जी,
वहेंची वधामणी रे, आप्यां छे दान अपार जी। १५।
रथे बेसी रे, वसिष्ठ मुनि त्यांहां आविया,
मळ्या रामने रे, आशीर्वचने बोलाविया। १६।
दीठा मुनिए रे, बे पुत्र रामना संगमां,
ज्यम सत चिद रे, आनंदना उछंगमां। १७।
ऊठी लाग्या रे, लव कुश मुनिचरणे तदा,
दीधी आशिष रे, सुखी रहेजो सुत सरवदा। १८।
भरगच्छीना रे, डेहेरा तंबू ताण्या त्यांहां,
सभा करीने रे, श्रीरघुवर बेठा त्यांहां। १९।

उन्होंने अपने उन दोनों पुत्रों को हृदय से लगा लिया। ११। उन्होंने आनन्दाश्रुओं से अपने पुत्रों के मस्तकों को सींच दिया और तब अनन्तर वे उन पुत्रों को अपनी गोद में लेकर बैठ गये। १२। (यह देखकर) सब आनन्दित हो गये। उन्होंने वहाँ जय जयकार किया और फूलों की बौछार की। (देवों ने) स्वर्ग में दुन्दुभियाँ बजा दीं। १३। राम ने यह मंगल समाचार कहने के लिए अयोध्या में एक दूत भेज दिया कि वे पुत्रों के विषय में ख्याति (जानकारी) को तथा सीता के पते को प्राप्त हो गये हैं। १४। यह सुनकर माता आदि (-सहित) समस्त परिवार आनन्दित हो गया। तो उन्होंने (उस दूत को) उपहार (बाँट) दिये और अपार दान दिये। १५। (तदनन्तर) रथ में बैठकर वसिष्ठ मुनि वहाँ आ गये और राम से मिले, उन्होंने आशीर्वाद देते हुए उन्हें बुला लिया। १६। मुनि ने राम के साथ दोनों पुत्रों को देखा, जैसे सत् और चित् आनन्द की गोद में विराजमान हों। १७। तब लव और कुश उठकर मुनि वसिष्ठ के पाँव लगे, तो उन्होंने आशीर्वाद दिया— 'हे पुत्रो, नित्यप्रति सुखी रहो'। १८। वहाँ (विशिष्ट प्रकार के) कपड़े के डेरे और तम्बू बना दिये और सभा आयोजित करके श्रीरघुवीर राम वहाँ बैठ गये। १९। अनन्तर वसिष्ठ और वाल्मीकि ने श्रीराम से विनती की, 'हे प्रभु, इस

पछे वीनव्या रे, वसिष्ठ वाल्मीके श्रीरामने,
अंगीकृत करो रे, प्रभु श्री ए पूरणकामने । २० ।
आपी आज्ञा रे, रघुपतिए निज भ्रातने,
चाल्या तेडवा रे, वीर सहु जगमातने । २१ ।
भरत लक्ष्मण रे, शत्रुघन ने सुमंत जी,
लंकापति रे, सुग्रीव ने हनुमंत जी । २२ ।
अन्य बीजा रे, कपिवर भूपति अति घणा,
चाल्या सरवे रे, अनन्य भक्त रघुवरतणा । २३ ।
मुनि साथे रे, आश्रममां सहु आविया,
घणा सेवक रे, साथे सुखासन लाविया । २४ ।
बंधु सरवे रे, पाये लाग्या सीतातणे,
करी विनति रे, मान देई करुणापणे । २५ ।
बोल्या भरतजी रे, हे अंब पधारो कृपा करी,
त्यारे सीताए रे, दुःख संभारी आंख्य जळे भरी । २६ ।
पछी वाल्मीके, सासरवासो कर्यो घणुं,
दीन वचने रे, संतोष्युं मन सीतातणुं । २७ ।
थया गदगद रे, सीतानी साथे बोल्या मुनि,
हे पुत्री रे, तुं निर्मळ जेवी सुरधुनि । २८ ।

पूर्णकामा सीता को आप स्वीकार कीजिए । ' । २० । तो रघुपति राम ने अपने भाइयों को आज्ञा दी, तब वे समस्त बन्धु जगन्माता जानकी को बुलाकर लाने के लिए चल दिये । २१ । भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न और (मन्त्री) सुमन्त, लंका-पति विभीषण, (कपि-पति) सुग्रीव और हनुमान, तथा अन्य दूसरे अनेकानेक कपिवर तथा राजा, जो रघुवर राम के अनन्य भक्त थे, सब चल दिये । २२-२३ । वे सब मुनि (वाल्मीकि) के साथ आश्रम में आ गये । साथ में अनेक सेवक पालकी ले आये । २४ । (अनन्तर) समस्त बन्धु सीता के पाँव लगे और उनका आदर करते हुए उन्होंने दया की याचना करके विनती की । २५ । भरत बोला, ' हे अम्ब, कृपा करके पधारिए । ' तब दुःख का स्मरण होते ही, सीता की आँखें (आँसुओं के) जल से भर आयीं । २६ अनन्तर वाल्मीकि ने (कन्या को ससुराल जाते समय दिये जानेवाले) वस्त्र, आभूषण आदि दिये, और दीन वचन से सीता के मन को सन्तुष्ट किया । २७ । (वाल्मीकि) मुनि गद्‌गद हो उठे और सीता से बोले, ' हे पुत्री, तुम गंगा जैसी निर्मल (शुद्ध)

तुं छे पूरण रे, तुजने हुं शुं कहुं कथी ?
बाई तारी रे, में स्वागत कांई थई नथी। २९।
तुं महालक्ष्मी रे, जक्त-जनेता छे सती,
तारुं सम्मान रे, नथी थयुं कांई मारी वती। ३०।
दरभ आसन रे, फळ जळथी पोषण करी,
क्षमा करजे रे, हुं विप्र उपर करुणा धरी। ३१।
अहींनुं सुखदुःख रे, मनमां कांई नव लावशो,
बाई हावे रे, फरी अहीं क्यांथी आवशो ?। ३२।
एम कहीने रे, गदगद कंठ थया घणुं,
मुनि रोया रे, संभारी हेत सीतातणुं। ३३।
त्यारे वळतां रे, वचन वैदेही ओचर्यां,
हो मुनि तमो रे, मुजने वानां घणां कर्यां। ३४।
तम आश्रम रे, हुं सुख पामी अति घणुं,
तेणे वीसर्युं रे, जे दुःख पतिविरहतणुं। ३५।
ज्यम गर्भने रे, माता राखे जतने करी,
एम राखी रे, तमो मुजने हुं सुखे करी। ३६।
हो पिताजी रे, तमारुं हेत नहि वीसरे,
निज मा बाप रे, तमथी अधिक बीजुं शुं रे ?। ३७।

हो। २८। तुम पूर्ण हो। मैं तुम से कहकर क्या बता दे सकता हूँ"। हे देवी, मुझसे तुम्हारा स्वागत कुछ भी नहीं हुआ। २९। तुम महालक्ष्मी हो, जगज्जननी सती हो। मेरे द्वारा तुम्हारा सम्मान कुछ भी नहीं हुआ। ३०। मैंने दर्भ के आसन पर फलों और जल से तुम्हारा भरण-पोषण किया। मुझ विप्र पर करुणा धारण करते हुए क्षमा करना। ३१। यहाँ का कुछ सुख-दुख अपने मन में न लाना। हे देवी, अब फिर से यहाँ कहाँ से आओगी।'। ३२। ऐसा कहते हुए वे मुनि बहुत गद्‌गद कण्ठ हो उठे और सीता का प्रेम याद करके वे रो पड़े। ३३। तब फिर वैदेही ने यह बात कही, ' हे मुनि, आपने मुझे बहुत बातें समझा दीं। ३४। आपके आश्रम में मैं बहुत बड़े सुख को प्राप्त हो गयी हूँ। उससे मैं वह दुख भूल गयी, जो पति के विरह का (मुझे हो गया) था। ३५। जिस प्रकार माता जतन करते हुए गर्भ को (ठीक से) रख लेती है, उसी प्रकार आपने मुझे सुख-पूर्वक आराम से रखा है। ३६। हे पिताजी, आपका प्रेम नहीं भुलाया जाएगा। मेरे अपने माता-पिता आपसे अधिक दूसरा क्या कर देते। ३७। आपका मेरे पिता से भी मेरे

तमो जनकथी रे, मारे हेत छो अति घणा;
मुने पाळी रे, साथी थया दु:ख वेळातणा । ३८ ।
एम कहीने रे, मुनिने पाये नम्यां फरी;
पछी सीताए रे, मुनिपत्नीओनी पूजा करी । ३९ ।
पुत्रीने ज्यम रे, पिता वळावे सासरे;
एवी स्वागत्य रे, वाल्मीके करी ते वासरे । ४० ।
पछी मागी रे, मुनिवरनी आज्ञा तदा;
सुखासनमां रे, बेठां सीताजी सरवदा । ४१ ।
भरत लक्ष्मण रे, चामर बे पासे करे;
सरव मंडळ रे, सीतानी साथे परवरे । ४२ ।
अंजनीसुत रे, खमा खमा मुख बोलता;
वियोगे दु:खी रे, मग्न थई मुनि डोलता । ४३ ।
एम आविया रे, राम समीपे ज्याहरे;
राखी शीबिका रे, ऊतर्या जानकी त्याहरे । ४४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

ऊतर्यां जानकी सुखासनथी, दूर थकी तेणी वार रे;
पछी चरणे चाली आवियां, ज्यां बेठा जुगदाधार रे । ४५ ।

प्रति बहुत अधिक प्रेम है । आपने मेरा पालन किया और आप दुख के समय के साथी हो गये ' । ३८ । ऐसा कहकर सीता ने मुनि के चरणों को नमस्कार किया और अनन्तर उसने मुनि-पत्नियों का पूजन किया । ३९ । जिस प्रकार पिता अपनी पुत्री को ससुराल बिदा कर देता है, उसी प्रकार वाल्मीकि ने उस दिन (सीता को) आतिथ्य (-पूर्वक विदा) किया । ४० । फिर तब सीता ने मुनि से आज्ञा माँगी, और वह सुखासन (-पालकी) में बैठ गयी । ४१ । भरत और लक्ष्मण दोनों ओर चामर झुला रहे थे । समस्त मण्डली सीता के साथ जाने लगी । ४२ । अंजनी-कुमार हनुमान मुख से ' खमा ', ' खमा ' शब्द बोल रहा था । समस्त मुनि वियोग के विचार से दु:खी हो गये और दु:ख में मग्न होकर डोल रहे थे । ४३ । इस प्रकार जब वे राम के समीप आ गये, तब (सेवकों ने) शिविका (नीचे) रख दी और तब सीता (उसमें से नीचे) उतर गयी । ४४ ।

उस समय दूरी पर (ही) सीता पालकी में से उतर गयी और फिर पैदल चलते हुए (वहाँ) आ गयी, जहाँ जगदाधार श्रीराम बैठे हुए थे । ४५ ।

* * *

अध्याय—८५ (वाल्मीकि की विनती के अनुसार राम द्वारा सीता-लव-कुश को स्वीकार करना)

राग धन्याश्री

सीता आव्यां ज्यांहां रघुवीर जी,
चरणे नमियां धरी मन धीर जी।
मुनिवर बोल्या मध्य समाज जी,
सुणो मम वाणी श्रीमहाराज जी। १।

ढाळ

महाराज पुत्री जनकनी, मम धरमकन्या एह,
ते करी अंगीकृत प्रभु, थई प्रसन्न निस्संदेह। २।
ए आदि मध्य ने अंतमां, सर्वथा छे निष्पाप;
तेना साक्षी छे भू नभ अनळ, रवि चंद्र वायु आप। ३।
ए परम साध्वी जानकी, प्रभु बेसाडो अरधंग,
तमो अंतरजामी सर्वनी, गति जाणो छो श्रीरंग। ४।
सहु सभा सुणतां वाल्मीके, एम वीनव्या रघुवीर,
एटले थई आकाशवाणी, गिरा महा गंभीर। ५।

अध्याय—८५ (वाल्मीकि की विनती के अनुसार राम द्वारा सीता-लव-कुश को स्वीकार करना)

सीता (वहाँ) आ गयी, जहाँ रघुवीर राम (विराजमान) थे। उसने मन में धीरज धारण करके उनके चरणों को नमस्कार किया। (तब) उस समाज (सभा) के बीच मुनिवर (वाल्मीकि) बोले, 'हे श्रीमहाराज, मेरी बात सुनिए। १।

हे महाराज, यह जनक की कन्या मेरी धर्म-कन्या है। हे प्रभु, मन में बिना किसी सन्देह के, प्रसन्न होकर आप उसे स्वीकार कीजिए। २। यह सब प्रकार से आदि, मध्य और अन्त में निष्पाप है। पृथ्वी, आकाश, सूर्य, चन्द्र, वायु और जल उसके साक्षी हैं। ३। हे प्रभु, इस परम साध्वी जानकी को आप अपने अर्धांग में (बायीं गोद में) बैठा लीजिए। हे श्रीरंग, आप अन्तर्यामी सबकी गति को जानते हैं।'। ४। समस्त सभा के सुनते रहते, वाल्मीकि ने इस प्रकार रघुवीर राम से विनती की। इतने में आकाशवाणी हो गयी। वह ध्वनि महा गम्भीर थी। ५। 'हे राम, ये मुनिवर सत्य कह रहे हैं। यह परम साध्वी है। कृपा करके

हे राम, मुनिवर सत्य कहे छे, परम साध्वी एह,
करो अंगीकार कृपा करी, नव धरशो मन संदेह । ६ ।
बे पुत्र सीतातणा निश्चे, छे तमारा अंश;
ए त्रैण जणे शुद्ध सत्त्व छे, ते जाणजो अवतंश । ७ ।
एवुं सुणी ऊठ्या रामजी, मन प्रसन्न थई तेणी वार,
श्रीय आलिंगी आसन बेसाड्यां, थयो जयजयकार । ८ ।
छे वाम भागे जानकी, बे पुत्र दक्षिण पास,
ते समे थई वृष्टि पुष्प, दुंदुभि गगड्यां आकाश । ९ ।
सहु सभा बोले शब्द जय जय, हरखनो नहि पार;
इंद्रादिक आदे देव सरवे, आविया ते ठार । १० ।
पछी कामदुधाने तेडावी, करी स्मरण वाल्मीक मुन्य,
ते जे जोईए ते सरव आपे; वस्त्र तृण जळ अन्न । ११ ।
भावतां भोजन सरवने, घृत शर्करा पय युक्त,
ते अशनथी सुख ऊपजे, थाय सकळ दुःखथी मुक्त । १२ ।
एम त्रण दिवस वाल्मीक मुनिए, राख्या जुगदाधार,
असंख्य दळ साथे प्रभुने, कर्यो प्रांहांणाचार । १३ ।

इसे स्वीकार कीजिए, मन में कोई सन्देह धारण न करना । ६ । ये दोनों निश्चय ही सीता के पुत्र हैं, वे आपके ही अंश हैं । ये तीनों जने शुद्ध और सत्त्व गुण-युक्त (सात्त्विक) हैं, उन्हें (अपने वंश के) अवतंस (आभूषण) समझिए' । ७ । ऐसा सुनकर उस समय राम मन में प्रसन्न होते हुए उठ गये और उन्होंने सीता का आलिंगन करके उसे आसन पर बैठा लिया । तो जय-जयकार हो गया । ८ । जानकी उनके बायें भाग में—बायीं ओर (शोभायमान) थीं, तो दोनों पुत्र दाहिनी ओर थे । उस समय पुष्प-वृष्टि हो गयी और आकाश में दुन्दुभियों की गड़गड़ाहट हो गयी । ९ । समस्त सभा 'जय-जय' शब्द बोल उठी । उसके आनन्द की कोई सीमा नहीं थी । इन्द्रादिक समस्त देव उस स्थान पर आ गये । १० । अनन्तर वाल्मीकि मुनि ने स्मरण करते हुए कामधेनु को बुला लिया । उसने जो-जो चाहिए था, वह वस्त्र, तृण, जल, अन्न सब दे दिया । ११ । सबको घी, शक्कर, दूध से युक्त भोजन आ गया । उस भोजन से सुख उत्पन्न हो गया । सब दुःख से मुक्त हो गये । १२ । इस प्रकार वाल्मीकि मुनि ने जगदाधार राम को तीन दिन रख लिया । उन्होंने अपार सेना सहित प्रभु राम का आतिथ्य किया । १३ । तदनन्तर कविराज (वाल्मीकि) से रघुपति राम हाथ जोड़कर यह बात बोले, 'अब अयोध्या जाने की

कविराजशुं पछी रघुपति, बोल्या वचन कर जोड,
हावे आज्ञा आपो अवध जावा, पहोंचे मनना कोड । १४ ।
तमो पण चालो तांहां, यज्ञमां मुनि महाराज,
तम वन विषे होय विप्र ते पण, साथे तेडो आज । १५ ।
त्यारे विदाय कीधी कामधेनु, वाल्मीके तेणी वार,
तत्पर थया जावा अवधपुर, साथे विप्र अपार । १६ ।
सावधान सहु सेना थई, वाजियां बहु वार्जित्र,
चतुरंग सेना चळकती, ध्वज कळश चित्रविचित्र । १७ ।
वाल्मीक मुनिने बेसाड्या, रथमां सहित सहु मुन्य,
पछी पोताने रथ सहित सीता, बेठा जुगजीवन । १८ ।
बे पुत्र बेठा हस्ती उपर, शोभानो नहि पार,
त्यां छत्र चामर थाय छे, बोले खमा छडीदार । १९ ।
सहु साथशुं रघुनाथ चाल्या, सेना सागर पूर,
हय हणहणे गज घूमता, सिंहनाद करता शूर । २० ।
एम अवधपुरीमां आविया, ऊतर्या सरजुतीर,
सहु भूपनुं स्वागत कर्युं, सर्वज्ञ श्रीरघुवीर । २१ ।

(हमें) आज्ञा दीजिए, तो मन की अभिलाषाएँ पूर्ण हो जाएँगी । १४ । हे मुनि महाराज, आप भी वहाँ यज्ञ में चलिए । वन में जो ब्राह्मण हैं, आप उन्हें भी आज साथ में बुला लीजिए ' । १५ । तब वाल्मीकि ने उस समय कामधेनु को बिदा किया और वे अयोध्या जाने के लिए तैयार हो गये । उनके साथ असंख्य ब्राह्मण थे । १६ । समस्त सेना सावधान हो गयी । अनेक वाद्य बजने लगे । चित्र-विचित्र ध्वजों और कलशों से युक्त चतुरंग सेना (मानो) जगमगा रही थी । १७ । जगज्जीवन राम ने समस्त मुनियों सहित वाल्मीकि मुनि को रथों में बैठा दिया और फिर वे स्वयं सीता-सहित अपने रथ में बैठ गये । १८ । (उनके) दोनों पुत्र हाथियों पर बैठ गये । उनकी शोभा की कोई सीमा नहीं थी । वहाँ छत्र और चामर झूल रहे थे । चोबदार ' खमा-खमा ' शब्द बोल रहे थे । १९ । रघुनाथ राम समस्त साथियों-सहित चल दिये । (उनके साथ की) सेना रूपी सागर में (मानो) ज्वार आया था । घोड़े हिनहिना रहे थे, हाथी चिंघाड़ रहे थे और शूर योद्धा सिंहनाद कर रहे थे । २० । सर्वज्ञ श्रीरघुवीर इस प्रकार अयोध्यापुरी के अन्दर आ गये और सरयू नदी के तट पर ठहर गये, फिर उन्होंने समस्त राजाओं का स्वागत किया । २१ । सीता समस्त सासुओं से मिली और उन सबके पाँव लगी । कौसल्या

सहु सासुने सीता मळ्यां, लाग्यां सरवने पाय,
थयां प्रसन्न जोई बे पुत्रने, हरख्यां कौशल्या माय। २२।
उछंगमां बेसाडिया, लव कुश जथा रवि चंद,
कौशल्या प्रेमे थयां गदगद, पाम्यां ब्रह्मानंद। २३।
सीताने चांप्यां रुदेशुं, माता भरे लोचन,
सुखदु:खनी वातो करी, थई वेदना जे वन। २४।
पछी नाना विधनां दान आप्यां, माताए तेणी वार,
एम हळीमळी सुखियां थयां, वरतियो जयजयकार। २५।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

जयजयकार वरत्यो तदा, थयां सफळ सहु मन काम रे,
पछी यज्ञ पूरण करवाने बेठा, दीक्षा लेई श्रीराम रे। २६।

माता (सीता के) उन दो पुत्रों को देखकर प्रसन्न हो गयी और आनन्दित हो गयी। २२। फिर कौसल्या ने लव-कुश को गोद में बैठा लिया, जैसे वे सूर्य-चन्द्र ही हों। वह प्रेम से गद्गद हो गयी और ब्रह्मानन्द को प्राप्त हो गयी। २३। अनन्तर उस माता ने सीता को हृदय से लगा लिया, तो उसकी आँखें (आनन्दाश्रु के जल से) भर आयीं। फिर वे वन में जो दु:ख हुआ, उसे लेकर सुख-दु:ख की बातें करने लगीं। २४। तत्पश्चात् माता कौसल्या ने उस समय नाना प्रकार के दान दिये। इस प्रकार वे घुल-मिल जाने पर सुखी हो गयीं। (वहाँ) जय-जयकार हो गया। २५।

तब जय-जयकार हो गया। (लोगों के) मन की समस्त कामनाएँ सफल हो गयीं। अनन्तर श्रीराम दीक्षा लेकर यज्ञ पूर्ण करने के लिए बैठ गये। २६।

* * *

अध्याय—८६ (राम आदि का अयोध्या में प्रवेश)

राग मारु

बेठा दीक्षा लेईने श्रीराम, साथे जानकी पूरणकाम,
पहेर्यां वस्त्र आभूषण सार, तेनी शोभातणो नहि पार। १।

अध्याय—८६ (राम आदि का अयोध्या में प्रवेश)

श्रीराम दीक्षा लेकर (यज्ञ पूर्ण करने के लिए) बैठ गये, तो उनके साथ पूर्णकामा जानकी (भी विराजमान) थी। उसने सुन्दर वस्त्र और आभूषण

त्यां अनेक पृथ्वीना भूप, बेठा मुनिवर वेद स्वरूप,
बेठा परतक्ष सरवे देव, निज आसन उपर एव । २ ।
वाजे वाजित्र नाना प्रकार, बंदीजन बोले जश विस्तार,
नाचे अपसरा नाना रंग, सरवेने मन हरख उमंग । ३ ।
यज्ञमंडप चार जोजन, मध्ये कुंड रच्यो छे पावन,
आचारज छे ब्रह्मकुमार, बीजा वरिया विप्र अपार । ४ ।
तेमां मुख्य अगस्त्य ने व्यास, करावे क्रतु बेसीने पास,
हुताशनमांहे कर्यो होम, प्रगटी ज्वाळा धूम्र व्योम । ५ ।
आपे आहुति नाना प्रकार, करे ऋत्विज मंत्र उच्चार,
ऊंचा हस्त करी मुनि डोले, स्वाहाकार स्वधा मुख बोले । ६ ।
ॐकारतणी धूनि थाय, वषट्कार ते भणता जाय,
जे प्रभु यज्ञमूर्ति अखंड, यज्ञभुक्ता व्यापक ब्रह्मांड । ७ ।
ते प्रभु पाळवाने धर्म, पोते आचरे यज्ञनुं कर्म,
जगतनां गुरु श्रीहरि जाण, जेनी श्वासा थई वेदवाण । ८ ।

पहन लिये थे । उसकी शोभा की कोई सीमा नहीं थी । १ । वहाँ पृथ्वी के अनेक राजा तथा वेद-स्वरूप मुनिवर बैठ गये । प्रत्यक्ष देव ही अपने-अपने आसन पर बैठ गये । २ । नाना प्रकार के वाद्य बज रहे थे; बन्दीजन (रघुकुल-शिरोमणि राम के) यश को विस्तार-पूर्वक बता रहे थे । नाना प्रकार के रंग-रागों से अर्थात गाते हुए अप्सराएँ नाच रही थीं । सबके मन में हर्ष और उमंग थी । ३ । यज्ञ का मण्डप चार योजन (विस्तीर्ण) था । उसके मध्य भाग में पावन कुण्ड निर्मित था । (स्वयं) ब्रह्म-कुमार वसिष्ठ ही (मुख्य) आचार्य थे । अन्य चुने असंख्य ब्राह्मण (उपस्थित) थे । ४ । उनमें अगस्त्य और व्यास मुख्य थे । वे पास में बैठकर यज्ञ (सम्पन्न) करा रहे थे । उन्होंने (जब) हुताशन में हवन किया, अर्थात् अग्नि में आहुति चढ़ा दी, तो ज्वाला प्रकट हो गयी । और (उससे) आकाश में धूआँ छा गया । ५ । वे नाना प्रकार की आहुतियाँ समर्पित कर रहे थे । ऋत्विज मंत्रों का उच्चारण अर्थात् पठन कर रहे थे । हाथ ऊँचे उठाये हुए मुनि डोल रहे थे और मुख से स्वाहाकार तथा स्वधा बोल रहे थे । ६ । ॐकार की ध्वनि हो रही थी । वे वषट्-कार बोल रहे थे । जो प्रभु (राम स्वयं) यज्ञमूर्ति अर्थात् मूर्तिमान यज्ञ-देवता हैं, जो यज्ञ के भोक्ता हैं, जो अखण्ड तथा ब्रह्माण्ड को व्याप्त किये हुए हैं, वे प्रभु धर्म का पालन करने के लिए स्वयं यज्ञ-कर्म का आचरण कर रहे हैं । समझिए कि श्रीहरि (भगवान राम) जगत्

ते प्रभु सुणतां सभा सर्व, पूछंता गुरुने तजी गर्व,
मारा यज्ञमांहे हो मुनेश, नव रहे कशी न्यूनता लेश। ९।
सुणीने हस्या ब्रह्मकुमार, सुणो श्रीपति जुगदाधार,
अमो जाणुं छुं वेदनो धर्म, सरव यज्ञतणुं जे कर्म। १०।
पूर्वे मरुत जेवा राजन, तेणे यज्ञ कर्यो पावन,
आप्युं सुवरण द्विजने अपार, लई जतां तेने लाग्यो भार। ११।
तेणें नाख्युं हिमाचळमांहे, अद्यापि ते पड्युं छे त्यांहे,
एवा भूप घणा थया पूरवे, तेणे यज्ञ कर्या विधि सरवे। १२।
अमो करावनार ऋतु केरा, उपचार पवित्र घणेरा,
हुत होमीए नाना प्रकार, वेदमंत्रनो करीए उच्चार। १३।
यज्ञ पूर्ण समे सुणो राम, अमो जपीए तमारुं नाम,
हुत मंत्र अशुद्धि जाय, तेथी यज्ञ ते पूरण थाय। १४।
देश काळ ने द्रव्य अशुद्धि, टळे दोष थाये तेनी शुद्धि,
जेना नामतणो ए प्रताप, ते प्रभु ऋतु करता आप। १५।

के वे गुरु हैं, जिनकी साँस (ही मानो) वेद-वाणी बन गयी है, वे (ही) प्रभु (राम) गर्व का त्याग करके समस्त सभा के सुनते रहते, गुरु (वसिष्ठ) से यह कह रहे हैं, 'हे मुनीश्वर, मेरे यज्ञ में किसी प्रकार की कोई अंश मात्र भी न्यूनता न रह जाए।'। ७-९। यह सुनकर ब्रह्माजी के पुत्र (वसिष्ठ) हँस दिये (और बोले), 'हे जगदाधार श्रीपति, सुनिए। वेदों के धर्म को और यज्ञ के जो कर्म हैं, उन्हें मैं जानता हूँ। १०। पूर्वकाल में मरुत जैसे राजा ने पावन यज्ञ (सम्पन्न) किया था। उसने ब्राह्मणों को अपार सोना प्रदान किया। (उसे ले जाने में) उन्हें वह बोझ प्रतीत हो गया। ११। (अतः) उन्होंने उसे हिमालय पर फेंक दिया। वह वहाँ अभी तक पड़ा हुआ है। ऐसे अनेक राजा पूर्व-काल में हो गये। उन्होंने सब प्रकार के यज्ञ कर दिये थे। १२। मैं यज्ञ-सम्बन्धी अनेकानेक पावन उपचार करानेवाला हूँ। हम नाना प्रकार की आहुतियाँ हवन करते हैं तथा वेद-मंत्रों का उच्चारण करते हैं। १३। हे राम, सुनिए। यज्ञ के पूर्ण हो जाने के समय, हम आपके नाम का जाप करते हैं। तो हुत-मंत्रों से अशुद्धि (दूर हो) जाती है। उससे यह यज्ञ पूर्ण हो जाता है। १४। उससे देश, काल और द्रव्य की अशुद्धि तथा दोष टल जाता है। इससे उसकी शुद्धि हो जाती है। जिनके नाम का यह प्रताप है, वे आप प्रभु स्वयं यज्ञ कर रहे हैं। १५। (अतः) उसमें न्यूनता कैसे रह पाएगी? सूर्य के पास किंचित् भी अन्धेरा नहीं रह पाता। इसलिए हे श्रीमहाराज,

ते मांहे न्यूनता रहे क्यम ? रवि पासे न किंचित तम;
माटे सुणीए श्रीमहाराज, प्रभु यज्ञ पूरण थयो आज। १६।
हावे ऊठो श्रीरघुराय, सहु विप्रनी करवी पूजाय;
जे अधिकारीनुं जेवुं मान, तेने आपवुं तेवुं दान। १७।
गुरुनां सुणी एवां वचन, सीता सहित ऊठ्या भगवन;
बंधु पुत्र मळी तेणी वार, लाव्या पूजा तणो उपचार। १८।
सीता सहित प्रथम रघुराय; करी वसिष्ठ मुनिनी पूजाय;
मणि भूषण वस्त्र अपार; रत्न मुक्ताफळना हार। १९।
अर्घ्य आरती धूप ने दीप, स्तुति विनय संतोष्या विप्र;
कीधी पूजा षोडश उपचार, सीतारामे कर्यो नमस्कार। २०।
त्यार पूंठे मुनि जे अगस्त्य, तेनी पूजा करी विधि स्वहस्त;
पछी सत्यवतीसुत व्यास, तेने पूज्या अति उल्लास। २१।
पछी च्यवन ऋषि महानंत, तेनी पूजा कीधी भगवंत;
शुक्राचारज बृहस्पति जेह, विश्वामित्र ने वाल्मीक तेह। २२।

सुनिए ! हे प्रभु, आज (अभी) यज्ञ पूर्ण हो गया है। १६। हे श्रीरघुराज, अब उठिए। (आपको) समस्त ब्राह्मणों की पूजा करनी है। जिस अधिकारी व्यक्ति का जैसा मान (पद) हो, उसे वैसा दान देना है।'। १७। गुरु (वसिष्ठ) की ऐसी बातें सुनकर भगवान राम सीता-सहित उठ गये। उस समय बन्धु और पुत्र इकट्ठा होकर पूजा का उपचार ले आये। १८। (सर्व-) प्रथम सीता-सहित रघुराज राम ने वसिष्ठ मुनि का पूजन किया। असंख्य रत्न, आभूषण, वस्त्र, रत्नों और मोतियों के हार, अर्घ्य, आरती, धूप और दीप जैसे उपचार प्रस्तुत करके उन्होंने विनय-वचनों से युक्त स्तुति करके उन विप्रवर को संतुष्ट किया। (अर्थात्) सोलह उपचारों[1] से युक्त पूजन करके सीता और राम ने उनको नमस्कार किया। १९-२०। तब अनन्तर उन्होंने अपने हाथों से, जो अगस्त्य मुनि थे, उनका विधिवत् पूजन किया। अनन्तर उन्होंने सत्यवती के पुत्र व्यास का पूजन अति उल्लास के साथ किया। २१। तत्पश्चात् भगवान राम ने महात्मा च्यवन ऋषि का पूजन किया। फिर जो मानो शुक्राचार्य और बृहस्पति ही हैं, ऐसे विश्वामित्र और वाल्मीकि का, अन्य समस्त मुनियों के साथ रघुनाथ राम ने पूजन किया। जिस रीति से उन्होंने अकेले गुरु की सेवा की थी, उसी रीति से समस्त मुनि-देवों की

---

१ आवाहन, आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान, वस्त्र, यज्ञोपवीत, तिलक, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, दक्षिणा, प्रदक्षिणा, मन्त्र-पुष्प।

ते आदे सहु मुनिनो साथ, तेनी पूजा करे रघुनाथ,
जे रीते करी गुरुनी सेव, ते रीते पूज्या सहु मुनिदेव। २३।
आप्यां बहु विधिनां पछी दान, तेनुं कोणे न थाये मान,
एकेका विप्रने तेणी वार, आप्युं हेम लक्ष लक्ष भार। २४।
वस्त्र विचित्र नाना रंग, अलंकार ओपे घणां अंग,
कराव्यां मिष्ट भोजन पान, संतोष्या मुनिने भगवान। २५।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

भगवाने संतोष्या मुनि त्यां, करियो बहु सतकार रे,
त्यारे तेणे समे त्यां अगस्त्य बोल्या, सुणिये जुगदाधार रे। २६।

पूजा की। २२-२३। फिर उन्होंने बहुत प्रकार के दान दिये। उसका मापन किसी भी द्वारा नही हो पाएगा। उस समय एक-एक विप्र को उन्होंने लाख-लाख भार सोना प्रदान किया। २४। नाना रंगों के विचित्र वस्त्रों और अनेक आभूषणों से (सबके) शरीर शोभायमान (दिखायी दे रहे) थे। भगवान राम ने मुनियों को मिष्टान्न भोजन और पान करा दिया और तृप्त कर दिया। २५।

भगवान राम ने वहाँ मुनियों को (सेवा, पूजन तथा दान आदि से) तृप्त कर दिया और उनका बहुत सत्कार किया। तब उस समय वहाँ अगस्त्य (मुनि) बोले, 'हे जगदाधार राम, सुनिए।'। २६।

* * *

अध्याय—८७ (अश्व का देव-रूप को प्राप्त हो जाना)

राग सामेरी

अनीहां रे घटसंभव बोल्या वचन, सुणिये श्रीपति जुगजीवन,
घट भरी लावो तीरथनुं वार, तेथी क्षालण करवा यज्ञ तोखार। १।

अध्याय—८७ (अश्व का देव-रूप को प्राप्त हो जाना)

अब यहाँ घट-सम्भव अगस्त्य मुनि ने यह बात कही, 'हे जगज्जीवन श्रीपति, सुनिए। एक घट तीर्थ-जल से भरकर ले आइए और उससे यज्ञीय घोड़े का प्रक्षालन कीजिए। १।

ढाळ

तोखारने हावे स्नान करावो, लावो तीरथनुं वार;
चतुःषष्टि दंपती, घट ग्रही चालो निरधार। २।
एम अगस्त्ये आज्ञा करी, त्यारे ऊठ्या श्रीरघुराय,
चोसठ जोडां स्त्रीपुरुष ते, जळ भरवाने जाय। ३।
श्रीराम संगे जानकी, ऊर्मिला लक्ष्मण वीर;
भरतनी साथे मांडवी, श्रुतिकीर्ति रिपुहर धीर। ४।
वळी कांति ने पुष्कलनी आदे, राजकुंवर समुदाय,
लक्ष्मीनिधि ने कोमळा, रिपुजित अंगसेनाय। ५।
वळी सत्यवती ने सुबाहु, सत्कीर्ति सुमद नरेश,
मनोज्ञया ने वीरमणि, महामूर्ति ने लंकेश। ६।
राय प्रतापाग्र ने प्रतीति, नीलरत्न रम्या भाम;
अश्वाग्र ने कामांगना, मनोहरा सुरथ नाम। ७।
इत्यादि राजा राणीओशुं, सज्या तन शणगार,
करमांहे कुंभ कनकतणा, ग्रही चाल्या भरवा वार। ८।
सरज्यु गंगामां आविया, साथे घणा मुनिजन,
त्यारे वेदमंत्रे करी वसिष्ठे, मंत्र्युं जळ पावन। ९।

'अब तीर्थ-जल ले आइए और घोड़े को स्नान कराइए। (उसके लिए) चौंसठ दम्पती निश्चय ही घट लेकर चल दें।'। २। अगस्त्य ने ऐसी आज्ञा दी, तब श्रीरघुराज उठ गये। (फिर) चौंसठ जोड़े स्त्री-पुरुष पानी भरकर लाने के लिएँ चले गये। ३। श्रीराम के साथ जानकी, बन्धु लक्ष्मण के साथ ऊर्मिला, भरत के साथ माण्डवी और धैर्यशील शत्रुघ्न के साथ श्रुतकीर्ति चली गयी। ४। फिर कान्ति और पुष्कल इत्यादि राजकुमारों का समुदाय चल दिया। लक्ष्मीनिधि और कोमला, रिपुजित और अंगसेना, फिर सत्यवती और सुबाहु, सत्कीर्ति और राजा सुमद, मनोज्ञया और वीरमणि, महामूर्ति (सरमा) और लंकापति विभीषण, राजा प्रतापाग्र और प्रतीति, नीलरत्न और उसकी स्त्री रम्या, अश्वाग्र और कामांगना, सुरथ नामक राजा और मनोहरा, इत्यादि राजाओं ने रानियों-सहित शृंगार सजाये हुए अपने-अपने शरीरों को सजा दिया और वे हाथों में सोने के कुम्भ लेकर पानी भरने के लिए चले गये। ५-८। वे सरयू गंगा के पास आ गये। उनके साथ अनेक मुनिजन थे। तब वसिष्ठ ने वेद-मन्त्र से (सरयू गंगा के) पावन पानी को अभिमन्त्रित कर लिया। ९। उस

ते नीरना घट भरी आप्या, दंपती करमांहे,
चोसठ जोडां जळ भरी, पछे वळ्यां पाछां त्यांहे । १० ।
मुनि वेद भणता जाय आगळ, वाजे बहु वाजित्र,
एम यज्ञमंडपमांहे आव्या, शोभा चित्रविचित्र । ११ ।
त्यां अश्व ऊभो राखियो, शुभ स्वस्ति वाचन थाय,
ऊभा रह्या अगस्त्य वसिष्ठजी, बे पास बे मुनिराय । १२ ।
श्रीराम सीता यज्ञहयने, करावे छे स्नान,
करमांहे घट लेई रेडता, जळ स्वयं श्रीभगवान । १३ ।
एम जळ क्षालन करी वळतो, पूजियो केकाण,
मुनि मंत्र भणता जाय छे, निर्विघ्न क्षेमकल्याण । १४ ।
आश्चर्य पाम्या विप्र सहु, करता परस्पर वात,
श्रीराम पूरणब्रह्म छे, ए अखिल जगना तात । १५ ।
जेनुं नाम लेतां अधम प्राणी, पापथी मुकाय,
संसृति दुःखथी मुक्त थई, अपवर्ग पंथ पळाय । १६ ।
ते पापमुक्ति निमित्त करता, यज्ञ श्रीरघुवीर,
ए लोकसंग्रह अरथ पाळे, धरम व्रत रणधीर । १७ ।

पानी से घट भर (-भर-) कर उन्होंने उन दम्पतियों के हाथों में दिये। अनन्तर चौंसठ जोड़े पानी भरकर वहाँ (से) फिर लौट चले। १०। आगे-आगे मुनि वेद (-मंत्र) पढ़ते हुए जा रहे थे। (उस समय) बहुत वाद्य बज रहे थे। इस प्रकार वे (सब) यज्ञ-मण्डप में आ गये। (वहाँ की) शोभा चित्र-विचित्र थी। ११। वहाँ घोड़ा खड़ा रखा हुआ था। शुभ स्वस्तिवाचन हो गया। तब उसके दोनों ओर दो मुनिराज—अगस्त्य और वसिष्ठ खड़े हो गये। १२। (उनके बताये अनुसार) श्रीराम और सीता यज्ञीय घोड़े को स्नान कराने लगे। श्रीभगवान राम स्वयं हाथ में घट लेकर पानी उँडेलते थे। १३। इस प्रकार पानी से प्रक्षालन करने के पश्चात् उन्होंने फिर उस घोड़े का पूजन किया। (उस समय) मुनि मंत्र पढ़ते रहे ताकि (समस्त कार्य) विघ्न-बाधा-रहित (सम्पन्न हो जाए और सबका) क्षेम कल्याण हो जाए। १४। समस्त विप्र आश्चर्य को प्राप्त हो गये। वे परस्पर बातचीत कर रहे थे—'श्रीराम पूर्णब्रह्म हैं, ये अखिल जगत् के पिता हैं। जिनका नाम लेने पर अधम प्राणी पाप से मुक्त हो जाते हैं और सांसारिक दुःख से मुक्त होकर मोक्ष के मार्ग पर चले जाते हैं, वे ही श्रीरघुवीर राम पाप से मुक्त होने के निमित्त यज्ञ कर रहे हैं। (वस्तुतः इस बहाने) वे रणधीर राम लोक-संग्रह के उद्देश्य से

पछे खडग मंत्री वसिष्ठे, आप्युं प्रभुने हाथ,
बीजे करे ग्रही केशवाळी, अश्वनी रघुनाथ । १८ ।
ज्यारे अश्व पृष्ठे स्पर्श कीधो, हस्त रविकुळ भूप,
त्यारे तुरीतणो देह पड्यो, तत्क्षण थयो दिव्यस्वरूप । १९ ।
चतुर्भुज घनश्याम तन, चतुरायुध मंडित वेष,
अलंकार मणिमय कनकना; पट मुगट कुंडळ देश । २० ।
ते अश्व मटीने थयो एवो, दिव्य रूपे सार,
तत्काळ आव्युं विमान सुंदर, बेठो ते मोझार । २१ ।
गण सिद्ध चारण अपसरा, करता सुमंगळ गान,
मांहे छत्र चामर थाय छे, शोभा ते स्वर्ग समान । २२ ।
एवा दिव्य रूपने दीठो सरवे, पाम्या अचरज मन,
पछी तेनी साथे बोलिया, श्रीराम मधुर वचन । २३ ।
कहे भाई पूर्वे कोण तुं, क्यम पाम्यो अश्वनी देह,
क्यम थयो हवडां दिव्य रूपे, ए मोटो संदेह । २४ ।
एवां वचन सुणी रघुवीरनां, पछे तेणे जोड्या हाथ,
सहु सभा सुणतां मेघगंभीर, बोल्यो प्रभुनो साथ । २५ ।

इस धर्म के व्रत का निर्वाह कर रहे हैं । '। १५-१७ । अनन्तर वसिष्ठ ने प्रभु राम के हाथ में एक खड्ग दिया । तो दूसरे हाथ से उन्होंने उस घोड़े की अयाल पकड़ी । १८ । जब रवि-कुल-भूप राम ने उस हाथ से घोड़े की पीठ को स्पर्श किया, तब उसकी (घोड़े की) देह छूट पड़ी और वह तत्क्षण दिव्य-स्वरूप (-धारी) हो गया । १९ । उसका शरीर घन-श्याम तथा चार भुजाओं से युक्त था । वह चार आयुधों से युक्त था । उसका वेश शोभायमान था । देखिए, उसके आभूषण रत्नमय थे, वस्त्र स्वर्ण अर्थात् जरी के थे और मुकुट और कुण्डल सोने के थे । २० । वह घोड़ा (अपने मूल) अश्व रूप में नष्ट होकर, इस प्रकार सुन्दर दिव्य रूप में (प्रकट) हो गया । तत्काल एक सुन्दर विमान (वहाँ) आ गया और वह उसमें बैठ गया । २१ । सिद्धगण, चारण, अप्सराएँ सुमंगल गान करने लगे । बीच में छत्र और चामर थे । उसकी शोभा स्वर्ग (की शोभा) के समान थी । २२ । सबने इस प्रकार के दिव्य रूप को देखा, तो वे मन में आश्चर्य को प्राप्त हो गये । अनन्तर श्रीराम उससे ये मधुर वचन बोले । २३ । 'हे भाई, कहो कि तुम पूर्व-काल में कौन थे ? अश्व के इस शरीर को कैसे प्राप्त हो गये ? अभी इस दिव्य रूप में कैसे प्रकट हो गये हो ? मुझे (इस सम्बन्ध में) यह बड़ा सन्देह (जिज्ञासा) है ।'। २४। प्रभु

हे अंतरजामी, सर्वगत, सद्असद् व्यापक वेद,
वळी बाह्यभीतरतणुं, तमने ज्ञान छे निरभेद । २६ ।
तोय अजाण्या थई मने पूछो, जणावा सहु जन,
त्यारे जथारथ वृत्तांत मारुं, कहुं श्री भगवन । २७ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

भगवान आदे सभा सरवे, सुणतां ते निरधार रे,
श्रीराम सन्मुख वचन बोल्यो, दिव्यरूप तेणी वार रे । २८ ।

रघुवीर राम की ये बातें सुनने के पश्चात् उसने हाथ जोड़े और समस्त सभा के सुनते रहते, मेघ-से गम्भीर स्वर में उनसे वह बोला । २५ । 'हे अन्तर्यामी, समझिए कि आप सर्व-गत हैं (आपका अस्तित्व सब में है), सत् और असत् को आप व्याप्त किये हुए हैं । इसके अतिरिक्त, बिना किसी अन्तर के आपको (हर एक के बारे में) बाह्य और अन्दर का ज्ञान है । २६ । फिर भी आपने अज्ञान बनकर समस्त जनों के जान लेने के लिए मुझसे यह बात पूछी है । तब हे श्रीभगवान्, मैं अपना यथार्थ वृत्तान्त कहता हूँ । ' । २७ ।

भगवान राम आदि समस्त सभा (-जन) सुन रहे थे । उस समय उस दिव्यस्वरूप (व्यक्ति) ने श्रीराम के सामने ये बातें कह दीं । २८ ।

* * *

अध्याय—८८ (अश्व की पूर्व-जन्म-कथा)

राग विलावल चोपाई

हावे दिव्यरूप कहे सुणो रघुराय, हुं पूर्वे हतो ब्राह्मणनी काय,
विद्या थोडी भण्यो अल्पमति, सारासार नव जाणुं रति । १ ।
मन अहंकार अनरथनुं मूळ, चालतो वेद प्रतिकूळ,
लोकमांहे पूजावा काम, दंभ करुं जई ठामोठाम । २ ।

अध्याय—८८ (अश्व की पूर्व-जन्म-कथा)

अब वह दिव्य-रूप-धारी बोला, 'हे रघुराज सुनिए । मैं पूर्वकाल में ब्राह्मण शरीर-धारी था । मैंने थोड़ी विद्या सीख ली । मैं अल्पमति सार-असार सम्बन्धी रुचि को नहीं जानता था । १ । मन में अहंकार के रूप में अनर्थ का मूल था । मैं वेद के प्रतिकूल (मार्ग पर) चलता था । लोक-समाज में पूजा जाने के हेतु स्थान-स्थान पर जाकर दम्भ

ज्यां त्यां करतो मिथ्या वाद, शुभ कर्मे मन थाय प्रमाद,
घणा दिवस एम वाह्या लोक, मिथ्या जन्म गुमाव्यो फोक । ३ ।
मोटुं पर्व हतुं एक दन, सरज्युतीर मळ्या सहु जन,
मोटो मेळो भरायो त्यांहे, हुं पण आव्यो ते स्थळमांहे । ४ ।
पुलिन विषे वन छे महा रम्य, त्यां घणां मुनिवरना आश्रम,
फूली वनस्पति भार अढार, त्रिविध पवन शोभा अति सार । ५ ।
सरज्यु गंगामां करीने स्नान, हुं बेठो जोई सुंदर स्थान,
अग्निहोत्रनो कुंडज कर्यो, जाज्वल्यमान अग्नि त्यां धर्यो । ६ ।
यज्ञसमिध मूकी सहु पास, लोकने जोवा मिथ्या भास,
बेठो धरी त्यां दंभनुं रूप, आवी नमे छे मोटा भूप । ७ ।
यज्ञ करम नव करतो लेश, लेई बेठो सहु मिथ्या वेश,
त्यारे ते समे ते यात्रा मांहे, मुनि दुर्वासा आव्या त्यांहे । ८ ।
को द्विज तप होम ज करे, को योग ध्यान पूजा आचरे,
वळी को वेदाध्ययन करता विप्र, को हरिकथा सुणावे क्षिप्र । ९ ।

(प्रकट) करता । २ । मैं जहाँ-तहाँ मिथ्या विवाद करता । शुभ कार्य के विषय में मन में आलस्य होता था । इस प्रकार समाज में मैंने बहुत दिन व्यतीत किये (और वस्तुतः) मैंने जन्म मिथ्या (कार्य में) और व्यर्थ गँवा दिया । ३ । एक दिन कोई बड़ा पर्व था । समस्त लोग सरयू-तट पर इकट्ठा हो गये थे । वहाँ बड़ा मेला लगा हुआ था । मैं भी उस स्थान पर आ गया था । ४ । नदी के पुलिन पर एक महा रम्य वन है । वहाँ बड़े-बड़े मुनियों के आश्रम हैं । (वहाँ) अठारह मात्राओं अर्थात् बहुत बड़े प्रमाण में वनस्पतियाँ फूली हुई थीं । त्रिविध प्रकार की अति सुन्दर वायु चलती थी । ५ । सरयू गंगा में स्नान करके मैं एक सुन्दर स्थान देखकर बैठ गया । मैंने अग्नि-होत्र का एक कुण्ड बना लिया और वहाँ उसमें जाज्वल्यमान अग्नि रख दी । ६ । सभी ओर लोगों को मिथ्या दिखाने के लिए यज्ञ की समिधाएँ रख दीं । फिर मैं वहाँ दाम्भिक रूप धारण करके बैठ गया, तो एक बड़े राजा ने आकर नमस्कार किया । ७ । (वस्तुतः) मैं कोई थोड़ा-सा भी यज्ञ-कर्म नहीं कर रहा था, (केवल) समस्त (प्रकार से) मिथ्या वेश धारण करके बैठा था । तब उस समय वहाँ उस मेले में दुर्वासा ऋषि आ गये । ८ । (वहाँ पर) कोई ब्राह्मण होम ही कर रहा था, कोई योग, कोई ध्यान, तो कोई पूजा कर रहा था । इसके अतिरिक्त कोई ब्राह्मण वेदाध्ययन कर रहा था, कोई शीघ्रतापूर्वक हरिकथा सुना रहा था । ९ । मुनि दुर्वासा उन सबको देखकर फिर

ते सहुने जोता मुनि दुरवास, वळता आव्या मारी पास,
चित्रकारी जोई मारुं तन, क्रोध चढ्‌यो मुनिवरने मन। १०।
अल्या दंभ करी बेठो छे तुंय, जोजे शिक्षा करुं छुं हुंय,
मूरख तुजने देउं शाप, तुं पशुयोनि भोगवजे आप। ११।
एवां वचन सुणी हुं कंप्यो काय, ऊठी लाग्यो मुनिवरने पाय,
प्रसन्न कर्या स्तवने मुनिजन, मुज अनुग्रह करीए स्वामिन। १२।
त्यारे दुर्वासाने आवी दया, पछे बोल्या करी मुज उपर मया,
अल्या तारो अनुग्रह करुं छुं हुंय, श्यामकर्ण हय थाजे तुंय। १३।
पछी थोडा दिवसमां श्रीभगवान, धरशे जन्म अवध स्वस्थान,
रघुकुळमां दशरथ भूपाळ, थशे प्रगट त्यां दीनदयाळ। १४।
ते रामचंद्र करशे अश्वयाग, त्यारे तुंने वरशे महाभाग,
पूर्णाहुति समे यज्ञने अंत; तुज पृष्ठे कर धरशे भगवंत। १५।
श्रीरामहस्तना स्पर्शे करी, तत्क्षण तुं जईश उद्धरी,
एवुं कही गया अत्रितंन; अश्व थयो हुं जुगजीवन। १६।
ते मुनिवचन थकी महाराज, मुजने करुणा कीधी आज,
हुं पतितना छोड्या बंध, पाम्यो महासुख मुक्तिसंबंध। १७।

मेरे पास आ गये। मेरे आश्चर्यकारी शरीर को (रूप को) देखकर मुनिवर के मन में क्रोध उत्पन्न हो गया। १०। (वे बोले—) 'अरे, तू दम्भ करके बैठा है। देख ले, देख ले, मैं तुझे दण्ड देता हूँ। रे मूर्ख, मैं तुझे अभिशाप देता हूँ—तू स्वयं पशु-योनि भोगना (पशु योनि में उत्पन्न हो जाना)।'। ११। ऐसी बातें सुनते ही मेरी काया काँप उठी; तो उठकर मैं मुनिवर के पाँव लगा। मैंने उन मुनि को स्तवन से प्रसन्न कर लिया (और बोला—) 'हे स्वामी, मुझ पर अनुग्रह कीजिए। १२। तब दुर्वासा को दया आ गयी और फिर मुझपर ममता करते हुए वे बोले, 'अरे, मैं तुझ पर अनुग्रह करता हूँ। तू श्यामकर्ण घोड़ा बन जाना। १३। फिर थोड़े दिन में श्रीभगवान अयोध्या में अपने स्थान पर जन्म ग्रहण करेंगे। रघुकुल में दशरथ राजा हैं। उनके वहाँ दीनदयालु भगवान प्रकट हो जाएँगे। १४। वे रामचन्द्र अश्वमेध यज्ञ करेंगे। तब वे महा भाग्यवान् तुझे स्वीकार करेंगे। यज्ञ के अन्त में पूर्णाहुति के समय भगवान राम तेरी पीठ पर हाथ रखेंगे। १५। श्रीराम के हाथ के स्पर्श से तू तत्क्षण उबरकर (चला) जाएगा।' ऐसा कहते हुए, अत्रि ऋषि के वे पुत्र—दुर्वासा चले गये और हे जगज्जीवन, मैं (उनके अभिशाप के अनुसार) घोड़ा बन गया। १६। मुनि के उस वचन के अनुसार, हे

एम कही प्रभुने कर्या नमस्कार, पछी चाल्यो शाश्वत पद मोझार,
देवनां दुंदुभि वाग्यां त्यांहे, गयो अश्व अपवर्ग ज मांहे। १८।
आश्चर्य पामी सर्व सभाय, त्यारे मुनिवरने पूछे रघुराय,
अश्व होम्या विण मुनि महाराज, पूरण यज्ञ क्यम थाशे आज? । १९।
पछी वसिष्ठ कुंभज बंन्यो मुन्य, रामनी साथे बोल्या वचन,
आ अश्वना अंगनुं थयुं कर्पूर, तेनो होम करो तमे सुर। २०।
देवने पण ए प्रिय छे घणुं, एथी काम चालशे आपणुं,
एवुं सुणी श्रीजुगदाधार, कर्पूर होम्युं कुंड मोझार। २१।
अंग अंगना मंत्र ज भणी, पूर्णाहुति करी यज्ञ ज तणी;
प्रत्यक्ष बेठा सर्व देव, यज्ञभाग सहु पाम्या एव। २२।
देव ऋषि पितृ तेणी वार, तृप्त थया सहु यज्ञ मोझार,
एम सीता सहित पोते रघुवीर, यज्ञ पूरण कर्यो रणधीर। २३।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रणधीर श्रीरघुवीर पोते, कर्यो पूरण यज्ञ महाराज रे;
पछी वसिष्ठ गुरुनी आज्ञाए, चाल्या अवभृत करवा काज रे। २४।

महाराज, आपने आज मुझ पर करुणा की है; आपने मुझ पतित के बन्धन छुड़ा दिये हैं। (अब) मैं मुक्ति-सम्बन्धी महान सुख को प्राप्त हो गया हूँ।'। १७। ऐसा कहते हुए उसने प्रभु राम को नमस्कार किया और फिर शाश्वत पद की ओर वह चला गया। तब वहाँ देवों की दुन्दुभियाँ बजने लगीं और वह घोड़ा स्वर्ग ही में चला गया। १८। समस्त सभा आश्चर्य को प्राप्त हो गयी। तब रघुराज ने मुनिवर से पूछा, 'हे मुनि महाराज, बिना अश्व से हवन किये, आज यज्ञ पूर्ण कैसे होगा?'। १९। अनन्तर अगस्त्य और वसिष्ठ दोनों मुनियों ने राम से यह बात कही, 'हे देव, इस अश्व के शरीर से कपूर बन गया है; आप उसे हवन कीजिए। २०। वह देवों को भी बहुत प्रिय है। इससे हमारा काम चल जाएगा।' ऐसा सुनकर श्रीजगदाधार राम ने (यज्ञ-) कुण्ड में उस कपूर को हवन किया। २१। अंग-अंग के सम्बन्ध में मंत्र पढ़कर ही उन्होंने यज्ञ की पूर्णाहुति सम्पन्न की। वहाँ समस्त देव प्रत्यक्ष बैठे हुए थे। वे ही यज्ञ-भाग को प्राप्त हो गये। २२। उस समय, उससे देव, ऋषि, पितर, सब तृप्त हो गये। इस प्रकार रणधीर रघुवीर राम ने सीता-सहित यज्ञ पूर्ण किया। २३।

रणधीर रघुवीर राम ने यज्ञ महाराज (महान यज्ञराज अश्वमेध) को पूर्ण किया। अनन्तर वे गुरु वसिष्ठ की आज्ञा से अवभृत स्नान करने के लिए चल दिए। २४।

अध्याय—८९ (अवभृत-स्नान)

राग धवळ धन्याश्री

हावे गुरुनी आज्ञा शिष चढावी, सीता सहित भगवान जी,
यज्ञने अंते ऊठीने चाल्या, करवा अवभृथ स्नान जी। १।
साथे सकळ देशना राजा, राणीओशुं तेणी वार जी,
सर्वे मुनिवर पत्नीओ साथे, तन शोभता शणगार जी। २।
नाना प्रकारनां वाजित्र वाजे, गांधर्व अप्सरा गाय जी,
एवी शोभाए श्रीअवधबिहारी, अवभृथ करवा जाय जी। ३।
हवे सरजु गंगामां प्रवेश्या पोते, सीता सहित रघुराय जी,
अन्य सकळ जन पूंठे प्रवेश्या, स्त्रीपुरुष समुदाय जी। ४।
हलदी कुमकुम केसर चंदन, अत्तर कस्तूरी बरास जी,
ते एकएकने नर नारी लेपन करे, मरदे सुगंधी सुबास जी। ५।
स्त्री पुरुष सहु लज्जा मूकी, छांटे सुगंधी अनंत जी,
रंगमां अंग भींजी गया सहुनां, जाणे शुं रमता वसंत जी। ६।
सर्वे सुगंधी मरदी रह्या पछी, छांटवा मांड्युं तोय जी,
लाज मूकीने छांटे परस्पर, अद्भुत उच्छव होय जी। ७।

अध्याय—८९ (अवभृत-स्नान)

अब गुरु (वसिष्ठ) की आज्ञा को शिरोधार्य करके भगवान राम सीता सहित उठकर यज्ञ के अन्त में अवभृत स्नान करने चल दिये। १। उस समय, उनके साथ समस्त देशों के राजा अपनी-अपनी रानियों-सहित तथा समस्त मुनिवर अपनी-अपनी पत्नियों सहित थे। उन (सब) के शरीर साज-शृंगार से शोभायमान थे। २। नाना प्रकार के वाद्य बज रहे थे, गन्धर्व और अप्सराएं गा रहे थे। इस प्रकार की शोभा से युक्त श्रीअवधविहारी राम अवभृत स्नान करने जा रहे थे। ३। अब रघुराज राम स्वयं सीता-सहित सरयू गंगा में प्रविष्ट हो गये। उनके पीछे-पीछे समस्त अन्य लोग—स्त्रियों-पुरुषों के समुदाय प्रविष्ट हो गये। ४। उन नर-नारियों ने एक-दूसरे को हलदी, कुंकुम, केसर, चन्दन, इत्र, कस्तूरी, भीमसेनी कपूर का लेपन किया, तथा सुगन्ध-युक्त अर्थात् सुगन्धी द्रव्यों से मर्दन किया। ५। समस्त स्त्री-पुरुष लज्जा (-संकोच) तजकर अपार सुगन्ध-युक्त द्रव्य (एक-दूसरे पर) छिटक रहे थे। सबके अंग रंग में भीग गये। जान पड़ता था, क्या वे वसन्त (-उत्सव) में तो (नहीं) खेल रहे हैं। ६। वे सब सुगन्धी-युक्त द्रव्य मर्दन कर चुकने के पश्चात्

श्रीपुरुषोत्तम पूर्णानंद पोते, रमे रमाडे एम जी,
अनेक अबळा छांटे परस्पर, उर धरी आनंद प्रेम जी । ८ ।
कुमकुम केसर मंडित त्रियानां, मुख दीसे जळमांहे जी,
जाणे कनकनां कमळ ज फूल्यां, एवी शोभा थई त्यांहे जी । ९ ।
दंतनी पंक्ति कमळकोश मानुं, नेत्र मधुकर रूप जी,
छूटा केश सेवाळ सरीखा, कंठ ते नाळ अनुप जी । १० ।
एम अद्‌भुत रूपे सहु गजगमनी, जळक्रीडा ते करती जी,
एकएकनो कर झाली जुवती, मंगळ गाती फरती जी । ११ ।
देशदेशना लोक ज सर्वे, आव्या ते उच्छव जोवा जी,
त्रिविध ताप संसारजनित दुःख, क्लेश शोक सहु खोवा जी । १२ ।
पोते परस्पर जळ उछाळे, जानकी ने रघुराय जी,
ज्यम भक्ति ज्ञान बे रूप धरीने, आनंदजळमां नहाय जी । १३ ।
वळी छांटे स्त्री पुरुष अति घणुं, एकएक उपर वार जी,
ते अखंड धारा चाले चोदिश, जळ जंत्रे निरधार जी । १४ ।

पानी छिटकने (-उछालने) लगे। वे लज्जा तजकर (पानी) छिटक रहे थे। (इस प्रकार) वह कोई अद्‌भुत उत्सव ही हो रहा था। ७। पूर्णानन्द (-स्वरूप) श्रीपुरुषोत्तम राम स्वयं इस प्रकार खेल और खेला रहे थे। अनेक नारियाँ हृदय में आनन्द और प्रेम धारण करके एक-दूसरे पर (पानी) छिटक (-उछाल) रही थीं। ८। कुंकुम और केसर से विभूषित स्त्रियों के मुख जल में (प्रतिबिम्बित) दिखायी दे रहे थे। मानो सोने के फूल ही प्रफुल्लित हो गये हों। वहाँ इस प्रकार शोभा छा गयी थी। ९। उनके दाँतों की पंक्तियाँ मानो कमल-कोश थीं, नेत्र भ्रमर-स्वरूप थे। उनके मुक्त केश शैवाल-सरीखे थे और उनके कण्ठ अनुपम (कमल-) नाल थे। १०। इस प्रकार, अद्‌भुत रूप से वे समस्त गज-गामिनी नारियाँ जल-क्रीड़ा कर रही थीं। वे युवतियाँ एक-दूसरे के हाथ को पकड़कर मंगल गीत गाती हुई विचरण कर रही थीं। ११। देश-देश के समस्त लोग उस उत्सव को देखने के लिए (और उससे) तीनों प्रकार के (अर्थात् आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक) तापों, संसार-जन्य समस्त दुःखों, क्लेशों और शोक को खो देने के लिए आ गये थे। १२। सीता और रघुराज राम स्वयं एक-दूसरे पर पानी उछाल रहे थे, जैसे भक्ति और ज्ञान—ये दो रूप धारण करके आनन्द रूपी जल में स्नान कर रहे थे। १३। इसके अतिरिक्त, स्त्री-पुरुष एक-दूसरे पर बहुत अधिक (मात्रा में) जल छिटक रहे थे। निश्चय ही जल-यन्त्रों (फ़ौवारों) से चारों दिशाओं में

तूट्या हार अंगद कटि मेखळा, छूटा सहुना केश जी,
भींज्यां वस्त्र तनु लपटायां, शोभे अद्भुत वेष जी । १५ ।
ज्यम कामदेव रति साथे शोभे, अनेक रूपे सार जी;
जाणे श्रृंगार रसना सागरमांहे, एम झीले नर ने नार जी । १६ ।
ते लीला जोई शिव ब्रह्मा मोह्या, सुरपति आदे देव जी,
ते नरनारीनां भाग्य वखाणे, मग्न थई मन एव जी । १७ ।
एम अवभृथनो उच्छव करी वळतां, सर्व नीकळ्यां बहार जी;
त्यारे सुमंत शकट घणां भरी लाव्यो, ते समे पट अलंकार जी । १८ ।
प्रथम मुनि सहुने पहेराव्यां, सहित पत्नीओ त्यांहे जी;
पछी सीतारामे नौतम पट भूषण, पहेरियां तनमांहे जी । १९ ।
अन्य राय-राणीने आप्या, मनगमता शणगार जी;
विविध रंगनां वस्त्र ज पहेर्यां, नरनारीए सार जी । २० ।
पूर्वतणां जे पट आभूषण, याचकने सहु आप्यां जी,
रंक दरिद्री न्याल थया ने, दुखडां तेनां काप्यां जी । २१ ।

अखण्ड जल-धाराएँ चल रही थीं । १४ । (गले में पहने हुए) हार, अंगद, कटि में बाँधी हुए मेखलाएँ टूट गयीं । सबके केश (-बन्ध) खुल गये । वस्त्र भीग गये और शरीर पर चिपक गये । उनके अद्भुत वेष शोभायमान हो गये । १५ । जैसे अनेक रूपों से कामदेव रति के साथ शोभायमान हो गया हो; मानो उसी प्रकार वे नर और नारियाँ श्रृंगार रस के सागर में जल-क्रीड़ा कर रहे थे । १६ । उस लीला को देखकर शिवजी, ब्रह्मा, सुरपति इन्द्र आदि देव मोहित (मुग्ध) हो गये और मग्न होकर मन में नर-नारियों के भाग्य की सराहना करने लगे । १७ । इस प्रकार अवभृत स्नान सम्बन्धी उत्सव को सम्पन्न करके सब (जल में से) फिर बाहर निकल आये । तब सुमन्त उस समय बहुत-सी गाड़ियों में वस्त्र और आभूषण भर कर ले आया था । १८ । वहाँ (सर्व-) प्रथम मुनियों को उनकी पत्नियों सहित सीता और राम ने (नवीनतम वस्त्र) पहना दिये । अनन्तर उन्होंने (स्वयं) शरीर पर नवीनतम वस्त्र और आभूषण पहन लिये । १९ । अन्य राजाओं और रानियों को मन-भाये श्रृंगार-(साधन) प्रदान किये; तो (सब) नर-नारियों ने विविध रंगों के सुन्दर (-सुन्दर) वस्त्र पहन लिये । २० । पहले वाले जो वस्त्र और आभूषण थे, वे सब याचकों को दे दिये, तो रंक, दरिद्र निहाल हो गये और उनके दुःख कट गये (दूर हो गये) । २१ । अब सुवर्ण-रथ में राम उस समय सीता-सहित विराजमान हो गये । जैसे उदयाचल पर सूर्य हो

हवे कनकरथे रघुवीर विराज्या, सीताशुं तेणी वार जी,
ज्यम उदयाचळ पर दिनमणि एवा, दशरथ राजकुमार जी । २२ ।
मुनिवर सर्वे रथमां बेठा, निज पत्नी छे साथ जी,
निज निज वाहन सहित राणीओ, बेठा सहु नरनाथ जी । २३ ।
वाजित्र वाजे नाना विधिनां, आगळ गांधर्व गाय जी,
खमा खमा छडीदार ज बोले, चामर विजन थाय जी । २४ ।
एम अवभृथ करीने अवधबिहारी, आवे अवधपुरमांहे जी,
अनेक देशना भूप संगाथे, निज कुटुंब मुनि त्यांहे जी । २५ ।
हावे पुरनां नरनारी सहु हरख्यां, आवता जोई रघुनाथ जी,
करे आरती वधावे मुक्ता, पुष्प अंजलि साथ जी । २६ ।
पुर-नारी सहु लेती ओवारणां, आशिष देती अपार जी,
एम सर्वने महासुख आपतां, रघुपति आव्या राजद्वार जी । २७ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

राजद्वारमां आव्या पोते, अवभृथ करी श्रीराम रे,
एम अश्वमेध कीधो पूरण, सफळ थया मनकाम रे । २८ ।

वैसे ही (उस रथ पर) दशरथ के राजपुत्र (शोभायमान हो रहे) थे। २२। अपनी-अपनी पत्नी सहित समस्त मुनि रथों में बैठ गये। (वैसे ही) समस्त राजा रानियों-सहित अपने-अपने वाहन में बैठ गये। २३। (उस समय) नाना प्रकार के वाद्य बज रहे थे; आगे-आगे गन्धर्व गा रहे थे। चोबदार खमा-खमा शब्द बोल रहे थे; । चामर और व्यजन (पंखे) झुलाये जा रहे थे। २४। इस प्रकार, अवभृत स्नान करके अवधविहारी राम अवधपुरी में आ गये। साथ में अनेक देशों के राजा थे। वहाँ अपने-अपने परिवार-सहित मुनि भी थे। २५। अब रघुनाथ को आते देखकर नगर के स्त्री-पुरुष आनन्दित हो गये। उन्होंने आरतियाँ उतारीं; अंजलियों फूल और मोती भरकर बधावे किये। २६। नगर की सब स्त्रियों ने बलैया ली और असंख्य आशीर्वाद दिये। इस प्रकार सबको सुख प्रदान करते हुए रघुपति राम राज-द्वार पर आ गये। २७।

श्रीराम अवभृत स्नान करके स्वयं राज-द्वार पर आ गये। इस प्रकार उन्होंने अश्वमेध यज्ञ पूर्ण किया, तो उनकी (सब) मनोकामनाएँ सफल हो गयीं। २८।

* * *

अध्याय—९० (राम द्वारा पुत्रों को राज्य प्रदान करना)

राग धन्याश्री

यज्ञ पूरण करी आव्या राम जी, अखिळ विश्वना पूरणकाम जी,
सरव भूपति कपि मुनिजन जी, तेने कराव्यां रुचि भोजन जी। १ ।

ढाळ

भोजन नाना भातनां, सहुने कराव्यां तांहे,
पछी वस्त्राभूषण आपीने, संतोषिया मनमांहे। २ ।
गज अश्व रथ ने कनक भूमि, वस्त्र गौ मणि ग्राम,
श्रीरामे आप्यां दान बहु, विप्रने तेणे ठाम। ३ ।
नट भाट गायक बंदी चारण, अपसरा गुणीजन,
तेने विविध केरां दान आपी, कर्या तृप्त मन। ४ ।
पछी मान देईने वळाव्या, सहु भूपति मुनिराय,
वखाणता ए यज्ञने, निज देशमां सहु जाय। ५ ।
स्तुति करी नमिया देव सहु, करी आज्ञा पूरणकाम,
महोत्सव यज्ञ वखाणता ते, गया निज निज धाम। ६ ।

अध्याय—९० (राम द्वारा पुत्रों को राज्य प्रदान करना)

अखिल विश्व की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले राम यज्ञ पूर्ण करके (अयोध्या में) आ गये। (अनन्तर) उन्होंने समस्त राजाओं, कपियों और मुनिजनों को रुचिकर (स्वादिष्ट) भोजन करा दिया। १ ।

उन्होंने वहाँ सबको नाना प्रकार का भोजन करा दिया; अनन्तर वस्त्र और आभूषण प्रदान करके सबको मन में तृप्त करा दिया। २ । राम ने उस स्थान पर ब्राह्मणों को बहुत हाथी, घोड़े, रथ, सोना, भूमि, वस्त्र, गायें, रत्न, गाँव दान में प्रदान किये। ३ । उन्होंने नटों, भाटों, गायकों, बन्दीजनों, चारणों, अप्सराओं, गुणीजनों अर्थात् कलाकारों को विविध प्रकार के दान देते हुए मन में तृप्त करा दिया। ४ । अनन्तर उन्होंने सम्मान करके समस्त राजाओं और श्रेष्ठ मुनियों को लौटा दिया (बिदा कर दिया)। वे यज्ञ की सराहना कर रहे थे। (फिर) वे सब अपने-अपने देश चले गये। ५ । समस्त देवों ने स्तुति करके पूर्णकाम राम को नमस्कार किया, तो उन्होंने उन्हें आज्ञा दी, तो यज्ञ के महोत्सव का बखान करते हुए वे अपने-अपने धाम चले गये। ६ । श्रीरघुवीर की

राजधानी श्रीरघुवीरनी ते, शोभा नव कहेवाय,
ए वैभव जोईने मान मूके, लोकपति समुदाय। ७ ।
ए प्रकारे सरजु गंगा तट, फरी फरी ते ठाम,
त्रण अश्वमेध जगन कर्या, सीता सहित श्रीराम। ८ ।
वळी ते विना केटलाक करिया, अन्य याग पवित्र,
त्रिलोकमांहे वखाणता जन, रामराज चरित्र। ९ ।
लवकुशतणो विवाह कर्यो, विधियुक्तथी श्रीराम,
कर्यो महा महोत्सव लग्नो, परणाविया शुभ ठाम। १० ।
अति रूप गुण लावण्य कन्या, कुळवधू पति धर्म,
परिवार पुत्रे पनोता, उदार कीर्ति कर्म। ११ ।
एम अष्ट पुत्रवधू सहित, शोभिये ज्यम रतिकाम,
मातपितानी आज्ञा पाळे, कुळ क्रिया अभिराम। १२ ।
ए प्रकारे रघुनाथजीए, कर्यां चरित्र अपार,
कोटिक सरस्वती शेषथी, कहेतां न आवे पार। १३ ।

राजधानी (अयोध्या) की शोभा (वर्णन करते हुए) बतायी नहीं जा सकती। उसके वैभव को देखकर लोकपति समुदाय ने गर्व छोड़ दिया (उनका गर्व दूर हो गया)। ७। इस प्रकार सरयू गंगा के तट पर उसी स्थान पर पुनः सीता सहित श्रीराम ने तीन अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न किये। ८। फिर इनके अतिरिक्त, उन्होंने कितने ही अन्य पवित्र यज्ञ कर लिये। स्वर्ग, मृत्युलोक और पाताल के—त्रिभुवन के लोग राजा राम के चरित्र (लीलाओं) का बखान किया करते थे। ९। (अनन्तर) श्रीराम ने लव और कुश के विवाह विधि-युक्त अर्थात् यथा-विधि कर दिये। उन विवाहों का महोत्सव सम्पन्न किया। उनके परिणय शुभ स्थान पर (अच्छे कुल की कन्याओं से) कर दिये। १०। अति रूप, गुण तथा लावण्य से युक्त वे कन्याएँ कुलवधुओं के रूप में पतिव्रता धर्म का पालन करती थीं। उनके परिवार पुत्रों से युक्त, शुभ, उदार तथा कीर्तिशाली कार्य से सम्पन्न थे। ११। इस प्रकार आठों पुत्र अपनी-अपनी वधू के साथ शोभायमान थे, जैसे कामदेव और रति ही हों। वे माता-पिता की आज्ञा का पालन किया करते थे और कुल (-धर्म) सम्बन्धी अभिराम क्रिया-कर्म का निर्वाह किया करते थे। १२। इस प्रकार रघुनाथ राम ने अपार लीलाएँ कीं। कोटि-कोटि सरस्वतियों तथा शेषों द्वारा उनको कहते रहने पर भी उनका पार नहीं आ पाएगा। १३। अनन्तर मंत्रियों और बन्धुओं के मत के अनुसार मिलकर राम ने विचार किया और गुरु

पछी मंत्री बंधुने मते मळी, कर्यों रामे विचार,
गुरु मात आज्ञा थकी सोंप्यो, पुत्रने अधिकार। १४।
एम सुमुहूरत जोई पुत्र सहुने, वहेंची आप्या देश,
ते अष्ट भाग समान संपत्ति, आपी श्रीपरमेश। १५।
जे चार बंधुतणा कहिये, अष्ट पुत्र रत्न,
तेनी वहेंचणी विस्तारी कहुं, ते सुणो श्रोताजन। १६।
श्रीरामना बे पुत्र लव कुश, श्यामसुंदर वेश,
कुशने ते कौशल देश आप्यो, लवने उत्तर देश। १७।
हावे लक्ष्मणजीना पुत्र अंगद, चित्रकेतु नाम,
बे देश आप्या तेहने, श्रीराम पूरणकाम। १८।
गजाश्वव नगरीतणुं आप्युं, अंगदने राज,
धन रत्न देश सोहामणा, चित्रकेतुने महाराज। १९।
हावे भरत केरो पुत्र प्रथमे, नाम पुष्कल जेह,
तेने पुष्करावती नगरी केरुं, राज्य आप्युं तेह। २०।
वळी पुत्र बीजो तक्ष नामे, महा बळियो सार,
तक्षशिला देश नामे, आप्यो ते निरधार। २१।
हावे शत्रुघन सुत सुबाहु, श्रुतसेन नामे एश,
श्रुतसेनने विदिशा नगर, सुबाहुने मथुरा देश। २२।

और माता की आज्ञा से पुत्रों को अधिकार सौंप दिये। १४। इस प्रकार सुमुहूर्त देखकर श्रीपरमेश्वर राम ने उन पुत्रों को देश वितरित कर दिये। (इसके अतिरिक्त) सम-समान आठ भागों में सम्पत्ति (विभक्त करके) उन्हें प्रदान की। १५। जिन्हें चार बन्धुओं के पुत्र-रत्न कहते हैं, उनमें किया बँटवारा विस्तार-पूर्वक कहता हूँ। हे श्रोताजनो, उसे सुन लीजिए। १६। श्रीराम के लव और कुश दो श्याम-सुन्दर वेश (रूपधारी) पुत्र थे। (राम ने उनमें से) कुश को कौशल देश और लव को उत्तर देश दिया। १७। अब लक्ष्मण के अंगद और चित्रकेतु नामक पुत्र थे। पूर्णकाम श्रीराम ने उन्हें दो देश प्रदान किये। १८। अंगद को महाराज राम ने गजाश्व नगरी का राज्य दिया, तो चित्रकेतु को धन-रत्न-नामक रमणीय देश दिया। १९। अब भरत के प्रथम पुत्र को जिसका नाम पुष्कल था, राम ने उस पुष्कलावती नगरी का राज्य प्रदान किया। २०। फिर तक्ष नामक दूसरा महा बलवान और सुन्दर पुत्र था। उसे राम ने निश्चय ही तक्षशिला नामक देश दिया। २१। अब सुबाहु और श्रुतसेन नामक शत्रुघ्न के पुत्र थे। (उनमें से) श्रुतसेन को

एम अष्ट पुत्रने अष्ट नगरी, देश सुभग विशाळ,
ते तणुं आप्युं राज तेने, कर्या छे भूपाळ । २३ ।
तेने राजनीति धर्म कुळनो, शीखव्यो रघुनाथ,
वळी डाह्या मंत्री सोंपिया, सुत शीश मूक्यो हाथ । २४ ।
नवीन छत्र सिंहासन चामर, दळ चतुरंग संग,
सहु देशमांहे मोकल्या, वधू सहित सुत श्रीरंग । २५ ।
रघुनाथजीए राज आप्युं, देश सुतने जेह,
श्रीभागवतमां नवम स्कंधे, व्यासवाणी एह । २६ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

ए वाणी व्यासतणी जथारथ, श्रीभागवत नवम स्कंध रे,
ते संक्षेपे करी रामकथामां, मेळव्यो एह संबंध रे । २७ ।

विदिशा नगर और सुबाहु को मथुरा देश प्रदान किया । २२ । इस प्रकार (श्रीराम ने) आठों पुत्रों को आठ नगरियों के सुन्दर विशाल देशों का राज्य देते हुए, राजा बना दिया । २३ । रघुनाथ राम ने उन्हें राजनीति तथा कुलधर्म की शिक्षा दी । इसके अतिरिक्त, चतुर मंत्री सौंप दिये और उन पुत्रों के मस्तक पर हाथ रख दिया । २४ । फिर श्रीरंग राम ने नये छत्र, सिंहासन, चामर, और चतुरंग दल के साथ उन सब पुत्रों को उनकी वधुओं-सहित (उनके अपने-अपने) देश में भेज दिया । २५ ।

श्रीरघुनाथ राम ने (अपने तथा अपने बन्धुओं के) पुत्रों को (भिन्न-भिन्न) देशों का जो राज्य प्रदान किया, उस सम्बन्ध में श्री व्यास की वाणी-स्वरूप श्रीभागवत (पुराण) के नवम स्कन्ध में (कथा) है । २६ । व्यास की यह वाणी यथार्थ रूप में श्रीमद्भागवत के नवमस्कन्ध मेंसे उद्धृत है । मैंने संक्षेप में उसका सम्बन्ध इस रामकथा में (इस प्रकार) जोड़ दिया है । २७ ।

* * *

अध्याय—९१ (कैकेयी का कपट और सीता का पृथ्वी में प्रवेश)

राग धन्याश्री

सुतने आप्या सरव देश जी, पछे निवर्त पाम्या पोते परमेश जी,
एक समे पोते पूरणकाम जी, रंगभोवनमां बेठा राम जी । १ ।

अध्याय—९१ (कैकेयी का कपट और सीता का पृथ्वी में प्रवेश)

परमेश्वर पूर्णकाम राम ने (अपने तथा अपने बन्धुओं के) पुत्रों को समस्त देश बाँट दिये । अनन्तर वे स्वयं निवृत्ति को प्राप्त हो गये । एक समय वे स्वयं रंग-भवन में बैठे हुए थे । १ ।

ढाळ

रंगभोवनमां राम बेठा, सुंदर सेज्यासन,
जनकतनया साधवी, सेवतां निर्मळ मन। २।
ते समे श्रीरघुवीर बोल्या, सुणी सती एक वात,
अवतार कारण आपणुं, पूरण थयुं साक्षात। ३।
सहु दुष्टनो संहार करियो, उतार्यो भूभार,
हावे अवधवासी आपणां, तेने आपवो उद्धार। ४।
स्वधाम जावुं आपणे, हावे नथी बीजुं काम,
माटे तमो प्रथमे गुप्त थाओ, पृथ्वीमां अभिराम। ५।
एम सीताने समजावियां, जे मनतणो अनुसार,
त्यारे पूंठे केटला दिन, वही गया निरधार। ६।
एक समे बेठा सभामां, समरथ श्रीरघुराय,
त्यारे रंगभोवनमांहे छे, त्यां एकलां सीताय। ७।
ते समे केकै आवियां, सीतातणे भोवन,
सासु जाणी थयां ऊभां, आपियुं आसन। ८।
बहु पेरनी स्वागत करी, पछे सीता बेठां पास,
त्यारे केकैये त्यां वात पूछी, आणी मन उल्लास। ९।

राम रंग-भवन में सुन्दर शय्यासन अर्थात् पलंग पर बैठे हुए थे। जनक-तनया साध्वी सीता निर्मल मन से उनकी सेवा कर रही थी। २। उस समय श्रीरघुवीर बोले, 'हे सती, एक बात सुन लो। अवतार धारण करने का मेरा उद्देश्य प्रत्यक्ष पूरा हो गया है। ३। मैंने समस्त दुष्टों का संहार कर दिया है और भूमि के (पाप-) भार को उतार दिया है। अब अपने (जो) अवधवासी हैं, उनको उद्धार (मोक्ष) प्रदान करना है। ४। हमें अपने धाम जाना है; अब दूसरा कोई काम (शेष) नहीं रहा है। इसलिए तुम पहले, इस रम्य पृथ्वी में गुप्त हो जाओ।' । ५। राम ने जो अपने मन में (आयोजित) था, उसके अनुसार, इस प्रकार, सीता को समझा दिया। तब इसके पश्चात् निश्चय ही कितने ही दिन बीत गये। ६। एक समय समर्थ श्रीरघुराज सभा में बैठे हुए थे। तब उधर रंग-भवन में सीता अकेली थी। ७। उस समय सीता के उस भवन में कैकेयी आ गयी। उसे अपनी सास जानकर वह (उठकर) खड़ी हो गयी और उसने उसे (बैठने के लिए) आसन दिया। ८। बहुत प्रकार से उसका स्वागत करके फिर सीता उसके पास बैठ गयी। तब कैकेयी ने

अरे जानकी तमो रह्यां लंका, वीतिया बहु दिन,
ते रावण केरुं रूप केवुं, हतुं प्रौढुं तन । १० ।
त्यारे वैदेही कहे सांभळो, कहुं मात साची वाण,
दृष्टि करी में नथी जोयुं, रूप एनुं जाण । ११ ।
पण एक दिन बेठी हती हुं, अशोक वाडीमांहे,
त्यारे रावण आवी रह्यो ऊभो, मारी सन्मुख त्यांहे । १२ ।
त्यारे ध्यानमांथी नेत्र मारा, ऊघड्यां निरवाण,
एना चरणनो अंगुष्ठ मारी, दृष्टे पडियो जाण । १३ ।
त्यारे केकै कहे ते हतो केवो, पुष्ट प्रौढ अपार,
मने चित्र काढी देखाडो, अंगुष्ठनो आकार । १४ ।
तव सीताए आलेखियो, अंगुष्ठ लखियो भींत,
केकईतणा मननुं कपट, नव जाणियुं विपरीत । १५ ।
केकैए करमां कलम ग्रहीने, लख्यो निशिचर भूप,
अंगुष्ठना अनुमानथी, चीतर्युं रावणरूप । १६ ।
ऊठीने आवी बारणे, बकवाद करती घोर,
दशवीश नारी मेळवीने, करवा मांड्यो शोर । १७ ।

वहाँ मन में उल्लास लाते हुए, अर्थात् उल्लास अनुभव करके यह बात पूछी । ९ । 'अरी जानकी, तुम लंका में रह गयी थी, उसे बहुत दिन बीत गये । उस रावण का रूप कैसा था ? उसका शरीर तो (बहुत) प्रचण्ड था (रहा होगा) । ' । १० । तब वैदेही ने कहा, 'सुनिए, मैं सच्ची बात कहती हूँ । समझिए कि मैंने उसके रूप को (अपनी) दृष्टि से (कभी) देखा नहीं । ११ । परन्तु मैं एक दिन अशोक उपवन में बैठी थी । तब रावण (एकाएक) आकर वहाँ मेरे सामने खड़ा रह गया । १२ । तब अवश्य ही मेरी आँखें ध्यान में से खुल गयीं । तो समझ लीजिए कि उसके चरण का अँगूठा मुझे दीख पड़ा । ' । १३ । तब कैकेयी ने कहा (पूछा), 'वह कैसा अत्यन्त पुष्ट और बड़ा था ? चित्र खींचकर मुझे उस अँगूठे का आकार (-स्वरूप) दिखा दो । ' । १४ । तब सीता ने दीवार पर आलेखन किया और (चित्र में) अँगूठा अंकित किया । ' कैकेयी के मन में कपट था; (फिर भी) सीता ने उसमें कोई विपरीत (प्रतिकूल) नहीं माना । १५ । (तदनन्तर) कैकेयी ने हाथ में लेखनी लेकर उस निशाचर राजा (का चित्र) अंकित किया । उसने अँगूठे के (आधार पर) अनुमान से रावण के रूप को चित्रित किया । १६ । (फिर) वह उठकर द्वार पर (अर्थात् बाहर) आ गयी और घोर बकवास

बाई जुओने आचरण ए, सीतातणां निरधार,
मंदिरमां रावणतणी, मूर्ति करी छे सार। १८।
कटाक्षवचन घणां कह्यां, हांसी करी तेणी वार,
ते सांभळतां जानकी, ऊठीने आव्यां बहार। १९।
अरे बाई तमारो आवडो शो, मुज उपर छे रोष,
तमो कृत्य निज हाथे करी, वळी द्यो छो मुने दोष। २०।
एवुं कही पछी जानकी, गद्गद थयां तेणी वार,
पृथ्वी केरी स्तुति करतां, नेत्रे जळनी धार। २१।
हे क्षमा उर्वी भूमि, भू मही महाभाग,
वसुंधरा धरणी धरा तुं, आप मुजने माग। २२।
हे अवनी अचळा वसुमती, क्षोणी क्षिति अभिराम,
गो अनंता विश्वंभरा, गति करो मुज ठाम। २३।
हे मात ए दुरवचनथी मुने, थाय बहु परिताप,
तुज उदरमांहे गुप्त करीने, टाळिये संताप। २४।
एवुं कहेतामां धरा फाटी, थयो शब्द अपार,
धरी रूप पृथ्वी नीकळ्यां, महा तेजनो अंबार। २५।

करने लगी। उसने दस-बीस नारियों को इकट्ठा करके शोर मचाना आरम्भ किया। १७। 'अरी बाई, इस सीता का निश्चय ही यह आचरण तो देख लो न! उसने अपने मन्दिर (घर) में रावण की सुन्दर मूर्ति बना ली है।'। १८। उस समय उसने हँसते हुए अनेकानेक व्यंग्य वचन (भी) कहे। उन्हें सुनते ही जानकी उठकर बाहर आ गयी। १९। (वह बोली—) 'हे देवी, मुझपर आपका इतना रोष (क्यों) है! आपने स्वयं अपने हाथ से यह काम किया और फिर मुझे दोष दे रही हैं। २०। उस समय ऐसा कहने के पश्चात् जानकी गद्गद हो उठी। वह पृथ्वी की स्तुति करने लगी। उसकी आँखों से (अश्रु-) जल की धारा बह रही थी। २१। 'हे क्षमा, हे उर्वी, हे भूमि, हे भू, हे मही, हे मेदिनी, हे महाभागवती, हे वसुन्धरा, हे धरणी, हे धरा, तू मेरा माँगा मुझे प्रदान कर। २२। हे अवनी, हे अचला, हे वसुमती, हे क्षोणी, हे अभिराम क्षिति, हे गो, हे अनन्ता, हे विश्वम्भरा, इस स्थान पर मेरी (अन्तिम) गति कर दो (मेरा अन्त कर दो)। २३। हे माता, इस दुर्वचन से मुझे बहुत ग्लानि हो रही है। अपने उदर में मुझे गुप्त करते हुए मेरे इस सन्ताप को दूर करो।'। २४। (सीता के) ऐसा कहते ही, धरा फट गयी, तो अत्यन्त बड़ी ग्लानि (उत्पन्न) हो गयी। (प्रत्यक्ष) रूप धारण

करमां सिंहासन कनकनुं, ग्रही रह्यां ऊभां त्यांहे,
मांहे सीताने पधराविया, थयां गुप्त पृथ्वीमांहे । २६ ।
ते भोम्य पाछी मळी गई, क्षणुए न लागी वार,
सहु स्त्रीओ आदे राणीओ, करती ते हाहाकार । २७ ।
सहु नग्रमांहे वात चाली, रुदन करता लोक,
कल्पांत करतां कौशल्याजी, वरतियो महाशोक । २८ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

महाशोक वरत्यो ते समे, सहु अवधपुरमां त्यांह रे,
ए प्रकारे श्रीजानकीजी, समायां पृथ्वी मांह्य रे । २९ ।

करके पृथ्वी (-देवी) ऊपर निकल आयी । वह महान तेज की राशि (ही) थी । २५ । वह वहाँ हाथों में सोने का सिंहासन लिये हुए खड़ी रह गयी । (फिर) अन्दर सीता को लिवा ले आयी । तो सीता पृथ्वी में गुप्त हो गयी । २६ । वह (फटी हुई) भूमि फिर से क्षण में मिल गयी (दरार पट गयी) । इसमें देर न लगी । (यह देखकर) समस्त स्त्रियाँ, रानियाँ आदि हाहाकार करने लगीं । २७ । यह बात समस्त नगर में चल गयी (फैल गयी), तो लोग रुदन करने लगे । कौसल्या बहुत विलाप करने लगी । २८ ।

वहाँ समस्त अयोध्यापुरी में उस समय बड़ा शोक छा गया । श्रीजानकी इस प्रकार पृथ्वी में समा गयी । २९ ।

* * *

अध्याय—९२ (राम के समीप धर्म का आगमन, दुर्वासा द्वारा राम की स्तुति)

राग मारु

पृथ्वीमांहे समायां सीता, सरवे नगर थयुं भयभीता,
साक्षात जे लक्ष्मीरूप, जेनी कीर्ति अमल अनुप । १ ।
भरत लक्ष्मण शत्रुघन, करे राणीओ सरवे रुदन,
निस्तेज थयो राणीवास, बेठा राम थईने उदास । २ ।

अध्याय—९२ (राम के समीप धर्म का आगमन, दुर्वासा द्वारा राम की स्तुति)

जो साक्षात् लक्ष्मी-स्वरूपा थी, जिसकी कीर्ति अमल (विशुद्ध) तथा अनुपमेय है, वह सीता पृथ्वी में समा गयी, तो समस्त नगर भयभीत हो गया । १ । भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न, समस्त रानियाँ रुदन करने लगे । रनिवास निस्तेज हो गया । राम उदास होकर बैठ गये । २ । पुत्रवधुओं

पुत्रवधू आदि परिवार, तेना शोक तणो नहि पार,
एम वही गया केटला दन, सहुनां व्यग्र थयां छे मन। ३ ।
एक समे लक्ष्मण ने राम, बेठा निज मंदिर अभिराम,
एटले आव्यो तहां एक दूत, विप्रवेश धरी अद्‌भुत। ४ ।
कर्यो रघुपतिने नमस्कार, कर जोडी बोल्यो तेणी वार,
कृपानाथ कहेवुं छे काम, माटे बेसीए एकांत ठाम। ५ ।
त्रीजुं कोई न आवे पास, त्यारे बोल्या श्रीअविनाश,
भाई लक्ष्मण बारणे बेसो, हुं सुणीने आवुं संदेशो। ६ ।
अमो बंन्यो जण करुं वात, त्रीजो आवे नहि सुण भ्रात,
जे कदापि आवशे कोय, तेने मारीश निश्चे सोय। ७ ।
लक्ष्मणजीने बेसाड्या द्वार, गया घरमांहे जगदाधार,
पेलो दूत बोल्यो जोडी हाथ, मुने ब्रह्माए मोकल्यो नाथ। ८ ।
धर्मराज ते मारुं नाम, आज्ञावर्ती तमारो राम,
विधिए कह्युं छे निरधार, हावे ऊतर्यो पृथ्वीनो भार। ९ ।
थयो स्थापन देवनो धर्म, चाले वर्णाश्रमनां कर्म,
थयां सरवे पूरणकाम, प्रभु हावे पधारो धाम। १० ।

आदि के तथा परिवार (के अन्य लोगों) के शोक की कोई सीमा नहीं थी। इस प्रकार कितने ही दिन व्यतीत हो गये। सबके मन (इस अवधि में) व्याकुल ही हुए रहे। ३। एक दिन लक्ष्मण और राम अपने रम्य भवन में बैठे हुए थे। इतने में कोई एक दूत अद्‌भुत विप्र-रूप धारण करके वहाँ आ गया। ४। उसने रघुवीर को नमस्कार किया और उस समय हाथ जोड़े हुए वह बोला, 'हे कृपालु नाथ, मुझे एक काम (बात) कहना है, इसलिए एकान्त स्थान पर बैठ जाएँ। ५। कोई तीसरा पास न आ जाए।' तब अविनाशी भगवान् श्रीराम बोले, 'भाई लक्ष्मण तुम द्वार पर बाहर बैठ जाओ। मैं सन्देश सुनकर आ जाता हूँ। ६। हम दोनों जने बातें करते हैं। हे भाई सुन लो, (तब तक वहाँ) कोई तीसरा आ न पाए। यदि कदाचित् कोई आ जाए, तो मैं उसे निश्चय ही मार डालूँगा।'। ७। (इस प्रकार) जगदाधार राम ने लक्ष्मण को द्वार पर बाहर बैठा दिया और वे घर के अन्दर चले गये। तो वह दूत हाथ जोड़कर बोला, 'हे नाथ, मुझे ब्रह्माजी ने भेजा है। ८। मेरा नाम धर्मराज है। हे राम, मैं आपका आज्ञाकारी हूँ। विधाता ने कहा है कि (आपने) निश्चय ही अब (तक) पृथ्वी के (पाप-) भार को उतार दिया है। ९। वेदों के अर्थात् वेद-प्रतिपादित धर्म की स्थापना हो गयी

दश सहस्त्र वरसनुं जाण, त्रेता युगमां आयुष्य प्रमाण,
थयां सहस्त्र त्रयोदश वर्ष, घणी लीला करी उत्कर्ष । ११ ।
कहेवा जोग नथी हुं दास, तमो स्वतंत्र छो श्रीनिवास,
तमो बांधी जे आमन्याय, प्रभु माटे करुं सूचनाय । १२ ।
एवुं कहाव्युं छे मारी साथ, घटे तेम करो हे नाथ !
त्यारे बोल्या श्रीभगवान, ते विचारे छे मारे मन । १३ ।
एम करता वात विषेक, एवे कौतुक प्रगट्युं एक,
ऋषि दुर्वासा तेणी वार, रुद्र अंश ने क्रोधी अपार । १४ ।
आव्या बारणे ते मुनिराय, ऊठी लक्ष्मण लाग्या पाय,
मुनि बोल्या तेणे ठाम, अरे लक्ष्मण क्यां छे राम ? । १५ ।
सुमित्री कहे बेसो महाराज, हवडां आवे छे करीने काज,
एवुं वचन सुणी अवरोध, मुनि बोल्या करीने क्रोध । १६ ।
अल्या नथी ओळखतो मुजने, हवडां शिक्षा करुं छुं तुजने,
मारुं नाम क्रोधी निरधार, उतार्यो इंद्रनो अहंकार । १७ ।

है, वर्णाश्रम (धर्म) के (अनुसार) कार्य चलने लगे हैं। सबकी कामनाएँ पूर्ण हो चुकी हैं। हे प्रभु, (अतः) अब आप अपने धाम पधारिए । १० । समझिए, त्रेतायुग में आयु का प्रमाण (आयु की मर्यादा) दस सहस्त्र वर्ष की है। (फिर भी आपके अवतरित हुए) तेरह सहस्त्र वर्ष हो गये है; (इस अवधि में) आपने बहुत अधिक लीला की है। ११ । मैं दास यह कह देने योग्य नहीं हूँ। हे श्रीनिवास, आप स्वतन्त्र है। आपने मर्यादा को बाँध रखा है (अर्थात् मर्यादा का भंग नही किया है)। इसलिए, हे प्रभु, मैं सूचना कर रहा हूँ। १२ । मेरे द्वारा (ब्रह्माजी ने) इस प्रकार कहला दिया है। (फिर भी) हे नाथ, जो योग्य हो, सो आप कर लीजिए।' तब श्रीभगवान बोले, 'मेरे मन में वही विचार है'। १३ । इस प्रकार वे विशेष बातें कर रहे थे, उस समय एक कौतुक हो गया। दुर्वासा ऋषि रुद्र के अंश तथा अपार क्रोधी थे। वे मुनिराज उस समय द्वार पर आ गये, तो लक्ष्मण उठकर उनके पाँव लगा। उस स्थान पर मुनि बोले, 'अरे लक्ष्मण, राम कहाँ हैं?'। १४-१५ । (इस पर) सुमित्रा-सुत लक्ष्मण ने कहा, 'महाराज, बैठ जाइए। वे अभी काम करके आ रहे हैं।' ऐसा अवरोधी (उनकी इच्छा में रुकावट उत्पन्न करने वाला) वचन सुनते ही मुनि क्रोध करके बोले। १६ । "अरे तू मुझे नहीं पहचान रहा है। मैं तुझे अभी दण्ड देता हूँ। निश्चय ही मेरा नाम 'क्रोधी' है। मैंने इन्द्र (तक) का अहंकार छुड़ा दिया है। १७ ।

त्रिलोकनी लक्ष्मी जेह, क्षणमां नाश पमाडी तेह,
मारुं वचन ते अग्नि ज्वाळ, बाळी भस्म करुं तत्काळ । १८ ।
विचार्युं सुणी लक्ष्मणे आप, जाण्युं देशे मुजने शाप,
भय पामी सुमित्री त्यांहे, गया उतावळा घरमांहे । १९ ।
धर्म पाम्या ते अंतरध्यान, ऊठी आव्या श्रीभगवान,
लक्ष्मणे कह्युं नामी शीश, आव्या छे दुरवासा मुनीश । २० ।
सुणी सत्वर आव्या राम, मुनिने कर्या दंडप्रणाम,
कर जोडी ऊभा सन्मुख, मुनि पाम्या घणुं मन सुख । २१ ।
नखशिख प्रभुने नीरख्या, रामरूप जोई ऋषि हरख्या,
पछी स्तुति करता दुरवास, जय कोटी ब्रह्मांड निवास । २२ ।
जय खळ वन दहन कृशानु, जय संत सरोरुह भानु,
जय ब्रह्मण्य देव दयाळ, जय भक्ततणा प्रतिपाळ । २३ ।
सच्चिदानंद पूरणब्रह्म, निरुपाधिक ने नैष्कर्म,
जय अंतरजामी अकाम, जय विश्वना आत्माराम । २४ ।

जो त्रिलोक की लक्ष्मी है, उसे भी मैंने क्षण में विनाश को प्राप्त करा दिया है। मेरी बात तो (साक्षात्) अग्नि की ज्वाला है। मैं (उससे) तुझे तत्काल जलाकर भस्म कर दूँगा।" । १८ । लक्ष्मण ने यह सुनकर स्वयं विचार किया, और जान लिया कि ये मुझे अभिशाप दे देंगे। (इसलिए) भय को प्राप्त होकर लक्ष्मण शीघ्रता से वहाँ (से) घर के अन्दर चला गया । १९ । धर्मराज अन्तर्धान को प्राप्त हो गये, तो श्रीभगवान राम उठकर आ गये। (तब) लक्ष्मण ने मस्तक नवाकर कहा, 'मुनीश्वर दुर्वासा आ गये है'। २० । यह सुनकर राम सत्वर (वहाँ) आ गये और उन मुनिवर को उन्होंने दण्डवत् प्रणाम किया। (फिर) हाथ जोड़कर सामने खड़े हो गये, तो वे मुनि मन में बड़े सुख को प्राप्त हो गये । २१ । दुर्वासा ऋषि ने प्रभु को नख से शिखा तक निरखकर देखा और राम के रूप को देखकर वे आनन्दित हो गये। अनन्तर वे (राम की) स्तुति करने लगे, 'हे कोटि (-कोटि) ब्रह्माण्डों के निवास (-स्थान), आपकी जय हो । २२ । खल (-जन) रूपी वन को जला देनेवाले हे कृशानु (-स्वरूप) आपकी जय हो। सन्तों रूपी कमलों का विकास कर देनेवाले हे सूर्य (-स्वरूप), आपकी जय हो। हे दयालु ब्रह्मण्य देव, आपकी जय हो। हे भक्तों के प्रतिपालक, आपकी जय हो । २३ । हे सच्चिदानन्द, हे पूर्णब्रह्म, हे निरुपाधिक तथा नैष्कर्म्य, (आपकी जय हो)। हे अन्तर्यामी, हे अकाम, आपकी जय हो। हे विश्व के आत्मा-स्वरूप राम,

जग व्यापक जगदाधार, नमुं रामने वारंवार,
घणी स्तुति करी मुनि धीर, त्यारे प्रसन्न थया रघुवीर । २५ ।
मागो मागो मुनिवर आज, जे इच्छा होय ते करुं काज,
मुनि कहे कांई अपेक्षा नथी, सत्य राघव कहुं सरवथी । २६ ।
थयुं पावन प्रभु दरशन, तेणे शीतळ पाम्युं तन,
कह्यां लक्ष्मणने कुवचन, ते क्षमा करजो स्वामीन । २७ ।
क्षुधा प्रगटी छे मुज तन, मारे करवुं छे भोजन,
सुणीने हस्या रघुपति एह, सर्प सिंह ने ब्राह्मण जेह । २८ ।
क्षुधातुर होये जेणी वार, त्यारे ते करे क्रोध अपार,
एवुं कहीने श्रीरघुनाथ, पछे मुनिवरनो ग्रह्यो हाथ । २९ ।
घरमां तेडी लाव्या भगवंत, बहु प्रकारे कराव्युं भोजन,
थया तृप्त पूरणकाम, स्तुति करीने गया निज ठाम । ३० ।
त्यारे पूंठळ श्रीरघुराय, बेठा मेळवी सर्व सभाय,
हावे लक्ष्मणजी तेणी वार, करता मनमांहे विचार । ३१ ।
प्रभुए पण करियुं जेह, में आज्ञा लोपी तेह,
शें कारण हवे राखुं तन ? जाय रामनुं सत्य वचन । ३२ ।

आपकी जय हो । २४ । हे जगद्-व्यापक, हे जगदाधार, आप राम को मैं बार-बार नमस्कार करता हूँ ।' (इस प्रकार,) उस धीरमति मुनि ने बहुत स्तुति की, तो रघुवीर राम उनपर प्रसन्न हो गये । २५ । (वे बोले—)' हे मुनिवर, आज (वर) माँग लो, माँग लो। आपकी जो इच्छा हो, (उसके अनुसार) मैं वह काम कर दूँगा ।' (इसपर) मुनि ने कहा, 'मेरी कोई अपेक्षा नहीं है। हे राघव मैं सब प्रकार से यह सत्य कह रहा हूँ । २६ । हे प्रभु, मैं आपके दर्शन से पावन हो गया हूँ । उससे मेरा मन शीतलता को प्राप्त हो गया है। मैंने लक्ष्मण से जो दुर्वचन कहा, हे स्वामी, उसे क्षमा करना । २७ । मेरे शरीर में भूख प्रकट हो गयी है । (अतः) मुझे भोजन करना है ।' यह सुनकर रघुपति राम हँस पड़े । जो सर्प, सिंह और ब्राह्मण, जिस समय क्षुधातुर हो जाता है, तब (उस समय) वह अपार क्रोध करता है ।' श्रीरघुनाथ ने ऐसा कहकर फिर मुनिवर का हाथ थाम लिया । २८-२९ । (अनन्तर) भगवान राम उन्हें लिये हुए घर में आये और उन्होंने उनको बहुत प्रकार से भोजन करा दिया । (तब) वे तृप्त तथा पूर्णकाम हो गये और (राम की) स्तुति करके अपने स्थान की ओर चले गये । ३० । तब अनन्तर श्रीरघुराज राम समस्त सभा (-जनों) को इकट्ठा करके बैठ गये । अब लक्ष्मण उस

प्रभु तो नहि बोले एह, मुज उपर छे घणो स्नेह,
पण मारे पाळवुं सत्य, जे बोल्या छे श्रीरघुपत्य । ३३ ।
ऐवो धर्म विचारी धीर, सभामां आव्या लक्ष्मण वीर;
रामने नम्या जोडी बे हाथ, ऊभा सन्मुख पन्नगनाथ । ३४ ।
बोल्या सुणतां सरव सभाय, सुणो सत्यसंध रघुराय,
दूत साथे करवाने वात, तमो पण करियुं साक्षात । ३५ ।
जे को आवे मंदिर मांहे, तेने तत्क्षण हणवो त्यांहे,
ते आज्ञा करी में भंग, माटे हणवो मने श्रीरंग । ३६ ।
दुरवासानो महाभय पामी, आव्यो घरमां हुं सारंगपाणि,
कर्युं वचन तमारुं खंड, अपराधीने देवो दंड । ३७ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

दंड देवो निश्चे मुजने, पाळुं सत्य वचन रे,
लक्ष्मणजी एवुं बोल्या ज्यारे, त्यारे विस्मे थया सहु जन रे । ३८ ।

समय यह विचार कर रहा था । ३१ । 'प्रभु ने जो प्रण किया था (और आज्ञा दी थी) उस आज्ञा का मैंने लोप किया है, अर्थात् आज्ञा का उल्लंघन किया है । तो (फिर) मैं अपनी देह किस कारण से रख लूं ? उससे तो राम के वचन की सत्यता (निकल) जाएगी । ३२ । प्रभु (स्वयं) तो यह नहीं बोलेंगे । (क्यों कि) मुझ पर उनका बहुत स्नेह है । परन्तु श्रीरघुपति राम जो बोले है, उसके अनुसार मुझे उस सत्य का, अर्थात् उस वचन की सत्यता का पालन करना है' । ३३ । इस प्रकार के अपने धर्म (-कर्तव्य) का विचार करके धीर-वीर लक्ष्मण सभा में आ गया और दोनों हाथ जोड़कर उसने राम को नमस्कार किया । फिर वह शेष (सर्पों के स्वामी शेष का अवतार) राम के सम्मुख खड़ा रह गया । ३४ । समस्त सभा के सुनते रहते वह बोला, 'हे सत्य-संध रघुराज, सुनिए । दूत के साथ बातें करते समय, आपने प्रत्यक्ष यह प्रण किया था । ३५ । यदि कोई घर के अन्दर आ जाए, तो उसे तत्क्षण मार डालना है । मैंने उस आज्ञा का भंग (उल्लंघन) किया है, इसलिए हे श्रीरंग, मुझे मार डालिए । ३६ । हे सारंग-पाणि, दुर्वासा से बड़े भय को प्राप्त होकर, मैं घर के अन्दर आया था । (इस प्रकार) मैंने आपके वचन को खण्डित कर दिया है । (अतः) मुझ अपराधी को दण्ड दीजिए । ३७ ।

मुझे निश्चय ही दण्ड दीजिए । मैं सत्य वचन की, अर्थात् आपके वचन की सत्यता की रक्षा करूंगा ।' जब लक्ष्मण इस प्रकार बोला, तब सब लोग विस्मित हो गये । ३८ ।

अध्याय—९३ (लक्ष्मण का इन्द्र के साथ स्वर्ग में गमन)

राग आशावरी

लक्ष्मणजीनां वचन सुणी, पामी विस्मय सरव सभाय,
पछे स्नेह सहित मधुर वचने करी, बोल्या श्रीरघुराय । १ ।
अरे भाई शुं बोले एवुं, विपरीत व्यंग वच्चन ?
प्राण थकी मुजने तुं वल्लभ, जीवन तन मन धन । २ ।
अमो प्रतिज्ञा करी ते खरी, पण कारण कहुं एक त्यांहे,
अमो वात करी रह्या त्यार पछी, तमो आव्या मंदिर मांहे । ३ ।
वळी दुर्वासाए क्रोध कर्यो, जाण्युं शाप देशे निरवाण,
ते माटे तुं आव्यो मंदिरमां, करवा मुजने जाण । ४ ।
माटे दोष नथी कांई एमां तारो, सांभळ साचुं वीर,
एवुं कहीने थया प्रभु गद्गद, चाल्यां नेत्रमां नीर । ५ ।
त्यारे लक्ष्मणजी कहे शाने काजे, मोह धरो महाराज ?
ए माया सर्वे दूर करीने, शिक्षा करो मुने आज । ६ ।
सत्यवादीने स्नेह न धरवो, मात पिता सुत वीर,
राज संपत्ति देह जाय पण, धरम राखवो धीर । ७ ।

अध्याय—९३ (लक्ष्मण का इन्द्र के साथ स्वर्ग में गमन)

लक्ष्मण के वचन सुनकर समस्त सभा विस्मय हो प्राप्त हो गयी। अनन्तर श्रीरघुराज राम स्नेह-सहित मधुर वचनों में—अर्थात् मधुर स्वर में बोले । १ । 'अरे भाई, ऐसे विपरीत व्यंग्य-वचन क्या (क्यों) बोल रहे हो ? तुम तो मेरे लिए प्राण से भी प्यारे हो, मेरे जीवन, तन-मन-धन (से भी प्यारे) हो। २ । हमने प्रतिज्ञा की, यह सत्य है । परन्तु मैं वहाँ (इसका) एक कारण कहता हूँ । हम बात कर रहे (चुके) थे, उसके पश्चात् तुम घर में आ गये । ३ । इसके अतिरिक्त दुर्वासा ने क्रोध किया था और तुमने माना था कि अन्त में अभिशाप दे देंगे । इसलिए मुझे उसकी जानकारी करा देने के लिए तुम घर में आ गये थे । ४ । इसलिए हे भाई, सच्ची बात सुनो, इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है ।' ऐसा कहकर प्रभु राम गद्गद हो उठे; उनकी आँखों से आँसू बहने लगे । ५ । तब लक्ष्मण बोला, 'हे महाराज, किस कारण से आप यह मोह धारण कर रहे हैं ? इस समस्त माया को दूर करके मुझे आज दण्ड दीजिए । ६ । सत्यवादी को माता-पिता, पुत्र, बन्धु के प्रति स्नेह न रखना चाहिए । हे धैर्यशील, राज्य, सम्पत्ति, देह जाए, फिर भी धर्म रखना अर्थात् धर्म का निर्वाह

जुओ आपणा वंशमां हरिश्चंद्ररायें, वेठ्युं दुःख अपार,
नीच कर्म करीने पण राख्युं, सत्य पोतानुं सार। ८।
वळी पिता आपणाने तमो वहाला, तन मन प्राण जीवन;
ते सत्य वचन पाळवा माटे, मोकल्या दारुण वन। ९।
वळी परशुरामे जमदग्निनुं, वचन कर्युं परमाण,
मस्तक छेद्यां मातभ्रातनां, राख्यो धर्म सुजाण। १०।
माटे सत्य वचन तमारुं पाळो, बोल्या श्रीमुख जेह,
मुज माटे प्रभु धर्म न मूको, आणी अंतर स्नेह। ११।
एवां वचन सुणी श्रीरामचंद्रने, दुःख घणुं प्रगट्युं मन,
धर्मसंकटमां पडिया पोते, नीचुं रह्या जोई मुन्य। १२।
एवे समे त्यां आव्या वसिष्ठजी, जाण्युं सहु वृत्तांत,
त्यारे मस्तक धुणावीने मुनिवर, बेठा पोताने स्थान। १३।
पछी श्रीरघुवीरनी साथे वळता, बोल्या ब्रह्मकुमार,
ए भावी पदारथें भूल नहि, कंई होये जे होनार। १४।
त्यारे कर जोडीने रघुपति कहे छे, सांभळो मुनिराज,
हुं धरमसंकटमां पड्यो छुं, माटे सूझ बतावो आज। १५।

करना चाहिए। ७। देखिए, अपने वंश में राजा हरिश्चन्द्र ने अपार दुःख सहन किया था। उन्होंने निम्न स्तर का कर्म करके भी अपने सुन्दर सत्य (-व्रत) की रक्षा की थी। ८। इसके अतिरिक्त, हमारे अपने पिता को तन, मन, प्राण, जीवन से भी प्यार करते थे। उन्होंने वचन की सत्यता का पालन करने के लिए आपको दारुण वन में भेज दिया। ९। फिर परशुराम ने (अपने पिता) जमदग्नि का वचन प्रमाण (-भूत) कर दिया। (उसके लिए) उन्होंने अपनी माता और बन्धु के मस्तकों को छेद डाला और उन सुजान ने अपने धर्म का निर्वाह किया। १०। इसलिए आपने अपने श्रीमुख से जो कह दिया, उस अपने सत्य वचन (धर्म-संगत वचन) का पालन कीजिए। हे प्रभु, अन्तःकरण में स्नेह लाते हुए (अनुभव करते हुए) आप मेरे लिए धर्म न छोड़िए।' ११। ऐसी बातें सुनते ही श्रीरामचन्द्र के मन में बहुत दुःख उत्पन्न हो गया। वे स्वयं धर्म-संकट में पड़ गये और नीचे देखते हुए मौन रह गये। १२। उस समय वसिष्ठ मुनिवर वहाँ आ गये और उन्होंने समस्त समाचार जान लिया। तब वे सिर हिलाते हुए अपने स्थान पर बैठ गये। १३। अनन्तर ब्रह्म-कुमार वसिष्ठ रघुवीर राम से बोले, 'होनेवाली बात भूलती, अर्थात् टलती नहीं; जो कुछ होनी हो, वह हो ही जाती है।'। १४। तब हाथ जोड़कर

त्यारे वसिष्ठ वात विचारी बोल्या, सुणिये श्रीरघुराय,
उपाय एक बतावुं तमने, धर्मशास्त्रनो न्याय। १६।
जे वधवा लायक पुरुष होय तेने, करवो देश त्याग,
तेमां धर्म अहिंसा ने वळी रहेशे, सत्य वचन महाभाग। १७।
एवुं धर्मवचन गुरुजी बोल्या, पूरव तुं बे पास,
ते सांभळीने श्रीराम रह्या, नव बोल्या वचन प्रकाश। १८।
एटले स्वर्गनिवासी इंद्र जे, अमर तणो राजन,
ते गजारूढ थई आव्यो करवा, रघुपतिनां दरशन। १९।
श्रीरामचंद्रने चरणे लाग्यो, स्तुति करी बहु जाण,
त्यारे सुरपति साथे वसिष्ठ मुनिवर, तत्क्षण बोल्या वाण। २०।
अरे इंद्र तमो लक्ष्मणजीने, तेडी जाओ निज घेर,
स्वागत सेवा बहुविधि करजो, राखजो रूडी पेर। २१।
पछे गुरु आज्ञाए लक्ष्मण चाल्या, सहुने कर्यो नमस्कार,
इंद्रनी साथे ऐरावत बेसी, गया स्वर्गमोझार। २२।
मघवापतिना मंदिर मांहे, रह्या सुमित्री त्यांहे,
देव सकळ मळी सेवा करता, तत्पर आज्ञामांहे। २३।

रघुपति बोले, हे मुनि महाराज, सुनिए। मैं धर्म-संकट में पड़ गया हूँ। इसलिए आज हल बता दीजिए।'। १५। तब उस बात पर विचार करके वसिष्ठ मुनि बोले, 'हे श्रीरघुराज सुनिए। धर्मशास्त्र के न्याय के अनुसार, मैं आपको एक उपाय बता देता हूँ। १६। जो पुरुष वध करने योग्य हो, उससे देश-त्याग करवाइए। हे महाभाग, उसमें अहिंसा धर्म (बना) रहेगा, इसके अतिरिक्त, वचन सत्य बना रहेगा। १७। उसे आप दोनों ओर से पूर्ण कर दीजिए।' इस प्रकार धर्म सम्बन्धी वचन गुरु (वसिष्ठ) बोले। उसे सुनकर श्रीराम (चुप) रह रहे; वे स्पष्ट रूप में कुछ न बोले। १८। इतने में देवों का जो राजा है, वह स्वर्ग-निवासी इन्द्र (ऐरावत) हाथी पर आरूढ़ होकर रघुपति राम के दर्शन करने के लिए आ गया। १९। (आते ही) वह श्रीरामचन्द्र के पाँव लगा। (फिर) समझिए कि उसने बहुत स्तुति की। तब सुरपति इन्द्र से मुनिवर वसिष्ठ ने तत्क्षण यह बात कही। २०। 'हे इन्द्र, आप लक्ष्मण को अपने घर ले जाइए। उनकी बहुत प्रकार से स्वागत-सेवा कीजिए और उन्हें अच्छी तरह से रख लीजिए'। २१। अनन्तर लक्ष्मण ने सबको नमस्कार किया और गुरु की आज्ञा के अनुसार वह चल दिया। इन्द्र के साथ ऐरावत पर बैठकर वह स्वर्ग में चला गया। २२। वहाँ सौमित्र लक्ष्मण

हावे लक्ष्मण जातां रघुपतिने, घणो शोक थयो छे मन,
लावण्यता गुण स्नेह संभारीने, करता राम रुदन । २४ ।
भर्त शत्रुघन आदे सहुनां, नेत्रमां चाले नीर,
पछे वसिष्ठ गुरुए छाना राख्या, समजाव्या देई धीर । २५ ।
हावे अवधपुरमां सरवे जाण्युं, लक्ष्मणजीनो त्याग,
नर नारी सहु रुदन करे छे, लाग्यो मोटो दाग । २६ ।
राणीवासमां राणीओ रोती, पुत्रवधू परिवार,
कौशल्या आदि माताओने, शोकतणो नहि पार । २७ ।
पछे गुरु वसिष्ठ आवी सहुने, समजाव्या ते दिन,
सहु जन केरो शोक समाव्यो, कहीने ज्ञानवचन । २८ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

ज्ञान उपदेशे करीने सहुने, समजाव्यां मुनिराय रे,
एम दिवस केटला वही गया, शुं करता हवा रघुराय रे । २९ ।

* * *

मघवा-पति इन्द्र के प्रासाद में रह गया। समस्त देव मिलकर उसकी आज्ञा में रहकर तत्परता से उसकी सेवा करने लगे। २३। अब लक्ष्मण के जाने पर रघुपति राम को मन में बहुत शोक हो गया। उसके लावण्य और गुण-स्नेह का स्मरण करते हुए वे रुदन करते रहते। २४। भरत, शत्रुघ्न आदि सबकी आँखों से (अश्रु-) जल बहता रहता। अनन्तर गुरु वसिष्ठ ने उनको चुप कर रखा और ढाढ़स बँधाते हुए समझा दिया। २५। अब अयोध्यापुरी में लक्ष्मण के त्याग को सब जान गये, तो सब स्त्री-पुरुष रुदन करने लगे। (उन्हें जान पड़ा कि) इससे बड़ा कलंक लग गया है। २६। अन्तःपुर में रानियाँ तथा पुत्र-वधुएँ तथा परिवार की अन्य स्त्रियाँ रोती थीं। कौसल्या आदि माताओं के शोक का कोई पारावार नहीं था। २७। अनन्तर उस दिन गुरु वसिष्ठ ने आकर सबको समझा दिया और ज्ञान-युक्त वचन कहकर सब लोगों के शोक का शमन कर दिया। २८।

मुनिराज वसिष्ठ ने ज्ञानोपदेश द्वारा सबको समझा दिया। इस प्रकार कितने ही दिन बीत गये। अब (मैं कहूँगा कि) रघुराज ने (तदनन्तर) क्या किया। २९।

* * *

अध्याय—९४ (राम-कौसल्या-संवाद)

राग सोरठ

हावे एक समे रघुनाथजी आव्या, कौशल्याने द्वार,
मात पासे आवी बेठा, करता वात विचार। १ ।
त्यारे कौशल्याजी बोलियां, सुणो राम कहुं एक वात,
हावे नथी गमतुं मुजने, आ घर विषे साक्षात्। २ ।
जे जानकी कुलवधू मारी, लक्ष्मण सरखो पुत्र,
ते मुने मूकीने गयां, लागे उदासी घरसूत्र। ३ ।
सौ लोक कहे छे ते खरुं, में जाणियुं निरवाण,
संसारमां सुख जेटलुं, दुःख तेटलुं परमाण। ४ ।
हे राम ? हावे शुं करुं ? अकळाय मारुं मन,
नथी जंप वळतो जीवने, भावे नहि जळ-अन्न। ५ ।
हजु प्राण मारो जाय नहि, शुं रह्यो जोवा दुःख ?
हावे धीरज शी वाते धरुं ? शुं रह्युं घरमां सुख ?। ६ ।
एवुं कहीने रोवा लाग्यां, मात जेणी वार,
त्यारे घणी आश्वासना करीने, बोल्या जुगदाधार। ७ ।

अध्याय—९४ (राम-कौसल्या-संवाद)

अब एक समय रघुनाथ राम कौसल्या के द्वार पर अर्थात् भवन में आ गये। वे माता के पास आकर बैठ गये और बातचीत करने लगे। १। तब कौसल्या बोली, 'राम, सुनो, एक बात कहती हूँ। अब मुझे इस घर में प्रत्यक्ष (अर्थात् सचमुच) अच्छा नहीं लगता। २। जो जानकी मेरी पुत्र-वधू थी, लक्ष्मण जैसा जो पुत्र था, वे मुझे छोड़कर चले गये, तो (अब) मुझे घर-बार (घर-गिरस्थी) उदास लग रहा है। ३। सब लोग कहते हैं, वह सच्चा है, यह मैं अन्त में जान चुकी हूँ। संसार में जितना सुख होता है, दुःख भी उतने ही प्रमाण का होता है। ४। हे राम, मैं अब क्या करूँ ? मेरा मन भय-भीत हो रहा है। फिर न जीव को शान्ति मिल रही है, न अन्न-जल अच्छा लग रहा है। ५। अभी मेरे प्राण नहीं जा रहे हैं, क्या वे (और) दुःख देखने को रह गये है ? अब मैं किस बात से धैर्य धारण करूँ ? घर में क्या सुख रह गया ?'। ६। जिस समय ऐसा कहकर माता रोने लगी, तब उसे बहुत आश्वस्त करते हुए जगदाधार राम बोले। ७। 'हे माता, दुःख किसलिए कर रही हो। यह संसार

हे मात, दुःख शाने धरो ? ए अशाश्वत संसार,
सहु रण संबंधे मळे आवी, पुत्र ने परिवार। ८ ।
ज्यम वृक्ष उपर पक्षी बेसे, निशाए निरवाण,
ते प्रभाते सहु ऊडी जाये, ज्यहां त्यहां परमाण। ९ ।
वळी नावमां आवी मळे, एकठां बेसे त्यांहे,
ते पार उतरीने पळाये, पृथक् मारगमांहे। १० ।
महा पर्वमां तीरथ विषे, टोळे मळे सौ जन,
ते पंच रात्री पछी कोईनुं, थाय नहि दरशन। ११ ।
ए प्रकारे आ जगतमां छे, गृहस्थनो वहेवार,
सहु पूरव संचे मळे आवी, सहोदर नर नार। १२ ।
जेनी अवध पूरी थई तेणे, क्षणु नव रहेवाय,
तेनी साथे कोईए जवाय नहि, मानजो साचुं माय। १३ ।
आ देह जूठी सर्वथा, देहतणा जूठा भोग,
ए स्वपन जेवुं जाणजो, सुख दुःख योग वियोग। १४ ।
व्यतिरेक आत्मा ए थकी, ते सदा छे सुखरूप,
प्रपंचमां पडतो नथी, चैतन्य साक्षी अनुप। १५ ।

अशाश्वत है। ऋण-सम्बन्ध से सब पुत्र तथा परिवार आकर मिल जाते हैं। ८। जिस प्रकार निश्चय ही रात में वृक्ष पर पक्षी बैठते हैं, और प्रभात काल में उड़ जाते हैं. उसी प्रकार जहाँ-तहाँ यह बात प्रमाणभूत हो जाती है। ९। इसके अतिरिक्त (यात्री) नाव में आकर (एक-दूसरे से) मिल जाते हैं, वहाँ इकट्ठा बैठ जाते हैं, परन्तु पार उतरकर वे अलग-अलग मार्ग पर चले जाते हैं। १०। महान पर्व पर तीर्थ-क्षेत्र में सब लोग समूह में मिल जाते हैं, परन्तु पाँच रातों के पश्चात् किसी के भी दर्शन नहीं होते। ११। इस प्रकार, इस जगत् में गृहस्थ का व्यवहार होता है। पूर्व (कर्म के) संचय से आकर सहोदर (भाई-बहन), स्त्री-पुरुष मिल जाते हैं। १२। जिसकी (पूर्व-निर्धारित) अवधि पूर्ण हो गयी हो, उससे क्षण (भर भी अधिक) नहीं रहा जाता। उसके साथ कोई भी नहीं जाता। हे माता, इसे सत्य मान लो। १३। यह देह सब प्रकार से मिथ्या है; देह के भोग भी मिथ्या हैं। इस सुख-दुख को, संयोग-वियोग को स्वप्न जैसा समझो। १४। (परन्तु) इससे आत्मा भिन्न है। वह सदा सुख-रूप है। वह प्रपंच में नहीं पड़ता (उलझता)। वह अनुपम रूप से चैतन्य का साक्षी बना रहता है'। १५। तब कौसल्या ने कहा, 'हे

त्यारे कौशल्या कहे : रघुपति, हुं प्रश्न पूछुं एक,
आ देह आत्मा एक छे, के देह थकी व्यतिरेक । १६ ।
सुख दुःख थाये देहने, के जीवने कहो राम,
मरण पामे देह त्यारे, जीव रहे कोण ठाम ? । १७ ।
संबंध आत्मा देहतणो, ज्यारे नथी रघुराय,
त्यारे दुःखथी क्यम शोक पामे ? सुखे क्यम हरखाय ? । १८ ।
शीत उष्ण ने क्षीण वृद्धि, क्षुधा तृषा पुण्य पाप,
ते मानी ले छे जीव ए, क्यम तपे छे परिताप ? । १९ ।
ते माटे देह आत्मातणो, मने कहो जथारथ भेद,
जे थकी शांति थाय मुज मन, ऊपजे निर्वेद । २० ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

निर्वेदथी अज्ञान जाये, थाये शांति मन रे,
एवां वचन मातनां सांभळी, पछे बोल्या श्रीभगवन रे । २१ ।

* * *

रघुपति, मैं तुमसे एक प्रश्न करती हूँ। यह देह और आत्मा एक हैं अथवा देह से (आत्मा) भिन्न है । १६ । हे राम, यह कह दो कि सुख-दुःख देह को होता है अथवा जीव को होता है। (जब) देह मौत को प्राप्त हो जाती है, तो जीव किस स्थान पर रहता है । १७ । हे रघुराज, जब कि आत्मा और देह का कोई सम्बन्ध नहीं है, तब दुःख से हम शोक को क्यों प्राप्त हो जाते हैं और सुख से आनन्दित (क्यों) हो जाते हैं ? । १८ । शीत और उष्णता, क्षीणता और वृद्धि, क्षुधा और तृषा, पुण्य और पाप, इन्हें जीव क्यों मान लेता है ? क्यों वह परिताप से तप्त हो जाता है। इसलिए मुझे देह और आत्मा का यथार्थ अन्तर बता दो, जिससे मेरे मन को शान्ति हो जाए और निर्वेद उत्पन्न हो जाए । १९-२० ।

निर्वेद से अज्ञान चला जाता है और मन को शान्ति (अनुभव) हो जाती है।' अपनी माता के ऐसे वचन सुनने के पश्चात् श्रीभगवान राम बोले । २१ ।

* * *

अध्याय—९५ (राम द्वारा कौसल्या को ज्ञानोपदेश प्रदान करना)

राग धन्याश्री

रघुपति बोल्या : सुणिये मातजी, प्रश्ननो उत्तर कहुं साक्षात् जी,
आदिपुरुष जे प्रथम एक जी, ते थकी प्रगट्या जीव अनेक जी । १ ।

ढाळ

अनेक जीव उदे थया, तेनो कहुं विस्तार,
ज्यम सूरजनुं प्रतिबिंब जळमां, स्थूळ सूक्ष्म सार । २ ।
एम आदिपुरुषे इक्षणा करी, माया उपर ज्यांहे,
विकार पामी प्रकृति, महत्तत्त्व प्रगट्युं त्यांहे । ३ ।
महत्तत्त्वथी अहंकार त्रिगुणी, सत्त्व रज तम जाण,
ते त्रणे गुणथी विश्व सरवे, ऊपन्युं निरवाण । ४ ।
भूत पंचे तमोगुणना, पृथ्वी जळ आकाश,
तेज वायु पंच मळीने, थयो देह प्रकाश । ५ ।
हावे रजोगुणथी इंद्रियो दश, ऊपनी निरवाण,
मन बुद्धि चित्त अहंकार आशय, सतो गुणथी जाण । ६ ।
शब्द स्पर्श रस रूप गंध, ए विषय मात्रा पंच,
चोवीश तत्त्व मळी बंधायो, देह जड परपंच । ७ ।

अध्याय—९५ (राम द्वारा कौसल्या को ज्ञानोपदेश प्रदान करना)

रघुपति राम बोले, ' हे माता, सुनिए । मै (तुम्हारे) प्रश्न का प्रत्यक्ष उत्तर देता हूँ । आदि पुरुष जो (सर्व-) प्रथम (आद्य) तथा एकमेव हैं, उनसे अनेक जीव प्रकट हो गये । १ ।

(जो) अनेक जीव उदित अर्थात् उत्पन्न हुए, उनके बारे में विस्तार-पूर्वक कहता हूँ । जिस प्रकार सूरज का पानी में स्थूल अथवा सूक्ष्म सुन्दर प्रतिबिम्ब होता है, उसी प्रकार आदिपुरुष ने जहाँ माया के विषय में इच्छा (अनुभव) की, तब वहाँ प्रकृति विकार को प्राप्त हो गयी और उससे महत् तत्त्व प्रकट हो गया । २-३ । समझ लो कि उस महत् से अहंकार तथा सत्त्व, रजस् और तमस् नामक तीन गुण प्रकट हो गये । उन तीन गुणों से अन्त में यह समस्त विश्व उत्पन्न हो गया । ४ । तमोगुण से उत्पन्न पंच (महा-) भूत हैं । उन पृथ्वी, जल, आकाश, तेज और वायु नामक पाँचों (महाभूतों) से मिलकर देह प्रकट हो गयी । ५ । अब अन्त में रजोगुण से दस इन्द्रियाँ उत्पन्न हो गईं । (फिर) मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, इच्छा को सत्त्व गुण से उत्पन्न समझो । ६ । शब्द, स्पर्श, रस,

पछे चतुरदश देवता मूक्या, इंद्रियोने स्थान,
पण देह चैतन्य नव थयो, रह्यो अचेतन जडवान। ८।
पंचाशएकुन वायु मूक्या, तोये न ऊठ्युं स्वराट,
पछे प्रवेश्या भगवान तेमां, थयो चैतन्य घाट। ९।
प्रतिबिंब तेमां ब्रह्मनुं, जे जीव चैतन्य अंश,
तेणे करी चैतन्य थयो, आ देह जड अवतंश। १०।
ज्यम कोटी घट जळना भर्या, तेमां सूरज भासे एक,
एम एक ब्रह्मनी चैतन्यशक्ति, थया जीव अनेक। ११।
एम अनादि काळनी बांधी, कळा एवी जाण,
तेणे करीने थाय छे, आ विश्व चारे खाण। १२।
अजर अमर ए जीव छे, चैतन्य रूप अखंड,
नथी नाश थातो कदापि, पडतां अशाश्वत खंड। १३।
ते जीव नखशिख रह्यो व्यापी, देहमांहे अरूप,
ए देहतणा अध्यासथी, पोते थयो तद्रूप। १४।

रूप, गन्ध—ये इन्द्रियों के पाँच विषय हैं। इन कुल चौबीस तत्त्वों से मिलकर यह जड़ प्रपंच-युक्त देह बाँधी अर्थात् रची गयी। ७। अनन्तर इन्द्रियों के स्थानों पर चौदह देव रखे (गये), फिर भी देह चैतन्य-स्वरूप नहीं हो गयी, वह तो अचेतन तथा जड़ता गुण से युक्त बनी रही। ८। फिर उनचास वायु रख दिये (गये), फिर भी (जड़) विश्व ऊपर नहीं उठ सका। (इसलिए) अनन्तर (स्वयं) भगवान (ब्रह्म) उसमें प्रविष्ट हो गये, तो वह घाट (आकृति) चैतन्य (-मय) हो गया। ९। उसमें जो ब्रह्म का प्रतिबिम्ब है, वह जीव है, चैतन्य (-स्वरूप ब्रह्म) का अंश है। उससे यह जड़-शिरोमणि देह चैतन्य (-मय) हो गयी। १०। जिस प्रकार कोटि-कोटि घट पानी से भरे हों, तो उनमें एक ही सूर्य करोड़ों रूपों में दिखायी देता है—अर्थात् करोड़ों प्रतिबिम्ब होने पर भी सूर्य एक मात्र होता है, उसी प्रकार एक (-मेव) ब्रह्म की चैतन्य शक्ति से अनेक (प्रतिबिम्ब-स्वरूप) जीव हो गये हैं। ११। समझ लो, इस प्रकार यह अनादि काल से निर्मित ऐसी कला है। उससे चार खानों से युक्त यह विश्व हो गया है। १२। यह जीव अजर, अमर, चैतन्य-रूप तथा अखण्ड है। (इस) अशाश्वत (देह) में खण्ड पड़ जाने पर भी (देह के नष्ट हो जाने पर भी) उसका कदापि नाश नहीं होता। १३। वह जीव, जो अरूप अर्थात् निराकार, अदृश्य है। देह में नख से शिख तक व्याप्त रहता है, यह उसके मिथ्या आरोप से स्वयं उससे तद्रूप हो गया है। १४। उस जड़

ते जड चैतन्यनी ग्रंथिए करी, थयो उदे अहंकार,
त्यारे अहंकर्ता मान्युं जीवे, देहतणो वहेवार । १५ ।
अहंकृतिरूपी मने, वश करियो सदा लयलीन,
दश इंद्रियोना विषे देखाडी, कर्यो छे महा दीन । १६ ।
ते विषय माटे कर्म बहुविध, करावे छे मन,
ए कुसंगे करी मुक्त आत्मा, पामियो बंधन । १७ ।
चित्त विषयमांहे मळी गयुं, विषय चित्तमां तद्रूप,
ज्यम लोह चुंबकने ग्रहे, एम परस्पर अनुरूप । १८ ।
शीत उष्ण ने क्षीण वृद्धि, देहतणो जे धर्म,
अध्यासथी ए मानी ले छे, पीडा पामे पर्म । १९ ।
क्षुधा पिपासा प्राण मननो, धर्म हर्ष ने शोक,
ते मानी ले छे जीव पोते, बंध ने वळी मोक्ष । २० ।
ए प्रकारे आ जगत सरवे, पड्युं मायामांहे,
ते माटे देहनो धर्म सरवे, मानी ले छे तांहे । २१ ।

(-स्वरूप देह) तथा चैतन्य (-स्वरूप जीव) की ग्रन्थि से (मेल से) अहंकार का उदय हो गया। तब जीव ने देह के व्यवहार का अपने आपको कर्ता समझ लिया। १५। इस अहंकृति ('मैं कर्ता हूँ' इस भावना-स्वरूप) से मन ने उसे अपने वश कर लिया और वह सदा उसमें लयलीन (पूर्णतः विलीन, मग्न) हो जाता है। उस (मन) ने उस (जीव) को दसों इन्द्रियों के विषय दिखाकर बहुत दीन कर दिया है। १६। उन विषयों के लिए यह मन बहुत-से कर्म करा देता है। (इस प्रकार की) कुसंगति से मुक्त (आत्मा, जो वस्तुतः मुक्त है, वह) बन्धन को प्राप्त हो जाता है। १७। जिस प्रकार लोहा चुम्बक (की ओर आकृष्ट होकर उसी) को पकड़कर रखता है, उस प्रकार ये परस्पर अनुरूप (हुए रहते) हैं। अर्थात् चित्त विषयों में मिल गया है और विषय चित्त में तद्रूप (होकर रह गये) हैं। १८। शीत और उष्णता, क्षीणता और वृद्धि (वस्तुतः) जो देह के धर्म हैं, उन्हें मिथ्या आरोप से (जीव) अपने मान लेता है और परम पीड़ा को प्राप्त हो जाता है। १९। भूख, प्यास, हर्ष और शोक, बन्धन और फिर मोक्ष (वस्तुतः) शरीर के धर्म हैं, (फिर भी) जीव स्वयं उन्हें अपने (धर्म) मान लेता है। २०। इस प्रकार, यह समस्त जगत् माया में पड़ा हुआ है। इसलिए जीव देह के समस्त धर्मों को वहाँ अपने ही मान लेता है। २१। हे माता, जब इस देह का भोग पूर्ण हो जाता है, तब जीव (उसमें से) मुक्त होकर निकल जाता है और जड़ देह

आ देह केरो भोग ज्यारे, पूरण थाये मात,
त्यारे जीव मूकी नीकळे, जड देह पडे साक्षात् । २२ ।
नव तत्त्वनुं वासना लिंग, ते जीव साथे जाय,
करम संचित होय जेवां, देह तेवो थाय । २३ ।
ते नवीन देह पामी करी, भोगवे संचित कर्म,
जे वरणमांहे अवतरे, आचरे तेवो धर्म । २४ ।
एम जन्म मरण प्रवाह केरो, न आवे वळी पार,
अज्ञानथी घणुं आथडे, भूल्यो स्वरूप विचार । २५ ।
ज्यम राजपुत्र भूलो पडे, मळ्यो भिखारीनो संग,
तेनी संगे भिक्षा मागतो, भूळी गयो कुळ रंग । २६ ।
एम जीव ईश्वरअंश छे, चैतन्यघन साक्षात्,
ते विषय संगे दीन थई, दुःख पामतो बहु भात । २७ ।
ए जीव केरो जीव छे, जे परमात्मा अविनाश,
ते अंतरजामी साक्षीवत् छे, रहे सदा एनी पास । २८ ।
जे ब्रह्म पूरण प्रकाशक छे, नित्य मुक्त संबंध,
तेने जाणतो नथी जीव ए, थयो मूरख विषय अंध । २९ ।

प्रत्यक्ष छूट जाती है । २२ । नौ तत्त्वों की वासनात्मक लिंग देह जीव के साथ चली जाती है । जैसे कर्म संचित होते हैं, उनके अनुसार देह फिर से उत्पन्न हो जाती है । २३ । (फिर) जीव उस नयी देह को प्राप्त करके अपने संचित कर्म (के अनुसार) भोग करता रहता है । जिस वर्ण में वह अवतरित हो जाता है, वैसे (वर्णानुसार) धर्म का वह आचरण करता है । २४ । इस प्रकार जन्म और मरण का प्रवाह (चलता रहता) है । फिर उसका कोई पार (अन्त) नहीं हो आता । वह अज्ञान से भटकता रहता है । वह अपने (मूल) स्वरूप के विचार को भूल गया है । २५ । जिस प्रकार किसी राजपुत्र को भिखारी की संगति मिल गयी हो, तो वह अनुचित मार्ग पर चल जाता है, उसके साथ भिक्षा माँगता रहता है और अपने कुल और प्रतिष्ठा को भूल जाता है, उस प्रकार जीव ईश्वर का अंश है, साक्षात् चैतन्य-घन है, फिर भी विषयों की संगति से वह दीन होकर बहुत प्रकार से दुःख को प्राप्त हो जाता है । २६-२७ । जो अविनाशी परमात्मा है, वह इस जीव का जीव है । वह अन्तर्यामी (परमात्मा) साक्षी की भाँति सदा इसके पास रहता है । २८ । जो ब्रह्म पूर्ण तथा (सबका) प्रकाशक और (समस्त) सम्बन्ध (रूपी बन्धनों) से नित्य मुक्त रहता है, उसे यह जीव नहीं जानता । वह तो मूर्ख तथा

वलण (तर्ज बदलकर)

विषय अंध नथी जाणतो, जे पासे रह्यो परिब्रह्म रे,
ए वचन सुणी रघुवीरनां, पछी माता पूछे मर्म रे। ३०।

विषयों (की आसक्ति) के कारण अन्धा हो गया है। २९।

वह विषयान्ध (जीव) उस परब्रह्म को नहीं जानता, जो (वस्तुतः उसके) पास रहा है।' रघुवीर राम के ऐसे वचन सुनकर फिर माता ने एक मर्म (-भरा प्रश्न) पूछा। ३०।

* * *

अध्याय—९६ (श्रीराम द्वारा कौसल्या को ज्ञानोपदेश देना)

राग विहाग

पूछे कौशल्याजी तेणी वार, सुणो राम कहुं निरधार,
जीवने थयो मायासंबंध, विषयवासनाए पाम्यो बंध। १।
ते मुक्त थयानो उपाय, मुजने कहो श्रीरघुराय,
जीव टळे जन्म ने मरण, जाय अज्ञाननुं आवरण। २।
मातानां सुणी वचन गंभीर, बोल्या समरथ श्रीरघुवीर,
जीवने छूटवानो उपाय, सावधान थई सुणो माय। ३।
सत्संग करे निरधार, तेथी समजे सरव विचार,
सत्संग छे सरवनुं मूळ, ज्ञानभक्ति वैराग्यनुं कुळ। ४।

अध्याय—९६ (श्रीराम द्वारा कौसल्या को ज्ञानोपदेश देना)

उस समय कौसल्या ने (यह कहकर) पूछा, 'हे राम, सुनो, मैं निश्चय-पूर्वक कहती हूँ कि जीव का माया से सम्बन्ध (स्थापित) हो गया और वह विषय-वासना द्वारा बन्धन को प्राप्त हो गया। १। हे रघुराज, उसके (उस बन्धन से) मुक्त हो जाने का उपाय मुझे बता दो। (मुझसे यह भी कहो कि) जीव का जन्म और मरण (कैसे) टल जाएगा।' । २। अपनी माता के ये गम्भीर वचन सुनकर समर्थ श्रीरघुवीर बोले, 'हे माता, जीव के मुक्त हो जाने का उपाय सावधान होकर सुन लो। ३। कोई निर्धार-पूर्वक सत्संग कर ले, तो उससे (इस सम्बन्ध में) सब विचार समझ में आ जाएँगे। सत्संग (इस मुक्ति-सम्बन्धी) सब (मार्गों) का मूल है। वह ज्ञान, भक्ति और वैराग्य का (मूल) कुल है (अर्थात् सत्संग रूपी कुल में ज्ञान, और भक्ति तथा वैराग्य

संत लक्षण पूरण जेह, कहुं विस्तारीने तेह,
स्थूळ सूक्ष्म पावन तन, गुणसागर गर्व न मन । ५ ।
राग द्वेष ने ममता मान, जेने शत्रु मित्र समान,
निःस्पृही नहि तृष्णा रोष, स्तुतिनिंदारहित निर्दोष । ६ ।
जेने अखंड ज्ञानप्रकाश, जाणे मुजने सर्वावास,
कीडी कुंजर ब्रह्मा भूप, जाणे सरवे मारा रूप । ७ ।
टळ्यो जक्ततणो आभास, हुं मारुं ए बंन्यो नया नाश,
वैरागेथी कर्यो दृढ जोग, कागविष्ठा जेवो जाणे भोग । ८ ।
कर्युं वासना मूळ छेदन, विषयथी मोह न पामे मन,
माया कृत्य प्रपंच प्रमाणे, सम लोष्ठा कांचन जाणे । ९ ।
करे एकांत भक्ति मारी, जेनुं चित्त सदा अविकारी,
दुःख सुख हरख ने शोक, जाणे समान सरवे लोक । १० ।

उत्पन्न होते हैं । ४ । (अब) सन्त के जो सम्पूर्ण लक्षण हैं, उन्हें मैं विस्तार-पूर्वक कहता हूँ । उसके पंचमहाभूतात्मक स्थूल शरीर और वासनात्मक सूक्ष्म लिंग शरीर दोनों पवित्र होते हैं । गुणों का (मानो) सागर होते हुए भी उसके मन में अभिमान नहीं होता । ५ । उसे किसी के प्रति न आसक्ति होती है, न द्वेष होता है । उसे किसी के प्रति ममता नहीं होती, न अपने प्रति मान होता है । उसे किसी के बारे में तृष्णा तथा क्रोध नहीं होता । वह स्तुति और निन्दा (के प्रभाव) से रहित होता है (या वह किसी की न स्तुति करता है, न निन्दा ।) वह निर्दोष होता है । ६ । उसके लिए अनवरत ज्ञान का प्रकाश ही (उत्पन्न) हो जाता है । वह मुझमें सबका निवास मानता है । वह कीड़ी, हाथी, ब्राह्मण, राजा, सबको मेरे ही रूप मानता है । ७ । उसके लिए जगत का आभास नष्ट हो गया है । मैं-मेरा भाव, अर्थात् यह मैं हूँ, यह मेरा है, —यह (संकुचित या आत्म-केन्द्रित) भाव उसके लिए नष्ट है । वह वैराग्य से दृढ़ योग करता है; भोग को कौए की विष्ठा जैसा मानता है । ८ । उसने वासना की जड़ (-मूल) को काट डाला है । (अतः) विषय-वासना के कारण उसका मन मोह को प्राप्त नहीं हो जाता । वह संसार तथा उसमें किये कार्य-व्यापार को मायावी तथा मिथ्या प्रपंच के समान समझता है; लोह और कंचन—(दोनों) को समान मानता है । ९ । जो मेरी ऐकान्तिक (एकनिष्ठ) भक्ति किया करता है, जिसका चित्त सदा (काम-क्रोध आदि) विकारों से रहित (मुक्त) रहता है, जो सुख और दुख को हर्ष और शोक को, जो (छोटे और बड़े) समस्त लोगों को समान

ज्ञानी सम दम साधनवंत, शब्दब्रह्मनो जाणे अंत,
परब्रह्म परायण संत, तेने कहीए मोटो महंत । ११ ।
करुणा रस भरियां नेत्र, पर उपकृतिनुं क्षेत्र,
दयावंत उदार प्रमुख, आपे शरणागतने सुख । १२ ।
आत्मलोभे करी संतुष्ट, ब्रह्मआनंद रसमां पुष्ट,
एवां लक्षण होय जेने, मारो वैष्णव कहीए तेने । १३ ।
विषयसंगथी मुक्तनी जुक्त, ते माटे कहीए जीवन्मुक्त,
एवा संतशुं लागे रंग, तेनुं नाम कहीए सत्संग । १४ ।
तेने शरणे जाये जे जन, करे सेवा तेनी शुद्ध मन,
विषयी पामर होये जंत, तेने समजावे दयावंत । १५ ।
मारां जन्म ने कर्म चरित्र, प्रथमे ते सुणावे पवित्र,
मारा गुण गाये घणुं प्रीत्ये, मारां नाम स्मरण करे नित्ये । १६ ।
मारी मूर्तितणी करे सेव, वळी चंदन अरचा एव,
थाय अनन्यपणे मुज दास, चित्तमां नहि अन्य उपास । १७ ।

समझता है, जो ज्ञानी होता है, शम (शान्ति) और दम (मनो-निग्रह, इन्द्रिय-दमन) के साथ साधनावान अर्थात् साधना करनेवाला होता है, जो शब्द-ब्रह्म के अन्त (पार को, शब्दों से परे स्थित रहस्य) को जान चुका है (अनुभव कर चुका है), उस परब्रह्म-परायण (व्यक्ति) को सन्त कहें, महान महात्मा कहें । १०-११ । उसके नेत्र करुणा (के कारण उत्पन्न रस अर्थात अश्रु-) जल से भरे रहते हैं; परोपकार ही उसका (कार्य-) क्षेत्र होता है । वह दयावान् उदार व्यक्ति प्रमुखतः शरणागत को सुख प्रदान करता है । १२ । वह आत्मिक लाभ से सन्तुष्ट और ब्रह्मानन्द रूपी रस से पुष्ट होता है । जिसमें ऐसे लक्षण हों, उसे मेरा वैष्णव (-भक्त) कहें । १३ । वह विषय (-सुख) की संगति की मुक्ति से युक्त, अर्थात् विषय-सुख की आकांक्षा से मुक्त होता है, इसलिए उसे जीवन-मुक्त कहे । इस प्रकार के सन्त के प्रति जो प्रेम होता है, उसका नाम सत्संग कहें । १४ । उस (सन्त) की शरण में जो मनुष्य जाता है, और उसकी शुद्ध मन से सेवा करता है, उसे तथा जो जीव (मनुष्य) विषयी और पामर होते हैं, उन्हें वह दयालु (सन्त) समझा देता है । १५ । वह सर्व-प्रथम मेरे जन्म, कर्म और पावन चरित्र (के विषय में) उन्हें सुनाता है । वह बहुत प्रेम से मेरे गुण गाता है, मेरे नाम का नित्य स्मरण करता है । १६ । वह मेरी मूर्ति की सेवा करता है, चन्दन (आदि) से अर्चना करता है । वह मेरा अनन्य भाव से दास होता है, अपने चित्त में किसी अन्य के आश्रय

हुं सदा जीवसंगी वखाणे, एवुं मानी सखा मुने जाणे,
देह इंद्रियो प्राण ने मन, सुत दारा धाम ने धन। १८।
करे मुजने समर्पण सर्व, मुने सेवे सदा गत गर्व,
ए छे नवधा भक्ति प्रकार, आचरे अनुक्रमथी सार। १९।
गुरु शास्त्रतणो विश्वास, निश्चे मानी करे अभ्यास,
मुने अंतरजामी जाणे, मारी मूर्ति ध्यानमां आणे। २०।
पामे विश्व थकी वैराग, करे सकळ कुसंगनो त्याग,
मन जीते तजी संकल्प, शम लक्षण पामे स्वल्प। २१।
निर्विषय इंद्रियो करे जेह, दम साधन कहीए तेह,
मन इंद्रियो वृत्ति विरामे, उपराम तदा चित्त पामे। २२।
सहे सुख दुःख द्वंद्वसंबंध, बुद्धि आस्तिक श्रद्धाबंध,
सारासार विवेकनुं ज्ञान, आवे त्यारे थाय समाधान। २३।
षड् साधनसंपत्तिवंत, थयो त्यारे मुमुक्षु ए जंत,
ज्ञान पामवानो अधिकारी, थयो जीव तदा अविकारी। २४।

को प्राप्त नहीं होता। वह सदा मुझे अपने जीवन का साथी (-संगी) कहता है, ऐसा मानकर वह मुझे अपना समझता है। वह अपनी देह, इन्द्रियाँ प्राण और मन, पुत्र, घर और धन, सब (कुछ) मुझे समर्पित करता है और गर्व छोड़कर वह मेरी सेवा करता है। ये हैं भक्ति के नौ प्रकार। वह अनुक्रम से उनका भली भाँति आचरण करता है। १७-१९। गुरु और शास्त्रों का निश्चय-पूर्वक विश्वास करते हुए वह उसका अभ्यास करता है। वह मुझे अन्तर्यामी मानता है और मेरी मूर्ति को (स्थिर बुद्धि से) ध्यान में लाता है (रखता है)। २०। वह विश्व से वैराग्य को प्राप्त होता है, समस्त कुसंगति का त्याग करता है। (सब) संकल्पों का त्याग करके अपने मन को जीत लेता है और आसानी से शम (शान्ति) नामक लक्षण को प्राप्त हो जाता है। २१। जो अपनी इन्द्रियों को निर्विषय, अर्थात् इन्द्रियों को सुखोपभोग के विषयों से मुक्त रखता है, उसे दम (इन्द्रिय-दमन, मनो निग्रह) नामक साधना का साधक कहें। उसका मन इन्द्रियों की वृत्ति से विरक्त हो जाता है। उसका चित्त तब उपराम को प्राप्त हो जाता है। २२। वह सुख-दुख तथा द्वन्द्व-सम्बन्ध को सहन करता है, बुद्धि से वह आस्तिक तथा श्रद्धा से आबद्ध होता है। उसे सारासार विवेक का ज्ञान होता है; तब वह सावधान हो जाता है। २३। तब (समझिए कि उपर्युक्त) छः प्रकार की साधन-सम्पत्ति से युक्त वह जीव (मनुष्य) मुमुक्षु हो गया है। तब वह विकारों से रहित जीव

त्यारे ब्रह्मनुं रूप चेतन, थयो जाणवा जोग ए जन,
जाय सद्‌गुरु केरे शर्ण, करे सेवा ते शुभ आचर्ण। २५।
गुरु आपे ते ज्ञान अखंड, जाणे आत्मा ए पिंड ब्रह्मांड,
धन अंजन विद्यावन, आडरहित देखे ज्यम धन। २६।
एम विश्व न भासे तेने, गुरु ज्ञान ज आपे जेने,
ज्यम घरमांहे वस्तु होय, अंधारे नव देखे कोय। २७।
जुए दीपक प्रकटी ज्यारे, आवे करमां तत्क्षण त्यारे,
एम अंतरमां अविनाश, कह्यो चैतन्य साक्षी प्रकाश। २८।
गुरु ज्ञान करावे तेनुं, मोटुं भायग होये जेनुं,
ज्यां जुए त्यां मुजने देखे, हुं विना बीजुं अन्य न पेखे। २९।
जाणे व्यापक ज्यम आकाश, टळे देहइंद्रिनो अध्यास,
जीवनमुक्त थाये ते जन, को काळे नव पामे पतन। ३०।

(आत्म-) ज्ञान प्राप्त करने का अधिकारी हो गया है। २४। तब वह मनुष्य ब्रह्म के चैतन्य रूप को जान लेने योग्य हो गया है। (तदनन्तर) वह सद्‌गुरु की शरण में जाता है और उसकी सेवा स्वरूप शुभ आचरण करने लगता है। २५। जिस प्रकार, आँखों में (दिव्य) अंजन डालने पर मनुष्य (गुप्त) धन को बिना किसी ओट (पर्दे) के (स्पष्टतः) देख सकता है, उसी प्रकार, जब गुरु साधक को अखण्ड (ब्रह्म-) ज्ञान प्रदान करता है, तब वह विद्यावान (साधक) उस ज्ञान-धन रूपी अंजन के प्रभाव से, आत्मा द्वारा पिण्ड और ब्रह्माण्ड (के सच्चे स्वरूप) को, बिना किसी अवरोध के देखने लगता है। २६। इस प्रकार, जिसे गुरु ही ज्ञान देता है, उसे (यह) विश्व प्रत्यक्ष वस्तु के रूप में नहीं दिखायी देता (अर्थात् उसे यह भौतिक विश्व मिथ्या जान पड़ने लगता है)। जिस प्रकार, घर में वस्तु तो है, फिर भी उसे कोई अन्धकार में देख नहीं सकता; जब दीया प्रकट करके (अर्थात् दीया जलाने पर स्पष्ट रूप में) वह उसे देख सकता है, तब वह (वस्तु) उसके हाथ तत्क्षण आ जाती है। उस प्रकार जब गुरु ने स्पष्ट रूप में सर्वसाक्षी चैतन्य-स्वरूप (ब्रह्म) को कहा हो, तो वह (साधक) अविनाशी ब्रह्म को (अपने हृदय में) देखने लगता है। २७-२८। जिसका भाग्य बड़ा होता है, उसे गुरु उस ब्रह्म का ज्ञान कराते हैं। (फिर) वह जहाँ देखता है, मेरे अतिरिक्त किसी दूसरे को वह (वहाँ) नहीं देखता। २९। वह (तब) मुझे आकाश जैसा व्यापक समझता है, उसके लिए देह और इन्द्रियों-सम्बन्धी मिथ्या आभास टल जाता है। ऐसा वह मनुष्य जीवन-मुक्त हो जाता है; वह किसी भी समय पतन को

एवुं समजीने हे मात ! मुने आत्मा जाणो साक्षात्,
पुत्रभावनी बुद्धि टाळो, मने अंतरमांही निहाळो । ३१ ।
हुं छुं व्यापक अंतरजामी, गुणातीत ने गुणनो स्वामी,
सृष्टि उदय-पोषण-संहरता, हुं करुं पण रहुं छुं अकरता । ३२ ।
हुं छुं कारणरूप अनादि, को नथी जाणतुं मुज आदि;
हुं धरुं जन्म स्थापन धर्म, करी कर्मने रहुं छुं अकर्म । ३३ ।
एवो जाणी मने हे माय ! त्यजो पुत्र तणो अभिप्राय;
मनमांथी करो गृहत्याग, आणो विश्व उपर वैराग । ३४ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

वैराग पामो विश्वथी, जाणो मिथ्या जगदाभास रे;
एक आत्मा व्यापक जुओ सघळे, जे पूरण अखंड प्रकाश रे । ३५ ।

* * *

प्राप्त नहीं हो जाता । ३० । हे माता, ऐसा समझकर मुझे साक्षात् (परम-) आत्मा जान लो । (मेरे विषय में अपनी) पुत्रत्व की भावना छोड़ दो और मुझे अपने अन्तःकरण में देख लो । ३१ । मैं (वस्तुतः) सर्वव्वापक, अन्तर्यामी हूँ, गुणों के परे होते हुए भी गुणों का स्वामी हूँ। सृष्टि की उत्पत्ति, पोषण और संहार का कर्ता मैं हूँ । मैं यह करता हूँ, फिर भी मैं अकर्ता हूँ । ३२ । मैं (सबके लिए) कारण-स्वरूप हूँ, अनादि हूँ, मेरा आदि कोई भी नहीं जानता । मैं धर्म की स्थापना के लिए जन्म ग्रहण करता हूँ । कर्म करते रहने पर भी मैं अकर्मण्य रहता हूँ । ३३ । हे माता, मुझे ऐसा समझकर मेरे विषय में पुत्र की भावना का त्याग करो । मन में से घर का (-गिरस्थी-सम्बन्धी भावना का) त्याग करो और विश्व के प्रति वैराग्य (की भावना मन में) लाओ (अनुभव करो) । ३४ ।

विश्व से वैराग्य को प्राप्त हो जाओ और इस जगत् के आभास को (दिखायी देनेवाले रूप को) मिथ्या समझो । सब में उस एक (सर्व-) व्यापक (परम-) आत्मा को जान लो (देख लो), जो पूर्ण अखण्ड तथा (ज्ञान रूपी) प्रकाश (मात्र) है । ३५ ।

* * *

अध्याय—९७ (राम द्वारा समाधि योग का वर्णन)

राग धन्याश्री

कह्युं रघुपतिए जे निर्मळ ज्ञान जी, कौशल्याए ते धरियुं कान जी,
वळतां पूछे विचारी माय जी, कहो मुने निश्चे श्रीरघुराय जी। १ ।

ढाळ

रघुनाथ मुजने कहो निश्चे, आत्मा केरुं रूप,
ते जाणवानी कळा केवी, थाय लक्ष अनुप। २ ।
वळी चित्त चंचळ ठरे नहि, संकल्प करतुं एह,
आधार अवलंबन विना, क्षणमात्र रहे नहि तेह। ३ ।
त्यारे राम वळतुं बोलिया, हे अंब, कहुं निरवाण,
एके मने सुणजो तमो, महा धीरज राखी प्राण। ४ ।
मारा स्वरूपनुं ध्यान धरतां, अचंचळ चित्त होय,
ते ध्यान धरवा तणी रीति, कहुं तमने सोय। ५ ।
पवित्र सम भूमि विषे, एकांत स्थळनी मांहे,
पद्म आसन करीने, बेसवुं निश्चे तांहे। ६ ।

अध्याय—९७ (राम द्वारा समाधि योग का वर्णन)

रघुपति राम ने जो निर्मल (विशुद्ध आत्म-) ज्ञान है, वह कह दिया और माता कौसल्या ने वह ध्यान से सुना। (तदनन्तर) उसने फिर विचार करके कहा, 'हे रघुराज, मुझसे यह निश्चित रूप से कहो। १।

हे रघुनाथ, मुझे आत्मा के स्वरूप के बारे में निश्चित रूप से बता दो। उसे जान लेने की कला (पद्धति) कैसी है ? (आत्म-ज्ञान की प्राप्ति का वह अनुपम लक्ष्य (कैसे) सिद्ध हो जाएगा ? । २ । फिर चित्त तो चंचल है; (अतः) वह (किसी एक बात पर) ठहर नहीं पाता। वह संकल्प करता जाता है। वह बिना किसी आधार अथवा अवलम्बन के क्षण मात्र तक (स्थिर) नहीं रह पाता।' । ३ । तब राम फिर से बोले, 'हे अम्ब, मैं निश्चित रूप से कह रहा हूँ। उसे एकाग्र मन से तथा मन में बड़ा धीरज धारण करके सुन लेना। ४। मेरे स्वरूप का ध्यान धारण करने से चित्त स्थिर हो जाता है। (अब) मैं ध्यान धारण करने की रीति तुम्हें बताता हूँ। ५। किसी एकान्त स्थान में पवित्र समतल भूमि पर पद्मासन लगाकर निश्चय-पूर्वक वहाँ बैठना (होता) है। ६। जिन शब्द आदि को बाह्य इन्द्रियों के विषय कहते है, उनसे

बाह्य इंद्रिय शब्द आदे, विषय कहीए जेह,
ते समेटी अंतर विषे, लावीए वृत्ति तेह । ७ ।
पछे मन निःसंकल्पथी, प्राणायाम करवो तांहे,
प्रणव मंत्र थकी तदा, श्वास रोकवुं अंतरमांहे । ८ ।
अपान ऊंचो चढावीने, अंतर लेवो प्राण,
समान बंन्यो मेळवीने, स्थिर राखवा निरवाण । ९ ।
स्थिर थाय ज्यारे प्राण, त्यारे मंन निश्चळ होय,
वृत्ति न जाये बारणे, अंतर समाधि सोय । १० ।

अपनी वृत्ति को समेटकर अन्तःकरण में लगा दें । ७ । अनन्तर वहाँ (इस स्थिति में) मन की निःसंकल्प वृत्ति के साथ प्राणायाम[1] करना है । फिर तब प्रणव मंत्र से श्वास को अन्दर रोक लेना है । ८ । (तत्पश्चात्) अपान को ऊँचा अर्थात् ऊपर की ओर चढ़ाकर (तथा बाहर छोड़कर) अन्दर प्राण को लेना है । फिर उन दोनों (अपान और प्राण) को समान रूप से मिलाकर अन्त में उसे स्थिर रखना है । ९ । जब प्राण स्थिर हो जाता है, तब मन निश्चल हो जाता है । (फलतः) वृत्ति बाहर नहीं जाती । यह (अवस्था) अन्तर-समाधि अवस्था (कहाती) है । १० । जब वहाँ (उस अवस्था में साधक) पवन वृत्ति के रोध को प्राप्त हो जाता

१ **प्राणायाम-प्राण-अपान :** प्राण वस्तुतः पिण्ड-ब्रह्माण्ड का एक मूल तत्त्व है; जीव सृष्टि का नियमन करनेवाली वह चैतन्य स्वरूप शक्ति है । योगशास्त्र के अनुसार अष्टांग योग में से चौथा अंग है प्राणायाम । प्राणायाम में श्वास और निःश्वास की स्वाभाविक गति का नियमन करते है । इस दृष्टि से प्राणायाम मे 'प्राण' का सम्बन्ध श्वासोच्छ्वास प्रक्रिया की वायु से है । इस प्राण-वायु के पाँच भेद हैं, जिनमें से यहाँ 'प्राण' और 'अपान' का उल्लेख है । प्राणायाम की क्रिया में इन शब्दों से प्राण वायु के विशिष्ट भेद सूचित हैं । योग विद्या के अनुसार सिद्धि के लिए 'प्राण' और 'अपान' को सम करना आवश्यक है ।

इन पाँच प्राण-वायुओं में से प्राण-वायु (प्रथम भेद) सिर, छाती और कण्ठ तक रहता है तथा वह बुद्धि, हृदय और चित्त को सम्हालता है । अपान वायु (द्वितीय भेद) गुदा में रहता है और कटि, बस्ति (मूत्राशय), लिंग और जाँघ तक चलता है । इसी के आधार पर मल, मूत्र, वीर्य, रज और (स्त्रियों में) आर्तव तथा गर्भ आदि चलते हैं । उदान (तृतीय भेद) छाती में रहता है, और नासिका, नाभि और गले में चलता है । भोजन करना, छींकें, डकार और जँम्हाई जैसी क्रियाएँ इसी के आधार से चलती हैं । समान वायु (चतुर्थ भेद) नाभि में रहता है और कोष्ठ में रहते हुए अन्न को ग्रहण करने, पचाने और विरेचन की क्रिया का आधार है । व्यान (पंचम भेद) हृदय में रहता है और सारे शरीर में व्याप्त रहता है । उपक्षेपण, अपक्षेपण, पलकें गिराना आदि कार्य इसके बल चलते हैं । जब ये पाँचों वायु शरीर से निकल जाते हैं, तो प्राणान्त हो जाता है ।

मन पवनवृत्तितणो, ज्यारे रोध पामे त्यांहे,
त्यारे सिंहासन सोनातणुं, कल्पवुं अंतरमांहे । ११ ।
तेनी उपर अष्टदळ, कोमळ कमळ आसन,
त्यांहां मूर्ति मारी चतुर्भुज, शुभ श्याम सुंदर तन । १२ ।
चार आयुध मुगट कुंडळ, कडां कंकण हार,
कटीमेखळा मुद्रिका अंगद, चरण नेपुर सार । १३ ।
श्रीवत्स कौस्तुभ भृगुलांछन, पुष्प तुळसीमाळ,
सुगंध मृग - मद अरगजा, तिलक केसर भाल । १४ ।
मुख हास्य करुणामृत द्रवित, नासिका तीक्ष्ण जाण,
चारु चिबुक उदर ग्रीवा त्रिवली, अधर अरुण प्रमाण । १५ ।
बहु रंग शोभे अंग अंबर, पीतांबर परिधान,
आकरण नेत्र विशाळ भ्रूधनु, भुज प्रलंब आजानु । १६ ।

है, तब अन्त:करण में एक स्वर्ण-सिंहासन की कल्पना करनी है । ११ । (कल्पना करें कि) उस (सिंहासन) पर आठ पँखुड़ियों से युक्त एक कोमल कमल का आसन हो । वहाँ (उस आसन पर) मेरी चतुर्भुज शुभ श्याम-शरीरी सुन्दर मूर्ति (विराजमान) हो । १२ । (उस मूर्ति के चार हाथों में) चार आयुध[1] हों; वह मुकुट, कुण्डल, कड़े, कंकण, हार, कटि में मेखला, मुद्रिका, अंगद, चरणों में सुन्दर नूपुर धारण किये हुए हो । वह कौस्तुभ मणि, श्री वत्स[2] भृगु-लांच्छन, फूल, तुलसी-माला, सुगन्धित कस्तूरी तथा अरगजा का लेपन धारण किये हो । भाल पर केसरिया तिलक लगा हुआ हो । मुख हास्य से युक्त तथा करुणामृत से द्रवित हुआ हो । समझ लो कि नासिका तीक्ष्ण अर्थात् नुकीली हो । उसके सुन्दर चिबुक, विशाल उदर, शंख-सी ग्रीवा, त्रिबली और लाल से होंठ हों । १३-१५ ।

---

१ चार आयुध—भगवान् विष्णु के चार आयुध हैं—शंख, चक्र, गदा और पद्म ।

२ श्रीवत्स—भृगु-लांछन: एक समय स्वायम्भुव मनु द्वारा किये जानेवाले यज्ञ में यह विवाद उपस्थित हुआ कि ब्रह्मा, विष्णु और शिवजी मे कौन श्रेष्ठ हैं । अन्त में इसका पता लगाने का काम भृगु ऋषि को सौंप दिया गया । परीक्षा करने के हेतु भृगु पहले शिवजी के यहाँ और फिर ब्रह्मा के यहाँ गये; लेकिन नन्दी ने शिवजी से उन्हें मिलने नहीं दिया; ब्रह्मा ने उन्हें नमस्कार नही किया । इस प्रकार अपमानित होकर वे विष्णु के यहाँ आ गये । उस समय विष्णु सोये हुए थे; अत: क्रोधपूर्वक भृगु ने उनके सीने पर लात जमायी । विष्णु जग गये और उन्होंने पूछा—आपके पाँव में चोट तो नही आयी ? विष्णु की यह विनम्रता देखकर भृगु ने उन्हे सर्वश्रेष्ठ देव घोषित किया । भृगु के लत्ता-प्रहार से सीने पर बने हुए चिह्न को विष्णु ने सदा के लिए धारण किये रखा है । श्वेत बालों के भँवर-से इस चिह्न को श्रीवत्स, श्रीवत्स चिह्न, भृगु-लांछन आदि नामों से जाना जाता है ।

उदार उदर त्रिरेख शोभे, विशाळ हृदय सुरंग,
गंभीर नाभि कटी सूक्ष्म, कोमळ जानु जंघ । १७ ।
पद कमळ नख छबी चंद्रमा, कोटी तीरथनुं धाम,
अंकुश ध्वज आदे षोडश, चिह्न पूरणकाम । १८ ।
कोटी काम स्वरूप, कोटी सूरज तेज प्रकाश,
विद्युत कोटी चपळता, शीत कोटी चंद्रविलास । १९ ।
नखशिख अंगो अंगने, अवलोकवुं एक मन,
वृत्ति स्वरूपाकार थाये, स्मृति रहे नहि तन । २० ।

शरीर विविध प्रकार से शोभायमान हो। अंग पर पीताम्बर नामक वस्त्र धारण किया हुआ हो। नेत्र आकर्ण (कानों तक फैले हुए) विशाल हों; भृकुटि धनुष-सी हो। भुज आजानु (घुटनों तक) दीर्घ हों। १६। उदार (-विशाल) उदर पर त्रिरेख (त्रिबली) शोभायमान हो। हृदय-स्थल विशाल और सुन्दर हो। नाभि गम्भीर और कटि पतली हो; जानु और जंघा (-प्रदेश) कोमल हों। १७। चरण कमल-से (कोमल) हों; नखों की छवि (कान्ति) चन्द्रमा की-सी हो। वे (चरण) करोड़ों तीर्थ-स्थलों के धाम हों। उनमें अंकुश, ध्वज आदि (भक्तों की) कामनाओं को पूर्ण करनेवाले सोलह चिह्न हों।[1] उसका स्वरूप कोटि-कोटि कामदेवों के स्वरूप का-सा हो। उसका प्रकाश (-युक्त) तेज कोटि-कोटि सूर्यों के तेज-सा हो। उसमें करोड़ों विद्युतों की चपलता हो, करोड़ों चन्द्रों के विलास (-चाँदनी) की शीतलता हो। ऐसी उस मूर्ति के अंग-अंग को एकाग्र मन से देखते रहना है। (तब साधक की) वृत्ति स्वरूपाकार हो जाएगी और उसे अपनी देह की स्मृति तक न रहेगी। १८-२०। इस प्रकार (प्राणायाम आदि का) अभ्यास करते रहने से उस (साधक) को मन पर विजय प्राप्त हो जाएगी। अनन्तर अन्तर्यामी निगुण ब्रह्म को इन लक्षणों से पहचाना जाए। २१। समझ लो कि जीव (के अन्तःकरण)[2]

---

१ सोलह चिन्ह (भगवान के चरणों में अंकित पाये जानेवाले शुभ चिह्न)—(दक्षिण में आठ) चक्र, कमल, ध्वज, वज्र, अंकुश, यव, स्वस्तिक, ऊर्ध्वरेखा; (वाम चरण मे आठ) अष्टकोण, इन्द्रचाप, त्रिकोण, कलश, अर्धचन्द्र, अम्बर, मत्स्य, गोष्पद। (कुल सोलह)

२ अन्तःकरण वृत्ति की तीन अवस्थाएँ मानी जाती हैं—१ जागृति—दर्शनशास्त्र के अनुसार जागृति जीव या मनुष्य की अन्तःकरण वृत्ति की वह अवस्था है, जिसमें उसे सब बातों का परिज्ञान होता हो और वह अपनी इन्द्रियों के सब विषयों का भोग कर सकता हो। २ स्वप्न नामक अवस्था में उसे अनुभव तो होता है; लेकिन, वह सब आभास मात्र होता है।

३ सुषुप्ति नामक अवस्था में जीव नित्य ब्रह्म की प्राप्ति करता हुआ भी उसका ज्ञान नहीं रखता।

एक प्रकारे अभ्यास करतां, मनतणो जय थाय,
पछे अंतरजामी ब्रह्म निर्गुण, लक्षणथी ओळखाय । २१ ।
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति ए, जीववृत्ति जाण,
त्रि-अवस्थामां ग्रह्यो अन्वय, साक्षीवत् निरवाण । २२ ।
तुरीय जेनी भूमिका, पण रह्यो तुरीयातीत,
देह इंद्रि मननो प्रवर्तक, वळी प्रकाश गुणरहित । २३ ।
मन इंद्रियोनी वृत्ति ज्यारे, लीन थाये ज्यांहे,
त्यांहां जाणपणुं छे जेनुं, तुरीय अवस्थामांहे । २४ ।
ते ज्ञप्ति मात्र स्वरूप कहीए, सुखानंद अनुप;
ए मात आत्मा जाणजो, ते ब्रह्म चैतन्य स्वरूप । २५ ।
अध्यासनो अपवाद करतां, शेष रहे जे सत्य,
विधितणो विधि ए सदा छे, निषेध अवधि अत्य । २६ ।
ए समजवानी संज्ञा नथी, ग्रहण करवा वस्त,
ए विना सरवे अशाश्वत, जे दृष्ट श्रुत समस्त । २७ ।

की तीन वृत्तियाँ (अवस्थाएँ) हैं—जागृति, स्वप्न और सुषुप्ति । निश्चय ही इन तीनों अवस्थाओं में सम्बन्ध रखते हुए ही चैतन्य ने साक्षी की भाँति रूप धारण किया है । २२ । जिसकी भूमिका तुरीय अवस्था रही है, फिर भी जो ब्रह्म उस तुरीय अवस्था से परे है, वही (ब्रह्म वस्तुतः) भौतिक देह और उसकी इन्द्रियों का तथा मन का प्रवर्तक है । इसके अतिरिक्त विशुद्ध ज्ञान रूपी प्रकाश होने पर भी वह (त्रि-) गुण-रहित होता है । २३ । मन और इन्द्रियों की वृत्तियाँ जिसमें लीन हो जाती हैं, वहाँ उस तुरीयावस्था में उसकी पहचान हो जाती है । उस ज्ञान मात्र को ब्रह्म का स्वरूप कहें । उस अवस्था में वह साधक अनुपम सुख और आनन्द अनुभव करता है । हे माता, उसे ही विशुद्ध आत्मा, ब्रह्म, चैतन्य का स्वामी समझ लो । २४-२५ । अध्यास (आभास, भ्रम) का अपवाद करने पर जो सत्य शेष रहता है, वह ब्रह्म सदा विधाता का भी विधाता बना रहता है । उसमें सब प्रकार के निषेधों की सीमा का भी अन्त हुआ होता है—अर्थात् वह ऐसा नहीं, वैसा नहीं है—ऐसा कहने पर भी उसके स्वरूप का पूर्णतः वर्णन नहीं किया जा पाता । २६ । यह (ज्ञान स्वरूप ब्रह्म) कोई (शब्दों में) समझा देने की संज्ञा नहीं है । (अर्थात् शब्दों के अर्थ या व्याख्या द्वारा उसे समझाया नहीं जाएगा) । वह तो (अनुभूति द्वारा) ग्रहण करने की वस्तु है । इस एक के अतिरिक्त जो समस्त इष्ट तथा श्रुत है (देखा तथा सुना जानेवाला), वह सब अशाश्वत है । २७ । हे

हे मात, ए आत्मा विषे, वृत्ति करो लयलीन,
पामशो परमानंद सुख, ज्यम महा जळमां मीन । २८ ।
अध्यास देहनो छूटशे, दु:ख क्लेश थाशे दूर,
निरवाण पदने पामशो, जशे वासना अंकुर । २९ ।
मम धाममां रहेशो अचल, नहि पुनर्भव संसार,
त्यां भोग परमानंद पदनो, सुख तणो नहि पार । ३० ।

वलण (तर्ज बदलकर)

नहि पार परमानंद सुखनो, मम धाम मुक्त सदन रे,
एवुं ज्ञान कह्युं श्रीरघुपति, ते माताए धर्युं मन रे । ३१ ।

माता, इस (परम) आत्मा में अपनी (मनो-) वृत्ति को लयलीन कर दो। उससे तुम वैसे ही परम आनन्द तथा सुख को प्राप्त हो जाओगी, जैसे बड़े (गहरे) पानी में (पहुँच जाने पर) मछली (आनन्द को) प्राप्त हो जाती है । २८ । उससे देह सम्बन्धी आभास छूट जाएगा, दु:ख और क्लेश दूर हो जाएँगे; वासनाओं का अंकुर (नष्ट हो) जाएगा और तुम निर्वाण पद को प्राप्त हो जाओगी । २९ । (तब) तुम मेरे धाम में अचल रूप से रह जाओगी, तुम्हारा इस संसार में पुनर्जन्म नहीं होगा। वहाँ परमानन्द देनेवाले पद का भोग होता है और सुख का कोई अन्त नहीं होता । ३० ।

(वहाँ) परम आनन्द और सुख का कोई पार नहीं है। मेरा धाम मुक्ति का सदन ही है।' —श्रीरघुपति राम ने ऐसा ज्ञान कहा (आत्म-ज्ञान सम्बन्धी बातें कहीं), तो माता कौसल्या ने उसे अपने मन में धारण कर लिया । ३१ ।

* * *

अध्याय—९८ (कौसल्या द्वारा मोक्ष-प्राप्ति और राम द्वारा मातृ-माहात्म्य का वर्णन)

राग धन्याश्री

माता समज्यां सरवे मर्म जी, रामने जाण्या पूरणब्रह्म जी,
अनुभव प्रगट्यो त्यां साक्षात् जी, पछे पद्मासन करी बेठां मात जी । १ ।

अध्याय—९८ (कौसल्या द्वारा मोक्ष-प्राप्ति और राम द्वारा मातृ-माहात्म्य का वर्णन)

माता कौसल्या (श्रीराम द्वारा कथित) समस्त (बातों के) मर्म को समझ गयी। (तब) उसने राम को पूर्णब्रह्म जान लिया। तो वहाँ

ढाळ

पद्मासन करी मात बेठां, धरवा हरिनुं ध्यान,
इंद्रियो वृत्ति समेटी, मन कर्युं स्थिर समान। २ ।
उन्मुनि मुद्राए थकी, कर्यो प्राणायाम प्रणाम,
अध, ऊर्ध्ववायु खेंचीने, मेळव्या अंतर जाण। ३ ।
जेवुं ध्यान रघुपतिए कह्युं, ते आचर्युं तेणी वार,
जे कोटि काम स्वरूप मूर्ति, शोभानो नहि पार। ४ ।
अलंकार मंडित श्याम सुंदर, चतुरभुज भगवान,
नखशिख नीरख्युं अनुक्रमथी, कोटी सूरज समान। ५ ।
ते मूर्ति राखी ध्यानमां, दृढ चित्त करियुं त्यांहे,
पछे प्राण ऊंचो चढाव्यो, ते ऊर्ध्व मारगमांहे। ६ ।
षट्चक्र भेदी चालियो, ते गयो दशमे द्वार,
ब्रह्मरंध्र फाट्युं मातनुं, सान्निध्य जगदाधार। ७ ।

प्रत्यक्ष अनुभव (-ज्ञान) उत्पन्न हो गया। अनन्तर वह माता (कौसल्या) पद्मासन लगाकर बैठ गयी। १।

माता (कौसल्या) पद्मासन लगाकर हरि (भगवान) का ध्यान धारण करने बैठ गयी और अपनी इन्द्रियों की वृत्ति को समेट कर उसने मन को स्थिर-सा कर दिया। २। (फिर) उन्मनी मुद्रा[1] से उसने प्रमाणित रूप में प्राणायाम करना आरम्भ किया। समझिए कि उसने अधोवायु (अपान) और ऊर्ध्व वायु (प्राण) को खींचकर अन्दर मिला दिया। ३। रघुपति राम ने जिस प्रकार कहा था, उस प्रकार उसने उस समय आचरण किया और (अपने अन्तःकरण में) राम की कोटि-कोटि कामदेवों के-से स्वरूपवाली मूर्ति को देखा, जिसकी शोभा का कोई अन्त नहीं है। (उसने देखा कि) भगवान्, आभूषणों से मण्डित, श्याम-सुन्दर चतुर्भुज-धारी हैं। उसने करोड़ों सूर्यों के समान (तेजस्वी) उस मूर्ति को अनुक्रम-पूर्वक नख से शिख तक ध्यान से देखा। ४-५। उसने उस मूर्ति को ध्यान में रखा और वहाँ (उस पर) अपने चित्त को दृढ़ (स्थिर) कर लिया। अनन्तर ऊर्ध्व मार्ग पर अपने प्राण को ऊँचा चढ़ाया। ६। वह

---

१ उन्मनी मुद्रा—योग विद्या के अनुसार जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीय नामक चार अवस्थाओं से परे निर्धारित पाँचवी अवस्था 'उन्मनी' कहाती है। इस अवस्था मे वृत्ति माया के पाशों से मुक्त होकर ब्रह्म में लीन हो जाती है।

ते योग अग्नि वडे तन, परजळ्युं कर्पूरवंत,
क्षणमात्रमां देह भस्म थई, चाली सुगंध अनंत। ८।
विमान आव्युं ते समे, शोभा तणो नहि पार,
दिव्य रूप धरीने कौशल्याजी, बेठां तेह मोझार। ९।
ते समे सरवे कुटुंब मळियुं, गुरु आदि प्रधान,
दिव्य रूप धरीने मात बेठां, दीठुं दृष्ट विमान। १०।
दुंदुभि वाग्यां देवनां, थई पुष्पवृष्टि त्यांहे,
सहु साथशुं रघुनाथ, आश्चर्य पामियां मनमांहे। ११।

छहों चक्रों[1] को भेदकर (आगे) चला और दशम द्वार[2] तक चला गया। फिर जगदाधार राम के सान्निध्य में माता कौसल्या का ब्रह्म-रन्ध्र[3] फट गया। ७। उस योगाग्नि से उसका शरीर कपूर जैसा प्रज्वलित हो उठा और क्षण मात्र में (जलकर) भस्म हो गया, (तब) अपार सुगन्ध उत्पन्न हो गयी (फैल गयी)। ८। उस समय एक विमान आ गया। उसकी शोभा का कोई पार नहीं था। कौसल्या दिव्य रूप धारण करके उसके अन्दर बैठ गयी। ९। उस समय समस्त कुटुम्बीय जन, गुरु, मन्त्री आदि इकट्ठा हो गये। दिव्य रूप धारण करके माता (जिसमें) बैठी हुई थी, उस विमान को उन्होंने अपनी दृष्टि से देखा। १०। (तब) देवों की दुन्दुभियाँ बज रही थीं। वहाँ पुष्प वृष्टि हो रही थी। सबके साथ ही रघुनाथ राम मन में आश्चर्य को प्राप्त हो गये। ११। उस समय कौसल्या ने राम की बहुत स्तुति की और वहाँ (उपस्थित) वसिष्ठ आदि

---

१ छः चक्र—योग विद्या के अनुसार मानव-देह के लिए आधार-भूत छः चक्र माने गये हैं, जो सुषुम्ना नामक नाड़ी पर स्थित हैं। इन चक्रों का क्रमशः भेदन करते हुए साधक योग साधना द्वारा प्राण को ऊपर की ओर चढ़ाता जाता है। ये चक्र है—१ मूलाधार चक्र (गुद द्वार और वृषण के बीच मे), २ स्वाधिष्ठान चक्र (जननेन्द्रिय और नाभि के बीच में), ३ मणिपुर चक्र (नाभि में), ४ अनाहत चक्र (हृदय स्थान में), ५ विशुद्धि चक्र (कण्ठ में), ६ आज्ञा चक्र (भ्रू-मध्य भाग में)। इनके अतिरिक्त, जिह्वा मूल में स्थित ललना चक्र और मस्तक में स्थित सहस्रार चक्र नामक दो अन्य चक्रों का भी उल्लेख मिलता है। इन चक्रों को 'कमल' भी कहा जाता है।

२ दशम द्वार—दो नेत्र, दो कान, दो नासा-पुट, एक मुख, एक गुदद्वार और एक मूत्रद्वार नामक शरीर में शारीरिक दृष्टि से नौ द्वार है। योग-विद्या के अनुसार इनके परे एक दशम द्वार सिर के ऊपर मध्य भाग में है। योग साधना द्वारा अर्जित बल पर इस द्वार से प्राणों को पार कराया जाता है। मृत्यु के समय इसी द्वार से आत्मा निकल जाती है।

३ ब्रह्म रन्ध्र—उपर्युक्त दशम द्वार को ब्रह्म रन्ध्र कहते हैं।

घणी स्तुति कीधी रामनी, कौशल्याए तेणी वार,
वसिष्ठ आदि विप्रने त्यां, कर्यो छे नमस्कार। १२।
विमान चाल्युं त्यां थकी, सौ देखतां परमाण,
अपवर्ग माता पामियां, कैवल्य पद निरवाण। १३।
एम मोक्ष पाम्यां माताजी, विस्मे थयो सौ साथ,
त्यारे आंसु आव्यां नेत्रमां, रोया घणुं रघुनाथ। १४।
रघुनाथ रोतां साथ सरवे, रुदन करतां ताहे,
शत्रुसूदन ने भरतजी घणुं, दु:ख धरे मनमांहे। १५।
पछे गुरु वसिष्ठे रोतां राख्या, सरवेने ते ठाम,
गद्गद कंठे वचन वळता, बोलिया श्रीराम। १६।
हे गुरु ! तमने कहुं साचुं, मानजो निरवाण,
मातना जेवुं सुख जगतमां, नथी बीजुं जाण। १७।
संसारमांहे कुटुंब सरवे, स्वारथी निरधार,
मा बाप ते परमारथी, वात्सल्य प्रेम अपार। १८।
दस मास राखे गर्भमां, वेठे घणुं तव दु:ख,
प्रसव्या पछी ते बाळकने, बहुविध पमाडे सुख। १९।

ब्राह्मणों को नमस्कार किया। १२। सबके प्रत्यक्ष देखते, वह विमान वहाँ से चल दिया। (इस प्रकार) माता कौसल्या अन्त में मोक्ष अर्थात् कैवल्य पद को प्राप्त हो गयी। १३। इस प्रकार, माता कौसल्या मोक्ष को प्राप्त हो गयी, तो सब साथ में विस्मित हो गये। तब रघुनाथ राम की आँखों में आँसू आ गये और वे बहुत रोये। १४। रघुनाथ राम के रोते रहने पर वहाँ (उपस्थित) सब (लोग) रोने लगे। शत्रुघ्न और भरत को मन में बहुत दु:ख हो गया। १५। अनन्तर गुरु वसिष्ठ ने उस स्थान पर सबको रोते रख दिया (रोते रहने दिया)। (फिर) श्रीराम गद्गद कण्ठ से ये वचन बोले। १६। 'हे गुरुजी, मैं सत्य कह रहा हूँ, उसे निश्चित रूप से सत्य मानना। समझिए कि इस जगत में माता से प्राप्त जैसा सुख होता है, वैसा कोई अन्य नहीं होता। १७। संसार में समस्त कुटुम्बीय जन निश्चय ही स्वार्थी होते हैं, परन्तु (केवल) माता-पिता परमार्थी होते हैं, उनका वात्सल्य प्रेम अनन्त होता है। १८। माता (शिशु को) गर्भ में दस मास रखती है; वह तब बहुत दुख सहन करती है। (परन्तु) उस बालक को जन्म देने के पश्चात्, वह बहुत प्रकार से सुख को प्राप्त हो जाती है। १९। जब पुत्र को दु:ख होता है, तो वह क्षण-क्षण देखती रहती है और उसकी रखवाली करती है। वह रात-दिन

क्षणे क्षणे जोती रहे, रखे पुत्रने दुःख थाय,
ते रातदिन पोषण करे, ज्यम पुष्टि पामे काय। २०।
ते प्रकारे उछेरतां, पछी थाय मोटो तन,
तोय भाव राखे रहित स्वारथ, प्रेमथी अनुदिन। २१।
ते मात केरो उरुणियो, सुत को काळे नव थाय,
मातनी सेवा नव करे ते, पुत्र नरक पळाय। २२।
मातनी आज्ञा भंग करी, दुर्वचन बोले मुख,
ते पुत्र शूकर श्वान थई, बहु जन्म पामे दुःख। २३।
त्रिय पुत्र बंधु मित्र थाये, द्रव्यथी गुण गाय,
मा बाप नव्र कहेवाये कोईने, कर्यां ते नव्र थाय। २४।
संसारमां तीरथ त्रिवेणी, माता पिता गुरु जेह,
एनी सेवाथी सुख मळे बहुविध, मोक्ष पामे तेह। २५।
माटे सांभळो मुनिराज, मुज पर मातनुं घणुं हेत,
मुजने क्षणु नव वीसरे, वात्सल्य प्रेम समेत। २६।
हुं नित्य मुक्त अबंध छुं, मने कोईए नव जिताय,
पण मात केरा स्नेहथी, मुज चित्त गद्गद थाय। २७।

उसका उस प्रकार पोषण करती है, जिस प्रकार उसकी काया पुष्टि को (ही) प्राप्त हो जाती है। २०। इस प्रकार, उसका पालन-पोषण करने पर उसका वह पुत्र बड़ा हो जाता है; तो भी प्रतिदिन वह (उसके प्रति) प्रेमपूर्वक निःस्वार्थ भाव रखती है। २१। पुत्र किसी भी काल में अपनी माता से ऋण-मुक्त नहीं हो पाता, (ऐसी) उस माता की जो पुत्र सेवा नहीं करता, वह नरक में जाता है। २२। माता की आज्ञा का भंग (उल्लंघन) करके जो अपने मुख से (उसके प्रति) दुर्वचन बोलता है, वह पुत्र (परवर्ती जन्मों में) शूकर, श्वान होकर अनेक जन्म दुःख को प्राप्त होता रहता है। २३। स्त्री, पुत्र, बन्धु, मित्र तो होते हैं, (परन्तु) वे धन के कारण गुण गाते हैं। हमसे किसी अन्य को अपने माता-पिता नहीं कहा जा सकता और किसी को बना भी नहीं सकते। २४। माता-पिता और गुरु जो होते हैं, वे ही संसार में त्रिवेणी तीर्थ (के समान) हैं। उनकी सेवा से बहुत प्रकार का सुख मिलता है; (उस सेवा के फलस्वरूप) वह (पुत्र) मोक्ष को प्राप्त हो जाता है। २५। इसलिए, हे मुनिराज, सुनिए, मुझसे माता का बहुत स्नेह था। वात्सल्य प्रेम पूर्वक वह मुझे क्षण तक नहीं भूल पाती थी। २६। मैं नित्य मुक्त हूँ, बन्धन-रहित हूँ। किसी के द्वारा मुझे नहीं जीता जा पाता। परन्तु माता के स्नेह से मेरा

मारा भक्त सेवा करे बहुविध, संत ज्ञानी सोय,
माताना जेवां लाड मुजने, लडावे नहि कोय। २८।
हुं अजन्मा धरुं जन्म ते, वळी मातना सुख काज,
घणुं गमे मुजने लाड ते, सत्य मानजो महाराज। २९।
एवां वचन कही ते रघुपति, घणां भर्यां नेत्रे नीर,
पछी आश्वासन करी नीतिवचने, आपी गुरुए धीर। ३०।
धीरज आपी वसिष्ठ गुरुए, समजाव्यो सहु साथ,
उत्तरक्रिया मातातणी, करी पोते श्रीरघुनाथ। ३१।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रघुनाथे निज हाथे करीने, आप्यां अपरिमित दान रे,
सरव नग्र भोजन कराव्युं, संतोष्या भगवान रे। ३२।

चित्त गद्‌गद हो जाता है। २७। जो मेरे भक्त, सन्त, ज्ञानी हैं, वे मेरी बहुत प्रकार से सेवा करते हैं। परन्तु माता के-से लाड़ उनमें से कोई भी मुझे नहीं लड़ा पाता। २८। (वस्तुतः) मैं अजन्मा हूँ, फिर भी मैं मातृ-सुख के हेतु पुनः (पुनः) जन्म ग्रहण करता हूँ। हे महाराज, इसे सत्य समझना कि वह लाड़ (-प्यार) मुझे बहुत अच्छा लगता है।'। २९। ऐसे वचन कहते हुए रघुपति के नेत्रों में बहुत आँसू भर आये। तो फिर गुरु (वसिष्ठ) ने नीति-वचनों से उन्हें आश्वस्त करते हुए ढाढ़स बँधा दिया। ३०। वसिष्ठ ने ढाढ़स बँधाकर सबको एक साथ समझाया-बुझाया, तो श्रीरघुनाथ राम ने स्वयं अपनी माता की उत्तर-क्रिया सम्पन्न की। ३१।

रघुनाथ राम ने स्वयं अपने हाथों से (अपनी माता की) उत्तर-क्रिया की और (उस अवसर पर) अपरिमित दान दिया। फिर भगवान् ने समस्त नगर (के लोगों को) भोजन कराया, तो वे संतुष्ट हो गये। ३२।

* * *

अध्याय—९९ (श्रीराम का स्वधाम जाने का विचार)

राग विलावलनी चोपाई

सुणो श्रोता धरी धीरज मन, त्यार पूंठे गया थोडा दन,
सुमित्रा केकई बंन्यो माय, मरण पाम्यां ते ईश्वर इच्छाय। १।

अध्याय—९९ (श्रीराम का स्वधाम जाने का विचार)

हे श्रोताओ, मन में धीरज धारण करके सुनिए। तब इसके पश्चात् थोड़े दिन बीत गये। ईश्वर की इच्छा के अनुसार सुमित्रा और

तेनी क्रिया विधिवत् करी, दान बहुविधि आप्यां हरि,
ते माता पाम्यां परमपदधाम, एवा दीनबंधु करुणानिधि राम। २ ।
पछी रघुपति बेठा मंदिर मांहे, वसिष्ठ गुरुने तेडाव्या त्यांहे,
एकांतमां बेठा अविनाश, ते समे नहि को बीजुं पास। ३ ।
त्यारे कर जोडी बोल्या रघुपति, सांभळी ए मुनिवर महामति,
तमो त्रिकाळज्ञानी छो महाराज, कंई तमने नथी अजाण्युं काज। ४ ।
मारुं स्वरूप जाणो छो तमो, तो विस्तारी शुं कहीए अमो ?
जे कारण में जन्म ज धर्यो, ते सर्व मनोरथ पूरण कर्यो। ५ ।
उतार्यो पृथ्वीनो भार, दुष्ट तणो करियो संहार,
वेदधरम द्रढ स्थाप्यो तदा, सुर साधु सुख पामे सदा। ६ ।
अवतारकृत्य पूरण थयुं आज, ते माटे विनति करुं महाराज,
आज्ञा आपो महामुनि तमो, तो हावे स्वधाम पधारुं अमो। ७ ।
रघुपतिनां एवां सुणीने वचन, मुनिवर दुःख पाम्या घणुं मन,
चाली नेत्रमां आंसुधार, गद्‌गद थई बोल्या तेणी वार। ८ ।

कैकेयी दोनों माताएँ मृत्यु को प्राप्त हो गयीं। १। भगवान हरि (राम) ने उनकी (अन्त्येष्टि, उत्तर) क्रिया विधिवत् की और वहुत प्रकार के दान दिये। वे माताएँ परमपद धाम को प्राप्त हो गयीं। ऐसे हैं दीन-बन्धु करुणानिधि (भगवान्) राम। २। अनन्तर (एक दिन) रघुपति राम अपने प्रासाद में बैठे हुए थे, तो उन्होंने वहाँ गुरु वसिष्ठ को बुला लिया। अविनाशी भगवान् राम एकान्त में बैठ गये थे। उस समय उनके पास कोई दूसरा नहीं था। ३। तब हाथ जोड़कर रघुपति बोले, 'हे महामति मुनिवर, सुनिए। हे महाराज, आप त्रिकाल-ज्ञानी हैं। कोई भी कार्य आपसे अज्ञात नहीं है। ४। आप मेरे स्वरूप को जानते हैं, तो हम उसे विस्तार करके क्या कहें ? जिन कारणों से मैंने जन्म ही ग्रहण किया था, उन सबको, अर्थात् उन सब मनोरथों को मैने पूर्ण किया है। ५। मैंने पृथ्वी के (पाप) भार को उतार दिया है, दुष्टों का संहार कर डाला है, वेद (प्रतिपादित) -धर्म की दृढ़ स्थापना की है; तब देव और साधु सुख को सदा (के लिए) प्राप्त हो गये हैं। ६। आज मेरा अवतार-कार्य पूर्ण हो गया है; इसलिए, हे महाराज, मैं एक विनती कर रहा हूँ। (अव) आप महामुनि मुझे आज्ञा दीजिए, तो मैं अव अपने धाम चला जाऊँगा।'। ७। रघुपति के ऐसे वचन सुनकर मुनिवर मन में वहुत दुःख को प्राप्त हो गये। उनकी आँखों से आँसुओं की धारा चलने लगी। उस समय वे गद्‌गद होकर बोले। ८। 'अहो राम, आपने यह क्या

अहो राम शुं बोल्या तमो ? तम पाखे क्यम रहीए अमो ?
तमो अमारुं सरवस धन, सुखना सिंधु प्राणजीवन। ९।
साधु सुर गो द्विजना प्रतिपाळ, अनाथ बंधु दीनदयाळ,
पिता अमारा ब्रह्मा जेह, पूरवे मुने कह्युं'तुं एह। १०।
अरे पुत्र, जा पृथ्वीमां, अवधपुरी पावन छे ज्यांहे,
सूरजवंशी राजातणुं, तेनुं करजे पुरोहितपणुं। ११।
एवुं सुणी हुं बोल्यो तेणी वार, अहो पिताजी, कहुं निरधार,
नीचुं करम ए हुं नहि करुं, वनमां जई तप आचरुं। १२।
पुराहितपणामां छे बहु पाप, तेथी हुं पामुं संताप,
मृतकक्रिया ने श्राद्ध अनंत, विवाह वास्तु ने सीमंत। १३।
जातक़र्म उपवीत विचार, अनेक विधि करवा संस्कार,
ते कर्म करावीने लेवुं दान, तेमां पाप घणुं अभिमान। १४।
माटे प्रोहित कर्म करुं नहि जाण, त्यारे फरीने प्रजापति बोल्या वाण,
पुत्र वचन मान्य मुजतणुं, आगळ लाभ तुजने छे घणुं। १५।
रविकुळमां दशरथ राजन, त्यां अवतरशे श्रीभगवन,
पूरण ब्रह्म सनातन ईश, ते राम रूप धरशे जुगदीश। १६।

कहा ? आपके बिना हम कैसे रहें ? आप हमारे सर्वस्व हैं, धन हैं, सुख सागर, हैं जीवन-प्राण हैं। ९। आप साधुओं, सुरों, गौओं और ब्राह्मणों के प्रतिपालक हैं, अनाथों के बन्धु हैं, दीन-दयालु हैं। जो ब्रह्माजी मेरे पिता हैं, उन्होंने पूर्वकाल में मुझसे यह कहा था। १०। 'अरे पुत्र, जहाँ पावन अयोध्यापुरी है, पृथ्वी पर वहाँ तुम जाओ और सूर्यवंशीय राजाओं का पौरोहित्य करो।'। ११। ऐसा सुनकर उस समय मैंने कहा था, 'हे पिताजी, मैं निश्चय-पूर्वक कहता हूँ यह नीच कर्म मैं नहीं करूँगा, मैं वन में जाकर तपस्या करूँगा। १२। पौरोहित्य में बहुत पाप होता है। उससे मैं सन्ताप को प्राप्त हो जाऊँगा। मृतक-क्रिया, असंख्य श्राद्ध, विवाह, वास्तु (-शान्ति) और सीमन्तोन्नयन संस्कार, जात-कर्म उपवीत धारण कराने के विचार से किया जानेवाला संस्कार और विधियाँ तथा संस्कार करने होते हैं। ये कर्म कराते हुए दान लेना होता है। उसमें बहुत पाप है। १३-१४। इसलिए, समझिए कि मैं पुरोहित का काम नहीं करूँगा।' तब प्रजापति ने फिर से यह बात कही, 'हे पुत्र, मेरी बात मान लो, (इसमें) आगे (चलकर) तुम्हें बहुत लाभ (होनेवाला) है। १५। रवि-कुल में (उत्पन्न) दशरथ नामक एक राजा हैं। उनके यहाँ श्रीभगवान अवतरित हो जाएँगे। पूर्णब्रह्म, सनातन ईश्वर जगदीश

ते प्रभु लाड पाळशे घणुं, देखाडशे सुख सेवातणुं,
गुरुपदवी मोटी आपशे, सहुमां श्रेष्ठ करी थापशे । १७ ।
एवुं जाणी पुरोहितपणुं, अंगीकार कर्युं तमतणुं,
ते सौ सत्य कर्युं महाराज, घणी वधारी मारी लाज । १८ ।
जगद्‌गुरु तमो छो जगदीश, गुरुपदवी आपी मुने ईश,
शिव ब्रह्मा इंद्रादिक देव, तम आज्ञा पाळे नित्यमेव । १९ ।
ते प्रभु सेवक थई सर्वदा, मारी आज्ञी पाळी सदा,
जेनी कटाक्षे कंपे काळ, ते मारो भय धरता भूपाळ । २० ।
ब्रह्मण्य देवमां नहि कंई मणा, शा शा गुण गाउं तमतणा ?
माटे प्रभु, मुने तेडो साथ, तमो विना हुं क्यम रहुं रघुनाथ ? । २१ ।
एम कही मुनि गद्‌गद थया, रघुपतिनी सन्मुख जोई रह्या,
त्यारे बोल्या श्रीरघुवीर, सुणीए मुनि मन राखी धीर । २२ ।
तमो ब्रह्मवेत्ता छो जाण, नथी बंध तमने निरवाण,
जीवन्मुक्त सदा छो तमो, तमने मोक्ष शुं आपुं अमो ? । २३ ।

राम-रूप धारण करेंगे । १६ । उन प्रभु राम का बहुत लाड़ से पालन करेंगे, और सेवा का सुख प्रदर्शित करेंगे । वे तुमको गुरु की बड़ी पदवी प्रदान करेंगे और सबसे श्रेष्ठ बनाकर प्रतिष्ठित कर देंगे । ' । १७ । ऐसा जानकर मैंने आपके पौरोहित्य को स्वीकार किया । हे महाराज, आपने उस सबको सत्य किया । इससे मेरी प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गयी है । १८ । हे जगदीश, आप (वस्तुतः) जगद्‌गुरु हैं । (फिर भी) हे ईश्वर, आपने मुझे गुरु की पदवी प्रदान की है । शिवजी, ब्रह्माजी, इन्द्र आदि देव आपकी आज्ञा का नित्य ही पालन करते हैं । १९ । ऐसे आप प्रभु मेरे सेवक बनकर मेरी आज्ञा का सदा पालन करते रहे हैं । जिनके कटाक्ष से काल (तक) काँप उठता है, वे आप राजा मुझसे भय मानते हैं । २० । ब्रह्मा (के कथन) में कोई त्रुटि नहीं है । मैं आप के किन-किन गुणों का गान करूँ ? इसलिए हे प्रभु, आप मुझे अपने साथ ले जाइए । हे रघुनाथ, मैं आपके विना कैसे रह सकूँगा ?' । २१ । ऐसा कहते हुए मुनि (वसिष्ठ) गद्‌गद हो उठे और रघुपति राम के सम्मुख (राम की ओर) देखते रहे । तब श्रीरघुवीर राम बोले, ' हे मुनिजी, मन में धीरज धारण करके सुनिए । २२ । समझिए कि आप ब्रह्म-वेत्ता हैं । तो निश्चय ही आपके लिए कोई बन्धन नहीं है । आप सदा जीवन्मुक्त हैं, (अतः) मैं आपको क्या मोक्ष प्रदान कर सकता हूँ । २३ । आप जैसे जो विकार-हीन पुरुष हैं, वे क्षण में जगत् का उद्धार कर सकते हैं । इसलिए,

तम सरखा जे पुरुष अविकार, ते क्षणमां जतन करे उद्धार,
माटे सर्व नग्र लेई जाउं अमो, पुत्रनी पाशे रहेजो तमो । २४ ।
रूडी रीतें चलावजो राज, रघुकुळनी छे तमने लाज,
एम कही ऊठ्या रघुपति, राज्यसभा आव्या महामति । २५ ।
सभा मेळवी सहु ते दीश, तेनी साथ बोल्या जुगदीश,
पडो फेरव्यो पुरमां आज, स्वधाम जावा केरे काज । २६ ।
जेने इच्छा होये मन, तत्पर थई आवो सहु जन,
नर नारी वृद्ध जोबन बाळ, सर्व आवजो प्रातःकाळ । २७ ।
रामतणां एवां सुणी वचन, प्रधाने मोकल्या पुरमां जन,
चौटां शेरी पोळ ज मांहे, ढोल वजाडी कहेतां त्यांहे । २८ ।
सरवे लोके जाणी वात, रघुपति स्वधाम जाय प्रभात,
पछी हनुमंतने आज्ञा करी, चाल्या रामचरण मन धरी । २९ ।
विभीषण सुग्रीव घोराजन, गया तेडवा मारुततन,
सहुने हर्ष थयो छे घणो, रघुपति साथे जावा तणो । ३० ।

मैं समस्त नगर (-वासियों) को (अपने साथ) ले जाता हूँ, आप हमारे पुत्रों के पास रहिएगा । २४ । उनके द्वारा अच्छी रीति से राज चलवाइए । आपके हाथ कुल की प्रतिष्ठा है ।' ऐसा कहते हुए महामति रघुपति राम उठ गये और राजसभा में आ गये । २५ । उस समय उसी स्थान पर सभा आयोजित करके जगदीश राम उससे बोले, 'अपने धाम जाने के हेतु आज नगर में डंका बजवा दो । २६ । जिनके मन में इच्छा हो, वे समस्त लोग तैयार होकर आ जाएँ । नर-नारी, वृद्ध, युवा, बालक, सब प्रातःकाल आ जाएँ ।' । २७ । राम के ऐसे वचन सुनकर मन्त्री ने लोगों को (दूतों को) नगर में भेज दिया । उन्होंने हाटों-चौकों में, गलियों-कूचियों में ढोल बजा (-बजा-) कर वहाँ कहा । २८ । समस्त लोगों ने यह बात जान ली कि रघुपति राम प्रभात-काल में स्वधाम जा रहे हैं । फिर (राम ने) हनुमान को आज्ञा दी, तो वह राम के चरणों को मन में धारण करके चल दिया । २९ । वह पवनकुमार विभीषण, सुग्रीव, गुहराज को बुलाने के लिए चला गया । (उसकी बात सुनने पर) रघुपति राम के साथ जाने (के विचार) से सब को बहुत आनन्द हो गया । ३० ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

रघुपति साथे स्वधाम जावा, हरख्या लोक तत्काळ रे,
एम रजनी सरवे वही गई, पछे हवो प्रातःकाळ रे। ३१।

लोग रघुपति राम के साथ स्वधाम जाने (के विचार) से तत्काल आनन्दित हो गये। इस प्रकार, सारी रात बीत गयी। फिर प्रातःकाल हो गया। ३१।

* * *

अध्याय—१०० (श्रीराम का अयोध्या-वासियों-सहित सरयू-तट पर आगमन)

राग वेराडी

प्रभात काळे वहेला ऊठी, श्रीरामे कर्युं छे स्नान,
नित्यकर्म पोतानुं करीने, आप्यां विधिवत् दान। १।
पछे वस्त्राभूषण अंग धरीने, बेठा मंदिरमांहे,
मोटा विप्र वसिष्ठनी आदे, सर्व आव्या त्यांहे। २।
भरत शत्रुघन पासे तेडाव्या, सुमंत आदि प्रधान,
ते सर्वेने साथे लई चाल्या, पोते श्रीभगवान। ३।
सरज्युगंगाने तट आव्या, रामघाट छे ज्यांहे,
तेमां स्नान करीने आवाहन कीधुं, वीरजाकेरुं त्यांहे। ४।
त्यारे गुप्त रूपे आवीने प्रवेश्यां, सरज्युमां तेणी वार,
स्पर्श करतां ते जळनो थाय, चत्रभुज निरधार। ५।

अध्याय—१०० (श्रीराम का अयोध्या-वासियों-सहित सरयू-तट पर आगमन)

सवेरे जल्दी उठकर श्रीराम ने स्नान किया; फिर अपने नित्यकर्म (पूर्ण) करके उन्होंने यथाविधि दान दिये। १। अनन्तर शरीर पर (यथोचित) वस्त्र और आभूषण धारण करके वे प्रासाद में बैठ गये। वहाँ वसिष्ठ आदि समस्त बड़े (-बड़े) ब्राह्मण आ गये। २। (फिर) श्रीभगवान राम ने भरत, शत्रुघ्न को तथा सुमन्त आदि मन्त्रियों को अपने पास बुला लिया और उन सबको साथ में लेकर वे चल दिये। ३। वे सरयू गंगा के तट पर जहाँ राम-घाट है, वहाँ आ गये और उस (नदी) में स्नान करके उन्होंने वहाँ वीरजा गंगाजी का आवाहन किया। ४। तब गुप्त रूप से आती हुई वे उस समय सरयू नदी में प्रविष्ट हो गयीं। उस जल को स्पर्श करते ही वे (राम) सचमुच चतुर्भुज-धारी हो गये। ५।

त्यारे सरज्युमांथी बहार नीकळ्या, पोते श्रीरघुवीर,
पछे दान बहुविधि रामे आप्यां, अनुक्रमथी रणधीर। ६ ।
हावे सरज्युतीर कराव्यो मोटो, वस्त्रमंडप तेणी वार,
ते मध्ये सिंहासन उपर, बेठा जुगदाधार। ७ ।
सभा करी तांहां बेठा पोते, पासे गुरुजन भ्रात,
नग्रलोक आवे छे सरवे, चार वरण विख्यात। ८ ।
त्यारे तेणे समे मुनिवर सौ आव्या, त्रिकाळज्ञानी जेह,
वामदेव वीतिहोत्र ने अत्रि, भृगु अंगिरा एह। ९ ।
विश्वामित्र अगस्त्य च्यवन, ऋषि लोमश ने मार्कंड,
पौलस्त्य भारद्वाज ने वाल्मीक, गौतम कौशिक चंड। १० ।
शौनक सनकादिक ने नारद, आदे घणा मुनिजन,
श्रीरामे सहुने प्रणाम करीने, बेसाड्या आसन। ११ ।
हावे हनुमंतने मोकल्या'ता प्रथमे, पोते श्रीरघुनाथ,
ते विभीषण सुग्रीव घोराजाने, तेडी लाव्या साथ। १२ ।
ते आवीने नम्या श्रीरामचंद्रने, स्तुति करी बहु पेर,
प्रभुए तेने बेसाड्या पासे, अति घणा आदरभेर। १३ ।

तब रणधीर श्रीरघुवीर राम स्वयं सरयू में से बाहर निकल आये। अनन्तर उन्होंने अनुक्रम से बहुत प्रकार के दान दिये। ६। अब उस समय सरयू के तट पर वस्त्रों का एक बड़ा मण्डप बनवाया था। उसके मध्य भाग में जगदाधार श्रीराम सिंहासन पर बैठ गये। ७। वे वहाँ सभा आयोजित करके स्वयं बैठ गये। उनके पास गुरुजन तथा बन्धु थे। नगर के चारों वर्णों के समस्त विख्यात लोग आ गये थे। ८। तब उस समय जो त्रिकाल-ज्ञानी थे, वे समस्त मुनिवर (भी) आये (जैसे कि)— वामदेव, वीतिहोत्र और अत्रि, भृगु, अंगिरस, विश्वामित्र, अगस्त्य, च्यवन, लोमश ऋषि और मार्कण्ड, पौलस्त्य, भरद्वाज और वाल्मीकि, गौतम, कौशिक, चण्ड, शौनक, सनकादिक और नारद आदि अनेक मुनिजन आ गये, तो श्रीराम ने उन सबको प्रणाम करके आसनों पर बैठा दिया। ९-११। अब श्रीरघुनाथ ने स्वयं हनुमान को पहले भेजा था, वह (राम के आदेश के अनुसार) विभीषण, सुग्रीव और गुहराज को बुलाकर अपने साथ ले आया। १२। आकर उन्होंने श्रीरामचन्द्र को नमस्कार किया और बहुत प्रकार से स्तुति की। तो प्रभु राम ने अति बहुत आदर के साथ उन्हें अपने पास बैठा लिया। १३। इस प्रकार (जब) समस्त सभा (जनों) को इकट्ठा करके श्रीरघुवीर राम स्वयं सरयू के तट पर बैठ गये,

एम सरव सभा मळी बेठा, पोते सरज्यु केरे तीर,
त्यारे अनुचरने पासे तेडावीने, बोल्या श्रीरघुवीर। १४।
अवधपुरीना वासी सौने, जाण करो निरधार,
जेने स्वधाम जावुं होय ते, सरवे नीकळो नर ने नार। १५।
जे जेने वहाली वस्तु होय ते, सरव लेजो साथ,
आवी सरज्यु मांहे स्नान करो, एम बोला श्रीरघुनाथ। १६।
ऐवुं सांभळीने अनेक अनुचर, चाल्या नगर विषे तेणी वार,
घर घर प्रत्ये कह्युं सरवने, सुणी चाल्यां नर नार। १७।
ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र, पुर बाहेर नीकळ्यां सर्व,
ज्यम संघ मळीने जाय तीरथमां, नाहवा मोटुं पर्व। १८।
एम पोतपोतानां जूथ मळीने, संगे चाल्यां सोय,
निज बाळक वृद्धने साथे लीधां, घरमां रह्युं नहि कोय। १९।
वस्त्राभूषण अंगे सजियां, प्रिय वस्तु लेई संग,
द्वार उघाडां मूक्यां सरवे, मनमां हरख उमंग। २०।
गौ महिषी ने वृषभ ऊंट खर, वाजी गज मंजार,
श्वान अजा शुक्र मेना आदे, जे हतां जेने द्वार। २१।

तब वे अनुचरों को पास में बुलाकर बोले। १४। अवधपुरी के समस्त निवासियों को निश्चय ही यह जानकारी करा दो—जिनको स्वधाम जाना हो, वे सब नर-नारियाँ (घर से) निकल आएँ। १५। जो-जो जिस-जिसकी प्रिय वस्तु हो, उन सबको साथ में ले आएँ (और) आकर सरयू में स्नान करें। इस प्रकार श्रीरघुनाथ बोले। १६। ऐसा सुनकर अनेक अनुचर उसी समय नगर में चले गये और उन्होंने घर-घर (जाकर) सबसे कह दिया, तो उसे सुनते ही स्त्री-पुरुष चल दिये। १७। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र—सब नगर के बाहर निकलकर आये। जिस प्रकार बड़े पर्व पर समूहों में इकट्ठा होकर (लोग) तीर्थ (-जल) में स्नान करने के लिए जाते हैं, उस प्रकार अपने-अपने समुदाय में इकट्ठा होकर वे एक-दूसरे के साथ चल दिये। उन्होंने अपने-अपने बालकों तथा वृद्ध जनों को साथ में लिया। (पीछे) घर में कोई भी न रह गया। १८-१९। उन्होंने शरीर पर वस्त्र और आभूषण सजा लिये और साथ में अपनी-अपनी प्रिय वस्तुएँ लीं। उन्होंने समस्त द्वार (अर्थात् घर) खुले रख दिये। उनके मन में आनन्द और उमंग थी। २०। गायें, भैंसें और बैल, ऊँट, गधे, घोड़े, हाथी, बिल्लियाँ, कुत्ते, बकरियाँ, तोते, मैनाएँ आदि जो-जो जिस-जिसके द्वार पर (घर पर) थे, उन सबको साथ में ले लिया और वे सरयू-तट पर

ते सरवेने साथे लीधां, ने आव्यां सरज्युतीर,
भीड घणी देखीने वळता, बोल्यां श्रीरघुवीर । २२ ।
स्वधाम आव्यानी जेने मुज साथे, इच्छा होये मन,
ते वस्त्र सहित सरज्युमां पेसी, स्नान करो सहु जन । २३ ।
एवां वचन सुणी श्रीरामचंद्रनां, हरख्या सरवे लोक,
सरज्यु मांहे प्रवेश्या तत्क्षण, मूकी मननो शोक । २४ ।
ते गंगाजळनो स्पर्श करतां, दिव्य थयो देह वर्ण,
मस्तक झळके किरीट मुगट, मकराकृत कुंडळ कर्ण । २५ ।
चार भुजा चतुरायुधमंडित, पीत वसन वनमाळ,
सुंदर श्याम कमळदळ लोचन, प्रगट्यां रूप रसाळ । २६ ।
तेणे समे आवी रह्यां अंत्रीक्ष, लक्षोलक्ष विमान,
विद्युत वरण धजाओ झळके, कंचन कळश वितान । २७ ।
ते दिव्य रूप धरी विमान बेठां, अवधपुरीनां जन;
त्यारे दूतने पासे तेडावीने, बोल्या श्रीराम वचन । २८ ।
अल्या, जुओ नग्रमां कोई रह्युं छे, पशु पक्षी नर तांहे,
ते सरव ठेकाणे शोध करीने, लावो तेने आंहे । २९ ।

आ गये। बड़ी भीड़ को देखकर फिर श्रीरघुवीर राम बोले । २१-२२ । ‘जिसके मन में मेरे साथ मेरे धाम आने की इच्छा हो, वे समस्त लोग वस्त्र-सहित सरयू में प्रविष्ट होकर स्नान करें।’ । २३ । श्रीरामचन्द्र के ऐसे वचन सुनकर समस्त लोग आनन्दित हो गये और मन के शोक को तजकर उन्होंने तत्क्षण सरयू में प्रवेश किया । २४ । उस गंगाजल को स्पर्श करते ही उनके शरीर और वर्ण दिव्य हो गये । उनके मस्तकों पर किरीट और मुकुट तथा कानों में मकराकार कुण्डल चमक रहे थे । २५ । उनके चारों हाथ (शंख, चक्र, गदा और पद्म—) चार प्रकार के आयुधों से विभूषित थे । वे पीत वस्त्र (पीताम्बर) तथा वन मालाएँ धारण किये हुए थे । वे सुन्दर श्याम-शरीरधारी थे । उनके नेत्र कमलों के दलों-से थे । वे रसीले रूप में प्रकट हुए थे । २६ । उस समय अन्तरिक्ष में लाख-लाख विमान आकर (स्थिर) रह गये । उनके विद्युत के-से वर्ण के ध्वज और सोने के-से कलश चँदोवे चमक रहे थे । २७ । अवधपुरी के वे लोग दिव्य रूप धारण करके उन विमानों में बैठ गये । तब दूतों को पास बुलाकर श्रीराम ने यह बात कही । २८ । ‘अरे, नगर में (जाकर) देखो, वहाँ कोई पशु-पक्षी, मनुष्य तो (नहीं शेष) रह गया है । समस्त स्थानों पर खोज करके यहाँ ले आओ । २९ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

शोध करीने लावो तेने, सहु जीव जंतु परमाण रे,
एवां वचन सुणीने अनुचर फरता, शोध करता निरवाण रे। ३०।

समस्त जीव-जन्तुओं को ठीक से खोज करके (यहाँ) ले आओ।' ऐसे वचन सुनकर वे अनुचर घूमने लगे और निर्धारपूर्वक खोज करने लगे। ३०।

* * *

अध्याय—१०१ (श्रीराम द्वारा कुत्ते का उद्धार करना और गुरु-लक्षणों का वर्णन)

राग सामेरी

अनीहां रे अनुचर फरता पुरमोझार,
शोधता सरवेने ठारोठार।
अनीहां रे सूक्ष्म जीव जंतु हता ज्यांहे,
नाख्या ते सरवे लेई सरज्यु मांहे। १।

ढाळ

सरज्युमां सहु जीव नाख्या, ते थया दिव्य स्वरूप,
ऐवी अकळ गति ईश्वरतणी, ते अतर्क्य वात अनुप। २।
एम अनुचर फरता अवधपुरीमां, जोयुं सरवे गाम,
एक श्वान सडेलो मरवा पड्यो छे, दीठो तेणे ठाम। ३।
उतावळा अनुचर आवीने, बोल्या प्रभुनी साथ,
सरवे पुर अमो जोयुं फरीने, हावे नथी रह्युं कोई नाथ। ४।

अध्याय—१०१ (श्रीराम द्वारा कुत्ते का उद्धार करना और गुरु-लक्षणों का वर्णन)

अब यहाँ नगर के अन्दर अनन्तर अनुचर घूमने लगे। वे स्थान-स्थान पर सबको खोज रहे थे। अब यहाँ (नगर के अन्दर) जहाँ सूक्ष्म जीव-जन्तु थे, उन सबको लेकर उन्होंने उन्हें सरयू में फेंक दिया। १।

जब उन्होंने समस्त जीवों को सरयू में फेंक दिया, तो वे दिव्य-रूपधारी हो गये। ईश्वर की गति अनाकलनीय (अगम्य) होती है। वह अद्‌भुत (बेजोड़) बात अतर्क्य है। २। इस प्रकार अवधपुरी में वे अनुचर विचरण कर रहे थे। उन्होंने समस्त नगर देखा। तो उन्होंने उस स्थान पर देखा कि एक सड़ा हुआ कुत्ता मरने के लिए (-मरणासन्न) पड़ा हुआ है। ३। शीघ्रता-पूर्वक आकर उन अनुचरों ने प्रभु से कहा,

पण एक ठेकाणे श्वान पड्यो छे, तेनी दुरगंधनो नहि पार,
तेना मस्तकमांही जीव पड्या छे, पामे दुःख अपार। ५ ।
रघुपति कहे, लेई जाओ सुखासन, लावो बेसाडीने आंहे,
शिर विषेथी पडी जाय नहि, कोई जीव रहे नहि त्यांहे। ६ ।
एवुं कहेतामां अनुचरे जई, शिबिकामां घाल्यो श्वान,
उतावळा लेई आव्या तेने, ज्यां छे श्रीभगवान। ७ ।
सरज्युमां ते श्वान ज नाख्यो, दिव्य थयो तत्काळ,
तेना मस्तकमां हता जीव, ते थया दिव्य देह विशाळ। ८ ।
पेलो श्वान हतो ते चत्रभुज थईने, आव्यो प्रभुनी पास,
चरणे नमी स्तुति करवा लाग्यो, गद्‌गद वचन प्रकाश। ९ ।
त्यारे अवधपतिए पूछ्युं तेने, पूरवे हतो तुं कोण ?
थयो श्वान शे करमे करी, महादुःख सह्युं निरवाण। १० ।
एवां वचन सुणी रघुवीरनां, बोल्यो श्वान दिव्यस्वरूप,
गत जन्मकेरी कहुं कथा ते, सुणो रविकुळभूप। ११ ।

'हमने घूमकर समस्त नगर देखा। हे नाथ, उसमें कुछ भी नहीं रहा है। ४। परन्तु एक स्थान पर एक कुत्ता पड़ा हुआ है। उसकी दुर्गन्ध की कोई सीमा नहीं है। उसके मस्तक में जीव पड़े हुए हैं, अतः वह अपार दुःख को प्राप्त हो रहा है।'। ५। (इस पर) रघुपति राम बोले, 'एक सुखासन (पालकी) लेकर जाओ और उसमें बैठाकर यहाँ ले आओ। उसके सिर में से कोई जीव गिर नहीं जाए, कोई वहाँ (शेष) न रह जाए'। ६। ऐसा कहते ही अनुचरों ने (वहाँ) जाकर शिबिका में उस कुत्ते को रख लिया और वे शीघ्रता से उसे लेकर (वहाँ) आ गये, जहाँ श्रीभगवान् राम थे। ७। उन्होंने उस कुत्ते ही को नदी में फेंक दिया, तो वह तत्काल दिव्य (-रूपधारी) हो गया। उसके मस्तक में (जो) जीव थे, वे विशाल दिव्यदेह-धारी हो गये। ८। वह (जो) कुत्ता था, वह चतुर्भुजधारी होकर प्रभु राम के पास आ गया और उनके चरणों को नमस्कार करके उनकी गद्‌गद वचनों में प्रकट रूप में स्तुति करने लगा। ९। तब अवध-पति राम ने उससे पूछा, 'पूर्वकाल में तुम कौन थे ? किस कर्म से तुम श्वान हो गये और अन्त में बड़े दुःख को तुमने सहन किया?'। १०। रघुवीर की ऐसी बातें सुनकर दिव्य-स्वरूप-धारी वह श्वान बोला, 'हे रविकुल-भूप, मैं (अपने) गत जन्म की कथा कहता हूँ, उसे सुनिए। ११। मैं पहले शूद्र जाति (में उत्पन्न) था। (तब) मैंने कुछ विद्या सीख ली। फिर मैं दम्भी होकर विवाद करता

पूरवे हतो हुं शूद्र जाति, भण्यो कांई विद्याय;
पछी दंभी थईने वाद करतो, सद्‌धरम निंदाय। १२।
वाचाळ साधु वेश लीधो, पूजावा जगमांहे;
गुरु थई फरतो जगतमां, घणा शिष्य कीधां तांहे। १३।
ते सेवा बहुविधि करे मारी, भावतां भोजन,
वस्त्र नाना भातनां, वळी भेट करता धन। १४।
एम घणां दिन सेवा करावी, गुरु थईने तेणी वार;
कल्याण तेनुं नव कर्युं, नव जाण्यो तत्त्वविचार। १५।
ते पापथी हुं श्वान थई, महादुःख पाम्यो नेट;
में छळ करी छेतर्या सहुने, भर्युं कपटे पेट। १६।
ते शिष्य सर्वे कीट थईने, पड्या मस्तकमांहे,
मुज रुधिर केरुं पान कर्युं, दुःख दीधुं त्यांहे। १७।
माटे गुरु थईने शिष्यनुं, करी कपट खाशे जेह,
कल्याण तेनुं नहि करे तो, भोगवशे दुःख तेह। १८।
प्रभु तमे दीनदयाळ छो, आचरो परउपकार,
नथी कर्म जोता जीवनुं, तेने आपो छो उद्धार। १९।

और सद्‌धर्म की निन्दा करता था। १२। जगत् में पूजे जाने के हेतु मैंने एक वाचाल साधु का वेश ग्रहण कर लिया और गुरु बनकर जगत् में घूमता रहा। वहाँ मैंने अनेक शिष्य बना लिये। १३। वे मेरी बहुत प्रकार से सेवा करते थे, मनभाया भोजन कराते थे। वे नाना प्रकार के वस्त्र तथा उनके अतिरिक्त धन भेंट के रूप में देते थे। १४। उस समय मैंने गुरु बनकर इस प्रकार बहुत दिन अपनी सेवा करवायी। (फिर भी) मैंने उनका कल्याण नहीं किया; (क्योंकि) मैं स्वयं (आत्मतत्व) सम्बन्धी कोई विचार नहीं जानता था। १५। उस पाप से मैं श्वान बनकर (श्वान के रूप में उत्पन्न होकर) निश्चय ही बड़े दुःख को प्राप्त हो गया। मैं छल से सबको ठग लेता था और कपट से अपना पेट भर लेता। १६। वे सब शिष्य कीड़े बनकर (कीड़ों के रूप में उत्पन्न होकर) मेरे मस्तक में पड़ गये (कीड़ों के रूप में मेरे मस्तक में उत्पन्न हो गये)। उन्होंने मेरे रक्त का पान किया और वहाँ मुझे दुःख दिया। १७। इसलिए जो गुरु बनकर कपट-पूर्वक शिष्य का (धन आदि) हड़पता है और उनका कल्याण नहीं करता, वे उसे दुःख का भोग कराते हैं। १८। हे प्रभु, आप दीन-दयालु हैं, आप परोपकार करते हैं। जीव के कर्म को न देखते हुए आप उन्हें उबार देते हैं।'। १९। रघुवीर राम से ऐसा कहकर

एवुं कहीने रघुवीरने, फरी नम्यो चरण त्यांहे,
सहु शिष्यने निज संग लेई, बेठो विमान ज मांहे । २० ।
आश्चर्य पाम्या सेवको, मन विचारे मुनि धीर,
ते सर्व सुणतां वचन वळतां, बोलिया रघुवीर । २१ ।
भाई गुरु पदवी कठिन छे, वळी अधिक सहुथी एह,
भगवान सम गुण होय जेमां, गुरु कहीए तेह । २२ ।
उत्पत्ति प्रले जाणे जथा, विद्या अविद्या रूप,
अगति गति सहु भूतनी, वळी ब्रह्मज्ञान अनुप । २३ ।
तत्त्वमसिनां आदि वायक, वेदनां निर्वाण,
सहु शास्त्रना मत विभिन्न ते, अनुभव जथारथ जाण । २४ ।
उपासना दृढ ध्यान, ज्ञान विवेक ने वैराग,
निरबंध मुक्त सदा रहे, अध्यासनो करे त्याग । २५ ।
वळी विषयी पामर मुमुक्षुनां, ओळखे आचर्ण,
उपदेश तेवो आपता, अधिकारीनुं जोई वर्ण । २६ ।
एवां लक्ष्मण हाये जेमां, गुरु कहीए धन्य,
ते मुक्त माटे जीवनां, छोडे सकळ बंधन । २७ ।

उसने फिर वहाँ उनके चरणों को नमस्कार किया और समस्त शिष्यों को साथ में लेकर विमान ही में बैठ गया । २० । (यह देखकर राम के) वे सेवक आश्चर्य को प्राप्त हो गये । धीर-मति मुनि मन में सोचने लगे । फिर उन सबके सुनते रहते रघुवीर राम बोले । २१ । 'हे भाइयो, गुरु की पदवी कठिन होती है । वह सर्वश्रेष्ठ होती है । जिसमें भगवान् के (गुणों के) समान गुण हों, उसे गुरु कहें । २२ । वह जैसे उत्पत्ति और प्रलय को जानता है, वैसे ही विद्या और अविद्या के रूपों को जानता है । वह समस्त भूतों (प्राणियों) की अगति और गति को, फिर अनुपम ब्रह्म-ज्ञान को जानता है । २३ । समझ लो कि वेदों के 'तत्त्वमसि' आदि वचनों को तथा समस्त शास्त्रों के भिन्न-भिन्न मतों को वह यथार्थ रूप से अनुभव करता है । २४ । वह उपासना, दृढ़ (अविचल) ध्यान, ज्ञान, विवेक और वैराग्य से युक्त होता है । वह सदा बन्धन-रहित, मुक्त रहता है । वह (सांसारिक बातों के सम्बन्ध में) मिथ्या आरोपण का त्याग करता है । २५ । इसके अतिरिक्त वह पामर विषयी-जनों और मुमुक्षियों के आचरण को पहचानता है । किसी अधिकारी के वर्ण को देखकर वह वैसा ही (अर्थात् उसके अनुकूल) उपदेश देता है । २६ । जिसमें ऐसे लक्षण हों, उसे धन्यतापूर्वक गुरु कहें । वह (जीवन-) मुक्त व्यक्ति जीवों

जे संग मुक्त थयो नथी, वळी विषय पर अनुराग,
नथी सारासार विवेक, भक्ति ज्ञान ने वैराग । २८ ।
ते गुरु थई जगतमां, करता जीव जे उपदेश,
नव ज्ञान आवे लेश ते, जाणजो मायिक वेश । २९ ।
ज्यम अंध संगे बधीर मळ्यो, शुं करे सिद्धांत ?
एक सुणे नहि बीजो न देखे, जाणजो दृष्टांत । ३० ।
एम ज्ञानरहित गुरु सदा, ने शिष्य साधनरहित,
ते उभय मुक्त न थाय कोई दिन, मलिन मायिक चित्त । ३१ ।
ए प्रकारे रघुनाथजी, बोलिया तेणी वार,
ते सुणी सरवे सभाजन कहे, धन्य जुगदाधार । ३२ ।
हावे अवधवासी दिव्य देह धरी, बेठा सरव विमान,
आवी रह्युं सहु त्याहरे, आज्ञा करी भगवान । ३३ ।
विमान लाग्यां चालवा, त्यारे बोल्या सहु पुरजन,
आण दीधी रामनी, विचार करीने मन । ३४ ।
रघुनाथ अमने मोकली ए, रहे अवधपुर मांहे,
त्यारे प्रभु पाखे अमो क्यम, रहीए जईने त्यांहे ? । ३५ ।

के लिए समस्त बन्धनों का त्याग कर देता है । २७ । जो (सांसारिक) संगति से मुक्त नहीं हुआ हो, जिसे विषय-सुख के प्रति अनुराग हो, जिसमें सारासार-विवेक, भक्ति, ज्ञान और वैराग्य नहीं है, फिर भी जगत् में गुरु बनकर जीवों को उपदेश देता हो, परन्तु जिसे अंश तक ज्ञान नहीं हो, उसके वेश को मायावी वेश जानना । २८-२९ । अन्ध को संगति के लिए बहिरा मिल गया हो, तो उनके लिए सिद्धान्त क्या कर सकता है । एक सुन नहीं सकता, तो दूसरा देख नहीं सकता । इस दृष्टान्त को (इस सम्बन्ध में उचित) समझ लेना । जिस प्रकार यह बात है, उसी प्रकार सदा ज्ञान-रहित गुरु और साधना-रहित शिष्य मिल गये हों, तो वे किसी भी दिन मुक्त नहीं हो पाएंगे । उनका चित्त मलिन और मायिक होता है ।' । ३०-३१ । उस समय रघुनाथ राम इस प्रकार बोले । उसे सुनकर समस्त सभा-जनों ने कहा, 'जगदाधार (भगवान् राम) धन्य है ।' । ३२ । अब अयोध्या के निवासी सब लोग दिव्य शरीर धारण करके विमानों में बैठ गये । वे सब तब (वहाँ) आकर रह गये, तो भगवान राम ने आज्ञा दी । ३३ । (फिर) विमान चलने लगे, तब समस्त नागरिक जन बोले । उन्होंने मन में विचार करके राम की शपथ दिलायी । ३४ । 'रघुनाथ हमें भेजकर (स्वयं) अयोध्या नगरी में रह

माटे प्रभु आगळ थाय त्यारे, पूंठळ जईए त्राण,
विमान ते स्थंभी रह्यां, ज्यारे दीधी रामनी आण। ३६।

वलण (तर्ज बदलकर)

राम आण मानी विमान सरवे, स्थंभ्यां तेणे ठार रे,
ए समे सत्यलोकथी आव्या, ब्रह्मा त्यां निरधार रे। ३७।

रहे हैं। तब बिना प्रभु के हम वहाँ जाकर कैसे रहें ? । ३५। इसलिए समझिए कि जब प्रभु राम आगे हो जाएँगे, तब हम पीछे-पीछे जाएँगे।' जब राम की शपथ दिलायी, तो वे विमान रुक गये। ३६।

समस्त विमान राम की शपथ को मानकर उस स्थान पर रुके रहे। उस समय ब्रह्मा जी सत्यलोक से वहाँ निर्धार-पूर्वक आ गये। ३७।

* * *

अध्याय—१०२ (ब्रह्मा द्वारा राम-स्तवन)

राग दोहा

हावे सत्यलोकथी आविया, ब्रह्मा तेणी वार,
मरिच्यादिक साथे घणा, मानसीपुत्र अपार। १।
हंस उपरथी ऊतर्या, चाली आव्या त्यांहे,
कर जोडी ऊभा रह्या, रघुपति ज्यांहे। २।
स्तुति करता ब्रह्मा त्यांहां, रामनी तेणी वार,
विनयवचन बहु बोलता, चतुरमुखे निरधार। ३।

छंद पद्धरी बंध

जयति रघुपति करुणानिधान, जय व्यापक विश्व अखंड खान,
दुःख-दीनहरण देवाधिदेव, सब काळ करत इंद्रादि सेव। ४।

अध्याय—१०२ (ब्रह्मा द्वारा राम-स्तवन)

अब उस समय ब्रह्मा सत्यलोक से आ गये। उनके साथ मरीचि आदि बहुत अधिक (उनके अपने) मानस-पुत्र थे। १। वे हंस पर से उतर गये और (पैदल) चलकर वहाँ आ गये और हाथ जोड़कर खड़े रह गये, जहाँ रघुपति राम बैठे हुए थे। २। उस समय ब्रह्मा वहाँ पर राम की स्तुति करने लगे। वे अपने चारों मुख से निश्चय पूर्वक (नीचे लिखे अनुसार) बहुत विनय वचन बोले। ३।

जय अपरिच्छिन्न आनंदघन, संहार असुर वत्सल प्रपन्न,
जय सृष्टि उद्भव हरण पाळ, विन हेत कृत कारण कृपाळ । ५ ।
ईश्वर व्यापक विभूति अनेक, जग सूत्रधार चैतन्य एक,
तव शासन पाळत लोकपाळ, भय मानी वरखत मेघमाळ । ६ ।
सूरज पोषण करतं प्रकाश, औषधि पोषण इन्दु विलास,
वहे मारुत सदा समे अनुकूळ, ऋतु आवत जात फळादि फूळ । ७ ।
दाहशक्ति धारत अनळ आप, रविसुत जाने जग पुन्य पाप,
मुनि धारत पावन वेदधर्म, अनुसार चलत यज्ञादि कर्म । ८ ।
दीपावती धरा धरत अनंत, त्यौं दिशा अमळ दिग्गज रहंत,
सब जानत ए प्रभुता प्रचंड, जे मानत नहि तेही देत दंड । ९ ।
जब जब यह ग्लानि होत धर्म, सुर साधु दुःखी गत वेदकर्म,
भुव पीडित भार अधरमी भूप, तबही तुम धर्त विचित्र रूप । १० ।

'हे करुणा-निधान रघुपति, आपकी जय हो । हे विश्व-व्यापक अखण्ड खनि (स्वरूप भगवान् राम), आपकी जय हो। हे दुःख और दैन्य का अपहरण करनेवाले देवाधिदेव, आपकी जय हो । इन्द्र आदि देव सब काल आपकी सेवा करते हैं । ४ । हे अपरिच्छिन्न (असीम, अखण्ड), हे आनन्द-घन, हे असुरों का संहार करनेवाले, हे शरण में आये हुए भक्तों के प्रति वत्सल, आपकी जय हो । हे सृष्टि की उत्पत्ति, हरण और पालन करने वाले, हे बिना किसी हेतु के (समस्त सृष्टि के) कारण (बीज-रूप), हे कृपालु, आपकी जय हो । ५ । आप (एकमेव) ईश्वर हैं, आप (सर्व-) व्यापक हैं, आपकी विभूतियाँ अनेक हैं, आप जगत् के सूत्रधार हैं, आप एक (मात्र) चैतन्य (स्वरूप) हैं । लोकपाल आपकी आज्ञा का पालन करते हैं । मेघमाला आपसे भय मानकर बरसती है । ६ । सूर्य (आपकी आज्ञा से) पोषण करने के लिए प्रकाश (उत्पन्न) करता है, चन्द्र अपने विलास (चाँदनी) से औषधियों का पोषण करता है । वायुदेव सदा समय के अनुकूल बहता है, ऋतुएँ आती हैं और फल, फूल आदि उत्पन्न होते हैं । ७ । अग्नि स्वयं दाह-शक्ति धारण करता है; रवि-सुत (यमदेव लोगों के) पुण्य और पापों को जानता है, मुनि वेदों द्वारा प्रतिपादित पावन धर्म का पालन करते हैं और (उनके द्वारा) उसी के अनुसार यज्ञादि कर्म चलते रहते हैं । ८ । अनन्त शेष शोभायमान धरा को (मस्तक पर) धारण किये हुए है । वैसे चारों दिशाओं में पवित्र (वृत्तिवाले) दिग्गज रहते हैं । सब आपकी इस प्रचण्ड प्रभुता को जानते हैं और जो उसे स्वीकार नहीं करते, उन्हें आप दण्ड देते हैं । ९ । जब-जब धर्म में ग्लानि

हत निरदे असुर कृतांत काळ, निज भक्त हृदय मानस मराळ,
जे दुष्ट दहन वन जातवेद, सुर गो जन मुनि मन हर्ण खेद। ११।
किये बाळ तरुण अद्‌भुत चरित्र, सुनि गावत सो मंगळ पवित्र,
ते जन्म मरण दुःख मुक्त होत, भवसिंधु तरन दृढ नाम पोत। १२।
नहि देश काळ विधि क्रिया भेद, नर नारी न आश्रम वर्ण वेद,
जो जन्म करम गावत पुनीत, तव लीला मंगळ सुखद गीत। १३।
ते पावत अमृत पद निदान, जेही कारण जोगी धरत ध्यान,
अधिकारी जपत जो रामनाम, तीनकुं नहि दुर्लभ परम धाम। १४।
जो गुण भवसिंधु सुगम सेत, सो संकटहरण दयानिकेत,
जय दीनबंधु करुणानिवास, गिरधारी प्रभु में दीन दास। १५।

(शिथिलता) उत्पन्न हो जाती है, देव और साधु (सज्जन) लोग दुखी हो जाते हैं, वेद (के अनुसार चलनेवाले) कर्म नष्ट हो जाते हैं, अधार्मिक राजाओं के (पाप-) भार से पृथ्वी पीड़ित हो जाती है, तभी आप विचित्र (अवतार-) रूप धारण करते हैं। १०। हे अपने भक्तों के हृदय रूपी मानसरोवर के (निवासी) हंस, आप कृतान्त काल बनकर उन निर्दय असुरों की हत्या करते हैं। जो दुष्ट जन रूपी वन है, उसे जला देनेवाले आप अग्नि हैं; देवों, गायों, (भक्त-) जनों तथा मुनियों के मन के खेद को आप दूर करते हैं। ११। आपने बाल रूप में तथा युवा रूप में अद्‌भुत चरित्र (लीलाएँ) प्रदर्शित किये हैं। उन पवित्र मंगल चरित्रों का गान मुनिजन करते रहते हैं। १२। (इस दृष्टि से) देश, काल, विधि, क्रिया, नर-नारी, आश्रम, वर्ण, वेद सम्बन्धी कोई भेद (शेष) नहीं हैं (अर्थात किसी भी देश के, किसी भी समय, किसी भी आश्रम या वर्ण के, किसी भी वेद को प्रमाणित माननेवाले स्त्री या पुरुष के दुख को आप दूर करते हैं।) यदि कोई आपकी जन्म तथा कर्म (सम्बन्धी) पुनीत लीला का मंगल तथा सुखकारी गान करता है, तो वह उस अन्तिम पावन अमृत (शाश्वत) पद को प्राप्त हो जाता है, जिस (की प्राप्ति) के हेतु योगी ध्यान धारण करते हैं। यदि विकार-रहित होकर कोई राम-नाम का जाप करे, उसे परमधाम दुर्लभ नहीं है। १३-१४। जिनके गुण (का गान) भव-सागर का (पार करानेवाला) सुगम सेतु हैं, ऐसे हे (गुणगान करनेवाले आपके उन भक्तों के) संकट को दूर करनेवाले, आपकी जय हो। हे दीन-बन्धु, हे करुणा-निवास, आपकी जय हो।' हे गिरिधारी प्रभु, मैं (कवि गिरधर-दास) आपका दीन दास हूँ। १५।

दोहा

ब्रह्माए एवी स्तुति करी, नम्या सजळ लोचन,
पछे रघुपतिए आदर करी, बेसाड्या आसन । १६ ।

ब्रह्मा ने इस प्रकार स्तुति की और नमस्कार किया। उनके नेत्र सजल हो गये थे। अनन्तर रघुपति राम ने उन्हें आदर-पूर्वक आसन पर बैठा लिया। १६।

* * *

अध्याय—१०३ (शिवजी द्वारा राम-स्तवन और दशरथ का मोक्ष प्राप्त करना)

राग सोरठा

प्रजापति निरधार, आसन बेठा स्तुति करी,
तत्क्षण सभामोझार, शंकर आव्या ते समे । १ ।
नीलकंठ त्रय नेन, भाल चंद्र झळकी रह्या,
कमळभुजा वरदेन, त्रिशूल डाक डमरु ग्रह्यां । २ ।
उपवीत सरपाकार, जटा विषे गंगा वहे,
गौर वर्ण सुकुमार, विभूति लेपन अंगमां । ३ ।
गळे रुंडनी माळ, मृगचर्म अंगे धर्यु,
भोळानाथ दयाळ, नंदी उपरथी ऊतर्या । ४ ।
आव्या सभा मोझार, कर जोडी ऊभा रह्या,
राम तणी तेणी वार, स्तुति करता सन्मुख रही । ५ ।

अध्याय—१०३ (शिवजी द्वारा राम-स्तवन और दशरथ का मोक्ष प्राप्त करना)

(राम की) स्तुति करके प्रजापति ब्रह्मा (जब) निश्चय-पूर्वक आसन पर बैठ गये, तो उस समय तत्क्षण उस सभा में शिवजी आ गये। १। नील-कण्ठ त्रिनयन शिवजी के भाल (-प्रदेश) पर चन्द्र झलक रहा था। उन्होंने अपने कमल-से (कोमल) वरद (वर देनेवाले) हाथों में त्रिशूल, डुग्गी और डमरू ग्रहण किये थे। २। उनका उपवीत सर्पाकार, अर्थात् सर्पों का बना हुआ था, जटाओं में से गंगा बह रही थी। उन्होंने अपने गौर वर्ण के सुकुमार शरीर में विभूति का लेपन किया था। ३। गले में रुंडों की माला तथा शरीर पर मृग-चर्म धारण किया था। ऐसे वे दयालु भोलानाथ नन्दी पर से उतर गये। ४। वे सभा (-गृह) के अन्दर आ गये और हाथ जोड़कर खड़े रह गये। उस समय वे राम के सम्मुख (खड़े) रहकर उनकी स्तुति करने लगे। ५।

छंद

नमामि ब्रह्मभावनं, अखिल लोकपावनं,
दनुज दुष्ट दावनं, नराकृति सोहावनं । ६ ।
त्रिलोक लोकभूषणं, विशोकहारी दूषणं,
अधर्म वारि शोषणं, सुवेद कर्मपोषणं । ७ ।
नमामि कमललोचनं, खळादि मान मोचनं,
त्वदीय का विशेषनं, त्रिताप शीत रोचनं । ८ ।
त्वदब्जअंध्रि दुर्लभं, मलिन चेत निर्लभं,
अमान संत सुलभं, नमामि भक्तवल्लभं । ९ ।
कठोर चापखंडनं, दशाननं विहंडनं,
परात्परं प्रचंडनं, नृपाधिमौलि मंडनं । १० ।
मारीच आदि दुर्मति, कबंध ताडिका हर्ति,
ददाति अक्षरं गति, नमामि उर्विजापति । ११ ।
समरकला विचक्षणं, अमोघ बाण तीक्षणं,
अभीत शर्ण भिक्षणं, कृपाकटाक्ष ईक्षणं । १२ ।

'हे ब्रह्मा के प्रिय, हे अखिल लोकों को पावन करनेवाले, हे दुष्ट दनुजों को जला डालनेवाले, हे नर की आकृति (रूप में शोभायमान भगवान् राम), आपको मैं नमस्कार करता हूँ । ६ । हे तीनों लोकों के लिए भूषण-रूप, हे सबके शोक और दोष को हरण करनेवाले, हे अधर्म रूपी जल का शोषण करनेवाले, वेद-प्रतिपादित अच्छे कर्मों का पोषण करनेवाले (हे भगवान), मैं आपको नमस्कार करता हूँ । ७ । हे कमल-लोचन, हे खल आदि के मान को छुड़ानेवाले, मैं आपको नमस्कार करता हूँ । आपके लिए क्या विशेषण (उपाधी) है । तीनों प्रकार के ताप और शीत को दूर करनेवाले आपको मैं नमस्कार करता हूँ । ८ । आपके कमल-कोमल चरण का अँगूठा दुर्लभ है; मलिन नीयतवालों के लिए वह अप्राप्य है; फिर भी मान-रहित सन्तों के लिए वह सुलभ है । ऐसे भक्त-वल्लभ आपको मैं नमस्कार करता हूँ । ९ । (मेरे) कठोर धनुष को तोड़ डालनेवाले, दशानन रावण का वध करनेवाले, हे परात्पर (ब्रह्म), हे प्रचण्ड, राजाओं के मस्तकों की शोभा बढ़ानेवाले (नृप-चूड़ामणि), आपको मैं नमस्कार करता हूँ । १० । मारीच, कबन्ध, ताड़का आदि दुर्मतियों (राक्षसों) का वध करनेवाले, अक्षर गति देनेवाले हे भूमिजा-पति, आपको मैं नमस्कार करता हूँ । ११ । जिनकी युद्ध-कला विचक्षण है, जिनके तीक्ष्ण बाण अमोघ हैं, जो शरण में आये हुओं को अभय की भिक्षा देनेवाले

अजन्म जन्म धारयं, पतित लोक तारयं,
सुरा अरि विदारयं, विछेद भूमि भारयं। १३।
चरित गीत निर्मलं, गृणंति अमृतं फलं,
श्रवण मनादि मंगलं, पुनाति पाप प्रज्वलं। १४।
अनादि रूप अव्ययं, भवान भूत भव्ययं,
गुणाश्रितं तनुं अयं, समग्र लोक सव्ययं। १५।
अतींद्रियं परात्परं, अगाध बोध ईश्वरं,
न जानी ते कृतं वरं, अहं विधि धराधरं। १६।
क्षर क्षरातीमक्षरं, अछेद वेद अंबरं,
कलौ मलौघ भे हरं, नमो नमो नमः परं। १७।

दोहा

स्तवन कर्युं एम रामनुं, शंभु परम उदार;
ते सुणीने ऊठ्या रघुपति, भीड्या हृदय मोझार। १८।

और कृपा-कटाक्ष से युक्त नेत्रों से देखनेवाले हैं, ऐसे आपको मैं नमस्कार करता हूँ। १२। अजन्मा होने पर भी जन्म ग्रहण करनेवाले, पतित लोगों को तारनेवाले, देवों के शत्रुओं को विदीर्ण करनेवाले, भूमि के भार को विच्छिन्न करनेवाले, आपको मैं नमस्कार करता हूँ। १३। आपकी चरित्र-लीलाओं के गीत निर्मल हैं, वे अमृत-फल धारण किये हुए हैं। उन मंगल (लीला-) गीतों का श्रवण-मनन आदि पापियों के पाप जलाते हुए उन्हें पावन कर देता है। १४। आपका रूप अनादि है, अव्यय है; फिर भी आप (अनेक रूपों में उत्पन्न) हो गये हैं और होनेवाले हैं। तथा अव्यय होने पर भी) आपने (सत्त्व, रजस्, तमस् जैसे) गुणों के आधार से यह देह समग्र सव्यय अर्थात् नाशवान् लोक में धारण की है। १५। आप अतीन्द्रिय (इन्द्रियों की जानकारी के परे) तथा परात्पर हैं, आप अथाह ज्ञान (-स्वरूप) ईश्वर हैं। आपने जो श्रेष्ठ कृतियाँ की हैं, उन्हें मैं तथा विधाता और धरा के धारी शेष (पूर्णतः) नहीं जान पाये हैं। १६। क्षर रूप अर्थात् नाश को प्राप्त होनेवाले रूप को धारण करने पर भी आप क्षरातीत (अर्थात् नाश के परे) हैं, अक्षर हैं, आप वेद-स्वरूप तथा सब पर छाये हुए आकाश-स्वरूप हैं। मल अर्थात् पाप के ओघ-स्वरूप इस कलियुग के भय को हरण करनेवाले आपको नमस्कार है, नमस्कार है, आप परात्पर को नमस्कार है।' १७।

परम उदार शिवजी ने इस प्रकार रघुपति राम का स्तवन किया, तो उसे सुनकर वे उठ गये और उन (शिवजी) को उन्होंने हृदय से लगा

भावे करी भेट्या तदा, शिवने श्रीरघुनाथ,
आसन पर बेसाडिया, ग्रही शंकरनो हाथ । १९ ।

त्यारे सुरपति आव्या स्वर्गथी, बीजा देव अपार,
साथे तेडी लाविया, लक्ष्मणने निरधार । २० ।

वळी पूर्वे रह्या'ता स्वर्गमां, दशरथ राजा जेह,
विमान बेसी आविया, देवनी साथे तेह । २१ ।

त्यारे नृपने जोई ऊभा थया, रघुपति तेणी वार,
पिताने पाये लागिया, गद्‌गद प्रेम अपार । २२ ।

ते रामनी सम्मुख जोई रह्या, दशरथ नृप निरवाण,
नखशिख मूर्ति प्रभुतणी, धरी ध्यानमां जाण । २३ ।

त्यारे रघुपति कहे, सुणो तातजी, करो सरज्युमां स्नान,
महारुं परम पद पामशो, भूपति भाग्यवान । २४ ।

पछे तत्क्षण नृप नाह्या जई, थया चतुर्भुज रूप,
विमानमां बेठा जई, पाम्या मोक्ष अनुप । २५ ।

लिया । १८ । तब श्रीरघुनाथ (इस प्रकार) शिवजी से प्रेम-पूर्वक मिले और उन्होंने उनका हाथ पकड़कर उन्हें आसन पर बैठा लिया । १९ । तब स्वर्ग से सुरपति इन्द्र तथा असंख्य अन्य देव आ गये । वे निश्चय ही लक्ष्मण को अपने साथ ले आये । २० । इसके अतिरिक्त जो पूर्वकाल से स्वर्ग में रहते थे, वे राजा दशरथ उन देवों के साथ विमान में बैठकर (वहाँ) आ गये । २१ । तब उस समय राजा (दशरथ) को देखते ही रघुपति राम खड़े हो गये और अपार प्रेम से गद्‌गद होते हुए वे अपने पिताजी के पाँव लगे । २२ । अन्त में राजा दशरथ राम के सामने राम की (ओर) देखते ही रह गये । समझिए कि उन्होंने नख से लेकर शिखा तक प्रभु राम की मूर्ति को ध्यान में धारण किया । २३ । तब रघुपति बोले, 'हे पिताजी, (अब) सरयू में स्नान कर लीजिए, तो हे परम भाग्यवान भूपति, आप मेरे परम पद को प्राप्त हो जाएंगे ।' । २४ । अनन्तर राजा दशरथ ने तत्क्षण जाकर (सरयू में) स्नान किया, तो वे चतुर्भुज-रूप-धारी हो गये । (फिर) वे जाकर विमान में बैठ गये और वे अनुपम मोक्ष को प्राप्त हो गये । २५ ।

सोरठा

दशरथ नृप तेणी वार, परम धाम पाम्या सही,
वरत्यो जयजयकार, पुष्पवृष्टि सुर-नरे करी। २६।

उस समय राजा दशरथ सचमुच परम धाम को प्राप्त हो गये, तो जय-जयकार हो गया। (यह देखकर) देवों और नरों ने पुष्प-वृष्टि कर दी।२६।

* * *

अध्याय—१०४ (देवों द्वारा राम की स्तुति करना)

राग दोहा

हावे देव सकळ त्यां आविया, कुबेर वरुण यम इंद्र,
अग्नि वायु दिक्पाळ वसु, दिनमणि तारा चंद्र। १।
सरवे देव पूंठळ रह्या, अग्र ऊभा सुरनाथ,
स्तुति करता श्रीरामनी, जोडीने जुग हाथ। २।

छप्पय

जय जय श्रीजुगदीश, ईश अज अंतरजामी;
धरा धर्ण वागीश, यति जन पूरणकामी।
सुरबंधन परिछेद, वेदपंथ पाळक पूरण,
मुनि मनरंजन कृत-समूह, दनुजादिक चूरण।
किये मुक्त अवधीपुर जन सकळ, गुण धर्म विकर्म तन,
अद्‌भुत चरित्र गिरधर प्रभु, जय रघुपति आनंदघन। ३।

अध्याय—१०४ (देवों द्वारा राम की स्तुति करना)

अब कुबेर, वरुण, यम, इन्द्र, अग्नि, वायु, दिक्पाल, सूर्य, तारे, चन्द्र-(आदि) समस्त देव वहाँ आ गये। १। सब देव पीछे (खड़े) रहे और आगे सुर-नाथ इन्द्र खड़े रहे। वे (सब) दोनों हाथ जोड़कर श्रीराम की (इस प्रकार) स्तुति करने लगे। २।

'हे श्री जगदीश, हे अजन्मा, हे अन्तर्यामी, हे ईश्वर, आपकी जय हो। धरणीधर शेष, ब्रह्मा तथा यति जनों की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले हे देवों के बन्धनों को काट देनेवाले, हे वेदों के मार्ग के प्रतिपालक पूर्ण (-ब्रह्म), हे मुनि-जनों के मन को रिझानेवाले, हे राक्षस आदि के समूहों को चूर-चूर करनेवाले, आपने गुण-कर्म-विकर्म से युक्त शरीर-धारी समस्त अयोध्या-पुर-वासी जनों को मुक्त कर दिया। हे गिरिधर प्रभु, आपके चरित्र अद्‌भुत हैं। हे आनन्द-घन रघुपति, आपकी जय हो'। ३।

दोहा

सुरपति स्तवन करी रह्या, बेठा निज आसन;
दिगपति कर जोडी तदा, बोल्या विनय वचन। ४ ।

सवैया

जय ब्रह्म सनातन ईश विभो, भवनाग विदारक नाम हरि;
शरणागत वत्सल टेक सदा, गतिदायक पूरण काम करी। ५ ।
कपि कोल किरात वनचर नीच, कीये निरभे निज धाम धरी,
बदरी फळ जूठ खवाय भई, जननी गति लायक ज्यों शबरी। ६ ।
भव दंड प्रचंड विखंड कियो; पन राख लियो नृपतिगनमें;
पितु आयस काननकुं विचरे, तबही मुनि चीर धरे तनमें। ७ ।
भूदेव अरि अघ ज्यार दियो, पद तीरथराज कियो वनमें;
करुणायतनं कमनीय घनं, यह मंगल रूप बसो मनमें। ८ ।

कवित

दशरथके नंदन रावण कुळके निकंदन
भारहारी जगवंधन, भानु धरमध्वज धारी हे!
जटायुकी दशा देख नेनन में आयो जळ

(इस प्रकार) सुर-पति इन्द्र स्तवन करते रहे। (तदनन्तर) वे अपने आसन पर बैठ गये। तब दिक्पतियों ने हाथ जोड़कर ये विनय-वचन कहे। ४।

'हे सनातन ब्रह्म, हे ईश, हे विभु, भवरूपी हाथी को विदीर्ण करने वाले नाम के धारी (भगवान) हरि, आपकी जय हो। शरणागतों के प्रति वात्सल्य (-युक्त रहना) आपकी टेक (प्रतिज्ञा) है। उनकी कामनाओं को पूर्ण करते हुए आप उनके लिए (सद्-) गति के दाता हैं। ५। अपने धाम में रखते हुए आपने कपियों, कोल-किरातों, नीच वन्य लोगों को निर्भय कर दिया। शबरी जैसी (निम्न श्रेणी की) स्त्री आपको जूठे बेर खिलाकर भक्त-जनों की गति पाने योग्य बन गयी। ६। आपने शिवजी के प्रचण्ड कोदण्ड को खण्ड-खण्ड कर डाला और नृपति-समुदाय में (जनक द्वारा प्रस्तुत) प्रण का निर्वाह किया। आप पिता की आज्ञा के अनुसार कानन में विचरण करते रहे। तभी आपने शरीर पर मुनि-चीर अर्थात् वल्कल धारण किये। ७। भूदेवों (ब्राह्मणों) के पापी शत्रुओं को आपने जला डाला (नष्ट कर दिया) और वन में अपने चरणों (के स्पर्श) से (स्थान-स्थान पर) श्रेष्ठ तीर्थ-स्थान निर्मित किये। मेरे मन में आपका यह घना करुणायतन कमनीय मंगल रूप बस जाए। ८।

पिता जेसी क्रिया कीनी ऐसे उपकारी हे;
जासु भई देवधुनी, ताको ध्यान धरत मुनि,
ऐसे पद पावन केवट धोय पीनो वारी हे;
कहत हे गिरधारी, पदरजकी बलिहारी,
गौतमकी नारी, वाकुं छिन्नमें उद्धारी हे। ९ ।

दोहा

परमारथ स्वारथरहित, जन्म सच्चिदानंद,
सात्वत कुळपालक प्रभु, जय जय रघुकुळचंद । १० ।
सकळ देवता स्तुति करी, नम्या रामने पाय,
सभा मांहे बेसाडिया, प्रसन्न थया रघुराय । ११ ।

हे दशरथ के नन्दन, हे रावण के कुल के विनाशक, हे (पापियों के) भार को और जगत् के बन्धन को दूर करनेवाले, हे भानुकुल में उत्पन्न तथा धर्म की ध्वजा के धारी, जटायु की दशा को देखकर आपके नयनों में (अश्रु-) जल भर आया और आपने उनकी (अन्त्येष्टि आदि) क्रियाएँ अपने पिता की-सी कर दीं, ऐसे हैं आप उपकार-कर्ता। (आपके) जिन (पदों) से देवधुनि गंगा उत्पन्न हुई, ऐसे उन पावन पदों को धोकर केवट ने वह जल पी लिया। (कवि गिरधरदास कहते हैं) दिग्पतियों ने कहा—हम कहते हैं, हे गिरधारी प्रभु, आपके उन पद-रजों की बलिहारी है, जिनसे आपने गौतम ऋषि की नारी (अहल्या) का क्षण में उद्धार किया। ९।

हे सच्चिदानन्द, आपका जन्म परमार्थ के लिए है, स्वार्थ-रहित है। हे सात्वत कुल के पालक प्रभु, हे रघुकुल-चन्द्र, आपकी जय हो, जय हो'। १०। इस प्रकार समस्त (दिक्पाल) देवों ने राम की स्तुति करके उनके चरणों को नमस्कार किया। तो रघुराज राम प्रसन्न हो गये और उन्होंने उन (देवों) को सभा में बैठा लिया। ११।

* * *

अध्याय—१०५ (शेष नाग द्वारा श्रीराम का स्तवन करना)

राग दोहा

हावे इंद्रनी साथे आविया, लक्ष्मणजी तेणी वार,
साष्टांग दंडवत करी नम्या, रामचरण मोझार। १ ।

अध्याय—१०५ (शेष नाग द्वारा श्रीराम का स्तवन करना)

(कहा जा चुका है कि) अब उस समय लक्ष्मण इन्द्र के साथ आ गये थे। उन्होंने राम के चरणों को साष्टांग दण्डवत् नमस्कार

त्यारे कर ग्रहीने उठाडिया, लक्ष्मणने रघुवीर,
सर्व सभा सुणतां तदा, बोल्या श्रीरणधीर। २ ।
अरे भाई, जाओ तमो, सरज्यु गंगामांहे,
स्नान करीने आवजो, मारी पासे आंहे। ३ ।
एवां वचन सुणी श्रीरामनां, चाल्या लक्ष्मण वीर,
सरज्युमां पेठा जई, जळ छे महा गंभीर। ४ ।
त्यारे मनुष्याकृति मटी गई तदा, शेषरूप थया त्यांहे;
सहस्र फणा द्युति चळकी, सहस्र मणि शिरमांहे। ५ ।
उज्वळ स्फटिक वरण सम, कांति अद्‌भुत रूप,
जुगल सहस्र लोचन झगे, झळहळ ज्योत अनुप। ६ ।
एवा अनंत तत्क्षण आवियां, ज्यां बेठा श्रीरघुराय,
स्तुति करता सन्मुख रही, सुणतां सर्व सभाय। ७ ।

छंद भुजंगी

नमो रामरामं नमो पर्मधामं, अखिल विश्वत्राता जनं पूर्णकामं,
अलिप्तं विभो व्यापकं ब्रह्मभूपं, नमो सच्चिदानंदं सर्वात्मरूपं। ८ ।

किया। तब रणधीर राम ने हाथ पकड़ते हुए लक्ष्मण को उठा लिया और समस्त सभा के सुनते रहते, वे बोले। २। 'अरे भाई, तुम जाओ, सरयू गंगा में स्नान करके मेरे पास यहाँ आ जाओ।'। ३। श्रीराम के ऐसे वचन सुनकर (उनके) बन्धु लक्ष्मण चल दिये और जाकर सरयू गंगा में प्रविष्ट हो गये। उसका जल महा गम्भीर अर्थात् बहुत गहरा था। ४। तब उनकी मनुष्य-आकृति (देह) नष्ट हो गयी और वे तब वहाँ शेष (स्वरूप) हो गये। उनके सहस्र फन थे। (प्रत्येक फन पर स्थित एक-एक के हिसाब से) उनके मस्तक पर सहस्र मणियों की कान्ति जगमगा रही थी। ५। उनका वर्ण स्फटिक के समान उज्ज्वल था, उनकी कान्ति अद्‌भुत स्वरूप की थी। उनके दो सहस्र नेत्र चमक रहे थे, (मानो) अनुपम ज्योतियाँ ही जगमगा रही हों। ६। ऐसे वे अनन्त शेष (रूप-धारी) लक्ष्मण (वहाँ) आ गये, जहाँ श्रीरघुराज बैठे हुए थे। और वे उनके सम्मुख समस्त सभा के सुनते रहते (इस प्रकार) स्तुति करने लगे। ७।

'हे राम, आपको नमस्कार है। हे परमधाम राम, आपको नमस्कार है। हे अखिल विश्व के रक्षक और (भक्त-) जनों की कामनाओं की पूर्ति करनेवाले, हे (समस्त विकारों से) अलिप्त विभु, हे (सर्व-) व्यापक ब्रह्म (-स्वरूप) -भूपति, हे सच्चिदानन्द, हे सर्वात्म-रूप, आपको नमस्कार

अछेद्यं अभेद्यं निरीहमेकं, अखंडं अजं नाम रूपं अनेकं,
अजामीशनिर्बंध निर्वाणदाता, प्रपन्नं जनं सर्वदा सर्व त्राता । ९ ।
सदा निर्गुणं गुणमयं रूप धर्ता, द्विजा निर्जरा गो धरा गुप्त कर्ता,
क्षमा सुर मुनि प्रार्थितं पर्महेतुं, पीडा टाळवा पाळवा धर्म सेतुं । १० ।
परित्राय साधुं विनाशाय दुष्टं, अभेदायकं संभवं भाव पुष्टं,
कळापूर्ण अंशे व्युहु श्रीसहितं, प्रभो उद्भवं भानुवंशे अजितं । ११ ।
कृतं बाळ पौगंड लीला अपारं, हतं ब्रह्मद्रोही निबिड अंधकारं,
तमो भूमिजा वल्लभं भूपस्वामी, पुनाति धरा दंडकारण्यगामी । १२ ।
तीरथ पादचर्ता भूविभार हरता, निगमधर्मधरता नमो विश्वभरता,
निजानंद संदेह अव्यक्त मूलं, मंगळध्यान हरति त्रई ताप शूलं । १३ ।

है । ८ । हे अच्छेद्य, हे अभेद्य, हे निरीह, हे एक (मात्र), हे अखण्ड, हे अजन्मा (होने पर भी) जिनके अनेक नाम और रूप हैं। हे अज, हे बन्धन-रहित ईश्वर, हे निर्वाण (मुक्ति) देनेवाले, हे शरण में आये हुए समस्त जनों की सदा रक्षा करनेवाले, (राम), आपको नमस्कार है । ९ । आप सदा निर्गुण होने पर भी गुणमय (सगुण) रूपों के धारक हैं। आप द्विजों, निर्जरों (देवों), गौओं तथा पृथ्वी की रक्षा करनेवाले हैं। आप पृथ्वी, देवों तथा मुनियों द्वारा प्रार्थित थे, तब आपने परम प्रेम से (उन सबकी) पीड़ा को दूर करने के लिए और धर्म-रूपी सेतु का पालन (रक्षण) करने के लिए, साधु जनों (सज्जनों) की रक्षा के लिए, दुष्टों के विनाश के लिए, (भक्ति-) भाव की पुष्टि के लिए (सबको) अभय देनेवाले के रूप में आविर्भुत हो गये हैं। हे प्रभु, आप अजित अपनी कलाओं के समस्त अंशों से तथा व्यूह और श्री (लक्ष्मी-) सहित सूर्यवंश में उद्भूत हो गये हैं। १०-११ । आपने शिशु तथा किशोर रूप में अपार लीला (प्रदर्शित) की है। (पाप-अन्याय-अधर्म आदि के रूप में) अति घने अन्धकार-स्वरूप ब्रह्म-द्रोहियों की हत्या आपने की है। आप भूपति, भूमि-कन्या सीता के वल्लभ तथा स्वामी हैं। दण्डकारण्य-गामी होकर (दण्डकारण्य में गमन करके) आपने धरती को पावन किया है। १२ । आपने अपने तीर्थ-सदृश पवित्र चरणों से विचरण करते हुए पृथ्वी के पाप-भार को दूर किया है। आप वेद-प्रतिपादित धर्म का पालन करनेवाले हैं। आप विश्व का भरण-पोषण करनेवाले हैं। (ऐसा कार्य करनेवाले) आपको नमस्कार है। आप निजानन्द अर्थात् स्वाभाविक सदा बने रहनेवाले आनन्द की राशि हैं। आपका मूल (आदि) अव्यक्त है। आपका मंगल ध्यान त्रिविध तापों के शूलों को नष्ट करता है। १३ । हे सांसारिक रोगों की औषधी-स्वरूप नाम को धारण करनेवाले, संसार में काम-क्रोध आदि का

मनोभव रुजा भेषजं नामधीरं, शमनसंस्रति काम क्रोधादि वीरं,
नमो निर्मलं कश्मलं दुःखहारी, मधुमर्दन मोक्षदाता मुरारि। १४।
हरि वासुदेवं ऋषिकेशधारं, नमो श्रीधरं माधवं मोहपारं,
दयाधीश ईशान अजसेव्यमानं, प्रभो पाहि प्रणति अभेभक्तिदानं। १५।

दोहा

ब्रह्म सच्चिदानंद अज, अविरल पूरण ज्ञान,
भक्तवत्सल करुणानिधि, जय जय श्रीभगवान। १६।
सहस्रानन एवी स्तुति करी, वंदी कमळपद राम,
सकळ सभा जोतां तदा, गया शेष निज धाम। १७।

शमन करनेवाले धीर-वीर स्वरूप नाम को धारण करनेवाले (राम) आपको नमस्कार है। हे निर्मल हे कश्मल (पाप रूपी मैल) और दुःख का नाश करनेवाले, हे मधु दैत्य का मर्दन करनेवाले, हे मोक्ष-दाता मुरारि, आपको नमस्कार है। १४। हे हरि, हे वासुदेव, हे धीर-मति हृषीकेश, हे श्रीधर, हे मोह के परे स्थित माधव, आपको नमस्कार है। हे दयाधीश, हे ईशान तथा ब्रह्मा द्वारा सेव्यमान, आपको नमस्कार है। हे प्रभु, (मेरी) रक्षा कीजिए। हे अभय तथा भक्ति के दाता, आपको नमस्कार है। १५।

हे सच्चिदानन्द अजन्मा ब्रह्म, हे अविरल पूर्णज्ञान (-स्वरूप), हे भक्त-वत्सल करुणानिधि श्रीभगवान्, आपकी जय हो, जय हो। १६। सहस्रानन शेष (-स्वरूप लक्ष्मण ने) ऐसी स्तुति की और तब राम के पद-कमलों का वन्दन करके वे समस्त सभा को देखते अपने धाम चले गये। १७।

* * *

अध्याय—१०६ (सुग्रीव आदि वानरों का स्वर्ग-गमन)

राग बिलावल चोपाई

एणी पेरे गया शेष निज धाम, पछे विभीषणशुं बोल्या श्रीराम,
अहो लंकापति ! सुणो मुज वात, तमो निज घेर पधारो भ्रात। १।

अध्याय—१०६ (सुग्रीव आदि वानरों का स्वर्ग-गमन)

इस प्रकार शेष (-स्वरूप लक्ष्मण) अपने धाम चले गये। अनन्तर श्रीराम विभीषण से बोले, 'अहो लंकापति ! मेरी एक बात सुनो। हे भाई,

मारुं स्मरण त्यां करजो सदा, अखंड भोग भोगवजो तदा,
रघुपतिनां एवां सुणी वचन, विभीषणे जळ भरियुं लोचन । २ ।
पछे प्रभुपद उपर मूक्युं शीश, गद्गद थई बोल्या ते दिश,
अहो नाथ ! मुने तेडो संग, तम विना हुं क्यम रहुं श्रीरंग । ३ ।
राज भोग मनमां नव धरुं, पदकमळनी सेवा करुं,
एवो कोण अभागी जन, तजी प्रभुसेवा विषय धरे मन ? । ४ ।
माटे मुजने बहिर्मुख कां करो नाथ ? किंकर जाणी तेडो प्रभु साथ,
त्यारे राम कहे, सुणो लंकाभूप, मानो वचन मारुं अनुप । ५ ।
हुं तमथी कांई अळगो नथी, भक्तनी पासे रह्या सर्वथी,
जतो आवतो नथी हुं कहीं, सकळ विश्व व्यापक छुं सही । ६ ।
आवागमन मुने कहे छे जेह, सदा नारकी जाणो तेह;
अजन्मा जन्म घणां अनुसरुं, जेवुं काम तेवुं रूप ज धरुं । ७ ।
स्थापन धरम दुष्ट अभिमान, उतारीने पामुं अंतरधान,
ए आविर्भाव तीरो अनुक्रम, मारा भक्त ते जाणे मर्म । ८ ।

(अब) तुम अपने घर चले जाओ । १ । वहाँ सदा मेरा स्मरण करते रहो । तब अखण्ड भोग का उपयोग करते रहो ।' रघुपति के ऐसे वचन सुनकर विभीषण ने अपने नेत्रों में (अश्रु-) जल भर लिया, अर्थात् उसकी आँखों में आँसू आ गये । २ । अनन्तर प्रभु राम के चरणों में मस्तक (झुका) रखा और वह उस समय गद्गद होकर बोला ' अहो नाथ, मुझे अपने साथ ले चलिए । हे श्रीरंग, मैं बिना आपके कैसे रह पाऊँगा ? । ३ । मैं राज्य तथा (सुख) भोगों (के विचार) को मन में नहीं रखूँगा, आपके पद-कमलों की सेवा करूँगा । ऐसा कौन अभागा मनुष्य है, जो प्रभु की सेवा छोड़कर विषय-सुख को मन में धारण करे । ४ । इसलिए हे नाथ, मुझे आपसे बिमुख अर्थात् दूर क्यों कर रहे हैं ? हे प्रभु, (मुझे अपना) सेवक समझकर अपने साथ ले जाइए ।' तब राम ने कहा, ' हे लंकाधिपति, सुनो । मेरे इस वचन को सर्वोत्तम मान लो । ५ । मैं तुम से कुछ अलग तो नहीं हूँ । मैं सब प्रकार से (अपने) भक्तों के पास रहता हूँ । मैं (उनसे दूर) कहीं जाता-आता तो नहीं हूँ । मैं सचमुच सकल-विश्व-व्यापक हूँ । ६ । जो मुझे आवागमन करनेवाला (अर्थात् इस जगत् में जन्म और मृत्यु को प्राप्त होनेवाला नाशवान्) कहता है, उसे नारकी अर्थात् नरक में रहनेवाला समझो । मैं (वस्तुतः) अजन्मा होने पर भी बहुत जन्म ग्रहण करता हूँ; जैसा काम हो, वैसा रूप ही धारण करता हूँ । ७ । मैं धर्म की स्थापना करके दुष्टों के

वलण (तर्ज़ बदलकर)

कुश पुत्रनी पासे ते रह्या, करवा राजतणुं जे काज रे,
पछी जांबुवानने पासे तेडावी, बोल्या श्रीमहाराज रे । २३ ।

वे (श्रीमहाराज राम के) पुत्र कुश के पास, राज्य के जो काम थे, उन्हें करने के लिए रह गये। अनन्तर उन्होंने जाम्बवान को पास बुलाकर कहा । २३ ।

* * *

अध्याय—१०७ (श्रीराम से जाम्बवान और हनुमान का वर प्राप्त करना)

राग चोपाई

रघुपति कहे सुणो जांबुवन, मानजो मारुं सत्य वचन,
पश्चिम देश समुद्रनी तीर, गोमताचळ पर्वत गंभीर । १ ।
मोटी गुफा छे ते गिरिमांहे, कुटुंबसहित जईने रहो त्यांहे,
द्वापर युगना अंतमोझार, त्यारे हुं धरीश कृष्ण अवतार । २ ।
चढशे चोरी मणिनी मुज शीश, तेने खोळवा हुं आवीश ते दिश,
त्यां तम साथे मारे जुद्ध बहु थशे, त्यारे पूर्वनी स्मृति आवशे । ३ ।
ओळखशो मुजने निरधार, मारी स्तुति करशो तेणी वार,
पुत्री थाशे जांबुवंती नाम, परणावशो मुजने ते ठाम । ४ ।
ते जांबुवंतीनी जन्मकथाय, सुणजो कहुं तेनो अभिप्राय,
सीतानुं हरण थयुं जेणी वार, अमो खोळता दंडक वन मोझार । ५ ।

अध्याय—१०७ (श्रीराम से जाम्बवान और हनुमान का वर प्राप्त करना)

रघुपति राम ने कहा, ' हे जाम्बवान, सुनो। मेरी बात को सत्य मान लेना। पश्चिम देश में समुद्र के तट पर गोमताचल नामक एक गम्भीर (बहुत प्रचण्ड और उँचा) पर्वत है । १ । उस पर्वत में एक बड़ी गुफा है। परिवार-सहित जाकर तुम वहाँ रह जाओ। मैं द्वापर युग के अन्त में तब कृष्णावतार धारण करूँगा । २ । (जब) मेरे सिर पर मणि की चोरी चढ़ेगी (चोरी का दोष मुझे लग जाएगा), तो उस समय मैं उसे खोजने के लिए (वहाँ) आ जाऊँगा। वहाँ तुम्हारे साथ मेरा बहुत (बड़ा) युद्ध होगा, तब तुम्हें पूर्वकाल की स्मृति हो आएगी । ३ । तुम मुझे निश्चय ही पहचान लोगे और उस समय मेरी स्तुति करोगे। तुम्हारी जाम्बुवती नामक एक पुत्री होगी, मुझसे उस स्थान पर तुम उसका परिणय करोओगे । ४ । उस जाम्बुवती की कथा सुन लो—मैं उसके

त्यारे यमुना गिरि रहेतां शिवसती, मुने नमस्कार करियो पशुपति,
तव उमियाने पडियो संदेह, राजकुंवर रडता फरे एह । ६ ।
क्यम कर्यो शिवे एमने नमस्कार ? कही सच्चिदानंद अपार,
सती आव्यां करवा मुज परीक्षाय, सीतानुं रूप धर्युं उमियाय । ७ ।
में ओळखीने तव हांसी करी, तव लाज्यां सती, गयां पाछा फरी,
सीतानुं रूप धर्युं ते काज, तज्या सतीने शिव महाराज । ८ ।
उमियाए विचार्युं मन, हावे ना राखवुं मोर तन,
ते दोष टाळवाने निरधार, अंशे करी लेशो अवतार । ९ ।
ते उमिया अंश जांबुवंती थशे, तम पुत्री मुजने परणशे,
त्यार पछी पामशो निज धाम, थशे सकळ मन पूरण काम । १० ।
माटे जाओ सखा सुखे करी त्यांहे, मारुं स्मरण करजो मनमांहे,
एवुं सांभळी जांबुवान, गया नमी पद श्रीभगवान । ११ ।
सुणो श्रोताजन ए अभिप्राय, जे जांबुवंती अंश उमियाय,
ते हरिवंशमां छे ए कथा, माटे संदेह नव करवो सर्वथा । १२ ।

अभिप्राय को कह देता हूँ । जिस समय सीता का अपहरण हुआ, तो मैं उसे दण्डकारण्य में खोज रहा था । ५ । तब शिवजी और सती यमुना गिरि पर रहते थे । (मुझे देखकर) पशुपति शिवजी ने नमस्कार किया, तब उमा (अर्थात् सती) को सन्देह हो गया कि ये राजकुमार रोते हुए घूम रहे हैं । ६ । तो शिवजी ने उन्हें 'अनन्त सच्चिदानन्द' कहते हुए नमस्कार क्यों किया । (तदनन्तर) सती मेरी परीक्षा करने के लिए आ गयीं । (उस समय) उमा (-सती) ने सीता का रूप धारण किया था । ७ । मैंने उन्हें पहचान कर हँसी उड़ायी, तब सती लज्जित हो गयीं और फिर पीछे लौट गयीं । उन्होंने सीता का रूप धारण किया, इस कारण महाराज शिवजी ने सती को तज दिया । ८ । तो उमा (सती) ने मन में विचार किया—अब मुझे यह देह नहीं रखनी है । उस दोष को दूर कराने के हेतु निश्चय ही वह अंश रूप में अवतार ग्रहण करेंगी । ९ । उमा का वह अंश जाम्बुवती (के रूप में उत्पन्न) होगा । तुम्हारी वह पुत्री मुझसे परिणय करेगी । उसके पश्चात् तुम अपने धाम को प्राप्त हो जाओगे । तुम्हारे मन की समस्त कामनाएँ पूर्ण होंगी । १० । इसलिए हे सखा, तुम सुखपूर्वक चले जाओ और वहाँ मन में मेरा स्मरण करो ।' ऐसा सुनकर जाम्बवान श्रीभगवान राम के चरणों को नमस्कार करके चला गया । ११ । हे श्रोताजनो, इस अभिप्राय को सुनिए कि जो जाम्बुवती है, वह उमा का अंश (-अवतार) है । यह कथा हरिवंश में है, इसलिए मन में सर्वथा संदेह न कीजिए । १२ ।

दोहा

एम रींछपतिने आज्ञा करी, दयानिधि रघुवीर,
पछी अंजनीसुतनो कर ग्रही, बोल्या श्रीरणधीर। १३।
अरे मारुति कह्युं तुने, तुं मुज दास अनीन,
अजर अमर बळवंत छे, मुज गुणसागर मीन। १४।
तुं भूतळमां रहेजे सदा, तारी करशे सौ पूजाय,
जे जन तुजने समरशे, तेनां संकट दूर पळाय। १५।
कथा थाय ज्यां माहरी, ते सांभळजे महावीर,
रामचरित्र पवित्रनो, तुं श्रोता मतिधीर। १६।
तुजमुजमां अंतर नथी, सत्य कहुं निरधार,
वास करी हुं रहुं सदा, भक्तना हृदय मोझार। १७।
मारो विजोग तारे नहि, ए मुज सत्य वचन,
स्मरण करे तुं जे समे, तत्क्षण देउं दर्शन। १८।
एवां वचन सुणी रघुवीरनां, थया गद्गद पवनकुमार,
साष्टांग करी शिर मूकियुं, रघुपति चरण मोझार। १९।
त्यारे मस्तक कर मूक्यो प्रभु, उठाडिया ग्रही हाथ,
धीरज आपी बहुविधि, प्रसन्न थया रघुनाथ। २०।

दयानिधि रघुवीर ने ऋक्ष-पति जाम्बवान को इस प्रकार आज्ञा दी (बिदा किया)। अनन्तर श्रीरणधीर वे अंजनी-सुत हनुमान का हाथ थामे हुए बोले। १३। 'अरे हनुमान, मैं तुमसे कहता हूँ, तुम मेरे अनन्य दास हो। तुम अजर, अमर, बलवान हो, मेरे गुण-रूपी सागर में (रहनेवाले) मीन (के बराबर) हो। १४। तुम पृथ्वी-तल पर सदा रहोगे। सब तुम्हारी पूजा करेंगे। जो लोग तुम्हारा स्मरण करेंगे, उनके संकट दूर हो जाएँगे। १५। हे महावीर, जहाँ-जहाँ मेरी कथा (का पठन अथवा कथन) हो, तुम उसे वहाँ सुन लो। हे धीर-मति, तुम पवित्र राम-चरित्र के श्रोता बने रहो। १६। मैं यह निर्धार-पूर्वक कहता हूँ कि तुम-मुझ में कोई अनन्तर नहीं है। मैं सदा भक्तों के हृदय में निवास करते हुए रहता हूँ। १७। मेरा यह वचन सत्य है कि तुम्हें मेरा कभी वियोग नहीं होगा और तुम जब मुझे स्मरण करोगे, तत्क्षण में (तुम्हारे पास आकर) तुम्हें दर्शन दूँगा।'। १८। रघुवीर राम की ऐसी बातें सुनकर पवनकुमार हनुमान गद्गद हो उठा। (फिर) साष्टांग नमस्कार करते हुए उसने रघुपति राम के चरणों पर मस्तक (झुका) रखा। १९। तब प्रभु रघुनाथ राम ने उसके मस्तक पर हाथ

वलण (तर्ज़ बदलकर)

धीरज आपी बहु प्रकारे एम, कर्युं सहुनुं समाधान रे,
पछी भरत शत्रुघ्न पासे तेडी, बोल्या श्रीभगवान रे। २१।

रखा और उसके हाथ को पकड़कर उसे उठा लिया। उन्होंने उसे बहुत प्रकार से ढाढ़स बँधाया। वे उसपर प्रसन्न हो गये। २०।

श्रीभगवान राम ने बहुत प्रकार से ढाढ़स बँधाते हुए सबको इस प्रकार तृप्त किया। अनन्तर भरत और शत्रुघ्न को अपने पास बुलाकर वे बोले। २१।

* * *

अध्याय—१०८ (श्रीराम-सीता का वैकुण्ठ जाना)

राग सामेरी

भरत शत्रुघन पासे तेडावीने, बोलिया श्रीराम,
जाओ सरज्युमांहे स्नान करीने, आवो आणे ठाम। १।
त्यारे वचन सुणी बे वीर ऊठिया, गया तत्क्षण तांहे,
स्नान करवा पेठा ज्यारे, सरज्युगंगा मांहे। २।
त्यारे भरतजी थया शंखरूपे, पांचजन्य जेनुं नाम,
शत्रुघन थया चक्र सुदर्शन, आव्या ज्यां श्रीराम। ३।
पछी रामे चतुर्भुज रूप धरियुं, तेजनो अंबार,
शंख चक्र ने गदा पद्म, ते धर्यां कर मोझार। ४।
एटले आव्या गरुडजी, प्रभुचरण नाम्युं शीश,
सहु देखतां हरि-वाहन उपर, बेठा श्रीजुगदीश। ५।

अध्याय—१०८ (श्रीराम-सीता का वैकुण्ठ जाना)

भरत और शत्रुघ्न को (अपने) पास बुलाकर श्रीराम बोले, 'जाओ, सरयू में स्नान करके इस स्थान पर आओ।'। १। तब यह बात सुनकर वे दोनों भाई उठ गये और तत्क्षण वहाँ (से) चले गये और जब सरयू गंगा में वे स्नान करने के लिए पैठ गये, तब भरत उस शंख के रूप में परिवर्तित हो गया, जिसका नाम पांचजन्य है, और शत्रुघ्न सुदर्शन चक्र (में परिवर्तित) हो गया। (फिर वे दोनों वहाँ) आ गये, जहाँ श्रीराम (विराजमान) थे। २-३। अनन्तर राम ने चतुर्भुज रूप धारण किया (मानो) वे तेज का अम्बार ही हों। (फिर) उन्होंने शंख, चक्र, गदा और पद्म को हाथ में धारण किया। ४। इतने में गरुड़ आ गया और

त्यारे पृथ्वीमांथी नीकळ्यां, श्रीजानकी तेणी वार,
ते थयां लक्ष्मीरूप पोते, शोभानो नहि पार। ६ ।
पछी गरुड उपर वाम भागे, बेठां हरिनी संग,
घनमांहे चमके दामनी, एम शोभता श्रीरंग। ७ ।
दुंदुभि वाग्यां देवनां, थयो शब्द जयजयकार,
सुर-अंगना अंजलि भरी, करे पुष्पवृष्टि अपार। ८ ।
वळी चर्म असि कोदंड शर, तेणे धर्यां पार्षद रूप,
निज रथ तणा जे अश्व अद्भुत, थया दिव्य अनुप। ९ ।
गायत्री मूर्ति श्रुति, ॐकार आदे मंत्र,
तेणे छत्र चामर कर ग्रह्यां, नारद वजाडे जंत्र। १० ।
ऋग् यजुर् साम ने अथर्व कहीए, वेद चारे जेह,
खमा खमा मुख बोलता, चोबदार चाले तेह। ११ ।
त्यारे वसिष्ठ आदि सहु मुनिने, रामे कर्या नमस्कार,
पछी गरुडने आज्ञा करी, चाल्या ऊर्ध्वपंथ मोझार। १२ ।

उसने श्रीजगदीश प्रभु राम के चरणों में सिर नवा लिया, तो वे सबके देखते हुए हरि-वाहन अर्थात् गरुड़ पर बैठ गये। ५। तब उस समय श्रीजानकी पृथ्वी में से निकल आयीं। वे स्वयं लक्ष्मी-स्वरूपा हो गयीं थीं। उनकी शोभा की कोई सीमा नहीं थी। ६। अनन्तर वे गरुड़ पर श्रीहरि (भगवान् विष्णु) के साथ उनकी वायीं ओर बैठ गयीं। (उस समय) श्रीरंग (श्री विष्णु-स्वरूप राम) ऐसे शोभा दे रहे थे, जैसे बादल में बिजली चमक रही हो। ७। देवों की दुन्दुभियाँ बज रही थीं। जय-जयकार ध्वनि हो रही थी। देवांगनाएँ अंजलियों में भर (-भर) कर अपार पुष्प-वृष्टि कर रही थीं। ८। अनन्तर चर्म (ढाल), असि (खड्ग), धनुष और बाण ने पार्षदों के रूप धारण किये। (राम के) अपने रथ के जो घोड़े थे, वे अनुपम अद्भुत दिव्य रूप (में परिवर्तित) हो गये। ९। गायत्री, श्रुति, ॐकार आदि मन्त्रों ने मूर्त रूप धारण करके अपने-अपने हाथों में छत्र और चामर ग्रहण किये। नारद वीणा (नामक वाद्य यन्त्र) बजा रहे थे। १०। जिन्हें ऋक्, यजुः, साम और अथर्व नामक चार वेद कहते हैं, वे चोबदार बनकर मुख से खमा-खमा बोलते हुए चल रहे थे। ११। तब वसिष्ठ आदि समस्त मुनियों को राम ने नमस्कार किया और अनन्तर उन्होंने गरुड़ को आज्ञा दी, तो वह ऊर्ध्व मार्ग पर चलने लगा। १२। उस समय लोक-पति वहाँ राम को देखने (राम के दर्शन करने के लिए) आ गये। गन्धर्व, चारण, सिद्ध, किन्नर, मरुत् (गण),

ते समे सर्वे लोकपति, जोवाने आव्या त्यांहे,
गंधर्व चारण सिद्ध किन्नर, रह्या अंतिक्षमांहे। १३।
मरुत पित्री यक्ष गण वळी, अमर दश दिग्पाळ,
अप्सरा करती नृत्य सुंदर, गाती गीत रसाळ। १४।
क्षणे क्षणे करता अमर, पुष्पनी वृष्टि धार,
जय धुनी व्यापी दश दिशा, वाजिंत्रनो नहि पार। १५।
मध्याह्न समय थयो छे ज्यारे, सूरज आव्यो शीश,
ते समे सरज्युतीरथी, चालिया श्रीजुगदीश। १६।
आगळ गरुडजी चालता, श्री सहित देव मोरार,
तेनी पूंठे सरव विमान चाल्यां, शोभानो नहि पार। १७।
जे देवनो ज्यांहां लोक आवे, व्योममारगमांहे,
त्यारे प्रभुने प्रणाम करी, रहेता हवा सुर त्यांहे। १८।
ए प्रकारे रघुनाथजी, पुर प्रजाशुं तेणी वार,
निजधाममां पहोंच्या प्रभु, वर्त्यो जयजयकार। १९।
आव्या हता जे मुनि सकळ, ते गया निज निज धाम,
कहेता हवा श्रीरामनी, प्रभुता परस्पर ठाम। २०।
श्रीरामे आवाहन कर्युं'तुं, विरज्यानुं ते ठार,
ते विसर्जन पाम्यां तदा, निज लोकमां निरधार। २१।

पित्तर, यक्ष गण, इनके अतिरिक्त देव तथा दस दिक्पाल अन्तरिक्ष में (आकर) रह गये (ठहर गये)। अप्सराएँ नृत्य कर रही थीं और सुन्दर रसात्मक गीत गा रही थीं। १३-१४। देव क्षण-क्षण पुष्पों की बौछार धारा-स्वरूप कर रहे थे। जय (-जयकार) ध्वनि दसों दिशाओं को व्याप्त किये हुए थी। वाद्यों (की ध्वनि का) कोई पार नहीं था। १५। जब मध्याह्न समय हो गया, सूर्य सिर पर आ गया, तो उस समय श्री जगदीश सरयू-तट से चल दिये। १६। गरुड़ (पर विराजमान होकर) श्री (अर्थात् लक्ष्मी स्वरूपा-सीता) सहित मुरारि (विष्णु-स्वरूप राम) आगे चल रहे थे। उनके पीछे समस्त (देवों के) विमान जा रहे थे। उनकी शोभा की कोई सीमा नहीं थी। १७। आकाश-मार्ग में जिन देवों का जहाँ लोक आ जाता, वहाँ वे देव प्रभु राम को तब नमस्कार करके ठहर जाते। १८। इस प्रकार, प्रभु राम उस समय अपने नगर की प्रजा-सहित निज धाम पहुँच गये, तो जय-जयकार हो गया। १९। (उनके साथ) जो मुनि आये हुए थे, वे अपने-अपने धाम चले गये। वे उस स्थान पर एक-दूसरे से श्रीराम की प्रभुता कहते रहे। २०। श्रीराम

सीता तणो कुश पुत्र जे, हनुमंत आदि प्रधान,
वसिष्ठजी तेने तेडीने, पुर प्रवेश्या स्वस्थान। २२।
केटलेक दिवसे अयोध्या, फरी वसावी शोभाय,
कुश राज करतो ते तणुं, महाधर्म नीति न्याय। २३।
अष्टपुत्रथी वंश विस्तर्यो, रघुकुळ तणो निरधार,
तेमां रघुपतिना वंशनो, कुशथी कहुं विस्तार। २४।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

विस्तार कहुं श्रीरामकुळनो, जे कुशथकी निरधार रे,
ते श्रोताजन सावधान थईने, सुणजो वंशविस्तार रे। २५।

ने उस स्थान पर गंगाजी का आवाहन किया था, वह तब अपने लोक में निश्चय ही विसर्जन को प्राप्त हो गयीं। २१। जो सीता का कुश नामक पुत्र तथा हनुमान आदि मन्त्री थे, उन्हें वसिष्ठ ने बुलाकर अपने साथ लेकर नगर में अपने स्थान पर प्रवेश किया। २२। थोड़े ही दिनों में उन्होंने अयोध्या में फिर से शोभा को प्रतिष्ठित कर दिया। महान धर्म, नीति और न्याय-पूर्वक कुश उस (नगरी) का राज करता रहा। २३। निश्चय ही रघु-कुल का वंश आठ पुत्रों द्वारा विस्तार को प्राप्त हो गया। उनमें से मैं रघुपति के वंश का कुश द्वारा हुआ विस्तार कहता हूँ। २४।

श्रीराम के कुल का कुश से जो विस्तार हुआ, उसे मैं कह देता हूँ। हे श्रोताजनो, सावधान होकर उस वंश के विस्तार (सम्बन्धी बात को) सुनिए। २५।

* * *

अध्याय—१०९ (कुश-वंश-विस्तार)

राग मारु

हावे श्रोताजन सावधान थईने, सुणजो सर्व समाज,
श्रीरामचंद्रनो पवित्र वंश ते, विस्तारी कहुं आज। १।
श्री जानकी केरो पुत्र ज कहीए, वीर कुंवर कुश नाम,
तेणे अवधपुरीनुं राज कर्युं, जेमां अर्थ, धर्म ने काम। २।

अध्याय—१०९ (कुश-वंश-विस्तार)

हे श्रोताजनो, हे समस्त (श्रोतृ-) समाज, अब सावधान होकर सुनिए। श्रीरामचन्द्र के उस पवित्र वश को मैं आज विस्तार करते हुए कह रहा हूँ। १। हम श्री जानकी के ही (उसी पुत्र के बारे में) कहते

ते कुशनो पुत्र अतिथि नामे, सूरजे आप्यो जेह,
धर्मराज तेणे कर्युं घणा दिन, महाबळियो थयो तेह। ३।
वळी ते तणो पुत्र निषिद्ध थयो, तेने पुंडरीक अभिधान;
पछे महापराक्रमी पुत्र थयो तेने, क्षेमधनु बळवान। ४।
वळी देवानिक थयो आत्मज तेनो, ते तणो पुत्र अनिह,
हावे तेथी प्रगट्यो पारिजात, नर मध्ये महा सिंह। ५।
तेनो बळ सुत तेथी स्थळ थयो, वज्रनाभ सुत तेनो,
सुगुण पुत्र वळी तेनो विधृति, महा प्रताप बळ जेनो। ६।
हिरण्यनाभ महा धीर वीर थयो, सूरज मंत्रथी जेह,
वळी जैमिनी केरो शिष्य ज कहावे, ज्ञानी विचक्षण तेह। ७।
वळी याज्ञवल्कय जेनी पासे भणियो, योगविद्या समर्थ,
साधन सिद्ध कळा सहु जाणे, अष्टांग योगनो अर्थ। ८।
ते हिरण्यनाभनो पुष्प थयो, तेनो ध्रुवसंधि एवुं नाम,
ते थकी पुत्र सुदत्त वीर तेनो, अग्निवर्ण बळ धाम। ९।

हैं। (उनके दो पुत्रों मे से) कुश नामक एक वीर पुत्र था। उसने अयोध्यापुरी का राज किया, जिसमें अर्थ, धर्म और काम (नामक तीन पुरुषार्थ) सिद्ध हो गये। २। उस कुश के अतिथि नामक पुत्र था, जिसे सूर्य ने (वरदान-स्वरूप) प्रदान किया था। उसने धर्म (के अनुसार) बहुत दिन (तक) राज किया। वह महाबलवान (सिद्ध) हो गया। ३। फिर उसके निषिद्ध (निषध नामक पुत्र) हुआ, उसके पुण्डरीक नामक (पुत्र) हुआ। अनन्तर उसके क्षेमधनु नामक महापराक्रमी बलवान पुत्र हुआ। ४। फिर उसके पुत्र हुआ देवानिक; उस (देवानिक) के अनिह नामक पुत्र हुआ। अब उससे उत्पन्न हुआ पारिजात (नामक पुत्र), वह (समस्त) नरों में महासिह (जैसा) था। ५। उसके पुत्र बल, बल के स्थल और उस (स्थल) के वज्रनाभ नामक पुत्र हो गया। उस (वज्र-नाभ) के सुगुण, फिर उसके विधृति और उस (विधृति) के महा प्रताप-वान बल (नामक पुत्र) हुआ। ६। सूर्य-मन्त्र (के प्रभाव) से (बल के) जो महान धीर वीर पुत्र हुआ, वह था हिरण्यनाभ। फिर वह जैमिनी का ही शिष्य कहाता है। वह ज्ञानी और विचक्षण (विद्वान) था। ७। इसके अतिरिक्त जिससे याज्ञवल्क्य ने सामर्थ्यशील योग विद्या सीखी थी, वह (यह हिरण्यनाभ) साधनाओं, सिद्धियों और समस्त कलाओं को तथा अष्टांग योग के अर्थ को जानता था। ८। उस हिरण्यनाभ के पुष्प (नामक पुत्र) हो गया; उस (पुष्प) के ध्रुवसन्धि नामक पुत्र हुआ।

वळी शीघ्र नामे सुत तेनो थयो, तेथी मरुत नामे तन,
तेणे अवधपुरीनुं राज कर्युं, पछे तप करवा गयो वन । १० ।
कलाप ग्राम हिमाचळ पासे, अद्यापि रह्यो छे त्यांहे,
ते सतयुग आवशे त्यारे करशे, राज अवधपुर मांहे । ११ ।
ते कळियुग जाणी सूरजवंशनुं, बीज रह्या छे राय,
हावे पुत्र प्रसु सुत मरुत तणो, ते महा बळियो कहेवाय । १२ ।
वळी तेनो सुत एक संधि नामे, पुरुष मध्ये महा वीर,
पछी पुत्र अमरशरण थयो, जे धनुर्विद्यानो धीर । १३ ।
हावे महास्वांग तेनो थयो, विश्वसा प्रसेनजित तेनो तन,
तेनो तक्षक तेथी बृहदबळ, पुरुषारथमां धन्य । १४ ।
वळी ते तणो पुत्र बृहदरण कहीए, तेथी उरुक्रीय नाम,
ते थकी वच्छ थयो वृद्ध तेनो, प्रतिव्योम अभिराम । १५ ।
ते थकी भानु दिवाकर तेने, सहदेव सुत श्रीमान,
ते तणा पुत्र जुगल बळिया, बृहदश्व ने भानुमान । १६ ।

उसके सुदत्त नामक वीर पुत्र हुआ। उसके (साक्षात्) बल का धाम (ही) अग्नि-वर्ण (नामक पुत्र उत्पन्न) हुआ। ९। फिर उसके शीघ्र नामक पुत्र हुआ। उस (शीघ्र) के मरुत् नामक पुत्र हुआ। उसने अवधपुरी का राज्य किया और अनन्तर वह तपस्या करने के लिए वन में चला गया। १०। हिमालय के पास कलाप नामक ग्राम है। वह (मरुत्) अभी भी उसमें रह रहा है। (जब) सत्ययुग आएगा, तब वह (फिर) अयोध्या नगरी में राज करेगा। ११। इसे कलियुग जानते हुए वह राजा सूर्यवंश के बीज के रूप में रह गया है। अब मरुत के प्रसू नामक पुत्र था। वह महान वलवान कहाता था। १२। फिर उसका सन्धि नामक एक पुत्र (समस्त) पुरुषों में महावीर (माना जाता) था। अनन्तर उसके अमरशरण नामक पुत्र हुआ, जो धनुर्विद्या का (धैर्यशील) धारी था। १३। अब उसके महास्वांग, उसके विश्वसा और उसके प्रसेनजित नामक पुत्र हो गया। उसके तक्षक नामक, उससे बृहद-बल नामक पुरुषार्थ में धन्य (माना जानेवाला) पुत्र हो गया। १४। फिर उसके पुत्र को वृहद्रण कहते हैं। उसके उरुक्रीय नामक पुत्र (उत्पन्न) हुआ। उसके वत्स नामक, उसके वृद्ध नामक, और उसके प्रतिव्योम नामक अभिराम पुत्र (उत्पन्न) हुआ। १५। उससे भानु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, उसके दिवाकर नामक और उसके सहदेव नामक श्रीमान पुत्र हो गया। उसके बृहदश्व और भानुमान

ते भानुमाननो पुत्र ज कहीए, नाम तेनुं प्रतिकाश,
सुप्रतिक तेनो आत्मज, तेने त्रण थया सुखराश। १७।
एक मरुदेव बीजो सुनक्षेत्र, त्रीजो पुष्कर नामे जाण,
ते पुष्करने थयो बृहदभ्राज, तेनो बरही पुत्र प्रमाण। १८।
ते थकी पुत्र कृतंजय नामे, रणंजय तेनो तन,
ते थकी संजय छाकज तेनो, शुद्धोदय निर्मळ मन। १९।
हावे ते थकी लांगल पुत्र थयो तेनो, प्रसेनजित कहेवाय,
ते थकी क्षुद्र करुणकंज तेनो, ते थकी सुरथराय। २०।
ते थकी पुत्र सुमित्र थयो, तेणे कर्युं थोडा दिन राज,
पछे घोर कळिमां नष्ट वंश थयो, भ्रष्ट कर्म कुळकाज। २१।
इक्ष्वाकु रायनो वंश एटलो, चाल्यो कळियुग मांहे,
ए सूरजवंशनो मरुतराय ते, ध्यान धरे छे त्यांहे। २२।
एक चंद्रवंशनो देवापी राजा, ते रह्यो तेणे ठार,
तप करे छे ए बंन्यो भूपति, कलाप ग्राम मोझार। २३।

नामक बलवान जुड़वाँ पुत्र हो गये। १६। कहते हैं, उनमें से भानुमान के एक पुत्र हुआ; उसका नाम प्रतिकाश था। उसके पुत्र हुआ सुप्रतीक। उसके तीन पुत्र हो गये, वे सुख की राशियाँ ही थे। १७। समझिए उनमें से एक (पहला) मरुदेव, दूसरा सुनक्षेत्र और तीसरा पुष्कर नामक था। उस पुष्कर के बृहद्भ्राज नामक पुत्र हो गया। यह प्रमाण-भूत है कि उसके बरहि (बर्हि) नामक पुत्र था। १८। उससे कृतंजय नामक पुत्र (उत्पन्न) हुआ। उस (कृतंजय) के रणंजय नामक पुत्र था। उसके संजय, उस (संजय) के छाकज (शाक्य) और उस (शाक्य) के निर्मल-मना शुद्धोदय नामक पुत्र था। १९। अब उसके लांगल नामक पुत्र हुआ। उस (लांगल) का पुत्र प्रसेनजित कहाता था। उसके क्षुद्रक, उस (क्षुद्रक) के ही रणक और उसके सुरथराज नामक पुत्र हो गया। २०। उसके सुमित्र नामक पुत्र हुआ। उसने थोड़े दिन राज किया। अनन्तर घोर कलि (-युग) में कुल-कर्मों से भ्रष्ट होने के कारण वह वंश नष्ट हो गया। २१। इक्ष्वाकु राजा का इतना ही वंश कलियुग में चलता रहा। इस सूर्यवंश का मरुत नामक वह राजा वहाँ ध्यान धारण किये हुए रह गया है। २२। उस स्थान पर देवापी नामक एक चन्द्रवंशीय राजा रहता है। ये दोनों राजा बदरिकाश्रम के निकट कलाप नामक ग्राम में तपस्या कर रहे हैं। २३। जब सत्ययुग का (फिर से) आरम्भ होगा, तब ये दोनों राजा राज करेंगे। उससे फिर धर्म के

त्यारे सतयुगनो आरंभ थशे, त्यारे करशे बंन्यो राज,
ते थकी वंश विस्तार पामशे, धर्मराज महाराज। २४।
ए परंपरा कही रविकुळ केरी, शास्त्र तणे अनुसार,
भाव धरी सुणशे जन जे, तेनो पामशे वंश विस्तार। २५।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

विस्तार पामशे वंश तेनो, जे भावे सुणे नर नार रे,
कहे दास गिरधर हावे संक्षेप करुं, रामचरित्र विस्तार रे। २६।

अनुसार राज करनेवाले राजा-महाराजाओं द्वारा यह वंश विस्तार को प्राप्त हो जाएगा। २४। मैंने (पुराण-) शास्त्र के अनुसार रवि-कुल की यह परम्परा कही है। जो मनुष्य श्रद्धा धारण करके इसे सुनेंगे, उनका वंश विस्तार को प्राप्त हो जाएगा। २५।

जो स्त्री-पुरुष श्रद्धा-पूर्वक इसे सुनेंगे, उनका वंश विस्तार को प्राप्त हो जाएगा। कवि गिरधरदास कहते हैं, अब मैं विस्तार-पूर्वक (अब तक) कहे हुए इस राम-चरित्र का संक्षेप (में उल्लेख) करने जा रहा हूँ। २६।

* * *

अध्याय—११० (विषयानुक्रमणिका— बाल काण्ड से सुन्दर काण्ड तक)

राग धन्याश्री

सुणो श्रोताजन थई सावधान जी, हरिरस लीला अमृत पान जी,
सप्त कांडमां जे थई कथाय जी, ते संक्षेपे करी हावे कहेवाय जी। १।

ढाळ

संक्षेपथी कहुं चरित्र सर्वे, अथ इति समुदाय,
जे सांभळ्याथी आदि अंतनी, स्मृति सर्वे थाय। २।

अध्याय—११० (विषयानुक्रमणिका— बाल काण्ड से सुन्दर काण्ड तक)

हे श्रोताजनो, सावधान होकर सुनिए और भगवान हरि (विष्णु अर्थात् श्रीराम) की लीला रूपी रस का पान कीजिए। (इस रामायण के) सात काण्डों में जो कथा प्रस्तुत हुई, उसे अब संक्षेप में कहा जा रहा है। १।

बाल काण्ड—मैं (अब राम का) अथ से इति तक समस्त चरित्र संक्षेप में कह रहा हूँ, जिसे सुनने से आदि से अन्त तक की (घटनाओं की) स्मृति बनी

बाळकांडमां कही प्रथम, रावण कुळ उतपत्य,
तपदिग्वजे विस्तारकुळ, उपनाम बंध विपत्य। ३।
दशरथ कौशल्या तणो जे, सकळ लग्नसंबंध,
कुबेरवधू शापित दशानन, दुखित निरजर बंध। ४।
पछी क्षीरसिंधु आगमन, भुव सहित सुर सहु त्यांहे,
कर्युं स्तवन नारायण तणुं, थई गिरा सागर मांहे। ५।
सांत्वन करीने धीरज आपी, कह्यो जन्मविचार,
पछी राय दशरथ श्रवणवध, कृत शाप वर निरधार। ६।
वळी असुर वृषपर्वा तणो वध, कैके वर प्रस्ताव,
चरित्र श्रृंगी आगमन, पुत्रेष्टि यज्ञप्रभाव। ७।
त्यारे यज्ञपुरुष प्रसन्न थई, चरु आपिया सुपवित्र,
सुवर्चसा चरु ग्रही गई, हनुमंत जन्मचरित्र। ८।

रहेगी। २। मैंने बाल काण्ड में (सर्व-) प्रथम रावण के कुल की उत्पत्ति, (रावण आदि की) तपस्या और दिग्विजय, कुल का विस्तार, उपाधी और (बली, सहस्रार्जुन आदि के) बन्धन में पड़ जाने जैसी उस पर आयी हुई विपत्तियाँ—ये घटनाएँ कहीं। ३। अनन्तर दशरथ-कौसल्या के विवाह-सम्बन्ध के बारे में समस्त वृतान्त कहा। दशानन कुबेर की वधू द्वारा शापित हो गया। निर्जर (देव रावण के) बन्धन में पड़ जाने से दुःखी हो गये। ४। अनन्तर वहाँ (कहा गया कि पृथ्वी का समस्त देवों सहित क्षीर-सागर के निकट आगमन हुआ; उन्होंने भगवान नारायण का स्तवन किया, तो समुद्र में (से भगवान् की दिव्य) वाणी उत्पन्न हो गयी। ५। (उसके द्वारा भगवान् ने उनको) सान्त्वना देते हुए ढाढ़स बँधाया और (राम के रूप में) जन्म ग्रहण करने का विचार कहा। अनन्तर राजा दशरथ द्वारा श्रवण का वध हो गया। उस (श्रवण) द्वारा दिये अभिशाप को (राजा ने) निश्चय ही वर के रूप में स्वीकार किया। ६। फिर दशरथ ने (सुरपति इन्द्र की सहायता करते हुए) असुर (-राज) वृषपर्वा का वध किया। तब कैकेयी को (रथ को सम्हाल लेने के कारण) दशरथ ने वर-दान का प्रस्ताव किया। तदनन्तर शृंगी ऋषि का दशरथ के यज्ञ के लिए अयोध्या में आगमन हुआ। पुत्रेष्टि यज्ञ का प्रभाव कहा गया। ७। तब यज्ञ-पुरुष ने प्रसन्न होते हुए सुपवित्र चरु (राजा दशरथ को) प्रदान किया। (रानियों को चरु बाँट देते समय) सुवर्चसा (नामक शाप-भ्रष्ट अप्सरा चील के रूप में) चरु लेकर भाग गयी। अनन्तर हनुमान-जन्म सम्बन्धी लीला कही गयी। ८। श्रीराम, लक्ष्मण, भरत और

श्रीराम लक्ष्मण, भरतजी, शत्रुघन सुत चार,
तेनां जन्म करम विधान, बाळचरित्र उपवीत सार। ९ ।
विद्या भण्या तीरथ अटण, आगमन गाधिकुमार,
गुरुदीक्षा लेईने राम चाल्या, यज्ञरक्षण सार। १० ।
गंगातणी उत्पत्ति कही, ताडिकावध एक बाण,
सुबाहु आदे हण्या असुर, क्रतु कराव्यो निरवाण। ११ ।
पछे अहल्या-उद्धार उत्पत्ति, सीताजन्म कथाय,
ते मुनि साथे जनकपुर, आविया श्रीरघुराय। १२ ।
त्यां स्वयंवर जीत्यो सकळ, कोदंड खंडी राम,
आगमन दशरथ, लग्न चारे पुत्रनां ते ठाम। १३ ।
पछी फरशुधरनो गर्व टाळ्यो, आव्या पुर मोझार,
ए बाळकांडमां कही कथा, एमां घणो विस्तार। १४ ।
पछी भरत शत्रुघन गया, मातुल केरी साथ,
त्यारे वृद्धपणुं जाणी विचार्युं, चित्त अवधीनाथ। १५ ।

शत्रुघ्न नामक चार पुत्रों की उत्पत्ति हो गयी। उनके जन्म तथा उसके सम्बन्ध में अन्य कर्मों का विधान, उनके सुन्दर बाल-चरित (लीलाएँ) और उपवीत संस्कार का वर्णन किया। ९। तदनन्तर गाधिकुमार विश्वामित्र का दशरथ के यहाँ आगमन हुआ। फिर राम गुरु से दीक्षा लेकर सुन्दर यज्ञ की रक्षा करने के लिए (गुरु विश्वामित्र के साथ) चल दिये। १०। मार्ग में विश्वामित्र ने उन्हें गंगा की उत्पत्ति सम्बन्धी कथा सुनायी। राम ने एक बाण से ताड़का का वध किया और सुबाहु आदि असुरों को मार डाला और अन्त में यज्ञ सम्पन्न करा दिया। ११। अनन्तर अहल्या-उद्धार, अहल्या की उत्पत्ति और सीता-जन्म की कथा कही गयी। तदनन्तर श्रीरघुराज मुनि विश्वामित्र के साथ जनकपुर आ गये। १२। वहाँ राम ने धनुष को तोड़कर सफलता-पूर्वक स्वयंवर को जीत लिया। तदनन्तर दशरथ का (मिथिला में) आगमन हुआ और उसी स्थान पर उनके चारों पुत्रों का विवाह सम्पन्न हुआ। १३। फिर राम ने परशुधर (भृगु-कुलोत्पन्न राम) का गर्व छुड़ा दिया और वे अयोध्यापुरी में लौट आये। बाल काण्ड में (यहाँ तक) कथा कही है। उसका बहुत विस्तार (-पूर्वक कथन) हो गया। १४।

अयोध्या काण्ड—अनन्तर भरत और शत्रुघ्न मामा के साथ चले गये। तब अयोध्या-पति दशरथ ने बुढ़ापे का आगमन जानकर मन में (पुत्र राम के अभिषेक सम्बन्धी) विचार किया। १५। राजा ने वसिष्ठ

वसिष्ठ गुरुने पूछियुं, लेई सरवनो अभिप्राय,
रामने राज्याभिषेक करवा, मुहूरत लीधुं राय। १६।
त्यारे केकैये माग्यां वचन, नृप थया दुखिया जाण,
श्रीराम लक्ष्मण जानकी, वन नीकळ्यां निरवाण। १७।
त्यां भेट थई घोरायनी; ऊतर्यां गंगा पार,
मुनि आश्रमे जईने रह्यां, चित्रकूट गिरि मोझार। १८।
सुमंते आवीने कह्युं, ज्यारे पाम्या राय पतन,
मोसाळथी तेडाविया; भरत ने शत्रुघन। १९।
करी क्रिया दशरथ रायनी, पछी कुटुंब लोक अपार,
रामने मळवा भरतजी, आव्या चित्रकूट मोझार। २०।
त्यां समागम थयो सर्वनो, इष्ट मित्र गुरुजन भ्रात,
घणां वचन कहीने शोक सर्वे, समाव्यो जगतात। २१।
पादुका लेई रघुवीरनी, वळ्या भरतजी निरधार,
पछी नंदीग्राम समीप बेठा, तप करवा ते ठार। २२।
सहु साथ आव्यो अवधपुर ते, अवध राखी मन,
ए अयोध्याकांडमां, सर्वे कथा कही पावन। २३।

गुरु से पूछा और सबका अभिप्राय जान लेकर राम का राज्याभिषेक करने के लिए मुहूर्त खोजवा लिया। १६। तब कैकेयी ने (पूर्व-दत्त) वचन (वर) माँग लिये, तो समझिए कि राजा दुखी हो गये। अन्त में श्रीराम, लक्ष्मण और जानकी वन की ओर जाने के लिए निकल गये। १७। वहाँ मार्ग में गुहराज से भेंट हो गयी और राम गंगा के पार उतर गये। अनन्तर वे चित्रकूट पर्वत पर जाकर मुनि के-से आश्रम में रह गये। १८। (इस सम्बन्ध में) सुमन्त ने (जब अयोध्या में) आकर कहा, तो राजा देह-पात (मृत्यु) को प्राप्त हुए। भरत और शत्रुघ्न को मातुल-गृह से बुलवा लिया। १९। भरत ने राजा दशरथ की (अन्त्येष्टि आदि) क्रियाएँ कीं और अनन्तर वे परिवार तथा असंख्य लोगों को लेकर राम से मिलने के लिए चित्रकूट पर आ गये। २०। वहाँ राम की इष्ट-मित्रों, गुरु-जनों तथा भाइयों से भेंट हुई। तदनन्तर जगत्तात राम ने बहुत बातें कहकर सबके शोक का शमन कर लिया। २१। फिर रघुवीर राम की पादुकाएँ लेकर भरत निश्चय-पूर्वक लौट गये। अनन्तर वे नन्दीग्राम के निकट उस स्थान पर तपस्या करने के लिए बैठ गये। २२। (वनवास की) अवधि का विचार मन में रखते हुए समस्त समाज उनके साथ ही अयोध्या लौट आया। यह समस्त पावन कथा अयोध्या काण्ड में कही है। २३।

चित्रकूटथी रघुनाथजी, चालिया दक्षिण मांहे,
अत्रिने आश्रम आविया, सिंहाद्रि पर्वत ज्यांहे । २४ ।
विराध वध करीने गया, शरभंगने आश्रम,
ते मुनिने सद्गति आपी, चाल्या पूरणब्रह्म । २५ ।
पछी सुतीक्ष्ण मंदकरण, आश्रमथकी चाल्या दूर,
अगस्त्यने मळी चालिया, ज्यां जटायु बळपूर । २६ ।
पछी दंडकवन गोदावरी तट, रह्या श्रीरघुवीर;
त्यां असुर समर मारियो, लक्ष्मण जति व्रतधीर । २७ ।
शूर्पणखा नासाकरण छेदन, खर दूखर वध काय;
माया मृग छेदन दशानन, हरण कृत सीताय । २८ ।
पछी जटायु युद्ध पराजय, करी गयो लंकामांहे,
तेनी शोध करतां लक्ष्मण, आव्या छे गीध ज्यांहे । २९ ।
तेने गति आपी गिरि यमुना, चढ्या श्रीरघुवीर,
संवाद शिव उमिया तणो, आव्या कृष्णवेणी तीर । ३० ।
कबंध वध शबरी गति, कर्यो पंपासर विश्राम,
अरण्यकांडमां एटली ते, कथा कही अभिराम । ३१ ।

अरण्य काण्ड—रघुनाथजी चित्रकूट से दक्षिण की ओर चल दिये। वे जहाँ सह्याद्रि नामक पर्वत है, वहाँ अत्रि ऋषि के आश्रम में आ गये। २४। अनन्तर विराध का वध करके वे शरभंग के आश्रम गये। उस मुनि को सद्गति प्रदान करके पूर्णब्रह्म राम (वहाँ से आगे) चले गये। २५। फिर सुतीक्ष्ण और मन्दकर्ण के आश्रम से (आश्रम होते हुए) वे दूर (दक्षिण में) चले गये। अगस्त्य से मिलकर वे वहाँ चले गये, जहाँ बल से पूर्ण (सम्पन्न) जटायु था। २६। अनन्तर श्रीरघुवीर राम दण्डक वन में गोदावरी के तट पर रह गये। वहाँ यति-व्रत के धारी (धैर्यशील) लक्ष्मण ने शम्बुक राक्षस को मार डाला। २७। फिर शूर्पणखा के नाक-कान छेद डाले; खर-दूषण का वध का काम किया। राम ने माया-मृग का वध किया, तो (इधर) दशानन ने सीता का अपहरण किया। २८। अनन्तर वह युद्ध में जटायु की पराजय करके लंका में चला गया। उस (सीता) की खोज करते हुए राम-लक्ष्मण वहाँ आ गये, जहाँ गृद्ध-राज जटायु (पड़ा हुआ) था। २९। उसे (सद्-गति) देकर श्रीरघुवीर यमुना पर्वत पर चढ़ गये। (बीच में) शिवजी और उमा (सती) का सम्वाद कहा गया है। फिर वे (राम-लक्ष्मण) कृष्णा वेण्णा के तट पर आ गये। ३०। कबन्ध का वध करके राम ने शबरी को

मारुति समागम वाली, सुग्रीव तणी कही उतपत्य,
सुग्रीव मळिया रामने, करी मैत्री वाचा सत्य। ३२।
ऋषिमुख पर्वत ताडभेदन, वालीवध एक बाण,
सुग्रीव राज्याभिषेक वर्णन, वर्षा शरद सुजाण। ३३।
श्रीय शुद्धिकारण मोकल्या, कपि दग्धवन परिहार,
दंडीऋषिसुत मोक्ष पाम्यो, सुप्रभा उद्धार। ३४।
सिंधु तणे तट आविया, कपि करे मन विचार,
थयो समागम संपातिनो, श्रीय शुद्धि कही तेणी वार। ३५।
ओळंगवा तत्पर थया, जलनिधि मरुततन,
किष्किधाकांडमां एटली, ते कथा कही पावन। ३६।
सिंधु ओळंगी लंका सर्वे, शोधी पवनकुमार,
पछे रुद्रवेणा गीत गायुं, अशोक वन मोझार। ३७।
मुद्रिका आपी जानकीने, समाव्यो परिताप,
अशोक वन उज्जड कर्युं, राक्षस अनेक निपात। ३८।

(सद्-)गति प्रदान की और पम्पा सरोवर के तट पर विश्राम किया। अरण्य काण्ड में यह सुन्दर राम कथा इतनी (यहाँ तक) कही है। ३१।

किष्किन्धा काण्ड — हनुमान से (राम की) भेंट तथा बाली-सुग्रीव की उत्पत्ति (तदनन्तर) कही। सुग्रीव राम से मिला और शब्दों द्वारा (अभिवचन देते हुए) प्रतिज्ञा करके उन दोनों ने परस्पर मित्रता की। ३२। राम ने ऋष्यमूक पर्वत पर (सात) ताल वृक्षों को काट दिया और एक बाण से बाली का वध किया। फिर समझिए कि सुग्रीव के राज्याभिषेक का तथा वर्षा और शरद (आदि) ऋतुओं का वर्णन प्रस्तुत किया। ३३। (सुग्रीव ने) सीता की खोज के लिए वानर भेज दिये। एक दग्ध वन में उनके श्रम का परिहार हुआ। दण्डी ऋषि का पुत्र मोक्ष को प्राप्त हो गया और सुप्रभा का उद्धार हो गया। ३४। वानर तदनन्तर समुद्र-तट पर आ गये। वे मन में विचार करने लगे। उस समय सम्पाति से उनकी भेंट हो गयी, तो उसने उस समय सीता की खोज कही (पता बताया)। ३५। हनुमान समुद्र को लाँघने के लिए तैयार हो गया। किष्किन्धा काण्ड में वह पावन कथा इतनी (यहाँ तक) कही है। ३६।

सुन्दर काण्ड — पवनकुमार ने समुद्र को लाँघकर समस्त लंका ढूँढ़ ली (लंका में खोज की)। अनन्तर उसने अशोक वन में (आकर) रुद्र-वीणा गीत गाया। ३७। फिर उसने जानकी को (राम की) मुद्रिका

ब्रह्मपाश बंधन, दहन लंका, ब्रह्मपत्र विधान,
समुद्र उल्लंघी मारुति, कही शुद्धि श्रीभगवान । ३९ ।

रघुनाथ कपिदळ लेई चढ्या, आविया सागरतीर,
त्यां विभीषण आवी मळ्यो, रावण तणो लघु वीर । ४० ।

पछी पाज बंधन करीने, स्थापिया श्रीमहादेव,
ऊतर्या सैन्य सहित रघुवर, सुवेलु ततखेव । ४१ ।

कपिदळ तणी संख्या कही, शुकसारण चतुर अपार,
अपमान कीधुं लक्ष्मणे, दशमुख तणुं तेणी वार । ४२ ।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

अपमान पाम्यो रावण, त्यारे मनमां थई चिंताय रे,
एम संक्षेपे वर्णवी सर्व, सुंदरकांड कथाय रे । ४३ ।

* * *

दी और उसके परिताप का शमन किया । (अनन्तर) उसने अशोक वन को उजाड़ कर दिया और अनेक राक्षसों का निःपात कर डाला । ३८ । वह ब्रह्म-पाश में आबद्ध हो गया । तत्पश्चात् उसने लंका को जला देकर ब्रह्मा द्वारा पत्र लिखवा लिया । फिर समुद्र को लाँघकर श्रीभगवान राम को (सीता का) पता बता दिया । ३९ । रघुनाथ राम कपि-सेना लेकर (आक्रमण के लिए) चढ़ दौड़े और समुद्र-तट पर आ गये । रावण का छोटा भाई विभीषण वहाँ आकर उनसे मिला । ४० । अनन्तर सेतु-बन्ध करके रघुवर राम ने शिवजी (के लिंग) की स्थापना की और वे सेना-सहित तत्क्षण सुवेल पर ठहर गये । ४१ । अपार चतुर राक्षस शुक और सारण ने वानर-दल (के सैनिकों) की संख्या बतायी । उस समय लक्ष्मण ने रावण का अपमान किया । ४२ ।

रावण अपमान को प्राप्त हो गया; तब उसे मन में चिन्ता उत्पन्न हो गयी । सुन्दर काण्ड में कथा का इस प्रकार वर्णन किया है । ४३ ।

* * *

अध्याय—१११ (विषयानुक्रमणिका— युद्ध काण्ड और उत्तर काण्ड)

राग सामेरी

हावे माया देखाडी रावणे, पाम्यां सीता मन विषाद,
पछी मयसुता सीता तणो, थयो परस्पर संवाद। १।
सुग्रीव रावण युद्ध वळती, अंगदविष्टि होय,
पछी युद्धनो आरंभ राक्षस, कपि करता सोय। २।
सर्पास्त्रबंधन राम सैन्या, प्रहस्त मरणकथाय,
मंदोदरीए कही सकळ, दशमुखने शिक्षाय। ३।
रावणतणुं युद्ध वर्णव्युं, कुंभकरण मरण विधान,
जामात्रसुत मैत्री घणा, पाम्या ते मरण निदान। ४।
इंद्रजितवध जुक्ति कही, सुलोचनानुं चरित्र,
पछे अहीरावण महीरावण वध, कही कथा चित्रविचित्र। ५।
पछे रावण जुद्ध करवा चढ्यो, लक्ष्मणने शक्ति थाय,
गिरि द्रोण औषध लावतां, मळ्या भरतने महाकाय। ६।
सुख थयुं लक्ष्मणने तदा, जुद्ध कर्युं रावण साथ,
सहुने हणी पछी रावणनो, वध कर्यो श्रीरघुनाथ। ७।

अध्याय—१११ (विषयानुक्रमणिका— युद्ध काण्ड और उत्तर काण्ड)

युद्ध काण्ड — अब सीता को माया दिखायी, तो, वह मन में विषाद को प्राप्त हो गयी। अनन्तर मय-सुता मन्दोदरी और सीता का एक-दूसरी से सम्वाद हो गया। १। सुग्रीव और रावण का (द्वन्द्व-) युद्ध हो गया; अनन्तर अंगद ने मध्यस्थता की। फिर उन राक्षसों और कपियों ने युद्ध का आरम्भ किया। २। राम की सेना सर्पास्त्र द्वारा आबद्ध होने की और प्रहस्त की मृत्यु की कथा कह दी। मन्दोदरी ने सब प्रकार से रावण को शिक्षा दी (उपदेश दिया)। ३। फिर (राम-) रावण के युद्ध का वर्णन किया; कुम्भकर्ण की मृत्यु की वार्ता प्रस्तुत हुई। अन्त में (रावण के) अनेकानेक जामाता, पुत्र, मित्र मृत्यु को प्राप्त हो गये। ४। इन्द्रजित के वध की युक्ति (पद्धति) और सुलोचना का चरित्र, फिर अहिरावण-महीरावण के वध की अद्भुत कथा कही है। ५। अनन्तर रावण युद्ध के लिए चढ़ दौड़ा।
लक्ष्मण पर आघात हुआ।
हनुमान भरत से मिला। ६।
सुख अनुभव हुआ; और उसने

सद्गति पाम्या सहु असुर, विभीषणने आप्युं राज,
सहु मुक्त बंधन देव कीधा, जिवाड्या कपिनो समाज। ८।
करी दिव्य मळियां जानकी, थया प्रसन्न श्रीरघुराय,
प्रभु बेठा पुष्पविमानमां, युद्धकांडनी ए कथाय। ९।
कपि विभीषण श्रीय अनुज, साथे चाल्युं पुष्प विमान,
कृपा करी निज पुर भणी, आविया श्रीभगवान। १०।
भरतजी आदे मळ्या सहुने, कर्युं मंगळ स्नान,
पछे शुभ मुहूरत लेई राज बेठा, अवधपुर स्वस्थान। ११।
लंकेश सुग्रीवने वळाव्या, मान देई रघुवीर,
पछे राजनीति प्रजा पाळी, धर्मधारण धीर। १२।
त्यारे लवणासुरनो वध कर्यो, निरभे मथुरा देश,
द्विजसुत जिवाड्यो, भीलने आपी गति परमेश। १३।
वळी श्वान संन्यासी, उलूक गीध तणो कीधो न्याय,
ब्रह्मदत्तनुं आख्यान, वर्णाश्रम धर्म समुदाय। १४।

के पश्चात् श्रीरघुनाथ ने रावण का वध किया। ७। समस्त असुर (भगवान राम के हाथों मारे जाने के कारण) सद्गति को प्राप्त हो गये। तदनन्तर राम ने (लंका का) राज्य विभीषण को प्रदान किया, समस्त देवों को बन्धन से मुक्त किया और (मृत) कपि-समूह को जीवित करा दिया। ८। अग्नि-दिव्य करके जानकी श्रीरघुराज से मिली, तो वे प्रसन्न हो गये। फिर राम पुष्पक विमान में बैठ गये। युद्ध काण्ड की कथा (यहाँ तक) है। ९।

उत्तरकाण्ड—समस्त वानर(-सेना), विभीषण, सीता और (रामानुज) लक्ष्मण सहित विमान चलने लगा और सब पर कृपा करते हुए वे (राम) अपने नगर की ओर चले आये। १०। वे भरत आदि सबसे मिले; उन्होंने मंगल स्नान किया। अनन्तर शुभ मुहूर्त खोजवा कर वे अयोध्या में अपने स्थान अर्थात् राज्यासन पर बैठ गये। ११। फिर रघुवीर राम ने लंकेश विभीषण और (किष्किन्धा-पति) सुग्रीव को लौटा दिया अर्थात् विदा किया। अनन्तर राजनीति के अनुसार धार्मिक मान्यताओं के धैर्यशील-धारी श्रीराम ने प्रजा का पालन किया। १२। तब (अनन्तर शत्रुघ्न ने) लवणासुर का वध किया और परमेश्वर राम ने (इस प्रकार) मथुरा देश को भय-रहित कर दिया। एक ब्राह्मण के (अकाल-मृत्यु को प्राप्त) पुत्र को उन्होंने जीवित करवा दिया और भील (तापस) को (सद्-) गति प्रदान की। १३। फिर श्वान और संन्यासी तथा उल्लू और गृद्ध के

श्रीमती सीताजी तणुं, परीयट दुर्वचन,
शुकशुकीना संवादे तजियां, जानकीने वन । १५ ।
वाल्मीकने आश्रम रह्यां, गंगा तेडाव्यां एव,
लवकुश जन्म मुनिबंधु हत, ब्रह्मकमळ पूज्या देव । १६ ।
अगस्त्यना उपदेशथी, यज्ञ आरंभ्यो श्रीराम,
शत्रुघन पुष्कल सेन लेई, चढ्या अश्वरक्षण काम । १७ ।
दमन नृप प्रथमे नम्यो पछे, च्यवन जन्मकथाय,
राय सुधर्मी केरुं स्वागत, नीलगिरि महिमाय । १८ ।
सतवंत पुरथी हर गयो, कामाक्षी देवी ज्यांहे,
उग्रदंत विद्युतमालीनो, कर्यो पराजय क्षणमांहे । १९ ।
आरण्य रामायण कही, मुनि मोक्ष पाम्या जेह,
वळी रेवाजळमां अश्व बूड्यो, लाविया पछी तेह । २० ।
वीरमणि साथे युद्ध थयुं, शिवसहित महा संग्राम,
मारुति लाव्या द्रोण औषधि, आविया श्रीराम । २१ ।

(संघर्ष के) सम्बन्ध में न्याय किया। तदनन्तर ब्रह्मदत्त का आख्यान कह दिये जाने पर (राम ने) वर्णाश्रम धर्म के (लक्षण-) समुदाय को प्रस्तुत किया । १४ । श्रीमती सीता-सम्बन्धी एक धोबी ने दुर्वचन कहे, तो शुक-शुकी के संवाद के सन्दर्भ में राम ने सीता को वन में तज दिया । १५ । वह वाल्मीकि के आश्रम में ठहर गयी, (तदनन्तर) वह गंगा ही को बुलाकर ले आयी । लव और कुश का जन्म हो गया। उन्होंने (वाल्मीकि) मुनि के बन्धु का वध किया। (पाप के क्षालन के लिए) उन्होंने ब्रह्म-कमलों से भगवान् का पूजन किया । १६ । (इधर अयोध्या में) अगस्त्य मुनि के उपदेश के अनुसार श्रीराम ने यज्ञ का आरम्भ किया। शत्रुघ्न और पुष्कल सेना को लिये हुए (यज्ञीय) घोड़े की रक्षा के हेतु चले गये । १७ । पहले दमन नामक राजा ने उन्हें नमस्कार किया। तदनन्तर च्यवन ऋषि के जन्म की कथा कही; सुधर्मी नामक राजा द्वारा (शत्रुघ्न का) स्वागत किया गया और नीलगिरि की महिमा कही गयी । १८ । घोड़ा सतवंतपुर से (आगे) वहाँ चला गया, जहाँ कामाक्षी देवी हैं। आगे चलकर शत्रुघ्न आदि ने उग्रदत्त और विद्युन्माली की क्षण में पराजय कर दी । १९ । आरण्य नामक ऋषि ने रामायण कहा, और वह मुनि मोक्ष को प्राप्त हो गया। अनन्तर रेवा नदी के पानी में (यज्ञीय) अश्व डूब गया, तो उसे फिर पुष्कल ले आया । २० । वीरमणि से (शत्रुघ्न का) युद्ध हुआ, शिवजी से (भी)

पछी अश्वस्थंभन मळ्या शौनक, कह्या कर्मविपाक,
सुरथ धर्मविवाद अद्‌भुत, अंगदविष्टि वाक। २२।
जुद्ध वर्णव्युं सुरथ तणुं, त्यां पधार्या रघुवीर,
लवकुशे जुद्ध कर्युं घणुं, जीत्या शत्रुघन धीर। २३।
वळी राम लक्ष्मण भरतने, लव कुशे मनावी हार,
थयो शोक सीताने तदा, पछी आप्यो यज्ञतोखार। २४।
पछे जिवाडी सेना सकळ, वाल्मीक मुनिए त्यांहे,
सीता सहित सुत लेईने प्रभु, आव्या अवधीमांहे। २५।
सीतासहित क्रतु कर्यो पूरण, स्नान अवभृथ दान,
पछे मुनि नृपने वळाव्या, बहुविधि करी सन्मान। २६।
पुत्रने आप्या देश सर्वे, कर्यो राज्याभिषेक,
सीता समायां, सौमित्रीनो त्याग करियो टेक। २७।
पछे कौशल्याने ज्ञान आप्युं, पामियां निज लोक,
स्वधाम लीला वर्णवी, पदे पदे पुण्यश्लोक। २८।

बड़ा संग्राम हो गया; फिर हनुमान द्रोण गिरि से ओषधी ले आया। (अनन्तर युद्ध-भूमि में) श्रीराम आ गये। २१। फिर अश्व स्तंभित हुआ, शौनक ऋषि से भेंट हुई और उन (शौनक मुनि) ने कार्य-विपाक का वर्णन करके कहा। सुरथ नामक राजा और अंगद का राजधर्म के सन्दर्भ में अद्‌भुत विवाद हो गया। अंगद ने वाक्-चर्चा से मध्यस्थता की। २२। शत्रुघ्न-सुरथ के युद्ध का वर्णन किया। फिर वहाँ रघुवीर (स्वयं) आ गये। (अनन्तर) लव और कुश ने बड़ा युद्ध किया और धीरवीर शत्रुघ्न को जीत लिया। २३। फिर राम, लक्ष्मण और भरत को लव-कुश ने हार मनवायी। सीता को तब शोक हो गया और अनन्तर (वाल्मीकि ने) यज्ञीय अश्व (लौटा) दिया। २४। फिर वाल्मीकि मुनि ने वहाँ समस्त सेना को जिला दिया। प्रभु राम सीता-सहित पुत्रों को लेकर अयोध्या में (लौट) आये। २५। उन्होंने सीता-सहित यज्ञ को पूर्ण किया, अवभृत स्नान करके दान दिया। फिर मुनियों और राजाओं को बहुत प्रकार से सम्मान करते हुए बिदा किया। २६। (अपने तथा भाइयों के समस्त) पुत्रों को देश (बाँट) दिये और उनका राज्याभिषेक कर दिया। सीता (भूमि में) समा गयी। फिर राम ने प्रण के अनुसार लक्ष्मण का त्याग कर दिया। २७। अनन्तर कौसल्या को (आत्म-) ज्ञान प्रदान किया, तो वह भगवान् के अपने लोक को प्राप्त हो गयी। इस प्रकार स्वधाम अयोध्या में पद-पद पर राम द्वारा की हुई

एम वर्ष त्रयोदश सहस्र सुधी, कर्युं रामे राज,
पछी पधार्या निजधाम प्रभु, लेई अवधलोकसमाज । २९ ।
एम सप्त कांडनी कथा सर्वे, कही मति अनुसार,
एना अवांतरमां बहु प्रकारे, कथा कही विस्तार । ३० ।
शतकोटि रामचरित्रनो, नव पार पामे कोय,
ज्यम समुद्र केरा पारमां, गज पिप्पीलिका सम होय । ३१ ।
आकाश केरो ताग लेवा, मशक गरुड समान,
एम अल्पबुद्धि महानथी, नव थाय हरिगुण मान । ३२ ।
बे सहस्र जीभ्या शेषने, ते नवीन गुण नित्य गाय,
एक कल्प सुधी वर्णवे, पण पूरण नव कहेवाय । ३३ ।
कवि कही गया वळी कहे घणा, कहेशे मति अनुसार,
नव थाय पूरण रामनो, लीलासमुद्र अपार । ३४ ।
हुं अल्पबुद्धि शुं कहुं, जे अजित इंद्रि मन,
व्यवसाय तेमां अति घणा, वळी क्षणभंगुर तन । ३५ ।

पुण्य-श्लोक लीलाओं का मैंने वर्णन किया । २८ । इस प्रकार प्रभु राम ने तेरह सहस्र वर्ष तक राज किया; अनन्तर वे अयोध्या के समस्त जन-समाज को (साथ में) लेकर अपने धाम पधारे । २९ । मैंने अपनी मति के अनुसार सातों काण्डों की समस्त कथा इस प्रकार (संक्षेप में) कही है । उसमें अवान्तर अथाओं के रूप में बहुत प्रकार की कथाएँ (न्यूनाधिक) विस्तार करते हुए कही हैं । ३० । कोई भी शत कोटि राम-चरित्र के पार को प्राप्त नहीं हो पाएगा (चाहे वह छोटा हो या बड़ा हो) । जिस प्रकार समुद्र के पार को प्राप्त होने में हाथी और चींटी समान (रूप से असमर्थ सिद्ध) होते हैं, जिस प्रकार आकाश को नाप लेने में मच्छर और गरुड़ समान (रूप से असमर्थ सिद्ध हो जाते) हैं, उस प्रकार अल्प बुद्धि और महान बुद्धि से युक्त मनुष्य दोनों ही द्वारा हरि के गुणों का मापन नहीं हो सकता है । ३१-३२ । शेष के दो सहस्र जिह्वाएँ हैं । वह उनसे (प्रभु राम के) नये-नये गुणों को नित्य गाया करता है । एक कल्प तक (भी) वह उनका वर्णन करे, तो भी वे पूर्ण रूप से नहीं कहे जाएँगे । ३३ । (पूर्वकाल में) अपनी-अपनी मति के अनुसार अनेकानेक कवि उन गुणों को कह गये हैं; (फिर भी) राम के अपार लीला-समुद्र को उनके द्वारा कहकर पूरा नहीं किया जा सकता । ३४ । फिर जो अपनी इन्द्रियों और मन को जीत नहीं पाया, ऐसा मैं अल्पबुद्धि व्यक्ति क्या कह पाऊँगा ? उसमें (इस संसार में) बहुत काम (करने) हैं; फिर

पण गुरुकृपाए वर्णव्या, कंई एक हरिगुण ग्राम,
जे कल्पना मनमां हती ते, थयां पूरणकाम। ३६।
कंई होय दूषण काव्यमां, अघटित अल्प वचन,
कांई अघटित ओछुं अशोभित, रसहीण पद परिच्छिन। ३७।
ते क्षमा करजो रघुपति, अपराध मारा सर्व,
में गाया छे गुण दीन थई, नथी धर्यो मनमां गर्व। ३८।
प्रभु तमो दीनदयाळ छो, भक्तना पूरण काम,
निज दासना अवगुण नथी, चित्त लावता श्रीराम। ३९।
तमो प्रसन्न थाओ, पुष्पपत्रे, भावथी भगवान,
एवुं जाणीने विश्वास आणी, कर्युं छे गुणगान। ४०।
ज्यम बाळक बोले बोबडुं, माबाप हरखे मन,
ए प्रकारे गुण वर्णव्या, जाणजो जुगजीवन। ४१।
श्रीराम लक्ष्मण जानकी, संकटहरण हनुमंत,
थजो प्रसन्न सुणी मुज विनति, छो तमो करुणावंत। ४२।

यह शरीर तो क्षण-भंगुर है। ३५। परन्तु मैंने गुरु की कृपा (के बल) से हरि (राम) के कुछ एक गुण-समूहों का वर्णन किया है। मेरे मन में जो कल्पनाएँ (कामनाएँ विचार, हेतु) थीं, वे कामनाएँ पूर्ण हो गयी हैं। ३६। (मेरे द्वारा प्रस्तुत) इस काव्य में दोष (रहे) होंगे; अघटित अल्प (अंश में ही गुण-महिमा को व्यक्त करनेवाले) वचन होंगे। कुछ अघटित ओछा और अशोभन रहा होगा, रसहीन पद रहे होंगे। ३७। (फिर भी) हे रघुपति, मेरे समस्त अपराधों को क्षमा कीजिए। मैंने तो दीन होकर (आपके) गुण गाये हैं, मैंने (इसको प्रस्तुत करते हुए) मन में कोई गर्व धारण नहीं किया है। ३८। हे प्रभु, आप दीन-दयालु है, भक्तों की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले हैं। हे श्रीराम, आप अपने दासों के अवगुण मन में नहीं लाते (धारण किये) रहते। ३९। हे भगवान, आप पुष्प-पत्र से, भक्ति-भाव से प्रसन्न होते हैं। ऐसा समझकर मैंने मन में यह विश्वास करके (कि आप भक्तों के दोषों की ओर ध्यान नहीं देते) आपके गुणों का गान किया है। ४०। जिस प्रकार बालक तो तुतला बोलता है, फिर भी (उसे सुनते हुए) उसके माता-पिता का मन आनन्दित होता है, उसी प्रकार से मैंने आपके गुणों का वर्णन किया है। हे जगज्जीवन, आप ऐसा समझिए (और मेरे इन तुतले बोलों को सुनकर प्रसन्न हो जाइए)। ४१। हे श्रीराम, हे लक्ष्मण, हे जानकी, हे संकट-हरण हनुमान, मेरी विनती सुनकर आप प्रसन्न हो जाइए। आप तो

छो भक्तवत्सल रघुपति, उदार दीनदयाळ,
नव लावशो मुज दोष मन, प्रभु राखजो संभाळ। ४३।
पापी अजामेल उद्धर्यो, लीधुं नारायण सुत नाम,
गजराज हरि एक वार कहेतां, पामियो निजधाम। ४४।
पोपट भणावतां पुंश्चली, सद्गति पामी तेह,
वळी दासीसुत नारद हता, थया संतशिरोमणि जेह। ४५।
वळी ध्रुव अमरीष प्रह्लाद विभीषण, आदे भक्त अनंत,
तव नामथी निर्मळ थया, जश गाय जेना संत। ४६।
मरा मरा जप्युं नाम प्रतिकूळ, व्याध वाल्मीक राज,
महाकवि पदवी पामिया, सहु कवि तणा शिरताज। ४७।

करुणावान् हैं। ४२। हे रघुपति आप भक्त-वत्सल, उदार, दीन-दयालु हैं। (मुझे आशा है,) आप मेरे दोष अपने मन में नहीं लाएँगे। हे प्रभु, मुझे सम्हाल लीजिए। ४३। आपने पापी अजामिल का उद्धार किया; उसने तो अपने पुत्र नारायण का नाम लिया था।[1] गज-राज एक बार 'हरि' कहने पर ही आपके अपने धाम को प्राप्त हो गया।[2] । ४४। एक वेश्या, अपने तोते को बुलाने पर ही सद्गति को प्राप्त हो गयी।[3] इसके अतिरिक्त, नारद मुनि तो दासी-पुत्र थे, जो सन्त-शिरोमणि हो गये।[4] । ४५। फिर ध्रुव,[5] अम्बरीष[6] प्रह्लाद,[7] विभीषण आदि आपके वे असंख्य भक्त आपके नाम (के प्रताप) से निर्मल (पाप-मुक्त) हो गये हैं, जिनका यश सन्त गाया करते हैं। ४६। वाल्मीकि राय व्याध ने

१ **अजामिल**—कान्यकुब्ज देश का निवासी यह ब्राह्मण पहले सदाचारी तथा सच्छील था; परन्तु बाद मे एक वेश्या पर आसक्त होकर उसने अपने माता-पिता और पत्नी का त्याग किया। वह द्यूत, चौर्य आदि से उपजीविका करने लगा। उस वेश्या से इसके दस पुत्र उत्पन्न हो गये। उनमें से सबसे छोटे पुत्र नारायण से उसे सर्वाधिक प्रेम था। मरणासन्न होने पर वह अपने उस पुत्र को नाम ले-लेकर पुकार रहा था। उस पुण्य के बल से यमदूतो के हाथों से भगवान् विष्णु के दूतो ने उसे मुक्त कर लिया।

२ **गजराज**—पृ० ६२५ पर (सुन्दरकाण्ड, अध्याय १५ मे) प्रस्तुत टिप्पणी देखिए।

३ **एक वेश्या**—पद्म पुराण (क्रिया-योग खण्ड, अध्याय १५) के अनुसार जीवन्ती नामक एक तरुण वैश्य विधवा व्यभिचारिणी बन गयी। उसके कोई सन्तान नहीं थी। एक वार किसी व्याध से एक तोता खरीदकर वह उसका पुत्र का-सा लालन–पालन करने लगी। वह उस तोते को हररोज 'राम, 'राम' शब्द पढ़ाती थी। राम नाम के प्रताप से उसका पाप धुल गया। मृत्यु के पश्चात् जब यमदूत उसके प्राणो को ले जाने लगे, तो भगवान् विष्णु के पार्षदों ने उन्हें रोक लिया और युद्ध मे उन्हें पराजित करके वे उस वेश्या के जीव को विष्णु-लोक ले गये। इस प्रकार अनजाने मे लिये हुए राम नाम से भी उसका उद्धार हो गया। [४, ५, ६, ७ नम्बर के फ़ुटनोट पेज ४८६ पर]

[४८५ पृष्ठ के फ़ुटनोट]

४ दासी-पुत्र नारद—भागवत पुराण (प्रथम स्कन्ध, अध्याय ६) के अनुसार नारद ने व्यास को अपने पूर्वजन्म की कथा सुनाते हुए बताया कि वे (नारद) एक पूर्वभव में किसी वेद-वादी ब्राह्मण की दासी के पुत्र थे। बाल्यावस्था में भी वे स्थिर-बुद्धि, जितेन्द्रिय और आज्ञाकारी थे। मुनियों की सेवा करते-करते उन्होंने एक दिन उनकी अनुज्ञा से उनका उच्छिष्ट खा लिया। इससे उनके समस्त पाप धुल गये। तदनन्तर वे भगवान् की भक्ति मे लीन रहने लगे। अन्त में मुनियों की कृपा से उनमे सद्भक्ति का उदय हुआ। उस समय नारद की अवस्था केवल पाँच वर्ष की थी। माता की मृत्यु के पश्चात् वे भगवान के ध्यान मे मग्न हो पीपल के पेड़ के नीचे बैठ गये। तब भगवान् ने उन पर प्रसन्न होकर उन्हें दर्शन दिये।

५ ध्रुव—स्वायम्भुव मनु का पौत्र और उत्तानपाद का सुनीति नामक रानी से उत्पन्न पुत्र ध्रुव बचपन में खेलते-खेलते अपने पिता की गोद में बैठने लगा, तो अपनी दूसरी पत्नी सुरुचि के भय से पिता ने उसे गोद में बैठने नही दिया। जब बालक ध्रुव रोते-रोते अपनी माँ के पास आ गया और उससे उसने समस्त समाचार कहा, तो माता सुनीति ने कहा कि ऐसा अधिकार पुण्य के बल से ही प्राप्त होता है। यह सुनकर ध्रुव ने प्रतिज्ञा की-मैं पुण्यानुष्ठान से वह अविचल पद प्राप्त करूँगा, जो मेरे पिता तक को प्राप्त नही हुआ है। फिर वह घर से निकल गया और मरीचि ऋषि की आज्ञा के अनुसार विष्णु की आराधना करने लगा। अनेक प्रलोभनों तथा विघ्न-बाधाओं से बचकर उसने तपस्या की। फलतः भगवान् विष्णु ने उसे दर्शन दिये। भगवान् के शख के स्पर्श से ध्रुव में ज्ञान का उदय हुआ और उनकी कृपा से उसे अविचल स्थान प्राप्त हुआ।

६ अम्बरीष—अयोध्या के सूर्य-वंशोत्पन्न राजा नाभाग के पुत्र राजा अम्बरीष के यहाँ एक बार कार्तिक की एकादशी व्रत के पारण के समय दुर्वासा ऋषि आये। दुर्वासा स्नान के लिए गये; द्वादशी समाप्त होने को थी, अतः अतिथि दुर्वासा को भोजन कराने से पहले, विष्णु का चरणामृत पीकर उन्होने व्रत तोड़ दिया। लौट आने पर दुर्वासा को यह विदित हुआ तो क्रोध से उन्होंने अपनी जटा खोलकर अम्बरीष पर एक कृत्या छोड़ दी। परन्तु विष्णु का सुदर्शन चक्र कृत्या का निवारण करके दुर्वासा के पीछे पड़ गया। अन्त मे विष्णु के आदेश से दुर्वासा अम्बरीष के पास गये। इस बीच एक वर्ष व्यतीत हुआ; इस अवधि में अम्बरीष भूखे ही रह गये थे। फिर दुर्वासा को भोजन कराकर उन्होंने अपना व्रत पूर्ण किया। भगवान विष्णु की भक्ति के कारण अम्बरीष को मुक्ति प्राप्त हुई।

७ प्रह्लाद—दैत्यराज हिरण्यकशिपु का प्रह्लाद नामक पुत्र बचपन से भगवान विष्णु का भक्त था। पिता के बार-बार निषेध करने पर भी यह अविचल रहा। अतः उसे एक बार विष खिलाकर, दूसरी बार हाथी के चरणों के नीचे डलवा कर, तीसरी बार पर्वत शिखर से नीचे गिराकर, फिर आग में झोंकवा कर मार डालने का यत्न किया गया। फिर भी उसने भगवद्-भजन नही छोड़ा। इस अविचल भक्ति के कारण भगवान ने नरसिंहावतार धारण करके हिरण्यकशिपु को मार डाला और उसकी रक्षा की।

एवुं जाणीने विश्वास आणी, गया गुण पावन,
ए अरज धरजो मन विषे, करुणानिधि भगवन। ४८।
जे कर्म काया मन वडे, थयुं वाणी इंद्रिय साथ,
ते सर्वे अर्पण करुं तमने, मानी लेजो नाथ। ४९।
वळी सर्व वैष्णव भगवतीने, नमुं छुं कर जोड,
निज दास जाणी दया करजो, देशो नहि कांई खोड। ५०।
सर्वे मळी अपराध मारो, क्षमा करजो दोष,
हुं अल्पबुद्धि बाळक जाणी, लावशो नहि रोष। ५१।
जे प्रकारे पतितपावन, गायुं रामचरित्र,
विषयमांथी वृत्ति काढवा, ने करवा मन पवित्र। ५२।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

पवित्र करवा मन-वाणी, टाळवा पाप विचित्र रे,
पामवा परमानंद पदने, गायुं रामचरित्र रे। ५३।

* * *

आपके उलटे नाम ('राम' के बदले) 'मरा' 'मरा' का जाप किया, फिर भी वे 'महाकवि' पदवी को प्राप्त हो गये और समस्त कवियों के सिरताज हो गये। ४७। ऐसा समझकर मन में विश्वास लाते हुए (करके) मैंने आपके पवित्र गुणों का गान किया है। हे करुणा-निधि भगवान, मेरी यह विनती मन में (ध्यान में) रखिए। ४८। जो मेरे अपने कर्म, शरीर, मन, वाणी और साथ ही इन्द्रियों द्वारा हो गया है, वह सब आपको समर्पित कर रहा हूँ। हे नाथ, उसे मान, अर्थात् स्वीकार कीजिए। ४९ इसके अतिरिक्त, मैं हाथ जोड़कर समस्त वैष्णव भक्तों को नमस्कार क हूँ (और प्रार्थना करता हूँ कि) मुझे अपना दास समझकर मुझ पर कीजिए, मुझे कोई दोष न दीजिए। ५०। सब मिलकर मेरे अप और दोषों को क्षमा कीजिए। मुझे अल्प-बुद्धिवाला बालक समझकर मन में (मेरे प्रति) क्रोध न लाइए (कीजिए)। ५१।

जिस (किसी भी) प्रकार से मैंने पतितों को पावन करनेवाला राम-चरित्र गाया है, वह इस प्रकार से, विषय-सुख में से अपनी वृत्तियों को निकाल लेने के लिए, और अपने मन को पवित्र करने के लिए, अपने मन और वाणी को पवित्र करने के लिए, अपने विचित्र पापों को दूर करने के लिए, परमानन्द दिलानेवाले आपके पद को प्राप्त करने के लिए, मैंने गाया है। ५२-५३।

* * *

अध्याय—११२ (ग्रन्थ-समापन)

राग धवळ धन्याश्री

श्री रामचरित्र सुधारस सिंधु, पावन सुखद अपार जी,
शमन त्रिताप शीतळ परिपूर्ण, अर्थरत्नमांहे सार जी। १ ।
कथा कल्पतरु पूरण कामना, शाखा कांड सुजाण जी,
उपशाखा अध्याय विचित्र अति, चोपाई पत्र प्रमाण जी। २ ।
अक्षर पुष्प ने अर्थ वासना, फळ परमानंद रूप जी,
नव रस भावरूपी रस पूरण, मधुर स्वाद अनुप जी। ३ ।
आश्रित जन अविचळ पद पामे, होय अनुभव अपरोक्ष जी,
उभयलोकमां जश प्राप्ति, धर्म अर्थ काम ने मोक्ष जी। ४ ।
ए रामकथा शुद्ध भाव थकी जे, सुणे भणे नरनार जी,
आ लोक मध्ये ते भोग भोगवे, अंते हरिपद सार जी। ५ ।
ब्राह्मण ब्रह्मतत्त्वने जाणे, क्षत्री विजय बळ पामे जी,
वैश्यने समृद्धि संतति बहुविधि, शूद्र सुखी दुःख वामे जी। ६ ।

अध्याय—११२ (ग्रन्थ-समापन)

श्रीराम-चरित्र (मानो) सुधा (अमृत) रस का अपार सुख देनेवाला पावन समुद्र है। वह आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक—तीनों तापों का शमन करनेवाले शीतल रस से परिपूर्ण है। उसमें अर्थ रूपी [illegible]त हैं। १। यह अच्छी तरह समझिए कि यह (राम-) कथा (भक्त-[illegible]की) कामनाओं को पूर्ण करनेवाला (मानो) कल्पवृक्ष है। उसके [illegible] काण्ड (मानो) उस (कल्प वृक्ष) की शाखाएँ हैं। उसके अध्याय [illegible] वृक्ष की) अति विचित्र उपशाखाएँ हैं और चौपाइयाँ पत्तों के [illegible]२। (उसके अन्दर के) अक्षर फूल हैं, अर्थ वासना है तो [illegible] प्राप्त) परम आनन्द के रूप में उस वृक्ष के फल (उपलब्ध) हैं। [illegible] राम-कथा के अन्दर भाव रूपी नौ रस मानो उस कल्पवृक्ष के फलों [illegible]रा-पूरा पाया जानेवाला रस है। वह (रस) मधुर तथा स्वाद में [illegible]नुपम है। ३। उस (कथा रूपी कल्पवृक्ष) के आश्रित जन अविचल पद को प्राप्त हो जाते हैं। उन्हें अपरोक्ष (आत्म-साक्षात्कार) का अनुभव हो जाता है। उन्हें उभय लोकों अर्थात् इहलोक और परलोक—दोनों में यश की तथा धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष (जैसे चारों पदार्थों) की प्राप्ति हो जाती है। ४। जो नर-नारियाँ इस रामकथा को विशुद्ध भाव से सुनते हैं, पढ़ते हैं, वे इस लोक में (सुख-) भोगों का उपभोग करते हैं और अन्त में सुन्दर हरि-पद को प्राप्त हो जाते हैं। ५। ब्राह्मण ब्रह्म-तत्त्व

अपुत्रवान पुत्र फळ पामे, निर्धन पामे धन जी,
रोगमुक्त रोगी जन थाये, बंधी बंधनमुक्त जी । ७ ।
भैरव भूत पिशाच जोगणी, दोष नडे नहि तेने जी,
ग्रह पित्री तेन नव पीडे, भाव भरोंसो जेने जी । ८ ।
शत्रु पराभव करी शके तेने, भय सर्वेथी मुकाय जी,
जे इच्छा होय मन तणी ते, मनोरथ पूरण थाय जी । ९ ।
बाळहत्या गौ ब्रह्म स्त्री वध, गुरुद्रोही चंडाळ जी,
महापाप थकी ते मुकाय प्राणी, ए सांभळतां तत्काळ जी । १० ।
श्रद्धा सहित विश्वास धरी जन, सुणे भणे जे कोय जी,
सर्वे तीरथनुं फळ पामे, अश्वमेध तणुं पुण्य होय जी । ११ ।
साक्षर द्विजने लखावीने, पुस्तक दान करे जन जेह जी,
पृथ्वी दान तणुं पुण्य होय तेने, महा सुख पामे तेह जी । १२ ।
जेना घरमां ए रामचरित्रना, पुस्तक केरो वास जी,
अखंड लक्ष्मी वंश विस्तरे, दरिद्र रोग थाय नाश जी । १३ ।

जान पाते हैं; क्षत्रिय विजय और बल को प्राप्त हो जाते हैं । वैश्य को बहुत प्रकार की समृद्धि और सन्तति प्राप्त हो जाती है, तो शूद्र सुखी होते हैं और उनके दुःख दूर हो जाते हैं । ६ । पुत्र-हीन व्यक्ति पुत्र रूपी फल को प्राप्त हो जाता है, तो धन-हीन धन को । रोगी मनुष्य रोग-मुक्त होता है, तो किसी बन्धन में बँधा हुआ उस बन्धन से मुक्त हो जाता है । ७ । जिसे भक्ति भाव और विश्वास हो, उसे भैरव, भूत-पिशाच, योगिनी से उत्पन्न कोई दोष पीड़ा नहीं पहुँचाते और न ग्रह और पितर पीड़ा पहुँचाते हैं । ८ । वह शत्रु की पराजय कर सकता है; वह समस्त भयों से मुक्त हो जाता है । उसके मन में जो-जो इच्छा हो वह पूर्ण हो जाती है । ९ । इस (राम-चरित्र) को सुनते ही महापापी नीच प्राणी (मनुष्य) बाल-हत्या, गो-हत्या, ब्राह्मण-हत्या, स्त्री-हत्या, गुरु-द्रोह के महापाप से तत्काल मुक्त हो जाता है । १० । जो कोई मनुष्य श्रद्धा-सहित विश्वास धारण करके (इस कथा को) सुनता है, पढ़ता है, वह समस्त तीर्थों के फल को प्राप्त हो जाता है; उसे अश्वमेध यज्ञ करने का पुण्य प्राप्त हो जाता है । ११ । जो मनुष्य (राम-कथा की) पुस्तक लिखवाकर साक्षर ब्राह्मण को दान में देता है, उसे पृथ्वी-दान का फल प्राप्त हो जाता है । १२ । जिसके घर में राम-चरित्र की पुस्तक का निवास हो (अर्थात् घर में ऐसी पुस्तक हो), उसके वंश की लक्ष्मी-सहित वृद्धि हो जाती है, उसकी दरिद्रता और रोग का नाश हो जाता है । १३ । हरि (भगवान् राम)

अपार महिमा हरिगुण केरो, ते जाणे मोटा संत जी,
सतजुग त्रेता द्वापर करतां, छे कळीमां महिमा अनंत जी। १४।
दोषनिधि महाघोर कळिजुग, थाय न तप कतु जाप जी,
सर्व साधनगत सार थयां, हरि नामनो अधिक प्रताप जी। १५।
वेद पुराण शास्त्र एम कहे छे, मोटा पुरुष मुख बोले जी,
केशवकीर्तन कळियुग साधन, अव नहि एने तोले जी। १६।
एवुं जाणी विश्वास धरी मन, गाया हरिगुणग्राम जी,
खोड मा देशो कविजन कोई जाणी, प्राकृतपद अभिराम जी। १७।
पिंगळ भेद छंद नव जाणुं, काव्य तणी जे रीत जी,
सरस विरस पद परिच्छिन्न पूरण, गायुं हरिगुण गीत जी। १८।
बुद्धि प्रमाणे ए ग्रंथ कर्यो, रसहीण होये अलंकार जी,
ते दोष क्षमा करजो सहु कविजन, राखजो चित्त उदार जी। १९।
जेवा तेवा पण हरिना गुण छे, पावन पतित अनुप जी,
नानुं मोटुं साकरनुं श्रीफळ, सर्व दिशा रसरूप जी। २०।

के गुणों की महिमा अपार है; बड़े-बड़े सन्त उसे जानते हैं। सत्य, त्रेता और द्वापर युग की अपेक्षा कलियुग में उसकी महिमा अनन्त है। १४। कलियुग (वस्तुतः) महाघोर दोष-निधि है। उसमें तप, यज्ञ और जाप नहीं हो रहा है। समस्त सुन्दर साधनाओं के प्रताप से हरि-नाम का प्रताप अधिक है। १५। वेद, पुराण, शास्त्र ऐसा कहते हैं, बड़े-बड़े पुरुष अपने-अपने मुख से अर्थात् स्वयं (ऐसा) कहते हैं कि कलियुग में केशव अर्थात् भगवान हरि (राम) के (नाम-) संकीर्तन जैसी साधना से दूसरी किसी भी साधना की तुलना नहीं हो सकती। १६। ऐसा समझकर मैंने मन में विश्वास धारण करके हरि-गुणों के समुदायों का गान किया है। इन पदों को जन-भाषा गुजराती में लिखित समझकर काई भी कविजन दोष न दें। १७। मैं पिंगल भेद, छन्द तथा काव्य की जो रीति है, उसे नहीं जानता। (फिर भी) मैंने रसात्मक अथवा रसहीन और मर्यादित अथवा पूर्ण पदों में हरि-गुणों के गीत गाये हैं। १८। मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार, इस ग्रन्थ की रचना की है। वह रसहीन तथा अलंकार-हीन हो, तो भी हे समस्त कवि-जनो, अपने चित्त को उदार (बनाये) रखिए और इन दोषों को क्षमा कीजिए। १९। जैसे-वैसे कहे गये हों; फिर भी हरि के गुण पतितों को पावन करनेवाले तथा अनुपम होते हैं। शक्कर का बनाया हुआ छोटा-बड़ा श्रीफल हो, तो भी वह सब दिशाओं में अर्थात् सब ओर से रसरूप (रसमय) ही होता है। २०। भूमि में बीज

अवळुं सवळुं बीज पडे पण, ऊगे पृथ्वी मोझार जी;
एम जे ते प्रकारे हरिना गुण ते; कल्याणकारी अपार जी। २१।
ए रामचरित्रनो ग्रंथ थयो, परिपूर्ण हरि करुणाय जी,
सप्त कांड विस्तार घणो छे, तेनी कहुं संख्याय जी। २२।
अध्याय बसें नव्वाणुं पूरा, त्रिशतमां एक न्यून जी,
नव सहस्र शतपंचनी उपर, चोपाई एकावन जी। २३।
गीत रागनी चाल जूजवी, रसिक ढाळ विश्राम जी,
छंद प्रबंधनी रचना अद्भुत, पावन जश अभिराम जी। २४।
वाल्मीकि रामायणनो अर्थ, मांहे नाटक कृत हनुमंत जी,
ते थकी भाषा ग्रंथ कर्यो छे, लेई दृष्टांत अनंत जी। २५।
पद्मपुराण ने अग्निपुराणनो, मेळव्यो मांहे संबंध जी,
अल्प बुद्धि ते मांटे कंई एक, कर्युं प्राकृत पदबंध जी। २६।
जेम क्षीरसमुद्र भर्यो पय केरो, ते पूरण नव पिवाय जी,
पण चंचुजळथी तृषा विरामे, पक्षी सुखियां थाय जी। २७।

उलटा या सीधा पड़ जाए, तो भी वह उग जाता है। उसी प्रकार जिस किसी प्रकार से हरि के गुण गाये गये हों, तो भी वे अपार कल्याणकारी होते हैं। २१। भगवान हरि की कृपा से राम-चरित्र का यह ग्रन्थ परिपूर्ण हो गया। इसका सात काण्डों में बहुत विस्तार हो गया है। मैं अब उस (के अध्याय, पद आदि) की संख्या बता देता हूँ। २२। इसमें दो सौ निन्यानब्बे अर्थात् पूर्ण तीन सौ में एक कम, अध्याय हैं; (और) नौ सहस्र पाँच सौ से इक्यावन अधिक चौपाइयाँ है। २३। गीतों और रागों की विविध प्रकार की तर्ज़ों और रसात्मक तर्ज़ों और विश्रामों से युक्त, छन्द-प्रबन्ध की यह रचना अद्भुत पावन अभिराम यश प्रदान करनेवाली है। २४। वाल्मीकि रामायण के अर्थ में हनुमान कृत नाटक का अर्थ मिलाते हुए मैंने असंख्य दृष्टान्त लेकर उसके आधार पर इस ग्रन्थ को भाषा में (तैयार) किया। २५। बीच-बीच में पद्म पुराण और अग्नि पुराण का सम्बन्ध जोड़ दिया है। मेरी बुद्धि अल्प है। इसलिए मैंने प्राकृत (जन-भाषा) में कुछ एक पद-बन्ध किये हैं। २६। क्षीर-समुद्र दूध से भरा हुआ है; उसे पूर्णतः पिया नहीं जा सकता; फिर भी जिस प्रकार पक्षी चोंच भर पानी से प्यास बुझाते हैं और सुखी हो जाते हैं, उस प्रकार रामचन्द्र के गुण असंख्य हैं, वे पूर्णतः नहीं कहे जा पाते, फिर भी अपनी अल्प बुद्धि के अनुसार मैंने उन ग्रन्थों से कुछ लेकर कह लिया है और अपनी इच्छा को पूर्ण किया है। शेष,

एम अपार गुण श्रीरामचंद्रनां, पूरण नव कहेवाय जी,
शेष गिरा गणनायक गातां, मनमांहे संकुचाय जी। २८।
तो हुं मंदमति महाकामी, क्यम करी जाणुं पार जी ?
पण गुरुकृपाए करिया कंई एक, हरिना गुण विस्तार जी। २९।
पंगु लंघे गिरिवर मोटा, मूंगो थाय वाचाळ जी,
पूरण ब्रह्म कृपा करे तो, थाये मूर्ख बुद्धि विशाळ जी। ३०।
शाके सत्तरसें अठ्ठावन, धन संक्रांति त्यांहे जी,
संवत अष्टादशत्रिनेवुं, हेमंत ऋतुनी मांहे जी। ३१।
मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष नौमी तिथि, रविवासर दिन मध्य जी,
चित्रा नक्षत्र योग शुक्रमां, वणिज करण समर्ध जी। ३२।
कुंभ लग्न अभिजित मुहूरतमां, ग्रंथ पूरण थयो एह जी,
श्लोक अर्थ धर्यो छे एमां, नव करशो संदेह जी। ३३।
श्रीवल्लभ कुळकमळ दिवाकर, श्री पुरुषोत्तम नाम जी,
शरणागतवत्सल सुखदायक, निज जन पूरणकाम जी। ३४।
शब्द-ब्रह्म परायण, काव्यकळा सुप्रवीण जी,
कृपादृष्टि करे जेनी उपर तेनां, अघ थाये क्षीण जी। ३५।

वाणी (की देवी सरस्वती), गणनायक गणेशजी (भी) उनका गान करते हुए मन में संकोच अनुभव करते हैं; फिर मैं तो मन्दमति हूँ, तो मैं उनका पार किस (उपाय) से जान सकूँगा। फिर भी गुरु की कृपा से भगवान हरि के मैंने कुछ एक गुणों का विस्तार (यहाँ) किया है। २७-२९। यदि पूर्णब्रह्म भगवान् राम कृपा करें, तो पंगु बड़े-बड़े पर्वतों को लाँघ सकता है, गूँगा वाचाल हो सकता है और महामूर्ख (समझा जानेवाला व्यक्ति) विशाल अर्थात् बड़ी प्रगल्भ बुद्धि का धारी बन जाता है। ३०। शालिवाहन शक सत्रह सौ अट्ठावन में धन संक्रान्ति के दिन अथवा विक्रम संवत् अठारह सौ त्र्यानब्बे में हेमन्त ऋतु, मार्गशीर्ष मास के कृष्ण पक्ष की नौमी तिथि रविवार को, चित्रा नक्षत्र, शुक्र योग, वणिक् नामक सामर्थ्य-युक्त करण, कुम्भ लग्न से युक्त अभिजित् मुहूर्त पर यह ग्रन्थ पूर्ण हो गया। इसमें (जो) श्लोक और (भाव-) अर्थ धारण कराया है (दिया है) उसके विषय में सन्देह न करें। ३१-३३। श्रीपुरुषोत्तम नामक मेरे गुरु श्रीवल्लभ-कुल-रूपी कमल को विकसित करनेवाले सूर्य-स्वरूप हैं। वे शरण में आये हुए लोगों के प्रति वात्सल्य-युक्त तथा सुख-दायी हैं। ३४। वे शब्द-ब्रह्म-परायण हैं, काव्य-कला में भली भाँति प्रवीण हैं। वे जिस पर कृपा-दृष्टि करते हैं, उसके पाप क्षीण (होते-

पाखंड धरम तम खंड करवा, आचारज कुळदीप जी,
श्रीकृष्णना नामनो मंत्र ज आपी, कीधा जीव समीप जी। ३६।
नवधा भक्ति स्थापन भूतळ, सेवा नंदकुमार जी,
ब्रह्मनी साथे संबंध कराव्यो, तार्या जीव अपार जी। ३७।
परिक्रमा मीश पृथ्वी कीधी, पदपद तीरथ रूप जी,
दैवी जीवने शरणे लेई, कर्युं भक्तिदान अनुप जी। ३८।
ते पुरुषोत्तमनो अंकित सेवक, चरणकमळनो दास जी,
एवा गुरुनी आज्ञाथकी, कीधो ग्रंथविलास जी। ३९।
परमारथ कारज श्रम करियो, नथी करियो स्वारथ लेश जी,
मान दंभ मूकी गाया छे, पावन गुण परमेश जी। ४०।
वैश्य वर्णमां जन्म ज धरियो, वीरक्षेत्रमां वास जी,
वणिक ज्ञाति दशा लाडनी, वैश्नव गिरधरदास जी। ४१।
सर्व संत वैश्नव कविजनने, पाये नमुं कर जोड जी,
कंई दोष होय ए कृति मध्ये, मुजने नव देशो खोड जी। ४२।

होते नष्ट) हो जाते हैं। ३५। धर्म सम्बन्धी पाखण्ड रूपी अन्धकार को नष्ट करने के लिए ये आचार्य-कुल में (उत्पन्न) मानो दीप ही हैं। उन्होंने श्रीकृष्ण का नाम मन्त्र ही प्रदान करके (जड़) जीवों को अपने निकट (स्नेह-भाजन) बना लिया है। ३६। उन्होंने भू-तल पर नवधा भक्ति की स्थापना की; नन्द-कुमार कृष्ण की सेवा की और (भक्त जनों का) ब्रह्म के साथ सम्बन्ध स्थापित कराया और इस प्रकार असंख्य जीवों का उद्धार कर लिया है। ३७। परिक्रमा करने के बहाने उन्होंने पृथ्वी को पद-पद पर तीर्थ-स्वरूप (पवित्र) कर दिया है और दैवी (दिव्य) जीवों को अपने आश्रय में लेते हुए उनको भक्ति का अनुपम दान दिया है। ३८। मैं उन पुरुषोत्तम का अंकित सेवक हूँ, उनके चरण-कमलों का दास हूँ। ऐसे उन गुरु की आज्ञा से मैंने यह ग्रन्थ-विलास प्रस्तुत किया है। ३९। मैंने परमार्थ के लिए ही यह परिश्रम किया है, अंश भर भी स्वार्थ के लिए यह नहीं किया है। मैंने मान, दम्भ को तजकर परमेश्वर के पावन गुणों का गान किया है। ४०। मैंने वैश्य वर्ण में ही जन्म ग्रहण किया और वीरक्षेत्र में निवास किया। मेरी ज्ञाति दशा लाड़ वणिक् (वैश्य) की है। मैं गिरधरदास वैष्णव हूँ। ४१। मैं समस्त सन्तों, वैष्णवों, कविजनों के चरणों को हाथ जोड़कर नमस्कार करता हूँ; (और विनती करता हूँ कि) यदि इस कृति में कोई दोष हो, तो आप मुझे दोष न दें। ४२। गुरु पुरुषोत्तम, जो अन्तर्यामी हैं, मेरी इस वाणी के प्रेरक हैं।

वाणी तणो प्रेरक पुरुषोत्तम, अंतरजामी जेह जी,
ते प्रभुनी इच्छाए थयुं छे, रामचरित्र ज एह जी। ४३।
ज्यम काष्ठनी पूतळी क्रिया करे, ते सूत्रधार आधार जी,
एम सकळ जीव हरिनी सत्ताए, वर्ते छे अनुसार जी। ४४।
ए उत्तरकांड थयो परिपूरण, अध्याय एक सो बार जी,
चोपाई एकत्रीसें अठ्ठाणुं, एमां घणो विस्तार जी। ४५।
निर्मळ जश रामचंद्रनां, गाया मति अनुमान जी,
निमित्तमात्र जन गिरधर कहावे, करता श्री भगवान जी। ४६।

वलण (तर्ज़ बदलकर)

भगवान भयहर कामपूरण, राखजो शरण कृपा करी,
कर जोडीने कहे दास गिरधर, श्रोताजन बोलो श्रीहरि। ४७।

॥ उत्तर कांड समाप्त ॥

उस प्रभु की इच्छा से ही यह राम-चरित्र (पूर्ण) हो सका है। ४३। जिस प्रकार काठ की पुतली (कठ-पुतली) क्रिया तो करती है, पर सूत्रधार ही उसका आधार होता है, उसी प्रकार ये समस्त जीव (कठ-पुतलियों की भाँति) श्रीभगवान् हरि की इच्छा के अनुसार व्यवहार करते हैं। ४४। यह उत्तर काण्ड (यहाँ) पूर्ण हो गया है। इसमें एक सौ बारह अध्याय हैं। इसमें इकतीस सौ अट्ठानब्बे चौपाइयाँ हैं। इस प्रकार इसका बड़ा विस्तार हो गया है। ४५। मैंने अपनी मति के अनुमान से (भगवान्) रामचन्द्र के निर्मल यश का गान किया है। मैं (तुच्छ) जन गिरधर निमित्त मात्र कहाता हूँ; कर्ता तो श्रीभगवान ही हैं। ४६।

(भक्त जनों के) भय का हरण करनेवाले और उनकी कामनाओं को पूर्ण करनेवाले हे भगवान्, कृपा करके मुझे अपनी शरण में रखिए। यह गिरधरदास हाथ जोड़कर कहता है, हे श्रोता-जनो 'श्रीहरि' बोलिए। ४७।

॥ उत्तर कांड समाप्त ॥

संवत् १८९३ तमे मार्गशीर्षमासे कृष्णपक्षे नवम्यां तिथौ भानुवासरे सम्पूर्णम्। स्वकृतं परोपकाराय स्वहस्तेन लिखितं।
जे वांचे तेने अमारा जेश्रीकृष्ण छे।

श्रीरामचरित्र काण्ड ७, अध्याय २९९, चोपाई ९५५१।

प्रथम खण्ड पृष्ठ संख्या ९६४
द्वितीय खण्ड पृष्ठ संख्या ४९४ } —ग्रन्थ की पृष्ठ संख्या १४५८

भुवन वाणी ट्रस्ट,

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८ चौपटियाँ रोड, लखनऊ—३

यह ग्रन्थ सम्पूर्ण हो चुके हैं (सानुवाद देवनागरी लिप्यन्तरण):—

१—(बंगला) कृत्तिवासरामायण-पाँचकांड नागरी लिप्य०, अवधी पद्यानुवाद मूल्य २५·००
२—(बंगला) कृत्तिवास रामायण लंका काण्ड ,, गद्यानुवाद ,, १५·००
३—(मलयाळम) ॲळुत्तच्छन्कृत महाभारत हिन्दी अनु० नागरी लिपि० ,, ४०·००
४—(,,) ,, अध्यात्मरामायण, उत्तररामायण ,, ,, ४०·००
५—(कश्मीरी) रामावतारचरित—प्रकाशराम कुर्यग्रामी कृत ,, ,, २०·००
६—(,,) ललद्यद—हिन्दी, संस्कृत अनुवाद सहित ,, ७·००
७—बाइबिल सार (सालोमन के नीतिवचन) संस्कृत उद्धरणयुक्त ,, १·००
८—(उर्दू) श्री 'रुस्वा' कृत शरीफ़जादः (आर्यपुत्र) नागरी लिपि मे ,, ५·००
९—(गुरमुखी) जपुजी तथा सुखमनी साहब—गुरमुखी मूल पाठ तथा
ख्वाजः दिलमुहम्मद कृत उर्दू पद्यानु०—दोनों देवनागरी लिपि में—मूल्य ५·००
१०—(फ़ारसी) सिर्रे अक्बर (दाराशिकोह कृत ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक,
माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तरीय, श्वेताश्वतर) की फ़ारसीव्याख्या हिन्दी में— ,, २०·००
११—(अरबी) रियाजुस्सालिहीन ज़ादे सफ़र (इस्लामी हदीस) प्र० खण्ड ,, १२·००
१२—(तमिळ) तिरुक्कुरळ् नागरी में मूल, हिन्दी गद्य-पद्यानुवाद— ,, २०·००
१३—(मराठी) श्रीराम-विजय—श्रीधर कृत, हिन्दी अनुवाद सहित ,, ४५·००
१४—(नेपाली) रामायण भानुभक्त कृत सानुवाद ,, २०·००
१५—(तेलुगु) मोल्ल रामायण सानुवाद लिप्यन्तरण ,, २०·००
१६—(कन्नड) रामचन्द्र चरित पुराणं—जैनसाहित्य (अभिनव पम्प नागचन्द्रकृत) ,, ४०·००
१७—(राजस्थानी) रुक्मिणीमंगल—पदम भगत कृत ,, १५·००
१८—(गुजराती) गिरधर रामायण हिन्दी अनुवाद सहित (नागरी लिपि.) ,, ६०·००
१९—(वाणी सरोवर)—उपर्युक्त अनुपम ग्रंथों का सानुवाद धारावाहिक
देवनागरी लिप्यन्तरण का त्रैमासिक पत्र—वार्षिक ,, १०·००

ट्रस्ट के अतिरिक्त, सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण के अन्य कार्य, जो अन्यत्र हो चुके हैं:—

२०—(अरबी) क़ुर्आन (मूल आयतें अरबी व देवनागरी लिपि में, अनुवाद,
टिप्पणी सहित)—इस्लामी धर्माचार्यों द्वारा प्रतिपादित— मूल्य ४०·००
२१—(,,) क़ौरानिक कोश क़ुर्आन के पठनक्रम से शब्दार्थ ,, १०·००

ट्रस्ट में प्रकाशित हो रहे सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण ग्रन्थ (यन्त्रस्थ):—

१—(तमिळ) कम्ब रामायण २—(तेलुगु) रंगनाथ रामायण
३—(असमिया) माधवकंदली रामायण ४— ,, पोतन्न भागवतमु
५—(हिब्रू) बाइबिल ओल्ड टेस्टामेण्ट हिन्दी अनु० सहित हिब्रू तथा अंग्रेज़ी मूल नागरी
६—(ग्रीक) ,, निउ ,, ,, ,, ,, ग्रीक ,, ,, लिपि में
७—(गुरमुखी) श्रीगुरुग्रंथ साहब ८—(ओड़िआ) बैदेहीशबिळास—उपेन्द्र भञ्जकृत
९—(मराठी) श्रीहरि-विजय—श्रीधर कृत मूलपाठ हिन्दी अनुवाद सहित
१०—(उर्दू) गुज़श्तः लखनऊ—मौ० शरर ११—(फ़ारसी) दाराशिकोह कृत
५० उपनिषदों की फ़ारसी-व्याख्या का धारावाहिक हिन्दी अनुवाद (द्वि० खण्ड)
१२—(अरबी) रियाज़ुस्सालिहीन (हदीस)—(ज़ादे सफ़र) द्वि० खण्ड
१३—(सिंधी) स्वामी, शाह, सचल की त्रिवेणी १४—(बंगला) कृत्तिवास उत्तरकाण्ड
१५—रामचरितमानस (तुलसी)—संस्कृत पद्यानुवाद सहित, तथा
१६— ,, ओड़िया लिपि में लिप्यन्तरण एवं ओड़िया गद्य-पद्यानुवाद
१७— ,, बँगला ,, ,, बंगला पद्यानुवाद

वाणी प्रेस, लखनऊ—३ में मुद्रित एवं भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ—३ द्वारा प्रकाशित।
—द्वारा नन्दकुमार अवस्थी

' प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक संत की बानी।
सम्पूर्ण विश्व में घर-घर है पहुँचानी ॥ '

प्रतिष्ठाता— पद्मश्री नन्दकुमार अवस्थी